हिन्दी
विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, तत्त्वचिन्तामणि, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

सप्तम भाग

[घननाभि—जम्ब]

THE
ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. VII.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārṇava,

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnākara, Tattva-chintāmani, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sāhitya Parishad and Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by H. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath V[illegible]

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, C[illegible]

हिन्दी

विश्वकोष

(सप्तम भाग)

घननाभि (सं० पु०) घनस्य मेघस्य नाभिरिव योनित्वात्। धूम, धूंआ। मेघ देखो।

घननिहार (सं० पु०) बर्फ, तुषार।

घनपति (सं० पु०) मेघोंके अधिपति, इन्द्र।

घनपत्र (सं० पु०) घनानि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। १ पुनर्णवा, सांठ नामका वृक्ष। २ घनच्छद, शिग्रु, सहिंजन।

घनपदवी (सं० स्त्री०) घनस्य पदवी, ६-तत्। आकाश। मेघका आधार तथा सञ्चार स्थान होनेके कारण आकाशका घनपदवी नाम हुआ है। मेघ देखो।

घनपल्लव (सं० पु०) घना निविड़ाः पल्लवा यस्य, बहुव्री०। शोभाञ्जन, सहिंजनका पेड़।

घनपाषण्ड (सं० पु०) घनेन मेघध्वनिना पाषण्ड इव। मयूर, मोर।

घनपाषाण (सं० पु०) अभ्रक, अबरक।

घनप्रिय (सं० पु०) १ मयूर, मोर। २ एक तरहकी घास जिसके पत्ते डण्ठलकी ओर पतली और ऊपरकी ओर चौड़ी होती हैं। यह पर्वतों पर पायी जाती है। चिकित्सक इसे दवाईके काममें लाते हैं। ३ मोर शिखा।

घनप्रिया (सं० स्त्री०) १ काकजम्बूवृक्ष। २ नदीजंबू।

घनफल (सं० पु०) घनानि निबिड़ानि फलानि यस्य, बहुव्री०। १ विकण्टकवृक्ष, तरबूज। २ लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई तीनोंका गुणनफल। ३ किसी संख्याको उसी संख्यासे दो बार गुणन करनेका फल।

घनफेनिला (सं० स्त्री०) काकमाची।

घनबहेड़ा (हिं० पु०) अमलतास।

घनबान (हिं० पु०) एक प्रकारका बाण।

घनबेल (हिं० वि०) बेलबूटेदार, जो बेल बूंटेसे बने हों।

घनमूल (सं० क्ली०) घनस्य समत्रिघातस्य मूलं, ६-तत्। जिस समान अङ्कके त्रिघातको घन कहते हैं। वह समान अङ्क उस घन अङ्कका घनमूल है। अंगरेजी भाषामें इसको cubic root कहते हैं। जैसे ३का घन २७ है, इस लिए २७का घनमूल ३ होगा। इसी प्रकार ६४का घनमूल ४ है, और १२५का घनमूल ५ है इत्यादि।

किसी एक राशिको, उस ही राशिसे गुणा करके, उस गुणफलको पुनः उस राशिसे गुणा करने पर जो फल उपलब्ध होगा उसको उस राशिका घन कहते हैं। जैसे—५का घन ५×५×५ अथवा १२५ है।

किसी राशिका घन व्यक्त करना हो, तो उसके माथिके जरा दाहिनी तरफ छोटा अक्षर ३का लिखनेसे हो वह समझा जायगा कि, उस राशिका घन करना। जैसे—५का घन = $५^३$, या $५^३$ = ५×५×५ = १२५।

किसी राशिको उस राशिसे गुणा करके पुनः उस

राशि द्वारा गुणा करनेसे गुणफल किसी एक प्रस्तावित राशिके समान होता है, उसको उस प्रस्तावित राशिका घनमूल कहते हैं। जैसे—१२५का घनमूल ५ है, क्यों कि ५×५×५=१२५ होता है।

जिस संख्याका घनमूल निकालना होगा, उसकी बाईं ओर ∛ ऐसा मौलिक चिह्न या माथेकी दाहिनी ओर छोटे हरफमें ⅓ ऐसा भग्नांश रखा जाता है। जैसे—∛१२५ या (१२५)⅓ ऐसा लिखने पर यह समझना होगा कि १२५ का घनमूल दिखाना होगा। जैसे—∛१२५=(१२५)⅓=५।

नियम।—जिस संख्याका घनमूल निकालना होगा, पहिले उसकी इकाईवाले अंकके मस्तक पर एक बिन्दु लिख कर दो दो अंक छोड़ कर प्रत्येक तीसरे अंक पर बिन्दु लगानेसे, मूलमें कितने अंक रहेंगे सो उस बिन्दुकी संख्यासे मालूम हो सकता है। यथा—१००० का घनमूल एक अंकविशिष्ट है; १९९९९९ का घनमूल दो अंकविशिष्ट होगा।

बिन्दुपातके बाद जो भाग होंगे उसके पहिले भागसे ऐसे एक गरिष्ठ राशिका घन अन्तर करना होगा, कि जिससे वह उस प्रथम अंशको अतिक्रम न कर सके। इस प्रकार जो राशिका घन अंतर करेगा, वही मूलका पहिला अंक होगा।

अन्तर करके जो बच जायगा, उसकी दाहिनी ओर प्रस्तावित संख्याकी और एक बिन्दुक्रान्त उतार लाइये, उससे जो फल प्राप्त होगा, उसकी अन्तकी दो संख्या बाद दे कर मूलमें जो पहिले उपलब्ध हुआ है, उसके वर्गको तिगुणा करके, उस बाद दिये हुए अंककी भाग करिये। फिर पहिले जो उपलब्ध हुआ है उसके बाद उस भागफलको रखना चाहिये। इस तरह निम्नलिखित विधिसे उसकी गणना करनी चाहिये।

मूलमें जो उपलब्ध होगा, उसके प्रथम अंकके दश गुणे वर्गको तिगुणा करके जो होगा, वह+मूलके दो गुणफलका तिगुणा+मूलका शेष लब्ध अङ्कका वर्ग है। इससे जो फल निकलेगा, मूलके द्वितीय लब्ध फल द्वारा उसका गुणा करें और उस गुणफलको, पहिलेकी बची हुई संख्यासे बाद जो प्रस्तावित राशिका द्वितीय भाग उतारा गया है, उससे निकाल दें। अगर प्रस्तावित राशिमें और भी अङ्क रहें; तो इसी प्रकार उतारते हुए प्रक्रिया करनी चाहिये।

पहिले, प्रथम बिन्दुके नीचेकी राशिको ऐसी एक राशिके घनसे अन्तरित करना होगा; कि जिससे वह उस प्रथम अंशको अतिक्रम न कर पावें।

उदाहरण—२१९५२का घनमूल कितना होता है? बिन्दु लगानेसे मालूम हुआ कि, उसका घनमूल दो अङ्क होगा। बादमें निम्न प्रकार प्रक्रिया करनी होगी—

२१९५२ (२८
८
१३९५२
३×२²=१२
३×(२०)²=१२००
३× २०×८=४८०
८²=६४
१७४४
८
१३९५२ | १३९५२

पूर्व लिखे अनुसार १३९को १२से भाग देनेसे, वह भागफल ९से अधिक होता है। परन्तु ऐसे स्थान पर ८के सिवाय ९, १० या ११से गुणा करनेसे, वह प्रस्तावित राशिको अतिक्रम कर जायगा। इस लिए जो राशि उसे अतिक्रम न कर सके ऐसी ही संख्यासे गणना करनी चाहिये।

घनमूलमें दो अङ्क होंगे, ऐसी दशामें २ दशक स्थानीय होगा, अतः ३×(२०)² ऐसा लिखा गया है।

सर्वसाधारणके जाननेके लिए सामान्य राशिका घनमूलके निराकरणके लिए नीचे लिखी हुई कुछ राशि लिखी जाती हैं—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१,	८,	२७,	६४,	१२५,	२१६,	३४३,	५१२,	७२९,	१०००,

इसके बादकी राशिसे नीचे लिखे अनुसार प्रक्रिया करनी चाहिये।

उदाहरण—२१९५२ (२८
८

४×३००=१२००	१३९५२
२×८×३०=४८०	
८² = ६४	
१७४४	
८	
१३९५२	१३९५२

पहिली बिन्दवाली राशिको ऐसे कोई एक अङ्कसे अन्तर करना चाहिये, जिससे वह उस प्रथमांशको अति-क्रम न कर सके। ऐसे स्थान पर जिस राशिका धन अंतर किया गया, उसके मूलका पहिला अङ्क अन्तर करके जो अवशिष्ट बचा, उसको दाहिनी ओर प्रस्तावित राशिका और एक बिन्दुवाली राशि उतार लेनी चाहिये। बादमें फिर मूलमें जो पहिले उपलब्ध हुआ हो; उस अङ्कके वर्ग को ३००से गुणा करनेसे जो बाकी रहे उसको + उस मूलके प्रथम लब्ध अङ्कको आनुमानिक मूलके द्वितीय अङ्क (८) से गुणा कर पुनः ३०से गुणा करनेसे जो होगा उसको + मूलके शेष लब्ध (८) अङ्कके वर्ग से जो योगफल होगा, उसे उस द्वितीय लब्ध अङ्कसे गुणा करें और उस गुणफलको उक्त अवशिष्ट राशिसे निकाल दें। अगर प्रस्तावित राशिमें और भी भाग रहे, तो ऐसे उतारते जाना चाहिये और प्रक्रिया करते रहना चाहिये। पहिले यह भी देखना होगा कि, वह आनुमानिक द्वितीय अङ्क कितना होगा? वह ८ न हो कर ९ या १० हो; तो भी कोई हर्ज नहीं। ऐसी जगह उक्त ९ या १०को द्वितीय अङ्क अनुमान करके उपर्युक्त प्रक्रियाके अनुसार काम करना चाहिये। अगर यह देखो कि, ९की प्रक्रियाकी संख्या प्रस्तावित राशिको अतिक्रम कर रही है तो ८को ही यथार्थ अङ्क अनुमान कर प्रक्रिया करनी चाहिये। सब ही अङ्कोंमें ऐसे अनुमान करनेकी जरूरत पड़े;—ऐसा कोई नियम नहीं।

घनमूला (सं० स्त्री०) १ काकमाची। २ चोरमूर्वा।

घनयन्त्र—काँसा धातुका बनाया हुआ वाद्ययन्त्र। सम-शराव, मंजिरा, खटताली, करताली, रामकरताली, घंटा, घड़ी, झाँझर, घुंटिका, नूपुर प्रभृति वाद्ययन्त्र इसी श्रेणीके भीतर हैं। इसके सिवा काँचके बनाये हुए यन्त्र भी घनयंत्रमें गिने जाते हैं। इनमेंसे अधिकांश माङ्गल्य हैं। मंजिरा, खटताली और करताली अनुगत-सिद्ध तथा समशराव स्वतःसिद्ध यंत्र हैं।

घनरव (सं० पु०) मयूर, मोर।

घनरस (सं० पु०) घनस्य मेघस्य मुस्तकस्य वा रसः, ६-तत्। १ जल, पानी। २ कर्पूर, कपूर। घनश्चासौ रस-श्चेति, कर्मधा०। ३ सान्द्ररस, गाढ़ा रस। घनो रसोऽस्य, बहुव्री०। ४ पीलुपर्णी, चुणहार। ५ मोरटवृक्ष, अङ्कोल-वृक्ष, ढेराका पेड़। (त्रि०) ६ जिसका रस गाढ़ा हो। (पु०) ७ हाथियोंका एक रोग, जिससे हाथीका रक्त दूषित हो कर नख गलने लगते हैं और हाथी लड़खड़ाने लगता है। हाथीका यह कुष्ठ रोगसा है। ८ मूर्वा। ९ कषाय।

घनराम—बङ्गदेशके एक प्रसिद्ध कवि। बंगदेशीय साहित्य समाजमें कविवर कृत्तिवास और कविकङ्कण आदि जैसे ऊँचे दर्जेके कवि हो गये हैं; उनसे इनका आसन भी कुछ कम नहीं है। इनका बनाया हुआ एक ही महाकाव्य मिलता है, जिसका नाम है— 'श्रीधर्ममंगल"। इसकी भाषा भी सरल और उत्तम थी। इन्होंने शक सं० १६३३ के अगहन मासमें उक्त पुस्तक समाप्त की थी। इनकी बचपनसे ही कवित्व-शक्ति तेज थी। इनके गुरुने इन्हें उक्त काव्यसे संतुष्ट हो कर 'कविरत्न'की उपाधि दी थी। वर्द्धमान जिलेके कृष्णपुर ग्राममें इनका जन्म हुआ था, और इनके पिताका नाम गौरीकांत तथा बाबाका नाम धनंजय था। इनके नानाका नाम गंगाराम तथा माताका नाम सीता था।

घनरूपा (सं० स्त्री०) खटीशर्करा, खड़ीमिट्टी।

घनवर (सं० क्ली०) आस्य, मुख।

घनवर्त्मन् (सं० क्ली०) घनस्य वर्त्म, ६-तत्। आकाश।

घनवल्लिका (सं० स्त्री०) घना निविड़ा वल्ली यस्याः, बहुव्री०, कप्, ह्रस्वश्च। १ अमृतस्रवालता। घनस्य वल्लीव, ६-तत्। २ विद्युत्, बिजली।

घनवल्ली (सं० स्त्री०) घनस्य मेघस्य वल्लीव। १ विद्युत्, बिजली। २ अमृतस्रवा नामकी लता।

घनवात (सं० पु०) घनो निविडो वातोऽत्र। १ नरकविशेष। घनस्य वातः, ६-तत्। २ मेघवात। ३ जैनमतानुसार तीन लोकको स्थिर रखनेवाली तीन वातवलयोंमें से एक। यह लोकके चारों तरफ फिरती रहती है।

घनवास (सं० पु०) घनो वासो गन्धोऽस्य, बहुव्री०। कुष्माण्ड, कुंहड़ा, कुंहड़ेका फल।

घनवाह (सं० पु०) वायु, हवा।

घनवाहन (सं० पु०) घन इव शुभ्रं वाहनं यस्य, बहुव्री०। १ शिव, महादेव। २ घनो मेघो वाहनं यस्य, बहुव्री०। जिसका वाहन मेघ हो, इन्द्र।

घनवाही (हिं० स्त्री०) १ लोहेको घनसे कूटनेका काम। २ वह गड्ढा वा स्थान जहां घन चालानेवाला खड़ा होता है।

घनवीथि (सं० स्त्री०) घनानां वीथिः, ६-तत्। आकाश।

घनव्यपाय (सं० पु०) घनस्य व्यपायः, ६-तत्। १ वर्षाका अवसान, वर्षाकी समाप्ति, वर्षाका अन्तिम समय। २ मेघका अवसान, मेघकी समाप्ति।

घनशृङ्गी (सं० स्त्री०) मेषशृङ्गी, मेढ़ा सींगी।

घनश्याम (सं० पु०) घनः मेघ इव श्यामः। १ काला बादल। २ श्रीकृष्ण। (त्रि०) बादलोंके समान काला।

घनश्याम—हिन्दीके एक कवि। इनकी कविता भक्तिरसपूर्ण होती थी। यथा—

"पावन नाम तुम्हारो रघुवर मोसे पतितको तारो।
जल थल चल चहु दिश मन विपटत सब हुग दोष हमारो॥
प्रेम रङ्ग रंगे घनश्यामकि लगी तन रङ्ग पियारो॥"

घनश्याम शुक्ल—आसनी-फतहपुरके रहनेवाले हिन्दीके एक कवि। १५७८ ई०में इनका जन्म हुआ था। ये रेवाराजदरबारके कवि थे तथा इन्होंने राजाके यशका ही वर्णन किया है। काशीमरेशकी सभाके भी ये कवि थे। इनकी कवितायें पाण्डित्यपूर्ण हैं।

घनसंज्ञा (सं० स्त्री०) मुस्ता, मोथा।

घनसागर (सं० पु०) घनसार देखो।

घनसार (सं० पु०) घनस्य मुस्तकस्य सारः, ६-तत् १ कर्पूर, कपूर। घनो निविड़ः सारोऽस्य, बहुव्री० २ दक्षिणावर्त पारद, पारा। ३ वृक्षविशेष, कोई पेड़। ४ धरणी, पृथिवी। घनस्य सारः, ६-तत्। ५ श्रेष्ठमेघ, सुन्दर बादल। ६ जल, पानी। ७ चन्दन।

घनसिखर—हिन्दीके एक कवि। इनकी एक कविता उद्धृत की जाती है—

"नाद ब्रह्मकी साधो आराधो।
योगिनको गत परम पद पावें अनहद बाहद॥
उपदेश पाठते नत बितत घनसिखर प्रकाश्यो।"

घनसून (सं० पु०) मोरटलता, एक तरहकी लता।

घनस्कन्ध (सं० पु०) घनः स्कन्धो यस्य, बहुव्री०। कोशाम्र वृक्ष, कोशम्भका पेड़।

घनस्वन (सं० पु०) घनस्य स्वनः, ६-तत्। १ मेघका शब्द, मेघको गरज। घनेन तज्जलेन सुष्ठु स्वनिति स्वन्-अच्। २ तण्डुलीय शाक, एक तरहका शाक।

घनहस्त (सं० पु०) घनः समविघातमितो हस्तोऽत्र, बहुव्री०। १ एक हाथ लम्बा एक हाथ चौड़ा और एक हाथ मोटा क्षेत्र। २ अन्न आदि नापनेका एक परिमाण जो एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा होता है, खारी, खारिका।

घना (सं० स्त्री०) घन अस्त्यर्थे अच्-टाप्। १ माषपर्णी, मासपर्णी नामकी लता। २ रुद्रजटा, जटाधारी लता।

घना (हिं० वि०) १ सघन, ठोस। २ घनिष्ट, नजदीकी, निकटका। ३ बहुत अधिक, ज्यादा।

घनाकर (सं० पु०) घनानां मेघानामाकरः, ६-तत्। वर्षाकाल, वर्षाकी मौसम।

घनाक्षरी (सं० पु०) दण्डक वा मनहर छंद। इसे साधारण लोग कवित्त कहते हैं। ध्रुपद रागमें भी यह छन्द गाया जा सकता है।

घनागम (सं० पु०) आगम्यते ऽत्र आ-गम आधारे घञ्। घनानामागमः, ६-तत्। १ वर्षाकाल। आ-गम भावे घञ् घनानामागमः, ६-तत्। २ मेघका आगमन, बादलोंका जमना।

घनाग्निसह (सं० क्ली०) उत्तम काँसा।

घनाघटा (सं० स्त्री०) काकजङ्घा।

घनाघन (सं० पु०) हन-अच् निपातने साधु। १ इन्द्र। २ वर्षक मेघ, बरसनेवाला बादल। ३ घातुक, मस्त हाथी। ४ परस्पर सङ्घर्षण, एक दूसरेसे टकरानेका शब्द। (त्रि०) ५ निरन्तर, निविड़, घना। ६ घातुक, हिंसा करनेवाला, मारनेवाला।

घनाघना (सं० स्त्री० घनाघन-टाप्। काकमाची, काकमाता, मकोय।

घनाञ्जनी (सं० स्त्री०) घनं निविड़ं अञ्जनं यस्य, बहुव्री०। दुर्गा।

घनात्मक (सं० त्रि०) १ जिसकी लंबाई, चौड़ाई और मोटाई बराबर हो। २ जो तीनोंके गुणा करनेसे निकला हो।

घनात्यय (सं० पु०) घनानामत्ययो यत्र, बहुव्री०। शरत्‌काल, एक ऋतुका नाम जो कुंआर और कार्तिकमें होती है। घनानामत्ययः, ६-तत्। २ घनातिक्रम, मेघका अवसान, बादलकी समाप्ति।

घनानन्द (सं० पु०) १ गद्य काव्यका एक भेद। २ हिन्दीके एक प्रसिद्ध कविका नाम जिसको आनन्दघन भी कहते हैं।

घनामय (सं० पु०) घनो दृढ़ आमयो यस्मात्, बहुव्री०। खर्जूरवृक्ष, खजूरका पेड़। (Date tree)

घनामल (सं० पु०) १ वास्तूकशाक, एक तरहका शाक। २ पुनर्णवा। ३ चन्दनवट।

घनाम्बु (सं० पु०) वर्षा।

घनाराव (सं० पु०) चातकपक्षी, पपीहा।

घनावहा (सं० स्त्री०) १ काकमाची। २ कर्णस्फोट।

घनावृत (सं० त्रि०) घनेन आवृतः, ३-तत्। मेघाच्छादित, बादलोंसे ढका हुआ।

घनाश्रय (सं० पु०) घनानामाश्रयः, ६-तत्। आकाश।

घनाह्व (सं० क्ली०) अभ्रधातु, अबरक।

घनिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन घनः घन-इष्ठन्। १ गाढ़ा, घना, बहुत अधिक। २ आसन्न, निकटका, पासका, नजदीकी, निकटस्थ।

घनिष्ठता (सं० स्त्री०) घनिष्ठस्य भावः घनिष्ठ-तल्-टाप्। १ विशेष आत्मीयता, नजदीकी सम्बन्ध, विशेष परिचय। २ निकट सम्बन्ध।

घनीभाव (सं० पु०) घन-च्वि-भू-घञ्। घनापन।

घनीभूत (सं० पु०) घन-च्वि भू-क्त। जो घना हुआ हो।

घने (हिं० वि०) बहुत, अनेक, ज्यादा।

घनेरे (हिं० वि०) बहुत, अधिक, अगणित।

घनोत्तम (सं० पु०) घनेषु उत्तमः, ७-तत्। १ मेघश्रेष्ठ, उत्तम बादल। २ शरीरका श्रेष्ठ भाग।

घनोद (सं० पु०) जिस समुद्र या पुष्करिणीका जल भारी हो।

घनोदधि (सं० पु०) घन उदधिरव, बहुव्री०। नरकविशेष।

घनोदधिवातवलय (सं०) जैनमतानुसार पृथिवी आदि तीनों लोकोंको स्थिर रखनेवाली तीन वातवलयोंमें एक।

घनोद्भव (सं० क्ली०) लौहकिट्ट, लौहमल, लोहेकी मैल।

घनोपल (सं० पु०) घनस्य उपलः, ६-तत्। ओला, करका, पत्थर।

घनौर—पातियाला राज्यके अन्तर्गत पिञ्जोर निजामतकी दक्षिण तहसील। यह अक्षा० ३०° ४' तथा ३०° २१' उ० और देशा० ७६° २८' एवं ७६° ५०' पू०में अवस्थित है। इसका रकबा १८६ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ४५३४४ है। इस तहसीलमें १७१ गांव लगते हैं।

घन्नई (हिं० वि०) मिट्टीके घड़ों और बांसके लट्ठोंको जोड़ कर बनाया हुआ बेड़ा, घरनाई।

घपचिआना (हिं० क्रि०) घबड़ाना, व्याकुल होना, चक्करमें आना।

घपची (हिं० स्त्री०) दोनों हाथोंको मजबूतीसे पकड़नेकी क्रिया।

घपला (हिं० पु०) गड़बड़, गोलयोग, गोलमाल।

घपुआ ((हिं० वि०) मूर्ख, जड़, नासमझ, उल्लू।

घपुचन्द (हिं० पु०) घपुआ देखो।

घपोकानन्दन (हिं० पु०) मूर्ख, जड़, नासमझ।

घप्पू (हिं० वि०) घपुआ देखो।

घबड़ाहट (हिं० स्त्री०) घबराहट देखो।

घबराना (हिं० क्रि०) १ व्याकुल होना, चक्करमें आना। २ भकपकाना, भौचक्का होना। ३ हड़बड़ाना, जल्दी मचाना, हक्का बक्का होना। ४ ऊबना, उदास रहना।

घबराहट (हिं० स्त्री०) १ व्याकुलता, उदासीनता, उद्विग्नता, अशान्ति। २ किंकर्तव्यविमूढ़ता, चिन्तित अवस्था। ३ हड़बड़ी, उतावली।

घमण्ड (हिं० पु०) १ अभिमान, गरूर, शेखी, अहङ्कार, दर्प, गर्व। २ बल, वीरता।

घमण्डिन (हिं० वि०) घमण्डी देखो।

घमण्डी (हिं० वि०) अहङ्कारी, अभिमानी, मगरूर, शेखीबाज।

म (हिं० पु०) नरम स्थान पर कड़ा आघात लगनेका शब्द ।

मकना (हिं० क्रि०) गम्भीर शब्द करना, धीरे धीरे आवाज होना ।

मका (हिं० पु०) आघातका शब्द, चोटकी आवाज ।

मखोर (हिं० वि०) वह जो धूपमें रह सके ।

मघमाना (हिं० क्रि०) १ गम्भीर शब्द करना, प्रहार करना । २ घूंसा लगाना ।

मर (हिं० पु०) नगाड़े, ढोल आदिका भारी शब्द ।

मरा (हिं० पु०) भंगरा, भंगरैया, भृंगराज नामको बूटी ।

मरौल (हिं० स्त्री०) १ हल्लागुल्ला, उत्पात, ऊधम । २ गड़बड़, गोलमाल ।

मसा (हिं० पु०) १ धूपकी गरमी, उमस । २ घनापन, सघनता, आधिक्य ।

मसान (हिं० पु०) भयङ्कर युद्ध, घनघोर लड़ाई ।

माका (हिं० पु०) भारी आघातका शब्द ।

माघम (हिं० स्त्री०) १ घमघमकी आवाज । २ समारोह, धूमधाम, चहल पहल । ३ भारी आघातकी आवाज ।

माघमी (हिं० स्त्री०) मारपीट, लड़ाई ; दङ्गा ।

मायल (हिं० वि०) धूपकी गरमीसे पका हुआ ।

मासान (हिं० पु०) घमसान देखो ।

माह (हिं० पु०) वह बैल जो अधिक देर तक धूप न सह सकता हो ।

मूह (देश०) मथुरा, आगरा, फिरोजपुर, झंग आदि स्थानोंमें मिलनेवाली एक तरहकी घास । यह प्रायः करील आदिकी झाड़ियोंके नीचे बहुत होती है । इसका स्वाद कुछ कड़ुआपन लिये नमकीन होता है । चौपाए इसके मोलायम कल्लोंको खाते हैं ।

मोई (देश०) बाँसका एक तरहका रोग । यह बाँसके नये कल्लेको निकलनेसे रोकता है ।

मोय (देश०) गोभीके आकारका एक तरहका पौधा । गुलाबके पत्तेके जैसे इसके पत्तेमें भी छोटे छोटे काँटे होते हैं । इसमें सिर्फ एक डण्ठल ऊपरको ओर निकला रहता है । प्याले आकारके इसमें पीले फूल लगते हैं । इसके डण्ठल और पत्तोंसे एक तरहका पीला रस निःसृत होता है जो आँखके रोगोंमें बहुत लाभदायक माना जाता है । यह पौधा बिना लगानेसे ही उजाड़ स्थानोंमें आपसे आप उपजता है। इसे स्वर्णक्षीरो, सत्यानाशी और भँडभाँड कहते हैं ।

घयिरमहदी—शोलापुरका मुसलमान संप्रदायविशेष । इन लोगोंका ऐसा विश्वास है कि, आखिरके इमाम या त्राणकर्ता जगत्में आविर्भूत हुए थे । जौनपुरनिवासी सयेदखाँके पुत्र मुहम्मद महदो इस संप्रदायके प्रवर्तक हैं । हिजिरा सं० ८४७ में इनका जन्म हुआ था । ४० वर्षकी उमरमें इन्होंने 'वाली' हो कर मक्कामें और जौनपुरमें अपने स्वतंत्र मतका प्रचार किया था ; और उस समय बहुतसे चेला भी बना लिए थे। १४८७ ई०में उन्होंने अपनेको भावी महदी कह कर अपना परिचय दिया था और उसी समय लोगोंके समक्ष उन्होंने बहुतसे ऐसे भी आश्चर्यजनक कार्य दिखलाये थे, जिससे लोग चकित रह जाते थे । १५०३ ई०में उनके पुत्रके साथ कुछ शिष्य भी दाक्षिणात्यमें जा बसे थे । १५२० ई०में अहमदनगरके राजा बुर्हान् निजाम शाह महदी संप्रदायमें शामिल हो गये थे । ये लोग बहुतसे विषयोंमें कट्टर मुसलमानोंका अनुकरण किया करते थे ।

ये लोग मुहम्मद महदीको शेष इमाम मानते हैं । तथा पापोंके दूर करने और मरे हुएको आत्माके उद्धारके लिए इनकी पूजते भी हैं ।

घर (सं० पु०) १ घृ-अच् । निवासस्थान, आवास, मकान, गृह ।

घर (हिं० पु०) १ जन्मस्थान, जन्मभूमि, स्वदेश । २ घराना, कुल, वंश, खानदान, । ३ कार्यालय, कारखाना, आफिस । ४ कोठरी, कमरा । ५ कोठा, खाना । ६ शतरंज आदिका चोकोर खाना, कोठा । ७ कोई चीज रखनेका डिब्बा, कोश, खाना । ८ लोहे या काठको पटरी आदिसे परिवेष्टित स्थान । ९ ग्रहोंकी राशि । १० क्षुद्रगर्त, छोटा गड्ढा । ११ छिद्र, बिल, सूराख । १२ उत्पत्तिस्थान, मूल कारण । १३ गृहस्थी, घरबार, परिवार । १४ दाँव, पेंच, युक्ति, तरकीब, उपाय ।

घरघराना (हिं० क्रि०) कफ रुक जाने पर गलेसे आवाज निकलना, घर्र घर्र शब्द करना।

घरघराहट (हिं० पु०) १ कफ रुक जाने पर गलेका शब्द। २ घर्र घर्र शब्द निकलनेका भाव।

घरघाल (हिं० वि०) जो कुलमें कलङ्क लगाता हो, घर बिगाड़नेवाला, जो घरकी सम्पत्तिको नष्ट करता हो।

घरघालन (हिं० वि०) घरघाल देखो।

घरचित्ती (हिं० पु०) एक तरहका सर्प जो सदा घरमें ही रहा करता है।

घरट्ट (सं० पु०) घरं सेकं अट्टति अतिक्रामति घर-अट्ट-अण्, उपपदस०। पेषणी, जाँता, चक्की।

घरणी (सं० स्त्री०) गृहिणी, भार्या, स्त्री। गृहिणी देखो।

घरदासी (हिं० स्त्री०) घरणी देखो।

घरद्वार (हिं० पु०) १ रहनेका स्थान, ठौर, ठिकाना। २ गृहस्थी, घरका काम काज। ३ सम्पत्ति, धन, दौलत।

घरद्वारी (हिं० स्त्री०) प्राचीन कालका एक तरहका कर, जो प्रति घरसे लिया जाता था।

घरन (देश०) एक तरहकी पहाड़ी भेड़। इसे जंगली भी कहते हैं।

घरनाल (हिं० स्त्री०) प्राचीन कालकी तोप, रहकला।

घरनी (हिं० स्त्री०) घरणी देखो।

घरपत्ती (हिं० स्त्री०) घर पीछे लगाये जानेका चन्दा, बेहरी

घरपरना (सं० पु०) ठठेरेके घरिया बनानेका गोल पिंडा जो कच्ची मिट्टीका बना रहता है।

घरफोड़नी (हिं० वि०) घरमें झगड़ा लगानेवाली, आपसमें वियोग करानेवाली, कुटनी।

घरबसा (हिं० पु०) उपपति, यार।

घरबसी (हिं० स्त्री०) १ उपपत्नी, रखेली स्त्री, रखनी, सुरैतिन। (वि०) २ घरकी श्री बढ़ानेवाली, जिसके रहनेसे घरकी सम्पत्तिमें वृद्धि हो, भाग्यवती।

घरबार (हिं० पु०) १ वास करनेका स्थान, ठौर ठिकाना। २ गृहस्थी, गृहजञ्जाल, घरकी झंझट।

घरबारी (हिं० पु०) गृहस्थ, कुटुंबी परिवारवाला।

घरमकर (हिं० पु०) सूर्य।

घररघरर (हिं० पु०) घिसनेका शब्द, रगड़नेकी

घरवा (हिं० पु०) छोटा मोटा घर, कुटी।

घरवारीदण्डी—एक प्रकारकी सम्प्रदाय। दण्डी नामसे परिचय देते हुए भी ये लोग गृहस्थ हैं। स्त्री पुत्रादिके साथ रह कर ये लोग गृहस्थधर्म पालन करते हैं, पर तब भी कभी कभी कमण्डलु आदि ले कर तीर्थयात्राको जाते हैं। पश्चिममें विशेषत: बनारस आदि शहरोंमें ऐसी सम्प्रदायें ज्यादा देखनेमें आती हैं। अपनी सम्प्रदायमें इनका विवाह आदि सम्बन्ध चालू है; परन्तु अपने दण्डी गृहमें वा मठमें ये कार्य नहीं होते। ऐसी किम्बदन्ती प्रसिद्ध है कि, "कोई दण्डी एक रूपसी कन्याको देख कर उस पर मोहित हो गये थे और उसके साथ गृहस्थी भी की थी उसहीसे कौतुकावह घरवारीदण्डी नामकी उत्पत्ति हुई है।"

घरवारी सन्न्यासी—एक सम्प्रदाय। मुण्डमालातन्त्रमें गृहावधूत * नामसे इसका वर्णन है। भारतके नाना देशोंमें इनका निवास है। अपनी सम्प्रदायमें ही इन लोगोंका विवाह होता है। घरवारी दण्डियोंकी भांति ये लोग भी अपने मठमें विवाह नहीं करते, परन्तु शृङ्गगिरि-मठके पूरि गुसांई तथा ज्योतिमठके गिरि गुसांईके घर ये लोग विवाह कर सकते हैं। दूसरे सन्न्यासी इनको बिल्कुल निकृष्ट समझते हैं और खानपान तो दूर रहा इनका छुआ हुआ भोजन भी नहीं करते।

घरवाला (हिं० पु०) १ घरका मालिक। २ पति, स्वामी।

घरवाली (हिं० स्त्री०) घरणी देखो।

घरसा (हिं० पु०) घर्ष, रगड़ा।

घराऊ (हिं० वि०) १ घरका, गृहस्थी सम्बन्धी। २ पालतू, घरमें पाला हुआ।

घराती (हिं० पु०) कन्या पक्षके लोग।

घराना (हिं० पु०) खानदान, वंश, कुल।

घरिआर (हिं० पु०) घड़ियाल देखो।

घरिया (हिं० स्त्री०) घड़िया देखो।

घरियार (हिं० पु०) घड़ियाल देखो।

---

* "अवधूतश्च द्विविधः गृहस्थश्च निराश्रमः।
सदारः सवेदाश्रयो भङ्कुवासो दिगम्बरः॥
गृहावधूतो देवेशि वितीयश्च सदाशिवः॥"

यारी (हिं० पु०) घड़ियाली देखो।

(हिं० स्त्री०) घड़ी देखो।

क (हिं० वि०) एक घड़ी तकका समय, थोड़ी
।

ा (हिं० पु०) घड़खा देखो।

(हिं० वि०) घरू देखो।

ा (हिं० वि०) घरेलू देखो।

(हिं० वि०) १ पालतू, पालू, जो घरमें पाला
ा हो। २ घरका।

दा (हिं० पु०) छोटे बच्चोंके खेलनेका घर, जिसे वे
ागज, मिट्टी, धूल आदिसे बनाते हैं।

ना (हिं० पु०) १ घर, गृह, मकान, वासस्थान,
नेकी जगह। २ घरौंदा देखो।

(सं० पु०) मत्स्यभेद, एक तरहकी मछली,
ारा।

(सं० पु०) घर्घेति अव्यक्त शब्दं राति रा-क । घतो:
सर्गे कः। पा ३।२।११। १ ध्वनिविशेष, चक्की आदिकी
वाज। "...घर्घरस्वर:।"
...) २ पर्वतका द्वार। ३ द्वार, दरवाजा। ४ उल्लूक
उल्लू। ५ नदविशेष।

"...घर्घर:।" (दुर्गोत्सवपद्धति)

फरीदपुर जिलेके कोटालीपाड़ परगणेमें घर्घर
मका एक नद है। ऐसी किंवदंती सुननेमें आती
कि, यह पहिले बड़ा भारी नद था। किसी एक
हापुरुषके शापसे यह दिन दिन घटता आया है।
सके दोनों किनारों पर करीब ४।५ कोश तक विलमय
ान है। इससे अनुमान होता है कि, किसी समय
ह नद बड़े विस्तारवाला था; दिन दिन खरतर
ाह नष्ट होते रहनेसे वह स्थान विलरूपमें परिणत
गया है। वर्तमानमें इस नदका ८०।९० फिटसे भी
धिक विस्तार है।

रक (सं० पु०) घर्घर स्वार्थे कन्। एक प्रसिद्ध
द। विन्ध्याचलसे यह उतरा है और चंपानगरीके
स हो गंगामें जा मिला है। राजनिघण्टुके मतसे—
सका पानी मीठा है, संताप और शोषका नाश करने-
ाला है, पथ्य है, अग्नि बढ़ानेवाला है, बलवर्द्धक है
ौर शरीरको हृष्टपुष्ट करनेवाला है।

"...तापशोषापह।" (राजनि०)

घर्घरा (सं० स्त्री०) घर्घर टाप्। १ छोटी घंटिका।

"घर्घरा क्षुद्रघंटा स्यात्।" (मल्लिनाथ)

२ वीणाविशेष। (मेदिनी) ३ गंगा। गंगा होनेसे
विकल्पमें ङीष् हो कर घर्घरी शब्द होता है।

"...घर्घरीव कनादिनी।" (काशीख० २९ अ०)

४ अयोध्या जिलेमें बहनेवाली एक नदी। यह
हिमालय पर्वतसे निकल कर नेपालमें बहती हुई
'कौरियाला' नामसे प्रसिद्ध हुई है। पर्वतके नीचेसे
शीशापानि नामके स्थानसे बहुतसी शाखायें आ कर
इसमें मिली हैं। उक्त स्रोतसमूह भूमि पर आ कर
दो भागोंमें विभक्त हुए हैं;—पश्चिमकी तरफ बहने-
वालीका नाम कौरियाला है और दूसरी पूर्वकी तरफ
बहती है, उसका नाम है—गिरवा नदी। घर्घराकी
अपेक्षा गिरवा नदीमें जल अधिक है। करीब १८
मील तक शालके जंगलमें हो कर ये दोनों शाखाएं
अक्षा० २८° २७' उ० और देशा० ८२° १७' पू०में
वृटिशराज्यके अंदर आ मिली है। फिर भरथापुरसे कई
एक मील दक्षिणमें ये दोनों नदी मिल गई हैं। इसके
दक्षिणमें खेरी जिलासे सुहेली नामकी नदी भी इसमें
आ मिली है। बादमें प्राय: ४७ मील दक्षिणकी तरफ
गई है और खेरी तथा भड़ौंच हो कर सरयूनदी
कटाई-घाट तथा बरहमघाटके पास चौका और
दहावाड़ ये दो नदी मिली हैं; जिससे संगमस्थलमें
पानी बहुत बढ़ता चला गया है। इसके बादसे ही
इसका असली नाम घर्घरा है। क्रमश: उत्तरमें भड़ौंच
और गोण्डा जिला, दक्षिणमें बाराबंकी और फैजाबाद,
पश्चिममें अयोध्याको छोड़ती हुई यह नदी दक्षिण
और पूर्वकी ओर चली गई है। जहां पर इस नदीने
उत्तरमें बस्ती और गोरखपुर जिला तथा दक्षिणमें
आजमगढ़ छोड़ा है, वहां इसके बाईं तरफ राप्ती और
मुचोरा नदी मिली है। दरौलीके पास जा कर इसने
बंगदेशकी सीमा अतिक्रम की है और छपराके पास
आ कर गंगामें जा मिली है। इस नदीके दोनों किनारे
बहुतसे नदी होनेके चिह्न दिखलाई देते हैं। संभव
है कि, पहिले यह नदी उन स्थानोंमें भी बहती हो।

हालमें नदीको गति बदल कर क्रमशः बीचमें आती जाती है। १६०० ई में इसो घर्घरा नदीमें बड़ो भारी बाढ़ आई थी ; जिससे गोण्डा जिलेका खुराशा नगर बिल्कुल धुल सा गया था।

घर्घरिका (सं० स्त्री०) घर्घरोऽस्त्यस्याः ठन-टाप्। १ क्षुद्र-घण्टिका, छोटो घण्टी। २ नदीविशेष, एक नदीका नाम। ३ वाद्यविशेष, एक तरहका बाजा। ४ भृष्टधान्य, भुंजा हुआ धान, लावा।

घर्घरित (सं० क्लो०) घर्घरं करोति णिच् भावे क्त। शूकर-जातीय ध्वनिविशेष।

घर्घुर्वा (सं० स्त्री०) घृ-विच्-घुर-ध्वनौ क्विप् तौ हन्ति हन-ड। निपातने साधुः ततः टाप्। कीटविशेष, घुर्घर-कीट, घुरघुरा।

घर्म (सं० पु०) घरति अङ्गात् क्षरति घृ-मक्। गुणश्च निपातने साधुः। १ स्वेद, पसीना। २ सूर्यातप, सूर्यकी गरमी। साहित्यदर्पणके मतसे यह सात्विक गुण-के अन्तर्गत है। रति, ग्रीष्म और श्रम प्रभृति द्वारा शरीर-से जो गरमी निकलती है उसीका नाम स्वेद या पसीना है। ३ ग्रीष्मकाल, गरमीको मौसम। ४ आतपयुक्त दिन, गर्म दिन। ५ यज्ञ। ६ रस। ७ दुग्ध, दूध। (त्रि०) ८ दीप्तियुक्त, कान्तियुक्त, प्रकाशवन्त, तेज, चमकीला।

घर्मचर्चिका (सं० स्त्री०) घर्मकृता चर्चिका। घर्मचिका, मरहोरी, पसीनेकी फुंसी।

घर्मदीधिति (सं० पु०) घर्मा दीधितो यस्य, बहुव्री०। सूर्य। "यः स सोम इव घर्मदीधितिः।" (रघु)

घर्मदुघा (वै० स्त्री०) जिस गोका दूध दुहा गया हो।

घर्मदुह् (सं० स्त्री०) घर्मं दुग्धं दोग्धि दुह-क्विप्, ६-तत्। घर्मदुघा देखो।

घर्मपयस् (सं० क्लो०) पसीना, उष्ण जल, गरम पानी।

घर्मपावन् (सं० पु०) घर्मसुष्मार्णं पिवति घर्म-पा-वनिप्। उष्मपा नामक पितृगण।

"स्वाहा पितृभ्य ऊर्ध्व बर्हिर्भ्यो घर्मपावभ्यः।" (वाजसनेयसं० ३८।१५)

घर्मविचर्चिका (सं० स्त्री०) पसीनेकी फुन्सी, मरहोरी।

घर्ममास (सं० पु०) ग्रीष्म-ऋतुके अन्तर्गत वैशाख या ज्येष्ठ मास।

घर्मरश्मि (सं० पु०) घर्मा रश्मो यस्य, बहुव्री०। सूर्य।

घर्मवत् (सं० त्रि०) घर्मः अस्त्यस्य घर्म-मतुप् मस्य वः। १ घर्मयुक्त, घर्माक्त, जिसको पसीना आ गया हो।

घर्मविन्दु (सं० पु०) पसीना।

घर्मसद् (सं० पु०) घर्मे यज्ञे सीदति सद-क्विप्। पितृ-गणविशेष, दूसरा नाम यज्ञसादी है।

घर्मसुभ (सं० त्रि०) घर्मं सुभ्नाति सुभ्-क्विप्। वायु, हवा, वायु बहनेसे पसीनाका नाश होता है, इस लिये वायुका घर्मसुभ कहते हैं।

घर्मस्वरस् (सं० पु०) घर्मा दीप्ताः स्वरसो ध्वनयो यस्य, बहुव्री०। दीप्तध्वनियुक्त, तेज आवाज।

घर्मस्वेद (सं० पु०) घर्मो दीप्तः स्वेदः, कर्मधा०। १ दीप्त गमन, प्रखर गति, तेज चाल। घर्मः चरन् स्वेदः कर्मधा०। २ स्वेदजल, पसीनाका पानी। घर्मे यज्ञे स्वेदो गतिर्यस्य, बहुव्री०। यज्ञमें जानेवाला, वह जो यज्ञमें जाता हो।

घर्मांशु (सं० पु०) घर्म अंशो यस्य, बहुव्री०। सूर्य।

घर्माक्त (सं० त्रि०) घर्मेणाक्तः, ३-तत्। घर्मान्वित, जिस-को पसीना आ गया हो।

घर्माक्तकलेवर (सं० त्रि०) घर्माक्तं कलेवरं यस्य बहुव्री०। जिसका शरीर पसीनासे भींग गया हो।

घर्मान्त (सं० पु०) घर्मस्य उष्णणोऽन्तो यत्र, बहुव्री०। वर्षाकाल, बरसात।

घर्मान्तकामुकी (सं० स्त्री०) घर्मान्ते वर्षासु कामुकी, ७-तत्। बलाका, बगुला। वर्षाकालमें बगुलाके कामकी स्पृहा होती है इस लिये इसका नाम ऐसा पड़ा है। बलाका देखो।

घर्माम्बु (सं० क्लो०) स्वेदजल, पसीना।

घर्माम्भस् (सं० क्लो०) स्वेदजल, पसीना।

घर्मार्त्त (सं० त्रि०) घर्मेणार्त्तः, ३-तत्। जिसके शरीरसे बहुत पसीना निकलता हो।

घर्मार्त्तकलेवर (सं० त्रि०) घर्मार्त्तं कलेवरं यस्य, बहुव्री०। घर्माक्तकलेवर देखो।

घर्मिन् (सं० त्रि०) घर्मेण चरति घर्म बाहुलकात् इनि। जो पसीना द्वारा जीविका निर्वाह करता हो। घर्मोऽस्त्यस्य घर्म-इनि। २ घर्मयुक्त, पसीनासे लदवद।

घर्मोदक (सं० क्लो०) स्वेदजल, पसीना, पसीना।

घर्म्य (सं० त्रि०) घर्मःस्वेदं घर्म-यत्। घर्मसम्बन्धीय, घामका।

घर्म्येष्ठ—हर्म्येष्ठ देखो।

घर्रा (हिं० पु०) १ आंख आने पर लगाये जानेका अञ्जन। यह अफीम, फिटकिरी, घी, कपूर, छड़, जलीबत्ती, इलायची, नीमकी पत्ती इत्यादिको एकमें रगड़ कर प्रस्तुत किया जाता है। २ कफ रुक जाने पर गलेकी घरघराहट।

घर्राटा (हिं० पु०) घर्र घर्रका शब्द, घरघराहटकी आवाज, जो गहरी नींदमें नाकसे निकलती है।

घर्रामी (हिं० पु०) वह मनुष्य जो छप्पर छानेका काम करता हो, छपरबंद।

घर्ष (सं० पु०) घृष-घञ्। १ घर्षण, रगड़, घिस्सा। २ कर्करिका।

घर्षक (सं० त्रि०) घृष-ण्वुल्। जो घर्षण करता हो, जो रगड़नेका काम करता हो।

घर्षकपदी (Rasores) जो पक्षी अपने नखोंसे भूमि खोदते हैं, मुर्गा, मोर प्रभृति।

घर्षण (सं० क्ली०) घृष भावे ल्युट्। रगड़, घिस्सा।

घर्षणाल (सं० पु०) घर्षणायालति पर्याप्नोति अल-अच्। शिलापत्र, मसाला इत्यादि रगड़नेके लिए पत्थरका गोल या लंबा चिकना खंड, लोढ़ा, लुढ़िया।

घर्षणी (सं० स्त्री०) घृष्यते ऽसौ घृष कर्मणि-ल्युट्-ङीप। हरिद्रा, हलदी।

घर्षणीय (सं० त्रि०) घृष-अनीयर्। जो घर्षण किया जायगा, जो रगड़ा जायगा।

घर्षित (सं० त्रि०) घृष-क्त। जो रगड़ा या घिस्सा गया हो।

घर्षिन् (सं० त्रि०) घृष-णिनि। जो घर्षण करता हो, जो पीसता हो।

घल (सं० क्ली०) घोल देखो।

घलना (हिं० क्रि०) १ छूटकर गिर पड़ना, फेंका जाना। २ अस्त्रका चल जाना। ३ मारपीट हो जाना।

घलाघल (हिं० स्त्री०) मारपीट, लड़ाई झगड़ा, आघात प्रतिघात।

घसखुदा (हिं० पु०) १ घास खोदनेवाला। २ अनाड़ी, मूर्ख।

घसि (सं० पु०) घस् भावे इन्। भक्षण, आहार, भोजन।

घसिटना (हिं० क्रि०) पृथ्वी पर किसी चीजको खींचते हुए एक स्थानसे दूसरे स्थान ले जाना, रगड़ना।

घसियारा (हिं० पु०) घास बेचनेवाला, घास काट कर लानेवाला।

घसियारिन (हिं० स्त्री०) घास बेचनेवाली स्त्री।

घसियारी (हिं० स्त्री०) घसियारिन देखो।

घसीट (हिं० स्त्री०) १ बहुत शीघ्रतासे लिखनेकी क्रिया। २ वह लेख जो बहुत जल्द जल्द लिखा गया हो। ३ घसीटनेका भाव।

घसीटना (हिं० क्रि०) १ घसिटना देखो। २ जल्दी जल्दी लिखना। ३ किसी मामलेमें डालना।

घसीटी बेगम—बङ्गालके नवाब महबत जङ्गकी कन्या और नवायस महमद जङ्गकी पत्नी। १७६० ई० जून मासको नवाब जफर अली खाँके लड़के मीरनके कहने से जहांगीरनगरके निकट यह और इनकी बहन अमीन बेगम, जो नवाब शीराजुद्दौलाकी माता थीं, नदीमें डुबा दी गयीं। इन्होंने शीराजके विरुद्ध शासनभार ग्रहण करनेको कोई उत्तराधिकारी खड़ा किया था, आपत्ति युक्तिसङ्गत न होनेसे वह नवाब बन गये। फिर भी शीराज इनसे असन्तुष्ट न थे। परन्तु पीछेको इस भयसे राजभवन और विषय सम्पत्ति अधिकार कर ली, कहीं मौसीके आत्मीय उनसे साहाय्य ले करके मेरे विरुद्ध उठ न खड़े हों।

घस्मर (सं० त्रि०) घस-क्मरच्। १ भक्षणशील, खाने लायक। (पु०) २ कौशिकके पुत्र जो सर्पके शापसे मृगयोनिमें जन्म ले कालञ्जरगिरि पर स्थित हैं। ३ भक्षक, खानेवाला।

घस्र (सं० पु०) घसत्यन्धकारं घस्-रक्। १ दिन, रोज। (त्रि०) २ हिंस्र, हिंसा करनेवाला, मारनेवाला। ३ कुङ्कुम, केशर।

घस्सा (हिं० पु०) घिस्सा देखो।

घहराना (हिं० क्रि०) गरजनेके जैसा शब्द करना, गंभीर आवाज निकालना, गरजना, चिग्घाड़ना।

घांघरा (हिं० पु०) स्त्रियोंकी कमरका पहरावा, जो

पर तक लटकता है, लहंगा। २ लोबिया, बोड़ा बजरबट्टू।

घांघरी (हिं० स्त्री०) घाघरा देखो।

घांटी—एक तरहका राग जो चैत्रमासमें गाया जाता है।

घा (सं० स्त्री०) हन-ड हस्य घत्वं बाहुलकात् टाप् च। १ काञ्ची, स्त्रीकी कमरका भूषण, करधनी, कमरबन्द। २ घात, दाव। ३ आघात, चोट। ४ चत-चिह्न, घावका दाग।

घाई (हिं० स्त्री०) १ दो अंगुलियोंके मध्यकी सन्धि। २ पेड़ी और डालके बीचका कोण। ३ धोखा, चालबाजी।

घाउघप (हिं० वि०) १ वह जो चुपचाप माल हजम कर जाता हो। २ गुप्तरूपसे अपना मतलब निकालनेवाला।

घाग (हिं० पु०) घाघ देखो।

घागर—नदीविशेष, बङ्गालके अन्तर्गत बाखरगंज जिला कोटालीपाड़के भावरसे यह नदी निकल दक्षिणमुख बहती हुई गङ्गाकी एक प्रशाखा मधुमती नदीके साथ मिली है। घागर नदीके दक्षिण भागको शिलादाह कहते हैं।

घागार—नदीविशेष, पंजाब और राजपूतानेमें यह नदी बहती है। किसी समय यह नदी सिन्धु नदकी एक प्रसिद्ध उपनदी थी, परंतु आजकल यह बहुत ही सामान्य नदी है। अब इसका प्रवाह भी बन्द हो गया है। हिमालय प्रदेशमें नाहन वा सिर्मूर नामक राज्यसे इसकी उत्पत्ति है। मणिमाजरा नामक नगरके पास यह पर्वतको छोड़ कर जमीनमें बहने लगी है। वहांसे फिर अम्बाला जिलेमें घुसी है। अम्बालामें यह नदी बहुत अप्रशस्त हो गई है। तत्पश्चात् पटियाला राज्यमें हो कर वृटिशराज्यकी सीमाके पाससे बहती हुई अम्बाला शहरके ३ मील पश्चिममें आ गई है। फिर हिसार जिलेके अकालगढ़ शहरके पास जा कर दो भागोंमें विभक्त हो कर सिरसा होती हुई राजपूतानेमें जा पहुंची है। एक शाखा हिसारमें खेतोंमें पानी पहुंचानेके लिए नियुक्त की गई है। भाटनेके किलेके सामने यह नदी है, फिर बहवलपुर राज्यमें मीरगढ़ नामक स्थान तक इसकी सूखी खात नजर आती है। पुराविद्गण वेदमें कही हुई प्राचीन सरस्वती नदीका इसमें अनुमान करते हैं। पटियालामें अब भी सरस्वती नामकी एक इसहीकी उपनदी मौजूद है। जिन जिन देशोंमें हो कर यह गई है, उन उन देशोंमें इसी नदीका जल खेतोंमें लगता है, इस लिए जगह जगह इसमें बांध लगे हुए हैं। इन बांधोंके कारण यह नदी दिन दिन सूखती जाती है और स्रोत भी घटता जाता है। सिरसामें आ कर जो शाखा नष्ट हो गई है, वहां तीन बड़ी बड़ी झीलें हो गई हैं। पानी सींचनेके लिए इन झीलोंमें कई एक पारस्य यंत्र भी लगाये गये हैं। इनका पानी बहुत ही खराब है, पीनेसे ही तिल्ली, बुखार आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसके किनारेके ग्रामोंकी मृत्युविवरणी पढ़नेसे यह साफ मालूम होता है कि, इस पानीको जो पीता है उसका वंश तीन चार पीढ़ीमें ही निर्मूल हो जाता है। इसी लिए इसके किनारेके गांवोंके आदमी निहायत दुबले पतले हैं और वे भी बहुत थोड़ी संख्यामें हैं। कातिक अगहनसे ले कर आषाढ़ महीने तक इनके दक्षिणांशमें पानी नहीं रहता। अच्छी वर्षा होने पर इनके किनारेमें गेहूं आदिकी फसल अच्छी होती है।

घाघ—१ कन्नौजके रहनेवाले एक हिन्दीके कवि। १६९६ ई०में इनका जन्म हुआ था। इन्होंने कृषिविषयक बहुत-सी कविताएं लिखी थीं। इनकी कहावतें उत्तर-भारतमें विशेषरूपसे प्रचलित हैं।

(हिं० पु०) २ अत्यन्त चतुर मनुष्य, गहरा चालाक, अनुभवी व्यक्ति, खुर्राट। ३ इन्द्रजाली, जादूगर, बाजीगर। ४ उल्लूकी जातिका एक पक्षी जो चीलके बराबर होता है।

घाघरनादिनी (सं० स्त्री०) जो स्त्री घर्र घर्र शब्द करती हो।

घाघरा (हिं० पु०) घर्घरा देखो।

घाघस (हिं० पु०) घाघसको देखो।

घाट (सं० पु०) घट चुरादि अच्। १ ग्रीवाका पिछला हिस्सा, गर्दन। (शब्दरत्ना०) घाटा अस्त्यस्मिन् घाटा-अच्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। २ घाटायुक्त, जिसको घाटा है।

३ नदी आदिकोंमें जो ईंट या पत्थरोंसे सीढ़ियां बनाई जाती हैं, उसको घाट कहते हैं। नदीके किनारे जहां लोग रोज स्नान करते हैं, नाव पर चढ़ते हैं या माल चढ़ता उतरता है उस स्थानका नाम भी घाट है।

४ 'गिरिवर्त्म'को भी साधारणत: घाट कहते हैं।

५ भारतवर्षके दक्षिणमें और पूर्व पश्चिम उपकूलमें उत्तर दक्षिण दिशामें विस्तृत जो दो पर्वतश्रेणी हैं, उन का नाम घाटपर्वत है। पूर्व दिशाकी पर्वतश्रेणीको पूर्व-घाट कहते हैं और पश्चिमकी पर्वतश्रेणीको पश्चिम-घाट कहते हैं। पूर्वघाट करमण्डल या पूर्वोपकूलसे बहुत दूर है, पर पश्चिमघाट मलवार वा पश्चिमोपकूलसे ज्यादा दूर नहीं है; पर ऐसा भी नहीं है कि, बिल्कुल पासमें ही हो। समुद्रतीर और पश्चिम घाटके बीचमें थोड़ीसी उर्वरा जमीन है, जहां कुछ जनपद भी हैं। पर्वतके पूर्वांशसे पश्चिमकी ओर जाने आनेके लिए इस जगह बहुतसे गिरिवर्त्म हैं। ये सब मार्ग हैं, इसी लिए शायद इनकी 'घाट संज्ञा हुई होगी; अथवा दाक्षिणात्यकी मालभूमिसे समुद्रके किनारे उतरनेके लिए ये पर्वत सिढ़ीके वतौर हैं, इस लिए शायद इनका घाट नाम पड़ा है।

पूर्व और पश्चिमके घाट-पर्वत कुमारिकाके पास जा कर मालाके आकारमें मिल गये हैं। पर्वतश्रेणीके दक्षिणकी तरफको नीलगिरि कहते हैं। इस नीलगिरि पर्वत पर ही मन्द्राज नगर विद्यमान है। इन सब पर्वतश्रेणीके बीचमें उतकामन्दशिखर है, जिसकी ऊंचाई ७००० फुट है। गर्मियोंमें मन्द्राजके गवर्नर साहब इसी पर्वत पर रहा करते हैं। इसकी जो सबसे ऊंची शिखर है; उसको दोदाबेत्ता कहते हैं। इसकी भी ऊंचाई ८७६० फुट है। यह मैसूरके दक्षिणकी ओर है। पश्चिम घाटके पर्वतोंमेंसे जितनी नदियां निकली हैं, वे सब ही पूर्वकी ओर मालभूमि और पूर्व घाट हो कर बंगोपसागरमें जा मिली हैं। इसी प्रकार कृष्णा, कावेरी और गोदावरी नामकी ३ प्रसिद्ध नदियां पश्चिमघाटसे उत्पन्न हो कर, सारे मालभूमिमें फैल कर अन्यान्य शाखाप्रशाखाओं सहित बंगोपसागरमें जा मिली हैं।

इन दो पर्वतश्रेणियोंसे दाक्षिणात्यमें नाना तरहके परिवर्त्तन हो गये हैं। पूर्व-घाट पर्वतश्रेणी उपकूलसे बहुत दूरमें है, इस लिए पर्वतकी दोनों तरफ जाने आनेमें कोई बाधा नहीं आती। परंतु यह सुविधा पश्चिम-घाटके पश्चिमकी ओरके अप्रशस्त भूखण्डमें नहीं है। पूरबकी तरफ वर्षा कुछ कम होती है, इस लिए वहां की जमीन कुछ सूखीसी रहती है। बड़ी बड़ी नदियोंके अववाहिका अन्यान्य स्थानमें जिस प्रकारकी सामान्य वर्षा होती है, उसीसे किसानोंका काम चल जाता है। यह वर्षात भी वर्ष भरमें कुल ४० इञ्चसे ज्यादा नहीं होती। जमीनकी हालत भी उतनी अच्छी नहीं रहती; जितनी कि चाहिये। जमीन साधारणत: ऊँची होती है। पर्वतके ऊपर जङ्गल भी ज्यादा नहीं है। सरकारी बन-विभागके कर्मचारी इस पर दृष्टि रखते हैं; क्योंकि इसमें जलानेका काठ अधिक पैदा होता है। पश्चिमकी नदीसे कुछ फायदा नहीं होता; पर दक्षिण और पश्चिमकी मौसम वायुके साथ इतना बादल होता है कि, जिससे सारे देश और पहाड़के वृक्ष लतादियोंका काम चल जाता है। समुद्रके किनारे खानदेशसे लगा कर मलवार तक सर्वत्र सालभरमें कुल १०० इञ्च वर्षा होती है। पहाड़ों पर कई जगह सालमें २०० इञ्च ही वर्षा होती है। पश्चिमकी तरफ जिस तरहकी स्वाभाविक प्राकृतिक शोभा देखनेमें आती है, ऐसी शोभा भारतमें अन्यत्र नहीं है। कनाड़ा, मलवार, महिसूर और कुर्गके जङ्गलोंमें काफी मूल्यवान चीजें मिलती हैं। पर्वतकी दोनों तरफ बड़े बड़े चिरश्याम वृक्षोंका घना जङ्गल है इनमेंसे 'पून' नामके वृक्षका काफी आदर होता है जो ऊंचाईमें कमसे कम १०० फुट होता है। इस १०० फुट ऊंचे वृक्षमें शाखा प्रशाखा नहीं होतीं, खम्भ सरीखा होता है। इससे जहाजके मस्तूल, मकानोंकी सोटें आदि अच्छी बनती हैं, इस लिए इन वृक्षोंकी कदरके साथ रक्षा की जाती है। दूसरे बड़े बड़े पेड़ोंमें कटहर, नागकेशर, मेहगनि, आवलूश और चम्पाका वृक्ष प्रधान हैं। इनमें कहीं कहीं दारचीनी और पीपल वृक्ष भी हैं। इनका रुजगार भी काफी है।

महिसूरमें श्वेतशाल या बम्बईया शिसु, सेगुन, चन्दन और बांस ज्यादा होते हैं। कुर्गके जंगलोंकी भांति

भारतमें दूसरा कोई भी जंगल शोभामें बढ़ा चढ़ा नहीं है। इन पर्वतोंमें सब तरहके जंगली जानवर रहते हैं। परन्तु ज्यादातर जंगली भैंसें, हाथी, शेर और शामर हरिण ही पाये जाते हैं।

पूर्वघाटकी पर्वतश्रेणी उड़िष्यामें बालेश्वर जिलेसे ले कर कटक और पुरीमें होती हुई गंजाम, विशाखपत्तन, गोदावरी, नेल्लूर, चेंगलपूट, दक्षिण आर्काट, त्रिचीनापल्ली और तेनिवल्ली जिले तक पहुंची है। यह उपकूलसे कहीं ५० और कहीं १५० कोश दूरी पर है। सिर्फ गंजाम और विशाखपत्तनमें यह समुद्रसे लगी हुई है। इसकी ऊंचाई लगभग १५०० फुट है। पत्थरोंके भीतर ग्रेनाइट, न्नेइस, माईका, स्लेट, कर्दमयुक्त स्लेट, हरणाव्लेण्ड और चूनेका पत्थर है। ऊपरकी तरफ पेशार तक ग्रेनाइटमय और पेशारके निकटवर्ती स्थानोंमें मूंगनी पत्थरमय, कृष्णासे उत्तरको ओर ग्रेनाइट और हरिताभ पत्थरमय और पंजाबके पास ग्रेनाइट, ग्निईस् व मूंगनी पत्थर मिश्रित है।

पश्चिमघाट ताप्तीसे ले कर खानदेश, नासिक, ठाणा, सतारा, रत्नगिरि, कनाड़ा, मलवार, कोचिन और त्रिवांकुर तक विस्तृत है। ताप्तीसे पालघाट गिरिपथ तक इसकी दीर्घता ८०० मील है, उसके बाद कुमारिका तक २०० मील है, उसके बादकी तीरभूमि बराबर और नीची है। पश्चिमकी तरफ इसकी ऊंचाई २००० फुट तक है, पूर्वकी तरफ क्रमशः नीचा होता गया है और उत्तरकी ओर महाबलेश्वर (४७०० फुट), पुरन्दर (४४७२ फुट), सिंहगढ़ (४१६२ फुट) इत्यादि शिखर प्रधान और प्रसिद्ध हैं। महाबलेश्वरको शिखरके दक्षिणकी तरफके पर्वतोंकी ऊंचाई १००० फुट उतर गई है। इसके बाद दक्षिणमें जा कर क्रमशः ऊंचाई बढ़ती हुई ५५०० फुटसे ७००० फुट तक पहुंची है। पश्चिमघाटके पत्थरोंकी बनावट (आकार)-से भूतत्त्वविदोंने यह निश्चय किया है कि, ये आधुनिक हैं। बहुतसे स्तर तो आग्नेय उत्पातसे उत्पन्न हुए हैं। इन पर्वतों पर गिरिदुर्ग भी हैं। दक्षिणांशके पर्वतपृष्ठ प्रायः सबही मूंगनिपत्थरवाले हैं। विशेष जानना हो तो, जिन जिन जिलोंमें यह पर्वतश्रेणी है, उन उन जिलोंका विवरण पढ़ना चाहिये।

घाट-कप्तान (हिं० पु०) बन्दरगाहका प्रधान अध्यक्ष, बन्दरगाहका मालिक।

घाटकूल—मध्यप्रदेशके चन्दा जिलेका एक परगना। इसका भूपरिमाण ३६८ वर्गमील है। ८१ गांव इसमें आते हैं। इसके पूर्वांश (वेणगङ्गाका किनारा)-को छोड़ कर और सब स्थान पर्वतीय तथा जङ्गलमय हैं। यहां पर तैलिंग लोग रहते हैं। कुछ दिनोंसे डकैतोंके अत्याचारसे यहांके सब गांव उजाड़से हो गये हैं।

घाटप्रभा—कर्णाटक प्रदेशमें बहनेवाली एक नदी। बेलगांव नगरसे २५ मीलकी दूरी पर जो सह्याद्रि है, वहांसे निर्गत हो कर बेलगांव और दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशमें हो कर करीब १४० मील जा कर बाघलकोटमें जा घुसी है। वहांसे पूर्वकी ओर २८ मीलके करीब जा कर बाघलकोट नगरके नीचे उत्तरकी ओर मुड़ गई है। बाघलकोट और चेर्कलके बीचमें प्राकृतिक सौन्दर्यमय दोनों तरफकी गिरिश्रेणी भेदती हुई चिमलगी गांवको उत्तर-पूर्व दिशामें जो कृष्णा नदी है, उसमें जा मिली है। इसका मुहाना करीब एकसौ गजका होगा। वर्षा ऋतुमें इससे दूना मुहाना हो जाता है।

घाटबन्दी (हिं० स्त्री०) नाव या जहाज खोलनेकी मनाईहा, किश्ती खोलने या चलानेको मुमानियत।

घाटमपुर—१ कानपुर जिलेकी दक्षिणीय तहसील। यह अक्षा० २५° ५६' तथा २६° १६' उ० और देशा० ७९° ५८' एवं ८०° २१' पू०में अवस्थित है। इसका रकबा ३४१ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १२४६६२ है। इसमें २३३ गांव लगते हैं।

२ अयोध्या प्रदेशके उन्नाव जिलेका एक परगणा। भूपरिमाण २५½ वर्गमील है। इस परगणेमें जमीदारी, पट्टिदारी और तालुकदारी—इस प्रकार तीन पद होते हैं। यहांके रहनेवाले बैईस क्षत्रिय ही ज्यादा हैं।

घाटमपुरकलां—उन्नाव जिलेका एक नगर। यह उन्नावनगरसे ८ कोस दक्षिणपूर्वमें है। यह अक्षा० २६° २२' उ० और देशा० ८०° ४६' पू० पर अवस्थित है। बहुत दिन हुए एक तिवारी ब्राह्मणने इस नगरको बसाया था, उनके वंशधर अब भी मौजूद हैं।

घाटवाल (हिं० पु०) १ वह ब्राह्मण जो घाट पर बैठ कर

ध्यान करनेवालोंसे दान लेता है, घाटिया, गङ्गापुत्र। २ विहारके मल्लाहोंकी उपाधि। ये लोगोंको नदी पार करते हैं। ३ छोटा नागपुर और पश्चिम बङ्गालमें जिन्होंने ग्राम्य थानेमें काम कर वृत्ति पाई है और उस कारण किसी किसी गिरिपथकी रक्षा और भूभागकी जमीनको भोगते हैं, उनको घाटवाल कहते हैं। छोटे नागपुरके घाटवालोंमें बहुतसे भूमिज, खर्वार और वाउरी आदि जातिके हैं।

घाटा (सं० स्त्री०) घट चुरादिं-अङ्-टाप्। ग्रीवाका पश्चाद्-भाग, गलेका पिछला हिस्सा। इसका संस्कृत पर्याय—अवटु, क्षकाटिका, शिरपश्चात्सन्धि घाट, कुकाटी और घाटिका है।

घाटा (हिं० वि०) घटी, हानि, नुकसान।

घाटाल (सं० पु०) घाटा सिध्मादिं अस्त्यर्थे लच्। १ सान्निपातिक विद्रधिरोगका एक लक्षण।

२ बङ्गालके अन्तर्गत मेदिनीपुर जिलेका उत्तरीय उपविभाग। यह अक्षा० २२° २८′ तथा २२° ५२′ उ० और देशा० ८७° २८′ एवं ८७° ५३′ पू०में अवस्थित है। इसका रकवा ३७२ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ३२४८८१ है। इसमें पांच शहर है—घाटाल, चन्द्रकोना, खीरपाई, रामजीवनपुर और कहरार। इसमें १०४२ गांव लगते हैं।

३ उक्त उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २२° ४०′ उ० और देशा० ८७° ४३′ पू०में सिलाई नदीके निकट (रामनारायणके संयोगस्थलके निकट) अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १४५२५ होगी। पहले यहां डाचोंका एक कारखाना था। यह वाणिज्यका एक केन्द्र है। रोज जहाजों द्वारा यहां मालकी आमदनी और रफ्तनी होती है। यहां टसरका कपड़ा बनता है और एक म्युनिसिपालिटी भी है।

४ मेदिनीपुर जिलाके अन्तर्गत एक नगर। अभी यह हुगली जिलाके अधीन है। यह अक्षा० २२° ४०′ १०″ उ० और देशा० ८७° ४५′ ५०″ पू०के मध्य शिलाई और रूपनारायण नदीके सङ्गमस्थान पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग बीस हजार है। चावल, चीनी, रूई, रेशम तथा सूती वस्त्रके व्यवसायके लिये यह नगर प्रसिद्ध है।

घाटिका (सं० स्त्री०) घाटा स्वार्थे कन्-टाप्। घाटा देखो।

घाटिया (हिं० पु०) घाटवाल देखो।

घाटी (हिं० स्त्री०) १ दो पहाड़ोंके बीचका सङ्कीर्ण रास्ता। २ पर्वतकी ढाल, चढ़ाव उतारका पहाड़ी मार्ग। ३ महसूली चीजोंको ले जानेका आज्ञापत्र, रास्तेका कर या महसूल चुकानेका स्वीकारपत्र।

घाड़से (घड़से)—दाक्षिणात्यकी नीचे दर्जेकी गायक-सम्प्रदाय। ये देखनेमें काले होते हैं और आचार व्यवहारमें तथा बातचीत करनेमें मराठी किसानोंके तुल्य हैं। ये लोग भाट और बहुरूपी बनते हैं। कभी कभी गुसांई और वैरागियोंकी तरह आधे नंगे हो कर भीख मांगा करते हैं। इसके अलावा किसी धनवानके आने पर जरीदार पगड़ी बांध कर सजधजके साथ उनके पास पहुंच जाते हैं और उनसे पैसा, दुअन्नी, चौअन्नी आदि न ले कर पगड़ी या धोती जोड़ा अदा करते हैं। ये लोग अपना इतिहास ऐसे सुनाते हैं कि—"राम और सीताका जब विवाह हुआ था, तब कोई गायक नहीं था, इसलिए उन्होंने काठकी ३ गायक मूर्तियां बनाई थीं। उनमें चेतनाशक्ति प्रदान कर उनसे नौबत बजवाई थी। इन्हींसे हमारी उत्पत्ति है।" और कोई कोई यह भी कहते हैं कि लङ्काके अधिपति रावणने घाड़से लोगोंको बसम-दाक्षिणात्य दान किया था।

इनमें भोंसले, जाधव, जगताप, मोरे, पोवार, सालुंके और सिन्धे ये उपाधियां पाई जाती हैं। परस्पर एक पदवी होनेसे विवाह सम्बन्ध नहीं होता। इनका धर्मकर्म बहुतसा कुणबी जातिके समान है।

घाण्टिक (सं० पु०) घण्टया चरति घण्टा-ठक्। १ राजाओंको नींद खुलने पर जो स्तुति पाठक घण्टा बजाता है।

"राज्ञां प्रबोधसमये घण्टाशिल्पास्तु घाण्टिकाः।" (वैयाकरण)

पर्याय—घाटिक, चाक्रिक। (त्रि०) २ घण्टावादक, घण्टा बजानेवाला, घण्टा तदाकारं पुष्पं अस्त्यस्य ठन्। ३ धुस्तुर।

"उपतप्तं यानि च घाटिका विभिद्य मिश्राणाम्।" (हेमन्त सं० १० अ०)

(पु०) ४ शपथपूर्वक विचार करनेवाले। (प्रायश्चित्तवि०) घाण्टिक ब्राह्मण देव और पैत्रकार्यके अयोग्य हैं। इनका साथ नहीं खाना चाहिये।

"पापा तथान्न श्रौषस्य चाह्निकस्य तथैव च।
इतरे ये त्वभोज्यान्ना स्तेषामन्नं विवर्जयेत॥" (यम०)

घात (सं० पु०) हन-घञ्। १ प्रहार, आघात, चोट। २ काण्ड, अवसर, मौका। ३ मारण, मार। ४ पूरण, गुणना। "समविघातश्च घनः प्रदिष्ट:" (लीलावती) हन्ति अनेन हन् करणे घञ्। ५ वाण, तीर। ६ चतुरङ्ग खेलमें दूसरेकी घूंटी आदि किसी एक बलको हटा कर उस स्थान पर आक्रमण करनेका नाम घात है। चतुरङ्ग देखो। ७ लुण्ठन, लूट लेना। ८ उत्पात, उपद्रव, हानि, नुकसान, बुराई। ९ वध, हत्या। १० जन्मताराको अपेक्षा सातवां, सोलहवां और पचीसवां तारा; इनके रहते हुए कोई शुभकार्य नहीं करना चाहिये। ताराबल देखो।

घातक (सं० त्रि०) हन्-ण्वुल। १ हन्ता, जो हनन करता है, हत्यारा। मनुके मतसे अनुमन्ता, विशसिता, निहन्ता, क्रयविक्रयी, संस्कर्ता, उपहर्ता और खादक—इन सबोंको खादक कहते हैं। जिस क्रियाके द्वारा प्राणियोंका संहार होता है, उसे हिंसा कहते हैं। जिसके व्यापारसे वा क्रियासे प्राणियोंका संहार होता है, उसको घातक कहते हैं। मिताक्षराके मतसे जिस व्यक्तिकी क्रिया वा जिसका व्यापार प्राणवियोगमें साक्षात् कारण है, उसे हन्ता वा निहन्ता कहते हैं। जैनियोंके मतसे मन, वचन और कायसे जो कोई प्राणियोंका घात करता है, उसे घातक कहते हैं, ऐसे काम करनेसे अपनी आत्माका भी घात होता है, इसलिए भी घातक है। जो भागते हुए शत्रुको पकड़ देता है और हन्ताके कार्यमें विशेष सहायता देता है, उसे अनुग्राहक घातक कहते हैं। हिंसा करनेको जो व्यक्ति उद्यत है, वह नियुक्त करनेवाला प्रयोजक घातक कहलाता है। प्रयोजक तीन प्रकारके होते हैं,—आज्ञापयिता, अभ्यर्थ्यमान और उपदेष्टा। प्रयोजक देखो।

हिंसा शब्दमें विस्तृत विवरण दिया गया है, वहां देखना चाहिये।

२ तंत्रशास्त्रमें कहेहुए मंत्रका शुभाशुभज्ञापक राशिचक्रके कोष्ठ विशेषमेंको साध्य राशि। चक्र देखो।

३ हिंसक, वधिक, जल्लाद। ४ शत्रु, दुश्मन।

घातकर (सं० त्रि०) घातं करोति घात-कृ-अच्। आघातकारी, बुराई करनेवाला।

घातकी (सं० स्त्री०) १ पुष्करद्वीपके अन्तर्गत एक गिरि। २ घातक देखो।

घातकृच्छ्र (सं० क्ली०) एक तरहका मूत्ररोग।

घातन (सं० क्ली०) हन् स्वार्थे णिच् भावे ल्युट्। १ मारण, हिंसा, वध, कतल। २ यज्ञार्थमें पशुहिंसा, यज्ञादिमें पशुका मारना। (त्रि०) घातयति हन् णिच् कर्त्तरि ल्युट्। ३ मारक, हत्या करनेवाला, कतल करनेवाला।

घातपक्षी (सं० पु०) श्येनपक्षी, बाजपक्षी।

घातवर्त्तना (सं० स्त्री०) कोहल मुनिके मतसे नृत्यमें एक प्रकारकी वर्त्तना।

घातवार (सं० पु०) घातो अमङ्गलजनको वारः, कर्मधा०। अमङ्गल सूचक वारविशेष। यह सबके लिये एकसा नहीं होता है। जन्मराशिके अनुसार इसका भेद होता है। शब्दचिन्तामणिके मतसे मकर राशिमें जन्म होनेसे मङ्गलवार, वृष, सिंह और कन्याराशिमें शनिवार, मिथुनमें सोमवार मेषराशिमें रविवार, कर्कटमें बुध, धनु, वृश्चिक और मीनराशिमें शुक्र तथा कुम्भ और तुलाराशिमें जन्म होनेसे वृहस्पतिवार घातवार हुआ करता है। घातवार किसी कार्यमें प्रशस्त नहीं है।

घातव्य (सं० त्रि०) हन् णिच् कर्मणि तव्य। हिंसाके योग्य मारने लायक। कतल करने काबिल।

घातस्थान (सं० क्ली०) घातस्य स्थानं, ६-तत्। १ मसान, वह स्थान जहां मृतदेह दाह किया जाता है।

घाति (सं० पु०) हन्-इण्। १ पक्षिबंधन। २ प्रहार, चोट।

घातिन् (सं० त्रि०) हन् ताच्छील्यार्थे णिनि। हिंसक, मारनेवाला, कतल करनेवाला।

घातिपक्षिन् (सं० पु० स्त्री०) घाती चासौ पक्षी चेति, कर्मधा०। श्येनपक्षी, बाज पक्षी।

घातिनी (सं० स्त्री०) १ मारनेवाली, वध करनेवाली। २ नाश करनेवाली।

घातिया (हिं०) घाती देखो।

घाती (हिं० पु०) १ घातक, वध करनेवाला, मारनेवाला कतल करनेवाला। २ नाश करनेवाला।

घातुक (सं० त्रि०) हन्-उकञ्। १ हिंस्र, हिंसक, नाशकारी। २ क्रूर, कठोर, निर्दय, बेरहम।

घात्य (सं० त्रि०) हन्-ण्यत्। वधार्ह, वधकरने योग्य, हिंसा करने लायक।

घान—बेरारके बुलडाना जिलामें प्रवाहित एक नदी। यह

अक्षा० २०° २६´ ३०´´ उ० और देशा० ७६° २३´ ३०´´ पू० में अवस्थित है। यह पेणगङ्गाको अधित्यकासे निकल कर पूर्णा नदीमें जा मिली है।

घान (हिं० पु०) उतनी वस्तु जितनी एक बार डाल कर कोल्हू या चक्कीमें पीसी जाय।

घानसोर—मध्यप्रदेशमें सिवनी जिलाके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० २२° २१´ उ० और देशा० ७६° ५०´ पू० पर सिवनी नगरसे ६४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां बढ़िया बालू पत्थरसे बनाए हुए ४०-५० भग्न विष्णु-मन्दिर हैं। मन्दिरका शिल्पनैपुण्य अत्यन्त प्रशंसनीय है।

घानी (हिं० स्त्री०) घान देखो।

घामड़ (हिं० वि०) घाम या धूपसे व्याकुल, वह जो बहुत देर तक धूपमें रह न सकता हो। यह शब्द सिर्फ चौपायामें व्यवहार किया जाता है।

घायक (हिं० वि०) घातक, विनाशक, मारनेवाला, कतल करनेवाला।

घायल (हिं० वि०) आहत, जिसको घाव लगा हो, चोट खाया हुआ, जख्मी।

घार (सं० पु०) घृ-अच्। सेचन, सींचना, जलसे जमीन छिड़कना।

घारि (सं० क्ली०) एक तरहका छन्द। अष्टाक्षर समवृत्त-के प्रत्येक चरणमें एक एक गुरुके बाद लघु इस तरहसे समस्त अक्षर निबन्ध हो जानेका नाम घारिवृत्त है।

घार्त्तिक (सं० पु०) घृतेन निवृत्तः घृत-ठक्। १ खाद्य द्रव्यविशेष, घियोड़। (त्रि०) २ घृतयुक्त, घीका बनाया हुआ।

घार्त्तेय (सं० पु०) घृताया अपत्यं धृत-ठक्। १ घृताका अपत्य, घृताकी सन्तान। २ घृताके राजा।

घालक (हिं० पु०) मारनेवाला, नाश करनेवाला।

घालकता (हिं० स्त्री०) मारनेका काम, नाश करनेकी क्रिया।

घालना (हिं० क्रि०) १ डालना, रखना। २ फेंकना, चलाना, छोड़ना। ३ कर डालना। ४ बिगाड़ना, नाश करना। ५ मार डालना, वध करना।

घालमेल (हिं० पु०) १ कई एक वस्तुओंको एक साथ मिलावट। २ मेलजोल, घनिष्ठता।

घालिका (हिं० स्त्री०) नष्ट करनेवाली, वध करनेवाली।

घालिनी (हिं० स्त्री०) नाश करनेवाली, हत्या करनेवाली।

घाव (हिं० पु०) क्षतस्थान, जख्म।

घावरा (देश०) एक ऊंचा और सुन्दर पेड़। इसकी छाल चिकनी और सफेद होती है। यह पेड़ हिमालय पर लगभग ३००० फुट ऊंचे स्थान पर होता है। इसकी लकड़ीसे नाव, जहाज तथा गृहस्थोंके सामान बनाये जाते हैं। मोची इसके पत्तेसे चमड़े सिझाते हैं।

घास (सं० पु०) घस्यते घस कर्मणि घञ्। दूर्वादि तृण, चौपायोंके खानेका चारा। इसका संस्कृत पर्याय—यवस, जवस और यवाज है।

घासकुन्द (सं० पु०) कुन्दुरु नामका गन्धद्रव्य, मोगरा, एक तरहका सफेद फूल।

घासकूट (सं० क्ली०) घासानां कूटं, ६-तत्। घासस्तूप, घासका ढेर।

घासस्थान (सं० पु०) मैदान, चरागा।

घासि (सं० पु०) घसति भक्षयति हव्यं घस कर्तरि इन्। वनिघासिभ्यामिना उण् ४। ११३०। १ अग्नि, आग। (त्रिकाण्ड०) (त्रि०) घस कर्मणि इन्। २ भक्षणीय, खाने लायक। "यत्र पशो यत्र घासिं जघान।" (ऋक् ११६२।१४) 'घासिं भक्षणीयं।' (सायण)

३ छोटा नागपुर और मध्यप्रदेशवासी एक नीच जाति। ये लोग मछली मारनेका और खेतीका काम करते हैं। विवाह आदिमें गायक बन कर और नौकर-चाकर बन कर भी ये लोग पेट भरते हैं। इनकी स्त्रियां दायीका काम करती हैं। उनका चरित्र बहुत ही जघन्य श्रेणीका है। इनकी सामाजिक अवस्था डोम और भङ्गीके समान होती है। इनमें सोनजाति, सिमरलोका और हाड़ि ये तीन विभाग हैं; तथा कसियर नामका एक गोत्र है। कोलोंसे इनका विशेष सम्बन्ध रहता है, इस लिए इनका आचार-व्यवहार कोलजातिसे मिलता जुलता है। बहुतसे तो इन लोगोंको चण्डालसे भी नीच जाति समझते हैं। ये लोग गजका मांस और सूअरका मांस आदि खाते हैं। बाल्य-विवाह, बहुविवाह, वृद्धविवाह और विधवाविवाह—ये सब ही इनमें चालू हैं। बङ्गाल २५०००के करीब घासियोंका वास है।

घासी (सं० पु०) अग्निदेवता।

घासीदास—छत्तीसगढ़के चमारोंमें सत् नामका मतप्रवर्तक। यह कुछ पढ़े लिखे नहीं थे, पर चालबाजीसे इन्होंने चमारोंमें अपना नाम पैदा कर लिया था। ७०।८० वर्ष पहिले इन्होंने घर द्वार छोड़ कर वानप्रस्थाश्रमका अवलंबन लिया था और शिष्योंको ६ माह बाद गिरोद नगरमें मिलनेके लिए कह दिया। उस निर्दिष्ट समय पर चमार लोग गिरोद जा कर उनकी बाट जोहने लगे। सवेरे ही घासीदासने पर्वतसे उतर कर ईश्वरका अभिमत जाहिर किया। इन्होंने "देव-देवियोंकी पूजा करना मिथ्या है और सब मनुष्य एकसे हैं"—ऐसा मत प्रकट किया। साथ ही यह भी प्रगट किया कि, हम इस नवीन सम्प्रदायके प्रधान आचार्य हैं और यह पद हमारी वंशपरम्परामें चलता रहेगा। उनकी मृत्युके बाद उन्हींके बड़े पुत्र बालकरामने उक्त पद पाया था। १८६० ई०में बालकदास भी मर गये। छत्तीसगढ़के सारे चमार इसी सम्प्रदायके अनुयायी हैं।

घासीराम—एक हिन्दीके कवि। इन्होंने १६२३ ई०में जन्मग्रहण किया था। इन्होंने प्रेम और उपदेशकी कविताएं लिखी हैं।

घिओंड़ा (हिं० पु०) घृतपात्र, घी रखनेका मिट्टीका बरतन।

घिघी (हिं० स्त्री०) १ हिचकी, सुबकी। २ डरके मारे मुखसे साफ साफ शब्द न निकलना।

घिघियाना (हिं० क्रि०) १ रो रो कर प्रार्थना करना, करुणस्वरसे बिनती करना। २ चिल्लाना।

घिचपिच (हिं० स्त्री०) १ घृष्ट पिष्ट, स्थानकी संकीर्णता, जगहकी तङ्गी, सकरापन। (वि०) २ अस्पष्ट, जो साफ़ न हो, गिचपिच।

घिन (हिं० स्त्री०) घृणा, अरुचि, नफ़रत।

घिनाना (हिं० क्रि०) घृणा करना, नफरत करना।

घिनावना (हिं० वि०) घृणित, बुरा, गन्दा। जिसे देख कर नफ़रत हो।

घिन्नी (हिं० स्त्री०) घिरनी देखो।

घिया (हिं० पु०) कुम्हड़े की जातिकी लता। इसके पत्ते और फल ठीक कोम्हड़े की तरह होते हैं। इसके दो भेद हैं—एकके फल लंबे और दूसरेके गोल होते हैं, जिसे कद्दू कहते हैं। इसकी अच्छी तरकारी बनती है। यह शीतल होता है और रोगीके लिये पथ्य माना जाता है। कद्दूसे तेल भी प्रस्तुत किया जाता जो बहुत ठण्ढा होता और सिरका दर्द दूर करता है।

घियाकश (हिं० पु०) घिया, कद्दू, पेठे आदिको बारीक छीलनेके लिये एक तरहका यन्त्र, कद्दूकश।

घियातोरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी तरकारीकी बेल। इसके पत्ते गोल और पुष्प पीले रंगके होते हैं। इसके फलकी लंबाई ८।१० अङ्गुल और मोटाई दो ढाई अङ्गुल होते हैं। इसे कहीं कहीं नेनुवा भी कहते हैं। इसका एक और भेद है जो सतपुतिया कहलाती और घौद (गुच्छा) में फलती और छोटे फलोंवाली होती है।

घिरना (हिं० क्रि०) आवेष्ठित होना, किसी चारो ओर फैली हुई वस्तुके बीचमें पड़ जाना।

घिरनी (हिं० स्त्री०) १ गराड़ी, चरखी। २ चक्कर, फेरा। ३ रस्सी बटनेकी चरखी। ४ लोटन कबूतर।

घिराई (हिं० स्त्री०) १ घेरनेकी क्रिया। १ पशुओंको चरानेका काम या मजदूरी।

घिरायंद (हिं० पु०) मूत्रकी दुर्गन्ध, खराब महक।

घिराव (हिं० पु०) आवृत, घेरा।

घिरिया (हिं० स्त्री०) शिकारको घेरनेके लिये मनुष्योंका घेरा।

घिर्री (देशा०) एक तरहकी घास।

घिलजाइ—अफगानस्थानकी एक जाति। ये लोग अत्यंत बलशाली होते हैं और बहुतसे योद्धा भी हैं। पूर्वमें जलालाबाद, पश्चिममें कलाति घिलजि, सफेद-को, सुलिमान्-को, और गुल्-को आदि पहाड़ोंके पास ढालू स्थानोंमें इन लोगोंका वास है। अफगानोंके मुंहसे जैसी कथा सुनी गई है, उसके अनुसार कोहिकायेसकी-काशि नामक स्थानमें इनका आदिवास था। परंतु यह स्थान कहां पर है, उसका आज तक कुछ भी पता नहीं मिला। किसीके मतसे यह सुलिमान् श्रेणीके अन्तर्गत है। और कोई कहते हैं कि, यह सियाबन्द पर्वत पर था।

उपर्युक्त प्रचलित प्रवादसे ऐसा मालूम होता है कि, अफगान जातिके आदिपिता कायेसके दो पुत्र थे। दूसरे पुत्रका नाम वतन था। वतनने अपना और अपने दलका रहना सियाबन्दमें पसंद किया था। इस स्थानमें रह कर वतन अपनी जातिके सर्वमयकर्ता हो गये और साथ हो उनकी धर्ममें विशेष रुचि होनेके कारण उन्हें शेखकी उपाधि मिल गयी।

हिजिराकी प्रथम शताब्दीके शेषभागमें खलीफा वालिदके राजत्वकालमें खोरासान और घोर पर जयप्राप्त करनेके लिए बोग्दादसे एक दल आरवी सेना भेजी गई थी। यह सैन्यदल जब घोर राज्यके पास पहुंचा तब उस स्थानके किसी एक भागते हुए पारस्य राजपुत्रने शेख वतनका आश्रय ग्रहण किया था। वतनने इस अभ्यागत अतिथिको अपने परिवारमें शामिल कर लिया; और उसका लालन पालन उसी परिवारमें होता रहा। उसके साथ वे राजकीय और पारिवारिक सकल विषयका परामर्श किया करते थे।

इन शेखकी 'मत्त' नामकी एक परम सुन्दरी कन्या थी। धीरे धीरे एक साथ रहनेके कारण इनमें परस्पर प्रेम बढ़ने लगा। लड़कीकी माको यह बात मालूम हो गई। उनने अपने पतिसे इस बातका जिकर किया, सुननेके साथ ही शेख वतन क्रोधमें अन्धे हो गये और उन दोनोंको मारनेके लिए उतारू हो गये। पर माताने बहुत सोच समझ कर पतिको इस कामसे रोक दिया। उन्होंने कहा;—"अगर ये हुसैनशाह राजपुत्र हो तो इनके साथ "मत्त"का विवाह करनेमें क्या आपत्ति है? इस लिए तुमको इस विषयकी खोज करनी चाहिए। शेखको जब मालूम हो गया कि, वह राजपुत्र ही हैं तब उन्होंने अपनी कन्याका हुसैनशाहके साथ विवाह कर दिया। कुछ दिन बाद 'मत्त'ने एक पुत्ररत्न प्रसव किया। वृद्ध शेखने आन्तरिक क्रोधके कारण इसका नाम "घाल्जै" (चोरेषपुत्र) रखा। कालान्तरमें समग्रजातिका नाम ही घाल्जै पड़ गया और क्रमशः अपभ्रंश होते होते उसीका नाम घिलजाइ पड़ गया है।

इस प्रवादके अनुसार यह भी जान पड़ता है कि, बीबी 'मत्त'का इब्राहिम नामका दूसरा पुत्र था। शेखने इसको प्यारसे "लो" (महत्) उपाधि दी थी। कालान्तरमें वह "लो" शब्द अपभ्रंश हो कर "लोदी" रूपमें परिणत हुआ। ईस्वीकी १५वीं शताब्दीमें लोदी वंशीय राजाओंने दिल्लीके सिंहासन पर बैठ कर राजत्व किया था। अफगानके ऐतिहासिकोंके मतसे लोदी और सुरवंशीय दिल्ली राजगण घिलजाइवंशके थे—ऐसा ज्ञात होता है। परन्तु यह बात कहां तक सम्भव हो सकती है उसका ठीक नहीं और यह भी मालूम होता है कि, बीबी मत्तके तुराण, तोलार, बुरान और पोलार नामके कई पुत्र थे और उनके नामानुसार अलग अलग सम्प्रदाय चालू हुई थी।

गत शताब्दीके प्रथम भागमें घिलजाइ जाति अफगानिस्तानोंमें सर्वश्रेष्ठ जाति समझी जाती थी। कुछ दिनोंके लिए इन लोगोंने इस्पाहानका सिंहासन भी जय कर लिया था। १८३६ ई०में अंगरेजोंने काबुल पर आक्रमण किया था; उस समयमें इन लोगोंने दोस्तमहम्मदको विशेष सहायता की थी।

तुर्कजातिके साथ इस घिलजाइजातिका बहुतसा सादृश्य पाया जाता है इस ही लिए शायद १०वीं और ११वीं शताब्दीके भूगोलवेत्ताओंने इस जातिको खिलिजि और तुर्कवंशीय बताया है।

घिसंघिस (हिं० स्त्री०) बिना किसी प्रयोजनका विलंब, वह देर जो सुस्तीके कारण हो।

घिसना (हिं० क्रि०) रगड़ना, पोसना।

घिसाई (हिं० स्त्री०) १ रगड़नेका काम। २ घिसनेकी मजदूरी।

घिसाना (हिं० क्रि०) रगड़ाना।

घिसाड़ि—दाक्षिणात्यमें बम्बई प्रदेशके रहनेवाले एक श्रेणीके लुहार। किसीके मतसे-मराठी "घिषणि" अर्थात् घिसने शब्दसे घिसाड़ि शब्दकी उत्पत्ति है। ऐसा अनुमान होता है कि, शायद ये लोग लोहा घसनेका काम करते थे; इस लिए इनका नाम घिसाड़ि पड़ गया है। बेलगाँव आदि कई एक स्थानोंमें इन लोगोंको "रहलनमे कोम्बार" अर्थात् बाहरके लुहार कहते हैं।

घिसाड़ि लोग कहते हैं कि, "हम लोगोंका आदिवास गुजरातमें था। करीब डेढ़सौ वर्षसे ये लोग नाना

स्थानोंमें फैल गये हैं। ये लोग हमेशा गुजराती भाषामें बातचीत करते हैं। परंतु तब भी ये लोग मराठी और हिन्दी भी बोल सकते हैं।

ये लोग देखनेमें कुछ खर्वाकृतिके और स्थूलकायके हैं, नहीं तो इनमें और कुनबीयोंमें कोई अन्तर नहीं। ये लोग मस्तक पर चोटी रखते हैं और दाढ़ी भी रखा करते हैं। ये एक जगह रहना पसंद नहीं करते। ये लोग जब जगह जगह घूमते रहते हैं तब कम्बलका डेरा बना कर उसमें रहा करते हैं। स्थायी वासिन्दाओंके छोटे छोटे घर और झोंपड़ियां भी हैं। इन लोगोंका पहराव मराठियों जैसा है और रातको लंगोटी मात्र ही पहरते हैं। ये लोग बड़े परिश्रमी, कलहप्रिय, गंदे और शराब व माँसभक्षी होते हैं। लोहेकी चीजें बनाना ही इनका काम है और इसीसे इनका निर्वाह होता है। इनके लड़के दश-बारह वर्ष तक तो पिताके साथ काम-काज करते हैं फिर बादमें अपनी अपनी दूकान खोल कर बैठते हैं। इनको स्त्रियां मर्दोंके काममें सहायता करती हैं और उनकी बनी हुई चीजोंको माथे पर रखकर बेचनेको जाया करतीं हैं। विलायतसे लोहेकी चीजोंके आने पर भी इनके रुजगारमें कोई क्षति नहीं पहुंची। घहिरा, गिरिके बालाजी, भवानी, खंडोबा, षट्टाइ और यमुना ये सब घिसाड़ियोंके कुलदेवता हैं। सोमवारमें और शनिवारमें ये लोग उपवास किया करते हैं। आश्विनका दशहरा इन लोगोंका प्रधान उत्सवका दिन है।

भूतोंका डर इन लोगोंमें बहुत है। कोई बीमार आदमी यदि सहजमें आरोग्य न हुआ तो उसके लिए यही अनुमान करते हैं कि, इसको भूतने पकड़ लिया है, फिर उसकी चिकित्सा न करके, अपने देवऋषि अर्थात् ओझाको दिखलाया करते हैं। देवऋषि भस्म नारियल, मुरगी और कुछ निम्बू ले कर रोगीके पास भुलाया करता है, इससे भी यदि भूत न छोड़े, तो कुल देवताओंकी पूजा करके रोगीकी मङ्गल कामना चाहते हैं।

सन्तानके होने पर ये लोग छठे दिन षष्ठीदेवीके उद्देशसे एक बकराकी बलि देते हैं और आत्मीय स्वजनोंको निमंत्रण करके उनको उस बकरेका मांस खिलाते हैं। ७ वें दिन इन लोगोंमें "षेटेरा" पूजा होती है।

ये लोग ५ वर्षकी उमरसे ले कर २५ वर्ष तकको कन्याओंका विवाह करते हैं। किसीकी मृत्यु होने पर ११ दिन पातक मानते हैं।

मतलब यह कि, इन लोगोंकी अवस्था बुरी नहीं हैं और नये लोग अपने रुजगारको छोड़कर दूसरा रुजगार ही करना चाहते हैं।

घिसाव (हिं० पु०) रगड़, पीस।

घिसावट (हिं० स्त्री०) रगड़, घिसन, घिस्सा।

घिसिरपिसिर (हिं० स्त्री०) घिसपिस।

घिस्टपिस्ट (हिं० पु०) १ घनिष्ठ सम्बन्ध, प्रगाढ़मित्रता, गहरा मेलजोल। २ अनुचित संबंध जो होने लायक न हो।

घिस्समघिस्सा (हिं० पु०) भारी धक्का, खूब भीड़ भाड़।

घिस्सा (हिं० पु०) १ रगड़ा। २ धक्का, ठोकर। ३ लड़कोंका एक खेल।

घी (हिं० पु०) घृत देखो।

घीकुवाँर (हिं० पु०) घृतकुमारी, ग्वारपाठा, गोंड़पट्टा।

घुँइयाँ (देश०) एक तरकारी, अरवी।

घुँगची (हिं० स्त्री०) घुंघची देखो।

घुँघची (हिं० स्त्री०) जङ्गलोंमें बड़ी बड़ी झाड़ियोंके ऊपर फैलनेवाली एक तरहकी मोटी बेल। इसके पत्ते इमली जैसे होते हैं। इसका स्वाद कुछ कुछ मीठा और पुष्प सेम जैसे होते हैं। इसके फलके मध्य लाल लाल बीज दिखाई पड़ते जो घुंघची या गुंजा नामसे मशहूर हैं। ये बीज देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं, इसका सारा भाग लाल होता केवल मुख पर छोटासा काला चिह्न रहता है। इसका गुण—कड़ुई, बलकारक, केश और त्वचाके लिए हितकारक तथा व्रण, कुष्ठ, गञ्ज आदिको दूर करनेवाला है। घुँघचीकी जड़ और पत्ते विषनाशक माने जाते हैं। इसका पर्याय—रक्तिका, गुञ्जिका, कृष्णला, काकिनी, कक्षा, कनीची, काकचिञ्ची, कांची, सौम्या, शिखण्डी, अरुणा, कांबोजी, काकशिम्बी और चटकी है।

घुँघनी (हिं० स्त्री०) घृत या तेलमें भुँजा हुआ चना, घुघरी।

घुंघराले (हिं० वि०) घुंघरवाले, ᵘ ञ्चित।

घुँघरू (हिं० पु०) १ किसी धातुका बना हुआ गोल और पोला पदार्थ, शब्द होनेसे इसके भीतर कङ्कड़ भर देते हैं चौरासी, मञ्जीर। २ नाचनेवालोंके पहननेका एक तरह का आभूषण। ३ घुटका, घटुका। ४ बूटके ऊपरको खोल। ५ सनईका फल जिसके भीतर बीज रहते हैं

घुँघरूदार (हिं० वि०) जिसमें घुँघरू लगे हों।

घुँघरूबन्द (हिं० स्त्री०) वह रण्डी जो नाचने गानेका काम करती है।

घुँघरूमोतिया (हिं० पु०) एक तरहका मोतिया बेला।

घुँट (देश०) एक तरहका जंगली पेड़। इसके पत्ते चमड़े सिझानेके काममें आते हैं।

घुँटना (हिं० क्रि०) घुटना देखो।

घुंडी (हिं० स्त्री०) १ गोपक, कपड़ेका गोल बटन। अङ्गरखे वा कुरते आदिका पल्ला बन्द करनेके लिए टांकी जानेवाली कपड़ेकी सिली हुई मटरके बराबर छोट गोली। २ खड़ुवे आदि (हाथ पैरोंमें पहननेके गहने) के दोनों छोरोंका गांठ जो कई आकारकी बनाई जाती है। ३ बाजू, जोशन आदि गहनोंमें लगी हुई धातुकी गोल गांठ, जिसको सूतके घरमें डाल कर गहनोंको कसते हैं। ४ दोलहा अर्थात् धानका वह अंकुर जो खेत काटने पर जड़से फूट कर निकलता है। ५ एक प्रकारकी घास।

घुंडीदार (हिं० वि०) १ जिसमें घुण्डी लगी हो। (पु०) २ एक प्रकारकी सिलाई जिसमें एक टांकेके बाद दूसरा टांका फन्दा डाल कर लगाते हैं।

घुंसा (हिं० पु०) वह लकड़ी जिससे जाठ उठा कर कोल्हूमें डालते हैं।

घुआ (हिं० पु०) घुंश्रा देखो।

घुग्घी (देश०) कम्बल या ताड़के पत्तेका बना हुआ त्रिकोणाकार। धूप, पानी और शीतसे बचनेके लिये यह छाताकासा काम देता है। किसान या गड़ेरिये विशेष कर इसे काममें लाते हैं, घोंघी। २ कबूतर जातिकी एक चिड़िया। इसकी बोली कबूतरसे मिलती जुलती नहीं है, टुटरू, पेंडुकी, पण्डुक।

घुग्घू (हिं० पु०) १ उल्लू नामकी एक चिड़िया। २ मुखसे फूंके जानेका मिट्टीका खिलौना। फूंकनेसे इसमें आवाज होती है।

घुघुआना (हिं० क्रि०) १ उल्लू पक्षीका बोलना। २ बिल्ली का गुर्राना। ३ उल्लूकी तरह बोलना। ४ बिल्लीकी तरह गुर्राना।

घुघुकृत् (सं० पु०) वनकपोत घुग्घू।

घुघुरी (हिं० स्त्री०) घुघुर देखो।

घुघुलाख (सं० पु०) पारावत, कबूतर।

घुट (सं० पु०) घुट कुटादि अच्। चरणग्रन्थि, एड़ी। पाश्चना।

घुटकी (हिं० स्त्री०) अन्न जल इत्यादिके भीतर जानेको नली, वह नली जिसके द्वारा खाना पीना आदि पेटमें जाते हैं।

घुटना (हिं० पु०) १ जानु, जांघके नीचे और टांगके ऊपर-का जोड़, टांग और जांघके बीचको गांठ। (क्रि०) २ रुकना, फंसना, सांसके भीतर ही भीतर दबजाना, बाहर न निकलना। जैसे वहां तो इतना धुंआ है कि दम घुटना है।

घुटन्ना (हिं० पु०) घुँटनों तकका पायजामा।

घुटवाना (हिं० क्रि०) १ घोटनेका काम कराना। २ बाल मुँड़ाना।

घुटाई (हिं० स्त्री०) १ घोटने या रगड़नेकी क्रिया। २ रगड़ कर चिकना और चमकीला करनेकी मजदूरी।

घुटिक (सं० पु०) घुट स्वार्थे ठन्। गुल्फ, एड़ी।

घुटिका (सं० स्त्री०) घुटि स्वार्थे कन् टाप्। जानु, गुल्फ, एड़ी।

घुटी (सं० स्त्री०) घुटि-ङीष्। गुल्फ, एड़ी, पाश्चना। २ चतुरङ्ग खेल।

घुट्टा (हिं० पु०) घोटा देखो।

घुट्टी (हिं० स्त्री०) छोटे बच्चोंके लिए पाचनकी एक दवा।

घुड़कना (हिं० क्रि०) क्रोधसे डपटना, डांटना।

घुड़की (हिं० स्त्री०) क्रोधमें कही गई बात, डांट, डपट, फटकार।

घुड़चढ़ा (हिं० पु०) १ अश्वारोही, सवार, घोड़सवार। २ एक तरहका स्वांग।

घुड़चढ़ी (हिं० स्त्री०) १ विवाहको एक प्रथा। इसमें वर घोड़े पर चढ़ कर कन्याके घर जाता है। २ निकृष्ट श्रेणीको गानेवाली वेश्या। ३ घोड़े पर रख कर चलाई जानेकी छोटी तोप।

घुड़दौड़ (हिं० स्त्री०) १ घोड़ोंकी दौड़। २ एक तरहकी बाजी, जिसमें एक स्थानसे कई घोड़े निश्चित स्थानकी ओर दौड़ाये जाते हैं, जिसका घोड़ा नियत स्थान पर सबसे पहले पहुंच जाय उसीकी जीत समझी जाती है। ३ घोड़ दौड़ानेका मैदान। ४ घोड़ेके मुँहके आकारका बनी हुई एक तरहकी नाव। ५ अश्वारोही सेनाकी परेड या कवायद।

गुड़नाल (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी तोप जो घोड़ों पर चलती है।

घुड़बहल (हिं० पु०) अश्वरथ, घोड़ेका रथ, वह रथ जिसमें घोड़े जुतते हों।

घुड़मक्खी (हिं० स्त्री०) घोड़ोंको तङ्ग करनेवाली मक्खी जो भूरे रंगकी होती है।

घुड़मुहाँ (हिं० पु०) लंबे मुँहवाला मनुष्य, वह मनुष्य जिसका मुख घोड़ कासा हो।

घुड़ला (हिं० पु०) १ घोड़के आकारका खिलौना जो मिट्टी या मिठाईका बनता है। २ छोटा घोड़ा। ३ छोटी रस्सी जो जाहजोंके काममें आती है। अंगरेजीमें लैन-यार्ड (Lanyard) कहते हैं।

घुड़सार (हिं० स्त्री०) घुड़साल देखो।

घुड़साल (हिं० स्त्री०) वह स्थान जहां घोड़े बांधे जाते हों, अस्तबल, पैंड़ा।

घुड़िया (हिं० स्त्री०) १ छोटी घोड़ी।

घुण (सं० पु०) घुण-क। १ काष्ठभक्षक कीटविशेष, अनाज, पौधे और लकड़ीका एक तरहका कीड़ा। इसका पर्याय—काष्ठवेधक और काष्ठलेखक है। २ भ्रमर, भौंरा।

घुणदयिता (सं० स्त्री०) अतिविषा, आतीस नामका औषधका पौधा।

घुणप्रिया (सं० स्त्री०) घुणस्य प्रिया, ६-तत्। १ क्षुद्रदन्ती वृक्ष, गुल्लरका पेड़। २ अतिविषा।

घुणवल्लभा (सं० स्त्री०) घुणस्य वल्लभा, ६-तत्। अतिविषा, आतीस नामका पेड़ जो दवाईके काममें आता है।

घुणाक्षर (सं० क्ली०) घुणकृतमक्षरं, मध्यपदलो०। १ घुणकृत अक्षर, घुनोंके खाते खाते लकड़ीमें अक्षरकासा चिह्न। २ अति सामान्यरूप, बहुत साधारण तरीका। (पु०) घुणाक्षरं तुल्यतया अस्त्यस्य घुणाक्षर-अच। ३ न्यायविशेष, ऐसी कृति या रचना जो अज्ञानसे उसी तरह हो जाय जिस तरह घुनोंके खाते खाते लकड़में अक्षरकी नाई बहुतसे चिह्न या लकीरें बन जाती हैं।

घुणि (सं० त्रि०) घुण-इन्। भ्रान्त, भूल।

घुण्ट (सं० पु०) घुट-क निपातने साधुः। गुल्फ, पाश्ना, एड़ी।

घुण्टक (सं० पु०) घुण्ट स्वार्थे कन्। घुण्ट देखो।

घुण्टा (सं० स्त्री०) क्षुद्र वदर, पेमदी बेर।

घुण्टिक (सं० क्ली०) घुण्टस्तदाकारोऽस्त्यस्य घुण्ट-ठन्। वनकरीष, सूखा गोबर जो जंगलोंमें मिलता और जलानेके काममें आता है, वनकण्डा, जङ्गली कण्डा, वनउपला।

घुण्ड (सं० पु०) घुण-ड निपातनात्वत्वं। भ्रमर, भौंरा।

घुतसानदेवी—पञ्जाबमें सिरमूरके अन्तर्गत एक गिरिमकूट। यह अक्षा० ३०° ३१´ उ० और देशा० ७७° २८´ पू० पर खियार्दा-दुनसे हिमालय पर्वतकी शिवालिक श्रेणी तक फैला हुआ एक निम्न पर्वतश्रेणीके ऊपर समुद्रपृष्ठसे २५०० फुट ऊंचे पर अवस्थित है। इस पर्वतने यमुनाकी भूतशाखासे मार्कण्ड नदीको विभक्त कर दक्षिण पश्चिममें शतद्रु नदीकी ओर प्रवाहित कर दिया है। टेहरासे नाहन जानेमें इसी रास्तेसे हो कर जाना पड़ता है।

घुन (हिं० पु०) घुण देखो।

घुनघुना (हिं० पु०) लकड़ी, पीतल इत्यादिका बना हुआ एक तरहका छोटा खिलौना, झुनझुना।

घुनना (हिं० क्रि०) घुनके द्वारा लकड़ी आदिका खाया जाना।

घुन्द—पञ्जाब प्रदेशके केउंथल राज्यके अन्तर्गत एक जागीर। यह अक्षा० ३१° २ तथा ३१° ६´ उ० और देशा० ७७° २७´ एवं ७७° ३३´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २००० हैं। राजस्व लगभग २०००) वसूल होता है। केउंथलके राजा सरकारको वार्षिक कर २५०) रुपया

देना पड़ता है। यहांके राजाको यद्यपि राज्य शासनको पूर्ण क्षमता प्राप्त है तोभी उन्हें अपराधीको फांसीका हुक्म देनेके लिये सिमला हिल ष्टेटके सुपरिण्टेण्डेण्टसे अनुमति लेनी पड़ती है।

घुन्ना (हिं० वि०) विश्वासघाती, मनही मन बुरा माननेवाला, घुप्पा।

घुन्नी (हिं० वि०) विश्वासघातिनी, घुप्पी।

घुप (हिं० वि०) कूप, गहरा, निविड़, घना।

घुमक्कड़ (हिं० वि०) बहुत घूमनेवाला, जो बहुत भ्रमण करता हो।

घुमटा (हिं० पु०) सिरमें चक्कर आ जाना, मिजाज दुरुस्त न रहना, खड़ा होने पर आंखके सामने अन्धेरा सा जान पड़ता।

घुमड़ (हिं० स्त्री०) वह मेघ जो वर्षाके समय इधर उधर मडराता है, बरसनेवाले बादलोंका घेरघार।

घुमड़ना (हिं० क्रि०) १ बादलोंका इधर उधर घूमना। २ इकट्ठा होना, छा जाना।

घुमड़ी (हिं० स्त्री०) १ कुम्हारके चाककी तरह घूमनेकी क्रिया। २ सिरमें चक्कर आ जाना। ३ परिक्रमा।

घुमनी (हिं० वि०) १ जो इधर उधर घूमती हो। (स्त्री०) २ पशुओंका एक तरहका रोग।

घुमरना (हिं० क्रि०) १ घोर शब्द करना, बहुत जोरसे आवाज होना।

घुमाँ (हिं० पु०) पञ्जाबमें जमीनकी एक नाप, जो दो बीघोंके बराबर होती है।

घुमाना (हिं० क्रि०) १ चक्कर देना, इधर उधर टहलाना। २ ऐंठना, मरोड़ना।

घुमाव (हिं० पु०) १ घुमानेकी क्रिया। २ फेर, चक्कर।

घुमावदार (हिं० वि०) चक्करदार, जिसमें कुछ घुमाव फिराव हो।

घुर (सं० त्रि०) घुर-क। जो डरमें आ गया हो, जो भयसे चिल्लाता हो।

घुरका (हिं पु०) चौपायोंकी एक बीमारी।

घुरघुर (सं० पु०) घुर प्रकारे द्वित्व। शब्दविशेष, सूअरकी बोली।

घुरघुराहट (हिं० स्त्री०) घुर घुर शब्द निकालनेका भाव या क्रिया।

घुरण (सं० पु०) शब्द, आवाज।

घुरबिनिया (हिं० स्त्री०) गली कूचोंमेंसे टूटो फटो चोजोंके टुकड़ेका एकत्र करनेका काम।

घराम (कुहराम वा रामगड़)—पटियाला राज्यके पिञ्जोर निजामतके अन्तर्गत घनौर तहसीलका एक पुराना शहर। यह अक्षा० ३०° ७' उ० और देशा० ७६° ३' पू० में राजपुरके २६ मील दक्षिणमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ८०० है। प्रवाद है—यहां अयोध्याके राजा रामचन्द्रजीके मातामहका निवास था। मुसलमानोंके राज्यके प्रारम्भमें यह दिल्लीके अन्तर्गत था, पीछे ध्वंसको प्राप्त हुआ। फिलहाल यहां बहुतसे खण्डहर पूर्व समृद्धिका परिचय दे रहे हैं।

घुरि (सं० स्त्री०) घुर बाहुलकात् कि ततो वा ङीप्। शूकरका तुण्ड, सूअरका मुख।

घुर्घुर (सं० पु०) घुरित्यव्यक्तं घुरति घुर-क। १ यमकीट, घुरघुरा नामका कोड़ा। २ सूअरका शब्द।

घुर्घुरक (सं० पु०) घुर्घुर इव कायति कै-क। १ उपद्रवविशेष, एक तरहका रोग।

घुर्घुरिका (सं० स्त्री०) घुर्घुरो वराहध्वनिरस्त्यस्याः घुर्घुर-ठन्। कफ रुक जानेके कारण एक तरहका रोग। (Harpes exedens)

घुर्घुरी (सं० स्त्री०) घूर्घुरः शूकरः शब्दः अस्त्यस्य घुर्घुर-अच् गौरादित्वात् ङीष्। एक प्रकारका जलजन्तु, घुरघुरा नामका पानीमें रहनेवाला एक जानवर।

घूर्मित (हिं० क्रि०) भ्रमण करता हुआ, घूमता हुआ, चक्कर खाता हुआ।

घरुवा (देश०) जानवरोंका एक रोग। यह छूतकी बीमारी है। एक पशुको यह रोग होनेसे दूसरोंमें बहुत जल्द फैल जाता है। लेड़में उत्पन्न एक प्रकारके जहरसे इस रोगकी उत्पत्ति है।

घुलञ्च (सं० पु०) घुर क्विप्, तमञ्चति अन्च अण् उपपदस०, रस्य लः। धान्यविशेष, गरहेड़ुआ धान। (Coix Barbata)

घुलघुलाख (सं० पु०-स्त्री०) घुल् घुल इत्यव्यक्तमारौति आ-रु-अच्। पारावतविशेष, एक तरहका कपोत, कबूतर।

घुलना (हिं० क्रि०) १ द्रवित होना, गलना, जल आदिके संयोगसे किसी पदार्थका मिश्रित होना। २ रोग आदिसे शरीरका क्षीण होना वा दुर्बल होना। ३ नरम होना, पक कर पिलपिला होना। ४ व्यतीत होना, गुजरना, बीतना। जैसे—जरासे काममें महीनों घुल गये। ५ हाथसे दांवका निकल जाना। ६ जाता रहना।

घुलवाना (हिं० क्रि०) १ किसी पदार्थमें मिश्रित कराना, मिलवाना। २ आंखोंमें सुरमा लगवाना।

घुलाना (हिं० क्रि०) १ गलाना, द्रवित करना। २ शरीर कमजोर करना। ३ किसी चीजको मुखमें रख कर धीरे धीरे उसका रस चूसना। ४ सुरमा या काजल लगाना। ५ बिताना, गुजारना।

घुलावट (हिं० स्त्री०) घुलनेका भाव या क्रिया।

घुसखोर (फा० पु०) वह जो घूस ले कर किसी दूसरेका कार्य करता हो, वह जो घूस ले कर पक्षपाती हो जाता हो।

घुषित (सं० त्रि०) घुष-क्त वा इट्। १ शब्दित, शब्द किया हुआ। (क्लो०) घुष भावे क्त। २ घोषणा, प्रकाश, जाहिर।

घुष्ट (सं० त्रि०) घुष-क्त पक्षे इडभावः। १ शब्दित, नादयुक्त। आवाज किया हुआ। (क्लो०) २ वाक्यविशेष, चिल्लाहट, जोरका शब्द।

घुष्टान्न (सं० क्लो०) घुष्टं को भोक्ता इत्युद्घुष्टे देयमन्नम्। खानेवाला कौन है, कौन खायगा, इस तरहसे पूछ कर जो अन्न दिया जाता है उसीको घुष्टान्न कहते हैं। मनुका मत है कि घुष्टान्न खानेवालोंको बहुत पाप होता है।

घुष्य (सं० त्रि०) घोषणीय, प्रकाश करने योग्य, जाहिर करने लायक।

घुसना (हिं० क्रि०) भीतर जाना, प्रवेश करना।

घुसपैठ (हिं० स्त्री०) पहुँच, गति, प्रवेश।

घुसवाना (हिं० क्रि०) घुसानेका काम दूसरे द्वारा कराना।

घुसाना (हिं० क्रि०) १ पैठाना, प्रवेश कर देना। २ चुभाना, धुंसाना।

घुसुड़ी—गङ्गाके पश्चिम किनारे पर स्थित एक उपनगर। कलकत्ते से करीब ६।७ मील उत्तर-पश्चिमकी तरफ अवस्थित है। यहां पर धोती साड़ियोंका यथेष्ट कारबार है। यहाँ यूरोपीय व्यवसायियोंने सूत, बोरा, लोहा ढलाई और गैस आदिके कारखाने खोले हैं। सर्वसाधारणके हितार्थ यहाँ एक बाजार भी है। इस जगह चावल, धान आदि अनाजका काफी रुजगार होता है और तेलके कारखाने भी बहुत हैं। इस उपनगरकी पूर्वसीमामें गङ्गाके किनारे एक बहुत बड़ा टापू (जंजीरा) है। इसको चलती बोलीमें "घुसुड़ीका टेंक" कहते हैं। ज्वार (जिस समय पानी बढ़ता है) के समय वह डूब जाता है और जब भाटा (जिस समय पानी घटता है) होता है तब वह दीखने लगता है। घुसुड़ीके निकट 'भोटबागान' नामक एक तिब्बतके बौद्ध यतियोंका आश्रम है।

घुसृण (सं० क्लो०) घुसि बाहुलकात् ऋणक् पृषोदरादित्वात् न लोपः। कुङ्कुम, केसर, जाफरान।

"घुसृणेयंव जलाशयोदरे" (नैषध०)

घुसृणपिञ्जरतनु (सं० स्त्री०) घुसृणमिव घुसृणेन वा आपिञ्जरा तनुर्यस्याः, बहुव्री०। गङ्गा।

घूँघट (हिं० पु०) लाज, कुलवधू लज्जावश या परदाके लिये अपना मुख ढाँकती है तो उसे घूंघट काढ़ना कहते हैं।

घूँघर (हिं० पु०) छल्ले या मरोड़ जो बालोंमें पड़ जाते हों।

घूँघरवारे (हिं० वि०) कुञ्चित, छल्लेदार, झबरीले।

घूँघरा (देश०) वाद्यविशेष, एक तरहका बाजा।

घूँचा (हिं० पु०) घूसा देखो।

घूँट (हिं० पु०) १ जल या किसी दूसरे तरल पदार्थका उतना भाग जितना एक दफा गलेके नीचे उतारा जाय। २ टट्टू (देश०) ३ बंगालके सिवा भारतवर्षके बहुतसे स्थानोंमें होनेवाला एक तरहका पेड़। इसके पत्ते चार पाँच अंगुल लम्बे होते हैं। यह बैशाख ज्येष्ठमें फूलता तथा जाड़ेमें फलता है। इसकी पत्तियाँ चारेके काममें आती हैं और छाल तथा फलसे चमड़ा रंगा जाता है।

घूँटना (हिं० वि०) पीना।

घूँटी (हिं० स्त्री०) छोटे छोटे बच्चोंको पिलानेकी दवा जो बहुत स्वास्थ्यकर और पाचक होती है।

घूँस (हिं० स्त्री०) घूस देखो।

घूँसा (हिं० पु०) १ मुक्का, बंधी हुई मुट्ठी, डुक, धमाका। २ बंधी हुई मुट्ठीका प्रहार।

घूआ (देश०) एक तरहका पुष्प जो काँस मूँज या सरकंडे आदिके फूलोंसे मिलता जुलता है। २ एक प्रकारका कोड़ा जो प्रायः पानीके किनारे मिट्टीमें पाया जाता है और जिसे बुलबुल आदि पक्षी खाते हैं। ३ किवाड़की चल अटकानेके लिये दरवाजेका छेद।

घूक (सं० पु०-स्त्री०) घू इत्यव्यक्तं कायति कै-क। घुग्घू, उल्लू पक्षी, कुकुआ।

घूकनादिनी (सं० स्त्री०) घूक इव नदति नद-णिनि ङीप्। गङ्गा। "घर्घरा घूकनादिनी।" (काशीखण्ड २९ अ०)

घूका (हिं० पु०) बांस, मूँज. बेंत इत्यादिको बनी हुई डलिया या टोकरी।

घूकारि (सं० पु०-स्त्री०) घूकस्य अरिः, ६-तत्। कौवा।

घूकावास (सं० पु०) घूकस्यावासः, ६-तत्। शाखोटवृक्ष, साहोड़का पेड़।

घूघ (हिं० स्त्री०) लड़ाईमें पहनी जानेकी टोपी जो लोहे या पीतलकी बनी रहती है।

घूघू (हिं० पु०) घुग्घू देखो।

घूटना (हिं० क्रि०) दबाना सांस रोकना।

घूम (हिं० स्त्री०) १ घुमाव, फेर, परिभ्रमण, चक्कर। २ वह स्थान जहाँसे किसी दूसरी ओर जाना हो, मोड़, चौराहा।

घूमना (हिं० क्रि०) १ चारों ओर फिरना, चक्कर खाना। २ सैर करना, टहलना। ३ मण्डराना।

घूमघुमारा (हिं० वि०) घेरदार, बड़े घेरेका।

घूर (हिं० पु०) १ कूड़ा, करकट फेंकनेका स्थान। २ कूड़ेका ढेर।

घूरना ((हिं० क्रि०) १ बुरे ख्यालसे टकटकी लगा कर देखना। २ क्रोधसे किसी दूसरे पर आँख निकालना।

घूरा (हिं० पु०) कूड़े करकटका पुञ्ज। २ खाद, कूड़ा, करकट फेंकनेका स्थान।

घूराघारी (हिं० स्त्री०) घूरनेकी क्रिया।

घूर्ण (सं० पु०) घूर्णति घूर्ण-अच्। १ ग्रीष्मसुन्दर, एक तरहका शाक। (त्रि०) २ भ्रान्त, भूला हुआ। (पु०) घूर्णि भावे घञ्। ३ भ्रमण, फिरना, घूमना, विचरना, चक्कर, सैर। घूर्ण णिच्-अच्। ४ घूर्णकारक, एक तरहका रोग।

घूर्णन (सं० क्ली०) घूर्ण भावे ल्युट्। भ्रमण, सैर।

घूर्णि (सं० पु०) घूर्ण भावे इन्। भ्रमण, घूमना, सैर, गश्त।

घूर्णित (सं० त्रि०) घूर्ण णिच् कर्मणि क्त। १ भ्रमित, चक्कर दिया हुआ, भ्रमण किया हुआ, गश्त लगाया हुआ। घूर्ण णिच् कर्तरि क्त। २ भ्रान्त, भूला हुआ।

घूर्णनीय (सं० त्रि०) घूर्ण-अनीयर्। घूमने योग्य, टहलने लायक।

घूर्णवायु (सं० पु०) घूर्णश्चासौ वायुश्चेति, कर्मधा०। वायुमंडल।

घूर्णमान (सं० त्रि०) घूर्ण कर्तरि शानच्। जो घूमता हो, जो चक्कर लगाता हो।

घूर्णायमान (सं० त्रि०) घूर्णः भ्रान्त इव आचरति घूर्ण भृशादि स्वार्थे वा क्यङ् कर्तरि शानच्। भ्राम्यमाण, जो मण्डलाकार पथ पर घूमता हो।

घूर्णिका (सं० स्त्री०) शुक्रकी कन्या देवयानीकी एक सखी।

घूर्ण्यमान (सं० त्रि०) घूर्ण्यते घूर्ण णिच् कर्मणि शानच्। भ्राम्यमान, मण्डलाकार पथ पर चलाया हुआ।

घूस (हिं० स्त्री०) १ चूहे जातिका एक जन्तु, जो प्रायः पृथ्वीके भीतर बड़े लंबे बिल खोद कर रहता है। एक तरहका बड़ा चूहा। २ घूष।

घृङ्करिक (सं० त्रि०) जो भेड़ जैसा बोलता हो।

घृण (सं० पु०) घृण-क। १ दिवस, दिन, रोज। २ दीप्त, कान्ति, तेजो। ३ उष्ण, गरम।

घृणा (सं० स्त्री०) घ्रियते सिच्यते ऽनया घृ सेके बाहुलकात् नक् ततः टाप्। १ कारुण्य, करुणा, दया, रहम। आच्छाद्यते गुणादिकमनया घृ-नक् टाप्। २ जुगुप्सा, निन्दा, असूया, घिन, नफरत। इसके संस्कृत पर्याय—अवर्तन, ऋतीया, हृणीया, रोज्या, हृणिया, ह्रिणीया।

"तां विलोक्य वनितावधे घृणां पत्रिणा सह मुमोच राघवः (रघु० ११।१७)

घृणार्चिस् (सं० पु०) अग्नि, आग।

घृणालु (सं० त्रि०) घृणा बाहुलकात् आलुच्। कृपायुक्त, दयालु, रहमदिल।

घृणावत् (सं० त्रि०) घृणा अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः। कृपायुक्त, दयावान्।

घृणावती (सं० स्त्री०) घृणावत्-ङीप्। गङ्गा।

घृणावास (सं० पु०) घृणाया आवासः, ६-तत्। १ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा, कोंहड़ा। २ कृपाधार।

घृणि (सं० पु०) जघर्ति दीप्यते घृ नि निपातने साधु। १ किरण, सूर्यकी रोशनी। २ ज्वाला। ३ तरङ्ग, लहर। ४ सूर्य। ५ वनशूकर, जङ्गली सूअर। ६ अखरोगविशेष। (क्लो०) जल, पानी। (त्रि०) दीप्तिशाली, तेजस्वी, प्रतापी।

घृणित (सं० त्रि०) घृणा इतच्। १ जिसे देख या सुन कर घृणा पैदा हो। २ घृणायुक्त, घृणा करने योग्य, नफरत करने लायक। ३ शनिग्रहसे प्राप्त दया, शनिग्रहसे पायी हुई कृपा।

घृणिनिधि (सं० पु०) घृणीनिधि, ६-तत्। १ सूर्य। २ गङ्गा। "घृणावती घृणिर्निधिः।" (काशीखण्ड)

घृणिन् (सं० त्रि०) घृणा अस्त्यस्य घृणि-इनि। घृणायुक्त, जिसमें घृणा हो।

"ईर्षी घृणीत्वसन्तुष्टः क्रोधनो नित्यशङ्कितः।" (पञ्चतन्त्र)

घृणीवत् (सं० त्रि०) घृनिरस्त्यस्य मतुप् छान्दसत्वात् मस्य न वः दीर्घश्च। १ दीप्तियुक्त, प्रभावशाली, तेजस्वी। (पु०) २ तेजस्वी पशुविशेष, पराक्रमी पशु।

घृण्य (सं० त्रि०) घृणाके योग्य, नफरत करने लायक।

घृत (सं० पु०) जघर्ति क्षरति घृ-क्त। अग्निदृशिभ्यः क्तः। उण् ३।८९। पक्व नवनीत, हविः, साधारणतः इसको घी कहते हैं। पर्याय—आज्य, हविस्, सर्पिस्, पवित्र, नवनीतक, अमृत, अभिचार, होम्य, आयुस्, तेजस् और आज।

घीके साधारण गुण ये हैं—रसायनवाला, मधुररसयुक्त, आखोंके लिए हितकारक, अग्निदीप्तिकारक, शीतवीय, अल्प अभिष्यन्दी, कान्ति बढ़ानेवाला, ओजोधातुवर्द्धक, तेजस्कर, लावण्यवर्द्धक, बुद्धि बढ़ानेवाला, स्वरवृद्धिकर, स्मृति बढ़ानेवाला, मेधाजनक, आयुष्कर, वलवर्द्धक, गरिष्ट, स्निग्ध, कफ पैदा करनेवाला, रक्षोघ्न और विष, अलक्ष्मी, पाप, पित्त, वायु, उदावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, आनाह, व्रण, क्षय, वीसर्प और रक्तदोषनाशक है। (भावप्रकाश पू॰ख॰)

राजवल्लभके मतसे इसके साधारण गुण ये हैं,—घी वुद्धि, अग्नि, शुक्र, ओजः, मेदः, स्मृति और कफ बढ़ानेवाला है और वात, पित्त, विष, उन्माद, शोथ, अलक्ष्मी और ज्वरनाशक है तथा मांससे आठ गुणा गरिष्ट और पुष्टिकर है।

गायके घृतके गुण—यह अत्यन्त चक्षु-हितकर, शुक्रवर्द्धक, अग्निवृद्धिकर, मधुररस, विपाकमें मधुर, शीतवीर्य, वातघ्न, पित्त और कफनाशक, मेधाजनक, लावण्यवर्द्धक, कान्ति बढ़ानेवाला, ओजोधातुवर्द्धक, अत्यन्त तेजस्कर, दुर्भाग्यविनाशक, पापहारक, रक्षोघ्न, वयःस्थापक, गरिष्ट, वलवर्द्धक, पवित्र, आयुष्कर, मङ्गलकर, रसायन, सुगन्धिवाला, रुचिकारक और मनोज्ञ होता है। गायका घी सबसे उत्तम होता है।

भैंसके घीके गुण—यह मधुररसवाला, रक्तपित्तनाशक, वायुनाशक, शीतवीर्य, कफकारक, शुक्रवृद्धिकर, गरिष्ट और पाकमें मधुर होता है।

बकरीके घीके गुण—यह अग्निवर्द्धक, आँखोंके लिए लाभदायक, वलकारी, कटुविपाकयुक्त और दमा, खांस तथा यक्ष्मा रोगके लिए उपकारी होता है।

ऊँटनीके घीके गुण—यह कटु, विपाकवाला, अग्निवर्द्धक और शोष, क्रिमि, विष, कफ, कोढ़, गुल्म तथा उदररोगको नाश करनेवाला होता है।

भेड़के घीके गुण—यह पाकमें लघु, सर्वरोगोंका नाशक, अस्थिवृद्धिकारक, चक्षुके लिये हितकर, जठराग्निको उत्तेजित करनेवाला और अश्मरी शर्करा तथा वातरोगका नाशक है।

नारीके दूधसे बने हुए घीके गुण—यह चक्षुको लाभदायक और कफ, वायु, योनिविपत्ति तथा रक्तपित्तमें लाभदायक होता है। इसका गुण अमृतके समान है।

घोड़ीके घीके गुण—यह देह और अग्निका बढ़ानेवाला, पाकमें लघु, तृप्तिकर और विषदोष, नेत्ररोग तथा दाहरोगको नाश करनेवाला होता है।

दुग्धको मथ कर जो घी बनाया जाता है उसके गुण—यह वीर्यको रोकनेवाला, तथा शीत-वीर्य है और नेत्ररोग, पित्त, दाह, रक्तदोष, मदरोग, मूर्छा, भ्रम और वायुका नाश करनेवाला है।

एक दिनके बासी दूधसे जो घी उत्पन्न होता है उसे 'हैयंगवीन' कहते हैं। हैयंगवीन घीके गुण—यह चक्षुके लिए हितकारक, अग्नि बढ़ानेवाला, अत्यन्त सुस्वादु, बलवर्द्धक, शरीरको बढ़ानेवाला, शुक्रवर्द्धक है और बुखारमें खूब लाभदायक है।

पुराने घीके गुण—यह त्रिदोष, मूर्च्छा, कोढ़, विष, उन्माद, अपस्मार और तिमिर दोषको नाश करनेवाला है।

एक वर्षसे अधिक पुराने घीको 'पुराना-घी' कह सकते हैं। पर वह जितना पुराना होगा, उतना ही गुणकारक होगा।

भोजनमें, श्राद्धमें, परिश्रमसे जिसका बलक्षय हुआ हो उसको, पाण्डुरोगमें, कामल और नेत्ररोगमें नया घी ही काममें लिया जाता है। परंतु राजयक्ष्मा, कफरोग, आमजन्यरोग, विसूचिका, विबन्ध, मदात्यय, ज्वर और मन्दाग्नि इन सब रोगोंमें तथा बालक और वृद्धोंके लिए घी उपकारी नहीं है। (भावप्रकाश पूर्व खंड, २य भाग)

सुश्रुतके अनुसार घीके गुण—घी सौम्य, शीतवीर्य, हलका, मधुर, अल्पाभिष्यन्दि और स्निग्धकर होता है। उदावर्त, उन्माद, अपस्मार, शूल, ज्वर, अनाह और वातपित्तमें शांतिकर होता है। यह अग्निवर्द्धक, स्मृतिवर्द्धक, मतिको स्वच्छ करनेवाला, मेधाको तीक्ष्ण करनेवाला, कांतिजनक, स्वरवर्द्धक, लावण्यवर्द्धक, सौकुमार्य, ओजः, बल और आयुवर्द्धक, पवित्र, वयःस्थापक, गुरुपाक, आखोंको लाभदायक, श्लेष्माहद्धिकर, पाप और अलक्ष्मीनाशक तथा विष और रक्षोनाशक होता है।

एकशफ जन्तु (जिसके खुर फटे न हों, जैसे-घोड़ा, गधा आदि)-के घीके गुण—यह हलका, उष्णवीर्य, कषायला, कफनाशक और अग्निदीप्तिकर होता है।

हथिनीके दूधका गुण—भावप्रकाशमें कहे हुए मानुषीके दूधके समान हैं।

घृतमण्डके गुण—यह मधुर और सारक है, तथा योनिशूल, कर्णशूल, चक्षुःशूल और शिरःशूलमें लाभदायक होता है। वस्तिक्रिया, नस्य और अक्षिपूरणमें इसकी आवश्यकता होती है।

ग्यारह वर्षके पुराने घृतको कुम्भसर्पि कहते हैं। इससे भी ज्यादे दिनके पुराने घीको महाघृत कहते हैं। यह कफनाशक होता है, वायुप्रधान व्यक्तिके लिए लाभदायक, बलकारक, मेधाजनक और तिमिररोगनाशक है। यह घी प्राणी मात्रके लिए हितकर और प्रशस्त है। (सुश्रुत सूत्र० ४५ अ०)

(त्रि०) घृ दीप्तौ कर्त्तरि क्त। २ दीप्त। ३ सेवक, सेवन करनेवाला। (शब्दरत्ना०) यह शब्द घृतादि गणान्तर्गत है इस लिए इसका अन्त उदात्त होता है। (क्ली०) ४ जल, पानी। (शब्दार्थचि०)

घृतकरञ्ज (सं० पु०) घृतमिव करञ्जः। करञ्जविशेष, करौंदाका वृक्ष, कण्टकरेजोका पेड़। पर्याय—प्रकीर्य, घृतपर्णक, स्निग्धपत्र, तेजस्वी, विषारि, स्निग्धशाक और विरोचन। इसका गुण—कड़ुवा, उष्ण, वात, व्रण, त्वग् और विषस्पर्शनाशक है। (राजनि०)

घृतकुमारिका (सं० स्त्री०) घृतेन घृतसदृश रसेन कुमारिकेव। घृतकुमारी, घीकुवार, गुआरपाठा, गीँड़पट्ठा।

घृतकुमारी (सं० स्त्री०) घृतेन घृतसदृशरसेन कुमारीव। स्वनामप्रसिद्ध वृक्षविशेष। (Aloe Indica) पर्याय—कुमारी, तरणिसहा, कन्यका, दीर्घपत्रिका, स्थलेरुहा, मृदु, कन्या, बहुपत्रा, अमरा, अजरा, कण्टक, प्रावृता, वीरा, भृंगेष्टा, विपुलास्रवा, ब्रह्मघ्नी, तरुणी, रामा, कापिला अम्बुधिस्रवा सुकण्टका, स्थूलदला, गृहकन्या। इसको हिन्दीमें घीकुवार या बनउस्तकी, पञ्जाबीमें—कुयार, गम्दल वा मसि, दाक्षिणमें—कुमखार, तामिलमें—कत्तले, तेलगुमें—कलबंदा, मलयमें उलनातन कहते हैं।

भारतके नानास्थानोंमें सूखी जमीन पर इसके वृक्ष उत्पन्न होते हैं। उत्तर और पश्चिममें कुछ अधिकता है। वर्षान्तमें इसके फूल उत्पन्न होते हैं। इसकी एक एक डाली १०।१२ फुट बड़ी होती है। इसके पत्तोंसे रस्सी बनती है। उसमें रङ्ग अच्छी तरह जमता है। देशके आदमी इसे ठंडे पानीमें धो कर थोड़ीसी चीनी मिला कर इसकी मिंगी खाया करते हैं।

इसके गुण—यह हिम, तिक्त, मदगन्धयुक्त, रसायन, कफ, पित्त, श्वास और कुष्ठनाशक होता है। (राजनिघण्ट)

भेदक, चक्षुको लाभदायक, मधुर, वृंहण, शुक्र और बल-वर्द्धक, वात, गुल्म, प्लीहा, यकृत्, वृद्धि, ज्वर, ग्रंथि, अग्नि दग्ध, विस्फोट, पित्तरक्त और त्वक् रोगमें विशेष लाभदायक है। (भावप्रकाश पूर्व खण्ड १म भाग) कुमारी शब्द देखो।

घृतकुम्भ (सं० पु०) घीका पात्र, घीका बरतन।

घृतकुल्या (सं० स्त्री०) घृतपूरिता कुल्या, मध्यपदलो० घृतपूर्ण कृत्रिम नदी, घीसे भरी हुई बनावटी नदी।

घृतकेश (सं० पु०) घृतो दीप्तः केशइव ज्वाला यस्य, बहुव्री०। वह्नि, अग्नि, आग।

घृतकौशिक (सं० पु०) घृतो दीप्तः कौशिकः। १ गोत्रविशेष, एक तरहका गोत्र। २ प्रवरविशेष।

घृतच्युता (सं० स्त्री०) कुशद्वीपकी एक नदी।

घृततैलादिकल्प (सं० पु०) घृततैलादीनां रोगविनाशक-पक्वघृततैलादीनां कल्पो विधिः, ६-तत्। घृत और तैल पक्व करनेका विधान, घी और तेल पकानेका नियम।

घृतदीधिति (सं० पु०) घृतेन घृता दीप्ता वा दीधितिरस्य, बहुव्री०। अग्नि, आग।

घृतदुह् (वै० त्रि०) घृतं दोग्धि घृत-दुह-क्विप्। जो घृत दुहता हो।

घृतदोग्धृ (सं० त्रि०) घृतस्य दोग्धा, ६-तत्। जो घृत निकालता हो, जिससे घी टपकता या चूता हो।

घृतधारा (सं० स्त्री०) घृतं तत्सदृशं जलं धारयति घृत धारि-अण् उपपदस०। १ पुराणानुसार कुशद्वीपकी एक नदी। घृतस्य धारा, ६-तत्। २ घीकी धारा।

घृतनिर्णिज् (सं० त्रि०) घृतं दीप्तं निर्णिक् रूपं यस्य, बहुव्री० षत्वं छान्दसत्वात्। १ दीप्तरूप, जिसका चमकीला रूप हो। (पु०) घृतं निर्णेनेति निज-क्विप्, ६-तत्। २ घृतशोधक अग्नि, जिसकी गरमीसे गला कर घी सोधा जाता हो।

घृतप (सं० पु०) घृतं आज्यं पिबन्ति पा-क, उपपदस०। १ आज्यप नामक पितृगणविशेष।

"घृतपाः सोमपा यत्रा वैश्वानरमरीचपाः।" (भारत १३।१६६ अ०)

(त्रि०) २ घृतपायी, जो घी पीता हो।

घृतपदी (सं० स्त्री०) घृतं पादे संस्थितं यस्याः, बहुव्री०, ङीषि पादस्य पद्भावः। १ इड़ा देवताविशेष।

"घृतपदीति यदेवास्यै घृतं पदे समतिष्ठत तस्मादाह घृतपदीति।"

(शतपथब्रा० १।८।१।२६)

घृता दीप्ताः पादा यस्याः, बहुव्री०, पूर्ववत् साधु। इड़ा नामकी सरस्वती।

घृतपर्णक (सं० पु०) घृतमिव स्वादु पर्णमस्य, बहुव्री०। कप्। घृतकरञ्ज, करौंद, कण्टकरंजीका पेड़।

घृतपीत (सं० त्रि०) घृतं पीतं येन, बहुव्री०, पीतस्य परनिपातः। घृतपानकर्ता, जिसने घी पीया हो।

घृतपू (सं० त्रि०) घृतेन पुनाति घृत-पू-क्विप्। १ जो घी आदि पञ्चगव्यसे पवित्र करता हो। जो जल द्वारा पवित्र करता हो।

घृतपूर (सं० पुं०) घृतेन पूर्यते पूरि कर्मणि अप्। पकवानविशेष, घेवर। पर्याय—पिष्टपूर, घृतवर, घातिक। इसकी साधारण पाक-प्रणाली इस प्रकार है—दूध, नारियल और घृतादिके साथ मैदा या सूजीको अच्छी तरह माड़ कर, पिष्टकाकार बना कर घीमें सेकना चाहिये। बादमें चीनीके पाकमें डुबा देना चाहिये। इसीका नाम घृतपूर है। इसके गुण ये हैं—यह गरिष्ट, बलकारी, कफवर्द्धक, रक्त और मांसको बढ़ानेवाला, रक्तपित्तनाशक, सुस्वादु, रुचिकर, पित्तनाशक और अग्नि-वर्द्धक होता है। (राजवल्लभ) चिन्तामणिके मतसे मैदा वा सूजिको दूधमें मड़ कर चीनीके रसमें पका लेनेसे ही घृतपूर बन जाता है। पाक हो जाने पर थोड़ीसी गोलमिर्च और कपूर भुरक देना चाहिये। ऊपरमें जो दो प्रकारकी घृतपूरकी पाकप्रणाली लिखी गई है उसी-को लोग घृतपूर कहते हैं। इसके सिवा और भी कई एक प्रकारकी पाकप्रणालीका उल्लेख पाया जाता है।

नारिकेलज, नारियलसे बना हुआ। इसकी पाक-प्रणाली ऐसी है—नारियल, चीनी और अदरकके साथ मैदा या सूजीको दूधसे माड़ कर रोटीके आकार बना कर घीमें सेकना चाहिए। इसे नारिकेलज घृतपूर कहते हैं।

२ दुग्धज—दूध गरम करते करते जब वह खोआ बन जायगा तब उसमें शक्कर छोड़ देनी चाहिये और थोड़ घीमें सेक लेना चाहिये। इसको दुग्धज घृतपूर कहना चाहिये।

३ शालिभव—उत्तम धानके चावलका चूर्ण और दूध मिला कर खाय बना कर पतले कपड़ेमें छान लेना

चाहिये। फिर उसमें शक्कर मिला कर घीमें पकाना चाहिये। इसका नाम शालिभव घृतपूर है।

४ कसेरुज—केसर चूर्ण करके दूध और शक्करके साथ पकाना चाहिये और जब वह पिण्डाकार हो जाय तब उतार लेना चाहिये। इसको कसेरुज कहते हैं।

५ आम्ररसज—जब अच्छी तरह घी गरम हो जाय तब उसमें पके आमका रस छोड़ देना चाहिये। कुछ देरमें वह पिण्डाकार हो जायगा। उसमें शक्कर मिला देनी चाहिये। इसका नाम आम्ररसज घृतपूर है।

घृतपूर्णक (सं० पु०) घृतं पूर्णमव, बहुव्री०। १ करञ्जवृक्ष, करोंदाका पेड़। २ एक तरहका पकवान।

घृतपृष्ठ (सं० पु०) घृतं दीप्तं पृष्ठमस्य, बहुव्री०। क्रौंच द्वीपके अधिपति, प्रियव्रतके पुत्र एक पराक्रान्त राजा। क्रौञ्च देखो।

(त्रि०) २ जिसका पृष्ठ बहुत दीप्तियुक्त हो, जिसकी पीठ बहुत चमकीला हो।

घृतप्रतीक (सं० त्रि०) घृतं प्रतीकं मुखं यस्य, बहुव्री०। जिसके मुखमे घृत हो, अग्निदेवता।

घृतप्रमेह (सं० पु०) प्रमेह रोगका एक भेद जिसमें मूत्र घीके समान गाढ़ा और चिकना होता है।

घृतप्रयस् (सं० पु०) घृतं तत्सहितं प्रयोऽन्नं यस्य, बहुव्री०। अग्नि, आग।

घृतप्रसक्त (सं० पु०) घृतेन प्रसक्तः, ३-तत्। अग्नि।

घृतप्री (सं० त्रि०) घृतप्रिय, अग्नि।

घृतप्रुष (सं० त्रि०) १ घृतपूर्ण, घीसे भरा हुआ। २ शुभकार, भलाई करनेवाला।

घृतभृत (सं० त्रि०) घीसे सेंका हुआ।

घृतमण्ड (सं० पु०) घृतस्य मण्डः, ६-तत्। गलाये हुए घीका नीचेका अंश, वह सारांश जो घी गरमाये जाने पर नीचे बैठ जाता है।

घृतमण्डलिका (सं० स्त्री०) घृतस्य मण्डलं समूहः तदिव निर्यासोऽस्त्यस्यां घृतमण्डल-ठन्। अत इनि ठनौ। पा ५।२।११५ १ हंसपदीवृक्ष, एक तरहका पेड़। २ रक्तालालुका। ३ काकजङ्घा।

घृतमण्डा (सं० स्त्री०) घृतमण्डवत् निर्यासोऽस्त्यस्याः घृतमण्ड-अच्। १ मधूलि, मालकाँकड़ी। २ रक्तलज्जालुका।

घृतमण्डोद (सं० पु०) मन्दरगिरिस्थ एक ह्रद, मन्दराचल पर्वत पर एक झील।

घृतयोनि (सं० पु०) अग्निविशेष।

घृतरौढ़ीय (सं० पु०) घृताभिलाषी रौढ़ीय, घीके चाहनेवाले रौढ़ीय।

घृतलेखनी (सं० स्त्री०) घृतं लिख्यतेऽनया घृत-लिख करणे ल्युट्-ङीप्। काष्ठनिर्मित पात्रविशेष, काठका बना हुआ घी मापनेकी तराजू।

घृतलोलित (सं० त्रि०) घृतमिश्रित, घीसे मिला हुआ।

घृतवत् (सं० त्रि०) घृतं अस्त्यस्य घृत-मतुप् मस्य वः। १ घृतयुक्त, जिसमें घी हो। २ दीप्तपदयुक्त, जिसका पैर चमकीला हो।

घृतवती (सं० स्त्री०) घृतमुदकं हेतुत्वेन कार्यत्वेन वा अस्त्यस्याम् घृत-मतुप् मस्य वः ततो ङीप्। स्वर्ग और पृथ्वी।

घृतवर (सं० पु०) घृतं वरमत्र, बहुव्री०। पक्कान्नविशेष, एक तरहका पकवान, घेवर।

घृतवर्तनि (वै० त्रि०) घृतं वर्तन्यां पथि यस्य, बहुव्री०। जिसके रास्तेमें जल हो, जिसको जानेके पथमें जल मिले।

घृतवर्त्ति (सं० स्त्री०) घृतयुक्ता वर्त्तिः, मध्यपदलो०। घृतयुक्त दीपकी दशा, घीमें डुबोई हुई चिराककी बत्ती।

घृतवृद्ध (सं० पु०) घृतेन वृद्धः, ३-तत्। अग्नि, घी डाल देनेसे अग्निकी वृद्धि होती है, इस लिये अग्निका नाम घृतवृद्ध पड़ा है।

घृतव्रत (सं० त्रि०) जो सिर्फ घी पी कर जीवन पालन करता हो।

घृतश्च्युत (सं० त्रि०) घृतंश्च्योतति घृतश्चुत-क्विप्। घृतस्रावी, जो घी पीता हो।

घृतश्री (सं० त्रि०) घृतेन श्रीः शोभा यस्य, बहुव्री०। घीसे जिसकी शोभा हुई हो।

"हुता यच लष्टारमिन्द्रं देवं भिषजं सुयजं घृतश्रियम्।" (शुक्ल यजु, २८।९)

"घृतश्रियं घृतेन श्रीः शोभा यस्यतम्।" (महीधर)

घृतसद् (सं० त्रि०) घृते सीदति घृत-सद्-क्विप्। जो घीमें रहता हो।

"अयमु वदं त्वा घृतसदं सोमसदम्।" (शुक्ल यजुः ८।१)

घृतस्थला (सं० स्त्री०) घृतं स्थलं उत्पत्तिस्थानं यस्याः, बहुव्री०। अप्सराविशेष। (हरिवंश १२६ अ०)

घृतस्ना (वै० त्रि०) घृतवत् स्नाति पवित्रो भवति स्ना-विच्। घृतके समान पवित्र, घीके जैसा शुद्ध।

घृतस्नु (वै० त्रि०) घृतं स्नौति घृत-स्नु-क्विप् छान्दसत्वान्न तुगागमः। १ जो घृत छिड़कता हो। घृतं जलं स्नौति स्नु-क्विप् पूर्ववत् साधु। २ जो जल सींचता या छिड़कता हो।

घृतस्पृश् (सं० त्रि०) घृतं स्पृशति स्पृश-क्विन्। जो घृत स्पर्श करता हो, जो घी छूता हो।

घृतहेतु (सं० पु०) नवनीत, नवनी।

घृतह्रद (सं० पु०) घृतस्य ह्रदः, ६ तत्। घृतपूर्ण ह्रद, घीसे भरा हुआ झील।

घृता (सं० स्त्री०) १ काकजङ्घा। २ काकतुण्डिका।

घृताक्त (सं० त्रि०) घृतेन आक्तः, ३-तत्। जो घृतमें लिप्त हुआ हो, जिसने अपने सम्पूर्ण शरीरमें घी लगाया हो।

घृताङ्क (सं० पु०) सरलद्रव।

घृताचि (सं० त्रि०) घृताक्त, घृतमय, घीमें डूबा हुआ।

घृताची (सं० स्त्री०) घृतं जलं कारणतया अञ्चति अञ्च-क्विप न लोपे स्त्रियां ङीप्। १ अप्सराविशेष। किसी समय भरद्वाज और विश्वामित्र इसे देख मुग्ध हो गये थे। इसके साथ व्यासदेवने सम्भोग किया था, उसीसे शुकदेवका जन्म हुआ। (भारत शान्ति ३२५ अ०) शुकदेव देखो। २ राजर्षि कुशनाभकी स्त्री, इसके गर्भसे एकसौ कन्या पैदा हुई थीं। (रामायण १।३२ स०) कुशनाभ देखो। ३ प्रमतिकी स्त्री और रुरुकी माता। ४ रात्रि, रात। ५ सरस्वती। ६ नागविशेष, एक तरहका सर्प। ७ वह करछुली जिससे यज्ञमें घी अग्निमें डाला जाता है। ८ एला, इलायची।

घृताचीगर्भसम्भवा (सं० स्त्री०) १ स्थूल एला, बड़ी इलायची। २ घृताचीकी कन्या। घृताची देखो।

घृताञ्च (सं० त्रि०) घृत अञ्चति क्विप्। १ जिसको घृत मिलता हो, जो घी पाता हो।

"घृताचसि युवभ्यां।" (यजुर्वेद ; २।६)

२ जलयुक्त, जिसमें जल हो। घृतं दीप्तरूपं अञ्चति अञ्च-क्विप्। ३ दीप्तरूपयुक्त, जिसका रूप चमकीला हो।

घृतादि (सं० पु०) घृतमादिर्यस्य, बहुव्री०। पाणिनीका एक गण, घृतादि आकृतिगण। (सि०कौ०)

घृतान्न (सं० पु०) घृतमाज्यमन्नमदनीयं यस्य, बहुव्री०। १ हविर्भुज, अग्नि। (त्रि०) घृतभोजी, जो घी पीता हो। (क्ली०) २ घृतमिश्रित अन्न, वह अन्न जिसमें घी मिला हो।

घृतार्चिस् (सं० पु०) घृतेनार्चिर्यस्य, बहुव्री०। अग्नि, आग।

घृतावनि (सं० स्त्री०) घृतस्यावनिरिव। यूपकर्ण, यज्ञ-स्तम्भ, यज्ञका खम्भा।

घृतावृध् (सं० त्रि०) घृतमुदकं वर्द्धतेऽनेन वृध-क्विप् पूर्व दीर्घश्च। उदकवर्द्धक, जिसके द्वारा जलकी वृद्धि हो।

घृतासुति (सं० पु०) घृतमुदकं वृष्टिरूपं आसुयते येन आ-सु-क्तिच्। १ वृष्टिकारक मित्रावरुण। वर्षा करनेवाले इन्द्र। (त्रि०) घृतं आसुतिरन्नं यस्य, बहुव्री०। घृत-भोजी, जो सिर्फ घी पी कर रहता हो।

घृताहवन (सं० पु०) घृतेनाहूयतेऽस्मिन् आ-ह्वे आधारे ल्युट्। जिसमें घृतकी आहुति दी जाती है, अग्नि।

घृताहुति (सं० स्त्री०) घृतेनाहुतिः, ३-तत्। जो आहुति घीसे दी जाती है।

घृताह्व (सं० पु०) घृतं तद् गन्धमाह्वयते स्पर्द्धते निर्यासेन घृत-आ-ह्वे-क, उपपदस०। एक तरहका वृक्ष, जिसके रसमें घीकीसी महक आती है। वृकधूप, कृत्रिमधूप।

घृतिन् (सं० त्रि०) घृतमाज्यमुदकं वा प्रशस्तमस्त्यस्य घृत-इनि। १ प्रशस्त घृतयुक्त, जिसका घी अच्छा हो। २ जिसमें उत्तम जल हो।

घृतिनी (सं० स्त्री०) घृतिन्-ङीप्। गङ्गा।

घृतिला (सं० स्त्री०) शाक क्षुपविशेष, पृश्निपर्णी, पीठ-वन, पठौनी।

घृतेय (सं० पु०) पुरुवंशके रौद्राश्व नामक राजाके पुत्र। कृतेय देखो।

घृतेली (सं० स्त्री०) घृते स्नेहद्रव्ये इलति इल-अच् गौरादित्वात् ङीष्। तैलपायिका, तिलचटा।

घृतोद (सं० पु०) घृतमिव स्वादु उदकमस्य, बहुव्री०। समुद्रविशेष, इसीसे कुशद्वीप घिरा हुआ है। कुश देखो।

घृतौदन (सं० पु०) घृतेन मिश्र ओदनः, मध्यपदलो०। घृतमिश्रित ओदन, घी मिला हुआ भात।

"दध्योदनच क्षीराय ग्रक्राय च घृतौदनम्।" (संस्कारतत्त्व)

घृत्य (सं० त्रि०) घृते भवः घृत-यत्। घृतसम्बन्धीय, जो घीसे उत्पन्न हो।

घृत्समद (सं० पु०) गृत्समद पृषोदरादित्वात् गस्य घत्वं। ऋषिविशेष। (ऋषि पु०) गृत्समद देखो।

घृषु (वै० त्रि०) प्रधान, श्रेष्ठ, उत्कृष्ट, उत्तम।

घृष्ट (सं० त्रि०) घृष कर्मणि क्त। मर्दित, जो रगड़ा गया हो। (पु०) २ चन्दनविशेष। ३ गोधूम, गेहूं। (क्ली०) ३ सद्यव्रण, ताजी घाव।

घृष्टतल (सं० पु०) घोड़ेके पैरका रोग।

घृष्टि (सं० स्त्री०) घृष्टतेऽसौ घृष कर्मणि क्तिच्। १ वाराहीकन्द, गेठी। २ अपराजिता। घृष भावे क्तिन्। ३ घर्षण, रगड़, घिसा। ४ स्पर्धा। (पु०) घृष कर्तरि क्तिच्। ५ शूकर, सूअर।

घृष्टिला (सं० स्त्री०) घृष्टिं लाति ला-क। घृष्टिला देखो।

घृष्वि (सं० पु० स्त्री०) घर्षति भूमिं तुण्डेन घृष क्विन् निपातने साधु। कृषि घृष्विध्वबीति। उण् ४।५६। १ वराह, सूअर। (त्रि०) २ घर्षणशील, रगड़नेके योग्य, घिसने लायक। (स्त्री०) घृष भावे क्विन्। ३ घर्षण, रगड़, घिसा।

घृष्विराधस (सं० स्त्री०) घृष्टानि राधांसि सोमलक्षणानि हवींषि यस्य, बहुव्री०। पृषोदरादित्वात् निपातने साधुः। मरुत् देवता।

घृष्वि (सं० पु०) वनवराह, जंगली सूअर।

घेंघ (देश०) १ एक तरहका भोजन जो चने और चावलको मिला कर पकाया जाता है। २ गलामें निकला हुआ मांसपिण्ड, घेघा।

घेंटा (हिं० पु०) सूअरका बच्चा।

घेघा (देश०) १ गला, पेटमें भोजन जानेकी गलेकी नली। २ गलेका एक तरहका रोग जिसमें गलेमें सूजन हो कर बतौड़ासा निकल आता है। यह रोग अकसर गोरखपुर बस्ती आदि जिलोंके अधिवासियोंको हुआ करता है।

घेघुलिका (सं० स्त्री०) क्षोद्यादन, एक तरहका कन्द।

घेतल (देश०) महाराष्ट्रोंके पहननेका जूता।

घेर (हिं० पु०) घेरा, परिधि।

घेरघार (हिं० पु०) १ चारों ओरसे घेरनेकी क्रिया। २ चारों ओरका फैलाव। ३ खुशामद, विनती।

घेरण्ड—एक ग्रन्थकार। इन्होंने शाक्त उपासककी योगशिक्षाके लिये घेरण्ड-संहिता नामसे एक तन्त्र रचना की है। उस ग्रन्थमें निम्नलिखित बहुतसे विषय वर्णित हैं- १ उपदेश, धौत्यादिषट् कर्मकथा, २ घटस्थ योगकथा, ३ घटस्थ योगमुद्राप्रकरण, ४ प्रत्याहारप्रयोगकथा, ५ प्राणायाम लक्षण, ६ ध्यानयोगकथा और ७ समाधि योग।

घेरना (हिं० क्रि०) १ परिवेष्टन करना, चारों ओर हो जाना। २ छेंकना, ग्रसना, आक्रांत करना। ३ चराना। ४ किसी जगहको अपने कब्जेमें लाना। ५ खुशामद करना।

घेरा (हिं० पु०) १ चारों तरफकी सीमा। २ परिधिका माप। ३ परिवेष्टित स्थान, घेरी हुई जगह। ४ चारों ओरसे आक्रमण, चढ़ाई, मुहासरा।

घेराई (हिं० स्त्री०) घिराई देखो।

घेरिया—(गिरिया) मुर्शिदाबाद जिलेके अन्तर्गत एक छोटा नगर। यह सूतीके दक्षिण अक्षा० २४° ३६´ १५´´ उ० और देशा० ८८° ८´ १५´´ पू०में अवस्थित है। यहां दो लड़ाइयां हुई थीं—१ली, १७४० ई०में सरफराज खां बङ्गालका शासनभार ग्रहण करनेके लिये अलीवर्दी खाँसे लड़ा था। उस युद्धमें सरफराज खाँ पराजित हुए थे।

२री १७६३ ई०में बङ्गालके नवाब मीर कासीमके साथ ईष्ट इण्डिया कंपनीका युद्ध हुआ था। अंगरेजोंने नवाबको पराजित और राज्यच्युत कर फिर भी मीर जाफरको मुर्शिदाबादका नवाब बनाया था।

घेवर (हिं० पु०) घृतपूर, मैदे, घी और चीनीकी बनाई हुई एक तरहकी मिठाई।

घेश—मध्यप्रदेशमें सम्बलपुर जिलाके सामन्तके अधीन एक राज्य। यह सम्बलपुरसे लगभग ५० मील पश्चिममें अवस्थित है। इसमें सब मिला कर १६ ग्राम लगते हैं, भूमिका परिमाण प्रायः १२ वर्गमील होगा जिसमेंसे ½ अंश जमीन आबाद है।

२ उक्त नगरका प्रधान ग्राम। यह अक्षा० २१° ११´ ३०´ उ० और देशा० ८४° २०´ पू०में अवस्थित है।

घैंटा (हिं० पु०) घेटुला देखो।

घैंसहर (हिं० स्त्री०) फौज, सेना।

घैया (हिं० पु०) १ शस्त्रका वह आघात जो किसी पेड़ या लकड़ी वगैरहको काटने वा उसमेंसे रस आदि निकालनेके लिए पहुँचाया जाय। २ ताजे तथा बिना मथे हुए दूध पर पलराते हुए मक्खनको काछ कर इकट्ठा करनेकी क्रिया। (स्त्री०) ३ दिशा, तरफ, ओर।

घैर, घैरु (देश०) १ अपयश, बदनामी, उपहास। २ गुप्त शिकायत, चुगली।

घैला (हिं० पु०) कलश, घड़ा, गागर।

घैहल (हिं० वि०) घायल, जखमी, जिसके घाव वा चोट लगी हो।

घैहा (हिं० वि०) जखमी, घायल।

घोंघ (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया।

घोंघा (हिं० पु०) १ शङ्खकी भांतिका एक कीड़ा। यह प्रायः नदियों, तलावों और जलाशयोंमें रहता है। इसकी आकृति घुमावदार होती है। इसका मुंह गोल होता है और खुलता तथा बन्द हो सकता है। इसके ऊपरका अस्थिकोष शङ्खसे बहुत पतला होता है। इसका चूना भी बनाया जाता है। इसके मांसके गुण—मधुर और पित्त नाशक। २ गेहूंकी बालमें रहनेवाली वह कोथली जिसमेंसे दाना निकलता है। (वि०) ३ जिसमें कुछ सार न हो। ४ मूर्ख, बेवकूफ, जड़।

घोंचवा (हिं० पु०) वह बैल जिसके सींग मुड़ कर कान तक पहुंचे हों।

घोंचा (हिं० पु०) १ स्तवक, गुच्छा, गौद, घौद। २ घोंचवा देखो।

घोंची (हिं० स्त्री०) वह गाय जिसके सींग कानोंसे लगी हो।

घोंसुआ (हिं० पु०) घोंसला, खोता।

घोंट (हिं० पु०) १ बूंट नामका पेड़। २ एक जङ्गली वृक्ष। यह बहुत बड़ा होता है। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है तथा किसानोंके औजार बनानेके काममें आती है।

घोंटना (हिं० क्रि०) पीना, पानी वा अन्य किसी द्रवित पदार्थको घूंट घूंट करके पीना। २ पचाना, किसी दूसरेकी चीजको हड़प कर जाना अर्थात् ले कर उसे वापिस न देना। ३ इस तरहसे गलाका दबाना कि दम रुक जाय, गला मरोड़ना। ४ घोटना देखो।

घोंपना (हिं० क्रि०) १ गांठना, बुरी तरह सीना। २ गड़ाना, चुभाना, धंसाना।

घोंसला (हिं० पु०) कुशालय, नीड़, खोता, पक्षियोंके रहनेका घर वा स्थान जिसको पक्षीगण वृक्ष, पुरानी दीवार आदि पर घास, फूंस, पत्ते और तिनके आदिसे बनाते हैं। इसमें चिड़ियां अण्डा देती हैं।

घोंसुआ (हिं० पु०) घोंसला देखो।

घोखना (हिं० क्रि०) स्मरण रखनेके लिये बार बार पढ़ना, रटना, घोटना।

घोखवाना (हिं० क्रि०) रटवाना, बार बार कहलाना, स्मरण कराना।

घोगर (देश०) एक तरहका पेड़।

घोघ (देश०) एक तरहका जाल जिससे बटेर फँसाया जाता है।

घोघा (देश०) चनेकी फसलमें हानि पहुंचानेवाला एक तरहका कीड़ा।

घोघारी—सिन्धुप्रदेशके शिकारपुर जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २७° २८´ उ० और देशा० ६८° ४´ पू०में अवस्थित है। अधिवासियोंमें मुसलमान, मंगन, शियाल और वगन जातिके लोग अधिक हैं। यहां चावलका रोजगार खूब बढ़ा चढ़ा है।

घोचिल (देश०) एक तरहका पक्षी।

घोटक (सं० स्त्री०) घोटते परिवर्तते गत्वा प्रत्यागच्छति घुट ण्वुल्। घोड़ा देखो।

घोटकमुख (सं० पु०) घोटकस्य मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्री०। १ किन्नरविशेष। २ प्रवर ऋषिविशेष।

घोटकसेना (सं० स्त्री०) घोटकारोही सैन्य, जो सैन्य घोड़े पर चढ़ कर युद्ध करते हैं।

घोटकारी (सं० पु०-स्त्री०) घाटकस्य अरिः, ६-तत्

१ महिष भैंसा। (पु०) करवीर, कनेरका पेड़।

करवीर देखो।

घोटकी (सं० स्त्री०) घोटक ङीप्। घोटक जातीय स्त्री, घोड़ी।

घोटकी—बम्बईके सिन्धुप्रदेशके अन्तर्गत सक्कर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २७° ४० तथा २८° ११ उ० और देशा० ६६° ४ एवं ६८° ३५ पू०में अवस्थित है। इसका रकबा ३५० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ४८६५० है। इसमें एक शहर (घोटकी) और १२६ गांव लगते हैं।

२ इस इलाकेका प्रधान शहर घोटकी है। यह अक्षा० २८° उ० और देशा० ६६° २१ पू०में अवस्थित है। अधिवासियोंमें मुसलमान ही ज्यादा हैं। लोकसंख्या प्रायः ४००० है। यह शहर १७४७ ई०में स्थापन किया गया था। पीर मुसानशा इस नगरके स्थापनकर्ता हैं। उनका एक दरगाह (समाधिस्थान) है, जिसकी लम्बाई ११३ फुट और चौड़ाई ६५ फुट है। इससे बड़ा दरगाह सिन्धु प्रदेशमें दूसरा नहीं है, इसको मुसलमान लोग बड़ा पवित्र मानते हैं। इस शहरमें एक रेलवे-ष्टेशन है। नील, पशम और ईखका रोजगार यहां जोरोंसे चलता है। यहांकी धातु और काठ पर खोदी हुई चीजें और रङ्गदार कारीगरी बहुत प्रसिद्ध है।

घोटना (हिं० क्रि०) १ रगड़ना, किसी चीजको लोढ़ा या दूसरी वस्तुसे इसलिए बार बार रगड़ना कि वह बहुत बारीक पिस जाय। जैसे—भांग घोटना, सुरमा घोटना। २ किसी वस्तु पर दूसरी वस्तु इस लिए रगड़ना कि, जिससे वह चमकदार और चिकनी हो जाय जैसे—तख्ती घोटना, दीवार घोटना, कपड़ा घोटना। ३ अभ्यास करना, मश्क करना, कोई कार्य विशेषतः लिखने पढ़नेका कार्य इस लिए बार बार करना कि जिससे उसका अभ्यास हो जाय। जैसे—श्लोक घोटना, सबक घोटना। ४ फटकारना, डांटना। ५ मूंड़ना, छुरा या उस्तरा फेर कर शरीरके बाल दूर करना। ६ गला मरोड़ना, गलेको इस तरह दबाना कि श्वांस रुक जाय।

(पु०) ७ रङ्गरेजोंकी लकड़ीका वह कुन्दा जिस पर रख रंगे कपड़े घोटे जाते हैं यह कुछ जमीनमें गड़ा रहता है। ८ घोटनेका औजार।

घोटनी (हिं० स्त्री०) वह छोटी वस्तु जिससे कोई वस्तु घोटी जाय।

घोटवाना (हिं० क्रि०) १ रगड़वाना, रगड़ कर चिकना कराना। २ पालिश कराना। ३ बाल बनवाना।

घोटा (हिं० पु०) १ घोटनेका काम करनेकी वस्तु। २ कपड़ा पर चमक लानेका रङ्गरेजका औजार। ३ भांग रगड़नेका डंडा। ४ रगड़ा, घिस्सा। ५ क्षौर, हजामत।

घोटाई (हिं० स्त्री०) १ रगड़नेकी क्रिया। २ घोटनेकी मजदूरी।

घोटाघोबा (देश०) खसियाकी पहाड़ियों, पूर्वी बङ्गाल तथा लङ्का आदिमें पाये जानेवाला एक तरहका पेड़, कनकुटकी, रेवाचीनी, सीरा।

घोटान—सिन्धुप्रदेशके हैद्राबाद जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २५° ४४ ४५ उ० और देशा० ६८° २७ पु०में अवस्थित है। यहांके अधिवासियोंमें मुहानो और लोहानो जाति ही अधिकतासे है। इस शहरमें शिकारपुर, आदमजी, तान्दो आदिकी उत्पन्न वस्तु बाहर भेजनेके लिए इकट्ठी की जाती है। यहांसे प्रतिवर्ष बहु परिमाणमें अनाज, रुई, बीज और खार बाहर जाता है।

घोटाला (देश०) घपला, गड़बड़, गोलमाल।

घोटिका (सं० स्त्री०) घोटते परिवर्तते घुट-ण्वुल्-टाप् अत इत्वं। १ वृक्षविशेष, कर्कटी, एक तरहका पेड़। पर्याय—कर्कटी, तुरंगी, चतुरंग। इसके गुण—यह कटु, उष्ण, मधुर है और वात, व्रण, खुजली, कोढ़ और श्वयथु (सूजन) नाशक है। (राजनि०) २ लोनी शाकविशेष। ३ अश्वा, घोड़ी।

घोटी (सं० स्त्री०) घोटते परिवर्तते घुट परिवर्तने अच् स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है। १ घोटकी, घोड़ी। २ घोण्टा। ३ क्षुद्र बदर।

घोड़—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेके अन्तर्गत खेड़ इलाकेका एक गांव। यह अक्षा० १८° २ उ० और देशा० ७३° ५३ पू०में खेड़ शहरसे २५ मील उत्तरकी ओर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५७२० है। यह आम्बगांवपेठ

का सदर मुकाम है। इस गांवमें प्रत्येक शुक्रवारको पैठ (हाट) लगती है। यहां डाकघर, थाना और स्कूल है। यहां एक तीन खिलान (लदाव) विशिष्ट पुरानी मसजिद है। लदाव दो पत्थरके खम्भोंके ऊपर निर्भर है। एक एक खम्भ एक एक पत्थरसे बना हुआ है। प्रत्येक स्तम्भों पर पारसी लिपिमें कुछ न कुछ लिखा हुआ है। इससे मालूम होता है कि मीरमहम्मद नामक एक व्यक्तिने १५८० ई०में यह मसजिद बनवाई थी। १८३६ ई०में कोली जातिके लोगोंने बिगड़ कर यहांके खजाने और थानेको लूटना चाहा था। उस समयके सहकारी कलक्टर साहबके उद्योगसे उनमेंसे बहुतसे पकड़ भी गये थे।

घोड़चढ़ा (सं० पु०) घुड़चढ़ा देखो।

घोड़दौड़ (हिं० स्त्री०) घुड़दौड़ देखो।

घोड़वच (हिं० स्त्री०) बच नामका ओषध, यह सिर्फ घोड़की बीमारीमें काम आता है।

घोड़बन्दर—बम्बईके थाना जिलेके अन्तर्गत सलसट्टी तालुकका एक बन्दर। यह अक्षा० १८° १७ उ० और देशा० ७२° ५४ पू में बसाई खाड़ीकी बाईं ओर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७०० है। इसमें रायजटन, मनोरी, बान्द्र और भेसाव ये चार बन्दर और भी शामिल हैं। यहांसे चावल, पत्थर, चूना, बालू, नारियल, नमक, मछली और लकड़ीको रफ्तनी होती है तथा धातुकी चीजें, कपड़ा, मसाला, तेल, मक्खन, तमाकू आदिकी भी आमदनी होती है। पोर्तुगीजोंके समयमें (१६७२ ई०में) शिवाजीकी दृष्टि इस पर पड़ी थी तथा १७३७ ई०में मराठोंने इस पर अधिकार कर लिया था।

घोड़मुंहा (हिं० पु०) घुड़मुंहा देखो।

घोड़राई (हिं० स्त्री०) बड़े बड़े दानेवाली राई। यह मसालेके साथ घोड़ोंको दी जाती है।

घोड़रासन (हिं० पु०) एक तरहका रासन या रास्ना।

घोड़रोज (हिं० पु०) घोड़ोंके समान तेज भागनेवाली एक तरहकी नीलगाय। कहीं कहीं इसे पालतू बना कर गाड़ियोंमें भी जोतते हैं।

घोड़सन (हिं० पु०) एक तरहका सन।

घोड़सार (हिं० स्त्री०) अस्तबल, पैंड़ा।

घोड़ा (हिं० पु०) पशुविशेष, चार पैरोंवाला एक बड़ा पशु। इसका संस्कृत पर्याय—घोटि, तुरग, अश्व, तुरङ्गम, वाजी, वाह, अर्वर, गन्धर्व, हय, सैन्धव, सप्ति, घोट, पीति, पोथि, तार्क्ष्य, हरि, वीती, मुद्गभोजी, घाराट, जवन, जितव, जवी, वाहनश्रेष्ठ, श्रोभ्राता, अमृतसोदर, मुद्गभुक्, शालिहोत्र, लक्ष्मीपुत्र, प्रकीर्णक, वातायन, श्रीपुत्र, चामरी, फेणी, शालिहोत्री, मरुद्रथ, राजस्कन्ध, हरिद्राक्ष, एकशफ, किन्धी, ललाम, विमानक, अत्य वह्नि, दधिक्रा, दधिक्रावा, एतग्व, एतश, पैद्व, दौर्गह, उच्चैःश्रवस, आशु, व्रध्न, अरुष, मांश्चत्व, अव्यथय, श्येनास, सुपर्णस्, पतङ्ग, नर, हंसास्य और घाटक। बङ्गला—घोड़ा, पारसी—अस्प, जन्द—अस्प, आरबी—हिसान्, तामिल—कुदरि, तेलगू-गुरमू, तुर्क—सुक्, ब्रह्म—सोन, लाटिन—Equus, Caballus, हिब्रू—सुस्, जर्मन—Pferd, gaul, इटाली और पर्तुगीज—Cavallo, फरासी—Cheval, ओलन्दाज—Paard, दिनेमार—Hest, पोलैण्ड—कोण, रुष—लोमचद्, स्पेनीय—कावालो, स्कन्दनाभ—हस्त।

इस देशके प्राचीन अश्वविदोंका विश्वास है कि, पहिले सब घोड़ोंके ही पङ्ख होते थे और वे बड़ी बड़ी पक्षियोंकी भांति आकाशमें उड़ा करते थे। किसी समयमें देवराज इन्द्रके आदेशसे शालिहोत्रने इनके पङ्ख काट लिये थे, तबहीसे घोड़े जमीन पर चलने लगे हैं; आकाशमार्गसे जानेमें असमर्थ हो गये हैं। प्राचीन तत्त्ववेत्ता मामूली तौरसे चार प्रकारके घोड़े बतलाते हैं। जैसे—उत्तम, मध्यम, कनीयान्, वा कनिष्ठ और नीच देशोंके अनुसार ये चार भेद हुए हैं। जैसे-ताजिक, खुराशान और तुषार देशमें जो घोड़े होते हैं, उनकी उत्तम संज्ञा होती है, गोजिकान, केकान (कोकाण) प्रौढ़ाहार, ताड़ज, उत्तमाश और वाजशूलके घोड़ोंका मध्यम कहते हैं, गन्धार, साध्यवास और सिन्धुदेशमें जो घोड़े पैदा होते हैं, उन्हें कनिष्ठ कहते हैं, इसके सिवा अन्य देशोंके जितने घोड़े हैं; उनको नीच समझना चाहिये। (१)

(१) "ताजिका खुराशानाश्च तुषारश्चोत्तमा: हया:।
गोजिकानाश्च केकाणा: प्रौढ़ाहाराश्च मध्यमा:॥
ताड़जा उत्तमाशाश्च वाजशूलाश्च मध्यमा:।
गंधारा: साध्यवासाश्च सिंधुवारा: कनीयस:॥"
(भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु)

भोजके युक्तिकल्पतरु ग्रन्थमें लिखा है कि, जलसे एक तरहके घोड़े पैदा होते हैं; उन्हें जलज, वह्निसे जो घोड़े उत्पन्न होते हैं उन्हें वह्निज और वायुसे जो घोड़े उत्पन्न होते हैं, उन्हें वायुज कहते हैं। इसके सिवा जो घोड़ोंके गर्भमें पैदा होते हैं, उन्हें मृगज कहते हैं। जलज घोड़ोंको ब्राह्मण, वह्निज घोड़ोंको क्षत्रिय, वायुज घोड़ोंको वैश्य और मृगज घोड़ोंको शूद्र समझना चाहिये। ब्राह्मण जातीय घोड़ोंके शरीरसे पुष्पगन्ध, क्षत्रिय जातीय घोड़ोंकी देहसे अगुरुगन्ध, वैश्य जातीय घोड़ोंके शरीरसे घीकी सुगन्ध और शूद्र जातीय घोड़ोंकी देहसे मछलीकी दुर्गंध निकला करती है। इसके सिवा ब्राह्मण जातीय घोड़े विवेकी और दयायुक्त, क्षत्रिय जातीय बलवान् और तेजस्वी, वैश्य जातीय ईषदुग्र भावयुक्त तथा शूद्र जातीय घोड़े अतिशय दुर्बल होते हैं। इनमेंसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जातिके घोड़े राजाओंके लिए उत्कृष्ट हैं और शूद्र जातीय घोड़े अमङ्गलकारी होते हैं।

अश्वविद्गण मामूली तौर पर घोड़े का अङ्गसंस्थान इस प्रकार बतलाते हैं—

घोड़े का मुख २७ अंगुलप्रमाण, कान ६ अंगुलप्रमाण, ललाट ४ अंगुलप्रमाण, गर्दन ४७ अंगुलप्रमाण, पृष्ठवंश २४ और कटिदेश २७ अंगुलप्रमाण होता है। लिङ्ग एक हाथका, अण्ड ४ अंगुलप्रमाण, मध्यस्थान २४ अंगुलप्रमाण, हृदय १६ अंगुलप्रमाण, कटि और कुक्षिका मध्यस्थान ४० अंगुलप्रमाण, मणिबन्ध और प्रत्येक खुर ४ अंगुलप्रमाण और पैर लम्बाईमें १०० अङ्गुलके करीब होते हैं।

घोड़े के दाँत देख कर उसकी उमरका निश्चय किया जा सकता है, इनके दाँतोंकी क्रमसे आठ अवस्था होती हैं। जैसे—कालिका, हरिणी, शुक्ला, काँचा, मक्षिका, शङ्ख, मुषलक और चलता।

कालिका—दाँतोंका स्वाभाविक रंग नष्ट हो कर जब उसका रंग काला हो जाता है तब उसको कालिका कहते हैं। पहिले पहल घोड़ोंके सब ही दाँत सफेद होते हैं, फिर उमर बढ़नेके साथ साथ काले होते रहते हैं। घोड़ेके चार वर्षकी उमरमें ४ दाँत काले होते हैं। ऐसे ही पांच वर्षमें ५, छे वर्षमें ६, सात वर्षमें ७ और आठ वर्षमें सारे ही दाँत काले हो जाते हैं।

हरिणी—दाँतोंका काला रङ्ग नष्ट हो कर जब पीला रङ्ग हो जाता है, तब उन्हें हरिणी कहते हैं। नौवें वर्षसे दाँतोंका रङ्ग पीला होना शुरू होता है और दशवें या ग्यारहवें वर्षमें सब पीले हो जाते हैं।

शुक्ला—पीले दाँत जब सफेद होते रहते हैं तब उन्हें शुक्ला कहते हैं। १२से १४ वर्ष तक दाँतोंका रङ्ग सफेद रहता है।

काँचा—दाँतोंका रङ्ग काँचके समान होने पर उसका काँचा कहते हैं। ऐसी अवस्था १५से १७ वर्ष तक रहती है।

मक्षिका—दाँतोंका रङ्ग जब मक्षिकाके समान होता है, तब उसे मक्षिका कहते हैं। १८से २० तक ऐसी अवस्था रहती है।

शङ्ख—घोड़ेके दाँतोंका रङ्ग जब शङ्खके समान आभाशाली हो जाता है तब उसकी शङ्ख संज्ञा होती है। यह दशा २१से २३ वर्ष तक रहती है।

मुषल—जिस समय दाँतोंका रङ्ग मुसलाकृति हो जाता है तब उसे मुषल कहते हैं। २४से २६ वर्ष तक ऐसी अवस्था रहती है।

चलता—अर्थात् दाँतोंका हिलना। २६ वर्षके बाद घोड़ेके दाँत हिलने लगते हैं। इसी दशामें ३ वर्ष तक रहते हैं, फिर गिर जाते हैं। भोजके मतसे घोड़े ३२ वर्षसे ज्यादा नहीं जीते।

घोड़ेके शुभ लक्षण—घोड़े का शरीर दीर्घ और ह्रस्व तथा मुख बड़ा हो तो अच्छा है। ऐसे घोड़े गाड़ी और वाहनके कामके लिए अच्छे होते हैं। घोड़ेके मुख, भुजयुगल और कृकाटिका (गर्दन) ये चार अंग दीर्घ हों तो अच्छा। नासिकाका पुटद्वय, ललाट और कफ (अवयवविशेष) ये चार स्थान उन्नत होनेसे वह घोड़ा अच्छी जातिका समझा जाता है। जिस घोड़ेके दोनों कान, मणिबन्ध, पूँछ और कोष्ठ (कोठा) प्रशस्त और अपेक्षाकृत छोटे हों, देहका रङ्ग पीला हो, चारों पैर और आँखें सफेद हों, उसको चक्रवाक कहते हैं। इस जातिका घोड़ा प्रभुभक्त और राजाओंके उपयुक्त होता है जिस घोड़ेके मुंह पर पके हुए जम्बू फलके समान चिह्न

रहता है और पैरोंका रङ्ग सफेद होता है, उसको मल्लिक कहते हैं। जिस घोड़ेका सारा शरीर सफेद हो और एक कान काला हो, उसे अश्वमेध यज्ञमें वध करते हैं। यह घोड़ा अति दुर्लभ है। जिसकी पूँछ, मुष्क (गलेकी थैली), मुख और मस्तकके बाल तथा पैर सफेद हों, उसे अष्टमंगल कहते हैं। जिसके पैर सफेद और ललाट पर चन्द्रमा जैसा चिह्न रहता है, उसका नाम कल्याणपंचक है। इसके पोषनेवालेका सदा मङ्गल होता रहता है। बहुतसे रङ्गवाला घोड़ा भी उत्तम होता है। इनमेंसे जिसके शरीरमें अच्छे अच्छे रङ्ग तो बढ़ें और बुरे रङ्ग नष्ट होते जांय, वह घोड़ा अन्य घोड़ोंकी श्रीवृद्धि करता है।

आवर्तके गुण—आवर्त उसे कहते हैं, जो भ्रमिके समान बालोंको बना देता है। आवर्त छह प्रकारका होता है। घोड़ोंके दाहिनी तरफ आवर्तका होना अच्छा गिना जाता है। नाकके अग्रभागमें, तथा ललाटमें शंख, कण्ठ और मस्तकमें आवर्तका रहनेसे, वह घोड़ा श्रेष्ठ समझा जाता है। जिस घोड़ेका ललाट, कुकुन्दर (अवयवविशेष) और मस्तक पर आवर्तसे सुशोभित हो, वह सर्वोत्कृष्ट घोड़ा समझा जाता है। घोड़ेके दहिने कंधे पर आवर्त होनेसे, वह शिव कहलाता है। यह पालनेवालेके लिए अत्यंत हितकर है। कर्णमूल अथवा स्तनमें आवर्त रहनेसे, वह विजय कहलाता है। इस जातिका अश्व युद्धके समय अपना अतिशय पराक्रम दिखलाता है और जय प्राप्त करके तब पीछा छोड़ता है। जिस घोड़ेके कन्धेके पासमें आवर्त हो उस घोड़े-से सुखकी प्राप्ति होती है। नाकके भीतर एक या तीन आवर्त हो तो उसे चक्रवर्ती कहते हैं। इस जातिका घोड़ा दूसरी जाति पर अपना आधिपत्य जमा लेता है। जिसके कण्ठ पर आवर्त रहे, उसे चिन्तामणि कहते हैं। इस जातिका अश्व भी मालिकके लिए सुखदायक और अच्छा होता है।

घोड़ेकी देहके किसी किसी स्थानके बाल ऐसे होते हैं जो ठीक शुक्तिके समान दीखते हैं। प्राचीन अश्व-विद्या शुक्ति नामसे इसका उल्लेख करते हैं। जिस जिस अंगों पर जैसा आवर्त रहनेसे फल होता है, उस उस अंगों पर शुक्तिके रहने पर भी वैसा ही फल होता है।

घोड़के दोष—जिस घोड़ेकी तमाम देह सफेद हो और पैरोंका रंग काला हो, उसे यमदूत कहते हैं। इस-को त्यागना ही ठीक है। जिस घोड़ेके चार पैर चार प्रकारके रंगवाले होंगे, वह मुषली कहलाता है। यह कुलका नाशक है। ललाटकी बाईं ओर यदि एक आवर्त रहे तो उसका नाम चर्वणी पड़ता है। इससे पालनेवालेका अहित होता है। वायें गाल पर भौंरा रहनेसे धनक्षय, कक्षमें रहनेसे मृत्यु, जंघामें रहनेसे क्लेश अथवा प्रवास और त्रिबली या (वे तीन बल जो पेट पर रहते हैं) रहनेसे त्रिवर्गका विनाश होता है। जिस घोड़के लिङ्ग पर आवर्त हो, वह राजाओंके लिए त्याज्य है।

पीठ पर एक ही आवर्त हो तो वह घोड़ा भी परि-त्याग करने योग्य है। गुह्य पूंछ और बलिस्थान पर तीन भौंरा रहनेसे वह घोड़ा कृतान्त कहलाता है। यह भी परित्याज्य है।

दन्तहीन, अधिकदन्त, कराली, कृष्णतालुक, मुषली और शृंगी—इन छह प्रकारके घोड़ोंका नाम घातक है। घोड़के दाँतोंकी संख्या कम होनेसे हीनदन्त और ज्यादा होनेसे अधिकदन्त कहते हैं। जिसके तीन पैर तो हों काले और एक हो सफेद अथवा तीन सफेद हों और एक काला; तो उसे मुषली कहेंगे। जिस घोड़के दाँत देखनेमें भद्दे और ऊंचे नीचे हों, उसे कराली कहते हैं। जिस घोड़ेके तालु (खोपड़ीके नीचेका भाग) परके रोम काले होते हैं, उसे कृष्णतालुक कहते हैं। यदि कान और कानकी जड़के अंतमें सींगकी तरह कोई चिह्न दिखलाई दे, तो वह शृंगी नामसे प्रसिद्ध होता है।

अश्व ताड़न करनेके नियम—वक्षस्थली, मुख, ओष्ठ, गले पर तथा पूंछ पर इन स्थानों पर मारना चाहिये। पर किसी कारणसे घोड़के डर जानेसे वक्षस्थल पर, दौड़ते हुएके मुंह पर, कुपित होनेसे पूंछ पर और भ्रान्त होने पर दोनों जंघाओं पर आघात करना चाहिये। इसके सिवा दूसरी जगह मारनेसे बहुतसे दोष होनेकी सम्भावना रहती है। इस लिए अच्छी तरह देखभालके साथ मारना वा ताड़ना करना चाहिये।

जो घोड़ा १६ सेकेण्डमें (निमिष) एक सो धनुष परिमित मार्ग अतिक्रम कर सके उसे उत्तम, जो २० धनुष चल सके उसे मध्यम और इससे थोड़े चलनेवालेको अधम समझना चाहिये। भाद्र और आश्विनके महीनेमें घोड़ोंका पित्त बढ़ता है इस लिए इन दिनोंमें अधिक चलाना ठीक नहीं। कार्त्तिक मासमें महत् कार्यके लिए तथा हेमन्त, शिशिर और वसन्त ऋतुमें इच्छानुसार चलाना चाहिये। घोड़ेका बच्चा, बूढ़ा घोड़ा, क्लश, रोगी, दत्तस्नेह, वृहत् वलियुक्त और पूर्ण वा अतिरिक्त कोष्ठयुक्त घोड़ा तथा गर्भिणी घोड़ी—इनमेंसे किसीको भी जोतने या चढ़नेके काममें नहीं लाना चाहिये।

घोड़ेका यदि खून खराब हो जाय तो वह घोड़ा कालान्तरमें मर जाता है। इस लिए दूषित रक्त निकलवाते रहना चाहिये। प्राचीन अश्वचिकित्सकोंके मतानुसार घोड़ेके शरीरमें कुल ७२ हजार नाड़ियाँ हैं। उनमें प्रत्येकमें खून रहता है। कण्ठ, कक्ष, आंखें, अंस (कन्धा), मुख, अण्डद्वय, पैर और पार्श्व (पसली) ये स्थान रक्तमोक्षणके हैं। कोई कोई चिकित्सक ऐसा भी कहते हैं कि, गुल्फ, गला, लिङ्ग, कक्षान्त, पलक, गुदस्थान, पूंछ, वस्ति, जङ्घा, सन्धिस्थान, जिह्वा, अधर, ओष्ठ नेत्रयुगल, कर्णमूल, मणिबन्ध और गर्दन ये सतह स्थान रक्तमोक्षणके हैं।

सुश्रुतके मतानुसार मुखसे एकसो पल प्रमाण रक्तमोक्षण करना चाहिये। ऐसे ही बगलसे एक पल प्रमाण नेत्र और लिंगसे ५० पल, गर्दन और अण्डकोशसे २५ पल तथा गुदासे १२ पल रक्त निकालना चाहिये, ज्यादा नहीं। पैत्तिक होनेसे कालिक, वातिक होने पर फेना सहित पिच्छिल तथा श्लैष्मिक होनेसे पाण्डुवर्णका और कपैले पानी जैसा होता है।

ऋतुचर्या—वर्षाऋतुमें घोड़ेको ज्यादा नहीं चलाना चाहिये। यदि ज्यादा चलाया जायगा तो दश महीनेमें मर जायगा। इस ऋतुमें घोड़ेको कूपोदक तथा कटुतैल देना और वातशून्य घरमें रखना चाहिये, एक दिन अन्तर आधा पल प्रमाण नमक भी देना चाहिये। ऐसा नहीं करनेसे घोड़ा स्वास्थ्यहीन और वीर्यहीन हो जाता है। दिन दिन बल घट जाता है और आयुक्षय होतो जाती है। शरत् ऋतुमें गुड़, घी, आठ पल प्रमाण शक्कर, स्वच्छ और मधुर रसयुक्त सरोवर या कुएका पानी, घी सहित भुसी—ये सब चीजें घोड़ेके लिए हितकर हैं। हेमन्त ऋतुमें घी, तेल और मूंग देना चाहिये तथा वायुशून्य घरमें रखना चाहिये। दूध भी देना और धीरे धीरे चलाना चाहिये। जौ पानीमें उबाल कर खिलाना अच्छा है। शीत ऋतुमें एक सप्ताह तक प्रतिदिन आठ पल प्रमाण तेल खिलाना चाहिये। बादमें सुबह जौ खिलाना ठीक है। वसन्त ऋतुमें इच्छानुसार घोड़ेको चलाना चाहिये। इस समयमें घी, तेल और नमक मिला कर पानी पिलाना उचित है। वसन्त ऋतुमें यदि घोड़ेको न चला कर एक जगह बाँध रखा जाय तो थोड़े ही दिनोंमें वह उत्साहहीन और आलसी बन जायगा। गरमियोंमें दूषित रक्त निकलवाना, पसीना निकलवाना, छायामें बांधना और शरीर मर्दन कराना अच्छा है तथा घी, ठंडा पानी, दूब अथवा दूसरी कोई नरम घास खिलाना उचित है।

कोई कोई अश्वविद् ऐसा कहते हैं कि—"सात्विक, राजसिक और तामसिक–इस प्रकार घोड़ोंके तीन भेद हैं।" जिसका रङ्ग सफेद हो, वेग अधिक हो, बहुत दूर दौड़ने पर भी जिसके थकावट नहीं आती हो, अधिक खानेवाला और स्वभावसे क्रोधहीन होने पर भी युद्धके समय अत्यन्त क्रोधित होनेवाला हो वह सात्विक घोड़ा है। जिस घोड़ेका वर्ण लाल हो, वेग और क्रोध अत्यधिक हो, जिसके लिए चाबुक खाना असह्य हो और शरीर जिसका लम्बा हो उसे राजसिक घोड़ा कहते हैं। जो घोड़ा काला, थोड़े वेगवाला, थोड़ा गुस्सावाला अल्पभोजी, दुर्बल और सकल गुणशून्य हो, वह तामसिक कहलाता है। (भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु)

पराशरसंहितामें, भौम आप्य, वायव, तैजस और नाभस इन ५ प्रकारके घोड़ोंका वर्णन मिलता है। शरीरके उपादान क्षिति, जल, तेजः, वायु और आकाशके तारतम्यसे पांच भेद होते हैं। जिसके शरीर पर क्षितिके अंश अधिक हों, उसे भौम वा पार्थिव कहते हैं। भौम घोड़ेका शरीर स्थूल, श्रमसह और क्लान्तिशून्य होता है, खाता अधिक है, आकृति दीर्घ और स्वर ऊँचा होता है।

इस जातिका घोड़ा स्वभावसे क्रोधहीन होने पर भी युद्धके समय कुपित होनेवाला होता है।

जिसके शरीरमें दूसरे उपादानोंकी अपेक्षा पानीका अंश अधिक हो, उसे आप्य कहते हैं। आप्य घोड़ेका अंग शिथिल, बल थोड़ा और शरीर असमसह होता है। ये घोड़े क्रोध और वेगशून्य होते हैं तथा सर्वदा सोना ही पसन्द करते हैं। सब घोड़ोंमें इस जातिके घोड़े ही नितान्त अधम होते हैं।

जिस घोड़ेकी देहमें वायुके अंश अधिक होंगे वह वायव कहलाता है। ये घोड़े वायुकी भांति तेजसे दौड़ने वाले शुष्क शरीरवाले, दीर्घाकृति और श्रान्तिशून्य होते हैं। यह घोड़ा बहुत दूर तक दौड़ सकता है।

जिस अश्वके शरीरमें तेजका परिमाण अधिक होगा वह तैजस कहलाता है। ये अश्व क्रोधशील, तेजयुक्त और एक दिनमें एक सौ कोस तक जा सकते हैं। ऐसा अश्व पुण्यवानोंके ही भाग्यमें बदा होता है। सब अश्वोंमें इस जातिका ही अश्व प्रशस्त होता है।

जिस अश्वके शरीरमें आकाशका भाग अधिक होगा, उसे नाभस कहते हैं। इनका गमन तेजयुक्त, क्रोध और वेग अधिक होता है। ये अश्व बड़ी बड़ी खाइयोंको उल्लंघ जाते हैं। भौम आदि अश्वोंके जो जो लक्षण लिखे गये हैं, उनमेंसे एक अश्वमें अगर दो लक्षण पाये जांय तो उसको द्विभौतिक कहना चाहिये। स्वजाति और गुणवान् अश्वों पर चढ़ कर गमनागमन करना उचित है। दुष्ट अश्वों पर सवार नहीं होना चाहिये। दैवयोगसे अगर दुष्ट अश्व पर सवार होनेका मौका आ पड़े तो काञ्चनके साथ तिल वा गुड़के साथ नमक दान करना चाहिये अथवा रेवन्तकी पूजा करके शरीर पर मालिश करना चाहिये। यदि दोनोंमें एक भी न कर सके तो १ पल तांबा दान करना चाहिये। (भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु)

नकुलने भी एक अश्वचिकित्सा लिखी है। उनके मतसे भी अश्व चार प्रकारके हैं—उत्तम, मध्यम, कनीयान् और नीच। इनके लक्षण जैसे लिखे गये हैं, इनके ग्रन्थमें भी करीब करीब वैसे ही लक्षण पाये जाते हैं। नकुलके मतसे भी पहिले अश्वोंके पंख थे और इन्द्रकी आज्ञासे शालिहोत्रमुनिने ईषिकास्त्रसे काटे थे—ऐसा ज्ञात होता है।

अश्वकी अवस्थाके अनुसार मालिकका शुभाशुभ मालूम हो सकता है। अश्व कसे जानेके बाद यदि वह ऊपरको तरफ मुंह करके भयानक शब्द करे और आगेके पैरके खुरसे जमीन खोदना शुरू करे तो समझना चाहिये कि, उस युद्धमें मालिककी अवश्य जय होगी। परन्तु यदि बार बार मूत्र और मल त्याग करे तथा अश्रुपात करता रहे तो पराजय होती है। किसी विशेष कारणके बिना यदि रात्रिके द्वितीय प्रहरमें अश्व जागता रहे तो मालिकको समझना चाहिये कि, शीघ्र ही युद्धके लिए जाना पड़ेगा। यदि रोगके न रहते हुए भी अश्व घास न खाय और अश्रुपात करता रहे तो समझना चाहिये कि मालिकका कुछ अमङ्गल होगा। रात्रिके समय अकस्मात् अगर अश्वकी पूंछ पुलकित (रोमांचित) हो तो मालिककी मृत्यु हो जाती है। पूंछ पर यदि आगकी चिनगारी देखनेमें आवे तो शीघ्र ही कोई शत्रुकी सेना आवेगी—ऐसा अनुमान करना चाहिये (१)। यदि किसी तरह अश्वशालामें गिरगिट घुस जाय तो फिर अश्वोंको वृद्धि नहीं होती, इस लिए सर्वदा खयाल रखना चाहिये जिससे गिरगिट न घुस सके। अश्वशालामें यदि मधुमक्खिका अपना छत्ता बना लें तो समझना चाहिये कि अश्वोंका विनाश होगा (२)। अश्वोंके मङ्गलके लिए

(१) "यः सन्नद्धो हयो रात्रावूर्द्ध्वमूर्द्ध्वं करोति च।
खुराग्रेण लिखन् भूमिं स शंसति रणे जयम्॥
यः करोत्यसकृन्मूत्रं पुरीषञ्चाश्रमो वरम्।
स शंसति पराभूतं युद्धे च वर्त्तते हयः॥
निरामिषं निशीथेयो जागर्त्ति नृपतेर्हयः।
स शंसति द्रुतं तस्य स्वामिनोऽपि प्रयाणकं॥
यदा व्याधिं विना वाजी घासं त्यजति दुर्मनाः।
अश्रुपातञ्च कुरुते तदा भर्त्तुरशोभनम्॥
पुलकाञ्चितपुच्छा ये जायन्ते भूपतेर्हयाः।
निरीक्षन्तः प्रभोर्मृत्युं ते वदन्ति निशागमे॥
स्फुलिङ्गा यस्य दृश्यन्ते पुच्छदेशे च वह्निजाः।
परचक्रागमस्तस्य विज्ञेयो हयपण्डितैः॥"
(नकुलकृत अश्वचि०, २ अ०)

(२) "शरटं रक्षयेद् यत्नात् प्रविशन्तं हयालये।
यदि स्यान्नाशकृद्धि तेषाञ्च तथात्मनः॥
अश्वशालां समासाद्य यत्रान्ते मधुमक्षिकाः।
मधुजालं प्रकुर्वन्ति तत्राश्वान् घ्नन्ति सर्वशः॥"

वेदज्ञ ब्राह्मणसे तिलहोम और शतरुद्रिय जप कराना चाहिये। अश्वशालाके दरवाजे पर एक लाल मुंहवाले बड़े बन्दर बांध रखना चाहिये; इससे अश्वोंका किसी प्रकारका अमङ्गल नहीं घटता, वरन् दिन दिन श्रीवृद्धि होती है (३)। नकुलके अश्वशास्त्रमें लिखा है कि, अश्वोंका रंग सात तरहका होता है,—सफेद, लाल, पीला, सारङ्ग (कई रंग), पिङ्गल, नील और कृष्ण। इनमें सफेद रंग का घोड़ा ही सबसे उत्तम होता है। शरीर और मस्तक आदिके भिन्न भिन्न रंगोंके अनुसार चक्रवाक और मल्लिक आदि कई भेद होते हैं। इनके भी लक्षण प्रायः पहिले लिखे अनुसार ही होते हैं।

स्थानविशेषसे आवर्तके गुण दोष और तारतम्यका वर्णन पहिले लिख चुके हैं।

अश्वचिकित्साके मतसे भी दांतोंके अनुसार उमर जाननेका उपाय लिखा है। पहिले जो कालिका आदि अवस्थाएं लिखी गई हैं, इसमें भी वैसी ही लिखी हैं। अश्वको आकृति लम्बी, पतली और मुख अपेक्षाकृत मांसहीन होनेसे वह राजाओंके लिए उत्तम होता है। कंधा उन्नत और दीर्घ, ग्रीवा वक्र चमरालंकृत और थोड़े रोमवाली, पीठ चौड़ी, व्रणशून्य और बीचमें नीची तथा पीठकी हड्डी खूबसूरत होनेसे अश्व बहुत अच्छा समझा जाता है।

नकुलके मतसे—अश्वका मुख २७ अंगुल प्रमाण, कान ६ अंगुल, तालू ४ अंगुल, गर्दन ४७ अंगुल, पीठकी हड्डी २४ और कटि २७ अंगुल, पूंछ २ हाथ, लिंग १ हाथ, अण्डकोष ४ अंगुल, गुह्यदेश २४ अंगुल, हृदय १६ अंगुल, कटि और बगलका अंतर ४० अंगुल, मणिबन्ध और खुर २।३ अंगुल प्रमाण. उत्सेध (ऊंचाई) ८० अंगुल तथा लम्बाई १०२ अंगुल प्रमाण होती है। जिस अश्वके अवयव इस तरहके होगें, उसे उच्च श्रेणीका अश्व समझना चाहिये। मुख, भुज, केश और गर्दन ये चार अंग बड़े हों तो अच्छा। नासिका· पुट, ललाट, शफ (खुर) दोनों (पिछले) पैर ऊंचे होनेसे, ओष्ठ, जिह्वा, तालू और लिङ्ग लाल वर्ण होनेसे मालिकके लिए मंगलकारी है। बंध, पैर, कोठा और पूंछ लम्बो रहनेसे तथा कान, कर्णान्तर और वंश छोटा होनेसे प्रशंसनीय है।

अश्वोंके खून बिगड़ जानेसे बहुतसे रोग उत्पन्न होते हैं और रक्तदोष प्रशमित होनेसे उन रोगोंकी निवृत्ति होती है। किसी भी कारणसे अश्वका रक्त दूषित होने पर चिकित्साशास्त्रके अनुसार शिरामोक्षणप्रणालीके द्वारा दूषित रक्तको निकलवा देना चाहिये। आषाढ़ मासमें रक्तमोक्षण करना चाहिये। रक्त निकलवानेके बाद अश्व-को अच्छी घास और पौष्टिक पदार्थ खिलाना चाहिये; जिससे वह पुनः बलवान् हो सके। अश्वके शरीरका रक्त जब दूषित हो जाय और बढ़ जाय, तब उसे तृण और दाना नहीं खिलाना चाहिये। इस अवस्थामें दाना खिलानेसे पित्त बढ़ कर थोड़े ही दिनोंमें अश्व मर जाता है। श्वासपुटमें रक्त अधिक होने पर तैलादिके साथ दाना खिलानेसे तथा श्लेष्म और रक्तके कम होने पर दाना खिलानेसे वायु बढ़ कर अश्व बीमार हो जाते हैं। ये जो बातें लिखी गई हैं, इन्होंको रक्तप्रकोपका लक्षण समझना चाहिये।

पित्तरक्त-प्रकोपके लक्षण—इससे खुजली हो जाती है। अश्व हमेशा देह रगड़नेकी फिराकमें रहता है। पित्त-रक्तका प्रकोप होनेसे अश्व छाया और पानीमें रहना पसंद करता है। अश्वको बार बार भूंख और प्यास लगती है। ऐसी दशामें दूषित रक्त निकलवा कर गोल मिर्च या दूसरी कोई चिरपटी चीज मिला कर गुड़ खिलानेसे शांति होती है। परंतु यदि बार बार अश्व आंसू डाले और आंखोंका रङ्ग पाण्डुवर्ण हो जाय तो उसका बचना मुश्किल है।

श्लेष्म-रक्तप्रकोपके लक्षण—खांसी, खानेमें अरुचि, उत्साह हीनता, पार्श्व आसनसे (चित्त) सोना, कोड़ा मारने पर भी सोते रहना और नासिकासे पानीका निकलना—ये सब श्लेष्म रक्तप्रकोपके लक्षण हैं। इस दशामें अश्व सर्वदा औंधे मुंह पड़ा रहता है और बाहरमें तथा गर्म स्थानमें रहना चाहता है। खून सफा करनेके बाद इसको सोंठ और गुड़ खिलाना चाहिये। परन्तु आंखके पास और पेट पर बुंदकी उभर आनेसे इसका

(३) "मन्दुरान्ते सदा धार्यो रक्तवक्त्रो महाकपिः।"
(नकुल० २४ अ०)

बचना कठिन है। कुछ महिनेके भीतर ही वह मर जाता है।

वातरक्त प्रकोपकी लक्षण—खांसका बढ़ना, एक जगह ज्यादा देर तक न ठहरना और निरर्गल भावसे बारबार चिल्लाते रहना—ये सब वातरक्तप्रकोपके चिह्न हैं। रक्तमोक्षण करा कर नियमानुसार महाघृतका सेवन करानेसे यह रोग जाता रहता है। परन्तु आँखोंके आसपास सफेद और लाल चिह्न हो जानेसे खाँसी और मुखमें खुजली होनेसे तथा आमिष या भैंसके दहीसे मिला हुआ अश्मक न खानेसे समझना चाहिये कि, वह घोड़ा अब किसी हालतसे बच नहीं सकता।

सन्निपातकी लक्षण—शरीरका काँपना, खांसी होना, वमन करना, सोना, आलस्यका होना, अग्निका मन्द होना, पेटमें मलका रुकना, कानोंका झुक जाना और मुखसे लारका गिरना—ये सब सन्निपातके चिह्न हैं। ऐसी दशामें रक्तमोक्षण करवा कर जब तक वह पूर्ण आरोग्य न हो जाय, तब तक उसे कुछ भी नहीं खिलाना चाहिये। सिर्फ गरम या ठण्डे पानीमें दवाई मिला कर पिलाते रहना चाहिये। हर्र, आँवला, कुट की और बच पानीमें मिला कर पिलानेसे भी यह ज्वर छुट जाता है। शिरीष, बिल्वफल और बेतस मिला कर सेवन करानेसे मन्दाग्नि नहीं रहती। यष्टिमधु, शिरीष और लाक्षाका क्वाथ बना कर खिलानेसे सन्निपात रोका जाता रहता है।

नकुलके मतानुसार अश्वका शुभाशुभ फल—नीरोग अश्वोंकी आँखके आस पास नीला हो जानेसे और देहसे मिट्टी जैसी बदबू मारनेसे समझ लें कि, वह २ माहसे ज्यादा नहीं बचेगा। आँखोंका प्रान्तभाग नील आभायुक्त पीतवर्ण हो जानेसे ३ मास, नेत्रमें बहुवर्णकी रेखाएं हों तो ५ मास, सहसा अश्वकी जिह्वा पर बुंदकियां दीख पड़ें तो बहुत कष्टसे १ मास, ये बुंदकियां पीली हों तो २ मास, लाल होनेसे ३ मास, विभिन्नवर्णकी होनेसे ४ मास, नीलवर्णकी होनेसे ५ मास, वज्राकृति होने पर ६ मास, पाटल वर्ण होनेसे ७ मास, चम्पक फूलके समान वर्ण होनेसे ८ मास हरिद्राभ होनेसे ९ महीने, जम्बुकी भाँति होनेसे १० महीने, दूबके समान होनेसे ११ मास और ओसके समान शुभ्रवर्ण होनेसे १ वर्षमें मर जाता है। अश्वकी जीभ चन्द्रमाकी किरणके समान शुभ्रवर्ण होनेसे ६ महीनेके भीतर वह मर जाता है। जिस अश्वको ग्रीवाके अग्रभागमें और ओठों पर पिण्डिका उत्पन्न होती है और मूत्रके साथ खून गिरने लगता है, वह अश्व ६ माससे ज्यादा नहीं जीता। आखोंका रङ्ग सफेद हो जाय तो समझना चाहिये कि, वह १० महीने ही जीयेगा। वात रोगसे पीड़ित अश्वकी आँखें अगर नीली हो जाय, तो वह बड़ी कठिनाईसे ३ महीने तक जी सकता है। श्लेष्म ज्वरसे पीड़ित अश्वको आँखोंका रङ्ग अगर लाल हो जाय और मुंहसे शराब जैसी बदबू आने लगे तो समझना चाहिये कि, वह १० महीनेसे ज्यादा नहीं जीयेगा। पित्त रोगसे पीड़ित अश्वकी आँखें अगर पीली हो जाय, तो उसकी आयु ७ मास जानना चाहिये। आँखें घोर लाल होनेसे, आयु ७ ही दिनकी समझनी चाहिये। जिसकी एक आंख तो नीली हो और दूसरी लाल हो उसे पित्तरोगसे पीड़ित समझना चाहिये। इसकी आयु भी एक ही मासकी समझनी चाहिये। वर्षा ऋतुमें अश्वको पित्तरोग होनेसे यह १५ दिन ही जीवित रहता है। ये सब लक्षण इस लिए लिखे गये हैं कि, जिससे अश्वके शरीरमें कौनसा विकार हुआ है, उसकी शीघ्र पहिचान हो सके उसके अनुसार उसकी परिचर्या हो सके। (नकुल अश्व० १०अ०)

अश्वकी चिकित्सामें नस्य, पिण्ड, घृत, क्वाथ और विष व्यवहृत होता है। नकुलको अश्वचिकित्सामें और जयदत्तकी अश्ववैद्यकमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है। अश्वशाला बनानेका नियम मन्दुरा शब्दमें देखो।

प्राचीन अश्वविदोंके मतसे ग्रहोंकी दृष्टिके अनुसार अश्वोंका कभी कभी अमङ्गल होता है। अश्वों पर जिन जिन ग्रहोंकी दृष्टि पड़ती है, उनके नाम ये हैं—लोहिताक्ष, विरूपाक्ष, हरि, बलि, सकाशी, संकाशी, सुसंस्थित, कुवेर, वैशाख, षड़विध, वरुण, बृहस्पति, सोम और सूर्य। इन ग्रहोंमेंसे कोई एक ग्रहकी दृष्टिसे अश्व मरते हैं। ग्रहकी दृष्टिसे जो जो लक्षण प्रगट होते हैं वे नीचे लिखे जाते हैं। हरिग्रहको दृष्टिसे अश्वके शरीर-

का पूर्वाद्ध कम्पायमान होता है, किन्तु अपरार्द्ध स्थिर रहता है। इसके अलावा अश्व अत्यन्त खेदखिन्न हो जाता है। देहसे पसीना निकलने लगता है, शरीरमें भारीपन हो जाता है और सर्वदा वमन करनेकी इच्छा रखता है तथा आँखोंको खोलता और मूंदता रहता है। (जयदत्तकृत अश्ववैद्यक ४८ अ०)

इसके सिवाय भिन्न भिन्न ग्रहोंकी दृष्टिसे और भी नाना प्रकारको शरीरमें विकृति प्रगट होती है। ये ही सब उपसर्ग दिन दिन बढ़ते जाते हैं और आखिरमें अश्वका प्राणनाश कर देते हैं। इन सब उपसर्गोंको दूर करनेके लिए शांतिविधान करना चाहिये। देवता, ब्राह्मण, परिव्राजक, गुरु और वृद्धोंको वस्त्र, गाय और कांचन (सोना का दान देना चाहिये और तरह तरहके मीठे भोजनसे सन्तुष्ट करना चाहिये। रातको अश्वशालाके चारो तरफ पकवान, खीचड़ी आदि बांटना चाहिए तथा तीन रात्रि, पञ्चरात्रि वा सप्तरात्रि तक नीराजन करके अश्वोंको अलग अलग बांध देना चाहिये। ऐसा करनेसे ग्रहदोष शान्त हो जाते हैं।

प्राचीन हिन्दूचिकित्सकोंके मतसे अश्वमांसके गुण—उष्ण, वातनाशक, गरिष्ठ, ज्यादा खानेसे पित्तदाह और अग्निवर्द्धक, कफ और बल बढ़ानेवाला, हितकर और मधुर होता है। (भावप्रकाश)

भारतके प्राचीन आर्योंने जहां तक जाना है, उसका सार ऊपर लिखा जा चुका है। हालके पाश्चात्य प्राणितत्त्वविदोंने भी अश्वके विषयमें बहुतसी बातें लिखी हैं। अश्व शब्दमें वे बातें कथञ्चित् लिखी जा चुकी हैं। इसके अलावा प्राणितत्त्वविदोंको भारतके ही अश्वोंकी खोज मिली है; बाहरके अश्वोंकी नहीं।

अङ्गरेजोंने भारतके नानाप्रदेशोंमें घूम घूम कर यह स्थिर किया है कि, अंगरेजी शासनमें भारतवर्षमें देशीय अश्वोंकी संख्या घट गई है, क्योंकि अंगरेजोंने देशीय अश्वोंकी कद्र नहीं की और न उनकी रक्षाके लिए कोई विशेष प्रयत्न ही किया। पालन करनेमें और उनसे काम लेते समय भी जरूरतसे कम ही उनकी कद्र की गई है। १८वीं शताब्दीके प्रारम्भमें राजपुतानामें देशीय अश्वोंकी कई जगह हाट जुड़ती थीं। उनमें भालोत्र और पुष्कर-की हाट ही प्रसिद्ध है। इन हाटोंमें कच्छ, काठियावाड़, मूलतान और लक्खीजङ्गलके अश्व ही ज्यादा आते थे। लूनी नदीके किनारे घोड़ियोंके अच्छे अच्छे बच्चे हों—इसके लिए विशेष प्रयत्न किये जाते थे। बड़दुरो नामक स्थानके अश्वोंको लोग ज्यादा चाहते थे। अंगरेजोंके मराठा और पिण्डारियोंके ऊपर जय प्राप्त करनेके समयसे ही यहांकी अश्व पैदा करानेकी रीति घट गई। इसके बाद सिखोंने प्रयत्न किया था। परन्तु उनकी और अंगरेजोंकी सेनामें अश्वोंकी संख्या बढ़ाई जानेके कारण श्रेष्ठ अश्वोंकी खान लक्खीजंगल धीरे धीरे अश्वशून्य हो गया। अंगरेजोंने विदेशीय बड़े बड़े अश्वोंका आदर किया, इस लिए देशीय छोटे अश्वोंका आदर घट गया। देशके राजा भी अधीनतावद्ध होनेके कारण, दृढ़ और बलिष्ठ अश्वोंका संग्रह करना भूल गए। अंगरेजी सेनामें जो सब अश्व हैं, उनमें भी बहुत ही कम घोड़ियां पाई जाती हैं। इसी लिए नाना कारणोंसे भारतका अश्ववंश निर्मूल होता जा रहा है।

बटेश्वर—आगरा प्रान्तके पास बटेश्वर नामका स्थान है। यहां भी वर्षमें एक बार मेला जुड़ता है। इस मेलेमें ऊँट, बैल आदिके साथ साथ हजारों अश्व बिकने आते हैं। मारवाड़ तकके लोग अश्व बेचनेके लिए यहां आते हैं। यह मेला नदीके किनारे पर लगता है।

पञ्जाब—इस देशमें सिख और देशीय राजा लोग जैसी अश्वारोही सेना रखते थे, उनके अश्व अधिकांश देशीय होते थे। परन्तु जबसे पञ्जाब अंगरेजोंके अधिकारमें आया है तबसे यहां सेनामें रखने लायक अश्व मिलते ही नहीं हैं। इसका पहिला कारण यह है कि, इस देशकी बहुतसी घोड़ियां अन्य देशोंमें भेज दी हैं। दूसरा कारण—सिपाही विद्रोहके वक्त भी अश्वों और घोड़ियां अन्य देशोंमें भेजी गई थीं। तीसरे-सिख-सेनाके लिए अधिकांश अश्व ही दिये जाने लगे इस लिए देशीय राजाओंने घोड़ियोंका खूब संग्रह किया और उन्हें युद्धके लिए तैयार करनेके लिए, उनकी सन्तानोत्पत्ति बन्द करवा दी। जो लोग अश्वोंका रोजगार करते थे और घोड़ियोंको रख कर उनसे अच्छे अच्छे बच्चे पैदा कराते थे, उनने भी अपनी अपनी घोड़ियां [illegible] मूल्य पानेके

कारण बेच दीं। इस तरह रावलपिण्डी जिलेके धुन्नि-जातिके अश्वव्यवसायियोंके हाथसे यह रोजगार जाता रहा। कुछ भी हो, रावलपिण्डी, झेलम्, गुजरात, शुगेरा, लाहोर, बन्नू, कोहात, डेरा-इस्माइल खाँ, डेरा-गाजी खाँ इत्यादि स्थानोंमें अब ही बहुत पोषी हुई घोड़ियाँ हैं। इन घोड़ियोंसे प्रतिपालकके प्रयत्नसे उत्तमोत्तम बच्चे पैदा होते हैं। पञ्जाबके अश्वोंमें कष्ट-सहिष्णुता अधिक होती है और वे अच्छे अश्वोंमें गिने जाते हैं।

पालनपुर—यहांके अश्व बहुत अच्छे होते हैं। देशके लोग यहांके अश्व ज्यादा दाम दे कर खरीदलेते हैं। यहांकी पोषी हुई घोड़ियाँ बहुत भी अच्छी होती हैं; इस लिए इनकी विशेष कद्र होती है।

राजपुतानेमें—अच्छे अश्वों अब ज्यादा नहीं हैं। मारवाड़के ठाकुर लोग घोड़े पालते हैं और घोड़ियोंसे बच्चे पैदा करवाते हैं। यहाँके अश्वों काठियावाड़के अश्व-की जातिके होते हैं। इस देशमें जगह जगह पर अच्छी घोड़ियां देखनेमें आती हैं, परंतु अच्छे अश्व नहीं मिलते। जयपुरके अश्वोंका अवस्था अच्छी नहीं होती। कुछ ठाकुर लोग अच्छे अच्छे बच्चे भी पैदा करवाते हैं। शिखावतीके अश्व हो जयपुरके अश्वांमें सबसे उत्तम गिने जाते हैं।

अलवरके राजा बुन्निसिंहने अश्वोंके पैदा करनेका अच्छा बन्दोबस्त किया था। वे अपनी सेनामें अश्व-पालकोंको रख कर अच्छे अच्छे अरबीय और काठियावाड़ी अश्व और घोड़ियोंके संयोगसे एक जातीय शंकर अश्व पैदा करवाते थे। राजपुतानाकी अन्यान्य राज-सैन्यके अश्वोंको अपेक्षा अलवरकी अश्वारोही सेनाके अश्व उत्कृष्ट होते हैं। सिपाही विद्रोहके समय वह सेना प्रायः नष्ट हो गई थी।

भरतपुरमें भी अच्छे अश्व उत्पादन करानेके लिए प्रयत्न हुए हैं। परन्तु अलवरके अश्वोंके समान अश्व नहीं पैदा कर सके।

हिमालयमें—घूंट नामके एक प्रकारके पहाड़ी घोड़े देखनेमें आते हैं ये देखनमें गट्टे, बलिष्ठ, दृढ़मुख और दुर्धर्ष होते हैं। ये अश्व पहाड़के संकटमय संकीर्ण मार्गसे चलनेमें खब पटु होते हैं। समतल मार्गमें चलनेवाले अश्वोंकी तरह य जल्दी जल्दी पहाड़ पर चढ़ तो नहीं सकते पर उतरते उनसे भी जल्दी हैं। पहाड़ोंकी शिखर पर जहाँ दूसरे अश्व चढ़ ही नहीं सकते, वहां और बरफसे ढकेहुए स्थानोंमें ये विना किसी कष्टके जा सकते हैं। स्पिती नामक स्थानमें ये अश्व बेचे जाते हैं और इसी लिए इनकी पैदायश की जाती है। ये घोड़े बारह हातसे ज्यादा बड़े नहीं होते। पर चीन देशसे एक तरहके घूंट आते हैं; वे १३।१४ हात लम्बे होते हैं।

दाक्षिणात्यमें कई एक जगह फिलहाल अच्छे अच्छे घोड़े पाये जाते हैं। गोदावरी नदीके किनारे गासीखेर' नामक स्थानमें २५ मील दुरी पर मलियाम नामक शहरमें दाक्षिणात्यके अश्वोंकी बड़ी भारी हाट लगती है। भीमा उपत्यका (तराई) में और मान उपत्यकामें एक तरहके छोटे घोड़े मिलते हैं, वे अश्व अरबीय अश्वके मिश्रणसे उत्पन्न हुए हैं। इन अश्वोंका शरीर गठीला और सुडोल होता है, ललाट प्रशस्त होता है। अकस्मात् देखनेसे अरबीय अश्वका भ्रम होता है। मलीगाँव, पूना, अहमदनगर तथा मध्यप्रदेशमें गोरन नदीके किनारे बड़े बड़े अश्व मिलते हैं। दाक्षिणात्यके टाटू वा पनि अश्व बहुत धीरे चलते हैं परंतु बड़े बलवान् और कष्टसहिष्णु होते हैं, इसमें सन्देह नहीं। ये घण्टेमें ४।५ मील चल सकते हैं। काठियावाड़के 'काठी' नामके अश्व बन्दूकधारी सैनिकोंके लिए अच्छे होते हैं। विशुद्ध 'काठी' अश्वोंमें कई एक दोष होते हैं परन्तु शङ्करवर्ण काठीमें कोई दोष नहीं होता। इसी लिए देशीय राजा इन अश्वोंको ज्यादा कीमत दे कर खरीद लिया करते हैं।

ऊपर कहे हुए भारतीय अश्वोंके अलावा एसियामें भी जगह जगह नाना जातीय अश्व देखनेमें आते हैं। इयाकन्द देशके टट्टू पार्वत्यपथके योग्य होते हैं, इस लिए उत्तर-पश्चिम प्रदेशके पार्वत्य अड्डोंमें इनकी विशेष आवश्यकता होती है। इनको पहिले पहल देखनेसे ही ऐसा मालूम होता है कि, ये कुछ भयभीत और कुण्ठितसे हैं।

तिब्बतके लङ्गन नामक अश्वको कष्टसहिष्णुता और दृढ़ता देखनेसे चकित होना पड़ता है। इनके खुर जुड़े हुए नहीं रहते, किसीके दो खंड और किसीके तीन खण्ड देखनेमें आते हैं। इनमेंसे अधिकांश अश्वोंकी एक आंख दृष्टिहीन पाई जाती है। इनको 'जेमिक' कहते हैं। एक आंख दृष्टिहीन होनेसे कुछ हानी नहीं होती। ये अश्व १००) सौ रुपयेसे ले कर ५००) पांच सौ रुपये तक बिकते हैं। तिब्बत देशके आदमी इनको सूअरका कच्चा खून और यकृत् खिलाते हैं। ये भी उसे रुचिसे खाते हैं। भारतमें इसको जगह भेड़का मस्तक खिलाते हैं। तिब्बतका टट्टू बङ्गालके लिए अत्यंत कार्यपटु होता है।

चीन देशके अश्व बिलायती ग्रेटब्रिटेन पनिकी अपेक्षा कुछ बड़े होते हैं परन्तु इनका उतना आदर नहीं। ये देखनेमें भी अच्छे नहीं होते।

पूर्वसागरकी द्वीपावलीमें सुमात्राके 'अटोन' वाटूवारा, सम्बवके 'भीमा', वालीद्वीपके "गुनेङ्ग आपी" नामक स्थानके अश्व प्रसिद्ध होते हैं। सम्बवका "भीमा" भारतीय द्वीपावलीके "आरबीय अश्व"के नामसे प्रशंसनीय होता है। सिलिबिस द्वीपका "बुगी" और मैकेसार द्वीपका "यवद्वीपका भैंसा" नामका घोड़ा प्रसिद्ध होता है। फिलीपाइनके टट्टू भारतीय द्वीपावलीके समस्त घोड़ोंमें उत्कृष्ट होते हैं।

अफरीकाके वर्वरी प्रदेशका 'वर्वर' घोड़ा यूरोपमें प्रसिद्ध और आदृत है। यह अश्व भारतवर्षमें नहीं आता।

अश्वजातिमें अरबीय अश्व ही सब विषयोंमें उत्कृष्ट होता है। इनके साधारण लक्षण ये हैं,—कान, गर्दन और सामनेके दोनों पैर बड़े, पूंछ, पीछेका भाग और पिछले पैर छोटे तथा आंखें, शरीरका चमड़ा और खुर साफ व चिकने होते हैं। इनमें धूसरवर्णका अश्व विशेष आदरणीय होता है। बिल्कुल काले अश्व कीमती और दुष्प्राप्य होते हैं। इस देशमें काला घोड़ा 'नीला' और धूसरवर्णका 'सब्जा' नामसे प्रसिद्ध है।

तुरष्कदेशके अश्वोंमें दामस्कसके घोड़े और सिरीयाके घोड़े प्रसिद्ध हैं। अरबीय घोड़ोंके नीचे तुरष्क घोड़ोंका नम्बर समझना चाहिये।

सिरीयामें पांच श्रेणीके घोड़े होते हैं। इनको 'खामशा' कहते हैं। बेदुइन लोग इन सब घोड़ोंको पालते और इनसे बच्चे पैदा करवाते हैं। 'खामशा'के पांच भेद हैं—(१) काहिलान्—यह सबसे जल्दी चलनेवाला होने पर भी इसका शरीर गठीला नहीं होता। जुल्फा वसोरा, मर्दिन आदि जगहोंमें इनकी उत्पत्ति होती है। जुल्फाका घोड़ा बहुत कीमती होता है। (२) सेगलवी—इनमें सेगलवी—गडन नामकी श्रेणी ही प्रधान है। (३) आबेय—यह छोटा या गट्टा होता है। परन्तु देखनेमें खूबसूरत होता है। (४) हामदानी—साधारणतः दुष्प्राप्य है; पर सबमें श्रेष्ठ होता है। (५) हादबान—इस जातिके घोड़े बहुत थोड़े मिलते हैं। तुरष्कके घोड़े कदम कदमसे चलने पर दहनीं बाईं और हिलते जाते हैं।

तुर्की अश्व तुर्कस्तानमें मिलते हैं। ये देखनेमें निहायत खूबसूरत होते हैं। तुरष्कके अश्वोंसे ज्यादा मिहनत करनेवाले होते हैं। हिन्दूकुशके आस पास इन अश्वोंका ज्यादा आदर होता है। वहांके लोग इनकी पैदायशमें विशेष सहायता पहुंचाते हैं। इनके समान कष्टसहिष्णु अश्व पृथिवी पर और नहीं हैं। पारस्यकी मरुभूमिमें ये घोड़े एक दिनमें १०० सौ मील चल सकते हैं। पुराणोंमें वाह्लीक देशीय अश्वोंकी ज्यादा तारीफ की गई है। वलख, अन्धकू और मैमानासे इस जातिके अश्व कुछ भारतमें भी आते हैं। तातारदेशके अश्वोंमें मानाठिके आर्गमक, बोखाराके उज्बक समरकाण्डके कोकाण, किरघिजके कौरवे-आइरी और काजक मुख्य होते हैं। आर्गमक बड़ा और देखनेमें अच्छा, उज्बक बलवान् और कोकाण गठीले शरीरवाला होता है। काजक अश्व दौड़नेमें निपुण होता है। काजक अश्व पर सवार हो कर अगर बहुत दूर जाना हो तो उसे बीच बीचमें कुरुत नामक एक प्रकारका दही खिलाते जाना चाहिये, इससे उसे भूख प्यासकी बाधा नहीं सताती।

एशियाके रुषियामें तर्पण और खुसिन नामके अश्व हैं। ये अश्व वशीभूत नहीं होते। मध्यएशियामें भी एक तरहके द्रुतगामी और खूबसूरत जङ्गली अश्व देखनेमें आते हैं। ये अश्व दल बांध कर घूमा करते हैं

और किसी भी तरह मनुष्यके वशीभूत नहीं होते। प्राणीतत्त्वविदोंका कहना है कि, जिस दिनसे ये मनुष्यके अधीन रहने लगेंगे, उसी दिनसे इनका अस्तित्व लोप होता जायगा।

खिरगिजमें मूस नामके एक तरहके जङ्गली अश्व होते हैं। दक्षिण अमेरिकाके जङ्गली अश्व इससे भिन्न हैं। ये अश्व गदहेसे भी छोटे होते हैं परन्तु देखनेमें सुन्दर होते हैं।

अष्ट्रेलियाके अश्व भारतवर्षमें 'ओयेलार' नामसे प्रसिद्ध हैं। 'ओयेलार' अश्व गड़ियोंमें अच्छे चलते हैं।

घोड़ोंके विषयमें विस्तृत विवरण जानना हो तो अश्व और अश्वमेध शब्द देखो तथा विलायती घोड़ोंका विस्तृत विवरण देखना हो तो Encyclopædia Brittanica और English Cyclopædia देखना चाहिये।

घोड़ाकरञ्ज (हिं० पु०) चर्मरोग, बवासीर तथा विषको दूर करनेवाला एक तरहका करञ्ज या करौंदा।

घोड़ागाड़ी (हिं० स्त्री०) १ वह गाड़ी जिसमें घोड़े जोते जाते हैं, घोड़ोंसे चलाई जानेकी गाड़ी। २ डाकगाड़ी, मेल कार्ट।

घोड़ाचोली (हिं० स्त्री०) एक तरहकी दवा।

घोड़ानीम (हिं० स्त्री०) बकाइनका पेड़।

घोड़ापलास (देश०) एक तरहकी कसरत।

घोड़ावच (हिं० स्त्री०) सफेद रंगकी खुरासानी बच। इससे बहुत तेज महक निकलती है।

घोड़ावांस (हिं० पु०) पूर्वीबंगाल और आसाममें होनेवाला एक तरहका बांस।

घोड़ावेल (हिं० स्त्री०) एक तरहकी लता। इसकी जड़ गँठीली होती और यह बहुत जल्द घरकी दीवार या वृक्ष पर फैल जाती है। चैत्र और वैशाखमें यह लता मञ्जरीके रूपमें फूलती है। बुन्देलखण्ड तथा उत्तर भारतमें यह बहुतायतसे पाई जाती है।

घोड़िया (हिं० स्त्री०) १ छोटी घोड़ी। २ कपड़े लटकाये जानेकी दीवारमें गड़ी हुई खूँटी। ३ जोलाहोंका एक यन्त्र।

घोड़ी (हिं० स्त्री०) १ घोड़ेकी मादा। २ धोबीके कपड़े सुखानेकी डोरी या अलगनी जो दो जोड़े बांसोंके मध्यमें बँधी हुई रहती है। ३ शादीकी एक रस्म जिसमें लड़का घोड़ी पर चढ़ कर लड़कीके घर जाता है। ४ विवाहमें गाए जानेके गीत। ५ खेलका वह लड़का जिसको पीठ पर दूसरे लड़के सवार होते हैं। ६ जुलाहोंके कपड़ा बुननेका एक यन्त्र।

घोण (देश०) बहुत प्राचीन कालका एक बाजा जिसमें तार लगे रहते थे। इन्हीं तारोंको छेड़नेसे वह बजता था।

घोणक (सं० पु०) गोनाससर्प।

घोणस (सं० पु०) घोनस पृषोदरादिवत् साधु। सर्पविशेष, कोई सांप।

घोणा (सं० स्त्री०) घुण-अच्-टाप्। १ अश्वकी नासिका, घोड़ोंकी नाक। २ नासिका, नाक।

"गौरः प्रलंबोज्ज्वलचारुघोणा।" (भारत १ १८९ अ०)

घोणान्तभेदन (सं० पु०) वनवराह, जंगली सूअर।

घोणिन् (सं० पु०-स्त्री०) प्रशस्ता घोणा अस्त्यस्य घोणा-इनि। शूकर, सूअर। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

घोण्टा (सं० स्त्री०) घुण्यते गृह्यते भक्षाय घुण बाहुलकात् टः। एक तरहका वृक्ष, इसका पर्याय—बदर, गोपघण्टा, शृगाल, कोलि, कपिकोलि, हस्तिकोलि, बदरीच्छदा, ककन्धू। २ पूगवृक्ष, सुपारीका पेड़। ३ मदनवृक्ष। ४ नागवला। ५ शाकवृक्ष।

घोण्टाख्य (सं० पु०) मदनवृक्ष, मैनफल या करहटेका पेड़।

घोण्टाफल (सं० क्ली०) १ सुपारी। २ बदरीफल।

घोतम—बम्बई प्रदेशमें अहमदाबाद जिलेके अन्तर्गत एक बड़ा ग्राम। यह शिवग्रा (शिवगांव) से ६ मील उत्तरमें अवस्थित है। ग्रामके बीच एक पुराना शिवमन्दिर है। मन्दिरको चारो ओर बड़े बड़े स्तम्भ पंक्तिमें स्थित हैं। जिनके शिल्पकार्य देखने योग्य हैं। मन्दिरके मध्य एक सुन्दर तड़ाग है।

घोनस (सं० पु०) सर्पविशेष, एक तरहका सांप।

घोमसा (देश०) एक तरहकी घास।

घोर (सं० क्ली०) हन्यते वध्यते ऽनेन हन् अच् घुरादेशः। हन्तेरच् घुर च। उण् ५।६४ १ विष। (राजनि०) (पु०) २ शिव। (भारत १३।१७।४) ३ वस्तिकुण्डल। (त्रि०) ४ भयानक, भीषण, डरावना, विकराल। ५ सघन, घना, दुर्गम।

६ कठिन, कड़ा। ७ गहरा। ८ बुरा, अति बुरा। ९ बहुत अधिक।

घोर—अफगानस्तानके पश्चिम भागमें अवस्थित अफगान जातिका एक पूर्वतन पार्वतीय राज्य। हिराटके १२० मील दक्षिण-पूर्वमें इसकी राजधानी थी, अब वह नष्ट हो गई।

गजनी और घोर राज्यमें परस्परमें बहुत दिनोंसे विवाद विसम्वाद चला आ रहा है। घोरवंशकी उत्पत्तिके विषयमें कई प्रकारके मत पाये जाते हैं परन्तु इनको अफगान वंशोद्भूत मानना हो समीचीन जचता है। गजनीके शासनकर्ता सुलतान मामूदके समय घोर एक राजाके अधीन था। फिरिस्ताने उक्त राजाका महम्मदसूरी अफगानके नामसे उल्लेख किया है। मामूदने घोरराज्य अधिकार कर उक्त राजाको वश्यता स्वीकार करानेके लिए वाध्य किया था। पीछे घोरके शासनकर्ता कुतब-उद्दीनने गजनीके सुलतान बहरामकी कन्यासे विवाह किया तथा सुलतान बहरामके हाथसे मारे गये। पीछे उनके भाई सैफ-उद्दीनने भ्रातृहत्याका प्रतिशोध लेनेके लिए गजनी पर अधिकार किया। बहराम भाग गये, उन्होंने बहुतसी सेना इकट्ठी करके सैफ-उद्दीनको पराजित और कैद कर बुरी तरहसे मार डाला। इसके बाद सैफ-उद्दीनके छोटे भाई अला-उद्दीनने बहरामको पराजित करके एशियाके सर्वश्रेष्ठ नगर गजनीमें लोगोंकी हत्या तथा आग लगा कर उसको नष्ट कर दिया। सुलतान मामूद और उनके पूरवर्ती दो सम्राटोंकी कब्रको छोड़ कर समस्त कीर्त्तिस्तम्भोंको जड़-मूलसे नष्ट कर दिया। इस तरह अला-उद्दीनघोर गजनीमें भ्रातृहत्याका बदला ले कर अपने राज्यको लौट आये; ११५६ ई०में इनकी मृत्यु हुई। उनके पुत्र सैफ-उद्दीन एक वर्षके लिए राजा हुए। इनकी मृत्युके वाद इनके चचेरे भाई गयास-उद्दीन राजा हुए। इन्होंने राजा हो कर अपने भाई साहब-उद्दीन् अर्थात् मुहम्मद घोरीको शासनकार्यमें नियुक्त किया। जीवित अवस्थामें गयास-उद्दीनने खुद राज्य-शासन करते हुए भी राजकीय सेनाका सम्पूर्ण भार साहब उद्दीनको दे दिया। इनके समयमें घोरराज्य चरम उन्नति पर पहुंच गया था, किन्तु मृत्युके बाद ही वह फिर क्षुद्र राज्यमें परिणत हो गया। मुहम्मद घोरी और उनके सेनापतियोंने समस्त उत्तर भारत हस्तगत किया था। इनके समयमें घोरराज्य पश्चिममें खुरासान और शायस्तानसे लगा कर पूर्वमें गङ्गाके मुहाने तक तथा उत्तरमें खारिजम, तुर्किस्तानके खनेट, हिन्दूकुश और हिमालय पर्वतसे लगा कर दक्षिणमें बेलुचिस्तान, कच्छोपसागर, गुजरात और मालवा तक विस्तृत था। १२०२ ई०में गयास-उद्दीनको मृत्यु हुई। १२०० ई०में इनके भाई साहब उद्दीन गक्करों द्वारा सिन्धुके किनारे मारे गये। पीछे उनके भानजे महमूद गद्दी पर बैठे। यद्यपि इनकी अधीनता सभीने स्वीकार की थी, तथापि समग्र राज्य कुछ दिनों अनेक क्षुद्रराज्योंमें विभक्त हो गया। उनमें दिल्ली राज्य ही प्रधान है। यह शीघ्र ही दासवंशीय राजाओंके अधीन स्वाधीन राज्यमें परिणत हो गया। मामूदकी मृत्युके ५१६ वर्ष बाद सिन्धु नदीके पश्चिमस्थ समस्त राजाओंसे युद्ध होने लगा। किन्तु शीघ्र ही समस्त राजाओंने खारिजमके राजाको अधीनता स्वीकार की।

घोरक (सं० पु०) एक देशका नाम। घोर देखो।

"काश्मीरश्च कुमारश्च घोरका हंसकायना:।" (भारत २।५१ अ०)

घोरकुष्ठहा (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक लताका नाम।

घोरघट्ट—कीकटके अन्तर्गत एक जनपद। (ब्रह्मखण्ड ११।१२)

घोरघुष्य (सं० क्ली०) घोरं घुष्यते क्यप्। कांस्य, कांसा।

घोरघोरतर (सं० पु०) घोर प्रकारे द्वित्वं ततस्तरप्। १ शिव, महादेव। (त्रि०) २ अत्यन्त घोर।

घोरडका—उत्तर-पश्चिम प्रान्तके अन्तर्गत हजारा जिलेको एक छोटी छावनी जो अक्षा० ३४° २' उ० और देशा० ७३° २५' पू०में डुङ्गागली और मुर्रीके रास्ते पर अवस्थित है।

घोरतर (सं० त्रि०) घोर-तरप्। अत्यन्त घोर, भयंकर, डरावना, विकराल।

घोरता (सं० स्त्री०) घोरस्य भाव: घोर-तल् टाप्। अति भीषणता, अत्यन्त कठोरता, डरावन, निर्दयता, क्रूरता।

घोरदर्शन (सं० पु०-स्त्री०) घोरं भयानकं दर्शनं यस्य, बहुव्री०। १ उलूपची। (त्रि०) २ भयानक रूप, जिसका रूप भयंकर हो, जो देखनेमें डरावना हो।

"कबन्धं नाम रूपेण विकृतं घोरदर्शनम्।" (रामायण १।१।५५)

घोरन्टसिंहरस (सं॰ पु॰) सन्निपात ज्वरका रस या काढ़ा।

घोरप्रदा (सं॰ स्त्री॰) गोधा, गोह नामक जन्तु।

घोररासन (सं॰ पु॰-स्त्री॰) घोरं भयानकं रासनं शब्दो यस्य, बहुव्री॰। शृगाल, गीदड़, सियार। (त्रि॰) २ घोरतर शब्दयुक्त, जिसकी आवाज भयानक या डरावनी हो।

घोररासिन् (सं॰ पु॰-स्त्री॰) घोरं रसति रस-णिनि। १ शृगाल, गीदड़, सियार। (त्रि॰) २ जो भयंकर शब्द करता हो, जो खौफनाक अवाज करता हो।

घोररूप (सं॰ पु॰) घोरं उग्रं रूपं यस्य, बहुव्री॰। १ शिव, महादेव। (त्रि॰) २ उग्ररूपविशिष्ट, जो देखनेमें डरावना हो।

घोररूपा (सं॰ स्त्री॰) घोरं उग्रं रूपं यस्याः, बहुव्री॰, टाप्। चण्डी, दुर्गा।

घोरवर्पस् (सं॰ त्रि॰) घोरं वर्पः रूपं यस्य, बहुव्री॰। उग्ररूपविशिष्ट, भयंकर रूपवाला, जिसका रूप भयानक हो।

"ये शुभ्रा घोरवर्पसः सुक्षत्रासो रिशादसः।" (ऋक् १।१९।५)

'घोरवर्पस उग्ररूपधराः।' (सायण)

घोरवस्त (घोरवन्द)—मकरान नगरीमें जो ध्वंसावशिष्ट भीतें हैं और वहांके पर्वतसे जहाँ जहाँ प्रबल वेगसे जलस्रोत बहता हुआ गिरता है उन उन स्थानोंमें ईंटोंसे बंधा हुआ जो बांध है, उसका नाम "घोरवन्द" है। वर्तमानमें मकरानके लोग इसके बनानेवालेको "घोरवन्द" वा "घोरवस्त" कहते हैं। यूरोपमें जगह जगह जैसा काइक्लोपियों द्वारा बनी हुई प्राचीरोंका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है, इन घोरवन्दोंकी पूर्व कीर्ति भी प्रायः वैसी ही है। वर्तमानके मकरानवासियोंके इस देशमें आनेसे पहिले यहाँ घोरवन्द जातिका वास था। यहांके रहनेवाले उन प्राचीरोंका वास्तविक इतिहास न मिलनेसे, उन्हें इस्लाम धर्मविरुद्ध किसी काफिर जातिकी बनाई हुई मानते हैं। वाघवानाके पासकी उपत्यका (तरहटी) और झालावनमें इनकी बनाई हुई बड़ी बड़ी आश्चर्यजनक वस्तुएं देखनेमें आती हैं।

कोई कोई अनुमान करते हैं कि, जिस समय घोरवन्द जाति द्वारा प्राचीन गुंजक नगरी स्थापित की गई थी, उस समयकी इनकी असंख्य कीर्ति देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि, इस जातिकी संख्या बहुत ज्यादा थी। इन लोगोंने मानसिक बल, सहिष्णुता और अपने बुद्धिकौशलसे आत्मरक्षाके लिए सीमान्त प्रदेशमें बहुतसे दुर्भेद्य प्राचीर और गढ़ आदि बनाये थे। सम्भव है कि, ये लोग मकरानसे पूरबकी ओर पर्वत पर रहा करते हों और कालान्तरमें लोकसंख्याके बढ़ने पर ये लोग उत्तर और पूरबमें फैल गये हों। फिर धीरे धीरे कलात् (खिलात्) उपत्यकामें आ कर इस स्थानसे मुक्त गिरिसङ्कट हो कर भारतवर्षके समतलक्षेत्रमें आ बसे हों। आज तक इस जातिका कोई सच्चा इतिहास नहीं मिला।

ग्रीसकी काइक्लोपीयाके प्राचीरके बनानेवाले पेलासगो जातिके साथ इस घोरवन्द जातिकी दो एक बात ऐसी भी पाई जाती हैं जिससे परस्परमें बहुतसा सौसादृश्य दीखता है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि, ये दोनों एक ही जाति हों। इन दोनों जातिकी प्रकृति भी प्रायः एकसी ही थीं। ग्रीसके इतिहासमें लिखा है कि, यह पेलासगो जाति एसियाखण्डसे आई है न कि, एसियामाइनर, सिरीया, एसिरीया वा पारस्य देशसे। एसियाराज्यके जिस खण्डसे भूमण्डलकी समस्त सभ्य जाति ही विस्तृत हुई है, सम्भवतः यह पेलासगो जाति भी वहींसे आई हो। ऐसे ही बेलुचिस्तानवासी यह घोरवन्द जाति भी वहांसे मकरान आई हो। जिस समय ये लोग कलात् उपत्यकासे मुक्त सङ्कट हो कर भारतवर्षके समतल क्षेत्रमें आये थे, उससे पहिले भी ये लोग प्राचीर और भवनादि बनानेकी तरकीबें तथा बहुतर शिल्पकार्य जानते थे।

घोरवाशन (सं॰ पु॰) घोरं वाशते शब्दायते वाश-ल्यु। १ शृगाल। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है। (त्रि॰) २ भयानक शब्दकारी।

घोरवाशिन् (सं॰ पु॰) घोरं वाशते शब्दायते वाश-णिनि। १ शृगाल। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है। (त्रि॰) २ भयानक शब्दकारी।

घोरा (सं० स्त्री०) घुर-अच्-टाप्। १ देवताड़ी लता, घोषाललता। २ रात्रि। ३ सांख्यमतसिद्ध राजसिक मनोवृत्ति। ४ रविसंक्रान्ति विशेष, भरणी, मघा, पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वभाद्रपद इन नक्षत्रोंमेंसे किसी एक नक्षत्रमें रविसंक्रान्ति होनेसे, उसे घोरा कहते हैं।

घोराघाट (घोड़ाघाट)—बङ्गालके अन्तर्गत दिनाजपुर विभागका एक ध्वंसप्राप्त शहर। यह करतोया नदीके पश्चिमकूल पर अक्षा० २५° १५´ उ० और देशा० ८९° १८´ पू०में अवस्थित है। महाभारतकी इस बातका कि, पाण्डवगण द्रौपदीके साथ वनमें भ्रमण करते समय विराटराजके घर गये थे, यहांके ध्वंसावशेषसे कुछ सम्बन्ध जान पड़ता है। १५वीं शताब्दीमें मुसलमानोंके राजत्वकालमें सैनिक आदिके रहनेके लिए जो मकानात थे उनका ध्वंसावशेष भी यहां मौजूद है।

घोराबाड़ी (घोड़ाबाड़ी)—सिन्धुप्रदेशके कराची जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २३° ५५´ तथा २४° ३४´ उ० और देशा० ६७° २२´ एवं ६८° २´ पूके मध्य अवस्थित है। इसका रकवा ५६६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३५ हजार है। इस तालुकमें एक शहर और ११ ग्राम लगते हैं। इसमें बघोयर, घर, मरही, नसोरवा, और मकरीवा नामकी पाँच नहरें हैं, जिनका पानी खेतीके काममें लगता है। यहांका प्रधान अनाज चावल है तथा बाजरा, जौ, ईख आदिकी भी फसल होती है।

घोरासर—बम्बई प्रदेशस्थ गुजरातके अन्तर्गत महीकान्ता एजेन्सीका एक छोटा राज्य। यहां रूईकी उपज अधिक है। यहांके राजाकी उपाधि ठाकुर है और ये अपनेको कोलि जातिके बतलाते हैं। राजाके ज्येष्ठ पुत्र ही गद्दी पर बैठा करते हैं। राजाको दत्तक पुत्र लेनेका अधिकार नहीं है। इस राज्यका प्रधान नगर घोरासर है। यह अक्षा० २३° २८´ उ० और देशा० ७३° २० पू०में अवस्थित है। यहां सिर्फ दो विद्यालय हैं।

घोल (सं० पु०) घुर कर्मणि घञ् रस्य लः। तक्र, मट्ठा। इसका पर्याय—दण्डाहत, कालसेय, अरिष्ट, गोरस, घल, मलिन, केवल और भग्नसन्धिक है। सुश्रुतका मत है कि बिना जल मिलाये दही मथ कर मक्खनको निकाल लिये जाने पर मट्ठा तैयार होता है। जितने तरहके दूधोंसे दही जम सकते उतने तरहके दूधोंसे मट्ठा हुआ करता है। मट्ठाके तीन भेद हैं—पादजल, अर्द्धजल और निर्जल। जिसमें चौथाई हिस्सा जल रहे उसे पादजल, आधा रहनेसे अर्द्धजल और जल नहीं रहनेसे निर्जल कहते हैं। सुश्रुत और भावप्रकाशके मतसे निर्जल दधीसे जो मट्ठा होता है। परन्तु आजकल पादजल और अर्द्धजलयुक्त दही मथे जाने पर भी वह मट्ठा कहलाता है। इसका गुण—मधुर, अम्ल, कषाय, उष्णवीर्य, लघु, रूक्ष, अग्निवर्द्धक तथा सरल, शोथ, अतीसार, तृष्णा, वदनमल, प्रसेक, शूल, मेद, श्लेष्मा तथा मूत्रकृच्छ्रनाशक, स्नेहपान, शान्तिकर और तेजोद्दीपक है।

निर्जल और शरयुक्त मट्ठाका गुण वायु और पित्तनाशक है। दधिको एक सफेद वस्त्र पर रखे। जलका भाग अच्छी तरह गिर जाने पर उसमें जीरा और नमक डाल देनेसे उत्तम मट्ठा तैयार होता है। इसका गुण—वातनाशक, अतीसार और अग्निमान्द्यमें हितकर, रुचिकर तथा बलकारी है। (शब्दार्थचि०) भावप्रकाशके मतसे मट्ठामें हींग, जीरा और नमक मिलानेसे उत्कृष्ट वस्तु बन जाती है, तब इसका गुण—वातनाशक, अर्श और अतीसारमें हितकारी, रुचिकर, पुष्टिजनक, बलकारी और शूलनाशक है। गुड़के साथ मट्ठा पीनेसे मूत्रकृच्छ्र या अश्मरीरोग दूर हो जाता है। अरब, फारस और विलायतमें मट्ठाका यथेष्ट आदर है। विलायतके प्रायः सभी मनुष्य मट्ठाको बहुत चावसे खाते हैं। वहां प्रति वर्ष लाखों रुपयेका मट्ठा बेचा जाता है।

घोलघाट—हुगलीके समीप पोर्तगीजोंका एक पुराना गढ़। इसे पोर्तगीज लोग "गलगंथा" नामसे वर्णन कर गये हैं। इसका भग्नावशेष आज लौं भी विद्यमान है। हुगली देखो।

घोलज (सं० क्ली०) घोलात् जायते घोल-जन-ड। मट्ठासे उत्पन्न घी, वह घी जो मट्ठासे निकला हो।

घोलदही (हिं० पु०) मट्ठा।

घोलना (हिं॰ क्रि॰) जल या किसी दूसरे तरल पदार्थ में किसी वस्तुको दे कर मिला देना, हल करना।

घोलमन्थन (सं॰ क्ली॰) घोलस्य मन्थनं, ६-तत्। मट्ठा तैयार करनेके लिये दहीका मथा जाना।

घोलमन्थनी (सं॰ स्त्री॰) १ मट्ठा मथनेका डंटा, वह डंटा जिससे मट्ठा मथा जाता हो। रई, मथनी, मथना। २ एक तरहका वृक्ष।

घोलवटक (सं॰ पु॰) घोलमिश्रितो वटकः, मध्य पदलो॰। वटकविशेष, दही-बड़ा। यह दहीमें डुबा कर खाया जाता है।

घोला (हिं॰ पु॰) १ वह जो घोल कर बना हो। २ बरहा, नाली जिसके द्वारा खेत सींचनेके लिए पानी ले जाते हैं।

घोलि (सं॰ स्त्री॰) घुर-इन् डस्य लः वा ङीप्। घोली नामका शाक

घोलिका (सं॰ स्त्री॰) घोली स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वो ह्रस्वः। घोली देखो।

घोली (सं॰ स्त्री॰) घोलि-ङीप्। पत्रशाकविशेष, तीड़घोलि नामक एक तरहका शाक। खेतमें उपजनेवाला घोली शाकका गुण—लवण रस, रुचिकर, अम्ल, वायु और कफनाशक है।

वनमें होनेवाला घोली शाकका गुण—अम्ल, रूक्ष, रुचिकर, वायुनाशक तथा पित्त और श्लेष्मवृद्धिकर है।

सूक्ष्मघोली शाक जीर्णज्वरनाशक है।

घोष (सं॰ पु॰) घोषन्ति शब्दायते गावो यस्मिन् घुष आधारे घञ्। हलश्च। पा ३।३।१२१। १ आभीरपल्ली, अहीरोंकी बस्ती। घोषति शब्दायते घुष कर्तरि अच्। २ गोपाल, ग्वाला, अहीर। "हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।" (रघु॰ १।४५) घुष भावे घञ्। ३ ध्वनि, शब्द, आवाज, नाद। ४ मशक, मच्छड़, डाँस। ५ वर्ण उच्चारण करनेमें ११ वाह्य प्रयत्नोंमेंसे एक। (क्ली॰) ६ कांस्य, काँसा। ७ बङ्गाली कायस्थोंका एक उपाधि। ८ हिमालयस्थ जनपदविशेष। ९ गोशाला। १० तट, किनारा। ११ घोषालता। १२ पटोल। १३ भ्रमर, भौंरा।

घोषक (सं॰ पु॰) घोष स्वार्थे कन्। १ घोष देखो। घोष संज्ञार्थे कन्। २ घोषालता, एक तरहकी बेल जिसमें सफेद और पीले पुष्प लगते हैं। इसका पर्याय—धामागव, घोषकाकृति, आदानी, देवदानी, तुरङ्गक, घोष, घोषालता और घोषकाल है। (जटाधर) २ शिव, महादेव। ३ दक्षकी लड़की धर्मकी स्त्री रम्भाके एक पुत्रका नाम। ४ काण्ववंशके एक राजा। (स्त्री॰) ५ एक तरहकी सौंफ।

घोषकाकृति (सं॰ पु॰) घोषकस्या कृतिरिवाकृति र्यस्य, बहुव्री॰। १ कोशातकी लता, एक तरहकी बेल। २ महाकाल, लाल इन्द्रायणका पेड़।

घोषकृत् (सं॰ त्रि॰) घोषं करोति कृ-क्विप् तुगागमश्च। १ शब्दकारी, जो आवाज करता हो। २ जो अहीरोंकी बस्ती निर्माण करता हो।

घोषकोटि (सं॰ स्त्री॰) एक पर्वतशृङ्ग, किसी पहाड़की चोटीका नाम।

घोषण (सं॰ क्ली॰) घुष भावे ल्युट्। १ ध्वनि, शब्द, आवाज, नाद। घुष णिच् भावे ल्युट्। २ इधर उधर विज्ञापन प्रचार साधारण मनुष्योंको जनानेके लिए उच्चस्वरसे किसी घटनाकी सूचना, मुनादी, डुग्गी। (पु॰) ३ कोकिल, कोयल।

घोषणा (सं॰ स्त्री॰) घुषिरविशब्दने घुष-युच्-टाप्। ण्यासश्रन्थोयुच्। पा ३।३।१०७) घोषण देखो।

घोषणीय (सं॰ त्रि॰) घुष-अनीयर्। जो प्रकाश करने योग्य हो।

घोषपाड़ा—नदिया जिलेमें एक प्रसिद्ध छोटा ग्राम। यहां कर्त्ताभजाओंका प्रधान और प्राचीन अड्डा है।

कर्त्ताभजा देखो।

घोषपुष्प (सं॰ क्ली॰) कांस्य, काँसा।

घोषयात्रा (सं॰ स्त्री॰) घोषे यात्रा, ७-तत्। घोषपल्लीमें यात्रा, ग्वालोंकी बस्तीमें जाना। पहले राजा लोग ग्वालोंकी बस्तीमें जा कर गायोंको देख रेख करते थे, इस लिए वह ही घोषयात्राके नामसे प्रसिद्ध हुआ। कुरुराज दुर्योधनने युधिष्ठिरको अपनी समृद्धि दिखलानेके लिए एक विराट् घोषयात्राका आयोजन किया था। (भारत)

घोषयितु (सं॰ पु॰-स्त्री॰) घुष णिच् बाहुलकात् तृलुच्। १ ब्राह्मण। २ कोकिल, कोयल। (त्रि॰) ३ वन्दी, प्रार्थना करनेवाला, जो अर्ज करता हो।

घोषलता (सं॰ स्त्री॰) कड़ुई तोरई।

घोषवत् (सं० त्रि०) घोषो ध्वनिः वर्णविशेषो वाह्यप्रयत्नविशेषो वा अस्त्यस्य घोष-मतुप् मस्य वः । १ जिन शब्दोंके उच्चारण करनेमें घोषरूप वाह्यप्रयत्नकी आवश्यकता हो उसे घोषवत् कहते हैं। कलापके मतसे ग घ ङ, ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म, य र ल व ह इन वर्णोंको घोषवत् कहते हैं। घोषवन्तोऽन्ये। कलाप १।१।१२। २ ध्वनियुक्त, जिसमें आवाज हो।

घोषवती (सं० स्त्री०) घोषवत्-ङीप् । १ विराम । २ शताह्वा, सौंफ ।

घोषवसु (सं० पु०) काण्ववंशके एक राजाका नाम ।

घोषा (सं० स्त्री०) घुष्यते भ्रमरैरियं कर्मणि-घञ् । १ मधुरिका, सौंफ । २ शतपुष्पा । ३ कर्कटशृङ्गी, ककड़ा शृङ्गी । ४ कोशातकी, एक तरहकी लता, तोरई, तरोई । ५ विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग । ६ गङ्गा । ७ गायत्री स्वरूपा महादेवी ।

"घृणिमन्मयी घोषा घनसम्पातदायिनी ।" (देवीभागवत १२।६।४४)

घोषातकी (सं० स्त्री०) कोशातकी पृषोदरादिवत् साधुः । कोशातकी लता, एक तरहकी बेल, तोरई, तरोई ।

घोषादि (सं० पु०) घोष आदिर्यस्य, बहुव्री० । पाणिनिका एक गण । यह गण परवर्ती होनेसे पूर्ववर्ती पदका आदि स्वर उदात्त हो जाता है। घोष, कट वल्लभ, ह्रद, बदरी, पिङ्गल, पिशङ्ग, माला, रक्षा, शाला, कूटशाल्मली, अश्वत्थ, तृण, मुनि, प्रेक्षा इन सबको घोषादि गण कहते हैं।

घोषाल (हिं० पु०) बङ्गाली ब्राह्मणोंकी एक उपाधि ।

घोषालता (सं० स्त्री०) एक तरहकी लता । घोष देखो ।

घोषित (सं० त्रि०) घुष-क्त । १ जो प्रकाशित हो चुका हो । (पु०) २ शिशुमार ।

घोषितव्य (सं० त्रि०) घुष-तव्य । घोषणीय, प्रकाश करने योग्य, जाहिर करने लायक ।

घोषिन् (सं० त्रि०) घुष-णिनि । घोषणा करनेवाला, जो किसी बातको जाहिर करता हो ।

घोषिल (सं० पु०) वनशूकर, जङ्गली सूअर ।

घोसी—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत आजमगढ़ जिलेको उत्तरपूर्वीय तहसील, जो अक्षा० २५° ५७´ तथा २६° १६´ उ० और देशा० ८३° २१´ एवं ८३° ५२´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका रकबा ३६८ वर्गमील और लोकसंख्या २६०८४० है। इसमें ५११ गांव और २ शहर लगते हैं।

घौद (देश०) फलोंका गुच्छा, गौद ।

घौर (सं० पु०) घोरस्य ऋषेरपत्यं घोर-अण् । काण्वगोत्रके एक प्रवर ऋषि । (आश्वला० १२।१३।१)

घौरी (हिं० स्त्री०) घौद देखो ।

घ्रंस (सं० पु०) ग्रस्यन्ते रसा अस्मिन् ग्रस आधारे घञ् पृषोदरादिवत् साधु । १ दिवस, दिन । (निघण्टु)

"यो घ्रंसे घ्रंस उत य ऊर्धनि ।" (ऋक् ५।३४)

'घ्रंस इत्यहर्नाम ग्रसन्ते ऽस्मिन् रसाः ।' (सायण)

(त्रि०) २ दीप्त, तेज, चमकीला ।

घ्राण (सं० क्ली०) घ्रा करणे ल्युट् । १ नासिकेन्द्रिय, नाक । इन्द्रिय देखो । (क्ली०) २ सूंघनेकी शक्ति । ३ गन्ध, सुगन्ध, महक ।

घ्राणज (सं० क्ली०) घ्राणे जायते घ्राण-जन-ड । नासिकेन्द्रियजात ज्ञानविशेष, जो ज्ञान नासिकासे उत्पन्न हो ।

"घ्राणजादिप्रभेदेन प्रत्यक्षं षड़्विधं मतं ।" (भाषापरि०)

घ्राणतर्पण (सं० पु०) घ्राणं नासिकेन्द्रियं तर्पयति तृपणिच्-ल्यु । सुगन्ध, जो गन्ध नाकमें जा कर आनन्द दे ।

घ्राणदुःखदा (सं० स्त्री०) घ्राणस्य दुःखं ददाति दा-क-टाप् । १ छिकनी । २ नासारोग ।

घ्राणपाक (सं० पु०) नासापाक, एक तरहकी नाककी बीमारी ।

घ्राणश्रवस् (सं० पु०) घ्राणमिव श्रवः कर्णोऽस्य, बहुव्री० । कार्तिकेय सैन्यविशेष । (भारत १।४६ अ०)

घ्राणेन्द्रिय (सं० क्ली०) नासिका, नाक ।

घ्रात (सं० त्रि०) घ्राण कर्मणि क्त । १ जो सूंघा गया हो । (क्ली०) घ्रा भावे क्त । २ गन्धग्रहण ।

घ्राति (सं० स्त्री०) जिघ्रत्यनया घ्रा करणे क्तिन् । १ नासिका, नाक । घ्रा भावे क्तिन् । २ आघ्राण, सूँघना, गन्ध लेना ।

"ब्राह्मणस्य रुजः कृत्वा घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः ।" (मनु० ११।६८)

———*———

ङ

ङ—व्यञ्जनवर्णका पांचवां और कवर्गका अन्तिम अक्षर। इसका उच्चारणस्थान जिह्वामूल और नासिका है। "जिह्वामूले तु कुः प्रोक्तः अमोऽनुनासिका नहौ" (शिक्षा) इसके उच्चारणमें आभ्यन्तरप्रयत्न, कण्ठमूलमें जिह्वामूल स्पर्श है। इसमें सवार, नाद, घोष और अल्पप्राण नामक प्रयत्न लगते हैं। मातृकान्यासमें दाहिने हाथकी अंगुलीके अग्रभागसे इसका न्यास करना होता है। इसके नाम ये हैं—शङ्खी, भैरव चण्ड, बिन्दूत्तंस, शिशु, प्रिय, एक, रुद्र, दक्षनख, खर्पर, विषय स्पृह, क्रान्ति, खेटाश्रय, धार, द्विजात्मा, ज्वालिनी, वियत्, मन्त्रशक्ति, मदन विघ्नेशी, आत्मनायक, एकनेत्र, महानन्द, दुर्द्धर, चन्द्रमा, मति, शिवयोषा, नीलकण्ठ, कामिशी, मय और अंशुक।

(वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका ध्यान—ये सर्वदेवमय, परकुण्डलीस्वरूप, त्रिगुणात्मक और पञ्चप्राणमय हैं। इसका वर्ण धूम्र, देखनेमें अत्यन्त भयानक, चार हाथ, जिह्वा वहिर्गत और परिधानमें पीतवस्त्र है। इनका ध्यान करनेसे साधकोंका अभीष्ट सिद्ध होता है। (वर्णोद्धारतन्त्र) किसी काव्यके आदिमें ङकार नहीं रखना चाहिए। यदि रखा जाय तो रचयिताका यश नहीं फैलता है। "ङः स्र गौघ लक्ष्मीं वितरति वियमो ङकया चः सुखं ङः।" (वृत्तरत्नाकर)

ङ (सं० पु०) ङु बाहुलकात् ड। १ विषय। २ विषय-स्पृहा, विषयकी इच्छा। ३ भैरव। (एकाक्षरकोष)
"ङकारेन्दिते ङ लोक्षते ङ कारवर्णरूपिणी।" (स्तुतिपञ्चाशत्)

च

च—व्यञ्जनवर्णका छठा अक्षर, द्वितीय वर्गका प्रथम अक्षर। इसका उच्चारणस्थान तालु है—

"अष्टौ वद्य निपुणशालालव्या चाहस्यायुः।" (शिक्षा)

इसके उच्चारणका आभ्यन्तरीण प्रयत्न है—तालुमें जिह्वाका मध्यस्पर्श। वाह्य प्रयत्न है—श्वास, विवार, घोष और अल्पप्राण। मातृकान्यासमें वामवाहुके मूलमें इसका न्यास करना पड़ता है। मातृकान्यास देखो।

इसके नाम ये हैं—पुष्कर, हली वाणी, आत्मशक्ति, सुदर्शन, चर्ममुण्डधर, भौम, महिषासुरसम्भिनी, एकरूप, रुचि, कूर्म, चामुण्डा, दीर्घवालुक, वामवाहुमूल, माया, चतुर्मूर्तिस्वरूपिणी, दयित, द्विनेत्र, लक्ष्मी, त्रितय लोचन, चन्दन, चन्द्रमा, देव, चेतन, वृश्चिक, बुध, [illegible]वी, कटिमुख, इच्छात्मा, कुमारी, पूर्वफल्गुनी, अनङ्गमेखला वायु, मेदिनी और मूलावती।

ध्यान—इसका वर्ण तुषार या कुन्दपुष्पकी भांतिका अतिशय शुभ्र है, शरीर नाना प्रकारके मनोहर अलङ्कारों-से सुशोभित है, उमर सोलह वर्षकी, एक हाथमें वर और दूसरे हाथमें अभय है, सफेद साफ वस्त्र पहिने हुए और आठ हाथवाली है। इस प्रकारका चकारका ध्यान करके मूलमन्त्र दश बार जपना चाहिये। (वर्णोद्धारतन्त्र) चकारकी तीनों रेखाओंकी क्रमसे चन्द्र, सूर्य और अग्नि-की भांति भावना करनी पड़ती है। काव्यकी आदिमें चकारका विन्यास करनेसे रचयिताका अपयश होता है।

ङ देखो।

च (सं० अव्य०) चणति चण बाहुलकात् ड, अथवा चिनोति चि बाहुलकात् ड। १ समुच्चय। "परस्परनिरपेक्ष-स्यानेकस्य एकस्मिन् अन्वयः समुच्चयः" (सि० कौ०) जिस जगह परस्पर आकाङ्क्षाशून्य दो या उससे अधिक पदार्थका एक धर्मावच्छिन्नमें अर्थात् एक क्रियादिरूप पदार्थमें अन्वय होता है, उस जगह चकारका अर्थ समुच्चय होता है। जैसे—"चैत्रो गच्छति पचति च।" इस जगह परस्पर निर-पेक्ष "गच्छति" और "पचति" ये पदद्वय-प्रतिपाद्य गमन और पाक ये पदार्थद्वय एकधर्मावच्छिन्न चैत्रपदार्थमें अन्वित हैं। अतएव इस जगह क्रियाका समुच्चय हुआ। "ईश्वरं गुरुञ्च भजस्व" इस जगह परस्पर निरपेक्ष ईश्वर और गुरु ये दोनों पदार्थ एक धर्मावच्छिन्न भजनरूप पदार्थमें अन्वित हैं। इस लिए यहां द्रव्यका समुच्चय हुआ। २ अन्वाचय। "यत्र एकस्य प्राधान्येन अपरस्य गौण्येन अन्वयः सोऽन्वाचयः।" जिस जगह एक पदार्थकी प्रधानतासे और दूसरेकी गौणतासे अन्वय होता है, उस जगह चकारका अर्थ अन्वाचय होता है। यथा—"भो बटो! भिक्षामट गाञ्चानय" इस स्थानमें भिक्षा आहरण पदार्थकी प्रधानतासे और गवानयन पदार्थकी गौणतासे अन्वय हुआ है।

अन्वाचयके स्थानमें वाक्यका तात्पर्य ऐसा है-भिक्षा अवश्य ही करना, अगर गाय देखो; तो गाय ही ले आना। ३ इतरेतर योग। "मिलिता नामन्वय इतरेतरयोगः।" जिस स्थानमें उद्भूतावयवभेद परस्पर सापेक्ष पदार्थसमूहका एकधर्मावच्छिन्नमें अन्वय होता है, उस स्थान पर चकारका अर्थ इतरेतर योग होता है। ४ समाहार। "समूहः समाहारः।" (सि० कौ०) जिस स्थानमें अनुद्भूतावयवभेदपदार्थ समूहका एकधर्मावच्छिन्नमें अन्वय होता है, उस जगह चकारका अर्थ समाहार होता है। अमरटीकाकार भरतके मतसे—जिस जगह एक क्रियामें अनेक पदार्थकी मुख्यतासे अन्वय होता है, वहां समाहार होता है। परंतु समाहारकी जगह जितने पदार्थोंकी मुख्यतासे अन्वय होता है प्रायः उतने ही चकारोंका प्रयोग देखनेमें आता है। जैसे—"धवाच खदिराय छिन्धि।" ५ पादपूरण। छन्दःशास्त्रके नियमानुसार रचनाके द्वारा छन्दपादका पूरण न होनेसे केवल पादपूरणके उद्देश्यसे ही जहां च वै आदि अव्यय प्रयोग किये जाते हैं, उस स्थानके चकारको पादपूरणार्थक चकार कहते हैं। वास्तवमें वहां चकारका कोई अर्थ नहीं होता, वह सिर्फ पादपूरणके लिए ही रहता है। आलङ्कारिकोंके मतसे—रचनामें ऐसे चकारोंका विन्यास करनेसे निरर्थकतादोष आता है। "निरर्थं कं चादि पादपूरणैकप्रयोजनम्।" (चन्द्रालोक) ६ पक्षान्तर, अथवा।

"शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य।"
(शाकुन्तल १ अङ्क)

७ अवधारण। (मेदिनी) ८ हेतु, कारण। (विश्वप्र०) ९ तुल्ययोगित्व, दोनोंकी समानता। इस अर्थमें चकार तुल्ययोगितालङ्कारका द्योतक होता है।

"संकुचंति सरोजानि स्वैरिणी-वदनानि च।" (चन्द्रालोक)

किसी किसी आलङ्कारिकोंके मतसे चकार दीपकालङ्कारका भी द्योतक होता है। दीपक देखो।

च (सं० पु०) चणति चिणोति वा चण-वा-चि-ड। अन्येष्वपि दृश्यते। पा ३।२।१०१। १ चन्द्र। २ कछुआ। ३ चोर। ४ चण्डेश्वर। ५ चवर्ग। (मेदिनी) (त्रि०) ६ निर्वीज। ७ दुर्जन। (शब्दरत्नाकर)

चंग (फा० स्त्री०) १ डफके आकारका एक छोटा बाजा। २ सितारका चढ़ा हुआ सुर। (स्त्री०) ३ भूटानमें बननेवाली एक तरहके जौकी शराब। ४ पतंग, गुड्डी।

चंगवाई (हिं० स्त्री०) एक तरहका वातरोग, जिसमें हाथ पैर जकड़ जाते हैं।

चंगा (हिं० वि०) १ नीरोग, स्वस्थ, तंदुरुस्त। २ अच्छा, भला, सुन्दर। ३ निर्मल, शुद्ध।

चंगुल (हिं० पु०) कोई वस्तु पकड़ने या शिकार मारनेका चिड़ियों या पशुओंका पञ्जा।

चँगेर (सं० स्त्री०) १ बाँसकी पट्टियोंका बनी हुई छिछली डालिया या टोकरी। २ फूल रखनेकी डलिया, डगरो, साजो। ३ वह जलपात्र जो चमड़ेका बना हो, मशक, पखाल। ४ वह टोकरो जो रस्सीमें बाँध कर लटकाई जाती है और जिसमें बच्चोंको सुला कर पालना झुलाते हैं, छोटे छोटे बच्चोंका झूला। ५ पुष्प रखनेका जालीदार चाँदीका एक पात्र।

चँगेल (हिं० स्त्री०) पुराने खेड़े या भग्न मकानोंके खण्डहरमें होनेवाली एक तरहकी घास। इसमें गोल गोल पत्ते होते और कुछ कालापन लिए लालरंगके पुष्प लगते हैं। इसके गोल गोल बीज दवाईके काममें आते हैं। यह घास फारसके शीराज, मजंदरान आदि प्रदेशोंमें बहुत होती है। कहीं कहीं इसे "खुब्बाजी" भी कहते हैं।

चँगेली (हिं० स्त्री०) चंगेर देखो।

चँचरी (देश०) १ वह पानी जो पत्थरके ऊपरसे हो कर बहता हो। २ हिन्दुस्थानकी एक तरहकी चिड़िया। यह छोटा घोसला बना कर जमीन पर घास आदिके नीचे छिप कर रहती है। एक बार यह कमसे कम ३ अंडे देती है। ३ गरी, कोसी, करही, भूड़री।

चंचलाहट (हिं० स्त्री०) चञ्चलता।

चँचोरना (हिं० क्रि०) दाँतोंसे दबा दबा कर चूसना।

चंडावल (हिं० पु०) सेनाका वह भाग जो पीछेमें हो, पीछे रहनेवाले सिपाही। २ वीर, योद्धा, बहादुर सिपाही। ३ संतरी, पहरेदार।

चंडाह (देश०) एक तरहका मोटा वस्त्र।

चंडिया (देश०) एक प्रकारका देशी लोहा।

चंडूखाना (हिं० पु०) चंडू पीनेकी जगह, वह स्थान जहां बहुतसे मनुष्य एकत्र हो कर चंडू पीते हैं।

चंडूबाज (हिं० पु०) वह जो चंडू पीता हो, चंडू पीनेका व्यसनी ।

चंडूल (देश०) एक तरहकी छोटी चिड़िया । यह देखनेमें खाकी रंगसी होती और पेड़ों तथा झाड़ियोंमें उत्तम घोंसला बना कर रहती है । इसकी बोली सुननेमें बहुत मीठी लगती है ।

चंडोल (हिं० पु०) १ हाथीके हौदेके आकारकी पालकी जिसे चार आदमी उठाते हैं । २ मिट्टीका एक खिलौना ।

चंदनौता (देश०) एक तरहका लहंगा ।

चंदवान (हिं० पु०) एक तरहका वाण । इस वाणको उस समय काममें लाते हैं जब किसीका सिर काटना होता है ।

चँदराना (देश०) १ झूठा बनाना, बहलाना । २ जान बूझ कर अनजान बनना ।

चंदला (हिं० वि०) जिसकी खोपड़ी या चांदका बाल झड़ गया हो, गंजा, खल्वाट ।

चँदवा (हिं० पु०) १ राजाओंके सिंहासन या गद्दीके ऊपर ताना हुआ मण्डप, चंदोवा, चदरछत, वितान । २ चन्दक देखो ।

चंदा (हिं० पु०) चन्द्र देखो ।

चंदावत (हिं० पु०) क्षत्रियोंकी एक जाति या शाखा ।

चंटिका (हिं० स्त्री०) चन्द्रिका देखो ।

चंदिया (हिं० स्त्री०) १ खोपड़ी, चांद, सिरका मध्य भाग । २ छोटी रोटी या टिकिया । ३ किसी तालका गहरा स्थान ।

चंदेरी (हिं० स्त्री०) चेदि देखो ।

चंद्रजोत (हिं० स्त्री०) १ चन्द्रमाका प्रकाश । २ महताबी नामकी आतशबाजी ।

चंपई (हिं० वि०) पीत वर्णका, पीले रङ्गका ।

चंपत (देश०) अन्तर्धान, गायब ।

चंपना (हिं० क्रि०) १ दबना । २ लज्जित होना ।

चँबेली (हिं० स्त्री०) चमेली देखो ।

चँवर (हिं० पु०) चामर देखो ।

चँवरदार (हिं० पु०) चामर डोलानेवाला सेवक ।

चँवरी (हिं० स्त्री०) घोड़ेके ऊपरकी मक्खियां उड़ाई जानेका चामर ।

चंसुर (हिं० पु०) चंद्रशूर देखो ।

चंमिल—पंजाबमें बसाहर राज्यके अन्तर्गत एक पर्वतश्रेणी । यह अक्षा० ३०° ५६' तथा ३१° २० उ० और देशा० ७७° ५४ एवं ७८° २२' पू०में अवस्थित है । यह हिमालयश्रेणीसे दक्षिण-पश्चिमकी ओर कुणावारकी दक्षिण सीमा तक फैला हुआ है, जहां इसकी कई एक चोटियां १३।१४ हजार फुट तक ऊंची हैं ।

चइ (हिं० पु०) महावतोंकी बोलीका एक शब्द जिसका व्यवहार हाथीको घुमानेके लिये किया जाता है ।

चई (हिं० स्त्री०) चव्य, दक्षिण भारत तथा अन्य स्थानोंमें नदियों और जलाशयोंके किनारे होनेवाला एक तरहका पेड़ । यह पिपरामूल जातिका है । वृक्ष काट लिये जाने पर भी इसकी जड़ नष्ट नहीं होती वरन् उसमें फिर पत्ते निकल आते हैं । इसके पत्ते पानके पत्तोंसे मिलते जुलते हैं । इसकी जड़ तथा लकड़ी औषधके काममें आती है ।

चउकी (हिं० स्त्री०) चौकी देखो ।

चउतरा (हिं० पु०) चबूतरा देखो ।

चउहट्ट (हिं० पु०) चौहट्ट, चौराहा ।

चऊतरा (हिं० पु०) चबूतरा देखो ।

चक (सं० पु०) चक प्रतीघाते अच् । १ खल, दुष्ट । २ साधु, सज्जन ।

चक (हिं० पु०) १ चकई नामका खिलौना । २ चक्रवाकपक्षी, चकवा । ३ चक्र नामक अस्त्र । ४ चक्का, पहिया । ५ जमीनका बड़ा टुकड़ा, पट्टी । ६ छोटा गांव, खेड़ा । ७ करघेकी बेसरके कुलवांससे लटकती हुई रस्सियोंमें बँधा हुआ डंडा जिससे दोनों छोरों परसे चकड़ोर नीचेकी ओर जाती है । ८ किसी बातकी निरन्तर अधिकता, तार । ९ अधिकार, दखल । १० चौक, सोनेका एक गहना जिसका आकार गोल और उभारदार होता है ।

चकई (हिं० स्त्री०) १ मादा चकवा । २ एक तरहका मिट्टीका खिलौना जिसमें डोरी लपेटी रहती है ।

चकचकाना (देश०) १ चमकना, शोभा देना । २ भींग जाना ।

चकचकी (हिं० स्त्री०) करताल नामका बाजा ।

चकचून (हिं० वि०) चूर्ण किया हुआ, पिसा हुआ, चकनाचूर।

चकचौंध (हिं० स्त्री०) चकाचौंध देखो।

चकचौंधना (हिं० क्रि०) प्रकाशके सामने दृष्टि स्थिर न रहना, आंख तिलमिलाना।

चकडोर (हिं० स्त्री०) १ वह डोरी जो चकई नामक खिलौनेमें लपेटी रहती है। २ जुलाहोंके करघेकी एक डोली।

चकत (हिं० पु०) चकोटा, दाँतकी पकड़।

चकती (हिं० स्त्री०) किसी वस्तुका गोल टुकड़ा, वह गोल या चोकोर छोटा टुकड़ा जो चमड़े, कपड़े आदि-मेंसे काट कर निकाला गया हो।

चकत्ता (हिं० पु०) १ वह बड़ा गोल दाग जो शरीरके ऊपर पड़ गया हो। २ वह निशान जो दाँतोंसे काटे जाने पर हो गया हो, दाँत चुभनेका चिह्न।

चकदार (फा० पु०) दूसरेकी जमीन पर कूप खुदवाने-वाला मनुष्य जो उस जमीनका लगान भी देता हो।

चकदीघि—वर्धमान जिलेका एक प्रसिद्ध स्थान। यहाँ बहुतसे भद्र पुरुषोंका निवास है। इनमें एक घर पुराने जमींदार-वंशका ही प्रधान है। वह जमींदार-वंश "चक-दीघिके राय" नामसे प्रसिद्ध है। इस वंशके आदिपुरु-षका नाम नलसिंह राय था। नलसिंह क्षत्री या क्षत्रिय थे। ये पूर्वनिवास राजपूतानाको छोड़ कर वर्धमानमें आ बसे थे। ये जमींदारीका काम अच्छा जानते थे, इस लिए मरते समय काफी जमींदारी छोड़ गये थे। इनके भवानी, देवी, भैरव और हरि नामके चार पुत्र थे। भवानी और देवीके कोई सन्तान नहीं थी। भैरवका अम्बिका नामका एक पुत्र और दुर्गा नामकी एक पुत्री थी। दुर्गाके दोनों पुत्र कृष्णचन्द्र और वृन्दावनचन्द्र धर्मात्मा थे। चकदीघिके पासही उन्होंने 'मणिरामवाटी' नामका ग्राम स्थापित किया और उसीमें रहने भी लगे। कृष्णचन्द्रके कोई सन्तान नहीं थी। वृन्दावन चन्द्रका पुत्र योगोन्द्रनाथ सिंह हुगली कालेजका एक प्रशंसनीय छात्र है। अम्बिकाका एक सारदा नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था। सारदा बाबूने विशेष ख्याति और प्रति-पत्ति पाई थी। सारदाके भी कोई सन्तान नहीं थी। ये मरते समय अपनी बहिन क्षीरोदासुन्दरीके ज्येष्ठ पुत्र ललितमोहन सिंहको अपना उत्तराधिकारी बना गये थे। सारदाबाबूके रुपयोंसे ही चकदीघिका दातव्य चिकि-त्सालय और डाकरखाना स्थापित हुए थे। इनके अन्यान्य सत्कार्योंमेंसे चकदीघिका संस्कृत विद्यालय, अनाथ-निवास और मेमारीसे चकदीघिकी पक्की सड़क ही मुख्य कार्य हैं। इन्हींके प्रयत्नसे यहां एक डाकखाना भी है। ललितमोहन कोर्ट आफ वोआर्डसके अधीनतामें शिक्षित हुए थे। नलसिंहके छोटे पुत्र हरिसिंहके छक्कनलाल और शशिभूषण नामके दो पुत्र पैदा हुए। ये पृथक् हो कर चकदीघिमें ही रहने लगे।

चकदिलावाड़ी—पूर्णिया जिलेके अन्तर्गत एक परगणा। इसका भूपरिमाण ३८३६ वर्गमील है। इस परगणामें ५ जमींदारी हैं। ५१४०) रुपयेकी मालगुजारी देनी पड़ती है। यहांका विचारकार्य कृष्णगंजके मजिष्ट्रेट और मुंसिफ अदालतके अधीन है। यहांकी प्रधान उपज मटर, तीसी, सरसों और भदई धान है।

चकनाचूर (हिं० पु०) १ जो बहुतसे टुकड़ोंमें बट गया हो, चूर चूर, खंड खंड। २ श्रमसे शिथिल, बहुत थका हुआ।

चकनामा (फा० पु०) किसी जमीनका सत्वनिर्णायक निदर्शनपत्र।

चकपक (हिं० वि०) भौंचक्का, चकित, हक्का बक्का।

चकपकाना (हिं० क्रि०) १ आश्चर्यसे इधर उधर ताकना, ताज्जुबसे चारों ओर निहारना। २ आशङ्कासे इधर उधर दृष्टि डालना, चौंकना।

चकफेरी (हिं० स्त्री०) परिक्रमा, भंवरी।

चकबन्दी (हिं० स्त्री०) १ चतुःशालाके चारों तरफके घर परस्पर मिले हुए होने पर तथा समान आकारके होने पर, उसे चकबन्दी कहते हैं। २ किसी जमीनकी या किसी सम्पत्तिकी सीमा निरूपण करना। ३ जितनी दूर तक थानेकी अधीनतामें हो। ४ ग्रामकी सीमा निरूपण करना।

चकबस्त (फा० पु०) १ जमीनकी हदबंदी, किश्तवार।

चकबस्त (हिं० पु०) २ काश्मीरी ब्राह्मणोंका एक श्रेणी।

चकमक (तु० पु०) अग्निप्रद पाषाणविशेष, एक तर-

हका पत्थर जिस पर चोट पड़नेसे बहुत जल्द आग निकलती है। प्राचीन कालमें आगका काम लेनेके लिए यही पत्थर बंदूकोंके ऊपर रखा जाता था। दियासलाई-का आविष्कार होनेसे पहले इसी पर सूत रख कर और एक लोहेसे चोट दे आग झाड़ते थे।

चकमणि—त्रिहुत जिलेका एक परगणा। इसमें ८८ गांव लगते हैं। विचारकार्य दरभङ्गाके मुन्सफी अदालतके इलाकेमें होता है। यह परगणा दो भागोंमें विभक्त है। दक्षिणपूर्व अंशकी उत्तरसीमा जलालपुर और अहिल-वाड़ है, दक्षिणमें हामिदपुर है, पूर्वमें तर्सोन, उत्तरमें उधारा तथा पश्चिममें भादवाड़ और उधारा है। बाघ-मती, कामला और कराई ये तीन नदियाँ इस परगणेमें बहती हैं। इस परगणेके सिंहिया, हरदेव, मलापुर, सूलहौल और हजौरो नामके ग्राम प्रसिद्ध हैं। हजौरोमें नीलकी कोठी और बाजार है।

चकमा (हिं॰ पु॰) भुलावा, धोखा।

चकमा—चट्टग्रामको पार्वतीय प्रदेशवासी एक जाति। किसीके मतसे—यह जाति खेयोंगथा जातिकी एक श्रेणीभुक्त है। खेयोंगथा देखो। कहीं पर यह शक और कहीं ठेक नामसे विख्यात है।

चकमाओंकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसी दन्त कथा सुननेमें आती है—१ इनके पूर्वपुरुष चन्द्रवंशीय क्षत्रिय थे और चम्पानगरमें रहते थे। ई॰को १४वीं शताब्दीमें उन्होंने पार्वतीय प्रदेश पर अधिकार जमाया था और यहां आ कर वास करने तथा यहांकी स्त्रियोंसे पाणि-ग्रहण किया था। २ पहिले चकमा लोगोंके आदिपुरुष मलय उपद्वीपसे यहां आये थे। ३ आराकानराजको जय करनेके लिए चट्टग्रामके वजीरने मोगलसेना भेजी थी। वहां एक बौद्ध फुंगिने वजीरको उपहार दिया, उसे वजीरने ग्रहण नहीं किया, इस लिए उस बौद्ध-फुंगिने इन्द्रजाल द्वारा मोगलसेनाको पराजित कर दिया। आराकानराजने उस सेनाको अपना क्रतदास बना लिया। उस सेनाके लोग वहांकी स्त्रियोंके साथ विवाह करके वहीं रहने लगे। चकमा लोग उन्हींके वंशधर हैं। पहिले चकमा राजाओंमें भी "खान' उपाधि पाई जाती थी।

कुछ भी हो, चकमा लोग कहांसे आये और कौनसी जातिके हैं, इसका वास्तविक इतिहास अभी तक कुछ भी नहीं मिला। आराकानी मघ लोगोंके साथ भी इन-का कोई सम्बन्ध नहीं। "खान" उपाधि रहने पर भी इन-को मोगलजातीय नहीं कह सकते, क्योंकि मोगल-शासनके समयसे बहुतसे हिन्दू राजाओंने भी "खान" उपाधि ग्रहण की है। ऐसे हो चट्टग्रामके मोगल-शासन-कर्ताका अनुकरण कर चकमा सर्दारोंने 'खान" उपाधि ग्रहण की होगी, इसमें सन्देह ही क्या?

इनमें तीन प्रधान श्रेणी हैं—चकमा, दोइंगनक, तुंगजैन्य वा तंजन्य। इसके सिवा इन तीन श्रेणियोंमें भी बहुतसे "गोज" वा गुच्छ हैं। जैसे—चकमा श्रेणीमें अमू, वामू, इचपोचा, कला, कुर्या, कुतुरा, कूरा, केंग्रा-गति, खब्बे, थियोंगजे, बड़्वा, वर्बरा, बतलिया, बोग, बोरमेगि, बूंग्, बुंग्जा, दरजिया, दविन्, धमोना, धूजिया, लर्मा, लेबा, लस्करा, मोलिमा, पेरभङ्गा, फेटुंग्सा इत्यादि।

तंग्जन्योंमें—आकयाद, बादाल, बांगाल, भूमर, इचा, कड़ुई, कहमा, मङ्गला, पूमा इत्यादि।

प्राचीन ग्रीक वा रोमकोंमें प्रथम अवस्थामें राजनैतिक आदि कार्योंकी जैसी व्यवस्था थी, इस चकमा जातिमें भी वैसी ही व्यवस्था प्रचलित थी। प्रत्येक श्रेणियोंमें एक एक "दीवान" होते हैं। वही "दीवान" पद अब वंशानुगत पदवी हो गई है। तुंगजैन्य इस दीवानको "अहन" कहते हैं। ये लोग कर संग्रह करके कुछ तो खुद ले लेते हैं और कुछ जातीय सर्दारको देते हैं।

विवाह आदिका या कोई पैत्रिक सम्पत्तिका झगड़ा होने पर दीवान लोग उसका न्याय कर देते हैं। इसमें जो कुछ जुरमाना होता है, वह सर्दारके पास भेजते हैं। जहां इनकी संख्या अधिक होती है, वहांके दीवान अपने नीचे 'खेजा" लोगोंको रख कर उनसे काम लेते हैं।

इनमें बाल्यविवाह नहीं होता। साथ ही २४।२५ वर्षसे ज्यादा उमरवाले भी अविवाहित नहीं देखनेमें आते। पहले पिता, माता या पुत्र कन्याकी खोज करते हैं। बादमें वरका पिता एक बोतल शराब ले कर कन्या-के घर पहुंचता है और लड़कीके बापसे कहता है कि-

"आपके घरके पास एक अच्छा वृक्ष देखते हैं, मैं इसकी छायामें वपन करना चाहता हूं।" इसके बाद सम्मान पूर्वक विदा हो कर घर लौटते समय यदि मार्गमें शुभ चिह्न दीखें तो वह सम्बन्ध पक्का हो जाता है। फिर दूसरे किसी समयमें वर-कन्या दोनों पक्षके कुटुम्ब एकत्र हो कर विवाहका बाकीके समस्त विषय पक्के कर लेते हैं। वर कन्याके घर जा कर कन्याके साथ एक कोटिसे तख्त पर बैठता है तथा वरके पीछे "सोवाला" और कन्याके पीछे "सोवाली" नामक एक पुरुष और एक स्त्री बैठ जाती है। ये लोग सबकी अनुमति ले कर वर और कन्याकी गांठें जोड़ देते हैं। इस समय नवदम्पती एक साथ भोजन करते हैं तथा वर कन्याको और कन्या वरको अपने हाथसे खिलाती है। भोजन समाप्त होने पर गांवका मुखिया दोनोंके मस्तक पर नदीका जल छिड़क देता है, बस इससे दोनोंका पतिपत्नीका सम्बन्ध पक्का हो जाता है। सब विवाह इसी रीतिसे नहीं होते। कहीं कहीं पर पात्र (वर) स्वयं कन्याको पसन्द करता है और माता, पिता उस सम्बन्धमें हस्तक्षेप नहीं करते। ऐसी दशामें पात्री पात्रके साथ भाग आती है; अगर पात्रीका पिता इस विवाहमें सहमत न हो तो विवाह नामंजूर समझा जाता है और पात्रीको भी अपने मनोनीत नायकसे वञ्चित रहना पड़ता है।

विवाहसे पहिले यदि कोई भी स्त्री परपुरुष गमन करे तो उसे कोई भी विशेष सजा नहीं दी जाती। विवाह हो जाने पर उसके पहिलेके अपराध माफ हो जाते हैं। अगर कोई पुरुष बालिकाहरण करे तो उसे ६०) रु० जुरमानेके देने पड़ते हैं। कोई स्त्री अगर ग्रामकी सभामें विवाह-सम्बन्ध-विच्छेद करानेकी प्रार्थना करे तो उसे पूर्वप्रदत्त कन्यापण, विवाहका खर्च और सिवाय इसके ५०) या ६०) रु० जुरमानेके पतिको देने पड़ते हैं।

विधवायें अपने देवरको ग्रहण कर सकती हैं, पर ज़बरन नहीं।

चकमाओंमें अपनी श्रेणी वा थोकमें विवाह निषिद्ध है। पर मातुल गोत्रमें विवाह हो सकता है। इनका विवाह-सम्बन्ध विमाताकी कन्या, मौसीकी लड़की, बहिन, भानजी मामाकी लड़की, फूफाकी लड़की और स्त्रीकी बड़ी बहिनके साथ नहीं होता, पर स्त्रीके मरनेके बाद उसकी छोटी बहिनसे विवाह हो सकता है।

ये सब बौद्धधर्मावलम्बी हैं। किन्तु वर्तमान समयमें इनका बौद्धधर्म पूर्ववङ्गके हिन्दूधर्मके बहुतसे क्रियाकलापोंसे रञ्जित देखा जाता है। ऐसा भाव चकमा-राज धर्मबक्स और उनकी पत्नी कालिन्दी राणीके समयसे ही प्रारम्भ हुआ है। राणी कालिन्दी हिन्दुओंके मारे पर्व मानती थीं और कालीकी प्रात्यहिक पूजाके लिए चट्टग्रामसे एक ब्राह्मण बुला कर नियुक्त किया था। कुछ ही वर्ष हुए होंगे, राजाकी मृत्युके बाद आराकानसे एक बौद्ध फंगीने आ कर बौद्धधर्मका प्रचार किया था। उन्हींके प्रयत्नसे आखिरमें राणी तकने बौद्धधर्ममें आस्था दिखलाई थी।

तुंगजैना लोग लक्ष्मीकी उपासना करते हैं। बौद्धधर्म प्रवर्तित होनेसे पहिले ये लोग असभ्य थे, यह आज तक "शोनवामा" पर्वसे जाना जा सकता है। उस समय ये लोग डांस, जलस्रोत, विसूचिका, ज्वर आदिकी पूजा करते थे और उनके उपलक्षसे जीवादि उत्सर्ग किया करते थे।

कुछ दिन पहिले वैरागी वैष्णव लोग पार्वत्य प्रदेशमें जा कर इन लोगोंमेंसे बहुतोंको अपने शिष्य बना आये थे। ये लोग तुलसीकी माला ले कर हरि नाम जपते हैं। मांस, मच्छी कुछ भी नहीं खाते हैं।

ये लोग मुर्दको जला देते हैं। मुर्दका मुख पश्चिमकी ओर रखते हैं। हैजा या चेचकसे मरे हुएको गाड़ देते हैं, जलाते नहीं। यदि किसीकी मृत्यु डाइनसे हुई हो, ऐसा उनको मालूम पड़ जाय तो वे उसको दो टुकड़ा कर डालते हैं और बक्समें बन्द करके जलाते हैं। मृत्युके सात दिन बाद पुरोहित आ कर शान्ति-विधान करता है। मासके अन्तमें भी ऐसा करनेका नियम है।

चकमा—पूर्वीय बङ्गालके चट्टग्राम जिलेका एक शासनयोग्य विस्तृत भूभाग। यह अक्षा० २२° ७' तथा २३° १३' उ० और देशा० ८१° ४३' एवं ९२° ३६' पू०में अवस्थित

है। क्षेत्रफल २४२१ वर्ग मील है। इसके दक्षिणमें बोमोंगकेन्द्र, उत्तर पश्चिममें मोंगकेन्द्र, उत्तर-पूर्वमें जङ्गल विभाग और पश्चिममें जिलेकी सीमा है। लोकसंख्या प्रायः ४८५८७ है। चकमा जातिके लोगोंका वास यहां अधिक है और चकमा राजा यहां राज्य करते हैं। इसमें कुल ६४ ग्राम लगते हैं जिनमेंसे राङ्गामाटी एक है और यह जिलेका प्रधान शहर है।

चकमाकी (तु० पु०) जिसमें चकमक पत्थर लगा हो।

चकरबा (हिं० पु०) १ चक्कर, फेर, बेसूधकी अवस्था, असमंजस। २ झगड़ा, बखेड़ा, टंटा।

चकरसी (देश०) पूर्वीबङ्गाल, आसाम और चटगांवमें होने वाला एक वृहत् पेड़। इसकी लकड़ीसे कुरसी, मेज आदि अनेक चीजें बनाई जाती हैं। इसकी छाल चमड़े उबालनेके काममें आती है।

चकराता—१ युक्तप्रदेशके देहरादून जिलेकी उत्तरीय तहसील। इसका प्राचीन नाम जौनसार-बावर था। यह अक्षा० ३०° ३१´ तथा ३१° २´ उ० और देशा० ७७° ४२´ एवं ७८° ५´ पू०में पड़ता है। क्षेत्रफल ४७८ वर्गमील है। इसका सम्पूर्ण भाग जङ्गलसे घिरा है। लोकसंख्या प्रायः ५०६६ है। इसमें दो शहर लगते हैं। यहां शराब प्रस्तुत होती है और इसके थोड़े भागोंमें पोस्त उपजाया जाता है।

२ युक्तप्रदेशके देहरादून जिलेका एक शहर। यह अक्षा० ३०° ४२´ उ० और देशा० ७७° ५२´ पू० पर कालसीसे २५ मील तथा मसूरीसे ४० मील पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १२०० है। १८६६ ई०में यहां एक छावनी स्थापित की गई थी जिसमें लगभग १७०६ सिपाही रखे जाते हैं। इस छावनीकी वार्षिक आय और व्यय १६०००) रु० है।

चकराना (हिं० क्रि०) १ सिर घूमना। २ भ्रान्त होना, भूलना। ३ घबड़ाना, चकित होना।

चकरानी (फा० स्त्री०) दासी, सेविका, टहलुई।

चकरी (हिं० स्त्री०) १ चक्की, जांता। २ एक तरहका खिलौना।

चकल (हिं० पु०) १ मिट्टी समेत किसी पौधेको एक जगहसे दूसरी जगह ले जा कर लगानेका काम। २ पौधेको उखाड़ते समय उसकी जड़में लगी हुई मिट्टी।

चकला (हिं० पु०) १ रोटी बेलनेका गोल पाटा, जो काठ या पत्थरका बना रहता है। २ चक्की, जांता। ३ इलाका, प्रदेश जिला। ४ कसबीखाना, वह महल्ला जहां रण्डियां रहती हों।

चकला रोशनाबाद—चिरस्थायी बन्दोबस्तकी एक जमींदारी। यह पूर्वीय बङ्गालके त्रिपुरा और नोआखाली जिलेमें तथा आसामके सिलहट जिलेमें अवस्थित है। इसकी वार्षिक आय ८ लाख रुपयेकी है। पहले यह पार्वत्यत्रिपुरा राज्यका एक भाग था जो १७३३ ई०में मुसलमानोंके अधिकारमें आया। १८८२ ई०में यह जमींदारी नापी गई और उसीके अनुसार मालगुजारी भी नियत की गई। यहांकी प्रधान उपज धान, पाट, लालमिर्च और सरसों है। लोकसंख्या प्रायः ४६७००० है।

चकलासी—बम्बईके कैरा (खेड़ा) जिलेके अन्तर्गत नदियाद तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २२° ३६´ उ० और देशा० ७२° ५७´ पू०में पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ७३४० है। १८६८ ई०में धराल जातिने अंगरेजोंसे यहां घमसान युद्ध किया था जिसमें वे पूर्ण रूपसे पराजित हुए थे। इस शहरमें सिर्फ एक विद्यालय है जिसमें लगभग ३०० लड़के पढ़ते हैं।

चकली (हिं० स्त्री०) १ घिरनी, गड़ारी। २ चन्दन रगड़नेका छोटा चकला, चंदौटा, होरसा।

चकलेदार (देश०) वह जो किसी प्रदेशका कर वसूल करता हो। अवधमें नवाबकी तरफसे जो कर्मचारी मालगुजारी संग्रह करनेके लिये नियुक्त होते थे वे चकलेदार कहलाते थे।

चकवंड़ (हिं० पु०) १ चक्रमर्द देखो। २ कुम्हारोंके चाकके पास रखे जानेका जलपूर्ण पात्र।

चकवा (हिं० पु०) चक्रवाक देखो।

चकवाल—झेलम जिलेकी एक तहसील। यह जिलेके मध्यस्थलसे लगा कर लवणशैल तक विस्तृत है। यह अक्षा० ३२° ४५´ तथा ३३° १३´ उ० और देशा० ७२° ३२´ एवं ७३° १७´ पूर्वमें अवस्थित है। भूपरिमाण १००४ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १६०३१६ है।

यहांकी जमीन—जमींदारी, पट्टिदारी और भायाचारा इन ३ भर्तों पर बंटी हुई है। विचार-विभागमें एक तहसीलदार और एक मुन्सिफ हैं। ये ही दीवानी और फौजदारी दोनों अदालतोंका कार्य सम्पादन करते हैं। यहां सिपाई बहुत हैं।

२ उक्त तहसीलका सदर और प्रधान नगर। यह पिण्डदादनखाँ और रावलपिण्डीके बीचमें तथा झेलम नगरसे ५४ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। यह अक्षा० ३२° ५६' उ० और देशा० ७२° ५२' पू०में अवस्थित है। अब्बूसे महेरथ गोत्रीय किसी राजपूतने आ कर यह नगर बसाया था। उनके वंशधरोंने अब तक इस भूमिको नहीं छोड़ा, बराबर भोग दखल करते आये हैं। यहांसे सूत और कपड़े तयार हो कर नाना स्थानोंमें विक्रयार्थ भेजे जाते हैं। यहां औषधालय, विद्यालय और चौलाई भाटी भी है।

चकवी (हिं० स्त्री०) चकई देखो।

चकाकेवल (हिं० स्त्री०) एक तरहके काले रङ्गको मिट्टी जो शुष्क होने पर चिटक जाती और जल लगनेसे लसदार होती है।

चकाचक (हिं० स्त्री०) तलवारका शब्द जब शरीर पर पड़ता है।

चकाचौंध (हिं० स्त्री०) कठिन प्रकाशके सामने नजरका न ठहरना, तिलमिलाहट, तिलमिली।

चकातरी (देश०) वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम।

चकाबू (हिं० पु०) चक्रव्यूह देखो।

चकार (सं० पु०) च स्वरूपार्थे कार:। वर्णस्वरूपे कारप्रत्ययः। १ द्वितीय वर्गका प्रथम वर्ण, च; वर्णमालामें छठा व्यञ्जनवर्ण। २ दुःख या सहानुभूतिसूचक शब्द।

चकावल (देश०) घोड़ोंके अगले पैरमें हड्डीका उभार।

चकित (सं० क्लो०) चक भावे क्त। १ भय, डर। २ सम्भ्रम, घबराहट, आशङ्का। ३ कायरता। ४ नायिकाका सात्विक अलङ्कारविशेष। (त्रि०) चक कर्तरि क्त। ५ भीत, डरा हुआ। ६ शङ्कित, विस्मित, भौचक्का, भ्रान्त, आश्चर्यान्वित।

चकिता (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, जिस वर्णवृत्तका प्रत्येक चरण सोलह अक्षरोंमें या स्वरवर्णमें निबद्ध हो तथा प्रत्येक चरणमें पहला, छठा, सातवां आठवां, नवमां, दशवां, इगारहवां और सोलहवां अक्षर गुरु तथा इन्हें छोड़ शेष अक्षर लघु हो उसे चकिता कहते हैं।

"भात्सभतन गैरष्टच्छे दे स्यादिह चकिता।" (छन्दोमञ्जरी)

चकिया—युक्तप्रदेशके मिरजापुर जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २४° ५६' तथा २५° १५' उ० और देशा० ८३° १३' एवं ८३° २५' पू०में अवस्थित है क्षेत्रफल ४७४ वर्गमील तथा लोकसंख्या प्रायः ६६६०१ है। इसमें ४१५ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। यह गङ्गाकी उपत्यकासे ले कर विन्ध्याद्रिकी अधित्यका तक विस्तृत है। तहसीलका उत्तरीय भाग बहुत उपजाऊ है। जहां धानकी उपज यथेष्ट होती है। इसके दक्षिणका भाग नौगढ़ कहलाता है। कर्मनासा तथा इसकी शाखा चन्द्रप्रभा नदी दक्षिणसे पूर्वको प्रवाहित है।

चकुलिया (हिं० स्त्री०) चक्रकुल्या, एक प्रकारका पौधा या झाड़ी।

चकेठ (हिं० पु०) कुम्हारके चाकके घुमानेका नोकदार डंडा।

चकोतरा (हिं० पु०) एक तरहका जम्बीरी नीबू। इसके गूदेका रङ्ग हलका सुनहला होता है। जाड़ेके दिनोंमें यह फल यथेष्ट पाया जाता है। इसका पर्याय—बड़ा नीबू, महानीबू, सदाफल, सुगन्धा, मातुलङ्ग और मधुकर्कटी है।

चकोता (हिं० पु०) एक तरहका रोग जिसमें घुटनेके नीचे छोटी छोटी फुंसियां निकलती हैं।

चकोर (सं० पु०) चकते चन्द्रकिरणेन तृप्यति चक-ओरम्। कठिचकिभ्यामोरन्। उण् १।६५। पर्याय—चकोरक, जीवञ्जीव, जीवजीव, जीवञ्जीवक, चलचञ्चु, ज्योत्स्नाप्रिय, विषदर्शनमृत्युक, चन्द्रिकापायी और चन्द्रिकाजीवन। यह पक्षी बहुत छोटा और देखनेमें चटक जैसा होता है। बहुतसे तो इसको एक जातीय चटक अनुमान करते हैं। इसका वर्ण घोरकृष्णाभ है, सामके वक्त आकाशमें उड़ा करता है। कवि-समय-सिद्धिके अनुसार ये चन्द्रमाकी ज्योत्स्ना पीते हैं। बहुतसे पुराने काव्योंमें चकोरके चन्द्रिका पीनेका वर्णन मिलता है। पहिले इस देशके राजा इसको यत्नपूर्वक पालते थे। खाते समय सारी खाद्य सामग्री इस-

को दिखा कर खाते थे। इसका कारण यह है कि, अगर खाद्यसामग्रीमें कोई तरहका विष हो तो उसको देखते ही चकोरकी आंखें लाल हो जांयगी और वह मर जायगा। इसी लिए चकोरका एक नाम विषदर्शनमृत्युक रखा गया है। (राजनि०) हारीतसंहिताके मतानुसार चकोरका मांस वातश्लेष्मकर, शुक्रवर्द्धक, अश्मरी-नाशक, विशद और बलकारी है।

चकोरक (सं० पु०) चकोर एव स्वार्थे कन्। चकोर पक्षी, चकवा।

चकोरी (सं० स्त्री०) चकोर-ङीप्। मादा चकोर।

"चकोर्य एव चतुराश्चन्द्रिकापानकर्मणि। (साहित्यद० १० परि०)

चकौटा (देश०) १ एक तरहका लगान जो बीघेके हिसाबसे नहीं होता। २ वह पशु जो ऋणके बदलेमें दिया जाय।

चक्क (सं० पु०) चक्क पीड़ायां चुरादि० अप्। १ पीड़न, पीड़ा, दर्द।

चक्कन (सं० क्ली०) चक्क-ल्युट्। पीड़ा, दर्द। यह शब्द पाणिनिके चूर्णादि गणके अन्तर्गत है। (४।२।१३४)

चक्का (हिं० पु०) १ पहिया, चाका। २ वह वस्तु जिसका आकार पहियेसा हो। ३ चिपटा टुकड़ा, बड़ा कतरा। ४ ईंटों या पत्थरोंका ढेर जो माप या गिनतीके लिये क्रमसे लगाया गया हो।

चक्की (हिं० स्त्री०) आटा पीसने या दाल दलनेका यंत्र, जाँता।

चक्कीनोआरो—बम्बईके पांच महाल जिलेके अन्तर्गत कलोल तालुकका एक तीर्थस्थान। यह अक्षा० २२° ३५ उ० और देशा० ७३° ३५ पू०के मध्य कराद नदी पर अवस्थित है इसके दो ओर मेदपुर और मरवा नामके दो ग्राम पड़ते हैं। नदीके बीच एक भारी चट्टान है जिसके ऊपर एक जलाशय खुदा हुआ है। जलाशयकी गहराई ४ से ५ फुट की होगी। नदीका पानी इसमें आता है और झरना द्वारा बाहर निकल कर एक पोखरमें गिरता है जो बहुत निम्नस्थानमें अवस्थित है। सूर्यग्रहणमें, महोदपर्व या सोमवती अमावस्यामें तथा दूसरे दूसरे अवसरोंमें बहुतसे ब्राह्मण राजपूत और बनिया पापसे छुटकारा पानेके लिये इस पोखरमें स्नान करने आते हैं। प्रवाद है कि प्राचीन कालमें बनारसके राजा सुलोचनकी हथेलीमें बाल उगा था। कहा जाता है कि यह उनके पापका दण्ड था। अन्तमें सभोंने उन्हें विश्वामित्रके पास जाने कहा। जो आजकल पावागढ़ कहलाता है वही पहिले विश्वा-मित्रका वासस्थान था। ऋषिने कहा—"यदि तुम नदीके उस स्थान पर यज्ञ करो जहां पवित्र चक्की पड़ी हो तो तुम्हारे सब पाप उसी तरह दूर हो जांयगे जिस तरह अनाज चक्कीमें पीसनेसे चूर चूर हो जाता है" राजाने उस स्थान पर जा कर एक यज्ञशाला निर्माण की और चट्टानसे एक सुरङ्ग निकाली और उसी हो कर वे होम-की अग्निमें घी, मक्खन इत्यादि गिराने लगे। ऐसा करने-से हथेलीके सब बाल जाते रहे। उसी समयसे नदीका नाम 'करद गङ्गा' और यज्ञशालाका नाम चक्कीनो आरो (grind-stone bank) पड़ा है। चक्कीका आधा भाग अभी भी उसी स्थानमें मौजूद है और आधे भागको कोई गोसाईं चुरा कर भाग रहा था, किन्तु पीछा किये जाने पर उसने उस भागको फेंक दिया जो अभी वेस और कालोलके अलाली ग्रामके मध्य पड़ा है।

चक्कीरहा (हिं० पु०) वह मनुष्य जो चक्कीको टाँकीसे ठोंक कर खुरदरी करता है।

चक्खी (सं० स्त्री०) १ चाट, कोई चीज खानेकी इच्छा।

चक्र (सं० पु०) क्रियते अनेन कृ घञर्थे क निपातनात् द्वित्वम्। १ चक्रवाक पक्षी, चकवा। चक्रवाक देखो। (क्ली०) २ रथाङ्ग, चक्का, पहिया।

"यथाह्येकेन चक्रेण रथस्य न गतिर्भवेत्" (याज्ञवल्क्य १।३५१)

३ सैन्य, सेना, फौज। ४ समूह, समुदाय, मण्डली, दल, झुण्ड। ५ राष्ट्र, राज्य, देश, प्रदेश, ग्रामों या नगरोंका समूह। ६ दम्भविशेष। ७ कुम्हारका चाक, जिससे सकोरा आदि मिट्टीके बर्तन बनाये जाते हैं। ८ वातचक्र, बवण्डर। ९ आसमुद्रान्तभूमि, एक समुद्रसे दूसरे समुद्र तक फैली हुई भूमि। १० वृत्त, गोलाकार घेरा। ११ हाथकी हथेली वा पैरके तलवेमें घूमी हुई रेखाओंका चिह्न, जिनसे सामुद्रिकमें अनेक प्रकारके शुभाशुभ फल निकाले जाते हैं। १२ प्रान्त, दिशा। १३ भुलावा, जाल, फरेब, धोखा। १४ विषभेद, रक्त-

कुलत्थ, लाल कुलथी। १५ काञ्जी। १६ अस्त्रविशेष, जो लोहेका पहिया जैसा और तीक्ष्ण धारवाला होता है। यह अस्त्र प्राचीन समयमें युद्धमें व्यवहृत होता था। शुक्र नीतिके मतसे यह अस्त्र तीन प्रकारका है—उत्तम, मध्यम और जघन्य। जो चक्र आठ शलाकावाला होता है, वह उत्तम, छहवाला मध्यम और चार शलाका (शूल)-वाला जघन्य या अधम चक्र कहलाता है (१)। इसके सिवा परिमाणके भिन्नतासे भी चक्रके तीन भेद होते हैं। जो चक्र बारह पल (एक पल ४ कर्ष या तोलेकी बराबर होता है) का बनता है, वह बालकके लिए उत्तम, ग्यारह पलका होनेसे मध्यम और १० पलका होनेसे जघन्य गिना जाता है। परन्तु युवकके लिए पचास पलका चक्र उत्तम, ४०का मध्यम और ३० पलका जघन्य चक्र है। विस्तारके भेदसे भी चक्रके तीन भेद होते हैं। बालकके लिए आठ अङ्गुल विस्तृत चक्र उत्तम, ७ अङ्गुलका मध्यम और ६ अङ्गुलका जघन्य समझा जाता है। युवकके लिए सोलह अङ्गुलका उत्तम, १४का मध्यम और १२ अङ्गुलका चक्र जघन्य समझा जाता है (२)। चक्रकी परिधि सैक्यलौहसे बनाई जाती है। परिधिका परिमाण ३ अङ्गुल होनेसे उत्तम, २½ होनेसे मध्यम और २ अङ्गुल होनेसे जघन्य कहते हैं। चक्र भी सैक्यलौहसे ही बनता है। इसका मुंह पैना रहता है। (हेमाद्रि० परिशिष्ट)

१७ व्यूहविशेष, एक प्रकारकी सेनाकी स्थिति, जिसे 'चक्रव्यूह' कहते हैं। इसका विशेष विवरण चक्रव्यूह शब्दमें देखना चाहिये। १८ जलावर्त्त, पानीका भंवर। (मेदिनी०) १९ ग्रामजाल। (त्रिकाण्ड०) २० तगरका फूल, गुल-चाँदनी। (राजनि०) २१ तैलयन्त्र, तेल पेरनेका कोल्हू। २२ तन्त्रोक्त मूलाधारादि नामका षट्पद्म, स्वाधिष्ठान, मणिपुर आदि शरीरके छह पद्म। मूलाधारादि देखो। २३ सर्वतोभद्रादि। २४ देवतार्च्चनयन्त्र।

"श्रीचक्रमिन्दुरितं परदेवतायाः।" (तन्त्रसार)

२५ अकडमादि, ये चक्र मन्त्रोद्धारके लिए व्यवहारमें लाये जाते हैं। २६ अलङ्कारशास्त्र-प्रसिद्ध काव्यबन्ध-विशेष। बन्धकार देखो। २७ भैरवी आदि चक्र। तन्त्रशास्त्रमें तत्त्वचक्र नामसे भैरवीचक्रका उल्लेख मिलता है। निष्काम (जिसमें किसी तरहकी कामना न हो) व्यक्ति ही इस चक्रका अधिकारी हो सकता है। भैरवीचक्र देखो।

रुद्रयामलमें महाचक्र, राजचक्र, दिव्यचक्र, वीरचक्र, और पशुचक्र—इन पाँच प्रकारके चक्रोंका उल्लेख है इन चक्रों पर सकाम व्यक्तिका अधिकार होता है। इनका विस्तृत विवरण उन उन शब्दोंमें देखना चाहिये। मन्त्रके शुभाशुभ विचारके लिये भी कुछ चक्र व्यवहृत होते हैं। इसके सिवा और भी बहुतसे चक्रोंका उल्लेख मिलता है, परन्तु आधुनिक तान्त्रिकोंने उनका व्यवहार करना छोड़ दिया है।

स्वरोदय ग्रन्थमें २० स्वरचक्रोंका और ६४ सर्वतो-भद्रादिका, सब समेत ८४ चक्रोंका उल्लेख किया गया है। जय, पराजय और शुभ, अशुभ आदिके निरूपणके लिए उन चक्रोंका प्रयोजन होता है।

स्वरचक्र जैसे—१ मात्राचक्र, २ वर्णस्वरचक्र, ३ ग्रहस्वरचक्र, ४ जीवस्वरचक्र, ५ राशिस्वरचक्र, ६ नक्षत्र-स्वरचक्र, ७ पिण्डस्वरचक्र, ८ योगस्वरचक्र, ९ द्वादश-वार्षिकस्वरचक्र, १२ ऋतुस्वरचक्र, १३ मासस्वर-चक्र, १४ पक्षस्वरचक्र, १५ तिथिस्वरचक्र, १६ घटी-स्वरचक्र, १७ तिथिवारादिस्वरचक्र, १८ तात्कालिक-दिनस्वरचक्र, १९ दिक्चक्र और २० देहजस्वरचक्र।

सर्वतोभद्रादिचक्र—१ सर्वतोभद्र २ शतपद, ३ अंश, ४ कलश, ५ सिंहासन, ६ कूर्म, ७ पद्म, ८ फणीश्वर, ९ राहुकालानल, १० सूर्यकालानल, ११ चन्द्रकालानल, १२ घोरकालानल, १३ गूढ़कालानल, १४ शशिसूर्यकाला-नल, १५ संघट्ट, १६ कुलाकुल, १७ कुम्भ, १८ प्रस्तार, १९ तुम्बर, २० तुम्बुर, २१ भूचर खेचर, २२ पथ, २३ नाड़ी, २४ काल, २५ सूर्यफणी, २६ छत्रफणी, २७ कवि, २८ खल, २९ कोट, ३० गज, ३१ अश्व, ३२ रथ, ३३ व्यूह, ३४ कुन्त, ३५ खड्ग, ३६ छुरिका, ३७ चाप,

(१) "अष्टारमुत्तमं चक्रं षडारं मध्यमं भवेत्
जघन्यं चतुरारं स्यात् इति चक्रं भवेत् त्रिधा।" (हेमाद्रि०)

(२) "द्वादशैकादश दश पलानि क्रमशः शिशोः।
पञ्चाशच्च त्रिंशद्युवः त्रिंशच्च दशचापि च॥
बालानां त्रिविधं चक्रमष्टसप्तषडङ्गुलम्
षोडशाङ्गुलमन्येषां त्रिकोने मध्यमाधमे॥" (हेमाद्रि० परिशिष्ट)

३८ शनि, ३९ सेवा, ४० नर, ४१ छिम्भ, ४२ पत्नी, ४३ वर्ग, ४४ आय, ४५ विरिञ्चि, ४६ सप्तशलाक, ४७ पञ्चशलाक, ४८ चन्द्र, ४९ भास्कर, ५० प्रथममातृका, ५१ द्वितीयमातृका, ५२ तृतीयमातृका, ५३ विजय, ५४ श्येन, ५५ तोरण, ५६ अहि, ५७ चन्द्रशृङ्गोन्नति, ५८ जीव, ५९ लाङ्गल ६० वोजोप्ति, ६१ वृष, ६२ मतानाड़ी, ६३ संवत्सर और ६४ स्थानचक्र। इनका विस्तृत विवरण उपरोक्त शब्दोंमें देखो। वृहत्संहितामें अन्तर, मृग, श्वचक्र और वातचक्र इन चार चक्रोंका उल्लेख है।

ऊपर जिन चक्रोंका उल्लेख कर आये हैं, उनका कुछ विवरण उस जगह न लिख कर यहां लिखा जाता है।

अंशचक्र—रुद्रयामलमें इस चक्रका उल्लेख है। अट्ठाईस सोधी रेखाएं खींच कर फिर उस पर अट्ठाइस टेढ़ी रेखाएं खींच देनेसे अंशचक्र बन जाता है। ईशान कोनकी रेखासे प्रारम्भ कर अट्ठाईस रेखाओं पर क्रमसे कृत्तिकादि नक्षत्रोंका पादद्योतक अक्षरविन्यास बना देना चाहिये। इसमें अभिजित्‌को भी नक्षत्रोंमें शामिल करना पड़ता है। नक्षत्रोंके पादद्योतक अक्षर ये हैं—अ इ उ ए, २। ओ व वि वु, ४। वे वो क कि, ५। कु घ ङ छ, ६। के को ह हि, ७। हु हे हो ड, ८। डि डु डे डो, ९। म मि मु मे, १०। मो ट टि टु, ११। टे टो प पि, १२। पु ष ण ठ, १३। पे पो र रि, १४। रु रे रो त, १५। ति तु ते तो, १६। न नि नु ने, १७। नो य यि यु, १८। ये यो भ भि १९। भू ध फ ढ, २०। भे भो ज जि, २१। जु जे जो, ष०। षि षु षे षो, २२। ग गि गु गे, २३। गो श शि शु, २४ शे शो द दि, २५। दु थ भ ञ, २६। दे दो च चि, २७। चु चे चो ल, २८। लि लु ले लो। इस प्रकारसे क्रम वार अक्षर विन्यास हो जानेके बाद जो ग्रह जिस नक्षत्रके जिस पादमें अवस्थित हो, उसको उस स्थानमें स्थापित करके उस उस रेखामें स्थित वर्णोंको परस्पर वेध देना चाहिये। नक्षत्रके चौथे पादमें ग्रह हो तो आदि और आदिमें रहे तो चतुर्थ, द्वितीय पादमें रहनेसे तृतीय और तृतीयमें रहनेसे द्वितीय पाद विद्ध होता है। अंशचक्रके विधानुसार यदि मनुष्यके नामका आदिका अक्षर शुभग्रहद्वारा विद्ध हुआ हो तो हानि होती है। इसी प्रकार नामका आदिका अक्षर यदि क्रूर ग्रहद्वारा विद्ध हो तो तरह तरहके अमङ्गल, और दो या उससे ज्यादा विद्ध होनेसे अवश्य ही मृत्यु होती है। नामका आदिका अक्षर उभयस्थित क्रूर ग्रह द्वारा विद्ध होनेसे मृत्यु, एक क्रूर और दूसरे शुभग्रहसे विद्ध होनेसे विघ्न तथा दोनों शुभग्रहोंसे विद्ध हो तो व्याधि, पीड़ा और बन्धन हुआ करता है। अंशचक्रमें नक्षत्रका जो पाद ग्रहद्वार विद्ध होता है, उस पादमें विवाह करनेसे वैधव्य, यात्रा करनेसे महाभय, रोगकी उत्पत्ति होनेसे मृत्यु और संग्राम करनेसे भङ्ग होता है। इसी प्रकारसे विद्धनक्षत्रपादाश्रित पर्वत, सागर, नदी, देश, ग्राम और पुरीका विनाश होता है। चन्द्र जिस दिन जिस नक्षत्रके जिस पादमें रहे, उस नक्षत्रका वह पाद यदि चन्द्रके सिवा दूसरे ग्रहद्वारा विद्ध हो तो उस समयमें कोई भी शुभकार्य प्रारम्भ न करना चाहिये क्योंकि उसमें अमङ्गल होनेकी सम्भावना रहती है।

(नरपतिजयचर्या)

अयनचक्र—यह चक्र स्वरोदय प्रकरणमें जरूरी है। अयनस्वरचक्र इस प्रकार बनाया जाता है—

अ	इ	उ	ए	ओ
दक्षिणायण श्रावणादि	उत्तरायण		अस्तोदय १६।	दिनादि २१।४९

अयनस्वरचक्रका प्रयोजन तथा और और विवरण स्वरोदय प्रकरणमें देखना चाहिये।

अश्वचक्र—एक घोड़ेकी मूर्ति बनानी चाहिये, फिर उसके मुख आदि कई एक अङ्गों पर जन्म नक्षत्रोंका क्रमसे अट्ठाईस विन्यास करना चाहिये। मुख, चक्षुद्वय, कर्णद्वय, मस्तक, पूंछ और दोनों पैर इन नौ अङ्गोंमें क्रमसे दो दो करके अठारह और पेटमें पांच तथा पीठ पर पांच नक्षत्र लिखना चाहिये। इसीको अश्वचक्र कहते हैं। नक्षत्रोंमें सूर्यकी अवस्थितिके अनुसार अश्वचक्रके मुख, चक्षु, उदर या मस्तक पर सूर्यकी अवस्थिति हो, अर्थात्

सूर्यके आश्रित नक्षत्र इन स्थानोंमें रहें तो युद्धमें विजय होती है। शनिग्रहका आश्रित नक्षत्र यदि अश्वचक्रके कान, पूँछ, पैर या पीठमें रहे तो विभ्रम, भङ्ग और हानि होती है। उन स्थानोंमें सूर्याश्रित नक्षत्र रहें तो पट्टबन्ध, यात्रा और युद्धका उद्योग न करना चाहिये।

(नरपतिजयचर्या)

अहिचक्र—किसी किसी पुस्तकमें अहिबलचक्रके नामसे भी इसका उल्लेख पाया जाता है। इस चक्रके द्वारा गड़ा हुआ धन निकाला जा सकता है। चार हातका एक वंश कहते हैं और बीस वंशके बराबर क्षेत्रको निवर्तन कहते हैं। जिस निवर्तन क्षेत्रमें निधि (रत्नादि) हों, उसके किसी एक हिस्सेमें यह यन्त्र रख दिया जाता है। ऊपरकी तरफ आठ रेखाएँ खींच कर, उसके ऊपर पाँच टेढ़ी रेखाएँ खींचनेसे अष्टाविंशति कोष्ठचक्र बन जाता है। उसकी प्रथम पंक्तिमें रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, मघा, पूर्वफल्गुनी और उत्तरफल्गुनी ये सात दूसरी पंक्तिमें पूर्वभाद्र, उत्तरभाद्र, शतभिषा, रोहिणी, अश्लेषा, पुष्या और हस्ता ये सात ; तीसरी पंक्तिमें अभिजित् श्रवणा, धनिष्ठा, मृगशिरा, मघा, पुनर्वसु और चित्रा ये सात तथा चौथी पंक्तिमें पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, मूला, ज्येष्ठा, अनुराधा, विशाखा और स्वाती इस प्रकार अठाइस नक्षत्रोंकी स्थापना करनी चाहिये। इस प्रकार सर्पके आकारका यह चक्र होता है। मघा और भरणी इन दोनों नक्षत्रोंके द्वार तथा कृत्तिकाको अहिका मुख समझना चाहिये। इसमेंसे अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्या, मघा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित्, श्रवणा, पूर्वभाद्र और रेवती ये नक्षत्र चन्द्रके हैं और बाकीके सब सूर्यके हैं। प्रश्न समय तक चन्द्रने नक्षत्रोंके जितने दण्ड भोग किये हों, उसका नाम उदयादिगत नाड़ी है। उदयादिगत नाड़ीको २७से गुणा कर उस गुणनफलको ६०से भाग दे कर जो उपलब्ध हो, उसको चन्द्रभुक्त नक्षत्रोंके साथ जोड़नेसे यदि २७से अधिक संख्या हो तो उसमेंसे २७ घटा कर जो बाकी कुछ बचेगा, उसीको भुक्त नक्षत्रोंकी संख्या समझनी चाहिये और ६०से भाग करनेसे जो बचे उसे भुज्यमान नक्षत्रका शरीर समझना चाहिये। जिस कोष्ठमें भुज्यमान नक्षत्र गिरता है, वहां चन्द्रकी स्थापना करनी चाहिये। इसको अहिचक्रस्थ तात्कालिक चन्द्र कहते हैं। इस प्रक्रियाके अनुसार तात्कालिक सूर्यकी भी स्थापना करनी पड़ती है। फल—अगर चन्द्र-नक्षत्रोंमें अर्थात् पहिले कहे हुए अश्विनी आदि नक्षत्रोंमें तात्कालिक चंद्र और सूर्य अवस्थित हो तो निश्चयसे निधि है और यदि सूर्य नक्षत्रमें तात्कालिक चन्द्र सूर्य अवस्थित हो तो शल्य है ऐसा समझना चाहिये। तात्कालिक चन्द्र और सूर्य अगर अपने अपने स्थानमें हो स्थित हों तो चन्द्रके स्थानमें निधि और सूर्यके स्थानमें शल्य रहता है। सूर्य नक्षत्रोंमें चन्द्र और चन्द्र नक्षत्रोंमें सूर्यके रहनेसे निधि या शल्य कुछ भी नहीं है—ऐसा निर्णय करना चाहिये। तात्कालिक चन्द्र क्रूरताको लिए हुए हो तो निधि वा द्रव्य नहीं मिलती और शुभग्रहको लिए हुए हो तो मिलती है। चन्द्रके अन्यान्य ग्रहोंकी दृष्टियोंके अनुसार सुवर्ण आदि कोई भी द्रव्य जमीनमें क्यों न गड़ी है, सब मालूम हो जाती है। ज्यादा जानना हो तो स्वरोदार ग्रन्थमें देखना चाहिये।

आयचक्र—पूर्व-पश्चिममें चार मोषी रेखाएँ खींच कर उस पर उत्तर-दक्षिणमें और चार रेखाएं खींचनी चाहिये, इससे नौ कोठावाला एक चक्र बन जायगा, उसके बीचके कोठेको छोड़ कर बाकीके आठ कोठोंमें आठ दिशाओंको कल्पना करनी चाहिये। ध्वज, धूम्र, सिंह, कुक्कुर, सौरभेय, ध्वांक्ष, गर्दभ और हस्ती ये सब प्रतिपदको अतिक्रम करते हुए तिथिभुक्ति प्रमाणके अनुसार इन आठों दिशाओंमें उदित हो कर एक प्रहर बाद तत्परवर्ती दिशामें गमन करते हैं, इस नियमके अनुसार रात-दिनमें आठों दिशाओंमें घूम आते हैं। जैसे—प्रतिपदामें प्रथम मासमें ध्वज पूर्वमें उदित होता है। फिर प्रथम यामके बीत जाने पर अग्निकोणमें चला जाता है, वहां एक प्रहर रह कर दक्षिण दिशामें चला जाता है। इस नियमके अनुसार प्रदिपद्तिथिके आठों पहरमें ध्वज क्रमसे आठों दिशामें भ्रमण करता है। इसी प्रकार द्वितीया आदि तिथिमें भी धूम्र आदिका उदय और भ्रमण समझ लेना चाहिये। ध्वज आदिके उदयके अनुसार प्रश्नोंका शुभाशुभ निर्णय किया

जाता है। प्रश्न करते समय ध्वज आदि किसीका उदय वा अवस्थिति पूर्वमें होनेसे महालाभ होता है, अग्निकोणमें होनेसे मरण, दक्षिणमें हो तो विजय और सौख्य, नैर्ऋतमें हो तो बन्धन और मृत्यु, पश्चिममें सर्वलाभ, वायुमें हानि, उत्तरमें धनधान्यकी प्राप्ति और ईशान दिशामें हो तो निष्फल होता है। सौरभेय, सिंह और ध्वांक्षके उदय होनेसे फल मिल चुके, ध्वज और गर्दभके उदय होनेसे वर्तमानमें मिल रहे हैं तथा कुक्कुट वा हस्तीके उदय होनेसे भविष्यमें मिलेंगे—ऐसा समझना चाहिये। इसके सिवा वृष और ध्वजसे फल समीप है, गज और सिंहसे दूर है, कुक्कुट और गर्दभसे मार्गस्थ है तथा धूम्र और ध्वांक्षसे निष्फल है—ऐसा निश्चय करना चाहिये। पूर्व और अग्नि दिशामें भावका उदय हो तो मूलचिन्ता, दक्षिण, नैर्ऋत और पश्चिममें हो तो धातुकी चिन्ता तथा उत्तरमें भावका उदय हो तो जीवचिन्ताका निर्णय करना चाहिये। स्वरचक्रका विवरण नक्षत्रचक्रमें देखना चाहिये।

ऋतुस्वरचक्र—अकार आदि पांच स्वरमें क्रमसे वसन्त आदि ऋतुओंका उदय होता है। प्रत्येक स्वरमें ७२ दिन हुआ करते हैं। अन्तरोदयका परिमाण ६ दिन ३२ दण्ड और ३४ पल है। वर्णस्वरोदय प्रकरणमें इसका प्रयोजन होता है। ऋतुस्वरचक्रकी प्रतिकृति इस तरह बनाई जाती है—

ऋतुस्वर-चक्र।

अ ७२	इ ७२	उ ७२	ए ७२	ओ ७२
वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरत्	हिम
मुख्य चान्द्र क्रमसे चैत्र वैशाख और ज्येष्ठकी द्वादशी पर्यन्त ७२।	ज्येष्ठ १८ आषाढ़ ३० श्रावण २४ ७२	श्रावण ६ भाद्र ३० आश्विन ३० कार्तिक ६ ७२	कार्ति २४ अग्र ३० पौष १८ ७२	पौष १२ माघ ३० फाल्गुन ३० ७२
			अन्तरोदय दिनादि ६।३२।५२	

कविचक्र—युद्धयात्रा शब्दमें इसका विवरण देखना चाहिये।

कालचक्र सीधो दश रेखाएं अङ्कित कर उस पर टेढ़ी चार रेखाएं खींच देनी चाहिये। इससे २७ कोठेका एक चक्र बन जायगा, इसकी ऊपरकी पंक्तिमें (जिस दिन प्रक्रिया करें उस दिनके) नौ नक्षत्रोंकी स्थापना करनी चाहिये तथा द्वितीय पंक्तिमें उसके बादके ८ नक्षत्र और तृतीय पंक्तिमें बाकीके नौ नक्षत्रोंको क्रमसे रखना चाहिये। इसमें अक्षत्रयवर्जित चतुर्नाड़ीगतको वेध करना चाहिये। नाड़ीचक्र देखो। सर्पाकार इस चक्रका नाम कालचक्र है। बीचके तीन नक्षत्रोंको कालका मुख और कोनेके दो नक्षत्रोंको दंष्ट्रा (दांत) कहते हैं। जिस दिनमें जिसके नामका नक्षत्र इस चक्रके अनुसार कालके मुख या दंष्ट्रामें पतित हो, उस दिन कोई भी शुभकार्य शुरू नहीं करना चाहिये, इसमें विपत्तिकी सम्भावना रहती है। इसके अतिरिक्त अन्यान्य अवयवोंमें नामका नक्षत्र पड़े तो शुभ होता है। नाम-नक्षत्र दंष्ट्रा या मुखगत होनेसे ज्वर, विनाश, दग्ध और विवाद आदिसे मृत्यु होती है, अथवा महाभय उपस्थित होता है।

कुम्भचक्र—इस चक्रसे यात्राका शुभाशुभ फल निर्णय किया जा सकता है। टेढ़ी रेखाओंसे कुम्भ जैसा एक चक्र बनाना चाहिये। चक्रमें ऊपरसे नीचेकी तरफ एक एक कोठा छोड़ कर सुन्ना लिख देना चाहिये। जिस जिस कोष्ठमें शून्य पड़े, उन्हें रिक्त और जिसमें न पड़े उन्हें पूर्ण कहते हैं। बादमें उस दिन जिस नक्षत्रमें सूर्य हो, उस नक्षत्रसे शुरू कर सब नक्षत्रोंको उसमें लिखना चाहिये। रिक्त कोष्ठमें जो जो नक्षत्र पड़े, उसमें यात्रा करनेसे मनोभीष्ट निष्फल और पूर्ण कोष्ठमें जो नक्षत्र पड़े, उसमें यात्रा करनेसे अभिलाषा पूरी होती है।

कुलाकुलचक्र—इसका विवरण कुलाकुल शब्दमें देखना चाहिये। इससे तिथि, वार और नक्षत्रोंमें कौनसा कुल और कौनसा अकुल है, तथा कौनसा कुलाकुल है, सो सब मालूम हो सकता है।

कुन्तचक्र—इस चक्रसे युद्धका शुभाशुभ फल मालूम किया जा सकता है। कुन्त-अस्त्रकी भांतिका एक चक्र बना कर जिस दिन कार्य करना हो, उस दिनके नक्षत्रसे आरम्भ कर नौ नक्षत्र कुन्तके पैने स्थानमें और उसके बादके नौ नक्षत्र दंडमें तथा उसके बादके

नो नक्षत्रोंको कुन्तके पीठ पर रखना चाहिये। नाम नक्षत्र कुन्तके पैने स्थानमें पड़े तो युद्धमें मृत्यु और दण्डमें पड़े ; तो युद्धमें जय तथा पीठ पर पड़े ; तो जय पराजय न हो कर समानता होती है।

कोटचक्र—यह चक्र आठ प्रकारका होता है। जैसे १ मृण्मय, २ जलकोटक ३ ग्रामकोट, ४ गह्वर, ५ गिरि ६ डामर, ७ वक्रभूमि और ८ विषम। अवस्थाके भेदमे भी दुर्गके भिन्न भिन्न नाम हुआ करते हैं। जैसे अतिदुर्ग, कलिकर्ण, चक्रावर्त, टिक्कर, तलावर्त, पद्म, यक्ष और सावर्त। जिस वर्गका जो भक्ष्य निर्णीत किया गया है, उस दुर्गमे वे रणमें पीठ दे कर भाग जाते हैं। इस लिये दुर्गवर्गके भक्ष्य या उस नामका मनुष्य दुर्गमें न रखना चाहिये। अवर्गका भक्ष्य गरुड़ है, कवर्गका मार्जार, चवर्गका सिंह, टवर्गका कुत्तेका पिल्ला, तवर्गका सर्प, पवर्गकी आयु, यवर्गका हस्ती और शवर्गका भक्ष्य मेष या बकरा है। अवर्गके पञ्चम स्थानमें खण्डि-भङ्ग हुआ करता है। अवर्ग आदि आठ वर्गोंको क्रमसे पूर्वादि आठ दिशाओंमें रखना चाहिये। चौकोना त्रिनाडिक एक कोटचक्र बना कर उसके बाहरके कोट पर कृत्तिका, पुष्या, अश्लेषा, मघा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, अभिजित्, श्रवणा, धनिष्ठा, अश्विनी और भरणी ये बारह, प्राकार पर रोहिणी, पुनर्वसु, भाग्य, चित्रा, ज्येष्ठा, उत्तरफल्गुनी, शतभिषा और रेवती—ये आठ तथा बीचमें मृगशिरा, आर्द्रा, उत्तरफल्गुनी, हस्ता, मूला, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्र और उत्तरभाद्र ये आठ नक्षत्र रखने चाहिये। पूर्व दिशाके आर्द्रा, दक्षिणके हस्ता, पश्चिमके पूर्वाषाढ़ा और उत्तरके उत्तरभाद्र—इन नक्षत्रोंको स्तम्भ कहते हैं। कृत्तिकादि ३, मघादि ३, अनुराधादि ३ और वासवादि तीन—इन बारह नक्षत्रोंको प्रवेश तथा इनके सिवा अन्य नक्षत्रोंको निर्गम कहते हैं। दुर्ग नक्षत्रसे गणना कर ग्रहोंके अनुसार फलका निर्णय करना चाहिये।

दुर्गनामका वर्ण यदि दुर्गका आदि स्थित हो तो उस दिशासे क्रमसे ये चक्र अङ्कित करने चाहिये—चतुरस्र, वर्त्तुल, दीर्घ, त्रिकोण, वृत्त दीर्घ, अर्द्धचन्द्र, गोस्तन और धनुराकृति, चतुरस्रमें जिस प्रकारसे नक्षत्रोंका समावेश किया जाता है, इसमें भी प्रवेश, निर्गम और स्तम्भ वैसे ही होते हैं। दुर्गमें प्राचीरोंका विभाग कर क्रमसे नक्षत्रमण्डल अङ्कित करना चाहिये। उन सब नक्षत्रोंके आश्रित ग्रहोंके अनुसार फल स्थिर कर लिया जाता है। जहां राज्य नक्षत्र और मध्य नक्षत्रमें क्रूरग्रह होगा, वहां दुर्ग न बनाना चाहिये, यदि बनाया जायगा तो वह सेना सहित नष्ट हो जायगा। स्तम्भ नक्षत्र वा प्रवेश नक्षत्रमें चन्द्र, वृहस्पति और शुक्र रहे तो क्रमसे सोम, वृहस्पति वा शुक्रवारको नगरका अवरोध करा देना ठीक है। ऐसे प्रवेश नक्षत्रमें या स्तम्भ नक्षत्रमें और लग्नमें मङ्गल हो तो युद्धमें मङ्गल होता है। क्रूरग्रह बीचमें रहे तो नगरका विनाश कर देता है, पर कोटामें रहे तो खण्डि-कारक और बाहर रहे तो सैनानाशक होता है। बीचमें क्रूर और बाहरमें शुभग्रह रहनेसे नगर पर अवश्य अधिकार होता है। या तो शत्रु लोग भाग जायंगे या उनका भेद हो जायगा, बिना युद्ध किये ही राज्य या नगर पर दखल हो जाता है। बीचमें चार क्रूरग्रह और परकोटे पर सौम्य होनेसे आत्मविच्छेद हो कर युद्धमें हार हो जाती है। बिना युद्धके ही किला अधिकृत हो जाता है। बीचमें सौम्य और बाहरमें क्रूरग्रह हो तो दुर्गका जीतना असाध्य हो जाता है। चहार दीवारी पर क्रूर और बीचमें सौम्य होनेसे दुर्गका घिराव टूट जाता है। मध्य नाड़ीमें सौम्य और बाहरमें क्रूरग्रह हो तो बिना युद्ध किये ही शत्रुकी सेनाका ध्वंस हो जाता है। बीचमें और चहार-दीवारी पर क्रूरग्रह, तथा बाहरमें सौम्यग्रह रहे तो बिना प्रयत्नके दुर्गको सिद्धि हो जाती है। मध्यमें और कोटमें सौम्य तथा बाहरमें क्रूरग्रह रहनेसे ब्रह्माको भी ताकत नहीं ; जो दुर्ग पर दखल जमा ले। परकोटा पर और बाहर क्रूर तथा बीचमें सौम्यग्रह हो तो युद्धमें चहार-दीवारी टूट जाती है, या नगर विच्छिन्न हो जाता है। शुभग्रहयुक्त शुभग्रह स्तम्भान्तर्गत होनेसे, वह दुर्ग चिरस्थायी होता है और शत्रुसे कभी भी ध्वस्त नहीं होता। रवि, राहु, शनि और मङ्गलके स्तम्भान्तर्गत होनेसे वह दुर्ग किसी तरह भी बचाया नहीं जा सकता ; अर्थात् शत्रु द्वारा वह अवश्य ही ध्वस्त होता है

बाहरमें सौम्य और कोट तथा बीचमें क्रूरग्रह आ जानेसे दुर्गका अधिपति अपने आप ही किलेको शत्रुके हाथ सौंप देता है। बाहर और बीचमें क्रूर तथा चहार-दीवारी पर शुभग्रह रहे तो आक्रमण करनेवालोंका बिना युद्धके ही विनाश हो जाता है। परकोटा पर क्रूर तथा बाहर और बीचमें शुभग्रह अवस्थान करता हो तो युद्धमें जय या पराजय न हो कर दिनों दिन खण्डिपात हुआ करता है। सौम्य और क्रूरग्रह अगर चहार-दीवारीमें, बीचमें या बाहर, कहीं भी हों तो भयङ्कर युद्ध छिड़ जाता है और हाथी, घोड़े, पियादे, सेनापति आदि सब ही नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार-के युद्धमें दोनों ही पक्षवाले कालके ग्रास बन जाते हैं। बाहर और बीचमें क्रूरग्रह और शुभग्रह अगर समान संख्यक हों तो प्रायः सन्धि हो जाया करती है। इस तरह कोट-चक्रमें फलाफलका विचार कर युद्ध करें। प्रवेश नक्षत्रके जीवपक्ष नक्षत्रमें (?) अगर चन्द्र रहे तो रातमें अवरोध-कारी राजाओंसे युद्ध करना चाहिये। चन्द्र यदि निर्गम नक्षत्रमें स्थित हो तो रातमें—बाहरमें सबके सो जाने पर—भीतरवाले राजाओंको युद्ध करना चाहिये। वक्र क्रूरग्रह यदि प्रवेश नक्षत्र और पुरमें स्थित हो तो बाहरके राजाओं द्वारा कोटका विनाश होता है। वक्र क्रूरग्रह अगर बाहरमें और प्रवेश नक्षत्रमें स्थित हों तो सेनामें आपसी झगड़ा, दुर्भिक्ष और मरण होता है तथा बाहरकी सेना तितरबितर हो कर भाग जाती है। निर्गम और वहिःस्थ नक्षत्रमें क्रूरग्रह आ जाय तो चहारदीवारी टूट जाती है तथा कोटमें क्रूरग्रह रहनेसे नगर तितर-बितर हो जाता है। पुरनक्षत्र और निर्गमनक्षत्रमें वक्र क्रूरग्रह अवस्थान करता हो तो दुर्गके आदमी युद्ध होते समय दुर्गको छोड़ कर भाग जाते हैं। ग्रहोंकी नीचता, उच्चता और समानताके भेदसे और भी बहुतसे फलाफलोंका निर्णय किया जा सकता है। इसका विशेष विवरण नरपतिजयचर्या प्रकरणमें देखना चाहिये।

खड्गचक्र—इससे भी युद्धका शुभाशुभ निर्णय किया जा सकता है। नौ भेदों सहित खड्गके आकारका एक चक्र बना कर उन नौ स्थानोंमें योधनक्षत्रसे शुरू कर क्रम-से तीन तीन नक्षत्र सजा देना चाहिये, इसीका नाम खड्गचक्र है। नौ स्थान ये हैं—१ यव, २ वज्र, ३ मुष्टि, ४ पालिका, ५ बन्ध, ६ धारद्वय, ७ धारद्वय, ८ खड्ग और ९ तीक्ष्ण। फल—नक्षत्रोंके अनुसार यवसे बन्ध तक जो पांच स्थान हैं, उनमेंसे किसी एक स्थानमें क्रूर ग्रह हो तो युद्धमें मृत्यु, भय और सेना तितरबीतर हो जाती है तथा सौम्यग्रहके रहनेसे लाभ और जय होती है। खड्ग, धारद्वय और तीक्ष्ण, इन चारोंमेंसे किसी एक स्थानमें क्रूरग्रह रहे तो युद्धमें जय होती है। परन्तु इन चारों स्थानोंमें शुभग्रह होनेसे युद्ध तितरबितर हो जाता है तथा शुभ और क्रूर दोनोंके रहनेसे मिश्रित फल होता है।

खलचक्र—इस चक्रसे युद्धमें जय होगी या पराजय, सो सब मालूम हो जाता है। चौकोना और चार द्वार-वाला एक चक्र बना कर, उसके पूर्वद्वारसे लगा कर चारों दरवाजोंमें क्रमसे नन्द आदि तिथि और कृत्तिका आदि सात सात नक्षत्र स्थापन करना चाहिये। प्रवेश करते वक्त बाईं ओर जो दिशा पड़े, उस दिशासे लगा कर चारों दिशाओंमें क्रमसे शनि और चन्द्र, मङ्गल और बुध, रवि और शुक्र तथा बृहस्पतिको खलचक्रके बाहर और भीतर रखना चाहिये। तिथि और नक्षत्रका अधि-पति जिस दिन जिस दिशामें हो, उस दिन उसी दिशाके द्वारमें खलप्रवेश करना पड़ता है। खलके भीतरके शनि, सूर्य, बृहस्पति और मङ्गल तथा बाहरके बुध, शुक्र और चन्द्रग्रहोंके अनुसार स्थायी, यायी और जयी ये तीन काल निरूपित होते हैं। खलके बीचके नक्षत्रमें जो ग्रह जिस स्थानमें अवस्थित हो, उस स्थानमें चन्द्रकी गतिके अनुसार फलका निर्णय किया जाता है। सूर्यके स्थानमें चन्द्रके जानेसे युद्धमें वीरपुरुषकी मृत्यु होती है। ऐसे ही मङ्गलके स्थानमें चन्द्र रहे तो महाक्रोध, बुधके स्थानमें महाभय, शुक्रके स्थानमें भय, शनिके स्थानमें दारुण आघात और राहुके स्थानमें चन्द्र रहे तो अवश्य ही मृत्यु होती है। दोनों योद्धाओंके पीठ पर क्रूरग्रह होनेसे युद्धमें दोनोंका ही मरण होता है। सौम्य ग्रह रहनेसे सन्धि तथा क्रूर और शुभ ये दोनों ग्रह रहनेसे मिश्रित फल होता है।

गूढ़कालानलचक्र—इससे युद्धमें जय-पराजयका फल पहिलेहीसे मालूम पड़ जाता है। पहिले सात सीधी

रेखाएँ खींच कर फिर उस पर टेढ़ी सात रेखाएँ खींचनी चाहिये। इस चक्रके बाईं तरफकी ऊपरकी रेखामें चन्द्राश्रित नक्षत्र और उसके बाद क्रमशः अवशिष्ट नक्षत्रोंको रखना चाहिये। इस चक्रमें कुछ स्थानोंकी कल्पना करनी पड़ती है, जैसे—१ गूढ़ या मस्तक, २ सम्पुट, ३ कर्त्तरी, ४ दण्ड, ५ कपाल और ६ वज्र या चक्र। जिस नक्षत्रमें चन्द्रकी स्थिति है, उसके बादके तीन नक्षत्रोंको मस्तक, उससे परेके नौ नक्षत्रोंको सम्पुट, उसके बाद तीनको कर्त्तरी, उसके परेके तीनको दण्ड, उसके बाद सात नक्षत्रोंको कपाल और बाकी तीन नक्षत्रोंको वज्र या चक्र कहते हैं। नाम नक्षत्र जिस अङ्क पर गिरता है, उसके अनुसार शुभाशुभ फल निरूपण किया जाता है। फल इस प्रकार है, मस्तकमें विभ्रम, सम्पुटमें जय, कर्त्तरीमें प्रहार, दण्डमें भङ्ग, कपालमें मृत्यु और वज्र या चक्रमें महाभय।

ग्रहस्वरचक्र—स्वरोदय प्रकरणमें इसका प्रयोजन होता है। चौकोने चक्रके बीचमें तर-ऊपर चार रेखाएं खींचनेसे पाँच पंक्तिवाला एक चक्र बन जाता है। उसकी बाईं तरफके खानेमें अ स्वर और उसके नीचे मेष, सिंह, वृश्चिक, उसके बादके दूसरे खानेमें इ स्वर और कन्या, मिथुन, कर्कट, तीसरे खानेमें उ स्वर और धनु, मीन, चौथेमें ए स्वर और तुला, वृष, तथा पांचवेंमें ओ स्वर और मकर, कुम्भराशि रखना चाहिये। और जिस पंक्तिमें जो जो राशि आई हों, उसके अधिपति ग्रहोंको भी उस उस राशिके नीचे रखना चाहिये। इसके सिवा इस चक्रमें ग्रहकी बाल्य आदि अवस्था भी लिखी जाती है। स्वरोदयप्रकरण देखो।

ग्रहस्वर-चक्र बनानेका तरीका—

अ	इ	उ	ए	ओ
मेष सिंह वृश्चिक	कन्या मिथुन कर्कट	धनु मीन	तुला वृष	मकर कुम्भ
बाल रवि मंगल	कुमार बुध चन्द्र	युवा वृहस्पति	वृद्ध शुक्र	मृत शनि

घटीस्वर चक्र—स्वरोदयप्रकरणमें इसका प्रयोजन हुआ करता है। इसमें स्वर, दण्ड, पल और अन्तरोदय अङ्कित रहता है। स्वरोदयप्रकरण देखो।

घटीस्वर-चक्र।

अ	इ	उ	ए	ओ
दण्ड ५ पल २७ अन्तरोदय ३०	द० ५ प० २१ अन्त० ३०	द० ५ प० २७ अं० ३०	द० ५ प० २७ अं० ३०	द० ५ प० २७ अं० ३०

घोरकालानलचक्र—इस चक्रद्वारा शुभाशुभका निर्णय किया जाता है। किसी किसी पुस्तकमें "घोरकालानल" की जगह "समकालानल" पाठ भी मिलता है। इसमें भी सात सीधी और उस पर सात टेढ़ी रेखाएं खींची जाती हैं। जिस नक्षत्रमें चन्द्र हो उस नक्षत्रको बाईं तरफकी ऊर्ध्वगामी रेखाके अग्रभागमें और उसके बादके नक्षत्र बादकी रेखाओंके अग्रभागमें रखना चाहिये। चन्द्राश्रित नक्षत्रसे शुरू कर तीन तीन नक्षत्रोंमें रवि आदि भी ग्रह यथाक्रमसे रखना चाहिये। चक्रस्थ नक्षत्रोंके रवि आदि ग्रहोंके अवस्थानानुसार शुभाशुभका निर्णय किया जाता है। पुरुषके नाम-नक्षत्रमें सूर्य अवस्थान करता हो तो शोक और सन्ताप, चन्द्र हो तो मङ्गल और सुख, मङ्गलके होनेसे मृत्यु, बुधसे बुद्धि, वृहस्पतिसे लाभ, शुक्रसे भय, शनिसे महाभय और राहुके रहनेसे निश्चयसे मृत्यु हुआ करती है। यात्रा, जन्म, विवाह और संग्राममें घोरकालानलचक्रसे विचार कर कार्य करना चाहिये। (नरपतिजयचर्या)

रुद्रयामलमें दीक्षाप्रकरणमें सोलह प्रकारके चक्रोंका उल्लेख मिलता है। जैसे—१ अकडम, २ अकथह, ३ ऋोचक्र, ४ कुलाकुल, ५ तारा, ६ कूर्मचक्र, ७ राशिचक्र, ८ शिवचक्र, ९ विष्णुचक्र, १० ब्रह्मचक्र, ११ देवचक्र, १२ ऋणिधनि, १३ रामचक्र, १४ चतुश्चक्र, १५ सूक्ष्म और १६ उल्काचक्र। इनका विवरण उन्हीं शब्दोंमें देखना चाहिये।

जैनमतानुसार—चक्रमें १००० आर (आरे) होते हैं। इसको १००० देव रक्षा करते हैं और यह भरत आदि छह खण्डोंके अधीश्वर (चक्रवर्ती, जैसे-भरत) तथा तीन खण्डोंके अधीश्वरों (अर्द्धचक्रवर्ती, जैसे कृष्ण)-के हो उत्पन्न होता है। यह अस्त्र देवोंका बनाया हुआ होता है। जब तक चक्रवर्ती पूर्णरूपसे छह खण्डोंको न जीत ले तब तक यह चक्र राजधानीमें प्रवेश नहीं करता। इसी प्रकार अर्द्ध चक्रवर्तीका चक्र भी तीन खण्डोंको वश बिना किये राजधानीमें नहीं जाता, बाहर हो रहता है। जैनपुराणोंमें ऐसा वर्णन है कि,—भरत चक्रवर्ती छह खण्डोंको विजय कर अपनी राजधानीमें घुसने लगे तो चक्रने उनका साथ नहीं दिया। इस पर मालूम हुआ कि, उनके भाई बाहुबलिने अब तक उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की। फिर उनको वश करनेके लिए दोनोंमें खूब युद्ध हुआ आखिरमें बाहुबलि हो जीते। भाईके हार जानेसे उदारहृदय बाहुबलिको बड़ा दुःख हुआ और इसी बात पर उन्हें संसारसे वैराग्य हो गया। जब उन्होंने दिगम्बरो दोक्षा ले ली तब उनका चक्र राजधानीमें गया। यह चक्र अपने कुल पर नहीं चलके अर्थात् चक्रवर्त्ता अपने कुलके किसी व्यक्ति पर चक्र चलाना चाहे तो नहीं चल सकता है। (आदिपुराण)

चक्र—१ एक जैन कवि ये श्रीचक्रनामसे प्रसिद्ध थे। क्षेमेन्द्र कृत औचित्यविचारचर्चा और सुवृत्ततिलकग्रन्थोंमें इनका श्लोक उद्धृत किया गया है।

२ एक दूसरे कविका नाम जो चक्रकवि नामसे विख्यात थे। इनका बनाया हुआ चित्ररत्नाकर नामक एक संस्कृत काव्य विद्यमान है।

चक्रक (सं० पु०) चक्रमिव कायति प्रकाशते कै-क। १ तर्कविशेष, न्यायशास्त्रका एक तर्क। तर्कशास्त्रमें इसका लक्षण ऐसा लिखा है कि—"स्वापेक्षणीयापेक्षितसापेक्षत्व-निबन्धनः प्रसंगश्चक्रकः।" (जगदीश) जहां किसी पदार्थके ज्ञानकी उत्पत्ति वा स्थिति उसी पदार्थके ज्ञानकी उत्पत्ति वा स्थितिके अपेक्षणीय पदार्थापेक्षित किसी पदार्थको अपेक्षा करता है, वहां चक्रक हुआ करता है। अपेक्षा कहीं प्रत्यक्ष और कहीं परोक्ष या परम्परामें होती है। उदाहरण—१ "एतद् घटज्ञानं यद्येतद्घटज्ञानजन्यज्ञानजन्यज्ञानजन्यं स्यात् तदा एतद् घटज्ञानजन्यज्ञानजन्यज्ञान-भिन्नं स्यात्।" २ "घटोऽयं यदि एतद् घटजन्यजन्यजन्यः स्यात् तदा एतद्घटजन्यजन्यभिन्नः स्यात्।" ३ "घटोऽयं यद्येतद्घट-वृत्तिवृत्तिः स्यात् तथात्वेन उपलभ्यते।" (जगदीश०)

२ राजिमजातीय सर्पविशेष, एक प्रकारका सर्प।

चक्रका (सं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक प्रकारकी झाड़ी। सुश्रुतके मतसे इसका वर्ण सफेद है और इसके फूलमें कई तरहके रङ्ग हैं।

चक्रकारक (सं० क्ली०) चक्रं चक्राकाररेखां करोति कृ-ण्वुल्, ६-तत्। १ नख, हाथका नाखून। २ व्याघ्रनखी नामक गन्धद्रव्य।

चक्रकुल्या (सं० स्त्री०) चक्रस्य तदाकारस्य कुल्येव। १ चित्रपर्णी, एक तरहका पौधा, पोठवन। २ कृष्णतुलसी।

चक्रगज (सं० पु०) चक्रे चक्राकारे दद्रु रोगे गज इव। चक्रमर्द वृक्ष, चकवँड़ नामका पौधा। इसकी ऊंचाई लगभग एक हाथसे डेढ़ दो हाथ तक होती है। इसमें पीले रङ्गके छोटे छोटे पुष्प लगते हैं। पुष्पके झड़ जाने पर पतली लम्बी फलियां लगती हैं। इसकी पत्ती और जड़ दवाईके काममें आती है।

चक्रगण्ड (सं० पु०) चक्रमिव गण्डुः। चक्राकार उपाधान, गोल तकिया।

चक्रगदाधर (सं० पु०) चक्रं मनस्तत्त्वं गदा बुद्धितत्त्वं धरति धारयति अन्तर्भूतोण्यर्थः धृ-अच्। विष्णु।

"मनस्तत्त्वात्मकं चक्रं बुद्धितत्त्वात्मिकां गदाम्।
धारयन् लोकरक्षार्थं मुक्तश्चक्रगदाधरः॥" (विष्णुस० भाष्य)

चक्रगुच्छ (सं० पु०) चक्रवत् गुच्छः पुष्पगुच्छः अस्य, बहुव्री०। अशोकवृक्ष।

चक्रगुल्म (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

चक्रगोप्त (सं० त्रि०) चक्रस्य गोप्ता, ६-तत्। १ सेनारक्षक, सेनापति। २ चक्रलारक्षक, चकलेकी रक्षा करनेवाला। ३ राज्यरक्षक, राज्यकी रक्षा करनेवाला। ४ जो रथ और चक्रकी रक्षा करता हो, योद्धाविशेष।

चक्रगोप्ता (सं० पु०) चक्रगोप्तृ देखो।

चक्रग्रहण (सं० क्लो०) चक्रस्य ग्रहणं, ६-तत्। १ चाक-

का अवलम्बन, वह जिस पर चाक घूमता है। २ दुर्गके चतुर्दिकस्थ प्राचीर, किलेके चारों ओरकी दीवार, चहारदीवारी।

चक्रचर (सं॰ त्रि॰) चक्रेण सङ्घशश्चरति चर-ट। जो दल बांध कर घूमता हो, जो झुण्डके झुण्ड चलता हो, हाथी, चिड़िया इत्यादि। (पु॰) २ तेली। ३ कुम्हार।

चक्रचारिन् (सं॰ त्रि॰) चक्रेण चरति चर-णिनि। जो चाक द्वारा एक स्थानसे दूसरे स्थानको पहुंचाया जाय।

चक्रचूड़ामणि (सं॰ पु॰) १ चूड़ामणि वा राजाके मुकुटमें लगा हुआ मणि। २ वोपदेवको एक उपाधि। बोपदेव देखो। ३ एक कविका नाम। इन्होंने भागवतपुराणटीका, अन्वयबोधिनी देवस्तुतिटीका, दुर्गामाहात्म्यटीका, रामपञ्चाध्यायटीका प्रभृति ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

चक्रजीवक (सं॰ पु॰) चक्रेण कुम्भसाधनचक्रेण जीवति जीव-ण्वुल्। कुम्भकार, कुम्हार।

चक्रणदी (सं॰ स्त्री॰) चक्रनदी देखो।

चक्रतलाम्र (सं॰ पु॰) एक तरहका आमका वृक्ष।

चक्रताल (सं॰ पु॰) एक प्रकारका चौताला ताल जिसमें तीन लघु, लघुको एक मात्रा, एक गुरु और गुरुको दो मात्राएं होती हैं। इसका बोल है—तांह, धिमिधिमि, तकितां, धिधिगन थों। २ एक तरहका चौदहताला ताल। इसमें यथाक्रमसे ४ द्रुत, द्रुतको ½ मात्रा, १ लघु, लघुको १ मात्रा, १ द्रुत, द्रुतको ½ मात्रा, १ लघु और लघुको ½ मात्रा होती है। बोल इस प्रकार है—जग॰ जग॰ नक॰ थें॰ ताथें॰ थरि॰ कुकु॰ धिमि॰ दांथें, दां॰ दां॰ धिधिकिट, धिधि॰ गनथा।

चक्रतीर्थ (सं॰ क्ली॰) चक्रेण सुदर्शनक्षालनेन कृतं तीर्थं मध्यपदलो॰। तीर्थविशेष। भारतमें चक्रतीर्थ एक नहीं, बल्कि समस्त प्रधान प्रधान तीर्थोंमें एक एक चक्रतीर्थ है, जिनमें काशी, हिमालय, कामरूप, नर्मदातीर, श्रीक्षेत्र और सेतुबन्ध-रामेश्वर आदि स्थानोंमें जो भिन्न भिन्न चक्रतीर्थ हैं, वे ही प्रसिद्ध हैं। (हिमवत्खण्ड ८।१८, योगिनीतन्त्र ४।१४, कूर्मपु॰ १२।३१, वह्निपु॰ ६१।२०)

१ प्रभासक्षेत्रके अन्तर्गत एक वैष्णवतीर्थ। स्कन्दपुराणीय प्रभासखण्डमें लिखा है कि, पहिले विष्णुके साथ असुरोंका एक भयङ्कर युद्ध हुआ था; जिसमें सुदर्शनचक्रके आघातसे बहुतसे असुरोंने प्राण दिये और विष्णुकी जय हुई थी। विष्णुने अपने चक्रको रक्तसे भीगा हुआ देख कर, उसे धो कर शुद्ध करनेके लिये प्रभासक्षेत्रमें एक घाटमें जा कर तीर्थोंको बुलाया। उनकी आज्ञाके पाते ही आठ करोड़ तीर्थ वहां आ उपस्थित हुए और वहीं चक्र धोया गया। प्रभासक्षेत्रके जिस घाटमें यह कार्य हुआ था, उसी क्षेत्रका नाम चक्रतीर्थ है। विष्णुके आदेशानुसार आठ करोड़ तीर्थ यहां सवदा विद्यमान रहते हैं। इस चक्रतीर्थकी पूर्वकी सीमा यमेश्वर, पश्चिमकी सोमनाथ, उत्तरकी विशालाक्षी और दक्षिणकी सीमा सरित्पति समुद्र है। (स्कन्दपुराण प्रभासखण्ड) कार्तिक मासकी द्वादशी तिथिमें चक्रतीर्थमें स्नान, उपवास, ब्राह्मणोंको सुवर्णदान और विष्णुकी उपासना करनेसे पापोंका विनाश होता है। मन लगा कर चक्रतीर्थमें स्नान करनेसे समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेका फल होता है। एकादशी, चन्द्रग्रहण वा सूर्यग्रहणमें इस तीर्थके स्नानसे करोड़ यज्ञका फल होता है। कल्पभेदसे यह तीर्थ भिन्न भिन्न नामसे अभिहित हुआ है। प्रथम कल्पमें कोटितीर्थ, द्वितीयमें श्रीनिधान, तृतीयमें शतधार और वर्तमान चतुर्थ कल्पमें चक्रतीर्थ नाम हुआ है। इसका आयतन आध कोस तक विष्णुक्षेत्र है। इस क्षेत्रमें एक मास उपवास, अग्निहोत्रका अनुष्ठान, मोक्षशास्त्रका अध्ययन, यज्ञका अनुष्ठान, तपस्या, चान्द्रायण, पिताके लिए तिलोदक श्राद्ध और एक रात्रि या तीन रात्रि कृच्छ्रसान्तपन व्रत करनेका विधान है। इस क्षेत्रमें धार्मिक अनुष्ठान करनेसे अन्यान्य तीर्थोंकी अपेक्षा करोड़ गुना फल प्राप्त होता है। यहां एक सुदर्शन नामका तीर्थ है, वहां गोदान करनेसे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और यात्राके उद्देश्यकी सिद्धि होती है। यहां मरनेसे वैकुण्ठकी प्राप्ति होती है। (स्कन्दपु॰ प्रभासखण्ड)

२ मथुराके पास यमुनाके किनारेमें स्थित एक तीर्थ, यहां तीन रात्रि उपवासी रह कर स्नान करनेसे ब्रह्महत्याका पाप छूट जाता है।

३ गोवर्द्धन पर्वतके पासमें एक तीर्थ। यहां चक्रेश्वर नामके महादेव हैं।

४ सेतुबन्ध-रामेश्वरके दो चक्रतीर्थ—एक समुद्रके

किनारे देवपुरी नामक स्थान पर है और दूसरा अग्नि-तीर्थके पास है।

इनमेंसे पहिलेका नाम धर्मपुष्करिणी है। स्कन्दपुराणीय सेतुमाहात्म्यमें लिखा है कि—पूर्वकालमें धर्मने महादेवकी तपस्या करनेके लिए चोरमरके पास १० योजनका एक तीर्थ खोदा था वही धर्मपुष्करिणी है। इसके किनारेके फुल्ल ग्रामके पास गालव अयुतवर्षने विष्णुकी तपस्या की थी। विष्णुने सन्तुष्ट हो कर उन्हें वर दिया था और कहा था—"देहान्त तक तुम इसी पुष्करिणीके किनारे रहो; तुम्हारे ऊपर कोई विपत्ति आवेगी तो हमारा चक्र आ कर तुम्हारी रक्षा करेगा।" माघ मासमें शुक्लपक्षीय हरिवासरमें उपवासी रह कर दूसरे दिन गालव धर्मसरोवरमें स्नान करने गये तो उन्हें दुर्जय नामके राक्षसने निगल लिया। गालवकी प्रार्थना सुन कर विष्णुने उनकी रक्षार्थ चक्र भेजा। चक्रने आ कर गालवका उद्धार किया और तबहीसे धर्मपुष्करिणीका नाम चक्रतीर्थ पड़ गया। किसी समयमें यह तीर्थ दर्भशयनसे ले कर देवीपत्तन तक विस्तृत था। फिर बीचमें एक पर्वत पड़ जानेसे दो चक्रतीर्थ हो गये—एक देवीपत्तनमें और दूसरा दर्भशयनमें। दर्भशयन चक्रतीर्थका दूसरा नाम अहिर्बुध्नतीर्थ भी है। यहांके गन्धमादन पर्वत पर अहिर्बुध्न ऋषिने सुदर्शनकी उपासना की थी। ऋषिकी प्रार्थनाके अनुसार तपोविघ्नकारी राक्षसोंके हाथसे भक्तोंकी रक्षा करनेके लिए विष्णुका चक्र यहीं रह गया। इस तीर्थमें स्नान करनेसे राक्षस, पिशाच आदिके विघ्न दूर हो जाते हैं और अन्धे, बहरे, कुबड़े, लंगड़े, लूले आदिके संकल्पपूर्वक स्नान करनेसे उन्हें पुनर्देह मिलती है।

(सेतुमाहात्म्य ७वां और २२वां अध्याय)

चक्रतुण्ड (सं० पु०) गोलमुखवाली मछली।

चक्रतैल (सं० क्ली०) चक्रस्य तत्फलस्य तैलं। चक्रमर्द फलसे उत्पन्न एक प्रकारका तेल, वह तेल जो चक्रवंडसे तैयार किया गया हो।

चक्रदण्ड (सं० पु०) एक तरहकी कसरत।

चक्रदंष्ट्र (सं० पु० स्त्री०) चक्रं चक्राकृतिर्दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री०। शूकर, सूअर।

चक्रदत्त (सं० क्ली०) चक्रपाणिका बनाया हुआ एक वैद्यक शास्त्र। इसमें भिन्न भिन्न रोगोंके भिन्न भिन्न औषधकी व्यवस्था और प्रस्तुत प्रणाली अच्छी तरहसे लिखी हुई है। चक्रपाणि देखो।

चक्रदन्ती (सं० स्त्री०) चक्रमिव फलरूपदन्तो ऽस्याः बहुव्री०, ङीप्। १ दन्तीवृक्ष। २ जैपालवृक्ष, जमालगोटा।

चक्रदन्तीबीज (सं० क्ली०) चक्रदन्त्या बीजं, ६-तत्। जमालगोटाका बीया।

चक्रदीपिका—१ तन्त्रसारघृत एक तन्त्र। २ वेदान्त सम्बन्धीय एक ग्रन्थ।

चक्रद्वीप—चाकदह देखो।

चक्रदृश (सं० पु०) वलि राजाके सेनापति एक असुर। (भाग० ८।१०।११)

चक्रदेव (सं० पु०) यादववंशके एक राजाका नाम। (भारत० २।१३।७०)

चक्रद्वार (सं० पु०) चक्रमिव द्वारमस्य बहुव्री० पर्वतविशेष एक पहाड़का नाम। (भारत १३।१२२ अ०)

चक्रधनुस् (सं० पु०) सूर्यसे उत्पन्न एक ऋषिका नाम। इनका दूसरा नाम कपिल था। महाभारतमें लिखा है कि इन्होंके क्रोधसे राजा सगरके लड़के भस्म हो गये थे। (भारत ५।१०८ अ०)

चक्रधर (सं० पु०) चक्रं मनस्तत्त्वं सुदर्शनाख्यमस्त्रं वा धरति धृ अच्। १ चक्रधारी विष्णु। २ ग्रामयाजी, गाँवका पुरोहित। (त्रि०) ३ जो चक्र धारण करे। (पु०) चक्रं फणां धरति धृ-अच्। ४ सर्प, साँप।

"भक्षिरः प्रमुखाश्चैव तथा भक्षपयोऽपरे।
तथा नागः सुपर्णाश्च सिद्धाश्चक्रधरास्तथा।" (भारत ३।८५।१०)

५ न्यायमञ्जरीग्रन्थभङ्ग नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ६ पैतृकतिथिनिर्णय नामक ग्रन्थके प्रणेता। ७ यन्त्रचिंतामणि नामक ग्रन्थकार। ८ नटरागसे मिलता जुलता षाडव जातिका एक प्रकारका राग। ९ श्रीकृष्ण। १० बाजीगर, इन्द्रजाल करनेवाला। ११ कई ग्रामों या नगरोंका मालिक।

चक्रधरपुर—बेहार-उड़िस्सा प्रान्तके सिंहभूम जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २२° ४१' उ० और देशा० ८५° ३७' पू० बङ्गाल नागपुर रेलवे पर अवस्थित है। और कलकत्तेसे १६४ मील दूर है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ४८५४ है।

चक्रधर्मन् (सं० पु०) विद्याधरोंके अधिपति।
(भारत ५।१०८ अ०)

चक्रधार (सं० पु०) चक्रधर देखो।

चक्रधारण (सं० क्लो०) चक्रं धार्यते अनेन धारि करणे-ल्युट्। रथावयवविशेष, रथका कोई भाग, अक्षनाभि, अक्षका बिचला भाग।

चक्रधारा (सं० स्त्री०) चक्रस्य धारा, ६-तत्। चक्रका अग्र।

चक्रध्वज—कमतापुर और कामरूपके कोई एक राजा। ये ब्राह्मणोंको यथेष्ट भक्ति श्रद्धा करते थे। इनके पिताका नाम नीलध्वज और पुत्रका नाम नीलाम्बर था।

चक्रनख (सं० पु०) चक्रमिव नखः नखाकृतिरंशविशेषोऽस्यस्य चक्रनख-अच्। व्याघ्रनख नामको औषध, बघनहाँ।

चक्रनदी (सं० स्त्री०) चक्रप्रधाना नदी, मध्यपदलो०। गण्डकी नदी।

चक्रनाभि (सं० पु०) चक्रस्य नाभिः, ६-तत्। चक्रकी नाभि, चाकके मध्यका भाग।

चक्रनाम (सं० पु०) चक्रं मक्षिकानिर्मितं मधुचक्रं तन्नामैव नाम यस्य, बहुव्री०। १ माक्षिक धातु, सोना मक्खी। चक्री नामो यस्य, बहुव्री०। २ चक्रवाक पक्षी, चकवा।

चक्रनायक (सं० पु०) चक्रं तदाकारं नयति नी-ण्वुल्। ६-तत्। व्याघ्रनख नामका गन्ध द्रव्य।

चक्रनारायणी संहिता—रघुनन्दन-कृत ग्रन्थविशेष।

चक्रनितम्ब (सं० पु०) चक्रस्य नितम्बः, ६-तत्। चक्रका नितम्ब, चाकका पैंदा।

चक्रनेमि (सं० स्त्री०) चक्रस्य नेमिः, ६-तत्। चक्रधार, चाकका अगला भाग।

चक्रन्यास—एक तान्त्रिक ग्रन्थ।

चक्रपट्ट (सं० पु०) चक्रवक्राकारो दद्रुरोगः तत्र पद्ममिव अटति प्रभवति अट्-अच्। चर्कमर्दवृक्ष, चकवण्डका गाछ।

चक्रपद (सं० क्लो०) एक तरहका छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें १३ अक्षर या स्वरवर्ण रहते, जिनमेंसे सिर्फ प्रथम और तेरहवाँ अक्षर गुरु और शेष लघु होते हैं।

चक्रपरिव्याध (सं० पु०) चक्रं दद्रुरोग परिविध्यति परि-व्यध-अण्, उपपदस०। आरग्वध, अमलतास, धनबहेड़ा।

चक्रपर्णी (सं० स्त्री०) चक्रमिव पर्णमस्याः बहुव्री०। ङीप्। चक्र ल्या, चित्रपर्णी लता, पिठवन। २ कृष्ण तुलसी।

चक्रपाणि (सं० पु०) चक्रं पाणावस्य बहुव्री०, सप्तम्यां परनिपातः। १ विष्णु।

"निघ्नन्नमित्रान् समरे चक्रपाणिरिवासुरान्।" (भारत ६।४८ अ०)

२ एक सुप्रसिद्ध आयुर्वेदवित् और ग्रन्थकार। इनकी उपाधि दत्त थी। इनका वासस्थान मयूरेश्वर ग्राममें था। ये निदानप्रणेता माधवकरके समसामयिक और नरदत्तके छात्र थे। माधवकर देखो। इनके बनाये हुए चक्रदत्त नामक संस्कृत चिकित्साशास्त्र, "द्रव्यगुण" नामका आयुर्वेदीय द्रव्य गुणाभिधान, सर्वसारसंग्रह और चरक टीका प्रभृति बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ हैं। इन्होंने शब्द-चन्द्रिका नामका एक अभिधान तथा माघ, कादम्बरी और न्यायशास्त्रकी टीका रचना की है। ३ एक कविका नाम, इन्होंने संस्कृत "पदावली" नामका काव्य प्रणयन किया है। ४ कोई एक पण्डित। ये चक्रपाणि पण्डित नामसे मशहूर थे। कवीन्द्र-चन्द्रोदय ग्रन्थमें इनका उल्लेख पाया जाता है। ५ कालकौमुदीचम्पूके प्रणेता। ६ ज्योतिर्भास्कर और विजयकल्पलता नामके ज्योतिर्ग्रन्थकार। ७ प्रौढ़मनोरमा खण्डन-प्रणेता। ८ एक कोई मैथिल कवि।

चक्रपाणिदास—अभिनव-चिंतामणि नामक वैद्यक ग्रन्थ प्रणेता।

चक्रपात (सं० पु०) एक तरहका छन्द।

चक्रपाद (सं० पु०) चक्रं पाद इवास्य बहुव्री०। १ रथ। चक्रवत् पादा यस्य बहुव्री०। २ हस्ती, हाथी।

चक्रपादक (सं० पु०) चक्रपाद देखो।

चक्रपाल (सं० पु०) चक्रं पालयति, चक्र-पालि-अण्। १ सेनापति, चक्रको रक्षा करनेवाली सेना। २ काश्मीरराज अवन्तिवर्माकी सभाके एक कवि। इनके भाईका नाम मुक्ताकण था। क्षेमेन्द्रके कविकण्ठाभरणमें चक्रपालकी कविता उद्धृत है। ३ सूबेदार, चकलेदार, किसी प्रदेशका शासक। ४ वह जो चक्र धारण करे। ५ वृत्त, गोलाई। ६ शुद्धरागका एक भेद।

चक्रपालित—गुप्तसम्राट् स्कन्दगुप्तने १३६ गुप्तसम्वत्में

प्रणदत्त नामक एक व्यक्तिको सुराष्ट्रदेशका शासनकर्ता बनाया था, उन्हींके पुत्रका नाम चक्रपालित था। चक्रपालित पिताके आदेशानुसार गिरिनगर (जूनागढ़) के शासनकर्ता हुए थे। इनके समयमें उर्ज्जयंत (गिरनार) पर्वतके नीचेके सुदर्शनह्रदका (यह ह्रद स्वाभाविक न था. उस समय यहांके एक प्रस्तरच्युतिजनित गह्वरके मुंहमें बांध लगा कर यह ह्रदके आकारका जलाशय बनाया गया था) बांध, वर्षाके पानीसे टूट गया और आस-पासके गाँव बह गये थे। इसके लिए उनने दो मास परिश्रम करके उक्त बांधको पुनः बनवाया था। १३८ गुप्तसंवतमें यह काम समाप्त हुआ था। १३८ गु० सं०में इन्हीं चक्रपालितने "चक्रभृत्" नामके नारायणकी प्रतिमा और उनके लिए एक मन्दिर बनाया था। इनके ये कार्य ४५६से ४५८ ई०के भीतर भीतर हुए थे।

चक्रपुर (सं० क्ली०) काश्मीरका एक प्राचीन नगर। राजा ललितादित्यकी स्त्री चक्रमर्द्दिकाने अपने नाम पर यह नगर बसाया था।

चक्रपुष्करिणी (सं० स्त्री०) काशीकी एक पुष्करिणी। इसकी उत्पत्तिकी कथा—किसी समय हरिने चक्र द्वारा यह पुष्करिणी खोदी थी। उनके शरीरसे जो पसीना निकला था उसीसे पुष्करिणी भर गई। पुष्करिणी तयार हो जाने पर विष्णुने पचास हजार वर्ष तपस्याकी थी उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर शिवजीने अपना मस्तक हिलाया, ऐसा करने पर शिवजीके कर्णसे मणिकर्णिका नामक कर्णभूषण उस स्थान पर गिर पड़ा। इसी कारण इसका दूसरा नाम मणिकर्णिका हुआ है। विष्णुकी प्रार्थनासे शिवजीने वर दिया था कि जो कोई जन्तु इस स्थान पर मरेगा, वह संसारके समस्त यातनासे मुक्त हो निर्वाणपद लाभ करेगा। जो इस तीर्थको आ सन्ध्या, स्नान, जप, होम अच्छी तरहसे वेदाध्ययन,तर्पण, पिण्डदान, देवगणकी पूजा, गौ, भूमि, तिल, सुवर्ण, दीपमाला, अन्न, सुन्दर भूषण एवं कन्यादान अथवा वाजपेयादि यज्ञ, व्रतोत्सर्ग, वृषोत्सर्ग और लिङ्गादि स्थान तथा कोई पुण्यकर्म करेंगे, उन्हें संसारकी तीव्र यातना झेलनी न पड़ेगी।

काशी और मणिकर्णिका देखो।

चक्रपूजा—१ तान्त्रिकग्रन्थ। २ एक तान्त्रिक आचार, तान्त्रिकोंकी एक विधि।

चक्रफल (सं० क्ली०) चक्रमिव फलमग्रं यस्य बहुव्री०। चक्राकार अग्रयुक्त अस्त्रविशेष, एक तरहका अस्त्र जिसमें गोल फल लगा रहता है।

चक्रबन्ध (सं० पु०) एक प्रकारका चित्रकाव्य जिसमें एक चक्र वा पहियेके चित्रके भीतर पद्यके अक्षर जाने जाते हैं।

चक्रबन्धना (सं० स्त्री०) वनमल्लिका, एक प्रकारकी जङ्गली लता।

चक्रबन्धु (सं० पु०) चक्रस्य बन्धुः, ६-तत्। सूर्य।

चक्रबान्धव (सं० पु०) चक्रस्य बान्धवः, ६ तत्। सूर्य।

चक्रवाला (सं० स्त्री०) आम्रातकवृक्ष, अमड़ाका पेड़।

चक्रवालिक (सं० पु०) घोड़ोंके पैरका रोग।

चक्रभृत् (सं० पु०) चक्रं बिभर्त्ति भृ-क्विप्। १ विष्णु, इन्होंने सुदर्शन नामक चक्र धारण किया था, इस लिये इनका नाम चक्रभृत् पड़ा। (त्रि०) २ चक्रधारी, वह जो चक्र धारण करें।

चक्रभेदिनी (सं० स्त्री०) चक्रं चक्रवाकौ भिनत्ति वियोजयति भिद्-णिनि-ङीप्। रात्रि, रात। रातमें चकवा चकईका जोड़ा अलग होता जान कर रातका नाम चक्रभेदिनी हुआ।

चक्रभोग (सं० पु०) चक्रस्य राशिचक्रस्य भोगः, ६-तत्। ग्रहकी वह गति जिसके अनुसार वह एक जगहसे चल कर फिर उसी जगह पर आ जाता है। इसका दूसरा नाम परिवर्त भी है।

चक्रभ्रम (सं० पु०) चक्रमिव भ्रमति भ्रम-अच्। १ एक तरहका यन्त्र। चक्रस्य भ्रमः, ६-तत्। २ चक्रका भ्रमण, चाकका घूमना। ३ चक्र विषयक भ्रान्ति।

चक्रभ्रमर (सं० पु०) एक तरहका नृत्य।

चक्रभ्रमि (सं० पु०) भ्रम-भावे इन् चक्रस्य भ्रमिः, ६-तत्। १ चक्रका घूमना, चाककी परिक्रमा। २ चक्र, चाक, जाँता।

चक्रमण्डल (सं० पु०) एक प्रकारका नृत्य जिसमें नाचनेवाला चक्रकी तरह घूमता है।

चक्रमण्डलिन् (सं० पु०-स्त्री०) चक्रमिव मण्डलोऽस्त्यस्य चक्रमण्डल-इनि। अजगर, सांप।

चक्रमन्द (सं० पु०) नागविशेष, एक तरहका सांप।

चक्रमर्द (सं० पु०) चक्रं चक्राकारं दद्रुरोगं मृद्नाति चक्र-मृद्-अण् उपपद समास। क्षुपविशेष, चकवंड़। इसका पर्याय—एडगज, अड़गज, गजाख्य, मेषाह्वय, एड़हस्ती, व्यावर्त्तक, चक्रगज, चक्री, पुन्नाट, पुन्नाड़, विमर्द्दक, दद्रुघ्न, चक्रमर्दक, पद्माट, उरणाख्य, प्रपुन्नड़, प्रपुनाड़, खर्जुघ्न, तर्वट, चक्राह्व, शुकनाशन, दृढ़वीज, और उरणाक्ष है। इसका गुण—कटु, तीव्र, मेद, वात, कफ, कण्डु, कुष्ठ, दद्रु और पामादि दोषनाशक है। भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—लघु, स्वादु, रुक्ष, पित्त, श्वास और क्रमिनाशक, रुचिकर तथा शीतल है। इसके फलका गुण—उष्णवीर्य्य, कटुरस एवं कुष्ठ, कण्डु, दद्रु, विष, वात, गुल्म, कास, क्रमि और श्वासनाशक है। (भावप्रकाश) २ कष्वट।

चक्रमर्दक (सं० पु०) चक्रं दद्रुरोगविशेषं मृद्नातीति मृद-ण्वुल्। चक्रमर्द, चकवँड़।

चक्रमर्दिका (सं० स्त्री०) राजा ललितादित्यकी प्रधाना महिषी, ललितादित्य की पट्टरानी।

"ललितादित्यभर्तुर्वल्लभा चक्रमर्दिका:" (राजतर० ४। २१२)

चक्रमासज (सं० त्रि०) जो रथचक्र जोड़ता हो।

चक्रमीमांसा (सं० स्त्री०) १ वैष्णवोंकी चक्रमुद्रा धारण करनेकी विधि। २ विजयेंद्र स्वामी रचित एक ग्रन्थ जिसमें चक्रमुद्रा धारणकी विधि लिखी है।

चक्रमुख (सं० पु० स्त्री०) चक्रमिव मुखं यस्य, बहुव्री०। शूकर, सूअर।

चक्रमुद्रा (सं० स्त्री०) १ देवपूजाका अङ्ग मुद्रा विशेष। तन्त्रसारके मतसे दोनों हाथोंको सामने की ओर खूब फैला कर मिलाते और दोनों हाथोंकी कनिष्ठाको अङ्गूठे पर रखते हैं। इसीका नाम चक्रमुद्रा है।

"हस्तौ तु सम्मुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ।
कनिष्ठांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चक्रसंज्ञिका॥" (त० सा०)

२ चक्र आदि विष्णुके आयुधोंके चिह्न जो वैष्णव अपने बाहु और अंगों पर छपाते हैं। चक्रमुद्राके दो भेद हैं, तप्तमुद्रा तथा शीतल मुद्रा। अग्निमें तपे हुए चक्र आदिके ठप्पोंसे शरीर पर जो चिह्न दागे जाते हैं उन्हें तप्त मुद्रा और चन्दन आदिसे शरीर पर जो छाप दिये जाते हैं उन्हें शीतलमुद्रा कहते हैं। रामानुज संप्रदायके वैष्णवोंमें तप्तमुद्राका प्रचार विशेष है। तप्तमुद्रा द्वारकामें ली जाती है।

चक्रमुषल (सं० पु०) चक्रं मुषलञ्च साधनतया अत्रास्ति चक्रमुषल-अच्। चक्र और मुषल ले कर जो युद्ध किया जाता है, उसे चक्रमुषल कहते हैं। हरिवंशके मतानुसार चक्र, लाङ्गल (फार), गदा और मुषल ले कर जो लड़ाई की जाय तथा इन सब अस्त्रोंके प्रहारसे एक सौ हजार राजाओंकी मृत्यु हो जाय तो ऐसे भयानक युद्धका नाम चक्रमुषल है। (हरिवंश १०० अ०)

चक्रमेलक (सं० पु०) काश्मीरके एक ग्रामका नाम।

चक्रमौलि (सं० पु०) चक्रमिव मौलिः शिरोभागो यस्य बहुव्री०। राक्षसविशेष। (रामायण ६।६८।१४)

चक्रयन्त्र (सं० पु०) ज्योतिष का एक यंत्र।

चक्रयान (सं० क्ली०) चक्रयुक्तं यानं, मध्यपदलो०। रथ इत्यादि। "असौ पुष्परथश्चक्रयानं न समराय यत" (अमर)

चक्रयोग (सं० पु०) चक्रस्य तैलस्य योगः ६-तत्। चक्रतैल लेपन, चाकमें तेल लगाना।

चक्ररक्ष (सं० पु०) चक्रं रक्षति अण् उपपदस०। सेनापति, चक्ररक्षक, योद्धाविशेष।

चक्ररथ (सं० पु०) चक्रवाकपक्षी, चकवा।

चक्ररद (सं० पु० स्त्री०) चक्रमिव वृत्तो रदोऽस्य, बहुव्री०। शूकर, सूअर। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

चक्ररिष्टा (सं० स्त्री०) बक, बगला।

चक्ररेणुका (सं० स्त्री०) रक्तकरवीर, लाल कनैलका फूल।

चक्रल (सं० पु०-क्ली०) रक्तकुलत्थ, लाल कुलथी।

चक्रलक्षणा (सं० स्त्री०) चक्रं मण्डलाकारकुष्ठे लक्षणं प्रतीकारसाधनरूपं चिह्नमस्य बहुव्री०। गुडुची, गुरुच।

चक्रलक्षणिका (सं० स्त्री०) चक्रलक्षणा स्वार्थे कन् इत्वञ्च। गुडूची, गुरुच।

चक्रलताम्र (सं० पु०) चक्रः तृप्तिसाधनं लताम्रः। बहरसाल वृक्ष, पुराना आमका दरख्त।

चक्रला (सं० स्त्री०) चक्रं दद्रुरोगं लाति ला-क। १ उच्चटा, घुँघची। २ नागरमुस्ता, नागर मोथा।

चक्रलिप्ता (सं० स्त्री०) चक्रस्य लिप्ता, ६-तत्। ज्योतिषमें राशिचक्रका कलात्मक भाग अर्थात् २१६०० भागोंमेंसे एक भाग।

चक्रवत् (सं० त्रि०) चक्रमस्त्यस्य चक्र-मतुप् मस्य वः। १ जिसको चक्रास्त्र हो। २ तैलिक, तेलसम्बन्धी। (पु०) ३ तिलोंसे तेल निकालनेवाला, तेली। चक्रं तदाकारोऽस्त्यस्य मतुप् मस्य वः। ४ वह पर्वत जिसका आकार चक्रसा हो। "तत्रैव चक्रसदृशं चक्रवन्तं महाबलम्" (हरिवंश १२५) ५ विष्णु। ६ महाराज।

चक्रवर्तिन् (सं० त्रि०) चक्रे भूमण्डले वर्तितुं चक्रं सैन्यचक्रं सर्वभूमौ वर्तयितुं वा शीलमस्य वृत-णिनि, वृत-णिच्-णिनि वा। १ बहुविस्तृत राज्यके अधिपति, एक समुद्रसे ले कर दूसरे समुद्र तक पृथिवीका राजा, जिन्हें अनेक राजा कर देते हों, आसमुद्रकरग्राही।

चक्रचूड़ामणि देखो।

"भरतार्जुनमान्धातृभगीरथयुधिष्ठिराः।
सगरो नहुषश्चैव सप्तैते चक्रवर्तिनः।" (गाथा)

२ वास्तुकशाक, बथुआ। (त्रि०) ३ श्रेष्ठ, मुखिया। फाहियानके भ्रमण-वृत्तान्तके १७वीं अध्यायमें "चक्रवर्ती" उपाधिधारी राजाका उल्लेख है। बौद्धोंमें चक्रवर्तीकी उपाधि अधिक पायी जाती है। भारतवर्षके सिवा अन्यान्य देशोंमें बुद्धदेवके जन्मके विषयमें जो सब मौलिक ग्रन्थ पाये जाते हैं उनसे पता लगता है कि बुद्ध देवदेवोंके वीर्यसे पैदा हुए हैं। मि० विलका ख्याल है कि इसी कारण बुद्धने चक्रवर्तीको उपाधि पाई थी। बुद्धदेव मरते समय कह गये थे कि चक्रवर्ती राजाकी अन्त्येष्टिक्रियाकी नाईं उनकी क्रिया की जाय। मि० विलके मतसे बौद्धचक्रवर्ती शब्द "फाभर्त्तिंश" शब्दसे निकला है। "फ्राभर्त्तिंश" शब्दका अर्थ "आदर्श" है। ४ लाक्षा, लाह। ५ जटामांसी।

चक्रवर्तिनी (सं० स्त्री०) चक्राकारेण वर्तते वृत-णिनि-ङीप्। १ जनीनामक गन्ध द्रव्य, पानड़ी। २ अलक्तक, महावर। ३ जटामांसी, बालछड़, बालचर। ४ पर्पटी, सौराष्ट्रदेशकी मिट्टी, गोपीचन्दन। चक्रं सेनावृन्दं वर्तयितुं शीलमस्याः चक्र-वृत-णिनि-ङीप्। ५ सर्वभूमिकी अधीश्वरी, समूची पृथिवीकी महारानी। चक्रेषु समूहेषु वर्तते वृत-णिनि-ङीप्। यूथकी अधिष्ठात्री, दल या समूहकी अधीश्वरी।

'एवं बाल्येऽपि जाताहं डाकिनी चक्रवर्तिनी।" (कथासरित् २०।११४)

चक्रवर्मा—काश्मीरके एक राजाका नाम। ये निर्जितवर्माके पुत्र थे। काश्मीर देखो।

चक्रवाक (सं० पु०-स्त्री०) चक्रशब्देन उच्यते वच-घञ्। जलचर पक्षीविशेष, चकोर, चकवा। स्त्री० चकई।

"परस्पराक्रन्दिनि चक्रवाकयोः
पुरा वियुक्ते मिथुने कृपावती॥" (कुमार)
"वरुणाय चक्रवाकीम्।" (शुक्लयजु २४।२२)

पर्याय—कोक, चक्र, रथाङ्गाह्वय, नामक, भूरिप्रेमन्, द्वन्द्वचारी, सहाय, कान्त, कामी, रात्रि, विश्लेषगामी, राम, वक्षोजोपम और कामुक। यह हंसजातीय हैं। देखनेमें भी हंस सरीखे हैं। इनका आकार राजहंसों जैसा लम्बा है। पुरुष जातीय चक्रवाककी लम्बाई २५।२६ इञ्च होती है। ऐसी किम्बदन्ती सुननेमें आती है कि—इस जातिकी पक्षी दिनमें स्त्री पुरुष दोनों मुंहसे मुंह सटा कर बैठते हैं और अगल-बगलमें रह कर तैरा करते हैं; परन्तु सूर्यके अस्त होनेके बाद ये लोग अलग अलग रहते हैं। रातमें चकवा चकई कभी भी एक साथ नहीं रहते।

अङ्गरेजोंमें इनको कोई तो Ruddy shelldrake और कोई Ruddy goose कहते हैं। संस्कृतके काव्योंमें इसके वर्णनकी बाहुल्य देख कर पाश्चात्य विद्वान् इसे "ब्राह्मणी हंस" (Brahminy duck) कहा करते हैं। (Casarca rutila.)

इनके शरीर पर तरह तरहके रङ्ग होनेके कारण ये देखनेमें बड़े अच्छे लगते हैं। इनके मस्तककी चोटी तथा दोनों बगलोंका रङ्ग गेरुआ और छाती तथा पीठका घना नरङ्गी रङ्ग होता है। गर्दनके नीचे और छातीके ऊपरके हिस्सेमें ३।४ अङ्गुल चौड़ा एक चमकीला काले रंगका फीतासा होता है, जो छातीसे लगा पीठके ऊपर से घूमा हुआ रहता है। यह चकवाके होता है, चकईके नहीं। किसी किसी चकवाके भी नहीं होता। पीछेका नीचेका भाग कुछ पीलाईको लिए हुए लाल रंगका होता है। किसी किसीके इस स्थानके पङ्खों पर लाल और काले रंगके डोरे भी रहते हैं। पूंछ हरिताभ होती है। इसके

अलावा पङ्ख, पेट आदिका रंग तरह तरहका होता है। चकईकी देहका रंग पीला और ललाईको लिए हुए सफेद होता है, मस्तक और गर्दनका रंग मूषिकधूसर तथा चोंच और पैरोंका रंग काला होता है।

ये लोग बहुत ही थोड़ी आवाजसे चौंक उठते हैं। शिकारी लोग इन्हें सहजमें नहीं मार सकते। जरासी आवाज पाते ही चौंक कर उड़ जाते हैं। उड़ते समय एक तरहकी आवाज करते हैं जिससे दूसरे चकवे भी उड़ जाते हैं। ये ज्यादे ऊँचे तो नहीं उड़ सकते पर हंससे ज्यादा ही उड़ते हैं। भारतवर्षमें जाड़ेके दिनोंमें ये ज्यादे दिखलाई देते हैं। मिस्र, पारस्य, वेलुचिस्तान, अफगानस्तान, पूर्व तुर्किस्तान, पञ्जाब, युक्तप्रदेश, अयोध्या, बङ्गाल, नेपाल, राजपूताना, मध्यभारत, कच्छ, गुजरात, कोङ्कन और दाक्षिणात्यके अन्यान्य देशोंमें इनका वास है। वैद्यक मतसे इसका मांस हलका, चिकना और गरिष्ठ होता है। (राजनि०)

चक्रवाकबन्धु (सं० पु०) चक्रवाकस्य बन्धुः, ६ तत्। सूर्य। दिनके समय चकवा चकईके साथ रमण करता है, इस लिए सूर्य चकवाके बन्धु कहलाते हैं।

चक्रवाकवती (सं० स्त्री०) चक्रवाका भूम्ना सन्त्यत्र चक्रवाक-मतुप् मस्य वः ङीप्। वह नदी जिसमें बहुतसे चकवा रहते हैं।

चक्रवाकिन् (सं० त्रि०) चक्रवाको ऽस्त्यत्र चक्रवाक-इनि। चक्रवाकयुक्त, जिसमें चकवा रहता हो।

चक्रवाट (सं० पु०) चक्रस्येव वाटो वेष्टनं यस्य, बहुव्री०। क्रियारोह, किसी कामका आरम्भ। २ पर्यन्तसीमा। ३ दीवट, जिस पर चिराग रखा जाता है, चीरागदान।

चक्रवाड़ (सं० पु०) चक्रमिव वाड़ते वेष्टयति वाड़ अच्। १ लोकालोक पर्वत, एक पुराण-प्रसिद्ध पहाड़ जो भूमण्डलकी चारों ओर स्थित तथा प्रकाश और अन्धकारका विभाग करनेवाला माना गया है। २ मण्डल, घेरा। ३ मण्डलाकार समूह।

चक्रवाड़िया—बङ्गालमें हवड़ा जिलाके अन्तर्गत एक ग्राम। यहां अच्छी अच्छी धोती और साड़ी प्रस्तुत होती हैं।

चक्रवात (सं० पु०) चक्रमिववातः। भ्रमिवायु, वायुमण्डल, बवण्डर, वेगसे चक्कर खाती हुई हवा।

चक्रवान् (सं० पु०) एक पौराणिक पर्वतका नाम जो चौथे समुद्रके बीच स्थित माना गया है। इसी स्थान पर विष्णुभगवान्‌ने हयग्रीव और पञ्चजन नामक दैत्योंको मार कर चक्र और शङ्ख दो आयुध प्राप्त किये थे।

चक्रवाल (सं० पु०) चक्रवाड़ देखो।

चक्रवालधि (सं० पु०) कुक्कुर, कुत्ता।

चक्रविप्रदास—भास्वती नामक ज्योतिषशास्त्रका एक टीकाकार।

चक्रविरति (सं० स्त्री०) चक्रवृत्ति देखो।

चक्रवीज (सं० क्ली०) जैपालवीज, जमालगोटाका बीया।

चक्रवृत्ति (सं० स्त्री०) एक वर्णवृत्तिका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें एक भगण तीन नगण और अन्तमें लघु गुरु होते हैं।

चक्रवृद्धि (सं० स्त्री०) चक्रमिव वृद्धिः। १ सूद दर सूद।

"इह स्पि पुनस्र द्विचक्रवृद्धिरुदाहृता।" (नारद)

मनुके मतसे चक्रवृद्धि अत्यन्त निन्दनीय है। (मनु० ८।१५३) चक्रमस्त्यस्य चक्र-अच् चक्रं चक्रयुक्तं शकटादि तन्निमित्ता वृद्धिः। २ गाड़ीका भाड़ा।

"चक्रवृद्धिः समारूढो देशकालव्यवस्थितः।" (मनु० ८।१५६)

चक्रव्यूह (सं० पु०) चक्राकारो व्यूहः। व्यूहविशेष, कुण्डलाकार स्थिति जो प्राचीन कालमें युद्धके समयमें किसी व्यक्ति या वस्तुकी रक्षाके लिये उसकी चारों ओर कई घेरोंमें सेना रखी जाती थी। इसमें प्रवेश करना और निकलना दुःसाध्य होता था। महाभारतमें द्रोणाचार्यने यह व्यूह बना कर युद्ध किया था। उस व्यूहमें अर्जुनके पुत्र अभिमन्यु मारे गये थे।

चक्रशकुल (सं० पु०) शालमत्स्य, एक तरहकी मछली।

चक्रशल्य (सं० स्त्री०) चक्रमिव शल्यमत्र, बहुव्री०। १ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुँघची। २ काकतुण्डी, कौआ टोंटी।

चक्रशाल—चट्टग्रामके अन्तर्गत एक परगणा। (देशावली)

चक्रशास्त्र—शिल्पशास्त्रसम्बन्धीय संस्कृत ग्रन्थ।

चक्रश्रेणी (सं० स्त्री०) चक्राणां श्रेणिर्यत्र, बहुव्री०, ङीप्। अजशृङ्गी वृक्ष, मेढ़ासींगी। इसका फल मेढ़ेके सींग जैसा होता है इस लिए ऐसा इसका नाम पड़ा।

चक्रसंज्ञ (सं० क्लो०) चक्रस्य संज्ञा संज्ञास्य, बहुव्रो०। १ वङ्ग धातु, राँगा। २ चक्रवाक, चकवा पक्षो।

चक्रसंवर (सं० पु०) चक्रमिन्द्रियचक्रं संवृणोति चक्र-सम्-वृ-अच्। बुद्धविशेष, एक बुद्धका नाम।

चक्रसक्थ (सं० त्रि०) चक्रमिव सक्थि अस्य यच्। चक्र तुल्य सक्थियुक्त, जिसकी जाँघ चक्र जैसी गोल हो।

चक्रसाह्वय (सं० पु०) चक्रेण समाना आह्वा यस्य, बहुव्रो०। चक्रवाक, चकवा।

"चकोरान् वानरान् हंसान् सारसान् चक्रसाह्वयान्।"

(भारत १३।५४ अ०)

चक्रसिकन्दर—तेरभुक्तके अन्तर्गत एक छोटा गाँव। (भ० ब्रह्मख० ४७।१२२-१२३)

चक्रसेन—ताराचन्द्रके लड़के और सिंहके पिता।

चक्रस्वस्तिकनन्दावर्त्त—बुद्धका नामान्तर।

चक्रस्वामिन् (सं० पु०) चक्रस्य स्वामी, ६-तत्। चक्रके अधिपति, विष्णु।

चक्रहस्त (सं० पु०) चक्रं हस्ते यस्य, बहुव्रो०। चक्र-पाणि विष्णु। (त्रि०) २ चक्रधारी, जिसके हाथमें चक्र हो।

चक्रह्रद (सं० पु०) एक झीलका नाम।

चक्रा (सं० स्त्री०) चक् टप्सो रक्-टाप्। १ नागरमोथा। २ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासिंगी।

चक्रांश (सं० पु०) चक्रस्य राशिचक्रस्यांशः। राशिचक्रका ३६०वाँ अंश।

चक्राकार (सं० त्रि०) पहियेके आकारका, मण्डलाकार, गोल।

चक्राकी (सं० स्त्री०) चक्राकारेण अकति अक गतौ अच् गौरादित्वात् ङोष्। हंसी, हंसिनी, मादा हंस।

चक्राकृति (सं० त्रि०) चक्रमिव आकृतिर्यस्य, बहुव्रो०। जिसका आकार चक्र जैसा गोल हो।

चक्राख्यरस (सं० पु०) चक्राख्यश्चासौ रसश्चेति, कर्मधा०। औषधविशेष, एक तरहकी दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—रससिन्दूर, अबरक, हीराभस्म, ताँबा और काँसा हर एकका समानभाग तथा सबको मिला कर जितना हो, उतना ही गन्धक मिला कर भिलावाके काढ़ेमें एक दिन घोंट कर दो रत्ती परिमाणकी गोलीयाँ तैयार करें। इसीका नाम चक्राख्यरस है। इसके सेवन करनेसे बवासोरकी बीमारी जाती रहती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह वि०)

चक्राङ्क (सं० पु०) चक्रका चिह्न जो वैष्णव अपने बाहु पर दगवाते हैं।

चक्राङ्का (सं० स्त्री०) नागरमोथा।

चक्राङ्कित (सं० त्रि०) जिसने चक्रका चिह्न दगवाया हो, जिसने चक्रका छाप लिया हो।

चक्राङ्किता (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, कोई पेड़।

चक्राङ्गी (सं० स्त्री०) चक्राकारेण अङ्गते गच्छति अकि गतौ अच् गौरादि ङीष्। हंसी, हंसिनी।

चक्राङ्ग (सं० पु०) चक्रमिवाङ्ग चक्रमिवाङ्गं यस्य, बहुव्री। १ हंस।

"इः सुप्तश्चक्राङ्गा यथाकाकं विहङ्गमा।" (भारत ८।४१।२१)

वक्रमङ्गमस्य बहुव्रो०। २ रथ, गाड़ी। ३ चक्रवाक, चकवा। ४ कुटकी नामकी दवा। ५ एक तरहका शाक, हिलमोचिका।

चक्राङ्गा (सं० स्त्री०) चक्रमिवाङ्ग मस्त्यस्याः चक्राङ्ग-अच-टाप्। १ सुदर्शनालता। २ कर्कटशृङ्गी, काकड़ा सिंगी।

चक्राङ्गी (सं० स्त्री०) चक्रमिवाङ्ग मस्याः, बहुव्रो०, ङीष। १ कटुरोहिणी, कुटकी। २ हंसी, हंसिनी, मादा हंस। ३ हिलमोचिका, एक प्रकारका शाक, हुलहुल। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ५ वृषपर्णी, मूसाकरणी। ६ कर्कट-शृङ्गी, काकड़ासिंगी।

चक्राट (सं० पु०) चक्रं चक्राकारमटति चक्र-अट्-अण्, उपस०। १ विषवैद्य, साँपका विष झाड़नेवाला। २ धूर्त, कपट, धोखेबाज। ३ मदारी, साँप पकड़ने वाला। ४ सोनेका एक सिक्का, दीनार।

चक्राथ (सं० पु०) कौरव योद्धाविशेष, एक कौरव योद्धाका नाम।

चक्राधिवासिन् (सं० पु०) चक्रं दृष्टिकरं अधिवासयति अधि-वस-णिच-णिनि। नागरङ्गवृक्ष, नारंगी नीबू।

चक्रान्त (सं० पु०) चक्रेण समूहेनान्तो नैकट्यं मेल-नं यत्र, बहुव्रो०। किसी अनुचित कार्य या किसीके अनिष्टसाधनके लिये कई मनुष्योंकी गुप्त मन्त्रणा, षड़यन्त्र, गुप्त अभिसन्धि।

चक्रान्तकारिन् (सं० त्रि०) चक्रान्तं करोति चक्रान्त-कृ-णिनि। चक्रान्त करनेवाला, जो षड़यन्त्र रचता हो।

चक्रान्तर—बुद्धभेद।

चक्रायुध (सं० पु०) चक्रमायुधमस्य, बहुव्री०। १ विष्णु।

"चक्रायुधेन चक्रेण पिबतोऽमृतमोजसा।" (भारत १।१९२ अ०)

(त्रि०) २ चक्रधारी, जो चक्र धारण करता हो।

चक्रायोध (सं० पु०) एक राजाका नाम।

चक्रालु (सं० पु०) महारसाल आम्र, एक तरहका आमका गाछ।

चक्रावर्त (सं० पु०) चक्रस्येवावर्तः। मण्डलाकारमें परिभ्रमण, गोलाकारमें घूमना।

चक्रावल (सं० पु०) घोड़ोंका एक रोग, जिसमें घोड़ोंके पैरोंमें घाव हो जाता है।

चक्राह्व (सं० पु०) चक्रेति आह्वा यस्य, बहुव्री०। १ चक्रमर्द, चकवँड़। २ चक्रवाक, चकवा पक्षी।

"हंससारसचक्राह्वकाकोलूकोदयः खगाः।" (भागवत ३।१०।२४)

चक्रि (सं० त्रि०) करोति कृ-किन् द्वित्वञ्च। १ कर्ता, करनेवाला, जो काम करता हो।

चक्रिक (सं० पु०) १ चक्रधारी, चक्र धारण करनेवाला। २ रक्तकुलत्थ, लाल कुलथी।

चक्रिका (सं० स्त्री०) चक्रं तदाकारोऽस्त्यस्याः चक्र-ठन्-टाप्। १ जानु, चक्की, घुटने परकी गोल हड्डी। २ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुँघची। ३ रक्तकार्पास, लाल कपास। ४ चक्रमर्द, चकवँड़।

चक्रिन् (सं० पु०) चक्रमस्त्यस्य चक्र-इनि। १ विष्णु।

"ततोऽतिकोप पूर्वस्य चक्रिणो वदनात्ततः।" (मार्क० चण्डी)

२ ग्रामजालिक, गांवका पण्डित या पुरोहित। ३ चक्रवाक, चकवा पक्षी। ४ सर्प, साँप। ५ कुम्हार, कुलाल। ६ सूचक, गोइंया, जासूस, दूत, चर। ७ अज, छाग, बकरा। ८ तैलिक, तेली। चक्रं राष्ट्रचक्रं अस्त्यस्य चक्र-इनि। ९ चक्रवर्ती। १० चक्रमर्द, चकवँड़। ११ तिनिश, एक तरहका वृक्ष। १२ व्याघ्रनख नामक गन्धद्रव्यविशेष, व्याघ्रनख नामका गन्धद्रव्य, बघनहाँ। १३ काक, कौवा। १४ गर्दभ, गदहा, गधा। (त्रि०) १५ चक्रयुक्त, जिसके चक्र हो, जो चक्र रखता हो १६ जो रथ पर चढ़ा हो। (पु०-स्त्री०) १७ सङ्कर जातिविशेष, एक वर्णसङ्कर जाति जिसका उल्लेख 'जातिविवेक'में है।

"वैश्यायां शूद्रतश्चौराज्जातश्चक्री स उच्यते।" (उशना०)

१८ चन्द्रशेखरके मतसे आर्याछन्दका २२वां भेद जिसमें ६ गुरु तथा ४५ लघु होते हैं।

चक्रिपत्नी (सं० स्त्री०) १ मादा चकवा, चकई। २ श्वेततुलसी, सफेद तुलसी।

चक्रीवत् (सं० पु०-स्त्री०) चक्रं तद्वद्भ्रमणमस्त्यस्य चक्र-मतुप् मस्य वः निपातनात् चक्रशब्दस्य चक्रीभावः। १ गर्दभ, गदहा, गधा।

"चक्रीवद्‌गलदध्यूढ्यो विसृष्टाः।" (माघ)

(पु०) २ राजविशेष, एक राजाका नाम। (त्रि० कौ०) ३ चक्रवाक, चकवा। (त्रि०) ४ चक्रयुक्त।

चक्रु (सं० त्रि०) कृ-कु द्वित्वञ्च। कर्मण। उण् १।२३। कर्ता, जो काम करता हो।

चक्रेन्द्रक (सं० पु०) देवसर्षपवृक्ष, राई।

चक्रेश्वर (सं० पु०) चक्रस्य मण्डलस्य ईश्वरः, ६-तत्। १ मथुराके निकट चक्रतीर्थमें अवस्थित महादेव।

चक्रतीर्थ देखो।

२ चक्रवर्ती। ३ तान्त्रिकोंके चक्रका अधिष्ठाता।

चक्रेश्वररस (सं० पु०) औषधविशेष। रससिन्दूर चार भाग, सोहागा पांच भाग और अबरक पांच भाग ले कर सफेद पुनर्णवाके रसमें तीन दिन भावना दे कर दो रत्ती परिमाणकी गोली बनानी पड़ती है। इसीका नाम चक्रेश्वररस है। प्रतिदिन सेवन करनेसे बवासिरकी बीमारी जाती रहती है। (रसेन्द्रसार० अर्शोधिकार)

चक्रेश्वरी (सं० स्त्री०) चक्रस्य ईश्वरी, ६-तत्। १ जैनोंकी महाविद्याओंमेंसे एक। जैन मतानुसार इस देवीने बड़े बड़े मुनि ऋषियोंका उपसर्ग दूर किया था और अकलङ्क देवके शास्त्रार्थमें सहायता पहुंचाई थी।

चक्रोत्थ (सं० पु०) कुक्कुटपादी लता, एक प्रकारकी लता।

चक्रोपजीविन् (सं० त्रि०) चक्रं तैलनिष्पीड़नयन्त्रं उपजीवति उप-जीव-णिनि। तैलिक, तेली।

चक्षण (सं० क्ली०) चक्ष-ल्युट् छान्दसत्वात् नख्यादेशः। १ अनुग्रहदृष्टि, कृपादृष्टि। २ मद्यपानरोचक भक्ष्यद्रव्य, गजक, चाट। ३ कथन।

चक्षणि (सं० त्रि०) चक्ष-अनि। प्रकाशक, जाहिर करनेवाला। "उतो विभावा चक्षणि" (ऋक् ६।४।२)

'चक्षणिः प्रकाशकः' (सायण)

चक्षन् (सं० क्ली०) चक्ष ल्युट् निपातने साधु। चक्षु, आंख। "कर्णाविमौ नासिके चक्षणी मुखम्" (अथर्व १०।२।६)

चक्षम् (सं० पु०) चक्ष-असि नख्यादेशः। १ वृहस्पति। २ उपाध्याय।

चक्षुम (सं० पु०) कुलाचार्य, गुरु, पुरोहित।

चक्षु (सं० पु०) चक्ष उस् क्शान्दसत्वात् मकारलोपः। १ नेत्र, आँख, दर्शनेन्द्रिय। चक्षुस देखो।

"चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्य्योऽजायत।" (ऋक् १०।९०।१३)

'चक्षोः चक्षुषः' (सायण)

२ अजमीढ़वंशीय एक राजा, जिनके पिताका नाम पुरुजानु और पुत्रका नाम हर्यश्व था। (विष्णुपुराण ४।१९ अ०) ३ दिवके पुत्र। (स्त्री०) ४ नदीविशेष, एक नदीका नाम। विष्णुपुराणमें लिखा है कि ब्रह्मपुरी प्लावित कर गङ्गा जब मर्त्यलोकमें गिरी तब इनके स्रोत चारों ओर चार नदियोंके रूपमें बह निकले। उनमेंसे एक नदीका नाम चक्षु है। चक्षुनदी केतुमाल पर्वतके बीचसे होती हुई पश्चिम सागरमें जा मिली है। आजकल इसे ओक्सस कहते हैं (Oxus) (विष्णुपुराण २।२ अ०)

चक्षुःपथ (सं० पु०) दृष्टिपथ, जितनी दूर तक नजर जा सके।

चक्षुःपीड़ा (सं० स्त्री०) चक्षुषः पीड़ा, ६-तत्। नेत्ररोग, आँखकी बीमारी। चक्षुरोग देखो।

चक्षुःश्रवस (सं० पु०-स्त्री०) चक्षुषा शृणोति सु-असुन् चक्षुरेव श्रवः कर्णौ यस्य वा। सर्प, साँप।

"इति स्म चक्षुःश्रवसां प्रियानले स्तुवन्ति निन्दन्ति हृदा तदात्मनः।" (नैषध० १।२८)

चक्षुक (सं० पु०) तिनिशवृक्ष।

चक्षुप (सं० पु०) प्रबल पराक्रान्त एक राजा। ये नेदिष्ठवंशके खनिनेत्रके पुत्र थे।

चक्षुरिन्द्रिय (सं० क्ली०) चक्षुश्च तदिन्द्रियश्चेति, कर्मधा०। नेत्र, आँख।

चक्षुर्गोचर (सं० त्रि०) चक्षुषो दर्शनेन्द्रियस्य गोचरः, ६-तत्। जो आँखसे ग्रहण किया जाय।

चक्षुर्ग्रहण (सं० क्ली०) चक्षुषो ग्रहणं, ६-तत्। चक्षुःप्राप्ति, आँखका पाना।

चक्षुर्दर्शनावरण (सं० पु०) जैनधर्ममें वह कर्म जिसके उदय होनेसे चक्षु द्वारा सामान्य बोधकी लब्धिका विघात हो।

चक्षुर्दा (सं० त्रि०) चक्षुर्ददाति दा-क्विप्। चक्षु दान करनेवाला, चक्षुःप्रदाता, जो आँख दान करता हो।

"कर्णोनकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि।" (शुक्लयजुः ४।१)

चक्षुर्दान (सं० क्ली०) नेत्र अर्पण, ज्ञानदान, उपदेश दे कर चतुर और चालाक बनाना।

चक्षुर्भृत् (सं० त्रि०) चक्षुर्बिभर्त्ति भृ-क्विप्, तुगागमः। १ लोचनयुक्त, जिसके आँख हो। २ चक्षुरक्षक, जो आँखकी रक्षा करता हो।

चक्षुर्मन्त्र (सं० त्रि०) नेत्रसुखकर, आँखको आराम देनेवाला। "चक्षुर्मन्त्रस्य दुर्हार्दः पृष्ठीरपि शृणीमसि।" (अथर्व १९।४५)

चक्षुर्मय (सं० त्रि०) चक्षुस्-मयट्। जिसको अनेक आँखें हों।

चक्षुर्मल (सं० क्ली०) चक्षुषो मलं, ६-तत्। नेत्रमल, कीचड़।

चक्षुर्लोक (सं० त्रि०) जो आँखसे देखी जा सके।

चक्षुर्वन्ध्य (सं० त्रि०) चक्षुरोगसे पीड़ित, जो आँखकी बीमारीसे दुःखित हो।

चक्षुर्वर्द्धनिका (सं० स्त्री०) महाभारतके अनुसार शाकद्वीपकी एक नदी। (६।११)

चक्षुर्वहन (सं० क्ली०) चक्षुस्तद् ज्योतिर्वहति वह कर्तरि ल्यु। मेषशृङ्गी वृक्ष, मेंढ़ासींगी।

चक्षुर्विषय (सं० पु०) चक्षुषो विषयः, ६-तत्। १ चक्षुग्राह्य रूपादि, आँखसे देखे जानेवाले रूप इत्यादि। भाषापरिच्छेदके मतानुसार उद्‌भूतरूप, उद्‌भूतरूपयुक्त द्रव्य, पृथक्त्व, संख्या, विभाग, संयोग, परत्व, अपरत्व, स्नेह, परिमाण, द्रवत्व और योगावृत्ति क्रिया ये सब पदार्थ चक्षुके विषय हैं। २ नेत्रप्रचारस्थान, जितनी दूर तक दृष्टि जाय।

"पुत्रीषु चक्षुर्विषये न यत्र स्त्री मनो भवेत्" (मनु० ३।१९८)

चक्षुर्हन् (सं० त्रि०) चक्षुषा हन्ति-हन्-क्विप्। १ दृष्टिनाशक, जिसके देखते ही नाश हो जाय। (पु०) २

एक प्रकारका सर्प, महाभारतके अनुसार एक तरहका सांप जिसके देखतेही जीवजन्तुओंकी आँखें फूट जाती हैं। (भारत १३। ३५ अ०)

चक्षुष्काम (सं० त्रि०) चक्षुःकामयते अभिलषति चक्षुस् काम-अण्, उपपदसं। जो मनुष्य आँखकी इच्छा करता हो।

चक्षुष्ट्य (सं० त्रि०) चक्षुम् पञ्चम्यास्तमिल् तकारस्य टकारः। चक्षुर्हेतुक, जिसमें आँखको जरूरत पड़े।

चक्षुष्पति (सं० पु०) चक्षुके अधिपति, सूर्य।

चक्षुष्पा (सं० त्रि०) चक्षुषी पाति चक्षुस्-पा-क्विप्। चक्षुरक्षक, आँखको रक्षा करनेवाला।

चक्षुष्मत् (सं० त्रि०) प्रशस्तः चक्षुरस्त्यस्य चक्षुस्-मतुप्। १ प्रशस्त लोचनयुक्त, जिसको आँखें बड़ी बड़ी और सुन्दर हों। "चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि।" (ऋक् १०।१८।१)

'चक्षुष्मते दर्शनवते' (सायण)

चक्षुष्मती (सं० स्त्री०) चक्षुष्मतः भावः चक्षुष्मत्-तल्-टाप्। प्रशस्तचक्षु, सुन्दर आँख।

"चक्षुष्मत्ता शास्त्रेण सूक्ष्मकार्यार्थदर्शिना।" (रघु० ४।१३)

चक्षुष्य (सं० त्रि०) चक्षुषे हितं चक्षुस्-यत्। चक्षुका हितकर, जो नेत्रोंको हितकारी हो।

"दन्तिपोमाक्षतः श्रेष्ठ चक्षुष्यो बलवर्द्धनः।" (सुश्रुतसूत्र २० अ०)

२ प्रियदर्शन, सुन्दर।

"अभूत् सर्वस्य चक्षुष्यः स तु दुर्लभदर्शनः।" (राजतर० ३।४९५)

३ नेत्रजात, नेत्रोंसे उत्पन्न, नेत्रसम्बन्धी।

"चक्षुष्याः खलु महतां परैरलङ्घ्याः।" (माघ ८।५२७)

(पु०) ४ केतकवृक्ष, केतकी, केवड़ा। ५ पुण्डरीकवृक्ष, श्वेतपद्म। ६ शोभाञ्जनवृक्ष, सहजनका पेड़। ७ रसाञ्जन, अञ्जन, सुरमा। (क्लो०) ८ खर्परीतुत्थ, खपरिया, तूतिया।

चक्षुष्या (सं० स्त्री०) चक्षुष्य-टाप्। १ कुलत्थिका, कुलथी, चाकसू। २ सुभगा, सुन्दर औरत। ३ अजशृङ्गी, मेढ़ासींगी। ४ वनकुलत्थिका। ५ नीलाञ्जन। ६ हीरक। ७ केतकवृक्ष। ८ कुलत्थाञ्जन।

चक्षुस् (सं० क्लो०) चष्टे धातूनामनेकार्थत्वात् पश्यत्यनेन चक्ष करणे उसि शिच्च। चक्षेः शिच्च। उण् २।१२०। १ दर्शनेन्द्रिय, आँख, जिस इन्द्रियसे उद्भूतरूप और तद्विशिष्ट पदार्थ आदिका प्रत्यक्ष ज्ञान हो। चक्षुरिन्द्रिय देखो। पर्याय—लोचन, नयन, नेत्र, ईक्षण, अक्षि, दृक्, दृष्टि, अम्बक, तपन, दर्शन, विलोचन, दृशा, वीक्षण, प्रेक्षण, दैवदीप, देवदीप, दृशि और दृशी। इसका अधिष्ठाता देव सूर्य है। न्याय और वैशेषिक मतसे चक्षुरिन्द्रिय तैजसिक और मध्यम परिमाण शरीरावयव चक्षुके अधिष्ठान गोलकमें अवस्थित हैं। सांख्यके आचार्यगण चक्षुरिन्द्रियका भौतिकत्व स्वीकार नहीं करते। उनके मतसे चक्षुरिन्द्रिय आहङ्कारिक है और कुछ तेजका अवलम्बन कर चक्षुगोलकमें अवस्थान करती है। बहुतसे भ्रान्त लोग चक्षुके अधिष्ठानको ही इन्द्रिय मान लिया करते हैं।

(षड्ध्यायी २४०)

२ शरीरावयव, शरीरका कोई हिस्सा। चक्षुरिन्द्रियके दो आधार; जो नासिकामूलके दोनों तरफ स्थित हैं और शरीरके प्रथमाङ्ग मस्तकके उपाङ्गोंमें शामिल हैं। इनके भीतरके काले गोलकोंमें अति उज्ज्वल जो दो पदार्थ दीखते हैं, उन्हें कनीनिका या तारा कहते हैं। इसके सिवा कृष्णगोल (पुतली), दृष्टि, शुक्लमण्डल, वर्त्म और पक्ष्म भी चक्षुके अवयव हैं। शरीरके समस्त अवयवोंमें यही एक ऐसा है जो अति प्रयोजनीय और मनोहर है। इसके अभावसे शरीरका रूप, यौवन, हाथ-पैर आदि सब ही अङ्गोंका सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। इसके विषयमें सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

नेत्रके बुद्बुद् अर्थात् शरीरके जिस अवयवको चक्षु कहते हैं, उसका विस्तार दो वृद्धाङ्गुष्ठोदरके बराबर है। जिसकी आँख हो, उसीके अंगूठेसे नापना चाहिये। इसका आकार गायके स्तनोंकी भांति गोल होता है और यह सब भूतोंके अंशोंसे उत्पन्न है नेत्र-बुद्बुदका मांस क्षितिसे उत्पन्न है, इसी प्रकार अग्निसे रक्त, वायुसे कृष्णभाग, जलसे श्वेतभाग और आकाशसे अश्रुमार्ग समुद्भूत हुआ है। नेत्रका तृतीयांश कृष्णमण्डल और कृष्णमण्डलका सप्तमांश दृष्टिस्थान है—ऐसा निर्णीत हुआ है। दोनों नेत्रोंके मण्डल पांच, सन्धि छह और पटल पांच है। पांच मण्डल ये हैं—१ पक्ष्ममण्डल, २ वर्त्ममण्डल, ३ श्वेतमण्डल, ४ कृष्णमण्डल और ५ दृष्टिमण्डल। ये क्रमशः पहिले पहिलेके मध्यवर्ती हैं। जैसे—पक्ष्ममण्डलके भीतर वर्त्ममण्डल, वर्त्ममण्डलके भीतर श्वेतमण्डल इत्यादि। छह सन्धियां इस प्रकार हैं—१ पक्ष्म और

वर्त्मके भीतरकी सन्धि, २ वर्त्म और शुक्लके मध्यगत सन्धि, ३ शुक्ल और कृष्णके बीचका सन्धि, ४ कृष्णमण्डल और दृष्टिमण्डलके भीतरकी सन्धि, ५ कनीनिकाके भीतरकी सन्धि और ६ अपाङ्गगत सन्धि। पटल पाँच ये है १ बाह्य वा प्रथम पटल तेज और जलाश्रित, २ मांसाश्रित, ३ मेद आश्रित, ४ अस्थिमज्जाश्रित और ५ दृष्टिमण्डलाश्रित। (सुश्रुत उ० १म०)

युरोपीय चिकित्सकोंके मतानुसार—जिस इन्द्रियके जरिये देखनेका ज्ञान हो उसीका नाम चक्षु है। चक्षुको गठनप्रणाली अति मनोहर है। शरीररूपी यन्त्रमें मस्तिष्ककी गढ़नके बाद दूसरा नम्बर चक्षुका ही है। इसका संपूर्ण वर्णन अनिर्वचनीय है ; जो भाषाके द्वारा ठीक ठीक कहा नहीं जा सकता।

युरोपीय शारीरतत्त्वविद्गण चक्षुस्तत्त्व निरूपणमें जहां तक अग्रसर हुए हैं, उससे जाना गया है कि, नेत्रमें ११ प्रधान उपादान हैं। १ घनत्वक् (Sclerotic), २ शाङ्गत्वक् वा स्वच्छावरणी (Cornea), ३ कृष्णावरक या कृष्णमण्डल (Choroid), ४ तारकामण्डल
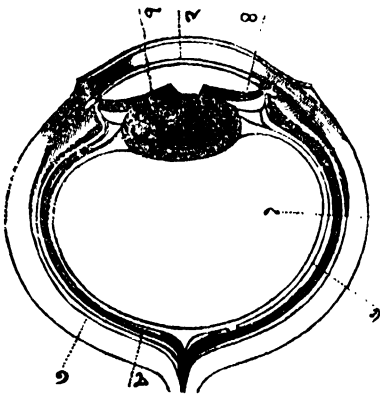
(Iris), ५ कनीनिका (Pupil), ६ चित्रपत्र (Retina), ७ तारकामण्डलका पश्चाद्गर्भ (The posterior chamber of the eye), ८ तारकामण्डलका सम्मुखगर्भ (The anterior chamber of the eye), ९ दोलोपल या मणि (crystaline lens) १० स्वच्छरस (Vitreous humour) और ११ दर्शनस्नायु (optic nerve)।

चक्षुका प्रधान आवरण जिसको कि हम पलक कहते हैं, उसे चक्षुपल्लव या अक्षिपुट (Eyelids) कहते हैं। इसके किनारेमें कुछ रोम भी रहते हैं, उन्हें पक्ष्म (Eyelash) कहते हैं। अक्षिपुटका पेशीभाग जो श्लैष्मिक झिल्लीसे भीतरकी तरफ ढका हुआ है अर्थात् अक्षिपुटका जो अंश ठीक अक्षिगोलकके ऊपर रहता है, उसका योजकत्वक् (conjunctiva) कहते हैं। इस योजकत्वक्के नीचे और एक कड़ा आवरण रहता है। इसके पीछेका भाग अस्वच्छ और सामनेका हिस्सा स्वच्छ होता है, इस स्वच्छांशको घनत्वक् वा शुक्लमण्डल (Sclerotic) कहते हैं। चक्षुतारकाके सामने घनत्वक्का जो स्वच्छांश रहता है, उसको बाहरसे देखनेसे ऐसा जान पड़ता है कि, मानो उस ताराको किसी स्वच्छ काँचसे ढक दिया हो। यह काँचखण्डवत् पदार्थ ठीक कटोरीके पेंदेके समान होता है और ऐसा जान पड़ता है कि, मानो उसे उल्टा करके रख दिया गया हो। वह बाहरसे देखनेसे भी ऐसा ही मालूम पड़ता है और है भी वैसा ही। इसका नाम स्वच्छावरणी या शाङ्गत्वक् (cornea) है। वास्तवमें घनत्वक् ही अक्षिगोलकका बहिरावरण है। यह कई एक व्यूहतन्तुओंसे बना हुआ है। ये तन्तु सफेद रंगके घने और कठिन हैं। इससे अक्षिगोलकका करीब ५/६ अंश ढका हुआ रहता है। यह आवरण अक्षिगोलकके पिछले हिस्सेके बीचमेंसे, जहांसे दर्शनस्नायु आ कर दोलोपल तक पहुँची है, वहां यह उस स्नायुकोषके दृढ़मातृकाके (Duramater) साथ जा मिला है। दर्शनस्नायुने जहांसे नेत्रमण्डलमें प्रवेश किया है, वहाँ यह करीब १ इञ्चका १/२४ हिस्सा मोटा है और क्रमशः घटता हुआ स्वच्छावरणीके पास जा कर १/४० अंश हो गया है। स्वच्छावरणी इससे बहुत मोटी होती है। यह आवरणी ही चक्षुकी वास्तविक रक्षिका है। इसके रहनेसे ही बाहरका कोई भी पदार्थ भीतर नहीं जाता और न कुछ हानि हो पहुंचा सकता है। स्वच्छावरणी शुक्लमण्डल या घनत्वक्के अन्यान्य अंशोंसे मोटी और कठिन होती है। मनुष्यकी उमरके साथ साथ इस स्वच्छावरणीके शृङ्गस्थान अर्थात् उच्चांशको न्यूनाधिकता होती रहती है। विभिन्न व्यक्तियोंमें इसका परिमाण भी भिन्न भिन्न पाया जाता है ; इसी लिए किसीकी दृष्टि क्षीण और किसी किसीकी दूरदृष्टि (Short or long sight) हुआ करती है।

यद्यपि यह तन्तुमय है, परन्तु सूक्ष्म व्यवच्छेदसे प्रकाशित हुआ है कि, इसमें पाँच स्तर (परत) हैं। इसका पहला परत श्लैष्मिक झिल्लीके उपत्वक्‌से बना हुआ है। आँखमें धूल या रेत पड़नेसे यह परत उसे रोक लेता है। इस स्तरमें अत्यधिक स्पर्श चैतन्य है। योजकत्वक्‌की भाँति इसकी दूसरी स्तर स्वच्छावरणीकी बहिरावणी है। इसमें सिकुड़ने और पसरनेकी शक्ति होती है। इसकी मुटाई एक इञ्चके १॰/॰॰ भाग है। इसीके जरिये स्वच्छावरणीके बाहरके भागका न्युब्जभाव (औंधापन) सुरक्षित रहता है। तीसरा स्तर वास्तवमें स्वच्छावरणी है, इसी पर इसका घनत्व और दृढ़ता निर्भर है। चौथा स्तर दूसरे परतको स्वच्छावरणीका पीछेका आवरण है। इससे स्वच्छावरणीके भीतरके भागका न्युब्जभाव संरक्षित रहता है। यह इतना सूक्ष्म है कि इसके गठनादिका निर्णय नहीं किया जा सकता। इससे दृष्टिविभ्रम नष्ट हो जाता है। ५वाँ स्तर १ले स्तरको जलीय रसावरक उपत्वक्‌ मात्र है। बहुतोंका अनुमान है कि, यह जलीय रस इसी त्वक्‌से निकलता है।

शुक्लमण्डलको हटा देनेसे एक कृष्णवर्णका आवरण देखनेमें आता है, इसको कृष्णावरण (Charoid) कहते हैं। इसका रंग काला है। यह शिराओंके समूहसे गठित और जरासे सहारे पर योजकशिरासे शुक्लमण्डलके साथ जुड़ा हुआ है। इसके भीतर तारकामण्डलगामी कुछ धमनियाँ भी हैं; जिनके बाहरके भाग स्वच्छरसके साथ जुड़े हुए हैं। इस संयोजनके लिए अक्षिसंस्थानके बीचमें क्रमसे फैले हुए ६०।७० परत हैं। इन परतोंमेंसे कोई परत छोटा और कोई बड़ा होता है। ये स्वच्छ रसमें आ मिले हैं। अभ्यन्तर भागमें भी यह (कृष्णावरण) चित्रपत्रके साथ उसी तरह जरासे सहारेसे जुड़ा हुआ है। कृष्णमण्डल बढ़ती हुई शाखाशिराओंके समूहसे बना हुआ है, यह देखनेमें पानीके भँवरकी कुण्डलीकी भाँतिका होता (Vasa vorticosa) है। यह कुण्डली आठ कोनवाली होती है। इसीमें कृष्णवर्णका अणुवत्‌ पदार्थका आधार है, इसका व्यास एक इञ्चके १/॰॰ अंश मात्र है। इस काले पदार्थको पिगमेण्टम्‌ नाइग्राम (Pigmentum Nigram) कहते हैं।
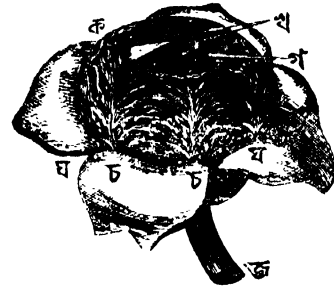
ऊपर जो चित्र दिया गया है, उसमें नेत्रके शुक्लमण्डलको काट कर पद्मकी पाँखड़ीकी तरह उलट दिया गया है। च च—तारकासंयुक्त शिर आदि, घ घ—शुक्लमण्डलका कटा हुआ अंश, ङ—दर्शनस्नायु, क—चक्षुकी पेशी और ख ग—ताराकी शिरा है।

आँखोंके दो कोन होते हैं,—एक नाककी तरफ और दूसरा कानकी ओर। इन दोनों कोनोंको अपाङ्ग कहते हैं। ऊपर और नीचेके पलकोंसे नासिकाकी तरफ कोनेमें जो एक एक छिद्र होता है, उसको अश्रुप्रणालीका रन्ध्र (Puncta lachrymalia) कहते हैं। नासिकाकी तरफ उस रन्ध्रसे नाकके भीतर अश्रु जानेके लिए जो मार्ग है, उसे अश्रुपथ कहते हैं। इस मार्गमें छोटी नली (Canalliculi), अश्रुजनक ह्रद (Lacus Lachrymalis) और अश्रुजनक कोष (Lacbrymal sack) आदिको पार करती हुई नासिकाप्रणालीमें (Nasal duct) हो कर नासिकाके भीतर श्लेष्माके आकारमें परिणत हुई है। जिस सन्धिसे अश्रु निकल कर उस मार्गसे हो कर चक्षुको सजल और चिकना रखते हैं, उसका अश्रुसन्धि (Lachrymal gland) कहते हैं। अश्रु सम्बन्धी उन समस्त यन्त्रोंका साधारण नाम अश्रुयन्त्र (Lachrymal apparatus) है।

आँखका तारा या तारकामण्डलको कृष्णमण्डलका ही क्रमविकाश कह सकते हैं। परन्तु इसकी दोनों झिल्लियोंकी गठन बिलकुल ही भिन्न है। यह मण्डल बहुत ही सूक्ष्म और चपटी झिल्ली मात्र है। यह दोनों पलके मध्यवर्ती स्थानको (लम्बाईमें) दो भागोंमें बाँट देता है। सामनेको सम्मुखगर्भ और पीछेके हिस्सेको पश्चाद्गर्भ कहते हैं। स्वच्छावरणीके भीतरसे देखनेसे यह अंश रंगा हुआ दिखलाई देता है। इसके बीच-

में तारके लिए छेद रहता है यह क्रमविकीर्ण शिरा-समष्टिमें ग्रथित है। इस प्रकारसे गठित होनेके कारण ही यह सिकुड़ और पसर सकता है; तथा इस ही लिए आलोकके प्रभावसे यह सिकुड़ता और पसरता दीखता है। इसीसे चक्षुतारा या दीप्तोपलमें ज्यादा उजाला नहीं पहुंच पाता और पहुंचे भी तो उससे कोई हानि नहीं होती।

पूर्वोक्त दोनों गर्भोंमें जलीय रस (Aqueous humour) मौजूद है। इस रसमें यह एक प्रकारका बहनेवाला पदार्थ है; इसलिए यह सहजहीमें छूट जाता है।

इसके बाद ही दीप्तोपल या आँखका तारा (crystaline) है, यह घना, स्वच्छ और दोनों तरफ न्युब्जता (औंधापन)को लिए हुए झिल्लिक पदार्थ है। इसके सम्मुख भागकी न्युब्जता पीछेके भागसे कम है। यह कृष्णमण्डलकी शेषसीमामें ग्रथित है।

इन पदार्थोंके सिवा और जिन जिन स्थानोंमें शून्यगर्भ हैं, वे सब ही एक प्रकारके स्वच्छरससे (vitreous humour) परिपूर्ण हैं।

कृष्णमण्डलके भीतर नेत्रका प्रधान अङ्ग चित्रपत्र (Retina) मौजूद है। यह दीप्तोपलके सामने और तारकामण्डलके पीछे रहता है। यह भी एक पर्दा है। इस आवरणमें प्रकाशके प्रभावसे दृश्यवस्तुकी सन्निकर्षरूप एक प्रकारका स्पर्शचैतन्य उत्पन्न हुआ करता है। यह अर्द्धस्वच्छ और कोमल है। साधारणत: इसको दर्शनस्नायुका विस्तृतभाग कहा जाता है। इसकी गठनप्रणाली अत्याश्चर्यजनक और विस्मयकर है।

यह चित्रपत्र चारों तरफके चारों कोनोंमें आँखके दोनों तरफकी पेशी (Muscles) द्वारा चलता रहता है।

चक्षुकी पेशी।

आँखमें चार सीधी पेशियाँ (Rectus) ऐसी हैं जो चक्षुको कोएके भीतर आनेकी शक्ति प्रदान करती हैं और टेढ़ी दो पेशियां उसे कोएसे बाहर निकलनेकी शक्ति प्रदान करती हैं। किसी तरफ चक्षुके आकृष्ट होने पर उसके विपरीत पेशियाँ उसी समय क्षीणबल हो जाती हैं। ऊपरके चित्रमें जो ऊपरकी लिभेटार पैलिब्री नामकी पेशी है, उससे आँखें खुलतीं हैं और अर्बिकिउलेरिज नामकी पेशीसे पलक मिच जाते हैं।

इसके सिवा चक्षुमें और भी बहुतसे सूक्ष्म सूक्ष्म यन्त्र हैं। अक्षिवीक्षण और अणुवीक्षण यन्त्रकी सहायता और पर्यालोचनासे अति सूक्ष्मदर्शी विवेचकोंने उनकी गठनप्रणाली, कार्य और उद्देश्योंका निर्णय किया है; परन्तु यहां उनकी आलोचना असम्भव जान पड़ती है।

३ तेज। "सूर्यचक्षुषे" (ताण्ड्य० ब्रा०) 'चक्षुषे तेजसे' (भाष्य)

चक्षूराग (सं० पु०) चक्षुषो रागो रक्तता, ६-तत्। १ चक्षुकी अरुणता, रक्तिमा, नेत्रोंकी लाली। २ नेत्रोंके आकर्षक अनुरागविशेष। नायक वा नायिकाका कामज दशावस्थाकी प्रथम अवस्था। अलङ्कारशास्त्रोंमें नयनप्रीति नामसे इसका उल्लेख है। नयनप्रीति देखो।

चक्षूरोग (सं० पु०) चक्षुषो रोग:, ६-तत्। नेत्ररोग, नेत्रमण्डलमें सब समेत ७८ प्रकारके रोग उत्पन्न हो सकते हैं, जिनमें १२ दृष्टिगत, ४ कृष्णगत, ११ शुक्लमण्डलगत, २१ वर्त्मगत, २ पक्ष्मगत ९ सन्धिगत, समस्तनेत्रव्यापक १७ और दूसरी तरहके २, इस प्रकार अठत्तर रोग ही नेत्ररोग हैं। (भावप्रकाश मध्य० ४ भा०)

सुश्रुतमें ७६ प्रकारके नेत्ररोगोंका निर्णय किया है। उनमेंसे—१० वायुजन्य, १० पित्तजन्य, १३ कफज, १६ रक्तजन्य और २५ सन्निपातजन्य होते हैं। इसके सिवा और भी दो प्रकारके बाह्यरोग हुआ करते हैं।

(सुश्रुत उत्तर० १ अ०)

नेत्ररोगका निदान—घामसे उत्तप्त व्यक्तिका जलमें घुस कर स्नान करना क्या है, मानो नेत्रके तेजका तिरस्कार करना है। दूरकी वस्तुको देखना, दिनमें सोना और रातमें जगना, अग्नि आदिका उपघात, नेत्रमें धूलि या धुआँ घुसना, वमनके वेगको रोकना, अत्यन्त वमन, शुक्त, खटाई, कुलथी और उड़द इनका अतिरिक्त सेवन, मल या मूत्र-

को रोक रखना, ज्यादा रोना, शोकजन्य सन्ताप, शिरमें चोट लगना, खूब तेज चलनेवाली सवारीमें चढ़ना, शास्त्र-विहित ऋतुचर्याके विपरीत आचरण, कामक्रोधादि जनित शारीरिक पीड़ा, अतिरिक्त स्त्रीसम्भोग, अश्रुके वेगको रोकना और अतिसूक्ष्म वस्तुको देखते रहना, इत्यादि कारणोंसे वातादि दोष कुपित हो कर नेत्ररोग-को उत्पन्न कर देते हैं। इन सब कारणोंसे वातादि दोष दूषित हो कर शिराओं द्वारा ऊपर चढ़ जाते हैं। इससे दृष्टि आदि नेत्रके अवयवोंमें कष्टकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

दृष्टिगत रोगोंका विवरण—दृष्टि कृष्णमण्डलके बीचमें रहती है, इसका आकार मसूरकी दालके आधे टुकड़ेके समान है, निमेष या द्योतकतामें जुगनूके समान और निमेषका अभाव होनेसे विस्फुलिङ्गके सदृश है, छिद्रयुक्त चक्षुके वाह्यपटलसे ढकी हुई तथा शीतल प्रकृतिवाली है। यह पञ्चभूतात्मक और चिरस्थायी तेज है—ऐसा प्रसिद्ध है। चक्षुमें चार पटल होते हैं। इनमेंसे पहले पटलका नाम वाह्यपटल है, यह रक्त और रसका आधार है, दूसरा मांसाधार, तीसरा मेदका आधार और चौथा कालका-स्थिका आश्रय है। चारों पटलोंको मिलानेसे उनकी मुटाई नेत्रमण्डलके पाँचवें अंशका एक अंश होती है। दोष चतुर्थ पटलमें पहुंच जानेसे, रोगी कभी अस्पष्ट और कभी स्पष्ट देखने लगता है। दूसरे पटलमें दोषोंका सञ्चय होनेसे दृष्टिशक्तिका काफी ह्रास हो जाता है।

कभी मक्षिका, मशक, केश, जाल, मण्डल, पताका, किरण और कुण्डलाकृति दीखते हैं, कभी पानी ही पानी या वृष्टि और अन्धकार इत्यादि तरह तरहकी छायाएं दीखती हैं तथा कभी कभी दूरकी चीज पासमें और पासकी चीज दूरमें दीखने लगती हैं। बहुत प्रयत्न करने पर भी सूईका छेद नहीं दीखता।

आँखका तीसरा पटल दोषयुक्त होनेसे ऊपरकी तरफ अच्छी तरह दिखलाई देता है। परन्तु नीचेकी तरफ बिल्कुल ही नहीं दीखता। ऊपरके स्थूल पदार्थ कपड़े-में लपेटे हुएसे जान पड़ते हैं और प्राणियोंके कान, नासिका और आँखोंका आकार विकृत दीखने लगता है। उसमें जो दोष प्रबलपूर्वक कुपित होता है उस दोषके अनुसार वस्तुओंके तरह तरहके रङ्ग भी दीखने लगते हैं अर्थात् वायुकी प्रबलतासे लाल रंग, पित्तकी प्रबलतासे पीला या नीला रंग और कफकी अधिकतासे शुक्लवर्ण दीखने लगता है। पटलके नीचे दोषोंके रहने-से पासकी चीज ऊपरके भागमें होनेसे दूरकी चीज और बगलमें दोषोंके रहनेसे बगलकी कोई चीज नहीं दीखती; पटलके तमाम हिस्सोंमें दोषोंके व्यापक हो जानेसे भिन्न भिन्न रूप मिले हुएसे दिखाई देते हैं। बीचमें दोष रहे तो बड़ी चीज छोटी दीखती है और दृष्टिमें तिरछा दोष हो तो एक चीज दोके समान दीखती है। दोनों तरफ दोष रहे तो एक ही चीज दो तरहकी दिखलाई देती है और दोष यदि एक जगह न ठहरे तो एक चीजकी बहुतसी चीजें दीखती हैं।

कुपित दोष यदि चौथे परतमें स्थित हों तो दृष्टिशक्ति बिल्कुल ही नहीं रहती। प्राचीन आयुर्विदोंने तिमिर या लिङ्गनाश नामसे इसका उल्लेख किया है। यह तिमिररोग तात्कालिक होनेसे रोगी चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, विद्युत् और सुवर्ण रत्न आदिकी निर्मल तेज, दीप्ति-शील वस्तुकी तरह देखता है। इस रोगको नीलिका भी कहा जा सकता है।

दृष्टिरोग कुल बारह प्रकारके होते हैं। उनमेंसे लिङ्गनाश छह प्रकारका होता है। जैसे—१ वातिक, २ पैत्तिक, ३ श्लैष्मिक, ४ सान्निपातिक, ५ रक्तज और ६ परिम्लायी। बाकी छह प्रकारके रोग ये हैं—१ पित्त-विदग्ध, २ श्लेष्मविदग्ध, ३ धूमदर्शी, ४ ह्रस्वजाड्य, ५ नकु-लान्ध्य और ६ गम्भीरक।

छह प्रकारके लिङ्गनाशके लक्षण—इसमें चीजें चलाय-मान, मैली पर कुछ लाल और टेढ़ी दीखती हैं। पैत्तिक लिङ्गनाशमें रोगीको सूर्य, जुगनू, इन्द्रधनुष और बिजली जैसा दीखने लगता है, तथा तमाम चीजें मयूरकी पूँछकी भाँति नीले रङ्गसे चित्रित जान पड़ती हैं। श्लैष्मिक लिङ्गनाशमें रोगीको तमाम चीजें चिकनी, शुक्लवर्ण, मोटी, पानीमें तैरती हुईसी और जालीदार-सी जान पड़ती हैं। सान्निपातिक दृष्टिनाशसे रोगी नानाप्रकारके चित्रित वैपरीत्यरूप देखता है और चीजों-को बहुत प्रकार या दो प्रकारकी अथवा हीनाङ्ग या

अधिकाङ्ग और नानाप्रकारकी ज्योतिः देखता रहता है। रक्तजन्य लिङ्गनाशमें पदार्थ लाल, हरे, पीले और काले आदि नानावर्णके दीखने लगते हैं।

परिम्लायी रोगके लक्षण—रक्तके साथ पित्त बढ़ कर परिम्लायी नामका रोग पैदा होता है। इस रोगमें दिशायें पीली, वृक्ष जुगनू या अग्निसे घिरे हुएसे और सूर्य उदय हो रहा है—ऐसा दीखा करता है। वातिक रोगमें नेत्र लाल, परिम्लायी और पैत्तिक रोगमें नीले, श्लैष्मिक लिङ्गनाशमें शुक्ल, रक्तजन्य दृष्टिनाशमें लाल और त्रैदोषिक रोगमें नेत्र चित्रित जान पड़ते हैं।

पित्तविदग्ध दृष्टिके लक्षण—दूषितपित्त प्रथम और दूसरे पर्दे पर रहे तो दृष्टिका रङ्ग पीला हो जाता है और रोगीको भी तमाम चीजें पीली ही पीली नजर आती हैं। इसीको पित्तविदग्ध दृष्टिरोग कहते हैं। दूषित पित्त तीसरे परतमें ठहरे तो रोगीको दिनमें कुछ भी नहीं दीखती। परन्तु रात्रिमें उसे दीखता है। रात्रिमें पित्तकी समता और दृष्टि शीतभावापन्न हो जाती है, इस लिए समस्त पदार्थ ही ज्योंके त्यों दीखने लगते हैं।

श्लेष्मविदग्ध दृष्टिके लक्षण—दूषित कफ जब प्रथम और द्वितीय पटलमें रहता है तब रोगीको तमाम चीजें सफेद दीखने लगती हैं। तीसरे पटलमें दूषित कफ रहे तो रोगीको रतौंध हो जाता है। इसको श्लेष्मविदग्ध दृष्टिरोग कहते हैं।

धूमदर्शीका लक्षण—शोक, ज्वर, परिश्रम और घाम आदिके सतानेसे दृष्टि आहत हो जाती है और उससे रोगीको सब चीजें धुएं जैसी दीखने लगती हैं। इसी रोगका नाम धूमदर्शी है।

ह्रस्वजाड्यका लक्षण—जिस रोगमें बड़े कष्टसे दिनमें बड़ी चीजें बहुत छोटी और रातको ठीक दीखता है, उसे ह्रस्वजाड्य रोग कहते हैं।

नकुलान्ध्यरोगका लक्षण—जिस रोगमें दोषोंके उद्रेकसे दृष्टिकी दीप्ति नौलेकी आंखों जैसी हो जाय और दिनमें नानाप्रकारके चित्रित रूप दीखने लगें, उस रोगको नकुलान्ध्य कहा जा सकता है।

गम्भीरकाका लक्षण—जिस रोगमें वायुके प्रकोपसे दृष्टि विकृत भावापन्न हो जाय और अगलका वेष्टनहेतु सिकुड़ कर भीतर घुस जाता है तथा वेदना भी बहुत ज्यादा होती है। इसको गम्भीर कहते हैं।

सुश्रुतने जिन बारह प्रकारके रोगोंका उल्लेख किया है उनके सिवा चरकमें और भी दो प्रकारके रोगोंका उल्लेख मिलता है। जैसे—अनिमित्तज और निमित्तज। देवता, ऋषि, गन्धर्व, महासर्प या सूर्यके देखनेसे यद्यपि दृष्टिनाश रोग हो जाता है, परन्तु उसे अनिमित्तज लिङ्गनाश कहते हैं। मस्तककी गर्मीसे जो दृष्टिनाशरोग उत्पन्न होता है, उसको निमित्तज कहते हैं।

कृष्णगत रोग चार प्रकारके होते हैं—सव्रणशुक्ल, अव्रणशुक्ल, अक्षिपकात्यय और अजका। इनका विस्तृत विवरण उन्हीं शब्दोंमें देखना चाहिये।

नेत्रसन्धिगत रोग ९ प्रकारका है—पूयालस, उपनाह, पैत्तिक, स्राव, श्लेष्मस्राव, सन्निपातस्राव, रक्तजस्राव, पर्वणिका, अलजी और जन्तुग्रन्थि। विशेष विवरण उन्हीं शब्दोंमें देखो।

शुक्लगत रोग ११ प्रकारका है—प्रस्तार्यर्म, शुक्लार्म, रक्तार्म, अधिमांसार्म, स्नाय्वर्म, शुक्ति, अर्जुन, पिष्टक, शिराजाल, शिरापीड़का और बलासग्रन्थि। विशेष विवरण उन्हीं शब्दोंमें देखो।

वर्त्मरोग २१ तरहका है—उत्सङ्गिनी, कुम्भिका, पोथकी, वर्त्मशर्करा, वर्त्मार्श, शुष्कार्श, अञ्जननामिका, बहुलवर्त्म, वर्त्मबन्धक, क्लिष्टवर्त्म, वर्त्मकर्दम, श्यामवर्त्म, प्रक्लिन्नवर्त्म, अक्लिन्नवर्त्म, वातहतवर्त्म, वर्त्मार्बुद, निमेष, शोणितार्श, लगण, विषवर्त्म और कुञ्चन।

पक्ष्मगत नेत्ररोग दो प्रकारका है,—१ पक्ष्मकोप और २रा पक्ष्मशात।

समस्त नेत्रगत रोग १७ प्रकारका है—वातिकाभिष्यंद, श्लेष्मिकाभिष्यन्द, पैत्तिकाभिष्यन्द, रक्तजाभिष्यन्द, चार प्रकारके अधिमन्थ, सशोथ अक्षिपाक, शोथहीन अक्षिपाक, हताधिमन्थ, अनिलपर्याय, शुष्काक्षिपाक, अन्यतोवात, अम्लाध्युषित, शिरोत्पात और शिराप्रहर्ष।

नेत्ररोगकी चिकित्सा—शरीरमें दोनों पैरोंसे ले कर मस्तक पर्यन्त दो मोटी शिराएं हैं, उन दोनों शिराओंमेंसे बहुतसी शिरा शाखाप्रशाखाओंमें विभक्त हो कर आंखमें गई हैं, इसी लिए परिषेक, उद्वर्त्तन और विलेपन आदि

को पैरोंमें लगानेसे उन शिराओंसे नेत्रोंमें असर पड़ता है।

धूल आदिके मैलसे मर्द्दन और पीड़नादिसे उक्त दोनों शिराएँ दूषित हो जाती हैं, इस लिए जूता पहनना, पैरके तलवेमें तेल या घी मलना और पैरोंको धोना चाहिये। चक्षुके लिए चावल, मूंग, जौ, बथुआका शाक, चौराईका शाक, परवल, ककड़ी, करेला, पक्वघृत, जाङ्गल मांस, पक्षीमांस, कच्चा बैंगन तथा मधुर और कड़ुआ रस, ये सब हितकारी हैं।

चरपरा और खट्टारस, गरिष्ट, तीक्ष्ण और गरम चीज, उड़द, लुबिया, स्त्रीसम्भोग, शराब, शुष्कमांस, तिल आदिको बुकनी, मछली, शाक, अङ्कुरित धान्यादिका अन्न और अतिदाहजनक पदार्थ चक्षुरोगमें बिल्कुल नहीं खाना चाहिये।

परिषेक, आश्चोतन, पिण्डी, विड़ालक, तर्पण, पुटपाक और अञ्जन द्वारा नेत्ररोगोंकी चिकित्सा करनी चाहिये।

परिषेकका विधान—रोगीकी चक्षु खोल कर तमाम आँख पर चार अंगुलका मोटा कपड़ा रखना चाहिये और उस पर सूक्ष्मतासे सेक लगाना चाहिये। वातज चक्षुरोगमें स्निग्धसेक, पित्तज और रक्तज नेत्ररोगमें रोपणसेक और कफज नेत्ररोगमें लेखनसेक लगाना चाहिये। छह सौ वाक्य उच्चारण करनेमें जितना समय लगे, उतने समय तक स्नैहिक सेक लगाना चाहिये।

सेक—अकवनका पत्ता और जड़की छालका काढ़ा बना कर कुछ कुछ गरम रहे, तब उससे नेत्र सेकने चाहिये, इससे वाताभिष्यन्द नष्ट हो जाता है। हर्र, बहेड़ा, आँवला, पोस्त और दारचीनी, इनको समान भागसे पीस कर पतले कपड़ेमें बांध कर अफीमके पानीके साथ नेत्र पर रखनेसे सब तरहका अभिष्यन्द जाता रहता है।

आश्चोतनकी विधि—खुलेहुए नेत्रों पर दो अङ्गुल मोटा वस्त्र रख कर उसके ऊपर काढ़ा, दूध, तेल या और कोई तरल पदार्थ छोड़नेका नाम आश्चोतन है। लेखन आश्चोतनमें आठ बूंद, रोपण आश्चोतनमें दश बूंद और स्नेहन आश्चोतनमें बारह बूंद आश्चोतन तरल पदार्थका प्रयोग करना चाहिये। नेत्र शीतल हो तो थोड़ा गरम आश्चोतन और गरम हो तो शीतल आश्चोतनका प्रयोग करें। एक सौ गुरुवर्ण उच्चारण करनेमें जितना समय लगता है, उतने समयसे ज्यादा आश्चोतन नहीं लेना चाहिये और रातमें आश्चोतन प्रयोग भी निषिद्ध है।

पिण्डीकी विधि—एक तोले पिसी हुई औषध कपड़ेमें बांध कर, उसे आखों पर फेरनेको पिण्डी कहते हैं। इसके व्यवहारसे सब तरहका अभिष्यन्द और व्रण दूर हो जाता है। हर्र, बहेड़ा, आँवला, पोस्त और दारचीनी, इनको अफीमके पानीके साथ पीस कर पिण्डीका प्रयोग करनेसे सब प्रकारका नेत्ररोग प्रशमित होता है।

विड़ालककी विधि—आँखोंके बाहर पक्ष्मको छोड़ कर प्रलेप देनेको विड़ालक कहते हैं। इसकी मात्रा मुखालेपके समान है। मुखालेपकी हीनमात्रा एक अङ्गुलके चतुर्थांशका एक अंश, मध्यम मात्रा एक अङ्गुलके तीन अंशका एक अंश और उत्तम मात्रा एक अङ्गुलका अर्द्धांश है। यह लेप जब तक सूख न जाय, तब तक रखना चाहिये और सूख जानेके बाद छुड़ा डालना चाहिये। क्योंकि सूख जाने पर उसका गुण नष्ट हो जाता है और चमड़ेको दूषित करता है। मुलहटी, गेरूमिट्टी, सेंधानमक, दारचीनी, रसाञ्जन (रसोत्) इन सब चीजोंको समान भागसे पीस कर आँखके बाहर लेप करना चाहिये। इससे सब तरहका नेत्ररोग नष्ट हो जाता है। रसाञ्जन, हर्र और बेलका पत्ता या बच, हल्दी और सोंठसे अथवा सोंठ और गेरू द्वारा नेत्रके बाहरके हिस्से पर लेप करनेसे भी नेत्ररोगमें फायदा पहुंचता है।

तर्पणकी विधि—उड़दके चूनको उबाल कर उससे गोल गोल दो आधार बनाना चाहिये। ये आधार नेत्रके बराबर होने चाहिये। फिर उनके भीतर गरम पानीमें मथा हुआ घृतमण्ड या दुग्धमन्थनोद्भव पर शतधौत घृत भर देना चाहिये। रोगीको हवा, घाम और धूलीशून्य घरमें चित्त सुला कर बन्द आखों पर उक्त उड़दके दोनों आधारोंको निचोड़ कर उसका रस डालना चाहिये। उस रससे जब नेत्रके रोम तक डूब जांय, तब रस न छोड़ कर रोगीको धीरे धीरे आँखें खुलवानी चाहिये।

नेत्र जब रूक्ष, अतिशुष्क, टेढ़े, मैले और शोथपक्ष्म हो जाँय, तब उन पर तर्पणका प्रयोग करना उचित है। इसके सिवा जो नेत्र शिरोत्पात, कृच्छ्रोन्मीलन, तिमिर, अर्जुन, शुष्क, अभिष्यन्द, अधिमन्थ, शुष्काक्षिपाक, अक्षिशोथ और वातविपर्ययादियुक्त हों, उन नेत्रों पर भी तर्पणका प्रयोग कार्यकारी होता है। तर्पणको रखनेका समय—वर्त्मरोगमें एक सौ मात्रा, सन्धिरोगमें पांचसौ मात्रा, कफज रोगमें छहसौ मात्रा, कृष्णगत रोगमें सातसौ मात्रा, दृष्टिगतरोगमें आठसौ तथा अधिमन्थ और वातरोगमें एक हजार मात्रा है। यथोक्त समयके बाद उस नेत्रतर्पणके रसको निकाल देना चाहिये और उबाले हुए जौके चूनसे नेत्रोंको साफ कर देना चाहिये। इसके बाद धूम्रपानकी क्रियासे कफको निकाल देना उचित है। दोषके अनुसार विवेचना पूर्वक एक दिन, तीन दिन या पांच दिन तक तर्पणक्रिया करना चाहिये। अच्छी तरह तर्पणके दिये जानेसे रोगीको नींद अच्छी आती है, आंखोंमें निर्मलता, तथा दृष्टिमें पटुता आती है और निमेष उन्मेष आदि क्रियाओंसे नेत्र हलके तथा रोग अच्छा हो जाता है। तर्पणका प्रयोग हदसे ज्यादा किया जाय तो आखें भारी, मैली, अत्यन्त स्निग्ध, अश्रुपूर्ण, खुजली, पीलीहुईसी और सुई भिदने जैसी वेदना होती है। आँखें किर-किराती भी हैं। सामान्य तर्पणके प्रयोगसे नेत्र स्रावहीन, शोथयुक्त, रोगाधिक्यविशिष्ट, प्रलिप्तप्राय, रूक्ष, कठोर और मैले हो जाते हैं तथा रोगी देखनेमें असमर्थ हो जाता है। अतितर्पण या हीनतर्पणसे दोषाधिक्य हो तो यत्नके साथ अतितर्पणमें रूक्षक्रिया और हीनतर्पणमें स्निग्धक्रिया करनी चाहिये। जिस दिन ज्यादा वर्षा हो या ज्यादा हवा चले, उस दिन, ज्यादा गरम या जाड़ा पड़े उस दिन, चिन्तित अवस्थामें, भीतावस्थामें तथा नेत्ररोगका उपद्रव जब तक शान्त न हो जाय तब तक तर्पणका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

पुटपाककी विधि—स्निग्ध मांस दो पल, अन्य औषधियां एक पल और मथा हुआ पदार्थ चार पल, इनको पीस कर अच्छी तरह हिला पुटपाकके विधानानुसार अकवन आदिके पत्ते से लपेट कर पुटपाक बनाया जाता है। पुटपाक देखो। तर्पनके नियमानुसार रोगीको सुला कर यह रस दृष्टिमें डाला जाता है। इसको पुटपाककी विधि कहते हैं। नेत्रोंमें तर्पण या पुटपाकके प्रयोग किये जानेके बाद रोगीको किसी तरह भी अग्नि, वायु, आकाश या सूर्यादिका प्रकाश नहीं दिखाना चाहिये।

अञ्जनकी विधि—दोषोंके परिपाक होनेसे नेत्रोंमें अञ्जन लगाना उचित है। अपक्व दोषमें अञ्जन नहीं लगाना चाहिये। जिस पदार्थसे आँखोंमें काजल दिया जाता है, उसे अञ्जन कहते हैं। यह अञ्जन तीन प्रकारका होता है—१ वटिका, २ रस और ३ चूर्ण। यह तीनों तरहका अञ्जन धातुओंसे बनी हुई शलाका (सलाई)से प्रयोग करना चाहिये और सलाईके अभावमें अङ्गुलीसे भी अञ्जन लगाया जाता है। स्नेहन, रोपण और लेखन भेदसे भी अञ्जनके तीन भेद हैं। मधुर द्रव्य और तेलसे जो अञ्जन बनाया जाता है उसे स्नेहन, कषायले और कडुए रसवाली द्रव्य और तेलसे जो अञ्जन बनता है उसे रोपण तथा तिक्त अम्लरस और खारसे जो अञ्जन बनाया जाता है उसे लेखन अञ्जन कहते हैं। तीक्ष्णाञ्जन (वटिकाञ्जन)-की वटी मटर बराबर, रसाञ्जनकी १½ मटरके बराबर और चूर्णाञ्जनकी वटी २ मटरके बराबर बनाई जाती है। रसक्रियामें श्रेष्ठमात्रा तीन वायविडंगकी बराबर, मध्यममात्रा दो वायविडंगके समान और हीनमात्रा एक वायविडंगके समान होती है। स्नेह और चूर्ण अञ्जनमें चार बार, रोपणमें तीन बार और लेखन अञ्जनमें दोबार सलाई देना चाहिये। सलाईका अग्रभाग मयूरके पंखके समान गोल, मुख कुञ्चिताकार आठ अङ्गुल लम्बी और धातु या पत्थरसे बनानी चाहिये। त्रिफला, दारचीनी और सोंठका काढ़ा, गोमूत्र, मधु और बकरीके दूधमें सीसा भिगो रखना चाहिये। बादमें उस सीसेको आगमें गला कर सलाई बनानी चाहिये। इसको दृष्टिप्रसादनीशलाका कहते हैं। इस सलाईसे अञ्जन लगानेसे सब तरहका नेत्ररोग दूर हो जाता है। कृष्णमण्डलके नीचेके भागमें अञ्जन लगाना जरूरी है। हेमन्त और शिशिरकालमें दुपहरको, ग्रीष्म और शरत् कालमें सुबह या शामको, वर्षाकालमें मेघहीन और ज्यादा ठण्डा न हो ऐसे समयमें तथा वसन्तकालमें

किसी भी समयमें अञ्जन लगाना चाहिये। थके हुए, रोते हुए, डरे हुए, शराब पी कर उन्मत्त, नवज्वराक्रान्त, अजीर्णग्रस्त तथा जिनके मलमूत्रादिका वेग उपचित हो उनके लिए अञ्जन लगाना निषिद्ध है। स्नेहनी, रोपणी, लेखनी, वटी आदि औषधियाँ नेत्ररोगमें प्रयोज्य हैं।

मोती, कपूर, काला नमक, अगुरु, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, एलवालुका, सोंठ, काकला (घुंघची), काँसा, राँगा, हल्दी, मनःशिला (मनछाल), शङ्खनाभि, अभ्रक, तूतिया, मुर्गीके अण्डेका चुकला, बहेड़ा, केशर, हर्र, मुलहटी, रेवटी, चमेलीका फूल, तुलसीकी नयी मञ्जरी, चमन, डहरकरञ्ज, लोध्र, अर्जुन, नागरमोथा, मरा हुआ ताँबा, मरा हुआ लोहा और रसाञ्जन, इनमेंसे प्रत्येकका १-१ मासा ले कर मधुके साथ अच्छी तरह घीसा जाता है। इसका नाम मुक्तादि-महाञ्जन है। इसके सेवनसे सब तरहका नेत्ररोग अच्छा हो जाता है। इसके सिवा त्रिफलाद्यघृत आदि औषधोंके प्रयोगसे भी नेत्ररोग अच्छा हो जाता है। (भावप्रकाश मध्यखण्ड ४ भा०) भिन्न भिन्न प्रकारके नेत्ररोगोंके निदान, लक्षण, चिकित्साप्रणाली और औषध आदि उन उन शब्दोंमें देखना चाहिये।

इस देशके प्राचीन आर्य चिकित्सकोंके भाँति ही यूरोपीय प्राचीन और आधुनिक चिकित्सकोंने चक्षुके नानाप्रकार रोगोंका वर्णन किया है। जैसे—हाइपारमेट्रोपिया (Hypermetropia) या अस्पष्टदृष्टि, माइओपिया (Myopia) या अदूरदृष्टि, एस्थिनोपिया (Asthenopia) या क्षीणदृष्टि, एष्टिग्मटिजम् (Astigmatism) अर्थात् विषम या तिर्यक्दृष्टि, (Presbyopia), दूरदृष्टि आफेकिया (Aphakia) या आँखमें मणिका न रहना, योजकत्वक्में रक्ताधिक्य (Hyperaemia), चक्षुका फड़कना (Conjunctivitis), आँखका आना (Catarrhal or muco-purulent conjunctivitis), कीचड़ सहित आँखका आना (Purulent conjunctivitis), योजकत्वक्में मेहजरोग (Gonorrhol opthalmia), बालकके पैदा हुए बच्चेकी आँख आना (Neonatorum opthalmia), योजकत्वक्में त्वक्च्छादन रोग (Diptheritic conjunctivitis), योजकत्वक्में गण्डमालाश्रित रोग (Scrofulous opthalmia), स्वच्छावरणीके पास व्रणोत्पत्ति (Pustular Conjunctivitis), काच्छपिक रोग (Exanthematous Conjunctivitis), श्वेतमण्डलमें फूलीका उठाना (Zeropthalmia), अनुपक्ष (Pterygium), अर्जुनरोग (Chemosis), कालशिरा (Ecchymosis), योजकत्वक्में अर्बुद या रसौली (Tumour), शार्ङ्गत्वगीष (Keratitis), शार्ङ्गत्वक्में विसर्पिका (Herpes of Cornea), शार्ङ्गत्वक्में क्षतरोग (Ulcers), पूयज शार्ङ्गत्वगीष (Suppurative Corneitis), बहिःसरण (Staphyloma), वार्द्धक्यमण्डल (Arcus senilis), सफेद दाग या अस्वच्छता (Opacity), श्वेतमण्डलरोग (Episcleritis), दृष्टिनाश (Ciliary staphyloma), तारकामण्डलप्रदाह (Iritis), ताराका निकल आना, बृहत्तारा (Mydriasis), क्षुद्रतारा (Myosis), गोलकविपर्यय (Nystagmus), हिपस् (Hippus) अर्थात् आलोक और अन्धकारके बिना ही पर्यायक्रमसे ताराका सिकुड़ना और पसरना, तारकाकम्पन (Iridodonesis), सिक्लाइटिस् (Cyclitis), कृष्णमण्डल सम्बन्धी रोग (Choroiditis Disseminata), चक्षुके सर्वाङ्गमें प्रदाह (Panopthalmitis), हायलाइटीस् (Hyalitis), नेत्रके स्वच्छरसमें सफेद या काली मक्खीकी भाँतिका पदार्थ दीखना (Muscae volitantis), ग्लौकोमा (Glaucoma) या तिमिररोग, चित्रपत्रमें रक्ताधिक्य, नाना प्रकारका चित्रपत्रशोथ (Retinitis), पिग्मेण्टोसा (Pigmentosa) या चित्रपत्रका विश्लेषण (Detachment of the retina), ग्लिओमा (Glioma) या चाक्षुर्बुद, चाक्षिक स्नायुप्रदाह (Optic Neuritis), अन्धता (Amaurosis and atrophy of the optic nerve), दृष्टिहानि (Amblyopia) अन्धप्रतारण (Simulation of blindness), रतौंधा (Hemeralopia), दिनमें न दीखना (Nyctalopia), चित्रपत्रमें आलोकाधिक्यज्ञान (Hyperaesthesia), प्रकाशमें अवशता (Anaesthesia), फूली (Cataract) या मोतीयाबिन्द, मणिविच्युति (Dislocation), द्विदर्शन (Diplopia) पेशीमें पक्षाघात, भेंगापन (Strabismus), ब्लेफरा-

इटीज् (Blepharitis) या विपर्यस्ताक्षिपुटप्रदाह, एक्निमिलियारिज् (Acne cilliaris) या ऊपरके पलकमें फुन्सी होना या वर्तुलाकार विसर्पिका (Herpes Zostor frontalis), एक्ट्रोपियम् (Ectropium) या पर्यस्ताक्षिपुट, एण्ट्रोपियम् (Entropiam), विपर्यस्ताक्षिपुट, वक्रपक्ष्म (Trichiasis), आञ्जनि (Hordeolum or slye), स्फोटक (Abscess), ऊपरके पलकमें पक्षाघात (Ptosis), लेगोफथाल्मस् (Lagopthalmus) या शशचक्षूरोग, ब्लेफारोस्पाजस्म् (Blepharospasm) या अक्षिपुटाक्षेप, चक्षुस्पन्दन (Nictitation), पानी गिरना (Epiphora), अश्रुगह्वरमें स्फोटक (Dacryocystitis), फिस्टुला लेक्रिमेलिस् (Fistula Lachrymalis) या अश्रुनाली, ब्लेनोरिया (Blenorrhaea) या अश्रुपतनरोग, अश्रुग्रन्थि पीड़ा (Dacryo-adimitis), हाइड्रोथाफ्लमिया (Hydrophthalmia) या नेत्रोदक, एक्सोफ्थाल्मिक गोइटार (Exopthalmic goitre) या अक्षिगोलककी वहिर्वृद्धि, सर्कोमा (Sarcoma) या मांसार्बुद, साण्डशुक्लमूत्ररोगज (Albuminurica) और उपदंश रोगज (Syphilitica) चक्षुरोग, चित्रपत्रमें रक्तस्राव (Apoplectica) । इसके अलावा पलकके रगड़ जानेसे, योजकत्वक्‌में चूना पड़ जानेसे, आँखमें किसी तरह ऐसिड या बारूद आदिके पड़ जानेसे, चित्रपत्रमें कोई पदार्थ चुभ जानेसे तथा एक आँखमें चोट आने या नष्ट हो जानेसे, उसकी वेदनासे दूसरी आँखमें भी नाना प्रकारकी पीड़ा हुआ करती है।

नेत्रकी बराबर दूसरी कोई भी चीज नहीं है जो मनुष्यको सर्वदा नवीन नवीन विषयका ज्ञान करा सके, इस लिए नेत्रमें जरासा भी रोग उत्पन्न हो तो उसकी उपेक्षा न कर सुचिकित्सा करनी चाहिये । चक्षुरोगमें कोई रोग हो तो पहिले चक्षुकी परीक्षा करानी चाहिये। चक्षुकी परीक्षा करते समय रोगीको ऐसे स्थानमें रखना चाहिये जहाँ पर उसके नेत्रमें साफ उजाला टेढ़ा हो कर पड़े । बादमें उसी उजालेसे पलकका बाहरका भाग-किनारा, पक्ष्म, अक्षिगोलककी अवस्था आदि मन लगा कर देखना चाहिये । फिर नीचेका और ऊपरका पलक उलटा कर उसकी घनता, भीतरका वर्ण और चिकनापन, शुक्लमण्डल और चक्षुका योजकत्वक्‌का वर्ण और उजलापन, पलक और चक्षुका सन्धिस्थान, शाङ्गत्वक्‌की स्वच्छता, कुब्जता, वर्ण और चिकनापन, ताराकी स्वाभाविक गोलाकृति और सिकुड़ना-पसरना, नेत्रोंका काठिन्य, कोमलता, विघूर्णन, पानी गिरना तारकामण्डल वा रंगीनचक्रका वर्ण और उसकी गठन, नासिकाकी तरफके नेत्रके कोनोंकी अवस्था इत्यादि विषय चिकित्सकको खुद ही देख लेना चाहिये और फिर रोगीको पूर्वापर आनुपूर्विक अवस्था पूछनी चाहिये ।

ऊपरके पलकके भीतरकी तरफ पलक और चक्षुके सन्धिस्थानमें वाह्य पदार्थ तो नहीं पड़ा है, यह भी देखना चाहिये । कीचड़, पीव, आँख किरकिरावे तो समझना चाहिये कि योजकत्वक् सम्बन्धी रोग है । आँखोंके नीचे और देखनेमें किसी प्रकारकी पीड़ा होनेसे दृष्टिमें क्षति पहुंचती है । शाङ्गत्वक् तारकामण्डल, अक्षिपुट और कृष्णमण्डलके प्रदाहसे आँखोंके भीतर बड़ी वेदना होती है। यह वेदना बहुत ही असह्य होती है । नेत्रोंको दाबनेसे कठिन और पीड़ा हो ; तथा कभी कभी दृष्टिमें फरक, आँखोंमें ललाई और चिरागके उजालेमें चारों ओर इन्द्रधनुष सरीखा रङ्गीन दिखाई दे तो उसे ग्लकोमा या तिमिररोगका लक्षण समझना चाहिये । यदि आँखोंमें दर्द न हो और दृष्टिमें धुंधलापन आ जाय, प्रकाशमें डर लगे तथा चक्षुके शुक्लमण्डलके योजकत्वक् कुछ लाल हो तो रेटिनाइटिस् अर्थात् चित्रपत्रदाह रोग हो जाता है। इसी प्रकार एस्थिनोपिया वा क्षीणदृष्टिरोगमें भी ज्यादा देर तक दृष्टिमें गड़बड़ी रहती है, और थोड़ी देर विश्राम करनेसे दृष्टि ठीक हो जाती है। माइओपिया या अदूरदृष्टिरोगमें दृश्य पदार्थ पासमें खूब साफ दीखते हैं और जितने दूर हों उतने ही अस्पष्ट दीखाई देते हैं। इस प्रकार पास और दूरमें अस्पष्ट दृष्टि होनेसे तथा कनभेक्स चसमासे भी अच्छा न दीखनेसे हाइपारमिट्रोपिया नामक रोग पैदा हो जाता है । पासमें दृष्टिका व्याघात और दूरमें स्वाभाविक दृष्टि होना, दूरदृष्टि रोगका लक्षण है । मोतियाबिन्दके पूर्वलक्षणमें भी दिनमें दृष्टि धुंधली हो जाती है और रातमें अच्छा दीखने लगता है।

किसी प्रकारके साधारण चसमेंसे दृष्टिकी उन्नति न हो, दूसरा कोई रोग भी न हो और दृष्टिमें विकार भाव आ जाय तो उसे एष्टिगमाटिसम् या क्षीणदृष्टि रोग समझना चाहिये। चित्रपत्र और कृष्णमण्डलगत रोगमें भी चसमा कुछ काम नहीं देता, रोगी बड़े बड़े अक्षरोंको भी नहीं पढ़ सकता, आँखोंके पास अङ्गुलियां दिखानेसे उन्हें गिन कर बतला सकता है। जब इतना भी न बता सके तब आलोक और अन्धकारका भेद मात्र बतला सकता है। फिर आँखें जन्म भरके लिए अन्धी हो जाती हैं। फिर उन आँखों पर कुछ भी चिकित्सा नहीं चलती।

आँखोंके सम्पूर्ण अवयव या यन्त्र सूर्यके प्रकाशमें नहीं दीखते। उन अवयवोंको देखनेके लिए ही अक्षिवीक्षणयन्त्र (Opthalmoscope)का आविष्कार हुआ है तारेके सङ्कीर्ण छिद्रसे जो आलोक आँखके भीतर पहुंचता है, उस आलोकमें इस अक्षिवीक्षणयन्त्रकी सहायतासे भीतरके सूक्ष्म अवयवोंका प्रत्यक्ष होता है। इस यन्त्रका व्यवहार और आँखोंके सूक्ष्म अवयवोंकी आकृतिका अच्छा ज्ञान न होनेसे मस्तिष्कशोथ (Meningitis), मस्तिष्कशोथ (Encephalitis), मस्तिष्कोदक (Hydrocephalus), मस्तिष्कमें रक्तस्राव (Haemorrhage), अर्बुद, अपस्मार, उन्माद, स्पन्दनरोग, असम (Ataxy), स्नायवीय-ज्वर, पुराना सिरदर्द आदि रोग तथा मस्तिष्क और स्नायुसम्बन्धी पीड़ा अच्छी तरह मालूम पड़ती हैं।

अक्षिवीक्षणयन्त्रसे चक्षुकी परीक्षा करनी हो तो एक अन्धकारमय घरमें, तेज और स्थिर शिखायुक्त चिराग जला कर एट्रोपिन् प्रयोग कर ताराका प्रसारण करना चाहिये। रोगीके कानके पास और कुछ पीछेकी तरफ यह चिराग रहना चाहिये। परीक्षक और रोगीकी आँखें तथा उक्त दीपक जिससे पृथिवीके समान्तर भावमें रहे ऐसा करना चाहिये। चिकित्सककी आँखें रोगीकी आखोंसे १८ इञ्चसे ज्यादा दूर न रहें। परोक्ष भावसे परीक्षा करनेमें कृष्णचक्षुके शार्ङ्गत्वक् (Cornea) से डेढ़ इञ्च दूरमें २ इञ्च मोटा एक मैग्निफाइङ्ग ग्लास रख उससे आँखें देखना चाहिये। आक्षिकचक्र (Optic disk) देखना हो तो रोगीको अपनी बाईं आँखकी दृष्टि चिकित्सकके कानपर रखनी चाहिये, इससे चक्षुके भीतरका हिस्सा लाल और उसके भीतरका चक्र गोल और कुछ ललाईको लिए हुए सफेद दिखाई देता है। प्रत्यक्ष भावसे देखनेके लिए ग्लासकी जरूरत नहीं पड़ती। चिकित्सकको रोगीकी आँखोंसे डेढ़ या दो इञ्च दूरमें अपनी आँखें रख कर परीक्षा करनी चाहिये। भेंच, चसमा, मोतियाबिन्द, फुल्ला, पानी गिरना, रतौंधा, दिनन्धा आदि शब्दोंमें विशेष विवरण देखना चाहिये।

हकीमी नामक किताबमें चक्षुरोगके विषयमें दवा खाना और आँखों पर लेप लगाने आदिका विधान है। हकीमी मतमें श्वेत पुनर्णवा (बिषखपरा)के पत्ते एक माह खानेसे सब तरहका चक्षुरोग आरोग्य हो जाता है। अञ्जनोंके लगाते रहनेसे भी चक्षुरोग नहीं होते और हो भी तो जल्दी अच्छे हो जाते हैं। बोगदादनिवासी हुसेन जोजेनीके पोते इस्माइलके बनाये हुए "सिब् जखिरह" नामक बड़े ग्रन्थमें चक्षु सम्बन्धी नाना प्रकारके रोगोंको चिकित्सा-प्रणाली विस्तार पूर्वक लिखी है।

चख (फा० पु०) कलह, झगड़ा, तकरार, टंटा।

चखना (हिं० क्रि०) स्वाद लेना, स्वाद लेनेके लिये मुखमें डालना।

चखाचखी (फा० स्त्री०) विरोधवैर, द्वेषता।

चखाना (हिं० क्रि०) खिलाना, स्वाद दिलाना।

चखिया (फा० वि०) झगड़ालू, तकरार करनेवाला।

चखौती (हिं० स्त्री०) चट पटा खाना, तीक्ष्ण स्वादका भोजन।

चगड़ (देश०) चतुर, चालाक

चगताई (चघताई)—तुर्की जातिकी एक श्रेणी। इसी श्रेणीके तुर्कीवंशमें भारतीय मुगल सम्राटोंके आदि पुरुष बाबरका जन्म हुआ था। बाबर चगताई तुर्की भाषामें बातचीत किया करते थे और लिखा-पढ़ीका काम भी उसी भाषामें करते थे। उनके समयमें दिल्लीके दरबारमें कुछ दिन तक तुर्की भाषाका ही प्रचार था। उसके बाद दोनों तरहके लोग और दोनों तरहकी भाषा भी दिखाई देने लगी। ईरान, तूरान, और पारसदेशके फारसी भाषाभाषी सियामतावलम्बी थे और तुर्कीके लोग चगताई

भाषाभाषी सुन्निमतावलम्बी मुसलमान थे। कर्णल टाडने अपने राजस्थानमें एक स्थान पर लिखा है कि, यह चगताई जाति ही संस्कृत पुराणोक्त "शकतई वा शाकद्वीपी" नामक शक जाति है। यही जाति आखिरमें ग्रीकों द्वारा स्किथियान् (Scythian) नामसे उल्लिखित हुई है। तैमूर बेगजब अजेय हो गये थे तब (१३३० ई०में) चगताई राज्यकी सीमा पश्चिममें 'धस्तिकपचक' और दक्षिणमें 'जक्जर्तिज्'नदी तक थी। इस नदीके किनारे गेटोकखाँ नाम के एक भारतीय राजाने टमिरिसकी तरह राजधानी स्थापित की थी। कोजेन्द, तासखन्द, उटरार, सिरोपलिस् और आलेकजान्द्रियाके उत्तरवर्ती अनेकानेक नगर इस राज्यके अन्तर्भुक्त थे। डिओइसनका कहना है कि, १२२२ ई०से १३६२ ई०के भीतर भीतर ट्रानसोक्सियाना राज्यके सिंहासन पर ३६ चगताई राजा बैठे थे। क्रमशः जब पूर्व तुर्किस्तानमें इनका प्रभाव घटने लगा तब इनमेंसे बहुतोंने धर्मयाजकता धारण की थी। १६७८ ई०में जुङ्गरियाके काल्मक जातिके अधिपतिने श्वेतपर्वत पर खोजाओंको रखा था। इसके सौ वर्ष बाद १७५७ ई०में तुर्किस्तानका अधिकांश चीनोंके हाथ लगा, उस समय इन लोगोंका प्रभाव बिल्कुल लुप्त हो गया था। इनके अधिपतियोंमेंसे बहुतसे कवि, ज्योतिषी, ऐतिहासिक, राज्यशासन विधि स्थापयिता और वीर थे। बहुतोंने सभ्यजातियोंके पास भी प्रशंसा पाई थी। चगताई खाँ देखो।

चगताईखाँ—प्रसिद्ध मोगलविजेता चंगेजखाँका एक पुत्र। चंगेजके सभी पुत्रोंसे ये धार्मिक और न्यायशील थे। १२२७ ई०में चंगेजखाँ इन्हें ट्रान्साक्सोनिया, वाल्ख, बदाक्सान और कासगरके राजा बना गये थे सही किन्तु चगताई अपनेसे राज्य न कर साथियोंसे राज्यशासन कराते थे तथा शिष्य जिस तरह सदा गुरुके पास रहता है उसी तरह ये भी अपने बड़े भाई ओकताईखांके निकट सर्वदा रहते थे। १२४१ ई०के जूनमासमें इनकी मृत्यु हुई।

इन्हीं चगताई खाँके वंशधर मोगल बादशाह भारतवर्षमें चगताई मोगल नामसे मशहूर हैं। चगताई देखो।

चगर (देश०) १ घोड़ोंकी एक जाति। २ एक चिड़िया।

चगुनी (देश०) संयुक्तप्रान्त, बङ्गाल और विहारकी नदियोंमें मिलनेवाली एक तरहकी मछली। इसकी लम्बाई लगभग १८ इञ्च होती है।

चङ्ग (हिं० वि०) सम्पूर्ण, समूचा, पूरा पूरा। कविताओंमें जहां चङ्ग शब्द आवे, वहाँ उसका ऐसा अर्थ होता है।

चङ्ग—उत्तर भारतमें फसल काटनेके समयका एक उत्सव। यह उत्सव भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें भिन्न भिन्न प्रथाओंसे सम्पन्न हुआ करता है। अनाजको झाड़ कर दावँने (रौंदने)-से पहिले एक फुट ऊँचा उसका एक ढेर किया जाता है। बादमें एक आदमी मौन धारण कर एक हातमें सूप और दूसरे हातमें उस अनाजकी मुट्ठी बांध कर दक्षिण दिशासे प्रारम्भ कर उसकी प्रदक्षिणा दिया करता है। प्रदक्षिणा देते समय धीरे धीरे मुट्ठीमेंका अनाज छोड़ता जाता है और दूसरे हातके सूपको इस तरह हिलाता है जिससे उसकी हवा उस अनाजकी राशिके नीचे तक पहुंचे। एकबार प्रदक्षिणा देनेके बाद सूप और अनाजका हात बदल लेता है। दूसरी बार प्रदक्षिणा कर, उस ढेरके सामने आ कर अन्नदेवताको प्रणाम करता है। प्रणाम करनेका मन्त्र इस प्रकार है—

"अन्न देवताओ—बहुत गुणा करियो।"

निम्न और मध्यम दोआबमें तथा मध्यप्रदेशके सागर नामक नगरमें गोबर या रेखसे अनाजके ढेरके चारों ओर लकीर-सी खींच दी जाती है। यह लकीर पूर्व दिशासे शुरू कर दक्षिण दिशा हो कर घुमाई जाती है। लकीर खींचते समय साँसको बन्द रखना पड़ता है। स्कोटलैंडके पार्वत्य प्रदेशमें भी आज तक यह प्रथा चालू है।

चङ्कुण (सं० पु०) राजा ललितादित्यके प्रधान मन्त्री। इनका जन्म भूखारदेशमें हुआ था। इनके भाईका नाम कङ्कणवर्ष था। महाराज ललितादित्यने इनके गुणका परिचय पा कर प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त किया था। इन्होंने एक बौद्धमठ बनाया था। किसी समय महाराज ललितादित्य ससैन्य पंजाबको जा रहे थे, रास्तेमें दुस्तर सिन्धुसङ्गम देख कर किस तरह पार होवें ऐसा सोचते हुए मन्त्रीसे जिज्ञासा की। मन्त्रिने एक मणि जलमें फेंक दी, जिसके प्रभावसे जल दो तरफ हट गया। राजा ससैन्य नदी पार हो गये। इसके बाद चङ्कुणने

दूसरी मणिसे वह मणि आकर्षण कर ली। राजा उन दोनों मणियोंके अलौकिक गुण देख आश्चर्यान्वित हो गये और उन्हें लेनेकी इच्छा प्रगट की। मन्त्री पहले देनेके लिए राजी न हुए। राजाके अनुरोधसे मगधदेशसे लाई हुई सुगतमूर्ति ले कर मंत्रीने दोनों मणि राजाको दे दी। इस जिन मूर्तिको ले कर चङ्कुणने अपने मठमें स्थापित कर दिया। प्रसिद्ध ईशानचन्द्रभिषककी बहन इनकी स्त्री थी। (राजतरङ्गिणी ४।२१२ ६३। ललितादित्य देखो।)

चङ्गनाचेरी—मन्द्राजके अन्तर्गत त्रिवाङ्कुर राज्यके उसी नामके तालुकका एक सदर मुकाम। यह अक्षा० ९° २६' उ० और देशा० ७६° ३६' पू०के मध्य क्वुलनसे ३८ मील उत्तर और कोचिनसे भी प्रायः उतनी ही दूरी पर अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः १४५०० है। यहां सप्ताहमें दो बार हाट लगती है जिसमें लाल मिर्च, चावल आदि बिकते हैं। पहले यहां टेक्कमकुर रियासतकी राजधानी थी। १७५० ई०में महाराज मार्तण्डवर्माके मन्त्री रामय्यन दलवाईने अधिकार कर इसको त्रिवाङ्कुर राज्यमें शामिल कर लिया।

चङ्कुर (सं० क्ली०) चकति भ्राम्यति अनेन चक-उरच्। १ यान, शकट, गाड़ी। (पु०) २ रथ। ३ वृक्ष, एक तरहका पेड़।

चङ्क्रमण (सं० क्ली०) क्रम-यङ् ल्युट् यङो लुक्। १ पुनः पुनः भ्रमण, बार बार घूमना।

चङ्क्रमा (सं० स्त्री०) पथ, रास्ता, मार्ग।

चङ्क्रायण (सं० पु०) प्रवरभेद।

चङ्ग (सं० त्रि०) चकति तृप्नोति चक-अच् निपातने साधु। १ सुस्थ, शान्त। २ शोभायुक्त, प्रभावशाली। ३ दक्ष, पटु, चालाक, होशियार। (पु०) राजा तुंगके एक मित्रका नाम। (राजतरङ्गिणी ७।८७) ५ भूटानकी एक तरहकी शराब। यह यवसे तैयार की जाती है।

चङ्गदास—एक बौद्ध पण्डित। ये चङ्ग नामसे मशहूर थे। इन्होंने संस्कृत भाषामें वैयाकरणजीवातु प्रणयन किया है।

चङ्गदेव—दाक्षिणात्यके एक हिन्दू साधु। ये योगभ्रष्ट, युगसाधु या युगव्यास नामसे भी प्रसिद्ध थे। कोई कोई कहता है कि ये कई सौ वर्ष बचे थे। बहुतसे मनुष्य इनकी श्रद्धा करते थे। लगभग १७९७ ई०में ये सशिष्य श्रीरङ्गको गये थे। हिन्दू होने पर भी टीपू सुलतानने इनका उचित सत्कार किया था, किन्तु चङ्गदेवने टीपूके आदेशको उलङ्घन करते हुए कहा था कि "राजप्रासादकी अपेक्षा वृक्षतल ही उनके लिए उपयुक्त स्थान है।"

चङ्गेजखाँ—साधारण अङ्गरेजी इतिहासोंमें जङ्गेजखाँ नामसे प्रसिद्ध। इनका पहिला नाम तेमुचीन या तामुजीन है। ओनोन नदीके किनारे ११५४ ई०में इनका जन्म हुआ था। ये मुगल जातीय थे। इनके पिताका नाम येसुकी है, वे मुगलोंके सर्दार थे। १३ वर्षकी उम्रमें चङ्गेजखाँने अपने पिताका पद पाया था। उन्हें शत्रुओंके जालसे अपनेको बचानेके लिए तातारराज अवन्तखाँको शरण लेनी पड़ी थी। अवन्तखाँको भी शत्रुओंके वारोंसे राज्यभ्रष्ट होना पड़ा था। चङ्गेजखाँकी सहायतासे आवन्तखाँको पुनः राज्य मिला था और उन्होंने अपनी लड़कीका व्याह चङ्गेजखाँके साथ कर दिया था। कुछ दिन बाद अवन्तखाँ अपने दामादसे नाराज हो गये और चङ्गेजखाँके शत्रुओंके साथ मिल कर उन्हें नष्ट करनेकी चेष्टा करने लगे यह बात चङ्गेजको मालूम पड़ गई; इस लिए कौशलसे अपनेको बचा लिया और फिर धीरे धीरे अपने शत्रुओंको परास्त करने लगे। ४९ वर्षकी उम्रमें चङ्गेजखाँने तातारके खाँ लोगोंसे 'खाकान' की उपाधि पाई और १२०६ ई०में तातरके सारे राज्यके सम्राट् हो गये। काराकुरम नगरमें चङ्गेजखाँकी राजधानी थी। बाईस वर्ष तक इन्होंने कोरिया, काथी, चीनदेशका कुछ अंश तथा एशियाके और भी बहुतसे देशोंको जीत कर ये ग्रीकवीर अलेकसन्दरकी तरह दिग्विजयी सम्राट् कहाये थे। इन्होंने १२०५ ई०में चीनाधिकृत टङ्गुट्से लगा कर १२१४ ई०में चिंतु या पिकिन तक अधिकार कर लिया था। १२१९ ई०में पश्चिमांशको जय करना प्रारम्भ किया और बोलूरताग पर्वतसे कास्पीय सागरके किनारे तक सब वशमें कर लिया। इनके सेनापतियोंने आर्मेनिया, जर्जिया आदि स्थानों पर अधिकार किया था और रूषियाका अधिकांश वशमें किया था। चङ्गेजखाँने १२१७ ई०में खारिजम

राज्यके सुलतानके पास दूत भेजा था। सुलतानने उसे मार डाला। इस पर चङ्गेजखाँ बहुत ही नाखुश हुए और सुलतानको अपने राज्यसे निकाल दिया। प्राणोंके डरसे सुलतान कास्पीय हृदके मध्यवर्ती एक टापूमें जा ठहरे, यहीं उनकी मृत्यु हुई थी। सुलतानके पुत्र जलालउद्दीनने चङ्गेजके साथ युद्ध किया। युद्ध करते करते जलाल क्रमशः पूर्वको हटने लगे और आखिरमें गजनीके पासमें आ कर पूर्णतया परास्त हो कर भारतवर्षमें भाग आये। चङ्गेजने सिन्धु नदीके किनारे तक उनका पीछा किया था। जलालउद्दीन रातमें सिन्धु नदीको पार कर दूसरे तट पर पहुंच गये थे। इस समयमें भारतके पश्चिमके राज्य इनके हात लग गये थे। जलालउद्दीन जब सिन्धु नदीमें तैर कर पार हो रहे थे, उस समय भी चङ्गेजकी सेनाने उन पर काफी वार किये थे जिससे वे लोहू-लुहान हो गये थे। ऐसी दशामें भी किसी तरह जान बचा कर उन्होंने दिल्लीमें जा कर दासवंशीय सम्राट् अलतमशका आश्रय लिया था। वहां रह कर उन्होंने अलतमशसे कुछ सहायता मांगी, परन्तु सम्राट्ने उनकी प्रार्थना मंजूर न की। इस पर जलालने घक्करोंके साथ मिल पञ्जाबके बहुतसे शहर लूट कर सिन्धुप्रदेश अधिकार कर लिया। उस समयके सिन्धुके सुलतान नसीरउद्दीन कुबाचीने मुलतानमें आश्रय ग्रहण किया था। सुलतान जलालउद्दीन फिर पारस्यके सिंहासनको अधिकार करनेकी आशासे सिन्धुको छोड़ कर पारस्यमें चले गये। इतनेमें चङ्गेजखाँने सिन्धु पार हो कर मुलतानको घेर लिया और करीब एक लाख आदमियोंकी जान ले कर आहार्य वस्तुके अभावसे भारत छोड़ कर चले गये। बादमें फिर चीनकी तरफ गये और टङ्गुटके पास युद्ध करते करते १२२७ ई०को २८ अगस्तको मर गये। मरते समय इनका राज्य पूर्व-पश्चिममें २७०० कोस और उत्तर-दक्षिणमें १५०० कोस विस्तृत था। इनके चार पुत्र जुजि, ओकताई, चगताई और तूलिखाँने पिताका राज्य बाँट लिया। इनमेंसे तूलिखाँने सम्राट् पद पाया था।

चच—पञ्जाबके रावलपिण्डी जिलेकी अटक तहसीलके अन्तर्गत एक जनपद। यह अक्षा० ३३° ५३' तथा ३३° ५९' उ० और देशा० ७२° २२' एवं ७२° ४४' पू०के मध्य अटक पहाड़के उत्तरमें और सिन्धु नदके पूर्वके किनारेमें अवस्थित है। यहांकी नदीमें कहीं कहीं छोटे छोटे टापू भी दिखलाई देते हैं। यहांकी जमीन खूब उपजाऊ है। यहांका चचहजारो नामक स्थान ही वाणिज्य और कृषिप्रधान है। ऐसा प्रवाद है कि, ओहिंद के एक चच ब्राह्मणके नामानुसार ही यहांका नाम हुआ है। ६४१ ई०में चचवंशीय एक व्यक्तिने सिन्धु प्रदेशमें ब्राह्मण राज्यकी स्थापना की थी, यह नाम उससे भी पहलेका होगा। सिन्धु नदीके किनारे इस चच वंशके नामसे बहुतसे नगर बसे थे। जैसे—चचपुर, चचर, चचगांव, चचि इत्यादि।

पहिले सिन्धुप्रदेशमें रायवंशके राजा राज्य करते थे। एक चचवंशीय ब्राह्मणने उनसे राज्य छीन लिया। वे शहराम या शाहरियारके समयमें हुए थे। किसीके मतसे इन्होंने ही सबसे पहिले चतुरङ्ग खेल चलाया था।

चचवंशने ४७६ ई०से करीब १३७ वर्ष तक प्रबल-प्रतापसे राजत्व किया था। आरबीयगण इस वंशको भ्रष्ट करनेके लिए ही सिन्धुप्रदेशमें आये थे। इसी उद्देश्यको ले कर ७५७ ई०में अरबी भाषामें "चचनामा" नामको एक किताब लिखी गई थी। १२१६ ई०में मुहम्मद नामक एक व्यक्तिने "तारीख-ए-हिन्द-ओ-सिन्द" नाम दे कर इसका पारसी भाषामें अनुवाद किया था।

चचण्डी (सं० स्त्री०) क्षुद्रजिह्वा, कौवा।

चचर (सं० त्रि०) चर-अच्, बाहुलकात् द्वित्वं। गमनशील, जानेवाला।

"पतरेव चचरा चन्द्रनिर्णिक् कृमनः।" (ऋक् १०।१०६।८)

'चचरा सचरन्तौ' (सायण)

चचर (देश०) वह जमीन जो बहुत दिन परती रह कर एक वर्षको ओई जोती हो।

चचरा (देश०) एक पेड़का नाम।

चचा (हिं० पु०) पितृव्य, बापका भाई।

चचान—काठियावाड़के झालावाड़ राज्यके अन्तर्गत एक छोटा राज्य। यहां एक सामन्त रहते हैं, जिनकी आमदनी प्रायः तीन हजार रुपये हैं और गवर्मेण्टको ३१८) रु० कर देने होते हैं।

चचिया (हिं० वि०) चाचाके बराबरका संबन्ध रखनेवाला

चचौंड़ा (हिं॰ पु॰) चिचिण्ड देखो।

चची (हिं॰ स्त्री॰) चाचाकी स्त्री।

चचेण्डला (सं॰ स्त्री॰) चचेण्डा, चचेड़ा, एक तरहकी लता।

चचेण्डा (सं॰ स्त्री॰) परवलकी लताके सदृश एक तरह की लता। इसके फलके ऊपर सफेद रंगकी रेखा रहती है। इसका संस्कृत पर्याय—वेश्मकुल, श्वेतराजी और बृहत्फल है। परवलके जैसा इसमें भी गुण है। शुष्क-शरीर रोगीके लिये यह विशेष हितकर है।

चचेरा (हिं॰ वि॰) चाचासे उत्पन्न, चाचाजाद।

चचोड़ना (देश॰) दांतसे खींच कर रस चूसना।

चचोड़वाना (हिं॰ क्रि॰) चचोड़नेका काम कराना।

चञ्च (सं॰ पु॰) चञ्च-अच। परिमाणविशेष, पांच अंगुलीका एक चञ्च माना जाता है।

चञ्चत्क (सं॰ त्रि॰) लम्फ, कूदता हुआ, उछलता हुआ।

चञ्चत्कठाररस (सं॰ पु॰) औषधविशेष। इसके बनने की विधि इस प्रकार है—पारा, गन्धक, लोहा और अब-रक, इनमेंसे प्रत्येकका २ भाग, लाङ्गलिका विष ६ भाग, सोंठ, पीपल, मिर्च, कुट और दन्ती इनमेंसे प्रत्येकका १ भाग, यवक्षार, कालानमक और सुहागा, इनमेंसे प्रत्येकका पांच भाग, गोमूत्र बत्तीस भाग तथा स्नुही (तिधारा या सीज)-का दूध बत्तीस भाग, इन सबको एक साथ पका कर दो माषेकी गोलियाँ बनानी चाहिये। इसीका नाम चञ्चत्कठाररस है। कहीं कहीं इसको चञ्चुत्कठाररस भी कहते हैं। इसके सेवनसे बवासीरका राग जाता रहता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह, अर्शचि॰)

चञ्चत्पुट (सं॰ पु॰) संगीतमें एक ताल जिसमें पहले दो गुरु तब एक लघु, फिर एक प्लुत मात्रा होती है।

चञ्चरिन् (सं॰ पु॰-स्त्री॰) चंचूर्यते चर-यङ्-तस्य लुक् णिनि। भ्रमर, भौंरा। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

चञ्चरी (सं॰ स्त्री॰) चंचूर्यते चर-यङ्-तस्य लुक्-टक् स्त्रियां ङीप्। भ्रमरी, भंवरी। २ चाँचरी, होलीमें गाने का गीत। ३ हरिप्रिया छन्द। इसके प्रत्येक पदमें १२+१२+१२+१०के विरामसे ४६ मात्रायें होती हैं। तथा अन्तमें एक गुरु होता है। ४ एक वर्णवृत्तका नाम जिसको चचरा, चञ्चली और विबुधप्रिया कहते हैं। इसके प्रत्येक चरणमें र स ज ज भ र (ऽ।ऽ ।।ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ।। ऽ।ऽ) होते हैं। ५ छब्बीस मात्राकी एक मात्रिक छन्द।

चञ्चरीक (सं॰ पु॰-स्त्री॰) चर-ईकन् निपातने साधु। भ्रमर, भौंरा।

चञ्चरीकावली (सं॰ स्त्री॰) १ छन्दविशेष, एक तरहका छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें १३ अक्षर रहते हैं और जिनमेंसे पहला, आठवां, ग्यारहवाँ अक्षर लघु और शेष गुरु होते हैं। इसीका नाम चञ्चरीकवाली है। २ भौंरोंकी पंक्ति।

चञ्चल (सं॰ पु॰) चञ्च-अलच्, चञ्चं गतिं लाति ला-क वा। १ कामुक, कामी, विषयी, रसिक। २ वायु, हवा। (त्रि॰) ३ चपल, चंचल। ४ अस्थिर, चलायमान एक स्थितिमें न रहनेवाला। ५ अधीर, एकाग्र न रहनेवाला। ६ उद्विग्न। ७ नटखट, चुलबुला।

चञ्चलता (सं॰ स्त्री॰) अस्थिरता, चपलता। नट-खटी, शरारत।

चञ्चलतैल (सं॰ क्ली॰) शिलारस।

चञ्चला (सं॰ स्त्री॰) चञ्चल टाप्। १ विद्युत्, बिजली। २ लक्ष्मी। ३ पिप्पली। ४ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरणमें १६ अक्षर होते हैं।

चञ्चलाक्षी (सं॰ स्त्री॰) चञ्चले अक्षिणी यस्याः, समा सान्त टच्-ङीप्। जिस स्त्रीकी दोनों आँखें अत्यन्त चञ्चल हों।

चञ्चलास्य (सं॰ पु॰) सुगन्धिद्रव्य।

चञ्चलाहट (हिं॰ स्त्री॰) चञ्चलता।

चञ्चा (सं॰ स्त्री॰) चन्च-अच्-टाप्। घास फूंसका पुतला जिसे खेतोंमें पक्षियोंको डरानेके लिये गाड़ते हैं।

चञ्चिमूचि (सं॰ पु॰) कारण्डव पक्षी, एक तरहका हंस।

चञ्चु (सं॰ पु॰) चन्च-उन्। १ एरण्डवृक्ष, रेंड़का पेड़। २ मृग, हिरन। ३ रक्तएरण्ड, लाल रेंड़ी। ४ क्षुद्र चञ्चुवृक्षविशेष, एक तरहका छोटा पेड़। (स्त्री॰) ५ पत्रशाकविशेष, वर्षाऋतुमें होनेवाला एक तरहका शाक। इसमें पीले फूल और छोटी छोटी फलियां लगती हैं। संस्कृत पर्याय—विजला, कलभी, चीरपत्रिका, चञ्चुर, चञ्चुपत्र, सुशाक और क्षेत्रसम्भव है। इसका गुण—मधुर, तीक्ष्ण, कसैला, मलशोधक, तथा गुल्म, उदर, विबन्ध, अर्श और ग्रहणीरोगनाशक है। भावप्रकाशके

मतसे इसका गुण—शीतल, सारक, रुचिकर, स्वादु, दोषत्रयनाशक, धातुपुष्टिकर, बलकर, पवित्र और पिच्छिल है। (भावप्रकाश)

इसके बीजका गुण—कटु, उष्ण, गुल्म, शूल, उदर-रोग, विष, त्वग्दोष, कंडु, खर्जूरोग और कुष्ठनाशक है। ६ चिड़ियोंकी चोंच।

चञ्चुका (सं० स्त्री०) चञ्चु स्वार्थे कन् टाप्। पक्षीकी चोंच।

चञ्चुतैल (सं० क्लो०) एरण्डतैल, रेंड़ीका तेल।

चञ्चुपत्र (सं० पु०) चञ्चुरिव पत्रमस्य, बहुव्री०। चञ्चु-शाक, चेंचका साग।

चञ्चुभृत् (सं० पु०-स्त्री०) पक्षी, चिड़िया।

चञ्चुमत् (सं० पु०-स्त्री०) पक्षी।

चञ्चुर (सं० पु०) चन्च्-उरच्। १ चञ्चु नामक शाक, चेंचका साग। (त्रि०) २ दक्ष, निपुण, कुशल, होशियार।

चञ्चुल (सं० पु०) विश्वामित्र मुनिके एक पुत्रका नाम। कहीं कहीं इन्हें चञ्चल भी कहा गया है। (हरिवंश २७ अ०)

चञ्चुलु (सं० पु०) रक्तएरण्ड, लाल रेंड़ी।

चञ्चुशाक (सं० क्ली०) चञ्चुनामकं चञ्चुसदृशं वा शाक-मस्य, बहुव्री०। शाकविशेष, चेंचका साग।

चञ्चुसूचि (सं० पु०-स्त्री०) चञ्चुः सूचिरिव यस्य, बहुव्री०। कारण्डव पक्षी, हंसकी जातिकी एक चिड़िया, एक तरहका बत्तख। इसका पर्याय-सुगृह, पीततुण्ड, मरुण और चञ्चुसूचिक है।

चञ्चुसूचक (सं० पु० स्त्री०) चञ्चुसूचि स्वार्थे कन्। चञ्चुसूचि देखो।

चञ्चू (सं० स्त्री०) चञ्चु-ऊङ्। १ चञ्चुशाक, चेंचका साग। २ चोंच, लोल।

चञ्चुक (सं० क्ली०) तृणशाकविशेष, चेंच साग।

चट (हिं० क्रि० वि०) शीघ्रतासे, जल्दीसे, झट, तुरन्त, फौरन।

चटक (सं० पु०) चट'ति भिनत्ति धान्यादिकं चट-क्वुन्। १ कलविङ्कपक्षी, गौरापक्षी, गौरवा, गौरैया। (Sparrow) इसका संस्कृत पर्याय—कालविङ्क, चित्रपृष्ठ, गृहनीड़, वृषायण, कामुक, नीलकण्ठक, कालकण्ठक, कामचारी, और कलाविकल है। इसके मांसका गुण—शीतल, लघु, शुक्रवर्द्धक और बलकारी है। जङ्गली चटकका मांस हलका और पथ्य होता है। वाभटके मतसे चटकका मांस कफवर्द्धक, स्निग्ध, वातनाशक, शुक्रवृद्धिकर, गुरु, उष्ण, स्निग्ध और मधुर होता है। (वाभट सू० ६ अ०) चरकके मतसे चटकका मांस सन्निपात और वायुप्रशमकारी है (चरक सू० २७ अ०) 'चटक' शब्द अजादिगणके अन्तर्गत होनेसे जातिवाचक होने पर भी स्त्रीलिङ्गमें टाप् लगता है। २ काश्मीरके रहनेवाले एक कवि और जयापीड़के मन्त्री। (राजतरङ्गिणी ४।४९६) ३ कृष्णचटक। (क्लो०) ४ पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

चटक (हिं० स्त्री०) १ कान्ति, चमकीलापन, चमक दमक। २ शीघ्रता, फुरती, तेजी। (क्रि० वि०) ३ शीघ्रतासे, चटपट, तुरन्त। (वि०) ४ तीक्ष्ण स्वादका, चरपरा, चटपटा, मजेदार। (पु०) छपे हुए कपड़ोंको साफ करके धोनेकी एक रीति। भेड़ोंकी मेंगनी और पानीमें कपड़ोंको कई बार सौंद सौंद कर सुखाते हैं।

चटकका (सं० स्त्री०) चटक स्वार्थे कन् टाप्। चटक देखो।

चटकदार (हिं० वि०) चटकीला, भड़कीला, चमकीला।

चटकन (हिं० पु०) चटकना देखो।

चटकना (हिं० क्रि०) १ टूटना, फटना, तड़कना, कड़कना। २ चिड़चिड़ाना। ३ जगह जगह पर कोई चीजका फट जाना। ४ अनबन होना, खटकना।

५ गँठीली लकड़ी, कोयले आदिका जलते समय चटचट करना। ६ उँगली फूटना, उँगलियोंका मोड़ कर दबाने पर चटचट शब्द करना। ७ प्रस्फुटित होना, कलियोंका खिलना वा फूटना। (पु०) ८ थप्पड़, चपत, तमाचा।

चटकनी (हिं० स्त्री०) भीतरसे किवाड़ी या झरोखा बन्द करनेकी छड़, सिटकिनी, अगरी।

चटकमटक (हिं० स्त्री०) बनाव सिंगार, ठमक, चमक, दमक, वेशविन्यास और हावभाव।

चटका (सं० स्त्री०) चटक-टाप्। १ चटक जातिकी स्त्री, मादा चटक। २ श्यामापक्षी, एक तरहकी चिड़िया।

चटका (हिं० पु०) १ चकत्ता, दाग, धब्बा। २ चरपरा

स्वाद, चटपट। ३ चमक्का। (देश०) ४ पपटा, चनेका वह ढोंढ़ जिसमें अच्छी तरह दाने न हुए हों।

चटकाना (हिं० क्रि०) १ ऐसा करना जिसमें कोई चीज चटक जाय, फोड़ना। २ कुपित करना, चिढ़ाना। ३ दूर करना, उचाटना।

चटकामुख (सं० क्लो०) चटकाया मुखमिव मुखमस्य बहुव्री०। अस्त्रविशेष, प्राचीन कालका एक अस्त्र जिसका उल्लेख महाभारतमें है। (८।४०।७०)

चटकारा (हिं० वि०) १ चटकोला, चमकोला। २ चञ्चल, चपल, तेज।

चटकाली (हिं० स्त्री०) १ चटक चिड़ियोंकी पंक्ति, गोरैयाका झुण्ड। २ चिड़ियोंको पंक्ति या समूह।

चटकाशिरस् (सं० पु०) चटकाया: शिर इव, ६-तत्। पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

चटकाहट (हिं० स्त्री०) १ चटकने या फूटनेका शब्द। २ कलियोंके खिलनेका अस्फुट आवाज।

चटकिका (सं० स्त्री०) चटका स्वार्थे कन् इदादेश:। चटका, मादा चटक।

चटकी (हिं० स्त्री०) चटक देखो।

चटकीला (हिं० वि०) १ जिसका रङ्ग फीका न हो, खुलता, भड़कीला। २ चमकीला चमकदार। ३ चरपरा, चटपटा।

चटकीलापन (हिं० पु०) १ चमक, दमक, आभा।

चटखौता (हिं० पु०) भालुओंका एक खेल जिसमें वह अपने पैरोंसे चरखा कातता है।

चटगांव (चट्टग्राम)—बङ्गालका एक विभाग। यह अक्षा० २०° २५ एवं २४° १६ उ० और देशा० ९०° ३४ तथा ९२° ४२ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके पश्चिम बङ्गालकी खाड़ी, पश्चिम-उत्तर ढाका विभाग, उत्तर-पूर्व श्रोहट्ट एवं त्रिपुरा, पूर्व लुशाई पर्वत तथा उत्तर आराकान और दक्षिणको आराकान है। उसका सदर चटगांव शहर है। लोकसंख्या प्राय: ४७३७७३१ लोगो। यहां मुसलमान बहुत रहते हैं। पहले लुशाइयोंके विरुद्ध सामरिक कार्यवाही होनेसे इसका राजनीतिक महत्त्व बहुत था।

चटगांव—बङ्गालका एक जिला। यह अक्षा० २०° ३५ एवं २२° ५८ उ० और देशा० ९१° ३० तथा ९२° २३ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २५१२ वर्गमील है। इसके दक्षिण नमककी खाड़ी, उत्तर फेनी नदी और पूर्वको पार्वत्य प्रदेश है। चटगांवमें कई एक छोटी छोटी पहाड़ियां हैं। नदियां दक्षिण-पश्चिमको बहती हैं। यहां तूफान बहुत आता है।

पहले चटगांव त्रिपुरा राज्यमें लगता था, परन्तु ई० नवीं शताब्दीको आराकानके बौद्धराजने इसे विजय किया और तबसे यह उन्हींके अधिकारमें रहा। ई० तेरहवीं शताब्दीको कुछ समयके लिये वह मुगलराज्यमें मिलाया गया, परन्तु १५१२ ई०में त्रिपुराराजने मुसलमानोंको परास्त करके अपने अधिकारमें कर लिया। पीछेको यह फिर मुगलोंके हाथ लगा था। १५६० और १५७० ई०के बीच जब मुगल और अफगान राज्याधिकारके लिये लड़ रहे थे, आराकानके राजाने फिर उसको विजय करके अपने राज्यमें मिला लिया। परन्तु मुगलोंने इसको कोई परवा न करके १५८२ ई०में टोडरमलको चटगांव लगान पर दे डाला।

अपना अधिकार अक्षुस रखनेके लिये मघों (आराकानियों) ने पोर्तगीज लुटेरोंको बुला डाका डालनेके लिये चटगांव बन्दर सौंपा था। इन्होंने अपना अत्याचार आरम्भ किया और १६०५ ई०को मघोंसे सब सम्बन्ध तोड़ लिया। उसीसे बङ्गालकी राजधानी १६०८ ई०को ढाका उठ आयी। १६३८ ई०को मटुकरायने जो मघोंकी ओरसे चटगांवका प्रबन्ध करते थे, आराकानके राजासे झगड़ा करके मुगलोंका शरण चाहा था। उन्होंने दिल्ली सम्राट्की वश्यता स्वीकार को और बङ्गालके सूबेदारको चटगांव सौंप दिया। १६६४-६५ ई०को बङ्गालके सूबेदार शायस्ता खांने मघों और फिरङ्गियों (पोर्तगीजों)-को दमन करनेके लिये एक बड़ी फौज भेजी थी। १६६६ ई०को इस सेनाने पूर्णरूपसे विजय लाभ किया। फिर वह बङ्गालमें मिलाया और चटगांव नाम बदल करके इस्लामाबाद चलाया गया। १६८५ ई०को ईष्ट इण्डिया कम्पनीने चटगांव अधिकार करके सैन्य प्रेरित किया था, किन्तु उद्योग सफल न हुआ। १६८६का अङ्गरेजी अभियान भी विफल हो गया था। परन्तु १७६० ई०को नवाब मीर कासिमने चटगांव अङ्गरेजोंको दे डाला।

१७८४ ई०को ब्रह्मवासी कर्तृक पराजित कितने ही आराकानी यहां शरणापन्न हुए थे। इससे ब्रह्मवासियोंने सीमाप्रान्त पर उपद्रव आरम्भ किया और बलपूर्वक शाहपुरी टापू ले लिया। इसी पर प्रथम ब्रह्मयुद्धका सूत्रपात हुआ।

१८५७ ई० १८ नवम्बरकी रातको चटगांवमें ३४वीं देशी पैदल फौजकी ३ कम्पनियोंने बलवा किया था। परन्तु सिलहटमें वह सबकी सब मारी गयीं।

चटगांवकी लोकसंख्या प्रायः १३५३२५० है। यहां उन्मत्तताका बड़ा प्रावल्य है। चावलकी खेती अधिक होती है। प्रायः एक तिहाई जिला जङ्गली है। चायका व्यवसाय प्रधान है। मोटा कपड़ा भी तैयार होता है। मघ-स्त्रियां रेशमी और सूती लुङ्गियां बनाती हैं। यहां चटाइयां बहुत अच्छी बुनी जाती हैं। पहले चटगांव नावें बनानेके लिये प्रसिद्ध था। पाट, चावल, धान और चायकी रफ़नी होती है। आसाम बङ्गाल रेलवे यहां चलता है। इष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवे और जहाजोंसे भी यात्री इधर उधर आते जाते हैं। हजारों मील तक कच्ची सड़कें लगी हैं। शिक्षा अच्छी उन्नति पर है।

चटगांव—बङ्गालके चटगांव जिलेका सदर सब डिविजन। यह अक्षा० २१° ५१′ एवं २२° ५६′ उ० और देशा० ९१° ३०′ तथा ९२° १३′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १५९३ वर्गमील है। चटगांव सब डिविजनके बीचमें सीताकुण्ड पर्वत और उत्तर तथा दक्षिण सीमा पर पहाड़ी त्रिपुरा और चटगांवका पहाड़ी देश है लोकसंख्या प्रायः ११५२०८१ होगी।

चटगांव—बङ्गालके चटगांव विभाग और जिलेका सदर। यह अक्षा० २२° २१′ उ० और देशा० ९१° ५०′ पू०में कर्णफूली नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २२१४० है। १८६४ ई०को यहां म्युनिसपालिटी हुई। एक सुरक्षित तालाबसे नलके द्वारा पानी नगरके व्यवसायी केन्द्र बख्शीहाटको पानी पहुंचाया जाता है। यह पूर्व बङ्गालका बड़ा बन्दर है। व्यवसायका प्रधान स्थान होनेसे पोर्तगीजोंने उसका नाम पोर्तो ग्राण्डी (Porto Grando) रखा था। आसाम बङ्गाल रेलवे लग जानेसे आसाम और पूर्व बङ्गालका वाणिज्य यहां खूब चलता है। पाटकी रफ्तनी ज्यादा है। चावल, चाय और चमड़ा भी खूब बाहरको भेजा जाता है। इस नगरमें कितने ही सुन्दर सुन्दर भवन बने हैं। यहां आसाम-बङ्गाल-रेलवे-वोलण्टियर राइफल्स और ईष्टर्न-बङ्गाल-वोलण्टियर राइफल्स नामक स्वेच्छासेवी सैन्य भी रहते हैं।

चटगांव (पार्वत्यप्रदेश)—बङ्गालके चटगांव विभागका एक सरहदी जिला। यह अक्षा० २१° ११′ एवं २३° ४५′ उ० और देशा० ९१° ४१′ तथा ९२° ४२′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल प्रायः ५१३८ वर्गमील है। इसके उत्तर पहाड़ी त्रिपुरा राज्य, पश्चिम चटगांव जिला, दक्षिण आराकान और पूर्वको उत्तर आराकान तथा लुशाई पहाड़ जिला है। इसमें पहाड़ बहुत हैं। पेड़ झाड़ और लता चारों ओर देख पड़ती हैं। नदियों, नालों और झीलोंकी कोई कमी नहीं। जलवायु शीतल है।

यहां पूर्वीय पहाड़के अधिवासी बराबर आक्रमण करते रहे हैं और उनके दमनके लिए युद्ध हुए हैं। लुशाई पहाड़ देखो। १७७७ ई०के अप्रेलको चटगांवके राजाने गवर्नर जनरल वारन हेष्टिङ्गसके इस आशयका एक पत्र भेजा कि कूकियों या लुशाइयोंका रामूखाँ नामक एक पहाड़ी नेता बड़ा उत्पात मचाता था। १८९१ ई० तक जब लुशाई पहाड़ अङ्गरेजी सीमाका अन्तर्भुक्त हुआ, वह लूट मार करता रहा।

इस पार्वत्य प्रदेशकी लोकसंख्या प्रायः १२४७६२ है। चकमा टूटी फूटी बंगला, मघ आराकानी और टिपरे कचारी जैसी अपनी भाषा व्यवहार करते हैं। बालविवाह कहीं नहीं होता। विवाहोच्छेद और विधवा-विवाह प्रचलित है। हल चलानेका सुभीता नहीं। जंगल काट और जला करके गहरी वृष्टि होते ही धान आदि कई प्रकारके बीज डाल दिये जाते हैं जो झूम कहलाते हैं। इसमें बारबार गोंड़ना और जानवरों तथा चिड़ियोंसे पौधोंकी रक्षा करना पड़ता है। अपने व्यवहारके लिये पहाड़ी स्त्रियां सूती कपड़ा बुन लेती हैं। रफ्तनीकी खास चीज रूई है। नावोंसे यातायात होता है, परन्तु अब सड़कें भी जहां तहां बनमें

लगी हैं। १८६० ई० तक यह प्रदेश चटगांव जिलेमें लगता रहा, जब कि हिल-सुपरिण्टेण्डेण्टके अधीन कर दिया गया। इसके ७ वर्ष पीछे वह पार्वत्य प्रदेशके डिपटी कमिश्नर बने। १८८१ ई०को यह सब-डिविजन हुआ और डिविजनल कमिश्नरके अधीन एक असिष्टण्ट-कमिश्नरको उसके प्रबन्धका अधिकार मिला। १९०० ई० को फिर जिला हो गया। पुरुषोंकी शिक्षा बढ़ी है।

चटचट (अनु० स्त्री०) चटकनेकी आवाज, टूटनेका शब्द।

चटनी (हिं० स्त्री०) १ वह चीज जो चाटी जा सके। २ एक तरहका व्यञ्जन जो पुदीना, हरी धनियाँ, मिर्च, खटाईको एक साथ पीसनेसे बनता है।

चटपट (अनु० क्रि० वि०) शीघ्र, जल्दी, तुरंत, झटपट, फौरन।

चटपटा (हिं० वि०) चाट, मजेदार।

चटपटी (हिं० स्त्री०) १ शीघ्रता, आतुरता, उतावली हड़बड़ी। व्यग्रता, आकुलता, घबराहट। २ उत्सुकता, आकुलता, छटपटी।

चटर (अनु० पु०) चटपट शब्द।

चटरजी—बङ्गालके ब्राह्मणोंकी एक शाखा। चट्टोपाध्याय।

चटवाना (हिं० क्रि०) १ चाटनेकी क्रिया। २ कुन्द छूरी या तलवार पर सान दिलाना, सान पर चढ़वाना।

चटशाला (हिं० स्त्री०) वह स्थान जहां छोटे छोटे लड़के पढ़ते हैं, छोटी पाठशाला, मकतब।

चटसार (हिं० स्त्री०) चटशाला देखो।

चटाई (हिं० स्त्री०) घास, सींक, ताड़के पत्तोंका बना हुआ बिछावन, साथरी, घासका आसन।

चटाक (अनु०) लकड़ी इत्यादि टूटनेकी आवाज।

चटाक (हिं० पु०) दाग, धब्बा, चकता।

चटाकर (हिं० पु०) एक तरहका वृक्ष जिसमें खट्टे फल लगते हों।

चटाका (अनु० पु०) लकड़ी या किसी दूसरी कड़ी वस्तुके टूटनेकी आवाज।

चटाचट (अनु० स्त्री०) चटचटका शब्द, किसी वस्तुके फूटनेकी आवाज।

चटाना (हिं० क्रि०) १ जिह्वा द्वारा किसी वस्तुको थोड़ा थोड़ा कर मुंहमें खिलाना। २ कुछ घूस देना रिशवत देना। ३ सान पर चढ़वाना।

चटापटी (हिं० स्त्री०) १ शीघ्रता, जल्दी, फुरती।

चटाफल (सं० पु०) नारिकेल, नारियल।

चटिका (सं० स्त्री०) चटक टाप् इदादेशः। १ मादा चटक। २ पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

चटिकाशिरस् (सं० क्ली०) चटिकायाः चटकपत्न्याः शिर इव आकृतिरस्य, बहुव्रो०। पिप्पलीमूल, पीपरामूल।

चटिकाशिर (सं० पु०) चटिकायाः शिर इव पृषोदरादित्वात् सकारलोपे साधु। पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

चटियल (देश०) अनावृत, खुला हुआ, जो ढका न हो।

चटिहाट (देश०) मूर्ख, जड़।

चटो (देश०) १ चटसार, पाठशाला। २ एक प्रकारकी जूती, जो एड़ीकी ओर खुली होती है।

चटोचरि (देश०) पेचविशेष।

चटु (सं० पु०) चट-कु। १ प्रिय वाक्य, चाटु, खुशामद, चापलुसी।

"छाया मिजस्को चटुलानलानां।" (माघ ४।६)

२ उदर, पेट। ३ व्रतियोंका एक आसन।

चटुल (सं० त्रि०) चटुरस्त्यस्य चटु-लच्। १ चंचल, चपल, चालाक।

"मासातिमात्रचटुलैः स्थतः पुरेमैः।" (रघु० ८।५८)

२ सुन्दर, उत्तम, अच्छा, खूबसूरत।

चटुला (सं० स्त्री०) चटुल-टाप्। १ गायत्रीस्वरूपा भगवती। २ विद्युत्, बिजली।

चटुलोल (सं० त्रि०) चटुलश्चासौ लोलश्चेति, कर्मधा०, निपातने साधुः। १ चाटुकारक, खुशामद करनेवाला, खुशामदी, चापलुस। २ चञ्चल, चालाक, चतुर। ३ सुन्दर, मनोहर, बढ़ियां।

चटूल्लोल (सं० त्रि०) चटुलोल देखो।

चटोरा (हिं० वि०) स्वादलोलुप, जिसे स्वादका व्यसन हो।

चटोरापन (हिं० पु०) स्वादलोलुपता, अच्छी अच्छी वस्तु खानेका व्यसन।

चट्टग्राम—एक विस्तृत जनपद जो बङ्गाल प्रदेशके अन्तर्गत है। चटगांव देखो।

चट्टभट्ट—ताम्रशासनवर्णित जातिविशेष।

चट्टा (हिं० पु०) १ दास, चेला, शिष्य। २ बाँसकी चटाई।

चट्टान (हिं० स्त्री०) विस्तृत शिलापटल, शिलाखण्ड।

चट्टाबट्टा (हिं० पु०) छोटे छोटे बच्चोंके खिलौने।

चट्टिका (सं० स्त्री०) जलौका, जोंक।

चट्टी (देश०) १ टिकान, पड़ाव, मञ्जिल। (स्त्री०) २ वह जूता जिसका एँड़ीका भाग खुला हो, स्लिपर। ३ हानि, घाटा, टोटा। ४ दंड, जुरमाना।

चट्टू (हिं० वि०) १ स्वादलोलुप, जिसे अच्छी अच्छी चीजें खानेका व्यसन हो। (पु०) २ पत्थरकी बड़ी कुण्डी। ३ छोटे छोटे बच्चोंके खिलौने।

चड़ (अनु० पु०) शुष्क काष्ठके फटनेका शब्द।

चड़कपूजा (हिं० स्त्री०) चरकपूजा देखो।

चड़चड़ (अनु० पु०) सूखी लकड़ीके टूटने या जलनेकी आवाज।

चड़बड़ (अनु० स्त्री०) निरर्थक प्रलाप, बेफजूलकी गप्प, टें टें, बकवक।

चड़सी (देश०) वह जो चरस पीता, चरसबाज।

चड़ी (हिं० स्त्री०) वह लात जो उछल कर मारी जाय।

चड्डो (देश०) एक तरहका लँगोट।

चड्डो (हिं० स्त्री०) छोटे छोटे लड़कोंका एक तरहका खेल।

चढ़त (हिं० स्त्री०) वह वस्तु जो देवताको चढ़ाई गई हो, देवताकी भेंट।

चढ़नदार (हिं० पु०) गाड़ी नाव आदि पर मालकी रक्षा करनेवाला मनुष्य।

चढ़ना (हिं० क्रि०) १ नीचेसे ऊपरको जाना। २ ऊपर उठना। ३ बढ़ना, उन्नति करना। ४ आक्रमण करना, हमला करना। ५ देवता महापुरुष आदिको भेंट दिया जाना। ६ किसी लटकती हुई वस्तुका खिसक कर ऊपर की ओर हो जाना, ऊपरकी ओर सिमटना। ७ ऊपरसे टँकना, मढ़ा जाना। ८ नदी या पानीका बढ़ना। ९ सज-धज कर जाना, गाजे बाजेके साथ कहीं जाना। १० भावका तेज हो जाना, मँहगा होना। ११ स्वर या आवाज तेज होना। १२ धाराके विरुद्ध चलना। १३ किसी बाजे-की डोरीका कस जाना, तनना। १४ किसीके माथे ऋण होना, कर्ज होना। १५ पोता जाना, लेप होना। १६ कालविभागका आरम्भ होना। १७ सवारी करना, सवार होना। १८ किताब आदि पर लिखा जाना, टँकना। १९ आवेश होना, बुरा असर होना। २० किसी चीजको गर्म करनेके लिये चूल्हे पर रखा जाना। २१ कचहरी तक मामला ले जाना।

चढ़वाना (हिं० क्रि०) चढ़ानेका काम कराना।

चढ़ाई (हिं० स्त्री०) चढ़नेकी क्रिया। २ धावा, आक्रमण। ३ किसी देवताकी पूजाका आयोजन। ४ चढ़ावा, भेंट।

चढ़ाउतरी (हिं० स्त्री०) बार बार चढ़ने उतरनेकी क्रिया।

चढ़ाउपरी (हिं० स्त्री०) एक दूसरेसे आगे होने या बढ़नेका प्रयत्न, होड़।

चढ़ाचढ़ी (हिं० स्त्री०) होड़ा होड़ी, खींच तान।

चढ़ाना (हिं० क्रि०) १ नीचेसे ऊपर ले जाना। २ आक्रमण कराना, धावा कराना, चढ़ाई कराना। ३ ऊपर जानेमें प्रवृत्त करना, चढ़नेका काम कराना। ४ किसी लटकती हुई वस्तुको खिसका कर ऊपर ले जाना, समेटना। ५ जल्दीसे पी जाना। ६ किसीके ऊपर ऋण निकालना, किसीके यहां अपना पावना ठहराना। ७ भाव तेज करना, महँगा करना। २ स्वर ऊँचा करना, आवाज तेज करना। ८ देवता आदिको अर्पित करना, भेंट देना। १० घोड़े, गाड़ी आदि पर बैठाना, सवार कराना। ११ कागज आदि पर लिख लेना, दर्ज करना। १२ सिद्ध करने या आँच खानेके लिये चूल्हे पर रखना। १३ पोतना, लेपना। १४ एक वस्तुके ऊपर दूसरी वस्तु लगाना, ऊपरसे टाँकना।

चढ़ानी (हिं० स्त्री०) वह स्थान जो आगेकी ओर बराबर ऊँचा होता गया हो।

चढ़ाव (हिं० पु०) १ चढ़नेका भाव। २ वृद्धि, बाढ़। ३ वह आभूषण जो विवाहमें लड़केकी ओरसे लड़कीको दिया जाता है। ४ विवाहके दिन दुलहिनको दूल्हाके यहांसे आये हुए गहने पहननेकी रीति। ५ वह दिशा जिधरसे नदीका प्रवाह आया हो। ६ बुलानेवालेके पासका दरीके करघेका एक अंश।

चढ़ावा (हिं० पु०) १ चढ़ाव देखो। २ देवताको चढ़ाने या भेंट देनेकी सामग्री, पुजापा। ३ बढ़ावा, दम, उत्साह, साहस। ४ किसी तांत्रिक प्रयोगको वह सामग्री जो बीमारीको एक स्थानसे दूसरे स्थान पर ले जानेके लिये किसी चौराहे या गाँवके किनारे रख दी जाती है।

चढ़ैत (हिं० वि०) चढ़नेवाला, सवार होनेवाला।

चढ़ैता (हिं० पु०) वह जो दूसरोंके घोड़ाको चाल सीखता हो, सवार।

चण (सं० पु०) चण-अच्। शस्यविशेष, चना, बूँट। (त्रि०) २ प्रसिद्ध, मशहूर।

चणक (सं० पु०) चणति दीयते चण-क्वुन्। १ शस्यविशेष, चना, बूँट। (Cicer arietinum) संस्कृत पर्याय—हरिमन्थक, हरिमन्थज, चण, हरिमन्थ सुगन्ध, कृष्णचंचुक, वाजिभोज्य, राजिभक्ष्य और कञ्चुकी है। इसका गुण—मधुर, रूक्ष, मेह, और रक्तपित्तनाशक, दीपन तथा वर्ण, बल, रुचि और आध्मानकारक है। कच्चे चनेके गुण-शीतल रुचिकर, सन्तर्पण, दाह, तृष्णा, अश्मरी और शोषनाशक, कसैला तथा कुछ कुछ कफवर्द्धक है। भुंजे चनेका गुण—रुचिकर, वातनाशक और रक्तदोषकारी है।

इसके जूसका गुण—मधुर, कसैला, कफ, वात, विकार, श्वास, ऊर्द्धकाश, क्लम और पीनसनाशक, बलकारी और दीपन है। प्रातःकालमें भिँगे-चनेके पानीका गुण—चन्द्रकिरणको नाईं शीतल, पित्तरोगनाशक, सन्त र्पण, मंजुल और मधुर है।

भिँगे चनेका गुण—पित्त और कफनाशक है। इसके भोलका गुण लोभकर है। इसके शाकका गुण—रुचिकर, गुरुपाक, कफ और वातवर्द्धक, अम्ल, विष्टम्भजनक, पित्त और दन्तशोथनाशक है।

भारतवर्षमें सब जगह खास कर युक्तप्रदेशमें इसका यथेष्ट आदर है। वहांके रहनेवाले इसमें गेहूँका आटा मिला कर खाते हैं और इसका सत्त, घोड़े, गाय और भेड़ोंको खिलाते हैं। स्पेनके रहनेवाले गरीब मनुष्य गेहूंके बदले इसीको खा कर जीते हैं। ब्रह्मदेशमें यह बहुत उपजाया जाता है। अपक्व अवस्थामें इसके पौधे का स्वाद कुछ कुछ खट्टा मालूम पड़ता है। इसके बीजमें जो सब विभिन्न पदार्थ देखे जाते उसके प्रत्येकका आंशिक परिमाण इस तरह है—जल १०.८०, आटा ६२.२०, यवक्षार १९.३२, तेल ४.५६ तथा मिट्टीका अंश ३.१२ है। २ एक गोत्रकार ऋषि।

चणकरोटिका (सं० स्त्री०) चनेकी रोटी। इसका गुण—रूक्ष, श्लेष्म, पित्त और रक्तनाशक, गुरु, विष्टम्भ और नेत्रोंका हितकर है।

चणकलोणी (सं० स्त्री०) चणकाम्ल, चनेका साग।

चणकशक्तु (सं० पु०) चनेका सत्तू।

चणकक्षार (सं० पु०) चणकपुष्प, चनेके फूल।

चणका (सं० स्त्री०) अतसी, तीसी। (Linum usitatissimum)

चणकात्मज (सं० पु०) चणकस्यात्मजः, ६-तत्। चाणक्य, वात्स्यायनमुनि।

चणकाम्ल (सं० क्ली०) चणकजातमम्लम्। चणकलवण, चनेका नमक चनेके सागको सिद्ध कर एक प्रकारका नमक तैयार होता है, उसीका नाम चणकाम्ल है। इसका गुण—अत्यन्त अम्ल, दीपन, दन्तहर्षण, लवणानुरस, रुचिकर तथा शूल, अजीर्ण और आनाहरोगनाशक है। (भावप्रकाश पूर्व १ भाग)

चणकाम्लक (सं० क्ली०) चणकाम्लमिव चणक स्वार्थे कन् चणकाम्ल देखो २ पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

चणकाम्लवारि (सं० क्ली०) चणकाम्लस्य चणकलवणस्य वारि, ६-तत्। चनेके पौधे पर पानीकी बूंद।

चणक्यम् (सं० क्ली०) चाणक्यमूल, चौंटीदक।

चणद्रुम (सं० पु०) चणश्चणक इव द्रुमः। १ क्षुद्र गोक्षुर, छोटा गोखरू। २ एक रोगका नाम।

चणपत्री (सं० स्त्री०) चणस्य चणकस्य पत्रमिव पत्रमस्याः बहुव्री०। रुदन्ती नामका पौधा, जिसके पत्ते चनेके पत्ते जैसे होते हैं।

चणशक्तु (सं० पु०) चणस्य शक्तुः ६-तत्। चनेका सत्तू।

चणिका (सं० स्त्री०) चणति रसं ददाति चण बाहुलकात् क्वुण टाप् अत इत्वञ्च। तृणविशेष, एक तरहकी घास जिसके खानेसे गायकी दूध अधिक होता है। यह दवाके काममें भी आती है। इसका पर्याय—गोदुग्धा, सुनीला, लेप्रजा और [illegible]। इसके बीजका गुण—वृष्य, बलकर और अत्यन्त मधुर है।

चणोद्रुम (सं० पु०) क्षुद्रगोक्षुर, छोटा गोखरू।

चण्ड (सं० त्रि० । चण्डते चडि-कोप पचाद्यच् । १ तीक्ष्ण, तेज, प्रखर, उग्र, प्रबल, घोर । (पु०) चणति चणयति वा अम्लरसं चण-ड २ तिन्तिड़ीवृक्ष, इमली-का पेड़ । चण्डते कुप्यति चडि-अच् । ३ यमकिङ्कर, यमका दूत । ४ एक प्रसिद्ध दैत्य । शुम्भ दैत्यके राजत्व-कालमें यह दैत्य उनके प्रधान सेनापतिके पद पर नियुक्त हुए थे। शुम्भके आदेशसे रणभूमिमें जा दुर्गा देवीके हाथसे मारे गये थे। इसके भाईका नाम मुण्ड रहा । (देवीमा०) ५ एक अत्यन्त प्राचीन वैयाकरण. इन्होंने 'प्राकृतलक्षण' रचना की है। ६ वत्सप्री राजाके नवम पुत्र (मार्क० पु० ११८।२) ७ ताप, गरमी । ८ एक शिवगण । ९ एक भैरव । १० विष्णुका एक पारिषद । ११ रामकी सेनाका एक बन्दर । १२ पुराणोंके अनुसार कुवेरके आठवें पुत्रका नाम । इन्हों-ने एक समय शिव-पूजनके लिये सूँघ कर पुष्प लाया था और इस कारण पिताके शापसे जन्म भरके लिए कंसका भाई हुआ था और कृष्णके हाथसे निहत हुआ था। १३ कार्त्तिकेय । १४ रक्तकरवीर, लाल कनेर । १५ अरण्य शूकर, जङ्गली सूअर। १६ ग्रन्थिपर्ण, गठिवनका पेड़। (त्रि०) १७ दुर्दमनीय, बलवान् । १८ विकट, कठिन, कठोर । १९ उग्रस्वभावका, क्रोधी, गुस्सावर।

चण्ड—मेवाड़पति लक्षराणाके ज्येष्ठ पुत्र और एक उदार-चेता महापुरुष । स्वदेशानुराग और स्वार्थत्यागके लिये ये राजस्थानके इतिहासमें बहुत प्रसिद्ध हैं ।

बचपनसे ही इनके गुणों पर मुग्ध हो कर मेवाड़के लोग चण्डको खूब चाहते थे। लक्षराणा भी इनको खूब प्यार करते थे। रजवाड़ोंके प्रायः सब ही राजा इनको अपनी अपनी कन्या व्याहना चाहते थे, उनमेंसे एक मारवाड़के राजा रणमल्ल भी थे।

चण्डने यौवनमें पैर रखा ही था, उनके विवाहकी चर्चा होती रही थी कि, इतनेमें रणमल्लने विवाह-सम्बन्धज्ञापक एक नारियल भेज दिया । लक्षराणा अपने मन्त्री तथा सभासदों सहित राजसभामें बैठे हुए थे इसी समय दूत नारियल ले कर वहां उपस्थित हुआ। चण्ड किसी कार्यवश बाहर गये थे। उन्होंने आते ही उस विवाहमें सम्मति दी । राणाने दूतको वह शुभसम्वाद कह दिया और हंसते हुए यह भी कहा "इस बूढ़ेके लिए शायद ऐसी खेलनेकी चीज नहीं आई है।" इस बातको सुन कर सभाके सब ही लोग आन-न्दित हुए । परन्तु इस बातने चण्डके हृदयमें भावान्तर उपस्थित कर दिया। चण्डने सोचा, पिताने जिसको मुहूर्त्त मात्रके लिये हृदयमें स्थान दिया है, पुत्रको उसके साथ पाणिग्रहण करना कदापि उचित नहीं। चण्डने यह बात पिताके पास पेश की । अब राणा बड़ी मुश्किलमें पड़ गये । उन्होंने पुत्रको बहुत सम-झाया, परन्तु दृढ़प्रतिज्ञ चण्डका हृदय किसी तरह भी विचलित न हुआ । उन्होंने बारबार पितासे कहा "पिताजी ! मैं हाथ जोड़ कर कहता हूं कि मुझे इसके लिये आग्रह करें।"

राणा लक्ष इस बातसे बहुत ही नाराज हुए खुद ही उस कन्याके साथ विवाह करनेको राजी हो गये और चंड जिससे राज्यके उत्तराधिकारी न बन सके, इसके लिये उन्होंने कहा कि, इस रमणीसे जो पुत्र होगा वही मेवाड़का अधिपति होगा । दृढ़प्रतिज्ञ चण्डने इस बातको भी स्वीकार कर लिया।

यथासमयमें लक्षराणाके औरससे उस माड़वार-राजकन्याके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम रखा गया मुकुलजी । मुकुलने जब पाँचवें वर्षमें पैर रखा था, उस समय पुण्यक्षेत्र गयाधाममें मुसल-मानोंका संघर्ष हो रहा था। वृद्ध मेवाड़पतिने विधर्मियों-के हाथसे हिन्दुओंके मोक्षस्थान उद्धार करनेके लिये यात्रा की तैयारियां की। यात्रा करनेसे पहिले उन्होंने चण्डको बुलाया और अति नम्र भावसे कहा 'मैं जिस महाकार्यके लिये जा रहा हूं उसे पूरा कर शायद अब लौट न सकूंगा यदि न लौट सकूं तो मेरे मुकुलका क्या होगा ? उसे क्या दे जाऊं ?

वीरवर चण्डने धीर और गम्भीरतापूर्वक कहा "चितौरका राजसिंहासन !" इससे वृद्ध राणाको कुछ सन्तोष हुआ। परन्तु वीरचेता चण्डने यह विचार कर कि ; कहीं पिताको फिर असन्तोष न हो जाय, पिताके जानेसे पहिले ही मुकुलजीका राज्याभिषेककार्य सम्पन्न कर दिया। उन्होंने ही सबसे पहिले राजोपयोगी बलिप्रदान

कर नव राणाके चिरभक्त और अनुरक्त रहनेकी शपथ की तथा मेवाड़के सर्वप्रधान मन्त्रित्वपद ग्रहण किया। उस दिनसे चितोरेश्वर उनके साङ्केतिक भल्लचिन्हके बिना किसी भी सामन्तको भूमि नहीं देते थे। चण्डने पिताकी अनुपस्थितिमें अपने छोटे भाई मुकुलको बड़े यत्नसे रखा था। मुकुलके पैरमें तिनकाके चुभनेसे भी चंडका हृदय व्यथित होता था। विमाताकी सन्तानके प्रति ऐसा अनुराग, इतना प्यार और स्नेह राजपूत समाजमें कभी किसीने न देखा होगा।

इधर रणमल्लकी पुत्री मुकुलकी माताके मनका भाव दूसरे ही तरफ था। उन्होंने सोचा—मुकुल राजा हुआ तो क्या? वास्तविक राजक्षमता चंडहीके हाथमें है। चंड चाहे तो अभी मुकुलका सिंहासन छीन सकता है। इस प्रकार राजमाता होना न होना बराबर है। इस प्रकारकी व्यर्थ स्वार्थस्पृहाके वशवर्ती हो वे चण्डके दोषोंको ढूंढ़ने लगीं। परन्तु कोई भी दोष न मिलनेसे वे ऐसे ही उनकी निन्दा करने लगीं कि "मुकुल नाममात्रका राणा है, चंड ही वास्तवमें राणा है, चंडकी इच्छा ही ऐसी है कि, 'राणा' शब्द सिर्फ नाममात्रके ही लिये रहे।" चंडने सब सुन लिया, उन्होंने समझा कि, मूर्ख स्वार्थ पर मुकुलकी माताके लिए सब ही सम्भव है। चंड विचारने लगे, मैंने जो अपने स्वार्थको जलाञ्जली दे, राज्यकी श्रीवृद्धिके लिए जी-जानसे परिश्रम किया उसका क्या यही नतीजा हुआ?" उन्हें बहुत ही घृणा हुई। उन्होंने विमाताकी मीठी मीठी सुनाईं भी तथा शिशोदीय वंशका जिससे मङ्गल हो, इसका खयाल रखनेके लिये कह कर वे चितोर छोड़ कर मान्डू राज्यमें चले गये।

चण्डके चले जाने पर मुकुलके ननसारके लोग धीरे धीरे मरुराज्यको छोड़ कर चित्तोर आने लगे। पहिले मुकुलके मामा जोधराव, फिर उनके पिता रणमल्ल और अन्यान्य पुरजनोंने आ कर चित्तोर नगरको छा दिया। दुष्ट रणमल्ल अपने दौहित्र मुकुलको गोदमें ले कर राजसिंहासन पर बैठने लगे। मुकुलके अन्यत्र चले जाने पर भी रणमल्लके मस्तक पर राजछत्र सुशोभित रहता था। मुकुलके ननसारके लोगोंने धीरे धीरे चित्तोरके तमाम उच्चपद अधिकार कर लिए। इन बातोंको देख कर मुकुलकी वृद्ध धात्रीके हृदयमें बड़ी चोट पहुंची। धात्री क्रूरमति रणमल्लकी दुरभिसन्धि समझ गई थीं। आखिर उसने मुकुलकी मातासे कहा—"क्या तुम अपने पितृकुलके हाथ अपने ही बच्चेका पितृराज्य खोना चाहती हो?" पहिले तो राजमाताने इस बात पर विश्वास ही नहीं किया। परन्तु कुछ दिनोंमें उन्हें भी सब बातें मालूम पड़ गईं। एक दिन उन्होंने अत्यन्त व्यथित हो कर अपने पिता रणमल्लसे ही इस दुरभिसन्धिका कारण पूछा; तो उनके मुंहसे ऐसी निदारुण बात सुनी कि, जिससे उनका मस्तक घूमने लगा! उन्होंने सुना कि, "मुकुलके मारनेका भी जाल हो रहा है।" ऐसे घोर विपत्तिके समयमें समाचार आया कि. चण्डके द्वितीय सहोदर परमधार्मिक रघुदेवको भी पापी रणमल्लने गुप्त भावसे मरवा डाला है। राणी नाना दुश्चिन्ताओंमें पड़ गईं। उनको अब इस विपत्तिसे कौन बचावे? उनके हृदयकी निधि (मुकुल) को कौन बचावे? आज उन्हें चण्डकी मीठी भर्त्सना और उनकी भविष्यत् वाणीको याद आने लगी। अब चण्ड कहां है? चण्ड रहता तो उन्हें ऐसी विपत्तिमें नहीं पड़ना पड़ता। उन्होंने लज्जा-शरमको छोड़ कर गुप्त भावसे चण्डको अपने दुःखकी बात कहला भेजी और उन्हें आनेके लिए आह्वान किया।

चण्ड जब मान्डु राज्यमें गये थे, तब दो सौ भील अपने बालबच्चोंको छोड़ कर उनके साथ गये थे। राजमाताका पत्र पाते ही चण्डने उन लोगोंको चित्तोर भेज दिया। उन लोगोंने अपने बाल-बच्चोंसे मिलनेका बहाना कर चित्तोरमें प्रवेश किया। चण्डकी सलाहके अनुसार मुकुलकी माताने मुकुलको पार्श्ववर्ती ग्रामोंमें भोजन देनेके लिए भेज दिया। क्रमशः एक गाँवसे दूसरा गाँव होते हुए चित्तोरके बाहर भी आने—जाने लगे। उस समयमें मुकुलके साथ कुछ विश्वासी अनुचर और रक्षक रहते थे। चण्डने कहला दिया था कि, दिवालीके दिन मुकुल गोसुन्दनगरमें (जो चित्तोरसे ३॥ कोसकी दूरी पर है) हो रहे।

निर्दिष्ट दिन भी आ गया। गोसुन्दनगरमें सब चण्डके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे। निर्दिष्ट समयके व्यतीत हो

जाने पर लोग निराश होकर चित्तोरकी ओर चल दिये। वे सब चित्तोरी नामक स्थानमें पहुंचे ही थे कि इतनेमें घोड़ोंकी टापोंका शब्द सुनाई पड़ा और देखते देखते चालीस अश्वारोही उनके सामनेसे निकल गये। इनमें सबसे पहिले चण्ड थे। जब ये तोरणके द्वार पर पहुंचे तब द्वारपालोंने इनसे परिचय पूछा। चंडने उत्तरमें कहा- "हम लोग चित्तोर राजके अधोनस्थ सर्दार हैं। गोसुन्दके उत्सवमें महाराणाके साथ भेंट करने आये थे अब उन्हें प्रासादमें पहुंचानेके लिए जा रहे हैं।" इस पर द्वारपालोंने रास्ता छोड़ दिया। परन्तु थोड़ी देर पीछे द्वारपालोंकी आंखें खुल गईं, वे सब अश्वारोहियों पर आक्रमण करनेके लिए दौड़े। महावीर चंडने नङ्गी तलवार हाथमें लिए हुए जलदगम्भीर निनादपूर्वक शत्रुओं पर आक्रमण किया। परिचित रणनिर्घोष सुनतेही वे भील भी बाहरसे उन द्वारपालोंको मारने लगे। उस समयके भट्टिवंशीय प्रवीण सचिव भी चंडकी तीक्ष्णकृपाणके जरिये यमालयको पहुंचा दिये गये। उधर दुष्ट राणमल्ल भी अन्तःपुरमें एकप्रकारसे बन्दी हो हो गये, चण्डके अनुचरोंने जा कर उस पापीको भी यथेष्ट दण्ड दिया। रणमल्ल देखो।

पिताके मर जानेकी खबर सुनते हो जोधराव गुप्त भावसे चितोरसे भाग गये। उन्हें पकड़नेके लिए चण्डने मन्दर तक पीछा किया। बेचारा जोधराव मन्दर छोड़ कर हरवाशङ्कर नामके प्रबलपराक्रान्त राजपूतके पास गया और वहीं रहने लगा। चण्डने मन्दर पर कब्जा कर लिया उनके दोनों पुत्र कण्ठ और मुञ्जके दल सहित मन्दरमें आ जानेके बाद वे चितोर लौट आये।

महावीर चण्डने पिताके सामने जो प्रतिज्ञा की थो, प्राणान्तमें भो उसे न भूले। उन्होंने पुनः छोटे भाई मुकुलको चितोरके राजसिंहासनमें बिठाया। उनके आत्मत्याग और निःस्वार्थ परहितैषिताका वास्तविक परिचय पा कर क्या शत्रु और क्या मित्र सब हो उनके गुण गाने लगे।

चण्ड मन्दरराज्यके अधीश्वर हो कर वहीं रहने लगे। जोधराव भी किसी तरह भाण्डकवनमें माड़वाड़के कई एक स्वाधीन व्यक्तियोंकी कृपासे अत्यन्त कष्टसे गुजर कर रहे थे। परन्तु सब दिन किसीके भी समान नहीं बीतते। जोधरावकी भी तकदीरने जोर मारा बहुत अनुनय विनय करनेके बाद महाराणाने उन्हें मन्दरराज्य दे दिया। मेवाड़पतिने चितोरमें आ कर मिलनेके लिए चण्डके पास आदेश भेजा। चण्ड राणाके आदेशके अनुसार ज्येष्ठ पुत्रके साथ मन्दर छोड़ कर दो कोस पहुँचे ही थे कि,इतनेमें उन्होंने मन्दरमें अचानक उजाला देखा, इससे उनका मन कुछ विचलित तो हुआ पर वे लौटे नहीं। उनके ज्येष्ठपुत्र मुञ्ज मन्दरको लौट गये। वहाँ जा कर उनने सुना कि, उनके दोनों भाइयोंको जोधरावने मार डाला है और मन्दरके दुर्गके ऊपर जोधको विजय-पताका फहरा रही है। मुञ्जने अपने दोनों भाइयोंकी मृत्यु तथा सेनाको पराजय जान. वहांसे शीघ्र हो प्रस्थान किया; परन्तु जोधरावकी सेनाने उन्हें भी रास्तेमें मार डाला।

चण्ड जिस समय आरावल्लीके दुर्गमें थे उस समय यह शोचनीय सम्बाद उनके कानमें पड़ा। बहुत ही जल्दी मन्दरको रवाना हुए। विजयी जोधरावने उनके साथ मिल कर उन्हें महाराणाका अनुज्ञापत्र दिया और मन्दर व मेवाड़की सीमानिर्द्धारणके लिए अनुरोध किया। राजभक्त चण्ड राणाका आदेशपत्र पढ़ कर दुःसह पुत्रशोकको भूल गये और उनकी प्रतिहिंसा भी शान्त हो गई। उन्होंने अपने मनका भाव छिपा कर जोधरावसे ऐसा कहा कि—"जब तक पीतकुसुम आवनला दीखेगा तब तकके लिए यह राणाकी राज्यसीमा निर्दिष्ट रही।"

इस प्रकारसे मन्दरके अधीन समग्र गड़वार (गदवार) प्रदेश मेवाड़के अन्तर्गत हुआ। माड़वारका अधिकांश मेवाड़के अधीन होनेसे मेवाड़वासियोंको बहुत सन्तोष हुआ।

इसके बाद फिर चण्डका मन राजनैतिक कार्योंसे हट गया। जीवनका अवशिष्ट अंश उन्होंने परोपकार और धर्मचर्यामें बिताया था। अब भी राजस्थानके सब ही लोग उनकी विशेष भक्ति और श्रद्धा करते हैं।

चण्डक (सं० पु०) रक्तकरवीर, लाल कनेर।

चण्डकर (सं० पु०) सूर्य।

चण्डका (सं० स्त्री०) वचा, वच।

चण्डकौशिक (सं० पु०) १ ऋषिविशेष, एक मुनिका नाम। ये काक्षीवानके पुत्र थे। ये महातपस्वी और उदारचरित्रके थे। २ एक नाटक जिसमें हरिश्चन्द्र और विश्वामित्रकी कथा वर्णित है। ३ एक विषैला साँप जिसकी कथा जैन पुराणमें लिखी है कि इसने महावीरस्वामीका दर्शन कर डसना आदि छोड़ दिया था और यह समस्त दिन बिल में मुँह डाले पड़ा रहता था। चींटियोंसे नाना प्रकारके कष्ट पाने पर भी उनके दबनेके भयसे करवट तक न बदली।

चण्डघण्टा (सं० स्त्री०) चण्डिका, दुर्गा।

चण्डचुक्रा (सं० स्त्री०) तिन्तिड़ी, इमली।

चण्डता (सं० स्त्री०) चण्डस्य भावः चण्ड-तल्-टाप्। १ चण्डता, उग्रता, प्रबलता, घोरता। २ बल, प्रताप।

चण्डतुण्डक (सं० पु०) चंडस्तुण्डो मुखं यस्य, बहुव्री०, कप्। गरुड़के एक पुत्रका नाम। (भारत ५।१०० अ०)

चण्डत्व (सं० क्ली०) चंडस्य भावः चंड-त्व। उग्रता, प्रबलता।

चण्डदण्ड—काञ्चीपुरके एक पल्लवराज। ये कदम्बराज रविवर्माके हाथसे पराजित हुए थे।

चण्डदीधिति (सं० पु०) चण्डा तीक्ष्णा दीधितिर्यस्य, बहुव्री०। चण्डांशु, सूर्य।

चण्डनायिका (सं० स्त्री०) चण्डी कोपना नायिका, कर्मधा०, पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। १ चण्डी, दुर्गा।

"उग्रचण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका।
चण्डा चण्डवतीचैव चामुण्डा चण्डिका तथा॥" (दुर्गाध्यान)

२ अष्टनायिकाके अन्तर्गत भगवतीकी एक सखी। इनका वर्ण नीला और इन्हें सोलह हाथ हैं। बायें हाथ में कपाल, खेटक (ढाल), घण्टा, दर्पण, धनु, ध्वज, पाश और सुन्दर शक्ति हैं तथा दहिने हाथमें मुद्गर, शूल, वज्र, खड्ग, अङ्कुश, बाण, चक्र और शलाका हैं।

"चण्डनायिका नीलवर्णा षोडशभुजा।
कपालं खेटकं घण्टां दर्पणञ्च धनुर्ध्वजम्॥
पाशञ्च शोभनां शक्तिं वामहस्तेन बिभ्रतीं।
मुद्गरं शूलवज्रञ्च खड्गञ्च सत्वांकुशम्॥
शरं चक्रं शलाकाञ्च दक्षिणेन च बिभ्रतीम्।"

(देवीपुराणोक्त दुर्गोत्सवपद्धति)

चण्डपरशु—त्वरितादेवीके भक्त विश्वामित्र गोत्रके एक राजा। ये मार्कण्डके पुत्र तथा भीमरथके पिता थे।

(सह्याद्रिखं० १।२७।६६)

चण्डपाल—एक संस्कृत पंडित, यशोराजाके पुत्र, चंडसिंहके भाई और लुणिगके शिष्य थे। इन्होंने दमयन्तीकथाकी टीका प्रणयन की है।

चण्डबल (सं० पु०) वानरविशेष, एक तरहका नाम।

(भारत ३।२८६ अ०)

चण्डभंड—सुन्दरवनमें रहनेवाली जातिविशेष। ये पूर्वसमयमें नमक प्रस्तुत कर अपनी जीविका निर्वाह करते थे

चण्डभार्गव (सं० पु०) च्यवन वंशके एक ऋषि, जो महाराज जनमेजयके सर्पयज्ञके होता थे।

चण्डमहासेन (सं० पु०) एक प्रबल पराक्रान्त राजा। इनकी राजधानी उज्जैन नगर थी। महासेन देखो।

चण्डमारुतस्वामी—हरिदिनतिलक नामक धर्मशास्त्रके एक टीकाकार।

चण्डमुण्ड (सं० पु०) दो सुरोंके नाम, जो देवीके हाथोंसे मारे गये थे।

चण्डमुंडा (सं० स्त्री०) चंडोमुंडश्च वध्यत्वे नास्त्यस्याः चंड-मुंड-अच्-टाप्। चामुंडादेवी। चामुण्डा देखो।

चण्डमुंडी (सं० स्त्री०) महास्थानस्थित तान्त्रिकोंकी एक देवी।

"चण्डमुण्डी महास्थाने दक्षिणी परमेश्वरी।" (तन्त्रसार)

चण्डरव (सं० त्रि०) घोरनादयुक्त, जो जोरसे चिल्लाता हो।

चण्डरसा (सं० पु०) छन्दोभेद, एक वर्णवृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें एक नगण और एक यगण होता है। इसका दूसरा नाम चौवंसा, शशिवदना और पादाकुलक भी है।

चण्डरुद्रिका (सं० स्त्री०) चंडो रुद्रो वेद्यत्वे नास्त्यस्य चंड-रुद्र-ठन्। विद्याविशेष, एक प्रकारकी सिद्धि जो अष्टनायिकाओंके पूजनेसे प्राप्ति होती है। (तान्त्रिक)

चन्द्रवती (सं० स्त्री०) चंडचंडता विद्यतेऽस्याः चंड-मतुप् मस्य वः। १ दुर्गा। २ अष्टनायिकाओंके अन्तर्गत एक दुर्गाकी सखी। ये धूसर वर्णके हैं। इसका ध्यान—

"चण्डवती धूम्रवर्णा षोडशभुजाम्।"

इनके दूसरे दूसरे अङ्ग चण्डनायिकाके जैसे हैं।

(देवीपुराणोक्त दुर्गोत्सवप०)

चण्डविक्रम (सं० त्रि०) चण्डो विक्रमो यस्य, बहुव्री०। १ विक्रमशाली, पराक्रमी। (पु०) २ राजविशेष, एक राजाका नाम।

चण्डवृष्टिप्रयात (सं० पु०) वह दंडक छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें २७ अक्षर या स्वरवर्ण रहें जिनमेंसे ७, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १८, १६, २१, २२, २४, २५ और २७वाँ अक्षर गुरु तथा इन्हें छोड़ शेष वर्ण लघु हों। इसीका नाम चण्डवृष्टिप्रयात है।

चण्डवेग (सं० त्रि०) चण्डो वेगो यस्य, बहुव्री०। अत्यन्त वेगशाली, जिसकी गति बहुत तेज हो।

चण्डशक्ति (सं० पु०) चण्डा शक्तिरस्य, बहुव्री०। १ बलि-राजाका एक सैन्य। (हरिवंश २४ अ०)

(त्रि०) २ चण्डविक्रम, प्रतापी।

चण्डसिंह—प्राग्वट वंशके एक विख्यात कवि। ये यशो-राजके पुत्र और चंडपालके भाई हैं। इन्होंने चंडिका-चरित नामक महाकाव्यकी रचना की है। दभईके शिलालेखमें इनकी कीर्ति वर्णित है*।

चण्डहासा (सं० स्त्री०) गुडूची।

चण्डा (सं० स्त्री०) चण्ड टाप्। १ उग्रस्वभावकी स्त्री, कर्कशा नारी। २ अष्टनायिकाओंमेंसे एक। इनका वर्ण सफेद और हाथ सोलह हैं। शेष अङ्ग चंडनायिकाके सदृश हैं। इनका ध्यान—

"चण्डा शुक्लवर्णां षोडशभुजाम।" चण्डनायिका देखो।

३ जैनके एक शासनदेवताका नाम। ४ चोर नामक गन्धद्रव्य, पञ्चगुड़िया। ५ शतपुष्पी। ६ श्वेतदुर्वा, सफेद दूब। ७ कपिकच्छु, केवाँच, कौंछ। ८ सौंफ। ६ सोवा। १० एक प्राचीन नदीका नाम। ११ अजमोदा। १२ शङ्खपुष्प। १३ आखुकर्णी।

चण्डांशु (सं० पु०) चंडा अंशवो यस्य, बहुव्री०। सूर्य।

चण्डाख्य (सं० पु०) दारुहरिद्रा, (Coscinium Fenestratum) एक तरहका पीला काष्ठ, दारु हलदी।

चण्डात (सं० पु०) चंडमतति चंड-अत-अण्, उपपदस०। १ करवीर, कनेर। २ एक तरहकी सुगन्धित घास वा पौधा। ३ कदम्बिवृक्ष।

चण्डातक (सं० पु०-क्ली०) चडां कोपनामतति अत-ण्वुल्। स्त्रियोंकी चोली या कुरती।

* Ephigraphia Indica, Vol. I. p. 31.

चण्डाल (सं० पु०) चडि कोपे आलच्। (पतिचण्डिभ्यामालच्। उण् १।११६) यद्वा चंड विकटं अलं भूषणं यस्य, बहुव्री०, निपातने साधु। (उज्ज्वलदत्त) १ वर्णसङ्कर जातिविशेष, चांडाल, डोम। स्त्री—चंडालिन, चंडालिनी। संस्कृत पर्याय—प्लव, मातङ्ग, दिवाकीर्ति, जनङ्गम, निषाद, श्वपाक, अन्तेवासी, पुक्कस, जलङ्गम, निशाद, श्वपच, पुक्कश, पुक्कष, चांडाल और निष्क।

मनुके मतानुसार शूद्रके औरस और ब्राह्मणीके गर्भसे चण्डाल जातिकी उत्पत्ति है।

"शूद्रादायोगवः क्षत्ता चाण्डालश्चाधमो नृणाम्।
वैश्यराजन्यविप्रासु जायन्ते वर्णसङ्कराः॥" (मनु० १०।१२)

परशुराम-पद्धतिके मतसे धीवरके औरस और ब्राह्मण-कन्याके गर्भसे चण्डालका जन्म हुआ है।

"चण्डालो हड्डिपो कोल्लो डाम खल: सुवक्षथा।
पञ्चैते तीवराज्जाता: कन्यायां ब्राह्मणस्य वै।" (परशुराम)

ब्राह्मणोंके लिए इनका दिया हुआ दान, अन्न और इनकी स्त्रियोंसे गमन करना बिल्कुल निषिद्ध है। बिना जाने ऐसा करनेसे भी ब्राह्मण पतित हो जाता है और जान कर करनेसे चण्डालके समान हो जाता है।

"चण्डालान्त्यस्त्रियो गत्वा भुक्त्वा च प्रतिगृह्य च।
पतत्यज्ञानतो विप्रो ज्ञानात् साम्यन्तु गच्छति।" (मनु०)

शूलपाणि आदि प्राचीन स्मृतिसंग्राहकोंके मतसे "चंडालान्त्य" इत्यादि वचनके "विप्र" पद ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चारों वर्णोंका उपलक्षण है। उनके मतसे ब्राह्मण आदि चारों ही वर्णवाले जान कर वैसा काम करें तो पतित होते हैं। पतित शब्दमें विस्तृत विवरण देखना चाहिये। इनका छूआ हुआ पानी नहीं पीना चाहिये और न इनको छूनाही चाहिये। अपेय, अपाङ्क्तेय और अस्पृश्य शब्द देखो।

मनुने इनको बहुत ही छोटी जातिमें स्थान दिया है और इनके जीवन यापनके लिए बड़े कड़े नियमों-का विधान किया है। मनुसंहिताके मतसे इनका वास-स्थान ग्रामके बाहर है। ग्रामके भीतर इन लोगोंको नहीं रहने देना चाहिये। सोना और चाँदीके सिवा और कोई निकृष्ट धातुसे इनके भोजनका पात्र बनाया जाता है। ये लोग जिस पात्रमें भोजन करते हैं, उसे फिर माँजते नहीं, अर्थात् भूंठे बर्तनमें भोजन करनेसे भी इनका धर्मनष्ट

नहीं होता। ये लोग सुवर्ण और रौप्यके पात्रके सिवा और किसी धातुके पात्रमें भोजन करें तो उस पात्रको शुद्ध करके भी ब्राह्मण आदि उसे काममें नहीं ला सकते। कुत्ते, गधे आदिका पालन करना, मुर्दोंके कपड़े लेना, टूटे-फूटे तमलोंमें खाना, लोहेके गहने पहरना और हमेशा चलते फिरते रहना इन लोगोंका कर्तव्य कर्म है। धर्म-कर्मानुष्ठानके समयमें इनका दर्शन आदि व्यवहार निषिद्ध है। इन लोगोंका विवाह और लेन-देन समान जातियोंके साथ ही हुआ करता है। इनको खुद जा कर अन्न नहीं देना चाहिये बल्कि नौकरोंकी मार्फत अन्य पात्रमें रख कर देना चाहिये। रात्रिके समयमें ग्राम या नगरमें घूमना इनके लिए बिल्कुल निषिद्ध है। दिनमें राजाके आदेशसे विशेष कुछ चिह्न लगा कर खरीदने और बेचनेके लिए नगरमें जा सकते हैं। बान्धवहीन मृतव्यक्तिकी दाहक्रिया और राजाकी आज्ञासे वध्य व्यक्तिका प्राण-संहार करना, तथा उसके वस्त्र, शय्या और गहने आदि ग्रहण करना ही इनका कर्तव्यकर्म है। (मनु १०।५१-५६)
मनुस्मृतिमें चंडालका धर्म जिस प्रकारका मिलता है, वर्तमानमें उसमेंसे बहुतसे व्यवहार देखनेमें नहीं आते। उनके खाने पीनेके व्यवहारको देख कर तो यह अनुमान भी नहीं कर सकते कि, कभी उनमें मनु-निरूपित नियम थे। मनुके द्वारा कहा हुआ चांडाल धर्म श्मशान-वासी मुर्दाफरोंस जातिमें थोड़ा-बहुत मिलता है। इससे बहुतोंने मुर्दाफरोसोंको ही मनुवर्णित चंडाल निश्चित करना चाहा है।

ढाकावासी चंडालोंमें ऐसा प्रवाद है कि, "ये लोग पहिले ब्राह्मण थे, शूद्रोंके साथ एकत्र भोजन करनेके कारण इनकी ऐसी अवनति हुई है। ये यह भी कहते हैं कि—गयानिवासी गोवर्द्धन चंडाल हमारे पूर्वपुरुष थे। गया-सेही वे ढाकामें आये थे। हम लोग पहिले ब्राह्मणोंके दास थे, क्योंकि हम ब्राह्मणोंके श्राद्धादिके अनुकरणसे क्रिया कलापोंको करते आये हैं। गयावाल बङ्गालके चंडालोंका दिया हुआ दान नहीं लेते।" इसके अतिरिक्त और भी एक कहावत प्रसिद्ध है कि, रघुकुलके पुरोहित वशिष्ठदेवके पुत्र वामदेवने जब राजा दशरथको यज्ञीय कुम्भसे शान्तिजल दिया था, उस समय उन्होंने भ्रमवश कोई अन्याय कार्य किया था, इसलिए पितृ-शापसे उन्हें ऐसा चंडालत्व प्राप्त हुआ था।

बङ्गालके फरीदपुरकी तरफ ऐसा प्रवाद सुननेमें आता है कि पूर्वकालमें ये लोग उच्च हिन्दूसमाजमें गिने जाते थे। इनकी समाजमें ब्राह्मण आदि समस्त वर्णोंको स्थान मिलता था और ब्राह्मण आदि श्रेणियां भी विभक्त थीं। बादमें ढाकाके कुछ दुष्ट ब्राह्मणोंकी उत्तेजनासे ये लोग समाजसे पृथक् किये गये और अपने देशको छोड़ कर फरीदपुर, यशोर, बाखरगञ्ज आदि स्थानोंमें आ कर रहने लगे।

किसी किसीके मतसे बिहारका दुसाध जाति और पश्चिमकी भङ्गी आदि जाति भी चण्डाल जातिकी शाखा विशेष है; परन्तु इनमें परस्परके आचार-व्यवहार और रीतिनीति देखनेसे तो ऐसा नहीं मालूम होता कि, ये दोनों एक जाति हैं। भङ्गी और दुसाध देखो।

बङ्गदेशमें पहिले चण्डालोंका खूब ही प्रादुर्भाव था। भावलके जङ्गलमें अब भी चण्डालोंके बृहत् दुर्गका भग्नावशेष दिखाई देता है।

वर्द्धमान आदि कहीं कहींके चण्डाल अपनेको लोमश या नोमश ऋषिकी सन्तान बताते हैं और नमशूद्रके नामसे अपना परिचय भी देते हैं। इन नमशूद्र नाम सुन कर कोई कोई इनको शूद्रोंके नमस्य अनुमान करते हैं, परन्तु असलमें यह बात नहीं है नमन अर्थात् शूद्रसे अवनत होनेके कारण इनका नाम नमशूद्र हुआ है।

पूर्वबङ्गमें—चण्डालोंका काश्यप गोत्र और हलबा, घासो, काँधो, कड़ाल, बारी, बेडुया, पोद, बक्काल, सरालिया, अमरावादी, बावार और शणहोपा आदि श्रेणियाँ तथा मध्यबङ्गमें—धानो, जालिया, जिड़नो, काराल, नुनिया, सियालो आदि श्रेणियाँ पाई जाती हैं।

पश्चिमबङ्गमें—भरद्वाज, लोमश और शाण्डिल्य ये तीन गोत्र तथा चासी, हेलो, जेलो, केसरखलो, कोटाल, मजिला, नोलो, नुनिया, पानफूल, सरो आदि श्रेणी विभाग देखनेमें आते हैं।

बङ्गालके चण्डालोंमें ये उपाधियां पाई जाती हैं—खाँ, टेङ्करा, ढालो, दाड़क, दास, डुले नमधानी पाधवान वा प्रधान, पण्डित, परामानिक, पात्र, फलिया, बाघ,

विश्वास, भाला, मजुमदार, मण्डल, माँझी, मल्लारा, मिर्दा, मिस्त्री, राय, लस्कर, शुमारदार, मानुना, सिंह, शिउली, सेना हाजरा, हाथी, हाउईकार, हालदार, हाइत इत्यादि।

हालवा श्रेणी अपनी पूर्वप्रथाके अनुसार चलते हैं, इस लिए वे अन्य श्रेणियोंसे अपनेको श्रेष्ठ मानते हैं। वे कड़ालोंके सिवा दूसरी श्रेणियोंसे विवाहादि सम्बन्ध नहीं करते। पोद श्रेणी हुगली और जसर जिलेमें कुछ ज्यादा है, वे किसान, धोवर, कुम्हार, लाठीवाल वगेरहका काम करते हैं। ये अपनेको एक स्वतन्त्र ही जाति बतलाते हैं। इनमें हेलो वा हालिया, मरलिया, शरो और बाकार लोग खेती-बारी करते हैं; जेलो वा जालिया, समरावादो और नुनियारा लोग मछली पकड़ते हैं; शिउली लोग ताड़ और खजूरसे रस निकालते हैं तथा शनहोया लोग पानका रोजगार करते हैं। इनके सिवा उपरोक्त श्रेणियोंमेंसे कोई कोई फलमूल बेचने तथा कोतवाल, चौकीदार और दरवानीकका काम करते हैं।

चण्डालोंमें बाल्यविवाह प्रचलित है। पहले विधवा-विवाह भी हुआ करता था, किन्तु अब बन्द हो गया। डेढ़ वर्षसे बड़ी उम्रवालेकी मृत्यु होने पर ये लोग दश दिन तक पातक मानते हैं और ग्यारहवें दिन श्राद्ध-क्रिया करते हैं। पुत्र होने पर प्रसूति १० रोज अशुचि रहती है।

बङ्गालके चण्डालोंमें अधिकांश लोग वैष्णव हैं। चैत्र संक्रान्तिके दिन ये वास्तु-पूजा किया करते हैं मधावङ्गके जेलो चण्डाल वनसुरा नामके एक नदी-देवताकी पूजा करते हैं तथा सभी लोग श्रावण मासमें समारोहके साथ मनसादेवीकी पूजा किया करते हैं।

वर्णब्राह्मणगण चण्डालोंका पौरोहित्य किया करते हैं। चण्डालोंके लिए कोई अलग धोबी और नाई नहीं हैं वे खुद हो उन कामोंको करते हैं। ये अन्य समस्त जातियोंकी अपेक्षा हीन होने पर भी शौण्डिकों (कलवारों) के नहीं छूते। जिस आसन पर कलवार बैठे, उस आसन पर किसी तरह बैठने पर वे अपनेको अशुचि समझते हैं।

(त्रि०) २ दुरात्मा, क्रूर कर्मानुष्ठानकारी। जिस व्यक्तिके जरा भी दया या ममता न हो।

(पु०) ३ रक्तकरवीर, लाल कनेर। ४ तंडुलीय शाक।

चण्डालकन्द (सं० पु०) चण्डालप्रियः कन्दः, मध्यपदलो०। कन्दविशेष। इसका गुण—मधुर, कफ, पित्त और रक्त-दोषनाशक, विष और भूतदोष प्रभृतिके प्रशमकारी एवं रसायण है। चण्डालकन्दके पांच भेद हैं। यथा—१ एकपत्र, २ द्विपत्र, ३ त्रिपत्र, ४ चतुष्पत्र और ५ पञ्च-पत्र।

चण्डालता (सं० स्त्री०) चंडालस्य भावः चंडाल-तल्-टाप्। चण्डाल देखो।

चण्डालत्व (सं० क्ली०) चण्डाल देखो।

चण्डालपक्षी (सं० पु०) काक, कौवा।

चण्डालबाल (हिं० पु०) मस्तकका एक अशुभ बाल जो मोटा और कड़ा होता है।

चण्डालवल्लकी (सं० स्त्री०) चंडालस्य वल्लकी, ६-तत्। वीणा, एक तरहका तँबूरा या चिकारा।

चण्डालिका (सं० स्त्री०) चंडाली भक्षकत्वेन वादकत्वेन वास्त्यस्याः चंडाल-ठन्-टाप्। १ चंडालवीणा, तँबूरा। २ एक तरहका पेड़ जिसके पत्ते औषधके काम आते हैं। ३ दुर्गा। ४ करवीर, कनेर।

चण्डालिनी (सं० पु०) १ चंडाल वर्णकी स्त्री। २ दुष्टा स्त्री, कर्कशा औरत। ३ एक तरहका दोहा जो दूषित माना जाता है।

चण्डाली (सं० स्त्री०) शिवलिङ्गिनी, एक तरहकी लता।

चण्डालीय (सं० त्रि०) चंडाल बाहुलकात् ईय। चंडाल सम्बन्धीय।

चण्डाशोक (सं० पु०) बौद्धप्रतिपालक एक राजाका नाम। इनका दूसरा नाम कामाशोक था।

चण्डि (सं० स्त्री०) चण्डि कोपे इन्। चंडी, दुर्गा।

चण्डिकघण्ट (सं० पु०) चंडस्तीक्ष्णस्वनोऽस्त्यस्याः चंड-ठन् चंडिका तीक्ष्णस्वना घण्टा यस्य, बहुव्री०। शिव, महादेव।

"नमश्चण्डिकघण्टाय घण्टाय घंटघाण्टिने।" (भारत १३।१८६ अ०)

चण्डिका (सं० स्त्री०) चंडी स्वार्थे कन् टाप् पूर्व ह्रस्वश्च। १ दुर्गा।

"इत्युक्ता सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा" (मार्कण्डेय चण्डी)

अमरकण्टकमें यह भगवती पीठशक्तिरूपसे प्रसिद्ध हैं।

"कुरुजाङ्गले प्रचण्डा तु चण्डिकामरकण्टके" (देवीभा० ७।३०।७३)

२ गायत्री देवी।

"चण्डिका चटला चित्रा चित्रमाल्यविभूषिता।"

(देवीभा० १२।६।४७) चण्डी देखो।

३ अतसी, तीसी।

चण्डी (सं० स्त्री०) चण्डि-ङीष्। १ दुर्गा। (तिथितत्त्व) २ हिंसा, खून पीनेवाली। ३ अति कोपना स्त्री, गुस्सावर औरत। (रघुवंश १।५) ४ छन्दोविशेष। जिस समवृत्तके प्रत्येक चरणमें १३ अक्षर आते या जिसको स्वरवर्णमें निवद्ध पाते और नवम, एकादश तथा द्वादश अक्षर गुरु लगाते और शेष अक्षर लघु ठहराते, उसीका नाम चण्डी बतलाते हैं। (वृत्तरत्नाकर)

५ मार्कण्डेय पुराणान्तर्गतदेवीमाहात्म्यप्रकाशक स्तव-विशेष। इसको देवीमाहात्म्य भी कहते हैं।

चण्डीपाठ करनेका नियम—प्रथम अर्गल, कीलक और चण्डीकवच पाठ करके फिर चण्डी पाठ करना पड़ता है। अर्गलसे पापनाश, कीलकसे चण्डीपाठकी फलोपयोगिता और कवचपाठसे सब विघ्न नाश होते हैं। (वाराहीतन्त्र) कोई स्तवपाठ करनेमें उसके प्रथम एक प्रणव और उसके अन्तमें और एक प्रणव लगाना पड़ता है। इसी नियमानुसार चण्डीके पहले और पीछे दो प्रणव योग करके पाठ करना चाहिये। ऐसा न करनेसे चण्डीपाठ निष्फल हो जाता है। पाठकालको पवित्र और एकान्त चित्त रखना पड़ता है। उस समय मन ही मन दूसरे किसी कार्यकी चिन्ता न करनी चाहिये। किसी आधार पर चण्डीकी पोथी रख करके पढ़नेका नियम है। हाथमें ले करके पाठ करनेसे कोई फल नहीं मिलता। अपना मूर्ख वा अब्राह्मणका लिखा पुस्तक देख करके पाठ करना निषिद्ध है। पाठके पूर्वको ऋषि छन्दादि न्यास करना पड़ता है। एक अध्याय पूरा होने पर विराम करना चाहिये। अध्यायके मध्यमें पढ़ते पढ़ते कभी भी नहीं ठहरते। यदि किसी कारणसे अध्यायके बीचमें विरत होना पड़े, तो उसी अध्यायको पुनर्वार प्रथमसे पढ़ना चाहिये। (मत्स्यसूक्त) ब्राह्मण भिन्न अपर पाठकके मुखसे कोई स्तवादि सुनने पर नरक होता है। पाठकको सर्वप्रथम देव और ब्राह्मणकी पूजा करके पोथीका ग्रन्थि शिथिल करना चाहिये। सूत्रको खोल करके बांध देते हैं, खुला नहीं रखते। विस्पष्ट, अद्भुत, शान्त, कलस्वर और रसभावयुक्त पाठ करना होता है। पढ़नेके समय वर्णोच्चारण अति स्पष्टरूपसे किया जाता है। जो स्वयं सकल ग्रन्थका अर्थ समझता और जिसका पाठ श्रवणमात्रसे दूसरा अनायास अर्थको समझ सकता, पाठका उपयुक्त अधिकारी ठहरता है। ऐसे सकल गुणसम्पन्न पाठकको व्यास कहा जाता है। पाठकालको यथानियम सातों स्वरोंका समावेश रहना आवश्यक है। फिर समस्त रस भी दिखलाना पड़ता है।

चण्डीपाठका फल—प्रथमतः सङ्कल्प पूजा और अङ्गमें मन्त्रन्यास करके चण्डीपाठ, फिर बलिप्रदान करनेसे सिद्धि होती है। उपसर्ग शान्तिके लिये त्रिरावृत्त, ग्रह-कोप शान्तिके लिये पञ्चावृत्त, महाभय उपस्थित होने पर सप्तावृत्त, शान्ति तथा वाजपेय फललाभ कामनाको नवा-वृत्त राजवशीकरण वा सम्पदप्राप्तिके अभिलाषसे एका-दशवार, शत्रुनाश वा अभिलाष पूरणकामनासे द्वादशवार, स्त्री वा रिपुवशीकरण कामनासे चतुर्दश वार, सौख्य वा श्रीकामनासे पञ्चदशवार, पुत्र पौत्र, धन तथा धान्य कामनासे षोड़श वार, राजभय निवारण एवं अराति-दल उच्चाटनको सप्तदश वार वा अष्टादश वार, महाव्रण विनाशके लिये विंशतवार और बन्धनमुक्ति कामनामें पञ्चविंशति वार चण्डीपाठ करनेका विधान है। भीषण सङ्कट, दुश्चिकित्स्यरोग, जातिध्वंस, कुलोच्छेद, आयु-क्षय, शत्रुवृद्धि, रोगवृद्धि, धननाश तथा क्षय आदि सकल उत्पात अथवा अतिपातककी शान्तिके लिये शतावृत्त चण्डीपाठ करना पड़ता है। शतावृत्त चण्डीपाठ करनेसे समस्त अशुभ विनाश और राज्यवृद्धि तथा श्रीवृद्धि होती है। एक सौ आठ वार चण्डीपाठ करनेसे मनमें जो सोचते सिद्ध हो जाता और पाठक शताश्वमेध यज्ञका फल पाता है। सहस्रावृत्त चण्डीपाठसे लक्ष्मी स्थिर हो सर्वदा विराज करती, इह जन्ममें बहुविध सुख और परममें मुक्तिपद मिलता है। जैसे यज्ञोंमें अश्व-

मेध और देवगणमें हरिकी भांति समस्त स्तवोंमें सप्तशती सर्वप्रधान है। (मत्स्यसूक्त)

देवीमाहात्म्य चण्डी भारतवर्षीय आस्तिकोंमें बहुत ही आदरणीय है। अति प्राचीनकालसे भारतीयोंमें इसकी पाठप्रणाली चलती आ रही है। कालक्रम और बहु ग्रन्थोंके भिन्न मतसे चंडीपाठ विधान सम्बन्धमें मतामत पड़ गया है। टीकाकार वा उपासक-सम्प्रदायने इसका पाठ स्थिर करनेमें अनेक चेष्टाएं की हैं। परन्तु इनमें भी ऐक्यमत लक्षित नहीं होता। देवीमाहात्म्य चंडीकी अनेक टीकाएं हैं, उनमें कई एक प्रचलित और दूसरी अप्रचलित हो गयी हैं।

चण्डीटीका देखो।

तन्त्रमें चंडी पाठके नियमप्रस्ताव पर लिखित हुआ है—

"सकामैः सम्पुटो जाप्यो निष्कामैः सम्पुटं विना।
शतमादौ शतञ्चान्ते सम्पुटोऽयमुदाहृतः॥"

इस वचनके अनुसार सकाम व्यक्तिके चंडी पाठ पर दो मत हो सकते हैं। यथा—सकाम व्यक्तिको नवाक्षर प्रभृति चण्डीमन्त्रसे पुटित करके सप्तशतीस्तव पाठ अथवा सप्तशती द्वारा पुटित करके नवाक्षर मन्त्र जपना चाहिये।

चंडीटीकाकार भास्कररायके मतमें सप्तशती स्तवसे पुटित करके मूलमन्त्र जप करना उचित है। सर्व प्रथम ऋष्यादि न्यास करके चरित्रत्रय पाठ, उसके पीछे संकल्पित संख्यानुसार नवाक्षर मन्त्र जप तथा पुनर्वार चंडी पाठ फिर अष्टोत्तर शतवार नवाक्षर मन्त्र जप करके आत्मसमर्पण करना चाहिये। इस नियमसे चंडी पाठ करने पर मनोभीष्ट पूर्ण होता है। (भास्कररायकृत गुप्तवती।) एतद्भिन्न पूर्वप्रदर्शित वचनके अनुसार दूसरे जो जो मत उद्भावित हुए हैं, टीकाकारने उन्हें शास्त्र और युक्तिविरुद्ध बतला करके खण्डन किया है।

भास्कररायकी गुप्तवतीटीका देखो।

चण्डीका अपर नाम सप्तशतीस्तव है। इसी नामानुसार आपाततः समझ पड़ता कि उसमें सात सौ श्लोक हैं। किन्तु चण्डीकी श्लोकसंख्या गणना करनेसे छह सौसे भी न्यून श्लोक निकलते हैं। इसी कारण कोई कोई मीमांसक कवच, कीलक, अर्गलास्तुति और रहस्यत्रयके योगसे चण्डीके सप्तशतीत्व व्यवहारकी रक्षा किया करते हैं। किन्तु वह युक्तिसङ्गत नहीं है। चण्डीके साथ कवच प्रभृतिका योग करनेसे श्लोकसंख्या सात सौसे बहुत अधिक आती है। विशेषतः "जपेत् सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा कवचमादितः" चण्डीकवचके वाक्यानुसार कवच भिन्न ही उसको सप्तशती जैसा मानना पड़ता है। गुप्तवतीके मतमें मालास्वरूप चण्डीमन्त्रको होमाङ्ग अथवा सम्पुटित करनेके लिये सात सौ भागोंमें विभक्त करते और इसीसे उसको सप्तशती कहते हैं। वाराहीतन्त्र चण्डीको कलिकालमें अतिशय प्रशस्त बतलाता है। स्तवपाठके साधारण नियमानुसार सर्वप्रथम ऋषिछन्द और देवताका उल्लेख किया जाता है। मार्कण्डेयपुराणके ८१ अध्यायसे ९३ अध्याय पर्यन्त, अर्थात् "सावर्णिः सूर्यतनय" इत्यादिसे "सावर्णिर्भविता मनुः" तक चण्डी कहलाती है। यह तीन भागोंमें विभक्त है—प्रथम चरित, मध्यम चरित और उत्तर चरित। चण्डीका प्रथम अध्याय वा मधुकैटभवध प्रथम चरित, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ अध्याय मध्यम चरित और ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२ एवं १३ अध्यायको उत्तर चरित कहते हैं।

चण्डी प्रथम चरितके ऋषि ब्रह्मा, देवता महाकाली, छन्द गायत्री, शक्ति नन्दा, वाग्वीज, अग्नितत्त्व और विनियोग वा पाठका उद्देश्य धर्म हैं। (डामर) प्रथम चरितके पाठमें देवीकी तामसिक मूर्तिका ध्यान करना पड़ता है—

"दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया॥
स्फुरद्दशनदंष्ट्राढ्या भीमरूपा भयङ्करी।
रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियाम्॥
खड्गबाणगदाशूलचक्रशङ्खभुशुण्डिभृत्।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ।
मधुकैटभयोर्नाशे ध्यायेषा तामसी शिवा॥"

मध्यम चरितके ऋषि विष्णु, देवता महालक्ष्मी, छन्द उष्णिक्, शक्ति शाकम्भरी, दुर्गा वीज, वायुतत्त्व और पाठका उद्देश्य मोक्षलाभ है। (डामर) मध्यम चरितके पाठमें देवीकी राजसिक मूर्ति महालक्ष्मीका ध्यान करते हैं—

"श्वेताननां नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला।
रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा।

चित्रानुलेपना कान्ता कुन्दशोभाग्यशालिनी ।
अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा रणे ।
आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ति दक्षिणाधः करक्रमात् ।
अक्षमालाञ्च मूषलं वाणाशिकुलिशं गदाम् ।
चक्रं त्रिशूलं परशुं शंखघण्टा च पाशकम् ।
शक्तिदण्डं चाम चापं पानपात्रं कमण्डलुम् ।
अलङ्कृतभुजा एभिरायुधैः परमेश्वरी ।
अत्र्या स्तुतिकालाग्नी महिषासुरमर्दिनी ।
इत्य षा राजसी मूर्तिः सर्वदेवमयी मता ।
यां ध्यात्वा मानवो नित्यं लभतेप्सितमात्मनः ॥”

उत्तर चरितके ऋषि रुद्र, देवता सरस्वती, छन्द त्रिष्टुप्, शक्ति भीमा, काम वीज, सूर्य तत्त्व और पाठका उद्देश्य कामनासिद्धि है। (डामर)

उत्तर चरितके पाठमें देवीकी सात्विक मूर्ति सरस्वती-का ध्यान किया जाता है—

“गौरीदेहात् समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया ।
साक्षात् सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिवर्हिणी ।
दधौ चाष्टभुजा वाणं मुषलं शूलचक्रकम् ।
शंखघण्टालक्ष्मैव कार्मुकञ्च तथापरम् ।
ध्येया सा स्तुतिकालादौ वधे शुम्भनिशुम्भयोः ।” (कात्यायनीतन्त्र)

डामरतन्त्रमें लिखा है ‘क्लीं चण्डिकायै” मन्त्रसे षड्ङ्गन्यास करना चाहिये। वागवीज ऐं, दुर्गावीज ह्रीं और कामवीज क्लीं है।

मन्त्रादि सिद्ध करनेमें मन्त्रके पुरश्चरणकी भांति चण्डीस्तवके भी पुरश्चरण करनेका विधान है। मरीचि-कल्पके मतमें कृष्णाष्टमीसे आरम्भ करके कृष्णचतु-र्दशी पर्यन्त उत्तरोत्तर एक वृद्धि करके पुटित चण्डीपाठ करना चाहिये। इसके पीछे प्रति श्लोकमें पायसहोम करते हैं। रात्रिसूक्त और देवीसूक्त पुटित चण्डीपाठ करना पड़ता है। होमके पीछे पुनर्वार चण्डीपाठ और सर्वप्रथम पूजा करते हैं। (मरीचिकल्प)

किसी किसी पंडितके मतमें ‘विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीम्’ इत्यादि स्तवको रात्रिसूक्त और “नमो देव्यै महादेव्यै” इत्यादि स्तवको देवीसूक्त कहते हैं। गुप्तवतीटीका-कार इसको नहीं मानते। उनके मतमें रात्रिसूक्त और देवीसूक्त वैदिक मन्त्र है। ऋग्वेदीय १०म मंडलके १२५ सूक्तको देवीसूक्त और १०म मंडलके १२७ सूक्तको रात्रिसूक्त कहते हैं। चंडीपाठमें यह दोनों वैदिक सूक्त ही पाठ करना उचित है। आजकल भी यही मत आदरणीय है। फिर किसी किसी तन्त्रके मतानुसार ‘विश्वेश्वर्यादि सूक्त देवीको तुष्टिकर, महिषान्तकरीसूक्त सर्वसिद्धिप्रद, ‘देव्या यया’ दि तथा ‘देवि! प्रपन्नार्तिहरे!’ इत्यादि सूक्त दिव्य, नारायणीस्तुतिसूक्त देवीको सन्तोष-कर और ‘नमो देव्यादि’ सूक्त सर्वकामफलप्रद जैसा उक्त हुआ है। (गुप्तवतीटीका)

काम्यप्रयोग पर एकावृत्त प्रभृति चंडीपाठमें संकल्प, पूजा, अङ्गमें मन्त्र-न्यास करके वलिप्रदान करना पड़ता है। यह वलि ब्राह्मणादि भेदसे भिन्न भिन्न होता है।

कालिकापुराण और वलि देखो।

जिसके पक्षमें ऐसे वलिका विधान है, वह यदि वैसा देनेमें असमर्थ हो तो कुष्माण्ड, इक्षुदण्ड, मद्य और आसव प्रदान करना चाहिये। इसके प्रदानसे भी छाग वलिकी भांति १५ वत्सर पर्यन्त तृप्ति हुआ करती है। (कालिकापुराण) गुप्तवती-टीकाकार बतलाते कि वास्तविक ब्राह्मणके पक्षमें छाग वलिदान वा मद्य तथा आसव दान उचित नहीं। उनको कुष्माण्ड तथा इक्षुदण्ड ही वलि देना चाहिये। (गुप्तवती)

हरगौरीतन्त्रके मतानुसार सकल कामनाओंमें चंडी-का सभी अंश पाठ करना नहीं पड़ता। कामना विशेष-में चण्डीका कुछ अंश पाठ करनेसे भी काम चल सकता है। धन वा शोभा और पुत्र कामनामें सृष्टि क्रमसे शक्रादि माहात्म्यसे आरम्भ करके शुम्भदैत्यवध पर्यन्त पढ़ना चाहिये। आदिसे पाठ आरम्भ और उसके पीछे समापन किया जाता है। इसी प्रकार शान्ति प्रभृति कामनाएं रहनेसे स्थितिक्रम पर “सावर्णिः सूर्यतनयः” से “सावर्णिर्भवितामनुः” पर्यन्त और सङ्कटमें अन्तसे आरम्भ तथा उसके पीछे आदिसे समापन करते हैं।

(हरगौरीतन्त्र)

केरलवासियोंमें वेदपाठके दो मत हैं। बहुतोंके मता-नुसार प्रतिदिन एक एक चरित्र पढ़ करके तीन दिनमें चण्डीपाठ समापन अर्थात् तीन दिन एकावृत्ति चण्डी-पाठ किया जाता है। फिर कोई कोई कहा करते कि प्रथम दिन १ अध्याय, द्वितीय दिन २ अध्याय, तृतीय दिन १ अध्याय, चतुर्थ दिन ४ अध्याय, पञ्चम दिन २

अध्याय, षष्ठ दिन १ अध्याय और सप्तम दिनको २ अध्याय पढ़ते हैं। इसी प्रकार सात दिन एकावृत्ति चण्डीपाठ करना चाहिये।

गुप्तवतीटीकाकार बतलाते हैं, कि केरलवासियोंके उस मतका कोई प्रमाण नहीं मिलता। यदि किसी प्रामाणिक तन्त्रमें वैसा प्रमाण निकले, तो असमर्थके पक्षमें हो कहा जैसा ठहराना पड़ेगा। (गुप्तवती)

इच्छा होने पर स्वयं चण्डीपाठ न करके ब्राह्मण द्वारा भी उसको करा सकते हैं। किन्तु ब्राह्मणसे चण्डीपाठ करानेसे यथानियम दक्षिणा देनी पड़ती है। शतावृत्त चण्डीपाठमें पञ्चस्वर्ण या पच अशर्फी, पञ्चावृत्तिमें ३ स्वर्ण, पञ्चावृत्तिमें १ स्वर्ण, त्रिरावृत्तिमें अर्धस्वर्ण और एकावृत्तिमें चौथाई स्वर्ण दक्षिणा लगती है। असमर्थके लिये यथाशक्ति दक्षिणा देनेसे भी काम निकल जाता है। (गुप्तवती)

विधानपारिजातके मतमें अध्यायके अन्तमें इति वा वध शब्द निकालना न चाहिये। पाठ देखो।

होमाङ्ग वा पुटित करनेके लिये चण्डीको सात सौ भाग दिया जाता है। उसके प्रत्येक अंशको मन्त्र जैसा उल्लेख कर सकते हैं। कात्यायनी और वाराही प्रभृति तन्त्रमें चण्डीको विभाग-प्रणाली लिखी है। गुप्तवती-टीकाकारने उसका संग्रह करके जैसा लिखा, यहाँ वही बतलाया गया है। चंडीको सात सौ विभागों वा मन्त्रोंमें बांटनेके लिये किसी स्थल पर एक श्लोक मन्त्र-जैसा रखते, कहीं श्लोकार्ध, श्लोकका त्रिपाद, पूनरुक्त वा राजोवाच, मार्कण्डेय उवाच प्रभृतिको एक एक मन्त्र मानना पड़ता है। एक श्लोक १ मन्त्र श्लोकात्मक, अर्धश्लोकमन्त्र अर्ध-श्लोकात्मक, त्रिपात् मन्त्रको त्रिपात् और राजोवाच प्रभृति मन्त्रको उवाचाङ्कित मन्त्र कहते हैं। (गुप्तवती)

चंडीके प्रथम अध्याय वा प्रथम चरितमें १०४ मन्त्र हैं। इनमें उवाचाङ्कित मन्त्र १४, अर्धश्लोकात्मक २४ और श्लोकात्मक मंत्र ६६ हैं। सर्वप्रथम मार्कंडेय उवाच १ मंत्र, 'सावर्णिः सूर्यतनय' से 'तस्मिन् मुनिवराश्रमे' पर्यन्त १० श्लोकात्मक, 'सोऽचिन्तयत्' इत्यादि अर्ध-श्लोकात्मक १, 'मत्पूर्वैः पालित पूर्व' से 'प्रश्रयावनतो नृपम्' पर्यन्त श्लोकात्मक ७, 'वैश्य उवाच' १, 'समाधिर्नाम वैश्योऽहम्' से 'दाराणाञ्चात्र संस्थितः' पर्यन्त श्लोकात्मक ३, 'किन्तु तेषां गृहे क्षेमं' और 'कथन्त किन्नु सद्वृत्ता' अर्धश्लोकात्मक २, राजोवाच १, 'यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः' और 'तेषु किं भवतः स्नेह' अर्धश्लोकात्मक २, वैश्य उवाच १, 'एवमेतद् यथा प्राह' से 'विगुणेष्वपि बन्धुषु' पर्यंत श्लोकात्मक ३, 'तेषां कृते मे निश्वासो' तथा 'करोमि किं यन्नमनो' अर्धश्लोकात्मक २ मार्कंडेय उवाच १, 'ततस्तौ सहितौ विप्र' और 'समाधिर्नाम वैश्योऽसौ' अर्ध-श्लोकात्मक २, 'कृत्वातु तौ यथा न्यायम्' श्लोकात्मक १, राजोवाच १, 'भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकम्' तथा 'दुःखाय यन्मे मनसः' अर्धश्लोकात्मक २, 'ममत्वं मम राजस्य' से 'विवेकान्धस्य मूढ़ता' पर्यन्त श्लोकात्मक ४, ऋषिरुवाच १, 'ज्ञानमस्ति समस्तस्य' से 'मैव सर्वेश्वरेश्वरी' तक श्लोकात्मक १०, 'साविद्या परमा मुक्तेः' और 'संसार बन्धहेतुश्च' अर्धश्लोकात्मक २, राजोवाच १, 'भगवन् काहि सा देवी' श्लोकात्मक १, 'यत्स्वभावाच सा देवी' और 'तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि' अर्धश्लोकात्मक २, ऋषिरुवाच १, 'नित्यैव सा जगन्मूर्ति' तथा 'तथापि तत्समुत्पत्ति' अर्धश्लोकात्मक २, 'देवानां कार्यसिध्यर्थं'से 'अतुलां तेजसः प्रभुः' पर्यन्त ६, ब्रह्मोवाच १, 'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा' से 'असुरौ मधुकैटभौ' पर्यन्त श्लोकात्मक १३, प्रबोधञ्च जगत्स्वामी' तथा 'बोधश्च क्रियतामस्य' अर्धश्लोकात्मक २, ऋषिरुवाच १, 'एवं स्तुता तदा देवी'से 'बाहुप्रहरणो विभुः' पर्यन्त श्लोकात्मक ५, 'तावप्यतिबलोन्मत्तौ' 'उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तः भवतीमद्य मे तुष्टौ' और 'किमन्य न वरेणात्र' अर्धश्लोकात्मक ४, भगवानुवाच तथा ऋषिरुवाच २, 'वञ्चिताभ्यामिति' श्लोकात्मक १, 'आवां जहि' अर्धश्लोकात्मक १, ऋषिरुवाच' १ और 'तथेत्युक्त्वा' से 'भूयः शृणु वदामि ते' पर्यन्त श्लोकात्मक मंत्र २ हैं। (गुप्तवती) अतएव प्रथम चरितमें सब मिला करके मंत्र-संख्या १०४ है।

मध्यम चरितको मंत्रसंख्या सर्वसमेत १५५ है। इसमें उवाचाङ्कित ८, अर्धश्लोकात्मक ३ और श्लोकात्मक १४४ मंत्र हैं। द्वितीय अध्यायमें ऋषिरुवाच १ और 'देवासुरमभूद् युद्धम्'से'पुष्पवृष्टि मुचो दिवि' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ६८ हैं। तृतीय अध्यायमें ऋषिरुवाच, देव्यु-

वाच तथा ऋषिरुवाच ३ और 'निहन्यमानं तत्सैन्य' से 'ननृतुश्चाप्सरोगणाः' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ४१ हैं। चतुर्थ अध्यायमें प्रथम ऋषिरुवाच १, 'शक्रादयः सुरगणाः' से 'तैरस्मान् रक्ष सर्वतः' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र २६, ऋषिरुवाच १, 'एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः' से 'समस्तान् प्रणतान् सुरान्' पर्यन्त श्लोकात्मक २, देव्युवाच १, 'व्रियतां त्रिदशाः सर्वे' अर्धश्लोकात्मक १, देवा ऊचुः १, 'भगवत्या कृतं सर्वं' से 'धनदारादिसम्पदां' तक श्लोकात्मक ३, 'वृद्धयेऽस्मत् प्रसन्ना त्वं' अर्धश्लोकात्मक १, ऋषिरुवाच १ और 'इति प्रसादिता देवैः' से 'यथावत् कथयामि ते' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ४ हैं। द्वितीय अध्यायमें मन्त्रसंख्या ६८, तृतीयमें ४४ और चतुर्थ अध्यायमें ४२ हैं। अतएव मध्यम चरितकी मन्त्रसंख्या १५५ है।

(गुप्तवती)

तृतीय चरित वा उत्तर चरितमें मन्त्रसंख्या सब मिला करके ४४१ है। उसमें श्लोकात्मक ३२७, अर्धश्लोकात्मक १२, त्रिपात् ६६, उवाचाङ्कित ३४ और पुनरुक्त २ हैं। पञ्चम अध्यायमें ऋषिरुवाच १, 'पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यां' से 'विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः' पर्यन्त श्लोकात्मक ६, देवा ऊचुः १, 'नमोदेव्यै' से 'देव्यै कृत्यै नमोनमः' पर्यन्त श्लोकात्मक ५, 'या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता' से 'या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः' पर्यन्त २१ श्लोकोंके प्रत्येकमें तीन तीन रखनेसे ३६ होते हैं। इसके प्रथमार्ध तथा नमस्तस्यै' पर्यन्त १, 'नमस्तस्यै' २ और 'नमस्तस्यै नमोनमः' ३य है। इसी प्रकारसे ३ भागोंमें विभक्त करना पड़ता है। (गुप्तवती) इनको त्रिपात् मन्त्र कहा जाता है। 'इन्द्रियाणामधिष्ठात्री' श्लोकात्मक १, चितिरूपेण या 'कृत्स्न' इत्यादि श्लोकको तीन भागोंमें बांटनेसे त्रिपात् मन्त्र ३, 'स्तुताः सुरैः पूर्व' से 'भक्तिविनम्रमूर्तिभिः' पर्यन्त श्लोकात्मक २, ऋषिरुवाच १, 'एवं स्तवादियुक्तानां' से 'त्वया कस्मान्न गृह्यते' पर्यन्त श्लोकात्मक १७, ऋषिरुवाच १, 'निशम्येति वचः शुम्भः' से 'श्लक्ष्णं मधुरया गिरा' पर्यन्त श्लोकात्मक ३, दूत उवाच १, 'देवि दैत्येश्वरः शुम्भः' से 'मत्परिग्रहतां व्रज' पर्यन्त श्लोकात्मक ८, ऋषिरुवाच १, 'इत्युक्ता सा तदा देवी' श्लोकात्मक १, देव्युवाच १, 'सत्यमुक्तं त्वयानात्र' से 'पाणिं गृह्णातु मे लघु' पर्यन्त श्लोकात्मक ४, दूत उवाच १, 'अवलिप्तासि मैवं त्वं' से "मा गमिष्यसि" पर्यन्त श्लोकात्मक ४, देव्युवाच १ और 'एवमेतद्बली शुम्भः' से 'स च युक्तं करोतु यत्' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ८ हैं।

षष्ठ अध्यायमें ऋषिरुवाच १, 'इत्याकर्ण्य वचो देव्याः' से 'यक्षो गन्धर्व एव वा' पर्यन्त श्लोकात्मक ४, ऋषिरुवाच १, 'तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं' से 'केशाकर्षणविह्वलां' श्लोकात्मक ३, देव्युवाच १, 'दैत्येश्वरेण प्रहितः' श्लोकात्मक १, ऋषिरुवाच १ और 'इत्युक्तः सोऽभ्यधावत् तां' से 'गृहीत्वा तामथाम्बिकां' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र २ हैं।

सप्तम अध्यायमें ऋषिरुवाच १, 'आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याः' से 'निशुम्भञ्च हनिष्यसि' पर्यन्त श्लोकात्मक २३, ऋषिरुवाच १ और 'तावानीतौ ततो दृष्ट्वा' से 'ख्याता देवि भविष्यसि' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र २ हैं।

अष्टम अध्यायमें—ऋषिरुवाच १, 'चंडे च निहते दैत्ये' से 'शूलेनाभिजघान तं' पर्यन्त श्लोकात्मक ५५, 'मुखेन काली जगृहे' अर्धश्लोकात्मक १ और 'ततोऽसावाजघान' से 'ननर्तासृङ्मदोद्धताः' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ६ हैं।

नवम अध्यायमें—राजोवाच १, 'विचित्रमिदमाख्यातं' से 'निशुम्भश्चातिकोपनः' पर्यन्त श्लोकात्मक २, ऋषिरुवाच १ और 'चकार कोपमतुलं' से 'शिवदूती मृगाधिपैः' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ३७ हैं।

दशम अध्यायमें—ऋषिरुवाच १, 'निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा' तथा 'बलावलेपदुष्टे त्वं' श्लोकात्मक २, देव्युवाच १, 'एकैवाहं जगत्यत्र' से 'एकैवासीत् तदाम्बिका' पर्यन्त श्लोकात्मक २, 'अहं विभूत्या' श्लोकात्मक १, ऋषिरुवाच १, 'ततः प्रववृते युद्धं' से 'देवीं गगनमास्थितः' पर्यन्त १३, 'तत्रापि सा निराधारा' अर्धश्लोकात्मक १ और 'नियुद्धं खे तदा दैत्यः' से 'शान्तदिग्जनितस्वनाः' पर्यन्त श्लोकात्मक ६ मन्त्र हैं।

एकादश अध्यायमें—ऋषिरुवाच १, 'देव्याहते तत्र महासुरेन्द्रे' से 'लोकानां वरदा भव' पर्यन्त ३४, देव्युवाच १, 'वरदाहं सुरगणा' श्लोकात्मक १, देवा ऊचुः १, 'सर्वाबाधाप्रशमनं' श्लोकात्मक १, देव्युवाच १, 'वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते' से 'शाकम्भरीं' 'महासुरैः प्राणधारकैः' पर्यन्त श्लोकात्मक ८,

'शाकम्भरीति विख्यातिं' अर्धश्लोकात्मक १ तथा 'तत्रैव च वधिष्यामि' से 'करिष्याम्यरिसंक्षयं' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ६ है।

द्वादश अध्यायमें—देव्युवाच १, 'एभिस्तवैश्च मां नित्य' से 'पठनादेव नाशनं' पर्यन्त श्लोकात्मक १८, 'सर्वं ममैतन्माहात्म्य' अर्धश्लोकात्मक १ 'पशुपुष्पार्घ्यधूपैश्च' से 'स्मरतश्चरितं मम' पर्यन्त श्लोकात्मक १०, ऋषिरुवाच १, 'इत्युक्त्वा सा भगवती' से 'महोग्रेऽतुलविक्रमे' पर्यन्त श्लोकात्मक ३, 'निशुम्भे च महावीर्ये' अर्धश्लोकात्मक १, 'एवं भगवती देवी' से 'मतिं धर्मे तथाशुभां' पर्यन्त श्लोकात्मक मन्त्र ६ हैं।

त्रयोदश अध्यायमें—ऋषिरुवाच १, 'एतत् ते कथितं भूप!' अर्धश्लोकात्मक १, 'एवं प्रभावा सा देवी' से 'भोगस्वर्गापवर्गदा' पर्यन्त श्लोकात्मक ३. मार्कण्डेय उवाच १, 'इति तस्य वचः श्रुत्वा' से 'प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका' पर्यन्त श्लोकात्मक ६, देव्युवाच १, 'यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप' श्लोकात्मक १, मार्कण्डेय उवाच १, 'ततो वव्रे' से 'सङ्गविच्युतिकारकं' तक श्लोकात्मक २. देव्युवाच १. 'स्वल्पै रहोभिर्नृपते' से 'तव ज्ञानं भविष्यति' पर्यन्त अर्धश्लोकात्मक ६, मार्कण्डेय उवाच १, एवं इसके परवर्ती 'इति दत्त्वा तयोर्देवी' से 'सावर्णिर्भविता मनुः' तक दो श्लोकोंको २ बार आवृत्ति करना पड़ता है। अतएव श्लोकात्मक ४ मन्त्र आते, जिनमें दो पुनरुक्त मन्त्र कहलाते हैं।

चण्डीके श्लोकोंकी संख्या सर्व समेत ५७८ है। उसमें श्लोकात्मक मन्त्र ५३७ लगते, अवशिष्ट ४१ श्लोकोंका अंश और ऋषिरुवाच प्रभृति ले करके चण्डीमें सात सौ मन्त्र पूरण करने पड़ते हैं। यह सकल विषय सहजमें समझनेका उपाय यह है— (नक्शा दूसरे कालममें देखो)

चण्डीके नवाक्षर मंत्रके ऋषि ब्रह्मा, विष्णु और शिव तथा छन्द गायत्री, उष्णिक् और त्रिष्टुप्, देवता महाकाली, महालक्ष्मी तथा महासरस्वती, शक्तिनन्दा, शाकम्भरी और भीमा, बीज रक्तदन्तिका, दुर्गा और भीमा है। इसका विनियोग सर्वाभीष्ट सिद्धिके निमित्त होता है। शिर, मुख तथा हृदयमें यथाक्रम ऋषिच्छन्द और देवता, स्तनद्वयमें शक्ति एवं बीज, फिर हृदयमें तत्त्वन्यास करके उसी मंत्रसे समस्त तथा व्यस्तरूपमें षड़ङ्गन्यास करना चाहिये। इसके पीछे एकादश न्यास करनेसे अभीष्ट सिद्धि होती है। १ मातृका, २ सारस्वत, ३ मातृगण, ४ नन्दजादिन्यास, ५ ब्रह्माद्य, ६ महालक्ष्म्यादि, ७ मूलाक्षरन्यास, ८ विपरीत भावसे मूलाक्षरका न्यास, ९ मंत्रव्यास, १० षड़ङ्ग और ११ खड्गिनी शूलिन्यादि न्यास है। मातृकान्यास प्रभृति शब्द देखो। खड्गिनी शूलिन्यादिन्यास

चरित	अध्याय	श्लोकात्मक मंत्र	अर्धश्लोकात्मक मंत्र	त्रिपाद् वा श्लोकके तृतीयांशात्मक मंत्र	उवाचांकित मन्त्र	सर्वमन्त्र संख्या	श्लोक संख्या
१	१	६६	२४	०	१४	१०४	७८
१	२	६८	०	०	१	६९	६८
२	३	४१	०	०	३	४४	४१
२	४	३५	२	०	५	४२	३६
३	५	५४	०	६६	९	१२९	७६
३	६	२०	०	०	४	२४	२०
३	७	२५	०	०	२	२७	२५
३	८	६१	१	०	१	६३	६१½
३	९	३९	०	०	२	४१	३९
३	१०	२७	१	०	४	३२	२७½
३	११	५०	१	०	४	५५	५०½
३	१२	३७	३२	०	२	४१	३८
३	१३	१४	७	०	६ पुनरु २	२९	१७½
समष्टि	१३	५३७	३८	६६	५७ और पुनरु २	७००	५७८

चण्डीका अन्य विवरण समझनेके लिये कात्यायनीतन्त्र, वाराहीतन्त्र, रुद्रयामल, मार्कण्डेयपुराण, चण्डीरहस्य, मन्त्रमहोदधि प्रभृति ग्रन्थ एवं सप्तशती चण्डीपाठका विधान द्रष्टव्य है।

इस प्रकार किया जाता है—खड्गिनी शूलिनी प्रभृति पांच श्लोक १ अध्यायके ६१-६५ श्लोक पाठ और मंत्रके प्रथम वर्ण ऐं को घोर कृष्णवर्ण ध्यान करके सर्वाङ्गमें न्यास करना चाहिये। इसी भांति 'शूलेन पाहिनो देवी' इत्यादि ४ अध्यायके २३से २६ पर्यन्त पांच श्लोक पाठ तथा द्वितीय वीज ह्रीँ को सूर्य सदृश चिन्ता करके सर्व शरीरमें 'सर्वस्वरूपे सर्वेशे' इत्यादि ११ अध्यायके २३से २७ श्लोक पर्यन्त ५ श्लोक पाठ और तृतीय क्लीं को स्फटिक-जैसा भास्कर शुक्लवर्णका ध्यान करके स्तनद्वयमें न्यास करते हैं। इसके पीछे षड़ङ्ग न्यास करना पड़ता है। चंडीका ध्यान है—

''खड्गं चक्रगदेषु चापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम्
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुकैटभौ॥
अक्षस्रक् परशु गदेषु कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिञ्च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्।
घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुःसायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्॥
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥''

इसी प्रकार ध्यान करके पूर्वलिखित नवाक्षर मंत्र ४ लक्ष जपना चाहिये। पायसान्नसे होम करना विधेय है। इसके पीछे जवादि शक्तियुक्त हेमपीठमें देवीकी अर्चना की जाती है। षट्कोण अष्टदलयुक्त, त्रास्त्र और पञ्चविंशति पत्रयुक्त यंत्रके त्रिकोण मध्य मूलमंत्रसे देवीकी पूजा करनी पड़ती है। पूर्वमें शक्तिके साथ ब्रह्मा, नैऋतमें लक्ष्मी तथा विष्णु, वायुकोणमें उमा एवं शिव, उत्तर तथा दक्षिणमें सिंह और महिष, षट्कोणके मध्य पूर्वादि क्रमसे नन्दजा, रक्तदन्तिका, शाकम्भरी, दुर्गा, भीमा और भ्रामरीकी पूजा करनी चाहिये। अष्टदलमें यथाक्रमसे ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, ऐन्द्री और चामुंडा तथा पञ्चविंशति पत्रमें यथाक्रम विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, शक्ति, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, धृति, परा, वृत्ति, श्रुति, स्मृति, दया, तुष्टि, पुष्टि, मोह और भ्रान्तिकी पूजते हैं। बाहर गृहकोणमें गणेश, क्षेत्रपाल, वटक, योगिनीगण और इन्द्रादि दिक्पालगणकी भी पूजा की जाती है। इसी प्रकार चंडीपूजा करके जप करनेसे मंत्र सिद्धि होती है।

(मन्त्रमहोदधि १९ तरङ्ग)

चण्डीकुसुम (सं० पु०) चण्डीप्रियं कुसुमं यस्य, बहुव्री०। रक्तकरवीर वृक्ष लाल कनेर।

चण्डीगड़—लाचा नदीके तीर पर बसा हुआ एक प्राचीन ग्राम। यह दुर्गापुरसे ३ कोसकी दूरी पर अवस्थित है। यहां प्राचीन दुर्गके चिह्नादि देखे जाते हैं।

चण्डीटीका—मार्कण्डेय पुराणोक्त देवीमाहात्म्यकी टीका। पहले देवीमाहात्म्यकी अनेक व्याख्यायें थीं, जिनमेंसे अभी निम्नलिखित व्यक्तियोंकी टीका पायी जाती हैं। यथा—आत्माराम व्यास, आनन्द पण्डित, एकनाथ भट्ट, कामदेव, काशीनाथ, गङ्गाधर भट्टाचार्य, गोपीनाथ, गोविन्दराम, गौड़पाद, गौरीवर चक्रवर्ती, जगद्धर, जयनारायण, जयराम, नारायण, नृसिंह चक्रवर्ती, पीताम्बर, मिश्र, भगीरथ, भास्करराय, भीमसेन, रघुनाथ, मस्करी, रवीन्द्र, रामकृष्णशास्त्री, रामानन्दतीर्थ, व्यासाश्रम, विद्याविनोद, वृन्दावनशुक्ल, विरूपाक्ष, शङ्करशर्मा, शन्तनु और शिवाचार्य।

चण्डीदत्त—अयोध्याके राजा मानसिंहको सभाके एक कवि। मानसिंह देखो।

चण्डीदास—बङ्गालके एक प्राचीन कवि, कवि विद्यापतिके समसामयिक। ब्राह्मणकुलमें चण्डीदासका जन्म हुआ था। ये नान्नुरग्राममें रहते थे जो वीरभूम जिलेके साकुल्लीपुर थानाके ठीक पूरबमें अवस्थित है। इस ग्राममें आज भी शिलामयी विशालाक्षी या वाशुलीदेवी विद्यमान है। प्रवाद है कि चण्डीदास पहले उन्हींकी उपासना करते थे। बाद उनके उपदेशसे कृष्णभक्त हो उन्होंने कृष्णलीलाघटित पदावलीकी रचना की। चण्डीदास भी बोलते थे कि उन्होंने वाशुलीदेवीके वरसे ही पदावलीकी रचना की है।

पदकल्पतरु पढ़नेसे जाना जाता है कि चण्डीदासने विद्यापतिका गुण सुन उन्हें देखनेकी इच्छा प्रगट की।

संयोगवश भागीरथीके किनारे दोनोंमें मुलाकात हो गई और दोनों एक दूसरेकी कविता और रसिकतासे विमुग्ध हो मित्रताके बंधनमें बंध गये।

जिस तरह विद्यापतिके लछिमा आसक्तिका प्रसङ्ग है, उसी तरह चण्डीदासके भी रामी नामकी रजक-कन्याके साथ संघटनकी कथा सुनी जाती है।

चंडीदास चैतन्यदेवसे भी पहले हुए थे। चैतन्यदेव चंडीदासकी पदावली सुनना बहुत पसन्द करते थे। चण्डीदासका समय बङ्गला रचनाका आदि काल कहा जा सकता है। यद्यपि ये बङ्गालके आदि कवि न थे तोभी उस प्रथम अवस्थामें कृष्णलीलावर्णनमें बङ्गभाषाका जिस तरह कल्पनाशक्ति, रचना-पारिपाट्य, रसमाधुर्य और सुललित छन्दोबन्धनका परिचय दिया है, उसीसे वे एक प्रधान कविके जैसा गिने जा सकते हैं। चण्डीदासकी कवितामें आदिरसकी बात रहनेके कारण नव्यरुचिके विरुद्ध है सही और भावगाम्भीर्य तथा वाक्यविन्यासमें नवयुवकोंके निकट विद्यापति चण्डीदासको अपेक्षा श्रेष्ठ भले ही गिने जांय, किन्तु यह निश्चय है कि चण्डीदास विद्यापतिकी अपेक्षा किसी हालतसे कम न थे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि विद्यापति चण्डीदासकी तरह अनेक विषयोंके पण्डित थे, परन्तु चण्डीदासने सरल सरस भाषामें जिस तरह मनका भाव और जिस तरह हृदयकी छवि चित्रित की है, विद्यापतिकी पदावलीमें उस तरहका शुद्ध भाव बहुत कम देखा जाता है। चण्डीदास मनोराज्यके परिदर्शक और विद्यापति बहिर्जगत्‌के चित्रकार कहे जाते हैं। एक भावुक और दूसरे दार्शनिक थे। एक सरल भाषामें साधारण मनुष्योंका मन मतवाला करते और दूसरे रचनाचातुर्यसे प्राकृतिके सौन्दर्य और शब्दविद्यामें यथेष्ट पाण्डित्य दिखा कर पण्डितके सुख्यातिभाजन हुए हैं। विद्यापति एक पक्के मैथिली कवि थे और चण्डीदास बङ्गालके एक बङ्गाली निपुण कवि थे। विद्यापति देखो।

२ एक विख्यात आलङ्कारिक, नारायणके पौत्र। लक्ष्मणभट्टके आदेशसे इन्होंने संस्कृत भाषामें ध्वनि-सिद्धान्तसंग्रह और काव्यप्रकाशदीपिकाकी रचना की है। गोविन्दने अपने काव्यप्रदीपमें चण्डीदासका मत उद्धृत किया है और विश्वनाथने अपने साहित्यदर्पणमें सगोत्र कह कर परिचय दिया है। ३ भावचन्द्रिका नामक संस्कृत भक्तिग्रन्थके रचयिता।

चण्डीदेवशर्मन्—संक्षिप्तसारके प्राकृतदीपिकाकार। ये "शोभाकरकुलोद्भूत" कह कर अपना परिचय दे गये हैं।

चण्डीपति (सं० पु०) शिव, महादेव।

चण्डीपाठ (सं० पु०) चण्ड्या देवीमाहात्म्यात्मकग्रन्थस्य पाठः, ६-तत्। देवीमाहात्म्य चण्डीकी आवृत्ति, नियमपूर्वक आदिसे अन्त तक चण्डी ग्रन्थ पढ़ना। चण्डी देखो।

चण्डीपुर—१ राजमहलके एक प्राचीन ग्राम। (देशावली) बृहन्नीलतंत्रके मतसे चण्डीपुर एक पीठस्थान है। यहां प्रचण्डादेवीकी मूर्ति विराजमान हैं।

"चण्डीपुरे प्रचण्डा च चण्डा चण्डवती शिवा।" (बृहन्नीलतन्त्र ५ प०)

२ उड़ियाके बालेश्वर जिलेके सदर उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २१° २७´ उ० और देशा० ८७° २´ पू पर समुद्रके किनारे अवस्थित है। यह बालेश्वर शहरसे ८ मील पूर्व बूढ़ावलङ्ग नदीके उत्पत्तिस्थान पर बसा है। लोकसंख्या प्रायः ६२७ है। यहां बहुत अच्छी अच्छी मछलियां पाई जाती हैं जो कुलीसे बालेश्वर पहुंचाई जाती और वहांसे रेलके द्वारा कलकत्ता लाई जाती हैं।

चण्डीमउ—पञ्चान नदीके पश्चिमतीर पर एक प्राचीन ग्राम। यह गिरिएकके निकटवर्ती इन्द्रशैलसे १ कोस उत्तर और नालन्दासे ३॥ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहां बहुतसी बुद्धमूर्तियां तथा राजा रामपालदेवको १२वीं वर्षाङ्कित एक खण्ड शिलालिपि पाई जाती है।*

चण्डीमण्डप (सं० पु०) चण्ड्या मण्डपः, ६-तत्। काली, दुर्गा प्रभृति देवीकी पूजाका घर, वह मठ जिसमें काली, दुर्गा आदिकी पूजा की जाती है।

चण्डीलता (सं० स्त्री०) ग्रन्थिपर्ण, गठिवनका पेड़।

चण्डीश (सं० पु०) १ रुद्रके गणभेद। कहीं कहीं चंडेश्वर नामसे भी इसका उल्लेख है। (भागवत ४।५।१८) चंड्या ईशः, ६-तत्। २ शिव, महादेव।

चण्डीश्वर—माधव सरस्वतीके एक शिष्यका नाम।

---

* Cunningham's Archæological Survey Report, Vol. VIII, p. 8 and Vol. IX, p. 169.

चण्डु (सं० पु०) चण्डि-उन्। १ उन्दुर, चूहा, मूषा, मूषिक। (शब्दच०) २ एक तरहका छोटा बन्दर।

चण्डू (हिं० पु०) एक मादकद्रव्य। यह अफीमके रससे बनता है। पहिले अफीमके गोलेको काट कर उसमेंसे जो तरल पदार्थ निकले उसको एक मिट्टीके पात्रमें रखा जाता है। जो व्यक्ति इस कामको करे उसे उस समय बराबर किसो पानीके पात्रमें हाथ धोते रहना चाहिये। उस अफीम मिश्रित जलमें गोलाके ऊपरका पत्ता भिगो कर उसे आग पर रख देना पड़ता है; फिर उसे कपड़े और चीना कागजमें दो बार छान लिया जाता है। अन्तमें उस साफ पानीके साथ लोहेके पात्रमें वह तरल अफीम मिला कर आग पर रख दी जाती है। जब तक वह पानी गुड़की तरह चिपकना न हो जाय तब तक उसे उबालते रहना चाहिये।

बादमें उस लुआबदार अफीमको कोयलेकी आँच पर इस प्रकारसे ताप दे कर सुखाना चाहिये जिससे भीतरमें जरा भी पानीका अंश न रह जाय तथा असावधानीसे जलने न पावे, इसका भी ख्याल रखना चाहिये। जब माल उपयोगी अवस्थामें आ जाय तब उसे उतार कर लोहेके पात्रमें आध इञ्च मोटा कर फैला देना चाहिये। फिर उस पात्रके एक एक अंशको आग पर तपा लेना उचित है। बादमें पात्रको दोनों तरफसे तीनधार सेक लेना चाहिये। मालमें आवश्यकीय उत्ताप लग चुको या नहीं, इसका ज्ञान कारीगरोंको उसके रंग और सुगन्धसे हो जाता है। ज्यादा उत्ताप लग कर यदि अफीम जरा भी सुलग जाय तो सब अफीम नष्ट हो जाती है।

इसके बाद उस अफीमको तामेके पात्रमें भर-पूर पानीमें घोल कर आग पर रखना चाहिये। उबाल कर जब गाढ़ा हो जाय तब उसे उतार लेना चाहिये। यही पदार्थ बाजारोंमें "चंडू" नामसे बिका करता है।

तरल अफीमसे सैकड़ा पोछे ७५ अंश तथा कड़ी अफीमसे सैकड़ा पीछे ५० से ५४ अंश तक चंडू निकलता है।

चीनी भाषामें चंडूको येन्-की या सू-येन कहते हैं। चीनके लोग इसे तमाकूकी तरह पीते हैं। इससे तीव्र नशा होता है। चंडू बनाते समय जिस कागजसे अफीम छानी जाती है, मलके प्रकोप या पेड़ूमें दर्द होनेसे उस कागजको पेटमें लगानेसे आराम होता है।

चण्डूखाना (हिं० पु०) चडुखाना देखो।

चण्डूबाज (हिं० पु०) चंडूबाज देखो।

चण्डूपण्डित—धोलकाके रहनेवाले एक विख्यात संस्कृत पंडित। ये आलिगके पुत्र, तालहनके भाई, वैद्यनाथ और नरसिंहके शिष्य थे। इन्होंने धोल्काके राजा साङ्गके आदेशसे १४५६ ई०में नैषधीय दीपिका और ऋग्वेदका एक भाष्य प्रणयन किया था।

चण्डूल (देश०) चडुल देखो।

चण्डेश्वर (सं० पु०) चंडश्चासौ ईश्वर श्चेति, कर्मधा०। १ रक्तवर्ण शरीरधारी शिवमूर्तिविशेष, रक्तवर्ण रूपधारी महादेवकी एक मूर्ति। "चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रम्।" (तन्त्रसार)

२ रुद्रगणविशेष। चण्डी देखो।

चण्डेश्वर—१ एक विख्यात स्मार्त पंडित। यह मिथिलाके राजमंत्री वीरेश्वर ठक्कुरके पुत्र थे। आप भी भवेशके पुत्र मिथिलाधिप हरसिंहदेवके मंत्री थे। इन्होंने स्मृतिरत्नाकर नामका एक बृहत् स्मृतिसंग्रह रचना की है। यह ग्रन्थ सात रत्नाकरोंमें विभक्त है। यथा—कृत्यरत्नाकर, दानरत्नाकर, व्यवहाररत्नाकर, शुद्धिरत्नाकर, पूजारत्नाकर, विवादरत्नाकर और गृहस्थरत्नाकर।

चंडेश्वरने अपने ग्रन्थमें कल्पद्रुम, पारिजात, प्रकाश और हलायुधके नाम उल्लेख किये हैं। फिर रघुनाथ, कमलाकर, अनन्तदेव, केशव, नीलकण्ठ प्रभृतिके स्मृतिसंग्रहमें चंडेश्वरका नाम उद्धृत हुआ है।

२ एक प्रसिद्ध ज्योतिषी। इन्होंने संस्कृत भाषामें ज्ञानप्रदीप, प्रश्नचंडेश्वर, प्रश्नविद्या और सूर्यसिद्धान्तभाष्यकी रचना की है।

चण्डेश्वर—कटकसे गंजाम जानेके रास्ते पर तथा खुरदासे १३ कोसकी दूरी पर अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहां चण्डेश्वरदेवका एक अत्यन्त प्राचीन लिङ्गमन्दिर है। मन्दिर पत्थरका बना हुआ है और इसकी चारों ओर यथेष्ट शिल्पनैपुण्य देखा जाता है। कहा जाता है कि यह बृहत् मन्दिर ई० १०वीं या ११वीं शताब्दीमें बनाया गया था। अभी सिर्फ गर्भगृह और अन्तरालमण्डप विद्यमान

है। इसको चारों तरफ कुंड और अत्यन्त पुराने मन्दिरोंका चिह्न मात्र पड़ा है।*

यहां बहुतसे शिलालेख हैं, जिनसे अनुमान किया जाता है कि गङ्गवंशके किसी राजाने यह मंदिर बनवाया था।

चण्डेश्वरवर्मन्—अपरोक्षानुभूतिके अनुभवदीपिकाके टीकाकार।

चण्डेश्वररस (सं० पु०) नवज्वरका रस। रस, गन्धक, विष, ताम्र प्रत्येकका बराबर भाग ले कर प्रतिदिन अदरकके रससे १ प्रहर तक मर्दन कर ७ बार भावना दे कर तथा इसके बाद निर्गुण्डके रसमें भी ७ बार भावना देनी पड़ती है। अदरकके रसमें यह एक रत्ती खिलाना चाहिए।

चण्डोग्रशूलपाणि (सं० पु०) शिवमूर्ति विशेष।

"चण्डोग्रशूलपाणेश्च मन्त्रः सर्वार्थसाधकः।" (तन्त्रसार)

चण्डोग्रा (सं० स्त्री०) नायिकाविशेष। नायिका देखो।

चतरभङ्ग (हिं० पु०) बैलोंका एक दोष, जिसमें उनके डिल्लेका मांस एक ओर लटक जाता है। इस तरहका बैल रखना या पालना हानिकारक और अशुभ समझा जाता है।

चतरभौंगा (हिं० वि०) जिसे चतरंगका रोग हो।

चतारि—बुलन्दशहरकी खुर्जा तहसीलके अन्तर्गत एक गंडग्राम। यह अलीगढ़ जानेके रास्ते पर अवस्थित है। यहां एक डाकघर और अंगरेजी स्कूल है। यहां प्रतिसप्ताह हाट लगती है जिसमें दूर दूर देशके लोग गो तथा भेड़ा बेचने आते हैं।

चतिन् (सं० त्रि०) चत-णिनि। विनाशक, मारनेवाला, घातक, नाश करनेवाला।

"तं व इन्द्रं चतिनमस्य शाकैः।" (ऋक् ६।१९।४)

'चतिनं शत्रूणां घातकं नाशकमित्यर्थः।' (सायण)

चतिया—उड़िष्याके कटक जिलान्तर्गत जाजपुर उपविभागका एक पहाड़। यह अक्षा० २०° ३९' उ० और देशा० ८६° ३' पू० पर इसी नामके ग्रामके समीप अवस्थित है। इस पहाड़के पूर्व अमरावती दुर्गका ध्वंसविशेष देखा जाता है। प्रवाद है कि अमरावती केशरीवंशके पांच किलाओंमेंसे एक था। इस पहाड़के पश्चिम बरामदा लगा हुआ एक कन्दरा है। कहा जाता है कि यह जैन सन्यासीका बनाया हुआ है।

चतुःकुटा (सं० स्त्री०) श्रीविद्याके मन्त्रविशेष।

"चतुःकुटा महाविद्या शङ्करेण प्रपूजिता।" (तन्त्रसार)

चतुःपञ्च (सं० त्रि०) चत्वारः पञ्च वा स्वार्थे ड। चार या पांच।

"चतुःपञ्चानि वर्षाणि तिष्ठन् नृपगृहे प्रियः।" (राजत० ८।३२९)

चतुःपञ्चाशत् (सं० त्रि०) चतुरधिका पञ्चाशत्, मध्यपदलो०। पचाससे चार अधिक, चौवन।

"पशुपुरोडाशीः हविष्मत्स चतुःपञ्चाशत्।" (शत० ब्रा० ६।२।२।३७)

चतुःपञ्चाशत्तम (सं० त्रि०) जिसके द्वारा चौवनकी संख्या पूरी हो।

चतुःपत्ना (सं० स्त्री०) चत्वारि पत्त्राण्यस्याः, बहुव्री०, स्त्रियां ङीप्। क्षुद्र पाषाणभेदी, एक तरहका पौधा।

चतुःपर्णी (सं० स्त्री०) चत्वारि पर्णान्यस्य, बहुव्री० स्त्रियां ङीप्। क्षुद्राम्लिका, एक तरहका खट्टा साग, छोटी अमलोनी।

चतुःपार्श्व—चतुर्णां पार्श्वानां समाहारः, द्विगु। चारों ओर।

चतुःपुटोदरा (सं० स्त्री०) पीतपुष्प करवीरवृक्ष, एक तरहका कनेरवृक्ष जिसमें पीले फूल लगते हैं।

चतुःपुण्ड्र (सं० पु०) चत्वारि पुण्ड्राणीवास्य, बहुव्री०। भिण्डाक्षुप, एक तरहकी बेली।

चतुःफला (सं० स्त्री०) चत्वारि फलानि यस्याः, बहुव्री०। नागवला, गुलशकरी, ककई।

चतुःशत (सं० क्ली०) चार सौ।

चतुःशती (सं० स्त्री०) चतुर्णां शतानां समाहारः, द्विगुः। चतुःशत वा ङीप्। चार सौ।

चतुःशाल (सं० क्ली०) चतसृणां शालानां समाहारः, द्विगु। आमने सामनेके चार घर, वह घर जो वर्गाकारमें बना हो।

"एकग्रामे चतुःशाले दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे।
स्वामिना न'गमनायाः पुरः शक्रो न दुष्यति।" (विश्वकर्मप्र०)

चतुःशालक (सं० क्ली०) चतुःशाल स्वार्थे कन्।
चतुःशाल देखो।

चतुःषष्ट (सं० त्रि०) चतुःषष्टेः पूरणः चतुःषष्टि-डट्। चतुःषष्टितम, जिसके द्वारा चौंसठकी संख्या पूरी हो।

* Cunningham's Arch. Sur. Rep. XIII. p. 101.

चतुःषष्टि (सं० स्त्री०) साठसे चार अधिक, चौंसठ।

चतुःषष्टिकला (सं० स्त्री०) चतुःषष्टिमिता कला। कला नामकी उपविद्या। चौंसठ कलाओंके नाम भिन्न भिन्न ग्रन्थोंमें भिन्न भिन्न तरहके हैं। शिवतत्त्वमें चौंसठ कलाओंके जो सब नाम हैं वे कला शब्दमें लिखे गये हैं। शुक्रनीति शास्त्रमें चौंसठ कलाओंके जो नाम हैं, वे इस जगह लिखे जाते हैं।

चौंसठ कलाओंके नाम—१ हावभावयुक्त नर्त्तन, २ वाद्यवादन, ३ वस्त्रालङ्कार-सन्धान, ४ अनेकरूप प्रस्तुत करण, ५ शय्या और आस्तरणसंयोगसे पुष्पादि ग्रन्थन, ६ द्यूत प्रभृति अनेक क्रीड़ाओंमें अभिरञ्जन, ७ नानाप्रकारके आसनमें रतिज्ञान, इन सात कलाओंको गान्धर्व कहते हैं। ८ मकरन्द और आसव प्रभृति मद्य प्रस्तुतकरण, ९ सिराव्रणव्यध, १० अनेक तरहके रसोंके मिलानेसे अन्न प्रभृति पाककरण, ११ वृक्षादिका रोपना और पालनेका ज्ञान, १२ पाषाण और धातुओंका द्रवकरण और कठिन करण, १३ गुड़ प्रभृति इक्षुविकार प्रस्तुत करण, १४ धातु और औषध संयुक्त करनेका नियमज्ञान, १५ मिश्रित धातु द्रव्योंका पृथक् करण, १६ धातु प्रभृतिका संयोगज्ञान, १७ क्षारनिष्कासनज्ञान, १८ शस्त्रसन्धान-विक्षेप, १९ मल्ल युद्ध, २० यन्त्रादि अस्त्र-निपातन, २१ वाद्यसङ्केतानुसारसे व्यूहरचनादि, २२ हाथी, घोड़ा और रथका संरक्षण कर युद्धसंयोजन, ये पांच कलायें युद्धशास्त्रसम्मत हैं। २३ विविध आसन और मुद्रा द्वारा देवताओंका आराधन, २४ सारथ्य या हाथी और घोड़ोंको गतिशिक्षा, २५ मृत्तिका, २६ काष्ठ, २७, २८ पाषाण और धातुमय द्रव्योंका निर्माणज्ञान, २९ खनिविज्ञान, ३० तड़ाग, वापी, प्रासाद और समभूमि प्रस्तुत करनेका उपाय ३१ घटी प्रभृति यन्त्र और वाणनिर्माण, ३२ वर्णके परस्पर संयोगसे उत्कृष्ट वर्ण प्रस्तुतकरण, ३३, जल वायु और अग्निसंयोगसे निरोधादि क्रिया, ३४ नौका और रथादि याननिर्माण, ३५ सूत्रादि द्वारा रज्जु प्रस्तुतकरण ३६ वस्त्र निर्माण, ३७ रत्नविज्ञान, ३८ स्वर्णादि धातुविज्ञान और कृत्रिम धातुज्ञान, ३९ अलङ्कार-निर्माण, ४० लेपादि ज्ञान, ४१ पशुचर्माङ्गनिर्हार ज्ञान, ४२ दुग्धदूहनेका ज्ञान, ४३ सोनेकी विद्या, ४४ सन्तरण-विद्या, ४५ गृहभांड प्रभृति मार्जन-विद्या, ४६ वस्त्रसमार्जन, ४७ क्षुरकर्म, ४८ मार्दवादि क्रियाज्ञान, ४९ तिलमांस प्रभृतिको स्नेह-निष्कासनविद्या, ५० सीराद्याकर्षणज्ञान, ५१ वृक्षारोहन, ५२ मनोरम्य पदार्थ सेवन, ५३ बांस और तृणप्रभृतिका पात्रनिर्माण, ५४ काचपात्रादि निर्माण, ५५ जल संसेचन, ५६ जलसंहरण, ५७ लोहाभिसार शस्त्र और अस्त्रका निर्माण, ५८ हस्ती, अश्व, वृष और उष्ट्रका पालनादि ज्ञान, ५९ शिशु प्रतिपालनाभिज्ञता, ६० धारण, ६१ क्रीड़न, ६२ अनेक देशोंके अक्षर अत्यन्त सुन्दर भावसे लेखन, ६३ अपराधीका दण्डज्ञान और ६४ ताम्बूल रक्षादिका विज्ञान इनके नामानुसारसे ही लक्षण जानना पड़ता है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई लक्षण प्राचीन शास्त्रमें दीख नहीं पड़ता है। (शुक्रनीति २ अ०)

चतुःषष्टितम (सं० त्रि०) चतुःषष्टि-तमप्। जिसके द्वारा चौंसठकी संख्या पूरी हो।

चतुःसप्तत (सं० त्रि०) चतुःसप्तति पूरणार्थे डट्। जिसके द्वारा चौहत्तरकी संख्या पूरी हो।

चतुःसप्तति (सं० स्त्री०) चतुरधिका सप्ततिः, मध्यपदलो०। सत्तरसे चार संख्या अधिक, चौहत्तर।

चतुःसप्ततितम (सं० त्रि०) चतुःसप्तति पूरणार्थे तम। जिसके द्वारा चौहत्तरकी संख्या पूरी हो।

चतुःसम (सं० क्ली०) चत्वारि समानि यत्र, बहुव्री०। मिश्रित लवङ्ग, जीरा, जमायन और हरीतकी। इसका गुण—आमशूल और विबन्धनाशक, पाचन, भेदक तथा शोषनाशक है। दो भाग कस्तुरी, चार भाग चन्दन, तीन भाग केसर और तीन भाग कपूर इन सबके मिश्रणको चतुःसम कहते हैं।

चतुःसम्प्रदाय—वैष्णवोंके चार प्रधान सम्प्रदाय—१ श्रीसम्प्रदाय २, माध्व या चतुर्मुख सम्प्रदाय, ३ रुद्रसम्प्रदाय और ४ सनक-सम्प्रदाय।

चतुःसीमन् (सं० स्त्री०) चारों ओरकी सीमा।

चतुःसीमावच्छिन्न (सं० त्रि०) चारिसीमाविशिष्ट, जिसकी चारों ओर चार सीमा हो।

चतुर् (सं० त्रि०) चत-उरन्। १ चारकी संख्या। २ जिसमें चारकी संख्या हो। चतुर् वारार्थे सुच् सस्य लोपश्च। ३ चतुर्वार, चार बार, चार दफा।

"चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय" (अथर्व ११।२।९)

४ चतुष्टय, चारकी संख्या, चार चीजोंका समूह।

"गूढ़ैश्चुरुषैर्मैच काले काले च संग्रहम्।
अप्रमादमनालस्य चतुःशिक्षेत वायसात्।" (चाणक्य)

चतुर (सं० त्रि०) चत्यते याच्यते चत-उरच्। १ वक्रगामी, टेढ़ी चाल चलनेवाला। २ आलस्यहीन, जिसे आलस न हो, फुरतीला, तेज। ३ कार्यदक्ष, प्रवीण, होशियार। इसका पर्याय—दक्ष, पेसल, पटु, उष्ण, पेशल और निपुण है।

"चतुरो नेव मुह्यते मूर्खः सर्वत्र मुह्यति।" (देवीभा० १।१७।४४)

४ धूर्त, चालाक।

(पु०) ५ हस्तिशाला, हाथीखाना, वह स्थान जहां हाथी रखे जाते हों। ६ नायकविशेष। रसमञ्जरीके मतसे इस नायकके दो भेद हैं—वचनव्यङ्ग्य समागम और चेष्टाव्यङ्ग्यसमागम अर्थात् वचनचतुर और क्रियाचतुर जिस नायकके चतुर वाक्यसे नायिकाका समागमकाल और स्थानका निर्देश ठीक हो जाय और उसीके अनुसार नायिकाके साथ मिलन हो तो उसे वचनव्यङ्ग्य समागम कहते हैं। यथा—

"तमो जटाले हरिदन्तराले काले निशायास्तव निर्गतायाः।
तटे नदीनां निकटे वनानां घटेत शातोदरिकः सहायः॥"

इस जगह चारों ओर अन्धकार रहने पर भी रात्रिके समय जङ्गलके निकट नदीके तट पर नायिकाका समागम हुआ है। इस लिये ऐसे नायकको वचनव्यङ्ग्यसमागम कहते हैं।

जिस नायककी चेष्टासे नायिकाका समागम संकेत जान पड़े उसे चेष्टाव्यङ्ग्यसमागम कहते हैं। यथा—

"कान्ते कनककम्बीरं करे कमपि कुर्वति।
अगारलिखिते भानौ विन्दुमिन्दुमुखी ददौ॥"

(त्रि०) चतुर् अर्शआदित्वात् अच्। ७ चतुःसंख्याविशिष्ट, जिसमें चारकी संख्या हो। ८ उपभोगक्षम, उपभोगी, विलासी। ९ नेत्रगोचर, देखनेवाला। (पु०) १० काक, कौवा।

चतुरंश (सं० पु०) चत्वारो अंशा यस्य, बहुव्री०। जिसके चार भाग हों।

चतुरंशा (सं० स्त्री०) वर्णवृत्तविशेष।

"द्विजवरकर्णा विरसवर्णा, भवति यदा सा किल चतुरंशा।"

चतुरक (सं० त्रि०) चतुर स्वार्थे कन्। चतुर देखो।

चतुरकि—दाक्षिणात्यके विजापुर जिलाके अन्तर्गत एक प्राचीन छोटा ग्राम। यह सिन्दगीसे ५ कोस पश्चिममें अवस्थित है। यह स्थान दत्तात्रेयके मन्दिरके लिये मशहूर है। मन्दिरका शिल्पनैपुण्य देखने योग्य है। इसके प्रत्येक द्वारमें नरसिंहमूर्ति और बीचमें बहुतसी देवदेवी और जीवजन्तुकी मूर्ति हैं। मन्दिरमें एक प्राचीन अस्पष्ट शिलालेख है।

चतुरक्रम (सं० पु०) रूपकविशेष, एक तरहका ताल जिसमें बत्तिस अक्षर होते हैं और जो शृङ्गार रसमें प्रशस्त है। इसमें दो गुरु, दो प्लुत और इनके बाद एक गुरु होता है।

चतुरक्ष (सं० त्रि०) चत्वारि अक्षीणि यस्य, बहुव्री०, समासान्तष्टच्। जिसकी चार आँखें हों।

"चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ।" (ऋक् १०।१४।११)
'चतुरक्षावक्षि-चतुष्टययुक्तौ' (सायण)

चतुरक्षर (सं० क्लो०) चत्वारि अक्षराणि यत्र, बहुव्री०। १ चार अक्षरयुक्त नारायणका नाम।

"यदा नारायणायेति जगाद चतुरक्षरम्।" (भागवत ६।२।८)

२ एक तरहका छन्द। (त्रि०) चार अक्षरयुक्त, जिसमें सिर्फ चार अक्षर हों।

चतुरङ्ग (सं० क्लो०) चत्वारि अङ्गानि यस्य, बहुव्री०। १ हस्ती, घोड़े, रथ और पयादे इन चार अङ्गों सहित सेना।

"प्रयातोऽस्मि नरव्याघ्र बलेन महतावृतः।
कृत्स्नं न चतुरङ्गेण यत्र न जितकाशिना॥" (भारत ३।२० अ०)

२ (त्रि०) जिसके चार अङ्ग हों।

"नराशंसश्चतुरङ्गो यमोऽदितिः" (ऋक् १०।९२।११)
'चतुरङ्गश्चतुर्भिरङ्गैरुपेतो' (सायण)

(क्लो०) ३ गीतविशेष, एक प्रकारका गीत। इसमें चार तुकें होती हैं। इसकी पहली तुकके वर्णनामें चतुरङ्ग शब्दका उल्लेख रहता है। दूसरी तुकमें स्वरग्राम, तीसरी तुकमें आलापकी चाल और चौथी तुकमें बाजेकी नकल हुआ करती है। जैसे—

(१) ग सा रे रे म म प प नि नि स स नि स रे
स नि ध प प ध म म नि ध प ध प म ग रे।
(२) तनन तनन तूम दिर दिर तूम दिर तारे दानी।
(३) सोरठ चतुरङ्ग सप्तसुरन से।
(४) धा तिरकिट धुम किट धा तिर किट धूम किट धा
तिर किट धुम किट धा।

४ चतुरङ्गिनी सेनाका प्रधान अधिपति। ५ एक प्रकारका चलता गाना।

६ क्रीड़ाविशेष, एक प्रकारका खेल। इसको शतरञ्ज, चौसर, चापड़ आदि भी कहते हैं। वर्तमानमें प्रचलित शतरञ्ज खेलके किस्ती मात, पिलुड़ो आदि नाम पारसी या अरबी हैं और शतरञ्ज नाम भी ऐसा ही है। इसलिए बहुतसे इसे बादशाही खेल अर्थात् पारस या अरब देशमें उत्पन्न हुआ खेल समझते हैं। कोई कोई प्रत्नतत्त्वविद् इसे चीनदेशमें कोई ग्रीस और कोई मिश्र देशमें इसकी प्रथम उत्पत्ति बतलाते हैं। वर्तमान समयमें प्राय: समस्त देशोंकी सभ्य जातियोंमें इस खेलका प्रचार पाया जाता है। इस देशमें ऐसा प्रवाद है कि—"रावण हमेशा युद्धके अभिलाषी रहते थे, उनकी यह अभिलाषा कभी भी पूरी नहीं होती थी। अन्तमें मन्दोदरीने स्वामीकी इस अभिलाषाकी पूर्तिके लिए यह अद्भुत खेल रचा था।" यही शतरञ्जका खेल पहिले चतुरङ्ग नामसे प्रसिद्ध था। हाती, घोड़ा नाव और गोटी, इन चारों अङ्गोंको ले कर यह खेल खेला जाता है, इसीलिए प्राचीन आर्योंने इसका नाम 'चतुरङ्ग' रखा है। पारसी लोग ई०की छठी शताब्दीमें भारतसे इस खेलको अपने देशको ले गये थे। पारसी भाषामें इस खेलका नाम 'चतरङ्ग' है। बहुतोंका कहना है कि पारससे फिर इस खेलका अरबमें प्रचार हुआ था अरब भाषामें च और ग न रहनेके कारण इसका नाम 'चतरङ्गके' स्थान पर शतरञ्ज हो गया। प्राचीन चतुरङ्ग खेलके नामके परिवर्तनके साथ साथ पूर्वप्रचलित क्रीड़ा नीति और संस्थानरीतिका भी काफी परिवर्तन हो गया है। यह परिवर्तन किस देशमें हुआ है, इसका कोई निश्चय नहीं हुआ। अरबसे फिर यूरोपमें इसका प्रचार हुआ था। सम्भवतः एसियाके अन्य स्थानोंमें भी इसी समय इस खेलका प्रचार हुआ होगा। किसी पुराविद्के मतसे ई०की ग्यारहवीं शताब्दीमें इसका इङ्गलैण्डमें प्रथम प्रचार हुआ था। यूरोपके लोग पहिले इस खेलको "स्कैकृही" कहा करते थे। इससे 'एचेक्स' और एचेक्ससे 'चेस्' (Chess) हुआ है।

चतुरङ्ग क्रीड़ा सम्बन्धी बहुतसे ग्रन्थ भी हैं, परन्तु आज तक इस विषयकी चतुरङ्गकेरली, चतुरङ्गक्रीड़न, चतुरङ्गप्रकाश और वैद्यनाथपायगुण्डे विरचित चतुरङ्गविनोद चार ही संस्कृत ग्रन्थ मिले हैं। करीब ७०० वर्ष पहले दाक्षिणात्यमें त्रिभङ्गाचार्य शास्त्री नामके एक चतुरङ्गक्रीड़ाके आचार्य थे, उन्होंने इस खेलके विषयमें बहुतसे उपदेश दिये थे। वर्तमानमें भी यूरोपके किसी किसी स्थानमें उन्हींके मतानुसार खेल हुआ करता है। यूरोपमें इस विषयमें बहुतोंने बहुतसी पुस्तकें लिखी हैं। भारतवर्षमें महर्षि कृष्णद्वैपायनने सम्राट् युधिष्ठिरको चतुरङ्ग-खेल सिखानेके लिए कुछ पद्योंकी रचना की थी। यहींसे यह खेल प्रारम्भ हुआ था। पहिले इस प्रकारसे शतरञ्ज खेली जाती थी—

चार आदमी मिल कर इस खेलको खेलते हैं। ताशकी तरह इसमें भी एक पक्षमें दो खिलाड़ी होते हैं। पूर्व-पश्चिमके दोनों खिलाड़ी एक पक्षमें और उत्तर दक्षिणके दूसरे पक्षमें होते हैं। इनमेंसे प्रत्येकके अधिकारमें एक राजा, एक हाथी, एक घोड़ा, एक नाव और चार चार गोटी या पयादे रहते हैं। पूर्वकी तरफकी गोटियोंका रंग लाल, पश्चिमका पीला, दक्षिणका हरा और उत्तरकी गोटियोंका काला रंग होता है। पहिले जैसे खेल होता था, उसका एक चित्र दिया जाता है—
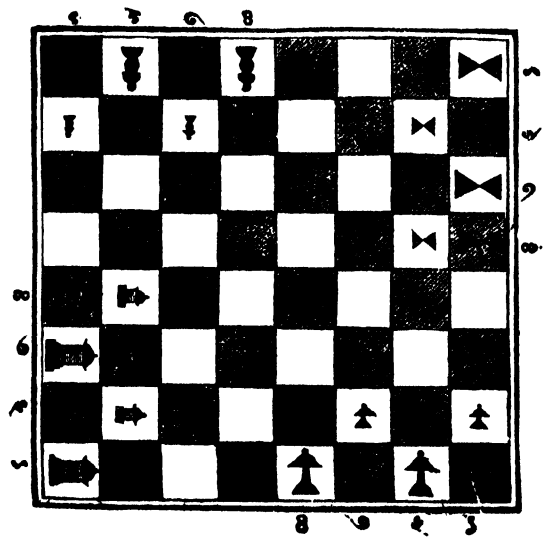
वर्तमानमें इसको चौसर या शतरञ्ज कहते हैं। शतरञ्जके चारों तरफ जो चार चार गोटीसी दिखाई पड़ती हैं, वे ही राजा, हस्ती, अश्व, और नौका नामसे

प्रसिद्ध हैं। नं० १ का राजा, उसको बाईं तरफके २ हस्ती, ३ घोड़ा और ४ नौका है। शतरञ्जके कोनेमें नौका रहती है और वहाँसे गणनामें चतुर्थ खानेमें राजा। इन चार प्रधान शक्तियोंके सामनेकी चार गोटियोंको गोटी या पयादे कहते हैं। प्राचीन चतुरङ्ग के खेलमें मन्त्री नहीं होते थे। (तिथितत्त्व)

पहिली गोटियोंकी चाल इस प्रकार थी—राजा सब दिशाओंमें एक घर जा सकता था। गोटी या पयादे सिर्फ आगेकी ओर एक घर चल सकते, परन्तु दूसरेके बलको मारनेके समय आगेके कोनेकी तरफ जा सकते। हस्ती चारों तरफ अपनी इच्छानुसार चलाया जा सकता अर्थात् वर्तमानके मन्त्रीकी चालकी भांति उस समयके हस्तीकी चाल थी। घोड़ा ३ घर टेढ़ा जाता। वर्तमानमें भी घोड़ेकी चाल ऐसी ही है। नौका कोनेकी तरफ दो घर लङ्घन करती थी अर्थात् दो घरसे ज्यादा नहीं जा सकती। (तिथितत्त्व)

राजाका लक्ष्य या गन्तव्य स्थान अपने घरसे पाँच घर तक होता है। राजाको शून्य घर मिलनेसे वह अपने निर्दिष्ट स्थानसे ५ घरसे ज्यादा नहीं जा सकता। गोटी आत्मपद परित्याग कर ५ घर मात्र जा सकती है। उसके बाद फिर उसमें गोटीपन नहीं रहता; बल्कि अच्छा बल प्राप्त होता है। जो गोटी जिस बलके सामने होती, वह गोटी उसीके बल रूपमें परिणत हुआ करती है। गोटी यदि किसी बलको नष्ट कर दूसरे कोठेमें जाय, तो उस कोठेके अनुसार ही उसकी परिणति होती है। किसीके मतसे इसी स्थानमें गोटीका चलना समाप्त हो जाता है।

गज या हस्तीके गन्तव्य मार्ग ४ हैं—बाईं ओर, सामने और सामनेके दोनों कोने। घोड़ेकी निर्दिष्ट स्थानसे टेढ़ी गति ३ कोठे तक होती है। नौका अपने स्थानसे दो कोठेसे आगे नहीं बढ़ सकती। (तिथितत्त्व)

सिंहासन, चतूराजी, नृपाकृष्ट, षट्पद, काककाष्ठ, बृहन्नौका और नौकाकृष्ट इस प्रकार सात जय पराजयसूचक परिणाम होते हैं।

सिर्फ हस्तीके बलसे ही राजा या बादशाहकी जयपराजय हुआ करती है, इसलिए समस्त शक्तियों द्वारा हस्तीहीकी रक्षा की जाती है। इसके बाद दूसरेकी शक्तिको नष्ट करना ठीक है। सेना और हस्ती द्वारा बादशाहकी रक्षा की जाती है। राजा नष्ट न होने पावे और दूसरा राजा या बादशाह अपने बादशाहका निर्दिष्ट पद या सिंहासन पर अधिकार न जमाने पावे, इस बातका विशेष ध्यान रखना चाहिये। किसी बादशाहके शत्रुपक्षी बादशाहके स्थान पर आक्रमण करनेसे आक्रमणकारीका सिंहासन हुआ करता है, यदि बादशाह आ कर सिंहासन हरण करे तो जिसका सिंहासन चला गया, उसकी पराजय होती है। (तिथितत्त्व)

पूर्वकालमें इस खेलमें भी बाजी लगानी पड़ती थी। जिसकी विजय होती थी, वह बाजीके रुपये पाते थे। राजाको मार कर सिंहासन अधिकार करनेसे दूनी बाजी देनी पड़ती थी। कोई बादशाह अपने पक्षके बादशाहके सिंहासन पर बैठे तो वह उस सिंहासनके बलसे अपहृत होता है। इसको भी सिंहासन कहते हैं। कोई बादशाह सिंहासन करनेके लिए अपने गन्तव्य स्थानको अतिक्रम कर छठे स्थानमें पहुंच जानेसे बल द्वारा सुरक्षित होने पर भी उसका हनन किया जा सकता है। अपने बादशाहोंके जीते-जी यदि शत्रुपक्षीय दोनों बादशाह मर जांय तो उसे चतूराजी कहते हैं। इस प्रकारके पराजयमें जितनेकी बाजी रखी हो, उतने ही रुपये देने पड़ते हैं। परन्तु बादशाह द्वारा बादशाहके मारे जानेसे बाजीसे दूना देना पड़ता है और बादशाह स्वपदस्थित दूसरे बादशाहको मारे, उससे जो चतूराजी हो, उसमें बाजीसे चौगुने रुपये देने पड़ते हैं। यदि सिंहासनके समय चतूराजी हो तो उसे चतूराजी ही कहते हैं, सिंहासन नहीं। कोई बादशाह दूसरे बादशाह द्वारा आकृष्ट हो कर गमन करनेसे, उसका हनन होता है, इसे नृपाकृष्ट कहते हैं। किसी बादशाहके अपने स्थानको अतिक्रम कर गोटीके आगे आनेसे और गोटी द्वारा ग्रहण किये जानेसे, उसे षट्पद कहते हैं। चतूराजी और षट्पदके एक साथ होनेसे उसे चतूराजी ही कहते हैं न कि षट्पद। पदातिका षट्पद यदि राजा वा हस्ती द्वारा विद्ध हुआ हो तो वहां षट्पद नहीं होता। गोटी सप्तम कोष्ठमें रहनेसे दुर्बल

बलका हनन करती है। जिसके पास तीन ही गोटी रह जाय, उसका षट् पद नहीं होता। किसी राजाके पास सिर्फ एक नौका और एक ही गोटी रह जाती है तो उसे गाढ़ा गोटी कहते हैं। उसके कोने पद या राजपद दूषित नहीं होते। बिलकुल शक्तिहीन होनेसे उसे काककाष्ठ कहते हैं। नौका चतुष्टय होनेसे उसे बृहन्नौका कहते हैं। गजकी तरफ गज (हस्ती) नहीं चलाना चाहिये। चतुरङ्गके अन्यान्य विवरण द्यूत शब्दमें देखो।

चतुरङ्गा (सं० स्त्री०) चत्वारि अङ्गानि यस्याः, बहुव्री०। घोटिका वृक्ष, लुनियाशाक, खरका।

चतुरङ्गिन् (सं० त्रि०) चत्वारि अङ्गानि भूम्ना सन्त्यस्य चतुरङ्ग-इनि। चार अङ्गवाली (सेना), जिसमें हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैन्य हों।

"चालयन् वसुधां चैमां बलेन चतुरङ्गिणा।" (भारत १।९४ अ०)

चतुरङ्गिणी (सं० स्त्री०) चत्वारि अङ्गाणि हस्त्यश्वरथपदातयः सन्त्यस्यां चतुरङ्ग-इनि स्त्रियां ङीप्। चतुरङ्गयुक्त सेना, वह सेना जिसमें हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल ये चारों अंग हों।

"प्रेषयिष्ये तवार्थाय वाहिनीं चतुरङ्गिणीम्।" (भारत १।७३।२०)

चतुरङ्गुल (सं० पु०) चतस्रोऽङ्गुलयः परिमाणमस्य, बहुव्री०। आरग्वध, धनबहेड़ा, अमलतास। (त्रि०) २ चतुरंगुल परिमित, जो चार उँगली परिमाणका हो।

चतुरङ्गुला (सं० स्त्री०) शीतली, शीतली नामकी लता।

चतुरता (सं० स्त्री०) चतुरका भाव, चतुराई, प्रवीणता, होशियारी।

चतुरनीक (सं० पु०) चतुरानन, ब्रह्मा।

चतुरनुगान (सं० क्ली०) सामभेद।

चतुरन्त (सं० त्रि०) पृथ्वी, दुनिया।

चतुरपन (हिं० पु०) चतुराई, चतुरता।

चतुरबीज (सं० पु०) चतुर्बीज देखो।

चतुरम्ल (सं० क्ली०) चतुर्णामम्लानां समाहारः, द्विगुः। चार प्रकारके अम्लद्रव्य, अमलबेतस, इमली, जंबीरी और कागजी नीबू, इन चार खटाईयोंका समूह। (वैद्यक)

चतुरमहल—अयोध्याके नवाब वजीरकी एक खूबसूरत बेगम। अयोध्याके नवाबके अधःपतन होनेपर चतुरमहल कुर्बाण अली नामक एक सामान्य व्यक्तिके प्रेममें मुग्ध हो गई थीं तथा उसके साथ विवाह करनेकी इच्छा की परन्तु बेगमकी माताने उसे इस काममें मना की और ऐसा उपाय करने लगीं जिससे वह कुर्बाण जैसे सामान्य मनुष्यके अतिरिक्त किसी दूसरे धनी व्यक्तिसे विवाह कर सके। कुर्बाण अली वृटिश गवर्मेंटके एक सेरिस्तेदार थे। उसके इच्छानुसार चतरमहलने चीफ कमिश्नरसे इस तरह प्रार्थना की "मैं मक्का जाना चाहती हूं, जिससे इस धर्मकार्यमें किसी तरहकी बाधा न हो वैसीही कृपादृष्टि आप मुझ पर रखें।" इस तरह चीफ कमिश्नरसे आज्ञा ले कर चतुरमहल लखनऊ नगरको जा कुर्बाण अलीसे मिली। इसके बाद बुन्देलखण्डके अन्तर्गत बिजनौर नामक स्थानमें वे दोनों पति पत्नीके रूपसे रहने लगे। चतुरमहलकी शुभदृष्टिसे कुर्बाण अली उस समय एक धनवान् व्यक्तिके जैसे कहलाने लगे।

चतुरवत्त (सं० त्रि०) चार अंशमें विभक्त, जो चार भागोंमें बंटे हों।

चतुरवत्ती (सं० त्रि०) जो चार भागोंमें होमकी सामग्री बाँटता हो।

"यद्यपि चतुरवत्ती यजमानः स्यात्।" (ऐत० ब्रा० २।१४)

चतुरबिहारी—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। ये चतुर कवि नामसे भी मशहूर थे। शिवसिंह और कृष्णानन्द व्यास इनकी प्रशंसा कर गये हैं। ये लगभग १५४२ ई०में इस लोकमें विद्यमान् थे।

चतुरशीत (सं० त्रि०) चतुरशीति पूरणार्थे डट्। चतुरशीतितम, जिसके द्वारा चौरासी संख्याकी पूरी हो।

चतुरशीति (सं० स्त्री०) चतुरधिका अशीतिः, मध्यपदलो०। १ अस्सीसे चार अधिक, चौरासी। २ चौरासी संख्यायुक्त, जिसकी चौरासी संख्या हों।

चतुरस्र (सं० त्रि०) चतस्रोऽस्रयः कोणा यस्य, बहुव्री०, निपातनादच्। १ चतुष्कोणयुक्त, जिसके चार कोने हों, चौकोर।

"चतुरस्रं त्रिकोणं वा वर्तुलं चार्द्धचंद्रकम्।
कर्त्तव्यमानुपूर्व्येण ब्राह्मणादिषु मण्डलम्।" (बौधायन)

(पु०) २ ब्रह्मसन्तान, केतुविशेष।

"चतुरस्रा ब्रह्मसन्तानाः।" (बृहत्सं० ११ अ०)

३ ज्योतिषमें चौथी वा आठवीं राशि।

चतुरश्रि—अश्रि देखो।

चतुरख (सं० पु०) एक राजाका नाम।

चतुरसिंह—१७वीं शताब्दीके एक हिन्दी कवि। ये राणा चतुरसिंह नामसे भी विख्यात थे। ये अत्यन्त सरल और मधुर भाषामें कविता लिख गये हैं।

चतुरस्र (सं० पु०) १ एक तरहका तिताला ताल। इसमें क्रमसे एक गुरु, गुरुको दो मात्राएं, एक लघु, लघुकी एक मात्रा, एक प्लुत और प्लुतको तीन मात्राएं होती हैं। २ नृत्यमें एक प्रकारका हस्तक।

चतुरस्वामिन्—एक कृष्णभक्त परमवैष्णव। ये गुरुके आदेश से सर्वत्यागी हो वृन्दावनवासी हो गये थे।

चतुरह (सं० क्लो०) चत्वारि अहानि समा॰ अच्। १ चार दिन। (पु०) २ चार दिन साध्य याग, वह याग जो चार दिनोंमें हो।

चतुरा (हिं० पु०) १ चतुर, निपुण। २ धूर्त, चालाक।

चतुराई (हिं० स्त्री०) १ निपुणता, दक्षता, होशियारी। २ धूर्तता, चालाकी।

चतुरात्मन् (सं० पु०) चतुरः कार्यनिपुणः आत्मा मनो यस्य, बहुव्री०। चत्वारो बुद्धादय आत्मानो यस्य इति वा। परमेश्वर, विष्णु।

"चतुरात्मा चतुर्व्यूहः" (भारत १३।१४९।८५)

चतुरानन (सं० पु०) चत्वारि आननान्यस्य, बहुव्री०। चार मुखवाला ब्रह्मा।

"इतरतापशतानि यथेच्छया वितर तानि सहे चतुरानन।" (उद्भट)

चतुरानर्त्तन (सं० क्लो०) १ चार चार मिल कर नाचनेकी क्रिया। २ चार भागोंमें नृत्य।

चतुरापन (हिं० पु०) चतुराई, होशियारी।

चतुराम्ल (सं० पु०) चतुराम्ल देखो।

चतुराश्रम (सं० क्लो०) चतुर्णामाश्रमाणां समाहारः। चार आश्रम, ब्रह्मचर्य प्रभृति।

चतुरिड़स्पदस्तोभ (सं० क्लो०) सामभेद।

चतुरिन्द्रिय (सं० पु०) चारइन्द्रियवाले जीव। प्राचीन समयमें भारतवासी मक्खी, भौंरे, साँप आदिको श्रवणेन्द्रिय नहीं मानते थे इसीसे वे चतुरिन्द्रिय कहलाते थे। (वैद्यक)

चतुरी (देश०) एक तरहकी नाव जो एक ही लकड़ीमें खोद कर तैयार की जाती है।

चतुरुत्तर (सं० त्रि०) चार क्रमसे वृद्धि, चार चार कर बढ़ना।

चतुरूर्ध्वपात—(सं० पु०) एक तरहका हिरन।

चतुरूषण (सं० पु०) चतुर्णामूषणानां समाहारः। पिप्पलीमूलयुक्त त्रिकुट, सोंठ, मिर्च, पीपर और पिपरामूल इन चार गरम पदार्थोंका समूह। (वैद्यक)

चतुर्गति (सं० स्त्री०) चतुर्णां वर्णाश्रमाणां यथोक्तकारिणां गतिः, ६-तत्। १ परमेश्वर, विष्णु।

"चतुर्मूर्त्ति श्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः।" (भारत १३।१४९।८९)

(पु० स्त्री०) २ कच्छप, कछुआ।

चतुर्गव (सं० क्लो०) १ चार गाय। (कात्या० श्रौत० १२।११।७) २ एक तरहकी गाड़ी जिसमें चार बैल जोते जाते हों।

चतुर्गुण (सं० त्रि०) १ चारगुण, चौगुना। २ चारगुणोंवाले।

चतुर्गृहीत (सं० त्रि०) चतुर्भिर्गृहीतः, ३-तत्। जो चार मनुष्योंसे ग्रहण किया गया हो।

चतुर्ग्राम (सं० क्लो०) ग्रामभेद, कोई गांवका नाम।

चतुर्जातक (सं० क्लो०) चतुर्णां जातकानां सुन्दराणां सुरभीणां समाहारः। इलाइची, दारचीनी, तेजपत्ता, नागकेशर, इन चार पदार्थोंको चतुर्जातक कहते हैं। इसका गुण—रुचिकर, रूक्ष, तीक्ष्ण, उष्ण, मुखका दुर्गन्धनाशक, लघु, पित्त और अग्निवृद्धिकर तथा कफ एवं वातनाशक है। (भावप्रकाश)

चतुर्णवत (सं० त्रि०) चतुर्णवति पूरणार्थे डट्। चतुर्णवतितम, जिसके द्वारा चौरानबे संख्याकी पूर्त्ति हो, चौरानबेवाँ।

चतुर्णवति (सं० स्त्री०) चतुरधिका नवतिः, मध्यपदलो०, पूर्वपदाद् वा णत्वं। नव्वेसे चार अधिक, चौरानबेकी संख्या। चतुर्णवति संख्यायुक्त, जिसकी चौरानबे संख्या हों।

"चतुर्णवत्यधिकानि चीनि शतानि" (कात्या०श्रौ० १९।८।२३)

चतुर्थ (सं० त्रि०) चतुर्णां पूरणः चतुर-डट्। १ चार संख्याका पूरक, चारकी संख्या परका, चौथा। (पु०) २ एक प्रकारका तिताला ताल।

चतुर्थक (सं० पु०) चतुर्थेऽह्नि भवो रोगः चतुर्थ-कन्। रोगविशेष, विषमज्वर, चौथिया बुखार, वह बुखार जो हर चौथे दिन आवे।

चतुर्थकाल (सं० पु०) चतुर्थः कालो कर्मधा०। शास्त्रानुसार वह समय जिसमें भोजन करनेका विधान है, भोजनकाल, खानेका समय। भोजन शब्द देखो।

चतुर्थभक्त (सं० क्ली०) चतुर्थे चतुर्थकाले भक्तं यत्र, बहुव्री०। चतुर्थकाल, भोजनका समय।

"चतुर्थभक्तक्षपणं वैश्ये शूद्रे विधीयते।" (भारत १३।१०६ अ०)

चतुर्थभाज् (सं० पु०) चतुर्थं अंशं धान्यादेः भजते कररूपेण भज-ण्वि। वह राजा जो प्रजाके उत्पन्न किये हुए अन्न आदिसे एक चौथाई अंश कर स्वरूप लेते हों। मनुके मतसे राजाको विपत्कालमें प्रजासे उपजका चौथाई भाग लेनेका अधिकार है और उस अर्थसे यदि प्रजाका कष्ट दूर किया जाय तो राजाको किसी तरहका पाप नहीं होता।

"चतुर्थभाक् महाराज। भोज इन्द्रसखो बली।" (भारत १।२।१६)

चतुर्थस्वर (सं० क्ली०) चतुर्थः स्वरो यत्र, बहुव्री०। सामविशेष।

चतुर्थांश (सं० पु०) चतुर्थश्चासौ अंशश्चेति, कर्मधा०। १ चार भागोंमेंसे एक, चौथाई।

"चतुर्थांशोऽस्य धर्मस्य रक्षता लभते फलं।" (हरिवंश ८० अ०)

(त्रि०) चतुर्थः अंशोऽस्य, बहुव्री०। २ चतुर्थांशका अधिपति, चार अंशोंमेंसे एक अंशका अधिकारी, एक चौथाईका मालिक।

चतुर्थाश्रम (सं० पु०) सन्न्यास।

चतुर्थिकर्म (सं० क्ली०) चतुर्थ्यामनुष्ठेयं कर्म। विवाहके बाद चतुर्थीके दिन अनुष्ठेय कर्म, वह विशिष्ट कर्म जो विवाहके चौथे दिन होता है।

चतुर्थिका (सं० स्त्री०) परिमाणविशेष, एक पल।
(वैद्यकपरि०)

चतुर्थी (सं० स्त्री०) चतुर्णां पूरणी चतुर्-डट्। तस्यपूरण डट्। पा ५।२।४८ ततः थुक्। षट् कतिपयचतुरां थुक्। पा ५।२।५१। टित्वात् स्त्रियां ङीप्। १ व्याकरण-परिभाषित विभक्तिविशेष, ङे, भ्याम् और भ्यस् इन तीन सुप्को चतुर्थी कहते हैं। सम्प्रदानकारक, क्रियायोग और तादर्थ्य आदि अर्थमें चतुर्थी विभक्ति होती है। विभक्ति देखो।

२ तिथिविशेष, चन्द्रकी चतुर्थकला, चतुर्थी दो प्रकारकी होती है—शुक्लपक्षीय और कृष्णपक्षीय। अमावस्याकी रातको चन्द्रका सम्पूर्ण अदर्शन होता है, उसके बाद जिस दिन (अर्थात् उसके बाद चौथे दिन) चन्द्रकी चारकला उदित हों, उसको शुक्लपक्षीय चतुर्थी और पूर्णिमाके बाद चौथे दिन चन्द्रकी चार कलाएं क्षय होती हैं, उसे कृष्णपक्षीय चतुर्थी कहते हैं। धर्मशास्त्रमें चतुर्थी तिथिमें जिन जिन कार्योंको करनेका विधान है, उन उन कार्योंका चतुर्थी नामसे उल्लेख होता है। दो दिन चतुर्थी हो तो किस दिन चतुर्थीके कार्य करने चाहिये, इसकी मीमांसाके सम्बन्धमें धर्मशास्त्रोंमें अनेक मतभेद पाया जाता है। स्मृतिसंग्रहकारोंने भी इस विषयमें बहुतसा विचार किया है। रघुनन्दनके मतसे—विशेष विधानके न रहनेसे जिस दिन चतुर्थीके साथ पञ्चमीका योग रहे, उसी दिन चतुर्थीकार्य करना पड़ता है।

"एकादश्यष्टमी षष्ठी अमावस्या चतुर्थिका।
उपोष्याः परसंयुक्ताः पराः पूर्वेण संयुता॥"

अग्निपुराणके इस वचनमें पञ्चमीयुक्त चतुर्थी तिथिका उल्लेख है, इसलिए विशेष स्थलके सिवा सर्वत्र ही पञ्चमीयुक्त चतुर्थीमें कार्य करना उचित है। किसी किसीका कहना है कि, ब्रह्मवैवर्तपुराणके—

"चतुर्थी संयुता कार्या तृतीया च चतुर्थिका।
तृतीयया युतानैव पञ्चम्या कारयेत् क्वचित्॥"

इस वचनके अनुसार तृतीयायुक्त चतुर्थीमें ही कार्य करना चाहिये, पञ्चमीयुक्त चतुर्थीमें नहीं करना चाहिये। यह मत ठीक नहीं है, क्योंकि ब्रह्मवैवर्तपुराणमें यह वचन विनायकव्रतप्रकरणमें कहा गया है, इसलिए ब्रह्मवैवर्तविहित विनायकव्रतमें ही तृतीयायुक्त चतुर्थीका विधान है। साधारण चतुर्थीका उससे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। (तिथितत्त्व) कालमाधवीय चतुर्थी प्रकरणमें भी ऐसी ही मीमांसा की गई है।

इसकी अन्यान्य विवरण तिथि और विनायकव्रत आदि शब्दोंमें देखना चाहिये।

चतुर्थीके प्रदोषको गाणपत कहते हैं। इसमें अध्ययन नहीं करना चाहिये।

"त्रयोदश्यां चतुर्थ्यां च सप्तम्यां द्वादशीतिथिः।
प्रदोषेऽध्ययनं धीमान् न कुर्वीत यथाक्रमम्॥
सारस्वती गाणपतः सौरश्च वैष्णवस्तथा॥"

हेमाद्रिके मतसे प्रदोष शब्दका अर्थ रात्रिका प्रथम प्रहर है। निर्णयामृतकर्ता भोजदेवके मतसे प्रदोष शब्दका अर्थ रात्रि है।

भाद्रमासकी चतुर्थी तिथिमें चन्द्र देखनेसे झूठा कलङ्क लगता है। उस दिन चन्द्रको न देखना चाहिये।

नष्टचन्द्र देखो

चतुर्थी तिथिमें जिसका जन्म होता है, उसका पुत्रवधू और मित्रकी स्त्रीमें अनुराग रहता है। वह घी खानेका अभिलाषी, दयालु, विवादशील, जयी और कठोर प्रकृतिवाला होता है। (कोष्ठप्रदीप)

चतुर्दंष्ट्र (सं० त्रि०) चतस्रो दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री०। १ जिसके चार दाँत हों। (पु०) २ कार्त्तिकेयकी सेना। ३ दानवविशेष, बलिका सैन्य। ४ परमेश्वर, ईश्वर।

चतुर्दंष्ट्रा (सं० स्त्री०) गोक्षुरक्षुप, गोखरू नामकी लता।

चतुर्दन्त (सं० पु०) चत्वारो दन्ता यस्य, बहुव्री०। ऐरावत हाथी। (त्रि०) २ जिसके चार दाँत हों।

चतुर्दश (सं० त्रि०) चतुर्दशानां पूरणः चतुर्दशन्-डट्। चौदह संख्याका पूरक। जिसके द्वारा चौदहकी संख्या पूरी हो, चौदहवाँ।

चतुर्दश-अतिशय—जैन मतानुसार श्रीअरहन्तोंके देवकृत चतुर्दश अतिशय होते हैं, यथा—१ अर्द्धमागधी भाषा, २ समस्त प्राणियोंमें परस्पर मित्रता, ३ दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ समस्त ऋतुके फल फूल धान्यादिका एक ही समय फलना, ६ एक योजन तक पृथिवीका दर्पणवत् स्वच्छ होना, ७ गमन करते समय चरणोंके तले सुवर्ण कमलका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनि, ९ मन्द सुगन्धित पवन, १० सुगन्धमय जलकी वर्षा, ११ भूमिका कण्टकरहित होना, १२ समस्त सृष्टिका आनन्दमय होना, १३ सम्मुखमें धर्मचक्रका चलना और १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घण्टा आदि अष्टमङ्गल द्रव्योंका साथ चलना। (इष्टछत्तीसी)

चतुर्दशकुलकर (सं० पु०) जैनमतानुसार प्रत्येक चतुर्थ कालमें होनेवाले कुलप्रवर्तक ये चौदह होते हैं। नाम इस प्रकार हैं—१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमङ्कर, ४ क्षेमन्धर ५ सीमङ्कर, ६ सीमन्धर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुष्मान्, ९ यशस्वी, १० अभिचन्द्र, ११ चन्द्राभ, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित्, १४ नाभि राजा। (उत्तरपुराण)

चतुर्दशधा (सं० अव्य०) चतुर्दश प्रकारार्थे धा। चतुर्दश प्रकार, चौदह तरह।

चतुर्दशन् (सं० त्रि०) चतुरधिकादश, मध्यपदलो०। १ चौदह। २ चतुर्दश संख्यायुक्त, जिसकी चौदह संख्या हो। कविकल्पलताके मतसे विद्या, यम, मनु, इन्द्र, भुवन और ध्रुवतारक ये सब चतुर्दश संख्यावाचक हैं।

चतुर्दशविद्या (सं० स्त्री०) वेद प्रभृति चौदह विद्या। चार वेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, धर्मशास्त्र, पुराण, मीमांसा और तर्कशास्त्र इन चौदहोंको चतुर्दशविद्या कहते हैं।

> "विद्याश्चतुर्दश प्रोक्ताः क्रमेण तु यथा स्थितिः।
> षडङ्गमिश्रिता वेदा धर्मशास्त्रपुराणकम्।
> मीमांसा तर्कमपि च एता विद्याश्चतुर्दश।" (नन्दिपुराण)

चतुर्दशभुवन (सं० क्ली०) चतुर्दशानां भुवनानां समाहारः, द्विगु०। चौदह लोक, सात स्वर्ग और सात पाताल।

चतुर्दशाङ्गक्वाथ (सं० पु०) एक तरहका पाचन। दशमूलके साथ चिरायता, मोथा, गुरुच और सोंठ मिला कर जो पाचन तैयार किया जाता है, उसे चतुर्दशाङ्गक्वाथ कहते हैं। इसके सेवन करनेसे चिरज्वर, वात और कफोल्वण तथा सन्निपात ज्वर जाता रहता है। (भावप्रकाश)

चतुर्दशी (सं० स्त्री०) चतुर्दश-ङीप्। १ तिथिविशेष, चन्द्रमाकी चौदह कलाकी क्रियाका रूप, इसका दूसरा नाम भूता है। साधारण भाषामें चौदस भी कहते हैं। चतुर्दशी दो प्रकारकी होती है—१ शुक्लपक्षकी और २री कृष्णपक्षकी। धर्मशास्त्रोंमें चतुर्दशी तिथिमें जिन जिन कार्यांको करनेका विधान किया है, उन उन कार्यांको चतुर्दशीकार्य कहते हैं। दो दिन चतुर्दशी हो, तो पूर्णिमायुक्त चतुर्दशीमें कार्यांका अनुष्ठान करना चाहिये। परन्तु कृष्णपक्षमें त्रयोदशीयुक्त चतुर्दशीमें ही कार्य करना पड़ता है। पक्षके भेदसे ऐसी दो तरहकी व्यवस्था हुआ करती है (१)। उपवास आदि कार्यांमें भी ऐसा ही नियम समझना चाहिये।

चतुर्दशी तिथि अपराह्नव्यापिनी होनेसे शुक्ल चतुर्दशी और पूर्वविद्वा अर्थात् त्रयोदशीयुक्त चतुर्दशी ग्रहण

(१) "कृष्णपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी। पूर्वविद्धैव कर्तव्या परविद्धा न कुर्वीत। शुक्ला चतुर्दशी ग्राह्या परविद्धा सदाव्रते।" (स्मृति)

करना चाहिये। रघुनन्दनके मतसे शिवविषयक व्रतादि में ही यह नियम है, अन्यान्य स्थलोंमें शुक्लपक्षीय चतुर्दशी परविद्धा ही ग्रहण करनी चाहिये (२)।

चतुर्दशी तिथिमें जिसका जन्म हो, वह विरुद्धशील, रोषयुक्त, चोर, कठोरस्वभाव, वञ्चक, परान्नभोजी और परदाररत होता है (३)।

भिन्न भिन्न मासकी चतुर्दशीमें भिन्न भिन्न कार्योंका विधान है। ज्येष्ठ महीनेकी कृष्णचतुर्दशीका नाम सावित्री चतुर्दशी है। उस दिन सावित्रीव्रत और स्त्रियोंके लिए भक्तिपूर्वक स्वामीकी पूजा करनी चाहिये। सावित्रीव्रत देखो। भाद्र मासकी कृष्णचतुर्दशीका नाम अघोरा चतुर्दशी है। अघोरा देखो। भाद्रमासकी शुक्लचतुर्दशीको अनन्त-चतुर्दशी कहते हैं। उस दिन अनन्तव्रत, डोरकधारण और चतुर्दश पिष्टक भक्षण करना उचित है। अनन्तव्रत देखो।

जैनमतानुसार क्या शुक्ल और क्या कृष्णपक्ष प्रत्येक चतुर्दशीको उपवास या एकासना (एक समय भोजन करना) चाहिये। चतुर्दशीको किसी प्रकारकी हिंसा न करनी चाहिये। झूठ बोलना, परस्त्रीका चाहना, चोरी करना, कराना वा चोरीका माल लेना ये सब कार्य चतुर्दशीमें निषिद्ध हैं। चतुर्दशीके दिन प्रातःकाल मध्याह्न और सायंकाल, तीनों समय णमोकार मन्त्रका जाप करना उचित है। उस दिन पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करना और स्वाध्याय आदि शुभकार्योंमें समय बिताना चाहिये। भाद्रमासकी शुक्ल चतुर्दशी दश-लाक्षणी पूजाका अन्तिम दिन है। उस दिन भारत-वर्षके प्रत्येक नगरमें जहां जहां जैन हों, वहां उत्सव होता है। उस दिन बच्चेसे ले कर बूढ़े तक तथा स्त्रियां भी उपवास और एकासना करतीं हैं। यह जैनियोंका वर्ष भरमें एक महान् दिन है। अद्भुत जगह जैन-मन्दि-रोंमें रात भर स्तुति और भजन हुआ करते हैं तथा रात्रिजागरण भी होता है। (बृहत् रत्नकरण्डश्रावकाचार)

दशलक्षणी धर्म देखो।

कार्तिक मासकी कृष्ण चतुर्दशीको भूतचतुर्दशी कहते हैं। इस दिन चौदह साग खाना, चौदह दिया जलाना और यमतर्पण करना उचित है। भूतचतुर्दशी देखो। अगहनकी शुक्ल चतुर्दशीमें गौरीकी पूजा करना और पाषाणाकार पिष्टक खाना चाहिये। कोई कोई इसे पाषाण-चतुर्दशी भी कहते हैं। माघ मासकी कृष्ण-चतुर्दशीका नाम रटन्ती-चतुर्दशी है। इसमें कालो पूजा और अरुणोदय समयमें स्नान किया जाता है।

रटन्ती देखो।

फाल्गुन मासकी कृष्णचतुर्दशीका नाम शिवचतु-र्दशी है। उस दिन शिवरात्रिव्रत, उपवास और शिव-पूजा कर्तव्य है। शिवरात्रि देखो। चैत्रमासकी कृष्णचतु-र्दशीमें मदनवृक्षके पल्लवसे कामदेवकी पूजा की जाती है। मदनपूजा देखो।

२ शीतनिर्गुण्डी।

चतुर्दिक् (सं० पु०) १ चारों दिशायें। २ (क्रि० वि०) चारों ओर।

चतुर्दिश (सं० क्ली०) चतसृणां दिशानां समाहारः, द्विगु। चारों दिशायें।

चतुर्दोल (सं० पु०-क्ली०) चतुर्भिर्वाहकैः दोल्यते उत्क्षिप्यते उह्यते, दोलि-घञ्। स्वनामख्यात यानविशेष, चौदोल, जिस डोलीको ४ आदमी उठावें।

"गामी य त्रिपदं यानं विशेषाख्यामलं विदुः।
चतुर्भिरुह्यते यत्तु चतुर्दोलं तदुच्यते॥" (युक्तिकल्पद्रुम)

भोजराजके मतमें जिस यानको चार आदमी उठाते और जिसमें ६ दण्ड तथा ८ स्तम्भ लगाते, चतुर्दोल ठह-राते हैं। यह चार प्रकारका होता है—जयचतुर्दोल, कल्याण-चतुर्दोल, वीरचतुर्दोल और सिंहचतुर्दोल। चार प्रकारके राजाओंको यथाक्रम चार प्रकारके ही चतुर्दोल व्यवहार्य हैं।

जयचतुर्दोल ३ हाथ लम्बा, २ हाथ चौड़ा और दोही हाथ ऊंचा होता है। ४ हाथ लम्बे, २॥ हाथ चौड़े और ढाई ही हाथ ऊंचे चतुर्दोलको कल्याण-चतुर्दोल कहा जाता है। जिस चतुर्दोलकी लम्बाई ५ हाथ, चौड़ाई ३ हाथ और ऊंचाई भी तीन ही हाथ होती, उसको वीरचतुर्दोल कहते हैं। ४ हाथ दीर्घ तथा ४

---

(२) "चतुर्दशीतु कर्तव्या त्रयोदश्या युता विभो।
मम भक्तै र्महाबाहो भवेद् या चापराह्णिकी॥" (तिथितत्त्व)

(३) "विरुद्धशीलः पुरुषः सरोषचोरकठोरः परवञ्चकश्च।
परान्नभोक्ता परदारचित्तश्चतुर्दशी चेत् जननस्य काले॥" (कोष्ठीप्र०)

हो हाथ विस्तृत और २ हाथ उच्च चतुर्दोलका नाम सिंहचतुर्दोल है।

छतदार चतुर्दोलोंको सच्छदिचतुर्दोल कहा जाता है। फिर बेछतका चतुर्दोल निश्छदि-चतुर्दोल है। समरस्थल और वर्षाकाल पर सच्छदि तथा केलि एवं अपर कालमें निश्छदि चतुर्दोल व्यवहार करना चाहिये। इसका वज्रवारण दण्ड सभी प्रकारके काष्ठसे प्रस्तुत किया जा सकता है। किन्तु चन्दन द्वारा सकल दण्ड परस्पर मिलित करना उचित है। महीपतियोंके चतुर्दोलमें वस्त्रनिर्मित लोलज, कनक, कुम्भ और पद्मकोष लगाया जाता है। एतद्भिन्न दर्पण, अर्धचन्द्र, हंस, मयूर, शुक प्रभृति मनोहर प्रतिमूर्तियां भी बनानी पड़ती हैं। चतुर्दोलको मणिके नियमदण्ड जैसा समझना चाहिये। इसमें पताका बांधनी पड़ती है। रक्त, शुक्ल, पीत, कृष्ण, चित्र, अरुण, नील या कपिल रङ्गोंमें किसी भी रङ्गकी पताका बन सकती है। पताकायुक्त चतुर्दोलके शुभयान कहते हैं। इस पर खञ्जन पक्षीकी पूंछ लगानेसे यात्रासिद्धि नामक चतुर्दोल कहलाता है। (भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु) यान देखो।

चतुर्द्वार (सं० क्ली०) चत्वारि द्वाराणि यस्य। १ वह घर जिसके चार मुंह हों। २ चार द्वार, चार दरवाजा।

चतुर्द्वीपचक्रवर्तिन्—चतुर्द्वीपके सम्राट्, चार द्वीपोंके बादशाह।

चतुर्धर—गणपतिगीताके एक भाष्यकार। नीलकण्ठ सूरि देखो।

चतुर्धरशिव—शिवमहिम्नस्तवके एक टीकाकार।

चतुर्धा (अव्य) चतुः प्रकारं धा। संख्याया विधार्थे धा। पा ५।३।४२। १ चार खण्ड, चार भाग।

"चाकृणोत चमसं चतुर्धा" (ऋक् ४।३५।३)

२ चार प्रकार, चार तरह। ३ चार बार या दफा।

चतुर्धाम—मथुराके चारों धाम, चार मुख्य तीर्थ—रामनाथ, वैद्यनाथ, जगन्नाथ और द्वारकानाथ। (भक्तमाल)

चतुर्बाहु (सं० पु०) चत्वारो बाहवो यस्य। १ विष्णु। २ शिव महादेव।

"पीताम्बरं चतुर्बाहुं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम्।" (देवीभा० १।४।३४)

चतुर्भद्र (सं० क्ली०) चतुर्णां धर्मार्थकाममोक्षाणां भद्राणां समाहारः। १ धर्मार्थकाममोक्ष, अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष इन चार पदार्थोंका समुच्चय। (त्रि०) धर्मार्थकाममोक्षयुक्त, अर्थ-धर्म-काम-मोक्षयुक्त।

"स चेन्मम सञ्जय! चतुर्भद्रतरस्त्वया।" भारत द्रोण

चतुर्भाग (सं० पु०) चार भागोंमेंसे एक, चौथाई।

"स राज्ञा तच्चतुर्भागं दाप्यस्तस्य च तद्धनम्।" (मनु ८।१७६)

चतुर्भुज (सं० पु०) चत्वारो भुजाऽस्य। १ चारभुजावाले विष्णु। २ विष्णुके अवतार वासुदेव।

"तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते।" (गीता) (क्ली०) ३ चतुष्कोणक्षेत्र (Square), वर्गाकार क्षेत्र। (त्रि०) ४ जिसके चार हाथ हों।

"शुककेशी चतुर्भुजाम्।" (श्यामारहस्य)

चतुर्णां धर्मार्थकाममोक्षाणां भुजः। ५ अर्थ, धर्म, काम और मोक्षभाजन। स्त्रियां टाप्। ६ गायत्रीरूपा महाशक्ति। (देवीभाग० १२।६।४७)

चतुर्भुज—१ एक ज्योतिषी। इन्होंने अद्भुतसागरसार नामक एक ज्योतिषशास्त्र बनाया था।

२ अशौचसंग्रह और अष्टादशसंस्कार नामके धर्मशास्त्रकार। रघुनन्दनने इनका नाम उद्धृत किया है।

३ विजयरामाचार्यके गुरु और गङ्गाभक्ति-तरङ्गिणीके प्रणेता। ४ सृष्टिकरणटोका नामक ज्योतिःशास्त्रके कर्ता।

५ कोङ्गूदेशके एक चेर राजा, गोविन्दके पुत्र।

६ एक परम वैष्णव राजा। ये करूरि नामक स्थानमें राज्य करते थे। किसी वैष्णवको पाने पर वे बहुत आदरके साथ उसकी सेवा करते थे। यह देख उनके एक विपक्ष राजाने किसी एक डोमको वैष्णवका भेष बना कर चतुर्भुजके निकट भेजा, परन्तु वैष्णवभक्त चतुर्भुजने किसी सूत्रसे यह जान लेने पर भी वैष्णववेशी डोमकी यथेष्ट सेवाशुश्रूषा की और बहुमूल्य जरीके वस्त्रमें एक कानी कौड़ी बांध कर उक्त राजाको उपहार देनेके लिये डोमके हाथ भेजवा दिया। राजा डोमके हाथसे वह कानी कौड़ी ले बहुतसे सज्जनोंको दिखा कर बोले, "मेरे परमशत्रु चतुर्भुजने इस तरहसे मेरा परिहास किया है!" तब किसी एक सभ्यने राजाको समझा कर कहा, "महाराज! यह परिहास नहीं है, आपका भ्रमसंशोधनके लिये उन्होंने ऐसा किया है। गौरसे विचार कर यह देखें कि कानी कौड़ी डोम है और जरीका वस्त्र

वैष्णववेश है, अतएव वैष्णववेश होने पर डोमको भी वैष्णवकी नांई भक्ति श्रद्धा करना कर्तव्य है।" यह सुन राजाकी आँखें खुलीं और उन्होंने अन्याय कार्य किया है यह अच्छी तरहसे समझ गये। उन्होंने चतुर्भुजके समीप जा क्षमा प्रार्थना की और उनसे वैष्णवधर्मकी दीक्षा ली। इस तरह वे दोनों आनन्दपूर्वक वैष्णवधर्म पालन करने लगे।

चतुर्भुजदास—गोकुलके रहनेवाले विट्ठलनाथके एक शिष्य। ये हिन्दी कवि थे। शिवसिंह और कृष्णानन्द व्यासदेवने इनकी व्रजभाषा उद्धृत की है। इन्होंने व्रजभाषामें भागवतका १०म स्कन्द अनुवाद किया है।

चतुर्भुजपण्डित—एक विख्यात नैयायिक। इन्होंने तत्त्वचिन्तामणिदीधितिविस्तारकी रचना की है।

चतुर्भुज मिश्र—१ अमरुशतकके भावचिन्तामणि नामक एक टीकाकार।

२ पण्डित शिवदत्त मिश्रके पिता तथा गोविन्दके बनाये हुए रसहृदयका एक टीकाकार।

चतुर्भुज मिश्र उपमन्यव—एक विख्यात संस्कृत शास्त्रवित्। इन्होंने संस्कृत भाषामें संक्षिप्त महाभारत, महाभारत टीका और देवीमाहात्म्यकी दुर्गाबोधिनी नामकी टीका प्रणयन की है।

चतुर्भुजरस (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा। रससिन्धु २ भाग, स्वर्ण, कस्तूरी, हरताल और मनःशिला, इनमेंसे प्रत्येकका १ भाग, घृतकुमारीके रसमें माड़ अण्डीके पत्तेमें लपेट कर अनाजके ढेरके भीतर तीन दिन रखना चाहिये। रोगीके रोगबलको समझ कर त्रिफलाचूर्ण मधुके साथ सेवन करानेसे वलीपलित, अपस्मार ज्वर, खाँसी, श्वाँस, शोथ, मन्दाग्नि, क्षय, हाथोंका कँपना, सिरका कँपना, देहका कँपना तथा वात, पित्त और कफ आदि निवारित होते हैं। (रसेन्द्रसारसं०)

चतुर्भुजा (सं० स्त्री०) १ एक विशिष्ट देवी। २ गायत्री रूपधारिणी महाशक्ति।

चतुर्भुजी—एक तरहके वैष्णव सम्प्रदाय। इस सम्प्रदायके प्रवर्तक एक साधु थे। प्रवाद है कि उस साधुने किसी समय चार भुजा धारण की थीं, तभी सम्प्रदायका नाम चतुर्भुज हुआ है। इनके आचार व्यवहार आदि रामानन्दियोंसे मिलते जुलते हैं। परन्तु ये अपने ललाटमें श्री धारण नहीं करते।

चतुर्महाराजकायिक—बोडशास्त्रोक्त महादीप्तिशाली चार देवताका नाम।

चतुर्मास (हिं० पु०) बरसातके चार महीनोंका चौमासा। यथा—आषाढ़, सावन, भादों और आश्विन।

चतुर्मुख (सं० पु०) चत्वारि मुखानि अस्य। १ ब्रह्मा। ब्रह्मा देखो। २ विष्णु। (रघु० १०।७२) (क्लो०) ३ चतुर्द्वारगृह, वह घर जिसके चार दरवाजे हों। (त्रि०) ४ चार मुखयुक्त, जिसके चार मुँह हों। स्त्रियां ङीप्। (क्लो०) चार मुख।

"पुराणस्य कवेस्तस्य चतुर्मुखसमीरिता।" (कुमार २।१७)

(पु०) ६ औषधविशेष, एक तरहकी दवा। ७ एक प्रकारका चौताला ताल। ८ नृत्यमें एक प्रकारकी चेष्टा।

चतुर्मुखरस (सं० पु०) १ वातव्याधिका वैद्यकोक्त एक औषध। सोना, पारा, गन्धक, लोहा, अभ्रक प्रत्येकका एक एक भाग घृतकुमारीके रसमें सान एरण्डके पत्तमें लपेट धान्यराशिमें रख देना चाहिये। यह २ रत्ती त्रिफला क्वाथके साथ सेवन करनेसे सर्वरोग विनष्ट होता है। चतुर्मुखरस पुष्टिकारक, बलकर और एकादश प्रकारका क्षयरोगनाशक है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

२ मुखके रोगका कोई औषध। रससिन्दूर १ भाग, स्वर्ण १ भाग और मनःशिला २ भाग एकत्र करके अलसीके तेलमें सान और गोला बना कपड़ेमें लपेट अलसीको पीस करके लेप चढ़ाते और ३ दिन दोला-यन्त्रमें पकाते हैं। इसको मुखमें रखनेसे जिह्वा, दन्त और मुखरोग अच्छा हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

चतुर्मुखस्थान—वृन्दावनमें एक तीर्थक्षेत्र। यहां एक समय ब्रह्मा तपस्या करते थे। आजकल यह स्थान चौमुहा नामसे प्रसिद्ध है।

चतुर्मूर्ति (सं० पु०) विराट्, सूत्रात्मा, अव्याकृत और तुरीय इन चारों अवस्थाओंमें रहनेवाला, ईश्वर, परमेश्वर।

चतुर्युग (सं० क्लो०) चतुर्णां युगानां समाहारः। सत्य,

त्रेता, द्वापर और कलि, इन चारों युगोंका समय, दैवमान-से इसका परिमाण ४३२०००० वर्ष है। युग देखो।

चतुर्युगी (सं० स्त्री०) चतुर्युग देखो।

चतुर्युज् (सं० त्रि०) चतुर्-युज-क्विप्। जिसमें चार बैल जोते जाते हों, जो चार बैलोंसे खींचा जाता हो।

"चतुर्युजो पुनरुक्तपरासृणौं वहिने दि घोडय।"

(कात्यायनश्रौत० १४।३।११)

'एकैकस्मिन् रथे चतुरश्चतुरोऽश्वान् युनक्ति।' (भाष्य)

चतुर्वक्त्र (सं० पु०) चत्वारि वक्त्राण्यस्य। १ चतुर्मुख ब्रह्मा। २ दानवविशेष, कोई राक्षस। (हरिवंश)

चतुर्वय (सं० त्रि०) चत्वारो वया अवयवा यस्य। चतुर्व्यूह, चार मनुष्यों अथवा पदार्थोंका समूह।

"सत्नमक्रुता चतुर्वयं।" (ऋक् १।११०।३)

चतुर्वर्ग (सं० पु०) चतुर्णां धर्मार्थकाममोक्षाणां वर्गः समूहः। अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष।

"त्रिवर्गो धर्मकामार्थैश्चतुर्वर्गः समोक्षकाः।" (हेम ६।१८)

चतुर्वर्गचिन्तामणि—हेमाद्रिकृत एक बृहत् स्मृति-निबन्ध। हेमाद्रि देखो।

चतुर्वर्ण (सं० पु०) चत्वारो वर्णाः संज्ञात्वात् न, समाहारः द्विगुः। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार वर्ण।

चतुर्वर्णादि—सिद्धान्तकौमुदोक्त एक गण।

"चतुर्वर्णादीनां स्वार्थ उपसंख्यानम्।" (सि०कौ०)

चतुर्वर्ण, चतुराश्रम, सर्वविद्य, त्रिलोक, त्रिस्वर, षड्गुण, सेना, अनन्तर, समीप, उपमा, सुख, तदर्थ, इतिह, मणिक ये सब शब्द चतुर्वर्णादिगणके अन्तर्गत हैं।

चतुर्वर्षिका (सं० स्त्री०) चार वर्षकी गाय।

"चतुस्त्र्यब्दीयां वाहायन्यो वादिवर्षिका।" (हेम ४।३।१८)

चतुर्वाहिन् (सं० पु०) चतुः-वह-णिनि। रथविशेष, चार घोड़ोंकी गाड़ी, चौकड़ी। (पंचविंशब्रा १६।१३)

चतुर्विंश (सं० त्रि०) चतुर्विंशतेः पूरणः डट्। १ चौबीस संख्याका पूरक, जिसके द्वारा चौबीस संख्याकी पूरी हो, चौबीसवां। (क्ली०) २ एकाह यागविशेष, एक दिनमें होनेवाला एक तरहका याग।

चतुर्विंशति (सं० स्त्री०) चतुरधिका विंशति। १ बीससे चार अधिक, चौबीसकी संख्या। २ जिसकी चौबीस संख्या हों। (शुक्लयजु १४।२५)

चतुर्विंशतिक (सं० त्रि०) चतुरधिका विंशति यत्र कप्। चौबीस संख्यायुक्त, जिसमें चौबीस संख्या हों। (पु०) सांख्योक्त चौबीस तत्त्व।

"पञ्चभिः पञ्चभिः ब्रह्म चतुर्भि दशभिस्तथा।
एतच्चतुर्विंशतिकं गणं प्राधानिकं विदुः॥" (भागवत ३।२६।११)

सांख्य देखो।

चतुर्विंशतिकामदेव (सं० पु०) जैनमतानुसार प्रत्येक चतुर्थकाल (दुखम सुषमा) में होनेवाले चौबीस कामदेव होते हैं। इनके नाम—१ बाहुबली, २ अमितेज, ३ श्रीधर, ४ दशभद्र, ५ प्रसेनजित्, ६ चन्द्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती), ९ वत्सराज, १० कनकप्रभ, ११ मेघवर्ण, १२ शान्तिनाथ (तीर्थङ्कर), १३ कुन्थुनाथ (तीर्थङ्कर), १५ वि यराज, १६ श्रीचन्द्र, १७ राजा नल, १८ हनुमान, १९ बलराजा, २० वसुदेव, २१ प्रद्युम्नकुमार, २२ नागकुमार, २३ श्रीपाल, २४ जम्बूस्वामी। (उत्तरपुराण)

चतुर्विंशतितम (सं० त्रि०) चौबीस संख्याका पूरण, चौबीस।

चतुर्विंशति-तीर्थङ्कर (सं० पु०) प्रत्येक चतुर्थकालमें होनेवाले २४ तीर्थङ्कर। तीर्थङ्कर देखो।

चतुर्विंशतिमूर्ति (सं० स्त्री०) विष्णुके हाथ और चक्रादि विन्यास भेदसे २४ मूर्तिभेद। अग्निपुराणमें उन चौबीस मूर्तियोंका वर्णन इस प्रकार है—

दूसरे पृष्ठमें देखो।

चतुर्विद्या (सं० स्त्री०) चतस्रः विद्या संज्ञायां, कर्मधा०। १ ऋक्, यजुः, साम और अथर्व इन चारों वेदोंकी विद्या। चतस्रा वेदस्वरूपा विद्या यस्य। २ चतुर्वेदाभिज्ञ, वे जो चारों वेद जानते हों। चातुर्वेद्य देखो।

चतुर्विध (सं० त्रि०) चतस्रो विधा यस्य। चार तरह, चार तरकीब।

"एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।" (मनु २।१२)

चतुर्वीज (सं० क्ली०) चतुर्णां वीजानां समा०। काला जीरा, मेथी, हालिम, और अजमाइन इन चार प्रकारके वीजोंका समूह। भावप्रकाशके मतानुसार यह नित्य भक्षण करनेसे वायु, आमय, अजीर्ण, शूल, आध्मान, पार्श्वशूल और कमरकी वेदना जाती रहती है।

मूर्त्तियोंके नाम	ऊपरके दाहिने	नीचेके दाहिने	ऊपरके बायें	नीचेके बायें
१ केशव	पद्म	शङ्ख	चक्र	गदा
२ नारायण	शङ्ख	पद्म	गदा	चक्र
३ माधव	गदा	चक्र	शङ्ख	पद्म
४ गोविन्द	चक्र	गदा	पद्म	शङ्ख
५ विष्णु	गदा	पद्म	शङ्ख	चक्र
६ मधुसूदन	चक्र	शङ्ख	पद्म	गदा
७ त्रिविक्रम	पद्म	गदा	शङ्ख	चक्र
८ वामन	शङ्ख	चक्र	गदा	पद्म
९ श्रीधर	पद्म	चक्र	गदा	शङ्ख
१० हृषिकेश	गदा	चक्र	पद्म	शङ्ख
११ पद्मनाभ	शङ्ख	पद्म	चक्र	गदा
१२ दामोदर	पद्म	शङ्ख	गदा	चक्र
१३ वासुदेव	गदा	शङ्ख	चक्र	पद्म
१४ सङ्कर्षण	गदा	शङ्ख	पद्म	चक्र
१५ प्रद्युम्न	चक्र	शङ्ख	गदा	पद्म
१६ अनिरुद्ध	चक्र	गदा	शङ्ख	पद्म
१७ पुरुषोत्तम	चक्र	पद्म	शङ्ख	गदा
१८ अधोक्षज	पद्म	गदा	शङ्ख	चक्र
१९ नृसिंह	चक्र	पद्म	गदा	शङ्ख
२० अच्युत	गदा	पद्म	शङ्ख	चक्र
२१ उपेन्द्र	शङ्ख	गदा	चक्र	पद्म
२२ जनार्दन	पद्म	चक्र	शङ्ख	गदा
२३ हरि	शङ्ख	चक्र	पद्म	गदा
२४ कृष्ण	शङ्ख	गदा	पद्म	चक्र

चतुर्वीर (सं० त्रि०) चार दिन साध्य सोमयागविशेष चार दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका सोमयाग।

"अथि चतुर्वीरनामदग्न्यवसिष्ठसंसर्गविश्वामित्राः।"
(कात्यायन-श्रौतसू० २२।२।१)

२ अञ्जनविशेष, सुरमा, काजल।

"चतुर्वीरं मेघतिव्यचतुर्भ्यो।" (अथर्व १९।४५।५)

चतुर्वृष (सं० त्रि०) चत्वारो वृषा यस्य, बहुव्री०। जिसके चार बैल हों।

"यदि चतुर्वृषोऽसि सृजारसोऽसि।" (अथर्व ५।१६।४)

चतुर्वेद (सं० पु०) चत्वारो वेदा अस्य, बहुव्री०, चतुरो वेदान् वेत्ति अधीते वा विद्-अण्, उपपदस०। १ परमेश्वर, ईश्वर।

"चतुर्वेदश्चतुर्होत्रश्चतुरात्मा सनातनः।" (हरिवंश २३८ अ०)

(त्रि०) २ चतुर्वेदाभिज्ञ, चारों वेद जाननेवाला, जो चारों वेद जानते हों। ३ जिनने चारों वेदका अध्ययन किया हो। (पु०) चत्वारश्चते वेदाश्चेति कर्मधा०। ४ चारों वेद।

चतुर्वेदपुर—युक्तप्रदेशके बनारस जिलेका एक प्राचीन ग्राम। भविष्य-ब्रह्मखण्ड नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—स्वर्गभूमिके मध्यभागमें काशीसे प्रायः एक योजन पथ दूर पर चतुर्वेदपुर अवस्थित है। पूर्वकालको काशी-राजने गोमती-गङ्गासङ्गम पर सोमयज्ञ किया था। उन्होंने कान्यकुब्ज देशसे चतुर्वेदपारग कई एक ब्राह्मण बुला करके वह यज्ञ पूरा किया। दक्षिणा-स्वरूप उन्हें एक ग्राम दिया गया। चातुर्वैद्योंके वाससे उसी ग्रामका नाम चतुर्वेदपुर पड़ा था। यवनाधिकार कालको यहां वेदज्ञ ब्राह्मणोंका बड़ा ही अभाव हुआ, अनेक ब्राह्मण नेपाल राज्यमें चले गये। इसी पापसे वह ग्राम विध्वस्त और पातालगामी हुआ कि विक्रमशकके अन्तमें यवनोंने वहां गोवध किया था। (भ० ब्रह्मखण्ड ५६।४७-५६)

चतुर्वेदवित् (सं० पु०) चतुरोवेदान् वेत्ति विद्-क्विप्। १ विष्णु।

"चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात्।" (विष्णुसह०)

(त्रि०) २ चतुर्वेदाभिज्ञ, चारों वेद जाननेवाला।

चतुर्वेदिन् (सं० त्रि०) चत्वारो वेदाः सन्त्यस्य चतुर्वेद-इनि। १ चारों वेदोंका जाननेवाला। २ ब्राह्मणोंकी एक जाति। चौबे देखो।

चतुर्व्यूह (सं० पु०) चत्वारो व्यूह यस्य, बहुव्री०। १ विष्णु।

"चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः।" (विष्णुसह०) भाष्यकारके मतसे विष्णुके शरीरपुरुष, छन्दःपुरुष, वेदपुरुष और महापुरुष ये चार रूप हैं, इसलिये विष्णुका नाम चतुर्व्यूह हुआ है।

पुराणके अनुसार विष्णुने सृष्टि प्रभृति कार्यके लिए चार भागोंमें विभक्त हो कर वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन चार मूर्तियोंमें अवतार लिया था,

इसलिये ये चारों मूर्ति रूप व्यूह चतुष्टय होनेसे विष्णुका नाम चतुर्व्यूह हुआ है।

"व्यूहात्मानं चतुर्धा वै वासुदेवादि मूर्तिभिः।
सृष्ट्यादीन् प्रकरोत्येष विश्रुतात्मा जनार्दनः।" (विष्णुपुराण)

(क्लो०) २ चिकित्साशास्त्र। ३ योगशास्त्र।

चतुर्हनु (सं० त्रि०) चत्वारो हनवो यस्य, बहुव्री०। १ जिसकी चार ठुड्डी या ठोढ़ी हों। (पु०) २ दानवविशेष, एक राक्षसका नाम।

चतुर्हायण (सं० त्रि०) चत्वारो हायना यस्य, बहुव्री०, णत्वं। चार वर्षकी उमरवाला। जिसकी उम्र चार वर्षकी हो।

चतुर्होतृ (सं० पु०) चत्वारश्चते होतारश्चेति, कर्मधा०। १ चार मनुष्य होता, होम करनेवाले चार मनुष्य।

"चतुर्होतार आप्रियश्चातुर्मास्यानि नीविदः।" (अथर्व ११।७।१९)

चत्वारो होतारो यस्य, बहुव्री०। २ विष्णु।

"चातुराश्रम्य वेत्ता च चतुर्होता महाकविः।" (हरिवंश १७९ अ०)

चतुर्होत्र (सं० पु०) चत्वारि होत्राणि होमा यस्य, बहुव्री०। विष्णु, परमेश्वर।

"चतुर्वेदश्चतुर्होत्रश्चतुरात्मा सनातनः।" (हरिवंश २१८ अ०)

चतुर्होत्रक (सं० क्ली०) चत्वारो होतारो यत्र कर्मणि, बहुव्री०, कप्। निपातने साधु। जिस कर्ममें चार होम करनेवाले हों, यज्ञ।

"यथा चतुर्होत्रकविद्यया च।" (भागवत ७।३।३०)

'चत्वारो होतारो यत्र तच्चतुर्होत्रकं कर्म' (श्रीधर)

चतुल (सं० त्रि०) चत-उलच। स्थापयिता, स्थापक, स्थापन करनेवाला।

चतुश्चक्र (सं० क्ली०) रुद्रयामलोक्त एक चक्र। इसके द्वारा मन्त्रका शुभाशुभ विचार किया जा सकता है। इस चक्रके अङ्कित करनेका नियम है—प्रथम पूर्व-पश्चिममें पांच रेखाएं खींच करके उस पर उत्तर-दक्षिणमें और ५ रेखाएं खींचनेसे १६ कोष्ठयुक्त एक चक्र बनता है। इस चक्रके पहले ४ कोठे स्निग्ध, शीतल, जल और सिद्ध हैं। उसकी दाहिनी ओरके चार कोष्ठ आह्लाद, प्रत्याय, मुख्य और शुद्ध, अधोभागवाले लौकिक, सात्विक, मानसिक एवं राजसिक और वामभागके चारों सुप्त, छिन्न, लिप्त तथा दुष्टमन्द कहलाते हैं। स्निग्ध कोष्ठमें अ उ लृ, शीतल कोष्ठमें आ ऊ लॄ, जल कोष्ठमें इ ऋ ओ और सिद्ध कोष्ठमें ई ॠ औ वर्ण लिखना चाहिये। इसी प्रकारसे आह्लादमें क ख झ ञ, प्रत्यायमें ग घ च, मुख्यमें ङ ट ठ शुद्धमें ढ ण त, लौकिकमें थ द म, सात्विकमें ध न य, मानसिकमें प फ, राजसिकमें ०, सुप्तमें ब भ, छिन्नमें श ल, लिप्तमें ष क्ष और दुष्टमन्दमें स और विन्दु लिखा जाता है। इसीका नाम चतुश्चक्र है। इसके मध्य सिद्ध कोष्ठमें मन्त्रवर्ण रहनेसे साधकको सब प्रकार सुखप्राप्ति और आह्लादादि कोष्ठ चतुष्टयमें मन्त्रवर्ण स्थित होनेसे शुभाशुभ फल मिलता है। सुप्त आदि कोष्ठ चतुष्टयमें स्थित होनेपर उस मन्त्रसे विघ्न पड़ता है। अर्थात् इन चारों गृहोंमें जो वर्ण आते, उनको छोड़ करके अपर मन्त्र ग्रहण करनेसे ऐहिकमें सिद्धि और चरममें मुक्ति होती है। यदि किसी साधकके दुरदृष्टसे सुप्तादि कोष्ठ चतुष्टयमें मन्त्रवर्ण लक्षित हो, तो भूतलिपि द्वारा पुटित करके जप करना चाहिये। क्योंकि वैसा करनेसे सिद्धि मिल जाती है। चतुश्चक्र इस प्रकारसे बनाना पड़ता है—

चतुश्चक्र।

स्निग्ध अ उ लृ	शीतल आ ऊ लॄ	आह्लाद क ख झ ञ	प्रत्याय ग घ च
सिद्ध ई ॠ औ	जल इ ऋ ओ	शुद्ध ढ ण त	मुख्य ङ ट ठ
सुप्त ब भ	छिन्न श ल	लौकिक थ द म	सात्विक ध न य
दुष्टमन्द स अं	लिप्त ष क्ष	राजसिक ०	मानसिक प फ

चतुश्चत्वारिंश (सं० त्रि०) चतुश्चत्वारिंशत् पूरणार्थे डट्। चौवालीस संख्याका पूरक, चौवालीसवां।

चतुश्चत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) चतुरधिका चत्वारिंशत्, मध्यपदलो०। चालीस संख्यासे चार अधिक, चौवालीस। २ चौवालीस संख्यायुक्त, जिसकी चौवालीस संख्या हो।

चतुश्चत्वारिंशत्तम (सं० त्रि०) चतुश्चत्वारिंशत्-तमट्। चतुश्चत्वारिंश, चौवालीस।

चतुश्छद (सं० पु०) १ चाङ्गेरी, चौपतिया। २ सुनिसस्पक, चनपत्ती।

चतुश्शाल (सं० त्रि०) चतस्रः शाला यत्र, बहुव्री०। १ जिसमें चार कमरे हों।

(क्ली०) चतसृणां शालानां समाहारः, द्विगु। २ विश्वकर्मप्रकाशके मतसे जिसके अलिन्दका अवच्छेद नहीं है अर्थात् चारों ओर अलिन्द परस्पर मिले हों और जिसमें चार दरवाजे रहें, वही चतुःशाल कहलाता है। चतुःशाल देखो।

"अलिन्दानां व्यवच्छेदो नास्ति यत्र समन्ततः।
यद्वास्तु सर्वतोभद्रं चतुर्द्वार समन्वितम्॥" (विश्वकर्म प्र० २ अ०)

चतुश्शृङ्ग (सं० त्रि०) चत्वारि शृङ्गाणि यस्य, बहुव्री०। जिसके चार सींग हों।

"चतुश्शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्।" (ऋक् ४।५८।२)
'चतुश्शृङ्गः चत्वारि शृङ्गाणि वेदचतुष्टयरूपाणि यस्य सः' (सायण)

(पु०) २ पुराणोंके अनुसार कुशद्वीपके एक वर्षके पर्वतका नाम।

चतुश्श्रोत्र (सं० त्रि०) चत्वारि श्रोत्राणि यस्य, बहुव्री०। जिसके चार कान हों।

"अष्टापदी चतुरक्षी चतुःश्रोत्रा चतुर्हनुः।" (अथर्व ५।१९।७)

चतुष्क (सं० त्रि०) चत्वारोऽवयवा यस्य चतुर्-कन्। १ जिसके चार अवयव हों, जिसके चार अंग या पार्श्व हों, चौपहल।

"पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम्।
एतत् कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे।" (मनु० ७।५)

२ गृहविशेष, एक प्रकारका घर।

"चतुष्कपुष्पप्रकरावकीर्णयोः परोऽपि कोनाम तवानुमन्यते।" (कुमार ५।६८)

३ यष्टिविशेष, एक तरहकी छड़ी या डंडा। (पु०) ४ राजतरङ्गिणी-वर्णित एक राजाका नाम। (राजत० ८।२८८१)

चतुष्कर (सं० पु०) चत्वारः करा यस्य, बहुव्री०। वह जन्तु जिसके चारों पैरोंके अग्रभाग हाथके समान हों, पंजेवाले जानवर। (त्रि०) हस्त चतुष्टययुक्त, जिसके चार हाथ हों।

चतुष्करिन् (सं० पु०) चत्वारः करा भूम्ना सन्त्यस्य चतुष्कर-इनि। चतुष्कर देखो।

चतुष्कर्ण (सं० त्रि०) चत्वारः कर्णा यतन्ते यत्र, बहुव्री०। १ जो सिर्फ चार कानोंमें पहुंचा हो, जिसे सिर्फ चार मनुष्योंने सुना हो।

"षट्कर्णो भिद्यते मन्त्रश्चतुष्कर्णः स्थिरो भवति।" (पञ्चतन्त्र)

२ जिसके चार कान हों।

चतुष्कर्णी (सं० स्त्री०) चत्वारः कर्णा अस्याः, बहुव्री०, ततः ङीप्। कार्तिकेयको अनुचरी एक मातृकाका नाम।

चतुष्कल (सं० पु०) चतस्रः कला मात्रा यत्र, बहुव्री०। छन्दःशास्त्रप्रसिद्ध मात्रागणविशेष, जिस गणमें चार मात्राएं हों उसे चतुष्कल गण कहते हैं। इस गणके पांच भेद हैं—सर्वगुरु, आदिगुरु, मध्यगुरु, अन्तगुरु और सर्वलघु। मात्रावृत्त देखो।

चतुष्किका (सं० स्त्री०) चतुःसंख्या, चार संख्या।

चतुष्किन् (सं० त्रि०) चतुष्क-इनि। चतुष्कयुक्त, जिसमें चार किनारे हों।

चतुष्की (सं० स्त्री०) चतुष्क स्त्रियां ङीप्। १ पुष्करिणीका एक भेद। २ मसहरी।

'चतुष्की मशकहर्यां पुष्करिण्यन्तरेऽपि च।' (मेदिनी)

३ चौकी।

चतुष्कोण (सं०त्रि०) चत्वारः कोणा यत्र। चार कोणवाला, चौकोर, चौकोना। (क्ली०) २ चारकोणविशिष्ट क्षेत्र, वह क्षेत्र जिसमें चार कोण हों, वर्गाकार खेत। (Square Quadrangle)

चतुष्टय (सं० त्रि०) चत्वारोऽवयवा यस्य तयप्। संख्याया अवयवे तयप्। पा ५।२।४२। ततोरेफस्य विसर्गे सत्वे च कृते षत्वं। (कुप्वाद्यादौ नक्षिते। पा ८।३।१०१) १ चतुरवयवयुक्त, जो चार भागोंमें विभक्त है।

"चतुष्टयं युज्यते संहितान्तं।" (अथर्व वहि १०।२।३)

२ चतुर्विध, चार प्रकार, चार रकम।

"तदेव सर्वमप्येतत् प्रयुञ्जीत चतुष्टयम्।" (मनु)

(क्ली०) चतुर्णामवयवः तयप्। ३ चारकी संख्या। ४ चार चीजोंका समूह। ५ जन्मकुण्डलीमें केन्द्र, लग्न और लग्नसे सातवां तथा दशवां स्थान।

"केन्द्रं चतुष्टयं ज्ञेयं।" (नीलकण्ठताजक)

चतुष्टोम (सं० पु०) चतुरुत्तरः स्तोमः, मध्यपदलो०। १ चारस्तोमवाला एक यज्ञ। (शतपथ: १३।२१) चतुर्दिक्षु स्तूयमानत्वात्। वायु, हवा।

'य एव चतुष्टोम स्तोमस्तं तदुपदधाति।'' (शतपथब्रा० १८।४।१।१६)

३ स्तोमविशेष, किसी स्तोमका नाम।

''समीचीदिंश: स्तुत्नाश्चतुष्टोम:।'' (शुक्लयजु ३४।२५)

४ (त्रि०) चार भागोंमें बँटा हुआ स्तोम संबन्धीय।

''पशुकामयजो चतुष्टोमो।'' (कात्या० श्रौतसू० २२।१०।१८)

चतुष्पञ्चाशत् (सं० स्त्री०) चतुरधिका पञ्चाशत्। पचास संख्यासे चार अधिक, चौवनकी संख्या।

चतुष्पत्री (सं० स्त्री०) चत्वारि पत्राण्यस्या जातित्वात् ङीष्। १ सुनिषण्णक शाक, सुसना नामका साग, चौपतिया। २ क्षुद्रपाषाणभेदी लता, छोटी अमलोनी। ३ चण्डालकन्द। ४ भिण्टी।

चतुष्पथ (सं० पु०) चत्वार: पन्थानो ब्रह्मचर्यादय आश्रमा यस्य स:। ऋक्पूरब्धूःपथा मानचे। पा ५।४।७४ इदुदुपधस्येति। पा ८।३।४१ इति षत्वम्। १ ब्राह्मण। (क्लो०) २ वह स्थान जहां चार रास्ता चारों ओरसे आ मिले हों, चौराहा, चौमुहानी।

''मदवान् देवतं विप्रं घृतं मधु चतुष्पथम्।'' (मनु० ४।३९)

चतुष्पथनिकेता (सं० स्त्री०) कुमारकी अनुचरी मातृका भेद।

''चतुष्पथनिकेता च गोकर्णी महिषानना।'' (भारत शल्य ४७ अ०)

चतुष्पथरता (सं० स्त्री०) कार्तिकेयकी एक मातृकाका नाम। (भारत शल्य० ४७ अ०)

चतुष्पद (सं० पु०) चत्वारि पदानि यस्य। १ गवादि जन्तु, पशु, चौपाया। (Quadrupeds) जिस जीवके चार पांव रहते, प्रधानत: उसीको चतुष्पद कहते हैं। परन्तु प्राणितत्त्ववित् इस प्रकारसे सभी जीवोंको चौपाया जैसा नहीं मानते। जिन जन्तुओंके अङ्ग प्रत्यङ्ग परिपुष्ट पाते और विशेषत: जो चार पांवसे यथेष्ट चलत्शक्ति दिखलाते, यह उन्हीं स्तन्यपायियोंको चतुष्पद जन्तु बतलाते हैं। स्तन्यपायी देखो।

२ तिर्यग् रूप ध्रुवकरणभेद। कोष्ठीप्रदीपके मतानुसार चतुष्पद करणमें जन्मग्रहण करनेसे मनुष्य सदाचारहीन, अति अल्पधन और क्षीणदेह होता है। ३ मकरादिका प्रथमार्ध, धनुका शेषार्ध, मेष, वृष और सिंह राशि। (क्लो०) ४ चार चरणविशिष्ट पद्य, चौतुका। ५ रोग निराकरणके चार उपाय। सुश्रुतने लिखा है—वैद्य, रोगी, औषध और परिचारक चारों पाद चिकित्सा कार्यके उपयोगी होते हैं। वैद्य गुणवान् और अपर तीनों उपयुक्त गुणविशिष्ट होनेसे महत् रोग भी शीघ्र अच्छा हो जाता है। शास्त्रार्थपारदर्शी, दृष्टकर्मा, कार्यक्षम, लघुहस्त, शुचि, शूर, औषध तथा अस्त्रचिकित्साके सकल उपकरणोंमें पटु, प्रत्युत्पन्नमति, बुद्धिमान्, व्यवसायी और धर्म एवं सत्यपरायण वैद्य ही चिकित्साकार्यमें प्रथम पद-जैसा गण्य है। औषध वही चिकित्साका तृतीय पाद-जैसा परिगणित है, जो प्रशस्त देशमें उत्पन्न, अच्छे दिनको उद्धृत, मनको प्रीतिकर, गन्धवर्ण रसविशिष्ट, दोषघ्न, ग्लानिहीन, विपर्ययमें भी विकार न रखनेवाला और उपयुक्त समय तथा उपयुक्त मात्रामें दिया जाता हो। बुद्धिमान्, आस्तिक, वैद्य मतानुरागी, साध्य और आयुष्मान् रोगी चिकित्साकार्यका द्वितीय पाद कहलाता है। नम्र, बलवान् रोगीके प्रति यत्नशील, परनिन्दा न करनेवाला, परिश्रमी और वैद्यके कहने पर चलनेवाला परिचारक चिकित्साका चतुर्थ पाद है।

चतुष्पदवैकृत (सं० क्लो०) चतुष्पद जन्तुके प्रसव आदिका एक उत्पात। वराहमिहिरने उक्त उत्पात वा विकारके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है।

तिर्यक्योनिका परयोनिमें अभिगमन अमङ्गलजनक है। धेनुगण वा वृषद्वयका परस्पर स्तन्यपान वा कुत्तेका बछड़ेका साथ वैसा ही करना भी अच्छा नहीं होता। इससे तीन महीनोंमें निःसन्देह परागमन हुआ करता है। गर्गने इसकी शान्तिके सम्बन्धमें कहा है कि वैसा चतुष्पद जन्तु त्याग निर्वासन वा ब्राह्मणको दान करनेसे शीघ्र शुभ होता है। इसमें ब्राह्मणको तृप्त करके जप और होम कराना चाहिये। पुरोहितको प्राजापत्य मन्त्रसे स्थालीपाक और पशु द्वारा धाताको यजन करना तथा बहुदक्षिणा देना चाहिये। (वृहत्संहिता ४६।५८-५९)

चतुष्पदा (सं० स्त्री०) १ चौपैया छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें ३० अक्षर होते हैं। २ जलजपुष्पविशेष। ३ भेण्डा।

चतुष्पदी (सं० स्त्री०) चत्वार: पादा यस्या:। संख्यासुपूर्वस्य। पा ५।४।१४०। इति अन्तलोपे, ततः ङीप्। पादोऽन्यतरस्याम्। पा ४।१।८ पाद: पत् पा ६।४।१३० इति पदादेश:। चार चरणयुक्त पद्य, चौपदी, चार पादका गीत। २ चौपाया

छन्द, जिसके प्रत्येक चरणमें १५ मात्राएं और अंतमें गुरु लघु होते हैं।

चतुष्पर्णी (सं० स्त्री०) चत्वारि पर्णान्यस्य ङीप्। १ सुनिषस्क शाक, जलके किनारे होनेवाला सुसना नामक साग। २ छोटी अमलोनो।

चतुष्पाटो (सं० स्त्री०) चतस्रो दिशः पाटयति पाटि-अण, उपपदस०। नदी।

चतुष्पाठी (सं० स्त्री०) चतुर्णां वेदानां पाठो यत्र गौरादि० ङीष्। छात्राध्ययन स्थान, विद्यार्थियोंके पढ़नेका स्थान, पाठशाला।

चतुष्पाणि (सं० पु०) चत्वारः पाणयो यस्य। १ विष्णु। २ चार हाथविशिष्ट, जिसके चार हाथ हों।

चतुष्पाद् (सं० त्रि०) चत्वारः पादा अस्य अन्त्यलोपः समा०। चार चरणयुक्त गोमहिषादि, चार पाँववाले, चौपाया। २ चार भाग, चार खण्ड।

"चतुष्पादेति त्रिपदामभिस्वरे।" (ऋक् १०।११७।८)

'चतुष्पाच्चतुर्भागधन:' (सायण)

चतुष्पाद (सं० त्रि०) चार खण्डमें विभक्त, चार भागोंमें बँटा हुआ।

"चतुष्पादं पुराणन्तु ब्रह्मणा विहितं पुरा।" (ब्रह्मपु०)

२ चौपाया पशुसे किया हुआ। (पु०) ३ चार भाग, चार खण्ड।

चतुष्पुटोदरा (सं० स्त्री०) पीतपुष्प करवीर वृक्ष।

चतुष्पुराड्र (सं० पु०) भिक्षाक्षुप।

चतुष्फल (सं० त्रि०) चौफला, जिसमें चार फल हो।

चतुष्फला (सं० स्त्री०) नागबला।

चतुस्तन (सं० स्त्री०) चत्वारः स्तना यस्या बाहुलकात् न ङीप्। चार स्तनयुक्त गौ, चार स्तनवाली गाय।

"सा चतुस्तना भवति चतुस्तना हि गौः।" (शतपथ ब्रा० ६।५।२।१८)

चतुस्ताल (सं० पु०) एक प्रकारका चौताला ताल जिसमें तीन द्रुत और एक लघु होता है।

चतुस्त्रिंश (सं० त्रि०) चतुस्त्रिंशत् संख्या पूरणे डट्। चौतिश, चौंतीस।

चतुस्त्रिंशत् (सं० स्त्री०) चतुरधिका त्रिंशत्। चौंतीसकी संख्या।

चतुस्त्रिंशज्जातकज्ञ (सं० पु०) बुद्धभेद, बुद्धका एक नाम।

'चतुस्त्रिंशज्जातकज्ञो दशपारमिताधरः।' (हेम ११४७)

चतुस्सन (सं० पु०) चत्वारः सनेति शब्दा नाम्नि येषां सन-अच्। १ ब्रह्मपुत्र सनक, सनत्कुमार, सनन्दन और सनातन ये चार ऋषि। चतुर्णां धर्मार्थकाममोक्षाणां सनः दाता अच्। २ विष्णु।

"आदौ सनात् स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत्।" (भागवत २।७।५)

चतुस्सम (सं० क्ली०) हड़, लौंग, जीरा और अजवाइन इन सबोंके बराबर बराबर भाग औषध। यह पाचक, भेदक और आमशूलनाशक होता है। २ एक गन्धद्रव्य जिसमें २ भाग कस्तूरी, ४ भाग चन्दन, ३ भाग कुंकुम और ३ भाग कपूरका रहता है।

चतुःसाह—कम नाशा नदीके तट पर अवस्थित एक अत्यन्त प्राचीन ग्राम। पहले यहां सङ्गमेश नामक लिङ्गका एक बड़ा मन्दिर था। सिद्धाश्रमसे चार वणिक्ने आ चतुःसाह ग्राम स्थापन और भग्नावशेषके ऊपर एक मन्दिर बना कर लिङ्गकी प्रतिष्ठा की थी। यहां मिट्टीके बने हुए दुर्गका खण्डहर देखा जाता है। कम नाशाके जलसे यह ग्राम जलमग्न होनेकी सम्भावना है। (भ० ब्रह्मखण्ड ५८।४४।४८)

चतुस्सूत्री (सं० स्त्री०) व्यासदेवके बनाये वेदान्तके प्रथम चार सूत्र। ये बहुत कठिन हैं और इन पर भाष्यकारोंका बहुत कुछ मतभेद है। ये चारों सूत्र पढ़नेके लिए मनुष्योंको यथेष्ट परिश्रम करने होते हैं।

चतुस्स्रक्ति (सं० त्रि०) 'चतस्रः स्रक्तयः कोणादि रूपा यस्य स।' (महीधर) चतुर्दिगवच्छिन्न, चारों ओर फैला हुआ।

"चतुःस्रक्तिर्नाभि ऋर्तस्य।" (शुक्लयजु० ३८।२०)

चतूराजी (सं० स्त्री०) सतरञ्ज खेलमें राजा स्वपदस्थित दूसरे राजाको मार कर चतूराजी होता है। चतुरङ्ग देखो।

चतूरात्र (सं० क्ली०) चतसृभिः रात्रिभिर्निर्वृत्तः अण् तस्य लुक् वा अच् समासः। १ चार रात्र, चार रात। २ चार रात्रिसाध्य यज्ञभेद, चार रात्रियोंमें होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ। कात्यायनश्रौतसूत्रके मतसे 'चतुरात्र' (१८।१।१४) अर्थात् चार रात्रिमें यह यज्ञ करना चाहिए। भाष्यकार कर्काचार्यके अनुसार "पौर्णमास्या सर्वे ह्यो माभूवन्निति" अर्थात् पूर्णिमाकी रातको यह यज्ञ करना निषेध है। इसमें एक हजार दक्षिणा देनी होती है।

"चतूरात्रः पञ्चरात्र षड्रात्रश्चोभयः सह।" (मैत्र्य० ११।७।११)

चत्रा—बङ्गालके हजारीबाग जिलेके सदर उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २४° १२´ उ० और देशा० ८४° ५३´ पू० पर हजारीबाग शहरसे ३६ मील उत्तर-पश्चिममें पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १०५९८ है। १८६९ ई०में यहां म्युनिसिपालिटीका प्रबन्ध किया गया है। यहांकी आय ६०००) रु० और व्यय ५०००) रु० है। यह शहर वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध है।

चत्वर (सं० क्लो०) चत्यते स्वीक्रियते चत-ष्वरच्। कृगृशृवृचतिभ्यः ष्वरच्। उण् ३।११२। १ स्थण्डिल, होमके लिये साफ किया हुआ स्थान। २ घरका आँगन। ३ चबूतरा।

"गृहाणां गृहवास्तूनि कार्यन्तामिह चत्वराः।" (हरिवंश ११३ अ०)

४ वह स्थान जहां चारों रास्ता आ मिले हों, चौराहा, चौरास्ता, चौमुहानी।

"चतुष्पथेषु सर्वेषु चत्वरेषु च कौरव।" (भारत ३।१५।२०)

५ वह स्थान जहां भिन्न भिन्न देशोंसे लोग आ कर रहें, मठ, धर्मशाला।

"प्रविश्य चत्वरे गत्वा छायायां नगराद्वहिः।" (कथासरित् ६।४१)

चत्वरवासिनी (सं० स्त्री०) चत्वरे वस्तुं शीलमस्याः वस-णिनि-ङीप्। कार्त्तिकेयको अनुचरी एक मातृकाका नाम। (भारत ९।४७ अ०)

चत्वारिंश (सं० त्रि०) चत्वारिंशत् पूरणार्थे डट्। चालीस संख्याका पूरक, चालिसवाँ।

चत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) चत्वारो दशतः परिमाणमस्य, बहुव्री, निपातने साधु। पंक्तिविंशतित्रिंशच्चत्वारिंशत् पञ्चाशत्-षष्टिसप्तत्यशीतिनवतिशतम्। पा ५।१।५९। संख्याविशेष, चालीस-की संख्या।

"तेभ्योऽस्यः समभवन् चत्वारिंशश्च पञ्च च।" (भागवत ४।१।६०)

चत्वारिंशत्तम (सं० त्रि०) चत्वारिंशत् पूरणार्थे तमट्। विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम्। पा ५।२।५६। चालीस संख्याका पूरक, जिससे चालीसकी संख्या पूरी हो, चालीसवाँ।

चत्वाल (सं० पु०) चत्यते प्रार्थ्यते होमार्थं चत-वालञ् न वृद्धिः। १ होमकुण्ड। २ दर्भ, कुश नामकी घास। ३ गर्भ। ४ वेदी, चबूतरा।

चदिर (सं० पु०-स्त्री०) चन्दति दीप्यते शरीरप्रभावेण चदि बाहुलकात् किरच्, निपातने साधु। १ हस्ती, हाथी। २ सर्प, साँप। ३ चन्द्र, चन्द्रमा। ४ कर्पूर, कपूर।

चद्दर (फा० स्त्री०) १ चादर। २ किसी धातुका लम्बा चौड़ा चौकोर पत्थर।

चन (अव्यय) चनशब्दे अच्। १ असाकल्य, थोड़ा।

"असाकल्ये तु चिच्चन।" (अमर)

२ मुग्धबोध-व्याकरणका एक प्रत्यय जो विभक्तिके अन्त किम् शब्दके बाद लगता है।

"किमः कात्विश्चनौ।" (मुग्धबोधसू०)

किसी किसी आभिधानिकके मतसे समुच्चयार्थक च और न शब्दका समास होने पर चन हो जाता है। ३ निषेध और समुच्चय।

"विश्वमत्यं मघवाना युवोरिद्रापश्चन प्र मिनन्ति व्रतं वा।" (ऋक् २।२४।१२)

४ निषेध, नहीं, मत।

"पूर्वो यच्चन प्रसितयन्तरन्ति।" (ऋक् ७।३२।१३)

'चनेति समुदायो नेत्यर्थे वर्त्तते।' (सायण)

५ समुच्चय, समूहमें।

"अद्दिश्च एषां पितरश्चने यिरे।" (ऋक् १०।५६।४)

'पितरश्च चत्वारः पितरोऽपि।' (सायण)

चनक (सं० पु०) मत्स्यविशेष।

चनकपाल—पालवंशके एक राजाका नाम। भूटान देशके तारनाथके मतसे ये श्रेष्ठपालके पुत्र थे। परन्तु पाल-वंशीय राजाओंके समयके किसी शिलालेखमें चनकपाल का नाम नहीं मिलता है। पालवंश देखो।

चनस् (सं० क्ली०) चाय-असुन् तस्य नुट् धातोश्च ह्रस्वं च। चायते रक्षे ऋक्ष। उण् ४।१९९। १ अन्न, अनाज। २ भक्त, भात।

"यनो दधीत नाधोगिरोमे।" (ऋक् २।२५।१)

'चनोऽन्नं' (सायण)

चनचना (हिं० पु०) तम्बाकूको फसलमें हानि पहुंचाने-वाला एक कीड़ा।

चनन (हिं० पु०) चन्दन, सन्दल।

चनसित (सं० क्ली०) चन शब्दे अच् चनः सित अवसानं यस्य, बहुव्रो०। ब्राह्मणोंके अप्रत्यक्ष नाम, गुप्त नाम।

"अप्रत्यक्षमावा चवीत चनसितेत्यर्हता सह।
समावमापो ब्रूयात् विषवयोतीनरे रिति।" (कल्पधृत मनु)

"विप्रश्च चनसितवतीं वाचं।" (कात्यायनश्रौत० ७।५।१०)

चना (हिं० पु०) चणक देखो।

चनाखार (हिं० पु०) वह खार जो चनेके डण्ठलों और पत्तियों आदिको जला कर निकाला जाता है।

चनाब (हिं० स्त्री०) चन्द्रभागा देखो।

चनार (देश०) उत्तर-भारत, खास कर काश्मीरमें होनेवाला एक तरहका बहुत ऊँचा पेड़। इसके पत्ते बड़े बड़े होते और जाड़े में बिलकुल झड़ जाते हैं। इसको लकड़ी मेज, कुरसियां आदि बनानेके काममें आती है। २ चुनार देखो।

चनिष्ट (सं० त्रि०) चनोऽन्नं लक्षणया तद्वान् चनसां अन्नवतामतिशयेन प्रकृष्टः चनस् इष्ठन्। १ अन्नशाली गणमें श्रेष्ठ, सब अनाजसे उत्तम।

"चनो वो अस्तु सुमतिश्च निष्ठा।" (ऋक् ७।५८।४)

'चनिष्ठाअन्नवत्तमा' (सायण)

२ आनन्दित, आह्लादित, खुशी, प्रसन्न।

चनेठ (हिं० पु०) एक प्रकारकी घास जिसकी पत्ती चनेकी पत्तीसे मिलती जुलती है। इसकी पत्ती दवाके काम आती है।

चनोधा (सं० स्त्री०) चनोऽन्नं दधाति चनस्-धा-क्विप्। अन्नके अधिपति, जिनके पास बहुत अनाज हो।

"सावित्रोऽसि चनोधाश्चनोधा असिचनोमयि धेहि।" (शुक्लयजुः ८।७)

'चनोधा अन्नस्य धारयिता' (महीधर)

चनोरी (हिं० स्त्री०) सफेद रोएँवाला भेड़, वह भेड़ जिसके सारे शरोरके रोएँ सफेद हों।

चनोहित (सं० त्रि०) चनसां अन्नानां हितः, ६-तत्। अन्नका हितकर, अनाजकी रक्षा करनेवाला।

चन्द (सं० पु०) चदि आह्लादने णिच् अच्। १ चन्द्र, चन्द्रमा। २ कर्पूर, कपूर।

चन्द (फा० वि०) १ कुछ, थोड़े से। २ कुछ, कोई एक।

चन्दक (सं० पु०) चन्दयति आह्लादयति लोकान् चदि णिच्-ण्वुल्। १ मत्स्यविशेष, एक तरहकी छोटो चमकीली मछली, चाँद मछली। इसका गुण—बलकारी और अनभिष्यन्दी है। (राजवल्लभ) २ चाँदनी। ३ चन्द्रमा। ४ अर्धचन्द्राकार एक आभूषण जो माथे पर पहना जाता है। इसके बीचमें नग और किनारे पर मोती जड़े रहते हैं। ५ नथकी एक बनावट। इसका आकार पानसा होता और उसमें नग बैठाया रहता है। इसके किनारे छोटे छोटे मोती जड़े रहते हैं।

चन्दकपुष्प (सं० क्ली०) १ लवङ्ग, लौंग। २ चन्दनपुष्प देखो।

चन्दन (सं० पु०-क्ली०) चन्दयति चदि आह्लादे णिच्-ल्यु। स्वनामप्रसिद्ध वृक्ष, सन्दल। इसका संस्कृत पर्याय—गन्धसार, मलयज, भद्रश्री, श्रीखण्ड, महार्ह, गोशीर्ष, तिलपर्ण, माङ्गल्य, मलयोद्भव, गन्धराज, सुगन्ध, सर्पावास, शीतल, गन्धाढ्य, भोगिवल्लभ, पावन, शीतगन्ध, तैलपर्णिक, इन्द्रद्युति, भद्रप्रिय, हित, हिम, पटीर, वर्णक, भद्राश्रय, सेव्य, रौहिण, याम्य और पीतसार है।

चन्दनको फारसीमें सन्दल, अरबीमें सन्दल आबियाज, तिब्बतमें चन्दन, तेलगुमें चन्दनपु, कर्णाटीमें श्रीगण्ड, सिंहलीमें सन्दन, ब्राह्मीमें करमाई वा सन्दकु, चीनामें पेचेन्-तन् वा तन्-मुह्, कोचीन चीनामें कयुनदन, जापानीमें सन्दन, इटालीय, स्पेनीय तथा पोर्तगालीमें सन्दलो (Sandalo) जर्मनमें सण्डेल होज (Sandel hoez), फरासीसीमें सण्डेल वा साण्टाल (Sandal, Santal) हलेण्डीमें साण्डेल होफ (Sandel houf), डेनमार्कीमें साण्डेलट्री (Sandel tree), रूसमें साण्डेलो डेरिओस (Sandaloe dereos), स्विचमें साण्डेलट्राड (Sandel trad) और अङ्गरेजोमें सण्डलउड (Sandal-wood) कहते हैं।

भारतवर्ष और सिंहलमें चन्दनके छोटे छोटे वृक्ष होते हैं। इनका वैज्ञानिक नाम सण्टालम् अलबम् (Santalum album) है। इसी नाम पर पृथिवीस्थ भिन्न भिन्न चंदनवृक्ष सण्टालेशिया (Santalacae) श्रेणीभुक्त किया गया है।

वैद्यक शास्त्रके मतमें जिस चन्दनका आस्वाद तिक्त, रस पीतवर्ण, छेदन करनेसे रक्तवर्ण, उपरिभाग श्वेतवर्ण और जो ग्रन्थि तथा कोटरयुक्त निकलता, वही उत्कृष्ट ठहरता है। यह शीतवीर्य, रूक्ष, तिक्तरस, आह्लादजनक, लघु और श्रान्ति, शोष, विष, श्लेष्मा, तृष्णा, पित्त, रक्तदोष तथा दाहविनाशक होता है।

रक्त चन्दन—शीतवीर्य, तिक्त, गुरु, मधुररस, चक्षुको हितकर, शुक्रवर्धक और वमि, तृष्णा, रक्तपित्त, ज्वर, व्रण तथा विषनाशक है। पीतचन्दनका गुण रक्तचन्दनके ही समान होता, परन्तु वह व्यङ्ग तथा मुखरोगनाशक भी है। (भावप्रकाश)

दूसरा कोई जातीय वृक्ष मिश्रोपोरम टेनूइफोलियम (Myoporum tenuifolium) है। यह १०से १५ हाथ तक ऊंचा होता है। इसका नाम कृत्रिम चन्दन (Spurious Sandal-wood) है। यह जितना ही बढ़ता, इसका सुगन्धि काष्ठ उतना ही पीतसे रक्तवर्ण बनते चलता है। पार्सी, आपष्टार्ट, पाम प्रभृति द्वीपोंमें भी एक प्रकार कृत्रिम चन्दन (Exocarpus latifolia) देख पड़ता है। भारतका चमेली जातीय (Plumeria alba) किसी प्रकारका वृक्ष भी असली चन्दनकी लकड़ीके साथ मिल करके बाजारमें चन्दन जैसा विक्रीत होता है।

भारतके विशुद्ध चन्दनकी भांति साण्डविच द्वीपमें दो जातीय चन्दनवृक्ष (Santalum Freycinetianum and S. paniculatum) मिलता है। पहले दक्षिण सागरीय द्वीपपुञ्जमें भी यथेष्ट चन्दन वृक्ष (S. Freycinetianum) होता था, किन्तु अधिवासियोंके उत्पातसे वह समूल उत्पाटित हुआ है।

भारतके बम्बई, कोयम्बतूर, कोड़ग, गञ्जाम, पश्चिम घाट, काश्मीर, कोल्लमलय, नलतिगिरि (कटक) मन्द्राज, मेलगिरि, मैर्कारा, महिसुर नीलगिरि, पचमलय, पलनी पहाड़, सलेम, सतारा, सिहपुर, बाबा बूदन आदि स्थानोंमें चन्दनका पेड़ उपजता है।

जञ्जीबारसे बम्बईमें 'लवा' नामक एक प्रकार श्वेतचन्दन आता है। यह महिसुरके चन्दनकी भांति व्यवहृत होता है।

महिसुरराजके यत्नसे चन्दनका पेड़ रक्षित होता है। वहां चन्दनके कई बाग हैं। महिसुरका चन्दन बहुत अच्छा होता है। इससे महिसुरके राजाको प्रतिवर्ष लाखों रुपयेका आय है। वहां बढ़िया चन्दन २०) से २५) रु० मन तक बिकता है। चन्दनका तना जब ६।१० इञ्च मोटा हो आता, उसी समयसे काष्ठसंग्रह किया जाता है। फिर इसकी छाल निकाल डेढ़ या दो महीने मट्टीमें गाड़ करके रख छोड़ते हैं। उस समय घुण लग करके ऊपरकी सब लकड़ी खा जाता, केवल मध्यका सारकाष्ठ अवशिष्ट दिखलाता है।

बाजारमें साधारणतः दो प्रकारका चन्दन देख पड़ता है—सफेद चन्दन और लाल चन्दन। परन्तु दोनों चंदन एक ही पेड़से निकलते हैं। सारकाष्ठके वहिर्भागमें श्वेत और अन्तर्भागमें रक्तचन्दन रहता है।

चन्दनकाष्ठका सुगन्ध गुलाब-जैसा लगता, तीव्र होते भी घ्राणयोग्य ठहरता है। इसका आस्वाद कुछ कड़ुवा होता है। चन्दनके मध्यमें तैलाक्त पदार्थ है। उसीमें मीठी महक रहती है। यह तैल जलकी अपेक्षा भारी पड़ता और सहजमें ही गाढ़ा किया जा सकता है। अन्तसारमें चन्दनका रंग जितना ही गहरा रक्ताभ लगता, उतना ही इसमें अच्छा गन्ध रहता है।

युरोप और भारतमें चन्दनके सुगन्धि तैलका यथेष्ट आदर है। अतर बनानेवाले चन्दनके तैलसे खूब काम लेते हैं। गुलाब देखो। इस देशमें चंदनका तैल गुलाबके अतरका प्रधान उपकरण है। खुशबूकी वजह चीना लोगोंको चदनका तैल खानेमें बहुत अच्छा लगता है। चीनमें फिजी और तिमर द्वीपसे प्रतिवर्ष लाखों रुपयोंका चंदनतैल मंगाया जाता है।

चंदनकी लकड़ीमें घुन नहीं लगता। इसीसे उससे सब तरहका सामान बनता है। पूर्वकालको हिन्दूराजा चंदनकी लकड़ीसे सिंहासन, नानाविध अलङ्कार, चतुर्दोल, देवदेवी मूर्ति, विलासभवन और देवमन्दिरका द्वार आदि बनाते थे। आज भी भारतके अहमदाबाद नगरमें चन्दनकी लकड़ी पर नक्काशी की जाती, जो जगत्‌में बड़ी प्रसिद्धि पाती है। भारतमें सर्वत्र पूर्ववत् चन्दनका आदर है। मैनपुरीमें भी चन्दनकी अच्छी अच्छी चीजें बनती हैं। भारत और चीन देशके देवमन्दिरोंमें चंदनका यथेष्ट व्यवहार है। हिन्दू चन्दनकी लकड़ीसे शवदाह करते हैं। इसकी छालसे अच्छासा लाल रङ्ग निकलता, परन्तु वह शीघ्र ही बिगड़ता है।

चन्दन एक चिरहरित् वृक्ष है। इसके पत्र डेढ़ इञ्च दीर्घ होते हैं। तीन तीन चार चार फूल पत्तियोंसे अलग टेहनियोंमें गुच्छे जैसे निकलते हैं। चन्दन प्रायः शुष्क स्थलमें ही जगता है। इसके मूलमें तैल अधिक होता है। चन्दन घिस करके देवदेवियों पर चढ़ाया और मस्तक पर लगाया जाता है। रसिक लोग इसको अङ्गमें अनुलेपन भी करते हैं। चन्दनका बुरादा धूपकी भांति

जलाया जाता है। यह अन्य वृक्षोंके रससे अपना पोषण करता है। घास पातके बीच लगानेसे खब खुशबूदार चन्दन होता है। चन्दनके तेलको जमीन कहते हैं। इसी पर फूलोंकी रूह चढ़ानेसे तरह तरहके अतर बन जाते हैं। भारतवर्षसे प्रतिवर्ष ५।६ लाख रुपयेका चन्दन विदेशको भेजा जाता है।

(क्लो०) २ रक्तचन्दन। (पु०) ३ वानरविशेष, बन्दर।

(क्लो०) चन्द्यते आह्लाद्यतेऽनेन चदि-णिच्-ल्युट्। ४ भद्रकाली। ५ चन्दनकी लकड़ी। ६ घिसे हुए चंदनका लेप। ७ गन्ध पसार, पसरन। ८ छप्पय छन्दके तेरहवें भेदका नाम। ९ उत्तर भारत, मध्यभारत, हिमालयकी तराई, काङ्गड़ा आदिमें मिलनेवाला एक प्रकारका बड़ा तोता।

चन्दन—विहार प्रान्तके भागलपुर जिलेकी एक नदी। यह देवगढ़के सन्निहित पर्वतसे निकली और बहुसंख्यक उपनदियोंसे मिलते मिलते उत्तराभिमुख बही, अवशेषको नाना शाखाओंमें विभक्त हो करके भागलपुरके निकट गङ्गासे मिलित हुई है। वहां इसकी सर्वापेक्षा प्रशस्त शाखाका विस्तार १५०० फुटसे अधिक नहीं। वर्षाकाल व्यतीत अन्य समयको चन्दन नदी जलशून्य और वालुकामय हो जाती, परन्तु पानी बरसते ही सहसा प्रबल बन्यामें प्रवाहित हो तीरस्थ जनपदोंका क्षति पहुंचाती है। इस अतर्कित अनिष्टके निवारणार्थ उसके दोनों तीरों पर बांध प्रस्तुत हुआ है।

चन्दनक (सं० पु०) चन्दन संज्ञार्थे कन्। १ मृच्छकटिक वर्णित एक राजभृत्य। चारुदत्त देखो। १ स्वार्थे कन्। २ चन्दन।

चन्दनकारी—पञ्चकूटके अन्तर्गत और टाका ग्रामसे दो कोस पूर्वमें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। (देशावली)

चन्दनगिरि (सं० पु०) चन्दनस्य गिरिः, ६-तत्। मलयाचल। इस पर्वत पर बहुतसे चन्दनवृक्ष उत्पन्न होते हैं, इस लिये मलयाचलका नाम चन्दनगिरि पड़ा है। मलय देखो। पूर्व समयमें बहुतोंका विश्वास था कि मलयाचलके सिवा दूसरी जगह चन्दनका वृक्ष नहीं मिलता था, इसी लिए पञ्चतन्त्रप्रणेता विष्णुशर्माने लिखा है—

"विना मलयमन्यत्र चन्दनं न प्ररोहति।" (पञ्चतन्त्र १।४०)

चन्दनगोपी (सं० स्त्री०) चन्दनमपि गोपायति गुप्-अण्, उपपदस०, ततः स्त्रियां ङीप्। शारिवाविशेष, अनन्तमूल।

चन्दनदास—एक श्रेष्ठी। कुसुमपुर शहरमें इनका वास था। नन्दके मन्त्री राक्षस नगर छोड़ कर जाते समय इनके घर पर अपने परिवारको छोड़ गये थे। चाणक्यको मालूम होते ही उन्होंने चन्दनदासको राक्षस-परिवार देनेके लिए कहा। चन्दनदास उस पर राजी न हुए। अन्तमें चन्दनदासको सूली पर चढ़ानेका आदेश दिया गया। इतने पर भी चन्दनदासने राक्षस-परिवारको नहीं निकाला। निर्भीकचित्तसे वध्य-स्थान पर उपस्थित हुए। पीछे राक्षसने आ कर उनकी प्राणरक्षा की। (मुद्राराक्षस)

चन्दनद्रुम (सं० पु०) रक्तचन्दनवृक्ष, लाल चन्दनका पेड़।

चन्दनधेनु (सं० स्त्री०) चन्दनेनाङ्किता धेनुः, मध्यपदलो०। चन्दनाङ्कित धेनु, चन्दन लगा करके ब्राह्मणको दी जानेवाली गाय। पतिपुत्रवती नारी मर जाने पर उसके उद्देश वृषोत्सर्ग न करके वत्सके साथ चन्दनाङ्कित धेनु दान पुत्रके पक्षमें कर्तव्य है। इसी चन्दनाङ्कित धेनुको चन्दनधेनु कहते हैं। (ब्राह्मपर्वस्व)

वशिष्ठके मतमें पिता जीवित रहनेसे पुत्र वृषोत्सर्ग नहीं कर सकता। अतएव पिताके वर्तमान रहते जननीका मृत्यु होनेसे उसकी स्वर्गकामनाके लिये आचार्य ब्राह्मणको चन्दनधेनु दान करना चाहिये। इसमें भी यज्ञवृक्षके काष्ठसे चार हाथका एक यूप बनाना पड़ता है। यूप वर्तुलाकार, देखनेमें सुन्दर और स्थूल रहता तथा उस पर धेनुकी एक मुर्तिको प्रस्तुत करना पड़ता है। कलिकालमें विल्व और वकुलका यूप प्रशस्त है। इसके अभावमें वरुणवृक्षका भी यूप बनाया जा सकता है। तरुणवयस्का, रूपवती, सुशीला और पयस्विनी धेनु दान करना उचित है। अन्यायसे संग्रह की हुई धेनु देना न चाहिये, न्यायार्जित अथवा गृहजात धेनु ही दी जाती है। धेनु दानके लिये नदीतीर, वन, गोष्ठ, देवायतन, व्रीहिक्षेत्र, कुशक्षेत्र, राजद्वार वा चतुष्पथ प्रशस्त होता है। (चन्दनधेनु दानविधि) चन्दनधेनु दानका

फल वृषोत्सर्गके समान है। वृषोत्सर्ग देखो। इससेभी मृत व्यक्तिका प्रेतत्व परिहार और स्वर्गलाभ होता है।

चन्दनधेनु दानके व्यवस्था-सम्बन्धमें संग्रहकारोंका मतामत लक्षित होता है। चन्द्रशेखर वाचस्पतिके मतमें जिस नारीके मृत्युकालको स्वामी और पुत्र जीवित रहे उसीके उद्देशसे चन्दनधेनु दान करे। किन्तु मरते समय पति वा पुत्रके अभावमें उसके उद्देशसे चन्दनधेनु न देना चाहिये, वृषोत्सर्ग करना ही उचित है। (चन्दनधेनु दान०) किसी स्मृतिसंग्रहकारके मतानुसार मूलवचनमें "पतिपुत्रवती नारी म्रियते भर्तु, रग्रत:" जैसा निर्देश रहने और "अपुष्पिता मृता काचित् तस्या धेनु विगर्हिता" कपिलवचनमें अपुष्पिता मृत नारीके उद्देश चन्दनधेनु दानका निषेध लगानेसे गर्भजात पुत्रके अभावमें सपत्नी पुत्रके लिये पिताको वर्तमान अवस्था पर मृत विमाताके उद्देश चन्दनधेनुदान करना चाहिये। चन्द्रशेखरने अनेक युक्ति और शास्त्रीय प्रमाण द्वारा इस मतको खण्डन किया है। उनके मतानुसार गर्भजात पुत्र ही चंदनधेनु दान करनेका अधिकारी है। दो वा ततोधिक पुत्र रहनेसे ज्येष्ठ पुत्रको ही चदनधेनु दान करना चाहिये। कनिष्ठके पक्षमें वृषोत्सर्ग करना उचित है। इस प्रकरण पर दो पुत्रोंके मध्य प्रथमको, तीनमें पहले दोको, चारमें पहले तीनको और पांच पुत्रोंके स्थलमें भी पहले तीन पुत्रोंको ज्येष्ठ पुत्र जैसा ग्रहण करते हैं। ज्येष्ठके लिये ही चंदनधेनु दानका विधान है। (चन्दनधेनुदानविधि)

सुवर्णशृङ्ग, रौप्यखुर, कांस्योदर, ताम्रपृष्ठ, घण्टा तथा चामर द्वारा परिशोभिता सुशीला धेनुको वस्त्राच्छादित करके उसके कर्णमें प्रवालकी माला पहनाते हैं। धेनु चन्दन द्वारा अङ्कित करके वृषोत्सर्गके नियमसे आचार्य ब्राह्मणको देना चाहिये। इसीका नाम चन्दनधेनु है। "मानस्तोक" और "वृषोऽयसि" इत्यादि मन्त्र पढ़ करके धेनुके सक्थि देशमें त्रिशूल तथा पदचिह्न अङ्कित करना चाहिये। फिर धेनुको उत्तरमुखी करके खड़ा करते और यजमान पूर्वमुख ही बैठ करके धेनुके मस्तक प्रभृति अङ्ग पूजते हैं। पूजा करनेका मन्त्र इस प्रकार है—मस्तकमें "ॐ ब्रह्मणे नमः" ललाटमें "ॐ वृषभध्वजाय नमः", उभय कर्णमें "ॐ अश्विनीकुमाराभ्यां नमः", उभयनेत्रमें "ॐ शशिभास्कराभ्यां नमः", जिह्वामें "ओं सरस्वत्यै नमः", दन्तमें "ॐ वसुभ्यो नमः", ओष्ठमें "ॐ सन्ध्यायैः नमः", ग्रीवामें "ॐ नीलकण्ठाय नमः", हृदयमें "ॐ स्कन्दाय नमः", रोमकूपमें "ॐ ऋषिभ्यो नमः", दक्षिण पार्श्वमें "ॐ कुवेराय नमः", वाम पार्श्वमें "ॐ वरुणाय नमः", रोमाग्रमें "ॐ रश्मिभ्यो नमः", ऊरुमें "ॐ धर्माय नमः", जङ्घामें "ॐ अधर्माय नमः", श्रोणितटमें "ॐ पितृभ्यो नमः", खुरमध्यमें "ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः" खुराग्रमें "ॐ अप्सरेभ्यो नमः", लाङ्गुलमें "ॐ द्वादशादित्येभ्यो नमः", गोमयमें "ओं महालक्ष्म्यै नमः", गोमूत्रमें "ओं गङ्गायै नमः", स्तनमें "ॐ चतुःसागराय नमः"। इसी प्रकार धेनुके सकल अङ्गमें पूजा करके निम्नलिखित मन्त्र—पढ़ना चाहिये—

"ओं इंद्रस्य च लमिंद्राणी विष्णोर्लक्ष्मीश या स्मृता।
रुद्रस्य गौरी या देवी सा देवी वरदास्तु मे।
ओं याललोकपालानां या च देवेष्ववस्थिता।
धेनुरूपेण सा देवी तस्याः पापं व्यपोहतु।
ओं देहस्थाया च रुद्राणी शङ्करस्य सदाप्रिय।
धेनुरूपेण सा देवी तस्याः शान्तिं प्रयच्छतु।
ओं सर्वदेवमयी दोग्ध्री सर्वलोकमयी तथा।
धेनुरूपेण सा देवी तस्याः स्वर्गं प्रयच्छतु।"

इसके पीछे अर्घ्य और पाद्य ग्रहण करके गुणशाली आचार्य ब्राह्मणको धेनु दान करते हैं। यथानियम धेनु दे देने पर पूंछ पकड़ करके यथाविधि तर्पण किया जाता है। इसके दक्षिणास्वरूप आचार्यको एक वृष देना पड़ता है। इसके पीछे ब्राह्मणोंको पूजा की जाती है। समागत दीनदरिद्रोंको अन्नदान प्रभृति भी चन्दनधेनु दानका अङ्ग है। (चन्दनधेनु दानविधि) वृषोत्सर्ग और धेनुदान देखो।

चन्दननगर—बङ्गाल प्रान्तके हुगली जिलाका एक फरासीसी अधिकृत क्षुद्र नगर। यह अक्षा० २२° ५२' उ० और देशा० ८८° २२' पू०में चुँचुड़ासे कुछ दूर हुगलीके दक्षिणतट पर अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः २५००० है। १६७२ या १६७८ ई०को फरासीसियोंने उसे अधिकार किया और १६८८ ई०को पूर्णरूपसे दबा लिया। फरासीसी गवर्नर डुप्लेके शासनाधीन (१७३१-४१ ई०) यह

नगर विशेष समृद्धिशाली हुआ था। उस समय इसमें कोई २०० पक्के घर बन गये। १७५७ ई०को अंगरेजी नौ-सेनापति वाटसन साहबने गोलाबाड़ी करके उसको अधिकार किया और किलेबन्दी तथा मकानोंको तोड़ दिया। १७६३ ई०को फरासीसियों और अंगरेजोंकी सख्यता स्थापित होने पर यह उन्हें सौंपा, किन्तु १७६४ ई०को वैमनस्य बढ़ने पर फिर उनसे छीना गया। १८०२ ई०को एमीन्सकी सन्धिके अनुसार फरासीसियोंने पुन-र्वार चन्दन नगर अधिकार किया, परन्तु इसी वर्ष अङ्ग-रेजोंने फिर छीन लिया। १८१६ ई०तक अंगरेजोंने अपने अधिकारमें रख अन्ततः चन्दननगर फरासीसियोंको दे डाला।

चन्दननगरका वह प्राचीन गौरव अब नहीं। आज कल वह एक सामान्य नगर बन गया है। यहां एक फरा-सीसी गवर्नर और थोड़ेसे सिपाही रहते हैं। १८१५ ई०के सन्धिपत्रानुसार फरासी कलकत्तेके मालवारी नीलाममें अफीमकी ३०० पेटियां असली दाम पर खरी-दते थे। परन्तु अंगरेज सरकारने ३०००) रू० वार्षिक दे उनका यह हक छीन लिया और २०००) रू० वार्षिक इसके लिये बांध दिया, कोई भी उनके राज्यसे अफीम आदि नशेकी चीजें अंगरेजी राज्यमें भेज न सके। ईष्ट इण्डियन रेलवेका चन्दननगर ष्टेशन फरासीसी अधि-कारके अन्तर्गत नहीं। अंगरेजी राज्यसे चोरोंको वहां भाग जानेमें बड़ा सुभीता है। जनताकी प्रधान संस्था डुप्ले कालेज है। यह १८८२ ई०को फरासीसी प्रबन्धसे खुला था। एक छोटेसे बागमें डुप्लेकी मूर्ति भी प्रति-ष्ठित है।

चन्दनपुष्प (सं० क्लो०) चन्दनमिव सुगन्धि पुष्पमस्य, बहुव्री०। लवङ्ग, लौंग।

चन्दनमय (सं० त्रि०) चन्दन-मयट्। चन्दनवृक्ष निर्मित, चन्दन काष्ठका बना हुआ।

"चन्दनमयी त्रिपुरी धर्मयशोदीर्घजीवितकृता।" (हरिवं ७ अ०)

चन्दनमूलिका (सं० स्त्री०) कृष्णशारिवा, काला अनन्त-मूल।

चन्दनयात्रा (सं० स्त्री०) अक्षयतृतीया, वैशाख सुदी तीज।

चन्दनराय—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। ये १७७३ ई०में शाहजहाँपुरके नाहिलपुवाया नामक स्थानमें पैदा हुये थे। ये गौड़राज केशरीसिंहकी सभामें रहते थे, इन्होंने राजाके नाम पर केशरीप्रकाश और इसके अलावे शृङ्गारसार, कल्लोलतरङ्गिणी, काव्याभरण, चन्दनशतक तथा पथिकवोध प्रभृति हिन्दी ग्रन्थोंकी रचना की है।

चन्दनवती (सं० लि०) चंदनसे युक्त। (स्त्री) २ केरल-देशकी भूमि।

चन्दनशारिवा (सं० स्त्री०) १ चंदन इव सुगन्धिः शारिवा। शारिवाविशेष, एक प्रकारकी शारिवा जिसमें चंदनकीसी सुगन्धि होती है। २ गोपीचंदन।

चन्दनसार (सं० पु०) चंदनस्येव सारो यस्य, बहुव्री०। १ वज्रक्षार, नौसादर। चंदनस्य सारः, ६-तत्। २ घसे चंदनका सारांश, घिसा हुआ चंदन।

चन्दना (सं० स्त्री०) चंदन-टाप्। १ शारिवाविशेष, चंदन शारिवा। २ मधुशाली नगरीके निकट प्रवाहित एक नदीका नाम। (देशावली)

चन्दनाचल (सं० पु०) चंदनस्याकरोऽचलः। मलया-चल।

चन्दनादि (सं० पु०) वैद्यकोक्त एक गण। चंदन, उशीर, कपूर, लताकस्तूरी, इलायची, सोंठ और गोशीर्ष इन सातों गन्धद्रव्यको चंदनादिगण कहते हैं। (वैद्यक)

चन्दनादितैल (सं० पु०) आयुर्वेदीय एक प्रसिद्ध तैल जो लाल चंदनके योगसे बनता है। रक्तचंदन, अगर, देवदारु, पद्मकाष्ठ, इलायची, केसर, कपूर, कस्तूरी, जायफल, शीतलचीनी, दालचीनी, नागकेसर प्रभृतिको जलके साथ पीस कर तेलमें पकाते हैं और पानीके जल जाने पर तेल छान लेते हैं।

चन्दनाद्य (सं० क्लो०) चक्रदत्तोक्त औषधतैलविशेष, किसी किस्मका तेल। नखी, कुष्ठ, यष्टिमधु, शैलेय, पद्मकाष्ठ, मञ्जिष्ठा, सरल, देवदारु, शठी, इलायची, गन्धतृण, कुङ्कुम, मुरा, जटामांसी, दालचीनी, प्रियङ्गु, मोथा, हलदी (२), सतावर (२), कुटकी, कक्कोल, पित्तपापड़ा, नली और सोंठके साथ तेल और उसकी चौगुनी दहीकी मलाई पाक करना चाहिये। पाकके

समय जब यह द्रव्य देखनेमें लाक्षा रसके समान हो जाय, तब उसे नीचे उतार लेते हैं। इसीका नाम चंदनाद्यतैल है। यह बलकारी, वर्णपरिष्कारक, आयुष्कर, पुष्टिकारक, वशीकरणमें प्रशस्त और अपस्मार, ज्वर, उन्माद, कृत्या तथा अलक्ष्मीनाशक है। (चक्रदत्त) पाकका अपर साधारण नियम तैलपाकके समान है। तैलपाक देखो।

चन्दनाद्रि (सं० पु०) चंदनस्याकरोऽद्रिः। मलयाचल।

चन्दनावती (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक नदीका नाम।

चन्दनिन् (सं० त्रि०) चंदनमस्त्यस्य चन्दन-इनि। चंदनसे युक्त, जिसमें चन्दन हो।

चन्दनी (सं० स्त्री०) चंदयति आह्लादयति चदि-ल्युट्-ङीष्। नदीविशेष, कोई नदी।

"बधिरां कुटिलाश्चैव चन्दनीं आपगां तथा।" (रामा० ४।४०।२०)

चन्दनीया (सं० स्त्री०) चंदतेऽनया चदि-अनियर्-टाप्। गोरीचना, गोरोचन।

चन्दनोदकदुन्दुभि (सं० पु०) चंदनोदकेन सिक्तो दुंदभिर्यस्य, बहुव्री०। एक यादव वीर। इनका दूसरा नाम भव था। इनके साथ तुम्बुरू गन्धर्वकी मित्रता थी।

(विष्णुपु०)

चन्दला (सं० स्त्री०) कर्णाटकके अधिपति परमाड़ी राजाकी स्त्रीका नाम। ये अत्यन्त खूबसूरत थीं।

(राजतरङ्गिणी ७।११२२)

चन्दिर (सं० पु० स्त्री०) चंदन्ति हृष्यन्ति लोका येन चदि-किरच्। इषिमदिमुदि प्रविभ्यः किरच्। उण् १।५२। १ हस्ती, हाथी। २ कर्पूर, कपूर। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है। (पु०) ३ चन्द्र, चन्द्रमा।

चन्देरी—ग्वालियर राज्यके नरवर जिलेका एक नगर और प्राचीन दुर्ग। यह अक्षा० २४° ४२´ उ० और देशा० ७८° ८´ पू०में समुद्रपृष्ठसे १३०० फुट ऊंचे अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ४०८३ है। चंदेरी बलुवे पत्थरके पहाड़ोंकी खाड़ीमें अति सुन्दर रूपसे अवस्थित है। पहले यह बड़े मौकेकी जगह थी। इसका पहाड़ोंसे घिरा हुआ मैदान बहुत उपजाऊ है। उसमें ५ झीलें और कई तलाव हैं। पहाड़की बगलोंमें खूब घने पेड़ लगे हैं। पुराना नगर वर्तमान प्राचीरके बाहर बड़ी दूर तक विस्तृत है और उसमें खूबसूरत मसजिदें, मकान और दूसरी इमारतें खड़ी हैं। परन्तु इनमें बहुतसे घर टूटफूट गये हैं। मकान स्थानीय बलुवे पत्थरसे बनते और मकबरे पत्थरके जालीदार परदोंसे सजते हैं। पहले चंदेरी बड़ी उन्नति पर थी, परन्तु अब गिरती जाती है।

किला २३० फुट नगरसे ऊंचा है। खूनी दरवाजेसे किलेमें जानेकी राह है। कहते हैं, पुराने समयके अपराधी इसी दरवाजेसे नीचे गिरा करके मार डाले जाते थे। उसीसे इसका नाम खूना दरवाजा पड़ा है। दुर्गका प्रधान भवन राजप्रासाद है। इस किलेमें पानी कीर्तिसागरसे आता, जिसका मार्ग इसकी कमजोरीका सबब समझा जाता है। बाबरको इसी मार्गसे दुर्ग पर आक्रमण करनेमें सुविधा हुई थी। इसकी दक्षिण-पश्चिम ओर एक निराली राह पहाड़को काट कर बनायी गयी है। एक शिलाफलकमें लिखा है कि शेरखांके बेटे जमान्खाँने उस दरवाजेको बनाया था। १४९० ई०को गयास-उद्दीनके अधीन वह चंदेरीके सूबेदार रहे।

इस नगरसे प्रायः ९ मील दूर पुरानी चंदेरी है। परन्तु उसका अब ध्वंसावशेष मात्र जंगलमें गड़ा हुआ देख पड़ता है। लोग कहते हैं कि इस नगरको चंदेल राजपूतोंने स्थापित किया था।

पहले पहल (१०३० ई०) अलबेरूनीने चंदेरीका उल्लेख किया है। १२५१ ई०को गयास-उद्-दीन बलबनने उसे नजीर-उद्-दीन बादशाहके लिये अधिकृत किया। १४३८ ई०को कुछ मास अवरोध करने पर मालवाके १म महमूद खिलजीको यह हाथ आया। १५२० ई०को चित्तोरके राना संगने उसे अधिकार किया और मालवाधिपति २य महमूदके विद्रोही मन्त्री मेदिनीरायको सौंप दिया। मेदिनीरायसे वीर युद्ध करके बाबरने चंदेरीको जाया। उक्त सम्राट्ने अपने रोजनामचेमें इस युद्धका लोमहर्षण वर्णन किया है। १५४० ई०को यह शेरशाहके अधीन हुआ और शुजाअतखांकी सूबेदारीका एक भाग बना। मालवमें अकबरके राजत्वकालको चंदेरी किसी सरकारका सदर थी। उस समयमें १४०० पत्थरके मकान और १२०० मसजिदें बनी थीं। १५८६ ई०को बुंदेलोंने इसे जीता और ओड़छाधिपति

राजा मधुकरके पुत्र रामशाहने शासित किया। १६८० ई०को देवीसिंह बुंदेला शासक नियुक्त हुए और १८११ ई० तक यह उन्हींके वंशधरोंके अधीन रहा। फिर जीन बापटिष्टी फिलोसने सेंधियाके लिये चंदेरीको अधिकार किया। १८४४ ई०को ग्वालियर कण्टिनजेण्ट (फौज) बनने पर यह अंगरेजी अधिकारमें सम्मिलित हुआ। बलवेके समय १८५८ ई०को एक मास घोर युद्ध करनेके पीछे सर ह्ग-रोजने चंदेरीको अधिकृत किया। फिर यह १८६१ ई० तक अंगरेजी राज्यमें सम्मिलित रहा, अन्तको सेंधियाके अधीन किया गया। अति प्राचीन कालसे चंदेरी अपने बनायो बारीक मलमलके लिये प्रसिद्ध है। परन्तु यह व्यवसाय अब दिनों दिन गिरता जाता है। चंदेरीकी मलमल निहायत उमदा और मुलायम होती है। फिर रंगदार सुनहली और रुपहली किनारियां खूबसूरतीमें अपनी जोड़ नहीं रखतीं। नगरमें एक स्कूल, रियासती डाकखाना, थाना और डाकबंगला बना है।

चन्देल—बुन्देलखण्डका एक प्राचीन राजवंश।

चन्द्रात्रेय शब्दमें विशेष विवरण देखो।

चन्दौली—युक्तप्रदेशके बनारस जिलेकी पूर्वीय तहसील। इसमें बढ़वल, बारा, धूस, मवे, महवारी, मझवार, नरवन और राल्हपुर नामके परगने शामिल हैं। यह तहसील अक्षा० २५° ८′ एवं २५° ३२′ उ० और देशा० ८३° १′ तथा ८३° ३३′ पू०में अवस्थित है। इसका भूपरिमाण ४२६ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः २१७८४० है। इसमें ७०३ ग्राम और दो शहर लगते हैं। यहाँकी जमीन पङ्कमय है और विशेषकर धान उत्पन्न होता है।

चन्दौसी—युक्तप्रदेशके मुरादाबाद जिलेकी बिलारी तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८° २७′ उ० और ७८° ४७′ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २५७११ है। उन्नीसवीं शताब्दीमें चंदौसी एक छोटा ग्राम था। रेलके हो जानेसे यहांका व्यापार धीरे धीरे बढ़ता गया और अब यह एक प्रसिद्ध वाणिज्यस्थानमें परिणत हो गया है। यहांसे गुड़ और रूई पञ्जाब, राजपूताना, कलकत्ता और कानपुर आदि देशोंमें रफतनी और राजपूतानेसे यहां नमककी आमदनी होती है। एक प्रकारका सूती कपड़ा भी यहां तैयार होता है।

चन्द्र (सं० पु०) चन्दयति आह्लादयंत चन्दति दीप्यते वा, चन्द णिच् रट् चंद-रक् वा। स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपि रक्। उण् २।१३। १ चन्द्रमा, चाँद। इसका संस्कृतपर्याय—हिमांशु, चंद्रमा, इन्दु, कुमुदबान्धव, विधु, सुधांशु, ओषधीश, शुभ्रांशु, निशापति, अज, जैवातृक, सोम, ग्लौ, मृगाङ्क, कलानिधि, द्विजराज, शशधर, नक्षत्रेश, क्षपाकर, दोषाकर, निशीथिनीनाथ, शर्वरीश, एणाङ्क, शीतरश्मि, समुद्रनवनीत, सारस, श्वेतवाहन, नक्षत्रनेमि, उडुप, सुधासूति, तिथिप्रणी, अमति, चंदिर, चित्राचोर, पक्षधर, नभश्चमस, राजा, रोहिणीश, अत्रिनेत्रज, पक्षज, सिन्धुजन्मा, दशास्व, हरचूड़ामणि, मा, तारापीड़, निशामणि, मृगलाञ्छन, दर्शविपत्, छायामृगधर, ग्रहनेमि, दाक्षायणीपति, लक्ष्मीसहज, सुधाकर, सुधाधार, शीतभानु, तमोहर, तुषारकिरण, हरि, हिमद्युति, द्विजपति, विश्वप्सा, अमृतदीधिति, हरिणाङ्क, रोहिणीपति, सिन्धुनंदन, तमोनुत्, एणतिलक, कुमुदेश, क्षीरोदनंदन, कान्त, कलावान्, यामिनीपति, सिप्र, मृगपिप्लु, सुधानिधि, तुङ्गी, पक्षजन्मा, अब्धिनवनीतक, पीयूषमहा, शीतमरीचि, शीतलवली, त्रिनेत्र, चूड़ामणि, अत्रिनेत्रभू, सुधाङ्ग, परिज्ञा, बलक्षगु, तुङ्गीपति, यज्वनांपति, पर्वधि, क्लेदु, जयन्त, तपस, खचमस, विकस, दशवाजी, श्वेतवाजी, अमृतसू, कौमुदीपति, कुमुदिनीपति, भपति, दक्षजापति, ओषधिपति, कलाभृत्, शशभृत्, एणभृत्, छायाभृत्, अत्रिदृग्ज, निशारत्न, निशाकर, रजनीकर, क्षपाकर, अमृत, श्वेतद्युति, शशी, शशलाञ्छन, मृगलाञ्छन।

रात्रिकालको हमारे मस्तक पर नक्षत्रोंके मध्यमें मणि जैसा उज्ज्वल आलोकमय जो एक ज्योतिष्क देख पड़ता, प्राचीन भारतवासियोंने उसका चन्द्र नामसे उल्लेख किया है। सूर्य प्रभृति दूसरे ग्रहोंकी भांति नियमित गति रहनेसे यह भी एक ग्रह होता है। परन्तु अपर ग्रहोंकी तरह इस ग्रहको सर्वदा सर्वांशमें आलोकमय नहीं पाते और मध्यभाग कृष्णवर्ण छायायुक्त जैसा लगता है। चन्द्र क्या है? उसका मध्यभाग काला क्यों देख पड़ता है? एवं प्रतिदिन समान भावसे सकल

अंशमें आलोक न रहनेका क्या कारण है? इन सब प्रश्नोंके उत्तर वा सिद्धान्त विषयमें प्राचीन कालसे ही मतामत चला आता है।

महाभारतमें लिखा है कि विष्णुके परामर्शसे देवताओंने असुरोंके साथ मिल करके समुद्रमन्थन किया। उसी समुद्रसे शीतरश्मि उज्ज्वलप्रभ, जगत्प्रकाशकारी चन्द्रकी उत्पत्ति हुई। (महाभारत १।१८) यह एक देवता गिने जाते हैं। अमृत पानके समय देवताओंकी पंक्तिमें बैठ करके किसी असुरने अमृत पी लिया था। इन्होंने विष्णुसे वह बात कह दी। उसी राग पर असुर राहु रूपसे इन्हें ग्रास किया करता है। चन्द्र लक्ष्मीके सहोदर हैं। (महाभारत १।१८)

काशीखण्डके मतमें—ब्रह्माके मानसपुत्र अत्रि मुनिने तीन हजार दिव्य वत्सर तपस्या की थी। उसी समय इनका रेतः सोम रूपमें परिणत और उर्ध्वगामी हुआ और दश दिक् उज्ज्वल करके नेत्रसे निकलने लगा। फिर विधाताके आदेशसे क्रमशः दस देवियोंने उसी रेतः को धारण करनेकी चेष्टा की। किन्तु वह इस गर्भको रख न सकीं। सोम पृथिवी पर गिर पड़े। पितामहने उन्हें उठा रथ पर स्थापन किया। चन्द्रने उसी रथ पर बैठ एकविंशति वार पृथिवीका चक्कर लगाया। उसी समय इनका बहुतसा तेजः क्षरित हो पृथिवी पर गिरा था। वही औषधिरूपमें परिणत हो समस्त जगत्को पोषण करता है। चन्द्रने ब्रह्माके तेजसे पुनर्वार वर्धित हो काशीमें चन्द्रेश्वर नामसे शिवलिङ्ग स्थापन और शतपद्म संख्यक वर्ष तपश्चरण किया। महादेवने सन्तुष्ट हो उनकी एक कलासे अपना ललाट सजाया था। इन्होंने महादेवकी कृपासे एक राजत्व लाभ किया। उसीको चन्द्रलोक कहते हैं। पीछेको चन्द्रने एक राजसूय यज्ञका भी अनुष्ठान किया था। दक्षके शापसे इनकी प्रतिदिन एक एक कला घटती है। इसी प्रकार पन्द्रह कला क्षयित होने पर शिवललाटकी उसी कलासे बढ़ कर पन्द्रह दिनमें वह पूर्ण होती हैं। (काशीखण्ड १४।८०) चंद्रवर देखो। कालिका-पुराणमें लिखा है कि ब्रह्माके आदेशसे शापदाता दक्षने १५ कला क्षयके पीछे पुनर्वार क्रमशः बढ़नेका नियम कर दिया है। कलिका देखो। कितने ही भारतवासियोंका विश्वास है कि दक्षराजके शापसे राजयक्ष्मा हुआ, उसीके प्रतीकारके लिए इनके क्रोड़में एक मृग बैठा है। प्रसिद्ध माघ कविने भी शिशुपालवधमें इसका उल्लेख किया है। (माघ २ सर्ग) फिर किसी किसी प्राचीन मतानुसार चन्द्रने गुरुपत्नी ताराके साथ कुव्यवहार किया, उसी शापसे इनके शरीरमें कलङ्क लगा है। तारा देखो। इसके सिवा पुराने जमानेकी बुढ़ियोंका विश्वास है कि चन्द्रमें एक वृहत् वटवृक्ष है। पतिपुत्रविहीन एक बुढ़ी उसी वृक्षके नीचे बैठ सूत कातती है। इसमें यही वृक्ष चन्द्रका कलङ्क जैसा दीखता हैं।

ऊपर जो कई एक मत लिखित हुए हैं, वैज्ञानिक भारतीय ज्योतिर्विद् उनमें एक पर भी विश्वास न करते थे। इनके मतमें चन्द्र एक ग्रह है। उसका अपना आलोक नहीं है। सूर्यका आलोक ही उसमें प्रतिफलित हो रात्रिका अन्धकार विनष्ट करता है। भास्कराचार्य चन्द्रको जलमय बतलाते हैं। उसमें अपना कोई तेज नहीं है। चन्द्रका जो जो अंश सूर्याभिमुखको अवस्थिति करता, सूर्यकिरण प्रतिफलित होनेसे प्रकाशित रहता है। एतद्व्यतीत अपरांश सूर्यकिरणसे प्रतिफलित न होने पर श्यामलवर्ण लगता है। जसे रौद्र (धूप)-में कोई घट रखनेसे उसका एकांश ही चमकता और अपर भाग अप्रकाशित लगता, वैसे ही इस स्थलमें भी समझना पड़ता है। जिस दिन सूर्यसे अधःस्थित चन्द्रके अधोभाग अर्थात् हमारी दृष्टिसे छिपे रहनेवाले अंशमें सूर्यकिरण नहीं पहुंचतीं, चन्द्र अदृष्ट जैसा लगता है। इसीका नाम अमावस्या है। चन्द्र और सूर्य एक राशिस्थ अर्थात् समसूत्रपातमें अवस्थित होनेसे वैसा हुआ करता है। अमावस्याके दिन चन्द्र सूर्य एक राशिस्थ होते हैं। (गोलाध्याय मह्णप्रतिषा०) सूर्यकी अपेक्षा चन्द्रकी गति अधिक है। यह अति शीघ्र ही सूर्यसमसूत्रपात अतिक्रम करके पूर्वदिक्को हट जाता है। चन्द्र सूर्यसे दूर पहुंचने पर क्रम क्रमसे उसकी किरण इसके कियदंशमें प्रतिफलित होती है और हम उस अंशको उज्ज्वल प्रभाशाली देखते हैं। इसी प्रकार चन्द्रके जिस अंशमें सूर्यकिरण नहीं पड़ती, वही अंश आलोकहीन ताम्रवर्ण लगता है। दिन दिन

चन्द्र जितना दूरवर्ती होता जाता, उतना ही इसमें सूर्य किरण अधिक परिमाणसे प्रतिफलित होती आती हैं। अमावस्याके पीछे शुक्ल द्वितीयाको यह पश्चिम दिक्‌में उदित होता है। इस समय चन्द्र-मण्डलके पश्चिमांशमें सूर्यकिरण पतित हो इसका एक कलापरिमित भाग उज्ज्वल कर देती है। क्रमशः दिन दिन एक एक कला बढ़ पूर्णिमाको पूर्ण चन्द्र बन करके प्रकाशित होता है। फिर कृष्णपक्ष लगनेसे प्रतिदिन एक एक कला घट करके अमावस्याको सम्पूर्ण अदर्शन लगता है। शुक्लपक्षकी प्रतिपदसे पूर्णिमा पर्यन्त चन्द्र स्वीय वृत्तके १८० अंश भ्रमण करता है। इस काल पर्यन्त सूर्यसे पश्चिमको चन्द्र अवस्थित होता है। इसी प्रकार कृष्णपक्षमें भी चन्द्र अपने वृत्तके १८० अंश चलता और सूर्यसे पूर्व दिक्‌को रहता है।

सूर्यसिद्धान्तके मतमें चन्द्र और सूर्यके अन्तरानुसार इसकी शुक्लता बढ़ती है। अमावस्या तिथिको चन्द्र और सूर्य समसूत्रपातमें अवस्थित होनेसे कोई अन्तर नहीं पड़ता। उस समय सूर्यकिरण इसमें प्रतिफलित न होनेसे चन्द्रका उज्ज्वलांश मिट जाता है। अमावस्याके पीछे चन्द्रकी गतिके अनुसार सूर्यसे जितना अन्तर पड़ता, उतना ही चन्द्रका पश्चिम भाग आलोकित लगता है। चन्द्र सूर्यसे ६ राशि अन्तर पर स्थित होनेसे इसका अर्धांश (हमारा दृश्य भाग) चमकता है। पूर्णिमाके पीछे चन्द्र जितना गमन करता, उतना ही सूर्य और चन्द्रका अन्तर घटता और तदनुसार शुक्लताका भी ह्रास देख पड़ता है। अनुपातके अनुसार अपर अपर दिनोंकी शुक्लताका परिमाण निरूपण किया जाता है। (सूर्यसिद्धान्त १०।९ रङ्गनाथ) शुक्लोन्नति देखो। प्राचीन ज्योतिर्विद् वराह, श्रीपति और ज्ञानराज प्रभृति भी चन्द्रको जलमय मानते हैं। वह सूर्यकिरण प्रतिफलित होनेसे ही उज्ज्वल और प्रभाशाली लगता है।

"बहुलश्चंद्र दृश्येव ह्रासमेभातुरुच्यते ।
शुक्लत्वे चामृतत्वे च शीतत्वे च विभाव्यते ॥
घनतोयात्मकं तत्र मण्डलं शशिनः स्मृतम्" (लिङ्गपुराण ६१।५-७)

चन्द्रके मध्य जो कृष्णांश देखनेमें आता है, वह चन्द्रका कलङ्क कहलाता है। सूर्यसिद्धान्त, सिद्धान्तशिरोमणि और बृहत्संहिता प्रभृतिमें उसका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। हरिवंशमें लिखा है कि दर्पणमें मुखकी भांति चन्द्रमें पृथिवीका प्रतिबिम्ब लक्षित होता है। यही चन्द्रकलङ्क नामसे प्रसिद्ध है। (हरिवंश) इससे समझ पड़ता लोगोंका कोई भी विश्वास क्यों न हो प्राचीन वैज्ञानिकोंने चन्द्रकलङ्कको पृथिवीकी छाया जैसा ही स्थिर किया है।

ब्रह्माण्डपुराणमें बतलाया है कि पार्थिव जल सूर्यकिरणसे आकृष्ट हो चन्द्रमण्डलमें जा करके ठहरता और पुनर्वार वृष्टि प्रभृति रूपमें पृथिवी पर गिर पड़ता है। वास्तविक पक्षमें चन्द्रमण्डलको ही जलाधार कहते हैं। गङ्गा आदि नदियां भी चन्द्रमण्डलसे ही प्रवाहित हुई हैं। (ब्रह्माण्डपुराण अनुषङ्ग ५५ अ०)

प्राचीन ज्योतिर्विदोंके मतमें चन्द्र एक ग्रह है। अपर ग्रहकी भांति यह भी पृथिवीको समान्तरालमें रख करके लगातार भ्रमण करता रहता है। दूसरे ग्रहकी भांति इसकी भी एक कक्षा है। चन्द्र पृथिवीसे अतिशय निकटवर्ती रहनेसे अपेक्षाकृत अधिक चलता है। यह पृथिवीसे ५७४५ योजन ऊंचे अवस्थित है। चन्द्र जिस कक्षामें पृथिवी परिभ्रमण करता, उसका परिमाण ३२४००० योजन ठहरता है। चन्द्रकी कक्षाका व्यास १०३०८१ योजन है। यह दैनिक गतिमें स्वीय चक्रका ७९० कला ३४ विकला और ५२ अनुकला भाग अतिक्रम करता है। इसकी वार्षिक गति (राश्यादि) ४।१२।४६।४०।४८ है, एक युगमें ५७७५३३३६ भगण और एक कल्पमें ५७७५३३३६००० भगण होते हैं। खगोल, ग्रह और ग्रहण देखो।

चन्द्रका भी एक पात रहता है। वह देख नहीं पड़ता और पश्चिम गतिमें द्वादश राशि भ्रमण करता है। पात देखो।

सूर्यकी भांति चन्द्रके भी दिन मास प्रभृति गिने जाते हैं। चान्द्रदिन ही तिथि नामसे प्रसिद्ध है। कालमाधवीय और विष्णुधर्मोत्तर प्रभृतिके मतसे चन्द्र जितने समयमें राशिचक्रके १२ अंश भ्रमण करता, वही एक चान्द्रदिन ठहरता है। अमावस्याको सूर्य और चंद्र समसूत्रमें रहते हैं। इसी समयसे प्रथम

चांद्र दिन आरम्भ होता है। इसके प्रथम दिनका नाम शुक्ल प्रतिपत् है। (विष्णुधर्मोत्तर) तिथि देखो।

राशिचक्रकी गतिमें चंद्रका अवस्थित राशि जब उदयाचल अर्थात् पूर्व क्षितिजवृत्तमें संलग्न रहता, वह हमको देख पड़ता है। इसीको चंद्रका दैनिक उदय कहते हैं। फिर जब उक्त राशि पश्चिम क्षितिजवृत्तके अन्तरालमें छूट जाता और हमारे देखनेमें नहीं आता, अस्त कहलाता है। सूर्यसिद्धान्तके मतानुसार सूर्यसे चन्द्रगति अधिक रहनेके कारण सूर्यको पूर्व दिक्में अस्त और पश्चिमदिक्में उदय होता है। (सूर्यसिद्धान्त ९।१) सूर्यसे १२ अंश दूर पश्चिमको चन्द्र निकलता और १२ अंश पूर्वको डूबता है। चन्द्रालोक शब्द देखो। तीस चान्द्र दिन या तिथिमें एक चान्द्रमास होता है। किसी मतमें शुक्लप्रतिपद् और किसीमें कृष्णप्रतिपद्से चान्द्र-मासको गणना लगती है।

पुराणके अनेक स्थलोंकी वर्णनाके अनुसार आपातः बोध होता कि चंद्रमण्डल सूर्यमण्डलके ऊपर अवस्थित है। भागवतमें कहा है कि सूर्यगभस्ति अर्थात् सूर्यमण्डलसे लक्ष योजन ऊंचे चन्द्र अवस्थिति करता है। (भागवत ५।२२।८) किन्तु वास्तविक पक्षमें यह बात नहीं है। उक्त स्थानमें "सूर्यगभस्तिभ्यः" पञ्चमी विभक्ति हेत्वर्थमें प्रयुक्त हुई है। इसका अर्थ अपादान नहीं लगता। अतएव भागवतके उस वाक्यका अर्थ इस प्रकार समझना पड़ेगा—पृथिवीके लक्षयोजन ऊपर चन्द्रमण्डल सूर्यकिरणसे उज्ज्वल होने पर हमें दिखलायी देता है। ऐसी व्याख्या करने पर ज्योतिःशास्त्र वा वैज्ञानिक मतके साथ पुराणका विरोध नहीं आता। भिन्न भिन्न यन्त्रों अथवा परिमाणोंके पारिभाषिक शब्द-भेदसे परिमाणादिके सम्बन्धमें मतभेद होना सम्भव है। पुराणका आपाततः अर्थ ग्रहण करके बहुतसे लोग सूर्यके ऊपर चंद्रका अवस्थान समझने लगते और भ्रान्त धारणा करते हैं।

पौराणिक मतमें समस्त ग्रहमण्डलका अधिष्ठाता एक एक देवता है। उसमें चन्द्रमण्डल और उसके अधिष्ठाता दोनोंकी वर्णना है। पुराणमें चंद्रके उत्पत्ति सम्बन्धकी कथा कही, वह चन्द्रमण्डलको नहीं, उसके अधिष्ठाता देवकी ही है। ज्योतिःशास्त्रमें चंद्रदेवको प्रायः कोई बात नहीं। इसका प्रधान उद्देश चन्द्रमण्डलको विवरण निरूपण करना ही है।

फलित ज्योतिषके मतमें चन्द्र वायुकोणका अधिपति, स्त्रीग्रह, सत्वगुण, लवणका अधीश्वर, वैश्य जाति, यजुर्वेदाधिष्ठाता और सूर्य तथा बुधका मित्र है। कर्कटराशि चंद्रका क्षेत्र माना गया है। अपर ग्रहको भांति इसकी दशा और दृष्टिके अनुसार जातकका फलाफल फलित ज्योतिषमें निर्णीत हुआ है। चन्द्रचार, चन्द्रस्फुट, दिष्ट, चन्द्रगोचर, चन्द्रलोक प्रभृति शब्द देखो।

युरोपीय ज्योतिर्विदोंके मतमें चन्द्र पृथिवीका एक उपग्रह वा पारिपार्श्विक (Satellite) है। पृथिव्यादिकी भाँति वह भी एक प्रकाण्ड जड़पिण्ड कहा गया है। पृथिवीसे इसका गड़ दूरत्व दो लाख चालीस हजार मील है। उक्त दूरत्व अत्यन्त अधिक समझ पड़ते भी अन्यान्य ज्योतिष्कोंकी दूरी देखते नितान्त अकिञ्चित्कर निकलेगा। वास्तविक चन्द्र ही सर्वापेक्षा पृथिवीका निकटस्थ ज्योतिष्क है। दूरवीक्षणयन्त्रके साहाय्यसे विद्वानोंको चन्द्रपृष्ठके अनेक तत्त्व अवगत हुए हैं। उक्त सभी तत्त्व ऐसे निश्चित और अभ्रान्त भावसे प्रमाणित किये गये हैं, कि उसको सुन करके आश्चर्यान्वित होना पड़ता है।

चन्द्रमण्डलका व्यास प्रायः २१५३ मील और पृथिवीका व्यास ७९२६ मील है। सुतरां उसका आयतन पृथिवीके आयतनका प्रायः $\frac{1}{49}$ वां अंश आता है। अर्थात् कोई ४९ चन्द्र एकत्र करनेसे एक पृथिवीके समान होंगे। चन्द्रका जो अंश हमें देख पड़ता, उसका परिमाण युरोपखण्डसे लगभग दुगुना और भारतवर्षसे पँचगुना है। चन्द्रका आपेक्षिक घनत्व पृथिवीके आधे आपेक्षिक घनत्वसे अत्यल्प मात्र अधिक है। उसका भार पृथिवीके भारका कोई $\frac{1}{8}$. वां भाग निकलेगा। चन्द्रपृष्ठमें मध्याकर्षणको शक्ति पृथिवी मध्याकर्षणके षष्ठांशसे अधिक नहीं अर्थात् भूपृष्ठ पर जो द्रव्य ६ सेर भारी पड़ता, चन्द्रपृष्ठ पर १ सेर ही लगता है।

चन्द्रका आलोक सूर्यालोकके ६ लाख भागोंमें एक भागमात्र है। पूर्णचन्द्रका आलोक १२६ इञ्च दूर रखी हुई

किसी बत्तीके प्रकाशको बराबर है। सूर्यालोक १ फुट दूरकी ५० हजार बत्तियोंके समान पड़ता है। चन्द्रका आलोक इसका निजस्व नहीं है। पृथिवी, बृहस्पति, शनि प्रभृतिकी भांति यह भी निष्प्रभ है। सूर्यकिरण चन्द्रमें प्रतिभात हो करके उसके मण्डलको उज्ज्वल कर देता है। सुतरां हमें रजनीयोगमें चन्द्ररश्मिरूपसे जो कोमल मृदु आलोक मिलता, सूर्यरश्मिका ही रूपान्तर मात्र ठहरता है।

चन्द्रका आकार अन्यान्य ग्रहको भांती प्रायः वर्तुल है। इसका घनत्व सर्वत्र समान नहीं। इसी कारणसे चन्द्रके केन्द्र और भारकेन्द्रमें भेद पड़ जाता है। प्रत्युत इन दोनों केंद्रोंका दूरत्व कोई साढे तेंतीस मील है चंद्रके भारकेंद्रकी अपेक्षा प्रकृत केंद्र पृथिवीका निकट-वर्ती है। सभी पदार्थ भारकेंद्रके अभिमुखको आकृष्ट होते हैं। चंद्रमें समुद्र वा वायुराशि रह सकनेसे जल-राशि सूक्ष्म रेखाङ्कित वृत्तकी भांति भारकेन्द्रके चारों ओर पड़ेगा और वायुराशि बिन्दुमय वृत्तके आकारमें रहेगा। मूल कृष्णरेखाङ्कित वृत्त चंद्रका कठिन अवयव है एवं क उसका केंद्र और ग भारकेंद्र होगा। अब प्रतीत होता है, पृथिवीके ओर रहनेवाले चंद्रांशमें जल वा वायु
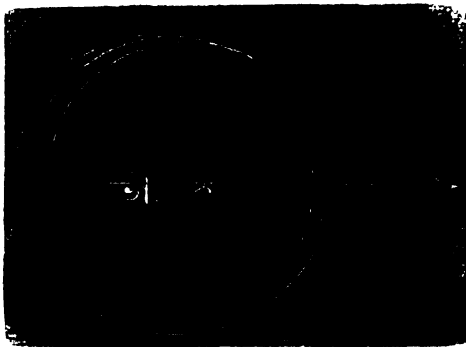
होनेकी कोई सम्भावना नहीं। नाना रूप पुङ्खानुपुङ्ख परीक्षासे भी आज तक चंद्रके दृष्ट अंशमें जल वा वायुके अस्तित्वका कोई प्रमाण कहीं नहीं मिला है। उत्कृष्ट दूरवीक्षणयन्त्रके साहाय्यसे उसमें कुज्झटिका, मेघ, वृष्टि इत्यादिका कोई लक्षण लक्षित नहीं हुआ है। सुतरां यह ठहर गया है कि चंद्रका अपर अर्ध जलवायुयुक्त होते भी हमारा दृष्ट अंश मरुमय जनप्राणी-तरु-गुल्म-लता विवर्जित है। इस विस्तीर्ण भूभागमें कहीं भी मुट्ठी भर घास देख नहीं पड़ती। अपार प्रस्तरमय प्रान्त सूना पड़ा हुआ है। उसकी तुलनामें रेगस्तान कहां आता है। इस भीषण स्थानकी कल्पना करनेसे भी जी घबरा जाता है। वही चंद्रलोक है !!

हम चंद्र और सूर्यको प्रायः समान आकारमें पाते हैं। किन्तु वास्तविक सूर्य चंद्रकी अपेक्षा प्रायः ६ कोटि गुण बड़ा है। सूर्य चंद्रसे कितना ही दूरवर्ती है। ज्योतिष्कगणके मध्य चंद्र सर्वापेक्षा पृथिवीके निकट पड़ता है। यह जब पृथिवीके अत्यन्त निकट आता, सबसे बड़ा देखा जाता और इसका व्यास हमारी दृष्टिमें ३३° ३१′ १″ कोण बनाता, एवं जब सर्वापेक्षा दूर चला जाता, इसका आकार बहुत छोटा दिखलाता तथा व्यास २६° २१′ ६″ कोण लगाता है। प्रायः ऐसे ही कोण (Angle of vision) में हम सूर्यको देखते हैं। सुतरां उसका दृश्यमान प्रत्यक्ष आकार समान जैसा प्रतीत होता है।

चंद्र अपने मेरुदण्ड पर घूमते घूमते पृथ्वीके चारो ओर चक्कर लगाता है। हम इसकी केवल एक दिक् ही देख सकते हैं। यह जब एक बार अपने मेरुदण्ड पर आवर्तन करता, तब पृथिवीके चारो ओर भी घूम पड़ता है। इसका भ्रमणपथ प्रायः वृत्ताभास है, और पृथिवी इसी वृत्ताभासके केंद्र (Focus) में अवस्थित है। सुतरां पृथिवीसे उसका दूरत्व सभी समय समान नहीं रहता। इस चंद्रकक्षाके दूरतम तथा निकटस्थ बिन्दुद्वय (Apsides) स्थिर नहीं। किन्तु दोनों ही क्रमशः परिवर्तित होते और आगे बढ़ते बढ़ते लगभग ९ वर्ष पीछे फिर पूर्वावस्था पर आ जाते हैं। सूर्य प्रभृतिकी तरह चंद्र भी राशि-चक्रके बीच पश्चिमसे पूर्व दिकको गमन करता है। इस राशिचक्रके किसी स्थानसे अग्रसर हो फिर उसी स्थानको प्रत्यावर्तन करनेमें कोई २७ दिन ७ घण्टा ३ मिनट ११ सेकण्ड लगते हैं। परन्तु उसी अवसरको सूर्य भी राशिपथमें कुछ दूर चल जाता है। सुतरां सूर्यके साथ पूर्वावस्था प्राप्त होते चंद्रको और भी थोड़ी दूर चलना पड़ता है। इसी प्रकार एक अमावस्यासे दूसरी अमावस्या तक लगभग २९ दिन १२ घण्टा ४४ मिनट ३ सेकण्ड

समय होता है। उसीका नाम चांद्रमास है। चंद्र प्रति दिन राशिचक्रमें १३ अंश चलता है।

चंद्रकी कक्षा सूर्यकक्षाके साथ एक समतलस्थ नहीं है। ऐसा होनेसे प्रति अमावस्या और पूर्णिमाको ग्रहण लग जाता। ग्रहण देखो। उक्त कक्षरेखा सूर्यकक्षासे (Ecliptic) ५° ८' कोण बनाती है। सुतरां चंद्रकक्षा और सूर्यकक्षा दो मात्र विन्दु पर परस्पर छेद करती हैं। इसी विन्दुद्वयको पात (Nodes) कहते हैं। पातद्वय भी स्थिर नहीं। दोनों क्रमसे चंद्रगतिकी दिशाको सूर्यकक्षामें धीरे धीरे बढ़ते बढ़ते प्रायः १८ वत्सर पीछे पूर्वावस्थाको प्राप्त होते हैं। सुतरां चंद्र एक बार जिस पथमें भ्रमण करता, पुनः वहां आनेमें १९ वत्सर समय लगता है। इसी प्रकारसे चंद्र १८ वर्षके मध्य सूर्यकक्षाके उभय दिकस्थ ११° ६' परिमित आकाशमें सर्वत्र घूमता है।

पहले ही बतलाया जा चुका है—चंद्र स्वयं ज्योतिः हीन है, सूर्यरश्मि द्वारा आलोकित होनेसे उज्ज्वल लगता है। यही कालभेदका प्रधान कारण है। गोलाकार वस्तु एकबार अर्धांशसे अधिक अपसारित नहीं हो सकती। अमावस्या देखो।

चंद्र जब सूर्यके साथ आकाशके किसी अंशमें रहता है, उसका आलोकित अंश हमें देख नहीं पड़ता। केवल अन्धकारमय भाग पृथिवीके ओर आ जाता है, सुतरां इस दिवसको वह नहीं दीखता। किन्तु अपनी आह्निक गतिके अनुसार यह राशिचक्रमें १३° और उसीके बीच सूर्य भी १° अंश मात्र आगे बढ़ता, सुतरां चंद्र सूर्यसे १२ अंश दूर पड़ता है। इसी प्रकार कियद्दूर अग्रसर होनेसे हम चंद्ररेखा रूपमें आलोकित थोड़ा अंश देख सकते हैं। किन्तु चंद्ररेखाके प्रान्तद्वय पूर्वदिकको विस्तृत रहते हैं।* क्रम क्रमसे जब कोई ७ दिन पीछे सूर्य और चंद्रका दूरत्व ९०° अंश हो जाता, यह ठीक आधे वृत्तका आकार बनाता है।

इसी प्रकारसे जब १८०° अंश दूर अर्थात् सूर्यसे ठीक विपरीत दिकको चंद्र निकलता; इसका सम्पूर्ण आलोकित भाग हमें देख पड़ता है। वही दिन पूर्णिमा है। क्रमशः फिर जितना सूर्यके निकट आता, यह घटता जाता है। प्रथम दृष्ट भागसे आरम्भ करके क्रमशः क्षयित हो पूर्ण चन्द्र रेखाकार धारण करता है। यह सूर्यके निकट पहुंच करके अदृश्य होता है। कृष्णपक्षमें चन्द्रकक्षाके सूक्ष्म प्रान्तद्वय पश्चिम दिकको पड़ते हैं। ऐसे ही पर्यटन-कालका नाम चान्द्रमास है। प्रथम पञ्चदश दिवस चंद्रके क्रम क्रमसे वर्धित होनेका समय शुक्लपक्ष और इसी प्रकारसे घटनेका समय कृष्णपक्ष कहलाता है। चंद्रका उदयकाल ठीक एकही समय नहीं पड़ता। आजसे कल ५० मिनट पीछे और परसों उससे भी ५० मिनट बादको चन्द्रोदय होता है। अमावस्याको चंद्र सूर्यके साथ निकलता और डूबता है। शुक्लाष्टमीके दिन दोपहरको और आधी रातको अस्त होता है। कृष्णाष्टमीमें भी ऐसा ही समझना चाहिये।

चंद्रका एक पृष्ठ सततः पृथिवीके ओर रहते भी अपने मेरुदण्ड पर चलते जानेसे इसको सभी ओरें एक एक बार सूर्यालोकमें पहुंचता है। हमने कलाभेदके विवरणमें दिखला दिया है, कैसे चन्द्रका आलोकित अंश चारों ओर घूम आता है। पृथिवीके एक दिनमें एक बार अपने मेरुदण्ड पर आवर्तन करनेकी भांति चन्द्र भी अपने मेरुदण्ड पर चक्कर लगाता है। किन्तु उसका एक दिन हमारे एक चान्द्रमासके समान अर्थात् २९ दिन १२ घण्टा ४४ मिनट ३ सेकण्ड होता है। चन्द्रसे दृष्टि डालने पर पृथिवी आकाशके एक स्थलमें स्थिर उज्ज्वल पदार्थ जैसी देख पड़ेगी और अमावस्याको सूर्यकी अपेक्षा १५ गुण उज्ज्वल पूर्णचंद्र जैसी लगेगी। पूर्णिमाके दिन यह चंद्रसे दृष्ट न होगी।

अब चंद्रमण्डलके दृष्ट अंशका भूतत्त्वविषय आलोचित किया जाता है। हम चर्मचक्षुसे चंद्रको जैसा मसृण और उज्ज्वल देखते, वास्तविक नहीं है। दूरवीक्षण यन्त्रके साहाय्यसे युरोपीय ज्योतिर्विद्गणने इसमें प्रकाण्ड प्रकाण्ड उच्च पर्वत और गभीर गह्वरादि आविष्कृत किये हैं। चंद्रका कलङ्क जैसा परिचित सकल

* शुक्लपक्षमें द्वितीया तृतीया और कृष्णपक्षमें त्रयोदशी, चतुर्दशी प्रभृतिको जब चंद्र कुछ कलामात्र देख पड़ता, कृष्णांश भी ईषत् आभायुक्त लगता है। विज्ञानीके अनुमानानुसार पृथिवीपृष्ठमें प्रतिफलित सूर्यरश्मिकदम्बक आलोकित होनेसे इसका वह अंश आभायुक्त समझ पड़ता है।

भाग चारों ओरसे पर्वतश्रेणी परिवेष्टित विस्तीर्ण निम्न प्रान्तरमात्र है। इसका जो अंश अपेक्षाकृत उज्ज्वल जैसा लगता, उच्चपर्वत तथा मधुचक्रकी भांति रन्ध्र-विशिष्ट शैलसमाच्छादित उच्चभूमि ही ठहरता है।

दूरवीक्षणयन्त्रके माहात्म्यसे अनायास इन सकल पर्वत आदिका अस्तित्व प्रमाणित हो जाता है। शुक्लपक्षमें द्वितीया, तृतीया प्रभृतिके समय चंद्रकलाकी विशेष रूपसे परीक्षा करके देखने पर स्पष्ट हो समझ पड़ता, कि उसके आलोकित और अन्धकारमय अंशकी व्यवच्छेदरेखा बिलकुल रेखाकार नहीं है। यह व्यवच्छेद अति अल्प तथा कुटिल रहता और अन्धकारमय अंशमें बहुत दूर तक स्थान आलोकित लगता है। वह आलोकमय सकल स्थान पर्वतशृङ्ग व्यतीत दूसरा कुछ भी नहीं। अपना चतुःपार्श्वस्थ निम्नप्रदेश अन्धकारमें डूब जाने पर भी यह सूर्यालोकसे आलोकित हो चमका करता है। इसी सकल पर्वत सन्निहित प्रान्तर पर बहुदूरव्यापिनी छाया पड़ती है। दूरवीनसे वह छाया स्पष्ट लक्षित और तद्द्वारा ही इन सकल पर्वतोंकी उच्चता निरूपित होती है। इनमें किसी किसीका उच्छ्राय प्रायः ५।६ मील अर्थात् हमारे हिमालयादिके समान है। सुतरां पृथिवीकी तुलनामें हिमालयादि जैसे आते, चंद्रकी तुलनामें वह सभी पर्वत अपेक्षाकृत बहुत ऊंचे बतलाये जाते हैं। चंद्रपृष्ठमें स्थान स्थान पर इतने गभीर गह्वर आविष्कृत हुए हैं कि उनकी गहराई पृथिवीके एक बड़े पर्वतकी ऊंचाईके बराबर है। मेडलार, डर्पाट आदि चन्द्रतत्त्वविद् लोगोंने इसका अति सुन्दर और विशद मानचित्र बनाया है। पूर्णिमाके दिन दूरवीक्षण यन्त्रसे चन्द्रमण्डल जैसा देखनेमें आता है, उसका एक चित्र नीचे दिया जाता है।

चन्द्रमण्डल।

इस चित्रसे चंद्रमण्डल प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त लगता है। कोई दो तिहाई भाग अल्पाधिक उज्ज्वल और अवशिष्ट एक तिहाई ईषत् कृष्णाभ है। उसी कृष्णाभ भागको चंद्रका कलङ्क कहते हैं। यह ⅓ स्थान चंद्रको निम्नभूमि कहलाता और अपेक्षाकृत अनुच्च अवस्थामें पाया जाता है। इसको चारों ओर उच्च उच्च पर्वतश्रेणी विराजमान है। मध्यभागमें भी कहीं कहीं दो एक क्षुद्र पर्वत तथा गह्वरादि दृष्ट होते हैं। पहले उस अंशको लोग चंद्रका सागर जैसा मानते थे परन्तु आजकल यह झूठ जैसा निकला है। उक्त सकल निम्नभूमि एकबारगी ही जलशून्य है। सम्भव है, इसमें किसी समय भयानक प्राकृतिक विप्लव उठने पर समुद्र उक्त स्थानसे हट गया हो। चंद्रका प्राकृतिक तत्त्व आलोचित करनेसे यह अनुमान नितान्त असङ्गत जैसा नहीं समझ पड़ता।

चन्द्रके पर्वतोंको विद्वानोंने तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया है। प्रथम समतलके मध्य गिरिश्रेणीसे विच्छिन्न पर्वत—पर्वत। यह समतलसे एकबारगी ही ऊर्ध्वको उठ करके एकाकी दण्डायमान होते हैं। प्लेटो गुहाका उत्तरवर्ती पिको (Pico) वैसा ही है। गुहाओंके बीच बीच कितने ही ऐसे पर्वत दृष्ट होते हैं। द्वितीय पर्वतश्रेणी—हिमालय, आन्दिस आदिकी भांति चंद्रमें भी सुदीर्घ और अत्युच्च पर्वतश्रेणियां विद्यमान हैं। यह किसी विस्तीर्ण निम्न प्रान्तरको चारों ओर अत्युच्च प्राचीरकी भांति लगी हैं। प्रान्तरको अपर दिक्‌को पर्वत सकल क्रमशः झुक करके समतलमें मिल गया है। पृथिवीकी पर्वतश्रेणीके गठनसे उसका सादृश्य आता है। इन सकल पर्वतोंकी उत्पत्तिके कारण पर बड़ा मतभेद है। कितने ही लोगोंका कहना है, कि चंद्रको अभ्यन्तरस्थ आग्नेय शक्तिसे वह कभी भी नहीं निकले। अन्य किसी

अज्ञात शक्तिके प्रभावसे उत्पन्न हुये होंगे। *क्रतीय गुहा*—यह अतीव अद्भुत और विस्मयजनक है। चंद्रका तीन पांचवां अंश इन्हीं सकल गभीर गह्वर अथवा चक्राकृति गुहा द्वारा व्याप्त हुआ है। उनसे इसका मण्डल मधुचक्र जैसा देख पड़ता है। ये गह्वर अति प्रकाण्ड हैं, किसी किसीका व्यास तो प्राय: ५०।६० मील तक है? छोटोसी छोटी गुहाओंका भी व्यास ५०० फुटसे कम नहीं है। उनका मुख चतुःपार्श्वसे क्रमशः उच्च और शिखरके निकट गभीर कूपाकृति गह्वरयुक्त है। इन गह्वरोंके अभ्यन्तरमें चक्राकृति सोपानमार्ग स्तर स्तरमें लगा है। चंद्रका कितना हो अंश उक्त गह्वर द्वारा ऐसा समाच्छन्न है कि वह भाग अविकल मधुचक्रवत् प्रतीयमान होता है। वैसी गुहाओंमें टाइको (Tycho) प्रधान है। चित्रमें चंद्रमण्डलके उपरिभाग पर उज्ज्वल स्थानसे आलोकमयी रेखाओंका जो समूह वहिर्गत हो चारों ओर फैला है वह टाइको गुहा है। टाइकोका दृश्य अति विस्मयकर है। इसमें कोई ५३ मील परिमित स्थानको चारों ओर उच्च पर्वत-प्राचीर है। कटाहाकार मध्यभाग सूर्यकिरणसे आश्चर्यरूपमें उद्भासित है। केन्द्राभिमुखको भूमि फिर ऊंची हो कर पर्वताकार बन गयी है। इस पर्वतका शृङ्ग साधारण पहाड़को तरह नहीं है। वह एक प्रकाण्ड वृत्त जैसा लगता है। इस शृङ्गमें उपनीत होने पर अद्भुत हृदय-कम्पकारी दृश्य मिलता है। पर्वत-शृङ्गकी अपर दिक् फिर क्रमसे निम्न न हो एकबारगी हो १७ हजार फुट गहरी पड़ गयी है! उस गभीर कूपका विस्तार लगभग ५५ मील है। इसको चारों ओर आकाशस्पर्शी अलंघ्य प्राचीर खड़ा है। उससे निकलनेको किसी प्रकारकी राह भी नहीं है।

यही नहीं कि टाइको गुहा हो वैसी गभीर है। चंद्रके मेरुदेशमें ऐसे कितने हो गह्वर हैं कि उनमें किसी भी कालको सूर्यालोक पहुंच सके। टाइकोसे निकली आलोकमय रेखाओंमें कोई कोई प्राय: १७०० मील तक विस्तृत है। दूसरी भी बहुतसी गुहाओंसे टाइकोकी तरह निकली हुई आलोक-रेखाएं देख पड़ती हैं। कोई कोई विद्वान् अनुमान करता कि वह गुहाके चतुर्दिक्स्थ विदीर्ण स्थान हैं। किसी किसीके मतमें यह सभी कठिनीभूत धातुमय स्रोत हैं। उक्त सकल धातुस्रोत अद्यापि उज्ज्वल ही बने हुए हैं। कारण पृथिवीकी भांति चंद्रमें पर्वतादि जलवायु कर्तृक परिवर्तित नहीं होते। वहां जलवायुके अभावसे थोड़ा भी तृण उपजना और पर्वतादि वा धातुस्रोतका मालिन्य पड़ना कठिन है।

चंद्र द्वारा पृथिवीस्थ वायु और जलराशिकी गति कितने हो परिमाणमें बदलती है। चंद्रके आकर्षणसे हो प्राय: ज्वार भाटा होता है। पूर्णिमा और अमावस्याके दिन प्राय: वायु परिवर्तित होते देख पड़ती है। शरत् तथा वसन्तकालको सूर्यको क्रान्तिमें अवस्थितिके समय वायुकी गति प्रधानत: चंद्र कर्तृक सङ्घटित होती है।

नाविक और भौगोलिक चंद्रकी गति देख करके किसी भी स्थानका अक्षान्तर निरूपित कर सकते हैं।

चंद्रकी तिथिके अनुसार अनेक रोग घटते बढ़ते हैं। पहले अंगरेजोंको विश्वास था कि उन्मत्तता (Lunacy) व्याधि चंद्रकी शक्तिसे उत्पन्न होता है। हमारे शास्त्रमें भी तिथिविशेषको खाद्यविशेषका भक्षण निषिद्ध है। शास्त्रकार राशिचक्र और अपरापर राशिके साथ अवस्थान भेदसे चंद्रकी स्थिति देख करके जन्मविवाहादि विषयका शुभाशुभ फल निर्दिष्ट कर गये हैं।

खृष्टीय १७श शताब्दी पर्यन्त इङ्गलैण्डके साधारण लोग चंद्रपूजा करते और तिथिभेदसे काष्ठ छेदन, शस्य वपनादि कार्य शुभाशुभ फलप्रद-जैसा समझते थे। स्काटलैण्ड, जर्मनी प्रभृति देशोंमें भी वैसा ही विश्वास था।

एङ्गलो-सेक्शन और जर्मन भाषामें चंद्र पुरुष और सूर्य स्त्रीलिङ्ग है। अंगरेजी, रोमक और ग्रीक भाषामें चंद्र स्त्री तथा सूर्य पुरुष माना गया है।

२ कर्पूर, कपूर। ३ स्वर्ण, सोना। ४ जल, पानी। ५ काम्पिल्य। ६ द्वीपविशेष, कोई टापू। ७ नादविन्दु। ८ मयूरपुच्छ, मेचक। ९ शोण मुक्ताफल। १० हीरक, हीरा। ११ मृगशिरा नक्षत्र। १२ एककी संख्या। १३ चंद्रगुप्त। (मुद्राराक्षस १ अ०) १४ बदायूंवाले पालवंशीय राजाओंके आदि पुरुष। १५ नेपालस्थ कोई

गिरि। १६ रौप्य, रूपा। (त्रि०) १७ आह्लादजनक, खुश कर देनेवाला। १८ कमनीय, चाहने लायक, चोखा।

चन्द्र—इस नामके कई एक संस्कृत ग्रन्थकार पाये जाते हैं। उनमेंसे—१ प्रसिद्ध वैयाकरण, इन्होंने काश्मीरमें रहते थे।* २ प्राकृतभाषान्तरविधानके रचयिता। ३ अष्टाङ्गहृदयके एक टीकाकार।

चन्द्र—पञ्जाब प्रदेशको चंद्रभागा नदीका एक प्रधान उपनद। यह नदी लाहुल-प्रदेशमें बारालाचा गिरिवर्त्मके दक्षिण-पूर्व कोनेके एक बड़े भारी तुषारक्षेत्रसे निकली है उत्पत्तिस्थानसे एक मीलको दूरी पर इसकी गहराई इतनी है कि, उस जगहसे पैदल पार नहीं हो सकते। दक्षिणपूर्वकी तरफ प्रायः ५५ मील जा कर टेढ़ी हो कर मध्यहिमालयके पाददेशको धोती हुई ११५ मीलके बाद (यहां इसका परिमाण देशा० ७७° १´ पूर्वमें, अक्षा० ३२° ३३´ उत्तरमें है) यह तान्दीके पास भागानदीके साथ मिल गई है। उत्पत्तिस्थानसे ७५ मील तक नदीके दोनों किनारे पर्वतसे घिरे हुए हैं, मनुष्योंका वास नहीं, सिर्फ गरमियोंमें दो-एक महीने बकरी, भैंस आदि चरा करती हैं। पालमोगिरिसङ्कटके पास जा कर इस नदीने (प्रायः ½ मील दीर्घ) एक ह्रदका आकार धारण किया है। रोहतङ्गगिरिसङ्कटके नीचेसे पहिले मनुष्योंका आवास दीखता है। उसके बाद यह चंद्रनदी खेत और लोकालयसे शोभित प्रस्तरमय प्रान्तरमें घुस गई है। परन्तु दक्षिणके किनारे पर बड़े बड़े पत्थर नदीके दोनों तरफ झुके हैं। घोण्डलाके पास ऐसाही एक पत्थर नदीमेंसे लम्बा ऊपरको गया है; जिसकी ऊँचाई ११००० फुट है। तान्दीके पास भागा नदीमें मिल कर इसने चंद्रभागा नाम धारण किया है। उत्पत्तिस्थानसे तान्दी तक चंद्र नदी प्रति मील प्रायः ६५ फुट नीची होती गई है।

चन्द्र—अयोध्या प्रदेशके सीतारामपुर जिलाके अन्तर्गत एक परगना। इसके पश्चिममें गोमती नदी, पूरबमें कठना नदी, दक्षिणमें उक्त दोनों नदियोंके सङ्गम पर दुधुयामान तथा उत्तरमें खेरी जिला है। इस परगनेमें क्रमानुसार बैस, आहीर, सैयद तथा गौड़ोंका अधिकार था। अंतिम अधिकारियोंके आदिपुरुष किरिमल्लने प्रायः २५० वर्ष पहले यह स्थान अधिकार किया था। इसमें सर्वसमेत १५० ग्राम लगते हैं, जिनमेंसे १३० ग्राम आजलों भी किरिमल्लके वंशधरोंके अधिकारमें हैं। इसका भूपरिमाण १२८ वर्गमील है जिनमेंसे ६१½ वर्गमील जमीनमें अनाज उत्पन्न होता है।

* Bühler's Kashmir Report, p. 72.

चन्द्रक (सं० पु०) चंद्र इव कायति प्रकाशते कै-क। १ बर्हनेत्र, मोरकी पूँछकी चंद्रिका।

"चन्द्रकचारुमयूरशिखण्डकमण्डलवलयितकेशम्।" (गीतगो०)

२ नख, नह, नाखून। ३ एक प्रकारका मत्स्य, एक तरहकी मछली। इसका संस्कृत पर्याय - चलत्पूर्णिमा, चंद्रचञ्चला, चंद्रिका है। वैद्यकके मतसे इस मछलीका गुण अनिमिष्यन्दि, मधुर और बलवर्द्धक माना गया है। "यां चंद्रकैर्मदकलस्य महानदीनां।" (माघ ५।४०) स्वार्थे कन्। ४ चंद्र, चंद्रमा। चंद्र देखो। ५ चंद्रमण्डल, चंद्रमाके ऐसा घेर। (क्लो०) ६ शिग्रुवीज, सहजन। ७ श्वेतमरिच, सफेद मिर्च। ८ कर्पूर, कपूर। ९ चन्दन। (स्त्री०) १० मेथिका। ११ कपिकच्छु।

चन्द्रक—एक १ विख्यात संस्कृत कवि। क्षेमेन्द्रने औचित्यविचारचर्चामें इनकी कविता उद्धृत की है। राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि ये तुञ्जीनके राजत्वकालमें नाटक रचा करते थे। (राजतर० १।७६)

२ गोमतीके उत्तर पारमें अवस्थित स्वर्गभूमिके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। भविष्यब्रह्मखण्डके मतसे यहांके मनुष्य सूर्य देवके क्रोधसे कुष्ठ और चक्षुरोगसे ग्रसित रहेंगे। (भ० ब्रह्मख० ५६।२०५-२०७)

चन्द्रकला (सं० स्त्री०) चंद्रस्य कला, ६-तत्। १ चंद्रमाके सोलह भागोंमेंसे एक भाग। कला देखो। कामशास्त्रके मतसे ये समस्त कलायें तिथि भेदसे स्त्रियोंके भिन्न भिन्न शरीरके अङ्गोंमें रहती हैं। उनके नाम यों हैं—पूषा, यशा, सुमनसा, रति, प्राप्ति, धृति, ऋद्धि, सौम्या, मरीचि, अंशुमालिनी, अङ्गिरा, शशिनी, छाया, सम्पूर्णमण्डला, तुष्टि और अमृता ये ही चंद्रमाकी सोलह कलायें हैं। (कामशास्त्र)

रुद्रयामलके मतसे अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चंद्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री,

प्रीति, रङ्गदा, पूर्णा, अपूर्णा, अमृता और कामदायिनी इन चंद्र कलाओंकी कलावती दीक्षाके आगे पूजा करनी होती है। (रुद्रयामल)

२ चंद्रमाकी किरण। ३ आठ सगण तथा एक गुरु वाला एक तरहका वर्णवृत्त। इसे कोई कोई सुन्दरी भी कहते हैं। यह एक प्रकारका सवैया है। ४ एक तरहका आभूषण जो मस्तक पर पहना जाता है। ५ क्षुद्रवाद्यविशेष, एक तरहका छोटा ढोल। ६ मत्स्य विशेष, बचा नामकी मछली। ७ एक प्रकारकी बंगला मिठाई। ८ एक तरहका सात-ताला-ताल।

चन्द्रकलाधर (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्रकवत् (सं० पु०-स्त्री०) चंद्रकोऽस्त्यस्य मतुप्, मस्य वः। मयूर, मोर।

"प्रादुद्रुवन् सपदि चंद्रकवान् द्रुमाग्रात्।" (माघ) स्त्रियां ङीप्।

चन्द्रकवि—पश्चिमप्रदेशवासी एक प्रसिद्ध राजपूत कवि। ये चाँदबरदाई नामसे प्रसिद्ध हैं। ये रणस्तम्भगढ़के चौहानवंशीय प्राचीन कवि विशलदेवके वंशभूत थे।* परन्तु उनके वंशधर सूरदास कविके वर्णनसे मालूम होता है कि ये जगत्वंशीय थे। दिल्लीश्वर पृथ्वीराजके दरबारमें आ कर ये मन्त्री हुए और "कवीश्वर" की उपाधि पा कर राजकवि हो गये थे। ११९१ ई०में उनकी प्रतिभा चारों तरफ व्याप्त हो गई थी। इनके बनाए हुए प्रधान काव्यका नाम "पृथ्वीराजरायसा" है। इस ग्रन्थमें उक्त कविने अपने प्रतिपालककी जीवनी और उस समयकी घटनाओंका उल्लेख किया है। ग्रन्थमें ६८ प्रस्ताव और १००००० श्लोक देखनेमें आते हैं। महाराज पृथ्वीराजने ११९७ ई०में काग्गार नदीके किनारे साहबउद्दीन घोरीके साथ युद्ध किया था। उसमें परास्त हो जानेसे मुसलमानों द्वारा बन्दी और अन्धे किये जानेके बाद वे गजनी पहुँचाये गये। चाँदकवि वहाँ पृथ्वीराजके साथ मिलनेके लिए गये थे। कहा जाता है कि, पहिले तो चन्द्रकवि किसी तरह भी पृथ्वीराजसे मिलने न पाये थे, फिर उनके मधुर गाने पर मोहित हो कर कारारक्षकने उन्हें अंध पृथ्वीराजके साथ मिलने दिया था। यहाँ पर चन्द्रकविने किसी प्रकार घोरराजको मार कर अपने प्रतिपालकके साथ आत्महत्या की थी। ईस्वीकी सत्रहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें मेवारपति अमरसिंहने चाँदकविकी कविताओंका संग्रह किया था।

पृथ्वीराजरासा पहिले राजपूतानाके भाटोंके मुँहजबानी याद था, उस समय भाटोंने इस महाग्रन्थमें बहुतसी नई और अनैतिहासिक बातें घुसेड़ दीं थीं तथा अपनी सुविधाके लिए जगह जगह भाषाका भी परिवर्तन कर दिया था। अमरसिंहने वैसी अवस्थामें ही पृथ्वीराजरासाका संग्रह किया था। इन सब अनैतिहासिक और नई बातोंको देख कर मेवाड़के राजकवि श्यामलदास पृथ्वीराजरासाको इन चन्द्रकवि रचित नहीं मानते। उनके मतसे किसी सुचतुरने ईस्वीकी सत्रहवीं शताब्दीके पहिले चन्द्रकविका नाम दे कर यह ग्रन्थ रचा है। चंद्रकविका नाम सुन कर राजस्थानके भिन्न भिन्न प्रदेशोंके भाटगण तदनुसार राजपूत राजवंशावलीकी कल्पना करते हैं, इसीलिए राजपूतानाके नाना स्थानोंसे प्राप्त शिलालेख और ताम्रलिपिमें वर्णित वंशावली और राज्यकालके साथ भाटोंके ग्रन्थोंकी एकता नहीं है। यही कारण है कि, टाड साहबके राजस्थानका इतिवृत्त भ्रमशून्य नहीं हुआ †। श्यामलदासके निबन्धको पढ़ कर काशीके एक विद्वान्ने राजकविका प्रतिवाद प्रकाशित किया था कि, भिन्न भिन्न समयमें राजस्थानके भाटों द्वारा उक्त महाग्रन्थमें बहुतसी बातोंका परिवर्तन होने पर भी वह चाँदवर्दाई (चंद्रकवि)-का ही बनाया हुआ है। सोलहवीं शताब्दीसे पूर्ववर्ती कवियोंके वर्णनसे यह प्रमाणित होता है ‡। सूरदास और शारङ्गधर देखो। इसके सिवा उन्होंने कन्नौजराज जयचन्द्रके नामसे "जयचंद्रप्रकाश" की रचना की थी। चंद्रकविकी कविता बड़ी मनोहर और हृदयउत्तेजक है। ऐसी वीररसप्रधान

* Todd's Rajasthan, II. 447.

† Journal Asiatic Society Bengal, 1886, pt. I. p. 5 &c. "On the antiquity, authenticity and genuineness of Chand Bardai's epic the Prithiraj Rasa," by Kaviraj Syâmal Dâs.

‡ "The defence of Prithiraj Râsâ of Chanda Bardai"; by Pandit Mohan Lal Visnu Lal Pandia (Banaras Medical Hall Press, 1887.)

कविता भारतमें शायद ही और मिलेगी। बड़े बड़े डरपोक भी चंद्रकविकी कविताको सुन कर वीरमदसे उन्मत्त हो जाते हैं। यूरोपीय विद्वान्‌गण इनको "राजपूत होमर" कह कर सम्बोधन किया करते हैं।

मिष्टर टाड साहब "पृथ्वीराजरासा"की करीब तीस हजार कविताओंका अनुवाद कर गये हैं। उनके बाद कुछ अंश रवार्ट लेञ्ज द्वारा १८३६ ई०में रूषभाष में और फिर एसियाटिक सोसाइटी द्वारा कुछ अंगरेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ था।

राजपूतानाकी प्रचलित भाषा और अपभ्रंश और सैनी प्राकृत भाषाके बिना जाने चंद्रकविकी सब कविताएं हृदयङ्गम नहीं की जा सकतीं।

२ दूसरे एक कवि। १६९२ ई०में इनका जन्म हुआ था। ये राजगढ़के नवाब सुलतान पाठानके भाई भूपालके राजा वन्दनबाबूकी सभाके कवि थे। इन्होंने अपने सुलतानकी आज्ञानुसार बिहारीलाल चौबे प्रणीत "शतसई" ग्रन्थकी टीका बनाई थी।

चन्द्रकाट्‌कि (सं० पु०) प्रवरऋषिभेद, एक मुनिका नाम।

चन्द्रकान्त (सं० पु०) चंद्रः कान्तः प्रियोऽस्य। १ कैरव, कुमुद। २ मणिविशेष, एक तरहका रत्न। इसका संस्कृत पर्याय—चंद्रमणि, चाद्र, चंद्रोपल, इन्दुकान्त, चंद्राश्मा संम्रपोपल, सिताश्मा, चंद्रद्राव और शशिकान्त है वैद्यकके मतसे इसका गुण-स्निग्ध, शिशिर, शिवप्रीतिकर, स्वच्छ, अस्र, दाह और अलक्ष्मीनाशक है। इससे उत्पन्न जलका गुण-विमल, लघु, कफ, पित्त, मूर्च्छा अस्र, दाह, कास और मदात्ययरोगनाशक है। (राजनि०)

भोजराजके मतसे पूर्णिमामें चंद्रमाके संस्पर्शसे जो अमृत टपकता है उसे ही चंद्रकान्त कहते हैं। यह कलियुगमें दुर्लभ है।

"पूर्णेन्दुकरसंस्पर्शादमृतं स्रवति क्षणात्।
चन्द्रकान्तं तदाख्यातं दुर्लभं तत्कलौ युगे।" (युक्तिकल्पतरु)

३ कामरूपके एक राजाका नाम। (क्ली०) ४ श्रीखण्डचन्दन। ५ लक्ष्मणात्मज चंद्रकेतुकी राजधानी, लक्ष्मणके पुत्र चन्द्रकेतुकी राजधानीका नाम। ४ एक राग। (स्त्री०) ७ रात्रि, रात। ८ निर्गुण्डी।

चन्द्रकान्ता (सं० स्त्री०) चंद्रः कान्तः प्रियोयस्याः। १ रात्रि, रात। २ चंद्रपत्नी, चंद्रमाकी स्त्री। ३ पंचदशाक्षरपादयुक्त छन्दोविशेष, पंद्रह अक्षरोंको एक वर्णवृत्ति। इसमें १।३।४।६।७।८।८।१२।१४।१५। अक्षर गुरु होते हैं।

"चंद्रकान्ताभिधा गौतौ विरामः स्वराष्टौ।" (वृत्तरत्नाकर टी०)

चन्द्रकान्ति (सं० स्त्री०) चंद्रस्येव कान्ति र्यस्य शुभ्रत्वात्। १ रौप्य, चाँदी। भावप्रकाशमें लिखा है एक समय महादेवने त्रिपुरासुरको विनाश करनेके लिए क्रोधसे नेत्रपात किया था जिससे उनकी दाहिनी आँख हो कर अग्निका गोला बाहर निकला जिससे तेजोमय रुद्रकी उत्पत्ति हुई और बायीं आँखसे जो अश्रुविन्दु गिरा उससे रौप्यकी उत्पत्ति हुई। चांदी देखो।

२ चंद्रकी दीप्ति, चंद्रमाकी रोशनी।

चन्द्रकाम—किसी रमणी द्वारा वशीकरण साधन औषध या मन्त्रादि प्रयोग कर विमोहित पुरुषोंको मानसिक पीड़ा, वह कष्ट जो किसी पुरुषको उस समय होता है जब कोई स्त्री उसे वशीभूत करनेके लिए मन्त्र तन्त्र आदिका प्रयोग करती है। अरबी भाषामें इसे सिना कहते हैं।

चन्द्रकामाश्रित (सं० त्रि०) इंद्रजालके मतसे चंद्रकाम रोगाश्रित व्यक्ति।

चन्द्रकालानल (सं० क्ली०) चक्रविशेष, एक तरहका चाक। (समयामृत)

चन्द्रकित (सं० त्रि०) चंद्रको जातोऽस्य तारिकादिभ्य इतच्। जातचंद्र, जो चंद्रमासे निकला हो।

चन्द्रकिन् (सं० पु०) चन्द्रकोऽस्त्यस्य इनि। मयूर, मोर।

चन्द्रकीर्ति (सं० पु०) बुद्ध पालित मतावलम्बी एक बौद्ध आचार्य।

चन्द्रकीर्ति भट्टारक—एक दिगम्बरजैन-ग्रन्थकर्ता। इन्होंने पद्मपुराण, छन्दःकोष प्राकृत, पूजाकल्प सटीक और विमानशुद्धि पूजा नामक चार ग्रन्थ रचे हैं।

चन्द्रकीर्तिसूरि—श्वेताम्बर जैनाचार्य हर्षकीर्तिके गुरु। इन्होंने रत्नशेखरके छन्दःकोशकी टीका और सारस्वतप्रक्रिया की कीर्ति बुद्धिविलासिनी नामकी टीका प्रणयन की है। हर्षकीर्ति सलीम शाहके समय अर्थात् १५४५-५२

ई०में विद्यमान थे, सुतरां चन्द्रकीर्त्ति उनसे कुछ पहले हुए थे।

चन्द्रकुण्ड (सं० पु० क्ली०) कामरूपमें स्थित एक पवित्र कुण्ड। चंद्रकूट देखो।

चन्द्रकुल (सं० क्ली०) नगरविशेष, कोई नगर। (शुक्लसप्तति ३८।१)

चन्द्रकुमार (सं० पु०) १ चन्द्रमाका पुत्र, बुध। २ बौद्धोंके एक जातकका नाम।

चन्द्रकुल्या (सं० स्त्री०) काश्मीरकी एक नदीका प्राचीन नाम। (राजतर० १।३२९)

चन्द्रकूट (सं० पु०) कामरूपप्रदेशका एक पर्वत। कालिका-पुराणके मतानुसार चन्द्रमा जब कामाख्या आनेके लिए स्वर्गसे उतरे थे, तब उनकी किरणराशिसे जल निकला था। इन्द्रने वह जल ले कर ब्रह्मशिलाके ऊपर अपने तथा चन्द्रमाके नाम पर एक कुण्ड निर्माण किया। चन्द्रकुण्डमें स्नान कर इसके निकटस्थ चन्द्रकूट पर्वत पर चढ़ कर जो चन्द्रमाकी पूजा करता है उसकी सन्तान अकालमृत्युसे नहीं मरती। इस स्थान पर लोकपाल इन्द्रकी पूजा करनेसे मनुष्य महाफल प्राप्त करता है। प्रति अमावस्याको चन्द्रमा तीन बार चन्द्रकूट और नंदन पर्वत प्रदक्षिणा करते हैं। (कालिकापु० ७९ अ०)

चन्द्रकूप (सं० पु०) काशीमें चन्द्रकृत पवित्र कूपभेद, काशीका एक पवित्र कुआँ जो तीर्थस्थान माना जाता है।

चन्द्रकेतु (सं० पु०) १ लक्ष्मणके छोटे लड़केका नाम। भरतके कहनेसे रामचन्द्रने इन्हें उत्तरका चन्द्रकान्त प्रदेश दिया था।

"चंद्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूमां निवेशिता।
चंद्रकान्तेति विख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा॥" (रामायण ७।१०२ अ०)

चन्द्रकोणा—बङ्गालके मेदनीपुर जिलेके अन्तर्गत घाटाल उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २२° ४४´ उ० और देशा० ८७° ३२´ पू०में पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ८३०९ है। अठारहवीं शताब्दीमें यह शहर वर्धमानके राजा कीर्तिचंद्र रायके अधिकारमें आ गया, और तभीसे यह वर्धमानके राजाके अधीनमें आ रहा है। यहांकी आय प्रायः ५३०४) रु० और व्यय ४८००) रु० है।

चन्द्रक्षय (सं० पु०) अमावास्या।

चन्द्रक्षेत्र—ताप्ती नदीके तीरका एक पवित्र स्थान। (तापीख० ५५।१ अ०)

चन्द्रगणना—जैनमतानुसार द्वीप समुद्रोंकी भाँति चन्द्र भी असंख्य हैं। इस जम्बुद्वीपमें २ चन्द्र हैं, लवणसमुद्रमें ४, धातकीखण्डमें १२ और कालोदधिमें ४२ चन्द्र है। आगे पुष्कर द्वीप है, जिसके दो भाग हैं। इधरके पहले भागमें ७२ और उसके दूसरे भागमें १२६४ चन्द्र हैं। पुष्करद्वीपके आगे पुष्करसमुद्रमें ११२०० चन्द्र हैं तथा उसके आगे, समुद्रसे चौगुने समुद्रमें और द्वीपसे चौगुने द्वीपमें हैं। पूर्व पूर्व द्वीप और समुद्रके चन्द्रमाओंसे उत्तरोत्तर द्वीप और समुद्रके चन्द्रोंकी संख्या क्रमशः बढ़ती हो गई है। इन सब चन्द्रोंमें असंख्य जिनचैत्यालय है, जिनको मुनगण वन्दना करते हैं। जम्बुद्वीप देखो।

चन्द्रगन्धा (सं० स्त्री०) शटी।

चन्द्रगर्भ (सं० पु०) एक बौद्धसूत्र ग्रन्थ।

चन्द्रगिरि—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत आर्कट जिलेके अक्षा० १३° २४ एवं १३° ४७´ उ० और देशा० ७८° ५८ तथा ७९° ३५ पू०के मध्य उत्तर भागमें अवस्थित एक तालुक। यह कड़ापा नगरके निकट है। भूपरिमाण ५४८ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ११३५५० है। इसमें दो शहर लगते हैं जिनमेंसे चन्द्रगिरि एक है। इसके अन्तर्गत कुल १३५ ग्राम हैं। इसके उत्तरमें पूर्वघाट पर्वत फैला हुआ है, दक्षिणमें अधिकांश स्थान कर्वेत नगर-पर्वतसे घिरा हुआ है। इस तालुकके बहुत अंश पर्वत और बहुत प्रस्तरमय हैं और शेषभाग गिरिवाहिनी नदीसे बनाई हुई उपत्यका भूमि है। उत्तर आर्काटके मध्य या इस तालुकका भूभाग अधिक उर्वरा है। यहां जितने जलाशय हैं वे बहुत ऊंचेमें अवस्थित हैं और निकटवर्ती जङ्गलमें गले पत्तोंका खार पाया जाता है। चंद्रगिरिके तैलङ्ग कृषक कठिन परिश्रमी हैं और कृषिकार्यको खूब पसन्द करते हैं। सचमुच येही जिला भरमें उत्कृष्ट कृषक गिने जाते हैं। जंगलका भूपरिमाण लगभग ३०० वर्गमील है। आजकल जंगलकी रक्षाके लिए अच्छा प्रबन्ध कर दिया गया है।

२ चंद्रगिरि तालुकका एक नगर। यह अक्षा० १३°

२५´ उ० और देशा० ७६´ १८´ पू०के मध्य तिपति टेसन-से प्रायः १६ मील दक्षिणको सुवर्णमुखी नदीके दक्षिण किनारे पर अवस्थित है। इस नगरमें तालुकके सरकारी आफिस, जेल और डाकघर हैं। लोकसंख्या प्रायः ४६२३ है।

इतिहासमें चंद्रगिरि बहुत मशहूर है। १५६४ ई०में विजयनगरके राजा तालिकोटमें पराजित हो कर इसी स्थानमें रहने लगे थे। इस नगरका दुर्ग लगभग १५१० ई०में बनाया गया था। १६६४ ई०में वह किला गोलकुण्डाके सर्दारके हाथ आया और एकसौ वर्षके बाद आर्काटके नवाबने उसे अपने अधिकारमें लाया।

१७५८ ई०में नवाब अबदुलवहाबखाँ उस दुर्गके अधिपति थे और इसी गर्वसे वे अपनेको पवित्र तिपति नगरके रक्षाकर्ता बताते थे। १७८२ ई०में हैदरअली उस दुर्गको अपने दखलमें लाये और १७९२ ई०में श्रीरङ्गपत्तनको सन्धिके पहले तक यह महिसुरकेअधीन रहा। यह दुर्ग चारों बगलके प्रदेशोंसे प्रायः ६०० फुट ऊँचे एक ग्रेनाइट प्रस्तरके पर्वत पर बना हुआ है। दुर्गकी अवस्थिति और बनावट ऐसी थी कि पूर्व समयमें यह दुर्ग अजेय समझा जाता था। इसी नगरमें इष्ट इण्डिया कम्पनीको फोर्ट सेण्ट जार्ज अर्थात् मंद्राज प्रदान करनेका सबसे पहला सन्धिपत्र लिखा गया था। वर्तमान चंद्रगिरिनगर दुर्गके पूर्वमें बसा है। प्राचीन नगरके खंडहरों पर अभी अनाज उपजाया जाता है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य देखने योग्य है। चारों ओरकी जमीन उर्वरा है। स्थान स्थान पर मन्दिर पुष्करिणी प्रभृतिका ध्वंसावशेष आज लों भी देखनेमें आता है।

३—मंद्राज प्रदेशके अन्तर्गत दक्षिण कणाड़ा जिलाकी एक नदी। वहांके मनुष्य इसे पुइस्विनि (पयोष्णी) नदी कहते हैं। यह अक्षा० १२° २७´ उ०, और देशा० ७५° ४०´ पू० पर सम्पाजिके निकट पश्चिमघाट पर्वतसे निकल पश्चिमकी ओर ६५ मील जानेके बाद कासरगोड़से दो मील दक्षिण अक्षा० १२° २९´ उ० और देशा० ७५° १´ ६´´ पू० पर समुद्रमें आ गिरी है। बाढ़के समय पश्चिमघाट पर्वतसे बड़े बड़े काष्ठ ला कर नदीस्रोतमें रखे जाते हैं। परन्तु दूसरे समय नदीमुखसे १५ मीलसे दूर तक नाव जा नहीं सकती है। नदीके बायें किनारे पर एक दुर्ग है।

चन्द्रगिरि मलयालम् और तुलुव प्रदेशके मध्यवर्ती, तथा उन देशोंके जनप्रवादके अनुसार नायारको स्त्रियोंको यह पर्वत लाँघना मना है।

४ महिसुर राज्यके अन्तर्गत हासन जिलेके श्रवणबेलगोल नामक स्थानसे उत्तरकी ओर स्थित एक पर्वत। इस पर्वतकी ऊँचाई ३०५२ फुट है। कनाड़ भाषामें इसको चिकबेट्ट कहते हैं। चन्द्रगिरिके नामकी सार्थकता लोग इस प्रकार बतलाते हैं—"इस पर्वत पर चन्द्रगुप्त मुनिने अपने गुरु भद्रबाहु स्वामीकी चरण-पादुकाकी निरन्तर सेवा करके ऐहिक लीला परिसमाप्त की है, इस लिए उनके चिरस्मरणार्थ ही इसके नाममें 'चन्द्र' जोड़ दिया गया है।"

चन्द्रगिरि भारतीय आदर्शभूत शिल्पकलासे रचित अनेक जैन-मन्दिरों और विकसित कमलोंसे सुशोभित सुन्दर सरोवर आदिसे बहुत ही रमणीय है। दक्षिणद्वारसे ढाई सौ सीढ़ी चढ़ कर दो रास्ते हैं, एक तो भद्रबाहुकी गुफाकी ओर गई है और दूसरी प्राकारकी ओर। भद्रबाहुकी गुफा पश्चिमाभिमुखी है और उसमें भद्रबाहुस्वामीके दो विशाल चरण बने हुए हैं। दक्षिणद्वारसे प्राकारमें घुसने पर बहुतसे जैन-मन्दिर मिलते हैं। प्रथम ही मानस्तम्भ तथा उसके पास ही महिसुर-नरेश द्वारा सुरक्षित और प्रस्तर-प्राचीरावगुण्ठित एक शिलालेख है। मि० ल्युईस राइस साहबने इसका आविष्कार किया है। इसमें लिखा है जब बारह वर्षका दुर्भिक्ष पड़ा था, तब भद्रबाहुस्वामी और उनके शिष्य चन्द्रगुप्त महाराजने मुनिसङ्घोंके साथ रह कर समाधिमरण पूर्वक इसी (चन्द्रगिरि) पर्वत पर अपने विनश्वर शरीरको छोड़ा है।

उपर्युक्त शिलालेखके उत्तर भागमें पार्श्वनाथ तीर्थङ्करका पूर्वाभिमुख एक विशाल मन्दिर है। इसके पास ही अशोक द्वारा निर्मित दो मन्दिर हैं। प्राकारके नैऋत कोणमें एक मन्दिर है, इसके आगे मानस्तम्भ है। इसके बाद वायुकोणमें दो मन्दिर हैं। इन दो मन्दिरोंके सामने चामुण्डराय द्वारा स्थापित एक अत्यन्त रमणीय भारतीय

शिल्पकलाको अद्भुत प्रतिष्ठाकी रक्षा करनेवाला एक मंदिर(वस्ती) है इसमें नेमिनाथ तीर्थङ्करको प्रतिमूर्ति विराजमान है। इस मन्दिरकी प्रतिष्ठा प्रसिद्ध जैनाचार्य श्रीनेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ति द्वारा हुई है।

(भास्कर कि० २-३)

चन्द्रगुण—चट्टग्रामके पार्वत्य प्रदेशमें कर्णफुली नदीके किनारे बसा हुआ एक गांव और थाना। १८६८ ई० तक यहां जिलेके समस्त विचारालयादि थे, इसके बाद वे राङ्गामाटोमें उठा ले गये थे। इस गाँवमें काठ और दूसरो दूसरी जङ्गली चीजें, चावल, नमक, मसाला, मवेशी और तम्बाकूका वाणिज्य होता है।

चन्द्रगुत्ति—महिसुरके शिमोग जिलामें स्थित पश्चिमघाट पर्वतका एक शृङ्ग। यह अक्षा० १४° २७´५´´ उ० और देशा० ७४° ५८´ २५´´ पू०के मध्य समुद्रपृष्ठसे २८३६ फुट ऊँचेमें अवस्थित है। पूर्व समय यहां वंश परंपरासे अनेक प्रादेशिक सर्दारोंका गड़ रहा। इसके सबसे ऊँचे स्थानमें परशुरामको माता रेणुकाका एक मन्दिर विद्यमान है।

चन्द्रगुप्त—भारतवर्षके एक प्रवल पराक्रान्त सम्राट्। विष्णु, ब्रह्माण्ड, स्कन्द और भागवतपुराणके मतानुसार नन्दवंशके अवसानप्राय होनेके समय कौटिल्य (चाणक्य) नामक एक ब्राह्मणने चन्द्रगुप्तको राज्याभिषिक्त किया था। इसके सिवा पुराणोंमें चन्द्रगुप्तके विषयमें औरकोई बात नहीं पायी जाती। विष्णुपुराणके टीकाकारने लिखा है—

"चंद्रगुप्तं नन्दस्यैव पत्न्यन्तरस्य मुरासंज्ञस्य पुत्रं मौर्याणां प्रथमम्।"

चन्द्रगुप्त नन्दको मुरा नामक एक स्त्रीके ही पुत्र हैं, मौर्यराजाओंमें ये ही पहिले हैं।

परन्तु मुद्राराक्षसके "मौर्येन्दु और मन्ये स्थिरा मौर्यकुलस्य लक्ष्मीः" (मु० रा० २ अ०) इस बचनोंसे चन्द्रगुप्त मौर्य थे, सिर्फ इतना ही जाना जाता है। उक्त नाटकके चौथे अङ्कमें "मौर्योऽसौ स्वामिपुत्रः परिचरणपरोमित्रपुत्रस्तथाहं" मलयकेतुके इस वचनसे चन्द्रगुप्तको नन्दका पुत्र समझा जा सकता है।

कर्णल मकन्जी साहबको (१) दक्षिणदेशके एक पण्डितसे तेलगु लिपिका एक ग्रन्थ प्राप्त हुआ है, उसमें लिखा है—

कलियुगके प्रारम्भमें नन्दनामके राजगण राज्य करते थे, उनमेंसे एक सर्वार्थ सिद्धि भी है, ये बड़े वीर थे। राक्षस आदि इनके मन्त्री थे। इन नन्दराजके मुरा और सुनन्दा नामकी दो महिषी थीं। एक समय राजा अपनी दोनों रानियोंको ले कर एक सिद्धपुरुषके आश्रममें उपस्थित हुए और भक्तिभावसे उन सिद्धपुरुषके पैरोंको धो कर उस जलको दोनों रानियोंके मस्तक पर छिड़क दिया। सुनन्दाके मस्तकसे ८ बूंद और मुराके मस्तकसे १ बूंद पानी गिरा। १ बूंद जमीन पर गिरनेसे पहिले मुराने उसको हाथ पर ले लिया, इससे सिद्धपुरुषको बड़ी प्रीति हुई। यथासमय मुराके एक रूपवान् पुत्र पैदा हुआ। उसका नाम मौर्य रखा गया। किन्तु सुनन्दाने कोई सन्तान न कर एक मांसपिण्ड प्रसव किया। राजमन्त्री राक्षसने उसको नौ खण्ड कर तेलको कुप्पियोंमें रख दिया। राक्षसके प्रयत्नसे उन नौ मांसखण्डोंमेंसे नौ पुत्र उत्पन्न हुए और वे पितृपुरुषके नामानुसार नवनन्द नामसे प्रसिद्ध हुए। राजा सर्वार्थसिद्धिने यथासमय नवनन्दोंको राज्य और मौर्यको सेनापतित्व दे कर राजपद त्याग दिया। मौर्यके एक सौ पुत्र जन्मे, उनमेंसे चन्द्रगुप्त ही सर्वश्रेष्ठ थे। मौर्य पुत्रगण शूरवीरतामें नवनन्दोंको अतिक्रम कर गये, इससे मौर्यो पर नवनन्दोंका बड़ा डाह हुआ। उन्होंने एक दिन मौर्य और उनके पुत्रोंको गुप्त गृहमें निमन्त्रण कर सपुत्र पिताका विनाश कर डाला।

घटनाक्रमसे उस समय सिंहलराजने एक मोमका सिंह पिंजरेमें रख कर भेजा और इस आशयका एक पत्र दिया कि—"यदि आपके कोई अमात्य पिंजरेको विना खोले सिंहको दौड़ा सके तो उनको हम महापुरुष समझेंगे।" सिंह मोमका होने पर भी असली-सा जान पड़ता था। इसलिये नन्दराजगण मुश्किलमें पड़ गये, पिञ्जरेको बिना खोले सिंह दौड़ ही कैसे सकता है? यह उनकी सामान्य बुद्धिमें न आया। उस समय तक चन्द्रगुप्तके प्राण नहीं निकले थे, उन्होंने झट कहा कि, यदि मेरे प्राणोंकी रक्षा हो तो मैं उस सिंहको दौड़ा सकता हूं। नवनन्दने चन्द्रगुप्तकी प्राणरक्षा करना अङ्गीकार

(१) See Wilson's Theatre of the Hindus, Vol. II, p. 114 &c, (Ed. 1835)

किया। फिर चन्द्रगुप्तने एक लोहेको गरम कर सिंहको देह पर छोड़ दिया, देखते देखते मोमका सिंह गल कर नष्ट हो गया। इससे नन्दोंने चन्द्रगुप्तको अन्धकार गह्वरसे निकाल लिया और उन्हें यथेष्ट धन दिया। इसके बाद चंद्रगुप्त राजाकी तरह रहने लगे। चंद्रगुप्तकी आजानुलम्बित बाहु, सौम्यमूर्ति, वीरभाव और उदारप्रकृति देख कर सब ही उन्हें प्यार करते थे। इसीलिए फिर नन्दोंको उनके प्रति ईर्षा उत्पन्न हुई और वे चंद्रगुप्तको मारनेके लिए जाल बिछाने लगे।

एक दिन चंद्रगुप्तने देखा कि एक ब्राह्मणके पैरमें कुश छिद गया था; इससे वह ब्राह्मण समस्त कुशवृक्षोंको जड़-मूलसे उखाड़ उखाड़ कर फेंक रहा है। चंद्रगुप्तने उस ब्राह्मणका आश्रय लिया। उस ब्राह्मणका नाम विष्णुगुप्त था। नीतिशास्त्रविद् चणकके पुत्र होनेके कारण इनको लोग चाणक्य भी कहा करते थे। धीरे धीरे चाणक्यके साथ चंद्रगुप्तकी घनिष्ट मित्रता हो गई। चंद्रगुप्तने नन्दद्वारा प्राप्त दुरवस्थाका वृत्तान्त चाणक्यसे कह दिया। उस दुःखकी कहानीको सुन कर चाणक्यने प्रतिज्ञा की कि—"चन्द्रगुप्त! मैं अवश्य ही तुमको नन्दका सिंहासन दूंगा।"

एक दिन चाणक्य भूखके मारे नन्दके भोजनागारमें घुस पड़े और प्रधान आसन पर बैठ गये। नवनन्दोंने चाणक्यको एक साधारण ब्राह्मण जान कर उन्हें आसनसे उठा देनेकी आज्ञा दी। मन्त्रियोंने इस पर बहुत कुछ आपत्ति की। परन्तु नन्दराजोंने उनकी बात पर ध्यान न दिया और क्रोधमें आ कर चाणक्यको घसीट कर उठा दिया। चाणक्यने उस समय क्रोधमें अन्धे हो कर चोटी खोलते हुए इस प्रकार अभिशाप दिया-"जब तक नन्द वंशका उच्छेद न हो जाय तब तक मैं इस चोटीको नहीं बाँधूंगा।" इतना कह कर चाणक्य वहाँसे चल दिये। चन्द्रगुप्त भी नगर परित्याग कर चाणक्यके पास पहुंच गये और नन्दवंशके नाशके लिए म्लेच्छाधिपति पर्वतेन्द्रको बुलाया। शर्त यह रही कि, यदि युद्धमें जय हुई तो पर्वतेन्द्रको आधा राज्य मिलेगा। इस शर्तके अनुसार म्लेच्छाधिपति सेना सहित आ डटे। नन्दोंके साथ युद्ध छिड़ गया। चाणक्यके कौशलसे एक एक कर सब ही नन्द निहत होने लगे। राजमन्त्री राक्षसने उस समय उपायान्तर न देख वृद्ध सर्वार्थसिद्धिको गुप चुप नगरसे बाहर निकाल दिया। राजधानी पर चन्द्रगुप्तका अधिकार हो गया। राक्षसने चन्द्रगुप्तको मारनेके लिए इन्द्रजालके बलसे एक विषमयी कन्या बना कर भेजी। चाणक्यको यह बात मालूम हो गई, उन्होंने इस कन्याको पर्वतराजको सौंप दी, जिससे पर्वतेन्द्रकी मृत्यु हो गई। बादमें चाणक्यने पर्वतराजके पुत्र मलयकेतुको पितृनिर्दिष्ट अर्द्धराज्यके देनेके लिए बुलाया, परन्तु मलयकेतु डर कर अपने देशको भाग गये। फिर चाणक्यके कौशलसे वनवासी सर्वार्थसिद्धि भी मृत्युके महमान बन गये। राक्षसने सर्वार्थसिद्धिकी मृत्युका हाल सुन कर मलयकेतुको बुलाया और म्लेच्छ-सेनाकी सहायतासे मौर्यराज पर आक्रमण किया। परन्तु चाणक्यके कौशलसे राक्षस बन्दी हो गये, आखिर चाणक्यने उन्हींको चन्द्रगुप्तका मन्त्री बनाया।

बौद्धाचार्य बुद्धघोषरचित विनयपिटककी समन्तपसादिका नामकी टीकामें और महानामस्थविरकृत महावंशटीकामें चंद्रगुप्त (चंदगुत्तो) के (२) सम्बन्धमें ऐसा परिचय मिलता है—

तक्षशिलावासी चाणक्य धननन्दसे नितान्त अपमानित हो कर राजकुमार पर्वतको सहायतासे गुप्त भावसे विन्ध्यारण्यमें भाग आये थे। यहां उन्होंने अपनी क्षमताके प्रभावसे एक कार्षापणको ८ करते हुए क्रमशः आठ करोड़ कार्षापण संग्रह किये। इस विपुल अर्थबलसे दूसरे एक व्यक्तिको राजा बनानेके लिए उनकी इच्छा हुई। दैववश मोरिय (मौर्य) वंशोद्भव कुमार चन्द्रगुप्त पर उनकी सुदृष्टि पड़ी।

चन्द्रगुप्तकी माता मोरिय नगराधिपकी (३) पट्ट-

---

(२) बुद्धघोष और महानामके ग्रन्थ पालिभाषामें लिखे हुए हैं, इसलिए चन्द्रगुप्तादिके नाम भी ऐसे (पालिभाषामें) हैं; परन्तु सब साधारणके समझनेके लिए नाम संस्कृतमें लिखे जाते हैं।

(३) बौद्धशास्त्रविद् पण्डितोंके मतसे मोरिय-नगर हिन्दुकुश और चित्रलके मध्यवर्ती उद्यानक देशके बीचमें था। उद्यानक शब्द और S. Beal's Records of the Western World, Vol. I. p. XVII. देखना चाहिये।

रानी थीं। एक दुर्दान्त राजाने मोरियनगर पर अधिकार कर मोरिय (मौर्य)-राजको मार डाला था। उस समय उनकी पट्टरानी गर्भवती थीं, वे बड़े भाईकी सहायतासे बड़े कष्टसे भाग कर पुष्पपुरमें आ कर रहने लगीं। यथासमय उनके एक पुत्र पैदा हुआ। उन्होंने उस नवजात शिशुको एक मट्टीके पात्रमें सुला कर देवोंके ऊपर निर्भर कर उसे एक मवेशीखानाके दरवाजे पर रख दिया। जिस प्रकार वृषभने घोषराजको रक्षा की थी, उसी प्रकार चन्द्रनामका एक वृषभ उसके पास रह कर शिशुकी रक्षा करता था। उस समय एक ग्वालेके लड़केने उस बालकको देखा तो उसका हृदय वात्सल्यभावसे उथल उठा। वह उस बच्चेको अपने घर ले आया और उसका लालन पालन करने लगा। चंद्र नामक वृषभ द्वारा गुप्त अर्थात् रक्षित हुआ था इसलिए उसका नाम चंद्रगुप्त रखा गया।

चन्द्रगुप्त जब कुछ बड़े हुए; तब उनके प्रतिपालकका एक मित्र व्याध उन्हें आदरपूर्वक अपने घर ले गया। उस गांवमें चन्द्रगुप्त प्रतिदिन गाय-भैंस चराया करते थे। एक दिन ग्रामके अन्यान्य ग्वालोंके लड़कोंके साथ गाय चराते चराते उन्हें "राजा राजा" खेलनेकी हवस हुई। चन्द्रगुप्त राजा हुए, दूसरे लड़कोंमेंसे कोई मन्त्री कोई कोतवाल कोई दरोगा और कोई चोर डकैत बने। मन ही मन एक विचारालय स्थापित हो गया। चन्द्रगुप्त विचारासन पर बैठे। अपराधी भी आये। विचारकोंने विचार कर उन्हें अपराधी साबूत कर दिया। चन्द्रगुप्त न्यायको सुन कर सन्तुष्ट हुए और उन्होंने अपराधियोंके हाथ-पैर काटनेकी आज्ञा दे दी। कर्मचारियोंने कहा—"देव! कुठार नहीं है, किस प्रकार काट दें?" इस पर चन्द्रगुप्तने गम्भीरस्वरसे कहा—"चन्द्रगुप्तका आदेश है, तुम लोग उनके हाथ-पैर काट दो। बकरीका सींग ही तुम लोगोंकी कुठार है।" राज-आदेशका पालन किया गया, सींगसे ही उनके हाथ-पैरोंके दो टुकड़े हो गये। फिर हुक्म हुआ कि, "हाथ-पैरोंको जोड़ दो।" उसी समय पहिलेकी तरह हात-पैर जोड़ दिये गये।

चाणक्यको इस अभूतपूर्व घटनासे बड़ा आश्चर्य हुआ। वे समझ गये कि यह चंद्रगुप्त साधारण ग्वालेका लड़का नहीं; बल्कि कोई राजपुत्र है। फिर चाणक्य चंद्रगुप्तको साथ ले कर उनके प्रतिपालकके पास गये। उस व्याधको एक हजार कार्षापण (प्राचीन सिक्के) दे कर चाणक्यने कहा—"मैं इस बालकको समस्त विद्या सिखाऊँगा इसे मुझे दे दो।" अर्थकी मोहिनी शक्तिमें विमुग्ध हो कर वह व्याध जरा भी आपत्ति न कर सका।

चाणक्य चंद्रगुप्तको अपने आश्रममें ले आये। यहाँ उन्होंने पशमके ऊपर स्वर्णसूत्र गूँथ कर चंद्रगुप्तके गलेमें लपेट दिया। इस स्वर्णसूत्रका मूल्य करीब एक लाख मुद्रा होगा। चाणक्यने कुमार पर्वतको भी ऐसा स्वर्णसूत्र पहना रखा था। थोड़े दिन बाद उन्हें मालूम हो गया कि, चंद्रगुप्त मोरिय (मौर्य) वंशीय राजकुमार है।

एक दिन ये तीनों परमान्न भोजन कर एक निभृत निकुञ्जमें विश्राम कर रहे थे। सब सो रहे थे। चाणक्य पहिले जगे। उन्होंने पर्वतको उठाया और उनके हाथमें एक तीक्ष्ण तलवार दे कर कहा—"जाओ चंद्रगुप्तके गलेसे स्वर्णसूत्र ले आओ, परन्तु तोड़ कर या खोल कर नहीं ला सकते।" पर्वत तलवार ले कर अग्रसर हुआ, परन्तु उसके कार्यकी सिद्धि नहीं हुई। ऐसे ही दूसरे दिन चाणक्यने चंद्रगुप्तको जगा कर पर्वतके गलेसे स्वर्णसूत्रको लानेकी आज्ञा दी। चंद्रगुप्त उक्त आदेशको पालन करनेके लिए अग्रसर हुए। वे सोचने लगे, तोड़ूं नहीं, खोलूं भी नहीं और ले भी आऊँ हो! यह क्या? पर्वतके मस्तकको छिन्न करनेके सिवा तो दूसरा कोई उपाय नहीं। क्या किया जाय; चाणक्यकी आज्ञा है, पालन करनी ही पड़ेगी। उन्होंने झट तलवारसे पर्वतका मस्तक काट डाला और स्वर्णसूत्रको ले जा कर चाणक्यके चरणों पर रख दिया। चाणक्य यह देख कर अवाक् हो गया। जो हो, वे चन्द्रगुप्तकी कार्यवाहीसे सन्तुष्ट हुए। उन्होंने चंद्रगुप्तको समस्त विद्याएं सिखाईं। इस प्रकार छह सात वर्षमें चंद्रगुप्त एक विलक्षण पण्डित हो गये।

चंद्रगुप्तने यौवनराज्यमें पदार्पण किया। इतने दिनों बाद चाणक्यने अपने अभीष्ट सिद्धिके लिए अवसर पाया। उन्होंने अपने सञ्चित धनको निकाल कर उस अर्थबलसे बहुतसी सेना नियुक्त की। चाणक्यकी आज्ञासे

चन्द्रगुप्त उस विपुलवाहिनीके अधिनायक हुए। इस वार चाणक्य अपने छद्मवेशको छोड़ कर सिर्फ जनाकीर्ण नगर और ग्रामों पर आक्रमण करने लगे। चाणक्य और चन्द्रगुप्तके आक्रमणसे उत्पीड़ित हो कर नगरवासी सब एकत्र हुए। उनके आक्रमणसे चाणक्य और चन्द्रगुप्तकी सेना विपर्यस्त हो पड़ी। तब दोनों रणस्थलको छोड़ कर वनमें घुस गये। दोनोंने सलाह की—"जब युद्धमें कुछ फलाफल स्थिर नहीं होता, तो छद्मवेशसे सर्वसाधारणका अभिप्राय जानना चाहिये।" इसके बाद दोनोंने छद्मवेश धारण किया और नगर तथा गाँव गाँवमें घूम कर सर्वसाधारणकी बातें सुनने लगे।

एकदिन ये दोनों एकही गांवमें उपस्थित हुए। यहां एक रमणी अपने लड़केको अपूप (एक प्रकारकी गेहूंके आटेकी लिट्टी) खिला रही थी। वह बालक किनारेके हिस्सको न खा कर बीचके हिस्सेको खा रहा था, यह देख कर उसकी माने कहा—"तेरा काम ठीक चन्द्रगुप्तके राज्यजय करने जैसा है। लिट्टीके किनारोंको पहिले न खा कर जैसे तू बीचका हिस्सा खा रहा है, चंद्रगुप्तने भी वैसे ही राज्यके लोभकी उच्चाशामें मत्त हो कर पहिले सीमान्तस्थान जय न कर राज्यके भीतरके नगरों पर आक्रमण किया था। यह उनकी मूर्खता नहीं तो क्या है?"

अब चंद्रगुप्त अपनी भूल समझ सके। फिर बहुतसी सेनाओंका संग्रह किया। अबकी बार चाणक्य और चंद्रगुप्त दोनों पहिले सीमान्त प्रदेश आक्रमण करने लगे। (१) आखिरमें उन्होंने पाटलिपुत्र (पटना) पर आक्रमण कर धननन्दका निपात किया।

चाणक्यने सहसा चंद्रगुप्तको सिंहासन न दिया था। पहिले एक धीवरको आधे राज्यका लोभ दे कर उससे नन्दके गुप्तकोषागारका पता लगा लिया था। उक्त समस्त गुप्त धनको संग्रह कर पीछे चन्द्रगुप्तको पुष्पपुरके सिंहासन पर बैठाया। चन्द्रगुप्तने जतिल्य मन्यतप (मनियतप्पो) नामके अपने एक पूर्वपरिचित पुरुषको बुला कर उन पर राज्यमें शान्ति स्थापन करनेका भार सौंप दिया। राजाके आदेशानुसार जतिल्यने राज्यमें सुशृङ्खला स्थापन कर दी।

चाणक्यने देखा कि, उन्हींके कौशलसे चंद्रगुप्तने आज समुच्च राजपद पाया है शायद उनके अज्ञातमें वह चंद्रगुप्त किसी दुष्ट व्यक्तिके विषप्रयोगसे निहत हो जाय! यह सोच कर वे चन्द्रगुप्तको थोड़ा थोड़ा विष पीनेका अभ्यास कराने लगे। इसलिए कोई विष खिला कर चन्द्रगुप्तको मार सकता है इसमें भी कुछ सन्देह न रह गया।

चन्द्रगुप्तने अपने ज्येष्ठ मातुलकी कन्याके साथ विवाह किया और उन्हें अपनी पट्टरानी बनाया। ये मामा भी अपनी माके साथ पुष्पपुरमें आये थे।

यथासमय राजमहिषी गर्भवती हुई। एक दिन चाणक्य यथारीति चन्द्रगुप्तकी खाद्य-सामग्री भेज कर छिपे हुए देख रहे थे। चन्द्रगुप्त प्यारसे अपनी रानीके मुखमें भोजन दे ही रहे थे, कि जल्दीसे चाणक्यने जा कर उन्हें मना कर दिया, परन्तु रानी एक ग्रास खा चुकी थीं। यह जान कर चाणक्यने झट रानीका मस्तक व उदर छेद डाला और उनके पेटसे भ्रूणको निकाल कर एक बकरीके गर्भमें रख कर सौं दिया। इसी प्रकार सात दिन सात बकरियोंके उदरमें रख कर, उसके बाद नवजात शिशुको धात्रीको सौंप दिया। इस बालकके शरीर पर बकरीके खूनको एक बूंद गिर पड़ी थी, इसलिए इसका नाम बिन्दुसार रखा गया। (महावंशट का) (२)

महावंश-टीकाकारने अन्तमें लिखा है कि, हिन्दुग्रन्थमें नन्दराजको पुनर्जीवन लाभकी कथा है (३), परन्तु वह ठीक नहीं है। चंद्रगुप्तकी मृतदेहमें देवगर्भ नामक यक्ष द्वारा पुनर्जीवन संचार हुआ था; पर चंद्रगुप्तके पुरोहित ब्राह्मणके जान लेने पर बिन्दुसारने अपना असिसे उसका विनाश कर महासमारोहसे पिताकी समाधिक्रिया समाधा की थी।

---

(१) मुद्राराक्षसमें लिखा है—इस युद्धमें पर्वतेश्वर, शक, यवन, काम्बोज और पारसिक सैन्यने चंद्रगुप्तकी सहायता की थी।

(२) टीकाकारने लिखा है कि, चंद्रगुप्तके विषयमें विस्तृत विवरण जानना हो तो उत्तरविहारका थेरो रचित "अत्थकथा" नामक ग्रन्थ देखना चाहिये।

(३) बृहत्कथा या कथासरित्सागर ग्रन्थमें नन्दकी मृतदेहमें पुनर्जीवन सञ्चारणका विवरण लिखा है। नन्द शब्द देखो।

प्रसिद्ध जैनपण्डित पद्ममन्दिरविरचित ऋषिमण्डल-प्रकरणवृत्ति नामक ग्रन्थमें लिखा है—

चंद्रगुप्त चाणक्यकी सहायतासे नन्दको उच्छेद कर पाटलीपुत्रका शासन करते थे। उनके प्रासादमें शत्रुओंके हननार्थ नित्य विष बनाया जाता था। एक दिन चन्द्रगुप्त और उनकी गर्भवती महिषी दुर्धराने भ्रमसे विषाक्त खाद्य खा रहे थे। चाणक्यने यह देख लिया और दोनोंको खानेसे रोक दिया। किन्तु उस समय दुर्धरा बहुतसा विष खा चुकीं थीं, उनके जीवनकी कुछ आशा न देख चाणक्यने उनके उदरको चीर कर लड़का निकाल लिया था। निकालते समय बालकके मस्तक पर एक बूंद रक्त गिर पड़ा था, इसलिए उसका नाम बिन्दुसार पड़ गया था। (ऋषिमण्डलप्रकरणवृत्ति)

पाश्चात्य प्राचीन ऐतिहासिकोंने (४) भी चन्द्रगुप्तके विषयमें बहुत कुछ लिखा है। उनके मतसे चन्द्रगुप्त गाङ्गप्रदेश (Gandaridae) और प्राची (Prasii) देशके राजा थे।

जष्टिनस्‌ने लिखा है, कि यह राजा अत्यन्त नीच वंशके थे। भाग्यके बलसे उन्होंने राज्य पाया था। किसी समय उन्होंने अलेकसन्दरके साथ भेंट की थी। परन्तु उनकी रूखी बातों पर रुष्ट हो कर अलेकसन्दरने उनके लिए प्राणदण्डका आदेश दिया। अन्तमें चंद्रगुप्तने भाग कर अपनी जान बचाई। नाना देशोंमें घूमते हुए चंद्रगुप्त थक कर एक जगह बैठ गये, वहां एक सिंह मुंह फाड़ कर उनके सामने आ खड़ा हुआ, परन्तु उनसे कुछ बोला नहीं और चला गया। इससे चन्द्रगुप्तके हृदयमें कुछ आशाका सञ्चार हुआ। उन्होंने साम्राज्य स्थापनके लिए बहुतसे डकैतोंका संग्रह किया और उनकी सहायतासे ग्रीकसेनाको परास्त कर सिन्धुनदप्रवाहित प्रदेश पर अधिकार किया। (५)

डिओडोरसने ऐसा लिखा है—अलेकसन्दरने फिजियासे सुना था कि, सिन्धुके उस पार मरुभूमिमें हो कर १२ दिन चलनेसे गङ्गाके किनारे पहुंच सकते हैं। गङ्गाके उस पार चंद्र (Xandrames)-का राज्य है, उसके बीस हजार अश्वारोही, दो लाख पदाति, दो हजार रथ और चार हजार हाथी हैं। पहिले तो अलेकसन्दरने इस बात पर विश्वास ही नहीं किया, परन्तु पीछे पुरुके कहनेसे उनका सन्देह दूर हो गया। पुरुराजने उनसे यह भी कहा कि, गाङ्गप्रदेशका राजा नीच कुलका है अर्थात् नाईका लड़का है। वह नाई देखनेमें बड़ा खूबसूरत था, इसलिए उसके रूपमें मुग्ध हो कर रानीने उसके साथ सहवास किया और उस दुष्टाने राजाको भी मरवा डाला, इसीलिये उसका पुत्र अब राजा हो गया है।*

कुइण्टास कार्टियासने भी डिओडोरसकी तरह चंद्रगुप्तकी विपुल समृद्धिका वर्णन कर अन्तमें कहा है कि, प्रजा भी इनको तुच्छ दृष्टिसे देखती थी।

आरियान्, ष्ट्राबो, आपियानस आदि बहुतसे ग्रीक ग्रन्थकारोंने चंद्रगुप्तकी समृद्धिका परिचय दिया है।

डिओडोरसको वर्णनासे मालूम होता है कि, ग्रीक-सेनानायक फिलिपके हत्याकाण्डके बाद अलेकसन्दरने इउडिमस और तक्षशिलको पञ्जाबके शासनका भार दिया था। किन्तु ३२३ ई०के पहिले अलेकसन्दरकी मृत्यु हो जाने पर इउडिमसने खुद राजा होनेकी आशासे अपने सेनापति इउमेनिसके द्वारा पुरुराजको मरवा डाला था।†

किसीका ऐसा भी मत है कि, पुरुराजकी हत्या करनेमें चंद्रगुप्त भी शामिल थे। ३१७ ई०से पहिले इउडिमस् सेनापति इउमेनिसकी सहायतार्थ ३००० पयादे, ५००० अश्वारोही और करीब १२० हाथी ले कर शविनिरणक्षेत्रमें उपस्थित हुए थे। इसी अवसरमें चंद्रगुप्तने जातीय स्वाधीनताके उद्धारके लिए देशीय सामन्तोंको उत्तेजित कर भारतसे ग्रीकोंको भगाया था और पञ्जाब पर अधिकार किया था।‡

---

(४) पाश्चात्य प्राचीन ऐतिहासिकोंने डिओडोरस् सिकिउलस् (Xandrames), कुइण्टास कार्टियास (Aggramen), जष्टिनस या मेगेस्थिनिस (Sandrocottus or Sandrokoptos) और प्लुटार्क (Andracottus) नामसे चन्द्रगुप्तका उल्लेख किया है।

(५) Justinus XV. 4.

* Diodorus Siculus.

† Diodorus. XIX. 5.

‡ प्लुटार्कने भी लिखा है कि, जब चंद्रगुप्तके साथ अलेकसन्दरकी मुलाकात हुई थी, तब चंद्र बालक थे। मौर्यवंशमें उनका जन्म हुआ था। इसलिए अलेकसन्दर भी उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखते थे।

ष्ट्राबोने लिखा है कि, इसके कुछ ही दिन बाद सेल्यूकस ग्रीकराजाकी पुनः स्थापना करनेके लिए चंद्रगुप्तसे युद्ध करने आये थे; परन्तु उनसे चंद्रगुप्तकी मित्रता हो गई। मेगेस्थिनिस लिखते हैं, कि इस समय सेल्यूकसने चंद्रगुप्तको अपनी कन्या परणाई थी। प्लूटार्कने लिखा है, चंद्रगुप्तने ५०० हस्ती भेंट दे कर सेल्यूकसका सम्मान किया था। सेल्यूकसके आदेशसे ग्रीकदूत मेगेस्थिनिस पाटलीपुत्र (Palembothra) नगरमें चंद्रगुप्तकी सभामें उपस्थित हुए थे। मेगेस्थिनिसने चंद्रगुप्त और उनके राज्यकी व्यवस्था आदिका जैसा वर्णन किया है, उससे मालूम होता है कि, स्कन्धावारमें भी चंद्रगुप्तके चार लाख आदमी मौजूद रहते थे। प्लूटार्कने एक जगह लिखा है कि, चंद्रगुप्तने छह लाख सेनासे समस्त भारतवर्ष जय किया था। श्रवणबेलगोलाके प्राचीन शिलालेखमें लिखा है कि, चंद्रगुप्त श्रुतकेवली भद्रबाहुके (६) साथ उज्जयिनी नगरीमें गये थे।

चन्द्रगुप्त किस समय पाटलीपुत्रके सिंहासन पर बैठे थे, इसमें मतभेद पाया जाता है। स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें लिखा है—"ततस्त्रिषु सहस्रेषु दशाधिकशतत्रये । भविष्यं नन्दराज्यञ्च चाणक्यो यान् हनिष्यति ॥" (३९ अ०)

कलियुगके ३३१० वर्ष बीत जाने पर नन्दोंका राज्य होता है और चाणक्य उनका विनाश करते हैं। इस समय कलियुगको प्रारम्भ हुए ५०२४ वर्ष हो गये, इस लिए कुमारिका खण्डके मतसे (५०२४—३३१० =) १७१४ वर्ष पहिले अर्थात् ई० सन् २०१ में नन्दोंका विनाश और चन्द्रगुप्तका राज्यारोहण हुआ होगा। पौराणिक वचन होने पर भी इस पर बिल्कुल निर्भर नहीं किया जा सकता, क्योंकि सर्ववादीसम्मत ग्रीकके इतिहाससे यह निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि, ३२३ ई०से पहले अर्थात् कुमारिकाखण्ड वर्णित समयसे करीब ५३२ वर्ष पहिले महावीर अलेकसन्दरकी मृत्यु हुई थी। इससे पहिले लिखा जा चुका है कि, अलेकसन्दरके समयमें चन्द्रगुप्त राजा हुए थे, किन्तु उस समय उनकी उम्र अल्प थी। ऐसी दशामें यही स्थिर होता है कि, ३२३ ई०से बहुत पहिले चन्द्रगुप्तका प्रथम राज्याभिषेक हुआ था। उइलसन्, कोलब्रुक, टार्णार, प्रिन्सेप आदि पाश्चात्य प्रत्नतत्त्वविदोंने चन्द्रगुप्तका वास्तविक समय निरूपण करनेके लिए यथेष्ट प्रयास किया था, अन्तमें प्रसिद्ध बौद्धशास्त्रविद् रिस्डेभिडने स्थिर किया कि चन्द्रगुप्त ३२० ई०से पहिले राजा हुए थे। (७) हमारी रायसे चन्द्रगुप्त उस समयसे पहिले राजा हुए थे, परन्तु सम्भवत: उस समय वे राजचक्रवर्ती रूपसे माने गये थे।

चन्द्रगुप्तकी मृत्युके बाद उन्हींके पुत्र बिन्दुसार राजा हुए थे। राजा राजेन्द्रलालके मतसे—"नेपाली बौद्धग्रन्थके पढ़नेसे बिन्दुसारको चन्द्रगुप्तका पुत्र या मौर्यवंशीय नहीं कहा जा सकता। चन्द्रगुप्त ही मौर्यवंशके प्रथम और अन्तिम राजा हैं।" (८) परन्तु जब समस्त प्रधान पुराणोंमें दीपवंश और महावंश आदि प्रामाणिक बौद्धग्रन्थोंमें बिन्दुसारको चन्द्रगुप्तका पुत्र बताया है; तो फिर इसमें विशेष कुछ सन्देहका कारण नहीं।

जैनोंका कहना है, कि चन्द्रगुप्त बौद्धमतावलम्बी नहीं किन्तु जैनमतावलम्बी थे। उन्होंने जैनाचार्य भद्रबाहुस्वामीके निकट दीक्षा ग्रहण की थी और उन्हींके नामानुसार महिसुर राज्यके अन्तर्गत श्रवणबेलगुलके निकटवर्ती चन्द्रगिरि पर्वतका नामकरण हुआ है, वहां उन्होंने समाधिमरण पूर्वक ऐहिक लीला समाप्त की थी। वे चन्द्रगुप्तके जैनमतावलम्बी होनेके विषयमें बहुतसे शिलालेखोंका हवाला देते हैं। मि० ई० टामस कहते हैं कि—महाराज चन्द्रगुप्त जैनधर्मके एक नेता थे। जैनोंने कई शास्त्रीय और ऐतिहासिक प्रमाणों द्वारा इस बातको प्रमाणित किया है। उनका यह भी कहना है कि, चन्द्रगुप्तके जैन होनेमें शङ्का करना व्यर्थ है। क्योंकि इस बातका साक्ष्य कई प्राचीन प्रमाणपत्रोंमें मिलता है और वे प्रमाणपत्र (शिलालेख) निःसंशय अत्यन्त प्राचीन हैं। महाराज चन्द्रगुप्तके पौत्र अशोक यदि अपने पितामहके धर्मका परिवर्तन नहीं करते अर्थात् बौद्धधर्म ग्रहण

(६) भद्रबाहु दिगम्बर जैन थे। इन्होंने तपस्या पूर्वक केवलज्ञानकी प्राप्ति की थी। भद्रबाहु और श्रुतकेवली शब्द देखो।

(७) Numismata Orientalia, (1877) p. 41—"On the Ancient Coins and measure of Ceylon" By T. W. Rhys Devids.

(८) Dr. R. Mitra's Indo Aryans, Vol. II p. 418.

नहीं करते, तो उनको जैनधर्मके आश्रयदाता कहनेमें किसी प्रकारकी अत्युक्ति नहीं होती। मगस्थिनिस (Magasthenes) के मतसे—ब्राह्मणोंके विरुद्ध जो जैनमत (श्रमणमत) प्रचलित था, उसीको चन्द्रगुप्तने स्वीकार किया था। आइन ए-अकबरीमें लिखा है कि, 'अशोकने काश्मीरमें पहले पहल जैनधर्मका प्रचार किया', इससे ज्ञात होता है कि अशोक कुछ समय तक जैन मतावलम्बी थे।

एन्सायक्लोपीडिया आफ् रिलिजनमें लिखा है—ई०से २९७ वर्ष पहले संसारसे विरक्त हो चंद्रगुप्तने जैन-दीक्षासे दीक्षित हो कर महिसुर प्रान्तस्थ श्रवणबेलगुलमें बारह वर्ष तक तपस्या की और अन्तमें तप करते हुए स्वर्गधामको सिधारे। मि० जार्ज सी० एम० बर्डउड लिखते हैं कि, चंद्रगुप्त और बिन्दुसार ये दोनों बौद्ध-धर्मावलम्बी नहीं थे। हां, चंद्रगुप्तके पौत्र अशोकने जैनधर्मको छोड़ कर बौद्धधर्म स्वीकार किया था। मि० जे० टालबोइ भिलर्स कहते हैं कि, चंद्रगुप्त बौद्ध* नहीं थे।†

इसके सिवा जैनाचार्य श्रीरत्ननन्दि अपने भद्रबाहु चरित्रमें लिखते हैं—

"चंद्रावदातसत्कीर्तिश्चंद्रवन्मोदकर्तृणाम् ।
चंद्रगुप्तिर्नृपस्तत्राचकस्रच्चारुगुणोदय: ॥ ७ ॥
राजंस्त्वदीयपुण्येन भद्रबाहु: गणाग्रणी: ।
आजगाम तदुद्याने मुनिसन्दोहसंयुत: ॥२१॥
चंद्रगुप्तिस्तदाबादो विनयाम्नवदीक्षित: ।
द्वादशाब्दं गुरो: पादौ पर्य्युपास्तेऽतिभक्तित: ॥ २८॥
भयसप्तपरित्यक्तो भद्रबाहुर्महामुनि:।
अशनाय पिपासोत्थं जिगाय श्रमसुल्वणम् ॥ ३७॥
समाधिना परित्यज्य देहं गेहं रुजां मुनि ।
नाकिलोकं परिप्राप्तो देव-देवीनमस्कृत: ॥ ३९॥
चंद्रगुप्तिमुनिस्तत्र चच्चारित्रभूषण:।
आलिख्य चरणौ चारु गुरो: संसेवते सदा ॥ ४० ॥"

चन्द्रके समान कीर्तियुक्त और संसारको समुल्हादित करनेवाले सुगुणी महाराज चन्द्रगुप्त अवन्तीमें हुए। हे राजन्! तुम्हारे पुण्य-बलसे संघाधिपति भद्रबाहुस्वामी सबोंके साथ उस उद्यानमें विराजमान हुए। इसके बाद नवदीक्षित विनयी चन्द्रगुप्तने कहा कि "मैं बारह वर्षसे अपने गुरु (श्री १०८ भद्रबाहुस्वामी) के चरणोंकी बड़ी भक्तिके साथ पूजा कर रहा हूं। इसके बाद भयसप्तको छोड़ कर महामुनि भद्रबाहुस्वामीने बलवती क्षुधा और पिपासाको दमन किया। अनन्तर स्वामीने रोगोंके घर स्वरूप शरीरको छोड़ कर देव-देवियोंसे पूजित स्वर्गधामको विभूषित किया। सम्यक्‌चारित्रसे भूषित मुनि चन्द्रगुप्त वहां अपने गुरु भद्रबाहुस्वामीके चरण अङ्कित कर सदा उनकी पूजा करने लगे।

हरिषेणाचार्य कृत 'वृहत् कथाकोष' और देवचंद्रकृत 'राजावलीकथा' में उपर्युक्त कथन अर्थात् चन्द्रगुप्तको भद्रबाहुस्वामीका शिष्य होने और जैन होनेके मतकी पुष्टि बड़े युक्तियुक्त कथनसे की गई है‡।

उन ग्रन्थोंमें महाराज चंद्रगुप्तका भद्रबाहुस्वामीके निकट दीक्षा ग्रहण करनेका विषय इस प्रकार वर्णित है—एक दिन महाराज चन्द्रगुप्तने शेषरात्रिको १६ स्वप्न देखे। यथा—(१) सूर्य अस्त हो रहा है, (२) रत्नोंकी राशि धूलिमें पड़ी है, (३) कल्पतरुकी डाली टूट गई है, (४) समुद्रने मर्यादा छोड़ दी है, (५) बारह फणोंवाला सर्प फुंकार रहा है, (६) देवताओंका विमान उलट गया है, (७) राजपुत्र ऊँट पर सवार हुआ है, (८) दो काले हाथी आपसमें लड़ रहे हैं, (९) गायके छोटे छोटे बछड़े गाड़ीमें जोते गये हैं, (१०) बन्दर हाथी पर सवार हुआ है, (११) प्रेत नाच रहा है, (१२) सुवर्णके पात्रमें कुत्ता खीर खा रहा है, (१३) जुगनू देदीप्यमान हो रहे हैं, (१४) तालाब सूख गया है, (१५) धूलिमें कमल खिला है, (१६) चन्द्रमामें कई छिद्र हो गये हैं। इन स्वप्नोंको देख कर महाराज चन्द्रगुप्तको उनके फल पूछनेकी बड़ी उत्कण्ठा हुई। इसी समय भद्रबाहुस्वामी हजारों मुनियोंके साथ उज्जयिनीमें आ कर चन्द्रगुप्तके बागमें ठहरे। चन्द्रगुप्तको मालूम होते ही वे स्वप्नके फल पूछनेके लिए उनके पास गये। भद्रबाहुस्वामीने स्वप्नोंका फल इस प्रकार बतलाया—

* Industrial Art of India, देखो

† J. Talboys Wheeler's Ancient India, देखो

‡ उपर्युक्त तीनों आचार्योंका समय इस प्रकार प्रतीत होता है, हरिषेणाचार्यका समय ९११ ई०, रत्ननन्द्याचार्यका समय १४५० ई० और देवचन्द्रका समय लगभग १८०० ई० है।

(१) द्वादश अङ्गका जाननेवाला कोई न रहेगा, (२) यतियोंमें एकता न रहेगी, (३) क्षत्रिय जैनधर्मको नहीं मानेंगे, (४) राजा नीति-पटु नहीं होंगे, (५) बारह वर्ष तक दुर्भिक्ष पड़ेगा, (६) भारत-भूमि पर देवता नहीं आवेंगे, (७) राजा मिथ्यात्व धर्मके अनुयायी होंगे, (८) समय समय पर वर्षा कम होगी, (९) युवावस्थामें ही धर्मसाधन होगा, (१०) क्षत्रिय हीन वृत्ति करेंगे और शूद्र राजा होंगे, (११) कुदेवोंकी पूजा अधिक होगी, (१२) धनिकोंके धर्मसे दुष्कर्म अधिक होंगे, (१३) जैनधर्मका प्रभाव बहुत कम हो जायगा, (१४) दक्षिणदेशमें वर्षा बहुत कम होगी और वहीं जैनधर्म अधिक माननीय होगा, (१५) ब्राह्मण अजैन होंगे और वैश्य जैन होंगे, (१६) जैनमतमें भेद प्रभेद होगा।

इस प्रकार स्वप्नफलको सुन सांसारिक भविष्यके भयसे त्रस्त हो कर महाराज चन्द्रगुप्तने अपने पुत्र बिंदुसारको राज्याभिषिक्त कर भद्रबाहुस्वामीके निकट जा दीक्षा ग्रहण की। चन्द्रगुप्तका दीक्षा-नाम प्रभाचन्द्र हुआ। बारह वर्षका दुर्भिक्ष होगा जान कर भद्रबाहुस्वामी दक्षिणदेशको चले गये। चन्द्रगुप्तने भद्रबाहुस्वामीके साथ रह कर अन्तिमावस्था तक उनकी सेवा की थी।

(भद्रबाहुचरित, प०२, श्लो०१०-१७)

चाणक्य, बिन्दुसार आदि शब्दोंमें अन्यान्य विवरण देखो।

चन्द्रगुप्त—१ एक महा प्रतापशाली गुप्तसम्राट् और महाराजाधिराज समुद्रगुप्तके पिता। इनका दूसरा नाम विक्रम या विक्रमादित्य भी था। इन्होंने लिच्छविराजकी कन्या कुमारदेवीके साथ पाणिग्रहण किया था। मेहरौलीके शिलालेखमें चन्द्र नामसे एक राजाका नाम मिलता है, कोई कोई उन्हें मिहिरकुलके कनिष्ठ भ्राता समझते हैं, परन्तु उस लिपिके अक्षरों और समुद्रगुप्तके समयके गुप्ताक्षरोंमें परस्पर सादृश्य पाया जाता है, इसलिए वह चन्द्रगुप्तके समयका शिलालेख है—ऐसा मालूम पड़ता है। अन्यान्य गुप्तसम्राटोंके शिलालेखोंमें जिस प्रकार "भागवत" नामसे इनका परिचय मिलता है, मेहरौलीके शिलालेखमें भी वैसी ही 'भागवत' आख्या देखनेमें आती है। इस शिलालेखमें लिखा है कि, चन्द्रने वङ्गसे ले कर सिन्धु वह्लिक तक समस्त जनपद जय किये थे। इससे मालूम होता है कि, गुप्तराजोंमेंसे सबसे पहिले इन्होंने समस्त उत्तरभारत जय कर महाराजाधिराजका पद पाया था और नया (गुप्त) सम्वत् चलाया था। गुप्त-सम्राटोंके इतिहासमें ये १म चंद्रगुप्तके नामसे प्रसिद्ध हैं।

गुप्तराजवंश शब्द तथा चन्द्रवर्मा देखो।

२ और एक गुप्तसम्राट्। ये २य चंद्रगुप्तके नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। ये महाराजाधिराज समुद्रगुप्तके "परिगृहीत" पुत्र और दत्तदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इनके दूसरे नाम विक्रम या विक्रमाङ्क और देवराज थे। इन्होंने ध्रुवदेवी (नेपालके राजा ध्रुवदेवकी कन्या)के साथ विवाह किया था। इन्होंने दिग्विजयके उपलक्षमें उदयगिरि आदि भारतके नानास्थानोंका परिदर्शन, बहुतसी कीर्तियोंका

चंद्रगुप्तके सिक्के।

स्थापन तथा बहुतसे देवोत्तर और ब्रह्मोत्तर दान किये थे। इनके समयके शिलालेखसे जाना जाता है कि, इन्होंने ८१ से ९४ गुप्तसंवत् (४०० से ४१३ ई०) तक साम्राज्यका उपभोग किया था। गुप्तराजवंश देखो।

चन्द्रगुप्त—अजमेरके एक चौहान राजा, माणिक्यरायके पौत्र। ये ६८५ ई०में विद्यमान थे। दिल्लीके अन्तिम हिन्दू राजा पृथ्वीराज इनहीके वंशधर थे।

चन्द्रगुप्त—जालन्धरके एक राजपुत्र। मड़ा ग्रामके प्रसिद्ध लक्ष्मामन्दिरमें प्रायः ६०० ई०के दो प्राचीन शिलालेख मिले हैं, उनके पढ़नेसे मालूम होता है कि, चन्द्रगुप्तकी पत्नी ईश्वररानी उक्त मन्दिरकी प्रतिष्ठा कराई थी।

चन्द्रगृह (सं० क्ली०) चन्द्रस्य गृहम्, ६-तत्। कर्कटराशि, कर्कराशि।

चन्द्रगोचरफल (सं० क्ली०) राशिविशेषमें चन्द्रमाकी अवस्थितिके अनुसार मनुष्योंमें जो शुभाशुभ हुआ करता है, उसीको चन्द्रगोचर कहते हैं। गोचर देखो

चन्द्रगोपालपाल—नवद्वीपपति महाराज कृष्णचन्द्रकी राज-

सभाके प्रधान विदूषक। ये गोपालभाँड़ नामसे विख्यात हैं। नवद्वीप नगरमें कुम्हारोंके कुलमें इनका जन्म हुआ था। कोई कोई कहते हैं कि, ये जातिके नापित थे। ये अत्यन्त सङ्गीतानुरागी थे और दिल्ली प्रदेशके आये हुए कलावन्तोंका अत्यन्त आदर किया करते थे। ध्रुपद और खियाल उन्हें बहुत ही प्यारे लगते थे। इन्होंने बंगालके राग-रागिणियोंका अच्छा अनुभव प्राप्त किया था। मकान आदि बनानेकी उन्नतिकी तरफ इनका विशेष ध्यान था। राजप्रासादमें पूजा करनेका दालान इन्होंकी सलाहसे बनाया जाता था। काशीमें पवित्र ज्ञानवापी कूपमें उतरनेके लिए पत्थरकी जो सीढ़ियां बनी हुई हैं, वे इन्हींके हाथसे बनीं थीं। गोपालभाँड़ देखो।

चन्द्रगोमिन्—प्रसिद्ध चंद्र व्याकरणके प्रणेता। चीरस्वामीने इनके बनाए हुए पारायणका तथा पुरुषोत्तम और उज्ज्वलदत्तने इनके लिङ्गानुशासन या लिङ्गकारिकाका उल्लेख किया है। ई० ८म शताब्दीमें चन्द्रद्वीपवासी थे।

चन्द्रगोल (सं० पु०) चंद्र एव गोलः। गोलाकार चंद्रमण्डल।

चन्द्रगोलस्थ (सं० पु०) चंद्रगोले तिष्ठन्ति स्था-क। चंद्रगोलमें रहनेवाले स्वधाभोजी पितृलोक।

चन्द्रगोलिका (सं० स्त्री०) चंद्रगोलः साधनत्वे नास्त्यस्य चंद्रगोल-ठन्-टाप्। १ ज्योत्स्ना, चंद्रिका, चाँदनी। २ चंद्रक मीन, चाँद नामकी मछली।

चन्द्रग्रहण (सं० क्ली०) चन्द्रका राहु द्वारा ग्रसित होना, कुसूफ-कमरी। ग्रहण शब्दकी परिभाषामें लिखा जा चुका है कि चन्द्र किसी पातविन्दुके निकटस्थ रहनेसे और सूर्य भी उसी समय अपर पातविन्दुके पास पहुंचनेसे चन्द्रग्रहण पड़ता है। सुतरां उक्त पातविन्दुद्वय स्थिर रहनेसे प्रतिवत्सर एक ही समय पर ग्रहण लगा करता। बुध और शुक्रकी कक्षाके साथ सूर्यकक्षाका पातविन्दु स्थिर है। इसीसे उनका ग्रहण एक बार वत्सरके जिस समय होता, परवर्ती वर्षको भी उसी समय पड़ा करता और चिरकाल वैसा ही होता रहेगा। परन्तु वैसे ग्रहणद्वयके मध्यवर्ती कालका परिमाण बहु वर्ष है। वास्तविक यह दोनों पात सूर्यकक्षामें पश्चिमदिक्को अग्रसर होते होते कोई साढ़े १८ वर्षमें एक बार घूम करके फिर पूर्वस्थान पर आ पहुंचते, अर्थात् प्रतिवत्सर प्रायः १९° अंश पीछे पड़ते हैं। सुतरां किसी वर्षको जो ग्रहण पड़ता, दूसरे वर्ष वही ग्रहण लगनेसे कोई १९ दिन पहले ठहरता है।

चंद्र अपने और सूर्य पातके जैसे स्थानमें रहता, फिर वही अवस्था प्राप्त होनेमें प्रायः २२३ चांद्रमासका समय लगता है। इस समय यदि पूर्णिमाके दिन एक बार चंद्र राहु ग्रस्त हो, तो २२३ चांद्रमास पीछे चंद्र और सूर्यका अवस्थान फिर पूर्ववत् बैठेगा, सुतरां ग्रहण भी सम्भव है। ५ मलमास (Leap year) रहनेसे १८ वर्ष १० दिन ७घण्टा, ४३ मिनट और ४ मलमास पड़नेसे १८ वर्ष ११ दिन ७ घण्टा ४३ मिनट पीछे चंद्रकी स्थिति, सूर्य चंद्रपात और चंद्रकक्षाके दूरतम विन्दु (apogee)-की तुलनासे फिर प्रायः पूर्वरूप हो जाती है। सुतरां इस समय पीछे सर्वांशमें लगभग पहलेकी भांति ग्रहण लगता है। उक्त कालके मध्य ही चंद्रका पात ऊनविंश वार सूर्यके साथ पूर्वस्थान प्राप्त हो करके फिर पूर्वस्थानमें चला आता है, किन्तु ठीक उसी स्थान पर नहीं जाता। यह बारीक हिसाब न रहनेसे ग्रहणगणनामें क्या गड़बड़ पड़ता, एक बार चन्द्रग्रहण होनेसे उक्त परिमित काल पीछे फिर ठीक उसी समय पर ग्रहण लगा करता। इस प्रकारकी गणना अति सूक्ष्म होते भी अति सामान्य असङ्गति रखती है। उसीसे एक बार ग्रहण पड़ने पर १८ वत्सर ११ दिन पीछे ठीक इसी समय ग्रहण न लगते भी अल्प इतर विशेष हुआ करता है। यहां तक कि आंशिक ग्रहण जिसमें चन्द्रका अत्यल्प भागमात्र ग्रस्त होता, उक्त परिमित काल पीछे पुनर्वार नहीं पड़ सकता और एक वार ग्रहण न लगते भी उससे १८ वर्ष ११ दिन पीछे चन्द्रका पाद ग्रहण हो सकता है। अन्यान्य द्विपाद, त्रिपाद ग्रास प्रभृति ग्रहण यथासमय फिर होगा तो सही, परन्तु ऐसा नहीं कि उसके ग्रस्त अंशका परिमाण ठीक पहले ही जैसा रहेगा।

अधुना ज्योतिःशास्त्रके उन्नति-सहकारसे नक्षत्रोंके गतिनिरूपणका अति उत्कृष्ट उपाय उद्भावित हुआ है। उसके द्वारा अनायास ही समझा जा सकता, किस समय को कौन नक्षत्र आकाशमें कहां ठहरेगा। चन्द्र और सूर्य के आकाशमार्गमें अवस्थित होनेकी तालिका बन

गयी है। उसको देख करके अनायास ही बतलाया जा सकता, कौन समय ग्रहण पड़े न पड़ेगा। इङ्गलैण्डकी नाविक-पञ्जिकामें (Nautical Almanac) आगामी बहुवर्ष पर्यन्त आकाशमण्डल पर सूर्य तथा चन्द्रके प्रतिदिनका अवस्थान-विषयक समस्त विवरण लिखा है। उसके माहात्म्यसे हम ग्रहणका भोगकाल तथा ग्रस्त अंशका परिमाणादि समस्त विषय समझ सकते हैं। चन्द्रग्रहण प्रकृष्ट रूपसे जाननेके लिये निम्नलिखित विषय भली भांत उपलब्धि करना आवश्यक है।

पृथिवीके केन्द्रको केन्द्र मान करके चन्द्रके केन्द्र पर्यन्त व्यासार्ध ले जा करके आकाशमें एक मण्डलाकार स्थान कल्पना करो। अब देख पड़ेगा कि चन्द्रका अर्ध भाग उसी वर्तुलाकार स्थानके अभ्यन्तर और अर्ध भाग उसके बाहर रहता है। पृथिवीकी छाया-सूचीका दैर्घ्य पृथिवी व्यासार्धके २१३ गुणसे २२० गुण पर्यन्त बैठता है। सूर्यके दृश्यमान बिम्बव्यास परिमाणको ह्रासवृद्धिके अनुसार वह भी घटता बढ़ता है। पृथिवीसे चन्द्रका दूरत्व ६० पृथिवी-व्यासार्धके समान है। सुतरां चन्द्र उक्त छायासूचीमें प्रविष्ट हो सकता है। पृथिवीकी छाया भी पृथिवीसे क्रममें ह्रस्वायत न हो करके सूचीके आकारमें उस मण्डलको काटेगी। अब उस मण्डलाकार स्थानके उपरिभागमें दो चिह्न बन गये—एक चन्द्रमण्डल और दूसरा पृथिवीकी छाया। यह स्पष्ट देख पड़ता है कि वह छाया, पृथिवी और सूर्यका केन्द्र एक सरल रेखामें अवस्थित हैं। सुतरां छायाकेन्द्र सूर्यकेन्द्रको ठीक विपरीत दिक्‌को सूर्यकक्षामें पड़ता है। फिर इसकी गति भी सूर्यकक्षाके ऊपर और सूर्यके समान है। चन्द्र उसी वर्तुलको चारों ओर अपनी कक्षामें भ्रमण करता और इसका केन्द्रकक्षाके ऊपर पड़ता है। इन दोनों चिह्नोंमें परस्पर अन्तर रहनेसे ग्रहणकी सम्भावना नहीं होती। इनके संयोगसे ही ग्रहण लगता है। फिर पृथिवीकी छाया चन्द्रकी अपेक्षा बढ़ जानेसे सर्वग्रास होता है। ग्रस्तांशका परिमाणादिको निकालनेको उक्त दोनों चिह्नोंका आपेक्षिक आयतन जानना आवश्यक है। पहले ही बतलाया जा चुका है कि चन्द्रका बिम्बव्यास गड़ ३१´ २५´´.७ और निम्नसंख्या २९´ २२´´ से ३३´ २८´´ तक बढ़ती है। नाविक-पञ्जिकामें उसके प्रतिदिनका परिमाण लिखा है और इससे दिनके किसी भी समयको उसका परिमाण निरूपण किया जा सकता है। पृथिवीकी छायाका परिमाण निम्नलिखित उपायसे निकाला जाता है। मान लो कि न ट उल्लिखित आकाशमण्डलका उपरिभाग है और यह चंद्रके केंद्रको काट
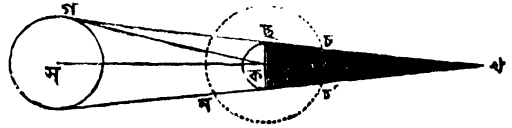
गया है। पृथिवीकी छाया उसके ट ट´ परिमित स्थानमें गोलाकार भावसे पड़ेगी। अब इस वृत्तके दृश्य बिम्बव्यास ट क ट´को निरूपण करना चाहिये। क्योंकि ∠ट क थ = ½ ∠ ट क ट´ और ∠ट क थ = ∠क ट छ - ∠ट थ क, फिर ∠ट थ क = ∠ग क स - ∠छ ग क। सुतरां ∠ट क थ = ∠क ट छ—(∠ग क स + ∠छ ग क) = ∠क ट छ — ∠ग क स + ∠छ ग क) = ∠क ट छ—∠ग क स + ∠छ ग क इसके मध्यमें ∠क ट छ = चन्द्रलंबन (Parallax)। क्योंकि क ट रेखा पृथिवीके केन्द्र चंद्रके दूरत्व समान है। ∠छ ग क = सूर्य लम्बनके (Parallax) और ∠ग क स = सूर्यबिम्बव्यास अर्ध परिमाणके। सुतरां चंद्र तथा सूर्यके लम्बन योगफलसे सूर्यके बिम्बव्यासका आधा वियोग करनेसे पृथिवीकी छायाके व्यासार्धका परिमाण निकलेगा। इसी प्रकार पृथिवीकी छायाके उस अंशका बिम्बव्यास परिमाण १° १५´ ३२´´ से १° ३१´ ३६´ तक होता है। नाविक पञ्जिकामें दिवसके किसी समयको उसका परिमाण लिखा है। किन्तु पृथिवीके वायुराशिनिबन्धनसे वह छाया साधारणतः पञ्जिकालिखित परिमाणसे ईषत् वृहत् समझ पड़ती है। इसीसे पञ्जिकालिखित भावी ग्रहणके प्रत्यक्ष दृश्यसे मेल रखनेके लिये उक्त परिमाणको ¹⁄ से गुण किया जाता है।

मान लो कि क ख सूर्यकक्षा और क घ चंद्रकक्षा (Moon's orbit) है। ऐसा होने पर प एक पातविंदु (Node) होगा। ह पृथिवीकी छाया क ख से सूर्यके समान गति चलती है। फिर चंद्र ग घ से उससे १० गुण अधिक वेगमें बढ़ रहा है। अब चन्द्र और छा

का सम्मिलन होनेको चन्द्र निकट पहुंचते समय उक्त
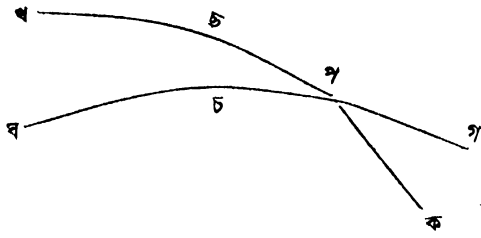
छायाका केन्द्र प विंदुके अति सन्निहित रहना आवश्यक है।

चंद्र और उक्त छायाका विम्बव्यास सब समयको समान नहीं रहता। परन्तु प पातविन्दुसे छायाकेंद्रका दूरत्व विपरीत दिक्‌को अपर पातविन्दुसे सूर्य्यकेंद्र दूरत्वके समान होता है। ऐसा होने पर प्रथमतः चंद्रग्रहणके सम्भावना कालमें सूर्यकेन्द्र सन्निहित पातविन्दुसे १२° ३′ अपेक्षा अधिक दूर पड़ने पर ग्रहण नहीं लगता। दूसरे इसी समयको सूर्य्यकेन्द्रका दूरत्व ८° ३१′ अपेक्षा न्यून आनेसे निश्चय ग्रहण पड़ता है। तीसरे—वही दूरत्व इन दोनों परिमाणोंका मध्यवर्ती होनेसे ग्रहण लग भी सकता और नहीं भी लग सकता है।* इसको स्थिर करनेमें विशेष गणनाका प्रयोजन है। अब देखना चाहिये—कैसे चन्द्रग्रहणका स्पर्श, स्थिति, मोक्ष और ग्रस्तांशका परिमाणादि निरूपण किया जाता है। उदाहरण स्वरूप पारिस नगरके १८४५ ई० १३।१४ नवम्बरका चंद्रग्रहण रख लीजिये। फरासीसी नाविक-पत्रिकामें पारिस नगर पर १३ नवम्बरके मध्यकालको चन्द्र और सूर्यका ध्रुवकान्तर १८६° २०′ ७″.१ है। पर दिवस १४ नवम्बरके मध्याह्नकालको उनका ध्रुवकान्तर १७४° ४५′ ८″.६ मात्र है। सुतरां उस समयके मध्य यह निश्चय हो कभी न कभी १८०° हुआ था। इससे सहजमें ही समझ पड़ता कि १३ नवम्बरको रातको १ घण्टा ४ मिनट २० सेकण्डके समय चंद्र और सूर्य पृथिवीकी दोनों ओरको बिलकुल विपरीत भागमें विद्यमान रहे। पत्रिका देखनेसे मालूम पड़ता कि उस समयको सूर्य पातविन्दुसे साढ़े ५ अंश दूरस्थ ध्रुवकमें अवस्थित रहा। सुतरां स्पष्ट ही प्रतीयमान होता कि उक्त स्थान पर ग्रहण निश्चित है। पत्रिका देखनेसे जान पड़ता कि उस समयको चन्द्रका लम्बन (Parallax) प्रायः ५५′ ६६″.६, सूर्यका लम्बन (Parallax) प्राय: ८″.७, चंद्रका दृश्य विम्बव्यासार्ध (Apparent semidiameter) कोई १६′ १″.१ और सूर्यका दृश्य विम्बव्यासार्ध लगभग १६′ १″.८ था।

इसमें पूर्वोल्लिखित गणनाके अनुसार पृथिवीकी छायाका दृश्यविम्बव्यासार्ध प्राय: ३९′ ३६″ अर्थात् २३′ ७६″ विकला आता है। इसको ⁶⁄₅से गुण करने पर २४′ १५″.६ विकला होती हैं। पत्रिका देखनेसे मालूम पड़ता, प्रथमत:—१३ नवम्बरको रातको ० घण्टा ३० मिनटके समय सूर्य चन्द्रसे १८०° १६′ ३३″.७ ध्रुवकमें और चन्द्र सूर्यपथसे ०° २५′ ५७″.६ उत्तरको विक्षेपमें अवस्थित था। द्वितीयतः—उसी रातको १ घण्टा ३० मिनट समय पर चन्द्र और सूर्यका ध्रुवकान्तर प्रायः १७९° ४७′ २७″.७ तथा चन्द्रका विक्षेप कोई ०° २८′ ५१″.५ था।

* थोड़ासा अनुधावन करके देखनेसे ही उसका कारण समझ सकते हैं। निम्नस्थ चित्र पूर्व चित्र जैसा ही है। इसमें प पातविन्दु छ पृथिवीकी छायाका केंद्र है। मान लो कि प छ परिमित स्थं कक्षाका परिमाण १२° ६′ अपेक्षा अधिक है। स यं विपरीत भागमें अवस्थित है। अब यदि चंद्रकेंद्र विन्दुमें पड़ेगा, तो उक्त दोनों वृत्त क और ठ इस प्रकारसे अवस्थित होंगे।
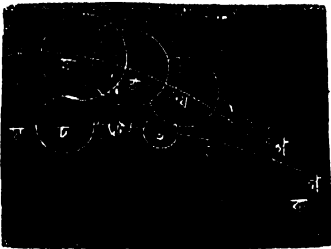
पहले ही बतला चुके हैं कि चंद्रके सबसे बड़े दृश्य व्यासार्धका परिमाण १६′ ४४″, पृथिवीकी छायाके सबसे बड़े दृश्य विम्ब व्यासार्धका परिमाण ४५′ ४८″ और इन दोनोंका योगफल १° २′ १२″ है। परन्तु प ह १२° ३′ होन से प छ का परिमाण अपेक्षाकृत अधिक निकलेगा। सुतरां वैसे अवस्थानकालको चंद्र और पृथिवीको छायाका दृश्य आयतन बहुत बड़ा होने पर भी ग्रहण नहीं लगता। इसी प्रकार उनकी अवस्थिति ड और थ इत्यादि जैसी अर्थात् प थ ८° ३१′ अपेक्षा न्यून पड़नेसे चंद्र तथा पृथिवीछाया छोटेसे छोटे आकारमें देख पड़ते भी ग्रहण होगा। फिर यदि दोनों केंद्र मध्यवर्ती स्थानमें ट ठ विन्दु जैसे स्थापित होने पर पृथिवीका दृश्य आयतन ट और ठ इनकी भांति आने पर ग्रहण नहीं पड़ता है। किन्तु इसका आयतन विन्दुमय वृत्तद्वय जैसा होने पर ग्रहण लगा करता है। सुतरां वैसे स्थान पर ग्रहण अनिश्चित है।

इसी सकल ज्ञात परिमाण द्वारा हम निम्नलिखित उपायसे ग्रहण सम्बन्धीय अपरापर समस्त विषय निर्णय कर सकते हैं। ग्रहणके समस्त स्थितिकालको चन्द्र और पृथिवीकी छाया पूर्वोक्त आकाशमण्डलके जिस भागमें अवस्थिति करती, उसी भागको समतल कल्पना लगती है। परन्तु ऐसी कल्पनामें गणनाका विशेष तारतम्य नहीं बैठता। फिर मान लो कि पृथिवीकी छाया स्थिर है और उसके साथ आपेक्षिक गतिको छोड़ करके चन्द्रकी दूसरी कोई चाल नहीं पड़ती। क ख ग घ वृत्त पृथिवीकी छाया है। चित्र देखो। इसका व्यासार्ध म क छायाके विम्ब-व्यासार्धका (२४१५´.६) अनुपातिक अर्थात् चित्रस्थ वृत्त है। रेखा प्रभृतिका अनुपात उस सबके पञ्जिकालब्ध परिमाणके अनुपात समान है। यथा—पञ्जिकामें पृथिवीकी छायाका व्यास चन्द्र छायाके व्याससे द्विगुण रहने पर चित्रमें भी क ख ग घ वृत्तका व्यास ক वृत्तके व्याससे द्विगुण कर देना पड़ेगा, इत्यादि। म केंद्रके मध्यसे ठ ठ रेखा सूर्यकक्षाका (Ecliptic) कियदंश निर्देश करती है। रातको ० घण्टा ३० मिनट पर सूर्य चन्द्रके १८०° १६´ ३३´´.७ अन्तरस्थ ध्रुवकमें है। सुतरां म केंद्रका ध्रुवक चंद्रसे १६´ ३३´´.७ अर्थात् ९९३´´.७ विकला अधिक होता है। अब चित्रमें दक्षिणसे वाम दिक्को ध्रुवक गणना करने और चित्रके मानानुसार म फ रेखाको ९९३´´.७के समान रखनेसे फ विन्दु चंद्रकेंद्रके

तात्कालिक ध्रुवकका छेद विन्दु होगा। फ विन्दुसे ठ ठ सूर्यपथका एक लम्ब उत्तोलन करो और इसी लम्बरेखामें चंद्रका विक्षेप २५´ ५७´´.६ अर्थात् १५५७´´.६के बराबर करके ब विन्दु रखो। ऐसा होने पर रातको ० घण्टा ३० मिनट पर चंद्रकेंद्रकी अवस्थिति ब विंदुमें होगी। इसी प्रकार १ घण्टा ३० मिनटके समय चंद्रसे छायाकेंद्रके ध्रुवकका आधिक्य १२´ २२´´.३ अर्थात् ७४२´´.३के समान रख करके म न अंश निकाल लो। फिर न विंदुसे सूर्य कक्षाके ऊपर उत्तोलित लम्बमें चंद्रके उसी समयका विक्षेप २८´ ५१´´.५ अर्थात् १७ २१´´.५के समान बना करके न त अंशको ग्रहण करो। ऐसा होने पर त विंदु रातको १ घण्टा ३० मिनट पर चन्द्रकेन्द्रकी स्थिति निर्देश करेगा। अब ग्रहणकालकी उसी छायामण्डलसे चन्द्रकी आपेक्षिक गति सरलरेखाक्रममें रखनेसे गणनामें विशेष कोई भ्रम नहीं पड़ता। सुतरां त ब विंदुद्वयके मध्यसे छ छ रेखा खैंचने पर यही उस क ख ग घ छायाकी तुलनामें चन्द्र-केन्द्रका आपेक्षिक गमनपथ होगी। म विंदुसे उत्तोलित लंब और छ छ रेखाके छेदसे उत्पन्न ध विन्दु ही १३ नवम्बरकी रातको १ घण्टा ४ मिनट २०.८ सेकण्ड समय अर्थात् चन्द्रको ठीक विपरीत दिक्को सूर्यके अवस्थित होते चन्द्रकेन्द्रको अवस्थितिका स्थान है। म केन्द्रकी चारों ओर चन्द्र और छायाव्यासार्धके योगफल अर्थात् ३३२५.७ के समान व्यासार्ध बना कोई वृत्त अङ्कित करो। यह वृत्त चन्द्रके आपेक्षिक छ छ कक्षापथको ज और ज विन्दु पर छेद करेगा। अब यह स्पष्ट प्रतीयमान होता है कि ज और ज विन्दुद्वयको केन्द्र बना चन्द्र व्यासार्धके समान ९१०´´.१ व्यासार्ध ले दो वृत्त अङ्कित करनेसे वह क ख ग घ छायावृत्तका परिधि स्पर्श करेगा। यही दोनों वृत्त ग्रहण स्पर्श और मोक्षके समय चन्द्रमण्डलका अवस्थान निर्देश करते हैं। फिर म से छ छ पर म द लम्बपात लगानेसे द विन्दु ही ग्रहण कालके ठीक मध्यवर्ती समयमें चन्द्रकेन्द्रकी अवस्थितिको बतलावेगा। चन्द्रको न से त तक पहुंचनेमें १ घण्टा लगता है। ब त और द ध का परिमाण देख करके ठहराते हैं, चंद्र कितनी देरमें द से ध तक पहुंचेगा। ऐसे स्थलमें उस समयका परिमाण ५ मिनट ४०.८ सेकण्ड है। सुतरां चंद्र सूर्यके विपरीत भावसे अवस्थानके समय ५ मिनट०.४८ सेकेण्ड पहले अर्थात् ० घण्टा ५८ मिनट ४०.१ सेकण्ड रातको ग्रहणका मध्यकाल हुआ था। इसी प्रकार देखते हैं कि द

क किंवा द ज परिमित स्थान पहुंचनेमें चंद्रको १ घंटा ३६ मिनट १९.४ सेकण्ड समय लगता है। सुतरां मालूम होता है कि १३ नवंबरको रातको ११ बज कर १८ मिनट २०.७ सेकण्ड पर ग्रहण स्पर्श और उसी रातको २ बज कर ३७ मिनट ५६.५ सेकण्ड पर मोक्ष हुआ था। द विन्दुको केंद्रमान चंद्रव्यासार्धके समान व्यासार्ध ले कोई वृत्त बनाने पर तत्क्षणात् समझ पड़ेगा कि ग्रहण पूर्णग्रास होगा या पादग्रास। वर्तमान स्थल पर चंद्र ग्रहण आंशिक है। क्योंकि जब तक द चंद्रकेंद्र छायाकेंद्र अका सर्वापेक्षा निकटवर्ती रहा चंद्रमण्डलका कुछ अंश छायाके बाहर जा पड़ा। अब प ग चंद्रमण्डलका व्यास होनेसे प ब रेखा इस व्यासके जितने अंश होगी, वही संख्या चंद्रके ग्रस्तांशका परिमाण प्रकाश करेगी। उल्लिखित ग्रहणका परिमाण ०° ८२ है। साधारणतः चन्द्रमण्डलका व्यास १२ समान भागोंमें विभक्त करके उसके एक भागको (Digit) एकक स्वरूप मान करके ग्रहणका परिमाण प्रकाश किया जाता है। स ब परिमित व्यासखण्डको उसी एककके परिमाणसे बांटने पर भागफल ग्रहणका परिमाण बतलावेगा। ०° ६२ भग्नांश ३/१ के बराबर है। इसको १/१२ से बांटने पर प्राय: ११ आता है। सुतरां १८४५ ई० १३।१४ नवम्बरके चन्द्रग्रहणका परिमाण ११ है। स प व्यास सर्वतोभावसे छायाके भीतर पड़ने पर सर्वग्रास होगा। यह निरूपण करनेसे हो कि चन्द्रमण्डल किस किस समय पर छाया परिधिको अभ्यन्तरस्थ दिक् मात्रको स्पर्श करेगा, सर्वग्रासका आरम्भ और अन्त निकल आवेगा। क र्ज विन्दुद्वयके ग्रहणको भांति ही यह उपाय अवलम्बन करनेसे उस समयके चन्द्रमण्डलकी अवस्थिति मिलेगी। अब तक केवल चित्रादि द्वारा ही ग्रहणके सम्बन्धमें समस्त विषयोंकी गणना की गयी है। अङ्कादि द्वारा गणना करनेसे उसकी अपेक्षा भी अधिक सूक्ष्म फल निकलता है। वास्तविक ग्रहणगणना इसी प्रकारसे की जाती है। कल्पित आकाशमण्डलमें छेदित छाया-सूचीके वृत्तांशका व्यास चंद्रके व्याससे प्राय: तीन गुण बड़ा है। इस छायाको तुलनामें चंद्रको आपेक्षिक गति प्रत्यह प्रायः १२° रखनेसे चंद्रमण्डल इसी छायाके भीतर प्रायः २ घण्टा तक रह सकता है। सुतरां चंद्रकेन्द्र उक्त छायाके व्याससे गमन करने पर सम्पूर्ण २ घण्टा तक चंद्रका सर्वग्रास रहनेकी सम्भावना है।

अब सोचना चाहिये, पृथिवीके कितने अंशमें पूर्वोक्त ग्रहण देखा जा सकता है। मालूम हुआ है कि पारिस नगरमें १३ नवम्बरको रातको ० घण्टा ५८ मिनट ४० सेकण्ड पर ग्रहणका ठीक मध्यकाल था। समय समीकरणके नियमानुसार (Equation of time) पंजिका लिखित उसी दिनको इसका मान १५ मिनट २७ सेकण्ड मिलानेसे १ घण्टा १४ मिनट ७ सेकण्ड होता है। यही उस समयको पारिस नगरका प्रकृत समय था।* अब देखना चाहिये, उस समय चंद्र पृथिवीके किस अंशमें ठीक मस्तकोपरि रहा। वहां इस समयको पूरी मध्यरात्रि थी और पारिससे उसका देशान्तर १८° ३१ ४५´ पश्चिम था। इस स्थानका अक्षान्तर नाड़ीमण्डलसे चंद्रकौणिक दूरत्व (Angulr distance or dealination of the moon)-के समान है। नाविकपञ्जिका देखनेसे मालूम पड़ता कि उसका परिमाण १७° ४२ १७´ है। सुतरां पृथिवीके पृष्ठ पर उस विंदुका अवस्थान स्थिर होगा। अब इस विंदुको मध्य विंदु मान करके उससे पृथिवीके चारों ओर ९०° पर्यन्त ग्रहण करनेसे भूमण्डलका अर्धभाग होता है। यही अर्धभाग ग्रहणके मध्यकालमें देख पड़ेगा और उसका वहिर्भाग अदृष्ट रहेगा। इसी प्रकार मध्यग्रहणके दर्शनकी सीमा निरूपित होती है। ठीक इसी नियमसे स्पर्श और मोक्षकी सीमा भी बतलायी जाती और उससे यह भी अनायास निर्णय कर लेते हैं—किस किस स्थान पर समस्त ग्रहण और कहां कहां उसका कियदंश मात्र देख पड़ेगा।

चन्द्रग्रहण देख पड़नेमें चंद्रमण्डल और पृथिवीको छाया दोनों दृष्टिपरिच्छेदक रेखा (Horzon)-के ऊपर

---

* सूर्य जिस समय किसी स्थानके ठीक देशान्तर पर आता, वहां दिपहर हो जाता है। पुनर्वार उसी स्थान पर पहुंचनेमें २४ घण्टे लगते हैं। किन्तु राशिचक्रमें सूर्यकी गति ५९ अं.८ से ६१ अंश तक होती है। सुतरां घड़ीमें ठीक १२ बजने पर भी सूर्य सब समयको उस स्थानके देशान्तर पर नहीं पहुंचता। यह सब निरूपण करनेको विशेष गणनाका प्रयोजन है। समय-समीकरण देखो।

रहना आवश्यक है। सुतरां सूर्य अस्त न होनेसे वह असम्भव है। इसीसे चंद्रग्रहण रात्रिकालको ही दृष्ट होता है। किन्तु अन्यान्य कारणसे सूर्योदयसे कई एक सेकण्ड पूर्व वा सूर्योदयके कई सेकण्ड पीछे भी चंद्रग्रहण देख पड़ता है। मान लो कि क विंदुमें स्पर्शकालको
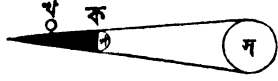
चंद्रग्रहण देखा जाता है। सुतरां समस्त सूर्यमण्डल तथा चंद्रमण्डलके कुछ अंश दृष्टिपरिच्छेदक रेखासे नीचे रहेंगे। किन्तु पृथिवीस्थ वायुराशिके भीतरसे सूर्य और चंद्रालोक वक्रीभावसे आता, सुतरां चंद्र और सूर्य दृष्टिपरिच्छेदक रेखाके ऊपरिभाग पर देखा जाता है। इसी प्रकारसे कई एक सेकण्ड तक हम समग्र सूर्य और राहुग्रस्त चंद्रको एक साथ ही देख सकते हैं।

सर्वग्रासके समय चन्द्रमण्डल साधारणतः ईषत् रक्तिमाभ धूसरवर्ण प्रतीयमान होता है। कारण यह है कि सूर्यरश्मि भूवायुके मध्यसे गमनकालको वक्रीभूत हो करके चंद्र पर पड़ता है। सूर्यालोक टेढ़ा पड़के चलने पर सात प्रकारके मौलिक वर्णोंमें विभक्त होता है। सर्वग्रासके समय कभी कभी यह सब रंग थोड़े बहुत देख पड़ते हैं। किसी किसी ग्रहणमें चंद्रमण्डल आकाशसे एकबारगी ही अदृश्य हो जाता है।

उपच्छाया (Penumbra) वशतः सर्वग्रासका स्पर्श और मोक्ष सूक्ष्मरूपसे प्रत्यक्ष करनेमें नहीं आता, सहजमें ही कोई एक मिनटका अन्तर पड़ जाता है। सुतरां सम्प्रति चंद्र ग्रहणके सहारे किसी दूसरे स्थानका अक्षांश निरूपित नहीं होता। चंद्र ग्रहण परिदर्शन करनेमें कभी कभी छायाप्रवेश करनेवाले भिन्न भिन्न चिह्न देखने पड़ते हैं।

चंद्रबिम्ब द्वारा ग्रहादि और तारा सकल आवृत होनेका नाम ताराग्रहण (Occultation) है।

चंद्रपातद्वयको पराङ्मुख गतिका (Retrograde motion) परिमाण प्रत्यह प्रायः ३´१०´.६४ विकला है। इसीसे वह दोनों पातस्थान साढ़े १८ वर्षमें आकाशमण्डलको एक बार आवर्तन करते हैं। सुतरां चंद्र सूर्यकक्षाकी दोनों ओर ५° ८´ मध्यस्थ प्रत्येक ग्रह और ताराको किसी न किसी समय ढांप लेता है सर्वदा ही देखनेमें आता है कि तारा चंद्रके एक पार्श्वमें प्रवेश और अपर पार्श्वमें प्रकाश पाता है। इन ताराओंके ग्रहणका समय नाविकपञ्जिकामें निर्दिष्ट हुआ है। उससे नाविकों और भूगोलवेत्ताओंके अनेक प्रयोजन निकलते हैं।

चन्द्रग्रहसमागम (सं० पु०) चन्द्रस्य ग्रहेण समागमो मिलनं, ६-तत्। दूसरे ग्रह या नक्षत्रके साथ चंद्रकामिलाव।

चन्द्रचञ्चल (सं० पु०) चन्द्र इव चञ्चलः। १ मत्स्यविशेष, खरसा मछली। २ चन्द्रकमत्स्य, चांद नामको मछली।

चन्द्रचञ्चला (सं० स्त्री०) चन्द्रचञ्चल-टाप्। चन्द्रकमत्स्य, चांद मछली।

चन्द्रचन्दन—१ अष्टाङ्गहृदयके पदार्थचंद्रिका नामक टीकाकार। २ अगर और जाफरानका चंदन।

चंद्रचार (सं० पु०) चंद्रस्य चारः, ६-तत्। चंद्रमण्डलकी राशिविशेषकी गति, अर्थात् एक राशिसे अन्य राशिको गमन, चांदकी चाल। आकाशचारी चंद्रमाकी इसी गतिके अनुसार भूलोकवासियोंको शुभाशुभ फल मिला करता है। बृहत्संहितामें चंद्रचारका फलाफल ऐसा लिखित हुआ है—ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्रके दक्षिण भागको चंद्र जानेसे बीज, जल तथा काननको हानि लगती और वह्निविभीषिका पड़ती है। यह जब विशाखा और अनुराधा नक्षत्रके दक्षिण आता, पापचंद्र कहलाता है। किन्तु विशाखा, अनुराधा और मघा नक्षत्रके मध्यमें रहनेसे चंद्र शुभफल देता है। रेवतीसे ले कर मृगशिरा तक यह नक्षत्र अनागत हो कर चंद्रमाके साथ मिलते हैं। आर्द्रासे अनुराधा तक १२ नक्षत्र मध्यभागमें और ज्येष्ठा अवधि उत्तर भाद्रपद पर्यन्त नौ तारा अतिक्रान्त हो करके चंद्रसे संयुक्त होते हैं। चंद्रका शृङ्ग ईषत् उन्नत हो नौका जैसा आकार धारण करनेसे नाविकोंको पीड़ा पहुंचती है। परन्तु दूसरे लोग सुखी रहते हैं। अर्धोन्नत चंद्रशृङ्गका नाम लाङ्गलमिति है। इसका फल—लाङ्गलोपजीवियोंको दुःख और राजाओंको आह्लाद तथा सुभिक्ष है। चंद्रके दक्षिण शृङ्ग अर्धोन्नत होनेको दुष्ट लाङ्गल कहते हैं। ऐसा होने पर पाण्ड्य देशीय राजाका सैन्य बिगड़ पड़ता और उसको मारनेका

उद्योग करता है। चंद्रके समानभावसे निकलने पर सुभिक्ष, मङ्गल और वृष्टि होती है। चंद्र दण्ड जैसा उदित होनेका फल गोपीड़ा और राजाओंके अस्वाभाविक कठोर दण्ड करनेका उद्योग है। चंद्रमा धनुःका आकार रखने पर भयानक युद्ध होता है। किन्तु इस धनुःकी ज्या जिस देशमें रहती, उसको जीत मिलती है। फिर यही शृङ्ग दक्षिणोत्तर आयत होनेका नाम स्थान वा युग है। इसका फल भूमिकम्प है। इस युग नामक शृङ्गके कुछ दक्षिण-की ओर उसे पार्श्वशायी शृङ्ग कहते हैं। उन्नत होने पर उसका फल वणिकोंका मृत्यु और अनावृष्टि है। चंद्रके कोणशृङ्गको निम्नमुख होनेसे आवर्जित कहते हैं। फल गोदुर्भिक्ष है। चंद्रमण्डलको चारों ओर अविच्छिन्न वृत्त सदृश रेखा दृष्ट होनेसे कुण्ड नामक शृङ्ग कहलाता है। ऐसा होने पर द्वादश मण्डल संक्रान्त राजाओंको स्थान त्याग करना पड़ता है। किन्तु उसी समय चंद्र-शृङ्ग उत्तर दिक्‌को उन्नत होनेसे शस्यवृद्धि और सुवृष्टि तथा दक्षिण ओरको उठ जानेसे दुर्भिक्ष होता है। एक शृङ्ग, निम्नमुख, शृङ्गहीन अथवा सम्पूर्ण नूतन धरणका चंद्र दर्शन करनेसे दर्शकोंमें एक व्यक्ति मर जाता है। चंद्र क्षुद्र होनेसे दुर्भिक्ष और अपेक्षाकृत दीर्घ लगनेसे सुभिक्ष पड़ता है। चंद्रके मध्यमरूप उदित होनेका नाम वज्र है। इसका फल प्राणियोंको क्षुधावृद्धि और राजाओंका संभ्रम है। मृदङ्गरूपी चंद्रोदय होनेसे मङ्गल और सुभिक्ष होता है। चंद्रमूर्ति अतिशय विशाल लगनेका राजलक्ष्मीवृद्धि, स्थूलका सुभिक्ष और रमणीय-का फल उत्तम धान्य है। चंद्रशृङ्ग मङ्गलग्रह द्वारा किसी तरह आहत होने पर प्रत्यन्त देशीय कदाचार नृपतियोंका विनाश होता है। इसी प्रकार वह शनि द्वारा आहत होनेसे शस्त्रभय और क्षुधाभय बढ़ता है। बुध द्वारा चंद्रशृङ्ग आहत होनेसे अनावृष्टि तथा दुर्भिक्ष बृहस्पतिसे प्रधान प्रधान और शुक्र द्वारा क्षुद्र क्षुद्र राजा-ओंका विनाश होता है। शुक्लपक्षमें ग्रह द्वारा चंद्रशृङ्ग भिन्न होनेसे भी वही फल मिलता है। कृष्णपक्षमें चंद्र शृङ्ग शुक्र द्वारा समाहत होने पर मगध, यवन, पुलिंद, नेपाल, भृङ्गी, मरुकच्छ, सुराष्ट्र, मद्र, पाञ्चाल, कैकय, कुलूत, पुरुषाद और उशीनर देशमें सात मास व्यापक मरी पड़ती है। इसी प्रकार बृहस्पति द्वारा आहत होने पर गान्धार, सौवीरक, सिन्धु, कीर, द्राविड़ और पार्वत्य प्रदेशके ब्राह्मण और तद्देशीय सकल धान्य दश मास सन्तापित होते हैं। वही मङ्गल द्वारा भिन्न होने पर वाहनके साथ उद्युक्त त्रिगर्त, मालव, कौणिंद, गणपति, शिवि और अयोध्या प्रदेशीय श्रेष्ठ नरपतियों एवं कुरु मत्स्य तथा शुक्ति प्रदेशीय क्षत्रियोंको पीड़ा और उनका विनाश होता है। चंद्र शृङ्ग शनि द्वारा आहत होने पर पूर्वदेशीय अर्जुनवंशीय तथा कुरुवंशीय राजा, मन्त्री और योद्धा दशमास तक पीड़ित रहते और मरते हैं। फिर वही बुध कर्तृक आहत होने पर मगध, मथुरा तथा वेगवाके तीरवर्ती प्रदेशमें पीड़ा और पश्चिम देशमें सत्ययुगका आविर्भाव होता है। इसी प्रकार चंद्र-शृङ्ग केतु द्वारा आहत होनेसे अमङ्गल, व्याधि, दुर्भिक्ष, शस्त्रा-जीवीका विनाश और चोरोंको अत्यन्त पीड़ा होती है। राहु वा केतु द्वारा ग्रस्त चंद्र पर उल्कापात होनेसे जिस राजाके जन्मनक्षत्रमें ग्रहण पड़ता, मरता है चंद्र-मण्डल भस्मतुल्य परुष, अरुणवर्ण, किरणहीन, कपिल-वर्ण, स्फटिक अथवा स्फुरणशील होनेसे क्षुधा, संग्राम, रोग वा चौरभय उपस्थित होता है। चंद्र कुन्द, मृणाल वा मौक्तिक हार जैसा शुभ्रवर्ण हो तिथिके अनुसार घटने बढ़ने और अविकृत मण्डल अथवा गति वा किरण-युक्त लगनेसे मनुष्य विजय पाते हैं। शुक्लपक्षमें चन्द्र बहुत बढ़नेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा प्रजाकी वृद्धि, क्षीण होनेसे उन सबकी हानि और समपरिमाण रहनेसे समता हुआ करती है। किन्तु कृष्णपक्षमें उसका विपरीत फल मिलता है। (बृहत्संहिता ४ अध्याय)

चन्द्रचूड़ (सं० पु०) चंद्रश्चूडायां यस्य, बहुव्री०। १ चंद्र-शेखर, शिव, महादेव। २ गोमाञ्चलका एक तीर्थस्थान। गोमा देखो। ३ एक विख्यात संस्कृत ग्रन्थकार। ये पुरु-षोत्तम भट्टके पुत्र थे। इन्होंने अन्योक्तिकण्ठाभरण, कार्त-वीर्योदयकाव्य, चंद्रशेखरविवाहकाव्य और प्रस्ताव-चिन्तामणि नामक अलङ्कार ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

चन्द्रचूड़भट्ट (दूसरा नाम चन्द्रशेखर शर्मा)—एक विख्यात स्मार्त और संस्कृत ग्रन्थकार। ये उमापति भट्टके पुत्र और धर्मेश्वरके पौत्र थे। इन्होंने कालसिद्धान्तनिर्णय,

कालदिवाकर, पाकयज्ञनिर्णय, पिण्डपितृप्रयोग, श्राद्ध-निर्णय, संस्कारनिर्णय, सौत्रामणिप्रयोग, चन्द्रचूड़ीय धर्मशास्त्र प्रभृति ग्रन्थोंको रचना की है।

चन्द्रचूड़ा (सं० स्त्री०) चन्द्रश्चूड़ायां यस्याः, बहुव्री०। गायत्री मूर्तिविशेष। (देवीभा० १२।६।७२)

चन्द्रचूड़ामणि (सं० पु०) फलित ज्योतिषमें ग्रहोंका एक योग। जब नवम स्थानका स्वामी केन्द्रस्थ हो तब यह योग होता है।

चन्द्रचूड़ाष्टक (सं० पु०) एक तन्त्रका नाम।

चन्द्रज (सं० पु०) चंद्रात् जायते चंद्र-जन-ड। चंद्रमाके पुत्र, बुध।

"रौद्रादीनि मघान्तानि पापिते चन्द्रजे प्रजापीडा।" (वृहत्स० ७।१)

(त्रि०) २ जो चंद्रमासे उत्पन्न हो।

चन्द्रजसिंह—तर्कसंग्रहके पदकृत्त नामक टीकाकार।

चन्द्रजोत (हिं० स्त्री०) १ चंद्रमाका प्रकाश। २ महताबी नामकी आतशबाजी।

चन्द्रजोपल (सं० पु०) चंद्रकान्तमणि, एक रत्नका नाम।

चन्द्रज्ञानतन्त्र—क्षेमराजधृत एक प्राचीन तन्त्र।

चन्द्रट—१ सूक्तिकर्णामृतधृत एक प्राचीन कवि। २ एक वैद्यक ग्रन्थकार, तीसटके पुत्र। इन्होंने संस्कृत भाषामें चन्द्रटसारोद्धार, सुश्रुतपाठशुद्धि और योगरत्नसमुच्चय नामक वैद्यकग्रन्थ, तीसटरचित चिकित्साकलिकाकी टीका और वैद्यत्रिंशत् टीकाकी रचना की है।

चन्द्रतापन (सं० पु०) चंद्र तापयति तप-णिच् कर्तरि ल्यु। कोई दानव। (हरिवंश २४०अ०)

चन्द्रताल (सं० पु०) एक प्रकारका बारहताला ताल जिसे परम भी कहते हैं।

चन्द्रतीर्थ—सह्याद्रिखण्डमें वर्णित गोमाञ्चलका एक पवित्र तीर्थ। (२।१।२१।) गोआ देखो।

चन्द्रदक्षिण (सं० त्रि०) चंद्रं सुवर्णं द्वितीयं दक्षिणं यस्य, बहुव्री०, शाकपार्थिवादित्वात् द्वितीयपदस्य लोपः। सुवर्ण दक्षिणा, सोनेका दान।

चन्द्रदत्त मैथिल—एक प्रसिद्ध मैथिल पण्डित। इन्होंने संस्कृत भाषामें काशीगीता नामक संगीतग्रन्थ, भगवद्भक्तिमाहात्म्य, कृष्णविरुदावली और उसकी टीका रची है।

चन्द्रदशा (सं० स्त्री०) चंद्रस्य दशा, ६-तत्। फलित ज्योतिषके मतानुसार ग्रहगण निर्दिष्ट समयमें मनुष्यको शुभाशुभ फल देते हैं। जितना समय तक चंद्रमा फल देते हैं, उसीको चंद्रका भोग काल या दशा कहते हैं। दशा देखो।

चन्द्रदार (सं० पु०) चंद्रस्य दाराः, ६-तत्। १ चंद्रमाकी स्त्री, अश्विनी प्रभृति सत्ताईस दक्षकन्या। २ अश्विनी प्रभृति सत्ताईस नक्षत्र। नक्षत्र देखो।

चन्द्रदारा (सं० पु०) २७ नक्षत्र जो पुराणके अनुसार दक्षकी कन्याएँ कही जाती हैं।

चन्द्रदास—प्रेमामृत टीकाके बनानेवालेका नाम।

चन्द्रदेव—१ कनौजके राठौर राजवंशका प्रतिष्ठाता। ये कनौजराज मदनपालके पिता थे। शिलालेख पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि मदनपाल ११५४ सम्वत्में विद्यमान थे। सुतरां चंद्रदेव उनसे कुछ काल पहले कनौजके सिंहासन पर बैठे थे।

२ वोदामयूतार्क राष्ट्रकूटवंशके प्रथम राजाका नाम। इनके पुत्रका नाम विग्रहपाल देव था।

३ उत्कलके एक प्राचीन राजा। केशरीवंशके पहले इनका अभ्युदय था। उत्कल ऐतिहासिकोंके मतसे इनने ३२३ से ३२८ ई० तक राज्य किया था। ये नाममात्रके राजा थे। इन्हींके राजत्वकालमें मुसलमानोंने उत्कल अधिकार किया था। अन्तमें मुसलमानोंके हाथसे इनकी मृत्यु हुई।* परन्तु किसी प्राचीन ग्रन्थ या शिलालेखमें चन्द्रदेवका नाम आज तक भी नहीं मिला है।

४ पञ्चालवंशके वीरपुरुष। ये धर्मराज युधिष्ठिरके पार्श्वरक्षक थे। युद्धमें अपना विक्रम दिखाते हुए ये कर्णके हाथसे मारे गये थे। (भारत ८।५०अ०)

५ राजतरङ्गिणीवर्णित एक तापस ब्राह्मण। इनकी तपस्यासे संतुष्ट हो शिवजीने नील पर्वतके उपद्रवसे देश रक्षा की थी और यक्षविप्लव भी इन्हींके द्वारा दूर हुआ था। (१।१८२-१८४)

चन्द्रद्वीप (सं० पु०-क्ली०) चंद्रेणाधिष्ठितो द्वीपः, मध्यपदलो०

---

* Hunter's Orissa, Vol. I, p. 199.

समुद्रके उस पार उत्तरकुरुके उत्तरभागमें अवस्थित एक द्वीप। ब्रह्माण्डपुराणके मतसे इस द्वीपमें नाग और असुरोंका वास ही अधिक है। इसकी परिधि हजार योजनकी, विस्तार दस योजन और उच्चता १०० योजनकी है। इस द्वीपके बीचमें चंद्रकान्त, श्वेतवैदूर्य और कुमुद आदिसे परिशोभित एक पर्वत है। इस पर्वतसे पुण्यसलिला चंद्रावती नदी निकली है। इसमें नक्षत्राधिपति चंद्रदेवका एक वासस्थान भी है। ग्रहनायक चंद्र प्रायः ही यहां उतरा करते हैं। चंद्रपर्वत स्वर्ग और मर्त्य दोनों जगहमें प्रसिद्ध है। चंद्रद्वीपवासी मनुष्योंके शरीरकी कान्ति चंद्र जैसी उज्ज्वल और प्रकाशमान होती है, उनका मुख भी चंद्रसदृश होता है। उनमेंसे प्रायः सब ही धर्मनिष्ठ, सदाचारी, सत्यप्रतिज्ञ, तेजस्वी और चंद्रके उपासक होते हैं। इनकी आयु एक हजार वर्षकी होती है। (ब्रह्माण्ड॰ अनुषङ्ग॰ ४७ अ॰)

चन्द्रद्वीप—बङ्गालके अन्तर्गत समुद्रका निकटवर्ती एक जनपद। अबुल फज़्लकी आईन अकबरीमें उसका अधिकांश बाकला सरकार लिखा गया है। चंद्रद्वीपके नामकी उत्पत्ति पर दो प्रवाद प्रचलित हैं।

प्रथम—विक्रमपुर परगनेमें चन्द्रशेखर नामक भगवतीमन्त्रदीक्षित कोई ब्राह्मण रहते थे। घटनाक्रमसे उन्होंने भगवती नाम्नी एक कन्याके साथ विवाह कर लिया। पहले इन्हें मालूम न था मालूम होने पर फिर आशङ्काकी सीमा न रही। इन्होंने सोचा—लोग क्या मुझे पत्नीउपासक कहेंगे? प्राण त्याग कर दूंगा, पर वैसा दुष्कर्म करनेसे दूर ही रहूंगा। उन्होंने नाव पर चढ़के समुद्रयात्रा की। इस समय विक्रमपुरकी दक्षिण सीमा तक समुद्र विस्तृत था। एक दिन समस्त रात्रि नौका पर चलते चलते सागरमें जा पहुंचे और अपने मनमें सोचने लगे, वहां किसीसे साक्षात् न होगा। परन्तु परदिन प्रत्यूषके समय किसी छोटी नावमें एक धीवरकन्या देख पड़ी। यह अवाक् रह गये! उन्होंने सोचा—सम्भवतः स्वयं भगवती छलना करनेको इस दुस्तर जलधिमध्य आविर्भूत हुई हैं। इन्होंने अविलम्ब उसी तरणी पर चढ़ कन्याके पैर जा करके पकड़ लिये। पहले भगवतीने अपनेको धीवरकन्या ही बतलाया था, शेषको जब देखा कि चंद्रशेखर भूलनेवाले लड़के न थे, कहने लगीं—हम तुम्हारी इष्टदेवता भगवती हैं। हमारे वरसे यहां रेत पड़के द्वीप उत्पन्न होगा, तुम उसको अधिकार करोगे और तुम्हारे नाम पर ही यह चंद्रद्वीप कहलावेगा। वर दे करके भगवती अन्तर्हित हुईं। इसीके साथ वहां पानी हट जानेसे टापू निकल पड़ता।*

द्वितीय—चन्द्रशेखर नामक एक सन्न्यासी रहे। इनके शिष्यका नाम दनुजमर्दन दे था। सन्न्यासी चेलेको अपने साथ ले सब दा ही घूमा करते थे। किसी दिन रातको सोतेमें इन्होंने स्वप्न देखा, मानो कालीदेवी उनसे कह रही थीं—इस जलके मध्य कई एक देवमूर्तियां हैं, उन्हें उद्धार करो। दूसरे दिन सन्न्यासीने शिष्यसे तीन बार डुबकी लगानेको कहा था। उसने तीन गोतोंमें तीन ही देवमूर्तियां निकालीं। दुर्भाग्य क्रमसे फिर डूबकी न लगी। वैसा होनेपर इन्हें लक्ष्मी मूर्ति मिल जाती और राज्यश्री भी चिरस्थायी रहती। चन्द्रशेखरने भविष्यवाणी की थी कि वह स्थान सूख करके टापू बन जावेगा और दनुज उसका राज्य पावेगा। चन्द्रशेखरके आदेश और नामानुसार उसका नाम चन्द्रद्वीप पड़ गया।

भविष्य ब्रह्मखण्डमें भी लिखा है—यहांकी समस्त भूमि पहले जलमय रही। महादेवके प्रसाद और उनके ललाटस्थ अग्न्युत्पातसे यह पानी सूख गया। चंद्रचूड़की मस्तकस्थ चंद्रकलाके किरणसे यह द्वीप सिक्त हुआ था। (भविष्य ब्रह्मखण्ड १२।२-८ श्लोक)

दिग्विजय-प्रकाशविवृति नामक संस्कृत भौगोलिक ग्रन्थके किसी स्थान पर कहा है कि उसके पूर्व मधुमती, पश्चिम इच्छामती नदी, दक्षिण वादाभूमि और उत्तरको कुशद्वीप है। फिर बाक्लाके वर्णनास्थलमें लिखते हैं—पूर्व मेघना नदी, पश्चिम बलेश्वरी, उत्तर इदिलपुर और दक्षिणको सुन्दरवन है। इसके मध्यमें गिरिवर्जित सोमकान्त है। उसका परिमाण ३० योजन पड़ता है। सोमकान्तके बीच और २ जनपद हैं—पश्चिमको जम्बुद्वीप और उत्तरको श्रीकार। इसके मध्यभागमें बाक्ला राजधानी प्रतिष्ठित है। (दिग्विजयप्रकाशविवृति)

* ब्रजसुन्दर मित्र-प्रणीत चन्द्रद्वीपका राजवंश ११ पृ॰।

खृष्टीय षोड़श शताब्दीमें चंद्रद्वीपके स्थल पर बाक्लाका उल्लेख मिलता है। बादशाह अकबरके समय बाक्ला एक स्वतन्त्र सरकार रही। वह इस्माईलपुर, श्रीरामपुर, शाहजादपुर और आदिलपुर चार महल्लोंमें विभक्त थी। वहां १५००० पदाति और ३२० हाथी रहते थे। (आईन अकबरी) ई० ८वीं शताब्दीसे साथ चंद्रगोरीके नामसे मशहूर है।

भविष्य ब्रह्मखण्ड नामक संस्कृत ग्रन्थमें चंद्रद्वीपके इन कई नगरों और ग्रामोंका उल्लेख है—ब्रह्मपुर (नगर), वाराणसीपुर, मह्यशाल, नालिका सरित् पार्श्वमें कुमुदग्राम, कोटालि, काकिनीग्राम, कण्ठस्थाली, वैणवाटी रणानदीके निकट डम्बूर, चेदीनगर, यादवपुर, वेतग्राम, तेलिग्राम, धुरग्राम, काकुलग्राम, सुराग्राम, माधवपार्श्व और पिङ्गलपत्तन। (भ० ब्रह्मखण्ड १२ अ०)

और भी कहा है—मगजातिके शस्त्रपातसे इसकी सब प्रजा मर मिटेगी, उन्हींका अधिकार होगा और लोग वेदभ्रष्ट हो जावेंगे। (भ० ब्र० १३।१३)

इतिहास—चंद्रद्वीपके राजवंश-लेखकके मतानुसार विक्रमपुरसे आ कर दनुजमर्दन ही चंद्रद्वीपके प्रथम राजा और बङ्गीय कायस्थ-समाजके समाजपति हुए।

दनुजमर्दनके पुत्र रमावल्लभ राय हैं। इन्होंने भी पिताकी प्रदर्शित कुलविधिकी रक्षाके लिये और भी बहुतसे नियम बनाये हैं। (१) इन्होंने अपने नाम पर एक नगर भी स्थापन किया है। (२) उनके पुत्र कृष्णवल्लभ राय, कृष्णके पुत्र हरिवल्लभ राय और हरिवल्लभ रायके पुत्र जयदेव राय हैं। दनुजमर्दन ले कर पांच राजा (३) चंद्रद्वीपमें प्रबल प्रतापसे राज्य करते थे।

जयदेव रायके कोई सन्तान न थे। उत्तराधिकारीके सूत्रसे उनके भांजा बलभद्र वसुके पुत्र परमानन्द राय चंद्रद्वीपके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। राजा परमानंदने कायस्थोंके कौलीन्य सम्बन्धमें बहुतसे नियम बनाये हैं। पहले बङ्गज कायस्थोंके घोष, वसु, गुह, मित्र क्रमानुसार गिना जाता था। उनके समयमें वसु, घोष, गुह, मित्र क्रमानुसार गिना जाने लगा। आइन अकबरीके मतसे परमानन्दके पिता बाकलामें राज्य करते थे। अकबरके २८ वर्षकी अवस्थामें लगभग तीन बजे एक भयानक बाढ़ आई, जिससे प्रायः सभी घर द्वार भस गये थे। राजा उस समय आमोदमें मत्त थे। वे बहुत जल्द एक नाव पर चढ़ गये और उनके पुत्र परमानन्द राय तथा बहुतसे लोगोंने एक मन्दिरके शिखर पर चढ़ प्राण रक्षा की। चार घण्टे तक तूफान तथा वृष्टिके साथ साथ समुद्र बढ़ गया था। उक्त मन्दिरके सिवा और समस्त समुद्रके गर्भशायी तथा प्रायः दो लाख प्राणी नष्ट हुए। (४) किन्तु चंद्रद्वीपकी राजवंशावली और प्राचीन कुलाचार्य कारिकामें परमानन्द ही चंद्रद्वीपके वसुवंशीय प्रथम राजा कह कर वर्णित हुए हैं। उनके पुत्र राजा जगदानन्दके समयमें ही नदीका स्रोत प्रबलवेगसे राजभवन तक पहुँचा था। राजा जगदानन्दने ही नदी गर्भमें आत्मसमर्पण किया। वे अपने बाखरगञ्जके निकट कचुया नामक स्थानमें राज्य करते थे। राजा जगदानन्दकी कन्या कमलाने यहां एक प्रकाण्ड सरोवर खुदवाया था। अभी भी वह सरोवर विद्यमान है।

राजा जगदानन्दकी मृत्युके बाद उनके पुत्र महाबली कन्दर्पनारायण सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। १५८६ ई०में ये राज्य करते थे, रफ फिच प्रभृति वैदेशिक भ्रमणकारी इनके गुणकी प्रशंसा कर गये हैं।*

कन्दर्पनारायण शब्द देखो।

चन्द्रद्वीपके राजभवनमें एक बड़ी पीतलकी तोप है। इस तोपके ऊपर बङ्गाक्षरमें कन्दर्पनारायणका नाम और ३१८ अङ्क उत्कीर्ण है (५)।

मगके दौरात्म्यसे कन्दर्पनारायणने कचुया परित्याग

(१) व्रजसुन्दर-मित्र प्रणीत चंद्रद्वीपका राजवंश १८।१९ पृष्ठ देखो।

(२) दिग्विजयप्रकाशमें इस नगरका उल्लेख है—

"रमावल्लभनगरे राजानुवल्लभनान्वितः।" (चंद्रद्वीप-विवरण २४५ श्लोक)

(३) दिग्विजयप्रकाशमें यादवराय नामक एक राजाका विस्तारित विवरण लिखा है। इनके साथ मथनाकोटकी राजकन्याका विवाह हुआ था। ब्रह्मखण्डमें चंद्रद्वीपके अन्तर्गत यादवपुरका जो उल्लेख है, उससे मालूम पड़ता है कि यादवरायने वह नगर स्थापन किया था। दिग्विजयप्रकाशमें चंद्रद्वीपके राज अन्य राजा नामसे अभिहित हुए हैं।

(४) Col. H. S. Jarrett's Ain Akbari, Vol. II. p. 123.

* Hakluyt's Voyages, Vol, II. p. 207.

(५) चंद्रद्वीपके राजभवनके समीप एक पुष्करिणी है, जिसका नाम कमलातलाव रखा गया है। बहुतोंका विश्वास है कि यहां बहुतसी तोपें रखी जा सकती हैं।

कर बरिशालके पूर्वोत्तर कोण बसुरिकाटी ग्राममें एक राजधानी स्थापित की। पीछे वह स्थान छोड़ कर यथाक्रमसे पञ्चकरणके निकटवर्ती होसेनपुर और क्षुद्रकाटीमें वे कुछ काल तक रहे। अन्तमें वे माधवपाशा नामक स्थानको चले गये। पूर्वोक्त स्थानसमूहमें अभी भी प्राचीन मन्दिर और भग्न इष्टकालयादिका चिह्न देखा जाता है।

माधवपाशामें एक मुसलमान गाजी रहते थे। उन्हें मार कर कन्दर्पनारायणने उस स्थान पर राजधानी निर्माण की जो अभी भी विद्यमान है (६)।

कन्दर्पनारायणके बाद उनके पुत्र रामचन्द्रराय राजा हुए। यशोराधिपति प्रतापादित्यकी कन्या विन्दमतीके साथ रामचन्द्रका विवाह हुआ था। किन्तु विवाहरात्रमें प्रतापादित्य उनका प्राणनाश कर कायस्थका समाजपतित्व और चन्द्रद्वीप राज्य अधिकार करेंगे, यह सम्वाद अपनी स्त्रीके मुखसे सुन कर रामचन्द्र वसन्तराय और सर्दार राममोहन मालकी सहायतासे ६४ डांड़युक्त नाव पर बैठ कर चन्द्रद्वीपको चले आये। कई एक वर्षके बाद यशोर-राजकन्या काशीयात्राके बहाने नाव पर चढ़ कर चन्द्रद्वीपको आई। किन्तु यहां बहुत दिन अपेक्षा करने पर भी अभागवश उन्हें स्वामीसे भेंट न हुई। पहले वे जिस घाट पर रहती थीं, वहां सप्ताहमें दो बार बाजार लगता था। अभी वहां बाजार नहीं है, किन्तु वही स्थान "बउठाकुराणीहाट" नामसे प्रसिद्ध हो गया है। रामचन्द्रको स्त्री सारसी ग्रामके निकट भी कुछ दिन तक ठहरी थीं और वहां उन्होंने एक सरोवर खुदवाया था।

राजा रामचन्द्र भुलुयाके प्रसिद्ध वीर लक्ष्मणमाणिक्यको कैदी बना कर चन्द्रद्वीपमें लाया था। इसीसे उनका साहस और वीरत्वका यथेष्ट परिचय पाया जाता है।

लक्ष्मणमाणिक्य देखो।

राजा कीर्तिनारायणराय रामचन्द्रके पुत्र थे। ये नौ-युद्धमें पारदर्शी थे। मेघनाके उपकूलसे उन्होंने फिरङ्गीको युद्ध कर मार भगाया, यह सुन कर ढाकाके नवाबने कीर्तिनारायणके साथ मित्रता कर ली। दैवक्रमसे एक दिन युद्धयात्राके समय इन्होंने नवाबके भोज्य द्रव्योंका घ्राण पाया था, इसीसे उन्होंने जातिभ्रष्ट हो कर अपने छोटे भाई वासुदेव नारायणके हाथ चन्द्रद्वीप राज्य समर्पण किया। वासुदेवके बाद उनके पुत्र प्रेमनारायण राजा हुए। प्रेमनारायणको थोड़ी उम्रमें मृत्यु हो गई। उनके कोई सन्तान न थी। वसु वंशके इन्हीं आठ राजाओंने चंद्रद्वीपमें राज्य किया।

प्रेमनारायणके बाद उनके पितृदौहित्र मित्र वंशीय उलाइल निवासी गौरीचरण मित्र मजुमदारके पुत्र उदयनारायण चन्द्रद्वीपके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उदयनारायणके एक भाई थे जिनका नाम राजनारायणराय था। वे भी मातामहके उत्तराधिकारसत्वसे "राजमाता तालुक" नामक बड़ा तालुक और चन्द्रद्वीपके अन्तर्गत महाल खिस्याजात और महाल उजुहात सम्पत्ति पा कर माधवपाशके निकट प्रतापपुरमें रहते थे। वहां अभी भी उनके वंशीयगण वास करते हैं। किन्तु अभी उनकी वह महामूल्य सम्पत्ति नहीं है।

उदयनारायणसे ले कर मित्र वंशीय कई एक राजाने चन्द्रद्वीपमें राज्य किया—

१ राजा उदयनारायणराय।
२ राजा शिवनारायणराय।
३ राजा जयनारायणराय।
४ राजा नृसिंहनारायणराय।
५ राजा वीरसिंह नारायणराय (दत्तक)
६ राजा देवेन्द्रनारायणराय (दत्तक)

राजा उदयनारायणके राज्यलाभके बाद ही नवाबके साले खादीमजुमदारने उन्हें अधिकारच्युत किया। पीछे नवाबके आदेशसे उदयनारायणने एक व्याघ्रको मार कर पुनः राज्याधिकार पाया।

राजा शिवनारायण चन्द्रद्वीपके सिवा सुलतान-प्रताप परगनेके छठे भागके अधिकारी थे। उन्होंने एक दलालका उसका समस्त अंश लिख कर उलाइल-निवासी देवप्रसाद मित्र मजुमदारको ठगना चाहा था। इसी अभियोगमें उनका मुकदमा चला गया। बङ्गलाकी ११७९ सालके २१ अगहनको उस मुकदमेकी राय सुनाई गई। इसमें राजा शिवनारायण पर यथेष्ट कलङ्क मढ़ा गया

(६) बङ्गालखण्डके मतसे माधवपाशेके माधवदेवका मन्दिर प्रसिद्ध है।

था। इसके अलावा उनके चरित्रदोषकी बात भी सुनी जाती है।

राजा जयनारायण बाल्यकालमें ही राज्यके अधिकारी हुए। इस समय उनके कर्मचारी शङ्कर बक्शीने अधिक सम्पत्ति अपना ली। दीवान गङ्गागोविन्दकी सहायतासे जयनारायणकी माता दुर्गारानीने बहुत कुछ लौटा दिया। रानीने बहुत धन खर्च करके एक बड़ा सरोवर खुदवाया था, जो अभी दुर्गासागर नामसे मशहूर है। राजा जयनारायणके समय दश साला बन्दोवस्त हुआ, इससे परगना कोटालिपाड़, इदिलपुर, सुलतानाबाद, बुजरुग, उमेदपुर आदि कई एक स्थान अलग अलग हो गये। जो कुछ बच भी गया, वह एक बड़ी जमींदारी थी, उसका भी बन्दोवस्त कर दिया गया।

उस समयके लोगोंका निर्दिष्ट दिनमें मालगुजारी ले कर कलेक्टर साहबके निकट उपस्थित होनेका अभ्यास न था। पीछे निश्चित दिनमें सूर्यास्तके मध्य मालगुजारी जमा नहीं करनेसे निलाममें सम्पत्ति बिक जायगी, इस आइनके जारी होनेसे राजाके अर्थलोभी दुष्टाशय कर्मचारियोंके दोषसे धीरे धीरे समुदाय सम्पत्ति निलाममें बिक गई। राजभवनके आसपासकी निष्कर भूमि और कुछ सिकमी तालुक मात्र राजाकी वर्तमान सम्पत्ति रह गई।

मित्रवंशीयके शासनकालके पहले जिन वसुवंशीय राजाओंने चन्द्रद्वीपमें राज्य किया था, उनके जातिवर्ग अभी भी देहेरगाति ग्राममें वास करते हैं और चंद्रद्वीपकी राजसभामें वे युवराजकी उपाधि धारण करते हैं। चंद्रद्वीपके वर्तमान राजाओंकी अवस्था शोचनीय होने पर भी बङ्गज कायस्थ-समाजमें अभी भी उनका यथेष्ट आदर होता है।

चन्द्रद्युति (सं० पु०) चन्द्रस्य द्युतिरिव द्युतिर्यस्य, बहुव्री०। १ चन्दन। (भावप्रकाश) चन्द देखो।

(स्त्री०) चन्दनस्य द्युतिः, ६-तत्। २ चंद्रकिरण, चंद्रमाकी रोशनी।

चन्द्रदोण—बारा वदन देखो।

चन्द्रधनु (सं० पु०) रात्रिके समय वृष्टिके ऊपर चंद्रमाकी किरणें पड़ कर धनुषाकार जो आलोक उत्पन्न होता है, उसको चंद्रधनु कहते हैं। इसकी उत्पत्ति और आकृति आदि सब इंद्रधनुष जैसी होती है। सिर्फ इसका वर्ण दिनमें उत्पन्न हुए इंद्रधनुष जैसा उज्ज्वल और स्पष्ट नहीं होता। यह बड़ा भारी अर्द्धवृत्त अर्थात् धनुषके समान होता है, इसलिए इसको भी धनु कहते हैं

इन्द्रधनु देखो।

चन्द्रधर (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्रध्वजकेतु (सं० पु०) समाधिविशेष। शतसाहस्रिका-प्रज्ञापारमितामें यह चंद्रध्वजासे वर्णित है।

चन्द्रनाथ—१ चट्टग्राम नगरसे २४ मील उत्तरमें सीताकुण्ड शैलमालाके बीचका एक पर्वत। इसको सीताकुण्डगिरि भी कहते हैं। इसकी ऊँचाई ११५५ फुट है। इस पर्वत पर दो प्रकारके पत्थर देखनेमें आते हैं—१ सच्छिद्र आग्नेय और २य लौहसंश्लिष्ट ठोस। प्रसिद्ध सीताकुण्ड नामक उष्णप्रस्रवन इसी पर्वत पर है। यह हिन्दुओंका एक महातीर्थ है। कहा गया है कि, महादेव और रामचंद्र, दोनोंने इस स्थानको दर्शन किया था, तथा महादेव अब भी इस स्थानमें रहते हैं। बङ्गालके जगह जगहके बहुत हिन्दु यात्री यहांकी पुण्यभूमिका दर्शन किया करते हैं। फाल्गुनमासमें शिवचतुर्दशी पर्वके उपलक्षसे यहाँ बहुत यात्री आते हैं। अधिकारी नामधारी ब्राह्मण इन यात्रियोंके रहनेके लिए झोंपड़ियां भी बना रखते हैं। यात्री उन घरोंमें रहते हैं। अधिकारी उनसे किराया वसूल करते हैं। इसके सिवा देवताओं वस्त्र तैजसादि जो कुछ उत्सर्ग किया जाता है वह सब अधिकारियोंको ही मिलता है। शिवचतुर्दशीके समय प्रत्येक अधिकारी इसी प्रकार ३-४ हजार रुपयेके करीब कमाते हैं। मन्दिरके महन्त सिर्फ कर पाते हैं, उसीसे देवसेवादिका खर्च चलता है। शिवचतुर्दशीका मेला दश दिन रहता है। उस समय १०से २० हजार तक यात्री आते हैं। लोगोंका ऐसा विश्वास है कि, चंद्रनाथ पर्वत पर चढ़नेसे फिर पुनर्जन्म नहीं होता। इस पर्वतकी शिखर पर लिङ्गरूपी महादेवका एक मंदिर है, पर्वतके चारों तरफ भी असंख्य देवमन्दिर हैं। चंद्रनाथसे करीब तीन मील दक्षिणमें बाड़वकुण्ड और उत्तरमें लवणाक्ष नामक तीर्थद्वय अवस्थित हैं। इस

पर्वत पर और भी बहुतसे कुण्ड या तीर्थ हैं। चन्द्रशेखर और सीताकुण्ड देखो।

प्रधान प्रधान मेलाओंके समय सीताकुण्ड तीर्थमें यात्रीगण नानारूप पीड़ाग्रस्त होते हैं। रास्ताओंका मैलापन, कर्दम जल और अति जनता हो उसका कारण है।

प्रवाद है कि, बुद्धदेवको शरीर चन्द्रनाथ पवत पर किसी स्थानमें प्रोथित हुआ था। यहां पर हर साल चैत्र संक्रान्तिके दिन बौद्धोंका मेला होता है और बहुतसे लोग मरे हुए व्यक्तिको हड्डियाँ ला कर यहांके पवित्र बुद्धकूपमें निक्षेप करते हैं।

२ चट्टग्राम जिलेमें उक्त पर्वत पर अवस्थित एक ग्राम। यहां सीताकुण्ड तीर्थके यात्रियोंका प्रधान अड्डा है। यह अक्षा० २२° ३७' ५५" उ० और देशा० ९१° ४३' ४०" पूर्वमें अवस्थित है।

चन्द्रनाभ (सं० पु०) चन्द्रो नाभौ यस्य चन्द्रनाभि मंज्ञार्थे अच्। एक दानवका नाम। (हरिवंश १२४)

चन्द्रनामन् (सं० पु०) चन्द्रस्य नामान्येव नामान्यस्य बहुव्री०। कर्पूर, कपूर।

चन्द्रनारायणभट्टाचार्य—एक नैयायिक। इन्होंने न्याय ग्रन्थको बहुतसी टीकाएं बनाई हैं, जिनमेंसे थोड़े निम्न लिखित हैं—कुसुमाञ्जलिटीका, गादाधरीयानुगम, गदाधरके अनुमानखण्डको टीका, गौतमसूत्रवृत्ति, जागदीशीकी क्रोड़टीका, जागदीशी चतुर्दशलक्षणीपत्रिका, तत्त्वचिन्तामणिटिप्पनी, तर्कग्रन्थटीका और न्यायक्रोड़पत्र।

चन्द्रनिर्णिज् (सं० त्रि०) चन्द्रस्य निर्णिगिव निर्णिग् रूपं यस्य, बहुव्री०। १ चन्द्रसदृश रूपविशिष्ट, जो देखनेमें चन्द्रमासा हो। चन्द्रं आह्लादकं निर्णिग् रूपं यस्य, बहुव्री०। २ जिसका रूप आह्लादजनक हो, जिसे देख कर सब कोई प्रसन्न हो।

"एतरेव चवरा चन्द्रनिर्णिक् मन चक्रा।" (ऋक् १०।१०६।८)
'निर्णिगिति रूपनाम चन्द्रनिर्णिक्री चन्द्रसदृशरूपयुक्तौ, यद्वा चन्द्रमाह्लादकं रूपं ययोः' (सायण)

चन्द्रपञ्चाङ्ग (सं० क्लो०) चन्द्रमानज्ञापक पञ्जिकाविशेष, एक तरहको पाँजो जो दक्षिण प्रदेशमें प्रचलित है।

चन्द्रपरिवार (सं० पु०) जैनमतानुसार ज्योतिषी देव पाँच प्रकारके होते हैं—चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारे। इनमें चन्द्र इन्द्र होता है और सूर्य प्रतीन्द्र। एक चन्द्रका परिवार इस प्रकार है—१ सूर्य, ८८ ग्रह, २८ नक्षत्र, और ६६९७५ कोड़ाकोड़ी तारागण। मनुषोत्तर पर्वत तक (अर्थात् जहां तक मनुष्योंकी उत्पत्ति होती है) ढाई द्वीपमें इसी प्रकारके परिवारयुक्त १३२ चन्द्र हैं। ये सभी ज्योतिषियोंके विमान जिनचैत्यालयों और जिन-प्रतिमाओंसे विभूषित हैं। (चर्चा शतक)

चन्द्रपर्णी (सं० स्त्री०) चन्द्रवत् पर्णं यस्याः, बहुव्री० ततः ङीप्। प्रसारणी, प्रसारिणी नामकी लता।

चन्द्रपाण्डुर (सं० त्रि०) चन्द्रइव पाण्डुरः। चन्द्रमा शुभ्रवर्ण, चन्द्रमाके जैसा सफेद।

चन्द्रपाद (सं० पु०) चन्द्रस्य पादः, ६-तत्। चन्द्रकिरण, चन्द्रमाकी रोशनी।

चन्द्रपाल—१ एक बौद्धदार्शनिक पण्डित। इनके उपदेशसे अत्यन्त संसारमायाबद्ध और धर्मविरागी मनुष्य भी धर्म-पिपासु हो जाते थे। इन्होंने कई एक बौद्ध ग्रन्थकी रचना की है। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्गके "सि-यु-कि" ग्रन्थमें इनका वर्णन पाया जाता है।

२ गोपाचलके एक प्राचीन अधिपतिका नाम। ये महाराज कौलभकी द्वितीय स्त्री माध्वीश्वरा देवीके ज्येष्ठ पुत्र थे।

३ एटावा अञ्चलके एक राजाका नाम। ये असाइ-खेरा नामक दुर्गके प्रतिष्ठाता थे।

४ मेवारके सूर्यवंशीय एक राजाका नाम। इन्होंने एक समय समस्त भारतवर्ष जय किया था।

चन्द्रपुत्र (सं० पु०) चन्द्रस्य पुत्रः, ६-तत्। बुध।

"व्रतचारि-रसायनकुशलविसराचन्द्रपुत्रस्य।" (वृहत्सं० १६।२०)

चन्द्रपुर—मध्यप्रदेशमें सम्बलपुर जिलेके अन्तर्गत एक राज्य वा जमींदारी, पद्मपुरकी जमींदारी इसीके अन्तर्गत है। १८६० ई०में दो गवर्मेण्ट परगनाको ले कर यह बना था। १८५८ ई०में सुरेन्द्रशाहके विद्रोहमें शामिल हो जानेके कारण कई-एक जमींदारोंकी ३०००) वार्षिक आयकी सम्पत्ति जप्त कर ली गई थी और वह सब इसी

जिलेके डिप्टी कलेक्टर राय रूपसिंहको दे दी गई थी। राजद्रोहियोंके क्षमा मांग लेने पर फिर वह जमींदारोंको वापिस दे दी गई थी। किन्तु राय रूपसिंहकी क्षतिपूर्तिके लिए डिप्टी कमिश्नर मेजर इम्पेने ऐसा बन्दोबस्त कर दिया था कि, ४० वर्ष तक चन्द्रपुर और पद्मपुरसे ७५५०) रुपये वार्षिक कर राय रूपसिंहको मिला करे, तथा रूपसिंह भी गवर्मेण्टको ४१३०) वार्षिक दिया करें चन्द्रपुर और पद्मपुर दोनों महानदीके किनारे हैं। सम्बलपुरसे प्रायः ४० मील उत्तर-पश्चिममें पद्मपुर और वहांसे और २० मील पश्चिममें चन्द्रपुर अवस्थित है। बीचमें रायगढ़ राजाका कुछ अंश है। चन्द्रपुर परगना छिन्न विच्छिन्न विशृङ्खलभावसे अवस्थित नाना अंशोंमें विभक्त है। इसके प्रायः सब ही हिस्सोंमें पानी मिलता है, कहीं भी जङ्गल नहीं है, कहीं बालू और कहीं काली जमीन कीचड़मय है। यहां अनाजमें चावल, ईख, सरसों, तिल, चना, गेहूं इत्यादि उत्पन्न होते हैं। यहांके टसरके वस्त्र प्रसिद्ध हैं।

चन्द्रपुर—१ तन्त्रवर्णित एक पीठस्थान।

"कैलासं पीठकेदारं ग्रमं चंद्रपुरं तथा।" (रुद्रयामलत० ५ प०)

२ देशावलीके मतसे त्रिपुराख्य अगरतोलाके ४ कोस दक्षिणमें गोमती नदीके किनारे पर अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहाँ त्रिपुरासुन्दरी बिराजती हैं।

३ विजयार्ध पर्वतकी उत्तरश्रेणीमें स्थित पचास नगरोंमेंसे एक नगर। (त्रिलोकसार)

चन्द्रपुरी—१ नर्मदानदीतीरवर्ती एक प्राचीन नगरी। रेवाखण्डके मतसे यहां सोमवंशीय राजा हिरण्यतेजा राजत्व करते थे। (रेवाख० ११२)

२ जैनोंका एक तीर्थ। यह तीर्थ काशीसे करीब १३-१४ मीलकी दूरी पर है। गंगाके किनारे एक दिगम्बर जैनोंका मन्दिर है और कुछ फासल पर श्वेताम्बरोंका भी मन्दिर है। यहां जैनोंके अष्टम तीर्थङ्कर चन्द्रप्रभ भगवान्‌का जन्म हुआ था। शीतऋतुमें यहां यात्री बहुत आया करते हैं। यह स्थान गंगाके किनारे होनेके कारण अत्यन्त रमणीय है।

चन्द्रपुष्पा (सं० स्त्री०) चन्द्र इव पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। १ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया। २ श्वेतप्रभा, बकुची। ३ ज्योत्स्ना, चाँदनी।

चन्द्रप्रकाश (सं० पु०) चन्द्रस्य प्रकाशः, ६-तत्। १ चन्द्रमाका उदय। २ चन्द्रमाकी रोशनी।

चन्द्रप्रभ (सं० पु०) चन्द्रस्येव प्रभा यस्य, बहुव्री०। जैनोंके अष्टम तीर्थङ्कर। इनके पिताका नाम महासेन राजा और माताका नाम लक्ष्मणा था। पौष कृष्णा त्रयोदशीके दिन अनुराधा नक्षत्र और वृश्चिक राशिमें चन्द्रपुरी नगरीमें इक्ष्वाकुवंशमें इनका जन्म हुआ था। इनका गोत्र काश्यप था। ये चैत्रवदी पञ्चमीको वैजयन्त विमानसे चढ़कर लक्ष्मणा रानीके गर्भमें आये थे। इनका शरीर श्वेतवर्ण था और उसकी ऊँचाई १५० धनुषकी थी। सप्तम तीर्थङ्कर सुपार्श्वनाथ भगवान्‌के मोक्ष जानेके नौ सौ करोड़ वर्ष पीछे इनका जन्म हुआ था। इनकी आयु दश लाख पूर्वकी थी। जन्मकालसे दो लाख पचास हजार पूर्व बीत जाने पर उन्हें राज्याभिषेककी प्राप्ति हुई थी। पचास हजार पूर्व और चौबीस पूर्वाङ्ग राज्य सम्पदाका सुख अनुभव करते हुए राज्य किया, फिर उन्हें संसारसे वैराग्य हो गया। लौकान्तिक देवोंने उनके इस विचारको सराहना की और देवोंने विमला नामकी पालकी पर बैठा कर उन्हें चन्द्रपुरीके सर्वर्तुक वनमें पहुंचा दिया। वहां पौष कृष्णा एकादशीके दिन अनुराधा नक्षत्रमें दो दिन उपवास धारण कर प्रभुने एक हजार राजाओंके साथ साथ पुन्नागवृक्षके तले निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण की थी। उसी समय उनको मनःपर्यय ज्ञान हुआ था। दूसरे पारणाके दिन नलिनपुर नगरमें गौरवर्ण महाराज सोमदत्तने उन्हें भक्तिपूर्वक उत्तम आहार दिया था। बादमें तीन मास तपश्चरणसे घातिया कर्मोंको नाश कर केवलज्ञानी हो गये। फाल्गुन वदी सप्तमीको इनको केवलज्ञानकी प्राप्ति हुई थी। इन्होंने उसी समय समवशरणको रचना की। उस समय भगवान्‌के दत्त आदि ९३ गणधर थे, २००० ग्यारह अंग चौदह पूर्वके जान कार, ८००० अवधिज्ञानी, २०००४०० शिक्षक, १०००० केवलज्ञानी, १४००० विक्रिया ऋद्धिधारक मुनिराज, ८००० मनःपर्यय ज्ञानी, ७६०० वादियोंके स्वामी, २५०००० साधु, ३८०००० साध्वी, २५०००० श्रावक और ४७८००० श्राविकाएं मौजूद थीं। इनके शासनयक्षका नाम वि य और यक्षणीका नाम भृकुटी।

था। इसके बाद चंद्रप्रभु स्वामीने समस्त आर्यदेशोंमें विहार कर धर्मतीर्थोंकी प्रवृत्ति की और अन्तमें श्री सम्मेदशिखर पर (जिसको कि, अब पारसनाथ पहाड़ कहते हैं। यह हजारीबाग जिलेमें। ई० आई० रेलवेकी ईसरी स्टेसनके पास है) आ विराजमान हुए। वहां पर १००० मुनियोंके साथ प्रतिमा योग धारण कर एक महीने तक योग निरोध किया अर्थात् मन-वचन-कायको स्थिर किया। बादमें फाल्गुन शुक्ल सप्तमीके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें शामके समय तीसरे शुक्लध्यानसे योग निरोध कर अयोग-केवली नामके चौदहवें गुणस्थानका पद प्राप्त कर चौथे शुक्लध्यानसे बाकीके सब कर्मों (आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय)का नाश किया और उसी समय शरीररहित परम सिद्ध भगवान् हुए। उनका शरीर कपूरवत् उड़ गया, सिर्फ केश और नख पड़े रहे, जिनको इंद्रने क्षीरसागरमें निक्षेप किया। चंद्रप्रभ मृगयोनि और देवगण थे। ये नौ मास सात दिन गर्भमें रह कर जन्मे थे। इनका मोक्षपरिवार १००० है।

(गुणभद्राचार्य कृत उत्तरपुराण ५४ पर्व)

चंद्रप्रभ—भद्रशिला या तक्षशिलावासी एक बोधिसत्व। ये तक्षशिलामें राज्य करते थे। नगरके चारों तरफ उनके चार दानागार थे। जो जैसा मांगता वह वैसा ही पाता था। हजारों भिखारी रोज यहांसे मनचाहा धन आदि ले जाया करते थे। अन्तमें रुद्राक्ष नामके एक कपटी ब्राह्मणने उनसे मस्तक चाहा। इस पर राजाने उनसे विपुल अर्थसम्पत्ति मांगनेको कहा और इस हटको छोड़नेके लिए अनुरोध किया। परन्तु ब्राह्मणने अपनी हट न छोड़ी, वह मस्तक ही मांगता रहा। आखिर राजाने सत्यभङ्गके डरसे अपना मस्तक देना ही स्वीकार किया। मस्तकसे राजमुकुटको उतार कर ब्राह्मणको दिया। यह देखते ही महाचंद्र और महीधर नामक प्रधान मन्त्री मूर्छित और गतासु हो गये। ब्राह्मणने यह सब देख उपस्थित जनमण्डलसे अहितकी आशङ्का कर राजासे कहा—"किसी निर्जन उद्यानमें चल कर मुझे मस्तक अर्पण कीजिये।" राजा इस बात पर राजी हुए और उद्यानमें जा कर दरवाजा बन्द कर दिया। उन्होंने बीजमन्त्र पढ़ते पढ़ते अपनेको चम्पकवृक्षसे बांधा और ब्राह्मणसे मस्तक ले लेनेके लिए कहा। ब्राह्मण राजाका मस्तक काट कर ले गया। तबसे भद्रशिला नगर तक्षशिलाके नामसे प्रसिद्ध हुआ। ये चन्द्रप्रभ राजा ही दूसरे जन्ममें बुद्धदेवके रूपमें अवतीर्ण हुए थे। दोनों मन्त्री शारीपुत्र और मौद्गलायनके नामसे उनके शिष्यरूपमें और वह भिक्षुक ब्राह्मण देवदत्त हो कर जन्मा था।

दिव्यावदानमाला, समाधिराज और द्वाविंशतिअवदान आदि संस्कृत ग्रन्थोंमें चंद्रप्रभका विस्तृत विवरण देखना चाहिये।

चन्द्रप्रभा (सं० स्त्री०) चंद्रइव प्रभा यस्याः, बहुव्री०। १ बकुची, सोमराज। (राजनि०)

२ औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा। सुखबोधके मतसे—विड़ङ्ग, रक्तचित्रक, त्रिकटु (सोंठ, पीपल और गोलमिर्च), त्रिफला (हर, बहेड़ा, आँवला), देवदारु, चई, चिरायता, मागधोमूल (पीपलकी जड़), मोथा, सोंठ, वच, स्वर्णमाक्षिक, काला नमक, यवक्षार, हल्दी, दारुचीनी, धनिया, गजपीपल और आतइच, प्रत्येकका दो तोला, शिलाजीत ८ तोला, शैलज (छरीला, बुढ़ना) २ पल, लौह २ पल, सिता (चीनी) ४ पल, वंशलोचन, निकुम्भ (दण्डी), कुम्भ (गुग्गुल) और सुगन्धित्रय, इन सबको मिला कर चूर्ण बनाना चाहिये। इसीको चंद्रप्रभा या चंद्रप्रभागुड़िका कहते हैं। इसके सेवन करनेसे अर्श (बवासीर), भगन्दर और कामला रोग दूर हो जाते हैं और मन्दाग्निवालेको विशेष लाभ होता है। इसके सिवा श्लैष्मिक, वायुजरोग, मर्मगत, नाड़ीगत, व्रण, ग्रन्थ्यर्वुद, विद्रधि, राजयक्ष्मा, मेह, शुक्रक्षय, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रप्रवाह और उदरामय रोगमें भी इस औषधका प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु इन समस्त रोगोंमें भोजन करनेसे पहिले ही औषधिका सेवन करना चाहिये। मट्ठा (छाछ), दहीकी मलाई, बकरीका दूध, जाङ्गलज दुग्ध या ठण्डा पानी, ये सब इसके अनुपान हैं। इसके सेवन करनेसे आहार आदिके विषयमें कोई नियम नहीं, जो मनमें आवे, वह खाया जा सकता है, तथा शीत, वायु, घाम और मैथुनके विषयमें भी कोई रोक-टोक नहीं है। इसके सेवन करनेसे हस्ती जैसा बल, घोड़े जैसी गमनशक्ति, गरुड़की भाँति दर्शनशक्ति और सूअर सरीखी श्रवणशक्ति होती है। इस

व्यक्तिके सेवन करनेसे वली (कफ) और पलित (सफेद बालों)-की बीमारी जाती रहती है, तथा यौवन लौट आता है। शिवकी तपस्या कर चंद्रके प्रसादसे इस महौषधिका आविष्कार हुआ है। (सुश्रुत)

२ चक्रदत्तोक्त वर्तिविशेष, एक प्रकारकी औषध। त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आँवला), कुक्कुटाण्डका छिलका, हीराकस, लौहचूर्ण, नीलथापला, विड़ङ्ग और समुद्रफेण, इन सबको बकरीके दूधके साथ पीस कर सात दिन तक तांबेके पात्रमें रखना चाहिये। सात दिन बाद फिर दूधमें पीस कर बत्ती बना लेनी चाहिये। इसीका नाम चंद्रप्रभा-वर्तिका है। इसके सेवन करनेसे अन्धेको भी दीख निकलता है। चक्रदत्तमें और भी बहुत तरहकी चंद्रप्रभावर्तिकाकी बात लिखी है, जानना हो तो ग्रन्थ देखना चाहिये।

४ चंद्रकिरण, चंद्रमाकी चाँदनी, ज्योत्स्ना।

५ कपूर। ६ पायसविशेष।

चन्द्रवधूटी (हिं० स्त्री०) वीरबहूटी।

चन्द्रबन्धु (सं० पु०) १ चंद्रमाका भाई, शङ्ख। २ कुमुद।

चन्द्रबाण (सं० पु०) अर्द्धचंद्रबाण जो सिर काटनेके लिए छोड़ा जाता है।

चन्द्रबाला (सं० स्त्री०) चंद्रस्य कर्पूरस्य बालेव तुल्य गन्धित्वात्। १ स्थूलएला, बड़ी इलायची। २ औषधविशेष, एक तरहकी दवा। चंद्रस्य बाला, ६-तत्। ३ चंद्रकिरण, चंद्रमाकी रोशनी। ४ चंद्रपत्नी, चंद्रमाकी स्त्री।

चन्द्रबाहु (सं० पु०) असुरविशेष, एक दानवका नाम।

चन्द्रबिन्दु (सं० पु०) चंद्रयुक्तो बिन्दुः, मध्यपदलो०। वर्णविशेष, अर्द्ध अनुस्वारकी बिन्दी। अर्द्ध चंद्राकार चिह्नयुक्त बिन्दु जो सानुनासिक वर्णके ऊपर लगता है। इसे नादबिन्दु भी कहते हैं।

चन्द्रबिम्ब (सं० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक राग जो दिनके पहले पहरमें गाया और हिण्डोल रागका पुत्र माना जाता है।

चन्द्रबुध्न (सं० त्रि०) चंद्र आह्लादको बुध्नः मूलं यस्य, बहुव्री०। जिसका मूल आह्लादजनक हो, जिसका सूत्र आनन्दप्रद हो।

"चंद्रबुध्नो मदवृद्धो मनीषिभिः।" (ऋक् १०।५२।१)

'चंद्रबुध्नः सर्वेषां प्रजानामाह्लादकमूलः' (सायण)

चन्द्रबोड़ा (हिं० पु०) एक तरहका अजगर।

चन्द्रभ (सं० पु०) चंद्रस्येव भा यस्य, बहुव्री०। चंद्रप्रभा, चंद्रमाका प्रकाश।

चन्द्रभवन (सं० स्त्री०) एक रागिणीका नाम।

चन्द्रभस्मन् (सं० क्ली०) चंद्र इव शुभ्रं भस्म। कपूर, कपूर।

चन्द्रभाँट—उपासक-सम्प्रदायविशेष। ये लोग एक प्रकारके भिक्षुक होते हैं। दशनामी भाँटोंकी तरह ये भी शिवके भक्त होते हैं। वर्तमानके मतसे ये लोग शिव और कालीकी पूजा करते हैं। ये गृहस्थ होते हैं। काशी, पटना आदि पश्चिमोत्तर प्रदेशोंमें नाना स्थानोंमें इनका वास है। शीत ऋतुमें परिवारको साथ ले और गाय, भैंस, बकरी, बन्दर, कुत्ते, गधे और कोई कोई घोड़े ले कर देश देशान्तरोंमें भीख मांगने फिरते हैं। इस प्रकारसे जो कुछ पैदा करते हैं, उसीसे अपनी गृहस्थी चलाते हैं। बहुतसे घर जा कर खेती बारी भी किया करते हैं।

ये लोग परदेशमें जा कर जिस दिन जहां ठहरते हैं, वहां झोंपड़ी बना लेते हैं अर्थात् इसका समान भी साथ रखते हैं। गायें चीजोंको ढोतीं हैं और कुत्ते रातको पहरा देते हैं। लोगोंको बन्दर और बकरीका नाच दिखा कर ये लोग भीख लेते हैं। ये बड़े निकृष्ट होते हैं, सर्वदा मद्यमांस खाते रहते हैं।

चन्द्रभा (सं० स्त्री०) चंद्रस्य भा इव भा यस्याः, बहुव्री०। १ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया। २ चंद्रमाका प्रकाश।

चन्द्रभाग (सं० पु०) चंद्रस्य भागो विभागो यत्र, बहुव्री०। १ पर्वतविशेष, एक पहाड़का नाम। कालिकापुराणके मतसे हिमालयके निकटवर्ती सौ योजन विस्तृतका एक पर्वत है। यह पर्वत हमेसा बर्फसे ढका रहता है और देखनेमें जूही फूलके सदृश उजला मालूम पड़ता है। इसकी ऊँचाई लगभग ३० योजन मानी गई है। चंद्रभागा नदी इसी पर्वतसे निकली है। पूर्व समय ब्रह्मा इस पर्वत पर बैठ देवता और पितृगणके लिए चंद्रमाको विभक्त किया था, इसी कारण देवताओंने

पर्वतका नाम चन्द्रभाग रक्खा है। (कालिकापुराण २० अध्याय) २ चन्द्रमाकी कला। ३ सोलहकी संख्या।

चन्द्रभागा (सं० स्त्री०) चंद्रभागः पर्वतविशेषः स उत्पत्तिस्थानत्वेनास्त्यस्याः चंद्रभाग-अच्-टाप्। एक नदी। पर्याय—चंद्रभागी, चंद्रिका। कालिकापुराणमें इसकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार लिखी है—ब्रह्माके आदेशसे चंद्रभाग पर्वतके सानुदेशमें शीतानदीकी उत्पत्ति हुई। शीतानदी चंद्रको प्लावित करती हुई बही, इसलिए उसका पानी अमृतयुक्त हो कर ब्रह्मलोहित सरोवरमें पड़ा और धीरे धीरे बढ़ता रहा। उस पानीसे एक कन्या उठी थी, उसका नाम चंद्रभागा था। ब्रह्माकी अनुमतिसे सागरने उस कन्याके साथ विवाह कर लिया। चंद्रने अपनी गदाके अग्रभागसे उस गिरिके पश्चिमपार्श्वको भेद दिया, इससे स्रोतस्वती चंद्रभाग उस जगहसे प्रवाहित हुई। सागर अपनी भार्या चंद्रभागाको ले कर घर चले गये। चंद्रभागा अबाध गतिसे सागरमें जा मिली। इसके गुण—गङ्गाके समान हैं। (कालिकापुराण २२ अ०) राजनिघण्टुके मतसे इसका पानी अत्यन्त शीतल है, दाह, पित्त और वातनाशक है।

जिन पाँच नदियोंके रहनेसे पञ्चनद प्रदेशका नाम पञ्जाब पड़ा है, चंद्रभागा उन्हींमेंसे एक है। ताण्डी नगरके पास चंद्र और भागा दोनों नदीके मिल जानेसे इसका नाम चंद्रभागा पड़ा है। काश्मीर प्रदेशके तुषारमण्डित हिमालय पर्वतसे उत्पन्न हो कर यह नदी जम्बू-सङ्कटमें होती हुई कुटिल गतिसे प्रवाहित हो सियालकोट जिलेमें खैरियाल गाँवके पाससे वृटिशराज्यमें आ घुसी है। फिर ताबी नामकी एक बड़ी नदीमें मिल कर प्रायः १८ मील तक सियालकोट और गुजरात जिलेके बीचसे प्रवाहित हुई है। यहां पर नदीके दोनों किनारे कीच जम जाती है। यह नदी सर्वदा परिवर्तनशील रहती है। फिर यह नदी रेचना और जेच दोआबके बीचसे निकल गई है। यहां व्यापारियोंकी अनेक नौका आया जाया करतीं है। इस नदीके किनारे कई मील तक पनीली जमीन है, जो खेतीके लायक और अत्यंत उपजाऊ है। उसके बाद नदीका पानी नहीं पहुंचता। फिर वह गुजरानवाला जिलेके पश्चिमभागसे प्रवाहित हो मरुमय झङ्ग प्रदेशमें घुसी है। वहां इसके दोनों किनारोंके मैदानका विस्तार करीब ३० मील होगा। इस मैदानमें नई नई मट्टी जमा करती है, नदीका प्रवाहित वहां सर्वदा परिवर्तित और विभक्त होता रहता है। अब नदीगर्भ प्रान्तरके बीचमें आ गया है। वहांसे प्रायः समस्त तीर-भूमिमें खेती होती है। नदीके बीचमें बहुत जगह टापू भी दिखलाई देते हैं, ये टापू प्रायः बाढ़ आनेके समय स्थानान्तरित हुआ करते हैं। तिम्म नगरके पास जा कर यह चंद्रभागा नदी वितस्ता-नदीके साथ मिल गई है। वजीराबादके पास इसके ऊपरसे एक रेलका पुल गया है और झङ्गसे डेराइस्माइलखाँकी रास्तामें इस पर एक बहनेवाला पुल बना हुआ है।

चन्द्रभागी (सं० स्त्री०) चंद्रभागस्य इयं चंद्रभाग-अण्। तस्येदं। पा ४।३।१२०। बह्वादित्वात् न वृद्धिः। बह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।४५) ततो ङीष्। चंद्रभागा नदी।

चन्द्रभाट (हिं० पु०) चन्द्रभाट देखो।

चन्द्रभानु (सं० पु०) १ कृष्णप्रिया श्रीमती चंद्रावलीका पिता। इनके पिताका नाम महीभानु और माताका नाम सुखदा था। इनके चार भाई थे जिनके नाम रत्नभानु, वृषभानु, सुभानु और भानु रहे। चंद्रभानु सबसे बड़े थे। इनकी बहनका नाम भानुमुद्रा और स्त्रीका नाम विन्दुमती था। (वृ० गौ० १४।२३ अ०)

२ कृष्णके एक पुत्रका नाम जो सत्यभामाके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इनके साथ चंद्ररेखाकी प्रेमघटित कथा तैलङ्गमें प्रसिद्ध है।

चन्द्रभाम (सं० पु०) चन्द्रभाव देखो।

चन्द्रभाल (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्रभूति (सं० क्ली०) चंद्रस्येव भूतिः कान्तिरस्य, बहुव्री०। रजत, चाँदी, रूपा।

चन्द्रभूषण (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्रमणि (सं० पु०) चंद्रप्रियो मणिः शाकपार्थिववत् समासः। चंद्रकान्तमणि। चन्द्रकान्त देखो।

२ उल्लाला छन्दका एक नाम।

चन्द्रमण्डल (सं० क्ली०) १ चन्द्रस्य मण्डल, ६-तत्। चंद्र-बिम्ब, चन्द्रमाकी छाया, चंद्रको चारों ओर पड़ा हुआ

मण्डल या घेरा। मध्य मध्य ईषत् मेघाच्छन्न रजनीको चंद्रको चारों ओर जो आलोकमय मण्डल देखनेमें आता, चंद्रमण्डल कहा जाता है। अज्ञ लोगोंको विश्वास है कि वह आलोकमय देवगणसे परिवृत हो पृथिवीकी शुभाशुभविषयक मीमांसा करते हैं। यह वृत्त वृहदाकार देख पड़नेसे शीघ्र ही वृष्टि होने और चंद्रके निकट क्षुद्राकार लगनेसे देरको पानी पड़नेका अनुमान किया जाता है।

वायु राशिके उपरिस्थ स्तरमें क्षुद्र क्षुद्र जलकणाओंमें चन्द्रविम्ब पड़नेसे यह उत्पन्न होता है। यह सकल जलविन्दु अति क्षुद्र रहते भी चंद्रकिरणको वक्रीभूत कर देते हैं। उसीसे चंद्रसे थोड़ी दूर दूसरा आलोकमय वृत्त देख पड़ता है, यही स्तर पृथिवीका निकटवर्ती रहनेसे वृत्त अपेक्षाकृत क्षुद्र और दूरवर्ती होनेसे वृहत् लगता है। फिर दूसरे कारणसे भी चन्द्रमण्डल घटता बढ़ता है। वृहत् जलकणाकी अपेक्षा क्षुद्रजलकणा आलोकको अधिक वक्रीभूत बनाती है। उसीसे मेघस्थित जलकणा बड़ी होनेसे मण्डल बड़ा लगता है। इन वृहत् जलकणाओंके शीघ्र ही भारवशतः वृष्टिरूपमें भूतल पर गिरनेकी सम्भावना है। सुतरां लोगोंका यह विश्वास, कि दूर मण्डल रहनेसे जल्द जल बरसता और निकट रहनेसे देरको पानी पड़ता, नितान्त अमूलक नहीं है। इन्द्रधनुःकी भाँति इस मण्डलमें भी नानावर्ण झलकते हैं। कभी कभी उस मण्डलसे कुछ दूर अपेक्षाकृत अस्पष्ट दूसरा भी मण्डल दृष्ट होता है। शीतप्रधान देशमें चंद्रमण्डलका दृश्य बहुत ही कौतुकजनक लगता है। वहाँ जलकणा शीतवशतः जम करके कोणविशिष्ट तुषारकणा बन जाती है। उसके मध्य चन्द्ररश्मि गमन कालको नानारूप दृश्य उत्पादन करता है। फिर कभी कभी उसमें आकार विशेष (+) की चंद्रश्रेणी भी देख पड़ती है इसीका नाम चंद्राभास (False moon) है। सू देखो।

चन्द्रमनस (सं० पु०) चंद्रमाके दश घोड़ाओंमेंसे एक।

चन्द्रमल्लिका (सं० स्त्री०) चंद्रमल्ली स्वार्थे कन् टाप् पूर्वह्रस्वश्च। चंद्रमल्ली।

चन्द्रमल्ली (सं० स्त्री०) चंद्र इव मल्ली यस्याः, बहुव्री०, ततो ङीप्। लताविशेष, अष्टापदी नामकी बेल।

चन्द्रमस् (सं० पु०) चंद्रं आह्लादं मिमीते मि असुन् मादेशः। यद्दा चंद्रं कर्पूरं माति तुलयति मा असुन् सचडित्। चंद्रे मो डित्। उण् ४।२२७। १ चंद्र, चंद्रमा।

"बहुविधं करोत्येव सूर्यं चंद्रमसं यथा।" (पंचतन्त्र १।३९)

२ कर्पूर, कपूर।

चन्द्रमसी (सं० स्त्री०) योनिमध्यस्थ नाड़ीविशेष।

चन्द्रमह (सं० पु०) चंद्रस्य मह, ६-तत्। चंद्रोत्सव।

चन्द्रमा (सं० स्त्री०) चंद्रेण मीयते मा घञर्थे क ततः टाप्। नदीविशेष, एक नदीका नाम।

"कौशकीनिम्नगा शोणं बाहुदामथ चंद्रमाम्।" (भारत ६।९ अ०)

चन्द्रमा (हिं० स्त्री०) चंद्र देखो।

चन्द्रमात्रा (सं० स्त्री०) सङ्गीतमें तालोंके १४ भेदोंमेंसे एक।

चंद्रमाल—विदेहक्षेत्रमें स्थित विभङ्ग नदियोंमेंसे एक वृहत् नदी। (त्रिलोक १२)।

चन्द्रमाला (सं० पु०) १ एक तरहका छन्द जिसमें २८ मात्राएँ रहती हैं। २ एक नदीका नाम। ३ चन्द्रहार।

चन्द्रमुख (सं० पु०) १ देवमुख नामक एक द्विविर तथा अपूपिका वेश्याके सम्भोगसे उत्पन्न एक धनीका नाम। बाल्यावस्थामें इसे कुछ भी धनसम्पत्ति न थी, सिर्फ महाराजके अनुग्रहसे ही अन्तमें कोटीश्वर हो गये थे। (राजतरङ्गिणी ७।१११)

(त्रि०) चंद्र इव मुखं यस्य, बहुव्री०। जिसका मुख चंद्रमासा हो, खूबसूरत।

चन्द्रमुखी (सं० स्त्री०) चंद्र इव मुखं यस्याः, बहुव्री०। जिस स्त्रीका मुँह चंद्रमासा सुन्दर हो।

चन्द्रमौलि (सं० पु०) चंद्रमौलावस्य बहुव्री०। शिव, महादेव।

"कौतलयेभि विविधादिनि चंद्रमौली।" (कुमार ५।८०६)

चन्द्ररथ (सं० त्रि०) चंद्रः सुवर्णमयो रथो यस्य, बहुव्री०। १ सुवर्णमय रथ, सोनेका रथ।

"होता मन्द्रः चन्द्ररथः।" (ऋक् १।१४१।१२)

'चन्द्ररथः सुवर्णमयरथोपेतः' (सायण)

(पु०) २ सुवर्ण निर्मित रथ, वह रथ जो सोनेका बना हो। चंद्रस्य रथः, ६-तत्। ३ चंद्रमाका रथ।

चन्द्ररसा (सं० स्त्री०) चंद्र इव रसो यस्याः, बहुव्री०, ततः टाप्। भारतवर्षीय एक नदी, हिन्दुस्थानकी एक नदीका नाम।

"चंद्रभा ताम्रपर्णी ।" (भागवत ५।१९।१८)

चन्द्रराव मोड़े—बीजापुर राज्यके अधीन और सतारा नगरसे ३५ मील (वायुदिशाकी ओर) दूर पर स्थित जावलीके एक महाराष्ट्र राजा। ई०की पंद्रहवीं शताब्दीके अन्तमें चंद्रराव मोड़ेको शिर्कि प्रदेश जय करनेके लिए विजयपुरके प्रथम अधिपति जुसुफ् आदिल शाहसे १२००० हिन्दू सेना प्राप्त हुई थी। उसी सेनाकी सहायतासे इन्होंने उक्त प्रदेश पर जय प्राप्ति की थी।

चंद्रराव और उनके पुत्र यशोवन्तरावसे ही उनका मोड़े वंश प्रसिद्ध हुआ है। यशोवन्तरावने अहमदनगरके बुर्हान् निजाम शाहको पुरन्धरके पास पराजित किया था और उनकी हरी पताका छीन ली थी। इस वीरोचित कार्यके लिए वे पैत्रिक राजपट पर अभिषिक्त हुए थे और विजयपताकाके व्यवहारके लिए उन्होंने अनुमति पाई थी। उनके उत्तराधिकारी (सात पीढ़ी तक) वहीं राज्य करते रहे और सभोंने वंशके स्थापनकर्त्ताके नामसे "चंद्रराव"की उपाधि व्यवहार की थी।

ये समस्त राजा बीजापुरके नवाबके अनुगत थे। इसी लिए नवाब इनसे थोड़ा कर लेते थे। १६५५ ई० सालमें शिवजीने उस समयके राजाको बीजापुरके विरुद्ध असिधारण करनेके लिए अनुरोध किया था, परन्तु वे राजी न हुए थे। शिवजीको पकड़नेके अभिप्रायसे जानेवाले शामराज नामक (बीजापुर-नवाब प्रेरित) सेनापतिको उस समयके राजा चंद्ररावने अपने राज्यमें जाने दिया था। शिवजीने इसी बहानेसे उनके साथ शत्रुता ठान ली थी। परन्तु चंद्रराव, उनके दोनों पुत्र, भाई और मन्त्री हिम्मतराव आदि सब ही वीरपुरुष थे, सेना भी शिवजीकी सेनासे हीनबल न थी, इसलिए सुचतुर शिवजीने शत्रुताको प्रकाशमें न ला कर भीतर ही भीतर कार्यकी सिद्धि करनेका उपाय स्थिर किया। उन्होंने रघुवल्लाल नामक एक ब्राह्मण और शम्भाजी कावजी नामक एक महाराष्ट्रको चंद्ररावकी कन्याके साथ विवाह सम्बन्ध स्थिर करनेके बहाने २५ मराठी सेना सहित जावली भेज दिया। वहां जा कर इन लोगोंने धोखेसे राजा और उनके भाईको मार डाला, तथा पास जङ्गलमें सेना सहित छिपे हुए शिवजीसे जा मिले। इसके बाद शिवजीके उक्त नगर पर आक्रमण करने पर हिम्मतराव आदिने जी-जानसे युद्ध किया। आखिर हिम्मतराव आदि भी मारे गये और शिवजीने राज्य ले लिया। तबसे अंगरेजी राजाके पहिले तक वह राज्य शिवजीके वंशधर और पेशावरके अधीन था।

चन्द्रराज (सं० पु०) राजा हर्षके प्रधान मन्त्रीका नाम। (राजतरङ्गिणी ७।१३।१६)

चन्द्रराजी (सं० स्त्री०) वाकुचो, बकुची।

चन्द्ररेख (सं० पु०) रामायणवर्णित एक राक्षसका नाम। (६।८५।१२)

चन्द्ररेखा (सं० स्त्री०) चंद्रस्य रेखा, ६-तत्। १ ज्योतिःशास्त्रप्रसिद्ध चंद्रकी मण्डलसूचक रेखा। चंद्रस्य रेखा इव आकृतिर्यस्याः, बहुव्री०। २ एक परम सुन्दरी अप्सरा। (काशीखण्ड ८ अध्याय) ३ बाकुची लता, (सोमराज या हिकुचे) (राजनिघण्ट्) ४ चंद्रशेखरकी सहोदरा भगिनी। चंद्रशेखर देखो। ५ एक छन्द। जिस वृत्तके प्रत्येक चरणमें १३ अक्षर या स्वरवर्णमें निबद्ध होते हों तथा प्रत्येक चरणके १, २, ३ ४, ५, ८ और ११वें अक्षर गुरु, दूसरे लघु होते हों उसको चंद्ररेखा कहते हैं। इसके ६ठे और ७वें अक्षरमें यतिस्थान है। "नसरयुग लो चंद्ररेखतु लोके:।" (वृत्तरत्ना० टी०) ६ वाणराजकी कन्या उषाकी सखी। (पुराण) कहीं कहीं चंद्ररेखा नामसे भी इसका उल्लेख है। ७ चंद्रमाकी कला। ८ चंद्रमाकी किरण। ९ द्वितीयाका चंद्रमा।

चन्द्ररेखागढ़—मेदिनीपुर जिलेका एक प्राचीन गढ़। नयाग्रामके राजवंशीय खेलारके ४र्थ भूपति चन्द्रशेखर सिंह द्वारा यह गढ़ ई०की १६वीं शताब्दीमें बना था। करीब १ मील लम्बी खाई द्वारा यह गढ़ चारों तरफसे घिरा हुआ है। इसका द्वार पूर्वकी तरफ सिर्फ एक ही है। यह खाई ८-१० फुट चौड़ी और ६ फुटसे ज्यादा गहरी है, तथा लोहितवर्ण कठिन पत्थरोंको काट कर बड़े खर्चसे बनाई गई थी। पूर्वकी तरफ दरवाजेके पास एक गहरी खाई और दीवार है। दरवाजेसे २०० गजकी दूरी पर एक लाल रङ्गकी अट्टालिकाका भग्नावशेष पड़ा हुआ है। शायद यह राजाका प्रासाद होगा। यहां अब

घना जङ्गल हो गया है। चन्द्ररेखागढ़से करीब आध कोस पूर्वमें देउल नामका ७५ फुट ऊँचा एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर देखनेसे अति प्राचीन जान पड़ता है। यह मन्दिर किसने बनाया था, उसका अभी तक कुछ पता नहीं लगा। नयाग्रामके राजा यहांकी देवसेवा-का खर्च चलाते हैं।

चन्द्ररेणु (सं० पु०) चन्द्र इव आह्लादको रेणुर्यत, बहुव्री०। १ काव्यचोर, जो दूसरेकी बनायी शायरी अपनी बताता हो। (क्ली०) २ रौप्य, चाँदी।

चन्द्रला (सं० स्त्री०) कर्णाटदेशप्रसिद्ध एक देवी।

(राजतरङ्गिणी ८।१४।२१)

चन्द्रलेखा (सं० स्त्री०) चन्द्रं तत्कान्तिं लिखति लिख-अण्, उपपदस०, ततो बाहुलकात् टाप्। १ लताविशेष, बकुची नामकी लता। चंद्रस्य लेखा, ६-तत्। २ चन्द्र-रेखा, चंद्रमाकी कला। ३ छन्दोविशेष, एक तरहका छन्द। जिस समवृत्तके प्रत्येक चरणमें १५ अक्षर या स्वरवर्ण हो तथा प्रत्येक चरणके ५, १० और १३वाँ अक्षर लघु तथा शेष वर्ण गुरु रहे तो उसे चंद्रलेखा कहते हैं।

४ बाणराजाके मन्त्री कुष्माण्डककी एक कन्याका नाम जो ऊषाकी एक सखी थी। इन्हींकी सहायतासे खुबसूरत ऊषाकी प्राणपति अनिरुद्ध चुपके मिले थे। (पुराण) ऊषा देखो। ५ अप्सराविशेष, एक अप्सराका नाम। कहीं कहीं यह चंद्ररेखा नामसे भी विख्यात है।

चन्द्ररेखा देखो।

६ नाग सुस्रुवाकी बड़ी लड़कीका नाम। इसकी छोटी बहनका नाम इरावती था। (राजतरङ्गिणी १।२१९)

चन्द्रलोक—चंद्रमण्डल। पहिले चंद्रके विवरणमें यह दिखाया गया है कि, चंद्रका जो भाग हम लोगोंकी तरफ है, वह सिर्फ पर्वतमय, गुहादि द्वारा विशोभित और जलवायुशून्य है। इसलिए दिनमें चंद्रका वह अंश अग्निवत् उत्तप्त हो जाता है। पृथिवी पर ग्रीष्म-कालमें दिन कई घण्टे बड़ा होता है, इसीलिए सूर्यका उत्ताप असह्य हो जाता है। तब भी वायुराशि और मेघवृष्टिसे सूर्यताप कुछ कम हो जाता है। किन्तु चंद्रलोकमें न पानी है, न वायु और न मेघ ही है, इस-लिए १५ दिवसव्यापी दिनकी प्रखर सूर्यकिरणोंसे चंद्रके पर्वत और प्रान्तर कैसे उत्तप्त जाते होंगे, जिसका कोई ठिकाना नहीं। अतः पार्थिव प्रकृतिका कोई भी जीव चंद्रलोकमें नहीं रह सकता—यह तो निश्चित ही है। वहाँ जल, वायु आदिके न होनेसे पक्षी भी उड़ कर नहीं जा सकती। पार्थिव कोई भी प्राणी वहाँ जाय, तो वह उसी समय मरणको प्राप्त होगा, ऐसा अनुमान किया जाता है। हाँ, विश्वपतिने उस लोकमें रहनेके लिए किसी जीवकी उत्पत्ति की हो, तो कौन कह सकता है? हो सकता है कि, उनकी प्रकृति चंद्रके अनुकूल हो और वे यहां आवें तो मर जावें। चंद्रके दूसरी तरफ जलवायु और पार्थिव प्रकृतिके जीव हो सकते हैं। शायद वहां भी हम लोगोंके समान मनुष्य हों और जल, वायु, मत्स्य, पशु, पक्षी आदि विचरण करते हो।* यहांकी तरह वहां भी शायद स्रोतस्वती नदी, श्यामल वृक्षलता और नानावर्णके पुष्पादि हैं और सुशीतल पवन चलती है। परन्तु चन्द्रकी मध्याकर्षणशक्ति बहुत थोड़ी होनेके कारण उसकी वायु अत्यन्त हल्की होती है, इसलिए वहांके प्राणियोंसे हम लोगोंमें विशेष सामञ्जस्य नहीं हो सकता। चन्द्रका दिन १ चन्द्रमासके समान है। चन्द्रकी ऋतुपर्याय नहीं है। प्रत्येक दिन ही चन्द्रका ग्रीष्मकाल है और प्रत्येक रात्रि शीतकाल। पृथिवी जाड़ेमें सूर्यके बहुत निकट पहुंच जाती हैं, इसलिए पौष और माघ मासमें, चान्द्रमासका परिमाण, ज्येष्ठ और आषाढ़ मासके चान्द्रमासके परिमाणसे कुछ बढ़ जाता है। उस समय चन्द्रका दिन अपेक्षाकृत बड़ा और सूर्यका दूरत्व अपेक्षाकृत थोड़ा हो जाता है, इसलिए उस समय चन्द्र-का ग्रीष्मकाल अपेक्षाकृत अधिकतर उष्ण हो जाता है। उसी तरह हमारे ग्रीष्मकालमें चन्द्रका शीत कुछ प्रखर हो जाता है। चंद्र, चन्द्रद्वीप और सोमगिरि देखो।

चन्द्रलोचन (सं० पु०) एक दानवका नाम। (हरिवंश)

चन्द्रलोहक (सं० क्ली०) चन्द्र इव शुभ्रं लोहकं धातुद्रव्यं। रजत, चाँदी।

---

* ब्रह्मपुराणमें चन्द्रलोकमें पितृपुरुषोंका वास बताया है (ब्रह्माण्डपु०—अनु० पा० १० अ०) देखो।

चन्द्रवंश (सं० पु०) चन्द्रस्य वंशः, ६-तत्। चन्द्रसे उत्पन्न पुरुषपरम्परा, चन्द्रकी सन्तान सन्तति। महाभारत, रामायण, हरिवंश आदिमें चन्द्रवंशके विषयमें जैसा लिखा है, उसीके अनुसार चन्द्रवंशकी तालिका नीचे लिखी जाती है।
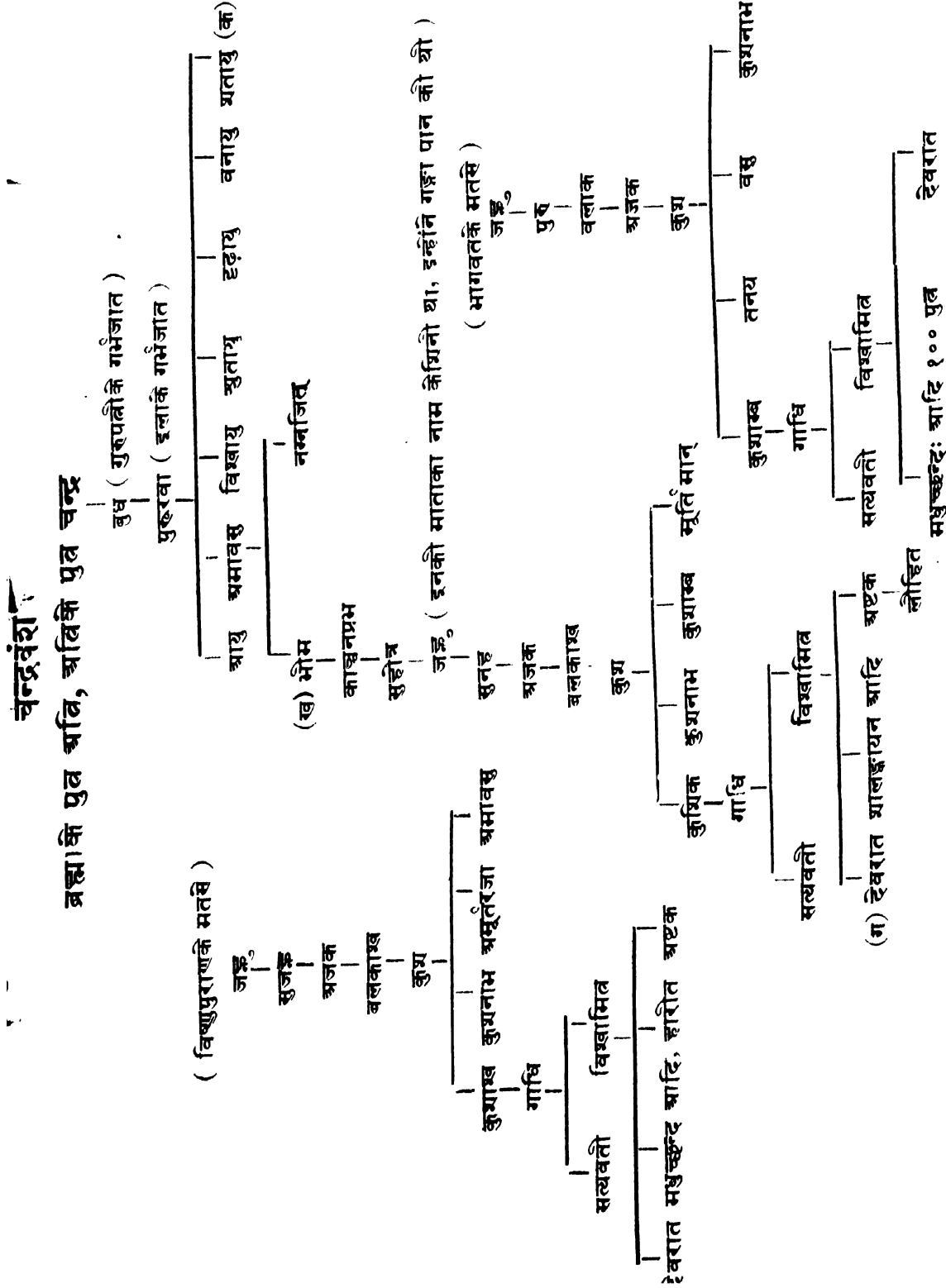
(क) भागवतके मतसे पुरूरवाके पुत्र ६ हैं, उनके नाम ये हैं—आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय, जय और विजय। विष्णुपुराणके मतसे आयु, अमावसु, विश्वावसु, श्रुतायु, शतायु और अयुतायु। (विष्णुपु० ४।७ अ०) मत्स्यपुराणके मतसे आयु, दृढ़ायु, अश्वायु, धनायु, धृतिमान, वसु, दिविजात और शतायु ये आठ पुरूरवाके पुत्र। (मत्स्यपु० २४।३४)

(ख) भागवतके मतसे ये विजयके पुत्र हैं। (ग) ये विश्वामित्रके पालकपुत्र भृगुवंशीय अजीगर्तके औरस सन्तान थे।

(घ) भागवत और विष्णुपुराणके मतानुसार इनका नाम क्षत्रवृद्ध। (ङ) भागवत और विष्णुपुराणमें भवकी जगह 'वियति' और 'संयति' की जगह 'कृति' पाठ है। मत्स्यपुराणके मतसे—यति, ययाति, संयति, उद्भव, पाचि, शर्याति और मेघजाति ये सात नहुषके पुत्र हैं। (मत्स्यपु०) (च) यदुवंश शब्दमें इनका वर्णन देखो। (छ) भागवतके मतसे महाराज दुष्मन्तने इनके साथ विवाह किया था। विष्णुपुराणके मतसे दुष्मन्त अपुत्रक मरुत्तके पुत्र हैं, ऐसे कल्पित हुए थे। मरुत्त देखो।

(१) इनके अधिकृत देश पाण्ड्य, केरल, कोल और चोल नामसे प्रसिद्ध हैं। (२) विष्णुपुराणमें इनको क्षत्रवृद्धका पुत्र बताया है। (विष्णु० ४।८) (३) भागवतके मतसे सुहोत्र। (४) विष्णुपुराणके मतसे काश, लेश और गृत्समद। [illegible] मतसे काश, कुश, और गृत्समद। (५) इन[illegible] क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन जातियों[illegible] हुए हैं। (६) पौरव शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

(विष्णुपुराणके मतसे) क्षत्रवृद्ध (क्षत्रशर्मा)
काश
लश
गृत्समद
शुनक
काशिराज
दीर्घतमा
धन्वन्तरि
केतुमान्
भीमरथ
दिवोदास
प्रतर्दन
वत्स (ये कुवलयाश्व नामसे प्रसिद्ध थे)
अलर्क
सन्नति
सुनीथ
सुकेतु
धर्मकेतु
सत्यकेतु
विभु
सुविभु
सुकुमार
धृष्टकेतु
वैनहोत्र
भार्ग
पुरु
जनमेजय
प्रचिन्वान
प्रवीर
मनस्यु
अभयद
सुधन्वा
बहुगव
संयाति
रहंयाति
रौद्राश्व
द्रुह्यु
बभ्रु
सेतु
अङ्गार
गान्धार
अनु
धर्म
घृत
दुदुह
प्रचेता
सुचेता
तुर्वसु
वह्नि
गोभानु
त्रैसानु
करन्धम
मरुत्त
सम्मता (कन्या)
दुष्यन्त
आक्रीड़
पाण्ड्य
केरल
कोल
चोल
ऋचेयु
कक्षेयु
कृतेयु
स्थाण्डिलेयु
सन्नतेयु
दशार्णेयु
जलेयु
स्थलेयु
वननित्य
वनेयु
दश कन्या
सभानर
चाक्षुष
परमन्यु
कालानल
सृञ्जय
पुरञ्जय
जनमेजय
महाशाल
महामना
उशीनर
तितिक्षु
नृग
कृमि
नव
सुव्रत
शिवि
उषद्रथ
फेण
वृषदर्भ
सुवीर
कैकेय
मद्रक
ऋचेयु
मतिनार
तंसु
प्रतिरथ
सुवाहु
गौरी (कन्या)
सुरोध
कण्व
मेधातिथि
दुष्मन्त
सुषमन्त
प्रवीर
अनघ
इलिनी

(७) अमावसुकी वंशवर्णनामें जह्नुकी वंशावली जैसी है, यहां भी वैसी ही वर्णित हुई है।

* विष्णुपुराण, हरिवंश, मत्स्यपुराण, लिङ्ग और मार्कण्डेयपुराण आदि प्रायः सभी पुराणोंमें चंद्रवंशका विस्तृत वर्णन है। किन्तु परस्पर मिलता नहीं, विरोध पड़ता है। हरिवंशमें वर्णित चंद्रवंश कहीं विष्णुपुराण और कहीं कहीं भागवत आदिके साथ मिलता है। इसलिए हरिवंशके

चन्द्रवंशी-चंद्रकुल-समुद्भव एक क्षत्रिय जाति। इनका आचारव्यवहार चन्देल राजपूतोंसे विभिन्न है, जो अपनेको भी चंद्रवंशीय बतलाते हैं। बुलन्दशहर जिलेमें इनका वास अधिक है। आजमगढ़में ये भार्गव गोत्रके कहलाते हैं। ये बिसेन, मकरवार, नन्दवक, राठोर, पलवार, गौतम, उज्जैनी, चन्देल, बैस, उदमतीय, सिंघेल और कौशिक वंशमें अपने लड़केका विवाह तथा गर्ग शो रघुवंशी, सूर्यवंशी, चौहान और सिरनेत वंशमें अपनी लड़कीका विवाह करते हैं। इनकी लोकसंख्या प्राय: ५७८८ है।

चन्द्रवक्ता (सं० स्त्री०) चंद्रइव चंद्रवक्तं यस्याः बहुव्री०। स्त्रियां टाप्। १ नगरीभेद, एक नगरका नाम। २ चंद्रमुखी।

चन्द्रवत् (सं० त्रि०) चंद्रो विद्यतेऽस्य चंद्र-मतुप् मस्य वः। १ चंद्रयुक्त, जिसमें चंद्रमा हो। २ दीप्तियुक्त, प्रभावशाली, प्रतापी।

"चन्द्रवताधमा पमयस्व।" (ऋक् ३।३०।२०)

'चंद्रवता दीप्तियुक्तेन' (सायण)

चन्द्रवदन (सं० त्रि०) चंद्र इव वदनं यस्य, बहुव्री०। चंद्रतुल्य मुखविशिष्ट, जिसका मुंह चंद्रमासा सुन्दर हो।

चन्द्रवती (सं० स्त्री०) चंद्रवत्-ङीप्। १ वज्रनाभके भाई सुनाभकी एक कन्याका नाम। इसकी छोटी बहनका नाम प्रभावती था। (हरिवंश १५३ अ०) प्रभावती देखो।

चन्द्रवधू (सं० स्त्री०) कीटविशेष, बीरबहुटी।

चन्द्रवर्ण (सं० त्रि०) चंद्रस्येव वर्णो यस्य, बहुव्री०। १ जिसका वर्ण सुवर्ण सदृश हो, जो देखनेमें सोनेसा हो, सुन्दर, खूबसूरत।

"सचन्द्रा मरुतश्चन्द्रवर्णाः।" (ऋक् १।१६५।१२)

'चंद्रमिति सुवर्णनाम सुवर्णवर्णाः।' (सायण)

२ चंद्रमासा सफेद।

चन्द्रवर्त्म (सं० क्ली०) छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें १२ अक्षर या स्वरवर्ण होते हैं और प्रत्येक चरणका १, ३, ७ और १२वां अक्षर गुरु तथा शेष लघु हों उसीका नाम चंद्रवर्त्म है।

"चंद्रवर्त्म निगदन्ति रनभसैः।" (वृत्तरत्नाकर)

चन्द्रवर्मन्—१ ई०की ४थी शताब्दीके पोकर्णका एक दिग्विजयी राजा। २ कालञ्जर दुर्गका बनानेवाला और चन्देलराजवंशका आदिपुरुष। चन्द्रात्रेयवंश देखो।

चन्द्रवल्लरी (सं० स्त्री०) चंद्रस्य वल्लरी, ६-तत्। १ सोमलता। २ ब्राह्मीक्षुप।

चन्द्रवल्ली (सं० स्त्री०) चंद्रस्य वल्ली, ६ तत्। १ सोमलता। २ माधवीलता। ३ प्रसारणी, पसरन। ४ चंद्रमल्लिका।

चन्द्रवसा (सं० स्त्री०) भारतवर्षीय एक नदी, हिन्दुस्थानकी एक नदीका नाम। (भागवत ५।१९।१८)

चन्द्रवाटी—वर्द्धमानके दक्षिण दामोदर नदीके किनारे बसा हुआ एक नगर। यहां गोपराजा राज्य करते थे। (भ०ब्रह्मख० ७।४३)

चन्द्रवार (सं० पु०) सोमवार।

चन्द्रवाला (सं० स्त्री०) बड़ी इलायची।

चन्द्रविमल (सं० पु०) समाधिविशेष।

चन्द्रविमलसूर्यप्रभासश्री (सं० पु०) बुद्धभेद।

चन्द्रविहङ्गम (सं० पु०-स्त्री०) चंद्रइव शुभ्रो विहङ्गमः। १ बकपक्षी, बगला। २ पक्षिविशेष, शङ्खी नामकी चिड़िया। ३ सारसपक्षी।

चन्द्रवेगा—एक पवित्र नदीका नाम। विख्यातपुराणके ६।७ वें अध्यायमें इसका माहात्म्य विस्तारपूर्वक वर्णित है।

चन्द्रवेष (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्रव्रत (सं० क्ली०) चंद्रस्य चंद्रलोक प्राप्तये व्रतम्, ६ तत्। चांद्रायण व्रत। चान्द्रायण व्रत देखो।

चन्द्रशकला (सं० स्त्री०) बकुची।

चन्द्रशाला (सं० स्त्री०) चंद्रेण शालते शोभते शाल-अच् ततष्टाप्। १ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चंद्रिका। चंद्र इव शालते शाल-अच्-टाप्। २ रथ या प्रासादके ऊपरका घर, अटारी, कोठा। इसका संस्कृत पर्याय—शिरोगृह, चंद्रशालिका, वड़भी और कूटागार है।

"विघट्टितं पुष्पकचन्द्रशालाः क्षणं प्रतिश्रुन्मुखराः करोति।" (रघु १३।४०)

चन्द्रशालिका (सं० स्त्री०) चंद्रशाली स्वार्थे कन्-टाप्। अत इत्वञ्च। अटारीका कमरा, वह कोठरी जो घरकी छतके ऊपर बनी हो।

चन्द्रशिला (सं० स्त्री०) चंद्रप्रिया शिला शाकपार्थिवादि°, मध्यपदलो°। १ प्रस्तरविशेष, चंद्रकान्त पत्थर।

चन्द्रशूर (सं० पु०) चंद्रे तज्जे श्लेष्मिकरोगे शूर इव। १ वृक्षविशेष, चंसुर या हालिम नामका पौधा। (क्ली०) २ फलविशेष, हालिम। इसका संस्कृत पर्याय—चंद्रिका, चर्महन्त्री, पशुमेहनकारिका, नन्दनी, कारवी और भद्रा है। इसका गुण—हिक्का, वात, श्लेष्मा और अतिसार-रोगनाशक तथा बलपुष्टिकर है। (भावप्रकाश)

३ वनमेथिका, जंगली मेथी।

चन्द्रशृङ्ग (सं० पु०) द्वितीयाके चंद्रमाके दोनों नुकीले छोर।

चन्द्रशेखर (सं० पु०) चन्द्रयुक्तः शेखरः शृङ्गं यस्य, बहुव्री०। १ एक प्रसिद्ध पर्वत, तीर्थस्थान। यह पर्वत चट्टल प्रदेशमें (वर्तमानके चट्टग्राममें) अवस्थित है। इस पर चन्द्रशेखर नामक शिव हैं। २ चन्द्रशेखर पर्वत पर स्थित एक शिवमूर्ति। तन्त्रचूड़ामणिके पीठनिर्णयमें लिखा है कि—

"चट्टले दक्षबाहुर्मे भैरव चन्द्रशेखरः।
व्यक्तरूपा भगवती भवानी तत्र देवता॥" (तन्त्र०-पीठ०)

चट्टलदेशमें देवीकी दक्षबाहु पतित हुई थी। उस जगह भवानी नामकी भगवती और चन्द्रशेखर नामके भैरव हैं। चंद्रनाथ और सीताकुण्ड देखो।

चंद्रः शेखरे यस्य, बहुव्री०। ३ महादेव।

"इति स्वहस्तोल्लिखितश्च मुग्धया रहस्युपालभ्यत चंद्रशेखरः।
(कुमार ५।५८)

४ वाराहीतन्त्रके मतसे—दक्षिणभागमें सागरसे सार्द्ध-याम दूरी पर चंद्रशेखर नामका एक तीर्थस्थान है। वहां आ कर कुण्डमें स्नान करनेसे महाफलकी प्राप्ति होती है। इस क्षेत्रके बीचके आधे योजनको परक्षेत्र कहते हैं। इस स्थान पर स्नान, श्राद्ध, पितृतर्पण और यथा-विधिसे देवतार्चन करनेसे समस्त पापोंसे छुटकारा मिल जाता है और सहस्रगोदानका फल प्राप्त होता है।
(वाराहीतन्त्र ३१ प०)

५ कालिकापुराणमें कथित एक राजा। कालिका-पुराणमें इनकी कथा इस प्रकार लिखी है—पौष्य नामके एक प्रबल पराक्रान्त राजा थे। उनकी तीन रानियां थीं। राजाका बुढ़ापा आ गया, पर उनके पुत्र एक भी न हुआ। निःसन्तान पौष्य तीनों रानियोंके साथ कमला-सन ब्रह्माकी उपासना करने लगे। ब्रह्माने सन्तुष्ट हो कर उन्हें एक फल दे कर कहा कि—"वत्स पौष्य! यह फल बड़ी मुश्किलसे पचता है। तुम अपनी रानियों-के साथ त्रिलोकपति महादेवकी आराधना करो, उनके दर्शनसे तुम्हारी अभिलाष पूर्ण होगी।" ब्रह्माके आदेशा-नुसार पौष्य भक्तिके साथ कठोर तपस्या करने लगे। उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर उनको महादेवने अपना दर्शन दिया और कहा कि—"हे वत्स! ब्रह्माने तुम्हें जो फल दिया है, उसके तीन टुकड़े कर अपनी रानियों-को खिला दो। इससे तुम्हें एक सर्वलक्षणसम्पन्न पुत्रकी प्राप्ति होगी। किन्तु एकके गर्भसे मस्तक, दूसरी रानीके गर्भसे मध्यभाग और तीसरीसे (नाभिसे) अधोभाग उत्पन्न होगा। बादमें इन तीनों खण्डोंको जोड़ देनेसे ही एक सुलक्षण बालक बन जायगा।" महाराज पौष्यने ऐसा ही किया। इससे चन्द्रशेखरकी उत्पत्ति हुई। चन्द्रशेखर शिवके अवतार थे। इन्होंने भगवतीके अव-तार तारादेवीका पाणिग्रहण किया था। इनके कपाल पर चन्द्रकला जैसी ज्योतिः थी। चन्द्रशेखरकी राजधानी करवीरमें थी। इन्होंने तीन रानियोंके गर्भसे अवतार लिया था इसलिए इनका नाम त्र्यम्बक पड़ा था। इनके औरस और तारावतीके गर्भसे उपरिचर, दमन और अलर्क नामके तीन पुत्र हुए थे। चन्द्रशेखर ज्येष्ठपुत्र उपरिचरको राज्य दे कर अपनी प्रियपत्नी तारादेवीके साथ वनको चले गये थे। (कालिकापु० ५० अ०)

तारावती देखो।

६ भुवकतालविशेष। भुवक देखो।

चन्द्रशेखर—इस नामसे कई एक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम मिलते हैं। जैसे—१ द्रव्यकिरणावलीशब्दविवेचन नामके न्यायग्रन्थरचयिता। २ पुरश्चरणदीपिका नामकी एक स्मृतिके संग्रहकर्ता। ३ स्मृतिप्रदीपके रचयिता। ४ लक्ष्मीनाथभट्टके पुत्र, इन्होंने पिङ्गलभावोद्योत, वृत्त-मौक्तिक और गङ्गादासकृत छन्दोमञ्जरीकी छन्दोमञ्जरी-जीवन नामक एक टीकाकी रचना की थी।

५ विष्णुपण्डितके पुत्र और रङ्गभट्टके पौत्र। इन्होंने अभिज्ञानशकुन्तलटीका, हनुमन्नाटकटीका और शिशु-पालवधकी सन्दर्भचिन्तामणि नामकी टीकाका प्रणयन किया था।

चन्द्रशेखरगौड़ीय—सुर्जनराजचरित नामक संस्कृत काव्यकार।

चन्द्रशेखर वाजपेयी—ये दरभङ्गा, जोधपुर और पतियाला राजदरबारमें रहते थे। इनका जन्म १७९८ ई०में और देहान्त १८७५ ई०में हुआ। इन्होंने हमीरहाठ तथा और दूसरे दूसरे ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

चन्द्रशेखररस (सं० पु०) औषध-विशेष, एक दवाका नाम। पारा, गन्धक, मरिच और सुहागा प्रत्येकका एक तोला तथा मनःशिला चार तोलाको मछलीके पित्तमें मर्दन कर तीन दिनों तक भावना देनी होती है। तीन रत्ती मात्रा रोगीको खिलाना चाहिए। पथ्य -शरीरमें अधिक गर्मी रहनेसे पखाराहुआ भात और मट्ठा खाना चाहिए। पित्तकी प्रबलता रहनेसे सिरमें जल देना होता है। इसका अनुपान अदरकका रस है। यह सविराम ज्वर रोगमें विशेष उपकारी है। (रसेंद्रसारसंग्रह)

चन्द्रशेखर रायगुरु—गोपीनाथके पुत्र। इन्होंने मथुरा-निरुद्ध नामक एक संस्कृत रूपकको रचना की है।

चन्द्रशेखर वाचस्पति—नवद्वीपके एक स्मृतिशास्त्रवेत्ता पण्डित। ये वारेन्द्र श्रेणीके ब्राह्मण थे। इनके पिता विद्याभूषण उपाधिधारी षड्दर्शनवेत्ता एक प्रसिद्ध पण्डित थे। उन्हींसे चंद्रशेखरने स्मृतिशास्त्र पढ़ा था और नवद्वीपमें बड़ी प्रतिष्ठा पाई थी। इन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थोंको रचना की थी—१ स्मृतिप्रदीप, २ स्मृतिसार संग्रह, ३ सङ्कल्पद्रुमभञ्जन और ४ धर्मविवेक।

चन्द्रशेखर विद्यालङ्कार—संक्षिप्तसारव्याकरणका एक विख्यात टीकाकार।

चन्द्रशेखर सिंह—कटकसे २० कोसकी दूरी पर स्थित खण्डपाड़ा नामक गड़जातनिवासी एक राजपुत्र, खण्ड-पाड़ाधिपति स्वर्गीय श्यामसुन्दरसिंहके पुत्र और खण्ड-पाड़ाके राजा नटवरसिंह मर्दराज भ्रमरवरराय सामन्तके चचेरे भाई। चंद्रशेखरका पूरा नाम चंद्रशेखरसिंह हरिचन्दन महापात्र सामन्त है। इनका एक नाम "पठानी सान्त" भी है। गवर्मेण्टने इनको महामहो-पाध्यायकी उपाधि दी है। १७५७ शकमें इनका जन्म हुआ था। पहिले इन्होंने संस्कृत काव्य, नाटक, अलङ्कार और धर्मशास्त्रका अभ्यास किया था, पीछे पितासे ज्योतिष भी पढ़ा था। २३-२४ वर्षमें अपनी व्युत्पन्नतासे ये एक अद्वितीय ज्योतिर्विद् हो गये थे। अंगरेजी अथवा पाश्चात्य शिक्षासे शिक्षित न होने पर भी इन्होंने सुदूर वनराज्यमें बैठ कर संस्कृत ज्योतिःशास्त्रमें इतनी उन्नति की थी, जिसको सुन कर लोग चौंक जाते थे। ग्रहोपग्रहोंकी गतिविधि परिदर्शनके लिए इन्होंने कभी भी किसी यूरोपीय यन्त्रादिका व्यवहार नहीं किया, किन्तु अपने असाधारण अध्यवसाय गुणसे शलाका-निर्मित जिन वेधयन्त्रोंका आविष्कार किया था, वह अत्यन्त आश्चर्यजनक है। इन सब यन्त्रोंसे इन्होंने ग्रहादिके वेध स्थिर कर जो फलाफल प्रकाशित किया है, और सिद्धान्तमतसे जो ध्रुवक संस्कार किया हैं, आश्चर्य है कि वे यूरोपीय नाविकपञ्जिकासे कुछ कुछ मिलते हैं। इन्होंने संस्कृत भाषामें—सिद्धान्तदर्पण नामक एक ज्योतिष शास्त्रकी रचना की है। इस ग्रन्थसे इनकी विद्या और बुद्धिका काफी परिचय मिलता है। इनके सिद्धान्त-दर्पणके अनुसार पञ्चाङ्ग बना है और उसीके अनुसार उड़िष्यामें विशेषतः जगन्नाथके समस्त क्रिया-कलाप सम्पन्न हुआ करते हैं।

चन्द्रशैल—नेपालके एक पर्वतका नाम। (हिमवत्खं० ८।२०७)

चन्द्रश्री (सं० पु०) अन्ध्रभृत्यवंशीय एक राजा। इन्होंने तीन वर्ष राज्य किया था, इनके पिताका नाम जय और पुत्रका नाम पुलोमायि था। (विष्णुपु० ४।२४।१२)

चन्द्रसंज्ञ (सं० पु०) चंद्र इति संज्ञा यस्य, बहुव्री०। कर्पूर, कपूर।

चन्द्रसभा—चंद्रमण्डल देखो।

चन्द्रसम्भव (सं० पु०) चन्द्रः सम्भवो यस्य, बहुव्री०। चंद्रमाके पुत्र, बुध।

चन्द्रसम्भवा (सं० स्त्री०) चंद्रः सम्भवो यस्याः, बहुव्री०। क्षुद्र एला, छोटी इलायची।

चन्द्रसरस् (सं० क्ली०) वृन्दावनके अन्तर्गत सङ्कर्षण-कुण्डके निकटवर्ती एक जलाशय। (वृ० गौ० १३)

चन्द्रसरोवर (सं० पु०) व्रजका एक तीर्थस्थान जो गोब-र्द्धन गिरिके समीप है।

चन्द्रसागर (ब्रह्मचारी)—दिगम्बर जैन सम्प्रदायके एक ग्रन्थकर्ता। इन्होंने पाण्डवपुराण (श्लो० सं० ५०००),

जैन-रामायण (श्लो० सं० ५०००) और नागकुमार-षट्पदी (संस्कृत कर्णाटक मिश्रित श्लो० सं० ६०००) नामक तीन ग्रन्थोंका प्रणयन किया है।

चन्द्रसुत (सं० पु०) चन्द्रस्य सुतः, ६-तत्। बुध।

चन्द्रसुरस (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम। (Vitex Negundo) सम्हालू।

चन्द्रसूर्यजिह्मीकरप्रभ (सं० पु०) बुद्ध।

चन्द्रसूर्यप्रदीप (सं० पु०) बुद्ध।

चन्द्रसूर्यात्मकरस (सं० पु०) वैद्यकोक्त एक प्रकारका औषध। पारा, गन्धक, लोहा, अभ्रक और गोक्षुर प्रत्येक ८ तोला, कौड़ी और शङ्ख प्रत्येक ४ तोला और गोक्षुर १ तोला सब द्रव्य मिला करके भावना देना चाहिये। फिर परवल, पित्तपापड़ा, ब्रह्म यष्टि, भूमिकुष्माण्ड, शुल्फा, गुडूची, दन्ती, वासक, काकमाची, इन्द्रवारुणी, पुनर्नवा, केशर, शालिञ्च और द्रोणपुष्पी प्रत्येकके ४ तोले रससे भावना दे करके बटी बना लेते हैं। छागदुग्धके अनुपानमें १४ गोलियां खानेसे हलीमक, पांडु, कामला, जीर्णज्वर, विषमज्वर, अम्लपित्त, अरुचि, शूल, प्लीहा, उदरी, छोला, गुल्म, विद्रधि, उपदंश, दद्रु, शोथ, मन्दाग्नि, हिक्का, श्वास, काश, वमि, भ्रम, भगन्दर, कण्डु, व्रण, दाह, तृष्णा, जरुस्तम्भ, आमवात और कटीग्रह प्रभृति रोग विनष्ट होते हैं। पथ्य—मण्ड, मद्य और मूंगका यूष है। गुड़ूची, त्रिफला और वासक आदि अनुपानसे भी उसके सेवन करनेका विधान है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

चन्द्रसूरि—एक विख्यात श्वेताम्बर जैनपण्डित। इन्होंने निरयावली श्रुतस्कन्धटीका रची है। इसके अलावे ये मागधी भाषामें संग्रहणी नामक एक भूवृत्तान्त लिख गये हैं।

चन्द्रसेन (सं० पु०) चन्द्रा आह्लादिका सेनाऽस्य, बहुव्री०। १ भारतप्रसिद्ध एक प्रबल नरपति, हिन्दुस्थानका एक मशहूर राजा। इनके पिताका नाम समुद्रसेन था। ये अश्वत्थामाके हाथोंसे मारे गये थे। (भारत ७।१५६ अ०)

२ एक प्रसिद्ध श्वेताम्बर जैनपण्डित, हेमसूरिके शिष्य इन्होंने उत्पादसिद्धिप्रकरणटीकाकी रचना की है। यह ग्रन्थ १२०० विक्रम-सम्वत्के चैत्रमासमें लिखा गया था।

३ चम्पावती नगरीका एक राजा। पद्मपुराणमें लिखा है कि राजा चन्द्रसेन एक समय शिकारके लिए बाहर गये थे। परन्तु समस्त दिन ढूंढ़ने पर भी एक शिकार हाथ न आया। सन्ध्या समय बहुत दूरमें एक मृगको देख कर बाण फेंका। मृग मारा गया ऐसा समझ कर वे शीघ्रतासे वहां पहुंचे। यहां आ कर उनने उस स्थान पर मृगको न पाया, वरन एक ऋषिको कष्टसे छटपटाता हुआ देखा। राजाने अपना दुष्कर्म समझ कर ऋषिसे क्षमा प्रार्थना की, किन्तु उससे मुनिका क्रोध शान्त न हुआ। ऋषिके शापसे उसी समय राजा कोयला जैसे काले हो गये। शापमुक्त होनेकी आशासे चन्द्रसेन सर्वदा धर्मकर्म करने लगे। परन्तु वैसा करने पर भी उनका शाप मोचन न हुआ। अन्तको पण्डितोंके परामर्शसे वे माता ऋषिके समीप पहुंचे और उनके आदेशसे वे वसन्तपुर जा वराहसागरमें स्नान कर शाप और जरासे मुक्त हो गये।

उक्त चम्पावतीका वर्तमान नाम चात्सु और वसन्तपुरका नाम वाघेरा है। ये दोनों स्थान राजपूतानाके जयपुरके अन्तर्गत हैं। प्रवाद है कि चन्द्रसेन ही विक्रमादित्यके बाद मालवराज्यमें राजत्व करते थे और प्रथम शताब्दीमें अपने नाम पर इन्होंने प्रसिद्ध चन्द्रावती नगरी निर्माण की।

४ रेणुकामाहात्म्य वर्णित एक विख्यात राजा। ये परशुरामके हाथसे मारे गये थे। मृत्युकालमें इनकी स्त्री गर्भवती थी। इस कारण दाल्भ्य ऋषिके आश्रमको जा गर्भरक्षा की थी। उनके वंशधर चान्द्रसेनी कायस्थ नामसे विख्यात हैं। कायस्थ देखो।

चन्द्रसेन कवि—दिगम्बर जैन सम्प्रदायके एक कवि। इन्होंने 'केवलज्ञानहोरा' नामक एक वृहत् ज्योतिष ग्रन्थ बनाया है, जिसकी श्लोकसंख्या प्रायः ३०००से कम न होगी।

चन्द्रसेनयादव—ताराबाईका प्रधान सेनापति। ये धनजी यादवके पुत्र थे। ये बड़े शूरवीर थे। इनके प्रतिद्वन्द्वी पेशवा वंशके प्रतिष्ठाता बालाजी विश्वनाथके लिये ही इनका अधःपतन हुआ। बालाजी विश्वनाथ देखो।

चन्द्रस्फुट—स्फुट देखो।

चन्द्रहन् (सं० पु०) चन्द्रं हतवान्, हन्-क्विप्। राहु।

"एकादशे दीप्ता राहुः सं.हारो मदुलव्यन: ।" (हरिवंश ४२ अ०)

चन्द्रहनु (सं० पु०) चन्द्रो हनो यस्य, बहुव्री० । राहु । "अश्वग्रीवश्चन्द्रहनु श्चन्द्रहा चन्द्रतापन: ।" (हरिवंश२४० अ०)

चन्द्रहन्तृ (सं० पु०) चन्द्रं हन्ति हन-तृच् । असुरविशेष, एक दानवका नाम। भारतयुद्धके समय ये शुनक नृप रूपमें अवतीर्ण हुए थे।

"चंद्रहन्तेति यस्तेषां कीर्त्तित: प्रवरोऽसुर: ।" (भारत १।६७ अ०)

चन्द्रहार (सं० पु०) एक तरहका आभूषण जो गलेमें पहना जाता है। यह हार सोनेका बना रहता और उसमें जड़ाऊ काम किया रहता है, नौलखा हार।

चन्द्रहास (सं० पु०) चन्द्रस्येव हास: प्रभाऽस्य, बहुव्री०, यद्वा चन्द्रं हसति, हस-अण् । १ खड्ग, तलवार । २ रावणका खड्ग । ३ कोई राजा । इनके पिता दाक्षिणात्य प्रदेशके सम्राट् रहे । चन्द्रहासके बाल्यकालमें ही इनका मृत्यु हुआ, कुछ दिन पीछे उनकी जननी भी कालग्रासमें पड़ गयीं । किसी धात्रीने चंद्रहासको ले करके वनमें पलायन किया था । दैवक्रमसे इनको ज्ञानसञ्चार होते न होते धात्री भी चल बसी । अब पितृमातृहीन बालक चंद्रहास निराश्रय हुए। कोई उन्हें राजपुत्र जैसा न समझता था । किसी दिन यह प्रधान मन्त्रीके आवासके सामने भ्रमण करते थे । उसी समय एक दैवज्ञने उनको देख करके कहा—यही बालक किसी समय ससागरा पृथिवीका अधिपति होगा। मन्त्री महाशयकी राजत्व लालसा बहुत ही प्रबल थी । राजाके अभावमें इस राज्यके वही सर्वेसर्वा रहे । इसीसे दैवज्ञकी भविष्यत् वाणी उनके हृदयमें घुस गयी । उन्होंने इनके मारनेको घातुक नियुक्त किये थे । वह मन्त्रीके आदेशसे इनको ले करके मध्यभूमिको चलते हुए। किन्तु चंद्रहासके रूप और कातर वाक्यसे घातुकोंने उन्हें छोड़ा था। फिर कोई संभ्रान्त व्यक्ति इनको अपने साथ ले गये । उन्हींके आलयमें रह करके चंद्रहास वर्धित हुए। वयोवृद्धिके साथ साथ इनका साहस और बुद्धि भी बढ़ने लगी। किसी समय मन्त्री वहां गये थे। उन्होंने चन्द्रहासको देखते ही पहचान लिया और इनको विनाशकामनासे एक पत्र लिख करके अपने पुत्र मदनके निकट भेज दिया।

चन्द्रहास मन्त्रीका पत्र ले करके निःशङ्कचित्तसे उसके भवनको चले, परन्तु पथकी श्रान्ति मिटानेको मन्त्रिभवनके ही एक उद्यानमें निद्रासुख भोग करने लगे । इसी समय मन्त्रितनया विषया उद्यान जा इनके रूपमें मुग्ध हो गयी और इनकी रक्षा करके पति बनानेके लिये पत्रकी लिखावट बदल दी। चन्द्रहास निद्रित थे, उसका कुछ भेद समझ न सके। मदनने पत्र पा करके और चन्द्रहासको देख करके कोई मतामत न किया और उसी दिन भगिनी विषयाको इनको अर्पण कर दिया । मन्त्रीने जब यह सुना, एक देवालयमें जल्लाद लगा करके चंद्रहासको पूजाके छलसे रवाना किया। घातुकोंसे बात हो गयी थी कि जो युवक देवालय जावेगा और तुम उसका शिरश्छेद कर डालोगे। दैवक्रमसे चन्द्रहासको छोड़ करके मन्त्रीपुत्र मदन वहां गये और अस्त्राघातसे निहत हुए। फिर चन्द्रहास एकछत्र सम्राट् बने थे। (महाभारत) भक्तमाल ग्रन्थमें इनका उपाख्यान अन्यप्रकार लिखा है।

(क्ली०) ४ रौप्य चाँदी ।

चन्द्रहासा (सं० स्त्री०) चंद्रहास-टाप् । १ गुड़ूची, गुरुच । चंद्र इवाह्लादकरो हासो यस्या: । २ गायत्री ।

'चंद्रहासा चारुहासी चकोरी चंद्रहासिनी ।' (देवीभा० १२।६।४८)

३ वृहती, एक पौधाका नाम । ४ लक्षिका, एक तरहका हलुआ । ५ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया । ६ प्रसारणी । ७ कन्दगुड़ूची ।

चन्द्रहासिनी (सं० स्त्री०) चंद्रं हसति, हस-णिनि ङीप् । गायत्रीदेवी ।

चन्द्रा (सं० स्त्री०) चदि आह्लादे रक्-टाप् । १ एला, इलायची । २ चन्द्रातप, वितान, चँदवा, चँदोवा । ३ गुड़ूचा, गुच । ४ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी । ५ ग्रन्थिपर्ण, गठिवन । ६ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया ।

चन्द्रांशु (सं० पु०) चन्द्रस्यांशुरिव आह्लादको अंशुरस्य, बहुव्री० । १ विष्णु, परमेश्वर ।

"अर्कः स्यन्दनो मन्त्रांशुर्भास्करद्युतिः ।" (विष्णुसहस्रनाम)

चन्द्रस्यांशु:, ६ तत् । २ चन्द्रकिरण, चन्द्रमाकी रोशनी ।

चन्द्राकर (सं० पु०) एक वीरपुरुष । (राजतर० ७।१)

चन्द्राख्यरस (सं० पु०) औषधविशेष । रससिन्दूर, अभ्रक, हीराभस्म, ताँबा और काँसा प्रत्येकका समान भाग ले

कर जितना हो उतना ही गन्धक मिला कर भिलावाके क्वाथमें एक दिन तक मर्दन करना होता है। इसका मात्रा २ रत्ती मानी गई है। इसके सेवन करनेसे द्वन्द्वज और सर्वप्रकारके अर्शरोग जाते रहते हैं।

(रसेंद्रसारसंग्रह)

चन्द्रागति-घात (सं० स्त्री०) मृदङ्गकी एक थाप।

चन्द्राग्र (सं० त्रि०) १ सुवर्ण प्रभृति, सोनेका। २ सुवर्ण शृङ्ग, सोनेका सींग।

"सनो रासच्छदथ चंद्रागाः" (ऋक् ६।५८।८)

'चंद्रागाः चंद्रमिति हिरण्यनाम हिरण्मयशृङ्गा यस्य यथ सङ्गा.'

(सायण)

चन्द्राङ्कित (सं० पु०) शिव, महादेव।

चन्द्राङ्गद (सं० पु०) इन्द्रसेनके एक पुत्रका नाम।

चन्द्रातप (सं० पु०) चन्द्रइव आतपति शीतलो करोति छायादानेन आतप-अच्। १ वितान, चंदवा। इसका पर्याय—उल्लोच, वितान और चन्द्रा है। चन्द्रस्यातपः, ६-तत्। २ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चन्द्रिका।

'चंद्रातपमिव रसनासुपेतम्' (कादम्बरी)

चन्द्रात्रेयवंश—बुन्देलखण्ड प्रदेशका प्रबल पराक्रान्त और प्राचीन राजवंश। इस वंशके लोग इस समय चन्देल नामसे प्रसिद्ध हो कर रोहिलखण्ड, गोरखपुर, इलाहाबाद, आजीमगञ्ज, निजामाबाद, जौनपुर, मिर्जापुर, कन्नौज, बुन्देलखण्ड और कानपुर जिलेमें नाना स्थानोंमें वास करते हैं। वर्दोसे दक्षिणमें, जहां इन लोगोंका वास है, उसका नाम चन्देलखण्ड पड़ गया है। निम्न-दोआबमें ये लोग राजा, राव, राणा और राउतकी उपाधिसे भूषित हैं।

इस राजवंशके बहुतसे मन्दिर, ताम्रशासन, शिलालेख और बड़े बड़े कूदादि अब भी देखनेमें आते हैं।

इस राजवंशके प्रादुर्भावका समय अभी तक निश्चित नहीं हुआ है। हाँ, खजुराहु महोबा, कालञ्जर आदि स्थानोंसे प्राप्त शिलालेख और ताम्रशासनोंके देखने तथा चंद्रकविकृत पृथ्वीराजरासा और फिरिश्ताके पढ़नेसे इतना अवश्य मालूम होता है कि, करीब ८३१ ई०से ११८२ ई० तक इस राजवंशके स्वाधीन राजाओंने महोबा खजुराहु आदि स्थानोंमें प्रबल पराक्रमसे राज्य किया था।

इस वंशकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा प्रवाद है—काशीराज इंद्रजित्के पुरोहित हेमराजकी कन्या हेमवती बहुत खूबसूरत थी। एक दिन वह रतिकुण्डमें अकेली नहा रही थी। इसी अवसरमें चंद्रदेवने उसके रूपसे मोहित हो कर उसका आलिङ्गन कर लिया। चन्द्रको इस धृष्टता पर हेमवतीको बड़ा गुस्सा आई वह अभिसम्पात देना ही चाहती थी कि, चन्द्रने उसे ऐसा वर दिया—"तुम्हारा पुत्र पृथिवीश्वर होगा और उससे अनेक राजवंशोंकी उत्पत्ति होगी।" हेमवतीने अपने अनूढ़ावस्थामें गर्भधारणके कलङ्कको मिटानेके लिए कहा, तो चन्द्रने कहा—"उसके लिए कुछ चिन्ता नहीं। कर्णवती नदीके किनारे तुम्हारा पुत्र पैदा होगा। फिर तुम उस बालकको खजुराहु ले जा कर राजाको दे देना। तुम्हारा पुत्र महोबा नगरका राजा होगा। मैं उसको स्पर्शमणि दूंगा। वह कालञ्जरमें किला बनावेगा। जब तुम्हारे पुत्रकी उम्र १६ वर्षकी होगी, तब तुम अपने कलङ्कको मेटनेके लिए भाण्डयज्ञका अनुष्ठान करना और काशीको छोड़ कर कालञ्जरमें रहना।" चन्द्रके कहे अनुसार हेमवतीने कर्णवती (वर्तमान-केयान) नदीके किनारे वैशाख शुक्ला एकादशी सोमवारको द्वितीय चन्द्रके तुल्य एक पुत्र प्रसव किया। प्रसव होते ही चंद्र देवोंसे परिवृत हो वहां आये और खूब उत्सव किया। वृहस्पतिने उस बालककी जन्मपत्रिका लिखी। उसका नाम चन्द्रवर्मा रखा गया। १६ वर्षकी उम्र होने पर चन्द्रवर्माने एक व्याघ्रका वध किया तथा पिता चन्द्रदेवसे स्पर्शमणि और राजनीतिकी शिक्षा पाई। उसके बाद कालञ्जरमें दुर्ग बनवाया। बादमें खजुरपुरमें जा कर माताके कलङ्कको मेटनेके लिए यज्ञका अनुष्ठान और ८५ मन्दिर बनवाये। अन्तमें उन्होंने महोबा अर्थात् महोत्सव नगरमें जा कर वहां राजधानी स्थापित की।

यह घटना किस समय की है, इसका कोई निर्णय नहीं हुआ। चंद्रकविके महोबा खण्डके अनुसार यह २२५ संवत्‌की बात है। प्रसिद्ध प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहाम साहबने १८५२ ई०में खजुराहु रहते समय चन्देल राजवंशीय बहादुरसिंहसे जो सन्धान पाया था, उसके अनु-

सार यह घटना २०४ संवत्‌की है। इस विषयमें बहुत मतभेद है।

खजुराहुसे प्राप्त हुए शिलालेखमें लिखा है कि, मरीचिनन्दन अत्रि ऋषिसे चंद्रात्रेयकी उत्पत्ति हुई है। (१) उनसे ही यह वंश चन्द्रात्रेय वा चन्देल्ल नामसे प्रसिद्ध हुआ है।

शिलालेख आदिके देखनेसे चंद्रात्रेय वंशका आविर्भावकाल सूक्ष्मरूपसे अनुमित होता है। इस वंशके अधस्तन षष्ठ पुरुष धङ्ग राजाके खोदे हुए शिलालेखके देखनेसे मालूम होता है कि, उन्होंने ९५४ ई०में राज्य किया था। राजत्वकाल २५ वर्ष समझा जाय, तो करीब ८०० ई०के इधर उधर किसी समयमें इस वंशकी उत्पत्ति हुई होगी, ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

चन्द्रकवि और अन्यान्य राजकवियोंने इस वंशके बाईस राजाओंका नाम लिखा है। किन्तु वे नाम राजत्व कालके अनुसार सिलसिलेवार नहीं लिखे गये हैं। इसलिए किसके पीछे कौन सिंहासन पर बैठे थे, इसका ठीक पता नहीं लगता। महोबामें चन्द्रकविकी जो पोथी है, उसमें निम्नलिखित वंशावली मिलती है—

१ चंद्रवर्मा, २ रामवर्मा, ३ रूपवर्मा, ४ रहिलवर्मा, ५ बलवर्मा, ६ रत्नवर्मा, ७ विजयवर्मा, ८ बेलवर्मा, ९ गङ्गावर्मा, १० दिलीपवर्मा, ११ खजुरवर्मा, १२ नवलवर्मा, १३ केशववर्मा, १४ हरवर्मा, १५ सुरूपवर्मा, १६ धनवर्मा, १७ माधववर्मा, १८ कल्याणवर्मा, १९ मदनवर्मा, २० कीर्तिवर्मा, २१ पर्मलवर्मा और २२ ब्रह्मजित्‌वर्मा। शिलालेखोंसे जैसा मालूम होता है, उससे यह वंशावली ठीक नहीं जंचती। कवियोंमें भी इस विषयमें नाना मतभेद हैं (२)।

(१) "तत्राविश्वसृजः पुराणपुरुषादाद्यादधाद्या कवेर्यो भूवन्मुनयः पवित्रचरिताः पूर्वे मरीच्यादयः।
तत्रात्रिः सुषुवे निरन्तरतपश्शीघ्रप्रभावं सुतं
चंद्रात्रेयनकृविमोज्ज्वलतरज्ञानप्रदीपं मुनिम्॥
अत्रि स्वस्तिविधायिनः स जगतां निःशेषविद्याविद-
स्तस्यात्मोपनताखिलप्रभुतिनिधेवंशः प्रशंसास्पदम्॥"
(खजुराहुके लक्ष्मीजीके मन्दिरमें खुदा हुआ शिलालेख)

(२) Cunningham's Arch. Sur. Reports. Vol. II. p. 449.

खजुराहु, महोबा आदि स्थानोंसे प्राप्त शिलालेख और ताम्रलिपियोंमें १८ राजाओंके नाम और उनके राज्यकालादिका विवरण मालूम हुआ है, जो नीचे लिखा जाता है।

१म राजा नन्नुक—(आनुमानिक राजत्वकाल ८३१ से ८५० ई०) धङ्गके समय खजुराहुके खोदित लालाजी और चतुर्भुजके शिलालेखसे तथा महोबाके १२४० संवत्‌के असंपूर्ण शिलालेखसे जाना गया है कि, नन्नुक इस राजवंशके प्रतिष्ठाता थे। इनके विषयमें और कुछ विशेष बात नहीं मालूम हुई। अनुमान किया जाता है कि, इन्होंने परिहारोंको भगा कर महोबाका राज्य अधिकार किया था।

२य वाक्पति—(आनुमानिक राजत्वकाल ८५०-८७० ई०) उक्त शिलालेखोंमें इनका नाम मिलता है। इनके राजत्वके समयमें कन्नौजके अधिपति भोजराजने चन्देरी पर अधिकार जमाया था।

३य विजय—(आनुमानिक राजत्वकाल ८७०-८९० ई०) लालाजी और चतुर्भुजके शिलालेखोंमें इनका उल्लेख है। यशोवर्माकी शिलालिपिमें इनका विजयशक्तिके नामसे उल्लेख है।

४र्थ राहिल—(आनुमानिक समय ८९०से ९१० ई०) उक्त शिलालेखोंमें तथा अजयगढ़के एक मन्दिरके पत्थरोंमें इनका नाम खुदा हुआ है और उक्त गढ़के कई एक मन्दिर और सरोवर भी इन्हींके बनाये हुए हैं, ऐसा प्रसिद्ध है। अतः ऐसा अनुमान होता है कि, उस समय अजयगढ़ भी चन्देल राजमें था। कालञ्जरका दुर्ग पहिलेहीसे इनके हाथ लग गया था।

इनकी तीन राजधानियां थीं। १ कालञ्जर—यहां प्रधान सेना-निवास और दुर्ग था। २ खजुराहु—सुबहु देवमन्दिरयुक्त धर्मस्थान। ३ महोबा—राजप्रासाद और विचारालययुक्त राजधानी।

चन्द्रकविके मतानुसार राहिल प्रसिद्ध दिग्विजयी थे और सिंहल तक गये थे। किन्तु यह बात यथार्थ नहीं प्रतीत होती। उन्होंने यह भी लिखा है कि, राहिलने कालञ्जरसे २० मील दूर ईशान दिशाकी ओर रसाननगर बसाया था। रसान प्राचीन नगर है, इसलिए यह बात ठीक हो सकती है।

महोबाके पासका राहिलसागर और उसके किनारे-के ध्वंसावशिष्ट प्रस्तर-मन्दिर अवश्य ही राहिलके बनाये हुए होंगे। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि, अजय-गढ़ और कालञ्जरकी तरह महोबा भी राहिलके अधि-कारमें था।

चेदिदेशके कलचुरिवंशीय राजा १म कक्कोलने नन्दा-देवी नामकी एक चन्देलवंशीय राजकन्याका पाणिग्रहण किया था। यह नन्दादेवी सम्भवतः राहिलकी या विजयकी कन्या थी।

५म हर्ष—(आनुमानिक राजत्वकाल ९१०—९३० ई०) लालाजीके शिलालेखके पढ़नेसे मालूम होता है कि, इन्होंने बहुतसे देश जय किये थे और गङ्गवंशीय राजकन्या कंचुकाके साथ विवाह किया था।

६ठे यशोवर्मा—(आनुमानिक समय ९३०-९५० ई०) पूर्वोक्त शिलालेखमें इनका भी उल्लेख है। ये हर्ष-वर्माके पुत्र थे। खजुराहुकी शिलालिपिमें लिखा है कि—आपने गौड़, खश, कोशल, मिथिला, चेदि, काश्मीर, मालव आदि नानादेश जय किये थे और एक विष्णुमन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। इनकी रानी पुष्पादेवी-के धङ्ग नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था।

७म धङ्ग—(राजत्वकाल ९५०से ९९९ ई०) इनके राजत्वकालमें खुदे हुए ३ शिलालेख प्राप्त हुए हैं। एक है १०११ संवत् अङ्कित खजुराहुका चतुर्भुजशिलालेख, दूसरा १०५५ सम्वत्का नुनौराका शिलालेख है और तीसरा १०५६ सम्वत्का खजुराहुके लालाजीका शिला-लेख है। अन्तके शिलालेखमें उसी सालमें धङ्गकी मृत्यु लिखी है।

मौऊत्रपुरके शिलालेखसे अनुमान किया जाता है कि, प्रभास नामके धङ्गके एक मन्त्री थे। लालाजीकी शिलालिपिमें उनके मन्त्रीका नाम यशोधर लिखा है। १०५५ सम्वत्के धङ्गदेवके ताम्रलेख और खोदित दान-पत्रमें जिन यशोधर भट्टका उल्लेख है, शायद वे ही मन्त्री यशोधर हैं।

९७८ ई०में गजनी पर आक्रमण होते समय जो कालञ्जरराज लाहोरके राजा जयपालकी साहाय्यार्थ दिल्ली, अजमेर, कन्नौज आदिके राजाओंके साथ गये थे, सम्भवतः वे ही ये धङ्ग होंगे। मौऊत्रपुरकी शिलालिपिमें जो एक राजाके द्वारा कान्यकुब्जजयकी कथा लिखी गई है, वह राजा अवश्य ही धङ्ग या उनके पुत्र गण्डदेव होने चाहिये। लालाजीके शिलालेखमें लिखा है कि, धङ्गदेवने काशी, अंध्र, अङ्ग और राढ़देशकी राजमहिषियोंको कारागारमें बन्द किया था तथा कोशल, कुन्तल, क्रथ और सिंहलके राजाओंको सहचारी बना रखा था।

इन्होंने करीब सौ वर्षकी अवस्थामें प्रयागतीर्थमें जा कर देहत्याग किया था।

८म गण्डदेव—(राजत्वकाल ९९९-१०२५ ई०) मौऊत्रपुरकी शिलालिपिको छोड़ कर और कहीं भी इन-का नाम नहीं मिलता। उसमें इनके मन्त्रीका नाम प्रभास लिखा है।

सम्भवतः कालञ्जरराज इन्हीं गण्डदेवने लाहोरके राजा जयपालके साथ १००८ ई०में मामूद गजनीके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। फिरिश्तामें लिखा है कि, कालञ्जरके राजा नन्दराय (गण्डदेव)-ने कन्नौज पर विजय प्राप्त कर वहांके राजाको मार डाला था। इसका बदला लेने-के लिए मामूदने कालञ्जर पर आक्रमण किया और उस-को जीत लिया (१०२३ ई०)।

खजुराहुमें कक्कोल निर्मित एक वैद्यनाथका मन्दिर है, उसमें १०५८ सम्वत्का खुदा हुआ एक शिलालेख भी है, उसको देख कर सब ही अनुमान करते हैं कि, चेदिराज २य कक्कोलने गण्डदेवके समय खजुराहु अधि-कार किया था। किन्तु वह कक्कोल तो खजुराहु-निवासी एक ऐश्वर्यशाली व्यक्ति मात्र थे; चेदिराजके साथ उनका कोई सम्पर्क ही नहीं।*

कुछ भी हो चेदिविजेता कीर्तिवर्मासे पहिले चेदि-राजने कालञ्जर अधिकार किया था, इसका प्रमाण भी मिलता है। क्योंकि, उस समयके चेदिके राजाओंके शिलालेखोंमें उन लोगोंको कालञ्जरराज कहा गया है।

९म विद्याधर देव—(आनुमानिक समय १०२५—१०३५ ई०) ये गण्डदेवके पुत्र थे। मौऊत्रपुरके शिलालेख-में नामोल्लेखके सिवा इनकी और कोई कीर्ति नहीं

* Epigraphia Indica, Vol. I. p. 148.

पाई जाती। इनके मन्त्री प्रसिद्ध दार्शनिक शिवनाथ थे, ये शिवनाग धङ्ग और गण्ड राजाके मन्त्री प्रभासके पुत्र थे शिवनाथके पुत्र महीपाल, विजयपालके तथा महीपालके पुत्र अनन्तकीर्तिवर्मा और सल्लक्षणवर्माके मन्त्री थे। सम्भवतः अनन्तके पुत्र गदाधर, जयवर्माके प्रतीहार तथा पृथ्वीवर्मा और मदनवर्माके प्रधान मन्त्री नियुक्त हुए थे।

आबू-रिहानने लिखा है—ये जब्बलपुरके सन्निहित त्रिपुरीश्वर चेदिराज गाङ्गेयदेवके (१०३०-३१ ई०) समकालवर्ती थे।

१०म विजयपाल देव—(आनुमानिक राजत्व-काल १०३५—१०४८ ई०) उक्त शिलालिपियोंमें इनका उल्लेख है। इनकी महिषीका नाम भुवनदेवी था। मशेराके १ नं० शिलालेखमें लिखा है कि, भुवनदेवीके पुत्र देववर्मदेव पिताके पीछे राज्याधिकारी हुए थे।

११श कीर्तिवर्मदेव (१म)—(आनुमानिक समय १०४८—११०० ई०) मौऊवपुरके शिलालेखके ७वें श्लोकमें लिखा है, विजयपालके पीछे उनके पुत्र कीर्तिवर्मा राजा हुए थे। अनन्त उनके मन्त्री थे। परन्तु नुनाराकी १ नं० शिलालिपिमें लिखा है कि—विजयपालके पीछे उनके पुत्र शिवभक्त कालञ्जराधिपति श्रीदेववर्मदेव पितृसिंहासन पर आरूढ़ हुए थे। और फिर कालञ्जरके नीलकण्ठ-शिलालेखके ७म श्लोकमें ऐसा लिखा है कि, विजयपालके पुत्र भूमिपालने शाणित असिसे बहुतसे शत्रुका नाश किया था।

इसलिए यही अनुमान किया जाता है कि, १म कीर्तिवर्मा, देववर्मदेव और भूमिपाल ये तीनों विजयपालके परवर्ती एक ही राजाके नाम होंगे।*

महोबाके एक शिलालेखसे ज्ञात होता है कि, कीर्तिवर्माने चेदिराज कर्णपर विजय प्राप्त की थी। प्रबोधचन्द्रोदय नाटकके नान्दी भागमें चेदिविजयी जिन कीर्तिवर्माका उल्लेख है, ये वे ही हैं। परन्तु कालञ्जरके नीलकण्ठ-शिलालेखमें ऐसा है कि, भूमिपाल (कीर्तिवर्मा)-के पुत्रने चेदिराज कर्णको जय किया था।

मौऊवपुरके शिलालेख देखनेसे ज्ञात होता है कि, कीर्तिवर्माके पुत्र और जयपालके पिता सल्लक्षणदेव थे। सम्भवतः इन्हीं सल्लक्षणदेवने पिताके राज्यमें चेदि जय किया था।

११५४ संवत्‌का देवगढ़का शिलालेख और चन्देरी-दुर्गके पासका किरात-सागर सम्भवतः इन्हीं कीर्तिवर्माका बनाया हुआ है। बुन्देलखण्डमें चन्देरी दुर्ग और किरातसागरके निर्माता किरातवर्माके विषयका जो प्रवाद प्रचलित है, वह शायद इन्हीं चेदिविजयी कीर्तिवर्माके नामान्तरसे होगा।

ऐसी प्रसिद्धि है कि, इन्होंने कालञ्जरदुर्गका जीर्णोद्धार किया था और अजयगढ़में बहुतसी इमारतें बनवाई थीं।

कीर्तिवर्माके नामके जो सिक्के मिलते हैं, वे शायद इन्हींके होंगे। क्योंकि इनके पौत्र २य कीर्तिवर्माके सिक्कोंमें जयवर्माका नाम अङ्कित है।

इन्होंने कलचुरिवंशीय चेदिराजाओंके सिक्कोंकी नकल कर चन्देलराज्यमें पहिले पहल सिक्के चलाये थे।

सम्भवतः इनने देवगढ़के दुर्गका जीर्णोद्धार कर अपने नामानुसार उसका देवगढ़ रखा होगा *।

१२श सल्लक्षणवर्मादेव—(आनुमानिक राजत्व काल ११००—१११० ई०) १३१७ संवत्‌में अंकित अजयगढ़के वीरवर्मप्रदत्त शिलालेखसे ज्ञात होता है कि, कीर्तिवर्माके बाद उनके पुत्र† सल्लक्षण राजा हुए थे।

सल्लक्षणके तरह तरहके सिक्कोंसे मालूम होता है कि, सल्लक्षण राजा थे और उनने अपने नामसे सिक्के भी चलाये थे।

मौऊवपुरके शिलालेखमें लिखा है कि, कीर्त्तिवर्माके मन्त्री अनन्तके पुत्र वास्तु, वामन और प्रद्युम्न ये तीनों ही सल्लक्षणकी सभामें रहते थे।

१३श जयवर्मदेव, उर्फ २य कीर्तिवर्मा—(आनुमानिक समय १११०—११२० ई०) लालाजीके शिलालेखके परिशिष्टमें और १३१७ संवत्‌में अङ्कित वीरवर्माके शिलालेखमें इनका नाम मिलता है। लालाजीके शिला-

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. L. p. 18.

* Epigraphia Indica. I. 209.

† " " I. 327.

लेखका परिशिष्ट इन्हींके समयका खुदा हुआ है। इन दोनोंमें ही ये सल्लक्षणके पुत्र बताये गये हैं।

मौऊत्रपुरके शिलालेखोंके देखनेसे यही प्रतीत होता है कि, जयवर्माके पीछे उनके पितृव्य पृथ्वीवर्मा और उनके बाद पृथ्वीवर्माके पुत्र मदनवर्मा राजा हुए थे।

१४श पृथ्वीवर्मदेव—(आनुमानिक राज्यकाल ११२०—११३० ई०) मौऊत्रपुरके शिलालेख और वीरवर्मप्रदत्त अजयगढ़के १३१७ सं०के शिलालेखके मतसे मदनवर्माके पिता भी जयवर्माके बाद राज हुए हैं। उनके समयके दो-एक सिक्के भी पाये जाते हैं।

१५श मदनवर्मदेव—(आनुमानिक राजत्वकाल ११३०-११६५ ई०) इनके समयके प्रकाशित बहुतसे शिलालेख और ताम्रलेख मिलते हैं। उससे इन्हींके समयका सूक्ष्मरूपसे निर्णय किया जा सकता है। महोबाका मदनसागर इन्हींका बनाया हुआ है।

इनके समयकी अनेक जैन मूर्तियां मिलती हैं, इससे मालूम होता है कि, इनके समयमें जैनधर्मका काफी प्रचार था।

चन्द्रकविके ग्रन्थों और प्राचीन लिपियोंमें लिखा है कि, मदनवर्मा महावीर थे, तथा इनका राज्य बहुत दूर तक फैला हुआ था।

कालञ्जरके २ नम्बर शिलालेखमें लिखा हुआ है कि, मदनवर्माने गुजरात जय किया था। चन्द्रकविने भी ऐसा ही लिखा है।

मौऊत्रपुरके शिलालेखोंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, मदनवर्माने चेदि जय किया था। उससे ऐसा अनुमान होता है कीर्तिवर्माके बाद कलचूरिवंशीय चेदिके राजाओंने पराक्रान्त हो कर पुनः स्वाधीनता पाई थी। बादमें फिर मदनवर्माने चेदि जीता था।*

बहुतोंका अनुमान है कि, बेलारी चन्देल्लराज्यके अन्तर्गत था और चन्देल्लके राजाकी अधीनतामें सामन्तराज द्वारा शासित होता था। इन राजाका नाम बलदेव था। सम्भवत: ये चन्देल्लवंशके होंगे।

१६श परमर्दिदेव या परमलदेव—(आनुमानिक समय ११६५—१२०२ ई०) बहुतसे लोग इन्हें चन्देल्लवंशके अन्तिम राजा समझते हैं, परन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है। ये सिर्फ पृथ्वीराज द्वारा पराजित हुए थे, परन्तु इनके बाद इनके वंशधरोंने राज्य किया था।

परमर्दिदेवके समयमें प्रतिष्ठित १२५२ संवत्‌के वकेश्वर शिलालेखमें लिखा है कि, मदनवर्माके पुत्र यशोवर्मा थे और यशोवर्माके पुत्र परमर्दिवर्मा थे।†

इसके सिवा १३१७ सं०में अङ्कित वीरवर्माके अजयगढ़के शिलालेखमें ऐसा मिलता है—मदनवर्माके पीछे परमर्दिवर्मा राजा हुए थे। इन दोनोंमें सामञ्जस्य रखना हो, तो ऐसा अनुमान होता है कि, मदनवर्माके बाद उनके पौत्र परमर्दिवर्मा राजा हुए थे। शेषोक्त शिलालेखमें उनको बालकवीर कहा गया है।‡

मुसलमान ऐतिहासिकगण और चन्द्रकवि इनके विषयमें बहुत-कुछ लिख गये हैं, इसलिए इन्हें प्रायः सब ही जानते हैं। नहीं तो इनकी कीर्तिस्वरूप मन्दिर, तालाब आदि या सिक्के आदि ऐसे कोई चिह्न नहीं मिलते, जिनसे इनके राजत्वकालका निर्णय किया जा सके।

११८२ ई०में परमर्दिदेव दिल्लीश्वर पृथ्वीराज द्वारा पराजित हुए थे और महोबासे विताड़ित किये गये थे। उनके इस पराजयका वर्णन चन्द्रकविने इस ढंगसे किया है कि, उस प्रदेशके प्रायः सब ही लोग उसे बाँचा और सुना करते हैं, तथा उससे नाटक उपन्यासादि भी बने हैं।

चन्द्रकविके मतानुसार परमर्दिदेवने सिर्फ २०० आदमियोंके साथ भाग कर जान बचाई थी और सब मारे गये थे। सम्भवत: यह अत्युक्ति है। क्योंकि उससे करीब बीस वर्ष बाद, १२०३ ई०में परमर्दिदेवने कालञ्जरमें कुतबुद्दीन द्वारा आक्रान्त हो कर जी-जानसे दुर्गकी रक्षा की थी। फिर मुसलमान सेनापतिके पास आत्मसमर्पण करनेके लिए उतारू होने पर उनके मन्त्री द्वारा मारे गये थे। मन्त्रीने भी कई एक दिन जी-जानसे दुर्गकी रक्षा की थी, पीछे वे भी हत हुए। उसके बाद मुसलमानोंने दुर्ग पर अधिकार किया था। कुछ भी हो, यह दुर्ग मुसलमानके अधिकारमें ज्यादा दिन नहीं

* J. A. S. B. Vol. L. p. 13.

† J. A. S. B. Vol. L. p. 15.

‡ Epigraphia Indica, I. 327.

रहा था। हिन्दू राजाओंने शीघ्र ही उस पर अधिकार किया था।

परमर्दिके समयसे ही चन्देलवंशके यशमें मलिनता हुई है। पहिले तो पृथ्वीराजसे और बादमें कुतबुद्दीनसे पराजित हो जानेसे उनके अधीनके सामन्त राजगण स्वाधीन हो गये। फिर चन्देलवंश एक छोटेसे राजवंशमें परिणत हो गया।

परमर्दिके बाद उनके पुत्र त्रैलोक्यवर्मा और उनके बाद वीरवर्माने राज्य किया था। अजयगढ़में त्रैलोक्यवर्मा और वीरवर्माके शिलालेख हैं। वीरवर्माकी महिषी कल्याणदेवीने अजयगढ़में निर्जराकूप बनवाया था। उनकी स्मृतिके लिए एक शिलालेख भी खोदा गया था।

वीरवर्माके बाद उनके पुत्र भोजवर्माने राज्य किया था। इनके समयमें खोदित पर्वतगात्र पर खुदा हुआ एक शिलालेख भी है। भोजवर्माके बाद और भी कई एक राजा हुए थे। अन्तमें १५४५ ई०में शेरसाहने कालञ्जर पर आक्रमण किया और वहांके चन्देलवंशके अन्तिम राजा किरातसिंहको मार कर कालञ्जर दुर्ग अधिकार किया था।

इस चन्देल या चन्द्रात्रेयवंशने ई० सं० ८००से लगा कर १५४५ ई० तक प्रायः साढ़े सात शताब्दी तक प्रबल पराक्रमसे विपुल गौरवके साथ राज्य किया था।

चन्द्रात्मज (सं० पु०) चन्द्रस्यात्मजः, ६-तत्। बुध।

चन्द्रानन (सं० पु०) चन्द्र इवाननमस्य, बहुव्री०। १ कार्तिकेय।

"चमोवक्तमथो रौद्रः शिवश्चन्द्राननस्तथा।" (भारत ३।२३१ अ०)

(त्रि०) २ जिसकी दोनों आँखें चन्द्रमासी सुन्दर हों।

चन्द्राननरस (सं० पु०) औषधविशेष, एक तरहकी दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, अबरक, चिता प्रत्येकका १ भाग, गन्धकके ३ भागको कठगुल्लरके दूधमें डुबो कर एक रत्ती मात्राकी गोली बनानी होती है। इसके सेवन करनेसे कुष्ठरोग जाता रहता है

चन्द्रापीड़ (सं० पु०) चन्द्र आपीड़ः शिरो भूषणं यस्य, बहुव्री०। १ शिव। २ काश्मीराधिपति प्रतापादित्य या दुर्लभकका ज्येष्ठ पुत्र। इनका दूसरा नाम वज्रादित्य था। प्रतापादित्यकी मृत्युके बाद शक सं० ६०४में ये काश्मीरके सिंहासन पर बैठे थे। इनके सुनियमों और उत्तम शासनसे बहुतसे लोग वशीभूत हुए थे। चन्द्रापीड़ने त्रिभुवनस्वामी नामक विष्णुमूर्तिकी स्थापनाके हेतु एक मंदिर बनवाया था। उस देवभवनकी चतुःसीमाके भीतर एक चमार रहता था। मन्दिर बन गया, पर वह चमार वहांसे न हटा। क्रमशः राजाको यह बात मालूम पड़ी। राजाने स्वयं उसके घर जा कर उसका घर खरीद लिया। चमार वहांसे चला गया। दीन दरिद्र व्यक्तियों पर उनकी ऐसी ही दया थी, इसीलिए काश्मीरके सब ही लोग उन पर अनुरक्त थे। चन्द्रापीड़की पत्नीका नाम प्रकाशा था और गुरुका नाम मिहिरदत्त। इनके भाई तारापीड़ने एक इन्द्रजालव्यवसायी ब्राह्मणके द्वारा इनको मरवा डाला था। इनका राजत्वकाल ८ वर्ष ८ महीना है। (राजतरङ्गिणी)

३ महाकवि बाणभट्टकृत कादम्बरीकथाका नायक। इनके पिताका नाम तारापीड़ था और माताका नाम विलासवती। ब्राह्मणके शापसे रोहिणीके पति चन्द्र चन्द्रापीड़के रूपसे भूमण्डल पर उतरे थे। ये सर्वशास्त्रपारदर्शी, नीतिज्ञ और देखनेमें अतिरूपवान् थे। हिमालयके पास किन्नर मिथुनका अनुसन्धान करते करते ये महाश्वेताके आश्रममें उपस्थित हुए थे। मन्त्रिपुत्र वैशम्पायनके साथ इनकी मित्रता थी। क्रमशः गन्धर्वराजकुमारी कादम्बरीके साथ इनकी भेंट हुई। देखनेके साथ ही दोनोंमें अनुराग उत्पन्न हो गया। महाश्वेताके शापवाक्यसे [चन्द्रा]पीड़के मित्र वैशम्पायनकी मृत्यु हो गई। चन्द्रापीड़ने बन्धुविच्छेदानलको न सह कर प्राण त्याग दिये और शूद्रक नरपति रूपमें भूमण्डल पर अवतीर्ण हुए। देवादेशसे चन्द्रापीड़का मृत शरीर रख दिया गया था। चन्द्रापीड़ने पुनः उज्जीवित हो कर कादम्बरीका पाणिग्रहण किया था। (कादम्बरी)

चन्द्राल (सं० क्ली०) कुमुदपुष्प।

चन्द्राभ—विजयार्द्ध पर्वतकी उत्तरश्रेणीमें स्थित पचास नगरीमें एक नगर। (त्रिलोकसार)

चन्द्राभास (सं० पु०) चन्द्र इवाभासते आ-भास-अच्। चन्द्रका प्रतिरूप, वह जो ठीक चन्द्रमासा दीखता हो। (False moon)

चन्द्रामृतलौह (सं० क्लो०) औषधविशेष। त्रिकटु (सोंठ, पीपल, मिर्च), त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आँवला), धनिया, चविका, जीरा और काला नमक इन सबको बराबर ले कर लौहमिश्रित कर नौ रत्तीकी गोलियां बनानी चाहिये। प्रातःकालमें पवित्र भावसे ईश्वरका नाम स्मरण कर इसका सेवन करना चाहिये। इसको रक्तोत्पल और नीलोत्पलके रस तथा कुलथीके रस या काढ़ेके साथ सेवन करनेसे खाँसी, वायु, पित्त, विषदोष, श्वासयुक्त ज्वर, भ्रम, दाह, तृष्णा, शूल, अरुचि और जीर्णज्वर दूर हो जाता है। यह वृष्य, आग्नेय, बल और वर्णकर होता है। चन्द्रनाथने इसका आविष्कार किया था, इसीलिए उनके नामानुसार इसका नाम चन्द्रामृतलौह पड़ा है वृहच्चंद्रामृतरस देखो।

चन्द्रायतन (सं० पु०) चंद्रशाला।

चन्द्रार्क (सं० पु०) चंद्रमा और सूर्य।

चन्द्रार्कदीप (सं० पु०) बुध।

चन्द्रार्द्ध (सं० पु०) चंद्रस्यार्द्धः, ६-तत्। चंद्रमाकी कलाके सदृश, भाग वह अंश जा चंद्रमाकी कलासा दीखता हो।

चन्द्रार्द्रक (सं० पु०) कर्पूर, कपूर।

चन्द्रार्द्धचूड़ामणि (सं० पु०) महादेव, शिव।

चन्द्रालोक (सं० पु०) चन्द्रस्यालोकः, ६-तत्। १ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चंद्रमाका प्रकाश। २ पीयूषवर्षका बनाया हुआ एक अलङ्कारग्रन्थ। जयदेव देखो।

चन्द्रावत्—राजपूत जातिकी एक शाखा। ये अपनेको चन्द्रवंशीयके जैसा परिचय देते हैं। ये पराक्रमशाली और मेवारके राणाके अधीन हैं। रामपुर या भानपुरमें चन्द्रावत् सर्दार वास करते हैं। उनकी आमदनी प्रायः कुछ लाख रुपये हैं। राणा जगत्सिंहने उनके भतीजे मधुसिंहको जो जागीर दी थी, चन्द्रावत् वही जागीर भोग कर रहे हैं।

चन्द्रावत—आरावल्लीके नीचे अवस्थित एक प्राचीन नगर। गुर्जरराजके अधीन प्रधान सामन्त प्रमारराजाओंकी यहां प्राचीन राजधानी थी। बनास् नदीके किनारे अर्बुद शिखरसे करीब ६ कोस दूरी पर श्यामल निकुञ्ज वनमें अब भी उस प्राचीन नगरीका कुछ ध्वंसावशेष पड़ा हुआ है। अहमदने इस प्राचीन नगरके मसालेसे प्रसिद्ध अहमदाबाद नगर स्थापन किया था। उस समय वहांके अधिवासिगण साबरमती नदीके किनारे उठ गये थे। इस समय भी वहाँका स्तूपाकार राजभवन और मन्दिर आदिका ध्वंसावशेष अतीत गौरवका कुछ परिचय दे रहा है।

चन्द्रावती—राजपूतानाके झालावाड़ राज्यकी राजधानी झालरापाटनके दक्षिणांशमें चंद्रभागा नदीके किनारे अवस्थित एक प्राचीन नगरी। झालरापाटन देखो।

चन्द्रावती।

चन्द्रभागा एक छोटीसी नदी है, यह गागरोनसे कुछ दूरमें कालीसिन्धुमें जा मिली है। इस चन्द्रभागा नदीके दोनों किनारे चन्द्रावती नगरीका ध्वंसावशेष पड़ा हुआ है। ऐसा प्रवाद है कि, राजा चन्द्रसेनने यह चन्द्रावती नगरी बसाई थी। किन्तु यहांसे प्राप्त प्राचीन सिक्कोंके देखनेसे तो यही अनुमान किया जाता है कि, यह नगरी चन्द्रसेनसे बहुत पहिले भी थी। शायद उनने इसका पुनःसंस्कार करा कर अपने नामानुसार इसका नाम रखा होगा। किसीके मतसे, ई०की छठी

शताब्दीमें चन्द्रावती नगरी स्थापित हुई थी, किन्तु उससे बहुत पहले यह नगरी प्रतिष्ठित हुई थी, इसमें कोई सन्देह नहीं। ई०की द्वितीय शताब्दीमें पाश्चात्य ऐतिहासिक टलेमिने सान्द्राबतिस् (Sandrabatis) नामसे जिस जनपदका उल्लेख किया है, शायद उसकी राजधानी यही चंद्रावती होगी।

यहाँ चंद्रभागाके तट पर सैकड़ों घाट और मन्दिरोंके चिह्न पड़े हुए हैं, जिनमेंसे चतुर्भुज, लक्ष्मीनारायण, नरसिंह, वृहस्पति, हरगौरी, बराह अवतार कालिका-देवी आदि मन्दिरोंका कुछ कुछ अंश अब भी देखनेमें आते हैं। सब ही कहते हैं कि, दुर्दान्त मुहम्मद घोरी और औरङ्गजेबके आदेशसे ही यहाँकी अनुपम असाधारण हिन्दुकीर्तियाँ विलुप्त और विध्वस्त हुई हैं। फार्गुसन, कनिङ्हाम आदि शिल्प और प्रत्नतत्त्वविद् पण्डितोंने मुक्तकण्ठसे चन्द्रावतीका अतीत-परिचय दिया है। यहाँका पत्थरके कामका शिल्पनैपुण्य और स्तम्भादिकोंका सुदृश्य राजपूतानेमें अतुलनीय है, यहांका कारुकार्य शोभाका आधार और दर्शकोंके चित्तको चुरानेवाला है। बहुतोंने निश्चय किया है कि, ई०की सातवीं शताब्दीसे दशवीं शताब्दीके भीतर ये सब हिन्दुकीर्तियां सुसम्पन्न हुई थीं (१)।

२ चम्पारणके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम।

(भ० ब्र० ४१।१)

३ राजा धर्मसेनकी महिषी। ४ तीर्थविशेष।

चन्द्रावर्त्ता (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम जिसके प्रत्येक पदमें ४ नगण या। १ सगण होता है।

चन्द्रावली (सं० स्त्री०) श्रीकृष्णकी एक प्यारी सखी, वृषभानुके अग्रज चंद्रभानुकी कन्या। इनकी माताका नाम विन्दुमती और स्वामीका नाम गोवर्द्धनमल्ल था। ये राधिकाकी चचेरी बहन थीं। राधिकाकी नाईं श्रीमती चंद्रावलीने भी अपना मनप्राण कृष्णको अर्पण कर दिया था। इनके भी एक कुञ्ज था तथा श्रीकृष्णचंद्र वहाँ जा आमोद प्रमोद करते थे। चंद्रावली करला नामक ग्राममें स्वामीके साथ रहती थीं। पद्या, शैव्या और सुबेला नामकी इन्हें तीन दासियां थीं। एक दिन कृष्णने इनके कुञ्जमें रात बिताई थी, इसीसे राधिकाके साथ कृष्णका झगड़ा हुआ था। चंद्रावली कभी कभी सखीसरा ग्राममें भी वास करती थीं। (ब्र० खौ० १३ च०)

चन्द्रावलोक (सं० पु०) कुशवंशीय रामके पुत्र।

चन्द्राश्व (सं० पु०) धुंधुमारके पुत्र। इन्होंने धुंधुयुद्धमें रक्षा पाई थी। (विष्णुपु०) कुवलयाश्व देखो।

चन्द्राश्मन् (सं० पु०) चंद्रप्रियोऽश्मा, मध्यपदलो०। चंद्र-कान्तमणि। (राजनि०)

चन्द्रास्पदा (सं० स्त्री०) चंद्र आस्पदं यस्या, बहुव्री०। कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी।

चन्द्राह्वय (सं० पु०) चंद्र आह्वयो यस्य, बहुव्री०। कर्पूर, कपूर।

चन्द्रिका (सं० स्त्री०) चंद्र आश्रयत्वं नास्त्यस्याः चंद्र-ठन्। अत इनिठनौ। पा ५।२।११५। १ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चंद्रमाका प्रकाश, कौमुदी।

"अभ्युद्धृता सुरतश्रमपदां मेघमुक्तविशदां स चन्द्रिकाम्।"

(रघु १९।३९)

२ स्थूल एला, बड़ी इलायची। ३ मत्स्यविशेष, चाँदा नामकी मछली। ४ चंद्रभागानदी। ५ कर्णस्फोटा लता, कनफोड़ा घास। ६ मल्लिका, जूही या चमेली। ७ श्वेत-कण्टकारी, सफेद भटकटैया। ८ मेथिका, मेथी। ९ छोटी इलायची। १० चंद्रसूर, चनसुर। ११ पीठस्थानकी अधिष्ठात्री देवी, हरिश्चंद्रपुरमें यह पीठस्थान है।

"महाकालेश्वरी नाम्ना तु हरिश्चंद्रे तु चंद्रिका।" (देवीभा० ७।३०।७०)

१२ छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम, जिसके प्रत्येक चरणमें १३ अक्षर या स्वरवर्ण होते और ७, ८, १०, ११ और १३ वां अक्षर गुरु तथा शेष अक्षर लघु होते हैं तथा ७वें और ६ठे अक्षर पर यति होती है।

"ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाश्वर्तुभिः।" (छन्दोमञ्जरी)

१३ वासपुष्पा। १४ मोरकी पूँछके परका गोल चिह्न या आँख। १५ संस्कृत व्याकरणका एक ग्रन्थ। १६ सिर

(१) Tod's Rajasthan, II., 732; Fergusson's Indian Architecture, p. 53; Cunningham's Archæological Survey Reports, Vol. II., p. 263—270 and XXIII., p. 125—130.

परका एक भूषण, बेँदी, बेँदा। १७ एक तरहका मस्तकका आभूषण जिसे प्राचीन कालकी स्त्रियां धारण करती थीं, चंद्रकला।

१८ ज्योत्स्नाकी नाईं आह्लाददायिनी, वह जो चंद्रमाकी रोशनीकी तरह आनन्दप्रद हो।

"चंद्रिकानुप्रभावेन ज्ञता न इचंद्रिका।" (दशकचंद्रिका)

चन्द्रिकाद्राव (सं० पु०) चंद्रिकया द्रावो निस्पन्दो यस्य, बहुव्री०। चंद्रकान्तमणि।

चन्द्रिकापायिन् (सं० पु०-स्त्री०) चंद्रिका पिवति चंद्रिका-पा-णिनि। चकोर पक्षी, चातक, चकवा। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

चन्द्रिकापुरी—श्रावस्ती नगरीका नामान्तर।

चन्द्रिकाभिसारिका (सं० स्त्री०) शुक्लाभिसारिका नायिका।

चन्द्रिकाम्बुज (सं० क्ली०) चन्द्रिकेव शुभ्रमम्बुजं। श्वेतपद्म, सफेद कमल।

चन्द्रिकोत्सव (सं० पु०) शारदोत्सव, शरत् पूनोका उत्सव।

चन्द्रिन् (सं० त्रि०) चन्द्रोऽस्त्यस्य चन्द्र-इनि। १ चन्द्रयुक्त, जिसमें चन्द्रमा हो। २ सुवर्णयुक्त, जिसमें सोना हो, जो सोनेका बना हो।

"चंद्री यजति प्रवीत:" (शुक्लयजु: २०।५७।)

'चंद्री सुवर्णमय:' (महीधर)

चन्द्रिमा (सं० स्त्री०) चन्द्रिणं मिमीते मा-क-टाप्। चन्द्रिका, ज्योत्स्ना, चाँदो, चन्द्रमाका प्रकाश।

चन्द्रिल (सं० पु०) चन्द्र बाहुलकात् इलच्। १ शिव, महादेव। २ नापित नाई, हजाम। ३ वास्तूकशाक, बथुआ।

चन्द्री (सं० स्त्री०) चदि-रक् गौरादित्वा ङीष्। बकुची।

चन्द्रेश्वर (सं० पु०) चन्द्रस्य ईश्वरः, ६ तत्। काशीको शिवमूर्तिविशेष। काशी और चंद्र देखो।

चन्द्रेष्ट (सं० क्ली०) कुमुदपुष्प, कुईं, कोका।

चन्द्रेष्टा (सं० स्त्री०) चन्द्र इष्टो यस्याः, बहुव्री०, ततः टाप्। उत्पलिनी, छोटी कोईं।

चन्द्रेहो—बुन्देलखण्डमें शोण नदीके किनारेका एक छोटा गाँव। शिलालेखोंके देखनेसे मालूम होता है कि, इसका प्राचीन नाम चन्द्रावती था, अब यहां दो-चार तृणाच्छादित गृहमात्र देखनेमें आते हैं। किन्तु किसी समय यह चन्द्रेहो (चन्द्रावती) नगरी विशेष समृद्धिशाली और सुरम्यहर्म्यादिसे सुशोभित थी. इसके बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। यहां जगह जगह मन्दिरादिके भग्नावशेष पड़े हुए हैं। उनमेंसे एक देउल तो अभी तक प्रायः सम्पूर्णावस्थामें खड़ी हुई है। यह देउल बड़े भारी चौखूँटी बुनियादके ऊपर स्थापित है। इस देउलका एक कारुकार्य अतीव विस्मयकर और अतुलनीय है। वास्तवमें इस प्रकारकी देउल बहुत कमही मिलतीं हैं। यह किसी संन्यासी द्वारा सम्भवत: १३२४ संवत्‌को बनी हुई है। देउलके सामने एक बड़ा आँगनसा है। यह दलान मोटे और छोटे छोटे खम्भोंसे परिवेष्टित है। इस देउलके प्रतिष्ठाता सम्भवतः शैव थे। देउलके पास एक भग्न प्रासाद भी पड़ा है। इसकी गठनके देखनेसे मालूम पड़ता है कि, यहां पहिले संन्यासियोंका आड्डा था।

चन्द्रोदय (सं० पु०) चंद्रस्य उदयः, ६-तत्। १ चंद्रका प्रथम प्रकाश, प्राथमिक दर्शनयोग्य स्थानमें अवस्थित चंद्र। क्षितिजवृत्तके अन्तरालमें किसी भी ग्रह या नक्षत्रको हम नहीं देख सकते, राशिचक्रकी गतिके अनुसार जो ग्रह जिस समय पूर्वक्षितिजवृत्तको अतिक्रम कर हमारे देखने योग्य स्थानमें पहिले उपस्थित होता है, उस समय उसको ग्रहका उदय कहते हैं। किसी किसी मतसे, तिथिके अनुसार चंद्रका उदय होता है। जिस दिन जो तिथि ढाई प्रहरव्यापिनी होती है, उस दिन उसी तिथिके अनुसार उदय होता है।

चंद्रोदयासनसाधन देखो।

२ चंद्रातप, चँदवा, चँदोवा।

३ औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकार है—स्वर्ण आठ तोला, पारद एक सेर और गन्धक दो सेर, लाल कपास-फूलके रसमें और घृतकुमारीके रसमें क्रमसे घोंटना चाहिये। जब अच्छी तरह घुट जाय, तब उसे बोतलमें भर कर उसका मुंह भली भाँति बन्द कर देना चाहिये, फिर उस बोतल पर कपड़ा और मिट्टीका लेप दे कर वालुकायन्त्रमें तीन दिन तक पाक करना चाहिये। पारा भस्म हो कर जब नये पत्तेकी तरह रञ्जित हो जाय, तब उसे उतार लेना चाहिये।

इसके साथ ८ तोला कपूर, जातीफल, मिर्च, लौंग प्रत्येक ३२ तोला, कस्तुरी आधा तोला मिला कर खल्हड़में घोंटना चाहिये, अच्छी तरह घुट जाने पर दश दश रत्तीकी गोलियां बनानी चाहिये। दूधके सेवन साथ करनेसे सैकड़ों मतवाली युवतियोंके गर्व (घमण्ड) दूर करनेकी सामर्थ्य उत्पन्न होती है। यह चंद्रोदय जरा मरण और वलि पलितका नाशक, आयुकर, सर्वरोगनिवारक, शुक्रवर्द्धक और मृत्युञ्जयकारक होता है। इसके अनुपान—पानका रस, इंद्रयव, लवङ्ग और कपास फूलका रस। कोई कोई इसको मकरध्वज भी कहते हैं। (रसेन्द्रसा०)

चन्द्रोदया (सं० स्त्री०) चन्द्रस्योदयो यस्याः, बहुव्री० टाप्। नेत्ररोगकी एक औषध, चक्रदत्तोक्त एक प्रकारकी वर्ति। इसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—हर, बच, कुष्ठ (कुट), पीपल, गोलमिर्च, बहेड़ाकी मिंगी, शङ्खनाभि और मनःशिला इनको समानतासे ले कर बकरीके दूधके साथ पीसना चाहिये। दूसरे नियम वर्ति बनानेके समान ही हैं। इसके सेवन करनेसे तिमिर, कण्डु, पटल, अर्बुद, रतौंध इत्यादि नेत्ररोग दूर हो जाते हैं। (चक्रदत्त)

चन्द्रोदयास्तसाधन (सं० क्ली०) चंद्रोदयास्तयोः साधनं, ६-तत्। गणितके अनुसार चंद्रके उदय और अस्तका निर्णय करना। सूर्यसिद्धान्तके मतसे—शुक्लपक्षके अभीष्ट दिनमें सूर्यास्तके समयका सूर्य और चन्द्रका स्फुट साधन, तथा चंद्रके दोनों दृक्कर्मोंका संस्कार करना पड़ता है। स्फुट और दृक्कर्म देखो। इसके बाद सूर्य और चंद्रके साथ ६ राशिको जोड़ कर दोनोंका वियोग निकालना चाहिये। इससे जो फल निकलेगा, उसको असु (परिमाणविशेष) करके रखना चाहिये। किन्तु यदि ६ राशियुक्त चंद्र और सूर्यकी एक ही राशि हो, तो उसके अन्तरकी कला कर लेना चाहिये। अन्तर कला या असुकी घटिका करके उससे सूर्य और चंद्रकी भुक्तिका गुना करना चाहिये और गुणफलका ६०से भाग करना चाहिये। जो उपलब्ध होगा, उसको क्रमसे चंद्र और सूर्यमें जोड़ कर पुनः पूर्वरीतिके अनुसार उनको अन्तर करनेसे जो फल होगा, उसको पुनः घटिका कर पहिलेकी तरह प्रक्रिया करनी चाहिये जब तक चंद्र और सूर्यका अन्तर समान न हो तब तक यह प्रक्रिया करते रहना चाहिये इस नियमसे चंद्र और सूर्यका अन्तर समान होता है। दोनोंके समान अन्तरसे जितने असु होते हैं, सूर्यास्तके बाद उतने असु पीछे चंद्रका अस्त होता है। (१)

कृष्णपक्षमें सूर्यका स्फुट कर उसके साथ ६ राशि जोड़ना चाहिये और चंद्रके दृक्कर्मका संस्कार करना चाहिये। बादमें पूर्वोक्त प्रक्रिया करने पर चंद्र और सूर्यके समान अन्तरसे जितने असु होंगे, सूर्यास्तके बाद उतने असु पीछे चंद्रका अस्त होता है (२)। इसको चन्द्रका दैनिक उदयास्त कहते हैं। इसके सिवा अन्यान्य ग्रहोंकी भांति भी चंद्रका उदयास्त हुआ करता है। सूर्यसिद्धान्तके मतसे चंद्र सूर्यसे १२ अंश पूर्वमें अस्त, और १२ अंश पश्चिममें उदित होता है।

चन्द्रोपराग (सं० पु०) चंद्रग्रहण।

चन्द्रोपल (सं० पु०) चंद्रप्रिय उपलः, मध्यपदलो०। चंद्रकान्तमणि।

चन्द्रोन्मीलन (सं० क्ली०) एक संस्कृत ज्योतिष ग्रन्थका नाम।

चन्द्रौरस (सं० पु०) चन्द्रस्य औरसः, ६-तत्। १ बुध। २ छन्दोविशेष, एक तरहका छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें १४ अक्षर या स्वरवर्ण रहते हैं और प्रत्येक चरणका १ २, ३ ४, ११, १२ और १४ वां अक्षर गुरु और शेष लघु होते हैं।

चन्नगिरि—१ महिसुरके शिमोगा जिलेके अन्तर्गत एक पूर्वीय इलाका। यह अक्षा० १३° ४८′ एवं १४° २०′ उ० और

---

(१) "रवीन्द्वोः षड्भयुतयोः प्राग्वल्लग्नान्तरासवः।
एकराशौ रवीन्द्वोश्च कार्या विवरलिप्तिकाः॥
तद्घटिकाहते भुक्ती रवीन्द्वोः षष्टिभाजिते।
तत्फलान्वितयोर्भूयः कर्त्तव्या विवरासवः॥
एवं यावत् स्थिरीभूता रवीन्द्वोरन्तरासवः।
तैः प्राणैरस्तमेतीन्दुः शुक्लेऽर्कास्तमयात् परं।" (सूर्यसि० १०।२४-)
'एवं तद्घटिकाभिः सूर्याचन्द्रौ षड्भयुतौ दृक्कर्मसंस्कृत चंद्रौ प्रचाल्य तयोर्विवरासव इति यावत्स्थिरीभूता अभिन्नास्तावत् साध्याः। तैरभिन्नैरसुभिः सूर्यास्तादनन्तरं चंद्रोऽस्तं प्राप्नोति।' (रङ्गनाथ)

(२) "भगणार्धं रवेर्दत्त्वा कार्यास्तद्विवरासवः।
तैः प्राणैः कृष्णपक्षे तु शीतांशुरुदयं व्रजेत्।" (सूर्य० १०।५)

देशा० ७५° ४४´ तथा ७६° ४´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका रकबा करीब ४६५ वर्गमील है। इस इलाकेके दक्षिण और पश्चिमकी तरफ अनुन्नत पर्वतमाला विराजमान है। उन पर्वतोंसे अनेक निर्झरिणी निकली हैं और वे विस्तीर्ण सुलिकेरी ह्रदमें गिरी हैं। इस ह्रदकी परिधि करीब ४० मील है। इसमेंसे हरिद्रा नदी निकल कर तुङ्गभद्राके साथ जा मिली है। इलाकेका अवशिष्ट अंश समतल और बहुतसी भूमि पशुओंके चरने योग्य है। उत्तरभाग बहुत कुछ उपजाऊ है और बाग बगीचों तथा ईखके खेतोंसे परिशोभित है। इस इलाकेमें एक फौजदारी अदालत और छह थाने हैं। लोकसंख्या प्रायः ८१४५३ है। इसमें एक शहर और २४४ गाँव लगते हैं।

२ उक्त इलाकेका सदर, यह शिमोगासे २५ मील दूरी पर ईशान दिशाकी ओर अक्षा० १४° १´ उ० और देशा० ७५° १´ पूर्वमें अवस्थित है।

चन्नपाट—१ महिसुरके बङ्गलोर जिलेका दक्षिण-पूर्वीय तालुक। यह अक्षा० १२° २८´ एवं १२° ५४ उ० और देशा० ७७° ५ तथा ७७° २८´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४५३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११४६२७ है। इस तालुकमें चन्नपाट और क्लोसपेट नामके दो शहर तथा २६७ ग्राम लगते हैं। इसके उत्तरपश्चिममें जङ्गलसे परिपूर्ण पर्वतश्रेणी है। दक्षिणका भाग बहुजनाकीर्ण समतल भूभाग है। पूर्वमें अरकावती और पश्चिममें कण्व नामकी नदियां प्रवाहित हैं।

२ महिसुरके अन्तर्गत बङ्गलोर जिलेका एक शहर। इसका असली नाम 'चन्नपत्तनम्' अर्थात् सुन्दर नगर है। यह शहर बङ्गलोरसे ३५ मील दूर दक्षिण-पश्चिमकोणमें देशा० ७७° १२´ पू० और अक्षा० १२° ३५´ उत्तरमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १०४२५ है। इस शहरका उत्तरपूर्वांश शुक्रवारीपेंठ नामसे प्रसिद्ध है। यहाँ शिल्पकारों और व्यवसायियोंका वास है। १५८० ई०में जगदेव रायलने चन्नपाटमें एक गढ़ बनवाया था। उनके वंशधरोंने १६३० ई० तक वहांका राज्य किया था, बादमें वे महिसुरके उदैयारके राजाओं द्वारा पराजित और विताड़ित किये गये थे। शुक्रवारीपेंठमें तरह तरहकी पौलिसदार चीजें, खिलौने, लोहेके तार और काँचकी चूड़ियां बनती हैं। इसके लिए इसकी प्रसिद्धि भी है। यहाँ दैरा श्रेणीके अनेक मुसलमान रहते हैं। उस पेंठके उत्तरमें दो बड़ी कब्रें हैं। उनमेंसे एक टीपू सुलतानके गुरुके नामसे और दूसरी टीपूके अङ्गरेजोंके प्रति दयाप्रकाशके लिए बङ्गलोरके एक शासनकर्ताके नामसे प्रतिष्ठित है। १८७३ ई० तक यह शहर चन्नपाट इलाकेका सदर था।

चन्नरायणपेट—महिसुरके कोलार जिलेके चिकबल्लापुर तालुकका एक पहाड़। यह अक्षा० १३° २३´ उ० और देशा० ७७° ४४´ पू०में पड़ता है। यह ४७६२ फुट ऊंचा है। इसके पश्चिममें पेन्नर और पूरबमें पोनैयर है। इसके ऊपर एक दुर्गका ध्वंसावशेष दृष्टिगत होता है। इसके पश्चिममें चन्नराय नामका एक मन्दिर है।

चन्नरायपत्तन—१ महिसुरके हासन जिलेके अन्तर्गत एक तालुक या इलाका। यह अक्षा० १२° ४६´ एवं १३° १० उ० और देशा० ७६° १६´ तथा ७६° ३८ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका रकबा करीब ४१५ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ८०८५० है। इस इलाकेका पानी दक्षिणकी ओर प्रवाहित हो कर हेमवती नदीमें पड़ता है। यहाँ बड़े बड़े सरोवर हैं और भूमि समतल है। पहाड़के बीचमें श्रवणबेलगोलाका जैनधर्ममन्दिर प्रतिष्ठित है। उत्तरकी कङ्करवाली जमीनके सिवा और सब भूमि उपजाऊ है। यहां धान्य और रबिशस्य दोनों उत्पन्न होते हैं। इसमें दो शहर और ३८६ गांव लगते हैं।

२ उक्त इलाके या तहसीलका सदर। यह हासनसे २४ मील पूर्वकी तरफ अक्षा० १२° ५४´ १२´´ उ० और देशा० ७६° २५´ ५५´´ पूर्वमें अवस्थित है। पहिले इस गाँवको कोलातूर कहते थे। १६०० ई०में यहाँके एक सर्दारने चन्द्रदेवस्वामीका (विष्णुका) एक मन्दिर बनवाया और अपने पुत्रका नाम चन्नदेवस्वामी रक्खा। बादमें इस गाँवका नाम भी परिवर्तन हो कर चन्नरायपत्तन हो गया। धीरे धीरे यहां गढ़ भी बन गया। हैदरअलीने इस गढ़की चहारदीवारी और दरवाजे बनवाये थे। यहाँ कोई कोई मुसलमान रेशमका काम करते हैं।

चन्नवसवेश्वरस्वामी—दाक्षिणात्यके एक ग्रन्थकार। इन्होंने "वीरशैवोत्कर्षप्रदीप" नामक एक संस्कृत ग्रन्थकी रचना की थी।

चपकन (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका अङ्गा, अङ्गरखा। २ किवाड़, सन्दूक आदिमें लगानेका लोहे वा पीतलका एक साज। इससे बन्द सन्दूक वा किवाड़के पल्ले अटके रहते हैं और झटके आदिसे खुल नहीं सकते हैं। ३ हलकी हरिसमें आगेकी ओर लगी हुई एक छोटी कील।

चपकना (हिं०) चिपकना देखो।

चपका (हिं० पु०) एक कीड़ा।

चपकाना (हिं०) चिपकाना देखो।

चपकुलिस (तु० स्त्री०) १ कठिन स्थिति, अड़चना, २ फेर, झञ्झट। २ बहुत भीड़भाड़, कसामसी।

चपट (सं० पु०) चप घञर्थे क, चपः सान्त्वना चूर्णीकरणं वा तदर्थं अटतीति अट-अच् शकन्ध्वादिवत् साधुः। चपत, तमाचा।

चपटा (हिं० वि०) चिपटा।

चपटागाँजा (हिं० पु०) दबाया हुआ गाँजा, बालूचर गाँजा।

चपड़गट्टू (हिं० पु०) चपरगट्टू देखो।

चपड़चपड़ (हिं० स्त्री०) कुत्तोंके खाते या पीते समयका शब्द।

चपड़ा (हिं० पु०) १ परिष्कार की हुई लाखका पत्तर, वह लाख जो साफ कर काममें लाई जाती है। २ कीटविशेष, एक तरहका लाल कीड़ा जो कभी कभी पाखानों तथा मैले कुचैले स्थानोंमें पाया जाता है।

चपत (हिं० पु०) १ चपट, तमाचा, थप्पड़। २ हानि, धक्का, नुकसान।

चपती (हिं० स्त्री०) सीधी लकीरें खींचनेकी छड़ जो काठकी बनी रहती है। छोटे छोटे लड़के इसे व्यवहारमें लाते हैं।

चपदस्त (फा० पु०) एक प्रकारका घोड़ा जिसका अगला दहिना पैर सफेद हो।

चपना (हिं० क्रि०) १ दबना, कुचल जाना। २ लज्जित होना, शरमाना, झेंपना।

चपनी (हिं० स्त्री०) १ छिछला कटोरा, वह कटोरा जो गहरा न हो, कटोरी। २ दरियाई नारियलका बना हुआ एक प्रकारका कमण्डल। ३ गड़रियेके कम्बल बुननेकी लकड़ी जिसमें ताना बाँधी जाती है। ४ हाँड़ीका ढक्कन। ५ चक्की, घुटनेकी हड्डी।

चपरउनी (हिं० स्त्री०) लोहारोंका एक यन्त्र जिसमें बालटू पीट कर फैलाया जाता है।

चपरगट्टू (हिं० वि०) १ सत्यानाशी, अभागा, चौपटा। २ एकमें उलझा हुआ, गुत्थमगुत्था।

चपरनी (देश०) मुजरा, गान।

चपरा (हिं० पु०) चपड़ा देखो।

चपरास (हिं० स्त्री०) १ कर्मचारियोंका चिह्नविशेष। यह पीतल आदि धातुओंकी बनी होती है। इसमें कार्यालयका नाम और कर्मचारीका नम्बर खुदा रहता है। २ मुलम्मा करनेकी कलम। ३ कुरतोंके मोड़े परकी चौड़ी धज्जी। ४ मालखम्भकी एक कसरत जो दुबगलीके समान होती है।

चपरासी (फा० पु०) सिपाही, प्यादा, मिरदहा, अरदली।

चपरी (हिं० स्त्री०) खेसारी, चिपटैया, एक तरहकी कदन्न या घास जिसमें चिपटी चिपटी फलियाँ लगती हैं।

चपरैला (देश०) एक तरहकी घास जो कहीं कहीं कूटी भी कहलाती है।

चपरौली—युक्तप्रदेशके मेरठ जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २४° ५०' १५" उ० और देशा० ७७° ३' ३०" पू० में पड़ता है। कहा जाता कि खृष्टीय अष्टम शताब्दीको जाटोंने वहां जा करके उपनिवेश लगाया था। परन्तु सिखोंके अत्याचारसे इनका वंश लुप्तप्राय हो गया। जो हो, प्रायः १८० वर्ष पहले स्थानीय आदिम अधिवासियों और मोरपुरके ध्वंसावशिष्ट जाटोंके मिल जानेसे चपरौली स्थान फिर समृद्धिशाली बना था। यहां वाणिज्य शिल्पादिकी चर्चा नहीं, फिर भी खेती खूब होती है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ६११५ है। इसमें थाना सराय, बाजार और डाकखाना मौजूद है।

चपल (सं० क्ली०) चुप मन्दायां गतौ कल। उकारस्य अकार। चुपे रचोपधायाः। उ० १।१०। शीघ्र, जल्द। (पु०) २ पारद, पारा। ३ शिलाविशेष, एक प्रकारका पत्थर।

४ मत्स्य, एक तरहकी मछली । ५ गन्धद्रव्यविशेष, चोर नामक सुगन्धद्रव्य । ६ एक प्रकारका चूहा । इस चूहाके काटनेसे वमन, पिपासा और मूर्च्छा होती है । देवदारु, जटामांसी और त्रिफलाके चूर्ण मधुके साथ मिला कर लेप देनेसे आराम हो जाता है । (सुश्रुतकल्प ६प०) ७ चातक, पपीहा, चकवा ।

८ चव, राई । ९ राजमाष, लोबिया । १० पारदविशेष, जस्ता । (त्रि०) ११ तरल । १२ चञ्चल, तेज, फुरतीला,

"कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः ।" (शाकुन्तल)

१३ क्षणिक, बहुत काल तक न रहनेवाला । १४ उतावला, हड़बड़ी मचानेवाला । १५ अभिप्राय साधनमें उद्यत, चालाक, धृष्ट ।

चपलक (सं० त्रि०) चपल स्वार्थे कन् । चपल देखो ।

चपलग्राम—विन्ध्यारण्यके निकटवर्ती पर्णा नदीके तीरका एक ग्राम । (भ०ब्र० ८।६७)

चपलता (सं० स्त्री०) चपलस्य चपलाया वा भावः चपल-तल्-टाप् । १ चाञ्चल्य, अस्थिरता, तेजी, जल्दी । २ धृष्टता, उतावली, ठिठाई । ३ व्यभिचारी गुणविशेष । साहित्यदर्पणके मतसे मात्सर्य और द्वेषादि वश चित्तमें जो अस्थिरता उपजती है, उसीका नाम चपलता है । इससे परनिन्दा, पारुष्य और स्वेच्छाचार प्रभृति हुआ करते हैं ।

"अन्यासु तावदुपमर्दसहासु भृङ्ग ! लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु ।
मुग्धामजातरजसं कलिकामकाले व्यर्थं कदर्थयसि किं नवमल्लिकायाः ॥"

यहां नायिका भ्रमरको सम्बोधन कर कहती है कि तुम अन्य पुष्पित लताके समीप जा चित्त प्रसन्न करो इस नवमल्लिका कलीको व्यर्थ क्यों दुःख देते हो ? इसमें नायिकके प्रति कटूक्ति कही गई है । सुतरां इस नायकामें चपलताका गुण दीख पड़ता है ।

चपलत्व (सं० पु०) चपलता, चंचलता ।

चपलस (देश०) एक ऊंचा वृक्ष । इसकी लकड़ीसे सजावटके सामान, चायके सन्दूक, नाव, तख्ते आदि बनते हैं । पुरानी होने पर यह कड़ी और मजबूत होती है ।

चपला (सं० स्त्री०) चपल टाप् । १ लक्ष्मी ।

"चपलाजनं प्रति न चोद्यमदः ।" (माघ ९।१६)
'चपला चाञ्चलवती स्त्री कमला च ।' (मल्लिनाथ)

२ विद्युत्, बिजली ।

"अनुभवचपलाविलासितनवजलदेशान्तरभ्रान्तीः ।" (आर्यासप्त०)

३ वेश्या, रंडी । ४ पिप्पली, पीपल । ५ जिह्वा, जीभ । ६ विजया, भांग ७ मदिरा, शराब । ८ मात्रावृत्तविशेष, आर्या छन्दका एक भेद जिसके प्रत्येक गणके अन्तमें गुरु हो, दूसरा गण जगण हो, तीसरा गण दो गुरुका हो चौथा गण जगण हो, सातवाँ जगण न हो, अंतमें गुरु हो, उसे चपला कहते हैं । ९ एक तरहकी प्राचीन नाव । यह ४८ हाथ लम्बी, २४ हाथ चौड़ी और २४ हाथ ऊंची होती थी और सिर्फ बड़ी बड़ी नदियोंमें चलती थी ।

चपलाङ्ग (सं० त्रि०) चपलं अङ्गं यस्य, बहुव्री० । १ जिसका शरीर चंचल हो । (पु०) २ शुशुक, सुसमार, सूस ।

चपलाङ्गन (सं० पु०) १ चंचल स्त्री । २ भाग्यदेवता, लक्ष्मी ।

चपलावक्ता (सं० क्ली०) छन्दोविशेष, एक तरहका छन्द जिसके प्रथम और तृतीय चरणके चतुर्थ अक्षरके बाद एक नगण अर्थात् तीन लघु अक्षर रहें, उसे चपलावक्ता कहते हैं ।

चपलात्मक (सं० त्रि०) चञ्चल प्रकृति, जिसका स्वभाव चञ्चल हो ।

चपाट (हिं० पु०) एक तरहका जूता जिसकी एँड़ी उठी न हो, चपौर जूता ।

चपाती (हिं स्त्री०) हाथसे बढ़ाई जानेवाली पतली रोटी ।

चपातीसुमा (उ० वि०) रोटीके जैसे सुमवाला ।

चपाना (हिं० क्रि०) १ रखो जोड़ना । २ दबवाना, दबानेका काम कराना । ३ लज्जित करना, झपाना ।

चपेट (सं० पु०) चप-इट अच् । १ प्रहस्त, धक्का, झोंका, रगड़ । २ झापड़, थप्पड़, तमाचा । ३ दबाव, संकट ।

चपेटना (हिं० क्रि०) १ दबाना । २ बलपूर्वक भगाना । डाँटना, फटकार बताना ।

चपेटा (सं० स्त्री०) चपेट-टाप् । १ चपेट देखो । २ दोगला, वर्णसंकर ।

चपेटी (सं० स्त्री०) भाद्रपदकी शुक्ला षष्ठी, भादों सुदी छठ । स्कंदपुराणमें संतानके हितार्थ पूजनके लिये गिनाई हुई द्वादश षष्ठियोंमेंसे एक । स्कन्दपुराणमें उन षष्ठियोंके भिन्न भिन्न नाम दिये गये हैं । यथा,

वैशाखमें—चान्दनी, ज्यैष्ठमें—अरण्य, आषाढ़में—कार्टमी, श्रावणमें—लुण्ठनी, भाद्रमें—चपेटी, आश्विनमें—दुर्गा, कार्तिकमें—नाड़ो, अगहनमें—मूलक, पौषमें—अन्नपूर्णा, माघमें—शीतला, फाल्गुनमें—गो और चैत्रमें अशोका। कोई कोई चपेटीषष्ठीको मन्थान षष्ठी कहा करते हैं।

चपेहर (देश०) पुष्पविशेष, एक फलका नाम।

चपोटसिरीस (देश०) सीसमकी जातिका एक वृक्ष। इसके पत्ते पौष माघमें झड़ जाते हैं। यमुनाके पूर्व हिमालयकी तराईमें यह बहुत उत्पन्न होता है। इसके बीजोंमेंसे तेल निकलता है और इसके पत्ते तथा छिलके दवाके काममें आते हैं। इस पेड़से बहुत मजबूत और लंबी धरन निकलती है।

चपौटी (हिं० स्त्री०) छोटी टोपी।

चपौर (देश०) बङ्गाल तथा आसाममें पाया जानेवाला एक तरहका जलपक्षी। यह शरद ऋतुमें दिखाई देता है। इसकी चोंच और पैर पीले तथा सिर, गर्दन और छाती हलकी भूरी होती है।

चप्पड़ (हिं० पु०) चिप्पड़ देखो।

चप्पन (हिं० पु०) छिछला कटोरा।

चप्पल (हिं० पु०) वह जूता जिसकी एँड़ी चिपटी होती है।

चप्पल-सेहुँड़ (हिं० पु०) नागफनी।

चप्पा (हिं० पु०) १ चतुर्थांश, चौथाई भाग, चार भागोंमेंसे एक। २ थोड़ा भाग। ३ वह जगह जो चार अंगुल या चार बालिश्तकी हो। ४ थोड़ी जगह।

चप्पी (हिं० स्त्री०) चरणसेवा, धीरे धीरे हाथ पैर दबानेकी क्रिया।

चप्पू (हिं० पु०) कलवारी, पतवारसा काम देनेवाला एक तरहका डाँड़।

चप्य (सं० त्रि०) चप-यत्। भोजनीय, खाने योग्य।

"चप्यं न पायुं भिषगस्य" (शुक्लयजुः १९।८८)

चफाल (हिं० पु०) दलदल भूमि, वह जगह जिसके चारों ओर कीचड़ हो।

चबक (देश०) वह दर्द जो रह रह कर उठता हो, चिलक, टीस, पीड़ा, हूल।

चबकना (देश०) टीसना, चमकना, चिलकना, हूल मारना, पीड़ा उठना।

चबकी (देश०) स्त्रियोंके केश बांधनेकी रस्सी जो सूत या ऊनकी गुथी होती है।

चबनीहड्डी (हिं० स्त्री०) भुरभुरी और पतली हड्डी।

चबला (देश०) पशुओंके मुखका एक रोग जिसे लाल रोग भी कहते हैं।

चबवाना (हिं० क्रि०) चबानेका काम कराना।

चबाना (हिं० क्रि०) १ दांतोंसे कुचलना। २ दाँतसे काटना, दरदराना।

चबाव (हिं० पु०) चबाव देखो।

चबूतरा (हिं० पु०) ऊँची जगह जो बैठनेके लिये चौरस बनाई रहती है, चौतरा।

चबैना (हिं० पु०) चर्वण, सूखा भुना हुआ अनाजका दाना जो चबा कर खाया जाता है, भूँजा।

चबैनी (हिं० स्त्री०) १ जलपानकी सामग्री। २ जलपानका मूल्य।

चभक (अनु०) वह शब्द जो किसी वस्तुके पानीमें डूबनेसे होता है।

चभड़चभड़ (अनु०) १ खाते समय मुखके हिलनेका शब्द। २ वह आवाज जो कुत्ते, बिल्ली आदिके जीभसे पानी पीनेके समय होती है।

चभाना (हिं० क्रि०) खिलाना, भोजन कराना।

चभोक (देश०) मूर्ख, बेवकूफ, गावदी।

चभोरना (हिं० क्रि०) १ डुबोना, गोता देना। २ आप्लावित करना, तर करना।

चमक (हिं० स्त्री०) १ ज्योति, प्रकाश, रोशनी। २ कान्ति, दीप्ति, आभा, झलक, दमक। ३ कमर आदिका दर्द जो चोट लगने या हठात् अधिक परिश्रम पड़नेके कारण होता है, लचक, झटका।

चमकचाँदनी (हिं० स्त्री०) व्यभिचारिणी स्त्री जो हमेशा अपनेको सजाती रहती है।

चमकदमक (हिं० स्त्री०) १ दीप्ति, आभा, झलक, तड़क भड़क। २ ठाट बाट, लकदक।

चमकदार (हिं० वि०) जिसमें झलक हो, चमकीला, भड़कीला।

चमकना (हिं॰ क्रि॰) १ प्रकाशित होना, देदीप्यमान, जगमगाना। २ कीर्ति लाभ करना, उन्नति करना, यश हासिल करना। ३ चौंकना, चञ्चल होना, भड़कना। ४ लड़ाई ठानना, झगड़ा होना। ५ कान्तियुक्त होना, दमकना, झलकना।

६ समृद्ध होना, वृद्धि प्राप्त होना, तरक्की पर होना, बढ़ना। ७ झटसे निकल जाना, फुरतीसे खसक जाना। ८ सहसा तनाव लिए हुए पीड़ा हो उठना, एक बारगी दर्द होना। ९ मटकाना, उँगलियां आदि हिला कर भाव दिखाना। १० मटक कर गुस्सा जतलाना। ११ कमरमें झटका लगना, अधिक जोर लगने वा चोट पहुंचनेसे कमरमें दर्द होना, कमरमें लचका आना।

चमकनी (हिं॰ वि॰) १ चमक जानेवाली, जो जल्दसे चिढ़ जाती हो। २ हावभाव करनेवाली।

चमकसूक्त (सं॰ क्ली॰) वाजसनेयसंहिताके १८ अध्यायों के १से २७ मन्त्रको चमकसूक्त कहते हैं।

चमकाना (हिं॰ क्रि॰) १ चमकीला करना, चमक लाना, झलकाना। २ सफेद करना, निर्मल करना, झक करना। ३ भड़काना, चौंकाना। ४ चिढ़ाना, खिझाना।

चमकानी (चकमानी) अफगानस्तानकी एक जाति। ये लोग प्राय ६३० वर्ष पहिले पारस्यसे अफगानस्तानमें आये थे और खट्टकजातिके साथ रहते थे। मूकिम और कानिगोराम नामक स्थानोंमें अब भी ३।४ सौ चमकानी रहते हैं। यह एक इस्लामधर्मावलम्बी पारस्य देशीय सम्प्रदाय है। इनका आचार व्यवहार और धर्मप्रणाली अति कुनीतिपूर्ण होनेके कारण ये लोग पारस्यराज द्वारा अपने देशसे निकाल दिये गये थे। इस समय ये अपनेको सिया सम्प्रदायभुक्त और कट्टर मुसलमान बताते हैं। इनके विशेष विशेष धर्माचार और तदानुसङ्गिक कुनीति-पूर्ण क्रियाकलापोंके विषयमें अत्याश्चर्यजनक विवरण पाये जाते हैं।

एक जलता हुआ दीपक इनके व्रतानुष्ठानका प्रधान अङ्ग था। इस अनुष्ठानमें क्या पुरुष और क्या स्त्री, सब ही शामिल होते थे। कुछ देर तक मन्त्रादि पाठ और अन्यान्य पूर्वकृत्य समापन होनेपर यथासमय मुल्लाजी दीपकको बुझा देते थे। इसके बाद ही वीभत्स पैशाचिक काण्ड शुरू होता था। इस विसदृश रीतिके लिए ही पारसीक लोग इनको 'चिरागकुश' (अर्थात् दीपक बुझानेवाले) तथा पठान लोग "अरमुर" (अर्थात् अग्नि-निर्वापक) कहते थे। इनके आदिपुरुषका नाम अमीर लोबान था। अफगान लोग कहते हैं कि, एक समय ३।४ वर्षका दुर्भिक्ष पड़ा था, उस समय ये लोग नानादेशों-को भाग गये थे। घूमते घूमते फिर पेशावरके पास चमकानी ग्राममें आ बसे थे।

इस समय चमकानी-परिवारकी संख्या करीब ५ हजार होगी। ये शान्तप्रकृति और परिश्रमी हैं, किसी-के अनिष्ट करनेकी चेष्टा नहीं करते और न कभी युद्ध वा चोरी-डकैती ही करना चाहते हैं।

चमकारा (हिं॰ पु॰) चमत्कार, प्रकाश, चमक।

चमकी (हिं॰ स्त्री॰) कारचोबीमें रुपहले सुनहले तारों-के छोटे छोटे गोल अथवा चौकोर चिपटे टुकड़े। यह जमीन भरनेके काममें आते हैं, सितारे, तारे।

चमकीला (हिं॰ वि॰) १ जिसमें चमक हो, चमकदार, ओपदार। २ भड़कदार, शानदार।

चमकीवल (हिं॰ पु॰) चमकानेकी क्रिया।

चमक्को (हिं॰ स्त्री॰) १ चञ्चल और निर्लज्ज स्त्री। २ व्यभिचारिणी स्त्री, कुलटा औरत। ३ वह स्त्री जो जल्द चिढ़ जाती हो, झगड़ालू स्त्री।

चमगादड़ (हिं॰ पु॰) चर्मचटका, पक्षिविशेष, एक उड़ने-वाला बड़ा जंतु जिसके चारों पैर परदार होते हैं। इसके कान बड़े बड़े होते हैं। इसे चोंचकी जगह मुँहमें दांत होते हैं। दिनके समय यह पक्षी और पशुके भयसे बाहर नहीं निकलता है, वरन दिन भर किसी पेड़की डालमें चिपटा रहता है। इनके झुण्डके झुण्ड पुराने खंडहरों आदिमें लटके पाये जाते हैं। यद्यपि यह जंतु हवामें बहुत ऊपर तक उड़ता है, पर उसमें चिड़ियोंके सब लक्षण नहीं हैं। यह देखनेमें चूहेके जैसे मिलते जुलते हैं। इसे कान होते हैं और चिड़ियोंकी तरह अण्डा नहीं पारता वरन बच्चा देता है। चमगादड़ प्रायः कीट पतंग और फल खाता है। इसके अनेक भेद हैं, कुछ तो छोटे छोटे होते हैं और कुछ इनसे बड़े होते कि

परोंको दोनों ओर फैला कर नापनेसे वे लगभग डेढ़ गज ठहरते हैं।

चमचक्र (सं० पु०) कुरुक्षेत्रके पार्श्ववर्ती प्रदेश।

चमचम (देश०) एक तरहकी मिठाई। यह दूध फाड़ कर उसके छेनेसे बनती है।

चमचमाना (हिं० क्रि०) चमकना प्रकाशमान होना, झलकना, दमकना।

चमचा (फा० पु०) १ एक प्रकारका छोटा पात्र जिसमें डाँड़ी लगी रहती है। इससे दूध, चाय आदि उठा उठा कर पीते हैं, एक तरहकी छोटो कलछी, चम्मच, डोई, कफचा। २ कोयला निकालनेका एक तरहका फावड़ा, डूँगा। ३ नावमें डाँड़का चौड़ा अग्रभाग, हाथा, हलेसा, पंगई, बैठा।

चमचिचड़ (हिं० वि०) पिण्ड या पीछा न छोड़नेवाला।

चमची (हिं० स्त्री०) १ छोटा चम्मच, आचमनी। २ छोटा चिमटा।

चमजुई (हिं० स्त्री०) १ कीटविशेष, एक तरहका छोटा कीड़ा जो पशुओं तथा कभी कभी मनुष्योंके शरीर पर उत्पन्न हो जाता है, चिचड़ी। २ एक तरहकी वस्तु जो चिचड़ीकी तरह चिमट जाती है।

चमट (सं० पु०) स्थूल गोधूम, मोटा गेहूं।

चमड़ा (हिं० पु०) १ चर्म, त्वचा, जिल्द। २ पशुओंके मृत शरीर परसे उतारा हुआ चर्म जिससे जूते, बैग आदि बहुतसी चीजें बनती हैं, खाल, चरसा। ३ छाल, छिलका। चर्म देखो।

चमड़ी (हिं० स्त्री०) चर्म, त्वचा, खाल।

चमत्करण (सं० क्ली०) चमत्-कृ भावे ल्युट्। १ आश्चर्य ज्ञान करण, चमत्कार करने या होनेकी क्रिया। (त्रि०) २ चमत्कार करनेवाला। ३ आश्चर्य ज्ञान करनेवाला।

चमत्कर्तृ (सं० त्रि०) १ जो चमत्कृत करता हो, चमत्कार करनेवाला। २ जो आश्चर्य ज्ञान करता हो, विलक्षण, अनूठा।

चमत्कार (सं० पु०) चमत्करोतीति चमत्-कृ कर्तरि अण्। १ अपामार्ग, चिचड़ा, लटजीरा। कृ भावे घञ् ततः ६-तत्। २ चित्तवृत्तिविशेष। अलौकिक वस्तुका ज्ञान होनेसे अनिर्वचनीय आनन्दके लिए चित्तका जो विकाश होता है, उसीका नाम चमत्कार है। आश्चर्य, विस्मय, असाधारण और अलौकिक बात, करामत।

कोई कोई कहते हैं कि किसी एक अलौकिक विषय अनुभव करने पर बाद 'यह क्या?' इस तरह ज्ञानधारा होनेसे चित्तवृत्तिका जो विकाश होता है, उसीका नाम चमत्कार है। फिर किसीके मतसे अलौकिक वस्तुका अनुभव होनेसे 'दृष्टके कारणसे यह सम्भव नहीं है' इस तरह विचार कर कारणान्तरका अनुसन्धान करनेसे जो मानसिक व्यापार होता है, उसका नाम चमत्कार है। कोई कहते हैं कि चमत्कार सुखविशेष है और चमत्कारत्व आह्लादगत जातिविशेष है।

३ उद्वेग, चित्तकी आकुलता, घबराहट।

"सम्भृतचमत्कारस्फुरत्सम्भ्रमा।" (काव्यप्र०)

४ डमरू।

चमत्कारक (सं० त्रि०) चमत्-कृ ण्वुल्, ६-तत्। विस्मयजनक, चमत्कार उत्पन्न करनेवाला, आश्चर्यजनक, विलक्षण, अनूठा।

चमत्कारपुर—नागरखण्डवर्णित एक पुण्यस्थान।

चमत्कारित (सं० त्रि०) चमत्कारः सञ्जातोऽस्य चमत्कार इतच्। विस्मित, जिसे आश्चर्य हो गया हो।

चमत्कारिन् (सं० त्रि०) चमत्करोतीति चमत्-कृ-णिनि। १ जिसमें चमत्कार हो, अद्भुत। २ चमत्कार दिखानेवाला, विलक्षण बातें करनेवाला, करामती।

चमत्कृत (सं० त्रि०) चमत्-कृ-क्त। विस्मयापन्न, आश्चर्यान्वित, विस्मित।

चमत्कृति (सं० स्त्री०) चमत्-कृ-क्तिन्। चमत्कार, आश्चर्य, विस्मय।

चमन (फा० पु०) १ हरी क्यारी। २ फुलवारी, घरके भीतरका छोटा बगीचा। ३ गुलजार बस्ती, रौनकदार शहर।

चमन—१ बलुचिस्तानके कोटापिशीन जिलेका एक उपविभाग और तहसील। यह अक्षा० ३०° २८' एवं ३१° १८' उ० और देशा० ६६° १६' तथा ६७° १८' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें अफगानिस्तान पड़ता है। इस उपविभागका अधिकांश तोब नामक पार्वतीय प्रदेश है। भूपरिमाण १२३६ वर्गमील और लोकसंख्या

प्रायः ५३७५ है। इसमें चमन नामका एक शहर लगता है।

२ बलुचिस्तानके क्वोटा-पिशीन जिलेके चमन उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० ३०° ५६' उ० और देशा० ६६° २६' पू० समुद्रपृष्ठसे ४३११ फुट ऊंचे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २२३३ है।

चमर (सं० पु०-स्त्री०) चमू अदने अरच्। अर्तिकमिभ्रमिचमिदेविवासिभ्यश्चित्। उण् ३।१३१। १ भैंसकी जातिका एक पशु, जिसकी पूंछसे चामर बनाया जाता है। यह पशु हिमालयकी उत्तरीय पर्वत पर हमेशा दीख पड़ता है, सुरा गाय। चामर देखो।

"चमराः सृमराश्चैव ये चान्ये वनचारिणः।" (रामायण)

२ दैत्यविशेष, एक दैत्यका नाम। चमरस्य इमित्यण्। संज्ञात्वात् वृद्ध्यभावः। (क्ली०) ३ चामर, सुरा गायकी पूंछका बना चंवर, चामर।

चमरख (हिं० स्त्री०) १ चरखेकी गुड़ियोंमें लगानेकी चमड़ेकी बनी हुई चकती। (वि०) २ दुबली पतली।

चमरखा (सं० पु०) चर्मकशा, एक सुगन्धित जड़ जो उबटन आदिमें पड़ती है।

चमर-जुलाहा (हिं० पु०) हिन्दू कपड़ा बुननेवाला, हिन्दू जुलाहा, कोरी।

चमरपुच्छ (सं० पु०-स्त्री०) चमरस्य पुच्छ इव पुच्छो यस्य, बहुव्री०। १ बिलशायी पशुविशेष, एक तरहका हिरन। (क्ली०) ६-तत्। २ चामर, चंवर।

चमरबगली (हिं० स्त्री०) एक तरहकी चिड़िया जो बगलेसी मिलती जुलती है।

चमरशिखा (हिं० स्त्री०) घोड़ोंकी कलगी।

चमरस (हिं० पु०) चमड़े या जूतीकी रगड़से उत्पन्न घाव।

चमराखारो (हिं० पु०) खारी नमक।

चमरावत (हिं० स्त्री०) चमड़ा या मोट आदि बनानेकी मजदूरी।

चमारक (सं० पु०) चमरिव केशरोऽस्त्यस्य चमर-ठन्। कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़। (चमर २।४।२२)

चमरिया सेम (हिं० स्त्री०) सेमका एक भेद, एक प्रकारकी सेम।

चमरी (सं० स्त्री०) चमरस्य स्त्री जातिः चमर ङीष्। १ चमर जातीय स्त्री, चमरगवी, सुरा गाय।

"कुर्वन्ति बालव्यजनैश्चमर्यः।" (कुमार १।१३)

२ मञ्जरी, मंजरी। ३ चंवरी।

चमरू (देश०) चमड़ा, छाल, चरसा।

चमरोर (देश०) वृक्षविशेष, एक तरहका पेड़ जिसकी छाया बहुत घनी होती है।

चमरौट (हिं० पु०) खेत, फसल आदिका वह भाग जो ग्राममें चमारोंको उनके कामके बदलेमें मिलता है।

चमला (देश०) भिक्षापात्र, भीख मांगनेका ठीकरा।

चमस (सं० पु०-क्ली०) चम्यते भुज्यते सोमः अस्मिन् चम-असच्। अत्य विचमित्यादि। उण् ३।११७। १ यज्ञीय पात्रविशेष, सोमपान करनेका चम्मचके आकारका एक यज्ञपात्र। पलाश आदि वृक्षके १२ उंगली परिमाणका एक काष्ठ ले कर ४ उंगली पर हाथसे पकड़नेके लिये दण्ड रहता है तथा शेष ८ उंगली पर चार अङ्गुल परिमाणका चतुष्कोण गड्डा बनाना पड़ता है। उगतके दोनों पार्श्व। ३ अङ्गुल विस्तृत होना चाहिये। होता और ब्रह्मा प्रभृतिके चमसदण्ड भिन्न भिन्न तरहके होते हैं।

(पु०) २ पर्पट, पापड़। ३ लड्डुक, लड्डू। ४ ऋषभदेवके एक पुत्रका नाम। ५ उर्दका आटा, धुआंस। ६ कलछा, चम्मच। ७ नौ योगीश्वरोंमेंसे एक। ८ पिष्टकभेद।

चमसाध्वर्यु (सं० पु०) ऋत्विक्विशेष।

"प्रपद्यन्ते चमसाध्वर्यव एव ते।" (अथर्व ६।६।५१)

चमसिन् (सं० पु०-क्ली०) चमसयुक्त, जिससे चमचा हो।

चमसी (सं० स्त्री०) चमस-ङीष्। १ उर्द, मूंग, मसूर आदिकी पीठी। २ काष्ठनिर्मित यज्ञीय पात्रविशेष, चम्मचके आकारका लकड़ीका एक यज्ञपात्र। (भारत)

चमसोद्भेद (सं० पु०) प्रभासक्षेत्रके पास एक तीर्थ।

"ततस्तु चमसोद्भेदमच्युतस्त्वगमद्बली।" (भारत श० ३६ अ०)

महाभारतमें लिखा है कि सरस्वती यहीं अदृश्य हो गई थी। इस तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यागका फल लाभ होता है।

चमसोद्भेदन (सं० क्ली०) तीर्थविशेष, चमसोद्भेद। (भारत ३।८८ अ०)

चमाचम (हिं० वि०) उज्ज्वल कान्तिके सहित, झलकके साथ।

चमार (हिं पु०) चमड़ेका काम करनेवाला, एक नीच जाति जो चमड़ेका काम करती है। चर्मकार देखो।

चमरदि—गुजरातमें काठियावाड़ जिलाके अन्तर्गत गोहिलवाड़के मध्यस्थित एक क्षुद्र राज्य। यहांकी आमदनी लगभग दश हजार रुपये है, जिसमेंसे गायकवाड़को ७६५) रु और जुनागड़के नवाबको ८०) रूपये कर देने पड़ते हैं।

चमारी (हिं० स्त्री०) १ चमार जातिकी स्त्री, चमारकी स्त्री। २ चमारका काम। ३ कमलका वह फूल जिसमें कमलगट्टे के जोरे खराब हो जाते हैं।

चमियारी (देश०) पद्मकाष्ठ।

चमीकर (सं० पु०) कृतस्वर नामक स्वर्णका उत्पत्तिस्थान, प्राचीन कालका एक स्थान जिससे सोना निकलता था। इसीसे सोनेका एक नाम चामीकर रक्खा गया है।

चमू (सं० स्त्री०) चमयति विनाशयति रिपून् चम-उ। कृषिचमितनीति। उण् १।८०। १ सेनामात्र, सेना, फौज।

"पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूं।" (गीता १।१)

२ सेनाविशेष, अमर और मेदिनीके अनुसार ७२६ हाथी, ७२८ रथ, २१८७ सवार और ३६४५ पैदल सब मिलाकर ७२९० का नाम चमू है।

अधिकरणे उ। (स्त्री०) ३ चमस। ४ स्वर्ग और पृथिवी।

चमूकन (देश०) चौपायोंके शरीरमें चिमटनेवाली एक तरहकी किलनी।

चमूचर (सं० पु०) चमूषु चरतीति चमू-चर-ट। १ सैनिकपुरुष, सिपाही। २ सैन्याध्यक्ष, सेनापति।

चमूनाथ (सं० पु०) चमूना नाथ, ६-तत्। सैन्याध्यक्ष, सेनापति। "युवतिचमूनाथमीज्यवश्चाणां" (कुला० १६ अ०)

चमूरु (सं० पु०) चम-ऊर। खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ। उण् ४।८०। पृषोदरादित्वात् अकारस्य उकारः। मृगविशेष, एक तरहका मृग।

"इदमूरुयुगं न चमूरुहम:" (प्रसन्नराघव)

चमूषद् (सं० त्रि०) चमूषु सीदन्ति चमू-सद-क्विप सुषमादेराकृतिगणत्वात् षत्वं। जो चमस प्रभृति यज्ञीय पात्रमें अवस्थान करते हों।

"इमा मध्यमूषद:।" (ऋक् १।१४।४)

'चमूषदश्चमसादिपात्रे अवस्थिता:' (सायण)

चमूहर (सं० पु०) चमूं दानवसैन्यं हरति चमू-हृ-अच्। शिव, महादेव।

"चमूहर: सुरेशय" (भारत अनु० १७ अ०)

चमेठी (देश०) पालकीके कहारोंकी एक बोली।

चमेलिया (हिं० वि०) चमेलीके रंगका, सोनजर्द।

चमेली (हिं० स्त्री०) १ सुगन्धित फूलोंके लिए प्रसिद्ध एक लता वा झाड़ी। इसकी टहनियां लंबी और पतली तथा उसके दोनों ओर पतली सींकोंमें छोटी छोटी पत्तियां लगी होती हैं। इसके फूलोंकी सुगन्ध बहुत मीठी और सुहावनी होती है। इसके दो भेद हैं—एकमें लाल और दूसरीमें सफेद फूल लगते हैं।

जाती, मालती, मल्लिका आदि शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

२ एक तरहकी इशारेकी बोली जिसे मल्लाह लोग ऊंची लहर उठने पर दोनों ओर थपेड़ लगानेके लिए बोलते है। इसके कारण प्रायः नावें डूब जाती हैं।

चमोई (देश०) एक तरहका पेड़ जिसकी छालसे नैपाली कागज बनाया जाता है। यह पेड़ सिकिमसे भूटान तक पाया जाता है।

चमोटा (हिं० पु०) चमड़ेका टुकड़ा जिस पर हज्जाम छुरेको उसकी धार तेज करनेके लिये बार बार रगड़ते हैं।

चमोटी (हिं० स्त्री०) १ चाबुक, कोड़ा। २ पतली छड़ी, कमची, बेंत। ३ चमोटी।

चमौवा (हिं० पु०) एक तरहका भद्दा जूता जिसके तलेमें चमड़ेकी सिलाई हो, चमरौधा।

चम्प (सं० पु०) चपि-अच्। १ कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़। २ चम्पकपुष्प, चंपा फूल। ३ एक क्षत्रिय राजा। हरिवंश और विष्णुपुराणमें ये चञ्चु नामसे प्रसिद्ध हैं। इनके पिताका नाम हरित, पितामहका नाम हरिश्चन्द्र और पुत्रका नाम शुकदेव था। इन्होंने चम्पापुरी स्थापित की। (भागवत, पद्म)

चम्पक (सं० पु०) चपि-ण्वुल्। १ एक प्रकारका फूल

और उसका पेड़, चम्पा (Michelia Champac)। इसके पर्यायवाची शब्द—चाम्पेय, हेमपुष्पक, स्वर्णपुष्प, शीतलाच्छद, सुभग, भृङ्गमोही, शीतल, भ्रमरातिथि, सुरभि, दीपपुष्प, स्थिरगन्ध, अतिगन्ध, स्थिरपुष्प, पीतपुष्प, हेमाह्व, सुकुमार और वनदीप हैं। दक्षिण उत्कलमें काञ्चनमु, तेलगूमें चम्पकमु, तामिलमें शेम्बुघा, कर्णाटकमें सम्पघि, सिंहलमें सप्पू, मलयमें जम्पक, ब्रह्ममें सा-गा ए और चीनदेशमें चेन्-पु-किया कहते हैं।

भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही यह पेड़ होता है। चम्बा राज्यमें इसका पेड़ ४०—५० हात ऊंचा होता है। भारतमें इसकी लकड़ीसे लाङ्गल या हलबनता है और सिंहलमें ढोलक, गाड़ी, पालकी आदि बनतीं हैं। चीनदेशमें इस पेड़को छाल दालचीनीके साथ मिलाई जाती है।

इसका सुवर्णवर्ण कुसुम हिन्दुओंका अति प्रिय और श्रद्धाकी चीज है। इसका फूल कृष्णपूजामें प्रशस्त है। इसी फूलसे मदनके पञ्चशरोंमेंसे एक वाण बना था।

किसीके मतसे, इसकी महक इतनी तीव्र है कि, मधुमक्षिका इसके पास तक नहीं जा सकती। इसकी छाल रजोनिःसारक होती है। मंद्राजमें सम्पती नामका जो तेल बनता है, वह इसी पेड़की लकड़ीसे बनता है। डाकर ओसफनेसिके मतसे इसकी छालका चूर्ण सविराम ज्वरमें १० से ३० ग्रेन तक दिया जा सकता है।

इसके गुण—कटु, तिक्त और शीतल। यह दाह, कुष्ठव्रण और कण्डूनाशक होता है। भावप्रकाशके मतसे इसके गुण—कषायला और मधुर तथा विष, क्रमिरोग, कफ, वायु और अस्रपित्तनाशक है।

२ कदलीवृक्षविशेष, एक तरहके केलेका पेड़। चम्पा केलेका पेड़। (क्ली०) ३ पुष्पविशेष, चम्पा फूल।

"बालोकयचम्पककोरकावली:।" (नैषध०)

४ पनस या कटहल फलका एक अवयव। ५ कदलीविशेष, चम्पा केला। (राजनि०) भावप्रकाशके मतसे यह गुरु, पक्व और वीर्यकर तथा वातपित्तनाशक है। इसका रस अत्यन्त शीतल होता है। पक जाने पर यह फल अति मधुर हो जाता है।

६ सांख्यशास्त्रोक्त सिद्धिविशेष, चतुर्थसिद्धि, कहीं कहीं चम्पकको जगह रम्यक भी पाठ है। रम्यक देखो।

७ तीसरे पहरमें गाया जानेवाला एक राग जो सम्पूर्ण जातिका होता है। यह दीपक रागका पुत्र कहलाता है।

चम्पककदली (सं० स्त्री०) सुवर्णकदली, चम्पा केला।

चम्पकचतुर्दशी (सं० स्त्री०) ज्येष्ठ मासकी शुक्ला चतुर्दशी मत्स्यपुराणमें लिखा है—ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशीको अयुत, सहस्र अथवा एक सौ चम्पकपुष्प द्वारा शिवकी अर्चना और खीरकी वलि प्रदान करनेका नाम ही चम्पकचतुर्दशी व्रत है। यह व्रत रातको किया जाता है। इस व्रतके पालन करनेसे क्षय और ज्वर आदि रोग तथा दश जन्मके पाप नष्ट होते हैं। (संवत्सरकौमुदीधृत ब्रह्मपुराण और उत्तर कामाख्यातन्त्रके ११ वें पटलमें इस व्रतका तथा उसके फलका विवरण लिखा है।)

चम्पकनाथ—एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने भावार्थचरणटीका, स्मृतिचरणटीका और शास्त्रदीपिकाप्रकाशकी रचना की है।

चम्पकमाला (सं० स्त्री०) चम्पकस्य माला, ६-तत्। १ चंपाके फूलोंकी माला। २ चम्पाफूलके जैसा स्त्रियोंके कण्ठालङ्कारविशेष, स्त्रियोंके गलेका एक गहना। चम्पाकलि। ३ छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम जिसके प्रत्येक पादमें दश अक्षर रहते हैं। प्रत्येक पदका १ला, ४था, ५वां, ६ठा, ८वां, और १०वां अक्षर गुरु और शेष वर्ण लघु होते हैं। किसीके मतसे इस छन्दका नाम रुक्मवती है।

चम्पकरम्भा (सं० स्त्री०) चम्पक इति नाम्ना प्रसिद्धा रम्भा, मध्यपदलो०। चम्पा केला। चम्पक देखो।

चम्पककलिका (सं० स्त्री०) चम्पक कोरल, चम्पाकी कली।

चम्पकानन्दाकुञ्ज (सं० पु०-क्ली०) वृन्दावनके गोवर्द्धनके पास श्याम और राधाकुण्डके निकटस्थ चम्पकलतिकाका कुञ्ज।

चम्पकारण्य (सं० क्ली०) चम्पक बहुलमरण्यं, मध्यपदलो०। तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम जिसका वर्णन महाभारतमें किया गया है। यहां पर एक रात बितानेसे हजार गोदानका फल प्राप्त होता है।

"ततो गच्छेत राजेन्द्र चम्पकारण्यमुत्तमम्।
तत्रोष्य रजनीमेकां गोसहस्रफलं लभेत्।" (भारत वन ८४ अ०)

इसका वर्तमान नाम चम्पारण्य है।

चम्पकालु (सं० पु०) चम्पकेन पनसावयवविशेषेण अलति चम्पक अल-उण्। पनस, कटहल।

चम्पकावती (सं० स्त्री०) चम्पक अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य वः संज्ञायां दीर्घः। चम्पापुरी। चम्पा देखो।

चम्पकुन्द (सं० पु०) चम्पइव कुन्दते कुदि-अच्। मत्स्य-विशेष, एक तरहकी मछली। इसका गुण—गुरु, शुक्र-वर्द्धक, मधुर और वातपित्तनाशक है।

चम्पकोल (सं० पु०) पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

चम्पकोष (सं० पु०) चम्पश्चम्पक इव कोषो यस्य, बहुव्री०। पनस, कटहलका पेड़।

चम्पतराय—एक विख्यात बुन्देला सर्दार, छत्रसालके पिता। १७वीं शताब्दीमें इन्होंने सैन्य दलको साथ ले मुसलमानोंको परास्त कर वेत्रवती नदीतीरवर्ती समुदाय भूभाग अधिकार किया था।

लाल कविके बनाये हुए छत्रप्रकाश नामक हिन्दी ग्रन्थमें इनका यथेष्ट परिचय है। छत्रसाल देखो।

चम्पा (हिं० स्त्री०) चम्पक देखो।

चम्पा (सं० स्त्री०) चम्पा नदी अस्ति अस्याम्, चम्पा अर्श आदित्वात् अच्। अथवा चम्पेन राज्ञ हरिश्चन्द्रस्य प्रपौत्रेण निर्मिता या पुरी। १ गङ्गातीरस्थ अङ्ग राज्यकी राजधानी। महाभारत और पुराणमें चम्पा, चम्पापुरी प्रभृति नामोंसे उसका उल्लेख है। हेमचन्द्रने मालिनी, लोमपादपू और कर्णपू आदि चम्पाके कई एक पर्याय लिखे हैं। वर्तमान भागलपुरके निकट ही वह नगर रहा। विख्यात चीनपर्यटक युएनचुयाङ्ग चम्पाका ऐसा विवरण लिख गये हैं—चम्पा एक विस्तृत प्रदेश है। इसकी राजधानी चम्पानगर उत्तरभागमें गङ्गाके तीर अवस्थित है। यह प्रदेश समतल तथा उर्वर है और सुचारुरूपसे कर्षित हुआ करता है। वायु मृदु और ईषदुष्ण है। अधिवासी सरल और सत्यवादी हैं। यहां बहुतसे जीर्ण सङ्घाराम हैं। इन सब मठोंमें प्रायः २०० बौद्ध यति रहते हैं। यह हीनयान मतावलम्बी हैं। इसमें कोई २० देवमन्दिर हैं। राजधानीका चतुर्दिक्स्थ प्राचीर इष्टकनिर्मित, अत्युच्च और शत्रुगणको दुराक्रम्य है। कहते हैं, इसी कल्पके आरम्भमें जब मनुष्य प्रभृतिकी प्रथम सृष्टि हुई, एक अप्सरा किसी अपराधसे स्वर्गच्युत हो मर्त्यमें आ करके बसी थी। फिर किसी देवके औरस और इसी अप्सराके गर्भसे ४ पुत्र हुए। इन्हीं पुत्रोंने जम्बुद्वीपको चार अंशोंमें बांट लिया और प्रत्येकने अपने अपने अंशमें राज्य स्थापन किया। उन्हींमें एक चम्पानगरके स्थापयिता थे। इस नगरसे पूर्व थोड़ी दूरकी गङ्गाके दक्षिण तीर पर एक पहाड़ और तदुपरि एक देवमन्दिर है। इस मन्दिरके देवता प्रत्यक्ष हैं और अनेक अलौकिक घटना प्रदर्शन करते हैं। पहाड़को काट करके मन्दिर आदि निर्मित हुए हैं। इस पहाड़ और उसके गुहा प्रभृति देखनेको बहुतसे ज्ञानी आया करते हैं। इस प्रदेशके दक्षिणांशमें अरण्य है। बीच बीच हाथी और अन्यान्य वन्य जन्तु दलके दल घूमते हैं। (Si-yu-ki)

भागवतादिके मतमें हरितपुत्र चम्पने अपने नाम पर चम्पानगरी बनायी। चम्प देखो।

२ पूर्व उपद्वीपका एक अति प्राचीन राज्य। वर्तमान आनाम और कम्बोडिया अर्थात् कम्बोजके दक्षिणांशमें यह राज्य अवस्थित था। अद्यापि उस स्थानके थोड़े अंशको चम्पा कहते हैं। इस देशके अधिवासी चम् (चम्) नामसे ख्यात हैं। प्रवाद है—कम्बोजोंके आनेसे पहले यह किसी समय श्याम उपसागरसे समस्त उपद्वीपमें व्याप्त हो करके वास करते थे। पहले वह सब हिन्दू धर्मावलम्बी थे। अनुमान होता है कि गङ्गातीरवर्ती चम्पानगरके अनुकरण पर उसका नामकरण हुआ होगा। खृष्टीय ७म शताब्दको पार्थक्य दिखलानेके लिये इसको महाचम्पा कहते थे। चीना पर्यटक युएनचुयाङ्गने कम्बोडियाकी चम्पाको महाचम्पा और गङ्गातीरवर्ती चम्पानगरको चम्पा-जैसा ही (चेन्-पो) लिखा है।

आनामवासियोंके आक्रमण करनेसे पहले यह राज्य प्रबल पराक्रान्त हिन्दू राजा कर्तृक शासित होता था। उस समय इसकी सीमा, श्याम और आनाममें बहुत दूर तक विस्तृत थी।

आनामी भाषामें चम्पाके लोगोंको लुई कहते हैं। यह बराबर हिन्दू मतावलम्बी रहे। इनकी उपासना

प्रभृति बौद्धों और जैनों जैसी है। यहां भी हर, पार्वती आदिकी पूजा होती है। कितने ही वर्ष पहले वहां कई एक प्राचीन शिलालिपि और अनुशासन प्रभृति मिले थे। इनका अधिकांश संस्कृत किंवा चम् भाषामें लिखित है। सबको पढ़नेसे समझ पड़ता है कि वहां पहले पराक्रान्त हिन्दू राजा राजत्व करते थे। उन्होंने स्व स्व नामानुसार इस प्रदेशमें जयहरिलिङ्गेश्वर, श्रीजयहरिवर्मलिङ्गेश्वर, श्रीइन्द्रवर्मशिवलिङ्गेश्वर प्रभृति शिवलिङ्गोंकी प्रतिष्ठा की थी। इनमें संस्कृतभाषाकी लिखी लिपियां अति प्राचीन हैं।

चम्पा—काश्मीरका सीमान्त प्रदेश। इसको राजधानीको ब्रह्मपुर कहते हैं। १०२८से १०३१ ई०के बीच काश्मीर-राज अनन्तदेवने उक्त राज्यको आक्रमण किया था। शालदेव नामक चम्पाराज इनके हाथों निहत हुए। फिर उनके पुत्रने चम्पावती नामक एक नगर स्थापन किया। वही चम्पा आजकल चम्बा नामसे प्रसिद्ध है। रावी वा इरावती नदी द्वारा वह नगर दो भागोंमें बंटा हुआ है। चम्बा देखो।

चम्पा—मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलेकी एक जमीन्दारी। इसका परिमाण १२० वर्गमील है। यहाँ कोई ६५ ग्राम और ६३७७ घर होंगे। चंपाके जमीन्दारको कुमार कहते हैं। सदरका नाम भी चम्पा ही है। इस शहरमें बहुतसे जुलाहे रहते हैं। उनके बनाये हुए वस्त्रादि पास ही वामनीडिहीके बाजारमें बिकते हैं।

चम्पा (सं० स्त्री०) १ नदीविशेष। आजकल इसको चम्पई कहते हैं। २ पनसका कोई अवयव।

चम्पाकली (हिं० स्त्री०) स्त्रियोंका एक गहना जो गलेमें पहना जाता है। इसमें चम्पाकी कलीके आकारके सोनेके दाने रेशमके तागेमें गुंथे रहते हैं।

चम्पाधिप (सं० पु०) चम्पाया अधिपः, ६-तत्। कर्ण। कर्ण देखो।

चम्पानगर—भागलपुरके पश्चिम भागका एक ग्राम। यहां बहुतसे मुसलमान संन्यासियोंकी कब्र हैं। यहां भागलपुरके ओसवाल जैनियोंके पुरोहित रहते हैं। यहां तसर, रेशम, सन आदि कपड़ोंकी आढ़त है। चम्पापुरी देखो।

चम्पानेर—बम्बई प्रदेशस्थ पञ्चमहल जिलेके कालोल तालुकका एक प्राचीन ध्वस्त नगर। यह अक्षा० २२ं २९´ उ० और देशा० ७३ं ३२´ पू० में बड़ोदासे २५ मील उत्तर अवस्थित है। यहां बड़ौदा-गोदरा रेलवेका ष्टेशन बना है। १४८३ ई०को जब महमूद बेगर पावागढ़ घेरे थे, वहां पहली मुसलमानी इमारत खड़ी की गयी। उन्होंने एक उम्दा मसजिदकी नींव भी डाली। १४८४ ई०को दुर्ग मुसलमानोंके हाथ लगा और राजपूतोंने छोटे उदयपुर और देवगढ़ बारियाको पलायन किया। महमूद बेगरने पहाड़के नीचे एक भव्य नगर खड़ा कर दिया और अहमदाबादसे अपने मन्त्रियों और सभासदोंको ला इसको राजधानी बना लिया। उन्होंने नगरका नाम महमूदाबाद चम्पानेर रखा था। यह बहुत जल्द बढ़ा और खूब रोजगार चला। चम्पानेरका रेशमी कपड़ा और तलवारें मशहूर थीं। लगे हुए पहाड़ोंमें लोहा मिलता था। किन्तु १५३५ ई०को हुमायूंने उसे लूट लिया और सुलतान बहादुर शाहके मरने पर राजधानी और अदालत अहमदाबाद चली गयी। ई० १७वीं शताब्दीके आरम्भसे इसकी इमारतें गिरने लगीं और जङ्गल बढ़ने लगा। १८०३ ई०को जब अंगरेजोंका वहां अधिकार हुआ, केवल ४०० अधिवासी मिले थे।

चम्पानेरका किला प्रायः १४२० गज लम्बा और ६६० गज चौड़ा है। यह दो भागोंमें बंटा हुआ है। एक भाग अत्युच्च है जिसमें प्रसिद्ध कालिका देवीका मन्दिर है। अपरार्ध अपेक्षाकृत अवनत होते भी दुराक्रम्य है। यहां अति प्राचीन कालके हिन्दू देवदेवीमन्दिर दृष्ट होते हैं। दुर्गके दक्षिण-पूर्व पहाड़से घिरा हुआ एक बड़ा गहरा हौज है जिसमें चारों ओर पत्थरकी सिढ़ियां लगी हैं।

चम्पापुरी—जैनोंका एक तीर्थस्थान। यह भागलपुर जिलेके अन्तर्गत नाथनगरके पास अवस्थित है। यहांसे जैनोंके बारहवें तीर्थङ्कर वासुपूज्य भगवान् मोक्ष गये हैं। यहां एक दिगम्बरोंका तथा ४ श्वेताम्बरियोंके मन्दिर हैं। पहिले ये मन्दिर दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनोंके कब्जेमें थे, पर कुछ दिनोंसे वे श्वेताम्बरोंके काबूमें हैं। यहां एक छोटासा पहाड़ भी है, उसके ऊपर अनेक प्राचीन प्रतिमायुक्त दिगम्बर जैन मन्दिर है, जिसको लोग मन्दारगिरि कहते हैं।

चम्पारण्य—प्राचीनकालका एक जंगल। शायद पहले यह वहां हो, जिसे आजकल चम्पारन कहते हैं।

चम्पारन—विहार प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० २६° १६´ तथा २७° ३१´ उ० और देशा० ८३° ५०´ एवं ८५° १८´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३५३१ वर्गमील है। यह गण्डक नदीके वाम तट पर १०० मील तक विस्तृत है। इसके उत्तर नेपाल, पश्चिम गण्डक और पूर्व तथा दक्षिणको मुजफ्फरपुर है। सोमेश्वर पर्वत जङ्गलसे हरा भरा रहता है। पूर्व सीमा पर कुदी नदी प्रवेश करती जिससे नेपालमें देवघाटकी राह निकलती है। इस सङ्कट मार्गसे १८१५ ई०को अंगरेज फौज नेपाल पर चढ़ी थी। जूरीपानी नदी पर सोमेश्वर पर्वतका दृश्य अत्यन्त मनोहर है। उत्तरको जङ्गल लगा है। इसमें अच्छीसे अच्छी लकड़ी होती है। हरे भरे मैदानोंमें बहुतसे मवेशी चरा करते हैं। उत्तरकी भूमि कड़ी और शीतकालमें उत्पन्न होनेवाले चावलके लायक है। दक्षिणकी ओर हलकी जमीन है। उसमें ज्वार बाजरा, दाल, अनाज और तेलहन होता है। गण्डक, बूढ़ी गण्डक, बाघमती आदि इसकी नदियाँ हैं। ४३ झील जिलेके बीचसे निकले हैं। पहले यहाँ गण्डक और बाघमतीकी बड़ी बाढ़ आती थी। परन्तु अब सरकारने उन पर बांध बंधा दिये हैं।

प्राचीन समयको चम्पारन जिलेमें बड़ा जङ्गल रहा। ब्राह्मण वहां आरण्यक पढ़ा करते थे। कहते हैं कि सुप्रसिद्ध वाल्मीकि ऋषि संग्रामपुरके पास रहते थे। राम और लवकुशमें युद्ध होनेके कारण ही उस स्थानका यह नाम पड़ा। यह जिला मिथिला राज्यका अन्तर्भुक्त रहा। लौरिया-नन्दनगढ़ ग्रामके निकट ३ प्रकाण्ड सूच्यग्र प्रस्तर श्रेणियां विद्यमान हैं। जेनरल कनिङ्गहमके अनुमानमें वह ई०से १००० वर्ष पूर्वको राजाओंके समाधिस्थान जैसे बनाये गये थे। यहां अलेकसन्दरके भारत आनेसे पहलेकी एक रौप्यमुद्रा और गुप्त राजाओंके समयका अक्षराङ्कित मृत्तिकानिर्मित द्रव्य मिला है। इसी स्थानके निकट अशोकप्रतिष्ठित ३३ फुट ऊंचा एक अखण्ड प्रस्तरस्तम्भ है। उसमें बुद्धको आदेशावली लिखी हुई है। अरराज ग्राममें अपेक्षाकृत क्षुद्र एक स्तम्भ है। केसरिया नामक स्थानमें भी इष्टकनिर्मित एक प्रकाण्ड चतुष्कोण वेदी पर ६२ फुट ऊंचा और ६८ फुट व्यासका एक पक्का खम्भा है। पुराविद् कनिङ्गहाम अनुमान करते हैं, वह बुद्धदेवके किसी कार्यका स्मृतिचिह्न जैसा प्रतिष्ठित हुआ होगा। इसीके पास बुद्धदेवकी मूर्तिका भग्नावशेष मिलता है। बौद्धधर्मका ह्रास होने पर किसी पराक्रान्त हिन्दू राजवंशने सम्भवत: १०९७से १३२२ ई० तक नेपालके सिमरौनमें राजत्व किया। वहां आज भी इसका बहुतसा ध्वंसावशेष विद्यमान है। नान्यदेवने उसको प्रतिष्ठित किया था। फिर इनके वंशके ६ राजा हुए। अन्तिम राजाको हरिसिंह देवने जोता था, जिन्हें अवधसे मुसलमानोंने निकाल दिया। ११९७ ई०को मुहम्मद बखतियार खिलजीने चम्पारन अधिकार किया। परन्तु मुसलमानोंके समय चम्पारन सरकार वर्तमान चम्पारन जिलेसे बहुत छोटी थी। अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमलने लिखा है कि १५८२ ई०को वह तीन परगनोंमें बंटा था। इसका क्षेत्रफल ८५१११ बीघा था। १७६५ ई०को जब यह इष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारभुक्त हुआ, तब यहांका राजस्व २ लाख रुपये कायम किया गया, किन्तु उसके बाद धीरे धीरे घटता गया। कई वर्षके बाद अर्थात् ई० १७९३में इस जिलेका राजस्व ३·८६ लाख रुपये सदाके लिये नियत कर दिया गया और १८६६ ई० तक सारन जिलेमें लगता रहा। १८५७ ई०को प्रधान घटना सगौली किलेकी फौजका विद्रोह था। इस जिलेमें ९ पुलिस स्टेशन और १४ आउट पोस्ट (Out-post) हैं, जिनमें जिला सुपरिंटेण्डेण्ट, २ इन्सपेक्टर, ३५ सब-इन्सपेक्टर, ४४ हेड कोन्सटेबल, ३२३ कोन्सटेबल और ४८ शहरके चौकीदार रहते हैं। जिलेका कारागार मोतीहारीमें है, जिसमें ३५६ कैदी रखे जाते हैं और वहां एक कोतघर भी है। इसके सिवा यहां ७ अस्पताल हैं, जिनमें वार्षिक व्यय २४०००) रु० और आय २१०००) रु०की है। आयमें ७००) रु० सरकारसे ४०००) रु० म्युनिसिपलटीसे और १७०००) रु० चन्दासे संग्रह किया जाता है।

यहांकी जनसंख्या प्राय: १७९०४६३ है। अधिवासियोंमें अधिकांश अहीर और चमार हैं, जिनको

संख्या क्रमशः १८६००० और १२५००० है। इसके अलावा यहां ब्राह्मण, राजपूत, कायस्थ, बाभन, कोइरी और नुनिया भी रहते हैं। मुसलमानोंमें जुलाहा और शेख प्रधान हैं। उक्त जातियोंके अतिरिक्त थोड़े ईसाई भी यहां वास करते हैं। अधिकांश अधिवासी कृषिकार्य कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं।

चम्पारनमें दुर्भिक्षका प्रकोप सदा रहा करता है। १७७० और १८६६ ई०के दुर्भिक्षमें प्रायः तृतीयांश अधिवासियोंकी मृत्यु हुई थी। इसके सिवा यहां १८७४ और १८६७ ई०में भी भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। इस समय सरकारने दूसरे दूसरे देशोंसे अनाज मंगा कर बहुतोंकी जान बचाई थी। विहारमें चम्पारनकी जलवायु अच्छी नहीं है। मलेरिया ज्वर और हैजा बहुत होता है। यहां गूँगे बहरे अधिक हैं। विहारीकी भोजपुरी भाषा प्रचलित है। परन्तु मुसलमान और कायस्थ अधिकांश हिन्दी बोलते और थारू लोग मैथिली भोजपुरी मिली हुई अपनी मदेसी भाषाका व्यवहार करते हैं। लिखनेमें साधारणतः कायथी चलती है। यहां युरोपीय नीलका व्यवसाय करते हैं। जोतकी जमीन सिर्फ २ सैकड़े सिंचती है। १८६७ ई०को मसान नदीसे एक नहर निकाली गयी। मधुवनकी नहर भी सरकारने खरीद ली है। कभी कभी गण्डक, पञ्चनद, हरहा, भवसा और सोनाहकी रेतको धो धो कर सोना निकाला जाता है। अरराजमें लौरियाके पास और हरहा नदीके तट पर कङ्कर मिलता है। चम्पारनमें सब जगह शोरा बनता है। मोटा कपड़ा, कम्बल और नम्दा बुना जाता और मट्टीके बर्तनका खूब काम होता है। यहां शक्कर भी साफ की जाती है। चम्पारनसे नील, तेलहन, अनाज और थोड़ी शक्करकी रफ़्तनी होती है।

१८८३ ई०को बेतियामें तिरहुत-ष्टेट रेलवे खोला था। यहां शिक्षाका अधिक प्रचार नहीं है। सैकड़े पीछे दो ही आदमी लिख पढ़ सकते हैं।

राज्यशासनकी सुविधाके लिये यह जिला दो उपविभागोंमें विभक्त किया गया है। राजस्व कार्य मोतीहारीमें १ कलक्टर और ३ सहकारी कलकरसे संचालित होता है। दीवानी और फौजदारी आदालतमें १ जज, २ मुनसफ, और १ जिला मजिष्ट्रेट रहते हैं।

चम्पाराम—पाटनके रहनेवाले एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकार। ये वि० सं० १९१६ में विद्यमान थे। इन्होंने वसुनन्दि-श्रावकाचार-वचनिका, चर्चासागर-वचनिका और योगसागर-वचनिका नामक तीन हिन्दी जैन ग्रन्थोंकी रचना की है।

चम्पालु (सं० पु०) चम्पकस्येव वर्णं आलाति प्रतिगृह्णाति चम्प-आ-ला-ड्। पनस, कटहल।

चम्पावत—युक्तप्रदेशके अलमोरा जिलेका एक तहसील। यह अक्षा० २८° ५७' एवं ३०° ३५' उ० और देशा० ७९° ५१' तथा ८१° ३' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल २२५५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२२०२३ है। इसमें १४६२ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। यह तहसील काली नदीसे ले कर भाबर नामक घने जङ्गल तक विस्तृत है। इसमें भाबर तल्लादेश, दारमा, मीरा, असकोट, सोर और कालीकुमौन नामके पाँच परगने पड़ते हैं।

चम्पावती (सं० स्त्री०) चम्पा नदी अस्ति अस्यां चम्पा-मतुप् मस्य वः। चम्पापुरी। चम्पकावती देखो।

चम्पावती १ राजपूतानाके अन्तर्गत वर्तमान चात्सु नगरका प्राचीन ग्राम। यह नगर देवाससे ३५ मील नैऋत कोणमें तथा जयपुरसे २४ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। पुराणोक्त चम्द्रसेन राजाकी राजधानी यही चम्पावती नगर थी। चन्द्रसेन और चम्पावती देखो।

२ भागलपुर जिलाकी एक नदी। इसका वर्तमान नाम चन्दन कहा जाता है। भागलपुरसे २० मील दक्षिणमें इसी नदीके तीर जेठोर नामक स्थानमें एक पहाड़के ऊपर एक मन्दिर है। उस मन्दिरमें १०५३ संवत्का लिखा हुआ एक क्षुद्र शिलालेख पाया जाता है। चन्दननदी देखो।

चम्पाषष्ठी—दक्षिण भारतमें प्रचलित पर्वविशेष, एक तरहका त्योहार जो दक्षिणमें चलता है। यह मार्गशीर्ष मासकी शुक्लषष्ठीको खण्डोवाके मन्दिरमें किया जाता है।

चम्पू (सं० स्त्री०) १ चपि-उ। गद्य पद्यमय काव्यविशेष, वह काव्यग्रन्थ जिसमें गद्य और पद्य दोनों हों।

"गद्यपद्यमयी वाणी चंपूरित्यभिधीयते।" (साहित्यद०)

चम्पेश (सं० पु०) चम्पाया ईशः, ६ तत्। कर्णराज।

चम्पोपलक्षित (सं० पु०) चम्पया नद्या नगर्य्या वा उपलक्षितः ३-तत्। १ अङ्गदेश, इस देशमें चम्पा नामकी नदी अथवा चम्पा नामकी राजधानी होनेसे, अङ्गदेशका नाम ऐसा रक्खा गया है।

२ अङ्गदेशवासी।

चम्बल (हिं० स्त्री०) १ सिंचाईके लिए पानी ऊपर चढ़ानेकी वह लकड़ी जो नहरों वा नालोंके किनारे लगी रहती है। (पु०) २ पानीकी बाढ़। ३ चिलमका सरपोश। ४ भीख मांगनेका खप्पर या कटोरा।

चम्बल—मध्यभारत और राजपूतानाकी एक नदी। यह यमुनाकी एक प्रधान शाखा नदी है। इन्दोर राज्यके जनपाव पर्वत पर अक्षा० २२° २७' उ० और देशा० ७५° ३१' पू०में इसका उत्पत्तिस्थान है। वहांसे यह उत्तरको ग्वालियर, इन्दोर, सीतामऊ और झालावाड़ होती हुई चौरासगढ़में राजपूताना पहुंचती है। यह स्थान उसके निकाससे १८५ मील दूर है। मध्यभारतमें चम्बला और सिपरा इसकी प्रधान सहायक नदियां हैं। राजपूतानेके पतारमें इसके झरने ६० फुट नीचे गिरते हैं। आगेको थोड़ी दूर तक यह बुंदी और कोटाकी सीमा बन गयी है। कोटाके पास इसके किनारे हराभरा जङ्गल है और नाना प्रकारके पक्षी रहते हैं। नीचे इसके वाम तट पर केशवराय पाटनका पुराना ग्राम है। फिर इसमें काली सिन्धु, मेज, पार्वती और बनास नदियां आ मिली हैं। धौलपुर नगरके दक्षिणको यह पार्वत्य प्रान्तको अतिक्रम करके मैदानमें पहुंची है। राजघाटमें इस पर नावोंका पुल बंधा है। यहांसे थोड़ी दूर पूर्वको रेलवेका एक पुल बना है। इटावासे २५ मील दक्षिण-पश्चिम यह यमुनामें मिलित हुई है। इसकी पूरी लम्बाई ६५० मील है। चर्मण्वती देखो।

चम्बली (हिं० स्त्री०) एक तरहका छोटा प्याला या कटोरा।

चम्बी (हिं० स्त्री०) मोमजामे या कागजका वह तिकोना टुकड़ा जो कपड़ों पर रङ्ग छापते वक्त उन स्थानों पर रक्खा जाता है जहां रङ्ग चढ़ाना नहीं होता, कतरनी, पट्टी।

चम्बू (हिं० पु०) १ भोड़कामें बननेवाला एक तरहका लोटा। इसका फल बहुत उमदा होता है। २ पहाड़ों पर बिना सींचो जमीन पर चैतमें होनेवाला एक प्रकारका धान। ३ एक तरहका छोटे मुंहका सुराईनुमा बरतन जिससे हिन्दू देवमूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं। यह तांबे, पीतल या और किसी भी धातुका बनता है।

चम्मच (फा० पु०) दूध, चाय तथा अन्यान्य खाने पीनेकी चीजें चलाने और निकालनेको एक तरहकी हलकी कलछी।

चम्मल (हिं० पु०) चमचा देखो।

चम्मोरानी (हिं० पु०) 'सात समुन्दर' नामका लड़कोंका एक खेल।

चम्रिष (सं० स्त्री०) चमूषु वर्तमानाः इषोऽस्यानि, ७-तत्, चम्रिष वस्य रेफश्छान्दसः। चमसमें अवस्थित अन्न, चमसस्थ भक्ष्यद्रव्य, चम्मचमें रक्खा हुआ अन्न या खानेकी वस्तु। "एव प्रपूर्वो रव तस्य चम्रिषः" (ऋक् १।५८।१)

चम्रीष (सं० त्रि०) चम्वां इष्यति गच्छति इष-क। इगुपधज्ञाप्रीकिरःकः। पा ३।१।१३५। पृषोदरादित्वात् रेफो दीर्घश्च। यद्वा चम-ईषम् रेफः पूर्ववत्। चमसमें अवस्थित, चम्मचमें रक्खा हुआ।

"चम्रीषो न शवसा पाञ्चजन्य." (ऋक् १।१००।१२)

'चम्रीषो चम्वां चमसे रसात्मनावस्थितः' (सायण)

चम्बा—लाहोर विभागके कमिश्नरके अधीन एक देशी राज्य। यह अक्षा० ३२° १०' एवं ३३° १३' उ० और देशा० ७५° ४५' तथा ७७° ३' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल प्रायः ३२१६ वर्गमील है। चम्बाके उत्तर और पश्चिम काश्मीर और दक्षिण तथा उत्तर गुरुदासपुर और कांगड़ा जिला है। यह राज्य प्रायः चारों ओर ऊंचे ऊंचे पहाड़ोंसे घिरा है। तुषारावृत टो पर्वतश्रेणियां राज्यमें लगी हैं। पश्चिम और दक्षिणको उपजाऊ भूमि है। इसकी प्रधान नदियां—चन्द्रा और रावी—दक्षिण-पूर्वसे उत्तर-पश्चिमको प्रवाहित हैं।

इस राज्यमें अनेक प्राचीन ताम्रफलक विद्यमान हैं। इनके साहाय्यसे उसका यथायथ इतिहास निश्चित हुआ है। सम्भवतः ई० ६ठी शताब्दीको सूर्यवंशीय राजपूत मारुतने चम्बा राज्य स्थापित किया था, जिन्होंने

ब्रह्मपुर भी खड़ा कर दिया। ६८०ई०को मेरुने इस राज्यको बढ़ाया और ६२० ई०को साहिल्लवर्माने चम्बा-नगर बनाया। भारतमें मुगल विजय होने तक इसने अपने स्वातन्त्र्यकी रक्षा की, यद्यपि बीच बीच काश्मीरको अधीनता नाममात्र माननी पड़ी। मुगलोंके अधीन यह राज्य बादशाहतको कर देता और सिख उत्पातसे बचा रहा। १८४६ ई०को पहले पहल चम्बा अंगरेजोंका हस्तगत हुआ। १८४८ई०को राजाने हिन्दू धर्मानुसार राज्य करनेकी सनद पायी। फिर १८६२को सनदमें राजाको गोद लेनेका भी अधिकार मिला। आजकल महाराज राजा रामसिंहजी सिंहासनारूढ़ हैं। चम्बाके राजा ११ तोपोंकी सलामी पाते हैं।

चम्बाकी लोकसंख्या प्राय: १२७८३४ है। यह पांच वजारतोंमें विभक्त है। प्रत्येक वजारतमें कई इलाके होते हैं।

राजा साहब ही भूमिके एकमात्र अधिकारी हैं। जमीनका पट्टा लिखानेवाले मालगुजार कहलाते हैं। यहां अफीम और चाय भी होती है। पशु अच्छे नहीं हैं। ऊनके कपड़े और कम्बल तैयार किये जाते हैं। खेत सींचनेके लिये लोग पहाड़ी नदियोंसे नालियां निकाल लेते हैं।

२१०००) रु० साल पर ८६ वर्षके लिये १८६४ ई०-को राज्यके अधिकांश वन्य भागका पट्टा लिख दिया गया था। पहाड़ोंमें धातु बहुत निकलते हैं। लोहा कई जगह मिलता है। परन्तु बाजारमें सस्ता लोहा बिकनेसे उसे कोई नहीं निकालता। तांबे और अबरक-की खानें भी बन्द कर दी गयी हैं। स्लेट पत्थरसे बड़ा लाभ होता है। इस राज्यसे शहद, ऊन, घी, सुपारी, लाह, दवा, अखरोट, लकड़ी और दूसरी जंगली पैदा-वारकी रफ़्नी की जाती है।

पठानकोटसे चम्बा तक ७० मील लम्बी सड़क लगी है। नूरपुर और कांगड़ा हो करके दूसरी सड़क भी यहां आयी है। जाड़ेमें यह दोनों सड़कें बन्द हो जानेसे बाथरी और चोलकी राहसे यातायात होता है। चम्बा नगरके पास रावी पर लोहेका लटकता हुआ पुल बना है।

राजा अपने प्रधान वजीर और बख्सी या राजस्व विभागके प्रधान कर्मचारीकी सहायतासे राज्यशासन करते हैं। वजीरके हाथमें सम्पूर्ण राज्यका भार रहता है। हर एक परगनेमें तहसीलदार और पटवारी रहते हैं, जिनका काम केवल प्रजासे मालगुजारी वसूल करना है। चम्बा शहरमें राज्यके समस्त विचारालय अवस्थित हैं। राजाके सिवा और दूसरेको अपराधी पर बेंतका दण्ड देनेका अधिकार नहीं है। लाहोरके कमिश्नरकी सम्मति ले कर राजा मृत्युदण्ड भी दे सकते हैं। यहांका राजस्व ४५८०००) रु० है जिनमें २१८०००) रु० मालगुजारीसे और शेष जंगल तथा और दूसरे दूसरे विभागसे आता है। वार्षिक ३८००) रुपये बृटिश-गवर्मेंटको देने पड़ते हैं। इस राज्यका कारागार चम्बा शहरमें है, जिसमें केवल १०० कैदी रखे जाते हैं। इसके सिवा चम्बा शहरमें उच्च और निम्न श्रेणीके विद्यालय कुल मिला कर ८ हैं। शहरमें श्यामसिंह अस्पताल नामक एक चिकित्सालय है।

२ चम्बा राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० ३२° २९´ उ० और देशा० ७६° ११´ पू०में रावीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ६००० है। इसमें कई देवमन्दिर हैं। उनमें लक्ष्मीनारायणका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। यह सम्भवत: ई० १०वीं शताब्दीका बना हुआ होगा।

चय (सं० पु०) चि कर्मणि अच्। एरच्। पा ३।३।५६।
१ समूह, ढेर, राशि।

"चयत्विषामित्यवधारितं पुरा"। (माघ १।३।)

२ वप्र, गढ़, किला। वप्र देखो।

३ प्राकार, वह दीवार जो किसी किले या शहरको चारों ओर रक्षाके लिये बनी रहती है, कोट, चहार दीवारी।

"शैलादश्मचयवता यथाद्रावहयोभिनी।" (भार० ३।१६०।१०)

४ नींव, बुनियाद जिसके ऊपर दीवार बनाई जाती है। ५ समाहार, समूह। ६ पीठ, चौकी, ऊंचा आसन। ७ चबूतरा। ८ अग्निका चयन रूप संस्कारविशेष, यज्ञके लिये अग्निका एक विशेष संस्कार, चयन। ९ वात, पित्त और कफकी विशेष अवस्था।

"चयः प्रभवति गण्डस्य प्रकोपः स्फुटति द्रुतम्।" (चक्रपाणि)

१० विष्ठा, मैला। ११ धुस्स, टीला, टूह। १२ रोग वृद्धि।

चयक (सं० त्रि०) चये कुशलः चय-कन्। आकर्षादिभ्यः कन्। ५।२।६४। चयनकुशल।

चयन (सं० क्ली०) चि भावे ल्युट्। १ आहरण, आनयन, संग्रह, संचय। २ अग्न्यादि संस्कारविशेष, यज्ञके लिये अग्निका विशेष संस्कार, चयन।

"स यथा कामयेत तथा कुर्य्यादिति श्चयनस्य तथा चयनस्येति"

(शतपथ ब्रा० ८।५।२।११)

चीयतेऽनेन चो करणे ल्युट्। ३ संस्कारसाधन, यूप प्रभृति।

"येन भागीरथी गङ्गा चयनैः काञ्चनैश्चिता।" (भारत ३।५१ अ०)

४ चुननेका कार्य, चुनाई।

चर (सं० पु०) चरति स्व-पर-राष्ट्रशुभाशुभज्ञानाय भ्राम्यति चर-अच्। १ अपने तथा दूसरे राज्यका शुभाशुभ मालूम करनेके लिये नियुक्त दूत, वह मनुष्य जो राजाकी ओरसे बहाल किया जाता है और जिसका काम प्रकाश या गुप्त रूपसे अपने तथा दूसरे राजाओंको भीतरी दशाका पता लगाना हो। इसका संस्कृत पर्याय—यथार्हवर्ण, प्रणिधि, अपसर्प, चार, स्पश, गूढ़पुरुष, अपसर्पक, प्रतिष्क, प्रतिष्कश, गुप्तगति, मन्त्रगूढ़, हितप्रणी और उदास्थित है। युक्तिकल्पतरुके मतसे चर दो प्रकारका है—जो प्रकाश रूपसे गमनागमन करता, उसे प्रकाश तथा जो गुप्त भावसे स्वराज्य या परराज्यका शुभाशुभ अनुसन्धान करे, उसे अप्रकाश कहते हैं। प्रकाश चरका नाम दूत है। (दूत देखो।) जो तर्क और इङ्गितज्ञ, स्मृतिशक्तियुक्त, क्लेश और आयाससहनशील, कार्यक्षम, भयशून्य, राजभक्त तथा जो हठात् कर्तव्याकर्तव्यका निर्णय कर सके, वही चर होनेके लायक है।

इसका दूसरा विवरण दूत शब्दमें देखो। २ कपर्दक, कौड़ी। ३ मेष, कर्कट, तुला और मकर राशि।

"चरस्थिरद्व्यात्मक नामधेया मेषादयोऽमी क्रमशस्त्रिधा स्युः।"

(ज्योतिस्तत्त्व)

४ स्वाती, पुनर्वसु, श्रवणा, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रोंको चर कहते हैं।

"स्वात्यादित्यद्वयं चरगणः" (ज्योतिस्तत्त्व)

५ मङ्गलवार, भौम। ६ अक्षक्रीड़ाविशेष, पासेसे खेला जानेवाला एक तरहका जूआ। (त्रि०) ७ चञ्चल, अस्थिर, एक स्थान पर न ठहरनेवाला।

"तस्य सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च।" (मनु ७।१५)

(पु०-स्त्री०) ८ खञ्जनपक्षी, खञ्जन चिड़िया।

९ देशान्तर। यह दो प्रकारका है—पूर्वापर और दक्षिणोत्तर। सूर्यसिद्धान्तमें चरानयनप्रणाली लिखी है। दिन और रात्रिका परिमाण जाननेमें यह काम आता है। पहले गणितानुसारसे ग्रहके स्पष्ट क्रान्तिसाधन कर उससे क्रमज्या और उत्क्रमज्या साधन करना पड़ता है। स्पष्टक्रान्ति देखो। उत्क्रमज्या और त्रिज्या दोनोंका अन्तर करनेसे जो हो, उसे दिन व्यासदल या अहोरात्र वृत्तका सार्द्ध या द्युज्या कहते हैं। दिन व्यासार्द्ध दक्षिणगोल और उत्तरगोलमें हुआ करता है, दूसरेका नाम क्रान्तिज्या है। विषुवद्दिनके मध्याह्न समय १२ अंगुल शंकु-छाया जितनी होगी उससे क्रान्तिज्या गुना कर १२से भाग देने पर जो निकले उसे कुज्या कहते हैं। कुज्याको त्रिज्यासे गुना करने पर जो गुणनफल हो, उसे दिनव्यासदल या द्युज्यासे भाग करना पड़ता है। भागफलका नाम चरज्या है। इस चरज्याके असुको चरासु कहते हैं। ग्रहका अहोरात्रासुसाधन कर उसके चतुर्थांशमें चरासुका योग करनेसे और दूसरे चतुर्थांशसे चरासु निकाल लेने पर जो दो राशियां होंगी, वे ही दिनार्द्ध और रात्र्यार्द्ध हुआ करती हैं। (सूर्यसि०) दिनरात्रिमानसाधन देखो। १० नदीगर्भ पर वालुकामय उत्पन्न स्थान, नदियोंके बीचमें बालूका बना हुआ टापू। ११ दलदल, कीचड़। १२ छिछला पानी। १३ नदीका तट। (त्रि०) १४ भक्षक, खानेवाला, आहार करनेवाला।

चर (अनु०) कागज कपड़े आदिके फटनेका शब्द।

चरई (हिं० स्त्री०) पशुओंको चारा या पानी दिये जानेका गहरा गड्ढा जो पत्थर या ईंटका बना रहता है।

चरक (सं० पु०) चर एव चर स्वार्थे कन्। १ चर, दूत विशेष। २ वैद्यशास्त्रप्रणेता मुनिविशेष।

"देवाकर्णय सुश्रुतेन चरकस्योक्तेन जानेऽखिलम्।" (नैषध१०)

भावप्रकाशमें लिखा है कि भगवान्‌ने जब मत्स्यावतार हो वेदका उद्धार किया था तब अनन्तदेवको अथर्ववेदके

अन्तर्गत आयुर्वेद मिला। इसके बाद अनन्तदेव पृथिवीकी अवस्था जाननेके लिये चररूपमें पृथिवी पर पहुँचे और यहां उन्होंने देखा कि बहुतसे भूमण्डलवासी व्याधिग्रस्त हो दुःखसे विकल हो रहे हैं। यह देख दयालु अनन्तदेवका हृदय पिघल गया। वे मानवकी दुरवस्था दूर करनेके लिये षड़ङ्गवेदवेत्ता मुनिपुत्रमें आविर्भूत हुए। ये चररूपमें पृथिवी पर अवतीर्ण हुए थे, इसीलिये उनका नाम चरक रक्खा गया। चरकाचार्य थोड़े ही दिनोंमें मानवमण्डलीकी व्याधिकी सुचिकित्सा कर जगद्विख्यात हुए। आत्रेयके शिष्य अग्निवेश प्रभृतिने जो सब वैद्यक ग्रन्थ प्रणयन किये थे, पण्डितवर चरकने उन ग्रन्थोंका संस्कार और सारांश ग्रहण कर अपने नाम पर चरकसंहिता नामक एक ग्रन्थ प्रणयन किया है।

(भावप्रकाश पूर्व १ भाग)

२ चरक मुनिका बनाया हुआ एक वैद्यक ग्रन्थ। इसके आठ भाग हैं—सूत्र, निदान, विमान, शारीर, इन्द्रिय, कल्प और सिद्धिस्थान। प्रचलित वैद्यक ग्रन्थोंमें चरक एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है। ४ एक प्राचीन वैयाकरण। क्षीरस्वामी और मोहनदासने इनका मत उद्धृत किया है। ५ चक्रकर। ६ भिक्षुक, भिखमङ्गा। ७ पर्पट, पापड़। ८ गुप्तचर, भेदिया, जासूस। ९ मुसाफिर, बटोही। १० बौद्धोंका एक सम्प्रदाय। (स्त्री०) ११ एक प्रकारकी मछली। १२ कुष्ठका दाग, सफेद दाग।

चरकटा (हिं० पु०) वह आदमी जो ऊँट या हाथीके लिए चारा काट कर लाता हो।

चरकसंहिता (सं० स्त्री०) चरकेण निर्मिता संहिता, मध्यपदलो०। वैद्यक ग्रन्थविशेष, चरक मुनिका बनाया हुआ एक वैद्यक ग्रन्थ। चरक देखो।

चरका (फा० पु०) १ हलका घाव, जख्म। २ वह चिह्न जो गरम धातुसे दागा गया हो। ३ हानि, नुकसान, धक्का। (देश०) ४ मडुवा नामक अन्नका एक भेद।

चरकाल (सं० पु०) कालविशेष, दिनमान स्थिर करनेमें इसका काम पड़ता है। दिनरात्रिमान देखो।

चरख (फा० पु०) १ गोलचक्कर, चाक। २ खराद। ३ सूत कातनेका चरखा। ४ कुम्हारका चाक। ५ गोफन, ढेलवाँस। ६ एक तरहका जन्तु जो लकड़बघा नामक जानवरसे मिलता जुलता है। ७ बाजकी जातिकी एक शिकारी चिड़िया। ८ तोपकी गाड़ी। ९ एक लकड़ीका ढाँचा। इसमें चार अंगुलकी दूरी पर दो छोटी चरखियां और उनके बीचमें कलाबत्तू वा रेशम लपेटा रहता है। १० चरखपूजामें काम आनेवाला एक घूमनेका यन्त्र। एक स्तम्भ बना कर उसके ऊपर मजबूत कील बनावें, फिर एक मजबूत लकड़ीमें एक छिद्र करके उसे उस कील पर इस तरह रख दें, कि जिससे वह कील पर घूमा करे। इस लकड़ीके दोनों छोरों पर मजबूत रस्सी बाँध कर उस पर संन्यासी घूमा करते हैं। इसीका नाम चरख है।

चरखकश (फा० वि०) १ जो खरादकी डोरी या पट्टा खींचता हो। २ जो खराद चलाता हो।

चरखपूजा (हिं० स्त्री०) चैत्रकी संक्रान्तिमें होनेवाली एक प्रकारकी पूजा। यह पूजा वा व्रत शिवको प्रसन्न करनेके लिए किया जाता है। कहीं कहीं इसको गाजन भी कहते। इस दिन शैवप्रधान बाण राजाने देवादिदेव महादेवको प्रसन्न करनेके लिए बन्धुवर्गके साथ शिवभक्ति-सूचक नृत्यगीतादिमें प्रमत्त हो कर अपने शरीरके रुधिरसे शिवको सन्तुष्ट किया था। तदनुसार शिवभक्त हिन्दू सम्प्रदाय उक्त दिनको शिवकी प्रीतिके अर्थ चरखपूजाका उत्सव करते हैं। इसका आयोजन ५।७ दिन पहलेसे किया जाता है।

बृहत्धर्म पुराण उत्तरखण्डके ९वें अध्यायमें इसका विधान और फल लिखा हुआ है।

चरखोत्सवमें स्थानभेदसे प्रति दिन शिवपूजा, शिवभक्ति-सूचक गायन और हरगौरी बना कर नगर-भ्रमण किया करते हैं। एक ३।४ हाथ लम्बा साफ तख्ते पर सिन्दूर लगा कर शिवका पाट बनाया जाता है। शिवपूजाकी तरह शिवके पाटकी भी पूजा की जाती है। जो लोग शिवभक्तिविषयक गान गाते और हरगौरी बन कर भ्रमण करते हैं, उनको संन्यासी कहते हैं। शिव और पाटकी पूजा ब्राह्मणके जरिये कराई जाती है। पूर्व और दक्षिण भारतमें प्रायः सब जगह चरखपूजा प्रचलित है। ब्राह्मणके सिवा सभी हिन्दूसंन्यासी हो सकते हैं

दाक्षिणात्यमें तामिल लोग इस उत्सवको 'चेड्डूल' कहते हैं।

इस व्रतके दिनोंमें संन्यासी पवित्र और उपवासी रह कर शिवकी आराधना करते हैं। सन्ध्याके उपरान्त शिवके नाम पर धूना जलाया जाता है। धूना जलानेके मन्त्र भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके और चलती बोलीमें रचे गये हैं। संन्यासी लोग भक्ति दिखानेके लिए शिवके सम्मुख अर्द्धचन्द्राकृति लौहशलाका वा हँसुआ पर कूदते हैं, जिससे चोट लग कर उनकी देहसे खून बहने लगता है। यह कूदना तीन तरहसे होता है—एक तो झूल कर कूदना, दूसरे काँटों पर कूदना और तीसरे हँसुआ पर कूदना। कहीं कहींके संन्यासी लोग चरखपूजासे दो दिन पहले गन्धमादन पर्वत उठा लानेका खेल खेलते हैं, इसको गिरिसंन्यास कहते हैं। इसके बाद महासमारोहसे एक आम्रवृक्षके पास जा कर बहुत मन्त्र बोल कर और भक्ति-सूचक गायन गा कर एक शाखा समेत एक वा ततोधिक आम्र तोड़ लाते हैं। कहीं कहीं इस दिन बानफोड़ा और नीलावतीकी पूजा करते हैं। इसका नाम है वानर-संन्यास। चरखपूजासे एक दिन पहले रात्रिको खिचड़ी और दग्ध मत्स्यसे पूजा करते हैं। आधी रातको संन्यासी लोग भाषा-मन्त्रसे धूना जलाते और मस्तक घुमा कर शिवकी आराधना करते हैं। इस समय दो एक संन्यासी बेहोश हो कर बहुत बातें करने लगता है। बहुतोंको विश्वास है, कि शिवके आविर्भाव और अनुग्रहसे ही संन्यासी ऐसा किया करता है। उस समय उस व्यक्तिके मुखसे स्वयं महादेव ही अतीत वा भविष्यत्‌की बात बताते हैं। जिस दिन चैत्रकी संक्रान्ति होती है, उस दिन बहुत तड़के ही (अरुणोदयसे कुछ पहले) महासमारोहसे शिवपूजाका आयोजन होता रहता है। भक्ति दिखानेके लिए संन्यासी लोग लोहेके बाणसे भी जीभ छेदते हैं। इसको बाण-संन्यास कहते हैं। आधी कनिष्ठ उंगलीके बराबर मोटी लोहेकी सींकोंके अग्रभागको नुकीले कर बाण बनाये जाते हैं। यह लम्बाईमें २॥ हाथसे ४।५ हाथ तकका बनता है। बाण-संन्यासी लोग भक्तिमें आ कर उन्मत्तोंकी तरह नाचने-गाने-बजानेमें ही दिन बिता देते हैं। बाण उसी तरह जीभमें छिदा हुआ रहता है। सन्ध्यासे कुछ पहले पानीमें जा कर बाणको निकाल देते हैं; असमर्थ होने पर दिनको भी बाण निकाला जा सकता है और एक दल ऐसा है जो दोनों बगलकी चमड़ी छेद कर उसमें सूत वा पतला बेंत भर देता है। इनको सूत्र-संन्यासी वा वेत्र-संन्यासी कहते हैं, ये भी दिन भर नाचने-गानेमें उन्मत्त हो कर ग्रामको सूत वा बेंत निकाल देते हैं। अन्य संन्यासी पीठ पर मछली पकड़नेका काँटा रखते और चरख पर चढ़ कर घूमा करते हैं।

१८६३ ई०की नई कानूनसे यह उत्सव प्रायः उठ गया है, प्रायः सभी जगह पहलेकी भाँति चरखपूजाका समारोह नहीं होता। जहां है भी, वहां सिर्फ चरखपूजा ही होती है, बाण, काँटा, सूत वा बेंत भरनेकी प्रथा उठ गई।

वर्तमानमें बङ्गालमें ही चरखपूजाका ज्यादा प्रचार पाया जाता है। बङ्गालके अन्तर्गत फरीदपुर जिलेके कोटालीपाड़में बूढ़ा ठाकुर नामके एक प्रसिद्ध शिवलिङ्ग है, चैत्र-संक्रान्तिमें उनके उत्सवमें अब भी पहिलेके नियमानुसार चरख हुआ करता है। वहां बाण, काँटे, बेंत और सुत छेद कर अब भी पहलेके नियमानुसार नाचना-गाना होता है। विपद वा उत्कट रोगाक्रान्त होने पर बहुतसे लोग 'बूढ़ा ठाकुरके सामने बाण, काँटे आदि धारण करूंगा' ऐसा कह कर मानसिक प्रतिज्ञा करते और समय पर नियमानुसार धारण भी किया करते हैं। इनमें धोबी और चाण्डालोंकी संख्या ही अधिक पाई जाती है। बूढ़ा ठाकुर देखो।

श्रीधर्ममङ्गलमें लिखा है—रानी रञ्जावतीने धर्मको सन्तुष्ट करनेकी इच्छासे चरखपूजा कर धर्मकी उपासना की थी। उसमें कूदना, धूना जलानां आदि चरखपूजाके बहुतसे अङ्गोंका उल्लेख है। धर्मपूजा देखो।

चरखा (फा० पु०) १ कोई घूमनेवाला गोल चक्कर, चरख। २ रहटा, ऊन, कपास या रेशम आदिको कात कर सूत निकालनेवाला एक लकड़ीका यन्त्र। इसमें एक तरफ बड़ा गोल चक्कर रहता है जिसे लोग चरखी कहते हैं। इस चरखीमें एक तरफ दस्ता लगा रहता है। चरखेके

दूसरी तरफ लोहेका एक बड़ा सूआ होता जो तकुआ या तकला कहलाता है। चरखी घूमानेके समय तकुआ घूमने लगता है। चरखा चलानेवाला ऊन या कपासको तकुएमें लगा कर हाथसे पकड़ता है। चरखी चलाने पर जब तकुआ घूमता है तो उसमें लगे हुए ऊन या कपास आदिका कत कर सूत बनता जाता है।

३ वह रहट जिसके द्वारा कूएँसे जल निकाला जाता है। ४ लोहेकी कल जिससे ऊँखका रस निकाला जाता है। ५ चरखी, या रील, वह गराड़ी जिसमें सूत लपेटा जाता है। ६ गराड़ी, घिरनी। ७ उड़ा नामक एक तरहका यन्त्र जिसके द्वारा रेशम खोला जाता है। ८ वह स्त्री या पुरुष जिसके सब अङ्ग बहुत बुढ़ापेके कारण शिथिल हो गये हों। ९ कुश्तीका एक पेंच। यह पेंच उस समय मारा जाता है जब विपक्षी (जोड़) नीचे होता है। इसमें विपक्षीकी दहनी तरफ बैठ कर अपनी बांई टांग विपक्षीकी दहनी टांगके भीतरसे निकालते और अपनी दहनी टांग उसकी गर्दनमें डाल कर दोनों पैर मिला कर उलट करते हैं, जिससे विपक्षी चित्त हो जाता है। १० पौठिए तार खींचनेका एक तरहका बेलन। ११ बड़ा पहिया। १२ बखेड़े या झंझटका काम। १३ नया घोड़ा जोतनेका गाड़ीका एक ढाँचा, खड़खड़िया।

चरखी (हिं० स्त्री०) १ वह वस्तु जो पहिएकी तरह घूमती है। २ छोटा चरखा। ३ ओटनी, बेलनी, एक तरहकी चरखी जिससे कपास ओटा जाता है। ४ सूत लपेटनेकी फिरकी। ५ घिरनी जिसके जरिये कूएँसे पानी निकाला जाता है। ६ कुम्हारका चाक। ७ एक प्रकारकी आतिशबाजी जो छूटनेके समय खूब घूमती है। ८ जुलाहोंका एक औजार जिससे कई सूत एकमें लपेटे जाते हैं। यह चरखी पतली कमाचियोंसे बनायी जाती है। ९ मोटी रस्सी बनानेका एक लकड़ीका यन्त्र। इसमें एक खूंटी लगी रहती है और इसका आकार धनुष जैसा होता है।

चरगृह (सं० क्ली०) चररूपं गृहं। मेष, कर्कट, तुला और मकरराशि। चर देखो।

चरचना (हिं० क्रि०) १ शरीरमें चन्दन आदि लगाना। २ लेपना, पोतना। ३ अनुमान करना, समझ लेना।

चरचरा (अ० पु०) पक्षिविशेष, एक तरहकी चिड़िया जिसका वर्ण खाकी रङ्गमा होता है और छाती सफेद होती है। यह लगभग ६ से १० उँगली लम्बा होता है और समस्त हिन्दुस्थानमें पाया जाता है।

चरचराना (अ० क्रि०) १ चरचर आवाजके साथ टूटना या जलना। २ चर्राना।

चरचराहट (हिं० स्त्री०) किसी चीजके टूटने या काटनेका शब्द।

चरचा (हिं० स्त्री०) चर्चा देखो।

चरज (फा० पु०) चरख नामका पक्षी।

चरट (सं० पु०-स्त्री०) चरति नृत्यति चर बाहुलकात् अटच्। खंजनपक्षी। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

चरण (सं० पु० क्ली०) चर करणे ल्युट्। अर्द्धर्चादिगणान्तर्गत होनेके कारण दोनों लिङ्ग। पा २।४।३१। देहावयवविशेष, पद, पैर, पाँव, कदम। इसका संस्कृत पर्याय—पाद, पत्, अङ्घ्रि, विक्रम, पद, आक्रम, क्रमण, चलन, क्रम।

"द्विजातिर्ये इस्तचरणौ छतौवे बध मर्हति।" (मनु ८।२८०)

२ वेदका एक देश, वेदकी एक शाखा।

"गोत्रञ्च चरणैः सह" (महाभाष्य)

३ सूर्य्य आदिकी किरण। ४ श्लोकका चतुर्थ भाग।

५ चतुर्थ भाग, किसी पदार्थका चतुर्थांश।

"पश्यन्ति खेटा चरणाभिवृद्धितः।" (ज्योति०)

६ एकदेश। "जाति चरणाभिधानात्।" (पा० सू०)

चर भावे ल्युट्। ७ अनुष्ठान।

"तपश्चरणैश्चोग्रैः।" (मनु ६।७५)

८ गमन, जाना।

"यत्रानुकामं चरणं त्रिनाके त्रिदिवे दिवः।" (ऋक् ९।११३।९)

१० भक्षण, चरनेका काम।

"अकृताभ्यवचरण मसमिध्य च पावकम्।" (मनु २।१८७)

११ आचार। चरति विचरत्यत्र चर अधिकरणे ल्युट्।

१२ चारणस्थान, विचरण करनेका स्थान, घूमनेकी जगह।

"अपश्यं गन्धर्वाणां मृगाणां चरणे चरन्।" (ऋक १०।१३६।६)

१३ भानु ऋषि गोत्रके दाक्षिणात्यका एक राजा। १४ गोत्र। १५ क्रम। १६ मूल, जड़। १७ बड़ोंका सान्निध्य, बड़ोंकी समीपता, बड़ोंका संग।

चरणगुप्त (सं० पु०) एक तरहका चित्रकाव्य। इसके कई भेद हैं।

चरणग्रन्थि (सं० पु०) चरणस्य ग्रन्थिः, ६-तत्। गुल्फ, एँड़ी।

चरणचिह्न (सं० पु०) १ पैरोंके तलुएकी रेखा, पाँवकी लकीरें। २ कीचड़ आदि पर पड़ा हुआ पैरका निशान। ३ देवदेवीके चरणोंकी प्रतिमूर्ति जो पत्थरों पर खोद कर बनायी जाती है। इसकी पूजा की जाती है।

चरणतल (सं० पु०) पैरके नीचेका भाग, तलुवा।

चरणदास (सं० पु०) एक साधुका नाम। ये दिल्लीमें रहते थे। जातिके धूसर बनिये थे। इन्होंने अलवारके डेहरा गांवमें १७६० संवत् को जन्म लिया था। इन्होंने ज्ञानस्वरोदय नामक ग्रन्थकी रचना की है, तथा एक संप्रदाय भी चलाय जिसके साधु आज तक पाये जाते और चरणदासी कहलाते हैं। द्वितीय आलमगीरके समय ये विद्यमान थे। दिल्लीमें इन्होंने संगीत शिक्षा भी ग्रहणकी थी, वहां इनका एक मठ भी है। ज्ञानस्वरोदयके अतिरिक्त इन्होंने भागवत और गीताकी भाषा तथा सन्देहसागर, धर्मजहाज प्रभृति हिन्दी वैष्णवग्रन्थ प्रणयन किये हैं। १८३६सं० में इनका शरीरान्त हुआ। चरणदासी देखो।

चरणदास—फैजाबाद जिलेके पण्डितपुर ग्रामके एक ब्राह्मण। ये १४८०ई०में विद्यमान थे। इन्होंने ज्ञानस्वरोदय नामक ग्रन्थ प्रणयन किया है।

चरणदास सुखदेव—एक हिन्दीके कवि। साधारणतः इनकी कविता अच्छी होती थी। नीचे इनकी एक वैराग्य रसकी कविता उद्धृत की जाती है—

"भजले सीताराम, अब तेरी दाव बन्यो है।
लख चौरासी भ्रम भ्रम आयो कबहुं न पायो विश्राम॥
मात, पिता, दादा, सुत बन्धु, कोई न आवै तेरे काम।
चरणदास चरणनको चेरो राघोजी सारेंगे तेरा काम॥"

चरणदासी (सं० स्त्री०) १ स्त्री, पत्नी। २ जूता, पनही। ३ एक वैष्णवसम्प्रदाय। चरणदास इसके प्रवर्तक थे। इसके अनुयायी कृष्णको ही जगत्के आदिकारण पर ब्रह्म मानते हैं सही, तथापि इनके मत बहुत कुछ वैदान्तिकोंके मतसे मिलते जुलते हैं। अन्यान्य वैष्णवोंकी नाईं ये भी दीक्षागुरुको प्रगाढ़ भक्ति करते और भक्तिको ही सर्वश्रेष्ठके जैसा मानते हैं। इस सम्प्रदायमें जातिभेदका विचार नहीं है। पहले ये शालग्रामकी पूजा नहीं करते थे, पीछे रामानुज सम्प्रदायके साथ संबन्ध रखनेके कारण शालग्रामकी पूजा करने लगे हैं।

इनमें विशेषता यह है, कि ये भक्तिको कर्मसे सम्पूर्ण पृथक् नहीं मानते, अतएव ये सदाचार और सुनीतिको बहुत पसन्द करते हैं। माध्व सम्प्रदायसे इन्होंने नीतिशिक्षा अनुकरण की है। माध्व देखो।

इनमें थोड़े विवाहादि कर वाणिज्य करते और कुछ संन्यासी हो कर इधर उधर भीख मांगा करते हैं। संन्यासी वैष्णव पीला वस्त्र पहनते, ललाटमें गोपीचन्दन रेखा करते, शिर पर एक तरहकी टोपी रखते और गलेमें तुलसीमाला धारण करते हैं। इनके बहुत शिष्य हैं। गोकुलके गोस्वामियोंकी प्रतिपत्ति नाश करनेके लिये ही सम्भवतः इस दलकी सृष्टि हुई है।

श्रीमद्भागवत और गीता इनके धर्मशास्त्र हैं। चरणदास तथा इनके अनुयायीने उक्त शास्त्रोंका अनुवाद सरल हिन्दीभाषामें किया है। चरणदासकी बहन सहजोबाई भाईके निकट सबसे पहले इस धर्ममें दीक्षित हुई थीं। दिल्ली नगर इन लोगोंका प्रधान अड्डा था।

चरणन्यास (सं० पु०) चरणस्य न्यासः, ६-तत्। पादन्यास, पादक्षेप, पैरोंका चिह्न।

चरणपर्वन् (सं० क्ली०) चरणस्य पर्व, ६-तत्। गुल्फ, एँड़ी।

चरणपात (सं० पु०) १ पादन्यास, पैरोंका निशान। २ पदस्खलन, पांवका फिसलना।

चरणपहाड़ी—वृन्दावनका एक पर्वत। काम्यवनकी सीमाके मध्य लुकालुकी कुण्डके पास यह अवस्थित है। वैष्णव इस पर्वतके चरणपहाड़ी नाम पड़नेका कारण इस प्रकार बतलाते हैं—किसी समय गोप महिलागणने कृष्णके साथ लुकीलुकी कुण्ड पर जल क्रीड़ाको जा परामर्श किया कि कृष्णके साथ ही वह भी डुबकी लगायेगा, किन्तु इनके निकलनेसे पहले ही निकल आयेगा और इनका निकलनेका उपक्रम करते देख फिर डुबकी मार जायेगा, जिससे अपने इनसे पीछे निकलनेका प्रमाण ठहरायेगा। कृष्ण

राधा आदिकी धोकेबाजो देख पहले गोतेंमें हो बहुत दूर पहुंच गये और किसी पर्वत पर चढ़ करके गोपियों-का खेल देखने लगे। इधर गोपियां बार बार डूबती और छकलतीं, परन्तु कृष्णको देख न सकतीं थीं। अवशेषको कृष्णके विरहमें कातर हो सब मिल करके रोने लगीं। कृष्णने समय देख करके वंशी उठायी। गोपियां दौड़ करके उनके पास पहुंच गयीं। कृष्णके मधुर वंशीरवसे पाषाणमय पर्वत भी कोमल पड़ा था। इससे कृष्णका चरणचिह्न पहाड़की चूड़ा पर अङ्कित हुआ और उक्त पर्वत चरणपहाड़ी कहलाया।

इस पर्वतका प्रस्तर बरसाना और नन्दगांव नामक पहाड़ जैसा है। एक बार इसी पत्थरको तोड़ करके व्यवहार करनेका प्रस्ताव उठा था, परन्तु लोगोंके आपत्ति करने पर वह कार्यमें परिणत न हुआ। यह पहाड़ २०से ३० फुट तक ऊंचा और कोई चौथाई मील लम्बा होगा। इसके अधिकारीका नाम राधिकादास है। पहाड़की चारों ओर थोड़ी दूर तक जङ्गल है। इस स्थानको दर्शन करनेसे व्रजधामका बहुविध फल मिलता है।

चरणपादुका (सं० स्त्री०) १ खड़ाऊं, पावड़ी। २ चरण-चिह्न, पत्थर आदि पर बना हुआ पैरोंका निशान, जिसकी प्रायः पूजा की जाती है।

चरणपीठ (सं० पु०) चरणपादुका, पाँवड़ी, खड़ाऊं।

चरणयुग (सं० पु०) दोनों पाँव।

चरणव्यूह (सं० पु०) चरणानां शाखानां व्यूहोऽत्र, बहुव्री०। वेदके शाखाविभागोंका परिचायक एक ग्रन्थ। अथर्ववेदके ४९ परिशिष्ट एवं कात्यायनके ५म परिशिष्ट-को भी चरणव्यूह कहते हैं। वेदव्यास, शौनक प्रभृति-का बनाया हुआ चरणव्यूह भी है। कृष्णदत्त, महीदास और विद्यारण्य-रचित चरणव्यूहकी टीका पाई जाती है।

चरणशुश्रूषा (सं० स्त्री०) चरणयोः शुश्रूषा, ६-तत्। पदसेवा, दण्डवत्, पैर दबाना, बड़ोंकी सेवा।

चरणस (सं० त्रि०) चरणेन निर्वृत्तः चरण चातुर्थिक स। पा ४।२।८०। चरणनिर्वृत्त देशादि।

चरणसेवक (सं० त्रि०) चरणस्य सेवकः, ६-तत्। चरण-सेवा करनेवाला, जो बड़ोंकी टहल करता हो।

चरणसेवा (सं० स्त्री०) चरणस्य सेवा, ६-तत्। पदसेवा, पाँव दबाना।

चरणा (सं० स्त्री०) योनिरोगविशेष, योनिका एक तरह-का रोग, काछा।

चरणाक्ष (सं० पु०) अक्षपाद, गौतम।

चरणाद्रि (सं० पु०) काशी और मिरजापुरके मध्य चुनार नामक स्थान। यहां एक छोटा पर्वत है। इस पर्वतको एक शिला पर बुद्धदेवके चरणचिह्न विद्यमान हैं। फिल हाल उक्त शिला मुसलमानोंकी मसजिदमें रक्खी है और वे उसे कदमे-रसूल बतलाते हैं। चुनार देखो।

चरणानुग (सं० त्रि०) १ शरणागत, जो किसीके आश्रय-में हो, जिसने किसीको शरण ली हो। २ पश्चात्‌गामी, अनुगामी, जो किसी बड़के साथ या उसको शिक्षा पर चलता हो।

चरणानुयोग (सं० पु०) चरणस्य अनुयोगो यस्मिन्, बहुव्री। जैनमतानुसार प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग इन चार अनुयोगोंमेंसे तीसरा अनुयोग। जैनोंमें ये चारों अनुयोग चार वेदोंके तुल्य पूजनीय हैं। स्वामी समन्तभद्राचार्यने चरणानु-योगका स्वरूप इस प्रकार लिखा है—

"गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्।
चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति॥"

(रत्नकरण्डश्रावकाचार)

जिन शास्त्रोंमें गृहस्थ और मुनियोंके चारित्रका विशद रीतिसे वर्णन हो तथा उसकी वृद्धि और रक्षाके उपाय बतलाये गये हों, उनको चरणानुयोग कहते हैं। चरणानुयोगके दो भेद हैं—एक अनगाराचार और दूसरा श्रावकाचार। जैनधर्म देखो।

चरणाभरण (सं० क्ली०) चरणस्याभरणं, ६-तत्। चरण का अलङ्कार, पैरका गहना, पैंजनी, कड़ा।

चरणामृत (सं० क्ली०) चरणस्यामृतं, ६-तत्। १ पादोदक, वह जल जिसमें किसी देवता या महात्माके चरण पखारे गये हों। २ एकमें मिश्रित दूध, दही, घी, शक्कर और शहद जिसमें किसी देवमूर्तिको स्नान कराया गया हो। हिन्दू बड़ी श्रद्धासे पादोदक पीते हैं। चरणामृत बहुत ही थोड़ी मात्रामें पीनेका विधान है।

चरणायुध (सं० पु० स्त्री०) चरण एवायुधः अस्त्रविशेषो यस्य, बहुव्री० । १ कुक्कुट, अरुणशिखा, मुरगा ।

"आकर्ण्य सम्प्रति रुतं चरणायुधानां ।" (साहित्य द० ३ परि०)

स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है । (त्रि०) चरणौ आयुधाविव यस्य, बहुव्री० । २ जिसके चरण आयुधके जैसे हों, जिसके पाँव हथियार या अस्त्रकी भाँति हों ।

"तुण्डपक्षप्रहारैश्च जटायुश्चरणायुधः ।" (रामा० ३।५१।३५)

चरणारविन्द (सं० पु०) वह जिसके चरण कमलके जैसे हों ।

चरणार्द्ध (सं० पु०) १ चरण या चतुर्थांशका आधा, किसी पदार्थका आठवाँ भाग । २ किसी श्लोक या छन्दके पटका आधा भाग ।

चरणि (सं० पु०) चर अनि । मनुष्य, आदमी ।

"सुविदानं चकृत्यं चरणीनाम् ।" (ऋक् ८।२४।२३)

'चरणीनां मनुष्याणां ।' (सायण)

चरणिल (सं० त्रि०) चरण चातुरर्थिक इलच् । चरण द्वारा निर्वृत्त ।

चरणोदक (सं० पु०) चरणामृत ।

चरणोपान्त (सं० पु०) चरणस्य उपान्तः ६-तत् । चरण समीप, पाँवके निकट ।

चरण्टी (सं० स्त्री०) चिरण्टी पृषोदरादित्वात् इकारस्य अकारः । चिरण्टी, युवती, सयानी लड़की जो पिताके घर रहे ।

चरण्य (सं० त्रि०) चरण्य-उण् । चरणशील, गमनशील, जाने योग्य, चलने लायक ।

"चतुर्न गर्मिणी चरण्यः ।" (ऋक् १०।९५।६)

'चरण्युः चरणशीलः ।' (सायण)

चरत (देश०) पक्षिविशेष, एक तरहका बड़ा पक्षी जिसका शिकार किया जाता है ।

चरता (सं० स्त्री०) चरस्य भावः चर-तल्-टाप् । १ चरका धर्म, चरत्व । २ पृथिवी ।

चरती (हिं० पु०) वह जो व्रत न करता हो, व्रतके दिन उपवास न करनेवाला ।

चरत्व (सं० पु०) चलनेका भाव ।

चरथ (सं० त्रि०) चर-अथ । १ जङ्गम, चलनेवाला ।

"स्थातुश्चरथमक्तून्व्यूर्णोत्" (ऋक् १।६८।१) 'चरथं जङ्गमं' (सायण)

२ चरणशील, चलने योग्य ।

"पुरुत्रा चरथं दधे ।" (ऋक् ८।३३।८) 'चरथं चरणशील' (सायण)

(क्ली०) ३ विचरण, भ्रमण, टहल ।

"क्षधीन उर्ध्वांश्चरथाय जीवसे ।" (ऋक् १।३६।१४)

'चरथाय लोके चरणाय ।' (सायण)

चरदाम (हिं० पु०) एक तरहकी कपास जो मथुरा जिलेमें उपजती है ।

चरदेव (सं० पु०) एक योद्धाका नाम जिसका उल्लेख राजतरङ्गिणीमें है । (८।१५५४)

चरनक्षत्र (सं० क्ली०) पुनर्वसु, स्वाती, श्रवणा और धनिष्ठा आदि कई नक्षत्र । इनकी संख्या भिन्न भिन्न आचार्योंके मतसे पृथक् पृथक् है । नक्षत्र देखो।

चरनदासी (हिं० स्त्री०) जूता, पनही ।

चरनबरदार (हिं० पु०) वह नौकर जो बड़ोंका जूता उठाता और रखता हो ।

चरना (हिं० क्रि०) मैदान या खेतोंमें पशुओंका चारा खाना ।

चरनी (हिं० स्त्री०) १ चरी, चरगाह, वह स्थान जहाँ मवेशी चरता हो । २ पशुओंके खानेकी नाँद, जिसमें घास इत्यादि दे कर पशुओंको खाने दिया जाता है । ३ पशुओंका आहार, घास, चारा इत्यादि ।

४ वह स्थान जहाँ पशुओंको चारा दिया जाता है । यह चबूतरे जैसा लम्बा होता है ।

चरपट (हिं० पु०) १ चपँट, चपत, तमाचा । २ उचक्का, चाईं, वह जो किसीकी वस्तु उठा कर भाग ले जाता है । ३ एक तरहका छन्द, चपँट ।

चरपनी (देश०) वेश्याका गाना, मुजरा ।

चरपरा (अनु०) १ स्वादमें तीक्ष्ण, झालदार, तीता । २ चपल, तेज, फुरतीला ।

चरपराना (हिं० क्रि०) घावका चर चर करना ।

चरपराहट (हिं० स्त्री०) १ स्वादकी तीक्ष्णता, झाल । २ ईर्ष्या, द्वेष, जलन, घाव आदिकी जलन ।

चरप्रिय (सं० क्ली०) मरिच, काली मिर्च ।

चरफ (फा० वि०) चपल, चालाक, तेज, फुरतीला ।

चरब (फा० वि०) तेज, तीखा ।

चरबाँक (फा० वि०) १ चतुर, चालाक । २ निर्भय, निडर, शोख ।

चरबा (फा० पु०) प्रतिमूर्ति, नकल, खाका।

चरबाना (हिं० क्रि०) ढोल पर चमड़ा मढ़ाना।

चरबी (फा० पु०) प्राणियोंके शरीरमें होनेवाला चिकना गाढ़ा पदार्थ। यह बहुतसे वृक्षोंमें भी पाई जाती है। इसका रङ्ग पोलावर्ण लिये कुछ सफेद होता है। वैद्यक ग्रन्थमें लिखा है कि चरबी मनुष्यके शरीरकी सात धातुओंमेंसे एक है। इसकी उत्पत्ति मांससे मानो गई है। पाश्चात्य रासायनिकोंका मत है कि चरबियां गन्ध और स्वादरहित होती हैं और पानीमें घुल नहीं सकतीं। इससे मरहम, साबुन तथा मोमबत्तियां बनाई जाती हैं और तेलकी जगह यह कल या इंजिनों में भी दी जाती है। जब चरबी शरीरसे बाहर निकाली जाती है तो यह गरमीमें पिघल और सरदीमें जम जाती है।

चरबीदार (फा० वि०) जिसमें चरबी हो।

चरभ (सं० क्लो०) चरराशि, चरगृह।

चरभवन (सं० क्लो०) ज्योतिषमें चरराशि। चरगृह देखो।

चरम (सं० त्रि०) चरति चर-अमच्। चरेच। उण् ५।६९। १ अन्त्य, अंतिम, हद दरजेका, सबसे बढ़ा हुआ। २ पश्चिम। ३ शेषोत्पन्न, अन्त।

"अब्रवीत क्रियतामेषां सुतानां चरमा क्रिया।" (भारत ४।२४ अ०)

(क्लो०) ४ अन्त, पश्चात्।

"उत्तिष्ठेत् प्रथमं चास्य चरमं चैव संविशेत्।" (मनु २।१९४)

चरमकाल (सं० पु०) चरमश्चासौ कालश्चेति, कर्मधा०। शेषसमय, अंतकाल, मृत्युका समय।

चरमक्ष्माभृत् (सं० पु०) चरमश्चासौ क्ष्माभृच्चेति, कर्मधा०। अस्ताचल, पश्चिमाचल।

चरमर (अनु० पु०) किसी चीजके दबने या मुड़नेका शब्द।

चरमरा (देश०) एक प्रकारकी घास।

चरमराना (हिं० क्रि०) १ किसी चीजसे चरमर शब्दका निकलना। २ चरमर शब्द होना, जैसे—जूतेका चरमराना।

चरमराशि (सं० स्त्री०) मेष, कर्क, तुला और मकरराशि। राशि देखो

चरमशरीर (सं० पु०) चरमं शरीरं यस्य, बहुव्री०। १ वह पुरुष जो उसी जन्ममें मोक्ष लाभ करता हो। इनकी अकालमृत्यु नहीं होती और नियमसे इनको मुक्ति होती है। ये अतिशय बलशाली होते हैं। (क्लो०) चरमञ्च तत् शरीरञ्च, कर्मधा०। २ अन्तिम शरीर, सबसे उत्कृष्ट शरीर, वज्रवृषभनाराचसंहनन।

चरमशैर्षिक (सं० त्रि०) चरमं पश्चिमस्थं शीर्षं अस्यस्य चरमशीर्ष-ठन्। पश्चिमशीर्ष, जिसका शिर पश्चिमकी ओर रहे।

"अथ दक्षिणमावृत्य वयौ चरमशैर्षिकीम्।" (भारत० १३।१०।२९)

चरमाजा (सं० स्त्री०) अतिक्षुद्र अजा, एक बहुत छोटी बकरी। "चरमाजा मपेचिरन्" (अथर्व० ५।१८।११)

चरराशि (सं० स्त्री०) मेष, कर्क, तुला और मकरराशि।

चरलोता (देश०) एक प्रकारकी काष्ठौषध।

चरवा (देश०) धम्मन, मवेशीके खानेका चारा। यह बारहो महीना अधिकतासे उत्पन्न होता है। इसके खानेसे गाय तथा भैंस अधिक दूध देती हैं।

चरवाई (हिं० स्त्री०) १ चरानेका काम। २ चरानेकी मजदूरी।

चरवाना (हिं० क्रि०) चरानेका काम कराना।

चरवाहा (हिं० पु०) वह जो गाय भैंस आदि चराता है।

चरवाही (हिं० स्त्री०) १ मवेशी चरानेका काम। २ चरानेकी मजदूरी।

चरव्य (सं० त्रि०) चरवे हितं चरु यत्। उगवादिभ्यो यत्। पा ५।१।२। चरु बनाने योग्य।

चरस (हिं० पु०) १ गांजेके पेड़ और उसके फूलका रस। गांजेमें विशेषतः उसके फूल और पक्व बीजमें राल जैसा किसी प्रकारका गाढ़ा रस रहता है। इस रसको समय समय पर गांजेसे अलग कर लेते और उसीका नाम चरस रख देते हैं। जहां गांजेकी आबादी है, वहां सब जगह चरस नहीं पाया जाता है। कारण बङ्गाल और दूसरे कितने ही देशोंके गांजा वृक्षमें रस अति अल्पमात्र निकलता है, सुतरां उन सभी प्रदेशोंमें अच्छा चरस भी नहीं मिलता। हिमालयके निकटस्थ प्रदेश विशेषतः गढ़वाल और नेपाल प्रभृति स्थानोंके गांजा वृक्षमें यथेष्ट परिमाणसे वैसा रस रहता, जिससे वहां सभी स्थानों पर प्रचुर परिमाणमें चरस उतरता है। युरोप अति शीतप्रधान

होनेसे वहां गांजेके पेड़से यथेष्ट परिमाणमें रस नहीं निकलता, सुतरां वहां ऐसे परिमाणमें चरस उत्पन्न होनेकी आशा भी नहीं। गांजेका पेड़ दूर दूर रहनेसे उसमें खूब रस होता है।

ग्रीष्मकालमें चरस प्रस्तुत होता है। यह साधारणतः तीन प्रकारसे बनता है—ताजे और खूब पके हुए गांजेके पेड़को आगको धीमी आंचमें नर्म करके फिर इमामदस्तेमें कूटनेसे उसमें भरा हुआ दूध इकट्ठा हो करके चरस बन जाता है। दूसरे चरस बनानेवाले चमड़ेको पोशाक पहन गांजेके खेतसे आते जाते हैं। इससे गांजा वृक्षके साथ गात्रका संस्पर्श और संघर्षण होने पर राल-जैसी गोंद उनके चर्मनिर्मित परिच्छदमें लग जाती है। वह कपड़ोंसे यह गोंद निकाल लेते और इसीसे चरस बना देते हैं। चरस बनानेकी सबसे अच्छी तरकीब यह है—गांजा वृक्षकी वर्धितावस्थामें हाथसे उसके मध्यकी गोंद निकाल लेते हैं। इसीका नाम चरस है।

पञ्जाब अञ्चलमें गांजेके बीज आदि ले करके हाथसे एक साथ मलने पर चरस निकलता है। यारकन्द और काशगरका चरस सबसे अच्छा होता है। वहां गर्दा नामक चरसका ही अधिक व्यवहार है। गर्दा तीन प्रकारका होता है—सुर्खा, भांगरा और खाकी। कुलू, कांगड़ा और काश्मीर प्रदेशसे पञ्जाबको काशगर और यारकन्दका चरस आता है।

भारतवर्षमें बोखारी, यारकन्दी और काश्मीरी तरह तरहका चरस मिलता है। सब प्रकारके चरसमें मोम जैसा चरस ही सर्वोत्कृष्ट है। नेपालमें बुखारी चरस ज्यादा अच्छा समझा जाता है। दिल्ली प्रदेशस्थ गढ़बहादुर नामक स्थान चरसकी खास जगह है।

चरस गांजे और भांगकी तरह मादक पदार्थ है। फिर भी गांजे जैसी अधिक मादकताशक्ति उसमें नहीं है। पहले पीनेकी गोली तम्बाकूसे चरसकी लपेट आगमें जरूरतके मुवाफिक सेंक लेते हैं। फिर थोड़ीसी खानेकी तम्बाकू उसमें मिला चिलम पर रख करके पीते हैं। धूआं खींचते ही नशा चढ़ आता, फिर वह जल्द ही उतर भी जाता है। इसको अकस्मात् व्यवहार करनेसे मानसिक विभ्रम लगता है। चरस पीनेसे आंखें खूब लाल हो जाती हैं।

एशिया और मिस्र देशमें बहुकालसे मादक द्रव्य स्वरूप चरस व्यवहृत होते आया है। डाक्टर रइल और मरेके कथनानुसार युरोपमें भी पहलेसेही यह औषध जैसा व्यवहृत रहा है।

२ बैल वा भैंस आदिके चमड़ेसे बना हुआ बड़ा थैला। ३ एक तरहका पक्षी जो ज्यादातर आसाम प्रान्तमें पाया जाता है। इसको बनमोर वा चीनीमोर भी कहते हैं। ४ पुर, तरसा, मोट, तरसा, चमड़ेका बना हुआ बहुत बड़ा डोल, इसके द्वारा खेत सींचनेके लिए कूपसे पानी निकाला जाता है। इसमें पानी इतना ज्यादा आता है, कि इसको खींचनेके लिए दो बैल जोते जाते हैं। ५ गोचर्म, जमीन नापनेका एक परिमाण। किसी किसीके मतसे यह २१०० हाथका होता है।

चरसा (हिं० पु०) १ भैंस बैल आदिका चमड़ा। २ वह थैला जो चमड़ेका बना हो। ३ चरस, मोट, पुर। ४ भूमिका एक परिमाण, गोचर्म।

चरसी (हिं० पु०) १ जो मोट द्वारा कूपसे जल निकालता हो। २ चरस पीनेवाला, चरसका नशा करनेवाला।

चरा (छर्रा वा चड़ा)—बङ्गालके मानभूम जिलाके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० २३° २३´ उ० और देशा० ८६° २५´ पू०में पुरुलिया नगरसे ४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां अत्यन्त प्राचीन पत्थरके बने हुए दो जैनमन्दिर हैं। पहले यहां इसी तरहके ७ देवालय थे, किन्तु अब दोके सिवा शेष मन्दिरोंका सिर्फ भग्नावशेष रह गया है। मन्दिरोंमें कोई विशेष शिल्पकार्य नहीं है, लेकिन यहांकी तीर्थङ्करकी मूर्तियां ही देखने योग्य हैं। यहां श्रावकोंके बनाये बहुतसे बड़े बड़े जलाशय हैं। लोकसंख्या प्रायः १५३२ है।

चराई (हिं० स्त्री०) १ चरानेका काम। २ चरानेकी मजदूरी। ३ चरनेका काम।

चराक (देश०) एक तरहका पक्षी।

चराग (हिं० पु०) चिराग देखो।

चरागाह (फा० पु०) पशुओंके चरनेका स्थान, चर, चरनी।

चराचर (सं० त्रि०) चर-अच् निपातने साधुः। १ जङ्गम, चलनेवाला। २ इष्ट, अभिलषित, वाञ्छित, चाहा हुआ। (पु०) ३ कपर्दक, कौड़ी। चरेण सह अचरः। ४ स्थावर और जङ्गम, चर और अचर।

"दुर्बोधमान्योऽन्यमामाद यस्मिंल्लोकायराचरा:" (भा० ३।६।१५)

(क्ली०) चराचरयोः समाहारः। ५ स्थावर और जङ्गम, जड़ और चेतन, जगत्, संसार।

चराचरगुरु (सं० पु०) चराचरस्य गुरुः, ६-तत्। १ परमेश्वर। २ स्थावरजङ्गमात्मक जगत्के सृष्टिकर्ता, ब्रह्मा।

चरान (हिं० पु०) वह भूमि जहां मवेशी चरता है, चौपायोंके चरनेकी भूमि।

चराना (हिं० क्रि०) १ मवेशियोंको चारा खिलानेके लिये खेतमें ले जाना। २ किसीको धोखा देना, बात बहलाना, मूर्ख बनाना।

चराव (हिं० पु०) चर, चरनी, चरागाह।

चरि (सं० पु०) चर-इन्। सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७। पशु, मवेशी।

चरि—पञ्जाबके काङ्गड़ा जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० ३२° ८' उ० और देशा० ७६° २७' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २५८७ है। १८५४ ई०में यहां एक मन्दिरका नींव डाला गया था, किन्तु वह अधूरा हो रह गया। मन्दिरके भीतर एक शिलालेख है, जिस पर बौद्धधर्मके नियम लिखे हुए हैं। इस शिलास्तम्भसे मालूम पड़ता है कि उस मन्दिरमें तान्त्रिकदेवी वज्र-वाराहीकी प्रतिमा थी।

चरित (सं० त्रि०) चर कर्मणि-क्त। १ अनुष्ठित, करने योग्य। (क्ली०) चर भावे क्त। २ चरित्र, जीवनचरित्र, जीवनी। "राज्ञां चोभयवंश्यानां चरितं परमाद्भुतम्।" (भाग १०।१।१)

उज्ज्वलनीलमणिके मतसे चरित दो प्रकारका होता, पहला अनुभाव और दूसरा लीला।

"अनुभावाश्च लीला चेत्युच्यते चरितं द्विधा।" (उज्ज्वलनी०)

अनुभाव और लीला देखो।

३ अनुष्ठान, काम, करनी, कृत्य। (त्रि०) चर कर्मणि क्त। ४ गत, गया हुआ, बीता हुआ। ५ प्राप्त, पाया हुआ, हासिल किया हुआ। ६ ज्ञात, मालूम किया हुआ, जाना हुआ। ७ आचरण, रहन सहन।

चरितनायक (सं० पु०) वह प्रधान मनुष्य जिसकी जीवनी ले कर कोई पुस्तक लिखी जाय।

चरितमय (सं० त्रि०) चरित-मयट्। चरितात्मक।

चरितव्य (सं० त्रि०) चर-तव्य। १ चरितके योग्य, आचरण करने लायक। "उपांशु वाचा चरितव्यं।" (ऐतरेयब्रा ०।१८८)

२ अनुष्ठेय, कर्तव्य, करने योग्य।

"नवाप्यधर्मो विद्वद्भिश्चरितव्यः कथञ्चन।" (भारत १।१८६५०)

चरितव्रत (सं० त्रि०) चरितं अनुष्ठितं व्रतं येन, बहुव्री०। कृतव्रत, जिसने व्रतका आचरण किया हो।

चरिताख्यान (सं० क्ली०) चरितस्याख्यानं, ६-तत्। चरित-कीर्तन, जीवनवृत्तान्त, जीवनका वर्णन।

चरिताख्यायक (सं० त्रि०) चरितस्याख्यायकः, ६-तत्। जिसने किसी मनुष्यका जीवन-वृत्तान्त लिखा हो, चरित्र-लेखक, किसीकी जीवनी लिखनेवाला।

चरितार्थ (सं० त्रि०) चरितः कृतोऽर्थः प्रयोजनं येन, बहुव्री०। १ कृतार्थ, जिसका कार्य या प्रयोजन सिद्ध हो गया हो, जिसकी अभिलाषा पूरी हो गई हो। २ सफल। "प्रवर्तिरासीच्छब्दानां चरितार्था चतुष्टयी।" (कुमार २।१७)

चरितार्थता (सं० स्त्री०) चरितार्थस्य भावः चरितार्थ-तल्-टाप्। चरितार्थका भाव, कृतार्थता, अभिलाषा पूरी होने का भाव या क्रिया।

चरितार्थत्व (सं० क्ली०) चरितार्थस्य भावः चरितार्थ-त्व। कृतार्थता।

"अन्योन्याभावतो नास्य चरितार्थत्वमुच्यते।" (भाषापरि०)

चरित्तर (हिं० पु०) बहाना, मिस, नखरेबाजी।

चरित्र (सं० क्ली०) चर इत्र। अर्त्ति-लू-धू-सू-खनसहचर इत्रः। उण् ४।१८४। १ स्वभाव। इसका पर्याय—चरित, चारित्र और चरीत है।

"यौवनस्थ शीलगुप्तानां चरित्रं कुलयोषिताम्।" (कथास० ४।८६)

२ अनुष्ठान, कार्य, वह जो किया जाय। ३ चेष्टा, प्रयत्न, कोशिश, उद्योग। ४ लीला, करनी, करतूत।

चरित्रनायक (सं० पु०) चरितनायक देखो।

चरित्रपुर—उत्कलका एक प्राचीन नगर। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्गने चे-ली-त-लो नामसे इसका उल्लेख किया

है। उनके वर्णनसे पता चलता है कि यह स्थान समुद्रके समीप रहनेके कारण उस समय यहां देशदेशके मनुष्य वाणिज्य करने आते थे।

प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहामके मतानुसार यहांको पुरी ही प्राचीन चरित्रपुर कहा जाता किन्तु उनका मत ग्राह्य करने योग्य नहीं है। चरित्रपुरका वर्तमान नाम चारपुर है जो पुरी जिलाके अन्तर्गत और वागारी नदीके उत्तर तीर पर अवस्थित है।

चरित्रवत् (सं० त्रि०) चरित्र प्रशंसार्थे मतुप् मस्य वः। प्रशस्त चरित्रयुक्त, जिसका चाल-चलन तारीफ करने लायक हो, अच्छे चरित्रवाला, अच्छे चालचलनवाला, सदाचारी। "वेदं चरित्रवन्तं ब्राह्मणम्।" (आश्वला० गृह्य ४।१)

चरित्रा (सं० स्त्री०) चरित्र-टाप्। इमलीका पेड़।

चरिष्णु (सं० त्रि०) चर-इष्णुच्। पा ३।२।१३६ १ जङ्गम, चलनेवाला।

"विराट् स्वराट् स्थाणु चरिष्णु मुखः।" (भागवत २।६।४०)

(पु०) २ कीर्तिमान्के पुत्रका नाम।

चरिष्णुधूम (सं० त्रि०) चरिष्णुधूमो यस्य, बहुव्री०। जिसका धूआँ चारों ओर फैला हुआ हो।

"चरिष्णुधूममगृभीत शोचिषम्।" (ऋक् ८।२३।१)

'चरिष्णुधूमं सर्वतश्चरणशीलधूमकाल" (सायण)

चरु (सं० पु०) चर्यते भक्ष्यतेऽस्मादिभिः, चर कर्मणि उ। यद्वा चरति होमादिकमस्मात् चर अपादाने उ। भृमृशीङ् चरित् सरितनिधनिमिमस्जिभ्य उः। उणा, १।७। १ हव्यान्न, होमके लिये पाक किया जानेवाला अन्न, यज्ञीय पायसान्न। चरन्त्यापोऽत्र, चर-उ अधिकरणे। २ मेघ। ३ चरुपाकपात्र, चरु पाक करनेका बर्तन।

कर्मप्रदीपके मतमें स्वशाखोक्त विधिके अनुसार अन्नको सुसिद्ध रूपसे पाक करनेका नाम चरु है। चरुको अतिशय कठिन और शिथिल न करना चाहिये। यह ऐसा पकाया जाता जिसमें न तो जलने पाता और न कच्चा ही आता है। (कर्मप्रदीप)

भवदेवके मतमें चरुपाकप्रणाली ऐसी होती है— यथानियम अग्निस्थापन करके उसको पश्चिम दिक्‌को कई एक कुश पूर्वाग्र रखना चाहिये। वरुण काष्ठ द्वारा एक उदूखल, मूसल और चमस तथा वंशशलाका द्वारा सूप प्रस्तुत करना पड़ता है। चमस और कुशण्डिका देखो। उदूखल, मूसल, चमस और सूप प्रक्षालित करके कुश पर रख देते हैं। चमसमें जल और सूपमें यव वा व्रीहि रखा जाता है। मन्त्र पढ़ करके चमसस्थित जल द्वारा व्रीहि वा यव आठ बार प्रोक्षित करना चाहिये। प्रोक्षण करनेका मन्त्र यह है—१ ॐ वास्तोष्पतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। २ ॐ इन्द्राय त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। ३ ॐ भूस्त्वाजुष्टं प्रोक्षामि। ४ ॐ भुवस्त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। ५ ॐ स्वस्त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। ६ ॐ प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। इन ६ मन्त्रोंसे छह बार प्रोक्षण करके अमन्त्रक दो बार प्रोक्षण करना पड़ता है। किसी कांस्यपात्र वा चरुस्थाली द्वारा व्रीहि या यव उठा करके उदूखलमें रखते हैं। व्रीहि वा यवको आठ बार उठाना पड़ता है। उठानेका मन्त्र यह है—१ ॐ वास्तोष्पतये त्वा जुष्टं निर्वपामि। २ ॐ इन्द्राय त्वा जुष्टं निर्वपामि। ३ ॐ भूस्त्वा जुष्टं निर्वपामि। ४ ॐ भुवस्त्वा जुष्टं निर्वपामि। ५ ॐ स्वस्त्वा जुष्टं निर्वपामि। ६ ॐ प्रजापतये त्वा जुष्टं निर्वपामि। इन्हीं छहों मन्त्रोंसे ६ बार उठा करके दो बार अमन्त्रक उठाते हैं। दाहना हाथ ऊपर रख करके मूसल पकड़ा जाता है। मूसलके आघातसे चावल प्रस्तुत करते और सूपमें फटक करके तुष तथा कणा प्रभृति निकाल डालते हैं। तीन बार ऐसा ही करना पड़ता है। फिर उन चावलोंको तीन बार प्रक्षालन किया जाता है। चरुस्थालीके मध्य एक पवित्र उत्तराग्र रख करके उस पर प्रक्षालित तण्डुल, तदुपयुक्त दुग्ध तथा कियत् परिमाण जल डाल पाक करना चाहिये। मेक्षणको दक्षिणावर्त घुमा करके इस प्रकारसे पकाते जिसमें अन्नको सुसिद्ध लाते और तण्डुल जलने या गलने नहीं पाते। पाक हो जाने पर उसको घृतस्रुव दे करके अग्निके उत्तर कुश पर रखते हैं। पाक करनेके समय चरुस्थालोको जौन दिक् जिस ओरको रहती, ठीक वही दिक् उसी ओरको रख करके कुश पर स्थापन करनी पड़ती है। इसीसे उतारनेके पहले ही स्थालीको चिह्नित कर लेते हैं। इसके पीछे चरुके मध्य फिर एक बार घृतस्रुव देनेका विधान है। (भवदेवभट्ट) कात्यायनश्रौतसूत्र और उसके भाष्यमें इसके पाकको प्रणाली इस प्रकार

लिखो है—अध्वर्यु को प्राचोनावोती और दक्षिणमुख हो करके अपूर्ण चरुस्थाली और न्युब्ज मुष्टिमें व्रीहि ग्रहण करना चाहिये। अथवा वह अपूर्ण स्रुक् ले करके दक्षिणाग्निके उत्तर और गार्हपत्यके पश्चिम दक्षिणमुखो खड़े हो करके व्रीहिको आघात और कण्डन (चलाना) करता है। चावल निकलने पर उदूखलसे सूपमें उठा करके तुष और कणा प्रभृति निकाल डालते हैं। किसो शाखाके मतमें दक्षिणाग्निके उत्तर एक कृष्णाजिन उत्तरग्रीव करके बिछाना चाहिये। उसो कृष्णाजिन पर उदूखल रख करके धान्यको आघात और कण्डन करनेका विधान है। इस प्रकारसे जो तण्डुल बनाया जाता, सारतण्डुल कहलाता है। चरुपाकमें तण्डुल अधिक सिद्ध करना न चाहिये। उसको इस प्रकारसे पकाते जिसमें स्थालोको कभी भी पूर्ण नहीं पाते। (कात्यायनश्रौतसूत्र ४।१।१८-७)

४ मिट्टीके सकोरेमें रांधे हुए चार मुट्ठी चावल। ५ वह भात जिसमें मांड़ मौजूद हो, बिना मांड़ पसाया हुआ भात, गुलैता भात। ६ मेघ, बादल। ७ वह जमोन जहां पशु चरते हों। ८ पशुओंके चरनेकी जमीन पर लगाया जानेवाला महसूल। ९ यज्ञ। १० जैनोंके अनुसार पूजाके अष्टद्रव्योंमें पांचवां द्रव्य। शुद्ध प्रणाली और विशुद्ध पदार्थ द्वारा पूजार्थ बनाये हुए खुरमा, पेड़ा, लाड्डू, वेवर आदिको चरु कहते हैं। इसके स्थानमें नारियलके सूखे गोलेको छोल कर बनाये हुए खण्ड भो चढ़ाये जाते हैं।

चरुका (सं० स्त्री०) व्रीहिविशेष, एक तरहका धान, चरक।

चरुचेलिन् (सं० पु०) चरुस्चेलमिवास्त्यस्य चरु-चेल-इनि। महादेव, शिव।

"चरुचेली मिलीमिली" (भारत १३।२८६ अ०)

चरुपात्र (सं० पु०) हविष्यान्न रखने या पकानेका पात्र।

चरुव्रण (सं० पु०) चरोर्व्रण इव। चित्रापूप, एक प्रकारके पकवान, चितवा।

चरुस्थाली (सं० स्त्री०) चरोः स्थाली, ६-तत्। जिस पात्रमें हविष्यान्न पकाया जाय, चरुपात्र। कर्मप्रदीपके मतसे मट्टी या तांबेको चरुस्थाली हो प्रशस्त है। इसका मुंह बहुत बड़ा न होना चाहिए। तिर्यक् और ऊर्ध्व भागमें एक समिध् परिमित तथा मत्त करना पड़ता है।

"तीर्यगूर्ध्वं समिन्मात्रा दृढा नातिहदम्मुखो।
मृण्मय्यौडम्बरी वापि चरुस्थाली प्रशस्यते।" (कर्मप्रदीप)

चरुहोम (सं० पु०) जिसमें चरु दे कर आहुति देनेका विधान हो उसे चरुहोम कहते हैं।

चरेरा (हिं० वि०) १ कड़ा और खुरदुरा। २ कर्कश, रूखा। (देश०) ३ हिमालयको तराईमें पाये जानेवाला एक तरहका वृक्ष। इसका काष्ठ लाल रङ्ग लिये सफेद और मजबूत होता है। इसके फलोंसे एक तरहका तेल निकाला जाता है।

चरेलो (हिं० स्त्री०) ब्राह्मी बूटी।

चरैला (हिं० पु०) १ एक तरहका चूल्हा। यह चूल्हा इस तरह बना रहता है कि एक समय चार चीजें पकाई जा सकती हैं।

चरोत्तर (हिं० पु०) किसी मनुष्यको उसके जोवन भरके लिये दो गई हुई जमीन, वह भूमि जो किसी मनुष्यको सदाके लिये दी गई हो।

चर्क (देश०) जहाजका मार्ग, रूस।

चर्ख (हिं० पु०) चरख देखो।

चर्खकश (फा० पु०) १ खरादको डोरी या पट्टा खींचनेवाला। २ वह जो खराद चलाता हो।

चर्खा (हिं० पु०) १ चरखा देखो।

२ दक्षिण काठियावाड़के अन्तर्गत एक छोटा राज्य। यहांकी आय प्रायः १२००) रु० है जिनमें गायकवाड़को ५०२) रु० और जुनागढ़के नवाबको ३८) रुपये कर देने पड़ते हैं।

चर्खारी—१ मध्य-भारतका एक देशीय राज्य। इसका प्रधान भाग अक्षा० २५° २१′ तथा २५° ३५′ उ० और देशा० ७९° ३८′ एवं ७९° ५६′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ७४५ वर्गमील है। इसके प्रधान ८ भागोंमें ८ भाग हमीरपुर जिलेसे घिरे हैं। सबसे बड़ा ८वां अंश धसान नदी पर अवस्थित और ओर्छा, छत्रपुर तथा बोजावर राज्योंसे आवृत है। इसकी प्रधान नदियां केन और धासन हैं। रानीपुर परगनेमें होरेको खान है।

चर्खारीराजका आरम्भ १७६५ ई०से हुआ है। १७३१ ई०को पन्ना नरेश छत्रसालने अपना राज्य कई भागोंमें बांटा था। उनमें एक जिसका आय ३१ लाख

रुपया वार्षिक था और जिसकी राजधानी जैतपुर था, इनके तृतीय पुत्र जगत्राजको मिला। १७५७ ई०को जगत्राजका परलोक वास होनेसे उत्तराधिकार पर विवाद उठा था। तृतीय पुत्र कीर्तिसिंह जो युवराज थे, अपने पितासे पहले ही चल बसे थे और इनके पुत्र गुमानसिंहने राज्याधिकार करनेकी चेष्टा की। परन्तु जगत्राजके दूसरे पुत्र पहाड़सिंहने गुमानसिंह और उनके भ्राता खुमानसिंहको चरखारीके दुर्गमें शरणापन्न होने पर विवश किया। १७६४ ई०को पहाड़सिंहने सन्धि करके अपने भतीजोंमें गुमानसिंहको बांदा और खुमानसिंहको चर्खारी सौंप दी। १७८२ ई०को चर्खारीके प्रथम नृपति खुमानसिंह परलोकवासी हुए और उनके पुत्र विजय विक्रमाजित्सिंह बहादुर गद्दी पर बैठे। यह अपने सम्बन्धियों विशेषतः बांदाके अर्जुनसिंहसे बराबर लड़ते झगड़ते रहे और अन्तको राज्यसे निकाल बाहर किये गये। १७८८ ई०को विजयबहादुरसिंहने अपना अधिकार पुनर्वार प्राप्त करनेकी आशासे बुन्देलखण्डके आक्रमणमें अलीबहादुर और हिम्मतबहादुरको साथ दिया और कर देने तथा मित्र रहनेकी शर्त पर १७९८ ई०को उनसे चरखारी राज्यका सनद पा लिया था। १८०३ ई०को अङ्गरेजोंके बुन्देलखण्ड पहुंचते विजयबहादुरसिंह ही एक ऐसे बुन्देला राजा थे, जिन्होंने इनसे सन्धि की। १८०४ ई०को उन्होंने एक सनद पायी और १८११ ई०को भी एक सनद मिली जिसमें कुछ छूटे हुए गांव जोड़ दिये गये थे। १८२९ ई०को स्वर्गवासी होने पर इनके पौत्र रत्नसिंह सिंहासनारूढ़ हुए। बलवेके समय इन्होंने महोबाके असिष्टण्ट कलक्टर मि० कार्नको शरण दिया और निकटवर्ती स्थानोंके प्रबन्धमें अङ्गरेजोंको साहाय्य किया। इसके पुरस्कारमें उन्हें २० हजार वार्षिककी भूमि, खिलअत, ११ तोपोंकी सलामी और दत्तकग्रहण करनेका अधिकार दिया गया जो १८६२ ई०को सनदसे पक्का हुआ। १८६० ई०को परलोकवासी होने पीछे इनके नाबालिग पुत्र जयसिंहदेव राजा हुए। १८७४ ई०को इन्हें राज्याधिकार मिला था, परन्तु कुप्रबन्ध रहनेके कारण १८७९ ई०को एक अङ्गरेजी अफसर सुपरिण्टेण्डेण्ट जैसा रखा और १८८० ई०को शासनाधिकार भी छीन लिया गया। जयसिंह शीघ्र ही परलोकवासी हुए। उनकी विधवा रानीने मलखानसिंहको गोद लिया था। उस समय इनका वयस केवल ८ बत्सर रहा। १८८६ ई०को यह राज्य बुन्देलखण्डस्थ पोलिटिकल एजेण्टके अधीन हुआ और १८९४ ई०में मलखानसिंहको राज्यका पूर्णाधिकार मिल गया। वर्तमान राजाका नाम एच. एच महाराजाधिराज सिपाह दार-उल-मुल्क गङ्गासिंह जो देव बहादुर है।

इस राज्यकी लोकसंख्या प्रायः १२३२५४ है। लोग बुन्देलखण्डी और बनाफरी भाषा व्यवहार करते हैं। चर्खारी नगरसे महोबे तक पक्की सड़क लगी हैं। महाराज अपने आप रियासतका काम काज चलाते हैं। राज्यका पूर्ण आय प्रायः ६ लाख है। पहले यहां राज्यका श्रीनगरी और चर्खारीका राजशाही दो प्रकारका सिक्का चलता था, १८८० ई०से अङ्गरेजी रुपया ही चलने लगा।

२ राज्यका प्रधान नगर चर्खारी (महाराजनगर) अक्षा० २५° २४' उ० और देशा० ७९° ४६' पू०में अवस्थित है। महोबा ष्टेशनसे यह प्रायः १० मील दूर है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ११७१८ होगी। चर्खारीमें मङ्गलगढ़ दुर्ग खूब ऊंचा खड़ा है। पास ही पहाड़के नीचे ३ झील हैं। १७६५ ई०के पीछे जब राजा खुमानसिंहने इसको अपनी राजधानी बनाया, नगरकी श्रीवृद्धि हुई। आजकल यहां खासा व्यवसाय चलता है। चर्खारीसे अनाज, तिल, अलसी और घीकी रफ़्तनी होती है।

चर्च (अं० पु०) १ ईसाईयोंके प्रार्थना करनेका मन्दिर, गिरजा। २ ईसाई धर्मका कोई सम्प्रदाय।

चर्चक (सं० पु०) चर्च कर्तरि ण्वुल्। आलोचक, चर्चा करनेवाला।

चर्चन (सं० क्ली०) चर्च-ल्युट्। १ आलोचना, चर्चा। २ लेपन।

चर्चर (सं० पु०) चर्च बाहुलकात् अरन्। गमनशील, चलनेवाला। "अजेव चर्चरं जारं मरायु।" (ऋक् १०।१०६।७)
'चर्चरं चरणशीलं' (सायण)

चर्चरिका (सं० स्त्री०) चर्चरी-कन्-टाप् पूर्व ह्रस्व। गतिविशेष, नाटकके उस समयका गान जब किसी विषयकी समाप्ति अथवा जवनिका पात होता है।

"चर्चरिकया विचिन्त्य।" (विक्रमोर्वशी ४ अङ्क)

चर्चरी (सं० स्त्री०) चर्च बाहुलकात् अरन् गौरादि' ङीष्। १ गानविशेष, वसन्त ऋतुमें गाये जाने योग्य एक प्रकारका गाना, फाग, चाँचर। २ कुञ्चित बाल, घुंघराले केश। ३ करध्वनि, करतलध्वनि, तालो बजानेका शब्द।

'चर्चरी गीतभेदे च केशभित्करशब्दयोः।' (रुद्र)

४ हर्षक्रीड़ा, उत्सव, आमोद प्रमोद। ५ कार्पटिकों-के आदरयुक्त वाक्य, मर्मवेदीके अच्छे अच्छे वचन। ६ तौर्यत्रिक, नृत्य, गीत और वाद्य, गाना बजाना, नाचना कूदना, आनन्दकी धूम। ७ वसन्तकालमें करने योग्य आमोद प्रमोद, खेल कूद, होलीकी धूमधाम, होलीका हुल्लड़। ८ हर्ष क्रीड़ाका वाक्यविशेष, चमेटी, चर्चरी गीत, आनन्द, क्रीड़ा।

"अये मधुरमभिहन्यमान मृदुमङ्गलानुगतसङ्गीतमधुरः पुरः पौराणामुच्चरति चर्चरीध्वनिः।" (रत्नावली १ अ०)

९ साटोप वाक्य, सगर्व वचन, घमण्डयुक्त बात। १० प्राचीन भारतका एक प्रकारका आनद्ध यन्त्र, प्राचीन कालका एक प्रकारका ढोल या बाजा जो चमड़े से मढ़ा हुआ होता था। ११ वर्णवृत्तविशेष, एक तरहका वर्ण-वृत्त जिसमें रगण, सगण, दो जगण और तब फिर रगण होता है। १२ तालके मुख्य ६० भेदोंमेंसे एक।

चर्चरीक (सं० पु०) चर्च-ईकन् निपातने साधु। फर्फरीकादयश्च। उण् ४।२०। १ महाकाल भैरव। २ केशविन्यास, बाल सँवारनेकी क्रिया। ३ शाक, साग, भाजी।

चर्चस् (सं० पु०) चर्च-असुन्। १ निधिविशेष, कुबेरकी नौ निधियोंमें एक। निधि देखो।

चर्चा (सं० स्त्री०) चर्यते विचार्यते वेदवेदान्तादितत्त्वमनया इति चर्च णिच् अङ्। १ दुर्गा। चर्च भावे अङ्। २ चिन्ता, आलोचना, जिक्र, वर्णन। ३ चार्चिक्य। ४ लेपन, पोतना। "मृगमदकृतचर्चा पीतकौशेयवासाः।" (छन्दोम०)

५ गायत्री रूपा महादेवी।

"आत्मधातुमयी चर्चा चर्चिता चारुहासिनी।" (देवीभा० १२।६।४६)

६ जयन्तके अन्तर्गत एक नदी। ७ वार्त्तालाप, बातचीत। ७ किंवदन्ती, अफवाह।

चर्चि (सं० स्त्री०) चर्च भावे इन्। विचारणा, वर्णन, बयान।

"हे चर्चावतिरिच्यते एकधा गौरतिरिक्तः एकयायुवनः।"

(तैत्तिरीयब्रा० १।२।४।२)

चर्चिक (सं० त्रि०) १ चर्चा वेदादि-विचरणां वेत्ति चर्चा-ठन्। वेद आदि जाननेवाला।

चर्चिका (सं० स्त्री०) चर्चा स्वार्थे कन् टाप् इत्वञ्च। १ दुर्गा। २ चर्चा, जिक्र। ३ रोगविशेष, एक तरह-का रोग। ४ एक प्रकारका सेम।

चर्चिक्य (सं० क्ली०) चार्चिक्य पृषोदरादित्वात् साधु। चार्चिक्य देखो

चर्चित (सं० त्रि०) चर्च कर्मणि क्त। १ चन्दनादि द्वारा लेपित, चंदनसे पोता हुआ। २ आलोचित, जिसकी चर्चा हो। (क्ली०) चर्च भावे क्त। ३ लेपन, पोतना।

चर्तन (सं० त्रि०) १ एकत्र बद्ध, एकमें बंधा हुआ, एकमें गुथा हुआ। (क्ली०) २ कीलक, कील, खूँटो।

"विते मुञ्चामि रशना वि रश्मीन् वियोक्ता यानि परिचर्तनानि"

(कृष्णयजुः १।६।४।३)

चर्तव्य (सं० त्रि०) चर तव्य। चरितव्य देखो।

"अब्रह्म चर्ये च नियमा चर्तव्या इति नः श्रुतं।" (भारत १३।१०९।२)

चर्त्य (सं० त्रि०) चर्यते चृत हिंसायां ण्यत्। ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृतेः। पा ३।१।११०। हननीय, हिंसितव्य, हिंसा करने योग्य, मारने लायक, कतल करने काबिल।

चर्थावल—युक्तप्रदेशके मुजफ्फरनगर जिले और तहसील-का एक शहर। यह अक्षा० २९° ३३´ उ० और देशा० ७७° ३६´ पू० मुजफ्फर नगरसे ७ मील उत्तर पश्चिम और हिन्दन नदीसे ३ मील पूर्वमें अवस्थित है। पहले यहां अंगरेज कर्मचारियोंका वासभवन था। अभी बहुतसे कृषक रहते हैं। लोकसंख्या प्राय ६२३६ है।

चर्दा—युक्तप्रदेशके बहराइच जिलेका एक परगना। इसके उत्तर ताप्ती नदीप्रवाहित नेपालको सीमा, पूर्व भिनगा परगना और दक्षिण तथा पश्चिमको नानपाड़ा है। यह स्थान क्रमशः इकौना और सैयदवंशीय पार्वतीय सामन्त राजाओंके अधिकारमें रहा, फिर नानपाड़ा राजाके किसी ज्ञातिको मिल गया। १८५७ ई० तक चर्दा इन्हीं ज्ञातिवंशीयोंके अधीन रहा, परन्तु, विद्रोही होने पर इनसे छीन लिया गया। जो ब्रटिश राजाके आज्ञाधीन रहे, सरकारने उन्हींको यह परगना दे डाला।

चर्दा परगनेको भकला नदी २ भागोंमें विभक्त करती है। भकला और राव्‌ती नदीका मध्यवर्ती स्थान बहुत उपजाऊ है। इस नदीके पश्चिम भागकी भूमि अधित्यकाका कियदंश है। चर्दाका क्षेत्रफल प्राय: २०६ वर्गमील है। सरकारी मालगुजारी कोई १३२५३०) रु० लगती है। लोकसंख्या प्राय: ७६ हजार होगी।

चर्दार—आसामके दरङ्ग जिलेका एक विभाग। इसका परिमाण प्राय: ११२० वर्गमील है। यहां वेलश्री और मानश्री नदीके मध्य प्राय: ८० वर्गमील वनविभाग है। रबरकी खेती कहीं कहीं परीक्षा-जैसी की जाती है, परन्तु अधिक लाभकर नहीं दिखलाती।

चर्पट (सं० पु०) चृप-अटन्। १ स्फार, कंपन, काँपना, थरथराहट, कँप कँपी। २ चपेट, चपत, तमाचा, थप्पड़। ३ पर्पट, पापड़। (त्रि०) ४ विपुल। (पु०) ५ हाथकी खुली हुई हथेली। ६ एक तरहका पौधा।

चर्पटा (सं० स्त्री०) चर्पट-टाप्। भाद्र मासकी शुक्ल-षष्ठी, भादों सुदी छठ। चपेटी देखो।

चर्पटी (सं० स्त्री०) चर्पट गौरादित्वात् ङीष्। पिष्टक-विशेष एक प्रकारकी रोटी या चपाती।

चवण (हिं० पु०) चर्वण देखो।

चर्बी (हिं० स्त्री०) चरबी देखो।

चर्भट (सं० पु०) चर-क्विप्‌ भट-अच् ततः कर्मधा०। इर्वारु, ककड़ी।

चर्भटी (सं० स्त्री०) चर्भट-ङीष्। १ चर्चरी, चर्चरी गीत। २ हर्षक्रीड़ा, आमन्द क्रीड़ा, खेल कूद। ३ साटोप वाक्य, सगर्व वचन, अहङ्कारयुक्त वचन। ४ चर्चा।

चर्म (सं० क्ली०) चर्म साधनतया अस्त्यस्य चर्मन्-अच् टिलोपश्च। १ त्वक्, चाम, चमड़ा, खाल। इसको हिन्दीमें चमड़ा, तामिलमें तोल, मलयमें कुलित, फरासीसीमें कूइर (Cuir), ओलन्दाज तथा दिनेमारमें लेडर या लीर (Leder, Leer), रुसीमें कोसा, जर्मनमें लेइर (Leer), इटलीयमें कुओजो (Cuojo) और लाटिनमें कोरियम् (Corium) कहते हैं। २ इन्द्रियविशेष, त्वगिन्द्रिय। शारीरविधानके मतमें चमड़ा शरीरस्थ श्लैष्मिक यन्त्रका अंश मात्र है। श्लेष्माकी झिल्ली (Mucous membrane) और रस-निःसरणकारी ग्रन्थिसमूह (secreting glands) भी उसीका अन्तर्भुक्त है। मोधी खालकी झिल्ली (cutaneous membrane) से सटी हुई असली झिल्ली या डोरा (basement tissue) और उसके ऊपरकी खाल (epithelium) दोनों इसका मूल उपकरण हैं। असली झिल्लीके नीचे नाड़ी, स्नायु और मिलानेवाला डोरा होता है। चमड़ेका कठिन अंश वहिस्त्वक् वा उपत्वक् (cuticle or epidermis) है। इसके नीचेका अंश प्रकृत त्वक् (Derma or cutis vera) कहलाता है। यह प्रकृत त्वक् घनी बारीक झिल्लीसे भरी होती है।

चर्मका उपरिभाग विभिन्न प्रकार वृहत् क्षुद्र रेखावलीसे परिवृत है। इनमें कई एक शरीरग्रन्थिके निकट ही रहती, कुछ मांसपेशीके साथ मिलित हो जाती हैं। अपर कतिपय प्राचीन वयस किंवा शारीरिक व्याधिवशत: चमड़ेके ऊपर निकल आती हैं। हस्त और पदतलमें क्षुद्र रेखासमूह पर्याप्त परिमाणमें दृष्ट होता है। एतद्व्यतीत इसमें घर्म और वसा-नि:सरणकी असंख्य लोमकूप और स्थान स्थान पर केश तथा नख रहते हैं।

चर्मका आभ्यन्तरिक अंश शुक्ल तथा पीतवर्णकी झिल्लीके पदार्थसे परिपूर्ण है। उसके किसी किसी अंशमें प्रचुर परिमाणसे मांसपेशी होती है। शरीरके समस्त स्थितिस्थापक अंशमें चमड़ेके भीतर पीला पदार्थ और पदतल-जैसे अधिक वाधाविघ्नसहाकारी सरल अंशके चर्माभ्यन्तरमें शुभ्र पदार्थका अस्तित्व अधिक रहता है। चर्मसंगत पीत पदार्थ स्थितिस्थापक और शुभ्र पदार्थ बलशाली है।

देहके संमुख भागसे पश्चाद्‌भाग और वहिस्थसे अन्तस्थ चर्म अधिक घन होता है। फिर सन्धिस्थलमें वह बहुत पतला रहता है। चक्षुका पल्लव और तत्सदृश स्नायवीय कार्य जिस अंशमें प्रबल पड़ता, उसका चर्मस्तर अधिक पतला और कोमल निकलता है। पदतल और तत्सदृश स्थलमें घनचर्मस्तर किसी अपरस्तर द्वारा उसकी अध:स्थ हलवेष्टनी (fascia)-के साथ दृढ़रूपसे मिलित होता है।

इस कोमल अथच अधिक व्यवहार्य स्थलकी रक्षाके लिये चर्म और हलवेष्टनीके बीचमें वसा क्षुद्र वर्तुला-

कार बन जाती है। इतर जन्तुओंमें उस प्रकारके उदाहरण असंख्य देख पड़ते हैं।*

प्रकृत चर्म (cutis)-का उपरिभाग यथार्थ स्पर्शेन्द्रिय है। कोलिकर साहब कहते हैं कि प्रकृत चर्म दो भागोंमें बंटा हुआ है। इसका थोड़ा अंश जल जैसा और थोड़ा चुचुकाकार है।

रक्तवहनाड़ी अधःस्थ पतली झिल्लीसे चमड़ेमें घुसती और वसावर्तुल, घर्मस्रवणग्रन्थि, वसाग्रन्थि, केशकोष, चर्मकण्टक प्रभृतिकी दिक्को विभक्त हो पड़ती है।

उपत्वक्का उपरिभाग स्नायुपरिपूर्ण है। किन्तु भीतरी अंशमें उसका भाग अपेक्षाकृत विरल होता है। चर्मके मध्य घर्मस्रवणग्रन्थि, वसाग्रन्थि आदि कई ग्रन्थियां हैं। घर्मस्रवणग्रन्थि मानव-शरीरके प्रायः सर्वांश पर प्रकृत चर्मके अन्तर्देशमें अवस्थित है। वसाग्रन्थि करतल तथा पदतल भिन्न शरीरके अपर सर्वांश विशेषतः मुखमण्डल प्रभृति स्थानों पर चर्मके मध्य विद्यमान है। यह ग्रन्थि शुभ्रवर्ण और अति क्षुद्र है।

Ceruminous glands की वाह्याकृति ठीक घर्मग्रन्थि जैसी है। यह ग्रन्थि श्रवणेन्द्रियके वहिर्देशमें अवस्थित है।

त्वक् वा चर्मका प्रधान धर्म स्पर्श है। इसको छोड़ करके उसकी और भी अनेक क्रियाएं हैं। यह शरीरकी आवरणी जैसा होता है। सुतरां आवरणी जैसा ही वह दृढ़ता, कोमलता, प्रतिबन्धकता और स्थितिस्थापकता गुणसम्पन्न है। अधःस्थ वसास्तर, केश, लोम तथा पालक प्रभृति संयुक्त उपत्वक् शारीरिक उष्णताकी रक्षा करती और नखादिसे शत्रुता निवारित रहती है। चर्म ही घर्मस्रवणग्रन्थि और वसाग्रन्थिका आश्रयस्थान है। सुतरां शरीरके पसीने और कभी कभी चर्बीको भी निकालना उसकी एक क्रिया है। शोषणक्रिया चर्मका अन्यतम धर्म है। पारदघटित द्रव्यादि किंवा तद्रूप कोई अन्य पदार्थ चर्म पर घर्षण करनेसे आभ्यन्तरिक प्रयोग जैसा कार्यकारी होता है।

* Todd and Bowman's Physiological Anatomy and Physiology of Man, Vol. I., p. 407.

चर्म नानाप्रकार व्याधिग्रस्त हो सकता है। रेयर (Rayer) साहबने अपने ग्रंथमें प्रायः ४६ प्रकारके चर्मरोगकी तालिका दी है।

चमड़ा हमारे कई कामोंमें लगता है। गो महिष प्रभृतिका चर्म ही अधिक कार्यकारी है। जन्तुओंका चमड़ा शरीरसे पृथक् होते ही कार्योपयोगी नहीं होता, क्योंकि वैसा चमड़ा थोड़े ही दिनों तक टिकता और जल्द बिगड़ता है। इसीसे जानवरोंके शरीरसे निकाल करके कई प्रकारके पदार्थोंसे उसको साफ करते हैं। इसी परिष्कृत चर्मका अंगरेजी नाम लेदर (Leather) है। इस अभिप्रायसे कि शीघ्र नष्ट न हो जावे बहुकाल पर्यन्त अक्षुस चला जावे चर्म परिष्कार करनेकी प्रणाली अति प्राचीनकालसे चली आती है। यहां तक कि जगत्का इतिवृत्त आरम्भ होनेसे पहले ही उस प्रणालीका प्रचलन हुवा है। मनुष्य जाति वस्त्रवयन-प्रणाली आविष्कृत होनेसे पहले चमड़ा पहन करके लज्जा निवारण करते थे। अतएव क्या सन्देह है कि उस कालको ही इन्होंने चर्मपरिष्कार कौशल आविष्कार किया। एक प्रकार उद्भिज्ज पदार्थ टानिक आसिड (Tannic acid)-से चमड़ा साफ किया जाता और कितने ही दिनों उसमें कोई फर्क नहीं आता। जितने दिनों इस सम्बन्धमें नूतन कौशल आविष्कृत नहीं हुआ, उद्भिज्ज पदार्थ (Tannic acid) ही चमड़ा साफ करनेका एकमात्र उपकरण रहा। इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता, वह कौशल कैसे निकला था। परन्तु ज्ञात होता है कि चर्म-परिधान, चर्मव्यवसाय प्रभृति चमड़ेके बहुतसे काम करते करते घटनाक्रममें यह कौशल आविष्कृत और प्रचारित हुआ होगा।

जिन जन्तुओंका चमड़ा साफ करके व्यवहारोपयोगी बनाया जाता, उन सबके चर्ममें गोंद जैसा कोई पदार्थ दिखलाता है। इसी पदार्थके साथ उद्भिद्-वल्कल-निःसृत पदार्थ (Tannic acid) की रासायनिक क्रिया अति प्रबल होती है। सुतरां दोनों एक होने पर रासायनिक क्रियाके अनुसार चमड़ा जल्द साफ होता और अक्षुस अवस्थाके उपयोगी लगता है।

अपरिष्कृत, अर्धपरिष्कृत और सुपरिष्कृत प्रभृति

विविध प्रकारकी अवस्थाका चर्म होता है। भिन्न भिन्न अवस्थामें इससे भिन्न भिन्न प्रयोजन निकलता है।

चमड़ा हमारे बहुत काम आता है। जूता, दस्ताना, पायजामा और दूसरी दूसरी पोशाक, घोड़े का साज और बागडोर, पोथीकी तख्ती, थैला आदि कई चीजें उससे बनती हैं। सुतरां चमड़े का व्यवसाय एक प्रधान व्यवसाय गिना जाता है। बहुतसे लोग इस व्यवसायको अवलम्बन करके प्रचुर अर्थ उपार्जन करते हैं। हरिण, व्याघ्र प्रभृतिका चर्म शुद्ध होता है। हिन्दूशास्त्रमें चमड़े का व्यवसाय निषिद्ध है। जो जाति अति प्राचीन कालसे इस देशमें उसका व्यवसाय करते आती, चर्मकार कहलाती है। चर्मकार देखो।

हिन्दू और जैनोंको छोड़ करके किसीको भी दृष्टिमें चर्मव्यवसाय दुष्य नहीं होता। किन्तु अब बहुतसे हिन्दू दूसरोंकी देखादेखी प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष भावसे चमड़ेका काम करने लगे है।

अष्ट्रेलिया और उत्तमाशा अन्तरीपसे मेषचर्म, आल्प पर्वतके निकटवर्ती स्थानसे हरिणचर्म, रूश देशसे शूकरचर्म और दक्षिण अमेरिकासे अश्वचर्म प्रभूत परिमाणमें इङ्गलैण्डको भेजा जाता है। फिर इङ्गलैण्डसे भारतको आनेवाला चमड़ा विलायती चमड़ा कहलाता है। इसका मूल्य अधिक होता है। इस देशके बने चमड़े को देशी चमड़ा कहते हैं।

चमड़ा साफ करनेका नया कौशल १८२३ ई०को स्पिलसबरी (Spilsbury) साहबकर्तृक आविष्कृत हुआ था। १८३१ ई०को वेष्टमिनिष्टरवासी ड्रेक (Drake) साहबने उस पर अनेक उन्नतियां साधन कीं। जो हो, आजकल चमड़ा साफ करनेकी बहुतसी तरकीबें निकल आयी हैं।

भारतवर्षके अनूपशहर, आगरा, अहमदाबाद, कानपुर, कपड़वञ्ज, कलानौर, करनाल, कमोर, कुण्डला, खवास (सिवनीस्थ), खैरपुर, खांपुर, गुजरात, चकवाल, जब्बलपुर, जम्बुसर, जेहक, झङ्ग, बङ्गाल, तलागांव, तन्दो, मुहम्मद खाँ, थर तथा पारकर, थतिया, दोदेरो, नजोबाबाद, नरवल, नौशहरा, पञ्जाब, पूर्वा, पिण्डदादन खाँ, बटाला, विसआ, बिरिया, बम्बई, भूटान, मतियाना, मामन्द, मोरपुर, मोठातिरामा, मुंगेर, मुल, मुलतान, महिसुर, योधपुर, रायचर, राहतगढ, रामनगर, रानिया, रावलपिण्डी, रेवती, लरकाना, वधधान, बांकानेर, शाहदरा, सियालकोट, सुधमान, सिन्धुप्रदेशस्थ हैदराबाद, होशियारपुर और हुनसुर प्रभृति स्थानोंमें चमड़ा बनाते और उससे जूता आदि नानाप्रकार द्रव्य तैयार करते हैं। लघु देखो।

३ शरीरावरक शस्त्र, ढाल। ढाल और फलक देखो।

चर्मकरि (सं० स्त्री०) १ मांसरोहिणालता, रोहिणी। २ सुगन्धि द्रव्य।

चर्मकशा (सं० स्त्री०) चर्मकषा पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पश्चिम देश प्रसिद्ध गन्धद्रव्यविशेष, एक प्रकारका सुगन्धि द्रव्य, चमरखा। २ सप्तला लता, एक प्रकारका थूहड़ जिसे सातला कहते हैं। ३ मांसरोहिणी नामकी लता।

चर्मकषा (सं० स्त्री०) चर्म कषति चर्म-कष-अच्-टाप्। चर्मकशा देखो।

चर्मकसा (सं० स्त्री०) चर्मकषा पृषोदरादित्वात् साधुः। चर्मकशा देखो।

चर्मकार (सं० पु०) चर्म तन्निर्मित पादुकादिकं करोति, चर्म-कृ-अण्। जातिविशेष, चमार, मोची। पराशरके मतमें चण्डालोके गर्भ और तीवरके औरससे चर्मकारका जन्म है। (पराशरपद्धति) मनु वैदेहीके गर्भ और निषादके औरससे उसकी उत्पत्ति बतलाते हैं। चर्मकारका अपर नाम कारावर है। (मनु १०।३६) फिर उशनाने वैश्यकके औरस और क्षत्रियाके गर्भसे उसकी उत्पत्ति लिखी है। (उशना)

संग्रहकार उन तीनों मतोंमें किसीको भी अप्रमाणित नहीं मान सकते। अतएव चर्मकार जाति तीन प्रकारके हैं। चर्मके पादुकादि बनाना उनकी वृत्ति है।

भारतमें सर्वत्र यह लोग दृष्ट होते हैं। इन्हें हिन्दुस्थानमें चमार, बङ्गालमें चामार और बम्बई प्रदेशमें चाम्भार कहते हैं। चर्मकारका संस्कृत पर्याय—पादुकृत्, चर्मार, चर्मकृत्, पादुकाकार, चर्मक और कुवट हैं। दूसरे सब स्थानोंकी अपेक्षा नागपुर अञ्चलमें चमार लोग देखनेमें अति सुश्री होते हैं। कहीं कहीं इस जातिके स्त्री-पुरुष बहुत ही सुन्दर लगते हैं। सुतरां इनका शारीरिक

गठन और सौन्दर्य सन्दर्शन करके अनायास ही समझ सकते कि वह उत्कृष्ट जातिसे उद्भूत हुए हैं। परन्तु युक्त-प्रदेशके चमार देखनेमें कृष्णवर्ण और अति कदाकार लगते हैं। यहां निम्नलिखित लोकोक्ति प्रचलित है—

"करिया ब्राह्मण गोर चमार। इनके साथ न उतरो पार॥"

अर्थात् साधारणके लिये काले ब्राह्मण और गोरे चमार दोनों अमङ्गल चिह्न हैं। किसी किसीके मतमें डोम, कञ्जर आदि निकृष्ट जातिसे चर्मकार उत्पन्न और इसीसे यह हिन्दू-समाजसे वहिर्भूत हैं। प्रथमावस्थामें चर्मकार श्रमजीवीका काम करते थे। यह अपने मालिकका खेत जोतते, गांवके बीच मामूली झोपड़ेमें रहते और मृत पशुदेह तथा उसके चमड़ेको मनमानी रीतिसे व्यवहार करते थे। कहना वृथा है कि यही शेषोक्त कर्म ही आजकल उनका प्रधान व्यवसाय बन गया है। किन्तु नागपुर प्रदेशस्थ रायपुर अञ्चलके चमार अपने आपको अन्यान्य प्रदेशोंके चर्मकारों जैसा हीनावस्थ नहीं समझते।

खृष्टीय चतुर्दश शताब्दीको रामानन्दके प्रसिद्ध शिष्य रविदास (रैदास, रुइदास) आविर्भूत हुए। बहुतसे चमार इन्हीं रविदासको अपना पूर्वपुरुष जैसा बतलाते हैं। उद्भवके सम्बन्ध पर इन लोगोंमें प्रवाद है—एकदा चार ब्राह्मण सहोदरोंने नदीमें अवगाहनको जा करके देखा, कोई असहाय गाय दलदलमें पड़ी यन्त्रणा भोग करती थी। उन्होंने गायकी विपद् देख उसके आसन्न मृत्युसे उद्धारके लिए कनिष्ठ भ्राताको भेजा। परन्तु दुःखका विषय यही था कि छोटे ब्राह्मण कुमारके पहुंचते न पहुंचते गाय डूब करके मर गयी। फिर ज्येष्ठ ब्राह्मण कुमारोंने कनिष्ठको उसका देह स्थानान्तरित करनेके लिये अनुमति दी। कनिष्ठको उक्त कर्मसम्पादन करने पर बड़ोंने समाजच्युत किया था। उसी समयसे कनिष्ठ ब्राह्मण चर्मकार नामसे अभिहित हुआ। यही ब्राह्मण-कुमार चर्मकारोंके आदि पुरुष हैं।

कहते हैं सत्ययुगमें एक ब्राह्मण और एक चमार प्रतिदिन एक साथ ही गङ्गास्नान करने जाते थे। किसी दिन घटनाक्रमसे चमारने ब्राह्मणके साथ गङ्गास्नान करने न जा सकनेके कारण, उससे गङ्गा माताको प्रणाम बोलनेके लिये कह दिया। ब्राह्मणने भी चमारके अनुरोधकी रक्षा करनेमें त्रुटि न की। ब्राह्मणके चमारकी ओरसे गङ्गामाताको प्रणाम कहने पर मूर्तिमती गङ्गादेवीने उपस्थित हो स्वीय मणिबन्धसे कङ्कण ग्रहण करके चमारको उपहार स्वरूप देनेके लिये उसको अर्पण किया था। कङ्कण पर ब्राह्मणको लोभ आ गया। वह कङ्कण चमारको न दे इन्होंने अपने आप ले लिया। गङ्गा देवीने यह विषय ज्ञात होने पर उसको अभिसम्पात प्रदान किया कि तुम्हारे उस कुकर्मके फल स्वरूप ब्राह्मण मात्रको जीविकानिर्वाहके लिये भिक्षा मांगनी पड़ेगी। तदवधि ब्राह्मण लोग भिक्षुकश्रेणीके मध्य परिगणित हुए हैं।

काशीके चमार 'लोनाचमार' नामक एक व्यक्तिको अपना आदिपुरुष-जैसा मानते हैं। लोना चमारकी गृहिणी लोना चमारिन हिन्दुओंके परिवारमें चुड़ैल-जैसी प्रसिद्ध हैं।

जो हो, किसी किसी स्थानके चमारोंका आकार तथा गठन सौन्दर्य देख करके अनुमित होता कि वह आर्य-वंश-सम्भूत होते भी कालक्रमसे व्यवसाय और आचार व्यवहार द्वारा निकृष्ट जातिमें परिणत हुए हैं। इनको देखनेसे वैदिक समयके अधःपतित समाजच्युत चारमाव लोगोंकी कथा मनमें उठ आती है। किन्तु साधारण चमार अपने आकार प्रकार वर्ण और गठन प्रणाली द्वारा चर्मव्यवसायी अनार्य जातिके वंशधर जैसे समझ पड़ते हैं।

इनमें भी श्रेणी विभाग है। जैसे—काशीके चमार ८ श्रेणियोंमें विभक्त हैं—१ जैसवार जो साधारणतः भृत्यका काम करते हैं, २ धूसिया या झूसिया जो गाड़ी और घोड़ेका साज बनाते हैं, ३ कोरी यानी जुलाहे, घोड़ा पालने और श्रमजीवीका काम करनेवाले, ४ दोसाद जैसे कि ऊपर कहे हैं, ५ करील जो चमड़ा साफ करते हैं, ६ रङ्गिया या चमड़ा रङ्गनेवाले, ७ जोतहा यानी श्रमजीवी, ८ मंगता जो भीख मांगते हैं, और ६ तँतुवा या चमड़ेकी वल्दियां बनानेवाले।

उपरोक्त श्रेणियोंमें जैसवार कंधे पर बोझ नहीं उठाते, शिर पर ले जाते हैं। इनमें कोई भी कंधे पर बोझ रखनेसे समाजच्युत होता है।

मंगता श्रेणीका भिक्षावृत्ति ही अवलम्बन है। परन्तु यह जैसवारोंको छोड़ करके किसी भी दूसरी जातिकी भिक्षा नहीं लेते। इनके वंशधर जैसवारोंके पास वर्षमें एक बार मात्र जा करके एक पैसा, एक रोटी और दूसरी भी जो चीज मिली मांग लाते और उसीसे अपना काम चलाते हैं। वंशपरम्पराक्रमसे यह वैसे ही जैसवारोंसे भीख मांग करके जीविकानिर्वाह करते आते हैं।

गाजीपुर और पूर्वाञ्चलमें धूसिया लोग अधिक हैं। इलाहाबादमें इस श्रेणीको झूसिया कहते हैं। बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि इलाहाबादके निकटस्थ धूसी वा झूसी ग्रामसे उनको धूसिया या झूसिया आख्या हुई है। परन्तु यह लोग अपने आप गाजीपुर जिलेके अन्तर्गत सैदपुर नामक स्थानके पूर्वाञ्चलमें अपना आदिम निवास बतलाते हैं।

एतद्भिन्न रुहेलखण्डमें जतलोत, मध्य दुवाबमें अहरवार, मकरवार तथा दहेर और विहारमें गरैया, मगहिया, दक्षिणिया और कनौजिया चमार भी रहते हैं।

शाहाबाद, गोरखपुर और गाजीपुर अञ्चलमें दोसाद श्रेणीके चमार बहुत हैं। फिर बनारस, आजमगढ़, मिर्जापुर और नीचले दोवाबमें भी उनकी संख्या कम नहीं है। स्थान स्थान पर यह लोग खेती करते हैं। किन्तु गाजीपुर अञ्चलमें चौर्यवृत्ति ही उनका प्रधान व्यवसाय है।

दोसाद सिपाहीका काम करनेमें भी होशियार हैं। पलासीके विख्यात समरमें इन्होंने क्लाइवके नीचे सिपाहियोंमें भरती हो अति विश्वस्त भावसे युद्ध किया था। कभी कभी वह जल्लाद और शववाहकका भी काम करते हैं।

चमार जातिगत सप्तम पुरुषको छोड़ करके उद्वाह क्रिया सम्पन्न करते हैं। बालविवाह इनमें प्रचलित है। किन्तु विवाहव्यय सङ्कुलनके अभावमें कन्या बड़ी हो जाते भी समाजमें विशेष दोषका कारण नहीं।

बम्बई प्रदेशके शोलापुर अञ्चलमें घोड़के, काम्बले, भागमारे प्रभृति उपाधिधारी चमार हैं। इनके परस्परमें आहारादिका प्रचलन है, परन्तु एक उपाधि होनेसे विवाह नहीं करते। अहमदाबाद और तत्सन्निहित स्थानके चर्मकारोंका उपाधि नानाप्रकार है। यथा—आगावने, बनसुरे, भागवत, दमारे, देशमुख, देवरे, धोगें, दुर्गे, गायकवाड़, गिरिमकर, हुलम, केजुध, जमधरेव, कवाड़े, कदम, कालगे, काले, काम्बले, कान्दे, कामड़े, केदार, लागचवरे, नटके, पवार, साल्वे, सातपुते, सिन्दे, सोनावनी और बाघे। यहां भी एक उपाधिमें परस्पर विवाह क्रियाका प्रचलन नहीं।

विहारके चमार पत्नीकी सहोदराको विवाह करना अतिगर्हित कार्य समझते हैं। विवाहकालको कन्याकर्ता पणस्वरूप पात्रके निकटसे थोड़ा खर्च लेते हैं। इनके विवाहमें स्वजातीय वृद्ध लोग पौरोहित्यका काम करते और अन्यान्य हिन्दुओंकी भांति पात्रपात्रीके सीमन्तमें सिन्दूर चढ़ा माङ्गलिक अनुष्ठान शेष कर लेते हैं। विहारी चमारोंमें विधवाविवाह विधिबद्ध है। पत्नी पतिकर्तृक परित्यक्त होने पर अन्य पतिको ग्रहण कर सकती है, इससे समाजमें पतित नहीं होती।

धर्मसम्बन्धमें वङ्गदेशीय चर्मकार प्रकृत हिन्दू मतावलम्बी न होते भी हिन्दू अनुष्ठित विविध क्रियाकलापका अनुष्ठान किया करते हैं। इनमें बहुतसे 'श्रीनारायणी' मतावलम्बी हैं। पूर्ववङ्गमें कबीरपन्थी चमार देख पड़ते हैं। वैष्णव सम्प्रदायभुक्त चर्मकार वङ्गालमें अति विरल हैं।

चमार शीतला और जल्कादेवी प्रभृतिको पूजा करते हैं। जल्कादेवी रक्षाकालीको स्थानीया हैं।

विहारी चमार वङ्गाली चमारोंसे धर्मसम्बन्धमें अधिक निष्ठावान् हैं। यह अपने देशके हिन्दुओंका कोई क्रियाकलाप नहीं छोड़ते। कोई कोई हिन्दू देवदेवीके पूजोपलक्षमें स्वजातीय पुरुषको पौरोहित्य कार्यका व्रती न बना करके मैथिल ब्राह्मणोंको वरण करता है। सन्ताल परगनेमें पुरोहित वंशको पुरो कहते और उन्हें समाजच्युत कनौजिया ब्राह्मण समझते हैं। इस देशमें चमार लोकेश्वरी, रक्तमाला काली प्रभृतिको अर्चना करते हैं। परन्तु कोई कोई रविदास को ही श्रेष्ठत्व पद देता है। बम्बई प्रदेशस्थ चर्मकार भी हिन्दू देवदेवियोंकी अर्चना करते और मुसलमान

भूमिष्ठ होने पर उसके मङ्गलकामनार्थ षष्ठीदेवीको पूजा चढ़ाते हैं। युक्तप्रदेशके चमार बड़े भक्त होते हैं। प्रत्येकके गलेमें कण्ठीमाला पड़ी रहती है। रामायण बांचनेका सबको प्रेम है। नीच श्रेणीके कान्यकुब्ज ब्राह्मण उनका पौरोहित्य करते हैं।

श्रीपञ्चमी चमारोंका प्रधान उत्सव है। शारदीय शुक्लनवमीको इनमें कम उत्सव नहीं होता। इस दिनको वह देवीकी पूजामें उन्मत्त होते और उनके समस्त शूकर छाग प्रभृति बलि दे करके अपने आपको कृतकृत्य समझते हैं। श्रीरामनवमीका इनका तीसरा उत्सव है। इस दिन वह दो पहर तक उपवास और भजन गान करते हैं।

युक्तप्रदेश और विहारके चर्मकार शवदाह और मृत्युके दशम किंवा त्रयोदश दिवसको श्राद्ध क्रिया सम्पन्न करते हैं। पूर्ववङ्ग और बम्बई प्रदेशस्थ अहमदनगरके सब तथा शोलापुरके दरिद्र चमार शवदेहको भूमिमें प्रोथित कर देते और मृतव्यक्तिके उद्देश्य दश दिन अशौच लेते हैं।

व्यवसाय और आचार व्यवहारमें चमार हिन्दू-समाजका निकृष्टतम पर्याय समझे जाते हैं। सुतरां यह वैसे ही हिन्दू समाजके निकट घृण्य भी हैं। हिन्दू समाजकी निषिद्ध आहार सामग्री उनका खाद्य है। यहां तक कि कोई कोई मृत जन्तुका शवदेह भी आग्रहके साथ खा जाता है।

चमड़ेकी सफाई, गाड़ी घोड़ेका साज बनाना और घोड़ेकी परवरिश करना उनका जातिगत व्यवसाय है। ढोल, एकतारा आदि वाद्ययन्त्र ले करके उत्सवादिमें चमार योगदान करते हैं। इनमें कोई कोई पालकी उठाता, हल चलाता या कपड़ा भी बनाता है।

चमारोंकी स्त्रियां चमारिनें कहलाती हैं। इन्हें टिकली लगाना और गोदना अच्छा लगता है। वह कहीं कहीं धात्रीका भी काम करती हैं।

स्वजातीय पञ्चायतमें चमारोंके सब झगड़े निवटते हैं।

भारतवर्षको भांति जापान और चीन देशमें भी चर्मकार अस्पृश्य जाति-जैसे गण्य हैं।

बरारके चमार अपनेको साढ़े १२ श्रेणियोंमें विभक्त बतलाते हैं। इनमें टोर, बुंदेला, कन्नर, मराठा परदेशी, मङ्ग, कटाई और मुसलमान चमार आदिका सन्धान मिलता है। औरङ्गाबादके चमार मरीअम्मा और शीतला देवीकी पूजा करते हैं। भारतवर्षमें प्रायः २४ लाख चमारोंका वास है।

चर्मकारक (सं० त्रि०) चर्म तन्निर्मितं पादुकादिकं करोति चर्म-कृ-ण्वुल्। जो चमड़ेका काम करता हो, जूता बनानेवाला।

चर्मकारतरु (सं० पु०) शुक्लमदनवृक्ष, सफेद मैनफल, करहटा।

चर्मकारालुक (सं० पु०) वाराहीकन्द, गेठी।

चर्मकारी (सं० स्त्री०) चर्म किरति कृ-अण्-ङीष्। १ औषधविशेष, चर्मकषा। चर्मकार जाती ङीष्। २ चर्मकार जातीय स्त्री, चमारकी स्त्री।

चर्मकार्य (सं० क्ली०) चर्मणः कार्यं, ६ तत्। चर्मकारका काम, चमड़ेके जूते, जीन आदिको सिलाईका काम। मनुका मत है कि इसीसे चमारोंकी जीविका है।

"विपर्णानां चर्मकार्यं वेणानां भाण्डवादनं।" (मनु १०।४९)

'चर्मकार्यं कवचादिसीवनं उपानद्ग्रथनमित्येवमादि' (मेधातिथि)

चर्मकील (सं० पु०) चर्मणि कील इव। गुह्यजात रोगविशेष, मवादको एक बीमारी। चलती बोलीमें इसे बरोस भी कहते हैं। शरीरमें काला या सफेद घेरा-जैसा चिह्न उत्पन्न होनेका नाम न्यच्छ वा चर्मकील है। इसमें कभी कभी वेदना उठती और कभी कभी एकबारगी ही नहीं जैसी समझ पड़ती है। शिरावेध, प्रलेप और अभ्यङ्ग द्वारा उसकी चिकित्सा की जाती है। क्षीरी वृक्षकी छाल दुग्धके साथ पेषण करके प्रलेप चढ़ाने अथवा सिद्धिपत्र, लहरहारक और शिशुकाष्ठ चूर्ण करके उद्वर्तन लगानेसे उसका प्रतीकार होता है। भावप्रकाशके मतमें वह न्यच्छरोगका लक्षण है। सुश्रुतने न्यच्छ रोग निर्णय करके बतलाया है कि उत्पत्ति और कारणके अनुसार न्यच्छरोगकी ही चर्मकील कहते हैं।

(सुश्रुत, निदान, १३ अ० ३७) क्षुद्ररोग और न्यच्छ देखो।

चर्मकृत् (सं० पु०) चर्म तन्निर्मितं पादुकादिकं करोति चर्म-कृ-क्विप् तुगागमश्च। चर्मकार, चमार।

"चर्मव्रत कोऽपि न प्रादात् कुटीं चेलोपयोगिनीं।" (राजतर० ४।५५)

चर्मखाण्डिक (सं० पु०) तन्नामक जनपदवासी जाति-विशेष, चर्मखांडिक देशको रहनेवाली जाति।

चर्मग्रन्थि (सं० पु०) चर्मणो ग्रन्थिः, ६ तत्। चमड़ेकी गांठ या गिरह।

चर्मग्रीव (सं० पु०) शिवके अनुचरविशेष, शिवके एक अनुचरका नाम।

चर्मघटिका (सं० स्त्री०) जलौका, जोंक।

चर्मचटक (सं० पु०) पक्षिविशेष, छोटा चमगादड़। चटक पक्षी जैसा आकारविशिष्ट और चर्मनिर्मित पक्ष-युक्त रहनेसे उसको चर्मचटक कहते हैं। यह स्तन्यपायी है। हाथसे पांव और पीठ तक उस पर एक पतला चमड़ा चढ़ा रहता है। यह चमड़ा इच्छानुसार सिकोड़ा, फैलाया और हिलाया डुलाया जा सकता है। हाथके ऊपरी भागमें कांटिया जैसी एक कील होती है। इसी अंकुशकी वृक्ष प्राचीरादिमें अटका करके वह झूला करता है। उसका अङ्ग लोमावृत और आकार बहुप्रकार होता है। यह प्रायः कीटपतङ्गादि खाया करता है। इसका वास वृक्षकोटर, गृहादिके कोण, नारिकेल प्रभृति वृक्षों-की चूड़ा और अन्यान्य अन्धकारमय स्थानोंमें है। दिवा-भागको यह क्वचित् बाहर निकलता और वैकालको सूर्यास्तके समय आकाशमें उड़ा करता है।

चर्मचटक नाना जातीय है। चमगादड़ आदि पक्षी भी इसी जातिके जीव हैं। चमगादड़ फलभोजी और आकारमें कितना ही बड़ा होता है। इसका आकार साधारणतः चारसे ८।१० इञ्च तक है।

भारतवर्षमें कुछ नीच लोग और सिंहल, चीन प्रभृति देशोंके बहुतसे आदमी चर्मचटक भक्षण करते हैं। भारतमें उसका रङ्ग धुन्धला रहता, परन्तु सिंहलमें पीला, लाल, गुलाबी आदि भी देख पड़ता है।

चमगादड़ देखो।

चर्मचटका (सं० स्त्री०) चर्मणा चटकेव। पक्षिविशेष, चमगादड़। इसका संस्कृत पर्याय – जतुका, अजिनपत्रिका, जतूका, गृहमाचिका, जतुनी, अजिनपत्रा, चार्मि, चर्म-चटी, चर्मपत्रा, चर्मचटिका।

चर्मचटिका (सं० स्त्री०) चर्मचटी स्वार्थे-कन् पूर्व-ह्रस्व। पक्षीविशेष, चमगादड़।

चर्मचटी (सं० स्त्री०) चर्म चटति भिनत्ति चट-अच् गौरादि० ङीष्। पक्षिविशेष, चमगादड़।

चर्मचित्रक (सं० क्ली०) चर्म चित्रयति चित्र ण्वुल्। श्वेतकुष्ठ, कोढ़का रोग। कुष्ठ देखो।

चर्मचेल (सं० पु० क्ली०) चर्माच्छादित वस्त्र, चमड़ासे ढका हुआ कपड़ा।

चर्मज (सं० क्ली०) चर्मणि जायते चर्म-जन-ड। १ रोम, रोआं। २ रुधिर, लहू, खून। (त्रि०) चर्मणि चर्मणो वा जायते जन-ड। ३ जो चमड़ेमें उत्पन्न हो। ४ जो चमड़े-से पैदा हुआ करता हो।

चर्मटी (सं० स्त्री०) जलौका, जोंक।

चर्मण्य (सं० त्रि०) चर्मणि भवः चर्मन्-यत्। चर्मज, जो चमड़ेसे पैदा हो।

"त्र्यक्षा चर्मण्यं वाससा विच्छिष्टं संप्रवदेत्।" (त्रिकाण्डकाण्ड० ५।३१)

चर्मण्वत् (सं० त्रि०) चर्मन् अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य वः। १ चर्मयुक्त, जिसमें चमड़ा लगा हो, जो चमड़ेसे मढ़ा हुआ हो।

चर्मण्वती (सं० स्त्री०) चर्मण्वत्-ङीप्। १ नदीविशेष, इसका दूसरा नाम चर्मवाला और शिवनद है *

महाराज रन्तिदेव प्रतिदिन कई सौ बैल मार कर ब्राह्मण और अतिथियोंको खाने देते थे। उन बैलोंके चर्मनिःसृत रक्त और पसीनेसे इस नदीका उत्पत्ति हुई है। (भारतशान्ति)

प्राचीन दशपुर नगर इसी नदी तीर पर अवस्थित था। बुन्देलखण्डके अन्तर्गत वर्तमान चम्बल नामसे मशहूर है। चम्बल देखो।

(वामन १३ अ०, मार्कण्डेय ५७।२०, मत्स्यपु० ११३।२४, सह्याद्रि २।३१।७।)

"चर्मण्वती पर्वतो जातो विन्ध्यावलसमः पुमः।
मैनाकप्रवनाज्जाता नदी चर्मण्वती शुभा॥"
(देवीभागवत ११।८।५४)

२ कदली वृक्ष, केलेका पेड़।

चर्मतरङ्ग (सं० पु०) चर्मणि तरङ्ग इव। चर्मका सङ्कोच, चमड़े पर पड़ी हुई शिकन, झुर्री।

* Asiatic Res. XIV, 407.

चर्मतिल (सं० त्रि०) चर्मणि जातास्तिला अस्य, बहुव्रो०। तिलयुक्त शरीरादि, जिसके शरीर पर तिल जमा हो।

चर्मदण्ड (सं० पु०) चर्मणा कृतो दण्डः, मध्यपदलो०। चर्मनिर्मित दण्ड, चमड़ेका बना हुआ कोड़ा या चाबुक।

चर्मदल (सं० त्रि०) चर्म दलयति दल-अण्। कुष्ठविशेष, एक तरहका कोढ़। चर्मदकुष्ठ देखो।

चर्मदूषिका (सं० स्त्री०) चर्म दूषयति दुष-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्वं। १ दादका रोग। २ खुजली, खाज।

चर्मदृष्टि (सं० स्त्री०) साधारण दृष्टि. आँख।

चर्मदेहा (सं० पु०) एक तरहका बाजा जो मशकके आकारका होता था और प्राचीन कालमें मुखसे फूंक कर बजाया जाता था।

चर्मद्रुम (सं० पु०) चर्म चर्माकृतिवल्कलं तत्प्रधानो द्रुमः, मध्यपदलो०। भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पेड़।

चर्मनालिका (सं० स्त्री०) चर्मबन्ध चाबुक, चमड़ेका बना हुआ कोड़ा या चाबुक।

चर्मनाशक (सं० पु०) चन्द्रशूर, चंसूर, हालिम।

चर्मनासिका (सं० स्त्री०) चर्मनालिका देखो।

चर्मपट (सं० पु०) चर्मणः पटः, ६-तत्। चर्मनिर्मित पट, चमड़ेका बना हुआ वह टुकड़ा जिस पर उस्तरा फेरा जाता है।

चर्मपट्टिका (सं० स्त्री०) चर्मणः पट्टिका, ६-तत्। चर्मपट देखो।

चर्मपत्रा (सं० स्त्री०) चर्मेव पत्रं पक्षोऽस्याः, बहुव्रो०। चर्मचटी, चमगादड़।

चर्मपत्री (सं० स्त्री०) चर्मेव पत्रं पक्षोऽस्या, बहुव्रो०, ततो बाहुलकात् ङीष्। चर्मचटी, चमगादड़।

चर्मपादुका (सं० स्त्री०) चर्मनिर्मिता पादुका, मध्यपदलो०। उपानत्, जूता, पनही।

"ततो ब्रह्मचारी चमेन मन्त्रं च चर्मपादुके पादयोर्मिध्यात्।" (भवदेव)

चर्मपिड़का (सं० स्त्री०) मसूरिका रोग, एक प्रकारकी शीतला, जिसमें रोगीका गला बन्द हो जाता है।

चर्मपुट (सं० पु०) चर्मनिर्मितः पुटः पात्रं, मध्यपदलो०। यद्वा चर्मनिर्मितं पुटः पात्रमत्र, बहुव्रो०। चर्मनिर्मित पात्रविशेष, चमड़ेका बना हुआ कुप्पा जिसमें तेल, घी आदि रखा जाता है।

चर्मपुटक (सं० पु०) चर्मपुट स्वार्थे कन्। चर्मपुटक देखो।

चर्मप्रभेदिका (सं० स्त्री०) चर्म प्रभिनत्ति प्र-भिद् ण्वुल्-टाप् अत इत्वं। अस्त्रविशेष, चमड़ा काटनेका यन्त्र, सुतारी।

चर्मप्रसेवक (सं० पु०) चर्मणा प्रसोव्यते प्र-सिव बाहुलकात् कर्मणि ण्वुल्। भस्त्रा. धौंकनी।

चर्मप्रसेविका (सं० स्त्री०) चर्म प्रसेवक-टाप्, अत इत्वं। चर्मनिर्मित यन्त्रविशेष भस्त्रा, चमड़ेकी बनी हुई धौंकनी।

चर्मबन्ध (सं० पु०) चर्मणा बन्धः, ३-तत्। १ चर्मद्वारा बन्धन, वह जो चमड़ेसे मढ़ा हुआ हो। २ चाबुक।

चर्मबन्धन (सं० क्ली०) मरिच, कालीमिर्च।

चर्ममण्डल (सं० पु०) देशविशेष, एक प्राचीन देशका नाम जिसका उल्लेख महाभारतमें किया गया है।

"अपरान्ताः परान्ताश्च पञ्चाश्चर्ममण्डलाः." (भारत ६।९ अ०)

चर्ममय (सं० त्रि०) चर्मणो विकारः चर्म-मयट्। चर्मनिर्मित पात्रादि, चमड़ेके बने हुए थैले, कुप्पो आदि।

"द्वीपिचर्मावनद्धं च व्याघ्रचर्ममयैरपि।" (भारत ६।४६ अ०)

स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

चर्ममसूरिका (सं० स्त्री०) मसूरिका रोगका एक भेद। इसमें रोगीके शरीर पर छोटी छोटी फुन्सियां निकल आती हैं, गला रुक जाता तथा शरीरमें बहुत व्याकुलता होती है।

चर्ममुण्डा (सं० स्त्री०) चर्मणो जोवरहितदैत्यस्य मुण्डमस्ति हस्तेऽस्याः, बहुव्रो०, टाप्। यद्वा चामुण्डा पृषोदरादित्वात् साधुः। दुर्गा।

चर्ममुद्रा (सं० स्त्री०) तन्त्रसारोक्त मुद्राविशेष। इसमें बायें हाथको तिर्यक् भावसे फैला कर अंगुली सिकोड़ लेते हैं। इसीको चर्ममुद्रा कहते हैं।

"वामहस्तं तथा तिर्यक् कृत्वा चैव प्रसार्य च।
आकुञ्चिताङ्गुलीः कुर्यात् चर्म मुद्रेयमीरिता।" (तन्त्रसार)

चर्मण्ना (सं० त्रि०) चर्ममये कवचादौ मनति अभ्यस्यति चर्म-म्ना क्विप्। आतो मनिन् क्वनिब्वनिपश्च। पा ३।२।७४। १ जिसे चर्ममय कवचादि धारण करनेका अभ्यास हो।

चर्मणि चरणसाधनान्यश्वादीनि तेषु मनति अभ्यस्यति चर्म-म्ना-विच्। २ अश्वादि आरोहणका जिसे अभ्यास हो, जो घोड़े पर चढ़ता हो।

"कृष्णयचर्मन्ना अभितोजना।" (ऋक् ८।५।३८)

'चर्मन्नायर्म मयस्य कश्वादेर्धारश्वे कृताभ्यासाः' (सायण)

चर्मयष्टि (सं० स्त्री०) चर्ममयी यष्टिरिव। चर्ममय यष्टि, चमड़ेका कोड़ा या चाबुक।

चर्मरङ्ग (सं० पु०) चर्मणि रङ्गोऽस्य, बहुव्री०। देशविशेष, कूर्मखण्डके पश्चिम-उत्तरमें इस देशका उल्लेख है।

(बृहत्सं० १४ अ०)

चर्मरङ्गा (सं० स्त्री०) चर्मणि रङ्गोऽस्याः, बहुव्री०, टाप्। आवर्त्तकी लता, कोङ्कण देशमें इसे भगवत्वल्ली कहते हैं।

चर्मरी (सं० स्त्री०) चर्म राति रा-क गौरादि ङीष्। स्थावर विषके अन्तर्गत एक प्रकारकी विषलता, इसके फलमें विष रहता है।

चर्मरु (सं० पु०) चर्म राति रा बाहुलकात् कुः। चर्मकार, चमार।

चर्मवंश (सं० पु०) मुंहसे फूंक कर बजानेका प्राचीन कालका एक बाजा।

चर्मवत् (सं० त्रि०) चर्मन् अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः असंज्ञात्वात् न लोपः। १ चर्मयुक्त, जिसमें चमड़ा दिया हुआ हो। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

"लोहचर्मवती चापि सायेः सगुडगष्टिका।" (भारत ३।१४ अ०)

(पु०) २ सुवलके एक पुत्रका नाम। (भारत ६।८१ अ०)

चर्मवसन (सं० पु०) चर्म गजासुरचर्म वसनं यस्य, बहुव्री०। महादेव, शिव। कृत्तिवासस् देखो।

चर्मवृक्ष (सं० पु०) चर्मप्रधानश्चर्मतुल्यवल्कलप्रधानो वृक्षः, मध्यपदलो०। भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पेड़।

"खर्जूरानारिकेलाच चर्मवृक्षो हरीतकी।" (हरिवंश ३१ अ०)

चर्मसम्भवा (सं० स्त्री०) चर्मणि सम्भव उत्पत्तिर्यस्याः, बहुव्री०, टाप्। एला, इलायची।

चर्मसा (सं० स्त्री०) जलौका, जोंक।

चर्मसार (सं० पु०) चर्मणः सारः, ६-तत्। रस। वैद्यकमें शरीरके अन्तर्गत चमड़ेके मध्य वह रस जो खाए हुए पदार्थोंसे बनता है।

चर्माख्य (सं० पु०) कुष्ठरोगविशेष, कोढ़ रोगका एक भेद। कुष्ठ देखो।

चर्माङ्क—प्राचीन भोजकटके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। इसका वर्तमान नाम चम्मक या चमाक है। यह अक्षा० २१° १२' उ० और देशा० ७७° ३१' पू०में इलीचपुरसे ४ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। इसी ग्रामसे वाकाटक महाराज २य प्रवरसेनका ताम्रशासन आविष्कृत हुआ है।

चर्मानला (सं० स्त्री०) प्राचीन कालकी एक नदीका नाम।

चर्मानुरञ्जन (सं० क्ली०) हिङ्गुल, एक तरहका पौधा।

चर्मान्त (सं० पु०) सुश्रुतोक्त उपयन्त्रविशेष, सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका उपयन्त्र।

"उपयन्त्राण्यपि रज्जुवेणिका पट्टचर्मान्तवल्कललता।"

(सुश्रुत सूत्र० ७ अ०)

चर्माम्भस् (सं० क्ली०) चर्मणोऽम्भः, ६-तत्। चर्ममध्यस्थित रस जो खाए हुए पदार्थोंसे बनता है।

चर्माम्भरु (सं० पु०) चर्मसार, चमड़ेका रस, वह रस जो चमड़ेके अन्दर खाए हुए पदार्थोंसे बनता है।

चर्मार (सं० पु०) चर्म शिल्पसाधनतया ऋच्छति ऋ-अण्, उपपदस०। चर्मकार, चमार।

चर्मारक (सं० पु०) शुक्लहिङ्गुल।

चर्मावकर्त्तिन् (सं० पु०) चर्म अवकृन्तति अव-कृत-णिनि। चर्मकार, चमार।

"आयुः सुवर्णकारान्नं तथा चर्मावकर्त्तिनाः।" (मनु ४।२१८)

चर्मावकर्तृ (सं० पु०) चर्मकार, चमार।

चर्माह्वय (सं० पु०) पर्पटक।

चर्मि (सं० स्त्री०) चर्मचटका, चमगादड़।

चर्मिक (सं० त्रि०) चर्म चर्ममयं फलकं अस्त्यस्य चर्मन् व्रीह्यादि ठन्। जो हाथमें ढाल ले कर लड़े, हाथमें ढाल ले कर लड़नेवाला।

चर्मिन् (सं० त्रि०) चर्म शरीरावरकं फलकमस्त्यस्य चर्मन्-इनि, टिलोपश्च। १ चर्मयुक्त, चर्मधारी, जो ढाल ले कर लड़ता हो। इसका पर्याय फलकपाणि है।

"शारं हन्तं तदर्थं चर्मिणानुत्तमं रथी।" (भारत ३।२७।३१)

(पु०) चर्माणि वल्कलानि सन्त्यस्य चर्मन्-इनि। २ भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पेड़। ३ भल्लरीट, एक तरहकी धातु। ४ महादेव, शिव। (भारत १३।१७।११) ५ चर्मचटक, चमगादड़।

चर्य्य (सं० त्रि०) चर कर्मणि यत्। गदमदचरयमश्चानुपसर्गे। पा ३।१।१००। १ अनुष्ठेय, आचरणीय, जो करने योग्य हो।

"षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्य्यं गुरौ त्रैवेदिकं व्रतम्।" (मनु ३।१)

(क्लो०) चर भावे यत्। २ अवश्य कर्तव्य, जिसका करना आवश्यक हो।

चर्य्या (सं० स्त्री०) चर्य्य-टाप्। १ आचरण, वह जो किया जाय। २ सेवा।

"वनवासस्य शूरस्य मम चर्य्या हि रोचते।" (रामा० २।२९।१५)

३ गमन, चलनेकी क्रिया या भाव। ४ भक्षण, खानेकी क्रिया। (मुग्धबोध टी० दुर्गा) ५ विहित कार्य्यका अनुष्ठान और निषिद्धका त्याग। ६ आचार, चालचलन। ७ कामकाज। ८ वृत्ति, जीविका।

चर्य्यापरीषत (सं० पु०) निर्द्वन्द्वतापूर्वक चारों ओर विचरनेकी क्रिया, एक स्थान पर न रहना।

चर्य्यावतार (सं० पु०) बौद्धग्रन्थभेद, बौद्धोंके एक ग्रन्थका नाम।

चर्राना (अनु० क्रि०) १ लकड़ी आदिका टूटनेके समय चर चर शब्द करना। २ शरीरके सूखे और रूखे हो जानेके कारण अङ्गमें तनाव और थोड़ा कष्ट होना। ३ शरीरके थोड़ा छिल जाने अथवा घाव पर जमी हुई पपड़ी आदिके उखड़ जानेके कारण खुजली या सुरसरी मिली हुई हलकी पीड़ा होना।

चर्री (हिं० स्त्री०) व्यङ्गपूर्ण बात, चुटीली बात।

चर्वण (सं० क्लो०) चर्व भावे ल्युट्। १ दांत द्वारा चूर्ण करनेकी क्रिया, चबाना। २ रसास्वादन व्यापारविशेष। (साहित्यद० ३ परि०)

(त्रि०) चर्व कर्तरि ल्यु। ३ जो चबाई जाय।

"पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानां" (भागवत ७।५।३०)

चर्वणा (सं० स्त्री०) चर्व-युच्-टाप्। १ रसास्वादन व्यापार, भूना हुआ दाना जो रस पानेके लिये चबा चबा कर खाया जाता है, चबैना, बहुरी, दाना। २ चर्वण, चिबाना।

चर्वन् (सं० पु०) तलप्रहार। हथेलीसे मारनेकी क्रिया, तमाचा, थप्पड़।

चर्वा (सं० स्त्री०) चर्व-अङ्। १ चर्वण, चिबाना। २ तलप्रहार।

चर्वित (सं० त्रि०) चर्व कर्मणि क्त। १ चबाया हुआ, दांतोंसे कुचला हुआ। २ भक्षित, खाया हुआ।

चर्वितचर्वण (सं० पु०) पिष्टपेषण किसी किये हुए कामको पुनः करना, जो हो चुका हो उसे फिरसे करना।

चर्वितपात्र (सं० क्लो०) चर्वितस्य पात्रं, ६-तत्। पात्रविशेष, पीकदान, उगालदान।

चर्वितपात्रक (सं० क्लो०) चर्वितपात्र स्वार्थे कन्। पात्रविशेष, पीकदान।

"ताम्बूलं दर्पणं पानपात्रं चर्वितपात्रकम्।" (पाद्मे पाताल)

चर्विल (अं० पु०) एक तरहकी अंगरेजी तरकारी जो गाजरको तरह होती है और आश्विन कार्तिकमें क्यारियोंमें बोई जाती है।

चर्व्य (सं० त्रि०) चर्व कर्मणि ण्यत्। १ भक्ष्यद्रव्यविशेष, जो दांतोंसे चबा कर खाया जाता हो।

"षट्कोटिं ब्राह्मणानाञ्च भोजयामास नित्यशः।
चुष्यं पेयश्च लेह्यञ्च चर्व्यं रतिवर्गं दिने दिने॥" (ब्रह्मवै० पु०)

२ चर्वणीय, चबाने योग्य।

चर्षण—रथचर्वण देखो।

चर्षणि (सं० पु०) कर्षति कृष-अनिच्, आदेशश्च। कृषेरादेश च। पा उणादि। १ मनुष्य, आदमी।

"य एकश्चर्षणीनां वसूनामिरज्यति।" (ऋक् १।७।९)

'चर्षणीनां मनुष्याणां' (सायण)

(स्त्री०) २ पुंश्चली, कुलटा स्त्री।

"स चर्षणीनामुदगाच्छुचो मृजन्।" (भागवत १०।२९।२)

चर्षणिप्रा (सं० त्रि०) जो धन दे कर मनुष्योंको प्रीतियुक्त करता हो।

"आ चर्षणिप्रा वृषभो जनानां।" (ऋक् १।१७७।१)

'चर्षणिप्राः चर्षणयो मनुष्याः। तेषां धनादिना प्रीणयिता' (सायण)

चर्षणी (सं० स्त्री०) चर्षणि जातौ वा ङीप्। १ मनुष्यजाति, मानवजाति। "इदन्नु ता चर्षणीधृता।" (ऋक् ८।२०।५)
२ वरुणकी स्त्री और भृगुकी माताका नाम।

चर्षणीधृत् (सं० त्रि०) जो मानवजातिकी रक्षा करता हो। (इन्द्र, वरुण, मित्र और विश्वदेव) चर्षणी देखो।

चर्षणीधृति (सं० त्रि०) चर्षणीभिर्धृतः पृषोदरादित्वात् साधुः। प्रजाकर्तृक धृत, प्रजाने जिसे धारण किया हो, जो प्रजासे मानी गई हो।

"सोम इमा इन: परस्व चर्षणीधृति:।" (साम २।१।१।३।५)

'चर्षणी धृति: चर्षणीभिश्च ऋत्विग्भि: प्रजाभिर्धृत:।' (सायण)

(स्त्री०) २ मानवजातिकी रक्षा।

चर्षणीसह (सं० त्रि०) शत्रुनाशक, जो शत्रुओंका संहार करता हो, जो दुश्मनोंका पराजय करता हो।

"यूयं राजान: कं चिच्चर्षणीसह:।" (ऋक् ८।१९।३५)

'चर्षणीसह: शत्रुभूतानामभिभवितार:।' (सायण)

चलंता (हिं० वि०) १ चलता हुआ। २ गमनशील, चलनेवाला।

चलंदरी (हिं० स्त्री०) पौसला, प्याऊ।

चल (सं० त्रि०) चलति गच्छति चल-अच्। नन्दिग्रहि-पचादिभ्यो ल्युणिन्यच:। पा ३।१।१३४। १ चंचल, अस्थिर, चलायमान।

"ताड़काचलकपालकुण्डला कालिकेव निबिड़ा बलाकिनी।" (रघु ११।१५)

२ कम्पयुक्त, कंपायमान। (पु०) ३ विष्णु।

"धन्वाशीश्चलश्चल:।" (भारत १३।१४९।९२)

४ पारद, पारा। (हेम० ४।११६) चल कम्पने स्वार्थे णिच् भावे अप्। ५ कम्पन, कांपना। (स्त्री०) ६ छन्दोविशेष, दोहा छन्दका एक भेद जिसके प्रत्येक चरणमें १८ अक्षर या स्वरवर्ण रहते हैं और जिसके प्रत्येक चरणके १, २, ३, ४, ११, १३, १६ और १८ वां अक्षर गुरु और शेष अक्षर लघु होते हैं। (पु०) ७ शिव, महादेव। (भारत १३।१७।११६) ८ दोष, ऐब, नुक्स। ९ भूल, चूक। १० धोखा, छल, कपट। ११ नृत्यमें एक प्रकारकी चेष्टा।

चलक—मन्द्राजके सलेम जिलेका एक पहाड़। यह अक्षा० १०° ४२´ तथा ११° ४७´ उ० और देशा० ७८° ७´ एव ७८° १२´ पू० पर सलेम शहरसे उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहां खड़ी मट्टी (chalk) बहुत पाई जाती है, इससे इसका अंगरेजी नाम चलक (chalk) रखा गया है।

चलकना (अनु० क्रि०) चमकना।

चलकर्ण (सं० पु०) १ पृथिवीसे ग्रहोंका प्रकृत दूरत्व, पृथिवीसे ग्रहोंका स्वाभाविक अन्तर। २ वह जिसके कान सदा हिलते हों। ३ हस्ती, हाथी।

चलका (देश०) एक प्रकारकी साधारण नाव।

चलकुड़ि—मन्द्राज प्रदेशके कोचीन राज्यमें प्रवाहित एक नदी। यह मुकुन्दपुरसे निकल कर वक्रगतिसे बहती हुई ६८ मील जा कर क्राङ्गनसे कुछ दूरमें अपसृत हो गई है।

चलकृति (सं० त्रि०) चला कृति: कार्य्यं, यस्य, बहुव्री०। जिसका कार्य्य स्थिर नहीं हो।

"अहच न कस्यचिद्विश्वसिमि चलकृतिश्च।" (पञ्चतन्त्र)

चलकेतु (सं० पु०) चलश्चासौ केतुश्चेति, कर्मधा०। केतु-विशेष। बृहत्संहितामें लिखा है, कि धूमकेतु पश्चिम दिशामें उदय होता है और इसके दक्षिणमें एक उंगली ऊपर उठी हुई एक शिखा रहती है तथा उदय हो कर उत्तरकी ओर क्रमश: लम्बा होनेके बाद अस्त हो जाता है। इसका नाम चलकेतु है। वर्द्धित चलकेतु यदि उत्तर ध्रुव, सप्तर्षिमण्डल या अभिजित् नक्षत्रको स्पर्श करते हुए आकाशके अर्द्धभाग तक चला जाय और वहां अस्त हो जाय, तब प्रयागसे ले कर अवन्ती तक पुष्कर और उत्तरमें देविका नदी पर्यंत बृहत् मध्यदेश वलिष्ठ होता है। इसके सिवा कभी कभी रोग और दुर्भिक्षमें दूसरे दूसरे देशोंका भी अनिष्ट हुआ करता है। इसका फल-काल दशमास है। किसी किसी पण्डितके मतसे अठारह मास इसका फल रहता है। (बृहत्सं० ११।११-१९) केतु देखो।

चलगाली—छोटानागपुरमें सरगूजाके अन्तर्गत एक तप्पा। पहले यहां एक सामन्त राजा राज्य करते थे। यहांकी कन्हार नदीके तीर पर पूर्व कीर्तियोंके ध्वंसावशेष देखे जाते हैं, जिनमेंसे ३ बड़े बड़े शिव-दुर्गाके मन्दिर तथा पत्थरकी चार हाथ ऊंची पुरुष मूर्ति आजलों भी दृष्टिगत होती हैं। विध्वस्त मन्दिरोंके शिल्पकार्य प्रशंसनीय है। यहांके मनुष्योंकी विश्वास है कि वह चार हाथ ऊंची प्रस्तर मूर्ति ही सामन्त राजाकी प्रति-मूर्ति है।

चलङ्कसगतिप्रिया (सं० स्त्री०) देवीविशेष, कुमारी।

चलघ्नी (सं० स्त्री०) स्फक्षा, एक तरहका सुगन्ध साग।

चलचञ्चु (सं० पु०-स्त्री०) चला चञ्चुरस्य, बहुव्री०। चकोर पक्षी।

चलचलाव (हिं० पु०) १ प्रस्थान, यात्रा, चलाचली २ महाप्रस्थान, मृत्यु, मौत।

चलचाल (सं० त्रि०) चञ्चल, अस्थिर, चलविचल।

चलचित्त (सं० क्ली०) चलञ्च तच्चित्त' चेति कर्मधा०। १ अस्थिरचित्त, चञ्चल स्वभाव।

"पौंश्चल्याञ्चलचित्ताच नैःस्नेह्याच स्वभावतः।" (मनु ९।१५)

(त्रि०) चलं अस्थिरं चित्त' यस्य, बहुव्री०। २ अस्थिर चित्त, जिसकी बुद्धिको स्थिरता न हो।

चलचित्तता (सं० स्त्री०) चलचित्तस्य भावः, चलचित्त-तल्-टाप्। चित्तको अस्थिरता, चित्तका चलायमान।

चलचूक (हिं० पु०) धोखा, छल, कपट।

चलच्छक्ति (सं० स्त्री०) गतिशक्ति जिसे चलनेका सामर्थ्य हो।

चलत् (सं० त्रि०) चल-शतृ। १ जो चलता हो। २ कम्पमान, जो काँपता हो। ३ चञ्चल, अस्थिर, चलायमान।

"चलचित्तं चलवित्तं चलज्जीवनयौवनं।" (उद्भट)

स्त्रीलिङ्गमें ङीष् हो कर 'चलन्ती' शब्द होता है।

चलता (सं० स्त्री०) चलस्य भावः चल्-तल्-टाप्। अस्थिरता, चञ्चलता।

"चलानामचलत्वमचलानां चलता।" (सुश्रुत १।१२२ अ०)

चलता (हिं० वि०) १ गतिवान्, चलता हुआ। २ जिसका क्रमभङ्ग न हुआ हो, जो बराबर जारी हो। ३ जिसकी प्रथा अधिक हो, जिसका रवाज बहुत हो। ४ कार्य्य करने योग्य, जो असमर्थ न हुआ हो। ५ व्यवहारपटु, चालाक, चुस्त। (देश०) ६ बङ्गाल, मन्द्राज और मध्य-भारतमें होनेवाला एक तरहका पेड़। इसकी लकड़ी चिकनी, बहुत मजबूत और भीतर लाल होती है। इसको पुरानी पत्तियोंसे हाथी दाँत साफ किया जाता है। इसके फलकी तरकारी बनती है। ७ कवच, झिलम।

चलती (हिं० स्त्री०) मानमर्यादा, प्रभाव, अधिकार।

चलतू (हिं० वि०) जो जोती बोई जाती हो, आबाद।

चलत्पूर्णिमा (सं० स्त्री०) चलन्ती पूर्णिमा तदुपलक्षित-चन्द्र इव। चन्द्रक मत्स्य, चाँदा नामकी मछली।

चलदङ्ग (सं० पु०-स्त्री०) चलत् चञ्चलं अङ्गं यस्य, बहुव्री०। मत्स्यविशेष, झींगा नामकी मछली।

चलदङ्गक (सं० पु०-स्त्री०) चलदङ्ग' यस्य, बहुव्री०, वा कप्। चलदङ्ग देखो।

चलदन्त (सं० क्ली०) चलित दन्त, हिलता हुआ दाँत, वह दाँत जो ढीला हो कर हिलने लगा हो।

चलदल (सं० पु०) चलानि चञ्चलानि दलान्यस्य, बहुव्री०। अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। (अमर २।४।२०) अश्वत्थ देखो।

चलद्रुम (सं० पु०) गोक्षुरक्षुप, गोखरू नामकी लता।

चलन (सं० क्ली०) चल भावे ल्युट्। १ कम्पन, काँपना। "इत्यथोऽचलनाद्देको द्वितीयः पादविक्षतः।" (पञ्चतन्त्र २।१७४)

२ गति, भ्रमण।

"चलनं विना कार्यं न भवेदिति मे मतिः।" (देवीभा० १।१७।१९)

(त्रि०) चल कर्तरि ल्यु। ३ कम्पयुक्त, कंपायमान, जो काँपता हो। (पु०-स्त्री०) ४ हरिण, हिरन। (पु०) चलत्यनेन चल करणे ल्युट्। ५ चरण, पैर। ६ नृत्यमें एक प्रकारकी चेष्टा। ७ ज्योतिषमें एक क्रान्तिपातगति अथवा विषवत्‌की उस समयकी गति जब दिन और रात दोनों बराबर होते हैं।

चलन (हिं० पु०) १ गति, चाल, चलनेका भाव। २ प्रथा रीति, रिवाज रस्म। ३ किसी चीजका व्यवहार।

चलनक (सं० पु०) चलन संज्ञायां कन्। चण्डातक, स्त्रियोंकी चोली या कुरती।

चलनकलन (सं० पु०) ज्योतिषमें एक प्रकारका गणित। इसके द्वारा पृथिवीकी गतिके अनुसार दिन रातके घटने बढ़नेका हिसाब लगाया जाता है।

चलनबील—बङ्गाल प्रांतके राजशाही तथा पावना जिलेकी एक झील। यह अक्षा० २४° १०' तथा २४° ३०' उ० और देशा० ८९° १०' एवं ८९° २० पू०में अवस्थित है। इसकी लम्बाई उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वकी ओर २१ मील और चौड़ाई १० मील है। इसका कुल क्षेत्रफल १५० वर्गमील है। इसमें बहुतसी मछलियाँ और जलपक्षी रहते हैं। यहाँसे प्रतिवर्ष ६००००) रु०की मछली दूसरे दूसरे देशोंमें भेजी जाती है।

चलनशिला (सं० स्त्री०) वृन्दावनके अन्तर्गत एक स्थान। यह श्रीकृष्णकी लीलाभूमि कह कर प्रसिद्ध है। (ब्र० ली० २४२०)

चलनसमीकरण (सं० पु०) गणितकी एक क्रिया। समीकरण देखो।

चलनसार (हिं० वि०) प्रचलित, जिसका व्यवहार प्रचलित हो।

चलना (हिं० क्रि०) १ प्रस्थान करना, गमन करना। एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाना। २ गतिमें होना, हरकत करना। ३ कार्य निर्वाहमें समर्थ होना, निभना। ४ प्रयुक्त होना, काममें लाया जाना। ५ प्रचलित होना, जारी होना। ६ व्यवहारमें आना, लेनदेनमें काम आना। ७ प्रवाहित होना, बहना। ८ वृद्धि पर होना, बाढ़ पर होना। ९ किसी कार्यमें अग्रसर होना, किसी कामका आगे बढ़ना। १० आरम्भ होना, छिड़ना। ११ क्रमका निर्वाह होना, बराबर बना रहना। १२ खाद्य पदार्थका परसा जाना, खानेके लिये रखा जाना। १३ बराबर काम देना, ठहरना। १४ शत्रुता होना, विरोध होना। १५ तीर, गोली आदिका छूटना। १६ व्यवहारके अनुकूल होना, अच्छी तरह काम देना। १७ पढ़ा जाना, उचरना। १८ किसी व्यवसायकी वृद्धि होना, काम चमकना। १९ आचरण करना, व्यवहार करना। २० कृत कार्य होना, सफल होना। २१ कपड़ेके बीचमें मोटा सूत आदि पड़ जानेके कारण सीधा न फटना। २२ गलेके नीचे उतरना, निगला जाना। २३ ताश या गञ्जीफे आदि खेलोंमें किसी पत्तेको खेलके कामोंके लिये सब खेलनेवालोंके सामने फेंकना।

चलना (हिं० पु०) १ बड़ी चलनी। २ लोहेका एक बड़ा कलछुला या डोई जिसका आकार चलनीसा होता है। इसके द्वारा उबलते हुए रसके ऊपरका फेन, मैल आदि साफ करते हैं। ३ हलवाइयोंका एक यन्त्र। यह छेददार डोईके समान होता है और इससे शीरा या चासनी इत्यादि साफ करते हैं, छन्ना।

चलनार्ह (सं० त्रि०) चलनमर्हति चलन-अर्ह-अण्। जो चलनेके योग्य हो।

चलनिका (सं० स्त्री०) चलनी स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वो ह्रस्वश्च। एक रेशमी झालर। २ स्त्रियोंके पहननेका घाघरा, लहँगा।

चलनी (सं० स्त्री०) चलत्यत्र चल आधारे ल्युट् ङीप्। १ परिधेय वस्त्रविशेष, घाघरा, लहँगा। २ गजबन्धनी, हाथियोंके बांधनेका रस्सा।

चलनीय (सं० त्रि०) चल-अनीयर्। १ गमनीय, जाने योग्य, चलने लायक। २ व्यवहारयोग्य, रिवाजमें लाने लायक, इस्तेमाल करने योग्य।

चलनीस (हिं० पु०) चोकर, चालन।

चलपत्र (सं० पु०) चलानि चञ्चलानि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

"अङ्केन केनापि विजेतुमस्या गवेष्यते किं चलपत्रपत्रम्।" (नैषध)

चलपाणि—युसफजैके अन्तर्गत लुन्खोर जिलामें प्रवाहित एक नदी। प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहामके मतमें आरियन् मलमन्तस् (Malamantos) नामसे इस नदीका उल्लेख किया है। इस नदीमें दलदल अधिक है। यह काबुल नदीमें जा गिरी है। इस नदीका दूसरा नाम खलपाणी है।

चलपुच्छ (सं० पु०) खञ्जरीट, खञ्जनपक्षी।

चलबाँक (हिं० वि०) १ चर्बाक देखो। २ चरबाँक देखो। ३ शीघ्रगामी, तेजचलनेवाला।

चलबिचल (हिं० वि०) १ जो अपने स्थान पर स्थिर न हो, जो ठीक जगहसे अलग हो गया हो, उखड़ा पुखड़ा। २ अव्यवस्थित, जिसके नियमका उल्लंघन हुआ हो।

चलवाना (हिं० क्रि०) चलानेका काम दूसरेसे कराना।

चलविचल (हिं० वि०) १ जो स्थिर न हो, जो ठीक जगहसे इधर उधर हो गया हो, उखड़ा पुखड़ा। २ अव्यवस्थित, जिसके नियमका उल्लंघन हुआ हो। (स्त्री०) ३ व्यतिक्रम, नियम पालनमें त्रुटि। इस शब्दको कहीं कहीं पु० भी कहते हैं।

चलस् (सं० क्ली०) वृक्षविशेष, एक प्रकारका पेड़।

चलसंक्रान्ति (सं० स्त्री०) चलाचलौ संक्रान्तिश्चेति, कर्मधा०। अयनांशकी गतिके अनुसार राशिविशेषके अंशमें रवि प्रभृति ग्रहोंका प्रभासञ्चार। संक्रान्ति देखो।

चला (सं० स्त्री०) चल-अच्-टाप्। १ लक्ष्मी। २ गन्धद्रव्यविशेष, शिलारस नामका गंधद्रव्य। ३ विद्युत्,

बिजली, दामिनी। ४ चार चरण और अठारह अक्षरोंका एक प्रकारका छन्द। ५ पृथिवी, भूमि। ६ पिप्पली, पीपल।

चलाऊ (हिं॰ वि॰) १ चिरस्थायी, मजबूत, टिकाऊ। २ बहुत चलने या घूमनेवाला, जो बहुत घूमता हो।

चलाचल (सं॰ त्रि॰) चलति चल-अच् द्वित्वं। अकार-स्याकारादेशश्च। चञ्चल, चपल।

"अग्निनोऽस्य स्थितिं विद्वान् लक्ष्मीमिव चलाचलाम्।" (किरात ११।३०)

(पु॰ स्त्री॰) २ काक, कौवा। ३ संसारचक्र। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

चलाचली (हिं॰ स्त्री॰) १ चलनेकी हड़बड़ी, रवारवी। २ बहुतसे मनुष्योंका प्रस्थान। ३ चलनेकी तैयारी या समय।

चलातङ्क (सं॰ पु॰) चलस्य चलनस्यातङ्को भयमस्मात्, बहुव्री॰। वातरोगविशेष।

चलान (हिं॰ स्त्री॰) १ चलनेकी क्रिया। २ माल आदिका एक स्थानसे दूसरे स्थान पर भेजना। ३ वह कागज जिसमें किसीकी सूचनाके लिये भेजी हुई चीजों-की सूची या विवरण आदि हो, रवन्ना। ४ भेजने वा चलानेकी क्रिया। ५ किसी अपराधीका पकड़े जाने बाद न्यायके लिये न्यायालयमें भेजा जाना।

चलानदार (हिं॰ पु॰) वह मनुष्य जो मालको चलानके साथ उसकी रक्षाके लिये जाता है।

चलाना (हिं॰ क्रि॰) १ किसीको काममें लगाना। २ तीर गोली आदि छोड़ना। ३ खाद्य पदार्थ आगे रखना। ४ गति देना, हिलाना डुलाना। ५ निर्वाह करना, निभाना। ६ प्रवाहित करना, बहाना। ७ वृद्धि करना, तरक्की करना। ८ किसी कार्यको अग्रसर करना, किसी कामको जारी करना। ९ आरम्भ करना, छोड़ना। १० लगातार बनाये रखना, जारी रखना। ११ बराबर काममें लाना, टिकाना। १२ व्यवहारमें लाना, लेनदेनके काममें लाना। १३ प्रचलित करना, जारी रखना १४ व्यवहृत करना, काममें लाना। १५ तीर गोली आदि छोड़ना। १६ विरोध करना, लड़ाई झगड़ा करना। १७ किसी व्यवसायकी वृद्धि करना, काम चमकाना। १८ आचरण करना, व्यवहार कराना। १९ असावधानी आदिके कारण टेढ़ा या तिरछा फाड़ना।

चलापह्न (सं॰ पु॰) १ वरुणवृक्ष। २ लाल कुलथी।

चलायमान (सं॰ त्रि॰) १ गमनशील, चलनेवाला, जो चलता हो। २ चंचल, चपल। ३ विचलित।

चलावा (हिं॰ पु॰) १ रीति, रस्म, रिवाज। २ द्विरागमन, गौना। ३ एक प्रकारका उतारा। यह प्रायः गावोंमें भयंकर बीमारी पड़नेके समय किया जाता है। ग्रामवासी बाजा बजाते हुए अपने गांवकी सीमाके बाहर इसको ले जा कर किसी दूसरे गांवकी सीमा पर रख आते हैं। उन लोगोंका विश्वास है कि ऐसा करनेसे बीमारी एक गांवसे निकल कर दूसरे गांवमें चली जाती है।

चलासन (सं॰ पु॰) बौद्धमतानुसार एक प्रकारका दोष। यह सामयिक व्रतमें आसन बदलनेके कारण होता है।

चलि (सं॰ पु॰) १ राजमाष, एक प्रकारकी सेम। २ उत्तरीय वस्त्र, ऊपरसे ढाकनेका कपड़ा, दुपट्टा, चद्दर, ओढ़नी।

चलित (सं॰ त्रि॰) चल कर्तरि क्त। १ कंपित, कम्पयुक्त, कंपनेवाला, कंपाया, जो हिलाया डुलाया गया हो।

"तयोर्विलासचलितं स्खलितागाढविभ्रमैः।" (राजतर॰ ५।३६५)

२ गत, गया हुआ, बीता हुआ।

"चलितः पुरः पतिमुपेतमात्मजम्।" (माघ)

३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ ज्ञात, जाना हुआ। (क्ली॰) चल भावे क्त। ५ गमन, जाना, प्रस्थान। ६ चलना, चलनेकी क्रिया। (त्रि॰) ७ चलायमान, अस्थिर। ८ चलता हुआ। (पु॰) ९ नृत्यमें एक प्रकारकी चेष्टा। इसमें ठोड़ीकी गतिसे क्रोध या क्षोभ प्रकट होता है।

चलितग्रह (सं॰ पु॰) एक प्रकारका ग्रह जिसके फलका कुछ अंश भोगा जा चुका हो और कुछ भोगनेको बाकी रह गया हो।

चलितव्य (सं॰ त्रि॰) चल भावे तव्य। गन्तव्य, जाने योग्य।

चलियापन्थी—चोलियापन्थी देखो।

चलिष्णु (सं॰ त्रि॰) चल-इष्णुच्। १ गमनशील, चलाय-मान, जो स्थिर न रहे। २ गमनोद्यत, जो जानेको तैयारी कर रहा हो।

चलु (सं॰ पु॰) चल-उन्। गण्डूष, चुलुक, चुल्लू, कुल्ली।

चलुक (सं॰ पु॰) चलु संज्ञायां कन्। १ प्रसृति, विस्तार, फैलाव। २ क्षुद्रभाण्ड, छोटा बरतन।

चलेषु (सं॰ पु॰) चलो लक्ष्यभ्रष्ट इषुर्यस्य, बहुव्रो॰। मन्दधानुष्क, जिसका फेंका हुआ वाण लक्ष्य तक पहुंचा न हो।

चलौना (हिं॰ पु॰) १ दूध, जल और कोई द्रव पदार्थोंके हिलानेका डंडा। २ चरखा चलानेका लकड़ीका टुकड़ा।

चलौनी—भागलपुरकी एक नदी। यह हरावत् परगनेसे निकल कर नारोदिगर परगना होती हुई पाण्डुयाके समीप लोकण नदीमें जा गिरी है। निशङ्कपुर परगनामें यह नदी दण्डासुर नामसे मशहूर है।

चवन्नी (हिं॰ स्त्री॰) चार आने मूल्यका चाँदीका सिक्का, एक रुपयाका चौथा हिस्सा।

चवर (हिं॰ पु॰) चंवर देखो।

चवरा (हिं॰ पु॰) लोबिया।

चवर्ग (सं॰ पु॰) च-वर्ग यद्वा चस्य वर्गः, ६-तत्। २य वर्ग, च से ञ तकके अक्षरोंका समूह। इसका उच्चारण तालुसे होता है।

चवर्गीय (सं॰ त्रि॰) चवर्गे भवः चवर्ग-छ। वर्गान्ताच्च। पा ४।३।६३। चवर्गसम्बन्धीय, चवर्गका।

चवल (सं॰ पु॰) चर्व बाहुलकात् अलच् पृषोदरादित्वात् साधु। राजमाष, लोबिया।

चवाई (हिं॰ पु॰) १ निन्दक, वह जो दूसरोंकी निंदा करता हो, दूसरोंकी शिकायत करनेवाला। २ चुगलखोर, पीठ पीछे शिकायत करनेवाला, वह जो परोक्षमें दूसरोंकी निंदा करता हो, लुतरा।

चवालीस (हिं॰ पु॰) चौवालीस देखो।

चवाव (हिं॰ पु॰) १ चर्चा, प्रवाद, अफवाह, वह बात जो चारों ओर फैल गई हो। २ चारों तरफ फैली हुई शिकायत। ३ चुगलखोरी।

चवि (सं॰ स्त्री॰) चर्व-इन् पृषोदरादित्वात् साधुः। चव्य, चव्य नामकी दवा।

चविक (सं॰ क्ली॰) चवि संज्ञायां कन्। चविका।

चविका (सं॰ स्त्री॰) चवि स्वार्थे कन्-टाप्। १ वृक्षविशेष पीपल मूल (Piper longum) इसे अरबीमें दरफिलफिल और फारसीमें मग्ज पीपल कहते हैं। एसियाके दक्षिण भागमें विशेष कर भारतवर्षमें जलके किनारे यह बहुत उपजता है। लताकी तरह यह फैलती है। उत्तर सरकारमें इसकी खेती अधिक होती है। इसका गाछ काटने पर फिरसे बढ़ जाता है। जड़ बहुत वर्षों तक भी नष्ट नहीं होती है। काली मिर्चके जैसे इसके फल होते हैं। कच्चेमें इसके फल सब्ज रंगके होते किन्तु पकने पर लाल दीख पड़ते हैं। अपक्व अवस्थामें सुखाने पर इसका रंग काला हो जाता है। डाक्टरोंके मतानुसार मिर्चके जैसे इसके गुण हैं।

इसका संस्कृत पर्याय—चव्य, चव्या, चवि, चविक, चवी, रत्नावली, तेजोवती, कोला, नाकुली, उषणा, चव्यक, वशिर, गन्धनाकुली, वल्ली, कोलवल्ली, कोल, कुटिलसमक, तीक्ष्णा, करिकरणावल्ली और क्रकर है। इसके गुण—कटु, उष्ण, लघु, रोचन, दीपन तथा काश, श्वास और शूलनाशक हैं। (राजनि॰) २ गजपिप्पली, गजपीपल। ३ चव्य।

चविकाशिर (सं॰ क्ली॰) पिप्पलीमूल, पीपरामूल।

चवी (सं॰ स्त्री॰) चवि-ङीष्। बह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।४५। चविका।

"सर्वधर्माचवीइसः प्रतिश्रो तां सुदुस्तराम्।" (कथास॰ ६।१११)

चव्य (सं॰ क्ली॰) चर्व कर्मणि ण्यत् पृषोदरादित्वात् र लोपे साधुः। १ चविका, औषधविशेष। २ हस्तिपिप्पलीमूल। ३ कर्पास कपास। ४ गजपिप्पली। ५ गुञ्जा, घुँघची।

चव्यक (सं॰ क्ली॰) चव्य-स्वार्थे कन्। चव्य देखो।

चव्यजा (सं॰ स्त्री॰) चव्यमिव जायते जन-ड-टाप्। गजपिप्पली, गजपीपल। गजपीपली देखो।

चव्यफल (सं॰ क्ली॰) चव्यमिव फलं यस्य, बहुव्रो॰। गजपिप्पली, गजपीपल।

चव्या (सं॰ स्त्री॰) चव्य-टाप्। १ चविका।

"सर्पिर्मधुभ्यां त्रिकटु प्रलिह्याथवा त्रिकट्वोपहितं यवान्नं:।"
(सुश्रुत ४१ अ॰)

२ बच। ३ कार्पासी, कपासका पेड़। ४ पिप्पली, पीपल।

चव्यादि (सं॰ क्ली॰) वद्यकोक्त एक प्रकारका पाक किया हुआ घृत। चक्रदत्तके मतसे चविका, त्रिकटु, आकनादि,

जीर, धनिया, अजवायन, पिप्पलीमूल, विड्लवण, सैन्धव लवण, चिता, बिम्ब और हरीतकी इन पदार्थोंको चूर्ण कर घृतके साथ पाक करना होता है। इसीका नाम चव्वादि घृत है। इसके सेवनसे प्रवाहिका, गुदभ्रंश, मूत्रकृच्छ्र, परिस्रव और शूलरोग जाते रहते हैं।

चव्यादिक्वाथ (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषधविशेष। चविका, मोथा, आतइष, कच्चे बेलका गूदा, सोंठ, कुड़चीकी छाल, इन्द्रयव और हर्र इन सबको मिला कर क्वाथ प्रस्तुत करना पड़ता है। इसके सेवनसे वमि और कफातिसार दूर हो जाता है।

चश्म (फा० स्त्री०) चश्म देखो।

चश्मा (फा० पु०) चश्मा देखो।

चश्म (फा० स्त्री०) नेत्र, लोचन, नयन, आँख।

चश्मक (फा० स्त्री०) १ ईर्षा, द्वेष, वैमनस्य, मनमोटाव। २ चश्मा, उपनेत्र, ऐनक। ३ आँखका इशारा।

चश्मखोर (फा० वि०) १ जो कुछ भी देख नहीं सकता हो। २ अकृतज्ञ, उपकार नहीं माननेवाला जो किसी दूसरोंसे उपकार पा कर उसके प्रति उपकार दिखाता हो।

चश्मखोरी (फा० स्त्री०) १ किसीका चीजका न देखना। २ अकृतज्ञता, एहसान फरामोसी।

चश्मदीद (फा० वि०) जो आँखोंसे देखा हुआ हो।

चश्मनुमाई (फा० स्त्री०) वह जो किसीको भय दिखाता हो, आँख दिखाना, धमकी।

चश्मपोशी (फा० स्त्री०) समक्ष न होना, आँख चुराना, कतराना।

चश्मा (फा० पु०) १ काचादि निर्मित चक्षुका आवरण, कमानीमें जड़े हुए शीशे या पत्थरके दो टुकड़े। कमानी ऐसी बनती और उसमें शीशेके टुकड़े ऐसे लगते कि कमानीका मध्यस्थल नाक पर रखनेसे शीशेके दोनों टुकड़े (Lens) दोनों आँखोंके ऊपर पड़ते और ढक्कन-जैसे लगते हैं। दृष्टिशक्तिकी कमजोरीको मेटनेके लिए ही साधारणतः और प्रधानतः चश्माका व्यवहार किया जाता है। कोई तो शौकसे और कोई आंखमें धूलि न गिरे इस उद्देश्यसे चश्माका व्यवहार करते हैं। इसलिए भिन्न भिन्न उद्देश-साधनके लिए चश्मा भी तरह तरहके होते हैं, अर्थात् परकला (Lens)-की आकृति और उसके साथ उसके गुण भी भिन्न भिन्न प्रकारके हुआ करते हैं। परकलाकी आकृति छह प्रकारकी होती है।

१—समतल और न्युब्ज पृष्ठविशिष्ट अर्थात् एक तरफ समान और दूसरी तरफ टेढ़ा (Plano-convex)। २—दोनों तरफ न्युब्ज या कुबड़ा (Double-convex), यह दो प्रकारका है, एकका व्यासार्द्ध तो दोनों तरफसे समान (Equi-convex) होता है और एकका व्यासार्द्ध दूसरेकी अपेक्षा छह गुना (Crossed lens) होता है। ३—एक तरफ पोला और दूसरी तरफ न्युब्ज (Meniscus)। ४—एक तरफ समान और दूसरी तरफ कूर्म-पृष्ठाकार (Plano-concave)। ५—दोनों तरफ कूर्म-पृष्ठाकार (Double-concave) या पोला। ६—एक तरफ न्युब्ज और एक तरफ कूर्मपृष्ठाकार (Concavo-convex)। इन छह प्रकारके परकलाओंमेंसे दोनों तरफ न्युब्ज (Double convex) परकला वयसजनित खर्व-दृष्टि व्यक्तिके लिए तथा दोनों तरफ कूर्मपृष्ठाकार (Double concave) परकला स्वाभाविक या व्याधि-जनित खर्वदृष्टि अल्पवयस्कके लिए उपयोगी है। इसलिए ये दोनों ही साधारणतः व्यवहारमें आते हैं। दृष्टिशक्ति-की कमी वेशी खर्वताके अनुसार परकलाके कूर्मपृष्ठ और न्युब्जतामें भिन्नता हो जाती है।

दृष्टिशक्तिकी तारतम्यताके अनुसार भिन्न भिन्न प्रकार-के कूर्मपृष्ठाकार और न्युब्ज परकलाओंका प्रयोजन होता है। कृत्रिम उपायोंसे स्वाभाविक दृष्टिशक्ति पानेके लिए ही परकला या चश्माका व्यवहार किया जाता है और यही इसका उद्देश्य है। दोनों तरफ न्युब्ज (Double convex) और कछुएकी पीठके आकारके (Double concave) परकलाके ऊपर ही आलोक समान्तराल-भावसे गिरता है, किन्तु न्युब्ज परकलाके बीच को भेद कर दूसरी तरफसे बाहर हो कर वह फिर समान्तराल नहीं रहता, परस्पर वक्रभावसे आ कर पर-कलाके कुछ दूर एक बिन्दुमें मिल जाता है। यह बिन्दु अधिश्रय (Focus) नामसे अभिहित है। लेन्स शब्द देखो।

उस अधिश्रय बिन्दुमें प्रकाशको सहायतासे दृष्ट पदार्थको एक उलटो प्रतिमूर्ति पड़तो है। कूर्मपृष्ठाकार परकला (Double concave) पर आलोक समान्तराल भावसे गिरता है और वह भेदता हुआ दूसरी बगलसे बाहर निकल कर विभिन्न दिशाओंमें जा कर परस्पर अलग हो जाता है। इन टेढ़े प्रकाशोंकी रेखाओंके बढ़ानेसे जिस बिन्दुमें मिलेंगी, वह हो कूर्मपृष्ठाकार परकलाके ऊपर गिरे हुए प्रकाशका अधिश्रय (Focus) है। दूरदृष्टि (Presbyopia), बुढ़ापेमें निकटदृष्टि (Myopia Senilis), मणिहीनता (Aphakia), निकटदृष्टि (Myopia), अस्पष्टदृष्टि (Hypermetropia) चीणदृष्टि (Asthenopia) विषम या तिर्यक्‌दृष्टि (Astigmatism) आदि रोगोंमें चश्मा लगानेकी जरूरत पड़तो है। चालीस वर्षसे ऊँचो उम्रके लोगोंको दूरदृष्टि (Presbyopia) रोग उत्पन्न हुआ करता है। इससे दूरदृष्टि नष्ट नहीं होतो किन्तु पासकी चीज अस्पष्ट दीखने लगतीं हैं अर्थात् दूरागत समान्तर रश्मिका अधिश्रय (Focus) चक्षुके मध्यस्थ चित्रपत्रके (Retina) ऊपर न हो कर उसके बाहर हो जाता है और इसीलिए पासकी चीजें अस्पष्ट दीखने लगतीं हैं। ऐसी दशामें जिससे समान्तर आलोक, रश्मिके अधिश्रय चित्रपत्रके बाहर न पड़ कर ठीक उसी पर पड़े, ऐसा उपाय अवलम्बन करना चाहिये, कारण कि पत्रके ऊपर अधिश्रयके होनेसे हो दृष्टि ठीक रहती है, कोई बाधा नहीं पड़ती। दोनों तरफ न्युज चश्मा (Double convex)-से यह दोष जाता रहता है, इसलिए इस अवस्थामें दोनों तरफ न्युज चश्मा आवश्यकीय है। परन्तु चालीस वर्षसे ज्यादा उम्रवालोंके लिए एक हो चश्मा कार्यकारी नहीं हो सकता, कारण उम्रके अनुसार समान्तर आलोक रश्मिका अधिश्रय भी चित्रपत्रके बाहर भिन्न भिन्न दूरत्वके ऊपर हुआ करता है। इसलिए उनको विभिन्न प्रकारके चश्माओंका व्यवहार करना
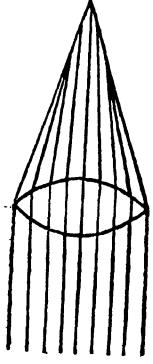
चाहिये। कितनी उम्रवालेकी आँखमें आलोकको रश्मिका अधिश्रय कितनी दूरमें पड़ता है, डाक्टर किचेनरने अपने "इकोनमी औफ् दी आइज" (Dr. Kitchener's Economy of the Eyes) नामकी पुस्तकमें उसकी एक तालिका दो है।

उम्र।			अधिश्रयकी दूरताकी रखा।
४०	...	...	३६
४५	...	...	३०
५०	...	...	२४
५५	...	...	२०
५८	...	...	१८
६०	...	...	१६
६५	...	...	१४
७०	...	...	१२
७५	...	...	१०
८०	...	...	९
८५	...	...	८
९०	...	...	७
१००	...	...	६

Myopia Senilis अर्थात् बुढ़ापेमें निकटदृष्टि होने पर न्युज चश्माको छोड़ कर कछुएकी पीठके आकारका चश्मा (Concave) लगाना चाहिये। मोतियाबिन्दको उखाड़नेसे भी आँखमें मणिका अभाव हो जाता है। इसमें पास और दूरकी चीज देखनेके लिए दो न्युज चश्मा लगाने पड़ते हैं। निकटदृष्टि रोग १५से ३० वर्षकी उम्रवालोंके होता है। इसमें बहुत पासकी चीजें तो दीखतीं हैं किन्तु दूरकी नहीं दीखतीं। उपर्युक्त (मझारी) कूर्मपृष्ठाकार चश्मा इस रोगके लिए उपयोगी है।

अस्पष्ट-दृष्टि रोगमें या पास और दूरमें कहीं भी स्पष्ट न दीखना, यह दोष रहे तो आखें छोटी हो जातीं हैं, थोड़ी उम्रमें यह रोग दिखलाई देता है। यह प्रायः पैतृक रोग होता है। इसमें कूर्मपृष्ठाकार या मध्यनिम्न चश्मा उपकारी होता है। ज्यादा लिखने पढ़ने या आँखका काम ज्यादा करनेसे चीणदृष्टि रोग उत्पन्न होता है। मध्यनिम्न या काचकलमका चश्मा इस रोगके लिए अच्छा है।

आँखोंके परकला (Lens) सवर्त्र समानतासे न्युब्ज न होनेसे विषम दृष्टिरोग पैदा होता है, इसमें नलके आकारका चश्मा (Cylindrical) लगाना पड़ता है। इससे आँखोंमें फायदा पड़ता है।

थोड़ी उम्रवालेको चीणदृष्टिरोग (Short sight) होनेसे समान्तर आलोकरश्मि उनके आँखोंसे अन्तरस्थ हो कर चित्रपत्र तक न जा कर ही केन्द्रायित हो जाती है अर्थात् रश्मिका अधिश्रय हो जाती है। इसलिए भिन्न भिन्न प्रकारके मध्यनिम्न या कूर्मपृष्ठाकार चश्मा लगानेसे अधिश्रय स्वाभाविक जगह पर पहुंच जाता है और दृष्टिकी खर्वता नष्ट हो जाती है।

दिन और रात्रिके प्रकाशके तारतम्यके लिए चश्मा-धारियोंको विभिन्न गुणवाले चश्मा लगाने चाहिये।

आजकल कोई कोई सभ्यतामें आ कर या शौकसे अच्छी आँखों पर चश्मा लगाते हैं और कोई कोई बहादुरी पानेके लोभसे अथवा शरमसे चालीस वर्ष बीत जाने पर भी तथा दूरदृष्टिरोगग्रस्त होने पर भी चश्मा नहीं लगाते। परन्तु दुःखके साथ लिखना पड़ता है कि, दोनोंको ही भविष्यमें अपनी करतूत पर पछताना पड़ता है।

प्रथमोक्त व्यक्तिगण जो चश्मा व्यवहार करते हैं, उसके दोनों परकला व्याधिग्रस्त लोगोंकी आँखोंके लिए उपयोगी न्युब्ज वा मध्यनिम्न न हो कर समतल (Plane) होने पर भी अच्छी आँखोंमें चश्मा लगानेसे उनकी आँखें इस प्रकार दूषित हो जातीं हैं कि वह वास्तविक व्याधिग्रस्त होनेसे (चालीस वर्षके बाद हो, चाहे पहिले किसी उम्रमें क्यों न हो) फिर किसी प्रकारके चश्मेसे फायदा नहीं होता। ऐसे व्यक्तियोंको उस समय बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। यदि वे बाल्यावस्थामें अच्छी आँखों पर चश्मा न लगाते, तो उन्हें यह कष्ट नहीं सहना पड़ता। क्योंकि, तब तो रोगके अनुसार चश्मा लग जाता और फायदा पहुंचता।

शेषोक्त व्यक्ति अर्थात् ४० वर्षसे ऊंची उम्रवाले दूरदृष्टिरोगके लिए चश्मा नहीं लगाते, इससे उनकी दृष्टिशक्ति शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। इस प्रकारसे उनकी आँखें थोड़ी ही दिनोंमें नष्ट हो जातीं हैं और फिर चश्मा लगाने पर भी आँखें नहीं सुधरतीं। अच्छी तरहसे चश्माका व्यवहार किया जाय, तो आँखोंमें कोई दोष नहीं होता।

२ स्रोत, पानीका सोता। ३ नदी, छोटा दरिया। ४ कोई जलाशय।

चषक (सं० पु०-क्ली) चषति भक्षयति पिवत्यनेन चष-क्वुन्। क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोरपूर्वस्यापि। उण् २।३२। १ मद्यपान-पात्र, शराब पीनेका बरतन। इसका पर्याय—गल्वर्क, सरक और अनुतर्षण है। युक्तिकल्पतरुमें लिखा है कि राजाओंके पानपात्रका नाम चषक है। वह सोने चाँदी, स्फटिक या काँचका बना हुआ गोलाकार, त्रिकोण, अष्टकोण या दश कोणका होता है। ये ही चारों प्रकारके चषक चार तरहके राजाओंके लिये प्रशस्त माने गये हैं। जिसके व्यवहारके लिये चषक बनाना हो वह सिर्फ उसीके मुष्टि परिमाणका होना चाहिए एवं चतुर्वर्ण रत्न द्वारा उसे जड़ देना चाहिए। मट्टी या फालनिर्मित चषकको सब कोई काममें ला सकते हैं। जङ्गलवासी राजाके लिये काष्ठ या पत्थरका चषक ही उपयोगी है।
(युक्तिकल्पतरु)

(क्ली०) चष कर्मणि क्वुन्। २ मधु, शहद। ३ मद्य-विशेष, एक तरहकी शराब।

चषचोल (हिं० पु०) चक्षुकी पलक, आँखका परदा।

चषण (सं० पु०) १ भक्षण, भोजन। २ वध। ३ क्षय।

चषति (सं० पु०) चष भावे अति। चषण देखो।

चषाल (सं० पु०-क्ली०) चष्यते वध्यतेऽस्मिन् चष-आलच्। सानसिवर्णसिपर्णसितण्डुलाङ्कुशचषालेल्वलपल्वलधिष्ण्यशल्याः। उण् ४।१०७। १ यूपकटक, वह गराड़ी जो यज्ञके यूपमें पशु बाँधनेके लिये लगी रहती है। यूप देखो। २ मधुस्थान। (संक्षिप्तसार उण्।

चषित (सं० त्रि०) चष-क्त। १ भक्षित, खाया हुआ। २ हत, मारा हुआ, कतल किया हुआ।

चष्टन (सं० पु०) एक क्षत्रप राजा।
शकराजवंश देखो।

चस (देश०) वह कलाबतून जो किसी किनारेदार वस्त्र-में किनारेके ऊपर या नीचेकी ओर बनी रहती है।

चसक (देश०) १ मीठा दर्द, हलकी चोट, कसक। २ मगजीके आगे लगानेकी पतली गोट।

चसकना (हिं० क्रि०) हलका दर्द होना, टीसना।

चसका (हिं० पु०) १ लालसा, शौक, चाट। २ लत।

चसना (हिं क्रि०) १ देहान्त होना, प्राण त्यागना, मरना। २ फंदेमें फँस कर किसी गाहकका माल खरीदना। यह शब्द विशेष कर दलालोंमें व्यवहृत होता है।

चस्का (हिं० पु०) चसका देखो।

चस्पाँ (फा० वि०) सटाया हुआ, चिपकाया हुआ।

चस्मी (देश०) वह खुजली जो हथेली और तलवोंमें हुई हो।

चह (हिं० पु०) वह चबूतरा जो नदीके कच्चे घाटों पर लकड़ियाँ गाड़ कर उसके ऊपर घास आदिसे आच्छादित कर बनाया गया हो। इसी पर हो कर मनुष्य तथा पशु आदि नावों पर चढ़ते हैं, पाट।

चहक (हिं० स्त्री०) चिड़ियोंकी बोली, पक्षियोंका मधुर शब्द।

चहकना (अनु० क्रि०) १ वह चहाना, चीं चीं शब्द करना। २ उमङ्ग या प्रसन्नतासे अधिक बोलना।

चहका (हिं० पु०) १ ईंट या पत्थरका फर्श। (देश०) २ वह लकड़ी जो जल रही हो, लुआठी, लूका। ३ बनैठी। (पु०) ४ कीचड़, दलदल।

चहचहा (हिं० पु०) १ चहक, चिड़ियोंकी बोली। २ हँसी दिल्लगी, ठट्ठा, चुहलबाजी। (वि०) ३ आह्लाद शब्दयुक्त, जिससे उल्लासकी आवाज आती हो। ४ ताजा, हालका। ५ बहुत मनोहर।

चहनना (हिं० क्रि०) कुचलना, रौंदना।

चहबच्चा (फा० पु०) १ वह छोटा गड्ढा या हौज जिसमें पानी भर कर रखा जाता है। २ धन छिपा रखनेका छोटा तहखाना।

चहल (अनु० स्त्री०) १ कर्दम, कीचड़, कीच। २ वह जमीन जिसमें कीचड़ मिली हुई हो। ३ आनन्दोत्सव, आनन्दकी धूम।

चहलकदमी (हिं० स्त्री०) धीरे धीरे टहलने या घूमनेकी क्रिया।

चहलपहल (अनु० स्त्री०) १ धूम, अबादानी। आनन्दोत्सव, आनंदकी धूम।

चहली (देश०) वह गराड़ी या घिरनी जिसके द्वारा कूएँसे जल निकाला जाता है।

चहारदीवारी (फा० स्त्री०) परिखा, कोट, प्राचीर, दीवार।

चहारुम (फा० वि०) चार भागोंमेंसे एक, चतुर्थांश, चौथाई।

चहुँ (हिं० वि०) चार, चारों।

चहुवान (हिं० पु०) चौहान देखो।

चहेटना (हिं० क्रि) गारना, निचोड़ना। किसी पदार्थका सार भाग निकालना।

चहेता (हिं० वि०) प्यारा, दुलारा, जिसके साथ प्रेम किया जाय।

चहेती (हिं० वि०) प्यारी, जिससे प्रेम किया जाय।

चहोरा (हिं० पु०) धान्यविशेष, जड़हन नामक धान। इसे कहीं कहीं रोपुवा धान भी कहते हैं।

चाँइँ (हिं० वि०) १ ठग, धोखेबाज, उचक्का। २ चंचल, चालाक, होशियार।

चाँइँ—मध्यवङ्ग और विहारप्रदेशमें रहनेवाली एक नीच जाति। खेती करना और मछली पकड़ना इनकी उपजीविका है। अयोध्या प्रदेशमें थारु, नट, डोम इत्यादि नीच जातियोंमें भी ये लोग मिलते हैं। यूरोपीय मानवतत्त्वविदोंके मतानुसार इनके मुखकी आकृति कुछ कुछ मङ्गोलीय साँचेमें ढली हुईसी जान पड़ती है। इनमें भी कई एक गोत्र हैं। जैसे—भारद्वाजी, चरणवंशी; काश्यप और शाण्डिल्य।

इनमें बाल-विवाह, विधवा-विवाह और वयस्थोंका विवाह प्रचलित है। साधारणतः दशनामी गोस्वामी ही इनके गुरु हैं। मैथिल ब्राह्मण इस नीच जातिका पौरोहित्य करते हैं।

अयोध्याके चाँइँ लोग महावीर, सत्यनारायण और देवीपाटनके उपासक हैं। विहारके चाँइँ लोग पाँच पीरोंको मानते हैं। वङ्गदेशमें यह जाति कोइलाबाबाकी पूजा करती है। समस्त उत्सवोंमें और आमोद प्रमोदमें बिना शराब पीये इनका काम नहीं चलता। ये लोग सूअरका मांस खाना बहुत पसन्द करते हैं।

इन लोगोंमें कोई स्त्री यदि चरित्रभ्रष्ट हो जाय तो वह जातिसे छेक दी जाती है, किन्तु स्वजातिमें एक भोज देनेसे उसके दोष माफ कर दिये जाते हैं। भ्रष्टा

स्त्रीको अगर पति छोड़ दे, तो वह अपने जारसे विवाह कर सकती है।

ये लोग बिन्द, नुनिया आदि जातियोंकी अपेक्षा समाजमें हीन हैं। युक्तप्रदेशमें यह जाति खेती बारी और कत्था बनानेका काम करती है। पूर्व बङ्गमें ये लोग दाल आदि बेचा करते हैं।

नुनिया और मल्लाहोंमें भी एक चाँई नामकी शाखा है।

बङ्गालमें प्रायः एक लाखसे भी ज्यादा चाँई रहते हैं।

चाँइँचूँइँ (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी फुंसियाँ जो सिर पर होती हैं। इसके होनेसे बाल गिरने लगते हैं।

चाँईंपुर—१ बङ्गदेशके शाहाबाद जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° २ १५´´ उ० और देशा० ८३° ३२´ ३०´´ पू० पर भबुआसे ३॥ कोस पश्चिममें अवस्थित है।

ऐतिहासिक हण्टर साहबने लिखा है, "चान्दू नामक एक चेरुराजभ्राता यहां वास करते थे। उन्हींके नामानुसार इसका नाम चान्दपुर पड़ा है। उसके अपभ्रंशसे अभी चाँईंपुर नाम हो गया है।" (Statistical Account of Bengal, Vol. XI. p. 212.)

किन्तु हम लोगोंकी समझमें चान्दपुरका अपभ्रंश न हो कर चामुण्डाके अपभ्रंशसे चाँईंपुर नाम हुआ है। प्रवाद है कि सत्ययुगमें असुरराज शुम्भनिशुम्भके चण्ड और मुण्ड नामक दो सेनापति थे। असुरनाशिनी पार्वती दोनोंको विनाश कर चामुण्डा नामसे प्रसिद्ध हो गई हैं। अभी भी चाँईंपुरसे ढाई कोस पूर्व मुण्डेश्वरी नामकी भगवतीका एक मन्दिर देखा जाता है।

फिर किसीका विश्वास है कि कटनी नदीके किनारे गोरोहाट नामक स्थानमें मुण्ड नामक एक चेरु सर्दारका राज्य था। चण्ड उन्हींके भाई थे। चेरुगण गणेश, हनु-मान, हरगौरी और नारायण मूर्तिकी पूजा करते थे। आज भी उक्त देवमूर्तियोंका भग्नावशेष भिन्न भिन्न स्थानोंमें देखा जाता है।

गोरीहाटमें मुण्डेश्वरीका मन्दिर विख्यात है। यद्यपि वह मन्दिर अभी बहुत भग्नावस्थामें पड़ा है तो भी उसमें महिषमर्दिनी और शिवलिङ्ग विराजमान हैं। प्राचीन बुद्ध मूर्त्तिकी नाईं महिषमर्दिनीको गुल्फ और दोनों कान हैं। इसके सिवा मन्दिरमें गाने बजाने-वालोंकी भी मूर्तियां देखी जाती हैं।

चाँईंपुरके हिन्दू राजाओंने चेरुको मार भगाया। वे राजपूतवंशके थे और उन्होंने बहुत समय तक यहां निर्वि-वाद राज्य किया। उन्होंने यहां एक दुर्ग बनाया, जिसके चारों ओर खाई और दरवाजे हैं। वह प्राचीन दुर्ग आज भी विद्यमान है। प्रायः तीन सौ वर्ष हुए, कि पठानोंने यहांके हिन्दू राजाको भगा कर दुर्ग और नगर पर अधिकार जमाया। अभी भी यह पठानोंके अधिकारमें है। सुप्रसिद्ध सेरशाह कभी कभी यहां आ कर रहते थे। यहांके पठान-सर्दार इखतियार खाँके पुत्र फतेखाँके साथ सेरशाहकी कन्याका विवाह हुआ था। फतेखाँकी कब्रके ऊपर एक सुन्दर मस्जिद बनाई गई है।

चाँईंपुर नगर अत्यन्त मनोहर स्थान है। यहांसे बड़े बड़े मैदान और पहाड़ देखे जाते हैं।

मुसलमान आक्रमणके बाद चाँईंपुरके हिन्दू राजाने सुरा नदीके किनारे अपने नाम पर एक नगर स्थापित किया और वे वहीं रहने लगे।

२ विहार प्रान्तके भागलपुर जिलेका एक विख्यात ग्राम। यह अक्षा० २५° ४८ २८´´ उ० और देशा० ८६° ३६´ १६´´ पू०में अवस्थित है। पहले यहां केवल ब्राह्मण पण्डित रहते और उनकी शास्त्रीय व्यवस्था हिन्दू मात्र अति सम्मानके साथ ग्रहण करते थे। आजकल वैसी पण्डितमण्डली नहीं, किन्तु अनेक ब्राह्मणोंका वास बना हुआ है।

चाँक (हिं० पु०) १ अक्षर या कोई चिह्न खुदा हुआ काष्ठकी थापी। २ वह चिह्न जो खलियानमें अन्नके ढेर पर डाला जाता है। ३ वह घेरा जो टोटकेके लिये शरीरके किसी पीड़ित स्थानके चारों ओर खींचा जाता है, गोंठ।

चाँकना (हिं० क्रि०) १ खलियानमें एकत्र अन्नराशि पर ठप्पेसे छापा लगाना। २ किसी वस्तुकी सीमा बांधनेके लिये उसके चारों ओर रेखा वा चिह्न खींचना, हद बाँधना। ३ पहचानके लिये किसी वस्तु पर चिह्न डालना।

चाँगड़ा (देश०) एक प्रकारका बकरा जो तिब्बतमें पाया जाता है।

चाँगला (हिं० वि०) १ चतुर, चालाक। २ स्वस्थ, तंदुरुस्त हृष्ट, पुष्ट। (पु०) ३ घोड़ोंका एक रंग।

चाँचड़ा—बङ्गाल प्रान्तके यशोर जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २३° ८' उ० और देशा० ८६° १४' ४५" पू०में अवस्थित है। पहले यहां चाँचड़ाके राजाओंको राजधानी रही। यशोरसे चांचड़ा आध कोस दक्षिण पड़ता है। अपने राजभवनके लिये यह स्थान बहुत दिनोंसे प्रसिद्ध है। उनमें यशोरका राजवंश रहता है। कन्दर्प-रायके पुत्र मनोहरराय ही, जो १७०५ ई० तक जीवित रहे, प्रकृत प्रस्तावमें चाँचड़ा-राज्यके प्रतिष्ठाता थे।

चाँचर (हिं० स्त्री०) १ चचरी, एक तरहका राग जो वसंत-ऋतुमें गाया जाता हैं। (देश०) २ वह जमीन जो कई वर्षोंसे आवाद न की गई हो, परती छोड़ी हुई जमीन। ३ टट्टी या परदा जो किवाड़के बदले काममें लाया जाय। ४ एक प्रकारकी मटियार भूमि।

चाँचिया गलवत (हिं० पु०) लुटेरोंका जहाज जिसके द्वारा वे सौदागरोंके जहाजोंको समुद्रमें लूटते हैं।

चाँचिय जहाज (हिं०) चाँचिया गलवत देखो।

चाँट (हिं० पु०) जलकणका प्रवाह जो वायुमें उड़ता है।

चाँटा (हिं० पु०) चींटा, चिउँटा।

चाँटी (हिं० स्त्री०) १ पिपीलिका, चींटी। २ एक प्रकार-का कर जो प्राचीनकालमें कारीगरोंके ऊपर लगाया जाता था। ३ तबलेकी संजाफदार मगजी। तबला बजाते समय तर्जनी अंगुली इसी पर पड़ती है।

चाँड़ (हिं० वि०) १ चण्ड, प्रबल, बलवान्, ताकतवर। २ प्रखर, उग्र, उद्धत, शोख। ३ श्रेष्ठ। ४ संतुष्ट, तृप्त, अघाया हुआ। (स्त्री०) ५ टेक, थूनी, वह खंभा जिस पर भार ढोया जाता है। ६ भारी लालसा, गहरी चाह, प्रबल इच्छा। ७ सङ्कट, दबाव। ८ प्रबल इच्छा, गहरी चाह। ९ प्रबलता, बढ़ती।

चाँड़ना (हिं० क्रि०) १ खोदना, खोद कर गिराना। २ उखाड़ना, उजाड़ना।

चाँड़ा (हिं० पु०) जहाजकी वह जगह जहां दो तख्ते आ मिले हों।

चाँद (हिं० पु०) १ चन्द्र देखो। २ एक प्रकारका आभूषण जो द्वितीयाके चन्द्रमाके आकारका होता है। ३ गोल फुलिया जो ढालके ऊपर रहती है। ४ निशाना लगाये जानेका चाँदमारीका काला दाग। ५ लंपकी चिमनीके पीछेमें लगनेका टीन आदि चमकीली धातुओंका गोल टुकड़ा। इसके लगानेसे प्रकाश बढ़ता है। ६ घोड़ेके सिरकी एक भौंरीका नाम। ७ स्त्रियोंकी कलाईके ऊपर गोदा हुआ एक प्रकारका गोदना। ८ भालूकी गरदनमें नीचेकी ओर सफेद बालोंका एक घेरा। (स्त्री०) ९ खोपड़ीका सबसे ऊँचा भाग। १० खोपड़ी।

चाँद—बुलन्दशहर जिलेके एक पूर्वतन राजा। ये अलाहा-बाद चन्द्रोक नामके एक स्थानमें राज्य करते थे। इस जगह चाँद राजाके विषयमें अनेक गप्पें सुननेमें आतीं हैं। उक्त स्थानमें 'चाँदरानीका मन्दिर' नामका एक मन्दिर भी है।

चाँदकवि—प्रसिद्ध राजपूतकवि। चन्दकवि देखो।

चाँदकुमारी—पञ्जाबकी एक अधीश्वरी, महाराज रणजित्-सिंहकी पुत्रवधू और खड़्गसिंहकी रानी। उनके पुत्र नवनिहालसिंहकी मृत्युके बाद ये शिक्खोंके राजसिंहा-सन पर बैठीं थीं। ये बहुत ही बुद्धिमती थीं। मन्त्री ध्यानसिंहका बिल्कुल विश्वास न करतीं थीं। वे समझ गईं थीं कि, ध्यानसिंह ही उनके पति और पुत्रकी मृत्युमें मूल कारण है. और कुछ दिन उनको इस उच्चपदमें रखनेसे शायद शिख-राज्य तक हस्तगत कर लेंगे। यह सोच कर उनने सिन्धुवाले उत्तमसिंहको प्रधान मन्त्री नियुक्त किया। इससे दुष्ट ध्यानसिंहको बड़ी जलन हुई और वह उस विचक्षणा रमणीका सर्वनाश करनेको उतारू हो गया। ध्यानसिंहने रण-जित्सिंहके जारजपुत्र शेरसिंहको उत्तराधिकारी खड़ा किया। अन्तमें गुलाबसिंह और ध्यानसिंहके षड़यन्त्र-से चाँदकुमारीसे राज्य छिन गया और उन्हें ९ लाख रुपये आमदकी एक जागीर मिली। शेरसिंह पञ्जाबके राजा हुए और चाँदकुमारीको हस्तगत करने-के लिए अनेक प्रयत्न करने लगे। चाँदकुमारी शेर-सिंहको अत्यन्त घृणा करतीं थीं। शेरसिंहने विवाह-का प्रस्ताव भेजा, तो उनने उसे अग्राह्य किया। इससे दुष्टमति शेरसिंहने अपना अपमान समझ कर चाँदकुमारीकी सहचरियोंको जागीरका लोभ दे कर

उनसे रानीकी हत्या करानेका जाल रचा। एक दिन पति-पुत्र-हीन शोकसन्तप्त चाँदकुमारी अपने विश्रामागारमें मस्तकके बाल बांध रही थीं, इतनेमें उनकी दुष्ट सहचरियोंने उनकी चोटी पकड़ कर घसीटा और इसी प्रकार बड़ी निर्दयतासे उनको मार डाला। गुल्बर्गिं इ ईतो।

चाँदको—सिन्धुप्रदेशका एक उपजाऊ भूमिखण्ड। यह अक्षा० २६° ४० तथा २७° २०´ उ० और देशा० ६७° २४´ एवं ६८° पू०के मध्य अवस्थित है। यहां प्रधानतः चाँदिया लोग रहते हैं। १८१८ ई०में तलपुरके मीरने स्थानीय चाँदिया सरदारको यह जमीन जागीर दी थी। १८४२ को जागीरदारके वली मुहम्मदसे मारकी और लड़ने पर खैरपुरके मीर अली मुरादने चाँदको आक्रमण किया। फिर सर चार्लस नेपियारने अनेक कष्टमें उसे छुटा लिया। १८५८ को गायवी खाँ चाँदको जागीरमें मिला। इसका प्रधान नगर गायबीडेर है।

चाँद खाँ—ग्वालियरके रहनेवाला एक विख्यात गायक। (आईन अकबरी)

चाँदखाली—बङ्गाल प्रान्तके खुलना जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २२° ३२´ उ० और देशा० ८९° १७´ ३´´ पू०में कपोताक्ष नदीके तीर पर अवस्थित है। १७८२ वा १७८३ ई०को मजिष्ट्रेट हेङ्कलने पहले पहल वन कटा करके एक गंज बसाया था। उसी समयसे यह हेङ्कलगञ्ज वा 'साहब हाट' कहलाने लगा। प्रति सोमवारको यहां एक बड़ा बाजार लगता है। नदीमें सैकड़ों नावें और किनारे पर हजारों लोगोंका समागम होनेसे यह अपूर्व श्री धारण करता है।

चाँदगढ़—मन्द्राज प्रान्तके बेलगांव जिलेका एक विभाग और उसका सदर। इसका छोटा दुर्ग और रावलनाथका मन्दिर विख्यात है। लोगोंकी विश्वास है कि रावलनाथकी पूजा करनेसे हैजा नहीं होता। १७२४ ई०को सावन्त घरानेके सुप्रसिद्ध फोंटके पुत्र नागसामन्तने चाँदगढ़ जय करके एक थाना डाला था। १७५० ई०को कोल्हापुरके सामन्तराजने पेशवाके भ्रातृपुत्र सदाशिवराय भाऊको चाँदगढ़ दुर्ग, पारगढ़ तथा कालानन्दीगढ़ और ५ हजार रुपयेकी सम्पत्ति अर्पण की। पहले इस किलेमें ४० मामूली सिपाही और १ तोप रहती थी। इसकी लोकसंख्या प्रायः २५०० है।

चाँदतारा (देश०) १ वह पतला मलमल वस्त्र जिस पर चाँद और तारेके आकारके चिह्न छपे हों। २ एक प्रकारको पतंग जिसमें रंगीन कागजमें चाँद और तारेके निशान दे कर साट देते हैं।

चाँदना (हिं० पु०) १ ज्योत्स्ना, चाँदनी। २ प्रकाश, उजाला।

चाँदनी (हिं० स्त्री०) १ ज्योत्स्ना, कौमुदी, चंद्रमाकी रोशनी। २ बिछानेके काममें आनेवाली बड़ी सफेद चद्दर, सफेद फर्श। ३ ऊपर तानमेका सफेद कपड़ा, छतगीर। ४ गुल चाँदनी, तगर।

चाँदपुर—युक्तप्रदेशके बिजनौर जिले और तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २९° ८´ उ० और देशा० ७८° १६´ पू०में बिजनौर नगरसे २१ मील दक्षिणको अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १२५८३ है। अकबरके अधीन यह किसी महाल या परगनेका प्रधान नगर रहा। परन्तु उसका और इतिवृत्त अज्ञात है। १८०५ ई०को पिण्डारियों और १८५७ ई०को मुसलमान बलवाइयोंने चाँदपुर अधिकार किया था। १८९४ ई० तक यह एक निराली तहसीलका सदर रहा। शहरकी राहें पक्की बनीं और अच्छी अच्छी मोरियाँ लगी हैं। १८६६ ई०से यहां म्युनिसपालिटी चलती है। मट्टीकी चिलमें और सुराहियां तथा रुईका मोटा कपड़ा यहां बनाते हैं।

चाँदपुर—बङ्गाल प्रान्तके मेदनीपुर जिलेका एक गांव। यह समुद्रतटके भागीरथीके मुंहाने पर अवस्थित है। यहां ग्रीष्मकालको सर्वदा समुद्रका स्निग्ध शीतल वायु चला करता है।

चाँदपुर—१ पूर्वीय बङ्गालके त्रिपुरा जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २३° २´ एवं २३° २८´ उ० और देशा० ९०° ३४ तथा ९१° २´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५४४ वर्गमील है। यह उपविभाग चारों ओर नदियोंसे घिरा हुआ है। इस कारण बाढ़के समय यहांको बहुत क्षति होती है। लोकसंख्या प्रायः ४८३२०८है।

इसमें एक शहर और ११०३ ग्राम लगते हैं।

२ त्रिपुराके अन्तर्गत एक वाणिज्य प्रधान नगर। यह मेघना नदीके तट पर अक्षा० २३° १३´ उ० और देशा० ९०° ३८´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८३६२ है

१८८७ ई०को यहां म्युनिसपालिटो हुई। कलकत्ता और गोआलन्दो आदि स्थानोंको जहाज जाते हैं। चाँदपुरमें पाटकी गांठ बांधनेके कई कारखाने हैं।

चाँदपुर—युक्तप्रदेशके झांसी जिलेके अन्तर्गत ललितपुर तहसीलका एक प्राचीन ग्राम। यह अक्षा० ५४' ३०' उ० और देशा० ७८' १९' पू०में पड़ता है। यहां चन्देल राजपूतोंकी कीर्तिका ध्वंसावशेष देखा जाता है। इस ग्राममें एक सुन्दर तालाब है, जिसमें कई तरहके कमलके फूल तालाबको शोभाको बढ़ा रहे हैं। तालाबके किनारे प्राचीन कालके तीन मन्दिर हैं। इस ग्राममें ८६८ ई०के कई एक शिलालेख पाये जाते हैं।

चाँदबाला (हिं० पु०) एक प्रकारका आभूषण जो नाकोंमें पहना जाता है और जिसका आकार अर्द्ध चन्द्रमासा होता है।

चांदबाली—उड़ीसा प्रान्तस्थ बालेश्वर जिलेके भद्रक महकुमाका एक बन्दर। यह अक्षा० २०°४७' उ० और देशा० ८०° ४५ पू०में वैतरणी नदीके वाम तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १८२६ है। बङ्गाल नागपुर रेलवे खुलनेसे इसकी महत्ता मारी गयी है। यहां चावलकी रफ़नी होती है।

चांदबीबी—(दूसरा नाम चांदसुलताना है) दाक्षिणात्यकी एक अति प्रसिद्ध वीरबाला। अहमदनगरके राजा हुसेन निजामशाहकी कन्या और मुर्तजा निजामशाहकी भगिनी।

जिन गुणोंके कारण मनुष्य चिरस्मरणीय और जगत्‌में पूज्य बन जाता है, उन गुणोंकी इनमें कमी न थी। बाल्यावस्थासे विलासके प्रासादमें लालित-पालित हो कर भी इनने जिस मानसिक वीर्यवत्ताका परिचय दिया है, वह हर हालतमें प्रशंसनीय है।

बीजापुरके राजा अली आदिलशाहने चांदबीबीके रूपलावण्य पर मुग्ध हो कर उनका पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय राजबालाने शोलापुरका राज्य दहेजमें पाया था। विवाहके बाद ही उनके हृदयमें पतिभक्ति जाग उठी थी, उठने बैठने खाने-पीने और सोने-जगनेमें वे सर्वदा अपने पतिको सन्तुष्ट रखनेकी चेष्टा करती थीं। परन्तु उनके भाग्यमें पतिसुखसम्भोग ज्यादा दिन नहीं बदा था, १५८० ई०में आप विधवा हो गईं।

चांदबीबीने पतिहीना हो जाने पर भी, अपना खयाल पतिके मानसम्भ्रम पर रक्खा। उनने पतिके भतीजे इब्राहिम आदिलशाहको बीजापुरके राजसिंहासन पर बिठाया और खुद उनकी अभिभाविका नियुक्त हुईं। क्योंकि, उस समय इब्राहिमकी उम्र कुल नौ वर्षकी थी।

बालक इब्राहिमके राज्यमें पहिलेके ८-१० वर्ष तो गड़बड़ोमें ही कट गये। बीजापुरके अमीर उमराव लोग अपना अपना प्राधान्य पानेके लिए नानाप्रकारके कौशल करने लगे। इसी समय प्रधान मन्त्री कमाल खाँ भी समस्त राजशक्तिको अपने काबूमें लानेके लिए षड़यन्त्र रच रहे थे। चांदबीबीको यह बात मालूम पड़ गई और उनने कमालखाँके शिर काटनेका हुक्म दे दिया। किशवरखाँने चाँदबीबीके हुक्मकी तामील की, बादमें फिर किशवर खाँ प्रधान अमीर हो गये। मुस्तफा खाँ नामके एक महाशय चाँदबीबीके विश्वस्त बन्धु थे, किशवरखाँने गुपचुप उनको भी मरवा डाला। फिर उस दुष्टने बीजापुरसे चाँदबीबीको निकाल दिया और सतारोके दुर्गमें उन्हें कैद कर रक्खा। आखिर शेखलास खाँ नामके एक हबसी सर्दारकी सहायतासे चांदबीबी मुक्त हुईं। तब तो किशवर खाँ बीजापुर छोड़ कर भागे; परन्तु रास्तेमें गोलकुण्डामें मुस्तफाके एक कुटुम्बी द्वारा मार दिये गये।

बीजापुरके इस अन्तर्विद्रोहके समय अहमदनगर, गोलकुण्डा और बिदरके राजाओंने बीजापुर घेर लिया। बीजापुरके सर्दारोंने समझा कि, गृहविद्रोहके ही कारण उनकी ऐसी सङ्कटमय अवस्था हुई है। चांदबीबीने शत्रु-मित्र सबहीको बुलाया और अपने मानसम्भ्रम और राज्य रक्षाके लिए उत्तेजित किया। फिर सब एकताके सूत्रमें बंध गये। शत्रुओंका अभिप्राय सिद्ध न हुआ। बीजापुरके साथ अहमदनगर और गोलकुण्डाके राजाओंने सन्धि कर ली। १५८५ ई०में बीजापुरके राजा इब्राहिमका गोलकुण्डाके राजाकी भगिनी ताज सुलतानाके साथ विवाह हो गया। इस समय दिलावर खाँ नामके एक महाशय बीजापुरके सर्वेसर्वा बन बैठे, इनने पुनः सुन्नि मत प्रचार किया।

चांदबीबीका कर्त्तृत्व अब न चलने लगा। उनने

देखा कि, बीजापुरमें इस समय खूब शान्ति है और दिन दिन राजकी भी उन्नति हो रही है। इससे वे सन्तुष्ट हो कर अपनी जन्मभूमि अहमदनगरको चलीं गईं। इसी समय चाँदबीबीके भतीजे मीरान हुसेनके साथ बीजापुरकी राजकन्याका विवाह हुआ। विवाहोत्सव खतम भी न हो पाया था कि, मुर्त्तजा निजामशाहकी मनमें ऐसी धारणा हो गई कि, पुत्र मीरान हुसेन उनकी हत्या करना चाहता है और उसके लिए प्रयत्न भी कर रहा है। इस बिना जड़के विश्वाससे उनका हृदय उत्तेजित हो उठा ; उनने पुत्रको मारनेके अभिप्रायसे एक दिन उनकेशयनागारमें आग लगा दी। मीरान किसी तरह अपनी जान बचा कर गुप्त भावसे दौलताबाद चले गये। १५८८ ई०में उनने मिर्जाखाँकी सहायतासे अहमदनगर पर कब्जा कर लिया और अपने पिताको एक गरम घरमें बन्द कर मार डाला। मीरानके अत्याचारसे सब हो घबड़ा उठे। दुर्बुद्धि यहाँ तक बढ़ी कि, उनने अपने प्रधान सहाय मिर्जाखाँको मार डालनेका आदेश दे दिया। प्रधान मन्त्री मिर्जाखाँको यह बात मालूम हो गई और वे सावधान हो गये। मिर्जाखाँने बड़ी चतुराईसे एक दिन मीरान-हुसेनको कैद कर लिया और दूसरे किसीको राजा बनानेके लिए राजवंशीय इस्माइलखाँ और इब्राहिम नामके दोनों भाइयोंको बुलाया। ये दोनों भाई लोहगढ़में बन्दी थे। इनमेंसे कनिष्ठ इस्माइल निजाम ही राजा बनाये गये, जिनकी उम्र कुल १२ वर्षकी थी। परन्तु इसमें जमालखाँ नामके एक सेनापतिने घोर विरोध किया और कहलवा भेजा कि, "मीरानहुसेन ही हमारे वास्तविक राजा हो सकते हैं, हम उनके साथ मिलना चाहते हैं।" इस समय बहुतोंने जमालखाँका पक्ष लिया। इस पर मिर्जाखाँने मीरानका सिर काट कर तोरणद्वार पर लटका देनेका हुक्म दिया। इस वीभत्स दृश्यको देख कर नगरवासियोंको बहुत उत्तेजना मिली और वे दुर्गके द्वार पर आग लगा कर जमालखाँके साथ दुर्गके भीतर चले गये, तथा जो जिसके हाथ पड़ा, उसका विनाश होने लगा। सात दिनके भीतर मिर्जाखाँ पकड़े गये और मार दिये गये।

अब जमालखाँ ही सर्वेसर्वा हो गये। उनने मुर्त्तजा निजामके भतीजे और बुर्हान् निजामके पुत्र इस्माइल निजामको सिंहासन पर बिठाया। इस समय बहुतसे अमीर जमालखाँके विपक्षमें सलावतखाँके साथ मिल गये। बीजापुरके प्रधान मन्त्री दिलावरखाँने भी दक्षिणसे आ कर योग दिया। चाँदबीबी इतने दिनों तक चुपचाप अहमदनगरके कार्यकलाप देख रही थीं। किन्तु अब वे स्थिर न रह सकीं, अहमदनगरके सम्रूह-की हानि होगी यह सोच कर उनने स्वयं बीजापुर जा कर सन्धिका प्रस्ताव किया। सन्धिके अनुसार निजामशाही राज सरकारसे ८५ लाख रुपये युद्ध-व्ययके हिसाबमें देने पड़े।

चाँदबीबीके बुर्हान निजाम (२य) नामक एक और भाई थे। हुसेननिजामके जीतेजी उनने एक बार पितृ-राज्य पानेकी चेष्टा की थी, इसलिए उन्हें पिताके क्रोधमें पड़ देश त्याग कर अकबर बादशाहके आश्रयको शरण लेनी पड़ी थी। अकबरने उत्तर भारतमें उन्हें कुछ जागीर दी थी और उसीसे वे अपनी गुजर करते थे। अहमदनगरकी उक्त गड़बड़ीका हाल अकबरने भी सुना। अकबरने बुर्हान् निजामको दक्षिणापथमें भेजा। खान्देश आदि नाना स्थानोंकी सहायतासे बुर्हान् निजामने अहमदनगर पर अधिकार किया और अपने पुत्रको कैद कर खुद राजा बन बैठे।

बीजापुरके राजमन्त्री दिलावरखाँ जो इससे पहिले बीजापुर छोड़ कर भाग गये थे, अब वे भी बुर्हानकी सभामें आदर पूर्वक गृहीत हुए। दिलावरकी उत्तेजना-से बुर्हान बीजापुर जय करनेके लिये अग्रसर हुए। जब बुर्हान् सेना सहित बीजापुर राज्यके वक्षस्थल पर भीमा नदीके किनारे तक आ गये, तब इब्राहिम आदिल-शाहने दिलावरखाँके पास लिख भेजा कि, "आप ही बीजापुरके यथार्थ रक्षक हैं, पुनः बीजापुर आ कर आप अपना राजकार्य ग्रहण करें।" दिलावरखाँ लोभ न सम्हाल सके, वे बुर्हानको छोड़ कर बीजापुर आये और मारे गये। भीमा नदीमें बाढ़ आनेसे बुर्हान निजामको विशेष क्षति हुई और उनके पुत्र राज्य पानेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं, यह सुन कर वे शीघ्र ही अपने राज्यको

लौट गये। १५९४ ई०में बुर्हान् पुनः एक वार अपने भाईकी सहायता करनेके लिए इब्राहिम आदिलशाहके विरुद्ध खड़े हुए थे, परन्तु इस वार भी वे कुछ न कर सके। इसी साल १५वीं मार्चमें उनकी मृत्यु हुई थी। उनके पीछे उन्हींके पुत्र इब्राहिम निजामने राज्य पाया और उनके शिक्षक मियाँ मंजू दक्षिणीको प्रधान मन्त्रीका पद मिला। इस समयसे अहमदनगरमें पुनः गड़बड़ी शुरू हुई। येखलासखाँने हबसी और मुवल्लिड सेना इकट्ठी कर मियाँ मञ्जूके विरुद्ध अस्त्रधारण किया। दारुण गृहविवादका उपक्रम हुआ। इस समय चांदबीबीके आदेशसे बीजापुरके राजा इब्राहिम आदिलशाहने युद्धकी घोषणा कर दी और खुद अहमदनगरके राजाकी सहायतार्थ शाहदुर्गकी तरफ अग्रसर हुए। मियाँ मञ्जूने सन्धिका प्रस्ताव किया, परन्तु येखलासखाँ उससे सहमत न हुए। निर्बोध अहमदनगरराजने उन्हींको ओर सम्मति दी। इसलिए बीजापुरकी सेना जिनकी सहायता करनेके लिए आई थी, अब उन्हींके विरुद्ध लड़नेको तयार हो गई। इस युद्धमें इब्राहिम निजामशाहकी मृत्यु हुई।

मियाँ मञ्जू झटपट राजधानीमें पहुँच गये और वहाँके राजकोष व दुर्ग पर अधिकार कर बैठे। फिर उनने, कैसे राजकार्य निर्वाह होगा इस बातका परामर्श करनेके लिए येखलासखाँ आदि प्रधान प्रधान राजपुरुषोंको बुला भेजा।

चांदबीबीकी तीव्र इच्छा थी की इब्राहिम निजामके दुग्धपोष्य शिशुपुत्र बहादुर ही राजा हो। प्रधान प्रधान हबसी सर्दार इससे सहमत थे, उनने मियाँ मञ्जूको कहला भेजा कि, अहमदनगरके राजपुत्र बहादुरको सिंहासन मिलेगा और उनके पिताकी फूफी चांदबीबी उनकी अभिभाविका हो कर राजकार्य चलावेंगी। मियाँ मञ्जूने यह सोच कर कि, अपना प्रभाव घट जायगा इस पर राजी न हुए, उनने अहमद नामके एक बारहवर्षके राजज्ञातिके बालकको राजा बनाया और चांदबीबीके पाससे बहादुरको हटा कर उन्हें सेनारक्षित चावन्द्दुर्गमें भेज दिया। हबसी सर्दार येखलासखाँ मियाँ मञ्जूके इस आचरणसे बहुत बिगड़े, उनने यह भी सुना कि अहमद यथार्थमें निजामशाही राजवंशका नहीं है। फिर उनने हबसी और मुवल्लिड सेनाकी सहायतासे मियाँ मञ्जू पर आक्रमण किया। इससे ऐसा हल्ला हो गया कि, युद्धमें नये राजा मारे गये। येखलासने चावन्द दुर्गसे बहादुरको लानेके लिए आदमी भेजे, परन्तु दुर्गाधिपने मियाँ मञ्जुकी बिना इजाजत बहादुरको न छोड़ा। येखलासने बहादुरके समवयस्क एक बालकको राजा खड़ा कर दश बारह हजार सेना संग्रह की। तब मियाँ मञ्जू हताश हो गये, उनने अकबरके पुत्र कुमार मुरादको अहमदनगरका राजत्व देनेके लिए राजी हो कर उनको गुजरातसे आनेके लिए लिखा। मुरादको पत्र लिखनेके बाद ही मियाँ मञ्जूकी तकदीरने पल्टा खाया। हबसी और मुवल्लिड सेना परास्त हुई। एकमास बाद मुराद तीस हजार अश्वारोही, सेनापति खान् खानान् और खान्देशके राजाको साथ ले कर दुर्गसे २ कोसकी दूरी पर हुस्तएवेहिस्त नामक स्थान पर उपस्थित हुए। मियाँ मञ्जू अपनी अदूरदर्शिताके लिए अनुताप करने लगे और घबड़ा उठे।

इस बार विचक्षणा चांदबीबीने अहमदनगरके राजाकी रक्षयित्री बन कर कार्यक्षेत्रमें पदार्पण किया। उनके आदेशसे मियाँ मञ्जूके प्रधान कर्मचारी अनसर खाँ घातकके हात मारे गये और बहादुरशाह राजा कह कर घोषित हुए। किन्तु उस समय भी बहादुर चावन्द दुर्गमें कैद थे। मियाँ मञ्जू नाममात्रके राजा अहमदशाहको ले कर इब्राहिम आदिलशाहकी सहायताके प्रार्थी हो बीजापुरकी सीमामें उपस्थित हुए। इधर दौलताबादके पास येखलासखाँने मोती नामके एक बालकको राज्येश्वर खड़ा किया था। और उधर हबसी-सेनानायक नेहङ्गखाँ बीजापुर जा कर (१म) बुर्हान निजामके एक सप्ततिवर्षीय पुत्र शाहअलीको अहमदनगरमें जा कर राजपदग्रहण करनेके लिए उत्तेजित कर रहे थे। ऐसी दशामें इस समय राज्यकी रक्षा करना कहाँ तक कष्टसाध्य और अभिज्ञतासापेक्ष है, सो वीरमहिला चांदबीबीने अच्छी तरह समझ लिया था। अबकी वार समस्त प्रधान कार्योंका भार उनने अपने ऊपर लिया। उनने शमशेरखाँ हबसी और अफजलखाँ

बीरिषिको दुर्गरक्षाके लिए नियुक्त किया तथा नेहङ्गखाँ और शाहअलीको राज्यरक्षार्थ आह्वान किया। नेहङ्गखाँ सात हजार सेना सहित रातमें अहमदनगर आ गये, रास्तेमें मुगल-शिविर देख कर तुर्त ही आक्रमण किया। इस समय खानखानानके अधीनस्थ बहुतसी सेना मारी गई। इस प्रकारसे मार्ग परिष्कार करते हुए नेहङ्गखाँ सेना सहित दुर्गमें आ उपस्थित हुए। शाहअली दौलतखाँ लोदी-परिचालित मुगल सेनासे कुछ पराजित हुए थे, मोगलोंने उनकी सात सौ सेनाको काट डाला था। बीजापुरके राजाको जब यह बात मालूम हुई, तो उनने खोजा सोहेलखाँके साथ पचीस हजार अश्वारोही शाहदुर्गकी तरफ भेज दिये। विदेशीके हाथसे राज्यकी रक्षा करनेके लिए शत्रुताको भूल कर मियाँ मञ्जू, अहमदशाह और येखलासखाँ ये तीनों आ कर सोहेलखाँके साथ मिल गये। इसी समय हैद्राबादसे में हदी कुलीसुलतानके अधीन छह हजार गोलकुण्डा अश्वारोही शाहदुर्गमें उपस्थित हुए। मुरादने भी इस अपूर्व-मिलनकी खबर पाई। मुगलसैन्यमें युद्ध-सभा बैठी, उसमें स्थिर हुआ कि, शत्रु लोग जब तक दुर्ग-रक्षाका बन्दोवस्त न कर पावें, उससे पहिले ही दुर्गका एक अंश ध्वंश करना चाहिये। थोड़े ही दिनोंके अन्दर दुर्गके एक तरफ पाँच सुरङ्ग काटी गई तथा जिस तरफ मुगलोंका दल-बल रहेगा, उस तरफको छोड़ कर और सब तरफकी सुरङ्गोंमें बारूद भर कर चूनासे पत्थर जड़वा दिये गये। दूसरे दिन (१५९६ ई०की २० फेब्रुअरीमें) सुरङ्गोंमें आग लगानेकी बात थी।

रातमें ख्वाजा मुहम्मदखाँ सिराजीने भावी विपत्तिकी बात कह दी। चांदबीबीने उसी समय दल-बलको साथले सुरङ्गोंकी खोज करनी शुरू कर दिया। दिनमें उनने दो सुरङ्ग नष्ट कर दी। सबसे बड़ी सुरङ्गसे सेनाके लोग बारूद निकाल रहे थे कि, इतनेमें मुरादने उसमें आग लगा देनेका हुक्म दिया। आगके लगते ही सुरङ्गके भीतरके लोगोंमेंसे बहुतसे लोग मर गये और प्राचीरका बहुतसा भाग गिर पड़ा। इस समय बहुतसे प्रधान प्रधान योद्धा दुर्ग छोड़ कर भागनेके लिए उद्यत हुए। चांदबीबीने जब देखा कि अब निस्तार नहीं है, तो उनने झटसे अपना मुंह ढक कर वर्म चर्मसे परिवृत हो नङ्गी तलवार हाथमें ले उस भग्न प्राचीरकी रक्षा करनेके लिए वे अग्रसर हुईं। भीरु योद्धागण उस वीरमहिलाका असीम साहस देख कर अति लज्जित हुए और उनके अनुवर्ती हुए। उस भग्न प्राचीरसे एक समयमें मूषलधारसे अग्निवृष्टि होने लगी, अग्न्यस्त्रको भीषण गर्जनासे दशो दिशाएं गूंज उठीं। सैकड़ों मुगल-वीर उस भग्न प्राचीरके पास प्राण त्यागने लगे। मुर्दोंके ढेरोंसे दुर्गकी खाई भर गई। उसके पानीमें आजके दिन यथार्थमें शोणितस्रोत बहने लगा! इस युद्धसे क्या शत्रु और क्या मित्र, सबहीको चाँदबीबीको अमानुषी तेजस्विताका परिचय मिल गया। क्या तो दुर्गमें और क्या शत्रुके शिविरमें, सबहीके मुखसे वीरबाला चांदबीबी या चांदसुलतानाकी प्रशंसा निकलने लगी। रातके दूसरे पहरके समय युद्ध कुछ थम गया, परन्तु चांदरानीको विश्राम नहीं। वे दुर्गके संस्कारमें ही व्यग्र थीं। सूर्योदयसे पहिले उनने ५-६ हाथ ऊंची दीवार खड़ी करा दी।

इधर दुर्गमें रसद घटती जा रही थी। चांदबीबीने बिदनगरको अपने पक्षको सेनाको शीघ्र आनेके लिए पत्र लिखा। दुर्भाग्यवश वह पत्र शत्रुओंके हाथ पड़ गया। मुरादने उस पत्रको पढ़ कर निर्दिष्ट स्थानको भेज दिया और मुगलपक्षको एक दल सेना बुलानेके लिए पत्र लिखा। इनके पक्षको सेना माणिकदण्ड पहाड़ पर हो कर अहमदनगरमें उपस्थित हुई। मुगलशिविरमें भी रसदकी कमी थी, अब नई सेनाके आगमनसे वे भी बड़ी मुश्किलमें पड़ गये। बहुत सोच-समझ कर मुरादने चांदबीबीको कहला भेजा कि, "यदि बरार प्रदेश छोड़ दिया जाय, तो हम लोग शीघ्र ही अहमदनगर छोड़ कर चले जायँगे।" चांदबीबीने पहिले तो कुछ ऊहापोह किया, पर बादमें यह सोच कर कि यदि हमारी सेना मुगलोंसे पराजित हो गई, तो मानसम्भ्रम कहां रहेगा, उनने बहादुरशाहके नामसे सनदपत्रमें हस्ताक्षर कर दिये। मुगल-सेना दौलताबाद हो कर चली गई। तीन दिन बाद बिदनगरसे भी दल-बल आ पहुंचा। मियाँ मञ्जूने सोचा था कि, अहमदशाहको ही राजसम्मान दिया जायगा, किन्तु प्रधान प्रधान अमीर लोग मियाँके प्रस्ताव-

से सहमत न हुए। नेहङ्गखाँने बहादुरशाहको लानेके लिए चावन्ददुर्गको एक दल सेना भेज दी। चांदबीबीने भी इब्राहिम आदिलशाहको अहमदनगरके गृहविवादको मेटनेके लिए पत्र लिखा। बीजापुरके राजा चांदबीबीको माताकी तरह मानते और भक्ति करते थे, उनने शीघ्र ही चार हजार सेना भेज दी और मियाँ मञ्जूको अहमदशाहकी आशा छोड़ कर बीजापुरको आनेके लिये लिख दिया। उनके आदेशानुसार मियाँ मञ्जू बीजापुर पहुंच गये और वहां बीजापुरराजके अनुग्रहसे एक गण्य-मान्य अमीर बन कर रहने लगे।

बहादुरशाह अहमदनगर आते ही राजा बना दिये गये और चांदबीबीके विश्वस्त मुहम्मदखाँ पेशवा अर्थात् प्रधान मन्त्री नियुक्त किये गये। अबकी बार मुहम्मदखाँ हर्ता-कर्ता हुए। उनके निजी आदमियोंको राज्यके बड़े बड़े ओहदे लगे। इनने शीघ्र ही नेहङ्गखाँ और हबसी सर्दार शमशेरखाँको कैद किया, यह देख कर अन्यान्य सर्दार भी डर गये और राजधानी छोड़ कर चल दिये। चांदबीबीने देखा कि उल्टा चोर कोतवालको डराता है! उनने जिस पर अनुग्रह कर प्रधान मन्त्रीका पद दिया, वही उनके ऊपर कर्तृत्व चलाना चाहता है। उनने बीजापुरके राजाको मुहम्मदके अत्याचारकी बात लिखी और जल्द मुहम्मदके कर्तृत्वसे राजाका उद्धार करनेके लिए बहुतसी सेना मंगाई। सुत ही सोहलेखाँ (१५८६ ई०के प्रारम्भमें) बहुतसी सेना ले कर उपस्थित हुए। मुहम्मदखाँने भी उन्हें रोका। बीजापुरकी सेना चार महीने तक दुर्गको घेरे रही। मुहम्मदखाँने जब देखा कि, चांदबीबीकी चतुराईसे शत्रुपक्ष क्रमशः बलवान् हो हो रहा है, तब उनने विजय-लक्ष्मीकी आशा छोड़ दी। उनने बरारके मुगल-सेनापति खानखानानकी सहायताके लिए बुला भेजा। दुर्गके फौजियोंको जब यह बात मालूम पड़ी, तब वे मुहम्मदखाँको कैद कर चांदबीबीके पास ले आये। उदार चांदबीबीने फिर भी मुहम्मदकी जान बचाई। अब चांदबीबी पर पुनः राजकार्यका भार पड़ा। उनने नेहङ्गखाँ हबसीको कारामुक्त कर उन्हें प्रधान मन्त्रित्व दिया। पर हाय! पहिलेके मन्त्रियोंकी भाँति नेहङ्गखाँ भी उच्च पद पर पहुंच कर हिताहित ज्ञान-शून्य हो गये।

कुछ दिनों बाद नेहङ्गखाँ भी चांदबीबीका सर्वनाश करनेके लिए प्रयत्न करने लगे। तीक्ष्णबुद्धि चांदबीबीने भी जल्द समझ लिया। उनने बालक राजाको दुर्गमें बुला लिया और दुर्गका द्वार बन्द करवा दिया। नेहङ्गखाँने जब दुर्गमें प्रवेश करना चाहा तब रानीने कहला भेजा कि, "आप राजधानीमें कार्य कर सकते हैं, दुर्गमें आनेका कुछ प्रयोजन नहीं।" तब नेहङ्गखाँने खुल्लमखुल्ला दुर्ग पर आक्रमण किया। बीजापुरके राजाने इस गृहविवादको मिटानेके लिए अनेक प्रयत्न किये, किन्तु उनकी बात पर किसीने भी कर्णपात न किया। नेहङ्गखाँ जब चांदबीबीका कुछ भी न बिगाड़ सकें, तब मुगलके अधीन विदराज्य पर अधिकार कर बैठे।

अकबरके पास भी यह संवाद पहुंचा, उनने झट (१५९८ ई०में) विदके शासनकर्ताकी सहायताके लिए शाहजादा दानियाल और सेनापति खानखानान्को भेज दिया। जयपुरकोटली नामक गिरिपथमें नेहङ्गखाँ मुगलोंके सामने पड़ गये और यह सोच कर कि—विपुल मुगल सेनासे युद्ध करनेसे कुछ लाभ नहीं—वे अहमदनगरको चले आये। यहाँ आ कर उनने चांदबीबीके साथ मेल करनेकी बहुत चेष्टा की, परन्तु चांदबीबीने नमकहरामकी बातका बिल्कुल विश्वास न किया। नेहङ्गखाँ जूनारको भाग गये।

इधर मुगल सेनाने विना किसी रुकावटके अहमदनगरका दुर्ग घेर लिया और गुप्त भावसे सुरङ्ग खोदनेका काम चालू किया। चांदबीबीने फिर रणरङ्गिणी मूर्ति धारण की। अहमदनगरमें जनश्रुति है कि इस युद्धमें जब गोला-बारूद आदि सब खतम हो गये, तब चांदबीबी सोने-चांदीके सिक्के और जवाहरात आदि तोपोंमें ठूस कर शत्रुओं पर वर्षा करने लगीं। पर इस बार वे हतोत्साह हो गईं। उन्हें चारों ओर अपने शत्रु दीखने लगे। प्रधान प्रधान योद्धा युद्धसे मुंह मोड़ने लगे! उनमें ख्वाजा हमिदखाँ नामके एक उच्चपदके कर्मचारीको बुला कर कहा—"हम लोग चारों ओरसे शत्रुओंसे घिर गये हैं! दुर्गमें जो प्रधान प्रधान योद्धा मौजूद हैं, उन पर भी विश्वास नहीं! ऐसी दशामें यदि अहमदनगरके मान सम्भ्रम और धनरत्न आदिकी रक्षा हो

सके, तो अब् शत्रुओंको दुर्ग अर्पण कर देना ही ठीक है।"

हमिदखाँने युद्ध करना चाहा। चांदबीबीने कहा—"मैं दिव्य-चक्षुओंसे देख रही हूं—इस युद्धमें हमारा पतन अवश्यम्भावी है। अब बालक राजा बहादुरशाहकी रक्षा करना ही हमारा परम-कर्तव्य है।" अल्पबुद्धि हमिदखाँने चांदबीबीके अभिप्रायको न समझ कर ऐसा शोर कर दिया कि, चांदबीबी शत्रुओंको दुर्ग देना चाहती हैं। मूर्ख सेना इस बातसे बिगड़ गई, उत्तेजनामें आ कर हमिदखाँके साथ चांदबीबीके महलमें घुस पड़ी और धोखेसे उनको मार डाला। वीरबाला चांदबीबीकी जीवनलीला यहीं समाप्त हुई।

चांदबीबीके हत्याकाण्डसे चारो तरफ हाहाकार पड़ गया। मुगलोंने दुर्ग पर कब्जा कर लिया। बहादुरशाह और अन्यान्य राजपुत्रादिकोंको कैद कर अकबरके पास भेजा गया। चांदबीबीकी भविष्य-वाणी चरितार्थ हुई।

बीजापुरके राजा इब्राहिम आदिलशाह अपने बाल्य-जीवनको रक्षयित्री स्नेहमयी चांदबीबीकी मृत्युसे अत्यन्त शोकाकुल हुए। इसी शोकमें उनने ब्रज मराठी मिश्रित पारसी भाषाके कुछ पद्य भी बनाये थे।

विशुद्धप्रकृति चांदबीबीकी पुरानी प्रतिकृति अब भी बीजापुरमें मौजूद है। उस मूर्तिमें उनके सुन्दर मुखमण्डल, नील नयन, तिलपुष्पविनिन्दित वक्र नासिका और स्थिर गम्भीर हावभावका चित्र बड़ी निपुणताके साथ खींचा गया है। बीजापुरके लोग अब भी उन्हें आदरकी दृष्टिसे देखते हैं और अन्यान्य कथाओंको छोड़ कर चांदबीबीके अहमदनगरके युद्धकी कथा सुनते हैं।*

चांदमारी (हिं० स्त्री०) बन्दूकके निशाना लगानेका अभ्यास।

चांदराय—बहुसम्पत्तिशाली एक जमींदार, इनका वासस्थान राजमहल था। ये धनाढ्य होने पर भी असच्चरित्र और डकैतोंके सर्दार थे। प्रजापीड़न और पराया धन लूटना ही इनका रुजगार था। दिनों दिन ये अभिमानके शिखर पर चढ़ने लगे। नवाबकी अधीनता भी उन्हें अच्छी न लगी और कर देना बन्द कर दिया। अब वह अपनेको स्वाधीन समझने लगे और नवाबके विरुद्ध आचरण करनेमें प्रवृत्त हुए। नवाबने यह जान कर कर अदा करनेके लिए उनके पास आदमी भेजे। परन्तु कर देना तो दूर रहा, चांदरायने उन्हें भगा दिया नवाबने इनको वश करनेके लिए बहुत प्रयत्न किया, परन्तु कृतकार्य न हुए। चांदरायके अत्याचारके भयसे लोगोंको घरसे बाहर निकलनेका भी साहस न होता था। सतीत्वनाश, साधुजनोंका अपमान इत्यादि समस्त असत्कार्य इनके शरीरके भूषण थे। ये शक्तिके उपासक थे। प्रति वर्ष दुर्गोत्सव करनेके लिए दुर्बल प्रजावर्गसे अत्याचार पूर्वक अर्थ संग्रह करते थे। पूजाके समयमें देवीके सामने लाखों बकरे, भैंसे आदिकी बलि दी जाती थी। और गोहत्या, ब्रह्महत्या आदि महापाप करने भी यह डरते नहीं थे।

कुछ दिनों बाद पापका फल फला, दस्युपति चांदराय उन्मत्त हो उठे अनुगतोंकी यह धारणा हो गई कि, "ब्रह्मदैत्यने चांदरायके अत्याचारको देख कर उन्होंके शरीरमें आश्रय लिया है। इनको मार कर प्रजावर्गमें शान्ति स्थापन करना ही उनका उद्देश है।" चांदरायके छोटे भाईका नाम था सन्तोषराय। सन्तोषने बहुतसे हकीम-वैद्य बुलाये और चिकित्सा कराई, परन्तु कुछ भी न हुआ, पापका फल दिन दूना बढ़ने लगा। आखिर सन्तोषरायने गढ़काछाटके रहनेवाले नरोत्तम ठाकुरको बुला कर इनको कृष्णमन्त्रसे दीक्षित कराया। इसके कुछ दिन बाद चांदरायने आरोग्य लाभ किया। नरोत्तम ठाकुरके धर्मोपदेशसे इनकी मति सुधरी, असदाचरणोंको छोड़ कर सच्चरित्रता धारण की, तथा ये परम वैष्णव हो गये। प्रजामें शांति हुई, नवाबको भी हर साल नियमित रूपसे राजकर पहुंचने लगा। (भक्तमाल)

चांदराय—प्रसिद्ध बारभुंइयोंमेंसे एक राजा। ये पूर्ववङ्ग विक्रमपुर प्रान्तमें राज्य करते थे। श्रीपुरमें इनकी राजधानी थी। ऐसा प्रवाद है कि—अकबर बादशाहके राज्यसे

* यौं तो बहुतसे ग्रन्थोंमें चांदबीबीकी कथा लिखी है, पर उनमेंसे निम्नलिखित ग्रन्थ ही पढ़ने योग्य है,—फेरिश्ता, आबुलफजलका अकबरनामा, फैजीका अकबरनामा, मआसीर—इ-रहिम, Elphinstone's History of India, Col. Meadows Taylor's Architeture of Bijapur and his History of India; Bombay Gazetteer, Vol. XVII. and XIII.

कर व डेढ़ सौ वर्ष पहिले नीमराय नामके महाशय कर्णाटक देशसे आ कर विक्रमपुरके अन्तर्गत आरापुल-वाड़िया नामके ग्राममें रहने लगे। बङ्गाधिपके आदेशसे इनने ही सबसे पहिले भूँइयाँकी उपाधि पाई थी। ये 'देव' उपाधिधारी कायस्थ थे। नीमरायके पुत्रादिकोंके नाम नहीं मालूम हुए। इसी वंशमें चाँदराय और केदारराय नामके दो भाईयोंने जन्म लिया। कोई कोई कहते हैं कि, खिजिरपुरके प्रसिद्ध भुँइयाँ ईशाखाँके साथ चाँदराय और केदाररायका हमेशा युद्ध विग्रह रहता था। ईशाखाँने चाँदरायकी राजधानी पर आक्रमण किया था और उनकी कन्या सोनाई या स्वर्णमयीको ले जा कर उसके साथ विवाह कर लिया था।*

उक्त प्रवाद निरा प्रवाद ही मालूम होता है, उसमें वास्तविकता नहीं पाई जाती। इससे पहिले केदारराय शब्दमें लिखा जा चुका है। वे १६६२ई०में श्रीपुरमें राज्य करते थे, सम्भवतः बड़े भाई चाँदराय इससे कुछ पहिले राज्य करते थे। किन्तु आइन-ए-अकबरीके पढ़नेसे मालूम होता है कि, १५९८ ई०में ईशाखाँकी मृत्यु हुई थी।† उस समय चाँदराय जन्मे थे कि नहीं, इसमें भी सन्देह है। ऐसी दशामें ईशाखाँके द्वारा चाँदरायकी कन्याका चुराया जाना बिल्कुल असम्भव जान पड़ता है।

चाँदराय एक वीरपुरुष थे और नौयुद्धमें विशेष पारदर्शी थे, उनने अपने बाहुबलसे सन्दीप तक अधिकार किया था। उनने अपने अधिकारमें नाना स्थानोंमें ब्रह्मोत्तर दान और शिव-मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा की थी। उनमेंसे विक्रमपुरमें पद्मानदीके बाँये किनारे प्राचीन श्रीपुरके पास राजबाड़ी-मठके नामसे एक बड़ा भारी और खूबसूरत शिवालय देखनेमें आता है। इस प्रसिद्ध मन्दिरकी ईंटों पर अति सुन्दर चित्र विचित्र फूल कटे हुए हैं। इसकी दीवार ११ फुटके करीब मोटी है। ऐसे मन्दिर बङ्गालमें और नहीं दीखते। अब इसकी शिखर पर पीपर और बड़के पेड़ उपज आये हैं।

नदीया जिलेके अन्तर्गत शान्तिपुरमें पाँच मील उत्तर-पश्चिममें स्थित बागाँचड़ा ग्राममें इसी ढंगका भव्य शिवमन्दिर देखनेमें आता है, इस मन्दिरके पूर्वद्वारमें ईंटों पर पंक्तिमें एक श्लोक खुदा हुआ है।

"शाके नागमतङ्गबाणहरिणाङ्के लाञ्छिते शङ्करं
संस्थाप्याशुसुधासुधाकरकरक्षीरोदनीरोपमं।
तस्मै सौधमिदं सुदामजलदश्रेणीनिलीनलोलध्वजं
तत्पादेऽविरतधीरधीरविरतं श्रीचाँदरायो ददौ"

"अविरत निश्चलबुद्धि चांदरायने शक सं० १५८७में शिवकी प्रतिष्ठा करा कर पूर्णचन्द्रकी किरण और क्षीरोदजलके समान, तथा निविड़ मेघसंलग्न चञ्चल ध्वजयुक्त यह मन्दिर उन शिवके चरणोंमें अर्पण किया।"

बागाँचड़ाके अधिवासियोंका विश्वास है कि, "इस मन्दिरके निर्माता चाँदराय राजा कृष्णचन्द्रके ज्ञातिके थे।" इसके अलावा उक्त मन्दिरके निकटवर्ती ब्राह्मणशासन नामक ग्रामके अधिवासियोंका कहना है कि, "ये चाँदराय कृष्णचन्द्रके प्रपितामह नदीयाराज रुद्ररायके दीवान थे। किसी समय रुद्रराय श्रीक्षेत्र गये थे, रास्तेमें ब्राह्मणशासन नामका ग्राम देख कर उनने सोचा कि, यहाँ सिर्फ ब्राह्मणोंका ही वास होगा। परन्तु ग्राममें खोज करनेसे मालूम हुआ कि, यहाँ ब्राह्मणोंका नाम निशान भी नहीं है वरन् अनार्य अहिन्दुओंका वास है। इस समय उनके हृदयमें एक वास्तविक ब्राह्मणशासनकी स्थापना करनेका भाव पैदा हुआ। श्रीक्षेत्रसे लौट कर उनने दीवान चांदरायसे मनकी बात कही और उसे कार्यमें परिणत करनेका आदेश दिया। चाँदरायने वर्तमानके ब्राह्मणशासन नामक ग्रामको मनोनीत कर शास्त्रोंके पारदर्शी १५० ब्राह्मण बुला कर ब्रह्मोत्तर दे वहाँ बसाये। इन्हीं चाँदरायने उक्त शिवमन्दिर बनाया था।"

उपरोक्त दो प्रवादोंमेंसे पहिला तो बिल्कुलही बिना जड़का है। क्योंकि शक सं० १५८७के चाँदरायका कृष्णचन्द्रके समसामयिक होना बिल्कुल असम्भव है। दूसरा कहाँ तक सत्य है, इसमें भी सन्देह है। मन्दिर-निर्माता चाँदराय यदि रुद्ररायके दीवान होते, तो सिर्फ अपने ही नामसे मन्दिरकी प्रतिष्ठा करनेका

* Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. XLIII, pt I. p. 202.

† Blochmann's Ain-I-Akbari, Vol. I. p. 340.

साहस न करते, ऐसा होनेसे रुद्ररायका नाम भी अवश्य खुदा हुआ रहता। मन्दिरप्रतिष्ठाके उपलक्षसे खुदे हुए हजारों शिलालेखोंमें, जहाँ मन्त्री या राजपुरुष द्वारा मन्दिर-प्रतिष्ठाकी प्रशस्ति लिखी गई है, प्रायः वहाँ राजाका नाम भी देखनेमें आता है। मन्दिर-प्रतिष्ठा और उसके उपलक्षसे ब्राह्मणशासनकी स्थापना दाक्षिणात्य-के नानास्थानोंमें देखनेमें आती है। ऐसी दशामें जब रुद्ररायके आदेशसे ब्राह्मण-शासनकी स्थापना हुई थी, तो रुद्ररायका नाम उस शिलालिपिमें क्यों न आता? इसलिए ये चाँदराय रुद्ररायके दीवान चाँदरायसे भिन्न ही प्रतीत होते हैं। इस मन्दिरके कारुकार्यके साथ राजबाड़ीके मठका कुछ सौसादृश्य रहनेसे तथा उस समय चाँदरायका पराक्रम विक्रमपुरमें विस्तृत होनेके कारण, सिर्फ इतना ही अनुमान किया जा सकता है कि, वे किसी समय तीर्थयात्राके लिए श्रीक्षेत्रको गये थे, लौटते समय उड़िष्याका अनुकरण कर बागाँचड़ाके पासका जङ्गल कटा कर बहुत अर्थव्यय करके शिव-मन्दिरकी प्रतिष्ठा और उसके उपलक्षमें ब्रह्मोत्तर दान किया था। बादमें वही ब्रह्मोत्तर फिर ब्राह्मण-शासनके नामसे प्रसिद्ध हुआ हो। ब्राह्मण-शासन लोग कहा करते हैं कि, वाग्देवीके शापसे चाँदराय निर्वंश हुए थे। विक्रमपुरके चाँदरायका भी वंश नहीं है, उनके छोटे भाई केदाररायका वंश है।

चाँद-साहब—दाक्षिणात्यमें ये हुसेन दस्तखाँके नामसे प्रसिद्ध थे। १७१२ ई०में दोस्तअली आर्काटके नवाबके पद पर अधिष्ठित थे। चाँदसाहब इस नवाबके एक आत्मीय थे। नवाबने सिंहासन पर आरूढ़ होनेके बाद अपनी एक कन्या चाँदसाहबको परणाई थी। इसके सिवा आर्काटके दीवान गुलामहुसेनके साथ चाँदसाहबकी लड़कीका व्याह हुआ था। इस तरहसे चाँदसाहब नवाब-के दामाद और दीवानके ससुर हुए। इन दो वैवाहिक सूत्रसे चाँदसाहबने राज्यमें विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। चाँदसाहबके अन्तःकरणमें उच्चपद पानेकी आशा बल-वती थी। जो लोग ऐसी आशाके वशीभूत होते हैं, उन्हें कुटिल-मार्ग अवलम्बन करना पड़ता है। चाँद-साहबने ऐसा ही किया था। वे दीवानीके काममें ससुर (नवाब)-की सहायता करते थे। एक बार उनने ससुर-के पद पर बैठनेके लिए प्रयास किया था, किन्तु कृत-कार्य न हो सके थे। कुछ भी हो कुछ दिन बाद, चाँद-साहबकी उन्नतिके लिए और एक मौका आया। मदुरा-के नायकराजाओंके राजत्वकालमें, रानी मीणाचीदेवी अपने पति विजयरङ्ग चोकनाथके परलोक सिधारनेके बाद, बङ्गारु तीरुमलके एक पुत्रको गोद रख राज्यशासन कर रही थीं। परन्तु तीरुमल (बङ्गरुके पिता)-को यह बात मञ्जूर न थी। उनने खुद राज्य पानेके लिए रानी-के विपक्षमें युद्धकी घोषणा की। इस विपत्तिकी अवस्था-में रानीने आर्काटके नवाबसे मदत मांगी। नवाबने अपने ज्येष्ठ पुत्र सफदरअली और चाँदसाहबको सेना सहित रानीकी सहायतार्थ भेजा। तीरुमलने सफदरअलीको हस्तगत करनेके लिए प्रयास किया। यह देख कर रानीने चाँदसाहबको शरण ली, तथा उन्हें बहुत धन दे कर यह तय कर लिया कि, वे राज्यको निष्कण्टक करके सेना सहित आर्काटको लौट जायगे। किन्तु चाँदसाहबके मनमें और ही कुछ थी। वे त्रिचिनापल्ली अधिकार कर बैठे। मदुरा राज्यमें मसलमानीय जयपताका उड़ने लगी।

चाँदसाहबका यह काम सफदरअलीके मनमें न बैठा। वे चाँदसाहबकी उच्चाशाको समझ गये और जिससे वे अपदस्थ हों, ऐसा प्रयत्न करने लगे। इसी समय आर्काटके दीवानका पद खाली हुआ और उस पर सफदरअलीके शिक्षक मीर आसद बैठे। सफदरअलीको अब बल मिला। वे मीर आसदसे मिल कर चाँदसाहबके विपक्षमें परामर्श करने लगे। उन्होंने चाँदसाहबके विरुद्ध नवाबके कान भरे। नवाब चाँदसाहब पर स्नेह करते थे, उसने इनकी बात पर ध्यान न दिया।

सफदरअली और मीर आसद इस पर भी हिम्मत न हारे वे दोनों दोस्तअलीसे छिपा कर षड़यन्त्र रचने लगे। उनने महाराष्ट्रोंसे एक सन्धि की, उस सन्धिसे स्थिर हुआ कि, महाराष्ट्रगण चौथ वसूल करनेके बहानेसे नवाबके अधिकारों पर आक्रमण करेंगे। इसको देख कर चाँद-साहब स्थिर न रह सकेंगे। उन्हें त्रिचिनापल्ली छोड़ कर नवाबकी सहायताके लिए आना पड़ेगा, इसी मौके पर

महाराष्ट्र-सेना उक्त नगर पर आक्रमण करेगी। नवाब दोस्तअलीको इस गुप्त अभिसन्धिका हाल बिल्कुल भी मालूम न था। महाराष्ट्रोंके आक्रमण करनेकी खबर सुन नवाब खुद युद्ध करनेके लिए गये। परन्तु उनकी सेना हार गई, तथा नवाब भी शत्रुओंके हाथ मारे गये।

कहावत है कि, "जो दूसरेका बुरा करता है, उसका बुरा पहले होता है।" सफदरअलीकी भी वह दशा हुई। अब उन्हें महाराष्ट्रोंके साथ सन्धि करनी पड़ी। उनसे बहुतसे रुपये ले कर महाराष्ट्रोंने कूँच कर दिया। बादमें सफदरअली अपने पिताके सिंहासन पर बैठनेके लिए आर्कट आये और चांदसाहब त्रिचिनापल्लीको लौट गये। मदुराराजाको मुसलमानोंके शासनमें जाते देख तिरुमलने महाराष्ट्रोंसे सहायता मांगी थी। चाँदसाहबके यह बात मालूम पड़ गई थी और उनने त्रिचिनापल्लीमें काफी रसद इकट्ठी कर ली थी। परन्तु उनने जब यह देखा कि, महाराष्ट्र लोग कर्णाट छोड़ कर अपने देशको जा रहे हैं, तब वे अपने सञ्चित रसदको दूसरे काममें लाने लगे।

१७३८ ई०में, रघुनाथजी भोन्सले एक बड़ी सेनाके साथ मदुराराज्य पर आक्रमण किया। मुसलमान सेना पराभूत हुई। चांदसाहबकी तमाम तरकीबें फिजूल गईं। रघुनाथजीने नगर पर कब्जा कर लिया। चाँदसाहबको कैद कर सतारा भेज दिया गया और उनकी स्त्री तथा अन्यान्य परिवारवर्ग फरासीसी गवर्नर मूसो डुप्लेको देख रेखमें पूँदिचेरी रहे। भारतवर्षमें फरासीसियोंका आधिपत्य विस्तृत हो, यही डुप्लेका आन्तरिक अभिप्राय था। वे चांदसाहबको एक उत्कृष्ट योद्धा और राजनैतिक व्यक्ति समझते थे। चाँदसाहबके मुक्त होनेसे फरासीसी आधिपत्यके स्थापन करनेमें बहुत सुगमता होगी, यह उनका ध्रुव विश्वास था। डुप्लेकी स्त्री देशीय भाषा जानती थीं, इसलिए उनके साथ चाँदसाहबकी स्त्रीकी बात चीत होती थी। यह आलाप अन्तमें मित्रतामें परिणत हो गया। चाँदसाहबकी स्त्रीने उनसे पतिके छुटकारेकी बात छेड़ी। डुप्लेकी स्त्रीने यह बात अपने पतिसे कही। डुप्ले भी इस बातसे सहमत हो गये। चाँदसाहबकी स्त्रीने यह भी कहला भेजा कि महाराष्ट्रोंको कुछ रुपये देनेसे उनके पति छूट जाँयगे। डुप्लेने यह रुपये दिये। १७४८ ई०में चाँदसाहब कैदसे छूट आये।

इसी समय चित्तलदुर्ग और बेदनूरके राज्यमें लड़ाई हुई। दोनोंने चाँदसाहबसे मदत मांगी। किन्तु चाँदसाहबने चित्तलदुर्गका पक्ष लिया। दुर्भाग्यकी बात है कि इस युद्धमें वे पराजित हुए। वे कैद कर बेदनूर भेजे गये, परन्तु अन्तमें छूट गये।

इस घटनासे चाँदसाहब हताश हो गये थे। किन्तु निजाम-उल्-मुल्कको मृत्यु हो जानेसे राज्यमें जो उपद्रव होने लगा, उससे ही इनके अभ्युदयका सूत्रपात हुआ। इस समय आन्वार-उद्दीन् आर्कटके नवाब थे। निजाम उनके प्रति विशेष सदय थे, इसलिए वे इस पदकी रक्षा कर सके थे। परन्तु निजामको मृत्यु हो जानेसे, उनके दूसरे पुत्र नासिरजङ्ग और उनके भतीजे मजफ्फरजङ्ग उक्त पद पानेके लिए प्रयत्न करने लगे। इसी मौके पर चाँदसाहबने मजफ्फरजङ्गका पक्ष अवलम्बन किया और डुप्लेके पाससे फरासीसी सेना संग्रह कर आन्वार उद्दीन्के विरुद्ध खड़े हो गये। अम्बूर नामके स्थान पर दोनोंका युद्ध हुआ। इस युद्धमें आन्वार उद्दीन् पराजित हुए और शत्रुओं द्वारा मारे गये। बादमें मजफ्फरजङ्गने दाक्षिणात्यके सूबेदारका ओहदा पाया और चाँदसाहब आर्कटके नवाब बन गये।

इस समय आर्कटका खजाना खाली हो गया था। चाँदसाहबने अर्थ-संग्रह करनेके लिए तञ्जाबूर पर आक्रमण किया। वहां राजाने डर कर उनसे सन्धि कर ली। इससे चाँदसाहबको ७० लाख रुपये मिल गये और वे आर्कटकी तरफ लौटने लगे। इसी मौके पर नासिरजङ्गने तीन लाख सेना सहित आर्कट पर चढ़ाई कर दी। मजफ्फरजङ्ग और चाँदसाहबने इनकी गति रोकनेके लिए बहुतसी चेष्टाएँ कीं, किन्तु सब व्यर्थ हुईं। मजफ्फरजङ्गने नासिरजङ्गकी शरण ले ली और चाँदसाहब भाग गये। नासिरजङ्गने आर्कट पर कब्जा किया और दाक्षिणात्यके सूबेदारके पद पर आरूढ़ हुए।

कुछ समय पीछे, आर्कटमें विप्लव उपस्थित हुआ। आन्वारउद्दीन्के पुत्र महम्मदअली अङ्गरेजोंको

सहायतासे आर्कटके नवाबका पद पानेके लिए उद्योग करने लगे। किन्तु महम्मदअलो अंग्रेजोंकी सेनाका खर्च न झेल सकनेके कारण उनकी सहायतासे वञ्चित हुए। इस खबरको पाते हो डुप्लेने फरासीसी सेनाके साथ चाँदसाहबको युद्धके लिए भेजा। चांदसाहबने महम्मदअलोको पराजित कर गिञ्जि नामक किला अधिकार किया। इन घटनाओंसे नसीरजङ्ग डर गये और डुप्लेसे सन्धि करनेके लिए प्रयत्न करने लगे। डुप्लेने भी अपना अभिप्राय नासिरजङ्गसे कहा। नासिरजङ्ग उससे सहमत तो हो गये, पर उसकी पूर्त्ति करनेमें देर करने लगे। यह देख कर डुप्लेने युद्धके लिए पुनः फरासीसी सेना भेजी।

युद्धके प्रारम्भमें कर्णूलके नवाबने विश्वासघातकता कर नासिरजङ्गको मार डाला।

बादमें डुप्ले ही दाक्षिणात्यके सर्व-सर्वा हुए। उनने मुजफ्फरजङ्गको दाक्षिणात्यको सूबेदारी और चाँदसाहबको आर्कट नगरके नवाबका पद दिया।

आर्कटके नवाब बन कर भी चाँदसाहबकी उच्चाकांक्षा न मिटी। वे त्रिचिनापल्ली अधिकार करनेके लिए उत्सुक हुए। १७५१ ई०के प्रारम्भमें उनने अपनी और डुप्लेकी भेजी हुई सेनाको ले कर त्रिचिनापल्ली पर धावा किया। इसी समय क्लाइव भारतवर्षमें अंग्रेजोंका आधिपत्य विस्तार करनेके लिए प्रयत्न कर रहे थे। उनने मौका देख आर्कट राज्य पर आक्रमण किया और पीछे अधिकार भी कर लिया। चाँदसाहबको जब यह बात मालूम पड़ी, तब उनने राजासाहबको युद्धके लिए भेजा, किन्तु क्लाइवने उन्हें पराजित कर दिया।

इसी अवसर पर मेजर लौरेन्स भी इङ्गलैण्डसे लौटे। उन्हींके अनुपस्थितिमें क्लाइवने मन्द्राज-सेनाके ऊपर कर्त्तृत्व पाया था। अब मेजर लौरेन्सने अपना कार्य क्लाइवसे ले लिया और उनके पीछे क्लाइवने जो कार्य छेड़ा था, उसे पूरा करनेके लिए कमर कसी। उनने बहुतसी सेना इकट्ठी की। महिसुर और तञ्जोरसे महम्मद अलीकी भेजी हुई मुसलमान-सेना, तथा मुरारिरायकी अधीनस्थ महाराष्ट्र-सेनाने उनके साथ योग दिया। इस सेनाओंका ले कर उनने त्रिचिनापल्ली पर आक्रमण किया और घोर युद्ध कर उस स्थान पर अधिकार कर लिया। फरासीसी सेनाके नायक लो और चाँदसाहबने श्रीरङ्गमके प्राचीरवेष्टित देवालयमें आश्रय लिया। अब चाँदसाहबको हस्तगत करना ही लौरेन्स साहबका उद्देश्य हुआ। उनने तञ्जोरके सेनानायक माणिकजीके साथ इस विषयमें एक अभिसन्धि की। माणिकजीने चांदसाहबको मुक्तिलाभका प्रलोभन दे, उन्हें हस्तगत किया। चांदसाहबको यह दशा देख उनकी सेना तितर-बितर हो गई, इधर लौरेन्स साहबने लो साहबको भय दिखा कर कहा कि, "यदि आप अपना अभिप्राय शीघ्र न प्रकट करेंगे, तो आपकी सेना मार दी जायगी। लो-साहबने दूसरा कोई मार्ग न देख कर अंग्रेजोंकी शरण ली।

चांदसाहबके विषयमें क्या करना चाहिये, इसको ले कर घोर आन्दोलन हुआ, पर उनके विषय कुछ भी निश्चय न हुआ। इसी समयमें (१७५२ ई०में) माणिकजीने चांदसाहबको मार डाला। सब झञ्झटोंसे छुटकारा मिला।

चांद सूरज (हिं० पु०) आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ चोटीमें गूँथ कर पहनती हैं।

चाँदसौदागर—एक प्रसिद्ध सौदागर। ये मनसा-विसर्जन, मनसा-मङ्गल आदि प्रसिद्ध आख्यायिकाओंके नायक लखिन्दरके पिता और बेहुलाके ससुर थे। उक्त ग्रन्थोंमें लिखा है कि, चम्पाइनगरमें इनका वासस्थान था। ये जातिके गन्धवणिग्‌ और विपुल ऐश्वर्यके अधिकारी थे। उनकी बहुतसी नावें व्यवसायके लिए देशविदेशोंमें आया जाय करती थीं। ये परम ज्ञानी और महादेवके महाभक्त थे, तथा सर्वदा दानव्रतादि धर्मानुष्ठानमें परमसुखसे समय बिताते थे। बादमें दैववश सर्पकुलकी अधिष्ठात्री मनसादेवीके साथ इनका विवाद हो गया। चांद तत्त्वके जानकार और परम शैव थे, इसलिए मनसाकी पूजा करनेको राजी न हुए, वरन् कोई पूजा करता तो वे उसका प्रतिरोध करते और मनसाको चिढ़ाया करते थे। मनसादेवी इस पर कुपित हो गई और प्रतिहिंसाके वशीभूत हो उनका अनिष्ट करनेके लिए उतारू हुई। शिवज्ञान रहनेके कारण साधुका अनिष्ट करना असाध्य जान, उसने उनके छह पुत्रोंका विनाश

किया। किन्तु महाज्ञानी चाँदसौदागर विचलित न हुए। इससे मनसाका ईर्षानल और भी जल उठा। उसने सौदागरकी चौदह नावें कालीदहमें डुबो दीं। सौदागर सर्वस्वान्त हो गये, पर तो भी उनका ज्ञान और मानसिक तेज अचल रहा। वे किसी तरह भी मनसाकी पूजा करनेको तयार न हुए। चाँद जानते थे कि, मनसाके कोपसे ही उनको इतनी लाञ्छना भोगनी पड़ती है, वे यह भी जानते थे कि मनसाकी पूजा करनेसे ही उनके कष्टोंका अन्त हो जायगा, किन्तु तो भी महामनस्वी साधु सामान्य पार्थिव सुखके लिए ज्ञानमार्गसे विचलित न हुए। इसलिए मनसा उनको नाना प्रकारसे कष्ट पहुंचाने लगी। उनकी पानीमें डूबी कर, शववस्त्र पहरा कर मनसा आनन्द मनाने लगी। चाँद निरन्न अवस्थामें द्वार द्वार पर भीख माँग कर चावल लाये, मनसाने उन्हें मूसोंके जरिये अपहरण कर लिया; अन्तमें साधु भूखों मरे, मनसाके आनन्दकी सीमा नहीं। चाँद लकड़ी काट कर लाते थे, मनसा हनूमानके जरिये उसका चूरा कर देती थी। चाँदकी ताकत नहीं वह काठ बेच सकें। ऐसा नहीं करनेसे चाँदकी मनसाके प्रतिभक्ति कैसे होगी? साधुके कष्टकी सीमा न रही। विषहरीकी अपने पर इतनी दया देख कर भी मनसाके प्रति उनकी भक्ति न हुई। बादमें उनके लखिन्दर नामका एक सुकुमार पुत्र पैदा हुआ। चाँद असीम कष्टके बाद दीनवेशसे घर लौट रहे थे, दयामयी मनसाको यह कैसे सह्य हो सकता था? वह गणकका वेश बना कर बनेनीसे कह गई कि, "सनका, आज रातको केलेके जङ्गलकी तरफसे तुम्हारे घर चोर आवेगा, उसे तुम खूब पीटना।" चाँदने मनसाकी कृपासे अपनी स्त्रीके हाथसे भी मार खाई। इतने पर भी मनसाकी उत्कट प्रतिहिंसा दूर न हुई। उसने सुहाग-रातको लोहेके घरमें साधुके एकमात्र पुत्र लखिन्दरको सर्प द्वारा मार डाला। साधु भी निश्चिन्त हुए, उसने सोचा कि विषहरीकी विषदृष्टिसे जितना अनिष्ट हो सकता है वह सब हो गया। धन-धान्य-पुत्र सब ही चले गये। किन्तु उनके शेषपुत्रके शोणितसे भी मनसाका मनोमालिन्य नहीं धुला। मनसा बड़ी मुश्किलमें पड़ी। उसकी इतनी चेष्टाएं सब व्यर्थ हुईं। उसने दूसरे उपायका अवलम्बन किया। शङ्ख चीलका रूप धारण कर सौदागरकी जटासे शिवज्ञान चुरा लिया। चाँद अब यथार्थमें दरिद्र हो गये। इधर चाँदको पुत्रवधू सायवणिककी पुत्री बेहुलाने मनसाको सन्तुष्ट कर अपने मृत पति और छह जेठोंको जिलाया तथा ससुरकी चौदह नावोंका उद्धार कराया। बेहुला आनन्दसे साथ ससुरालको आई। अब तो मनसाकी यह चतुराई भी व्यर्थ न हुई। चाँद महा-आनन्दसागरमें मग्न हो कर आपा खो बैठे और थोड़ेसे प्रतिवादके बाद मनसाकी पूजा करनेके लिए राजी हो गये। महा आड़म्बरके साथ चाँदसौदागरके घर मनसाकी पूजा हुई। उनकी देखादेखी सब ही मनसाकी पूजा करने लगे।

'मनसा-विसर्जन' आदि ग्रन्थोंमें चाँदसौदागरका ऐसा विवरण मिलता है। उक्त ग्रन्थोंमें कहे हुए चाँद-सौदागर और उनका संसृष्ट अलौकिक विवरणका अधिकांश ही कविकी कल्पना मात्र जान पड़ती है। कुछ भी हो, ईसाकी १२वीं या १३वीं शताब्दीमें चाँद नामके एक धनशाली सौदागर हुए थे, इसमें कोई सन्देह नहीं। सम्भवतः उसी समयसे मनसा पूजा चली हो। मनसा देखो।

चाँदा (चन्दा)—मध्यप्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० १८° ४२' तथा २०° ५२' उ० और देशा० ७८° ४८' एवं ८१° पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल १०१५६ वर्गमील है। इसके उत्तर नांदगांव राज्य, भण्डारा, नागपुर तथा वर्धा जिला, पश्चिम एवं दक्षिण-पश्चिम यवतमाल जिला तथा निजाम राज्य और पूर्वको वस्तर तथा कांकर राज्य एवं दुग जिला है। वर्धा, प्राणहिता, गोदावरी, उवा, एराई, वेणगङ्गा, शिवनाथ, अन्धारी, बोतवाही, देनी, गर्भी, कोब्रागढ़ी, वन्दिया, इन्द्रावती इसकी नदियां और चिमूर मूल, फेरसागढ़, सुरजागढ़ और तोयागढ़ पर्वत हैं। चाँदा जिलेमें बहुतसा घना जङ्गल है। जलवायु साधारणतः स्वास्थ्यकर लगता है।

चन्दा जिलेका वर्धानदीप्रवाहित पश्चिमांश केवल निम्नभूमि है, इसके सिवा इसके सभी अंश उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत पहाड़ोंसे आकीर्ण हैं। वेणगङ्गा नदीसे

पूर्वकी ओर पर्वतश्रेणीका उच्चता बढ़ गई है, यहांकी सबसे ऊंची शिखर, समुद्रपृष्ठसे लगभग २००० हजार फुट ऊंची है। वेणगङ्गा, वर्द्धा और महानदी नामक तीन प्रधान नदियां तथा अन्यान्य कुछ छोटी छोटी नदियां इसके मध्य, पश्चिम और पूर्वसे प्रवाहित हुई हैं। वेणगङ्गा और वर्द्धानदीसे सिवनी नामक स्थानमें मिल कर प्राणहिता नाम धारण किया है। गड़चोरी और ब्रह्मपुरी परगनेके अनेक स्थानोंमें गिरिनिःसृत क्षुद्र स्रोतस्वतियोंने परस्पर मिल कर रास्ता रुक जानेसे ह्रदका आकार धारण किया है। इस जिलेमें नदियां अधिक हैं, इसलिए पेड़ोंकी भी ज्यादा पैदायश है। इसकी पश्चिम सीमा पर बृहदाकार वृक्षश्रेणी दीख पड़ती है। गवर्मेंटकी देखरेखमें ३३६८ मील जंगल है। इसके अलावा ११४ वर्गमील जंगल वैसे ही पड़ा है। दृश्यप्रिय व्यक्तियोंके लिए यह बड़ा मनोरम स्थान है।

इसका निकटस्थ भाण्डक ग्राम सम्भवतः हिन्दू राज्य वाकाटककी राजधानी रहा। शिलाफलक पढ़नेसे ज्ञात होता कि ई० चौथीसे १२वीं शताब्दी अर्थात् जब तक चांदाके गोंड़ोंका अभ्युदय नहीं हुआ उक्त राज्यका अस्तित्व था। सम्भवतः ई० ग्यारहवीं और १२वीं शताब्दीके बीच गोंड़ोंने जोर पकड़ा। १७५१ ई० तक राजत्व करनेवाले ११ राजाओंके नाम मिलते हैं। चांदाके राजा सरजा बल्लार शाहके नाम पर बल्लारशाही कहलाते हैं। ई० पन्द्रहवीं शताब्दीके मध्य वह जीवित रहे होंगे। हरिशाह नरेशने चांदाका किला बनाया और चहार दीवारीको पूरा कराया। इनके पौत्र करणशाहने सबसे पहले हिन्दू धर्म ग्रहण किया था। आईन अकबरीमें लिखा है कि करणशाहके पुत्र स्वाधीन राजा रहे। वह दिल्लीको कोई कर न देते और अपने पास १००० सवार तथा ४०००० पैदल फौज रखते थे। चांदाके गोंड राजाओंने चांदा-नगरकी चारों ओर ५॥ मीलका प्रस्तरमय प्राचीर बनाया और उसमें बढ़ियासे बढ़िया फाटक लगाया। उनके निर्मित दूसरे भवनोंका भी ध्वंसावशेष मिलता है। उन्होंने शान्तिपूर्वक अपना राजत्व चलाया और कृषि आदिकी उन्नति करके प्रजाको समृद्धिशाली बनाया था। १७५१ ई०को मराठोंने गोंड़ोंको परास्त करके चांदा अधिकार किया। उस समय यह नागपुर राज्यमें लगता था। परन्तु भोंसला राजाओंके भागमें पड़नेसे इसकी अधोगति हुई। १८१७ ई०को अप्पा साहबके विद्रोह पर अंगरेजोंसे लड़नेके लिये यहां फौज रखी गयी थी। किन्तु १८१८ ई०के अपरेल मास अङ्गरेजोंने आक्रमण करके चांदा अधिकार किया। १८१८से १८३० ई० तक अङ्गरेज अफसरोंने इसका शासन अपने हाथमें रखा, फिर अन्तिम भोंसला राजा ३य रघुजीको दे डाला। उनके मरने पर कोई उत्तराधिकारी न रहनेसे १८५३ ई०को यह अङ्गरेजी राज्यमें सम्मिलित हुआ। प्राचीन गोंड-राजाके वंशधर आज भी चांदामें रहते और सरकारी पेन्शन पाते हैं।

यहां प्रत्नतत्त्व सम्बन्धी अनेक वस्तु मिलती हैं। चांदाकी लोकसंख्या ६०१५३३ है। १८०० ई०को यहां घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। मराठी, गोंड़ी तेलगु, और छत्तीसगढ़ी भाषा व्यवहृत होती है। खेत सींचनेकी बड़ी सुविधा है। यहां अच्छे अच्छे तालाव और बांध हैं। खानसे कोयला, तांबा, लोहा, हीरा और पत्थर निकलता है। वेणगङ्गा और इन्द्रावतीकी बालूमें सोना होता है। टसरका कीड़ा भी लोग पालते और रेशमी कपड़े बुने जाते हैं। रेशमी पगड़ियां और चोलियां मशहूर हैं। रेशमी किनारेका कपड़ा यहां बहुत बनता है। पहले वह दूर दूरको भेजा जाता था। मामूली सूती कपड़ा भी तैयार होता है। पीतल और तांबेके बर्तन चांदामें बनते हैं। रेशमी जूते सीये जाते हैं। तेलहन, लकड़ी, चमड़ा, सींग, रुई और दालकी रफ़्तनी होती है। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवेकी वर्धा-वरोरा शाखा इस जिलेमें चलती है। मूल और सिरोंचाकी सड़कें सबसे बड़ी हैं। शिक्षाको देखते मध्यप्रदेशमें चांदा १३वां गिना जाता है।

यहां बहुतसे मेले लगते हैं, जिनमें वैशाख महीनेका चन्दा नगरीका मेला और माघ मासका भाण्डक नगरका मेला ही सबसे श्रेष्ठ है। इन मेलोंमें बहुत दूर दूरसे आदमी आते हैं तथा पहिले पहल इन्हीं मेलोंके कारण ही यहांका वाणिज्य चला था।

चांदा—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेको दरमियानी तहसील।

इसका क्षेत्रफल ११७४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२१०४० है। इसमें पहाड़ और जङ्गल बहुत हैं।

चांदा—मध्यप्रदेशके चाँदा जिलेका सदर। यह अक्षा० १९° ५७' उ० और देशा० ७९° ५८' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई १७८०३ होगी। यह नाम चन्द्रपुर शब्दका अपभ्रंश है। दूरसे देखने पर यह नगर अत्यन्त विचित्र लगता है। इसके उत्तर और पूर्वको घना जङ्गल है। दक्षिणको माणिकदुर्ग पर्वतकी नीलवर्ण श्रेणी है। चाँदा चारों ओर प्राचीरसे घिरा हुआ है। इसको गोंडराज होरसाहबने बनाया और मराठोंने सुधराया था। प्राचीरसे इराईकी बाढ़का पानी चाँदामें नहीं पहुंच सकता। इसमें चार दरवाजे और ५ खिड़कियां हैं। भूतपूर्व गोंड़ राजाओंके मन्दिर दर्शनीय हैं। अचलेश्वर, महाकाली और मुरलीधरके मन्दिर प्रधान हैं। किलेके बाहर रमाल तालावसे नलके द्वारा नगरमें पानी आता है। यह काम गोंड राजाओंके तत्त्वावधानमें हो हुआ था। नगरसे दक्षिण-पूर्वको रायप्पाकी मूर्तियां हैं। कहते हैं किसी धनी कोमती रायप्पाने एक बड़े शिवमन्दिरके लिये उन्हें निर्मित कराया था, परन्तु काम पूरा न होते हो उनकी मृत्यु हो गया।

१८६७ ई०को चाँदामें म्युनिसपालिटी पड़ी। यह अपने जिलेका व्यापारिक केन्द्र है। यहां रेशमी तथा सूती कपड़ा, फूलदार जूता और चाँदी सोनेका गहना बनता है। प्रत्येक वर्षको अपरेल मासमें अचलेश्वर द्वारके बाहर एक बड़ा मेला लगता है। उसमें कोई १ लाख आदमी इकट्ठा होते होंगे। मवेशी, तम्बाकू और लहसन बहुत बिकता है।

चांदा (चन्दा)—अयोध्याके अन्तर्गत सुलतानपुर जिलेका एक परगना। यह दक्षिणमें प्रतापगढ़ जिलान्तर्गत पट्टी और उत्तरमें आलदिमज नामक परगना इन दोनोंके मध्यस्थलमें अवस्थित है। इसका भूपरिमाण १३० वर्गमील है। जौनपुरसे लखनऊ जानेका रास्ता इस परगनेके बीच हो कर गया है। सिपाही विद्रोहके समय १८५८ ई०के १८वीं जूनको इस स्थानके निकट फ्राङ्क साहबने महम्मद हुसेन नाजिमको परास्त किया था।

चांदी (हिं० स्त्री०) १ रौप्य। यह खनिज पदार्थ और अष्टधातुमें गण्य है। इस धातुसे नानाप्रकारके गहने और तरह तरहकी औषधियाँ बनती हैं। स्नायविक दौर्बल्यजनित रोगोंमें आयुर्वेदके मतसे स्वर्ण या लौह योगसे रौप्यघटित औषधके प्रयोग करनेकी विधि है। डा० एमार्सनने उक्त औषधकी उपकारिताके विषयमें बहुत प्रशंसा की है।

यह धातु नानास्थानोंमें नाना नामोंसे परिचित है। हिन्दी, बङ्गला, मराठी, दक्षिणी, गुजराती और भुटानमें—चाँदी, रूपा और रुप्पा कहते हैं; सिन्धप्रदेशमें—रूपो; तामिल—वेल्ली, वेण्डी; तेलगू और कनाड़ी—बेल्ली; अरब—फड्डा, फिजा, पारसी—सिन्, नुकराह; संस्कृत—श्वेत, रजत, रौप्य, सिङ्गापुर—पैटी, रिचि; ब्रह्म—नोये; चीन—जिन्; पेकिन्; मलय—पेराक्, शलका; यवद्वीप—शलाका; मलयालम्—रियाकि; तुर्की—घुसमुस, अङ्गरेजी—Silver; (सिलवर) दिनेमार—Solva; ओलन्दाज—Silver; जर्मनी—Silber; फरासीसी—Argent; इटली—Argento; लैटिन्—Argentum; पोलिस—Srebro; पोर्तगीज—Parte; रूष—Serebro; स्पेनमें—Plate; सुयेडिस्—Silfver और हिब्रु—केसेफ् कहते हैं।

क्या प्राच्य और क्या प्रतीच्य जगत्‌में बहुत पूर्वकालसे ही चांदी या रौप्यका आदर और व्यवहार चला आ रहा है। ऋक्संहितामें (८।२६।२२) तथा वैदिक ब्राह्मणादि युगमें भी ऋषिगण स्वर्ण और रौप्यका व्यवहार करना जानते थे। पुराण और मनु आदि स्मृतिमें चांदीका उल्लेख मिलता है। स्मृतिकारोंने ब्राह्मणोंके लिए शूद्रोंसे रौप्यदान ग्रहण करनेका विधान किया है। इससे वे पतित नहीं होंगे। ये रत्न उस समय ब्राह्मण देवसेवाके लिए निर्दिष्ट कर रख दिया करते थे। रजत देखो।

प्रतीच्य भूमि पर भी पहिलेसे चाँदीका प्रचलन चला आ रहा है। मोजेसकी लेखनीसे इस बातका निश्चय हुआ है। ईसाधर्मको पुस्तक बाइबेलके जेनेसिस् विभागमें (XX. 16) पहिले चाँदीका उल्लेख मिलता है। उक्त विभागके XXIII. 15, अंशमें चाँदीके वाणिज्य प्रभावकी कथा लिखी है। जसुयामें (VI 18—19)

लिखा है—"इन समस्त अभिशप्त वस्तुओंसे सर्वदा दूर रहना चाहिये, किन्तु स्वर्ण या रौप्य जितना भी हों, तथा लोहे या पीतलसे बने हुए पात्रादिको भोगविलासकी सम्पत्तिके रूपसे सञ्चय न कर देवार्थ नियोग करना ही सब तरहसे उचित है।" वास्तवमें बाइबेल ग्रन्थसे बहु पूर्ववर्ती संहिता-युगसे ब्राह्मण्यधर्मसेवी नानास्थानोंके हिन्दू इस आचारको वेदवत् पालन करते आये हैं।

खानमें चाँदी कभी मूलधातुरूपमें, कभी क्लोरिद, सालफाइडके साथ या सीसा, स्वर्ण, रसाञ्जन और ताम्रादिके योगसे मिश्रधातुके रूपमें देखनेमें आती है। उक्त मिश्रधातुको जिस रीतिसे साफ किया जाता है, उस प्रणालीको अंग्रेजीमें Process of Amalgamation कहते हैं। साफ किया हुआ रौप्य अर्थात् स्वच्छ रौप्यको चाँदी कहते हैं। चाँदीमें खाद (Alloy) मिला कर साधारणतः सिक्के और अलङ्कारादि बनाये जाते हैं। कभी कभी किसी भिन्न पदार्थके सहयोगसे (Affected by re-agents) उसकी प्रकृतिका परिवर्तन कर उसके द्वारा चीर-फाड़ या काटनेके कामके लिए अस्त्रादि (Surgical instruments) और रसायनकार्यमें आवश्यकीय पात्र आदि बनाये जाते हैं।

भारतवर्षके नानास्थानोंमें, विशेषतः कर्णूल जिलेके मधुरा और महिसुरमें तथा लासा, सानष्टेट, मार्तावान, आसाम, कोचिनचीन, यूनान, फिलिपाइन आदि स्थानोंमें मिश्र अवस्थामें चाँदी मिली।

चाँदीका भाव सब समय समान नहीं रहता। पहिले चाँदीका भाव ज्यादा था। अमेरिकामें भी सोने और चांदीकी खानें आविष्कृत होनेके बादसे चाँदीका बाजार गिर गया है। १६वीं शताब्दीके प्रारम्भमें १ तोले (१८० ग्रेन) सोनेका मूल्य १५ या १६ रुपये (उस समयका चाँदीका सिक्का) था ; किन्तु १८७०से १८८७ ई०के भीतर २३ तोले चाँदी १=तोले सोना, इतना बढ़ गया था। बादमें किसी समय १ तोले पक्के सोनेका मूल्य २७) से २८) रुपये (सरकारी रु०, जो वर्तमानमें प्रचलित हैं) तक हो गया था, जैसा कि अब है। सोनेका बाजार प्रायः स्थिर रहनेसे अब चाँदीका भाव भी बहुत कुछ स्थिर हो गया है। अंगरेजी राज्यमें प्रचलित २२=) बाईस रुपये दो आनेमें सभरेन गिन्नीका १ तोला होता था अर्थात् पक्के १५) रु०में १ गिन्नी होती थी। किन्तु आजकल १६) रुपयेमें मिलता है। मुसलमानोंके राज्यमें प्रचलित सिक्कोंसे वर्तमानके रुपये ।) आना भर कम हैं, अर्थात् मुसलमानी सिक्के १।) भर होते थे।

इङ्गलैण्डमें तीसरे एडवार्डके शासनके समय चाँदीका भाव कमती था। रानी एलिजावेथके राज्यमें उसका भाव करीब दूना हो गया था। उसके बाद मेक्सिको और पेरुराज्यमें चाँदीका खान निकल आनेसे क्रमशः मूल्य घटता आया और १म चार्लसके राजत्वकालमें चाँदी एलिजाबेथके युगसे तिहाई कीमतमें बिकने लगी। इस प्रकारसे इङ्गलैण्ड और टिउडरके राज्य-कालके मध्यभागमें चाँदीका जो भाव था, उससे अन्दाजन पाँच आना भाव रह गया, तथा क्रसोके समयके भावसे आधा हो गया।

पहिले कहा जा चुका है कि, इङ्गलैण्डमें मध्ययुगमें चाँदीका भाव ज्यादा था। उस समय १ औन्स सोना १० औन्स चाँदीके बदलेमें मिलता था। १७९२ई०में अमेरिकाके युक्तराज्यमें डालर सिक्का प्रचलित होने पर उसका परिमाण १=१५ अर्थात् १५ स्वर्ण-डालारके समान १ रौप्य-डालर निर्धारित हुआ। अमेरिकाके इस नये कानूनसे चाँदीका भाव अत्यधिक बढ़ते देख १८०३ ई०में फरासीसियोंने फ्राङ्क सिक्का चलाया। उससे फरासीसी मल्लो गढ़िमने चाँदीकी कीमत घटा कर उसका परिमाण १=१५॥ कर दिया। इससे बाजारोंमें चाँदीका खेल होने लगा। १५ डालरके बराबर चाँदी दे कर कोई १ डालरके बराबर सोना नहीं ले सकता था। मुद्राङ्कणके बाद वह "Standard Coin" या प्रचलित सिक्केकी तरह लीया जाने लगा, इसलिए सहजहीमें लोग १५ डालरके बदलेमें स्वर्णमुद्रा खरीद सके। इस रौप्यमुद्रासे कर्मचारियोंको तनखा देनेमें भी बड़ी सुगमता हुई। क्योंकि, असली चाँदी १५ डालरके बराबर और १५ डालर सिक्कोंका मूल्य बहुत न्यारा हो गया। लोगोंके घर जितनी चाँदी थी, उनने भी टकशालमें ला कर उनके सिक्के बना डाले, इससे बाजारमें रौप्य-मुद्राका खूब प्रचार हुआ। चीजें खरीदनेमें भी रौप्य-मुद्राकी

ज्यादा जरूरत पड़ने लगी, क्योंकि एक स्वर्णमुद्राके विना भनाये अथवा उतने मूल्यका चीज विना खरीदे स्वर्णमुद्राका बदला सहजसाध्य न था। रौप्य-मुद्राके प्रचारसे इस बातकी सुगमता अवश्य हुई, किन्तु स्वर्ण-मुद्राका प्रचलन बहुत घट गया।

चाँदी और सोनेकी कीमत कानूनके अनुसार निश्चित कर अमेरिकाके युक्तराज्यमें उक्त दोनों प्रकारके सिक्कोंका बदला साबित किया गया। किन्तु ऋण चुकानेके समय स्वर्ण-मुद्रा देनेमें क्षतिका आधिक्य देख उन लोगोंने इस bi-metallic system को रद्द कर दिया और समस्त स्वर्ण-मुद्रा फ्रान्समें भेज दिये। फ्रान्सकी राजसरकारमें पहिलेसे ही चाँदीकी कीमत घट चुकी थी (Under Valueb) इसलिए वे अमेरिकाकी bi-metallism प्रथाका अवलम्बन करनेके लिए वाध्य हुए। इस तरह अपने उन्हें देशके चाँदीके सिक्के अमेरिकाको देने पड़े।

अमेरिकासे सोना स्थानान्तरित होते देख, उस देशके वासियोंने १८३४ ई०में पुनः दोनों तरहके सिक्के चलानेका प्रस्ताव किया। उसके अनुसार चाँदीका मूल्य १ = १६ नियत हुआ। इससे फिर गड़बड़ी होने लगी, राज्यमें फिर चाँदी या चाँदीके सिक्कोंका अभाव हो गया और सोनेके सिक्कोंने उनका स्थान घेर लिया। १८५४ ई० तक अमेरिकाके टकसालमें एक भी चाँदीका सिक्का नहीं बना था। १८७३ ई० तक अमेरिकाके Statute Book नामके राजकीय कानूनमें चाँदीको सोनेके समान (Silver a legal tender equally with gold) निर्दिष्ट किये जाने पर भी उसका कुछ नतीजा नहीं निकला, क्योंकि उसके परवर्ती समयमें सोने-चाँदीका भाव बाजारमें घटता बढ़ता रहा है। जर्मनियोंने भी १८७३ ई०के बाद स्वर्णमुद्राके मूल्यके अनुरूपमें एक तरहका चाँदीका सिक्का चलाया था। कालिफोर्निया और अष्ट्रेलियामें सोनेकी खान निकलनेके बादसे सोने और चाँदीके बाजारमें युग-प्रलय हुआ है।

शोधी हुई चाँदी, चाँदीके वरक या रूपा (Silver leaf)-का प्रयोग साधारणतः आयुर्वेदशास्त्रसे औषधिमें किया जाता है। हकीम लोग आँवलेके (Phyllanthus Emblica) साथ चाँदीके वरक, अजीर्ण अथवा स्नायविक दौर्बल्यजनित रोगमें सेवन कराते हैं। योजकत्वगोष रोगमें (Conjunctivitis) Argentum Nitrus १० ग्रेन पानीमें मिला कर काजल देनेसे फायदा पहुंचता है। जलन ज्यादा मालूम पड़े, तो जलनको जगह नमकका पानी लगा देनेसे व्यथा घट जाती है। कच्छ प्रदेशके भुज नगरके सुप्रसिद्ध चिकित्सक वेरेन साहबने स्नायुमें बल पैदा करनेके लिये औषध रूपसे चाँदीकी भस्मका उल्लेख किया है। उसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—एक भाग संकी (संखिया) विष, आधा ग्रेन निब्बूका रस, और ।⁄) भाग चाँदीके वरक, इनको खलहड़में अच्छी तरह पीस कर गोलियाँ बनानी चाहिये। बादमें उनको नये कपड़े और मिट्टीमें पोत कर आगमें जलाना चाहिये। जब उसके भीतर औषध जल कर भस्मरूपमें परिणत हो जाये, तब उतार लेना चाहिये, ऐसी प्रक्रिया चौदह बार करनेसे अर्थात् चौदह बार नये कपड़े और मिट्टीमें पोत कर उनको आगमें देनेसे रौप्य-भस्म बन जाती है।

रासायनिक प्रक्रियासे चाँदीका परिवर्तन अनेक प्रकारसे किया जा सकता है। चाँदीके बासन या खिलौने बनानेमें क्षारसे काम लिया जाता है। नाइट्रिक एसिड् चाँदी पर विशेष काम करता है, हाइड्रो-क्लोरिक और उष्णम सालफिउरिक एसिड् तथा गरम नमकका पानी और एकोया-रिजिया कुछ कुछ रूपान्तर करनेमें समर्थ है।

नाइट्रिक एसिडमें चाँदी (Commercial Silver) डुबोनेसे बाजारमें विशुद्ध चाँदी मिलती है। पात्रमें जो हाइड्रोक्लोरिक एसिड रह जाती है, उसे जलानेसे क्लोराइड्-अव्-सिल्वर निकलती है। रासायनिक प्रक्रियासे चाँदीके द्वारा जितने मिश्रपदार्थ आविष्कृत किये गये हैं, उनकी सूची इस प्रकार है—

Suboxide of silver, Molybdate of suboxide of silver, Protoxide of silver, Peroxide of silver, Sulphide of silver, Sub & Proto-chloride of silver, Bromide of silver, Iodide of silver, Sulphate of silver, Nitrate of silver या Luner

caustic. इनके सिवा चांदसे triphosphate, pyrophosphate, metaphosphate, carbonate, borate, chlorate, mono-chromate, bichromate और arseniate आदि नमक निकलते हैं।

औषध बनाते समय शोधित रौप्यके अभावमें कान्त-लौह दिया जा सकता है।

"सुवर्णमथवा रौप्यं मृतं यत्र न लभ्यते।
तत्र कान्तेन कर्माणि भिषक् कुर्याद्विचक्षणः॥" (भावप्रकाश)

२ आर्थिक लाभ, धनकी आमदनी। ३ खोपड़ीका मध्य भाग, चाँदिया। ४ दो या तीन इञ्च लम्बी प्रकारकी मछली।

चाँदूड़—१ बरार प्रदेशके इलिचपुर तालुकके अन्तर्गत एक शहर। यह अक्षा० २१° १५' उ० और देशा० ७७° ४७' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां प्रति सप्ताहमें हाट लगता है। उस हाटसे जो कुछ शुल्क लिये जाते हैं वे शहरकी उन्नतिके लिये व्यय किया जाता है। यहाँ ग्रेट-इण्डियन पेनिनसुला रेलवेके ष्टेसन होनेके कारण व्यवसायकी विशेष सुविधा हो गई है। यहां चिकित्सालय, डाकघर, विद्यालय और पुलिस-थाना हैं। लोकसंख्या प्रायः ५२०८ है।

२ उक्त प्रदेशके अमरावती जिलेके अन्तर्गत एक तालुक। यह अक्षा० २०° ३१' एवं २१° १३' उ० और देशा० ७७° ४०' तथा ७८° १८' पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें चार शहर २०७ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १८२८०५ है। इस शहरमें शस्यक्षेत्र अधिक है और इन्हींके ऊपर अधिवासियोंकी जीविका निर्भर होती है। आबादी जमीनके सिवा बहुतसी परती जमीन भी हैं। यहाँ दिवानी, फौजदारी विचारालय तथा पुलिस थाना हैं।

३ उक्त जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २१° ४८' उ० और देशा० ७८° २' पू० पर रेलवे ष्टेसनसे १ मील-की दूरी पर अवस्थित है। ष्टेसनके समीप एक धर्मशाला है।

चाँदुड़िया—वङ्गदेशके खुलना जिलेके अन्तर्गत एक वाणिज्यप्रधान ग्राम। यह अक्षा० २२° ५४' ४५" उ० और देशा० ८८° ५६' ४५" पू० पर इच्छामती नदीके पूर्वतीर पर अवस्थित है। यहाँ एक म्युनिसपालिटी है।

चाँप (हिं० पु०) १ चाप देखो। (स्त्री०) २ दबाव, चप वा दब जानेका भाव।

३ पैरकी आहट, वह शब्द जो पैरके जमीन पर पड़नेसे होता है। ४ बन्दूकका एक पुरजा, इसके द्वारा कुन्देसे नली जुड़ी रहती है। ५ अगले दाँतों पर जड़वाने-की सोनेकी कीलें।

चाँपदानि—वङ्गदेशके हुगली जिलेके अन्तर्गत एक छोटा ग्राम। यह वैद्यवाटीके निकट हुगली नदीके दाहिने किनारे पर अवस्थित है। पहले यहां डकैतोंका वास था। ये यहांके अधिवासियों तथा पथिकोंका सर्वस्व लूटते और समय समय पर उन्हें मार भी डालते थे।

चाँपना (हिं० क्रि०) १ दबाना, मोड़ना। २ जहाजका पानी निकालनेके लिये पम्पका पेंच चलाना।

चाँयचाँय (अनु०) व्यर्थकी बकवाद, बकबक।

चांसलर (अं० पु०) बी० ए०, एम० ए० आदिके उपाधि देनेवाले विश्वविद्यालयके प्रधान अधिकारी।

चाउ (हिं० पु०) ऊँट या बकरेका बाल।

चाउपुर—युक्तप्रान्तीय बदायूं जिलेके राजपुर परगनेका एक ग्राम। यह गङ्गाके उपकूलमें बदायूं नगरसे ५६ मील दूर पड़ता है। प्रतिवर्ष कार्तिक मासको यहां एक मेला लगता, जिसमें प्रायः २० हजार यात्रियोंका समागम रहता है।

चाक (हिं० पु०) १ चक्र, चक्की, पहिया। २ गराड़ी, घिरनी, चरखी। ३ छूरी आदिकी धार तेज करनेका सान। ४ ऊखका रस रखनेका मट्टीका बरतन। ५ मण्डलाकार।

चाक (फा० पु०) दरार, फटोर, चीड़। ६ खलियानकी राशि पर छापा लगानेकी थापा। ७ मट्टीकी वह पिण्डी जो ढेंकलीके पिछले छोर पर बोझके लिये रखी जाती है। ८ मट्टीका एक बरतन जिससे ऊखका रस कड़ाहमें पकानेके लिये डाला जाता है।

चाक (तु० वि०) १ दृढ़, मजबूत, पुष्ट। २ हृष्टपुष्ट, तन्दुरुस्त, चुस्त।

चाकचक (तु० वि०) दृढ़, मजबूत।

चाक (अं० पु०) खरिया मट्टी, दुद्धी।

चाकचक्य (सं० क्ली०) चक-अच् चकः प्रकारे द्वित्वं चक-

चकस्तस्य भावः चकचक-ष्यञ्। १ उज्ज्वलता, चमक-दमक, चमचमाहट। २ शोभा, सुन्दरता।

चाकचिक्य (सं० क्लो०) चकचक भावार्थे ष्यञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। उज्ज्वलता, चमकदमक।

चाकचिञ्चा (सं० स्त्री०) चक-घञ् चाकः तं चिनोति चि-क्विप् तथा सती चीयते चि बाहुलकात् ड। श्वेतगुञ्जा, एक तरहकी लता।

चाकदह—हुगली नदीके तीर पर नदिया जिलेके रानाघाट उपविभागके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २३° ६' उ० और देशा० ८८° ३२' पू०के मध्य अवस्थित है। यह कलकत्तेसे ३८½ मील दूर पूर्व बङ्गाल रेलवेके एक ष्टेसनके समीप अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५४८२ है। यहां पवित्रसलिला भागीरथीके जलमें स्नान करनेके लिये दूर दूरसे मनुष्य आते हैं। इसके पास ही कुलिया नामक स्थानमें श्री श्री गौराङ्ग और उनकी सहधर्मिणी विष्णुप्रियाके मिलन उपलक्षमें अपराध-भञ्जन नामका एक वार्षिक मेला लगता है। यह मेला तीन दिन तक रहता है और इसमें प्रायः सात आठ हजार यात्री जुटते हैं।

चाकदिल (फा० पु०) एक प्रकारका बुलबुल।

चाकन—बम्बई प्रान्तिक पूना जिलेके खेड़ तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १८° ४५' उ० और देशा० ७३° ३२' पू०में पूनासे १८ मील दूर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४१८७ है। चाकन दुर्ग प्रायः चतुष्कोण बना है। बाहरी इमारतका एक हिस्सा १२८५ ई०को किसी अविसीनीय राजा कर्तृक निर्मित दुर्गका ध्वंसावशेष बतलाया जाता है। १४४३ ई०को मालिक-उत्-तुजार नामक कोई बहमानी रईस यहां आ करके रहे। उन्हें २य अलाउद्दीनने कोङ्कनके सब किले गिरा देनेको कहा था। १४८६ ई०को अहमदनगर वंशके प्रतिष्ठाता मालिक अहमदने चाकन दुर्ग अधिकार किया। १५९५ ई०की अहमदनगरके १०वें राजा बहादुरने यह किलाके शिवजी पितामह मालोजी भोंसलाको दे डाला। १६६२ ई०को मुगल-सेनापति शायस्त खाँने उसे अधिकार किया, परन्तु १६६७ ई०में औरङ्गजेबने फिर शिवाजीको सौंप दिया। १८१८ ई०को अंगरेजोंने मराठोंसे लड़ भिड़ करके चाकन ले लिया।

चाकना (हिं० क्रि०) १ खलियानमें अनाजकी ढेरी पर राख या मट्टीसे छापा लगाना। इससे अगर कोई अनाज निकाले तो मालूम पड़ जाता है। २ पहचानके लिए किसी चीज पर चिह्न या निशान लगाना। ३ हद खींचना, सीमा बांधनेके लिए किसी चीजको चिह्न वा रेखा खींच कर चारों ओरसे घेरना।

चाकर (फा० पु०) दास, भृत्य, सेवक, नौकर।

चाकरानी (हिं० स्त्री०) दासी, नौकरानी, लौंडी।

चाकरी (फा० स्त्री०) सेवा, नौकरी, टहल, खिदमत।

चाकसू (हिं० पु०) १ वन कुलथीका पौधा। २ वन कुलथीका बीज।

चाकी (हिं० स्त्री०) १ चक्की, वह यन्त्र जिससे आटा पीसा जाता है। २ बिजली, वज्र। ३ पटेकी एक चोट जो सिर पर की जाती है। ४ बङ्गाली कायस्थोंके एक उपाधि।

चाकी—पञ्जाबमें गुरुदासपुर जिलाके मध्य हो कर बहनेवाली एक नदी। यह डलहौसी स्वास्थ्यनिवासके निकटकी गिरिमालासे निकल कर कुछ दूर तक इसी जिलाके पूर्वकी ओर बहती है और इसके बाद पार्वत्य प्रदेशकी पयोप्रणाली और चम्बागिरिसे निकली हुई उपनदीके साथ मिल और कुछ दूर प्रवाहित हो पाठानकोटसे दो मील दक्षिणमें यह दो शाखाओंमें विभक्त हो गई है। इसकी एक शाखा दक्षिणकी ओर बहती हुई मीरथल नामक स्थानके निकट विपाशा नदीमें जा गिरी है। दूसरी शाखा पश्चिमकी ओर बहती हुई इरावती नदीके साथ मिलती थी, किन्तु वारिदोभाव खालसे प्रतिहत हो कर अन्तमें विपाशा नदीमें गिरी है।

चाकू (तु० पु०) वह यन्त्र जिससे कलम, फल तथा और दूसरी चीजें काटी या छीली जाय, छूरी।

चाक्र (सं० त्रि०) चक्रेण निर्वृत्तं चक्र-अण्। १ जो चाकसे उत्पन्न हुआ है।

"चाक्रमौसलमित्येवं संग्रामं रचक्षत्रः।" (हरिवंश १०० अ०)

चाक्रवर्मण (सं० पु०) चक्रवर्मणोऽपत्यं चक्रवर्मन्-अण् टिलोपः। चक्रवर्माके पुत्र। ये एक प्रसिद्ध वैयाकरण थे। पाणिनिने इनके मतका उल्लेख किया है—

ईतचाक्रवर्मणस्य। पा ६।१।१३०।

चाक्रवाकेय (सं० त्रि०) चक्रवाक सख्यादि' चातुरर्थिक ढञ्। चक्रवाकके निकटवर्त्ती देशादि।

चाक्रायण (सं० पु०) चक्रस्य गोत्रापत्यं चक्र-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। चक्र नामक ऋषिके वंशधर। जिनका उल्लेख छान्दोग्य उपनिषद्में है। (छान्दोग्य १।१०।१)

चाक्रिक (सं० त्रि०) चक्रेण समूहेन यन्त्रविशेषेण वा चरति चक्र-ठक्। चरति। पा ४।४।८। १ घाण्टिक, जो बहुतसे मिल कर किसी मनुष्यकी स्तुति गान करता हो। याज्ञवल्क्य-स्मृतिके मतसे इन लोगोंका अन्न भोजन निषिद्ध है।

"पद्मनाम्तिनाये व तथा चाक्रि तबन्दिनाम्।
एषामन्नं न भोक्तव्यं सोमविक्रयिणस्तथा ।" (याज्ञ० १।१६५)

२ तैलकार, तेली। ३ शाकटिक, गाड़ीवान।

"भिक्षुका चाक्रिकाश्चैव क्लीबोन्मत्तान् कुशीलवान्।
वाहयान् कुर्यान्नरश्रेष्ठो दोषाय तेस्युरन्यथा॥" (भारत १३।१८ अ०)

४ चक्रशिल्पी, कुम्हार। ५ सहचर, अनुचर।

"तदात्मकाः चपि तस्मिन् गडनद्रोहचाक्रिकाः।" (राजतरङ्गिणी ५।२०७)

(त्रि०) ६ चक्राकार। ७ चक्रसम्बन्धीय। ८ कोई चक्र या समाज सम्बन्धीय, किसी चक्र या मण्डलीसे सम्बन्ध रखनेवाला।

चाक्रिका (सं० स्त्री०) एकप्रकार पुष्प, एक फूलका नाम।

चाक्रिण (सं० पु०) चक्रिणोऽपत्यं चक्रिन्-अण् टिलोपाभावः। संयोगादिश्च। पा ६।४।१६६। चक्रिके पुत्र। चक्रिन् देखो।

चाक्रेय (सं० त्रि०) चक्रसख्यादि' चातुरर्थिक-ढञ्। चक्रके निकटवर्त्ती देशादि, चक्रके समीपके देश।

चाक्षुष (सं० क्ली०-) चक्षुषा निर्वृत्तं चक्षुस्-अण्। तेन निर्वृत्तं। पा ५।१।७९। १ प्रत्यक्षविशेष, दर्शनेन्द्रिय द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होता है। भिन्न भिन्न पदार्थ ग्रहण करनेमें इसका व्यापारभेद हुआ करता है। द्रव्यके चाक्षुष प्रत्यक्षमें व्यापार संयोग है, ऐसे ही द्रव्य समवेत रूपादि पदार्थके चाक्षुष प्रत्यक्षमें व्यापार संयुक्त समवाय और द्रव्यसमवेत पदार्थ (गुणत्वादि जाति)-के चाक्षुष प्रत्यक्षमें व्यापार-संयुक्त-समवेत-समवाय है। (भाषापरि०) चक्षुषा गृह्यते चक्षुस्-अण्। २ चक्षुर्ग्राह्य रूपादि। (त्रि०) ३ चक्षुर्ग्राह्यरूपादियुक्त।

(पु०) ४ षष्ठ मनु। मार्कण्डेय-पुराणके मतसे ये पूर्व जन्ममें ब्रह्माके चक्षुसे उत्पन्न हुए थे, इसलिए इस जन्ममें भी इनका नाम चाक्षुष हुआ है। (मार्कण्डेय पु० ७६।१)

मार्कण्डेयपुराणमें इनकी कथा इस प्रकार लिखी है कि—राजर्षि अनमित्रकी महिषी भद्राके गर्भसे सर्वसुलक्षणसम्पन्न एक पुत्र हुआ। पुत्रके रूप और सुलक्षणोंको देख कर पितामाताके आनन्दकी सीमा न रही। महिषी भद्रा पुत्रको गोदमें ले कर लाड़ करने लगीं। सहसा बालक जोरसे हँस पड़ा। माताने बालकको बिना कारण हँसते देख, आश्चर्यसे पूछा—"हे वत्स! तुम्हारे हँसनेका कारण क्या? मेरी गोदमें तुम्हें डर मालूम पड़ता है, या कोई आश्चर्यको बात देख कर हँस रहे हो?" बालकने धीरे धीरे कहा—"माता! वह देखिये, एक बिल्ली मुझे खानेके लिए ताक लगाये बैठी है और जातहारिणी भी मुझे ले जानेके लिए छिपी बैठी है। दुनियाँमें सब ही अपने अपने स्वार्थमें मग्न हैं। आप सोच रही हैं, कालान्तरमें मैं आपका उपकार करूंगा। किन्तु वह कल्पना झूठी है। मैं ५।७ दिनसे ज्यादा आपके पास न रह सकूंगा। तथापि बिना जाने आप मुझे प्यार कर रही हैं और बेटा, वत्स आदि झूठे नामोंसे पुकार रही हैं। ये सब हाल देख कर मैं हंसा था।" इ-बह बालकको ऐसी बात सुन कर भद्राके हृदयमें बड़ी चोट पहुंची, वह बालकको छोड़ कर चल दीं। उसी दिन विक्रान्त राजाकी रानीके भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। जातहारिणी इस बालकको उनके पलङ्ग पर रख कर उनके पुत्रको दूसरे किसी स्थानको ले गई। रानी सो रही थीं, उन्हें कुछ मालूम न पड़ा। उसी बालकको पुत्रकी तरह पालने लगीं। महाराज विक्रान्तने पुत्रका नाम आनन्द रक्खा।

राजकुमार आनन्द धीरे धीरे सर्वशास्त्रपारदर्शी हो कर पितामाताके यत्नसे बढ़ने लगे। यथासमय आनन्दका उपनयन हुआ। उपनयन होनेके बाद आचार्यने उनको उपदेश दे कर कहा—"हे वत्स! पहिले माताकी पूजा कर उन्हें नमस्कार करो।" आनन्द गुरुके मुंहसे ऐसी बात सुन हँस कर कहने लगे—"हे गुरो! मैं किसकी पूजा करूं? जो माता हैं उनकी पूजा करूं, या जिनने

पाला है उनको ?" आचार्यने कहा—"क्यों वत्स ! तुम्हारी माता विक्रान्तराजमहिषी हैमिनी हैं, उन्हींकी पूजा करो।"

आनन्दने उत्तर दिया—"नहीं, ये मेरी माता नहीं हैं, इनके पुत्रका नाम चैत्र है, वह विशाल ग्राममें बोध-विप्रके घर प्रतिपालित हुआ है। मेरी माताका नाम भद्रा है।" इसके बाद आनन्दके मुंहसे सब हाल सुन कर सबहीको परम आश्चर्य हुआ। आनन्द राजा और रानीको सान्त्वना दे कर तपस्यामें निरत हुए। आनन्दकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर ब्रह्माने उन्हें मनु बनाया। ये ही चाक्षुष मनु नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। फिर इनने राजा उग्रकी कन्या विदर्भासे विवाह किया। इन मन्वन्तरके सुरोंका नाम आर्य था, उनके पाँच गण थे। देवगणमें जो सौ यज्ञोंका अनुष्ठान कर सकते थे, उन्हें इन्द्र कह कर ग्रहण किया जाता था। चाक्षुष मन्वन्तरमें मनोजव इन्द्र हुए थे। सुमेधा, विरजा, हविष्मान्, उन्नत, मधु, अतिनामा और सहिष्णु, ये सप्तर्षि थे। जरु, पुरु और शतद्युम्न आदि मनुके पुत्र थे। (मार्कण्डेयपु० ७६ अ०) भागवतके मतसे चाक्षुष मनु विश्वकर्माके पुत्र थे। (भागवत ८।५।७) इनकी माताका नाम आकृति और पत्नीका नाम नड्वला था। पुरु, कृत्स्न, ऋत, द्युमान्, सत्यवान्, धृत, अग्निष्टोम, अतिरात्र, प्रद्युम्न, शिवि और उल्मुक ये मनुके पुत्र थे। इस मन्वन्तरमें इन्द्रका नाम मन्त्रद्रुम था। (भागवत)

मत्स्यपुराणके मतसे नड्वलाके गर्भसे जरु, पुरु, शतद्युम्न, तपस्वी, सत्यभाषी, हविः, अग्निष्टुत्, अतिरात्र, सुद्युम्न, अपराजित और अभिमन्यु, इतने पुत्र हुए थे।

४ स्वायम्भुव मनुके पुत्र। ५ कक्षेयुके एक पुत्र और सभानरके भाई। (हरिवंश ३१ अ०)

६ रिपुके पुत्र, इनकी माताका नाम बृहती था। इनके औरस और अरण्य प्रजापतिकी कन्या वीरणीके गर्भसे मनुकी उत्पत्ति हुई थी। (हरिवंश २ अ०)

७ खनित्रका पुत्र, इसका नाम विविंशति था।

८ चतुर्दश मन्वन्तरका एक देवगण।

"चाक्षुषाय पवित्राय कनिष्ठा भाजिरास्तथा।" (विष्णु० ३।२ अ०)

९ छठा मन्वन्तर।

"चाक्षुषे त्वन्तरे प्राप्ते प्राक्सर्गे कालविद्रुते।" (भाग० ४।३०।४९)

१० पितृभेद। "सुयामं चाक्षुषः।" (अथर्ववेद १४।६।७)

चाक्षुषत्व (सं० क्लो०) चाक्षुष भावार्थे त्व। चाक्षुषका धर्म।

चाक्ष्म (सं० त्रि०) चक्ष बाहुलकात् म पृषोदरादित्वात् साधुः। १ द्रष्टा, देखनेवाला।

"चाक्ष्मो यद्वायं मरते मती।" (ऋक् २।२४।९)

'चाक्ष्मः सर्वस्य द्रष्टा।' (सायण)

२ प्रसन्न, दयाशील, दयालु।

चागे—बलुचिस्तानका एक जिला। यह अक्षा० ३८° २ तथा २८° ५४' उ० और देशा० ६०° ५०' एवं ६६° २५' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १८८६२ वर्गमील है। इसके उत्तरमें अफगानिस्तान, पूर्वमें कलात राज्यका सारावन विभाग, दक्षिणमें खारान और पश्चिममें पारस्य देश है। यहांकी सबसे बड़ी नदीका नाम पिशीनलोर है, जिसे वहांके लोग धोर कहते हैं। दालबन्दिनके निकट इसी नामका एक पहाड़ है। इस जिलेमें साँप, बिच्छू, जंगली गधा, छिपकली तथा पारसी हिरन अधिक पाये जाते हैं।

यहांकी जलवायु शुष्क तथा वसन्त और शरद ऋतुमें बहुत स्वास्थ्यकर होती है। गर्म ऋतुमें दिनको बहुत गर्मी पड़ती और रातको ठण्ड रहती है।

प्रवाद है, कि पहले यह स्थान अरब और मङ्गोल जातिके अधिकारमें था। १७४० ई०में नादिरशाहने खारनके प्रधानको नुशकी जागीरके रूपमें अर्पण किया, किन्तु थोड़े समयके बाद ही यह ब्राहुइके अधिकारमें आ गया। हेनरी पोतिनगर १८१० ई०में और सर चार्लस मैकग्रेगर १८७७ ई०में इस जिलेको देखने आये थे। १८८६ ई०में अफगानिस्तानके अमीरने चाग जीतनेके लिये एक दल सेना भेजी, किन्तु इसके थोड़े ही अंश हाथ लगे। १८८९ ई०के जून मासमें कलातके राजाने नुशकी निजामत वार्षिक ६०००) रु० पर गवर्मेण्टके हाथ लगा दी और वहां एक तहसील स्थापित की गई। १९०१ ई०में चागेके दालबन्दिनके निकट एक छोटी तहसील कायम की गई।

इस जिलेकी लोकसंख्या प्रायः १५६८८ है। अधिवासियोंमें सुन्नी सम्प्रदायके मुसलमानोंकी संख्या अधिक

है। ये ब्राहुई, बलुची और कुछ कुछ पश्तू भाषा बोलते हैं। इसमें कुल ३२ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। अधिवासियोंमें अधिकांश कृषिजीवी हैं और थोड़े पशु पाल कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। यहां ऊँट, भेड़ और बकरे बहुत पाले जाते हैं। इस जिलेमें दरी, पशम, घी और हींगका व्यवसाय अधिक होता है।

यह जिला कई बार दुर्भिक्ष तथा दैवदुर्विपाकसे उत्पीड़ित हुआ था। इस कारण बहुतसे लोग इस स्थानको छोड़ दूसरे जगह जा बसे थे। १८०२ ई०में यहां घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। इस समय गवर्मेंटने भी पीड़ित प्रजाको यथेष्ट अर्थ सहायता की थी। राज्यकार्यका सुविधाके लिये यह जिला दुग्गकी तहसील, चागे उपतहसील और पश्चिमी सिन्जरानी देशमें विभक्त है। विचारकार्य मजिष्ट्रेट, पुलिसके सहकारी सुपरिण्टेण्डेण्ट, एक तहसीलदार और दो नायब तहसीलदारसे सम्पन्न होता है। उपजका छठा भाग मालगुजारके रूपमें लिया जाता है। हींग तथा पशु चारणमें भी एक प्रकारका कर लगता है। यहांकी आय प्रायः २६०००) रु०की है। इस जिलेमें स्कूल तथा चिकित्सालय भी हैं।

२ बलुचिस्तानके चागे जिलेकी एक उपतहसील। यह अक्षा० २८° १६´ एवं २८° ३४´ उ० और देशा० ६३° १५´ तथा ६५° ३५´ पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें अफगानिस्तान और दक्षिणमें रासकोह पहाड़ है। भूपरिमाण ७२८८ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ४८३३ है। यहांके गृहस्थ कृषिकार्यमें निपुण नहीं हैं। वे विशेष कर भेड़ा और ऊंट पाल कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं।

चाङ्ग (सं० पु०) चीयते इ चमङ्ग यस्य, बहुव्री०। १ चाङ्गेरी, खट्टी लोनी। २ दन्तपटुता, दांतकी सफाई, दांतकी सुन्दरता।

चाङ्गभकार—मध्यप्रदेशका एक करद राज्य। यह अक्षा० २३° २८´ तथा २३° ५५´ उ० और देशा० ८१° ३५´ एवं ८२° २१ के बीच पड़ता है। १८०५ ई० तक वह छोटा नागपुरमें लगता रहा। इसके उत्तर-पश्चिम तथा दक्षिण रीवा राज्य और पूर्वको कोरिया राज्य है। पहले यह कोरिया राज्यके ही अधीन रहा। यहां जङ्गल और पहाड़ बहुत हैं। मुरारगढ़की चोटी ३०२७ फुट ऊंची है। बनास, बयती और नेउर इसकी प्रधान नदियां हैं। पहले चाङ्गभकारमें जङ्गली हाथी बड़ा उत्पात करते थे। मराठों और पिण्डारियोंके आक्रमणसे तङ्ग आ करके स्थानीय राजाने रीवाके राजपूतोंको राज्यकी रक्षाके लिये गांव दे डाले थे। १८१८ ई०को यह राज्य अंगरेजोंके हाथ लगा और १८४८ ई०को कोरियासे अलग हुआ। इसके हरचौका ग्राममें पहाड़को तोड़ करके बनाये गये गृहोंका भग्नावशेष विद्यमान है। मालूम होता है कि पहले उनमें मन्दिर और विहार रहे।

इसकी लोकसंख्या प्रायः १६५४८ है। यहां गोंड़ और हो बहुत रहते हैं। १८९८ और १९०५ ई०के सन्धिपत्रानुसार राजा इस राज्यका प्रबन्ध करते हैं। छत्तीसगढ़के चीफकमिश्नरका उस पर प्रभुत्व है। राजा किसी भी खानसे कोई धातु निकाल नहीं सकते। राज्यका आय प्रायः १३०००) रु० है। सरकारको ३८७) रु० कर देना पड़ता है। शिक्षाका बहुत कम प्रचार है।

चाङ्गेरी (सं० स्त्री०) चाङ्ग ईरयति चाङ्ग-ईर-अण्, उपपदस०। गौरादित्वात् ङीष्। १ अम्ललोनिका, अमलोनी जिसका साग होता है। इसका गुण-दीपन, रुचिकर, लघु, उष्ण, कफ और वातनाशक, अम्लरस, पित्तवृद्धिकर तथा ग्रहणी, अर्श और कुष्ठनाशक है। (भावप्रकाश) २ निम्बुकवृक्ष। ३ पालङ्क शाक।

चाङ्गेरीघृत (सं० क्ली०) चाङ्गेर्या पक्वं घृतं, मध्यपदलो०। औषधघृतविशेष, घीमें पकाई हुई एक तरहकी दवा। नागर (सोंठ), पिप्पलीमूल, चित्रकमूल, गजपीपल, गोक्षुर, पीपल, धान्यक, विल्व, आकनादि और यमानी इन सबको चूर्ण कर चाङ्गेरी रसमें घृत पाक करना पड़ता है। इसके सेवनसे अर्श, ग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका और गुदभ्रंश रोगोंका प्रतीकार होता है। (चक्रदत्त)

चाङ्गेरीसदृशपत्र (सं० पु०) सुनिषण्णक शाक, चणपत्ती या शिरीआरी नामक साग।

चाचकपुर—जौनपुर जिलेका एक ग्राम। झनझरि मसजिदके लिये यह स्थान विख्यात है। इब्राहिमशाहने उस मसजिदका निर्माण किया था। यहां हिन्दुराजा जयचन्द्रका बनाया हुआ एक हिन्दूदेवालय था।

चाचपुट (सं॰ पु॰) तालविशेष, तालके ६० मुख्य भेदोंमेंसे एक। इसमें एक गुरु, एक लघु और एक प्लुत स्वर होते हैं।

"गुरुलघुः प्लुतश्चैव भवेच्चाचपुटाभिधः।" (सङ्गीतदामोदर)

चाचर (हिं॰ स्त्री॰) चर्चरी, एक प्रकारका गीत जो होलीमें गाया जाता है।

चाचरि (हिं॰) चाचर देखो।

चाचरी (सं॰ स्त्री॰) चर्चरी, योगकी एक मुद्रा।

चाचलि (सं॰ त्रि॰) चल-यङ्-लुगन्त कि। १ अतिशय चञ्चल, अत्यन्त चपल, चालाक। २ बक्रगामी।

चाचा (हिं॰ पु॰) पिताका छोटा भाई, पितृव्य, काका।

चाचिङ्गदेव—गुजरातके अन्तर्गत पावकगढ़के एक राजा। इनका जन्म प्रसिद्ध चौहानपति पृथ्वीराजके वंशमें हुआ था। इनके पिताका नाम श्रीचाङ्गदेव था।

चाची (हिं॰ स्त्री॰) पितृव्यपत्नी, चाचाकी स्त्री, काकी।

चाञ्चल—बङ्गालके मालदहके अन्तर्गत एक बड़ी जमीन्दारी।

चाञ्चल्य (सं॰ क्ली॰) चञ्चलस्य भावः चञ्चल-ष्यञ्। चञ्चलता, अस्थिरता चपलता।

"चाञ्चल्यवर्जिता लक्ष्मीः पुत्रपौत्रविवर्द्धिनी।" (जगन्मङ्गलकवच)

चाट (सं॰ पु॰) चाट्यते भिद्यते यस्मात्। चट-अप्। १ विश्वासघातक चोर, वह जो किसीका विश्वासपात्र बन कर उसका धन हरण करे, ठग।

"चाटतस्करदुर्वृत्तमहासाहसिकादिभिः।" (याज्ञवल्क्य)

"चाटाः प्रतारकाः विश्वास्य ये परधनमपहरन्ति।"

(मिताक्षरा आचाराध्याय)

२ उचक्का, चाँई।

चाट (हिं॰ स्त्री॰) १ चाह, चसका, शौक, लालसा। कोई चीज खानेकी प्रबल इच्छा। २ यथेष्ट इच्छा, कड़ी चाह, लोलुपता। ३ लत, आदत, बान, टेव, धत। ४ एक तरहका व्यञ्जन जो मिर्च, खटाई, नमक आदि डाल कर बनाया जाता है।

चाटकायन (सं॰ पु॰) चटकस्य गोत्रापत्यं चटक-फक्। नड़ादिभ्यः फक्। पा ४।१।९९। चटकका गोत्रापत्य, चटक पक्षीकी सन्तान, गौरैया चिड़ियाके वंशधर।

चाटकैर (सं॰ पु॰) चटकायाः पुमपत्यं चटका-एरक्। चट काया एरक्। पा ४।१।१२८। चटकाका पुंअपत्य, छोटा नर गौरैया।

चाटना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी वस्तुको जीभसे उठाना, स्वाद लेना। २ सम्पूर्ण खा डालना, चट कर जाना। ३ प्यारसे किसी वस्तु पर जिह्वा फेरना।

चाटपुट (सं॰ पु॰) तालविशेष, तबलेका एक ताल। चाचपुट देखो।

चाटा (देश॰) नाँद, कोल्हूका पेरा हुआ रस रखनेका एक बरतन।

चाटी (देश॰) खूब मोटा दलवाली मिट्टीकी मटकी।

चाटु (सं॰ पु॰-क्ली॰) चट्-ञुण्। इसिमिमनिचरिचटिभ्यो ञुण्। उण् १।३। १ प्रियवाक्य, मीठी बात, खुशामद।

"नो चाटुश्रवणं कृतं न च दृशा हारोऽन्तिके वीक्षितः।" (साहित्यद॰)

चाटुक (सं॰ पु॰-क्ली॰) चाटु स्वार्थे कन्। चाटु देखो।

"विस्रब्धचाटुकशतानि रतान्तरेषु।" (साहित्यद॰)

चाटुकार (सं॰ त्रि॰) चाटुं करोति चाटु-कृ-अण्, उपपदस॰। पा ३।२।२३ सूत्र देखो। झूठी प्रशंसा करनेवाला, खुशामदी, चापलुस।

"चाटुकारमपि प्राणनाथं रोषादपास्य या।" (साहित्यद॰)

चाटुकारी (सं॰ स्त्री॰) झूठी प्रशंसा करनेका काम, चापलूसी।

चाटुपटु (सं॰ पु॰) चाटेषु पटुः, ७-तत्। १ भण्ड, भाँड़।

"पाण्डवानां पक्षिनोऽसौ चासचाटुपटुः कविः।" (नैषध)

चाटुलोल (सं॰ त्रि॰) चाटेषु लोलः, ७-तत्। चाटुकार, खुशामद।

चाटुवटु (सं॰ पु॰) चाटेषु वटुः, ७-तत्। विदूषक. वह जो नाँच गान प्रभृति कार्योंके समय दर्शकोंको हँसी लगावे।

चाटुवाद (सं॰ पु॰) प्रियवाक्य, मीठी बात।

चाटुवादिन् (सं॰ त्रि॰) चाटु वदति चाटु-वद-णिनि। चाटुकार, झूठी प्रशंसा करनेवाला, खुशामद करनेवाला, खुशामदी।

चाटूक्ति (सं॰ स्त्री॰) चाटुरूपा उक्तिः, कर्मधा॰। १ प्रियवाक्य, मीठी बात। चाटोश्चाटुवाक्यस्य उक्तिर्यत्र, बहुव्री॰। २ सेवा, टहल।

चाटेश्वर—उड़िष्याके कटक जिलेके पद्मपुर परगणाके अन्तर्गत किशनापुर (कृष्णपुर) ग्राममें प्रतिष्ठित एक प्रसिद्ध शिवलिङ्ग और उनका मन्दिर। यह मन्दिर कटकसे प्रायः १२ मील उत्तर-पूर्वमें, तथा कटकसे चाँदबाली तक जो रास्ता गई है, उससे २ मील उत्तरमें अवस्थित है। उक्त किशनापुर ग्राममें बहुत कम लोगोंका वास है, जो भी रहते हैं, उनमें अधिकांश ही भोपा (सेवक) हैं। पहिले चाटेश्वरकी सेवार्थ बहुतसा देवोत्तर था, परन्तु सेवकोंने उसे धीरे धीरे हस्तान्तर कर दिया है। अब सेवा-पूजाका आड़म्बर भी पहिले जैसा नहीं रहा। अब सेवार्थ १००० बीघा जमीन और ३०० भरण धान्यका बन्दोबस्त किया गया है। शिवरात्रि और कार्तिक मासकी शुक्ल-चतुर्दशीके दिन यहाँ बहुतसे लोगोंका समागम होता है।

उक्त मन्दिरमें चाटेश्वरके दोनों तरफ कृष्णराधिका और पार्वतीका मन्दिर है, परन्तु वे देखनेमें आधुनिकसे जान पड़ते हैं। चाटेश्वर तब भी पुराना है। उड़िष्याके अन्यान्य स्थानोंमें ईसाकी बारहवीं और तेरहवीं शताब्दीमें जो मन्दिर बने हैं, चाटेश्वर मन्दिरको देखनेसे यही मालूम होता है कि, वह उन्हींके समसामयिक है। यह मन्दिर पत्थरसे बना हुआ है, इसका शिल्पनैपुण्य भी बुरा नहीं है, परन्तु पहिले यह देखनेमें जैसा सुन्दर और शिल्पनैपुण्ययुक्त था, अब वैसा नहीं रहा, सौन्दर्य क्रमशः घटता जाता है। इस ऊँचे मन्दिरका भीतरका भाग अन्धकारमय मालूम होता है। सेवकोंको लापरवाहीसे मन्दिरके भीतर सैकड़ों चमगादड़ोंका वास हो गया है। गर्भगृहके भीतर एक खाई-सी बनी हुई है, जिसमें लिङ्ग सर्वदा ही पानीमें डूबे हुए रहते हैं, कभी कभी उत्सवके समय निकलते हैं।

इस चाटेश्वरके मन्दिरमें उत्कलराज (२य) अनङ्गभीमकी प्रशस्तिका एक शिलालेख मिलता है।*

चाटेश्वरकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसी जनश्रुति है—

"इस समय जहां चाटेश्वर हैं, वहाँ एक सरोवर था। उसके पास ही एक पण्डितजी "चाटशाली" (पाठशाला) कर छात्रोंको पढ़ाते थे। देवदेव महादेव भी चाट * के भेषमें उन पण्डितजीके पास पढ़ने आया करते थे। पण्डितजीको सब होसे वेतनका तकादा करना पड़ता था, परन्तु चाट-भेषधारी तकादा करनेसे पहिले ही वेतन दे दिया करते थे। पण्डितजी उनसे परिचय पूँछते थे, पर वे कभी परिचय नहीं देते थे। पण्डितजीके मनमें क्रमशः सन्देह बढ़ने लगा। एकदिन पण्डितजीने पाठशाला बन्द होने पर उनका पीछा किया। चलते चलते देखा कि चाट उस सरोवरमें कूद कर अन्तर्हित हो गये। उसी दिन रातको पण्डितजीको स्वप्नादेश हुआ "मैंने अपना माहात्म्य प्रगट करनेके लिए चाटके भेषमें तुम्हारे पास पढ़ा था। अबसे मेरा नाम चाटेश्वर प्रसिद्ध करना।" उस समयसे बहुतसे लोग यहाँ आ कर पण्डित होने लगे। क्रमशः इस स्थानका माहात्म्य राजाको मालूम पड़ा। उनने सरोवर मुदवा दिया और उस पर एक बड़ा भारी सुन्दर मन्दिर बनवाया, जो इस समय चाटेश्वरके नामसे प्रसिद्ध है। उस मन्दिरकी सेवार्थ उनने बहुतसी सम्पत्ति दान की थी।

उड़िष्याके राजा २य नरसिंहदेवके ताम्रलेखमें चोड़गङ्गसे लगा कर २य अनङ्गभीम तक जो वंशावली लिखी है, चाटेश्वरके शिलालेखमें भी वैसी है।

चाटेश्वरके शिलालेखके पढ़नेसे मालूम होता है कि चोड़गङ्गके अनङ्गभीम नामके एक पुत्र थे, उन अनङ्गभीमके वत्सगोत्रीय गोविन्द नामक एक विचक्षण मन्त्री तथा राजेन्द्र नामके एक पुत्र थे। इन्हीं राजेन्द्रसे त्रिकलिङ्गनाथ और (२य) अनङ्गभीम जन्मे थे।

इन (२य) अनङ्गभीमके प्रधान मन्त्रीका नाम विष्णु था। इन विष्णुके प्रबलप्रतापसे बहुतसा यवनराज्य अनङ्गभीमके अधिकारमें आया था, तथा तुम्माण राजा उनके भयसे सशङ्कित होते थे।

उक्त विवरणसे साफ मालूम पड़ता है कि २य नरसिंहके ताम्रलेखमें वर्णित अनियङ्कभीम और चाटेश्वर शिलालेखके चोड़गङ्गके पुत्र अनङ्गभीम दोनों एक ही हैं, इसी प्रकार ३य राजराज और राजेन्द्र दोनों

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. VII. Plate XXIV. देखो

* उड़िष्यामें चाट शिष्य वा छात्रको कहते हैं।

एक ही थे, इसमें सन्देह नहीं। अब चाटेश्वर-शिलालेख और २य नरसिंहके ताम्रलेखके अनुसार बिना किसी सन्देहके उड़िष्याके गाङ्गेय राजाओंको वंशावली इस प्रकार बनाई जा सकती है—
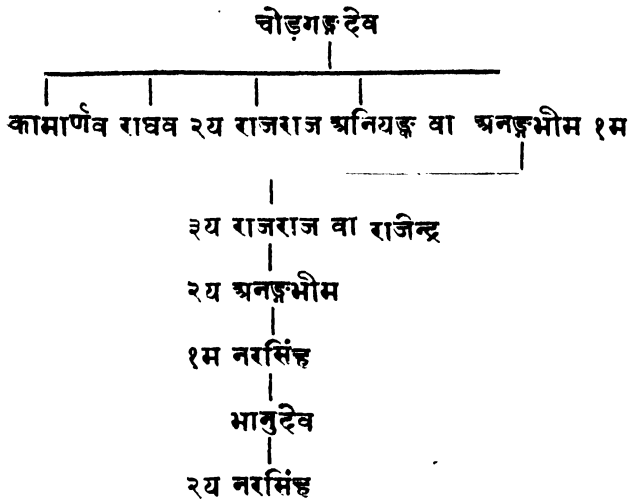
२य अनङ्गभीमने बहुतसी पुरानी कीर्तिओंका संस्कार कराया था, तथा उनने ही कामाख्यकके मन्दिर-की प्रतिष्ठा कराई थी, जो इस समय चाटेश्वरके नामसे प्रसिद्ध है। अन्यान्य विवरण गाङ्गेय शब्दमें देखो।

चाड़चट—गुजरातकी पालनपुर एजेन्सीके अन्तर्गत एक जमींदारी। साधारणतः सन्तानपुरके साथ सन्तानपुर-चाड़चट नामको प्रसिद्धि है। दोनोंका रकबा ३०३ वर्ग-मील है। चाड़चटमें ३६ ग्राम लगते हैं। यहांके राजा झरियाराजपूतकुलोद्भव है। राजाके ज्येष्ठपुत्र राज्यके उत्तराधिकारी होते हैं। ये तालुकदार कहलाते हैं। १८२०ई० २१ जुलाईको अंग्रेज गवर्मेण्टके साथ तालु कदारका बन्दोवस्त हुआ था।

यहांकी जमीन समतल और साफ है, जंगल नहीं है। मिट्टी कहीं कर्दममय, कहीं बालुकामय और कहीं काली है। यहांकी अधिकांश जमीन इक-फसली है। यहां नमककी पैदायश बहुत ज्यादा है। नदी आदि यहां ज्यादा नहीं है, किन्तु बड़े बड़े तालाब बहुत हैं। वैशाख तक उनमें पानी रहता है, उसके बाद अधिवासियोंको कुओंकी शरण लेनी पड़ती है। यहां ५से १० फट गड्ढा खोदनेसे ही पानी निकल आता है। लोकसंख्या प्रायः १२०८२ है।

चाणक (सं० पु०-स्त्री०) चाणक्यस्य छात्रः चाणक्य-अण् यस्य लोपः। १ चाणक्यके छात्र। २ कम्पास। (Compass)

चाणक—इसका दूसरा नाम बाराकपुर है। यह नगर २४ परगनेके अन्तर्गत और कलकत्तेसे ७॥ कोस उत्तरमें है। अक्षा० २२° ४५´ उ० और देशा० ८८° २३´ ५२´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके बगलमें भागीरथी नदी बहती है। यहां एक सेना-निवास (छावनी) है। इसलिए अंग्रेजोंने इसका नाम बाराकपुर रख दिया है। यहां ई० बी० रेलवेकी एक ष्टेशन है। प्रवाद है, कि जब चार्णकने इस नगरको बसाया था। उनके नामका अपभ्रंश हो कर इस नगरका नाम हुआ है। किन्तु कर्नल इउल (Yule)-ने प्राचीन पत्रादि देख कर स्थिर किया है, कि इस प्रवादमें कुछ भी सत्यता नहीं है। चार्णक साहबके पैदा होनेसे बहुत पहले भी यह स्थान आचाणक वा चाणक नामसे प्रसिद्ध था। इसकी जनसंख्या ३५६४७ है, जिसमें २६१५७ हिन्दू, ८५१२ मुसलमान और ८७८ अन्य लोग हैं। सेनानिवाससे दक्षिणकी तरफ एक मनोहर उद्यान है, जो बारकपुर पार्कके नामसे प्रसिद्ध है। इस उद्यानके भीतर एक उत्कृष्ट प्रासाद है, जो भारतके गवर्नर जनरल लार्ड मिण्टोके समयमें बना था। पीछे मारक्विस् आफ हेष्टिंग्स्-ने इसको परिवर्द्धित किया था। अवकाश मिलने पर गवर्नर साहब चित्तविनोदनार्थ बारकपुर जा कर उक्त प्रासादमें ठहरते हैं। इस उद्यानके अन्दर लेडी कैनिङ्गकी कब्र है। यहां तीन दफा सिपाही विद्रोह हुआ था। पहला विद्रोह १८२४ ई०में हुआ था। ब्रह्मयुद्धके समय ४७ बङ्ग-पदातिकोंने युद्धके लिए समुद्रपथसे जाना नामंजूर किया। उनका कहना था, कि दूना भत्ता न मिलने पर वे पैदल जानेके लिए तैयार नहीं। दूसरी बार, उक्त वर्षके अन्तमें और एक दल सिपाहीने युद्धमें जाना नामंजूर किया। उनके, युद्धास्त्र छोड़ कर नदीके किनारे चले जाने पर, अंग्रेजी सेनाने उनके पीछे पीछे जा कर कुछ सिपाहियोंको गोलीसे मार डाला। कुछ सिपाहियों-को फांसी हुई और बाकीके भागना चाहते थे, पर पानीमें डूब कर मर गये। तीसरा वा शेष विद्रोह १८५७

ई०में हुआ था। इस वर्षके प्रारम्भमें हिन्दू सिपाहियोंमें एक जिक्र छिड़ा, कि बन्दूकके कारतूसोंमें गायकी चरबी दे कर अंग्रेज लोग उन्हें ईसाई बनाना चाहते हैं। इस बातको झूठी साबित करनेके लिए सेनापतिने उनको बहुत कुछ समझाया, पर सब व्यर्थ हुआ। बादमें ये विद्रोही सिपाही घरमें आग लगाने लगे। उनमेंसे मङ्गल पांड़े नामक एक सिपाहीने एक सेनाध्यक्ष पर गोली चलाई। पीछे मङ्गल पांड़े और उस दलके अध्यक्षको फांसी हुई। बारकपुर देखो।

चाणकोन (सं० क्लो०) चणकानां भवनं चेत्रं चणक-खञ्। धान्यानां भवने चेत्रे । पा ५।२।१। चणकके उत्पत्ति-योग्य क्षेत्र, वह जमीन जहां चने अधिकतासे उपजते हों।

चाणक्य (सं० पु०) चणकस्य मुनेर्गोत्रापत्यं चणक गर्गादि० यञ्। एक सुप्रसिद्ध नीतिज्ञमुनि। इनका रचा हुआ 'नीतिशास्त्र' भारतवर्षमें आज भी घर घरमें चम-कता है। विष्णुपुराण, भागवत आदि प्राचीन ग्रन्थोंमें इनका उल्लेख है। बहुतसे लोग चाणक्य नाम देख कर, इनको चणक मुनिके पुत्र बतलाते हैं, किन्तु पाणिनिके ५।२।१ सूत्रके अनुसार चणकके वंशमें उत्पन्न किसी भी व्यक्तिको चाणक्य कहा जा सकता है। मुद्राराक्षसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, इनका यथार्थ नाम विष्णु-गुप्त था। त्रिकाण्डशेषमें कौटिल्य, द्रोमिण और अंशुल ये तीन हो नाम हैं। इनके अतिरिक्त पक्षिलस्वामी, मल्ल-नाग, वात्स्यायन आदि नाम भी देखनेमें आते हैं।

कामन्दकनीतिकी टीकामें कौटिल्य नामकी इस तरह व्याख्या की गई है—"कूटो घटस्तं धान्यपूर्णं ल्लान्ति संगृह्णन्ति इति कूटलाः कुम्भीधान्या इति प्रसिद्धिः। अत-एव तेषां गोत्रापत्यं कौटिल्यो विष्णुगुप्तो नाम।" 'कूट' अर्थात् धान्यसे परिपूर्ण घड़ाका जो सञ्चय करते हैं, उनको 'कूटल' कहते हैं। 'कूटल' शब्दका दूसरा पर्याय-वाची शब्द 'कुम्भीधान्य' है। जो ब्राह्मण गृहस्थ एकवर्षके लिए धान्यादि सञ्चय कर रखते हैं, वे 'कूटल' या 'कुम्भीधान्य' नामसे प्रसिद्ध होते हैं। चाणक्यके पुरखा ऐसे ही ब्राह्मण-गृहस्थ थे। उनके वंशमें उत्पन्न होनेके कारण चाणक्यका नाम 'कौटिल्य' हुआ। और किसीके मतसे वे कुटिल मन्त्रके उपासक थे, इसलिए "कौटिल्य" नामसे प्रसिद्ध हुए। इसी लिए अध्यापक उईलसनने (Professor Wilson) इनको Machiavelli of India कहा है। सुप्रसिद्ध "नीतिसार" प्रणेता कामन्दक चाणक्यके प्रधान शिष्य थे।

चाणक्यका प्रादुर्भाव किस समय हुआ था। यह ठीक नहीं कहा जा सकता। हां, उनके जीवनकी बहुतसी घटनाएं प्रसिद्ध सम्राट् चन्द्रगुप्तके इतिहासके साथ विशेषरूपसे सम्बद्ध होनेके कारण ३२३ ई०से पहिले ही उनका समय निरूपित हुआ है।

ये पञ्जाबके अन्तर्गत तक्षशिला नामक स्थानमें जन्मे थे। इन महात्माके बाल्यजीवनका कुछ इतिहास नहीं मिलता। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि, उनने शास्त्रोंका अध्ययन कर उस समयकी पण्डितमण्डलीका शीर्षस्थान अधिकार किया था।

तैलङ्ग-लिपिमें लिखे हुए एक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा हुआ है कि—एक दिन चाणक्य भूंखके मारे नन्दके भोजनागरमें घुस पड़े और प्रधान आसन पर बैठ गये। नव नन्दोंने चाणक्यको एक साधारण ब्राह्मण समझ उन्हें आसनसे उठा देनेकी आज्ञा दी। मन्त्रियोंने इस पर बहुत कुछ आपत्ति की। परन्तु मदोन्मत्त नन्दराजोंने उनकी बात पर कर्णपात भी न किया और क्रोधित हो चाणक्यको ढकेल कर उठा दिया। चाणक्यने उस समय क्रोधमें अन्ध हो कर चोटी खोलते खोलते इस प्रकार अभिशाप दिया—"जब तक नन्दवंशका ध्वंस न हो जायगा, तब तक मैं इस चोटीको नहीं बाँधूंगा।" इतना कह कर चाणक्य वहाँसे चल दिये। चन्द्रगुप्त भी नगर त्याग कर चाणक्यके पास पहुंच गये और नन्द-वंशका नाश करनेके लिए उनने म्लेच्छाधिप पर्वतेन्द्रको बुलाया। शर्त यह रही कि, यदि युद्धमें जय हुई, तो पर्वतेन्द्रको आधा राज्य मिलेगा। इसके अनुसार पर्व-तेन्द्र सेना सहित आ डटे। नन्दोंके साथ युद्ध छिड़ गया। चाणक्यकी चतुराईसे एक एक कर सब ही नन्द मारे गये।

मुद्राराक्षस और महावंश-टीकाके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, नन्दराज पुत्रों सहित मारे जाने पर भी,

चन्द्रगुप्तको सहजहीमें राज्य न मिला था। महामन्त्री राक्षस सर्वार्थसिद्धि नामके राजभ्राताको सिंहासन पर बैठा कर, चाणक्य और चन्द्रगुप्तको मारनेके लिए निरंतर कूटजाल फैलाने लगे, किन्तु उनका यह उद्देश्य सिद्ध न हुआ। चाणक्य पण्डितके सुदृश्य नचक्रके समान नीति-कौशलसे टकरा कर उनके सारे अस्त्र चकनाचूर हो गये। चाणक्यने विपक्षियोंका ध्वंस कर नन्दके सिंहासन पर चन्द्रगुप्तको बैठाया और खुद बड़ी बुद्धिमानी और प्रबल पराक्रमसे उनके मन्त्रीका कार्य करने लगे। चाणक्यने अन्यान्य शत्रुओंका संहार तो किया, परन्तु पराक्रमशाली समकक्ष शत्रु राक्षसको न मार सके। राक्षस भी निश्चिन्त न थे। उत्तरोत्तर प्रबल राजाओंका आश्रयग्रहण कर चन्द्रगुप्त और चाणक्यको मारनेकी चेष्टा करने लगे। राक्षस चाणक्यके परम शत्रु थे, परन्तु गुणग्राही चाणक्य उनकी निःस्वार्थ प्रभुभक्ति, कर्तव्य कार्यमें अविचल अध्यवसाय, असामान्य बुद्धि और अलौकिक मन्त्रणा-कौशलको देख कर मन ही मन उनकी प्रशंसा किया करते थे। चाणक्य जिस मार्ग पर चल रहे थे वह पवित्र ब्राह्मण्य आचारके बिल्कुल विरुद्ध था, इस बातको वे समझ गये। परन्तु राक्षसके विपक्षमें रहते हुए वे मन्त्रीका पद छोड़ कर कहीं जा नहीं सकते थे। वे समझते थे कि, ऐसी हालतमें चन्द्रगुप्तका राज्य निष्कण्टक नहीं रह सकता। उन्होंने सोचा कि, किसी तरह राक्षसको मित्रताकी डोरमें बाँध कर उन्हें ही मन्त्री बनाना चाहिये। राक्षसके चन्द्रगुप्तका पक्ष अवलम्बन करने पर, चन्द्रगुप्त निःशङ्कचित्तसे राज्य कर सकेंगे और उनका राजपद निष्कण्टक रहेगा। चाणक्यने आन्तरिक भक्ति और यथोचित सौजन्य द्वारा राक्षसको अपना प्रिय बना लिया और उन्हें प्रतिज्ञापूर्वक चन्द्रगुप्तके मन्त्रित्व पद पर अधिष्ठित किया। फिर उनने राजकार्यसे अवसर ले लिया।

बौद्धाचार्य बुद्धघोष प्रणीत विनयपिटकको समन्तपसादिका नामकी टीकामें और महानामस्थविर रचित महावंशटीकामें चाणक्यके विषयमें कई एक नवीन परिचय मिलते हैं—

तक्षशिलावासी चाणक्य धननन्दके द्वारा अपमानित हो कर राजकुमार पर्वतको सहायतासे अज्ञातभावसे विन्ध्य-अरण्यको भाग गये थे। यहाँ आ कर उनने अपने असीमबलके प्रभावसे अपरिमित धन सञ्चय किया और उस सञ्चित धनके बलसे दूसरे एक व्यक्तिको राजा बनानेका निश्चय किया। मौरिय-वंशोद्भव कुमार चन्द्रगुप्तने उनके चित्तको आकर्षित किया। चाणक्यने उस धनके जरिये अनेक सेना संग्रह को और चन्द्रगुप्तको उन सबके सेनानायक बनाया। इसके बाद नाना कौशल और प्रचण्ड विक्रमसे पाटलीपुत्र पर आक्रमण कर धननन्दको निहत किया। चन्द्रगुप्त शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

पूर्वोक्त "नीतिसार" नामक ग्रन्थके प्रणेता कामन्दकने अपने ग्रन्थके मङ्गलाचरणमें चाणक्यके विषयमें कई एक श्लोक लिखे हैं, जिनका भावार्थ नीचे लिखा जाता है—

चाणक्यने ज्ञानके उज्ज्वल आलोकसे जगत्‌को प्रकाशमान किया था। उनने अपनी अलौकिक प्रतिभाके बलसे चार वेदोंका अध्ययन कर वेदज्ञोंका शीर्षस्थान अधिकार किया था। चाणक्य अद्वितीय पण्डित थे, उनने प्रज्ञाबलसे अर्थशास्त्ररूप महासागरको मन्थन कर नीतिशास्त्ररूप अमूल्यरत्नका उद्धार किया था।

पहिले ही लिखा जा चुका है कि, चाणक्यने छह सौ श्लोकोंका एक राजनीति ग्रन्थकी रचना की थी। इसके अलावा वृद्ध-चाणक्य, लघुचाणक्य और बोधि चाणक्य नामके कई एक ग्रंथ चाणक्य प्रणीत हैं, ऐसी प्रसिद्धि है। वृद्धचाणक्यकी किसी प्रतिमें १७ अध्याय और ३४२ श्लोक हैं, किसीमें उससे ज्यादा अध्याय और ज्यादा श्लोक तथा किसी प्रतिमें ८ अध्याय और करीब हजार श्लोक देखनेमें आते हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि, चाणक्यके परवर्ती किसी पण्डितने चाणक्यके सुबृहत् राजनीति शास्त्रसे साधारण नीतिविषयक श्लोकोंको इच्छानुसार पृथक् कर वृद्धचाणक्य बनाया होगा, तथा उनके परवर्त्ती किसी पण्डितने उक्त वृद्धचाणक्यसे इच्छानुसार कुछ श्लोक निकाल कर उनका लघुचाणक्य नामसे प्रचार किया होगा। बोधिचाणक्यमें भी ३०० श्लोक हैं, नेपालके बौद्ध समाजमें इस ग्रन्थका प्रचलन है।

कोई कोई ऐतिहासिक लेखक कहते हैं कि,

चाणक्यने शकटारके घरसे तपोवनमें जा कर वहाँ तीन दिन तक अभिचार साधन किया था। अभिचारकार्य समाप्त होने पर शकटारके पास कुछ निर्माल्य भेज दिया। उस निर्माल्यको स्पर्श कर राजा और राजपुत्रगण तीन दिनके भीतर मर गये। किसी किसीका कहना है कि, चाणक्यने प्रचण्ड दूत द्वारा नन्दको मरवाया था।

चाणक्य जगत्‌में पाण्डित्य और प्रतिभाके अवतार थे। चाणक्य मुनिश्रेणीमें गण्य थे।

वैरनिर्यातनके लिए उनने भी कालाग्निमूर्ति धारण की थी। कठोर प्रतोज्ञा पालन करनेके बाद उनने उस भैरवी तामसी मूर्तिको छोड़ कल्याणी स्नेहवती सात्विकी मूर्ति धारण की थी। कुटिल राज्यतन्त्रकी चिन्ता छोड़ कर पुण्य और विश्वहितव्रतकी दीक्षा ली थी। महात्मा व्यास वाल्मीकि आदि परम दयावान् महर्षियोंके पदानुवर्ती हो विश्वके लोगोंके मङ्गलके लिए उपदेशशास्त्रोंका आविष्कार किया था।

चाणक्यने नीतिशास्त्रके अतिरिक्त अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, तथा "विष्णुगुप्तसिद्धान्त" नामका एक ज्योतिष ग्रन्थ रचा था। वराहमिहिर, हेमाद्रि, भूधर, लक्ष्मीदास, स्मार्त्त रघुनन्दन आदि पण्डितोंने उनके श्लोक उद्धृत किये हैं। किसीके मतसे शेषोक्त सिद्धान्त ग्रन्थका नाम हो 'वशिष्ठसिद्धान्त' है।* किन्तु ब्रह्मगुप्त और भट्टोत्पलके वचन द्वारा मालूम होता है कि, विष्णुचन्द्र नामक किसी एक व्यक्तिने वसिष्ठसिद्धान्तकी रचना की थी, न कि विष्णुगुप्तने। कोई कहते हैं कि, इनने वैद्यजीवन नामका एक वैद्यक ग्रन्थ रचा था। इनने वात्स्यायन नामसे परिचय दे कर "कामशास्त्र" और न्यायसूत्रका भाष्यका प्रणयन किया था। ये दोनों ही ग्रन्थोंका पण्डित-समाजमें विशेष आदर है।

कथासरित्सागर, स्थविरावलिप्रकरणवर्णित, पालि अत्थकथा आदि ग्रन्थोंमें भी चाणक्यके विषयमें बहुतसी बातें लिखी हैं। इनके जीवनकी अन्यान्य घटनाएं चन्द्रगुप्त शब्दमें देखो।

(क्लो०) चाणक्येन प्रोक्तं चाणक्य-अण् तस्य लोपः। २ चाणक्यरचित नीतिशास्त्र। चणक स्वार्थे ष्यञ्। ३ चणक। चणक देखो।

* Max Muller's India, p. 320.

चाणक्यमूलक (सं० क्लो०) चणक एव चाणक्यं तदिव मूलमस्य, बहुव्री०। एक जातीय मूला, एक तरहकी मूली। इसका पर्याय—बालेय, विष्णुगुप्तक, स्थूलमूल, महाकन्द, कौटिल्य, मरुसम्भव, शालाक और कटुक। इसका गुण—उष्ण, कटु, रुचिकर, दीपन, कफ, वात, क्रमि और गुल्मनाशक, ग्राही तथा गुरु हैं।

चाणूर (सं० पु०) कंसका एक अनुचर असुर। इसे मल्लयुद्धमें खूब निपुणता थी। भागवत और हरिवंशके मतसे मयदानवने इसी नाम पर जन्म ग्रहण किया था। धनुर्यज्ञके समय श्रीकृष्णने इसे मारा था। (भागवत और विष्णुपु०)

चाणूरसूदन (सं० पु०) चाणूरं सूदयति नाशयति सूदि-ल्यु। श्रीकृष्ण। चाणूरका नाश वृत्तान्त हरिवंशके ८६ अ०में देखो।

चाण्ड (सं० पु० स्त्री०) चण्डस्यापत्यं चण्ड-अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। १ चण्डका अपत्य, चण्डकी सन्तान, चण्डके वंशधर। (क्लो०) चण्डस्य भावः चण्ड अण्। पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा। पा ५।१।१२२। २ चण्डता, उग्रता, प्रखरता, तेजी।

चाण्डाल (सं० पु० स्त्री०) चण्डाल एव चण्डाल स्वार्थे अण्। प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८। १ चण्डाल देखो। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

"चाण्डालश्च वराहश्च कुक्कुटः श्वा तथैव च।
रजस्वला च षण्ढश्च नेक्षेरन्नश्नतो द्विजान्॥" (मनु ३।२३९)

(त्रि०) चण्डालस्येदं चण्डाल-अण्। २ चण्डाल सम्बन्धीय। ३ दुरात्मा, दुष्ट, कुकर्मी, पतित मनुष्य।

चाण्डालक (सं० क्लो०) चण्डालेन कृतं चण्डाल-वुञ्। कुलालादिभ्यो वुञ्। पा ४।३।११८। १ संज्ञाविशेष (त्रि०) २ चण्डालकृत, चण्डालसे किया हुआ।

चाण्डालकि (सं० पु०-स्त्री०) चण्डालस्यापत्यं चण्डाल-इञ् अकङ् च। सुधातृव्यासवरुडनिषादचण्डालबिम्बानामिति वक्तव्यं। पा ४।१।९७ महाभाष्य। चण्डालकी सन्तान, चण्डालके वंशधर।

चाण्डालिका (सं० स्त्री०) चाण्डालक-टाप् इत्वञ्च। १ वीणाविशेष, एक तरहका बाजा। २ औषधविशेष, एक तरहकी दवा।

चाण्डालिकाश्रम—एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान।

"कोकामुखे विगाह्याप गत्वा चाण्डालिकाश्रमे।" (भा० १३।२५ अ०)

चाण्डाली (सं० स्त्री०) चाण्डाल-गौरादि ङीष्। १ लिङ्गिनी

ता, पञ्चगुरियाँ नामकी लता। चाण्डाल जातौ ङीष्। २ चण्डालजातीय स्त्री, चांडाल जातिकी स्त्री, वह औरत जो चाण्डाल जातिकी हो।

चातक (सं० पु० स्त्री०) चतते जलं चत-ण्वुल्। एक प्रसिद्ध पक्षी। पर्याय—स्तोकक, सारङ्ग, मेघजीवन, जीवन, तोकक, शारङ्ग। ऐसी किंवदन्ती है कि, इस पक्षीको प्यास लगने पर यह मेघ (बादल) से पानी माँगता है। ये लोग वर्षाती बूँदके सिवा दूसरा जल नहीं पीते। कब पानी बरसे, इसी उम्मेदमें शुष्क कण्ठसे मेघकी ओर ताका करते हैं। इसीलिए इनका नाम चातक पड़ा है।

इसका अंग्रेजीमें वैज्ञानिक नाम आइओरा टाइफिया (Iora typhia) अंग्रेजीमें the white-winged Green Bulbul कहते हैं।

चातक और चातकीकी आकृति समान होने पर भी उनके रंगकी विभिन्नतासे सहजहीमें स्त्री पुरुषका भेद मालूम हो जाता है। चातकके शरीरका सामनेका भाग जैतूनफलकी तरह हरा होता है और पीछेका भाग हरिद्वर्ण। इसके दोनों पङ्ख काले, किन्तु दोनों तरफके प्रान्तभाग कुछ सब्ज होते हैं। पङ्खोंकी जड़मेंके पङ्खोंका रंग श्वेतकृष्णजड़ित, अंसदेशके पङ्ख आंशिक शुक्ल और पूँछ स्याह काली होती है। चातकीकी पूँछ और शरीरका वर्ण प्रायः ऐसा ही होता है, सिर्फ फर्क इतना ही है कि, पूँछका रंग शरीरकी अपेक्षा ज्यादा काला होता है तथा इसके दोनों पङ्ख चातकके पङ्खोंके समान काले नहीं होते।

चातक और चातकी, दोनोंकी चोंच तथा दोनों पैरोंका रंग कुछ कुछ नीलाईकी लिए पिङ्गलवर्ण होता है। नेत्र उज्ज्वल कपिशवर्ण होते हैं। इसकी समग्र आकृतिकी लम्बाई प्रायः ५½ इञ्च होती है। पङ्ख २⅘ इञ्च, पूँछ २ और चोंचका अग्रभाग ⅞ इञ्चका होता है।

नेपाल, मध्यभारत, बङ्गाल, आसाम, आराकान और मलय उपद्वीपमें चातक पक्षी उड़ा करते हैं। कोई कोई कहते हैं कि, यह पक्षी दक्षिणावर्त्तसे उक्त देशोंमें आये हैं। किसी किसीका कहना है कि, नागपुर, सागर आदि स्थानोंसे यह पक्षी अन्यान्य देशोंको गये हैं। क्योंकि, उन्हीं प्रदेशोंमें ये ज्यादा दिखलाई देते हैं। हाँ, फर्क इतना ही है कि, शेषोक्त चातकजातीय पक्षियोंकी पीठ तथा मस्तक काला नहीं है, इनकी चोंच और दूसरे अवयव कुछ बड़े हैं, तथा शारीरिक वर्णमें भी विशेष विलक्षणता है। किसी किसीने स्याह काले रंगकी पीठ और शिरोदेशविशिष्ट चातक जातीय पक्षीका उल्लेख किया है। यद्यपि इस तरहके पक्षी दिखलाई नहीं देते परन्तु तो भी कुछ कृष्णवर्णकी चातक जातीय पक्षीके नमूने देखनेमें आते हैं। ये पक्षी दाक्षिणात्यवासी और पूरबके चातक पक्षीके मिलावटसे सङ्कर जाति मालूम पड़ते हैं; क्योंकि, दाक्षिणात्य और सिंहल देशीय चातकके समान वर्णविशिष्ट चातक आर्यावर्तमें कहीं भी देखनेमें नहीं आते। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि, दोनों देशोंकी चातकियोंमें कुछ फर्क नहीं मालूम पड़ता।

इनके सिवा और भी बहुत तरहके चातक होते हैं। यवद्वीप और अन्यान्य द्वीपोंमें इस देशके चातकोंके समान एक प्रकारके चातक दिखलाई देते हैं। इनका वैज्ञानिक नाम है Iora scapularis। थोड़े दिनसे आराकानमें सीधी पूँछवाले बड़े चातक भी देखनेमें आते हैं। इस जातिके चातकोंका वैज्ञानिक नाम Iora lafresnayii है। बोर्णिओ द्वीपमें Iora viridis, तथा सुमात्रा द्वीपमें Iora viridissixa ये दो तरहके चातक भी देखनेमें आते हैं।

इसके आमिषके गुण—लघु, शीतल, कफ और रक्त, पित्तनाशक तथा अग्निवृद्धिकर। (राजवल्लभ) सुश्रुतने इनको प्रतुदगणमें गिन लिया है। इसके सामान्य गुण—मधुर, कषाय और दोषनाशक।

चातकानन्दन (सं० पु०) चातकमानन्दयति आनन्द णिच् ल्यु। १ वर्षाकाल। २ मेघ, बादल।

चातन (सं० क्लो०) चत णिच्-ल्युट्। १ पीड़न, क्लेश, वेदना, दर्द, तकलीफ। (पु०) २ एक वैदिक ऋषि। (अथर्वानुक्र० १।१२) (त्रि०) चातयति या चयति चत-णिच्-ल्यु। ३ याचनाप्रयोजक, जो याचना कराता हो।

चातर (हिं० पु०) १ वह बड़ा जाल जिससे मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। २ षड़यन्त्र, साजिश।

चातरा—बङ्गदेशके हजारीबाग जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २४° १२' उ० और देशा० ८४° ५३' पू० पर हजारीबाग शहरसे ३६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहां प्रतिवर्ष दुर्गापूजाके समय पशु मेला लगता है। चातराका हाट हजारीबाग जिलेमें प्रसिद्ध है। लोहर डांगा, वर्द्धमान, गया, शाहाबाद प्रभृति स्थानोंके उत्पन्न द्रव्य इस हाटमें बेचनेके लिए लाये जाते और हजारी बागके उत्पन्न द्रव्य उन उन देशोंमें भेजे जाते हैं। १८५७ ई०के अक्टोबर महीनेमें सिपाही विद्रोहके समय सिपाहियोंके साथ अंगरेजोंकी इस स्थान पर एक छोटीसी लड़ाई हुई थी, जिसमें सिपाहियोंकी हार हुई थी। लोकसंख्या प्रायः १०५६८ है।

चातसु—राजपूतानेके जयपुरराज्यके अन्तर्गत सवाई जयपुर निजामतकी इसी नामकी तहसीलका एक सदर। यह अक्षा० २६° ३६' उ० और देशा० ७५° ५७' पू० पर जयपुर सवाई माधोपुर रेलवेके चातसु स्टेशनसे २ मील और जयपुर शहरसे २५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४६०२ है। यह एक प्राचीन शहर है। कहा जाता है, कि पहले यहां विक्रमादित्य रहते थे और इसके चारों ओर तांबेकी दीवार थी। इसी कारण इसके नाम उस समय ताम्रवती नगरी रखा गया था। यह शहर सिसोदिया राजपूतके राजा चातसुसे स्थापित किया गया है। पूर्व समयमें यहाँ बहुतसे मन्दिर थे जो ई० तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दीके मध्य मुसलमानोंसे तहस नहस कर डाले गये। अभी यहाँ कई एक प्राचीन सुन्दर सरोवर हैं। शीतला माताके उपलक्षमें प्रतिवर्ष मार्च मासमें यहां एक बड़ा मेला लगता है। यहां एक औषधालय और पांच स्कूल हैं।

चाता (छाता)—१ युक्तप्रदेशके मथुरा जिलेके अन्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० २७° ३३' एवं २७° ५६' उ० और देशा० ७७° १७' तथा ७७° ४२' पू०के मध्य अवस्थित है। यह व्रजमण्डलका अंशमात्र है। यहां एक भी नदी नहीं है। आगरा खाल द्वारा जलपथसे आने जानेकी सुविधा है। इस तहसीलका क्षेत्रफल ४०६ वर्गमील हैं। लोकसंख्या प्रायः १७३७५६ है।

इस तहसीलमें कोसी और छाता नामके दो शहर तथा १५८ ग्राम लगते हैं। इसके पू॰में यमुना और पश्चिममें भरतपुर राज्य है। इसके उत्तरमें बहुतसे गहरे कुएं देखे जाते, जिनका पानी सदा खारासा होता है। वसन्तकी अपेक्षा शरद ऋतुमें यहां अधिक फसल होती है। हालमें ही किसोसे यमुना तक एक नहर खोदी गई है।

२ मथुरा जिलेका एक शहर एवं उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा० २७° ४४' उ० और देशा० ७०° ३१' पू० पर मथुरा शहरसे २१ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहाँ एक बड़ी पान्थशाला (सराय) है जो देखनेमें दुर्गसा मालूम पड़ता है। किसी किसीका मत है कि, वह पान्थशाला शेरशाहके समयमें बनाई गई थी। सिपाही विद्रोहके समय विद्रोहीगण उसमें कुछ काल तक रहे थे। चाता शहरमें थाना, डाकघर, विद्यालय एवं सेमानिवास है। यहां प्रति शुक्रवारको हाट बैठता है।

चातुर (सं० त्रि०) चतुर्भिरुह्यते चतुर-अण्। १ जिसे चार मनुष्य ढोते हों जो चार मनुष्योंसे खींचा जा सके। "चातुरं शकटं" (सि०कौ०) चतुर स्वार्थे अण्। २ नेत्रगोचर। ३ नियन्ता, विधायक, कार्य्यको चलानेवाला। ४ चाटुकार, खुशामदी, चापलूस। ५ चतुर। (पु०) ६ चक्रगण्डु, गोल तकिया या मसनद। (क्ली०) चतुरस्य भावः चतुर-अण्। ७ चतुरता, प्रवीणता, होशियारी।

चातुरक (सं० त्रि०) चातुर स्वार्थे कन्। चातुरंकरा।

चातुरक्ष (सं० क्ली०) चतुर्भिरक्षैर्निर्वृत्तः चतुरक्ष-अण्। १ वह चौसर खेल जो चार गोटियोंसे खेला जाता है। (पु०) २ उपधानविशेष, गोल तकिया।

चातुरङ्गक (सं० क्ली०) शूर्पारक क्षेत्रके मध्यवर्त्ती एक गिरि।

"एवं क्षेत्रं महादेवि भार्गवेण विनिर्मितम्।

तन्मध्ये तु स्थितो यासः पर्वते चातुरङ्गके।" (सह्याद्रि २१।३०)

चातुरर्थिक (सं० पु०) चतुर्षु अर्थेषु विहितः चतुरर्थ ठक्। पाणिन्युक्त प्रत्यय, पाणिनीके कई एक प्रत्यय। पाणिनिके ४।२।६७, ६८, ६९ और ७० सूत्रोंमें जिन चार अर्थोंका विधान है, उसीको चातुरर्थिक कहते हैं।

"जनपदे वाच्ये चातुरर्थिकस्य लुप् स्यात्।" (सि० कौ०)

चातुराश्रमिक (सं० त्रि०) चतुर्षु आश्रमेषु विहितः चतुराश्रम-ठक्। जो चार आश्रमोंमें विहित हो, ब्रह्मचर्य्य प्रभृति आश्रमविहित धर्म।

"चातुर्विद्यं यथा वर्ण्यं चातुराश्रमिकान् पर।
तानहं सम्प्रवक्ष्यामि शाश्वतान् लोकभावनान्॥" (भारत १।१५२ अ०)

चातुराश्रमिन् (सं० त्रि०) चतुराश्रमके मध्य एक आश्रम-भुक्त, चार आश्रमोंमें एक आश्रमभुक्त।

चातुराश्रम्य (सं० क्ली०) चत्वारश्च ते आश्रमाश्चेति संज्ञात्वात्, कर्मधा०, चतुराश्रम स्वार्थे ष्यञ्। ब्राह्मणादिव चातुर्वर्ण्यादीनाम् उपसंख्यानं। वार्त्तिक ५।१।१२४ 'प्रत्ययात्लोकारय्ं भाव कर्म्मसम्बन्धटिनत्तद्र्थ मिमति स्वार्थ-एव ष्यञ् भवति।' कैयट। आश्रम-चतुष्टय, ब्रह्मचर्य्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास (भिक्षु) नामक चार आश्रम।

"चातुर्विद्यं चातुर्होत्रं चातुराश्रमामेव च।" (भारत १३।४८ अ०)

चातुरिक (सं० पु०) चातुरीं वेत्ति चातुरी-ठक्। सारथी, रथवान।

चातुरी (सं० स्त्री०) चतुरस्य भावः चतुर-ष्यञ् ङीष् यलोपश्च। १ चतुरता, चतुराई, होशियारी।

"यशः पटं तद्भट चातुरीतुरी।" (नैषध १ स०)

२ निपुणता, दक्षता कुशलता। ३ शठता, धूर्त्तता, चालाकी।

चातुर्जातक (सं० पु०) १ गुर्जरदेशीय उच्च राजपारिषदकी उपाधिविशेष, तथा उक्त उपाधिधारक व्यक्ति। सिम्बासे प्राप्त सारङ्गदेवकी प्रशस्तिमें लिखा है—गुर्जरदेशीय त्रिपुरान्तक समस्त तीर्थभ्रमण कर सरस्वती-सागरसङ्गम देवपत्तन (प्रभास) नामक स्थानमें उपस्थित हुए, वहाँसे वे उमापतिव्रहस्पतिके पास पञ्च मह-त्तर पद पर अभिषिक्त हो कर चातुर्जातकके पास गये थे। वे उनको धर्मनिष्ठाको देख कर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। इस प्रशस्तिके ६५, ६३ और ६०-६१ वें श्लोकमें चातुर्जातकको अनुशासन प्रचार करते, तथा ६७ वें श्लोकमें शिवरात्रिपर्वके उपलक्षमें पान-सुपारी बाँटते पाया जाता है। चातुर्जातक शब्दका असली अर्थ—जो चारों जाति पर शासन करते हों—ऐसा है। अतः परिभाषानुसार इसका अर्थ यथार्थ शासनकर्ता या नगर श्रेष्ठी है।

(क्ली०) चतुर्जातक एव चतुर्जातक-अण्। २ गन्ध-चतुष्टय, गुड़त्वक् (दारचीनी), पूरबो इलायची, तेज पत्ता और नागकेशर। इसके गुण—दस्तकारक, रूक्ष, तीक्ष्ण, गरम, मुखगन्धनाशक, हलका, पित्त और विष-नाशक। (भावप्रकाश पूर्व १म भाग)

चातुर्थक (सं० पु०) पाँच तरहके ज्वरोंमेंसे एक प्रकारका ज्वर। दो दिनके बाद जो ज्वर होता है अर्थात् जो ज्वर एक दिन हो कर दो दिन तक नहीं आता, फिर तीसरे दिन आ जाता है, उसीको चातुर्थक कहते हैं, चौथे दिन आनेवाला ज्वर, चौथिया बुखार। इसमें वायुकी अधिकता रहती है। यह ज्वर दो तरहका है—मज्जागत और अस्थिगत। चातुर्थक अत्यन्त भयानक रोग है। दोष शिरःस्थित होने पर दूसरे दिनमें कण्ठ, तीसरे दिनमें हृदय एवं चौथे दिनमें आमाशय दूषित कर ज्वर उत्पन्न करता है। इसी लिये यह ज्वर दो दिनके बाद हुआ करता है। (सुश्रुत ५।३९ अ०) इसका अन्य विवरण ज्वर शब्दमें देखो।

चातुर्थकारी (सं० पु०) औषधविशेष। हरताल, मनः-शिला, तूतिया, शङ्ख और गन्धक प्रत्येकका बराबर भाग ले कर ग्वारपाठाके रससे भावना दे कर घोंटना चाहिये। उसे फिर पुटमें रख घी कुवाँरके रसके साथ गजपुटमें पाक करना पड़ता है। इसकी मात्रा तीन रत्ती की जाती है। मट्ठा पी कर घी और मिर्चके साथ इसका सेवन किया जाता है। (रसेन्द्रसा०)

चातुर्थाह्निक (सं० त्रि०) चतुर्थमह्नः समासान्त टच् अह्नादेशश्च चतुर्थाह्ने दिन चतुर्थभागे भवः चतुर्थाह्न-ठक्। १ चतुर्थ दिनसम्बन्धीय, चौथे दिन होनेवाला। २ दिनके चतुर्थ भागमें कर्त्तव्य कर्म, वह काम जो दिनके चौथे भागमें किया जाता है।

चातुरर्थिक (सं० त्रि०) चतुर्थे भवः चतुर्थ-ठक्। जो चौथे दिनमें उत्पन्न हो, चतुर्थ सम्बन्धीय, चौथे दिन होनेवाला।

"चातुर्थिकस्य वातप्रस्य।" (काशायन ७।७।२८)

चातुर्दश (सं० क्ली०) चतुर्दश्यां दृश्यते चतुर्दश-अण्। १ राक्षस। (शि० को०) (त्रि०) चतुर्दश्यां भवः चतुर्दश-अण्। २ जो चतुर्दशीको उत्पन्न हो।

चातुर्दशिक (सं० त्रि०) चतुर्दश्यामधीते चतुर्दशी-ठक्। जो चतुर्दशी तिथिमें अध्ययन करता है। (शि० को० ४।४।७१)

चातुर्दैव (सं० त्रि०) चार देवोंका पवित्र।

चातुर्भद्र (सं० क्ली०) चतुर्भद्रमेव चतुर्भद्र स्वार्थे अण्। - चतुर्भद्र देखो।

चातुर्भद्रक (सं० क्ली०) चतुर्भद्र देखो।

चातुर्भद्रावलेह (सं० पु०) चक्रदत्तोक्त औषधविशेष, चक्रदत्तकी निकाली हुई एक तरहकी दवा। कट्फल (जायफल), पुष्करमूल, कर्कटशृङ्गी (काकड़ासिंगी) और कृष्णा (पीपल) इन सब पदार्थोंको पीस कर मधुके साथ मिलाया जाता है। इसीका नाम चातुर्भद्रावलेह है। इसके सेवनसे कास, श्वास, ज्वर और कफ जाते रहते हैं। (चक्रदत्त)

चातुर्भौतिक (सं० त्रि०) चतुर्षु भूतेषु भवः चतुर्भूत-ठक्। जो चार भूतोंसे उत्पन्न हो। (माहात्म्य० ३।१८)

चातुर्महाराजकायिक। चातुर्महाराजिक देखो।

चातुर्महाराजिक (सं० पु०) चत्वारो महाराजिकाः स्वीकारत्वेनास्त्यस्य चतुर्महाराजिक-अण्। १ परमेश्वर, विष्णु।

"महाराजिकश्चातुर्महाराजिकः।" (भारत १३।३४० अ०)

२ बौद्धशास्त्रोक्त चार अधिदेव।

चातुर्मास (सं० त्रि०) चार महीनेका, चार महीनोंमें होनेवाला। २ बुद्धका एक नाम।

चातुर्मासक (सं० त्रि०) चातुर्मासं व्रतं चरति चातुर्मास वुन् य लोपश्च। चातुर्मास्यानां यलोपश्च। पा ४।२।१८ वार्तिक। जो चातुर्मास्य व्रत आचरण करे, जो चार महीनेमें होनेवाला व्रत करता हो।

चातुर्मासिक (सं० त्रि०) चतुरो मासान् व्याप्य ब्रह्मचर्य्यमस्य चतुर्मास-ठक्। चतुर्मासव्यापक ब्रह्मचर्य्ययुक्त, चार महीनोंमें होनेवाला (यज्ञकर्म आदि)

चातुर्मासिन् (सं० त्रि०) चातुर्मास्यं व्रतं चरति चातुर्मास्य-इनि यलोपश्च चातुर्मास्यानां यलोपश्च इ वुञ् इनिश्च वक्तव्यं ४।२।१८ महाभाष्य। जो चार महीनेमें होनेवाला व्रत करता हो।

चातुर्मासी (सं० स्त्री०) चतुर्षु मासेषु भवति चतुर्मास-अण्, स्त्रियां ङीप्। संज्ञायामण्। पा ४।२।१८ वार्तिक। पौर्णमासी।

"चतुर्षु मासेषु भवति चातुर्मासी पौर्णमासी।" (४।२।१८ महाभाष्य)

चातुर्मास्य (सं० क्ली०) चतुर्षु मासेषु भवो यज्ञः, चतुर्मास-ण्य। चतुर्मास सन्‌ज्ञो यज्ञे तत्र भवेन। पा ४।३।१८ वार्तिक। १ चतुर्माससाध्य यज्ञविशेष। चतुर्षु मासेषु भवन्तु चातुर्मास्यानि यज्ञाः। (४।२।१८ भाष्य)

कात्यायन-श्रौतसूत्रके ५वें अध्यायमें इसका वर्णन है। सूत्रकारके मतसे फाल्गुनी पौर्णमासी तिथिमें इस यज्ञको शुरू करना चाहिये। चातुर्मास्यप्रयोगः फाल्गुन्यां। (कात्यायन श्रौ० ५।१।१) भाष्यकार और पद्धतिकारने शाखान्तरके साथ एकवाक्यता कर ऐसा स्थिर किया है कि, फाल्गुन, चैत्र या वैशाख मासकी पूर्णिमामें इसका प्रारम्भ किया जा सकता है। इस यज्ञमें चार पर्व हैं। जैसे—१ वैश्वदेव, २ वरुणप्रघास, ३ शाकमेध और ४ सुनासीरीय। वैश्वदेव आदि शब्द देखो।

२ चतुर्माससाध्य व्रतविशेष, चार महीनेमें साधनेवाला एक व्रत।

वराहके मतसे आषाढ़ मासकी शुक्ल द्वादशी या पूर्णिमामें यह व्रत शुरू किया जाता है और कार्त्तिक मासकी शुक्ल द्वादशीमें अथवा पूर्णिमामें इसका उद्यापन किया जाता है। (वराह)

मत्स्यपुराणमें लिखा है कि, वर्षमें चार मास देवोंके उत्थान तक गुड़का त्याग करनेसे मधुर स्वर, तेल त्याग करनेसे सुन्दरता, कड़ुए तेलके छोड़नेसे शत्रुनाश, स्थालीपक्व न खानेसे सन्तति वृद्धि और मद्य-मांसके त्यागनेसे योगकी सिद्धि होती है। इन मासोंमें एक दिन बाद भोजन करनेसे विष्णुलोककी प्राप्ति, नख और बाल रखनेसे प्रतिदिन गङ्गास्नानका फल, पानके छोड़नेसे गीतशक्ति, घृत त्यागसे शरीरमें लावण्यता और चिकनाई, फल न खानेसे बुद्धि और अनेक सन्तानोंका लाभ होता है। भक्तिपूर्वक 'नमो नारायणाय' इस मन्त्रका जप करनेसे उपवासका फल, तथा विष्णुवन्दना करनेसे गोदानके समान फल होता है। व्रत प्रारम्भ करनेके मन्त्र ये हैं,—

"इदं व्रतं मया देव गृहीतं पुरतस्तव।
निर्विघ्नं सिद्धिमायातु प्रसन्ने त्वयि केशव॥
गृहीतेऽस्मिन् व्रते देव यद्यपूर्णे म्रियाम्यहं।
तन्मे भवतु सम्पूर्णं त्वत्प्रसादाज्जनार्दन॥" (सनत्कुमार)

व्रत समाप्तिके बाद यह मन्त्र पढ़ना पड़ता है—

"इदं व्रतं मया देव। कृतं प्रीत्यै तव प्रभो।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाज्जनार्दन॥"

काठकगृह्यका मत है कि, यतियोंको ये चार महीने एक जगह बिताने चाहिये। (तिथितत्त्व)

सनत्कुमारके मतसे आषाढ़ी एकादशी, पूर्णिमा वा कर्कट संक्रान्तिमें इसके प्रारम्भ करनेका विधान है। प्रारम्भ मन्त्र इस प्रकार है—

"चतुरो वार्षिकान् मासान् देवस्योत्थापनावधि।
इमं करिष्ये नियमं निर्विघ्नं कुरुमे च्युत॥"

भविष्यपुराणके मतसे—जो चातुर्मास्य व्रत नहीं करते हैं, उनका जीवन निष्फल है। इसलिए सबहीको चातुर्मास्य करना उचित है।

स्कन्दपुराणके नागरखण्डमें लिखा है कि, श्रावण मासमें शाक, भाद्रपदमें दही, आश्विनमें दूध और कार्तिक मासमें आमिष (मांसादि) भोजन त्याग करना ही चाहिये। शिम्बिका, राजमास, पूतिकरञ्ज, परवल और बैंगन खाना निषिद्ध है। उस समयमें प्राप्त और रुचिकर फल मूलादि त्याग देना चाहिये। (भविष्यपुराण) अन्यान्य विवरण जानना हो तो विष्णुरहस्य, भविष्योत्तर और हरिभक्तिविलास देखना चाहिये।

॥ * ॥ वैदिक चातुर्मास्य इष्टिकी भाँति प्राचीन पारसिक जातिमें भी "गहनवार" नामका यज्ञ प्रचलित था। वैदिक चातुर्मास्य यज्ञको तरह 'गहनवार'में भी पशुओंका वध किया जाता है। फर्क इतना ही है कि, चातुर्मास्ययज्ञ चार मासमें पूरा होता है और 'गहनवार' वर्षमें छह वार किया जाता है। वैदिकगण यज्ञके समय अग्निमें वपा निक्षेप करते थे, परन्तु पारसी लोग अग्निमें न डाल कर पवित्र जान उस पशुका मांस खा डालते थे। अब दाक्षिणात्यमें भी कहीं कहीं यज्ञके उपलक्षमें मांस अग्निको उत्सर्ग कर ऋत्विक्गण उसे खा लिया करते हैं।

जैनमतानुसार—वर्षाऋतुके कारण श्रावण, भाद्र, आश्विन और कार्तिक इन चार महीनोंमें जैनमुनि और उत्कृष्ट श्रावक (ऐलक और क्षुल्लक) ग्रामसे ग्रामान्तर नहीं जाते। क्योंकि वर्षाके कारण पृथिवी पर सर्वत्र असंख्य जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है। हिंसाभीरु जैनमुनि और उत्कृष्ट श्रावक इन चार महीनोंमें एक ग्राम वा वनमें ही रह कर धर्म ध्यान उपदेशादि दे कर धर्मकी वृद्धि करते हैं। इसके सिवा ऋद्धिधारी मुनिगण इन चार महीनोंमें भूमि पर बिल्कुल ही गमन नहीं करते। वे ऋद्धिके प्रभावसे आकाशमार्गसे गमन कर गृहस्थके घर पर अवतरण करते और बिना अन्तरायके शुद्ध आहार ग्रहण कर पुनः वनको लौट जाते हैं। वर्तमान समयमें भी जैनमुनि और उत्कृष्ट श्रावक चातुर्मास्यका पालन करते हैं। ऐसा करनेसे जीवोंकी दया और श्रावकोंको उपदेश द्वारा धर्मसाधनका मौका दोनों प्राप्त होते हैं।

चातुर्मास्यद्वितीया (सं० स्त्री०) आषाढ़, फाल्गुन, आश्विन और कार्त्तिक मासके कृष्णपक्षकी द्वितीया तिथि।

"आषाढे फाल्गुने जैष्ठे (?) द्वितीया विधुक्षये।
चातुर्मास्यद्वितीयाख्याः प्रवदन्ति महर्षयः॥" (स्मृति)

चातुर्य्य (सं० क्लो०) चतुरस्य भावः चतुर-ष्यञ्। १ चतुरता, दक्षता, निपुणता, चतुराई।

"चातुर्य्यं मुद्गतमनोभवया रतेषु।" (साहित्यद०)

२ चातुरी, धूर्त्तता, चालाकी।

चातुर्वर्ण्य (सं० क्लो०) चत्वारो ब्राह्मणादयो वर्णा चतुर्वर्ण स्वार्थे ष्यञ्। ब्राह्मणादिषु चातुर्वर्ण्यादीनामुपसंख्यानं। पा ५।१।१२४ वार्त्तिक। १ चारों वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।" (गीता)

चातुर्वर्ण्य भावे ष्यञ्। २ चारों वर्णोंका अनुष्ठेय धर्म। प्राचीन धर्मशास्त्रकारोंने ब्राह्मण प्रभृति वर्णोंका भिन्न भिन्न धर्म निरूपण किया है। स्मृतिप्रणेता शङ्खके मतानुसार ब्राह्मणोंका धर्म—यजन, याजन, दान, अध्यापन, अध्ययन और प्रतिग्रह; क्षत्रियोंका विशेष धर्म प्रजापालन; वैश्योंका विशेषधर्म कृषिकार्य, गोपालन, और वाणिज्य; शूद्रोंका धर्म ब्राह्मणसेवा और शिल्पकर्म। क्षमा, सत्य, दम और शौच ये सब वर्णोंका साधारण धर्म है। गीता, विष्णुसंहिता, मनु प्रभृति स्मृति, पुराण और महाभारतादिमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय प्रभृति शब्द देखो।

चातुर्विंशिक (सं० त्रि०) चतुर्विंशतिदिन सम्बन्धीय, चौबीस दिनोंमें होनेवाला।

चातुर्विद्य (सं० क्लो०) चतस्रो विद्या एव चतुर्विद्या स्वार्थे ष्यञ्। ब्राह्मणादिषु चातुर्वर्ण्यादीनामुपसंख्यानं। पा ५।१।१२४।

र्मिक। १ चारों वेद। २ चारों विद्या, आन्वीक्षिकी, दण्डनीति, वार्ता और त्रयी। (त्रि०) ३ जिसने चारों विद्या पढ़ी हों। चतस्रो विद्या चेति चतुर्विद्या-अण्। ४ चतुर्वेदाभिज्ञ, जिसने चारों वेद पढ़े हों।

चातुर्वैद्य (सं० क्ली०) चतुर्वेदमेव चतुर्वेद स्वार्थे ष्यञ्। १ चारों वेद। चतुर्वेदमेव चातुर्वैद्यं। पा ५।१।१२४ कैयट। (त्रि०) चतस्रो विद्या अधीते चतुर्विद्या-ठक्, तस्य लुक्, चतुर्विद्य एव चतुर्विद्य स्वार्थे ष्यञ् उभयपदवृद्धिः। २ जो चारों विद्या पढ़ते हों।

चातुर्होतृक (सं० पु०) चतुर्होतृप्रतिपादकग्रन्थस्य व्याख्याता, चतुर्होतृ-ठक्। चतुर्होतृप्रतिपादक ग्रन्थोंके व्याख्यानकर्ता।

चातुर्होत्र (सं० त्रि०) चतुर्भिर्होतृभिरनुष्ठेयं, चतुर्होतृ-अण्। १ जो चार होताओं द्वारा अनुष्ठित हो, जो यज्ञ चार होताओं द्वारा सम्पन्न हो। चतुर्णां होतॄणां कर्म चतुर्होतृ-अण्। २ चार होताओंका काम।

"चातुर्होत्रं कर्म शुद्धं प्रजानां वीक्ष्य वैदिकम्।" (भागवत १।४।१९)

चातुर्होत्रिय (सं० त्रि०) जिस यज्ञमें चार होता नियुक्त किये जाते हों।

चातुष्काण्डिक (सं० त्रि०) चार काण्डोंमें विभक्त, जो चार भागोंमें बटा हो।

चातुष्टय (सं० पु०) चतुष्टयं कालापसूत्रवृत्तिविशेष वेत्ति अधीते वा चतुष्टय-अण्। १ चतुष्टय वृत्त्यभिज्ञ, जो चारों वृत्ति जानता हो। २ जो चारों वृत्ति अध्ययन करता हो।

चातुष्प्राश्य (सं० त्रि०) चतुर्भिरध्वर्युब्रह्मादिभि ऋत्विग्भिः प्राश्यं, ३-तत्। ततः स्वार्थे अण्। चार ऋत्विकोंका भोजनोपयुक्त, जिसे चार ऋत्विक् अच्छी तरह खा सके।

"चातुष्प्राश्यमोदनं पचन्ति।" (शतपथ ब्रा० २।१।४।४)

चातुःसागरिक (सं० त्रि०) चतुर्षु सागरेषु भवः चतुःसागर-ठक्। चतुःसागरोत्पन्न, जो चार समुद्रोंसे उत्पन्न हुआ हो। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होता है।

चात्र (सं० क्ली०) चाय करणे ष्ट्रन्। अग्निमन्थनयन्त्रका अवयवविशेष। कात्यायनश्रौतसूत्रके भाष्यमें अग्निमन्थन-प्रणाली इस प्रकार लिखी है—एक आसनको पूर्वको तरफ पश्चिममें मुंह करके खड़ा कर अग्निमन्थन करना चाहिये। पहिले एक काठको उत्तराग्र कर रखना चाहिये, इसको अधरारणि कहते हैं। दूसरे एक तख्तेका ईशानदिशासे ८ अङ्गुल लम्बा, २ अङ्गुल मोटा प्रमन्थ या मन्थनदण्ड बनाना चाहिये। चात्रको जड़में प्रमन्थकी जड़ बैठानी चाहिये। अधरारणिकी जड़से ८ अ० और छोरसे १२ अङ्गुल छोड़ कर उसमें चार अंगुलप्रमाण मन्थनस्थान बनाना चाहिये। प्रमन्थका छोर उस जगह रख कर चात्रके आगेकी कीलके ऊपर उत्तराग्र कर ओवीली रखना चाहिये। इसके बाद चात्रको नेत्र या मन्थनरज्जुसे तीन बार लपेट कर ऐसे मन्थन करना चाहिये, जिससे अग्नि पश्चिमको तरफ गिरे। किसी शाखाके मतसे यजमानके खुद यन्त्र पकड़ना चाहिये और उसकी स्त्रीको मन्थनरज्जु। शाखान्तरमें अध्वर्यु-पूर्वमुखी हो कर मन्थन करनेका विधान है। बारह अङ्गुलकी एक खैरकी गोल लकड़ीके अगले छोरमें लोहेकी कील ठोंक कर पोंछेकी ओर एक छेद करना चाहिये, तथा लोहेकी पत्तीसे इसकी जड़ और छोर बांध देना चाहिये। इसीको चात्र कहते हैं। बारह अंगुल लम्बी चार अंगुल मोटी एक खैरकी लकड़ीका नीचेका भाग समान और ऊपर भाग गोल करना चाहिये। इसमें भी लोहेकी पत्ती लगती है। इसको ओवीली कहते हैं।

चात्रपुर—मन्द्राज प्रदेशके गञ्जाम जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० १९° २२´ उ० और देशा० ८५° पू० के मध्य बरहमपुरसे १३ मील उत्तर-पूर्व तथा गंजामसे ५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जिलेके कलकटर और पुलिसके श्रेष्ठ कर्मचारी यहां रहते हैं। प्रति वृहस्पतिवारको यहां हाट लगता है। बहरमपुर और गञ्जामसे द्रव्यादि यहां लाया जाता है। यहां एक अंगरेजी विद्यालय है। लोकसंख्या प्रायः ४२१० है।

चात्वारिंश (सं० क्ली०) चत्वारिंशदध्यायाः परिमाणमस्य चत्वारिंशत्-डण्। त्रिंशच्चत्वारिंशतोर्ब्राह्मणे संज्ञायां डण्। पा ५।१।६२। ब्राह्मणविशेष, ब्राह्मणोंके एक भेद जिसमें चालीस अध्याय हों।

चात्वारिंशत्क (सं० त्रि०) चालीस द्वारा क्रीत, जो चालीसमें खरीदा गया हो।

चात्वाल (सं० पु०) चतति याचते चत-वालञ्। स्थावतिचतिजे वालञ् चालनालोयवः। उण् १।११५। १ यज्ञकुण्ड, हवनकुंड। २ दर्भ, डाभ, कुश। ३ उत्तान, जल, पानी। ४ उत्कट, वृक्षभेद, एक तरहका पेड़। ५ उत्तरवेदीका अङ्ग। ६ गर्त, गड्ढा।

"चात्वालं चात्वालवत्‌म्।" (आश्व० श्रौ० १।१।६)

चात्वालवत् (सं० त्रि०) चात्वालोऽस्त्यस्य चात्वाल-मतुप् मस्य वः। चात्वालयुक्त, जिसमें चात्वाल हो।

चादर (फा० स्त्री०) १ ओढ़नेका वस्त्र, हलका ओढ़ना, चौड़ा दुपट्टा, पिछौरी। २ किसी धातुका चौकोर पत्तर। ३ फूलोंका ढेर जो किसी देवता या पूज्य स्थान पर चढ़ाया जाता है। ४ कुछ ऊपरसे गिरनेवाली पानीकी चौड़ी धार। ५ बढ़ी हुई नदी वा अन्य कोई वेगसे बहनेवाले प्रवाहमें स्थान स्थान पर पानीका वह फैलाव जो बिल्कुल बराबर होता है। इसमें भँवर या हिलोरा नहीं होता।

चादरा (हिं० पु०) मरदानी चादर, बड़ी चादर।

चादल—कालञ्जरसे १६ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित अजयगढ़ नामक स्थानके एक प्रसिद्ध राजा। इनका जन्म दधीचिवंशमें हुआ था। उस समय इनका अलौकिक यश तमाम फैला हुआ था। मूर्तिमान् वीर्य्यस्वरूप राजा श्रीपाल इनके पुत्र थे।

चानराट (सं० क्ली०) चनराटस्येदं चनराट-अण्। राजा चनराटकी सभा।

चानस (अं० पु०) ताशका एक खेल।

चानसम—गुजरात प्रदेशके अन्तर्गत बरोदा गायकवाड़ राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २३° ४३´ उ० और देशा० ७२° १४´ ५५´´ पू०में अवस्थित है। यहां जैनोंका उपास्यदेवता पार्श्वनाथदेवका एक मन्दिर है। ऐसा बड़ा जैन-मन्दिर गायकवाड़ राज्यमें दूसरा नहीं है। प्रायः सौ वर्ष पहले इसका निर्माणकार्य्य समाप्त हुआ है। इस शहरमें विद्यालय, डाकघर, थाना और धर्मशाला है।

चान्तपिल्ली (शान्तपल्ली)—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० १८° २ ३०´´ उ० और देशा० ८३° ४२´ पू०में अवस्थित है। बिमलीपत्तन बन्दर जानेके समय जिससे जहाज पहाड़से टक्कर न खाय, इसी उद्देश्यसे नाविकोंको सावधान करनेके लिये १८४७ ई०में यहां "शान्तपल्ली" नामक एक आलोक गृह बनाया गया था। समुद्रसे प्रायः १४ मील दूर तक इसका प्रकाश दृष्टिगत होता है।

चान्दनिक (सं० त्रि०) चन्दनेन सम्पद्यते चन्दन-ठक्। जो चन्दनसे बनाया गया हो।

"वपुश्चान्दनिकं यस्य कार्य्यं वैष्टनिकं सुखं।" (भट्टि)

चान्दनी (सं० त्रि०) १ चन्द्रद्वारा आलोकित चन्द्रमाकी किरणसे प्रकाशित। (पु) २ एक तरहका गुल्म। इसका वैज्ञानिक अङ्गरेजो नाम Tabernaemontana coronana है। यह चारसे पांच फुट तक लम्बा होता है। इसके पत्ते ५।६ इञ्च लम्बे, चिकने और सफेद होते हैं। इसके फल मोमके जैसे सफेद और खानेमें मीठे तथा सुगन्धित होते हैं। दिनके समय इसमें गन्ध नहीं रहती है। भारतवर्षके प्रायः सभी उद्यानोंमें यह गुल्म देखा जाता है।

चान्दाभलु—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कृष्णा जिलेका एक शहर। यह अक्षा० १६° १´ उ० और देशा० ८०° ४०´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २८८५ है। १८७३ ई०में यहां बहुतसी सोनेकी ईंटें पाई गई थीं।

चान्दाला—मध्यप्रदेशके चन्दा जिलेके मूल तहसीलकी एक छोटी जमींदारी। यह १८२० ई०में पहले पहल स्थापित हुई थी। इसका भूपरिमाण लगभग १७ वर्गमील है।

चान्दोड़—१ बरोदा गायकवाड़के अधिकारभुक्त एक ग्राम। यह अक्षा० २१° ५८´ उ० और देशा० ७३° २१´ पू०के मध्य बरोदासे ३० मील दक्षिण-पूर्वमें तथा नर्मदा नदीके दाहिने किनारे पर अवस्थित है। यहां तथा इसके निकटवर्ती कर्णाली ग्राममें बहुतसे देवालय हैं, जिन्हें देखनेके लिये चैत्र और कार्तिक महीनेमें अनेक यात्री आते हैं। लोकसंख्या प्रायः २६१३ है।

२ बम्बईके नासिक जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २०° ८´ तथा २०° २४´ और देशा० ७३° ५६´ एवं ७४° २८´ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ३७७ वर्गमील है। इसमें मनमाड़ और चान्दोड़ नामके दो शहर और

१०७ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्राय: ५५८६८ है। इस तालुकका सर्वांश समतल है, लेकिन गोदावरी की ओर कुछ कुछ ढालू दीख पड़ता है। यहांके उत्पन्न अनाजोंमें गेहूँ और चना प्रधान है।

३ बम्बईके नासिक जिलान्तर्गत इसी नामके तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २०°२०´ उ० और देशा० ७४° १५´ पू०में पड़ता है। इस शहरसे ४० मील दक्षिण-पश्चिममें नासिक शहर और १४ मील दक्षिणमें ग्रेट-इण्डियन पेनिनसुला रेलवेका लासनगाँव स्टेशन अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५३७४ है। रेल होनेके पहले यहां लोहे तांबे और पीतलके बरतन बनानेका एक कारखाना था। कहा जाता है, कि यह शहर चान्दोड यादव-वंशके दृढ़प्रहार नामक राजासे स्थापित किया गया है। पहले यहां डकैतोंका वास अधिक था, लेकिन उक्त राजाने सबको दमन कर वहां शान्ति स्थापन कर दी। १६३५ ई०में यह शहर मुगलोंके हाथसे महाराष्ट्रोंके हाथ लगा। पीछे १६६५ ई०में औरंगजेबने महाराष्ट्रोंको पराजित कर इसे अपने अधिकारमें कर लिया। १७६३ ई०में यह शहर फिर होलकरके अधीन आया। उनके समयमें, कहा जाता है, कि यह उन्नतिके एक ऊँचे शिखर पर जा पहुंचा था और १८१८ ई० तक यह शहर उन्हींके अधिकारमें रहा, पीछे बृटिश गवर्मेण्टने इसे साम्राज्य भुक्त कर लिया। अबसे कुछ पहले इस शहरमें महाराजाकी एक बड़ी अट्टालिका थी। अब केवल उसका ध्वंसावशेष रह गया है। यहांका प्राचीन दुर्ग ३८६४ फुट लम्बा है और इसके चारों तरफ खाई खोदी हुई है। यहां रेणुकदेवीका मन्दिर और कई एक जैन गुहाएं हैं। मन्दिरमें काठकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। इस शहरमें सिर्फ एक औषधालय है।

चान्दोली—युक्तप्रदेशके बनारस जिलेके अन्तर्गत तहसीलदारके अधीन एक उपविभाग। यह काशीके पूर्व-दक्षिणकी ओर गङ्गाके दाहिने किनारे पर अवस्थित है। इस तहसीलमें हो कर रेल गयी है।

चान्द्र (सं० त्रि०) चन्द्रस्येदं चन्द्र-अण्। तस्येदं। पा ४।३।१२०। १ चन्द्रसम्बन्धीय, चन्द्रमा सम्बन्धी, जिसमें चन्द्रमाका संबंध हो, दिनमास प्रभृति। (क्ली०) २ चान्द्रायण व्रत।

"चान्द्र कृच्छ्र तदर्द्धञ्च ब्रह्मचरविशोविधिः।" (प्रायश्चित्ततत्त्व)

(पु०) ३ चन्द्रकान्तमणि। (क्ली०) ४ आर्द्रक, अदरख। ५ परिमाणविशेष। चान्द्रमाण देखो। ६ मृगशीर्ष नक्षत्र, मृगशिरा नक्षत्र। नक्षत्र और मृगशिरस् देखो। ७ प्लक्षद्वीपस्थ एक पर्वत, लिङ्गपुराणके अनुसार प्लक्षद्वीपका एक पर्वत। (लिङ्गपु० ५३।१२) ८ रौप्य, चांदी।

चान्द्रक (सं० क्ली०) चान्द्रं आर्द्रकमिव कायति कै-क। शुण्ठि, सोंठ।

चान्द्रपुर (सं० पु०) १ एक जनपद। बृहत्संहिताके कूर्मविभागके प्रारम्भमें इस नगरका उल्लेख है। २ उक्त नगरकी शिवमूर्ति।

चान्द्रभागा (सं० स्त्री०) चान्द्रोभागोऽस्त्यस्यां, बहुव्री०। चन्द्रभागा नदी। चन्द्रभागा देखो।

चान्द्रभागेय (सं० पु०) चन्द्रभागाया अपत्यं चन्द्रभागा-ढक। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। चन्द्रभागा नदीसे निकली हुई एक नदी।

चान्द्रमस (सं० त्रि०) चन्द्रमस इदं अण्। १ चान्द्रसम्बन्धीय, चन्द्रमा संबन्धीय, जिसमें चन्द्रमाका लगाव हो।

"तिथिश्चान्द्रमसं दिनं।" (तिथितत्त्व)

(क्ली०) २ मृगशिरानक्षत्र।

चान्द्रमसायन (सं० पु०) चान्द्रमसायनि पृषोदरादित्वादिकारस्याकारः। बुध। (हलायुध)

चान्द्रमसायनि (सं० पु०) चन्द्रमसोऽपत्यं चन्द्रमस-फिञ्। तिकादिभ्यः फिञ्। पा ४।१।१५४। बुधग्रह।

चान्द्रमाण (सं० क्ली०) चान्द्रञ्च तन्मानञ्चेति, कर्मधा०। समयका परिमाणविशेष, चन्द्रकी गतिके अनुसार जो सब परिमाण स्थिर किये जाते हैं, उन्हें चान्द्रमाण कहते हैं। इस देशमें कालसम्बन्धी गणना सौर और चान्द्रमाणसे होती है। सौरमाणमें जैसा मास और वर्ष आदिकी गणना होती है, उसी प्रकार चान्द्रमाणमें भी दिन, मास वर्ष आदि होते हैं। सूर्यसिद्धान्तके मतसे चन्द्र अपनी गतिके अनुसार सूर्यके समसूत्रपातमें अवस्थित होने पर इनमें कुछ अन्तर नहीं रहता, इस समयको अमावस्या कहते हैं। इसके बाद शीघ्रगतिसे चन्द्र सूर्यको अतिक्रम कर चलता रहता है। इस प्रकारसे सूर्यसे द्वादशांश अतिक्रम करनेमें जितना समय लगता है, उतने समयको

चान्द्रदिन कहते हैं। १५ चांद्रदिनमें १ पक्ष, २ पक्षमें १ मास और बारह माससे १ वर्ष होता है। इसके अन्यान्य विवरण चन्द्र और तिथि शब्दमें देखो। सूर्यसिद्धान्तके मतसे तिथि, करण, विवाह, चौरकर्म अन्यान्य क्रियाएँ और व्रतोपवास, यात्रा आदि चान्द्रमासमें करना चाहिये।

"तिथिकरणोद्वाहः क्षौरं सर्वं क्रियास्तथा।
व्रतोपवासयात्राणां क्रिया चान्द्रे ण गृह्यते॥" (सूर्यसि०)

चान्द्रमास (सं० पु०) चान्द्रश्चासौ मासश्चेति, कर्मधा०। चन्द्रसम्बन्धीय मास। चन्द्रमास दो प्रकारके होते हैं, गौण और मुख्य। कृष्ण प्रतिपदसे पूर्णिमा तकको तीस तिथियोंको गौण और शुक्ल प्रतिपदसे अमावस्या तकको तीस तिथियोंका मुख्यचान्द्र कहते हैं।

मुख्यचांद्रमें विहित कर्म ये हैं—वात्सरिक श्राद्ध, आद्य श्राद्ध, मासिक, सपिण्डकरण, चान्द्रायण और प्राजापत्यादि व्रत, दान, नित्यस्नान, गृह और पुष्करिणी आदिकी प्रतिष्ठा तथा साधारण तिथिके विहित कर्म।

गौणचान्द्रमें विहितकर्म ये हैं—अष्टकादि पार्वण श्राद्ध, वारुणीस्नान, जन्मतिथिकृत्य, जन्माष्टमी आदि उपवास तथा दुर्गोत्सव आदि नित्यकर्म। (स्मृति)

चान्द्रव्याकरण—चन्द्र या चन्द्रगोमिन् नामक विद्वानका बनाया हुआ व्याकरण। आठ प्रधान व्याकरणोंमेंसे यह भी एक प्रधान व्याकरण है।

"इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिशली शाकटायनः।
पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्यष्टादिशाब्दिकाः॥"

आजकल इस व्याकरणका अस्तित्व नहीं मालूम पड़ता, कहीं कहीं दो एक प्रति लिपि मिलती भी है, तो वह असम्पूर्ण है थोड़े दिन हुए होंगे इसकी एक प्रति नेपालसे मिली है, जो नेपाली संवत् ४७६ अर्थात् १३५६ ई०की लिखी हुई है। इस व्याकरणके बहुतसे सूत्रोंकी भाषा और वर्णविन्यास हूबहू पाणिनिके समान है, इससे अनुमान किया जाता है कि, पाणिनिके व्याकरणसे कुछ सरल बना कर पीछेसे यह बनाया गया होगा। बेण्डाल साहब (Mr. Bendal) का कहना है कि चान्द्रव्याकरण छह अध्यायोंमें और एक एक अध्याय चार चार पदोंमें विभक्त है। परन्तु नेपालसे जो प्रति मिली है, उसके छठे अध्यायमें तीनसे ज्यादा पाद नहीं हैं। चान्द्रव्याकरण यद्यपि पाणिनिके अनुकरणसे रची गई है, तथापि इसमें पाणिनिमें लिखित तमाम शब्दोंका प्रयोग नहीं किया गया है। इसके सिवा कुछ शब्दोंके भिन्न नाम भी दिये गये हैं जैसे—उपसर्गके बदले प्रादि, सर्वनामके बदले सर्वादि, तद्धितके बदले अणादि इत्यादि।

चान्द्रव्रतिक (सं० पु०) चान्द्रतुल्यं चान्द्रायणं वा व्रतमस्त्यस्य चान्द्रव्रत-ठन्। १ राजा, प्रजा अपने अच्छे राजाको देख कर उसी तरह प्रसन्न होती है जिस तरह वह चन्द्रमाको देख कर खुशी हो जाती है, इसीलिये राजाको चान्द्रव्रतिक कहते हैं।

"तथा प्रकृतयो यस्मिन् स चान्द्रव्रतिको नृपः।" (मनु० ९।३०९)

(त्रि०) २ जो चान्द्रायण व्रत करे।

चान्द्रा (सं० स्त्री०) अतिविषा, अतीस।

चान्द्राख्य (सं० क्ली०) चान्द्रमित्याख्या यस्य, बहुव्री०। आर्द्रक, अदरख।

चान्द्रायण (सं० क्ली०) चन्द्रस्यायनमिवायनमत्र, बहुव्री०, पूर्वपदात् संज्ञायां णत्वं दीर्घश्च यद्वा चन्द्रायण स्वार्थे अण्। १ इन्दुव्रत, एक व्रत। मिताक्षराके मतसे चान्द्रायणके अनुष्ठानकारीको शुक्ल प्रतिपदके दिन मयूराण्ड परिमित एक पिण्ड और द्वितीयाको दो पिण्ड खाना चाहिये। इसी प्रकारसे क्रमशः एक एक बढ़ा करके पूर्णिमाको पन्द्रह पिण्ड वा ग्रास भक्षण किये जाते हैं। उसके पीछे कृष्णपक्षकी प्रतिपदको चौदह और द्वितीयाको १३ पिण्ड खाये जाते हैं। इसी भाँति क्रम क्रमसे घटा कर कृष्ण चतुर्दशीको एक ही ग्रास भक्षण करना चाहिये। अमावस्याके दिन कुछ भी खानेको नहीं, उपवास करके रहते हैं। यथानियम उक्त प्रकार आचरण करनेका नाम चान्द्रायण है। यह व्रत यव जैसा मध्यस्थूल रहनेसे यवमध्य चान्द्रायण कहलाता है। पिपीलिकातनुमध्य कृष्णपक्षकी प्रतिपदसे आरम्भ हो कर पूर्णिमा तक चलता है। इसमें कृष्ण प्रतिपदको चौदह और द्वितीयाको तेरह क्रमसे एक एक ग्रास घटा करके चतुर्दशीको एक मात्र ग्रास लेते हैं। फिर अमावस्याके दिन उपवास करके शुक्ल प्रतिपदको एक और द्वितीयाको दो नियमसे क्रमशः एक एक ग्रास बढ़ाते और पूर्णिमाको १५ ग्रास खाते हैं। तिथि ह्रासवृद्धिके अनुसार पक्षमें १४ या १६ दिन

होनेसे ग्रास भी घटाना बढ़ाना पड़ता है। गौतमने चान्द्रायणविधि इस प्रकार कही है—पहले केशवपन और कृष्णचतुर्दशीको उपवास करना चाहिये। "आप्यायस्व" (ऋक् १।९१।१८), "सन्ते पयांसि" (ऋक् १।९१।१७), "नवो नवः" (ऋक् १०।८५।१९) इत्यादि कई मन्त्रों द्वारा तर्पण, आज्यहोम, हविका अनुमन्त्रण और चन्द्रका उपस्थान किया जाता है। "यद्देवा देवहेड़न" आदि मन्त्र चतुष्टयसे आज्यहोम और "देवकृतस्य" आदि मन्त्र त्रयसे समिध् आहुति देनी चाहिये। ग्रासका मन्त्र "ॐ भूर्भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यं यशः श्रीः ऊर्क् इट् ओजः तेजः पुरुषः धर्मः शिवः" है। प्रति मन्त्रमें "नमः स्वाहा" उच्चारण करके भोजन करते हैं। याज्ञवल्क्यके मतमें पिण्ड संख्या सब मिला करके २४० होती है।
सोमायन देखो।

प्रायश्चित्तविवेकमें पांच प्रकारका चान्द्रायण लिखा है—पिपीलिकातनुमध्य, यवमध्य, यतिचान्द्रायण, सर्वतोमुख और शिशुसान्द्र। कृष्णप्रतिपदसे आरम्भ करके एक मास पर्यन्त अनुष्ठान करनेसे पिपीलिकातनुमध्य और शुक्ल प्रतिपद्से उसी प्रकार चलने पर यवमध्य चान्द्रायण होता है।

कृष्णपक्षमें यथाक्रम प्रतिदिन एक एक ग्रास घटा और शुक्लपक्षमें बढ़ा करके त्रिसन्ध्या स्नानके साथ किये जानेवाले व्रतका ही नाम चान्द्रायण है। (मनु)

कल्पतरुके मतमें प्रतिदिन तीन तीन ग्रास खा एक मास व्रतानुष्ठान करनेसे यति-चान्द्रायण होता है। पराशर ग्रासका परिमाण कुक्कुटाण्डके समान अथवा जितना मुखमें आ सके—बतलाते हैं। (पराशर) सभी प्रकारके चान्द्रायणमें चतुर्दशीको उपवास तथा केश, श्मश्रु, नख और रोम वपन करके तत्पर दिनको संयम करना पड़ता है। (बौधायन)

गौतमने सब भी चान्द्रायणका फल चन्द्रलोकप्राप्ति लिखा है। उसीसे "चान्द्रस्य चन्द्रसम्बन्धिनी लोकस्य अयनं यस्मात्" व्युत्पत्ति पर इस व्रतका नाम चान्द्रायण हुआ है। धर्मशास्त्रमें प्रायश्चित्तके लिये भी चान्द्रायण करनेका विधान है। प्रायश्चित्त देखो। इसका अनुकल्प सार्ध ग्रसधेनु है। व्रतानुष्ठान न कर सकनेवालेको अनुकल्प धेनु देनेसे भी चान्द्रायणके समान फल मिलता है। पिपीलिकातनुमध्य, यवमध्य, यतिचान्द्रायण, सर्वतोमुख और शिशुचान्द्र देखो।

(त्रि०) चान्द्रायणस्येदम्, चान्द्रायण-अण्। २ चान्द्रायणसम्बन्धी।

किसी किसी आभिधानिकने चान्द्रायण शब्दको पुंलिङ्ग भी माना है।

३ एक मात्रिक छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें ११ और १०के विरामसे २१ मात्राएं होती हैं।

चान्द्रायणिक (सं० त्रि०) चान्द्रायणमावर्त्तयति चान्द्रायण-ठञ्। गोदानादीनांब्रह्मचर्ये। पा ५।१।९४। चान्द्रायणकारी।

चान्द्री (सं० स्त्री०) चंद्रमा इदम् चंद्र-अण्। तस्येदम्। पा ४।३।१२०। स्त्रियां ङीप्। १ चंद्रपत्नी, चंद्रमाकी स्त्री। २ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चंद्रमाका प्रकाश। ३ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया। ४ सोमराजी। (त्रि०) ५ चंद्रसम्बन्धीय, चंद्रमा सम्बन्धी।

"गुरुकाद्यानुगां बिभ्रच्चान्द्रीमभिमतः शिरम्।" (माघ २।१)

चान्दरपथ—बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत नृसिंहपुर जिलेका एक ग्राम। इसकी वर्तमान अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। यहां महाराष्ट्रोंके उत्कृष्ट किलाका भग्नावशेष देखा जाता है।

चाप (सं० पु०) चपस्य वंशविशेषस्य विकारः, चप-अण्। अवयवे च प्राण्यौषधि वृक्षेभ्यः। पा ४।३।१३५। अथवा चपति स्थिपति अनेन, चप-घञ्। अकर्तरि च कारके संज्ञायां। पा ३।३।१९। १ धनु, कमान। (रघु ३।५९)

२ वृत्तक्षेत्रार्ध, गोलेका आधा हिस्सा। सूर्यसिद्धान्तमें लिखा है—जिसका धनुसाधन किया जाता उसमें ग्रहादिकी ज्याका साधन भी आता है। यह ज्या साधित होने पर उसमें जितने ज्याखण्ड घटते लब्ध संख्याको पृथक् रखते हैं। फिर ज्याखण्ड साधनके अवशिष्ट अङ्कको २२५से गुणन करना चाहिये। इसके पीछे निकाले हुए ज्याखण्ड और उसके परखण्ड दोनों अपने अन्तरित खण्डोंसे बांटे जाते हैं। उससे लब्ध अङ्क एक स्थानमें स्थापन करके पहलेको अलग रखी हुई ज्याखण्ड संख्या द्वारा २२५ गुण करके पूर्वोक्त एकस्थानस्थापित अङ्कोंमें मिलानेसे चाप होगा।

मानलो, किसी ग्रहको ज्या २०२५ है। इसका चाप इस प्रकारसे निकाला जावेगा—

२०२५ ज्यासे उसका नवम खण्ड १९१० निकालने पर ११५ बचता है। इसको २२५से गुण करने पर २५८७५ हुआ। फिर इसको उक्त नवम खण्ड तथा दशम खण्डके अन्तर १८३से भागहार करने पर १४१।७२ निकलेगा। इससे घटे हुए नवम अङ्क द्वारा २२५को गुण करने पर २०२५ होता है। इसमें लब्धाङ्क १४१।७२ मिलानेसे २१६६।७२ चाप निकल आया।

३ धनुराशि। (बृहत्संहिता ४२।१०) ४ (स्त्री०) दबाव।

चापजरीब (हिं० पु०) किसी जमीनको सीधी नाप, लम्बाईकी नाप।

चापट (हिं० स्त्री०) चोकर, भूसी।

चापड़ (हिं० वि०) १ जो कुचले जानेके कारण चिपटा हो गया हो। २ बराबर, समतल। ३ चौपट, मटियामेट, उजाड़।

चापड़ा—नदिया जिलेके अन्तर्गत एक वाणिज्यप्रधान ग्राम। यह जलङ्गी नदीके तौर पर अवस्थित है।

चापदण्ड (सं० क्ली०) जिसके द्वारा जल नीचे और ऊपर आ जा सके पिचकारीके दण्डसा वह दण्ड जिसके द्वारा जल खींच कर फेंका जाता है।

चापना (हिं० क्रि०) दबाना, मीड़ना।

चापपट (सं० पु०) चापो धनुः तद्वत् वक्राकारः पटः पत्रं यस्य, बहुव्री०। पियालवृक्ष, पियारका पेड़।

चापल (सं० क्ली०) चपलस्य भावः, कर्मधा० चपल अण्। हायनान्त युवादिभ्योऽण्। पा ५।१।१३०। १ चपलता, चंचलता, अस्थिरता। २ अनवस्थिति, अधीरता, अनिश्चयता।

"मात्सर्याद्वेषरागादिश्चापल्यन्त्वनवस्थितिः।" (साहित्यद०)

चापलायन (सं० पु०) चपलस्य गोत्रापत्यं पुमान्, चपल-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ् पा ४।१।११०। चपलके गोत्रज पुरुष।

चापलूस (फा० वि०) चाटुकार, खुशामदी।

चापलूसी (फा० स्त्री०) चाटुकारी, चाटुता, खुशामद।

चापल्य (सं० क्ली०) चपलस्य भावः, कर्मधा०। गुणवचन-ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। १ चपलता, चंचलता। २ चाञ्चल्य, ढिठाई। ३ अस्थैर्य, अस्थिरता।

"गुणैः स्थाने चापल्यञ्च विवर्जयेत्।" (चाणक्य)

चापवंश—काठियावाड़के पश्चिम सीमान्तर्गत वर्धमान नामक स्थानका एक राजवंश। हड्डालासे आविष्कृत ताम्रशासन द्वारा इस वंशका अस्तित्व समझा जाता है। कहते हैं कि उस वंशके आदि पुरुषने महादेवके चाप अर्थात् धनुसे उत्पन्न होने पर "चाप" नाम पाया था।

चापके वंशमें विक्रमार्कने जन्म लिया। सम्भवतः वही इस वंशके प्रथम राजा रहे। नीचे चापवंशावली दी जाती है—
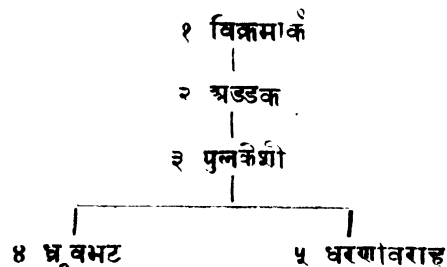
हड्डालाके अनुशासनपत्रसे ज्ञात होता कि धरणी-वराह ८३८ संवत् अर्थात् ८९६-९७ ई०को वर्धमान राज्यमें राजत्व करते थे। ३ पुरुषोंमें एक शताब्दी रखने पर खृष्टीय ८म शताब्दीके शेषभागमें विक्रमार्कका आवि-र्भाव काल दिखलाता है।

उक्त दानपत्र पाठसे समझ सकते कि धरणीवराह राजा कन्दर्प-जैसे रूपलावण्यसम्पन्न, अर्जुन सदृश बल-वीर्यशाली और कर्णकी भाँति दानशील रहे। इन्होंने राजपूतोंकी तरह सैकड़ों ग्राम और नगर उत्सर्ग करके वीरोचित यश पाया था। वर्धमान नामक नगरमें उनकी राजधानी रही।

काठियावाड़के पश्चिमाञ्चलस्थ वर्धमान बढ़वान नामक नगरको बहुतसे लोग वर्तमान जैसा अनुमान करते हैं। कारण द्वादश और त्रयोदश शताब्दीके जैन-लेखक बढ़वान नगरको वर्धमान वा वर्धमानपुर जैसा लिख गये हैं। फिर आजकल वहांके ब्राह्मण इस नगरको शेषोक्त नामसे ही अभिहित करते हैं। पश्चिम भारतमें उक्त नामाभिहित द्वितीय स्थानका अस्तित्व कहीं भी नहीं है।

दानपत्रके मङ्गलाचरणमें महादेव धर्मेश्वर नामसे

सुत हुए हैं। अहमदाबाद जिलेके अन्तर्गत और वर्धमान-के समीपस्थ धन्धुक नामक प्राचीन नगरमें धन्धेश्वर महादेवका मन्दिर भी है। पहले धन्धुक नगरमें धरणीवराहके पितामह अड्डक शासन करते थे। धरणीवराहका उक्त प्रदेशमें आधिपत्य रहा।

दानपत्र देखनेसे समझ पड़ता कि चापवंश बढ़वान स्थानके परवर्ती ठाकुर उपाधिधारी राजाओंकी भांति समीपके प्रधान नृपतियोंकी अधीनता स्वीकार करते थे। जो हो, धरणीवराह "समधिगताशेषमहाशब्द" और "सामन्ताधिपति" उपाधिसे विभूषित रहे। वह यह भी स्वीकार करते कि हम राजचक्रवर्ती महीपालदेवके अनुग्रहसे राजत्व चलाते और उन्हींके श्रीचरणाश्रित कहलाते हैं।

चापा—मध्यभारतके अन्तर्गत बिलासपुर जिला तथा शिवरीनारायण तहसीलका एक ग्राम।

चापाल (सं० क्ली०) बौद्धोंका एक विख्यात चैत्य, बौद्धोंका एक मशहूर मन्दिर।

चापिन् (सं० पु०) चापोऽस्त्यस्य चाप-इनि। १ धनुर्धारी, वह जो धनुष धारण करे।

"त्वं मही त्वं शरी चापी त्वष्टाऽसि भर्मणो तथा।" (भारत १२।२८६ अ०)

२ शिव, महादेव। ३ धनुराशि।

"चापी मरीचजनो मकरो मगास्तः।" (ज्योतिस्तत्त्व)

चापू (देश०) एक प्रकारको बकरी जो हिमालयके निकटवर्त्ती प्रदेशोंमें पाई जाती है। इसके बाल लम्बे और नरम होते हैं जिनसे कम्बल आदि बनाये जाते हैं।

चापोत्कट—गुजरातके अन्तर्गत पत्तन नामक स्थानका एक राजवंश। इस वंशके आदि राजाका नाम वाण था। उन्होंने पत्तननगर बसाया और ६० वत्सर काल अर्थात् ८०५ ई० तक यहां अपना राजत्व चलाया। इनकी परलोकप्राप्तिके पर योगराजने ८४१ और उनके पीछे क्षेमराजने ८६६ ई० तक शासन किया था। क्षेमराजके बाद चांदा और भूयड़ने २५ वर्ष अर्थात् ८८५ ई० तक सिंहासन भोग तथा द्वारावती एवं पश्चिम दिक्में समुदाय स्थान अधिकार करके राज्यका पुष्टि साधन किया। उनके मृत्यु पीछे इसी वंशके वीरसिंह २५ और रत्नादित्य १५ वत्सर पर्यन्त क्रमान्वयसे राजा रहे। चापोत्कट वंशके शेष राजाका नाम सामन्तसिंह था। उन्होंने ७ वर्ष हो (८३५-८४२ ई०) राजत्व किया। फिर इनके भगिनीपुत्र चालुक्यवंशीय मूलराज गुजरात और पत्तनके अधिपति हुए।

चाफन्द (हिं० पु०) मछली पकड़नेका एक तरहका जाल।

चाफट्टि (सं० पु०-स्त्री०) चफट्टस्य ऋषेरपत्यं। चाफट-इञ् (नतोश्वलिभ्यः। पा ४।१।९१) इति लुङ्निषेधः। चफट्ट ऋषिके अपत्य, चफट्ट ऋषिके वंशधर।

चाफल—दाक्षिणात्यको एक बृहत् पल्ली। यह उमराज नामक स्थानसे ६ मील पश्चिम कृष्णाकी उपनदी माड़के तीर पर किसी उपत्यकामें अवस्थित है। इसकी चारों ओर उर्वरा क्षेत्र और उसके पार्श्वमें पर्वतश्रेणी है। चाफलके पास तक एक सड़क लगी है। प्रसिद्ध शिवजीके गुरु रामदास स्वामीके वंशधर यहां राजत्व करते हैं। यह पल्ली माड़ नदीकी दोनों ओर विस्तृत है। गमनागमनके लिये उस पर एक पुल बन्धा है। नदीके दक्षिण पार्श्वको स्वामीका वासभवन और उससे अनतिदूर रामदास स्वामी और इनके आराध्य देव मारुतिके नाम पर उत्सर्गीकृत मन्दिर है। यह मन्दिर १७७६ ई०को बालाजी मांड वगनी नामक किसी धनवान् ब्राह्मण कर्तृक सम्पूर्ण हुआ था। वह एक तीर्थस्थान है। रामनवमीको यहां एक मेला लगता है। उस समय बहुतसे यात्रियोंका समागम हुआ करता है।

चाव (हिं० स्त्री०) १ एक तरहका पौधा जो कुछ कुछ गजपिप्पलीसे मिलता जुलता है। एशियाके दक्षिण और विशेष कर भारतमें यह पौधा पाया जाता है। इसकी लकड़ी और जड़ दवाके काममें आती है। पौधेको काट लेने पर उससे फिर नया पौधा निकलता है। काली मिर्चके जैसे इसमें छोटे छोटे फल लगते हैं। विशेष विवरण चविका शब्दमें देखो।

२ उक्त पौधेका फल। ३ कपड़ा। ४ चारकी संख्या। ५ बच्चेके जन्मोत्सवको एक रिवाज। इसमें सम्बन्धको स्त्रियां खिलौने कपड़े आदि ले कर आती और गाती बजाती हैं। ६ डाढ़, चौभड़, वे चौखूंटे दांत जिनसे भोजन चबा कर खाया जाता है। (पु०) ७ एक प्रकारके बांसका नाम।

चाबना (हिं० क्रि०) चबाना, दाँतोंसे कुचल कुचल कर खाना। २ खाना, खूब भोजन करना।

चाबी (हिं० स्त्री०) १ कुञ्जी, ताली। ताला खोलनेका औजार। २ वह पच्चड़ जिसे दो जुड़ी हुई वस्तुओंके सन्धिस्थलमें ठोंक देनेसे जोड़ मजबूत हो जाय।

चाबुक (फा० पु०) १ कोड़ा, हण्टर, सांटा। २ कोई ऐसी बात जिससे किसी कार्यके करनेकी उत्साह उत्पन्न हो।

चाबुकसवार (फा० पु०) वह जो घोड़ेको भिन्न भिन्न प्रकारकी चाल सिखाता हो, घोड़ोंकी चाल सुधारनेवाला।

चाबुकसवारी (फा० स्त्री०) चाबुक सवारका काम या पेशा।

चाभ (हिं० स्त्री०) चाब देखो।

चाम (हिं० पु०) चर्म, चमड़ा, खाल, चमड़ी।

चामचोरी (हिं० स्त्री०) गुप्तरूपसे पर स्त्री गमन।

चामर (सं० पु०-क्ली०) चमरी मृगविशेषस्तस्या इदम्, चमरी-अण्। १ चमरीपुच्छ वा लोमनिर्मित व्यजन, सुरागायकी पूंछ या रूएँकी बनी मुरछल, चँवर, चौंरी, चौंर। युक्तिकल्पतरुमें लिखा है—सुमेरु, हिमालय, विन्ध्य, कैलास, मलय, उदयाचल, अस्ताचल और गन्धमादन पर्वतमें जो चमरी नामक मृग पाया जाता, उसीके पुच्छ-लोमसे निर्मित होने पर यह चामर कहलाता है।

इसका संस्कृत पर्याय—प्रकीर्णक, चमर, चामरा, चामरी, वालव्यजन और रोमपुच्छक है। चामरका वायु भोजनकर और मक्षिकादि दूरकर होता है। शुभ्रवर्ण, रोहस्त उन्नत, सुवर्ण दण्डयुक्त और हीरक द्वारा अलङ्कृत होनेसे ही राजाओंके लिये यह शुभकर और सम्मानजनक है। इसका दण्ड सुवर्ण और रौप्य किंवा दोनोंसे बनाया जा सकता है। चामरदण्डमें हीरक, पद्मराग, वैदूर्य और नीलकान्तमणि जड़ते हैं। यह लोहित, पीत, शुक्ल किंवा नानावर्णका भी हो सकता है। चामर दो प्रकार होता है—स्थलज और जलज। अरण्य देशके राजाको स्थलज और सजल देशके राजाको जलज चामर व्यवहार करना चाहिये।

चामरका गुण—दैर्घ्य, स्वच्छता, घनत्व और लघुत्व है। इसमें दोष भी चार होते हैं—खर्वता, गुरुत्व, विवर्णता और मलिनाङ्गता। दीर्घसे दीर्घायु, लघुसे भय-विनाश स्वच्छसे धन तथा कीर्तिलाभ और घनसे सम्पद्-वृद्धि होती है।

स्थलज चामर खर्व होनेसे अल्पायुकारक, गुरु होनेसे अतिशय भयप्रद, अल्प लोमयुक्त होनेसे रोग तथा शोकोत्पादक और मलिन होनेसे मृत्युजनक है।

सात प्रकार समुद्रसे उत्पन्न चामर भिन्न भिन्न गुण-विशिष्ट होता है। लवण समुद्रका चामर पीतवर्ण और गुरु तथा लघु उभयविध है। इसका रोम अग्निमें डालनेसे कुछ कुछ चटकता है। इक्षु—समुद्रजात चामर ताम्र-वर्ण, परिच्छन्न और लघु लगता है उसको डोलानेसे मक्षिका और मशक नहीं आते। सुरासमुद्रका चामर नानावर्णयुक्त, मलिन, गुरु और कर्कश पड़ता है। इसके गन्धसे वृद्ध हाथी भी मत्त हो जाते हैं। सर्पिः, समुद्रजात चामर ईषत् पीतवर्णयुक्त, श्वेतवर्ण, स्निग्ध, घन और लघु निकलता है। उसके वायुसे वायुरोग नाश होता है। जलसमुद्रजात चामर पाण्डुवर्ण, दीर्घ, लघु और अत्यन्त घन रहता है। इसके वायुसे तृष्णा, मूर्च्छा, मद और भ्रम मिटता है। यह चामर जिसके घरमें रहता, सर्वप्रकार अमङ्गल और भय भगता है। दुग्धसमुद्रोद्भव चामर शुभ्रवर्ण, दीर्घ, लघु तथा अत्यन्त घन होगा। इसका गुण नानाविध है। देवताओंको भी वह सहजमें नहीं मिलता। समुद्रके मध्यसे सर्प उसे उठा ले जाते हैं।

स्थलज चामर सुगमतापूर्वक जलाया सकता, परन्तु जलज बड़ी कठिनतासे जलता है। इसके दाह-कालको अत्यन्त धूम उठता है। इन सब लक्षणोंको विवेचना करके जो राजा चामर रखता, सुखभोग कर सकता है।

जलज चामर व्यवहार करनेसे शीघ्र ही अरण्यके राजाका वंश, वीर्य, लक्ष्मी और आयुःक्षय होता है। इसी प्रकार अनूप देशका जो राजा स्थलज चामर रखता अपनी लक्ष्मी, आयुः, यशः और बलसे हाथ धो बैठता है। वालुकायन्त्रमें मसूर और जल प्रभृति द्वारा चामर-का संस्कार करना पड़ता है। उसी उष्ण जलके क्वाथसे इसकी लम्बिमता छूटती है। (भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु)

(पु०) २ गण्डस्थल, गाल। ३ ग्रन्थिपर्ण, गठिवन। ४ चमरी मृग। ५ एक छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें रगण, जगण, रगण, जगण और रगण होते हैं। ६ मोरछल।

चामरग्राह (सं० त्रि०) चामरं गृह्णाति चामर ग्रह-अण्, उपपदस०। चामरेण व्यजनकर्त्तरि स्त्रियां टाप्। जो चामरसे हवा करता हो, जो चामर डुलाता हो।

चामरधारिणी (सं० स्त्री०) चामरं धरति धर-णिनि स्त्रियां ङीप्। चामरग्राहिका।

चामरपुष्प (सं० पु०) चामरवत् पुष्पमस्येति। १ क्रमुक, सुपारीका पेड़। २ काशतृण, काँस। ३ केतकीवृक्ष। ४ आम्र, आम।

चामरपुष्पक (सं० पु०) चामरपुष्प एव स्वार्थे कन् चामरमिव पुष्पमस्य इति कन् वा। काशतृण।

चामरपुष्प देखो।

चामरलाकोटा—मन्द्राज प्रदेशके गोदावरी जिलेके अन्तर्गत एक शहर। यह अक्षा० १७° ३′ १०″ उ० और देशा० ८२° १२′ ५०″ पू० पर काकनाड़ासे ७ मील उत्तरमें अवस्थित है। इस स्थानसे राजमहेन्द्री और काकनाड़ा तक एक नहर काटी गई है। पहले यहां सैनिकोंकी छावनी थी। किन्तु १८६८ ई०से यहां सेना रखी नहीं जाती है। १८८६ ई०का बनाया हुआ एक सैन्यागार आजकल भी विद्यमान है।

चामरसाह्वय (सं० पु०) तृणविशेष, एक तरहकी घास।

चामरहस्ता (सं० स्त्री०) चामरं हस्ते यस्याः सा बहुव्री०। चामरधारिणी देखो।

चामरा (सं० स्त्री०) चामर अजादित्वात् टाप। चामर।

चामराज—महिसुरके यादववंशीय आदि राजा विजयके वंशमें उत्पन्न कई एक राजाओंका नाम। १म चामराजने १५७१ ई०से १५७६ ई० तक महिसुरराज्य शासन किया था। विजयनगरके ध्वंस होनेके बाद ये स्वाधीन हुए थे। २य चामराजने १६१७ ई०से १६३७ ई० तक राज्य किया था। कहते हैं कि, ये १म चामराजके चचाके वंशके थे। ३य चामराज १म १७३१से १७३३ ई० तक राज्य किया था। आप विजयवंशीय राजाओंके अन्तिम वंशधर थे। इनके बाद अराजकता फैली थी, तथा मुसलमानोंने इस राज्य पर बारम्बार आक्रमण और अपनी इच्छानुसार राजाका चुनाव किया था। कुछ भी हो, इस प्रकारकी विशृङ्खलताके समय मुसलमानों द्वारा निर्वाचित भिन्न भिन्न वंशीय राजाओंमें भी चामराज नामके दो राजा पाये जाते हैं। एकने १७६६ ई०में सिंहासन पर बैठ कर १७७५ ई०में शरीर छोड़ा था, और दूसरेने हैदरअली द्वारा सिंहासन पा कर १७८६ ई०में मानवलीलाका खातमा किया था। आप कारुगहल्ली वंशके आर्कोत्तराके देवराज आरसके पुत्र थे।

चामराजनगर—महिसुर राज्यके महिसुर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४०′ तथा १२° ८′ उ० और देशा० ७६° ४३′ एवं ७७° १२′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४८७ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ११०१८६ है। पूर्व तथा दक्षिण सीमा पर बिलीगिरी नानगन पर्वत पड़ता है। सुवर्णवती नदीसे कई नहरें निकली हैं। देश सर्व प्रकार समृद्धिशाली है। युरोपीय कुछ कहवा भी पैदा करते हैं। दक्षिण-पूर्वको जङ्गलमें हाथीका खेदा होता है।

चामराजनगर—महिसुर राज्यस्थ महिसुर जिलेके चामराजनगर तालुकका सदर। यह अक्षा० ११° ५५′ उ० और देशा० ७६° ४६′ पू०में नञ्जनगूद रेलवे ष्टेशनसे २२ मील दूर पड़ता है। लोकसंख्या ५८७३ होगी। पहले इसको आर्कोत्तार कहते थे। १११७ ई०को यहां जैन बसती पड़ी। १८१८ ई०को महिसुरराजने इसका वर्तमान नामकरण किया। कारण उनके पिताने यहां जन्म लिया। राजाने चामराजेश्वरका बड़ा मन्दिर बना दिया और अपने पिताके स्मरणार्थ नगरोत्सर्ग किया। इसके पूर्व पार्श्वमें रामसमुद्रम् है, जिसके निकट कथित मणिपुर नामक प्राचीन नगरका ध्वंसावशेष देख पड़ता है। १८७३ ई०को म्युनिसपालिटी हुई।

चामराजेन्द्र उदेयार—महिसुरके एक राजा। महिसुरके अन्तिम हिन्दूराज कारुगहल्लीवंशीय चामराजके पौत्र थे। श्रीरङ्गपत्तनके ध्वंस और टीपू सुल्तानकी मृत्युके बाद अङ्गरेजोंने इनके पिताको महिसुरका राजसिंहासन दिया था। १८६८ ई०में इनकी मृत्युके बाद नाबालिगी अवस्थामें ये सिंहासन पर बैठाये गये थे और १८८१ ई०में इनने समर्थ हो कर राज्यभार ग्रहण किया था।

चामरिक (सं॰ पु॰) चामर-ठन्। वह जो चामर डुलाता हो।

चामरी (सं॰ पु॰-स्त्री॰) १ चामरी गाय, सुरागाय। (Yak)

भोजराजरचित युक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—सुमेरु पर्वतकी सुरागाय कुछ पीली, हिमालय और विन्ध्य पर्वतकी गाय सफेद, कैलास पर्वतकी काली और सफेद, मलयपर्वतकी शुक्ल और पिङ्गलवर्ण, उदयाचलकी कुछ लाल, अस्ताचलकी नील आभायुक्त शुक्ल, किसीके मतसे काली, गन्धमादनकी पाण्डुवर्ण तथा अन्यान्य स्थानोंकी सुरागाय प्रायः काले रंगकी होती है। इन पर्वतोंके चामरी चार प्रकारकी होती है,—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इनमेंसे बड़े बड़े रोमवाली, औरोंसे छोटी, चिकने अङ्गवाली, कोमल, संख्यामें थोड़ी और अल्पग्रन्थियुक्त चामरी ब्राह्मण जातीय है। इनके रोम दूसरोंसे साफ सुथरे और देखनेमें सुन्दर होते हैं। क्षत्रिय चामरी कहलाती हैं, जिनके रोम लम्बे हों, जो भारी और सचराचर देखनेमें आती हों। स्थूलसन्धियुक्त चामरी वैश्य जातीय हैं। अल्पलोमयुक्त, अत्यन्त छोटी, कोमलाङ्ग, अल्पसन्धियुक्त और सचराचर दीखनेवाली चामरी शूद्र कहलाती हैं। इनके चामर साफ करने पर भी मैले रहते हैं।

(युक्तिकल्पतरु)

वर्तमानके प्राणीतत्त्वविदोंके मतानुसार—गायकी जातिके एक प्रकारके जङ्गली जानवरको चामरी कहते हैं। तिब्बतके नानास्थानोंमें यह पाली जाती हैं और इनके मादे भार ढोते हैं। इनकी आकृति करीब करीब बैल और भैंसोंके बीचकी होती है। उक्त जातिके अन्यान्य चतुष्पदोंकी तरह ये भी मस्तक नीचा करके चलते हैं। पाली हुई चामरी खूब बड़ी होती हैं, इनका आकार बड़े बैलोंके समान और मस्तक, पैर और आकृति भी प्रायः वैसी ही होती है। सारा अङ्ग लम्बे लम्बे रोमोंसे ढका हुआ, मस्तक छोटा, आंखें बड़ी और उज्ज्वल, सींग छोटे, टेढ़े और नुकीले, ललाट कुञ्चित, चौड़ा और रोमोंसे आच्छादित, नासिका चौरस और छोटे छोटे छिद्रवाली, गर्दन छोटी, पीठका हिस्सा नीचा, पैर गट्टे, तथा कन्धे पर लोमयुक्त ककुत् (कुब्बड़) रहता है। इनके पीठकी रोमावली सीधी रहने पर भी कर्कश नहीं होती। पूंछ खूब लम्बी और बहुत रोमवाली होती है। सामनेके पैरोंके बीचसे गुच्छे जैसे दीर्घ रोम निकलते हैं। पीछे और कन्धेके लोम छोटे, नीचेके हिस्सेके सीधे और लम्बे, कभी कभी जमीनसे भी छू जाते हैं।

सफेद, धूसर आदि नाना रङ्गकी चामरी होती हैं। उनमेंसे सफेद और काले रङ्गकी चामरी ही ज्यादा देखनेमें आती हैं। इनके शरीर पर ज्यादा रोम रहनेके कारण ये तिब्बतका असह्य शीतको भी सह लेती हैं।

तिब्बतके ऊंचे पार्वत्यप्रदेश ही इनका यथार्थमें जन्मस्थान है। तिब्बतके पूर्व भागमें पर्वतोंके ऊपर चामरीके झुण्डके झुण्ड दिखलाई देते हैं। वहां पाली हुई चामरी गायका काम देती है। तिब्बतके लोग इसका दूध पीते और रोमोंसे कपड़ा बुनते हैं। मादी और मादे चामरी दुर्गम पहाड़ी मार्ग पर भार ले कर जा-आ सकते हैं। तिब्बतके लोग इसका मांस खाते हैं और दूधसे दही, मक्खन, घृतादि बनाते हैं। पूर्व-नेपालमें चामरी प्रधान सम्पत्तिमें गिनी जाती है। खेतीके काममें तथा गाड़ी खींचनेमें चामरी पटु नहीं है। परन्तु पीठ पर काफी बोझ ले कर अन्य प्राणीके अगम्य पहाड़ी मार्गपर प्रतिदिन २० मीलके करीब चल सकती है। लामा लोग चामरी पर सवार भी होते हैं। चामर या

चँवरके सिवा इनके रोमसे रस्सो और एक तरहका पुख्ता कपड़ा भो बनता है, तथा लोम सहित चमड़े से टोपी, अंगरखे, कंबल आदि बनते हैं।

चतुष्पद प्राणियोंमें चामरी ही सबसे ऊंची जगहमें रहती हैं। हिमालय और तिब्बत जैसे तुषार-मण्डित पर्वतों पर इनका वास है। वहाँके असहनीय शीतसे इन्हें कुछ भी तकलीफ नहीं होती। परन्तु शीतातपका सहसा अधिक परिवर्तन इनसे नहीं सहा जाता। गरमियोंमें मामूली तौरसे १६००० — १७००० फुट ऊंची जगह पर रहती हैं। १६३०० फुट ऊंचाई पर भी चामरी देखी गई हैं। इस भयानक ऊंचाईसे बहुत दूर नीचे तक घास आदि नहीं उपज सकती, क्योंकि वहांका स्थान बरफसे ढका हुआ रहता है।

सिन्धुनदके उत्पत्तिस्थानमें बहुत चामरी देखनेमें आतीं हैं। परन्तु काराकोरम और किउनलन् पर्वतके नीचे ही इनके ज्यादे झुण्ड दिखाई देते हैं। तिब्बतके समस्त पशुओंसे इनका आकार बड़ा है। जङ्गली चामरी भयानक डरावनी और दुर्दमनीय होती हैं। शिकारीको देखते ही बड़ी जोरसे आक्रमणपूर्वक सींगोंसे उसे चीर डालतीं हैं या छातीसे जमीन पर डाल कर पीस डालतीं हैं। इनकी जीभ इतनी तीखी और खरखड़री होती है कि, जहाँ चाट लें वहाँकी हड्डी तक निकल आती हैं। जाड़ेकी मौसममें ये ऊपरसे कुछ नीचे आ जातीं हैं और जाड़ेके चले जाने पर पुन: ऊपर पहुंच जाती हैं। ये अकेली या छोटे छोटे झुण्ड बना कर निर्जन उपत्यकामें रहा करतीं हैं। भालू और मृगोंकी तरह दुपहरको बरफके ऊपर गाढ़ी नींद लेती हैं। शिकारी लोग इसी मौके पर इनको मारा करते हैं

बड़े बड़े कुत्ते और बन्दूकोंसे चामरीका शिकार किया जाता है। शिकारी लोग इनके मारनेका स्थान खोज कर, उससे २-४ गज अन्तरमें पत्थरोंके कई एक ढेर बनाते हैं। शिकारी उनमेंसे किसी एकमें छिप जाता है तथा जब चामरी खूब पासमें आ जाती है, तब गोली मारते हैं और जल्दीसे दूसरे ढेरमें छिप जाता है। चामरी *शब्दको सुन कर चाहे गोली लगे या न लगे, उसी तरफ* धावा मारती है और सींगसे उन पत्थरोंका चकनाचूर करती रहती है। शिकारी इसी मौके पर पुन: गोली मारता है और झट-पट दूसरे ढेरमें छिप जाता है। इस तरहसे चामरीको मार पाते हैं।

जङ्गली चामरी पाली हुई चामरीसे करीब चौगुनी होती है। पूरी उम्रवाली चामरीके सींग दो हातके करीब लम्बे होते हैं। तिब्बतके लोग इन सींगोंसे सोने-चांदीसे जड़े हुए गिलास बनाते हैं। विवाह और उत्सवोंके समय उसमें मीठा पानी रख कर लोगोंको पिलाते हैं।

तिब्बतके नाना स्थानोंमें लामासराइयोंमें महाकालीकी मूर्तिके सामने बलिदानार्थ चामरी देखनेमें आती हैं।

चैत्र और बैसाख माससें चामरी सिर्फ एक बच्चा जनती है। चामरीका बच्चा देखनेमें बहुत ही खूबसूरत और खेलकूदमें मस्त होता है।

रूपसा, बुशायर आदि स्थानोंमें चामरी पाली जातीं हैं। बुशायरसे चामरी बिकनेके लिए भी भेजी जातीं हैं। स्पिति नगरमें चामरीसे हल जोता जाता है। मादा चामरी और गाय या मादी चामरी और बैलके संमिश्रणसे एक तरहके जानवर पैदा होते हैं। इनकी आकृति भी प्राय: चामरी जैसी होती है।

चामरमिव केशरोऽस्त्यस्य इनि प्रत्ययः। २ घोटकी, घोड़ी। ३ चामर, चौंर। चामर देखो।

चामरायुलि—अयोध्या प्रदेशस्थ उनाव जिलेका एक शहर। यह उनाव शहरसे ७ मील पूर्वमें अवस्थित है। दोक्षित उपाधिधारी क्षत्रियोंने यह नगर स्थापन किया था। इसके एक ग्राममें अभी भी बहुतसे दोक्षित क्षत्रियोंका वास है। यहां एक गवर्मेण्ट विद्यालय, अनाजका बाजार और दो प्राचीन शिवमन्दिर रह गये हैं।

चामसी (सं० स्त्री०) अन्नमण्ड।

चामसायन (सं० पु०) चमसिन्-फक्। नड़ादिभ्य: फक्। पा ४।१।९९। चमसीका गोत्रापत्य।

चामार-तङ्केड़ि—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत एक पर्वत। यह नासिक नामक स्थानसे ५।६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। *यह प्राय: छ: सौ फुट ऊँचा है।* इसके ४५० फुट ऊपरमें एक जैन-मन्दिर है। पर्वतके

ऊपर जानेके लिये सीढ़ियां बनाई गई हैं। पर्वत पर पुष्करिणी, मन्दिर प्रभृति हैं। इसके मध्यभाग तथा ऊपर-में स्त्री-पुरुषोंकी बहुतसी प्रतिमूर्तियां खोदी हुई हैं।

चामारदि—गुजरात प्रदेशस्थ काठियावाड़ जिलेके अन्तर्गत गोहिलवारका एक सामान्य राज्य। इस राज्यमें सिर्फ एक ग्राम लगता है। राज्यकी आमदनी जो कुछ होती, उसमेंसे कुछ गायकवाड़ और कुछ जूनागढ़के नवाबको करस्वरूप देना पड़ता है।

चामीकर (सं० क्ली०) चमीकरे रत्नाकरविशेषे भवम् चमीकर-अण्। १ स्वर्ण, सोना। २ धुस्तूरवृक्ष, धतूरा।

"जगतीरिहस्फुरितचारु चामीकराः।" (माघ) ३ नाग-केशरपुष्प। (त्रि०) ४ स्वर्णमय, सुनहरी।

"सशब्दचामीकरकिङ्किणीकः" (कुमारसम्भव)

चामुण्डराज—१ गुजरातके चालुक्य वंशीय द्वितीय राजा। इनके पिताका नाम मूलराज था। ये चापोत्कट-वंशके अन्तिम राजा सामन्तराजके भांजा थे। बाल्यकालसे ही चामुण्डराज अत्यन्त बुद्धिकुशल और वीर्य्यवान् थे। पिताकी मृत्युके बाद इन्होंने राजसिंहासन पर बैठ राज्य शृङ्खलाबद्ध और अनेक विषयोंमें उन्नति की थी। वल्लभराज, दुर्लभराज और नागराज नामके इनके तीन पुत्र थे। एक समय चामुण्डराज किसी पापकार्य्यमें लिप्त हो गये थे। प्रायश्चित्तके लिये ये काशी प्रभृति तीर्थोंमें भ्रमण करने निकले। रास्तेमें मालवके राजाने इनके राजछत्र और चामर छीन लिये थे। जो कुछ हो, चामुण्डराजने तीर्थस्थानोंसे राजधानी लौट कर अपने लड़के वल्लभराजको मालवराजके विरुद्ध लड़नेके लिये भेजा, किन्तु दुर्भाग्यवश वल्लभराज रास्तेहीमें वसन्त रोगसे मर गया। अतः युद्धयात्राका कोई फल न निकला। इसके बाद दुर्लभराजको राज्यभार सौंप कर आप फिर शुक्लतीर्थको गये और वहीं १०२५ ई०में परलोकको सिधारे। गुजरातके अन्तर्गत पत्तननगरमें इनकी राजधानी थी। इनके राजत्वकालमें गजनीके सुलतान मामूदने भारतवर्ष पर चढ़ाई कर गुजरात लूटा था।

२ चाँदवर्दाईके लिखे हुए दोहाओंमें प्रबल प्रतापान्वित वीरपुरुष चामुण्डराजका नाम देखा जाता है। ये देवगिरि जीत कर पृथ्वीराजके निकट पहुँचे और उन्हें रेवातट जय करनेके लिये उत्साहपूर्ण वचन बोले थे।

चामुण्डराय—दाक्षिणात्यके श्रवणबेलगोला नामक स्थानमें जैन-मन्दिरादिके प्रतिष्ठाता और मदुराराज राचमल्ल नरपतिके प्रधान मन्त्री। ये गोम्मटसारादिके कर्ता श्रीमान् नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीके प्रधान शिष्य थे। इन्होंने "चामुण्डरायपुराण" नाम रख कर कई एक ग्रन्थ रचे हैं। इस ग्रन्थमें तेसठ शलाका-पुरुष (प्रधान प्रधान जैन महात्मा) अर्थात् २४ तीर्थङ्कर, १२ चक्रवर्ती, ९ बलभद्र, ९ नारायण और ९ प्रतिनारायणका विवरण है। इसके सिवा इन्होंने ३००० श्लोकोंमें "चारित्रसार" नामक एक मुनि और गृहस्थोंके आचारका ग्रन्थ रचा है। यह ग्रन्थ बहुत ही सरल और सरस है। कहते हैं, कि इन्होंने गोम्मटसारकी कर्णाटकवृत्ति भी बनाई है, जिसके आश्रयसे केशववर्णीने वर्तमानमें प्रचलित संस्कृत टीका रची है।

चामुण्डा (सं० स्त्री०) दुर्गा, मातृकाविशेष। इनका पर्याय—चर्चिका, चर्ममुण्डा, मार्जारकर्णिका, कर्णमोटी, महागन्धा, भैरवी और कापालिनी है। इनका ध्यान यथा—

"काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमाला-विभूषणा॥
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा।
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा॥
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा॥"

इनका चामुण्डा नाम होनेका कारण—

"यस्माच्चण्डञ्च मुण्डञ्च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि॥" (चण्डी)

चामुण्डा नामकी शक्तिने महासंग्राममें चण्डमुण्ड नामक शुम्भ निशुम्भके दो सेनापति दैत्योंका वध किया था, इसलिये दुर्गाका नाम चामुण्डा हुआ है।

जो चामुण्डा देवीके ललाटसे निष्क्रान्त हुई हैं, उन्हींका नाम काली है। इनकी आठ योगिनी हैं—त्रिपुरा, भीषणा, चण्डी, कर्त्री, हन्त्री, विधात्रिका, कराला और शूलिनी।

चामुण्डाका बीजमन्त्र—

ऐँ ह्रीँ क्लीँ (ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) चामुण्डा देव-

शक्तिस्वरूपा होने पर भी सच्चिदानन्दात्मकके लिये त्रिरूपा हैं। चिद्रूपा महासरस्वती हैं, इसीलिये सरस्वती बीज ऐँ है, सद्रूपा महालक्ष्मी है और उनका बीज ह्रीँ है। आनन्दस्वरूपा महाकाली है, इसलिये उनका कामबीज क्लीँ है।

"विच्चे" (वित्, च, इ) पदत्रयात्मक चित्सद आनन्द वाचक है। उक्त संज्ञाके विषयमें प्रमाण भी है। यथा—

'महासरस्वती चिते ! महालक्ष्मीसदात्मिके।
महाकाल्यानन्दरूपे तत्त्वज्ञानप्रसिद्धये।
अनुसन्दध्महे चण्ड ! वयं त्वां हृदयाम्बुजे।" (दक्षिणामूर्ति सं०)

यदि महालक्ष्मीका भी बीज मन्त्र "श्रीँ" है, किन्तु वह "ह्रीँ से विशेष विभिन्न नहीं है, क्योंकि शकार और हकार दोनों ऊष्मवर्ण और सजातीय है, अतएव "श्रीय ने "श्रा..." इस शाखान्तरमें "श्री"के स्थान पर 'ह्रीँ"का पाठ देखा जाता है। "कामबीज" "क्लीँ" इस जगह लकारके स्थान पर रकार योग करनेसे कालीबीज "क्रीँ" होता है।

चामुण्डीविट्टा—महिसुर राज्यका एक पर्वत। यह अक्षा० १२° १७ उ० और देशा० ७६° ४४ पू०में अवस्थित है। यह समुद्रतलसे ३४८९ फुट ऊँचा है। पर्वतकी चोटी पर चामुण्डा देवीका मन्दिर प्रतिष्ठित है। मन्दिरके सम्मुख पथ पर शिवकिङ्कर नन्दी और शिववाहन वृषकी बड़ी बड़ी प्रतिमूर्तियाँ पर्वत पर खोदी हुई हैं। १६५९ ई०में राजा दोड्डदेवने महिसुरके सिंहासन पर बैठ इन प्रतिमूर्तियोंको खोदवाया था। हैदर अलीके राजत्वकाल तक इस मन्दिरके सामने नरवलि होता था। प्रवाद है कि भगवती चामुण्डाने इसी देशमें महिसुरका बध किया था, इसी कारण इस राज्यका नाम महिषासुर शब्दके अपभ्रंशसे महिसुर हुआ है।

चामुर्सि-मध्यप्रदेशस्थ चाँदा जिलेके अन्तर्गत मूल तहसीलका एक शहर। यह वेणगङ्गाके बायें किनारे पर अवस्थित है। यहाँ हिन्दू, मुसलमान और आदिम अधिवासियोंका वास हैं। जनसंख्या लगभग ३४८० है। निजाम राज्यके साथ रेँड़ीका बीज और पूर्व उपकूलके प्रदेशोंके साथ घी, कपास प्रभृतिका वाणिज्य हुआ करता है। यहाँ एक साप्ताहिक हाट लगता है। यहाँ डाकघर और विद्यालय भी है।

चाय (चीनी-चा, स्त्री०) एक तरहके पौधेके पत्ते। चाय प्रधानतः दो प्रकारके पौधोंसे पैदा होती है। एक प्रकारके पौधे तो चीन देशमें उत्पन्न होते हैं और दूसरे प्रकारके भारत और दक्षिण अमेरिकामें। दक्षिण अमेरिकामें जो पौधे होते हैं, उनसे* पारागुया-चाय (Paraguay tea) पैदा होती है।

चीनदेशमें चायकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसी जनश्रुति है कि, "धर्म नामक कोई एक ब्राह्मणसंन्यासी चीन देशमें धर्मप्रचारार्थ गये थे। वहाँ पहुँचने पर लम्बे सफरसे थक जानेके कारण सो गये। जगनेके बाद उन्हें कुछ दुर्बलता-सी जान पड़ी, इससे वे क्रोधित हो कर अपनी भौंहके बाल नोच नोच कर फेंकने लगे। उस बालोंसे छोटे छोटे पेड़ हुए। संन्यासी उन पौधोंके पत्तोंको चख कर आध्यात्मिक चिन्तामें निमग्न हुए और वे पौधे 'चा' नामसे प्रसिद्ध हो गये।"

चीन देशमें Thea chinensis नामके वृक्षकी चाय मिङ्, कुतू, कु-चा, किया, तू आदि नामसे प्रचलित है। इन सब नामोंसे यह प्रतीत होता है कि, भिन्न भिन्न स्थानोंमें और भिन्न भिन्न समयोंमें उस देशमें किसी किसी शाक सब्जियोंमें चाय उत्पन्न होती थी। मिङ् नाम ताङ्‌वंशके राजत्वकालमें प्रचलित था, वर्तमान चीन साहित्यमें भी इसका प्रयोग देखनेमें आता है। इसके सिवा चायके डब्बों पर भी 'मिङ्' लिखा रहता है।

कु-त और कू-चाके पत्ते भी आजकल चायके नामसे अभिहित हैं। सम्भवतः "किया" शब्दसे विलायती चिकोरी (Chicory) नामके पौधेका बोध होता है। इसके सिवा और भी एक तरहके पौधे (Segeretia theezans) होते हैं। चीन देशसे अत्यधिक चायकी रफ़नी होती है, इसलिए वहाँ चायका मूल्य बहुत बढ़ गया है। इससे गरीब लोग इस चायको खरीद नहीं सकते। इसलिए वे चायके बदले उपर्युक्त पौधों (Segeretia theezans)-के पत्ते काममें लाते हैं। इसके साथ भी चमेली (Camellia) के पत्ते मिलाये जाते हैं। किन्तु इसमें चायका अंश बहुत ही कम रहता है। जिस

* इस जातीय वृक्षको अङ्गरेजीमें Holly, तथा भारत और पञ्जाबमें "हलु" या "कलुषो" कहते हैं।

कोठेमें चायके बोरे भरे जाते हैं, उस घरमें जो चाय पड़ी रहती है वह भी गरीबोंको कम दाममें बेच दी जाती है। "तू" शब्दका प्रयोग अभी तक किया जाता है। हानवंशके किसी राजाके शासनके समय "चा" वर्णका "तू" उच्चारण निषिद्ध था, तबहीसे "चा" नाम ही अधिक प्रचलित हो गया है।

यूरोपीय वणिकोंसे चायके बहुतसे नाम सुननेमें आते हैं। जैसे—कालीचाय (Black tea), बोहिया (Bohea), ब्रिक्-चाय (Brick tea), कङ्गू (Congou), हरी चाय (Green tea), बारूद चाय (Gunpowder tea), राजबारूद (Imperial gunpowder), हाइसन् (Hyson), पक्ली हाइसन् (Pukli Hyson), हाइसन् स्किन् (Hyson Skin), पिको (Pekoe), पिको-सुचङ्ग (Pekoe Suchong), फल पिको (Flowery Pekoe) सुवासित पिको (Scented Pekoe), पौचङ्ग (Pouchong) और सौचङ्ग (Souchong) चायके भिन्न भिन्न नाम चीनोंके रक्खे हुए हैं। रंग और उत्पत्तिस्थानके नामानुसार ये नाम रक्खे गये हैं। उई या बुई पर्वत परसे उत्पन्न-वाली चायका नाम बोहिया रक्खा गया है। यद्यपि लण्डन नगरमें एक तरहकी बुरी काली चाय इस नामसे प्रसिद्ध है, तथापि चीनदेशमें किसी विशेषका यह नाम नहीं है। कियांसु पर्वत पर जो हरे रंगकी चाय होती है, उसे सुङ्ग्लो (Sunglo) कहते हैं।

काले रंगकी चायके निम्नलिखित भिन्न नाम हैं—

पिको या पिको (इन नामका अर्थ सफेदवाल) इसके नये पत्तों पर एक तरहको सफेद केशर होती है। लोग इसे खूब पसन्द करते हैं। इसके स्वादमें भी कुछ विशेषत्व है। कमला-पेको (Orange pekoe) यह अत्यन्त सुगन्धित और पेकोसे कुछ भिन्न प्रकारकी होती है। हङ्गमुइ (Hungmuey) अर्थात् लाल बदरीफूल—इसका रंग लाल होता है। सौचङ्ग और पिकोके और भी भिन्न भिन्न नाम हैं, उनका हिन्दी अनुवाद करनेसे—राजभ्रू, मांसवर्ण केशर, पद्मबीज, चटकजिह्वा, देवदारु, पत्रादर्श इत्यादि नाम हो सकते हैं।

सौचङ्ग, या सियान् चङ्ग शब्दका अर्थ छोटा पौधा या छोटी जाति। इसी प्रकार पौचङ्गका अर्थ भाँजना, बोरा बाँधनेकी किसी विशेष परिपाटीसे इसका ऐसा नाम हुआ है।

कम्पोई (Compoi) कन्पाई (Kan-pei) शब्दका अपभ्रंश अर्थ यत्नतम है। चूलान (Chulan)—चूलान नामक फूलकी सुगन्धिसे सुगन्धित की जानेके कारण कई एक चायको चूलन चाय कहते हैं। हरी चायके नाम ज्यादा नहीं हैं।

भारतवर्षमें देशभेदसे चायके नाम भी भिन्न भिन्न हैं। काछाड़ जिलेमें चायको "दुलिचाम्" कहते हैं। पेड़की छालके रंगसे दुलिचाम् अर्थात् श्वेतकाष्ठ नाम हुआ है। आसामके लोग इसे फलेप य क्षेप कहते हैं। मटकमें मिमाफ्लेट और आसामके अन्यान्य प्रदेशोंमें चाय हिलकाट नामसे प्रसिद्ध है।

चाय भारतसे पैदा हुए पौधेसे उत्पन्न है, यह बात पहिले यूरोपके लोग नहीं जानते थे, बादमें उन्हें उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें उनको मालूम हुआ है। १७८८ ई०में सर जोसिफ् बैङ्कस्ने वारेन हेस्टिंसकी सलाहसे इष्टइण्डिया कम्पनीको एक दरखास्त भेजी थी, उसमें चीनदेशसे चायके पौधे मंगा कर विहार, रङ्गपुर, कोचविहार आदि स्थानोंमें चायकी खेती करनेके लिए अधिकार मिलनेकी बात लिखी थी।

१८१५ ई०में किसी लेफ्टनेण्ट कर्णलने उत्तरपूर्व प्रदेशमें चायके वृक्षको बात जाहिर की थी। तबसे बहुतोंने भारतमें चायका पता लगाया है। डाक्टर बुकानान हामिल्टनके मतसे, चाय आसाम और ब्रह्मदेशसे उत्पन्न हुई है। १८१६ ई०में माननीय गार्डनर साहबने नेपाल प्रदेशमें, १८२१ ई०में मुरक्राफ्ट साहबने बुसाहरमें, १८२३में बिशप् हिबारने कुमायुन प्रदेशमें चाय देखी थी। किन्तु वास्तवमें देखा जाय तो आसामके कमिश्नर डेभिड् स्काट साहबने ही १८१८ ई०में इस देशमें चायके आविष्कार किया था। उनने भारतके गवर्मेण्टके प्रधान सेक्रेटरी मि० जी० सुइण्टन साहबको चायके कुछ नमूने मणिपुरसे भेजे थे। नमूने अभी तक लण्डनकी लिनियान्-सभाके भवनमें रक्खे हैं। मेजर आर और सी० ए० ब्रुस नामके दो भाई, पहले उनके पास उन पत्तोंको लाये थे।

छोटे भाई आसाममें अङ्गरेजोंके अधिकारके पहिले छोमे वाणिज्य करते थे, बादमें वे १८२६ ई०में कुछ बीज और पौधे ले कर आये थे। आपने उन पौधोंको चायके पौधे और बीजोंको चायके बीज प्रमाणित किये थे।

ब्रुस साहबने नागापर्वत पर चायके पौधे देखे थे। १८३६ ई०में अगस्त मासकी एसियाटिक सोसाईटीकी पत्रिकामें इन्होंने लिखा था कि, "मैंने पहाड़ और मैदानमें चायके लिए उपजाऊ १२० स्थान देखे हैं।"

१८३४ ई०में लार्ड विलियम बेण्टिकने भारतमें चाय उत्पन्न करनेके विषयमें कोर्ट अफ् डाइरेक्टर सभामें आवेदन किया था। उसके अनुसार ११ यूरोपीय और २ देशीय सभ्योंकी एक कमेटी बनाई गई। भारतमें किस किस जगह चायकी खेती अच्छी हो सकती है, इसका निर्णय करना इस कमेटीका मुख्य उद्देश्य था। आसाममें चाय मिली थी, इसलिए वहां जा कर ब्रुस साहबकी अधीनतामें ये लोग नाना स्थानोंमें भ्रमण कर खोज करने लगे। चीनदेशसे चायके बीज और पौधे मंगाये गये। पहिले इस कार्यमें विशेष कुछ उन्नति नहीं हुई। नये खेतोंमें जो चाय उत्पन्न हुई, उसके कुछ नमूने १८३६ ई०में विलायतमें डाईरेक्टरोंके पास भेजे गये। परन्तु वह कामलायक नहीं हुई थी।

इसमें जो नौकर नियुक्त किये गये थे, उन्हें चायको प्रस्तुत-प्रणाली भलीभांति मालूम न थी। १८३७ ई०में चीनदेशसे आदमी बुलाये गये। उनकी देख-रेखमें चाय उत्तम उत्पन्न होने लगी। १८३८-३९ ई०में डाइरेक्टरोंके पास फिर चाय भेजी गई। अबकी वार चाय देख कर वे खुश हुए। यह चाय खूब ऊँचे दामसे बिकने लगी। व्यवसायी लोग अपने लोभको न सम्हाल सके। सब चायकी कृषिके विषयमें परामर्श करने लगे। आसामदेशमें आसाम-चाय-कम्पनी नामसे एक कारखाना खुल गया। व्यवसायियोंको उत्साहित करनेके लिए भारत-गवर्मेण्टने अपने खेतोंमेंसे ⅔ अंश उक्त कम्पनीको दे दिया और ⅓ अंश अपने अधिकारमें रक्खा। बादमें १८४९ ई०में अवशिष्ट अंश एक चीनदेशके व्यवसायीको ८००) रु०में बेच दिया गया।

१८५० ई०में इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने चायके विषयमें विशेष विवरण जाननेके लिए फर्च्युन साहबको चीनदेशमें भेजा था। चीनदेशसे अच्छे अच्छे बीज और निपुण नौकरोंको लानेका भार भी इन्हीं पर सौंपा गया था।

इस समय भारतमें अफगानस्तानकी सीमासे ले कर ब्रह्म सीमान्त तक (अक्षा० २५° से ३३° उ०, देशा० ७०° से ९५° पूर्व तक) चाय उत्पन्न होती है। हिमालयमें समुद्रपृष्ठसे ४६६७ हाथ ऊपर किसी किसी जगह, हिमालयकी तरहटीमें १३६७ हाथ ऊपर, ब्रह्मपुत्रके किनारे, आसाम, ढाका, कोचबिहार, चटगाँव, छोटानागपुर, दार्जिलिङ्ग, तराई, काङ्गड़ा, गढ़वाल, कुमायूं, कछाड़, श्रीहट्ट, देरा, हजारीबाग और नीलगिरिमें काफी चाय पैदा होती है।

जापानियोंकी 'स्वर्गीय चाय' Hydrangea Thunbergii नामक वृक्षके पत्तोंसे बनती है। सान्ताफी देशमें Astoria theiformis नामक वृक्षके पत्ते चायकी तरह व्यवहृत होते हैं। धारक गुणविशिष्ट Ceanothus Americanus वृक्षके पत्ते निउ जार्सि टी (New Jersey tea)-के नामसे व्यवहृत होते हैं।

Melaleuca, Leptospermum, Corraea alba, Acoena Sanguisorba, Glaphyranitida और Athenosperma moschota, इन वृक्षोंकी छालसे तासमानीया चाय बनती है और मरिच द्वीपके Augricum Fragrans नामक किसी सुगन्धित लतासे 'फहम् चाय' (Faham tea) बनती है।

चायका इतिहास—बहुत दिनोंसे चीनदेशमें चाय-पीनेकी प्रथा चली आई है। चीनियोंके पाससे दूसरी एक जातिने चायके गुण अवगुणका वास्तविक सन्धान पाया है। सुलेमान नामके किसी एक अरबके वणिकने ८५० ई०में पूर्वदेशके भ्रमणवृत्तान्तमें चायका उल्लेख किया है। मैक्फार्सन्ने अपने 'भारतवर्षके साथ यूरोपीय वाणिज्यका इतिहास" नामक ग्रन्थमें इस वृत्तान्तको उद्धृत किया है। उसमें लिखा है कि, चीनियोंकी साधारण पीनेकी चीज चाय है। ई०की सोलहवीं शताब्दीके मध्यभागमें ईसाई धर्मके प्रचारकगण चीन और जापानमें गये थे। उन देशोंमें इनके परिभ्रमणसे पहिले "चाय पीने"की

प्रथाका और कोई उल्लेख देखनेमें नहीं आता। बटेरो (Botero) ने १५९० ई०में चायका वर्णन किया है। तेक्साइरा (Taxeira) नामके एक पोर्तगोजने १६०० ई०में मलक्काद्वीपमें चायके सूखे पत्ते देखे थे। ओलिरियस Ollarius ने १६३८ ई०में पारस्यदेशवासियोंमें चाय पीनेकी प्रथा प्रचलित पाती थी, उजबेक वणिक लोग चीन देशसे वह चाय ले जाया करते थे। यूरोपमें ओलन्दाज वणिकोंने ही पहिले पहल चायकी आमदनी की थी; बादमें आमष्टर्डमसे चाय लण्डनमें आई। १६६० ई०को पार्लियामेण्टके किसी कानूनमें चाय, कहवा और चकोलेट (Chocolate) का उल्लेख है। उस काननमें चकोलेट, सरवत् और चायके व्यवसायमें प्रति गैलन पर ८ पेन्सके हिसाबसे कर वसूल करनेकी व्यवस्था की गई है। उस समय चाय एक नई चीज थी। बहुत दिनों तक तो यह बहुत थोड़ी थोड़ी आमदनी हुई थी। इष्ट इण्डियन कम्पनीने १६६४ ई०में राजोपहारके लिए ४१ सेर चाय खरीदी थी। १६७८ ई०में उक्त कम्पनी करीब ५८॥४६॥ चाय लण्डनको ले गई थी; तबहीसे इस रुजगार पर लोगोंका लक्ष्य पड़ा। परन्तु परवर्ती कुछ वर्षोंमें आमदनी ५४५ से ज्यादा नहीं हुई। माइबरनके "प्राच्यवाणिज्य" नामक ग्रन्थमें लिखा है कि १७११ ई०में प्रायः १७७१ मन, १७१५ ई०में करीब १५०७॥ मन, १७२० ई०में करीब २३७३॥ मन और १७४५ ई०में ८१४६॥४४॥ चायकी खपत हुई थी। डेढ़ सौ वर्षसे भी ज्यादा इष्ट इण्डिया कम्पनीने इङ्गलैण्ड और स्काटलैण्डमें चाय भेजी थी। यही कम्पनीका बड़ा रुजगार था। चायकी आमदनीके लिए उन्हें जहाज देने पड़ते थे और गोदामोंमें चाय इतनी रक्खी जाती थी कि, जिससे एक वर्ष तक चायका अभाव न पड़े।

वर्तमान समयमें चायका बड़ा भारी रुजगार चल रहा है। भिन्न भिन्न देशोंमें आने जानेकी सुविधा बढ़ती जाती है और उसके साथ ही चायकी कीमत घट रही है, तथा मादक पदार्थोंके बदले चायका प्रचार होता जाता है, इसलिए चायकी जरूरत भी बहुत बढ़ रही है। सिर्फ ग्रेट ब्रिटेनमें ही १८८२ ई०में २६१३८५०४॥ मन चायकी आमदनी हुई थी। जिसमेंसे बारह आने भर तो चीनदेशसे जाती है, और देशमें व्यवहारके लिए प्रायः समान ही चाय रक्खी जाती है। इङ्गलैण्ड और आयर्लैण्डका प्रत्येक आदमी वर्षमें कुल मिला कर ५ पौण्ड अर्थात् ८२॥ सेरके करीब चाय पी लेता है।

चायकी खेती—चायके बीज बिलायती हथर्ण (Hawtharn) बीजके समान होते हैं। चीनमें बहुत तरहके चायके पौधे पैदा होते हैं। इनमें परस्परमें विशेष अन्तर नहीं है। भिन्न भिन्न प्रदेशोंसे प्रतिवर्ष इसके बीज संग्रहीत किये जाते हैं। एक ही प्रकारके बीज भिन्न भिन्न देशोंमें बोये जानेसे कुछ समय पीछे फसलमें कुछ कुछ विभिन्नता हो जाती है। जगहके फेरसे भी कहीं कहीं अच्छी और कहीं बुरी चाय भी पैदा हो सकती है। इसलिए चायके बीजोंका संग्रह करना हो तो खूब अच्छे बीज ही संग्रह करना चाहिये।

सर जन डेभिस, फरचुन् और आर्च-डिकन्-ग्रेने चीन देशमें किस प्रकारसे चायकी खेती होती है, इसका विस्तृत विवरण लिखा है। आर्च-डिकन्-ग्रेका कहना है कि, चीनदेशमें आश्विन और कार्तिक मासमें चायके बीज संग्रहीत किये जाते हैं। ये बीज घाममें अच्छी तरह सुखा कर रक्खे जाते हैं। फिर माघ फागुनमें इन बीजोंको २४ घण्टे तक पानीमें भिगो कर कपड़े की बोरियां भरके रन्धनशाला या किसी गरम जगहमें रख देते हैं। कुछ सूख जाने पर बीजोंको पुनः भिगाया जाता है। इसी प्रकारसे जब तक बीज अङ्कुरित न हों, तब तक भिगोते और सुखाते रहते हैं। इसके बाद चटाई या और कोई चीज पर मिट्टीको फैला कर आधे इञ्चके अन्तर उन अङ्कुरित बीजोंको रख देना पड़ता है। पहिले पहल चार दिन तक बीजोंको प्रातःकालके समय पानीमें भिगो कर घाममें रखते हैं, और रातमें उन्हें ढक देते हैं। पांचवें दिन अङ्कुर जब ४ हाथ ऊंचे हो जांय, तब उन्हें २ इञ्चके अन्तर मिट्टीमें गाड़ देते हैं। पार्वत्य भूमिमें पानी निकालनेकी सुविधा होती है, इसलिए मैदानकी अपेक्षा पहाड़की खेती अच्छी होती है।

तृतीय वर्षके अन्तमें चायकी प्रथम फसल होती है। उससे पहिले काटनेसे चाय नष्ट हो सकती है, और उसकी फसलमें भी खराबी पहुंच सकती है। तीन वर्षके

बाद यदि वर्ष वर्ष में न काटी जाय, तो प्रत्येक परवर्ती वर्षमें बहुत थोड़ी या निहायत खराब चाय होने लगती है। वर्षमें तीन बार चाय तोड़ी जाती है।

पहली बार वैशाखमासके प्रारम्भमें, दूसरीबार जेठमें और तीसरीबार उससे इकतीस दिन बाद चाय तोड़ी जाती है। खूब सावधानीसे तोड़नी चाहिये जिससे पत्ते न टूटें और वृक्षका कोई अनिष्ट न हो। ८-१० वर्ष बाद फिर अच्छे पत्ते नहीं लगते, सिर्फ दो एक मोटे और भद्दे पत्ते लगते हैं। उस समय पेड़ोंकी जड़ काट दी जाती है और उससे दूसरी सालमें नये अङ्कुर पैदा होते हैं।

पत्ते तोड़नेसे पहिले मजदूरोंको हाथ धोने पड़ते हैं। मजदूर लोग उन पत्तोंको तोड़ तोड़ कर एक टोकरीमें रखते हैं। पुराने मजदूर एक दिनमें ७५ से ७६॥ सेर तक पत्त तोड़ सकते हैं। ये लोग पत्ते तोड़ते समय खूब चातुर्य दिखाते हैं—एक बारमें तीन पत्तेसे ज्यादा नहीं तोड़ते।

कङ्गु चाय बनानेकी प्रणाली—किसी खुली जगहमें पत्तोंको हवामें रख कर सुखा लिया जाता है। फिर मजदूर लोग उन्हें २-३ घण्टे तक पैरोंसे खूंदते हैं। इससे पत्तोंका सारा रस निकल जाता है। इसके बाद फिर पत्तोंको इकट्ठा कर रात भर कपड़ेसे ढक कर रखते हैं। इससे पत्तोंसे एक तरहका उत्ताप निकलता है और पत्ते हरे या काले अथवा धूसरवर्ण हो जाते हैं, सुगन्धि भी कुछ बढ़ती है और स्वादमें भी विशेष फर्क पड़ता है। फिर मजदूर लोग उन पत्तोंको दोनों हाथसे रगड़ लेते हैं और घाममें सुखा देते हैं। वर्षात होने पर कोयलेकी आंचसे सेक लेते हैं। इसी अवस्थामें चायके कारखानोंके मालिकोंको यह चाय बेच दी जाती है। वे फिर इसे दो घण्टे तक आंच पर सेकते हैं और खराब पत्तोंको अलग कर अच्छी चायको कागजसे मढ़ी हुई डिब्बोंमें भर देते हैं। रंगकी विभिन्नतासे काले और लाल पत्तोंकी चाय कङ्गु, अमानकङ्गु, निङ्चोकङ्गु और होचोकङ्गु आदि नामसे अभिहित है। हुपे प्रदेशमें बहुत तरहकी कङ्गु चाय उत्पन्न होती है। जिनका नाम अपककङ्गु भी है। हङ्को बन्दरसे यह चाय रफ्तनी होती है। होनान देशमें अनानकङ्गु पैदा होती है। इसके पत्तोंका रंग काला होता है, कहीं कहीं सफेद आभा और लाल रंग भी दिखलाई देता है।

कियांसि प्रदेशके उत्तर पश्चिममें निंचोकङ्गु चाय पैदा होती है। इसकी अच्छी चीज उनिङ् प्रदेशमें उत्पन्न होती है, तथा काण्टन और हङ्को शहरमें साधारणतः बिकती है। इसके पत्ते काले और धूसरवर्णकी आभायुक्त होते हैं। कियांसि प्रदेशके उत्तरपूर्व विभागमें और बोहिया पर्वतके उत्तरांशमें 'हो-काउ' चाय पैदा होती है। इस चायका अधिकांश बिकनेके लिए किउकियाङ् नगरमें तथा थोड़ा अंश काण्टन, सेङ्हाई और फुचूनगरमें भेजा जाता है। हो-हाउ चाय सबसे निकृष्ट है। काले पत्तोंकी चायोंमें अपक जातीय चाय सबसे उत्तम गिनी जाती है। अनान चाय निंचोसे अच्छी है। फोहकिएन् इससे छोटी छोटी लाल और धूसरवर्णकी चाय पैदा होती है। इसकी सर्वोत्कृष्ट जातिको "काइसन्" कहते हैं, तथा सामा नगरके पासके किसी स्थानसे इसकी आमदनी होती है। इन समस्त चायोंका प्रधान विक्रयस्थान फुचू नगर है। किन्तु जो चाय फोकिएन् प्रदेशके दक्षिणांशमें पैदा होती है, वह आमय नगरको भेजी जाती है। कोयांटाङ् प्रदेशमें जो कङ्गु चाय पैदा होती है, उसका नाम तेसान कङ्गु है। इसके पत्ते लंबे कठिन तथा काले और धूसरवर्णके होते हैं। मकाओ नगरमें ही यह चाय ज्यादा बिकती है।

कुछ सालसे लाल पत्तोंकी कङ्गुकी एक बहुत अच्छी नकल निकाली गई है। इसके पत्ते छोटे छोटे हैं। काण्टन शहरसे यह चाय इङ्गलैण्ड लाई गई और कुछ कुछ अमेरिकाके युक्तराज्यमें भी भेजी गई। इसको एक एक पेटीमें ॥७ मनसे लगा कर ॥।७ मन तक चाय रहती है। तेसनकङ्गुकी एक पेटीमें।७ सेरसे।७५ सेर तक और काले पत्तोंकी कङ्गुकी एक पेटीमें १७२॥से १७५ तक चाय भरी रहती है।

लालपत्तोंकी कङ्गुकी तरह सोचङ्ग चायका रंग भी ललाईको लिए हुए अथवा पिङ्गलवर्ण है। सोचङ्ग चाय करीब करीब कङ्गु जैसी ही है। फोकिएन् प्रदेशके उत्तरपूर्व विभागमें अच्छी सोचङ्ग पैदा होती है। इसकी भी प्रस्तुत-प्रणाली कङ्गु जैसी है।

फूचपिको—यह देखनेमें बहुत अच्छी होती है, परन्तु ज्यादा पैदा नहीं होती। पत्तोंकी कलिकासे यह बनती है। कलिकाओंको तोड़ कर उसी समय सुखा लिया जाता है। कारखानेवाले सूखे पत्तोंको खरीद कर थोड़ी-सी आँच पर सेक लेते हैं और फिर उसे बोरे-में भर कर रख देते हैं। ये पत्ते देखनेमें चिड़ियों पङ्ख जैसे कोमल होते हैं। कुछ पीले और कुछ काले रंगके होते हैं। यह फुचूसे इङ्गलैण्ड आती है। कुछ कुछ काण्टनसे भी आती है।

जलङ्—फोकिएन् प्रदेशमें इस चायकी उत्पत्ति है। फुचू और आमयबन्दरसे जलङ् चाय अमेरिकाके युक्त-राज्य, इङ्गलैण्ड और अष्ट्रेलियाको बहुत भेजी जाती है। इसके भी पत्तोंको तोड़ कर घाममें सुखा लेते हैं। बादमें पानीमें भिगो कर कङ्गु की भाँति सेक लेना पड़ता है। इसी अवस्थामें यह व्यवसायियोंको बेच दी जाती है। वे इसमेंसे डण्ठल और खराब पत्तोंको निकाल कर फिर भिगोते और सेकते हैं। फिर थोड़े थोड़े पत्तोंको इकट्ठे करते हैं और उनको मिला कर पुनः सेकते हैं। पत्तोंका रंग पीला, बीच बीचमें जरा काला होता है और मटीले हरे रंगकी आभा दिखलाई देती है। इन पत्तोंका आकार एक तरहका नहीं होता। ये कुछ कड़े खरखरे होते हैं, पर चिपटे हुए नहीं होते।

सुगन्धि कमला-पिको—फोकिएन और कोयाङ्टङ्में यह चाय बनती है। कोयांटङ्में जितनी चायें बनती हैं, उन सबको काण्टनसुगन्धि कमलापिको कहते हैं और फोकिएन् प्रदेशकी बनी हुई चायोंको फुचूसुगन्धि कमलापिको कहते हैं। पहिले पत्तोंको घाममें सुखाते हैं। इसके बाद मजदूर लोग पत्तोंको दोनों हाथोंसे अच्छी तरह रगड़ते हैं। इससे पत्ते कुछ मिल जाते हैं। इसी अवस्थामें ये पत्ते काण्टन और फुचूके बाजारमें भेजे जाते हैं। वहांके लोग थोड़ीसी आग पर पत्तोंको सेकते हैं और फिर उसमें चमेलीके फूल मिलाते हैं। बादमें पत्तोंमें सुगन्धि हो जाने पर चलनीसे फूल निकाल लिये जाते हैं। अच्छी सुगन्धि लाना हो, तो ऐसी प्रक्रिया दो बार करनी पड़ती है। फुचू प्रदेशकी सुगन्धि कमला चाय छोटी छोटी और खूब मिली हुई होती है। देखनेमें पीली, बीच बीचमें जरा पिङ्गलवर्ण, जिसमें काली आभा भी रहती है। काण्टन-सुगन्धि-कमला चाय लंबी लंबी, मिली हुई और काली होती है। कभी कभी पीली और हरी रंगकी भी देखनेमें आती है। सुगन्धि-कमला-पिकी बकसमें बन्द रहती है और इङ्गलैण्डको भेजी जाती है। अब थोड़ी बहुत भारतमें आने लगी है।

सुगन्धि-केशर—सुगन्धिकमलापिकोकी तरह यह भी बनती है। इसके पत्ते गोल होते हैं। यह सुगन्धि कमलापिकोमेंसे चलनीके सहारे निकाला जाती है। फुचूमें जो चाय बनता है वह पीली, पिङ्गलवर्ण या काली होती है। काण्टन नगरकी बनी हुई चाय काली या पिङ्गलवर्णकी होती है। परन्तु कभी कभी पीली और हरे रंगकी भी हुआ करती है।

चायमें सुगन्धि—फर्चुन साहबने चीनदेशमें इस प्रकार चायको सुगन्धित करते देखा था। किसी घरके एक कोनेमें कमलाफुलकी ढेरी लगा दी जाती है। फिर एक आदमी उसमेंसे चलनीके सहारे छोटी छोटी केशर निकालता है। इससे उस फूलकी ढेरीमेंसे सैकड़ा पीछे ७० भाग रहता है और ३० भाग फेंक दिया जाता है। कमला काममें लानेके लिए खूब अच्छे खिले हुए फूलोंकी जरूरत होती है। किन्तु चमेलीफूल चाहे जैसा काममें लाया जा सकता है। चायके साथ मिलाने पर भी वह खिलता रहता है और सुगन्धि निकलती रहती है। इस प्रकारसे करीब १।८ मन चायमें ॥८ मन फूल मिलाये जाते हैं। बादमें सुखी चाय और फुल मिला कर २४ घण्टे तक इसी तरह रखी रहती है। चलनीसे दो तीन बार छानने पर फूल बिल्कुल अलग हो जाते हैं। इस तरहसे चायमें जो कुछ फूलका रस लगा रहता है, उसे सुखानेके लिए काठके कोयलोंकी आँच पर चाय सेकी जाती है। चायमेंसे गन्ध नहीं निकलती, बादमें कुछ दिन तक ढक कर रखनेसे गन्ध निकलती है। कभी कभी दो तीन बार ऐसा करनेके बाद चायमें सुगन्ध आती है। चीनके लोग नाना जातीय फूलोंसे चाय सुगन्धित करते हैं।

चाय सुगन्धित करनेमें सब फूल बराबर नहीं लगते। हाइसन्‌पिको नामकी चाय बड़ी कीमती और स्वादिष्ट होती है, और तो क्या, दूध चीनीके बिना भी पीयी जा

सकती है। यह चीनके कुईह्व (Olea fragrans) फूलसे सुगन्धित की जाती है। फूलकी जातिके अनुसार इसकी सुगन्धिके स्थायित्वमें तारतम्य होता है। उक्त फूलसे सुगन्धित चायकी खुशबू १ वर्ष तक रहती है। दो वर्ष बाद फिर उसमें सुगन्धि नहीं रहती, और एक तरहके खराब तेलकी गन्ध छूटती है। जो चाय कमला फूल और चीनके मलि नामक फूलसे सुगन्धित की जाती है, उसकी खुशबू दो तीन साल तक रहती है। इसके सिवा सिउहिङ् फूलकी सुगन्धि भी तीन चार वर्ष तक रहती है। विदेशीय लोग सिउहिङ् फूलकी सुगन्धि ही अधिक पसन्द करते हैं, उसका आदर भी है। किन्तु चीनके लोग इसको उतना पसन्द नहीं करते।

चायके गुण—चाय धारक और उत्तेजक होती है। परिश्रम करनेके बाद इसके पीनेसे आराम मालूम होता है। चायका एक विशेष गुण यह भी है कि, इसको पी कर अधिक रात तक जग सकते हैं। यह गुण हरी चायमें ही ज्यादा पाया जाता है और जिनको चाय पीनेका अभ्यास नहीं, उन्हींके लिए यह विशेष कार्यकारी भी होती है। किसी किसीका कहना है कि, यह हृदय और रक्ताधारको खूब स्निग्ध रखती है। डाक्टर बाइलिङ् लिखते हैं कि, चाय और कहवा ये दोनों स्निग्धकारक, उत्तेजक, आन्तिनाशक, अन्यान्य मेदोरोग-निवारक और औषधके नशेको उतारनेवाले हैं। अधिक परिचालनाके कारण मस्तिष्कमें किसी प्रकारकी विकृति हो जाय, तो चायके पीनेसे बहुतसा प्रकृतिस्थ होता है।

सर हाम्फ्रि डेभिके मतसे हरी चायमें टानिन (Tanin) अर्थात् अम्ल और सङ्कोचक पदार्थ अधिक रहते हैं, तथा काली चायमें एक प्रकारका उद्वेय तेल अधिक देखनेमें आता है। डा० लिबिगके मतसे चायसे यकृत्के स्रावकी भांतिका एक प्रकारका रस झरता है।

चायक (सं० त्रि०) चि-ण्वुल्। चयन करनेवाला, चुननेवाला।

चायक (हिं० पु०) प्रेमी, चाहनेवाला।

चायनीय (सं० त्रि०) चाय कर्मणि अनीयर्। पूजनीय, पूजा करने योग्य।

चायबासा—बेहार उड़िस्या प्रान्तके मानभूम जिलेका सदर। अक्षा० २२° २३' उ० और देशा० ८५° ४६' पू०में रारो नदीके दक्षिण उच्च भूमि पर अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ८६५३ है। १८७५ ई०को वहाँ म्युनिसपालिटी हुई।

चायमान (सं० पु०) चायमनोऽस्य राज्ञोऽपत्यं चयमान-अण्। १ चयमाण राजाके पुत्र। (ऋक् ६।२७।८) (त्रि०) चाय शानच्। २ पूज्य, पूजायोग्य, आदरणीय, माननीय। ३ दृष्ट, देखा हुआ, जो देखा गया हो।

चायु (सं० त्रि०) चाय उण्। पूजक, पूजा करनेवाला।

"वज्रेषु यत्र चायवः।" (ऋक् १।१२४।३) 'चायवः पूजकाः।' (सायण)

चार (सं० पु०) चर एव चर स्वार्थे अण्। १ गूढ़पुरुष, गुप्तचर, जासूस।

"चारः सुविहितः कार्य्य आत्मनश्च परस्य वा।
पाषण्डांस्तापसादींश्च परराष्ट्रेषु योजयेत्॥" (भारत १।१४ अ०)

कृषि, दुर्ग, वाणिज्य, खेत-खलियानोंकी मालगुजारी उगाना, सेनाओंका कर लेना, घोड़े और हाथियोंका बाँधना, पतित खेतोंके लिए प्रजाका संग्रह करना, प्रजाके अनाजके रक्षार्थ बाँध बनाना, इन आठ विषयोंके लिए राजा चार नियुक्त करते हैं। स्वामी, सचिव, राष्ट्र, मित्र, कोश, बल, दुर्ग, राज्याङ्ग, अन्तःपुर, पुत्रोंके मनका भाव, मांसपिष्टकादिका रन्धनगृह, शत्रु और शत्रुता मित्रताशून्य उदासीन राजाओंका बलाबल जाननेके लिए भी राजाको चार नियुक्त करने चाहिये। राजाको चाहिये कि, सामको मन्त्रीके साथ निर्जन स्थानमें जा कर चारसे रहस्य-वृत्तान्त पूछें। अपने पुत्र, अन्तःपुर, रन्धनगृह और मन्त्रीके रहस्योंको जाननेके लिए जो चार नियुक्त किये हैं, उनसे खुद राजाको आधी रातके समय पूछना चाहिये।

जो तरह तरहके भेश धारण कर सकें, जिनके बालबच्चे और स्त्री हों, जो बहुतसी भाषाओंका जानकार हो, दूसरेके अभिप्रायको सहजहीमें समझ सके, अतिशय भक्त, सामर्थ्यशाली और निर्भय हो, ऐसा चार या गुप्तचर उपयुक्त होता है। राजाको चाहिये कि, कृषिके लिए आत्मसदृश, वाणिज्य और दुर्गादिके लिए बलवान्, तथा अन्तःपुरके लिए पितृतुल्य वृद्ध चार नियुक्त करें।

(कालिकापु० ८५ अ०)

२ (क्लो०) चर कर्मणि अण् चर्यते भक्ष्यते कोप-हेत्वादिवशात् । कृत्रिमविष, बनाया हुआ जहर जो मछली पकड़नेके लिए काँटेमें लगाया जाता है ।

३ कई एक, बहुतसे । जैसे चार आदमियोंने पीटा । ४ कुछ, थोड़ा, बहुत । जैसे चार बातें सुनाई ।

(पु०) (वि० चारित, चारी) ५ गति, चाल, गमन । ६ बन्धन, कारागार । ७ दास, सेवक । ८ चिरौंजीका पेड़, अचार । ९ रीति, रिवाज, आचार, रस्म ।

चार (हिं० वि०) १ चारकी संख्या । तीनसे एक ज्यादा, दो और दो । चारका अंक इस प्रकार होता है—४ ।

चार आइना (फा० पु०) एक प्रकारका कवच या बकतर जिसमें लोहेकी चार पटरियां होती हैं ।

चारआइमाक (आइमाक काबुल, पारस्य, मङ्गोलिया, माञ्चुरिया और तुर्क देशका शब्द है, इसका अर्थ जाति है।) चारजाति । हिरात और काबुलके उत्तरमें पार्वत्य-प्रदेशमें चार प्रकारके चारआइमाक रहते हैं । सुनते हैं कि, प्रसिद्ध तैमूर खाँने इन लोगोंको फिरोज-कोह नामके स्थानमें परास्त कर भारतवर्ष और पारस्यके बीचके पार्वत्यप्रदेशमें बसाया था । उस समयसे ये लोग फिरोज-कोह नामसे भी प्रसिद्ध होते आये हैं । लाथम् साहब कहते हैं कि, चारआईमाक जाति ताईमणि, हजारा, जूरी और तैमूरी इन चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं। किन्तु भेम्रो साहबका कहना है कि, ये लोग तैमूरी, तेइमेनी, फिरोज-कोहिनी-जामसिडी और पारसिक, इन चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं ।

चारइयारी–इसलामधर्मावलम्बी एक प्रकारका सुन्नी सम्प्रदाय । ये लोग आबुबकर, ओमार, ओसमान और अली इन चारोंको ही असली खलीफा जान कर स्वीकार करते हैं ।

चारक (सं० त्रि०) चारयति इति चारि-ण्वुल् । १ गो अश्वादिका पालक, गाय भैंस चरानेवाला, चरवाहा । २ सञ्चारक, चलानेवाला ।

"न चाइमार्या कुर्यात् ते पाप प्रच्छन्नचारकः॥" (रामा० ५।८८।१८)

३ बन्ध, बँधा हुआ । (पु०) ४ गति, चाल । ५ पियालवृक्ष, चिरौंजीका पेड़ । ६ कारागार, कैदखाना ।

"निगडितचरणाचारके निरोद्धव्या।" (दशकुमार)

चार स्वार्थे कन् । ७ गुप्तचर, जासूस, भेदिया ।

"विभिन्निभिरविज्ञातैर्विद्धि तीर्थानि चारकैः।" (भारत २।५।३८)

८ चालक, संचालक, वह जो चलाता हो । ९ सहचर, साथी, संगी । १० अश्वारोही, सवार । ११ भ्रमणकारी ब्राह्मण छात्र, घूमनेवाला ब्राह्मण ब्रह्मचारी । १२ मनुष्य, आदमी । (क्लो०) चरकेण निर्मितं चरक-अण् । १३ चरकनिर्मित, चरकका बनाया हुआ ग्रन्थ ।

चारकाने (हिं० पु०) चौसर या पासेका एक दाँव ।

चारकीण (सं० त्रि०) चारक खञ् । भ्रमणकारी ब्राह्मण छात्रका उपयुक्त, जो घूमनेवाले ब्राह्मण ब्रह्मचारियोंके योग्य हो ।

चारखाना (फा० पु०) एक प्रकारका वस्त्र जिसमें रंगीन धारियोंके द्वारा चौखूँटे घर बने रहते हैं ।

चारचक्षुः (सं० पु०) चारश्चक्षुरस्य, बहुव्री० । राजा ।

"यस्मात् पश्यन्ति दूरस्थाः सर्वानर्थान् नराधिपः ।
चारेण तस्मादुच्यन्ते राजानश्चारचक्षुषः ॥" (रा० ३।३७)

जो दूतोंके ही द्वारा सब बातोंकी जानकारी प्राप्त करे उसीको चारचक्षुः कहते हैं ।

चारचण (सं० त्रि०) चार-चणप् । जिसकी गति अच्छी हो, जिसकी चाल या गमन सुन्दर हो ।

चारचुञ्चु (सं० त्रि०) सुन्दर गतियुक्त, जो चलनेमें सुन्दर दिखाता हो, चलनेकी क्रिया जिसकी अच्छी हो ।

चारज (अ० पु०) १ कार्य्यभार, कामकी जिम्मेदारी । २ निगरानी, सुपुर्दगी ।

चारजामा (फा० पु०) एक तरहका आसन जो कपड़े या चमड़ेका बना रहता है । इससे घोड़ेकी पीठ पर कस कर सवारी करते हैं, जीन, पलान, काठी ।

चारटिका (सं० स्त्री०) चर-णिच्-अटन् । चरादिभ्योऽटन् । उण् ४।८१ । ततः संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वञ्च । १ नली नामक गन्धद्रव्य । २ नीली नामक वृक्ष । ३ गुञ्जा ।

चारटी (सं० स्त्री०) चर-णिच-अटन् ततो गौरादित्वात् ङीष् । १ पद्मचारिणी वृक्ष, वरङ्गीका पेड़ । २ भूम्यामलकी, भद्र आँवला ।

चारण (सं० पु०) चारयति प्रचारयति नृत्यगीतादि विद्यां तज्जन्यकीर्त्तिं वा । चर-णिच-ल्यु । १ कीर्त्ति-संचारक भट, वंशकी कीर्ति गानेवाला भाट या बंदी-

अन। इसका नामान्तर कुशीलव है। २ गन्धर्वविशेष

"गंधर्वाणां ततो लोकः परतः शतयोजनात्।
देवानां गायनास्ते च चारणाः स्तुतिपाठकाः॥" (पद्मपुराण पाताल खण्ड)

३ देवयोनिविशेष।

"गंधर्व विद्याधरचारणाप्सरः।" (भागवत)

४ चार पुरुष, गुप्तमनुष्य, जासूस।

"चरन् चिरं हि भूतानां पश्यन् कर्म हि चारणैः।
उदासीन इवाध्यक्षो वायुरात्मेव देहिनाम्॥" (भागवत)

५ भ्रमणकारी।

"न कुर्यात् दीर्घसूत्रत्वं रत्नं चारणेषु।" (भारत)

६ वागीश्वरी देवीभक्त अत्रि गोत्रका एक राजा, वामके पुत्र। (सह्याद्रि ३।१२।२६) ७ कोलाम्बा देवीभक्त प्रियर्षि गोत्रका एक राजा, शुक्रके पुत्र। (सह्याद्रि ३।३०।३)

चारण—भारतके पश्चिमप्रदेशमें रहनेवाली एक जाति। सह्याद्रिखण्डके मतसे—

"वैश्यधर्मेण शूद्रायां जातो वैतालिकाभिधः।
चारणो ऽसावपि भवेन्न्यूनो वृषलकर्मतः॥
राज्ञां च ब्राह्मणानाञ्च गुणवक्ता मतत्परः।
संगीतं कामशास्त्रञ्च जीविका तस्य वै कृता॥" (२६।४९-५०)

वैश्यधर्मी द्वारा शूद्राके गर्भसे वैतालिक उत्पन्न हुआ था, चारणजातिकी उत्पत्ति भी इसी प्रकार है, परन्तु वृषलत्वके कारण ये लोग कुछ न्यून हुए हैं। राजा और ब्राह्मणोंके गुण गाना, सङ्गीत और कामशास्त्र इनकी उपजीविका है।

आचार व्यवहार और कार्यकलापोंमें यह जाति भाट जातिके समतुल्य है। चारणोंका कहना है कि, महादेवने पार्वतीको प्रीतिदान करनेकी अभिलाषासे अपने ललाटके पसीनेकी बूंदसे भाट जातिकी सृष्टि की थी, किन्तु भाटोंने पार्वतीके गुण न गा कर महादेवके ही गुण गाये। इससे पार्वतीने असन्तुष्ट हो कर उनको मर्त्यमें जा राजा और देवताओंके गुण गा कर जीवन बितानेकी अभिप्राय दे, मर्त्यको भेज दिया। दूसरी एक किम्बदन्ती इस प्रकार है—महादेवने सिंहोंसे अपने वृषको बचानेके लिए भाटोंकी सृष्टि की थी, किन्तु भाटोंकी देख रेखमें भी सिंह रोज वृषोंको मार कर अपना पेट भरने लगे और महादेवको भी रोज वृषकी सृष्टि करनी पड़ी। इसलिए महादेवने भाटोंसे असन्तुष्ट हो कर उनसे बलवान् और साहसी चारणकी सृष्टि कर उनके हाथ उक्त काम सौंपा। चारणकी देख रेखमें सिंह वृषको नहीं मार सकते थे। उन्हींकी सन्तान चारण नामसे प्रसिद्ध हो कर एक जातिमें गिनी जाने लगी और इच्छापूर्वक मर्त्यमें आ कर रहने लगी। चारण लोग सबकी वंशावली कण्ठस्थ कर रखते हैं, और कवित्तोंमें उसका वर्णन कर लोगोंको सन्तुष्ट किया करते हैं। सिन्धुप्रदेशके मरुभूमिके चारण भिखारीके भेषमें रहते है, तथा विवाह और अन्यान्य पर्वोंमें जा कर हर तरहसे रुपये पैदा करते हैं। कुछ भी हो, चारणोंका सर्वसाधारणमें सम्मान है, इसमें कोई सन्देह नहीं। मालव और गुजरातकी तरफ लोक कहीं जाते समय चारणको साथमें ले लेते हैं, उन लोगोंका विश्वास है कि, ये लोग महादेवसे पैदा हुए हैं, इसलिए रास्तेमें चोर वगैरह इनके सामने यात्रियोंको मारनेका साहस नहीं करते। रास्तेमें कहीं लुटेरे आदि मिल जाँय तो चारण सामने पहुँच यह कह कर पथिककी रक्षा करनेकी चेष्टा करते हैं कि, "मैं शिववंशोद्भव हूं, मेरे सामने पापकर्म न होना चाहिये।" यदि इतनेसे कुछ फल न हो, तो तलवार हाथमें ले "यह तलवार तुम लोगोंके मस्तक पर पड़े" यह कहते हुए अपने हाथ पर मार लेते हैं। और यदि इससे भी कुछ फल न हो, तो उस तलवारको अपनी छातीमें भोंक कर अपने सम्मानकी रक्षा करते हैं। चारण लोग मौतसे नहीं डरते, सब ही आवश्यकता होने पर मृत्युको आलिङ्गन करनेके लिए तयार रहते हैं। ये लोग काचिली और मरु, इन दो प्रधान सम्प्रदायोंमें विभक्त हैं। इन दोनों सम्प्रदायोंमें भी १२० परिवारोंमें बँटे हुए हैं। काचिली लोग वाणिज्य-व्यवसाय और मरु चारण भाटोंका काम कर अपना जीवन बिताते हैं। इन दोनों सम्प्रदायोंमें परस्पर विवाह आदि कार्य नहीं होते। हाँ, मरु चारण लोग राजपूतोंके साथ विवाहसूत्रमें आबद्ध हो सकते हैं।

मेवारके इतिहासमें प्रसिद्ध राणा हमीरने कच्छभुज नामक स्थानके पाससे चारणोंको बुला कर चितोरके पास मार्ला नामके स्थानमें बसाया था और उन लोगोंको सम्मानसूचक कार्यमें नियुक्त किया था। कालान्तरमें

यहांके चारणोंका सर्वसाधारणमें सम्मान होने लगा और राजपूतानेमें बिना शुल्कके वाणिज्य करनेकी उन्हें अनुमति मिल गई।

चारण लोग विद्याभ्यास भी करते हैं। काचिलो चारण व्यवसायमें विशेष निपुण होते हैं। मारुचारण वंशावली और वीरोंके गुण गानेका अभ्यास कर लेते हैं। युद्धप्रिय राजपूत लोग चारणोंके मुंहसे वीरोंकी कहानी आदरसे सुनते हैं। विशेषतः राठोर लोग चारणोंका ज्यादा आदर करते हैं।

ये लोग कभी भी जातीयताको नहीं छोड़ते। राणा हमीर द्वारा गुजरातसे बुलाये हुए चारणगण चितौरके पास शताब्दियोंसे रहते हैं, इतने पर भी आज तक उन लोगोंने अपनी जातीय पोषाक नहीं छोड़ी। उन लोगोंको राजपूतों जैसी पोषाक पहिरे हुए देखते हैं। ये लोग ढीली पोषाक और ऊंची पगड़ी बांधते हैं, तथा लम्बी दाढ़ी भी रखाते हैं।

चारणऋद्धि—वह शक्ति जिसके द्वारा मुनि-ऋषिगण आकाशमार्गसे चल सकें। चारणमुनि देखो।

चारणदारा (सं० स्त्री०) नटी प्रभृति।

चारण-मुनि—ऐसे जैन मुनि या ऋषि, जो अपनी विद्याके बलसे आकाशमार्गसे (उड़ कर) जहाँ-तहाँ जा सके। ऐसे मुनि तीन गुप्तिके धारक अर्थात् मन-वचन-कायको सम्पूर्ण वशमें रखनेवाले होते हैं।

चारणविद्य, चारणवैद्य (सं० पु०) अथर्ववेदका एक अंश।

चारणी (सं० स्त्री०) १ करवीर पुष्पवृक्ष, कनेरका पेड़। २ स्थलपद्म, थल कमल।

चारटा (हिं० पु०) १ चौपाया, चार पाँववाला पशु। २ गदहा।

चारदीवारी (फा० स्त्री०) १ रक्षाके लिये चारों ओर बनाई हुई दीवार, घेरा, हाता। २ प्राचीर, कोट, शहरपनाह।

चारनक—कोई अंगरेज। इनका पूरा नाम जब चारनक (Job Charnock) था। यह ईष्ट इण्डिया कम्पनीके एजेण्ट हो करके बङ्गाल आये। १६८१ ई०को चारनक साहब मुर्शिदाबादके पास कासिमबाजारको कोठीके मालिक रहे।

१६८६ ई०को दिल्लीश्वरके प्रतिनिधिने अंगरेजोंसे बिगड़ करके हुगलीकी कोठी आक्रमण की थी। परन्तु उन्होंने मुगल सिपाहियोंको परास्त करके अनेक विषयोंमें सुविधा लगा ली। फिर कुछ काल पीछे सम्राट् औरङ्गजेबके मुसाफिरोंसे भरे कई एक जहाज अंगरेजोंने पकड़े थे। उन्होंने क्रोधान्ध हो करके अंगरेजोंको भारतवर्षसे निकालने और हुगली लूटनेका आदेश दिया। उनके आदेशक्रमसे हुगली पर अत्याचार होने लगा। चारनक साहब बाध्य हो लोगोंके साथ हुगली नदीके मुंहाने पर हिजली द्वीपको भाग गये। जो हो, इसके अल्प दिन पीछे ही बङ्गालके सूबेदारने सन्धिका प्रस्ताव करके इन्हें सैन्य आदिके साथ सूतानुटी नामक स्थान पर आनेको लिखा था। किन्तु कप्तान हिथ उसी समय सन्धि स्थगित रख करके युद्ध करनेका आदेश ले इङ्गलैण्डसे भारतमें आ पहुंचे। चार्नक साहब समुदाय सैन्यके साथ बालेश्वर ध्वंस और चट्टग्राम पुनर्ग्रहणपूर्वक मन्द्राज चले गये। १६९० ई०को सम्राट् औरङ्गजेब साथ अङ्गरेजको सन्धि स्थापित होने पर यह बङ्गाल आये और हुगली नदीके तीर सूतानुटी और तन्निकटवर्ती स्थान क्रय करके एक कोठी खोल दी। बहुतसे लोगोंको विश्वास है कि चारनक साहबने ही कलकत्ता नगरी प्रतिष्ठा की थी। कलकत्ता देखो।

१६९० ई०को इन्होंने चानक (बारकपुर)-में एक

बाजार लगाया। अनेकोंके अनुमानमें इन्हींके नामानुसार उक्त स्थानको चानक कहते हैं। परन्तु यह बात ठीक नहीं है। चानक देखो।

किसी दिन चारनक साहबने गङ्गातीर पर घूमने जा करके देखा कि कुछ लोग एक नवयौवना सुन्दरी ब्राह्मणकन्याको उसके मृत पतिके साथ जलानेका उद्योग करते थे। परन्तु रमणी प्राणके भयसे रो रही थी। यह दलबल ले करके उपस्थित लोगोंके हाथसे उसी रमणीको निकाल लाये, फिर उसके प्रणयमें आसक्त हो विवाह कर लिया। किन्तु थोड़े दिन पीछे वह मर गयी। यह उसके शोकमें अधीर हुए। प्रतिवर्ष को उसी रमणीके मृत्यु दिन उपलक्षमें समाधिस्थान पर यह एक मुर्गा उत्सर्ग करते थे। १६९२ ई०को इनका मृत्यु हुआ।

चारनाचार (फा० वि०) विवश हो कर, लाचार हो कर मजबूरन।

चारपथ (सं० पु०) वह स्थान जहां चारों ओरसे चार रास्ता आ कर मिल गये हों, चौराहा। [illegible]

चारपाई (हिं० स्त्री०) खाट, छोटा पलंग, खटिया।

चारपाया (फा० पु०) चौपाया, चार पाँववाला पशु, जानवर।

चारबाग (फा० पु०) १ चौखूंटा बगीचा। २ भिन्न भिन्न रंगोंके चौखूंटा शाल या रुमाल।

चारबालिश (फा० पु०) एक तरहका गोल तकिया।

चारभट (सं० पु०) चारेषु चरेषु भटः यद्वा चारे बुद्धिकौशलादि प्रचारे भटः। वीर, साहसी पुरुष।

चारमिक (सं० त्रि०) चरममधीते वेद वा चरम-ठक्। बहवादिभ्यश्च। ८।४।२।६१। चरम अध्ययनकारी, बहुत पढ़नेवाला, जिसका मन पढ़नेमें सदा मग्न हो।

चारयारी (हिं० स्त्री०) १ चार मित्रोंका समूह। २ मुसलमानोंमें सुन्नी संप्रदायकी एक मण्डली जो अबुबक्र, उमर, उसमान और अली इन्हीं चारोंको खलीफा मानती है।

चारवायु (सं० पु०) चारेण सूर्यस्योष्णतिभेदेन प्रेरितो यो वायुः। ग्रीष्मकी गरम हवा, लू।

चारवीज (सं० क्ली०) पियाल बीज।

चारसद्दा—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके पेशावर जिलेकी एक तहसील। यह स्थान अक्षा० ३४° २' एवं ३४° १२' उ० और देशा० ७१° ३० तथा ७१° ५६' पू०के बीच पड़ता है। क्षेत्रफल ३८० वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १४२७५६ निकलेगी। अदजाई और काबुल नदीके बीचकी भूमि बहुत उवरा है। मुहम्मद पर्वतके नीचेकी जमीन भी अच्छी है। हस्तनगरके टप्पेमें स्वातको नहर लगी है।

चारसद्दा—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशस्थ पेशावर जिलेकी चारसद्दा तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३४° ८' उ० और देशा० ७१° ४५' पू०में स्वात नदीके दक्षिण तट पर पेशावर शहरसे १६ मील उत्तरपूर्वको अवस्थित है। लोकसंख्या कोई १६३५४ लगती है। यहांसे पेशावरको पक्की सड़क चली गयी है। बीचमें नावके पांच पुल आते हैं। व्यवसाय वाणिज्य प्रायः हिन्दुओंके हाथमें है। मुसलमान खेती करते हैं।

यह प्राङ्ग नगरसे मिला हुआ है। कनिङ्हम साहबने इन दोनों स्थानोंको प्राचीन पुष्कलावती जैसा ठहराया है। अलेकसन्दरके आक्रमण समयको ग्रीक ऐतिहासिकोंने उसको प्यूकेलास या प्यूकेलोटिस (Peukelaus or Peukelaotis) लिखा था। आरियन (Arrian)के अनुसार हेफाष्टियान (Hephaistion) वार्ह क बहुकाल अवरुद्ध होने पर चारसद्दाके राजा अपने दुर्गको रक्षा करनेमें मारे गये। टलेमि इसका अवस्थान स्वात (Swastene)-के पूर्व तट पर ठहराते हैं। ई० सातवीं शताब्दीको चीन-परिव्राजक युएनचुयाङ्ग इस नगरमें आये थे। वह इसको पेशावरसे १०० लि (१६॥ मील) उत्तर-पूर्व लिख गये हैं। बुद्धदेवने जहां अपना नेत्रोत्सर्ग किया, बौद्धों और उनके सहयोगी मतावलम्बियोंका बड़ा आकर्षक था। सम्भवतः पुरुषपुर (पेशावर)-के कारण उसको लोगोंने राजधानी जैसा छोड़ दिया। इसका विस्तार बहुत अधिक था, चारों ओर विस्तृत ध्वंसावशेष विद्यमान है। १९०२-३ ई०को चारसद्दाको चतुर्दिक्की खननकार्य हुआ और कुछ लाभदायक मट्टीका गहना तथा सिक्का मिला।

चारसम्प्रदाय—विभिन्न श्रेणियोंके भाटोंका एक विभाग। ये लोग रामानुज आदि प्रधान चारसम्प्रदायोंकी शिष्यप्रणाली आदिका विवरण लिख रखते हैं और आवश्य-

कताके अनुसार उनको गाते हैं। ये भाट "चारसम्प्रदायके भाट" कह कर अपना परिचय देते हैं। ये विष्णुके उपासक होते हैं, तथा समस्त सम्प्रदायोंके लोगोंके पास जा कर स्तुतिपाठ, यशोवर्णन और शिष्य परम्पराकी आवृत्ति कर भीख मांगा करते हैं। ये लोग गुणगानेको 'कविभ' कहते हैं।

चारा (हिं० पु०) १ पशुओंका खाद्यपदार्थ, जैसे घास, पत्ती, डंठल आदि। २ पक्षियों, मछलियों या और जीवोंके खानेकी वस्तु। ३ आय या और कोई वस्तु जिसे कटियामें लगा कर मछली फंसाते हैं।

चारा (फा० पु०) उपाय, तदबीर, इलाज।

चाराजोई (फा० स्त्री०) नालिश, फरियाद।

चारान्तरित (सं० पु०) गुप्तचर, भेदिया, जासूस।

चारायण (सं० पु० स्त्री०) चरस्य गोत्रापत्यं चर-फक्। (पा ४।१।९९) १ चरका गोत्रापत्य, चरके वंशधर। २ कामशास्त्रके एक आचार्य जिनके मतका उल्लेख वात्स्यायनने किया है।

चारायणक (सं० त्रि०) चारायणेभ्य आगतः। चारायण-वुञ्। (पा ४।३।८०) चारायणीय छात्र, जो चारायणके मत जानते हों।

चारायणीय (सं० पु०) १ चारायणके छात्र। २ कम्बल।

चारिकर—अफगानिस्तानके अन्तर्गत एक स्थान। यह अक्षा० ३५° ३' उ० और देशा० ६९° १०' पू०के मध्य अवस्थित है। यह ओपियन नामक स्थानके निकट और काबुलसे ४० मील उत्तरमें है। १८४२ ई०में जब काबुलकी लड़ाई छिड़ी थी, उसी समयसे यह स्थान मशहूर हो गया है। यहां प्रधान सेनापति म्याक् कास्किल दक्षताके साथ लड़े थे।

चारिकचारिका (सं० स्त्री०) १ सहचरी, सखी, सहेली। २ आरशुला, तिलचट्टा।

चारिणी (सं० स्त्री०) चारयति स्वगुणमिति चर-णिच्-णिनि ङीप् च। १ करुणीवृक्ष। (त्रि०) २ आचरण करनेवाली, चलनेवाली।

चारित (सं० त्रि०) १ जो चलाया गया हो, चलाया हुआ। २ उतारा हुआ, भबके द्वारा खींचा हुआ।

चारितार्थ्य (सं० क्ली०) चरितार्थस्य भावः। चरितार्थता, कृतकार्यता।

चारित्र (सं० क्ली०) चरित्रैर्वृत्तं चर-णित्रन्। चरित्रमेव चारित्रम् स्वार्थे अण्। १ चरित्र, स्वभाव, व्यवहार, चाल चलन।

"कुलाकोशकरं लोके धिक् ते चारित्रमीदृशम्।" (रामा० ३।५१।८)

२ कुलक्रमागत आचार।

"चारित्रं येन नो लोके दूषितं दूषितात्मना।" (हरिवंश १८० अ०)

(पु०) ३ मरुत्गणका अन्यतम, मरुत्गणोंमेंसे एक। ४ जैनसंन्यासी। ५ जैन मतानुसार संसार परिभ्रमणकी कारणरूप क्रियाओंके त्याग करनेको चारित्र कहते हैं। यह चारित्र ५ प्रकारका होता है— १ सामायिक, २ छेदोपस्थापना, ३ परिहारविशुद्धि, ४ सूक्ष्मसाम्पराय और ५ यथाख्यात। समस्त सावद्ययोग (पापयोगका)-का भेदरहित जिसमें त्याग हो, उसे सामायिकचारित्र कहते हैं। प्रमादके कारण यदि कोई सावद्य (पापसहित) कर्म बन आवे, तो उससे उत्पन्न हुए दोषका प्रायश्चित्त ले कर छेदन करे और आत्माको पुनः व्रतधारणादिरूप संयममें धारण करे, इस क्रियाका नाम है छेदोपस्थापनाचारित्र। जीवोंकी पीड़ाका परित्याग करनेके विशेष विशुद्धिका होना परिहारविशुद्धिचारित्र कहलाता है। अति सूक्ष्म कषायके उदयसे सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थानमें जो चारित्र हो, उसका नाम है सूक्ष्मसाम्पराय-चारित्र। यथाख्यात-चारित्र उसे कहते हैं, जिसमें आत्म मोहनीय कर्मके सर्वथा उपशम वा क्षय होनेसे आत्मस्वभावमें स्थित हो। सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो चारित्र प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण इन गुणस्थानोंमें, परिहारविशुद्धि चारित्र छठे और सातवेंमें, सूक्ष्मसाम्पराय दशवेंमें तथा यथाख्यातचारित्र ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानमें होता है। (तत्त्वार्थसूत्र ९।१८)

चारित्रकवच (सं० त्रि०) सत्स्वभाव रूप वर्म द्वारा ढका हुआ।

चारित्रचूड़ामणि—एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकार। इनका द्वितीय नाम है चूड़ामणि। इन्होंने संस्कृत भाषामें मन्त्रसूत्रामृत और कौमारव्याकरण ये दो ग्रन्थ रचे हैं।

चारित्रमार्गणा (सं० स्त्री०) चारित्रका अनुसरण, चारित्रकी खोज। चारित्र ५ प्रकारका है। चारित्र देखो।

चारित्रवती (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी समाधि।

चारित्रवर्द्धन—एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार, इनका दूसरा नाम सरस्वतीवाचनाचार्य । आप खरतरगच्छीय श्रीजिनप्रभाचार्यके पुत्र थे। साधु अरड़ कमलके आदेशसे इनने शिशुहितैषिणीके नामसे कुमारसम्भव और रघुवंशकी टीका रची थी। इसके सिवा नैषध, शिशुपालवध, राघवपाण्डवीय आदि काव्योंकी टीका भी बनाई थी। अफ्रे क्ट साहबने इनको रामचन्द्रभिषजका पुत्र और इनका दूसरा नाम साहित्यविद्याधर बताया है।* परन्तु यह बात ठीक नहीं, ये दोनों भिन्न भिन्न व्यक्ति थे।

चारित्रविजय—एक जैन ग्रन्थकर्ताका नाम।

चारित्रविनय (सं० पु०) १ चरित्र द्वारा नम्र या विनीत भाव प्रदर्शन, शिष्टाचार, नम्रता। २ चारित्रकी विनय।

चारित्रसुन्दर कवि—महिपालचरित्र नामक एक जैनग्रन्थके रचयिता।

चारित्रसिंहगणी—जिनभद्रसूरिके उत्तराधिकारी भावधर्म गणीके प्रशिष्य और मीतीभद्रके शिष्य। आपने १५६८ ई०में कातन्त्रविभ्रमसूत्र और अवचूरि, तथा षड़्दर्शन वृत्तिकी रचना की थी।

चारित्रा (सं० स्त्री०) चारित्रमिव स्वभावो विद्यते अस्याः, चारित्र-अच् स्त्रियां टाप्। तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका पेड़।

चारित्राचार—जैनोंके ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन पंचाचारोंमें तीसरा आचार।

चारित्र्य(सं० क्ली०) चरित्रमेव चारित्र्यं चरित्र स्वार्थे ष्यञ्। चरित्र, स्वभाव। चरित्र देखो।

चारिन् (सं० त्रि०) चर-णिनि। १ सञ्चारकारी, चलनेवाला, आकाशचारी। २ आचरण करनेवाला, व्यवहार करनेवाला। (पु०) ३ पदाति सेना, पैदल सिपाही। ४ करणी वृक्ष। ५ सञ्चारी भाव।

चारिवाच् (सं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, काकड़ासिंगी।

चारी (सं० स्त्री०) चारः पदनिक्षेपशब्दः गतिभेदो वा अस्त्यस्याः। अच् आदिभ्यश्च। पा ५।२।१२७ ततः ङीप्। नृत्याङ्ग विशेष, नृत्यका एक अङ्ग। चारीके बिना नृत्य नहीं होता। शृङ्गार आदि रसकी भावोद्दीपक और मधुरताजनक सुन्दर मतिको चारी कहते हैं। किसी किसीके मतसे एक वा दो पैरोंसे नाचनेका नाम ही चारी है। चारीके दो भेद हैं—भूचारी और आकाशचारी।

भूचारी—छब्बीस प्रकारकी होती है—समनखा, नूपुरनविद्धा, तिर्यङ्मुखी, मरला, कातरा, कुवीरा, विश्लिष्टा, रथचक्रिका, पार्श्व रेचितका, तलदर्शिनी, गजहस्तिका, परावृत्ततला, चारुताड़िता, अर्द्धमण्डला, स्तम्भक्रीड़नका, हरिणत्रासिका, चारुरेचिका, तलोद्वृत्ता, सञ्चारिता, स्फुरिका, लङ्घितजङ्घा, सङ्घटिता, मदालसा, उत्कुञ्चिता, अतितिर्यक्-कुञ्चिता और अपकुञ्चिता। किसीके मतसे भूमिचारी सोलह प्रकारकी है—समपादस्थिता, विद्धा, शकटास्यिका, विच्यावा, ताड़िता, आवद्धा, एड़का, क्रीड़िता, ऊरुवृत्ता, छन्दिता, जनिता, स्पन्दिता, स्यन्दितावती, समतन्ती, समोत्सारितवद्दिता और उच्छन्दिता।

आकाशचारीके भी सोलह भेद हैं—विक्षेपा, अधरी, अङ्घ्रिताड़िता, भ्रमरी, पुरःक्षेपा, सूचिका, अपक्षेपा, जङ्घावर्त्ता, विद्धा, हरिणप्लुता, ऊरुजङ्घान्दोलिता, जङ्घा, जङ्घनिका, विद्युत्क्रान्ता, भ्रमरिका और दण्डपार्श्वा। मतान्तरमें विभ्रान्ता, अतिक्रान्ता, अपक्रान्ता, पार्श्वक्रान्तिका, ऊर्ध्वजानु, दोलोद्वृत्ता, पादोद्वृता, नूपुरपादिका, भुजंगत्रासिका, क्षिप्ता, आविद्धा, ताला, सूचिका, विद्युत्क्रान्ता, भ्रमरिका और दण्डपादा। मिताहारी और अमसहिष्णु होकर तैलमर्दनपूर्वक, इन चारियोंका प्रथमतः स्तम्भ वा भीत पर अभ्यास करना चाहिये। रूखा वा खट्टा भोजन करके अभ्यास करना निषिद्ध है। (सङ्गीतदामो०)

चारु (सं० त्रि०) चरति चित्ते इति चर-उण्। १ मनोज्ञ, सुन्दर, मनोहर, खूबसूरत। "कोमलं चारुचूतकम् वा" (माघ) १ चरति देवेषु गुरुत्वेन (पु०) २ वृहस्पति। (क्ली०) ३ कुङ्कुम, केसर। ४ पद्मकाष्ठ। (पु०) ५ रुक्मिणीसे उत्पन्न कृष्णके एक पुत्र। (हरि० ११७।११)

चारुक (सं० पु०) चारु संज्ञायां कन्। १ क्षुद्रधान्य विशेष सरपतका बीज जो औषधके काममें लाता है। इसका गुण—मधुर, रुक्ष, रक्त, पित्त और कफनाशक, शीतल, लघु, कषाय, वीर्यकर और वातवर्द्धक है। (क्ली० २ रक्तचन्दन।

चारुकीर्त्ति—१ एक दिगम्बर ग्रन्थकर्त्ता। इन्होंने चन्द्रप्रभ-

* Aufrecht's Catalogus Catalogorum, p. 186.

काव्यकी टीका (श्लो० सं० ६०००), आदिपुराण (श्लो० सं० ३०००), यशोधरचरित्र, नेमिनिर्वाणकाव्यकी टीका और पार्श्वनिर्वाणकाव्यकी टीका रची है। २ एक दिगम्बर जैनाचार्य। ये वि० सं० १२६२में ज्येष्ठ सुदी एकादशीको पद पर बैठे थे।

चारुकेशरी (सं० स्त्री०) चारूणि केशराणि अस्या। १ नागरमोथा। २ तरुणी पुष्प, सेवतीका फूल।

चारुगर्भ (सं० पु०) चारुः मनोज्ञः गर्भः अन्तःकरणं यस्य अथवा उत्पत्तिस्थानं यस्य। श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश १६०।१)

चारुगीति (सं० स्त्री०) छन्दोभेद, गीतका एक प्रकारका भेद।

चारुगुप्त (सं० पु०) चारु यथा स्यात् तथा गुप्तः रक्षितः। श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम।

चारुचित्र (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

चारुता (सं० स्त्री०) चारु भावे तल्। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। टाप्। सौन्दर्य, सुंदरता, मनोहरता, सोहावनापन।

चारुदत्त (सं० पु०) मृच्छकटिकनाटकके नायक। वेश्याकी लड़की वसन्तसेनाके प्रेममें मुग्ध हो कर इनने अपना सर्वस्व खो दिया था। वसन्तसेना भी चारुदत्तको प्राणोंसे अधिक प्यार करती थी। मृच्छकटिकके सिवा श्री जिनसेनाचार्यकृत हरिवंशपुराणमें, तथा जैन पद्म पुराण, चारुदत्तचरित्र, आराधनाकथाकोष आदिमें भी इनका विशेष वर्णन मिलता है, उनके आधारसे कुछ नीचे लिखा जाता है—

चारुदत्त सेठके समय चम्पापुरीके राजा शूरसेन थे। चारुदत्तके पिता भानुदत्त बड़े ही धनाढ्य और धर्मात्मा थे। चारुदत्तकी माताका नाम था सुभद्रा। चारुदत्त बचपनहीसे पढ़ने लिखनेमें ज्यादा योग दिया करते थे। यही कारण था कि, उन्हें चौबीस पच्चीस वर्षकी उम्रमें भी किसी प्रकारकी विषय-वासना छू तक न गई थी। दिन रात ग्रन्थोंके पठन-पाठनमें ही लीन और सांसारिक झंझटोंसे विरक्त रहते थे। मातापिताने आग्रह पूर्वक उनका मित्रवतीके साथ व्याह कर दिया।

व्याह तो हो गया, पर चारुदत्त व्याहका रहस्य कुछ भी न समझ सके और इसीलिए उनने अपनी प्रियाका मुंह तक नहीं देखा। चारुदत्तकी यह हालत देख कर उनकी माताने चारुदत्तको ऐसे लोगोंके सुपुर्द कर दिया, जो व्यभिचारी और लम्पटी थे। इससे चारुदत्त विषयोंमें फंस गये और यहां तक फंस गये कि, उनने वेश्याकी पुत्री वसन्तसेनाके प्रेममें फंस कर अपनी विवाहिता स्त्री मित्रवतीको सर्वथा भूल गये और अपने पिताका धन मनमाना खर्च करने लगे। अन्तमें स्त्री और माताके गहने तक पर नौबत आई। इसी बीचमें चारुदत्तके पिता मुनि हो गये थे। चारुदत्तको दारिद्र्य होते देख वसन्तसेनाकी कुट्टिनी माने अपनी पुत्रीसे कहा—"बेटी, अब इसके पास धन नहीं रहा, इसलिए तुझे इसका साथ जल्दी छोड़ना चाहिये।" वसन्तसेनाको यह बात बुरी लगी और वह कहने लगी—"मा! तूने यह क्या कहा? अरे यह चारुदत्त कुमार अवस्थासे ही मेरे पति हैं, मैंने उनके साथ भोगविलास किया है, मैं उन्हें कदापि न छोड़ूंगी। मेरा जीना उन्हींके साथ है।" इस पर कलिङ्गसेनाने पुत्रीका भाव समझ लिया और आधीरातमें वसन्तसेनाके सो जाने पर उसने चारुदत्तको बांध कर पैखानेमें डाल दिया। बहुत कष्ट सह कर चारुदत्त घर पहुंचे और घरकी दुरवस्था देख अपने किये हुए कृत्यों पर पश्चात्ताप करने लगे। बस, यहींसे उनका मन उन्नत होने लगा। ये विदेशमें जा कर रुजगार करने लगे। काफी धन भी पैदा किया। परन्तु इस बीचमें उन्हें अनेक आपदा झेलनी पड़ीं थीं। कई बार तो जान पर बीत चुकी थी, परन्तु वीरवर चारुदत्त हताश न हो कर उत्तरोत्तर उन्नति मार्ग पर चढ़ने लगे। घर लौटते समय भी इन्हें अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। इनका धर्म पर अटल विश्वास था, उसी विश्वासके बल पर निर्भर हो, ये किसी प्रकार घर लौट आये। घर आ कर उनने माता और स्त्रीको सन्तुष्ट किया। अन्तमें वसन्तसेनासे भी व्याह हो गया।

जबसे चारुदत्त वेश्याके घरसे बुरी तरह निकाले गये थे, तब होसे उनके हृदयमें आत्मोन्नति या आत्मकल्याण करनेका भाव जग उठा था। परन्तु लोकमें फैली हुई बदनामीको दूर करनेके लिए उन्हें धन पैदा करने तथा

कुछ दिन गृहस्थोमें रहनेकी आवश्यकता जान पड़ी। जब लोगोंके हृदयसे उनके प्रति बुरे भाव जाते रहे, तब उनने निवृत्तिमार्ग पकड़नेका मौका देखा और अपने सुन्दर नामक पुत्रको गृहस्थी व कारोबारका भार सौंप कर खुद मुनि हो गये। इतने लम्पटी पुरुषका करोड़ों रुपयेकी सम्पत्ति पर लात मार कर दिगम्बर साधु हो जाना सहज बात नहीं, यह चारुदत्त जैसे वीर पुरुषोंका ही काम था। बहुत दिनों तक कठोर तप कर अन्तमें समाधिमरणपूर्वक चारुदत्त सर्वार्थसिद्धि नामके स्वर्गमें (जो सबसे ऊंचा स्वर्ग है) गये। वहांसे ये ३३ सागर काल पर्यन्त श्रेष्ठ सुखोंका अनुभव कर दूसरे भव (जन्म)-में मोक्ष-(निर्वाण) जाँयगे। (चारुदत्तचरित)

चारुदर्शन (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष।

चारुदारु (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष।

चारुदेष्ण (सं० पु०) १ गण्डूषके एक पुत्रका नाम। २ कृष्णके एक पुत्र जो रुक्मिणीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इन्होंने निकुम्भ आदि दैत्योंके साथ युद्ध किया था।

चारुधाम (सं० क्ली०) आम्रहरिद्रा।

चारुधारा (सं० स्त्री०) चारुं चारुतां धारयति धारि-अण् अथवा चार्वी धारा व्यवहारः अस्याः। १ इन्द्रपत्नी शची, इन्द्रकी स्त्री शची।

चारुधिष्ण (सं० पु०) ग्यारहवें मन्वंतरके सप्तर्षियोंमेंसे एक।

चारुनन्दि—एक दिगम्बर जैनाचार्य, ये १२१६ सम्वत्में मौजूद थे। इनकी जाति सहजवाल थी।

चारुनालक (सं० क्ली०) चारु नालं यस्य कप्। कोकनद रक्त कमल।

चारुनेत्र (सं० त्रि०) चारु मनोहरं नेत्रं यस्य। १ सुन्दर नयनविशिष्ट, सुन्दर आँखवाला। (पु०) २ हरिण। ३ अप्सराविशेष। (काशीखण्ड १० अध्याय)

चारुपद (सं० पु०) पुरुवंशीय राजा मनुष्युका एक पुत्र। (भागवत ९।२०।२)

चारुपर्णी (सं० स्त्री०) चारूणि पर्णानि अस्याः। प्रसारणी, पसरन, गंधपसार।

चारुपुट (सं० पु०) चारुपुटमन्त्र। सङ्गीतका तालविशेष, तालके ६० मुख्य भेदोंमेंसे एक।

चारुप्रतीक (सं० त्रि०) सुन्दर उपक्रमयुक्त।

"चारुप्रतीक आहुतः" (ऋक् १।८।१२)

'चारुप्रतीकः शोभनोपक्रमः' (सायण)

चारुफला (सं० स्त्री०) चारु मनोहरं फलं अस्याः। द्राक्षा-लता, अंगुर या दाखको एक बेल।

चारुबाहु (सं० पु०) श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश १६०।६)

चारुभद्र (सं० पु०) श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश १६०।६)

चारुमत् (सं० पु०) एक बौद्ध चक्रवर्ती। (बु पर्णि)

चारुमती (सं० स्त्री०) रुक्मिणीके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्ण-की एक कन्या। (हरिवंश १६० अ०)

चारुयशस् (सं० पु०) श्रीकृष्णके एक पुत्र। (भारत अनु० १४ अ०)

चारुरत्न (सं० क्ली०) स्वर्ण, सोना।

चारुरावा (सं० स्त्री०) इन्द्रकी स्त्री शचीका नामान्तर।

चारुलोचन (सं० त्रि०) चारु लोचनं यस्य, बहुव्री०। १ सुन्दर नेत्रयुक्त, सुन्दर आँखवाला।

"तस्यां प्रथमा यातायां कामलां चारुलोचनां" (हरि० १५२ अ०)

(पु०) २ हरिण। स्त्रियां टाप्।

चारुवक्त्र (सं० त्रि०) चारु वक्त्रं मुखं यस्य। १ सुन्दर मुख-युक्त, जिसका मुख सुन्दर हो, जो देखनेमें खूबसूरत हो। (पु०) २ कार्तिकेयका एक अनुचर। (भारत शल्य ४६ अ०)

चारुवर्तिनी (सं० स्त्री०) लाक्षा।

चारुवर्द्धन (सं० त्रि०) चारुः चारुतां वर्द्धयति वृध-णिच्-ल्युट्। सौन्दर्य्यवर्द्धक, सुन्दरता बढानेवाला, जिससे खूब सुन्दर दीख पड़े।

चारुवर्द्धना (सं० स्त्री०) चारुवर्द्धन स्त्रियां टाप्। रमणी, सुन्दर और मनोहर स्त्री।

चारुविन्द (सं० पु०) चारु चारुतां विन्दति विद-श। गवादिषु विन्देः संज्ञायां। वार्तिक ३।१।१३८। श्रीकृष्णके एक पुत्र-का नाम। (हरिवंश १६०।६)

चारुवेश (सं० त्रि०) चारुः वेशः यस्य, बहुव्री०। १ सुन्दर वेशयुक्त सुन्दरता, खूबसूरत। (पु०) २ रुक्मिणी-के गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णका एक पुत्र। (भाग० अनु० १४ अ०)

चारुव्रत (सं० त्रि०) चारु व्रतं यस्य, बहुव्री०। सुन्दर व्रतविशिष्ट।

चारुव्रता (सं० स्त्री०) चारुव्रत स्त्रियां टाप्। एक मास उपवासी स्त्री, वह स्त्री जो एक महीनेमें होनेवाला व्रत करती है।

चारुशिला (सं० स्त्री०) चार्वी शिला, कर्मधा०। १ सुन्दर शिला, अच्छा पत्थर।

"कुतूहलाच्चारुशिलोपवेशं" (भट्टि)

२ मणिरत्न।

चारुशीर्ष (सं० त्रि०) चारु शीर्षं मस्तकं यस्य, बहुव्री०। १ सुन्दर मस्तकविशिष्ट, जिसका शिर अच्छा हो।

चारुश्रवस् (सं० त्रि०) चारुनी श्रवसी कर्णौ यस्य, बहुव्री०। १ सुन्दर कर्णयुक्त, जिसके अच्छे अच्छे कान हैं, सुन्दर कानवाला (पु०) २ रुक्मिणीके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णके एक पुत्र। (भारत अनु १४ अ०)

चारुषेण—एक जैन मुनि। (जैन-इतिहास)

चारुहासिन् (सं० त्रि०) चारु यथा तथा हसति हस्-णिनि। जो सुन्दर हास्य करे, सुन्दर हँसनेवाला।

चारुहासिनी (सं० स्त्री०) चारुहासिन् स्त्रियां ङीप्। १ सुन्दर हास्यकारिणी स्त्री, सुन्दर हँसनेवाली स्त्री, मनोहर मुसकानेवाली औरत। २ वैतालीय छन्दोभेद, वैताली छन्दका एक भेद।

चारेक्षण (सं० पु०) चारः ईक्षणं यस्य, बहुव्री०। नृपति, राजा। चारचक्षु देखो।

चारोली (देश०) गुठली।

चार्चिक (सं० पु०) चर्चां वेत्ति तत्परं ग्रन्थं अधीते वा, चर्चा उक्थादित्वात् ठक्। क्रतूक्थादि सूत्रान्ताट्ठक्। पा ४।२।६०। विचारमग्न या चर्चापर ग्रन्थ अध्ययनशील। (सिद्धान्त)

चार्चिक्य (सं० क्ली०) चर्चिका एव स्वार्थे ष्यञ्। कुङ्कुमादि द्वारा गात्रलेपन, शरीरमें केसरका लेप।

चार्णक—चारक देखो।

चार्थावल—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत मुजफ्फरनगर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° ३२´ ३०´´ उ० और देशा० ७७° ३८´ १०´´ पू० पर मुजफ्फरपुरनगरसे ७ मील पश्चिममें अवस्थित है।

चार्म (सं० त्रि०) चर्मणा आच्छादितं चर्मन्-अण्। १ चर्माच्छादित, चमड़ेसे मढ़ा हुआ। (पु०) २ चर्माच्छादित रथ, चमड़ेसे मढ़ा हुआ रथ। (भारत)

चार्मण (सं० क्ली०) चर्मणां समूहः चर्मन्-अण्। भिक्षादिभ्योऽण्। पा ४।२।३८। चर्मसमूह, चमड़ोंका ढेर। (त्रि०) २ चमड़ेसे मढ़ा हुआ।

चार्मिक (सं० त्रि०) चर्मणा निर्वृत्तः चर्मण्-ठक्। चर्मनिर्मित, चमड़का बना हुआ।

"चर्मचार्मिकभाण्डेषु।" (मनु०)

चार्मिकायणि (सं० पु०-स्त्री०) चर्मिणोऽपत्यं चर्मिण् अपत्यार्थे फिञ् कुकागमश्च। वाकिनादीनां कुक्च। पा ४।१।१५८। चर्मीका अपत्य, ढाल ले कर लड़नेवाला योद्धाकी सन्तान।

चार्मिक्य (सं० क्ली०) चार्मिकस्य भावः चार्मिक भावे ष्यञ्। पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ५।१।१२८। चार्मिकका भाव, चमड़ेसे कोई चीज मढ़नेकी क्रिया।

चार्मिण (सं० क्ली०) चर्मिणां समूहः चर्मिण्-अण्। चर्मिसमूह, ढाल लेकर लड़नेवाले योद्धाका समूह।

चार्मीय (सं० त्रि०) चर्मणः अयं चर्मण्-छः। उत्करादिभ्यश्छः। पा ४।२।९०। चर्मसम्बन्धीय, जिसका चमड़ेसे तअल्लुक हो।

चार्य (सं० पु०) व्रात्यवैश्यद्वारा सवर्णा स्त्रीसे उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति।

"वैश्यात्तु जायते व्रात्यात् सुधन्वाचार्य एव।" (मनु० १०।२३)

चार्लस विलकिन्स—एक विख्यात विद्वान्। १७५० ई०में इन्होंने इङ्गलैण्डमें जन्मग्रहण किया। १७७० ई०को विंशति वर्ष वयसमें भारतीय सिविल सर्विस परीक्षामें उत्तीर्ण हो राजकर्म ग्रहणपूर्वक यह बङ्गदेश पहुंचे। वहां कई एक साल रहने पीछे अपने बन्धु हालहेड साहबको संस्कृत विद्या अध्ययन करते देख १७७८ ई०में इन्हें भी संस्कृत सीखनेकी इच्छा हुई। सौभाग्यक्रमसे अनायास यह कौतूहल चरितार्थ करनेके उपयुक्त एक विद्वान् बन गये। परन्तु उस समय संस्कृत व्याकरणका उपक्रमणिका-जैसा कोई पुस्तक न रहनेसे इन्होंने अपने शिक्षकके सहारे अधीत व्याकरणका सार संकलन करके व्याकरणकी उपक्रमणिका बना डाली।

अल्प समयके मध्यही विलकिन्सने संस्कृत विद्यामें पारदर्शिता पायी थी। अनुभूतिस्वरूपाचार्यप्रणीत सारस्वतप्रक्रिया, वोपदेवप्रणीत मुग्धबोध और पुरुषोत्तम

प्रणीत रत्नमाला तीन प्रधान संस्कृत व्याकरण अवलम्बन पूर्वक इन्होंने आवश्यक अंश उद्धृत करके अंगरेजीमें अनुवाद किया और एक व्याकरणग्रन्थ निकाल दिया। फिर इन्होंने भगवद्गीताका अङ्गरेजी उलथा लिखा था। १७८५ ई०को डिरेक्टर-सभाने उनका शेषोक्त ग्रन्थ मुद्राङ्कण करके प्रचारित किया।

१७८६ ई०को यह भारतवर्ष छोड़ करके स्वदेश चले गये। वहां इन्होंने १७८५ ई०को 'शकुन्तलापरीक्षा' (Trial of Sakuntala) नामक एक पुस्तक छापा था। उसी वर्ष इन्होंने अपनी चेष्टासे लौहफलक काट करके देवनागरी अक्षरोंका सांचा ढाला।

इतिपूर्व को एतद्देशमें हस्त लिखन भिन्न अन्य किसी भी प्रकारसे ग्रन्थादि प्रचारकी सुविधा न रही। चार्लस विलकिन्स पहले उसी अभावको छोड़ाने पर स्थिरसंकल्प हुए। इङ्गलैण्ड रह करके उन्होंने देवनागरी अक्षरोंमें पैमाने बनाये थे। फिर यह मुद्रायन्त्रके अन्यान्य उपकरण संग्रह करके अपने घरमें बैठे बैठे छपाईका काम करने लगे। परन्तु दुर्भाग्यक्रमसे उनका कार्य अधिक अग्रसर होते न होते इसी वर्ष २री मईको घरमें आग लगनेसे मुद्रायन्त्रको उपकरणसामग्री नष्ट हो गयी। सुखका विषय यही है कि वह अपने मुद्राङ्कित तथा हस्तलिखित ग्रन्थ और अक्षरके सांचे अग्निदेवके कवलसे बचा सके थे। परन्तु अक्षर और अन्यान्य उपकरण कितना ही भस्मीभूत और कितना ही अव्यवहार्य हो गया। साज समान बिगड़ जानेसे इनका हौसला भी घटा था।

उक्त घटनाके कुछ दिन पीछे ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीके डिरेक्टरोंने इङ्गलैण्डके हार्टफोर्ड शहरमें ईष्ट-इण्डिया-कालेज नामक एक विद्यालय खोला। भारतको कर्म करनेके लिये अभिलाषी उसमें पढ़ते थे। प्राच्यभाषा विशेषत: संस्कृत शिक्षा ही उस कालेजका प्रधान उद्देश्य थी। परन्तु सरल रीतसे ज्ञानलाभ करनेके उपयुक्त उक्त भाषाका कोई व्याकरण न रहा। इसीसे चार्लस विलकिन्स डिरेक्टर लोगों कर्तृक आहूत और उसका प्रबन्ध करनेको भारप्राप्त हुए। उन्होंने अपने पहले ही सांचेसे नूतन अक्षर प्रस्तुत किये। इससे मुद्राङ्कण करके अपने बहुत दिनके उद्देश्य साधनमें भी वह सफल हुए।

१८०० ई०को यह इष्ट-इण्डिया-हाउस पुस्तकालयके अध्यक्ष बने थे। १८०८ ई०को प्राच्य ग्रन्थके अनुवाद पर इङ्गलैण्डमें आन्दोलन उठने पर इन्होंने उसका अधिनायकत्व लिया। इसी समय इङ्गलैण्डके राजा चतुर्थ विलियमने उन्हें 'नाइट' उपाधिसे विभूषित किया। १८३३ ई० १३ मईको ८६ वत्सर वयसमें यह परलोक चले गये।

इन्होंने पहले बंगला और फारसी हर्फ ढाले थे। फिर इन्होंने संस्कृत हितोपदेशका अनुवाद करके भी प्रचार किया। इस विषयमें, कि हिन्दुओंके प्रति राजपुरुषोंकी श्रद्धा और प्रीति बढ़े, उनकी विशेष दृष्टि रही और गीताका अनुवाद इस प्रमाणोद्देशसे, कि महा उच्च तत्त्व, ज्ञान और नीतिग्रन्थ जैसा वह हिन्दू जातिका धन और श्रद्धेय है, भगवद्गीताका अंगरेजी अनुवाद किया और उस समयके बड़े लाट वारेन हेष्टिङ्गसको इसका सब आशय समझा दिया। हेष्टिङ्गसने भी गीताका माहात्म्य समझानेको एक मुखबन्ध लिखा था।

चार्वाक (सं० पु०) चारु आपातमनोरमः लोकमनोरञ्जनको वाको वाक्यं यस्य, पृषोदरादित्वात् साधुः। तार्किकविशेष, एक दलीलो। इनका नामान्तर वार्हस्पत्य, नास्तिक और लौकायतिक है।

यह नास्तिक मतप्रवर्तक वृहस्पतिके शिष्य थे। महाभारतमें दुर्योधनके सखा चार्वाक राक्षसका प्रसङ्ग मिलता है। उन्होंने परिव्राजक रूपसे युधिष्ठिरकी सभामें उपस्थित हो इनको ज्ञाति तथा गुरुहत्याकारी बतला करके यथेष्ट निन्दा की और जोवन त्याग करनेको अनुमति दी। इससे सभास्थ शुद्धाचारी ब्राह्मण क्रुद्ध हो गये और हुङ्कार छोड़ करके चार्वाकको भर्त्सना करने लगे। इसी हुङ्कारसे दग्ध हो वह भूतल पर गिर पड़े। (शान्तिपर्व) बहुतसे लोग अनुमान करते हैं कि वही चार्वाक नास्तिक मतप्रवर्तक थे।

सर्वदर्शनसंग्रहमें चार्वाकदर्शनकी कथा पढ़ करके समझ पड़ता कि वृहस्पतिने ही प्रथम नास्तिकशास्त्र प्रणयन किया था। फिर चार्वाक और इनके शिष्य वही वृहस्पतिका मत प्रचार करते रहे। वास्तविक वृहस्पतिसूत्र नामक कोई नास्तिक मत प्रतिपाद्य ग्रन्थ भी दृष्ट

होता है। किन्तु कैसे समझ सकते, वह बृहस्पति कौन थे। पद्मपुराणमें लिखा है कि देवगुरु बृहस्पतिने बलदृप्त असुरोंकी छलनासे वेदविपरीत मत फैला दिया था।

फिर विष्णुपुराणमें चार्वाकके मत-परिपोषक कथा प्रसङ्ग पर कहा है—धर्मबलसे बलीयान् पादप्रमुख दैत्योंने ब्रह्माका आदेश लङ्घन करके त्रिलोक और यज्ञ-भार हरण किया था। इससे देव नितान्त कातर हो करके विष्णुके शरणापन्न हुए। विष्णुने अपने शरीरसे मायामोहकी सृष्टि करके देवगणको बतलाया कि यही मायामोह समुदय दैत्योंका मोहित करेगा और फिर वेदमार्गविहीन होने पर उनको तुम अनायास विनाश कर सकोगे। महासुर लोग उस समय नर्मदा तीर पर तपस्या करते थे। दिगम्बरस्वरूपमें मायामोहने निकट पहुंच नाना प्रकार युक्तियोंसे उनको वेदमार्गभ्रष्ट कर दिया। इसकी कथामें कोई देवगण, कोई यज्ञादि क्रियाकाण्ड और कोई ब्राह्मणकी निन्दा करने लगा। मायामोहकी बात यह थी—यदि यज्ञमें निहत पशुको स्वर्गप्राप्ति होती, यजमान अपने पिताको क्यों नहीं मार डालता? यदि अन्यके भुक्त अन्नसे पुरुष तृप्तिलाभ करते, तो प्रवासियोंके उद्देशसे श्राद्ध करो और उन्हें अन्नवहन करनेसे छुड़ा दो। इन्द्र जब अनेक यज्ञ करके देवत्व पाने पर भी शमीकाष्ठादि भक्षण करते, पत्रभोजी पशु भी उनकी अपेक्षा श्रेष्ठ है। हमारे और तुम्हारे जैसे लोगोंके लिये युक्तियुक्त वचन ही ग्राह्य है।

(विष्णुपु० ३ अंश १८ अध्याय)

रामायणमें अयोध्याकाण्ड पर महर्षि जाबालिने जब रामचन्द्रको वनवाससे लौटनेका उपदेश दिया, चार्वाकके मतका आभास लक्षित हुआ। इससे अनुमित होता है कि उनका मत अति प्राचीन है।

तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें एक स्थानमें लिखा है—बृहस्पतिने गायत्री देवीके मस्तक पर आघात किया था। इससे उनका शिर फट गया। किन्तु गायत्री अमरी हैं। इनके प्रत्येक मस्तिष्क विन्दुसे वषट्कारकी उत्पत्ति हुई।

उक्त उपाख्यानके पाठसे बोध होता, किसी समयको बृहस्पतिने वैदिक धर्म विनाशकी चेष्टा की थी।

उपनिषद् तथा दर्शनसमूहमें कर्मकाण्डकी अवज्ञा है। कर्मकाण्डकी बढ़ा बढ़ीके समय ही उपनिषदादि बने थे। मालूम होता कि उसी समयको वेदोक्त कर्मकाण्डके तीव्र प्रतिवाद स्वरूप बृहस्पतिका तर्कसम्भूत वर्तमान चार्वाक मत चलाया गया होगा।

युरोपके आरिष्टटल, एपिकुरस, बेकन, कोमत, मिल प्रभृति जिस प्रकार इहलोक और सुखजीवनके लिये व्यस्त, आपाततः चार्वाक भी सुखप्रचारमें विशेष उद्योगी हैं। चार्वाकके साथ उनका अनेक मतभेद है सही, परन्तु मूल कथा मिलती जुलती है।

भारतके सब दर्शनकार परलोक स्वीकार कर चुके हैं, परन्तु चार्वाक उसे नहीं मानते। इसीसे चार्वाक-दर्शनका अपर नाम लोकायत है। लोकायत देखो।

चार्वाक दर्शनके मतमें—सुख ही इहजीवनका प्रधान लक्ष्य है। जो दुःख होनेके कारण सुखभोग करना नहीं चाहता, पशुवत् मूर्ख है। चीलरके डरसे क्या कोई गुदड़ी छोड़ देगा? क्या भात इसलिये नहीं खायेंगे कि चावलको बीन करके कङ्कर पत्थर निकाल डालना पड़ेगा। क्या पशुगण कर्त्तक नष्ट हो जानेके भयसे धान्य-बीज वपन नहीं किया जावेगा? क्या अन्नपाक इसलिए परित्याग करना पड़ेगा कि भिक्षुक आ करके विरक्त करेगा? क्या चोरके डरसे अपना धन कोई कूएमें डाल देगा?

चार्वाकके मतमें इहकालका सुख ही सुख है, परकालको कोई सुख नहीं होता। जैसे गुड़, तण्डुल प्रभृति मादक न होते भी उनसे सुरा प्रस्तुत होती, चारों अचेतनभूत-पृथिवी, जल, तेज और वायु मिल करके देह रूपमें परिणत होनेसे चैतन्यशक्ति उठती है। मैं स्थूल हूं, मैं कृश हूं, मैं गौर हूं, मैं श्यामवर्ण हूं आदि लौकिक व्यवहारमें भी आत्मा ही स्थूल, कृश इत्यादिरूप समझ पड़ता है। स्थूलत्वादि धर्म सचेतन भौतिक देहमें ही दृष्ट होते हैं। अतएव विलक्षण रूपसे प्रतिपन्न पड़ता कि वही भौतिक देह आत्मा है। सिवा इसके दूसरा कोई आत्मा नहीं है। उक्त चार भूतोंका अभाव आते ही चैतन्य भी नहीं रहता। उस समय इसकी अवस्थिति असम्भव है। यह चैतन्यविशिष्ट देह भस्मीभूत होने पर आत्माका पुनरागमन कब होता है।

(सर्वदर्शनसंग्रहस्थ चार्वाकदर्शन)

सभी शास्त्रोंमें ईश्वरास्तित्व प्रतिपादनके लिये अनु-मान अवलम्बन करते हैं। किन्तु परम नास्तिक चार्वाक-ने एकबारगी ही इसको अग्राह्य किया है। इनके मतमें अनुमान व्याप्तिज्ञान-सापेक्ष है। चक्षु प्रभृति इन्द्रियोंके साथ किसी पदार्थका सन्निकर्ष होने पर ही उसका बाह्य प्रत्यक्ष होता है। इस प्रकारका प्रत्यक्ष वर्तमान कालमें सम्भव होते भी भूत और भविष्यत्के लिये एक कालको ही असम्भव है।

वह्नि धूमका चिरसङ्गी है। केवल इसी समय नहीं, भूत और भविष्यत् कालको भी यह उसके साथ रहता है। जब हमारा जन्म न हुआ होगा, वह्नि धूमका सहचर रहा और हमारा मृत्यु होते भी यह उसका साथ न छोड़ेगा। यह व्याप्तिज्ञान त्रिकालव्यापक है। वैसा ज्ञान मानसप्रत्यक्ष द्वारा ही हो सकता है। किन्तु यह भी प्रामाण्य नहीं। सुख दुःख प्रभृति अनुभवके लिये मन वहिरिन्द्रिय-सापेक्ष हैं। सुतरां वाह्य प्रत्यक्ष द्वारा व्याप्तिज्ञान होनेकी जो आपत्ति उठती, मानस-प्रत्यक्ष द्वारा व्याप्तिज्ञान पर भी पड़ती है। यदि अनुमान द्वारा व्याप्तिज्ञान हो सकनेको कहा जावे, इतरेतराश्रय दोष आवेगा। कारण अनुमान सिद्ध करनेकी व्याप्ति भी अनुमान सापेक्ष होती है।

कणादके मतमें शब्द अनुमानका अन्तर्भूत है। अनु-मान द्वारा ही हम शब्द विवेचना करते हैं। मान लो, किसीने कलस लानेको कहा। जिस व्यक्तिसे कहा गया, वस्तुविशेषको ला करके रख दिया। हमने भी उसी वस्तुको कलसी ठहरा लिया। इसी प्रकार वृद्ध व्यवहार देखनेसे शब्दार्थका अनुमान होता है। सुतरां अनुमानको व्याप्ति ज्ञानका उपाय बतलानेसे जो दोष लगता, शब्दको अनु-मानका कारण कहनेसे भी आ पड़ता है। स्वार्थानुमानमें शब्दप्रयोग नहीं है। फिर कैसे शब्दको व्याप्तिज्ञानका उपाय ठहरावेंगे? धूम जिस प्रकार अग्नि व्यतीत अन्य किसी भी पदार्थका सापेक्ष नहीं होता और इसमें जैसे अन्य निरपेक्षताका ज्ञान लग सकता है, भूत भविष्यत्का दूरदेशवर्ती ज्ञान सकल स्थलमें सम्भव नहीं। सुतरां सर्वत्र उपाधिशून्यताके निर्णयाभावमें व्याप्तिज्ञान क्योंकर आवेगा। (चार्वाकदर्शन)

वेद द्वारा ईश्वर और परलोक संस्थापन करनेमें चार्वाकका मत है—वेद एक काल प्रामाणिक नहीं है। कारण वह प्रत्यक्षविलोपी युक्तिविरुद्ध और धूर्त लोक-सम्भूत है। अनेक प्रधान असाधारण धीशक्तिशाली पण्डित वृथा बहु अर्थव्यय तथा शारीरिक कष्ट स्वीकार करके वैदोक्त कर्मानुष्ठान करते हैं। इससे आपाततः बोध हो सकता कि अवश्य ही परलोक होगा। किन्तु वास्तविक परलोक नहीं है। उन सकल निष्फल कर्मोंमें प्रवृत्त होनेका कारण यह है कि कितने ही धूर्त प्रता-रकोंने वेदकी सृष्टि करके स्वर्ग-नरकादि नानाप्रकार अलौकिक पदार्थ बतला सबको अन्ध बना रखा है। इन्होंने अपने आप उन सब वेदविधिका अनुष्ठान करके लोगोंको प्रवृत्ति लगा दी है। इन्हीं धूर्तोंने राजाओंको नानारूप यज्ञादिमें प्रवृत्त करके उनसे यथेष्ट अर्थ लिया और निज निज परिवार प्रतिपालन किया है। इनका अभीष्ट न जान करके ही बहुतसे लोग कर्मकाण्डके अनुष्ठानमें लगे और बहुकालसे उसी प्रथामें पड़े हैं। बृहस्पतिने बतलाया है—अग्निहोत्र, वेदाध्ययन, दण्ड-ग्रहण और भस्मलेपन समस्त ही निर्बोध और कापुरुषोंकी उपजीविका है। वेदमें कहा है कि पुत्रेष्टियाग करनेसे पुत्रजन्म होता, कारिरीयाग करनेसे पानी बरसता और श्येनयाग करनेसे शत्रु मर मिटता है। यही कारण है कि बहुतसे लोग वह कर्म किया करते हैं। किन्तु उससे कोई भी फल तो नहीं मिलता। वेदमें किसी स्थान कहा है कि सूर्योदयके समय अग्निहोत्र करना चाहिये, फिर दूसरे स्थान पर सवेरे होम करनेको निषेध किया है—क्योंकि उस समय प्रदत्त आहुति राक्षस भोग करते हैं। इसी प्रकार वेदमें अनेक विषयोंका परस्पर विरोध पड़ता और उन्मत्त-प्रलाप जैसा बारम्बार एक कथाका उल्लेख भी मिलता है। इन सकल दोषोंको देख करके किस प्रकारसे वेदको प्रामाण्य माना जा सकता है? अतएव स्वर्ग, अपवर्ग और पारलौकिक आत्मा सभी मिथ्या कथा है। ब्राह्मण क्षत्रियादिके चार आश्रमोंका कर्तव्यकर्म सकल ही वृथा है। धूर्त लोग कहा करते कि यज्ञमें वध किया जानेवाला पशु स्वर्ग जाता है। यदि उनका ऐसा विश्वास है, यज्ञमें अपने अपने वृद्ध पिता

माताको क्यों नहीं मारते ? ऐसा करने पर पितामाताको स्वर्ग होता और उनके उद्देश तथा श्राद्ध करके इन्हें कष्ट न झेलना पड़ता। यदि श्राद्ध करनेसे मृतव्यक्ति परितोष पाता, तो किसीको विदेश जाने पर पाथेय देनेका प्रयोजन न आता, गृहमें इसके उद्देश किसी ब्राह्मणको भोजन करानेसे ही काम चल सकता था। यदि सचमुच श्राद्ध करनेसे मृतव्यक्तिकी तृप्ति हो जाती, चबूतरे पर श्राद्ध करनेसे गृहके उपरिस्थ व्यक्तिको क्यों क्षुधा लग जाती है। मृतव्यक्तिके उद्देश जो प्रेतकृत्य होता, ब्राह्मणोंका जोविकामात्र है—उसमें कोई फल नहीं। यह देह भस्मीभूत होने पर फिर लौट कर कहां आता जाता है। यदि देहसे परलोक जाने पर आत्माको देहान्तरमें प्रवेशकी क्षमता रहती, तो बन्धुबान्धवके स्नेहसे पूर्वदेहमें फिर उसको गति क्यों नहीं लगती ? जितने दिन जीवो, सुखसे कालको अतिवाहित करो। ऋण करके भी घृत खाना चाहिये। भण्ड, धूर्त और निशाचर तीनों वेदके कर्ता हैं। जर्फरी तुर्फरी आदि पण्डितोंका नाम सभी जानते हैं। भण्डोंने लिखा है कि अश्वमेधयज्ञमें राजपत्नीको अश्वशिश्न धारण करना चाहिये। इसी प्रकार उन्होंने क्या न क्या धारण करनेकी कितनी ही कथा कही है। वैसे ही निशाचरोंने (यज्ञमें) मांस भक्षणको व्यवस्था भी की है। (चार्वाकदर्शन)

चार्वाकदर्शनसे हम निम्नलिखित कई एक विषय समझ सकते हैं—१ यह लोक दुःखमय नहीं है, सुखमें रहना चाहिये। २ शास्त्रको अपेक्षा युक्ति प्रबल होती है। ३ प्रत्यक्ष प्रमाण ही प्रमाण-जैसा ग्राह्य है।

चार्वाकवधपर्वन् (सं० क्ली०) महाभारतके अन्तर्गत अवान्तर पर्वविशेष। कुरुवंश ध्वंस होनेके बाद दुर्योधनका सखा चार्वाक नामक राक्षस ब्राह्मणके वेशमें युधिष्ठिरको राजसभामें गया और ज्ञातिविभाश करके राज्यलाभके लिए, उनका तिरस्कार किया। महाराज युधिष्ठिर उसके तिरस्कारसे दुःखित हुए। सभास्थित ब्राह्मणोंने छद्मवेशधारी राक्षसको पहचान लिया और आक्रमण पूर्वक उसे मार डाला। चार्वाकवधपर्व स्त्रीपर्वके अन्तर्गत होनेके कारण आदिपर्वकी उपक्रमणिकामें लिखा है, किन्तु छपी हुई पुस्तकमें उक्त पर्व शान्तिपर्वके भीतर है।

चार्वाघाट (सं० पु०) चारु आहन्ति चारु-आ-हन-अच् अन्तस्य चाटः। दारावाहनोऽणन्त्यस्य च टः संज्ञायां चारौ वा। वार्त्तिक। पा ३।२।४९। खड्गविशेष, एक तरहकी तलवार।

चार्वाटि (सं० पु०) अन्तोदात्तस्वरप्रक्रियाके सूत्रोक्त शब्दगण।

क्त्वो वेणुधार्वादियवः। पा ६।२।१६०।

चार्वी (सं० स्त्री०) चारु स्त्रियां ङीप्। १ सुन्दरी स्त्री, खूबसूरत औरत। २ ज्योत्स्ना, चाँदनी, चन्द्रमाका प्रकाश। ३ बुद्धि। ४ कुवेरकी स्त्री। ५ दीप्ति, आभा, चमक, दमक। ६ दारुहलदी।

चाल (सं० पु०) चल-ण अथवा णिच्-अच्। घरका छप्पर या छत, छाजन। २ स्वर्णचूड़पक्षी, एक तरहकी चिड़िया। भावे घञ्। ३ चलन, चलनेकी क्रिया, गमन, गति।

चाल (हिं० स्त्री०) १ गमन प्रकार, चलनेका ढंग। २ आचरण, चलन, बर्ताव, व्यवहार। ३ आकृति, बनावट, ढब, आकार प्रकार। ४ चलन, प्रथा, रीति, रवाज, रस्म, परिपाटी। ५ धूर्तता, चालाकी, छल, कपट। ६ आन्दोलन धम, हलचल। ७ आहट, शब्द, खटका। ८ गमन-मुहूर्त्त, चाला। ९ तदबीर।

चालक (सं० त्रि०) चल्-णवुल्। १ संचालक, चलानेवाला। २ दुर्दम हस्ती, अंकुश नहीं माननेवाला हाथी, नटखट हाथी ३ नृत्यमें भाव बताने वा सुन्दरता लानेके लिए हाथ हिलानेकी क्रिया।

चालक (हिं० पु०) चाल चलनेवाला, धुर्त्त, छली।

चालकुण्ड—उड़ीसामें चिलका नामकी एक झील।

चालचलन (हिं० पु०) चरित्र, शील, आचरण, व्यवहार।

चालढाल (हिं० स्त्री०) १ आचरण, व्यवहार। २ ढंग, तौर तरीका।

चालन (सं० क्ली०) चल-णिच् करणे ल्युट्। १ चालनी, चलनी, छलनी। भावे ल्युट्। २ वायुका क्रियाविशेष। (भागवत ३।२६।३६) ३ चलन, परिचालन, चलानेकी क्रिया।

चालन (हिं० पु०) भूसी चोकर, चलनौस।

चालनहार (हिं० पु०) चलानेवाला, ले जानेवाला।

चालना (हिं० क्रि०) १ परिचालित करना, चलाना। २ हिलाना, डोलाना। ३ प्रसंग छेड़ना, बात उठाना। ४ आटा या कोई चीज छानना।

चालनी (सं० स्त्री०) चालन स्त्रियाँ ङीप्। चलनी, छलनी।

चालबाज (फा० वि०) धूर्त्त, छली।

चालबाजी (हिं० स्त्री०) धूर्त्तता, चालाकी, छल, धोखेबाजी।

चालमुगरा—चालमोगरा देखो।

चालमोगरा—एक प्रकारका वृक्ष (Genocardia Odorata)। इसे चालमुगरा, कालमुगरा और चावल-मुंगरी भी कहते हैं। इसको फारसीमें व्रंजमोग्रा, बंगलामें—चाउल मुग्रो, नेपालमें कदूलेपचातुकुंग्, बम्बईमें मगेरा ठंपङ्, शृङ्गापुरमें तालिनोई और चीनमें तफांचि कहते हैं।

चालमोगरा मध्यआयतन और चिरहरितवृक्ष है। यह सिकिम, खसिया पहाड़, चटगांव, रंगून और तेनसेरिम प्रदेशमें होता है। इस पेड़के काण्डमें तथा बड़ी बड़ी शाखाओंमें दृढ़ और वर्त्तुलाकार एक प्रकारका फल लगता है। इस फलको पीसनेसे एक प्रकारका तेल निकलता है, जो दूनियामें मशहूर है। चालमोगरेका तेल हमारे लिए विशेष लाभदायक है। इसके पेड़का भी काफी आदर है।

चालमोगराका फल देखनेमें बादाम जैसा होता है और आश्विन मासके भीतर पक जाता है। इसका बीज इतना कोमल होता है, कि हाथसे दबाने मात्रसे ही उससे तेल निकल आता है। इस फलको सुगन्ध तथा स्वाद भी बुरा नहीं है। यह सौभाग्यका विषय है, कि पशु-पक्षी आदि इसे नष्ट नहीं करते। आंधी या जोरसे हवा चलने पर फल अपने आप पेड़से गिर पड़ते हैं, तथा कभी कभी पेड़से तोड़ने भी पड़ते हैं।

चालमोगरा फल चट्टग्राम प्रदेशसे कलकत्ते में बिकने आता है। ये फल पके और कच्चे, इस तरह दो प्रकार के होते हैं। पके फलोंके शस्य पिङ्गलवर्ण और तेलसे परिपूर्ण होते हैं। किन्तु कच्चे फलोंको मिगी काली होती है और उससे तेल भी ज्यादा नहीं निकलता, थोड़ा बहुत मिलता भी है तो वह मैला होता है।

फलोंसे तेल निकालनेके लिये फोड़ कर उनकी मिगी निकाली जाती है और छिलके फेंक दिये जाते हैं। पीछे मिगीको धूपमें सुखा कर ओखलीमें कूटते हैं। अधकुचली हो जाने पर मिगीको नरम कैंबिसमें रख कर "कैष्टर ओयेल" की प्रस्तुत प्रणालीके अनुसार मशीनकी सहायतासे उसका तेल निकाला जाता है। किन्तु इससे साफ तेल नहीं निकलता। कारण, अग्निके उत्तापसे तप्त बिना हुए यह तेल साफ नहीं होता।

चालमोगराका तेल साधारणतः दो प्रकारका होता है—एक साफ, उजला और दीप्तिमान तथा देखनेमें 'सेरी' शराब की भांतिका और दूसरा अति सूक्ष्म शस्यकणाविशिष्ट, अतः अनुज्ज्वल।

जैमस महोदयने रासायनिक विश्लेषण द्वारा स्थिर किया है, कि इसका ८० भाग अम्लमिश्रित (सैकड़ा पीछे ११'७ अंश Gynocardic acid, ६३ अंश Palmitic acid, ४ अंश Hypogoeic acid और २'३ अंश Cocinic) है। ये सब अम्ल Glyceryl के साथ रासायनिक संयोगसे संश्लिष्ट हैं। किन्तु किसी अम्लका कुछ कुछ अंश असंश्लिष्ट अवस्थामें भी रहता है यह तेल ४२ डिग्री गरमीमें गलता है।

चालमोगराका तेल चर्मरोगके लिए विशेष लाभदायक है और तो क्या, इस तेलका अच्छी तरह व्यवहार करनेसे कोढ़ भी चला जाता है। इसका वाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकारका प्रयोग ही फलदायक है। इस देशमें चालमोगराके बीज और उसके तेलका बहुत प्रचार दीख पड़ता है, बहुतसे लोग इसे घीके साथ मिला कर खाते हैं। इसका आभ्यन्तरिक प्रयोग बलकारक और वाह्यप्रयोग उत्तेजक होता है। खुजलीसे लगा कर कोढ़ तक सब तरहके चर्मरोगोंमें यह व्यवहृत होता है और उससे आराम पहुंता है।

१८५६ ई०में भारतप्रवासी श्वेतपुरुषोंको मालूम हुआ कि चालमोगरा उपदंश रोगमें भी महौषधका काम करता है। इसके कुछ दिनों बाद डा० आर० जोन्सने प्रकट किया कि यह क्षय काश और गण्डमाला रोगमें भी विशेष लाभदायक है। पीछे १८६८ ई०में यह महोपकारी औषधका उपकरण समझा गया और इसीलिए भारतीय सरकारकी औषध-सूचीमें इसका नाम दर्ज हो गया।

उस समय लिखा गया कि यह कुष्ठव्याधि, गलगण्ड, अन्यान्य चर्मरोग तथा वात आदि रोगोंमें व्यवहार्य है। उस समय उसके प्रयोग-परिमाणका भी निर्णय हो गया था। छह ग्रेण बीजचूर्णसे वटिका बना कर दिनमें तीन बार अथवा दिन भरमें ५-६ बूंद तैल व्यवहार करना चाहिये। वर्त्तमान समयमें समग्र यूरोप-खण्डमें यह परित्यक्त हो गया है और इसका यशः गौरव दिन दिन बढ़ रहा है। आजकल इससे Gynocardia acid, Gynocardata of magnesia आदि नाना प्रकारको मलहम बनने लगी हैं।

यह तैल अत्यन्त उपकारी होने पर भी सब रुग्न व्यक्तियोंके लिए व्यवहार्य नहीं है। रुग्न और अल्प-जीर्ण लोगोंके लिए यह वैसा नहीं है. उक्त प्रकारके लोगोंको इसके व्यवहार करनेसे क्षुधामान्द्य आदि रोग उत्पन्न होते हैं। ४से ३०।४० ग्रेन तक इसकी मात्रा बढ़ाई जा सकती है। Vaseline मिला कर इसको बढ़िया मलहम बनाई जाती है।

चालमोगराका तैल, बीजचूर्ण और इसको मलहम व्यवहार करके बहुतसे कुष्ठरोगियोंने आरोग्यता लाभ की है, इसके काफी प्रमाण हैं। रोगकी प्रथमावस्थामें व्यवहार करनेसे रोग प्रबल नहीं होता और दिन दिन आराम होता रहता है।

कलकत्तेमें चालमोगरेके बीज १०)—१२) रु० मनके हिसाबसे बिकते हैं। किन्तु आमदनी कम होनेसे २०)—२२) रु० मनका भाव हो जाता है। वर्षाके अन्तमें इसकी आमदनी होती है। इसका तेल १००)—१२५) मनके हिसाबसे मिलता है। कलकत्तेसे बम्बई और मन्द्राजको इसकी रफ्तनी होती है, इसलिए वहां इसकी कीमत और भी ज्यादा है।

चाला (हिं० पु०) १ प्रस्थान, कूच, रवानगी। २ यात्राका मुहूर्त्त, प्रस्थानका शुभदिन, रवानगीकी सायत।

चालाक (फा० वि०) १ चतुर, दक्ष, होशियार। २ धूर्त्त, चालबाज।

चालाकी (फा० स्त्री०) १ दक्षता, पटुता, चतुराई। २ धूर्त्तता, चालबाजी। ३ युक्ति, कौशल।

चालान (हिं० पु०) १ वह फिहरिस्त जो मालके साथ भजी जाती है, बीजक, इनवायस। २ अपराधियोंका सिपाहियोंके साथ थाना या अदालत जाना। ३ वह आज्ञा पत्र जो भेजे हुए मालके साथ दिया जाता है। ४ भेजा हुआ माल वा रुपया अथवा उसका ब्योरेवार हिसाब।

चालानदार (हिं० पु०) १ वह पुरुष जो भेजे हुए मालके साथ जाता है, जमादार, पल्लेदार। २ वह मनुष्य जिसके पास बीजकका कागज हो।

चालानबही (हिं० स्त्री०) मालकी आमदनी तथा रफ्तनीका ब्योरा लिखे जानेकी बही।

चालायूनी—विहार प्रांतके भागलपुर जिलेकी एक नदी। यह इरावत परगनेसे निकल करके परगना नारदिगरके अन्तर्गत थाल्लागढ़ी नामक ग्रामसे बहती हुई अवशेषको गेंड़ी नदीमें जा गिरी है। चालायूनीके तट पर अनेक स्थानोंमें चावल उपजता है।

चालिया (हिं० वि०) धूर्त्त, छली, धोखेबाज, चाल-बाज।

चालिया—मलवर उपकूलका एक पुराना बन्दर। इसका दूसरा नाम चाल्यम् है। चालिया बेपुर नदीके दक्षिण ओर अवस्थित है। इसी स्थान पर मन्द्राज रेलवे शेष हो गया है।

चाली (हिं० वि०) १ धूर्त, चालिया, चालबाज। २ चञ्चल नटखट।

चालोकर—महाराष्ट्र आधिपत्यकालकी धारवाड़की माल-गुजारी अदा करनेवाला प्रकारका कर्मचारी। यह अपेक्षाकृत अल्प करमें जमीन लेते और उसके बदले प्रजासे लगान वसूल कर देते थे। किसी असामीके माल-गुजारी दे न सकने पर चालोकरको वह पूरी करनी पड़ती। उसको छोड़ करके इनका अन्यान्य दायित्व भी था। साधारणत: निर्द्धारित व्यतीत और भी नाना रूप कर चालाकरोंसे लिया जाता था। इनमें खास ताकत थी। यह जमीनका बन्दोवस्त करते थे। इसलिये कि पैदावारी न होने या बिगड़ जानेसे उन्होंको मालगुजारी देनी पड़ती, वह असम प्रजाका बीज, हल, वृष और शस्य प्रभृतिसे साहाय्य करते थे। कहीं कहीं चालोकर निष्कर भूमि भी भोग करते थे। कृष्णा नदीके दोनों पार्श्वकी इनको क्षमता भिन्न प्रकार रही। उस समय यह पद बड़े ही

आदरका था। चालोकर गांवमें सर्वोत्कृष्ट भूमि अधिकार करते, सर्वापेक्षा सुन्दर गृहमें रहते, पतित भूमि प्राप्त कर सकते और गैर सरकारी भूमि अल्पकरमें वा निष्कर दखल करते थे। इन्हींके हाथमें प्रजाका हिताहित मानसम्भ्रम सम्पूर्ण निर्भर करता था। उसीसे किसी चालोकरकी ममता और भूमि अपने कर्त्तव्यको अवहेला करनेसे सरकारमें जब्त हो जाती थी।

चालीस (हिं॰ वि॰) १ चत्वारिंशत्, तीससे दश अधिक। (पु॰) २ जो संख्या बीस और बीसके बराबर हो।

चालीसगांव—बम्बई प्रान्तके पूर्व खानदेश जिलेका एक ताल्लुक। यह अक्षा॰ २०° १६′ तथा २०° ४१′ उ॰ और देशा॰ ७४° ४६′ एवं ७५° १०′ पू॰में अवस्थित है। इसका भूमिपरिमाण ५०१ वर्गमील है। आबादी कोई ८०८३७ होगी। यह सात मील पर्वतके नीचे पड़ता है। गिरना नदी पश्चिमसे पूर्वको बहती है। इसको और जामदा नहरको छोड़ करके २७०० कूओंसे भी खेत सींचे जाते हैं।

चालीसगांव—बम्बई प्रान्तीय पूर्व खानदेश जिलेके चालीस गांव ताल्लुकका सदर। यह अक्षा॰ २०° २७′ उ॰ और देशा॰ ७५° १′ पू॰में ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे पर अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः १०२४३ है। रेलवे खुल जानेसे यहां व्यापारकी अच्छी वृद्धि हुई है। १९०० ई॰को चालीसगांवसे धुलिया तक एक शाखा रेलवे खुला था। यहां सरकारी अस्पताल और बालक बालिका-विद्यालय प्रतिष्ठित हैं।

चालीसवां (हिं॰ वि॰) १ जिसका स्थान उनतालीसवेंके आगे हो। (पु॰) २ चालीस दिनोंमें होनेवाला मृतक कर्मका कृत्य, चहलुम। यह प्रथा सिर्फ मुसलमानोंमें चलती है।

चालीसा (हिं॰ पु॰) १ चालीस चीजोंका ढेर या जमाव २ चालीस दिनका समय, चिल्ला। ३ चालीस वर्षका समय। ४ वह ग्रन्थ या काव्य जिसमें सिर्फ चालीस पद्य हों।

चालुक्य—दक्षिणापथका एक प्रबल पराक्रान्त प्राचीन राजवंश। दाक्षिणात्यके सैकड़ों ताम्रलेख और शिलालेखोंमें इस राजवंशके राजाओंके समय और कीर्त्तिकलाप खुदे हुए हैं।

प्राचीनतम शिलालेखमें यह वंश चल्क्य, चलिक्य और चलुक्य इत्यादि नामसे कहा गया है।

विह्लणके विक्रमाङ्कचरितमें लिखा है—किसी समय ब्रह्मा सन्ध्या कर रहे थे। इन्द्रने उनके पास जा कर कहा "पृथिवीमें घोर दुर्दैव उपस्थित हुआ है! आप एक वीर पुरुषकी सृष्टि कर अत्याचारसे पृथिवीको रक्षा करें।" यह सुन कर प्रजापतिने अपने "चुलुक" अर्थात् जल-पात्रकी तरफ ताका। ताकनेके साथ ही चुलुकसे एक सुन्दर वीरपुरुष त्रिभुवन रक्षार्थ निकल पड़े। उन चुलुक पुरुषसे ही महावीर चालुक्यगणका जन्म। हारीत ही इनके आदिपुरुष थे। इस वंशमें शत्रुदमनकारी मानव्य उत्पन्न हुए। इनका आदिवास अयोध्यामें था, इनमेंसे किसी किसीने दिग्विजय करनेके लिए दक्षिण देश आक्रमण किया। (विक्रमाङ्कचरित १म सर्ग)

विह्लणके उक्त वर्णनके अनुसार मालूम होता है कि, चुलुकसे चालुक्य नाम हुआ है। किन्तु प्राचीनतम शिलालिपिमें वर्णित चल्क्य, चलिक्य इत्यादिके पढ़नेसे विह्लणका विवरण कल्पित जान पड़ता है। प्राचीनतम किसी भी चालुक्य शिलालेखमें ब्रह्माके चुलुकसे चालुक्यकी उत्पत्तिकी कथा नहीं लिखी है। किसी किसी चालुक्य-अनुशासन-पत्रमें चालुक्यवंशके पूर्वपुरुषोंकी वर्णनामें कल्पित पुराणाख्यान देखे जाते हैं। प्राच्यचालुक्योंके बहुत से ताम्रलेखोंमें लिखा है कि, चालुक्य-राजगण चन्द्रवंशीय हैं और उनको ६० पीढ़ियोंने अयोध्यामें राज्य किया है। उक्त राजाओंके अंतिम राजाका नाम विजयादित्य है। ये दिग्विजयके लिए दाक्षिणात्यको गये थे, पर दुर्दैवक्रमसे त्रिलोचन-पल्लवके हाथ मारे गये। उनको रानी उस समय गर्भवती थीं, उनने कुलपुरोहित विष्णुभट्ट सोमयाजी और सखियोंके साथ मुडिवेमु नामके अग्रहारमें आ कर आश्रय लिया। यहां समय पूर्ण होने पर उनके एक पुत्र पैदा हुआ। पुत्रने बड़े होने पर माके मुंहसे अपने पुरखाओंका इतिहास सुना। तब उनने चलुक्य नामके पर्वत पर नन्दागौरी, कुमारनारायण और मातृकाओंको परितुष्ट कर राजछत्र धारण किया। इनका नाम था—विष्णुवर्द्धन। ये गङ्ग और कादम्ब राजाओंको पराजित कर श्वेतकल, गङ्ग, पल्लमशाशब्द, पालिगीसन,

प्रतिष्ठक्का, वराहलाञ्छन, मयरासन, मकरतोरण और गङ्गायमुनादि चिह्नोंसे विभूषित हो कर प्रभुत्व भावसे दाक्षिणात्यका शासन करने लगे।*

प्रत्नतत्त्वविद् फ्लिट साहब उक्त प्रवादको कल्पित कह कर उड़ा देना चाहते हैं। उनके मतसे पुलिकेशो वल्लभसे ही चालुक्यवंशने दाक्षिणात्यमें आधिपत्य विस्तार किया है। उससे पहिले चालुक्य राजगण उत्तराञ्चलमें राज्य करते थे, तथा संभवतः गुप्तराजाओंके अधोन थे।

सर वालटर इलियट साहब इस प्रकार लिखते हैं—

"चालुक्यराजाओंके दाक्षिणात्यमें आनेसे पहिले वहाँ पल्लव राजाओंका आधिपत्य था। त्रिलोचनपल्लवके राज्य-कालमें जयसिंह उर्फ विजयादित्यने नर्मदा अतिक्रम कर युद्धक्षेत्रमें प्राण छोड़े थे। उनकी महिषीने विष्णु-सोमयाजोके घर आश्रय लिया और वहाँ उनके राजसिंह नामका एक पुत्र पैदा हुआ, जिसका दूसरा नाम रणराग वा विष्णुवर्द्धन था। इनने भो पितृपदवीका अनुसरण कर पल्लवोंके साथ युद्ध किया, उनको सम्पूर्ण रूपसे परास्त किया और पल्लवराजकुमारीके साथ पाणिग्रहण कर राज्य स्थापन किया। इनके उत्तराधिकारी पुत्रका नाम पुलिकेशो (प्रथम) था।" (१)

प्रथम पुलिकेशोके राजत्वकालके शिलालेखोंसे ज्ञात होता है कि, पहिले चालुक्यराजाओंकी राजधानी इन्दु-कान्ति नगरीमें थी, बादमें पुलकेशो (प्रथम) ने वातापो (वर्त्तमानमें बादामी) नगर जय कर यहीं राजधानी स्थापित की थी। बादामी देखो। संभवतः यह स्थान पल्लव-राजाओंके अधिकारमें था, पुलिकेशोने पल्लव राजको भगा कर बादामो अधिकार किया था। वीरवर पुलि-केशोवल्लभने शक सं० ४११ में (४८८ ई०में) सिंहासन पर अधिरोहण किया था। (२)

येवूरके सोमेश्वर—मन्दिरमें खुदे हुए शिलालेखमें लिखा है कि—उनने दो हजार ग्राम दान दिये थे और अश्वमेधयज्ञ कराया था। (३)

पुलिकेशोके पुत्र कीर्त्तिवर्माने नल, मौर्य और प्रसिद्ध कादम्ब राजाओंको पराजित किया था। कीर्त्तिवर्माके बाद उनके छोटे भाई मङ्गलोश शक ४८८में अभिषिक्त हुए थे। बादामीके गुहामन्दिरमें, वराहमूर्त्तिके पार्श्वमें खोदित शिलालेखमें लिखा है कि—इनने बाजपेय, अग्निष्टोम, अश्वमेध आदि यज्ञ किये थे, तथा इनके राजत्वके बारहवें वर्षमें शक-सं० ५०० में कार्त्तिकी पूर्णिमामें विष्णुमूर्त्ति प्रतिष्ठित हुई। (४) इसके सिवा इनने रेवातट, मातङ्ग, कलचुरो, कोङ्कणका कुछ अंश जय किया था, तथा शङ्करगणके पुत्र बुद्धको पराजित किया था।

कीर्त्तिवर्माके पुत्र अप्राप्तवयस्क होनेके कारण मङ्गलो-शने राजपद पाया था। इनने रेवती द्वीप पर आक्रमण और कलचूरियोंको पराजित किया था। जब कीर्त्ति-वर्माका ज्येष्ठ पुत्र सत्याश्रय बड़े हुए, तब मङ्गलोशने राज्य उनको सौंप दिया। (५)

सत्याश्रयका दूसरा नाम पुलिकेशो (२य) था। इन-के बराबर प्रतापी राजा चालुक्यवंशमें दूसरा नहीं हुआ। इनने शक ५३१ में राज्यारोहण किया था। ऐहोलके मेगुटो-मन्दिरमें खुदे हुए (५३४ शकके) शिलालेखमें लिखा है कि—महाराजाधिराज सत्याश्रयने कोशल, मालव, गुजरात, महाराष्ट्र, लाट, कोङ्कण, काञ्चो आदिको अपने राज्यमें मिलाया था और मौर्य, पल्लव, चोल, केरल आदिके राजाओंको पराजित किया था, जिन राजाधि-राज हर्षके पादपद्मोंके सैकड़ों राजा नमते थे। वे महा प्रतापी हर्षराज भो सत्याश्रयसे परास्त हुए थे। सत्या-श्रय पण्डितमण्डलीको भो खूब आदरकी दृष्टिसे देखते थे। कालिदास और भारवीके समान कीर्त्तिमान् दिग-म्बर जैन पण्डित रविकीर्त्ति इनके विशेष अनुग्रहके पात्र थे। (६) इसके सिवा आपने राष्ट्रकूटराज गोविन्द-को पराजित किया था और इससे बड़ा यश पाया था। चीनपरिव्राजक युएनचुयङ्गने इनकी राज्यसमृद्धिका और वहांकी रीतिनीतिका वर्णन किया है। किसीके मतसे

* Indian Antiquary, Vol. XIV. p. 51.

(१) Madras Journal, 1858, Journal Royal Asiatic Society, (N. S) Vol. I. p. 251.

(२) Indian Antiquary, Vol VII. p. 209.

(३) Indian Antiquary, Vol. VIII. p. 13.

(४) Indian Antiquary, Vol. VI. p. 364.

(५) Indian Antiquary, Vol. VII. p. 13-14.

(६) Indian Antiquary, Vol. V. p 70-71

फारसके बादशाह खुसरो (दूसरे)-के साथ इनका व्यवहार था। तरह तरहके भेंट लेकर दूत आते जाते थे। (७) शक ५५६ तक इनको आधिपत्यके प्रमाण मिलते हैं।

सत्याश्रयको मृत्युके बाद काञ्चीके पल्लवराज चोलने पाण्ड्य और केरलराजके साथ मिल कर चालुक्यराज्य पर आक्रमण किया था। इस समय सत्याश्रयके पुत्र सम्भवतः चन्द्रादित्य वा आदित्यवर्माने कोङ्कणके सिवा और सब राज्य खो बैठे थे। छोटे भाई विक्रमादित्यने अपनी वीरतासे पल्लवराजाओंको परास्त कर पितृराज्यका कुछ उद्धार किया था। किन्तु कुछ समय पीछे पल्लवोंके हाथ चालुक्यराज निगृहीत किये गये थे। इसके कुछ दिन बाद ही विक्रमादित्यने यथेष्ट सेना संग्रह कर पल्लवोंकी राजधानी काञ्चीपुर पर आक्रमण कर बदला लिया। देवशक्ति आदि प्रतापी सेन्द्रकराजगण उनके महासामन्त थे। येवूरके शिलालेखके अनुसार २य पुलिकेशी या सत्याश्रयके पुत्रका नाम नडमरी था, शायद इन्हींका दूसरा नाम चन्द्रादित्य होगा। इस शिलालेखके अनुसार नडमरीके पुत्रका नाम आदित्यवर्मा था। प्रत्नतत्त्वविद् फ्लिट् साहब नडमरी और आदित्यवर्मा इन दोनों नामोंको कल्पित कह कर उड़ा देना चाहते हैं, उनके मतसे पूर्वतन शिलालेखोंमें ये ही दो नाम देखनेमें नहीं आते। विक्रमादित्यके समयका खोदित शिलालेखके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, ये ही पुलिकेशी सत्याश्रयके बाद सिंहासन पर बैठे थे। क्योंकि ऐसा होनेसे विक्रमादित्यके समयमें खोदित शिलालेखमें तत्पूर्ववर्त्ती अन्य किसी चालुक्यराजका नाम रहता। परन्तु महात्मा फ्लिटका यह मत हमको समीचीन नहीं जंचा। विजयमहादेवीके ताम्रपत्रमें लिखा है पुलकेशी सत्याश्रयके पुत्र, विजयमहादेवीके स्वामी चन्द्रादित्य महाराजाधिराजकी उपाधिसे भूषित हुए थे। (८) इस ताम्रलेखमें विक्रमादित्यका भी नाम है। इससे ऐसा मालूम होता है कि, चन्द्रादित्य थोड़े दिन राज्य करनेके बाद मर गये और उनके छोटे भाई आदित्यवर्माने कम उम्रमें ही राज्य पाया। उस समय महिषी विजयमहादेवी उनकी अभिभाविका हो कर राजकार्य सम्हालती रही होंगी। कुछ दिन बाद आदित्यवर्माकी मृत्यु हो जानेसे विक्रमादित्य सिंहासन पर बैठाये गये। इनके बड़े भाई चन्द्रादित्य पल्लवोंके हाथ उत्पन्न और राज्यच्युत हुए थे, शायद इसी लिये विक्रमादित्यके शिलालेखोंमें उनका नाम नहीं है।

राजा विक्रमादित्यके समयका शकचिह्नित कोई भी लेख आज तक नहीं मिला। दो एक जो मिले भी हैं, वे कृत्रिम हैं। (९) हां, इनके पुत्र विनयादित्यके समयशकचिह्नित शिलालेखसे मालूम होता है कि, वे शक ६०१ में राज्याभिषिक्त हुए थे। (१०)

येवूरके शिलालेखके अनुसार—विक्रमादित्यके पुत्रका नाम था युद्धमल्ल। इनका नामान्तर विनयादित्य भी था। इनके शक ६११ के ताम्रलेखमें लिखा है कि पल्लवपतिसे चालुक्यवंश निगृहीत और विलुप्तप्राय होने पर, उन पल्लवपतिको विनयादित्यने पिताके आदेशसे कैद किया था। इन विनयादित्यके अन्यान्य ताम्रशासनोंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, उनने किसी समय प्रबल पराक्रमसे समस्त दाक्षिणात्य पर आधिपत्य कर लिया था।

खेड़ासे प्राप्त सं० ३९४का विजयराजका ताम्रलेख, नौसारीसे प्राप्त ४२१ का और सूरतसे प्राप्त ४४३ संवत्का शिलादित्य श्याश्रयका ताम्रलेख, बलसारसे संगृहीत शक ६५३ का मङ्गलराजका ताम्रलेख तथा नौसारीका ४९० संवत्का पुलिकेशी-वल्लभ जनाश्रयका ताम्रलेख, इन सबके पढ़नेसे मालूम होता है कि—हर्षविजेता पुलिकेशी-सत्याश्रयके समयसे इस चालुक्यवंशके कई-एक राजा गुजरात प्रान्तमें राज्य करते थे। उन लोगोंके साथ प्रसिद्ध पुलिकेशी सत्याश्रय आदिका भी विशेष सम्बन्ध था।

नासिक जिलेके निर्पन् ग्रामसे प्राप्त नागवर्द्धनको ताम्रलेख और विजयराजके ताम्रलेखको मिलानेसे इस प्रकार वंशावली बनती है—(११)

(७) Journal Royal Asiatic Society Vol. XI, p. 165.
(८) Ind. Ant. Vol. VII, p. 45.

(९) Ind. Ant. Vol. VII. p. 218.
(१०) Ind. Ant. Vol. VII. p. 186.
(११) Bombay Branch Royal Asiatic Society, Vol I. p. 4, and Ind. Ant. Vol. VII. p. 252.

पूर्वोक्त नौसारी और बलसारके ताम्रशासनोंको मिलानेसे इस प्रकारकी वंशावली निकलती है—(१२)

पुलकेशिवल्लभ (२य)

विक्रमादित्य (१म) — जयसिंह धराश्रय

शिलादित्य श्राश्रय (सं० ४२१-४४३) — मङ्गलराज (शक ६५३) — जनाश्रय (सं० ४९०)
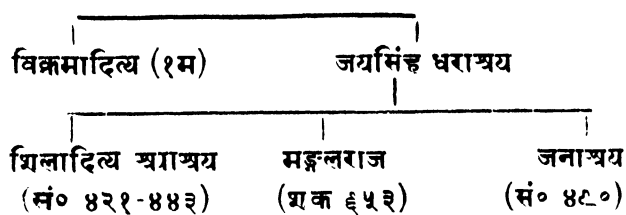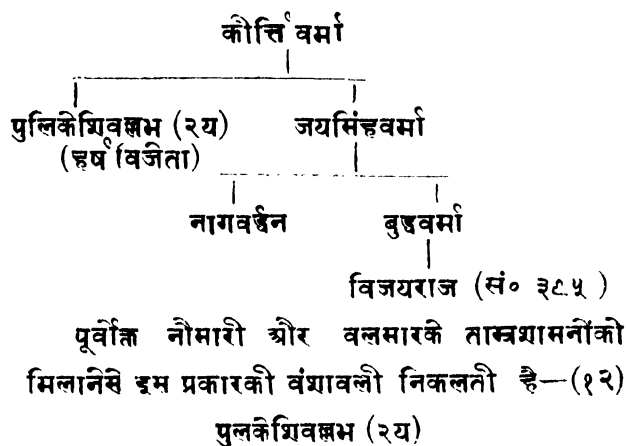
पहिलेकी वंशावलीके देखनेसे मालूम होता है कि, २य पुलिकेशिवल्लभके समय जयसिंहने बड़े भाईकी सहायतासे ही अथवा और किसी प्रकारसे गुजरात राज्यके कुछ अंश पर आधिपत्य जमाया था, इसके पौत्र विजयराज तकने उक्त स्थानमें राज्य किया था। इसके बाद या तो इस वंशका लोप हुआ होगा या ये लोग गुजरात वा बादामीके राजाओं द्वारा विताड़ित हो कर राज्यच्युत हुए होंगे।

ऐसा मालूम पड़ता है कि, इसी समय काञ्चीपुरके पल्लवराजने चोल, केरल और पाण्ड्यराजके साथ मिल कर बादामीपुरीके चालुक्यराजवंशको नाश करनेके लिये अस्त्रधारण किया होगा।

युवराज शिलादित्य श्राश्रयके अनुशासन-पत्रमें लिखा है—२ य पुलिकेशिके विक्रमादित्यने ही उनके (शिलादित्यश्राश्रयके) पिता जयसिंह धराश्रय पर अनुग्रह किया था। इसीसे समझ सकते हैं कि, महाराज विक्रमादित्य सत्याश्रयने पितृराज्यको उद्धार कर अपने छोटे भाई जयसिंहधराश्रयको गुजरातका दक्षिणांश अर्पण किया था। पिताके सामने ही शायद शिलादित्य-की मृत्यु हो गई थी, इसीलिए वे राजपद ग्रहण न कर सके थे. उनके पीछे छोटे भाई विनयादित्य मङ्गलराज राजा हुए थे। इनके शक-सं० ६५३ के ताम्रपत्र देखनेमें आते हैं। इसके बाद पुलकेशिवल्लभ-जनाश्रय भाईके सिंहासन पर बैठे थे, इनके ४९० (चेदि) संवत्के ताम्रशासन मिलते है। इसके बाद कौन राजा हुए थे, यह आज तक किसी शिलालेख या ताम्रपत्रसे नहीं ज्ञात हुआ। जिस समय उक्त पिता और पुत्रगण राज्य करते थे, उस समय विक्रमादित्यके पुत्र विनयादित्य युद्धमल्लको वातापीसिंहासन पर पाया जाता है।

नाना स्थानोंसे उक्त विनयादित्यके ताम्रशासनादि मिले हैं, उनको देखनेसे मालूम पड़ता है कि—ये शक ६०२में राजा हुए थे। इनने पिताके आदेशसे त्रैराज्यको पल्लवसेनाओंको परास्त कर पल्लवराजधानी काञ्ची तक अधिकार कर लिया था। कलभ्र, केरल, हैहय, बील, मालव, चोल और पाण्ड्यके राजा भी उनसे पराजित हुए थे। और तो क्या, ये सारे दाक्षिणात्यके राजचक्रवर्ती हुए थे।

इनकी मृत्युके बाद इन्हींके पुत्र विजयादित्यने शक ६१८ से ६५५ तक निष्कण्टक राज्य किया था। इनके समयके ताम्रपत्रोंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, इनने बहुतसे स्थानों पर कब्जा किया था और बहुतसे ग्राम दान किये थे। (१३) पालिध्वज उनका अधिकृत हुआ था तथा वत्सराज आदिने अपने शरीरसे छुट्टी पाई। (१४) इनके पुत्र महाराज विक्रमादित्य (२य) थे, इन्होंने शक ६५५ से ६६८ तक प्रबल प्रतापसे राज्य किया था। बोक्कले ग्रामसे प्राप्त ताम्रपत्रमें लिखा है कि, इन्होंने तीन बार पल्लवराजधानी आक्रमण और नन्दिपोतवर्माका विनाश किया था। पल्लवराज नरसिंहपोतवर्माने काञ्चीपुरमें राजसिंहेश्वर और अन्यान्य देवताओंकी जो प्रस्तर-मूर्तियां स्थापित की थी, महाराज विक्रमादित्य (२य) ने उन्हें सोनेसे जड़ दी थी। बादमें इनके पुत्र कीर्तिवर्मा (२य) शक ६६८ में राजगद्दी पर बैठे, उनने भी एक बार

(१२) Ind. Ant. Vol. p. 85. VII, p. 186.

(१३) Ind. Ant. Vol. VI. p. 85, VII, p. 186, VII. p. 14.

(१४) Ind. Ant. Vol. VIII, p. 28.

चालुक्यवंशके चिरशत्रु पल्लवराज पर आक्रमण किया था और सार्वभौमकी उपाधि पाई थी। (१५)

मीराज राज्यके अन्तर्गत कौथेमसे प्राप्त पांचवें विक्रमादित्यके ताम्रपत्रमें लिखा हुआ है कि, (२य) कीर्तिवर्माके समय चालुक्यराज्यश्रीमें बड़ा धक्का पहुंचा था। (१६)

ताम्रपत्रसे तो यही मालूम पड़ता है कि, शक ६७८ तक २य कीर्तिवर्माका आधिपत्य था। शायद इनके थोड़े दिन पीछे राष्ट्रकूटाधिपति २य दन्तिदुर्गने कीर्तिवर्माको परास्त कर विस्तीर्ण चालुक्यराज्य पर अधिकार किया था। उस समय प्राच्य चालुक्यगण दाक्षिणात्यके पूर्व भागमें प्रबल प्रतापसे राज्य करते थे, यह ठीक है, परन्तु तो भी उस समय प्रतापी प्रबल पराक्रमी चालुक्यवंशकी हीनावस्था हो गई थी, इसमें सन्देह नहीं। पहिले कहे हुए पांचवें विक्रमादित्यके ताम्रपत्रसे जाना गया है कि, दाक्षिणात्यके पश्चिमीय चालुक्यवंशका पुनः अभ्युदय होने पर भी फिर २य कीर्तिवर्माके पुत्र वा उत्तराधिरीको राज्य नहीं मिला था। उनके पितृव्यवंशीयगण ही प्रबल प्रतापी हुए थे। उनके पितृव्य अर्थात् चचाका नाम भीम था। इनके पुत्र कीर्तिवर्मा (३य) थे, इनके पुत्रका नाम था तैलभूप। तैलके पुत्र विक्रमादित्य, विक्रमादित्यके पुत्र भीमराज थे। इनके पुत्र अय्यणार्यका (राष्ट्रकूटाधिप) कृष्णका कन्याके साथ व्याह हुआ था। इनके पुत्र चतुर्थ विक्रमादित्य थे। भीमसे ले कर विक्रमादित्यके पूर्ववर्ती राजा शायद बहुत थोड़े जनपदोंके राजा थे अथवा प्रतापी राष्ट्रकूटराजके महासामन्तोंमें गिने जाते थे।

अय्यणके पुत्र ४र्थ विक्रमादितासे ही इस वंशका पुनरुत्थान या पुनरभ्युदय हुआ था।

फिलट साहबके मतसे—४र्थ विक्रमादित्यके पुत्र तैल (२य)-से ही चालुक्यराज्यका पुनरुद्धार हुआ था। किन्तु ४र्थ विक्रमादित्यके ताम्रपत्र और येवूरके शिलालेखोंमें लिखा है कि (४र्थ) विक्रमादित्य विजयविभाशी और विरोधिविध्वंसी थे। इन्होंने चेदिराज लक्ष्मणकी कन्या बोन्थादेवीके साथ अपना विवाह किया था, इनका दूसरा नाम विजितादित्य भी था। (१७) इससे मालूम होता है कि, इन्होंने चेदिराजकी सहायतासे पहिलेके नष्ट हुए गौरवको उद्धार करनेकी चेष्टा की थी। डा० बुर्णेलके मतसे इन्होंने शक-सं० ८७५से ११८ तक राज्य किया था। परवर्ती जयसिंहदेवके समकालीन शिलालेखमें लिखा है कि, सत्याश्रयके कुलमें उत्पन्न नूर्मड़ी तैल (सम्भवतः २य तैल)ने रट्ट अर्थात् राष्ट्रकूटराजाओंको विदलित किया और उन लोगोंके हाथसे राज्योद्धार कर ये चालुक्यकुलशिरोमणि कहाये थे। (१८)

ऐसा अनुमान किया जाता है कि, पिताके सामने ही वीरवर तैल (२य) राज्योद्धार करनेमें समर्थ हुए थे।

४र्थ विक्रमादिता अथवा २य तैलराज वातापी नगरीमें राज्य करते थे या नहीं, इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता।

शक-सं० ६७५के १म सोमेश्वरदेवके सामयिक शिलालेखमें इनका कल्याणाधीश्वरके नामसे उल्लेख मिलता है। ऐसा मालूम पड़ता है कि, उनके पूर्वपुरुष ४र्थ विक्रमादित्य वा २य तैलने चालुक्यराज्यका पुनरुद्धार कर कल्याणमें राजधानी की थी। कल्याण देखो।

४र्थ विक्रमादित्यके पुत्र २य तैल एक महाप्रतापी राजा हो गये हैं। येवूरके शिलालेखमें लिखा है कि, तैलने राष्ट्रकूटराज कर्कके दो रणस्तंभ विच्छिन्न कर दिये थे। इन्होंने कुटिल राष्ट्रकूटोंके हाथसे चालुक्यवंशोंकी राजलक्ष्मीका उद्धार किया था। चेद्य और उत्कलराजको समरमें पराभव तथा राष्ट्रकूटके राजा भम्महकी कन्या जाकब्बाका पाणिग्रहण किया था। इनके औरस और जाकब्बाके गर्भसे (२य) सत्याश्रयका जन्म हुआ था। इनने नाना स्थान जय कर राज्यका गौरव बढ़ाया था। सत्याश्रयके बाद उनके छोटे भाई दशवर्मा या यशोवर्मा राजा हुए थे। उनकी महिषी भाग्यवती-

(१५) Indian Antiquary, Vol. p. 28.

(१६) "तस्मात् विक्रमादित्यः कीर्त्तिवर्मा तदात्मजः।
येन चालुक्यराज्यश्रीरन्तरायिण्यभूद् भुवि॥"
—शक सं० ६३०के ताम्रशासन, ११ पंक्ति।

(१७) "भगवत्यशोवल्लभो विजयविभासी विरोधी विध्वंसी तेजो विजितादित्य सत्यवन्तो विक्रमादित्यः।"

(१८) Indian Antiquary, Vol. V. p. 17.

के गर्भसे (५म) विक्रमादित्य त्रैलोक्यमल्ल वल्लभेन्द्र जन्मे। इनके ताम्रलेखसे मालूम पड़ता है कि, इन्होंने शक ८३० में राजगद्दी पाई थी। इन्होंने महाराजाधिराज परमेश्वरपरमभट्टारककी उपाधि पाई थी। इनके बाद इन्हींके छोटे भाई जयसिंह जगदेकमल्ल राजसिंहासन पर बैठे। तञ्जोरके शिलालेखसे ज्ञात होता है, कि इन्होंने मालवोंको विध्वस्त, तथा चेर और चोलराजाके साथ युद्ध किया था। तमाम कुन्तलदेश इनने अपने अधिकारमें कर लिया था। शक ८६४ तक इनका राज्यकाल था। अक्कादेवी इनकी बहन थी।

उसके बाद उनके पुत्र सोमेश्वर आहवमल्लने प्रबल प्रतापसे राज्य किया था। विक्रमाङ्कचरितमें लिखा है कि, इन्होंने दो बार चोलराज्य जय किया था, परन्तु १म कुलोत्तुङ्गके शिलालेखादिके बाँचनेसे ऐसा जान पड़ता है कि, ये भी उनसे एकबार परास्त हुए थे। इन्हीं १म सोमेश्वरके समयमें बनवासीके कादम्बराजाओंने पुनः स्वाधीनता पाई थी। सोमेश्वरकी तीन स्त्री थीं,—बचलादेवी, चन्द्रिकादेवी और मैनलादेवी। इनकी बहन अव्वल्लदेवीका यादवराज आहवमल्लके साथ विवाह हुआ था। (१९)

सोमेश्वरके पुत्रका नाम भुवनैकमल्ल या २य सोमेश्वर था। इन्होंने शक ९९०से ९९७ तक राज्य किया था। इन्हींने कादम्बराजाओं पर शासन कर कनिष्ठ भ्राता जयसिंह त्रैलोक्यमल्लको बनवासीका शासनभार सौंपा था। जयसिंहने वहां शक १००१से १००३ तक शासनकार्य निर्वाह किया था।

तत्पश्चात् सोमेश्वरके मध्यम भ्राता ६ठे विक्रमादित्य त्रिभुवनमल्लका अभ्युदय हुआ। महाकवि विह्लणने इन्हींको लक्ष्य करके "विक्रमाङ्कदेवचरित" नामका एक काव्य लिखा है। चोलराजकी पुत्रीके साथ इनका विवाह हुआ था। जिस समय ये तुङ्गभद्रानदीके किनारे ठहरे हुए थे, उस समय इन्हें श्वसुरके मर जानेकी खबर मिली। उन्होंने जल्दीसे सेनाको साथ ले काञ्चीपुरकी तरफ प्रयाण किया। वहां पहुंच उन्होंने विद्रोहियोंका दमन कर वास्तविक उत्तराधिकारीको काञ्चीपुरके राजसिंहासन पर बिठाया। बादमें फिर उनने गङ्गैकोण्डचोलपुर पर चढ़ाई की। थोड़े समय पीछे उनने सुना कि, उनके साले विद्रोहियोंके हाथ मारे गये, तथा वङ्गिराज राजिग (राजेन्द्र कुलोत्तुङ्ग चोड़देव १म)ने काञ्चीपुर पर अधिकार कर लिया। उन्होंने शीघ्र ही राजिगके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। राजिग (राजेन्द्रचोड़)ने विक्रमादित्यके भाई चालुक्यराज २य सोमेश्वरको सहायताके लिये बुला भेजा। विक्रमादित्यने सोमेश्वर और राजिग दोनोंहीको परास्त कर दिया। राजिगने भाग कर जान बचाई, पर सोमेश्वर कैद कर लिये गये। अब विक्रमादित्यने सिंहासन पर अभिषिक्त हो अपनेको दाक्षिणात्यके सार्वभौम राजा प्रसिद्ध किया।

(विक्रमाङ्कचरित)

इन्होंने अपने राज्यारोहणसे ही "चालुक्यविक्रमवर्ष" नामका एक नया संवत् चलाया। शक ९९७ में फाल्गुन मासको शुक्लपञ्चमीसे इस संवत्का प्रारम्भ है। चालुक्यविक्रमवर्ष या विक्रम-संवत् देखो। सैकड़ों ताम्रपत्र और शिलालेखोंमें महाप्रतापी विक्रमादित्यकी महिमा घोषित है। कादम्बराजाओंने इनके आश्रय लिया था। उन्होंने प्रसन्न हो कर इनको अपनी कन्या दी थी। विक्रमादित्यने शक-स० १०४८ तक राज्य किया था।

उनके बाद उन्हींके पुत्र सोमेश्वर (३य) या भूलोकमल्ल सिंहासन पर बैठे थे। इनके बादसे ही चालुक्य वंशका गौरव-रवि प्रतापहीन होने लगा। चेदि और गणपति राजोंने चालुक्य राज्यके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। विस्तीर्ण चालुक्यराज्य धीरे धीरे दूसरेके करकवलित होने लगा। बड़ी कठिनाईसे भूलोकमल्लने १०६० ई० तक राज्यलक्ष्मीकी रक्षा कर पाई थी। तदनन्तर उनके भाई जगदेकमल्ल (२य) (दूसरा नाम जयकर्ण) राजगद्दी पर बैठे थे। उनके सेनापतिका नाम था कालिदास। (२०) राजा जयकर्ण बड़े धर्मात्मा थे, जगह जगह इन्होंने देवता और मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा कराई थी। (२१)

तदनन्तर भूलोकमल्लके पुत्र तैल या त्रैलोक्यमल्ल

(१९) Indian Antiquary, Vol. XII. p. 122.

(२०) Indian Antiquary, Vol. VI. p. 140.

(२१) Jour. Bom. Br. Roy. As. Soc. Vol. X. p. 287.

(३य) शक १०७२में सिंहासन पर बैठे। इनके पुत्र वीरसोमेश्वर (४र्थ)ने फिर कुछ दिनोंके लिए चालुक्य राज्यश्रीको गौरवान्वित किया था। उनके राजत्वकालमें अर्थात् शक-सं० ११११ तक चालुक्यगौरव अक्षुण्ण रहा, बादमें फिर महिसुरके होयसल-वल्लालवंश के अभ्युदयसे चालुक्यराज्यके नामोनिशान तक मिटनेकी नौबत आ पहुंची।

मिउएल् साहबने लिखा है कि, ११८८ ई०के बाद फिर प्रतीच्य चालुक्यवंशका नामोनिशान तक न रहा था। (२२) परन्तु शायद उस समय तक प्रतीच्य चालुक्यवंश एकाएक विलुप्त नहीं हुआ होगा। शक ३६६के एक ताम्रपत्रमें कल्याणपुरके राजा वीर नोनम्बका नाम मिलता है। परन्तु शक सं० ३६६में कल्याणपुरमें चालुक्यकी कोई राजधानी न थी, विशेषतः उस ताम्रपत्रकी लिपि आधुनिक जान पड़ती है (२३), इसलिए उक्त शकाङ्क सम्भवतः चालुक्य विक्रमसंवत् होगा। यदि यह अनुमान ठीक हो, तो शक सं० १३६३में भी कल्याणपुरमें वीर-नोनम्ब राज्य करते थे।

पहिले कहे हुए प्रतीच्य चालुक्यवंशसे ही प्राच्य चालुक्यवंशकी उत्पत्ति हुई है। जिस समय बादामी और कल्याणके चालुक्यराजोंने दाक्षिणात्यके पश्चिमांशमें आधिपत्य विस्तार किया था, उस समय वङ्गीराज्यमें प्राच्य चालुक्यराजोंका आधिपत्य था। दाक्षिणात्यके पूर्व भागमें ये लोग राज्य करते थे, इसलिए प्राच्यचालुक्य नामसे कहा गया है। हर्षविजेता पुलिकेशि सत्याश्रयके छोटे भाई कुब्जविष्णुवर्द्धन ही प्राच्य चालुक्यवंशके आदि पुरुष हैं।

पुलकेशि सत्याश्रयके आधिपत्यके समय विष्णुवर्द्धन युवराज पद पर अभिषिक्त हुए थे, तथा चालुक्यसाम्राज्यके पूर्व भागका शासन (बड़े भाईकी अधीनतामें) करते थे। अन्तमें ये वेङ्गराज्य अधिकार कर स्वाधीनतासे राज्य करते रहे। उनके तथा उनके वंशके राजाओंके सैकड़ों ताम्रपत्र मिले हैं। बादामी और कल्याणके चालुक्यराजोंके यथार्थ समयनिर्णय करनेमें जैसी दिक्कत उठानी पड़ती है, प्राच्य चालुक्यके ताम्रपत्रोंमें प्रत्येक राजाका राज्यकाल विवृत रहनेके कारण इनके यथार्थ इतिहासके उद्धार करनेमें वैसी गड़बड़ी नहीं पड़ती।

कुब्जविष्णुवर्द्धनने अपने समयके शिलालेखों और ताम्रपत्रोंमें कहीं कहीं कुब्जविष्णु, कहीं विष्णुवर्द्धन, कहीं विट्टरस, कहीं श्रीपृथिवीवल्लभ और कहीं पर विषमसिद्धि विरुदसेके (नामान्तरसे) अपना परिचय दिया है। पुलिकेशिसत्याश्रयके ८म वर्षमें लिखित ताम्रपत्रमें (शक ५३८ अर्थात् ६१६ ई०में) ये युवराजपदसे विभूषित थे। (२४) इसके सिवा विशाखपत्तन जिलेके अन्तर्गत चिपुरुपल्लिसे प्राप्त विष्णुवर्द्धनके सं० १८ के ताम्रपत्रमें इनकी पहली उपाधि "महाराज" है, ऐसा लिखा है। इस ताम्रपत्रकी सहायतासे मालूम होता है कि, विष्णुवर्द्धनने बादामीराज्यसे बहुत दूर पूर्वमें जा कर राज्य-स्थापन किया था।

प्राच्य चालुक्योंके ताम्रपत्रोंके अनुसार-विष्णुवर्द्धनने १८ वर्ष राज्य किया था। किन्तु उक्त राज्यकाल उनके युवराज पद पर अभिषिक्त होनेसे गिना गया है।

तदनन्तर उनके ज्येष्ठ पुत्र १म जयसिंह शक ५५६में राजगद्दी पर बैठे थे; तथा उसने शक ५८५ तक ३० वर्ष राज्य किया था।

तत्पश्चात् जयसिंहके कनिष्ठ भ्राता इन्द्रभट्टारकने सात दिन मात्र राज्य किया था। महाराज प्रभाकरके पुत्र पृथिवीमूलके समयके गोदावरीके ताम्रपत्रमें लिखा है कि, इसने (गङ्गराज) इन्द्रवर्मा आदि राजाओंके साथ मिल कर इन्द्रभट्टारकका उच्छेद करनेके लिए घोरतर संग्राम किया था (२५)। इन्द्रभट्टारकके बाद इनके पुत्र (२य) विष्णुवर्द्धनने शक ५८५ से ५९४ तक, ९ वर्ष राज्य किया था। किसी किसी ताम्रपत्रमें इनका नाम विष्णुराज, सर्वलोकाश्रयको उपाधि और विषमसिद्धि विरुद लिखा है।

बादमें २य विष्णुवर्द्धनके पुत्र मङ्गी युवराजने शक

(२२) R. Sewell's Dynasties of Southern India, p. II.

(२३) Indian Antiquary, Vol. VIII. p. 94. Plate I and II.

(२४) Indian Antiquary, Vol. XIX. p. 303.

(२५) Journal Bombay Branch Royal Asiatic Society, Vol. XVI. p. 19.

५६४से ६१८ तक २५ वर्ष राज्य किया था। इनकी उपाधि सर्वलोकाश्रय और विरुद विजयसिद्धि थी, ये एक बड़े भारी पण्डित थे। आध्यात्मिक शास्त्रार्थमें इनने बहुतोंको परास्त किया था। पूर्ववर्ती समस्त चालुक्यराजोंके ताम्रपत्र और शिलालेखोंमें लिखा है कि स्वामी महासेनके अनुग्रहसे चालुक्यवंशको राज्यश्री बढ़ी थी, किन्तु उक्त मङ्गीराजके एक ताम्रपत्रमें लिखा है, कि कौशिकोंके वरसे उन लोगोंको राज्य मिला था (२६)।

तदनन्तर मङ्गी युवराजके ज्येष्ठ पुत्र २य जयसिंहने शक ६१८से ६३२ तक, १३ वर्ष राज्यसुख भोगा। बादमें इनके वैमात्रेय भ्राता कोक्किलीने ६ माह राज्य किया था।

कोक्किलीके बाद उन्हींके बड़े भाई ३य विष्णुवर्द्धनने उन्हें राजगद्दी परसे हटा कर शक ६३२से ६६८ तक ३७ वर्ष राज्यशासन किया था।

फिर तृतीय विष्णुवर्द्धनके पुत्र विजयादित्य भट्टारकने शक ६६८से ६८७ तक १८ वर्ष प्रबल प्रतापसे राजशासन किया, इनके विक्रमराम और विजयसिद्धि ये दो विरुद थे।

विजयादित्यके पुत्रका नाम था विष्णुराज या ४र्थ विष्णुवर्द्धन। इन्होंने शक ६८७से ७२२ तक, ३६ वर्ष राज्य किया था।

उसके बाद इनके वीरपुत्र विजयादित्य नरेन्द्रमृगराजने शक ७२२से ७६६ तक, ४४ वर्ष राज्यसुख भोगा था। इनके प्रथमावस्थामें ताम्रपत्र खोदे जानेके समय ये युवराज पद पर अभिषिक्त थे। इसलिए कोई कोई अनुमान करते हैं कि इन्होंने ४ वर्ष यौवराज्य और ४० वर्ष राजसुख भोगा था इन्होंने चालुक्य अर्जुन और समस्तभुवनाश्रय नामसे अपना परिचय दिया है। जगह जगहसे इनके ताम्रपत्र मिले हैं। उनके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि—ये गङ्गवंश-विध्वंसके अनलस्वरूप और नागाधिपविजेता थे। इन्होंने बारह वर्ष व्यापी रात्रि दिनके संग्राममें गङ्ग और रट्टसेनाके साथ एक सौ आठ बार युद्ध कर शताष्ट शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की थी। इनके पुत्र महाराज कलिविष्णुवर्द्धन या ५म विष्णुवर्द्धन थे। इन्होंने १८ मास राजत्व किया था।

कलिविष्णुके ज्येष्ठ पुत्र विजयादित्य या ३य विजयादित्य थे। किसी किसी ताम्रलेखमें इनका नाम गुणग या गुणगाङ्क-विजयादित्य भी है। और समस्तभुवनाश्रय उपाधि देखनेमें आती है। ये एक अङ्कशास्त्रविद् पण्डित थे। इन्होंने रट्टराजद्वारा बुलाये जाने पर असमयोद्धाओं पर आक्रमण किया था। इस युद्धमें मङ्गीराजका मस्तक छेदन किया था और (राष्ट्रकूटराज २य) कृष्णको परास्त किया था। इन्होंने शक ७६७से ८११ तक कुल ४४ वर्ष राजत्व किया था।

इनके बाद ३य विजयादित्यके छोटे भाई युवराज १म विक्रमादित्यका नाम मिलता है। ये राजगद्दी पर बैठे थे या नहीं, इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता। (२७) इसके बाद विक्रमादित्यके छोटे भाई १म युद्धमल्लका नाम मिलता है। ये महाराज चालुक्यभीमके चचा थे। ये भी शायद राजगद्दी पर नहीं बैठे थे।

युवराज १म विक्रमादित्यके पुत्र १म चालुक्यभीमने शक ८११से ८४१ तक कुल ३० वर्ष राज्य किया था। कृष्णा जिलेके ईडरसे प्राप्त ताम्रलेखमें लिखा है कि, ३य विजयादित्यके बाद वेङ्गीदेश रट्टगणद्वारा आक्रान्त हुआ था। चालुक्यभीमने कृष्णवल्लभको पराजित कर पितृराज्यका पुनरुद्धार किया था। इनके सेनापतिका नाम था महाकाल।

चालुक्यभीमके जेष्ठ पुत्र ४र्थ विजयादित्यने शकसं० ८४१में सिर्फ ६ मास ही राज्य भोगा था। नाना स्थानोंके ताम्रपत्रोंमें इनका कोल्लविगण्ड विजयादित्य, कोल्लभिगण्ड विजयादित्य, कोल्लविगण्ड, कोल्लविगण्डभास्कर, कलियर्त्ताङ्क, कलियर्त्तिगण्ड इत्यादि नामोंसे उल्लेख मिलता है। इनकी रानीका नाम था मेलाम्बा। ये तमाम वेङ्गीमण्डल और त्रिकलिङ्गका शासन करती थीं। पट्टवर्द्धिनीवंशीय पृथिवीराजके पुत्र भण्डनादित्य (दूसरा नाम कुम्भादित्य) इनके प्रधान अनुचर थे।

उक्त विजयादित्यके पुत्र अम्म १म वा राजमहेन्द्र विष्णुवर्द्धन (६ष्ठ) ने शक ८४१ से ८४८ तक, ७ वर्ष राजत्व किया था। इनके ज्ञातिके सामन्त इनके विरोधि-

(२६) Hultzsch's South Indian Inscriptions, vol, I p. 35

(२७) Ind. Ant. vol VI. p. 70, vol. XI. p. 161n

योंके साथ जा मिले थे। इन्होंने फिर दोनों शत्रुदलका विनाश कर दिया था। इन्हींके समयमें राजमहेन्द्रपुर (वर्त्तमान—राजमहेन्द्री) चालुक्यराज्यमें मिल गया था, तथा बादमें राजमहेन्द्र नामसे अभिहित हुआ था।

इसके बाद अम्मके ज्येष्ठ पुत्र (५म) विजयादित्य (दूसरा नाम वेत) ने पन्द्रह दिन मात्र राज किया था। २य अम्मके ताम्रशासनमें लिखा है कि, वेत विजयादित्य युद्धमल्लके पुत्र ताड़प द्वारा राजगद्दीसे उतारे और कैद किये गये थे।*

पिट्टपुरके शिलालेख तथा गोदावरीसे प्राप्त ताम्रपत्रके पढ़नेसे जाना जाता है कि, ताड़पके वेत विजयादित्यको कैद कर सिंहासन अधिकार करने पर वेतके पुत्र वेङ्गी प्रान्तको भाग गये थे। शायद उस समय राजमहेन्द्रीमें ही राजधानी थी। वेङ्गीमें जा कर वेतके पुत्र कुछ दिन मामूली तौरसे रहे, पीछे वे वहांके शासनकर्ता बन गये थे। क्योंकि, शक ११२४में उक्त वंशके मल्लविष्णुवर्द्धन 'वेङ्गीदेशवसुन्धरेश'के नामसे प्रसिद्ध हुए थे। प्राच्य चालुक्य-वंशावलीमें मल्लविष्णुवर्द्धनके पूर्वपुरुषों की वंशावली देखनी चाहिये।

युद्धमल्लके पुत्र ताड़पके भाग्यमें भी ज्यादे दिन राज्य-सुख नहीं बदा था। उनको राजगद्दी पर बैठे एक मास भी न हो पाया था, इतनेमें चालुक्यभीमके पुत्र (२य) विक्रमादित्यने उनको मार कर राजसिंहासन अधिकार कर लिया। इन्होंने भी ११ मास त्रिकलिङ्ग और वेङ्गी-मण्डल पर शासन किया था। बादमें १म अम्मके दूसरे पुत्र भीम (३य)-ने युद्धमें इनको परास्त कर ८ मास राज्य किया। ताड़पके पुत्र २य युद्धमल्लने भीमको मार कर शक-सं० ८५०से ८५७ तक, ७ वर्ष राजत्व किया था।

तदनन्तर विक्रमादित्यके पुत्र और १म अम्मके वैमात्रेय (२य) चालुक्यभीम या (७म) विष्णुवर्द्धनने शक-सं० ८५७से ८६८ तक, १२ वर्ष तक राज्य अधिकार किया था। २य अम्म वा ६ठे विजयादित्यका एक अप्रकाशित ताम्रशासनमें लिखा है कि,—महाराजाधिराज द्वितीय चालुक्यभीमने श्रीराजमय्य, महावीर धलग या वलग, दुर्द्धर्ष तातविक्की या तातविक्यन, रणदुर्म्मद विज्ज, दुर्दान्त अय्यप।*, चोलराज लोवविक्की, युद्धमल्ल,† तथा गोविन्द‡ द्वारा प्रेरित विपुल सेनाका विनाश किया था। उक्त द्वितीय चालुक्यभीमने सर्वलोकाश्रय, गण्ड-महेन्द्र, राजमार्त्तण्ड, करयिम्बदात और वेङ्गीनाथ आदि नामसे अपना परिचय दिया है।

प्राच्य चालुक्य राजाओंमें एक महाप्रतापी राजा हुए थे। इनके ताम्रशासनमें 'महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक' यह उच्च उपाधि और इनके सूअर चक्र-वाली मोहरमें "त्रिभुवनाङ्कुश" नाम खुदा हुआ है।

चालुक्यराजके ताम्रलिखमें लगी हुई मोहर।

इनको महिषीका नाम लोकमहादेवी था। उसके उपरान्त २य चालुक्यभीमके पुत्र २य अम्म या छठे विजयादित्य राजा हुए थे। इनके समयके बहुतसे ताम्रपत्र मिले हैं, उसमें ये समस्तत्रिभुवनाश्रय और राजमहेन्द्रके नामसे तथा महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक इस उपाधिसे विभूषित किये गये हैं। इन्होंने शक ८६८ से ८९४ तक, २५ वर्ष राज्य किया था।

तदनन्तर उनके वैमात्रेय जेठे भाई दानार्णवने राज-गद्दी पाई। उन्होंने ३ वर्ष भी राज्य न कर पाया था,

* Ind. Ant. Vol. XIII. p. 248.

* प्रतीच्य गङ्गवंशीय बुतुगके शिलालेखमें कहे गये अय्यपदेव। Epigraphia Indica, Vol. I p. 347.

† ये सम्भवत: २य चालुक्य भीमके पूर्ववर्त्ती २य युद्धमल्ल हैं।

‡ प्रत्नतत्त्वविद् फ्लिट साहबने इनको राष्ट्रकूटराज ५म गोविन्द स्थिर किया है।

कि इतनेमें चालुक्यराज्य अराजकता, विशृङ्खलता और विप्लवसे परिपूर्ण हो उठा। राजाके आत्मीय जन और प्रतिपक्ष चोलराजगण चालुक्य सिंहासन लेनेके लिए उन्मत्त हो उठे। किसी किसीका अनुमान है कि चोलराज गङ्गैकोण्ड-को-राजराज राजकेशरिवर्माके अव्यवहित पूर्वपुरुषोंने समस्त वेङ्गीराज्य पर कुछ दिनोंके लिए अधिकार कर लिया था। गोदावरी जिलेके चोल्लूरी नामक स्थानसे प्राप्त ताम्रपत्रमें (२८) लिखा है कि, "प्रायः २७ वर्ष तक वेङ्गीमण्डल अराजक था।"

उसके बाद दानार्णवके बड़े पुत्र चालुक्यचन्द्र शक्तिवर्माने वेङ्गीका राजसिंहासन अधिकार किया। आराकान और श्यामदेशसे इन्हीं शक्तिवर्माके नामकी मोहर पाई गई है। शक-सं० ९२६ से ९३८ तक, १२ वर्ष इन्होंने राज्यका शासन किया था। बादमें शक्तिवर्माके छोटे भाई विमलादित्य राजगद्दी पर बैठे। इन्होंने सूर्यवंशीय चोलराज राजराजकी कन्या और राजेन्द्रचोलकी छोटी बहन कुण्डवा-महादेवीके साथ विवाह किया था। इनका राज्यकाल शक-सं० ९३८ से ९४४ तक है।

महाराज विमलादित्यके औरससे राजराज जन्मे थे। कोरुमेल्लीसे प्राप्त ताम्रपत्रमें लिखा है कि राजराज शक ९४४ में सिंहराशिमें सौरभाद्रपदकी कृष्णद्वितीया गुरुवारके दिन राजगद्दी पर बैठे थे। (२९) इन्होंने अपने मामा राजेन्द्रचोलकी कन्याके साथ अपना व्याह किया था। शक सं० ९८६ तक, ४१ वर्ष इन्होंने राज्य किया था। आराकान और श्यामसे इनकी भी मोहरें मिली हैं। (३०)

इसके बाद उनके पुत्र वीर कुलोत्तुङ्ग चोड़देवने वेङ्गीराज्य पाया। इन्होंने भी चोलराज राजेन्द्रदेवकी कन्या मधुरान्तकोदेवीका पाणिग्रहण किया था। तीन पीढ़ी तक मामाके वंशमें विवाह होनेके कारण चालुक्य राजगण भी उस समय "चोल" हो गये थे; तथा इसी लिए प्रत्येकको नानाकी उपाधि ग्रहणपूर्वक राज्याभिषिक्त होते पाया जाता है। चोलराजवंश देखो।

(२८) Dr. Hultzsch's South Indian Inscriptions, Vol. I, p. 94.

(२९) कोरुमेल्लीके ताम्रपत्रमें १।२।४थ पंक्तिमें ऐसा लिखा है।

(३०) Ind. Ant. XIX p. 79.

महावीर कुलोत्तुङ्ग चोड़देवने नानास्थानों पर कब्जा कर गङ्गापुरी वा गङ्गैकोण्डचोलपुरम् नामक स्थानमें राजधानी की थी। प्रसिद्ध काञ्चीपुरमें इनकी राजसभा बैठती थी। ऐसा जान पड़ता है कि, जिस समय उत्तराधिकारीको ले कर चोलराज्यमें विद्रोह हुआ था, उस समय इन्होंने चोलराज्य पर अधिकार किया था और वहाँ कुछ दिनोंके लिए राजपाट स्थापन किया था।

गाङ्गेयराज चोड़गङ्गके ताम्रलेखमें लिखा हुआ है कि, उनके पिताने राजराज राजेन्द्रचोड़की कन्या राजसुन्दरीका पाणिग्रहण किया था, तथा द्रमिलयुद्धमें विजयश्रीको पा कर वे वेङ्गीराज्यकी राजगद्दी पर बैठे थे। इसके उपरान्त विजयादित्यको वेङ्गीराज्यका भार दे कर कलिङ्गको लौट गये थे। गाङ्गेय देखो। सम्भवतः चालुक्यराज कुलोत्तुङ्गचोड़देवने चोलराज्य पर आक्रमण करते समय द्राविड़भूममें जामाता राजराजको सहायता पाई थी और शायद इसीलिए इन्हें कुछ दिन तक वेङ्गीका शासन करने दिया था। गाङ्गेयराज राजराजके उपरान्त कुलोत्तुङ्गके चचा (राजराजके छोटे भाई) विजयदित्यने शक ९८६ से ९९९ तक वेङ्गीमण्डल पर शासन किया था।

विह्लण कविके विक्रमाङ्कदेवचरितमें महाराजाधिराज कुलोत्तुङ्ग-राजेन्द्रचोड़देवका सिर्फ राजिग नामसे उल्लेख किया गया है। इनके पहिले चोलराजा पर अधिकार कर लेने पर चोलराजके जमाई (कल्याणपुरके) चालुक्यवंशीय छठे विक्रमादित्यने सेना सहित गङ्गापुरी पर आक्रमण कर उन्हें परास्त और काञ्चीका उद्धार किया था। परन्तु उनके लौट जाने और राजकन्या ग्रहण करनेके बाद ही शायद कुलोत्तुङ्ग पुनः चोलराज्य-अधिकार कर बैठे थे। इन्होंने शक-सं० ९८६ से १०३५ तक, ४९ वर्ष प्रबल प्रतापसे राजत्व किया था।

तदनन्तर उनके ज्येष्ट पुत्र विक्रमचोड़ने शक १०३५ से १०५० तक १५ वर्ष राज्य किया। ये पहिले कुछ दिनों तक वेङ्गीमें राजप्रतिनिधि थे। इनके र जा होने पर इनके छोटे भाई २य राजराजने शक १ ००में थोड़े दिन तक राजप्रतिनिधिका काम किया था। तदनन्तर कुलोत्तुङ्गके तृतीय पुत्र वीरचोड़देव वा ९म विष्णुवर्द्धनने १०००से १०२२ शक तक प्रतिनिधित्व ग्रहण किया।

विक्रमचोड़के बाद उनके पुत्र २य कुलोत्तुङ्ग चोड़देव १०४८ शकमें चालुक्यसाम्राज्यके अधिकारी हुए थे। चित्तूरसे संगृहीत ताम्रलेखके पढ़नेसे मालूम होता है, कि उन्होंने १०५६ शकमें राजत्व किया था। इसके उपरान्त और कितने समय तक उनने राज्य किया था, अथवा उनके बाद कौन चालुक्य साम्राज्य पर अभिषिक्त हुए थे, उसका कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। हाँ, प्राच्य चालुक्यवंशीय १७वें राजा वेतविजयादित्यके वंशके मल्लविष्णुवर्द्धन शक ११२४में भी वेङ्गीके सिंहासनपर आरूढ़ थे, यह ठीक है।

१२४ क और १२४ ख पृष्ठमें चालुक्यवंशावली देखो।

चाल्य (सं० त्रि०) चल कर्मणि ण्यत्। चालनीय, चलाने योग्य।

चाल्ह (देश०) चेल्हवा मछली।

चाव (हिं० पु०) १ चाह, प्रबल इच्छा, अभिलाषा, लालसा अरमान। २ प्रेम, अनुराग। ३ उत्कण्ठा, शौक। ४ दुलार लाड़, प्यार नखरा। ५ उत्साह, आनन्द, उमंग।

चावड़—गुजरातका एक प्राचीन और विख्यात राजपूत राजवंश। चावड़ वंशीय नाना शाखाओंके राजपूत भिन्न भिन्न आदि पुरुषोंका नामोल्लेख करते हैं। सुतरां अति उच्च श्रेणीके राजपूतोंमें गण्य और अणहल्लवाड़के चावड़-नृपति इतिहासमें प्रसिद्ध होते भी उनके वंशको उत्पत्तिका विवरण आज भी भली भांति ज्ञात नहीं है। कोई कोई अनुमान करता कि उन्होंने विदेशसे जा करके सौराष्ट्र राज्य अधिकार किया था। क्रम क्रम उत्तर दिक्‌को राज्य फैला अवशेषमें इस वंशके वनराजने पट्टन राज्यकी स्थापना की। फिर किसी किसीके कथनानुसार चावड़ लोग बहुविस्तृत और विख्यात परमार वंशोद्भव हैं। उसी परमार वंशसे राजपूत घराने निकले हैं। प्राचीनकालको उनका राज्य इतना फैला कि 'पंवारोंका मुल्क' कहलाता था। गुजरातके प्रायः समस्त प्रधान प्रधान विख्यात नगरोंमें पंवारोंने किसी न किसी समयको राजत्व किया। पट्टन नगरमें भी पहले उनकी राजधानी रही। चावड़ोंने वहां जा करके अनहल नामक किसी पशुपालकके साहाय्यसे पट्टनके भग्नावशेषमें पंवार राजाओंका सञ्चित बहुतसा धन पाया था। वनराजने इसी अर्थके साहाय्यसे पूर्व राजधानीके ध्वंसावशेष पर ८०२ संवत्‌को एक नया नगर स्थापन किया और अनहलके नामानुसार उसका भी नाम अनहलवाड़ रख दिया। इसे प्राचीन वर्धमानपुर भी कहते हैं, यह बहुपूर्वको पंवारोंका शासनाधीन रहा। सम्प्रति उस प्रदेशके दक्षिणांशमें एक शिलालिपि मिली है। इसमें लिखा है कि परमारवंशीय कोई नृपति बालाचित्र (वर्तमान बालाक) नगरमें राजत्व करते थे।

सम्भवतः उक्त चावड़ राजाओंसे चाड़चट अर्थात् चावड़चटका नामकरण हुआ होगा। वहांके प्रवादसे भी ऐसा ही अनुमित होता कि, चावड़ लोग परमार वंशके एक शाखामात्र है। वनराज वत्सराजके पौत्र और देवगड़ाधिप वेणिराजके पुत्र थे। परम्परागत प्रवाद है कि वत्सराज अरब सागरके उपकूलमें राजत्व करते थे। वहाँ इन्होंने और पीछेको इनके पुत्र वेणीराजने राजत्व किया। वेणीराजने किसी वणिक्‌की उसके बहुमूल्य रत्नादि छीन करके निकाल दिया था। समुद्रने इससे क्रुद्ध हो वेणीराजके समग्र द्वीपको जलसात् किया। उस समय गर्भवती रानीने स्वप्रयोगसे इस विपद्‌को समझ करके पलायनपूर्वक अपना प्राण बचाया था। वह पहले पञ्चासर और इस नगरका ध्वंस होने पर अरण्यको चली गयीं। चन्दूर नामक स्थानमें उन्होंने वनराज नामक एक पुत्रको प्रसव किया था। वनराज वयःप्राप्त होने पर दुर्दान्त दस्यु हुए। चतुःपार्श्वसे बहु संख्यक दस्यु जा करके उनका दल पुष्ट करने लगे। किसी समय इन्होंने कन्नौजका राजत्व बलपूर्वक हड़प लिया था। इसी अर्थसे वह दल वृद्धि करने लगे। अवशेषको अनहल नामक किसी रखवालेने प्राचीन पट्टन नगरीका सञ्चित बहुतसा गुप्त अर्थ वनराजको बतला दिया। इन्होंने उस अर्थसे विख्यात अनहलवाड़पत्तन नामक नगर स्थापन किया। इस प्रदेशमें चारण और भाट लोगोंने चावड़ राजाओंको अनेक ऐतिहासिक घटनाएं लिपिबद्ध कर ली हैं। इस कवितामें देवनगर ध्वंसका विवरण और वनराजका परमारवंशीय होना कहा है। विख्यात पुरातत्त्ववित् बार्गेसका कहना है, किसी वंशावलीमें उन्होंने वनराज, वेणीराज और वत्सराजको विक्रमादित्य नामक परमार वंशीय राजाका वंशोद्भूत

जयसिंह १म

रणराग

१ पुलिकेशीवल्लभ १म (शक ४११)

२ कीर्तिवर्मा (१म) पृथिवीवल्लभ शक ४८६)

३ मंगलीश वा मंगलराज (शक४८६-५३१)

४ सत्याश्रय इन्द्रवर्मा (शक ५३१)

५ पुलिकेशी (२य) सत्याश्रय (शक ५३१-५५६) विष्णुवर्द्धन (१म प्राच्य चालुक्यराज) जयसिंह धराश्रय (गुजरातका १म चालुक्यराज

नागवर्द्धन

बुद्धवर्मा

विजयराज (३९४ चेदिसं०)

६ नडमारि (चन्द्रादित्य) (शक ५५७-५९०?) (महिषी विजयमहादेवी)

७ आदित्यवर्मा (शक ५९०-९२ ?)

८ विक्रमादित्य (१म) (शक ५९२-६०२)

अम्बेरा (कन्या)

जयसिंह धराश्रय (गुजरातका राजा)

९ विनयादित्य युद्धमल्ल (शक ६०२-६१८)

शिलादित्य श्रयाश्रय (युवराज) (४२६-४४३ चेदिसं०)

विनयादित्ययुद्धमल्लमंगलराज (६५३ शक)

पुलिकेशिवल्लभ जनाश्रय (४९० चेदिसं०)

१० विजयादित्य (शक ६१८-६५५)

११ विक्रमादित्य २य (शक ६५५-६६८)

१ भीम (१म) तत्पुत्र कीर्तिवर्मा (३य) तत्पुत्र (तैल १म) तत्पुत्र विक्रमादित्य (३य)

१२ कीर्तिवर्मा २य (शक ६६९-६७९)

भीम (२य) तत्पुत्र अय्यण (१म)

१३ विक्रमादित्य (१म) वा सत्याश्रय विक्रमादित्य (शक ८९५-९१५)

१४ तैल (२य) वा आहवमल्ल (१म)

१५ सत्याश्रय (२य) (शक ९१९-९३०)

दशवर्मा या यशोवर्मा

१६ विक्रमादित्य (५म) वा त्रैलोक्यमल्ल (१म) (शक ९३०-९४०)

अक्कादेवी (शक ९४४-९६९)

१७ जयसिंह (३य) वा जगदेकमल्ल (१म) (शक ९४०-९६४)

(कल्याणपुरमें)

१८ सोमेश्वर (१म) वा आहवमल्ल (२य) त्रैलोक्यमल्ल (शक ९६४-९९०)

१९ भुवनैकमल्ल वा सोमेश्वर (२य) (शक ९९०-९९७)

२० विक्रमादित्य (६ष्ठ) वा त्रिभुवनमल्ल (२य) (शक ९९७-१०४८)

जयसिंह (४र्थ) वा त्रैलोक्यमल्ल (वनवासीका शासनाधिकारी) (शक १००१-१००)

२१ जयकर्ण वा जगदेकमल्ल (२य) (शक १०६०-७२)

सोमेश्वर (३य) वा भूलोकमल्ल (शक १०४८-१०६०)

मैलादेवी (कादम्बराज २य जयकेशीकी स्त्री)

२३ तैल (३य) वा त्रैलोक्यमल्ल (३य) (शक १०७२-१०८४)

२४ सोमेश्वर (४र्थ) वा त्रिभुवनमल्ल (३य) (शक १०८४-१११?)

कीर्तिवर्मा

सत्याश्रय (प्रतीच्य)

१ कुब्ज विष्णुवर्द्धन (प्राच्य) (१८ वर्ष, शक ५३८-५५६)

२ जयसिंह (१म) (३० वर्ष, शक ५५६-५८५)

३ इन्द्रभट्टारक (७ दिन, शक ५८५)

४ विष्णुवर्द्धन (२य) (८ वर्ष, शक ५८५-५९४)

५ मंगियुवराज (२५ वर्ष, शक ५९४-६१८)

६ जयसिंह २य (१३ वर्ष, शक ६१८-६३२)

८ विष्णुवर्द्धन ३य (४७ वर्ष, शक ६३२-६६६)

७ कोक्किलि (५ मास, शक ६३२)

९ भट्टारक विजयादित्य (१८ वर्ष, शक ६६६-६८७)

१० विष्णुवर्द्धन ४र्थ (३६ वर्ष, शक ६८७-७२२)

११ नरेन्द्रमृगराज विजयादित्य (२य) (४४ वर्ष, शक ७२२-७६६)

नृपरुद्र

१२ कलि विष्णुवर्द्धन ५म (१८ मास, शक ७६६-७६७)

१३ गुणक विजयादित्य ३य (४४ वर्ष शक ७६७-८११)

युवराज विक्रमादित्य (१म)

युद्धमल्ल (१म)

१४ चालुक्य-भीम (१म) (३० वर्ष, शक ८११-८४१)

१८ ताडप (१ मास, शक ८४७)

२१ युद्धमल्ल (२य) (७ वर्ष, शक ८५०-८५७)

१५ कोल्लविगण्ड विजयादित्य (४र्थ) (६ मास, शक ८४१)

१९ विक्रमादित्य (२य) (११ मास, शक ८४८-८४९)

१६ अम्म (१म), विष्णुवर्द्धन (६ष्ठ) राजमहेन्द्र (७ वर्ष, शक ८४१-८४८)

२२ चालुक्यभीम (१म), विष्णुवर्द्धन (७म) (१२ वर्ष, शक ८५७-८६८)

१७ बेत विजयादित्य (५म) (१५ दिन, शक ८४८)

२० भीम (३य) (८ मास, ८४९-५०)

२४ दानार्णव (३ वर्ष, ८९३-८९६)

२३ अम्म (२य), विजयादित्य (६ष्ठ) वा राजमहेन्द्र (२५ वर्ष, शक ८६८-८९३)

सत्याश्रय (पत्नी—गंगमागौरी)

विजयादित्य (पत्नी—विजयमहादेवी)

विष्णुवर्द्धन

मल्लपदेव (पत्नी—चंदलदेवी)

मल्लविष्णुवर्द्धन (११२४ शक वेंगीराज)

(३० वर्ष विप्लवके बाद) २५ शक्तिवर्मा (१२ वर्ष, शक ९२६-९३८)

२६ बिमलादित्य (७ वर्ष, शक ९३८-९४५)

२७ राजराज (१म), विष्णुवर्द्धन (८म) (४१ वर्ष, शक ९४५-९८६)

विजयादित्य (७म) (वेंगीके शासनकर्ता) (६५ वर्ष, शक ९८५-१०००)

२८ राजेंद्रचोड, कुलोत्तुंग चोडदेव (१म) (४९ वर्ष, शक ९८६-१०३५)

२९ विक्रमचोड (१५ वर्ष, शक १०३५-१०५०)

राजराज (वेंगीनाथ) (शक १०००-१००१)

वीरचोड विष्णुवर्द्धन (वेंगीनाथ शक १००१-१०२२)

राजसुंदरी (कलिंगके गांगेयराज राजराजकी स्त्री)

(३० कुलोत्तुंग चोडदेव (२य) (१०५० शकमें अभिषिक्त हुआ)

जैसा लिखा हुआ देखा है। यह अनुमान करते हैं कि वनराजके कोई कनकसेन नामक पूर्वपुरुष कनकवती (वर्तमान काटपुर) स्थानमें रहते थे। अवशेषको वह समुद्र तीरसे देवनगर चले गये। फिर वत्सराजके समयको देवनगर चावड़ लोगोंका अधिकृत हुआ। उल्लिखित कनकवती वा काटपुर वर्तमान बालाकका अन्तर्गत है। सम्प्रति एक शिलालिपि मिली है। इसको देखनेसे मालूम होता है कि उसी बालाकमें कोई परमार वंशीय राजा रहते थे।

इस प्रदेशके कवि जो वर्णना कर चुके हैं * समझ पड़ता है कि ८८७ संवत्को चावड़ लोग अनहलवाड़से विताड़ित हुए और १२८७ संवत्को अलाउद्दीन्ने उसको अधिकार किया। ८८७ संवत्को मूलराज इस नगरको आक्रमण करके राजा बने और सबको विनष्ट किया था। प्रवाद है कि उन्होंने इसी समय विजय सोलाङ्कीको प्ररोचनासे अपनी माताका भी मस्तक काट लिया। छिन्न रक्ताक्त मस्तक जब सिढ़ियोंसे लुढ़कते लुढ़कते सप्तम सोपान पर उपस्थित हुआ, मूलराजने उसको रख छोड़ा। विजय सोलाङ्कीने यह सुन करके कहा था—यदि तुम सिढ़ीके नीचे तक मस्तके लुढ़क जाने देते, तुम्हारा वंश चिरकाल पट्टनमें राजत्व करता—अब तुम सात पुरुष पर्यन्त ही पट्टनमें राजत्व कर सकोगे। जो हो, यह निश्चित रूपसे निरूपित नहीं, चावड़ लोग किस प्रकृत वंशोद्भव हैं।

किसी समय गुजरातका समस्त उपकूल चावड़ राज्यका अन्तर्भुक्त था। महमूद गजनीके आक्रमण समयको सोमनाथ-पट्टनाधिपति चावड़वंशीयोंके अधिकारमें रहा।

अनहलवाड़पत्तनका प्राचीन गौरवचिह्न अद्यापि वर्तमान है। इसके भग्नावशेषमें मर्मर पत्थरकी बहुतसी मूर्तियां मिलती हैं। वहां लोग इनको जला करके चूना बनाते थे। डाकखानेके पास किसी मन्दिरमें शिव-पार्वतीकी मूर्ति और ८०२ संवत्की खोदित एक शिलालिपि लगी है।

चावण्ड (चामुण्ड)--बंबई प्रान्तके पूना जिलेका एक पर्वत। इसमें एक बहु प्राचीन दुर्ग है। यह पहाड़ जूनानगरसे १० मील वायुकोण और नानाघाटसे १० मील अग्निकोणको पड़ता है। चावण्ड, झिन्दा, हड़सर और शिवनेर चारों किले नाना गिरिपथोंकी रक्षा करते हैं। चावण्ड दुर्ग स्वभावत: अति दुरारोह है। परन्तु इसके कृत्रिम प्राचीरादि उतने सुदृढ़ न थे। १८२० ई०को किले पर चढ़नेकी जगह तोपसे उड़ा दी गयी है। आजकल सिवा पहाड़ी लोगोंके उस पर कोई भी पहुंच नहीं सकता। इसके शिखर देशमें चावण्डबाई (चामुण्डा) देवीका मन्दिर है यहां जल अधिक परिमाणमें मिलता, परन्तु अन्यान्य सामग्री अच्छी नहीं पायी जाती। १४८६ ई०को अहमदनगरके निजामशाही वंशस्थापयिता मलिक अहमदने चावण्ड अधिकार किया था। १५९४ ई०को २य निजाम बुरहानके शिशुपुत्र बहादुर प्रायः एक वर्ष काल चावण्ड किलेमें कैदी रह करके दूसरे वर्ष अहमदनगरके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। १६३७ ई०को शाहजीने चावण्ड अर्थात् जन्द दुर्ग शत्रुओंको दे डाला।

१८१८ ई०को महाराष्ट्र-समरके समय मेजर एल्डरिज चालित एकदल सैन्य चावण्ड दुर्गके अधिकारको प्रेरित हुआ। १ मईको रानाको अंगरेजी फौजके किलेमें सौसे अधिक गोले मारने पर सवेरे दुर्गस्थ १५० मराठा सिपाहियोंने पराजय स्वीकार कर लिया।

चावल (हिं० पु०) १ निस्तुष धान्य, धानके बीजकी गुठली, धान कूटने पर तुष आदि पृथक् हो कर जो अंश अवशिष्ट रहता है, तण्डुल।

क्षेत्रगत होने पर शस्य, तुषयुक्त होने पर धान्य और तुषरहित होने पर उसको चावल कह सकते हैं। इन चावलोंको उबालनेसे भात या अन्न बन जाता है। शालितण्डुलके अन्नसे भली भांति चरु बना कर सूर्यदेवको चढ़ानेसे चावलकी संख्याके अनुसार सूर्यलोकमें वास

* किसी कविने वनराज कर्तृक अनहलपुर स्थापित होनेकी वर्णना करके उसका दिग्वर्णन इस प्रकार लिखा गया है—

"प्रथम चाड़ चक्रेश शब्द गणवीन सुनायो।
अर्बुद तीर्थ गंगा सेन उत्तर दिशि पायो॥
परवरियो परमार वास भिनमाल बसायो।
नवकोटी करनेव खेव गाजनी खसायो॥
भोग विभोग सबु [illegible] यत तन [illegible]कियो रहु।
बनराजकुंवर जो वासियो दसमो अनहलपुर दुरंग॥

होता है। सप्तमीतिथिमें चढ़ाना तो और भी फलप्रद है। (तिथितत्त्व)

चावल भारतवर्षका एक प्रधान खाद्य है। प्रधान वाणिज्य-द्रव्य कहनेमें भी कोई अत्युक्ति नहीं। युक्त-प्रान्त तथा अयोध्या आदि स्थानोंमें गेहूं, जुआर, मकई आदि अनाज खाद्यरूपमें व्यवहृत होते हैं, किन्तु चावल नहीं खाये जाते हों, ऐसा भी नहीं है। तात्पर्य यह है, कि भारतवर्षके सभी स्थानोंमें धान होते हैं तथा सभी जगहके लोग थोड़े बहुत चावल खाया करते हैं। चावल को अग्निकी सहायतासे पानीमें रांधनेसे भात बनता है। बङ्गालमें तो भात ही जोवनधारणका प्रधान उपाय है। लोग अन्यान्य उपकरणोंके साथ भात खाते हैं अन्य द्रव्यके न मिलने पर कुछ दिनों तक सिर्फ भात खा कर ही जोवनधारण किया जा सकता है। अतएव चावलको जीवनीशक्तिका रक्षक भी कहा जा सकता है।

जमीन पर हल जोत कर धान बोनेसे धान उत्पन्न होते हैं। धान पक जाने पर उनको खेतसे काट कर खलियानमें ले जाते हैं। वहां उनको भाड़ते हैं। पीछे धानको कूट कर चावल बनाते हैं। भारतवर्षमें १०००० प्रकारके धान्य होते हैं और उतने ही प्रकारके चावल भी देखनेमें आते हैं। इन विविध प्रकारके चावलोंको आकृति और गठनप्रणालीका वर्णन करना असम्भव है। सूक्ष्मदृष्टिके अनुसार इनको आकृति एक दूसरेसे जुदी जुदी हैं, मामूली तौर पर देखनेसे बहुतोंकी आकृति एक ही तरहकी हैं।

चावलको साधारणत: दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—एक अरवा और दूसरे उसना। धानको सिर्फ धूपमें सुखा कर कूटनेसे जो चावल बनते हैं, उनको आतप वा अरवा कहते हैं। हिन्दू-मतानुसार अरवा चावल ही परिशुद्ध हैं, ब्राह्मणोंको ऐसे चावल ही खाने चाहिये। उसना चावल बनाना हो, तो पानोमें भिगो कर फिर उबालें तथा उबल जाने पर सुखा कर कूटें। ऐसा करनेसे उसना चावल बनेंगे। दक्षिणदेशके कोड़गराज्यमें एक रात धानोंको भिगो रखते हैं। दूसरे दिन सुबह आध घण्टे तक उबाल कर उनको १५ दिन तक छांहमें सुखाते हैं, पीछे २ घण्टे तक धूपमें सुखा कर कूटे जाते हैं। कूटते समय प्रत्येक धानके ४-५ टुकड़े हो जाते हैं। इस चावलको कोड़गमें 'ऐदुनगुअक्कि' कहते हैं, इसको धनी लोग खाते हैं। ब्राह्मणविधवाओंको उसना चावल खाना शास्त्रानुसार निषिद्ध है। बङ्गदेशमें उच्च घरको विधवाएं अरवा चावलके सिवा अन्य कोई भी चावल नहीं खातीं, न खाना ही उचित है

धानोंके भेदसे चावल भी आमन (अगहनो) आउस (भदई), बोरो आदि श्रेणियोंमें विभक्त हैं। आमनके सिवा अन्य कोई भी चावल देवताको उत्सर्ग नहीं किये जाते।

ओखलीमें धान कूटकर चावल निकाले जाते हैं। पहले तुष (धानका छिलका) पृथक् होता है। दूसरी बारमें किनकी (खुद्दी) निकलती है। सूपसे तुष और किनकी को फटक कर निकाल देनेसे चावल मिलते हैं। आतपकी अपेक्षा उबाल कर चावल बनानेसे अधिक चावल होते हैं। ओखलीके सिवा आजकल मशोनसे भी धान कूटते और चावल बनते हैं।

चावलसे भात, पलान्न, लावा, पिष्टक आदि खाद्य बनते हैं। पिष्टक बनानेके लिए पहले चावलको भिगो कर पीछे सुखा कर पीस लेना चाहिये।

लावाके चावलोंको बनानेका तरीका भातके चावलसे पृथक् है।

वर्तमान समयकी पृथिवीमें प्रायः सर्वत्र चावल व्यवहृत होते हैं। पहले यूरोप और अमेरिकामें चावल नहीं मिलते थे। किन्तु चोनमें बहुत पहलेसे ही चावलका उल्लेख पाया जाता है। हमारे अथर्ववेदमें चावलका वर्णन है। (आमन देखो।) बाबिलन देशमें भी चावलका व्यवहार बहुत पहले है।

एक वर्षके बाद ही चावलको पुराने कह सकते हैं। नये चावल खानेमें कुछ अच्छे लगते हैं, किन्तु कुछ भारी होते हैं। पुराने चावल बहुत फायदेमन्द हैं।

पुराने चावल पीड़ित और रोगसे उठे हुए व्यक्तिको पथ्यरूपमें दिये जा सकते हैं। तण्डुलचूर्णको अदरख और मिर्च आदिके साथ पानीमें उबालनेसे यवागू बनती है। यह यवागू भी रोगीके लिए पथ्य है। बङ्गाल आदि प्रान्तोंमें गरीब गृहस्थ अपने सुबह सामके कलेवाके लिए

चावल भून कर लावा बना रखते हैं। यह पीड़ित व्यक्तिको भी पथ्यरूपमें दिया जा सकता है। चावल, दूध और मीठेसे जो खीर बनायी जाती है, वह भी खूब स्वादिष्ट होती है। डा० पावल साहबका कहना है— मूत्राशयरोग तथा सर्दी आदिकी बीमारियोंमें कभी कभी चावल दिये जाते हैं, तप्तजलज क्षत और दग्धस्थान पर चावलका प्रयोग करनेसे विशेष लाभ होते देखा गया है। कुछ पके और आखिरमें सीझे हुए चावलोंको नेपाल आदि देशोंमें बकवा कहते हैं। यह भी पीड़ित व्यक्तियोंको पथ्यरूपमें दिया जाता है। चावलमें रेचक-गुण अन्यान्य अनाजोंसे कम है, इसीलिए भातका माड़ उदरामयादि रोगोंमें दिया जाता है। सब चावलोंके गुण एकसे नहीं हैं। गेहूं जितने पुष्टिकर हैं, चावल उतने नहीं, चावलमें नाइट्रोजनके अंश थोड़े हैं। चावलका धोवन विशेष स्निग्धकारी है। प्रदाहिक रोगमें चावलका धोवन व्यवहार करनेसे लाभ पहुंचता है। चावलके धोवनमें नीबूका रस और चीनी मिलानेसे वह सुखाद्य हो जाता है। अम्लरोगमें यही काथ दिया जाता है। चावलोंकी पुल्टिश और लेई यथेष्ट उपकारजनक है। उदरामय और हैजेकी बीमारीमें चावलका पानी कषाय-रूपमें व्यवहृत होता है।

भारतवासियोंका प्रधान खाद्य है चावल। मणिपुर आदिकी तरफ घोड़ों और पाले हुए पशुओंको भी चावल खिलाते हैं। युक्तप्रान्तमें पीलीभीतके चावल बहुमूल्य हैं। टाना आदि प्रदेशोंमें एक प्रकारके सुगन्धित चावल मिलते हैं। ब्रह्मदेशके चावल उतने अच्छे नहीं होते। बङ्गालके चावल सफेद और स्वादु होते हैं। पटनाके चावल अंग्रेजोंके अधिक प्रिय हैं। उच्चप्रदेशके चावल साधारणतः स्वादविहीन होते हैं। इन चावलोंके खानेसे कोष्ठमान्द्य हो जाता है।

भारतीय चावलोंसे बहुत मादकद्रव्य बनते हैं। गत ३५० वर्षसे पश्चिम और दक्षिण भारतमें चावलसे मद्य बननेका उल्लेख देखनेमें आता है। भारतमें प्रायः सर्वत्र ही चावलसे शराब बनाई जाती है।

बङ्गदेशमें चावलके चूरसे विविध प्रकारके पिष्टक बनाये जाते हैं। इसलिए वहां इसका रोजगार भी है। ब्रह्मदेशसे प्रति वर्ष ५०००० टन चावलके चूर्णकी रफ़्तनी होती है। चावलको पहले पानीमें भिगो कर फिर चक्कीमें पीस कर उसका चून बनाया जाता है। पीछे उसे धूपमें सुखाते अथवा पहले चावल सुखा कर पीछे पीस कर बेचते हैं। यूरोपीय अंग्रेज और देशी क्रिश्चियन लोग ओपर नामक तण्डुलचूर्णके पिष्टक बहुत खाया करते हैं।

१०० भाग चावलमें निम्नलिखित पदार्थ हैं—

जल	१२·८
अण्डलाल	७·३
श्वेतसार	७८·३
तैलाक्त पदार्थ	·६
तन्तु	·४
जल	·६

एक सेर साफ चावल रांधनेसे वह दो सेरसे भी ज्यादा भारी हो जाते हैं। चावलमें खनिज पदार्थोंके अंश बहुत कम हैं। भातका मांड़ निकाल देनेसे उसके साथ भी खनिजके कुछ अंश निकल जाते हैं। इसलिए चावलोंमें उतना ही पानी देना चाहिये जितना उसमें जल जाय, उसके अतिरिक्त पानी न देना ही अच्छा है। डा० पेन कहते हैं, कि १०० भाग सूखे चावलोंमें नाइट्रोजन ७·५५, कार्बोहाइड्रेटिस् ८०·७५, चरबी ८ और खनिज पदार्थ ·६ अंश है। चावलका रासायनिक संयोग आलूके समान है।

युक्तप्रदेशके लोग आटा, ज्वार, मका आदि ही ज्यादा खाते हैं सही, पर कभी कभी चावल भी खाया करते हैं। मराठी ब्राह्मण साधारणतः भात ही खाते हैं। मन्द्राजके दक्षिण और बम्बईके पश्चिमांशमें चावल ही प्रधान खाद्य है। चावल खानेवालोंको चाहिये कि, उसके साथ दाल और शाकसबजी आदि खाया करें। जो मांस नहीं खाते, उनके लिए दाल आदिका खाना ठीक है, इससे चावलके यवक्षारका न्यून अंश परिपूरित होता है।

बङ्गालमें चावलकी पैदायश बहुत ज्यादा होती है। विभिन्न उपायोंसे उक्त प्रान्तमें चावलकी आमदनी और रफ्तनी होती है। अन्तर्वाणिज्यका ठीक हिसाब मिलना दुर्घट है। हां, रेल, ष्टीमर आदिमें जो चावलोंकी आम-

इनी रफ़्तनी होती है, उसीकी रिजष्ट्री होती है, इसलिए उसका परिमाण किसी तरह लिखा जा सकता है। छोटी छोटी नावोंमें भरा कर जो एक जगहसे दूसरी जगह चावल भेजे जाते हैं, उसका परिमाण स्थिर नहीं किया जा सकता। १८८८ ई०में आसाममें बङ्गालमें ६३७७६३ मन चावल आये हैं। बङ्गाल, युक्तप्रान्त और अयोध्यामें ८२६१८० मन तथा आसाममे ३३५३२४ मन चावलकी रफ्तनी हुई है। कलकत्तेमें ही सबसे अधिक चावलोंकी आमदनी होती है। बङ्गालके भिन्न भिन्न स्थानोंसे १२८६२८८२ मन, आसाममे ५३३२४ मन, युक्त-प्रान्तसे २८४३ मन और पञ्जाबसे ८४ मन चावल आये हैं। जलपथसे, बाकरगञ्ज और साहबगञ्जसे १६७३३६२ मन, मेदिनीपुरसे १३५६४७३, झालकाठीसे ६४८१०५ मन, दिनाजपुरसे ४३८६६१, हुगलीसे ३३६०४८, बरिशालसे ३०३७६३ तथा १६ बन्दरोंमें प्रत्येक बन्दरसे प्रायः २ लाख मन चावल कलकत्तेमें आये हैं। कलकत्तेमें रेलके जरिये बर्धमानसे भी बहुत चावल आते हैं।

नेपाल, सिकिम और भूटानसे १०३८८८१ मन चावल बङ्गालमें तथा ४७५२६ मन चावल उक्तप्रदेशोंमें गये हैं। पूर्वोक्त १८८८ ई०में ब्रह्मदेश, चट्टग्राम और बालेश्वरसे ५८३८०५ मन चावलकी रफ्तनी हुई है।

भारतवर्षके बाहर भी बङ्गालसे चावल काफी जाते हैं। बाह्य देशोंमें सिंहलमें ही बङ्गालके चावलोंकी अधिक खपत है। सिंहलके बाद ग्रेट ब्रिटेनका नम्बर है। यूरोपमें १ लाख टनसे भी अधिक चावल व्यवहृत होते हैं। उक्त वर्षमें मरिचद्वीपमें चावलकी आमदनी कुछ काम हुई थी। जर्मन राज्यमें भी आमदनी पहली सालकी तरह नहीं हुई थी, किन्तु फ्रान्समें बहुत कुछ बढ़ गई थी।

एक वङ्गदेशमें ही प्रायः ४००० प्रकारके चावल पाये जाते हैं। कुछ नाम नीचे लिखे जाते हैं—

(१) आउस (भदई) (२) आमन (अगहनी) (क) छोटना (ख) बड़ान, (३) बोरो, (४) रायदा, (५) बेनफुली, (६) कामिनी, (७) बासमती, (८) राँधुनी पगला, (८) काजला, (१०) लक्ष्मीभोग, (११) उड़ि इत्यादि। इसे ८म प्रकारके चावल अति सुगन्धित होते हैं। भद्र लोग 'छोटना' आमनके चावल खाते हैं। पटनाके चावल जो लाल, छोटे और मोटे होते हैं साधारणतः गरीब लोग खाते हैं। मुसलमान लोग पीली-भीतके चावल ज्यादा पसन्द करते हैं। ब्रह्मदेशके चावल-में कङ्कड़ बहुत निकलते हैं, इसलिए वे अस्वास्थ्यकर हैं।

बङ्गालमें प्रायः ६६ लाख आदमी रहते हैं और ४२ लाख तरहकी धानकी जमीन हैं। चावलोंकी जितनी आमदनी होती है, उसके अनुसार रफ्तनी बाद दे कर—यदि हिसाब लगाया जाय तो बिहारमें प्रतिदिन प्रत्येक आदमी १३ छटाक तथा बङ्गालके अन्यान्य स्थानोंके अधिवासी ११ छटाक चावल खाते हैं।

ढाका विभागमें निम्नलिखित प्रकारके चावल पाये जाते हैं—

रायन्दा, बाउवा, खामा, रोया, साल, भेसलान, बोये-लामाइटा, सूर्यमणि, लेपो और बोरो।

फरीदपुर जिलेमें आमन, आउस, बोरो और रायदा चावल ही प्रधान खाद्य है। यहां आश्विनी आमनके चावल भी काफी मिलते हैं। साधारण आमन खानेमें सबसे उमदा होते हैं। यशोर जिलेमें भी उक्त प्रकारके चावल उपजते हैं। यहां दोघाके चावल काफी मिलते हैं। खुलना जिलेमें तरह तरहके 'बालाम' चावल होते हैं। बाकरगंज जिलेके आमन मोटे और चिकने इस दो भागोंमें विभक्त हैं। बाकरगंजके 'बालाम' चावल विशेष प्रसिद्ध हैं। नदिया जिलेमें कार्तिक मासमें 'फलि' नामके चावल खाये जाते हैं। रङ्गपुरमें 'काउनिया आउस' 'साधारण आउस', जालि आउस, 'रोपा' और 'भुंइग्रा' नामके चावल होते हैं। निम्न बङ्गके बोरो चावल दो प्रकारके होते हैं—'कालपिन बोरो' और 'छटा बोरो'। छोटे नागपुरमें गुरुहन्, लहुहान और तेवान् चावल प्रधान हैं। मानभूम जिलेके चावलोंके नाम—'पोड़ानुयनर' और 'आमन'। उड़िष्यामें नाना प्रकारके चावल होते हैं—सातिका, कुलिआ, आखिना, खेरा, कलासुर, राङ्गे, मतरा, धङ्गिआसिना, नृपतिभोग, गोपालभोग, बासमती, बन्दिरि, पियरा, कसुन्दा, टालुया, लक्ष्मीनारायणप्रिय, बामनवहा, अन्तरखा, सरिषफुल, दुधसर, नियालि, दोकयालि, हार्वसातिया, बकरि, ईङ्गिरि, चोलि, हाकुआ, इत्यादि।

१८८८ ई॰में मन्द्राजसे २५७७१३६ मन चावलकी रफ़्तनी हुई थी। फी सदी ७० मन चावल सिंहलमें, ११ मन बम्बई प्रदेशमें, ८ मन गोआमें और ४ मन चावल ग्रेट ब्रिटनको गये थे। मन्द्राज प्रान्तमें सम्बा, (कदम,) कलवन, चिना, (जदम) कार, (मूटा पेरम्), मनकट, मोकानम्, पुमपाले, पिसिनि, पुनेमा पैहरि, मिलापो आदि असंख्य प्रकारके चावल पाये जाते हैं। तञ्जाउरमें कार और शिआनम चावल ही प्रधान खाद्य है। कोडुगके लोग अकसर दोनो वक्त चावल खाते हैं। यहांके सम्बवट्ट और केसारी चावल उत्तम खयोग्य हैं।

युक्तप्रान्त और अयोध्यामें निम्नलिखित चावल होते हैं—मङ्हा, बासमती, वासफल, झिलमा, झालि, कपूर चोना, गजेश्वर, बेन्दो, गजबेल, अञ्जनगा, झन्दो, खोनदार इत्यादि। पीलोभीत, जगा, पूया, हाकुया आदि नेपालको चावल हैं।

युक्तप्रदेशसे बहुत चावल पञ्जाबको भी जाते हैं। बङ्गालसे प्रायः ५० हजार मन चावल पञ्जाबको जाता है। पञ्जाबसे राजपूताना, कराची, अयोध्या आदि प्रान्तों को चावलकी रफ़्तनी होती है। इस प्रदेशमें चहोरा, बेगमी, झोला, रतङ, सुखचैन, मुश्कि, खसु, कलोना आदि चावल प्रचलित हैं। काश्मीरमें सफेद और लाल, दो तरहके चावल मिलते हैं।

मध्यप्रदेशमें चावलोंकी आमदनी प्रायः १२०२८० मन तथा भिन्न भिन्न स्थानोंको रफ़्तनी ८४२०२४ मन होती है। इस प्रदेशमें टिञ्चूर चावल सबसे अच्छे हैं, यहां चतरी, राधाबालाम, अम्बमोहर, कालिका, मुड़, रामकेल, दूधराम, केल तेलासी, लनबेनो, सारिहानि, हकलूमी आदि नाना प्रकारके चावल होते हैं पेशावरके चावलसे उत्कृष्ट पलाव बनता है।

ब्रह्मदेशका चावलका वाणिज्य प्रसिद्ध है। १८८१ ई॰से १८२० ई॰ तक प्रति वर्ष यहांसे प्रायः २० लाख टन चावल विदेशको गये हैं। १८८० ई॰में निम्न ब्रह्मसे करीब ११ लाख मन चावल अन्यत्र रवाने हुए थे।

१८८८ ई॰में आसामसे ५,६१,११७ मन चावलकी रफ़्तनी हुई थी। आसामके चायके बगीचोंमें ज्यादातर बङ्गालके चावल ही व्यवहृत होते हैं। १८८६ ई॰में ढाकासे प्रायः २५००० मन चावल आसामको गये थे। आसाममें नागा, मिसमी, लुसाई, त्रिपुरा आदि स्थानोंसे भी चावल आते हैं और आसामके चावल भूटान, तोयाङ्ग आदि स्थानोंको जाते हैं। आसाममें लाही, बोर, आश्, बारो, आतिस, मुराली, साइल, आमन, कतरिया, बूरा, दुमई, असरा इत्यादि चावल प्रधान हैं।

भारतवर्षमें चावलोंकी जितनी उपज है, उतनी किसी भी देशमें नहीं। १८२० ई॰में भारतसे २, ६७, ७४,२५१ हण्ड्रेडवेट चावल विदेशोंको भेजे गये थे। भारतवर्षमें जितने चावल रहते हैं उससे मालूम होता है, कि आदमी पीछे लगभग ७३ सेर चावलका खर्च है। कुछ चावल तो पालतू जानवरोंके लिए खर्च होते हैं और कुछ अप्रतिहत कारणसे नष्ट हो जाते हैं। १८८८ ई॰में ब्रह्मदेशसे भारतके लिए प्रायः २७००० मन चावलकी रफ़्तनी हुई थी। इसके सिवा कोचिन, जापान, इटली, स्पेन आदि स्थानोंमें भी यथेष्ट चावल उत्पन्न होते हैं। १८८० ई॰में भारतीय चावल, ग्रेट ब्रिटन, माल्टा, फ्रान्स, इजिप्ट, जर्मनी आदि यूरोपीय देशोंमें प्रायः १३८७७ हण्ड्रेडवेट, सिंहल, अरब, पारस्य आदि एशियाके विभिन्न देशोंमें ८७२२ हण्ड्रेडवेट, मरिचद्वीप, रुनिओ, इष्टकोष्ट आदि अफ्रिकास्थ देशोंमें २२७०, अमेरिकाके पश्चिम-दक्षिण प्रदेशमें और कानाड़ामें १७५८ तथा अष्ट्रेलियामें ५६ हण्ड्रेडवेट चावलकी रफ़्तनी हुई थी।

विदेशोंमें चावल तीन प्रकारके कामोंमें व्यवहृत होते हैं, यथा-खाद्य, कलप और मद्यके उपकरण। ब्रह्मदेशके चावल खूब मोटे होते हैं और खानेमें भी उमदा नहीं होते। इस चावलसे साधारणतः कलप और शराब बनती है। बङ्गदेशसे एक तरहके उत्कृष्ट चावल यूरोपको भेजे जाते हैं, जिसको अंग्रेज लोग खानेके काममें लाते हैं। किन्तु अधिकांश चावल शराबके लिए व्यवहृत होते हैं। १८२० ई॰में २२६२८२ हण्ड्रेडवेट चावलोंसे शराब बनाई गई थी।

भारतवर्षसे विदेशको जो चावल जाते हैं, उन पर गवर्मेण्ट महसूल लगाती है। यह महसूल फी सदी १५) रु॰ लगता है। १८६० ई॰में धान और चावलकी रफ़्नीके

कारण गवर्मेंटको भारतसे ७५,६४,६८५ रु० टैक्सके प्राप्त हुए थे।

अंगरेजी राज्यसे पहले भारतके विशेषत: बङ्गालके चावल विदेश नहीं जाते थे। इसलिए उस समय चावल खूब सस्ते मिलते थे। इस समय रेल, ष्टीमर आदिके आधिक्यके कारण चावल शीघ्र ही एक जगहसे दूसरी जगह जाया करते हैं, इसलिए मूल्य खूब बढ़ गया है। भारतके चावल यूरोप, अमेरिका आदि देशोंको चले जानेके कारण हर साल यहां अन्नकष्ट हुआ करता है। भारतमें अधिकतर गरीब लोगोंका ही वास है। रफ्तनीके कारण चावल मंहगी हो जानेसे बहुतोंको तो एक बार खाने मिलता है तथा कहीं कहींके लोगोंको उपवास भी करने पड़ते हैं। इतिहासमें लिखा है, शायस्ताखाँके शासनकालमें बङ्गालमें रुपयेके ८८ मन चावल मिलते थे। किन्तु अब तो रुपयेमें ८।८ सेरसे ज्यादा मोटेसे मोटे चावल भी नहीं मिलते। वर्तमानमें हर साल भारतमें कहीं न कहीं अकाल पड़ते देखा जाता है और बहुतसे लोग भूखों मर जाते हैं। परन्तु हाय! विदेशोंको रफ्तनी बिना बन्द हुए इस विपत्तिसे किसी तरह भी छुटकारा नहीं मिल सकता।

भावप्रकाशके मतसे—विभिन्न चावलोंमें विभिन्न गुण हैं। शालि धानसे जो चावल बनते हैं वे स्निग्ध, बलकारक, मलके लिए काठिन्य और अल्पताकारक, लघुपाक और रुचिकारक, स्वरप्रसादक, शुक्रवर्द्धक, शरीरके लिए उपचयकारक, ईषत् वायु और कफवर्द्धक, शीतवीर्य, पित्तनाशक तथा मूत्रवर्द्धक हैं। दग्धभूमिजात शालिधान्यके चावल कषायरस, लघुपाक, मलमूत्रनिःसारक, रूक्ष और कफनाशक होते हैं। खेतमें हल जोत कर धान बोनेसे जो धान होते हैं, उसके चावल वायु और पित्तनाशक, भारी, कफ और शुक्रवर्द्धक, कषायरस, मलके लिए अल्पताकारक, मेधाजनक तथा बलवर्द्धक हैं।

अकृष्ट भूमिमें स्वभावतः अपने आप जो धान होते हैं, उसके चावल कुछ तिक्तरसयुक्त, मधुर, कषायरस, पित्तघ्न, कफनाशक, वायु और अग्निवर्द्धक, कटु, तथा विपाक होते हैं।

एक बार उखाड़ कर जो बोये जाते हैं, उनको वापित धान्य कहते हैं। गुण—मधुर, कषायरस, शुक्रवर्द्धक, बलकारक, पित्तघ्न, कफवर्द्धक, मलके लिए अल्पताकारक, गुरु और शीतवीर्य।

अवापितधान्य अर्थात् जंगली धानके चावल वापित धानोंसे कुछ हीनगुणयुक्त होते हैं।

रोपित धान्यके चावल नूतन अवस्थामें शुक्रवर्द्धक और पुराने होने पर लघु होते हैं। अति रोप्यारोप्य चावल, रोपारोपा धानके चावलोंसे अधिक गुणयुक्त तथा लघुपाक होते हैं। शालिधान्यके चावलोंमें रक्तशालि धानके चावल ही श्रेष्ठ हैं। इस चावलको दाउदखानी चावल कहते हैं। गुण—बलकारक, वर्णप्रसादक, त्रिदोषनाशक, चक्षुको हितकर, मूत्रवर्द्धक, स्वरप्रसादक, शुक्रवर्द्धक, अग्निकारक, पुष्टिजनक तथा पिपासा, ज्वर, विष, व्रण, श्वास, काश और दाहनाशक। महाशालि आदि धानके चावल रक्तशालि तण्डुलकी अपेक्षा अल्पगुणविशिष्ट हैं। व्रीहिधान्यके चावल मधुर विपाक, शीतवीर्य ईषत् अभिष्यन्दी तथा मलवेरिक और षष्टिक चावलके समान हैं। यह षष्टिक धानके चावल उदरस्थ होते ही परिपाक होता है। इसको व्रीहितण्डुल भी कहते हैं। यह मधुररस, शीतवीर्य, लघु, मलवेरिक, वातघ्न, पित्तनाशक तथा शालितण्डुलकी भाँति गुणयुक्त होते हैं। यह चावल बहुत प्रकारके हैं—जिनमें षष्टिकधाना तण्डुल ही श्रेष्ठ गुणयुक्त हैं। यह चावल लघु, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, मधुररस, मृदुवीर्य, धारक, बलकारक, ज्वरनाशक और रक्तशालि चावलके समान गुणयुक्त हैं।

तृणधान्यके चावल—शुष्क गरम, कषाय, मधुररस, कटु विपाक, लघु, लेखन गुणयुक्त, रूक्ष, क्लेदशोषक, वायुवर्द्धक, मलमूत्ररोधक तथा पित्त, रक्त और कफनाशक होते हैं।

कङ्गुधान्यके चावल—वायुवर्द्धक, शरीरके लिए उपचयकारक, भग्नसन्धानकारक गुरु, रूक्ष, कफनाशक, शुक्रवर्द्धक तथा अतिशय गुणकर हैं। चीनाकधान्यके चावल कङ्गुधान्यके समान हैं।

श्यामाक धान्यके चावल—शोषक, रूक्ष, वायुवर्द्धक, कफ और पित्तनाशक हैं। कोद्रव-तण्डुल वायुवर्द्धक, धारक, शीतवीर्य, पित्त और कफनाशक हैं। वनकोद्रव

धान्यके चावल उष्णवीर्य, धारक और अत्यन्त वायुवर्द्धक हैं। नीवार तण्डुल शीतवीर्य, धारक, पित्तनाशक तथा कफ और वायुजनक है।

नये चावल मधुररस, गुरु और कफकारक होते हैं तथा पुराने लघु और हितजनक। धान एक वर्ष बाद पुराने हो जाते हैं। ऐसे धानके चावलको पुराने कह सकते हैं।

चावल पुराने होने पर लघु तो होते हैं, पर वीर्य ह्रास नहीं होता। ज्यादा पुराने होने पर क्रमशः उनका वीर्य ह्रास होता रहता है। (भावप्र०) धान्य देखो।

अगहनमें नवान्न अर्थात् पार्वण श्राद्ध करके नये चावल खाये जाते हैं। अगहनमें नवान्न न किया जाय, तो माघ वा फाल्गुन मासमें पार्वन श्राद्ध करके तथा आत्मीय स्वजन आदिको नये चावल दे कर खुद खाना चाहिये। जिनको पार्वण-श्राद्ध करनेकी सामर्थ्य नहीं उनको कमसे कम देवता और पितरोंको भोज्य उत्सर्ग करके नये चावल खाना विधेय है। शुभदिन और तारा विशुद्धिमें नये चावलका अन्न खाना श्रेयस्कर है। नवान्न देखो। भ्रष्ट तण्डुलके गुण ये हैं—रूक्ष, सुगन्धि और कफनाशक तथा पित्तकारी। (राजव०)

२ एक तरहको तौल जो एक रत्तीके ८वें भागके बराबर होती है। ३ भात, राँधे हुए चावल। ४ छोटे छोटे बीजके दाने जो किसी प्रकारसे खानेके काममें आते हों।

चावुण्ड—दाक्षिणात्यके प्राचीन सिन्दवंशीय राजा। इस नामके सिन्दराजवंशमें दो नृपति रहे। प्रथम चावुण्डके नामोल्लेखको छोड़ करके दूसरी कोई कीर्ति सुन नहीं पड़ती। इनकी खोदित शिलालिपि मिली है। वर्तमान बीजापुरके दक्षिण भाग और धारवारके उत्तर-पूर्व भागको ले करके पुराना सिन्दराज्य गठित था। २य चावुण्ड आनुमानिक १०८४ शक (११६१ ई०)को प्रादुर्भूत हुए। यह २य आचुगीके पुत्र, १म परमाड़ीके कनिष्ठ भ्राता और प्रतीच्य चालुक्यराज ३य तैलके सामन्तराज थे। देमल देवीके गर्भसे चावुण्डके आचुगी और परमाड़ी नामक दो पुत्रोंका जन्म हुआ। इनके समयकी एक शिलालिपि अरशीविदी और दूसरी पत्तदकल नामक स्थानसे निकली है। शेषोक्त अनुशासन १०८४ शकको खोदित हुआ। उस समय यह विशत कलावाड़ी, सप्तति किशुकाड़ और सप्तति बागदग प्रभृतिके अधीश्वर रहे। देवला देवी और राजपुत्र आचुगी प्रतिनिधिस्वरूप पत्तदकलमें राजत्व करते थे। कलचुरी नृपति बिज्जलकी भगिनी चावुण्डकी २य महिषी रहीं। इनके गर्भसे चावुण्डके विज्जल और विक्रम नामक और दो पुत्र उत्पन्न हुए। उस समय यह मालूम नहीं पड़ता, कलचुरि राजाओंके अधीन जैसे थे। चावुण्ड कलचुरि राजकन्याको विवाह करके कुछ स्वाधीनता भोग करते थे। ११८०-१ ई०को बोध होता है, विक्रमराज 'कलचुरिवंशीय' सङ्गमराजके सामन्त जैसे रहे। इसके पीछे सिन्द वंशका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता।

चाश—उत्तरपश्चिम सीमान्त प्रदेशके रावलपिण्डी जिलेका एक बड़ा शहर। यह रावलपिण्डीसे ३० मील पश्चिम पड़ता है। आजकल उसको फतेहजङ्ग कहते हैं। खुश्हाल-गढ़ और कालाबाग दोनों शहर जिन दो बड़ी राहों पर अवस्थित हैं, उन्हीं दोनों राहोंकी मोड़ पर यह शहर बसा है। यही उसकी उन्नतिका अन्यतम कारण है। इस शहरसे १ मील दूर कोई बड़ा पोस्ता है। वह २२५ फुट लम्बा, १६० फुट चौड़ा और २६ फुट ३ इञ्च ऊंचा है। इसकी चारों ओर औरभी बहुतसे प्राचीरोंका भग्नाव शेष है। इस समस्त भग्नावशेषको मिला करके इस अञ्चलके लोग चाशपोस्ता कहते हैं।

इस पोस्ताको पूर्व दिक् और इसीके अतिनिकट दूसरा भी एक छोटासा पोस्ता है। वह दैर्घ्यमें ५ फुट मात्र है।

इस प्रदेशके लोगोंको विश्वास है कि चाशपोस्तामें प्रचुर परिमाणसे धनसम्पत्ति प्रोथित है। किन्तु आज तक रुपया खर्च करके पोस्ता खोद धन सम्पत्ति निकालनेको किसीने भी साहस नहीं किया है।

चाश—बङ्गाल प्रदेशके मानभूम जिलेका एक ग्राम। यहां पुलिसका एक थाना पड़ा है।

चाशनी (फा० स्त्री०) १ आँच पर चढ़ाया हुआ चीनी, मिस्री या गुड़का गाढ़ा रस और मधुके जैसा लासदार रस। बहुत तरहकी मिठाईयाँ चाशनीमें डुबा कर बनाई जाती हैं। २ वह वस्तु जिसमें कुछ कुछ मीठा मिला हो। ३ चसका, मजा।

चाष (सं० पु०) चाषयति भक्षयति कर्णादिकं चाषि-अच्। १ स्वर्णचातक, चाहा पक्षी। २ नीलकण्ठ पक्षी (Coracias Indica), इसके संस्कृत पर्याय—किकीदिवि, नीलाङ्ग, पुण्यदर्शन, हेमतुण्ड, मणिग्रीव, स्वस्तिक, अपराजित, अशोक, विशोक, नन्दन, पुष्टिवर्द्धन इत्यादि हैं। स्मृतिके मतानुसार इस पक्षीको देख कर उक्त समस्त नाम पढ़नेसे कार्यकी सिद्धि होती है। इसकी हत्या करनेसे क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रको हत्याके बराबर पाप लगता है जिसके लिए प्रायश्चित्त स्वरूप चान्द्रायण व्रत करना पड़ता है।

"हत्वा चाषं कच्छपमेव च।...शूद्रहत्याव्रतं चरेत्।" (मनु ११।१३२)

'शूद्रहत्याव्रतं शूद्रविट्क्षत्रियवधहत्यु पाक प्रायश्चित्तं' (कुल्लुक)

इसके मस्तक और टेंटवाका रंग मटीला हरिताभ नीला होता है, कपाल कुछ लाल रंगका, गर्दन और उदर पांशुवर्ण, पुच्छमूल और पूंछ पीलाईको लिए नीला होती है। पूंछ जड़में पतली और पीछे फैली हुई होती है। पैरोंका रंग लोहिताभ पीतवर्ण, चोंच धूसरवर्ण और पलक पीले होते हैं। इसकी लम्बाई प्रायः १३ इञ्चको होती है।

यह पक्षी भारतवर्षमें सर्वत्र देखे जाते हैं। यूरोपमें और एसियाके अन्यान्य स्थानोंमें नीलकण्ठकी जातिके नानारूप पक्षी विचरण करते हैं।

भारतवर्षीय नीलकण्ठपक्षी घने जङ्गलमें नहीं रहते। ये जङ्गलके किनारे बगीचोंमें, खेतोंमें, झरनोंके पास और बस्तीके चारों तरफ रहते हैं। ये साधारणतः ऊंचे वृक्षकी चोटी पर बैठ कर कट् कट् शब्द और नाच करते हुए छोटे छोटे कीटपतङ्गोंको ढूंढ़ा करते हैं। जमीनमें किसी जीवित पतङ्ग या कीड़ेको देखते ही नीचे आकर उसे पकड़ लेते हैं और फिर उड़ कर वहीं पहुंच जाते हैं। लोग चौखूंटे जालमें जीवित धुरघुरा कीड़ेको बांध कर इनके बैठनेकी जगह पर रख देते हैं। ये आकर जरूर उस कीड़ेको पकड़ते हैं और खुद फांस जाते हैं।

नीलकण्ठ पक्षी वर्षाके प्रारम्भमें पेड़ोंकी खोहमें, टूटी फूटी भीतोंमें अथवा प्राचीन मन्दिरोंको खोहमें घोंसला बनाते हैं। इन घोंसलोंमें मादा नीलकण्ठ चिड़िया एक साथ ३।४ अण्डे देती हैं। इस समय ये बहुत ही कलहप्रिय और क्रोधित रहती हैं।

तैलगू भाषामें इस पक्षीको पालुपित्त कहते हैं। इन लोगोंको ऐसा विश्वास है कि, कम दूध देनेवाली गायको घासके साथ पालुपित्त (चाष) पक्षीके पर खिलानेसे वह अधिक दूध देने लगती है।

वराहमिहिरके मतसे यात्रा करते समय चाषपक्षी यदि उत्तरको तरफ मिले तो कार्यकी सिद्धि, दूसरको उस पक्षी नकुलके साथ बाईं तरफ मिले तो शुभ, दृष्टिके अग्रभागमें हो तो पापप्रद और पूर्वाङ्गमें यात्राके समान समझना चाहिये। (बृहत्सं० ८८।२०-४०) इसके सिवा यदि यह पक्षी रथ-ध्वजाके ऊपर बैठे, तो युवराजका अमङ्गल होता है। (बृहत्सं० ४८।८१)

चास (सं० पु०) १ चाष पृषोदरादित्वात् सत्वं। चाषपक्षी, नीलकंठ चिड़िया। २ इक्षुविशेष, एक तरहका ऊख या गन्ना, ईख। (देश०) ३ जोत, बाह।

चासकमान—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेका एक गांव, यह भीमा नदीके तीर पर खेम नामक स्थानसे ६ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। पेशवा लोगोंके समयमें इसने प्रसिद्धि पायी थी। लोकसंख्या प्रायः २२०० है। बालनजी बाजीराव पेशवाको कन्या रुक्मिणी बाईने यहां कई एक अट्टालिकाएं, बढ़िया घाट और महादेवका एक सुन्दर मन्दिर प्रतिष्ठित किया। वहां लिङ्ग सोमेश्वर कहलाता है। मन्दिर नाना प्रकार कारुकार्य खचित हैं। उसके आनुसङ्गिक अन्यान्य मण्डप और प्रस्तर-निर्मित दीपमालाएं और भी शोभा बढ़ाती हैं।

चासना (हिं० क्रि०) जोतना।

चासा—१ उड़ीसाकी खेती करनेवाली एक जाति। बहुतसे लोग अनुमान करते कि उक्त जातीय अनार्य होते, क्रमशः हिन्दू समाजमें घुस गये हैं। यह चार श्रेणियोंमें विभक्त है—ओड़चासा या मुण्डोचासा, बेनातिया, चुकुलिया और सुकुलिया। प्रत्येक शाखामें काश्यप और शालऋषि गोत्र प्रचलित है। चुकुलिया समुद्रकूलमें लवण प्रस्तुत करते है। इनका अपने गोत्रमें विवाह नहीं होता। उड़ीसामें समाज बन्धन शिथिल रहनेसे अनेक अनार्य जाति चासा दलभुक्त हो जाते हैं। इधर धन-

आलो चासा स्वयं लाङ्गल और कृषिकार्यादि परित्याग करके महान्तो उपाधि ग्रहणपूर्वक निम्नश्रेणीके काय-स्थोंमें परिगणित होनेकी चेष्टा करते हैं।

इनमें बाल्यविवाह और वयस्थका विवाह दोनों चलते हैं। बाल्यविवाह ही अधिक गौरवाह है। आठ वा नौ वर्षमें विवाह करके कन्याको यौवन प्राप्ति पर्यन्त स्वामीके पास नहीं जाने देते। बहुविवाहमें कोई विशेष बाधा नहीं। फिर स्त्री वन्ध्या न होने पर दरिद्रतानिबन्धनसे बहुतसे लोग दूसरी शादी नहीं करते। चासाओंमें विधवाविवाह प्रचलित है। वह साधारणतः देवरके साथ विवाह करती, देवर न रहनेसे इच्छानुसार अपर स्वामी ग्रहण कर सकती है। विधवाके विवाहमें आचारादि नहीं होते। दक्षिण हस्तके परिवर्तमें वामहस्त द्वारा पाणिग्रहण किया जाता है। स्वामी असती स्त्रीको छोड़ सकता है। ऐसे स्थानमें पञ्चायतमें उसका विचार होता है। स्त्रीको असती स्थिर होने पर स्वामी एक वर्षका खर्चा दे करके परित्याग करता है। परित्यक्ता स्त्री विधवाविवाहके नियमसे फिर विवाह कर सकती।

कितने ही चासा वैष्णव-सम्प्रदायभुक्त हैं। इनके पुरोहित वर्णब्राह्मण होते हैं। यह मृतदेहका अग्निसत्कार करते, कभी कभी समाधि भी दे देते हैं। समाधि देते समय शवके साथ अन्न और फलादि गाड़े जाते हैं। अग्निसत्कार करने पर कभी चिताका भस्म गाड़ा और कभी गङ्गाजलमें डालनेके लिये घड़ेमें रख छोड़ा जाता है। श्राद्धादि हिन्दुओंके नियमसे सम्पन्न होते हैं।

चासा अधिकांश कृषिजीवी है और यही उनका जातिगत व्यवसाय है। फर भी कुछ लोग वाणिज्य और नौकरी करते हैं। यह ब्राह्मणको छोड़ करके और किसीके घरमें कच्चा रसोई नहीं खाते।

२ हलवाहा, हल जोतनेवाला। ३ खेतिहर, किसान।

चासाधोबा—बङ्गालका कृषि-वाणिज्योपजीवी जातिविशेष। इनमें कोई कोई शिल्प और गृहनिर्माणादि भी करते हैं। चासाधोबा अपनेको वैश्याके औरस और वैदेह कन्याके गर्भसे उत्पन्न बतलाते हैं। वह यह भी कहते कि-चासा धोबाका साधारणतः खेती करनेवाले धोबी अर्थात् रजक-जैसा जो अर्थ लगाया जाता सम्पूर्ण भ्रमात्मक है। इनका प्रकृत अर्थ कृषि (चास)-का स्वामी (धव) अर्थात् आबाद जमीनका मालिक है। इनकी उत्पत्तिकी और भी कई एक कहानी है—किसी दिन ब्रह्माकी धोबिन मलिन वसनादि लेनेको पुत्रके साथ ब्रह्मलोक पहुंची थी पितामहने उस समय नानाकार्यमें व्यस्त रहनेसे पुत्रको बैठने कह करके धोबिनको लौटा दिया। लड़का भी थोड़ी देर अपेक्षा करके घर चला आया। इसी अवसरमें ब्रह्मा सब मैले कपड़े ले करके निकले और धोबीके लड़केको न देख करके सोचने लगे—किसी असुरने उसे खा तो नहीं डाला। जो हो धोबिनको सान्त्वना देनेके लिये उन्होंने इसके पुत्र जैसा एक बालक बनाया था। इसी समय धोबिन यथापूर्व अपने पुत्रके साथ वहाँ जा पहुंची। ब्रह्मा अपने भ्रम देख बहुत विव्रत हुए और अपना सृष्टि पुत्र धोबिनको दे कर कहने लगे—इसको पालन करो, यह पुत्र देवजात होनेसे वस्त्रादि धोना प्रभृति नीच कार्य न करेगा। कृषि-कर्म ही इसकी उपजीविका होगी। जो हो परन्तु कुछ लोग इन्हें सामाजिक अवस्थाके अनुसार द्राविड़ीय वंशोद्भव जैसा समझते हैं।

इनकी तीन श्रेणियाँ हैं—उत्तर राढ़ी, दक्षिण राढी और वारेन्द्र। यह विभाग आदि वासस्थान-परिचायक है। विभिन्न श्रेणियोंमें आहारादि होते भी कन्याका आदान प्रदान नहीं चलता। इनमें काश्यप आदि कई गोत्र हैं। कोई कोई अपने गोत्रमें विवाह कर नहीं सकता, परन्तु माताके गोत्रमें विवाह करनेको कोई निषेध नहीं। इनमें बहुविवाह अप्रचलित है। किन्तु स्त्री वन्ध्या वा असाध्य रोगग्रस्त होनेसे स्वामी पुनर्विवाह कर सकता है। स्त्रीको असती होनेसे स्वामी छोड़ देता है।

अधिकांश चासाधोबा वैष्णवसम्प्रदायभुक्त हैं। वह मांस भोजन नहीं करते। कृषिव्यवसायी लक्ष्मीदेवीको पूजते हैं। फिर शिल्प-व्यवसायियोंमें विश्वकर्माको पूजा होती है।

बङ्ग-समाजमें इन्हें लोग धोबी जैसा ही समझते हैं। कितने ही चासाधोबा खेतीबारी, तिजारती, राजगरी

आदि काम करते हैं। इनमें बहुतसे लोगोंने प्रचुर धन एकत्र कर लिया है।

चाह (हिं० स्त्री०) १ अभिलाषा, इच्छा। २ प्रीति, अनुराग, प्रेम। ३ पूछ, आदर। ४ आवश्यकता, मांग, जरूरत।

चाहक (हिं० पु०) वह जो प्रेम करता हो, प्रेम करनेवाला, चाहनेवाला।

चाहड़देव—नलपुर या नरवर राज्यके एक हिन्दू राजा। इनके समयमें प्रचलित सिक्कोंसे ज्ञात होता है कि, इन्होंने सं० १३०३से १३११ (ई० सं० १२४६—१२५४) तक राज्य किया था। इन्होंने परिहार वंशका उच्छेद करनेवाले मलयवर्मदेवको राजगद्दीसे उतार दिया और खुद नरवर राज्यके राजा बन गये। वहां इन्होंने एक नया राजवंश चलाया था। कुछ दिन स्वाधोन भावसे राज्य किया। बादमें इनका राज्य दिल्लीराज नासिरउद्दीन आलितामासके अधीन हो गया था। इनकी मृत्युके बाद इनके पुत्र राजसिंहासन पर बैठे थे और सं० १३११से १३३६ (ई० सं० १२५४-१२७९) तक राज्य किया था।

चाहड़देव--दिल्लीके अधिपति पृथ्वोराजके छोटे भाई। दिल्ली और अजमेर इन दोनोंके राजा पृथ्वोराज ही थे, इसलिए पृथ्वीराजकी अधीनतामें इन्होंने कुछ समय तक दिल्लीमें करद राज्य किया होगा, राजस्थानके इतिहासके पढ़नेसे ऐसा ही मालूम पड़ता है। कुछ भी हो, चाहड़देव पृथ्वीराजकी अपेक्षा बहुत अंशोंमें न्यून होने पर भी एक प्रसिद्ध राजा थे, यह बात उनके सिक्कोंसे मालम पड़ती है।

चाहत (हिं० स्त्री०) प्रेम, चाह।

चाहना (हिं० क्रि०) १ अभिलाषा करना, इच्छा करना। २ स्नेह करना। ३ प्यार करना, प्रेम करना, कोशिश करना। ४ ताकना, निहारना। ५ ढूंढ़ना, खोजना, तलाश करना। (स्त्री०) ६ चाह, आवश्यकता, जरूरत।

चाहमान-राजपुत जातिविशेष। चौहान देखो।

चाहा (हिं० पु०) नीलकंठपक्षी। चाष देखो।

चाहिए (हिं० अव्य०) उपयुक्त है, उचित है, मुनासिब है।

चाही (हिं० स्त्री०) प्यारी, चहेती, जो चाही जाय।

चाहे (हिं० अव्य०) १ इच्छा हो, मनमें आवे, जो चाहे। २ जैसा मन हो, जैसी इच्छा हो। ३ होनेवाला हो, होना चाहता हो।

चिंआं (हिं० पु०) इमलीका बोज।

चिउँटा (हिं० पु०) एक तरह मधुप्रिय कोट, चींटा।

चिउँटिया रेंगान (हिं० स्त्री०) अत्यन्त मन्दगति, बहुत सुस्त चाल, धीमी चाल।

चिउँटी (हिं० स्त्री०) कोटविशेष, चींटो, पिपीलिका। पिपीलिका देखो।

चिंगड़ा (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, झींगा मछली।

चिंगड़ी (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक मछली। इसको हिन्दीमें झींगा भी कहते हैं। यह शल्करहित और कठिन आवरणाच्छादित होती है। प्राणितत्त्ववित्‌ने चिंगड़ी मछलीको कर्कटादिके साथ एक श्रेणीभुक्त किया है।

इसका साधारण लक्षण—उभय पार्श्वको दीर्घ दीर्घ ग्रन्थियुक्त पद और उनमें सामनेके दोनों कांटे बड़े तथा आत्मरक्षाके अस्त्र स्वरूप पीने शोशेकी तरह अस्थिकङ्काल शरीरके आवरण रूपसे परिणत है। गात्रच्छद कठिन और ग्रन्थियुक्त होता है।

यह मछली आकार, वर्ण और गठनभेदसे बहु जातिमें विभक्त है। इसका वजन ज्यादासे ज्यादा १ सेरसे १॥ सेर तक होता है। आकारगत पार्थक्य रहते भी इसका गठनादि एक ही जैसा देख पड़ता है। मस्तकके
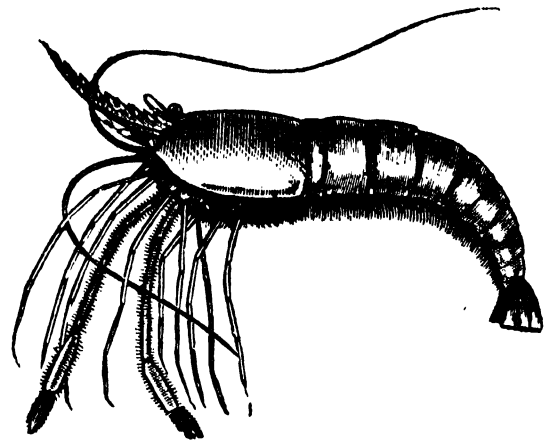
निकट यह सर्वापेक्षा स्थूल और क्रममें पुच्छको दिक सूक्ष्म लगतो है। यह शरीरको सिकोड़ कर के पूंछ और

फिर इकट्ठा कर सकती है। मत्स्यका ढक्कन अति दृढ़ रहता है। सामनेके आरे जैसे पने खड्ग और दोनों सुतीक्ष्ण कांटोंसे यह अपेक्षाकृत बलवान् प्राणीके हाथसे भी बच जाती है। इसके चक्षुकी बनावट अन्यान्य प्राणियोंसे सम्पूर्ण विभिन्न है। केकड़ेकी तरह इसकी दोनों आँखें छोटे छोटे कांटोंके अग्रभागमें रहती हैं। यह इच्छानुसार उन्हें इधर उधर घुमा सकती है।

यह बीच बीच शरीरका आवरण परिवर्तन करती है। आवरण छोड़ देनेसे इसका शरीर थोड़े दिन अति कोमल रहता है। फिर अविलम्ब वह ढक्कन मजबूत पड़ जाता है। युक्तप्रदेश आदि भारतके अन्यान्य स्थानोंकी बड़ी बड़ी नदियों और तलावोंमें चिंगड़ी मछली मिलती है। यह सब अण्डे पकने तक पेट पर रखे रहती है।

चिंगना (देश०) १ मुरगीका छोटा बच्चा। २ छोटा बालक, बच्चा।

चिंगारी (हिं० स्त्री०) चिनगारी देखो।

चिंगुरना (हिं० क्रि०) सिकुड़ जाना, किसी अङ्गका जल्दी न फैलना।

चिंगुरा (देश०) एक तरहका बगुला।

चिंगुला (देश०) १ बालक, बच्चा। २ किसी पक्षीका छोटा बच्चा।

चिंघाड़ (हिं० स्त्री०) १ चीत्कार, चीख मारनेकी आवाज, चिल्लाहट। २ हाथीकी बोली।

चिंघाड़ना (हिं० क्रि०) १ चीत्कार, चीखना, चिल्लाना। २ हाथीका चिल्लाना।

चिंचिनी (हिं० स्त्री०) १ तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका पेड़। २ इमलीका फल।

चिंजी (हिं० स्त्री०) कन्या, लड़की।

चिंत (हिं० स्त्री०) चिन्ता, ध्यान, स्मरण, याद, फिक्र।

चिंदी (देश०) खण्ड, भाग, टुकड़ा।

चिंपा (देश०) कीटविशेष, एक तरहका कीड़ा जिसका रंग खूब काला होता है और जो ज्वार, बाजरे, अरहर तथा तमाखूको खा डालता है।

चिंपांजी (हिं० पु०) एक तरहका बनमानुस जो अफ्रीकामें पाया जाता है। यह बहुत कुछ मनुष्यसे मिलता जुलता है। इसका मुख बहुत विस्तृत, सिरके ऊपरका भाग चिपटा, माथा दबाहुआ, कान बड़, नाक चिपटी और शरीरके बाल काले और मोटे होते हैं। इसके सिर, कंधे और पीठ घने बालोंसे ढके रहते हैं और पेट तथा छाती पर बहुत कम बाल होते हैं। मुखमें एक रोआँ भी नहीं रहता है। ये अफ्रीकाके जंगलमें झुण्डके झुण्ड पाये जाते हैं।

चिउड़ा (हिं० पु०) चिड़वा, चूरा जो भिगों या उबाले हुए धानको कूट कर तैयार किया जाता है।

चिउली (देश०) १ हिमालय पहाड़ तथा भूटानमें होनेवाला एक तरहका पौधा जो महुएकीसी जातिका होता है। इसका तेल मक्खनके समान जम जाता है। नेपाल आदि देशोंमें इसका तेल घीमें मिला दिया जाता है। २ वस्त्रविशेष, एक तरहका रंगीन रेशमी कपड़ा।

चिक (तु० स्त्री०) १ वह झंझरीदार परदा जो बाँस या सरकंडेकी तीलियोंका बना हुआ रहता है। २ पशुओंका मांस बेचनेवाला मनुष्य, बूचर, कसाई।

चिक (देश०) कमरका दर्द जो अचानक हो गया है, चमक, चिलक, झटका, लचक।

चिकट (हिं० वि०) १ कुत्सित, मैला, कुचैला, जिस पर मैल जमा हो। २ जो लसीला या चिपचिपा हो।

चिकट (देश०) १ रेशमी या तसरका वस्त्र। २ भांजा या भाँजीके विवाहका कपड़ा जो उस समय उसके मामासे दिया जाता है।

चिकटना (हिं० क्रि०) जमे हुए मैलके कारण चिपचिपा होना।

चिकड़ी—हिमालय पहाड़ पर होनेवाला एक तरहका पेड़। यह ८००० फुट ऊंचाई तक पाया जाता है। इसका काष्ठ बहुत दृढ़ और कुछ पीलापन लिये होता है। अमृतसरमें इसकी कंघियां बहुत अच्छी बनती हैं। इसकी पत्तियां खादके काममें आती हैं। इसके फूलोंसे मीठी सुगन्ध आती है।

चिकन (फा० पु०) सूजनकारी द्वारा कपास, ऊन या रेशमके जिन कपड़ों पर रंगीन या सादा काम किया जाता है, उन कपड़ोंको चिकन कहते हैं। एक तरहका महीन कपड़ा, जिस पर फूल या बूटे काढ़े हुए होते हैं, कसीदा काढ़ा हुआ कपड़ा।

भारतवर्ष इस कामके लिये बहुत प्राचीनकालसे प्रसिद्ध है। सहिष्णुता और सूक्ष्मकार्यों में निपुणता होनेसे इस देशके लोग बहुत थोड़ी महनतसे चिकन बनाना सीख सकते हैं और उसमें नैपुण्य दिखा सकते हैं।

क्या सभ्य और क्या असभ्य, पृथिवीके तमाम देशोंमें चिकनका प्रचार है। समस्त सभ्य देशोंमें एक उत्कृष्ट शिल्पका अंग समझ कर चिकन कार्य सिखाया जाता है इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, अमेरिका इत्यादि देशोंमें प्रासादमें रहनेवाली राजकन्यासे ले कर झोंपड़ोंमें गुजर करनेवाली दरिद्र बालिका तक इस कामको सीखतीं हैं। कुछ भी हो, यद्यपि इस समय तरह तरहके यन्त्रोंके सहारे यूरोपमें अति अल्प समय और थोड़े खर्चमें बहुत तरहका चिकनका काम बनने लगा है, तथापि प्रबल प्रतिद्वन्द्विता में भी आज तक ढाका, बनारस लखनऊ आदिकी चिकनकारी प्राधान्य और गौरवकी रक्षा कर रही है। चीन, फारस, तुर्किस्तान और भारतवर्षके चिकनके कामका आज तक भी यूरोप आदि सब देशोंमें आदर है।

साधारणतः महीन सूत, रेशम, ऊन अथवा सोने चांदीके तार आदि ही इस काममें आते हैं। सूत आदि यथासम्भव रंगे भी जाते हैं। कभी कभी उसके साथ पक्षी-पतंगादिके पंख, चमकी, प्राणियोंके नख-केशादि अथवा सोने चांदीके सिक्के भी लगाये जाते हैं। भिन्न भिन्न जमीन पर भिन्न भिन्न सूतसे काम किये जानेसे उसके नाम भी न्यारे न्यारे होते हैं। जैसे कारचोब, जामदानी, गड़ारीदार, कढ़ीदार, मुर्रीदार, जंजीरदार, मूंगा इत्यादि। कपासके कपड़े पर सूत, रेशम पशम अथवा सोने चांदीकी जरीसे बूटे काढ़े जाते हैं। रेशमी और ऊनी कपड़ों पर सूतके सिवा और सब चीजोंसे बेल-बूटे काढ़े जा सकते हैं। सोने चांदीके तार और रेशमी सूत लपेट कर एक तरहका सूत बनाया जाता है जिसको साधारणतः 'कलाबत्त' कहते हैं। सूजनकारीमें यही ज्यादातर काममें लाया जाता है। इसी प्रकार धोती, दुपट्टे, कुरते, जाकिट, टोपी, कोट, चोगा, शाल, दुशाले आदि बहुत ही खूबसूरतीके साथ तरह तरहके रंग और बेल बूटेदार बनाये जाते हैं। राजा और ऐश्वर्यशाली व्यक्तिगण उक्त बहुमूल्य परिच्छदोंका व्यवहार करते हैं। कोई कोई हजारों रुपये खर्च कर चंदोवा तथा हाती-घोड़ोंकी झूलें भी सोने चांदीके कामसे जड़वा देते हैं। सबसे ज्यादा कीमती सोनेके कामको कारचोबी कहते हैं। पहिले पहल रेशमी या पशमी कपड़े पर किसी प्रकारके रंगसे बेल-बूटोंका ठप्पा छापा जाता है, फिर उस पर कलाबत्तूका काम किया जाता है। जिस पर सोने-चांदीका काम थोड़ा और रेशमी आदिका काम ज्यादा हो उसे कारचिकन कहते हैं। सूती कपड़े पर सोने-चांदीके कामको कामदानी कहते हैं।

ढाकेका जामदानी कपड़ा प्रसिद्ध है! इसके बेल-बूटे सब तांतसे ही काढ़े जाते हैं। सुनिपुण कारीगर कपड़ा बुननेमें जगह जगह बांसकी सुईसे तानीके सूतके साथ बेल-बूटेका सूत मिला दिया करते हैं। सीधी और तिरछी सब तरहसे इन फूलोंकी पंक्ति बन जाती है। इधर उधर विच्छिन्न और पृथक् पृथक् बूटे काढ़े जानेसे, उसे बूटीदार कहते हैं। और भी बहुत तरहके जामदानी कपड़े बनते हैं। भिन्न भिन्न फूल और विन्यासके भेदानुसार इनके नाम हुआ करते हैं। पहिले जामदानी कपड़ेकी बहुत खपत थी, फिलहाल घटती जाती है।

आसामसे बहुत ज्यादा मूगा ढाकाको जाता है। जिस कपड़े पर मूगाका काम होता है, उसको कसीदा कहते हैं। यहांसे बहुत तरहके कसीदे अरब, फारस, तुर्किस्तान आदि देशोंको जाते हैं। ४३ गज लम्बे ३८ इञ्च चौड़े कसीदेकी कीमत लगभग २०) से ५०) तक होती है।

कलकत्तेमें बहुत जगहकी सुलभ बूटीदार साड़ियाँ बिका करतीं हैं। प्रसिद्ध ढाकाकी साड़ी पहले ढाकेहीमें बनती थी, अब सब जगह उसकी नकल होने लगी है। अंग्रेज लोग पर्दा आदिके लिए चिकन-कपड़ा खरीदा करते हैं। बच्चों और बीबियोंकी पोशाक, तथा रूमाल इत्यादिका चिकन-कपड़ा कलकत्तेके आसपास बहुत जगह बनता है। लखनऊ शहरमें बारह सौसे ज्यादा दरिद्र सम्भ्रान्त मुसलमान-महिलाएं और बालक-बालिकाएँ उत्कृष्ट चिकनका काम करतीं हैं।

सोजनी नामका और भी एक तरहका कपड़ा

बनता है, जो रजाई बनानेके काममें आता है। शिकारपुर (सिन्धुप्रदेश) काश्मीर, बम्बईमें, पुरी तथा बंगालके मालदह, राजसाही, नदिया आदि जिलोंमें नाना प्रकारकी सोजनी बनती है।

बोखारासे लाई हुई सोजनी बड़ी मजबूत होती है उसमें खूब चमकीले रंगके बेल-बूटे काढ़े हुए रहते हैं।

पटना और मुर्शिदाबादमें बहुत कीमती कलाबत्त ूके कामदार झालरवाले चंदोये, हाथी और घोड़ोंकी झूल, पालकीकी चाँदनी, अंगरखा, टोपी, गलीचे आदि बनते हैं। भारतीय शिल्प-प्रदर्शनीमें मुर्शिदाबादकी महारानीने स्वर्णमयी कारचोबीका काम किया हुआ एक शामियाना तथा एक पालकीकी चांदनी भेजी थी, जिसकी कीमत क्रमसे १५१८) और २०००) रुपये थी। सारन जिलेसे भी ऐसी ही एक तकियेकी खोलीका नमूना आया था।

नाटक आदिमें अभिनेताओंको जो पोषाक और ताज आदि पहनाये जाते हैं, वे बहुधा बहुमूल्य कारचोबके कामदार हुआ करते हैं। उक्त कपड़े कलकत्तेमें बना करते हैं।

लखनऊ, बनारस, आगरा आदि स्थानोंमें बहुत खूबसूरत कामदानी, जरदोजी आदि कपड़े बनते हैं। मखमलके ऊपर सोने-चांदीके कामको जरदोजी कहते हैं। लखनऊके दुपट्टे, कोट, साड़ी, शाल आदिके हाशिये, जीनकी खोली, बेग, झालर, जूते इत्यादि भारतवर्षमें सर्वत्र बिकते हैं। यहांके सोने-चांदीके तार, कलाबत्त ून आदि सूजनकारीके उपकरणोंका फिलहाल यूरोप आदिमें खूब आदर है। बनारसकी साड़ी सर्वत्र प्रसिद्ध है। आगरेमें हुक्केकी नली, टोपी, कमरबन्द आदिमें विचित्र सूजनकारीका काम किया जाता है।

पञ्जाबके अमृतसर, लुधियाना, दिल्ली आदि स्थानोंमें भी उत्कृष्ट सूजनकारीका काम होता है। इन स्थानोंके कामदार मलीदे आदि शीतवस्त्र, टेबिल, कुर्सी, गद्दी, आदिके चादरे, पर्दे, रूमाल इत्यादिका अंग्रेज लोग ज्यादा व्यवहार करते हैं। लुधियाना, नूरपुर, गुरुदासपुर, सियालकोट आदि नगरोंमें काश्मीरी दुशाले बनते हैं।

पहिले काश्मीरमें ही उत्कृष्ट दुशाले बनते थे, इसीलिए उत्तम दुशालेका नाम काश्मीरी दुशाला पड़ गया है। यह दो प्रकारका होता है। एक तरहका दुशाला वह होता है, जिसमें बुनते समय ही बहुतसी नलियों भिन्न भिन्न रंगके सूतोंसे एक ही साथ बेल-बूटे बनाये जाते हैं। यही दुशाले उत्कृष्ट होते हैं। दूसरे तरहके दुशाले वे हैं; जिनमें बुननेके बाद बेल बूटे काढ़े जाते हैं। ये उससे कुछ मध्यम होते हैं। पहिले प्रकारके दुशाले तिलीवाला, तिलोकार, कानीकार, शिनीत तथा द्वितीय प्रकारके दुशाले अमलीकारके नामसे प्रसिद्ध हैं। आजकल काश्मीरमें काश्मीरीदुशालोंकी बड़ी हीनावस्था हो गई है।

अमृतसर, सियालकोट, मण्टगमरी, रावलपिण्डी, फिरोजपुर, हाजारा, बन्नू, हिस्सार, लाहौर, करनाल, कोहत आदि पञ्जाबके नानास्थानोंमें 'फूलकारी' नामका और भी एक तरहका चिकनका कपड़ा बनता है। सूती कपड़े पर रेशमके फूल काढ़े हुए होनेसे, उसे फूलकारी कहते हैं। पञ्जाब प्रान्तमें किसानोंकी स्त्रियां उक्त कामको करतीं हैं। वहांकी स्त्रियाँ फूलकारी-कपड़ेसे अंगिया और चादर बनातीं हैं। अंगरेज लोग फूलकारीको बहुत पसन्द करते हैं। इसके सिवा पञ्जाबमें तरह तरहके चिकनकारीयुक्त पश्मीना तथा रामपुरी-चादर आदि भी बना करती हैं।

बम्बई प्रदेशमें शिकारपुर, रोहरी, कराची, हैद्राबाद सूरत, सावन्तवाड़ी; बम्बई आदि नगरोंमें चिकनका काम होता है।

शिकारपुर, रोहरी, सूरत आदि स्थानोंमें सूचिकरोंको चिकनदोज या कुन्दीगर कहते हैं। ये लोग जातिके मुसलमान होते हैं। ये लोग हातजारी कारचोबी, बदलानी और रेशमी-भरत-काम, इन चार प्रकारकी सूजनकारीमें निपुण होते हैं। हातसे बनाये हुए जरीके कामको हातजारी और पतले सोने चाँदीके तारकसीके कामको बदलानी कहते हैं। रेशम-भरत-काममें पहिले रेशमके ऊपर सूतसे चित्र अङ्कित कर उसके बीचका स्थान सोने चांदीकी जरीसे भर देते हैं। कारचोबीका काम पांच तरहका होता है। जैसे १ कसबटिकी २ भिक्चक, ३ भरातकराची, ४ भिकटिकी और ५ चलकूटिकी।

टिकोका अर्थ है चमकी, फिक एक तरहका सोनेका सूत, तथा चलकका अर्थ है टेढ़ा-सीधा या लहरदार। कसबटिकी उसे कहते हैं, जिस पर चसकीका काम हो। फिकसूतके लहरोले कामको फिकचलक, फिकके बीच बीचमें चमको बैठानेसे फिकटिकी, तथा लहरीले और चमकीवाले कामको चलकटिकी कहते हैं। जिस कपड़े पर कराचीकी तरहके बेल-बूटे हों, वह भरात-कराची कहलता है।

आसाममें बहुत खूबसूरत फूलदार रेशम और कपासके कपड़े बनते हैं। ये अधिकांश ताँत पर बुने जाते हैं। सब जातिकी स्त्रियां इस कामको करती हैं। नये नये फूल काढ़नेसे वे अपना गौरव समझती हैं। वहां चादर, धोती, आदि बहुत तरहके कपड़े बनते हैं। रेशमकी चादर तथा 'ऐड़ावर' इत्यादि नामके कपड़े सोने-चाँदीकी जरीसे बनाये जाते हैं। यहांके मृगारेशम-के कपड़े बहुत कामदार होते हैं। इन वस्त्रोंके छोर बहुत खूबसूरत होते हैं।

इस समय इस देशके धनी दरिद्र सब ही चिकनका, व्यवहार करते हैं। धनिकोंकी स्त्रियां विचित्र जरीदार साड़ी पहनती हैं और दरिद्र घरकी औरतें सूती कम दामकी गुलबहार साड़ी पहन कर अपना शौक मिटाती हैं। धनिक लोग कारचोबके कोट, पायजामा, टोपी और काश्मीरीदुशाले ओढ़ कर मौज करते हैं तथा गरीब चादर और बूटीदार कमीज पहन कर थोड़ा खेद मिटा लेते हैं। जिनको सोनेकी जरी खरीदनेको सामर्थ्य नहीं और शौक है ही, वे तारकसीके कामसे ही अपनी विलास पिपासाको शान्त करते हैं।

यूरोपके विद्वानोंका मत है कि आसीरीयदेश चिकन-कारीका आदि उत्पत्तिस्थान है, वहांसे नानादेशोंमें यह फैल गई है। प्लिनी लिखते हैं कि फ्रिजियगण इसके उद्भावयिता है, और इसीलिये रोमके सूजनदीजोंको फ्रिजियान कहा जाता था। कुछ भी हो, यह बहुत प्राचीनकालसे भारतमें प्रचलित है, इसमें कुछ सन्देह नहीं। (ऋग्वेद २।३।६, २।३८।४) मोजेसके समय हिब्रुओंमें इसकी चर्चा थी। मिसर, अरब और पारसी लोग प्राचीन कालमें अति सुन्दर सूजनकारी करते थे। ट्रय युद्धसे पहले सिडनकी स्त्रियां सूजनकार्यमें दक्ष थीं, बादमें फिर ग्रीककी औरतोंने इसमें नैपुण्यलाभ किया

चिकन सिर्फ शौकका ही काम नहीं है; इसमें पैसा भी पैदा होता है। य रोपमें तरह तरहकी मशीनोंसे सूजनका काम लिया जाता है। मान ह्वान्सेन-निवासी मि० हिलमान (M. Heilman)-ने एक यन्त्रका आविष्कार किया है, उसमें एक साथ ८०से १४० तक सूई चलाई जा सकती हैं। इसलिये हातसे जितनी देरमें एक बूटा काढ़ेगा, इस मशीनसे उतनी देरमें ८०से १४० तक बूटे काढ़ सकते हैं। सूजनके कामको सहज करनेके लिए वहाँ तरह तरहके उपायोंका अवलम्बन किया गया है। फूल आदिके ठप्पे और भिन्न भिन्न वर्ण-युक्त नमूने भी मिलते हैं। उन्हें कपड़ेके नीचे रख कर पहिले भिन्न भिन्न रंगकी पेन्सिलसे दाग दे लेना चाहिये। बादमें सुईसे जहां जैसा रंग चाहिये वहाँ वैसे रंगके सूतसे उन स्थानोंको भर देना चाहिये। बार्लिनमें इसका सबसे पहले आविष्कार हुआ था, इस-लिए ऐसे कामको बार्लिनवर्क (Berlin-work) कहते हैं। इसमें सुई चलानेके सिवा दूसरा कोई कारीगरीका काम नहीं है। सूचि देखो।

चिकनकारी (फा० स्त्री०) चिकन बनानेका काम।

चिकनगर (फा० पु०) वह जो चिकनका काम करता हो।

चिकनदोज (फा०) चिकनगर देखो।

चिकना (हिं० वि०) १ जो रुखरा या खुरदुरा न हो। २ साफ सुथरा, सँवरा हुआ। ३ चाटुकार, खुशामदी, जो दूसरोंको प्रसन्न करनेके लिये उसकी झूठी प्रशंसा करता हो। ४ अनुरागी, प्रेमी, स्नेही। ५ स्निग्ध, तेलिया, जिसमें रुखाई न हो, जिसमें तेल लगा हो।

चिकनाई (हिं० स्त्री०) १ चिकनापन, चिकनाहट। २ स्निग्धता, सरसता।

चिकनाना (हिं० क्रि०) बराबर करके साफ करना। २ रूखा या खुरदुरा न रहने देना। ३ साफ सुथरा करना, सँवारना। ४ चरबीसे युक्त होना, हृष्टपुष्ट होना, मुटाना। ५ स्नेहयुक्त होना, प्रेमपूर्ण होना, अनुरक्त होना। ६ चिकना होना। ७ स्निग्ध होना।

चिकनापन (हिं० पु०) चिकनाकरनेकी क्रिया, चिकनाई, चिकनाहट।

चिकनायकनहल्लि—महिसुर राज्यके तुमकूर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १३° १८′ एवं १३° ४४′ उ० और देशा० ७६° २१′ तथा ७६° ४५′ पू०के बीच अवस्थित है। १८०२ ई० तक हुलियारका छोटा तालुक भी इसमें सम्मिलित रहा। इसका क्षेत्रफल ५३२ वर्ग मील और जनसंख्या प्रायः ६००७१ है। १६०२-३ ई०को इसका ६७ वर्ग मील रकवा चितलद्रुग जिलेमें मिला दिया गया था। मालगुजारी कोई ११६०००) रु० है। पूर्वसे उत्तरको छोटे छोटे नंगे पहाड़ चले गये हैं। नदीनाले उत्तरको बहते हैं। उत्तरपूर्वको बांध लगा करके बोरङ्क नावे तलाव बना है। इसमें नारियल और सुपारीके पेड़ बहुत होते हैं। उत्तरको बेल्लर स्थानमें सोनेकी खान भी है।

चिकनायकनहल्लि—महिसुर राज्यस्थ तमकूर जिलेके चिकनायकनहल्लि तालुकका सदर। यह अक्षा० १३°२५′ उ० और देशा० ७६° ३७′ पू०में बानसन्द्र रेलवे ष्टेशनसे १२ मील उत्तरको अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६११३ है। ई० १६वीं शताब्दीके अन्तमें चिकनायक नामक किसी हागलवाड़ी नायकके नाम पर इसका नामकरण हुआ। १६७१ ई० तक इस नगरको मुसलमान और मराठे बार बार अधिकार करते रहे, फिर महिसुरराजने अपने हाथमें ले लिया। १६७२ ई०को यहां महिसुरके राजा डोड्डदेवका मृत्यु हुआ। १७६१ ई०को श्रीरङ्गपटनके सामने लार्ड कार्नवालिससे मिलने जा मराठोंने राहमें इस स्थानको लूटा और किला तोड़ा था। इसकी चारों ओर नारियल और सुपारीके बाग हैं। सात उत्सर्गीकृत मन्दिर भी हैं। १८७० ई०को यहां म्युनिसपालिटी हुई।

चिकनावट (हिं० स्त्री०) चिकनाहट देखो।

चिकनाहट (हिं० स्त्री०) चिक्कणता, चिकनापन, चिकनाई।

चिकनिया (हिं० वि०) शौकीन, छैला, बांका।

चिकनीमिट्टी (हिं० स्त्री०) मैल दूर करनेकी मिट्टी। यह लसदार होती और सिर पर लगाई जाती है।

चिकनीसुपारी (हिं० स्त्री०) उबाली हुई एक तरहकी चिपटी सुपारी। इस तरहकी सुपारी विशेषकर दक्षिण कनाड़ा नामक स्थानमें प्रस्तुत की जाती है। कोई कोई इसे दक्खिनी सुपारी भी कहते हैं।

चिकव्वा—एक दि० जैन ग्रन्थकर्ता। इन्होंने गुणपाक नामक एक वैद्यकग्रन्थकी रचना की है।

चिकवल्लापुर—महिसुर राज्यके कोलार जिलेका पश्चिम तालुक। यह अक्षा० १३° २०′ एवं २३° ४०′ उ० और देशा० ७७° ३६′ तथा ७७° ५२′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २५० वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ५६०५७ है। यह तालुक पहाड़ी है। ७ नदियाँ प्रवाहित हो रही हैं। दक्षिण पूर्वको भूमि बहुत उपजाऊ और ईखकी खेतीके लिये उपयुक्त है। उत्तर-पूर्वको गहरे नाले और विच्छिन्न भूमि है।

चिकवल्लापुर—महिसुर राज्यस्थ कोलार जिलेके चिकवल्लापुर तालुकका सदर। यह अक्षा० १३° २६′ उ० और देशा० ७७° ४४′ पू०में अवस्थित है। डोडवल्लापुर रेलवे ष्टेशन यहांसे २२ मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ५५२१ है। यह स्थान नन्दीदुर्ग पर्वतश्रेणीके नीचे कोई १४७६ ई०को अवतीके मोरसु वक्कलिगोंने स्थापित किया था। इसी वंशका राजत्व वहां चलता रहा। विजयनगरको चिकवल्लापुरके राजा कर देते थे। फिर हैदरअलीने इसे अधिकार किया। यहां लोहा ढलता और रेशमका काम होता है। १८७० ई०को म्युनिसपालिटी पड़ी।

चिकमुगलूर—महिसुर राज्यके कदूर जिलेका दरमियानी तालुक। यह अक्षा० १३° ११′ तथा १३° ३४′ उ० और देशा० ७५° २८′ एवं ७६° १′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका रकवा ६३८ वर्ग मील और आबादी कोई ९०६८१ है। चिकमुगलूरमें एक नगर और २३५ ग्राम विद्यमान हैं। मालगुजारी कोई २१३०००) होगी। उत्तरको जंगलसे भरा हुआ ऊंचा पहाड़ है। भद्रानदी पश्चिम सीमारूपसे उत्तरको बहती है। इसकी चारों ओर ऊंची उर्वरा भूमि है। बाबा बूदन पर्वतके उतार पर कहवाके कई बाग हैं।

चिकमुगलूर—महिसुर राज्यस्थ कदूर जिलेके चिकमुगलूर तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा० १३° १८′ उ० और देशा० ७५° ४६′ पू०में कदूर रेलवे ष्टेशनसे २५ मील

दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८५१५ है। १८६५ ई०को कटूरसे सदर यहां उठ आया था। ई० ६वीं शताब्दीको इसका दुर्ग गङ्ग राजाओंके अधिकार में रहा, फिर होयसलोंके हाथ चला गया। १८६५ ई० को यह नवीन नगर जो किलेसे बसवनहल्लि तक लगा है, स्थापित हुआ। यहां बहुतसे मुसलमान सौदागर और दूकानदार बस गये हैं। बाबा-बूदन पर्वतके नीचे किसी तालाबसे पानी आता है। १८७० ई०को म्युनि-सपालिटी हुई।

चिकरना (हिं० क्रि०) जोरसे आवाज करना, चिंघाड़ना, चीखना।

चिक्रिषु (सं० त्रि०) करितुं क्षेप्तुं इच्छुः कृ-सन् उः। क्षेपण करनेमें अभिलाषी, जिसे कोई चीज फेंक देनेकी इच्छा हो, जो कोई चीज फेंकना चाहता हो।

चिकरीवेल्लर—कर्णाटक देशकी एक जाति। दूसरे नाम अड़विचिञ्चर और फानसेपार्धी भी हैं। ये लोग संख्या-में बहुत थोड़े होने पर भी बीजापुर जिलेमें प्रायः सर्वत्र दिखलाई देते हैं। ये लोग वर्णसङ्कर हैं। धाँगड़, काब-लीजार और राजपूत जातिके मिलावटसे इस जातिकी उत्पत्ति है।

इन लोगोंकी मातृभाषा गुजराती है; किन्तु ये लोग कनाड़ी और हिन्दीमें भी अच्छी तरह बोल सकते हैं। इनके शरीरका रंग तो काला नहीं है, परन्तु ये इतने गन्दे और मैले रहते हैं कि, देखनेसे काले ही मालूम पड़ते हैं। खरखरे और मैले कपड़ेसे मस्तकके बाल बांधते हैं, तथा फटा और मैला कपड़ा कन्धे पर डाल लिया करते हैं। इनकी धोती भी ऐसी ही फटी मैली और छोटी होती है। स्त्रियां मैली फतूही और पीतलके गहने पहना करती हैं।

ये लोग साधारणतः चलते-फिरते रहते हैं, घर-द्वार न बना कर मैदानमें रहते हैं; तथा फसलके समय भ्रमण करते हैं। रोटी दाल इनका मामूली खाना है, पर मांस मिलने पर ये आपेसे बाहर हो जाते हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि, ये लोग सूअर और गौका मांस नहीं खाते। ये लोग हमेशा शराबके नशेमें मस्त रहते हैं। किसानों-का अनाज चुरा कर तथा शिकार करके ये लोग अपनी जीविका निर्वाह करते हैं, दूसरा कोई काम नहीं करना चाहते। यल्लमा, तुलजाभवानी तथा व्यंकटेश आदि इन-के कुलदेवता हैं। इन देवताओंकी मूर्तिको ये लोग कपड़ेमें बांध रखते हैं और आश्विनमासमें उसकी पूजा करते हैं। ये लोग किसी पर्वमें उपवासादि, आमोद-प्रमोद या तीर्थयात्रा नहीं करते। भविष्यद्वाणी और जादू-विद्यामें इनका खूब विश्वास है। इन लोगोंकी स्त्रियां गरम तेलमें अंगुली डुबो कर अपने सतीत्वका परिचय देती हैं। यदि अंगुली जल जाय, तो वह व्यभिचारिणी समझी जाती है बाल्य-विवाह और विधवाओंका पुनर्लग्न इन लोगोंमें प्रचलित है। ये लोग मुर्देको कभी जलाते और कभी गाड़ दिया करते हैं। पञ्चायतमें इन लोगोंके सामा-जिक झगड़ेका निबटेरा होता है।

चिकीर्षु (सं० त्रि०) कृत्-सन-उ। जिसे कोई चीज करनेकी इच्छा हो, जो कोई काम करना चाहता हो।

चिकलदा—बरार प्रान्तीय अमरावती जिलेके मेलघाट तालुकका सैनिटेरियम वा स्वास्थ्यावास। यह अक्षा० २१° २४´ उ० और देशा० ७७° २२ पू०में एलिचपुरसे प्रायः २० मील दूर सातपुरा पर्वत पर अवस्थित है। १८३९ ई०से चिकलदा बरारका एक अच्छा स्वास्थ्यावास रहा है यहां मेलघाटके तहसीलदार और वन-विभागके कनसर-वेटरका सदर है। जलवायु शीतल और स्वास्थ्यकर है, इसकी दृश्यावली बहुत अच्छी लगती है। यहां पहले आलू बहुत होती थी। बागोंमें लोग कहवा लगाते हैं। यह ५ मील लम्बा और पौन मील चौड़ा है। समुद्रपृष्ठसे इसकी उंचाई ३६६४ है। यह पल्ली एक अधित्यकामें पड़ी है। गावीलगढ़से इसका दूरत्व प्रायः १॥ मील है। यहांसे एलिचपुरको ३ सड़कें गयी हैं। उसमें एक राह ३० मील लम्बी और गाड़ी चलनेके लायक है। परन्तु एलिचपुर और चिकलदरके बीच तांगे नहीं चलते। यात्रि-योंको एलिचपुरमें तहसीलदारसे मिल करके गाड़ियोंका प्रबन्ध करना पड़ता है।

चिकवा (तु० पु०) वह जो मांस बेचता है, बूचड़, चिक-कसाई।

चिकाकोल—१ मन्द्राज प्रदेशके गञ्जाम जिलेका एक तालुक। इसको श्रीकाकुलम् भी कहते हैं। यह अक्षा०

१८° १२´ एवं १८° ४०´ उ० और देशा० ८३° ५१´ तथा ८४°१´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३७३ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः २२१३७३ है। पहले यहां हिन्दू और बौद्ध राजाओंके अधिकार भुक्त कलिङ्गराज्यका केन्द्रस्थल और मुगल बादशाहोंके अधीनस्थ सरकारी प्रदेशकी राजधानी रही। यह स्थान १५६८ ई० तक उत्कलके गजपति राजाओंका अधिकारभुक्त था। फिर बङ्गालके मुसलमान शासनकर्ताने अधिकार करके उसको कुतबशाही विभागमें मिला लिया। किन्तु वहांका शासनभार हिन्दू राजाओंके ही हाथमें न्यस्त रहा। अवशेषको १७२४ ई०में आसफजाह निजाम-उल्-मुल्कने दाक्षिणात्यके प्रतिनिधि नियुक्त हो और हैदराबादमें राजधानी स्थापन करके चिकाकोलका सम्पूर्ण शासनभार अपने अधीन किया था। सुतरां इसी समयसे प्रकृत पक्ष पर वहांके हिन्दू राजाओंका उच्छेद साधित हुआ। मुसलमानोंके शासन समय यह ताल्लुक इच्छापुर, कासिमकोटा और चिकाकोल तीन विभागोंमें बंटा था। हैदराबादके निजाम बहादुर इसका कुछ अंश उत्तर सरकारके साथ १७५३ ई० में फरासीसियों, फिर १७६६ ई०में अंगरेजोंको दे डाला। कासिमकोटा और चिकाकोल दोनों विभाग अंगरेजोंके हस्तगत होनेसे विशाखपत्तन जिलेमें मिलाये गये। फिर यही विभाग १८०२ ई०को गञ्जाम जिलेके अन्तर्भुक्त हुए।

२ श्रीकाकुलम् चिकाकोल ताल्लुकका एक शहर है। यह अक्षा० १८° १७´ उ० और देशा० ८३° ५५´ पू०में समुद्रतीरसे ४ मील और मन्द्राजसे ५६७ मील दूर नागवली नदी तथा ग्राण्ड-ट्रङ्क-रोड पर अवस्थित है। बहुत दिन तक इस स्थानमें सेनाका निवास (छावनी) रहा। १८१५ ई०को थोड़े समयके लिये जिलेके शासनकर्ता और १८६५ ई०को कुछ समयके लिये जिला जजका यहां विचारालय (अदालत) स्थापित हुआ था। आज भी यहां फौजदारी और दीवानी अदालत, अस्पताल, डाकखाना, मदरसा आदि मौजूद हैं। श्रीकाकुलम्की राज संक्रान्त अट्टालिकाएं प्राचीन दुर्गकी चतुःपार्श्वस्थ परिखाके अभ्यन्तरमें अवस्थित हैं। इसके दक्षिण पार्श्वकी स्थानीय अधिवासी रहते हैं। यहां गोलकुण्डा कुतुबशाही वंशके शासनकर्ता शेर मुहम्मद खांकी प्रतिष्ठित बहुतसी मसजिदें आज भी मुसलमान शासनकर्ताओंके आधिपत्य और प्राचीन नगरके समृद्धिका साक्ष्य प्रदान करती हैं।

इस शहरको हिन्दू श्रीकाकुलम् और मुसलमान मफूज या मनफूर बन्दर कहते हैं। लासेनके मतमें प्राचीन मणिपुरका अपभ्रंश मनफूर हुआ है। किसी किसीके कथनानुसार चिकाकोलके प्रसिद्ध शासनकर्ता अनवर उद्-दीन खांके पुत्र महफूजके नामानुसार उसका शेषोक्त नाम पड़ा है। इसका स्थानीय नाम गुलचोनाबाद है।

यहांके अधिवासियोंमें सैकड़े पीछे बीस व्यवसाय वाणिज्य और आठ आदमी शिल्पकार्य करके जीवन यापन करते हैं। इसकी कारीगरी बहुत अच्छी है। ढाकेसे किसी प्रकार भी कम नहीं पड़ती।

१७९१ ई०को दुर्भिक्ष उपस्थित होनेसे यह स्थान एक तरहसे जनशून्य हो गया। १८६६ ई०को भी दुर्भिक्ष पड़ा, परन्तु यह पहले जैसा अनिष्टकर न था।

चिकागो—अमेरिकाका एक विख्यात नगर। अमेरिका देखो। सार्वजनिक और सार्वधर्मिक प्रदर्शनीके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। प्रदर्शनी देखो।

चिकाति—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गञ्जाम जिलेके मध्यका एक राज्य। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ११९१३ है, जिनमेंसे अधिकांश हिन्दू हैं। ८८१ ई०में एक सामन्तने यहां एक दुर्ग बना कर उत्कलके राजासे यह राज्य पाया था। वलिन्दा नदी इस राज्यके बीच हो कर गई है, इसलिये राज्यमें जाने आनेको अधिक सुविधा है। इसका प्रधान शहर चिकाति है।

चिकार (हिं० पु०) चीत्कार, चिल्लाहट, चिंघाड़।

चिकारना (हिं० क्रि०) चीत्कार करना, चिंघाड़ना।

चिकारा (हिं० पु०) १ वाद्यविशेष, एक तरहका बाजा जो सारंगीके जैसा होता है। इसके नीचेकी ओर चमड़ासे मढ़ा हुआ कटोरा रहता है और ऊपर मूठ निकला रहता है। २ एक फुरतीला जंगली जानवर जो हिरनकी जातिका होता है। कहीं कहीं इसे छिकारा भी कहते हैं।

चिकारी (हिं० स्त्री०) १ छोटा चिकारा। २ क्षुद्र कीट-

विशेष, एक प्रकारका बहुत छोटा कोड़ा जो बहुत कुछ मच्छड़सा मिलता जुलता है।

चिकित (सं० त्रि०) कित्-ज्ञान यङ्-लुक् पचाद्यच्। चि-ज्ञानं कर्मणि क्त निष्ठायाः भाव धातुकर्मसंज्ञायां। छन्दस्-भयथा। पा ३।४।११७ श्लपज्जुहोत्यादित्वात् तस्य श्लुः द्वित्वम्। १ अतिशय ज्ञानविशिष्ट, जिसे बहुत चीजोंका ज्ञान हो। २ ज्ञात, मालूम किया हुआ, जो जाना गया हो। (पु०) ३ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

चिकितान (सं० त्रि०) कित् ज्ञाने कानच्। १ अभिज्ञ, जाना हुआ, परिचित, जो मालूम हो। "चिकितानो अचि-त्तान्" (ऋक् ३।१८।२) 'चिकितानः अभिज्ञ।' (सायण) (पु०) २ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

चिकितायन (सं० पु०) चिकितका गोत्रापत्य, चिकित ऋषिके वंशधर।

चिकिति (सं० त्रि०) ज्ञात, परिचित, जाना बूझा, मालूम।

चिकितु (सं० त्रि०) कित्-उण् वेदे द्वित्वं। अभिज्ञ, विज्ञ, जानकार, जाना बूझा, मालूम।

"यवीयसश्चिकितुर्व्यचष्ट" (ऋक् ८।५६।५)

चिकित्वन् (सं० त्रि०) कित् ज्ञाने क्वनिप् वेदे द्वित्वं। ज्ञानविशिष्ट, जाना बूझा, अभिज्ञ, मालूम।

"शुभ्रं चिकित्वना।" (ऋक् ८।८०।१८)

चिकित्वित् (सं० त्रि०) जो जानते हों या जनाते हों।

चिकित्विन्मनस् (सं० त्रि०) सर्वज्ञ, अन्तःकरणविशिष्ट।

चिकित्सक (सं० पु०) चिकित्सति रोगं अपनयति कित् स्वार्थे सन् ण्वुल्। गुप्तिज्किद्भ्यः सन् बहुलं। पा ३।१।५। जो रोगका नाश करता हो, रोगीको आराम करता हो, वैद्य, हकीम, डाकटर। "चिकित्सकानां सर्वेषां मिथ्याप्रचरतां दमः।" (मनु ९।२८४) पर्याय—रोगहारी, अगदङ्कार, भिषक्। चिकित्सकको रोगकी भलीभाँति परीक्षा करके औषध देना चाहिये, रोगको बिना पहिचाने हो दवा देनेसे राजा उन्हें दण्ड देंगे। दोषके बिना व्याधि नहीं हो सकती। उन दोषोंके आनुमानिक लक्षण द्वारा रोगका निर्णय करना चाहिये, विकारको शान्त न कर सकने पर भी चिकित्सकको लज्जित न होना चाहिये। वैद्यशास्त्रज्ञ, ज्ञाती, क्षिप्रहस्त, शुद्धाचारी, सब रोगके प्रतीकारमें समर्थ, प्रियवादी, अध्यवसायी, धर्मात्मा; इन गुणोंके धारक चिकित्सक ही प्रशंसनीय होते हैं। मैले कपड़े पहननेवाला, अप्रियवादी, अभिमानी, औषध प्रयोगमें अनभिज्ञ और अपने आप घरमें आया हुआ चिकित्सक धन्वन्तरिके समान होने पर भी जनसमाजमें कभी भी आदरणीय नहीं हो सकता।

चिकित्सकोंको धार्मिक भावसे चिकित्सा करनी चाहिये। जीविकानिर्वाहके लिये सिर्फ धनिकोंसे धन ग्रहण करना उचित है। जो कष्ट या पीड़ाको सह सके, आस्तिक हो और चिकित्सककी आज्ञाका भली भांति पालन करे तथा जिसके कुटुम्बीजन मौजूद हों और पथ्यादिका प्रबन्ध हो सके, ऐसा रोगी ही चिकित्स्य अर्थात् चिकित्सा करने योग्य है। जो रोगी डरपोक, कृतघ्न, श्रद्धाहीन, धूर्त, अविश्वासी और क्रोधी हो, वह चिकित्सकका वैरी है, अर्थात् चिकित्सकको उसकी चिकित्सा न करनी चाहिये। (भावप्रकाश)

चिकित्सन (सं० क्ली०) आरोग्यकरण, रोग प्रतीकार रोगशान्तिका विधान।

चिकित्सा (सं० स्त्री०) कित् सन् भावे अः। रोग-प्रतीकार, इलाज, रोग दूर करनेकी क्रिया, शरीरको नीरोग बनानेकी युक्ति, रोग दूर करनेका विधान। पर्याय—रुक्प्रतिक्रिया, उपचार, उपचर्या, निग्रह, वेदनानिष्ठा, क्रिया, उपक्रम, शम, चिकित्सित, प्रतीकार, भिषग्जित, रोग-प्रतीकार। चिकित्सा तीन तरहकी होती है—दैवी, आसुरी और मानुषी। पारदप्रधान चिकित्साको दैवी, चीर-फाड़ आदिकी आसुरी और काष्ठ रस द्वारा जो चिकित्सा की जाती है, उसे मानुषी कहते हैं। मानुषी चिकित्सा ही कलियुगमें आदरणीय है। जिस क्रियाके द्वारा शरीरस्थ धातु आदि समताको प्राप्त हो और दूसरी व्याधि न जन्मे, उसे चिकित्सा कहते हैं। अर्थ, मित्रता, धर्म, यशः और कार्याभ्यास, ये चिकित्साके फल हैं। द्रव्य और शुश्रूषाकारी ये दो पथ्य हैं। निपुण मनुष्यको साफ सुथरे कपड़े पहिन कर और रोगीकी जातिके दूत अश्व वा बैल पर बैठ कर शुभ्रपुष्प और फल हाथमें ले वैद्यको बुलाने जाना चाहिये। (भावप्र०) आयुर्वेद देखो।

चिकित्सालय (सं० पु०) रोगियोंके आरोग्यका प्रयत्न करनेका स्थान, अस्पताल, शफाखाना।

चिकित्सित (सं० क्लो०) कित् सन भावे क्त। १ चिकित्सा, इलाज। २ भेषज, औषध, दवा। कर्मणि क्त वा चिकित्सा-इतच (त्रि०) ३ कृतरोगप्रतीकार, चिकित्सा द्वारा जिसका रोग शान्त हुआ हो, जिसको चिकित्सा की गई हो, जिसकी दवा हुई हो। (पु०) ४ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

चिकित्सु (सं० त्रि०) चिकित्-सन-उ। जो चिकित्सा करता हो, जो दवा करता हो, जैसे-चिकित्सक, वैद्य, हकीम, डाकटर।

चिकित्स्य (सं० त्रि०) कित् स्वार्थे सन् कर्मणि यत्। प्रतिकार्य्य, चिकित्सासाध्य, जो चिकित्साके योग्य हो।

"भेषजैः स चिकित्स्यः स्यात्" (भारत शान्ति १४ अ०)

चिकिन (सं० त्रि०) नि नता नासिका अस्य इनच् प्रकृतेश्चिकादेशः। इनच पिटच् चिकचि च। पा ५।२।३३। नत नासिकायुक्त, चिपटी नाकवाला, जिसकी नाक दबी हुई हो।

चिकिल (सं० पु०) चि बाहुलकात् इलच् कुक् च। पङ्क, कीचड़।

चिकीर्षक (सं० त्रि०) कर्त्तुमिच्छुकः कृ इच्छार्थे सन्। धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा। पा ३।१।७। ततो ण्वुल्। करनेकी अभिलाषी, जिसे कोई काम करनेकी अधिक चाह हो।

चिकीर्षा (सं० स्त्री०) कर्त्तुमिच्छा कृ-सन् ततः अः प्रत्ययः (पा ३।३।१०२) करनेकी इच्छा।

"नाशकर्म चिकीर्षया" (भारत २।१०।२४)

चिकीर्षित (सं० त्रि०) कर्त्तुमिष्टं कृ-सन् कर्मणि क्त। अभीप्सित, अभिलषित, इष्ट, चाहा हुआ, वाञ्छित।

चिकीर्षु (सं० त्रि०) कर्त्तुमिच्छुः कृ-सन्-उ। सनाशंसभिक्ष उः। पा ३।२।१६८। जिसको कोई काम करनेकी यथेष्ट इच्छा हो।

चिकीर्ष्य (सं० त्रि०) कर्तुमेष्यं कृ-सन् कर्मणि यत्। जो करनेकी इच्छा हो।

चिकुर (सं० पु०) चि इत्यव्यक्तशब्दं कुरति चि-कुर्-कः। केश, सिरके बाल। "चिकुरप्रकारं जयन्ति ते" (नैषध)

२ वृक्षभेद, एक पेड़का नाम। ३ पर्वत, पहाड़। ४ सरीसृप, सांप आदि रेंगनेवाले जन्तु। ५ सर्पविशेष, एक सर्पका नाम। यह आर्य्यकके पौत्र वामनका दौहित्र और सुमुखका पिता था। (भारत उद्योग १०३।१२) ६ छुछूंदर ७ काष्ठमार्जार, गिलहरी, चिखुरा। (त्रि०) ८ चञ्चल, चपल, चालाक।

चिकुरकलाप (सं० पु०) चिकुराणां कलापः ६-तत्। केश समूह, बालोंका गुच्छा। (हेम ३।२३२) बाल देखो।

चिकुला (हिं० पु०) चिड़ियाका बच्चा।

चिकूर (सं० पु०) निपातनाद्दीर्घः। केश, सिरके बाल। चिकुर देखो।

चिकूल (सं० पु०) दन्तीवृक्ष, अरण्डोकी जातिका एक पेड़।

चिकोडी—बम्बई प्रान्तके बेलगांव जिलेका उत्तर-पश्चिम ताल्लुक। यह अक्षा० १६° ३' एवं १६° ४० उ० और देशा० ७४° १५' तथा ७४ ४८' पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल प्रायः ८३६ वर्गमील और लोकसंख्या कोई २०४५४८ है। आबादी बहुत घनी है। उत्तरकी उपजाऊ काली जमीन धीरे धीरे पश्चिमको जा करके सुर्ख पड़ गयी है। दक्षिणकी भूमि अच्छी नहीं। चिकोड़ी अपने तम्बाकू, गन्ने फल और सब्जीके बागोंसे मशहूर हो गया है। कूओंसे बहुत खेत सींचे जाते हैं। इसकी मालगुजारी प्रायः ३ लाख ३४ हजार है।

चिकोड़ी—बम्बई प्रान्तस्थ बेलगांव जिलेके चिकोड़ी ताल्लुकका सदर। यह अक्षा० १६° २६' उ० और देशा० ७४° ३५' पू०में दक्षिण मराठा रेलवेके चिकोड़ी ष्टेशनसे १६ मील दूर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८०३७ होगी। यहां खूब व्यवसाय होता है। प्रधानतः स्थानीय व्यवहारके लिये रुईके कपड़े बनाये जाते हैं। १७९० ई०को कपतान मूर उसको एक बड़ा और गौरवशाली नगर लिख गये हैं। उस समय इसके आसपास बड़े और उमदा अङ्गूर खूब होते थे।

चिक्क (सं० पु०) चिक् इत्यव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते चिक्-कै क। १ छुकुन्दरी, छुछून्दर। नि नता नासिका अस्य नि-क चिकादेशः। इनच पिटच्। पा ५।२।३३। (त्रि०) २ नतनासिकायुक्त, चिपटी नाकवाला, जिसकी नाक दबी हो।

चिक्कट (हिं० पु०) १ गर्द, तेल आदिका मैल जो कहीं

जम गया हो, कीट। (वि०) २ मैला कुचैला, गन्दा।

चिक्कण (सं० त्रि०) चिक्यते ज्ञायते चिक्-क्वण-कश। १ स्निग्ध, चिकना।

"कठिनचिक्कणः श्रवनः" (भारत १२।१८४।१४)

(पु०) २ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़। ३ हरीतकी फल, हड़, हर्रे। ४ गुवाकफल, सुपारीका फल। ५ औषधपाकका अवस्थाविशेष, आयुर्वेदमें पाक या आँचकी तीन अवस्थाओंमेंसे एक, कुछ तेज आँच।

चिक्कणकण्ठ (सं० क्ली०) नगरविशेष, एक नगरका नाम।

चिक्कणशल्की (सं० पु०) चिक्कण आमिषविशिष्ट मत्स्य, वह मछली जिसका मांस चिकना हो।

चिक्कणा (सं० स्त्री०) चिक्कण स्त्रियां टाप्। १ उत्तम गौ, अच्छी गाय। इसका पर्याय नैचिकी है। (शब्दचन्द्रिका) २ पूगफल, सुपारी।

चिक्कणी (सं० स्त्री०) चिक्कण गौरादित्वात् ङीष्। १ गुवाकवृक्ष सुपारीका पेड़। २ गुवाकफल, सुपारीका फल। ३ हरीतकी, हड़, हर्रे।

चिक्कदेव-महिसूरराज्यके यादववंशीय एक राजा। इन्होंने १६७२ ई०से १७०४ ई० तक राज्य किया था, तथा तञ्जोरके एकोजीसे बेङ्गलूर खरीद कर अन्यायपूर्वक कुछ स्थानों पर कब्जा कर अपने राज्यकी पुष्टि की थी। राज्यमें नाना प्रकारसे सुनियमोंका प्रचार कर ये प्रजाके अतिप्रिय बन गये थे। महाराष्ट्रगण इनसे परास्त हुए थे। ये वैष्णवधर्ममें दीक्षित थे।

चिक्कन (हिं० वि०) चिक्कण, चिकना।

चिक्कनर्ति—बम्बई प्रदेशका एक क्षुद्र ग्राम। यह हुबली नामक स्थानसे ११ मील पूर्व-दक्षिणको अवस्थित है। इसके अधिवासियोंकी संख्या प्रायः ४०० है। चिक्कनर्ति ग्राममें कमलेश्वर नामक एक मन्दिर है। इसमें प्राचीन कालकी उत्कीर्ण एक शिलाफलक दृष्ट होता है।

चिक्करना (हिं० क्रि०) चीत्कार करना, चिंघाड़ना, चीखना, ज़ोरसे चिल्लाना।

चिक्कराय तिम्मय्य—दाक्षिणात्यके अन्तर्गत पुङ्गनूर नामक स्थानके एक राजा। इनके पिताका नाम था इम्मड़ी तिम्मय्य। इन्होंने विजयनगराधिपति कृष्णदेवरायकी सहायतासे आदिलशाहीवंशके मुसलमानोंके साथ संग्राम किया था, तथा १५१० ई०में तीन नये किले बनवाये थे। चिक्कराय तिम्मय्य तत्कालीन राजाओं द्वारा विशेष सम्मानित हुए थे। उस समय इन्होंने अपना आधिपत्य विस्तार किया था। इन्होंने पुङ्गनूर नगरकी प्रतिष्ठा की थी।

चिक्करायबासव—दाक्षिणात्यके अन्तर्गत पुङ्गनूरके अधिपति चिक्करायतिम्मय्यके पुत्र। ये बहुत ही छोटी अवस्थामें राजगद्दी पर बैठे थे। १६३८ ई०में मुसलमानोंने इनके राज्य पर आक्रमण कर कुछ अंश हड़प लिया था और कुछ इन्हें वापिस कर दिया था। इनके पुत्रका नाम था वीरचिक्कराय। ये मुसलमानोंके प्रिय हुए थे।

चिक्कस (सं० पु०) चिक्कयति पीड़यति चूर्णकारिणमिति शेषः चिक्क-असच्। १ यवचूर्ण, जौका आटा। २ उबटन या ब्याहमें उबटनकी तरह शरीरमें लगानेकी हलदी और तेल मिश्रित जौका आटा।

चिक्कस (देश०) बुलबुल, तोते आदि बैठनेका लोहे पीतल आदिके छड़का बना हुआ अड्डा

चिक्का (सं० स्त्री०) चिक्कयति पीड़यति भोक्तारं चिक्क अच् स्त्रियां टाप्। गुवाकफल, सुपारी।

चिक्किर (सं० पु०) चिक्क-इरच्। १ मूषिकभेद, एक प्रकारका मूसा, जिसके काटनेसे सूजन और सिरमें पीड़ा आदि होती है। कषाय आदिका प्रयोग करनेसे यह दब जाता है। २ चिखुरा, गिलहरी।

चिक्कुरुबिनवर—कर्णाटक जातिविशेष, कर्णाटक देशकी एक जाति। इन लोगोंकी मातृभाषा कनाड़ी है। ये लोग पुरुष होने पर अपने नामके साथ 'आपा' अर्थात् पिता लगाते हैं और स्त्रियोंके नामके पीछे 'आवा' अर्थात् माता। नामके अन्तमें और कुछ न लिख कर अपना जातिगत नाम अर्थात् चिक्कुरुबिनवर शब्दका प्रयोग करते हैं। जिसका नाम "आय" है, वह "आयापा-चिक्कुरुबिनवर" कह कर अपना परिचय देता है। इनमें चौंसठ शाखाएँ हैं; जिनमेंसे आरे बिले, मैनस और मिने प्रधान हैं। लड़का पिता और माताके गोत्रको छोड़ कर तीसरे किसी भी गोत्रकी लड़कीसे अपना विवाह कर सकता है। ये काले और हट्टे-कट्टे होते हैं।

ये लोग मामूली एक-मञ्जले घरमें रहते हैं तथा मामूली कम्बल, रजाई और कुछ मिट्टीके बरतनोंके सिवा इनके घरोंमें और कुछ नहीं दिखाई देता। इनमें नौकर रखनेकी रीति नहीं है। ये लोग पक्षी और बकरी आदि पशुओंको पालते हैं, परन्तु यदि कोई कुत्ता पाले तो वह अवश्य ही जातिसे छेक दिया जाता है।

रोटी, दाल और तरह तरहके उद्भिज्ज पदार्थ इनका दैनिक खाद्य है। अज, मेष, खरगोश, हरिण और पक्षी मांस तथा ग्राम्यमदिरा पीनेकी भी इनमें चाल है। लिम्बदेव और यल्लम्मादेवकी पूजामें ये लोग अज चढ़ाते हैं। वीरभद्र इन लोगोंके कुलदेवता हैं और जङ्गम पुरोहितका काम करते हैं। विवाह आदिमें जङ्गमकी जरूरत होती है।

इनमें क्या स्त्री और क्या पुरुष कोई भी प्रतिदिन स्नान नहीं करते। पर्वमें उपवास करना हो अथवा कहीं ज्योनार जीमनी हो तो पुरुषगण स्नान करते हैं और सप्ताहमें एक दिन मात्र स्त्रियां नहाती हैं। पुरुष मूंछ और चोटी रखाते हैं तथा कुरता आदि पोषाकसे शरीर ढकते हैं। स्त्रियां महाराष्ट्र-कामिनियों जैसी पोषाक पहनती हैं। बड़े घरकी स्त्रियां तथा पुरुष भी सोने-चाँदीके गहने पहना करते हैं। ये लोग कष्टसहिष्णु, मितव्ययी और अत्यन्त मैले होते हैं। रुजगार करना इनकी पैतृक वृत्ति हैं, परन्तु दुःख है कि ये लोग अब रुजगारमें उतना मन नहीं लगाते। कपड़े बुन कर तथा खेतीबारी कर ये अपना निर्वाह करते हैं। लड़के-लड़कियाँ तथा स्त्रियाँ भी पुरुषके काममें सहायता पहुंचाती हैं। लिङ्गायत और साली जाति इसकी अपेक्षा मर्यादामें कुछ ऊंची है तथा शिम्पी और कुरुवर जाति कुछ नीची समझनी चाहिए। ये लोग अगहनसे वैशाख मास तक कुछ अधिक परिश्रम करते हैं।

बाल्यविवाह, बहुविवाह और विधवाओंके पुनःसम्बन्धकी प्रथा इन लोगोंमें चालू है। पतिके मर जाने पर पत्नीके माता पिता या और कोई गुरुजन उसे नयी पोषाक पहनाते हैं तथा उसके हाथमें एक दीपक दे कर पतिकी प्रदक्षिणा दिलाते हैं। किन्तु यदि पतिके सामने पत्नी मर जाय तो उस पतिके शिर पर फूलोंकी माला लपेट देते हैं।

चिक्कुरुविनवर जातिके लोग सामाजिक कलह करनेमें बड़े निपुण होते हैं, किन्तु इन लोगोंकी सामाजिक कलह जातीय पञ्चायतमें निपट जाती है। लड़के बारह वर्ष तक पाठशालामें पढ़ते हैं।

चिक्केरूर—बम्बई प्रदेशका एक शहर। यह कोड़ नामक स्थानसे १० मील पश्चिम पड़ता है। प्रति बुधवारको यहां बाजार लगता है। तण्डुल ही उसका प्रधान पण्यद्रव्य है। चिक्केरूरमें हिरिकेरे नामक एक वृहत् सरोवर है। इसके तीर पर १०२३ तथा १०२५ शकके खोदित दो शिलाफलक लगे हैं। यहां वाणशङ्करी, हनुमन्त तथा सोमेश्वर देवका मन्दिर और उक्त तीनों मन्दिरोंमें यथाक्रम ८७५, १०२३ एवं १०२३ शकके खोदित ३ शिलाफलक भी देख पड़ते हैं। एतद्व्यतीत ८८८ तथा ११४४ शकके खोदित प्रस्तरफलक संयुक्त २ वीरगल पत्थर और १०४७ एवं १०५१ शकके खोदित दो बड़े शिलाफलक भी हैं।

चिक्रंस (सं० स्त्री०) क्रमितुमिच्छा क्रम् इच्छार्थे सन-अटाप्। १ आक्रमणका अभिलाष, चढ़ाई या हमला करनेकी इच्छा। २ जानेकी इच्छा।

चिक्राशी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम। (Swietenia chickrassy.)

चिक्रीड़ा (सं० स्त्री०) क्रीड़ितुमिच्छा क्रीड़ इच्छार्थे सन् अ-टाप्। क्रीड़ा करनेकी इच्छा, खेलनेका मन।

चिक्लिद (सं० त्रि०) क्लिद् यङ् लुक् अच्। अत्यन्त क्लेदयुक्त, धर्माक्त, क्लेदवान्, पसीनेसे भरा हुआ, पसीनेसे तर बतर।

चिखलवहल—बम्बई प्रदेशके नासिक जिलेके अन्तर्गत एक स्थान। यह मालिगांवसे १० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहां एक बड़ा शैलमन्दिर है।

चिखली—बरारके बुलडाना जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २०° एवं २०° ३७' उ० और देशा० ७५° ५७' तथा ७६° ४२' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल १००८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२८५८० है। इसमें २६६ ग्राम और चिखली, देउल गांवराजा तथा बुलडाना नामके

तीन शहर लगते हैं। तालुकका अधिकांश उर्वरा है। उत्पन्न शस्योंमें गेहूं प्रधान है।

चिखली—बम्बई प्रदेशके सूरात जिलेका पूर्व तालुक। यह अक्षा० २०° ३७´ तथा २०° ५४´ उ० और देशा० ७२° ५६´ एवं ७३° १७´ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल १६८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५१६८२ है। मालगुजारी कोई २०३०००) रु० है। इसकी भूमि चढ़ा-उतार है। पथरीली नदियां इधर उधर बहती हैं। यहां घास और झाड़ी खूब जगती है। परन्तु नीचेकी जमीन जरखेज है। इसमें कई नदियां पूर्वसे पश्चिमको प्रवाहित हैं।

चिखली—बम्बई प्रान्तके खानदेश जिलेकी एक जमींदारी। मेहवास देखो।

चिखादिषु (सं० त्रि०) खादितुमिच्छुः खाद इच्छार्थे सन-उः। खानेमें अभिलाषी, खानेकी चाह।

चिखुरन (देश०) तृणविशेष, एक तरहकी घास जो खेतसे निरा कर निकाली जाती है।

चिखुरना (देश०) जोते हुए खेतमेंसे घास निकाल कर बाहर करना।

चिखुराई (हिं० स्त्री०) खेतसे घास निकालनेकी मजदूरी।

चिखुरी (हिं० स्त्री०) वृक्षमार्जार, गिलहरी।

चिङ्गट (सं० पु०) चिङ्ग इत्यव्यक्तशब्देन अटति चिङ्ग-अच् शकन्ध्वादित्वात् अलोपः। मत्स्यभेद, एक प्रकारकी मछली, झिंगवा, झिंगा। इसका पर्याय महाशल्क है। यह मछली गुरुपाक, बलवीर्यकर, पित्तादिनाशक, मुख-रोचक तथा कफ और वातवर्द्धक है।

चिङ्गलेपुत (सेङ्गलुनीरपत्त् वा कमलहृद)—मन्द्राज प्रान्तके पूर्व सागर तटका जिला। यह अक्षा० १२° १५´ एवं १३° ४७´ उ० तथा देशा० ७९° ३४´ और ८०° २१´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३०७९ वर्गमील है। इसके पूर्व बङ्गालकी खाड़ी, उत्तर नेल्लूर और पश्चिम तथा दक्षिणको उत्तर एवं दक्षिण अर्काट पड़ता है। उत्तर की ओर पर्वतोंका दृश्य रमणीय है। नदियां पश्चिमसे पूर्वको बहती है। परन्तु छोटी नदियां शीघ्र जाती हैं और बड़ी नदियोंमें भी नावें चल नहीं सकतीं।

इसका जलवायु न बहुत ठण्डा और न गर्म है। पश्चिममें ज्वर और पूर्वमें कुष्ठ तथा फील पावेका प्राबल्य रहता है।

अतीत कालसे ई० ८वीं शताब्दीके मध्य तक यह पल्लव राजाओंका राज्यभुक्त रहा। पल्लव कौन थे, कहांसे आये अनिश्चित है। चिङ्गलेपुतसे पूर्वको, कहते हैं, उन्होंने वर्तमान सात मठ बनाये थे। ७६० ई०को पल्लव वंशका विध्वंस होने पर यह महिसुरके पाश्चात्य गङ्ग-राजाओंके हाथ लगा। ई० ९वें शताब्दके आरम्भमें माल-खेड़के राष्ट्रकूटोंने आक्रमण करके काञ्चीको अधिकार किया और १०वीं शताब्दीके मध्य भागमें भी फिर वैसा ही हुआ। थोड़े दिन पीछे चोल नृपति राजा राजदेवने चिङ्गलेपुत दबा लिया था। १३वींके प्रायः मध्य भागमें चोल राजाओंकी अवनति होने पर यह जिला वरङ्गलके काकतीय राजाओंके हाथ लगा। १३८३ ई०को यह विजयनगर राज्यमें मिला लिया गया। १५६५ ई०को जब तालीकोटाके युद्धमें दक्षिणके मुसलमान नवाबोंने मिल जुल करके विजयनगरके राजवंशको उत्खात किया था, यह विध्वस्त राज्य प्रतिनिधियोंको मिल गया। १६३९ ई०को किसी पिछले प्रतिनिधिने अंगरेजोंने वह स्थान जहां आजकल फोर्ट सेण्ट जार्ज बना है, दे डाला। इसके थोड़े ही दिन पीछे गोलकुण्डाके कुतुबशाही सुलतानोंने इसको अपना करद राज्य बनाया।

१६८७ ई०को गोलकुण्डाके पतन पर दिल्ली मुगल बादशाहोंने चिङ्गलेपुत अधिकार किया था। कर्णाटकके युद्ध समय यहां बराबर मारकाट जारी रही। १७६३ ई०को अरकाटके नवाब मुहम्मद अलीने एक गांव जो अब मन्द्राज नगरका एक भाग है, ईष्ट इण्डिया कम्पनीको जागीरके तौर पर दिया और १७६५ ई०को मुगल बादशाहने भी उसको मञ्जूर किया था। फिर हैदर अलीने १७६८ और १७८० ई०में इसको लूटा। १७८१ ई०को नवाब कर्णाटक कर्णाटक कम्पनीको प्रदत्त होने पर यह अङ्गरेजी राज्यभुक्त हुआ।

कुरम्ब और आदिम अधिवासियोंके प्रस्तरमय अवनीका ध्वंसावशेष यहां बहुत देख पड़ता है। चिङ्गलेपुतकी लोकसंख्या प्रायः १११२१२२ है। प्रचलित भाषा

तेलगु है। कुछ लोग तामिल भी बोलते हैं। यहां वड़गलय और तेङ्गलय वैष्णवोंमें मतभेदके कारण बड़ा झगड़ा होता है। कृषिकार्य भली भांति नहीं चलता। गोचर भूमिकी कमी होनेसे पशु बिगड़ गये हैं।

यहां सूती और रेशमी कपड़ा खूब तैयार होता है। कोई ११०००से ऊपर चरखे चलते हैं। पहले यहां बहुत उम्दा मलमल बनती थी। कुछ गांवोंमें रंगदार चारखाना बनाया जाता है। इस जिलेमें कई भी नील-की कोठियां और तेल निकालनेकी देशी साधारण चक्कियां हैं। समुद्रतट लम्बा रहते भी कोई अच्छा बन्दर नहीं है। यहांसे मन्द्राजको कच्चा लकड़ी, अनाज, शक्की, पैरा, घास आदि द्रव्य बिकने जाते हैं। व्यवसायका कोई प्रधान केन्द्र नहीं। कहीं कहीं हफ्तावार बाजार लगते हैं। महाजनोंमें मारवाड़ी प्रधान हैं। इस जिले-में मदरास-रेलवे और साउथ-इण्डियन रेलवे चलते हैं। मदरास रेलवेकी साउथ वेष्ट लाइन १८५६ ई०, ईष्टकोष्ट लाइन १८८१ ई० और साउथ इण्डियन रेलवेकी बड़ी लाइन १८७६ ई०को खुली थी। सड़कें भी खूब हैं। समुद्रके किनारे किनारे बकिङ्घम नहर लगी है। ई० १८वीं शताब्दीकी यहां चार बार दुर्भिक्ष पड़ा था।

चिङ्गलेपुत जिला ३ सबडिविजनोंमें विभक्त है। यहां अपराध अधिक नहीं होता। हिन्दू राजत्वके समय खेत-की पैदावारका कोई हिस्सा ही मालगुजारीमें दिया जाता था। परन्तु मुसलमानोंने जा करके कर चुकाने-वालोंको नियुक्त किया। १८०१-२ ई०को अंगरेजोंने इसका मुदामी बन्दोबस्त कर दिया, परन्तु उसका फल असन्तोषजनक निकलनेसे रैयतवारी कायदा चला। यहां कोई सेण्ट्रल जेल नहीं। बन्दी मन्द्राज, वेल्लूर और कुड्डलूर पहुंचाये जाते हैं। शिक्षाके लिये मन्द्राज प्रान्तमें इसकी संख्या छठीं हैं। चिकित्साके लिये कई सरकारी अस्पताल हैं।

चिङ्गलेपुत—मन्द्राज प्रान्तके चिङ्गलेपुत जिलेका सब डिवि-जन। इसमें तीन तालुक लगते हैं।

चिङ्गलेपुत—मन्द्राज प्रान्तके चिङ्गलेपुत जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १२° २६' एवं १२° ५४' उ० और देशा० ७९° ५२' तथा ८०° १५' पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४३६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५५२१३ है। मालगुजारी प्रायः २८२०००) रु० लगती है। साधारणतः यह तालुक पथरीला और उजाड़ है। परन्तु नीची पहाड़ियोंकी झाड़ियां देखनेमें बहुत अच्छी लगती हैं।

चिङ्गलेपुत—मन्द्राज प्रान्तीय चिङ्गलेपुत जिलेके चिङ्गले-पुत तालुकका प्रधान नगर (हेड क्वार्टर)। यह अक्षा० १२° ४१' उ० और देशा० ७९° ५८' पू०में मन्द्राज नगरसे ३६ मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। पालार नदीका उत्तर तट यहांसे कोई आध मील दूर होगा। लोकसंख्या प्रायः १०५५१ है। कई गांवोंको जोड़ करके १८६६ ई०को म्युनिसपालिटी हुई। इसका किला ई० १६वीं शताब्दीको बना था। किसी समय यह विजयनगरके राजाओंकी राजधानी रहा। कहते हैं कि उक्त दुर्ग विजयनगरराज कृष्णदेवके मन्त्री तिम्मराज कर्तृक निर्मित हुआ। अपने चतुःपार्श्वकी दलदल और झील रहनेसे इसको शत्रु तोड़ न सकते थे। यहांसे १ मील पूर्वको एक गुहा है। पहले वह बौद्ध विहार रही, परन्तु अब शिवालय बन गयी है। नगरका स्वास्थ्य साधारणतः अच्छा और जलवायु शीतल है। इसके चारों ओर पर्वत खड़े हैं। उनमें कोई भी ५०० फुटसे अधिक ऊंचा नहीं। वर्षा ऋतुमें सरोवरादिको ले करके पर्वतोंका दृश्य विचित्र बन जाता है। किलेका बड़ा तलाव २ मील लंबा और एक मील चौड़ा है। उत्तरको १० मील दूर तक पानीको बांध करके यह बनाया गया है। यह ग्रीष्म ऋतुको भी नहीं सूखता। १८८२ ई०को यहां प्रादेशिक रिफार्मेटरी स्कूल (Reformatory School) खुला था। यह बालक अपराधियोंको, जिन्हें कठिन रूपसे दण्डित करना उचित नहीं भरती करनेके लिये हैं। १८८८ ई०से सार्वजनिक शिक्षाके तत्त्वाव-धानके अधीनउसको किया गया है। लड़कोंको उपयोगी व्यवसायकी शिक्षा देते हैं। इसके कामोंमें मुसव्वरी, बढ़ई-गरी, लकड़ीकी नक्काशी लोहे तथा दूसरे धातुओंका बनाव, कपड़ा बुनना और दरजीगरी शामिल है। इस विद्यालयमें बड़ी सफलता पायी है।

चिचगढ़—मध्यप्रदेशस्थ भण्डारा जिलेके दक्षिणपूर्व-

प्रान्तमें स्थित एक विस्तृत राज्य वा जमींदारी। यह राज्य विस्तृत होने पर भी नाना कारणोंसे इसकी अवस्था अच्छी नहीं है। इसका रकबा २३१ वर्गमील है, जिसमें सिर्फ १२ वर्गमील स्थानमें खेती होती है। यहांके अधिवासियोंमें हलवागोंड़ और ग्वाला ही प्रधान हैं। चिचगढ़के जङ्गलमें मूल्यवान् काष्ठ मिलते हैं। चिचगढ़ और पालन्दुर इस राज्यके प्रधान शहर हैं। चिचगढ़नगरमें वहांके अधिपतिने एक सराय बनवाई है, जिसमें एक कुँआ भी है।

चिचड़ा (हिं॰ पु॰) दो डेढ़ हाथ ऊँचा एक पौधा। इसमें थोड़ी थोड़ी दूर पर गांठें होती हैं। उन गांठोंके दोनों तरफ पतली पतली टहनियां वा पत्तियां लगती हैं। पत्त २-३ हाथ लंबे, गोल और नसदार होते हैं। यह पौधा बरसातमें तथा घामोंके साथ उगता और बहुत दिनों तक रहता है। इसकी जड़ मसला होती है। इसकी जड़ तथा पत्त आदि सब औषधके काममें आते हैं। इसके फूल और बीज लंबी लंबी सींकोंमें गुंथे रहते हैं। कर्मकाण्डी लोग इसे पवित्र मानते और ऋषिपञ्चमीका व्रत पालनेवाले इसका दतुअन करते हैं।

चिचड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ अपामार्ग। २ किलनी वा किल्ली नामका एक कीड़ा जो चौपायों तथा कुत्तों बिल्लियोंके शरीरमें चिपटा रहता है। यह खून पीता है।

चिचाङ्गिल—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके बन्नू जिलेका एक पहाड़। यह अक्षा॰ ३२° ५१′ उ॰ और देशा॰ ७१° १०′ ४५″ पू॰में अवस्थित है। इसका दूसरा नाम सींगढ़ या मैदानी भी है। उच्च शृंगको शोखजारत कहते हैं। वह कालाबाग नामक स्थानसे १६ मील दूर और समुद्र-पृष्ठसे ४७४५ फुट ऊंचा है। इसकी पूर्व दिक्को बन्नू उपत्यका है। मियांवालीसे बन्नू उपत्यकाको जानेवाली राह मैदानीकी टांगदरा घाटीसे हो कर निकली है।

चिचिंगा—चिचिण्ड देखो।

चिचिण्ड (सं॰ पु॰) फलविशेष, चचींडा, चिचिण्डा (Trichosanthes anguina) इसके पर्याय—श्वेतराजि, सुदीर्घ, गृहकूलक और बहुफल। इसके गुण वातपित्तनाशक, बल और रुचिकारक, पथ्य और परवलके तरह उपकारी है। (हारीत)

यह फल करीब ३-४ हाथ लंबा सर्पाकृति होता है। इसका वर्ण हरिताभ शुभ्र है। इसकी लता तोरई-की भाँति होती है, यह बरसातके प्रारम्भमें बोयी जाती है और भादों कुआरमें फल देने लगती है। जाड़ेके दिनोंमें तोरई सेम आदिकी तरह इसकी भी तरकारी बनाई जाती है। इस पर पतले सफेद फूल लगते हैं। साधारणतः तालावके किनारे इसके बीज बोये जाते हैं। इसकी बेलको चढ़ानेके लिए टट्टियाँ या कांटोंके झाड़ लगाये जाते हैं। इसका फल बहुत जल्दी बढ़ता है। वैद्यकके मतानुसार यह बलकारक, वातपित्तनाशक, शोषरोगनाशक और पथ्य है। इसकी कुछ जातियां कड़ई होती हैं। कहीं कहीं इसे परवल भी कहते हैं।

चिचुकना (हिं॰ क्रि॰) चुचुकना देखो।

चिचोड़वाना (हिं॰ क्रि॰) चचोड़वाना देखो।

चिच्चिकुटी (सं॰ स्त्री॰) पक्षीका चीत्कार, चिड़ियोंके चींचींका शब्द।

चिचिटिङ्ग (सं॰ पु॰) चीयते चि कर्मणि क्विप्-चित् अग्निः, तत्र चिटिं प्रेषणं गच्छति चिटि-गम-ड। पृषो-दरादित्वात् मुम्। कीटभेद, एक तरहको कीड़ा।

चिच्छक्ति (सं॰ स्त्री॰) चिदेव शक्तिः कर्मधा॰। चैतन्य शक्ति।

"भाशम्बु इस चिच्छक्ता कैवल्ये स्थित आत्मनि"

(भागवत १।७।२४)

चिच्छायापत्ति (सं॰ स्त्री॰) चिति बुद्ध्यादेः बुद्ध्यादौ वा चितेः छाया प्रतिबिम्बः तस्या आपत्तिः प्राप्तिः। चिच्छक्ति पर बुद्धिसत्त्वादिका प्रतिबिंब वा बुद्धिसत्त्वादि पर चिच्छक्तिका प्रतिबिम्ब पड़ना। पर्याय—चित्प्रतिबिम्ब, चैतन्याध्यास, चिदावेश। विषयके साथ इन्द्रियका सन्नि-कर्ष होनेसे बुद्धिकी विषयाकारमें वृत्ति हुआ करती है। विषयाकार बुद्धिमें पुरुषका प्रतिबिम्ब पड़ता है। चेतन-की छाया पानेपर अचेतन बुद्धि भी चेतन हो जाती है। विषयाकार परिणाम होने पर बुद्धि भी चैतन्यमें प्रति-बिंबित होती है। उस समय परिणामीका प्रतिबिम्ब पा कर अपरिणामी निर्लेप पुरुष भी अपनेको सुखी दुःखी इत्यादि मान बैठता है। (सांख्यभाष्य)

चिच्छित्सु (सं॰ त्रि॰) छेत्तु मिच्छुः छिद् इच्छार्थे सन्-

उ। छेदन करनेमें अभिलाषी, जिसे काटनेकी इच्छा हो।

चिच्छिल (सं० पु०) १ देशभेद, महाभारतके अनुसार एक देशका नाम।

"मेलकैश्च पुरोषैव चिच्छिलैश्च समन्वितः।" (भारत भीष्म ८८ अ०)

चिच्छुक—भागवतका एक टीकाकार।

चिञ्चखेड़—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव। यह पथोरा तालुकका एक विख्यात स्थान है। इसको माहिजीभी कहते हैं। प्रति वत्सर आधे पौष माससे यहां एक मेला लगता है। प्रवाद है, कोई रमणी वहां समाधिस्थ हुई थी। उसीके उपलक्षमें यह मेला होता है। यह रमणी जामनेर जिलेवाले होषरी ग्रामके फिरोली कुनबीकी कन्या थी। श्वसुर और सासुके द्वारा लाञ्छित तथा विताड़ित होने पर भाल पहाड़ पर जा करके उसने गोरक्षनाथके पास योग सीखा। अवशेषको यह चिञ्चखेड आ पहुंची। प्रति वर्ष अधिवासी लोग इसके लिए एक कुटीर बनाते थे। परन्तु यह उसको जला डाला करती थी। द्वादश वर्ष पीछे रमणी अपने आप भूगर्भमें समाधिगत हुई। लोग भक्तिके साथ उसकी पूजा किया करते हैं। माहिजी देखो।

चिञ्चनी—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव। इसी स्थानको तारापुर चिञ्चनी भी कहते हैं। यह खाड़ीके उत्तर कूलको बड़ोदा और मध्यभारतीय रेलवे लाइनके बड़ायन ष्टेशनसे ६ मील दूर अवस्थित है।

तारापुर चिञ्चनी देखो।

चिञ्चली—बम्बईके कोल्हापुर राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा० १६° २४ उ० और देशा० ७४° ५०' पू० कोल्हापुर शहरसे ४२ मील दूरमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३५४० है। यह दाक्षिणी महाराष्ट्र रेलवेका ष्टेशन है। महाकाली या माया देवीका मन्दिर रहनेके कारण यह ग्राम एक तीर्थस्थान गिना जाता है। वर्षमें चार बार यहां बहुतसे यात्रियोंका समागम होता है। माघ मासकी पूर्णिमा तिथिमें एक भारी मेला लगता है जिसमें लगभग ३५००० मनुष्य जुटते हैं।

चिञ्चवड़—बम्बई प्रान्तस्थ पूना जिलेके हवेली तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १८° ३७' उ० और देशा० ७३° ४७' पू०में पूना नगरसे १० मील उत्तर-पश्चिम पौन नदीके दक्षिण तट तथा ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १५८६ होगी। चिञ्चवड़ गणपतिके देव मन्दिरके लिये प्रसिद्ध है। कहते हैं, ई० १७वीं शताब्दीके मध्यभागको यह मरोबा नामक एक बालकके रूपमें अवतरित हुए। पितामाताकी मृत्युके बाद आजन्म धर्मशील मरवा चिञ्चवड़से दो मील पश्चिम तातवड़में जाकर रहने लगे। वे प्रतिमास तातवड़से २५ कोस दूरवर्ती मरगांवके मन्दिरमें जा कर गणेशकी पूजा किया करते थे। मरगांवके प्रधान चौधरी मरवाके धर्मानुरागको देख कर खुश हुए और प्रत्येक बार उन्हें एक कटोरा दूध देने लगे। एक दिन चौधरी अपनी अन्धी बालिकाको घर पर छोड़ कर खेतको चले गये। इतनेमें मरवाने आ कर दूधका कटोरा मांगा। अन्धी लड़कीको उसी समय सब दीखने लगा, उसने उठ कर मरवाको एक कटोरा दूध दे दिया। इस आश्चर्य-घटनाकी बात चारों ओर फैल गई। थोड़े ही दिन बाद मरवाने महाराष्ट्रवीर शिवाजीका चक्षुरोग आरोग्य कर दिया। मरवाका यशगौरव चारों तरफ फैल गया। उनके दर्शनके लिए नाना स्थानोंसे आदमी आने लगे। किन्तु इससे उनकी उपासनामें व्याघात होने लगा. इस लिए वे जङ्गलमें जा छिपे। वृद्ध होने पर उनके लिए २५ कोस चल कर मरगांव जाना दुष्कर हो गया। एक दिन वे पूजा समाप्त होनेके बाद वहां आये और मन्दिरका द्वार बंद देख कर बाहर लौट गये। परिश्रमसे क्लान्त होनेके कारण शीघ्र ही उन्हें निद्रा आ गई। स्वप्नमें गणेशदेवने दर्शन दे कर उन्हें कहा—"तुम मेरी पूजा करो पर भविष्यमें इतनी तकलीफ उठा कर यहां न आया करो। मैं तुम्हारे और तुम्हारे पुत्र पौत्र आदिके शरीरमें रहूंगा।" मरवाने जग कर देखा तो मन्दिरका दरवाजा खुला पाया। अनन्तर गणपतिकी पूजा कर वे वहांसे चल दिये। सुबह पुरोहितोंने आ कर गणपतिके गलेमें एक नई पुष्पमाला देखी, पर रत्नहार उनके गलेमें न पाया। सभी विस्मित हुए। सामान्य अनुसन्धानके बाद पता चला कि वह हार मरवाके गलेमें है। वह फिर पकड़ा था, दलपतिने उन्हें बन्दी करनेकी आज्ञा दी। गणेशकी कृपासे मरवाको छुटकारा मिल गया। चिञ्च-

वड़ पहुंच कर उन्होंने देखा, कि घरकी दीवार फोड़ कर गणेशको मूर्ति निकली है। वे उस मूर्तिकी पूजा करने लगे। अन्तको वे मूर्तिके नीचे समाधिस्थ हुए। इस लड़केने बहुतसे अलौकिक कर्म किये और इसके देहावसान पर उसी वंशमें और भी कई देवोंने जिन्हें चिञ्चवड़ देवता कहते हैं, अवतार लिया। इनमें मरोवाके पुत्र चिन्तामणि दूसरे जीवित देव थे। इन्होंने एक बार बड़े वाणी कवि तुकारामको, जिन्हें विठोबाके यहां जा करके उनके साथ भोजन करनेका अभिमान था, ईर्षा दूर करनेको गणपति रूप धारण किया था। तुकाराम चिन्तामणिको देवता कहते थे और यही उपाधि उनके वंशधरोंको भी प्राप्त हुई। चिन्तामणिके स्वर्गवासी होने पर नारायणको उनका उत्तराधिकार मिला। यह तृतीय देवता थे। कहते हैं एक बार औरङ्गजेबने उनकी परीक्षा लेनेको खानेके लिए एक पात्रमें गोमांस भेजा। इन्होंने उसको चमेलीके फूलोंका गुच्छा बना दिया था। इस अलौकिक घटनाको देख करके औरङ्गजेब इतने प्रसन्न हुए कि देववंशको वंशपरम्परा रूपसे ८ ग्राम उत्सर्ग कर दिये। अन्तिम देवने मरोवाका समाधिस्थान खोल करके अपने आपको शापित किया था। मरोवाने अपनी योगनिद्रा टूटने पर कहा कि ईश्वरत्व उनके पुत्रके साथ ही समाप्त हो जावेगा। १८१० ई०को लड़का अपुत्रक मर गया और उसीके साथ देववंशका सप्तम पुरुष समाप्त हुआ। पुरोहितोंने मन्दिरकी सम्पत्ति बचानेके लिये मृत व्यक्तिके किसी सत्वरी नामक दूर सम्बन्धीको उसका स्थानापन्न बनाया।

देववंश आजकल एक भवनमें, जिसे नाना फड़नवीस और १८वीं शताब्दीके मराठा-सेनापति हरिपन्त फाड़केने निर्मित किया था, रहता है। प्रासादके निकट ही दो मन्दिर खड़े हैं जिनमें प्रत्येक स्वर्गगत देवोंमें एक न एकके लिये पूजित होता है। प्रधान मन्दिर मरोवाके लिये उत्सर्गीकृत है। यह एक निम्न स्वच्छ भवन है। मण्डप चतुष्कोण तथा मन्दिर अष्टकोण बना हुआ है। भीतरी मठकी भित्ति पर एक शिलाफलक लगा है जिसमें लिखा है कि १६५८ ई०को मन्दिर निर्माण किया गया। श्रीनारायण-मन्दिरकी बाहरी दीवार पर दूसरा शिलाफलक है। उसके अनुसार यह १७२० ई०को पूरा हुआ। प्रतिवर्ष मार्गशीर्ष कृष्णा षष्ठीको गणपतिदेवके उपलक्षमें एक मेला लगता है।

मरोवाके विवरण सम्बन्धमें मतान्तर लक्षित होता है। कोई कोई कहता कि वह विदर-निवासी और धर्मशील थे। यौवनके पूर्व ही अकर्मण्य समझ करके इनको पिताने घरसे निकाल दिया। यह चिञ्चवड़को चलते बने। राहमें मरगांव नामक स्थानके गणेशकी उपासना करनेकी इनकी एकान्त निष्ठा उठी थी। सुतरां चिञ्चवड़से प्रतिदिन यह वहां जाने आने लगे। किसी समय भाद्र मासकी गणेश चतुर्थीको मन्दिरमें लोगोंकी बड़ी भीड़ होनेसे मरोवाने वृक्षतल पर निज नैवेद्य गणेशके उद्देश अर्पण किया था। किन्तु दैवबलसे यह नैवेद्य तत्क्षणात् मन्दिराभ्यन्तर और मन्दिरका नैवेद्य वृक्षतलमें पहुंच गया। पुरोहितोंने बालकको कुहकी (बाजीगर) समझ करके गांवसे निकाल दिया था। पीछे स्वप्नयोगमें गणपतिने पुरोहितको आदेश किया—तुम शीघ्र मरोवाको बुला लावो, वह हमारी पूजा करेगा। पुरोहितोंके अनेक अनुयोग करने पर भी यह वहां न गये। स्वप्नमें गणेशने मरोवाको कहा था—हम तुम्हारे साथ चिञ्चवड़में अवस्थान करेंगे। दूसरे दिन मरोवाने स्नान करते करते देखा कि मरगांवकी उनकी आराध्य गणेशमूर्ति तैरती चली आती है। वह तत्क्षणात् इसे घर ले गये और एक मन्दिर बना करके प्रतिष्ठित कर दिया। चारों ओर खबर फैल गयी कि मरोवा गणेशदेव हुए थे। फिर मरोवाने विवाह किया और इनके पुत्र गणेशावतार जैसे पूजित होने लगे। विख्यात भ्रमणकारी लार्ड वालेन्सियाने जब यह मन्दिर देखा, कथित गणेशावतार चक्षुरोगसे पीड़ित थे।

१८०८ ई०को मिसेस ग्रहामने इसका मन्दिर दर्शन किया। यह कहती है कि उस समय गणेशदेव एक बालकमात्र थे। वह प्रति दिन अतिमात्र अहिफेन सेवन करते और इसीसे उनकी आंखें सुर्खासुर्ख रहती थीं।

चिञ्चा (सं० स्त्री०) १ तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका पेड़। इसके पत्तेके रससे गुल्मरोग जाता रहता है। तस्या फलं इत्यण् हरीतक्यादित्वाल्लुप्। हरीतक्यादिभ्यश्च। पा ४।३।१६७।

२ चिञ्चाफल, इमलीका चिंआँ। ३ चञ्चुशाक।

चिञ्चाटक (सं० पु०) तृणविशेष, चेंच साग।

चिञ्चातैल (सं० क्लो०) तिन्तिड़ी-बीजतैल, इमलीके बीजोंसे निकाला हुआ तेल।

चिञ्चाम्ल (सं० पु०) चिञ्चेवाम्लं। अम्ल शाक, चूका नामका साग।

चिञ्चासार (सं० पु०) चिञ्चाया इव सारोऽस्य। अम्ल शाक, चूका नामका साग।

चिञ्चिका (सं०) चिञ्चा देखो।

चिञ्चिड़ी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक प्रकारका पेड़।

चिञ्चितिका (सं० स्त्री०) तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका पेड़।

चिञ्चिनी (सं० स्त्री०) नगरीविशेष, एक नगर जो गङ्गा-द्वारके दक्षिण भाग पर अवस्थित है।

चिञ्ची (सं० स्त्री०) चिञ्च गौरादित्वात् ङीप्। गुञ्जा, घुंघुची।

चिञ्चूका (सं०) चिञ्चोटक देखो।

चिञ्चोटक (सं० पु०) चिञ्चे अटति चिञ्चा-अट-ण्वुल् पृषोदरादित्वात् साधुः। तृणविशेष, चेंच साग।

चिञ्चोली—हैदराबाद राज्यके गुलबर्गा जिलेका एक तालुक। भूपरिमाण ४१३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५८,८६० है। इसमें ११० ग्राम लगते हैं जिनमें ४१ ग्राम जागीर हैं। यहांकी आय लगभग १५०००० रुपयेकी है।

चिट (हिं० स्त्री०) १ कागजका टुकड़ा। २ छोटा पत्र, पुरजा, रुक्का। ३ वस्त्रका छोटा टुकड़ा।

चिटकना (अनु० क्रि०) १ सूखी हुई चीजोंका फटना। २ चिट चिट शब्द करना। ३ चिढ़ना, चिड़चिड़ाना, बिगड़ना।

चिटकाना (हिं० क्रि०) १ चिड़चिड़ाना, चिढ़ना, बिगड़ना। २ खरा हो कर दरकना, सूख कर स्थान स्थान पर फटना, रुखाई होनेसे ऊपरी तहमें दराज होना।

चिटनवीस (हिं० पु०) लेखक, मुहर्रिर, कारिन्दा, हिसाब किताब लिखनेवाला।

चिटिङ्ग (सं० पु०) कीटभेद, एक तरहका कीड़ा।

चिटी (सं० स्त्री०) चेटति प्रेरयति चिट्-क गौरादित्वात् ङीप्। १ चाण्डाल-वेशधारिणी योगिनी। तन्त्रसारके अनुसार चांडाल वेशधारिणी योगिनी जिसकी उपासना वशीकरणके लिये की जाती है। वशीकरणमन्त्र—"ॐ चिटि! चिटि! महाचाण्डालि अमुकं मे वशमानय स्वाहा"। जिसको वश करनेकी इच्छा हो उसका नाम तालपत्रमें लिख कर चीरमिश्रित जलमें रातको उबालना पड़ता है। ऐसा होनेसे अवश्य ही वह वशीभूत हो जाता है। इस विधिके द्वारा ७ दिनमें राजा वश हो सकते हैं।

(तन्त्रसार)

चिट्ट (हिं० स्त्री०) चिट देखो।

चिट्टा (हिं० वि०) १ श्वेत, धवल, सफेद। (पु०) २ एक तरहका सफेद छिलका जो किसी किसी मकड़ीके ऊपर पाया जाता है। इसका आकार सीपकासा होता है और यह दुअन्नीसे लेकर रुपए तकके बराबर रहता है। इससे रेशमके लिये मांड़ी तैयार की जाती है।

चिट्ठा (हिं० पु०) १ वह कागज जिस पर माल भरका हिसाब जांच कर आयव्यय वा लाभ और नुकसानका मीजान मिलाया जाता है, आंकड़ा, फर्द। २ खाता, लेखा, हिसाबकी किताब, लेन देन या जमा खर्चकी बही। ३ वह फिहरिस्त जिस पर कोई रकम सिलसिलेवार लिखी गई हो, सूची, टिकी। जैसे—चन्देका चिट्ठा। ४ खर्चकी फिहरिस्त, होनेवाला खर्चका ब्योरा, मय कीमतके उन चीजोंकी फिहरिस्त जो किसी कामके लिए जरूरी हो। आनुमानिक व्ययकी सूची। ५ विवरण, ब्योरा। ६ बाँटा जानेवाला सीधा, रसद। ७ प्रति-दिन, प्रति सप्ताह वा प्रति मास मजदूरी वा तनखाहके रूपमें बाँटा जानेवाला रुपया।

चिट्ठी (हिं० स्त्री०) १ पत्र, खत, वह रुक्का जिस पर समाचार लिख कर दूसरी जगह भेजा जाता है। २ पुरजा, बीजक। ३ किसी बातका आज्ञा-पत्र। जैसे हुण्डी आदि। ४ निमन्त्रण-पत्र। ५ कोई लिखा हुआ छोटा पुरजा। ६ वह क्रिया जिससे यह निश्चय किया जाता है कि किसी मालके पाने या कोई काम करनेका अधिकारी कौन बनाया जाय।

चिट्ठीपत्री (हिं० स्त्री०) १ पत्र, खत। २ पत्र-व्यवहार।

चिट्ठीरसां (हिं० पु०) हरकारा, डाकिया, पोस्टमैन, चिट्ठी बाँटनेवाला।

चिड़चिड़ा (हिं० पु०) १ चिचड़ा देखो।
२ भूरे रङ्गका पक्षी। (वि०) ३ थोड़ीसी बात पर अप्रसन्न हो जानेवाला, जो तनिकसी बातमें नाखुश हो जाता हो, तुनक, मिजाज।

चिड़चिड़ाना (हिं० क्रि०) १ कोई चीज सूखने पर फटना, खरा हो कर दरकना। २ चिढ़ना, क्रोधित लिये हुए बोलना, झुंझलाना।

चिड़चिड़ाहट (हिं० स्त्री०) चिढ़नेका भाव।

चिड़वा (हिं० पु०) चिउड़ा देखो।

चिड़ा (सं० स्त्री०) देवदारु।

चिड़ा (हिं० पु०) चटक, गौरा पक्षी, गोरैयाका नर।

चिड़ारा (देश०) जड़हन बोनेके योग्य नीची जमीनका खेत, डबरी।

चिड़िया (हिं० स्त्री०) १ पक्षी, पखेरु, पंछी। २ ताशका एक रङ्ग, चिड़ी। इसमें तीन गोल पखड़ियोंकी बूटी बनी रहती है। ३ तराजूकी डांडीमें लगा हुआ लोहेका टेढ़ा अँकुड़ा। ४ गाड़ीका वह अँकुड़ा वा कांढ़ा जिसमें रस्सी लगा कर पैंजनी बांधा जाती है। ५ अङ्गिया वा चोलीकी वह सीवन जिससे कटोरियां मिली रहती हैं। ६ एक तरहकी सीवन या सिलाई। इसमें पहले कपड़ेके दोनों पल्लोंको सी कर फिर सिलाईको तरफके दोनों सिरोंको अलग अलग उन्हीं पल्लों पर उलट कर इस तरहकी बखिया लगाई जाती है कि उस पर एक तरहकी बेलसी कढ़ जाती है। ७ लहँगे वा पायजामेका वह पोला भाग जो नलीकी तरहका होता और जिसमें नाला वा इजार बन्द पड़ा रहता है। ८ आड़ा लगा हुआ काठका वह टेढ़ा टकड़ा जिसका एक सिरा ऊपरकी ओर चिड़ियाकी गरदनकी तरह उठा हो, चिड़ियाके आकारका बना हुआ लकड़ीका वह टुकड़ा जो टेक देनेके लिए कहारोंका लकड़ी, लङ्गड़ोंकी बैसाखी, मकानोंके खम्भों आदि पर लगा रहता है।

चिड़ियाखाना (हिं० पु०) पक्षिशाला, दूर दूर देशोंके तरह तरहकी चिड़ियोंके रखनेका स्थान।

चिड़ियावाला (हिं० पु०) मूर्ख, जड़, उल्लू, गावदी।

चिड़िहार (हिं० पु०) व्याध, चिड़िया पकड़नेवाला, बहेलिया, चिड़ीमार।

चिड़ी (हिं० स्त्री०) ताशके चार रङ्गोंमेंसे एक रङ्ग जिसमें तीन गोल पखड़ियोंकी काली बूटी बनी रहती है।

चिड़ीमार (हिं० पु०) चिड़िहार देखो।

चिढ़ (हिं० स्त्री०) अप्रसन्नता, विरक्ति, खिजलाहट।

चिढ़कना (हिं०) चिढ़ना देखो।

चिढ़ना (हिं० क्रि०) १ अप्रसन्न होना, खिन्न होना, नराज होना। २ द्वेष रखना, बुरा मानना।

चिढ़वाना (हिं० क्रि०) दूसरेसे चिढ़ानेका काम करना।

चिढ़ाना (हिं० क्रि०) १ विरक्त करना, नाराज करना, खिझाना, कुढ़ाना। २ उपहास करना, ठट्ठा करना, कोई ऐसी चर्चा छेड़ना जिसे सुन कर कोई लज्जित हो, कोई ऐसा काम करना वा ऐसी बात कहना जिससे किसीको अपनी असफलता, अपमान आदिकी याद आ जाय। ३ खिजानेके लिए किसीकी आकृति, चेष्टा वा ढङ्गको नकल करना, किसीको कुढ़ानेके लिए हाथ मटकाना या मुंह बनाना ऐसी ही और कोई चेष्टा करना।

चित् (सं० स्त्री०) चित् संज्ञाने सम्पदादित्वात् भावे क्विप्। १ चैतन्य, ज्ञान, चेतना।

"भगवांश्चिन्मात्रस्याविकारिण:" (भागवत ३।७।८)

२ चित्तवृत्ति।

"चिदसि मनासि धीरसि" (शुक्लयजु: ४।१९)

'चयेतनत्वादि सद्यातस्य चेतनत्व' सम्पादयन्ती वाऽग्वस्तुम् निर्विकल्पद्रव्यं सामान्यज्ञानं जनयन्ती वृत्तिश्चित् देवत्व चिदित्युच्यते' (महीधर)

३ निर्विकल्पकप्रत्यक् आत्मस्वरूप समस्त वस्तुओंका अवभासक ज्ञान, सब पदार्थोंका प्रकाशक ज्ञान। चिनोति चि कर्तरि क्विप् (पु०) ४ चयनकर्ता, वह जो चुनता हो, या बीनता हो, इकट्ठा करनेवाला मनुष्य। कर्मणि क्विप्। ५ अग्नि, आग। (अव्य०) ६ असाकल्य, अपूर्ण ७ संस्कृतका एक अनिश्चयवाचक प्रत्यय जो क: किम् आदि शब्दोंमें आता है।

चित (सं० त्रि०) चि कर्मणि क्त। १ छन्न, आच्छादित, ढका हुआ। २ कृतचयन, चुन कर इकट्ठा किया हुआ।

चित (हिं० वि०) १ इस प्रकार पड़ा हुआ कि मुख, पेट आदि शरीरका अग्रभाग ऊपरकी ओर हो। (पु०) २ चित्त, मन। चित्त देखो।

चितकबरा (हिं० वि०) जो सफेद रङ्ग पर काले, लाल या पीले चिह्न लिये हुए हो, काले, पीले या और किसी रङ्ग पर सफेद दागवाला चितला, शबल ।

चितङ्ग—पञ्जाबके अम्बाला और करनाल जिलेकी एक नदी यह सरस्वती नदीसे कुछ मील दक्षिणको उत्पन्न हो करके उसीके साथ समान्तर भावसे थोड़ी दूर तक चली गयी है। बलचाफर नगरके निकट दोनों नदियोंका वालुकामय गर्भ प्रायः मिल गया है परन्तु कुछ दूर आगे यह फिर पृथक् हो गया। चितङ्ग नदी यमुनाके साथ समान्तर भावसे हांसी और हिसारकी ओर चली है। नदीका वह अंश पश्चिम यमुनाकी नहरका एक भाग है। इससे कृषिकार्यकी अधिक सुविधा हो गयी है। पहले यह नदी भाटनेर नगरसे कई एक मील नीचे घघरा नदीसे मिलती थी। आज भी वालुकामय उक्त प्राचीन गर्भ दृष्ट होता है। पीछेको स्रोत बदल जानेसे वर्तमान नहरमें वह परिणत हुई है। कोई कोई अनुमान करता कि चितङ्ग आदमियोंकी बनायी हुई सिर्फ एक नहर है। खेतीके सुभीतेको लोगोंने उसे खोद लिया है।

चितचोर (हिं० पु०) वह जो दूसरेके चित्तको चुराता हो, वह जो जी लुभाता हो।

चितपट (हिं० पु०) १ एक तरहका खेल या बाजी। २ कुश्ती, मल्लयुद्ध।

चितबाहु (सं० पु०) तलवारके ३२ हाथोंमेंसे एक।

चितभङ्ग (हिं० पु०) १ उचाट, उदासी, मन न लगना। २ मतिभ्रम, चकपकाहट, बुद्धिका लोप, होशका ठिकाने न रहना।

चितरतला—उड़ीसामें कटक जिलाके अन्तर्गत महानदीकी एक शाखा। यह नदी विरूपाके उत्पत्ति स्थानसे १० मील नीचे महानदीसे विच्छिन्न और थोड़ी दूर चल करके ही चितरतला तथा नून दो शाखाओंमें विभक्त हुई है। प्रायः २० मील जाने पीछे इन दोनों नदियोंने फिर मिल करके नून नाम धारण किया है। अवशेषको उपकूलसे थोड़ी दूर महानदीके मुहानेमें वह पतित हुई है। केन्द्रपाड़ा नहर इसी चितरतला नदीके उत्तरसे निकली और नून नदीके उत्तर कटकसे ४२॥ मील दूर मार्शाघाई नामक स्थान पर नदीमें जा गिरी है।

चितरवा (हिं० पु०) पक्षिविशेष, ईंटके जैसा लाल रंगका एक पक्षी।

चितरोख (देश०) पक्षिविशेष, एक चिड़ियाका नाम, चितरवा।

चितलद्रुग (चत्रकलदुर्ग) महिसुर राज्यका उत्तरस्थ जिला। यह अक्षा० १३° ३५ तथा १५° २ उ० और देशा० ७५° ३८ एवं ७७° २ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४०२२ वर्गमील लगता है। इसके उत्तर बेल्लारी जिला, पूर्व अनन्तपुर जिला, दक्षिण-पूर्व तुमकूर, दक्षिण-पश्चिम कदूर और पश्चिमको शिमोगा तथा धारवाड़ जिला है। पहाड़ी नदियां प्रायः सूख जाती हैं। उत्तर-पूर्वको समतल प्रकाश्य मैदान है। यहां कोई मनोहर दृश्य नहीं। परन्तु कहीं कहीं खेती खूब होती है। वृक्षोंके अभावमें भी गोचर भूमि अच्छी है। उत्तर-पश्चिमकी भूमि ढालू और घाससे हरी भरी हैं। बीचमें पहाड़ पड़ता है। खुश्की बहुत है।

मोलकालमुरु ताल्लुकमें मिली अशोककी प्राचीन शासनलिपिसे ज्ञात होता है कि ई० ३री शताब्दीमें यह प्रान्त मौर्यसाम्राज्यमें सम्मिलित रहा। चितलद्रुगकी सातकर्णि मुद्राएं और शिकारपुर ताल्लुक (जिला शिमोगा) की शिलालिपियां बतलाती हैं कि ई० २री शताब्दीके लगभग आन्ध्र वा सातवाहन वहां शक्तिशाली थे। इनके पीछे कदम्बोंका राज्य हुआ। ई० ६ठीं शताब्दीमें चालुक्योंने कदम्बोंको शासनाधीन किया था। उत्तरोत्तर गङ्गों, राष्ट्रकूटों और चालुक्योंके अधीन पल्लवों वा नोनम्बों या लोनम्बोंका भी वर्णन मिलता है। उन्हींके नामानुसार इस जिलाका नाम लोनम्बवाडी वा नोनम्बवाडी रखा गया। ई० ११वीं और १२वीं शताब्दीको यह उच्छङ्गीके पाण्ड्य राजत्व करते थे। फिर होयसल राजा हुए, परन्तु इन्हें स्यूनास वा देवगिरिके यादव १३वीं शताब्दीके अन्तको उत्तर-पश्चिममें दबा बैठे। होयसलोंने पुनः अधिकार प्राप्त होने पर बेमत्तनकल्लु (चितलद्रुग)-को अपनी राजधानी बनाया था। १४वीं शताब्दीके दिक्षीसे मुसलमानोंने आक्रमण करके यह प्रान्त अधिकृत किया। १५वीं शताब्दीको चितलद्रुगने राज्यरूपमें परिणत हो विजयनगर साम्राज्यकी अधीनता मानी। १७०९

ई०को हैदरअलीने इसको अधिकृत करके २०००० बेदोंको निर्वासित किया था। इसलिये जिलेमें और भी दो एक रियासतें रहीं। १८वीं शताब्दीको मरहटोंके आक्रमणसे चितलद्रुगको बड़ी चति लगी। १८३० ई०के विद्रोहमें पश्चिम और दक्षिणको भी बुरी गति हुई। अशोक और मौर्य राजाओंके भवनोंका ध्वंसावशेष इस जिलेमें मिलता है। शिलालिपियां अनुवादित हो प्रकाशित हुई हैं।

चितलद्रुग जिलेकी लोकसंख्या प्रायः ४६८७८५ है। दक्षिणको नारियलके बाग बहुत हैं। ८३ वर्गमील सरकारी जङ्गल है। पत्थर कई प्रकारका मिलता है। कहीं कहीं सोनेकी खान भी है। कम्बल और सूती कपड़े बनते हैं। लोहेकी चीजें, पीतलके बर्तन, शीशेकी चूड़ियाँ और लाल रंग भी तैयार करते हैं। जिलेके पश्चिमसे ५८ मील तक साउदर्न-मराठा-रेलवे गया है। सैकड़ों मील सड़क है।

यह जिला ८ तालुकोंमें विभक्त है। १८०३ ई०को छई सब डिविजन बने। सीमाप्रान्त पर बड़ा अपराध होता है। वार्षिक आय प्रायः ११५४००० है। १८६५ तथा १८६८ ई०के बीच पश्चिममें और १८६८ तथा १८७२ के बीच पूर्वमें, पैमायश और बन्दोबस्त हुआ। १६०३-४ ई०में यहाँ ६ म्युनिसपालिटियाँ थीं। यहांकी मिट्टी कहीं काली और कहीं लाल है। इसके दक्षिणांशकी मट्टी खारी है। इसी कारण यहां नारियल बहुत पाये जाते हैं। इस जिलेके प्रधान उत्पन्न द्रव्य गेहूं, ईख और चना हैं। चावलकी फसल बहुत कम होती है। दावनगिरी और जगलूर तालुकमें बहुत अच्छे अच्छे कम्बल तैयार होते हैं। वे इतने सुन्दर बनते हैं कि एक एकका दाम २००)से ३००) रु० तक होता है। इसके सिवा यहां सूती कपड़े का भी कारोबार है। मोलकालमुरु और हरिहर तालुकमें रेशमी वस्त्र भी बनते हैं। हिरयूर, होसदुर्ग और चितलद्रु ग तालुकमें लोहे, ईस्पात और तांबेके बरतन बनाये जाते हैं। यहां रेशमी वस्त्र बुननेके ८ और सूती वस्त्रके ७६७७ करघे चलते हैं। इनके अलावा २१ लोहेके, ६५ तेलके और ८० चीनीके कारखाने हैं।

चितलद्रु ग—महिसुर राज्यके चितलद्रुग जिलेका दरमियानी तालुक। यह अक्षा० १४° ३´ एवं १४° २८´ उ० और देशा० ७६° ६´ तथा ७६° ३५´ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ५३१ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ८३२०५ है। मालगुजारी कोई १२२००० रु० पड़ती है। उत्तर-दक्षिणको जाती हुई एक पर्वतश्रेणीने इस तालुकको दो समान भागोंमें बांट दिया है। इस पर्वतके पूर्व तथा पश्चिमको भूमि चपटी और जङ्गलसे खाली है। पूर्वकी काली तथा पश्चिमकी लाल भूमि है।

चितलद्रुग-महिसुर राज्यस्थ चितलद्रुग जिलेके चितलद्रु ग तालुकका सदर। यह अक्षा० १४° १३´ उ० और देशा० ७६° २४´ पू०में हालकर-रेलवे-ष्टेशनसे २४ मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ५७८२ लोगों। पश्चिममें निकट ही चन्द्रावलीकथित नगरका ध्वंसावशेष विद्यमान है। वहां बौद्ध मुद्राएं आविष्कृत हुई हैं। चितलद्रुगके राजा वेदवंशीय हैं। विजयनगर पतित होने पर यह स्वाधीन हुए। इन्होंने चित्रकलदुर्ग नामक एक पहाड़ी किला बनाया था। इसे हिन्दू और मुसलमान दोनों श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। दक्षिणमें एक पर्वत शिखर पर झोबला देवीका मन्दिर है। यही वेदोंकी अर्चनाका प्रधान स्थान है। नगरमें उच्छङ्गि अम्माका द्वितल मन्दिर बना है। १८वीं शताब्दीमें टीपू सुलतान और हैदरअलीके अधीन यहां लम्बी चौड़ी किलेबन्दी हुई, तोपखाने लगे और रसद सामान रखनेके लिये कोठियां बनीं। दुर्गके अभ्यन्तरस्थ भागमें टीपूका राजप्रासाद है। इसीमें आजकल कचहरी लगती है। इसकी उस ओर शस्त्रागार था। सम्प्रति आविष्कृत हुआ है कि वहां एक बड़ कारखानेमें सम्भवतः गोला बारूद बनते थे। १७६६ ई०के पीछे यहां कुछ रोज अंगरेजी फौज रही, परन्तु आबहवा अच्छी न होनेसे चली गयी। उत्तर पश्चिममें कोई १ मील दूर मुर्गीमठ है। वहां लिङ्गायतोंके प्रधान गुरु रहते हैं। पश्चिमको कई रंगदार पहाड़ियोंके बीच आधुनिक पहाड़ी मठ है। यहां जमीनके भीतर कितनी ही कोठरियां बनी हैं जो ३००से ५०० वर्ष तककी पुरानी समझ पड़ती हैं। पञ्चलिङ्गगुहामें द्वार पर १२८६ ई०की होयसल

शिलालिपि लगी है। १८७० ई०को म्युनिसपालिटो हुई।

चितलद्रुग—महिसुर राज्यके चितलद्रुग जिलेको एक पर्वतश्रेणी। यह चितलद्रुग जिलेके मध्यभाग हो करके दक्षिणसे उत्तरको चला गया है। अवस्थान अक्षा० १३° ३६' तथा १४° ४२' उ० और देशा० ७६° २४' एवं ७६° ३६' पू०में पड़ता है। पहाड़ पथरीले और खाली हैं परन्तु कुछ नीचेको घास और छोटे मोटे पेड़ देख पड़ते हैं।

चितलमारी—बङ्गालके खुलना जिलेका एक गांव। यह ग्राम मधुमती नदीके तीर पर अवस्थित है। चैत्रमासमें ६ दिन तक मेला लगता जिसमें प्रतिदिन हजारों आदमियोंका समागम रहता है।

चितला (हिं० वि०) १ चित्रल, कबरा, चितकबरा, रंग बिरंगा। (पु०) २ लखनऊमें होनेवाला एक तरहका खरबूजा। (स्त्री०) ३ मत्स्यविशेष एक प्रकारकी मछली। (Notopterus) इसकी लंबाई ३·४ हाथ और वजन दो डेढ़ मन होता है। इसकी पीठ बहुत उभड़ो हुई, नाक ऊंची और डैने मस्तकको अपेक्षा पूंछके बहुत पास होते हैं। इसको चोई छोटी और चांदीके रंगको होती हैं। शरीर पर कांटे बहुत ज्यादा होते हैं। गलेसे लगा कर पेटके नीचे तक कांटोंको करीब ५१ पङ्क्तियां होती हैं। रंग-पीठका भूरा और ताम्राभ, पर पार्श्वदेश चांदीको तरह होता है। यह बङ्गालको खाड़ी, उड़ीसा, आसाम, सिन्ध,मलय, श्याम आदि स्थानोंकी नदी और पुष्करिणियोंमें पायी जाती है। बङ्गालके नीचे स्थानोंमें ही यह मछली ज्यादा मिलती है। यह मछली छोटी छोटी मछलियोंको खाया करती है, इसलिये जिन तालावोंमें ये रहती हैं, वहां और और मछलियां कम होती हैं। इनमें बहुतसी श्रेणियां हैं। इनमें तेल ज्यादा होनेके कारण लोग तेल निकालनेके लिए इनको पकड़ा करते हैं। पूर्व बंगालमें इसका तेल जलाने और खानेके काममें आता है।

चितवन (हिं० स्त्री०) अवलोकन, दृष्टि, कटाक्ष, नजर, निगाह।

चिता (सं० स्त्री०) चीयते श्मशानाग्निरस्यां चि अधिकरणे क्त स्त्रियां टाप्। १ शवदाहाधार, चुल्ली। पर्याय—चित्या, चिति, काष्ठमटो, चैत्य, चिताचूड़क और चित्य। चिता पर मुर्देका दाह करना बहुत पहिले समयसे चला आ रहा है। शतपथब्राह्मण, कात्यायनश्रौतसूत्र, लाट्यायनश्रौतसूत्र आदि वैदिक ग्रन्थोंके चिताका उल्लेख है। कात्यायनश्रौतसूत्रके मतसे किसी भी समतल स्थान पर बहुतसी लकड़ीके नीचे अग्नि रख कर चिता चिनी जा सकती है(१)। काष्ठादिके स्थानमें क्षीरयुक्त अर्कवृक्ष, दूब, सरकण्डा, मुञ्ज, पिठवनलता, माषपर्णी, अथवा सरकण्डा अथवा ढण्टगिकाकी लड़कोंसे चिता चिननी चाहिये। (२)

शुद्धितत्त्वमें लिखा है कि—सगोत्रज, सपिण्ड अथवा बन्धुवर्ग शवको ले कर श्मशानमें पहुंच सकते हैं। पुरुष हो तो दक्षिणको तरफ पैर कर औंधा सुलाना चाहिये; किन्तु स्त्री होनेसे चित्त सुलाई जाती है। शव देखो।

तन्त्रोंमें मन्त्रसाधनाङ्ग चिताकी बात लिखी है। वीरतन्त्रके मतसे—"किसी भी पक्षमें अष्टमी या चतुर्दशीमें चितासाधन हो सकता है। परन्तु कृष्णपक्ष ही प्रशस्त है। डेढ़ प्रहर रात्रि बीतने पर, मुर्देको ले चिता पर जा कर अपने हितके लिए साधन करना उचित है। डरना नहीं, हंसना नहीं, चारों ओर ताकना भी नहीं। अपनी धुनमें मन्त्र पढ़ते रहना चाहिये। साधनके समय आमिषयुक्त अन्न, गुड़, अज, शराब, खीर, पिष्टक और इच्छानुसार तरह तरहके फलोंसे नैवेद्य बना कर शस्त्रपाणि सुहृदके साथ वीरसाधन करना पड़ता है।"

तन्त्रसारमें लिखा है—

"असंस्कृता चिता ग्राह्या न तु संस्कारसंस्कृता।
चाण्डालादिषु संप्राप्ता केवलं शीघ्रसिद्धिदा॥"

अर्थात्—असंस्कृत चिता ही वीराचारमें प्रशस्त है, जिस चिताका संस्कार किया गया हो, वह उपयोगी नहीं होती। विशेषतः जिस चिता पर चाण्डाल आदिका दाह किया गया हो, उस चितासे शीघ्र अभीष्टसिद्धि होती है। २ समूह, ढेर। (मेदिनी) ३ श्मशान, मरघट।

---

(१) "विरहितं साधयित्वाग्निं बहुलतृणे ऽनाग्नौ चितं चिनोति।"
(कात्यायनश्रौतसूत्र २५।८।१५ भा०)

(२) 'स चितिवत् मृतस्य दाहार्थं या इध्मैः काष्ठैश्चितिर्विहिता तादृशीं' [illegible] (कर्काचार्य)

चिताकुल—बम्बईके उत्तर कनाड़ा जिलेके अन्तर्गत कारवार तालुकका एक ग्राम । यह अक्षा० १४° ५१' उ० और देशा० ७४° १०' पू० पर कारवारसे ४ मील उत्तरमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ४७६६ है । कहा जाता है, कि १७१५ ई०में सोनदके प्रधान विश्वलिंगने यहां काली नदीके किनारे एक दुर्ग निर्माण किया और अपने पिताके नाम पर इसका नाम सदाशिवगढ़ रखा । दुर्गकी ऊँचाई लगभग २२० फुट है । १७५२ ई०में पोर्तगीजोंने सोन्दके प्रधानसे लड़ाई ठान दी और दुर्ग अपने दखलमें कर लिया । किन्तु दो वर्ष पीछे यह पुनः सोन्दके प्रधानको लौटा दिया गया । १९६३ ई०में हैदरअलीके सेनापति फजल उल्लाहखाँने दुर्ग पर अपना अधिकार जमाया । १७९९ ई०में यह टीपूके हाथ लगा ।

चिताच्छादन (सं० क्ली०) चितायाः आच्छादनं, ६-तत् । चिताका आच्छादन-वस्त्र, वह कपड़ा जो चिता पर ढका हुआ रहता है ।

चिताना (हिं० क्रि०) १ सचेत करना, होशियार करना । २ स्मरण कराना, याद दिलाना । ३ आत्मबोध कराना, ज्ञानोपदेश करना । ४ आगका जलाना, सुलगाना या जगाना ।

चिताभस्म (सं० स्त्री०) चितायाः भस्म, ६-तत् । चिताको भस्म ।

चिताभूमि (सं० स्त्री०) श्मशान, मृतकके शवदाह करनेको जगह ।

चितामणपुर—बिहारके अन्तर्गत शाहाबाद जिलेका एक नगर ।

चितारेवा—मध्यप्रदेशको एक नदी । यह छिन्दवाड़ा जिलासे निकल कर ५० मील तक बहती हुई नरसिंहपुर जिलेके अन्तर्गत पाटलौन नामक स्थानके समीप सक्कर नदीमें गिरी है । नर्मदा-माइनिंग कम्पनीका कायला नदीकी सहायतासे दूसरे दूसरे देशोंमें भेजा जाता है ।

चितारूढ़ (सं० त्रि०) चितां आरूढः, २-तत् । जो चितामें प्रवेश हो गया हो ।

चितालिया—बङ्गालके अन्तर्गत संताल परगनाकी जमीन्दारी । यह गवर्मेण्टको सम्पत्ति है ।

चितावनी (हिं० स्त्री०) सतर्क करनेकी क्रिया, होशियार करनेका काम ।

चिताशायिन् (सं० त्रि०) चितायां शेते चिता-शी-णिनि, उपपदस० । जिसने चितामें शयन किया हो, जो चितामें प्रवेश कर सो गया हो ।

चितासाधन (सं० क्ली०) चितायाँ साधनं, ७-तत् । चिताके ऊपर साधन, तन्त्रसारके अनुसार चिता या श्मशानके ऊपर बैठ कर इष्ट मन्त्रका अनुष्ठान । दोनों पक्षकी चतुर्दशी या अष्टमीको डेढ़ पहर रातके समय चिताके ऊपर बैठ कर निर्भीक चित्तसे इष्ट मन्त्र जप करना पड़ता है । सामिष अन्न, गुड़, छाग, मद्य, पायस, पिष्टक तथा अनेक तरहके फल द्वारा नैवेद्य लगा कर पूजा करनी होती है । (तन्त्रसार)

चिति (सं० स्त्री०) चीयते अस्यां चि आधारे क्तिन् । १ चिता । चिता देखो ।

"चितिं दारुमयीं चित्वा ।" (भागवत ४।२८।४)

चोर आटायुक्त आकन्द प्रभृति वृक्षोंके काष्ठ, दूर्वा, मुञ्ज, माषपर्णी, जलसरसों, अश्वगन्ध (वाराही गेठी) इत्यादि, इनके द्वारा तृणयुक्त स्थान पर चिता बनानी चाहिए । चिताके काष्ठानुसार ही मिट्टीका गुण हुआ करता है । (कात्यायन) भावे क्तिन् । २ समूह, ढेर । ३ चयन, चुनाई, इकट्ठा करनेकी क्रिया । ४ अग्निका संस्कारविशेष, शतपथब्राह्मणके अनुसार अग्निका एक संस्कार ।

"गार्हपत्यं वेदयान् प्र [illegible] तद् गार्हपत्यं चिनोति" (शतपथब्राह्मण ८।१।१।१)

५ इष्टकादिका संस्कार, यज्ञमें ईंटोंका एक संस्कार ।

"[illegible] प्राणानेव तदुपदधाति । [illegible] चितिं उपदधाति" (शत० ८।१।१।१)

६ भित्तिस्थ इष्टक समूह, दीवारमें ईंटोंकी जोड़ाई । चितिशब्दार देखो ७ दुर्गा ।

"चितिश [illegible] चितिः [illegible]" (देवीपु० ४५ अ०)

कप् होनेसे दीर्घ हो जाता है । (चितेः [illegible]) यथा एकाचितीक इत्यादि । चाय दीप्तौ क्तिन् । ८ चैतन्य, ज्ञान ।

चितिका (सं० स्त्री०) चितिरिव कायति चिति-कै-क-टाप् । कटिशृङ्खल, करधनी, मेखला । चिति स्वार्थे कन्-टाप् । २ चिति देखो । चिता स्वार्थे कन्-टाप् । ३ चिता ।

चितिमत् (सं० त्रि०) चितिरस्त्यस्मिन् चिति अस्त्यर्थे मतुप् । जिस स्थानमें चिता हो ।

चितियागुड़ (देश०) वह गुड़ जो खजूरकी चीनीकी जसीसे जमाया जाता हो।

चितिव्यवहार—ईंट और पत्थरके परिमाणको निरूपण करनेके प्रकरणको चिति कहते हैं। भास्कराचार्यके मतसे

"उच्छ्रयेण गुणितं चितेः किल क्षेत्रसम्भवफलं घनं भवेत्।
इष्टिका घनहृते घनेचिते रिष्टिकापरिमितिस्तु लभ्यते॥
इष्टिकोच्छ्रयहृदुच्छ्रितिश्चितेः स्युः स्तराश्च दृषदां चितेरपि।" (लीलावती ९१)

पहले खातव्यवहारके अनुसार ईंट आदि चितिका क्षेत्रफल निकाल कर उसको उच्चता (उच्छ्रय)-से गुणा करने पर जो फल होगा, वही चितिका धन होगा। बाद में ईंट आदिका भी घनफल निकाल कर उपरोक्त चिति-के घनको भाग करनेसे ईंट आदिका परिमाण हो जायगा।

पूर्वोक्त मतानुसार चितिकी उच्छ्रितिका ईंट आदि-की उच्छ्रितिके साथ भाग करनेसे स्तरफल निकल आता है।

उदाहरण—ईंट या पत्थरकी लम्बाई १८ अङ्गुल, चौड़ाई १२ अङ्गुल और उच्चता ३ अङ्गुल है। जिसकी लम्बाई ८ हाथ, चौड़ाई ५ हाथ और ऊंचाई ३ हाथ है ऐसी चितिमें (पजायेमें) कितनी ईंट और उसमें कितनी स्तर-संख्या रहती है, उसका निरूपण करो।

अङ्गुलिके परिमाणसे चितिकी ईंट आदिका घनफल ६४८ होता है और अङ्गुलपरिमाणसे चितिमें १६५८८८० घनफल होता है। इसलिए चितिका घनफल १६५८८८० को ईंटके घनफल ६४८ से भाग करनेसे २५६० चितिकी ईंटकी संख्या हुई। ऐसे ही पुनः चितिकी उच्छ्रिति ३ हाथ अर्थात् बारह अङ्गुलकी ईंटकी ऊंचाई ३ अंगुल-से भाग करनेसे २४ चितिके स्तरका परिमाण हुआ।

चितेरा (हिं० पु०) चित्रकार, वह जो चित्र बनाता हो, मुसौवर।

चितेरिन (हिं० स्त्री०) १ वह स्त्री जो तसवीर खींचती हो। २ चित्रकारकी स्त्री।

चितेरी (हिं०) चितेरिन देखो।

चित्कण (सं० त्रि०) चिदित्यव्यक्तशब्दं करोति चित्-कण्-अच्। जो 'चित् चित्' शब्द करता हो।

चित्कार (सं० पु०) चित्-कृ भावे घञ्। चीत्कार, चिल्लाहट, हल्ला गोर, गुल।

"स विषीदति चित्कारात् ताडितो गर्दभो यथा।" (हितोप०)

चित्कारवत् (सं० त्रि०) चित्कार अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वत्वं। मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः। पा ८।२।९। चित्कारकारी, चिल्लानेवाला, जो भयभीत हो जोरसे आवाज करता हो।

चित्सुख—एक प्रसिद्ध टीकाकार और नैयायिक। आप गौड़ेश्वराचार्यके शिष्य और सुखप्रकाश मुनिके गुरु थे। अपने षड्दर्शनसंग्रहवृत्ति, आनन्दबोधके न्यायमकरन्द-की टीका, प्रत्यक्तत्त्वदीपिका वा चित्सुखी आदि ग्रन्थों-की रचना की थी। इसके चित्सुखी ग्रन्थमें उदयन, उद्योतकर, कुमारिल, पद्मपाद, वल्लभ, वाचस्पति, सुरेश्वर आदिके नाम उद्धृत किये गये हैं। काशीखण्डटीकाकार रामानन्दने चित्सुखरचित ब्रह्मस्तुतिका तथा श्रीधरस्वामी-ने इनकी बनाई हुई विष्णुपुराणटीकाका उल्लेख किया है।

चित्त (सं० क्लो०) चिती ज्ञाने करणे क्त। १ अन्तःकरण-भेद, दिल। (वेदान्त) २ मन, तबीयत। (ऋक् १।१६३।११)

सांख्य मतमें चित्त त्रिगुणात्मक प्रकृतिका कार्य है। इसके अधिष्ठाता अच्युत होते हैं। वह बाह्य इन्द्रिय द्वारा बाह्य वस्तु ग्रहण करता है।

वेदान्तसारमें लिखा है—निश्चयात्मक अन्तःकरण वृत्तिका नाम बुद्धि और सङ्कल्प-विकल्पात्मक अन्तःकरण वृत्तिको ही मन कहा जाता है। चित्त और अहङ्कार दोनों ही बुद्धि और मनके अन्तर्गत दो वृत्तिमात्र हैं। अनुसन्धानात्मक अन्तःकरण वृत्तिको चित्त और अभि-मानात्मक अन्तःकरण वृत्तिको अहङ्कार कहते हैं।

फिर चार्वाकके मतमें मन ही आत्मा है। मनविशिष्ट होने पर प्राणादिका अभाव होता है। (वेदान्तसार)

पञ्चदशीको देखते—चक्षु प्रभृति ज्ञानेन्द्रिय और वाक् आदि पञ्च कर्मेन्द्रियका नियन्ता मन हृत्पद्मगोलकमें अव-स्थित है। इसीको अन्तःकरण कहा जाता है। आन्त-रिक कार्यमें मन स्वाधीन है, परन्तु बाह्य विषयमें इन्द्रिय-के अधीन रहता है। सत्व, रज और तमः—मनके तीन गुण हैं। इन्हीं सकल गुणोंसे वह विकृत होता है। वैराग्य, क्षमा, औदार्य आदि सत्वगुणके विकार हैं। काम, क्रोध, लोभ और वैषयिक व्यापार रजोगुणका विकार कहा गया है। आलस्य, भ्रान्ति और तन्द्रा प्रभृति मन-

के तमोगुणजन्य विकार होते हैं। (२।७-८) पञ्चभूतके सत्वगुण-समष्टिसे अन्तःकरणकी उत्पत्ति है। यह अन्तःकरण वृत्तिभेदसे दो प्रकार होता है—मन और बुद्धि। अन्तःकरणका संशयात्मक भावको मन और निश्चयात्मक वृत्तिको बुद्धि कहते हैं। (२।१८)

वेदान्तदर्शनके मतमें प्राण मनका कारण है। मरणकालको मन प्राणमें ही लीन होता है। शारीरिक-भाष्यमें शङ्कराचार्यने बतलाया है—

मन प्राणमें लय होता है। यहां सन्देह उठ सकता हैं—मनोविवर्जित वृत्ति या मनका लय हुआ करता है। वृत्तिके साथ मन लय प्राप्त होता है—कहनेसे अर्थसङ्गति आ जाती है। मनके प्राणमूलक होनेका प्रमाण श्रुतिमें मिलता है। पण्डितोंके कथनानुसार मन अन्नमूलक और प्राण जलमूलक है। अन्नमय मनका लयस्थान प्राण है। कारण हम देखते हैं कि अन्न जलमें लय होता है। अभेद भावसे ग्रहण करने पर अवश्य ही कह सकते हैं कि अन्न ही मन और जल ही प्राण है। इस दृष्टिसे कि अन्न और मन एक ही हैं, प्राणको मनकी प्रकृति कहना सङ्गत है। फिर ऐसा भी दृष्ट होता कि सुषुप्त और म्रियमाण अवस्थामें प्राणका कार्य अर्थात् श्वास प्रश्वास बना रहते भी मनोवृत्ति छूट जाती है। इसीसे मन प्रकृत पक्षमें प्राणमूलक नहीं होता और प्राणमें मनका स्वरूप विलय असम्भव है। मनकी प्राणमूलकता और इसी प्रणालीकी प्रकृतिमें कार्यका विलय माननेसे अन्नमें भी मनका विलय मानना पड़ेगा। साथ ही यह भी कहेंगे कि मन अन्नमें, अन्न जलमें और प्राण भी जलमें लयप्राप्त होता है। परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं कि प्राणरूपमें परिणत जलसे मन बनता है। इसीसे कहा जाता है कि प्राणमें मनकी वृत्तिका विलय होता है, किन्तु उसके स्वरूपका नहीं। (४।२।३ सूत्रभाष्य)

योगवाशिष्ठरामायणके मतमें—

असम्यक् दर्शनसे अनात्मशरीरादिमें जो आत्मदर्शन होता और अवस्तुमें जो वस्तुज्ञान लगता, चित्त है। (२६।१७) भावाभाव अवस्था तथा दुःखसमूहका आधार और आशाके वशवर्ती इस शरीरका बीज ही चित्त होता है। इस चित्तके दो बीज हैं—एक प्राणस्पन्दन और द्वितीय कठिन भावना। प्राणस्पन्दन द्वारा चैतन्य रुद्ध होता और उससे दुःख बढ़ता है। भावना द्वारा अभ्यवस्तु बनता और पुरुष वासनाविह्वल हो करके उसी वस्तुके तत्त्वज्ञानमें उलझ पड़ता है, सुतरां वासनावश जीव स्वरूप नहीं समझता। उसीसे योगी प्राणायाम और ध्यान द्वारा प्राणस्पन्दन रोकते हैं। प्राणस्पंद रुद्ध होनेसे चित्तको विमल शान्ति होती है। इसी प्रकार चित्तसे सांसारिक भावना निकाल करके मायातीत परम वस्तुकी भावना करना अचित्तत्व वा चित्तशून्यता कहलाता है। वासना और प्राणस्पन्द दोमें एकका भी क्षय होनेसे दोनों नष्ट हो जाते हैं। कारण, वासनासे प्राणस्पन्द और प्राणस्पन्दसे वासनाका जन्म है। ज्ञेय वस्तुको छोड़ने पर प्राणस्पन्द और वासना दोनों वस्तु नहीं रहते।

क्षणिकवादी बौद्धोंका कहना है—अग्नि जैसे अपने आपको प्रकाशित करके अपर वस्तुको भी प्रकाशित करता चित्त स्वप्रकाश और विषयप्रकाशक है। चित्तके अतिरिक्त पृथक् आत्मा नहीं होता

पतञ्जलि कहते हैं कि चित्त स्वप्रकाश हो नहीं सकता। (योगसूत्र ४।१८) कारण चित्त दृश्य है और इन्द्रिय वा शब्दादिकी भांति जो वस्तु दृश्य है, स्वप्रकाश कभी भी नहीं। उसका कोई प्रकाशक है और यही आत्मा होता है। अग्नि दृष्टान्त बन नहीं सकता। कारण वह अपने अप्रकाश रूपको कब प्रकाशित करता है। प्रकाश्य और प्रकाशकके संयोगसे वस्तुका प्रकाश होता है। परन्तु अपने आपके साथ अपने आपका संयोग नहीं हो सकता। चित्त एक ही समय अपने आप और दूसरेको कैसे प्रकाशित कर सकेगा। क्योंकि क्षणिकवादियोंके मतमें सब वस्तु क्षणिक हैं, उत्पत्ति भिन्न वस्तुका अन्य कोई व्यापार नहीं होता। चित्त उत्पन्न होते ही विनष्ट हो करके किस प्रकार अपर वस्तु प्रकाश करेगा। यदि कहो कि परचित्त द्वारा पूर्व चित्तका ग्रहण होगा और पूर्व बुद्धि परबुद्धि द्वारा गृहीत होगी, तो परबुद्धिका ग्रहण असम्भव है। फिर बुद्धि द्वारा उसके ग्रहणमें भी अनवस्थादोष आता है। जितना अनुभव होगा, स्मृति भी हो जायेगी। अनुभवकी भांति स्मृति और परस्मृति द्वारा आत्मा पृथक् रूपसे किसी स्मृतिका अवधारण हो

नहीं सकता। अतएव उसमें स्मृतिसाङ्कर्यदोष लग जावेगा।

योगसूत्रकार पतञ्जलिके मतमें चित्त घटादि जैसा दृश्य और जड़पदार्थ है। आत्माके साहाय्य व्यतिरेक चित्त कुछ भी कर नहीं सकता। (राजमार्तण्ड) इस सम्बन्ध पर भी कि चित्त एक है या बहु, योगसूत्रको वैयासिकभाष्य और राजमार्तण्ड नामक वृत्तिमें कई बातें लिखी हैं। शेषको ठहर गया है कि मन एक ही है, बहुत नहीं। कारण योगियोंका एक चित्त ही सकल चित्तोंका अधिष्ठाता है। अतएव योगीका एक चित्त नाना प्रकार कार्योंमें बहुतसे चित्तोंको प्रेरित कर सकता है। योगसूत्रकारके कथनानुसार चित्तवृत्ति पञ्चविध होती है—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। प्रत्यक्ष, अनुमान तथा आप्तवाक्यको प्रमाण कहते हैं। किसी वस्तुका अन्य वस्तु जैसा भ्रमज्ञान ही विपर्यय है। वस्तुके स्वरूपको अपेक्षा न करके केवल शब्दजन्य ज्ञानानुसार होनेवाला बोध विकल्प कहलाता है। चित्तमें सर्व विषयका अभाव लगना निद्रा नामसे अभिहित होता है। पूर्वको प्रमाण द्वारा जो विषय अनुभूत हुआ है, कालान्तरमें संस्कार और बुद्धि द्वारा उसीको आरोप करनेका नाम स्मृतिवृत्ति है, योगाभ्यासमें चित्तको इस पञ्चविध वृत्तिको निरोध करना चाहिये। (१।६-१२)

योग देखो।

वैयासिक भाष्यकारके मतमें मन, चित्त और प्राणके ही पारस्परिक साहाय्यसे योगसाधन करता है। प्राणवायु संयत होनेसे इन्द्रियवृत्ति भी संयत हो जाती है। ऐसे होने पर चित्तका निरोध वा एकाग्रता साधित हो सकती है। रेचक, पूरक और कुम्भक—त्रिविध उपायसे भी चित्तको एकाग्रता साधन होती है। योगसूत्रकार कहते हैं कि समस्त विषयानुराग परित्याग कर सकनेसे चित्तको एकाग्रता लगती है। इसीका नाम चित्तशून्यता वा वीतराग है। राजमार्तण्डकारके मतमें उसी प्रकारकी अवस्थाको सम्प्रज्ञात समाधिका विषय कहा जाता है। महर्षि पतञ्जलि बतलाते कि चित्तवृत्ति निरोध होनेसे फिर चित्तमें कोई अनुराग नहीं उठ सकता, वह समाधिस्थ रहता है। उस समय एकमात्र ध्येय विषयमें चित्त अनुरक्त हो जाता और विषयान्तरकी आसक्ति मात्र छूट जाती है। (३।१२)

भगवद्गीतामें कहा है—जैसे वायुशून्य स्थानमें प्रदीपकी शिखा स्थिरभावसे बनी रहती, निर्विकल्प समाधिमें चित्त एकाग्ररूपसे निश्चल हो जाता है। उस समय योगी आत्माको पहचान करके अपने आपमें ही सन्तुष्ट रहता है। (६।१९-२०)

पतञ्जलिने भी लिखा है—

जब चित्त अपने आप और पुरुष विशेषका दर्शन करता—कर्तृत्व, ज्ञातृत्व और भोक्तृत्व आदि ज्ञान निवृत्त हो करके आत्माके चित्तमें ऐक्यसे मिलता है। चित्तका कर्तृत्वादि अभिमानको निवृत्ति होते ही कर्म भी छूट जाता है (योगसूत्र ४।२४-२५)

योगसूत्रकार फिर भी लिखते हैं—चित्तसंयमको सिद्धिके विषयमें त्रिविध परिणाम होता है—निरोधपरिणाम, समाधि-परिणाम और एकाग्रता-परिणाम। इसी त्रिविध परिणाम द्वारा द्विविध भूत और द्विविध इन्द्रियका धर्म लक्षण तथा अवस्था-त्रिविध परिणाम निकलता है। चित्तका यह त्रिविध परिणाम अतीत होने पर समाधि मिल जानेसे अतीत-अनागत-ज्ञान, शब्दादि प्रत्येकके प्रति संयम हेतु सर्वभूतादि समस्त पदार्थका ज्ञान और पूर्वजन्मान्तरीय जात्यादि ज्ञान तथा लोगोंका मुख देख करके उनके मनोभावको समझनेकी क्षमता आती है। (योगसूत्र ३।९, १६-१९)

२ शृङ्गारमें दिलचस्पी लानेके लिए नाचमें की जानेवाली एक तरहकी दृष्टि।

चित्तगर्भ (सं० त्रि०) चित्तं गर्भयति गच्छतीति यावत् चित्तगर्भ-अच्। चित्तग्राही, मनोहर, सुन्दर, खूबसूरत।

"यथाकिं चित्तगर्भासु सुलभः।" (काव्य ५।३४।५)

'चित्तगर्भासु चित्तग्राहिणीषु स्तुतिषु॥' (सायण)

चित्तचाञ्चल्य (सं० क्ली०) चित्तस्य चाञ्चल्यं, ६-तत्। मनकी अस्थिरता, मनकी चंचलता।

चित्तचारी (सं० स्त्री०) चित्ते चरति चित्त-चर-णिनि। जो सर्वदा सोचा जाय, जो हमेशा ख्यालमें रक्खा जाय।

चित्तचालन (सं० क्ली०) चित्तस्य चालनं, ६-तत्। मन-

वृत्तिका चालान, मनके वृत्तिकी गति, मनका झुकाव।

चित्तज (सं० पु०) चित्ते जायते चित-जन-ड। कन्दर्प, काम, कामदेव।

चित्तजन्मन् (सं० पु०) चित्तात् जन्म यस्य, बहुव्री०। काम, कामदेव।

चित्तज्ञ (सं० त्रि०) चित्तं जानाति चित-ज्ञा-क। जो चित्तकी बात जानता हो, जो दूसरोंके हृदयका हाल जानता हो।

चित्तदोष (सं० पु०) चित्तस्य दोषः, ६-तत्। चित्तका दोष, चित्तका विकार।

चित्तनदी (सं० स्त्री०) चित्तमेव नदी अवधारणे, कर्मधा०। चित्तवृत्तिरूपी नदी। यह नदी पाप और पुण्य वाहिनी है। अविवेक अवस्थामें पापवाहिनी है, उस समय यह केवल संसारको ओर दौड़ती है। विवेक अवस्थामें पुण्यवाहिनी है, तब सिर्फ कैवल्य ही इसका अभिलषणीय है।

चित्तनाश (सं० पु०) चित्तस्य नाशः, ६-तत्। चित्तवृत्तिके नाश, चित्तकी गतिका बिगड़ना।

चित्तनिर्वृति (सं० स्त्री०) चित्तस्य निर्वृतिः, ६-तत्। मनकी शान्ति, दिलकी आराम।

चित्तपरिकर्मन् (सं० क्लो०) चित्तस्य परिकर्मन्, ६-तत्। मैत्रादिभावनारूप चित्तका संस्कार। चित्तप्रसादन देखो।

चित्तपावन—दक्षिणप्रदेशीय ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी।

कोङ्कणस्थ देखो।

चित्तप्रमाथिन् (सं० त्रि०) चित्तं प्रमथ्नाति चित्त-प्रमथ-णिनि। जो चित्तको व्याकुल करता हो, जिससे दिलमें दुःख होता हो।

चित्तप्रसन्नता (सं० स्त्री०) चित्तस्य प्रसन्नता, ६-तत्। मनको तृप्ति, प्रीति, आनन्द, हर्ष, खुश।

चित्तप्रसाद (सं० पु०) चित्तस्य प्रसादः, ६-तत्। मनका सन्तोष, मनकी तृप्ति।

चित्तप्रसादन (सं० क्लो०) चित्तस्य प्रसादनः, ६-तत्। मैत्रादि भावना द्वारा चित्तको निर्मल करनेकी क्रिया। यह मैत्री, करुणा, हर्ष, उपेक्षा आदिके उपयुक्त व्यवहार द्वारा होता है। जैसे, सुखीके प्रति मित्रभाव, दुखीके प्रति करुणा, पुण्यवान्के प्रति हर्ष एवं पापीके प्रति उपेक्षा रखना। इस प्रकारके साधनसे चित्तमें राजस और तामसकी निवृत्ति हो कर केवल सात्विक धर्मका प्रादुर्भाव होता है।

"मैत्री करुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनं॥" (योगसू० १।३३)

चित्तभू (सं० पु०) चित्ते भवति चित्त-भू क्विप्। कन्दर्प, काम, कामदेव।

चित्तभूमि (सं० स्त्री०) चित्तस्य भूमिः अवस्था, ६ तत्। चित्तकी अवस्था, मनकी हालत। पातञ्जलोक्त चित्तको अवस्थाके भेद इस प्रकार हैं—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। क्षिप्त अर्थात्-रजो गुणद्वारा चालू विषयमें सर्वदा अस्थिर। मूढ़ अर्थात्—तमोगुणके उद्रेकके कारण निद्रावृत्तियुक्त। विक्षिप्त अर्थात्—जिससे कुछ विशेष जो कभी कभी स्थिर हो। एकाग्र अर्थात्—एक विषयमें मनका रहना। निरुद्धवृत्तियोंका निरोध होने पर सिर्फ संस्काररूपसे अवस्थित। क्षिप्त, मूढ़ और विक्षिप्त चित्त समाधिके लिए उपयोगी नहीं होते। एकाग्र अवस्थामें संप्रज्ञातसमाधि होती है, राजस तामस वृत्तिसे निवृत्त हुआ जा सकता है, सिर्फ सात्विक वृत्ति रहती है। असंप्रज्ञातसमाधिमें उसका भी निरोध हो जाता है। मधुमती-मधुप्रतीका, विशोका और ऋतम्भरा ये चार भूमियां हैं। एकाग्र और निरुद्ध ये दोनों भूमिके अन्तर्गत हैं।

(योगसू० १ भाष)

चित्तमोह (सं० पु०) चित्तस्य मोहः, ६-तत्। मनका मोह।

चित्तयोनि (सं० पु०) चित्तं योनिरुत्पत्तिस्थानं यस्य, बहुव्री०। कन्दर्प, कामदेव।

चित्तराग (सं० पु०) चित्तस्य रागः ६-तत्। मनका अनुराग, चित्तको प्रीति या प्रेम, दिलकी मुहब्बत।

चित्तल (सं० पु०) चित्तं लाति चित्त-ला-क। मृगभेद, एक प्रकारका मृग।

चित्तलुनार—मध्यभारतके अन्तर्गत चांदा जिलेके निकटस्थ एक जमींदारी। यहांके जंगलमें अच्छे अच्छे सेंगुन-काठ पाये जाते हैं।

चित्तवत् (सं० त्रि०) प्रशस्तं चित्तं विद्यते अस्य चित्त प्रशंसायां मतुप् मस्य व। उदारचेता, जिसका चित्त उदार हो, दाता, दानशील।

चित्तवलास—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलेकी एक नदी। इसका दूसरा नाम विमलीपत्तन है। यह गोलकुण्डा पर्वतसे निकल कर पूर्व-दक्षिणको ओर गोपालपल्ली, जमि इत्यादि नगर होती हुई ५८ मील जानेके बाद विमलीपत्तनके पास समुद्रमें गिरी है। चित्तवलास नगरके निकट इसके ऊपर एक पुल बना हुआ है।

चित्तवाद (सं० पु०) चित्तरूपः वादः, मध्यपदलो० कर्मधा०। हार्दिक वचन, दिलकी बात।

चित्तविकार (सं० पु०) मनका विकार, हृदयकी पीड़ा।

चित्तविक्षेप (सं० पु०) चित्तस्य विक्षेपः, ६-तत्। मनकी चञ्चल अवस्था, यह अवस्था योगमें व्याघात पहुंचाती है। पातञ्जलमें चित्तविक्षेप नौ प्रकारका कहा गया है। जैसे—व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्तिदर्शन, अलब्धभूमिकत्व और अनवस्थिति। व्याधि अर्थात् धातु रसादिका वैषम्य। स्त्यान-चित्तकी अकर्मण्यता। संशय—उभयकोटिक ज्ञान अर्थात् ऐसा हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। प्रमाद-समाधिके लिये प्रयत्न न करना। आलस्य—शारीरिक कफादिजन्य गुरुत्व और चित्तके तमोजन्य गुरुत्वके कारण अप्रवृत्ति वा बुरी प्रवृत्ति। अविरति-विषय—वासनाओंसे निवृत्त न होना। भ्रान्तिदर्शन-मिथ्याज्ञान। अलब्धभूमिकत्व-समाधिभूमिका न मिलना। अनवस्थिति अर्थात् लब्धभूमिमें चित्तकी अनवस्थिति। (योगसू० १।३० भाष्य०)

चित्तविद् (सं० त्रि०) चित्तं वेत्ति चित्त विद् क्विप्। १ चित्तज्ञ, जो मनकी बात जाने। (पु०) २ बौद्धभेद, बौद्ध दर्शनके अनुसार वह पुरुष जो चित्तके भेदों और रहस्योंको जानता हो।

चित्तविनाशन (सं० त्रि०) चित्तं विनाशयति चित्त-विनाशि नन्द्यादित्वात् ल्यु। १ चित्तविनाशक, मनको नाश करनेवाला। भावे ल्युट्। (क्ली०) २ चित्तका विनाश, मनका लोप, दिलकी बरबादी।

चित्तविप्लव (सं० पु०) चित्तस्य विप्लवो यस्मात्, बहुव्री०। १ उन्मादरोग, पागलपन, चित्तविभ्रम, बावलापन, वह रोग जिसमें मन और बुद्धिका कार्यक्रम बिगड़ जाता है। चित्तस्य विप्लवः, ६-तत्। २ चित्तकी अनवस्थिति, चित्तकी स्थिरता न रहना।

चित्तविभ्रम (सं० पु०) चित्तस्य विशेषेण भ्रमणमनवस्थानं यस्मात्, बहुव्री०। १ उन्मादरोग। २ बुद्धिनाश, भ्रान्ति, भ्रम, भौचक्कापन।

"अहो चित्तविकारोऽयं स्यात्वा मे चित्तविभ्रमः।" (भारत १८।२ अ०)

चित्तविश्लेष (सं० पु०) चित्तस्य विश्लेषः, ६-तत्। मनोभङ्ग, मनकी अशान्ति, दिलकी बेचैनी।

चित्तवृत्ति (सं० स्त्री०) चित्तस्य वृत्तिः, ६-तत्। चित्तका अवस्था, चित्तकी गति। पातञ्जलमें चित्तवृत्ति पाँच प्रकारकी मानी गई है, जैसे—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। इन सबके भी क्लिष्ट और अक्लिष्ट दो दो भेद हैं। अविद्यादि क्लेशहेतुक वृत्ति क्लिष्ट और जो क्लेशहेतुक नहीं है वह अक्लिष्ट माना गया है।

चित्तसमुन्नति (सं० स्त्री०) चित्तस्य समुन्नतिः, ६-तत्। १ मनकी उन्नति। २ गर्व, अहंकार, घमण्ड।

चित्तस्थित (सं० त्रि०) ७-तत्। जो मनमें धारण किया जाय, जो चित्तमें रखा जाय।

चित्तहारिन् (सं० त्रि०) चित्तं हरति चित्त-हृ-णिनि। जो मन हरलेता है, मनहारी, सुन्दर, खूबसूरत।

चित्तानुवर्त्तिन् (सं० त्रि०) चित्त-अनुवृत्-णिनि। मनका अनुसरण करनेवाला।

चित्तान्तर (सं० क्ली०) अन्यच्चित्तं, सुप्सुपेतिस० वा चित्तस्य अन्तरं, ६-तत्। १ अन्य चित्त। २ मनका भीतर।

चित्तापर्णी—पञ्जाबके अन्तर्गत होशियारपुर जिलेकी एक गिरिमाला। इसका दूसरा नाम सोलासिंही है। यह जमअन्दुनकी पूर्वी सीमा है। इस गिरिमालाके ऊपर एक स्थान है, इसको भी चित्तापर्णी कहते हैं। यहां देवीका एक प्रसिद्ध मन्दिर है। प्रति वर्ष बहुतसे यात्री यहां जुटते हैं।

चित्तापहाड़—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके रावलपिण्डी जिलेकी एक गिरिमाला। यह पर्वत त्रिभुजाकृति है। इसकी भूमि नाग नगरके निकट सिन्धु नदीके पूर्वकूलमें और शार्षविन्दु मर्गला गिरिसङ्कटके निकट प्रायः ५० मील पूर्वको अवस्थित है। यह १२ मील विस्तृत है। चूनेके स्तरीभूत पत्थरसे सफेद लगने पर ही उसका यह नाम पड़ा है। इसके स्थान स्थान पर 'जलपाई' वृक्ष लगता

और पत्थरसे यथेष्ट चूना निकलता है। पश्चिम भाग अतिशय बन्धुर तथा दुरारोह है। इधर पूर्व भागमें स्थान स्थान पर उच्चशृङ्ग और गभीर खात दृष्ट होते हैं।

चित्तापहारक (सं० त्रि०) चित्तस्यापहारकः, ६-तत्। चित्तको हरण करनेवाला, मनोहर, सुन्दर, खूबसूरत।

चित्ताभोग (सं० पु०) चित्तस्य आभोगः एकविषयता, ६-तत्। एक विषयमें चित्तकी प्रवृत्ति। इसका पर्याय मनस्कार है।

चित्तावादिगी—मन्द्राजके अन्तर्गत बेलारी जिलेका एक शहर। यह अक्षा० १५° १७ उ० और देशा० ७९° ४७ पू० पर तुङ्गभद्रानदी और हस्पेट नगरसे २ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३७५९ है। यहां एक प्रधान हाट है जिसमें निजाम राज्यके पण्य द्रव्योंकी आमदनी होती है। इस शहरमें सिर्फ ३।४ अच्छे अच्छे रास्ते हैं। हस्पेटके बहुतसे समृद्ध वणिक् यहां रहते हैं। बेला नामकी खाड़ी इस नगरके बीच हो कर गई है।

चित्ति (सं० स्त्री०) चित भावे क्तिन्। १ बुद्धिवृत्ति।

"उदुत्वा विश्वे देवा अग्ने! भवन्तु चित्तिभिः।" (शुक्लयजुः १२।३१)

२ अग्नितत्त्वपरिज्ञानार्थं चिन्ता।

"चित्तिं जुहोमि मनसा घृतेन।" (शुक्लयजुः १७।१८)

३ कर्म।

"हविश्चित्तिभिर्विन्दिरे।" (ऋक् १।१०२।२६)

'चित्तिभिः कर्मभिः' (निरुक्त)

४ ख्याति, प्रसिद्धि, शोहरत, नामवरी।

"चित्तिं दधस्य सुभगत्वमश्वे" (ऋक् २।२१।६)

'चित्तिं ख्यातिं' (सायण)

५ अथर्व ऋषिकी पत्नी।

"चित्तिस्त्वथर्वणः पत्नी लेभे पुत्रं धृतव्रतं।" (भागवत ४।१।३८)

कर्त्तरि क्तिन्। ६ ज्ञापक या प्रापक, वह जो जानने या पाने योग्य हो।

"चित्तिरपां दमे विश्वायुः।" (ऋक् १।६७।५)

'चित्तिर्ज्ञपयिता प्रापयिता वा' (सायण)

चित्तित (सं० त्रि०) चित्तं अस्य सञ्जातः चित्त तारकादित्वादितच्। चित्तयुक्त।

चित्तिन् (सं० त्रि०) चित्तं अस्य अस्ति चित्त-इनि। प्रशस्त चित्तयुक्त, जिसका चित्त उत्तम या प्रशंसनीय हो।

चित्तिवलास—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १७° ५६' २०" उ० और देशा० ८३° २९' ३०" पू०में अवस्थित है। यहां एक बड़ा पटुएका कारखाना है।

चित्ती (हिं० स्त्री०) १ छोटा धब्बा, छोटा चिह्न। २ एक तरहका छोटा गड्ढा जो कुम्हारके चाकके किनारे रहता है और जिसमें डंडा डाल कर चाक घुमाया जाता है। ३ मादा लाल, मुनिया। ४ एक तरहका सांप जो अजगरको तरह होता है। ५ टैयां, एक तरहको कौड़ी जिसकी पीठ खुरदरी और चिपटी होती है।

चित्तीकृत (सं० त्रि०) अचित्तं चित्तं कृतम् अभूततद्भावे च्वि। चित्तके साथ प्राप्त, जो एकाग्रचित्तसे सोचा गया हो।

"एकोमयेऽमवान् विविध प्रधानं चित्तीकृतः प्रजननाय।"

(भागवत ४।१।२६)

चित्तूर—मन्द्राज प्रान्तके नार्थ-आर्काट जिलेका सब-डिविजन। इसमें चित्तूर तथा पालमनेर तालुक और पुङ्गनूर जमीन्दारी तहसील लगती है।

चित्तूर—मन्द्राज प्रान्तके उत्तर आर्काट जिलेका मध्यस्थ तालुक। यह अक्षा० १३° और १३° ३१' उ० तथा देशा० ७८° ४८' एवं ७९° १६' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ७९३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २०८८६८ है। एक नगर और ३३८ ग्राम बसे हुए हैं। सालाना मालगुजारी कोई ३२१०००) रु० होगी। इसकी भूमि ढालू और पथरीली है। खेती खूब होती है।

चित्तूर—मन्द्राज प्रान्तके उत्तर आर्काट जिलेका सदर। यह अक्षा० १३° १३' उ० और देशा० ७९° ६' पू०में पाइनी नदीकी उपत्यका पर साउथ इण्डियन रेलवेके वेल्लूर जङ्कशनसे १८ मील उत्तरको अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १०८९३ है। १८७४ ई० तक चित्तूर एक जंगी अड्डा रहा।

चित्तूर—मन्द्राज प्रान्तस्थ कोचिन राज्यके चित्तूर तालुकका सदर। यह अक्षा० १०° १२' उ० और देशा० ७६° ४५' पू०में अनमलय नदी पर अवस्थित है। आबादी कोई ८०६५ होगी। ब्राह्मण बड़े बड़े जमीन्दार हैं। नगरमें कुछ सूती कपड़े बुने जाते हैं।

चित्तोन्नति (सं० स्त्री०) १ मनकी उन्नति। २ गर्व, अभिमान, घमण्ड।

चित्तोद्वेग (सं० पु०) ६-तत्। १ मनका उद्वेग, चित्तकी आकुलता। २ मनोवेग, चित्तको तीव्र वृत्ति, आवेश जोश।

चित्तौर—राजपूतानास्थ उदयपुर राज्यके चित्तौर जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४° ५३´ उ० और देशा० ७४° ३९´ पू०में राजपूताना-मालवा तथा उदयपुर-चित्तौर रेलवेके चित्तौर जङ्कशनसे प्रायः २ मील पूर्वको अवस्थित है। पहाड़को पश्चिम ढाल पर चित्तौर दुर्ग है। पश्चिमको कोई आध मील पर गम्भीर नदो बहती है। कहते हैं १४वीं शताब्दीको उस पर पत्थरका वर्तमान पुल बांधा था। १८८३ ई०को उदयपुरसे अफीमको तौल यहां उठ आयी। मेवाड़से बम्बईको जानेवाला सब अफीम यहीं तौला करते हैं। लोकसंख्या लगभग ७५९३ होगी।

चित्तौरके किसो ऊंचे स्थानमें खड़े हो कर चारों तरफ दृष्टि डालनेसे एक अपूर्व दृश्य नजर आता है। समतलसे लगा कर क्रमशः ऊंचो प्रवणभूमि पर्वतके रूपमें ऊंची होती गई है। उसके शीर्षस्थान पर प्राचीरवेष्टित गढ़ शोभित है। इसके किसी स्थानमें हिन्दू गौरवका उज्ज्वल दृष्टान्तस्वरूप अत्युच्च जयस्तम्भ अचल अटल रूपसे खड़ा है। किसी जगह अत्याश्चर्य भास्करकार्यसे सुशोभित बड़ी बड़ी सौधमालाएं अक्षुस अवस्थामें विद्यमान रह कर तात्कालिक अद्भुत बुद्धिकौशल और शिल्पनैपुण्यका परिचय दे रही हैं। कहीं विस्तीर्ण जलाशय और उनके किनारेके प्रासाद महापराक्रान्त राणाओंके वासस्थान दिखा रहे हैं और उनके अद्भुत वीरकार्योंको याददास्त दिला रहे हैं। सूर्यकुलतिलक महावीर रामचन्द्रके वंशधर बप्पारावने जिस नगरकी प्रतिष्ठा की थी, जिस द्वादश वर्षीय राजपूत बालककी सूरवीरतासे पद्मिनीके रूपमें मोहित हो अलाउद्दीनकी अगण्य सेनाने यमालयकी शरण ली थी उस महावीर बादलकी जन्मभूमि, महाराजा भीमसिंह और महापराक्रान्त दिग्विजयी कुम्भराणाकी राजधानी सुसमृद्ध भारतप्रसिद्ध चितौर नगर तथा मृत्युको आलिंगन करके भी जो समरमें पीठ नहीं दिखाते थे ऐसे सैकड़ों योद्धाओंको प्रसविनी वीरमाता चितौर नगरीको इस समय कैसी दुर्दशा है, इस बातका विचार कर किसके हृदयमें सन्ताप न होगा? जिधर देखते हैं, उधर ही सैकड़ों खण्डहरोंको इसके प्राचीन गौरव और सुख-समृद्धिका परिचय देते पाते हैं। कहीं अत्युच्च स्तम्भ, कहीं भग्न प्रासाद, कहीं प्रकाण्ड तोरणद्वार, कहीं देवालय, और तो क्या एक एक सामान्य पत्थर तक इसकी किसी न किसी ऐतिहासिक घटनाका विकाश कर रहा है। वास्तवमें हिन्दू कुलगौरव राजपूतोंकी राजधानी चितोरनगरीमें जानेसे वर्तमान अधःपतित हिन्दुओंके हृदयमें ऐसे एक अपूर्व भावका उदय होता है, कि जो लेखनी द्वारा नहीं लिखा जा सकता।

पर्वतके पश्चिम पाददेशमें चित्तौर नगर अवस्थित है। नगरका आकार एक विशाल आयतक्षेत्रके समान है। यह नगर चारों ओरसे दुर्गसंलग्न प्राचीरसे घिरा हुआ है। पश्चिमभागमें पास ही गमेरी नदी बहती है, उसके ऊपर पत्थरका पुल मानो कालको उपेक्षा करनेके लिए ही विद्यमान है। चित्तौरके समृद्धिकालमें शैलशृङ्गस्थ दुर्गके भीतर राजप्रासाद, कीर्तिस्तम्भ और अन्यान्य मन्दिर आदि बनते थे, इसीलिए निम्नस्थ नगरमें सुन्दर अट्टालिकाएं नहीं बन पायी हैं। निम्नस्थ नगरको तलहटी कहते हैं। प्राचीन शिलालेखोंमें उक्त नगरका चित्रकूट और पहाड़ चित्रकूटाचलके नामसे वर्णन है। नगरके पूर्वमें ३-४ मील लम्बे शैलशिखर पर जगत्प्रसिद्ध चितौरगढ़ है। इस गढ़की लम्बाई प्रायः ५७३५ गज और चौड़ाई ८३६ गज होगी। शिखरदेश अत्यन्त दुर्गम है, कुछ दूर नीचेसे प्रवणभूमि क्रमनिम्न हो कर समतल भूमिसे मिल गई है। दुर्गके भीतर बहुतसे बड़े बड़े जलाशय हैं। उत्तरभागमें दुर्गको प्राचीर १७६१ फुट और दक्षिणभागमें १८१९ फुट ऊंची है। दुर्गमें प्रवेश करनेके लिए तीनों तरफ तीन क्रमोच्च मार्ग हैं, जिनमें पश्चिमका मार्ग ही प्रधान है। यह मार्ग प्रायः १ मील लम्बा है, नगरके अग्निकोणसे दो तोरणोंमें हो कर पहले उत्तरकी तरफ १०८० गज तक गया है, फिर टेढ़ा हो कर और भी ३।४ तोरणोंको पार करता हुआ ५०० गज अतिक्रमके बाद रामपोल नामक दुर्गद्वारमें जा मिला है। यह मार्ग समभावसे १५ हाथमें १ हाथ क्रमोच्च और कहीं

कहीं पत्थरसे बना हुआ है। २य द्वार उत्तरभागमें है, इस पर चढ़नेका मार्ग अत्यन्त दुर्गम है। इसलिए इसका व्यवहार नहीं होता। सूर्यपोल नामका ३य द्वार पूर्वभागमें है। इस द्वारमें जानेका मार्ग प्रायः ७५० गज है, इसके ऊपरका अर्द्धांश प्रस्तर-निर्मित है। दुर्गमें प्रायः ३२ सरोवर हैं, इसलिए बहुत पानी मिलता है। पर्वतके नीचे नगर, नगरके उपरिभागमें एक झरना है, वहां सब समय ही सुस्वादु और स्वास्थ्यकर जल मिलता है। मध्यभागमें थोड़ीसी जमीनमें गेहूंकी खेती होती है। परन्तु पशुओंके चरनेका चारा यहां नहीं मिलता।

वर्तमानकी बढ़ियासे बढ़िया तोप भी इस पर गोला बरसानेमें असमर्थ है। वास्तवमें चितोरके सौभाग्यके समय समग्र भारतवर्षमें ऐसा गढ़ था या नहीं, इसमें सन्देह ही है। राजपूत लोग कहा करते हैं, कि सूर्यवंशमें उत्पन्न नृपकुल-धुरन्धर महीपति रामचन्द्रके कनिष्ठ पुत्र लवके पवित्र वंशमें बप्पारावने जन्म लिया था। इन्होंने ७२८ ई०में चितोरगढ़ बनवा कर वहां राजधानी स्थापित की थी। १५६८ ई० तक उनके वंशजोंने वहां राजत्व किया, पीछे उक्त वर्षमें बादशाह अकबरके चितोर गढ़ अधिकार करने पर उस समयके राणा उदयसिंहने उदयपुरमें राजधानी स्थापित की।

चितोरके प्राचीन मन्दिर और कीर्ति-स्तम्भ आदिमें कुम्भराणाका कीर्तिस्तम्भ, खोवानिस्तम्भ, मोकलजीका मन्दिर, शिङ्गारचौरी आदि ही प्रधान हैं। इनके सिवा दुर्गके सर्वत्र ही बहुत भग्नावशेष पड़े हैं। जगह जगह जैनों द्वारा खोदित, बहुतसे शिलालेख भी मिलते हैं; जिनमें सबसे प्राचीन लेख वि० सं० ७५५-का मिलता है।

प्रवाद है—राना कुम्भकर्णने अपने पिता मोकलजीके स्मरणार्थ उपरोक्त मोकलजीका मन्दिर बनवाया था और कोई कोई ऐसा कहते हैं, कि मोकलजीने खुद ही उक्त मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। यह पूर्व-पश्चिममें ७२ फुट लम्बा और उत्तर-दक्षिणमें ६० फुट चौड़ा है। इसके बीचमें चौखूंटा प्रकोष्ठ है, उसके ऊपर छतकी डाट लगी हुई है जो क्रमशः पतली होती गई है और अन्तमें सूची का आकार धारण कर चोटीके रूपमें परिणत हुई है। इस प्रधान प्रकोष्ठके पीछे मन्दिरके पूर्वांशमें छोटासा एक गर्भगृह है, वहां बहुत अन्धेरा रहता है। मन्दिरमें कहीं भी प्रकाश जानेका मार्ग नहीं है। घोर-दोपहरको भी यहां बिना चिरागके कुछ दीखता नहीं। मन्दिरके उत्तर, दक्षिण और पश्चिमकी ओर तीन दालान और प्रवेशद्वार है, जिनमें पश्चिमका द्वार ही प्रधान है। पूर्व-दिशाके प्रकोष्ठमें एक प्रकाण्ड प्रस्तरमूर्ति स्तम्भाकारमें दण्डायमान है। प्रस्तरकी मूर्तियां तीनों तरफ खुदी हुई हैं और वे अत्युत्कृष्ट भास्करकार्यसे शोभित हैं। यह मन्दिर प्रस्तर-खोदित बहुसंख्यक मूर्तियोंसे भरा हुआ है। कहीं वाद्यकरगण ढोल, तासा, नगाड़ा आदि बजा रहे हैं; कहीं विचारकगण विचार कर रहे हैं, सामने अपराधीको लिए हुए प्रहरी खड़े हुए हैं; कहीं कोई पुरमहिला घड़ा कांखमें लिए जल भरने जा रही है और उसके सामने हाथ जोड़े कोई पुरुष खड़ा है; कहीं कोई वीरपुरुष सशस्त्र रणक्षेत्रसे लौटा है और सामने बच्चेको गोदीमें लिए उसकी प्रियतमा खड़ी है तथा कहीं योद्धागण ढाल-तलवार ले कर युद्ध करने जा रहे हैं, इत्यादि नाना प्रकारकी सैकड़ों खूबसूरत मूर्तियां खुदी हुई हैं।

शिङ्गारचौरी मन्दिरकी बनावट विलक्षण ही है। इसका प्रधान गर्भगृह बीचमें बना है। उसके चारो तरफ चार दालान हैं, जिसमें पूर्व और दक्षिणमें द्वार नहीं है; उत्तर और पश्चिमकी तरफसे मन्दिरमें प्रवेश किया जाता है। हिन्दूओंके देवमन्दिरोंका द्वार प्रायः पूर्वको होता है, किन्तु चित्तौरके प्रायः सभी मन्दिर पश्चिम द्वारी है। प्रवाद है, कि यह शिङ्गारचौरी राणा कुम्भकर्णके जैनधर्मावलम्बी कोषाध्यक्षके द्वारा बना है।

शिङ्गारचौरीके बीचमें मेवार-राज्यापहारी वनवीरने आत्मरक्षार्थ एक प्राचीर बनवाई थी, उक्त प्राचीरके कारण गढ़ दो भागोंमें विभक्त हो गया है।

चौघानके अदूरवर्ती सरोवरके बीचमें भीमसिंह और रानी पद्मिनीका प्रासाद है। फिलहाल इस प्रासादका जीर्णोद्धार हुआ है।

एक ऊंची जमीन पर मेवाड़की अधिष्ठात्री कालिका देवीका मन्दिर स्थापित है। बहुतोंका अनुमान है, कि

उक्त मन्दिरका निम्नभाग और तो क्या स्तम्भादि भी राणाओंके पहले बने हैं, राणाओंने सिर्फ उसकी मरम्मत कराई है।

इसके सिवा कुक्कुरेश्वरका मन्दिर, अन्नपूर्णा देवीका मन्दिर, रत्नेश्वरसिंहका प्रासाद. नवलक्ष भण्डार आदि तथा और भी अनेक आश्चर्य-जनक मन्दिर, सूर्यकुण्ड और माताजीका कुण्ड आदि चित्तौरकी शोभा बढ़ा रहे हैं।

सुप्रसिद्ध दुर्ग ५०० फुट ऊंचे एक लम्बे तङ्ग पर्वत पर अवस्थित है। यह ३। मील लम्बा और आध मील चौड़ा है। क्षेत्रफल ६९० एकर आता है। यह निश्चय करना कठिन है, कब वह किला बना था। पुराणानुसार भीमसेन इसके निर्माता रहे। इसका पुराना नाम चित्रकोट था। मोरी राजपूतोंके अधिपति चित्राङ्गके नाम पर ही उसका नामकरण हुआ है। पर्वतके दक्षिण भागमें उनके सरोवर और विध्वस्त प्रासाद आज भी देख पड़ते हैं। ७३४ ई०को बप्पा रावलने मोरियोंसे वह किला छीना था। १५६७ ई० तक यहां मेवाड़की राजधानी रही, जब कि वह उदयपुरको बदल दी गयी। मुसलमान बादशाहोंने इसे चार बार अधिकृत और लुण्ठित किया। १३०३ ई०को अलाउद्दीन् खिलजीने चित्तौर दखल करके अपने बेटे खिज्रखांको दिया था। उस समय इसका नाम खिज्राबाद रखा गया। १४वीं शताब्दीके प्रायः मध्यभागमें मुहम्मद बिन तुगलकने, १५५४ ई०को गुजरातके बहादुर शाह और १५६८ ई०को अकबरने चित्तौर अधिकार किया। किलेमें तीन बड़े दरवाजे हैं—पश्चिम रामपोल, पूर्व सूरजपोल और उत्तरकी लाखोता-बाड़ी। नगरसे किलेको रामपोल द्वारसे राह गयी है। दुर्गका सबसे प्राचीन भवन 'कीर्तिस्तम्भ' है। १२वीं या १३वीं शताब्दीको जीजा नामक किसी बघेरवाल महाजनने उसे बना दिया और प्रथम जैन तीर्थङ्कर आदिनाथके नाम पर उत्सर्ग किया था। भारत सरकारने इसकी मरम्मत करा दी है। १४४२ तथा १४४९ ई०के बीच मालव और गुजरातके सुलतानोंकी मिलित सेना पर विजय पानेके उपलक्षमें राणा कुम्भने पर्वत पर 'जयस्तम्भ' बनाया था। यह बुर्ज १२० फुट ऊंचा है। एक घुमावदार
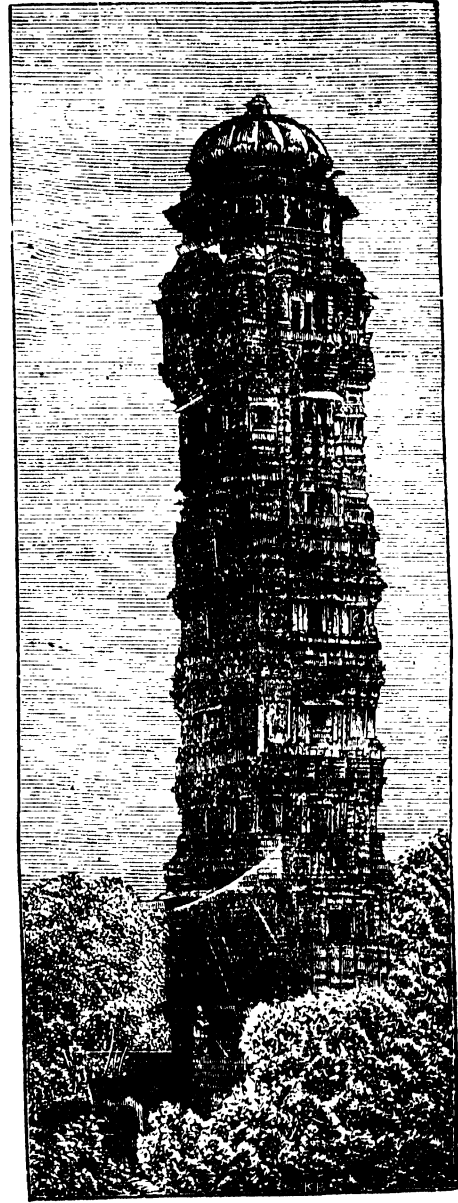
चित्तौरका जयस्तम्भ

जीना नीचेसे ९ मञ्जिल ऊपर तक लगा है। फर्शसे छत तक सजावट खूब है। टाड और फरगूसन साहबने इस इमारतकी बड़ी तारीफ की है। १४४८ ई०को कालका-देवीको सिंगारचौरी बनी। पहाड़में जो बौद्ध स्तूप पाये जाते, लोग लिङ्गम् बतलाते हैं। चित्तौरसे ७ मील उत्तर बेराच नदीके किनारे नगरीगांवमें बहुतसी अति प्राचीन मुद्राएं और शिलालिपियां मिली हैं।

चित्पति (सं० पु०) चितः ज्ञानस्य पतिः, ६-तत्। पूर्वपदस्य न प्रकृतिस्वरत्वं। न भ कू चाचिद्दिषु। पा ६।२।१६।

१ मनोभिमानी जीव, वह प्राणी जिसके हृदयमें अभिमान हो।

"चित्पतिर्मा पुनातु" (शुक्लयजु० ४।४)

२ हृदयेश्वर, हृदयके मालिक।

चित्पात (सं० पु०) चित् हो कर गिरना, मुंह, पेट आदि शरीरका अगला भाग ऊपरकी ओर हो जाना।

चित्पावन—कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंका प्रकृत नाम। सह्याद्रिखंडमें ये चित्तपुतात्मा नामसे वर्णन किये गये हैं। कोङ्कणस्थ ब्राह्मण देखो।

चित्प्रवृत्ति (सं० स्त्री०) चैतन्यकी प्रवृत्ति, ज्ञानका प्रवाह या झुकाव।

चित्फिरोजपुर—युक्तप्रदेशके बलिया जिलेका एक शहर। इसका दूसरा नाम बड़ागांव है। यह अक्षा० २५° ४५' उ० और देशा० ८४° पू० पर बलियासे १० मील दूर गाजीपुर जानेके रास्ते पर तथा सरयू नदीके किनारे अवस्थित है। यह शहर कृषिकर्मके लिये मशहूर है। लोकसंख्या प्रायः ८५०५ है।

चित्वदल—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कड़ापा जिलेके मध्यस्थ पालमपेट नामक तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० १४° १०' ३०" उ० और देशा० ७८° २४' २८" पू०में अवस्थित है। पहले इस नगरमें एक सामान्य राज्यकी राजधानी थी और इसके शासनकर्ता घाटपर्वतके पश्चिम पार्श्वस्थ विजयनगर-राजाओंके अधीनस्थ अन्यतम प्रधान सामन्त या महामण्डलेश्वर थे। १८०२ ई०में अंगरेजोंने यहांके अधिपतिको सिंहासनसे उतार दिया और वृत्ति देने लगी।

चित्य (सं० पु०) चीयते चित्य निपातने। चित्याग्निचित्ये। पा ३।१।१३२। १ अग्नि, आग। (त्रि०) २ चयनीय, चुनने या इकट्ठा करने योग्य। चीयते अस्मिन् अग्निरिति शेषः। (क्ली०) ३ शवदाह करनेका चुल्हा, चिता। चितायां भवः, चिता-यत्। (त्रि०) ४ चितासे उत्पन्न, चितासम्बन्धीय।

"चित्यमाल्यानुरागश्च-चायसाभरणोऽभवत्।" (रामायण १।५८।११)

चित्या (सं० स्त्री०) चिऽयतेऽग्निरस्यां प्रेतस्य चि-य निपातने, स्त्रियां टाप्। १ चिता। भावे क्यप्। २ चयन, इकट्ठा करनेकी क्रिया।

चित्र (सं० क्ली०) चित्रयते वि क्त। अमिचिमिदिशसिभ्यः क्त। उण् ४।१६३। १ तिलक, चन्दन आदिसे माथे पर बनाया हुआ चिह्न। २ आलेख्य, चित्र, तसवीर।

"उत्तमाधममावेन वर्तन्ते पटचित्रवत्।" (पञ्चदशी ६।५)

३ चित्रक्रिया देखो। अद्भुत, आश्चर्य, ताज्जुब।

"चित्रं संक्रीडमानास्ताः क्रीडनैर्विविधैस्तथा।" (रामायण २।१०।४)

४ शब्दालङ्कारभेद, पद्माकार या खङ्गादिके आकारमें वर्णविन्यासका नाम चित्रालङ्कार है। (साहित्यद० १०।६४५) ५ काव्यभेद, एक तरहका एक काव्य, यदि शब्द और अर्थका वैचित्र रहे तो उसे तृतीय अधमकाव्य कहते हैं। (काव्यप्र० १७०)

६ छन्दोभेद, एक प्रकारका वर्णवृत्त जो सामानिका वृत्तिके दो चरणोंको मिलानेसे बनता है। इसके प्रत्येक पादमें सोलह अक्षर अयुग्म होते हैं, अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम इत्यादि गुरु एवं युग्म अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ और षष्ठ इत्यादि वर्ण लघु होते हैं। (छन्दोमञ्जरी)

७ आकाश। ८ कुष्ठविशेष, एक प्रकारका कोढ़ जिसमें शरीर पर सफेद चित्ते या दाग पड़ जाते हैं। (क्ली०-पु०) ९ कर्बुरवर्ण, कबरा, रंग चितकबरा। चित्रयति पापपुण्ये विचार्य्य लिख्यते चित्र-णिच्-अच्। (पु०) १० यमभेद, एक यमका नाम।

"इक्रोधराय चित्राय" (तिथ्यादितत्त्व)

११ चित्रगुप्त। १२ एरण्डवृक्ष, रेंडका पेड़। १३ अशोक वृक्ष। १४ चित्रकवृक्ष, चीतेका पेड़। १५ धृतराष्ट्रके सौ पुत्रोंमेंसे एक। (त्रि०) १६ विचित्रवर्णविशिष्ट, रंग विरंग, कई रंगोंका।

"निसर्गचित्रोज्ज्वलसूक्ष्मपक्षणा।" (माघ)

१७ आश्चर्यजनक, विस्मयकारी, विचित्र, ताज्जुब।

"चित्राः श्रोतुं कथास्तत्र परिवव्रुस्तपस्विनः।" (भारत १।१।३१)

(पु०) १८ श्वेत एरण्ड। १९ तरम्बुज, तरबूज। २० लावपक्षी। २१ वृश्चिक। २२ जैन मतानुसार सीतोदानदीके किनारेका एक पर्वत।

चित्रक (सं० क्ली०) चित्र स्वार्थे कन्। १ तिलक। चित्रेण चित्र इव वा कायति चित्र-कै-क। (पु०) २ व्याघ्रविशेष, चीता बाघ। ३ शूर, बलवान्। ४ एरण्डवृक्ष, रेंडीका पेड़। ५ चिता। ६ औषधभेद, एक तरह-

की दवा, चिरायता। इसका गुण—ग्रहणी, कुष्ठ, शोथ, अर्श, क्रमि, काम, वातश्लेष, वातअर्श, श्लेष्म और पित्तनाशक अग्निवर्द्धक तथा कटु है।

चित्रक (चिता) साग कसोदीके साथ घोट कर हिङ्गके साथ तेलमें पाक कर खाना चाहिये। चित्रयति चित्र स्वार्थे कन्। (त्रि०) ७ चित्रकार, चित्र बनानेवाला। (पु०) ८ मुचुकुन्द, मेकचंद। इसका गुण शिरःपीड़ादि नाशक है। (भावप्रकाश)

चित्रकगुटिका (सं० स्त्री०) गुटिकाविशेष। चिता, पिपरामूल, चार, लवण, त्रिकटु, हिंगु और अजमायन, इन सबको चूर्ण कर अनार या नीबूके रस द्वारा गोली बनानी पड़ती हैं, इसके बाद सौवर्चल, सैन्धव, विट्, उद्भिद, सामुद्र इन पांच लवणके साथ एक प्रहर तक अग्निमें उबाली जाती है। (चक्रदत्त)

चित्रकगुड़िका—वैद्यकोक्त औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—चितामूल, पिपरामूल, यवक्षार, साचिक्षार, पञ्चलवण, त्रिकटु, हिंगु, जङ्गली अजमायन, इन सबको एक साथ चूर कर टाभानीबू या अनारके रससे घोट कर १ मासा परिमाणकी गोली बनानी होती है। यह आमपाचक और अग्निदीप्तिकारक है। (भैषज्यर०)

चित्रकघृत—एक देशी औषध। इसकी प्रस्तुतप्रणाली—घृत ४ सेर। क्वाथार्थ चीतेकी जड़ १२॥ सेर, पानी ६४ सेर, शेष (बाकी रहे) १६ सेर। कांजी ८ सेर, दहीकी लोनी १६ सेर। कल्कार्थ पीपल, पीपलमूल, चव्य (चाव या चव), चीतामूल, सोंठ, तालीशपत्र, यवक्षार, काला नमक, जीरा, कालाजीरा, हलदी, दारुहलदी, मिर्च, सब मिला कर १ सेर। पाकका जल १६ सेर। इस घृतको खानेसे तिल्ली, गुल्म, उदराध्मान, पाण्डु, अरुचि, ज्वर, बवासीर, शूल आदि नानारोग आराम हो जाते हैं। (भैषज्यर०)

मतान्तरमें घृतको चीतेके क्वाथ और कल्क द्वारा पाक करना चाहिये। यह ग्रहणी, गुल्म, बवासीर, शोथ, तिल्ली, अरुचि, ज्वर और शूलका नाशक तथा अग्निको बढ़ाता है। (चक्रदत्त)

चित्रकजीवी (सं० पु०) जीवक, एक प्रकारका औषध वृक्ष।

चित्रकण्टक (सं० पु०) गोक्षुरक, गोखरू नामक क्षुप।

चित्रकण्ठ (सं० पु०) चित्रः कण्ठो यस्य, बहुव्री०। १ कपोत, कबूतर, परेवा। २ वन कपोत, जङ्गली कबूतर।

चित्रकतैल—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक प्रकारकी देशी दवा। इसके बनानेकी प्रणाली इस प्रकार है—तैल ४ सेर, गोमूत्र १६ सेर। चीतेकी छाल, चविका, अजमायन, कण्टकारी, करञ्जबीज, काला नमक और आकके पत्ते मिला कर १ सेर। इसके नस्यसे नासार्श अच्छा हो जाता है। (भैषज्यर०)

प्रकारान्तरमें ऐसी भी है—चीतेकी छाल, अजमायन, चव्य, इलायची, करौंदाके बीज, अकवन और कालानमकको तैलके साथ एकत्र कर गोमूत्रमें पकाना चाहिये। इस तैलसे अर्श (बवासीर) आराम हो जाता है। (भैषज्यर०)

चित्रकन्धर (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक तरहकी चिड़िया।

चित्रकपिप्पलीघृत—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवाई। इसकी प्रस्तुतप्रणाली—घी ४ सेर, दूध १६ सेर, काढ़ेके लिए पीपल और चीतेकी जड़ मिला कर १ सेर। पाकका जल १६ सेर। इस घृतको खानेसे यकृत् और प्लीहा (तिल्ली) नष्ट हो जाती है। (भैषज्यर०)

चित्रकम्बल (सं० पु०) कम्बलभेद, गलीचा।

चित्रकर (सं० त्रि०) चित्रं करोति चित्र-कृ-ट। १ जो चित्र बनाता हो, चित्र बनानेवाला, चित्रकार। चित्रविद्या देखो। (पु०) २ वर्णसङ्कर जातिविशेष, ब्रह्मवैवर्तपुराणके अनुसार एक संकर जाति जिसकी उत्पत्ति विश्वकर्मा पुरुष और शूद्रा स्त्रीके सम्भोगसे हुई है। रामायण, महाभारतमें भी उल्लेख है।

चित्रकर्मिन् (सं० त्रि०) चित्रं कर्म यस्य, बहुव्री०। १ चित्रकर, चित्र बनानेवाला। २ आश्चर्यकर, विचित्र कार्य करनेवाला। (पु०) ३ तिनिशका पेड़। ६-तत्पुरुष (क्ली०) ४ चित्रकार्य, शिल्प, तसवीर बनानेका हुनर।

चित्रकला (सं०) चित्रविद्या देखो।

चित्रकहरीतकी (सं० स्त्री०) चीतेके साथ पकाई हुई हर्रे। आयुर्वेदोक्त एक तरहकी दवा। चीता, आँवला,

घुँघुँची और दशमूलके रससे हरेका चूर्ण गुड़के साथ उबालना चाहिये, तथा दूसरे दिन त्रिकटु और तेजपत्रके क्षारसे मधुमें पाक करना चाहिये। इसके सेवन करनेसे अग्निवृद्धि तथा क्षय, खाँसी, नासिकारोग, क्रिमि, गुल्म, उदावर्त्त, बवासीर और श्वास रोग नष्ट हो जाता है। (चक्रदत्त)

भैषज्यरत्नावलीके अनुसार, इसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—पुराना गुड़ १०० पल। क्वाथार्थ चीतेकी जड़ ५० पल, पानी ५० सेर शेष (बाकी रहे) १२॥ सेर, आँवलेका रस (नहीं हो तो काढ़ा) १२॥ सेर, दशमूल प्रत्येक ५ पल, पानी ५० सेर, शेष १२॥ सेर। इन काढ़ोंको एकत्र कर उसमें गुड़ घोल कर छान लेना चाहिये, फिर उसमें हरेका चूर्ण ८ सेर छोड़ कर उबालना चाहिये। उबल जाने पर सोंठ, पीपल, मिर्च, दालचीनी, तेजपत्र, इलायची प्रत्येकका चूर्ण २ पल और यवक्षार ४ तोला डाल देना चाहिये। दूसरे दिन २ सेर मधु मिलाना चाहिये। यह अग्निके बलके अनुसार आधा तोलासे २ तोला तक खाया जाता है। इसके खानेसे अग्नि बढ़ती है, तथा क्षय, खाँसी, पीनस, क्रिमि, गुल्म, उदरावर्त्त, बवासीर और श्वासरोग आरोग्य होता है। (भैषज्यर०)

चित्रकाथी—बम्बई प्रदेशकी एक जाति। इन्दापुर, पुरन्धर और पूना, इन तीन स्थानोंके सिवा पूना जिलेके अन्यान्य स्थानोंमें इस जातिका अस्तित्व पाया जाता है। 'चित्र' और 'कथा' इन दो शब्दोंसे इस जातिके नामकी उत्पत्ति हुई है, क्योंकि ये लोगोंको देवदेवीको और वीरपुरुषोंके चित्र दिखा कर तथा उनकी पौराणिक कथा सुना कर भीख माँगा करते हैं। ये कहते हैं कि, शोलापुर जिलेके अन्तर्गत सिंघानापुरमें इनका पहिले वास था, साहू राजाके राज्य (१७०८-१७४६ ई०)में ये लोग पूना जिलेमें आकर बसे हैं। इनमें श्रेणी-विभाग नहीं है। यादव, मोरे आदि इनकी उपाधि है। समान उपाधि धारियोंमें खाने पीनेकी रीति है, किन्तु विवाह नहीं होता। इस जातिके पुरुषोंके नामके पीछे "पेटेल" और स्त्रियोंके नामके पीछे "बाई" लगाया जाता है।

इन लोगोंकी मातृभाषा मराठी है। इनकी आकृति प्रकृति मराठी कुणवी जाति जैसी है। ये चोटी और मूछ रखते हैं। बकरेका मांस खाने और शराब पीनेमें ये लोग राजी रहते हैं। प्रायः चित्रकाथी जाति अपरिष्कार किन्तु मितव्ययी और अतिथिसेवक होती है। ये लोग कभी कभी कठपुतली नचा कर तथा उनमें युद्धादिका खेल दिखा कर जीविका निर्वाह करते हैं। बारह वर्षकी उम्रमें ये चित्रप्रदर्शनका रुजगार शुरू करते हैं। हिन्दू-धर्ममें ये बड़े अनुरक्त हैं। तुलजापुरकी भवानीदेवी और जेजूरीका खण्डोवा इनका कुलदेवता है। ये वैष्णवधर्ममें दीक्षित होने पर भी भवानी ही इनकी आराध्य देवी रहती है। महाराष्ट्रदेशके क्रिमान जिन पर्वोंका पालन करते हैं, ये भी उन पर्वोंको मानते हैं। आलाण्डी, जेजूरी आदि इनके तीर्थस्थान हैं। सन्तान उत्पन्न होते ही थोड़ी देर बाद उसे स्नान करा देते हैं।

विवाह आदिमें वरके पिताको कन्याके पिताके पास जा कर प्रस्ताव उत्थापन करना पड़ता है। इनमें ३ वर्षसे लगा कर २५-३० वर्ष तक पुरुषोंका और ३ वर्षसे लगा कर २३ वर्ष तक स्त्रियोंका विवाह होता है। किसी भी श्रेणीका ब्राह्मण क्यों न हो, वह इनका पौरोहित्य कर सकता है। ये मुर्देको गाड़ते और तेरह दिन उसका पातक मानते हैं। तेरहवें दिन मरे हुए व्यक्तिको लक्ष्य कर जातिके लोगोंको जिमाते हैं। इस समय कभी कभी बकरेकी भी बलि करते हैं, और उसका मांस खा जाते हैं। प्रत्येक भाद्रमासमें ये लोग मृत व्यक्तिके उद्देशसे उत्सव करते हैं। इनकी पंचायतें सामाजिक झगड़ोंका निबटारा कर देती हैं। सामाजिक अपराधसे अपराधी यदि पाँच पञ्चोंको जिमा दे, तो वह पुनः समाजमें ले लिया जाता है।

चित्रकला—चित्रविद्या देखो।

चित्रकादिलौह—वैद्यकोक्त एक औषधका नाम। इसकी प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकार है—चितामूल, सोंठ, वासक-मूल, गुलञ्च, शालपर्णी, तालजटाभस्म, अपाङ्गमूलभस्म, प्रत्येकका ६ तोला, लौह, अभ्र, पीपल, ताम्र, यवक्षार, पञ्चलवण प्रत्येकका २ तोला; इनको १६ सेर गोमूत्रमें उबालें। ठण्डा होने पर उसमें २ पल मधु मिला दें। इस चित्रकादिलौहके सेवन करनेसे प्लीहा, गुल्म, उदरामय, यकृत्, ग्रहणी, शोथ, अग्निमान्द्य, ज्वर, कामला, पाण्डु-

रोग, गुदभ्रंश और प्रवाहिका दूर हो जाती है। (भैषज्या०)

चित्रकाय (सं० त्रि०) चित्रः कायः शरीरं यस्य, बहुव्री०। चित्रक व्याघ्र, चीता।

चित्रकार (सं० त्रि०) चित्रं करोति चित्र-कृ-अण्। १ चित्रकर, चित्र बनानेवाला। (पु०) २ सङ्करजातिभेद, एक तरहकी संकरजाति जिसकी उत्पत्ति स्थपतिके औरस और गान्धिकीके गर्भसे हुई है। (पराशरपद्धति)

चित्रकारिन् (सं० त्रि०) चित्रं करोति चित्र-कृ-णिनि। १ चित्रकर, चित्र बनानेवाला। (पु०) २ चित्रविद्या, चित्र बनानेकी कला। ३ चित्रकारका काम।

चित्रकाव्य (सं० पु०) काव्यभेद, एक प्रकारका काव्य, जिसके अक्षरोंको विशेष क्रमसे लिखनेसे एक तरहका चित्र बन जाता है। इस तरहका काव्य अधम समझा जाता है।

चित्रकुण्डल (सं० पु०) चित्रे कुण्डलेऽस्य, बहुव्री०। धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत आदि ११७।४)

चित्रकूट (सं० पु०) चित्राणि कूटानि अस्य, बहुव्री०। १ पर्वतविशेष, एक पहाड़। (भारत, वन २८६ अ०)

रामायणके मतमें वह पर्वत प्रयाग तीर्थके निकटवर्ती भरद्वाजाश्रमसे ३॥ योजन दक्षिणको अवस्थित है, इसके उत्तर पार्श्वको पुण्यतोया मन्दाकिनी नदी खरस्रोतमें बहती है। (रामायण, अयोध्या० ९२ अ०) इस स्थान पर भगवती सीतारूपसे विराजमान हैं। (देवीभागवत)

आदिरामायणके चित्रकूटमाहात्म्य और भविष्यपुराणीय ब्रह्मखण्डमें लिखा है कि राम जानकीके अवस्थान करनेसे ही वह पुण्यभूमि जैसा माना जाता है। आजकल इसको कामता भी कहते हैं। यह बांदा जिलेमें अवस्थित है। इसके पाददेशमें पयोष्णी नदी प्रवाहित हुई है। पुण्यचित्रके चारों ओर प्रदक्षिणा लगी है। यात्री लोग उसीमें घूमा करते हैं। पयोष्णी नदीके तीर अथवा शैलदेशमें ३३।३४ सुदृश्य और सुरम्य मन्दिर हैं। इन सब मन्दिरोंकी देवसेवाके लिये अंगरेजोंके अधीन उनतालीस गांवोंकी आमदनी लगी है। देशीय राज्यभुक्त भी कई ग्रामोंका आय उसके लिए निर्दिष्ट है। रामनवमी और दीपमालिकाके उपलक्षमें यहां हजारों यात्री आते हैं। पहले इसी समयकी बहुतसे देशी राजा और विशेषतः परिवारके लोगोंका भी आगमन होता था। पण्डाओंके तत्त्वावधानमें ३० घाट हैं। स्नान करते समय पण्डाओंको कुछ न कुछ देना पड़ता है।

चित्रकूटमें रामायणोक्त मन्दाकिनी और मालिनी नाम्नी दो क्षुद्र नदियां भी प्रवाहित हैं।

२ चित्तौरका प्राचीन संस्कृत नाम। यह शिलालिपिमें वर्णित हुआ है। ३ हिमालयका कोई पवित्र शृङ्ग। (हिमवत्-खण्ड ८।१०६)

४ सीता नदीके पूर्व तट पर खड़ा हुआ एक पहाड़, वक्षार गिरि। (जैन हरिवंश ५।१८१)

चित्रकृत् (सं० त्रि०) चित्रं करोति चित्र-कृ-क्विप्। १ चित्रकार, तसवीर खींचनेवाला। २ आश्चर्यकर, विचित्र कार्य्य करनेवाला। (पु०) ३ सङ्करजातिभेद, एक तरहकी वर्णसंकर जाति। ४ तिनिशका पेड़।

चित्रकेतु (सं० पु०) १ गरुड़का पुत्रभेद, गरुड़के एक पुत्रका नाम। (भारत ५।१०१ अ०) २ लक्ष्मणके एक पुत्र। (भाग० ९।११।१२) ३ उर्जाके गर्भजात वशिष्ठके एक पुत्रका नाम। (भाग० ४।१।४०) ४ कंसाके गर्भसे उत्पन्न यदुवंशीय देवभागका एक पुत्र। (भाग० ९।२४।४३) ५ शूरसेन देशका एक राजा। उन्हें पुत्र शोकसे सन्तप्त देख देवर्षि नारदने तत्त्व-ज्ञानके लिये वासुदेव-मन्त्रोपदेश दिया था। (भाग० ६।१४।६) (त्रि०) ६ चित्रपताकायुक्त, वह झंडा, जिसमें कोई चित्र खींचा हुआ हो।

चित्रकोण (सं० पु०) चित्रः कोणोऽस्य, बहुव्री०। अञ्जनिका, अञ्जनी, कुटकी। २ काली कपास।

चित्रकोल (सं० पु०) आञ्जनी, कुटकी।

चित्रक्रिया (सं० स्त्री०) कर्मधा०। चित्रकार्य्य, तसवीर खींचनेका काम।

चित्रक्षत्र (सं० त्रि०) विचित्र बलविशिष्ट, जिसे अधिक बल हो, बलवान्, शक्तिमान।

चित्रग (सं० त्रि०) चित्र-गम्-ड। चित्रार्पित, चित्रलिखित, रंगाया हुआ, तसवीर खींचा हुआ।

चित्रगत (सं० त्रि०) चित्र-गम् कर्त्तरि क्त। चित्रार्पित, चित्र खींचा हुआ, चित्र दिया हुआ।

"शुशुभाते रथोऽतीव पटे चित्रगतौ इव।" (भारत भीष्म ४५ अ०)

चित्रगन्ध (सं० क्ली०) चित्रः गन्धोऽस्य बहुव्री०। १ हरि-

-ताल, हरताल। (त्रि०) २ आश्चर्य गन्धयुक्त, जिसमें विचित्र गन्ध हो।

चित्रगन्धा (सं० स्त्री०) शुकनासा, कौंचा, किवाँच।

चित्रगुप्त (सं० पु०) चित्राणां पापपुण्यादिविचित्राणां गुप्तं रत्तणं यस्मात्, बहुव्री०। १ यमभेद, चौदह यम राजाओंमेंसे एक। ("चित्रगुप्ताय वै नमः।" यमतर्पण) लोकपितामह ब्रह्माके समस्त जगतकी सृष्टि कर ध्यानमें मग्न होने पर, उनकी कायसे विचित्र वर्णका एक पुरुष मस्याधारलेखनी हातमें लिए हुए निकला। पितामहका जब ध्यान टूटा, तब उनने उसकी ओर देखा, तो वह कहने लगा—"हे तात! मेरा नाम क्या है? मुझे किसी योग्य काममें नियुक्त कीजिये।" ब्रह्माने उसको मीठी बातों पर खुश हो कर कहा—"मेरी कायसे उत्पन्न हुआ है, इसलिए तुम कायस्थ नामसे प्रसिद्ध हुए और नाम तुम्हारा चित्रगुप्त हुआ। लोगोंके पापपुण्यका लेखा करनेके लिए तुम यमराजके पुरमें जा कर रहो।" इतना कह कर ब्रह्मा अन्तर्हित हो गये। भट्ट, नागर, सेनक, गौड़, श्रीवास्तव्य, माथुर, अहिष्ठाण, शकसेन और अम्बष्ठ ये सब चित्रगुप्तके ही पुत्र थे। चित्रगुप्तने इन्हें अपना अपना काम सौंप कर पृथिवीमें भेजा था। (भविष्यपुराण)

कायस्थ देखो।

उन्होंने मनुष्यके भाग्यमें भावी शुभाशुभ फल लिखा है। (पद्मपुराण पातालखण्ड १०१ अ०)

ये यमराजद्वारा नियुक्त हो कर पापियोंको यातना दिया करते हैं। ("तत्रापि च तद्व्यापाराद्विरोधः।" शा० सू०)

गरुड़पुराणके प्रेतकल्पमें लिखा है—यमलोकके पास चित्रगुप्तपुर नामक एक स्वतन्त्र लोक है, वहां चित्रगुप्तकी अधीनतामें कायस्थगण पापियोंके पुण्य-पापका विचार करते हैं।

कार्त्तिक मासक शुक्लद्वितीयोके दिन कायस्थगण भक्तिपूर्वक चित्रगुप्तकी पूजा करते हैं। गन्धपुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, पट्टवस्त्र, शक्कर, पूर्णपात्र इत्यादि उपकरणों द्वारा गाजे-बाजेके साथ महासमारोहसे उनकी पूजा सम्पन्न कर ब्राह्मण और कायस्थोंको भोजन कराते हैं।

चित्रगुप्तका नमस्कार-मन्त्र—

"मसिभाजनसंयुक्तः सदा चरसि भूतले।
लेखनीच्छेदनीहस्त चित्रगुप्त नमोऽस्तु ते॥
चित्रगुप्त नमस्तुभ्यं नमस्ते धर्मरूपिणे।
लेखा त्वं पातकी नित्यं मम: शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

दुराचारी सौदास नामके राजाने कार्त्तिक शुक्ला द्वितीयाको चित्रगुप्तकी पूजा कर अनन्त पापोंसे छुटकारा पाया था, तथा अन्तमें वे स्वर्ग गये थे। उस दिन महाबाहु भीष्मने चित्रगुप्तकी उपासना की थी, इसलिए चित्रगुप्तने उनसे कहा था—"हे महाबाहो! मैं तुम पर सन्तुष्ट हुआ हूं, तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी। जब तुम चाहोगे, तब तुम्हारी मृत्यु होगी।" चित्रगुप्तके प्रसादसे ही भीष्मकी इच्छामृत्यु हुई थी।

कार्त्तिकमासकी शुक्लपक्षीय द्वितीयाको यमद्वितीया कहते हैं। उक्त तिथिमें यम, यमदूत और चित्रगुप्तकी पूजा करनी पड़ती है। उस दिन बहनके हातका बना हुआ भोजन और गण्डूष पान करनेसे बुद्धि, यशः, आयुवृद्धि और सर्वकामनाओंकी सिद्धि होती है। भोजन कर चुकने बाद भाईको बहनके लिए देय द्रव्य देनी चाहिये।

प्रार्थना मन्त्र—

"उत्पत्तौ प्रलये चैव स्थितौ दाने शुभाशुभे।
लेखकस्त्वं सदा श्रीमान् चित्रगुप्त नमोस्तु ते॥
श्रिया सह समुत्पन्न समुद्रमथनोद्भव।
चित्रगुप्त! महाबाहो ममाद्य वरदो भव॥"

(भविष्योत्तरपुराणस्थ चित्रगुप्तकथा)

"श्रिया सह समुत्पन्न समुद्र मथनोद्भव" इससे मालूम होता है कि, चित्रगुप्त लक्ष्मीके सहोदर और समुद्रमन्थनके समय समुद्रसे उत्थित हुए थे।

गोमन्त (वर्त्तमान-गोया)के माड्गोशको शङ्खानदीके पास प्राचीन चित्रगुप्तमन्दिरका भग्नावशेष पड़ा हुआ है।

"मुख्यं चैव मर्त्यानां चित्रगुप्तस्य मन्दिरे।"

(सह्याद्रि माङ्गोशमा० ८।११)

२ एक धर्मशास्त्रकार। जलोत्सर्ग और मठप्रतिष्ठादि तत्त्वमें रघुनन्दनने चित्रगुप्तस्मृतिकी उद्धृत किया है।

चित्रगुप्ता (सं० स्त्री०) जैनमतानुसार रुचिकगिरिवासिनी एक देवी।

चित्रगृह (सं० पु०-क्ली०) चित्रशाला, वह घर जहां चित्र खींचा जाता हो। चित्र विद्या देखो।

चित्रग्रीव (सं० त्रि०) चित्रा ग्रीवा यस्य, बहुव्री०। १

विचित्र ग्रीवाविशिष्ट जिसका गला अनूठा हो। (पु०) २ सारसपक्षी, एक तरहकी चिड़िया।

चित्रघण्टा (सं० स्त्री०) चित्रा घण्टा यस्याः बहुव्री०। काशीस्थ देवीभेद, एक देवी जो नौ दुर्गाओंमें मानी जाती हैं। "चित्रे! चित्रे! चित्रभुजे! नमोऽस्तु ते शोचित् घण्टे! विकटे सुदर्शके।" (काशीखण्ड ५ अ०)

चित्रघण्टेशी (सं० स्त्री०) काशीस्थ देवीविशेष। "इयञ्च चित्रघण्टेशी घण्टाकर्णं स्वयं ह्रदः।" (काशीख० ३३ अ०)

चित्रचाप (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।६७ अ०)

चित्रजल्प (सं० पु०) चित्रो मनोहरो जल्पः, कर्मधा०। वाक्यभेद, प्रियव्यक्ति अपने प्रियव्यक्तिको रोषके साथ भावमय उत्कण्ठायुक्त जो वाक्य कहता है उसको चित्रजल्प कहते हैं। इसके दश अङ्ग हैं. जैसे—प्रजल्प, परिजल्पित, विजल्प, उज्जल्प, संजल्प, अवजल्प, अभिजल्पित, आजल्प, प्रतिजल्प और सुजल्प। प्रजल्प अवस्थामें प्रेयसी असूया, ईर्षा और गर्वयुक्त हो कर अवज्ञाके साथ कौशल करती है। परिजल्पित अवस्थामें पत्नी स्वामीकी निष्ठुरता, शठता और चपलता इत्यादि दिखा कर हाव-भावसे अपनी सरलता दिखाती है। विजल्प अवस्थामें अभिमान के दाब कर असूयाको जाहिर करती हुई प्रियतमके प्रति कटाक्षोंसे बात करती है। उज्जल्प दशामें गर्वको दाब कर ईर्षा, मायाचारी और असूयाके साथ आक्षेप करती है। संजल्प अर्थात् उपहास और आक्षेप करके प्रियतमा को अकृतज्ञ इत्यादि कहना। अवजल्प अर्थात् ईर्षापूर्वक डरके साथ प्रियको निष्ठुर, धूर्त्त, कामी आदि कहना। अभिजल्पित अर्थात् हाव-भाव और अनुपातके साथ प्यारेको छोड़ना ही उचित है - ऐसा अभिप्राय जतलाना। आजल्प अर्थात् मनके दुःखसे प्रियको कुटिल और दुःखदायक कहना, तथा ऐसा भी प्रगट करना कि वे दूसरेको सुख देते हैं। प्रतिजल्प अर्थात् प्रियतमके भेजे हुए दूतको सम्मान पूर्वक (इकलासे) ऐसा कहना कि—"वे तो दूसरीसे फँसे हुए हैं, वे दोनों हमेशा एक जगह रहते हैं। ऐसी दशामें मेरा जाना उचित नहीं।" सुजल्प अर्थात् सरलता, गम्भीरता, चपलता और उत्कण्ठाके साथ कोई बात प्रियतमसे पूछना। (उज्ज्वलनीलमणि)

चित्रजात (पु०) चित्र योग देखो।

चित्रतण्डुल (सं० क्ली०) चित्र स्तण्डुलो यस्य, बहुव्री०। विड़ङ्ग, वायविड़ंग।

चित्रतण्डुला (सं० स्त्री०) विड़ंग, वायविड़ंग।

चित्रताल (सं० पु०) सङ्गीतमें एक प्रकारका तालका नाम।

चित्रतैल (सं० क्ली०) एरण्डतैल, रेंडी या अण्डीका तेल।

चित्रतनु (सं० पु०) लावपक्षी।

चित्रत्वक् (सं० पु०) चित्रा त्वक् यस्य, बहुव्री०। भूर्जपत्र, भोजपत्र।

चित्रदण्डक (सं० पु०) चित्रो दण्डो यस्य, बहुव्री०, कप्। शूरण, सूरन, जमीकन्द, ओल।

चित्रदीप (सं० पु०) पञ्चदशीप्रकरणके अन्तर्गत दीपभेद। जिस तरह पटके ऊपर चित्र अङ्कित रहता है, उसी तरह स्वचैतन्यमें जगच्चित्र भी अङ्कित है। उसे मायामय और मिथ्याज्ञानसे उपेक्षा कर चैतना हो एक और विविध रूप समझना चाहिए। इस चित्रदीपके विषयमें जो हमेशा अनुसन्धान करता है, उसके जगच्चित्र अवलोकन करने पर भी फिर पहलेकी नाईं मुग्ध नहीं होता है। (पञ्चदशी)

चित्रदृशीक (सं० त्रि०) विचित्रदर्शन, सुन्दर या चमकीला दीख पड़ना।

चित्रदेव (सं० पु०) कार्तिकके एक अनुचरका नाम। (भारत शल्य ४६ अ०)

चित्रदेवी (सं० स्त्री०) १ महेन्द्रवारुणी, महेन्द्रवारुणी नामकी लता। २ शक्तिविशेष, शक्ति या देवीका एक भेद। कलकत्तेके उत्तर प्रान्तमें चितपुरके उत्तर चित्रदेवी नामकी एक शक्तिमूर्त्ति है। मालूम पड़ता है कि उन्हींके नामानुसार चित्रपुर तथा उससे वर्तमान चितपुर नामकरण हुआ है। चित्रेश्वरी देखो।

चित्रधर्मन् (सं० पु०) दैत्यनृपतिभेद, एक दैत्य राजाका नाम जिसका उल्लेख महाभारतमें है। (भारत १।६७ अ०)

चित्रधरशर्मा—एक विख्यात नैयायिक। इन्होंने ईश्वरवाद और संस्कारसिद्धिदीपिका नामके नव्य न्याय ग्रन्थ संस्कृत भाषामें प्रणयन किये हैं।

चित्रधा (अव्यय) चित्र विधार्थे धा। अनेकधा, अनेकविध, बहुत तरहके, भिन्न भिन्न प्रकारके हैं।

"तत्र धामास चित्रधा" (भागवत ३।१३।१०)

चित्रधाम (सं० क्लो०) कर्मधा०। चित्रनिर्मित पूजाका मण्डल, सर्वतोभद्रमण्डल, चारखानेको तरह यज्ञादिमें पृथिवी पर बनाया हुआ एक चौखूंटा चक्र जिसके खानोंमें तरह तरहके रङ्गोंसे भरे रहते थे।

चित्रप्रजति (सं० त्रि०) विचित्र गतिविशिष्ट, जिसकी चाल अनूठी हो।

"चित्रप्रजतिर्दिं रतिर्यो" (ऋक् ६।३।५) 'चित्रप्रजतिर्विचित्रगतिः' (सायण)

चित्रध्वज—कोई पाण्डुराज। पाण्डु देखो।

चित्रनेत्रा (सं० स्त्री०) चित्रं नेत्रं यस्याः, बहुव्रो०। १ सारिका, सारस। २ मदनपक्षी, मैना।

चित्रन्यस्त (सं० त्रि०) चित्रे न्यस्तः, ७-तत्। चित्रार्पित, चित्रित, चित्रमें खींचा हुआ। चित्र द्वारा दिखाया हुआ।

चित्रपक्ष (सं० पु०) चित्रौ पक्षौ यस्य, बहुव्रो०। तित्तिरी पक्षी, तीतर। इसका मांस वात, कफ और ग्रहणीनाशक है। (राजव०)

चित्रपट (सं० पु०) १ चित्रित वस्त्र, वह कपड़ा जिस पर चित्र बना हो, छींट। २ चित्राधार, वह जिस पर चित्र बनाया जाय या बना हो।

चित्रपट्ट (सं० पु०) चित्रित पट।

"चित्रपट्टं मायादर्शं त्वांचक्षीवा जीवति" (हरिवंश १०७ अ०)

चित्रपति—सिद्धान्तपीयूष नामक स्मृतिके संग्रहकार।

चित्रपत्र (सं० त्रि०) चित्रे पत्र पक्षौ यस्य, बहुव्रो०। १ विचित्र पक्षयुक्त, रंगबिरंगे परवाला।

"चित्रपत्रशकुनिनीडद्योतितेत्यादि।" (कादम्बरी)

(पु०) २ भूर्जपत्र। ३ आँखोंको पुतलीके पीछेका वह भाग जिस पर किरण पड़नेसे वस्तुओंके रूप दीखते हैं।

चित्रपत्रक (सं० पु०) मयूर, मोर।

चित्रपत्रिका (सं० स्त्री०) चित्राणि पत्राणि पर्णानि यस्याः बहुव्रो. कप्। अतइत्वं। १ कपित्थपर्णीवृक्ष। २ द्रोणपुष्पी, गूमा। ३ पृश्निपर्णी।

चित्रपत्री (सं० स्त्री०) १ जलपिप्पली, जलपिपरी। २ पृश्निपर्णी।

चित्रपथा (सं० स्त्री०) प्रभासतीर्थमें ब्रह्मकुण्डके निकटको एक छोटी नदी। जब यमदूत यमराजके आदेशानुसार चित्रको सशरीर बांध कर ले आ रहे थे, तब चित्रा नामकी उसको बहन अत्यन्त दुःखितचित्तसे अपने भाईको ढूंढनेके लिये ही नदी हो कर समुद्रमें प्रवेश की थी, इसीलिये इस नदीका नाम चित्रपथा हुआ है। कलियुगमें यह नदी छिप गई है, केवल बरसातमें कभी कभी दीख पड़ती है। इस नदीमें स्नान कर चित्रादित्यका दर्शन करनेसे दूसरे जन्ममें उसे सूर्यलोक प्राप्त होता है।

चित्रपद (सं० त्रि०) चित्राणि पदानि सुश्लिष्टन्तरूपाणि यत्, बहुव्री०। सुन्दर पदविशिष्ट, जिसके अच्छे पैर हों।

"न तद्वचश्चित्रपदं हरेर्यशो।" (भागवत १।५।१०)

चित्रपदा (सं० स्त्री०) १ गोधालता, लज्जाधुर, लज्जालू नामकी लता। २ छन्दोभेद, एक प्रकारका छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें आठ अक्षर होते हैं। प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और अष्टम गुरु और शेष लघु होते हैं।

चित्रपर्णिका (सं० स्त्री०) चित्राणि पर्णानि अस्याः, बहुव्रो० टाप्, अतइत्वं। चित्रपर्णीभेद, पीठवन। इसका पर्याय—दीर्घा, शृगालविन्ना त्रिपर्णी, सिंहपुच्छिका, दीर्घपत्रा, अतिगुहा और पृष्ठिला है।

चित्रपर्णी (सं० स्त्री०) बहुव्रो०, गौरादित्वात् ङीष्। १ पृश्नीपर्णी, पीठवन। २ कर्णस्फोटलता, कनफोड़ा। ३ जलपिप्पली, जलपीपर। ४ द्रोणपुष्पी, गूमा। ५ मञ्जिष्ठा, मँजीठ।

चित्रपाठी (सं० पु०) चित्रक, चिताका पेड़।

चित्रपादा (सं० स्त्री०) चित्रौ पादौ यस्याः, बहुव्रो०। शारिका, मैना।

चित्रपिच्छक (सं० पु०) चित्रं पिच्छं यस्य, बहुव्रो०, कप्। मयूर, मोर।

चित्रपुङ्ख (सं० पु०) चित्र पुङ्खो यस्य, बहुव्री०। शर, बाण, तीर।

चित्रपुट (सं० पु०) एक प्रकारका छः ताला ताल।

चित्रपुष्प (सं० पु०) राभसर नामको शरजातिको घास।

चित्रपुष्पी (सं० स्त्री०) 'चित्राणि पुष्पाणि यस्या, बहुव्रो० स्त्रियां ङीष्। १ अम्बष्ठा, आमड़ा। (पु०) आम्रातकवृक्ष।

चित्रपृष्ठ (सं० पु०) चित्रं पृष्ठं यस्य, बहुव्री० । १ कलविङ्कपक्षी, चटक, गौरापक्षी, गौरैया । २ क्षुद्र कमल, एक तरहका छोटा कमल ।

चित्रप्रतिकृति (सं० स्त्री०) चित्रा चित्रिता प्रतिकृतिः प्रतिमूर्तिः, कर्मधा० । चित्रमें अङ्कित प्रतिमूर्ति, वह जिसका रंग रूप चित्रमें दिखाया गया हो ।

"चित्रप्रतिकृतिश्चैव काञ्चनस्य प्रतिमां तथा ।" (हरिवंश १३८ अ०)

चित्रप्रिया (सं० स्त्री०) हरिताल, हरताल ।

चित्रफल (सं० पु०) चित्रं फलं फलकं तद्वदाकृतिर्विद्यतेऽस्य चित्रफल-अच् । १ मत्स्यविशेष, चितला मछली । यह गुरुपाक, स्वादु और बलवीर्यकारक है । २ तरम्बुजवृक्ष, तरबूज ।

चित्रफलक (सं० पु०) चित्रफल स्वार्थे कन् । १ चितला मछली । २ चित्रपट, तसवीर ।

चित्रफला (सं० स्त्री०) चित्राणि फलानि यस्याः, बहुव्री०, टाप् । १ चिर्भटी, ककड़ी । २ मृगेर्वारु, बड़ी इन्द्रफला । ३ लिङ्गिनीलता, पंचगुड़िया । ४ महेन्द्रवारुणी, लाल इन्द्रायण । ५ वार्त्ताकु, बैंगन । ६ कण्टकारी, भटकटैया । ७ फलकी मत्स्य, फलुई मछली । इसका पर्याय—राजग्रीव, महोन्मद है । ८ पटोल, परवल ।

चित्रबन्ध—चित्रस्य बन्धः चित्रबन्धः, ६-तत् । देवनागरी अक्षरोंसे बना हुआ चित्रविशेष, मुक्तहस्तालेख्यका एक विचित्र आदर्श, तुगरा ।

अरबी लिपिमें एक लिपिविशेषका नाम 'खतेतुग़रा' है । शाही ज़मानेमें इस लिपिका बड़ा आदर था । किसी पशु, पक्षी अथवा पुष्पादिके आकारमें बादशाहोंके नाम लिखे जाते थे, जो देखनेमें चित्र प्रतीत होते थे ; ऐसे चित्रोंको तुर्की भाषामें 'तुग़रा' कहते हैं । तुर्किस्तानमें अब तक तुग़रा लिखनेकी चाल है । कुरानकी आयतों तथा 'बिस्मिल्ला: फल्रहमान-अल्रहीम'का तुग़रा बना कर बहुधा कमरों और दरवाजों पर लगाते हैं । अकबर बादशाहके फ़रमानों पर "जलालुद्दीन मुहम्मद अकबरशाह ग़ाजी"का तुग़रा लिखा रहता था । भारतमें भी शिक्षित और प्रतिष्ठित मुसलमानोंकी गृहशोभा कई प्रकारके तुगरोंसे बढ़ाई जाती है । चित्रलिपि देखो ।

चित्रबर्ह (सं० पु०) चित्रो बर्हो यस्य, बहुव्री० । १ मयूर, मोर । "कार्त्तिकेयाश्चित्रबर्हान् याह्लान् क्रौञ्चकेन च । क्रौञ्चीव पाण्डवान् राजन् ॥" (भारत १।१५० अ०)

२ गरुड़से एक पुत्रका नाम । (भारत ५।१०० अ०)

चित्रबर्हिन् (सं० त्रि०) चित्रो बर्होऽस्त्यस्य चित्रबर्ह अस्त्यर्थे इनि । विचित्र पुच्छविशिष्ट, जिसकी पूँछ रंग बिरंगकी हो ।

"मयूरं चित्रबर्हिणम्" (भारत अ० ८६ अ०)

चित्रबर्हिस् (सं० त्रि०) चित्रं बर्हिः कुशमस्य बहुव्री० । विचित्र कुशमय या कुशयुक्त, जिसमें भिन्न भिन्न तरहके कुश हों ।

"आपृच्चित्रबर्हिषमाहुवे" (ऋक् १।२३।१३)
'चित्रबर्हिषं विचित्रं दर्भैर्युक्तं ।' (सायण)

चित्रबाहु (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (भारत १।६७ अ०)

चित्रभानु (सं० त्रि०) चित्रा भानवा रश्मयो यस्य, बहुव्री० । १ विचित्र दीप्तिविशिष्ट, जिससे अनूठा प्रकाश हो ।

"अथा अग्निं चित्रभानुः" (ऋक् २।१०।२)
'चित्रभानु विचित्रदीप्तिः' (सायण)

(पु०) २ अग्नि, आग ।

"पुच्छैः शिरो भय भग्नं चित्रभानुं प्रपेदिरे" (भारत १५२ अ०)

३ सूर्य । ४ चित्रवृक्ष, चीतेका पेड़ । ५ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़ । ६ भैरव । ७ अश्विनीकुमार ।

"अपूर्व्वानापूर्व्वजौ चित्रभानू" (भारत १।३।२१ अ०)

८ प्रभवादि साठ संवत्सरोंमें जो बारह युग होते हैं, उनमेंसे चौथे युगके प्रथम वर्षका नाम । इस युगके अधिपति अग्नि हैं । इसके अन्तर्गत पाँच वर्षोंके नाम १ चित्रभानु, २ सुभानु, ३ तारण, ४ पार्थिव, ५ व्यय हैं । इनमेंसे चित्रभानु ही अधिक फलप्रद है ।

"अथ चतुर्थस्य युगस्य पूर्वं यश्चित्रभानुं कथयन्ति वर्षम् ।" (बृहत्सं० ८।३५)

९ मणिपुरके राजा जो अर्जुनकी पत्नी चित्राङ्गदाके पिता थे । १० भल्लातकवृक्ष ।

चित्रभूत (सं० त्रि०)अचित्रश्चित्रो भूतः, कर्मधा० । १ आश्चर्यभूत, जिसे देख कर ताज्जुब खाना पड़े । २ चित्राङ्कित, चित्रमें खींचा हुआ, चित्र द्वारा दिखलाया हुआ ।

चित्रभेषजा (सं० स्त्री०) चित्रं भेषजं यस्याः, बहुव्री० । काकोदुम्बरिका, कठगूलर, कठूमर ।

चित्रमण्डल (सं० पु०) चित्रं मण्डलं यस्य, बहुव्री० । मण्डल जातीय सर्पभेद, एक तरहका विषधर साँप।

चित्रमती (सं० स्त्री०) जैनमतानुसार सुभौम चक्रवर्तीकी माता।

चित्रमद (सं० पु०) नाटकमें एक तरहका भाव।

चित्रमहस् (सं० त्रि०) चित्रं महस्तेजो यस्य, बहुव्री० । विचित्र तेजोविशिष्ट, देदीप्यमान, जिसमें प्रकाश अधिक हो।

"वसुं न चित्रमहसं गृणीषे।" (ऋक् १०।१२२।१)

'चित्रमहसं चायनीयतेजस्कं।' (सायण)

चित्रमृग (सं० पु०) चित्रवर्ण हरिण, एक प्रकारका हिरन जिसकी पीठ पर सफेद चित्तियां होती हैं।

"चर्म्मासाक्षाग्मांसेन पार्षतेन च सम्वं।" (मनु ३।२६९)

'पृषतश्चित्रमृग' कुल्लूक भट्ट देखो।

चित्रमेखल (सं० पु०) चित्रा मेखला यस्य, बहुव्री० । मयूर, मोर।

चित्रयाम (सं० त्रि०) १ नानागमनयुक्त जो अनेक तरहके चलनेकी गति जानता हो। (पु०) २ एक राजाका नाम।

चित्रयोग (सं० पु०) चौंसठ कलाओंमें एक।

चित्रयोधिन् (सं० त्रि०) चित्रं युध्यति चित्र-युध्-णिनि। १ आश्चर्य युद्धकारी, विचित्रयुद्ध करनेवाला, भारी योद्धा।

"यदाद्रौषी विविधानश्वमार्गान् निदर्शयन् समरे चित्रयोधी।"

(भारत ११ अ०)

(पु०) २ अर्जुन, पार्थ। ३ अर्जुनवृक्ष।

चित्ररथ (सं० पु०) चित्रो रथो यस्य, बहुव्री० । १ सूर्य। २ सुरलोकवासी एक गन्धर्वका नाम। ये कश्यपके औरस और दक्षकन्या मुनिके गर्भसे पैदा हुए थे। (भारत १।१२३।५१) ये कुबेरके मित्र हैं। इनका नामान्तर गन्धर्वराज, अङ्गारपर्ण, कुबेरसख और दग्धरथ है। (भारत १।१७१।१७९) "गन्धर्वाणां चित्ररथः" (गीता) ३ श्रीकृष्णके पौत्र और गदके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश १६१ अ०) ४ एक विद्याधर। ५ अङ्गदेशके एक राजाका नाम। (भारत १३।५९ अ०) ६ अङ्गवंशीय महाराज धर्मरथके पुत्र। (हरिवंश ३१ अ०) ७ राजा ऋषभके पुत्र। (भारत १३।१४७ अ०) ८ यदुवंशीय एक राजा, विप्रथुके पुत्र। (भाग० ९।२३।१०) विष्णुपुराणमें विप्रथुकी जगह रुषद्रु लिखा हुआ है। (विष्णु० ४।१२।१) ९ यदुवंशीय राजा उष्णिके पुत्र। (भागवत ९।२४।१४) १० सुपार्श्वकके एक पुत्र। (भाग० ९।२३।२३) ११ गायत्रीके गर्भसे उत्पन्न गयके एक पुत्रका नाम। (भाग० ५।१३।१४) १२ राजा उष्णके एक पुत्र। (भाग० ९।२२।४०) १३ मृत्तिकावतीके एक राजाका नाम। (भारतवन) १४ एक सारथीका नाम। (रामा० २।३२।१७) (त्रि०) १५ नानावर्ण रथयुक्त, विचित्र रथवाला।

"होतारं चित्ररथमध्वरस्य" (ऋक् १०।१।५)

'चित्ररथं नानारूपरथं' (सायण)

"इति ब्रुवं श्चित्ररथः स्वसारथिं।" (भागवत ४।१०।२२)

चित्ररथा (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम। (भारत भीष्म)

चित्ररश्मि (सं० त्रि०) चित्रा रश्मयो यस्य, बहुव्री०। १ नानारश्मिविशिष्ट, जिसमें विचित्र किरण हो। (पु०) २ मरुद्भेद, मरुतोंमेंसे एक। (हरिवंश २०४)

चित्ररात (सं० त्रि०) चित्रा रातिर्दानं यस्य, बहुव्री० । जो अनेक तरहके दान देते हों।

"द्रुणो वर्णं गृणते चित्ररातौ।" (ऋक् ६।६२।११)

'चित्ररातो विचित्रदानौ' (सायण)

चित्रराधस (सं० त्रि०) जिसे विचित्र धन हो, जो अत्यन्त धनी हो।

चित्ररेखा (सं० स्त्री०) बाणासुरकी कन्या ऊषाकी एक सखी। चित्रलेखा देखो

चित्ररेफ (सं० पु०) १ शाकद्वीपाधिपति प्रियव्रतके पौत्र और मेधातिथिके एक पुत्र। मेधातिथि अपनी वृद्धावस्थामें तपोवन जानेके समय इन्होंने पुरोजव, मनोजव, वेगमान्, धूम्रानीक, चित्ररेफ, बहुरूप और विश्वाधारने अपने सात पुत्रोंको सात वर्ष बाँट दिये थे। जो जिस वर्षके अधिपति हुए, उस वर्षका नाम उन्हींके नाम पर रखा गया। (भाग० ५।२०।२५)

२ वर्षभेद, एक वर्ष या भूविभागका नाम।

चित्रल (सं० पु०) चित्रं आश्चर्यं लाति ला-क। १ कर्बूरवर्ण, चितकबरा, रंग बिरंगा, चितला। (त्रि०) २ नानाविध वर्णयुक्त, जिसमें अनेक तरहके रंग हों।

चित्रल—चित्राल देखो।

चित्रलता (सं० स्त्री०) मञ्जिष्ठा, मंजीठ।

चित्रला (सं० स्त्री०) चित्रल-टाप्। अजाद्यतष्टाप्। पा ४।१।४। गोरक्षीवृक्ष, गोरख इमली।

चित्रलिखन (सं० क्लो०) १ चित्र बनानेका कार्य्य। २ सुन्दर लिखावट, खुशखती।

'चित्रलिखनादीनि सर्वतः प्रतिषिद्धानि।' (मनु० २।१४)

चित्रलिखित (सं० त्रि०) चित्रं यथास्यात् तथा लिखितं। सुप्सुपा। २।१।४। विचित्ररूपलिखित, सुन्दर लिखावट।

चित्रलिपि — देवनागरीलिपिका अङ्गविशेष, लेखनकलाका कौतूहलपूर्ण कौशल, खतेतुग़रा। चित्रलिपि देवनागरी लिपिका विलक्षण अलङ्कार है, इसको वर्णमालाका एक एक अक्षर अनेकानेक रूपका होता है; ऐसे हो अक्षरोंसे अनेक प्रकारके चित्रोंका रेखासमूह निर्माण किया जाता है। यह लिपि पहले अरबीलिपिमें 'खते-तुग़रा' के नामसे प्रचलित हुई थी, किन्तु उसकी वर्ण-माला नहीं थी। बादशाही दरबारोंमें 'तुग़रानवसी' (चित्र-बन्धलेखक) रहते और अपनी कल्पनाशक्तिसे अनेक प्रकारके तुग़रे बना कर बादशाहोंको प्रसन्न किया करते थे। इस विषयको एक किताब 'अरज़ङ्गचीन' नामक फ़ारसी भाषा तथा अरबी और फ़ारसीलिपिमें मुन्शी देवीप्रसाद इन्सपेक्टर मदारिस ज़िला बदायूँने लिखी थी। इसके सिवाय इस विषयका कोई पुस्तक देखनेमें नहीं आती। लोग समझते थे कि देवनागरी लिपिमें तुग़रा नहीं बन सकता, किन्तु संवत् १८७० में पं० गौरीशंकरभट्टने कुछ चित्रबन्ध बनाये थे।

चित्रलेखक (सं० पु०) चित्रस्य लेखकः, ६-तत्। १ चित्रकार वह जो चित्र बनाता हो। २ वह जो अच्छा लिखता हो।

चित्रलेखनिका (सं० स्त्री०) चित्रलेखनी स्वार्थे टाप्। ईकारस्य ह्रस्वः। केऽणः। पा ७।४।१३। चित्रकारकी रंग भरनेकी कूँची तूलिका।

चित्रलेखनी (सं० स्त्री०) चित्रं लिख्यते अनया करणे ल्युट् स्त्रियां ङीप्। तसवीर बनानेको कलम, कूँची।

चित्रलेखा (सं० स्त्री०) चित्रो लेखा लेखसमशक्तिर्यस्याः, बहुव्री०। १ अप्सराविशेष, कोई एक देवाङ्गना। २ बाणासुरकी कन्या उषाको एक सखी कुष्माण्डकी कन्या थी। ये चित्र बनानेमें बड़ी निपुण थीं।

"बाणस्य सखी कुष्माण्डचित्रलेखा तु तत्सुता" (भाग० १०।६२।१२)

चित्रविद्या देखो।

३ छन्दोभेद, एक तरहका छन्द। इसका लक्षण — प्रत्येक पादमें १८ अक्षर होते हैं। ४था, ५वाँ, ६ठा, ७वाँ, ८वाँ, ९वाँ, १२वाँ और १५वाँ अक्षर लघु, तथा बाकीके गुरु सम झने चाहिये। १०वाँ और अन्तिम अक्षर यति होता है।

"कृदाम्यं सं नन ततमकं कोर्त्तिता चित्रलेखेयम्।" (वृत्तर० टीका)

दूसरी प्रकार — "मन्दाक्रान्ता नरर लघुयुता कीर्त्तिता चित्रलेखा" (छन्दोमञ्जरी) चित्रलेखाको छन्द मन्दाक्रान्ताके समान हो है, सिर्फ १ लघुवर्ण ज्यादा जोड़ना पड़ता है। इसका ४था, ११वां और १८वां अक्षर यति है। ४ सप्तदशाक्षर-पादयुक्त छन्दोभेद १७ अक्षरोंका एक पाद हो ऐसो छन्द। लक्षण — ३रा, ६ठा, ८वां, १०वां, १४वां, १६वां और १७वाँ अक्षर गुरु, बाकीके अक्षर लघु होते हैं। १०वां और ७वां अक्षर यति होगा। जैसे — "मसगा भजना गा दिक्स्वरै यति चित्रलेखा।" (वृत्तर० टीका) ५ व्रजाङ्गना, गोपिनी। ६ चित्रवर्णरेखा ७ चित्रलेखनी, चित्र बनानेकी कलम, कूँची।

चित्रलोचना (सं० स्त्री०) चित्रं लोचनं यस्याः, बहुव्री०। १ शारिका, सारस। २ मदनपक्षी, मैना।

चित्रवत् (सं० त्रि०) चित्रं विद्यते अस्य चित्र-मतुप् मस्य वादेशः। मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः। पा ८।२।९। चित्रयुक्त, आलेख्यशोभित, जिसमें चित्र खींचा हुआ हो, जो तसवीरसे खबसूरत बनाया गया हो।

"कान्तिदुग्धाः सदसः चित्रवत्सु।" (रघु १४।२५)

चित्रवदाल (सं० पु०) चित्रवत् आ समन्तात् अलति पर्य्याप्नोति चित्रवत् आ-अल-अच्, अथवा चित्रोवदालः, कर्मधा०। पाठीनमत्स्य, पहिना मछली।

चित्रवन (सं० क्लो०) गण्डकीके किनारेका पुराणप्रसिद्ध एक वन।

चित्रवर्मन् (सं० पु०) १ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

"चित्राङ्गश्चित्रवर्मा।" (भारत १।११७।६)

२ कुलूत देशके एक राजा।

"कौलूतश्चित्रवर्मा मलयनरपतिः सिंहनादोऽसिहः।" (मुद्रा० अङ्क० १०)

चित्रवर्षिन् (सं० त्रि०) चित्रं यथास्यात् तथा वर्षति चित्र-वृष णिनि। अद्भुत वर्षणकारी, विचित्र वृष्टि करनेवाला।

"चित्रवर्षी च पर्जन्यो युगे चौथे भविष्यति।" (हरिवंश १९१ अ०)

चित्रवल्लिक (सं० पु०) चित्रवल्लिरिव कायति चित्रवल्लि-

कैं·क। १ चित्रवदाल, पहिना नामकी मछली। २ तरम्बुज फल, तरबूज।

चित्रवल्ली (सं० स्त्री०) चित्रा वल्ली, कर्मधा०। १ विचित्र लता। २ मृगेर्वारु, बड़ी इन्द्रवारुणी। ३ महेन्द्र-वारुणी, लाल इन्द्रायण।

चित्रवहा (सं० स्त्री०) चित्रं वहति चित्र-वह अच टाप्। नदीभेद। महाभारतके अनुसार एक नदीका नाम।

(भारत ६।९ अ०)

चित्रवाज (सं० त्रि०) चित्रो वाजः पक्षोयस्य, बहुव्री०। १ विचित्र पक्षयुक्त, जिसके रंग बिरंगके पर हों। २ विचित्र शक्तिमान्, जिसे अधिक शक्ति या धन हो, जा ज्यादे ताकत या दौलत रखता हो।

चित्रवाण (सं० पु०) १ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।११७।५) (त्रि०) २ विचित्र वाणयुक्त, जिसके आश्चर्यजनक तीर हो।

चित्रवाहन (सं० पु०) मणिपुरके एक नाग राजा।

(भारत १।२१५ अ०)

चित्रविचित्र (सं० त्रि०) १ रंग बिरंगा, कई रंगोंका। २ जिसमें बेल बूटा जड़ा हो, नकाशीदार।

चित्रविद्या (सं० स्त्री०) कलाविशेष, मुसव्वरी। किसी समतल वस्तु पर वृक्षलता, मनुष्य, पशु, पक्षी किंवा प्राकृतिक दृश्य प्रदर्शन करके मानवहृदयमें कोई भाव उत्पादन करना ही चित्रविद्याका मुख्य उद्देश्य है। बहु कालसे भारतवर्षमें गृहप्राचीर, देवमन्दिर, यानवाहनादि नाना वर्णोंमें रञ्जित और देवदेवी वृक्षलतादिकी प्रतिमूर्ति चित्रित करनेकी प्रथा प्रचलित और अनुशोलित होती आयी है। यह निर्णय करना दुष्कर है—कब चित्रविद्या पहले आविष्कृत हुई। बहु शताब्दी पूर्वकी जब समग्र युरोप आममांसभोजी गुहावासी वर्वरजातिका वासस्थान था, भारतवर्षमें चित्रविद्याका पूर्ण विकाश रहा। रामायण, महाभारतादिमें इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं। उस समय तसवीरोंमें मनुष्यादिके अनुरूप प्रतिकृति, हाव-भाव, चेष्टा प्रभृति अद्भुत नैपुण्यसे चित्रित होते थे। यहां तक कि भय विस्मयादिसे स्तम्भितको चित्रार्पित कहा जाता था। (महाभारत, वन० १९६४)

रामायणके समयमें भी राजाओंका चित्रगृह रहा। चित्रशालामें जा करके वह आमोद प्रमोद करते थे।

(रामायण५।१५।८)

पहले भारतवर्षमें राजा और उनके पुत्र सभी चित्रविद्या सीखते थे। चित्रविद्या न जाननेसे उनकी शिक्षा अधुरी रहती थी। यहां तक कि तत्कालकी कुटीरवासिनी वनचारिणी कुमारियां भी आलेख्यरचनामें पटु रहीं। कालिदासकी शकुन्तला इसका उज्ज्वल दृष्टान्तस्थल है। (शकुन्तला)

इस सम्बन्धमें ऊषाकी सखी चित्रलेखाका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है। चित्रलेखाके ववरणसे बहुत अच्छा विदित हुआ है—पूर्वकालकी कुलकामिनियां चित्रविद्यामें कैसी सुनिपुण थीं। हरिवंश और भागवतमें कहा है—वाणदुहिता ऊषा जब अनिरुद्धके लिये अधीर हुईं, चित्रलेखा उनको सान्त्वना करके कहने लगीं—सखि! तुम्हारे प्यारेका कुल, शील, वर्ण और निवास मैं कुछ नहीं जानती हूं। फिर भी बुद्धिबलसे मैं प्रभावशाली, कुलीन, शीलवान्, रूपवान् गुणी और विख्यात देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, उरग, राक्षस, मनुष्य प्रभृतिके आलेख्य प्रस्तुत करके सात दिनके बीच तुम्हारे निकट उपस्थित कर दूंगी। तुम आलेख्यगत इन महात्माओंको देखते ही अपने कान्तको पहचान लोगी। सात ही दिनमें चित्रलेखा समस्त आलेख्योंको यथारीति बना कर ले आयीं और क्रम क्रम सखियोंके सामने इन्हें खोलखोल ऊषाको दिखलाने लगीं। अन्तमें चित्रलेखाने कहा था—मैंने सबको अविकल चित्रन किया है। यदि तुमने जिन्हें स्वप्रयोगसे देखा है इसमें हों, तो पहचान लो। ऊषाने तसवीरें देखते देखते कृष्णके पौत्र और प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धको पहचाना और चित्रलेखाको दिखला दिया। फिर चित्रलेखाने ही द्वारकासे अनिरुद्धको ला करके ऊषाको विरहवेदना विदूरित की।

(हरिवंश १७५ अ०)

रामायण महाभारत पढ़नेसे समझ पड़ता है कि प्राचीन कालकी भी चित्र उपजीवी स्वतन्त्र चित्रकार विद्यमान थे। (रामायण २।८०।१८)

विश्वकर्मीय शिल्पशास्त्रके मतमें स्थपति, स्थापक, शिल्पी, वर्धकी और तक्षकमें शिल्पीको ही चित्र अङ्कण करना चाहिये। (विश्वकर्मीय १।१९)

हयशीर्षपञ्चरात्र और विश्वकर्मीय शिल्पशास्त्रके पाठसे समझ पड़ता है कि पूर्वकालको देवताओंके चित्र अङ्कित और पूजित होते थे। आजकलको भांति पहले भी चित्र-पट और चित्रफलकका आदर रहा। (हरिवंश १००।४५, विक्रमोर्वशी २ अङ्क)

हेमचन्द्र-रचित स्थविरावली-चरितके परिशिष्ट पर्वके प्रथम सर्गमें विवृत हुआ है—उस समय चित्रप्रतिकृति (Portrait-painting) का लोग कितना अधिक आदर करते थे।

कोई कहता है कि पूर्वकालमें भारतवासी किसी प्रकार जैसी तैसी तसवीर खींच लेते भी उसका सामाञ्जस्य रख न सकते थे, उनको चित्रविद्यामें कोई पद्धति वा प्रणालीका ग्रन्थ न था और विशेषतः दूरस्थ प्राकृतिक दृश्य एक बारगी ही बना न सकते थे।

परन्तु यह तो पहले ही प्रमाणित हो चुका है कि बहुपूर्वकालमें भारतवासियोंने चित्रविद्यामें पाण्डित्य लाभ किया था। सिवा उसके इसका भी प्रमाण मिला है कि भारतीय चित्रविद्याके स्वतन्त्र ग्रन्थ रहे। प्रायः १२ सौ वर्ष पहले काश्मीराधिपति जयादित्यके सभास्थ कवि दामोदरगुप्त अपने विरचित 'कुट्टनीमत' ग्रन्थमें चित्रसूत्र नामक किसी चित्राङ्कण विषयक ग्रन्थका उल्लेख कर गये हैं। (कुट्टनीमत १२३) बस इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके बहुत पहले 'चित्रसूत्र' बना था। फिर भवभूति-प्रणीत उत्तररामचरित-नाटकके प्रथमाङ्कको वर्णना पढ़नेसे स्पष्ट ही ज्ञात हो जाता है कि प्राकृतिक दृश्य अङ्कनमें भी भारतीय चित्रकारोंने नैपुण्य लाभ किया था। लक्ष्मण सीताके विनोदनार्थ एक तसवीर ले गये, इसमें रामके वनवाससे सीताको अग्निपरीक्षा पर्यन्त समुदय घटनामूलक प्राकृतिक दृश्य खिंचा था। सीताने उस तसवीरको देख विस्मित और आत्मविस्मृत हो कहा—पुत्रवर! इस चित्रको देख करके फिर मेरे मनमें वही अभिलाष उठता है। (उत्तररामचरित १ अ०)

उन प्राचीन भारतीय चित्रोंका निदर्शन आजकल अति विरल है। जिस प्रकार भारतकी अति प्राचीन कीर्तियां विलुप्त हो गयी है, चित्रनैपुण्यका परिचय भी कहीं प्रकाशित हुआ है। उत्कलके कटक जिलेमें कपिलेश्वर मन्दिरगात्र पर अङ्कित मस्तोदक चित्र (Fresco-piainting) अति सामान्यभावसे हिन्दुओंके प्राचीन चित्रोंका निदर्शन प्रकाश करता है। मय-शिल्प और मानसार नामक वास्तुशास्त्रमें ऐसे चित्र चित्रतोरण नामसे वर्णित हुए हैं। (मयशिल्प २० अ०, मानसार ४३।२१)

भारतीय बौद्धोंके समयमें जो मन्दिर बने थे, उनमें दो एक पर नानारूप चित्र अङ्कित हुए हैं। अजण्टा गुहास्थित मन्दिरमें आज भी वैसे हो चित्र वर्तमान हैं। यह गुहा ई० २री शताब्दीके पूर्व हजार वर्ष तक खोदी गयी। तसवीरें भी उसी समयको हैं। अजण्टाके चित्र देख करके बहुतसे लोग विस्मित हुए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि उस प्राचीनकालको भी भारतमें चित्रनैपुण्यको पराकाष्ठा प्रदर्शित हुई। प्रसिद्ध चित्रविद् ग्रिफिथ साहबने अजण्टा गुहाको तसवीरें देख करके लिखा है—

"The artists who painted them were gaints in execution. Even on the vertical sides of the walls some of the lines which were drawn with one sweep of the brush struck me as being very wonderful; but when I saw long delicate curves drawn without faltering with equal precision upon the horizontal surface of the ceiling, where the difficulty of execution is increased a thousand-fold—it appeared to me nothing less than miraculous......For the purpose of art education no better examples could be placed before an Indian art-student than those to be found in the caves of Ajanta, full of expression—limbs drawn with grace and action, flowers which bloom, birds which soar, and beasts that spring, or fight, or patiently carry burdens: all are taken from Nature's book—growing after her pattern and in this respect differing entirely from Muhammadan art, which is unreal, unnatural, and therefore incapable of developmen.t" (Indian Antiquary, vol. III. p. 26-28.)

अति प्राचीनकालमें मिसरमें भी मुसव्वरी चली थ। युरोपीय विद्वानोंने साबित किया है, कोई १५०० वर्ष पीछे मिसरकी तरक्कीके वक्त वहां इस इल्मकी चर्चा थी। वहां मुसव्वरोंसे ही लिखा पढ़ी होती थी। अलग अलग बातें जाहिर करनेमें निराली निराली तसवीरें बनती थीं। विलायतके ब्रटिश अजायबघरमें कोई ३००० वर्ष-की पुरानी मिसरी तसवीर है। प्रत्नतत्त्वविद् अन्दाज कहते हैं कि ईसासे कोई १८०० साल पहले थीव शहर-की चहारदीवारी तसवीरोंसे भरी थी। सहज ही अनुमान हो सकता है, कि दूसरे सब इल्मोंकी तरह मिसर-से ही यूनानियोंने मुसव्वरी सीखी। ई० ४थी शताब्दीसे पहले यूनानमें मुसव्वरी खूब तरक्की पर थी। ई०से ४६३ साल पहले आसस शहरमें पलिगनोटास नामके एक मुसव्वर हुए। आरिष्टल उनकी तारीफ करके कहते हैं—उनकी खींची हुई आदमीकी तसवीर असली आदमीकी बनिस्बत भी कहीं अच्छी है। सिकियन, करिन्थ, आथेन्स और रोडस जैसी कई जगहोंमें यूनानके बड़े बड़े तसवीरखाने थे। दूसरे दूसरे यूनानी मुसव्वरों-में एथिनिक और रोडसके बाशिन्दे प्रटोजिसन किसी वक्त पैदा हुए। यूनानमें नजूमके साथ मुसव्वरीके इल्मने भी तरक्की पकड़ी। होशियार नजूमियोंकी तरह मुसव्वरों-की भी कमी न थी।

रोममें तसवीरोंका खूब चलन हुआ तो सही परन्तु उसका बहुतसा हिस्सा यूनानी मुसव्वरोंने खींचा था। यूनानकी अवनति और रोमक साम्राज्यकी उन्नतिका आरम्भ होने पर ग्रीक चित्रकर कार्य अन्वेषणके लिए रोम पहुंच गये। रोमक लोग इनके सद्गुणोंका पुरस्कार देने लगे। अवशेषको यूनानके सब बड़े मुसव्वरोंने रोममें जा करके रहना शुरू किया। सुतरां उस समय रोमके समस्त ही चित्रकार्य ग्रीक चित्रकरों द्वारा सम्पन्न होते थे। किन्तु ७५ ई०को रोममें चित्रोंकी सम्पूर्ण हीनावस्था हो गयी।

ई० १३वीं शताब्दीको फिर युरोपमें चित्रविद्याका अनुशीलन आरम्भ हुआ। १२०४ ई०को लाटिन लोगोंके कुस्तुनतुनिया अधिकृत करने पर ग्रीक चित्रकारगण कर्तृक इटलीय चित्रविद्या पुनर्जीवित हो गयी। सेनानिवासी गिदो इटलीके आदि चित्रकर थे। १२२१ ई०को अङ्कित उनका एक चित्र आज भी रक्षित है। इन्होंने उस समय चित्रविद्याका सकल दोष अधिकांश विदूरित करके पूर्वापेक्षा विशुद्ध नूतन प्रणालीसे चित्रादि अङ्कन किये। इनके अनेक शिष्य थे। उनमें बहुतोंके चित्रादि आज भी देख पड़ते हैं। इसके पीछे इटलीमें अनेक विख्यात चित्रकर जन्मग्रहण किया। उनमें लिओनार्डो-डा-विन्सो (१४५२-१५१६), माइकेल एञ्जेलोबोनार्ती (१४७४-१५६३) और राफेल (१४८३-१५२०) तीन व्यक्ति प्रधान थे। टिसियान और करेजिओ भी विख्यात चित्रकर रहे। ई० १६वीं शताब्दीके प्रारम्भमें वेनिसको छोड़ कर इटली के सर्वत्र चित्रविद्याकी अवनति आरम्भ हुई। किन्तु इसी शताब्दीके अन्तमें फिर वहां चित्रविद्याका संशोधन और उन्नति होने लगी। एक दलने पूर्वप्रसिद्ध चित्रकरोंकी उत्कृष्ट उत्कृष्ट प्रणालियां ग्रहण करके एक नूतन प्रणाली निकाली थी। दूसरा दल किसी प्रकार भी प्राचीन रीतिका वशवर्ती न हो एकबारगी ही प्रकृतकी आदर्श मान करके तदनुरूप चित्र बनाने लगे। बलोगना प्रथम और नेपाल्स नगरमें द्वितीय प्रकारका चित्रालय भी था।

शार्लिमान (Charlemagne)-के समयसे जर्मनोंमें भी चित्रोंका विवरण मिलता है। वह चित्रविद्याके उत्साहदाता थे और एक्सला-चापेलके गिर्जेमें चौवास उपासकोंके साथ ईसाका चित्र अङ्कित कराया था। २य ओथोरके साथ (६७४-६८३) ग्रीक-राजकन्या थियो-फानीका विवाह हुआ, जर्मन चित्रकरोंको यूनानियोंसे चित्रशिक्षाकी सुविधा मिली। इसी समयसे बाहिमिया, होलेण्ड प्रभृति नानास्थानोंमें चित्रविद्याका अनुशीलन आरम्भ हुआ। १३८० ई०को मिष्टर विलहेलम नामक एक विख्यात जर्मन चित्रकार थे। उनके और तत्परवर्ती बहुतसे शिल्पियोंके चित्र आज भी कोलोन, बर्लिन आदि नगरोंके अजायबघरमें रखे हैं।

शार्लिमान और उनके परवर्ती समयसे फ्रान्स देशमें चित्रविद्याका आभास मिलता है। फरासीसी चित्रकर इटलीयोंसे यह विद्या सीखते थे। फिर सिमन भोट

(Simon vout) ने (१५८२—१६४१ ई०) स्वाधीन प्रणालीमें चित्राङ्कण आरम्भ किया।

बहुकालसे इङ्गलैण्डमें चित्र अङ्कनका कथञ्चित् आभास मिलता है। ई० ८वीं शताब्दीको यहां हस्तलिखित पुस्तकादि सुन्दर चित्रों द्वारा सुशोभित किये जाते थे। ब्रटिश म्यूजियम (अजायबघर) में रक्षित डर्हाम-बुक (Durham Book) उसका प्रमाणस्थल है। किन्तु क्रमसे परवर्ती कालको इसका व्यवहार घट गया। ७म और ८म हेनरीके समयको विदेशीय चित्रकार राजप्रासादके चित्रादि कर्ममें नियुक्त थे फिर एलेजाबेथके राजत्वकालमें प्रथम उल्लेखयोग्य अङ्गरेज चित्रकार प्रादुर्भूत हुए। वास्तविक उसी समयसे अङ्गरेजी चित्र विद्याका उत्पत्तिकाल माना जा सकता है। इस समय निकोलस-हेलियार्ड और उनके शिष्य आइ-जाक-अलिभार प्रधान रहे।

१म चार्लस नाना स्थानोंसे उत्कृष्ट चित्र संग्रह करते थे। सभी बड़े आदमियोंने उनका अनुकरण आरम्भ किया। इससे अङ्गरेज चित्रकारोंको उत्साह मिला था। उस समय यद्यपि अनेक विदेशीय चित्रकार इङ्गलैण्डमें रहते और कितने ही विषयोंमें अङ्गरेज चित्रकारोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ थे, तथापि प्रतिमूर्तिके चित्रणमें अङ्गरेज चित्रकारोंने ही श्रेष्ठता पायी। जो हो, इसके बाद भी अनेक चित्रकारोंने जन्मग्रहण किया। अवशेषको विख्यात अङ्गरेज चित्रकार विलियम-हगार्थने (१६९७-१७६४ ई०) चित्रविद्याकी नूतन प्रणाली निकाली। सर जसुया रेनोल्ड (Sir Joshua Reynold) प्रकृत पक्षमें सर्वश्रेष्ठ अङ्गरेज चित्रकार थे। प्रतिमूर्तिके चित्रण और यथायथ वर्णविन्यासमें उनकी जैसी अद्भुत शक्ति थोड़े ही लोगोंमें रही। इन्होंने १७२३ ई०को जन्म लिया और १७९२ ई०में मानवलीला संवरण की। उनके पीछे अनेक विख्यात चित्रकार प्रादुर्भूत हुए। पाल-साण्डबीने (१७२५-१८०९) इङ्गलैण्डमें पहले पानीके रङ्गसे कागज पर तसवीर खींचनेकी चाल निकाली थी। क्रमसे उसीने उन्नत हो करके वर्तमान आकार धारण किया है।

मुसलमानोंके मतमें जीते प्राणीकी मूर्ति अङ्कित करना पाप है। इसीसे बहुतसे बादशाह चित्रविद्याकी उन्नति करनेमें उदासीन रहे। भारतके विख्यात मुगल-सम्राट् अकबरने वह कुसंस्कार अपनोदन करके अनेक विख्यात चित्रकारोंसे सुन्दर सुन्दर चित्र प्रस्तुत कराये। उन्होंने राजानामा नामक महाभारतका संक्षिप्त फारसी अनुवाद भी उतराया। राजपुरके राजपुस्तकागारमें इस महाग्रन्थका एक हस्तलिखित सचित्र खण्ड रखा है। उस ग्रन्थकी तसवीरें कोई चार लाख रुपये खर्चसे सर्वोत्कृष्ट फारसी चित्रकरों कर्तृक चित्रित हुईं। उस समयके बादशाहों और नवाबोंकी बहुतसी तसवीरें आज भी मौजूद हैं। मुसलमानोंसे भारतके चित्रकरोंने भी कुछ कुछ शिक्षा पायी।

अजण्टा गुहा निर्माणके पीछे इस देशमें चित्रविद्याकी विशेष दुर्दशा उपस्थित हुई। वर्तमान देशीय चित्रकर जो चित्र प्रस्तुत करते, अति कदर्य ठहरते हैं। इनके अङ्कनमें आकारका सामञ्जस्य किंवा चित्र और चित्रित वस्तुका सौसादृश्य बिलकुल नहीं रहता। अब पाश्चात्य अनुकरणसे पुनर्वार उसकी उन्नति होती है। कलकत्ता, बम्बई, मन्द्राज प्रभृति प्रधान प्रधान नगरोंमें गवर्नमेण्टके साहाय्यसे चित्रशालाएं संस्थापित हुई हैं। उनसे बहुसंख्यक छात्र उत्तीर्ण हो चित्रादि अङ्कित करके ही स्वच्छन्दतासे जीविकानिर्वाह करते हैं। कहना वृथा है कि उन सभी चित्रोंका अधिकांश पाश्चात्य रुचि अनुयायी है। किन्तु वही आजकल भारतीय चित्रविद्याको पुनर्जीवन दान करता है।

केवल चक्षुकी प्रीतिका सम्पादन करना ही चित्रविद्याका मुख्य उद्देश्य नहीं है। चित्रविद् उसके अनुशीलनमें विमल आनन्द अनुभव करते हैं। ज्योतिर्विद् पण्डित जैसे ग्रहोंकी गतिविधि पर्यालोचना करके आनन्दित होते, चित्रकर सुन्दर वर्णविन्यास, प्राकृतिक दृश्य दर्शन किंवा नानारूप चित्रादि कल्पना करते करते अपार आनन्द नीरमें डूबते हैं। इसका अनुशीलन एक विशुद्ध आमोदका आकार है। चित्रविद्याके अनुशीलनमें युवकोंकी रुचि तथा प्रवृत्ति मार्जित और उन्नत होती है। उससे उद्भावनी शक्तिका सम्यक् उत्कर्ष साधित होता है। प्राकृतिक सौन्दर्य दर्शनसे आंख खुलती और मानव मनमें भावकी लहरी उठती है। पचास पृष्ठ पढ़ने पर

भी किसी स्थानके दृश्य वा किसीके अङ्गभङ्गी हावभावादिकी वर्णनासे मनमें जिस भावका उदय नहीं होता, सुचित्रकरके एकमात्र शुद्ध चित्र द्वारा ही वह अनायास हो सकता है। सुतरां सुचित्रकर सुकविसे न्यून नहीं पड़ता, वरन् अनेक अंशोंमें उत्कृष्ट ठहरता है। कारण कविकी वर्णना कितनी ही उत्कृष्ट और सूक्ष्म क्यों न हो, चित्र जैसी सुस्पष्ट और विशद भावका उद्रेक करनेवाली नहीं लगती। फिर कविका भाव उसी भाषाभिज्ञ लोगोंको बोधगम्य है, परन्तु चित्रकरका मनोभाव सब लोग बराबर समझ सकते हैं। एतद्व्यतीत चित्र द्वारा अन्यान्य शिल्पादि और व्यवसाय वाणिज्यकी प्रभूत उन्नति होती और उससे देशका धनागम बढ़ता है। दूसरे, चित्रविद्या प्राचीन परिच्छदादि तथा विख्यात लोगोंकी मूर्ति प्रभृतिको चिरजीवित रखती, सुतरां इतिहासकी सम्यक् उन्नति साधित होती है।

वर्तमान चित्रकार्य प्रधानतः दो भागोंमें बांटा हुआ है—रेखादि द्वारा अङ्कित करना और पीछे वर्णादिसे रंगना। प्रस्तर, प्राचीर, काष्ठ वा कागज पर खड़िया मट्टी, लेडपेन्सिल या स्याहीसे प्रधानतः अङ्कनकार्य सम्पन्न होता है। शिक्षार्थी पहले सरल, वक्र प्रभृति नानारूप रेखाएं खींचनेका अभ्यास करता है। इसमें दक्षता उत्पन्न होनेसे वृत्त त्रिभुजादि ज्यामितिक क्षेत्र अङ्कन करना सीखते हैं। यह सम्पूर्ण आयत्त होने पर नानाविध वस्तु और मनुष्य, पशुपक्ष्यादिकी प्रतिकृति भी खींचने लगते हैं। पहले पहल वस्तुओंका केवल दैर्घ्य और प्रस्थ मात्र प्रदर्शन करना सीखा जाता है। फिर समतल पर दैर्घ्य, प्रस्थ और वेध तीनों ओर खींचनेकी चेष्टा करते हैं। ऐसे चित्रको दृश्यीय अङ्कन (Perspective drawing) कहा जाता है। यह अपेक्षाकृत कठिन होता और कुछ अधिक शिक्षाका प्रयोजन रखता है। क्रमशः चित्रकर अनेक वस्तु एकत्र यथायथ आकारमें बनाना आरम्भ करता है। इसी प्रकार चित्रमें वस्तुओंका आकार समानुपातिक होगा। आलोकमय और अन्धकारमय भाग विशेष दक्षताके साथ खींचना चाहिये। सुदक्ष चित्रकार ऐसे सुन्दर भावसे चित्र अङ्कित कर सकता कि देखनेमें प्रकृत वस्तु जैसा लगता है। आलोक और अन्धकार चित्रमें दिखलानेको दृष्टिकी प्रखरता और विशेष अनुशीलनका प्रयोजन है।

प्राकृतिक दृश्य जैसे नगरमध्यस्थ राजपथ, नदी तीर वन वा उपवन आदि अङ्कन करना सर्वापेक्षा कठिन है। इसी प्रकार पदार्थ जैसे देखनेमें आते, चित्रमें बनाये जाते हैं। हम निकटस्थ पदार्थ सुस्पष्ट, वृहत् और उज्ज्वल देखते हैं। सुतरां चित्रमें भी उनको वृहदाकार और सुस्पष्ट खींचना पड़ता है। क्रमशः वह जितनी ही दूर हो जाते, आकार और स्पष्टताका ह्रास पाते हैं। ऐसे ही चित्रके आकाश भागमें ईषत् मेघमाला और चन्द्रादि अङ्कन करनेसे वह बहुत मनोहर लगता है। शिक्षार्थी प्रथमावस्थामें अन्य चित्र वा फोटोग्राफ देख करके नकल करता है, फिर इसमें पारदर्शी होने पर प्राकृतिक वस्तुको ही देख करके बनाना सीखता है। यह समझनेको अभिज्ञता चाहिये, कैसे स्थानमें किस ओरसे देख करके अङ्कन करने पर चित्र सुन्दर आवेगा।

शिक्षार्थी प्रथम एक टुकड़ा मोटा कागज, उसको रखनेके लिये एक चौरस तख्ता, कई एक उड पेन्सिल और एकखण्ड रबर ले करके चित्राङ्कणका अभ्यास कर सकता है। चित्रके नानास्थान नानाप्रकार पेन्सिलोंसे अङ्कित होते हैं। कहीं खूब काला कहीं थोड़ा काला और कहीं पर निहायत हलकापन रहता है। निकटस्थ पदार्थ और उसकी छायाको गहरा बनाते हैं। दूरस्थ वस्तु अपेक्षाकृत हलका रहता है। चित्रको परिच्छन्नताके विषय पर दृष्टि रखना आवश्यक है, नहीं तो सामान्य कारणसे ही यह बिगड़ जाता है।

मनुष्यकी प्रतिकृति अङ्कन करना चित्रविद्याका एक प्रधान अङ्ग है। प्रथमतः नासिका, कर्ण, हस्तपदादि एक एक अङ्गका उत्कृष्ट चित्र ले करके नकल करना चाहिये। जब तक नकल नमूने जैसी न बने, जहां तक हो सके उसीको उतारता रहे। इसी प्रकार छोटे बड़े सब आकारोंमें और हावभावोंमें हाथ, पैर, छाती, कमर आंख, कान, नाक वगैरह बनानेमें खूब होशियार हो जाने पर सीखनेवालेको वह सब इकट्ठा करके आदमीकी सूरत खींचनी चाहिये। मनुष्य शरीरके सौन्दर्य पर लक्ष्य रख करके चित्रमें खबसूरती लाता कर तसबीर

बनावे। आदमीका जिस्म बनानेमें नीचे लिखे तरीकों पर खयाल रखना चाहिये—

१। कागजकी जितनी जगह पर तसवीर बनेगी, निशान् लगा दिया जावेगा।

२। इसी जगहके हिसाबसे सर खींचेंगे।

३। फिर स्कन्ध, बाहु और वक्ष अङ्कित करना चाहिये।

४। अवशेषको अग्रभागमें जिस पद पर चित्र खड़ा होगा, पहले वही बनेगा और पीछे दूसरा पद उतरेगा।

नग्नदेह अङ्कित करनेमें यथास्थान पर शिरा आदि बनानी पड़ती हैं। हस्त पदादिसे कोई कार्य देखानेमें वहांकी नसें आदि खूब साफ उतारी जाती हैं। अधिक किशोर देहमें पूर्णवयस्क व्यक्तिकी भांति शिरादि दिखाना अन्याय है। स्थूलकाय व्यक्ति, सुन्दर युवा और बालकके शरीरमें कोई बड़ी शिरा न लगानी चाहिये। सुन्दरी स्त्रीकी मूर्ति अङ्कित करनेमें शिराको एकबारगी ही छोड़ देते हैं।

मनुष्यका मुख, चक्षु प्रभृति देख करके मानसिक अवस्था समझी जाती है। सुतरां तसवीरमें इसको जाहिर कर सकते हैं। मुख ही मानवहृदयका दर्पण स्वरूप है। इसलिये मानसिक अवस्थाके चित्रणमें उस पर विशेष दृष्टि रखना चाहिये। विषादके प्रकाश कालको मस्तक अवनत रखना पड़ता है। औद्धत्य, निर्भीकता वा दृढ़प्रतिज्ञा देखानेमें वह सीधा और उठा हुआ रहता है। अवसन्न भावके प्रदर्शनमें मस्तकको किसी ओर झुका देते हैं। इसी प्रकार मस्तकके नाना रूप विन्यासोंमें चिन्ता, विलाप, अहंकार, भीति, प्रेम, आनन्द आदि प्रकाशित होते हैं। फिर मस्तकके मध्य चक्षु और मुखसे ही भयविस्मयादि समझे जाते हैं।

तसवीर खिंच जाने पर रङ्ग चढ़ाना चाहिये। वस्तुका जैसा स्वाभाविक वर्ण रहता, चित्रमें भी वैसा ही लगता है। ऐसा होने पर तसवीर खूब मुवाफिक और खूबसूरत आती है। वर्णयोजना नाना प्रकार होती है। पानी, लेई, गोंद, तेल आदिमें मिला करके तसवीर पर रङ्ग चढ़ाते हैं। जलमें द्रवणीय रङ्गोंको पानीका रङ्ग (Water-colour) और तेलमें मिलनेवालोंको तेलका रङ्ग कहते हैं। रङ्ग पानीमें मिला करके तसवीर बनाना Painting in water colour या water-painting और तेलमें घोल करके उस पर चढ़ाना Oil painting कहलाता है। यह दोनों परस्पर भिन्न विद्याएं हैं और भिन्न भिन्न चित्रकरों कर्तृक अनुशीलित होती हैं।

सब रङ्ग प्रधानतः तीन प्रकारके हैं—१ आकरिक, २ धातव और ३ उद्भिज्ज। हिङ्गुल, हरिताल, मनःशिला प्रभृति आकरिक हैं। सिन्दूर, जाङ्गाल आदिको धातव कहते हैं। फिर नील, लाक्षारसादि वर्ण उद्भिज्ज होते हैं। जलमें मिला करके चढ़ानेको प्रायः शेषोक्त रङ्ग ही व्यवहार किया जाता है। आजकल मैजेण्टरमाहब और अन्यान्य बहुतसी कम्पनियोंके बनाये कई प्रकारके पानीमें घुलनेवाले रङ्ग मिलते हैं। रङ्ग दे करके कागज या कपड़े पर तसवीर खींची जाती है। परन्तु ऐसा चित्र दीर्घकाल स्थायी नहीं होता। उसका रङ्ग जल्द ही उड़ जाता है। इसे बहुत दिनके लिये टिकाऊ बनानेको वारनिस चढ़ा देते हैं। वार्निस करनेसे चित्र उज्ज्वल होता और धूलि लगानेसे नहीं बिगड़ता।

तैलचित्र (Oil-painting) अपेक्षाकृत उत्कृष्ट और दीर्घकालस्थायी होता है। यह साधारणतः वस्त्र पर अङ्कित किया जाता है। एक मोटे कपड़ेके टुकड़ेको खींच कर काठके चौखटे पर चढ़ाते हैं और उस पर एक प्रकार प्रलेप लगाते हैं। इस प्रलेपके देनेसे कपड़ेके छेद मुंद जाते हैं, जिससे रंग चढ़ाने पर वह बिगड़ता नहीं। अलसी गर्जन आदिके तेलमें रंग घोल करके तसवीर बनाते हैं। हिङ्गुल, हरिताल, सफेदा आदि इस कार्यमें व्यवहृत होते हैं। आजकल सब प्रकारका तैयार तेल बिकता है। इसको किसी छोटी पियालीमें रख करके आवश्यक जितना कलमसे तसवीरमें लगाते हैं। चित्र अङ्कित हो जाने पर वारनिस चढ़ाते हैं।

इस बातका विशेष प्रमाण मिलता, पूर्वकालको भारतमें कैसा तैलचित्र बनता था। मुसलमानोंके समय यहां बननेवाली तेलकी तसवीरोंके सबूत बहुत हैं। परन्तु इन सकल तैलचित्रोंमें वैसी उन्नति लक्षित नहीं होती। प्रकृत प्रस्ताव पर इस देशमें तैलचित्रने अधिक उन्नति नहीं पायी। नाना स्थानोंमें भद्दे जैसे तैलचित्र बनते

हैं। इनमें श्रीक्षेत्रके जगन्नाथ देवका हो चित्र प्रधान होता है। वहां पुराने कपड़े में कीचड़ लगा कर लाह-के संयोगसे उसको कड़ा और चिकना कर लेते हैं। फिर उस पर तसवीर बनायी जाती है। ऐसी एक बड़ी तसवीर ४०) रु० तक बिकती है।

सम्प्रति युरोपीय शिक्षकोंसे अनेक छात्र यह विद्या पढ़ रहे हैं। आजकल बहुतसे भारतवासी उत्तम चित्र-कर बन गये हैं। यह बड़े बड़े लोगों, देवदेवियों और समाजोंके नानारूप चित्र अङ्कित करके यथेष्ट अर्थ उपा-र्जन करते हैं।

अट्टालिकाके प्राचीरगात्र पर मनुष्य, पशु, पक्षी आदि-का चित्र अङ्कित करनेकी प्रथा भारतमें सर्वत्र प्रचलित है। दीवारका चूना गीला रहते रहते उस पर रङ्ग लगा करके ऐसी तसवीर बनायी जाती है। रंग चूनेमें मिल करके कड़ा पड़ता और बहुत दिन टिकता है।

मुसलमानी राजत्वके शेष भागको (१५०० से १८०० ई०) तैयार कागज पर खिंची बादशाह वगैरहकी बहुत-सी तसवीरें आज भी मिलती हैं। कलकत्तेकी प्रद-र्शनीमें ढाका और सहारनपुरसे वैसी कितनी ही तसवीर इकट्ठी हुई थीं। इसमें नूरजहान् बेगम, सावन्त खाँ, राजा यशोवन्तसिंह, बादशाह शाह आलम और आलम-गीर आदिके चित्र थे। जयपुर-राजपुस्तकागारस्थ 'राज नामा' के ६ चित्र वृहदाकारसे अङ्कित करके भारतीय प्रदर्शनीमें प्रदर्शित हुए। इनमें एक युधिष्ठिरके नरक-दर्शन और दूसरा राजसूय यज्ञका चित्र था। कहनेसे क्या वह तसवीरें निहायत उम्दा थीं। जयपुरमें आज भी मोटे कागज पर बढ़िया तसवीरें बनती हैं। इनमें एक एककी कीमत कई रुपये हैं।

बीकानेरमें भी जयपुरकी भांति उत्कृष्ट चित्र प्रस्तुत होते हैं। लाहोरके तोताराम नामक किसी मुसव्वरकी बनायी हुई कुरुक्षेत्रयुद्ध आदि कई तसवीर भारतके अजायबघरमें रखी हैं। लाहोरी चित्रकरों द्वारा अङ्कित कुरुक्षेत्र, कौरवराजसभा, कंसवध, कालिय-दमन, वराह अवतार आदि चित्रोंका मूल्य ७०) ८०) रु० पर्यन्त है।

मन्द्राजके नाना स्थानोंमें कागज पर बढ़िया तसवीरें अङ्कित होती हैं। कलकत्तेकी आन्तर्जातिक प्रदर्शनी-में मन्द्राजसे एक ऐसा चित्र आया, जिसमें श्रीकृष्ण चीर-भाण्ड हाथ पर लिये और उनके दोनों पार्श्वको गोपा ङ्गनाएं थीं। इसका मूल्य (१३२) रु० था।

कुछ दिन पहले बङ्गालमें हिन्दू देवदेवियोंके अच्छे अच्छे चित्र बनते थे। परन्तु लिथोग्राफकी प्रतिद्वन्द्विता-में उसकी अति दुरवस्था हुई है। महिसुरके मुसव्वर महावरी रंगसे कागज पर तसवीरें बनाते हैं। यह एक एक ५) से १५) रु० तक बिकती है।

पहले बङ्गालके नाना स्थानोंमें काच पर देवदेवी प्रभृति-का चित्र अङ्कित होता था। आज कल वह एक प्रकार-से उठ जैसा गया है। मन्द्राजके चन्द्रगिरि तथा भारत-के अन्यान्य स्थानोंमें भी शीशे पर तरह तरहकी तसवीरें बनती हैं।

दिल्लीमें हाथी दांत पर अति सुन्दर नानारूप चित्र अङ्कित होते हैं। फारसी लिखावटमें वैसी तसवीरें दी जाती थीं। मुसलमान बादशाह, बेगम वगैरहकी सूरतें और ताजमहल, जामा मसजिद वगैरह इमारतों-की तसवीरें हाथी दांत पर पानीके रंगसे बनायी जाती है। चित्रकर फोटोग्राफ देख करके और रंगके द्वारा तदनुरूप चित्र अङ्कित करते हैं। हस्तिदन्तके यह चित्र सज्जा किंवा मणियोगसे अलङ्कार जैसे व्यवहृत होते हैं। दिल्लीके बहुतसे मुसव्वर जो हाथी दांत पर तसवीरें बनाते, आजकल कलकत्ता, बम्बई आदि शहरोंमें रहते हैं ऐसी एक तसवीरका दाम १०) से १०० रु० तक है। काशी और त्रिचिनापल्लीमें वैसे चित्र बना करते हैं। जय-पुरमें बहुतसे चित्रकर हस्तीदन्त पर चित्र अङ्कित कर सकते हैं।

काशी और त्रिचिनापल्ली प्रभृति स्थानोंमें अभ्र पर भिन्न भिन्न जाति तथा उपजातियों और पर्व, यात्रादिके चित्र अङ्कित होते हैं।

भारतमें सब जगह लकड़ी पर तरह तरहकी तसवीरें बनायी जाती हैं। मुजफ्फरपुर, दिल्ली, लाहोर, जलन्धर, शिमला, काशी, बरेली और पटना वगैरह जगहोंकी लकड़ीके सन्दूक और खिलौने मशहूर हैं। किवाड़, सन्दूक वगैरहको नक्शा करके पीछे रङ्ग चढ़ाया जाता है।

हस्तलिखित पुस्तककी सुरञ्जित चित्राङ्कण-प्रथा बहुकालसे भारत, भोट और चीनदेशमें प्रचलित है। भोट (तिब्बत)के अनेक प्राचीन पुस्तकोंमें सिद्धपुरुषों और देवदेवियोंके चित्र अङ्कित हैं। भारतकी अनेक प्राचीन जैन हस्तलिपियोंमें भी वैसे ही तीर्थंकरों और महापुरुषोंके चित्र अङ्कित देख पड़ते हैं। बहुत दिनोंसे इस देशमें तान्त्रिक यन्त्रादि नाना वर्णोंसे पुस्तकों पर अङ्कित होते आते हैं। इस प्रकार साढ़े आठ सौ वर्षकी चित्रित हस्तलिपि संगृहीत हुई है।

हाथकी लिखी किताब चित्रित करनेमें मुगल बादशाह विशेष उद्योगी थे। अकबरने चार लाख रुपया लगा करके 'राजानामा'में तसवीरें खिंचायीं। अलवरके महाराज वलिसिंहने फारसी कवि शेख शादीके गुलिस्ताँ नामकी किताब तसवीरोंके साथ नकल करायी थी। इसकी सिर्फ तसवीरोंमें ५० हजार और सब मिला करके एक लाख रुपया खर्च पड़ा। इस पुस्तकका प्रत्येक पृष्ठ नये नये चित्र द्वारा शोभित है। जयपुरकी प्रदर्शनीमें उक्त पुस्तक 'राजानामा'के साथ प्रदर्शित हुआ। १८८३ ई०को कलकत्तेकी नुमायशमें कितनी ही हाथकी लिखी सचित्र किताबें आयीं। इन्हें युक्तप्रदेशके मुसलमान नवाबोंने भेजा था। उड़ीसेमें तालपत्रके पुस्तकों पर भी चित्रादि अङ्कित होते हैं।

आजकल मुद्रायन्त्र आविष्कारके पीछे काष्ठफलक (Wood-cut), लिथोग्राफ (Lithograph), फोटोग्राफ (Photograph) ताम्रफलक (Copper-plate) प्रभृति चित्रों द्वारा पुस्तकादि सचित्र करते हैं।

पहले केवल हस्त द्वारा अङ्कित और भारतमें वर्ण योजित होनेसे चित्र अतिशय दुर्मूल्य था। अब लिथोग्राफ, फोटोग्राफ प्रभृति उद्भावित होनेसे चित्रकार्य अपेक्षाकृत सहज और सुलभ बन गया है। किसी चित्रकारके एक चित्र अङ्कित करने पर लिथोग्राफके साहाय्यसे वैसी हजारों तसवीरें अनायास तैयार हो सकती हैं। लिथोग्राफ और फोटोग्राफ देखो।

चित्रविभाण्डकरस—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवाका नाम। इसके बनानेकी तरकीब यह है—पारद १ तोला और गन्धक २ तोला, इनको एकत्र घृतकुमारीके रसमें तीन दिन तक घोंट कर काजल बनावें। पीछे उस कज्जल द्वारा ३ तोला शोधित ताम्रपत्र लिप्त करके एक पात्रमें कण्डेकी राख रख कर उसके ऊपरी हिस्सेमें उस कज्जलीलिप्त ताम्रपत्रको रक्खें और ऊपरसे खली भुरक कर कण्डेकी राखसे पात्रको भर दें। पीछे उस पर सरवा ढक कर २ प्रहर तक तीव्र अग्नि पर उसे पाक करें। दूसरे दिन औषधको निकाल कर चूर्ण और जम्बीरी नीबूके रसमें पीसें, फिर मूषा (मिट्टीका पात्रविशेष)में बंद करके ७ बार गजपुटमें पाक करें। मात्रा—१ रत्ती, अनुपान—घी और मधु। सेवन करनेके बाद कांजीमें घसी हुई तालमूली और लहसुन खाना चाहिये। इसके व्यवहारसे भगन्दर रोग नष्ट होता है। इसमें मिष्टद्रव्यभोजन, दिवानिद्रा, मैथुन और स्निग्ध द्रव्य खाना निषिद्ध है। (भैषज्य)

चित्रवीर्य (सं० पु०) चित्रं आश्चर्यं वीर्यं यस्य, बहुव्री०। १ रक्तएरण्ड, लाल रेंड़। (त्रि०) २ आश्चर्य बलयुक्त, विचित्र बली, जो खूब ताकत रखता हो।

चित्रवृत्ति (सं० स्त्री०) कर्मधा०। अद्भुत व्यापार, विचित्र काम।

चित्रवेगिक (सं० पु०) चित्रवेगो ऽस्त्यस्य चित्रवेग-ठन्। नागभेद, एक सर्पका नाम। (भारत ५७ अ०)

चित्रवेश (सं० पु०) विचित्रवेश, आश्चर्य भेष।

चित्रव्याघ्र (सं० पु०) चीता बाघ। चीता देखो।

चित्रशाला (सं० स्त्री०) चित्रार्था शाला, मध्यपदलोपी कर्मधा०। १ चित्रगृह, वह घर जहां चित्र बनते हों। २ चित्रयुक्तगृह, वह घर जिसमें बहुतसी तसवीरें टंगी हों। ३ वह स्थान जहां चित्रकारी सिखाई जाती हो।

चित्रशिखण्डिज (सं० पु०) चित्रशिखण्डिनोऽङ्गिरसः जायते चित्रशिखण्डिन्-जन्-ड। बृहस्पति।

चित्रशिखण्डि-प्रसूत (सं० पु०) चित्रशिखण्डिनः प्रसूतः सन्ततिः, ६-तत्। बृहस्पति।

चित्रशिखण्डिन् (सं० पु०) चित्रः शिखण्डः शिखा अस्त्यस्य चित्रशिखण्ड इनिः। अत इनि ठनौ। पा ५।२।११५। मरीचि, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ, इन सात ऋषियोंके नाम। (अमर)

चित्रशिरस् (सं० पु०) चित्रं शिरोऽस्य, बहुव्री० । १ गन्धर्वभेद एक गन्धर्वका नाम। (हरिवंश २६१ अ०)

२ मूत्रपुरीषोत्पन्न विषभेद, सुश्रुतके अनुसार मल-मूत्रसे उत्पन्न एक विष, गंदगीका जहर।

चित्रशीर्षक (सं० पु०) चित्रं शीर्षं शिरोऽस्य, बहुव्री०, कप्। कीटभेद, एक प्रकारका कीड़ा। (सुश्रुत)

चित्रशोक (सं० पु०) अशोक वृक्ष।

चित्रशोचिस् (सं० त्रि०) चित्रं शोचिः तेजो यस्य, बहुव्री०। १ विचित्रयुक्त जो अधिक चमकता हो।

"यं गाकं-मित्रशोचिषं मन्म" (ऋक् ५।१८।२)

'चित्रशोचिषं चित्रतेजसं' (सायण)

२ विचित्र दीप्तियुक्त, जिसमें विचित्र कान्ति हो।

"चित्रशोचिषं अस्य" (ऋक् ६।१०।३)

'चित्रशोचिर्षि चित्रदीप्तिः' (सायण)

चित्रश्रवस् (सं० त्रि०) १ विविध कीर्त्तियुक्त, जिसका चित्र यश हो, जिसने अद्भुत नामवरी हासिल की हो।

"अग्निर्होता कविक्रतुः सत्य चित्रश्रवस्तमः" (ऋक् १।१।५)

२ विविध अन्नयुक्त।

"त्वां चित्रश्रवस्तम हवन्ते" (ऋक् १।४५।६)

चित्रश्री (सं० स्त्री०) उत्कृष्ट सौन्दर्य्य, जिस तसवीरका रंग खूबसूरत हो।

चित्रसंस्थ (सं० त्रि०) चित्र संतिष्ठति चित्र-सं-स्था-क। चित्रस्थित, चित्रगत, चित्रमें खींचा हुआ, तसवीरमें दिया हुआ।

चित्रसङ्ग (सं० पु०-क्ली०) चार चरण और सोलह अक्षरयुक्त, छन्दोभेद, १६ अक्षरोंका एक वर्णवृत्त।

चित्रसर्प (सं० पु०) कर्मधा०। मालुधान सर्प, चीतल साँप।

चित्रसारा (सं० स्त्री०) हरिताल, हरताल।

चित्रसारी (हिं० स्त्री०) १ चित्रगृह, वह घर जहाँ चित्र टँगे हों या दीवार पर बने हों। २ रंगमहल, वह कमरा जो सोनेके लिये सजाया हुआ हो, विलासभवन।

चित्रसेन (सं० त्रि०) चित्रा सेना यस्य, बहुव्री०। १ नानासैन्यविशिष्ट, जिसके बहुतसे सैनिक हों।

"चित्रसेना इषुबला अमृधाः" (ऋक् ६।७५।९)

'चित्रसेनाः बहुसेनाः' (सायण)

(पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।९५ अ०)

३ गन्धर्वभेद, एक गंधर्वका नाम। (भारत ३।२० अ०)

४ पुरुवंशीय राजा परीक्षितका दूसरा लड़का। (भारत १।९५।१२) ५ शम्बरासुरका एक पुत्र। (हरिवं० १६१।४३)

६ राजा नरिष्यन्तके एक पुत्रका नाम। (भाग० ९।२।१९)

चित्रसेनभट्ट (सं० पु०) पिङ्गलछन्दो-ग्रन्थके टीकाकार।

चित्रस्थ (सं० त्रि०) चित्रे तिष्ठति चित्र-स्था-कः। चित्रार्पित, चित्रगत, चित्रमें खींचा हुआ, तसवीर द्वारा दिखाया हुआ।

चित्रहस्त (सं० पु०) चित्रो हस्तः हस्तक्रिया यत्र, बहुव्री०। युद्धाङ्ग हस्तक्रियाभेद, हथियार चलानेका एक हाथ।

(भारत २२ अ०)

चित्रांशु (सं० पु०) गुग्गुल।

चित्रा (सं० स्त्री०) चित्र-अच्-टाप्। १ श्रीकृष्णकी कोई सखी, व्रजाङ्गनाभेद। इसका वयस १३ वत्सर ८ मास, वर्ण गौर, वसन जातीपुष्प सदृश और कर्म चित्र उतारना है। इसका कुञ्ज श्रीकृष्णको आनन्दसुखद है। (गोस्वामिग्रन्थ) २ मूषिकपर्णी। ३ गोड़ुम्बा, राजगोमुक। ४ सुभद्रा। ५ दन्तिका, दन्तीवृक्ष। ६ माया। ७ सर्पभेद, कौड़ियाला। ८ नदीविशेष। ९ चित्रकी भगिनी। यह नदी बन करके चित्रपथा नामसे आख्यात हैं। (प्रभास) १० अप्सराविशेष। ११ मृगशीर्ष। १२ गण्डदूर्वा। १३ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। १४ विडङ्ग, वायविड़ङ्ग। १५ आखुकर्णी। १६ यवनिका, पर्दा, चिक। १७ नक्षत्रविशेष (Spica Virginis)

यह प्रथम श्रेणीका उज्ज्वल नक्षत्र है। अश्विन्यादि नक्षत्रोंके मध्य चित्रा चतुर्दश तारा होती है। यह मुक्ता जैसी उज्ज्वल प्रभायुक्त है। इसकी तारासंख्या एक है। किन्तु चित्राकी योगतारा भी दृष्ट होती है। वह उत्तर दिक्की चित्रांश और अपांवत्स नामसे विख्यात है। चित्राकी कलाका परिमाण ४० है। इसका विक्षेप २ कला होता है। इसका कलांश १३ है अर्थात् सूर्यकक्षाके त्रयोदश अंशमें यह अस्तगत और त्रयोदश अंशके पीछे उदित होती है। गणित स्थलमें सामान्य अन्तर आता है। चित्रा पूर्व दिक्से निकलती और पश्चिम दिक्की

डूबती है। (सूर्य सिद्धान्त, रङ्गनाथ) इसके विश्वकर्मा देवता हैं।

चित्रा नक्षत्रमें जन्म होनेसे निम्नलिखित फल मिलता है—चित्राजात मनुष्यके प्रतापसे प्रतिपक्ष परितापित रहता, यह नीतिशास्त्रमें निपुण, चित्रविचित्र वस्त्र परिधानकारी और नानाशास्त्र-पारदर्शी होता है। (कोष्ठीप्रदीप)

चित्रा नक्षत्र जब आकाशमण्डलमें हमारे मस्तकके ठीक उपरिभाग पर अवस्थिति करता है, तब मकर लग्नको प्रथम कलाका उदय समझ पड़ता है। (राशिवलयनिरूपण) इसी चित्रा वा स्वाती नक्षत्रमें वृहस्पति ग्रहका उदय वा अस्त होता है। उस समय वार्हस्पत्यचैत्र नामक संवत्सर लगा करता है। कन्या राशि २३ अंश २० कला बीतने पर तुलाराशि ६ अंश ४० कला पर्यन्त चित्रानक्षत्रका भोगकाल है अर्थात् उस समय स्फुटांशके अनुसार सूर्य प्रभृति ग्रह चित्रानक्षत्रमें रहते हैं। यह पार्श्वमुख नक्षत्र है। इसमें यन्त्र, रथ, जलयान, गृहारम्भ, गृहप्रवेश और गो, गज, वाजि प्रभृतिका कार्य शुभदायक है। (ज्योतिस्तत्त्व) चित्रविचित्र रूपलावण्य ही उसके चित्रा नामका कारण है। (शतपथब्राह्मण २।१।२।१७) पुराणमें यह दक्षप्रजापतिकी चतुर्दश कन्या जैसी वर्णित और चन्द्रकी पत्नी-जैसी गण्य है। चैत्रमासकी पूर्णिमा तिथिमें चन्द्र प्रायः इसी नक्षत्रका भोग करता है। गणनाकी गड़बड़ वा अन्य किसी कारणसे कभी कभी दो-एक नक्षत्रोंका अन्तर पड़ जाता है। इसकी स्थिति ३० मुहूर्त होती है।

इस नक्षत्र पर मेषमें सूर्यका सञ्चार होनेसे गोटिकापात लगता है। उसका फल सर्वदेशमें सुवृष्टि, सकल प्रकार शस्यकी उन्नति और सर्वजनको आनन्दलाभ है।

रात्रिमानको पञ्चदश भागोंमें विभक्त करनेसे एक एक मुहूर्त होता है। उसके चतुर्दश भागको चित्राका मुहूर्त कहते हैं। यदि उस दिवस रात्रिकालको अन्य कोई नक्षत्र रहता, तो चित्रा नक्षत्रमें किया जानेवाला कार्य इसी मुहूर्तको किया जा सकता है। (मुहूर्तदीपिका) इस नक्षत्रमें जन्म लेनेवालेका राक्षसगण होता है। राक्षसगण और नरगणका विवाह नहीं बनता। कोई कोई कहते हैं कि राक्षसगण पुरुष और नरगण कन्या होनेसे विवाह करनेमें कोई दोष नहीं। (गर्गसंहिता) सोमवारको चित्रा नक्षत्र पड़नेसे पापयोग और ककचा योग होता है। उसमें यात्रा निषेध है। रविवार वा मङ्गलवारको चित्रा नक्षत्र और प्रतिपद्, षष्ठी वा एकादशी तिथि मिलनेसे अमृतयोग होता है। इस योगमें सर्वकार्य सिद्धिकर है। शुद्ध चित्रा नक्षत्र यात्रामें मध्यफलद जैसा उक्त हुआ है। शनिवारको चित्रा नक्षत्र आनेसे कालयोग होता है। इसका जैसा नाम, वैसा ही अशुभ भी समझना चाहिये। चित्रा मृदु नक्षत्रवर्गमें सम्मिलित है। इसमें मित्रता, मैथुनादिविधि, वस्त्र, भूषण, मङ्गलगीत आदि सकल कार्य शुभ होते हैं। चित्रा नक्षत्रमें ज्वरोत्पत्ति होनेसे अर्धमास भोग करना पड़ता है। कौशिकके मतसे चित्रोदन और घृतहोम करनेसे पीड़ाकी निवृत्ति होती है। भीमपराक्रममें लिखा है कि चित्राको पिष्टक और तगरपुष्प देना चाहिये।

(ज्योतिस्तत्त्व)

१८ चन्द्रकी पत्नी। १९ गायत्री स्वरूपा महाशक्ति। (देवीपुराण ४५२) २० चित्रा नक्षत्रजाता स्त्री। २१ मूषिककर्णी, मूसाकानी। २२ छन्दोविशेष। इसके पादमें पञ्चदश अक्षर पड़ते हैं। उनमें दशम तथा त्रयोदश वर्ण लघु और अवशिष्ट गुरु होते हैं। (छन्दोमञ्जरीटीका)

चित्रा—बङ्गालके यशोर जिलेकी एक नदी। यह यशोरके मध्यसे प्रवाहित हो कालीगञ्ज, गोवरा नाम स्थानोंको अतिक्रम करके फिर उसी जिलेके अभ्यन्तर देशस्थ जलीय प्रदेशमें जा अन्तर्हित हुई है। आषाढ़से अग्रहायण मास तक इसमें खूब पानी रहता है। पहले यह नवगङ्गाकी शाखा नदी थी, परन्तु आजकल नवगङ्गामें रेत पड़ और बांध बंध जानेसे इसका उत्पत्तिस्थान सम्पूर्ण रूपसे बन्द हो गया है।

चित्राक्ष (सं० त्रि०) चित्र अक्षिणि यस्य, बहुव्री०, षच्। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३। १ विचित्र नेत्रयुक्त, सुन्दर नेत्रवाला, जिसकी आँखें अच्छी हों। (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।११७।५)

चित्राक्षी (सं० स्त्री०) चित्राक्ष स्त्रियां ङीष्। शारिका, मैना।

चित्राक्षुप (सं० पु०) नित्यस०। द्रोणपुष्पी।

चित्राङ्ग (सं० पु०) १ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।११७।६) २ रक्तचित्रक, लाल चीता। ३ सर्पभेद, एक प्रकारका सर्प। ४ चित्रक, चीता। यह वातनाशक बल और मेदवर्द्धक है। (हारीत ११ अ०)

(क्ली०) चित्रं अङ्गं यस्मात्, बहुव्री०। ५ हिंगुल, ईंगुर। ६ हरिताल, हरताल। चित्रं अङ्गं यस्य। (त्रि०) ७ विचित्र अङ्गयुक्त, जिसका अंग विचित्र हो, जिसके शरीर पर चित्तियां, धारियां, आदि चिह्न हों। (पु०) ८ हरिणविशेष, किसी हिरन। ९ वृश्चिक, बिच्छू।

चित्राङ्गद (सं० पु०) १ सत्यवतीके गर्भसे उत्पन्न शान्तनु का एक पुत्र। इनके बड़े भाईका नाम विचित्रवीर्य्य था। चित्राङ्गद गन्धर्वराज चित्ररथके संग्राममें मारा गया था। २ गन्धर्वविशेष, एक गन्धर्वका नाम। (देवीभा० १।२०।२) ३ दशार्ण देशके एक राजा। (भारत अश्व० १५) ४ विद्याधरविशेष। (कथासरि० २२।१३६)

चित्राङ्गदसू (सं० स्त्री०) चित्राङ्गदं सूते चित्राङ्गद-सू-क्विप्। शान्तनुकी स्त्री सत्यवती। (भारत १।१०१ अ०)

चित्राङ्गदा (सं० स्त्री०) १ एक अप्सरा। (भारत १३।१९० अ०) २ अर्जुनकी स्त्री। ये मणिपुरपति चित्रवाहनकी कन्या थीं। (भारत १।१२५ अ०)

३ रावणकी स्त्री, जो वीरबाहुकी माता थी।

चित्राङ्गी (सं० स्त्री०) चित्रं अङ्गं यस्याः, बहुव्री०, स्त्रियां ङीप्। १ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २ कर्णजलौका, कनसलाई नामका कीड़ा, कनखजूरा।

चित्राटीर (सं० पु०) चित्रां नक्षत्रविशेषं अटति चित्रा-अट्-ईरच्। १ चन्द्र, चन्द्रमा। (चित्रं तिलकं अटति प्राप्नोति बलिच्छागाद्यविन्दुभिरिव:) २ उत्कृष्ट रक्त द्वारा अङ्कित घण्टाकर्णका कपाल। ३ शिवका अनुचर घण्टाकर्ण।

चित्रादि—पञ्जाबके चम्ब राज्यके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० ३२° २७' उ० और देशा० ७६° २५' पू०के मध्य रावी नदीके बायें किनारे अवस्थित है। यहां एक देवीका मन्दिर है जिसमें सतरहवीं शताब्दीका एक शिलालेख विद्यमान है।

चित्रादित्य (सं० पु०) चित्रस्य चित्रगुप्तस्य आदित्य, ६-तत्। प्रभासतीर्थमें चित्रगुप्त कर्तृक स्थापित सूर्यमूर्तिभेद। यह मूर्ति चित्रपथा नदीके किनारे अवस्थित है। जो चित्रपथामें स्नान कर चित्रादित्यका दर्शन करते, वे सूर्यलोकको जाते हैं। (स्कन्दपु० प्रभासखण्ड)

चित्रान्न (सं० क्ली०) कर्मधा०। अन्नविशेष, बकरीके दूधमें पकाया तथा बकरीके कानके रक्तसे रङ्गा हुआ जो और चावल।

चित्रापूप (सं० पु०) कर्मधा०। पिष्टकविशेष, पीठी, पिट्ठी।

चित्रामघ (सं० त्रि०) विचित्र धनयुक्त। स्त्रियां टाप्।

"शुचि चित्रामघे। हवं।" (ऋक् १।४८।१०)

"हे चित्रा मघे! विचित्र धनयुक्ते! मघमिति धन-नाम। चित्रं मघं यस्याः सा चित्रामघा। अन्येषामपि दृश्यते इति संहितायां पूर्वपदस्य दीर्घत्वं:" (सायण)

चित्रामघा (सं० स्त्री०) चित्रा-मघ-टाप्। उषा, प्रभात, ब्राह्मवेला। (निघण्टु)

चित्रायस (सं० क्ली०) चित्रं अयः, कर्मधा० टच् समा०। अनोश्मायःसरसां जाति संज्ञयोः। पा ५।४।९४। तीक्ष्णलौह, इस्पात।

चित्रायुध (सं० त्रि०) चित्राणि आयुधानि यस्य, बहुव्री। १ आश्चर्य आयुधकर, विलक्षण अस्त्रयुक्त (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।११७ अ०) कर्मधा०। (क्ली०) ३ आश्चर्य आयुध, विलक्षण अस्त्र।

(भारत ३।१६ अ०)

चित्रायुस् (सं० त्रि०) चित्रमायुर्यस्य, बहुव्री०। चित्रगमन या अन्नयुक्त।

"पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती।" (ऋक् ६।४९।७)

चित्रारम्भ (सं० त्रि०) १ तसवीरमें खींचा हुआ, चित्रमें दिया हुआ। (पु०) २ वह रेखा जो चित्र खींचनेके आरम्भमें खींची जाती है। ३ चित्रलिखित पुत्तलिकादि, चित्रमें खींची हुई पुतली इत्यादि।

चित्रार्पित (सं० त्रि०) चित्रे अर्पितः, ७-तत्। चित्रन्यस्त, चित्रित, चित्रमें खींचा हुआ, चित्र द्वारा दिखाया हुआ।

चित्रार्पितारम्भ (सं० त्रि०) चित्रेऽर्पित आरम्भो यस्य, बहुव्री०। चित्रलिखित।

"चित्रार्पितारम्भमवावतस्थे" (कुमार ३।४२)

चित्राल—१ युक्तप्रदेशके दीर, स्वात और चित्राल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० ३५° १५' एवं ३७° ८' और देशा० ७१° २२' तथा ७४° ६' पू०में अवस्थित है।

भूपरिमाण ४५०० वर्गमील है। चित्राल ग्रामसे इस राज्यका नाम पड़ा है। इसके उत्तरमें हिन्दूकुश पहाड़, पश्चिममें बदखशान और काफिरिस्तान, दक्षिणमें दीर तथा पूर्वमें गिलगिट एजेन्सी, मस्तूज और यासीन है।

कहा जाता है कि सबसे पहले चित्राल राज्य पर चिङ्गीजखाँने आक्रमण किया। उस समय यहां राय नामक राजा राज्य करते थे। उनके समयमें खोरामानके सनगोन अलीखाँका प्रभुत्व बहुत बढ़ा चला था। उन्होंने आ कर रायवंशका सत्यानाश कर चित्राल राज्य अधिकार कर लिया। उनके मरने पर उनके चार लड़के बड़े शूरवीर निकले। उन्होंने लगभग ३०० वर्ष तक इस राज्यमें शासन किया। वर्तमान मेहतर वंश उन्हींके वंशज हैं। राज्यके अन्तिम समयमें उन्हें अपने पड़ोसी गिलगिट, यासीन और काश्मीरके सिख शासनकर्त्ता, चिलासी तथा पठानवंशसे लड़ना पड़ा। १८५४ ई०में काश्मीरके महाराजाने चित्रालके मेहतर वंशज शाह अफजलसे दोस्ती कर मस्तूज और यासीनके शासनकर्त्ता गोहर आमनसे लड़ाई ठान दी, क्योंकि वे काश्मीरके गिलगिट राज्य पर धावा कर रहे थे। १८८० ई०में शाह अफजलके छोटे लड़के अमान-उल-मुल्क चित्राल, मस्तूज, यासीन और घिजके राजा हुए। काश्मीर-दरबारने १८७८ ई०में भारत सरकारकी सम्मतिसे उनके साथ दोस्ती कर ली।

१८८२ ई०में अमान्-उल-मुल्कके मरने पर उनके द्वितीय पुत्र अफजल-उल-मुल्क राज्य-सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। बड़े लड़के निजाम-उल्-मुल्क यासीनके शासनकर्त्ता गिलगिटको भाग चले और वहां उसके सौतेले भाई अमीर-उल-मुल्कको उत्तेजनासे मार डाले गये।

यहांके अधिवासी तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं, अदमजाद, अरबाबजाद और फकीर मिस्कीन। वे सबके सब इसलाम धर्मावलम्बी हैं।

इस राज्यकी अधिकांश जमीन उर्वरा है; इसी कारण समय समय पर अच्छी फसल लगती है। यहांके प्रधान शस्य गेहूं, ज्वार, जुन्हरी और धान हैं। यहां हरताल, लोहे और तांबेकी खान है। एक प्रकारका सामान्य सूती वस्त्र भी प्रस्तुत होता है।

राज्यशासनकी सुविधाके लिये यह देश आठ जिलोंमें विभक्त है। हर एक जिला एक एक अतालिकके अधीन है जिनका मुख्य कार्य राजस्व वसूल करना तथा लोगोंको लड़ाईमें भेजना है। अतालिकके नीचे चरवेली है जिनके अधीन कई एक ग्राम रहते हैं। हर एक ग्राम एक एक मुखियेके अधीन है। वे सड़क, किले और पुलोंकी देखभाल करते हैं। राज्य भरमें मुल्लाओंका सबसे अधिक प्राधान्य है। विचारकार्य शासनकर्त्ताके ऊपर सम्पूर्ण रूपसे निर्भर करता है। अतालिक सामान्य विषयकी मीमांसा करते हैं। फकीर मिस्कीन श्रेणीके लोग मालगुजारी वसूल करते हैं।

२ काश्मीर देशान्तर्गत कुनर या कास्कार उपत्यकास्थित चित्राल नामक राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० ३५° ५१´ उ० और देशा० ७१° ५०´ पू० पर कास्कार नदीके तीरवर्ती मुस्ताजसे ४८ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यह समुद्रतलसे ५२०० फुट ऊँचा है। यहांकी मट्टी अत्यन्त उर्वरा है, इसलिये अनेक तरहके अनाज तथा प्रचुर फलमूल होते हैं। विशेष कर यह शहर अङ्गूर फलके लिये प्रसिद्ध है। लोकसंख्या प्रायः ३३८० है।

प्रवाद है कि यह स्थान अफराशियाबका सुराभाण्डार था। इस उपत्यकाभूमिकी स्वाभाविक गठनप्रणाली और जलवायु काफिरस्थानके जैसा है। यहांके पुरुष लम्बे और बलवान् होते तथा स्त्रियां बहुत सुन्दरी होती हैं। ये बहुत कुछ चम्बा और काङ्गड़ा पहाड़ी अधिवासियोंसे मिलते जुलते हैं। यहाँ दासप्रथा साधारण रूपसे प्रचलित है एवं यहांके शासनकर्त्ता इस व्यवसायसे यथेष्ट लाभ पाते हैं।

चित्रावती—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कड़ापा जिलेकी एक नदी। यह महिसुर राज्यके अन्तर्गत नन्दीदुर्गसे निकलती और बेलारी जिला हो कर बहती हुई जमलमदुगु तालुकके मध्यस्थ पेन्नार नदीसे जा मिली है।

चित्रावसु (सं० स्त्री०) विविध नक्षत्रोंसे मण्डित रात्रि।

"चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय।" (शुक्लयजुः ३।१८)

चित्रावाव—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशस्थ गोहलेवार जिलेका एक सामन्त राज्य। इस राज्यमें

सिर्फ एक ग्राम लगता है। राजा बड़ोदाके राजाको कर देते हैं।

चित्राश्व (सं॰ पु॰) सत्यवान्‌का नामान्तर, सत्यवान्‌का एक नाम। घोड़े की तसवीर बहुत पसन्द करते थे, इस लिये उनका नाम चित्राश्व पड़ा।

चित्रिक (सं॰ पु॰) चैत्र स्वार्थे क पृषोदरादित्वात्। चैत्र मास, चैतका महीना।

चित्रिका (सं॰ स्त्री॰) चित्रा स्वार्थे कन्-कापि ह्रस्वं। चित्रा देखो।

चित्रिणी (सं॰ स्त्री॰) पद्मिनी आदि चार प्रकारकी स्त्रियोंके अन्तर्गत मीनगन्धा स्त्री। इसके लक्षण—शरीर ज्यादा लम्बा या खर्व न हो, नासिका तिलफूलके समान हो, आँखें पद्मपत्रवत् सुन्दर हों, मुख सर्वदा तिलकादि द्वारा चित्रित हो। इस प्रकारके समस्त गुणोंसे भूषित, स्तनके भारसे अवनत, रतिमें निपुणा, सुचरित्रा नायिकाको चित्रिणी कहते हैं। ऐसी स्त्रियाँ मृगजातीय पुरुषों पर अनुरक्त हुआ करती हैं। (रतिमञ्जरी)

चित्रित (सं॰ त्रि॰) चित्र कर्मणि क्त। चित्रपटमें लिखित, चित्रार्पित, चित्रमें खींचा हुआ, जिसका रङ्ग रूप चित्रमें दिखाया गया हो।

चित्रिन् (सं॰ त्रि॰) चित्र-णिनि। १ आश्चर्यकारक। अस्त्यर्थे इनि। २ चित्रकर्मयुक्त, जिसमें चित्र बने हों, जिस पर नक्काशी हों। स्त्रियां ङीप्।

"अमिमिथदयाति तुतुजिरा चित्रिणीषा" (ऋक् ४।३२।२)
'चित्रिणीषु चित्रकर्मयुक्तासु' (सायण)

चित्रिय—एक प्रकारके अश्वत्थका नाम, एक तरहका पीपर।

चित्रीकरण (सं॰ क्लो॰) आश्चर्यकरण, वह जिसे देख कर आश्चर्य हो।

चित्रीयमाण (सं॰ त्रि॰) चित्र-ङ-क्यच्। नमोवरिवश्चित्रङः पा ३।१।१९। शानच्। विस्मयकर, आश्चर्यजनक।

चित्रेश (सं॰ पु॰) ६-तत्। चित्रानक्षत्रपति, चन्द्रमा।

चित्रेश्वर (सं॰ क्लो॰) प्रभासक्षेत्रमें चित्रगुप्तसे स्थापित शिवलिङ्ग। (प्रभासखण्ड)

चित्रेश्वरी—कलकत्तेके उत्तर प्रान्तस्थित चित्रपुरमें अवस्थित एक देवीकी मूर्ति और उनका प्राचीन देवमन्दिर। पहले बहुतसे यात्री यह मन्दिर देखनेके लिये आते थे, अब वैसी समृद्धि नहीं है।

चित्रोक्ति (सं॰ स्त्री॰) चित्रा आश्चर्यकारिणी उक्तिः कर्मधा॰। १ चित्र कथन, अलंकृत भाषामें कथन। २ आकाशवाणी।

चित्रोड़ बम्बई प्रदेशस्थ काठकोटसे १३ मीलकी दूरी पर अवस्थित एक ग्राम। यहांसे १ मील उत्तर मिवासा नगरके चार प्राचीन जीर्णमन्दिर पुराकालके भास्कर विद्याका परिचय दे रहे हैं। मिवासासे एक मील पूर्व पार्श्वस्थित वितिवेतीके भग्नावशेषके निकट एक महादेवका मन्दिर रह गया है। उस मन्दिरमें १५५८ संवत्‌का लिखा हुआ एक शिलालेख है।

चित्रोति (सं॰ त्रि॰) नानाविध रक्षियुक्त, आनन्ददायक, जिसे देख कर मन खुश हो। (ऋक् १०।१४०।७)

चित्रोत्तर (सं॰ क्लो॰) एक प्रकारका काव्यालङ्कार जिसमें कई प्रश्नोंका एक ही उत्तर हो वा प्रश्नहीके शब्दोंमें उत्तर हो।

चित्रोत्पला—१ उत्कलकी एक प्रसिद्ध नदी। (उत्कलखण्ड ११ अ॰) इसका वर्तमान नाम चितरतला है। चितरतला देखो।

२ पुराणोक्त एक नदी। मत्स्य और मार्कण्डेयपुराणके अनुसार यह ऋक्षपादसे निकली है।

(मार्कण्डेयपु॰ ५७ २२, मत्स्य ११३।२५, वामन १३ अ॰)

चित्रोपला (सं॰ स्त्री॰) चित्र उपलो यस्यां, बहुव्री॰, स्त्रियां टाप्। नदीभेद, एक नदी जिसका उल्लेख महाभारतमें है। "चित्रोपला चित्रपथा" (भारत भीष्म॰ ९ अ॰)

चित्रौदन (सं॰ क्लो॰) केतु पूजामें देनेयोग्य विचित्र अन्नविशेष।

"चित्रौदनञ्च केतुभ्यः सर्वभक्ष्यैः समर्चयेत्।" (ग्रहयागतत्त्व)
चित्रान्न देखो।

चित्र्य (सं॰ त्रि॰) चित्र कर्मणि यत्। १ पूज्य।

"स धीमाधतयो दिवि चित्र्यं रथं।" (ऋक् ५।६३।७)
'चित्र्यं पूज्यं' (सायण)

२ चायनीय, चुनने या इकट्ठा करने योग्य।

"चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः।" (ऋक् ७।२०।७)
'चित्र्यं चायनीयं' (सायण)

चिथड़ा (हिं० पु०) फटा पुराना वस्त्र, कपड़ेकी बनी हुई धज्जी, लत्ता।

चिथाड़ना (हिं० क्रि०) १ चीरना, फाड़ना, टुकड़ा टुकड़ा करना। २ अपमानित करना, लज्जित करना, जलील करना।

चिद् (अव्यय) चित् पृषो०। १ अप्यर्थ. नाश करनेके लिये। (ऋक् २।१०।३) २ एव, साम्य, इसी प्रकार, ऐसे (ऋक् २।११।२) ३ च अपरार्थ। (ऋक् ५।४१।१७) ४ पूजा। (ऋक् १।१८७।५)

५ कुत्सा, निन्दा, बदगोई। (ऋक् १।१६७।८ ६ पादपूरण, पद या चरण पूरा करनेके लिये। (ऋक् ५।२०।१) ७ असाकल्य, अपूर्ण, अधूरा। ८ उपमा, तुलना, मिलान। ९ कुत्सित, निन्दित, खराब। (निरुक्त १।४) किं शब्दके परस्थित चित् शब्द पहले रहे तो तिङन्तपद उदात्त नहीं होता है। (पा ८।१।४८) चित् शब्दके परेमें रहने पर तिङन्तपद भी उदात्त नहीं होता। (पा ८।१।५७) चित् शब्द उपमार्थमें प्रयुक्त होनेसे वाक्यके अन्त्यस्वरसे शेष वर्ण तकका अनुदात्त स्वर प्लुत होता है। (पा ८।१।१०१)

चिदम्बर—एक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकार। अनन्तनारायणके पुत्र और कौशिक सूर्यनारायण दीक्षितके पौत्र। इनके पुत्रका नाम भी अनन्तनारायण था। इन्होंने भागवतचंपू, शब्दार्थचिन्तामणि और उसकी टीका तथा कथात्रयीव्याख्यान वा राघवयादवपाण्डवीय नामक ग्रन्थोंकी रचना की थी। कथात्रयीव्याख्यानका कुछ अंश उनके पुत्र अनन्तनारायणका बनाया हुआ है।

चिदम्बरम्—१ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत दक्षिण आर्काट जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १०° ११´ एवं ११° ३०´ उ० और देशा० ७९° १९´ तथा ७९° ४९´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०२ वर्गमील है, जिसमेंसे प्रायः २७० वर्गमील परिमित स्थानमें खेती होती है। अधिवासियोंमें प्रायः ¼ अंश मुसलमान और शेष हिन्दू हैं। इसका प्रधान नगर चिदम्बरम् और पोर्टोनभो है। लोकसंख्या प्रायः २९४८६८ है। इसमें ३२६ गांव और २ शहर लगते हैं।

२ पूर्वोक्त चिदम्बर तालुकाका प्रधान नगर और एक प्राचीन तीर्थ। अङ्गरेज लोग इसे चिलम्बरम् कहते हैं। यह नगर अक्षा० ११° २५´ उ० और देशा० ७९° ४२ पू० तथा कड्डालुरसे २५ मील दक्षिण समुद्रतटसे ७ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। तालुकका सदर होनेके कारण यहां जिलेके अधीनस्थ कलक्टरी, दीवानी और पुलिस अदालतें, डाकघर और साहबोंके बङ्गले हैं। लोकसंख्या प्रायः १९९०९ है। अधिवासियोंमेंसे एक चतुर्थांश रेशम और कपास वस्त्र बुनते हैं। यहां चिदम्बरेश्वरदेवके उत्सव उपलक्षमें प्रतिवर्ष पौष मासकी शुक्ल पञ्चमीसे पूर्णिमा तक एक बड़ा मेला लगता है। मेलामें चारों ओरसे प्रायः ४०।६० हजार मनुष्य देव दर्शन और व्यवसादि उपलक्षमें जुटते हैं।

दाक्षिणात्यमें अङ्गरेज और फरासीस विप्लवके समय चिदम्बरम् एक सेनानिवासमें गिना जाता था। १७४९ ई०में कप्तान कोप् देवीकोटके आक्रमणसे निराश हो लौटते समय ससैन्य यहां आ पहुँचे। १७५३ ई०में फरासीसियोंने अङ्गरेज सैनिकोंको इस स्थानसे भगा दिया। १७५९ ई०में अङ्गरेजोंने इसे जीतनेकी अधिक चेष्टा की, किन्तु सब परिश्रम निष्फल गया। १७६० ई०में फरासीसियोंने हैदरअलीको चिदम्बरम् अर्पण किया। हैदरने भी इसे सुरक्षित करनेके लिये चारों ओरसे बड़ी बड़ी दीवारोंसे घेर डाला। १७८१ ई०में जब सर आयरकूटने चिदम्बरम् पर आक्रमण किया तो उन्हें विशेष कष्ट सहना पड़ा और अन्तमें वहांसे भगा दिये गये।

चिदम्बरके देवालय बहुत विख्यात हैं जिनमेंसे शिवदुर्गाका कनकसभा सबसे प्रधान है। स्थलपुराणके मतसे पञ्चम मनुके पुत्र श्वेतवर्ण (नामान्तर हिरण्यवर्ण) ने यह मन्दिर बनाया था। श्वेतवर्णको श्वेतकुष्ठ हुआ था, इसी कारण वे पितृदत्त गौड़राज्यके भोग पर लात मार कर तीर्थ पर्यटन करते हुए दाक्षिणात्यके काञ्चीपुर नगर-में जा पहुँचे। वहां इन्होंने किसी एक व्याधसे सुना कि चिदम्बरनगरमें व्याघ्रपद नामक एक ऋषि रहते हैं। बहुत कुतूहलसे ये चिदम्बरको पहुँचे। ऋषिवर एक अरण्यमें आकाशरूपी शङ्करदेवके एक मन्दिरके पास रहते थे। श्वेतवर्ण वहां जा पहुँचे। ऋषिने ध्यानके जरिये उनका आगमन वृत्तान्त जान कर शङ्करके आज्ञानुसार राजाको हेमतीर्थमें स्नान करनेका आदेश किया। उनके

चिदम्बरकी एक नाट्यशाला।

कथनानुसार उस तीर्थमें स्नान करनेके साथ ही राजाका रोग जाता रहा। उन्होंने दिव्य काञ्चन-कान्ति प्राप्त की। तभीसे वे श्वेतवर्णके बदले हिरण्यवर्ण कहलाने लगे। शङ्करकी कृपासे उस दुःसाध्य रोगसे मुक्त हो कर उन्होंने कनकसभा नामक शिवका मन्दिर निर्माण किया। इस मन्दिरमें कोई विग्रह या लिङ्ग नहीं है। यहां महादेव की पाञ्चभौतिक-मूर्तिकी अन्यतम आकाश-मूर्तिकी पूजा होती है। देवालयके सामने एक परदा लटका रहता है। जब कोई यात्री देवदर्शन करने आता है तो पुरोहित परदाको अलग कर देते हैं, उस समय देवालय की दीवारके सिवा कुछ भी दीख नहीं पड़ता है। क्योंकि देवता आकाशरूपी हैं सुतरां वे मानव-चक्षुके अगोचर हैं। यह लिङ्ग चिदम्बर-रहस्य नामसे प्रसिद्ध है और इसीसे नगरका नाम चिदम्बर पड़ा है। मन्दिरके पुरोहित दीक्षित नामसे ख्यात हैं। क्षेत्रमाहात्म्यके मतानुसार ये पद्मयोनिके आदेशसे तेवाईसे वाराणसी जा कर रहते हैं। हिरण्यवर्णने इनके तीन हजार व्यक्तिको चिदम्बर बुलाये थे। तभीसे ये चिदम्बरमें ही वास करते आ रहे हैं।

यह सब प्रवाद विश्वास करनेसे जाना जाता है कि चिदम्बरका मन्दिर बहुत प्राचीन है। काश्मीर राजवंशके इतिहासमें हिरण्यवर्ण राजा और उनके सिंहलजयका उल्लेख है। यदि ये ही चिदम्बरके कनकसभाके निर्माता गिने जाय तो यह स्पष्ट है कि यह मन्दिर लगभग ५वीं शताब्दीमें बनाया गया था। कोङ्गु देशराजकाल नामकी पुस्तकमें लिखा है,—"वीरचोलरायने एक दिन चिदम्बरेश्वर (शिव) और पार्वतीको समुद्रतीर पर नृत्य करते देख कर उन्हींके लिये कनकसभाकी सृष्टि की।" वीरचोलरायने ९२७ ई०से ९७७ ई० तक राज्य किया था। उसके अनुसार यह मन्दिर दशवीं शताब्दीमें निर्माण

किया गया है ऐसा प्रमाणित हो सकता है।

उक्त ग्रन्थमें एक स्थानमें लिखा है कि—"अरिवेरिदेव नामक वीरचोल राजाके पौत्रने चिदम्बरेश्वरके उद्देश-से गोपुर, मण्डप, सभागृह और प्राकारादि निर्माण किया।" अरिवेरिदेव १००४ ई०में विद्यमान थे। सम्भव है कि यह प्राचीर देवालयके भीतरका ही प्राचीर होगा। बाहरके प्राचीर भी सम्भवतः सोलहवीं शताब्दीके प्रथमभागमें आरंभ हुआ था, किन्तु वह अधूरा ही रह गया।

मन्दिरके चारों सीमाके मध्यभागमें एक पुष्करिणी है जिसकी लम्बाई १५० फुट और चौड़ाई १०० फुट है तथा यह चारों ओर पत्थरसे बंधा है। क्षेत्रमाहात्म्यके मतसे यह तीर्थ प्राचीन हेमतीर्थके ऊपर निर्मित हुआ है। बहुतसे मनुष्य इस सरोवरमें भक्तिभावसे स्नान करते हैं। बहुत मनुष्योंके स्नान करने तथा उसका जल बाहर नहीं निकलनेके कारण जलका रङ्ग हरा हो गया है। मन्दिरमें चार कूप हैं जिनका जल पीनेके काममें लाया जाता है। कूपका जल भी स्वास्थ्यकर नहीं है।

इस सरोवरके उत्तरभागमें पार्वतीका मन्दिर है। मन्दिरके सामने नाटमण्डप अत्यन्त सुन्दर और अनेक तरहके भास्करकार्य्योंसे समन्वित है।

पुष्करिणीके दक्षिणकी ओर विख्यात सहस्रस्तम्भमण्डप है। यह बहुत कुछ श्रीरङ्गम्के मन्दिरसे मिलता जुलता है, किन्तु उससे पीछेका बना हुआ मालूम पड़ता है। मण्डपमें अच्छे अच्छे भास्करकार्ययुक्त एकसहस्र स्तम्भ हैं।

दूसरे एक मण्डपमें नटेश्वर महादेवकी मूर्ति है। प्रवाद है कि किसी समय महादेवने एक पैरसे नृत्य कर भगवतीको परास्त किया था। तभीसे उस स्थानमें वे नटवेषसे एक पदमें अवस्थान कर रहे हैं। स्थलपुराणके मतानुसार वह मूर्ति श्रीरामचन्द्रसे भी पहलेकी है। किन्तु उन सब पुराणोंमें वे सिर पैरका उपाख्यान रहनेके कारण विश्वासयोग्य नहीं है।

एक दूसरे मन्दिरमें अनन्तशायी विष्णुमूर्ति और पिल्लियर नामक दूसरे मन्दिरमें विघ्नेश्वरकी मूर्ति विराजमान हैं। सम्पूर्ण देवालयका परिमाणफल प्रायः १२० बीघा होगा।

दीक्षित उपाधिधारी पुरोहित मन्दिरकी देवसेवा किया करते हैं। वे एक सभामें एकत्र हो कर कर्त्तव्याकर्त्तव्य स्थिर करते हैं। किसी एक सभ्यके किसी विषयमें आपत्ति करने पर वह कार्यमें परिणत नहीं हो सकता है। उनके सहमत बिना कोई कार्य स्थिर नहीं होता है। जिसका उपनयन हो गया है, इस तरहसे दीक्षित होनेके लिए सभामें सबको समान क्षमता है। इसीलिये लड़कोंका बहुत अल्प अवस्थामें उपनयन हो जाता है। बीस बीस दीक्षित एकबार पूजामें नियुक्त रहते हैं। इन लोगोंमेंसे एक एक मनुष्य प्रतिदिन एक एक मन्दिरमें पूजा करते हैं। इस तरह २० दिनोंमें हर एकको सब मन्दिरोंमें एक बार करके पूजा करनी होती है। बाद २० नये दीक्षित आ कर उनका स्थान अधिकार करते हैं। पूजाके नैवेद्यादि पूजक दीक्षित ही ग्रहण करते हैं, किन्तु उत्सवादिके समय या किसी दूसरे कारणसे अधिक मोदक और दक्षिणादि संग्रह होने पर वह सब दीक्षितोंमें बाँट दिया करते हैं। ये देवताओंकी पूजा अदा करनेके लिये मन्द्राजसे कुमारिका तक प्रत्येक ग्राममें जाते हैं। जो कुछ भिक्षा उपार्जित होती है उसमेंसे कुछ देवसेवामें अर्पण कर शेष स्वयं ग्रहण करते हैं। किसी एक दीक्षितके एक घरसे एक बार भिक्षा लेने पर फिर दूसरा दीक्षित उस घरमें नहीं जाता है।

चिदम्बरतन्त्र, स्कन्दपुराणीय, चिदम्बरमाहात्म्य प्रभृति संस्कृत ग्रन्थोंमें चिदम्बरका देवमाहात्म्यादि विस्तार रूपसे वर्णित है। शङ्कराचार्य देखो।

चिदाकाश (सं० पु०-क्ली०) चित् आकाशमिव निर्लेपत्वात् सर्वाधारत्वाच्च। आकाशवत् निर्लिप्त परब्रह्म। जिस तरह आकाश किसी पदार्थके साथ लिप्त न हो कर सर्वाधार रूपसे अवस्थित है, उसी तरह चिन्मय परब्रह्म सब वस्तुओंमें निर्लिप्त होते हुए भी सबके आधाररूप विद्यमान हैं।

चिदात्मन् (सं० पु०) चित् चैतन्यमात्मा स्वरूपमस्य। चैतन्य स्वरूप परब्रह्म।

"एतद्रूपं भगवतोह्यरूपस्य चिदात्मनः।" (भागवत १।३।३०)

चिदानन्द (सं० पु०) चैतन्य और आनन्दमय परब्रह्म।

चिदानन्दयोगी—एक दार्शनिक, तोटकव्याख्याके रचयिता।

चिदानन्दसरस्वती—आत्मप्रकाश नामक वेदान्तिक ग्रन्थके एक व्याख्याकार।

चिदाभास (सं० पु०) चित आभासः प्रतिविम्बः, ६-तत्। १ बुद्धि या महत्तत्त्वमें चैतन्यका प्रतिविम्ब। २ जीवात्मा।

चिद्रूप (सं० त्रि०) चिदेव रूपमस्य, बहुव्री०। १ स्फूर्त्ति-युक्त। २ हृदयालु, प्रशस्तचेता। ३ ज्ञानमय। (पु०) ४ आत्मा, जीव। (क्ली०) ५ चैतन्य स्वरूप ब्रह्म, ज्ञानमय परमात्मा। चिद्रूपिणी स्त्री।

चिदुल्लास (सं० त्रि०) चिदिव उल्लास उज्ज्वलः, कर्मधा०। उपमानानि सामान्य वचनैः। पा २।१।५५ १ चैतन्यके जैसा उज्ज्वल।
"मुक्ताफलं चिदुल्लासैः।" (भागवत ८।२१।३६)
'चिच्चैतन्यं तद्वदुल्लासैरुज्ज्वलैः' (श्रीधर) उत्-लस भावे घञ्, ६-तत्। (पु०) २ चैतन्यका स्फूरण, ज्ञानकी धड़धड़ाहट।

चिद्रूपाश्रम—एक प्रसिद्ध व्याकरणवित्। इन्होंने परिभाषेन्दुशेखरके विषमी नामकी टीका और दीपव्याकरण रचे हैं।

चिद्विलास—१ शङ्कराचार्य्यके एक शिष्य। दाक्षिणात्यमें बहुतोंका विश्वास है कि ये भी शङ्करविजय नामक संस्कृत भाषामें शङ्कराचार्य्यका एक चरित्र रचना किये हैं। उस ग्रन्थमें चिद्विलास वक्ता और विज्ञानकन्द श्रोता हैं।
(पु०) २ चैतन्य स्वरूप ईश्वरकी माया।

चिन (देश०) १ हिमालय पर्वत पर होनेवाला एक बहुत बड़ा और सुन्दर पेड़। इसकी लकड़ी इमारतोंके काममें आती है। २ मवेशियोंके खाने लायक एक तरहकी घास। यह खेतोंके किनारे होती है। लोग इसे सुखा कर भी रखते हैं।

चिनक (हिं० पु०) १ पीड़ा, चुनचुनाहट। २ वह जलन और पीड़ा जो सूजाकमें होती है।

चिनकिलीचखाँ-निजाम उल्-मुल्क आसफजा दाक्षिणात्यमें दिल्लीके मुगलसम्राट्के एक प्रतिनिधि, ये पहिले मालवाके शासनकर्त्ता थे। उस समय महाराष्ट्री शम्भुजी और साहूमें आपसका झगड़ा खूब बढ़ रहा था, चिनकुलीखाँने शम्भुजीका पक्ष लिया था। चन्द्रसेन नामक मराठी सेनापति साहूका विरागभाजन हो कर इनके शरण आया, इन्होंने उसे आश्रय और पारितोषिक दे सन्तुष्ट किया। ये हैदराबादके निजाम-वंशके प्रतिष्ठाता थे।

१७१४—१७२० ई०में दिल्लीके सम्राट्के ऊपर सैयद-द्वयके एकाधिपत्य पर विरक्त हो कर इन्होंने मालवाके शासनकर्त्ताका पद छोड़ कर समस्त दाक्षिणात्यके अधीश्वर बननेकी चेष्टा की थी। इन्होंने खानदेश लूटा था और उसके विरुद्धमें आई हुई मुगल सेनाको बुरहानपुर नामक स्थानमें पूर्ण रूपसे परास्त किया था। मुगल सेनापति दिलावरअलीखाँ इस युद्धमें मारे गये थे। बादमें महाराष्ट्रसेनाके नायक आलम अलीखाँके अधीन निजाम-उल्-मुल्कके विरुद्ध यात्रा की। बालापुर नामक स्थानमें सेनापतिकी मृत्यु हो गई। कुछ भी हो, थोड़े ही दिनोंसे दिल्लीसे सैयदोंका एकाधिपत्य जाता रहा, और सम्राट मुहम्मद शाहने सैयदोंके करकमलसे छुटकारा पाया। चिनकिलीचखाँ भी उस समय दाक्षिणात्यके स्थायी राजप्रतिनिधि नियुक्त हुए थे, तथा स्वाधीन भावसे राज्य किया था। किन्तु सम्राट्के साथ उनका मनोमालिन्य बना ही रहा।

१७२७ ई०में निजाम उलमुल्क मराठोंका बल बढ़ते देख बहुत शङ्कित हुए थे। उन्होंने नाना प्रकारके कौशलोंसे उन्हें वशमें किया और हैदराबाद राजधानी स्थिर की।

१७२८ ई०में फिर पेशवाके बाजीरावके साथ उनका घोर युद्ध हुआ। सम्भुजीने इन युद्धोंमें उनकी सहायता की थी। किन्तु बाजीरावके युद्धनैपुण्यको देख कर निजाम-उल्-मुल्कको सन्धिका प्रस्ताव करना पड़ा। बाजीरावने भी इस प्रस्तावका अनुमोदन किया। सन्धिकी शर्त्त यह थी कि शम्भुजीको बाजीरावके तम्बूमें भेजना होगा। भविष्यमें महाराष्ट्रोंके अंशानुसार कर संग्रहके विषयमें किसी प्रकारकी प्रतिबन्धकता न पड़े, इसके लिए कुछ मजबूत किले जमानतके रूपमें रखने होंगे, तथा बाकीका कर वसूल कर देना होगा।" निजाम उल्मुल्कने पहिलीके सिवा पीछेकी दो शर्त्तें मञ्जूर कर लीं, बादमें बाजीरावके इस शर्त्तको मञ्जूर करने पर कि—"शम्भुजीको बिना किसी प्रकारकी तकलीफके वापिस भेज देंगे"—उन्होंने भी उस प्रस्तावको मञ्जूर कर लिया। तदनन्तर उन्होंने कभी महाराष्ट्रोंके साथ सद्भाव और कभी असद्भाव रखते हुए १७४८ ई० तक दाक्षिणात्यमें स्वाधीनतापूर्वक राज्य किया। १७४१

ई०में किसी जरूरी कामके लिए उन्हें दिल्ली जाना पड़ा था; किन्तु वहां कुछ दिन ठहरनेके बाद उनके पुत्र नासिरजङ्गकी विद्रोहवार्त्ता सुन जल्दी लौट आना पड़ा था। १७४८ ई०में उनकी मृत्यु हुई थी।

चिनगारी (हिं० स्त्री०) १ आगका वे छोटे कण या टुकड़े जो जलती हुई आगसे निकलते हैं। २ जलती हुई आगका कण या टुकड़ा।

चिनगी (हिं० स्त्री०) १ अग्निकण, चिनगारी। २ चतुर लड़का, चुस्त और चालाक लड़का। ३ नटोंके साथ रहनेवाला लड़का।

चिनमन्देम्—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कड़ापा जिलेके रायचाती तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १३° ५६' उ० और ७८° ४४' पू०में अवस्थित है।

चिनाई दौड़ (हिं० स्त्री०) जहाजका चक्कर, जहाजकी घुमावफिराव।

चिनाव (हिं० पु०) पञ्जाबकी एक नदी। चन्द्रभागा देखो।

चिनिओत—१ पञ्जाब प्रदेशके झंग जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३१° २३' एवं ३२° ४' उ० और देशा० ७२° २४ तथा ७३° १४' पू०के मध्य रेचना-दोआब पर अवस्थित है। भूपरिमाण १०१२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २००६७६ है। तहसीलकी आमदनी प्रायः २६४०००) है।

२ पञ्जाबके अन्तर्गत झंग जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ३१° ४३' उ० और देशा० ७३° ० पू०के मध्य तथा चन्द्रभागा नदीसे दो मील दक्षिण एवं झंगसे वजीराबाद तक जो रास्ता गया है उसी पर अवस्थित है। लोकसंख्या १५६८५ है। अठारवीं शताब्दीमें अहम्मदशाह दुरानीने इस नगरको एक बार तहस नहस कर डाला था। अभी यह एक समृद्धिशाली स्थान गिना जाता है। यहां शाहजहांके राजत्वकालमें नवाब सदुल्लाखाँ तहीमकी बनाई हुई एक मसजिद और शाहबरहन नामक मुसलमान साधुके नामसे प्रतिष्ठित एक मन्दिर है। काष्ठ और पत्थरके खोदे हुए कामोंके लिये यह नगर प्रसिद्ध है। मोटे सूती कपड़ेका व्यवसाय भी यहां अधिक होता है। यहांसे रेशम, घी, हड्डी सींग और चमड़ेकी रफ्तनी होती है।

चिनिया (हिं० वि०) १ चीनीके रंगका, सफेद। २ चीन देशका, जो चीन देशका हो, चीनी।

चिनिया केला (हिं० पु०) एक तरहका छोटा और बहुत मीठा केला जो बंगालमें होता है।

चिनिया घोड़ा (हिं० पु०) घोटकविशेष, एक तरहका घोड़ा जिसके चारों पैर सफेद हों और समूचे शरीरमें लाल और कुछ सफेद बाल हों।

चिनियाबत (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक तरहकी चिड़िया जो बतकसे मिलती जुलती है।

चिनिया बादाम (हिं० पु०) एक तरहका फल। छिलका अलग कर इसके भीतरका भाग खाया जाता है। मूंगफली।

चिनियारी (हिं० स्त्री०) शाकविशेष, एक तरहका साग।

चिन्तक (सं० त्रि०) चिन्तयति चिन्ति-ण्वुल्। ण्वुल्तृचौ पा ३।१।१३३। १ चिन्तन करनेवाला, ध्यान करनेवाला। २ सोचनेवाला, विचार करनेवाला।

चिन्तन (सं० क्ली०) चिति णिच् भावे ल्युट्। १ अनुध्यान, चिन्ता। २ विवेचना, विचार, गौर।

चिन्तना (सं० स्त्री०) १ चिन्ता, सोच। २ स्मरण, ध्यान।

चिन्तनीय (सं० त्रि०) चिति णिच् कर्मणि अनीयर। १ अनुध्येय, भावनीय, ध्यान करने योग्य।

"अतोऽस्यचिन्तनीयस्तु" (भागवत ८।११।३८)

२ चिंता करने योग्य, जिसको फिक्र करना उचित हो। ३ विचार करने योग्य, सोचने समझने लायक।

चिन्ता (सं० स्त्री०) चिति णिच् स्त्रियामङ् चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च। पा ३।३।१०५। ततोऽदन्तत्वात् टाप्। अजाद्यतष्टाप्। १ आध्यान, भावना, ध्यान।

"चिन्ता दीर्घतमा प्रतः" (भा० ७।५।४४०)

२ कम्पनापति उदयकी स्त्री। (राजत० ८।१४५१) ३ नाटकोक्त व्यभिचारी गुणविशेष, इसका लक्षण प्रिय वस्तुके अप्राप्तिके लिये उस विषयका ध्यान है। यह दृष्टकी शून्यता, शारीरिक ताप और दीर्घ निश्वास द्वारा अनुमित होता है। साहित्यमें चिन्ता करुण रसका व्यभिचारी भाव माना जाता है। (साहित्यदर्पण) ४ दर्शनसम्भोगविषयक भावना भेद, वह भावना जो किसी प्राप्त दुःख या दुःखकी आशङ्का आदिसे हो, सोच, फिक्र, खटका इसका पर्याय-आध्या, ध्याम और चिन्तिति है।

चिन्ताकर्मन् (सं० क्लो०) चिन्तैव कर्म, कर्मधा० । चिन्तारूप कार्य्य, वह काम जो चिन्ताजनक हो ।

चिन्ताकारिन् (सं० त्रि०) चिन्तां करोति चिन्ता-कृ-णिनि । चिन्ता करनेवाला, जो सोच करता हो ।

चिन्ताकुल (सं० त्रि०) चिन्तासे व्यग्र, फिकिरमन्द ।

चिन्तातुर (सं० त्रि०) चिन्तासे घबराया हुआ, जो सोचसे उद्विग्न या बेचैन हो गया हो ।

चिन्तापर (सं० त्रि०) चिन्ता परा प्रधानं यस्य, बहुव्री० । चिन्तासक्त, चिन्तान्वित, सोचसे व्याकुल ।

चिन्तामणि (सं० पु०) चिन्तायां सव कामदो मणिरिव । शाक-पार्थिववत् समासः अथवा चिन्तया ध्यान-धारणादिना मन्यते आज्ञयते चिन्ता मन-इण् । १ ब्रह्मा । २ बुद्धविशेष, एक बुद्धका नाम । ३ कामप्रद मणिभेद, एक प्रकारका रत्न जिसके विषयमें प्रसिद्ध है कि उससे जो अभिलाषा की जाय वह पूरा कर देता है ।

"चिन्तामणीनुदारांश्च चिन्तिते सर्व्वकामदान् ।" (हरिवंश १५२ अ०)

४ सर्वकामद परमेश्वर । ५ मन्त्रविशेष । ६ यात्रिकयोगभेद, यात्राका एक योग । मङ्गल सहज स्थानमें और बृहस्पति भाग्य स्थानमें रहे तो उसे चिन्तामणि योग कहते हैं, इसमें यात्रा करनेसे मनोरथ सिद्ध होता है । (ज्योतिष) ७ स्पर्श मणि ।

"यथा चिन्तामणिं स्पृष्ट्वा लोहं काञ्चनतां व्रजेत् ।"

(पद्मपु०-उत्तरखण्ड)

८ गणेशभेद, स्कन्दपुराणके अनुसार वह गणेश जिन्होंने कपिलके घरमें जन्म लिया था । महाबाहु गण नामक दत्यने कपिलसे चिन्तामणि छीन लिया था, इसी कारण इन्होंने उसका विनाश कर उस मणिका उद्धार किया था । उस समय ये चिन्तामणि नामसे अभिहित हुए थे ।

(स्कन्दपु० गणपतिकल्प)

९ अश्वविशेष, एक तरहका घोड़ा जिसके कण्ठमें एक बड़ा लोमावर्त्त या भौंरी हो । (नकुलकृताश्वचिकित्सा)

१० कृष्णकीर्त्ति प्रबन्ध नामक संस्कृत ग्रन्थकार ।

११ एक विख्यात ज्योतिर्विद् जो मुहूर्त्त चिन्तामणिके रचयिता रामके पितामह थे । इन्होंने संस्कृत भाषामें निम्नलिखित कई एक ग्रन्थ बनाये हैं—गणिततत्त्व-चिन्तामणि, ग्रहगणितचिन्तामणि, ज्योतिःशास्त्र, रमल-शास्त्र, रमलचिन्तामणि, रमलोत्कर्ष ।

१२ मुहूर्त्तमाला नामक ज्योतिःशास्त्रकार ।

१३ एक विख्यात संस्कृत ग्रन्थकार जो हरिहरके पुत्र और सिद्धेशके पौत्र थे । इन्होंने अञ्चावली, अभिधान-समुच्चय, कंसवध, कादम्बरीरस, कृत्यपुष्पाञ्जलि, त्रिशिरो-वध, वासुदेवस्तव, शम्बरारिचरित तथा १५७३ ई०में वाङ्मयविवेक नामक छन्दोग्रन्थ रचे हैं ।

१४ शेष नृसिंहके पुत्र जो शेषचिन्तामणि नामसे विख्यात थे । इन्होंने संस्कृत भाषामें छन्दःप्रकाश, मेघदूतटीका, रसमञ्जरीका भाष्य, रुक्मिणीहरणनाटक तथा वृत्तरत्नाकरकी सुधा नामकी टीका प्रणयन की हैं । १५ शिवपुरवासी गोविन्दज्योतिर्विद्के पुत्र जो दैवज्ञ चिन्तामणि नामसे विख्यात हैं । इन्होंने १६३० ई०में प्रस्तारचिन्तामणि नामक एक छन्दोग्रन्थ और उसकी टीका रचना की है । १६ ज्ञानाधिराजकृत सिद्धान्त-सुन्दरके एक टीकाकार । इसी नामसे संस्कृत भाषामें न्याय और धर्मशास्त्र सम्बन्धीय बहुतसे ग्रन्थ हैं ।

चिन्तामणि—महिसुरके कोलार जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० १३° १८´ एवं १३° ४०´ उ० और देशा० ७७° ५१´ तथा ७८° १३´ पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण २७२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५७१४४ है । इस तालुकमें चिन्तामणि नामक एक शहर और ३४१ ग्राम लगते हैं । यहांका राजस्व १,२२,०००) रु० है । कम्बल और मोटे कपड़े यहां तैयार होते हैं ।

चिन्तामणि न्यायवागीश भट्टाचार्य्य—गौड़वासी एक विख्यात स्मार्त्त । इन्होंने स्मृतिव्यवस्थाकी रचना की है । इस ग्रन्थमें संक्षेपसे उद्वाह, तिथि, दाय, प्रायश्चित्त, शुद्धि और श्राद्धव्यवस्था वर्णित है ।

चिन्तामणिचतुर्मुख—एक औषधि या दवा । प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—रससिन्दूर २ तोला, लौह १ तोला, अभ्र १ तोला, स्वर्ण आधा तोला, इन सबको एकत्र घृतकुमारीके रसमें माड़ कर एरण्ड (अण्डी)-के पत्तेमें लपेट कर धान्यराशिमें रख देना चाहिये । फिर तीन दिन बाद उसे निकाल कर २ रत्ती प्रमाण गोलियां बनानी चाहिये । अनुपान—मधु वा चायनी और त्रिफलाका पानी । इसके खानेसे अपस्मार और उन्माद आदि नाना रोगोंकी शान्ति होती है । (भैषज्यर०) रसप्रकार देखो ।

चिन्तामणिपेंट—महिसुर राज्यके अन्तर्गत कोलार जिला-का एक नगर। यह अक्षा० १३° २१' २०" उ० और देशा० ७८° ५' ४५" पू० पर कोलारसे २५ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५११६ है।

चिन्तामणिराव नामक एक महाराष्ट्रीने यह नगर स्थापित किया था इसी कारण इन्हींके नाम पर नगर-का नाम रखा गया है। यहां सोना, चाँदी, जवाहरात तथा अनेक तरहके अनाजोंका वाणिज्य होता है।

चिन्तामणिरस—औषधविशेष, एक औषध इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा १ तोला, गन्धक १ तोला, अबरक १ तोला, विष ॥ तोला, जमालगोटा १॥ तोला, इन सबको जम्बोरी नीबूके रसमें घोंट कर गोलाकार बना ३ पानोंमें लपेट कर उसे मिट्टीके डिब्बेमें रख देना चाहिये, फिर ऊपरसे उसका मुंह बन्द करनेके लिए, कपड़ा कूट कर मिट्टीमें मिला उस मिट्टीको थोप कर लघुपुटसे पाक करना चाहिये। ठण्डा होने पर उठा कर उक्त ३ पानोंके साथ सबको पीस कर पुनः जमालगोटा ॥ तोला और विष ॥ तोला मिला कर अदरकके रसमें माड़ कर १ रत्ति प्रमाण गोलियां बनानी चाहिये। त्रिकटुचूर्ण, काला नमक और चोतेकी पत्तियोंके रसके साथ माड़ कर सेवन कराना चाहिये। इससे सब तरहका ज्वर, शूल आदि नानारोग नष्ट हो जाते हैं।

२य प्रकार—पारा, गन्धक, अभ्र, लौह, सीसा, शिलाजीत, प्रत्येकका १ तोला, स्वर्ण । आना भर और रौप्य ॥ तोला, सबको एकत्र कर चोतेका रस, भाँगरेका रस तथा अर्जुन (ककुभ)-की छालके काढ़ेमें ७ वार भावना दे कर १ रत्ती प्रमाण गोलियां बना कर छायामें सुखानी चाहिये। एक एक गोली गेहूंके काढ़ेके साथ खानी चाहिये। इसके सेवनसे हृद्रोग, फुसफुसरोग तथा प्रमेह, श्वास, काश आदि रोगोंकी शान्ति और बल-वीर्यको वृद्धि होती है। (भैषज्य०)

चिन्तामणिविनायक (सं० पु०) गणपतिकी मूर्तिभेद, गणेशकी एक मूर्त्ति। काशीमें जो आठ विनायक हैं, ये भी उन्हींके अन्तर्गत हैं। ये हेरम्बके अग्निकोणमें प्रति-ष्ठित हैं। (काशीख० ५० अ०)

चिन्तामय (सं० लि०) चिन्ता-मयट्। मयट्।पा ४।३।८२। चिन्ता द्वारा उपस्थित, चिन्ताके लिये उत्पन्न, जो सोचसे उत्पन्न हुआ हो। "इति चिन्तामयमेतमीश्वरम्" (भागवत २।१।१२) 'चिन्तामयं चिन्तया आविर्भूतं' (श्रीधर)

चिन्तावत् (सं० त्रि०) चिन्ता अस्त्यस्य चिन्ता-मतुप् मस्य वत्व। मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः। पा ८।२।९। चिन्तायुक्त, चिन्तित, जिसे चिंता हो, फिक्रमन्द।

चिन्तावेश्मन् (सं० क्लो०) चिंताया मन्त्रणादेर्वेश्म गृहं, ६-तत्। मन्त्रणागृह, गोष्ठीगृह, सलाह करनेका घर। इसका पर्याय दार्वाट है। (हारावली)

चिन्ति (सं० पु०) १ देशविशेष, एक मुल्कका नाम। २ उस देशका निवासी। सुराष्ट्र पदके साथ द्वन्द्व समास करने पर पूर्वपदको प्रकृतिस्वरत्व होती है।

"चिन्तिसुराष्ट्राः।" पा ६।२।३७।

चिन्तिड़ी (सं० स्त्री०) तिंतिड़ी पृषोदरादित्वात् तस्य चत्वं। तिंतिड़ी, इमली।

चिन्तित (सं० त्रि०) चिति कर्मणि क्त। १ अनुध्यात, भावित, आलोचित, विचार किया हुआ। "अचिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति" (उद्भट) कर्त्तरि क्त। २ चिंतायुक्त, जिसे चिंता हो, फिक्रमन्द। भावे क्त। ३ चिंता, सोच, फिक्र।

चिन्तिता (सं० स्त्री०) १ चिंतिता नामकी एक स्त्री। तस्या अपत्यं चैंतितः। चतुष्पाद्भ्यो ढञ्। ...पा ४।१।११३। २ चिंतायुक्ता, जिसे चिंता हो, फिक्रमन्दी।

चिन्तिति (सं० स्त्री०) चिति भावे क्तिच् इट् च। चिंता, सोच, फिक्र।

चिन्तिया (सं० स्त्री०) चिंता।

चिन्तोक्ति (सं० स्त्री०) चिंतया उक्तिः कथनं, ३ तत्। चिंता पूर्वक, जो बात कही जाय।

चिन्त्य (सं० त्रि०) चिंत कर्मणि यत्। चिंतनीय, भाव-नीय, विचारणीय, विचार करने योग्य।

"केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया।" (गीता १०।१७)

चिन्त्यद्योत (सं० पु०) चिन्त्यः सन् द्योतते द्युत-अच्। देवभेद, जिसकी पवित्र ज्योति चिंता द्वारा मालूम की जाय। "चिंत्यद्योता शैव सम्यंगु मुख्याः।" (भारत अनु० १८ अ०)

चिन्दविन—उपर बर्माके मगैग्य विभागका एक जिला। यह अक्षा० २१° ४८' एवं २२° ५०' उ० और देशा० ९४° १६' तथा ९५° ३८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण

३५४८० वर्गमील है। इसके उत्तरमें अपर चिन्दविन और खेवो जिला, पश्चिममें पकोक्कू जिला, पूर्वमें खेवो जिला और दक्षिणमें पकोक्कू तथा सगैंग विभाग है।

जिलेमें बहुतसे प्राचीन मन्दिर हैं जिनमेंसे अलोग्दाव कथप नामक मन्दिर ही प्रधान है। यह मन्दिर कनि शहरके निकट पटोलोन और योमनदीके किनारे अवस्थित है। बर्म्माके भिन्न भिन्न स्थानोंसे यहां प्रति वर्ष यात्री समागम होते हैं। यहां बुद्धकी लगभग ४४४४४४ मूर्त्तियां हैं। जिलेकी लोकसंख्या प्रायः २३३३१६ है जिनमेंसे अधिकांश बरमी हैं। भारतवर्षसे आये हुए थोड़े हिन्दू और मुसलमान भी हैं।

यहांके अधिकांश अधिवासी कृषिउपजीवी हैं। जिलेमें सब जगह धान, ज्वार और चना उत्पन्न होते हैं। अधिवासियोंका प्रधान खाद्य ज्वार है। तमाकू भी यहां बहुत उपजाया जाता है। यहांके लोग गाय, भेंड़, बकरे और घोड़े अधिक पालते हैं।

यहां सोने, तांबे, तामड़े, पेट्रोलियम तथा और भी कई तरहकी खानें हैं। राज्य कार्यको सुविधाके लिये जिला दो विभागोंमें विभक्त है, मोनिव और शिनमविन। शीतकालमें यहांकी जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर रहती है।

चिन्न (सं० पु०) (Panicum Miliaceum) शस्य-विशेष, एक प्रकारका धान, चीनाधान।

चिन्नकिमेदि—मन्द्राज प्रदेशके अंतर्गत गञ्जाम जिलेके पश्चिममें अवस्थित एक बड़ी जमींदारीके तीन भागोंमेंसे एक भाग। किमेदि देखो। कन्ध जाति यहां रहती है। कुछ समय पहले ये देवताके सामने नरबलि देते थे। कहा जाता है कि कन्ध सुरापानसे मत्त हो कर जिसको बलि देना होता है उसको खींचते हुए ले जाते तथा जब तक उसकी मृत्यु न हो जाती तब तक अस्त्र द्वारा उसकी देहसे टुकड़ा टुकड़ा कर मांस काटा करते थे। बाद मृत देहको दग्ध कर उसका भस्म नये अनाजके साथ मिला देते थे, क्योंकि उसका ख्याल था कि भस्म मिलानेसे कीट अनाजको नष्ट कर नहीं सकता है।

चिन्नमलपुर—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गञ्जाम जिलास्थित पहाड़की एक चोटी। यह समुद्रतलसे १६१५ फुट ऊंची है।

चिन्नम्भट्ट—विष्णु देवाराध्यायके पुत्र और सर्वज्ञके कनिष्ठ भाई। १४वीं शताब्दीमें इन्होंने राजा हरिहरके आदेशसे तर्कभाषाप्रकाशिका, निरुक्तिविवरण और चिन्नम्भट्टीय नामक न्याय ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

चिन्नवोम्मभूपाल-दक्षिणापथके नलवोम्मभूपालके पुत्र। इन्होंने संस्कृत भाषामें सङ्गीतराघव रचा है।

चिन्नूर—१ हैदराबाद राज्यके अदिलाबाद जिलेका एक तालुक। भूपरिमाण ७८० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५६५६१ है। इस तालुकमें चिन्नूर नामका एक शहर और ११० ग्राम लगते हैं। तालुकके दक्षिणमें गोदावरी नदी और पूर्वमें प्राणहिता नदी प्रवाहित हैं। धान यहांकी प्रधान उपज है।

२ हैदराबाद राज्यके अदिलाबाद जिलेका एक शहर। यह अक्षा० १८° ५१' उ० और देशा० १६° ४८' पू०में गोदावरी नदीसे १० मील उत्तरमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १७०५३२ है। यहां एक डाकघर और एक चिकित्सालय है। शहरमें तसरके खूब मजबूत कपड़े तैयार होते हैं।

चिन्मय (सं० त्रि०) चित्-मयट्। १ ज्ञानमय। (पु०) २ परमेश्वर।

चिन्मूलगुन्द—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत धारवार जिलेका एक स्थान। यह कोड़ नामक नगरसे छः मीलकी दूरी पर अवस्थित है। इस स्थानके उत्तर-पूर्वकी ओर काले पत्थरोंका बनाया हुआ चिकेश्वरका एक मन्दिर है। मन्दिरमें बहुत तरहके शिल्पकार्य्य हैं और इसकी छत ११ स्तम्भके ऊपर स्थापित है। इस स्थानके उत्तरमें एक छोटे पहाड़के ऊपर सिद्धेश्वरका मन्दिर है जिसके भीतर स्वयंभुलिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। इससे कुछ दूर पर एक गुहा है। प्रवाद है कि यह गुहा बहुत दूर तक चली गई है। यहां मुचकुन्द रायका एक आश्रम था और इसीसे इस स्थानका नाम मुलगुन्द पड़ा है। इसके निकटवर्ती पहाड़ पर सोनेका चूर्ण पाया जाता है इसी कारण यह चन्मूलगुन्द नामसे मशहूर है।

इस स्थानके चिकेश्वर और सिद्धेश्वर मन्दिरमें दो शिलालेख है।

चिम्ह (हिं० पु०) चिह्न देखो।

चिन्हाना (हिं० क्रि०) परिचित कराना, पहचनवाना।

चिन्हार (हिं० वि०) परिचित, जिससे जान पहचान हो।

चिपकना (हिं० क्रि०) १ किसी दो वस्तुओंको एक साथ जोड़ना, सटना, चिमटना। २ प्रेमसे मिलना, आलिङ्गन करना, लिपटना। ३ किसी व्यवसायमें लगना।

चिपकाना (हिं० क्रि०) १ गोंद द्वारा किसी वस्तुको साटना। २ लिपटाना, प्रगाढ़ आलिङ्गन। ३ नौकरी लगाना।

चिपचिप (अनु० पु०) किसी लसदार वस्तुको छूनेका शब्द या अनुभव।

चिपचिपा (अनु० वि०) लसीला, लसदार।

चिपचिपाना (हिं० क्रि०) लसीला मालूम होना।

चिपचिपाहट (हिं० स्त्री०) लसीलापन, लस, लसी।

चिपटना (हिं० क्रि०) एक दूसरेसे जुट जाना, सटना।

चिपटा (हिं० वि०) जो समतल न हो, जिसकी सतह दबी और बराबर फैली हुई हो, दबा हुआ।

चिपटाना (हिं० क्रि०) १ सटाना, एकको दूसरेसे जोड़ना। २ आलिंगन करना, प्रेमसे मिलना।

चिपटी (हिं० वि०) १ चिपटा देखो। (स्त्री०) २ नैपाली स्त्रियोंके कानमें पहननेकी एक तरहकी बाली। ३ भग, योनि।

चिपड़ी (हिं० स्त्री०) शुष्क गोमय, गोबरके पाथे हुए चिपटे टुकड़े, उपली, गोईंठी।

चिपलुन—१ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत रत्नगिरि जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १७° १२' एवं १७° ३७' उ० और देशा० ७३° ८' तथा ७३° ४५' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ६७१ वर्गमील है। इसमें एक शहर और २०८ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १६०७४६ है। इस उपविभागके उत्तरकी वाशिष्टी और दक्षिणकी शास्त्री नदियां प्रसिद्ध हैं। यहां १ दीवानी और ३ फौजदारी अदालत हैं।

२ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत रत्नगिरि जिलेके चिपलुन तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा० १७° ३२' उ० और देशा० ७३° ३१' पू०के मध्य बंबईसे १०८ मील दक्षिण-पूर्व और समुद्रसे २५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ७८८६ है। नगरका क्षेत्रफल २३ एकर है। यह कोङ्कणस्थ या चितपावन ब्राह्मणोंका आदिम वासस्थान है। नगरसे कुछ ही दूर दक्षिणमें बहुतसे पत्थरके मन्दिर हैं। सबसे बड़े मन्दिरकी लंबाई २२ फुट, चौड़ाई १५ फुट और ऊंचाई १० फुट है। मन्दिरके एक ओर बुद्धकी देहगोपाकृतिका एक मन्दिर है। इसके सिवा परशुरामकी एक मूर्ति प्रतिष्ठित है। कोङ्कणस्थ ब्राह्मण उनकी पूजा किया करते हैं। परशुरामशैल इसके पास ही स्थित है।

चिपिट (सं० पु०) चिनोति चि बाहुलकात् पिटच् सच कित्। १ भक्ष्य द्रव्यविशेष, खानेका एक पदार्थ, चिउड़ा या चिड़वा। यह हलका, बलकारक और कफवर्द्धक है। दूधके साथ खानेसे वायुनाशक और रेचक (दस्तावर) होता है। (राजवल्लभ)

इसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—उत्कृष्ट नये धानोंको कुछ देर तक पानीमें उबाल कर एक रात्रि ठण्ढे पानीमें भिगो रखना चाहिये। दूसरे दिन उन धानोंको छान कर अर्थात् उसका पानी निकाल कर कुछ देर तक भूजना चाहिये। जब दो एक धान फूट निकले, तब उनको ओखलीमें डाल कर कूटना चाहिये। चिड़वा कूटनेके मूसलका मुंह (Belt) लोहेसे मढ़ा हुआ रहता है। कूटते कूटते धानकी भुसी अलग हो जाती है और भीतरका चावल चपटा हो जाता है। इस अवस्थामें उनको ओखलीसे निकाल कर सूपसे फटकना चाहिये, जिससे भुसी और चावल दोनों अलग अलग हो जाय।

पुराने धानसे अच्छे चिउड़ा नहीं होते। नये शालि धान्य और नीवार धान्यसे ही अच्छे चिड़वा होते हैं। चिड़वा जितने पतले और उजले हों, उतने ही अच्छे होते हैं।

भारतवर्षमें सर्वत्र चिड़वा खानेकी रिवाज पाई जाती है। रास्तागीर भी रास्तेमें खानेके लिए साथमें चिड़वा और गुड़ बाँध लेते हैं। चिड़वाके साथ साधारणतः दही, गुड़ और दूध व्यवहृत होता है। गरीब लोग पूड़ी कचौड़ीके बदले बहुत समय चिड़वा, दही, गुड़, चीनी आदिसे ही ब्राह्मण-भोजनादि कराते हैं।

कोजागरी लक्ष्मीपूजाके दिन चिड़वा खाने और नारियलके पानी पीनेका शास्त्रमें विधान है।

चिड़वाके मंस्कृत पर्याय—पृथुक, चिपिटक, चिपुट, धान्यचमम और चिपीटक । वैद्यकमें इसको अत्यन्त पुष्टिकर माना है । (भावप्रकाश)

चिपिट (चिड़वा) यती, विधवा और ब्रह्मचारियोंके लिए अभक्ष्य है, ब्राह्मणोंके लिये भी इसका खाना निहायत प्रशस्त नहीं है । देशाचारके भेदसे यह कहीं कहीं पवित्र माना गया है, किन्तु देवताओंको चढ़ाना अच्छा नहीं । (ब्रह्मवैवर्त्त पु० ब्रह्मखण्ड)

नि नता नासिका विद्यतेऽस्य नि नासिका पिटच् प्रकृतेश्चिश्च । इनच् पिटच् चिकचि च । पा ५।२।३३ वार्त्तिक । (त्रि०) १ नतनासिका, चिपटी नाकवाला मनुष्य । चिपिट अधम है, इसके दर्शनसे अनर्थोंकी उत्पत्ति होती है ।

(विश्वकर्म प्र० १३।५)

३ चिपिटाकार, चपटा । (पु०) ४ अंगुली आदिसे कुछ जाने पर नेत्रको पीड़ा या आंखोंका दुखना ।

(मेघ सन्नि०)

चिपिटक (सं० पु०) चिपिट स्वार्थे कन् । चिपिट, चूड़ा।

चिपिट जयापीड़—काश्मीरके एक राजा । काश्मीर देखो।

चिपिटनासिक (सं० पु०) चिपिटा नासिका यत्र, बहुव्री० । १ देशभेद । यह देश कैलास पर्वतके उत्तरमें अवस्थित है । (बृहत्सं हिता) मोऽभिजनोऽस्य इत्यण् तस्य लुक् । २ उस देशके रहनेवाले मनुष्य । ३ उस देशके राजा । ४ मध्यदेशके उत्तरांशवासी लोक । (त्रि०) चिपिटा नासिका यस्य, बहुव्री० । ५ चिपिटाकार नासिकायुक्त, चिपटी नाकवाला, जिसकी नाक दबी हो ।

चिपिटा (सं० स्त्री०) १ गुण्डासिनी तृण, एक तरहकी घास । २ वन कुलत्थ, जंगली कुलथी । ३ चिपट मूर्त्ति, चिपटी या दबी मूर्त्ति ।

चिपिटिकावत् (सं० त्रि०) जिसका आकार चपटा हो ।

चिपीटक (सं० पु०) चिपिट, चूड़ा, चिउड़ा, चिड़वा ।

चिपुआ (देश०) चेलहवा मछली ।

चिपुट (सं० पु०) चिपिट पृषोदरादित्वात् साधु । चिपिटक, चूड़ा, चिउड़ा, चिड़वा ।

चिपुरपल्ली—१ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलेका एक तहसील । यह अक्षा० १८° २' एवं १८° ३२' उ० और देशा० ८३° २६' तथा ८३° ५७' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ५४८ वर्गमील है । इसमें कुल २६८ ग्राम लगते हैं । लोकसंख्या प्राय: १७०५३२ है जिनमेंसे सबके सब हिन्दू हैं ।

२ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलेकी एक जमींदारी । पहले यह पाँचदारला जमींदारीके अन्तर्गत था । पहले इसमें २४ ग्राम लगते थे । राजाको ३६२३०) कर देना पड़ता था । कई एक वर्षोंका कर चुकती न होनेके कारण १५ ग्राम सरकारको दे दिये गये और ८ ग्रामोंमें कई एक अधिकारी हो गये । अत: आज इसमें सिर्फ एक ग्राम लगता है ।

चिप्प (सं० पु०) चिक्कति पीडयति अङ्गुलि चिक्क-अचक्क स्थाने प्यागम: । नखरोगविशेष, नाखूनका एक रोग । लक्षण—वात और पित्तसे यदि नखमांसमें यन्त्रणा और जलन हो तो उसे चिप्परोग कहते हैं । चिकित्सा—पहिले रक्तस्राव या शोधन द्वारा इसका प्रतीकार करना चाहिये । यदि उसमें गरमी न रहे तो गरम पानीसे सेकना उचित है । पक जाने पर नाखूनका कटवा कर व्रणोचित विधान द्वारा उसकी चिकित्सा करानी चाहिये। लोहेके पात्र पर हल्दीके रसमें हर्रे घिस कर उसके सारका इस पर लेप करना चाहिये । गाम्भारी वृक्षके कोमल मात पत्तोंसे इसको लपेट देनेसे शीघ्र ही इसका उपशम हो जाता है। (भावप्र० मध्यखण्ड ४र्थ भाग)

मतान्तरमें ऐसा भी है—चिप्परोगमें नखमांसमें फटकन पड़े, यन्त्रणा हो और बुखार आवे तो उसे क्षतरोग न समझना चाहिये । इसको उपनख भी कहा जा सकता है । (वाभट उत्त० ३१ अ०) पक जाने पर इसको यन्त्र द्वारा काट देना ही उचित है । (वाभट उत्त० २१ अ०)

चिप्पट (सं० क्ली०) वङ्ग, सीसा, राँगा ।

चिप्पड़ (हिं० पु०) १ छोटा चिपटा टुकड़ा । २ शुष्क काष्ठके ऊपरका भाग, पपड़ी ।

चिप्पिका (सं० स्त्री०) १ रात्रिचर जन्तुभेद, बृहत्संहिताके अनुसार एक रात्रिचर जन्तु । यदि वह दिनके समय घूमे तो देश या राजाका विनाश होता है ।

(बृहत्संहिता ८८।२)

२ पक्षिविशेष, एक चिड़ियाका नाम ।

चिप्पी (हिं० स्त्री०) १ छोटा चिपटा टुकड़ा। २ उपली, गोईंठो। ३ सीधा, जिंस।

चिप्य (सं० पु०) क्रमिभेद, एक तरहका कीड़ा।

चिबिल्ला (हिं० वि०) बिलबिला देखो।

चिबुक (सं० क्ली०) अधराधोभाग, ठुड्डो, ठोड़ी, दाढ़ी।

चिम (सं० पु०) ककवटपत्र, पटुआ साग।

चिमटना (हिं० क्रि०) १ सटना, चिपकना। २ प्रेमसे मिलना, आलिङ्गन करना। ३ मजबूतीसे पकड़ना। ४ पीछे लगा रहना, पीछा न छोड़ना।

चिमटवाना (हिं० क्रि०) दूसरे द्वारा सटवाना।

चिमटा (हिं० पु०) एक तरहका औज़ार। यह लोहे पीतल आदिको दो लम्बी और पतली लचीली फट्टियों-का बना हुआ रहता है। यह कोई छोटी चीज पकड़ने या उठानेके काममें आता है, दस्तपनाह।

चिमटाना (हिं० क्रि०) १ सटाना, लसना, चिपकाना। २ आलिङ्गन करना।

चिमटी (सं० स्त्री०) १ छोटा चिमटा। २ सोनारका एक यन्त्र जिसके द्वारा वह महीन रवे उठाता है।

चिमड़ा (हिं० वि०) चीमड़ देखो।

चिमनगौड़—गौड़ जातिका एक विभाग। इसका दूसरा नाम चमारगौड़ है। दूसरे दो भागोंका नाम ताटगौड़ और वामनगौड़ है। इस जातिके मनुष्य दिल्लीके अन्तर्गत मध्य दोआवमें वास करते हैं। चमारगौड़ कई एक विभागोंमें श्रेष्ठ गिना जाता है। गौड़वंशके सङ्कट समय उनकी एक स्त्री पूर्णगर्भावस्थामें एक चमारके घरमें जा ठहरी थी। आश्रयदाताके प्रति सन्तुष्ट हो कर उन्होंने अङ्गीकार किया था कि सन्तान भूमिष्ठ होने पर वह चमार नामसे अभिहित होगा। किन्तु इस जातिके बहुत-से मनुष्य बोलते हैं कि उन लोगोंका प्रकृत नाम चौहार गौड़ है। इसी नामसे अभिहित किसी राजासे उन लोगोंका यह नाम पड़ा है। फिर कोई कोई कहता है कि प्रकृतपक्षमें उन्हें चिमलगौड़ कहना उचित है, क्योंकि उन्होंने चिमलमुनिसे जन्म ग्रहण किया है।

चिमनाजी आप्पा—महाराष्ट्रीय राज्यके प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथके द्वितीय पुत्र। १७२१ ई०में बालाजीके इह-लोक त्यागने पर उनके प्रथम पुत्र बाजीरावको पेशवाका पद मिला था। चिमनाजी उनकी अधीनतामें सैन्याध्यक्ष नियुक्त हुए थे और उन्हें सूपा नामक ग्राम जायगीर स्वरूप दिया गया था। १७३९ ई०में उत्तर कोङ्कणमें जो सब स्थान पोर्त्तगीजोंके अधिकारमें थे, चिमनाजीने उन-का अधिकांश जय कर उन्हें स्थानान्तरित कर दिया था। बाजीरावकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र बालाजीरावको पेशवा पद मिलनेमें विघ्न उपस्थित हुए थे। परन्तु उनके चचा चिमनाजीकी सहायतासे उन्हें उक्त पद मिला था। महाराष्ट्रोंके राज्य विस्तार और प्रताप फैलानेमें इन्होंने अपने भतीजे बालाजीरावको बहुत कुछ सहायता दी थी। १७४१ ई०में जनवरी मासके अन्तमें इनका परलोकगमन हुआ था। इनकी मृत्युसे बालाजीरावको विशेष क्षति-ग्रस्त होना पड़ा था।

चिमनाजी माधवराव—महाराष्ट्रीय राज्यके आठवें पेशवा। १७९५ ई०के अन्तमें माधवरावकी मृत्यु हुई थी। मरते समय उनकी इच्छा थी कि उनके आत्मीय बाजीरावको जो शास्त्रविद्या और धर्मशास्त्रमें पारदर्शी थे—अपने पद पर नियुक्त कर जांय। नानाफड़नवीस उस समय पेशवा-के प्रधान मन्त्री थे। उनकी इच्छा नहीं थी कि बाजी-रावको पेशवाका पद मिले और इसीलिए उन्होंने माधव-रावके अंतिम वाक्योंको छिपा कर ऐसा प्रस्ताव किया था कि माधवरावकी विधवा स्त्री यशोदा बाई एक लड़के-को गोद रक्खें तथा जब तक वह बड़ा न हो, तब तक नानासाहब स्वयं उसके प्रतिनिधि स्वरूप राजकार्य चलावें। इस प्रस्ताव पर होलकरकी तथा उस समयके बड़े बड़े पुरुषों और अंग्रेजोंकी सम्मति पाई गई। बाजीरावको भी यह सब हाल मालूम हो गया और वे अपने अधिकार की रक्षाके लिये तयार हो गये। परन्तु इनके सर्व प्रयत्न व्यर्थ गये। माधवरावकी विधवा स्त्रीने बाजीरावके छोटे भाई चिमनाजीको गोद रक्खा। १७९५ ई०में २६वीं मई तारीखको ये पेशवाके पद पर आरूढ़ हुए थे। परशु-राम भाऊने प्रस्ताव किया कि वे स्वयं सैन्य-विभागका भार लेंगे और नाना अन्यान्य विभागोंका कार्य देखेंगे। इस प्रस्ताव पर नानाने सम्मति दे दी तथा इस विषय-का बन्दोबस्त करनेके लिए परशुरामके ज्येष्ठ पुत्र हरि-पन्थको उनके पास 'वाई' नामक स्थान पर भेजनेके लिए

अनुरोध किया। परन्तु परशुराम भाउको यह आन्तरिक इच्छा न थी। हरिपन्थ वाईको रवाना तो हुए पर दूत बन कर नहीं वल्कि सेना ले कर गये। नाना परशुरामकी दुरभिसन्धिको समझ गये और वे रायगढ़-दुर्गके सन्निहित माहाड़ नामक स्थानको चले गये।

इस समय नानाने अपनेको आफतमें फंसा समझा। परन्तु इस विपत्तिमें उनकी बुद्धिने काफी सहायता दी। उन्होंने कौशल जाल फैला कर उसमें बहुतसे बड़े बड़े आदमियोंको फंसाया। चिमनाजीके भाई बाजीरावसे भी सन्धि कर ली। उनसे नानाने यह निश्चय किया कि बाजीराव पेशवा होंगे, तथा वे स्वयं प्रधान मन्त्रीका काम करते रहेंगे। नाना कई वर्षोंसे धन इकट्ठा कर रहे थे, इससे उनके पास धनकी कमी न थी। इस धनसे उन्होंने प्रधान प्रधान व्यक्तियोंको हस्तगत किया। यथेष्ट सेना उनके अधीन हो गई। बाजीरावको पेशवाका पद मिलेगा, निजाम और सिन्धिया महाराजाको जमींदारी और स्थान देना अङ्गीकार कर लिया। इसलिए उन्हें बाजीराव तथा अन्यान्य प्रधान प्रधान व्यक्तियोंको खूब सहायता मिली। २७वीं अक्टूबरको महाराज सिन्धियाने परशुरामको पकड़ लाने और उनके मन्त्री बालकाको कैद कर लानेके लिए एक फौज भेज दी। यह फौज निजामकी दी हुई फौजमें जा मिली। परशुरामको जब यह बात मालूम पड़ी, तब वे चिमनाजीको ले कर भाग गये। परन्तु उक्त फौजों द्वारा वे पकड़े गये। इस प्रकारसे नानाकी कूट नीति सफल हो गई। १७९६ ई०में २५ नवम्बरको उन्होंने प्रधान मन्त्रीका पद पाया था और बाजीरावको पेशवाका पद दिसम्बरकी ४ तारीखको मिला था। चिमनाजीकी गोद लेना शास्त्रके विरुद्ध है; ऐसा पण्डितोंने भी कह दिया। कुछ भी हो, उन्होंने गुजरातके शासनकर्त्ताका पद पाया था। बाजीरावको पेशवाका पद मिलना चाहिये, ऐसी सम्मति नागपुरके रघुजी भोंसलेने तथा अङ्गरेजोंने भी दी थी।

चिमनाजी यादव—एक महाराष्ट्र विद्रोही। ये ब्राह्मणके कुलमें उत्पन्न हुए थे। इन्होंने भाउखड़े और नाना दरबड़े नामके दो सहयोगि के साथ मिल कर सह्याद्रियोंके आस पासमें रहनेवाले कोलियोंको उत्तेजित किया था और उन को लेकर एक दल बना कर बहुतसे गाँव लूटे थे। १८३९ ई०में कोलियों उपद्रव शुरू हुआ था। इनके नेताओंने ऐसा प्रगट किया था कि—वे पेशवाके बदले स्वयं राज्यशासन करना चाहते हैं तथा वास्तवमें शासन भारग्रहण भी किया था। परन्तु पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट रड् साहबने एक दल अश्वारोही सेनाकी सहायतासे इनका दमन कर इनमेंसे बहुतोंको दण्ड भी दिया था। १८४६ ई०में ये लोग पूरी तरहसे दब गये थे।

चिमना पटेल—मध्यप्रदेशके नागपुर विभागके अन्तर्गत कामथा और बरूद तालुकोंके जमींदार। १८१८ ई०में ये राजविद्रोही हो गये थे। कप्तान गर्डन साहबने इनको वशमें किया था।

चिमनी (स्त्री० स्त्री०) १ लम्पका धुआँ बाहर निकलनेका शीशेकी नली। २ मकानका धुआँ बाहर निकलनेका इसके ऊपरका छेद।

चिमि (सं० पु०) चिनोति मञ्चिनोति मनुष्यजातिवद्वाक्यानि चि बाहुलकात् मिक्। १ शुकपक्षी, तोता, सुगा। २ पट्टकशाक पटुआ साग। ३ तिमिमत्स्य।

चिमिक (सं० पु०) चिमि स्वार्थे कन्। शुकपक्षी, तोता। २ पट्टकवृक्ष, पटुआ साग। ३ तिमिमत्स्य।

चिमचिमा (सं० स्त्री०) चटेलविशेष, झनझनका शब्द।

चिमूय—मध्यप्रदेशके चाँदा जिलेके अन्तर्गत चिमूय परगनाका एक नगर। यह अक्षा० २०° ३१´ उ० और देशा० ७९° २५´ ३०″ पू० में अवस्थित है। यह वरोदा तहसीलका प्रधान नगर है। यहां अच्छे अच्छे रेशमी वस्त्र तैयार होते हैं और प्रतिवर्ष एक मेला लगता है।

चिर (सं० त्रि०) चि बाहुलकात् रक्। १ दीर्घ, दीर्घकालवर्त्ती बहुत दिनोंका। "चिरकाल चिरं कार्य" (हरि० १०६) (क्ली०) २ दीर्घकाल, बहुत समय। "तपसः किं चिरेण ते:" (मार्कण्डेयपु० १६।८०) तत्पुरुष समासमें यदि चिर शब्द पहले रहे तो प्रतिबन्धवाची पूर्वपदको प्रकृतिस्वरत्व होता है। 'गमनचिर' प्रतिबन्धिचिर शब्द भी। पा ६।२।६। ३ छन्दःशास्त्रोक्त गणविशेष, तीन मात्राओंका गण जिसका प्रथम वर्ण लघु हो। (अव्य०) ४ दीर्घकाल, बहुत समय। इसका पर्याय—चिराय, चिररात्रिय, चिरस्य, चिरेण, चिरात्, चिरे और चिरत है।

"माचिरं तत् या चप:" (चरक ५।७०।११)

चिरकढांस (हिं० स्त्री०) १ हमेशा एक न एक रोगका रहना, सदा बनी रहनेवाली अस्वस्थता। २ प्रतिदिनका झगड़ा।

चिरकना (अनु० क्रि०) थोड़ा थोड़ा मल निकलना। साफ तौरसे मल न उतरना।

चिरकर्मन् (सं० त्रि०) बहुव्री०। चिरक्रिय, दीर्घसूत्र, बहुत दिनोंमें करनेवाला, काममें देर लगानेवाला।

चिरकार (सं० त्रि०) चिरं करोति चिर-कृ-अण्। कर्मण्यण् पा ३।२।१। दीर्घसूत्र काममें देर लगानेवाला।

"चिरकारस्य यत्पूर्वं वृत्तं।" (भारत शां० २६७ अ०)

चिरकारि (सं० त्रि०) दीर्घसूत्र।

"चिरकारि दरयाचि पुत्रं।" (भारत शा० २६७ अ०)

चिरकारिक (सं० त्रि०) चिरकारिन् स्वार्थे कन्। दीर्घ-सूत्र।

"चिरकारिकभद्रं ते भद्रं ते चिरकारिक" (भारत शां० २६७अ०)

चिरकारिन् (सं० त्रि०) चिरेण करोति चिर-कृ-णिनिः। १ दीर्घसूत्री, चिरक्रिय, काममें देर लगानेवाला।

"चिरकारीव मेधावी" (भारत शान्ति २६७अ०)

(पु०) २ गौतमके एक पुत्रका नाम।

"चिरकारी महाप्राज्ञो गौतमस्याभवत् सुत:।" (भारतशां० २६८ अ०)

चिरकारित्व (सं० पु०) दीर्घसूत्रता, प्रत्येक कार्यमें विलंब करनेका स्वभाव; हर एक काममें देर लगानेकी आदत।

चिरकाल (सं० पु०) कर्मधा०। दीर्घकाल, बहुत समय, ज्यादे वक्त।

चिरकालपालित (सं० त्रि०) बहुत दिनों तक पाला हुआ जिसकी रक्षा दीर्घकाल तक हुई हो।

चिरकालिक (सं० त्रि०) अधिक समय तक रहनेवाला, जो बहुत दिनों तक रहे, जीर्ण, पुराना।

चिरकीर्ति (सं० पु०) एक धार्मिक सम्प्रदायके प्रवर्तक।

चिरकोन (फा० वि०) मैला, गन्दा।

चिरकुट (सं० पु०) चिथड़ा, गूदड़।

चिरक्कल—१ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत मलवार जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४७´ एवं १२° १८´ उ० और देशा० ७५° ११´ तथा ७५° ४१´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६७७ वर्गमील है। इसमें एक नगर और ४४ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्राय: ३२०१०७ है। इसका प्रधान नगर कनानूर है। इस तालुकमें २ फौज-दारी अदालत हैं। दीवानी विचार तेलिचेरीकी मुन्सफी अदालतमें होता है।

२ चिरक्कल तालुकका एक शहर। यह अक्षा० ११° ५४´ उ० और ७५° २१´ पू० पर कनानूरसे ३ मील उत्तर-में अवस्थित है। इसमें कुल १२५७ घर लगते हैं। लोक-संख्या प्राय: २७२६६१ है। यह शहर पहले चिरक्कल तालुकका सदर था। आज भी मलवार जिलेकी सेन्ट्रल जेल इस शहरमें अवस्थित है। इस स्थानके चिरक्कल राजा या कोलत्तिरि राजासे ही अङ्गरेजोंने सबसे पहले तेलिचेरीमें अपनी कोठी बनानेकी अनुमति ली थी। इस राजाके वंशधर आज लों भी इसके निकटवर्त्ती स्थानमें वास करते हैं।

चिरक्रिय (सं० त्रि०) चिरा क्रिया यस्य, बहुव्री०। दीर्घ-सूत्र, जो किसी कार्यमें देर लगता हो। आलसी, सुस्त।

चिरक्रियता (सं० त्रि०) दीर्घसूत्रता, हर एक काममें देर करनेकी आदत।

चिरक्रीत (सं० त्रि०) चिरं क्रीतः, सुपसुपेति समास। जो बहुत दिनोंका खरीदा हुआ हो।

चिरगांव—युक्त-प्रदेशके अन्तर्गत झांसी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३५´ उ० और देशा० ७८° ५२´ पू० पर झाँसीसे १८ मील उत्तरपूर्व तथा मोथसे १८ मील दक्षिण-पश्चिम कानपुर जानेकी सड़क पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३७४८ है। यह नगर तथा और दूसरे २५ ग्राम ओरछाके वीरसिंहदेवके उत्तराधिकारी बुन्देल ठाकुरके अधिकारमें थे। इन्होंने सरकारसे सनद पाई थी। इसी वंशके राव बख्तसिंह नामक एक राजा बहुत अन्यायी हो गये थे। सरकारने उनका दुर्ग तहस नहस कर डाला और समस्त राज्य छीन लिया। पनवारीमें वे मारे गये थे। गवर्मेंटने उनके लड़के राव रघुनाथ सिंहको ३०००) पेन्शन ठहरा दी, क्योंकि इन्होंने सिपाहीविद्रोहके समय अङ्गरेजोंकी सहायता की थी। रघुनाथसिंहके मरनेके बाद उनके लड़के दलीप-सिंहको भी १५००) मासिक पेन्सन मिलती थी।

चिरङ्गहार—१ आसामके अन्तर्गत ग्वालपाड़ा जिलेके कई

एक अंश। १८६८ ई०में अंगरेजोंने भुटानोंको हरा कर इस भूभाग तथा दूसरे दूसरे द्वारों पर अधिकार किया था। इसका परिमाणफल ४८५ वर्गमील है। इसके चारों ओर घना वन है। यहां प्रति वर्गमीलमें सिर्फ ३ मनुष्य बसते हैं। २२५६ वर्गमील स्थानमें गवर्मेण्टका रक्षित अरण्य है। सम्पूर्ण अरण्य १३ भागोंमें बटा है। प्रत्येक भागमे प्रतिवर्ष बहुमूल्य शालकाष्ठ उत्पन्न होते हैं। ४०० बीघा जमीनमें गवर्मेण्टको खास कामत होती है। जिसमें अनेक तरहके अनाज उपजाये जाते हैं।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° २४ उ० और देशा० ७८° ४७ पू० पर बन्दासे ४१ मील दूर ग्वालियरसे बन्दा नगर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। इसके समीप ही एक सुन्दर दुर्ग है। नगरसे कुछ नीचे एक झील होनेके कारण नगरकी शोभा अत्यन्त बढ़ी चढ़ी मालूम पड़ती है। नगरके चारों ओर सुगम्य पथ और जगह जगह निकुञ्ज वनको शोभा पथिकोंकी क्लांतिको हरती है। दूर दूरमें बड़े बड़े सरोवर होनेके कारण यहांको जमीन उर्वरा हो गई है।

चिरगत (सं० त्रि०) जिसके गये बहुत दिन हुआ हो, बीता हुआ, गया हुआ, गुजरा हुआ।

चिरचिटा (देश०) १ अपामार्ग, चिचड़ा, लटजीरा। २ तृणविशेष, एक तरहकी ऊंची घास। यह बाजरेके पौधेके आकारको होती है और मवेशीके चारेके काममें आती है।

चिरचेष्टित (सं० पु०) दीर्घकाल तक अनुसन्धान किया हुआ, बहुत दिनों तक तलाश किया हुआ।

चिरजात (सं० त्रि०) चिरं दीर्घकालं जातः सुपसुपेति समास। दीर्घकाल जात, जिसके जन्मे बहुत दिन हुआ हो, बूढ़ा, पुराना।

चिरजीवक (सं० पु०) चिरः जीवति चिर-जीव-ण्वुल्। १ जीवक नामक वृक्ष। (त्रि०) २ चिरजीवी, दीर्घजीवी, बहुत दिनों तक जीनेवाला।

चिरजीविका (सं० स्त्री०) कर्मधा०। दीर्घ कालवृत्ति, वह जो बहुत दिनों तक जीता हो।

"वृणीष्व विभं चिरजीविकाश्च" (कठ० उप)

चिरजीविन् (सं० त्रि०) चिरं जीवति, चिर-जीव-णिनि। १ दीर्घकालजीवी, बहुत दिनों तक जीनेवाला।

"यथा राजा भवेत्वं वृक्षस्य चिरजीविनः।" (रामा० अयो० १।३६ अ०)

(पु०) २ विष्णु। ३ काक, कौवा। ४ जीवकवृक्ष। ५ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। ६ मार्कण्डेय ऋषि।

"चिरजीवी यथात्वं भोः।" (तिथितत्व)

७ अश्वत्थामा प्रभृति महाजन। यथा—अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनूमान, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम ये सातों चिरजीवी माने गये हैं। (तिथितत्व)

चिरञ्जीव (सं० त्रि०) चिरजीवी।

चिरञ्जीव—विद्वन्मोद तरङ्गिणीके रचयिता। यह एक प्रसिद्ध नैयायिक थे। इनकी उपाधि भट्टाचार्य थी।

चिरञ्जीविन् (सं० पु०) चिरं जीवति चिरम्-जीव-णिनि। १ विष्णु। २ काक, कौवा। ३ जीवकवृक्ष। ४ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। (त्रि०) चिरजीवी, बहुत दिनों तक जीनेवाला।

चिरण्टी (सं० स्त्री०) चिरेण अटति पितृगृहादिति चिर-अट् अच्। वयसि प्रथमे। पा ४।१।२०। ततो ङीप्, पृषोदरादित्वात् साधु। १ प्रौढ़ा, पितृगृहस्थित वयस्था कन्या, सयानी लड़की जो पिताके घर रहे। २ युवती।

चिरता (सं० स्त्री०) चिर भावे तल् ततष्टाप्। १ दीर्घसूत्रता, हर एक काममें देर करनेकी आदत। २ भूनिम्ब, चिरायता।

चिरतिक्त (सं० पु०) चिरस्तिक्तो रसो यत्र, बहुव्री०। भूनिम्ब, चिरायता। इसका संस्कृत पर्याय—चिरातिक्त, तिक्तक, अनार्यतिक्तक, किराततिक्त, भूनिम्ब, किरातक, सुतिक्तक।

चिरत्न (सं० त्रि०) चिर भवार्थे त्न। चिरपरुत्परारिभ्यस्त्नो वक्तव्यः। पा ४।३।२३ वार्त्तिक। पुरातन, चिरकालीताय, पुराना।

चिरन्तन (सं० त्रि०) चिरं भवः चिरं भवार्थे-ट्युल् तुट्च्। सायं चिरं प्राह्णे प्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च। पा ४।३।२३। १ पुरातन, पुराना, बहुत दिनोंका। (पु०) २ मुनिभेद, एक मुनिका नाम। "शाक्तलेषु पुराणेनचिरन्तनेन मुनिना प्रोक्ताः।" (पा ४।३।१०५ वार्त्तिक) (स्त्री०) ३ पुष्करमूल।

चिरना (हिं० क्रि०) १ फटना। २ रेखाके आकारमें घाव होना। (पु०) ३ वह यन्त्र जिससे चीरा जाता हो। ४ चाँदीके तार खींचनेका सुनारोंका औजार। ५ नरिया

चोरनेवाला कुम्हारोंका धारदार लोहा। ६ कसेरोंका थालीके बीचमें ठप्पा या गोल लकीर बनानेका एक औजार।

चिरपत्रक (सं० पु०) क्षुद्र सर्ज्जवृक्ष, शालवृक्ष, सलइका पेड़।

चिरपत्रा (सं० स्त्री०) भूमिजम्बुवृक्ष, एक तरहका जामुनका पेड़।

चिरपत्रिका (सं० स्त्री०) १ कपित्थपर्णीवृक्ष, एक तरहका पेड़। २ क्षुद्र शाक।

चिरपाकिन् (सं० पु०) चिरेण पाकोऽस्त्यस्य चिरपाक अस्त्यर्थे इनि। कपित्थवृक्ष, कैथका पेड़।

चिरपर्ण (सं० पु०) सर्ज्जवृक्ष, सलइका पेड़।

चिरपुष्प (सं० पु०) चिराणि पुष्पाणि यस्य, बहुव्रो०। वकुल वृक्ष, मौलसिरी।

चिरपोटा (सं० स्त्री०) वास्तूकभेद, एक तरहका बथुआ साग।

चिरप्रवासिन् (सं० त्रि०) चिरं प्रवसति चिर प्र-वस्-णिनि। चिरविदेशी, जो बहुत दिनों तक परदेशमें रहता हो।

चिरप्राप्त (सं० त्रि०) चिरेण प्राप्तः, ३ तत्। जो बहुत दिनोंके बाद पाया गया हो।

चिरप्रार्थित (सं० त्रि०) चिरेण प्रार्थितः, ३ तत्। चिराभिलषित, बहुत दिनोंका आकांक्षित, बहुत दिनोंका चाहा हुआ।

चिरप्रोषित (सं० त्रि०) चिरं प्रोषितः, सुप्सुपेति समास। चिरविदेशी, जो बहुत समय तक परदेशमें रहता हो।

चिरबत्ती (हिं० वि०) खण्ड खण्ड, टुकड़ा टुकड़ा।

चिरम् (अव्यय) चि-रमुक्। दीर्घकाल, बहुत समय।

"विपक्षभावे चिरमस्य तस्थुषः।" (रघु ३ सर्ग)

चिरमकोड़—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत नीलगिरि नगरका एक विभाग। भूपरिमाण ४१ वर्गमील है। सिर्फ एक शहरके चतुर्दिक्स्थ कुछ दूर तक ले कर यह विभाग हुआ है।

चिरमिटी (देश०) गुञ्जा, घुंघुची।

चिरमेहिन् (सं० पु०) चिरेण मेहति चिर-मिह-णिनि। वह गधा जो बहुत देर तक पेशाब करता हो।

चिरमेहिणी (सं० स्त्री०) चिरमेहिन् स्त्रियां ङीप्। गदहेभी, गधी, गदही।

चिरमोचन (सं० क्ली०) तीर्थविशेष।

"चिर मोचन तीर्थं तत्र यत्राद्यं तपस्तत।" (रामतर० ११।४८)

चिरम्भ (सं० पु०) चील।

चिरम्भण (सं० पु०) चिरं भणति चिरम्-भण कर्त्तरि अच्। चिल्लपक्षी, चील चिड़िया।

चिररात्र (सं० क्ली०) चिररात्रिरिति योगविभागात् अच समासान्तः। दीर्घकाल, बहुत समय।

"चिररात्रोषिता अपि ब्राह्मणस्य निवेशने।" (भारत आ० १६८)

चिररात्राय (अव्यय) चिररात्रं अयते चिरं रात्र अयः अण। (कर्म्मण्यण्। पा ३।२।१) दीर्घकाल।

"त्रिविधं चिररात्राय स चानन्त्याय कल्पते।" (मनु ३।२६६)

'चिररात्रायपदमत्रायं चिरकाल-वाची अतएव चिराय चिररात्राय चिरस्याद्या चिरार्थंका इत्यभिधानिकाः।' (कुल्लूक)

चिरलोक (सं० पु०) चिरः चिरस्थायी लोको येषां, बहुव्रो०। परलोकगत पितृपुरुष।

"स एकः पितृणां चिरलोकलोकानामानन्दः।" (तैत्तिरीय उप०)

'चिरकालस्थायी लोको येषां पितृणां चिरलोकाः पितरः।' (भाष्य)

चिरवल (हिं०) चिरविल्व देखो।

चिरवाई (हिं० स्त्री०) १ चिरवानेकी मजदूरी। २ खेतोंकी वह जुताई जो पहले पहल पानी बरसने पर होती है। चिरवानेका कार्य वा भाव।

चिरवाना (हिं० क्रि०) फड़वाना, चिरवानेका काम करना।

चिरविल्व (सं० पु०) चिरं विलति आच्छादयति पत्रकण्टकादिभिरिति चिर-विल्वः। करञ्जवृक्ष, कञ्जाका गाछ।

चिरविल्वक (सं० पु०) चिरविल्व स्वार्थे कन्। करञ्ज, कञ्जा। इसका पौधा बङ्गाल और उड़ीसेसे ले कर मन्द्राज और सिंहल तक होता है। यह सिर्फ छः मास तक रहता है। एक तरहका सुन्दर लाल रङ्ग इसके मूलको छालसे बनाया जाता है। मछलीपट्टन, वेल्लूर आदि स्थानोंमें इसकी खेती सिर्फ रङ्गके लिये की जाती है। इसके बीज आषाढ़मासमें बोए जाते हैं। कहीं कहीं यह पौधा सुरबुली भी कहलाता है।

चिरवीर्य्य (सं० पु०) रक्त एरण्डवृक्ष, लाल रेण्डका पेड़।

चिरवृष्टिमण्डल (सं० पु०) वह देश जहां सर्वदा वृष्टि पड़ती हो।

चिरसुप्तबुद्धि (सं० त्रि०) जिसकी बुद्धि हमेशा सोती रहती हो, अनवधान, बेपरवाह-ला-परवाह।

चिरसूता (सं० स्त्री०) चिरंसूता। चिरप्रसूता गाभी, वह गाय जो हर एक वर्षमें बच्चा देती है। इसका पर्याय वष्कयनी है।

चिरस्थ (सं० स्त्री०) चिरं तिष्ठति चिर-स्था-क। १ चिर कालस्थायी, बहुत दिनों तक रहनेवाला। (पु०) २ नायक, नेता, अगुआ।

चिरस्थायिता (सं० स्त्री०) चिरस्थायिन् भावे तल् तत-ष्टाप्। दीर्घकालस्थायिता, बहुत दिनों तक रहनेवाला, जिसकी आयु बहुत दिनोंकी हो।

चिरस्थायिन् (सं० त्रि०) चिरं तिष्ठति चिर-स्था-णिनि। चिरकालस्थायी, बहुत दिनों तक रहनेवाला।

चिरस्मरणीय (सं० त्रि०) १ बहुत दिनों तक स्मरण रखने योग्य, जो बहुत समय तक याद रखने काबिल हो। २ पूजनीय, प्रशंसनीय, प्रशंसा करने योग्य, तारीफ करने लायक।

चिरस्य (अव्यय) चिरं अस्यते चिर-अस् यत् शकन्ध्वादित्वात् साधु। दीर्घकाल, बहुत समय।

"चिरस्य दृष्ट्वेव मतोऽस्मि तैः" (कुमा०)

चिराँदा (हिं० वि०) थोड़ीसी बात पर अप्रसन्न होनेवाला, तुरक मिजाज।

चिराइता (हिं० पु०) चिरायता देखो।

चिराई (हिं० स्त्री०) १ चिरवानेका काम। २ चिरवानेकी मजदूरी।

चिराक (हिं० पु०) चिराग देखो।

चिराग (फा० पु०) दीपक, दीया।

चिरागत (सं० त्रि०) चिरेण आगतः सुप्सुपेति समास। १ जो प्रथा बहुत दिनोंसे चली आ रही हो। २ अनेक दिनोंके बाद आगत, जो बहुत दिनोंके बाद आया हो।

चिराग़दान (अ० पु०) दीवट, फतीलसोज शमादान।

चिराग़ी (अ० स्त्री०) १ चिराग जलानेकी मजदूरी। २ किसी कब्र पर चढ़ाई जानेकी भेंट।

चिराटिका (सं० स्त्री०) चिरं अटति चिर-अट्-ण्वुल् कापि अत इत्वं। १ श्वेतपुनर्णवा, सफेद शाम्त। २ चटिका, पिप्पलीमूल।

"गोमूत्र श्च पुरातनस्य यवांक्षकानि चिराटिकायाः" (वैद्यक)

३ चिरायता।

चिरातच्छदा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

चिरातन (सं० वि०) १ पुरातन, पुराना। २ जीर्ण।

चिरातिक्त (सं० पु०) चिरं आतिक्तः। चिरतिक्त, चिरायता।

चिरात् (अव्य) चिरं अतति चिर-अत-क्विप्। १ चिरकाल, दीर्घकाल, बहुत समय। "चिराद्दारै गति समासं।" रामायण ४।२८।१७। (पु०) २ चिरतिक्त, चिरायता।

चिराद (सं० पु०) चिरेणअत्ति चिर-अद् क्विप्। गरुड़।

चिराद (हिं० पु०) बत्तककी जातिकी एक चिड़िया।

चिराना (हिं० क्रि०) १ चीरनेका काम करना, फड़वाना। (वि०) २ पुरातन, पुराना। ३ जीर्ण।

चिरान्तक (सं० पु०) गरुड़के एक पुत्रका नाम।

"सूर्यनेत्रचिरान्तक." (भा० उद्यो: १०१ अ०)

चिराव—राजपूताना राज्यके अन्तर्गत शेखावती निजामतका एक शहर। यह अक्षा० २८° १४' उ० और देशा० ७५° ४१' पू० जयपुर शहरसे १०० मील उत्तरमें पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ७०६५ है। यहां एक सुन्दर छोटा दुर्ग है जो अभी भग्नावस्थामें पड़ा है। शहरमें बहुतसे धनी मनुष्य वास करते हैं जिन्होंने मुसाफिरोंके लिये कई एक सराय और धर्मशालायें बनवा दी हैं। इसके सिवा यहां स्कूल डाक और तार-घर हैं।

चिरायध (हिं० पु०) किसी जन्तुके अङ्गोंके अंशोंके जलनेकी दुर्गन्ध।

चिराय (अव्य) चिं अयते चिर-अय-अण्। दीर्घकाल।

"चिराय नाम: प्रणमाभिवेयता" (माघ १म सर्ग)

चिरायता (हिं० पु०) एक कड़ुवा पौधा। इसके संस्कृत पर्याय—भूनिम्ब, अनार्यतिक्त, कैरात, काण्डतिक्तक, किरातक, किराततिक्त, चिरतिक्त, तिक्तक, सुतिक्तक, कटु, तिक्त और रामसेनक। अनार्यतिक्त, कैरात आदि नामोंसे मालूम होता है कि, आर्योंको किरात नामकी अनार्यजातिसे इसके गुण मालूम हुए थे।

यह दस्तावर, शीतल तथा ज्वर, कफ, पित्त, सूजन, सन्निपात, खुजली, कोढ आदिको नष्ट करनेवाला होता

है। खून साफ करनेवाली औषधियोंमें इसकी गणना है।

भारतवर्षमें प्रायः ३७ तरहका चिरायता देखा जाता है। पृथिवी पर प्रायः १८० प्रकारके चिरायताकी जातिके पौधे आविष्कृत हुए हैं।

ये तमाम पौधे Gentianaceæ श्रेणीमें शामिल हैं। भारतवर्षका चिरायता जेन्सियाना Gentiana) समधर्मी होता है। इन चिरायतोंकी जड़ और डाली आदि सब ही दवाके काममें आती है। अग्निवर्द्धक, क्षुधावर्द्धक और बलकारी हैं, विशेषतः अन्यान्य समगुणसम्पन्न औषधोंकी भाँति यह रूक्ष और उग्र नहीं होता। सब ही प्रकारके आभ्यन्तरिक प्रदाहोंमें इसका सेवन किया जा सकता है। ज्वरघटित रोगोंमें भी इसके सेवनसे फायदा होता है।

चिरायतेका कड़ुवापन चिरतावीर्य (Chiratin Gentianaceæ)-के योगसे उत्पन्न हुआ करता है। इसमें अङ्गार २० भाग, हाइड्रोजन ३० भाग और अक्सिजन १२ भाग रहता है इसमें Gentianin अङ्गार १४, हाइ० १० और अक्सि० ५८) नामक और एक बिना स्वादका, पीला दानेदार पदार्थ रहता है, इसके सिवा इसमें फी सदी १२से १५ भाग तक तरल शर्करा रहनेके कारण बावेरिया और सुइजर्लैण्डके लोगोंने चिरायतेकी जड़से एक प्रकारकी शराब बनानी शुरू कर दी है। अतएव इसमें सन्देह नहीं कि चिरायतेके वीर्यमें ऊपर लिखे हुए तीन पदार्थ मौजूद हैं। बाजारोंमें निम्न लिखित समधर्मी पौधे मिलते हैं,—

१ छोटा चिरायता (Adenema hyssopifolia), दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें यह मिलता है। यह अत्यन्त कड़ुवा, मृदु, दस्तावर और अग्निवर्द्धक होता है। २ चिरायता (Gentian Chirata, Ophelia Chirata), यह भारतवर्षके उत्तर प्रान्तमें और मोरङ्ग पर्वत पर उपजता है। इसकी जड़, डालियों, पत्ते, फूल आदि सब ही अत्यंत कड़ुवे होते हैं। इसके गुण सर्वांशमें जेन्सियानके समान हैं। भारतवर्षमें सर्वत्र यह बलकर और ज्वरनाशक औषधोंमें व्यवहृत होता है। हिमालयकी तरहटीमें यह खूब पैदा होता है। यह बाजारोंमें साधारणतः "कड़ुवा चिरायता" के नामसे बिकता है। ३ कालमेघ या महातीता (Justicia paniculata), यह ही आदि और यथार्थमें चिरायता है। ४ गोमा या गोछिम (Chironia centanroides)। यह कड़ुआ शाक सारे भारतमें जलाशयोंके आसपास होता है। ५ Exacum hyssopifolia, यह पूर्व उपद्वीपमें पैदा होता है। यह भी खूब कड़ुआ होता है। यह बलकर और अग्निवर्द्धक है। वहांके लोग इसे दवाकी तरह खाते हैं। ६ Exacum bicolor, यह दक्षिणके नीलगिरिके आसपास होता है। शरत्-ऋतुमें इस पौधेमें फूल खिलते हैं। इसमें जेन्सियाना लुटिया (G. lutea) के सारे गुण मौजूद हैं। इसलिए बहुतोंका अनुमान है कि, जेनसियाना-लुटियाके बदले इसका व्यवहार किया जा सकता है। ७ कुबड़ो (Exacum tetragona), इसको नीला चिरायता भी कहते हैं। ८ Ophelia angustifolia, इसको पहाड़ी चिरायता कहते हैं। असली चिरायतेके बदले यह काममें आता है। ९ शिलारस या शिलाजीत (Ophelia elegans)। यह मन्द्राज प्रांतमें कई जगह होता है। भादोंके महीनेमें इसमें बहुत खूबसूरत फूल लगते हैं। दक्षिण देशके हकीम और वैद्य हिमालयके चिरायतेकी अपेक्षा इसे ज्यादा काममें लाते हैं। विशाखपत्तनमें यह बहुत उत्पन्न होता है। प्रति वर्ष प्रायः २५००) रुपयेका शिलाजीत उक्त स्थानसे बाहर जाता है। बाजारोंमें सूखा शिलाजीत मिलता है, इसका काढ़ा पीनेसे परिपाकशक्तिकी वृद्धि होती है तथा शरीर जोरदार और कांतियुक्त हो जाता है।

साधारण चिरायता या किराततिक्त (Ophelia Chirata or Gentiana Chirata) हिमालय पर्वत पर ४०००से लगा कर १००२० फुट ऊँचाई तक होता है। खसिया पर्वत पर यह ४।५ हजार फुट ऊँचाई पर भी उत्पन्न होता है। इन्हीं स्थानोंमें चिरायता भरपूर पैदा होता है। ये पौधे हर साल नये नये उत्पन्न होते रहते हैं। यह मामूली तौर पर २से ५ फुट तक ऊंचा होता है। इसका काण्ड (तरुस्कन्ध) गोल और शाखाओंसे शून्य होता है। शरत्ऋतुमें इसमें फूल लगते हैं, इस समय पौधोंको जड़ सहित उखाड़ कर सुखा लिया जाता

है। बादमें २ हात लम्बा चिपटा गुच्छा बांधकर बाहर भेजे जाते हैं। बाजारोंमें ऐसे गुच्छे मिलते हैं। चिरायतेका उग्रवीर्य पानी और शराबमें गलता है। कोष्ठबद्ध और मन्दाग्नि होने पर बहुतसे लोग इसे शामको भिगो कर सुबह चोनीके साथ पीते हैं। चिरायतेकी जड़ ही ज्यादा कड़ुई होती है। तिजारमके लिये इसका अधिक आदर है।

१८२६ ई०में चिरायताके गुणोंने यूरोपीय चिकित्सकोंकी दृष्टि आकर्षित की थी। १८३६ ई०में चिरायता एडिनवर्ग फार्माकोपियामें गृहीत हुआ था। परन्तु अमेरिका और यूरोपमें इस समय इसका व्यवहार घट गया है। कुछ भी हो, भारतवर्षमें यूरोपीय डाक्टर इसका जोरोंसे प्रयोग करते हैं।

रासायनिक उपायोंसे चिरायतेका वीर्य निकाल कर उससे उत्कृष्ट बलकारक औषध बनती है। सारे शरीरमें खुजली, मन्दाग्नि, बुखार इत्यादि रोगोंमें यह बहुत ही शीघ्र और आश्चर्यजनक फल दिखाता है। चिरायता और गुरुच (गुलञ्च) के समान काठेको वैद्यगण परिवर्त्तक औषधरूपसे काममें लाते हैं। देशी मालसामें चिरायतेका काढ़ा रहता है। घोड़ोंको पुष्ट करनेके लिए इङ्गलैण्डमें इस तरहका चिरायता पिलाया जाता है।

ज्यादा चिरायता खानेसे देहमें जलन, वमन और कभी कभी अतिसार रोग भी हो जाता है।

चिरायतेकी जड़से उत्पन्न चार तरहकी औषध भारतीय फार्माकोपियामें देखी जाती है।

अधिकांश चिरायता नेपालसे कलकत्ते और वहांसे भारतवर्षके अन्यान्य देशोंको भेजा जाता है।

चिरायुस् (सं० वि०) १ दीर्घायु, बहुत दिनों तक जीनेवाला। २ ताड़का पेड़। ३ देवता। ४ लालवृक्ष।

चिरारी (हिं० स्त्री०) चिरौंजी।

चिराला—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गण्टूर जिलेकी वापतला तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १५° ५०´ उ० और देशा० ८०° २१´ पू०में अवस्थित है। यह शहर पहले नेल्लूर जिलाके अन्तर्गत था। यह कपास वस्त्रके लिये प्रसिद्ध है। लोकसंख्या प्रायः १६२६४ है।

चिराव (हिं० पु०) १ चीरनेकी क्रिया। २ वह घाव जो चीरनेसे हुआ हो।

चिरावा—राजपूतानाके जयपुर राज्यके अन्तर्गत शेखावती विभागका एक नगर।

चिरि (सं० पु०) चिनोति मनुष्यवद् वाक्यादिकं चि-रिक्। शुकपक्षी, तोता, सूगा।

चिरिटी (सं० स्त्री०) प्रदुदपक्षिविशेष, एक प्रकारका चील।

चिरिण्टिका (सं० स्त्री०) चिरण्टी देखो।

चिरिण्टी (सं० स्त्री०) चिरण्टी पृषोदरादित्वात् साधु। १ सयानी लड़की जो पिताके घरमें रहे। इसका पर्याय—स्ववासिनी, चिरण्टी, सुवासिनी है। २ युवती।

चिरिबिल्व (सं० पु०) चिरिबिल्व पृषोदरादित्वात् साधु। करञ्जवृक्ष, कंजाका पेड़।

चिरु (सं० क्ली०) चि बाहुलकात् रुक्। बाहुसन्धि, स्कन्ध और बाहुका सन्धिस्थल, कंधे और बाँहका जोर।

चिरे (अव्य) चिरमेति चिर-इ-विच्। दीर्घकाल।

"चिरस्याद्याश्चिराय का:।" (अमर)

'आद्याशब्देन चिरे चिरेणचिरात् इति गृह्णन्ति।' (भानुजी दीक्षित)

चिरेण (अव्य) चिर-बाहुलकात् एनप्। दीर्घकाल।

"निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव।" (रघु०)

चिरैता (हिं० पु०) चिरायता।

चिरैया (हिं० स्त्री०) १ चिड़िया २ वर्षाका पुष्य नक्षत्र। ३ परिहतका सिरा जो जोतनेवालेके हाथमें रहता है।

चिरौंजी (हिं० स्त्री०) पियाल फलोंके बोजकी गिरी जो खानेमें बड़ी स्वादिष्ट होती है।

चिर्कणा (सं० स्त्री०) पूगफल, सुपारी।

चिर्भट (सं० क्ली०) राजशूषवी, करेली।

चिर्भटी (सं० स्त्री०) चिरेण भटति चिर-भट-अच् पृषोदरादित्वात् साधु 'गौरादित्वात् ङीष्'। १ ककंटी, ककड़ी। २ राजसुषवी।

चिर्भिट (सं० पु०) चिर्भटी पृषोदरादित्वात् साधु। १ गोरक्षकर्कटी, ककड़ी। (क्ली०) २ गोमुकफल, फूट।

चिर्भिटा (सं० स्त्री०) ककंटी, ककड़ी। इसका संस्कृत पर्याय—सुचित्रा, चित्रफला, क्षेत्रचिर्भिटा, पाण्डुफला, पथ्या, रोचनफला, चिर्भिटिका और कर्कचिर्भिटा है। यह मधुर, रूक्ष, गुरुपाक, तथा पित्त और कफनाशक

है। पक जाने पर यह उष्ण और पित्तकारक होती है। (भावप्रकाश) तथा अपक्क अवस्थामें तिक्त और कुछ अम्ल-रसयुक्त होती है। सूखी ककड़ी वात, श्लेष्मा, अरुचि, शरीरकी जड़ता और परिपाकशक्ति बढ़ाती है।

चिर्भिटिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कटी, ककड़ी।

चिर्भिटी (सं॰ स्त्री॰) ककड़ी।

चिलक (हिं॰ स्त्री॰) १ द्युति, कान्ति, आभा, चमक झलक। २ शरीरका वह दर्द जो ठहर ठहर कर उठता हो। ३ एक बारगी उठ कर बंद हो जानेवाला दर्द।

चिलकना (हिं॰ क्रि॰) १ चमचमाना, झलकना। २ ठहर ठहर कर दर्द होना। ३ एक बारगी दर्द हो कर बंद हो जाना।

चिलका (हिं॰ पु॰) चाँदीकी मुद्रा, रुपया।

चिलगोजा (फा॰ पु॰) मनोबरका फल।

चिलचिल (हिं॰ स्त्री॰) अभ्रक, अबरक।

चिलड़ा (देश॰) उलटा नामका पकवान।

चिलता (फा॰ पु॰) एक प्रकारका कवच।

चिलनदेव—नेपालके अन्तर्गत पाटन और कीर्त्तिपुरके मन्दिर। प्रत्येक स्थानमें कमसे कम पाँच पाँच मन्दिर हैं। मध्यस्थल मन्दिर ही सबसे ऊँचा है। मन्दिरोंकी बनावट बहुत चमत्कृत है। इनमें स्थापित बुद्धदेवकी मूर्तियां भी अत्यन्त सुन्दर हैं।

पाटनका मन्दिर एक सरोवरके पश्चिमको ओर अवस्थित है। प्रवाद है कि सम्राट् अशोकने जब यह मन्दिर निर्माण किया, सरोवर भी उसी समय खुदा गया था। इस मन्दिरके पूरबकी ओर एक शिलालेखमें लिखा है कि बीचका मन्दिर एवं चारों कोनके मन्दिर शेरिस्था नीवार मिगापालसे १३५७ ई॰में अच्छी तरह संस्कार किये गये थे। १६८० ई॰में ८।१० बाँड़ाने मिल कर इस मन्दिरके अन्तर्गत एक धरम-धातुमण्डल निर्माण किया। १५०१ ई॰के पहले कीर्तिपुरके मन्दिरके विषयका पता कुछ नहीं लगता है। एक शिलालेख पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि उक्त ई॰में इस मन्दिरका संस्कार हुआ और साथ ही साथ इसकी वृद्धि भी की गई। इस मन्दिरके भीतर एक 'धरम-धातुमण्डल' तथा इसके चारों ओर 'अष्टमङ्गल' ये दोनों शब्द खुदे हुए हैं। १६६६ ई॰में बाँड़ा जातिके दो भाइयोंने यह निर्माण किया था। मन्दिरके दक्षिण-पूर्व कोणमें एक छोटा देवालय है। इसके भीतर बुद्धदेवकी त्रिमूर्त्ति प्रतिष्ठित है। १६७२ ई॰में राजा श्री नवाम मल्लके राजत्वकालमें बाँड़ासे यह देवालय बनाया गया है।

चिलबिल (हिं॰ पु॰) एक तरहका मजबूत काठवाला पेड़। इसको लकड़ीसे खेतीके औजार बनाये जाते हैं। २ एक तरहका पेड़। जिसको पत्तियां बहुत कुछ इमली-की पत्तियोंसी मिलती हैं।

चिलबिला (हिं॰ वि॰) चपल, चञ्चल, नटखट।

चिलम् (फा॰ स्त्री॰) वह मिट्टीका बरतन जिस पर तमाकू और आग रख कर तमाकू पीते हैं। बहुत मनुष्य चिलम-को हुक्केकी नलीके ऊपर बैठा कर तमाकू पीते हैं।

चिलमगर्दा (फा॰ स्त्री॰) लगभग एक या डेढ़ हाथ लम्बी बाँसकी बनी हुई नली जो हुक्केमें लगी रहती है। इसीके ऊपर चिलम रखी जाती है, गट्टा।

चिलमचट (फा॰ वि॰) १ जो अधिक चिलम पीता हो, जिसे तमाकू पीनेकी बहुत आदत पड़ गई हो। २ इस तरह खींच कर चिलम पीनेवाला कि फिर वह चिलम दूसरेके पीने लायक न रहे।

चिलमची (फा॰ स्त्री॰) एक तरहका बरतन जो देगकी तरह होता है। इसके किनारे चारों ओर तक फैले होते हैं। यह हाथ धोने और कुल्ली आदि फेंकनेके काममें आती है।

चिलमन (फा॰ पु॰) एक तरहका परदा जो बाँसको फट्टियोंका बना हुआ रहता है, चिक।

चिलमपोश (फा॰ पु॰) चिलम ढक देनेका झंझरीदार ढक्कन। यह चिनगारीके उड़नेसे बचाता है।

चिलम-बरदार (फा॰ पु॰) वह नौकर जो हुक्का पिलाता हो।

चिलमिलिका (सं॰ स्त्री॰) चिरं मिलति चिरमील्-गवुल् ततष्टाप्, अत: इत्वं। १ कण्ठिभेद, एक प्रकारकी कंठी। २ खद्योत, जुगनू। ३ विद्युत्, बिजली।

चिलबाँस (पु॰) चिड़िया फँसानेका एक तरहका फंदा।

चिलस—काश्मीर-महाराजके अधीनस्थ एक दरद राज्य।

इसके उत्तरमें सिन्धु नदी तथा दक्षिण और पूर्वमें एक झील है। वर्षमें बहुत दिन तक यह तुषारसे ढका रहता है। शिनि जातिका यहां वास है। ये अरब वंशीयके जैसा अपना परिचय देते हैं। मुसलमानोंके साथ तुलना करने पर देखा जाता है कि इनकी स्त्रियां अधिक स्वाधीन हैं और समता भी इनमें अधिक है। ये सतीत्वके बड़े ही पक्षपाती हैं। यहांकी असती स्त्रियोंका दण्ड मृत्यु है। क्या पुश्तु, क्या फारसी, क्या हिन्दी किसी भी भाषा के साथ इनकी भाषा नहीं मिलती है। इनके पड़ोसी सैयदजाति और चिलघिटके पश्चिमस्थित दुरराइल तथा तानकीयगण भी इन लोगोंकी भाषा समझ नहीं सकते हैं। इन लोगोंमें एक प्रवाद है कि अठारवीं शताब्दीमें मुसलमानोंने चिलस् वासियोंको पराजय कर उन्हें मुसलमान धर्ममें दीक्षित किया था। ये प्रतिवर्ष काश्मीर महाराजको तीन तोले सोनेकी चूर और एकसौ बकरा कर स्वरूप देते हैं।

चिलसी (देश०) काश्मीरमें होनेवाला एक तरहका तमाकू। यह अप्रैल महीनेमें बोया जाता है।

चिलहुल (हिं० पु०) सिंध, पंजाब, युक्तप्रान्त और बङ्गाल-की नदियोंमें पाई जानेवाली एक तरहकी मछली। इस-की लम्बाई लगभग डेढ़ बालिश्तकी होती है।

चिलासी—मध्य एशियाके अन्तर्गत हिन्दूकुशपर्वत पर रह-नेवाली एक जाति। ये मुसलमान धर्मको मानते हैं। परन्तु इन लोगोंने उक्त धर्मको दूसरे आकारमें परिणत कर दिया है। ऐसी किम्बदन्ती सुननेमें आई है कि, चौदहवीं शताब्दीके बीचमें यह धर्म इन लोगोंमें प्रचलित हुआ है। पर्वत परके हर एक गाँवमें प्राचीन पौत्तलिक धर्मका चिह्न पाया जाता है। प्रस्तरनिर्मित अवयव प्रायः सर्वत्र ही टिके हुए हैं। इन मूर्तियोंके सामने किसी प्रकारकी प्रतिज्ञा करनेसे वह अलङ्घनीय समझी जाती है। स्वात और बोनारसे मुल्ला आ कर इनमें तथा पर्वत-स्थित अन्यान्य जातियोंमें धर्मोपदेश दिया करते हैं। यहां की प्रत्येक जाति स्वाधीनतापूर्वक रहती है। इनमें एक स्त्री अनेक पतियोंके साथ रमती है। इनका वैवाहिक बन्धन भी टूट सकता है। ये लोग आमोद-प्रमोदमें मस्त रहते हैं तथा नाचने, गाने और अन्यान्य दिल बहलावेके कामोंमें इनका बड़ा उत्साह पाया जाता है।

चिलिका (सं० स्त्री०) चिरिका देखो।

चिलि (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक तरहकी मछली।

चिलिचिम (सं० पु०) चिलिं हिंसा चिनोति चिलि-चि-मक् रस्य लत्वं। मत्स्यविशेष, चेलहवा मछली। इसका पर्याय—मलमीन, तलमीन, चिलीचिमि, चिलिचीम, चिलीचिम, चेलिचिम, चिलीम, चिलिमीनक, चिलिचीमि, कवल और विलोटक है। यह मछली लघु, रूखा, वायु-कारी और कफनाशक मानी गई है।

चिलिया (हिं० स्त्री०) चिलहुल मछली।

चिलियानवाला—पञ्जाब प्रदेशमें गुजरात जिलेके अन्तर्गत फालियान् तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० ३२° ३९´ उ० और देशा० ७३° ३७´ पू० पर झेलम नदीके तटसे ५ मील दूर पर अवस्थित है।

१३ जनवरी १८४९ ई०में यहां सिखोंकी दूसरी लड़ाई हुई थी जिसमें अंगरेजोंकी हार हुई थी। उनके बहुतसे राजपुरुष तथा सेना इस युद्धमें मारी गई थी। इस-के स्मरणार्थ इस युद्धक्षेत्रमें एक चिह्न स्थापित हुआ है। आसपासके मनुष्य इस स्थानको "कतलगढ़" कहते हैं। जेनेरल कनिंहमका कथन है कि इस रणक्षेत्रमें पहले अलेक सन्दरके साथ पुरु राजाका युद्ध हुआ था।

चिल्काहृद-उत्कल प्रदेशकी एक विख्यात झील। यह पुरी जिलेके दक्षिण-पूर्वकोणसे आरम्भ हो कर मन्द्राज प्रदेशके गञ्जाम जिले तक चली गई है। यह अक्षा० १९° २८´ एवं १९° ५६´ उ० और देशा० ८५° ६´ तथा ८५° ८६´ पू० पर बङ्गोपसागरके उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। समुद्र और ह्रदके मध्य बालूका एक ढेर है। इस ढेरमें एक छिद्र होनेके कारण झीलका संयोग समुद्रसे हो गया है। यह ४४ मील लम्बा है और इसका उत्तरार्ध २० मील चौड़ा है। इसका दक्षिणार्द्ध क्रमशः पतला हो गया है। इस जगह इसकी चौड़ाई लगभग ५ मीलकी है। इसकी गहराई ६ फुटसे अधिक कहीं पर नहीं है दिसम्बरसे जून मास तक इसका जल खारा रहता है। वर्षाके आरम्भ होनेसे लवणाक्त जल धीरे धीरे दूर होता जाता है और मीठे जलसे यह भर जाता है। इसका जल अत्यन्त परिवर्तन-शील है, कभी घट जाता और कभी बढ़ जाता है।

इस झीलके स्थान स्थान पर अत्यन्त मनोहर दृश्य हैं। इसके दक्षिण और पश्चिम तट पर पर्वतश्रेणी शोभा दे रही है। इस अंशमें पत्थरोंसे गठित कई एक द्वीप हैं। यों तो इसके उत्तरमें भी द्वीप हैं लेकिन वह पत्थरका बना नहीं है। इस द्वीपमें मनुष्योंका वास नहीं है, लेकिन सरकण्डेका जङ्गल है। कभी कभी प्रयोजन पड़ने पर आसपासके अधिवासी यहांसे सरकण्डा (नरकट) काट कर ले जाते हैं। ह्रदके पूरब पारिकुद नामक द्वीपपुञ्ज है जिसकी शोभा देखते ही बनती है। इन द्वीपोंको प्रकृतिका प्रमोद-कानन कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं है। मनोहर वृक्षोंकी शाखा पर बैठे हुए भांति भांतिके रंगोंसे रञ्जित अच्छे अच्छे पक्षियोंकी मधुर ध्वनिसे द्वीपपुञ्ज सर्वदा गुंजा करता और कवियोंका हृदय सदा प्रीतिभाजन हुआ करता है। एक समय महात्मा चैतन्यदेव इस झीलकी शोभा देख ज्ञानशून्य हो जलमग्न हो गये थे।

चिल्ल (सं० त्रि०) क्लिन्नं चक्षुषी क्लिन्न-चिल, लश्च क्लिन्नस्य चिल लश्चास्य। चक्षुषी। पा ५।२।३३ वार्तिक। १ क्लिन्न, चक्षु, जिसकी आखोंमें क्लिन्नरोग हुआ हो।

२ पक्षीविशेष, एक तरहकी चिड़िया, चील इसका पर्य्याय आतायी, शकुनि, आतापी, खभ्रान्ति, कण्ठनीड़क और चिरञ्जण है।

चिल्लका (सं० त्रि०) चिल्ल-इव कायति चिल्ल-कै-क। झिल्लिका, झींगुर नामका एक कीड़ा।

चिल्लड़ (हिं० पु०) जूंकी जातिका एक बहुत छोटा सफेद कीड़ा। यह मैले कपड़ोंमें पड़ जाता है। इसके काटनेसे शरीरमें बड़ी खुजली मचती है और छोटे छोटे दानेसे पड़ जाते हैं।

चिल्लपों (हिं० स्त्री०) शोर, गुल, चिल्लाहट।

चिल्लभक्ष्या (सं० स्त्री०) चिल्लस्य भक्ष्या भक्षणीया, ६-तत्। रुद्रविलासिनी नामक गन्धद्रव्य, नख या नखी नामका गन्धद्रव्य।

चिल्लवांस (हिं० स्त्री०) बच्चोंकी वह चिल्लाहट जो जमुवाके रोगमें होती है।

चिल्लवाना (हिं० क्रि०) दूसरेसे चिल्लानेका काम कराना, चिल्लानेमें प्रवृत्त कराना।

चिल्ला (फा० पु०) १ चालीस दिनका समय। २ वह व्रत जो चालीस दिनोंमें हो, किसी पुण्य-कार्यका वह बंधेज वा नियम जो चालीस दिनके लिये हो। ३ पगड़ीका छोर जिसमें कलाबत्तूका काम हो। ४ एक जङ्गली पेड़। ५ प्रत्यञ्चिका, धनुषकी डोरी। ६ उर्द, मूंग वा रोंडेके आटेकी रोटी वा परौंठी।

चिल्ला—यमुना नदीके दक्षिणकी ओर एवं बरदेवालसे १२ मील पूरबमें अवस्थित एक ग्राम। यह प्रयागसे दक्षिण-पश्चिमकी ओर १२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। ग्राम वृक्षोंसे भरा हुआ है और देखनेमें बहुत सुन्दर मालूम पड़ता है। यहां पत्थरकी बनी हुई एक बड़ी अट्टालिका है, इसीलिये यह ग्राम प्रसिद्ध गिना गया है। प्रवाद है कि इस अट्टालिकामें अल्हा और ऊदल नामके दो बनाफाके वीरपुरुष वास करते थे। यह चारों ओरसे इस तरह ऊंची और दृढ़ दीवारोंसे घिरा था कि कुछ समय तक यह शत्रुसैन्यके आक्रमणको रोक सकता।

यह अट्टालिका हिन्दुओंकी आदिम कीर्ति है। कनिंहम साहबका अनुमान है, कि यह ८वीं या ९वीं शताब्दीमें बनाया गया था।

चिल्लाना (हिं० क्रि०) शोर करना, हल्ला करना।

चिल्लाभ (सं० पु०) चिल्ल इव प्रसह्य हारित्वादाभाति चिल्ल-आ-भा-क। १ चौरविशेष, गठकट्टा। (पु०) चितो लाभः, ६-तत्। २ चैतन्यलाभ, ज्ञानकी प्राप्ति।

चिल्लाहट (हिं० स्त्री०) १ गरजनेका भाव। २ हल्ला, शोर, गुल।

चिल्लि (सं० पु०) चिल-इन्। भ्रूद्वयका मध्य, दोनों भौंहोंके बीच। २ चील।

चिल्लिका (सं० स्त्री०) चिल्लि स्वार्थे कन् ततष्टाप्। भ्रू, दोनों भौंहोंके बीचका स्थान।

"सलिलभरजितमशरासनतां चिल्लिकालतां।" (कादम्बरी)

चिल्ली स्वार्थे कन् इकार ह्रस्वश्च। २ चिल्लीशाक, एक तरहका बथुआ साग।

चिल्ली (सं० स्त्री०) चिल्ल-इन ततो ङीप्। १ लोध्रवृक्ष, लोध। २ झिल्लिका, झिल्ली।

३ क्षुद्र वास्तुक शाक, बथुआ साक। इसका पर्याय— चिल्लिका, क्षुनी, अग्रजीविता, मृदुपत्री, क्षारदला, क्षारपत्रा, वास्तुकी, महद्दला और गौड़वास्तुक है। इसका

गुण—श्लेष, पित्त, मूत्रकृच्छ्र और प्रमेहनाशक, पथ्य और रुचिकर है। (राजनि०)

चिल्लीका (सं० स्त्री०) झींगुर (Cricket)।

चिल्लूपार—युक्त-प्रदेशके अन्तर्गत गोरखपुर जिलेका एक परगना। इसके उत्तर-पूर्वमें राप्ती नदी, पश्चिम और उत्तर-पश्चिममें भौपार एवं धुरियापाड़ नामके दो परगने तथा दक्षिणमें घर्घरा नदी है। इस परगनेमें भिन्न भिन्न जातिके मनुष्य वास करते हैं। इसके एक उपविभागमें सिर्फ कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंका वास है जिनकी संख्या लगभग ८ हजार होगी। यहां बहुतसे जलाशय हैं जिनसे शस्यक्षेत्रका यथेष्ट उपकार होता है। गोरखपुर जिलेमें यह परगना सबसे अधिक उर्वरा है। तड़ागका जितना भाग सूख जाता है उतनेमें शीघ्र ही धान बोया जाता है। ऐसे समयमें धान और नीलकी खेती होती है। वसन्त ऋतुमें गेहूं, अरहर, चना और दूसरे दूसरे अनाज उत्पन्न होते हैं। यह परगना पहले भर जातिके अधिकारमें था। कहा जाता है कि चौदहवीं शताब्दीमें धुरियापाड़के प्रथम राजा धुरचांद कौशिकने इन्हें यहांसे भगा दिया था। १६वीं शताब्दीके अन्त अथवा १७वीं शताब्दीके आरम्भमें सेरावासी वीरनाथसिंह विशेनने इसे अपने अधिकारमें लाया। इनके वंशधरोंने १८५८ ई० तक राज्य किया था। इसके बाद राजाके विद्रोही हो जाने पर इस वंशकी राज उपाधि सदाके लिये लोप हो गई। इन राजाओंकी राजधानी नरहरपुरमें थी, इसी कारण ये नरहरपुरके राजाके नामसे मशहूर रहे।

चिल्हवाड़ा (हिं० पु०) लड़कोंका एक प्रकारका खेल। यह पेड़ पर चढ़ कर खेला जाता है, गिलहर, गिल्लहर।

चिवि (सं० स्त्री०) चीव-इन् पृषोदरादित्वात् साधु। चिबुक, ठोढ़ी।

चिविट (सं० पु०) चिपिट, चिउड़ा, चिड़वा, चूड़ा।

चिविल्लिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र क्षुपविशेष, एक प्रकारका छोटा झाड़। इसका पर्याय—रक्तदला, क्षुद्रघोला और मधुमाल पत्रिका है। इसका गुण—कटु, कषाय, रसायन और जीर्ण ज्वरमें विशेष उपकारी है। (राजनि०)

चिवु (सं० पु०) चीव-उ-पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। ओष्ठका अधोभाग, चिबुक, ठुड्डी, ठोढ़ी, दाढ़ी।

चिवुक (सं० क्ली०) चिवु स्वार्थे कन् अभिधानात् क्लीवत्वं। १ चिवु देखो।

"उत्तमभा चिव कं वक्ष स्युत्थाप्य न्यसनं शनैः।" (हठयोगदीपिका ३।४६)

(पु०) चिवु संज्ञायां कन्। २ मुचुकुन्द वृक्ष।

चिश्चा (अव्य) तूणसे बाण उठानेके समय जो शब्द होता है उसको चिश्चा कहते हैं।

"चिश्चा करोति समनावनता।" (ऋक् ६।७५।५)

चिष्ट (सं० पु०) अचिष्ट देखो।

चिह्नण (सं० त्रि०) चिक्कण पृषोदरादित्वात् निपातने साधु। चिक्कण, चिकना। (पा ६।२।१२५)

चिह्नणकन्थ (सं० त्रि०) चिह्नणकन्था यस्य, बहुव्री०। जिसके चिक्कण कन्था हो, जिसकी गुदड़ी चिकनी हो। (पा ६।२।१२५) २ एक शहरका नाम

चिह्नणादि (सं० पु०) चिह्नण आदिर्यस्य, बहुव्री०। पाणिनिका एक गण। चिह्नण, मदुर, मद्रुमह, वैतुल, पटत्क, वैड़ालिकर्णक, वैड़ालिकर्णि, कुक्कुट, चिक्कण, और चिक्कण इन शब्दोंको चिह्नणादि कहते हैं। कन्था शब्द पीछे रहनेसे चिह्नणादिका आदि उदात्त होता है। (सि० कौ०)

चिहुर (सं० पु०) चिकुर पृषोदरादित्वात् साधु। केश, सिरके बाल।

चिह्न (सं० क्ली०) चिह्न-अच्। १ लक्षण, रूप, निशान। इसका पर्याय—कलङ्क, अङ्क, लक्ष्म, लक्षण, लिङ्ग, लक्ष्मण और अभिज्ञान है।

"चिह्नीभूतं लभिज्ञानं लमङ्गं कर्तुं मईसि।" (रामा० ४।१२।४४)

२ मात्रा, गणविशेष। जिस गणका आदि लघु हो और तीन मात्रा युक्त हो, उसे चिह्न कहते हैं। (शब्दार्थचि०) ३ पताका, झंडी। ४ किसी प्रकारका दाग या धब्बा।

चिह्नक (सं० त्रि०) चिह्नयति चिह्न-ण्वुल्। १ जो चिन्हित करता है, पहचान करनेवाला। २ वृक्षविशेष, चिल्ह नामका पेड़।

चिह्नकारिन् (सं० त्रि०) चिह्नं करोति चिह्न-कृ-णिनि। १ चिह्नकारक, दाग या निशान देनेवाला। २ घोर दर्शन, भयंकररूप। (शब्दर०) स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

चिह्नधारिन् (सं० त्रि०) चिह्नं धरति चिह्न-धृ-णिनि। चिह्नयुक्त, जिसके दाग या निशान हो।

चिह्नधारिणी (सं० स्त्री०) चिह्नधारिन्-ङीप्। श्यामालता, श्यामा नामकी लता, कालीसर।

चिह्नित (सं० त्रि०) चिह्न कर्मणि क्त। १ अङ्कित, चिह्न किया हुआ, जिस पर चिह्न हो। २ लक्षित, देखा गया, पहचाना हुआ।

"दिवा चरेयुः कार्य्यार्थं चिह्निता राजशासनैः।" (मनु० १०।५५)

चिह्नीकृत (सं० त्रि०) चिह्न च्वि कृत। चिह्नित, चिह्न किया हुआ।

"लिङ्गेनापि हरस्य सर्व्वे पुरुषाः प्रत्यर्च्चचिह्नीकृताः।" (भा० अनुशा०)

चीँचीँ (अनु० स्त्री०) १ पक्षियों अथवा बच्चोंका महीन स्वरमें बहुत बोलना या चिल्लाना। २ छोटे बच्चों वा पक्षियोंका महीन शब्द।

चीँचपड़ (अनु० स्त्री०) वह शब्द वा कार्य जो किसी सबल वा बड़े आदमीके सामने प्रतीकार या विरोधके अभिप्रायसे किया जाय।

चीँटो (हिं० स्त्री०) चिउँटी देखो।

चीक (हिं० स्त्री०) १ किसी कष्ट आदिके कारण बहुत जोरसे गरजनेको आवाज, चिल्लाहट। (पु०) २ बूचर, कसाई। खास कर बूचरोंकी दूकान पर परदाके लिये चिकें लटकी रहती हैं इसीसे उन्हें चीक कहते हैं।

चीकट (हिं० पु०) १ तलछट, तेलका मैल। २ लसार मट्टी, मटियार। (देश०) ३ चिकट नामका रेशमी वस्त्र।

चीकना (हिं० क्रि०) १ जोरसे चिल्लाना। २ बहुत जोरसे बोलना।

चीख (हिं० स्त्री०) चीक देखो।

चीखना (हिं० क्रि०) किसी चीजका स्वाद लेनेके लिये थोड़ी मात्रामें खाना।

चीखर (हिं० पु०) १ कीच, कीचड़।

चिखुर (हिं० पु०) गिलहरी।

चीँचगढ़—चीचगढ़ देखो।

चीचीकुटि (अव्य) शारिका प्रभृतिका शब्द अनुकरण, सारस पक्षीके जैसा शब्द करना।

"चीचीकुटीति वाशन्ते शारिका वञ्चिवेश्मसु।" (भारत १६।२)

चीज (फा० स्त्री०) १ पदार्थ द्रव्य, वस्तु, सत्तात्मक वस्तु। २ आभूषण, गहना, जेवर। ३ गानेकी चीज, गीत, राग। जैसे कोई अच्छी चीज सुनाओ। ४ महत्वकी वस्तु, गिनाई जाने योग्य वस्तु। ५ विलक्षण वस्तु।

चीड़ (देश०) लोहविशेष, एक प्रकारका देशी लोहा।

चीड़ा (सं० स्त्री०) चिड़-टाप् पृषोदरादित्वादिकारस्य दीर्घत्वं। गन्धद्रव्यविशेष, चीढ़ नामका पेड़। इसका पर्याय—दारुगन्धा, गन्धवधू, गन्धमादनी, तरुणी, तारा, भूतमारी, मङ्गल्या, कपटिनी, ग्रहभीतिजित् है। इसका गुण कटु, कफ और काशनाशक तथा दीपन है। इसके अधिक परिमाणमें खानेसे पित्तदोष और भ्रान्ति जाता रहता है।

चीढ़ (हिं० पु०) चीड़ा, भूटान, काश्मीर और अफगानिस्तानमें होनेवाला एक प्रकारका बहुत ऊंचा पेड़। इसमें अच्छी अच्छी पत्तिया लगती हैं और इसके काष्ठ इमारत और सजावटके सामान बनानेके काममें आते हैं। इसकी लकड़ीमें पानी लगनेसे शीघ्र ही खराब हो जाती है। पहाड़ी मनुष्य इसकी लकड़ीको जला कर मशालका काम लेते हैं। क्योंकि इसमें तेलका अंश अधिक रहता है। चीड़ शब्दमें देखो।

चीण (सं० पु०) चीन पृषोदरादित्वात् साधु। चीनदेशवासी, चीन देशके रहनेवाले। (वृहत्सं० १६।८)

चीणक (सं० पु०) चीनक देखो।

चीतना (हिं० क्रि०) १ सोचना, विचारना भावना करना। २ चैतन्य होना, होशमें आना। ३ स्मरण करना, याद करना।

चीतल (हिं० पु०) १ एक प्रकारका हिरण। इसके शरीर पर सफेद रंगके धब्बे होते हैं। यह हिन्दुस्थानके प्रायः जलके किनारे झुंडोंमें पाया जाता है। इसकी मादा आठ महीनेमें बच्चा देती है। २ सर्पविशेष, एक प्रकारका साँप जो कुछ कुछ अजगर साँपसे मिलता जुलता है। इसके सामनेका भाग पतला और मध्यका भाग बहुत भारी होता है। इसका आहार खरगोश, बिल्ली और छोटा छोटा छागल है। ३ एक प्रकारका मुद्रा, सिक्का।

चीता (हिं० पु०) १ शार्दूल जातीय एक हिंसक पशु, शेरकी जातिका एक हिंसक जानवर। यूरोपीय प्राणितत्त्वविद्गण इसको बिल्लीकी जातिका बतलाते हैं। इसको देह चित्रित होनेके कारण इसको संस्कृतमें चित्रक

या चित्रव्याघ्र कहते हैं। इसकी तमाम देह सुदृढ़ और सबल होती है, गठन विशेष मोटी नहीं होती, मस्तक गोल, दाँत खूब पैने और पञ्जे के नाखून बड़े तीखे होते हैं। इनकी पूँछ खूब लम्बी और सारी देह घने कड़ लोमोंसे ढकी हुई होती है। इसकी देह पर लम्बी काली और पीली धारियाँ होती हैं। इसका रङ्ग कालेपनको लिए पीला होता है। भारतवर्ष, पूर्व उपद्वीप, अफगानस्तान, सिंहल आदि एशियाके नाना स्थानोंमें और अफ्रीकामें चीता दिखलाई देता है। जगह जगह इसकी बहुतसी जातियां भी हैं। बहुतसे लोग काले शेरको भी इसी जातिका बतलाते हैं। चीताकी जातिके एक छोटे बाघको बीबीबाघ कहते हैं।

चीता घने जङ्गलमें रहता है। यह बड़ा ही हिंसक होता है। पेट भरा रहने पर भी यह शिकार करता है। मनुष्यको जरा भी नहीं डरता, तथा कभी कभी तो शिकारी तकको मार डालता है। यह हरिण, बकरी भेड़ आदिको पकड़ कर खाता है और कभी कभी मौका लगने पर गाय भैंसोंको भी मार डालता है। जिसको आदमीके खूनकी चाट पड़ जाती है, वह गाँवमें घुस कर बच्चोंको पकड़ ले जाता है, तथा गाय भैंस आदिको भी नष्ट करता है। यह व्याघ्रकी तरह बहुत तेजीसे चौकड़ी भरता है। यह मामूली तौरसे ५।६ हाथ ऊँची दीवारको लांघ सकता है। यह प्रायः मरे हुए जानवरोंको नहीं खाता, परन्तु ज्यादा भूंख लगने पर खाता है। यह झाड़ियोंमें छिपा हुआ रहता है और पासमें जानवर आते ही उस पर टूट पड़ता है। कभी कभी सामना करके भी शिकार करता है।

यह सहजमें पोस नहीं मानता, किन्तु बचपनसे पालनेसे कुत्तेकी तरह हिलता और स्वामीकी भक्ति करता है। भारतवर्षमें बहुत जगह पाले हुए चीतासे खेल खेलते देखा गया है। इसके सिवाय बहुतसे लोग चीताको पाल कर उससे हिरन आदिका शिकार कराते हैं।

शिकारी-चीता (Falis jubata) मध्यभारत, दाक्षिणात्यके मध्यभागमें, राजपूताना और सिन्धुप्रदेश आदि स्थानोंमें पाया जाता है। सिरिया, मेसोपटोमिया आदि एशियाके दक्षिण-पश्चिम भागमें, तथा अफ्रीकामें सर्वत्र चीता पाया जाता है। यहांके चीताका रंग धूसर और सफेद होता है, तथा शरीर पर घने घने काले गोल दाग होते हैं। आखोंका प्रान्तभाग काली रेखायुक्त होता है, पूंछ धारीदार और छोर काला होता है। पेट पर बड़े बड़े लोम और कन्धे पर कुछ केशर होते हैं। इसकी आखें गोल, पैर लम्बे और कमर पतली होती है। इसके द्वारा कृष्णसार और हिरनोंका शिकार किया जाता है, इस लिए यह शिकारी चीता कहलाता है। बच्चा कुछ बड़ा हो जाने पर उसे पकड़ कर पालते हैं और फिर शिकार करना सिखाते हैं। पालते समय इसको ज्यादा उत्तेजित करने या सर्वदा बन्द रखनेसे कुछ फल नहीं होता। सावधानता पूर्वक यथोपयुक्त स्वाधीनता और प्यार करते रहना चाहिये। शिकारको जाते समय शिकारी लोग चीताको एक गाड़ीमें रख कर ले जाते हैं, तथा आँख पर पट्टी बाँध देते हैं। बादमें जहाँ काले हिरनोंका झुण्ड दिखलाई दे; वहाँ जहाँ तक हो पासमें

जा कर चीताको निकाल कर उसकी आँखोंकी पट्टी खोल देते हैं। चीता शिकारके देखते ही चुपचाप झुण्डकी तरफ बढ़ता है और जब बिल्कुल पासमें पहुंच जाता है या शिकार भागनेकी चेष्टा करता है, तब वह छलांग मार उसे पकड़ लेता है। यदि प्रथम आक्रमणमें न पकड़ सके, तो क्रोधसे और निराशासे अधीर हो कर विकट मुँह बना कर बैठ जाता है। चीता, झुण्डके सबसे बड़े काले हिरन पर आक्रमण करता है, तथा उसकी गर्दन पर मुँह गड़ा कर और मस्तक पर पञ्जा मार कर उसे इस प्रकारसे वश करता है कि, वह फिर अपने सींगोंसे चीताका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। शिकार होनेके बाद हिरनका एक पैर काट कर परिश्रमका पुरष्कार स्वरूप चीतेको दिया जाता है। जो कालाहिरन क्या देशी और क्या बिलायती, किसी भी डालकुत्ते से परास्त नहीं होता, वह भी चीतासे घबराता और पराजित होता है। परन्तु चीता ज्यादा देर तक दौड़ नहीं सकता। चीताका बहुत छोटा बच्चा पाला जाय, तो वह अच्छा शिकार नहीं कर सकता। इसलिए शिकारी लोग उसे कुछ बड़ा होने पर अर्थात् जब वह अपनी मासे पशु मारनेका कौशल सीख लेता है, तब पकड़ते हैं। इस हालतमें वह हिल भी जाता है और अच्छा शिकारी बन जाता है।

२ एक तरहका छोटा वृक्ष या बड़ा पौधा। इसकी पत्तियाँ जामुनके पत्तियों जैसी होती हैं। यह पौधा कई तरहका होता है, जिनमें भिन्न भिन्न सफेद, लाल, पीले या काले फूल लगते हैं। सफेद फूलवाला चीता साधारणत: देखनेमें आता है। परन्तु दूसरे चीते बहुत कम पाये जाते हैं। इसके फूल जूँहीके फूलके समान सुगन्धित होते हैं। इसकी छाल और जड़ औषधमें काम आती है, और खूब पाचक होती है। वैद्यकमें इसे अग्निवर्द्धक, भूँख बढानेवाला, रूखा, हलका, तथा संग्रहणी, सूजन। कोढ, खाँसी, बबासीर और यकृत्दोषको नाश करनेवाला, तथा त्रिदोषनाशक बतलाया है। ऐसा कहते हैं कि, काले फूलवाले चीतेकी जड़के सेवनसे बाल काले हो जाते हैं और सफेद फूलवाले चीतेकी जड़के सेवनसे शरीर मोटा हो जाता है। पर्याय—हुतभुक्, अम्बर, अनल, चित्रक, शिखावन आदि। ३ होश हवास, संज्ञा। (वि०) ४ सोचा हुआ, स्थिर किया हुआ, विचारा हुआ।

चीति (सं० स्त्री०) चि-क्तिन् पृषोदरादित्वात् साधु। चयन, संग्रह, संचय।

"देवाले चीति मविदन् ब्रह्माण उत वीरुधः।" (अथर्व २।९।४)

चीतू—एक प्रसिद्ध पिण्डारी सर्दार। इनका जन्म दोजाटोंके कुलमें हुआ था, परन्तु भीषण दुर्भिक्षके कारण इनके माता पिता इन्हें शैशव अवस्थामें एक पिण्डारीको बेच दिया था। उस पिण्डारीने इनको पाला और अपना रुजगार सिखाया। चीतूने शीघ्र ही अपनी असाधारण प्रतिभाके बलसे पिण्डारी दलमें ऐसी प्रतिष्ठा पाई कि, हीरू और बुरान नामक प्रधान सर्दारोंकी मृत्युके बाद दौलतराव सिन्धियाने इन्हें नवाबकी उपाधि दे कर एक जागीर भेंट स्वरूप दे दी। परन्तु दो वर्ष बाद ये सिन्धियाके कोपमें पड़ कैद किये गये, तथा चार वर्ष कैद भुगत कर अन्तमें प्रचुर धन देने पर ये छूटे थे। इसके बाद इन्हें सिन्धियाराजसे भूपालके अन्तर्गत ५ जिले इनाममें मिले थे। नर्मदा नदीके किनारे नीमार नामके स्थानमें इनकी छावनी थी।

चीतूके समयमें वासिल महम्मद, दोस्तमहम्मद और करीमखाँ नामके और भी तीन प्रधान सर्दार थे। सन् १८१४ ई०में चीतूके अधीन प्राय: १५००० अश्वारोही थे। चीतूने अपने सेनापतियों द्वारा बहुतसे देशोंको लुटवा कर प्रचुर धन संग्रह किया था। सन् १८१५में चीतूकी अधीनतामें प्राय: २५००० हजार अश्वारोही पिण्डारी सेनाने निजाम राज्य पर आक्रमण कर बहुतसा धन इकट्ठा किया था।

चीतूने रघुजी भोंसलेसे कई एक जायगीरें पाईं थीं। इसीलिए किसी समय रघुजी भोंसलेके राज्य पर करीम खाँ नामक पिण्डारी सर्दारके आक्रमण करनेका उद्योग करने पर चीतूने उन्हें सहायता नहीं दी थी। इसी विषय पर करीमखाँके साथ इनका खूब मनोमालिन्य हो गया था। परस्परके इस मनोमालिन्यसे करीमखाँका बल घट जाने पर सिन्धियाकी सेनाने उन्हें परास्त कर दिया। इस समय चीतूका बल खूब ही बढ़ गया था। चीतूने

१८१५ ई०में अंगरेजाधिकृत उत्तर सरकार तक लूट लिया था, इससे वहांके अधिवासियोंको बड़ा कष्ट पहुंचा था। १८१८ ई०में चोतूको वश करनेके लिए सर्जन मालकोल्म् नामके एक अंगरेज सेनापति भेजे गये थे। उस समय चीतूने अन्यान्य पिण्डारी सर्दारोंके साथ उत्तरकी ओर भाग कर जावदके यशोवन्तराव भाऊका आश्रय ग्रहण किया था। परन्तु अंगरेजोंकी सेनाने वहाँ भी उनका पीछा न छोड़ा, अतः वहाँसे भी उन्हें भागना पड़ा था। चित्तौरमें जा कर ये भिन्न भिन्न दिशाओंको भाग गये थे।

चीतू पहले गुजरातकी तरफ गये थे, किन्तु वहाँ घुमना मुश्किल देख वे पुनः लौट आये। बहुत जगह घूमते घूमते अंगरेजी सेनाको अतिक्रम करते हुए अन्तमें वे हिन्दियाके पास उपस्थित हुए। वहाँ मेजर हिथ्ने चीतूको पूरी तरह परास्त कर उनके दलको तितर-बितर कर दिया। चीतूने भाग कर अपने प्राण बचाये। बादमें उन्होंने अंगरेजोंके साथ सन्धि करनेके अभिप्रायसे अकस्मात् भूपालराजके पास जा कर उन्हें मध्यस्थ बननेके लिए कहा। चीतूकी इच्छा थी कि, अंगरेज उन्हें और उनके कुछ अनुचरोंको माफी दे कर कुछ जायगीर आदि देने पर वे उनसे अधीन रहने लगेंगे। परन्तु अंगरेजोंने इस बातको मञ्जूर न किया। चीतूको फिर भाग कर विन्ध्य और सातपुर पर्वत पर जाना पड़ा। वहाँ घूमते घूमते वे एक व्याघ्रके ग्रास बन गये। उनकी अर्द्ध-भक्षित देह एक भैंस चरानेवालेको मिली थी, उसने उन्हें पहिचान लिया था।

चीत्कार (सं० पु०) चीत्-कृ-घञ्। चिल्कार, उच्च ध्वनि, चिल्लाहट, हल्ला, शोर, गुल।

चीथड़ा (हिं० पु०) फटे पुराने वस्त्रका छोटा रद्दी टुकड़ा।

चीथना (हिं० क्रि०) खंड खंड करना, टुकड़े टुकड़े करना, चीथना।

चीथरा (हिं० पु०) चीथड़ा देखो।

चीद (फा० वि०) चुना हुआ, छांटा हुआ।

चीन (सं० पु०) चीयते सञ्चीयते दोष विशेषो यत्र, चि-बाहुलकात् नक् दीर्घश्च। देशविशेष, कोई मुल्क। शक्तिसङ्गम तन्त्रके मतसे काश्मीरसे आरम्भ करके कामरूपके पश्चिम तथा मानसेशके दक्षिण भोटान्त देश और मानसेशके दक्षिण पूर्वको चीन देश है। बृहत्संहिताके कूर्म-विभागमें ईशान कोणमें इस देशका उल्लेख है।

(बृहत्सं हि० १४ अ०)

चीन वर्तमान पूर्व एशियाका मध्यवर्ती सुविख्यात देश है। इस विस्तीर्ण राज्यके पूर्व चीनसागर एवं पीतसागर, दक्षिण-पूर्व उपद्वीप, पश्चिम तिब्बत तथा पूर्व तुर्कस्थान और उत्तरकी सुप्रसिद्ध बृहत् प्राचीर हैं। चीनका दैर्घ्य उत्तर-दक्षिणमें प्रायः १८६० मील और प्रस्थ पूर्व-पश्चिमको प्रायः १५२० मील है। परिमाण-फल प्रायः १५३४६५३ वर्गमील आता है। हैनानद्वीपके साथ यह राज्य अक्षा० १८° तथा ४०° उ० और देशा० ९८° एवं १२४° पू०के मध्य अवस्थित है। ऊपर जो परिमाण कहा, केवल चीन देशका है। एतद्भिन्न चीन साम्राज्यके अधीन मञ्चूरिया, मङ्गोलिया, चीन-तातार प्रभृति देश भी हैं। सबका पूरा परिमाण प्रायः ४४६८७५० वर्गमील पड़ता है। लोकसंख्या ४० करोड़से कम नहीं। राजस्व प्रायः २५ करोड़ रुपया उठता है

यह बहु जनाकीर्ण प्रकाण्ड राज्य एक भाषा भाषी, एक आचार व्यवहार-सम्पन्न एक जातीय लोगोंका वासस्थान और प्राचीनकालसे एक ही राजा द्वारा शासित है। भारतवासी उस राज्यको चीनराज्य और उसके अधिवासियोंको चीनवासी या चीना कहते हैं।

युरोपमें इस देशका नाम चाइना (China) है। पश्चिम मङ्गोलीय 'कार्थे', मञ्चूरीय तातार 'नकण कोण', जापानी लोग 'थ' और अनामवासी इसको 'छीन' कहते हैं। चीना अपने देशको 'चङ्गकुयो' अर्थात् मध्यराज्य बतलाते हैं। वह इसको 'चङ्ग-हो' अर्थात् मध्यप्रसून नामसे भी अभिहित करते हैं। वर्तमान राजवंशने इसका नाम 'टाट सिङ्ग यो' अर्थात् पवित्र साम्राज्य रखा है। उसको छोड़ करके 'चङ्ग-व्याङ्ग', 'टियाङ्गचेयो' अर्थात् स्वर्गीय राज्य प्रभृति दूसरे भी अनेक नाम हैं।

चीन देशकी भूमि प्रायः सर्वत्र उर्वरा है। तिब्बतके पर्वतसे बहिर्गत हो इयाङ्ग-सिकियाङ्ग और होयाङ्ग-हो दो नदियां उसके बहुविस्तीर्ण प्रदेशको जलदान करते करते सागरमें प्रविष्ट हुई हैं। इन दोनों नदियोंके ऊपरसे

एक नहर निकाली गयी है, जिससे कृषिकार्यको विशेष सुविधा हुई है। होयाङ्गहो वा पीतनदीकी गति अति परिवर्तनशील है। सम्प्रति इसकी गतिने परिवर्तित हो अनेक दूर पर्यन्त विस्तीर्ण जनपदको विशेष क्षति की है। इसी कारण पीतनदीको 'चीनका शोक (Chinese Sorrow) कहते हैं। दूसरी सब नदियोंमें दक्षिणको काण्टन नदी और उत्तर भागको पिहो नदी प्रधान है।

चीनको भूमिको प्रधानतः तीन भागोंमें विभक्त कर सकते हैं। पहिले पश्चिम भागमें उन्नत माल जमीन, दूसरे मध्य तथा दक्षिणांशमें पार्वत्यभूमि और तीसरे पूर्व भागमें प्रकाण्ड समतल क्षेत्र है। ये-लिङ्ग और इयन-लिङ्ग दो पर्वतश्रेणियां उत्तर-दक्षिणमें इसको तीन हिस्सोंमें बांटती हैं। ननलिङ्ग पर्वत दक्षिण भागमें अवस्थित है।

चीनकी राजधानी पेकिन नगर है। पेकिन शब्दका अर्थ उत्तर राजसभा है। यह राज्यके उत्तर भागमें बृहत् प्राचीरसे ३० कोस दक्षिण पिहो नदीके तीर अवस्थित है। एक अत्युच्च प्रशस्त प्राचीर नगरको वेष्टन किये हुए है। लोकसंख्या प्रायः १० लाख होगी। अपरापर नगरोंमें नानकिन, कानटन, साङ्घे, आमय, फुचु और निङ्गयो प्रधान हैं। नानकिन नगरमें पहले राजधानी थी।

विदेशीय अधिकारोंमें हङ्गकङ्ग द्वीप अङ्गरेजोंके अधिकृत है।

चीनके अधिकांश प्रदेशमें शीत-ग्रीष्मका अतिशय वैषम्य लक्षित होता है। पेकिन नगरके निकट शीतकालको इतना जाड़ा पड़ता कि नदी आदि पौषमाससे प्रायः ३।४ मास बर्फमें ढका रहता है। फिर ग्रीष्मकालमें असह्य गर्मी पड़ती है। किन्तु पेकिनका मैदानी तापांश अपने सम अक्षान्तर्वर्ती युरोपीय नगरोंके मैदानी तापांशसे बहुत कम है। ३९° ५४' उ० अक्षांशमें स्थित रहते भी पेकिनका मैदानी तापांश फारनहीटके ५४° अंशोंसे न्यून नहीं लगता। किन्तु नेपल्स नगरका मैदानी तापांश इससे प्रायः १° उत्तर अर्थात् ४०° ५०' उ० अक्षांशमें स्थित होते भी ६२° होता है। इसका कारण चीना राजधानीमें शीतकालकी दुरन्त शीत पड़ता है जिससे थरमामीटरका पारा बहुत गिरा हुआ रहता है। कानटन नगर कलकत्तेका सम अक्षान्तर्वर्ती है। परन्तु दोनोंके जलवायु शीतोष्णता विषयमें विस्तर पार्थक्य देख पड़ता है। वृष्टिका परिमाण सब वर्षोंमें समान नहीं होता। साधारणतः वार्षिक ७० इञ्च परिमित पानी गिरता है। किसी किसी वर्ष ८० इञ्च तक वृष्टि हो जाती है। अग्रहायणके मध्यसे फाल्गुनके कुछ दिन तक उत्तर-पूर्व दिक्से अति शीतल वायु बहती है। उद्भिदादि उस कालको वर्धित नहीं होते।

वैशाख मासमें दक्षिण वायु चलने लगता है। यह वायु दक्षिण उष्ण सागरोंमें प्रचुर वाष्पयुक्त हो करके उत्तर वायु द्वारा शीतल चीन देशमें पहुंचते ही वह वाष्पराशि कुज्झटिकारूपमें परिणत हो जाता है। इसी समय वृष्टि भी होती है। अवशेषको आषाढ़ श्रावण मासमें भयानक ग्रीष्म पड़ता है। कानटन नगरके निकट उस समय वायु अतिशय उत्तप्त हो करके इतना पतला पड़ जाता है कि भीषण झटिकादि बनाता है। चीन लोग ऐसे टाइफून (Typhoon) अर्थात् झटिकावर्त्तको अतिशय भय करते हैं। कानटनके निकटस्थ प्रदेश विशेषतः हैनानद्वीपके उपकूलमें उस झटिकाको उपद्रव अधिक होता है। चीनका वायु स्वास्थ्यकर और अधिवासी दीर्घजीवी हैं।

चीनके पार्वत्य तथा अरण्य प्रदेशमें हस्ती, गण्डार, भल्लूक, केंदुया, उल्कामुखी, महिष, घोटक, उष्ट्र, वन्य-गर्दभ, वराह प्रभृति वन्य जन्तु वास करते हैं। उत्तर प्रदेशमें वीवर, सेबल, आर्मन आदि उत्कृष्ट लोमोत्पादक पशु देखे जाते हैं। सममण्डलका अन्तर्वर्ती होते भी इस देशमें अपेक्षाकृत शीतका आधिक्य रहनेसे सममण्डलके अनेक प्राणी रह नहीं सकते। व्याघ्र, तरक्षु प्रभृति हिंस्रक जन्तु जनाकीर्ण प्रदेशमें अति विरल हैं। शिलीथाबाघ दक्षिण अंशमें दो एक मिलते हैं, परन्तु कानटनमें एक भी नहीं। सिंहका एकबारगी ही अभाव है। गृहपालित पशुओंमें गो, महिष, छाग, मेष, अश्व, शूकरादि अधिक हैं। चीना लोग पालू जानवरोंके प्रति कुछ भी यत्न नहीं करते। गो, मेष, अश्वादि मैदानमें चरनेके लिये छोड़ देते हैं। उनको यह ज्ञान बिलकुल नहीं, पशुओंके लिये कौनसा खाद्य संग्रह करके रखना और क्या आहार देना पड़ता है। इसीसे वहां सब

आनवर क्षुद्राकार और हीनबल हैं। घोड़े भी छोटे और भीरु होते हैं, यहां तक कि तातारियोंके युद्धाश्वों-का हेषारव सुनते ही भाग जाते हैं। जो हो, चीनके बकरे छोटे होते भी युरोपीयोंके लिये अति उपादेय खाद्य हैं। एतद्भिन्न अन्यत्र अज्ञात जैसा और भी नानाप्रकार पशुमांस चीना भक्षण करते हैं। ये छाग किंवा पनीर नहीं खाते। बलद, उष्ट्र प्रभृति पशु भार वहन करते हैं। परन्तु मजदूर सुलभ होनेसे अल्प समयको ही बैल वगैरह बोझ ढोनेमें नियुक्त होते हैं। यहां आसाम देशीय वानर ही विख्यात हैं। दक्षिण भागमें कस्तूरिका मृग होता है। तातार देशीय अरण्यमें एक जाति पक्षविशिष्ट उल्का-मुखी (लोमड़ी) और इन्दुर देख पड़ता है। हरिण, कृष्णसार, वन्यवराह, शशक, काष्ठविड़ाल आदि भी दुर्लभ नहीं हैं।

चीनमें नानाप्रकार अद्भुत पक्षी दृष्ट होते हैं। यहां स्वर्ण तथा रौप्य वर्णका कुक्कुटजातीय पक्षी अति प्रसिद्ध है। उनमें एक श्रेणीका पुच्छ ६ फुट तक लम्बा होता है। चीनके जङ्गलमें उल्लू, तीतर, बटेर, बनैला, हंस आदि बहुतसी चिड़ियां रहती हैं। हंस, सारस, चक्रवाक प्रभृति जलचर पक्षी भी बहुत हैं। यहां एकरूप धूसर-वर्ण हंसाकृति पक्षी होता है। वह मत्स्य पकड़नेमें अति पटु है। चीना इस पक्षीको पाल करके उसके द्वारा ह्रदसे मछलियां पकड़ा मंगाते हैं। अन्यान्य बहुजातीय पक्षियोंमें सामरिक लवा, एक प्रकारका घुग्घू और शुभ्र-कण्ठ काक विख्यात है।

बहुसंख्यक लोगोंके रहने और सब नदियां अगण्य नौकादि द्वारा उद्वेलित होनेसे काण्टन नगरके उत्तर कुम्भीरादि भीषण जलजन्तु नहीं जैसे हैं। ग्रीष्मकालमें बहुसंख्यक कृकलास, छिपकली, शरट प्रभृति दृष्ट होते हैं। विषाक्त सर्प अधिक नहीं हैं। किसी किस्मका कौड़ियाला ही वहां सबसे ज्यादा जहरीला और डरावना सांप होता है।

चीनकी नदी, ह्रद और सरोवरमें नानारूप मत्स्य मिलते हैं। यहां अति सुन्दर सुनहली और रुपहली मछली मयङ्कर है। उसका आकार सामान्य प्रोष्ठी मत्स्य जैसा होता है। शीशेकी बोतलमें बन्द करके यह मछलियां बहुतसे मुल्कोंको भेजी जाती हैं। क्या समुद्र, क्या नदी सर्वत्र ही बहुत परिमाणसे मत्स्य धृत होते हैं। सर जे० एफ० डेविस (Sir J. F. Devis)-के अनु-मानमें चीनकी भांति पृथिवीके किसी भी स्थान पर जल-से उतना अधिक खाद्य नहीं निकाला जाता।

कीट पतङ्गादिके मध्य पङ्गपाल (टिड्डी) चीनके कई जिलाओंका विस्तर अनिष्ट करता है। काण्टन नगरके निकट बड़ा विच्छू देख पड़ता है। वहां वृक्षोंमें किसी प्रकारका मकड़ा रहता है। यह छोटी छोटी चिड़ियां भी जालमें फांस करके खा सकता है। काण्टान-की पूर्व दिक्को लो-फो-शान पर्वतमें एक जाति वृहदा-कार अतिसुन्दर तितलियां होती हैं। यह बहुसंख्यक प्रति वत्सर पेकिन भेजी जाती हैं। रेशमका कीड़ा बहुत प्राचीनकालसे चीनमें उत्पन्न होता है। चीनका बढ़िया रेशम नाना देशोंको रफ़्तनी किया जाता है।

चीनकी आकरिक सम्पत्तिका विषय अति अल्प मात्र ही ज्ञात है। पर्वतमय प्रदेशमें स्वर्ण, रौप्य, लौह, ताम्र, पारद, रांगा, जस्ता, सीसा आदि सकल प्रकार धातु उत्पन्न होते हैं। किन्तु कार्यकी अद्भुत विरुद्धतिके कारण सब खानियां रीत्यनुसार खोदी नहीं जातीं। यहां स्वर्णमुद्रा नहीं चलती, सम्राट् व्यतीत अति अल्प लोग ही स्वर्णालङ्कार व्यवहार करते हैं। ब्रह्मदेशके सीमान्त-स्थित यूनान प्रदेशकी सब नदियोंमें स्वर्णरेणु मिलती है। इस प्रदेशमें चांदीकी खान है और सफेद तांबा भी निकलता है। विटाङ्ग (सित ताम्र) लगभग चांदी जैसा उज्ज्वल होता है। जापानसे जो पीला तांबा आता अति सुन्दर दिखलाता है। साधारण ताम्र यूनान और क्यूरी प्रदेशमें मिलता है। इकुयाङ्ग झीलके पास हरित् वर्ण आकरिक ताम्र दृष्ट होता है। हिङ्गुल, हरिताल, कोरण्ट और सैन्धव लवणादि भी पाये जाते हैं। समुद्र-के जलसे नमक बनता है।

गृहनिर्माणोपयोगी प्रस्तर और स्लेट-प्रस्तर देशमें सर्वत्र मिलता है। यहां सङ्गमरमर अच्छा नहीं होता, सिवा उसके जगह जगह चुन्नी, मरकत, पन्ना आदि बहुमूल्य पत्थर भी निकलता है।

चीनका कओलिन नामक कर्दम अतिशय विख्यात

है। चीना वर्त्तन सब उसीसे बनते हैं। यह लोग एक प्रकारकी खड़िया मट्टीमें क्योलिन मिला करके वर्त्तन बनाते हैं। तद्भिन्न अन्यान्य सकल प्रकार कलसादि निर्माणोपयोगी मृत्तिका चीनमें प्रचुर परिमाणसे और पत्थरका कोयला सब जगह मिलता है। चीना लोग बहु प्राचीनकालसे उसे काममें ला रहे हैं।

पुरातत्त्ववित् विद्वान् अनुमान करते हैं, कि चीना लोग कासपियन झीलके दक्षिणसे जा करके चीनमें बसे हैं। इनकी चित्रमय वर्णमालाके साथ प्राचीन मिसरकी वर्णमालाका सादृश्य देख कर अन्दाज लगाते हैं, कि वह मिसरीय वंशोद्भूत हुए होंगे। सूर्यदेवका षाण्मासिक अयनान्तकालीन अर्घ्यदान और पितृपुरुषोंके उद्देशमें श्राद्धादिका विधि भारतवासियोंके तुल्य हैं। फिर हमारी भांति वह दशभागोंमें द्विविभाग और बारह भागोंमें राशिचक्र विभाग भी करते हैं। यह सब सादृश्य रहते भी वह हिन्दू वा मिसरीय वंशोद्भूत नहीं हैं। इनका वदनावयव आर्य्य जातिसे सम्पूर्ण विभिन्न है। वह मङ्गोलीय श्रेणीभुक्त हैं। यह लोग कर्कटक्रान्तिसे उत्तर महासागर पर्य्यन्त एशियाके समस्त भागोंमें रहते हैं।

चीनाओंके आदि राजवंशका नाम और विवरण आदि अलौकिक उपाख्यानोंसे परिपूर्ण हैं। यह कहते थे कि 'पूयङ्ग-कु' चीन राज्यके प्रथम अधीश्वर थे। उसके पीछे सीन्हीयाङ्ग राज्य प्राप्त हुए। पूयङ्ग-कुसे अति प्राचीनकाल और सीन्हीयाङ्ग शब्दसे स्वर्गाधीश्वर अर्थ निकलता है। सुतरां वह सब नाम रूपक हैं। इनका प्राचीन इतिहास अनिश्चित जैसा समझ पड़ता है। जो हो, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि चीन राज्य बहुत पुराना है। सब लोग अन्दाज लगाते हैं, कि फोही चीनके प्रकृत प्रथमाधीश्वर थे। यह ईसाके २८५० वर्ष पहले राज्यपद पर अधिष्ठित हुए। उनके जन्म विषय पर एक उपाख्यान है। फोहीकी जननी एक समय घरके पास किसी झील-के तट पर घूमती थीं। उसी समय बालू पर अपूर्व ज्योतिर्विशिष्ट इन्द्र-धनुषके रंगका कोई पदचिह्न जैसे ही देख पड़ा, उनको गर्भसञ्चार हुआ। पुत्र प्रसूत होने पर उसका नाम फोही रखा गया। फोहीको वयःप्राप्त होने पर पराक्रम तथा शक्तिसम्पन्न और बहुविध राजगुणशाली देख करके चीनवासियोंने राजपद पर अभिषिक्त किया था। इन्होंने चीन भाषा बनायी और राजामें विवाह, सङ्गीतशास्त्र, वेशभूषादिका नियम चला करके समस्त लिपिबद्ध कर दिया। प्रवाद है कि उन्होंने प्रथम अक्षर सृष्टि की थी। कुसंस्कार विशिष्ट लोगोंका अनुराग बढ़ाने-के लिए इन्होंने घोषणा की कि उन्होंने यह सब अक्षर एक दिन किसी ह्रदसे उत्थित शल्क तथा पक्षयुक्त स्वर्गीय अश्वके पृष्ठ पर दर्शन करके प्रकाशित किये थे। आज भी चीन-सम्राट्के पताका-समूह पर वह अश्वमूर्ति अङ्कित रहती है। फोहीके बहुकाल राजत्व करके गतासु होने पर सिनङ्ग, होयाङ्गटी, सूवोह्नावो, ह्युनङ्ग, टिको, घौ, इयावो और सान प्रभृति सम्राट् अभिषिक्त हुए। उनके राजत्व-कालका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। इयावो सम्राट्के राजत्वकालसे चीनका इतिहास अपेक्षाकृत सुस्पष्ट है। इन्होंने और इनके जामाता सान-सम्राट्ने चीनमें अनेक सुनियम संस्थापित किये। सानके मरने पर तदीय मन्त्री इउ ईसासे २२०७ वर्ष पहले 'ह्याया' नामक प्रथम चीन-राजवंश स्थापन करके सम्राट्-पदाभिषिक्त हुए। नीचे ह्याया वंशके समयसे वर्तमान काल पर्य्यन्त प्रत्येक राजवंशका नाम, सम्राट् संख्या और उनके राज्यारम्भका काल लिखते हैं—

वंशका नाम	सम्राट् संख्या	राज्यारम्भका काल		
१ ह्याया वा काया	१७	२२०७	पू०	ख़ृ०
२ साङ्ग व इङ्ग	२८	१७६६	,,	,,
३ च्यू	३५	११२२	,,	,,
४ क्विन	५	२५५	,,	,,
५ ह्वान	२८	२०६	,,	,,
६ ह्वहान	२	२२०		ई०
७ क्विन	१५	२६५	,,	,,
८ सङ्ग	८	४२०	,,	,,
९ क्वि	५	४७९	,,	,,
१० लियाङ्ग	४	५०२	,,	,,
११ चिन	४	५५७	,,	,,
१२ सुई	३	५८१	,,	,,
१३ टोवाङ्ग	२०	६१८	,,	,,
१४ हुलियाङ्ग	२	९०७	,,	,,

१५ हुटाङ्ग	४	८२३		ई०
१६ हुक्किन	२	८३६	,,	,,
१७ हुहान	२	८४७	,,	,,
१८ हुचु	३	८५१	,,	,,
१९ सङ्ग	१८	८६०	,,	,,
२० इयेन	८	१२८०	,,	,,
२१ मिङ्ग	१६	१३६८	,,	,,
२२ क्किङ्ग …	… …	१६४५	,,	,,

शेषोक्त दोनों राजवंशके प्रत्येक सम्राट्‌का नाम, सिंहासनारोहणकाल और राजत्वकाल लिखा जाता है—

मिङ्ग वंश।

सम्राट् गणका नाम	सिंहासनारोहण		राजत्वकाल	
हाङ्ग हो	१३६८	ई०	३०	वर्ष
कियेङ्ग वङ्ग	१३९८		५	,,
हेयाङ्ग लू	१४०३		२२	,,
हाङ्ग ह्र	१४२५		१	,,
सिनेङ्ग टि	१४२६		१०	,,
चिङ्ग टाङ्ग	१४३६		२१	,,
किङ्ग टाइ	१४५७		८	,,
चिङ्ग होया	१४६५		२३	,,
हाङ्ग चो	१४८८		१८	,,
चिङ्ग टो	१५०६		१६	,,
किया क्किङ्ग	१५२२		४५	,,
लुङ्ग किङ्ग	१५६७		६	,,
भङ्ग ली	१५७३		४७	,,
ते चाङ्ग	१६२०		१	,,
टयेङ्ग की	१६२१		७	,,
छाङ्ग चिङ्ग	१६२८		१६	,,

क्किङ्ग वंश।

साङ्ग चो	१६४४	१७	,,
काङ्ग हो	१६६१	६१	,,
इयाङ्ग चिङ्ग	१७२२	१४	,,
कियेङ्ग लुङ्ग	१७३६	६०	,,
किया किङ्ग	१७९६	२५	,,
हावोकोयाङ्ग	१८२१	२९	,,
हियेङ्ग फुङ्ग	१८५१	१०	,,
टुङ्गचो	१८६२ ई०	१३	वर्ष
कोयाङ्ग सू	१८७६	…	…

प्रथम वंशके राजत्वकालको कोई विशेष घटना नहीं हुई। द्वितीय वंशीय टेमू सम्राट्‌के समय राजभवनमें अकस्मात् शहतूतका एक बड़ा पेड़ जगा था। सम्राट्‌के धर्मपथावलम्बी होनेसे वह सूख गया।

च्यू वंशीय त्रयोविंश सम्राट् लिङ्गवङ्ग नृपतिके राजत्वकालमें ई०से ५५० वर्ष पहले शालटङ्ग प्रदेशके कायाकू नगरमें महादार्शनिक विश्वविख्यात कनफुचोने जन्मग्रहण किया। इन्होंने उन्होंने चीनका तात्कालिक भ्रमसङ्कुल धर्ममत खण्डन करके अपने विशुद्ध धर्ममत और राजनीतिको चलाया था। इन्होंने अति पूर्व चीन-मनीषी फोही, मेङ्ग भाङ्ग प्रभृति प्रणीत सब धर्मग्रन्थोंको विशुद्ध टीकाके साथ संकलन और अनेक नूतन ग्रन्थोंको रचना की। ठीक उसी समयको प्रसिद्ध ग्रीक विद्वान् पिथागोरस पश्चिम देशमें यशोलाभ करते थे। कनफुची देखो।

उसी वंशीय परवर्ती सम्राट्‌गणके राजत्वकालको चीन बहुसंख्यक क्षुद्र क्षुद्र राज्योंमें विभक्त हुआ। इन सब राज्योंके नृपतियोंमें परस्पर युद्धविग्रहादि सर्वदा चलते रहनेसे चीन अतिशय हीनबल पड़ गया। उक्त वंशके २२श सम्राट् होनभाङ्ग जब चीनमें राजत्व करते थे, ईसासे ३२७ वर्ष पहले अलेकसन्दरने भारतवर्ष आक्रमण किया। छिन नामक चतुर्थ वंशीय सिहोयांगटो वा चिङ्ग नामक ४र्थ सम्राट् सर्वापेक्षा अधिक विख्यात थे। ईसा-से २१३ वत्सर पूर्व यह भिन्न भिन्न प्रदेश जय करके समस्त चीन देशके एकाधिपति हुए। उत्तर भागमें तातारोंका दौरात्म्य दूर करनेके लिए उन्होंने चीनको प्रसिद्ध चहार दीवारी बनायी थी।

(यह दीवार भी पृथिवीके सात आश्चर्योंमें गण्य है।) परिशेषको दिग्विजयसे महागर्वित हो चिङ्गने हो पर-वर्ती लोगोंको यह विश्वास दिलानेके लिये कृषि तथा शिल्पविषयक व्यतीत अन्यान्य समस्त ग्रन्थादि भस्मीभूत कर डालनेको अनुमति दी और तात्कालिक अनेक पण्डितोंको वध किया कि वही चीनके प्रथमाधीश्वर थे। इसीसे चीनका समस्त प्राचीन इतिहास अन्धकारा-वच्छिन्न है।
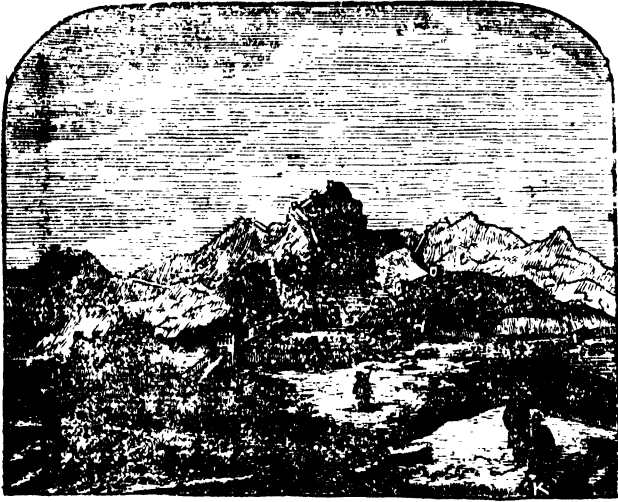
चीनकी पहाड़-दीवार।

हान नामक पञ्चवंशीय १८श सम्राट् चाङ्गटीके निकट ८८ ई०को पार्थियोंने किसी कार्योपलक्षमें दूत प्रेरण किया था। उसी वंशके २६श सम्राट् ह्वेण्टीके राजत्वकाल वाणिज्य कारणार्थ १६६ ई०को रोम राज्यके षष्ठ सम्राट् मार्कस अविनोयसने कतिपय सम्भ्रान्त पुरुष भेजे। इसी समयसे चीनके साथ रोमका वाणिज्य आरम्भ हुआ। षष्ठ, सप्तम और अष्टम वंशीय सम्राट्गणके राजत्वकालको समस्त चीनदेश युद्ध विग्रहसे छिन्न भिन्न हो गया। ४१६ ई०को चीनराज्य उत्तर और दक्षिण दो भागोंमें बटा था। होनान नगर उत्तर और नानकिन दक्षिण भागकी राजधानी हुआ।

४८८ ई०को नवम वंशीय २य सम्राट् भूटीके राजत्वकालको फानसिन नामक किसी नास्तिक दार्शनिकने जन्म लिया था। दशम वंशीय सम्राट्गणके राजत्वकाल संग्रामादि द्वारा चीना लोग व्यतिव्यस्त हो गये। परन्तु एकादश वंशीय सम्राट्गणके राजत्व समय चीन देशमें सुख शान्ति देख पड़ी। यह सातिशय विद्योत्साही और प्रजारञ्जक थे। उसी वंशके २य सम्राट् भिटीने नियम किया कि रातको कोई व्यक्ति अकारण राजपथमें घूम न सकेगा, इसीसे असंख्य प्रहरी एक पहरे रात्रि बीतने पर भेरी बजा कर साधारण लोगोंको सतर्क कर देते थे। वह नियम आज भी चला आता है। त्रयोदश वंशीय २य सम्राट् टेछङ्गने चीन देशमें विद्याको समधिक उन्नति की। इन्होंने राजभवनमें ही एक उत्कृष्ट विद्यालय स्थापन करके लगभग आठ हजार विद्यार्थियोंको पढ़ाया था। इनकी महिषी भी विदुषी रहीं। उन्होंने अन्तःपुरवासिनी स्त्रियोंके लिये एक पुस्तक लिखी। इन्हीं टेछङ्ग सम्राट्के राजत्वकालमें नेष्टोरियान ईसाई चीन पहुंचे थे। सम्राट्ने उन्हें धर्म प्रचार करनेकी अनुमति और गिर्जा बनानेको भूमि दी।

फिर चीन राज्य बार बार तातारों द्वारा आक्रान्त हो टूट फूट गया। नाना वंशोंके हस्तगत होनेसे आखिरकार १११७ ई०में किन् तातारोंने इसके उत्तर भागमें राज्य स्थापन किया था। इसी वंशके राजत्वकाल १२१२ ई०को मुगल सेनापति चङ्गीजखाँ चीन पर चढ़े। उन्होंने बहु नगर जय किये थे। चङ्गीज खाँ गतासु होने पर दूसरे मुगल सेनापतियोंने अनेक युद्ध करके किनोंको भगाया और उत्तर भागका अधिकार पाया। चीन-सम्राट् दक्षिण भागके नानकिन नगरमें राजत्व करने लगे।

कालक्रमसे मुगलोंके साथ चीन-सम्राट्का विरोध उपस्थित होने पर चीनमें फिर समरानल जल उठा। उभय पक्षकी बहुतसी सेना मारी गयी। अवशेषमें पियेन नामक जनैक मुगल वीरने चीनाओंको सम्पूर्ण रूपसे पराभूत किया था। चीन-सम्राट्के शेष उत्तराधिकारी नवम वर्षीय युवराजने अमात्य, मन्दारिन और अन्यान्य लक्षाधिक व्यक्तियोंके साथ समुद्रमें डूब करके प्राण छोड़ा। इसी प्रकार १२८० ई०को चीनका राजवंश मिट जाने पर कुपिलोने इयेन नामक मुगल राजवंश स्थापन किया। कुपिलोने इसी बीच चीनाओंको अज्ञात होयाङ्ग-हो नदीका उत्पत्तिस्थान आविष्कार करके उस प्रदेशका एक मानचित्र बनाया था। तद्भिन्न इन्होंने गणित, साहित्य, ज्योतिष प्रभृति शास्त्रोंकी विस्तर उन्नति की। वाणिज्य कार्यकी सुविधाके लिए कुपिलाने एक बहुत बड़ी नहर खुदायी थी। यह नहर अद्यापि विद्यमान है। उसी वंशके शेष नृपतिने साहिटकेचू नामक एक चीन वीर पुरुषको पराजित और विताड़ित करके हङ्ग-भु उपाधि ग्रहणपूर्वक मिङ्ग नामक एकविंश वंश स्थापन किया था। उसी वंशके नवम सम्राट् श्याङ्ग चीनके राजत्वकाल १४९७ ई०को नाविकाग्रगण्य वास्कोडिगामाने उत्तमाशा अन्तरीप वेष्टन पूर्वक भारतवर्षमें आ उतरे। इसी समय-

से युरोपोय जहाज चोन जाने आने लगे। दशम सम्राट् चोङ्गटोके राजत्वकालमें (१५१७ ई०) पोर्तगीज शासन-कर्ता लपे-ज-डि साण्डाने टामस पेरेराको दूत स्वरूप चोन भेजा था। टामस पेरेरा काराबद्ध हो पेकिनमें मर गये। फिर लपेजने नाना कौशलसे चोनके साथ सन्धि स्थापित की थी। किन्तु चीनाओंने बार बार विरक्त किये जाने पर पोर्तगोजोंको स्वदेशसे निकाल दिया। अवशेष १५६३ ई०को एकादश सम्राट् कियाछिङ्के राजत्वकाल पोर्तगीजोंने चाङ्गटिसो नामक जलदस्युको विनष्ट करके चोनसे मैकेया द्वोप पाया था। यह आज भी उन्हींके अधिकारमें है। इसी वंशके त्रयोदश सम्राट् भङ्गलोके राजत्वकालमें ओलन्दाजोंने पहले मैकेयामें पैर रक्खा। षोड़श सम्राट् कङ्ग-चिङ्ग उक्त वंशके शेष नृपति थे। इन्हींके राजत्वकालमें कप्तान वेलेड नामक वृटिश पोता-ध्यक्षने चोनमें उतर अङ्गरेजों और चीनाओंके वाणिज्यका सूत्रपात किया था। अवशेषको विद्रोही सेनापतिद्वय लो और चाङ्ग अतिशय पराक्रान्त हो गये। सम्राट ने उपा-यान्तर न देख करके शत्रु हस्तमें पतित होनेको आशङ्का-से रानजो और दुहिताके साथ आत्महत्या की। प्रधान विद्रोही लोने सम्राट्के दोनों पुत्रों और अमात्योंका मस्तक छेदन करके राज्य दबा लिया था। उफाङ्ग नामक चोन वंशोय एक साहसी सेनापति लो को अधी-नता न मान करके बिगड़ खड़े हुए। इन्होंने मञ्चु-तातारोंका साहाय्य चाहा था। तातारोंके राजा छङ्गटो तत्क्षणात् अष्ट सहस्र सैन्य ले करके उनसे जा मिले। लो यह सुन करके पेकिन लूटते प्रचुर ऐश्वर्य अपहरण पूर्वक भागे थे। तातारराज कालग्रस्त होने पर उनके पुत्र साङ्गचोने साधारणकी सम्मति क्रमसे राज्याभिषिक्त होने पर छिन नामक द्वाविंशतितम राजवंश स्थापन किया। वही राजवंश राजत्व शाङ्गचोने उफाङ्गको सेन्सो प्रदेशका अधीश्वर मनाया। किन्तु उससे उफाङ्ग तातारोंको आह्वान करनेके लिये अनुता-पित न हुए। वह सर्वदा कहा करते थे—"शृगालोंके दूरीकरणार्थ सिंह समूहको आह्वान करके मैंने क्या हो कुकर्म किया है।" १६७४ ई०को उन्होंने एक बार मञ्चुओंके विरुद्ध फौज जोड़ी, परन्तु प्रतारित होने पर अविलम्ब हो मर गये। इनके पुत्र हङ्ग होया तातारोंसे लड़ करके ऐसे दुर्दशाग्रस्त हुए, कि अन्तको आत्महत्या कर बैठे। क्रमश: तातार अन्यान्य विद्रोह दमन करके चोनमें सुदृढ़ पड़े थे। १६८२ ई०को चोनके १८ प्रदेश सम्पूर्ण रूपसे तातारोंके वशीभूत हो निरुपद्रव बन गये। साङ्गचोके उत्तराधिकारी काङ्गी अत्यन्त विद्योत्साही थे। इन्होंने पहले ईसाई धर्मके विस्तारका बहुत आनुकूल्य किया, परन्तु शेषको यथेष्ट रूपसे उसका विरुद्ध पक्ष लिया। इनके पुत्र यङ्चिङ्गने जेसुटोको काण्टनमें बहिष्कृत करके १७३२ ई०में यहांसे भी उन्हें मैकोयो द्वोप भेजा दिया।

१७२८ ई०को फरासोसी पोताध्यक्ष वेलेयार प्रथम काण्टनमें उत्तीर्ण हुए। १७३१ ई०को चीनके उत्तर प्रदेशमें एक भोषण भूमिकम्प होनेसे बहुसंख्यक लोगों-का प्राण गया।

यङ्चिङ्ग पुत्र कियेन-लिङ्गके राजत्वकाल १७९३ ई०में इङ्गलैण्डके अधीश्वरने चोन सम्राट्के साथ सौहार्द स्थापन करके वाणिज्य प्रचलन निमित्त लार्ड मेकार्ट-नीको बहुतसे लोगोंके साथ दूतस्वरूप प्रेरण किया था। वह यहां उपस्थित हो कोई विशेष सुविधा न लगा सके। कियेन-लिङ्ग सम्राट् अतीव विद्वान्, ज्ञानो, निर्मल-स्वभाव और दयालु थे। इनके मरने पर १८०० ई०को तातारोंने चोन आक्रमण किया, परन्तु सम्राट् काया-विङ्ग कर्टक पराजित और ताड़ित होना पड़ा। उन्होंने मिशनरियोंको राजधानीसे ३० कोस दूर रहनेका आदेश दिया था। कहते हैं, कि उसी समयको कई एक बालकोंने ईसाई धर्मकी दोक्षा ली। १८०५ ई०को सेचुयेन प्रदेशमें अन्यून ६४ विद्यालय स्थापित हुए। १८०८ ई०को फिर ईसाई धर्म पर अत्याचार होने लगा। उसी समय सर जार्ज ष्टाटनने काण्टनस्थ अंग्रेजी कोठीके चिकित्सक पियार्सन साहबके साहाय्यसे चीनमें बच्चोंको गोदने या पाछ लगानेकी प्रथा चलायो थी।

१८०६ ई०को ईष्ट इण्डिया कम्पनीके जहाजके किसी मल्लाहने लगुड़ाघात द्वारा एक चोनाको मार डाला। इसी बात पर काण्टनस्थ अंगरेजोंके साथ चोनाओंका झगड़ा होने लगा। कालक्रमसे वह विवाद तो मिट

गया, परन्तु अंगरेजों पर इनका विद्वेष बद्धमूल हुआ। कायाकिङ्गने स्वदेशका प्रचलित आचार व्यवहार आदि कितना ही सुधारा था। इनके मरने पर राजकुमार टौकुयाङ्ग सिंहासन पर बैठे। उन्होंने चीनमें युरोपीय यन्त्र और शिल्पकर्म आदिको प्रचार किया था। अब तक ईष्ट इण्डिया कम्पनी चीनके साथ समस्त वाणिज्यका एकाधिपत्य करती रही। १७३३ ई०को पार्लामेण्टसे एक राजाज्ञा निकली कि वह चीनके साथ फिर वाणिज्य कर न सकेगी, केवल चीनवासी अंगरेजों द्वारा ही यह निष्पन्न होगा।

टौकियाङ्ग नृपतिने अहिफेन सेवनसे प्रजाकी बुद्धि और धनका क्षय देख करके आदेश दिया कि वहां फिर अफीम न ले जाया जावेगा। १८३८ ई०को लिन नामक सम्राट्‌के किसी कमिश्नरने काण्टन नगरमें उपस्थित हो जहाँ जितना अफीम मिला, विनष्ट कर डाला। और दूसरे वर्ष सम्राट्‌के आदेशसे अंगरेजोंका वाणिज्य एक बारगी ही बन्द किया। इस पर इङ्गलैण्डसे बहुतसी रण-तरियाँ चीनको प्रेरित हुईं। चीनराज मन्त्रीने भीत हो करके काण्टनमें अंग्रेजोंके साथ इस नियम पर सन्धि की थी कि हाङ्गकाङ्ग द्वीप और युद्धका व्ययस्वरूप ६० लाख डालर उनको दिया जायगा और वाणिज्य अबाध-रूपसे चला जावेगा। सम्राट्‌ने वह संवाद पा करके मन्त्रीको पदच्युत किया। सुतरां तत्कृत सन्धि भी अग्राह्य हो गयी। अंगरेजोंने यह सुन करके फिर युद्ध छेड़ा था। अवशेषको चीना लोग ६० लाख देने पर सम्मत हुए और वाणिज्य चलने लगे। परन्तु अङ्गरेजी रणतरियोंके आमय, कुजान द्वीप, गिङ्गपो, चापू प्रभृति अधिकृत करनेसे फिर युद्ध आरम्भ हुआ। १८४२ ई०के मई मास अंगरेजोंने इयाङ्गसिकियाङ्ग नदीमें प्रवेश करके बहुतसे लोगोंको मारा और उमाङ्ग, सङ्घाई तथा मिन-कियाङ्ग अधिकार किया था। अपरेल महीनेकी ८ तारीखको उनके नानकिन नगर आक्रमणका उद्योग करनेसे सम्राट्‌ने सन्धि करनेका प्रस्ताव भेजा। उसी महीनेकी २८वीं तारीखको इस नियम पर एक सन्धि हुई कि अंगरेजोंके साथ फिर विवाद न लग करके बन्धुत्व स्थापित होगा, आगामी चार वत्सरके मध्य सम्राट्‌ एक-विंशति लक्ष डालर देंगे; काण्टन, आमय, फुचू, निङ्गपो तथा सङ्घाई बन्दरमें वैदेशिक लोग वाणिज्य कर सकेंगे और हाङ्गकाङ्ग द्वीप इंगलैण्डकी रानी और उनके उत्त-राधिकारियोंको मिलेगा। तदनन्तर १८४३ ई० जूनमास-को अंगरेजोंने हाङ्गकाङ्ग टापू अधिकार किया।

नानकिनको यह खबर पा करके अमेरिका और युरोपीय वणिक्‌मण्डलीको दृष्टि चीन पर पड़ी थी। युनाइटेडष्टेटस, फ्रान्स, इङ्गलैण्ड, जर्मनी, स्पेन, पोर्तगाल प्रभृति राज्योंसे दूत प्रेरित हो चीनमें वाणिज्यका प्रबन्ध कर गये। उस समयसे चीनके सब बन्दरों विशेषतः काण्टन और सङ्घाईमें निर्विघ्न वाणिज्य चल रहा है।

टौकुयाङ्ग सम्राट्‌ने १८५० ई०में प्राण त्याग किया था। फिर उनके पुत्र होङ्ग-फुङ्ग सम्राट्‌ हुए। यह अवि-वेचक, हीनबुद्धि और नीच प्रकृतिवाले थे। इन्होंने पितृ नियुक्त ज्ञानी उन्नत कर्मचारियोंको पदच्युत करके कुसंस्काराविष्ट प्राचीन मतावलम्बी मन्दारिन नियुक्त किये। राज्यमें किसी प्रकारको नूतन प्रथाका प्रचलन निषिद्ध हुआ। मन्दारिन विदेशियों विशेषतः अंगरेजों-का प्रभुत्व उच्छेद करनेमें लग गये।

चीना लोग मञ्चू-तातारियोंके शासनमें रहनेको पहलेसे ही असन्तुष्ट थे। उस समय सम्राट्‌के इस व्यव-हारसे सभी विरक्त हुए। राज्यके नानास्थानोंमें विद्रोहके चिन्ह प्रकाशित होने लगे। विद्रोहियोंने क्रमशः बलशाली हो अनेकानेक नगर अधिकृत किये थे। इसी बीच १८५६ ई०में अंगरेजोंके साथ फिर युद्धारम्भ हुआ। अंग-रेजोंने काण्टन अधिकार करके पेकिन पर चढ़नेका भय दिखलाया था। उस पर १८५८ ई०को २६ जुलाईको टोन्सिनमें एक सन्धि हुई। सन्धिकी बड़ी शर्तें यह थीं—(१) वाणिज्यके लिये सब नये बन्दर खुले रहेंगे, (२) ईसाई धर्म निर्विघ्न उपासित और चीना-ईसाई-दल सुरक्षित होगा, (३) कोई वृटिश कर्मचारी राज-प्रतिनिधि रूपसे पेकिनमें रहेगा। १८५९ ई०को चीना लोग सन्धिका नियम भङ्ग करके उलटी चाल चलने लगे। अंग्रेजोंने फरासीसियोंसे मिल असंख्य चीना सैन्य मारा था। १८६० ई०को पेकिनमें सन्धि हुई, विदेशीय वणिक्‌ यथेच्छाक्रमसे चीनके सब नगरोंमें जा करके वाणिज्य

कर सकेंगे और चीना लोग भी जब चाहेंगे विदेश आवें जावेंगे। १८६१ ई०में सम्राट् हांग फुंग गतासु हुए। उनके पुत्र टुङ्गछांको राजपद मिला था। परन्तु युवराज बालक रहे, इनके खुल्लतात काङ्ग राजकार्य पर्यवेक्षण करते थे। १८६४ ई० जुलाई मासको विद्रोही नानकिन नगरमें एकत्र हो सम्राट् के विरुद्ध उठ खड़े हुए। सम्राट् के सेनापति छेङ्ग कोचानने नानकिन अवरोध करके उन्हें समूल विनष्ट किया। फिर विरोध मिट गया। कोयाङ्गसू नामक मञ्चू तातारवंशीय नवम भूपतिने १८७१ ई०को जन्म लिया और १८७५ ई० १२ जनवरीको सिंहासनारोहण किया था।

१८७५ ई०में क्वङ्ग-सुके राज्यशासन कालमें चीनके बहिर्गत देशोंमें बहुत गड़बड़ी मची। उन्होंने राज्यका सम्पूर्ण भार होनफेंगको दो विधवा स्त्रियों तजेश्यन और तजेहसी पर सौंपा। तजेहसीके तुंगची नामका एक पुत्र था और वही यथार्थ उत्तराधिकारी समझा गया। किन्तु तजेहसी रानीके मरनेके बाद क्वाङ्ग-सु पुनः चीनके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए।

इस समयमें वृटिश गवर्मेण्ट और चीनसे लड़ाई छिड़ गई। भारत सरकार चाहती थी कि पुनः बरमा और दक्षिण-पश्चिम प्रदेशोंमें वाणिज्य व्यवसाय चले, किन्तु चीन गवर्मेण्टने इसे अस्वीकार किया। इस हेतु वृटिश गवर्मेण्टने एक सैन्यदल कलनेल ब्रौनके अधीन चीन देश पर आक्रमण करनेको भेजा। किन्तु वे यहां परास्त किये गये और कलनेल ब्रौन कठिनतासे प्राण ले कर भाग चले।

१८७७-१८७८ ई०में शानसी और शानतङ्ग नामक स्थानोंमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। इसमें बहुतोंकी जान गई थी। भविष्यमें इस कष्टको बन्द करनेके लिये चीनसरकार रेलवे लाइन खोलनेको बाध्य हुई और १८८१ ई०में पहले पहल तीन्तसिनसे ले कर शङ्घै तक एक रेलवे लाइन खोली गई और उसके साथ साथ टेलियाफकी भी पूरी व्यवस्था की गई। राज्यको दृढ़ करनेके लिये कई एक दुर्ग भी स्थापित हुए। तथा मेशिनगण आदि सामरिक वस्तु खरीदी गई।

१८८५ ई०में चीन और वृटिश गवर्मेण्टमें एक सन्धि हुई जिसमें चीन सरकारने वृटिशका आधिपत्य बरमामें स्वीकार किया। १८९४ ई०के जुलाई मासमें चीन और जापानमें कोरिया विषय ले कर युद्ध आरम्भ हो गया, किन्तु १८९५ ई०की १७वीं अप्रैलको दोनोंमें सन्धि हो गई। मेकोङ्ग उपत्यका ले कर १८९५ ई०में अंगरेज और चीनमें पुनः विवाद शुरू हुआ पर एक वर्षके बाद ही अपनी अपनी मांगकी पूर्ति हो जाने पर दोनोंमें सुलह हो गई। इसके बाद चीन गवर्मेण्टने व्यापारकी वृद्धि करनेके लिये विदेशीय देशों तक रेलवे लाइन खोलनेकी इच्छा प्रगट की। इस काममें शङ्ग ह्रङ्ग हो नियुक्त हुए और सङ्घै-नानकिन् रेलवे लाइन उसी साल खोली गयी। इस तरह चीन-सम्राट्ने भिन्न भिन्न देशोंमें रेलवे लाइन प्रचार कर अपने देशकी खूब उन्नति की।

१९०८ ई०के नवम्बर मासमें क्वांसुकी मृत्यु हुई। इनके कोई सन्तान नहीं रहनेके कारण इनके भतीजे पु-यी राज्यके उत्तराधिकारी हुए। राजसिंहासन पर बैठ कर इन्होंने अपना नाम स्वेन सङ्ग रखा।

१९०९ ई०में हर एक प्रदेशमें राष्ट्रीय सभा (Provincial Assembilies) स्थापित हुई। इसके सदस्योंको राजकीय विषयमें सलाह देनेका अधिकार दिया गया। १९१० ई०को राज्य कार्यमें विशेष परिवर्तन हुआ। तङ्ग शाव-इ बोर्ड आफ कम्युनिकेशनके सभापति बनाये गये। चीन और देश विदेशमें रेल विषय ले कर यदि कोई विवाद आरम्भ हो तो इन्हींके ऊपर दोनोंमें सन्धि करा देनेका भार सौंपा गया तथा ये ही उस समय चीनके हर्त्ता कर्त्ता गिने जाते थे।

चीना लोग अतिशय कष्टसहिष्णु, परिश्रमशील तथा कृषिकार्यमें यत्नवान् होते हैं। प्रजावर्गको कृषिकार्यमें उत्साह देनेके लिये चीनसम्राट् स्वयं किसी निर्दिष्ट शुभ दिनमें अपने हाथसे हल जोतते हैं। भारतवर्षीय प्रायः समस्त शस्य चीनमें उत्पन्न होता है। दक्षिण भागमें अधिक परिमाणसे तण्डुलकी उत्पत्ति है। चावल ही चीना अधिक खाते हैं। एशिया और युरोपके प्रायः समस्त फल चीनमें होते हैं। आम, शरीफा, अमरूद, अनार, जैतून, नासपती, शहतूत, नारङ्गी, अखरोट, गूलर आदिकी बहुतायत है। पोर्तगीज चीनसे ही पहले

सन्तरा युरोप ले गये थे । यहां कई किस्मका नीबू लगता है। एक छोटासा नीबूका पेड़ बहुत अच्छा होता है। चीना लोग इसको गमलेमें लगा करके घर पर रखते हैं। चीनमें पीले रंगको एक ककड़ी उपजती है। उसको छिलके सहित खा डालते हैं। लीची प्रभृति कई एक चीना फल भारतवर्षमें उत्पन्न होते हैं। एशिया और युरोपके यावतीय शाक पत्रको छोड़ करके चीनमें दूसरे भी नानाविध नूतन नूतन शाकमूलादि मिलते हैं। गोभी, हलदी, आलू, प्याज, लहसुन वगैरह सब चीजोंकी भरमार रहती है। यहां मुइया ४।५ हाथ तक बड़ी होती है।

सब वृक्षोंमें एक गूलर होता है । इसके बल्कलसे बढ़िया कागज बनाते हैं। चीनको कोई लकड़ी लोहे जैसी कड़ी होती है। नानमू नामक काष्ठ अति दीर्घ-कालस्थायी है । राजभवनकी कड़ियां वरगे, द्वारादि उसी काष्ठसे निर्मित होते हैं। एक खुशबूदार लड़कीसे शौकीन लोग गृहसामग्री प्रस्तुत कराते हैं। चीन देशका कपूर वृक्ष सुविख्यात है। यह १०० हाथसे अधिक ऊंचा रहता और पीड़की परिधि भी बहुत चौड़ी होती है। चीना इसी वृक्षसे कपूर बनाते हैं। कपूर देखो। यहां नारियलके पेड़ जैसा मोटा बांस होता है। चीना लोग पान खाते हैं। पान यहीं उपजता है। तम्बाकू भी खूब लगती है। वहां नानाविध सुगन्धि और सुन्दर पुष्प पाये जाते हैं। उनमें उटङ्कचू फूल सबसे अच्छा है। कमल अनेक प्रकार होता है। चीनाओंको फूलोंसे बड़ा प्रेम है। चाय चीनका प्रधान उद्भिद् है। क्या समतल क्या पार्वत्य भूमि सर्वत्र चाय उपजती है। यह चीनका प्रधान पण्य द्रव्य है। चाय देखो।

चीनमें बहुविध औषधि उत्पन्न होती है। रेवाचीनी, दालचीनी आदिकी कोई कमी नहीं। चीनका पुदीना बहुत अच्छा रहता है। कपास खूब लगती है। ईख भी बहुत हुआ करती है। चीनका गुड़, चीनी वगैरह दूसरे देशोंको भेजते हैं। सन, पाट आदि बहुत उपजता है। सनका एक पेड़ १०।१५ फुट तक बढ़ता है। काण्टन नगरके निकट उससे वस्त्र प्रस्तुत होता है। इस कपड़ेकी रफतनी युरोपको की जाती है। वहां इसको चीना घासका कपड़ा (China-grasscloth) कहते हैं। दलदल जमीनमें नागरमोथाकी खेती होती है। जुलाई मासमें उसको काट करके चटाइयां बनाते हैं।

चीनदेशके अधिवासी शारीरिक बल तथा सौन्दर्यमें एशियाके कितने ही लोगोंसे अच्छे हैं। काण्टन नगरके कुली अतिशय सुगठित और बलवान् होते हैं। मंगोलीय शाखाभुक्त होते भी चीनाओंका मुखावयव कदाकार नहीं, वरन् बहुत कुछ बराबर है। इनका स्फीत ओष्ठ और विस्तृत नासारन्ध्र कितना ही काफिरों जैसा होता है। अमेरिकाके अधिवासियोंकी भांति इनके केश विरल कृष्ण और चमकीले हैं। लोम नहीं होते कहना ही पर्याप्त है। हस्त, पद और अस्थि क्षुद्रायतन है। उत्तर अपेक्षा दक्षिणांशके चीनाओंको मुखश्री अपेक्षाकृत अल्प चतुष्कोण लगती है। इनका वर्ण शुभ्र होता है। प्रायः विंशतिवर्ष वयस पर्यन्त चीना देखनेमें बहुत अच्छे मालूम पड़ते हैं, फिर क्रम क्रम गण्डदेशमें दोनों उच्च अस्थि वहिर्भूत हो करके मुखको चतुष्कोण कर डालते हैं। चीनके बुड्ढे और बुड्ढियां सभी देखनेमें भीषण कदा-कार होते हैं।

ये लोग अधिकांश परिश्रमी, शान्तप्रकृति और सन्तुष्ट-चित्त होते हैं। चीनके सम्राट् यथेच्छचारी होते भी प्रजाको समझानेकी चेष्टा लगाते कि वह न्याय और दयाके साथ ही उनका शासन चलाते हैं। यह प्रकट रूपमें विनय तथा शिष्टाचार द्वारा वश्यता देखनेमें बड़े चतुर हैं, परन्तु कितने ही घोर मिथ्यावादी और प्रवञ्चक होते हैं। इसीसे इनमें परस्परका विश्वास और सद्भाव नहीं रहता। वह शिष्टाचार जतला करके इतना मनका भाव छिपा सकते कि सुननेसे लोग विस्मयमें पड़ते हैं। चिकनी चुपड़ी बातोंमें मनका विन्दु विसर्ग भाव भी समझ नहीं सकते। इनकी बात चीतमें शायस्तगी और तकल्लुफ खूब रहता है। आदर सत्कारके लिए इतना आड़म्बर होता है कि अति उन्नत स्वभाव गर्वित व्यक्ति भी बातचीतमें अपनेको 'मैं छोटा हूं', 'मैं मूढ़ हूं', 'मैं ओछा हूं' 'मैं नासमझ हूं', आदि वाक्योंसे सम्बोधन करता है। राहके भिक्षुकको भी 'आपके दर्शनसे मैं धन्य और भाग्यवान् हुआ' कह करके आप्यायित किया

जाता है। यह किसी कार्योपलक्षमें आने पर पहले ही नानारूप व्यर्थ कथाको अवतारणा करके अधिकांश समय बिता देते हैं। फिर २।४ बातोंमें असली हाल कह करके चलते बनते हैं। लौकिकाचार वैसा होते हुए भी इनका नीतिज्ञान बहुत हो थोड़ा है। बहुतसे लोग बड़े झूठ बोलनेवाले हैं। चोना अफीम ज्यादा खाते हैं। मि० नोलटन (Mr. Knawlton) अनुमान करते हैं, कि वहां सब मिला करके २३५११११५ अफीमची हैं।

शान्तिके समय यह अपने आप राज्यमें सुशृङ्खला रखते हैं। किन्तु युद्ध विग्रह आदिके समय अथवा अत्याचारसे प्रपीड़ित होने पर वह उन्मत्त हो जाते और नरहत्या, शोणितपात, लुण्ठन प्रभृति सभी प्रकारके भीषण और निर्दय कार्योंसे बाज नहीं आते। जब जो विषय उठाते, कभी दयालु कभी निष्ठुर, कभी निरीह, कभी भीषण प्रकृति दिखलाते हैं। परन्तु शान्तिमय गृहमें सन्तुष्ट चित्तसे अपना काम करते समय चोना लोगों जैसे निरीह और सुशृङ्खल लोग बहुत कम मिलेंगे।

यह खेती, राजगरी, मजदूरी और मल्लाही करनेमें बहुत होशियार हैं। जितनी बुद्धि, यत्न और सहिष्णुता होनेसे कारीगर बनते, इनमें पाया करते हैं। कलकत्तेके चीना मिस्त्री और चीना मोची मशहूर हैं। साधारणतः वह देशी कारीगरोंसे कितने ही अच्छे और गवर्नमेण्ट कर्तृक अधिक आदृत होते हैं। यह नम्र, धीर, मिताचारी, परिश्रमी, निःस्वार्थपर, कष्टसहिष्णु थोड़े बहुत शान्तिप्रिय हैं। चीना लोग क्या शीतप्रधान क्या ग्रीष्मप्रधान सब देशोंमें जा करके रहा करते हैं। रीत्यनुसार शिक्षा, अर्थसाहाय्य और उत्साह मिलने पर यह पृथ्वीमें सर्वोत्कृष्ट शिल्पी बन जाते हैं।

कष्टमें पड़नेसे वह अनायास अपत्यस्नेह बन्धन तोड़ डालते हैं। वैसे समयमें निराश्रय बालिकाएं ही हत वा परित्यक्त होती हैं। चीनमें वृद्ध, खञ्ज, अन्ध, कुष्ठ, व्याधिग्रस्त प्रभृतिके निमित्त दातव्यागार प्रतिष्ठित हैं। वृद्धोंके प्रति यथेष्ट सम्मान प्रदर्शित होता है।

चीना अपने आमोद-प्रमोदके लिए रङ्गालयमें नाट्याभिनय, आतिशबाजी, पुतलियोंका नाच, कुश्ती, चिड़ियोंकी लड़ाई आदि खेल तमाशे किया करते हैं। इन्हें खूबसूरत चिड़िया बहुत अच्छी लगती है। परन्तु स्वभावतः यह गम्भीर प्रकृति हैं, आमोद प्रमोदमें अधिक समय नहीं बिताते।

चीनमें सब श्रेणियोंके लोग प्रायः एक रूप परिच्छद व्यवहार करते हैं। सम्भ्रान्त अधिवासी सम्मानसूचक चिह्नस्वरूप कुछ अलङ्कार पहनते हैं। परन्तु दूसरोंको इन्हें काममें लानेसे दण्ड मिलता है। इनका अङ्गरखा बहुत लम्बा और ढीला रहता है। इसमें ४।५ बटन लगते हैं। कमरमें यह एक दीर्घ कटिबन्ध लपेटते हैं। इसमें एक छुरी और दो कटारियां लटका करती हैं। इन्हींके द्वारा वह खाते हैं। चीना साधारणतः नील परिच्छद परिधान करते हैं। पर्वोत्सवादिमें कृष्ण, धूसर, हरित, पीत, लोहित आदि वर्णोंका वस्त्र भी व्यवहृत होता है। सम्राट् अपने आप पीला कपड़ा पहनते हैं।

राजपरिवार पीतवर्ण कटिबन्ध धारण करते हैं। शोक आदिके समय शुभ्रवेश धारण करना ही चीनको प्रथा है। चीना लोग टोपी लगाते हैं। यह समस्त मस्तक मुण्डन करके मध्य भागमें एक दीर्घवेणी रखते हैं। कोई कोई नहीं भी रखते हैं। चीनमें विंश वर्ष अतिक्रम न करनेसे किसीको रेशमी कपड़ा या टोपी पहननेकी अनुमति नहीं मिलती।

चीनकी रमणियां अवगुण्ठन व्यवहार नहीं करतीं। यह मस्तकमें वेणी बांधतीं और उसमें स्वर्ण रौप्य निर्मित नानाविध फूल लगाती हैं।

चीना दीर्घ नख रखनेको सम्भ्रान्त वंशका चिह्न समझते हैं। कारण हीनवंशको काम करना पड़ता है, सुतरां नख टूट जाते हैं। जिसका जितना संभ्रम रहता, नख भी बढ़ा करता है। सम्राट्का नख सर्वापेक्षा बड़ा होता है।

चीनमें बहुविवाह प्रचलित है। विवाहिता रमणी— प्रथम पत्नी भी स्वामीके संसारमें विशेष प्रतिपत्ति नहीं पा सकती। फिर भी पुत्रवती स्त्रियोंको विशेष सुविधा होती है। लड़का कितना ही बड़ा क्यों न हो, माताको उस पर असीम ममता रहती है। इसी कारणसे चीनरमणियां कथञ्चित् सपत्नी मिलन सह्य कर सकती हैं। राजाज्ञासे धनी लोगों और बनियोंको अपने अपने दासों

मन्दारिन पुरुष। मन्दारिन स्त्री।

तथा दासियोंका विवाह करना पड़ता है। स्त्रीकी गर्भावस्था और शिशुके स्तन्यपान कालको स्त्रीसङ्गम एकान्त निषिद्ध है। उसीसे कितने ही लोग दारान्तर परिग्रह करते हैं। सम्राट्के अन्तःपुरमें प्रधाना सम्राज्ञी व्यतीत दूसरी भी बहुतसी राजमहिषियां होती हैं। प्रत्येक महिषीका भिन्न भिन्न गृह, दास, दासी और अन्यान्य आवश्यकीय सामग्री रहती है। इन सकल राजमहिषियोंके लिये १८७७ ई०के किन्-भि-चीनके राजकीय बर्तनोंके कारखानेसे प्रायः ११८३८ चीना बर्तन प्रेरित होते हैं।

चीनमें ज्येष्ठादि क्रमसे सन्तानोंका विवाह किया जाता है। अभिभावक किंवा आत्मीय स्वजन ही कन्यानिर्वाचन करते हैं। विवाहसे पूर्व वर कन्याको देख नहीं सकता। विवाहके दिनमें मसालें जला कर वाद्यभाण्डसह बड़े आडम्बरसे कन्याको डोली पर बैठाल वरके घर भेजते हैं। फिर वहां यथारीति विवाह-कार्य सम्पन्न होता है। कन्या सास-श्वशुरको अभिवादन करती और नवदम्पतीके ईश्वरोपासना करने पर रमणियां कन्याको अन्तःपुरमें ले जाती हैं। दाम्पत्य प्रणयके आदर्शकी भांति विवाहमें चकवेका जोड़ा आनीत होता है। विवाहके बाद अन्तःपुरमें रमणियां और घरके बाहर पुरुष आमोद प्रमोद करते हैं। फिर बड़ी धूमधामके साथ आहार आदि कार्य सम्पन्न होते हैं।

विवाहकी प्रणाली राजनियमके अन्तर्गत है। कन्या १४ वर्ष वयस्का न होनेसे विवाह करना निषिद्ध है। सगोत्र किंवा नितान्त अन्तरंगमें भी विवाह नहीं करते। नट, नाविक, दास प्रभृतिका अपने अपने सम्प्रदायमें बिवाह होता है। चीनमें विधवाविवाह सम्मानकर नहीं है। परन्तु पुरुष जितनी इच्छा हो विवाह कर सकता है। विवाहकालको अनेक स्थल पर कन्याका पिता वरसे दहेज लेता है। लिखा जा चुका है कि विवाहसे पहले वर कन्याको नहीं देख सकता, सुतरां कई बार ऐसा होता है कि कन्या वरके आलयमें आनेसे अच्छी नहीं लगती। उस समय कन्या विमुख हो करके लौट जाती है। परन्तु वैसे स्थल पर वरको वृथा बहुतसा व्यय भार वहन करना पड़ता है।

चीनकी अवरोध-प्रथा इस देशकी अपेक्षा भी अधिक है। वहां स्त्रियां जनानखानेसे बाहर नहीं निकल सकतीं। आत्मीय गुरुजनोंको भी हठात् अन्तःपुरमें प्रवेश करनेकी क्षमता अत्यल्प है।

पदद्वय अतिशय क्षुद्र होना ही चीनकी रमणियोंका प्रधान सौन्दर्य लक्षण है। इसीसे बाल्यकालको ही दोनों पांव छोटे करनेमें उनकी बड़ी चेष्टा रहती है। दोनों पांव बढ़ना इनके मतमें नीचवंशका चिह्न है। चीना औरतोंके पांव अपने आप बहुत छोटे होते हैं। फिर ७।८ वत्सर वयससे नानारूप कृत्रिम उपायोंमें उनको घटाया जाता है। मोटे फीतेसे पांवकी उंगलियां, तलवा और एड़ी इस प्रकार कस करके बांध देते, कि वह कभी भी बढ़ नहीं सकते। इस पर लोहेके जूते भी पहने जाते हैं। सुतरां पांव छोटे ही रहते हैं। उस प्रकारके पद हमारे देशमें बहुत भद्दे लग सकते हैं; परन्तु चीनमें बहुकालसे उनका गौरव चला आता है। बहुत छोटी छोटी उङ्गलियां ऐसी समझ पड़तीं, मानो पदके पत्रसे अङ्कुर जैसी निकलती हैं। ऐसे क्षुद्र पदोंसे भी चीना रमणियां अति-

द्रुत चल सकती हैं। इनका पर्दा और लोहेका जूता देख करके किसी विवेचकने कहा है कि—वह लौहपादुका नहीं—रमणियोंका अन्तःपुर रूप कारागारमें आवद्ध रखनेकी बेड़ी है। जो हो अब लोगोंकी दृष्टि क्षुद्र पदों पर कम पड़ती है। इसी बीच बहुतसी स्त्रियां पांव छोटे बनानेके लिये अथवा यन्त्रणा भोग नहीं करतीं।

चीनमें बहुसंख्यक शिशुओंका वध होता है। कहना वृथा है कि मारे जानेवाले बच्चोंमें अधिकांश नवजात बालिकाएं होती हैं। यहां पिता ही सन्तानका हर्ता-कर्ता है। सुतरां उस प्रकार नृशंस व्यवहारके लिये राजद्वारमें दण्डित होना नहीं पड़ता। अतिशय दारिद्र्यजनत महाकष्टमें पतित होने पर जब वह देखते कि जो जाग जानेसे शिशुका जीवन केवल कष्टपूर्ण मात्र होगा, शीघ्र ही उसको ठिकाने लगा देते हैं। जो हो, सकल समृद्ध जनपदोंमें वह प्रथा दृष्ट नहीं होती। फूचू नगरके निकट किसी नदी तीरकी एक खण्ड प्रस्तरमें लिखा है—'यहां लड़कीको डुबा करके मत मारो।' इससे मालूम पड़ता है, कि चीनमें बालिकावध निवारित होनेमें अभी भी देर है।

चीनाओंका प्रधान खाद्य भात है। आलू, गोभी, सेम, मूली, भाटा आदि तरकारियां भी चलती हैं। वह साधारणतः शूकर छाग और मेष मांस खाते हैं। अश्व, कुक्कुर, वानर, विड़ाल, इन्दुर प्रभृति भी उनको अखाद्य नहीं। शूकरमांस अधिक कटता है। चीनाओंको वह मांस इतना प्यारा है, कि उसको न छोड़नेकी कहावतें बन गयी हैं।

खाद्यके विषयमें उनका नियम है, कि शरीरपोषण कर सकनेवाला कोई भी द्रव्य भक्ष्य होता है। यह सकल प्रकार मत्स्य, कर्कट और कच्छपादि खाते हैं। गोवध सम्पूर्ण रूपसे गैर कानूनी है। किसीको गाय या बैल मार डालनेमें पहले बार एक सौ बेत्राघात दण्ड मिलता है। दूसरे मरतबा उसी अपराध पर १०० बेंत लगा करके अपराधी निर्वासित किया जाता है। चीना चावलकी शराब पीते हैं। चण्डूका चलन इनमें बहुत है। यह युरोपियोंकी तरह कुर्सी पर बैठ मेजमें लकड़ीके हत्थे वगैरहसे आहार करते हैं। चाय पीनेके सिवा दूसरे समयको यह चम्मचसे काम नहीं लेते।

चीना मृत्युको बहुत डरते हैं कि मृत्युके पीछे मनुष्य क्षुधार्त भूतयोनि पा करके मारा मारा घूमता है। इसी मृत्युभयके निवारणार्थ चीना शास्त्रकारोंने मृत-व्यक्तिको देवतुल्य समझने और मृतदेहका महा समारोहसे अन्त्येष्टिक्रिया सम्पन्न करनेका विधि बनाया है। फिर भी यह चिन्ता करके नितान्त घबरा उठते, मरने पर हठात् कहां जावेंगे, क्या करेंगे। परकालको अनन्त सुखकी आशा भी इन्हें आश्वस्त कर नहीं सकती। शव-को समाधि देते हैं।

किसी चीनाके मरने पर उसके लिए जीवित कालसे सहस्र गुण सम्मान दिखलाया जाता है। उसका शव सर्वोत्कृष्ट वेशभूषासे सज्जित करके साध्यानुयायी मूल्य-वान् सुन्दर सन्दूकमें रखा जाता है। मुर्देके वह सन्दूक तरह तरहकी कारीगरी किये हुए, सफेद, लाल, पीले, नीले आदि रंगोंसे रंगे और कीमती होने पर सोने चांदीसे मढ़े होते हैं। बहुतसे लोग जीवितावस्थामें ही अपने लिये सन्दूक खरीद करके रख लेते हैं। जो हो उसमें रूई, चूना और समय समय पर चायकी पत्तियां डाल लाश रखी जाने पर तीनसे ७ दिन तक घरसे नहीं उठती। इसी अवसर मृत व्यक्तिके आत्मीय कुटुम्बादि सब लोग शोकवेशमें सज्जित हो करके सम्मान प्रदर्शन करने जाते हैं। गृहादि भी उस समयको श्वेत वस्त्र द्वारा आच्छादित होते हैं। श्वेतभूषा ही उनका शोक चिन्ह है। आगत कुटुम्बादि कई दिनों मृतके घरमें ही अवस्थान करते हैं। समाधिके दिन आत्मीय बन्धु बान्धव सभी शवके साथ चलते हैं। सन्निहित पर्वतकी उपत्यका ही समाधिस्थानरूपमें निर्वाचित होती है। मुर्देका सन्दूक वहां प्रोथित किंवा मन्दिराभ्यन्तरमें निहित होता है। नगरादिसे कुछ दूर समाधिस्थान उच्च वृक्षादि द्वारा वेष्टित रहता है। शव समाहित होने पर चीना लोग प्रति वर्ष वहां जा करके मृतके उद्देशको श्राद्धादि करते हैं। इस आशासे कि परकालको मृत व्यक्ति गृह और तैजसादि पावेगा, कागजके बने हुए गृहयानादि जलाये जाते हैं, इनका विश्वास है कि वैसे भस्मीभूत गृहयानादि परकालमें सच्चे बन जाते हैं। इसी प्रकार नकद रुपया भी मुर्देको मिलेंगे ऐसा विचार कर सुन-हला कागज जलाया करते हैं।

मृत व्यक्तिके मर्यादानुसार शोककाल सुदीर्घ होता है। सम्राट् मृत पिता माताके लिये पूर्ण ३ वर्ष शोकचिह्न धारण करते हैं। सम्भ्रान्त चीना लोगोंको भी इनका दृष्टान्त अनुसरण करना पड़ता है। मद्य-मांसादि वर्जन, श्वेतवस्त्र परिधान, उत्सवादि त्याग आदि शोकचिह्न हैं। राजकर्मचारी अपने कार्यसे विरत होते, विद्यार्थी पाठादि त्याग करते और साधारण लोग कोई काम नहीं करते। प्रत्येक नगरमें सभाएं स्थापित हैं, जिससे पीछेको यथोचित रूप मृतकी अन्त्येष्टिक्रिया सम्पन्न हो जावे। उन सभाओंमें यह भी समस्त निर्दिष्ट है—किसको कितनी देर कैसे कहां तक शोक प्रकाश करना पड़ेगा। किसी भी चीनाको विदेशमें मरने पर सन्तान देश ले जा करके समाहित करते हैं। अन्यथा घोर दुर्नाम होता है। जो हो, कितनी ही बार तो लाशें सिर्फ फेंक दी जाती हैं। नानकिन नगरके निकट वैसे विस्तर शव प्रक्षिप्त होते हैं। ई० अट्ठारहवीं शताब्दीके पूर्व पर्यन्त चीनकी सती स्त्रियां मृत पतिका अनुसरण करती थीं। इस देशकी भांति वह जलती हुई चितामें कूदती नहीं, अनाहार वा अहिफेन सेवन द्वारा जीवन छोड़ती थीं। १७८२ ई०को सम्राट् युएनचुयाङ्गने वह प्रथा रहित कर दी। परन्तु बेवा औरतें आज भी खाविन्दके क़ब्रस्तानमें जा कर उसकी क़ब्र पर पङ्खा डुलातीं और इस तरह अपने दिलका अफसोस दिखलाती हैं।

पतिकी सहगामिनी चीना विधवा।

चीना जैसी प्राचीन भाषा जगत्में दुर्लभ है। चार अड्डस वत्सर पूर्वकी चीनमें जिस भाषासे कथनोपकथन होता, आज भी उसीमें हुआ करता है। चीनाओंकी वर्णमाला चित्रमय है। इनकी भाषा एकमात्राविशिष्ट होती अर्थात् किसी शब्दमें एक स्वर और एक व्यञ्जन दोसे अधिक वर्ण नहीं रह सकते। सुतरां वर्णमाला द्वारा अति अल्पसंख्यक शब्द बन सकते हैं। समस्त चीन भाषामें सब मिला करके ४५० शब्द हैं। किन्तु प्रत्येक शब्द उच्चारणभेदसे नानारूप अर्थमें प्रयुक्त हो सकता है। इस प्रकार प्रायः ४३४९६ विभिन्नार्थ बोधक शब्द मिलते हैं। यह संख्या कुछ पढ़ लेनेसे ही अधिकांश मनोभाव प्रकाश किया जाता है। क्रमागत पांच वर्ष काल अभ्यास करनेसे विदेशी व्यक्ति साधारणतः चीना भाषा सीख सकता है।

चीनकी भाषा चार प्रकार है। प्रथम कोयेन अर्थात् राजभाषा है। वह भाषा आजकल नहीं चलती। प्राचीन ग्रन्थादि इसमें लिखे जाते थे। वह भाषा अति मधुर है। उसके द्वारा संक्षेपमें गुरुतर विषयकी भी वर्णना की जाती है। दूसरी ओयेन्चाङ्ग है। इसमें विज्ञान और दर्शन शास्त्रादि लिखते हैं। तीसरी होयानहोया है। यह भाषा विचारालय और शिक्षितमण्डलीमें व्यवहृत होती है। सम्प्रति वह १८ विभागोंमें प्रचलित है। उसमें पेकिनके निकट इसका उच्चारण विशुद्ध लगता है। चौथी ह्यायाङ्ग-टान है। वह पल्लीग्राम और नीच लोगोंकी भाषा है।

चीनाओंकी वर्णमाला छह प्रकार है। १ली कियाई-सू जो सर्वापेक्षा सुन्दर लगती है। २री चुयेन-सू जो चित्रमय वर्णमालामें अव्यवहित परवर्त्ती है। ३री ये-सू जो राजकार्यमें चलती है। चौथी हिङ्गसू हस्तलिपिमें व्यवहृत है। वसीट लिखनेमें वही अच्छी होती है। पाँचवीं चोजी है। यह संक्षिप्त तथा शीघ्र लिखने और कामकाजमें व्यवहृत है। छठीं शाङ्ग हो है। पुस्तक मुद्राङ्कनमें यही प्रचलित है। राजकर्मप्रार्थी परीक्षार्थियोंको रचना सुन्दर कियाइसू वर्णमालामें परिपाटी रूपसे लिखनी पड़ती है।

चीना लोग लिखे हुए कागजको देवता जैसा मान्य करते हैं। विद्वत्समाज छपे और लिखे हुए कागजोंको इकट्ठा करनेके लिये इस आशङ्कासे आदमी रखता, जिसमें पीछेको कोई उन पर पाँव न मारे। संग्रहकारी बंहगी

में बांसकी दो बड़े जैसी टोकरियां लगा यह कहते द्वार द्वार घूमा करते—रद्दी कागज दे दो। (सो-सुई-चू।) यह आवाज सुन करके सब लोग अपने अपने घरका रखा हुआ फटा पुराना कागज उनकी टोकरियोंमें ले जा करके छोड़ते हैं। फिर उस कुल कागजको देवालय पर जला करके भस्म कलसोंमें डाल समुद्रमें फेंक देते हैं।

चीनकी कागज संग्रहकारी।

बहु प्राचीन कालसे चीन देशमें विद्याका थोड़ा बहुत आदर होता आता है। चीन-सम्राट् देशके समस्त विद्वानोंमें परीक्षा करके अपने कर्मचारी रखते हैं। इस समस्त विषयके लिये उनकी राजकीय साहित्यसमिति है।

पुस्तकादिके मध्य कनफुचो द्वारा प्रणीत ५ ग्रन्थ हो अतिप्राचीन और सर्वत्र आदरणीय हैं। कनफुचोसे पहले भी कितने हो चीन ग्रन्थकार पुस्तकादि लिखे गये हैं। इन्होंने उनके सकल पुस्तकोंसे सङ्कलन और उसका सरलार्थ प्रकाश किया है। उन्होंने धर्म, दर्शन, इतिहास, काव्य आदि समस्त प्रकारके ग्रन्थ लिखे हैं। धर्मका सूक्ष्म तत्त्व-व्याख्यामें हो उनकी असाधारण बुद्धिमत्ता झलकती है। कनफुचोके शिष्योंने उनका सब ज्ञानगर्भ कथनोपकथन 'शू' नामक तीन पुस्तकोंमें लिपिबद्ध किया है।

ईसासे २१३ वर्ष पहले सम्राट् ची-ओयाङ्ग-टीने कृषि, स्थपति और आयुर्वेदविषयक भिन्न देशके अपर यावतीय पुस्तक जला डाले थे। उसके बाद ६ष्ठ सम्राट् किंग टो, फिर सम्राट् ओटो पुस्तक संग्रह तथा रक्षणमें यत्नवान् हुए। शेषोक्त सम्राट्ने ईसाके २०८७से १२२ वर्ष पहले तक १२० अध्यायों और ५ भागोंमें विभक्त चीनका एक प्रकाण्ड इतिहास प्रस्तुत कराया।

ईसासे ११०० वर्ष पूर्वको चौकी नामक किसी व्यक्तिने सर्व प्रथम चीना भाषामें लुसू अभिधान प्रणयन किया था। आज भी वह चलता आ रहा है। सम्राट् काङ्गीने भी अपने राज्यके प्रधान विद्वानों द्वारा संस्कृत व्याकरणके अनुकरण पर ३२ खण्डमें सम्पूर्ण झिटिन नामक एक उत्कृष्ट अभिधान बनाया।

चीनमें कविताका विशेष आदर है। विद्वान् व्यक्ति सर्वसाधारणके सुविधार्थ सकल प्रकार नीति सरल कवितामें रचना करते हैं। इनके नाटकमें किसी विशेष घटना वा रसका प्राधान्य नहीं रहता। अभिनेता रंगमञ्च पर खड़ा हो पहले अपना परिचय दे करके अभिनय आरम्भ करता है। एक हो पात्र भिन्न भिन्न वेशमें अलग अलग खेल दिखलाता है।

चीनकी भाषामें उत्कृष्ट व्याकरण एक भी नहीं है। प्राचीन चीना भाषामें छेद चिह्नका व्यवहार अत्यल्प था। आजकल भी राजकीय परीक्षा प्रभृतिमें लिखनेके साथ छेद नहीं लगाते। परन्तु कुछ पुस्तकोंमें अब उसका व्यवहार होने लगा है।

मृत पितृपुरुषोंके प्रति यथोचित सम्मान प्रदर्शन और उनके उद्देशमें आद्यतर्पण करना चीनाओंका प्रधान धर्म है। शिक्षित सम्प्रदाय कनफुचोका मत अवलम्बन करता है। बहुतसे घोर नास्तिक भी हैं। तौइचो नामक कोई सम्प्रदाय है। पहले इसका मत उत्कृष्ट रहा। किन्तु कालक्रममें उसके याजकोंने धर्मको नानारूपसे विकृत करके जघन्य पौत्तलिकतामें परिणत कर दिया। दूसरे लोग नानाविध देवदेवियोंकी पूजा करते हैं। बौद्धधर्म भी प्रचलित है। चीना बुद्ध देवको 'फो' और बौद्ध याजकोंको 'होचाङ्ग' कहते हैं। यह होचाङ्ग या लामा पीतवसन परिधान करते और दार-परिग्रह न करके धर्म मन्दिरोंमें रहते हैं। चीनके बौद्ध अपने आप कोई प्राणि-हत्या नहीं करते, परन्तु अपर कर्तृक हतप्राणीका मांस खाते हैं। बहुकालसे ईसाई धर्मने चीनमें प्रवेश किया है। मि० हाकके अनुमानसे समस्त चीन राज्यमें ईसाइयोंकी संख्या प्रायः ८ लक्ष है। प्रवादानुसार मुहम्मदके मातुल कासिमने चीनमें इसलाम धर्म प्रचार किया था। आजकल चीनमें बहुतसे मुसलमान बसते हैं। इन सब

नाना धर्मोंके चलते भी कनफुची प्रणीत धर्म राजाका अनुमोदित है।

चीनके बौद्ध याजक।

चीन साम्राज्यमें यथेच्छाचार प्रणाली प्रचलित है। सम्राट् ही राज्यके सर्वेसर्वा हैं। परिवार शासनके अनुरूप वह राज्यस्थ प्रजाको सन्तानवत् पालन और शासन करते हैं। पितृभक्तिके आदर्श पर ही राजभक्ति सङ्गठित होती है। सुतरां कोई भी पिता-माताका अवाध्य होने पर राजदण्ड पाता है। समस्त प्रजा सम्राट्को देवताकी भांति मानती है। वह और मन्दारिन प्रजाको पुत्र जैसा सम्बोधन और अपत्यनिर्विशेषसे उपदेश प्रदान करते हैं। सम्राट् कर्तृक राजकर्मचारी नियुक्त होते हैं। रानीको चीना लोग पृथ्वीमाताका अंश जैसा मान्य करते हैं।

शासनकार्यकी सुविधाके लिये चीन देश अष्टादश भागोंमें बांटा है। प्रत्येक प्रदेशमें एक शासनकर्ता रहता है। वही अपने प्रदेशके अलग अलग जिलाओं पर प्रभुत्व करता है। राजकार्य-पर्यालोचनाको राजाकी २ मन्त्रिसभा हैं। यह आईन कानून बनाने और कायदा बदलनेमें सम्राट्को मशविरा दिया करती हैं। चीनकी सैन्यसंख्या सब मिला करके कोई १२ लाख है। १८९२ ई०को चीनमें कुल १६० जङ्गी जहाज थे। अब युरोपसे लड़ाईका कितना ही सामान खरीदा जाता है।

प्रधान शासनकर्ता और सेनापतिको मन्दारिन कहते हैं। दूसरी भी कई उपाधि वंशानुक्रमिक होती हैं। राजवंशीय लाल और पीला कमर बन्ध लगा सकते हैं। यहां राजदण्ड अति कठोर है। समय समय पर वह अति नृशंस जैसा समझ पड़ता है। अपेक्षाकृत सामान्य अपराध पर ही पांवमें डण्डा मारते और गलेमें तौक डालते हैं। नरहत्या, राजद्रोह आदि बड़से बड़ अपराधोंमें दोषीको निर्वासन अथवा प्रस्तर निक्षेप, श्वासरोध प्रभृति नृशंस उपायोंसे वध करते हैं। मुजरिमको काट करके ८, २४, ३६, ७२ या १२० टुकड़े करनेका चाल चीनके सिवा पृथिवी पर किसी भी दूसरी जगह नहीं देख पड़ती। चीनके कारागार साक्षात् नरकसदृश हैं।

चीनमें स्वर्णमुद्रा नहीं चलती। चांदीका एक रुपया है। उसीसे कर्मचारियोंके वेतन आदि प्रदत्त होते हैं। राजस्व और वाणिज्य व्यवसायमें वही सिक्का चलता है। साधारण लोग सर्वदा पैत्तल मुद्रा व्यवहार करते हैं। इस पैसे पर बीचमें छेद होता है। इसका मूल्य अतिशय न्यून है। एक रुपयेमें कुछ सात सौ पैसे मिलते हैं। महाजनोंके सुभीतेको एक हुण्डी होती है।

चीना लोग उत्तर-पूर्व एशियाके अन्यान्य अधिवासियोंकी भांति ६० वत्सरके कालावर्त द्वारा समय गणना करते हैं। इस ६० वत्सर परिमित कालके प्रत्येक वर्षका भिन्न भिन्न नाम है। फाल्गुनकी शुक्ल प्रतिपत्से वर्ष गिना जाता है। २९ वा ३० दिनमें एक चान्द्रमास और १२ चान्द्रमासमें एक साल होता है। सौर वर्षके साथ समानता रखनेको यह भी एक मलमास लगाते हैं। रातको ११ बजेसे दिन आरम्भ होता है। दिवारात्रि २ घण्टेके हिसाबसे १२ भागोंमें विभक्त है।

चीना लोग सुबुद्धि, परिश्रमी, अध्यवसायी और कष्टसहिष्णु हैं। वह खूब समझते, किस उपायसे निर्माणके सकल उपकरण वृथा नष्ट नहीं होते। उद्भावनी शक्ति भी उनमें विलक्षण है। विदेशियोंने चीनसे बहुतसी बातें सीखी हैं। हमारे देशका चीनांशुक बहुप्राचीनकालसे विख्यात है। रेशम, साटन, चाय आदि चीनसे विलायत

गये। अब सभी स्वीकार करते कि कागज, मुद्रायन्त्र, बारूद आदि नित्य प्रयोजनीय द्रव्योंका आविष्कार प्रथम चीन देशमें ही हुआ। खृष्टके १०५ वर्ष पूर्वको चीनमें कागज बना। इससे पहले सूती या रेशमी कपड़े धातुफलक और वृक्षपत्रादि पर लिपिकार्य सम्पन्न होता था। फिर किसी मन्दारिनने वल्कल, शण और पुरातन वस्त्रादि पका करके उसके मण्डसे किसी किस्मका कागज तैयार किया। कहना काफी है कि पहले पहल बना हुआ कागज बहुत भद्दा था। फिर चीनाओंने नानारूप बुद्धिकौशलसे प्रभूत उन्नति करके कागजको चिकना, सफेद और साफ करना सीखा। आज भी यह जिन सकल सहज उपायोंसे कागज बनाते, युरोपीय शिल्पकार समझ नहीं पाते। प्रत्येक प्रदेशमें भिन्न भिन्न उपादानसे कागज प्रस्तुत होता है। कोकिनमें कच्चे बांस, चेकियाङ्गमें धानके सूखे पेड़से और कियाङ्गनान प्रदेशमें रद्दी रेशमसे कागज बनाते हैं।

खृष्टीय १०म शताब्दीके प्रारम्भमें चीनदेशमें प्रथम मुद्रायन्त्र आविष्कृत हुआ था। ९३२ ई०में चीन-सम्राट्ने बहुसंख्यामें पुस्तक छापनेकी अनुमति दी और समस्त धर्मग्रन्थ छपा करके राजभवनमें रक्षित किये। उसके कोई ५०० वर्ष पीछे युरोपमें छापाखाना चला और वर्तमान उत्कृष्ट अवस्था प्राप्त हुआ।

विख्यात परिव्राजक मार्कोपोलो चीन राज्यमें मुद्रित कागजी रुपया अर्थात् नोट चलनेकी बात लिख गये हैं। सम्भवतः चीनमें उन्होंने छपी किताबें भी देखी होंगी।

चीनमें बहुत पहले काष्ठफलक पर अक्षर खोद करके पुस्तक मुद्रित होते थे। आज भी वह लिमो नामक वृक्षके कठिन काष्ठ पर पुस्तकके पृष्ठ खोदित करके मुद्रित करते हैं। चीनमें बहुकालसे मुद्रायन्त्र आविष्कृत तो हैं, परन्तु उसकी अधिक उन्नति नहीं हुई। वर्तमान उत्कृष्ट युरोपीय मुद्रायन्त्रकी तुलनामें चीनका मुद्रायन्त्र अति अपकृष्ट है।

सर जान डेविसके अनुमानसे बारूद, कुतुबनुमा और छापा तीनों चीजें पहले पहल चीनमें ही ईजाद हुई थीं।

चीनकी स्याही सब जगह मशहूर है। चित्रादि अङ्कनको युरोप और अन्यान्य देशमें यह आदरके साथ व्यवहृत होती है। दीपकी कालिख, सरेस और दूसरी दूसरी चीजें मिला करके उसको तैयार करते हैं। यह समस्त पदार्थ एकत्र जमा करके टुकड़े टुकड़े काटे जाते हैं। फिर मुहर लगा करके इसे विदेश भेजते हैं। कियाङ्गनान प्रदेशके हैचिउ नगरकी रोशनाई सबसे अच्छी होती है। वहांके मसी-प्रस्तुतकारी, विदेशीयको बात छोड़ दीजिये, स्वदेशीयको भी इसका कौशल नहीं बतलाते। इस चीना स्याहीका नाम इण्डियन इङ्क (Indian ink) है।

चीन देशमें ही सर्व प्रथम मट्टीसे मजबूत साफ बर्तन बने थे। अब वह पृथिवीके अनेक देशोंमें प्रस्तुत तो होते, परन्तु चीना बर्तन ही कहलाते हैं। चीनकी केओलिन मट्टीसे बने बर्तन युरोपकी अपेक्षा भी उत्कृष्ट ठहरते हैं। कपासका बिनौला निकाल करके रूई बनानेकी चीना चर्खी युरोपीय मशीनोंसे अच्छी होती है। सिवाय उसके इनके लौह, ताम्र, रौप्य, जस्ता और निकेल निर्मित नानाविध धातुद्रव्य तथा पेकिन नगरको १३।१४ फुट बड़ा घण्टा बहुत विख्यात है। चीनके सिन्दूर प्रभृति धातव वर्ण, रंग, नक्काशी किया हुआ मणि, हाथी दांत तथा काष्ठादि निर्मित बहुविध द्रव्य और स्वर्ण रौप्यादिके नानारूप अलङ्कार अतीव विस्मयजनक होते हैं। तरह तरहकी जरीके कामका चीना रेशमी कपड़ा बहुत पुराने समयसे आज तक पृथिवी पर सर्वत्र समादृत होता आता है। पहले युरोपमें रेशमका कीड़ा न था। कहते हैं, चीन देशसे ही कोई रोमन कार्थलिक धर्मयाजक खोखली छड़ीके भीतर उसका अण्डा छिपा करके युरोप ले गये और वहां रेशमकी खेती करने लगे। बहु पूर्वको कनफुचीके समयसे चीना लोग सोने, चांदी और तांबे वगैरहका सिक्का काममें ला रहे हैं। हानवंशीय सम्राटोंके राजत्वकालमें चीनाओंने ही सबसे पहले व्यवसाय वाणिज्यके सुविधार्थ नोट चलाया था। ओटा नामक सम्राट्के समय १२५) रु०का रंगदार 'फाईपाई' नोट प्रचलित रहा। चीनके नोटोंमें इस प्रकार लिखते थे— 'कोषाध्यक्षोंकी प्रार्थनासे आदेश हुआ कि मिङ्गराज वंशीय मुद्राङ्कित इस कागजका रुपया सम्पूर्ण रूपसे ताम्रमुद्राके बदले चलेगा जो व्यक्ति इसको अमान्य करेगा उसका मस्तकच्छेद किया जावेगा।'

युरोपीय लोग बहुकालसे चीनमें रेलवे लाइन और टेलीग्राफ स्थापन की चेष्टा करते थे, किन्तु किसी भी प्रकारसे क्तकार्य न हो सके। एक बार उन्होंने चीन सम्राट्की अनुमति ले करके शङ्घाईसे उसाङ्ग तक ३'४ कोशमात्र रेलपथ बनाया, परन्तु वह चीना कर्मचारियों-की चक्षुशूल हो गया। इन्होंने सब खरीद करके उखाड़ डाला था। जो हो, परन्तु अब चीनमें रेल निकल गयी है। कहनेसे क्या उसका सभी सामान युरोपीय है। ताड़ितवार्ताका तार भी वहां विस्तारित हुआ है। अब चीनमें वाष्पीय यन्त्र द्वारा रूईसे सूत बनाते, कपड़ा बुनते और नाव जहाज वगैरह चलाते हैं।

भारतवर्षके साथ चीनका वाणिज्य ठीक इंगलेण्डसे नीचे रखा जा सकता है। चीनमें अफीम, रूई, जनी कपड़ा, मट्टीका तेल और चावल बाहरसे मंगाते और चाय, चीनी, रेशम, रेशमी कपड़ा और कपूरकी रफ्तनी करते हैं।

चीन-सम्राट्के अधीन चीन व्यतीत चीन-तातार, मंगोलिया, मञ्चूरिया, कोरिया, तिब्बत प्रभृति देश भी हैं। चीन जैसा बहुजनाकीर्ण देश भूमण्डलमें दूसरा नहीं है। चीन-सम्राट् ही पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिक संख्यक प्रजाके अधीश्वर हैं। कोरिया प्रदेश चीनके एक करद नृपति कर्टक शासित होता है। १८८४ ई०को कोरियाके प्राधान्य पर चीन और जापानसे तुमुल युद्ध हुआ। युरोपीय राजाओंने उसमें निरपेक्ष भाव अवलंबन किया था। अन्तको कोरिया जापानने ले लिया।

पहले बहुतोंकी विश्वास था कि छिन् (जिन) अथवा सिन् वा चिन वंशसे चीन शब्दकी उत्पत्ति हुई। इसीके अनुसार मनुसंहिता और महाभारतमें चीन शब्दका प्रयोग देख करके लोग कहते हैं कि उक्त दोनों प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ छिन वा सिन वंशके समय वा परवर्ती काल-की रचित हुए। परन्तु वह ठीक नहीं। वर्तमान चीना पुराविद्ने स्थिर किया, कि वह शब्द बहु प्राचीन है। यह नाम भारतवासियोंके प्रदत्त छिनवंशसे भी पहले बाइबिलके बहुत पुराने अंशमें चीन देश 'सिनिम' (Sinim) नामसे वर्णित हुआ है। (Edkin's Chinese Buddhism, p. 93 n; Indian Antiquary Vol. XIII. p. 317 n.) हिन्दुओंके दिये हुए 'चीन' नामकी ही टलेमिने सिनाइ (Sinai) लिखा है।

महाभारतमें कहा है कि महाराज भगदत्त चीन और किरात सेना सह युद्ध करने गये थे। (महाभारत २।२६।९) कामरूप देखो। इससे मालूम होता है, कि भारत युद्धकालमें भी चीनके साथ भारतका संस्रव रहा। अति पूर्वकालसे ही सिन्धुवासी वणिक् चीन साम्राज्यके मध्यसे कास्पिय सागरके तीर दाहिस्तान तक पर्यायद्रव्य ले करके गमनागमन करते रहे हैं। १२२ ई०को ज्ञानवंशीय चीन-सम्राट् बूतीको इनका पहला संवाद मिला और भारतकी दिक्की उनका लक्ष पड़ा। (Edkin's Chinese Buddhism, p. 83.) बौद्धधर्मको विस्तृति-के साथ भारत और चीनका सम्बन्ध उत्तरोत्तर बढ़ता गया। एक प्राचीन चीना ग्रंथमें लिखा है कि सम्राट् अशोकने जो अस्सी हजार स्तूप बनाये, बहुतसे चीन देशमें निर्मित हुए। इनमें मिङ्ग चेऊ (निमपो) नगरका स्तूप ही प्रधान है। दूसरे पुस्तकमें बतलाया है कि २१७ खृ० पू०को भारतवासी सेनसी प्रदेशकी चीना राजधानीमें बौद्ध धर्म प्रचार करने गये थे।

६१ ई०को चीन-सम्राट् मिंगटीने स्वप्नमें विदेशीय देवमूर्ति दर्शन करके १८ व्यक्ति भारतसे बौद्धाचार्य और बौद्धधर्म पुस्तक संग्रह करनेके लिये प्रेरण किये। उन दूतोंकी भारतसीमा पर श्वेत अश्वारोही दो ब्राह्मणोंका साक्षात् हुआ। उनके साथ देवमूर्ति प्रतिमा और अनेक धर्मग्रन्थ थे। ६७ ई०को वह चीन-सम्राट्के समीप उप-नीत हुए। उनके साथ काश्यपमतंग नामक एक भारत-वासी बौद्ध पण्डित रहे। इन्होंने सबसे पहले चीना भाषामें "द्विचत्वारिंशसूत्र" अनुवाद किया। चीनके लोयंग नामक स्थानमें इनकी मृत्यु हुई। फिर चीन-वासी बौद्धधर्म पर आस्था प्रदर्शन करने लगे। खृष्टीय २य और ३य शताब्दीकी भारतवासियोंने चीन देशमें जा करके नाना स्थानों पर बौद्ध देवालय स्थापन किये थे। उसी समय धर्मकाल नामक एक भारतसन्तानने "विनयपिटक"का उल्था किया। २९० ई०को चुसि-हिंग और उनके पीछे चफलु फलिंग बौद्ध ग्रन्थ संग्रहके लिये भारत आये थे। धर्मरक्ष नामक किसी बौद्धाचार्यने

भारतसे एक संस्कृत "निर्वाणसूत्र" ले जा करके चीन देशमें प्रचार किया। फिर बुद्धयशा नामके एक भारत सन्तानने "महागमसूत्र" प्रभृति चीन भाषामें निकाले। एतद्भिन्न धर्मनन्दि, धर्मागम, संगदेव प्रभृति भारतीय विद्वानोंने चीन देशमें जा कर अनेक शास्त्रीय ग्रन्थोंका चीना भाषामें अनुवाद किया था। इसी समय यशोष्ठित और बुद्धनन्दिने सिंहलसे चीन देश जा करके अनेक धर्म ग्रन्थ फैला दिये।

खृष्टीय ४र्थ शताब्दीके प्रारम्भको बुद्धजंग नामक कोई भारतवासी चीन पहुंचे थे। चीनके चौ-राजकुमार इनके निकट दीक्षित हुए। उन्होंने अपने प्रजावर्गको भी बौद्धधर्मकी दीक्षा दिलायी थी। बौद्धजंगने भी धर्मपुस्तक संकलनमें चीनवासियोंका बहुतसा साहाय्य किया। ४०५ ई०को भारतसन्तान कुमारजीवने चीन-सम्राट्के निकट उच्च पद पाया था। यह सम्राट्के आदेशसे भारतीय धर्म पुस्तक अनुवादमें प्रवृत्त हुए। प्रायः८ शत बौद्ध विद्वानोंने इनके महाकार्यमें योगदान किया। स्वयं चीन-सम्राट् भी अपने हाथमें प्राचीन हस्तलिपि ले करके पाठ संशोधन करते थे। कुमारजीवके अध्यवसाय गुणसे ३०० पुस्तक प्रस्तुत हुए। आज भी चीनके वर्तमान बौद्ध ग्रन्थमें कुमारजीवका नाम पहले लिया जाता है। उस समय-को कुमारजीवके प्रिय शिष्य फाहियान नामक कोई चीना परिव्राजक बौद्धधर्मपुस्तक संग्रहके लिये भारत आये थे। वह ४१४ ई०को जन्मभूमि वापस जा करके पत्नत्संग नामक एक भारतवासीके साथ अपने संगृहीत धर्म पुस्तक संकलनमें प्रवृत्त हुए। परिशेषको फाहियनने गुरु कुमारजीवके आदेशसे अपना भ्रमणवृत्तान्त प्रकाश किया। उन्होंने भद्र नामक किसी भारतीयके साहाय्यसे "असंख्येयविनय" सूत्रका अनुवाद भी निकाला था।

भारतवर्षीय बौद्धग्रन्थोंका चीन देशमें जितना ही प्रचार हुआ, चीनके राजा आदि सभीका बौद्ध धर्म पर उतना ही अनुराग बढ़ा। सम्राट् सुंगविन्तीके राजत्व कालको (४२३-४५३ ई०) बौद्धधर्मके समृद्धि दर्शन पर नानास्थानोंसे साधुवाद आने लगा। इसमें आरद्दराज पिषवर्मा और येववद आख्यासे भारतवर्षीय दूसरे किसी राजाका नाम चीनके इतिहासमें रक्षित है।

खृष्टीय ५म शताब्दीके शेष भागको भारतमें बौद्धधर्म पर निर्यातन आरम्भ होने पर बौद्धधर्मावलम्बी अनेक भारतसन्तानोंने हिमालयका तुषार भेद करके चीन देशमें जा आश्रय लिया था। खृष्टीय षष्ठ शताब्दीके प्रथम चीन देशमें प्रायः तीन सहस्र भारतसन्तानोंका वास हो गया। इनके भरणपोषण और सुख स्वच्छन्दके लिये वेई राजकुमारने चीनके नाना स्थानोंमें मनोहर सङ्घाराम बना दिये। ५१८ ई०में वेई-राजने सुङ्ग-युनको बौद्ध धर्म पुस्तक संग्रहके लिये भारतवर्ष भेजा था। इनके साथ होई सेंग नामक एक बौद्धयाजक भी रहे।

५२६ ई०में दाक्षिणात्यवासी वृद्ध बोधिधर्म बौद्धधर्म प्रचारार्थ समुद्रपथसे कांटन नगर गये थे। वहां चीन-सम्राट् लियाङ्ग वूती कर्तृक आहूत हो यह नानकिन नगरकी राजसभामें पहुंचे, किन्तु सम्राट्के ऊपर विरक्त हो लायङ्ग जा करके ८ वर्ष तक ध्याननिमग्न रहे। क्रमशः इनके गुणकी कथा सम्राट्ने सुनी थी। परन्तु वह अनेक चेष्टा करके भी फिर बोधिधर्मको अपनी सभामें न ले जा सके। होनान और शेनसीके मध्यवर्ती हिउङ्गर पर्वतमें इन्होंने समाधिलाभ किया था। परिव्राजक सुङ्गयुन भारतसे वापस हो बोधिधर्मका पूतदेह किसी मन्दिरमें रखनेको शवाधार पर ले गये। परन्तु शवाधार खोलने पर बोधिधर्मकी एक पादुकाको छोड़ करके दूसरी कोई चीज नहीं मिली। यही पादुका किसी विहारमें रक्षित हुई। किन्तु होयाङ्ग वंशके राजत्वकालमें किसीको सन्धान नहीं लगा, वह पादुका भी कहां चली गयी।

६२८ ई०को विख्यात चीना परिव्राजक युएनचुयाङ्ग संस्कृत पुस्तकोंका संग्रह करनेके लिए भारतमें आये। उनके रचित सि-यु-कि नामक ग्रन्थमें तत्कालीन भारत-वर्षका नाना स्थानीय आचार व्यवहार तथा भूगोल, इति-हास, अनेक आवश्यकीय कथा लिपिबद्ध हुई हैं। उसको पढ़नेसे भारतकी बहुतसी बातें हम समझ सकते हैं। उक्त चीन-परिव्राजकने संस्कृत पुस्तक संग्रहके लिये जो असाधारण परिश्रम और कष्ट उठाया था, सुननेसे भी आश्चर्यान्वित होना पड़ता है। स्वदेशको लौटते समय वह २२ घोटकों पर ६५७ प्राचीन ग्रंथ इकट्ठे करके ले

गये। इसके लिये चीन-सम्राट्ने उनको समुचित अभ्यर्थना की और उनका विस्तृत भ्रमण-वृत्तान्त लिपिबद्ध करनेके लिए आदेश दिया। उन्होंने कुल ७४० संस्कृतके बौद्ध ग्रंथोंका १३३५ खण्डोंमें विशुद्ध चीन भाषामें अनुवाद किया। युएनचुयाङ्ग देखो।

खृष्टीय ८म शताब्दीके प्राक्कालको कनफुचीके मतावलम्बी चीनाओंने भारतीय बौद्धों पर दारुण अत्याचार आरम्भ किया। उसी समय चीनदेशवासी चीना पञ्जिका संशोधनमें नियुक्त हुए। कुछ समय तक गौतम-सिद्धान्तके अनुसार वह चलायी गयी। कौचुङ्गके इतिवृत्त-पाठसे समझ पड़ता है, कि टौयाङ्ग-वंशके राजत्वकालमें (खृष्टीय ८म शताब्दी) भारतीय बौद्धोंने औघुर राजमें हिन्दूपञ्जिकाको प्रचार किया। सिवा इसके तंगयून, यूपियान प्रभृति प्राचीन चीना महाकोषमें जो बौद्ध शास्त्र संकलित हुए, अधिकांश भारतवासियोंके साहाय्यसे लिखित हैं।

एक बुद्ध मूर्तिके पश्चाद्भागसे गौतम-सिद्धान्तका चीना अनुवाद निकला है। इसका नाम कई-यु-एन-चन-किंग है। इस ग्रंथमें भारतीय अङ्कप्रणालीका भी संक्षिप्त विवरण है। गौतमसिद्धान्त व्यतीत खृष्टीय षष्ठ शताब्दीको मलयवासी दलूचि कर्तृक २० अध्यायोंमें ब्रह्मसिद्धान्त (लो-सेन-तिएन वेन) और पीछे गर्गसंहिता तथा अङ्कशास्त्रका चीना अनुवाद प्रस्तुत हुआ। इन अनुवादों द्वारा अनुमित होता है कि उस प्राचीन कालमें भारत सन्तान दूरदेशमें भारतीय विद्या और सभ्यता विस्तारित करने आगे बढ़े थे।

इत्-सुंग सम्राट्ने (८६० ई०) चीन-साम्राज्यमें बौद्ध-ग्रंथ प्रचारका बड़ा उद्योग किया। वह संस्कृत भाषामें मूलग्रंथादि पढ़ते और संस्कृताक्षरोंमें लिखते भी थे। उस समय बोधिरुचि नामक एक बौद्धाचार्यने जा कई एक बौद्धसूत्र अनुवादित किये। टौयांग वंशके राजत्वकालमें अमोघ (पु-कुंग) सिंहलसे चीन पहुंचे। असंग महायानने ब्रह्मा, शिव और ध्यानी बुद्ध पूजानुसारी जो योगाचार चलाया था, अमोघने भी चीनदेशमें वही मत फैलाया।

८५१ ई०को पश्चिम भारतसे सामन्त नामक कोई संन्यासी १६ परिवार सह चीनकी राजसभामें उपस्थित हुए। इसके कुछ ही बाद तौ-यु-एन नामक एक याजक भारतवर्षसे तालपत्र पर लिखित ४० संस्कृत पुस्तक चीनको ले गये। उसके पर वर्ष (९६६ ई०) सम्राट्का आदेश ले करके १५७ चीनयाजक बौद्धग्रंथ संग्रहके लिये भारत आये। ९८२ ई०को पश्चिम चीनवासी कोई याजक भारत दर्शन करके एक भारतीय राजाका पत्र ले चीन-सम्राट्के निकट पहुंचा। इस पत्रमें भौगोलिक परिचय दिया गया था। दूसरे वर्ष एक चीना संन्यासीने समुद्रकी राह आते आते कम्बोजके पास किसी भारत-वासीको देखा और इसको चीनदेश लेते गये। चीन सम्राट्के आदेशसे यह बौद्धशास्त्रके अनुवादमें प्रवृत्त हुए।

असीम कष्ट और दारुण उत्पीड़न सह करके भी चीन देशीय बौद्धोंने बुद्धदेवकी जन्मभूमिके दर्शनका अनुराग नहीं छोड़ा। चीनकी भाषामें सहस्र सहस्र बौद्ध ग्रंथ अनुवादित तो हुए, परन्तु उनकी भारतदर्शन तथा बौद्ध ग्रंथसंग्रहलिप्सा नहीं मिटी। खृष्टीय १४ शताब्दीके शेषभागको तौ बू नामक एक चीना याजकने भारत भ्रमण और बौद्ध ग्रंथ संग्रहका विषय लिपिबद्ध किया था। इनके पीछे किसी दूसरे चीना परिव्राजकका नाम नहीं लिखा। कोई कोई कष्टसहिष्णु चीना संन्यासी भारतमें बौद्धतीर्थ दर्शनको आज भी आते हैं।

बहुतसे लोग कहते, कि भारतसे चीन देशको जानेवाले सभी बौद्ध ग्रंथ अधिकांश पालीभाषामें लिखे थे। परन्तु वह बात प्रकृत जैसी नहीं देख पड़ती। आजकल भी नेपालमें जैसे संस्कृत और प्राकृत बौद्धग्रंथ प्रचलित हैं, भारतमें कोई कमी न थी। चीना परिव्राजक यही सब संस्कृत और प्राकृत ग्रंथ अपने देशको ले गये। (Rev. J. Edkin's Chinese Buddhism, p. 400-412) चीनदेशमें संस्कृत भाषाका बड़ा आदर था। आज भी चीनके अनेक प्राचीन बौद्ध देवालयोंमें देवनागर अक्षरोंकी लिपि और संस्कृत भाषाके धारणी प्रभृति मन्त्र प्रचलित हैं। प्राचीन चीना धर्मपुस्तकोंमें इसका निदर्शन मिलता है कि भारतसन्तानने वहां संस्कृत वर्णमालाके अनुकरण पर चीन भाषामें ३६ व्यञ्जन वर्ण

लगाये थे। इस समय भी तुरङ्ग बौद्ध याजक संस्कृतको देव-भाषा बोध करके विशेष सम्मान जतलाते हैं। चीनका हो कोई धर्ममत ले करके इस देशमें तन्त्रोक्त चीनाचारक्रम प्रवर्तित हुआ। रुद्रयामल, शक्तिसङ्गम प्रभृति तन्त्रमें चीनाचारका उल्लेख है। बौद्धदेखो।

चीनमें साधारण तंत्र।

१८१२ ई०को १२ फरवरीके दिन चीन साम्राज्यमें साधारणतंत्र स्थापित हुआ।

पु-उ-यि (P-u-yi) चीनके अंतिम सम्राट् थे। इनका जन्म १९०६ ई०में हुआ था और उनके चाचा कुआङ्-ह्सु जब मर गये तो १८०८ ई०में इनको सम्राट् कह कर घोषित किया गया। १९१२ ई०को १२ फर-वरीको इन्होंने इस शर्त पर सिंहासन छोड़ दिया कि जितने दिन ये जीवित रहेंगे उतने दिन पूर्ववत् उपाधि व्यवहार कर सकेंगे और राजकोषसे एक निश्चित वृत्ति पावेंगे। हां! उनके मर जाने पर उनके वंशधरको उस विषयमें कुछ अधिकार न होगा।

वर्तमान संसारमें इस पृथिवी पर चीनसाम्राज्यके समान पुरातन साम्राज्य कहीं न था परन्तु वह इतने कम समयमें सुदृढ़ प्रतिष्ठित सिंहासनको छोड़ देगा इसका किसी को स्वप्नमें भी विश्वास न था। जिन कारणोंसे चीन-साम्राज्यके राजतन्त्रका अधःपतन हुआ उनके साथ वर्तमान भारतवर्षकी अवस्थाका ऊपरी तौर पर खासा सादृश्य देखा जाता है। चीनदेश इतने दिनों तक एक विदेशी राजवंशके शासनाधीन था। इस राजवंशका प्रभाव चीन-वासियों पर क्रमशः कम हो रहा था। सामा-जिक बंधन पाश्चात्य शिक्षाके प्रभावसे धीरे धीरे शिथिल हो रहे थे। पर-राष्ट्रोंसे चीन राष्ट्रने जो कुछ ऋण लिया था और चीन सम्राटोंकी असामर्थ्य एवं विदेशी लोगोंकी अर्थलोलुपताके कारण चीनदेश पर जो क्षति पूर्णका बोझ लद चुका था उसके लिये चीनवासी विशेषतया निष्पीड़ित होते थे। विप्लववादियोंका प्रधान अड्डा था—केंटन। वहांसे वे लोग डाक्टर सन्यात्सनकी अधीनतामें मंचू--राजवंशके प्रति विद्वेष एवं शत्रुताके भावको लोगोंमें क्रमशः प्रज्वलित करते थे। वे लोग कहते फिरते थे कि मंचूराजवंशकी सहयोगितासे विदेशी राष्ट्रगण चीनदेशको आपसमें विभक्त कर ले रहे हैं। रूस और जापानकी मंचूरिया और मंगोलियाके ऊपर लोलुप-दृष्टि देख चीनवासियोंका असंतोष और भी बढ़ गया। इसके सिवाय अंगरेजोंने यूनानकी सीमान्तमें पीयेनमा देश पर दखल कर विप्लववादियोंका जोर और भी बढ़ा दिया। इधर राजपरिवारमें एकता न थी। सम्राट् छोटे लड़के थे, उनके स्थानमें जो राजशासन करते उनके साथ कीयांगहुसकी विधवा सम्राज्ञी लांग-युका राजकीय क्षमताके लिये प्रकाश्य द्वंद्व चल रहा था। उसके सिवा राजपरिवारमें बहुतसे लोग ऐसे भी थे जो सम्राट्की सामर्थ्य चूर्ण कर प्रजावर्गके प्रतिनिधियों द्वारा राज-काज चलानेके पक्षपाती थे।

इसी समय हंकोउमें विद्रोहका झंडा फहरा उठा। विद्रोहियोंने उचांगको टकसाल और हानपोङ्की शेला-खाना पर अधिकार कर लिया। राजप्रतिनिधिने देखा कि विद्रोहियोंकी सामर्थ्य दमन करनेकी उनमें कुछ भी क्षमता नहीं है तो उन्होंने प्रसिद्ध शासनकर्त्ता युआन-सिकाईको प्रधान सेनापति पद पर प्रतिष्ठित कर हुमान और ह्रुपे प्रदेश का शासक बना दिया। इस प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ मनस्वीको उन्होंने १८०८ ईस्वीमें अपमानित और पदच्युत किया था, परंतु इस विपत्तिके समयमें युआन सिकाईको छोड़ कर कोई भी उपयुक्त व्यक्ति उनकी दृष्टिमें न आया। इसी समयसे यूआन सिकाईने पिकिंगका समस्त राज्य भार ग्रहण किया।

इधर विद्रोह चारों तरफ फैल रहा था। खुले तौर पर युआन-सिकाई यद्यपि विजयी हुये तो भी विप्लववादी शून्य प्रदेश और भिन्न भिन्न विभागोंके राजकर्मचारियों-के बीच राजविद्वेष फैला रहे थे। क्रमशः १४ प्रदेश विद्रोहियोंके दलमें आ गये। सिंहासनकी इस घोर विपद्के समय अकेले युआनसिकाई ही विद्रोह दमन कर-नेमें लीन थे। परंतु विप्लववादी राजतन्त्र उठाकर साधारण तंत्र स्थापित करनेका संकल्प कर चुके थे किन्तु युआन-सिकाई कहते कि राजतन्त्र उठा देनेसे चीनमें जो अराजकता फैल जायगी उससे समस्त लोगोंका ही स्वार्थ नष्ट होगा और बहुत वर्षों तक भी शान्ति न आवेगी; उनकी यह भविष्य वाणी कहां तक सच निकली इस

बातको जो लोग चीनके वर्तमान भाग्यविपर्ययका अनुशीलन करते हैं वे ठीक २ बतलावेंगे।

१८११ ई०के दिसम्बर महीनेकी ११ तारीखको विद्रोहियोंके नेताओंके साथ हंकौउमें राजप्रतिनिधि टाङ्ग-सुयिका सन्धि कर लेनेके लिये वार्तालाप होने लगा। प्रजातान्त्रिक कार्यनिर्वाहकसमितिको यथार्थ आलोचना करनेके लिये शंघाईमें स्थान निश्चित किया गया। २५ दिसम्बर १८११ ई०को डा० सन्यात्सेन इङ्गलैंडसे शंघाई-से पहुंचे। उसके एक सप्ताहबाद नानकीनमें सम्मिलित प्रादेशिक प्रतिनिधियोंकी एक सभाने उनको चीनराष्ट्र-तन्त्रका प्रथम सभापति निर्धारित किया। १२ फरवरीको राजप्रासादके समीप एक बम फटा था। अतएव सम्राट्ने आंतकके भयसे सिंहासन छोड़ दिया। जिस विज्ञापनमें सम्राट्के शासनत्यागकी घोषणा की गई उसीमें यूआन-सिकाईको नूतन राष्ट्र-शासनविधि प्रणयन करनेकी समस्त सामर्थ्य प्रदान की गई। १४ फरवरीको यूआन-सिकाईके हाथ डा० सन्यातसेनने अपने नवीन पदका समस्त उत्तर-दायित्व समर्पण कर दिया। नानकिंनकी समितिने इस कार्यको अनुमोदन की। इसके बाद प्रेसीडेंटने अपना दायित्वपूर्ण कार्य भार ग्रहण किया। १८१३ ई०में लियु-उन्हांग (Li-Yuon-Hang) सहकारी प्रेसीडेट पद पर निर्वाचित किये गये। अप्रेल मासकी २ तारीखका साधारणतन्त्रकी शासन-समिति नानकिंगसे पिकिंगमें उठा दी गई। यू-आन-सिकाईके मर जाने पर लि यूआन् ह्वांग १८१६ ई० सन्के जून मासकी ७ तारीखको सभापति पद पर नियुक्त किये गये। इसी साधारणतन्त्रके समयसे चारो तरफ अराजकता स्थापित हो गई है। प्रजाके प्रतिनिधियों द्वारा शासनकार्य संचालनका नियम ठीक तरह नहीं रक्खा जा रहा है। प्रादेशिक शासनकर्ता स्वयं प्रधान होनेसे स्वच्छंद काम करते हैं निर्वाचन प्रथा कार्यकारी न होनेके कारण सभापतिकी आज्ञा ही कानून मानी जाती है।

दक्षिण चीनमें एक स्वतंत्र शासन प्रवर्तित हो गया है। साधारणतंत्रका दल ही यहां सर्वाधिकारी है। जिस समय लि-यू यान ह्वांग सभापति हुये उसी समय इन्होंने इस स्वतंत्रशासन उठा देनेका विज्ञापन प्रकाशित किया। साधारणतांत्रिकोंने तब केंटनमें १८२१ ई०को डा० सन्यात्सेनको सभापति पद पर नियुक्त किया किन्तु पिकिंगके सेनापति चेंचियानसिंने १८२२ सन्में उनके सैन्यदलको पराजित कर दिया। इसलिये वे अङ्गरेजोंके जहाजका आश्रय ले चीन देश छोड़ चले गये।

चीन (सं० पु०) चीनदेश विशेषोऽभिजनोऽस्य, चीन-अण् तस्य लुक्। १ चीनदेशवासी, चीनके वाशिन्दे। यह शब्द नित्य बहुवचनान्त है। तस्य राजा। २ चीनदेश-का राजा। (भारत २।२६।१८)

मनुके मतमें चीनदेशीय क्षत्रिय नृपति सदाचारविहीन और वेदवर्जित हो करके वृषल हो गये हैं। (मनु १० ४०) ३ चीनदेशोत्पन्न वस्त्र, चीना कपड़ा। (शब्द)

कोई कोई कहते हैं, कि पूर्वकालको चीन देशमें ही सबसे अच्छा मोटा कपड़ा बनता था। उसीसे हमारे देशके प्राचीन कवियोंने उसको चीनांशुक वा चीनवस्त्र लिखा है। ४ व्रीहिविशेष, एक धान। इसको चलती बोलीमें चीनिया कहते हैं। धान्य देखो। ५ तन्तु, सूत। ६ मृगविशेष। ७ पताका, झण्डी। ८ सीसक, सीसा। ९ आचारविशेष। तन्त्रके मतमें चीनवासियोंको यही आचार प्रतिपालन करना चाहिये। १० कर्पूर, कपूर।

चीन (जाति) पार्वत्य जातिविशेष। स्थानभेदसे ये किन् नामसे भी विख्यात हैं। पूर्व वङ्गके शैलभूममें, चीन-देशके पश्चिमांशमें तथा आसाम् और कम्बोजके प्रान्त-भागमें इस जातिका वास है। इस जातिके लोग हिमा-लयके उत्तर-पश्चिमांशसे ले कर निग्रेस अन्तरीप तक प्रायः सब स्थानोंमें फैल गये हैं।

उत्तराञ्चलमें यह जाति कुछ अधिक उग्र और असभ्य है, किन्तु आराकान शैलमालाके पश्चिम निम्न भूमिमें जो चीन बसते उनमेंसे बहुतसे सभ्य हैं। वृटिशके अधि-कार होने पर ये प्रायः शिष्ट शान्त और निरीह हो गये हैं। इन लोगोंमें किसी प्रकारकी लिखित भाषा अथवा निर्दिष्ट शासनप्रणाली नहीं है। अपने अपने परिवारके पिता ही इनके सर्वमय कर्त्ता हैं। ये भ्रमणशील अथवा जहां जाते वहां अपने परिवारको साथ ही लिये फिरते हैं। शोकार और तोङ्ग नामक कृषि ही इनको प्रधान उपजीविका है। गवर्मेंटके अधीन इनमें बहुतसे स्थायी

हो गये हैं और धान आदिकी खेती करते हैं।

कर्नल ह्युल साहबने इस जातिको कुकी नागादिके सदृश इन्दु-चीन वंशीयके जैसा स्थिर किया है। आराकानके चीनोंका कहना है कि ये आराकानो और ब्रह्मोंको एक जातिके हैं। कालचक्रसे ये गिरिजंगलमें छोड़ दिये गये तथा जातीय सैनिक धर्म परित्याग कर वर्तमान अवस्थाको प्राप्त हुए हैं। फिर किसी किसीके मतसे ये करेन जातिके एक अंगीभुक्त हैं। जो कुछ हो ये निर्जन वनभूमिमें प्रकृतिकी शिशु सरलताकी प्रतिमूर्त्तिके सदृश मालूम पड़ते हैं। ये सहजमें कोई पापकार्य नहीं करना चाहते। एकबार यदि कोई किसी तरहका दोष करता है, तो ये उसे निर्दय निष्ठुर हो जानसे मार डालनेके लिये तैयार हो जाते हैं।

चीन ठीक ब्रह्मवासी जैसे दीखते हैं। वे सिर्फ कमरमें एक खंड कपड़ा लपेटे रहते हैं, किन्तु जब वे जातीय पोशाक छोड़ कर किसी ब्रह्मके जैसा पहनावा पहनते तो वे चीनसे दीख नहीं पड़ते हैं, सिर्फ शरीरके गोदनेके चिह्नसे ही पहचाने जा सकते हैं।

कोई कोई ब्रह्म भाषामें थोड़ा बहुत बोल सकता है। उनसे धर्मकी कथा पूछने पर वे कहते हैं कि वे एक मात्र भगवान् गौतमके उपासक हैं। वे जगत्के सृष्टिकर्त्ता और विधाता एक मात्र ईश्वरको स्वीकार करते हैं, किन्तु वे उनकी पूजा कभी नहीं करते। ये खाङ् नामक शराब दे कर "नाट" नामके उपदेवोंकी पूजा करते हैं। उन लोगोंका ख्याल है कि नाट ही सब प्रकारके अनिष्टोंके मूल हैं, खाङ्पानेसे वे संतुष्ट हो जाते हैं।

चीन मात्र ही खाङ् पीना बहुत पसन्द करते हैं। वे सब उत्सवोंमें खाङ्का व्यवहार करते हैं। किन्तु अधिक खाङ् पीनेसे मतवाले हो जाते हैं।

इनकी कुमारियोंके ऊपर भाइयोंका ही अधिकार रहता है। भाईके इच्छानुसार कुमारीका विवाह होता है। इस विषयमें पितामाताके बोलनेका कोई हक नहीं है। कन्याके जन्म मात्रसे ही उसका भाई रक्षक बना रहता है। भाईके नहीं होने पर उसके पितेरे या फुफेरे भाईको यह भार सौंपा जाता है। विवाहके समय वरको कन्याके भाईकी सलाह लेनी पड़ती है। विवाहके बाद भी वर सालेके प्रति सम्मान दिखानेके लिये वाध्य है। जब किसी समय कोई श्वशुरालको अपने सालेसे मिलने जाता है, तो सालेको भेंट देनेके लिए उसे 'खाङ्' साथ ले जानी पड़ती है।

किसीकी मृत्यु होने पर बड़ी धूमधामसे ये शवका दाह करनेके लिए ले जाते हैं। अवस्थानुसार ये आत्मीय कुटुम्बके भोजके लिये भैंसा, बैल, सूअर और अनेक तरहके पक्षीको मारते हैं। शवको ले जानेके समय उसके पैरमें मुरगीका एक पैर बाँध देते हैं। बाद उसको झोलीमें रख दाहकर्मके लिये ले जाते हैं। दाहके बाद मृतकी हड्डियोंको अपने घर लाते और उन्हें खाङ् शराबसे धो तथा हल्दी लगा कर एक वर्ष तक एक बरतनमें रख छोड़ते हैं। उसके बाद साधारण समाधि-स्थानमें ला कर उन हड्डियोंको गाड़ देते हैं।

वयःप्राप्त होनेके पहले ही चीनकी स्त्रियां अपने मुखको काले गोदनेसे गोदा कर ढक लेती हैं। कोई कहता है कि गोदने गोदाने पर वे इस तरहकी कुरूपा दीखती हैं कि किसी दूसरी जातिके पुरुष उन्हें पसन्द नहीं करते। फिर कोई कहता है यदि अन्य जातिके पुरुष इसे अपने साथ रखें तो यह गोदनेसे शीघ्र ही पहचानी जा सकती हैं। चीन जाति मात्रमें ही गोदना गोदानेकी प्रथा प्रचलित है। वृटिशका अधिकार होने तथा उन लोगोंमें सभ्यताकी कुछ झलक हो जानेसे गोदनेका व्यवहार कुछ कम होता जा रहा है। ब्रह्मदेश और आराकानमें लाखसे कम चीन नहीं हैं।

चीनक (सं० पु०) चीन स्वार्थे-कन्। १ धान्यविशेष, चीना नामका धान। इसका पर्याय काककङ्गु है।

"प्रियङ्गवोऽवदाराश्च कोरदूषाः स चीनकाः।" (विष्णुपु० १।६।२१)

इसका गुण—शोषक, वायुवृद्धिकर, पित्तश्लेष्मनाशक और रूक्ष है। (राजवल्लभ) २ कङ्गुनी, कंगनी नामक अन्न। (त्रि०) ३ कर्पूर, चीनी कपूर। ४ चीनदेशवासी।

"मुक्तानक्षांश्च वाहांश्च निषधान् पुण्ड्रचीनकान्।" (भारत० ८।८।१९)

५ चेना नामक अन्न।

चीनकपूर (सं० पु०) चीननामकः कर्पूरः, मध्यपदलो०।

कर्पूरविशेष, चीनी कपूर। इसका पर्याय—चीनक, कृत्रिम, धवल, पटु, मेघसार, तुषार, हीपकर्पूरज है। इसका गुण—कटु, तिक्त, उष्ण, ईषत् शीतल कफ, कण्ठदोष और कृमिनाशक, मेध्य एवं पवित्र है।

(राजनि०)

चीनज (सं० क्लो०) चीने जायते चीन-जन ड। १ तीक्ष्ण, लौह, एक तरहका इस्पात, लोहा।

चीनतातार—चीन-सम्राट्के शासनाधीन तुर्किस्तानका पूर्वभाग। इसके तीन ओर ऊंचे ऊंचे पर्वत हैं, सिर्फ पूर्वकी ओर समतल क्षेत्र है जो गोबि नामक मरुभूमि तक फैला हुआ है। उत्तरभागमें थियान्-शान् पर्वत इस देशको जङ्गेरियासे तथा दक्षिणमें काराकोरम और कियुनलुन् पर्वत इसको भारतवर्षसे पृथक् करता है। पर्वतकी उपत्यकाकी भूमि सब जगह कीचड़मय है, किन्तु मध्य भाग बालूसे भरी है। यहां वृष्टि कम पड़ती है, इसी कारण हवा बहुत प्रखर रहती है। यहांका जलवायु स्वास्थ्यकर और नातिशीतोष्ण है। इसमें इयरकन्द, काशघर, खोतन, आक्सु, इयाङ्गिसर तथा उस्तातान नामके क. शहर लगते हैं। खोतन नगरमें पहले भारतवर्षके साथ वाणिज्य चलता था, अभी भी वहांसे ऊन, बनात, चमड़े और चीनीकी आमदनी होती है। यहांकी खानोंमें सोना, तांबा, नमक, गन्धक और काले रंगके संगमरमर पत्थर मिलते हैं। अधिवासी विशेष कर मुसलमान हैं। १९वीं शताब्दीके अन्तमें रूसने इसके इलिप्रदेश और कुन्दजा शहर जीत कर अपना अधिकार जमा रक्खा है। विशेष कर तुर्क और तातार जातिका आवास स्थान होनेके कारण इस देशका नाम तुर्किस्तान या तातार पड़ा है। जो पश्चिमकी उच्च भूमिमें वास करते हैं, वे खिरघिज-तातारके नामसे मशहूर है। ये सदा एक स्थानमें नहीं बसते हैं। तातार देखो।

चीनपट्ट (सं० पु०) चीन देशके वस्त्र।

चीनपति (सं० पु०) १ चीन देशके राजा। जनपदविशेष, एक देशका नाम।

चीनपत्तन—मन्द्राजका दूसरा नाम। १६३८ ई०के मार्च मासके प्रथम दिनमें अङ्गरेजोंने यहां एक किला बनानेके लिये विजयनगरके राजासे अनुमति ली थी। उस आदेश पत्रमें लिखा था कि यहां जो किला या नगर बनाया जायगा वह श्रीरङ्गराय-पत्तन नामसे अभिहित होगा। किन्तु स्थानीय शासनकर्त्ताने फ्रान्सिड साहबको लिख भेजा कि यह स्थान उनके पिता चीन-अप्पा नामसे सुप्रसिद्ध होगा। इसी कारण मन्द्राज प्रदेशवासी इसे चीनापत्तन कहा करते हैं। मन्द्राज देखो।

चीनपिष्ट (सं० क्लो०) चीनस्य सीसकस्य पिष्टं, ६-तत्। १ सिन्दूरविशेष, चीनका सेंदूर। चीनं पिष्टमिव। २ सीसक, सीसा, रांगा।

चीनराजपुत्र (सं० पु०) १ राजपुत्र, चीनदेशके राजाका लड़का। २ नासपातीका पेड़।

चीनवङ्ग (सं० क्लो०) चीनभवं वङ्गं, मध्यपदलो०। सीसक, सीसा नामक धातु।

चीना (हिं० पु०) १ चीनदेशवासी। २ धान्यविशेष, चीना नामका धान।

चीनांशुक (सं० क्लो०) चीनोत्पन्नमंशुकं कर्मधा०। पट्टवस्त्रविशेष, चीन देशसे आनेवाला एक प्रकारका कपड़ा। २ चीन देशसे आनेवाली एक प्रकारकी लाल बनात।

"चीनांशुकमिव केतोः प्रतिवातं नीयमानस्य" (शकु० १ अ०)

चीनाक (सं० पु०) चीनं चीनाकारमकति अक-अण्। कर्पूरविशेष, चीनी कपूर।

"चीनाकसंज्ञः कर्पूरः कफक्षयकरः स्मृतः।" (भावप्रकाश)

इसका गुण—कफ, कुष्ठ, कृमि, विषनाशक तथा तिक्तरसयुक्त है।

चीनाकर्कटी (सं० स्त्री०) चीनमिव स्वादुः कर्कटी, कर्मधा०। पृषोदरादित्वात् दीर्घः। चित्रकूट प्रदेशप्रसिद्ध कर्कटीविशेष, एक प्रकारकी छोटी ककड़ी। इसका पर्याय—राजकर्कटी, सुदीर्घा, राजफला, बाला, कुल-कर्कटी है। इसका गुण—रुचिकर, शीतल, पित्त, दाह और शोषनाशक, मधुर और तृप्तिकर है। (राजनि०)

चीनाचन्दन—पक्षिविशेष, एक प्रकारकी चिड़िया जो दक्षिण-भारतमें पाई जाती है। इसका शरीर पीला होता है और ऊपरमें काली धारियां होती हैं। इसकी बोली बहुत मीठी होती है इसीलिए लोग इसे पालते हैं।

चीनाबादाम (हिं० पु०) मूंगफली। छिलका अलग कर इसके भीतरका भाग खाया जाता है।

चीनामट्टी (हिं० स्त्री०) चीन देशकी मट्टी। चीन भाषामें इसे "केओलिन्" कहते हैं। इस मिट्टीमें फीसदी ४६.४ भाग, सिलिकेट अक्साइड, ३८.६८ भाग, अलुमीनाम अक्साइड और १३.८२ भाग पानी रहता है। चीन देशके 'किङ्-भि-चीन्' पर्वत पर यह मिट्टी विशुद्ध अवस्थामें पाई जाती है, इसीलिए इसे 'केओलिन्' अर्थात् ऊंचा पहाड़ कहते हैं। नाना तरहकी वनस्पतियों और खनिज धातुओंकी मिलावटसे इसके गुणोंमें तारतम्य की जाती है। वर्त्तन बनानेके लिए विशुद्ध चीनामट्टी ही प्रशस्त है। हिन्दू लोग मिट्टीके वर्तनको एक बारके सिवा दुबारा काममें नहीं लाते थे, इसीलिए भारतवर्षके कुम्हार चिकनी और मुलायम मिट्टीके वर्तन नहीं बनाते थे। फिलहाल मध्यप्रदेश और बाँकुड़ा जिलेमें चीना मट्टीकी भाँतिकी एक तरहकी मट्टी निकली है, रानी-गञ्जकी वारन् एण्ड कम्पनी उक्त मट्टीसे नाना प्रकारकी सामग्री बनाती है।

चीनि—पञ्जाबकी बशहर जमींदारीके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० ३१° ३१´ उ० और देशा० ७८° १६´ पू०के मध्य एक ऊंचे पहाड़की दक्षिणी उपत्यकामें शतद्रु नदीसे प्रायः १ मील दूरी पर अवस्थित है। नदीगर्भसे इसकी ऊँचाई प्रायः १५०० फुट तथा समुद्रपृष्ठसे ६०५८ फुट है। पर्वतसे निकली हुई बहुतसी नदियां चीनवासियोंको जल देती हैं। इसके चारों ओर अंगूरके जंगल हैं। अंगूर ही अधिवासियोंका प्रधान भोजन है। अंगूरकी रक्षाके लिये वे बड़े बड़े कुत्तेको रखते। भालू या अंगुर खानेवाले दूसरे जंगली जानवरको मार भगाते हैं। यहां लाड डलहौसीका एक सुन्दर शैलनिवास था।

चीनिया (देश०) चीनदेशका, चीन देश सम्बन्धी।

चीनी (हिं० स्त्री०) मधुर आस्वादविशिष्ट पदार्थविशेष, सफेद रंगका एक मीठा पदार्थ जो चूर्ण किया हुआ होता है, शक्कर। अति प्राचीनकालसे भारतवर्षमें चीनीका व्यवहार होता आया है। रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थोंमें इसके बहुतसे प्रमाण पाये जाते हैं। (रामायण २।१००।६७, भारत १२।२८४।४४। सुश्रुत १।४५ अ०) संस्कृतके शर्करा, खण्ड, गुड़ इत्यादि शब्दोंसे ही—अरबी कण्ड्, मलय गुल्, पारसी शक्कर आदि शर्करावाचक शब्दोंकी उत्पत्ति हुई है; इसमें कुछ सन्देह नहीं। इसके सिवा गुड़, शर्करा, गुड़ोद्भवा, सिता, मिष्ट, इक्षुसार, बालुका-त्मिका इत्यादि गुड़के संस्कृत पर्याय देखनेमें आते हैं। लाटिन शक्करम्, फरासी सुकार और अङ्गरेजी सुगार शब्दसे संस्कृत शर्करा शब्दके साथ समान सौसादृश्य पाया जाता है। संस्कृत ग्रन्थोंमें खण्डमोदक, खण्ड, मत्स्यिक, शर्करा, उपला, शङ्कोपला, शर्करा, सिताखण्ड, दृढ़गात्रिका इत्यादि चीनीके संस्कृत नाम देखनेमें आते हैं। इससे अनुमान किया जाता है कि, भारतवर्षसे ही चीनीका व्यवहार चारों तरफसे फैला है। पहले चीनी भारतीय शर्करा नामसे प्रसिद्ध थी, बादमें नाना देशोंमें जा कर उसका नाम अपभ्रंश हो गया। चरक, सुश्रुत आदि प्राचीन ग्रन्थकारों-की पुस्तकोंमें जगह जगह खण्ड, गुड़ आदिका उल्लेख, मिलता है। इससे भी प्राचीन मनुप्रणीत संहितामें भी शर्कराका उल्लेख है। पथश्रान्त गरीब द्विजपथिक यदि पथ पार्श्ववर्त्ती ईखके खेतसे दो ईख ले तो वह दण्डनीय न होगा—ऐसा भी मनुने निर्द्देश किया है। ऐसा विधान भी कि, जो गुड़ चोरी करता है, वह दूसरे जन्ममें चिम-गादड़ होता है। मनुसंहिताके दशवें अध्यायमें शर्करा, और मिष्टान्नका उल्लेख है। इसलिए मनुके समयमें भी शर्करा, गुड़ आदिका व्यवहार और ईखकी खेती होती थी; इसमें सन्देह नहीं।

अति प्राचीनकालमें भी यूरोपमें चीनीका व्यवहार चालू था, इसके बहुतसे दृष्टान्त पाये जाते हैं। हेरोडो-टस, थिअफ्राष्टस, सेवेका, प्लिनी आदि प्राचीन लेखकोंकी पुस्तकोंमें चीनीका उल्लेख पाया जाता है। ई०की सातवीं शताब्दीमें पलस् इजिनेटाने अति प्राचीनकालके ग्रन्थकार आर्केजिनिसके अनुवर्त्ती हो—'देखनेमें साधारण नमक-की भाँतिका; किन्तु खानेमें मधु जैसा मीठा, भारतीय लवण"—इस तरहसे जिसका उल्लेख किया है, वह चीनीका ही वर्णन है। इससे यही मालूम होता है कि भारतसे ही चीनीकी उत्पत्ति हुई है।

भारतवर्षमें बहुत जगह बहुतसे ऐसे गाँव हैं, जिनके नामके साथ शर्करा, गुण्ड, खण्ड, खर्जर इत्यादि शब्दोंसे

उच्चारणगत विशेष सादृश्य है। ऐसा मालूम होता है कि गुड़, शर्करा आदिकी उत्पत्तिके अनुसार उनके वैसे नाम पड़े हैं। फ्लूकिगर (Fluckiger) और हानबारि (Hanbary) साहबका अनुमान है कि, बङ्गालका गौड़ नाम ऐसे ही पड़ा था। वास्तवमें पहिले बङ्गालमें ईखकी खेती बहुत ज्यादा होती थी इसमें सन्देह नहीं और भी बहुतोंका अनुमान है कि भारतवर्षमें पहिले पहल बङ्गालमें ही ईखकी खेती होती थी। बादमें फिर वहांसे क्रमशः उत्तर-पश्चिमप्रदेश, पञ्जाब, दाक्षिणात्य आदिमें फैली थी। ई०की नवम शताब्दीमें पारस्योपसागरके किनारे ईखकी खेती होती थी इसका प्रमाण मिलता है। ईसाके धर्मयोद्धाओंने (Crusaders) सिरीय प्रदेशमें ईखकी खेती होती देखी थी। उस समयके एक इतिहास-लेखकने लिखा है "धर्म्म-योद्धाओंने त्रिपली-देशके खेतोंमें सुक्रा (Sukra) नामके बहुतसे मधुयुक्त तृण देखे थे।" ये मधुयुक्त तृण ईख ही थे; इसमें तो सन्देह ही क्या है? सारासिनोंने यूरोपमें पहिले-पहल ईखकी खेती की थी। १४वीं शताब्दीमें यूरोपमें चीनीका प्रचलन था। १३२९ ई०में स्काटलण्डमें भी एक औन्स खरी चांदीके बदले एक पौण्ड साफ चीनी मिलती थी। ग्रीकोंको यह बात नहीं मालूम थी कि चीनीका आविष्कार सबसे पहिले भारतवर्षमें ही हुआ है और न रोमक ही इस बातको जानते थे। भारतवर्षसे अरब ग्रीस, आदि देशोंमें चीनी पहुंचनेकी बात अरबके प्राचीन ग्रन्थकारोंके ग्रन्थोंमें पाई जाती है।

१३०६ ई०में सुलतानके राज्यमें भी साइप्रस, रोडस, सिसिली आदि ईसाधर्मके माननेवाले राजाके अधीनस्थ देशोंमें पहिले पहल चीनी बनानेकी प्रणाली प्रचलित हुई थी। इटाली, स्पेन और भूमध्यसागरस्थ द्वीपमें रहनेवालोंने भी चीनी बनाना सीख लिया था। १४२० ई०में पोर्तुगीजके लोगोंने सिसिली द्वीपसे मेदिरामें ईख मंगाये थे। कुछ भी हो, स्पेन और पोर्तगीजसे सबसे पहले भारत और चीनदेशीय चीनी बनानेकी तरकीब यूरोपमें प्रचलित हुई थी; इसमें संशय नहीं। कोई कोई कहते हैं कि, १६२७ ई०में बार्बाडोजमें अङ्गरेजोंका चीनीका कारखाना खोला था और १६७६ ई०में उसने खूब ही उन्नति कर ली थी। अङ्गरेजोंके इस कारखानेके खुलनेके बाद ही पोर्तगीजोंने यूरोपमें ब्रेजिलदेशकी चीनीका खूब प्रचार किया था।

सिर्फ ईख और खजूरसे ही चीनी पैदा होती हो, ऐसा नहीं; बल्कि बहुतसे पेड़ और पौधोंसे भी थोड़ी बहुत चीनी बना करती है, नीचे उन पेड़ और पौधोंके नाम लिखे जाते हैं।

ईख, खजूर, ताड़, नारियल, सागू, लाल पालक शाक (Beet sugar) मापल (Sugar Maple) और नीम। इनके सिवा मका, धान (जिससे लावा होता है) काशीका मूल इत्यादिके रससे भी चीनी बन सकती है। नली बनाते समय जब नीलको सड़ाते हैं, तब नीलमें सारके साथ नीलकी चीनी भी पानीमें गल जाती है। चीनीके रहनेसे शीघ्र ही उक्त मिश्र-द्रव्यमें अम्लरसक (Fermentation) होने लगता है और उससे नील-वर्णका नीलसार श्वेतवर्णके नीलमें परिणत हो जाता है इस सफेद नीलको फिरसे नीला बनानेमें बहुत खर्च और परिश्रम करना पड़ता है; किन्तु हम नीलसे निकली हुई चीनीको लोग अकर्मण्य समझ फेंक देते हैं। कहवाकी खेती करनेवाले सिर्फ कहवाके बीजहीको ग्रहण करते हैं, फलके सारभागके साथ जो चीनी रहती है; उसे छोड़ देते हैं। सनसे भी एक तरहकी चीनी और शराब निकाली जा सकती है। मधुकपुष्प अर्थात् मौलसरीके फूलमें भी चीनी रहती है। जहां जहां मौलसरी ज्यादा उत्पन्न होती है, वहां वहां उसकी शराब भी बनती है। परन्तु आज तक कोई भी रासायनिक मौलसरीसे दानेदार चीनी नहीं बना सके हैं।

नाना प्रकारके फल-फूलोंसे चीनी निकल सकती है। हम जो कुछ मीठी चीज खाते हैं, उन सबमें थोड़ा बहुत चीनीका अंश रहता है। मधु भी चीनीके पर्यायके सिवा दूसरी कोई चीज नहीं है, मधुमक्खी फूल आदिके मीठे रसको खींच कर ही मधुरूपमें एकत्र करती हैं। इसलिए मधु परोक्षतया द्रवकी चीनीका भेद मात्र है। अङ्गूर, सपौका, सपड़ी (अमरूद), जामुन, अनरस, नारङ्गी, आदि मीठे फलोंमें चीनी रहनेके कारण उनसे उत्तम मनोहर खुशबूदार आसव (मधु) बनती है

आर्य ऋषियोंकी सोमसुरा शायद ऐसी ही किसी वस्तु द्वारा सुवासित की जाती थी।

घुंघँची या गन्नाकी जड़में तथा मुलैठी (जेठीमधु) की जड़में भी कुछ चीनीका अंश रहता है इसी कारण वह मीठी लगती है। दारचीनीमें भी चीनी है; किन्तु इनका परिमाण थोड़ा है और ये चीजें भी ज्यादा नहीं मिलतीं। अतएव उक्त चीनी विशेष कार्यकारी नहीं होती।

सकरकन्द, आलू इत्यादिके भीतरके गूदेसे भी चीनी बनती है। इस समय बिनौले और ईखके रससे भी उत्कृष्ट चीनी बनती है।

काष्ठचूर्ण और फटे पुराने वस्त्रों द्वारा भी नेपोलियनके उद्यमसे चीनी बनी थी। इसकी प्रक्रिया अत्यन्त कष्टसाध्य है।

इन सब पदार्थोंसे जो चीनी बनती है, रासायनिकोंने उसे चार श्रेणियोंमें विभक्त की है,—१ इक्षुज शर्करा, २ मधुज शर्करा, ३ फलज शर्करा और ४ दुग्धज शर्करा। इनका स्वाद भी न्यारा न्यारा होता है। इक्षुज शर्करा रसनाप्रिय और थोड़े परिश्रमसे बनती है इसलिए इसका प्रचार भी खूब है। इक्षु, पालक शाककी जड़, खजूर इत्यादिके रससे जो चीनी बनती है, उसे इक्षुज, मधु और ताजे फलोंसे उत्पन्न चीनीको मधुज, फलोंके रस, अङ्गूर और अन्यान्य सूखे फलोंसे उत्पन्न चीनीको फलज, तथा जानवरोंके दूधसे उत्पन्न चीनीको दुग्धज कहते हैं। कोई कोई उक्त चीनीको दो भागोंमें विभक्त कहते हैं,—१ इक्षुज और २ फलज। यूरोपीय रासायनिक मतसे—इक्षुज चीनीमें अङ्गार १२, हाइड्रोजन ११ और अक्सिजन ११ भाग रहता है. मधुज चीनीमें अ० १२, हाइड्रो० १२ और अक्सि० १२ भाग. फलज चीनीमें अ० १२, हाइ० १२, अक्सि० १२ और जल २ भाग, तथा दुग्धज चीनीमें अ० २४, हाइड्रो० २४ और अ० २४ भाग रहता है। जो चीनी इक्षुज नामसे प्रसिद्ध है, वह वर्णविहीन, गन्धशून्य, मीठी, अस्वच्छ, किन्तु क्षणभङ्गुर होती है। साधारण साफ चीनीकी भाँति जल्दी जल्दी दानेदार बनानेसे, इसके दाने छोटे २ होते हैं, किन्तु ज्यादा आँचसे गला कर धीरे धीरे ठण्ढी करनेसे दाने मिश्री जैसे कुछ बड़े बड़े हो सकते हैं। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १६ है। खुली रखने पर भी इसका कुछ परिवर्त्तन नहीं होता। सिर्फ आँचसे इसमेंके पानीके अंश जल जाते हैं। एकतृतीयांश परिमित शीतल और वह किसी भी परिमाणकी क्यों न हो, गरम पानीमें जल जाती है। सुरासारमें भी यह गल जाती है, पर पानी जैसी नहीं। फारेनहिटके तापमान यन्त्रको ३२०० डिग्री गरम होनेसे चीनी खूब मुलायम, वर्णहीन, तरल पदार्थके समान हो जाती है, तथा वह तरल पदार्थ अकस्मात् शीतल होनेसे उसका अत्यन्त स्वच्छ ढेला बन जाता है, किन्तु कुछ देर पीछे ठण्ढी करनेसे अस्वच्छ हो जाती है। ज्यादा गरम करनेसे इसमेंसे अङ्गारके सिवा दूसरे अंश भापके साथ उड़ जाते हैं। उक्त चीनीके दो ढेलों (मिश्री) को अन्धेरेमें ढँकनेसे उसमेंसे आलोक निकलता है। इक्षुज शर्करा पुष्टिकर होती है, इससे खानेकी चीजें जितनी मीठी होती हैं, दूसरी चीनीसे वैसी नहीं हो सकतीं।

पेशाबके दोषोंको मिटनेके लिए जितने उपाय निकाले गये हैं उनमेंसे फलज चीनी ही श्रेष्ठ है। बहुमूत्रवाले रोगीके पेशाबके साथ उक्त प्रकारकी चीनी निकलती है। इसलिए उस समय फलज चीनी खिलानेसे फायदा पड़ता है। फारनहिटकी १४०० डिग्री गरम करनेसे यह नरम हो जाती है और २१२० डिग्रीकी गरमीसे गल जाती है, परन्तु इससे ज्यादा गरम करनेसे वह (Caramel) क्षाररूपमें परिणत हो जाती है। इक्षुज चीनी पानीमें जितनी जल्दी गल सकती है, दूसरी चीनी उतनी जल्दी नहीं गल सकती और गल भी जाय तो वह उस अवस्थामें इक्षुज चीनीकी तरह साफ और मीठी नहीं रहती। गरम सुरासारमें यह गल जाती है। परन्तु जरा भी ठण्ढा हो जानेसे चीनीके दाने बँध जाते हैं। मधुज चीनी तीक्ष्ण सुरासारमें तरल होती है।

दुग्धज शर्करा साधारणतः वर्णहीन होती है। यह प्रायः ६ गुने ठण्ढे अथवा ढाई गुने गरम पानीमें गलती है। इसका स्वाद वैसा मीठा नहीं होता, जैसा कि इक्षुजका होता है। यह हवामें खुली हुई पड़ी रहे तो परिवर्तित या सुरासारमें द्रवीभूत नहीं होती। इसको खट्टेके साथ मिला कर गरम करनेसे यह धीरे धीरे फलज चीनीमें

परिणत हो जाती है। जन्तुओंका दूध फट जाने पर उसका पानी उबलते उबलते दानोंमें परिणत हो जानेसे जो चीनी बनती है, उसको दुग्धज चीनी कहते हैं। ऊपर कही हुई चार प्रकारकी चीनीके सिवा और भी कई तरहकी चीनी नवीन आविष्कृत हुई हैं, परन्तु वे सब इक्षुज जैसी ही हैं। थोड़े ही दिन हुये हांगि कोयले से भी एक तरहकी चीनी निकाली गई है। कोई कोई रासायनिक कहते हैं कि, उससे ज्यादा मिठास और किसी भी चीजमें नहीं है।

खजूरके पेड़के रससे भी प्रतिवर्ष बहुत गुड़, चीनी आदि उत्पन्न होता है। बङ्गालमें सब जगह खजूरका रस संग्रहीत और उससे गुड़ बनाया जाता है। ६-७ वर्षके बाद खजूरके पेड़के ऊपरकी तरफका हिस्सा (डालियोंसे नीचे) छील दिया जाता है और उसमें क्यारियांसी बना कर बांस या टीरकी पत्ती लगा दी जाती हैं, जिससे उसका रस एकत्र हो कर गिरे। फिर शामको उसके नीचे मिट्टीके घड़े बाँध रखते हैं और सबेरे तक उसमें रस भर जाने पर खोल लेते हैं। इसी प्रकार तीन दिन तक बांधते खोलते रहते हैं और तीन दिन वृक्षको विश्राम देते हैं। साधारणत: अगहनसे लगा कर फाल्गुन तक रस संग्रह किया जाता है। इसमेंसे पौषके महीने अर्थात् अत्यन्त जाड़े के दिनोंमें ही ज्यादा रस निकलता है। एक पूरी उम्रके पेड़से अर्थात् १६-१७ वर्षके पुराने वृक्षसे लगभग रोजीना ८ सेर रस निकल सकता है। पहिले पहल कुछ साल तक कम और ५-७ वर्ष तक खूब ज्यादा रस निकलता है, बादमें फिर रस घटने लगता है। रस निकल जानेसे वृक्षकी उम्र बहुत कुछ घट जाती है। इस पर भी अगर अनियमित रूपसे रस संग्रह किया जाय तो और भी उम्र कम हो जाती है। कोई कोई ३-४ वर्षके पेड़मेंसे ही रस निकालना शुरू कर देते हैं। इससे वह पेड़ शीघ्र ही खम हो जाता है और बढ़ने पर भी उसमें-से ज्यादा रस नहीं निकलता, तथा शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। बादल या कुहराके दिन रस नहीं निकालना चाहिये, अन्यथा रस ठीक नहीं होता और पेड़ सड़ जाता है। पहिली साल जिस तरफ छील कर रस निकाला जाता है, दूसरी साल उससे उलटी तरफ छीलना चाहिये। इस तरह खजूरके पेड़में प्रति वर्ष एक दाग पड़ जाता है, इन दागोंको गिन कर पेड़की उम्रका अनुमान कर लिया जाता है। फिर उस रससे इस प्रकार गुड़ या चीनी बनाई जाती है। सब पेड़ोंका रस इकट्ठा होते ही उसी समय कारखानेकी कढ़ाईमें डाल कर उसे भट्टी पर चढ़ा देनी चाहिये। रस ज्यादा देर तक रखनेसे उसमें अम्लरस क (Fermentation) हो कर सुरामें परिणत हो जाता है। फिर उससे गुड़ नहीं बनता। इसीलिए बिना देरीके गुड़ बना लिया जाता है। रस ताजा और अच्छा हो तो ६ सेरमें १ सेर गुड़ बनता है, अन्यथा १८ सेर रससे १ सेर गुड़ बनता है। बङ्गालमें सिउली नामकी एक जाति खजूरका गुड़ बनाया करती है। उस गुड़से इक्षु-गुड़का प्रणालीके अनुसार चीनी बनती है। एक सौ खजूरके पेड़ोंसे सालमें १२० मन तक गुड़ बन सकता है।

खजूरकी तरह ताड़के वृक्षसे गुड़ और चीनी बन सकती है। मालवाके उपकूलमें ताड़के गुच्छेकी जगह जगह काट कर रस संग्रह करते हैं। उस रससे गुड़ और चीनी बनाई जाती है। ताड़के रस (ताड़ी)-से गुड़ बहुत कम ही बनता है किन्तु ब्रह्मदेशमें ज्यादा बनता है।

मन्द्राज तथा दक्षिण बङ्गमें नारियलके पेड़से गुड़ बनाया जाता है। दाक्षिणात्यमें नारियलका पेड़ बङ्गालके खजूर-वृक्षका काम देता है।

सिंहलके दक्षिणांशमें सागूके पेड़से चीनी बनाई जाती है।

१६वीं शताब्दीके प्रारम्भमें फरासीराष्ट्रविप्लवके समय फ्रान्समें चीनी जाना बन्द हो गया था। नेपोलियन बोनापार्टने हुक्म दिया कि, जो कोई यूरोपकी कोई भी वस्तुसे थोड़े खर्चसे ज्यादा चीनी बना सकेगा, उसको १ लाख रुपये इनाममें दिये जांयगे। इस पर बहुतोंने बहुत तरहकी बनाई, जिनमें सबसे सस्ती और अच्छी चीनी लाल पालक (शाक) की बनी थी। उक्त चीनी बनानेवालेको १ लाख रुपये मिले थे। बादमें ईखकी चीनीके चलनेसे इसके लोपकी सम्भावना हुई परन्तु विदेशी चीनी पर अत्यधिक कर बढ़ जानेसे यह बनी रही। अब भी यूरोपमें लाल पालकसे (Beet Sugar) बहुत ज्यादा

चीनी बना करती है, परन्तु भारतवर्षमें पालङ्क वैसा होता नहीं, इससे चीनी भी वैसी नहीं बनती। एक प्रकारका पालक-शाकसा होता भी है तो वह तरकारी-के काममें आता है।

ईख और उसका गुड़ तथा चीनी।

ईखोंमें जो (विशेषत: पकी हुई ईखोंसे) ज्यादा चीनी मिलती है। तरुणावस्थामें ईखमें ज्यादा चीनी नहीं रहती, उसमें श्वेतसार और चीनीका पूर्वरूप फलज शर्करा (Glucose) विद्यमान रहता है। ये ही फिर चीनीके रूपमें परिणत हो जाते हैं इसके अलावा ईख में जड़की तरफ ज्यादा चीनी रहती है और श्वेतसार आदि कम होते हैं तथा ऊपरका तरफ चीनी कम और श्वेतसारादि ज्यादा रहते हैं। भिन्नभिन्न समयमें १०० भाग इक्षु-रसको विश्लिष्ट करनेसे निम्न लिखित फल होता है —

	१म परीक्षा ३१ आगस्त	२य परीक्षा २९ सेप्टेम्बर	३य परीक्षा १० दिसम्बर
ईखकी लम्बाई	४½ फुट	५½ फुट	५½ फुट
पत्तेदार ईखकी ,,	८ ,,	१०½ ,,	१०½ ,,
रसका आपेक्षिक गुरुत्व	१.०३७	१.०४	१.०७१
शर्करा	४.२५	८.००	१६.००
फलज शर्करा	१.२७	२.००	.३१
भस्म	.७३	.७८	.७३
श्वेतसार	१.५१	.८९	३.२५
अम्ल	.१६	...	...
जल	९२.०८	८८.३३	७९.७१
	१००	१००	१००

उक्त नक्शेसे मालूम होता है कि सेप्टेम्बर मासका चीनीका भाग अगस्तसे प्राय: दूना है, तथा दिसम्बरमें सेप्टेम्बरसे दूना है। और भी देखा जाता है कि सेप्टेम्बर और दिसम्बर मासके मध्यमें ग्लुकोस अर्थात् फलज शर्करा-का भाग घट गया है तथा श्वेतसारका बढ़ा है। इससे अनुमान किया जाता है कि फलज शर्कराको ही किसी रासायनिक क्रिया द्वारा चीनीरूपमें परिणत किया जाता है। सूर्यकी किरणोंके बिना वृक्ष लतादिकी वृद्धि नहीं हो सकती तथा उसके पत्ते वायुस्थित द्व्यम्लजारक वाष्प-को शोषण नहीं कर सकते, प्रखर रौद्र (धूप) होनेसे रासायनिक क्रिया बिना बाधाके चलती रहती है। इस लिये वृक्षादिकी भी वृद्धि होती रहती है। इसी कारण धूप ईखोंके लिये ज्यादा हितकारी है। जिस साल थोड़ी वर्षा होती है और आकाश ज्यादा देर तक साफ रहता है। उस साल ऊख खूब मीठे और अच्छे होते हैं। परन्तु वर्षा अधिक होने वा आकाश मेघाच्छन्न रहनेसे ईखकी वृद्धि और मीठेपनमें बहुत कुछ फरक पड़ जाता है।

कङ्करशून्य उत्कृष्ट चौरस जमीन पर ही ईखकी खेती हुआ करती है। ऊख करीब ८।९ महीने तक बढ़ता रहता है, इस लिये खेतमें बदस्तूर खाद और पानी सींचते रहना चाहिए। बङ्गालमें किसान लोग ५।६ दफे खेतको जोतते हैं और गोबर, भस्म, बालू, पुरानी भीतों-की मिट्टी इत्यादिकी खाद देकर जमीन तयार करते हैं। ईखके पत्ते और उसकी छोई (सीठा) इत्यादिकी खाद ईखके लिए अच्छी होती है। बादमें हल जोत कर १॥ हात अन्तर नाली बनाई जाती है। फिर उसमें १ या १॥ हात अन्तर ईखका आगेका पत्तोंवाला डण्ठल सीधी तरहसे डाल कर ऊपरसे उसे ४।५ इञ्च ऊंची मिट्टीसे ढक देते हैं और साथ ही पानी सींचते जाते हैं। १०।१५ दिन बाद एक एक डण्ठलमेंसे ८।१० तक अङ्कुर निकल आते हैं, उस समय बहुत सावधानीसे खेतको थोड़ा खोद कर पानी सींचा जाता है। चैतका महीना ही इसके लिए अच्छा है। ऊख जब एक या डेढ़ हात बड़ा हो जाता है तब फिर एक बार जमीन खोद कर प्रत्येक पौधेकी जड़में मिट्टी देनी पड़ती है। ईखका खेत जितनी बार साफ किया जाता है, उतनी ही बार उसमें पानी सींचा जाता है। भाद्रपदमें ईखकी जड़-से पत्ते लपेट कर ऊपरकी तरफ ४-६ पौधोंको एकत्र बांध देते हैं। प्रत्येक भाड़की जड़में मिट्टी भी थोपनी पड़ती है। आश्विन, कार्तिकमें ईखमें बहुत कुछ मीठा-

पन आ जाता है। शृगालोंको एक बार इसका आयका मिलने पर वे फिर इसको भूल नहीं सकते। किसान इस समय खेतको रखानेके लिए एक आदमीको रखते हैं। वह आदमी खेतके बीचमें तीन हाथ ऊँचा एक मचान बनाता है और उस पर एक झोंपड़ी बना कर रातमें उसमें रह कर शृगालोंसे ईखोंकी रक्षा करता है। मचानसे खेतके चारो तरफ लम्बी लम्बी रस्सी बाँध दी जाती है, इससे वहीं बैठ कर वह रस्सीको हिलाता है और उसके हिलते ही पौधे भी हिलने लगते हैं पौधोंको हिलते देख शृगाल भी भाग जाते हैं। बहुसे लोग मचानके नीचे आग जला कर तापते और नगाड़ा बजा कर गीत भी गाते हैं, इससे मौजमें उनकी रात भी बीत जाती है और शृगाल भी नहीं खाने पाते। कभी कभी खेत रखानेवालेकी स्त्री भी वहां भोजन ले कर पहुंच जाती हैं। वहीं स्त्री-पुरुष दोनों स्वर्गीय सुखका अनुभव करते हुए रात बिताते हैं।

माघ और फाल्गुनके महीनेमें ईख पक जाती है। इसी समय किसान लोग जड़ोंको कुदालीसे काटते हैं और साथ ही उनको छील कर साफ करते जाते हैं, तथा ऊपरके पत्तेदार डंठलको काट कर अलग कर देते हैं। इनको पीछे सुखा कर लकड़ीकी जगह जलाया जाता है। इसके बाद जब सब ईख काट ली जाती है, तब ८० ईखोंकी एक एक गड्डी बांधी जाती है। फिर इनको गाड़ीमें लाद कर खलियानमें ले जाते हैं और वहां इनको कोल्हूमें पेर कर रस निकालते हैं। एक साल जहां ईखकी खेती होती है, दूसरी साल उस जगह ईखकी खेती नहीं होती, बल्कि दूसरा ही कुछ बोया जाता है।

पहले काठके कोल्हूसे ईख निचोड़ा जाता था। ३ या ३॥ हाथ लम्बी और १।१॥ हाथ व्यासकी दो इमलीकी लकड़ियोंको दोनों तरफके दो पायोंमें तरऊपर मजबूतीके साथ बाँध कर दोनों तरफसे दो आदमी उन्हें घुमाते हैं और एक आदमी उसमें ईख लगाता जाता है। इस प्रकार एक एक ईख ५।७ बार दबानेके बाद उसका सारा रस निकल आता है। इसके बाद उन बची हुई सीठी (छोइ) को फेंक देते हैं। इस प्रकार ईख पेरनेमें ज्यादा मेहनत और दिक्कत होनेके कारण अब सर्वत्र लोहेके कोल्हू चल गये हैं। लोहेके कोल्हू कई तरहके होते हैं। किसीमें २ और किसीमें ३।४ तक जाठ होते हैं। किसी किसीके जाठ सीधे खड़े किये हुए भी होते हैं। ये कोल्हू बैल आदि द्वारा और वाष्पयन्त्र द्वारा चलाए जाते हैं। साधारण कोल्हू बैल द्वारा चलाए जानेसे प्रति दिन उसमेंसे ४०।५० मन रस निकलता है और उससे ७।८ मन गुड़ बनता है। इन कोल्हुओंकी कीमत गुणानुसार ८०) रु०से लगा कर १०००) रु० तक होती है। फिलहाल भारतवर्षमें सर्वत्र इस कोल्हूसे रस निकाला जाता है। जो लोग खुद कोल्हू नहीं खरीद सकते हैं, वे दूसरोंसे भाड़े पर ले कर काम चलाते हैं। साधारणतः इसका दैनिक भाड़ा २) रु० है।

भारतवर्षके किसान गुड़से चीनी नहीं बनाते हलवाई लोग किसानसे गुड़ खरीद लेते हैं और फिर उसकी चीनी बनाते हैं। भिन्न भिन्न स्थानोंमें नाना तरहसे चीनी बना करती है। परन्तु प्रस्तुत प्रणाली सबका एकसी ही है। नीचे उसकी प्रणाली लिखी जाती है।

गुड़को हण्डियां २।१ महीने रक्खी रहनेसे उसमें दाना बाँध जाते हैं। फिर हण्डीका मुंह तोड़ शैवालसे ढक करके तलेमें छेद कर देनेसे सब सीरा निकल जाता है। सिवार देनेसे ऊपरका गुड़ सफेद दानेदार हो जाता है। तब उस सफेद गुड़को निकाल कर पुनः शैवाल वा सिवारसे ढक देते हैं। दूसरे दिन फिर ऊपरके सफेद गुड़को निकाल कर शैवालसे ढक दिया जाता है। इसी प्रकार क्रमशः तमाम सीरा निकल जाता है और गुड़ सफेद हो जाता है। फिर उस गुड़को घाममें सुखा कर बोरोंमें भर देते हैं। इसको खाँड़ कहते हैं। यह खाँड़ ही बहुत जगह चीनीकी जगह खायी जाती है। खाँड़को साफ चीनी बनानेके लिए हलवाई उसको लोहे या पीतलके कड़ाहेमें रख कर भट्टी पर चढ़ा देते हैं और ऊपरसे पानी डाल देते हैं। जब तक वह उबलती रहती है, तब तक उसमें थोड़ा थोड़ा तेल, दूधका पानी, चूनेका पानी, खारका पानी इत्यादि डालते रहते हैं। इससे उसकी गाद वगैरह ऊपर आ जाती है और हलवाई उसे झाबेसे निकालता जाता है। इस प्रकारसे जब तमाम गाद निकल जाती

है और रस कुछ गाढ़ा हो जाता है, तब कड़ाहा उतार लिया जाता है। रसके ठण्डे होनेके साथ साथ उसमें दाने बँधने लगते हैं। इन दोनोंको शर्करा या चीनी कहते हैं। रसमेंसे उन दानोंको छान कर निकाल लेनेसे फिर नये दाने बनते रहते हैं। इस प्रकार समस्त दानोंको निकाल कर बचे हुए रसको दूसरे काममें लाते हैं। कभी कभी उस रसका पानी भट्टी पर ही जला दिया जाता है अर्थात् रसको चाशनी रूपमें परिणत किया जाता है। इससे ठण्डा होते ही जम कर चीनीके ढेलसे बन जाते हैं। परन्तु इसमें दाने नहीं बनते। कीचड़ जैसी हो जाती है। इसको फिर बड़े कड़ाहेमें डाल कर मोटे के पेंदे या लकड़ीसे ठोक कर चूरा करते हैं। क्रमशः यह सफेद धलीसी हो जाती है। ऐसी चीनी ज्यादातर युक्त प्रदेशमें ही बनती है, इसको वहाँके लोग बूरा कहते हैं। जर्ज वाट साहबका अनुमान है कि, पहले भारतमें साफ चीनी नहीं बनती थी। चीन और मिशर देशसे साफ चीनी भारतमें आती थी। इसी प्रकारसे चीनसे आई हुई शर्कराका नाम चीनी और मिशरसे आई हुई शर्करा मिस्री नामसे प्रसिद्ध हुई है।* किन्तु उनकी यह कल्पना यथार्थ नहीं मालूम होती। बहुत दिनोंसे भारतवर्षमें शर्करा नामक नाना प्रकारकी चीनी बनती थी, यह बात सुश्रुत आदि प्राचीन आयुर्वेदमें लिखी है। शर्करा शब्द देखो।

गुड़से सीराको अलग कर सारभागको खानेसे शक्कर या खाँड़ बन जाती है।

काशीकी दुबारा चीनी बहुत ही बढ़िया होती है। दो बार साफ की जानेके कारण ही शायद इसको दुबारा कहते हैं।

खाँड़ और अङ्गरेजी लोफ-सुगर (Loof-sugar) एक ही चीज है।

भारतवर्षमें भी नाना देशोंमें नाना तरहके ऊख पैदा होते हैं। जैसे—काजल, बड़ीखा, केतारा, लखड़ा, कुशवार, सरौती, धौल, मतना, अगोल इत्यादि। इसके सिवा चीन, मारिशस (मिरच-टापू), ओटाहिटी, बार्बों आदि स्थानोंसे ईखके बीज मंगा कर यहाँ उसकी खेती होती है। काजली, गन्ना देखनेमें लाल या बैंजनी होता है। इसके सिवा और सब ईखोंका रंग प्रायः हराईको लिए हुए पीला होता है। धौल ऊखका रंग सफेद होता है। कई तरहके रंगवाले ऊख भी देखनेमें आते हैं। शिङ्गापुरका एक तरहका स्वच्छ ऊख बहुत कोमल और मोठा होता है, परन्तु यह आँधी चलने पर टूट जाता है। बम्बई और ओटाहिटीके ऊख सबसे बड़े होते हैं। यह ऊख चूसनेके काममें ही ज्यादा आते हैं। ये ऊख कोमल और मीठे होनेके कारण इनसे चीनी अच्छी नहीं बनती है। शिङ्गापुरी ईखोंका खेत करनेसे नुकसानका डर रहता है। ग्रन्थ लोगिग्रारोके साथ न रखानेसे शृगाल और आदमी ही खेतको उजाड़ कर देते हैं। इसी भयसे लोग अधिकतर केतारा, लखड़ा, चौनिया आदि कड़े ऊखों-को ही खेती करते हैं। इन ऊखोंसे गुड़ प्रायः समान ही होता है, इसके सिवा इन्हें आदमी और शृगाल दूर रहे; दीमक भी नष्ट नहीं कर सकती। इसलिए इन-को नहीं बाँधनेसे भी कुछ हर्ज नहीं होता। आँधीमें गिर जाने पर भी ये बिना बाधाके उठाये जा सकते हैं।

शृगाल और चोरोंके उपद्रवोंके सिवा ऊखकी खेतीमें और भी बहुतसे विघ्न उपस्थित होते हैं। पहिले-पहल ऊखकी खेतीमें बहुत खर्च पड़ता है, इसलिए जो गरीब किसान हैं वे बिना कर्ज लिए ऊखकी खेती नहीं कर सकते। परन्तु देशीय महाजनोंसे कर्ज ले कर चुकानेमें नाकों दम आ जाती है, इसलिए लोग विशेष सङ्गतिके बिना इसकी खेती नहीं करते।

इसके बाद किसी प्रकार कोई खेत कर भी ले, तो फिर दीमक, मूसे, शृगाल, रीछ, चोरादिकोंके उपद्रवोंका सामना करना पड़ता है। कभी कभी इन लोगोंके उप-द्रवसे तमाम खेत ही नष्ट हो जाता है। इनके सिवा पौधोंका सूख जाना, सड़ जाना और कीड़ोंका लगना इत्यादि और भी बहुतसे विघ्न हैं। ये कीड़े एक जगह-से घुस कर सारे ऊखको बिगाड़ दिया करते हैं।

दो एक ईखमें दीमक लगनेसे तमाम गुच्छेमें लग जाती है। कभी कभी ऐसा भी देखा गया है कि, ऊपर-से ईख बहुत अच्छी दीखती है, परन्तु तोड़नेसे भीतरमें कोई गांठ सूखी, कोई लाल और कोई विस्वाद पाइ

* Dr. Watt's Dictionary of the Economic products of India.

जाती है। बाबू जयकृष्ण मुखर्जी और अन्यान्य कृषि-तत्त्वानुसन्धित्सु महोदयोंने इस विषयकी पर्यालोचना कर स्थिर किया है कि, बहुत वर्षा तक एक ही जमीन पर ईख बोनेसे उक्त रोग हो जाता है। इस बातकी परीक्षा की गई है कि, बङ्गालमें जिस जमीन पर बम्बई ईखकी खेती १८।२० वर्ष की गई है, वहीं इन रोगोंका ज्यादा जोर है, तथा जहां १०।१२ वर्ष हो खेती हुई है, वहां इन रोगोंका नामोनिशान भी नहीं है।

बहुत समय ईखके खेतोंमें बहुतसी घास वगैरह उत्पन्न हो जानेके कारण ज्यादा क्षति हुआ करती है। इनका उपद्रव भी किसानोंको हैरान कर देता है। ये सब व्यर्थके पौधे ईखके जड़में उत्पन्न हो कर उसमें अपनी जड़ फैलाते हैं। इनकी जड़ ईखके भीतर पहुंच जानेसे फिर ईख नहीं बढ़ती। बल्कि सूख कर मुरझा जाती है। पहिले उस जमीन पर सन, नील आदि बो कर पीछे ईख बोई जाय ; तो इनके उपद्रवोंका उपशम हो जाता है।

इतने विघ्नोंके बाद थोड़े-बहुत ऊख पैदा भी हो जांय तो भी चैन नहीं। देशीय प्रथाके अनुसार ब्राह्मण यदि खेतमें घुस कर इच्छानुसार ईख तोड़ ले जांय तो उनसे कुछ कह नहीं सकते क्योंकि मनुके नियमानुसार ब्राह्मणोंको ईख लेनेका अधिकार है। इसके सिवा राहगीर, गाड़ीवान, गाय-भैंस चरानेवाले लड़के इत्यादि भी छुपी तौरसे ईख चुराते हैं। ईख काटते समय भी किसानके घर एक तरहकी लूट-सी हो जाती है। लोग आ कर यथेच्छा खाते और २।४ घरको भी ले जाते हैं। आंखोंके सामने सरासर डकैती देखते हुए भी बेचारे किसान देशाचारके लिहाजसे कुछ नहीं कह सकते। खलियानमें भी गुड़ बनाते वक्त यही दशा होती है, यदि किसीको रीते हाथ (निराशा पूर्वक) लौटाया जाय, तो पाप होगा यह समझ कर किसानोंको वहां भी चुप रहना पड़ता है। इसके बाद गुड़ बननेके बाद गुरु, पुरोहित, नाई, धोबी आदिको गुड़ देना पड़ता है। इस प्रकारके लगातारके खर्चसे कभी कभी लाभकी जगह उलटा नुकसान भी उठाना पड़ता है यहां तक कि खेतका खर्च भी नहीं उठता। इसलिए ईखकी खेती लोग कम करना चाहते हैं। इसके अलावा किसान बहुधा अशिक्षित भोले होते हैं। वे अपनी पुरखाओंकी प्रथाको सहजमें छोड़ते नहीं और न ऐसा करना वे पसन्द ही करते हैं। इसलिए भारतमें गुड़के साथ साथ चीनीका रुजगार भी डूबेगा, इसमें आश्चर्य ही क्या है? अतएव शिक्षित पुरुषोंको इस तरफ ध्यान देना चाहिये, इसमें लाभ है, देशकी व्यापारिक उन्नति और देशका उपकार भी है।

ईसाकी १५वीं शताब्दीमें स्पेनके लोगोंने कानेरीद्वीप-पुञ्जमें ईखकी खेती करना शुरू किया था। इससे पहले १४२० ई०में पोर्तगोजवासियोंने सिसिलीद्वीपसे मेदिरा और सेण्ट टमास द्वीपमें ईखकी खेती की थी। १५०६ ई०में केनारी द्वीपसे इसका सान्डोमिङ्गो द्वीपमें प्रचार हुआ था। १५८० में ओलन्दाजोंने ब्रेजिलमें सबसे पहले ईखकी खेती और चीनीका कारखाना खोला था, परन्तु वहांसे शीघ्र ही ये पोर्तगीजों द्वारा भगा दिये गये। फिर इन्होंने पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें कारखाने स्थापन किये थे। अंग्रेजोंने १७४७ ई०में बार्बाडोज द्वीपमें तथा १६६४ ई०में जामैका द्वीपमें चीनीके कारखाने खोले थे, किन्तु शीघ्र ही इस विषय पर अंगरेज, फरासी और पोर्तगीजोंमें बड़ी भारी धींगाधींगी चलने लगी। अंग्रेज लोग नानाप्रकारसे चीनी बना कर सस्ते दाम पर चीनी बेचने लगे। परन्तु १७२६ ई०में फरासियोंने सान्डोमिङ्गोके कारखानोंकी अपूर्व उन्नति की और अंग्रेजोंके साथ टक्कर लगा कर यूरोपमें खूब चीनीकी भरमार कर दी।

इस प्रकारसे भारतवर्षसे ईखकी खेती यूरोप और अमेरिकामें प्रचलित हुई थी। ईसाकी १८वीं शताब्दीके अन्तमें राजनैतिक उपद्रवके कारण सान्डोमिङ्गोसे चीनीके कारखाने उठ गये थे। इस कारण अंग्रेजोंका चीनीका रुजगार भी खूब जोरोंसे चला था। इस समय चीनीका भाव खूब तेज हो गया था, और तो क्या, इंगलैण्डमें रहीसे रही चीनी भी ॥) आने सेर तक बिक गई थी। इस पर लोगोंने भारतवर्षसे चीनी भेजनेके लिए ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीको लिखा था। फिर तो भारतवर्षसे इङ्गलैण्डको इतनी चीनी जाने लगी कि, अमेरिकाके व्यापारी भी डमाडोल हो गये थे। अमेरिकाके शासन-

कर्त्ताओंने व्यापारियोंकी ऐसी हालत देख कर चीनीका कर बहुत ही घटा दिया था, परन्तु भारतवर्षकी चीनी पर खूब ही कर बढ़ गया था। उस समयके लोग दासत्व प्रथाके अत्यन्त विरोधी होनेके कारण वे क्रीतदासोंके द्वारा बनी हुई अच्छी चीनीको भी नहीं लेते थे और भारतवर्षकी चीनी खुशीसे खरीदते थे। यह चीनी बङ्गालसे ही आया करती थी। १७५५ ई०में भी बङ्गालसे ५०००० मन चीनी यूरोपमें भेजी गई थी। परन्तु अब बङ्गालमें इतनी कम चीनी बनती है कि, वहांकी उससे गुजर नहीं होती।

आजकल अमेरिकामें मरिसस, वोटाहिटी, शिङ्गापुर आदि द्वीपोंमें बहुत ज्यादा चीनी बनती है। इन समस्त कारखानोंके मालिक अंग्रेज ही हैं। ईखके रससे लगा कर चीनी बनने तक तमाम काम बड़ी बड़ी मशीनोंसे ही होते हैं। उद्भिद्‌तत्त्वज्ञोंके मतानुसार ही जमीनमें पांस या खाद दी जाती है और ईख बोयी जाती है। देशीय कोल्हूसे सैकड़ा पीछे ५० भागसे ज्यादा रस नहीं निकलता, परन्तु यूरोपीय उत्कृष्ट मशीनों द्वारा सैकड़ा पीछे ७५ भाग रस निकलता है।

भारतवर्षमें यूरोपीय प्रणालीसे ईखकी खेती और चीनी बनानेकी अनेक बार कोशिश की गई है। १७७६ ई०में कलकत्तेके वणिकोंने पहिले पहल इसकी चेष्टा की थी। गवर्नर जनरलने भी उस कम्पनीको सहायता देना स्वीकार कर लिया था। उस कम्पनीने पहले कई एक जगह ईखकी खेती की, किन्तु लगातार दीमक और कीड़े लगते रहनेके कारण कम्पनीको अपना उद्देश्य त्याग देना पड़ा। फिर उसने देशीय किसानोंसे ईख खरीद कर चीनी बनाई, परन्तु उसमें भी नुकसान ही हुआ और इसीलिए उसे उक्त व्यवसायको छोड़ ही देना पड़ा।

चीनी बनानेकी तरकीबें नाना प्रकारकी प्रचलित हैं। विदेशीय मशीनोंसे बनी हुई चीनीमें हिन्दूधर्म-विगर्हित कोई कोई पदार्थ पड़ते हैं अतः वह हिन्दुओंके लिए अभोज्य है, इसीलिए इस देशमें मशीन द्वारा चीनी नहीं बनती थी। बड़े बड़े कड़ाहे या हण्डोंमें ईखका रस रख कर उसके नीचे आग जला दी जाती है। पात्रका मुंह खुला रहता है। अग्निके उत्तापसे रसमेंकी गाद ऊपर आ जाती है और वह उसी समय झावेसे निकाल दी जाती है। इस प्रकारसे कुछ देर तक उबालने और उसकी गाद निकल जानेके बाद जब उसके जलीय अंश भाफमें परिणत हो तथा गाढ़ा हो कर गुड़ जैसे हो जायं, तब उसे ठण्डा करनेके लिए मिट्टीके बड़े पात्रमें ढाल देना चाहिये। जब अच्छी तरह दाने बँध जाँय, तब उसमेंसे पानीके अंश निकालनेके लिए उसे मोटे कपड़े पर रख कर ऊपरसे दबाते रहना उचित है। इस तरहसे तरल अंशोंके निकल जाने बाद सारांशमें पुनः पानी मिला कर उबालनेके लिए भट्टी पर चढ़ा देना चाहिये। इस बार इसमें थोड़ा थोड़ा दूध और चूना डालते रहना चाहिये, क्योंकि इससे मैला (गाद) कटता है। इसी प्रकार जब तक इसमेंसे गाद निकलती रहे तथा जलीय अंश पृथक् न हो तब तक ऐसी प्रक्रिया करते रहना चाहिये, बादमें मिट्टीके पात्रमें ढाल कर ठण्डा करना चाहिये। मिट्टीके पात्रमें उसमें दाना बँधने पर तरलांशको पृथक् करनेके लिए तलेमें छेद और चीनीका वर्ण उज्ज्वल और साफ करनेके लिए पात्रके ऊपरका भाग सिवारसे ढक दिया जाता है। शैवालसे निकला हुआ रस पात्रमेंसे निकलते हुए चीनीके मलिनांशके साथ छेदसे निकल जाता है। सिवारके गुणसे चीनीका रंग भी सफेद हो जाता है। बादमें फिर उस हण्डेसे चीनी निकाल ली जाती है। इस चीनीको फिरसे आग पर चढ़ा कर पहलेकी तरह दानेदार बनानी पड़ती है। चीनीमें हो कर पात्रके छेदसे जो रस निकलता है, वह दूसरे पात्रमें रख लिया जाता है, और दूसरे काममें आता है। चीनदेशमें भी इसी प्रक्रियाके अनुसार चीनी बनाई जाती है।

अमेरिकामें बहुत ही सरल तरीकेसे चीनी बनायी जाती है। वहाँ ईख पेरनेके कोल्हूसे निकलता हुआ रस नालियोंमें हो कर पात्रोंमें गिरता है। वे पात्र भट्टियों पर रखे रहते हैं। परन्तु भट्टीयां उस समय नहीं जलतीं; बल्कि सब पात्र भर जानेके बाद जलाई जाती हैं और इसी समय पात्रोंमें थोड़ा थोड़ा चूना डाल दिया जाता है। पात्रोंका रस जब उबलने लगता है, तब उनमें गाद

ऊपर आ जाती है। रसको साफ करनेके लिए उस गाद-को निकाल कर फेंक देना पड़ता है; इसीको वहाँ गाद फेंकना कहते हैं। कुछ देर तक यही प्रक्रिया चलती है। बादमें जब रस साफ हो जाता है और ऊपर सफेद झाग आने लगता है, तब भट्ठियोंकी आग बुझा दी जाती है, तथा घण्टा भर तक रसको ज्योंका त्यों रहने देते हैं। बादमें दूसरे पात्रोंमें उंडेल दिया जाता है। इस समय रस देखनेमें ठीक पिङ्गलवर्ण शराबकी भांति उज्ज्वल और साफ मालूम देता है। सब पात्रोंका रस दूसरे पात्रोंमें उंड़ेले जाने बाद उसके जलीय अंशोंका कथञ्चित् वाष्पाकारमें परिणत करनेके लिए फिरसे भरे हुए पात्र भट्टी पर चढ़ा दिये जाते हैं। अग्निके उत्तापसे गाद ऊपर आने पर खूब सावधानीके साथ निकाल दी जाती है। अन्तमें रस जब जमने लायक हो जाता है, तब उसे बड़े बड़े काठके पात्रोंमें रखते हैं और करछुलोंसे हिला कर ठण्डा करते हैं। बादमें गाढ़ा करनेके लिए फिर दूसरे पात्रोंमें ढालते हैं। इन पात्रोंमें रसके कुछ अंश तो कोमल दानेदार हो जाते हैं और कुछ तरल रह जाते हैं। दानेदार अंश लसीले तरल रससे अलग होते ही चीनी रूपमें परिणत हो जाते हैं। इसीलिए दोनों तरहके पदार्थोंको पृथक् पृथक् करना पड़ता है। फिर उस दानेदार अंश अर्थात् चीनीको बड़े बड़े कोठोंमें ले जा कर डाल देते हैं। उक्त कोठोंकी जमीनमें बड़े बड़े हौद और उनके ऊपर फ्रेमों पर कुछ रीते पीपे रक्खे रहते हैं। उपर्युक्त रिक्त पीपोंके पेंदे केलेके डंठलोंसे ढके हुए रहते हैं और उसमें ८।१० छेद होते हैं। पूर्वलिखित दानेदार और कुछ तरल रस मिश्रित चीनी इन पीपोंमें डाल देनेसे उसका तरल रस क्रमशः उन छेदोंमेंसे बहा कर नीचेके हौदमें गिरता रहता है और अन्तमें सूखी चीनी पीपोंमें रह जाती है।

चीनी बनानेके लिए बहुत जगह बहुत तरहकी मशीनें बनी हैं, जिनमेंसे डब्ल्यू० एण्ड ए० मोनि (W. and A. M'onic) साहब द्वारा आविष्कृत मशीन ही यूरोप-खंडमें सर्वत्र प्रचलित और विशेष आदृत है। चित्र देखो।

चीनी प्रस्तुत करनेका कल।
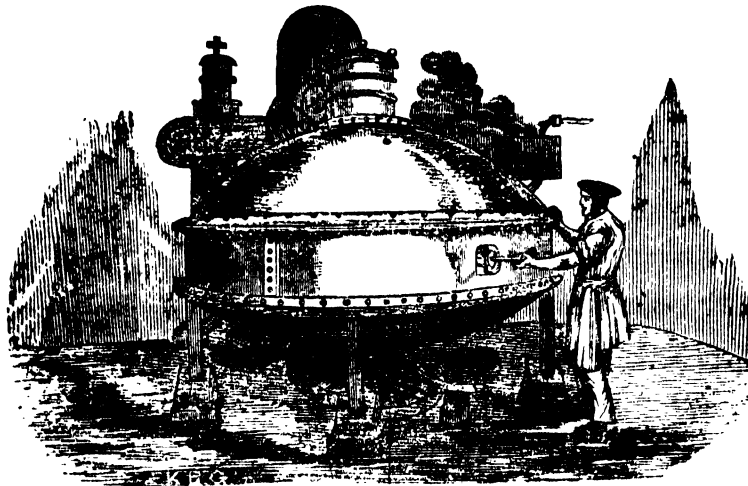
इस यन्त्रमें ताम्रनिर्मित शून्य एक कड़ाहा लगा हुआ रहता है, जिसका व्यास ६ फुट और नीचेका अंश दुहरा होता है। दोनोंके बीचमें २ इञ्च या १ इञ्च स्थान धुंआं निकलनेके लिए खाली रहता है। ईखका रस पहले कही हुई प्रणालीके अनुसार उत्तप्त होने और उसकी गाद निकल कर तरल होने पर तथा उत्तप्त अवस्थामें ही तेलकी भांति घना होने पर उसे उक्त यन्त्रके कड़ाहेमें ढाल देना चाहिये। कड़ाहेमें रस ठण्डा होनेके साथ साथ उसमें दाने बँधते जाते हैं। दाना बँधते समय इस बातका भी खयाल रखना पड़ता है कि जिससे दाने

सब समान हों। चीनी बनानेवाले रीते कड़ाहेमें पूरा रस न भर कर तृतीयांश वा चतुर्थांश रस भर भट्टी पर चढ़ा देते हैं, तथा दाने जब आयतनमें बड़े हो उठते हैं, तब उसमें क्रमशः मैला रस देकर अग्निके उत्तापको बढ़ाते रहते हैं। इस प्रकारसे कड़ाहेके रसकी चाशनी ठीक हो जाय, तब उसे दूसरे पात्रमें उँड़ेल कर ठण्डो करना चाहिये। ठण्डा होते ही इसकी चीनी बन जाती है, किन्तु व्यापारी लोग उसे उस समय ठण्डा न करा कर दूसरे देशोंको भेजनेके लिये उस छोटे छोटे पात्रोंमेंसे ढाल कर ठण्डा करते हैं। चीनीमें अच्छे दाने बँधने तथा ठण्डे होने पर पात्रके पेंदेके छेदोंकी डाट खोल दी जाती है। डाट खुल जाने पर पात्रोंमेंका जो रस जम कर दानेके आकारमें परिणत नहीं हुआ है, वह निकल कर नालियों द्वारा हौदोंमें जा कर इकट्ठा होता है। बादमें उस रसकी फिरसे कड़ाहेमें चढ़ा कर चीनी बनाई जाती है; जो पहली चीनीसे कुछ निकृष्ट होती है, यह चीनी मध्यम श्रेणीकी होती है। इससे निकले हुए रससे पुनः एक बार चीनी बनाई जाती है, जो सबसे निकृष्ट होती है।

इङ्गलैण्ड और अन्यान्य देशोंमें चीनीको साफ बनानेके लिये यथेष्ट परिश्रम किया जाता है। चीनी साफ करनेका स्थान आठ-नौ मञ्जल ऊँचा होता है। मैली सबसे ऊपरके मञ्जलमें डाल दी जाती है. फिर उसमें सम्भवतः गरम पानी और थोड़ा गऊका खून मिला कर नीचेसे अग्निका उत्ताप दिया जाता है। उत्ताप ज्यादा होने पर गोरक्तका सारभाग घना हो कर उक्त तरल पदार्थमेंके तमाम मैले गादको ले कर ऊपर बहने लगता है। फिर वह तरल चीनी मोटे और घने कपड़ेकी थैलीसे छान ली जाती है। इस थैलीको 'बेगफिल्टार' कहते हैं। थैलीमेंसे रस जल्दी जल्दी निकले, इसलिये उस थैलीको लोहेकी छड़में लटका देते हैं और उसमेंका रस ठण्डा न होने पावे इसके लिए दोनों तरफसे अग्निका उत्ताप देते रहते हैं। कपड़ेकी थैलीमें छाननेसे सब तरहका मैला तो निकल जाता है, पर उसका कालापन नहीं जाता, इस लिए थैलीसे रस निकालते ही वह अङ्गारास्थिसे परिपूर्ण लोहेके पात्रमें रख दिया जाता है। इस पात्रकी ऊँचाई २० ३० फुट और व्यास प्रायः ५।६ फुट होता है। पात्रकी अङ्गार चूर्ण कर दी जाती है। अङ्गारचूर्णमेंसे प्रवाहित होनेके बाद उसका रंग सफेद और उजला हो जाता है। इस समय अग्निके उत्तापसे जलीय अंशोंको वाष्पाकारमें परिणत करनेसे, चीनी सफेद, उजली और साफ हो जाती है।

चीनी अधिकतर साफ होने तथा उसमें बड़े बड़े दाने बँधनेसे उसे मिश्री कहते हैं। चीनीका रस सुचारु रूपसे परिष्कृत होनेके बाद, उसे चीनी बनानेके साधारण कड़ाहेसे बड़े कड़ाहेमें रख कर, उसमें उत्ताप और बीच बीचमें नया रस डालते रहना पड़ता है। फिर उसमें जब बड़े बड़े दाने होने लगें, तब उसे केन्द्रविमुख (Centrifugal Machine) यन्त्रमें पात्रान्तरित किया जाता है। उक्त यन्त्रमें डालते ही, उसके दाने रससे अलग हो कर सूख जाते हैं। इसी बड़े बड़े दानेदार चीनीको मिश्री कहते हैं। इस प्रकारके चीनीके दाने सहजमें नहीं गलते।

चीनीका व्यवसाय।

दुनियामें कितनी चीनी बनती है, इसका निर्णय करना सहज नहीं है। १८५३ ई०में ष्टीली साहबने किस देशसे कितनी चीनी भिन्न देशोंको भेजी जाती है, उसकी सूची बनानेका प्रयास किया था। उनकी बनाई हुई सूची यहां दी जाती है—

भारतवर्ष और वृटिश अमेरिकासे ...	८६६६२५० मन,
फरासीसी उपनिवेशोंसे	१७७३७५० मन,
होलैण्डके उपनिवेशोंसे	१७८७५०० मन,
स्पेनके उपनिवेशोंसे	८१४३७५० मन,
डेन्मार्कके उपनिवेशोंसे	२०६२५० मन,
ब्रेजिल देशसे	५५००००० मन,
अमेरिकाके युक्त राज्यसे	३७५३७५० मन

कुल-३१८३१२५० मन ईखकी चीनी अन्य देशोंको भेजी जाती है। उन्होंने यह भी स्थिर किया था कि, जिन जिन देशोंसे जितनी चीनी.दूसरे देशोंको भेजी जाती है, उतनी ही चीनी उन उन देशोंमें खर्च हुआ करती है। उन्होंने सिर्फ ईखकी चीनीके विषयमें ही निर्णय नहीं किया था, बल्कि उनकी सूचीमें ४५३७५०० मन पालककी जड़की चीनी, २७५०००० मन खजूरकी

चीनी और ५५०००० मन मापल् चीनीका भी उल्लेख किया था। कुछ भी हो, यदि उक्त तालिका विशुद्ध समझी जाय, तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ६८७५०००० मनसे बहुत ज्यादा चीनी बनती है। माकुलक साहबके मतसे १८५८ ई०में तमाम देशोंमें २५००००:० हण्ड्रेट् वेट (करीब १ मन १५॥ सेरका एक हण्ड्रेट् वेट होता है) चीनी बनी थी।

दूसरे देशोंकी अपेक्षा भारतवर्षमें चीनीका ज्यादा खर्च है। इस देशमें चीनीके बिना किसी भी तरहकी मिठाई या अच्छी खाद्य वस्तु नहीं बन सकती। मिठाई आदिके सिवा और भी बहुतसे कामोंमें चीनीकी आवश्यकता पड़ती है।

युक्तप्रदेशमें काशी, गाजीपुर आदि शहरोंमें अधिकतर चीनी बनती है और वह अच्छी और विशुद्ध समझी जाती है। निष्ठावान् हिन्दू-सन्तान देशीय चीनीके सिवा विदेशी परिष्कृत चीनी नहीं खाते। जैनियोंमें सैकड़ा पीछे ५० आदमी विदेशी चीनी नहीं खाते। अलीगढ़ जिलेके अन्तर्गत हाथरस शहरमें शुद्ध देशी चीनीके सिवा विदेशी चीनीका नामोनिशान तक नहीं है। वहाँके लोगोंने कमिटी कर यह निश्चय कर लिया है कि, "यदि कोई भी (हिन्दू या मुसलमान) विदेशी चीनी बेचेगा या खायगा तो उसे ५०) रु० दण्ड देने पड़ेंगे।"

१८३६-३७ ई०में समस्त भारतवर्षसे ५१३८४६०) की, १८४०-४१ ई०में १६४६८८८८) की तथा १८४७-४८ ई०में १६६२८५३४) रुपयेकी चीनी विदेशोंको भेजी गई थी, जिसमेंसे बङ्गालकी चीनी ही ज्यादा थी। १८४५ ई०में इङ्गलैण्डमें भारतीय चीनी पर अत्यधिक टैक्स बढ़ा दिया गया था। इसी वर्षसे चीनीका व्यापार घटता गया। १८८०-८१ ई०में भारतवर्षसे कुल ३८३७५४) रुपयेकी चीनी, तथा ३७८१८७१ मन गुड़ इत्यादि विदेशोंमें गया था।

उस सालमें मरिचद्वीप चीन, अमेरिकाके युक्तराज्य और उपनिवेशोंसे कुल ३,२२,६८४६८६) रुपयेकी चीनी तथा ७३०३६३) रुपयेका गुड़ इत्यादि भारतवर्षमें आया था।

१८८९-९० ई०में बङ्गालसे ५८६९८६ मन चीनी और ३१४३३७ मन गुड़, खाँड़ इत्यादि भारतके नाना स्थानोंको भेजी गई थी। उस सालमें भारतके नाना-स्थानोंसे बङ्गालमें १०११३ मन चीनी, तथा ७६३८२ मन गुड़, खाँड़, इत्यादि आई थी।

कलकारखानोंका बनाई हुई चीनी पर पहिलेके लोगोंकी जो घृणा थी, वह दिन दिन घटती जाती है। इसीलिए विदेशी चीनीकी खपत खूब ही बढ़ती जा रही है।

सिर्फ कलकत्तेमें ही प्रतिवर्ष प्रायः ३ लाख मन विदेशी चीनी खर्च होती है। १८८६-८७ ई०में कलकत्तेमें प्रत्येक व्यक्तिने लगभग १३ सेर १० छटाक चीनी खाई थी।

चीनी कपूर (हिं० पु०) एक प्रकारका कपूर।

चीनीकबाब (हिं० स्त्री०) कबाबचीनी देखो।

चीनीचम्पा (देश०) छोटे आकारका एक तरहका केला। इसको 'चिनिया केला' भी कहते हैं।

चीनी मिट्टी—चीनामट्टी देखो।

चीनीमोर (हिं० पु०) संयुक्तप्रान्त, बंगाल और आसाममें मिलनेवाला एक तरहका पक्षी। अंगरेज लोग इस पक्षीका शिकार करते हैं क्योंकि इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है।

चीन्ह (हिं० पु०) चिह्न देखो।

चीन्हना (हिं० क्रि०) परिचित होना, पहचानना।

चीप (देश०) १ जूता बनानेके काममें लानेकी लकड़ी जो सिर्फ चार अंगुलकी होती है। २ मट्टीका वह भाग जो एक बार खुदनेसे निकल आवे।

चीपड़ (हिं० पु०) नेत्रमल, आँखका कीचड़।

चीपुरपल्लि—मंद्राज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखपत्तन जिलाकी एक जमींदारी। इसमें एक छोटा गांव है। पहिले पांचदारला जमींदारीमें था।

चीफ़ (अं० पु०) १ किसी जाति या प्रान्तका अधिकारप्राप्त प्रधान, बड़ा सरदार, मुखिया, अगुआ। (वि०) २ संख्या। ३ श्रेष्ठ, प्रधान।

चीफ़कमिश्नर (अं० पु०) १ वह व्यक्ति जिसे किसी कार्य्य करनेका अधिकारपत्र मिला हो। २ वह जो किसी सूबे या कई कमिश्नरियों पर शासन करता हो। चीफ़ कमिश्नर लेफ्टिनेंट गवर्नर (छोटे लाट) से कुछ नीचे गिने

जाते हैं। छोटे लाट स्वयं गवर्नर जेनरल इन कौंसिलसे नियुक्त होते हैं और इनके अधिकारमें स्वतन्त्र प्रान्त होता है। परन्तु चीफ कमिश्नरके अधीन सीमा प्रान्त तथा मध्यप्रदेश आदि प्रान्त हैं।

चीफ़कोर्ट (अं॰ पु॰) किसी प्रान्तका प्रधान विचारालय। हिन्दुस्थानके पंजाब और दक्षिणी बरमाकी सबसे बड़ी अदालत 'चीफ कोर्ट' कहलाती है। इसके चीफ जज और जज गवर्नर-जेनरल इन कौंसिलसे नियुक्त किये जाते हैं।

चीफ़जज (अं॰ पु॰) वह व्यक्ति जो चीफ़कोर्टके जजोंमें प्रधान हो, चीफ कोर्टका प्रधान जज।

चीफ़जस्टिस (अं॰ पु॰) हाईकोर्टका प्रधान जज।

चीमड़ (हिं॰ वि॰) १ जो अमानीसे न फटे या टूटे। २ एक तरहका छोटा पौधा। यह अमलतासके जैसा होता है और इसके बीज दस्तावर होते हैं। आँख आने पर यदि इसके बीज पीस कर आँखोंमें डाले जायें तो आँखकी लाली अति शीघ्र जाती रहती है।

चीमर (हिं॰ पु॰) चीमड़ देखो।

चीर (सं॰ क्ली॰) चिनोति आप्नोति चि-क्रन् दीर्घश्च। शुसिचिमीनां दीर्घश्च। उण् २।२५। १ वस्त्रखण्ड, पुराने कपड़ेका टुकड़ा। "चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां।" (भारत १।२।५) २ वृक्षत्वक्, वल्कल, वृक्षकी छाल। ३ गोस्तन, गौका थन। ४ वस्त्रविशेष, एक प्रकारका कपड़ा। "चीवासा द्विजोऽरण्ये चरेद् ब्रह्मचर्यं व्रतम्।" (मनु ११।१०१) ५ रेखाविशेष। ६ वस्त्र, कपड़ा। ७ चूड़ा, चोटी, सिरा। "चीराणीव चुड़ानि रेजुस्तत्र महावने।" (भारत ३।१११।४८) ८ सीसक, सीसा नामक धातु। ९ चार लड़ियोंवाली मोतियोंकी माला। १० कमाऊँ, गढ़वाल तथा अन्य पार्वतीय जिलोंमें पाया जानेवाला एक तरहका पक्षी। इसकी पूंछ लम्बी और सुन्दर होती है। ११ धूपका पेड़। १२ छप्परका मांगरा। मथोथा।

चीर (हिं॰ स्त्री॰) १ चीर कर बनाया हुआ दरार या शिगाफ़। २ लड़नेका एक पेंच। यह पेंच उस समय मारा जाता है, जब विपक्षी (जोड़) पीछेसे कमर पकड़ लेता है। इसमें पहलवान अपने दहने हाथसे विपक्षीका दहना हाथ और बांये हाथसे बायां हाथ पकड़ कर उसके दोनों हाथोंको अलग हटाता हुआ निकल जाता है। ३ चीरनेका काम या क्रिया।

चीरक (सं॰ पु॰) चीर संज्ञायां कन्। १ विक्रियालेख, लिखित प्रमाणके दो भेदोंमेंसे एक। (क्ली॰) चीर स्वार्थे कन्। १ चीर देखो।

चीरगाँव, चिरगाँव देखो।

चीरना (हिं॰ क्रि॰) विदीर्ण करना, फाड़ना।

चीरनिवसन (सं॰ पु॰) १ पुराणोक्त देशविशेष, पुराणके अनुसार एक देशका नाम। यह कूर्म विभागके ईशान कोणमें बतलाया गया है। २ उस देशके अधिवासी ३ उस देशके राजा। ४ चीरधारी।

चीरपत्रिका (सं॰ स्त्री॰) चीरमिव पत्रमस्याः, बहुव्री॰, कन् टापि अत इत्वञ्च। चञ्चु साग, चेंच नामका साग।

चीरपर्ण (सं॰ पु॰) चीरमिव पर्णमस्य, बहुव्री॰। शालवृक्ष, साल नामक पेड़।

चीरफाड़ (हिं॰ स्त्री॰) चीरने फाड़नेका काम।

चीरभवन्ती (सं॰ स्त्री॰) स्त्रीकी ज्येष्ठ भगिनी। स्त्रीकी बड़ी बहन।

चीरल्लि (सं॰ पु॰) पक्षिविशेष, सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका पक्षी।

"धारयेदपि जिह्वाञ्च चाषचीरल्लि सर्पजाः।" (सुश्रुत ५।१५ अ॰)

चीरवासस् (सं॰ त्रि॰) चीरं वासो यस्य, बहुव्री॰। १ जो फटा पुराना कपड़ा पहनता हो। (पु॰) २ शिव, महादेव। ३ यक्ष।

चीरा (हिं॰ पु॰) १ पगड़ी बनानेके काममें आनेवाला एक तरहका रंगीन वस्त्र। २ वह पत्थर या खंभा जो गाँवकी सीमा पर गाड़ा गया हो। ३ वह घाव जो चीरनेसे हुआ हो।

चीराबंद (हिं॰ पु॰) वह जो दूसरोंके लिये पगड़ी बाँध कर तैयार करता हो।

चीराबंदी (हिं॰ स्त्री॰) पगड़ीकी एक तरहकी बुनावट।

चीरि (सं॰ स्त्री॰) चि बाहुलकात् क्रि दीर्घश्च। १ नेत्रांशुक, आँखका परदा। २ झिल्लिका, झींगुर। ३ कच्छटिका, कच्छ, लांग, कोछा।

चीरिका (सं॰ स्त्री॰) चीरीति कायति शब्दायते कैक-टाप्। झिल्लिका, झिल्ली, झींगुर।

चोरिणी (सं० स्त्री०) बदरीनारायणके निकटकी एक प्राचीन नदी। इसी नदीके पास वैवस्वत मनुने तपस्या की थी।

"तं कदाचित् तपस्यन्तमार्द्रं चीरजटाधरं।
चोरिणीतीरमागम्य मत्स्यो वचनमब्रवीत्॥" (भारत ३।१८७ अ०)

चोरित (सं० त्रि०) चोरं जातमस्य चोर-इतच्। जिसमें क्षाल हो गई हो।

चोरितच्छदा (सं० स्त्री०) चोरितश्चोरवदाचरितश्छदो दलं यस्याः, बहुव्रो०, टाप्। पालङ्ग शाक, पालकका साग।

चोरिन् (सं० त्रि०) चोरमस्यास्ति चोर-इनि। चोरयुक्त, जिसके कपड़े हो।

चीरो (सं० स्त्री०) चोरि-ङीष्। कर्कटिका, कन्क लांग, झिल्ली, झींगुर।

चीरोल्लि (सं० स्त्री०) चिरल्लि देखो।

चीरोवाक (सं० पु०) चीरोति शब्दो वाको वाचकोऽस्य, बहुव्री०। कीटविशेष, एक प्रकारका कीड़ा। मनुका मत है कि नमक चुरानेवाला मनुष्य दूसरे जन्ममें चीरोवाक योनिमें जन्म लेता है।

"चीरोवाकस्तु लवणं बलाका शकुनिर्दधि।" (मनु १२।६१)
'चीरोवाकाख्य उच्चैःस्वरः कीटः।' (कुल्लूक)

चोरुक (सं० क्ली०) चो इति कृत्वा रौति रु-क। १ फलविशेष, एक प्रकारका फल। इसका गुण—रुचिकर, दाहजनक, कफ और पित्तवर्द्धक एवं अम्लरस है। (राजवल्लभ)

चीर्ण (सं० त्रि०) चर-क्त पृषोदरादित्वादत इत्वं। १ कृत, किया हुआ। २ शीलित, अभ्यस्त, रक्षा हुआ। ३ विभक्त, बाँटा हुवा। ४ सम्पादित, बनाया हुआ।

"चीर्णव्रतानपि सदाः क्षतस्रंहितानिमान्।" (याज्ञवल्क्य)

५ विदारित, फाड़ा हुआ, चीरा हुआ।

चीर्णपर्ण (सं० पु०) चीर्णं विदारितं पर्णं यस्य, बहुव्री०। १ नीमका पेड़। २ खजूरका पेड़। (मेदिनी)

चील (हिं० स्त्री०) पचीविशेष। गिद्ध और बाजकी जातिकी एक चिड़िया जो उनसे कुछ दुर्बल होती है। इसकी आँखें गोल, दृढ़ और अग्रभागमें टेढ़ी होती हैं। पैरोंकी उंगलियां टेढ़ी और उनके नख पैने हैं। डैने लम्बे तथा पूंछ छोटी अखंड अथवा बड़ी और दो भागोंमें विभक्त होती है। यह कबूतरोंसे ३।४ गुनी बड़ी होती है। इसके डैने फैलने पर २६।२७ इञ्च हो जाते हैं। भारतवर्षमें प्रायः पांच तरहकी चील देखनेमें आती है। जिनमेंसे शङ्ख (अथवा शङ्कर), डोमरी और धोबिन ये तीन प्रकारकी चील साधारणतः बङ्गालमें मिलती हैं। इनके सिवा अफ्रीका और अमेरीकामें और भी नाना तरहकी चीलें पाई जाती हैं। यह कीड़े, मकोड़े, चुहे मछलियाँ, गिरगिट और अन्यान्य छोटे छोटे पक्षी खाया करती है। मुर्दोंका मांस भी खाती है। किसी जगह मरा हुआ साँप, चूहा या दूसरी कोई मड़ी चीज पड़ी रहनेसे यह उसे तुरंत उठा ले जाती है। गांवोंमें जहाँ रास्ता आदिके साफ करनेका कोई बन्दोबस्त नहीं वहां यह रास्ता साफ करनेका काम करती है। यह अपने शिकारको देखते ही बड़ी सावधानीसे तिरछी उतरती है और बिना ठहरे झपट्टाके साथ उसे ले कर आकाशकी तरफ निकल जाती है। शिकारको यह उड़तेमें भी खा लेती है। यह बिना डैने हिलाये बहुत देर तक आकाशमें शिकारके चारों तरफ चक्कर लगाया करती है। कोई कोई चील पानीमें झपट्टा मार कर मछलियां पकड़ती है, कभी कभी यह धोखेमें पानीमें भी डूब जाती है और बड़ी मुश्किलसे किनारे लग उड़ जाती है। बाजारोंमें मछली और मांसकी दूकानोंके आस पास बहुतसी चीलें उड़ती रहती हैं। जहां ज्योनार होती है, वहां असंख्य चीलें इकट्ठी हो कर खानेमें बाधा डालती हैं। यह गरम देशोंमें रहना ज्यादा पसन्द करती है।

शङ्खचीलका रंग कत्थईकी लिये हुये लाल होता है। इसकी नार सफेद होती है। डोमचीलका वर्ण कालेपनको लिए धूसर होता है। यह देखनेमें अत्यन्त कदर्य होती है। पुराणोंके मतानुसार—भगवतीने किसी समय शङ्खचीलका रूप धारण किया था, इसलिए या यह देखनेमें अच्छी होती है इसलिए इस देशके लोग इसे आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। रविवारको बहुतसे इसे मांसादि खिलाते हैं। कोई कोई इसका मिलना यात्राके लिए शुभ समझते हैं।

इस चीलको कोई मारता नहीं, इसलिए यह बड़ी

निडर होती है। लोगोंके हाथसे, विशेषतः बच्चोंके हाथसे यह बड़ी फुर्तीके साथ झपट्टा मार कर मिठाई आदि छीन ले जाती है। बहुतोंको ऐसा विश्वास है कि, शङ्खचील विष्णुका विमान और गरुड़का ही रूपान्तर है। अंग्रेज लोग इसे ब्राह्मणी-चील (Brahmany Kite) कहते हैं। सफेद और काले रंगकी और भी अनेक तरहकी चील देखनेमें आती हैं।

पौष और माघके महीनेमें यह २।३ अण्डे देती है। ऊँचे वृक्षोंकी डालियों पर मन्दिर या बड़े बड़े मकानोंके शिखर पर या पहाड़ोंके ऊपर यह अपना घोंसला बनाती है। यह अण्डोंकी बड़ी होशियारीके साथ रक्षा करती है और अण्डे फूटने पर अपने बच्चोंको अन्यान्य चिड़ियोंके घोंसलोंसे छोटे छोटे बच्चे ला कर खिलाती है। इसके ग्रासमें हंस और मुर्गीके बच्चे ही ज्यादा पड़ते हैं। उड़ते उड़ते या दूसरी किसी चिड़ियाके साथ विरोध पड़ने पर यह बड़ी जोरसे "चीं चीं" शब्द करती है, इसीलिए इसका नाम चील (चिल्ल) पड़ा है। चील ज्यादा ऊँचे पर अच्छी उड़ सकती है। इसकी दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण होती है। चिल्ल देखो।

चीलड़ (हिं० पु०) चिल्लर देखो।

चीलर (देश०) कीटविशेष, एक प्रकारका कीड़ा जो जूँसे मिलता जुलता है। यह कीड़ा मैले कपड़ोंमें पड़ जाता है।

चीला (हिं० पु०) चिलड़ा देखो।

चीलिका (सं० स्त्री०) चीति शब्दं लाति ला-क-टाप्-अत इत्वं यद्वा चीरिका पृषोदरादित्वात् रेफस्य लकारः। झिल्लिका, झिल्ली, झींगुर।

चीलू (सं० पु०) एक तरहका पहाड़ी मेवा जो आड़ूकी तरह होता है।

चील्लक (सं० पु०) चीदिति शब्दं लकति लक-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। झील्लिका, झिल्ली।

चील्ह (हिं० स्त्री०) चील देखो।

चीवर (सं० क्ली०) चीयते तण्डुभिः चि-ष्वरच् निपातने साधुः। (उण् ३।१) १ भिक्षुप्रावरण, योगियों या भिक्षुकोंका फटा पुराना कपड़ा।

"कौपीनाच्छादनं यावत्तावदिच्छेच्च चीवरं।" (भारत १।९१।१२)

२ बौद्ध संन्यासियोंके पहननेके वस्त्रका ऊपरी भाग। इनके परिधेय दो भागोंमें विभक्त हैं—ऊपरके भागको चीवर और नीचेके भागको निवास कहते हैं।

चीवरिन् (सं० पु०) चीवरमस्त्यस्य चीवर-इनि। १ बौद्धभिक्षु, बौद्ध भिक्षुक। २ भिक्षुक, भिखमङ्गा।

चीस (सं० स्त्री०) टीस देखो।

चुंगना (हिं०) चुगना देखो।

चुंगल (हिं० पु०) १ पक्षियों या जानवरोंका टेढ़ा या झुका हुआ पंजा, चंगुल। २ मनुष्यका बटोरा हुआ पंजा, बकोटा।

चुंगली (देश०) एक तरहका आभूषण जो नाकमें पहना जाता है, एक तरहकी नथ।

चुंगी (हिं० स्त्री०) १ किसी वस्तुका उतना परिमाण जितना चुंगलमें समाता हो, चुटकी भर चीज। २ शहरके भीतर आनेवाले बाहरी माल पर लगनेका महसूल।

चुंघाना (हिं० क्रि०) चुसाना, चुसा कर पिलाना।

चुंचुड़ा—बङ्गालके हुगली जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २२° ५३´ उ० और देशा० ८८° २४´ पू०के मध्य हुगली नगरसे कुछ दक्षिण भागीरथीके पश्चिम तट पर अवस्थित है। अब चुंचुड़ा हुगली मिउनिसिपैलिटीके अन्तर्गत हो गया है। १७वीं शताब्दीमें ओलन्दाजोंने यहां उपनिवेश स्थापित किया था। १८५८ ई० तक यह नगर उन्हींके अधिकारमें रहा। इसके बाद यह अंगरेजोंको सौंप दिया गया। पहले यहां आतुर-सेनानिवास और इंगलैण्डके यात्री अथवा इङ्गलैण्डसे आये हुए सैनिकोंके रहनेका अड्डा था। अब यह उठ गया है। उस स्थानमें अब पोष्टआफिस, स्कूल आदि बना दिये गये हैं। यहां दिगम्बर जैनोंका एक प्राचीन मन्दिर है। मन्दिरमें अनेक दि० जैन-मूर्तियां हैं। जिनमें एक चतुर्थ कालकी प्रतिमा भी विराजमान हैं। इसका प्रबन्ध कलकत्तेके दि० जैन पञ्चोंके हाथमें है। लोकसंख्या प्रायः २९३८३ है।

चुँटली (देश०) घुँघची।

चुँधलाना (हिं० क्रि०) चौंधना, चकाचौंध होना, आंखोंका तिलमिलाना।

चुंधा (हिं० वि०) जिसे अच्छी तरह दीख न पड़े, जिसकी छोटी छोटी आँखें हों।

चुँभना (हिं० क्रि०) चुभना देखो।

चुआ (देश०) १ गोधूमविशेष, एक प्रकारका पहाड़ी गेहूं। (पु०) २ चोआ देखो।

चुआई (हिं० स्त्री०) १ चुआनेका काम, टपकानेकी क्रिया। २ वह मजदूरी जो चुआनेसे मिलती हो।

चुआक (हिं० पु०) वह छेद जिससे जल आवे।

चुआन (हिं० स्त्री०) नहर, गड्ढा, सोता, जल आनेका स्थान।

चुआना (हिं० क्रि०) १ टपकाना, बूँदबूंद गिरना। २ किसी चीजसे अर्क उतारना।

चुआव (हिं० स्त्री०) चुआनेकी क्रिया या भाव।

चुकंदर (फा० पु०) खारी मिट्टीमें उगनेवाली एक प्रकारकी जड़। यह गाजर या शलगमकी तरह होती है। इसका रंग लाल होता है। यह तरकारीके काममें आती है। समुद्रके किनारे चुकंदर बहुत उपजती है क्योंकि वहां खारी मिट्टी या खारा पानी मिलता है।

चुक (हिं० पु०) चूक देखो।

चुकचुकाना (हिं० क्रि०) १ रस कर बाहर फैलना। २ आर्द्र होना, पसीजना, चूचाना।

चुकचुहिया (हिं० स्त्री०) १ बहुत सवेरे बोलनेवाली एक तरहकी चिड़िया। २ चमड़े या रबरका बना हुआ एक प्रकारका खिलौना जो दबानेसे पक्षी सरीखे चूँचूँ शब्द करता है।

चुकटा (हिं० पु०) चंगुल, चुटकी।

चुकता (हिं० वि०) निःशेष, बेबाक, अदा, वसूल।

चुकती (हिं० वि०) चुकता देखो।

चुकती-आईन—चुकता या बेबाक करनेका एक कानून। यह १८७२ ई०की ८वीं धाराके नामसे परिचित है। १८७२ ई०में २५ अप्रेलको यह कानून गवर्नर जनरल द्वारा अनुमोदित और उसी वर्षके सेप्टेम्बर मासकी १ली तारीखसे भारतवर्षके अंग्रेजाधिकृत प्रदेशोंमें प्रचलित हुआ। किसी प्रकृतिस्थ व्यक्तिके अन्य किसी प्रकृतिस्थ व्यक्तिके साथ कोई कार्य करने वा न करनेके लिए कानूनके अनुसार जो अङ्गीकार करना है, उसे ही चुकती कहते हैं। चुकती साक्षीके सामने वाचनिक वा लिखित दोनों तरहसे हो सकती है। गैरकानून, डर दिखा कर, जबरदस्ती, धोखेसे या बेहोशीमें लिखाई हुई चुकती अदालतमें अग्राह्य है। चुकतीकी एक भी शर्त अगर कानूनसे विरुद्ध हो, तो तमाम शर्त्तें रद्द हो जाती हैं। कोई अनिश्चित भविष्यत् घटनामूलक चुकतीको अनिश्चित (Contingent) चुकती कहते हैं। ऐसी चुकतीमें लिखी हुई भविष्यत् घटना यदि कार्यरूपमें परिणत न हो अथवा उसकी घटना असम्भव न हो तो वह कार्यकारी वा रद्द नहीं होती। वह घटना यदि बिल्कुल ही असम्भव हो, तो दोनों पक्षवाले जानें चाहे न जानें, चुकती रद्द हो जायगी। परस्पर कोई काम करनेके लिए दोनों पक्षवाले यदि चुकती करें, तो प्रत्येक पक्षको चुकतीमें लिखा हुआ वा अङ्गीकृत कार्य करनेके लिए प्रस्ताव करना होगा। दो वा ततोधिक व्यक्ति यदि मिलित चुकतीमें किसीके द्वारा बंध जांय, तो हर एक व्यक्ति अन्य समस्त व्यक्तियोंको चुकतीमें लिखी हुई शर्तोंको पालनेके लिए बाध्य कर सकता है। जब चुकतीके एक पक्षवाले अपनी शर्तोंको पालनेके लिए तयार न हों, तो दूसरे पक्षवालोंको भी निर्दिष्ट शर्त नहीं पालनी पड़ती। दोनों पक्षोंकी सम्मतिसे कोई भी चुकती परवर्ती चुकतीके द्वारा रद्द या परिवर्तित होने पर पूर्ववर्ती चुकतीके नियम नहीं पालने पड़ते। उन्मत्त वा आतुर व्यक्तियोंके प्रतिपालनादिके विषयमें प्रकाश्य चुकती न होने पर भी चुकती ग्राह्य रहती है, तथा कानून बाध्य न होने पर भी दूसरा कोई यदि ऐसे आदमीका प्रतिपालन करे, तो उसकी सम्पत्तिसे वह खर्च पा सकता है।

चुकतीमें लिखी हुई शर्त्तोंका यदि भङ्ग किया जाय, तो क्षतिग्रस्त पक्ष अन्य पक्ष पर अदालतमें क्षतिपूर्तिकी नालिश कर सकता है, किन्तु वह क्षति परोक्ष वा अन्य कारणसे न होनी चाहिये।

यदि कोई व्यक्ति निर्दिष्ट परिमाणमें कोई वस्तु किसीको बेचनेकी स्वीकारता दे दे और उसका अधिकांश वा पूरा मूल्य ले ले, तो चुकतीके नियमानुसार वह उस चीजको दूसरे किसी व्यक्तिको नहीं बेच सकता।

चुकतीमें यदि यह लिखा रहे, कि विक्रेता विक्रेय वस्तु को विक्रयोपयोगी बना कर देगा, तो जब तक वह काम न हो जाय, तब तक क्रेता उसको लेनेके लिये बाध्य नहीं है। चुकती हो चुकनेके बाद उस वस्तुके नफा नुकसानका मालिक क्रेता होता है। विक्रेय वस्तु विक्रताके अधिकारमें न रहने पर भी उसके विक्रयको चुकती हो सकती है। विक्रेता निर्दिष्ट दिनके भीतर उस वस्तुको (कहींसे भी संग्रह करके) देनेके लिए बाध्य है। चुकतीमें विशेष कुछ उल्लेख न हो तो विक्रेय वस्तु क्रेताको वहीं लेनी पड़ती है। जहां वह विक्रय करते समय रहे यदि विक्रयके समय वह वस्तु तय्यार न हो, तो क्रेताको जहां वस्तु हो, वहींसे लेनी पड़ती है चुकतीमें विशेष निर्देश न हो, तो विक्रेता पूरा मूल्य न मिलने तक मालको रोक सकता है।

कोई किसीके पास कोई चीज गहने रखे तो रक्षक उस चीजको यथोचित सम्हाल रखनेके लिए बाध्य है। यथोचित सम्हाल करने पर भी यदि वह चीज बिगड़ जाय और चुकतीमें अन्यथा कुछ उल्लेख न रहे, तो रक्षक उसके लिए जिम्मेवार नहीं होगा। जो चीज जिस कामके लिए दी जाय, उसके अलावा उससे अगर और कोई काम लिया जाय, तो उसकी क्षतिपूर्तिके लिए रक्षक जिम्मेवार है। उस रक्खी हुई चीजमें यदि कोई दोष हो, तो रखनेवाला उस दोषको रक्षकसे कहनेके लिए बाध्य है, अन्यथा रक्षकको कुछ क्षति पहुंचने पर रखनेवाला उसके लिए जिम्मेवार है।

किसी व्यक्तिके क्षमतापन्न प्रतिनिधि वा कर्मचारीके साथ चुकती करनेसे प्रथम व्यक्तिके साथ चुकती सिद्ध होती है। प्रतिनिधिकी क्षमता प्रकाश्य न होने पर वह अवस्थाके अनुसार गुप्त रहती है। विशेष विशेष जगह प्रतिनिधि मालिककी तरह काम कर सकता है। प्रतिनिधिके क्षमताके अतिरिक्त कोई कार्य करने पर मालिक उसे अग्राह्य वा ग्राह्य कर सकता है। उससे यदि कोई हानि हो, तो प्रतिनिधि उसके लिए जिम्मेवार है।

ऐसे कार्यका कोई भी अंश ग्राह्य करने पर सभीको ग्राह्य करना होता है। प्रतिनिधि मालिकके आदेशानुसार कार्य करनेके लिए बाध्य है, प्रकाश्य आदेश न हो तो व्यवहारानुसार कार्य करनेके लिए बाध्य है। मालिक प्रतिनिधि द्वारा आईन सङ्गत किये हुए सभी कार्योंके लिए जिम्मेवार है। गैरकानून कामके लिए मालिक जिम्मेवार नहीं।

चुकना (हिं० क्रि०) १ निःशेष होना, समाप्त होना, खतम होना, बाकी न रहना। २ निबटना, ते होना। ३ चुकता होना, बेबाक होना। इस क्रियाका प्रयोग व्यङ्गमें भी होता है, जैसे — वह अब दे चुका' अर्थात् वह अब न देगा। इसके सिवा अन्य क्रियाओंके साथ समाप्तिका अर्थ देनेके लिए भी इसका प्रयोग होता है, जैसे—'तुम व्यालू जीम चुके' आदि।

चुकरैंड़ (देश०) सर्पविशेष, एक तरहका सांप जिसे दो मुंह होते हैं। ऐसे सांपको गूंगी भी कहते हैं।

चुकवाना (हिं० क्रि०) अदा कराना, बेबाक कराना, दिलाना।

चुकाई (हिं० स्त्री०) चुकनेका भाव।

चुकाना (हिं० क्रि०) परिशोध करना, बेबाक करना, वसूल करना।

चुकिया (देश०) वह छोटा बरतन जिससे तेली घानीमें जल देता है, कुल्हिया।

चुकौता (हिं० पु०) ऋणका परिशोध, कर्जकी सफाई।

चुक्कड़ (हिं० पु०) जल शराब आदि पीनेका मिट्टीका गोल छोटा बरतन।

चुक्कार (सं० पु०) चुक भावे अच्, चुक्कं पीड़नं आराति सम्यक् ददाति चुक्क-आ-रा-क। सिंहनाद, सिंहकी गरज।

चुक्की (हिं० स्त्री०) धोखा, छल, कपट।

चुक्र (सं० क्ली०) चकते तृप्यत्यनेन चक-रक् उत्वं च। चकिरम्योरुच्चोपधायाः। उण् २।१४। १ अम्लरस, सड़ाया हुआ अम्लरस, कांजी, संधान। २ अम्लद्रव्यविशेष, चुक नामकी खटाई, चुक महाम्ल। इसका पर्याय—तिन्तिड़ीक, वृक्षाम्ल, चुक्रक, महाम्ल, अम्लवृक्षक। ३ पत्रशाक विशेष, एक प्रकारका खट्टा साग, चूकाका साग। इसका संस्कृत पर्याय—चुक्रवास्तूक, शिकुच, अम्लवास्तुक, दलाम्ल, अम्लशाकाख्य, अम्लादि और हिलमोचिका है। इसका गुण—अम्लरस, लघु, उष्ण, वातगुल्मनाशक,

रुचिकर, अग्निवृद्धिकर, पित्तवृद्धिकर और पथ्य है। ४ शुक्तविशेष। ५ काञ्जिकविशेष, कांजो। इसका पर्याय—सहस्रवेध रसाम्ल, चुक्रवेधक, शाकाम्ल, भेदन, चन्द्र, अम्लसार और चुक्रिका है। इसका गुण—स्वादु, तिक्त, अम्ल एवं कफ, पित्त, नासिकारोग, दुर्गन्ध और शिरःपीड़ानाशक है। ६ रसाम्ल। ७ सन्धानविशेष, सड़ाया हुआ अम्लरस। वैद्यकपरिभाषाके मतानुसार मस्त्वादि, गुड़, मधु और काञ्जिकको एक परिष्कार पात्रमें रख कर तीन रात्रि तक धान्यके मध्य रख देवें। इसीको चुक्र कहते हैं।

"यन्मस्त्वादि शुचौ भाण्डे सगुडक्षौद्रकाञ्जिकं।
धान्यराशौ त्रिरात्रस्थं शुक्तं चुक्रं तदुच्यते।" (वैद्यकपरि०)

(पु०) ८ अम्लवेतस, अमलवेत।

चुक्रक (सं० क्लो०) चुक्र संज्ञायां कन्। १ शाकविशेष, चूकाका साग। इसका गुण - भेदक, वायुनाशक, पित्तवृद्धिकर और गुरु है। चुक्र स्वार्थे कन्। २ चुक्र देखो।

चुक्रकेतु (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलवेत।

चुक्रचण्डिका (सं० स्त्री०) तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका पेड़।

चुक्रफल (सं० पु०) चुक्रं फलं यस्य, बहुव्रो०, यद्वा चुक्रं फलति फल-अच्। वृक्षाम्ल, इमली।

चुक्रवास्तूक (सं० क्लो०) चुक्रं वास्तूकमिव। शाकविशेष, अमलोनीका साग।

चुक्र वृहत्—औषधविशेष, एक दवा। इसके बनानेकी प्रणाली इस प्रकार है—चावलका पानी ४ सेर, कांजी १२ सेर, दही २ सेर, कांजीके नीचेकी सीठी १ सेर, गुड़ २ सेर, इन सबको एक घड़ेमें डाल कर उसमें बिना छिलकेका अदरक (टुकड़े बना कर) २ सेर, संधानमक, जीरा, मिर्च, पीपल और हल्दी प्रत्येक २ पल ये सब डाल देना चाहिये; फिर घड़ेका मुंह सरवेसे ढक कर कपड़े और मिट्टीका लेप कर देना चाहिये। उस घड़ेको गरमियोंमें ३ दिन, शरद् ऋतुमें ३ दिन, वर्षाऋतुमें ४ दिन, वसन्त ऋतुमें ६ दिन और शीत ऋतुमें ८ दिन तक अनाजके भीतर रखना पड़ता है। इसके बाद उसे निकाल कर दारचीनी, तेजपत्ता, इलायची, नागकेशर प्रत्येकका २ तोला, इनको अच्छी तरह पीस कर उसमें मिला देना चाहिये। इसीको वृहत्चुक्र या चुक्रवृहत् कहते हैं। इसके सेवनसे मन्दाग्नि, शूल, गुल्म आदि नाना रोग नष्ट हो जाते हैं। (भैषज्यर०)

चुक्रवेतस (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलवेद।

चुक्रवेधक (सं० क्लो०) काञ्जीविशेष, कांजी, सिर्का।

चुक्रशाक (सं० पु०) चुक्र पालङ्क, अमलोनीका साग।

चुक्रस्वल्प—साफ सुथरी मलरियामें गुड़ १ भाग, मधु २ भाग, कांजी ४ भाग और दहीकी लोनी ८ भाग, इनको इकट्ठा मिला कर तीन दिन अनाजमें रख देनेसे वह विकृत हो जाता है। उस विकृत वस्तुका नाम है शुक्र या चुक्र। वृहत् चुक्रके साथ पार्थक्य रखनेके लिए इसे स्वल्पचुक्र या चुक्रस्वल्प कहते हैं।

चुक्रा (सं० स्त्री०) चुक्र-टाप्। १ चाङ्गेरी, अमलोनीका साग। २ तिन्तिड़ी, इमली।

चुक्राम्ल (सं० क्लो०) चुक्रमिवाम्लं। १ वृक्षाम्ल, चूक नामकी खटाई। २ शाकविशेष, चूकाका साग।

चुक्राम्ला (सं० स्त्री०) चुक्रमिव अम्लं अम्लत्वं यस्याः बहुव्रो०, टाप्। १ अम्ललोणिका, अमलोनीका साग। २ काञ्जिकभेद, एक प्रकारकी कांजी।

चुक्रिका (सं० स्त्री०) चुक्रो विद्यते ऽस्याः चुक्र-ठन् टाप्, अत इत्वं। १ अम्ललोणिका, अमलोनीका साग नोनिया। इसका संस्कृत पर्याय—चाङ्गेरी, दन्तशठा, अम्बष्ठा और अम्ललोणिका है। २ कुचाङ्गेरी, चूकाका साग। ३ तिन्तिड़ी, इमली। (भावप्रकाश)

चुक्रिमन् (सं० पु०) चुक्र भावे इमनिच्। अम्लत्व, खटाई।

चुक्री (सं० स्त्री०) चुक्र गौरादित्वात् ङीष्। चाङ्गेरी, अमलोनीका साग। इसका गुण—अत्यन्त अम्लरस, स्वादु, वातनाशक, कफ और पित्तवर्द्धक, लघु एवं रुचिकर है। बैंगनके साथ पाक करने पर यह अत्यन्त रुचिकर है। (भावप्रकाश)

चुक्षा (सं० स्त्री०) चष वधे बाहुलकात् स पृषोदरादित्वात् साधु। हिंसा, वध। चोष देखो।

चुखाना (हिं० क्रि०) १ गाय दुहनेके पहले उसके बछड़े-को पिलाना। २ चखाना।

चुगद (फा० पु०) १ उल्लू नामका पक्षी। २ मूढ़, मूर्ख, बेवकूफ।

चुगना (हिं० क्रि०) चोंचसे दाना उठाना, चोंचसे दाना बिनना।

चुगल (फा० पु०) १ वह जो परोक्षमें दूसरेकी निन्दा करता हो, पीठ पीछे शिकायत करनेवाला, लुतरा। २ गिट्टो, गिट्टक, चिलमके छेद पर रखनेका कंकड़।

चुगलखोर (फा० पु०) किसीकी अनुपस्थितिमें निन्दा करनेवाला, इधरकी उधर लगानेवाला, लुतरा।

चुगलखोरी (फा० स्त्री०) निन्दा करनेकी क्रिया या भाव चुगली खानेका काम।

चुगलस (देश०) काष्ठविशेष, एक तरहकी लकड़ी।

चुगली (फा० स्त्री०) किसीकी अनुपस्थितिमें शिकायत, पीठ पीछे शिकायत।

चुगा (हिं० पु०) चिड़ियोंके आगेका अनाज, चिड़ियोंका चारा।

चुगाई (हिं० स्त्री०) १ चुगनेका भाव या क्रिया। चुगानेकी मजदूरी।

चुगाना (हिं० क्रि०) पक्षियोंको दाना खिलाना, चिड़ियोंको चारा डालना।

चुगुलखोर (हिं० पु०) चुगलखोर देखो।

चुगुलखोरी (हिं० स्त्री०) चुगलखोरी देखो।

चुग्गा (हिं० पु०) चुगा देखो

चुग्घी (देश०) चाट, चसका।

चुचकारना (अनु० क्रि०) मीठी बोली मुखसे निकालना, चुमकारना, पुचकारना, प्यार दिखाना।

चुचकारी (अनु० स्त्री०) पुचकारनेकी क्रिया या भाव।

चुचाना (हिं० क्रि०) रसना, टपकना, चूना, गरना, कण, कण या बूँद बूँद करके निकलना।

चुचु (हिं० पु०) चञ्चु देखो।

चुचुक (सं० पु०-क्ली०) चु चु इत्यव्यक्तशब्दं कायति कै-क। १ कुचाग्र भाग, स्तनके सिरेकी ढिपनी। इसका पर्याय चूचुक, चुचूक, कुचानन और स्तनवृन्त है। २ दक्षिण देशविशेष, दक्षिण भारतका एक प्राचीन देश। (पु०) ३ उक्त देशके निवासी।

"गुहाः पुलिन्दाः शवरा चूचुका मद्रकैः सह।" (भारत १।२०७।४२)

चुचुप (सं० पु०) १ देशविशेष। २ उक्त देशके निवासी।

"च्चालचराश्च चुचुपा देशपालका।" (भारत ५।१९८ अ०)

चुच्चू (सं० पु०) चञ्चुत् बाहुलकात् उ निपातने साधुः। सुनिषण्ण शाक, चौपतिया साग।

चुचूक (सं० पु०) चुचुक पृषोदरादित्वात् साधु। चुचुक देखो।

चुञ्चु (सं० पु०) शाकविशेष, पालककी भांतिका एक साग। इसे चौपतिया भी कहते हैं। पालक देखो। सुश्रुतके मतसे इसके गुण—कषाय, स्वादु, तिक्त, रक्तपित्त-नाशक, कफघ्न, वायुवृद्धिकर, संग्राही और लघु है। किसी किसी आभिधानिकके मतसे इस अर्थमें "चुच्च" शब्द भी देखा गया है।

चुञ्चू (सं० पु०) सुनिषण्णक शाक, चणपत्ति साग, चौपतिया।

चुञ्चु (सं० पु०) १ छुछुन्दरी, छछुन्दर। २ सङ्कर जाति-विशेष। बौधायनके मतसे इसकी उत्पत्ति वैदेह जातीय स्त्री और ब्राह्मणसे हुई है।

"चुञ्चुमद्गुष वैदेहवन्दिस्त्रियोर्ब्राह्मणेन जातौ।" (बौधायन)

मनुके मतानुसार जंगली पशुओंकी हिंसा करना ही इन लोगोंकी प्रधान जीविका है।

"मेदान्ध्रचुञ्चुमद्गूनामारण्यपशुहिंसनं।" (मनु० १०।४८)

३ त्रिशङ्कु वंशीय हरितके पुत्र। (विष्णुपु० ४।३।२५) किसी किसी पुस्तकमें चुञ्चुकी जगह चञ्चु जैसा लिखा गया है। ४ क्षुपविशेष, एक बूटी या पौधा, चिनियारी।

चुञ्चुक (सं० पु०) बृहत्संहिताके अनुसार नैऋत्य कोण पर स्थित एक देश।

चुञ्चुपत्र (सं० पु०) चुञ्चुक्षुप, चिनियारी।

चुञ्चुमायन (सं० क्ली०) वातश्लेष्मके लिये व्रणकी एक अवस्था।

"कण्डुस्फुरण चुञ्चुमायनप्रायः पाण्डुघनरक्तस्रावी चेति वातश्लेष्मोत्थितेभ्यः।" (सुश्रुत चि० १ अ०)

चुञ्चुरी (सं० स्त्री०) चुञ्चुरिव राति रा-क स्त्रियां ङीप्। वह जूआ जो इमलीके बीजोंसे खेला जाता हो।

चुञ्चुल (सं० पु०) गोत्रप्रवर्त्तक विश्वामित्र मुनिके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश २७ अ०)

चुञ्चुलि (सं० स्त्री०) चुञ्चुरी देखो।

चुञ्चुली (सं० स्त्री०) चुञ्चुरी विकल्पे रेफस्य लकारः। चुञ्चुरी देखो।

चुटक (देश०) १ एक प्रकारका गलीचा। (स्त्री०) २ चुटकी।

चुटकना (हिं० क्रि०) चाबुक मारना, कोड़ा मारना।

चुटका (हिं० पु०) १ बड़ी चुटकी। २ आटा या किसी अन्नका उतना परिमाण जितना चुटकीमें समाता हो।

चुटकी (हिं० स्त्री०) १ अंगूठे और मध्यमा उंगलीके मिलानेकी स्थिति, किसी पदार्थको दबाने या लेनेके लिये अंगुठे और बीचकी उंगलीका मेल। २ चुटकी भर परिमाणका आटा या कोई दूसरा अनाज। ३ चुटकी बजनेकी आवाज। ४ बंदूकके प्यालेका ढकना, बंदूकका घोड़ा। ५ कटारदार गुलबदन या मशरू। ६ एक तरहका आभूषण जो पैरकी उंगलियोंमें पहना जाता है। ७ वस्त्र पर अङ्कित करनेकी एक रीति, कपड़ा छापनेका एक तरीका। ८ पेंचकश। ९ वह सूत जो दरीके तानेमें रहता है। १० अंगूठे और तर्जनीसे किसी प्राणीकी खालको दबानेका काम। ११ अंगूठे और तर्जनीसे मोड़ कर बनाया हुआ गोटा जिसे गोखरू कहते हैं। १२ काठ आदि बनी हुई चिमटी जिसमें कागज या और कोई हलकी चीज पकड़ा देनेसे वह उड़ने वा खिसकने नहीं पाती।

चुटकुला (हिं० पु०) १ विनोदपूर्ण बात, चमत्कारपूर्ण उक्ति, विलक्षण बात, मजेदार बात। २ दवाका वह नुसखा जो बहुत गुणकारक और छोटा हो, लटका।

चुटिया (हिं० स्त्री०) सिरके ठीक बीचमें रक्खो जानेकी बालोंकी लट, शिखा, चुटी। सिर्फ हिन्दुओंमें इस तरहकी शिखा रखी जाती है।

चुटीलना (हिं० क्रि०) चोट पहुंचाना।

चुटीला (हिं० वि०) १ जिसे चोट लगी हो, चोट खाया हुआ। २ सिरेका सबसे बढ़िया, चोटीका। (पु०) ३ छोटी चोटी, मेंढ़ी, अगल बगलकी पतली चोटी।

चुटैल (हिं० वि०) घायल, जिसे चोट लगी हो।

चुड (हिं० स्त्री०) चुड्ड देखो।

चुड़ाव (देश०) वन्य जातिविशेष, एक जंगली जाति।

चुड़िहारा (हिं० पु०) वह जो चूड़ी बनाता या बेचता हो।

चुडुका (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक तरहकी चिड़िया। *यह मालकी तरह होता है। इसकी चोंच और पैर काले* पीठ मटमैले रंगकी तथा पूंछ कुछ लंबी होती है।

चुड़ेसवाल (देश०) वैश्योंकी एक जाति।

चुड़ैल (हिं० स्त्री०) १ भूतकी स्त्री, भूतनी, प्रेतनी, पिशाचिनी। २ कुरूपा और विकराल स्त्री। ३ क्रूर स्वभावकी स्त्री, दुष्टा।

चुड्ड (हिं० स्त्री०) भग, योनि।

चुड्डी (हिं० स्त्री०) स्त्रियोंके देनेकी एक प्रकारकी गाली, छिनाल।

चुण्डा (सं० स्त्री०) चुडि-अच् स्त्रियां टाप्। कूप, कुआं। किसी किसी पुस्तकमें चुण्डाको जगह चुल्ढा लिखा गया है।

चुण्डी (सं० स्त्री०) चण्ड गौरादित्वात् ङीप्। उपकूप, कुओंके समीपका जलाधार।

चुत (सं० पु०) चोतति क्षरति शोणितादि अकस्मात् चुत बाहुलकात् घञर्थे कः। १ मलद्वार, गुदद्वार। २ योनि, भग।

चुति (सं० स्त्री०) चोतति क्षरति मलशोणितादि यस्याः चुत-इन्। सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७। मलद्वार।

चुत्यल (हिं० वि०) विनोदप्रिय, ठट्ठेबाज, ठठोल, मसखरा।

चुत्यलपना (हिं० पु०) हंसी दिल्लगी, मसखरापन, ठठोली।

चुत्या (हिं० पु०) घायल बटेर, जख्मी बटेर।

चुद—१ बम्बईके काठियावाड़के अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २२° २३´ से २२° ३०´ उ० और देशा० ७१° ३७´ से ७१° ५१´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२००५ है। इसमें कुल १३ ग्राम लगते हैं। यहांके राजाकी उपाधि ठाकुर है।

२ उक्त राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २२° २८´ उ० और देशा० ७१° ४४´ पू०में अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ५५८१ है। भवनगर वढ़वान रेलवेका यहां एक स्टेशन है।

चुदक्कड़ (हिं० वि०) अत्यन्त कामी, हदसे ज्यादा स्त्री प्रसंग करनेवाला।

चुदना (हिं० क्रि०) पुरुषसे संयुक्त होना।

चुदवाई (हिं० स्त्री०) १ चुदाई देखो। २ प्रसंग करने या करानेके बदले दिया गया धन।

चुदवाना (हिं॰ क्रि॰) चुदाना देखो।

चुदवास (हिं॰ स्त्री॰) मैथुन करानेकी इच्छा।

चुदवासी (हिं॰ स्त्री॰) पुरुष प्रसङ्ग करनेवाली स्त्री, वह स्त्री जिसे मैथुन करानेकी कामना हो।

चुदवैया (हिं॰ पु॰) वह जो स्त्री प्रसंग करता हो।

चुदाई (हिं॰ स्त्री॰) १ स्त्री प्रसंग, मैथुन। २ मैथुनके बदले दिये जानेका धन।

चुदाना (हिं॰ क्रि॰) पुरुषसे संभोग करना, मैथुन कराना।

चुदास (हिं॰ स्त्री॰) स्त्री प्रसंग करनेकी कामना।

चुदासा (हिं॰ स्त्री॰) विषयी मनुष्य, वह जिसको स्त्री प्रसंग करनेकी चाह हो।

चुदौवल (हिं॰ स्त्री॰) मैथुन करनेकी क्रिया या भाव।

चुन (हिं॰ पु॰) चूर्ण, आटा, पिसान।

चुनचुना (देश॰) १ यन्त्रविशेष, एक तरहका औजार जो कसेरोंके काममें आता है। (वि॰) २ जिसके स्पर्श करनेसे चुनचुनाहट पैदा हो। ३ चिढ़नेवाला, रोनेवाला। (पु॰) ४ कीटविशेष, एक तरहका कीड़ा जो सूत सरीखा सूक्ष्म और उज्ज्वल होता है। यह कीड़ा पेटमें पड़ जाता है और मलके साथ बाहर निकलता है।

चुनचुनाना (देश॰) १ कष्ट मालूम पड़ना, चुभनेकीसी पीडा करना। २ रोना, ठिनकना।

चुनचुनाहट (देश॰) चुभनेकीसी पीड़ा, कष्ट, तकलीफ़।

चुनट (हिं॰ स्त्री॰) चुनन, चुनावट, बल, शिकन, सिलवट।

चुनन (हिं॰ पु॰) चुनट देखो।

चुननदार (हिं॰ वि॰) जो चुनी गई हो, जिसमें चुनन पड़ी हो।

चुनना (हिं॰ क्रि॰) १ बीनना किसी चीजको हाथ या चोंच आदिके द्वारा एक एक करके उठाना या जमा करना। २ बहुतसी चीजोंमेंसे छाँट छाँट कर अलग रखना। ३ समूहमेंसे कुछको पसन्द कर अलग रखना, इच्छानुसार संग्रह करना। ४ क्रमसे स्थापित करना, सजाना, सिलसिलेवार रखना। ५ नाखून या उंगलियोंसे खोटना। ६ शिकन डालना, खरैं या चुटकोसे कपड़ेमें चुनट डालना। ७ दीवार उठाना, जुड़ाई करना, तह पर तह रखना।

चुनरी (हिं॰ स्त्री॰) १ एक तरहका रंगीन वस्त्र। ऐसे कपड़ेके बीचमें कुछ फासले पर सफेद बुंदकियां होती हैं। २ लाल रंगके एक नगका छोटा टुकड़ा, चुन्नी, याकूत।

चुनवाँ (हिं॰ पु॰) १ लड़का, शागिर्द। (वि॰) २ बढ़िया, उत्तम, चुनिंदा।

चुनवाना (हिं॰ क्रि॰) चुननेका काम कराना।

चुनाँचुनीं (फा॰ स्त्री॰) १ इस तरह उस तरह, ऐसा वैसा। २ इधर उधरको बात, बेमतलबी बातें।

चुनाई (हिं॰ स्त्री॰) १ चुनने या बोननेकी क्रिया। २ प्राचीरका सन्धिकार्य्य, दीवारकी जुड़ाई या चुनाई। ३ चुननेका मेहनताना।

चुनाखा (हिं॰ पु॰) यन्त्रविशेष, एक तरहका औजार जिसके द्वारा वृत्त बनाया जाता है, परकार, कम्पास।

चुनाना (हिं॰ क्रि॰) १ बिनवाना, इकट्ठा करवाना। २ ढंगसे लगवाना, सजवाना। ३ पृथक् करवाना, छँटवाना। ४ शिकन या चुनट डलवाना। ५ दीवारमें गड़वाना या चुनवाना। ६ दीवारकी जुड़ाई कराना।

चुनार—१ युक्तप्रदेशके अन्तर्गत मिर्जापुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा॰ २४° ४७´ एवं २५° १५´ उ॰ और देशा॰ ८२° ४२´ तथा ८३° १२´ पू॰ पर गङ्गाके दहिने किनारे अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५६२ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग १७६५३२ है। इसमें ५८० ग्राम और दो शहर लगते हैं। तहसीलके दक्षिणमें जिरगो नामकी नदी प्रवाहित है।

२ युक्तप्रदेशके मिर्जापुर जिलेके अन्तर्गत इसी नामकी तहसीलका एक शहर। यह अक्षा॰ २५° ७´ उ॰ और देशा॰ ८२° ५४ पू॰ पर गङ्गाके बायें किनारे अवस्थित है। यह शहर मिर्जापुरसे २० मील पूर्व और काशीसे २६ मील दूर नैर्ऋत कोणमें पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १० हजार है।

यहांका दुर्ग अत्यन्त प्राचीन है और इसका प्रकृत नाम चरणाद्रिगढ़ है। यह दुर्ग विन्ध्य पर्वतमालाके एक छोट पहाड़ पर अवस्थित है। गङ्गाका स्रोत उक्त पहाड़के नीचे होते हुए उत्तरकी ओर वाराणसी तक चला गया है। पहाड़ उत्तर-दक्षिणमें प्रायः ८०० गज लम्बा, १३३

से ३०० गज तक चौड़ा और ८०से १७५ फुट ऊँचा है। गढ़के चारों ओर प्राचोरका परिमाण प्रायः २४०० गज है। वर्तमान दुर्गका अधिकांश ही आधुनिक तथा मुसलमानोंके राजत्व कालका बना हुआ प्रतीत होता है। किन्तु इसके भीतर अत्यंत प्राचीन बहुतसी हिन्दू देवदेवियोंकी प्रतिमूर्तियां हैं। भर्त्तृहरिका समाधि-मन्दिर इसीके मध्य अवस्थित है। इन्हें देखनेके लिये दूर दूरके हिन्दू तीर्थयात्री यहां आया करते हैं। दुर्गके अभ्यंतर एकखण्ड प्रकाण्ड कृष्णवर्ण मर्मर पत्थर विद्यमान है। प्रवाद है, कि उस पत्थर पर बैठ कर भर्त्तृहरिने योग साधना की थी। १८८८ ई०में सैनिक विभागके कर्मचारियोंने इस दुर्गके दक्षिण-पश्चिम भागमें एक गुहा आविष्कार की। उस गुहामें शिव, पार्वती और भैरवको सुन्दर प्रतिमूर्त्तियां पाई जाती हैं। १८१५ ई०से यह अंगरेजोंका राजकीय वन्दि-निवास हो गया है, तथापि भारतवर्षके दुर्गोंमें इसकी गिनती है।

इस दुर्गका आकार एक प्रकाण्ड पदचिह्नसा है। इसकी उँगलीसे ले कर पैरका आधा भाग तक नदीकी ओर विस्तृत है और घुटनेका भाग किनारेमें अवस्थित है। ऐसी अवस्थितिके कारण इसका नाम चरणाद्रिगढ़ पड़ा है। प्रवाद है कि द्वापरयुगमें किसी देवने हिमालयसे कुमारिकाको जाते समय एक वार इसी स्थान पर अपना पैर रखा था और पैरका चिह्न उस जगह अङ्कित हो गया।
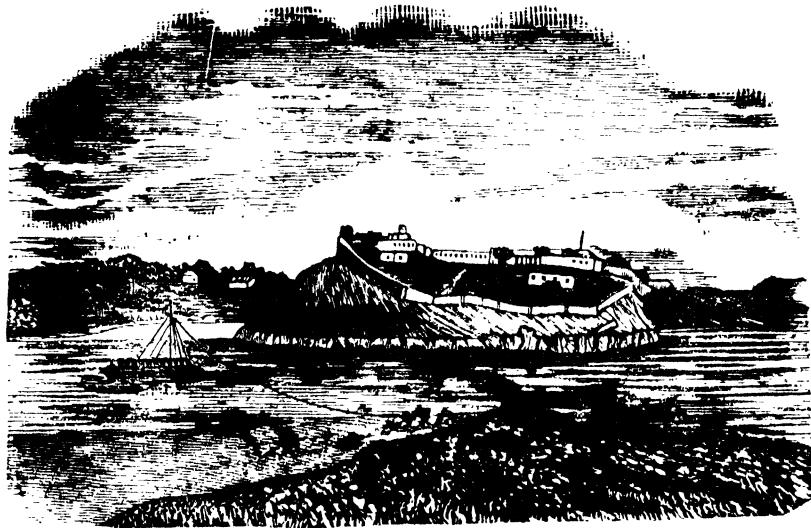
चुनारगढ़।

चुनार दुर्गका प्राचीन इतिहास कुछभी स्पष्ट जाना नहीं जाता है। कहा जाता है कि उज्जयिनीके राजा विक्रमादित्यके कनिष्ट भाई भर्तृहरिने इसी स्थान पर योगसाधन आरम्भ किया। विक्रमादित्यको यह बात मालूम होने पर वे उस स्थानको देखने गये और भाईके रहनेके लिये उन्होंने वर्तमान भर्त्तृहरिका मन्दिर निर्माण किया। दूसरा प्रवाद है कि पृथ्वीराजने भी उस स्थान पर एक दुर्ग बना कर कुछ काल तक वास किया था। उनकी मृत्युके बाद खैरुद्दीन सवक्तगीनने वह दुर्ग अधिकार किया। १३९० सम्वत्में (१३३३ ई०में) उत्कीर्ण एकखण्ड भग्न शिलाफलक पढ़नेसे जाना जाता है कि स्वामीराजने पुनः मुसलमानोंके हाथसे यह दुर्ग उद्धार किया और इस घटनाके स्मरणार्थ पूर्वोक्त शिलाफलक प्रस्तुत कराया था। अन्तमें महम्मदशाहके सेनापति मालिक साहब उद्दीनके बुद्धिकौशलसे यह दुर्ग सम्पूर्ण रूपसे मुसलमानोंके अधिकारमें किया गया।

हुमायूंके प्रतिद्वन्द्वी सुचतुर शेरखाँ शूरने विवाह-सूत्रसे यह दुर्ग अपने श्वशुरसे प्राप्त किया। १५३६ई० में हुमायूंने इस दुर्ग पर आक्रमण किया और छ मास अवरोध करनेके बाद उसे अधिकारमें कर लिया। पीछे जब हुमायू बङ्गाल जीतनेको अग्रसर हुए तब शेरखाँ पुनः चुनार अधिकार कर बैठे। हुमायूके लौटते समय

उन्होंने उन पर धावा कर सम्पूर्ण रूपसे पराजित किया।

१५७५ ई०में अकबरको सेनाने चुनारगढ़ पुनः मोगलोंके अधिकारमें कर लिया। मोगल साम्राज्यकी अवनतिके बाद चुनार अयोध्याके नवाब वजोरके हाथ लगा था पीछे यह कई एक सर्दारोंके अधिकारमें आनेके बाद १७५० ई०में काशीराज बलवन्त सिंहके हस्तगत हुआ।

१७६३ ई०में सेनापति मेजर मनरोसे परिचालित अंग्रेजो सेनाने इस दुर्ग पर आक्रमण किया किन्तु निष्फल हुआ। जो कुछ हो १७७२ ई०में चुनार दुर्ग यथारीति इष्ट इण्डिया कम्पनीके हाथ सौंपा गया। १७८१ ई०में चैतसिंहके विद्रोहके समय वारेन हेष्टिंगने इस दुर्गमें रह कर विद्रोह दमन किया था। दुर्ग तथा यहांकी जलवायु हेष्टिंगको बहुत अच्छी लगती थी। उनका वासभवन अभीभी दुर्गसे बहुत बड़ाचढ़ा मालम पड़ता है और दुर्गके मध्य सबसे ऊंचे स्थान पर निर्मित है।

चुनारगढ़से प्रायः एक मील दूर नगरसे दक्षिणपश्चिममें शाह कासिम सुलेमानी नामक किसी धार्मिक फकीरका समाधिमन्दिर अवस्थित है। इस मन्दिरका कारुकार्य और गठनकौशल अत्यन्त उत्कृष्ट शिल्पनैपुण्यका परिचय देता है। कहा जाता है कि सम्राट् जहांगीरने इस फकीरको मार डालनेका हुक्म दिया, किन्तु जब सुना कि प्रत्येक बार उपासनाके समय उनका बन्धनशृङ्खल गिर पड़ता है, तब फकीरको चुनारगढ़में बन्द कर रखा। उनके मरनेके बाद उनके शिष्योंने उक्त समाधि निर्माण की। बहुतोंका अनुमान है, कि इसी मन्दिरको देख कर शाहजहांके ताजमहलके निर्माणको कल्पना हुई थी।

चुनार रेलवे ष्टेशनसे दक्षिण-नैऋत कोणमें प्रायः आध मीलकी दूरीमें दुर्गाकुण्ड अवस्थित है। इस दुर्गाकुण्डसे एक सङ्कीर्ण गहरा नाला निकला है जिसे जीर्णनाला कहते हैं। इस नालेके उत्तरमें कामाक्षी देवीका मन्दिर प्रतिष्ठित है। इसके समीप और भी एक छोटा मन्दिर है। इस जीर्ण नालेके ऊपर एक सेतु है। सेतु पार करने पर हो पर्वत पर तीन देवमन्दिर देखे जाते हैं। मन्दिरके प्राचीरमें भांति भांतिकी देव देवी और पशु पक्षी आदिके चित्र अङ्कित हैं और गुप्तवंशके राजत्वकालसे ले कर आज तककी सभी लिपियां उनमें देखी जाती हैं। उनमेंसे 'चन्द्र' और 'समुद्र' ये दो नाम पास ही पास कई जगह लिखे हुए हैं। अनुमान किया जाता है, कि ये दोनों नाम राजा चन्द्रगुप्त और उनके पुत्र समुद्रगुप्तके नाम होंगे।

जीर्णनालासे और भी कुछ दूरमें "दुर्गाखो" नामकी एक गुहा है। उस गुहाके निकट प्रतिवर्ष दुर्गोत्सवके बाद एक मेला लगता है। गुहा देखनेसे मालूम पड़ता है, कि पहले उससे पत्थर निकाला जाता था और क्रमशः वह स्थान गुहाके आकारमें और पीछे स्तम्भादि द्वारा सुशोभित हो कर देवमन्दिरमें परिणत हो गया है। इसमें भी चन्द्रगुप्तके समयकी एक प्राचीन उत्कीर्ण लिपि देखी जाती है। यहांके अधिवासियोंका विश्वास है, कि दुर्गादेवी स्वयं पर्वत पर पत्थरकी मूर्तिमें आविर्भूत हुई। उन्हें देखनेके लिये बहुतसे यात्री समागम होते हैं। चुनार शहरकी आय १३०००) रु० और व्यय प्रायः १२०००) रु० है। यहां वाणिज्य व्यवसाय बहुत कम है। यहां स्कूल तथा चिकित्सालय है।

चुनारगढ़—चुनार देखो।

चुनाव (हिं० पु०) १ बीनने या चुननेका काम। २ नियुक्त करनेका काम, समूहमेंसे कुछको किसी कामके लिए पसन्द करनेका काम।

चुनावट (हिं० स्त्री०) चुनन, चुनट।

चुनिंदा (हिं० वि०) १ पसन्द किया हुआ, चुना हुआ। २ समूहमेंसे अच्छा निकाला हुआ, उत्कृष्ट, बढ़िया। ३ गण्य, प्रधान, खास।

चुनिया (देश०) लड़की। यह शब्द सिर्फ सुनारोंमें व्यवहृत होता है।

चुनियागोंद (हिं० पु०) औषधके काममें आनेका ढाकका गोंद, पलाशका गोंद, कमरकस।

चुनी (हिं० स्त्री०) १ चुन्नी देखो। २ भूसी मिले अन्नके टुकड़े, मोटे अन्न वा दाल आदिका चूरा।

चुनौटिया (रङ्ग)—कालेपनको लिए लाल रंग, एक तरहका खैरा या काकरेजी रंग। इसको रंगाई लखनऊमें होती है। आजिज खानी रंगसे यह कुछ ज्यादा काला होता

है। यह हल्दी, हर्रा, कसीस और बकमकी लकड़ीके संयोगसे बनता है।

चुनौटी (हिं॰ स्त्री॰) पान लगाने या तंबाकूमें देनेके लिए चुना रखनेका छोटा बरतन या डिब्बी।

चुनौती (हिं॰ स्त्री॰) १ उत्तेजना, बढ़ावा, चिढ़। २ ललकार, प्रचार।

चुन्द (सं॰ पु॰) बुद्धदेवके एक शिष्यका नाम।

चुन्दी (सं॰ स्त्री॰) चोदति प्रेरयति नायकादीन् चुद वा निपातने साधु। १ कुट्टिनी, दूती। २ शिखा, चुटैया, सिरकी चोटी।

चुन्नट (सं॰ स्त्री॰) चुनट देखो।

चुन्नत (सं॰ स्त्री॰) चुनट देखो।

चुन्नन (हिं॰ स्त्री॰) चुनन देखो।

चुन्नी (हिं॰ स्त्री॰) १ रत्नविशेष, चुनी, माणिक, लाल। इसके संस्कृत पर्याय—माणिक्य, पद्मराग, रत्न, शोणरत्न, रत्नराज, रविरत्न, रङ्गमाणिक्य, रागयुक्, शृङ्गारी, तरुण, शोणोपल, सौगन्धिक, लोहितक और कुरुविन्द।

आधुनिक जौहरी लोग लाल रंगके नानाप्रकारके बहुमूल्य पत्थरोंको चुन्नी कहा करते हैं। रत्नशास्त्रोंमें माणिक्यरत्नके जैसे लक्षणादि लिखे हैं, उनसे मालूम होता है कि, आधुनिक चुन्नी नामका पत्थर ही पहले माणिक्य कहाता था। रंगकी उज्ज्वलता और कठिनता आदिके भेदसे जौहरी लोग चुन्नीको चार भेदोंमें विभक्त करते हैं, जैसे चुनी नरम, चुनी कड़ी, चुनी श्यामश्वेत् और चुनी माणिक। इनमेंसे शेषोक्त चुनीमाणिक्य ही प्राचीन पद्मरागमणि है। इसको अंग्रेजीमें Oriental ruby कहते हैं। अन्यान्य चुन्नी Spinel ruby, Almandine ruby, Brass ruby इत्यादि नामसे प्रसिद्ध हैं।

चुन्नी माणिक, पन्ना, मरकत इत्यादि कई-एक रत्नोंका रासायनिक उपादान एक ही प्रकारका है। ये सब ही आलुमिनियम् (Aluminium) और अक्सिजन (Oxygen) इन दो मूल पदार्थोंके योगसे उत्पन्न होते हैं। (Al. 2, O३)। कुरुन्द पत्थर (Corundum) इन्हीं पदार्थोंके योगसे उत्पन्न है। इसलिये अङ्गारके साथ हीराका जैसा सम्बन्ध है, कुरुन्द पत्थरके साथ चुन्नी आदिका भी वैसा ही सम्बन्ध है। चुन्नी आदि पत्थर अत्यन्त कठिन और स्वच्छ होते हैं। चुन्नीका रंग साधारणतः खूनखराबी, लाल, गुलाबी लाल, पीलेपनको लिए लाल, फीका गुलाबी और नीलेपनको लिए लाल होता है। हीरेके सिवा समस्त पार्थिव वस्तुओंसे चुन्नी कठिन होता है अर्थात् हीरेका काठिन्य १० होनेसे चुन्नीका काठिन्य ८ होता है और नरम चुनीका आठ समझना चाहिये। इसलिए यह निश्चित है कि, हीरेके सिवा दूसरा कोई पदार्थ चुन्नीके बराबर कठिन नहीं होता। इस विशेष गुणके रहनेसे इसके नकली असलीको पहिचान बहुत सहजमें हो जाती है। दो चुन्नियोंको आपसमें रगड़ कर देखना चाहिये, जिस पर दाग पड़ जाय उसे निकृष्ट और जिस पर दाग न पड़े उसे उत्कृष्ट चुन्नी समझनी चाहिये। साधारणतः चुनी नरम (Spinel) और चुनीमाणिक (Ruby)-की पहिचान इसी तरह की जाती है। इस (Spinel) पत्थरके रासायनिक उपकरण मैगनिसियम (Magnasium), अलुमिनियम (Aluminium) और अक्सिजन (Oxygen) हैं (Md. O. Al_2, O_3)। असली चुन्नी और Spinel देखनेमें प्रायः एकसे होते हैं। परन्तु असली चुन्नीमें गुरुत्व, उज्ज्वलता और आलोकविकीर्णशक्ति अधिक होती है। उनके रासायनिक उपादानोंके भेद ऊपर लिखे अनुसार हैं। Spinel पत्थरका टुकड़ा चुनीके टुकड़ेसे पृथक् होता है, तथा वह और सबोंसे कठिन होने पर भी हीरा और चुन्नीसे नरम होता है, इसलिए चुन्नीको रगड़से उस पर दाग पड़ जाता है। दोनों तरहके पत्थर ही स्वच्छ होते हैं, इसमें किञ्चित् लोहा और क्रोमियाम धातुमिश्रित रहनेसे उसका रंग लाल होता है। चुन्नी किसी भी द्रावकसे गलायी नहीं जा सकती। साधारण उत्तापसे चुनीका कुछ बिगड़ता नहीं। परन्तु सुहागेके साथ खूब ज्यादा गरम करनेसे वह गल कर वर्णहीन काँचकी तरहकी हो जाती है।

जैसे चुन्नीको गला कर काँच बनाया जा सकता है, वैसे ही उससे उलटी प्रणाली द्वारा काँचसे चुन्नी भी बनायी जा सकती है। असली क्रोमियम धातुके योगसे काँच द्वारा अति कठिन नकली चुनी बनाया जाता है। इन नकली चुन्नियोंमेंसे असली चुन्नीका छांटना जरा कठिन हो जाता है।

चुनी माणिकके गुणदोष, जातिविभाग तथा धारण-फल इत्यादिके शास्त्रीय प्रमाण और प्राचीन नियमसे परीक्षा आदिके विषयके शास्त्रीय मत, माणिक्य और पद्मराग शब्दको परिभाषामें विस्तारपूर्वक लिखे जायेंगे। इस जगह हम उसके वर्तमान व्यवहार, परीक्षा, उत्पत्ति-स्थान, मूल्य इत्यादिकी संक्षेपमें आलोचना करते हैं।

भारतवर्ष, ब्रह्मदेश, सिंहल, अफगानस्तान इत्यादि देशोंमें सर्वोत्कृष्ट चुन्नी मिलती हैं। इसके सिवा बोहिमिया, श्याम, सुमात्रा, बोर्णिओ और पेगू प्रदेशमें नाना प्रकारकी होन जाति चुन्नियां खानसे निकाली जाती हैं। दक्षिण देशमें बिरलोमोटो और चोलग्रीगमनीमें साधारणतः कुरुन्द्र-पत्थर (Curudum) और निस् (Gneis) पत्थरके साथ चुन्नी पायी जाती हैं। त्रिचूरगढ़ इलाका और मल्लपोल्लाई नामक स्थानमें भी थोड़ी-बहुत चुन्नी निकलती हैं।

ब्रह्मदेशमें चुन्नीकी खानें मुङ्गमोटसे २५ मील दक्षिणमें अवस्थित हैं। १८७० ई०में मि० ब्रेडमियर जिस चुन्नीको खानके तत्त्वावधारक थे, वह मान्दालासे १६ मील दूर है। पिरे डी० आमेटो (Pere di Amato) ने जो रत्नक्षेत्र देखा था, वह आवा नगरसे ६०।७० मील ईशान-को तरफ है।

इस रत्नक्षेत्रका परिमाणफल प्रायः ६६ वर्गमील होगा। २।३ फुट या और कुछ नीचे एक तहमें रत्न मिलते हैं। इस रत्नस्तरका वेध कहीं २ इञ्च मात्र और कहीं २।३ फुट है। रत्नसंग्रह करनेवाले गड्ढा करके रत्नस्तरोंकी मट्टी धोया करते हैं। इसी प्रकारसे छोटी छोटी चुन्नियां मिलती हैं। ये चुन्नियां अधिकतर ¼ चौथाई रत्तीसे भी कमकी होती हैं। क्वचित् कभी बड़ी चुन्नी मिलती है। परन्तु इनका आकार गोल और हाथमें लेनेसे चिकनी मालूम पड़ती हैं। दो-एक बड़ी चुन्नी भी मिलती हैं, परन्तु वे निर्दोष नहीं होतीं। मि० स्पियाम-के कहना है, कि उन्होंने अभी तक आध तोलेसे ज्यादा वजनकी एक भी चुन्नी निर्दोष नहीं पाई है। यह चुन्नी-क्षेत्र पहले ब्रह्मराजका निजी था। इससे उन्हें वर्षमें लाख रुपयेसे ज्यादा आमदनी होती थी। इसके सिवा एक निर्दिष्ट परिमाण (१०० तिकल)से बड़ी चुन्नी मिलने पर वह राजभण्डारमें रक्खी जाती थी। कोई उक्त चुन्नी पा कर छिपा लेता, तो उसे कड़ी सजा दी जाती थी। परन्तु तो भी बहुतसी बड़ी चुन्नियां इधर-उधर हो जाया करती थीं। जौहरी लोग इस तरहकी बड़ी चुन्नियोंको काट कर छोटी कर लेते थे या चीन, पारस्य, भारतवर्ष आदिके सौदागरोंको गुप चुप बेच दिया करते थे। इस तरह राजाको बहुत नुकसान पहुंचता था। जब अंग्रेजोंने ब्रह्मदेश जीत लिया, तब ब्रह्मके राजभण्डार में जो बड़ी बड़ी चुन्नियां थीं, वे साउथ-केनसिंटनके अजायबघरमें भेज दी गईं। उनमेंसे छोटी छोटी कुछ चुन्नियोंके सिवा समस्त चुन्नियां दोषयुक्त थीं। इससे जाना जाता है, कि उत्कृष्ट बहुमूल्य चुनी अत्यन्त दुर्लभ थी। कारण, ऐसी चुन्नियां ज्यादा निकलतीं, तो राजभण्डारमें दस-बीस अवश्य पाई जातीं।

इस रत्नखानके सिवा मान्दालासे १६ मील दूरी पर सेगियान नामक मर्मर पत्थरके पर्वत पर उससे हीन जाति चुन्नी पत्थर मिलते हैं। मान्दालासे १५ मील उत्तरमें चुनीक्षेत्रका आविष्कार हुआ है, ऐसी जनश्रुति सुननेमें आई हैं।

ऊपर लिखे हुए उपायके सिवा ब्रह्मदेशमें और भी तीन प्रकारके उपायों द्वारा भूमिसे रत्न संग्रह किये जाते हैं। पर्वतकी देहमें नाले काट कर उसमें जोरसे पानी छोड़ते हैं, इससे ऊपरकी मिट्टी आदि धुल जाती है और पत्थर आदिके टुकड़े पड़े रहते हैं। पीछे इन्हींमेंसे रत्न छेक कर निकाल लिए जाते हैं।

और भी एक तरहसे उत्कृष्ट चुन्नियां मिलती हैं। पर्वतका स्तरविशेष पानीके स्रोतसे धुल जाता है और उसके रत्नादि जगह जगह गुहाओंमें भर जाते हैं। रत्नकी खोज करनेवाले पर्वत पर घुम घुम कर उन गुहाओंसे रत्न संग्रह करते हैं। सबसे उत्कृष्ट चुन्नी इसी तरह मिलती है।

एक प्रकारके कठिन पत्थरके भीतरसे भी चुन्नी पाई जाती है। परन्तु पत्थर तोड़ कर चुन्नी निकालनेमें बहुत-सी चुन्नियां टूट भी जाती हैं। खानसे जो चुनी निकाली जाती है, उसे काटना और माजना पड़ता है। साधारणतः छोटी छोटी निकृष्ट चुन्नियोंको चूरा कर, उसीसे

यह काम किया जाता है। बादमें उस तामे या पीतल से पालिस कर व्यवहारोपयोगी बनाया जाता है।

चुन्नीके सिवा और भी बहुत तरहके मूल्यवान् पत्थर ब्रह्मदेशसे अन्यत्र भेजे जाते हैं। १८८८ ई०में ३३,८४८) रुपयेको ६५६२८०५ कैरेट् (प्रायः १३१२७ रत्ती) चुन्नीयां और २५६) रुपयेको ४४८६ कैरेट् (प्रायः ८९८२ रत्ती) स्पिनेल (Spinel) अर्थात् नरम चुन्नीयां ब्रह्मदेशमें उत्पन्न हुई थीं।

फिलहाल श्यामदेशमें बाङ्कक नगरसे चार दिनके मार्ग पर चुन्नी और पन्नाकी खान निकली है। यहांकी मणियां ब्रह्मदेशको मणियोंकी भाँति उत्कृष्ट नहीं हैं; किन्तु ज्यादा मिलती हैं। इनका रंग घोर गुलाबी है। धूर्त्त जौहरी लोग इस पत्थरको सिंहलको मणि बता कर अनजानोंको बहुत ज्यादा मूल्यसे बेचते हैं।

तुर्किस्तानके अन्तर्गत बदचन् नामक स्थानमें थोड़ी बहुत उत्कृष्ट चुन्नियां मिलती हैं। अक्सस् नदीके तीरवर्ती शुसान और चरन नामके स्थानोंमें भी चुन्नी मिलती है। वहाँके लोगोंका ऐसा विश्वास है, कि चुन्नीका सर्वदा जोड़ा रहता है। इसलिए वे एक चुन्नी मिलने पर जब तक दूसरी न मिले तब तक उसे छिपा रखते हैं। यदि दूसरी न मिले तो वे उसे ही काट कर दो कर डालते हैं।

अष्ट्रेलियाकी सोनेकी खानमें बहुतसी चुन्नियां मिलीं हैं, परन्तु वे सब ही अपकृष्ट प्रस्तरमात्र हैं।

सिंहल, यावा, महिसुर, बेलुचिस्तान तथा यूरोप, अमेरिका और अष्ट्रेलियाकी बहुतसी नदियोंमें कंकड़ोंके साथ नरम चुन्नी (Spinel) मिलती हैं। सुइडेन और सिंहलमें नीले रंगकी नरम चुन्नी देखनेमें आती है। नरम चुन्नी हरी और काली इत्यादि भी मिलती हैं। मूल बात यह है, कि उक्त समस्त पत्थरोंका उपादान और गठनक्रम एकसा है, सिर्फ द्रव्यके सामान्य हेरफेरके कारण लाल, नीला, हरा इत्यादि रंग हो जाता है। ब्रेजिलमें वर्णहीन चुन्नी भी पाई गई है।

निर्दोष बड़ी चुन्नी दुष्प्राप्य होनेके कारण कभी कभी उसका मूल्य हीरेसे भी बढ़ जाता है। इस समय आधी रत्ती वजनकी निर्दोष चुन्नी १५)से १२०) रुपये तक बिकती है।

२ रत्ती वजनकी	चुन्नीका	मूल्य	१४०) से	२००)
३ ,, ,,	,,	,,	२५०) "	४५०)
४ ,, ,,	,,	,,	७००) "	८००)
६ ,, ,,	,,	,,	२०००) "	२५००)
८ ,, ,,	,,	,,	४०००) "	४५००)

८ रत्तीसे ज्यादा वजनकी चुन्नी विरली ही होती है, इसलिए उसका मूल्य निर्द्धारित नहीं हो सकता।

चिह्नयुक्त अनुज्ज्वल, अत्यन्त घोर अथवा फीके लाल रंगकी चुन्नीका मूल्य साधारणतः बहुत कम हुआ करता है। ४ रत्ती वजनकी ऐसी चुन्नी १२०) रुपयेसे भी कम कीमतमें मिल सकती है। जौहरियोंके दूकानोंमें अनेक तरहकी चुन्नियां देखनेमें आती हैं; जिनमेंसे ब्रह्म और श्यामदेशकी चुन्नी ही सबसे उत्कृष्ट और अधिक मूल्यवान् होती हैं।

नरम चुन्नीकी कीमत औरोंसे कम ही होती है। छोटी नरम चुन्नी २५)से ५०) रुपयेमें बिकती है। मध्यम और बड़े आकारकी चुन्नी १००)से ५००) रत्ती तक बिकती है। सारांश यह कि, इसका मूल्य खरीददारोंके शौक और खयाल पर निर्भर है।

नाना तरहके पत्थर असली चुन्नीके नामसे बिका करते हैं। कुरुन्द पत्थर पर घिसनेसे इसकी कोमलता और वजन करनेसे इसकी लघुतर मालूम होती है। इसी तरहसे उनकी जातिका भी निश्चय किया जाता है।

बहुत छोटी चुन्नियां जेब घड़ी और हाथघड़ियोंमें बैठाई जाती हैं। घड़ीके चक्रोंका सूक्ष्म पिभट (Pivot) चुन्नीके छेदमें बैठाये जानेसे चक्र खूब आसानीसे घूमता रहता है। इस प्रकारकी चुन्नियोंका काफी व्यवहार होने पर भी यह बहुत मिलती हैं, इसीलिए इसकी कीमत भी बहुत कम है।

पहले लोगोंका ऐसा विश्वास था कि, चुन्नी अर्थात् माणिक्यको अंधेरेमें रखनेसे वह प्रकाश करता है। यह बात बिल्कुल ही असत्य नहीं है। चुन्नीमें आलोक शोषण करनेको शक्ति होती है। दिनमें चुन्नीको घाममें रख देनेसे रातमें उससे प्रभा निकलती है। और भी बहुतसे पत्थरोंमें यह गुण पाया जाता है।

प्रायः समस्त देशोंके पूर्वकालके लोगोंका यह विश्वास

था कि, चुन्नी पहननेसे अनेक विपत्ति और रोगोंसे बच जाते हैं। बहुतोंका ऐसा भी विश्वास है कि, पद्मराग मणि विवर्ण और हीनप्रभ होनेसे पहननेवाले पर शीघ्र ही दुर्घटना आ पड़ती है।

टाभार्नियार लिख गये हैं कि—पारस्यके राजाके पास कबूतरके अण्डे की भाँतिकी एक चुन्नी थी। इस चुन्नीके बीचमें एक सुराख था और उसका लावण्य अत्यन्त चमत्कार था। रूसियाकी सम्राज्ञी काथाराईनके मुकुट पर एक अण्डे की आकृतिकी चुनी था। सुईडेनके तीसरे गुस्तावास् (Gustavus III) ने १७७७ ई०में सेण्ट पिटर्सवर्गके आगमनके उपलक्षमें काथाराइनको उसे भेंटस्वरूप दिया था। इंगलैण्डके राजमुकुटके सम्मुख भागमें एक बड़ी चुन्नी है। १३६७ ई०में उक्त चुन्नी डन प्रेड्रोने एडवर्ड दी ब्लक प्रिन्सको भेंटमें दी थी। सबसे बड़ी चुन्नी इस समय रूसियाके राजमुकुटको शोभा बढ़ा रही है। साइबिरियाके शासनकर्त्ता प्रिन्स गार्गरिनको चीनसे वह चुन्नी मिली थी।

प्रवाद है कि, महाराज रणजीतसिंहके पास १४ तोलेका एक चुनीमाणिक था। उस चुन्नी पर औरङ्गजेब, आह्मदशाह इत्यादि बादशाहोंका नाम खुदा हुआ था।

भारतवर्षके प्रायः समस्त राजभण्डारों और ऐश्वर्यशाली व्यक्तियोंके घरमें नाना तरहकी चुन्नियां हैं।

गलेके हार, पदक, अङ्गूठी, घड़ीके लोकेट इत्यादिमें चुन्नी बैठा कर उनका सौन्दर्य बढ़ाया जाता है।

२ एक तरहका मोटा चून, जिसे गरीब लोग खाते हैं। यह किसी भी अन्न या दाल आदिको पीस कर बनाया जाता है। ३ स्त्रियोंके पहननेकी चद्दर, ओढ़नी। ४ आरीसे रेतने पर निकला हुआ लकड़ीका बारीक चूर कुनाई।

चुप (हिं० वि०) १ अवाक्, जिसके मुखसे शब्द न निकले, मौन, खामोश। (पु०) २ पक्के लोहेका वह खड्ग वा तलवार जिसमें टूटनेके बचावके लिए एक कच्चा लोहा लगा रहता है। (स्त्री०) ३ खामोशी, गम। जैसे-सबसे भली चुप।

चुपका (हिं० वि०) १ चुप देखो। २ चुप्पा, घुन्ना।

चुपकी (हिं० स्त्री०) अवाक्, मौन, खामोशी।

चुपचाप (हिं० क्रि० वि०) चुप देखो।

चुपड़ना (हिं० क्रि०) १ किसी नरम वस्तुको फैला कर लगाना, पोतना। २ दोष छिपाना। ३ चिकनी बातें कहना, चापलूसी करना, खुशामद करना।

चुपड़ा (हिं० पु०) कीचड़युक्त नेत्र, वह जिसके नेत्र कीचड़से भरे हों।

चुपरी आलू (देश०) मन्द्राज और मध्यभारतमें होनेवाला पिंडालू या रतालू।

चुपुणीका (सं० स्त्री०) चुप-बाहुलकात् उनङ् ततः स्वार्थे ई-कक्। इष्टकविशेष, यज्ञको अग्नि रखनेके लिए जो ईंट ली जाती है।

चुप्पा (हिं० वि०) बहुत कम बोलनेवाला, घुन्ना।

चुप्पी (हिं० स्त्री०) मौन, खामोशी।

चुप्य (सं० त्रि०) चुप-क्यप् १ धीरे धीरे चलनेवाला। २ गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिविशेष। किसी वैयाकरणिकके मतसे यह शब्द अश्वादि गणके अन्तर्गत है।

चुबलाना (हिं० क्रि०) किसी चीजका आस्वादन करना, किसी चीजका चखना।

चुबुक (सं० क्ली०) चिबुक पृषोदरादित्वात् साधु। चिबुक देखो।

"चुबुक दघ्न'वा।" (आपस्तम्बश्रुत)

चुम्ब (सं० क्ली०) चुम्ब्यते अनेन चुबि-र नकार लोपश्च। (उ २।२८) मुख, मुंह, चेहरा।

चुभकना (अनु०) जलमें गोता खाना, बार बार डूबना।

चुभकाना (अनु० क्रि०) पानीमें डुब देना, बार बार गोता देना।

चुभकी (अनु० स्त्री०) डुब्बी, गोता।

चुभना (हिं० क्रि०) १ गड़ना, धँसना। २ मनमें दुःख उत्पन्न करना, चित्त पर चोट पहुंचाना। ३ हृदय पर असर करना, चित्तमें बना रहना। ४ तन्मय, मग्न लीन, मशगूल।

चुभर चुभर (अनु०) वह शब्द जो पीनेके समय ओठसे हो।

चुभलाना (हिं० क्रि०) चुबलाना देखो।

चुभाना (हिं० क्रि०) धँसाना, गड़ाना।

चुभोना (हिं० क्रि०) चुभाना देखो।

चुमकार (हिं० स्त्री०) प्यारका शब्द, पुचकार।

चुमकारना (हिं॰ क्रि॰) चुचकारना, दुलारना।

चुमकारी (हिं॰ स्त्री॰) चुमकारनेकी।

चुमवाना (हिं॰ क्रि॰) चूमनेका काम दूसरेसे कराना।

चुमाना (हिं॰ क्रि॰) किसी दूसरेके सामने चूमनेके लिये प्रस्तुत करना।

चुमुरी (सं॰ पु॰) ऋग्वेद-प्रसिद्ध एक असुर। ये इन्द्रके हाथ लड़ाईमें मारे गये थे।

"धुनी चुमुरी च हविष्यन्।" (ऋक् ६।२०।१३)

'धुनिम्, चुमुरिमेत्येतं नामकावसुरौ' (सायण)

चुम्ब (सं॰ पु॰) चुवि भावे घञ्। चुम्बन, मुखसे मुखस्पर्श।

चुम्बक (सं॰ पु॰) चुम्बति आकर्षति लौहं चुवि-ण्वुल्। १ लौहाकर्षक मणि, आकर्षण, विकर्षण इत्यादि गुणसम्पन्न पदार्थविशेष, चुम्बक पत्थर। इसके संस्कृत पर्याय कान्तपाषाण, अयस्कान्त और लौहकर्षक है।

चुम्बक दो तरहका होता है—एक प्राकृतिक और दूसरा कृत्रिम। भारतवर्ष, सुईडेन आदि देशोंमें खनिसे जो चुम्बक पत्थर निकलता है, वह प्राकृतिक है। यह पत्थर लोहे और अक्सिजनके योगसे उत्पन्न एक तरहका लौहमिश्रित पत्थर मात्र है। परन्तु यह अत्यन्त दुर्लभ है। और जो चुम्बक इस्पातका वैज्ञानिक उपायसे बनाया जाता है, वह कृत्रिम चुम्बक कहलाता है। कृत्रिम चुम्बक ही सुलभ और सर्वदा व्यवहृत होता है। चुम्बकका प्रधान धर्म यह है, कि वह लोहेको अपनी ओर आकर्षित करता है और एक चुम्बक-शलाका विना बाधाके चारो ओर घूम सके ऐसा बन्दोवस्त कर रखनेसे उस शलाकाका एक प्रान्त सर्वदा एक निर्दिष्ट दिशामें ठहर सकता है।

इस चुम्बकके दोनों प्रान्तोंमें ही लौह-आकर्षणशक्ति अधिक होती है। एक कृत्रिम चुम्बककी छड़ यदि लोहेके चूरेमें छोड़ दी जाय, तो उसके छोरोंमें ज्यादा और बीचमें कम चूर लिपटेगा। इस बीचके स्थानको सममण्डल या शून्यप्रान्त कहते हैं। दो प्रान्तोंके बीचमें विना बाधाके घूम सकने पर जो प्रान्त उत्तरकी तरफ रहता है, उसे उत्तरमेरु या सुमेरु तथा जो प्रान्त दक्षिणकी तरफ रहता है, उसे दक्षिणमेरु या कुमेरु कहते हैं।* इन दोनों प्रान्तोंका नाम आकर्षण-प्रान्त भी है।

चुम्बककी छड़के ऊपर एक मोटा कागज रख कर उस पर लोहेका चूरा डाल देनेसे, वह चूरा रेखाकी तरह सज जाता है। उस रेखासे चुम्बकाकर्षणकी दिशा और परिमाण मालूम हो सकता है।

मध्य विन्दुमें अवस्थित चुम्बक-शलाकाको चुम्बक-सूची कहते हैं। साधारणतः चुम्बक-सूची इस्पातकी पत्तीसे बनती है। इसका मध्यभाग कुछ चौड़ा और दोनो किनारे क्रमशः पतले होते आये हैं। इसके ठीक बीचमें एक छोटा छेद रहता है। एक सुईके सूक्ष्म अग्रभाग पर उसे बैठा देनेसे, वह एक निर्दिष्ट भावसे स्थिर रहती है। हिलडुल जाने पर पुनः वह पहिलेके निर्दिष्ट स्थान पर आ जाती है। चुम्बकका कांटा या चुम्बक-सूची प्रायः उत्तर-दक्षिणमें ठहरती है। परन्तु ये उत्तर-दक्षिण भौगोलिक उत्तर-दक्षिणसे मेल नहीं खाते। चुम्बकका कांटा कहीं उत्तरसे कई अंश पूर्वमें और कई पश्चिममें ठहरता है, इस अन्तरको चुम्बकापसृति (Magneticdeclinatiom) या चुम्बकप्रवृत्ति कह सकते हैं। यह चुम्बकापसृति एक स्थानमें भी सब समय समान नहीं रहती, क्रमशः परिवर्तित होती रहती है। परीक्षा द्वारा पृथिवीके नानास्थानोंकी चुम्बकापसृति निर्णीत हुई है। इन्हीं नियमोंके अनुसार जहाजियोंका दिग्दर्शनयन्त्र (Compass) बनाया जाता है। जहाजी लोग उक्त यन्त्र और चुम्बकापसृतिकी एक तालिकाकी सहायतासे पृथिवीके सर्वत्र, बीच समुद्रमें भी दिशाओंका निर्णय कर लेते हैं। चुम्बक-सूची जिस रेखा पर ठहरती है, उसको उस स्थानकी चौम्बकीय द्राघिमा कहते हैं।

पृथिवीके नानास्थानोंकी चौम्बकीय द्राघिमाके चित्र और अन्यान्य विषय दिग्दर्शन शब्दमें देखना चाहिये।

एक चुम्बक-सूचीको इस तरह ठहरानेसे कि, वह चौम्बकीय द्राघिमामें स्थित एक दण्डायमान समतल पर अच्छी तरह घूम सके, तो सूचीका भूपृष्ठके साथ समान्तर

* फरासी लोग चुम्बक-शलाकाका जो प्रान्त उत्तरकी तरफ रहता है, उसे कुमेरु और जो दक्षिणकी ओर रहता है, उसे सुमेरु कहते हैं। यही सुसङ्गत मालूम पड़ता है।

नहीं रहता, बल्कि एक प्रान्त नत जाता है, इसको चुम्बकावनति (Magnatic dip) कह सकते हैं।

एक चुम्बकका उत्तरमेरु दूसरे चुम्बकके दक्षिण मेरुको आकर्षित करता है, परन्तु उत्तरमेरुको आकर्षण नहीं कर सकता। इस गुणके रहनेसे यह मालूम होता है, कि एक पदार्थ चिरस्थायी चुम्बकधर्म सम्पन्न अथवा सिर्फ चुम्बक द्वारा आकर्षित हो सकता है। यदि कोई पदार्थ चुम्बकके दोनों मेरुओं द्वारा समान आकर्षित हो, तो समझना चाहिये कि वह चुम्बकधर्म-सम्पन्न नहीं है। किन्तु यदि चुम्बकके एक मेरु द्वारा आकृष्ट और दूसरे मेरुसे विप्रकृष्ट हो, तो वह चुम्बक-धर्माक्रान्त ही समझा जायगा।

एक चिरस्थायी चुम्बकके पास लोहेको ले जानेसे उस लोहेमें भी उस समय चुम्बकत्व आ जाता है; तथा चिरस्थायी चुम्बककी तरह वह भी लोहे इत्यादिको आकर्षित कर सकता है। ऐसे चुम्बकको अस्थायी चुंबक कहते हैं। स्थायी चुंबकके जिस मेरुके पाससे अस्थायी चुंबक उत्पन्न होता है, उस मेरुका विपरीत मेरु निकटवर्त्ती और सममेरु दूरवर्ती होता है। अर्थात् स्थायी चुम्बकके उत्तर मेरुको एक लोहेके पास ले जानेसे उस लोहेका दक्षिण मेरु स्थायी चुम्बकके पास हो आ जाता है और उत्तर
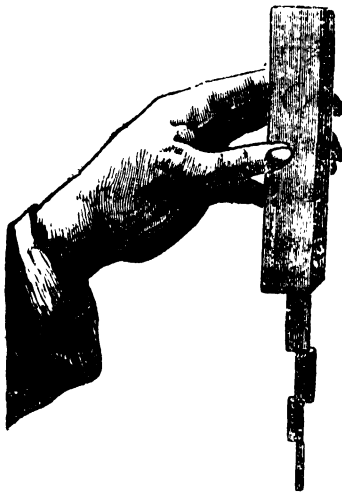
मेरु दूसरी तरफ होता है। लोहा जब तक चुम्बकसे सटा हुआ रहता है, तब तक ही उसमें चुम्बकत्व रहता है अर्थात् वह दूसरे लोहेको, दूसरा तीसरेको, तीसरा चौथेको इसी प्रकार आकर्षित करता रहता है। परन्तु पहले लोहेको स्थायी चुम्बकसे अलग करते ही उसका चुम्बकत्व दूर हो जाता है और वे सब गिर पड़ते हैं। इस्पातको चुम्बकके पास ले जानेसे उसमें लोहेकी तरह-की चुम्बक शक्ति तो नहीं आती, पर उसमें एक बार चुम्बकशक्ति आ जानेसे वह सहजमें अलग नहीं होती। इस गुणके रहनेसे इस्पातसे ही स्थायी चुम्बक बनाया जा सकता है। जितने स्थायी चुम्बक देखनेमें आते हैं, वे सब ही इस्पातसे बने हुए हैं।

चुम्बकके नाम आकारके अनुसार भिन्न भिन्न हुआ करते हैं, जैसे सीधा चुम्बक, घोड़ेकी नालकी आकृतिका चुम्बक इत्यादि। एक सीधे चुम्बकको दो या उससे ज्यादे टुकड़े करनेसे भी उनमें चुम्बक-शक्ति रहती है। इन टुकड़ोंमें दो स्वतन्त्र मेरु भी रहेंगे और सबमें सममेरु एक तरफ तथा विषममेरु दूसरी तरफ रहेंगे। नीचे क

क ═══════ ═══════ ख

क═══ख क═══ख क═══ख क═══ख

और ख चुम्बकको चार टुकड़ोंमें विभक्त किया गया है। उन चारों खण्डोंके क क क क मेरु एक समान तथा ख ख ख ख मेरु विपरीत नामधारी हैं। विज्ञानविदोंका अनुमान है कि, दो प्रकारकी परस्पर विपरीत चुम्बक-शक्ति है। उनमेंसे एकको सम और दूसरीको विषम कहा जा सकता है। इन दो तरहकी शक्तियोंकी मिलावटसे साम्य भावकी उत्पत्ति होती है। नाना उपायोंसे इन दो शक्तियोंको अलग किया जा सकता है। प्रत्येक चुम्बकमें ही ये दोनों शक्तियां समानतासे रहती हैं, जो पृथक् भी की जा सकती हैं। ये दो तरहकी शक्तियोंका परस्परमें आकर्षण होता रहता है। परन्तु समजातीय शक्तियोंका परस्परमें आकर्षण नहीं होता, बल्कि विकर्षण ही होता रहता है।

पृथिवी पर नाना स्थानोंमें चुम्बकका आकर्षण और चुम्बक-सूचीका अवस्थान देख कर बहुतसे अनुमान करते हैं कि, पृथिवीको दोनों चुम्बक शक्तियां विच्छिन्न भावसे हैं। पृथिवीके मेरुदण्डके साथ प्रायः २०° अंश कोनेमें अवस्थित एक बड़े भारी तिरछे चुम्बकके अस्तित्व की कल्पना करनेसे पार्थिव चुम्बकशक्तिका एक मामूली निर्देश करना होता है। इस काल्पनिको चुम्बकको

दोनों बगल भूपृष्ठ तक बढ़ा देनेसे जिन दो स्थानोंमें वह मिलेगा, वे दो स्थान ही पृथिवीके चौम्बकीय मेरुदण्ड होंगे। उक्त दोनों स्थानोंमें चुम्बकका काँटा समतल रहनेसे कोई भी तरफ रह सकता है। किसी निर्दिष्ट दिशामें नहीं ठहरेगा। इन दो बिन्दुओंकी चुम्बकावनति ९०° है। इन दो चुम्बकीय मेरुके दूरी पर एक वृत्तकी कल्पना करनेसे वह वृत्त ही चौम्बकीय निरक्षवृत्त होगा। इस मेरुके सर्वत्र चुम्बकावनति ०° शून्य है। इस काल्पनिक चुम्बकसे उत्तरकी तरफ सुमेरु-आकर्षक अर्थात् कुमेरु चुम्बकशक्ति और दक्षिणकी तरफ सुमेरु चुम्बकशक्ति रहती है।

अब कृत्रिम चुम्बक कैसे बनाई जाती है, संक्षेपमें उसका वर्णन किया जाता है। साधारणतः एक स्थायी चुम्बकमें पानी चढ़े हुए (बुझाए हुए) इस्पातको घिस कर चुम्बक बनाया जाता है। एक या दो चुम्बक द्वारा एक बार भी घिसा जा सकता है। एक चुम्बकसे चुम्बक बनाना हो, तो उसका एक मेरु इस्पातके एक तरफसे दूसरी तरफको घिसते हुए ले जाना चाहिये और शेष होने पर वहांसे उठा कर पुनः पूर्व स्थानसे घिसना चाहिये। दो चुंबक हों, तो उनके भिन्न भिन्न दो मेरुओंको इस्पात-शलाकाके बीचमें रख कर दोनों तरफ खींचते रहना चाहिये। इसी प्रकार बहुत बार घिसनेसे इस्पातमें चुंबक शक्ति स्थायी रह जाती है।

इसके सिवा बिजलीके जरिये भी अत्यन्त प्रबल चुंबक बनाया जा सकता है। एक लोहेकी छड़के ऊपर सूतसे लपेटा हुआ तांबेका तार लपेट कर उक्त तारमें विद्युत्प्रवाह सञ्चारित करनेसे उस छड़में काफी चुंबकशक्ति भर जाती है। इस तरहके चुंबकको विद्युत्चुंबक (Electro magnet) कहते हैं। फिलहाल विद्युत्प्रवाहसे ही दो तरहके चुंबक बनाये जाते हैं—

१। एक दृढ़वद्ध विद्युत् चुंबकके (१म चित्र) दोनों मेरुओंके ऊपर इस्पातके टुकड़ेको परस्पर उलटी तरफ रगड़ना चाहिये। प्रत्येक रगड़नके अन्तमें इस्पातके टुकड़ेके छोरमें लगे हुए मेरुके विपरीत चुंबकत्व उत्पन्न होता है, इसीलिए दो तरहकी रगड़न ही चुंबक पैदा करनेमें सहायक है।
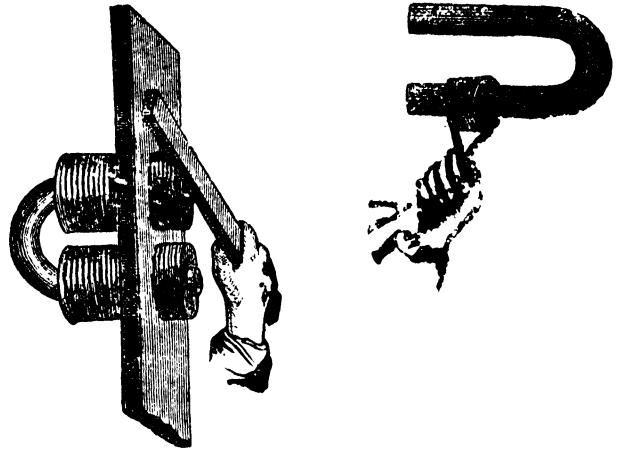
२। अति प्रबल चुंबक बनाना हो, तो ताड़ित चुंबक अत्यन्त तेजयुक्त होना चाहिये, किन्तु ऐसा होनेसे इस्पात शलाका ऐसी दृढ़तासे ताड़ित-चुंबकमें लग जाती है कि, उससे खींचनेमें अत्यन्त जोर लगाना पड़ता है। ऐसी दशामें विद्युत्प्रवाहित तारके कुण्डलीदण्ड पर (२य चित्र) एक तरफसे दूसरी तरफ तक हिलाते रहना चाहिये। आरागो (Arago) और आम्पियर (Ampere) ने पहिले पहल उक्त दो प्रणालियोंके अनुसार चुंबक बनाया था। इस्पातको चुंबक बनाते बनाते ऐसा भी समय आ जाता है कि, फिर उस पर और भी ज्यादा चुंबक-शक्ति भरनेसे वह अस्थायी हो जाता है। उस समय उक्त इस्पातको चरम-चुम्बकशक्तियुक्त (Magnetized to saturation) कहा जा सकता है।

कभी कभी इस्पातके सर्वाङ्गमें समान पान न चढ़ानेसे तथा अन्यान्य कारणोंसे चुंबकके दोसे भी अधिक मेरु हो जाते हैं। ऐसी हालतमें उसमें एक सममण्डल न हो कर बहुतसे सममण्डल हो जाते हैं।

चुंबककी भारधारण करनेकी शक्ति प्रायः आकार पर निर्भर है। परन्तु छोटा चुंबक अपनेसे जितना गुना भार धारन कर सकता है, बड़ा चुंबक उतना भार नहीं धारण कर सकता। इसलिए एक बड़े चुंबककी अपेक्षा समान वजनके बहुतसे छोटे छोटे चुंबक एकत्र करनेसे वे उससे कहीं ज्यादा भार धारण कर सकते हैं। और कोई कोई चुंबक ऐसा भी होता कि, जो पहले पहल तो ज्यादा भार नहीं धारण करता, परन्तु क्रमशः थोड़ा

थोड़ा भार बढ़ाते रहनेसे अन्तमें ज्यादा भार धारण कर सकता है।

चुंबक सिर्फ लोहेको ही आकर्षण करता हो, ऐसा नहीं। परीक्षाओं द्वारा यह स्थिर किया गया है कि, चुंबक लोहेके सिवा नीकेल, कोबाल्ट, मेङ्गानिस्, क्रोमियान्, प्लाटिनाम इत्यादि धातुओंको भी आकर्षित कर सकता है।

इसके अलावा बहुतसे पदार्थ ऐसेभी हैं; जिन्हें चुम्बकके पास ले जानेसे वे विप्रकृष्ट हो जाते हैं। जल, सुरासार, कांच, गन्धक, मोम, चोनो, श्वेतसार, काठ, हाथीदांत, रक्त इत्यादि इसी श्रेणीके अन्तर्गत हैं।

जिस प्रकार विद्युत्प्रवाहसे चुंबक बनाया जाता है, उसी प्रकार चुंबकसे भी विद्युत्प्रवाह उत्पन्न हुआ करता है। फेराडे (Faraday)-ने पहले-पहल आविष्कार किया था कि किसी भी तारकुण्डलीसे चुंबक लगाते ही कुण्डलीमें विद्युत्प्रवाह उत्पन्न हो जाता है। और चुंबकको हटानेके साथ ही उसी समय कुण्डलीमें उलटी तरफ ताड़ितस्रोत चलता है। इस उपायका अवलंबन कर १८३३ ई०में पिक्सिआइ (Pixii) साहबने एक चौंबकीय विद्युत्कोष बनाया था। दो तारकुण्डलियोंके अग्रभागमें एक स्थायी चुंबक घूम सके ऐसा बन्दोवस्त कर उक्त यन्त्र बनाया गया था। चुंबकको घुमाते ही तारमें बिजली पैदा होती है। वात और पक्षाघात (लकवा) रोगोंमें जो विद्युत्कोष द्वारा रोगीके शरीरमें ताड़ितस्रोत सञ्चालित किया जाता है, वह इसी यन्त्रका प्रकारभेद मात्र है।

बहुतसे चुंबक लगानेसे और वाष्पीययन्त्र द्वारा तारकुण्डलीको अति वेगसे घुमानेसे ऐसा प्रबल ताड़ितस्रोत उत्पन्न होता है कि, जिससे जल आदि मूल उपादानोंमें भी विश्लिष्ट, अत्यन्त ताप उत्पन्न हो जाता है और तो क्या उज्ज्वल आलोक तक निकल सकता है बिजलीकी बत्तियां साधारणतः ऐसे ही यन्त्रोंद्वारा जलाई जाती हैं। ताड़ित, बिजली और विद्युत् देखो।

वैद्यकमें चुंबकको लेखनगुणयुक्त, शीतल, मेद और विषनाशक माना है। (भावप्रकाश) २ घड़ेका ऊपरका अवलंबन, वह फंदा जो कुंएसे पानी भरते समय घड़ेके मुंह पर बांधा जाता है, फांस। (मेदिनी) ३ बहुतसे विस्तृत ग्रन्थोंका सार संग्रह करना। (त्रि०) ४ जो चुंबन करता हो। ५ कामुक, कामी, विषयी। ६ धूर्त, चालाक मनुष्य, धोखेबाज। ७ ग्रन्थके एक देशको जाननेवाला, विषयको भली भांति न जाननेवाला। (मेदिनी)

चुम्बन (सं० क्ली०) चुवि भावे ल्युट्। मुखसंयोगविशेष, चुम्मा, बोसा। कामशास्त्रमें चुंबन करनेको निम्नलिखित स्थान निर्दिष्ट हैं—

"मुखे स्तने ललाटे च कण्ठे च नेत्रयोरपि।
गण्डे च कर्णयोश्चैव कक्षोरुभगमूर्द्धसु॥
चुम्बनस्थाननित्युक्तं विशेषं कामुकैरिह"

मुख, स्तन, ललाट, कण्ठ, दोनों नेत्र, गण्डस्थल, दोनों कान, कक्ष, उरु, भग और मस्तक ये सब चुंबनेके स्थान निर्दिष्ट है।

चुम्बना (सं० स्त्री०) चुवि भावे युच् टाप्। चुम्बन, चुम्मा।

चुम्बनीय (सं० त्रि०) चुवि कर्मणि अनीयर्। चुम्बनयोग्य, जो चुम्मा लेनेके योग्य हो।

चुम्बा (सं० स्त्री०) चुविभावे अ-टाप्। चुंबन, चुम्मा।
'स्वेदोऽस्य चुम्बा प्रथमानयना ।'' (हंसस० ७८५०)

चुम्बित (सं० त्रि०) चुवि कर्मणि क्त। १ चूमा हुआ, प्यार किया हुआ। २ स्पर्श किया हुआ, छुआ हुआ।

चुम्बिन् (सं० त्रि०) चुवि णिनि। १ चूमनेवाला, जो चूमें। २ संयुक्त, मिला हुआ।
"पाणौव्रतसनयुगा विवाचुम्बि मुक्तावली।'' (चौरप० १०)

चुम्मक (हिं० पु०) चुम्बक देखो।

चुम्मा (हिं० पु०) चुंबन, बोसा।

चुर (सं० त्रि०) चुर बाहुलकात् क। चोरी करनेवाला, चोर।

चुर (देश०) १ वह स्थान जहां बाघ रहता हो, मांद। २ चार पांच मनुष्योंके बैठनेकी जगह, बैठक। (अनु० पु०) ३ कागज, सूखे पत्ते आदिके मुड़नेका शब्द।

चुरकना (अनु० क्रि०) बोलना, चहचहाना।

चुरकुट (हिं० क्रि०) चूर्णित, चकनाचूर, चूरचूर।

चुरचुरा (अनु० वि०) जो बहुत धीरे धीरे दबानेसे ही चुरचुर शब्द करके टूट जाय।

चुरट (हिं० पु०) चुरुट देखो।

चुरना (हिं० पु०) १ चुनचुना नामके कीड़े जो पेटमें पड़ते और मलके साथ निकलते हैं। बच्चोंको ये बहुत तकलीफ देते हैं। (क्रि०) २ उबलना, सीझना, खौलते हुए पानीमें किसी चीजका पकना। ३ आपसमें गुप्त बात चीत होना।

चुरमुर (अनु० पु०) वह आवाज जो खरी या कुरकुरी वस्तुके टूटनेसे होती हो।

चुरमुरा (अनु० वि०) चुरमुरा देखो।

चुरमुराना (हिं० क्रि०) १ चुरमुर शब्द करके तोड़ना। २ चुरमुर शब्दके साथ टूटना।

चुरव (सं० पु०) कृमि।

चुरवाना (हिं० क्रि०) पकानेका काम कराना।

चुरस (देश०) वस्त्रोंकी शिकन, सिलवट, सिकुड़न।

चुरा (सं० स्त्री०) चुर बाहुलकात् भावे अ-टाप्। चौर्य्य, स्तेय, चोरी, दूसरेका द्रव्य अपहरण।

चुराई (हिं० स्त्री०) चुरनेकी क्रिया, पकानेका काम।

चुरादि (सं० पु०) चुर आदिर्यस्य, बहुव्री०। चुर प्रभृति कई एक धातु। इसके उत्तर स्वार्थे णिच् हुआ करता है।

चुराना (हिं० क्रि०) १ किसी दूसरेकी चीजको इस तरह ले लेना कि उसे खबर न हो, चोरी करना, गुप्तरूपसे पराई वस्तु हरण करना। २ परोक्षमें करना, छिपाना। ३ किसी वस्तुके देने या करनेमें कसर रखना। ४ रांधना, पकाना।

चुरिला (हिं० पु०) कांचका स्थूल खंड, कांचका मोटा टुकड़ा जिससे लड़के पट्टी या तख्ती रगड़ते हैं।

चुरिहारा (हिं० पु०) चुड़िहारा देखो।

चुरी (सं० स्त्री०) चुर बाहुलकात् कि-ङीप्। उपकूप, कूएंके समीपका छोटा जलाशय।

चुरुचुर (सं० त्रि०) चुर-कु चुर-क ततः कर्मधा०। दुर्जन, खराब मनुष्य।

चुरुट (अं० पु०) तंबाकूके पत्ते जिसका धुआं मनुष्य पीते हैं, सिगार।

चुरुट (हिं० पु०) चुरुट देखो।

चुल (सं० त्रि०) चुर-क रस्य लः। तस्कर, चोर। यह शब्द बलादि गणके अन्तर्गत है।

चुल (हिं० स्त्री०) खुजलाहट, किसी अंगके सहलाए वा मले जानेकी इच्छा, कामोद्वेग, मस्ती।

चुलका नदीविशेष, दक्षिणकी एक नदीका नाम।

चुलचुलाना (हिं० क्रि०) खुजलाहट होना, चुल होना।

चुलचुलाहट हिं० स्त्री०) खुजलाहट।

चुलचुली (हिं० स्त्री०) खुजलाहट, चुल।

चुलबुल (हिं० स्त्री०) चञ्चलता, चपलता, चुलबुलाहट।

चुलबुला (हिं० वि०) १ चञ्चल, चपल। २ नटखट, धूर्त्त छली, पाखंडी।

चुलबुलाना (अनु० क्रि०) १ चपलता करना। २ चुल-बुल करना।

चुलबुलापन (हिं० पु०) चञ्चलता, चपलता, शोख।

चुलबुलाहट (देश०) चञ्चलता, चपलता, शोख।

चुलाना (हिं० क्रि०) चुवाना देखो।

चुलाव (हिं० पु०) १ मांसरहित पुलाव, बिना मांसका पुलाव। २ चुआने या चुलानेका काम।

चुलिया—मलवार और सिंहलके एक श्रेणीके मुसल-मान। किन्तु मलवारके लोग दाक्षिणात्यके रहने-वालोंको चुलिया कहते हैं। वहांके प्रायः सब ही व्यव-सायी चुलिया और क्लिं इन दो जातियोंमें विभक्त हैं। क्लिं सम्भवतः कलिङ्ग शब्दसे और चुलिया चोलशब्दसे उत्पन्न हुआ है। ऐसा मालूम पड़ता है कि, चुलिया लोग चोलराज्यसे ही वहां पहुंचे हैं।

चुलियाला (हिं० पु०) छन्दविशेष, एकमात्रिक छन्दका नाम। इसमें तेरह और सोलहके विश्रामसे २८ मात्राएं तथा अन्तमें एक जगण और एक लघु होता है। दोहेके अन्तमें एक जगण और एक लघु जोड़नेसे यह छन्द बनता है। कोई कोई इसके दो पद और कोई चार मानते हैं। दो पद माननेवाले दोहेके अन्तमें एक जगण और एक लघु लगाते हैं तथा जो चार पद मानते हैं, वे सिर्फ एक जगण रखते हैं।

चुलुक (सं० पु०) चुल बाहुलकात् उकक्। १ प्रसृति, हस्तकोष, अंजलि, चुल्लू। २ घन पङ्क, घन कर्दम, भारी दलदल। ३ क्षुद्र भाण्डविशेष, एक प्रकारका बरतन। ४ मात्र-मज्जनोपयुक्त जल, उदरके डूबने भरका जल।

"नावमज्जनजलमात्रं तच्चुलुकं।" (महोपनि०)

५ गोत्रप्रवर्तक ऋषिविशेष, एक गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिका नाम। गर्गादि देखो।

चुलुका (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक प्राचीन नदीका नाम जिसका वर्णन महाभारतमें आया है।

"कावेरीं चुलुकाञ्चापि वेण्वां शतबलामपि।" (भारत ६।९ अ०)

चुलुकिन् (सं० पु०) चुलुक जर्ध्वोन्नति विद्यतेऽस्य चुलुक-इनि। १ मत्स्यविशेष, एक तरहकी मछली। यह देखनेमें सुइंस नामक जलजन्तुके जैसा होता है। (त्रि०) २ चुलुकयुक्त।

चुलुम्प (सं० पु०) चुलुम्प भावे घञ्। बालकोंका लालन, दुलार, प्यार।

चुलुम्पा (सं० स्त्री०) चुलुम्प-टाप्। छागी, बकरी।

चुलुम्पिन् (सं० पु०) चुलुम्प-णिनि। मत्स्यविशेष, शिशुमार, सुइंस नामकी मछली।

चुल्ल (सं० क्ली०) क्लिन्न स्वार्थे लच् चुलादेशश्च। क्लिन्नस्य चिल् पिल्लश्चास्य चक्षुषी। पा ५।२।३३ वार्तिक। "चुल्लं चक्ष :।" (महाभाष्य) १ क्लिन्ननेत्र, क्लेदयुक्त चक्षु, कीचड़से भरी हुई आंखें। (त्रि०) चुल्ल अर्श-आदित्वात् अच्। २ क्लेदयुक्त चक्षु-विशिष्ट, जिसकी आँखोंमें कीचड़ भरा हो।

चुल्लक—चुलुक देखो।

चुल्लकी (सं० स्त्री०) चुल्लति अङ्गभङ्गेन क्रीड़ति चुल्ल-ण्वुल्, गौरादित्वात् ङीष्। १ शिशुमार, सुइंस नामका जल-जन्तु। २ कण्डोविशेष, एक तरहका छोटा कंडा, गोहरी। ३ कुलविशेष।

चुल्ला (हिं० पु०) काँचका छोटा छल्ला। जुलहे इसे करघे-में लगाते हैं।

चुल्लि (सं० स्त्री०) चुल्लते धातूनामनेकार्थत्वात् स्थाप्यते अग्निर्यत्र चुल्ल-इन्। सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७। वह स्थान जहां रसोई करनेके लिए आग रखी जाती है, अग्न्याधान, चूल्हा। इसका पर्याय—अश्मन्त, उद्धान, अधिश्रयणी, अन्तिका, अस्मन्त, उध्मान, उद्धार, चुल्ली, आन्दिका और उद्धानि है।

चुल्ली (सं० स्त्री०) चुल्लि वा ङीष्। क्रदिकारादक्तिनः। पा ४।१।४५ वार्तिक। १ चिता। २ अग्न्याधान, चूल्हा। ३ गुवाकपुष्प, सुपारीके फूल।

चुल्लू (हिं० पु०) चुलुक, प्रसृति, अंजलि।

चुवाना (हिं० क्रि०) टपकाना, गिराना।

चुशूपा (सं० स्त्री०) च्युत सन् निपातने साधुः। वह जो अच्छी तरह चूसा गया हो।

"चमचमन चुशूपाकार' धाना: ध'दश्य।" (मानव०)

चुसकी (हिं० स्त्री०) १ मद्य पीनेका पात्र, पानपात्र, प्याला। २ थोड़ा थोड़ा कर पीनेकी क्रिया, सुड़क, दम, घूंट।

चुसना (हिं० क्रि०) १ चूसा जाना, चचोड़ा जाना। २ निचुड़ जाना, गर जाना, निकल जाना। ३ शक्तिहीन होना, कमजोर होना। ४ धनशून्य होना, सब खर्च कर डालना।

चुसनी (हिं० स्त्री०) १ एक तरहका खिलौना। इसे लड़के मुंहमें डाल कर चूसते हैं। २ वह शीशी जिससे छोटे छोटे लड़कोंको दूध पिलाया जाता है।

चुसवाना (हिं० क्रि०) चूसनेमें प्रवृत्त होना, चूसनेका काम कराना।

चुसाई (हिं० स्त्री०) चूसनेकी क्रिया या भाव।

चुसाना (हिं० क्रि०) चूसनेमें तैयार करना।

चुसौवल (हिं० स्त्री०) बहुतोंसे चूसनेकी क्रिया।

चुस्त (सं० पु०-क्ली०) चूष्यते आस्वाद्यते चुष क्त निपातने साधु। १ वुस्त, मांसपिण्डविशेष। २ स्थालीभृष्ट मांस, पकाया हुआ मांस। ३ पनस प्रभृति फलोंका असार भाग। ४ भूसी, चोकरा।

चुस्त (फा० वि०) १ संकुचित, कसा हुआ जो ढीला न हो। २ जिसमें आलस्य न हो, फुरतीला, चलता। ३ दृढ़, मजबूत।

चुस्ता (हिं० पु०) बकरीके बच्चेका आमाशय। इसमें पिया हुआ दूध जमा रहता है।

चुस्ती (फा० स्त्री०) १ तेजी, फुरती। २ कसावट, तंगी। ३ दृढ़ता, मजबूती।

चुहचाहट (अनु० स्त्री०) पक्षियोंका शब्द, चहकार।

चुहचुहा (अनु० वि०) रसीला, चटकीला, शोख।

चुहचुहाता (हिं० वि०) सरस, जिसमें रस हो, मजेदार।

चुहचुहाना (अनु० क्रि०) १ रस गिरना। २ कलरव करना, चहकार मचाना, चूं चूं शब्द करना।

चुहचुही (अनु० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक तरहकी काली

रंगकी चिड़िया। यह सदा फूलों पर बैठी देखी जाती है। यह बहुत चंचल मालूम पड़ती है। इसकी बोली सुननेसे ही मन भर जाता है।

चुहड़ा (देश०) श्वपच, चाण्डाल, भंगी, हलालखोर।

चुहल (हिं० स्त्री०) विनोद, मनोरंजन, हंसी, ठठोली।

चुहलपन (हिं० पु०) चुहलबाजी देखो।

चुहलबाज (हिं० वि०) विनोदी, ठठोल, हंसोड़, मखौलिया।

चुहलबाजी (हिं० स्त्री०) दिल्लगी करनेका काम, हंसी ठठोली।

चुहादंती (हिं० स्त्री०) चूहादंती देखो।

चुहिया (हिं० स्त्री०) मादा चूहा।

चुहिली (देश०) गुवाकविशेष, चिकनी सुपारी।

चूँ (अनु० पु०) पक्षियोंकी बोली। ऐसा शब्द सिर्फ छोटी चिड़िया करती है।

चूँकि (फा० क्रि०) क्योंकि, इसलिये कि।

चूँचरा (फा० पु०) १ प्रतिवाद, विरोध, खंडन। २ आपत्ति, उज्र, एतराज। ३ बहाना, मिस।

चूंचो (हिं० स्त्री०) चूंची देखो।

चूंचूं (अनु० पु०) पक्षियोंकी बोली, चिड़ियोंके बोलनेकी आवाज।

चूआडाङ्गा—१ बङ्गालके नदिया जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २३° २२´ एवं २३° ५० उ० और देशा० ८८° ३८´ तथा ८८° १´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४३७ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २५४५८८ है। इस उपविभागमें ४८५ ग्राम लगते हैं।

२ बङ्गालके नदिया जिलेके अन्तर्गत इसी नामके उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २३° ३८ उ० और देशा० ८८° ५१´ पू० पर माताभाङ्गा नदीके बायें किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ३१४७ है। इष्ट इण्डियन रेलवेका इसी नामका एक स्टेशन है। यहां एक छोटा कारागार है जिसमें केवल १२ कैदी रखे जाते हैं।

चूज (देश०) परिधान वस्त्रविशेष, स्त्रियोंके पहननेका एक तरहका रेशमी कपड़ा। इस तरहका वस्त्र पहाड़ी देशोंमें बनता है।

चूक (हिं० स्त्री०) १ भूल, गलती। २ दरार, दर्ज। (पु०) ३ अम्ल रस, खट्टे फलोंके रसको गाढ़ा करके बनाया हुआ एक तरहका खट्टा पदार्थ। ४ एक तरहका खट्टा साग।

चूकना (हिं० क्रि०) १ भूल करना, गलती करना। २ लक्ष्य-भ्रष्ट होना, निशाना बरबाद होना। ३ सुअवसर नष्ट कर देना, अच्छा मौका हाथसे जाने देना।

चूका (हिं० पु०) चूक नामका खट्टा साग। इसका गुण—लघु, रुचिकर और दीपक है।

चूची (हिं० स्त्री०) १ स्तनका अग्रभाग, थनके ऊपरकी घुंडी। २ स्तन, स्त्रीकी छाती।

चूचुक (हिं० क्लो०) चूषति पीयते चुष पाने बाहुलकात् उकः षकारस्य चकारश्च। १ चूचुक, कुचाग्र। (त्रि०) २ चूषणशक्तिहीन, जो जिह्वासे रस चूस नहीं सकता हो, जिसे चूसनेकी ताकत न हो।

"पारयोनि समापन्नाश्चाण्डाला मूकचूचुका।" (भारत १५।३५ अ०)

चूजा (फा० पु०) १ मुरगीका बच्चा। (वि०) २ जिसकी उम्र ज्यादा न हो।

चूड़ (सं० पु०) १ शिखा, चोटी २ मस्तक परकी कलगी। ३ शंखचूड़ नामक दैत्य। ४ छोटा कुआं। ५ पहाड़, मकान या खंभे आदिका ऊपरका हिस्सा, कङ्गूरा।

चूड़क (सं० पु०) चूड़ाख्यस्य चूड़ा बाहुलकात् कन्। कूप, कुआं। चड़ देखो।

चूड़त्रिपादोपक्रमण—बुद्धदेवका धर्मव्याख्यान। महेन्द्र नामक एक पुरुषने भारतवर्षसे सिंहल आ वहांके राजा देवानन् प्रियतिष्यको उक्त धर्मव्याख्या समझा कर उन्हें तथा उनके अधीनस्थ चालीस हजार मनुष्योंको बौद्धधर्ममें दीक्षित किया था।

चूड़ा (सं० स्त्री०) चोलयति उन्नतो भवति चुल-अङ् तस्य उकारः दीर्घश्च निपातनात्। १ मयूरशिखा, मोरके सिर परकी चोटी। २ शिखा, चोटी, चुरकी। इसके पर्याय—शिखा, केशपाशी, जुटिका और जूटीका। ३ छाजन आदिमें वह सबसे ऊंचा भाग जिसे मँगरा कहते हैं। ४ बाहुका अलङ्कार, बाँहमें पहननेका एक तरहका गहना। ५ अग्रभाग। "अस्ताचल चूड़ावलम्बिनि भगवति चन्द्रमसि।" (हितोप०) ६ कूप, छोटा कुआं। ७ गुञ्जा, घुंघची नामकी लता।

८ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। ९ मस्तक, शिर, माथा, सर। १० प्रधाननायक, मुखिया, अगुआ। ११ दश संस्कारोंके अन्तर्गत एक तरहका संस्कार। चूड़ाकरण देखो।

चूड़ा (हिं० पु०) १ चिउड़ा, चिड़वा। चिपिट देखो। २ कङ्कण, कड़ा। ३ चूहड़ा चण्डाल। ४ हाथोंमें पहना जानेवाला छोटी बड़ी बहुतसी चुड़ियोंका समूह जिसे किसी जातिमें नव-वधू और किसी जातिमें प्रायः सब विवाहिता स्त्रियां पहनती हैं। इसकी चूड़ियां अकसर हाथी-दांतकी होती हैं। इसकी सबसे छोटी चूड़ी पहुंचे तक और सबसे बड़ी चूड़ी कुहनीके पास तक रहती है तथा बीचकी चूड़ियां गावदुमा होती हैं।

चूड़ाकरण (सं० क्लो०) चूड़ायाः करणं, ६-तत्। १ मुण्डन किसी बच्चे का सिर पहले पहल मुड़वा कर चोटी रखवाना। हिन्दुओंके दश प्रकारके संस्कारोंमेंसे एक संस्कार। गर्भाधान आदि संस्कारोंकी तरह यह संस्कार भी हिन्दुओंके लिए आदरणीय और अवश्य-कर्तव्य है। मुहूर्तचिन्तामणिके मतसे—गर्भाधान वा जन्मदिनसे ३य, ५म वा ७म वर्षमें चूड़ाकरण करना चाहिये। किन्तु मनुका मत है, कि प्रथम वर्षमें भी चूड़ाकरण हो सकता है। पीयूषधाराके मतसे गृह्यसूत्रमें जिसके जिस दिनका विधान है, उसका उसीके अनुसार चूड़ाकरण होना चाहिये। बहुत जगह यह संस्कार उपनयनके साथ ही किया जाता है और कहीं कहीं पृथक्‌रूपसे भी होता है। कुलाचारके अनुसार उपनयन संस्कारके साथ जिनका चूड़ाकरण होता है, उनको चूड़ाके लिए पृथक् शुभदिन नहीं देखना पड़ता; जिस शुभदिनमें उपनयनका विधान है, उस दिन चूड़ा भी हो सकता है। परन्तु चूड़ाकरण संस्कार जिनमें पृथक् होता है, उनको इसके लिए पृथक् दिन शोधना पड़ता है। मुहूर्तचिन्तामणिके मतसे यथासमय उत्तरायण अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावस्या और द्वादशी रिक्ता तथा प्रतिपदाके सिवा अन्य तिथिमें सोम, बुध, वृहस्पति और शुक्रवारमें एवं समस्त ग्रहोंके लग्न और नवांशमें चूड़ाकरण करना उचित है। परन्तु चैत्र वा पौष मासमें चूड़ाकरण निषिद्ध है। अष्टम स्थानमें यदि शुक्रके सिवा अन्य ग्रह रहे, तो भी चूड़ाकरण विधेय नहीं है। अनुराधा वर्जित मृदु चर और लघुगण तथा ज्येष्ठा नक्षत्र चूड़ाके लिए प्रशस्त है। जिस लग्नके ३रे ६ठे या ११वें स्थानमें पापग्रह हो, उस लग्नमें चूड़ा करना उचित है। क्षीण चन्द्र यदि लग्नके केन्द्रगत हो तो मृत्यु होती है, इसी तरह केन्द्रस्थानमें मङ्गल होने पर शस्त्रभय, शनि होने पर पङ्गुता और सूर्य होने पर ज्वर होता है। अतएव लग्नके केन्द्रस्थानमें उक्त ग्रह न रहें, ऐसे मुहूर्तमें चूड़ाकरण करना उचित है। किन्तु बुध, वृहस्पति वा शुक्रके केन्द्रगत होने पर शुभ फल होता है। इसमें तारा शुद्धि देखनेकी भी आवश्यकता पड़ती है। माता गर्भिणी हो, तो बालकका चूड़ाकरण न करना चाहिये। किन्तु गर्भके प्रथम पांच मासके भीतर वा बालककी उम्र पांच वर्षसे ज्यादा होने पर चूड़ाकरण करनेमें कोई दोष नहीं। उपनयन और चूड़ा एक साथ होनेसे गर्भके प्रथम पांच मासके भीतर भी किया जा सकता है। विवाह आदिकी तरह चूड़ाकरण भी वेदके अनुसार भिन्न भिन्न प्रकारसे हुआ करता है।

(मुहूर्तचिन्तामणि)

भवदेवभट्टकृत दशकर्मपद्धतिमें सामवेदियोंके लिए चूड़ाकरणकी विधि इस प्रकार लिखी है—जिस दिन चूड़ाकरण होगा, उस दिन बालकके पिताको यथानियम प्रातःस्नान और वृद्धिश्राद्ध करना चाहिए। तदनन्तर कुशण्डिकाके नियमानुसार विरूपाक्ष जपके बाद कुशण्डिका करें। इसमें सत्य नामक अग्नि स्थापित की जाती है। कुशण्डिका देखो। तत्पश्चात् एकविंशति दर्भ पिञ्जुलि अर्थात् प्रत्येक भागमें सात और अन्य एककी कुशपत्रसे वेष्टित करें। उष्ण जलसे परिपूर्ण कांस्यपात्र, ताम्बेका क्षुर (उस्तरा), उसके अभावमें दर्पण ला कर रखना पड़ता है, तथा नाईको लौहक्षुर हाथमें ले कर बैठना पड़ता है। अग्निके उत्तर दिशामें वृष-गोमय, तिल, चावल और मूङ्गकी खिचड़ी (कृशर) तथा पूर्व दिशामें धान्य, यव, तिल और मूङ्ग, इनसे परिपूर्ण तीन पात्र रक्खें। इसके बाद बालककी गर्भधारिणी (माता) एक साफ वस्त्रसे आच्छादित बालकको गोदमें ले कर अग्निसे पश्चिम दिशामें स्वामीके बाईं बगल उत्तराग्र कुश पर पूर्व मुखी हो कर बैठे। तदनन्तर बालकका पिता प्रादेश परिमित एक समिधको घीमें डुबो कर अमन्त्रक अग्निमें

निक्षेप करे। फिर कुशण्डिकाके नियमानुसार व्यस्त, समस्त महाव्याहृति होम करना पड़ता है। बालकका पिता उठे और पूर्वमुखी हो पश्चिम दिशामें अवस्थित नापितकी तरफ दृष्टिनिक्षेप कर उसको सूर्यको भांति समझ कर "प्रजापतिऋ षि सविता देवता चूड़ाकरणे विनियोगः ओम् आयमगात् सविता क्षुरेण" इस मन्त्रका तथा उष्ण जलसे परिपूर्ण कांस्यपात्र पर दृष्टिनिक्षेप एवं मन ही मन वायुकी चिन्तन करके "प्रजापतिऋ षिर्वायुर्देवता चूड़ाकरणे विनियोगः, ॐ उष्णेन वाय उदकेनेधि" इस मन्त्रका जप करे। इसके बाद पूर्वस्थापित कांस्यपात्रसे किञ्चित् उष्णजल दहिने हाथ पर ले कर बालकको दहनी कपुष्णिका भिगो दें। (शिखास्थानसे नीचे और कानके निकटवर्ती उच्चस्थानको कपुष्णिका कहते हैं) मन्त्र इस प्रकार है—"प्रजापतिऋ षिरापो देवता चूड़ाकरणे विनियोगः। ओम् आप उदन्तु जीवसे।" अनन्तर ताम्रक्षुर वा दर्पण अवलोकन कर यह मन्त्र पढ़े—"प्रजापतिऋ षिर्विष्णुर्देवता चूड़ाकरणे विनियोगः। ओम् विष्णोर्दंष्ट्रोऽसि।" इसके बाद कुशवेष्टित उस दर्भपिञ्जलिको ले कर "प्रजापतिऋ षिरोषधिर्देवता चूड़ाकरणे विनियोगः। ओम् ओषधे त्रायस्वैनं।" इस मन्त्रका उच्चारण करके दर्भपिञ्जलीके मूलको ऊपरकी ओर रख पूर्वसिक्त कपुष्णिकामें लगावें तथा ताम्रक्षुर वा दर्पणको दहिने हाथमें रख कर "प्रजापतिऋ षिस्वधिपतिर्देवता चूड़ाकरणे विनियोगः। ॐ स्वधिते मैनं हिंसीः।" इस मन्त्रका उच्चारणपूर्वक उसे वहां संयोजित करें। इसके बाद वहां ताम्रक्षुर वा दर्पण इस तरह चलावें कि एक भी केश न टूटने पावे मन्त्र इस प्रकार है—"प्रजापतिऋ षिः पूषा देवता चूड़ाकरणे विनियोगः ओम् येन पूषा बृहस्पतिर्वायोरिन्द्रस्य चावपत्तेन ते वयामिब्रह्मणा जोवातवे जीवनाय दीर्घायुष्ट्वाय बलाय वर्चसे।" इसके सिवा बिना मन्त्रके भी दो बार फेरना चाहिये। अनन्तर लौहक्षुर द्वारा कपुष्णिकाके केश छेदन करके उनको बालकके किसी मित्र व्यक्तिके हस्तस्थित उस वृषगोमय पूर्णपात्रके ऊपर दर्भपिञ्जलीके साथ रख दें। तत्पश्चात् कपुच्छलदेशके केश छेदन करें। (मस्तकके पोछे शिखास्थानके नीचे और नापितको गोदको तरफका ऊंचा स्थान कपुच्छल कहलाता है।) इसके नियम—पहिले "आप उन्दन्तु" इत्यादि मन्त्र पढ़ कर उष्णजलसे भिगोवें, फिर "ओम् विष्णोर्दंष्ट्रोऽसि" इस मन्त्र द्वारा ताम्रक्षुर वा दर्पण और "ओम् ओषधये त्रायस्वैनं" इस मन्त्रसे दर्भपिञ्जली संयोजित करें। बादमें "ओम् स्वधिते मैनं हिंसीः" इस मन्त्रसे ताम्रक्षुर वा दर्पणको फेरें और लौहक्षुरसे केशच्छेदन करके उन्हें पहलेको भांति स्थापन करें। वाम-कपुष्णिकासे भी इस तरह केशच्छेदन किया जाता है। इस प्रकारसे केशच्छेदन हो जाने पर बालकका मस्तक दोनों हाथोंसे ढक कर 'प्रजापतिऋ षिरुष्णिकछन्दो जमदग्निकश्यपागस्त्यादयो देवतास्चूड़ाकरणे विनियोगः। ओम् त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषं अगस्त्यस्य त्र्यायुषं यद्देवानां त्र्यायुषं तत्तेऽस्तु त्र्यायुषं॥" इस मन्त्रका जप करें। अनन्तर पुष्पादि द्वारा नापितका अलङ्कृत करना चाहिए। समस्त केशोंको वृष-गोमयके ऊपर रख कर, वनमें जा बांसको झाड़ोमें रख आना चाहिये। इसके बाद पूर्ववत् व्यस्त समस्त महाव्याहृति होम करें और एक समिधको अभ्यक्त अग्निमें निक्षेप करके यथार्थ कर्मको समाप्त करें। अनन्तर कुशण्डिकाके नियमानुसार शाट्यायनहोम आदि वामदेव्यगणान्त कर्म सम्पन्न करके कर्मकारक ब्राह्मणको दक्षिणा और नापितको धान्यादिपूर्ण पूर्वस्थापित पात्र दे देने चाहिये। (भवदेवभट्टकृत दशकर्मपद्धति)

ऋग्वेदोय चूड़ाकरण—ऋग्वेदियोंके लिए अपने कुलाचारके अनुसार तृतीय वा प्रथम वर्षमें अथवा उपनयनके समय चूड़ाकरण विधेय है। स्वयं अशक्त होने पर अन्य ब्राह्मणको वरण कर सकते हैं। जिस दिन चूड़ाकरण हो, उस दिन प्रातःस्नान आदि नित्यक्रिया करके तिल, जल और कुशपत्र ले कर "ओम् अद्येत्यादि कर्त्तव्य कुमारसंस्कारकचौलकर्माङ्गनान्दीमुखश्राद्धमहं करिष्ये" ऐसा संकल्प करें। तत्पश्चात् यथोक्त विधानानुसार आभ्युदयिक श्राद्ध करके कुशण्डिकाके नियमसे ले कर अग्निस्थापन तकके समस्त कार्योंका अनुष्ठान करें। इसमें अग्निका नाम सत्य रखना चाहिये। पीछे प्राणायाम करके "ओम् अद्येतादि कुमारसंस्कारार्थं चौलाख्य कर्म तदङ्गमन्वाधानं देवता परिग्रहार्थं च करिष्ये।"

ऐसा संकल्प कर "ओम् भूर्भुवः स्वाहा। इदं प्रजापतये नमः।" इस मन्त्रका उच्चारणपूर्वक दो समिध् घीमें डुबो कर अग्निमें निक्षेप करें। अनन्तर "ओम् अद्येत्यादि अस्मिन्नन्वाहिते अग्नौ अग्निं जातवेदसमश्विना प्रजापतिं चाधारदेवञ्च आज्येनाग्निपवमानं प्रजापतिञ्च प्रधानदेवता आज्यशेषेण स्विष्टकृतमिध्मसन्नहनेन रुद्रं विश्वान् देवान् संश्रावेण सर्वप्रायश्चित्तदेवता अग्निं देवान् विष्णुं वायुं सूर्यं प्रजापतिञ्च ज्ञाता ज्ञातदोषनिर्हरणार्थं मनाज्ञातमिति तिस्रः आज्यद्रव्येणामाङ्गेन कर्मणामद्योऽहं वक्ष्ये।" इस प्रकार संकल्प करके आज्यहोममें आवश्यकीय समस्त वस्तुओंका संग्रह करें। कुशण्डिका देखो। अग्निके उत्तरको तरफ धान, माष, यव और तिलसे परिपूर्ण चार शरवे, ताम्रक्षुर, लौहक्षुर, शीतलोष्णोदिक, नवनीत और दधि-पूर्ण-पात्र रक्खें। बालककी माता बालकको गोदमें ले कर अग्निके पश्चिममें बैठे। समीपत्रपूर्ण वृष-गोमययुक्त दो नये शरावे बालकके पास रक्खें। बालकका पिता इक्कीस दर्भपिञ्जलियां हाथमें ले कर दक्षिणकी ओर बैठे और कुशण्डिकाके नियमानुसार इध्माधानसे ले कर आधार तकके समस्त कार्य करें। उसके बाद चार घृताहुति देवें। मन्त्र इस प्रकार है—"अग्न आयुंषोति तिसृणां शतं वैखानस ऋषयोऽग्निः पवमानो देवता गायत्रीच्छन्द आज्यहोमे विनियोगः। १ ॐ अग्न आयुंषि पवस आसुवोर्जमिषं चनः। आरे बाधस्व दुच्छुन स्वाहा" (ऋक् ९।६६।१९) २ "अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः तमीमहे महागयं स्वाहा" (ऋक् ९।६६।२०) ३ "अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यं दधद्रयिमयि पोषम् स्वाहा" (ऋक् ९।६६।२१) इन तीन मन्त्रोंके अन्तमें "इदमग्नये पवमानाय नमः" यह वाक्य जोड़ कर तीन आहुति और "प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वा" (ऋक् १०।१२१।१०) इत्यादि मन्त्रके अन्तमें "स्वाहा इदं प्रजापतये नमः" ऐसा जोड़ कर एक एक आहुति देवें। इस तरह चार आहुति देनेके बाद बालकके दहिनी तरफ एक सरवा रक्खें और दोनों हाथोंमें पूर्वस्थापित शीतलोष्ण जल ले कर "ओम् उष्णेण वाय उदकेनेहि" इस मन्त्रसे मिलावें। एक सरवामें उस मिश्रित जलमेंसे थोड़ासा ले कर नवनी (उसके अभावमें दूधकी मलाई)से बालकके दहिने कानके ऊपरके बालोंको यह मन्त्र पढ़ते हुए भिगोवें—"ओम् अदितिः केशान् वपतु आपः उन्दन्तुवर्चसे दीर्घायुष्ट्वाय बलाय वर्चसे।" इस प्रकारसे मस्तकके सम्पूर्ण केशोंको भिगोना चाहिये। और वाम मस्तकके केशोंको दक्षिण दो भागोंमें विभक्त करके, दहिने हिस्से को चार भागोंमें और बायेंको तीन भागोंमें विभक्त करें। इसके बाद होमकर्ताको बालकके दहिनी ओरके केशोंके एक भाग पर "ओम् ओषधे त्रायस्वैनं" यह मन्त्र बोल कर तीन कुशपिञ्जलिया अर्पण करें तथा उन कुशपिञ्जलियोंके साथ उन केशोंको बायें हाथसे पकड़ कर "ओम् स्वधिते मैनं हिंसीः।" इस मन्त्रके द्वारा दहिने हाथसे ताम्रक्षुर फेरें एवं लौहक्षुर द्वारा "ओं येना पवत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेन ते ब्रह्मणो वपभेदमस्यायुष्मान् जरदष्टीर्यथासत्" इस मन्त्रका उच्चारण कर केश छेदन करें और शमीपत्रके साथ मिला कर बालककी माताकी हस्ताञ्जलिमें अर्पण करें। इस समय छिन्न केशोंके अग्रभाग पूर्व दिशामें रक्खे जाते हैं। बालककी माताको उन केशोंको वृषगोमयके ऊपर रख देना चाहिये। इस तरह दहिनी ओरके केशोंके चारों भाग छेदन करें। छेदनके मंत्रके सिवा अन्य समस्त नियम पहिलेकी भांति हैं। २री बार छेदनका मन्त्र—"ॐ येन धाता वृहस्पतेरग्नेरिन्द्रस्य चायुषे वपत्। तेन ते आयुषे वपानि सुश्लोकाय स्वस्तये।" ३री बार छेदनका मन्त्र—"ओं येन भूयश्च रात्र्यां ज्योक् च पश्यति सूर्यं। तेन ते आयुषे पामि सुश्लोकाय स्वस्तये।" इन तीनों मंत्रोंको पढ़ कर चतुर्थ भाग छेदन करना चाहिये। इसके उपरान्त होमकर्त्ताको चाहिये कि, वह बालकके उत्तरमें आ कर बैठे और बालकके पिताको उचित है, कि वह बाएं कानके ऊपरके केशों पर पहलेकी भांति दर्भपिञ्जली अर्पण पर्यन्त समस्त कार्योंको करके पूर्वोक्त तीन मंत्रोंके द्वारा तीन बार छेदन करे। उसके बाद पहलेकी तरह उन केशोंको बालककी माता वृषगोमय पर रख दे। पीछे होमकर्त्ता अङ्गुष्ठ और उपकनिष्ठा अङ्गुली द्वारा "ओम् यत् क्षुरेण मार्जयता सुपेशसा वपसि केशान् छिन्धि मास्यायुः प्रमोषीः" इस मन्त्रका उच्चारण कर, क्षुर या उस्तरेको माजे। अनन्तर बालक-

की माता नाईके हाथमें उस्तरा दे कर ऐसा आदेश दे, कि 'शीतोष्णाभिरद्भिरस्युषममुं कुशली कुरु'। नाईको 'करोमि' कह कर स्वीकार करना पड़ता है। इसके उपरान्त नाई उस शीतोष्ण जलसे समस्त केशोंको भिगो कर मुण्डन-कार्य करे। इसी समय कर्णवेध (कनछेदन) किया जाता है। अन्तमें होमकर्त्ताको प्रायश्चित्त और स्विष्टकृत् होम समाप्त करना चाहिये। पीछे ब्राह्मणको दक्षिणा और नाईको धान्यादिसे परिपूर्ण सरवे दिये जाते हैं। कुमारीके चूड़ामें भी ये समस्त कार्य करने पड़ते हैं। किन्तु उसमें किसी प्रकारका मंत्र नहीं पढ़ा जाता, विना मंत्रके ही उन कार्यों का अनुष्ठान होता है।

(वासुदेवभट्टविरचित आश्वलायनपद्धति)

यजुर्वेदीय चूड़ाकरणके निबन्धमें जैसा विधान है, उसके अनुसार चूड़ाका काल समझें। चूड़ाकरणके दिन बालकका पिता नित्य क्रियासमाप्त करके शुभलग्नमें गौरी आदि मातृकाओंकी पूजा, वसुधारा और वृद्धि-श्राद्ध करे। पीछे "ओम् अद्येत्यादि मत्पुत्रस्यामुकस्य चूड़ाकरणकर्मणि कर्त्तव्ये यथासम्भवगोत्रशाखनामभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोपकल्पितं तन्नैमित्तिकमन्नमहमुत्सृजे।" इस प्रकारका वाक्य उच्चारण करके तीन भोज्य उत्सर्ग करे। अनन्तर तीन ब्राह्मणोंको भोजन जिमा कर शक्त्यनुसार ताम्बूलादि और दक्षिणा देवें। इसके बाद प्राङ्गणमें छायामण्डपके मध्य पूर्वमुखी हो कर बैठे और अग्नि स्थापित करे। उष्णजल, शीतलजल, नवनीत, पिण्ड, श्वेतशल्लकीके तीन कांटे, कुशनिर्मित नौ त्रिपात्र, ताम्रक्षुर और नये सरवेमें वृषगोमय इन सब चीजोंका संग्रह किया जाता है। इसके उपरान्त पवित्र-च्छेदन, प्रोक्षणीके ऊपर स्थापन, प्रणीता पात्रके जलमें प्रोक्षणीका भरना वामहस्तके ऊपर प्रोक्षणीका पलट लेना, दहिने हाथकी उंगलियोंको फैला कर प्रोक्षणीसे जल उठाना, उस जलमें समस्त द्रव्योंका प्रोक्षण, आज्य-स्थालीमें घी ढाल देना, ज्वलन्त अग्निको वेष्टन, पर्यग्नी-करण, स्रुवदिका उत्तप्त करना, सम्मार्जन, कुशपत्र द्वारा स्रुवदिके मध्य और अग्रभागका मार्जन, प्रणीताके जल द्वारा अभ्युक्षण, पुनः उत्तप्तकरण और स्थापन, आज्यो-त्पवन, आज्यावेक्षण, उपशमन, कुशपत्र और प्रोक्षणीके जलको वामहस्तसे ग्रहण, उठ कर अग्निमें समिधका निक्षेप करना, अग्निपर्युक्षण, प्रणीतापात्रमें पवित्रका स्थापन करना तथा अग्निके उत्तरमें प्रोक्षणीपात्र स्थापन करना, ये सब कार्य यथाक्रमसे नियमानुसार करने चाहिये। बालककी जननी बालकको स्नान कराके दो नये वस्त्र पहनावे और गोदमें ले कर अग्निके उत्तरमें बैठे। पीछे ब्राह्मण "ओम् अग्ने त्वं सत्य नामासि" इस मन्त्रको बोल कर अग्निका नामकरण और अन्वारम्भ करके "ओम् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये" इस मन्त्र द्वारा अग्निके वायुकोणसे लगा कर अग्निकोण तक घृतधारा दान करें और 'ओं इन्द्राय स्वाहा। इद मिन्द्राय' इस मन्त्रसे नैऋतकोणसे ले कर ईशाण-कोण तक अनवच्छिन्न घृतधारा प्रदान करें। इसको आधार कहते हैं। तदनन्तर "ओं अग्नये स्वाहा। इदमग्नये" इस मन्त्रसे अग्निके उत्तरभागमें तथा "ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय" इन मन्त्रसे अग्निके दक्षिण-में घृताहुति देवें। इन दोनोंको आज्यभाग कहते हैं। इसके बाद प्रायश्चित्त होम और स्विष्टिकृत्होम करें। फिर "ओं उष्णेन वायो उदकेनेह्यदिते केशान् वप"। इस मन्त्र द्वारा शीतल जलके साथ उष्ण जल मिलावें। उस जलमें नवनीत पिण्ड डाल कर उसके द्वारा मस्तक-के दक्षिण भागके केशोंको भिगो दें, मन्त्र यह है—"ओं सविता प्रसूता दैव्य आप उन्दतु ते तनुं। दीर्घायुष्टाय बलाय वर्चसे"। फिर शल्लकी कण्टकत्रय द्वारा केशोंको सम्हाल कर "ओम् ओषधे त्रायस्व। स्वधिते मैनं हिंसीः"। इस मन्त्रका उच्चारण कर उस पर कुशपत्र-त्रय संयोजित करें।

कुशयुक्त केशोंमें इस मन्त्रको बोल कर ताम्रक्षुर चलावें "ओं निवर्तयाम्यायुषे ऽन्नाद्याय प्रज्वलनाय, रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय"। अनन्तर "ओं येनावपत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेन वपामि ब्रह्मणो वपतेद-मस्यायुषं जरदष्टेर्यथासत्"। इस मंत्रका उच्चारण कर लौहक्षुर द्वारा कुशयुक्त केश छेदन करके उनको बालक-से उत्तरकी ओर किसी व्यक्ति द्वारा थामे हुए पूर्व-स्थापित गोमयपिण्डके ऊपर निक्षिप्त करें। दक्षिणपार्श्वमें-भी इस तरह समस्त कार्य अमन्त्रक किये जाते हैं।

पहली बार केशच्छेदनका मन्त्र—"ओं कश्यपस्य त्र्यायुषं। ओं यमदग्नेस्त्र्यायुषं। ओं यद्देवानां त्र्यायुषं तन्तेऽस्तु त्र्यायुषं"। इस प्रकार मस्तकके उपरिभागमें भी दक्षिणपार्श्वकी तरह समस्त अनुष्ठान करें। दूसरी बार छेदनका मंत्र-'ओं येन भूरिश्चरा दिवं ये केचन पश्चादधिसूर्यं। तेन ते वपामि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय सुश्लोकाय स्वस्तये'। इसके बाद उस जलसे समस्त केशोंको भिगो कर "ओं अक्षुण्णं परिवप" । इस मंत्र द्वारा नाईके हाथमें क्षुर देवें। नाई समस्त मस्तकको मूड़ कर बालोंको उक्त गोबरके पिण्ड पर रखेगा। कुलाचारके अनुसार-पांच वा एक शिखा रख कर मुण्डन किया जाता है। मुण्डन हो जाने पर उन बालोंको किसी गोष्ठमें अथवा सरोवर या पुष्करिणीमें छोड़ देना चाहिये। अन्तमें बालकको नहला कर अग्निसे पश्चिमकी ओर बैठावें तथा शान्तिकर्म और आशीर्वाद देवें। इन सम्पूर्ण कार्योंके शेष होने पर साधारण कार्यसमाप्तिकी तरह इसमें अच्छिद्रावधारण किया जाता है। (प्रयुक्तिलक दशकर्मप०)

चूड़ाकर्मन् (सं० क्लो०) चूड़ायाः कर्म, ६-तत्। चूड़ाकरण, विधि अनुसारसे प्रथम केशच्छेदन।

"चूड़ाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः।" (मनु २।३५)

चूड़ाकरण देखो।

चूड़ानाग—सिंहल द्वीपस्थित एक पर्वत, सिंहल द्वीपका एक पहाड़। इस द्वीपके राजा महादाथिक महानागने इस पर्वतके ऊपर एक मठ निर्माण किया था।

चूड़ान्त (सं० पु०) चूड़ाया अन्तः, ६-तत्। १ चूड़ाका शेषभाग। २ सिद्धान्त, निष्पत्ति। ३ बहुत अधिक, अत्यन्त। ४ पराकाष्ठा, चरमसीमा।

चूड़ाप्रतिग्रह (सं० पु०) चूड़ायाः शिखायाः प्रतिग्रहः स्वीकारो यत्र, बहुव्री०। बौद्धोंका एक तीर्थस्थान। बुद्धदेवने संन्यासधर्म ग्रहण करनेके बाद अपने खड्गसे मस्तकके बाल बनवा कर जिस स्थान पर चूड़ा अर्थात् शिखा धारण किया था उसी स्थानको 'चूड़ाप्रतिग्रह' कहते हैं। इसका अपभ्रंश चूड़ाग्रह है।

चूड़ाभय—सिंहलद्वीपके एक राजा। प्रायः ३८ ई०में इन्होंने चूड़गुल नामक एक विहार निर्माण किया था। यह विहार गोनक नदीके तीर तथा राजधानीके दक्षिण की ओर अवस्थित है।

चूड़ामणि (सं० पु०) चूड़ास्थितो मणिः, मध्यपदलो०। १ शिरःस्थित मणि, शिरोरत्न, सिरमें पहननेका शीशफूल नामका गहना। "भूषणानां हि सर्वेषां यथा चूड़ामणिर्वरः।" (माके० ११) चूड़ायां मणिरिवास्य, बहुव्री०। २ काकमाचिका, एक छोटा पेड़, मकोय। ३ योगविशेष।

"सूर्यग्रहः सूर्यवारे सोमे सोमग्रहस्तथा।
चूड़ामणिरयं योगस्तत्रानन्तं फलं स्मृतम्॥
अन्यस्माद् ग्रहणात् कोटीगुणमाधक्तं लभेत्।" (तिथ्यादितत्त्व)

रविवारमें सूर्य्यग्रहण अथवा सोमवारमें चन्द्रग्रहण होनेका नाम चूड़ामणियोग है। इस समय यदि कोई पुण्य कार्य्य किया जाय तो उसका अनन्तफल होता है। दूसरे ग्रहणकी अपेक्षा इसमें करोड़ों गुण फल प्राप्त होते हैं।

४ शुभाशुभ गणनाविशेष। शुभाशुभ जाननेके लिये ही यह गणना रची गई है। गणकको पहले सूर्य, देवी, गण और चन्द्रमाका ध्यान करना चाहिए। इसके बाद गोमूत्रिकाकी नाईं तीन रेखा खींच कर ध्वजादिकी गणना करनी पड़ती है। प्रश्नके वाक्यानुसार ध्वजादि गिने जाते हैं। नामसम्बन्धानुसार इनका न्यास किया जाता है। १ ध्वज, २ धूम्र, ३ सिंह, ४ श्वा, ५ वृष, ६ खर, ७ दण्डी और ८ ध्वांक्ष, इन आठोंको ध्वजादि कहते हैं। गरुड़पुराण २०५ अ० देखो। ५ वङ्गदेशीय शास्त्रव्यवसायी पण्डितोंकी एक उपाधि। ६ श्रेष्ठ प्रधान, मुखिया, अगुआ। ७ गुञ्जा, घुंघची। ८ शङ्खचूड़के मस्तकका मणि। वैष्णव ग्रन्थोंके मतसे गोवर्द्धन पर्वतके ईशान कोणमें रत्नसिंहासन नामक एक स्थान है। एक समय राधिका कृष्णके साथ होली क्रीड़ा कर रही थीं, ऐसे समय कंसप्रेरित शङ्खचूड़ राधिकाको हरण करनेके उद्देशसे वहां आ पहुंचा। कृष्णने उसे मार कर उसके मस्तकका जो मणि निकाल लिया था उसीको चूड़ामणि कहते हैं। उस मणिके लिये बलरामको भी लोभ हो गया था; किन्तु राधिका ही अन्तमें इसकी स्वत्वाधिकारिणी हुई थीं। (भक्ता०नी० १० अ०) भक्तमाल ग्रन्थके मतसे चूड़ामणिका दूसरा नाम स्यमन्तक है। ९ जैनमतानुसार भरत और ऐरावत क्षेत्रोंके विजयार्द्ध पर्वत पर स्थित विद्याधरोंकी नगरियोंमेंसे पश्चिम भागकी एक नगरी।

चूड़ामणि—१ एक धर्मशास्त्रकार। रघुनन्दन और कमलाकरने इनका मत उद्धृत किया है।

२ एक ज्योतिःशास्त्रकार। वसन्तराज और राजमार्त्तण्डमें इनका मत उद्धृत हुआ है।

चूड़ामणिदास—एक वैष्णव ग्रन्थकार। इन्होंने बङ्गला पद्यमें चैतन्यचरित रचा है।

चूड़ामणिदीक्षित—१ एक विख्यात संस्कृत कवि। इन्होंने आनन्दराघवकाव्य, कमलिनीकाहंस नाटक और रुक्मिणीकल्याणको रचना की है। २ वृत्तरत्नाकरका एक टीकाकार।

चूड़ामणिरस—औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली-रससिन्दूर १ तोला, स्वर्ण ॥० तोला, गन्धक १ तोला इन सब द्रव्योंको चिताके रस तथा घृतकुमारीके रसमें १ प्रहर और बकरीके दूधमें ३ प्रहर तक घोंट कर उसके साथ मुक्ता, प्रवाल और अङ्ग प्रत्येकका आधा तोला मिला कर घोटना पड़ता है। इसके बाद चक्राकार कर अब्रमूषामें गजपुट पाक करना चाहिए। शीतल हो जाने पर औषध दूसरे पात्रमें ढाल दें। इसको मधु और बकरीके घीमें सेवन करनेसे क्षयरोग जाता रहता है।

चूड़ाम्ल (सं० क्ली०) चूड़ायामग्रभागे ऽम्लं यस्य, बहुव्री०। वृक्षाम्ल, इमली।

चूड़ार (सं० त्रि०) चूड़ामृच्छति चूड़ा-ऋ-अण्। चूड़ागत, जो चोटी या शिखामें अवस्थित हो। यह शब्द पाणिनीके प्रगद्यादि गणके अन्तर्गत है। (पा ४।२।८०)

चूड़ारक (सं० त्रि०) चूड़ामृच्छति ऋ-ण्वुल्, यद्वा चूड़ा बाहुलकात् आरक्। १ चूड़ायुक्त, जिसे चोटी या शिखा हो। (पु०) २ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम। (पु०-स्त्री०) चौड़ारकि इञो लुक्। ३ चूड़ारक मुनिके गोत्रापत्य, चूड़ारक मुनिके वंशधर।

चूड़ारत्न (सं० क्ली०) चूडाया रत्नं, ६-तत्। चूड़ामणि, एक तरहका आभूषण।

चूड़ाल (सं० त्रि०) चूड़ा अस्त्यस्य चूड़ा-लच्। १ चूड़ायुक्त प्राणी, जिन जन्तुओंके सिर पर चोटी हो।

"चूड़ाला: कवि काशाश्च प्रहृष्टाः पितरोदराः।" (भारत १०।०।१७)

(क्ली०) २ मस्तक, माथा, सिर।

चूड़ाला (सं० स्त्री०) चूड़ाल-टाप्। १ श्वेत तृण, एक प्रकारकी घास जिसे निर्विषी भी कहते हैं। २ श्वेत गुञ्जा, सफेद घुंघची। ३ नागरमुस्ता, नागरमोथा।

चूड़ावत् (सं० त्रि०) चूड़ास्त्यस्य चूड़ा-मतुप् मस्य वः। चूड़ाविशिष्ट, जिसके शिखा हो।

चूड़ावन (सं० क्ली०) लाहोरके निकटवर्त्ती एक पर्वत।

"सन्त्यज्य लोहदण्डं प्रायाद गिरिं चूड़ावनाभिधं।" (राज० ८।५८७)

चूड़िक (सं० त्रि०) चूड़ा-ठन्। चूड़ायुक्त, जिसके मस्तकके बीचो बीच शिखा हो। यह शब्द पाणिनीय पुरोहितादि गणके अन्तर्गत है। (पा ५।१।१२८)

चूड़िका (सं० स्त्री०) चूलिका लस्य डकारः। चूलिका देखो।

चूड़िन् (सं० त्रि०) चूड़ा-अस्त्यस्य चूड़ा बलादित्वात् इन्। चूड़ायुक्त।

चूड़िया (हिं० पु०) एक प्रकारका धारीदार वस्त्र।

चूड़ी (हिं० स्त्री०) १ हाथके मणिबन्ध वा पहुंचेमें पहननेका एक वृत्ताकार गहना। यह चांदी, सोना, लाख, कांच इत्यादिकी बनती है। सोधी और लहरोली इस प्रकार दो तरहकी चांदी या सोनेकी चूड़ियां बनती हैं। इन दोनों तरहकी चूड़ियोंमें नक्काशीका काम रहता है। यह गहना बहुत हलका होनेके कारण इसे सब ही स्त्रियाँ बड़े चावसे पहनती हैं।

सोने और चांदीके सिवा पीतल, गिलट आदिकी चूड़ियाँ भी पहनी जाती हैं। तांबे या पीतलकी चूड़ियों पर सोनेका पानी चढ़ाया जाता है और उन्हें बहुतसी स्त्रियां पहनती हैं। काँच, लाख, शङ्ख, हाथीदांत इत्यादिकी भी चूड़ियां बनती हैं। आजकल तरह तरहकी कांचकी चूड़ी इस देशकी औरतें पहनतीं हैं। ये चूड़ियां लाल, काली, हरी, पीली, केलई, गुलाबी आदि सब ही रंगकी बनती हैं। कभी कभी इन चूड़ियों पर सोने चांदी जैसा रंग भी चढ़ाया जाता है। उत्कृष्ट कांचकी चूड़ियों पर तरह तरहके बेल बूटे कढ़े रहते हैं। बाजारोंमें बहुत तरहकी चूड़ियां बिकती हैं। अच्छी चूड़ियोंका जोड़ा १॥) २) रुपयेमें मिलता है। भारतवर्षमें गाजीपुर, फिरोजाबाद (आगरा), काशी, लखनऊ, दिल्ली, हाजीपुर, पटना, भागलपुर, मुर्शीदाबाद और पूनाके पास शिवपुरमें कांचकी चूड़ियां बनती हैं। आगरा जिलेके अन्तर्गत फिरोजाबाद शहरमें फिलहाल नक्काशीदार,

रेशमी इत्यादि तरहकी अच्छीसे अच्छी चूड़ियां बनने लगीं हैं। यहांकी रेशमी चूड़ियां दूर दूर तक जातीं हैं। चूड़ीके व्यापारसे इस कसबेको ८।१० वर्षमें खूबही उन्नति हो गई है। बिलायत, जापान आदि देशोंसे भी यहां उत्कृष्ट कांचकी चूड़ियां आती हैं। लाखकी चूड़ी हिन्दुस्तानमें सर्वत्र बनती हैं। लाख और मिट्टी मिला कर पहले चूड़ी बना ली जाती है, बादमें उस पर लाल, नील, हरी, पीली आदि रंगदार लाख लगाई जाती है। रंगदार होने पर कभी कभी ऊपरसे उसे सोने-चांदीके पत्तरसे या चमकी और छोटे छोटे रंगीन कांचोंके टुकड़ोंसे जड़ भी देते हैं। फिर यह देखनेमें खूबसूरत लगती है। लाखके साथ किसी भी धातुकी चूर मिला देनेसे चूड़ी पर उस धातुकी आभा आ जाती है।

आसामके अन्तर्गत श्रीहट्ट जिलेके करीमगञ्जमें लाखकी चूड़ियाँ बनती हैं। दिल्ली, रेवा, इन्दौर आदि शहरोंमें भी सबसे उम्दा लाखकी चूड़ियां बनतीं हैं।

बङ्गालमें शङ्खकी चूड़ियोंका अधिक प्रचार पाया जाता है। पहले यहां सुहागिन स्त्री मात्र शङ्खकी चूड़ी पहना करती थी। अब भी इसका प्रचार पाया जाता है। ढाकेमें शङ्खकी चूड़ी बहुत अच्छी बनती हैं। ये चूड़ियां लाखसे रंगी और चमकी आदिसे शोभित की जातीं हैं। ढाकेमें जलतरङ्ग, डायमण्डकाट, कनिशदार इत्यादि नामकी तरह तरहकी चूड़ियां बनती हैं।

पञ्जाब, सिन्धु प्रदेश और राजपूतानाके पश्चिममें, बम्बई प्रेसीडेन्सी और मध्यप्रदेशके नानास्थानोंमें तथा बङ्गालमें कहीं कहीं हाथीदांतकी चूड़ियां व्यवहृत होती हैं। पञ्जाबमें विवाहके समय कन्याका मामा उसे एक जोड़ी चमकीदार रंगीन हाथीदांतकी चूड़ी देता है। उच्चश्रेणीकी स्त्रियां विवाहके बाद १ वर्ष तक उन्हें पहनती हैं, बादमें सोने-चांदीके गहने पहनती हैं। राजपूताना रेलवेकी जोधपुर-शाखामें स्थित पालीनगरमें हाथीदांतकी चूड़ियोंका खूब रुजगार होता है।

भैंसके सींगसे भी चूड़ी बनती है। यह चूड़ी सोने-चांदीके पत्तर लगनेके बाद बहुत अच्छी दीखने लगती है।

नारियलके खोपरेसे भी चूड़ी बनती है, जो देखनेमें भैंसके सींगकी चूड़ीके समान मालूम पड़ती है। जैनोंकी स्त्रियां हाथीदांत और भैंसके सींगकी चूड़ियां नहीं पहनतीं, इसलिए वे उनके स्थान पर नारियलके खोपरेकी चूड़ी पहनती हैं।

हिन्दुस्तानकी स्त्रियां चूड़ीको अपने सुहागका चिह्न समझतीं हैं। हाथकी चूड़ी टूट जाना अशुभ समझा जाता है। यूरोप, अमेरिका इत्यादि देशोंकी स्त्रियां सिर्फ दाहिने हाथमें एक एक चूड़ी पहनतीं हैं।

भारतकी स्त्रियां पतिके मर जाने पर चूड़ियोंको तोड़ डालती हैं, यह उनका वैधव्य-चिह्न है। चूड़ियोंके साथ "उतारना" या "तोड़ना" शब्दका प्रयोग करना औरतोंमें अशुभ और अनुचित माना जाता है।

२ वह गोलाकारवस्तु जिसमें सिर्फ घेरा हो, तथा उसके बीचका स्थान शून्य हो। गोल या मण्डलाकार पदार्थ, जैसे—फोनोग्राफकी चूड़ी, मशीनकी चूड़ी इत्यादि। ३ ग्रामोफोन या फोनोग्राफकी चूड़ी, जिसमें गाना भरा रहता है। इसको अंग्रेजीमें रेकर्ड (Record) कहते हैं। ४ चूड़ीके आकारका गोदना, जिसे स्त्रियां अपने हाथों पर गुदाती हैं। ५ एक यन्त्र, जिससे रेशम साफ की जाती है। इसका आकार मोटे कड़े जैसा होता है।

चूड़ीदार (हिं॰ वि॰) जिसमें चूड़ी या छल्लेके जैसे घेरे पड़े हों।

चूत (सं॰ पु॰) चूष्यते आस्वाद्यते चूष कर्मणि क्त पृषोदरादित्वात् षकार लोपे साधु, यद्वा चोतति रसं चूत-अच्। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

"परिवृक्षति स विश्व धमरव्यू तमकरौं।" (रामायण ३।७३।१७)

(क्ली॰) चूत-अण् तस्य लुक्। २ आम्रफल, आम। चोतति चरति शोणितादिकं चूत-अच्। ३ मलद्वार, गुदाद्वार। किसी किसी ग्रन्थमें तीनों अर्थोंमें 'चूत'की जगह 'च्युत' ऐसा भी पाठ है।

चूत (हिं॰ स्त्री॰) स्त्रियोंकी भगेन्द्रिय, योनी, भग।

चूतक (सं॰ पु॰) चूत-कन्। आम्रवृक्ष, आमका पेड़ २ कूप, कुआँ।

चूतड़ (हिं॰ पु॰) वह भाग जो कमरके नीचे और जंघाके ऊपर गुदाके बगल है, नितंब।

चूति (सं० स्त्री०) स्त्रियोंकी भगेंद्रिय, योनि, भग।

चूतिया (हिं० वि०) मूर्ख, शठ, बेसमझ, गावदी।

चूतिया—बङ्गालके राँची जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २३° २१´ उ० और देशा० ८५° २१´ पू० पर राँची शहरसे २ मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ८८८ है। एक समय यह ग्राम नागवंशीय राजाओंका वासस्थान था।

चूतियापन्थी (हिं० स्त्री०) मूर्खता, बेसमझी, बेवकूफी।

चून (हिं० पु०) १ चूर्ण, आटा, पिसान। २ चूना। चूना देखो। ३ एक प्रकारका बड़ा थूहड़। यह हिमालयके दक्षिण भागमें और पञ्जाबके कुछ स्थानोंमें अधिकतासे होता है। इसके दूधमें गटापारचाका अंश ज्यादा होता है। ताजे दूधमें सुगन्धि अधिक होती है। ताजा दूध आँखके लिए हानिकर है। और बासा दूध लगनेसे देहमें छाले पड़ जाते हैं।

चूनरी (हिं० स्त्री०) चुनरी देखो।

चूना (हिं० पु०) १ क्षार-धर्मी पदार्थविशेष, एक प्रकारका तीक्ष्ण क्षारभस्म। इसका संस्कृत पर्याय—सुधाचूर्ण, शङ्खभस्म, कपर्दकभस्म, शुक्तिभस्म और शम्बूकभस्म है। यह पत्थर, कंकड़, मट्टी, सीप, शङ्ख या मोती पदार्थोंको भट्ठियोंमें फूंक कर बनाया जाता है।

इसके दो भेद हैं, एक कलि या बुझा हुआ चूना और दूसरा 'बरी या बिना बुझा हुआ चूना। जो चूना तुरंत फूंक कर तैयार किया जाता है उसे कलि (Quick lime) कहते हैं। जो चूना ढोंके या उसी रूपमें होता है और जिसमें उसका मूलपदार्थ फूंके जानेसे पहले रहता है उसे 'बरी' या बिना बुझा चूना कहते हैं।

इसे जलमें डालनेसे यह पहले स्पंजकी नाईं जल सोखता है, पर थोड़ी देरके बाद उसमेंसे अत्यन्त गरमी निकलती और बुलबुले छूटने लगते हैं। थोड़े समयके बाद यह सफेद रंगकी गुठलीमें परिणत हो जाता है। एक दूसरे तरहका चूना (Slacked lime) होता है जो थोड़ा पानी देनेसे ही गल जाता है। जलमें डालनेसे इसका कुछ अंश उसमें मिल जाता है, किन्तु अधिकांश नीचे जा कर जम जाता है। ऊपरका स्वच्छ जल चूनाका जल कहलाता है। यह जल क्षारधम सम्पन्न है। इसमें यवास फूल डालनेसे वह नीलवर्णका हो जाता है। चूर्णक (Calcium) और अक्सिजन (Oxygen)-के योगसे चूना उत्पन्न होता है। अक्सिजन पृथिवीके भीतर अधिक परिमाणमें देखा जाता है। चूना संगमरमर पत्थर, चूना पत्थर, तथा शङ्ख, सीप, घोंघे, कौड़ी प्रभृति प्राणियोंके गात्रावरणसे उत्पन्न होता है।

भारतवर्षके कड़ापा, बीजापुर, आरावल्ली, विन्ध्यगिरि, गोण्डवन प्रभृति स्थानोंमें अनेक तरहके संगमरमर पत्थर पाये जाते हैं। चीकने करने पर ये दूसरे दूसरे कामोंमें व्यवहृत होते हैं और अवशिष्ट भागको जला कर चूना बनाया जाता है। मन्द्राज प्रदेशके त्रिचिनापल्ली, कोयम्बतुर, कड़ापा, कर्नुल तथा गंटूरमें चूनेके पत्थरकी खान हैं।

बङ्गालके मानभूम, सिंहभूम, हजारीबाग, लोहरडागा प्रभृति स्थानोंमें भी चूनापत्थरकी खान आविष्कृत हुई है। इसके सिवा आसाम, मध्यप्रदेश, बम्बई, युक्तप्रदेश पञ्जाब, राजपूताना, कच्छ, ब्रह्मदेश प्रभृति स्थानोंमें चूना पत्थरकी खान हैं। किन्तु इतना होने पर भी भारतके अनेक स्थानोंमें चूना मंहगा ही बिकता है। इसका कारण यह है कि जहां चूनाकी खपत अधिक है, वहांसे खान बहुत दूरमें है। कलकत्तका समस्त चूना नाव-रेल प्रभृति द्वारा बहुत दूरसे लाया जाता है। अतएव जो सब खान नदी वा रेलवेके निकट हैं वहींसे चूना लानेकी अधिक सुविधा है। सम्प्रति निम्नलिखित स्थानोंसे ही अधिक परिमाणमें चूना चारों तरफ भेजा जाता है—

१। जब्बलपुर जिलेके कटनी नामक स्थानमें अत्यन्त उत्कृष्ट चूना प्रस्तुत होता है। इस चूनाकी रफ्तनी ७३७ मील दूरवर्त्ती कलकत्ता तक होती है।

२। श्रीहट्ट पर्वतके दक्षिणांशमें एक लम्बी चौड़ी चूना पत्थरकी खान है। पहले इसी जगहसे कलकत्तमें अधिकांश चूना आता था, अभी भी अधिक परिमाणमें आता है।

३। हिमालय पर्वतके स्थान स्थानमें यथेष्ट चूना पाया जाता है। पंजाबका अधिकांश चूना पहाड़से उत्पन्न होता है।

४। रोहतक दुर्गके निकट विन्ध्यगिरिमें चूना पत्थरकी खानसे बहुत चूना निकाला जाता है।

५। आन्दामन द्वीपसे अतास्त उत्कृष्ट चूनेकी आमदनी होती है। आन्दामन प्रायः कटनीके समरेखावर्त्ती है, तथा वहांका चूना भी कटनीके चूनेसे उम्दा होता है।

इसके सिवा अन्यान्य स्थानोंमें जितने भी चूने होते हैं, उनकी खपत केवल स्थानीय लोगोंमें ही हो जाती है। घोंघी प्रायः भारतवर्षके सब स्थानोंमें देखी जाती है। ये मट्टीके साथ नाना आकारमें पाई जाती हैं। बङ्गाल तथा उत्तर प्रदेशमें अट्टालिका निर्माणादिके कार्यमें उन्हींका चूना व्यवहृत होता है। घोंघोकी उत्पत्तिके विषयमें विद्वानोंका अनुमान है कि, जलके साथ पत्थर चूर्ण धुल कर आता है और वही कालान्तरमें जम कर घोंघीका आकार धारण करता है। ये क्रमानुसार बढ़ते बढ़ते बड़े हो जाते हैं। उनमें विशुद्ध चूना पत्थर नहीं है वरन उनके साथ और भी कई तरहके पदार्थ रहते हैं।

बङ्गालके समुद्र, नदी, तालाव इत्यादिमें प्रति वर्ष बहुतसे शंख, सीप, घोंघे प्रभृति पकड़े जाते हैं। इनको जला कर दो तरहके चूने तैयार किये जाते हैं। घोंघे और शंख इन्हीं दोनोंका चूना अट्टालिकानिर्माणमें उपयोगी है।

चूना जिस स्थान पर तैयार किया जाता है, वह स्थान चूनेकी भट्टी कहलाता है। इस देशमें कोयला और लकड़ीसे चूना गरम किया जाता है। भट्टी ईंटोंकी बनी रहती है। चारों ओर तीन या चार हाथ ऊंची दीवारसे एक स्थान घेर कर दीवारके नीचे चार या इससे अधिक छोटी छोटी राहें छोड़ दी जाती हैं। इन राहोंके सीधे सीध भट्टीके मतहमें नाले खुदे रहते हैं। इन नालाओंके ऊपर दो अङ्गुल अन्तर ईंट बैठा कर उसके ऊपर पहले एक अस्तर कोयला या काष्ठ रखना पड़ता है। इसके बाद एक अस्तर घोंघा दिया जाता है। इसी तरह अस्तरके ऊपर अस्तर रख कर भट्टी सजाई जाती है। बाद नीचेके अस्तरमें आग लगा दी जाती है क्रमशः सम्पूर्ण भट्टामें आग लग जानेसे नीचेके घोंघे जलने लगते हैं। इस तरह दो तीन दिन तक गलनेके बाद आग बुझ जाती है। तब ठंढा होने पर भट्टीसे जला हुआ चूना बाहर कर उसमें जल छिड़का जाता है। जल पड़नेसे चूना गल कर गुठलीके आकारमें सफेद रंगका हो जाता है। इसके बाद इसे बस्ता या बोरामें बांध कर दूर दूर देशोंमें भेजा जाता है।

घोंघे प्रभृति जितने धीरे धीरे जलेंगे उतने ही अधिक चूना उनसे उत्पन्न होगा। इसी कारण चूना बनानेवाले भट्टीके नीचे बड़ी सुराख नहीं करते क्योंकि बड़ी सुराख हो कर अधिक हवा जानेसे कोयला शीघ्र ही जल जाता और घोंघे प्रभृतिका अन्तरस्थ भाग अविकृत ही रह जाता है। घोंघे और कोयलेके उत्कर्षापकर्षके अनुसार दोनोंका परिमाण रहना चाहिए। १०० मन घोंघे जलानेमें ४०से ६० मन पत्थरका कोयला लगता है। बहुत जगह कोयले और घोंघेको अस्तर पर न सजा कर दोनोंको एकमें मिला देते हैं। १०० मन घोंघेसे ५० से ६० मन तक चूना निकल सकता है। शङ्ख, सीप और शम्बुकादिके आवरणको भी इसी तरह जला कर चूना निकाला जाता है। शङ्ख प्रभृतिको जलानेमें अपेक्षाकृत थोड़ा ही कोयला या काष्ठ लगता है। उपादानकी विशुद्धताके अनुसार चूना उत्कृष्ट होता है। उत्कृष्ट चूना श्वेतवर्ण और कङ्कररहित होता है।

चूना प्रस्तुत करनेमें जो खर्च पड़ता है उसीके अनुसार मूल्य स्थिर किया जाता है।

जिन पदार्थोंसे चूना उत्पन्न होता है, उसका अधिकांश ही चूने और अङ्गाराङ्कके योगसे बना है। जलाने पर उससे अङ्गाराम्ल वाष्प बाहर निकल जाता, सिर्फ चूना अवशिष्ट रह जाता है। संगमरमर प्रभृतिमें उक्त दोनों द्रव्योंके सिवा दूसरे द्रव्य नहीं रहते हैं। किन्तु बहुतसे चूनापत्थर तथा घोंघे प्रभृतिमें लोहा और दूसरे दूसरे पदार्थ मिले रहते हैं। चूनापत्थर वायुमें दग्ध करनेसे वह साधारण चूनेमें परिणत हो जाता है। किन्तु, वायुशून्य स्थानमें अत्यन्त उत्तप्त करनेसे वह गल कर एक तरहके स्वच्छ संगमरमर पत्थरमें परिवर्त्तित हो जाता है। चूनेसे रासायनिक उपाय द्वारा अम्लजान पृथक् कर लेने पर चूर्णक (Calcium) अवशिष्ट रह जाता है। चूर्णक एक धातु है। इसका वर्ण रौप्यमिश्रित स्वर्णसा है।

यह सीसासे कठिन है, किन्तु अत्यन्त हलका है। इसकी पीट कर पत्तियां बनायी जाती हैं। वायुमें रहनेसे इसमें शीघ्रही मोर्चा लग जाता है। उत्तप्त करनेपर यह वायुमें उज्ज्वल प्रकाश निकाल कर जलने लगता है। जल जाने पर यह सिर्फ चूना होता है।

किस पदार्थसे कितना चूना निकलेगा वह गन्धकद्रावक द्वारा मालूम किया जा सकता है। गन्धकद्रावकमें एक चूना पत्थर डालने पर यदि उससे प्रचुर परिमाणमें वाष्प निकलता हो तो जानना चाहिये कि उसमें अधिक चूना है। थोड़ा वाष्प निकलने पर उसमें थोड़ा चूना रहनेका बोध होता है।

आसाममें चूनेका व्यवहार सबसे अधिक है। कृषि, शिल्प, चिकित्सा, गृहनिर्माण प्रभृति कामोंमें इसका प्रयोजन पड़ता है।

कपड़ेमें नील रंगकी छींट बनानेमें नील गोटीके साथ चूना और संखिया मिला कर रंग प्रस्तुत किया जाता है। नीलको सफेद करनेके लिए चूना और चीनीके साथ उसको गोटी डुबो कर रखी जाती है। ऐसा करने पर उससे शीघ्र ही अम्लरसोत्सेक (Farmentation) आरम्भ हो कर नील सफेद हो जाता है।

खड़ि प्रभृति अनेक समय रंग रूपमें व्यवहृत होती है। लोमश प्राणियोंके कच्चे चमड़ेको चूनेमें डुबो रखनेसे उसके सब लोम उठ जाते और चमड़ा कुछ फूल जाता है।

साबुन और बत्ती तैयार करनेमें भी चूनाका व्यवहार किया जाता है। साबुन और बत्ती देखो।

वस्त्र सफेद करने, किसी स्थानमें दुर्गन्ध हटाने अथवा अन्यान्य कार्योंमें जो ब्लिचिं-पाउडर (Bleeching power) व्यवहृत होता है, वह चूनेसे ही तैयार किया जाता है। चूनेके भीतर हो कर हरितक वाष्प (Chlorine) देनेसे चूना ब्लिचिं-पाउडरमें परिणत हो जाता है। इसका वर्णनाशक गुण है।

चिकित्सा—क्या वैद्य क्या डाक्टर क्या हकीम सबके सब चिकित्सामें चूनाका प्रयोग करते हैं। इसके सिवा मुष्टियोग में बहुत चूना लगता है। किसी स्थानमें चोट लगने पर चूना और हल्दी मिला कर उस स्थान पर प्रलेप देनेसे बहुत जल्द दर्द जाता रहता है। अग्निसे जलने पर चूनेका जल और नारियलका तेल फेंटा कर रूई द्वारा दग्ध स्थान पर लगानेसे घाव नहीं होने पाता है। वेधकके स्थान पर इसका लेप देनेसे दाग नहीं होता है।

अजीर्ण होने पर प्रतिदिन २ बार तीन चार तोला चूनेका जल पीनेसे अजीर्ण शीघ्र आराम हो जाता है। छोटे छोटे बच्चोंके पेटमें दर्द होनेसे दूधके साथ चूनेका जल दिया जा सकता है। किसी खनिज द्रावक द्वारा विषाक्त होने पर चूनेका जल पीनेसे बहुत लाभ होता है। संखिया विष पर भी चूनेका जल विशेष हितकर है।

मूत्र-नलीमें ज्वाला तथा पेशाब करनेमें कष्ट होने पर नाभिमण्डलके ऊपर चूनेका लेप देनेसे तत्क्षणात् आश्चर्यजनक लाभ होता है। एक भाग चूनेका जल और २।३ भाग जल मिला कर पिचकारी देनेसे श्वेत प्रदरादि योनिव्याधि सदाके लिये दूर हो जाती है।

यदि घावसे पीब निकलती हो तो सर्वदा चूनेके जलसे धोने पर घाव सूख कर अच्छा हो जाता है।

उपदंश संक्रान्त (गरमी-रोग) घाव पर प्रायः डेढ़ पाव जल और १० ग्रेन कालोमेल (Calomel) मिला कर लगानेसे बहुत उपकार होता है।

खाद्य—हम लोग प्रतिदिन पानके साथ चूना खाते हैं। इसके अलावा बहुतसे साग और फलादिमें भी चूना मिलाया जाता है। चूना एक अस्थिनिर्माणकारी वस्तु है। चूनेमें मांसपाक करनेका गुण है। इसी कारण पानके साथ अधिक चूना होनेसे जीभ फट जाती है।

पूर्व समय भारतवर्षके शौकीन नवाब मुक्ताभस्म दे कर पान खाते थे। मुक्ताचूर्ण भी प्राणिजन योगसे उत्पन्न होता है तथा इसका रासायनिक उपादान सीपसे विभिन्न नहीं है। सुतरां मुक्ता जलाने पर सीपके चूनेके जैसा हो जाता है। किन्तु इसका मूल्य और गुण बहुत अधिक है।

कृषिकार्यमें खादके रूपमें चूनेका व्यवहार अधिक होता है। जिस खेतमें वृक्षोंको पत्तियां आदि हों उसमें चूना देनेसे वे पत्तियां सड़ कर उमदा खाद रूपमें परिणत हो जाती हैं।

गृहनिर्माणमें चूनेकी खपत् सबसे अधिक है। ईंट जोड़नेके मसालेमें १ भाग चूना और २।३ भाग सुरखी दी जाती है। बहुत जगह सुरखीकी जगह चूनेके साथ बालू मिला कर मसाला तैयार किया जाता है। ताजा चूना और मसाला सूक्ष्म और अच्छी तरह मिलाया गया हो तो चुनाई मजबूत होती है। सिर्फ चूनेके मसालेकी अपेक्षा चूना और सुरखीसे निकला हुआ मसाला अधिक उत्कृष्ट है।

(क्रि०) २ टपकना, बूंद बूंद करके गिरना, पानी या और कोई तरल पदार्थका किसी छेदमेंसे बूंद बूंद करके टपकना। ३ किसी चोजका विशेष कर फल आदिका अचानक ऊपरसे नीचे गिरना। ४ किसी चोजमें ऐसा छेद हो जाना कि जिससे कोई तरल पदार्थ बूंद बूंद करके टपके। जैसे—लोटा चूना, छत चूना इत्यादि।

चूनादानी (हिं० स्त्री०) वह छोटा पात्र जिसमें चूना रखा जाता है, चूनौटी।

चूनिआन—१ पञ्जाबके लाहोर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३०° ३८′ एवं ३१° २२′ उ० और देशा० ७३° ३८′ तथा ७४° २८′ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ११६१ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग २५७२८१ है। यह तहसील शतद्रु नदीसे ले कर मांझ तक विस्तृत है। इसमें चूनियान और खुदियान नामके दो शहर और ४३० ग्राम लगते हैं। तहसीलकी आय प्रायः ३२५०००) रु०की है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३०° ५८′ उ० और देशा० ७४° पू० पर उत्तर-पश्चिम रेलवेके चाङ्गमाङ्ग स्टेशनसे ८ मीलकी दूरीमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४८५८ है। १८६८ ई०में यहां म्युनिस्पालिटी कायम की गई। शहरकी आय (१५६००) रु० है। यहां वाणिज्य व्यवसाय बहुत कम है सिर्फ सूती कपड़ेका कुछ कारोबार होता है। शहरमें एक मिडिल स्कूल तथा एक चिकित्सालय है।

चूमना (हिं० क्रि०) १ चुम्बन करना, चुम्मा लेना, बोसा लेना। (पु०) २ हिन्दुओंमें विवाहकी एक प्रथा। इसमें लड़केकी अंजुलीमें चावल, जौ और गुड़ दे कर सधवा स्त्रियां मंगल गीत गाती हुई लड़केके सिर, कंधे, और घुटने आदि अंगोंको हरी दूबसे स्पर्श करती और इसके बाद दूबको चूम कर फेंक देती हैं।

चूमा (हिं० पु०) चुम्बन, चुम्मा, बोसा।

चूमाचाटी (हिं० स्त्री०) चूमने और चाटनेका काम।

चूर (हिं० पु०) १ क्षुद्र खण्डविशेष, किसी पदार्थके छोटे छोटे टुकड़े। २ किसी पदार्थके रेते हुये कण, बुरादा, भूर। (वि०) ३ निमग्न, लगा हुआ। ४ जिस पर नशेका बहुत अधिक प्रभाव हो।

चूरन (हिं० पु०) १ चूर्ण। २ औषधोंका चूर्ण।

चूरनहार (हिं० पु०) एक तरहकी जंगलमें होनेवाली बेल इसकी पत्तियां लंबी, चिकनी और कुछ मोटी होती हैं। इसमें एक तरहके फूल भी लगते हैं जिनकी गंध बहुत दूर तक जाती है। यह कषाय, उष्ण, त्रिदोषनाशक और कृमिनाशक माना गया है। इसका प्रत्येक अंग दवाके काममें आता है। वैद्यकके अनुसार इससे विषम ज्वर भी जाता रहता है।

चूरमा (हिं० पु०) एक तरहका पकवान। यह रोटी या पूरीको चूर चूर कर दी और चीनीमें भून कर बनाया जाता है।

चूरमूर (देश०) जौ या गेहूंके कट जाने पर खेतमें बची हुई खूंटियां।

चूरा (हिं० पु०) पिसा हुआ भाग, चूर्ण, बुरादा।

चूरी (सं० स्त्री०) क्षुद्र कूप, छोटा और छिछला कुआं।

चूरु (सं० पु०) चूर-उण्। कृमिविशेष, एक तरहका कीड़ा।

चूरू (हिं० पु०) एक प्रकारका चरस। यह गांजेके मादा पेड़ोंसे निकलता और उससे निकृष्ट समझा जाता है।

चूरू—राजपूतानेके बीकानेर राज्यके अन्तर्गत रेनी निजामतकी इसी नामकी तहसीलका एक सदर। यह अक्षा० २८° १८′ उ० और देशा० ७४° ५८′ पर बीकानेर शहरसे १०० मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १५६५८ है। कहा जाता है कि यह शहर १६२० ई०में जाटके चुहरु नामक राजासे स्थापित किया गया। यहां बहुतसे धनी मनुष्योंका वास है। १७३६ ई०का बना हुआ यहां एक दुर्ग भी है। शहरमें एक हिन्दी स्कूल

डाक और टेलीग्राफघर तथा एक उत्तम चिकित्सालय है।

प्रवाद है कि चूरू शहर और दुर्ग भी पहले पहल ठाकुरके अधिकारमें था। दरबार इनके चिरशत्रु थे। १८१३ ई०में ठाकुर बहुत दिनों तक किलेमें अवरोध किये गये। पीछे दरबारसे बहुत तंग किये जाने पर इन्होंने किलेमें ही हीरा खा कर अपना प्राण त्याग किया। इस तरह कुछ काल तक चूरू शहर दरबारके हाथ रहा। बाद ठाकुरके उत्तराधिकारियोंने अमीर खांको सहायतासे दरबारको परास्त किया और शहर तथा दुर्गको अपने कब्जेमें कर लिया। १८१८ ई०में दरबारने ब्रटिशगवर्मेण्टके साहाय्यसे सदाके लिये इसे अपने कब्जेमें कर लिया। अभी ठाकुरके अधिकारमें केवल पांच ग्राम रह गये हैं।

चूर्ण (सं० क्ली०) चूर्ण्यते पिष्यते यत् चूर्ण कर्मणि-अप्। १ पेषण द्वारा कठिन द्रव्यका शुष्कभावसे परिणमन, चूरा, बुकनी, सफूफ, सूखा पिसा हुआ पदार्थ। प्राचीन वैद्यकशास्त्रोंके मतसे—अत्यन्त शुष्क द्रव्यको पीस कर कपड़छन करने पर, उसको चूर्ण कहते हैं। इसको मात्रा एक कर्ष वा अस्सी रत्तीकी होती है। किसी चूर्णमें गुड़ डालने पर समान तथा चीनी डालनी हो तो दूनी दी जाती है। किसी कारणवश चूर्णमें हींग मिलानी हो, तो उसे भिगो लेना चाहिये। चूर्ण चटाना हो तो उसमें घी आदि द्विगुणे तरल पदार्थका अनुपान बताना चाहिये और यदि पिलाना हो तो चौगुने तरल द्रव्यमें मिला कर पिलावें। किन्तु पित्त, वायु और कफजात रोगमें यथाक्रमसे ३ पल, २ पल और १ पल अनुपान देना चाहिये। (भावप्र० पूर्व० २ भाग)

२ सद्गन्धयुक्त धूलि, अबीर। (रघुवंश) ३ धूलि, गर्द। ४ ताम्बूलका उपकरणविशेष, चूना। (मेदिनी) चूना देखो।

(पु०) चूर्ण भावे अप्। ५ पेषण, पीसनेका काम। चूर्ण कर्मणि अप्। धूली। ७ चूना। ८ कपर्दक। (मेदिनी)

(त्रि०) चूर्ण-कर्मणि असंज्ञार्थे अप्। ८ जिसका चूरा हुआ हो, जो पीस गया हो। १० जो नष्ट हो चुका हो, जो लयको प्राप्त हुआ हो।

चूर्णक (सं० क्ली०) चूर्ण संज्ञार्थे कन्। १ गद्यविशेष, एक तरहका गद्य जिसमें छोटे छोटे शब्द हों और लंबे समासवाले शब्द तथा कठोर या श्रुतिकटु अक्षर न हों यह वैदर्भ रीतिसे रचे जाने पर अत्यंत मनोहर होता है। "अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः।

तत्तु वैदर्भरीतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत्" । (साहित्यद०)

(पु०) २ षष्टिक, एक प्रकारका शालि धान्य।

"चूर्णककुरवककौ । कल्मनयः षष्टिकाः ।" (सुश्रुत १।२४ अ०)

३ सत्तू, सत्तू, सतुआ। चूर्ण स्वार्थे कन्। ४ चूर्ण देखो। ५ धातुविशेष, एक तरहकी धातु। (Calcium) ६ वृक्षविशेष, एक तरहका पेड़।

चूर्णकार (सं० पु० स्त्री०) चूर्णं करोति चूर्ण-कृ-अण्, उपपदस०। १ वर्णसंकर जातिविशेष, एक वर्णसंकर जाति। पराशरपद्धतिके मतानुसार इस जातिकी उत्पत्ति नट जातकी स्त्री और पुंड्रक जातिके पुरुषसे हुई है। चूर्णकारी देखो। (त्रि०) २ चूर्णकारक, चूर्ण करने वा पीसनेवाला। ३ आटा बेचनेवाला।

चूर्णकोल (सं० पु०) अश्वपादरोगभेद, घोड़ेके पैरका एक तरहका रोग।

चूर्णकुन्तल (सं० पु०) चूर्णश्चासौ कुन्तलश्चेति, कर्मधा०। अलक, जुल्फ, लट।

चूर्णखण्ड (सं० क्ली०) चूर्णाय खण्डं, ४-तत्। कर्कर, कंकड़।

चूर्णता (सं० स्त्री०) चूर्णस्य भावः चूर्ण-तल्-टाप्। चूर्णत्व, चूरनेका भाव या क्रिया।

चूर्णन (सं० क्ली०) चूर्ण भावे ल्युट्। चूर्ण, पिसा हुआ भाग।

चूर्णपद (सं० क्ली०) गतिविशेष, एक तरहकी चाल।

चूर्णपारद (सं० पु०) चूर्णः पारदस्य एकदेशिसमासः। हिङ्गुल, शिंगरफ।

चूर्णमषी (सं० स्त्री०) मसीविशेष, सिन्दूर।

चूर्णयोग (सं० पु०) चूर्णस्य योगः, ६-तत्। बहुतसे सुगंधित पदार्थोंका मिश्रण।

चूर्णशाकाङ्क (सं० पु०) चूर्ण इव शुभ्रः शाकः चूर्णशाकः तमङ्कते सदृशो करोति चूर्णशाक-अङ्कि-अण्, उपपदसमा०। चित्रकूट गिरिप्रसिद्ध शाकविशेष, गौर सुवर्ण

नामका साग जो चित्रकूटमें अधिकतासे होता है।

चूर्णहार (सं० पु०) चूनरहार नामकी बेल।

चूर्णा (सं० स्त्री०) छन्दोभेद, आर्या छंदका दसवां भेद, जिसमें १८ गुरु और २१ लघु होते हैं।

चूर्णादि (सं० पु०) चूर्ण आदिर्यस्य, बहुव्री०। पाणिनिका एक गण। तत्पुरुष समासमें यह गणान्तर्गत शब्द अप्राणिवाचक होता है। शब्दके उत्तरवर्त्ती होने पर उसका आदि उदात्त होता है। चूर्ण, करीष, करिष, शाकिन, शाटक, द्राक्षा, तुस्त, कुन्दम, दलप, दलप, चमसी चक्कन और चौल इनको चूर्णादि गण कहते हैं। (पा ६।२।१३४)

चूर्णि (सं० स्त्री०) चूर्णयति खण्डयति शतसंख्यपणिडतानां तर्कं चूर्ण-इन्। सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७। १ पतञ्जलि कृत पाणिनि व्याकरणका भाष्य। "चूर्णिभागुरिवामटाः।" (व्या०का०) २ शतसंख्य कपर्दक, एक सौ कौड़ी। ३ कार्षापण, पुराणपरिमित कौड़ी। चूर्ण भावे इन्। ४ चूर्णन पिसा हुआ भाग।

चूर्णिका (सं० स्त्री०) चूर्णोऽस्यास्ति चूर्ण-ठन् टाप्। १ सक्तु, सत्तू, सतुआ। २ गद्यका एक भेद। चूर्णक देखो।

चूर्णिकृत् (सं० पु०) चूर्णिं महाभाष्यं करोति कृ-क्विप्। महाभाष्यकारक, पतञ्जलि मुनि।

चूर्णित (सं० त्रि०) चूर्ण कर्मणि क्त। चूर्ण किया हुआ, जो पिसा हुआ हो।

चूर्णिदासी (सं० स्त्री०) चूर्णौ चूर्णने नियुक्ता दासी, मध्यपदलो०। जो दासी कोई चीज चूर्ण करनेके लिये नियत की गई हो।

चूर्णिन् (सं० त्रि०) चूर्णैः संसृष्टः चूर्ण-इनि। चूर्णादिनिः। पा ४।२।२१। चूर्ण निर्मित, जो चूनेसे तैयार किया गया हो। "चूर्णिनोऽपूपाः।" (सिद्धान्तकौ०)

चूर्णी (सं० स्त्री०) चूर्णि-ङीप्। १ कार्षापण, कार्षापण नामक पुराना सिक्का या कौड़ी। २ पतञ्जलि प्रणीत पाणिनिव्याकरणका भाष्य। ३ नदीविशेष, एक प्राचीन नदीका नाम।

चूर्णीकृत (सं० त्रि०) अचूर्णः चूर्णः सम्पद्यमानः कृतः चूर्ण-चि कृ-क्त। चूर्णित, जो पीसा गया हो।

"सर्वं चूर्णीकृतञ्च वनराशिभिरावृतः।" (रामा० ५।१८।११)

चूर्ति (सं० स्त्री०) चर भावे क्तिन् अत उत्वं। चरण, पांव, पैर।

चूल (सं० पु०) चोलयति पुनः पुनरुच्छेदने ऽपि उन्नतो भवति चूल उन्नतौ क पृषोदरादित्वाद् दीर्घः। यद्वा चरकः रेफस्य लकारः। शिखा, चोटी, बाल, केश।

'गृहीतचूलको विप्रो नच्छेन रजकादिना।' (मलमासत० १८ प०)

चूलक (सं० पु०) १ हाथीकी कनपटी। २ हाथीके कानका मैल। ३ किसी विषयकी परोक्ष सूचना। ४ स्तम्भका ऊपरी भाग।

चूलदान (हिं० पु०) १ पाकशाला, वह स्थान जहां रसोई बनती है, रसोईघर बबर्चीखाना। २ गैलरी, बैठने या चीजें आदिके रखनेका सीढ़ीनुमा बना हुआ स्थान।

चूला (सं० स्त्री०) चूड़ा डस्य लः। १ गृहके उपरिस्थित गृह, वह घर जो जीनेके ऊपर मकानकी छत पर हो, जिसकी छत प्रायः ढालु होती है। २ चूड़ा।

चूलिक (सं० क्ली०) चोलयति भर्जनसमये समुन्नतो भवति चूल-ण्वुल् निपातने साधुः। घृतपक्व गोधूमपिष्टक, घृतमें सेंकी हुई पूरी या पराठा।

चूलिका (सं० स्त्री०) चुलिक्-टाप्। १ हस्तीका कर्णमूल, हाथीकी कनपटी। २ नाटकका अङ्गविशेष, नाटकका एक अंग जिसमें नेपथ्यसे किसी घटनाके हो जानेकी सूचना दी जाती है।

"अन्तर्जवनिकासंस्थैः सूचनार्थस्य चूलिका।"

संस्कृत नाटकके नियमानुसार रंगशालामें युद्ध या मृत्यु आदिका दृश्य दिखलाना निषिद्ध है। इसकी सूचना नेपथ्यसे हो जाया करती है। संस्कृतके वीरचरितमें एक प्रकारकी चूलिका है जिसमें नेपथ्यसे सूचना दी जाती है,—"भो भो वैमानिकाः प्रवर्त्तन्तां रङ्गमङ्गलानीत्यादि' रामेण जितः परशुरामः।" इति नेपथ्ये पात्रैः सूचितं।"

अर्थात्—रामने परशुराम पर विजय पा ली है, अतः हे विमान पर बैठनेवाले! आप लोग मंगलगीत आरंभ करें। ३ मुरगीके सिर परकी शिखा।

४ जैन मतानुसार श्रुतज्ञानके दो भेद हैं—अङ्गप्रविष्ट और अङ्गवाह्य। अङ्गप्रविष्टके आचारांग आदि बारह भेद हैं। जिसमें दृष्टिवाद बारहवां है। उसीका पांचवां

भेद चूलिका है। उसके भी पांच भेद हैं—१ जलगता २ स्थलगता, ३ मायागता, ४ रूपगता और ५ आकाशगता। जलगता चूलिकामें जलका रोकना, जलमें गमन करना, अग्निका स्तम्भन करना, अग्निका भक्षण करना, अग्निमें प्रवेश करना इत्यादि क्रियायोंके कारणभूत मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिकोंका वर्णन किया गया है। स्थलगता चूलिकामें मेरुपर्वतादि दुर्गम्य स्थानोंमें गमन करना, शीघ्र गमन करना इत्यादि क्रियायोंके कारण स्वरूप मंत्र तन्त्र तपश्चरणादिकों विशेष स्वरूप निरूपण किया है। इन्द्रजाल सम्बन्धी मन्त्रादिका वर्णन मायागतामें है। सिंह, हाथी, घोड़ा, वृषभ, मृग आदि अनेक प्रकार रूप बदल बदल कर धरना इस विषयके मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिका अथवा चित्राम काष्ठ, लेपादिकका धातु, रसायनका वर्णन रूपगत चूलिकामें प्रस्फुट किया गया है। आकाशगत चूलिका आकाशमें गमन करना आदि क्रियायोंके कारण स्वरूप मन्त्र तन्त्रादिका वर्णन है। इन पांच चूलिकाओंमें प्रत्येक चूलिकाके दो करोड नौ लाख नवासी हजार दो सौ पद हैं। (गोम्मटसार जीवकाण्ड)

चूलिकावटी—औषधविशेष, एक तरहकी दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, विष, हरिताल, त्रिकटु, त्रिफला, सुहागा, प्रत्येकका बराबर भाग ले कर जितना हो उससे चौगुना जयपाल (जमालगोटा) लेना चाहिए। भीमराजके रससे तथा मधुके साथ घोट कर २ रत्ती परिमाणकी गोली बनानी चाहिए। इसके सेवन करनेसे शोथ, पेटकी बिमारी, कामला, पाण्डुरोग, आमवात, प्लीमक, भगन्दर, कुष्ठ, शोहा, गुल्म प्रभृति रोग जाते रहते हैं।

चूलिकोपनिषद् (सं० स्त्री०) अथर्ववेदीय एक उपनिषद्का नाम।

चूलिन् (सं० त्रि०) चूड़ा अस्त्यस्य चूड़ा-इनि डस्य लः। १ चूड़ायुक्त, जिसके चोटी या शिखा हो। (पु०) २ एक ऋषि। रूपवती गन्धर्वकुमारी सोमदाकी परिचर्यासे संतुष्ट हो ऋषिने उस पर दया की थी। उससे गन्धर्वकुमारीके एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ जिसका नाम ब्रह्मदत्त रखा गया। (रामा० बाल० ३३ अ०)

सोमदा और ब्रह्मदत्त देखो।

चूल्हा (हिं० पु०) वह स्थान जहां आग जला कर भोजन पकाया जाता है।

चूषण (सं० पु०) चूसनेकी क्रिया।

चूषणीय (सं० त्रि०) चूष कर्मणि अनियर्। आस्वादनीय, चूसने योग्य, जो चूसा जाय।

चूषा (सं० स्त्री०) चोष्यते पीयते पृष्ठमांसेन दर्शनाविषयतां नीयते चूष सञर्थे क-टाप्। हाथीको कमरमें बाँधी जानेवाली बड़ी पेटी या रस्सी।

चूषित (सं० त्रि०) चूष कर्मणि क्त। १ आस्वादित, चूसा हुआ, चखा हुआ। (क्ली०) चष भावे क्त। २ चूषण, आस्वादन, चखाना, स्वाद लेना।

चूष्य (सं० त्रि०) चूष कर्मणि ण्यत्। १ जो जिह्वा और ओष्ठ लगा कर पीया जाय। चोषणीय, जो चूस कर खाया जाय। २ चूसने योग्य, जो चूसा जाय या चूसा जा सके।

चूसना (हिं० क्रि०) १ जिह्वा और ओष्ठके संयोगसे किसी पदार्थका रस खींच खींच कर पीना। २ किसी चीजका सारभाग निकाल लेना।

चूहड़ (हिं० पु०) चूहड़ा देखो।

चूहड़ा (हिं० पु०) श्वपच, चांडाल, मेहतर।

चूहर (हिं० पु०) चूहड़ा देखो।

चूहा (हिं० पु०) इन्दूर देखो।

चूहादन्ती (हिं० स्त्री०) १ आभूषणविशेष, एक तरहका गहना जिसे स्त्रियां कलाईमें पहनती हैं। इसके दांत चूहेके दांतसे लंबे और नुकीले होते हैं, इसलिये इसका नाम ऐसा पड़ा, पहुंची। (वि०) २ जो चूहेके दांतके आकारसा हो।

चूहादान (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, तक तरहका पिंजड़ा जिससे चूहे फसाये जाते हैं।

चे (अनु० स्त्री०) पक्षियोंकी बोली, चूँ चूँका शब्द।

चेंगी (देश०) चमड़ेकी चकती या सुतलीका घेरा। यह पैंजनी और पहियेके बीचमें दी जाती है ताकि एक दूसरेसे रगड़ न खाँय।

चेंच (हिं० पु०) शाकविशेष, बरसातमें होनेवाला एक तरहका साग। इसमें पीले फूल और फलियां लगती हैं।

चेंचर (अनु० वि०) व्यर्थ बोलनेवाला, बकवादी।

चेंचें (अनु० स्त्री०) १ चिड़ियोंके बोलनेकी आवाज। २ व्यर्थकी बकवाद, बक बक।

चेंटियारी (देश०) पक्षिविशेष, एक तरहका बहुत बड़ा जलपक्षी। इसके पैर लगभग एक हाथ लम्बे और चोंच एक बालिश्तकी होती है। इसके मस्तक पर एक भी पर या बाल देखनेमें नहीं आता है। मांस स्वादिष्ट होनेके कारण इसका शिकार किया जाता है।

चेंपें (हिं० स्त्री०) १ व्यर्थकी बकवाद, बकबक। २ चींचपड़, वह धीमी आवाज या काम जो किसी बड़ेके सामने प्रतिवाद या विरोधके रूपमें किया जाय।

चेअर (अं० स्त्री०) कुरसी।

चेअरमैन (अं० पु०) सभापति, किसी सभा या बैठकका प्रधान, मुखिया।

चेक (अं० पु०) १ किसी बैंक आदिके नाम लिखा हुआ रुक्का या आज्ञापत्र। वही मनुष्य किसी बैंकके नाम चेक दे सकता है जिसका रुपया उस बैंकमें जमा हो। २ चारखाना, बहुतसी सीधी लकीरों पर खींची हुई आड़ी रेखायें जिनसे बहुतसे चौकोर खाने बन जाय।

चेकनाई—बङ्गदेशके अन्तर्गत पावना जिलेकी एक नदी। जिस जिस स्थान हो कर यह बहती है, उसके सिर्फ आठ स्थानोंमें गवर्मेण्टका मछली पकड़नेका व्यवसाय है।

चेकित (सं० त्रि०) कित् यङ्‌ लुक्‌-अच्। १ अत्यन्त वासना और ज्ञानयुक्त, बहुत बड़ा ज्ञानी। (पु०) २ ऋषि-विशेष। यह शब्द पाणिनीय गर्गादिगणके अन्तर्गत है, गोत्रापत्यार्थमें इसके उत्तर यञ्‌ हुआ करता है।

चेकितान (सं० त्रि०) कित यङ्‌-लुक्‌ ताच्छिल्ये चानश। १ अत्यन्त ज्ञानयुक्त, बहुत बड़ा ज्ञानी। (पु०) २ महादेव शिव।

"रुद्रमीशानमृषभं शिवं शम्भुं कपर्दिनम।
चेकितानं परं योनिं तिष्ठन्तो गच्छतस्य इ॥" (भारत ७।२०१ अ०)

३ द्वापरयुगके एक क्षत्रिय राजा धृष्टकेतुके पुत्रका नाम। महाभारतके युद्धमें इन्होंने पांडवोंकी सहायता की थी।

"धृष्टकेतुश्चेकितानः काशीराजश्च वीर्यवान्।" (गीता १ अ०)

चेक्रिय (सं० त्रि०) परिश्रमी, कार्यकुशल, मेहनती, जो काम काज करनेमें चालाक हो।

चेगो—मलवारवासी एक नीच जाति। ये लोग खजूर, ताड़ आदिके पेड़ोंसे ताड़ी संग्रह कर जीविका निर्वाह करते हैं। ऐसी किम्वदन्ती सुनी जाती है कि, चेगो जाति सिंहलसे यहां आई है। ये कहते हैं कि, चेरुम पेरुमल राजाके राजत्वकालमें उनके राज्यमें एक धोबिन बसती थी। एक दिन उसने कपड़े धोते धोते कपड़ेका दूसरा छोर पकड़नेके लिए किसीको न देख अपने पड़ोसी आजारी अर्थात् सूत्रधरकी लड़कीको पुकारा। लड़कीको सामाजिक नियम मालूम नहीं थे, इसलिये उसने बिना किसी संकोचके धोबिनकी सहायता की। इस घटनाके थोड़े ही समय पीछे एक दिन धोबिन उक्त पड़ोसीके घरमें घुस गई। इससे आजारीके महाक्रोधान्ध होने पर धोबिन बोली—तुम्हारी जाति तो नष्ट हो चुकी, अब तुम मेरे ही समान जातिके हो, तुम्हारी लड़कीने मेरे साथ कपड़े धोये हैं। आजारी अपने क्रोधको न सम्हाल सका, उसने धोबिनको मार डाला। यह घटना चेरुम् पेरुमलके कानों तक पहुंच जाने पर तमाम आजारी लोगोंने राजदण्डके भयसे भाग कर काण्डीके राजाका आश्रय लिया। चेरुम् पेरुमलने उन्हें अभय दान दिया और लौट आनेके लिये काण्डीके राजाके पास पत्र लिखा। परन्तु आजारियोंको यह डर था कि, राजा अपने पास बुला कर न जाने क्या न करेंगे, इसलिए उन्होंने काण्डीके राजासे दो चेगो अर्थात् सैनिक मिलनेकी प्रार्थना की। राजाने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और कहा कि—तुम्हारी रक्षा करनेके बदले, तुम लोग चेगो और उनके वंशधरोंको विवाह-श्राद्धादिके समय निर्दिष्ट परिमाणके अनुसार चांवल देते रहना। तदनुसार दो चेगो अपने बाल-बच्चों सहित मलवारमें आ कर रहने लगे। वर्त्तमानके चेगो उन्हींके वंशधर हैं। आज तक आजारी लोग उन्हें पूर्व प्रथानुसार विवाह-श्राद्धादिमें चावल दिया करते हैं। कोई आजारी यदि असमर्थ हो, तो वह उतने चावल चेगोके घर ले जा कर उनकी अनुमतिसे वापिस भी ले आता है, परन्तु नियमभङ्ग नहीं करता। युद्धविग्रह आदिके समय ये राजाकी तरफ हो कर लड़ते हैं। ताड़ी बेचना ही इनकी प्रधान उपजीविका है। ये दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं—एक चेगो और दूसरे तीयेन चेगो। उड्डलसनने जिस चेगावान या चेकावान्

जातिका उल्लेख किया है, वह शायद यही जाति होगी।

चेङ्गमा—मन्द्राज प्रदेशके सलेम और दक्षिण आर्काट जिले के मध्यका एक गिरिवर्त्म। इसका प्रकृत नाम तिरुरी-कोट या सिङ्गरीकोट है। यह अक्षा० १२° २१´ से १२° २३´ ४५´´ उ० और देशा० ७८° ५०´ से ७८° ५२´ ५५´´ पू०के मध्य कर्नाट प्रदेशसे बारमहल जानेके रास्ते पर अवस्थित है। सम्मुख रास्ता होनेके कारण यहां बड़ी बड़ी लड़ाइयां लड़ी जा चुकी हैं। १७६० ई०में मक-दुम अली इसी रास्ते से हो कर कर्णाट गये थे। १७६७ ई०में हैदरअली ब्रटिश सैन्यका अनुसरण करते हुए इसी जगह पराजित हुए थे। इसके दो वर्ष बाद महिसुरके सैन्य इसी रास्ते से हो कर लौटे तथा १७८० ई०में जेने-रल वेलिङ्ग उन्हें पराजय करनेके लिये यहीं हो कर गये थे। १७८१ ई०में टिपुने इसी राह हो कर अंगरे-जाधिकृत कर्णाट पर आक्रमण किया। इसके बाद और किसीने कर्णाट पर चढ़ाई नहीं की है।

चेचक ((फा० स्त्री०) शीतला या माता नामक रोग।

चेचकरू (फा० पु०) शीतला होनेसे जिसके मुंह पर दाग पड़ गया हो, वह जिसके मुंह पर शीतलाके दाग हों।

चेजा (हिं० पु०) छिद्र, सूराख, छेद।

चेङ्घु—एक प्राचीन जनपद। गाजीपुर नगरके निकटस्थ गङ्गानदीके तीर पर्यवेक्षण करके कनिंहम साहबने बहुत-से ईंटके ढेले और प्राचीन मट्टीके पात्र पाये थे। उनके मतानुसार यहां चेङ्घु राजधानी थी। किन्तु कारलैले साहबने कहा है कि प्राचीनकालमें जामनिया तहसील के अन्तर्गत उधारणपुर ग्राम ही चेङ्घु राज्यकी राजधानी थी। उन्होंने यहां प्राचीन अट्टालिकाका भग्नावशेष देखा है। उनके मतसे उधारणपुर संस्कृत युद्धारण-पुरका अपभ्रंश मात्र है। चेङ्घुका अर्थ—युद्धविजयी-की राजधानी तथा युद्धारणपुरका भी यही तात्पर्य है। चीन देशके विख्यात पर्यटक युएनचुयाङ्ग इस स्थान पर आये थे।

चेट (सं० पु०) चेटति प्रेरयति चिट-अच्। १ दास, भृत्य, नौकर या सेवक।

"मृहारस्य सभायां विटचेटविदूषकाद्याः॥" (साहित्यद०)

२ पति, स्वामी, खाविन्द। ३ उपनायक, जो नायक और नायिकाको मिलाता हो, भाँड़, भँड़ुवा। ४ पुरुष-की उपस्थेन्द्रिय। ५ एक प्रकारकी मछली। ६ सिंहल-के राजा बासवकी प्रधान महिषी। ये पहले बासवकी मामी थीं। बासवके मामा पहले सिंहलराज शुभकी एक सेनापति थे। बासव मामाके अधीन काम करते थे। राजा यशभालकी यह भविष्य-वाणी थी कि, बासव नामक एक व्यक्ति सिंहलके राजा होंगे। राजा शुभ इससे बहुत शङ्कित हुए। उन्होंने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देख सिंहलमें बासव नामके जितने मनुष्य थे, उनको मारना शुरू कर दिया। इस समय उक्त सेनापतिने अपने भानजे बासवको राजाके हाथ सौंपना चाहा। स्त्रीके साथ इस विषयमें बात-चीत कर वे बासवको साथ ले राजमहलमें उपस्थित हुए। उनकी स्त्रीने बासवके हाथ कुछ पान रख दिये, जिनमें चूना नहीं लगाया था। जब वे दोनों राजमहलकी ड्योढ़ी पर पहुंचे तब उक्त सेनाध्यक्षने बासवसे पान लिए। परन्तु उसमें चूना न था, इसलिए उन्हें बासवको चूना लानेके लिए घर भेजना पड़ा। बासवको बचाने होके लिए चेटने ऐसा किया था। अब उसे सामने देख चेटकी बड़ी खुशी हुई। चेटने अपना गुप्त अभिप्राय सब सुना दिया और उन्हें भाग जानेके लिए कहा राह खर्चके लिए कुछ रुपये ले कर बासव वहांसे चल दिए।

बासवने महाविहारमें जा कर वहांके कई-एक दल बौद्ध पुरोहितोंका आश्रय लिया। यहां आ कर उन्हें राजसिंहासन पानेकी इच्छा बलवती हो उठी। वे युद्ध करनेके अभिप्रायसे सेना संग्रह करने लगे; तथा उनकी सहायतासे उन्होंने कुछ ग्रामों पर भी कब्जा कर लिया। बादमें बढ़ते हुए एकके बाद दूसरा, दूसरेके बाद तीसरा, इसी प्रकार ग्राम जय करने लगे। अन्तमें राजधानी भी उन्होंने धावा किया और राजाको परास्त कर मार डाला। इस युद्धमें उनके मामा भी मारे गये। बासवने अपनी मामीके उपकारको स्मरण कर उन्हें अपनी पट्ट-रानीका पद दिया।

चेटरानीने एक अच्छा स्तूप बनवा कर उस पर एक छत और गृह बनवाया था; जो चेटविहारके नामसे प्रसिद्ध है।

७ उपपति, सन्धानदक्षनायक। (रत्न०)

चेटक (सं० पु०) चिट-ण्वुल्। १ दास, भृत्य, नौकर, सेवक। २ दूत। ३ चसका, चाट, मजा। ४ फुरती, जल्दी। ५ चटक-मटक। ६ भाँड़ोंका तमाशा। ७ नजरबन्दका तमाशा, इन्द्रजालविद्या।

चेटका (हिं० स्त्री०) १ मुरदा जलानेकी चिता। २ श्मशान, मरघट।

चेटकी (सं० पु०) १ इन्द्रजाली, जादूगर। २ वह जो अनेक, प्रकारके कौतुक करता हो, कौतुकी।

चेटिका (सं० स्त्री०) चेटक-टाप् अत इत्वं। १ दासी, सेवा करनेवाली स्त्री। २ उपनायिकाविशेष।

"चक्रीकुर्व्वन् स तत्र द्वचेटिकाभिः प्रवेशितः।" (कथास० ४।५१)

चेटी (सं० स्त्री०) चेट-ङीष्। दासी, लौंडी।

"प्रेष्याश्चेव्यश्च बध्यश्च बलस्याश्चापि सम्बदः।" (रामा० २।८१।६४)

चेटुवा (हिं० पु०) चिड़ायाका बच्चा।

चेड़ (सं० पु०) चेटति परप्रेष्यत्वं करोति चिट्-अच्, टस्य डत्वं। दास, भृत्य, नौकर।

चेड़—आसामके खासी पर्वतका एक छोटा राज्य। लोकसंख्या लगभग ८१५५ और वार्षिक आय ७८००) रु० की है। यहां कोयले और लोहेकी खान है। राज्यमें आलू, नारंगी नीबू, रूई, बाजरा, सुपारी, पान, लाल मिर्च, अदरक और शहद बहुत पाये जाते हैं।

चेड़क (सं० पु०) चेटति परप्रेष्यत्वं करोति चिट-ण्वुल् टस्य डत्वं। दास, भृत्य, सेवक।

चेड़िका (सं० स्त्री०) चेड़क-टाप्, अत इत्वं। दासी, लौंडी।

चेड़ी (सं० स्त्री०) चेड़-ङीष्। दासी, वह स्त्री जो सेवा टहल करती हो, लौंडी।

चेत् (अव्य०) चित्-विच् तस्य लोपः। १ यदि, अगर।

"अन्नलवारश्च इत्यामिति चेदन्नवारणम्।
कूटस्थस्यात्मतां वा रिष्टमेवहि तद्भवेत्।" (पञ्चदशी ६।४२)

२ पक्षान्तर, दूसरी तौर पर। ३ जिस जगह संदेह नहीं हो उस जगह भी संदेह कथन। ४ कदाचित्, शायद।

चेतकी (सं० स्त्री०) चेतयति उन्मीलयति बुद्धिबलेन्द्रियाणि चित-णिच्-ण्वुल्, गौरादित्वात् ङीष्। १ हरीतकी, हर्रे। (अमर) २ सात प्रकारकी हर्रोंमेंसे हिमाचलोत्पन्न एक हर्रे, जिस पर तीन धारियां होती हैं। भावप्रकाशके मतसे चेतकीके दो भेद हैं, एक काली और दूसरी सफेद। काली हर्रे १ अङ्गुलसे ज्यादा बड़ी नहीं होती और सफेद हर्रे ६ अङ्गुल तक बड़ी होती है। मनुष्य, पशु, पक्षी और मृग आदि कोई भी प्राणी यदि चेतकीके वृक्षकी छायामेंसे निकल जाय, तो उसे उसी समय दस्त होने लगेंगे। चेतकी हर्रेकी हाथमें लेते ही दस्त जारी हो जाते हैं। परन्तु यह हर्रे अब कहीं नहीं पाई जाती। तृष्णार्त, सुकुमार, दुर्बल या औषधविद्वेषीके लिए चेतकी हर्रे अच्छी है। (भावप्र० पूर्वख० १म भा०। इसका विशेष विवरण हरीतकी शब्दमें देखना चाहिये।) ३ एक रागका नाम। इसको कोई कोई श्रीरागकी सङ्गिनी बताते हैं। ४ जातिफूल, चमेलीका पौधा। (राजनि०)

चेतन (सं० पु०) चेतति जानाति चित् कर्तरि ल्यु। १ आत्मा, जीव। २ परमेश्वर, ईश्वर।

"चेतनाचेतनाभिदा कूटस्थात्मकृता नहि।
किन्तु बुद्धिकृताभासा कृतैवत्येव गम्यताम्।" (पञ्चदशी ६।५)

३ मनुष्य, आदमी। ४ प्राणी, जीवधारी। (त्रि०) चेतनं चैतन्यं विद्यतेऽस्य चेतन-अच्। अर्शआदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। ५ प्राणयुक्त, जिसके प्राण हो।

"कामार्त्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु।" (मेघदू० पूर्व ५)

चेतनकी (सं० स्त्री०) चेतनं करोति चेतन-कृ-ड गौरादित्वात् ङीष्। हरीतकी, हड़, हर्रे।

चेतनचन्द्र—एक प्रसिद्ध कवि। ये १५५८ ई०में विद्यमान थे। इन्होंने 'शालिहोत्र' और सगर वंशके राजा कुशलसिंहके लिए 'अश्वविनोद' नामक ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

चेतनता (सं० स्त्री०) चेतनस्य भावः चेतन-तल्-टाप्। चैतन्य, चेतनेका धर्म, सज्ञानता।

"देहचेतनतामिवात।" (मालव० १)

चेतनत्व (सं० क्ली०) चेतनस्य भावः चेतन-त्व। चेतनता, चैतन्य।

चेतना (सं० स्त्री०) चित्-युच्-टाप्। १ बुद्धि। २ मनका वृत्तिविशेष, मनकी एक वृत्ति, ज्ञान। (गीता १३।६) ३ चैतन्य, चेतनता, संज्ञा, होश। ४ चित्तवृत्तिविशेष

स्वरूप ज्ञानशक्तिक, प्रमाणका असाधारण कारण। (शब्दार्थचि०) ५ स्मृति, सुधि, याद।

चेतना (हिं० क्रि०) १ सावधान होना, चौकन्ना होना। २ होशमें आना। ३ विचारना, सोचना, ध्यान देना, समझना।

चेतनावत् (सं० त्रि०) चेतना विद्यतेऽस्य चेतना मतुप् मस्य वः। चेतनायुक्त, जिसके चैतन्य हो।

"चेतनावत्सु चैतन्यं सर्व्वभूतेषु पश्यति।" (भारत १४ प०)

चेतनीय (सं० त्रि०) चित-अनीयर्। ज्ञेय, जानने योग्य, जो चेतन करने योग्य हो।

चेतनीया (सं० स्त्री०) चेतनायै हिता चेतना-छ। ऋद्धि नामक औषध, ऋद्धि नामकी लता।

चेतय (सं० त्रि०) चेतयति चित णिच्-श। चेतनायुक्त। जिसके ज्ञान हो।

चेतयितव्य (सं० त्रि०) चेतनीय, जो चेतन करने योग्य हो, जानने योग्य।

चेतयितृ (सं० त्रि०) चित-णिच्-तृच। चेतनायुक्त।

चेतवाई—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत मलवार जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० १०° ३२´ उ० और देशा० ७६° ३ के मध्य अवस्थित है। यह वदनपल्ली नगरका एक अंश है। नहरके ऊपर अवस्थित होनेके कारण यह ग्राम वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध था। १७१७ ई०में ओलन्दाजोंने सामरी राजासे यह छीन लिया था और यहां एक दुर्ग निर्माण कर पापिनीपत्तन प्रदेशकी राजधानी स्थापन की। १७७६ ई०में हैदरअलीने सारा जिला जीत कर इस दुर्ग पर अधिकार किया था। १७८० ई०में यह स्थान अंगरेजके हाथ आया और उन्होंने फिर कोचीन राजाको अर्पण कर दिया। अन्तमें १८०५ ई०को कम्पनीने यह फिरसे अपने अधिकारमें कर लिया।

चेतव्य (सं० त्रि०) जो चयन करने योग्य हो, इकट्ठा करने लायक।

चेतस् (सं० क्ली०) चित्यते ज्ञायते अनेन चित्त-असुन्। १ चित्त, जी। (अमर) "चेतोनलं कामयते मदीयं।" (नैषधचरित) २ मन, दिल। नैयायिक लोग अणु परिमाण मनको ही चित्त कहते हैं, इससे सुख, दुःख, इच्छा, राग, द्वेष इत्यादि कुछ आत्मधर्मोंका प्रत्यक्ष होता है।

मनस् शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

३ बुद्धितत्त्व। सांख्य मतमें—बुद्धितत्त्वमें ही ज्ञानादि-कों माना है और उसे ही कहीं कहीं चित्तके नामसे उल्लेख किया जाता है, अन्तःकरणके सिवा चित्त नामका कोई भिन्न पदार्थ नहीं है। बुद्धि और महत्तत्त्व देखो। ४ वृत्तिविशेष। (निघण्टु) (त्रि०) चित कर्त्तरि असुन्। स धातुभ्योऽसुन्। ५ ज्ञाता, जो जाने। (क्ली०) चित भावे असुन्। ६ चैतन्य, चेतनता। ७ प्रज्ञा, बुद्धि। (बोपदेव ६।६२)

चेतसक (सं० पु०) एक जनपद।

चेतसिंह—काशीका एक विख्यात राजा। ये साहसी और तेजस्वी थे तथा राजनीतिमें इन्हें पूरी अभिज्ञता थी। जिस समय मोगलराज्य छिन्न विच्छिन्न हो गया था, उसी समय वाराणसी प्रदेश अयोध्याके नवाबके अधिकारमें आया। तब बलवन्त सिंह इस प्रदेशके अधिपति थे दिल्लीके बादशाह महम्मदशाहने उनके पिता मनसारामको जो राजउपाधि प्रदान की, उनने वही उपाधि प्राप्त की थी। इष्ट इण्डिया कम्पनी और अयोध्याके नवाबके युद्धके समय, बलवन्तसिंहने अधीनता परित्याग कर कम्पनीकी सहायता दी थी। १७६५ ई०में इस विग्रहके शेष होने पर नवाबके साथ कम्पनीका जो सन्धि स्थापित हुई, उसमें लिखा था कि बलवन्तसिंहको फिर भी अयोध्याके नवाबके अधीन रहना पड़ेगा, किन्तु वे पूर्व अधिकृत जमींदारी निर्विवादसे भोग करेंगे तथा जिस परिमाणसे राजस्व देते आ रहे हैं उसी परिमाणसे राजस्व देंगे।

१७७० ई०में बलवन्त सिंहकी मृत्यु हुई। अयोध्याके नवाब उनके पुत्र चेतसिंहको पितृपद पर अभिषिक्त होनेकी सनद देनेमें सहमत न हुए। चेतसिंहको जब यह मालूम हुआ तो वे क्रुद्ध हो उठे, किन्तु आत्मीयगणके परामर्शसे शान्त हो गये। उन्होंने अपना पितृपद पानेके लिये नवाबके पास विनीतभावसे एक आवेदन-पत्र भेजा और नवाबके दूसरे दूसरे प्रधान कर्मचारियोंको उनकी सहायता करनेके लिये विशेष रूपसे अनुरोध किया, किन्तु इनकी सारी चेष्टा निष्फल हुई। अन्तमें उन्हें अंगरेजोंकी शरण लेनी पड़ी। वारेन-हेष्टिंस साहबके अनुरोधसे नवाब सुजाउद्दौलाने १७७३ ई०में

चेतसिंहको काशीका राज्य प्रदान किया, किन्तु साथ ही साथ कुछ राजस्व भी बढ़ा दिया।

१७७५ ई०में नवाब सुजाउद्दौलाका देहान्त हुआ। इधर इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने अपना आधिपत्य फैलानेका अच्छा अवसर पाया। उन्होंने सुजाउद्दौलाके पुत्र आसफ-उद्दौलाके साथ एक नई सन्धि संस्थापन की। इस सन्धिकी एक धाराके अनुसार चेतसिंह कम्पनीके अधीन आ गये। चेतसिंह राजनीतिकुशल थे। उनको पूरा विश्वास था कि वारेनहेष्टिंसको सन्तुष्ट करनेसे उनका प्रभुत्व बहुत कुछ बढ़ जायगा, इसीलिये वे वारेन हेष्टिंसको आज्ञा अच्छी तरह पालन करने लगे। हेष्टिंस साहबकी भी उन पर असीम कृपा रहती थी। चेतसिंह सुअवसर समझ कर धीरे धीरे कम्पनीसे एक एक क्षमता ग्रहण कर अपने नाम पर सिक्का चलाने लगे और काशी प्रदेशमें शान्ति-रक्षा, विचार तथा जमींदारी संक्रान्त बन्दोवस्त करनेका भार इन्हीं पर सौंपा गया। चेतसिंह प्रति वर्ष निर्द्धारित कर २२६६१८०) रुपये कम्पनीको देते थे।

परन्तु यह सद्भाव ज्यादा दिन न ठहर सका। चेतसिंह अत्यन्त क्षमता प्राप्त कर अहंकारसे चूर हो गये और अंगरेजोंके विरुद्ध कोई षड़यन्त्र सोचने लगे। वे निर्धारित समयमें कर देने न लगे इसी कारण शीघ्रही कम्पनीके विवादभाजन हो गये। किसी किसी इतिहास-वेत्ताने लिखा है कि चेतसिंह नियमानुसार ही राजस्व दिया करते थे। १७७८ ई०में अंगरेज एक ओर मराठों-के साथ और दूसरी ओर फरासिसियोंके साथ लड़ाईमें उलझे थे, इसलिये वैसे समयमें उन्हें धन तथा सैन्यका प्रयोजन पड़ा। उन्होंने चेतसिंहसे पांच लाख रुपये माँगे। चेतसिंह यद्यपि मदोन्मत्त हो गये थे तोभी अंगरेजोंसे भय खाते थे। उन्होंने अत्यन्त विनीत भावसे हेष्टिंसको एक पत्र लिख अर्थाभाव सूचित किया, किन्तु हेष्टिंसने उनकी प्रार्थना पर कुछ भी कर्णपात न किया। अन्तमें चेतसिंह रुपये देनेके लिये वाध्य हुए। दूसरे वर्ष भी अंगरेजोंने उनसे रुपये चाहे। इस बार भी वे रुपये देनेमें सहमत न हुए और ज्यादा टाल-मटोल करने लगे। इस पर हेष्टिंस साहबने एक दल सैन्य भेज कर चेतसिंहको रुपये देनेके लिये वाध्य किया।

चेतसिंह मनही मन समझ गये कि अंगरेज उनके व्यवहारसे असन्तुष्ट हो गये हैं। अतः उनके क्रोधकी शान्तिके लिये उन्होंने लाला सदानन्दको हेष्टिंसके निकट भेजा और उसके द्वारा क्षमा प्रार्थना की। हेष्टिंस साहबने कहा कि यदि वे बिना आपत्तिके और पाँच लाख रुपये दें तो उनका अपराध क्षमा हो सकता है। सदानन्दने चेतसिंहको यह आदेश कह सुनाया। वे इस समय रुपये देनेमें सहमत हो गये, किन्तु उसके बाद अङ्गीकार पूर्ण करनेमें विलम्ब करने लगे। चेतसिंहका कार्य देख कर हेष्टिंस साहब विरक्त हो उठे। उन्होंने रुपये अदा करनेके लिये उनके पास एक दल सैन्य भेजा।

रुपये तो वसूल हो गये, लेकिन अधिक समय अपेक्षा करनेमें सेनाओंको यथेष्ट कष्ट सहना पड़ा था।

१७८० ई०में दो हजार अश्वारोही सैन्य भेजनेके लिये चेतसिंहसे कहा गया। यह आदेश पा कर चेतसिंहने अपनी अक्षमता प्रगट करते हुए हेष्टिंस साहबको एक पत्र लिख भेजा। पत्रमें उन्होंने लिखा था कि उनके कुल १३०० अश्वारोही हैं जिनमेंसे कुछ शान्तिरक्षा तथा राजस्व अदा करनेके लिये रखना अत्यन्तावश्यक है। हेष्टिंस साहबने चेतसिंहकी बात पर विश्वास किया। क्योंकि उन्होंने पहली बार १५०० तथा दूसरी बार १००० सैन्य माँगे थे। चेतसिंहने उक्त सैन्य भेजनेकी पूरी कोशिश की थी। लेकिन अभी उन्हें सिर्फ १३०० अश्वारोही थे, अतएव इनमेंसे १००० सैन्य भेजना उनके लिये असम्भव हो गया। अन्तका उन्होंने ५०० अश्वारोही और ५०० पदातिक संग्रह कर हेष्टिंस साहबको एक पत्र लिखा। लेकिन गवनर साहबने कुछ भी प्रत्युत्तर न दिया।

१७८१ ई०के जुलाई मासमें अयोध्याके नवाबसे मिलनेके लिये हेष्टिंस साहब युक्तप्रदेशको गये। इसके पहले चेतसिंहके अधिकारभुक्त स्थान बेचनेके लिये नवाबके साथ हेष्टिंसका पत्रव्यवहार होता था। चेतसिंह इस अभिसन्धिका आभास पा कर स्वराज्य रक्षाके लिये गवर्नर जेनरल साहबको २० लाख रुपये देनेमें सहमत हुए थे। किन्तु नवाब भी ५० लाख रुपये देनेमें प्रस्तुत थे, अतः चेतसिंहका प्रस्ताव अग्राह्य हो गया था। इस पर चेतसिंहको बहुत दुःख हुआ। उन्हें

जिस विपत्तिसे सामना करना पड़ेगा, वे अच्छी तरह समझ गये। भावी संकटसे छुटकारा पानेके लिये उन्होंने बक्सर जा कर गवर्नर जेनरलसे मुलाकात की और उन्हें विनीत भावसे निवेदन किया कि वे अपने अधिकारभुक्त स्थान उन्हें समर्पणके लिये प्रस्तुत हैं। ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी पगड़ी हेष्टिंस साहबके पैरों पर रख दी। इतना कहने पर भी गवर्नर जेनरल साहबकी कृपादृष्टि उन पर न पड़ी। हेष्टिंस साहबने उन्हें किसी तरहका सम्बोधन न दिया। चेतसिंहको निराश हो कर लौट जाना पड़ा। जब हेष्टिंस साहबने इङ्गलैण्डकी महासभा-में अपने चेतसिंह सम्बन्धीय कार्यका समर्थन किया, उस समय उन्होंने कहा था कि चेतसिंहका रुपया देनेका प्रस्ताव विलम्बसे पाने पर वह अग्राह्य हो गया था। इसके बाद चेतसिंहको बड़ी आपत्ति झेलनी पड़ी।

१४ अगस्त १७८२ ई०को हेष्टिंस साहब काशी पहुंचे। चेतसिंहने वहां उनसे भेंट करनेकी प्रार्थना की, किन्तु उनकी प्रार्थना ग्राह्य न हुई। दूसरे दिन सबेरे वहांके रेसिडेण्ट मारखम साहब चेतसिंहके निकट भेजे गये। इन्होंने चेतसिंहके विरुद्ध बहुतसे अभियोग तथा उनसे पावनाके विषय सम्वलित एक कागज अपने साथ ले लिया। वहां पहुंच कर रेसिडेण्ट साहबने वह कागज चेतसिंहको दे दिया। उन्होंने उसी दिन प्रत्युत्तर दिया, किन्तु इसे हेष्टिंसको विश्वास न हुआ। चेतसिंहका कार्य न्याय या अन्याय हुआ है इसका प्रयोजन अब हेष्टिंको न रहा। चेतसिंह ही कितना रुपया दे सकते? पहले वे २० लाख रुपये देनेमें सहमत हुये थे, अब दो लाख रुपये और बढ़ा दिये। किन्तु इतने पर भी हेष्टिंस साहब संतुष्ट न हुए।

उसी दिन सन्ध्याके समय हेष्टिंस साहबने रेसिडेण्ट साहबको आज्ञा दी कि वे शिवालयघाटके दुर्गको जा कर चेतसिंहको उसमें बन्दी करें और दो सौ सैन्य दुर्गमें पहरा देनेके लिये रख छोड़ें। मारखम साहबने उनके आज्ञानुसार काम किया। इस तरह चेतसिंह अपने प्रासादमें कैदीकी तरह रहने लगे।

चेतसिंह प्रजारंजक थे। उनकी शान्तप्रकृति तथा न्यायसङ्गत विचार-प्रणालीसे सब कोई सन्तुष्ट थे। विशेष कर एक तो हिन्दूओंके लिए राजा देवताके समान होते हैं दूसरे चेतसिंह निर्दोष थे, ऐसी हालतमें ऐसे राजाका अपमान कौन सह्य कर सकता है? काशीधाममें इसका घोर उपद्रव मचा। कोई अब एक क्षण भी स्थिर न रह सका। लोगोंका झुंडका झुण्ड राजप्रासादमें जाने लगा। काशीराज्यके सैनिकोंने किला पर आक्रमण किया। वह दुर्ग दुर्भेद्य था। दो सौ सेना एक सप्ताह तक शत्रुके आक्रमणसे दुर्गकी रक्षा कर सकती। किन्तु अंगरेजी सैन्यसे कोई काम न हो सका क्योंकि उनके साथ बारूद न थी। अतएव वे शत्रुके सैन्यको भगा न सके। उनमेंसे एक एक कर शत्रुके हाथसे मारा गया। इस समय एक दूसरी अंगरेजी सेना बारूद ले कर आ पहुंची, किन्तु तब तक आक्रमणकारियोंने दुर्ग अधिकार कर लिया था। उन्होंने जयके उल्लाससे उत्तेजित हो नवागत सैनिकों-को भी मार डाला। युद्धमें कुल २०५ मनुष्य मारे गये। इस गड़बड़ीके वक्त चेतसिंह भागनेके लिये कोशिश करने लगे। वर्षाकालका समय था, इसलिये गङ्गामें बहुत ऊंचा तक जल बढ़ आया था। वे अपनी पगड़ीको कमरमें बांध एक गवाक्षद्वार हो कर निकल पड़े। नदीके किनारे पहुंच वे नावद्वारा नदी पार हो गये।

इस समय हेष्टिंस साहब मधुदासके उद्यानमें रहते थे। उनका सौभाग्य था कि चेतसिंहके जयोन्मत्त मनुष्य उन पर आक्रमण न कर राजाके साथ हो लिये। राजाके मनुष्य विद्रोही हो उठे अतः उन्हें दमन करना हेष्टिंस-ने उचित समझा। उस समय मेजर पोफम साहबके अधीन बहुतसी सेना थी जिनमेंसे अधिकांश काशीमें और कुछ मिरजापुरमें थी। इसके सिवा रेसिडेण्ट साहबके घर पर भी थोड़े सिपाही पहरेमें नियुक्त थे। हेष्टिंस साहबने स्थिर किया कि काशीके सैन्योंके साथ यदि मिरजापुरके सैन्य एकत्र कर दिये जांय तो पोफम साहब शीघ्रही विद्रोहियोंको दमन कर सकते हैं। उसी समय मिरजापुरस्थित सेनाध्यक्षको एक पत्र लिखा गया कि वे वहांके सैनिकोंको साथ ले रामनगर आ कर अपेक्षा करें। उक्त सेनाध्यक्ष इस आदेशके अनुसार वहां पहुंचे। चाहे समझनेमें भ्रम हुआ हो, अथवा अपना गौरव पानेकी आशासे हो, उन्होंने अन्य सेनाकी अपेक्षा न कर

अपने अधीनस्थ थोड़ी सेनाओंको ले विद्रोहियों पर आक्रमण किया। इस युद्धमें वे पराजित और निहत हुए तथा उनके अधीनस्थ बहुतसे सैन्य भी मारे गये। विद्रोही जयके उल्लाससे प्रमुदित हो उठे। वे तब दूसरे दूसरे स्थानों पर धावा करने लगे। यहां तक अफवाह फैली कि वे गवर्नर जेनरलके वासगृह पर भी आक्रमण करेंगे। हेष्टिंस साहबको यह खबर मिल गई थी। ऐसी हालतमें वे अपनेको भी निरापदमें न समझ चुनार चले गये।

बड़े लाटने भयसे काशी छोड़ दिया है, यह सम्वाद चारों ओर फैल जानेसे एक भयानक विप्लव उपस्थित हो गया। अंगरेजोंके विपक्ष युद्ध करनेके लिये सिर्फ काशीके ही मनुष्य तैयार न हुए, वरन अयोध्या तथा बिहारके बहुतसे मनुष्य भी चेतसिंहके पक्षमें हो गये।

इस विप्लवके समय चेतसिंह स्वयं अंगरेजके विरुद्ध कोई काम नहीं करते थे। विश्वास जमानेके लिये उन्होंने हेष्टिंसको कई एक पत्र इस आधार पर लिखे कि वे सन्धिस्थापन करनेके लिये प्रस्तुत हैं। किन्तु हेष्टिंस साहबने इन पत्रोंमें एकका भी उत्तर नहीं दिया।

हेष्टिंस साहब चुनारसे युद्धका आयोजन करने लगे। पोफम साहबने बहुतसे सैन्य संग्रह कर काशी पर चढ़ाई कर दी। अब चेतसिंह भी सैन्य इकट्ठा करनेके लिये वाध्य हुए। किन्तु जब उन्होंने देखा कि प्रबल अंगरेज सेनाको जीतना उनकी शक्तिसे बाहर है तब वे भाग कर लतिफपुर होते हुए अपनी राजधानीसे प्रायः ५० मील दक्षिण विजयगढ़ नामक दुर्गको चले गये। इस दुर्गमें उन्होंने अपना प्रायः समस्त धन रख दिया था। पोफम साहब उनके पश्चात्‌वर्त्ती हो गये। जब चेतसिंहको यह सम्वाद मालूम हुआ तो जहां तक बना वे अपना धन छिपाने लगे। अन्तमें वे महाराज सिन्धियाका आश्रय ले ग्वालियरमें रहने लगे।

चेतसिंहके भागनेके बाद उनकी माता किलेमें रहने लगी थीं। किलेकी रक्षाके लिए राजकीय सेनाओंने बहुत चेष्टा की, किन्तु इसमें सफलता न हुई। जब अंगरेज सेनाओंने कहा कि किला तोपसे उड़ा दिया जायगा, तब रानी किला छोड़नेके लिए बाध्य हुईं। तब अंगरेजोंके साथ यह शर्त ठहरी कि राजपरिवारके साथ किसी तरहका अत्याचार न किया जाय और घरमें किसी तरहकी खानातलाशी न हो।

इसके बाद हेष्टिंगस साहबने चेतसिंहको राज्यच्युत कर उनके भांजे महीपनारायणको काशीके राजसिंहासन पर अभिषिक्त किया। यह घटना १७८१ ई०में हुई थी। उस समय महीपनारायणकी अवस्था केवल १८ वर्षकी थी।

चेतसिंह बहुत वर्ष तक ग्वालियरमें रहे थे। १८१० ई०में वहीं पर उनकी मृत्यु हो गई।

चेतसिंहके विषयमें किसी तरहकी त्रुटि रहने पर भी यह मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया जा सकता है कि हेष्टिङ्गस् साहबने उनके प्रति अन्याय व्यवहार किया था। उनके सम्बन्धमें जो सन्धि स्थापित हुई थी, उसमें धन जन दे कर कम्पनीकी सहायता करनेकी कोई बात लिखी न थी। किन्तु अङ्गरेजोंने बलपूर्वक उनसे धन और जन लिया था। हेष्टिङ्गसकी आज्ञा पालन करनेमें विलम्ब होने अथवा आज्ञाका भली भांति पालन न कर सकनेके कारण हो वे कैद किये गये और राज्यसे हाथ धो बैठे। चेतसिंहने जिस तरह सदाचरण द्वारा प्रजाको सुखमें रखा था, नगरको सुदृढ़ करनेके लिए भी वे उसी तरह यत्नवान थे। शिवालयघाटके निकटस्थ दुर्ग तथा रामनगरके दुर्गका पूर्व भाग और सुर्चा इन्हींकी आज्ञासे बनाई गई थी। काशीमें प्रति वर्ष जो बूढ़ामङ्गल मेला लगता है, प्रजाके मनोरञ्जनके लिए इन्होंने इसका प्रारंभ किया था।

चेतावनी (हिं० स्त्री०) वह बात जो किसीको सचेत होनेके लिये कही जाय, सतर्क होनेकी सूचना।

चेतिका (हिं० स्त्री०) चेटिका देखो।

चेतित (सं० त्रि०) चित्-णिच् क्त। ज्ञापित, जाना हुआ, किया हुआ।

चेतिया—बनारस जिलेके अन्तर्गत गाजीपुर जिलेमें नारायणपुर नामक एक ग्राम है। इस ग्रामसे ५ मील दक्षिण-पश्चिम, गङ्गाके उत्तर तीर पर दो स्तूप हैं जो चेतिया और आम्बकोट या अम्बिरिखके भग्नावशेष हैं

अम्बिकोटका स्तूप एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष है। कहा जाता है कि अम्बिऋषिने इस दुर्गका निर्माण किया था। पहले यह स्थान चेरु राजाको राजधानी थी।

चेतिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन चेतायिता चेतायिट-इष्ठन्। अत्यन्त चैतन्ययुक्त, जिसे अधिक ज्ञान हो।

"चेतिष्ठोविशामुषर्भुत्।" (ऋक् १।६६।१०)

'चेतिष्ठो अतिशयेन चेतायिता।' (सायण)

चेतुरा (देश०) एक प्रकारका पक्षी। यह भारतके प्रायः सब भागोंमें पाया जाता है। इसका नर और मादा भिन्न भिन्न रंगका होता है। यह पेड़ पर घोसला बना कर रहता है।

चेत्ट (सं० त्रि०) चि-तृच् यद्दा चित-तृच् निपातने साधुः। १ चेतनायुक्त, जिसे ज्ञान हो।

"साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।" (श्वेताश्व०उप० ६।११)

२ हिंसक, जो हिंसा या बध करता हो।

चेतोंशु (सं० पु०) चेतसश्चैतन्यस्यांशुरिव। जीव। वेदान्तके मतसे जलगत या जलप्रतिविम्बित सूर्य्यको नाईं पुरुषके प्रतिविम्ब या आभासको जीव कहते हैं, अतः वेदान्तिकोंने जीवको चेतोंऽशु नामसे उल्लेख किया है।

जीव देखो।

चेतोजन्मन् (सं० पु०) चेतसि जन्म यस्य, बहुव्री०। १ कामदेव, कन्दर्प।

"चेतोजन्मशर प्रसूनमधुभिर्व्यामिश्रतामाश्रयत्।" (नैषध)

(त्रि०) २ मनोजात, जो मनमें उत्पन्न हुआ हो।

चेतोमत् (सं० त्रि०) प्रशस्तं चेतो विद्यते यस्य चेतस् मतुप्। १ मनस्वी, जिसका चित्त सदा प्रफुल्ल रहता हो। २ चैतन्ययुक्त, जिसे ज्ञान हो, जिसे होश हो।

(भारत वन०)

चेतोमुख (सं० पु०) चेतो मुखं द्वारं यस्य, बहुव्री०। वेदांत प्रसिद्ध प्राज्ञ, वेदान्तमें लिखाहुआ एक पण्डितका नाम। "आनन्दभुक् चेतोमुखः प्राज्ञः।" (श्रुति)

चेतोविकार (सं० पु०) चेतसो विकारः, ६-तत्। चित्तकी विकृति, क्रोध, गुस्सा। (कुल्लूक मनु० १।२५)

चेत्तृ (सं० त्रि०) चित-अन्तर्भूत निजर्थे ताच्छील्ये तृण् निपातनादिड़भावः १ ज्ञापयिता, जो जानता है।

(ऋक् १।२२।५)

चेत्य (सं० त्रि०) चित कर्मणि ण्यत्। १ ज्ञेय, जो जानने योग्य हो। २ स्तुत्य, जो स्तुति करने योग्य हो।

(ऋक् ६।१।५)

चेत्या (सं० स्त्री०) चेत्य टाप्। क्षेपणीय, फेंकने योग्य। (ऋक् १०।८८।१४)

चेदु (अव्य०) चेत देखो।

चेटार (सं० पु०) वेदार देखो।

चेदि (सं० पु०) १ जनपदविशेष, भारत प्रभृत प्राचीन इतिहासोंमें इस देशका थोड़ा बहुत विवरण पाया जाता है। इसका नामान्तर त्रैपुर, डाहल और चैद्य है। यह देश अग्निकोणमें शुक्तिमती नदीके किनारे विन्ध्यपृष्ठ पर अवस्थित है।

"विन्ध्यपृष्ठेऽभिचन्द्रेन चेदिराष्ट्रमधिष्ठितम्।" (जैन हरिवंश)

वर्तमान बाघेलखण्ड और तेवार चेदिराज्यके अन्तर्गत था। तेवार देखो। सोऽभिजनोऽस्य चेदि अण् तस्य लुक्। २ चेदि देशके राजा। ३ चेदि देशका वासी। ४ कौशिकके पुत्र।

चेदिक (सं० पु०) चेदिदेश। (बृहत्सं० १४।८)

चेदिपति (सं० पु०) चेदीनां पतिः, ६-तत्। १ उपरिचर नामका वसु।

"इन्द्रप्रीत्या चेदिपतिश्चकारेन्द्र महञ्च सः।
पुत्राश्चास्य महावीर्याः पञ्चासन्नमितौजसः॥" (भारत)

इसका दूसरा विवरण उपरिचर और चेदिराज शब्दमें देखो।

२ दमघोषके पुत्र, शिशुपाल। (भारत २।४०।१५) ३ चेदि देशके अधिपति, चेदि देशके राजा।

चेदिराज (सं० पु०) चेदीनां राजा-टच्। १ शिशुपाल।

(भारत २।४०।१२)

२ उपरिचर वसु, चन्द्रवंशीय कृति राजाके पुत्र। ये कट्टर वैष्णव थे। स्वर्गराज इन्द्रके साथ इनकी मित्रता थी। इन्द्रने इन्हें एक आकाशगामी रथ प्रदान किया था। इसी पर चढ़ करके ये प्रायः सर्वदा उपरिदेश (आकाश)-को जाया करते थे। इसी कारण इनका नाम उपरिचर हुआ था। सत्ययुगके किसी समयमें याजक ऋषि और देवताओंके बीच एक भयानक विवाद उपस्थित हुआ। विवाद होनेका कारण यह था कि ऋषिगण पशुहिंसाको पाप समझ केवल धान्यादि बीज समूह

द्वारा याग करते थे। देवगण ऋषियोंके इस व्यवहारसे सन्तुष्ट न हो कर एक दिन उनके निकट आ कर बोले- "याजक महाशय! आप यह क्या कर रहे हैं। "अजेन यष्टव्यं" इस शास्त्रानुसार छाग पशु द्वारा याग करना उचित है।" मुनियोंने उत्तर दिया, "ऐसा नहीं हो सकता है, पशुहिंसा करनेसे ही पाप होता है। 'बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्यं' इस वैदिकी श्रुतिके अनुसार बीज द्वारा ही याग करना उचित है। आप लोगोंने जिस शास्त्रका वचन कहा उसमें भी अज शब्दसे बीजहीका उल्लेख किया गया है, वह पशुवाचक नहीं है।" किन्तु देवताओंने इसे स्वीकार करना न चाहा। वे बहुतसी युक्ति और प्रमाण दिखा कर अपना ही मत प्रबल करनेकी चेष्टा करने लगे। ऋषि भी उन लोगोंसे कम न थे। वे भी अनेक युक्ति और प्रमाणके बलसे देवताओंका मत खण्डन करने और अपना मत प्रतिपालनमें यत्नवान् हुए। इसका विचार बहुत दिन तक चलता रहा, वाक्ययुद्ध भी बहुत हुआ, किन्तु कौनसा मत उत्तम है इसका कोई निर्णय न हो सका। ऐसे समयमें उपरिचर राजा जा रहे थे। दोनों पक्षोंने दोनों मतमें कौनसा मत उत्तम है, इसके निर्णय करनेका भार उन्हीं पर सौंपा। राजाने देवताओंका पक्षपात कर उन्हींका मत अनुमोदन किया। इस पर ऋषियों ने क्रुद्ध हो राजाको शाप दिया। इसी शापसे हो महाराज उसी विमानके साथ अधोविचार (भूगर्भ)-को जा रहे हैं ऐसा देख देवताओंको बड़ी लज्जा मालूम हुई। उन्होंने राजाको विष्णुकी आराधना करनेका उपदेश दिया और शुभ कर्ममें वसोर्धारा देना होगा ऐसा ही विधान किया। इसीसे ही भूगर्भस्थित वसुकी प्रीति होती है। आजकल भी विवाह इत्यादि शुभकर्मोंमें वसोर्धारा देने की नीति प्रचलित है। कालक्रमसे विष्णुने उन्हें मोक्ष कर दिया। (भारत शान्ति ३३८ अ०)

चेदिराजवंश—एक प्रसिद्ध प्राचीन राजवंश। ईसाकी ३री शताब्दीसे ११वीं शताब्दी तक इस वंशके राजाओंने भारतके नानास्थानोंमें राज्य किया है, जिनमेंसे त्रैपुर और तुम्मानके राजा ही प्रधान हैं। यह वंश कलचुरि और हैहय नामसे भी कथित है।

कलचुरि और हैहय राजवंश देखो।

चेदिसम्वत्—द्वितीय नाम कलचुरि सम्वत्। त्रैपुरके चेदिराजने ईसाकी ३री शताब्दीमें उक्त सम्वत् चलाया था, इसीलिए इसको चेदिसम्वत् कहते हैं।

हैहय राजवंश और कलचुरि देखो।

चेदुबा—१ ब्रह्मदेशके अन्तर्गत आराकानका एक द्वीप। यह शातावेद नदीके दूसरे किनारे पर अवस्थित है। १२०० ई०में यह समृद्धिशाली था। उस समय एक राजा इस द्वीप पर राज्य करते थे। उनके अधीन बहुतसे सैन्य थे। शत्रु के साथ उनका युद्धवृत्तान्त इतिहासमें पाया जाता है। यह अक्षा० १८° ४० एवं १८° ५३´ उ० और देशा० ९३° २८´ तथा ९३° ४६´ पू०में अवस्थित है। इसका परिमाणफल २२० वर्गमील है। द्वीपका उत्तर-पश्चिम कोण १७६० फुट ऊँचा है।

द्वीपके अनेक स्थानोंमें मट्टीका तेल मिलता है। १७५१ ई०के मई माससे यह ब्रटिश गवर्मेंटके अधीन आया।

२ ब्रटिश बरमाके आराकान विभागके अन्तर्गत क्योकप्यु जिलेका एक छोटा शहर। यह चेदुबा द्वीपके उत्तर-पश्चिम अन नदी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १५४० है। यहां एक छोटी अदालत, बाजार, विद्यालय और पुलिसके घर हैं।

चेन (अं० ञी०) कई एक छोटी छोटी कड़ियोंकी शृंखला, सिकरी, जंजीर।

चेनगा (देश०) उत्तर तथा पश्चिम भारतकी नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। जिस तालाब या नदीमें घास अधिक रहती है उसीमें यह मछली खास कर रहती है। इसकी लम्बाई लगभग एक बालिश्तकी है। इसे प्रायः नीच जातिके तथा दीन मनुष्य खाते हैं। इसे चेंगा या चनधा भी कहते हैं।

चेनसुकरीर—कोयवतूरके पासके पार्वत्य प्रदेशकी एक आजाबर जाति। ये लोग घर नहीं बनाते और न खेती ही करते हैं, जगह जगह घूमा करते हैं। ये जाल और तीरसे चिड़ियोंका शिकार करते हैं। तथा उन्हें बेच कर चावल आदि खरीदते हैं। ये दीमकोंको भी खा जाते हैं। शिक्षित भैंस या गायकी ओटमें रह कर भी ये पक्षियोंका शिकार करते हैं। इनकी भाषा कनाड़ी मिश्रित तामिल है। जो लोग नगरके पास रहते हैं, वे तेलगू भाषा भी

जानते हैं। बहुत कम ऐसे हैं जो नगरके पास रहते हों, नहीं तो प्रायः ये लोग जङ्गल, गुहा, वृक्षकोटर या पर्ण कुटीर इत्यादिमें रहते हैं।

चेनसुयार—दाक्षिणात्यकी पूर्वघाटनिवासी एक असभ्य जाति आसपासके अधिवासीगण इन्हें चेञ्चकुलाम, चञ्चवड़ और चेनसुयार कहते हैं। उइलसन साहबने जिस चेञ्चवड़ जातिका इतिहास लिखा है, वह शायद यही चेनसुयार या चञ्चवड़ जाति ही होगी। ये लोग कृष्णा और पन्ना नदीके मध्यवर्ती पूर्वघाट पर्वतकी पश्चिम उपत्यकाओं और नेल्लूर जिलेसे पश्चिममें पालिकोण्डा पर्वत पर रहते हैं नन्दिकोण्डा गिरिवर्त्मके पास बहुसंख्यक चेनसुयार रहते हैं, वहां ये प्रहरी और पथप्रदर्शकका काम करते हैं। ये जङ्गलोंमें झोंपड़ी बना कर वहीं रहते और शिकार कर अपनी गुजर करते हैं। मांस, वन्यमूल, बाजरा इत्यादि इनके प्रधान खाद्य पदार्थ हैं। ये जङ्गलोंमेंसे मोम, मधु आदि संग्रह करते हैं और बाँसुरी बाँस इत्यादि बेचनेके लिए नेल्लूर आया करते हैं।

पुरुष छोटे छोटे वस्त्र पहनते हैं। स्त्रियोंकी पोशाक वहांकी डोमिनों जैसी है। इनमें ऐसे लोग भी बहुत पाये जाते हैं; जो पत्ते और पेड़ोंकी छाल पहनते हैं तथा कभी भी शहरमें नहीं जाते और न खेती-बारी ही करते हैं। ये कभी कभी गाय, भैंस और बकरियोंको भी चराया करते हैं। इनका वर्ण धूसर या काला, आकृति खर्व, गालकी हड्डी ऊँची और केश कुञ्चित होते हैं। स्त्री पुरुष सब ही बाल रखाते और चोटी बाँधते हैं। शिकार करते समय ये वर्छा, बन्दूक, कुठार, तीर-धनु इत्यादिका व्यवहार करते हैं।

ये लोग मुर्देको गाड़ते हैं। कोई कोई जलाते भी हैं। इनमेंसे कोई कोई थानेमें भी काम करते हैं। इनकी भाषा तेलगू होने पर भी बड़ी कर्कश है।

चेना (हिं० पु०) चणक, एक तरहका धान। कहीं कहीं इसे चीना धान भी कहते हैं। यह कंगनी या साँवाँकी तरह होता है। यह चैत, बैशाखमें बोया और आषाढ़में काटा जाता है। इसके दाने छोटे, चोकने और गोल होते हैं। अधिक जल देनेसे इसकी उपज यथेष्ट होती है, नहीं तो खर्च तक भी हाथ नहीं आता है। कहा जाता है कि यह अनाज पहले यहां नहीं मिलता था। यह मिस्र या अरबसे इस देशमें लाया गया है। जिस तरह चावल दूध या जलमें पका कर खाया जाता है, उसी तरह इसे भी मनुष्य काममें लाते हैं। शिमलेके पासके मनुष्य इसकी रोटियां भी बना कर खाते हैं। पंजाबके मनुष्य सिर्फ पशुके चारेके लिये उपजाते हैं। यह शीतल, कसैला, शक्तिवर्धक और भारी माना गया है। चणक देखो।

चेनाब (चनाब)—१ पञ्जाबके रेचना दोआबका एक उपनिवेश। यह अक्षा० ३०° ४६´ एवं ३१° ४६´ उ० और देशा० ७२° १८´ तथा ७३° ३८´ पू०में अवस्थित है लेलापुर जिला, झङ्ग जिलेकी झङ्ग तहसील और चिनियोतका कुछ अंश, गुजरानवालाके खानगाह दोगरान तहसीलका अर्द्धभाग तथा लाहोरके शरकपुर तहसीलके कुछ राज्य इस उपनिवेशके अन्तर्गत हैं। इसका भूपरिमाण ३७०६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ७८२६९० है। इसमें लेलापुर, मांगल-चिनियोत रोड, गोजर और तोवतेकसिंह नामके शहर तथा १४१८ ग्राम लगते हैं। चनाब नहरसे कृषिकार्य सम्पन्न होता है। चनाब नहरके प्रस्तुत हो जानेसे अनुर्वरा जमीनमें भी अब अच्छी फसल लगती है। यहांके अधिवासियोंमेंसे बलोच, मियाल, कहर और खरेल जातिकी संख्या ही अधिक है। एक समय यह अधिनिवेश बहुत अवनति दशाको प्राप्त हो गया था, किन्तु जबसे उत्तर-पश्चिम रेलवेकी वजीराबाद-खानेवाल लाइन खुली है, तबसे यह देश समृद्धशाली होता जा रहा है। सड़क भी ११८२ मील तक बनाई जा चुकी है, किन्तु उसमेंसे अब तक केवल ५० मील तक ही पक्की है।

२ पञ्जाबकी पांच नदियोंमेंसे एक नदी। यह लद्दाखके पर्वतोंमेंसे निकल कर सिन्धुमें जा गिरी है। इसके दो स्रोत हो गये हैं, एक चन्द्र और दूसरा भागा। चन्द्र नदी ५५ मील तक दक्षिणसे पश्चिममें प्रवाहित हो कर ताण्डीके निकट भागा नदीमें मिल गई है। ये दोनों नदियां मिल कर चन्द्रभागा या चेनाब नामसे मशहूर हैं। किश्तवार, भद्रवार और जम्बू हो कर जाते समय इस नदीकी कई एक शाखायें हो गई हैं, यथा उनियर,

शदि, भुटन और मारुवर्दवाम नदीके ऊपर बहुतसे पुल हैं और कहीं कहीं भूले भी देखनेमें आते हैं। यह रावीके साथ सिंधुमें और शतद्रुके साथ मदवालमें मिल गई है। उस जगहसे संयुक्त नदियोंका नाम पञ्चनद हो गया है।

३ पञ्जाबकी एक नहर। चेनाब नदीके किनारेसे ले कर रावी तककी जमीन इसी नहरसे सींची जाती हैं। नहर खोदे जानेके पहले वह सब जमीन अनुर्वरा थी और वहां एक मनुष्य भी वास नहीं करता था, किंतु १८८७ ई०में जबसे नहर खोदी गई, तो उसमें हर एक तरहकी फसल लगती और बहुत हरी भरी दीख पड़ती है, तथा धीरे धीरे बहुतसे मनुष्य भी बस गये हैं। इस नहरसे भी गुगेर, बरेल कोतनिक्क और भंग नामकी शाखायें निकाली गई हैं। नहरकी लम्बाई ४२६ मीलसे कमकी नहीं होगी। इसके बनानेमें लगभग २८० लाख रुपये खर्च हुए थे। आजकल प्रति वर्ष इससे ६५ लाख रुपयेकी आमदनी होती है। नहरके हो जानेसे यहांके आस पासके देशोंकी उन्नति हो गई है, क्योंकि अनावृष्टि होने पर उन्हें अन्नका कष्ट भुगतना नहीं पड़ता।

चेन्दवाड़—बङ्गदेशके अन्तर्गत हजारीबाग जिलेका एक पहाड़। हजारीबाग स्टेशनके निकट जो चार पहाड़ हैं, उनमेंसे चेन्दवाड़ प्रधान है। यह मालभूमिसे ८०० फुट तथा समुद्रपृष्ठसे २८१६ फुट ऊँचा है।

चेन्नगिरि (चन्नगिरि)-१ महिसुर राज्यके अन्तर्गत सिमोगा जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १३° ४८′ एवं १४° २०′ और देशा० ७५° ४४′ तथा ७६° ४′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका भूपरिमाण ४६५ वर्गमील है। लोकसंख्या ८१४५३ है। इसके दक्षिण तथा पश्चिमकी ओर गिरिमाला विस्तृत है। इन पर्वतोंसे निकली हुई जलधारा एकत्र हो कर एक बृहत् जलाशयमें परिणत हो गयी है। इसका नाम शूलिकेरि रखा गया है, इसकी परिधि प्रायः ४० मीलकी होगी। यह जलाशय उत्तर ओर जा कर हरिद्रा नामक तुङ्गभद्रा नदीके साथ मिल गया है। इस तालुकका दूसरा दूसरा भाग उर्वरा है। इसका उत्तरीय भाग नाना प्रकारके उद्यानोंसे शोभित है और इसमें ऊखकी खेती अधिक होती है। इस तालुकमें एक फौजदारी अदालत और छह थाने हैं। तालुककी आमदनी प्रायः १२३८० पौण्ड है। इसमें १ शहर और २४४ गांव लगते हैं।

२ महिसुर राज्यके अन्तर्गत शिमोगा जिलेका एक ग्राम और चन्नगिरि तालुकका सदर। यह अक्षा० १४° १′ उ० और ७५° ५८′ पू० पर शिमोगासे उत्तरपूर्व सड़कके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४००० है।

चेप (हिं० पु०) १ कोई गाढ़ा लसदार रस। २ चिड़ियोंको फंसानेके लिये उनके पैरोंमें लगानेका लासा। ३ उत्साह, चाव।

चेपदार (हिं० वि०) चिपचिपा, लसदार।

चेपाङ्ग—मध्य नेपालके अन्तर्गत एक जङ्गली जाति। दूसरा नाम है चिविङ्ग। नेपाल राजधानीके भूतपूर्व ब्रिटिश रेसिडेण्ट बी० एच० हजसन् साहबने लिखा है कि, मध्य नेपालके निविड़ वनमें दो जातियां रहती हैं। इनकी संख्या थोड़ी ही है। ये असभ्य अवस्थामें रहते हैं। एक जातिका नाम चेपाङ्ग है और दूसरीका कसन्द। ये सभ्य जातियोंके साथ अपना कोई भी संसर्ग नहीं रखते और न खेती ही करते हैं। किसी राजाको न तो ये कर देते हैं और न किसीकी अधीनता ही स्वीकार करते हैं। पशु-मांस और जङ्गली फल, ये ही इनके खाद्य हैं। ये कहा करते हैं कि,—'राजा आबादी भूमिके अधिपति हैं और हम लोग पतित भूमिके स्वामी हैं।' इनके पास तीर-धनुष ही एक अस्त्र हैं। जीवहिंसा ही इनकी उपजीविका है। पेड़ोंकी डालियोंसे ये झोंपड़ी बनाते हैं और अपनी इच्छानुसार उसे उठा ले जाते हैं। यद्यपि ये सभ्य जातियोंके साथ नहीं रहते तथापि इनको किसीके विरुद्ध आचरण करते नहीं पाया जाता ये किसीका अपकार नहीं करते, किन्तु खुद सहायहीन हैं। इनकी अवस्था देख कर सभ्य जातियोंको बड़ा कष्ट होता है। चेपाङ्गजातिके लोग अब तो सभ्य जातियोंके साथ कुछ कुछ संसर्ग रखने लगे हैं और उनकी कोई कोई चीज काममें लाने लगे हैं। इनका वर्ण स्याह, पेट बड़ा और ये बहुत दुबले होते हैं। इनकी भाषा भूटानके लहोपाओंकी भाषासे मिलती जुलती है।

आर्द्र भूमि और नदीके किनारे इनका वास है।

चेबुला (देश०) वृक्षविशेष, एक तरहका पेड़, जिसकी छाल चमड़ा सिझाने और रंगोंमें काम आती है। यह ८० या १०० फुट तक ऊंचा होता है। समस्त भारतवर्षमें यह वृक्ष देखा जाता है।

चेम्बर (अं० पु०) सभागृह, वह बड़ा कमरा जिसमें किसी विषयकी मन्त्रणा हो।

चेय (सं० त्रि०) चि-यत्। १ चयनीय, जो चयन करने योग्य हो, जो इकट्ठा करने लायक है। (पु०) २ यथाविधानकी संस्कृत अग्नि, वह अग्नि जिसका विधानपूर्वक संस्कार हुआ हो।

चेयर (हिं० स्त्री०) चेअर देखा।

चेयरमेन (इं० पु०) चेअरमेन देखो।

चेयरु—१ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कड़ापा जिलेकी एक नदी। यह पन्ना नदीकी एक उपनदी है और पहाड़ी रास्ता हो कर प्रवाहित है। नन्दालुके निकट रेलपथ इसके ऊपर हो कर गया है।

२ मन्द्राज प्रदेशके उत्तर आर्काट जिलेकी एक नदी। इसका दूसरा नाम बाहुनदी है। यह जावड़ी पर्वतसे निकल कर बहुतसी प्रणालियों और शस्यक्षेत्रोंमें जल देती हुई तिवातुर नगरके निकट हो कर ८० मील जानेके बाद चेङ्गलपट जिलेकी पालार नदीसे जा मिली है।

चेयूर—मन्द्राजके चिङ्लेपुत जिलेके अन्तर्गत मदुरान्तकम् तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १२° २१´ उ० और देशा० ८०° पू० पर मदुरान्तकम् शहरसे १३ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। चेयूर जमीन्दारीका यह एक मुख्य स्थान है। लोकसंख्या लगभग ५२१० है। शहरमें कैलाशनाथ, सुब्रह्मण्य और वाल्मीकनाथके तीन प्राचीन मन्दिर हैं जिनमें चोल राजवंशके बहुतसे शिलालेख भी पाये जाते हैं। प्रति सप्ताह वृहस्पतिवारको यहां एक हाट लगती है।

चेर—दाक्षिणात्यका एक प्राचीन जनपद। इसका कुछ अंश केरल और कोङ्गुराज्यसे मशहूर है। चेरराज्य कहां तक विस्तृत था उसका पूरा पता आज तक भी नहीं लगा है। किसी किसीने अनुमान किया है कि वर्तमान कानाड़ा, मलवार, कोचीन, त्रिवाङ्कुर, सलेम इत्यादि देश प्राचीन चेरराज्यके अन्तर्गत थे।

पूर्व समयमें चेर, चोल और पाण्ड्य ये ही तीनों वंश बढ़े चढ़े थे। समय समय इन्हीं तीनोंके बीच जो बलवान् हो जाते वे ही दूसरोंको वशमें लाते थे। चेर जनपदमें चेरवंशने बहुत दिन तक राज्य किया था, किन्तु किस समयमें इस वंशका आविर्भाव हुआ इसका पता नहीं चलता है। टलेमिने सेरेई (Carei) और सेरबोथ्रि (Cerebothri) नाम उल्लेख किया है जो बहुतसे पुराविदके मतानुसार चेर और चेरपति शब्दका अपभ्रंश है। इससे मालूम पड़ता है कि १ली शताब्दीके पहले चेरवंशका अस्तित्व था। विलसन साहबके मतसे कोङ्गुका दूसरा नाम चेर है।* कोङ्गुदेशराजक्कल नामक प्राचीन ग्रन्थोंमें इस चेर राजवंशका परिचय है, उसके अनुसार डाक्टर वार्गेश और डौसन साहबने चेर राजकी वंशावली इस तरह प्रकाशित की है—

१म वीरराय चक्रवर्तीने स्कन्दपुरमें रट्टके घरमें जन्म ग्रहण किया। किसीके मतसे ये सूर्यवंशीय और किसीके मतसे चन्द्रवंशीय माने जाते हैं। उनके पुत्र गोविन्दराय, गोविन्दरायके पुत्र कृष्णराय, कृष्णरायके पुत्र दिग्विजयी कालवल्लभराय और कालवल्लभके पुत्र गोविन्दराय थे। नागनन्दी नामक एक जैन कालवल्लभ और गोविन्दके मंत्री थे। गोविन्दके बाद चतुर्भुज कनरदेव चक्रवर्त्ती राजा हुए। उनके पुत्र तिरुविक्रमदेव स्कन्दपुरमें अभिषिक्त हुए, ये कर्नाट और कोंगुदेशमें राज्य करते थे। १०० शकके खुदे हुए शिलालेखमें लिखा है कि इन्होंने पाण्ड्य, चोल, मलय प्रभृति देशोंको जय किया था, तथा ये शङ्कराचार्यके उपदेशसे शैवधर्ममें दीक्षित हुये थे। इनके खुदे हुए शिलालेखमें शङ्कराचार्यका नाम देख कर बहुतोंने इसे जाल स्थिर किया है। बाद गङ्गवंशके राजाओंके नाम पाये जाते हैं। किस समय गङ्ग या कोङ्गुवंशने चेरराज्य जय किया, यह अब तक भी स्थिर नहीं हुआ है। दाक्षिणात्यके भिन्न भिन्न स्थानोंसे कोङ्गुवंशीय राजाओंके जो शिलालेख और ताम्रशासन आविष्कृत हुए हैं, प्रत्नतत्त्ववित् फ्लिट साहबने उनसे अधिकांशको ही आधुनिक और जाल स्थिर

* Wilson's Mackenzie Collections, p. 35.

किया है। सो अभी कोङ्गु वंशका प्रकृत राजत्वकाल स्थिर नहीं हुआ है। जब होयसालबल्लाल-वंशने १०८० ई०में चोलराजके हाथसे चेरका राज्य ले लिया था तब मालूम पड़ता है कि कोङ्गु राजका राज्य चोलराजवंशसे अधिकृत हुआ था।

द्वलवनपुर या तालकाड़ि नामक स्थानमें बल्लाल वंशकी राजधानी स्थापित हुई थी। १३१० ई०में होयसाल बल्लालवंशका राज्य नष्ट हो जाने पर चेर राज्य मुसलमान राजाके अधिकारमें आ गया। बहुत थोड़े समयके बादही विजयनगरके राजाओंके उद्योगसे बहुतसे हिन्दू राजाओंने मिल कर चेरराज्यका उद्धार किया। इसके बाद चेरराज्य विशेष समृद्धिशाली और बहुजनाकीर्ण हो उठा। १५६५ ई०में मुसलमानोंके अधिकारमें विजयनगर राज्य आ जाने पर भी मदुराके नायकोंने प्रबल प्रतापसे चेरराज्यकी रक्षा की थी। १६४० ई०में बीजापुरके आदिलशाही राजाने चेरराज्य पर आक्रमण किया। १६५२ ई०में महिसुरके राजाने बहुत यत्नसे इस स्थानको अपने अधिकारमें किया।

चोल शब्दमें विशेष विवरण देखो।

भारतवर्षमें बहुत समयसे चेर या केरल रमणियोंके

चेर या केरल-रमणी।

बालका आदर चला आ रहा है। अभी भी बहुतसे कवि केरलके बालोंकी उपमा दिया करते हैं।

चरना (देश०) नकाशोके काममें आनेकी एक प्रकारकी छेनी। इसके द्वारा नकाशी करनेवाले सीधी लकीर बनाते हैं।

चेरा—आसामके अन्तर्गत खासी पर्वतस्थ एक क्षुद्र सामन्त-राज्य। सामन्तकी उपाधि सायेम है। नारङ्गी, सुपारी, मधु, बांस, चूना और पत्थर कोयला, ये सब यहांके प्रधान उत्पन्नद्रव्य हैं। यहांके बांसोंसे अच्छी अच्छी टोकरी और चटाई बनती हैं। खासी भाषामें इस जमींदारी तथा इसके प्रधान नगरका नाम सोहरा है। एक प्रकारके खाद्य उद्भिदूसे यह नाम पड़ा है। इसका प्रधान नगर चेरापुञ्जि है। चेरापुञ्जि देखो।

चेरात—पञ्जाब प्रदेशमें पेशावर जिलेके नवसरा तहसीलका एक पावत्य सेनागार और स्वास्थ्यनिवास। यह अक्षा० ३३° ५० उ० और देशा० ७१° ५५' पू०में अवस्थित है। यह पेशावर और कोहात जिलेके मध्यवर्त्ती खट्टक पर्वतके पश्चिममें समुद्रपृष्ठसे प्रायः ४५०० फुट ऊंचे पर तथा पेशावरसे ३० मील दक्षिण-पूर्व और नवसरासे २५ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। १८५३ ई०में यहां एक स्वास्थ्यनिवास बनानेका प्रस्ताव हुआ। १८६१ ई०में जब यहां सेना रहने लगी तो यहां उनके स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान रखनेका विचार किया गया। इस स्थानसे प्रायः ३ मीलकी दूरी पर एक पार्वतीय निर्झरणी होनेसे यहां जलका अभाव नहीं रहता है। यहांकी वायु बहुतही मृदु है। प्रखर ग्रीष्म कालमें भी वायुमें अधिक गरमी नहीं रहती है। जून मासके अन्तमें उत्ताप वृद्धि होने पर भी जरासी वृष्टि होते ही वायु फिर शीतल हो जाती है। पर्वत प्रस्तरमय होने पर भी भांति भांतिके वृक्षोंसे सुशोभित है। वसन्तऋतुके आने पर उनमें भिन्न भिन्न प्रकारके फूल लगते हैं। यह स्थान शाहकोट, शेलाखाना और भक्तिपुर इन तीन ग्रामोंकी उड़िया-खेल खट्टकोंके अधिकारमें है। शीतकालमें सैन्यगणके स्थान बदलने पर ग्रामवासी गवर्मेण्टके द्रव्यादिकी रक्षाके निमित्त उनसे प्रति मास २०० रुपये पाते हैं। इस स्थानसे दृष्टि डालने पर एक ओर समस्त पेशावर उपत्यका और दूसरी ओर रावलपिण्डी तथा खवरा उपत्यकाका अधिकांश दृष्टि-

गोचर होता है। यहां एक रोमन कथोलिकको गिर्जाका घर है।

चेरान—सारन जिलेके अन्तर्गत गङ्गाके तीरवर्त्ती एक प्राचीन स्थान। प्राचीन कालमें यहां एक समृद्धिशाली गढ़ था। आज कल यहां एक पुरातन घरका भग्नावशेष रह गया है। यह छपरासे सात मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। एक बड़े स्तूपके ऊपर एक मसजिद तथा उसके प्रवेशद्वारके ऊपर एक खुदा हुआ शिलालेख है। कई एक मन्दिरोंके भग्नावशेषसे यह मसजिद बनाई गई है। दीवारके भीतर आठ स्तम्भ हैं। उन स्तम्भोंमें "अला उल् दुनियावल् दिन आवुया अलजाकार जे हुसेनसा उल् सुलतान इवन् सैयद असरफ" नामक एक वङ्गीय राजाका नाम खुदा हुआ है। अनुमान किया जाता है कि इन्होंने १४९८ से १५२० ई० तक राज्य किया था। मालूम पड़ता है कि उक्त मुसलमान राजाने ही प्राचीन हिन्दुमन्दिरको ध्वंस कर उसीके अवयवोंसे मसजिद निर्माण किया था। ऐसा कथित है कि चेरु जातिसे चेरान नाम पड़ा है।

चेरु देखो।

चेरापुञ्जि—आसामके खासी पर्वतस्थित चेरा नामक एक छोटे राज्यके अन्तर्गत एक ग्राम। खासी जाति इसे श्रोहरापुञ्जि कहती है। यह अक्षा० २५° १५' उ० तथा देशा० ९१° ४४' पू० पर शिलंसे ३० मील दक्षिणमें अवस्थित है। यह समुद्रपृष्ठसे ४४५५ फुट ऊंचा है। खासी पर्वत पर इसी जगह पहले अंग्रेज राजपुरुषोंका निवासस्थान था। किन्तु १८६१ ई०में जिलेका प्रधान कार्यालय शिलङ्ग उठ कर चले जानेके कारण यह स्थान अब छोड़ दिया गया है। इस ग्रामके दक्षिणकी ओर एक स्थान है जहां चेरा राज्यके अधिपति वास करते हैं। चेरापुञ्जिका दृश्य अभी शोचनीय है। बड़ी बड़ी अट्टालिकाओंका भग्नावशेष अब जंगलसे घिर गया है। यहां अब डाकबंगला, डाकघर तथा थाना मात्र रह गया है।

ईसाई-धर्मप्रचारकगण खासि जातिके मध्य ईसाई धर्म प्रचारके लिये यहां सदा आया करते हैं। श्रोहरारिन् चेरा राज्यका प्राचीन राजधानी था। यह चेरापुञ्जिसे ७ मील उत्तरमें अवस्थित है। यहांका एक पान्थनिवास (सराय) आसाम-श्रीहट्ट जानेकी राह पर अवस्थित है। यहां एक साप्ताहिक बाजार लगता है।

चेरापुञ्जिमें कोयला भी होता है। देशीय राजासे वृटिश गवर्नमेंटने कोयलाकी जमीन पत्तन ली है। पहले इस जमीनसे कोयला निकाला जाता था। किन्तु १८५९ ई०से इसका काम बंद है।

यहां आलु बहुत उपजाया जाता है। चेरापुञ्जिमें विशेषता यह है कि यहां पृथिवीके दूसरे दूसरे स्थानोंसे अधिक वर्षा होती है।

चेरियल—हैदराबादके नलगोण्ड जिलेका एक तालुक। लोकसंख्या प्राय: १०४१४२ है। इसमें १२८ ग्राम लगते हैं। तालुककी आय एक लाख रुपयेसे अधिक है। धान यहांकी प्रधान उपज है। तालुकका प्रधान सदर जनगाँव है, जो निजामत ष्टेट रेलवेका एक ष्टेशन भी हैं।

चेरु (सं० त्रि०) चि बाहुलकात् रु। चयनशील, संग्रह करनेवाला, जिसे संग्रह करनेकी आदत हो।

चेरु—भारतवर्षकी एक प्राचीन जाति। कुछ सात सौ वर्ष पहले इस जातिके लोग प्रबल परिश्रमी और उद्यमशील स्वाधीन समझे जाते थे। प्रवाद है कि—ये लोग नागा जातिके अन्तर्गत हैं। इस वंशके लोगों और उनकी प्राचीन कीर्त्तियोंके चिह्न भारतवर्षमें अब भी बहुत जगह मिलते हैं। कहा जाता है सासेराम, रामगढ़ और बोधगयाकी बहुतसी इमारतें इन्हीं लोगोंने बनवाई थीं, जिनके खण्डहर अब भी देखनेमें आते हैं। शाहाबाद जिलेमें जो प्राचीन कीर्त्तिस्तम्भ मिलते हैं, उनमेंसे अधिकांश चेरुजातिके द्वारा ही स्थापित हुए हैं। शेरिङ् साहबका कहना है कि, आसामके पहाड़की नागा जाति, नागपुरकी आदिम जाति, नागवंशीय राजपूत और नागा फकीरोंके साथ चेरुजातिका संसर्ग है। यह कहां तक सत्य है, इसका निर्णय नहीं हो सकता।

इनमें एक रिवाज है कि, प्रत्येक ५।६ परिवारोंमें एक राजा चुन लिया जाता है और राजपूतोंकी रीतिके अनुसार उक्त राजाके ललाट पर टीका दिया जाता है। पहले ये गङ्गा नदीके निकटवर्त्ती बहुतसे देशों पर अपना कब्जा रखते थे और सम्भवतः भारतवर्षमें विशेष क्षमता-

शाली थे। बहुतोंका कहना है कि, चेरुराजगण शुनक वंशीय थे और गौतमके समय वे राजत्व करते थे। चेरुओंके आधिपत्यके समय यह जाति विशेष बलवान् थी। उत्तरमें बिहारसे ले कर गोरखपुर तक तथा दक्षिणमें मिर्जापुर जिलेके अन्तर्गत शोन नदी तक तमाम देश इन लोगोंके अधिकारमें थे। सरयु नदीके किनारे कोपाचितके अन्तर्गत पक्काकोट नामक स्थानमें ६०से ८० बीघा जमीन तक तमाममें प्राचीन अट्टालिकाओंके खण्डहर, ईंट तथा अन्यान्य चीजें पड़ी हुई देखी जाती हैं। बलिया परगनाके अन्तर्गत बैना नामक स्थानमें मिट्टियोंके बने हुए बड़े बड़े बाँधोंका ध्वंसावशेष अब भी दृष्टिगोचर होता है। यहांके लोग कहते हैं कि, गङ्गा नदीके किनारे वीरपुरके अन्तर्गत कोट नामक स्थानमें तिकमदेव नामक एक चेरुवंशीय राजा महम्मदाबाद नामक एक परगनाका शासन करते थे। महोप चेरु नामक दूसरे एक राजाका सुराहा झदसे उत्तरको तरफ देवरो ग्राममें एक दुर्ग था। जब आर्यगण यहाँ आये थे, तब गङ्गा नदीके मध्यवर्ती समस्त स्थान उन्हींके अधिकारमें थे। इस जगह एक प्रवाद सुननेमें आता है कि, यहांका एक जलाशय राजा सुरथके समय चेरु जाति द्वारा खोदा गया था। गाजीपुर जिलेमें इस जातिका नामोनिशान तक नहीं मिलता, किन्तु शाहाबाद जिलेके निकटवर्त्ती बहिया परगनेमें इनका अस्तित्व है। कुछ समय पहले यह जिला तथा बिहारके अन्यान्य जिले इस जातिके अधिकारमें थे। हल्दी नामक स्थानके हयवंशीय राजपूतोंके कई एक पारिवारिक इतिहासमें लिखा है कि बहियामें रहते समय उन लोगोंने चेरुओंके साथ शताब्दियों तक युद्ध किया था और अन्तमें वे जयी हुए थे। शेरशाहके समयमें चेरु जाति उनकी परम शत्रु समझी जाती थी।

मिर्जापुर जिलेके दक्षिणमें जो बड़ा भारी जङ्गल है वह किसी समय चेरु और खरवार आदि कई एक जातियोंके कब्जेमें था। बादमें बहुत दिनों तक युद्ध करनेके उपरान्त चन्देल राजपूतोंने उस पर अधिकार किया था। कनिङ्हाम साहब लिखते हैं - शाहाबादके देओमार्कण्डमें प्राचीन मन्दिरोंके जो खण्डहर पड़े हैं, वे सम्भवतः ६-७ सौ वर्ष पहलेके और चेरुराजाओंके बनाए हुए हैं।

कई वर्षों तक नीरा और कोरा नामके दो चेरुजातीय डकैत शोन नदीके किनारेके मङ्गेसर पहाड़ पर रह कर भीषण डकैती और नरहत्या किया करते थे। डकैती करके वे पर्वत पर भाग जाते थे और पहाड़ी लोग उन्हें आश्रय देते थे। अन्तमें स्थानीय मजिष्ट्रेटके प्रयत्नसे ग्रामवासियों द्वारा वे पकड़े गये थे। वर्त्तमान समयमें चेरु जातिके लोग बिहार और छोटे नागपुरमें खेतीका काम करते हैं। शाहाबाद, काशी और मिर्जापुरमें इनका अस्तित्व है। पालामऊके राजा अपनेको राजपूतवंशीय बताते हैं, पर लोग उन्हें चेरु जातिके समझते हैं। पालामऊ राज्यमें कुछ कुछ जमीन चेरुओंके अधिकारमें भी है। वे उसे आबाद कर अपना गुजारा किया करते हैं। ये राजपूतवंशके होनेके कारण अपना गौरव समझते हैं। सबहीने राजपूत गोत्रोंका अवलम्बन किया है। ये यज्ञोपवीत भी धारण करते हैं, परन्तु तो भी इनका असली राजपूतोंके साथ वैवाहिक सम्बन्ध नहीं होता।

पालामऊके चेरुओंका कहना है कि, वे चैन मुनिसे उत्पन्न हैं, जो कुमायूंमें रहते थे। उक्त चैनमुनिने एक राजकन्याके साथ विवाह किया था। उस राजकन्याके गर्भसे जो पुत्र जन्मे थे, वे ही चेरु जातिके आदिपुरुष हैं। दूसरी किम्बदन्ती यह भी है कि, चेरु जातिका आविर्भाव उक्त मुनिके आसनसे हुआ था।

अन्यान्य स्थानोंका अधिकार बहुत पहिले तिरोहित हो जाने पर भी चेरुओंने पालामऊमें बहुत दिनों तक प्रभुत्व किया था। वृटिश गवर्मेंटके शासनमें आनेसे पहले तक ये लोग स्वाधीन थे और तो क्या चेरुओंने वृटिश गवर्मेंट तकका सामना कर अपनी स्वाधीनताकी रक्षाके लिए भरपूर प्रयत्न किये थे। परन्तु उनके प्रयत्न निष्फल हुए। १८१३ ई०में राजस्व देनेमें असमर्थ होनेके कारण वृटिश गवर्मेंटने राजाकी तमाम जायदाद खरीद ली। इस पर भी उनके कुटुम्बियोंकी सम्पत्ति बच रही और उसे ही ये लोग भोग रहे हैं।

यहांके चेरुओंका कहना है कि, उनके पूर्वपुरुषोंने

रोहतासगढ़से आ कर उक्त स्थान अधिकार किया था। उस समय यहां कई-एक जातियोंका वास था। उनमेंसे खरवार जाति ही प्रसिद्ध है। चेरु जातिके लोग इनके साथ मेल रखते हैं और उन्हें सरगूजा नामक स्थानके निकटवर्ती पार्वत्य देशमें रहने देते हैं।

जिस समय पालामऊमें चेरुराज्य स्थापित हुआ था, उस समय चेरुओंकी गृहसंख्या १२००० और खरवार जातिके १८००० घर थे। ये दोनों जातियां ही अपनेको राजपूत बताती हैं। इसोलिए इनमें परस्पर विवाह सम्बन्ध भी हुआ करते हैं।

चेरुजाति किसी समय प्रबल थी, इसीलिए वह विशुद्ध हिन्दुओंके साथ विवाह सम्बन्ध करनेमें समर्थ हुई है। इनके अवयवोंके परिवर्तनमें भी यही कारण है। परन्तु तो भी किसी किसी लक्षणसे इनको भिन्न जातीय माना जा सकता है। इनका वर्ण विभिन्न, किन्तु साधारणतः मटमैला है। इनके गालकी हड्डी ऊँची, आंख छोटी और तिरछी हैं। नाक दबी हुई और चौड़ी है। मुंह बड़ा और ओठ ऊँचे हैं।

चेरुजातिकी कन्याओंके विवाहकी उमर स्थानभेदसे भिन्न भिन्न होती है। कहीं कहीं बाल्यविवाह भी प्रचलित है। कहीं कहीं प्रौढ़ स्त्रियोंका भी विवाह होता है। इनकी विवाहप्रणाली साधारणतः हिन्दुओं जैसी है। परन्तु किसी किसी विषयमें पार्थक्य भी पाया जाता है।

'भामवार'के नामसे इनमें एक विवाह-प्रणालीका अनुष्ठान प्रचलित है। ये पेड़ोंकी डालियोंसे एक चंदोया बनाते हैं और उसीमें विवाह करते हैं। यहां एक मिट्टीका पात्र रहता है, जिसके चारों ओर घूमते हुए वर झुक कर कन्याके पैरका अंगूठा छूता है और प्रतिज्ञा करता है कि, वह जीवन भर कभी व्यभिचारी न होगा। सिन्दूर लगाये जानेके बाद वरका बड़ा भाई वरके पैर धो कर दोनों हाथोंसे भेंट देता है। इसके बाद वरके मौर (मुकुट) से तुर्रा वा कलंगी खोल कर वधूके मस्तक पर रक्खी जाती है। दूसरे एक अनुष्ठानका नाम आमली है। विवाहके लिए लड़कीके घर जानेसे पहले वरकी माता मुंहमें एक आमका पत्ता लगा कर जोरसे रोती है। इस समय उसका मामा उस पत्ते पर पानी डालता रहता है। और कन्याके घर वरके पहुंचने पर कन्याकी मा भी ऐसा ही करती है तथा कन्याका मामा पानी डालता है।

चेरुओंमें बहु-विवाह प्रचलित है। परन्तु विरले ही करते हैं। चेरु जातिके धनी और सम्भ्रान्तोंमें विधवाओंका विवाह नहीं होता। परन्तु निम्नश्रेणिकी विधवाओंका दूसरा विवाह हो जाता है। इस प्रकारके विवाहमें कुछ नियमोंकी रक्षा करनी पड़ती है। पारिवारिक सुभीतेके लिए इस जातिकी विधवायें स्वामीके छोटे भाई या और किसी भाईके साथ भी विवाह कर सकती हैं। परन्तु यदि और किसीके साथ विवाह कर ले तो पहलेके विवाहमें जो प्रतिज्ञा की थी, उसे पालन करती है। जो स्त्री व्यभिचार करती है, वह जातिसे निकाल दी जाती है तथा किसी तरह भी विवाह नहीं कर सकती।

इनकी धर्मप्रणालीने नाना रूप धारण कर लिये हैं। ये हिन्दुओंके देवताओंकी भी पूजते हैं, तथा किसी किसी असभ्यजातिके देवताके सामने भी बलि चढ़ाते हैं। हिन्दू देवताकी पूजाके समय ब्राह्मण पौरोहित्य करते हैं और जङ्गली जातिके देवताके सामने बलिका कार्य उसी जातिके बैगा करते हैं। खरिया और मुण्डा जातिके देवताओंके सामने ये बकरा, पक्षी, शराब और मिठाई चढ़ाते हैं। अगहनके महीनेमें देवताकी कृपासे फसल अच्छी हो, इस आशयसे पूजा करते हैं। कोल जातिकी तरह ये भी तीन वर्ष पीछे भैंस और अन्यान्य ग्राम्यपशुओंका बलि चढ़ाया करते हैं।

चेरु लोग अपने जातीय गौरवकी रक्षा करनेके लिए बद्धपरिकर होते हैं। ये अपने पुरखोंकी कीर्त्तियोंका स्मरण कर अपनेको धन्य मानते हैं। इनमें कुछ जमींदार भी हैं। बहुतसे लोग वाणिज्य और खेती-बारी किया करते हैं। जो बिल्कुल गरीब हैं, वे ही हल जोतते और मजदूरीका काम करते हैं।

चेरुम् पेरुमल—प्राचीन चेर राज्यके अन्तिम राजा। चन्द्रगिरि नदीसे लगा कर कन्याकुमारी अन्तरीप तक और पश्चिममें पहाड़से लगा कर समुद्र तक चेरराज्यकी सीमा

थी। ऐसा प्रवाद है कि, चेरुम पेरुमल अपने राज्य-को अधीनस्थ व्यक्तियोंको बाँट कर राजसिंहासन परित्याग पूर्वक मक्का चले गये थे और वहां उन्होंने मुसलमान धर्म-को अपनाया था।

अरब-सागरके किनारे माफहाई नामक स्थानमें उन-की कब्र है। उसमें खुदा हुआ है कि, वे हिजिरा सं० २१२ (ई० ८२७) में वहां गये थे और २१६ हिजिरामें (८३१ ई०में) उनकी मृत्यु हुई थी।

चेरुम पेरुमल जिन जिनको अपना राज्य बांट गये थे, उन लोगोंने बहुत दिन तक उन स्थानोंका शासन किया था। परन्तु दूसरोंके आक्रमण होते रहनेसे वे क्रमश: कमजोर हो गये। सिर्फ त्रिवाङ्कुरके राजा अभी तक अंग्रेजोंके अनुग्रहसे प्रतापशाली हैं।

चेपुंलचरि—मन्द्राज प्रदेशके मलवार जिलेमें पताम्बी ष्टेशनसे १० मील दूरवर्त्ती एक ग्राम। यह अक्षा० १०° ५३´ उ० और देशा० ७६° २२´ २०´´ पू०में अवस्थित है। १७८२ ई०से १८०० ई० तक यहां बम्बईके "सादारण सुपरिण्टेण्डेण्ट" साहबका आफिस था। १८६० ई०में यहां नेदुनगनाड़ तालुकका सदर हुआ। यहां डाकघर, विचारालय तथा बड़े बड़े राजकर्मचारियोंका टिकाव स्थान है। १७६६ ई०में यह महिसुरके अन्तर्गत आया। इसी स्थानमें सामरीराजके परिवार १७८० ई०को अत्यन्त दुर्दशामें प्राप्त हुए थे।

चेल (सं० क्ली०) चिल्यते आच्छाद्यते परिधीयते चिल कर्मणि घञ्। १ वस्त्र, कपड़ा।

"चेलकर्णामिषापाय विराव स्वादभोजनम्।" (मनु० ११।११६)

(त्रि०) २ अधम, निकृष्ट, नीच।

"मा ज्ञातिचेलं भुवि कस्यचिद्भूः।" (भट्टि)

चेलक (सं० पु०) वैदिक कालके एक मुनिका नाम।

"चेलक उद्धवाड शाण्डिल्यायनः।" (शतपथब्रा० १०।४।५।३)

चेलका—जैनमतानुसार कल्किराजाके पुत्र अजितञ्जयकी रानीका नाम। (त्रि० सा०)

चेलकत्वक् (सं० स्त्री०) गुवाकपुष्पत्वच, सुपारीके फूलों-की छिलका।

चेलगङ्गा (सं० स्त्री०) चेलमिव गङ्गा। गोकर्णके पासकी एक नदी। इसका उल्लेख महाभारतमें किया गया है।

"गोकर्णस्योपरिष्टात् आश्रितः स महासुरः।
पपात चेलगङ्गायाः पुलिने सह कन्यया॥" (हरिवंश १४९अ०)

चेलना रानी-भारतके सुप्राचीन महाराजाधिराज श्रेणिक (बिम्बसार)की प्रधान महिषी। जैन-महापुराणान्तर्गत उत्तरपुराण, श्रेणिकचरित्र, महावीरपुराण, आराधना-कथाकोष आदि जैन ग्रन्थोंमें चेलना वा चेलिनी रानी का चरित्र इस प्रकार लिखा है :—

सिन्धुदेशके अन्तर्गत वैशाली नगरके राजा चेटककी भद्रा नामक पट्टरानीके गर्भसे चेलनाका जन्म हुआ था। ये कुल सात बहनें थीं और इनके भाई दश थे। गन्धार देशके अन्तर्गत महीनगरके राजा सात्यकने जब राजा चेटकसे उनकी जेष्ठा नामकी कन्या, जो चेलनासे छोटी थी मांगी तो चेटकने उन्हें कन्या देना अस्वीकार किया। इस पर दोनोंमें युद्ध हुआ और सात्यक हार गये। चेटकने स्वहस्त सातों पुत्रियोंका चित्र खिचवाया। चेलनाके चित्रमें उनकी जङ्घा पर एक छोटासा बिन्दु देख कर राजा चेटक चित्रकार पर बड़े नाराज हुए। चित्रकारने उत्तर दिया, "महाराज! क्या करूं, कई बार उस चिह्नको उड़ाया पर बार बार वहां बूंद गिरती ही रही, इससे मैंने अनुमान किया कि वहां चिह्न होना ही चाहिये।" इस उत्तरसे राजा अत्यन्त खुश हुए, क्योंकि यथार्थमें चेलनाकी जङ्घा पर वैसा तिलका चिह्न था।

किसी समय राजा चेटक अपनी सेना सहित मगध-पुरी पहुंचे और राजगृह नगरके बाहर उद्यानमें जा कर डेरे डाल दिये। सुबह स्नान करके ये श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजाके लिए मन्दिरमें पहुंचे और भगवानकी पूजा करनेके बाद अपनी पुत्रियोंके चित्रकी अर्चना करने लगे। राजा श्रेणिक भी वहां उपस्थित थे, उन्होंने उनके समीपवर्ती लोगोंसे चित्रोंके विषयमें पूछा तो वे कहने लगे,—'राजाने अपनी सात पुत्रियोंका एक चित्रपट खिचवाया है, जिनमें चार विवाहिता हैं, और तीन अविवाहिता। इन तीन पुत्रियोंमेंसे दो पूर्ण युवती हैं और एक बालिका किन्तु राजा उन दोनोंका अभी विवाह नहीं करना चाहते। चित्र देख कर महाराज श्रेणिक चेलना और जेष्ठा पर आसक्त हो गये। राजा श्रेणिकने चेटकसे उक्त कन्याओंके साथ विवाहके लिए प्रस्ताव किया, पर चेटक ने उनकी उम्र ढल जानेसे उस प्रस्तावको अस्वीकार किया। मन्त्रियोंको मालूम होते ही वे राजकुमार अभय-

कुमारके पास गये और उनको सब हाल कह सुनाया।

अभयकुमार बड़े बुद्धिमान, पितृभक्त और वीर पुरुष, थे। उन्होंने मन्त्रियोंको चुप चाप रहनेके लिए कहा और अपने ऊपर उस कार्यका भार ले लिया। इसके बाद अभयकुमारने स्वयं ही राजा श्रेणिकका एक बहुत ही बढ़िया और विलासयुक्त चित्र बनाया। अनन्तर वे उसे वस्त्रसे ढक कर राजा चेटकके घर पहुंचे और राज कर्मचारियोंको आशातीत धन देकर वोटक नामके वैश्य-के भेषमें भीतर घुस गये। वह चित्र उन्होंने उक्त दोनों कन्याओंको दिखाया, तो दोनों ही राजा श्रेणिक पर मुग्ध हो गईं। पूर्ण यौवनने उन्हें यहां तक हैरान किया कि, दोनों अभयकुमारके साथ चलनेको तैयार हो गईं।

इधर कुमारने पहलेसे ही गुप्तमार्ग तैयार करा रक्खा था। अभयकुमार निर्भय चित्तसे उन्हें ले कर राजगृह-की तरफ चले। कुछ दूर जा कर बुद्धिमती चेलनाने अपनी छोटी बहन ज्येष्ठासे कहा—"मैं अपने आभूषण भूल आई हूं, तुम जा कर ले आओ।" इस तरह सरल-चित्त ज्येष्ठाको लौटा कर चेलना अकेली ही अभयकुमार-के साथ चल दी। जब ज्येष्ठा लौट आई और उस स्थान पर दोनोंको न देखा, तो उनके हृदयमें बड़ा आघात पहुंचा। ज्येष्ठाका सरल हृदय धर्ममार्गकी ओर झुका, उन्हें संसारसे घृणा हो गई और वे अपनी मामी यश-स्वती नामक आर्यिकाके समीप जा कर जिनदीक्षा ले तपस्विनी हो गईं। (उत्तरपुराण, सर्ग ७५, श्लो० १-११)

महाराज श्रेणिकने चेलनाके साथ विधिपूर्वक विवाह किया और प्रधान महिषीका पद प्रदान कर उन्हें सन्तुष्ट किया। पीछे जब चेलनाको यह मालूम हुआ कि श्रेणिक बौद्धधर्मावलम्बी हैं, तो उसे अत्यन्त दुःख हुआ और उन्होंने इस बातके लिए कमर कस ली कि किसी तरह भी पतिको जैनधर्मावलम्बी बनाना होगा। धीरे धीरे चेलना इसके लिए नाना प्रयत्न करने लगीं। अन्तमें यहां तक हो गया कि, राजा श्रेणिक इनके साथ सर्वदा धर्मके विषयमें शास्त्रार्थ करने लगे। शास्त्रार्थमें दोनों ही अपने अपने मतकी पुष्टि करते थे। एक दिन एक बातमें श्रेणिकके मुंहसे यह निकल गया कि, "जैन-मुनियोंको कुछ भी ज्ञान नहीं होता, किन्तु बौद्ध-भिक्षुक त्रिकालदर्शी होते हैं।" रानी भी छोड़नेवाली न थीं, उन्होंने कहा—"नहीं, निर्ग्रन्थ जैन-मुनि ही परम ज्ञानी होते हैं, बौद्ध-भिक्षुक तो अज्ञान संन्यास करते हैं, उन्हें हेय-उपादेयका कुछ भी ज्ञान नहीं होता।" इस पर श्रेणिकको बहुत ही क्रोध आया, उन्होंने परीक्षा करने-के लिए प्रस्ताव किया, तो चेलना राजी हो गईं।

राजा श्रेणिकने भोजनशालाके सामने एक चबूतरा बनवाया, जिसमें हड्डियां भरवा दीं। इसके बाद उन्होंने चेलनासे कह दिया कि, "तुम यहीं रसोई बनाओ और जैनमुनि आवें तो उन्हें आहार दो।" चेलना समझ गई कि इसमें जरूर कुछ न कुछ दालमें काला है। रानीने श्रेणिकके आदेशानुसार ही कार्य किया। जैनमुनिके आने पर चेलनाने "अत्र तिष्ठ, तिष्ठ, अन्नपानादिकं सर्वं शुद्धं वर्त्तते" कह कर उनका 'पड़गाहन' किया और तीन उंगली दिखा कर भोज्य-द्रव्य लेनेको आगे बढ़ीं। तीन उंगली दिखानेका मतलब 'तीन गुप्ति'से था जिसका तात्पर्य यह होता है कि, यदि आपको मन वचन कायके वश करनेसे अवधिज्ञान प्राप्त हुआ हो तो आहार लें। उक्त संकेतसे चेलाने उन्हें 'अवधिज्ञान'का स्मरण कराया था। (अवधिज्ञान देखो।) मुनिमहाराज समझ गये और आहार न कर वनको लौट गये। राजा श्रेणिकको बड़ा आश्चर्य हुआ और वे उनके पीछे पीछे चल दिये। पूछने पर मुनि महाराजने चबूतरेका तमाम हाल कह दिया। यहींसे श्रेणिकके हृदयमें जैनधर्मका कुछ कुछ प्रभाव पड़ने लगा।

अब बौद्ध भिक्षुककी परीक्षाकी बारी आई। बौद्ध-भिक्षुकको निमन्त्रण दिया गया। चेलनाके हृदयमें प्रति-शोध लेनेका भाव जग उठा। उन्होंने अपने पतिकी उपा-नत्के टुकड़े टुकड़े कर खीरमें मिला दिये। चेलनाने जान बूझ कर खीर खूब स्वादिष्ट बनाई थी। भिक्षुकके भोजन कर चुकने पर चेलनाने अपने पतिसे कहा—"स्वामिन्! देखिये आपके भिक्षुकजीने जूतेके टुकड़े खा लिए।" इस पर श्रेणिक अत्यन्त क्रुद्ध हुए और चेलना पर झूठ बोलनेका दोष लगाने लगे। इस पर चेलनाने उक्त भिक्षुकको एक दवा खिला दी जिससे कै हो गई राजा श्रेणिकने उस उलटीमें सचमुच ही जूतेके टुकड़े देखे, तो उनके हृदयमें प्रतिहिंसाका भाव जग आया।

वे उसी समय शिकारके बहाने वनमें गये और मुनि महाराजके गलेमें एक मरा हुआ भयंकर सर्प डाल आये। तीन दिन तक उन्होंने इस बातको छिपा रक्खा और चौथे दिन जैन-मुनियोंको हंसी उड़ाते हुए रात्रिमें चेलनासे यह बात कह दी। सुनते ही चेलनाने एक आह खींच कर बड़े दुःखसे कहा—"स्वामिन्! आपने बड़ा बुरा कार्य किया, अपनी आत्माको व्यर्थ ही नरकमें पटका। इससे बड़ा पाप संसारमें दूसरा नहीं है।" श्रेणिकने कहा—"क्या वे सर्पको अलग कर वहांसे अन्यत्र नहीं गये होंगे?" रानी बोली—"नहीं, जब तक उनका उपसर्ग दूर न होगा, तब तक वे वहांसे हटेंगे ही नहीं।" राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे कौतूहलवश उसी समय अनेक सेवकोंसहित रानी चेलनाके साथ वनमें गये और देखा कि महामुनि ज्योंके त्यों ध्यानस्थ हो बैठे हैं। कई दिन हो जानेसे सर्प पर चोटियां चढ़ गई थीं रानीने बड़े यत्नसे सर्पको अलग कर मुनिका उपसर्ग दूर किया और समयोचित उनकी पूजा की। महामुनिकी शान्तिमय मुद्राको देख कर श्रेणिकका हृदय भक्ति-रसमें गोते लगाने लगा।

सूर्योदय होने पर रानीने मुनिराजकी प्रदक्षिणा की और कहा,—"हे संसारसमुद्रसे पार उतारनेवाले भगवन्! उपसर्ग दूर हो गया, अब हम पर कृपा कीजिये।" मुनिने 'दोनोंकी धर्म वृद्धि हो' कह कर आशीर्वाद दिया। राजा श्रेणिक पर इस आशीर्वादका बड़ा गहरा असर पड़ा, वे उनके चरणों पर पड़ गये और महा अनुताप करते हुए उन्होंने जैन-धर्म धारण करनेकी प्रतिज्ञा कर ली। इस तरह अनेक उपायोंका अवलम्बन कर रानी चेलनाने अपने पतिका उद्धार किया। इनके पुत्रका नाम कुणिक था जो अजातशत्रुके नामसे प्रसिद्ध हैं। रानी चेलना कई बार महावीरस्वामीके समवशरणमें गई थीं। (श्रेणिक-पुराण) श्रेणिक देखो।

चेला (हिं॰ पु॰) १ शिष्य, वह जिसने गुरुसे धर्म शिक्षा ली है। २ छात्र, विद्यार्थी, शागिर्द। (देश॰) ३ बंगालमें मिलनेवाला एक तरहका सर्प। ४ क्षुद्रमत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छोटी मछली।

चेलान (सं॰ पु॰) चेल बाहुलकात् आनच्। लता विशेष, तरबूजकी लता। इसका पर्याय—अल्पप्रमाणक, चित्रफल, सुखाश, राजतिनिश, लतापनस, नाटाम्र, भेट है। इसका गुण—गुरु, विष्टम्भ, कफ और वायुवर्द्धक है।

चेलाल (सं॰ पु॰) चेलमिवालति अल-अच्। लतापनस, तरबूजकी लता।

चेलाशक (सं॰ पु॰) चेलं तत्रस्थितयूकामश्नाति चेल-अश-ण्वुल्। प्रेतविशेष, एक तरहका भूत।

चेलाशक देखो।

चेलिका (सं॰ स्त्री॰) चेल-कन्-टाप् अत इत्वं। पट्टवस्त्र, चिउली नामका रेशमी कपड़ा।

"सैयं कञ्चुक चेलिका पांशाटार्पि च्छदा।
रक्तचेलिकयाच्छन्ना शातकुम्भमसानी॥" (पद्मपुराण पा॰खण्ड)

चेलकाई (हिं॰ स्त्री॰) शिष्य-वर्ग, चेलोंका समूह, चेलहाई, चेलकाई।

चेलिचिम (सं॰ पु॰) एक जातीय क्षुद्रमत्स्य, एक तरहकी छोटी मछली।

चेली (सं॰ स्त्री॰) चेल-ङीप्। १ पट्टवस्त्र, चिउली नामका रेशमी कपड़ा।

चली (हिं॰ स्त्री॰) चेलाकी स्त्री।

चेलोम (सं॰ पु॰) मत्स्यविशेष, एक तरहकी मछली।

चेलुक (सं॰ पु॰) चेल-उक। बौद्धभिक्षुकविशेष, एक प्रकारका बौद्धभिक्षुक। इसका पर्याय—श्रामणेर, प्रव्रजित, महोपासक और गोमी है।

चेल्हवा (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छोटी मछली। यह चमकीली और पतली होती है।

चेवारी (देश॰) दक्षिण और पश्चिम भारतवर्षमें होनेवाला एक तरहका बाँस। यह चटाई और टोकरी बनानेके काममें आता है।

चेषी (सं॰ स्त्री॰) रागिणीविशेष, एक रागिनीका नाम।

चेष्टक (सं॰ त्रि॰) चेष्टते चेष्ट-ण्वुल्। १ चेष्टायुक्त, चेष्टा करनेवाला, जो चेष्टा करे। (पु॰) २ रतिबन्धविशेष, एक प्रकारका रतिबंध। ३ तपस्वि मत्स्य, एक प्रकारकी मछली।

चेष्टन (सं॰ क्ली॰) चेष्ट-ल्युट्। चेष्टा, उद्योग, प्रयत्न।

"सर्वसन्निविशेषेतु शिवु चेष्टनस्यमं मेऽनिलम्।" (मनु॰ १२।१२०)

चेष्टयितृ (सं॰ त्रि॰) चेष्ट-णिच्-तृच्। जो चेष्टा कराता हो, कोशिश करानेवाला।

चेष्टा (सं० स्त्री०) चेष्ट-भाव-टाप्। १ कायिकव्यापार-विशेष, नायिका या नायकका वह प्रयत्न जो नायक या नायिकाके प्रति प्रेम जाहिर करनेके लिये हो। २ व्यापार, उद्योग, कोशिश। ३ कार्य्य, काम। ४ परिश्रम, श्रम, मेहनत। ५ कामना, इच्छा, ख्वाहिश।

चेष्टानाश (सं० पु०) चेष्टाया विश्वरचनाव्यापारस्य नाशो यत्र, बहुव्री०। प्रलय, सृष्टिका अंत।

चेष्टाबल (सं० स्त्री०) ज्योतिःशास्त्र प्रसिद्ध ग्रहोंका बल-विशेष, गतिके अनुसार ग्रह बलवान् हुआ करते हैं, इस प्रकारके बलको ज्योतिःशास्त्रोंमें 'चेष्टाबल'के नामसे उल्लेख किया जाता है। बृहज्जातकके मतसे उत्तरायणमें रवि, चन्द्र तथा वक्रगामी मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये चेष्टाबलयुक्त होते हैं। इसके सिवा चन्द्रके साथ संयुक्त ग्रहको भी चेष्टाबलयुक्त कहा जाता है। युद्ध आदिके समय विजयी ग्रहोंके भी चेष्टाबल होता है। (बृहज्जातक)

चेष्टावत् (सं० त्रि०) चेष्टा विद्यतेऽस्य चेष्टामतुप् मस्य वः। चेष्टायुक्त, जिसे चेष्टा हो।

"चेष्टावदन्यावयविभवाश्रितः" (मुक्तावली)

चेष्टार्ह (सं० त्रि०) चेष्टामर्हति अर्ह-अण्। जिसका प्रयत्न करना उचित हो।

चेष्टित (सं० त्रि०) चेष्ट कर्त्तरि क्त। १ चेष्टायुक्त, जो चेष्टा करता हो, उद्योग करनेवाला। (क्ली०) चेष्ट भावे क्त। २ गति, चाल। ३ चेष्टा, नायक और नायिका-का व्यापार।

"जतुकेव सदानारी रुधिरं पिवतीतिव।
मूर्खस्तु न विजानाति मदितो भावचेष्टितैः॥" (देवीभा० १।१५।१८)

चेस (अं० पु०) १ लोहेका बना हुआ एक तरहका चौकठा। कंपोज किये हुए टाइप इसके बीचमें रख कर प्रेस पर छापनेके लिये कसे जाते हैं। २ चतुरंगविशेष, शतरंजका खेल।

चेहरई (हिं० वि०) हलका गुलाबी।

चेहरा (फा० पु०) १ बदन, मुखड़ा। २ किसी पदार्थका अग्रभाग, आगा। ३ कागज, मिट्टी या किसी धातु आदिका बना हुआ मुखड़ा जो मनोविनोद और खेलके लिये चेहरेके ऊपर बाँधा जाता है।

चेहलुम (फा० पु०) मुसलमानोंमें मुहर्रमके चालीसवें दिनकी एक रसम।

चैंटी (हिं० स्त्री०) चिउँटी देखो।

चैंबर (अं० पु०) चेम्बर देखो।

चैंसलर (अं० पु०) चेन्सलर देखो।

चै—उत्तर-पश्चिम प्रदेशके जादूगर। अयोध्या, गोरखपुर तथा और भी अन्यान्य स्थानोंमें ये रहते हैं। परन्तु इन्हें कभी एक जगह रहते नहीं देखा गया। जहां कहीं मेला वा और कोई उत्सव होता है वहां ये पहुंच जाते हैं और अपनी चतुराई दिखा कर पैसा पैदा करते हैं।

चैक (अं०) चेक देखो।

चैकित (सं० पु०) गोत्रप्रवर्त्तक एक ऋषिका नाम। यह शब्द गर्गादिके अन्तर्गत है। गोत्रापत्यार्थमें इसके उत्तर यञ् होता है। (पा ४।१।१०८)

चैकितान (सं० पु०) चिकितानस्य गोत्रापत्यं चिकितान-अण्। उपनिषत्प्रसिद्ध एक पुरुष।

चैकितानेय (सं० पु०) उपनिषत्प्रसिद्ध एक ज्ञानी मनुष्य।

चैकितायन (सं० पु०) चिकितायनस्यापत्यं चिकितायन-अण्। चिकितायन ऋषिके पुत्र। छान्दोग्य उपनिषद्-में इसका उल्लेख है।

चैकित्य (सं० पु०-स्त्री०) चैकितस्य गोत्रापत्यं चैकित-यञ्। चैकित मुनिके गोत्रापत्य, वे जो चैकित ऋषि-के गोत्रके हों, चैकित मुनिके वंशधर।

चैकिस्रित (सं० त्रि०) चैकिस्रत्यस्य छात्रः चैकिस्रित्य-अण्। चैकिस्रित्य मुनिके छात्र।

चैकिस्रिता (सं० पु०-स्त्री०) चिकिस्रितस्य ऋषेर्गोत्रा-पत्यं चिकिस्रित-यञ्। चिकिस्रित ऋषिके गोत्रापत्य, चिकिस्रित ऋषिके वंशधर।

चैकीर्षत (सं० त्रि०) चिकीर्षन्नेव चिकीर्षत्-अण्। जिसे चिकीर्षा हो, जो कोई काम करनेकी इच्छा करता हो।

चैटयत (सं० त्रि०) चेट इव यतते यत अच् अतः स्वार्थे अण्। भृत्यको नाईं यत्नशील, जो सेवक नहीं होने पर भी सेवकके सरीखे काम करता हो।

चैटयतायनि (सं० पु०-स्त्री०) चैटयतस्यापत्यं चैटयत-फिञ्। चैटयतका अपत्य, चैटयतके वंशधर।

चैत (हिं० पु०) चैत्र, फागुन और बैसाखके बीचका महीना।

चैतन्य (सं० क्ली०) चेतन एव चेतन स्वार्थे ष्यञ्। १ चित्स्वरूप, चेतन आत्मा। सांख्यमतमें चैतन्यको आत्माका धर्म नहीं माना है। उनके मतसे आत्मा चैतन्यस्वरूप द्रव्य या पदार्थविशेष है। यह अपरिणामी हो कर भी व्यापक है। पृथिवी, जल आदि द्रव्योंकी भांति इसमें रूप, रस आदि गुण नहीं, किन्तु संयोग, विभाग और परिणाम इत्यादि गुण हैं, इसलिए दार्शनिकगण इसको द्रव्य मानते हैं। इस मतमें ज्ञान और चैतन्यको भिन्न भिन्न पदार्थ माना है। ज्ञान, बुद्धि वा महत्तत्त्वका धर्म है हमलोग साधारण दृष्टिसे ज्ञानको ही चैतन्य कहते हैं।

"निर्गुणत्वान्न चिद्धर्मा"। सांख्यसूत्र।

जैन मतानुसार—चैतन्य, ज्ञान और आत्मा तीनों एक ही पदार्थ हैं। आत्मा चैतन्यस्वरूप है, ज्ञान उसका धर्म है। यह भेद विवक्षासे कहा जाता है। वास्तवमें ज्ञान यदि आत्मासे पृथक् कर लिया जाय तो जड़ (पृथिवी आदिमें) और आत्मामें कुछ अंतर नहीं रह जाता और ऐसी अवस्थामें दो पदार्थ मानना भी व्यर्थसा हो जाता है। इसलिये ज्ञान-दर्शनमय आत्माका स्वरूप है और उसको चेतना, चैतन्य, बुद्धि आदि नामोंसे पुकारते हैं।

२ परमात्मा, परमेश्वर। वेदान्तिकगण परमात्माको चित् वा चैतन्यस्वरूप मानते हैं। जीवात्मा और परमात्मा देखो। ३ आत्मधर्म, ज्ञान। नैयायिक मतसे ज्ञान और चैतन्य एक ही पदार्थ है, यह आत्माका ही धर्म है; आत्माके सिवा और किसी पदार्थमें इसका अस्तित्व नहीं है। (भाषापरि०)

४ चेतना। ५ प्रकृति। ६ एक प्रसिद्ध बंगाली धर्मप्रचारक। चैतन्यदेव देखो। (हिं०) ७ चेतनायुक्त, सचेत। ८ सावधान, होशियार।

चैतन्यचन्द्र—चैतन्यदेव देखो।

चैतन्यचन्द्रामृत—संस्कृत भाषामें लिखा हुआ एक वैष्णव ग्रन्थका नाम। परमहंस प्रबोधानन्द सरस्वती इसके प्रणेता हैं।

चैतन्यचन्द्रोदय—महात्मा चैतन्यदेवके चरित्र विषयक एक संस्कृत नाटक। शिवानन्द सेनके पुत्र कविकर्णपुर इसके प्रणेता हैं। यह ग्रन्थ १५०१ शकमें लिखा गया है।

चैतन्यदेव—सुप्रसिद्ध धर्मप्रचारक, चैतन्य-सम्प्रदाय-प्रवर्तक। इनका पूरा नाम श्रीश्रीकृष्णचैतन्यदेव था। लोग इन्हें सिर्फ "चैतन्य" कहा करते थे।

समय समय पर धर्मकी अवनति होने पर कोई न कोई महात्मा अवतीर्ण होते और सदुपदेश आदि नाना उपायोंसे धर्मका संस्थापन करते हैं। चैतन्यदेव भी ऐसे ही एक अद्वितीय धर्मप्रचारक थे। इनकी सुमधुर धार्मिक वक्तृताको सुन नितान्त मूढ़प्रकृति पाखण्डी व्यक्तिका भी हृदय धर्मभावसे पिघल जाता था, सभी इनके मतके पक्षपाती हो जाया करते थे। जिस समय बौद्धोंके प्रबल प्रतापसे भारतमें विशुद्ध हिन्दू-धर्मका निर्वाण हो रहा था और बहुतोंने हिन्दू-धर्म त्याग कर बौद्धधर्म अवलम्बन कर लिया था उसके कुछ ही दिन बाद बङ्गालमें तान्त्रिक-मतका सूत्रपात हुआ। तान्त्रिक-धर्मावलम्बी लोग दिन दिन तन्त्रके यथार्थ उद्देश्यको भूलने लगे और पशुहिंसा और मद्य-पान आदि नीच कार्योंमें प्रवृत्त हो गये। इनके दलोंकी वृद्धि होने और प्रबल प्रतापी मुगल बादशाहोंके अत्याचारसे भारतके धर्मभावकी भयङ्कर दशा हो गई। धर्मप्राण साधुओंको असह्य हृदयविदारक भीषण मनस्ताप होने लगा। उन्होंने नीरस भक्तिहीन क्रियाकाण्डको छोड़ कर ईश्वरमें प्रेम, भक्ति और जीवोंमें दया करनेको ही प्रधान साधन निश्चित किया और वे वैष्णवधर्मके पक्षपाती होने लगे। विद्यापति, चण्डिदास आदि बङ्गाली महात्माओंने उक्त मतको स्वीकार किया था। इसके बाद श्रीहट्टमें चन्द्रशेखर आदि चट्टग्राममें पुण्डरीक विद्यानिधि, राढ़देशमें नित्यानन्द, बुढ़नमें हरिदास और शान्तिपुरमें अद्वैताचार्य आदि वैष्णवोंने जन्मग्रहण किया। किन्तु उनकी सहायतासे वैष्णवधर्म विशेष उन्नति न कर सका, केवल सूत्रपात हो कर रह गया। वे पाखण्डियोंके भीषण अत्याचारोंसे नितान्त उत्पीड़ित हो कर वैष्णवधर्मके प्रचारके लिए हृदयसे ईश्वरको पुकारने लगे। इसके कुछ ही दिन बाद चैतन्यदेवका आविर्भाव हुआ। इन्होंने भारतके इस प्रान्तसे

ले कर उस प्रान्त तक समस्त जातियोंमें समानरूपसे विशुद्ध वैष्णव धर्मका प्रचार कर दिया। ये हमेशाके लिए भारतवासियोंके प्राणधन और स्मरणीय हैं। कल्पनाप्रिय भारतवर्षमें जीवन-चरित्र बड़ी दुर्लभ वस्तु है, किन्तु वैष्णवसम्प्रदायमें वह अभाव नहीं है, वैष्णव कविगण चैन्यदेवकी प्रायः पूरी जीवनी ही लिख गये हैं। चैतन्यदेवके जीवनवृत्तान्त-सम्बन्धी जितने भी ग्रन्थ हैं, उनमेंसे वृन्दावनदासकृत संस्कृत चैतन्यमङ्गल और बंगला चैतन्य भागवत, कृष्णदास कविराजकृत चैतन्यचरितामृत, चूड़ामणिदासकृत चैतन्यचरित, कविकर्णपुरकृत संस्कृत चैतन्यचन्द्रोदय, प्रेमदासकृत उसका बङ्गला पद्यानुवाद प्रबोधानन्द सरस्वतीकृत चैतन्यचन्द्रामृत, प्रद्युम्नमिश्रकृत श्रीकृष्णचैतन्योदयावली, जगज्जीवनकृत मनःसन्तोषिणी, लोचनदास तथा जयानन्दकृत चैतन्यमङ्गल, भक्तिरत्नाकर, गौराङ्गसुरकल्पतरु, रूपगोस्वामी, जीवगोस्वामी और गोविन्द आदि रचित प्राचीन कड़चा ग्रन्थ ही प्रधान हैं। इनके सिवा कुलपञ्जिका आदि ग्रन्थोंमें भी इनके विषयमें बहुत कुछ लिखा है। वैष्णव कविगण चैतन्यदेवको साक्षात् ईश्वर वा ईश्वरका पूर्णावतार मानते थे तथा इन पर उनका अलौकिक विश्वास और ऐकान्तिक-भक्ति थी। इनके सम्पूर्ण जीवनचरित्रको वे अलौकिक मानते थे। इसीलिए वे कल्पनाबलसे तिलको ताल (ताड़) बनानेमें भी कुण्ठित नहीं होते थे। इन्हीं कारणोंसे चैतन्यदेवका जीवनचरित्र अतिरञ्जित हो गया है। बहुत जगह ऐसी कहानियां भी मिल गई हैं, जो किसी हालतमें भी विश्वासयोग्य वा सत्य नहीं हो सकतीं। यद्यपि चैतन्य चन्द्रको अन्तर्द्धान हुए अभी ४०० वर्ष हुए और उन के शिष्यों प्रशिष्योंने भी उनकी जीवनी लिखनेमें त्रुटि नहीं की, तथापि उन अतिरञ्जित वर्णनोंमेंसे यथार्थ भावको ग्रहण करना बड़ा ही कठिन कार्य है। कुछ भी हो, उनके जीवनचरित्रके अतिरञ्जित अंशको त्याग कर देखनेसे सभीको कहना पड़ेगा, कि कलियुगमें जितने भी धर्मप्रचारक वा आदर्श पुरुष आविर्भूत हुए हैं, महात्मा चैतन्यदेव ही उनमें शीर्षस्थानीय हैं। द्वापरके शेष आदर्श पुरुष वा अवतार श्रीकृष्णचन्द्रके बाद भारत वा पृथिवीमें ऐसे पुरुष दूसरे किसी स्थानपर उदित नहीं हुए।

महात्मा चैतन्यदेवके आविर्भावसे वैष्णवमण्डलीको अपूर्व आनन्द हुआ। ऐकान्तिक भक्ति और विश्वासने उन लोगोंके हृदयमें यह बात अच्छी तरह जमा दी, कि चैतन्यदेव स्वयं ईश्वर वा ईश्वरके पूर्णावतार हैं तथा इस विश्वासके अनुसार वे कार्य भी करने लगे। अन्तमें चैतन्यके ईश्वरत्वको कायम रखनेके लिये वैष्णवोंने बड़े बड़े दृष्टान्त भी दिखाये हैं। दूसरी ओर तन्त्रमतावलम्बियों वा शाक्तोंने इनके असाधारण भक्ति, प्रेम, ईश्वर विश्वास, वैराग्य और देशहितैषिता आदि सद्गुणोंको बिल्कुल भूल कर उनके तिरस्कार और अवज्ञा करनेमें त्रुटि नहीं रक्खी। (वैष्णवधर्म देखो।) वैष्णव लोग चैतन्यको स्वयं कृष्णका अवतार और पूर्णब्रह्म मानते हैं। किन्तु शाक्त वा अन्य सम्प्रदायके लोगोंने इनको साधु-भक्त और धर्मप्रचारकके सिवा ईश्वरावतार कभी भी नहीं माना है। इसलिए शाक्त और वैष्णवोंमें बहुत दिनसे घोर विवाद चला आ रहा है। चार सौ वर्ष बीत गये चिरस्मरणीय चैतन्यदेव केवलमात्र हृदयाकाशको आलोकित कर उदित रहे, किन्तु तो भी इस विवादकी मीमांसा न हुई। वैष्णव लोग चैतन्यको ईश्वर बनानेके लिए ऐसी युक्ति देते हैं—"ईश्वर स्वतन्त्र हैं, वे इच्छा होने पर मनुष्य होंगे इसमें आश्चर्य ही क्या है!" वे अपने मतका पोषक शास्त्रीय प्रमाण भी दिखाया करते हैं—

> "धर्मसंस्थापनार्थाय विहरिष्यामि तैरहम्।
> कालेनष्टं भक्तिपथं स्थापयिष्याम्यहं पुनः॥
> कृष्णचैतन्यगौराङ्गो गौरचन्द्रः शचीसुतः।
> प्रभुर्गौरहरिर्गौरो नामानि भक्तिदानि मे॥" (अनन्तसंहिता)

धर्मसंस्थापनके लिए मैं (ईश्वर) उनके साथ (पृथ्वी पर) विचरण करूंगा। मैं कालके प्रभावसे विनाशको प्राप्त भक्तिपथको पुनः स्थापन करूंगा। मेरे, कृष्ण-चैतन्य, गौराङ्ग, गौरचन्द्र, शचीसुत, प्रभु, गौरहरि और गौर, ये समस्त नाम अत्यन्त भक्तिप्रद हैं।

इसके सिवा महाभारतका एक श्लोक भी वे उद्धृत करते हैं—

> "सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी।
> संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठाशान्तिपरायणः॥"

विष्णुसहस्रनाममें सवर्ण वा गौराङ्ग, चन्दनतिलका

धारी, संन्यासकारी और निष्ठाशान्तिपरायणके नामसे उनका वर्णन किया गया है (१)। विष्णुने अन्य किसी भी अवतारोंमें उक्त लक्षण वा चिह्नादि धारण नहीं किये। अतएव महाभारतके उक्त श्लोकके अनुसार चैतन्यको ही विष्णुका अवतार मानना चाहिये। विष्णु ईश्वरके पूर्णावतार हैं ; जब उन्होंने चैतन्य-मूर्ति धारण की, तब उनका पूर्णत्व कहां जा सक्ता है ? वे यह भी कहते हैं, कि कुरुक्षेत्र-युद्धके प्रारम्भमें भगवान् श्रीकृष्णने अपने प्रियसखा अर्जुनसे कहा था कि—

"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥"

साधुओंके परित्राणके लिए, दुरात्माओंका विनाश और धर्मका संस्थापन करनेके लिए युग युगमें मैं अवतीर्ण होऊंगा। अतएव कलियुगमें कृष्णका अवतार क्यों न होगा ?

शाक्तगण चैतन्यके ईश्वरत्वनिराकरणके लिए तन्त्ररत्नाकरके कुछ श्लोक बोला करते हैं। उनका मर्म इस प्रकार है—त्रिपुरासुर महादेव द्वारा निहत हो कर शिवधर्म विनाश करनेके लिए तीन पुरके स्थानमें गौराङ्ग, नित्यानन्द और अद्वैत इन तीन रूपोंमें अवतीर्ण हुए। पीछे उन्होंने नारीके भावमें भजनका उपदेश दे कर व्यभिचारी, व्यभिचारिणी और वर्णसङ्करोंके द्वारा पृथिवीको परिपूर्ण कर दिया। महादेवका क्रोध पुनः उद्दीप्त हो उठा। त्रिपुरके साथी असुर लोग मनुष्यका वेश धारण कर त्रिपुरके तीन अवतारोंकी भजना करने लगे। वे लोग त्रिपुरके प्रथम अंशको साक्षात् विष्णु, द्वितीयको बलराम और तृतीय अंशको महादेव बतला कर उनका प्रचार करने लगे।

इनमेंसे किसको हम यथार्थ समझें ? वैष्णव लोग जिन ग्रन्थोंसे चैतन्यका ईश्वरत्व वा ईश्वरका पूर्णावतारत्व सिद्ध करनेके लिए प्रमाण उद्धृत करते हैं, उनमेंसे अधिकांशमें ही प्राचीनत्वके विषयमें सन्देह है। शाक्तों द्वारा उल्लिखित तन्त्ररत्नाकरके वचनोंको भी प्राचीन नहीं माना जा सकता। हां, इतना जरूर है कि चैतन्यके जीवनवृत्तान्तोंको देख कर उन्हें अवतार कहनेमें बाधा नहीं। प्राचीन हिन्दू-शास्त्रोंमें अवतारके लक्षणोंका जिस प्रकार वर्णन है, चैतन्यदेवमें उनमेंसे बहुतोंका सादृश्य पाया जाता है। इन्होंने भी एक धर्मका संस्थापन करके संसारके अनेक पापियोंका त्राण किया है।

नवद्वीपके प्रसिद्ध राजा कृष्णचन्द्रके समय इनके ईश्वरत्वको ले कर एक विवाद खड़ा हो गया। अन्तमें इसकी मीमांसाके लिए कृष्णचन्द्रकी सभामें करलिपि बनाई गई, जिसमें इस प्रकार उत्तर मिला—

"चैतन्यो भगवद्भक्तो न च पूर्णो न चांशकः।"

अर्थात् चैतन्य भगवान्के भक्त हैं, वे पूर्ण वा अंशावतार नहीं हैं। शान्तिपुर-निवासी अद्वैतके वंशज किसी गोस्वामीने आ कर इसकी अन्य प्रकारसे व्याख्या की, कि—

"चैतन्यो भगवद्भक्तो न अंशको न, किन्तु पूर्णएव।"

अर्थात् चैतन्यदेव एक भगवद्भक्त वा भगवान्के अंशावतार नहीं, किन्तु पूर्णावतार हैं। इससे भी विवादकी मीमांसा न हुई। आज तक भी इस विवादका सुचारु रूपसे निवटेरा नहीं हुआ।

चैतन्यभागवत आदि ग्रन्थोंमें चैतन्यदेवका जीवनचरित जिस प्रकार लिखा है, यहां हमें उसीके अनुसार लिखना पड़ेगा।

वैष्णव कवियोंने चैतन्यदेवकी जीवनलीलाको प्रथमतः दो भागोंमें विभक्त किया है। जन्मसे ले कर संन्यास-ग्रहण तककी घटनाएं आदिलीलाके नामसे और संन्यास-धर्मावलम्बनके बादकी घटनाएं अन्त्यलीलाके नामसे वर्णित हैं। अन्त्यलीला भी मध्य और शेष इस तरह दो भागोंमें विभक्त है।

पाश्चात्य वैदिककुलमञ्जरीके मतसे यशोधरके सहित समागत भरद्वाजगोत्री जितमिश्रके वंशमें जगन्नाथ मिश्रका जन्म हुआ था। उन्होंने रथीतरगोत्री नीलाम्बर चक्रवर्त्तीकी कन्या वा विष्णुदासकी भगिनी शचीदेवीके साथ विवाह किया था। जगन्नाथके औरस और शचीके गर्भसे विश्वरूप और विश्वम्भर नामके दो पुत्र हुए।

(१) कृष्णदासने इस श्लोकको भारतके दानधर्मके २४९वें अध्यायका ९०वां श्लोक बतलाया है, किन्तु महाभारतमें ऐसा श्लोक नहीं है। अनुशासन पर्वाध्यायके १४९वें अध्यायमेंसे दानधर्मके ९२वें श्लोकके प्रथम चरणको और ७५वें श्लोकके द्वितीय चरणको ले कर यह श्लोक संगठित हुआ है।

कनिष्ठ विश्वम्भर ही संन्यास अवलम्बन कर 'चैतन्य' नामसे प्रसिद्ध हुए। इनके वंशके न होनेसे ही पाश्चात्य वैदिककुलमें सामवेदी भरद्वाज गोत्रका लोप हुआ है। बहुतोंका कहना है कि पाश्चात्यवैदिकगण किसी भी समयमें श्रीहट्टमें न रहते थे, अन्यथा वैदिकसमाजमें श्रीहट्टका उल्लेख होता। कृष्णदास आदि वैष्णवोंने जो चैतन्यके पूर्वपुरुषोंको श्रीहट्टवासी लिखा है, उसे अभ्रान्त नहीं कहा जा सकता।

चैतन्यके पूर्वपुरुषगण चन्द्रद्वीपमें वा अन्य किसी वैदिकसमाजके साथ वास करते थे। जगन्नाथ वहांसे गङ्गावासके लिए नदीया पहुंचे थे। वैष्णव कवियोंने उक्त स्थानको श्रीहट्टके अन्तर्गत समझ कर चैतन्यके पितामहका वासस्थान श्रीहट्ट बतलाया है। किन्तु श्रीहट्ट-निवासी प्रद्युम्नमिश्ररचित श्रीकृष्णचैतन्योदयावली और उसके बङ्गानुवाद मनःसन्तोषिणी नामक ग्रन्थोंमें (२) लिखा है, कि तपस्यानिरत जितेन्द्रिय मधुकरमिश्र नामक एक पाश्चात्यवैदिकका श्रीहट्टमें आगमन हुआ। इन्होंने वर पा कर कुछ भूमि प्राप्त की।

(२) वंशावली इस प्रकार है—
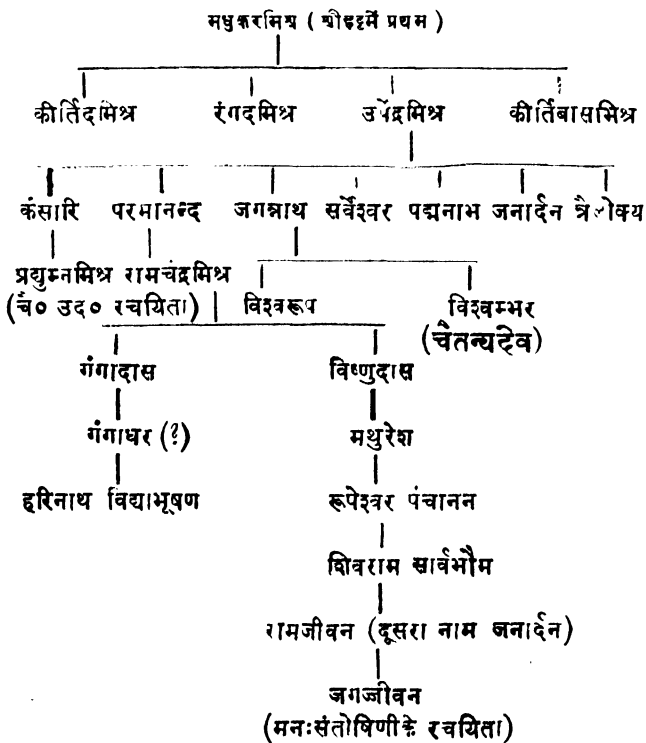
वह स्थान वरगङ्गा नामसे प्रसिद्ध है। इनकी सहधर्मिणीने चार पुत्र और एक सर्प प्रसव किया। उनके अनन्तर मध्यम पुत्र उपेन्द्रमिश्र कैलाशपर्वतके निकट इक्षुनदीके पश्चिम तट पर अमृत नामक गुप्तकुण्डके आसपास रहने लगे। उनके कंसारि, परमानन्द, जगन्नाथ, सर्वेश्वर, पद्मनाभ, जनार्दन और त्रैलोक्य नामक सात पुत्र हुए। उनमेंसे जगन्नाथमिश्र देशमें व्याकरणादि पाठ सम्पन्न करके नवद्वीपमें रहने लगे। इनकी विद्या बुद्धि और सौन्दर्य से मुग्ध हो कर, वैदिककुलसम्भूत नीलाम्बर चक्रवर्त्तीने इनको अपनी कन्या (जिसका नाम शची था) ब्याह दी। शचीके गर्भसे विश्वरूपका जन्म हुआ। विश्वरूपने बाल्यकालमें ही संसारकी असारताको जान कर वैराग्य अवलम्बन किया। जगन्नाथने सोचा, कि बहुत दिनोंसे उन्होंने पितामाताके दर्शन नहीं किये, इसीलिए पुत्रको ऐसी बुद्धि हुई है। ऐसा विचार कर वे शचीके साथ अपने देश पहुंचे। परमानन्दकी स्त्री सुशीलाके साथ शचीका बहुत ज्यादा हेल-मेल था। देशमें ही शचीके गर्भ रह गया था। अन्तमें माताके कहने पर जगन्नाथ शचीको लेकर नवद्वीप लौट आये (३)। इससे यह कहा जा सकता है, कि श्रीहट्टवैदिकोंका समाज तो नहीं था, किन्तु चैतन्यके पूर्वपुरुष मधुकर मिश्रके किसी कारणसे वहां आ बसने और वहां वैदिकोंकी संख्या कम होने तथा उनके थोड़े दिन रहनेके कारण उसकी समाज-श्रेणीमें गणना नहीं हुई। कुलपञ्जिका आदि कुलजीग्रन्थोंमें उल्लेख नहीं मिलता इसलिए चैतन्यके समकालवर्त्ती ग्रन्थकारोंकी बातको उड़ा देना और चन्द्रद्वीप वा अन्य किसी स्थानमें चैतन्यके पूर्वपुरुषोंके वासस्थानका अनुमान करना युक्तिसंगत नहीं हो सकता।

वैष्णवोंके मतसे सिद्धपद्मके कर्णिकारूप अन्तर्द्वीपके मध्यस्थ मायापुरमें जगन्नाथ मिश्रका आवासस्थान था। नवद्वीप देखो। जगन्नाथ और शचीका पहले संतानभाग्य अच्छा न था। एक एक कर आठ कन्याएं हुईं और मर गईं। दम्पतीके दुःखकी सीमा न रही, दोनों मन-वचनकायसे ईश्वरकी याद करने लगे। कुछ दिन बाद

(३) चैतन्योदयावली, २य सर्ग।

चैतन्यके ज्येष्ठभ्राता विश्वरूपने जन्मग्रहण किया। इसके बाद बहुत दिन तक शचीके कोई सन्तान न हुई। विश्वरूपके प्रायः यौवन सीमामें पैर रखनेके बाद शक सं० १४०७ (१४८५ ई०) में फाल्गुन मासकी पूर्णिमाके दिन सिंहलग्नमें नवद्वीपमें चैतन्यका जन्म हुआ। इनके जन्म समयमें चन्द्रग्रहण हुआ था। उस समय नवद्वीपवासी बालवृद्धवनिता सभी उत्साहित थे। बार बार शङ्खध्वनि और ईश्वर नामकीर्तन आदि धर्मकार्योंके अनुष्ठानोंसे नवद्वीपकी सुखशान्ति अमरावतीसे भी बढ़ गई थीं। ये सब कार्य अन्य कारणसे होने पर भी बहुतोंको विश्वास हो गया, कि इस शुभ समयमें जिसका जन्म हुआ है, वह अवश्य ही कोई महापुरुष होंगे। कालान्तरमें यही विश्वास चैतन्यके ईश्वरत्व-प्रतिपादनमें अन्यतम कारण हो गया। चैतन्यके १३ मास माताके गर्भमें रह कर जन्म लेने पर (४) शची और जगन्नाथको असीम आनन्द हुआ। सभी नव बालकको देखने आये और रूप देख कर विस्मित हुए। उनके रूप और जन्म समयका विचार कर आस्तिक वैष्णवगण उनको ईश्वरका अवतार समझने लगे और उनका यह विश्वास दिन दिन पक्का होने लगा। यहांके लोगोंका विश्वास है, कि डाकिनी शाकिनी आदि बालकका अनिष्ट किया करती हैं, किन्तु 'निमाई' नाम रखनेसे फिर वे उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकतीं। इसीलिए विष्णुभक्त अद्वैतकी सहधर्मिणीने "निमाई" नाम रक्खा था (५)। परन्तु चूड़ामणिके मतसे शचीने १३ मास तक गर्भधारण नहीं किया, किन्तु दस मास पूर्ण होने पर ही चैतन्यका जन्म हुआ था। ज्येष्ठभ्राता विश्वरूपने ही नवशिशुका निमाई नाम रक्खा था (६)। नीलाम्बर चक्रवर्त्तीने अपने दौहित्रकी जन्मपत्रिका मिलाई, उससे भी स्थिर हुआ कि ये कोई महापुरुष हैं। कृष्णदास कविराजने चैतन्यका जन्मकाल जैसा लिखा है, वह पहले लिखा जा चुका है। चूड़ामणिदासने अपने चैतन्यचरितमें एक अद्भुत जन्मपत्रिकाकी अवतारणा की है। जिन्होंने थोड़ा बहुत गणितशास्त्र देखा है, वे सहज हीमें उस जन्मपत्रिकाकी उपादेयताको ग्रहण कर सकेंगे। (७) हम इतना कह सकते हैं—वैष्णव कविका विश्वास है, कि चैतन्यदेवके किसी भी कार्यमें असम्भवता नहीं थी, असंभवको भी सम्भव कर सकते थे। इसीलिए वे ऐसी जन्मपत्रीकी अवतारणा करनेमें साहसी हुए हैं। बालकके जन्मग्रहणके बाद जगन्नाथके घर महोत्सव हुआ। बन्धु बान्धव आत्मीय स्वजन सभी लोग नाना उपहार ले कर बालकको देखने आये। मिश्र पुरन्दरने भी यथासाध्य दानध्यान करके सबको सन्तुष्ट किया। जनकजननीके हृदयानन्दके साथ साथ चैतन्यदेव भी दिन दिन बढ़ने लगे। इनकी अङ्गकान्ति अत्यन्त गौर थी, इसलिए स्त्रियां उनको गौराङ्ग और कभी कभी गौरचन्द्र कहा करती थीं। कालान्तरमें ये भी चैतन्यके नामान्तर समझे जाने लगे।

चैतन्यके बाल्यकालमें कोई महत्त्वसूचक वा ईश्वरत्वज्ञापक कोई घटना हुई थी, ऐसा नहीं जान पड़ता, किंतु वैष्णवकवियोंने बाल्यकालमें ही चैतन्यको ईश्वर समझ कर उनके चरित्रमें नाना प्रकारकी अलौकिक घटनाओंका संयोजन किया है। उनके मतसे "एक दिन घर लीपनेके बाद शची और जगन्नाथने घरमें छोटे छोटे पैरोंके चिह्न देखे। उनमें ध्वजा, शङ्ख, चक्र और मीन चिह्न देख कर दोनों बड़े आश्चर्यमें पड़ गये। मिश्रजी बड़े विश्वासी भक्त थे। उन्होंने अनुमान किया कि घरमें जो बालगोविन्द देवविग्रह विराजित हैं, शायद उन्हींके ये पदचिह्न हैं। उस समय शचीदेवी चैतन्यको स्तनपान करा रही थीं, सहसा उन्हें पुत्रके पैरोंमें उक्त चिह्न दिखलाई दिये, उनके आश्चर्यकी सीमा न रही। उन्होंने उसी समय जगन्नाथको बुला कर चिह्न दिखाये।" इसके सिवा वंशी बजाना, मातापिताको चतुर्भुज मूर्तिका दिखाना इत्यादि और भी बहुतसी अद्भुत घटनाएं हैं।

शुभदिन देख कर बालकका नाम विश्वम्भर रक्खा गया। चूड़ामणिदासका कहना है, कि चैतन्यका जन्मनक्षत्र रोहिणी और जन्मराशि वृष थी, इसलिए गणकने

(४) कृष्णदासकृत बंगला चैत० च० आदि०१४ प०।

(५) " " "

(६) चूड़ामणिदासकृत बंगला चैतन्यच०।

(७) चूड़ामणिदास—चैतन्य च०।

श्री श्री चैतन्यदेव।

राशिके अनुसार विश्वम्भर रक्खा था (८)। परन्तु यह कहना बिल्कुल ही भ्रान्तिमूलक है, चैतन्यने रोहिणी नक्षत्रमें जन्म नहीं लिया, क्यों कि यदि उस दिन रोहिणी नक्षत्र होता तो चन्द्रग्रहण कदापि न होता।

बालकके जन्म होनेके बादसे ही जगन्नाथका भाग्य चेतने लगा। उन्होंने शक सं० १४०८, श्रावणमास, हस्ता नक्षत्र और बृहस्पतिवारमें खूब धूम धामके साथ चैतन्यका अन्नप्राशन कराया। इससे सभी नवद्वीपवासी उत्साहित हुए थे (९)।

निमाई बाल्यावस्थामें कुछ चालाक और क्रोधपरतन्त्र थे। वे जो कहते थे, उसे पूरा न कर सकने पर रो रो कर घरवालोंको परेशान कर देते थे। परन्तु इसमें भी उनकी कुछ अलौकिकता थी, यदि कोई मधुर स्वरसे हरिगुण गाने लगता था, तो उनका रोना बंद हो जाता था। हरिगुण सुनते ही मानो नन्हें नन्हें हाथ पैरोंको हिला कर हृदयका आनन्द प्रकट करते थे। इसी तरह दिन व्यतीत होने लगे, चन्द्रकलाकी भाँति गौरचन्द्र भी दिन दिन वृद्धिको प्राप्त हो पितामाता और भक्तोंके आनन्दकी वृद्धि करने लगे। शक-सं० १४०९के वैशाख मासमें निमाईका चूड़ाकरण हुआ (१०)। निमाई बाल्यावस्थामें बहुत ही चपल

(८) चूड़ामणि दासकृत चैतन्यचरित।
(९) चूड़ामणिदासकृत चैतन्यचरित।

(१०) चूड़ामणिदासकृत चैतन्यचरित।

थे। एक दिन शचीदेवी इनको लावा और बरफी दे कर घरका काम करने लगीं। परन्तु बालक खाद्य द्रव्यको छोड़ कर मिट्टी खाने लगा। यह देख कर शचीने बच्चेके हाथसे मिट्टी छीन ली और मिट्टी खानेका कारण पूछा। इस पर बालक निमाईने दार्शनिक उत्तर दे कर माताको दंग कर दिया। विश्वम्भरने कहा था—"मा, विचार कर देखो, सभी मिट्टीके विकार हैं। लावा, बरफी आदि खानेकी तमाम चीजें मिट्टीसे ही पैदा हुई हैं, फिर क्यों मुझे मिट्टी खाते देख दुःखित होती हो?" शचीदेवी भी कुछ कम न थी, उन्होंने तर्कमें बालकको परास्त कर दिया। और एक दिनकी बात है, एक ब्राह्मण जगन्नाथके घर अतिथि थे। वे शायद बालगोपालमन्त्रसे दीक्षित थे, पाक समाप्त करके ज्यों ही उनका इष्टदेवके लिए नैवेद्यका चढ़ाना हुआ, कि ज्यों ही कहींसे दुर्दान्त निमाईने आ कर उस स्तूपीकृत अन्नमेंसे एक ग्रास उठा कर खा लिया। शची और जगन्नाथ दूरसे यह देख कर हाय हाय करते हुए दौड़े आये, बहुत अनुनय विनय करने पर ब्राह्मण दूसरी बार रसोई करनेको राजी हुए। इधर निमाईको उस घरसे निकाल दिया गया, परन्तु इस बार भी शायद अन्न प्रस्तुत होने पर निमाईने आ कर एक ग्रास उठा लिया था। इस तरहसे तीसरी बार गौराङ्ग प्रभुने योगनिद्रासे पितामाता आदि सबको मुग्ध करके गोपालके वेशमें दर्शन दे कर ब्राह्मणका उद्धार किया था।

एक दिन नाना अलङ्कारोंसे विभूषित हो कर बालक विश्वम्भर गङ्गाके किनारे घूमने गये थे। दो प्रसिद्ध चोर अलङ्कारके लोभसे मिठाई दे कर उन्हें घर पहुंचा देनेका प्रलोभन दिखा कर ले गये। पीछे दोनों विष्णुकी मायासे मुग्ध हो कर गन्तव्य स्थानका मार्ग भूल गये और अन्तमें घूमते फिरते जगन्नाथके घर पहुंचे। निमाईका कुछ भी अनिष्ट न हुआ, इस बातसे सभीको आश्चर्य हुआ। बस, फिर क्या था कट्टर भक्तगण कंस-प्रेरित असुरकी तरह उन चोरोंकी वर्णना करने लगे।

जगदीश भागवत और हिरण्य पण्डित नामके दो व्यक्तियोंके साथ जगन्नाथ मिश्रका खूब मेल था। दोनों एकादशीके दिन नाना प्रकारकी उपादेय सामग्रियां ला कर कृष्णपूजाकी तैयारियां कर रहे थे। निमाईको उन सामग्रियोंमेंसे कुछ खानेकी इच्छा हुई। वे व्याधिका बहाना कर रोने लगे और कह बैठे कि नैवेद्यके बिना खाये उनकी पीड़ा दूर न होगी। निमाईके रोनेसे घरके लोग इतने व्याकुल हो गये कि वह बात उन्हें जगदीश और हिरण्यको कहनी पड़ी। सरलमति दोनों वैष्णवोंने अगत्या देवतासे पहले ही बालकको नैवेद्य दे कर शान्त किया।

धीरे धीरे बालक निमाई (वा चैतन्य) अति दुष्ट-स्वभाव और उद्दत हो उठे. मुहल्लेके लड़कोंमें अग्रणी हो कर उन्होंने एक टोली बांधी और वे नाना कौशलोंसे ऊधम करने लगे। निमाईके भविष्य-जीवनमें जो शक्ति उनकी प्रधान सहायक हुई थी, वही मोहिनीशक्ति चैतन्य-के बाल्यकालमें ही विकशित हुई। टोलीके सभी लड़के उनके अनुयायी हो गये थे, यहां तक कि वे थोड़ी देरके लिए उनका विच्छेद भी न सह सकते थे। चैतन्य उस टोलीके साथ पड़ोसियोंके घर चोरी करते थे, तथा यदि कोई लड़का उनकी आज्ञा न मानता था तो वे उसे दण्ड देनेमें भी त्रुटि नहीं करते थे। कभी कभी भागी-रथीके तीरस्थ बालुकामय स्थान पर प्रचण्ड रौद्रतापमें खड़े हो कर मार्त्तण्डखेल खेलते थे और कभी कभी टोलीसहित नदीमें तैरा करते थे। इनकी जलक्रीड़ासे लोगोंके स्नानादिमें विशेष व्याघात पहुंचता था। शची और जगन्नाथके पास चैतन्यके विरुद्ध बहुत शिकायतें आया करती थीं।

एक दिन शचीमाताने पुत्रको बुला कर कुछ ताड़ना दी और तिरस्कार किया। चैतन्यको गुस्सा आ गई, उन्हों-ने घरमें जा कर सब कुछ तोड़ फोड़ डाला। वैष्णव कवियोंका कहना है, कि एक दिन तो चैतन्यने अपनी माता पर भी हाथ चलाया था। शची बहाना कर बेहोश कर गिर पड़ीं, इस पर अन्य स्त्रियोंने चैतन्यसे कहा कि यदि तुम दो नारियल ला सको, तो तुम्हारी माताकी तबीयत ठीक हो जाय। चैतन्यने कुछ उज्र न किया, बाहर जा कर तुरंत दो नारियल ले आये। देख कर सभी विस्मित हुए। ग्रामकी छोटी लड़कियां जिस समय फूलोंकी डाली और नैवेद्य ले कर गङ्गाके किनारे पूजा करने बैठती थीं, उस समय दुर्दान्त निमाई वहां पहुंचते

थे और मौका देख कर लड़कियोंसे कहा करते थे—"सुनो, तुम सब मेरी पूजा किया करो, मैं तुम लोगोंको उत्तम वर दूंगा; क्या जानतीं नहीं कि गङ्गा, दुर्गा और महादेव सभी मेरे आज्ञाकारी हैं!" यह कह कर वे उनकी पुष्पमाला, चावल, चन्दन, केले आदि सब कुछ छीन लिया करते थे। इस पर असन्तुष्ट हो कर यदि कोई कुछ कहता भी थी, तो वे मधुर हंसीके साथ यह कह दिया करते थे—"मैं तुम लोगोंको वर देता हूं, कि तुम लोगोंको परमसुन्दर, युवा, रसिक और धनवान् दूल्हा मिलेंगे।" चावल केले आदि छीननेमें यदि कोई बाधा पहुंचाती थी, तो वे झट गुस्सा हो कर चिल्ला उठते थे—"तुम बुड्ढेके हाथ पड़ोगी, उस पर भी सात सौतें होंगी!" निमाईकी बातचीतोंसे सभी बालिकायें चौंक पड़ती थीं। लड़कियां यह सोच कर कि, "निमाई-का कहना सच है; यह शायद ईश्वरका अवतार है, नहीं तो ऐसी बातें कहनेका इसे साहस न होता" विश्वम्भरको सन्तुष्ट बिना किये कोई भी व्रतानुष्ठान नहीं करती थीं। चैतन्य ऐसे मौकेमें चावल और केले खा कर आमोद करते थे। एक दिनकी बात है कि नवद्वीपके वल्लभाचार्यकी कन्या लक्ष्मी देवपूजाके लिए चन्दन, माला और नैवेद्य ले कर गङ्गाके किनारे आई। विश्वम्भरने उनके पास जा कर कहा—"देखो सुन्दरी! तुम मेरी पूजा करो मैं तुम्हें अभीष्ट वर दूंगा।" चैतन्यकी मूर्ति देख और मीठी जबान सुन कर लक्ष्मी उनकी बातको टाल न सकीं; उन्होंने माला और चन्दनसे गौराङ्गकी पूजा की। इस समय दोनोंके हृदयमें स्वाहजिक प्रेमका आविर्भाव हुआ था।

विश्वम्भरके छह वर्षके ऊधमसे पितामाताकी नाकों-दम आ गई। एक दिन शचीदेवी चैतन्यको पकड़ने जा रही थीं, पर चैतन्य कूद कर एक उच्छिष्ट हण्डीके ऊपर बैठ गये। इस पर शचीने कहा कि तुम अशुचि हो गये हो, गङ्गा-स्नान बिना किये घरमें न जाना। चैतन्यने रोते हुए कहा—"मा, ऐसा क्यों कहती हो? ब्रह्माण्डका तो कोई भी स्थान अस्पृश्य नहीं हो सकता। ब्रह्मके मौजूदगीमें सभी स्थान महातीर्थमय हैं।" पांच वर्षके बालकके मुंहसे तत्त्वज्ञानपूर्ण उपदेश सुन कर सभीको आश्चर्य हुआ। फिर वे बड़े यत्नके साथ उन्हें घरमें ले गईं।

कुछ दिन बाद जगन्नाथमिश्रने पुत्रको पाठशालामें भरती कर दिया। विश्वम्भरने अपनी प्रतिभासे थोड़े ही दिनोंमें पढ़ना-लिखना समाप्त कर दिया। उनकी बुद्धि और धारणाशक्तिको देख कर गुरुमहाशय और छात्रवृन्द सभी उनकी प्रशंसा करने लगे। नवद्वीपको बालक-मण्डलीमें चैतन्यसे बढ़ कर और कोई भी न रहा। इतना होने पर भी उनका दौरात्म्य जरा भी न घटा। वैष्णव कवियोंने इसके साथ और भी दो एक अलौकिक उपाख्यान जोड़ कर श्रीचैतन्यकी बाल्यलीला समाप्त कर दी है।

गौराङ्गके बड़े भाई विश्वरूपने चतुष्पाठीमें संस्कृत पढ़ कर विशेष ख्याति लाभ की थी। किन्तु बाल्यकालसे ही उनके हृदयराज्यमें वैराग्यका विलास-भवन खड़ा हो गया था, वे संसारके झंझटोंसे हमेशा दूर रहते थे, उनका प्रायः सारा समय साधुओंके साथ धर्मालाप करनेमें बीतता था। उनके इस तरहके वैराग्यसे माता-पिताके हृदयमें बड़ा आघात पहुंचता था। इसीलिए उनका चैतन्यके पढ़ानेमें ज्यादा ध्यान न था। जग-न्नाथका विश्वास था, कि विद्या पढ़ानेसे प्राणाधिक चैतन्य भी विश्वरूपका अनुकरण करेगा। उधर गौरा-ङ्गका बाल्यचाञ्चल्य और दौरात्म्य उत्तरोत्तर बढ़ने ही लगा। बुढ़ापेकी सन्तान होनेके कारण पितामाता उन पर विशेष शासन न रखते थे। चैतन्यको भी उनका डर न था। परन्तु अग्रज विश्वरूपसे बहुत डरते थे, उनको देखते ही वे शान्त हो कर चुपचाप बैठ जाया करते थे (११)। गङ्गाघाट पर स्नान करने जाते थे, वहां भी बड़ा ऊधम मचाते थे। इनके ऊधमसे पड़ोसी जब बहुत तंग हो जाते थे तब वे शचीके पास जा कर शिकायत करते थे, परन्तु वे सिर्फ मिष्ट वाक्योंसे उनको विदा करनेके सिवा पुत्रको जरा भी शासन न कर सकती थीं। इसके कुछ दिन बाद चैतन्य गङ्गादास पण्डितके टोलमें व्याकरण पढ़ने लगे।

चूड़ामणिदासने चैतन्यके विद्याभ्यासके पहले एक

(११) चैतन्यभागवत, १।६ अ०।

नूतन घटनाका वर्णन किया है। घटना यदि सत्य हो, तो यहींसे उनके भावि-जीवनका सूत्रपात और विकाश मानना पड़ेगा। घटना यह है—

पडोसियोंके मुंहसे पुत्रके अधमको बातें सुनते सुनते शचोको अत्यन्त खेद हुआ। उन्होंने जगन्नाथके पास जा चैतन्यके अध्ययनको व्यवस्था करनेके लिए अनुरोध किया। मिश्रजीने शचीको बात काट कर कहा कि चैतन्यको पढ़ानेकी जरूरत नहीं, मेरे पास जितना धन है, उससे ही उसका गुजारा बड़ी आसानीसे हो जायगा। विश्वम्भर पिताके इस वाक्यसे अत्यन्त दुःखित हुए; उन्होंने सोचा था कि विद्याभ्यास कर जगत्‌का कुछ न कुछ उपकार जरूर कर सकूंगा। जब देखा कि उनकी उस आशा पर पानी फिर रहा है, तब उनके दुःखको सोमा न रही। चैतन्यने बहुत कुछ सोच विचार कर स्थिर किया कि 'धर्मशास्त्रके मतसे जिस व्यक्तिको अस्थि गङ्गामें पडती है, वह मुक्त हो जाता है, अतएव मुझसे जहां तक बनेगा, मैं मृत प्राणिको अस्थि गङ्गामें पटक दिया करूंगा। इससे भी जगत्‌का बहुत कुछ उपकार होगा।'' विश्वम्भर बाल्यकालसे हो दृढ़प्रतिज्ञ थे, जिसको वे कर्तव्य समझ लेते थे, उसके पालनार्थ जी जानसे कोशिश करनेमें वे जरा भी त्रुटि न करते थे। वे बालकोंको ले कर गङ्गाके तीरवर्त्ती विशाल मैदानसे मनों हड्डियां गङ्गामें पटकने लगे। गङ्गाका पानी अस्थिमय हो गया, लोगोंके स्नान सन्ध्यामें भी बाधा आने लगी। सब कोई चैतन्यको मना करने लगे, किन्तु चैतन्यको प्रतिज्ञा अटल थी, उन्होंने किसीको भी न सुनी। बादको यह खबर मिश्रजी तक पहुंची। मिश्रजी मारे गुस्सेके गङ्गाके किनारे पहुंचे और चैतन्यके कार्यको देख कर दंग रह गये। अन्तमें बहुत भर्त्सना करने और भय दिखाने पर विश्वम्भरने रोते हुए अपना मनोभाव व्यक्त किया। बालक निमाईके मुंहसे ऐसे महान उद्देश्यको सुन कर सभी यत्परोनास्ति सुखी हुए। मिश्रजीने भी पहलेकी प्रतिज्ञाको छोड़ कर चैतन्यको टोलमें पढ़ने भेज दिया। (चूडामणिकृत चैतन्यच०)

गङ्गादास पण्डित नवद्वीपके प्रधान वैयाकरण थे। उनको चतुष्पाठीमें देशीय अनेक बुद्धिमान् छात्र अध्ययन करते थे। चैतन्य अतिशय मनोयोगके साथ विद्याभ्यास करने लगे। उनके अध्यवसाय और प्रतिभाको देख कर पं० गङ्गादासके आनन्दको सोमा न रही। चैतन्य कलाप-व्याकरण पढ़ते थे। टीका, पञ्जी आदिका भी विशेष आदरके साथ अध्ययन करते थे। (१२) इनकी स्वाभाविक बुद्धि और स्मरणशक्ति इतनी सूक्ष्म थी, कि जिसे एक बार पढ़ लेते वा जिसको एक बार व्याख्या सुन लेते थे, उसे वे कभी न भूलते थे। इनके गुण और असाधारण शक्तिको बात चारों तरफ फैल गई। मातापिताके भी आनन्दको सोमा न रही। कुछ दिन ऐसे ही बोते। जब चैतन्यको अवस्था उपनयन करने योग्य हुई तो बड़ी धूम धामसे मिश्रजीने उनका उपनयनसंस्कार किया। वैशाख मासकी अक्षयतृतीयाके दिन चैतन्यका उपनयन हुआ था। पं० गङ्गादास चैतन्यको सावित्री-दीक्षाके आचार्य थे। (१३)

कुछ दिन सुखसे बोते। मिश्रजो ज्येष्ठपुत्र विश्वम्भरके विवाहकी तैयारियाँ करने लगे। बाल्यकालसे ही विश्वरूपके हृदयमें वैराग्य उत्पन्न हुआ था, यौवनके साथ साथ उसका भी पूर्णविकाश हुआ। उन्होंने विवाहका जिक्र सुनते ही पितामाताको जनम भरके लिए शोकसागरमें बहा कर संन्यास अवलम्बन कर लिया। विश्वम्भर भी भ्रातृविरहसे अत्यन्त दुःखित हो रोने लगे थे। अन्तमें उन्होंने पितामाताको बहुत कुछ उपदेश दे कर शान्त किया। उस समय चैतन्यने जैसा उपदेश दिया था, उससे प्रतीत होता है कि वे भी बाल्यकालसे संन्यासधर्मके पक्षपाती थे।

श्रीकृष्णचैतन्योदयावलीके कर्ता प्रद्युम्नमिश्रके मतसे चैतन्यके जन्मसे पहले हो विश्वरूपने संन्यास ग्रहण किया था। उसके बाद मिश्रपुरन्दर पितामाताके चरण देखने श्रीहट्ट गये थे, उसके बाद चैतन्यका जन्म हुआ था (१४)। परन्तु वैष्णवकवि वृन्दावन आदिने चैतन्यके बाल्यजीवनके बाद विश्वरूपका संन्यास लेना बतलाया है।

विश्वरूपके संन्यास लेनेके बाद विश्वम्भरका बाल-

(१२) कृष्णदासकृत चैतन्य० आदिलीला १५ प०

(१३) चूडामणिदासकृत चैतन्यचरित।

(१४) श्रीकृष्णचैतन्योदयावली, २७ सर्ग।

चापल्य एकबारगी जाता रहा। चैतन्य जीजानसे विद्याभ्यास करने लगे। जगन्नाथने सोच-समझ कर निश्चय किया, कि अध्ययन ही सर्वनाशका मूल-कारण है, यदि विश्वरूप अध्ययन कर विद्यालाभ न करता, तो वह हम लोगोंको छोड़ कदापि संन्यास ग्रहण करनेको तयार न होता। उन्होंने शचीको बुला कर कहा—

"ये भी यदि सर्व शास्त्रमें होगा गुणवान्।
छोड़ कर गार्हस्थ्यसुखको करेगा पयान॥
इसे न पढ़ाओ प्रिये ये हो मेरो गाय।
रहे वह मूर्ख चाहे बैठा बैठा खाय॥" (१५)

शचीदेवी जगन्नाथकी अपेक्षा बहुत कुछ स्थिरप्रकृति और विद्याभ्यासकी पक्षपातिनी थीं। उन्होंने जगन्नाथकी प्रस्तावमें सम्मति न दे कर यही उत्तर दिया—

"मूर्ख रह कर जीवनका बिताना कठिन है।
सिवा इसके ब्याहका होना भी कठिन है॥" (१६)

अन्तमें जगन्नाथको ही जीत हुई। उसी दिन चैतन्यको अध्ययन बंद करनेके लिए आज्ञा दी गई। चैतन्यको इच्छा न होते हुए भी पिताकी आज्ञा माननी पड़ी। परन्तु पाठके बंद हो जानेसे उलटा नतीजा निकला। निकम्मा हो कर बैठे रहनेके कारण चैतन्य पर दुष्ट सरस्वती सवार हो गई। उनके उधमसे अड़ोसी-पड़ोसी तंग हो कर जगन्नाथको गाली-गुफ्ता देने लगे तथा उन्हें पुनः पढ़ानेके लिए अनुरोध करने लगे। अन्तमें जगन्नाथने पुनः पढ़नेकी आज्ञा दे दी। अबकी बार विश्वम्भरका अध्ययन और भी विस्तृत हो गया। इनके डरसे कोई भी छात्र उधम न मचा सकता था। धीरे धीरे ये छात्रोंमें मुख्य गिने जाने लगे। इस चतुष्पाठीमें इनके भावी धर्मबन्धु मुरारिगुप्त, कमलाकान्त, कृष्णानन्द, मुकुन्द, सञ्जय आदिके साथ इनका सौहार्द हो गया था। गङ्गाके किनारे भिन्न भिन्न टोलके छात्रोंमें परस्पर तर्क-वितर्क चलता था। गौराङ्गके साथ शास्त्रार्थमें कोई भी जीत न पाता था। ये एक विषयका विविध अर्थ करके विपक्षियोंको परास्त कर दिया करते थे। तब तक भी चैतन्य उतने गम्भीर न हो सकते थे। शास्त्रार्थमें पराजित हुए बालकोंको चिढ़ा चिढ़ा कर ये झगड़ा भी किया करते थे। कभी कभी उन पर बालू-रेत और कीचड़ फेंकनेसे भी बाज न आते थे। इतना होने पर भी उस समय वे रात दिन पढ़ा करते थे। शौच-स्नानादिके बाद घर आ कर ये विष्णुपूजा और आहारादि करते थे। तदुपरान्त एकान्त स्थानमें बैठ कर अध्ययन करते और अवकाश मिलने पर पुस्तक लिखते थे। पुस्तकमें टिप्पणी लिखनेका भी उन्हें अभ्यास था। विद्योपार्जनमें पुत्रको प्रगाढ़ निपुणताको देख कर जगन्नाथ अनिर्वचनीय आनन्दका अनुभव करने लगे, किन्तु विश्वरूपके संन्यास ग्रहणके बादसे इनके विषयमें भी उन्हें सन्देह हो गया था। एक दिन स्वप्नमें चैतन्यको संन्यासीके वेशमें देख कर जगन्नाथ और भी डर गये। प्रसिद्ध नैयायिक रघुनाथ शिरोमणिके साथ चैतन्यका एक शास्त्रार्थ हुआ था, जिसमें शिरोमणिजीको भी हार माननी पड़ी थी। तभीसे नवद्वीपमें चैतन्यदेवकी प्रसिद्धि होने लगी। देखते देखते सुखयामिनीका अंत हो गया। जगन्नाथ स्त्री-पुत्रको शोकसागरमें बहा कर इस लोकसे चल बसे। चैतन्यका विवाह कर पुत्रवधूको घरमें देखना उनके भाग्यमें बदा नहीं था। इस समय पितृवियोगसे विश्वम्भरके हृदयमें अत्यन्त आघात पहुंचा। पड़ोसियोंके बहुत कुछ समझाने बुझाने पर वे पिताकी अन्त्येष्टिक्रिया और श्राद्धादि करके पुनः गृहस्थीमें प्रवृत्त हुए।

कुछ दिन सुखसे बीत गये। तदुपरान्त दिन दिन शचीका आर्थिक कष्ट बढ़ने लगा। जगन्नाथ मिश्रकी स्थायी सम्पत्ति कुछ भी न थी, वे एकमात्र याजनादि क्रियासे ही अपनी गुजर करते थे। इसलिए उनकी मृत्युके बाद शचीको आर्थिक कष्टका होना असम्भव नहीं था। पर चैतन्यको इस बातकी तनिक भी परवाह न थी। उन्हें जब जिस चीजकी जरूरत पड़ती, यदि उस समय वह नहीं मिलती, तो वे नाकों दम कर देते थे।

एक दिन विश्वम्भरने गङ्गा स्नानको जानेके लिये मासे माला और चन्दन मांगा, किन्तु शची उसी समय दे न सकीं, उन्होंने कहा—"जरा ठहरो, मैं लाये देती हूं।" इस पर चैतन्य मारे क्रोधके अधीर हो गये।

(१५, १६) यह चैतन्यभागवत (आदि ६ अ०) के बंगला पद्योंका अनुवाद मात्र है।

माताका तिरस्कार करते हुए वे एक लकड़ी ले कर घरमें घुस पड़े और गङ्गाजल रखनेकी तमाम गागरें फोड़ डालीं। इसके सिवा चावल, दाल आदि घरकी प्रायः सब चीजें नष्ट कर दीं। शचीके शीघ्र ही माला ला कर देने पर चैतन्यको शान्ति हुई। चैतन्यके प्रकृतिस्थ होने पर शचीने उनको मीठी जबानसे समझाया। माताकी मृदु भर्त्सना सुन कर चैतन्य लज्जित हुए और समझ गये कि उनकी गृहस्थीमें इस समय आर्थिक कष्ट उपस्थित है। पितृवियोग को थोड़े ही दिन हुए हैं, उस पर भी आर्थिक कष्ट ; किन्तु इससे भी चैतन्य विचलित न हुए। बाल्यावस्थासे उनका ईश्वर पर दृढ़ विश्वास था, उन्होंने माताको यह कह कर समझा दिया, कि "रुपये पैसेके लिए आप चिन्ता न करें, जिन विश्वनियन्ताकी कृपासे संसारके समस्त प्राणी जीवन धारण करते हैं, वे ही किसी तरह हम लोगोंकी गुजर कर देंगे।" माताको चाहे जैसे क्यों न समझा दें, पर उस समय चैतन्यदेवको आर्थिक चिन्ता जरूर हुई थी। वैष्णव कवियोंने यह प्रस्तावना बांध कर चैतन्यकी अलौकिकताका परिचय दिया, कि चैतन्यने गङ्गाकिनारे जा कर अलौकिक शक्ति-बलसे कुछ सुवर्ण ला कर माताको अर्पण किया था।

इस समय गौरचन्द्र शास्त्रीय चर्चामें बड़े मशगुल थे, रात दिन प्रायः सब समय वे शास्त्रालाप और शास्त्रचर्चा-में लगे रहते थे। क्या घर क्या बाहर, जब जिसके साथ उनकी मुलाकात हो जाती, उन्हींसे वे शास्त्रालाप करने लग जाते थे। चैतन्य विद्वान् होकर भी दम्भको न छोड़ सके थे, शास्त्रालापमें ही न पकवालों पर वे विशेष अत्याचार करते थे। वैष्णवोंसे ही उनका ज्यादा डाह था। वैष्णव यदि उनके पिताके बराबर भी होता, तो भी वे उसको बिना तंग किये न छोड़ते थे। मुरारिगुप्तके साथ उनका प्रायः झगड़ा हुआ करता था।

थोड़ी उम्रमें ही चैतन्यने एक व्याकरणकी टिप्पणी लिखी थी। व्याकरण पढ़ चुकने पर चैतन्यने न्यायशास्त्र पढ़ने-की इच्छासे नवद्वीपके प्रधान नैयायिक वासुदेव सार्व-भौमकी चतुष्पाठीमें प्रवेश किया। एक तो निमाई बालक थे, दूसरे उन्हें प्रविष्ट हुए थोड़े ही दिन हुये थे, इसलिए वासुदेवका उन पर उतना लक्ष्य न था। इसी समय प्रसिद्ध "दीधितिकार" रघुनाथ शिरोमणि भी वासु-देवके टोलमें अध्ययन करते थे। रघुनाथको विश्वास था, कि वे छात्रोंमें प्रधान होंगे। किन्तु चैतन्यको देख कर उनकी आशा पर पानी फिर गया। उस समय रघुनाथने "दीधिति" लिखना प्रारम्भ किया था, चैतन्यदेव भी न्यायकी कोई पोथी लिख रहे थे। रघुनाथके साथ चैतन्य-की मित्रता थी। एक दिन नाव पर चढ़ चैतन्य अपनी पुस्तक रघुनाथको सुनाते हुए दोनों गङ्गा पार हो रहे थे। रघुनाथ उसको सुन कर हताश हो गये; उन्होंने सोचा कि चैतन्यका ग्रन्थ चल गया तो मेरी 'दीधिति"-का आदर न होगा। उनकी प्रधानताकी आशा पर पानी फिरने लगा, उन्हें यह बात सह्य न हुई; वे दोनों आंखों पर हाथ रख कर रोने लगे। जब चैतन्यको मालूम हुआ कि, मेरा ग्रन्थ ही उनके रोनेमें कारण है, तो उन्होंने अपना ग्रन्थ निकाल कर गङ्गामें फेंक दिया और कहा कि "भाई! तुम रोओ मत, चिन्ता न करो, तुम्हारा ग्रन्थ ही आदरणीय होगा।" चैतन्यका न्याय पढ़ना यहीं समाप्त हो गया, उन्होंने स्वयं एक चतुष्पाठी खोली। चैतन्यके घर इतनी जगह न थी, इस लिए मुकुन्द सञ्जयके बड़े चण्डीमण्डपमें उन्होंने टोल खोला था। इस समय चैतन्यकी उम्र १६ वर्षकी थी। इनकी असाधारण शास्त्रदक्षताकी बात छिपी न थी; दिन दिन उनकी चतु-ष्पाठीमें छात्रोंकी संख्या बढ़ने लगी। चैतन्य एक दिग्गज विद्वान् हो गये। अब शचीके घर अर्थकष्ट नहीं रहा। बड़े बड़े जमींदार और धनाढ्य लोग चैतन्यका यथेष्ट सम्मान करते और आर्थिक सहायता पहुंचाया करते थे। परन्तु चैतन्य अमितव्ययी होनेके कारण कुछ सञ्चय न कर सके। अतिथियों पर चैतन्यका विशेष लक्ष्य रहता था। इसके कुछ दिन बाद चैतन्यदेवने वल्लभा-चार्यकी कन्या लक्ष्मीदेवीका पाणि-ग्रहण किया। वैष्णव कवियोंका कहना है, कि यह विवाह शचीकी इच्छाके विरुद्ध चैतन्यकी इच्छाके अनुसार हुआ था।

थोड़े ही दिनोंमें चैतन्यका यश चारों तरफ फैल गया, छात्रोंके झुण्डके झुण्ड आ कर उनके टोलमें प्रविष्ट होने लगे। चैतन्य प्रायः सभी समय अध्ययन और अध्या-पनमें लगे रहते थे, क्षण भरके लिए उन्हें अवकाश न

मिलता था। चैतन्यदेवका स्वभाव इस समय भी अति चञ्चल था, किन्तु उनका शरीर दीर्घ, सुगठित और सुंदर था, क्योंकि जन्मसे ले कर आज तक उन्हें किसी प्रकारका रोग न हुआ था। प्रति दिन ये गङ्गामें तैर कर उस पार पहुंच जाया करते थे और शिष्योंको साथ ले कर नगर-भ्रमणके लिए निकलते थे, जहां जो मिल जाता उसीके साथ शास्त्रार्थ करने लगते थे।

मुकुन्ददत्त नामक चट्टग्रामवासी एक वैद्यकुमार नवद्वीपमें अध्ययन करते थे। ये परम वैष्णव और सुगायक थे। अद्वैतके घर वे कीर्तन गाया करते थे। इनसे मुलाकात होने पर चैतन्य इन्हें सहजमें न छोड़ते थे। एक दिन चैतन्यदेव शिष्योंके साथ राजपथसे कहीं जा रहे थे, मुकुन्द दूरसे इन्हें देख कर अन्य मार्गसे चले गये। इस समय चैतन्य ज्ञानके पक्षपाती थे, उनके हृदयमें बिन्दुमात्र भी भक्तिभाव न दीख पड़ता था, भक्त मुकुन्द इसीलिए उनके पास न जाते थे। बहुतोंने अनेक प्रकारकी मीमांसाएं कीं, किन्तु चैतन्यने हंसीमें कहा—"बेचारा वैष्णव मुझे ज्ञानका पक्षपाती जान कर पास भी नहीं फटकता, अच्छी बात है, मैं भी एक दिन ऐसा भक्त बनूंगा, कि सब वैष्णव मेरे पैरों तले लोटेंगे।"

और एक दिनकी बात है, कि मुकुन्दसे साक्षात् होते ही चैतन्यने उनका हाथ पकड़ कर कहा था—"तुम मुझे देख कर भाग क्यों जाते हो; आज शास्त्रार्थ करना ही पड़ेगा, बिना किये छोड़ूंगा नहीं।" मुकुन्दने चैतन्यको साधारण पण्डित समझ उन्हें छकानेके लिए एक अलङ्कारका कठिन प्रश्न पूछा। चैतन्यने हंसते हुए उस प्रश्नकी तुरंत मीमांसा कर दी। सुनते ही मुकुन्द दंग रह गये, उन्हें मालूम हो गया, कि चैतन्य एक असाधारण व्यक्ति हैं। वास्तवमें चैतन्य व्याकरणके पण्डित समझे जाते थे और उसीमें उनकी प्रसिद्धि थी, किन्तु दर्शन, अलङ्कार, न्याय आदि सभी शास्त्रोंमें वे शास्त्रार्थ कर सकते थे; इसीसे उनकी प्रतिभाका विलक्षण परिचय मिलता था और शास्त्रार्थमें उनकी जय होती थी। एक दिन पण्डित गदाधरके साथ मुक्तिके विषयमें शास्त्रार्थ हो पड़ा; किन्तु चैतन्यदेवने उनके सिद्धान्तमें सैकड़ों दोष निकाल कर मुक्तिपदकी अन्य प्रकारसे व्याख्या की। धीरे धीरे उनकी कीर्त्ति और प्रतिष्ठा बढ़ने ही लगी।

प्रतिदिन ग्रामकी नगरभ्रमण करनेका विश्वम्भरको अभ्यास सा हो गया था। पड़ोसी पड़ोसियोंके साथ इनका खूब सद्भाव था, इन पर सभीका प्रेम था। इस समय विद्याकी गरिमाके सिवा चैतन्यका हृदय ईर्षा, अभिमान आदि और किसी भी दोषसे कलङ्कित न था।

एक दिन मार्गमें श्रीईश्वरपुरीके साथ चैतन्यकी भेंट हो गई। अपने भावी अभीष्ट देवको देख कर चैतन्य पण्डितका गर्वित मस्तक अपने आप अवनत हो गया, तभीसे उनके हृदयमें भक्तिरस अङ्कुरित हो गया। पुरीके साथ चैतन्यका परिचय हुआ, पुरीको वे अपने घर ले आये। ईश्वरपुरी अद्वैतके घर रहते थे। प्रतिदिन सन्ध्याके समय अध्यापन समाप्त कर चुकने पर चैतन्य उन्हें प्रणाम करते थे और उनके साथ थोड़ी बहुत धर्मचर्चा भी हुआ करती थी। एक दिन ईश्वरपुरीने स्वरचित श्रीकृष्णलीलामृत नामक काव्य दिखा कर चैतन्यसे उसके दोष-गुण ढूढ़नेके लिए अनुरोध किया। चैतन्यने अस्वीकार कर उत्तर दिया कि—"प्रभु, भक्त अपने वाक्योंमें श्रीकृष्णका वर्णन कर रहा है, उसमें दोष निकाल कर पापी कौन बने? भक्तकी कविता चाहे जैसी हो, ईश्वर उसीसे सन्तुष्ट होते हैं। इसलिए आपके इस प्रेमके वर्णनमें मुझे दोष देखनेका साहस नहीं होता।"

जो भक्तिका नाम सुनते ही उसकी अवज्ञा करते थे—ज्ञानका प्राधान्य स्थापन करना ही जिनका उद्देश्य था, उन्हीं चैतन्यदेवके हृदयकी यवनिका बिल्कुल परिवर्तित हो गई—उनका हृदयराज्य भक्तिरसमें डूब गया। यहींसे चैतन्यके भावी धर्मजीवनका सूत्रपात हुआ। कुछ भी हो, पुरीके अनुरोध करने पर उन्होंने उस ग्रन्थमें एक व्याकरणदोष निकाल ही दिया। असाधारण प्रतिभाशाली पुरीने भी प्रकारान्तरमें उसकी रक्षा की थी। इसके कुछ दिन बाद चैतन्य वायुरोगसे पीड़ित हुए और बहुत चिकित्साके बाद उन्होंने आरोग्य प्राप्त किया। किसी किसी वैष्णव कविके मतसे, इस अवस्थामें उनके मुंहसे दो एक महाभावकी बातें निकली थीं, जैसे—"मैं ईश्वर हूं, तुम लोग मुझे पहिंचानते नहीं" इत्यादि।

इसके थोड़े दिन बाद ही चैतनादेव वङ्गदेशमें चले गये। इस समय सहसा पूर्ववङ्गमें जानेका कारण क्या था? इस समस्यामें वैष्णव कवियोंने हस्तक्षेप नहीं किया परन्तु प्रद्युम्नमिश्रकृत श्रीकृष्णचैतन्योदयावलीके पढ़नेसे मालूम होता है, कि जिस समय मिश्रपुरन्दर शचीको ले कर मातापिताके चरण देखने अपनी जन्मभूमि श्रीहट्टमें गये थे, उस समय जगन्नाथकी माताने एक स्वप्न देखा था, कि मानो कोई कह रहा है—"शचीके गर्भसे एक महापुरुषका जन्म होगा। यहाँ रहनेसे विपत्ति आवेगी, अत: शीघ्र ही उन्हें नवद्वीप भेज दो।" जगन्नाथकी माताने नवद्वीप भेजते समय शचीसे कहा था—"शची! तुम्हारे इस गर्भसे एक महापुरुषका जन्म होगा, उससे मेरा साक्षात् करा देना।" शचीने सासुकी बात पर स्वीकारता दी थी। शायद उसी प्रतिज्ञाके पालनार्थ शचीने चैतन्यको पूर्ववङ्गाल जानेकी अनुमति दी होगी; किन्तु चैतन्योदयावलीमें चैतन्यके संन्यास ग्रहण करनेके बाद भी एक बार श्रीहट्ट जानेकी बात लिखी है। (१) चैतनादेवने पूर्ववङ्गमें किस भाग वा किन किन देशोंमें पर्यटन किया था, उसका विवरण नहीं मिलता। सिर्फ इतना ही मिलता है, कि शिष्योंके साथ वे पद्मानदीके किनारे पहुंचे थे। इससे पहले ही पूर्ववङ्गमें चैतन्य पण्डितका यशः-सौरभ विकीर्ण हो गया था। उनको देशमें पा कर सभीको परम आनन्द हुआ। बहुतसे विद्यार्थी उनकी टिप्पणीकी सहायतासे अध्ययन करते थे और बहुतसे अर्थ सञ्चय कर उनके पास पढ़नेकी इच्छासे नवद्वीप जानेकी तैयारियां कर रहे थे। ऐसे समयमें चैतन्यको घरके द्वार पर पा कर लोगोंके आनन्दकी सीमा न रही। ये भी टोल स्थापित कर बदस्तूर शिक्षा देने लगे। वहां तपनमिश्र नामक एक निरीह सारग्राही ब्राह्मणके साथ इनका परिचय हो गया। चैतन्यने उन्हें बहुत कुछ उपदेश दे कर काशी भेज दिया और कह दिया कि भविष्यमें काशीमें ही उनसे फिर भेंट होगी। चैतन्यमङ्गलके कर्त्ताका कहना है, कि इस समय इन्होंने हरिनामकी नाव सजा कर सज्जन, दुर्जन, आचारी, विचारी, पतित और अधम सभीका परित्राण किया था। आश्चर्यकी बात तो यह है, कि जब नवद्वीपमें थे; तब ऐसे भाव कुछ भी न थे, फिर जब नदीया लौटे, तब भी ऐसे भाव न रहे, किन्तु वङ्गदेशमें पहुंचते ही इन्होंने अपने भावी जीवनकी उस अमोघ शक्तिका विस्तार कर सबको हरिनाममें मत्त कर दिया एवं स्वयं भी भक्तिरसमें मग्न हो गये। चैतनादेवका यह समय परम सुखमें बीत रहा था, इसी समय अचानक उनके घर विपत्ति आ पड़ी। उनके घरसे चलनेके कुछ दिन बाद दैवयोगसे रातको सर्पके काटनेसे उनकी स्त्रीका शरीरान्त हो गया। शचीके सुखके घरमें विषादका अन्धकार छा गया। कुछ दिन बाद चैतन्यदेव घर लौट आये। वङ्गदेशी छात्रोंने उन्हें नाना प्रकारकी कीमती चीजें भेंटमें दी थीं। कई महीने बाद फिर वे बहुत शिष्यों और धन सम्पत्तिके साथ नवद्वीपकी तरफ चले। उस समय इनका हृदय उत्साहपूर्ण था और बहुत दिन पीछे माता और भार्यासे मिलेंगे, इस आशासे आश्वासित था। किन्तु हाय! उस समय भी उन्हें मालूम नहीं था, कि इनकी आशा भीषण निराशामें परिणत होगी। संध्याके समय घर पहुंच कर उन्होंने सबसे पहले माताके चरण छुए, शचीने भी हृदयके उच्छ्वसित शोकके वेगको रोक कर आशीर्वाद दिया। एक पड़ोसीने आ कर चैतन्यको पत्नी-वियोगका समाचार सुनाया। इस निदारुण सम्वादको पा कर कुछ देरके लिए चैतन्यका मस्तक अवनत हुआ और आंखोंसे आंसू बहने लगे। अन्तमें माताको अत्यन्त कातर देख वे उपदेश देने लगे—"माता, दुःख क्यों करती हो? भवितव्यको कोई भी नहीं मेट सकता। संसारका यही नियम है, कोई किसीका नहीं होता। संसार अनित्य है, इसमें जो कुछ भी होता है, वह ईश्वरकी इच्छासे, जब उन्हींकी ऐसी मरजी है, तो दुःख किस बातका करती हो।"

चैतन्यने ऐसा उपदेश पहले कभी न दिया था। शायद पत्नी-वियोगके बादसे ही उन्हें संसार असार मालूम पड़ने लगा था। दिन दिन शोक घटता गया; चैतन्य फिर अपनी चतुष्पाठीका कार्य धड़ाकेसे चलाने लगे। इस समय वे अपने छात्रोंमें सन्ध्यावन्दन और तिलक आदि ब्राह्मणके कर्तव्य अनुष्ठान न देखनेसे उन

(१) चैतन्योदयावली, ४र्थ सर्ग।

पर शासन करते थे; किन्तु इस उम्रमें भी उनका चाञ्चल्य स्वभाव सर्वथा दूर न हुआ था।

सनातन नामक एक महंशज ब्राह्मण नवद्वीपमें रहते थे। वंशपरम्परासे वे राजपण्डित थे, उनको सम्पत्ति भी कुछ कम न थी। उनकी कन्या विष्णुप्रियासे चैतन्यके विवाहका प्रस्ताव चलने लगा। सनातनने इन्हें ईश्वरका अवतार समझ लिया था, इसलिये उनके आनंदकी सीमा न रही। किन्तु चैतन्यको इस विवाहमें सम्मति न थी, पीछे माके अनुरोधसे उन्हें विवाह करना पड़ा। अवस्था अच्छी न होने पर भी इस विवाहमें चैतन्यका खर्च अधिक हुआ था। नवद्वीपके प्रधान धनी बुद्धिमन्त खाँ, मुकुंद, सञ्जय और प्रधान प्रधान छात्रोंने इस विवाहमें काफी व्यय किया था। वास्तवमें देखा जाय तो चैतन्यका यह विवाह राजपुत्रोंके समान हुआ था।

किसी समय यहां केशव भारती नामक एक दिग्विजयी काश्मीरी पण्डित नवद्वीप जय करनेके अभिप्रायसे आये थे। एक तरहसे उन्होंने सभी पण्डितोंको परास्त कर दिया; पर चैतन्यने उनके द्वारा बनाये हुए एक श्लोकमें आलङ्कारिक दोष दिखा कर उनके गर्वको चूर कर दिया। केशव पराजित और चैतन्यके छात्रों द्वारा तिरस्कृत हो कर ठण्डे हो गये थे।

कुछ दिन बाद देशकी प्रचलित प्रथाके अनुसार चैतन्यने गया यात्रा की। साथमें उनके मौसा चन्द्रशेखर और बहुतसे उच्च छात्र भी थे। गङ्गाके किनारे किनारे चले आनेसे मान्दारनमें चैतन्यको ज्वर चढ़ आया। साथके लोग बड़ी चिन्तामें पड़ गये। अन्तमें चैतन्यने वहांके ब्राह्मणका पादोदक पीकर इस प्राणनाशक व्याधिके आक्रमणको व्यर्थ कर दिया।

चैतन्यने गया पहुंच कर ब्रह्मकुण्डमें स्नान किया और फिर वे पितृकार्य सम्पन्न करने लगे। पीछे ये साथियोंके साथ विष्णुपदचिह्नके दर्शनके लिए चले। गयाके पण्डे लोग पादचिह्नके आवरणको हटा कर पादपद्मकी महिमा गाने लगे। चैतन्यका भावप्रवण हृदय उसी समय उछलने लगा। उनके हृदयकी स्वाभाविक अवस्था ही भावमय थी, अब तक वह सिर्फ पाण्डित्यके वृथाडम्बरसे आच्छादित थी। शुभक्षणमें आवरण उन्मुक्त हो गया। चैतन्य टकटकी लगा कर पदचिह्नोंको देखने लगे; उनके मुंहसे बात न निकली, शरीर रोमांच हो आया और पसीना निकलने लगा। चैतन्यके इस भावको देख कर सभी स्तम्भित हो गये। बहुतसे तमाशा देखने आये, खूब भीड़ हो गई। इस दर्शकमण्डलीमें ईश्वरपुरी भी मौजूद थे। चैतन्यकी उस अवस्थाको देख कर ईश्वरपुरीने उन्हें थामा और चैतन्यको बाह्यज्ञान हुआ। इसके बाद ईश्वरपुरीके पास जा कर चैतन्य दशाक्षरी मन्त्रमें दीक्षित हुए। दीक्षाके बाद चैतन्यने अपने इष्टदेवसे ऐसी प्रार्थना की—"प्रभु, मैंने पुरीको अपना प्रभु समझ कर उन्हें ही अपनी देह अर्पित की है, मुझ पर अब ऐसी कृपा करें, कि जिससे मैं कृष्णप्रेमके सागरमें गोते लगा सकूं।"

इसके कुछ दिन बाद ईश्वरपुरी अन्तर्हित हो गये। अब दिनों दिन चैतन्यके धर्मराज्यका मार्ग प्रशस्त होने लगा, चैतन्यकी प्रकृति भी क्रमशः परिवर्तित होने लगी। उन्होंने ज्यादा बोलना भी छोड़ दिया। अत्यंत प्रयोजन होने पर साथियोंके साथ दो एक बात कहते सुनते थे, इसके सिवा प्रायः एकांतमें बैठ कर गुरुदत्त मन्त्रका जप किया करते थे। एक दिन इष्टमन्त्रका जप करते करते सहसा उन्मत्तकी तरह चिल्ला उठे—"कृष्णरे! बापरे! प्राणजीवन श्रीहरि! कहां गये प्यारे! मेरे प्राणोंको चुरानेवाले! मेरे ईश्वर! दिखलाई दे कर फिर तुम किधर चले गये?"

साथियोंने उनको बहुत कुछ समझाया और देश जानेके लिए अनुरोध किया। उन्होंने रोते हुए उत्तर दिया—"प्यारे बन्धुगण, आप लोग देश जाइये, मेरा अब देश जाना न होगा, जहां जानेसे मुझे प्राणनाथके दर्शन मिलेंगे मैं वहीं जाऊंगा।" इसके बाद एक दिन गभीर रात्रिको किसीसे बिना कुछ कहे सुने वे मथुरा चल दिये, पर मार्गमें दैववाणी सुन कर वे लौट आये। चन्द्रशेखर और चैतन्यके शिष्यगण बड़ी समस्यामें पड़ गये। पीछे वे नाना प्रकारसे समझा कर उन्हें घर ले आये पौष मासके अन्तमें सब नवद्वीप लौटे थे।

चैतन्यदेव गयासे नवजीवन प्राप्त कर घर लौट आये, पर अब न तो उनमें वह भाव ही रहा और न वह

चेहरा, स्वर्गीय ज्योतिके पड़नेसे उनका सब कुछ नया हो गया। पाण्डित्य, गर्व और चाञ्चल्यके स्थानमें व्याकुलता और विनयका साम्राज्य फैल गया। चैतन्य जिस समय भक्तिमें मग्न हो कर नदीयाके राजपथसे घरकी ओर जाने लगे, उस समयका भाव देख कर नवद्वीपके लोग दंग रह गये।

विश्वम्भर माता और विष्णुप्रियासे मिल कर अध्यापक महाशयके पास गये। उन्होंने पुनः अध्यापन प्रारंभ करनेका उपदेश दिया। विश्वम्भर श्रीमान् पण्डित, सदाशिव कविराज और मुरारिगुप्तसे गयाकी उस लीलाका वर्णन करने लगे; कहते कहते उनकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा बहने लगी, अन्तमें वे "हा कृष्ण कहां गये" कह कर रोने लगे। उक्त तीनों विद्वान् पहलेसे ही परम वैष्णव थे, चैतन्यके भावको देख कर उनके आनन्दकी सीमा न रही।

दूसरे दिन श्रीमान् पण्डितने श्रीवासके घर आये हुए वैष्णवोंसे चैतन्य पण्डितके नवजीवनका वृत्तान्त कहा। वैष्णवमण्डली आनन्दमें आ कर हरिध्वनि कर उठी। पूर्व दिनके कथनानुसार श्रीमान् पण्डित, सदाशिव और मुरारिगुप्त शुक्लाम्बर ब्रह्मचारीकी कुटीरमें यथासमय मिले। गदाधर पण्डितको न बुलाने पर भी वे चैतन्यके मनोदुःखकी कहानी सुननेके लिए शुक्लाम्बरके घर आ कर छिप गये। शुक्लाम्बर ब्रह्मचारी एक उदासीन वैष्णव थे और नाना तीर्थ पर्यटनके बाद वे नवद्वीपमें हो गङ्गाके किनारे एक कुटीर बना कर वहीं रहते थे। ये अत्यन्त सत्प्रकृति और विश्वम्भरके पूर्वपरिचित थे। इसीलिए चैतन्यने श्रीमान् आदि पण्डितोंको वहां जानेके लिए अनुरोध किया था। कुछ समय पीछे शचीनन्दन भक्तिरसके उद्दीपक श्लोकोंकी आवृत्ति करते करते वाह्यज्ञानशून्य हो कर वहां उपस्थित हुए और "हा नाथ! कहां जाते हो। ओः तुम्हें पा कर भी खो दिया" इत्यादि पागलों जैसी चेष्टा करते हुए मूर्छित हो गये। इनके मनोभावको समझ कर वैष्णवमण्डलीके हृदय प्रेमोल्लासमें मग्न हो गये। सभी लोग भक्तिरसमें डूब कर नाचने, हंसने और बीच बीचमें रोने भी लगे। कुछ देर बाद चैतन्यको चेतना हुई, वे मनोभावमें उदास हो कर अनुताप करने लगे। शुक्लाम्बरकी कुटीर प्रेममय हो गई। शाम होने आई, किन्तु किसीको भी इसकी चिन्ता नहीं, चैतन्यपण्डितकी तरह सभी प्रेमतरङ्गमें डूबे हुये थे। उन लोगोंकी ऐसी दशा देख कर गदाधर धैर्य न रख सके, घरमें बैठे बैठे ही रोने लगे। चैतन्यने जब रोनेका कारण पूछा तो लोग प्रशंसा करते हुए उन्हें बाहर ले आये। गदाधरने भी उनके साथ नाचना शुरू कर दिया। सन्ध्याके समय चैतन्यदेव भावमें ढलते हुए घरको चले। दिन भर खानाहार कुछ भी न हुआ था। शचीने बड़ी मुस्तैदीसे उन्हें नहलाया खिलाया। चैतन्यकी इस अवस्थामें देख कर सरलमती शचीदेवीके हृदयमें नाना प्रकारकी आशङ्काएं होने लगीं। नववधू विष्णुप्रियाको भी इस तरहके भावसे बड़ा भय हुआ था। दूसरे दिन सबेरे चैतन्य गङ्गास्नान करके पढ़ानेके लिए टोलको गये, पढ़ानेको भी बैठे पर हर एक प्रश्नके उत्तर और पाठकी व्याख्यामें वे हरिनामकी महिमा कहने लगे। इस तरह कहते कहते वाह्यज्ञानशून्य हो कर दश मुखसे भगवानको महिमा गाने लगे। शिष्यगण हालत अच्छी न समझ अपनी पोथी पत्रा बाँधने लगे। इसी तरह कुछ दिन बीत गये। चैतन्यने पढ़ाना छोड़ दिया। शिष्योंमें जो जो धर्मनिष्ठ थे, उन लोगोंने चैतन्यका अनुसरण किया, अन्य छात्र स्थानान्तरको चले गये।

चैतन्यदेवने उन शिष्योंको मिला कर एक सङ्कीर्तनका दल बनाया। ये ताली बजा कर शिष्योंको ताल और गायन सिखाने लगे। जिस कीर्तनकी मधुर लहरोंने वङ्गभूमिको प्लावित कर दिया था, जिसके तरङ्गाघातसे कितने ही पाषाणहृदयोंने गल कर नवजीवन प्राप्त किया था, उसीका यह सर्वप्रथम सूत्रपात है। इस कीर्तनमें यह गीत गाया जाता था—"हरि हरये नमः! गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।"

शची पुत्रकी ऐसी अवस्थाको देख कर बहुत डर गईं। चैतन्यको संभाषण करने पर प्रायः उसका उत्तर न मिलता था, जो भी दो एक उत्तर मिलता था, वह भी अप्रकृत होता था, सिर्फ भगवान्के नामकी महिमा मात्र सुननेमें आती थी। शची अब स्थिर न रह सकीं, यह संवाद उन्होंने अपने परम आत्मीय भक्त श्रीवासके

पास भेजा। श्रीवास चैतन्यको देखने आये, किन्तु इन्हें देख कर चैतन्यको कृष्णभक्ति और भी बढ़ गई, यहां तक कि श्रीवासको प्रणाम करते करते इन्हें मूर्छा आ गई। कुछ देर पीछे चेतना होने पर श्रीवासके साथ वार्तालाप हुआ। श्रीवास शचीको बहुत कुछ सान्त्वना दे कर चले गये। धीरे धीरे चैतन्यदेवके बारेमें जगह जगह तर्क वितर्क होने लगे। कोई भला, कोई बुरा और कोई कोई इन्हें पागल बतलाने लगा। कोई कुछ भी क्यों न कहे पर चैतन्यको देखनेसे वह भाव हृदयमें स्थान नहीं पाता था, सभी प्रेमभक्तिमें भूल जाया करते थे। जो वैष्णव भक्त थे, वे अत्यन्त आनन्दित हुए। विश्वम्भर अद्वितीय विद्वान् थे, उनके भक्तिपथ अवलम्बन करने पर उसकी उन्नति अवश्यम्भावी है, यही उनके आनन्दका प्रधान कारण था। इसी समय विश्वम्भर साधुसेवामें यत्नवान् हुए थे। श्रीवास आदि भक्तोंको देखते ही वे उनको नमस्कार और विशेष स्वागत करते थे। शक-सं० १४३० में "हरिहरये नमः" इत्यादि कीर्तनका प्रथम प्रचार हुआ था।

नवद्वीपमें अद्वैताचार्य नामक एक परम वैष्णव रहते थे। उनको चतुष्पाठीमें चैतन्यके बड़े भाई विश्वरूप भागवत आदि भक्तिग्रन्थोंका अध्ययन करते थे. उस समय बालक विश्वम्भर भी कभी कभी वहां जाया करते थे। अद्वैताचार्यने विश्वम्भरको देख कर उनको किसी महापुरुषका अवतार निश्चित कर रक्खा था। बहुत दिन बीत गये, तो भी उनको कल्पना कार्यमें परिणत न हुई। एक दिन उन्होंने एक मित्रके मुंहसे विश्वम्भरके नवजीवनकी कथा सुनी। उसके पहले दिन उन्हें भागवतके एक श्लोकका तात्पर्य समझमें न आनेके कारण उपवास करना पड़ा था। रातको स्वप्न देखा, कोई उनसे कह रहा था—"आचार्य! अब चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। जो समझमें नहीं आया है. उसका अर्थ इस प्रकार है। तुम्हारा संकल्प सिद्ध हुआ है, ईश्वर अवतीर्ण हुए हैं।" आचार्यने मित्रके मुंहसे चैतन्यकी कथा सुन कर कहा कि, "यदि विश्वम्भर वास्तवमें ही ईश्वर होंगे, तो अवश्य ही मेरे साथ साक्षात् करने आवेंगे।" इसके बाद ही चैतन्य एक दिन गदाधरके साथ अद्वैताचार्यके घर पहुंचे। उस समय आचार्य महाशय भक्तिरसमें डूब कर तुलसीकी सेवा कर रहे थे। विश्वम्भरको आगे बढ़नेका साहस न हुआ, हृदयमें भक्तिकी तरङ्गें बहने लगीं, वे महाभावमें मूर्छित हो गये। अद्वैतने मौका देख कर गङ्गाजल, तुलसीपत्र और चन्दनसे चैतन्यकी पूजा करके "नमो ब्रह्मण्यदेवाय" कह कर नमस्कार किया। इससे चैतन्यका अकल्याण समझ कर साथी गदाधर डर गये थे। कुछ समय पीछे निमाईको होश आया। वे भक्तिभावसे आचार्यको नमस्कार कर कहने लगे, "आचार्य, मुझ पर कृपा करें। बिना आपकी कृपाके मुझे कृष्णलाभकी आशा नहीं, मैं आपकी शरणमें आया हूं।"* अद्वैताचार्यने भी थोड़ी बहुत विश्वम्भरकी प्रशंसा करनेमें त्रुटि न रक्खी। इसके कुछ दिन बाद अद्वैताचार्य निमाईकी परीक्षा करनेके लिए नवद्वीपसे शान्तिपुर अपने घर चले गये।

जिस दिन अद्वैताचार्यने निमाईकी पूजा की थी, उसी दिनसे वैष्णवोंने उनको अन्य दृष्टिसे देखना सीखा था। सभी लोग चैतन्यको ईश्वर वा कृष्णका अवतार जान कर तन-मनसे उनकी भक्ति करने लगे। चैतन्यके भक्त-दलोंकी दिन पर दिन वृद्धि हो होने लगी। प्रतिदिन शामसे भक्तगण मिल कर चैतन्यके प्राङ्गनमें संकीर्तन करते थे। एक दिन आविष्ट अवस्थामें चैतन्यदेवने साथियोंके गलेमें बांह डाल कर कहा—"जब गयासे आया था, उस समय मैंने 'कानाई-नाटशाला' ग्राममें सुबहके वक्त एक भुवनमोहन परम सुन्दर कृष्णवर्णके शिशुको नाचते हुए अपने पास आते देखा था। उन्होंने मुझे आलिङ्गन करके मेरे मनको पवित्र कर दिया, किन्तु फिर उनके दर्शन न मिले।" इसके सिवा प्रति दिन ही वे प्रायः आवेशके समय कहा करते थे, कि 'भाई! कृष्णको बुला कर मेरे प्राणोंकी रक्षा करो। भाई! कृष्णकी सेवा करो, ऐसा दयालु देवता और नहीं है।" इसके बाद श्रीवासके प्रयत्नसे इनके घरमें कीर्तन होता था। इस समय एक अपूर्व कीर्तनीया मुकुन्ददत्त भी इनमें आ मिले थे।

* किसीके मतसे उस समय चैतन्यने "अद्वैताष्टक" का पाठ किया था। चैतन्यचरितमें वे ८ श्लोक अब भी देखनेमें आते हैं।

निमाईके भावोंका विराम नहीं था और न नयन-धाराका ही विश्राम था। हां, दूसरोंके देखने पर वे अति कष्टसे अपने भावोंको छिपाया करते थे। एक दिन गङ्गाके किनारे कुछ गायें देख कर और उनका रव सुन कर चैतन्यमें महाभावका उदय हुआ था।

दिन पर दिन भक्तोंकी वृद्धि होने लगी, कीर्तन भी पूर्ण मात्रामें चलने लगा। माघ मासमें पहले कीर्तन प्रारम्भ हुआ और फाल्गुन मासमें पूरी तरहसे कीर्तन होने लगा। चैत्र मासके अन्तमें इस कीर्तनके विषयमें सभी आन्दोलन करने लगे। इस समय अन्य लोगोंके प्रवशके भयसे द्वार बंद करके श्रीवासके मन्दिरमें कीर्तन होता था। गङ्गादास नामक एक भक्त द्वारको रक्षा करते थे। श्रीवासभवनमें गीत, वाद्य आदिका कलरव सुन कर सब देखने आते थे, किन्तु द्वार बंद होनेसे उनका प्रवेश न हो सकता था। इस पर बहुतोंने अनुमान कर लिया, कि ये लोग सभी मद्यपायी हैं और औरतोंको ले कर आमोद प्रमोद किया करते हैं, इसी लिए दूसरोंको घुसने नहीं देते। पाखण्डियोंके हृदय जलने लगे। उन लोगोंने श्रीवासको तंग करनेके लिए एक झूठी बातका प्रचार किया, कि "बादशाहने श्रीवासको सपरिवार पकड़ लानेके लिए कुछ आदमी भेजे हैं।" इस संवादसे श्रीवासका हृदय कांप उठा। किन्तु गम्भीर-प्रकृति विश्वम्भर जरा भी न डरे, उन्होंने कहा कि "यदि राजा तुम्हें पकड़वा बुलावेंगे भी, तो मैं जा कर उनको सभामें हरिगुण कीर्तन करूंगा। देख लेना, मेरे साथ राजा और सभासद्गण सभी रोने लगेंगे, तथा हम लोगोंका विश्वास कर सम्मान करेंगे।" चैतन्यके मुंहसे ये बातें सुन करके भी श्रीवासका सन्देह दूर न हुआ। निमाई समझ गये और बोले—"तुम्हें विश्वास नहीं होता, देखो इस चार वर्षकी लड़कीको कृष्णप्रेममें रुला सकता हूं या नहीं?" इतना कह कर श्रीवासको भ्रातुष्पुत्री (चैतन्यभागवत-प्रणेता वृन्दावनदासकी चार वर्षकी छोटी बहन) नारायणीसे कहा—"नारायणी मा, एक बार कृष्णप्रेममें रोओ तो भला।" नारायणी तत्काल ही 'हा कृष्ण! हा कृष्ण!' कहती हुई प्रेमावेगसे रोने लगी। यह देख कर श्रीवासका सन्देह दूर हो गया।

वैशाख मासके शेषमें या ज्येष्ठ मासके प्रारम्भमें एक दिन श्रीवासके घर दोपहरके समय चैतन्यमें नृसिंहभावका आविर्भाव हुआ, जिससे वे विष्णुखट्टा पर बैठ गये और श्रीवाससे उन्होंने अपना अभिषेक करनेके लिए कहा। श्रीवास और भक्तवृन्दोंने भावमें विभोर हो कर इन्हें ज्योतिर्मय देखा था। गङ्गाजल आदि देवोपचारोंसे इनका अभिषेक हुआ था। तभीसे समय समय पर निमाईमें देवभाव प्रकट होता था, आविष्टावस्थामें गौराङ्ग अपनेको ईश्वर समझा देते थे तथा भक्त लोग भी इनके ईश्वरत्वको प्रत्यक्ष करनेमें विमुख न होते थे। आवेशके चले जाने पर निमाईचंद्र पहलेकी तरह मनुष्य हो कर दास्यभावसे उपासना करते थे। इसके कुछ दिन बाद वराहावतारकी श्लोकावलीकी व्याख्या सुन कर वराहावेश हुआ था। चैतन्यदेवने वराहावेशमें मुरारिगुप्तके घर जा कर उनके सम्पूर्ण सन्देहोंको दूर कर दिया था। आवेशकी अन्तिम अवस्थामें चैतन्यदेव "मैं जाता हूं" कह कर मूर्छित हो जाते थे, किन्तु होश आने पर पूर्वभावका कोई भी चिह्न न दिखलाई देता था। इस तरह भक्तदल उन्हें नानारूपोंमें देखने लगे। इसी समयसे चैतन्यका ईश्वरत्व दृढ़ होने लगा था। जिन भक्तोंके मनमें कुछ सन्देह था, वह भी दिन पर दिन दूर हो गया, भक्तदलोंने एक वाक्यसे इन्हें ईश्वर बना डाला। इसी ज्येष्ठ मासमें नित्यानन्द आ कर मिल गये। (नित्यानन्द देखो।) अवधूत भक्तप्रधान नित्यानन्दके साथ मिलनेसे चैतन्यके भावमय हृदयमें और भी तरङ्गे बहने लगीं। निताई भी भावमें विभोर होने लगे, भक्तगण निताईको बलराम समझने लगे, चैतन्य भी निताई पर बड़े भाईके समान भक्ति-श्रद्धा करते थे।

इस समय चैतन्यदेवमें मुहुर्मुहु भावावेश होता था। एक दिन इन्होंने भावावेशमें आ कर श्रीवासके कनिष्ठ श्रीरामसे शान्तिपुर जा कर अद्वैताचार्यको ले आनेके लिए कहा। श्रीवासने शान्तिपुर जा कर अद्वैतको साथ चलनेके लिए अनुरोध किया एवं चैतन्यके ईश्वरावतारत्वका भी प्रतिपादन किया। पण्डित अद्वैताचार्यने शास्त्रीय प्रमाणोंके न मिलनेसे उन्हें ईश्वरावतार नहीं माना था, तथा उनकी परीक्षा करनेके लिए नव-

द्वोपमें आ कर छिप रहे। चैतन्य भावावेशमें अद्वैतको चालाकोको समझ गये और उन्हें बुलवा भेजा। इस समय चैतन्यमें नृसिंहभावका आविर्भाव हुआ था। यह देख सुन कर अद्वैतका मन भी मोक्ष गया। इसके कुछ दिन बाद अद्वैताचार्य चैतन्यको अपने इष्टदेवके रूपमें देख कर उन्हें ईश्वर कहते थे; किन्तु चैतन्यके कानमें भनक पड़ते ही, वे इसका प्रतिवाद कर अपनेको सामान्य मानव प्रतिपादित करते थे। परन्तु आविष्टावस्थामें अपने मुंहसे ही अपनेको ईश्वर कहते थे।

एक दिन कीर्तनानन्दमें मग्न हो कर विश्वम्भर "पिता पुण्डरीक! तुम्हें कहां देखूंगा।" कह कर रोने लगे। उस समय किसीने भी इसका विशेष आनन्द अनुभव नहीं किया था। कुछ दिन बाद चट्टग्राम-वासी पुण्डरीक विद्यानिधि आ कर चैतन्यके साथ मिल गये। ये भी एक परमभक्त थे। चैतन्य इनका बहुत सम्मान करते थे।

दो-एक मासके भीतर बहुतसे प्रधान प्रधान व्यक्ति चैतन्यके भक्त बन गये। उनमें नित्यानन्द, अद्वैत, गदाधर, श्रीवास, मुरारि, मुकुन्द, नरहरि, गङ्गादास, चन्द्रशेखर, पुरुषोत्तम (स्वरूप दामोदर,) वक्रेश्वर, दामोदर, जगदानन्द, गोविन्द, माधव, वासुघोष, सारङ्ग और हरिदास ही प्रधान थे।

विशेष विवरण उन्हीं शब्दोंमें देखो।

इस समय चैतन्य बहुतसे भक्तोंको मनोगत गोपनीय बातोंको प्रकट कर देते थे। इससे उनका विश्वास और भी बढ़ने लगा। एक दिन निमाईकी माताने स्वप्नमें देखा कि सामने निमाईको कृष्णमूर्ति और निताईको बलराम मूर्ति खड़ी है। इसी समय भक्त श्रीवास आदिके परामर्शसे वृद्धा शचीने अपने पुत्र चैतन्यको कृष्ण समझ उनकी अर्चना की थी।

इसके कुछ दिन पीछे रातको कीर्तन होता था। तबसे कीर्तनकी प्रकृति भी कुछ कुछ परिवर्तित होने लगी। अब तक सब मिल कर कीर्तन करते थे। चैतन्यके बहिरङ्गन तथा चन्द्रशेखर और श्रीवासके घरमें कीर्तन होता था। परन्तु अब वह नियम न रहा, पृथक् पृथक् सम्प्रदाय हो कर पृथक् पृथक् कीर्तन होने लगा। प्रत्येक एकादशीको रातको बड़ी धूमधामसे कीर्तन होता था। एक दिन आवेशमें आ कर चैतन्य "श्रीधरको ले आओ" कह कर चीत्कार कर उठे। परन्तु श्रीधरको कोई भी पहचान न सका। बादमें निमाईने कहा-"दरिद्र खपरैल बेचनेवाले श्रीधरको ले आओ।" इस पर भक्तगण उन्हें ले आये। श्रीधर एक परम भक्त व्यक्ति थे।

एक दिन रात्रिके समय श्रीवासके भवनमें कीर्तन हो रहा था, इतनेमें सहसा भावावेशमें गौराङ्ग मूर्छित हो गये। यह भावावेश प्रायः तृतीय प्रहर तक था, शरीरमें स्पन्दन वा श्वास प्रश्वास कुछ भी न था। भक्तगण चैतन्यको ऐसी अवस्थासे बड़े डर गये थे, अन्तमें कीर्तनके रवसे विश्वम्भरको होश हुआ। वैष्णवगण इसको महाभाव-प्रकाश कहा करते हैं।

मुकुन्ददत्त चैतन्यके अत्यन्त प्रियपात्र थे, इनके सुमधुर गायनसे उन्हें बड़ा आनन्द होता था। विश्वंभरमें एक दिन महाभावका प्रकाश हुआ था। उस दिन उन्होंने सभी भक्तोंको अभीष्ट वर प्रदान किया था।

चैतन्य रात दिन कृष्णप्रेमानन्दमें तन्मय रहते थे। इससे शचीको बड़ा कष्ट होता था। शचीको इच्छा थी कि चैतन्य गृहस्थ हो कर श्रीमती विष्णुप्रियाके साथ ऐश आराम करें। विश्वम्भर माताके मनोगत भावको जान कर उनके सन्तोषके लिए रातको और कभी कभी दिनको भी श्रीमतीके साथ आमोद प्रमोद करते थे। एक दिन चैतन्यदेव विष्णुप्रियाके साथ बैठे थे कि इतनेमें निताई नंगे हो कर वहां पहुंचे, इतने पर भी विश्वंभरके हृदयमें विकार उत्पन्न नहीं हुआ था। इस घटनाका वर्णन चैतन्यभागवतमें खूब विस्तारसे किया गया है। किन्तु चैतन्यचरितामृत आदि ग्रन्थोंमें इसका कुछ उल्लेख नहीं है।

इस समय अधिकांश लोग ही चैतन्यके निकट उपदेश लेने आते थे। विश्वम्भर सभीको वृहन्नारदीयके इस श्लोकका उपदेश दिया करते थे—

"हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥"

इसके सिवा वे अपने द्वारा प्रवर्तित धर्मका सूत्र-स्वरूप यह श्लोक भी कहते थे—

"तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥" (पद्यावली ३०५०)

इस समय श्रीवासके घरमें द्वार बंद करके कीर्तन होता था। इसी तरह एक वर्ष बीत गया। पाखण्डी लोग भीतर न जा सकनेके कारण इनको नुकसान पहुंचानेकी कोशिश करने लगे। गोपाल चापाल नामके एक पाखण्डीने एक दिन रातको हलदी, सिन्दूर, रक्तचन्दन और शराब आदि श्रीवासके दरवाजे पर रख दिया था। उसकी इच्छा थी कि सबेरे इसे देख कर लोग इन लोगोंको कपटाचारी समझें। सुनते हैं इसके कुछ दिन बाद गोपालको भयानक कुष्ठरोग हुआ था। और एक दिन एक सरलचित्त ब्राह्मण प्रेममें मत्त हो कर कीर्तन सुनने आया था, किन्तु द्वार रुद्ध होनेसे वह कीर्तन न सुन सका। उसके बाद किसी दिन चैतन्य दल सहित गङ्गा स्नानके लिए जा रहे थे, उस समय उस ब्राह्मणने आ कर चैतन्यसे कहा—"तुमने मुझे दुःख दिया है, इसलिए तुम्हारा गार्हस्थ्य सुख नष्ट हो जावे।" विश्वम्भर इस शापको सुन कर अत्यन्त आनन्दित हुए और ब्राह्मणको धन्यवाद देते हुए गङ्गाकी तरफ चल दिये। इसके बाद चैतन्यकी आम्रलीला हुई। वैष्णव कवियोंका कहना है कि विश्वम्भरने भक्तोंको मन-स्तुष्टिके लिए एक दिन एक आमकी गुठली बोयी थी, देखते देखते उसका एक लम्बा चौड़ा पेड़ हो गया, आम भी लग गये, पक भी गये; भक्तगण उछल कर डालियों पर चढ़ गये और एक एक आम तोड़ कर खाने लगे। सबका पेट तो भर गया, पर आम ज्योंका त्यों ही बना रहा! प्रत्येक वर्षके अन्तमें इस प्रकारकी आम्रलीला की जाती थी।

अब तक गोरका द्वार बंद करके धर्म साधन होता था, बाहरके लोग भीतरका तत्त्व कुछ भी न जानते थे। एक दिन भावावेशमें गौरचन्द्रने नित्यानन्द और हरिदासको बुला कर कहा—"तुम दोनों आजसे नवद्वीपके प्रत्येक घर घरमें जा कर हरिनामका प्रचार करना प्रारम्भ कर दो। जो भी मिले, उसको विनती करके हरिनाम साधन करनेका उपदेश दो। इसमें ब्राह्मण, चण्डाल वा स्त्री पुरुषका कोई भेदभाव न रखना, सभी समान अधिकारी हैं। शामको प्रचार-वृत्तान्त मुझसे आ कर कह जाना।" प्रचारका आदेश सुन कर भक्त-मण्डली महा आनन्दित हुई। नित्यानन्द और हरिदास प्रचारक हो कर घर घर हरिनामका प्रचार करने लगे। वे मनुष्यमात्रको देखते ही यह उपदेश दिया करते थे—

"बोलो कृष्ण, गावो कृष्ण, भजो कृष्ण कृष्ण रे।
प्राणकृष्ण, धन कृष्ण, कृष्ण ही जीवन रे। ऐसे कृष्ण बोलो भाई करो मन एक रे।"

जिस हरिनामके प्रचारक्षेत्रकी वृद्धि हो कर किसी समय प्रायः समस्त भारतवर्षमें कृष्णनाम व्याप्त हो गया था, उसका सूत्रपात इसी तरह हुआ था। जगाई माधाई नामक दो पापाचारी इन्हींके उपदेशसे परम वैष्णव हुए थे। जगाई-माधाईके-परित्राणमें विश्वम्भरका कोई भी माहात्म्य प्रकट न हुआ था, केवल निताईकी शक्तिसे ही उनका परित्राण हुआ था। इन दोनोंने पहले निताईको मारा था, यह सुन कर विश्वम्भर अत्यन्त क्रुद्ध हो कर दोनोंको दण्ड देनेके लिए उद्यत हुए थे, पीछे नित्यानन्दके अनुनय करने पर शान्त हुए थे। इनके विनीतभावसे वैष्णवधर्ममें दीक्षित होने पर चैतन्यने इनके साथ बहुत ही सद्व्यवहार किया था। इसके बाद कुछ दिन तक और कोई विशेष घटना न हुई। एक दिन अद्वैतके साथ कलह करके निमाई गङ्गामें कूद पड़े थे। उस समय निमाईको पानीमें कूद पड़नेका एक रोगसा हो गया था। एक दिन चैतन्य गङ्गा नहाने जा रहे थे, कि रास्तेमें एक माननीय ब्राह्मण-पत्नी उनके सामने पड़ गई और पैर छू कर कहने लगी—"तुम मेरा उद्धार करो।" यह देख कर चैतन्य स्तम्भित हो गये। उनका मुखकमल मुरझा गया। कुछ देर बाद वे आत्म-हत्या करनेके लिए गङ्गामें कूद पड़े। आखिरको निताईने उन्हें किनारे लगाया। चेतना आने पर निमाई अपनी लघुता दिखलाते हुए "गुरु ब्राह्मणपत्नीने मेरे पैर छू कर मुझे कृष्णके सामने अपराधी ठहराया है" इत्यादि कह कर अफसोस करने लगे। शुक्लाम्बरका परिचय ऊपर दे चुके हैं। विश्वम्भर उन्हें श्रद्धाकी

दृष्टिसे देखते थे और शुक्लाम्बर भी इनको हृदयसे भक्ति करते थे। एक दिन चैतन्यने निताई आदिके साथ शुक्लाम्बरके आश्रममें जा कर छोटे कदलीवृक्षके श्वेत-सारकी तरकारीके साथ भात खाया था। शुक्लाम्बर पहले कुछ डर गये थे, क्योंकि सामाजिक नियमानुसार निमाई उनका अन्न नहीं खा सकते थे। उन्होंने भी अस्वीकार किया था, आखिरको गौराङ्गकी बातको न टाल सकनेके कारण उन्हें उक्त साग-भात खाना पड़ा था।

एक दिन गौराङ्गने श्रीवासके मुंहसे कृष्णलीला सुनते सुनते कृष्णलीलाका अभिनय करनेके लिए प्रस्ताव किया। इस पर वैष्णवमण्डलियोंने मिल कर चन्द्रशेखर आचार्यके घर कृष्णलीलाका अभिनय किया। विश्वम्भर राधिका बने थे। इनके मनोरम अभिनयसे भक्तोंमें कृष्णप्रेम हजार गुना बढ़ गया था। कहते हैं कि इस अभिनयकाण्डमें विश्वम्भरने अद्भुत शक्ति प्रकट की थी, यही कारण है कि जिससे अभिनय-समाप्तिके बाद भी एक सप्ताह तक चन्द्रशेखरका गृह ज्योतिर्मय था।

इससे कुछ दिन पहले अद्वैताचार्य हरिदासको साथ ले कर शान्तिपुर चले गये थे। गौराङ्गके अदर्शनसे उनके मनको गतिने फिर पल्टा खाया। वे फिर भक्तिकी अपेक्षा ज्ञानका प्राधान्य प्रतिपादन करने लगे। कुछ दिन बाद ही चैतन्य निताईके साथ शान्तिपुरको चल दिये। जाते समय गङ्गाके किनारे ललितपुर ग्राममें एक सन्न्यासीके आश्रममें अतिथि हुए थे। किन्तु वीराचारी संन्यासीके आचार व्यवहारसे तंग आ कर वहांसे प्रस्थान किया। इन्होंने सोचा कि तीर-पथसे चलनेसे शायद फिर ऐसे कपटाचारी संन्यासीके चक्करमें आना पड़े, इसलिए गङ्गामें तैर कर शान्तिपुर पहुंचे। चैतन्यने अद्वैतके घर जा कर उनसे पूछा "अरे नेढ़ा क्या अब तू भक्ति-मार्गकी अवहेला करता है?" अद्वैतने उत्तर दिया "हमेशासे ज्ञान ही बड़ा है, भक्ति तो स्त्रियोंका धर्म है। बिना ज्ञानके भक्ति कुछ भी नहीं कर सकती।" चैतन्यने इसका फिर कोई उत्तर नहीं दिया। वृद्ध आचार्यको पकड़ कर उन्होंने आंगनमें दे पटका और घूंसे पर घूंसा मारने लगे। अद्वैतने मार खा कर चूं तक न निकाली और अन्तमें उनके विचार पलट गये। उठ कर वे चैतन्यके पैरों पड़ गये और भक्तिकी अनेक प्रशंसा करने लगे। चैतन्यने आचार्यको थाम कर कहा-"यह आप क्या कर रहे हैं, मुझे क्षमा कीजिये" इतना कह कर फिर वे उनके पैरों पड़ गये। कुछ देर पीछे अनमने भावसे उन्होंने कहा कि "गुसाईं! मैंने तो कुछ चपलता नहीं की।" निमाईके इस व्यवहारसे सभी लोग दंग हो गये। इसके बाद गङ्गास्नान करके निताई, अद्वैत और निमाई भोजन करने बैठ गये। यहां आ कर वे पहले जो घटना हुई थी उसे बिल्कुल ही भूल गये।

शालिग्रामवासी गौरीदास पण्डित गृहत्यागी हो कर शान्तिपुरके इस पार अम्बिका-कालनामें रहते थे। ये भी एक परम भक्त थे। कहते हैं एक दिन निमाई सिर पर एक डांड़ (चप्पू) ले कर गौरीदासके घर पहुंचे थे और उसके द्वारा तापित जीवनको भवनदीसे पार उतारनेके लिए उपदेश दिया था। गौरीदासकी मृत्युके बाद वह डांड़ (चप्पू) शायद उनके प्रिय शिष्य हृदयचैतन्यको मिला था। यह अद्भुत आख्यायिका भक्तिरत्नाकरमें लिखी है। गौराङ्ग कुछ दिन शान्तिपुरमें रह कर नवद्वीपको लौट आये।

इसके कुछ दिन बाद गौरचन्द्र भक्तोंके साथ विष्णुगृहमार्जन और नाव पर चढ़ कर नाना प्रकारकी कृष्णलीला करने लगे।

प्रवाद है कि नदीयाके एक पार्श्वमें जहानगरमें सारङ्गदेव नामक एक परम साधु रहते थे। सारङ्गदेव जब चैतन्यके भक्त बने तब चैतन्यने उनको एक शिष्य रखनेका उपदेश दिया। किन्तु सारङ्गदेव योग्य शिष्यके अभावसे किसीको भी शिष्य बनानेमें सम्मत न हुए। अन्तमें चैतन्यके कथनानुसार स्थिर हुआ कि सुबह जिसका मुंह देखो उसे ही अपना शिष्य बनाओ। दूसरे दिन सुबह ही सारङ्गदेव गङ्गाके किनारे आंख मुंद कर जप करने बैठ गये, कुछ समय बीतने पर एक मृतबालक का शरीर बहता हुआ आया और उनकी देहसे आ लगा। आंखें खोल कर देखा तो सामने मरा बालक नजर आया, वे विचारने लगे कि "कैसे आश्चर्यकी बात है! जिसको देखूंगा, उसे ही मन्त्र दूंगा, यह तो मृत

शरीर है, अब क्या करूं।" बहुत कुछ सोच विचारके बाद निश्चय किया कि "गौरके वचन मिथ्या नहीं हो सकते, देखूं क्या होता है, इसे हो मन्त्र देता हूं।" मारकण्डेयने मृत बालकके कानमें मन्त्र दिया, देखते देखते बालक चेतना हो गया। कुछ देर बाद चैतन्यदेव भी वहां आ पहुंचे। उनको देखते हो इनका प्रेम उमड़ आया, सब मिल कर बड़े उत्साहसे हरिनाम गाने लगे। इस घटनाको जान कर सब चौंक गये और निमाईको ईश्वर समझने लगे। पीछे मालूम हुआ कि उस बालकका नाम मुरारि गोस्वामी और सरग्राममें उसका वास था। इसको रातके वक्त सर्पने काटा था, सबने मरा जान कर गङ्गामें बहा दिया था, बहते बहते वे यहां तक आ पहुंचे थे।

धीरे धीरे श्रीमद्भागवतमें श्रीकृष्णके जितने उत्सवोंका उल्लेख था, चैतन्यदेव भक्तोंको साथ ले कर उन सबका अनुष्ठान करने लगे। वे जिस समय जो उत्सव करते थे, भक्तगण अपनेको भूल कर उसीमें लग जाया करते थे। उस समय नवद्वीपमें दर असल सुखस्रोत बहने लगा, सर्वदा हरिनाम कीर्तन और धर्मकथा होनेके कारण सभी लोग ईश्वर-प्रेममें मुग्ध होने लगे। किन्तु एक दल पाखण्डी हिन्दू और मुसलमानोंके लिए यह नितान्त ही असह्य हो गया। गौड़राजके दौहित्र चांदकाजी नामके एक मुसलमान नवद्वीपमें ही रहते थे। उनके पास कुछ पठान सेना भी थी। राजाकी आज्ञासे उन्होंने इस जगहका शासन-भार ग्रहण किया था। पाखण्डी हिन्दू और मुसलमानोंने काजीके पास आ कर कीर्तन बंद करा देनेकी प्रार्थना की। पहले तो वे कीर्तन बन्द करानेके लिए राजी न हुए थे, किन्तु पीछे कर्मचारी और हिन्दुओंके उत्पीड़न करनेसे उन्हें कीर्तनमें वाधा पहुंचानी ही पड़ी। उन्होंने आदेश निकाला कि "आजसे नवद्वीपमें कोई भी कीर्तन न कर सकेगा, करनेसे अर्थदण्ड और आवश्यक समझने पर जातिनाश एवं प्राणदण्ड भी हो सकता है।" नवद्वीपवासी उस समय प्रेममें उन्मत्त हो गये थे, किसीने भी काजीके आदेश पर ध्यान नहीं दिया। आखिरको काजी स्वयं कुछ सेनाके साथ किसी कीर्तन-स्थान पर उपस्थित हुए। उन्होंने मृदंग आदि तुड़वा दिये और अपने मुंहसे सबको भय दिखला कर कीर्तन भङ्ग करनेका आदेश दिया। सबको बार लोग डर गये और कीर्तन बंद करके विश्वंभरके पास संवाद देने चले।

संवाद पाते ही चैतन्यदेवको अत्यन्त क्रोध आया, उन्होंने सबको आश्वास दे कर कहा—"तुम्हें जरा भी चिन्ता न करनी चाहिये. मैं आजही चांदकाजीसे बदला लूंगा।" चैतन्यने जाहिर कर दिया कि "आज ही सामके वक्त सब कोई कीर्तन करनेका साज और हाथमें प्रदीप ले कर मेरे साथ कीर्तन करनेको चलें।" सबने ऐसा ही किया। सन्ध्याके समय चैतन्यदेव दलबलके साथ कीर्तनको निकले। वैष्णवग्रन्थमें इस नगर-कीर्तनका बहुतही उमदा वर्णन है।

गौराङ्ग दलबल सहित काजीके घर पहुंचे। पहले उनके लोगोंने काजी पर कुछ दौरात्म्य करना चाहा था, पर निमाईने सबको मना कर दिया। चांद पहले तो लोगोंकी भीड़ देख कर भाग गये थे, पीछे चैतन्य उन्हें बुला लाये। चैतन्यको देखते ही चांदके भाव पलट गये, वे भी कृष्णके भक्त हो गये। विश्वम्भरके साथ उनका गोवधके विषयमें बहुतसा शास्त्रार्थ हुआ; आखिर यही निश्चत हुआ कि क्या हिन्दू और क्या मुसलमान सभीके लिये गोवध करना अकर्तव्य है। काजीके दमन विवरण चैतन्यभागवतमें विस्तृतरूपसे लिखा है। उक्त काजीके वंशधर भी वैष्णवधर्मावलम्बी हो गये थे। इस तरह नवद्वीप निष्कण्टक हुआ। विश्वम्भरने काजीके मकानसे लौटते समय श्रीधरके जीर्ण जलपात्रमें जल पीया था।

नगर-कीर्तन करके चैतन्यने फिर घरके किवाड़ बंद कर दिये। बाहरके लोगोंके साथ आलाप व्यवहार बिलकुल ही घट गया, रात दिन लगातार चैतन्यकी आखोंसे अश्रुधारा बहने लगी। दिन पर दिन कीर्तन करनेमें भी असमर्थता दीखने लगी। भक्तमण्डलीने अद्वैताचार्यको नायक बना कर कीर्तन करना प्रारंभ किया। चैतन्य भी कभी कभी उसमें साथ देते थे। इस समय चैतन्य बीच बीचमें अचेतन हो जाते थे और प्रायः सर्वदा भावमें तन्मय रहते थे। एक दिन चैतन्य

विष्णुपूजा करनेके लिए स्नान करके आसन पर बैठे; बैठनेके साथ ही अश्रुधारासे परिधेय वस्त्र भीग गया। वस्त्र बदल कर पुनः बैठे, पर फिर भी यही हाल हुआ। इसी प्रकार जब ४।५ बार बैठने पर भी अश्रुधारा बंद न हुई, तब उन्होंने सोचा कि अब मुझसे कृष्णपूजा न हो सकेगी। उन्होंने गदाधरको बुला कर कहा "गदाधर! मेरे भाग्यमें अब पूजा करना नहीं बदा. आजसे तुम्हीं विष्णुपूजा करो।" इसी दिनसे चैतन्यकी विष्णुपूजा छूट गई, वे दिवानिशि नाम जपने लगे।

वैष्णव कवियोंका कहना है कि उस समय तक अद्वैत चैतन्यको ईश्वर न मान सके थे, इसीलिए एक दिन कीर्तन करते समय आचार्यके मनमें बड़ा दैन्य उपस्थित हुआ था। वे मानसिक दुःखसे श्रीवासके घर पर कातर हो आर्त्तनाद करते थे। चैतन्यको मालूम होते ही वहां उपस्थित हुए और विश्वरूप दिखला कर उन्होंने उनका भ्रम दूर कर दिया। इसके उपरान्त एक दिन भागीरथी पुलिनकी मनोहर वनराजि देख कर चैतन्यको श्रीकृष्णकी रासलीलाकी याद आ गई। उसके बाद उन्होंने सेवकोंके साथ रासलीला की थी।

इस समय भी श्रीवास-घरमें कीर्तन होता था, कभी कभी चैतन्य भी पहुंच जाते थे। एक दिन चैतन्यदेव श्रीवास आदि भक्तोंके साथ कीर्तन करते करते बाह्यज्ञान खो कर प्रेममें उन्मत्त हो गये थे, इतनेमें घरके अन्दर श्रीवासके पुत्रके मरनेकी खबर आई, पर श्रीवासने उस पर तनक भी ध्यान न दिया, वे पूर्ववत् प्रफुल्ल चित्तसे नृत्य करने लगे। परन्तु अन्य दासोंको इस संवादसे दुःख हुआ। कुछ देर बाद निमाईको होश आया। कहते हैं, चैतन्यने जब मृत शिशुको बाहर ला कर उसका अङ्गस्पर्श किया, तब वह बालक शायद बोल उठा था कि "मेरा इस जगत्का कार्य समाप्त हो चुका। अब मैं अच्छी जगह जा रहा हूं। प्रभो! ऐसी कृपा करो जिससे तुम्हारे चरणोंमें मेरी मति रहे।" चैतन्यके हाथ उठाते ही बालक मर गया। इस घटनासे श्रीवासके परिवारवर्गके दुःखका बहुत कुछ ह्रास हुआ था। चैतन्यने दलबलके साथ जा कर उस बालककी अन्त्येष्टिक्रियाकी थी। इस समय पुराणादि शास्त्रोंमें, कृष्णविरहमें गोपियोंकी जैसी अवस्थाका वर्णन है, चैतन्यकी भी वैसी अवस्थाएं हुई थीं। वैष्णव कविगण कृष्णविरहावस्थाके नामसे इसका वर्णन करते हैं।

इन दिनों विश्वम्भर अपने घर बैठ कर ही प्रायः नामकीर्तन किया करते थे। एक दिन चतुष्पाठीका एक छात्र चैतन्यको देखने आया था, उस समय चैतन्य गोपीके रूपमें बैठ कर गोपीका नाम उच्चारण कर रहे थे। छात्रने कहा—"महाशयजी! आप तो पण्डित हैं, भला बतलाइये तो सही कि आप कृष्णनाम छोड़ कर गोपबालाका नाम क्यों जप रहे हैं?" इस पर चैतन्यको गुस्सा आ गई। वे एक लम्बा बांस उठा कर उसे मारने चले। इस घटनाके बादसे नवद्वीपके सम्पूर्ण छात्र उनके विरोधी हो गये। अध्यापकमण्डली तो पहलेसे ही विरक्त थी। वैष्णव कवियोंका कहना है कि इन लोगोंके परित्राणके लिए ही प्रभु चैतन्यदेवने संन्यास-धर्म अवलम्बन किया था। उन्होंने विचारा था कि "संन्यासी होने पर ये लोग भी मेरा उपदेश सुनना चाहेंगे और मेरे भक्त हो जायंगे।" (चैतन्य-चरित आदि लीला)

चैतन्यमंगलके मतसे इस समय निमाईने एक स्वप्न देख कर संन्यास अवलम्बन किया था। स्वप्नका सारांश यह था—कोई एक महापुरुष आ कर मानो निमाईसे कह रहे हैं कि "निमाई, ईश्वरने तुमको जिस कामके लिए भेजा था तुम उसे भूल गये, शीघ्र ही संन्यास-धर्म ग्रहण करो।" यह सुन कर चैतन्य चौंक गये, पहले भक्तगण और बालिका स्त्रीके मोहसे तथा माताके स्नेहसे संन्यास ग्रहण करनेमें सम्मत नहीं हुए। महापुरुषने तब भी बार बार संन्यासके लिए उपदेश दिया। चैतन्यने यह स्वप्नवृत्तान्त वा पूर्वोक्त मनोगत भाव नित्यानन्द आदि कई एक प्रधान भक्तोंसे कहा। क्रमशः नवद्वीपमें इनके संन्यास ग्रहणका जनरव हो गया। इसके कुछ दिन बाद नवद्वीपमें केशवभारती आ पहुंचे। ये भारती सम्प्रदायके एक उदासीन संन्यासी थे, भागीरथीके तीरस्थ कण्टकनगरी (वर्तमान नाम कांटोया) में इनका आश्रम था। चैतन्य जब नगरभ्रमणके लिए निकले तब रास्तेमें इनसे मुलाकात हो गई। देख कर चौंक गये, सोचने लगे 'क्या ये वे ही हैं? उस दिन स्वप्नमें क्या इन्हीं

महापुरुषके दर्शन हुए थे ।' फिर उन्हें वे आदरके साथ घर ले गये, वहां उनसे स्वप्नवृत्तान्त और मनोगत भाव कह सुनाया। भारती उस पर सहमत हुए। आखिर उत्तरायण-संक्रान्तिके दिन दीक्षाका दिन निश्चित हुआ।

इसके उपरान्त विश्वम्भर स्वयं ही भक्तोंसे गृहस्थी छोड़नेकी बात प्रकट कर विदा लेने लगे। किन्तु विष्णुप्रियासे इस बातका जिक्र भी न किया।

शक सं० १४३१ की उत्तरायण-संक्रान्तिके पहले दिन विश्वम्भरने सवेरेसे श्रीवासभवनमें उन्मत्तभावसे कीर्तन किया था। रातको विष्णुप्रियाके साथ एक शय्या पर सोये तो थे, पर उन्हें नींद नहीं आई। शचीको पहलेसे ही गृहपरित्यागका दिन मालूम था, इसलिए उन्हें भी नींद न आई। उस दिन गदाधर और हरिदास चैतन्यके बाहरवाले घरमें सोये थे। चारदण्ड रात्रि रहते चैतन्यदेवने इष्टदेवके पादपद्मोंका स्मरण कर और भगवान्‌के ऊपर माता और पत्नीका भार सौंप कर शय्या छोड़ दी। इस समय कहते हैं कि प्रियतमाके मुखारविन्दको देख कर चैतन्यके हृदयमें विकारभावका सञ्चार हुआ था। उन्होंने सतृष्ण दृष्टिसे प्रियतमाका मुख चिरकालके लिए एक बार देख लिया। वे कुछ देर तक स्तम्भित रह कर अपनी दुर्बलताको सौ सौ बार धिक्कारने लगे और जोरसे द्वार खोल कर घरसे बाहर निकले। पदशब्द सुन कर गदाधर और हरिदास भी उनके पास पहुंचे और दोनोंने उनके साथी बननेका प्रस्ताव किया। चैतन्यने उनसे मना कर दिया। शचीमाता पुत्रका गमनोद्योग जान कर बाहर दरवाजे पर बैठी थीं। चैतन्य जननीको तदवस्थ देख कर वहीं बैठ गये और उन्हें नाना उपदेश देने लगे। शची कुछ भी उत्तर न दे सकी, केवल आंसुओंसे छाती भिगो कर पुत्रके मुंहको ओर ताकती रहीं। विश्वम्भरने शोकाभिभूता पतिता माताको प्रदक्षिणा दे कर पदधूलि ली और बिना कुछ कहे द्वार खोल कर एक बारगी घरसे निकल कर चल दिये। नवद्वीपमें अंधेरा हो गया। शचीदेवी मूर्छित हो कर जड़पदार्थकी तरह दरवाजे पर पड़ी रहीं। सरला विष्णुप्रियाकी कालनिद्रा उस समय तक भी न टूटी थी, गदाधर और हरिदास सिर पर हाथ रख कर रोने लगे। घरसे निकलते ही चैतन्यके हृदयमें जितना प्रेम, जितना भाव, जितना आनन्द और भविष्य जीवनका ज्योतिर्मय आभास था, सब जाग उठा। रास्ते जाते जाते वे घर द्वार, माता, स्त्री और बन्धुओंकी चिन्ता बिलकुल भूल कर आनन्दसागरमें मग्न हो गये। गाते गाते, नाचते नाचते, हंसते हंसते, गिरते पड़ते, दुलते दुलते कांटोआके मार्ग पर मन्थरगतिसे चलने लगे। दिन हो गया, क्रमशः चैतन्यके गृहत्यागकी वार्ता भक्तमण्डलीमें प्रसिद्ध हो गई, सभी लोग प्रभुके विच्छेदयन्त्रणासे अधीर हो रोने लगे। नित्यानन्द, गदाधर, मुकुन्द, चन्द्रशेखराचार्य और ब्रह्मानन्द ये पांच आदमी चैतन्यके निषेध करने पर भी उनके पीछे पीछे चल दिये और उनके साथ हो लिए। तमाम दिन बीत गया, चैतन्यदेव सन्ध्याके प्राक्कालमें बन्धुओंके साथ केशव-भारतीकी कुटीरके द्वार पर उपनीत हुए।

उपरोक्त घटना चैतन्यभागवत और चैतन्यमङ्गलके अनुसार ही लिखी गई है, किन्तु कविकर्णपुरने अपने चैतन्यचन्द्रोदयमें संन्यास यात्राका वृत्तान्त अन्य प्रकार लिखा है। उनके मतसे चैतन्यदेवने संन्यास ग्रहणकी बात किसीसे भी कही न थी। केवल शचीको इशारेमें इतना कहा था कि "किसी प्रयोजनसे मैं गृहत्याग कर तीर्थयात्रा करूंगा, आप इसके लिए उद्विग्न न होवें।" जिस रातको गौराङ्ग चले गये थे, उसके बाद शचीने उनको घर न देख कर यह विचारा था कि विश्वम्भर श्रीवासके घर कीर्तन करते होंगे। श्रीवास आदि भक्तोंने ऐसा समझा कि प्रभु अपने घरको चले गये हैं। यथार्थमें रात्रिका कीर्तन समाप्त होने पर जब भक्तगण अपने अपने घर चले गये, तब चैतन्य भी घर जानेका बहाना बता कर बाहर निकल पड़े। उनके साथ केवल आचार्यरत्न थे। कुछ प्रयोजन है, ऐसा कह कर वे उनके साथ गंगाकी तरफ चलने लगे। मार्गमें नित्यानन्दसे भेंट होने पर उन्हें भी साथ ले लिया। ये तीनों गङ्गा पार हो कर कांटोयाकी ओर चलने लगे। दिन बीतने पर भारतीके द्वार पर उपस्थित हुए। सुबह होते ही नवद्वीपमें चैतन्यके चले जानेकी खबर फैल गई। शची और भक्तोंको कुछ भी मालूम न हो पाया कि चैतन्य किधर

गये। तीसरे दिन जब आचार्यरत्न कांटोआसे लौटे, तब रहस्य प्रकट हुआ।

जिस समय श्रीगौरांग केशव भारतीके द्वार पर उपस्थित हुए, उस समय प्रदोषकाल था। सन्ध्याके क्षीण आलोकमें चैतन्यने देखा कि मानो उस स्वप्नका वही दृश्य सामने घूम रहा है, उनका हृदय उसी क्षण प्रेममें पुलकित हो गया भारती गुसाँई मनुष्यकी आहट सुन कर शीघ्र ही बाहर आये और साथियोंके साथ चैतन्यको देख कर उन्होंने प्रेमपुलकित हो अन्तरसे उनका आलिङ्गन किया। गौराङ्गने भी यथारीति भारतीकी पदवन्दना की और गुरुदेव कह कर उनका सम्बोधन किया तथा यह भी कहा कि "कल ही मुझे संन्यासदीक्षा देनी पड़ेगी।" केशव-भारती पहले इस बात पर राजी न हुए थे। क्योंकि एक तो इनकी नवीन अवस्था थी, दूसरे घरमें बालिका स्त्री और वृद्धा माता थी, अवस्थाको विचारते हुए संन्यासी केशवकी आंखोंसे जलधारा बहने लगी। उन्होंने कहा—"निमाई! दरअसल तुम्हें संन्यासी बनानेमें मेरा हृदय कांप रहा है!" चैतन्य फिर भी प्रेममें विह्वल हो हाथ जोड़ कर दीक्षाके लिए अनुरोध करने लगे। कुछ देर बाद आवेगमें हरि कह कर नृत्य करने लगे। मौका देख कर मुकुन्दने सुमधुर स्वरसे संकीर्तन प्रारम्भ कर दिया, चैतन्यकी आंखोंसे अविरल अश्रुधारा बहने लगी, वे महाभावमें तन्मय हो गये। कीर्तनके कोलाहलसे चारों तरफ लोगोंकी भीड़ होने लगी। मनोहर गौरमूर्ति देख कर सभी लोग दंग रह गये। केशव-भारतीने चैतन्यकी ऐसी अवस्था कभी न देखी थी, इसीलिए उन्होंने बालकके वैराग्यको असम्भव समझ कर दीक्षा देना अस्वीकार किया था। अब चैतन्यके महाभावका प्रत्यक्ष कर उन्होंने कहा—"चैतन्य तुम स्वयं ईश्वर हो। मैंने तुम्हारी बात पर सहमत न हो कर अपराध किया है, तुम जैसा कहोगे वैसा ही करूंगा।" चैतन्यने इस आश्वास-वाक्यसे सन्तुष्ट हो कर कहा—'गुरुदेव! मैंने स्वप्नमें जो मन्त्र प्राप्त किया था, उसे देखिये तो सही वह मन्त्र सिद्ध है या नहीं?" इतना कह कर उस मन्त्रको भारतीके कानमें कह दिया। भारती सुन कर विस्मित हुए, उस दिन रातको किसीको भी नींद न आई। प्रातःकाल ही चैतन्यके कथनानुसार आचार्यरत्नने दीक्षाके लिए आयोजन किया। चैतन्यने भी जी भर कीर्तन किया। इससे पहले ही चैतन्यके संन्यास ग्रहण की बात नगरमें प्रसिद्ध हो गई थी, इस लिए गांवके सरलमति स्त्रीपुरुष दधि, घृत, चीनी, ताम्बूल और वस्त्र आदि ले कर वहां उपस्थित हुए। देखते देखते संन्यासदीक्षाके उपयोगी सभी पदार्थ आ गये। उधर चैतन्यदेव कीर्तनानन्दमें तन्मय हो कर नाचने लगे। संकीर्तनकी ध्वनिसे आकृष्ट हो कर चारों ओरसे नर नारी, बालकबालिकाएं दौड़ती हुई आई। गौरकी मोहनमूर्ति और उस समयके भावको देख कर सभी काष्ठपुत्तलिकाकी तरह खड़े रहे। चैतन्यदेवके संन्यास लेने पर उनकी स्त्री और माताकी क्या दुर्दशा होगी, यह सोच कर सभीकी आंखोंसे अश्रुधारा बहने लगी। वैष्णव-कवियोंने नागरिकोंकी इस समयकी दशाका वर्णन बड़ी दिलचस्पीसे किया है, पढ़नेसे पाषाण-हृदय भी पसीज जाता है।

क्रमशः सूर्य अस्त होने लगे, किन्तु तो भी गौरचन्द्रके प्रेमावेगका सम्वरण न हुआ। अन्तमें निताईके इशारेसे चैतन्यदेव कुछ स्थिर हो कर बैठ गये। फिर उनके मुण्डनके लिए एक नाई बुलाया गया। नाईने आ कर उनको प्रणाम किया। प्रभुकी सुन्दर केशराशि हमेशाके लिए अन्तर्हित होगी, यह सोच कर उनके भक्तगण रोने लगे। दृश्य देख कर दर्शकोंके हृदय भी पसीजे, वे भी रोने लगे। नाई भी उस्तरा उठावे या नहीं, इस दुविधामें रोने लगा। गौरचन्द्र भी नाना प्रकार भाव प्रकट करने लगे। इस प्रकारसे क्षौरकर्ममें अधिक विलम्ब होने लगा। चैतन्यमङ्गलके मतसे नापितने जब मुण्डन करना नहीं चाहा, तब नापितको उन्होंने बहुत कुछ समझाया-बुझाया था। अन्तमें नापित भी हरिनाममें मस्त हो कर उनका हाथ पकड़ कर नृत्य करने लगा था।

उस समय चाकन्दीग्रामवासी गङ्गाधर भट्टाचार्य इनके मुण्डनको देख कर हाहाकार कर रोते हुए मूर्छित हो गये। सूर्य डूबनेसे पहले पहल नाईने छाती बांध कर किसी तरह क्षौरकर्म समाप्त किया।

केशोंको देख कर सभी लोग धक्के खा खा कर आगे बढ़ने लगे, पर किसीको भी छूनेका साहस न हुआ। भक्तोंने उन केशोंको गङ्गाके किनारे गाड़ दिया और उसके ऊपर एक मन्दिर बनवा दिया। काटोआमें अब भी वह मन्दिर मौजूद है, जिसे लोग प्रभुकी केशसमाधि कहते हैं। भक्त वैष्णवगण वहाँ जा कर प्रेमानन्दमें मत्त हो प्राण शीतल करते हैं।

नापितका कार्य शेष होने पर प्रभु स्नान करने गये, दर्शकमण्डली भी हाहाकार शब्द करती हुई उनके पीछे चली। नापित अस्त्रोंको सिर पर रख कर नाचते २ गङ्गाके किनारे पहुंचा, उसने अस्त्रोंको गङ्गामें फेंक दिया। वैष्णव कवि कहते हैं, कि नापितने यह सोच कर अस्त्र फेंके थे कि "जिस हाथसे चैतन्यदेवका मुण्डन किया है, उस हाथसे अन्य किसीका भी क्षौरकर्म न करूंगा जनम भरके लिए यह रोजगार छोड़ता हूं।"

प्रभु स्नान करके भीगे कपड़ोंसे भारतीके पास पहुंचे। अन्य लोग भी उनके साथ भीगे कपड़ोंसे हरिध्वनि करते हुए वहां उपस्थित हुए। भारती तीन वस्त्र ले कर खड़े थे, जिनमें एक कौपीन थी और दो वहिर्वास। गौराङ्गके आने पर भारतीने उनको तीनो वस्त्र दे दिये। चैतन्यने अपनेको कृतार्थ समझा वे अरुण वसनोंको मस्तक पर रख कर कहने लगे—"भाई बन्धु! पिता! माता! तुम सब आज्ञा दो जिससे मैं भवसागर पार हो सकूं। तुम लोग मुझे आशीर्वाद दो कि जिससे मैं कृष्णको पा सकूं।' इस बातको सुन कर उपस्थित सभी लोगोंको आंखोंसे आंसु बहने लगे। भारतीने रोते हुए चैतन्यके कानमें मन्त्र पढ़ा। केशवभारती फिर उनका क्या नाम रक्खा जाय, इस चिन्तामें पड़ गये। बहुत देर तक विचारनेके बाद चैतन्यको छाती पर हाथ रख कर बोले—"प्यारे चैतन्य! तुमने जीवमात्रको श्रीकृष्णमें चैतन्य कराया है, अतः तुम्हारा नाम आजसे श्रीशीकृष्णचैतन्य हुआ।" इस प्रकार प्रभुका नामकरण होने पर कोई कृष्ण और कोई चैतन्य कह कर चिल्लाने लगे। पूर्वकथित गङ्गाधर भट्टाचार्य गौरका श्रीकृष्णचैतन्य नाम सुन कर 'चैतन्य चैतन्य' करते हुए गंगाके किनारे दौड़े। तभीसे ये "चैतन्य"के सिवा दूसरे शब्दका उच्चारण न करते थे। गांवके लोगोंने पागल समझ कर इनका नाम चैतन्यदास रक्खा। निमाईके बाद इन्होंने वैष्णवधर्मको रक्षा की थी।

कुछ देर बाद हो हल्ला थम गया। सब उनको मुंहकी तरफ टकटकी लगाये देखने लगे। उस समय शायद दर्शकोंमेंसे भी बहुतोंने गृहस्थी छोड़ कर संन्यास लिया था। चैतन्यदेव हाथ जोड़ कर "मैं वृन्दावनको अपने प्राणनाथके पास चला, मुझे विदा दो" इतना कह कर जोरसे भागने लगे। गदाधरने साथ चलनेको प्रार्थना की थी, पर उन्होंने निषेध कर दिया। भारतीने उन्हें बुला कर पीछे दण्ड और कमण्डलु दिया था। गौरांग उस नवीन अवस्थामें दण्ड और कमण्डलु हाथमें लिए हुए लोगोंसे कृष्णनामको भिक्षा मांगने लगे। अहा! उसकी याद करनेसे भी शरीर रोमाञ्चित हो आता है। देखते देखते गौराङ्गका वाह्यज्ञान जाता रहा, हृदयमें एकमात्र वृन्दावन जानेकी चिन्ता करने लगे। इसीलिए वे पश्चिमकी तरफ दौड़ने लगे। यह देख कर नरहरि, दामोदर और वक्रेश्वर आदि बेहोश हो गये। किन्तु, निताई, चन्द्रशेखर, मुकुन्द और गोविन्द उनके साथ साथ दौड़े तथा उपस्थित प्रायः सहस्राधिक दर्शक भी उनकी पीछे पीछे दौड़ने लगे।

चैतन्यने पहले ध्यान न दिया था, आखिर जब इतनी भीड़ देखी कि उनके आगे बढ़नेका मार्ग ही बन्द हो गया है तब उन्होंने मधुर स्वरसे कहा—'पिता! माता! तुम लोग घर लौट जाओ, मैं प्राणनाथके लिए जा रहा हूं, मुझे बाधा न पहुंचाओ।" यह बात पूरी भी न हो पाई थी कि इतनेमें नित्यानन्द, चन्द्रशेखर और भारती आदिने आ कर उन्हें घेर लिया। भारतीके साथ चलनेके लिए कहने पर चैतन्यने स्वीकारता दे दी।

इस समय चन्द्रशेखर पर प्रभुको दृष्टि पड़ी। चैतन्य अब तक राधा-भावमें अपनेको भूल कर प्राणेश्वरके पास जानेके लिए उन्मत्त थे, उनको किसी बातका भी होश न था। चन्द्रशेखरको देख कर लुप्त स्मृति जाग उठी, नवद्वीपकी याद आई, जन्मभूमि, घर, द्वार, वृद्धा माता, प्राणाधिक भक्तगण और प्रियतमा नवीना भार्याको भी याद आने लगी। अब तो गौरांगको आंखोंसे अश्रुधारा

बह चली। उनसे खड़ा न रहा गया, वे चन्द्रशेखरके गलेमें हाथ डाल कर बैठ गये और कहने लगे "प्यारे! तुम घर लौट जाओ, मेरी माताको जा कर तुम सान्त्वना दो। देखना कहीं वे मेरे विच्छेदसे प्राण न दे बैठें। और जो लोग मेरे निमित्तसे दुःख पा रहे हैं उनसे विनतीपूर्वक कहना कि निमाई आत्मीयस्वजनोंको कष्ट देनेके लिए ही पैदा हुआ था। उनका निमाई अब घर न लौटेगा। घरमें उन लोगोंसे कहना कि निमाईने जिस दिनसे गदाधरके पादपद्म देखे हैं, उसी दिनसे उसके प्राण उसमें मिल गये हैं।" कहते कहते निमाईका गला रुक आया; वे पुनः प्रेममें विह्वल हो कर "प्राणवल्लभ! मैं आ रहा हूं" कह कर जोरसे भागने लगे। सब लोग उनके पीछे पीछे दौड़े। काटोआके पश्चिममें उस समय जंगल था; देखते देखते प्रभुने उस वनमें प्रवेश किया। लोगोंने भी उनका पीछा कर वनमें प्रवेश किया। निमाई दौड़ रहे थे, लोग उनके साथ दौड़ न सके। कुछ देर बाद वे सबको पीछे छोड़ कर निविड़ वनमें जा अदृश्य हो गये। परन्तु नित्यानन्द, चन्द्रशेखर, मुकुन्द और गोविन्द जीजानसे उनके पीछे दौड़ने लगे। प्रभु कमण्डलुको कटिसे बांध कर हाथमें नूतन वंशदण्ड ले बिजलीकी तरह दौड़ने लगे। नित्यानन्द प्रभुके साथ दौड़ न सके और पीछेसे बोले "प्रभो! जरा ठहरिये, हम लोगोंमें अब दौड़नेकी शक्ति नहीं।" किन्तु प्रभुने 'हां' या 'ना' कुछ भी उत्तर न दिया। भक्तोंमें निताई ही प्रभुके पीछे थे, बाकीके सब बहुत दूर थे। अब प्रभुको दिग्विदिकका भी कुछ ज्ञान न रहा, बराबर दौड़ने लगे। पुरुषोत्तम आचार्य प्रभुके परम भक्त थे। प्रभु उनको छोड़ कर निर्ममकी तरह चले गये, इससे उन्हें बड़ा दुःख हुआ। पुरुषोत्तम क्रोधमें आ कर, जिस देशमें चैतन्यको जिक्र नहीं, जहांके साधुगण भक्तिको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं, उस वाराणसी नगरीमें जा कर चैतन्यके विरुद्ध मतका प्रकाश करते हुए संन्यासी हो गये। उनका नाम था स्वरूप दामोदर।

दौड़ते दौड़ते विश्वम्भर मूर्छित हो गये, कुछ देर बाद मूर्च्छा भङ्ग होने पर फिर दौड़ने लगे, भक्तोंकी तरफ उन्होंने एक बार दृष्टि भी न फेरी। सन्यासे पहले निमाई अत्यन्त द्रुतवेगसे धावित हुए, अबकी बार नित्यानन्द भी उनके पीछे पीछे न दौड़ सके। देखते देखते शाम हो गई, भक्तगण विषण्ण-मन हो चुपचाप खड़े रहे; अनन्तर सामनेके गांवमें घुस कर घर घर पूछने लगे कि 'निमाई कहां गये?' किसीसे कुछ उत्तर न मिला। आखिर सब बैठ गये; रात भर किसीको नींद न आई, बड़े कष्टसे रात बीती। इतनेमें उन्हें कातर-ध्वनि सुनाई पड़ी। भक्तगण उस ध्वनिको लक्ष्य करके मैदानमें पहुंचे, वहां जा कर देखा कि चैतन्य एक अश्वत्थ वृक्षके नीचे बैठे हैं और एक कौपीन मात्र पहने हुए बांये हाथ पर गला रख कर यह कहते हुए रो रहे हैं कि "प्राणनाथ! कृष्ण! मुझे क्या आपके दर्शन न मिलेंगे, अब सहा नहीं जाता, अब दर्शन दो।" कुछ देर बाद प्रभु फिर उठ खड़े हुए और पश्चिमकी ओर चल दिये। भक्तगण उनके पास ही थे, पर उन्हें कुछ खबर न थी।

चैतन्यने चलते हुए सहसा भगवतके ११वें स्कन्धका * एक श्लोक कहा और कहने लगे "साधु! साधु! हे ब्राह्मण तुम्हीं साधु हो। मैं भी वृन्दावन जा कर तुम्हारी तरह श्रीमुकुन्दकी सेवा करूंगा।" वैष्णव कवियोंका कहना है कि उस समय नवद्वीपमें भक्तगण और निमाईके आत्मीय स्वजन इनके विच्छेदसे कातर हो रो रहे थे, निमाईका अन्तर बीच बीचमें उनमें आकृष्ट होता था, उन्होंने केवल अपने विवेक-बलसे उन बन्धनोंका छेदन किया था।

इस तरह चैतन्य तीन दिन तक राढ़देशमें ही घूमते रहे, वृन्दावनकी ओर एक पैर भी आगे न बढ़ सके। प्रभु पहले दिन जहां थे, तीन दिन बाद अविश्रान्त चलने पर भी वहीं रहे। इस तरह तीन दिन बीत गये, पर उन्होंने जलस्पर्श न किया, भक्तोंकी भी यही दशा थी! प्रभु जब अचेतन हुए, तब भक्तोंने सोचा कि उन्हें किसी तरह शान्तिपुर अद्वैतके घर ले चलें। प्रभु काटोआसे बहुत दूर चले गये थे, पर अब वे ही प्रभु शान्तिपुरसे उस पार दो चार कोस दूरी पर हैं। भक्तगण नाना कौशलोंसे उन्हें इतने निकटमें ले आये थे।

* "एतां समास्थाय परात्मनिष्ठामध्यासितां पूर्वतमैर्महर्षिभिः।
अहन्तरिष्यामि दुरन्तपारं तमो मुकुन्दाङ्घ्रिनिषेवयैव॥"

चैतन्य नयनोंको अर्द्धमुद्रित कर चल रहे थे, दिशाविदिशाका उन्हें उतना ख्याल न था। ऐसी दशामें भक्तोंके हृदयमें आशाका सञ्चार हुआ कि उन्हें लौटा सकेंगे। वहां मैदानमें ग्वालोंके लड़के गाय चरा रहे थे। प्रभुको देखते ही वे 'हरि बोल' कह कर चिल्ला उठे और नाचने लगे। वाह्यज्ञानशून्य चैतन्य हरिनाम सुन कर खड़े हो गये, ज्ञान हुआ, वे आंख खोल कर कहने लगे—'प्यारे बालको। तुम लोग मुझे हरिनाम सुनाओ। मैंने बहुत दिनोंसे हरिनाम नहीं सुना, इसीलिए इस तरह मरसा गया हूं। तुम लोग हरिनाम सुना कर मुझे प्राणदान दो।" लड़के पुनः हरिका नाम लेते हुए नाचने लगे। चैतन्यने उनसे वृन्दावन जानेकी राह पूछी। नित्यानन्दका इशारा पा कर उन लोगोंने शान्तिपुरका रास्ता बता दिया। प्रभु उसी मार्गसे चलने लगे।

उसी समय नित्यानन्दने चन्द्रशेखरको शान्तिपुर जा कर अद्वैताचार्यको संवाद पहुंचाने भेज दिया, यह भी कह दिया कि अद्वैतको संवाद दे कर घर जाना और घरवालोंसे उनके संन्यास लेनेकी बात कहना। अब तक नवद्वीपके लोगोंको चैतन्यके संन्यास-ग्रहण करनेकी खबर भी न थी।

प्रभुने शान्तिपुरका प्रशस्त मार्ग पकड़ा। पीछे नित्यानंद थे, उनके पीछे कुछ दूरी पर गोविन्द और मुकुन्द थे। इस समय चैतन्यको कुछ ज्ञान हुआ था। उन्होंने तीन बार "एतां समास्थाय" इत्यादि श्लोक पढ़ कर "साधु! साधु! ब्राह्मण! तुम्हारा सङ्कल्प है जीवमात्रको ही अनुकरण करना चाहिये।" ऐसा कहते हुए चल रहे थे, कि इतनेमें उन्हें मालूम हुआ कि उनके पीछे कोई आ रहा है! मालूम होने पर भी पहलेकी तरह चलते हुए उन्होंने पूछा—"वृन्दावन यहांसे कितनी दूर है?" नित्यानन्दने उत्तर दिया—"अब ज्यादा दूर नहीं है।" नित्यानन्द अपना परिचय देनेके लिए सामने जा खड़े हुए और बोले—"प्रभु! मैं नित्यानन्द हूं।" प्रभुने मुख उठा कर देखा, पर वे उन्हें पहचान न सके। प्रभुकी चेष्टा देख कर निताईने कहा—"प्रभु, नहीं पहचानते, मैं नित्यानन्द हूं।" बहुत देर बाद नित्यानन्दको पहचान कर उन्होंने कहा—"श्रीपाद! तुम यहां कैसे आये? मैं वृन्दावन जा रहा हूं, तुम किस तरह मेरे साथ आ गये?" निताई अधिक कुछ न बोल कर चलने लगे। प्रभु भी चल दिये। चैतन्य "कृष्ण मुझे दर्शन देंगे न? मैं वृन्दावन जा कर क्या करूंगा" इत्यादि प्रश्न करने लगे। निताइ भी संक्षेपमें उनका उत्तर देने लगे। कुछ दूर जा कर प्रभुने पुनः प्रश्न किया कि 'वृन्दावन अब कितनी दूर रहा है?" निताइने कहा, वृंदावन अब बहुत पासमें ही है।" कुछ दूर जा कर उन्होंने चैतन्यकी व्यग्रता निवारणके लिए गङ्गाके तीरवर्ती एक वटवृक्षको वृन्दावनका वंशीवट और गङ्गाको यमुना बतला दिया। देखते देखते प्रभु गङ्गाके किनारे पहुंचे और यमुना समझ कर उसमें कूद पड़े। कूदते समय उन्होंने यह श्लोक पढ़ा था—

> "चिदानन्दभानोः सदानन्दसूनोः
> परप्रेमपात्री द्रवब्रह्मगात्री।
> अघानां लवित्री जगत्क्षेमधात्री
> पवित्री क्रियान्नो वपुर्मित्रपुत्री॥" (चैतन्यचन्द्रो०)

निताईके संवादानुसार अद्वैताचार्य भी नाव ले कर वहां आ पहुंचे। निमाईके स्नान कर चुकने पर अद्वैत उनके पास पहुंचे, उन्हें देख कर निमाइको बहुत आनन्द हुआ। वे यह भी समझ गये कि निताइ उन्हें भ्रममें डाल कर यहां ले आये हैं और गङ्गाको यमुना बतलाया है। आचार्य बहुत कुछ समझा बुझा कर उन्हें अपने घर ले गये। आचार्यके प्रयत्नसे निमाइने तीन दिन तीन रात्रि उपवासके उपरान्त अद्वैतके घर भिक्षा (भोजन) ग्रहण की। भोजनके समय उन्होंने मुकुन्द और हरिदाससे अपने पास बैठ कर खानेके लिए कहा, वे होन जातिके थे इसलिए वाहर बैठ कर खाने लगे। निमाइके आनेकी खबर सुन कर अद्वैतके घर लोगोंकी खूब भीड़ हो गई। सन्ध्याके समय आचार्यके साथ प्रभुने कीर्तन किया था। इस दिन भी कीर्तन करते करते प्रभु उन्मत्त हो गये थे, अन्तमें नित्यानन्दने अति कष्टसे उन्हें प्रकृतिस्थ किया था। प्रभुकी अनुमतिसे निताइने नवद्वीप जा कर सबको निमाईके दर्शनके लिए शान्तिपुर जानेको कहा। विषादपूर्ण नवद्वीपमें फिर आनन्दका साम्राज्य फैल गया, सब बड़े उत्सा

नवद्वीप चलनेकी तैयारियां करने लगे। पतिव्रता विष्णुप्रियाने भी स्वामीके दर्शनकी लालसासे बहुत कुछ तैयारियां की थीं, पर उनकी इच्छा पूरी न हुई। निताईने कहा कि प्रभुने नवद्वीपके आबालवृद्धवनिता सभीको चलनेकी अनुमति दी है, पर पतिप्राणा विष्णुप्रियाके लिए उनकी अनुमति नहीं है। विष्णुप्रियाका हृदय फटने लगा, वह कुछ भी न कह सकीं, सिर्फ उनकी आंखोंसे अश्रुधारा बहने लगी। बेचारी जैसे आई थीं, वैसे ही जा कर निरविरह शय्या पर पड़ी रहीं। उनके मुखकी अलौकिक सुन्दरता और तत्कालीन भावको देख कर सभी मोहित और अकूल विषादसागरमें निमग्न हो गये थे। इससे पहले नवद्वीपमें कुछ लोग चैतन्यके विरोधी थे। उन लोगोंने जब सुना कि वह कमनीयमूर्ति युवक निमाई राजभोग छोड़ कर भिखारीके भेषमें संन्यासी हुआ है, अब घर न लौटेगा, और तो क्या अपनी पतिप्राणा विष्णुप्रियाको न देखेगा, तब उनके सामनेसे अज्ञानयवनिका हट गई। सभी उनको महापुरुष समझने लगे। उनके देखनेके लिए उनका भी हृदय उत्सुक हुआ। शची डोली पर चढ़ कर शान्तिपुरको चलो, नवद्वीपके सभी लोग उनके साथ हो लिए। नवद्वीपमें कोई न रहा, वह प्रायः सूनासा हो गया। सिर्फ विष्णुप्रिया ही एक सहेलीके साथ विरहमें रो रहीं थी।

इधर शान्तिपुरमें अद्वैतके घर हजारों लोग आने लगे; लोगोंकी ज्यादा भीड़ होनेके कारण अद्वैतने द्वार पर बलवान् मनुष्यको नियुक्त कर द्वार बंद करवा दिया। इससे बहुतसे लोग प्रवेश न कर सकनेके कारण दुःखित हो द्वार पर खड़े खड़े आर्तनाद करने लगे। अद्वैत उनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिए चैतन्यको छत पर ले गये। भक्तोंकी वासना पूर्ण हो गई; वे जी भर कर उन्हें देखने लगे, पर देखते देखते उनके नयन तृप्त न हुए और न मन ही तृप्त हुआ। जिसने एक बार भी उन्हें देखा, उसको फिर घर जानेकी इच्छा न रही।

इसी समय नवद्वीपसे भी लोग आ पहुंचे। चैतन्यने देखा कि शचीमाता डोली पर आ रही हैं। वे शीघ्र ही छतसे उतर आये और माताके पैरों पर पड़ गये। शचीने प्राणधन निमाईको गोदमें बैठा लिया और चुम्बन करके कहा—"बेटा! निमाई! विश्वरूपने संन्यास लेनेके बाद फिर मुझे दर्शन नहीं दिये। बेटा, तुम भी यदि निठुर हो जाओगे, तो मैं मर जाऊंगी।" निमाईने माताको बारम्बार प्रणाम कर कहा—"मा! यह शरीर तुम्हारा है, चिरजीवनमें भी यह ऋण न चुका सकूंगा। यद्यपि बिना समझे संन्यासी हुआ हूं, तो भी तुम्हें कभी न भूलूंगा। तुम जैसा कहोगी, वैसा ही करूंगा।" आचार्यरत्न शची और निमाईको भीतर ले गये। जो जो भक्त निमाईको देखने आये थे, उन सबको वे मिष्ट वचनोंसे सान्त्वना देने लगे।

कुछ दिन आचार्यके घर रहनेके बाद गौरचन्द्रने भक्तोंको बुला कर कहा—"संन्यासीका एक जगह बहुत दिन रहना उचित नहीं, मैं अन्यत्र कहीं जाऊंगा।" इस बात पर सभी रोने लगे। शचीमाता भी रोने लगीं। अन्तमें निश्चय हुआ कि निमाई नीलाचलमें रहेंगे। क्योंकि इस देशके लोग वहां समय समय पर जाया करते हैं, वहां रहनेसे शचीको भी उनकी खबर मिला करेगी। निमाई माताकी बात पर राजी हो गये और भक्तोंसे कहने लगे—"प्यारे भाइयो! तुम सभी मेरे प्राणोंके तुल्य हो। प्राणोंके रहते हुए मैं तुम लोगोंको भूल नहीं सकता। तुम लोग घर जा कर कृष्णनाम कृष्णकथा और कृष्ण-आराधना करके समय बिताओ। मैं नीलाचलको चला, कभी कभी आ कर तुम लोगोंसे मिलूंगा और तुम लोग भी समय समय पर मुझसे मिलना।" प्रभुको छोड़ कर रहनेमें सभीका जी रो उठा, पर निमाईकी बात पर कोई भी कुछ बोल न सका। सब रोते हुए घरको लौट गये और निमाईके आदेशानुसार कार्य करने लगे। आचार्यरत्नके अनुरोधसे निमाई और भी कई एक दिन उनके घर रहे। बादमें नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर और मुकुन्द इन चारोंको साथ ले कर शान्तिपुरमें अंधेरा करते हुए छत्रभोगपथसे नीलाद्रिको चल दिये। जाते समय अपनी जननीके प्रतिपालनका भार अद्वैताचार्य पर छोड़ गये।*

* चैतन्यचरितामृतरचयिता कृष्णदासने गौरचन्द्रके संन्यासग्रहण तकका विवरण वृन्दावनदासके नामसे और उनकी उन्माद अवस्थामें तीन दिन राढ़देशमें भ्रमण तकका वृत्तान्त मध्यलीलाके नामसे वर्णन किया है।

उस समय गमनागमनकी बड़ी असुविधा थी, नौकामें जानेसे जलदस्युका और तीरपथसे जानेमें डकैत और हिंस्र जन्तुओंका भय था। इसके सिवा पथरक्षक राजपुरुषोंके उत्पीड़नसे भी बहुतसे पथिक प्राण खो बैठते थे। परन्तु चैतन्यका हृदय भयशून्य था, वे निर्भीक चित्तसे कृष्णनाम लेते हुए चलने लगे। मध्याह्नके समय वे किसी निकटस्थ गांवमें भिक्षा ग्रहण कर लिया करते थे। ये जिस गांवमें जाते थे, वहांके लोग इनका मुख देख कर कृष्णप्रेममें डूब जाते थे। चैतन्य एक ग्राममें एक दिनसे ज्यादा भिक्षा न लेते थे। एक दिन मार्गमें विपद् आई, उपयुक्त अर्थके बिना कोई भी उन्हें पार करनेके लिए राजी न हुआ। संन्यासी चैतन्यके पास कुछ भी न था; कमण्डलु, बहिर्वास और वंशदण्ड यही उनकी पूंजी थी। प्रभुने उन लोगोंसे कहा—"भाई! हम संन्यासी हैं, रुपये पैसेका हमारे पास क्या काम? हमें पार उतारनेसे तुम लोगोंको पुण्य होगा।" किन्तु उन लोगोंके हृदयमें धर्म वा दयाका उद्रेक हो न था, किसीने भी उनकी बात न मानी। अन्तमें चैतन्यने अपनी शक्तिका विस्तार करके कीर्तन करना शुरू कर दिया। कीर्तन सुन कर सबका हृदय पसीज गया। वे भी "हरि! हरि! कृष्ण! कृष्ण!" इत्यादि कह कर नाचने और रोने लगे। चैतन्यके पैरों पड़ कर उन्हें समादर पूर्वक पार कर दिया। मार्गमें और कोई विघ्न न हुआ। चैतन्यचन्द्र साथियोंके साथ रेमुणा तक आ पहुंचे। यहां गोपीनाथ नामक एक देवमूर्तिके दर्शन करके उन्होंने प्रेमाप्लुत हो कर अनेक गीत नृत्यादि किये थे। वैष्णव कवियोंके मतसे श्रीचैतन्यके यहां आनेके साथ ही गोपीनाथदेवके मस्तकका पुष्प इनके उपहारके लिए गिर पड़ा था। इस पर चैतन्यको अत्यन्त आनन्द हुआ था। गोपीनाथके सेवकोंने इनके भावोंको देख कर उस रात्रिको इन्हें वहीं रक्खा था। गोपीनाथकी प्रसादी खीर खा कर ये बहुत खुश हुए थे। पहले उन्होंने ईश्वरपुरीके मुंहसे इन्हीं गोपीनाथके खीर चुरानेके विषयमें जो किम्बदन्ती सुनी थी, उसे वे कहने लगे जिससे सभीको बड़ा आनन्द हुआ। गौरचन्द्र पुरीकी प्रशंसा करते करते पुरीकृत—

> "अयि दीनदयाद्र नाथ हे मथुरानाथ कदावलोक्यसे।
> हृदयं त्वदलोककातरं दयित! भ्राम्यति किं करोम्यहम्॥"

इस श्लोकको पढ़ कर मूर्छित हो गये। दूसरे दिन वहांसे चल दिये। कुछ दिन बाद याजपुर पहुंचे। याजपुरमें उन्होंने वराहमूर्तिके दर्शन किये और प्रेमावेगमें नृत्यगीत करते हुए कटक जा कर गोपालके दर्शन किये। गोपालके दर्शनसे प्रभुको भावावेश उपस्थित हुआ, आवेशमें उन्मत्त हो कर वे गोपालका स्तव करने लगे। निताईके साक्षीगोपालके विषयमें अलौकिक प्रस्ताव करने पर चैतन्यको और भी हर्ष हुआ। वैष्णव कवियोंका कहना है कि चैतन्य जब गोपालके पास खड़े होते थे, तब भक्तगण दोनोंको एक रूपमें देखते थे! एक रात्रि यहां ठहर कर वे फिर चलने लगे। चैतन्य जिस ग्राम वा जिस जगह थोड़ी देरके लिये ठहरते थे, वहांके लोग उनके अनुयायी हो जाया करते थे। चैतन्य अपनी अमोघ शक्तिके द्वारा मार्गके लोगोंको कृष्णप्रेममें उन्मत्त करते हुए भुवनेश्वर उपस्थित हुए। उसके बाद भार्गवी नदीके पवित्र जलमें स्नान कर कपोतेश्वरके दर्शनके लिये कमलपुर गये। जाते समय निताईके हाथमें अपना दण्ड दे गये थे। नित्यानन्दने उसके तीन टुकड़े कर नदीमें बहा दिया। निताईके इस प्रकारसे दण्ड तोड़ कर फेंकनेका क्या कारण था? और चैतन्यने उन्हें दण्ड क्यों दिया था? वैष्णव कवियोंसे इसकी कुछ मीमांसा न हो सकी, इसीलिए उन लोगोंने इसे "दण्ड-भङ्ग-लीला" कहा है।

चैतन्य कपोतेश्वरके दर्शन कर हर्षगद्गद-चित्तसे राजपथ पर चलने लगे। जगन्नाथ बहुत पास हो हैं, शीघ्र ही दर्शन मिलेंगे, ऐसा विचार कर उनका हृदय उमड़ आया। स्वेद, कम्प, अश्रु आदि सात्विक भाव प्रकट होने लगे। अब भी जगन्नाथ-मन्दिर तीन कोसकी दूरी पर है, चैतन्य इस स्थानसे मन्दिरको शिखर देख कर उन्मत्त हो गये। दण्डवत् हो वहींसे मन्दिरको नमस्कार किया और नृत्य करने लगे। इसी तरह हंसते हंसते, गाते गाते, नाचते नाचते और रोते रोते वे अठारहनाले पर उपस्थित हुए। यहां आ कर उनको बाह्यज्ञान हुआ। उन्होंने निताईसे दण्ड मांगा तो निताईने यथार्थ बातको

छिपा कर यह कह दिया कि "तुम प्रेमावेशमें अचेतन हो कर दण्डके ऊपर गिर पड़े थे, इससे दण्ड टूट कर न मालूम किधर चला गया।" चैतन्यको इस पर कुछ गुस्सा आ गई, उन्होंने कहा—"मैंने तुम लोगोंको सङ्गी बना कर बेवकूफी की है, मैं वृन्दावन चला, तुम लोग मुझे मार्ग भुला कर शान्तिपुर ले आये थे, अब मेरे पास जो एकमात्र दण्डको पूंजी था, उसे भी तोड़-फाड़ कर फेंक दिया। तुम लोग आगे चलो, मैं तुम लोगोंके साथ ईश्वर देखने न जाऊंगा।" यह सुन कर भक्तोंने पीछे चलनेकी इच्छा प्रकट की, चैतन्य प्रेममें अपनेको भूल गये और साथियोंको पीछे छोड़ कर जगन्नाथ देखनेके लिए अकेले ही दौड़े। धीरे धीरे गौरके हृदयमें आवेशका सञ्चार हुआ, उन्होंने मन्दिरमें प्रवेश कर जगन्नाथके दर्शन किये। दर्शन करनेके बाद ही उन्मत्तकी तरह मूर्तिको आलिङ्गन करनेके लिए आगे दौड़े। कुछ दूर जा कर वे अचेतन हो गये। जगन्नाथके सेवकगण परीछा (परीक्षाके लिए वेत्राघात) करने आये। परन्तु उस समय वासुदेव सार्वभौम भी वहां उपस्थित थे। वे संन्यासीकी मूर्तिको देख कर मोहित हो गये। सेवकोंको रोक कर वे आगन्तुककी शुश्रूषा करने लगे, पर किसी तरह भी उन्हें चेतना न हुई। उधर जगन्नाथके भोगका समय हो चुका था, इसलिए सार्वभौम उन्हें अपने घर ले गये। नित्यानन्द आदि भक्तोंने सिंहद्वारमें आ कर यह बात सुनी। संगीगण किंकर्तव्यविमूढ़ हो कर खड़े थे, इतनेमें नदीयावासी विशारदके जमाई गोपीनाथ आचार्य वहां आ पहुंचे। नवद्वीप रहते समय ये भी चैतन्य पर अनुरक्त थे, मुकुन्दके साथ इनका कुछ पहलेका परिचय था। इनको पा कर सबको सन्तोष हुआ, इनके साथ सब सार्वभौमके घर गये, वहां प्रभुको मूर्छित अवस्थामें देखा। उपरोक्त चैतन्यका उत्कल-गमन-विवरण चैतन्य-चरितामृतके अनुसार लिखा गया है अन्यान्य वैष्णव-ग्रन्थोंसे इसमें बहुत कुछ वैलक्षण्य है। चैतन्यभागवतके मतसे, शान्तिपुर छोड़नेके बाद चैतन्यदेव साथियोंको वैराग्यधर्मका उपदेश देते हुए सन्ध्याके समय आठिसारा ग्राममें अनन्तप्रफुल्ल नामक एक विष्णुभक्त ब्राह्मणके घर उपस्थित हुए। साथियोंके साथ उन्होंने वहां आतिथ्य ग्रहण कर सारी रात हरिनाम संकीर्तन और कृष्णकथामें बिता दी। प्रातःकाल हो वहांसे भागीरथीके किनारे चल कर छत्रभोग पहुंचे किसी किसी कविके मतसे, उस समय इस स्थानसे निकटमें ही गङ्गा शतमुखी हो कर सागरमें जा मिली थी और वहाँ अम्बुलिङ्ग नामक एक जलमय शिवलिङ्ग था। शिवके नामानुसार अम्बुलिङ्ग नामका एक प्रसिद्ध घाट भी था, चैतन्यदेव वहां स्नान करके तथा लोगोंके मुंहसे अम्बुलिङ्ग शिवकी आख्यायिका सुन कर और शतमुखी गङ्गाकी नैसर्गिक शोभा देख कर आह्लादित हुए थे। अम्बुलिङ्गघाट पर स्नान करके वे क्रमशः प्रेममें रोने लगे, देखते देखते उन्हें देखनेके लिये हजारोंकी भीड़ हो गई। इस समय यवननरपति द्वारा स्थापित दक्षिणराज्यके अधिकारी रामचन्द्र खान् वहाँ उपस्थित हुए। गौरने उनका परिचय पा कर उनसे उत्कल जानेका सुभीता कर देनेके लिए कहा। इसके उत्तरमें रामचन्द्र खानने कहा—"इस समय उत्कल और वङ्गराज्यमें भयानक युद्ध चल रहा है। उस देशमें जाने आनेके लिए किसीको भी रास्ता नहीं मिलता, इस समय उत्कल जाना अत्यन्त कष्टकर है। आपको अगर जाना ही है, तो मैं जीजानसे कोशिश कर गुप्तभावसे आपको भेज दूंगा।" इतना कह कर वे चैतन्य और उनके साथियोंको एक ब्राह्मणके घर ले गये और उनको सेवाका बन्दोबस्त कर दिया। गौरचन्द्र नीलाचल देखनेके लिए बड़े उत्कण्ठित थे, अच्छी तरह भोजन भी न कर सके। भोजनके बाद कीर्तन प्रारम्भ हुआ। रात्रिके तीसरे पहर ये रामचन्द्र खान्की नाव पर सवार हुए। रास्तेमें ये हरिनाम कीर्तन करते हुए आये थे। यथासमय नाव उत्कलराज्यके प्रयागघाट पर जा लगी। गौरचन्द्र साथियोंके साथ वहां उतर गये। उन्होंने उत्कलदेशको नमस्कार कर गङ्गाघाट नामके घाटमें स्नान किया। वहाँ युधिष्ठिरके द्वारा स्थापित शिवके दर्शन करके किनारे किनारे चलने लगे। मध्याह्न उपस्थित होने पर उन्होंने साथियोंसे कहा, 'तुम लोग यहां ठहरो, मैं भिक्षाके लिए जाता हूं।' इतना कह कर वह नवीन मोहनमूर्ति गौराङ्गदेव ग्राममें जा कर गृहस्थके द्वार पर भिक्षा

मांगने लगे। उनको देख कर छोटे बड़े सभी ग्रामवासी अपनेको भूल गये और उन्हें अपरिमित भिक्षा देने लगे, वे साथियोंके योग्य संग्रह होते ही वहांसे चले आये। जगदानन्दने एक वृक्षके नीचे रसोई बनाई। गौरचन्द्रने महानन्दसे भोजन कर हरिनामके आनन्दमें वह रात्रि वृक्षके नीचे ही बिता दी और सबेरे चलना शुरू कर दिया। मार्गमें एक विपत्ति पड़ी, मल्लाह बिना पैसेके गङ्गा पार नहीं करना चाहता। यहां उनके भक्तोंको कुछ चिन्ता हुई थी, क्योंकि उनके पास एक कौड़ी भी न थी। अन्तमें संन्यासी चैतन्यकी उस तेजस्विनी मूर्ति और अविश्रान्त अश्रुधाराको देख कर मल्लाहने पूछा—"आपके साथ कितने आदमी हैं?" चैतन्य उस समय महाभावमें तन्मय थे, उन्होंने उत्तर दिया—

"...... जगत्में कोई नहीं मेरा है।
मैं भी नहीं किसीका कोई नहीं मेरा है॥
मैं एक हूं दूजा नहीं सभी कुछ मेरा है।"

कहते हुए चैतन्यकी आंखोंसे आंसू गिरने लगे। मल्लाहने कहा—'गुसाईं! आप नाव पर चढ़िये, पर इन लोगोंको बिना पैसेके पार न करूंगा।' गौराङ्गने और कुछ न कहा, चुप चाप नाव पर चढ़ कर वे पार हो गये और वहां रोने लगे। इनका रोना देख कर मल्लाहका हृदय पसीज गया। नित्यानन्द आदिके मुखसे प्रभुका परिचय पा कर उसने सभीको पार कर दिया और खुद प्रभुके चरणोंमें लोटने लगा। इसके बाद ये सुवर्णरेखा नदीको पार कर अति द्रुतगतिसे चलने लगे। साथी लोग पीछे रह गये। बहुत दूर जा कर प्रभु उनके लिए एक वृक्षके नीचे बैठ गये। अब तक चैतन्यका दण्ड जगदानन्दके हाथमें था। अब जगदानन्दने उसे भिक्षाको जाते समय निताईको सौंप दिया। निताईने उसे तोड़ डाला। जगदानन्दने आ कर जब दण्डके टूटनेका कारण पूछा, तो उन्होंने कुछ सदुत्तर न दिया। जगदानन्दने उस टूटे हुए दण्डको उठाकर निमाईके हाथमें दिया (दण्ड टूटनेका अन्य विवरण चरितामृतके समान है)। चैतन्य साथियोंका साथ छोड़ कर आगे चल दिये और जलेश्वर नामक ग्राममें जा कर जलेश्वर-शिवकी पूजा देख प्रेममें उन्मत्त हो गये। साथके लोग यहां आ कर उनके साथ हो लिए। रास्तेमें बादशाह ग्राममें एक शराबी शाक्त संन्यासीके साथ इनकी मुलाकात हुई थी, प्रभुकी कृपासे वह संन्यासी उसी दिनसे वैष्णव हो गये थे। इसके बाद रेमुनामें आ कर क्षीरचोर गोपीनाथके दर्शन किये। एक रात्रि यहां कीर्तनानन्दमें बिताई और सुबह फिर चलने लगे। यहां वैतरणी नदी और असंख्य देवालय सुशोभित थे। गौराङ्गने साथियोंके साथ दशाश्वमेध-घाटमें स्नान और वराहमन्दिरमें जा कर कीर्तन किया। याजपुरके दृश्यसे गौरके हृदयमें क्रमशः भावलहरी उठने लगी, उन्होंने साथियोंको वहीं छोड़ कर अकेले ही उन द्रष्टव्योंको देखा, दूसरे दिन सुबह हो साथियोंसे जा मिले। इसके बाद सब आनन्दसे हरिध्वनि करते हुए राजपथसे चलने लगे और यथासमय कटक नगरकी पुण्यसलिला महानदीमें स्नान कर पथ-पर्यटन करते हुए साक्षीगोपालके मन्दिरमें उपस्थित हुए, यहांसे यात्री लोग भुवनेश्वरके मन्दिरमें जा रहे थे। श्रीचैतन्यदेव भुवनेश्वरके दर्शन कर महा सुखी हुए और विन्दुसरमें अवगाहन कर नृत्य करने लगे। अनन्तर कपिलेश्वर शिवके दर्शन कर वहांसे प्रस्थान किया। यात्रियोंने यथासमय वहांसे कमलपुर आ कर भार्गवीमें स्नान किया। इस जगहसे जगन्नाथकी शिखरकी ध्वजा देख कर चैतन्यदेव प्रेममें विह्वल हो गये और यह श्लोक कहते हुए पागलकी तरह चलने लगे—

"प्रासादाग्रे निवसति पुरः स्मेरवक्त्रारविन्दो
मामालोक्य स्मितसुवदनो बालगोपालमूर्तिः।"

इस आधे श्लोकका तात्पर्य यह है कि, भगवान् बालगोपाल प्रासादके अग्रभागसे मुझे देख कर हंस रहे हैं।

इस प्रकार वाह्यज्ञानशून्य हो पछाड़ खाते खाते ३।४ दिनका मार्ग तीन प्रहरमें अतिक्रम कर अठारहनालेमें आ कर प्रकृतिस्थ हुए। श्रीचैतन्यने अठारहनालेके पास आ कर साथियोंको विनयवाक्योंसे सन्तुष्ट किया और अकेले जगन्नाथ-दर्शनको गये। साथी लोग द्वार पर बैठे हुए उनकी बाट देख रहे थे। जिस समय सार्वभौमकी आज्ञासे सेवकगण अचेतन चैतन्यको उनके घर ले जा रहे थे, उस समय साथी उनके साथ हो लिए।

(चैतन्य भागवत शेषखण्ड २ अ०)

साथके लोग सार्वभौमके घर महाप्रभुको बेहोश पड़ा देख कर दुःखित हुए। सार्वभौमने आगन्तुकोंका यथेष्ट सम्मान कर अपने पुत्र चंदनेश्वरके साथ उनको जगन्नाथ दर्शनके लिए भेज दिया। दर्शन करके लौट आने पर मुकुन्दने प्रभुके कानमें सुस्वरसे हरिसंकीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। तीन प्रहरके बाद चैतन्यदेवने हुङ्कारा लिया। प्रायः शाम हो चुकी थी, सबने समुद्रमें जा कर आनंदसे स्नान किया, फिर सार्वभौमकी कृपासे भरपेट भोजन किया। इस बीचमें साथियोंके साथ प्रभुने खूब आलाप किया था। साथियों और सार्वभौमने उन्हें जगन्नाथ दर्शनको अकेले जानेके लिए मना किया। इस पर ये प्रतिज्ञा कर बैठे कि, "मैं जगन्नाथ-दर्शनके लिए कभी भी मंदिरके भीतर न जाऊंगा, बाहर गरुड़स्तम्भके पास खड़ा खड़ा देखूंगा।" भोजनके बाद सब यथास्थानमें बैठे। सार्वभौमको गोपीनाथके मुंहसे गौराङ्गका परिचय मिलने पर वे उनके पास आ कर कहने लगे—"नीलांबर मेरे पिता विशारदके सहाध्यायी थे, जगन्नाथ पर भी उनकी यथेष्ट श्रद्धा थी; अतः आप मेरे गौरवके पात्र हैं, विशेषतः जब आपने संन्यास लिया है, तब विशेष पूजनीय हैं।" श्रीचैतन्यने विष्णुका स्मरण करके कहा—"आप मुझसे ऐसा न कहिये, आप जगत्के गुरु हैं, वेदान्ताध्यापक महापूजनीय होते हैं। मैं बालक संन्यासी सदसद् ज्ञानहीन हूं, मैं आपकी शरण आया हूं। आपसे मुझे बहुत कुछ सीखना है। आजसे मैंने आपको गुरुत्वमें वरण किया, मुझे शिष्य समझ कर सदुपदेश दीजिये।"

चैतन्यके विनयवाक्योंको सुन कर सार्वभौम सन्तुष्ट हुए और बोले—"जहां तक मेरी गति है, वहां तक मैं आपको उपदेश दूंगा। किन्तु एक बात कहता हूं, गुस्सा न लाना, इस कच्ची उम्रमें संन्यास ले कर आपने अच्छा नहीं किया। इन्द्रियोंका दमन कर ले, लोभ मोहको छोड़ दे, तब कहीं वह संन्यासी हो सकता है। विशेषतः संन्यास लेनेमें सिर्फ अहङ्कारकी वृद्धिके सिवा और कुछ फल नहीं।" चैतन्यदेवने पण्डितवर सार्वभौमकी विद्रूपोक्ति सुन कर उत्तर दिया—"महाशय मैंने अपनी इच्छासे संन्यास नहीं लिया, कृष्णके लिए मेरी मति बिगड़ गई थी, इसीलिए मैंने संन्यास लिया है, इसमें मेरा कोई अपराध नहीं।" कुछ समय तक वार्तालाप करनेके बाद सार्वभौमने अपनी मौसीके घर चैतन्य और उनके साथियोंको ठहरा दिया। प्रभु अपने साथियोंके साथ वहां विश्राम करने लगे। गोपीनाथने साथ जा कर इनका तमाम बन्दोबस्त कर दिया। कुछ समय बाद जब गोपीनाथाचार्य मुकुन्दको साथ ले कर सार्वभौमके पास पहुंचे, तब चैतन्यको केशवभारतीने दीक्षित किया है, यह सुन कर सार्वभौमको बड़ा दुःख हुआ। सार्वभौमने कहा कि, पुनः संस्कार करके चैतन्यको उत्तम सम्प्रदायभुक्त करनेसे बहुत अच्छा हो। इसी बीचमें चैतन्य ईश्वर हैं या नहीं, इस बात पर गोपीनाथसे खूब तर्क हुआ था। पहले सार्वभौमके साथ शास्त्रार्थ हो रहा था, पीछे उनके छात्रोंने चीत्कार कर गड़बड़ी मचा दी थी। गोपीनाथने अनेक शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा चैतन्यको ईश्वरावतार सिद्ध किया था। (चैतन्य चरित मध्यखण्ड ६ठ परिच्छेद देखो।) वैष्णवोंके मतसे इस शास्त्रार्थमें सार्वभौम और उनके छात्र पराजित हुए थे, किन्तु तार्किकोंके सहजलभ्य कूटतर्कको सहायतासे उन लोगोंने पराजय स्वीकार न की। अन्तमें सार्वभौमने गोपीनाथसे यह कहा—"अब जा कर अपने ईश्वरको महाप्रसाद खिलाओ। उनको और उनके साथियोंको मेरी तरफसे निमन्त्रण देना।" गोपीनाथने पहले तो प्रभुसे सार्वभौमके अन्याय शास्त्रार्थका हाल कहा, पीछे निमन्त्रणकी बात कही। महाप्रभुने शास्त्रार्थकी बातको सुन कर हंसते हुए कहा—"सार्वभौम बड़े भारी पण्डित हैं, वे मुझ पर बहुत ज्यादा स्नेह करते हैं, इसीलिए उन्होंने ऐसा शास्त्रार्थ किया है।" किन्तु इससे गोपीनाथ और मुकुन्दके हृदयमें और भी आग लग गई। उन दोनोंने सोचा था कि प्रभुको मालूम होते ही वे शीघ्र ही सज धज कर सार्वभौमसे शास्त्रार्थ करेंगे, सार्वभौम शास्त्रार्थमें पराजित हो कर उसी मुहूर्तमें उनके भक्त हो जांयगे और आंसुओंसे छाती भिगो कर प्रभुके चरणोंमें पड़ेंगे।

बादमें जब उन्होंने सार्वभौमको सदुपदेश दे कर भक्त बनानेके लिए कहा, तब प्रभुने उत्तर दिया कि, "भगवान्की इच्छा होगी तो सार्वभौम शीघ्र ही भक्त हो जांयगे।" प्रभात होने पर कृष्णचैतन्य गोपीनाथके साथ

जगन्नाथका शय्योत्थान देख कर यथासमय सार्वभौमके घर उपस्थित हुए। भट्टाचार्यने प्रभुकी अनुपस्थितिमें सोचा था कि संन्यासीके आने पर वे उन्हें सदुपदेश देंगे और उनके मतको खण्ड खण्ड करके उनको वेदान्तिक मतमें दीक्षित करेंगे। नवीन संन्यासीका जिससे भला हो, ऐसा काम करनेका उनका अभिप्राय था; सिवा इसके उनके हृदयमें अत्यन्त गर्व और अहङ्कार भी हुआ था। चैतन्यके आने पर सार्वभौमने उनका यथोचित सम्मान नहीं किया, वे उनके पास जा कर बैठ गये। देखते देखते दाम्भिक सार्वभौमके मनकी गति फिर गई। उन्होंने विनीत भावसे कहा—"तुम शायद सभी विषयोंके ज्ञाता होओगे, इसीलिए मैं तुम्हें उपदेश देता हूं। हमारे यहां प्रतिदिन वेदान्तका पाठ होता है, तुम उसे सुनना; वेदान्त सुनना संन्यासीका नितान्त कर्तव्य है।" चैतन्य भी अति नम्रभावसे उन्हें अपना गुरुस्थानीय मान कर उनकी बात पर सहमत हो गये और जिससे उनका संन्यास धर्म ठीक रहे, ऐसा उपदेश देते रहनेके लिए उन्होंने प्रार्थना भी की।

दूसरे दिन श्रीमन्दिरमें प्रभु और सार्वभौम मिले। वहांसे चैतन्य सार्वभौमके साथ उनके घर गये। सार्वभौमने वेदान्त पढ़ाना प्रारम्भ किया, चैतन्यदेव मन लगा कर सुनने लगे। इस तरह चैतन्यदेव प्रति दिन उनके घर जा कर वेदान्त सुनने लगे, 'हां' 'ना' कुछ भी न करते थे। सात दिन बीत गये, पर चैतन्य उसी तरह सुनते रहे। इससे सार्वभौमने समझा कि, चैतन्य वेदान्तको कठिन समस्यामें उपनीत न हो सके, इसीलिए वे चुपचाप बैठे रहते हैं। दूसरे दिन सार्वभौमने गौराङ्गसे कहा, "तुम्हें वेदान्त सुनते सुनते सात दिन हो गये, पर अच्छा बुरा कुछ भी उत्तर नहीं देते; मैं तो यह भी स्थिर न कर सका कि तुम्हारी समझमें आता है या नहीं।" चैतन्यने बड़ी नम्रतासे उत्तर दिया, "मैं मूर्ख हूं फिर बालक हूं, भला मैं वेदान्तके कठिन सिद्धान्तको कैसे समझ सकता हूं। हां, मूल सूत्रका अर्थ तो समझ लेता हूं पर आप जो व्याख्या करते हैं, उसका अर्थ कुछ भी समझ नहीं पड़ता।" इसके बाद सार्वभौमके साथ चैतन्यचन्द्रका वेदान्तके विषयमें शास्त्रार्थ हुआ; महा प्रभुने मायावादमें सैकड़ों दोष दिखाते हुए सार्वभौमके मतका खण्डन किया और समस्त वेद और पुराणोंके साथ सामञ्जस्य रखते हुए वेदान्तसूत्रकी व्याख्या की जिसमें साकारवाद और भक्तिका प्राधान्य स्थापित किया। सार्वभौम किसी प्रकार भी अपने मतकी रक्षा न कर सके। चैतन्यने अपने मतकी पुष्टिके लिए भागवत (१।७।१०)-का "आत्मारामाश्च" इत्यादि श्लोक कहा था। सार्वभौमने जब इसको ९ प्रकारसे व्याख्या कर अभिमान प्रकट किया, तब चैतन्यने भी १८ प्रकारसे व्याख्या कर उनको नीचा दिखाया।

चैतन्यचरितामृत मध्यखण्ड १८२ परिच्छेद देखो।

प्रभुकी व्याख्या सुनते सुनते सार्वभौमके भावोंका परिवर्तन हो गया। वेदान्तसूत्रकी व्याख्या सुन कर सार्वभौमकी धारणा हो गई कि यह कोई असाधारण व्यक्ति होने चाहिये। यहां तक कि वे गोपीनाथके कथनानुसार इन्हें ईश्वर समझनेमें भी द्विधा न करने लगे। आखिर उनको अनुतापने सताया, वे गलेमें धोती डाल कर इनके चरणोंमें पड़ गये और कहने लगे—"प्रभो! मैं अपराधी हूं, दयामय! मुझे क्षमा करो।" चैतन्यने पहले इन्हें रोका था, पर उनकी भक्ति देख कर फिर रोक न सके। वैष्णव कवि कहते हैं कि, इस समय श्रीकृष्णचैतन्यने भट्टाचार्य पर कृपा करके पहले चतुर्भुज नारायणका रूप और पीछे द्विभुज मुरलीधरका रूप दिखा कर उन्हें कृतार्थ किया था। चैतन्यकी कृपासे भट्टाचार्य ईश्वर-प्रेममें गद्गद हो प्रभुका स्तव करने लगे। उस दिनसे सार्वभौम भी परम भक्त हो गये। चैतन्य इसी तरह कीर्तनानन्दमें कुछ समय बिता कर वहांसे चल दिये। इन घटनाओंसे सार्वभौमके शिष्य भी भक्तिके पक्षपाती हो उठे। गोपीनाथ और मुकुन्दके तापित प्राण भी शीतल हो गये। सार्वभौमकी ऐसी अवस्था देख कर भी चैतन्यका सन्देह दूर न हुआ। दूसरे दिन अरुणोदयके समय चैतन्य जगन्नाथके दर्शन करके तथा पुजारीप्रदत्त माला और महाप्रसाद ले कर सार्वभौमके घर आये। भट्टाचार्य प्रभुके आगमनका संवाद पाते ही तुरंत शय्यासे उठे और प्रभुके पास जा कर उनको प्रणाम किया। चैतन्यने उनके हाथमें महा-

प्रसाद दिया। उस समय भट्टाचार्यने स्नान, सन्ध्या, दन्त-धावन आदि कोई भी क्रिया न की थी। तो भी उन्होंने चुपचाप प्रसाद खा लिया और प्रेमावेगमें मत्त हो वे इस श्लोकको कहने लगे—

"शुष्कं पर्युषितं वापि नीतं वा दूरदेशतः।
प्राप्तिमात्रेण भोक्तव्यं नात्र कालविचारणा॥
न देशनियमस्तत्र न कालनियमस्तथा।
प्राप्तमन्नं द्रुतं शिष्टैर्भोक्तव्यं हरिरब्रवीत्॥" (पद्मपुराण)

सार्वभौम इस तरह प्रसाद खा कर कीर्तन करने लगे, देख कर सभीको आश्चर्य हुआ। चैतन्यको चिर-भक्तिविद्वेषी सार्वभौमके इस प्रकार व्यवहार और भक्ति देख कर बड़ा आनन्द हुआ, उन्होंने सार्वभौमको छातीसे लगा कर कहा—"आज मैंने अनायास ही त्रिभुवन जीत लिया, आज मेरी सम्पूर्ण अभिलाषाएं पूर्ण हो गईं, सार्वभौमका महाप्रसादमें विश्वास होना ही मेरे इस आनन्दका कारण है।" इस प्रकार प्रेमाविष्ट हो कर कुछ देर तक नृत्यगीत और कीर्तन कर चुकनेके बाद चैतन्य अपने वासस्थानको चले गये। सार्वभौमने उस दिनसे भक्तिशास्त्रके सिवा अन्य शास्त्रोंका अध्ययन वा अनुशीलन करना बिल्कुल छोड़ दिया। दूसरे दिन भट्टाचार्य जगन्नाथ-दर्शन बिना किये, पहले चैतन्यके दर्शनके लिए गये। प्रभुके चरणोंमें साष्टांग प्रणाम कर वे अनुताप करने लगे। प्रभुने कहा—"कलि-कालमें हरिनामके सिवा दूसरी गति नहीं, अतएव सर्वदा हरिनाम कीर्तन करो।" भट्टाचार्य प्रभुकी आज्ञानुसार दिन रात हरिका भजन करने लगे। थोड़े ही दिनोंमें वे एक प्रधान भक्त हो गये, चिराभ्यस्त निर्वाणमुक्तिमें जो उनका अनुराग था, वह भी जाता रहा। सार्वभौम अब सिर्फ भक्तिप्रार्थी हो गये। यहां तक कि उन्होंने एक दिन चैतन्यके सामने भागवतके दशम स्कन्धस्थ चतुर्दशाध्यायके अष्टम श्लोकके चतुर्थ चरण-में 'मुक्तिपदे' इस पाठका परिवर्तन कर वहां "भक्तिपदे" ऐसा पाठ बना दिया। महाप्रभुने जब इस पाठ परिवर्तनका कारण पूछा, तब सार्वभौमने उत्तर दिया कि, "मुक्तिका नाम सुननेसे भी मुझे भय होता है, इसलिए मैंने 'मुक्ति' की जगह 'भक्ति' पाठ बना दिया है।

इसके बाद एक दिन सार्वभौम भट्टाचार्यने जगदा-नन्द और दामोदर पण्डितको अपने घर बुला कर महा-प्रभुके लिए उत्तम उत्तम महाप्रसाद और एक ताड़पत्र पर स्वरचित दो श्लोक लिख कर श्रीचैतन्यके पास भेज दिये। उक्त श्लोक पहले मुकुन्दके हाथ पड़े, उन्होंने पढ़ कर उनको बाहर भीत पर लिख दिया। उक्त ताड़पत्र जब चैतन्यके पास पहुंचा तब उन्होंने उसमें अपनी प्रशंसा देख उसे फाड़ कर फेंक दिया। किन्तु भक्तोंने भीत पर लिखे हुए श्लोकोंको कण्ठस्थ कर लिया। वैष्णवगण उनको "भक्तकण्ठमणिहार" कहते हैं। श्लोक ये हैं—

"वैराग्यविद्यानिजभक्तियोगशिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्ण-चैतन्यशरीरधारी कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये॥१॥
कालान्नष्टं भक्तियोगं निजं यः प्रादुष्कर्तुं कृष्णचैतन्यनामा।
आविर्भूतस्तस्य पादारविन्दे गाढं गाढं लीयतां चित्तभृङ्गः॥२॥
(चै० चरि० मध्य० ६ परि०)

नगर भरमें प्रसिद्ध हो गया कि, मायावादी सार्वभौम भट्टाचार्य चैतन्यकी कृपासे भक्त हो गये हैं। कठोरज्ञानी सार्वभौमकी भक्तिको देख कर लोग चैतन्यको साक्षात् ईश्वर समझने लगे। तभीसे उत्कलराज्यके इष्टदेव काशीमिश्र और नीलाचलके प्रधान प्रधान लोग चैतन्यके शरणापन्न हुए। इनके यशसे चारों दिशाएं गूंज उठीं।
(चै० चरि० मध्य० ६ परि)

माघ मासके प्रथम दिन चैतन्यने संन्यास लिया था और फाल्गुन मासमें नीलाचल आये। फाल्गुन मासके अन्तमें दोलयात्रा दर्शनके बाद सार्वभौम पर कृपा की। इसी बीचमें नीलाचलके लोग उनके अनुयायी हो गये। वैशाख मासके प्रारम्भमें गौराङ्गको दक्षिण देश-पर्यटनकी इच्छा हुई। एक दिन वे भक्तोंको बुला कर कहने लगे "तुम लोग मेरे प्राणाधिक बन्धु हो, प्राण छोड़ जा सकते हैं पर तुम लोगोंको नहीं छोड़ सकता। तुम लोगोंने मुझे यहां ला कर जगन्नाथके दर्शन कराये, यह सच-मुच ही बन्धुका कार्य किया है। अब तुम लोगोंसे एक भिक्षा मांगता हूं, तुम लोग अनुमति दो तो मैं विश्व-रूपके लिए दक्षिणदेशको जाऊं। किन्तु अबकी बार मैं अकेला ही जाऊंगा। जब तक मैं सेतुबन्धसे लौट न

आज'. तब तक तुम लोग यहीं रहना।" चैतन्यकी बात पर भक्तगण चुपचाप रोने लगे। निमाईने साथ जानेके लिए बहुत कुछ कहा सुना पर चैतन्य उनको साथ लेनेमें राजी न हुए। अन्तमें कौपीन, बहिर्वास और जलपात्र ले जानेके लिए उन्होंने सरलमति कृष्णदास नामक एक ब्राह्मणको अपने साथ रखना मंजूर किया। सार्वभौमने यह संवाद पा कर उन्हें और भी कुछ दिन रहनेके लिए अनुरोध किया। चैतन्य रह भी गये। पीछे निर्दिष्ट दिन वे जगन्नाथ दर्शन और बन्धुओंसे सादर-सम्भाषण कर दक्षिणको तरफ चल दिये। नित्यानन्द आदि चारों भक्त, गोपीनाथ आचार्य और सार्वभौम अलालनाथ तक उनके साथ गये थे। यह स्थान पुरीसे चार कोस दक्षिणमें है। चैतन्यदेवने इस जगह अलालनाथ-मन्दिरके दर्शन करके दलसहित हरिसंकीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। अधिवासीगण संन्यासीके अपरूप भाव और पुलकाश्रु आदि सात्विक लक्षणोंको देख कर तन्मय हो कर संकीर्तन सुनने लगे। धीरे धीरे जनता बढ़ने लगी, छोटे बड़े सब इन्हें देख कर भक्ति-रसमें बहने लगे; सभी कृष्ण कृष्ण कह कर हाहाकार करने लगे। देखते देखते दोपहर हो चुका, तो भी भीड़ न घटी। अन्तमें निताईके प्रयत्नसे चैतन्यने स्नान किया। मन्दिरके दरवाजे बंद करके चैतन्य और उनके साथियों-ने भोजन किया। इसके बाद फिर कीर्तन शुरू हुआ। इस बार जनता और भी बढ़ गई। सम्पूर्ण जनता बिना नहाये-खाये वहीं खड़ी रही। शामके बाद जब कीर्तन समाप्त हो गया, तब लोग अपने अपने घर चल दिये। चैतन्यने वह रात्रि वहीं बिता दी। इसी रातको सार्व-भौमने गोदावरीतीरस्थ विद्यानगरमें उत्कलराज्यके प्रति-निधि परमवैष्णव रामानन्दरायके गुण गा कर चैतन्यको उनसे मिलनेके लिए अनुरोध किया। सुबह होने पर चैतन्यदेव स्नानादि करके अनुयायियोंसे आलिङ्गन कर विदा हुए। अनुयायिगण उनके विच्छेदसे मूर्छित हो गये, कृष्णदास पीछे पीछे जलपात्र ले कर चल दिये। चैतन्यदेव चलते समय इस प्रकार कहते जाते थे,—

"कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण रक्ष माम्।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण पाहि माम्।
राम राघव राम राघव राम राघव रक्ष मां।
कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव पाहि माम्॥"

ये जिस रास्तेसे जाने लगे, उसी रास्तेमें इनको देखनेके लिए लोगोंकी भीड़ होने लगी। कोई कोई तो क्षण भरके लिए "हा कृष्ण! कहां है कृष्ण" इत्यादि कह कर रोने लगते थे। किसीकी भी इनसे अलग होनेकी इच्छा न होती थी, किन्तु स्वामी उनको उप-देश दे कर घर लौटा देते थे। वे बड़ी मुश्किलसे लौटते थे और उनके मुखसे कृष्णनाम सुन कर गाँववाले भी कृष्णके नाम पर पागल होते थे। इस तरह प्रेम, नाम और भक्ति बांटते हुए शचीनन्दनने सेतुबन्ध तक भ्रमण किया था।

अलालनाथके बाद वे कूर्मक्षेत्रमें उपस्थित हुए, वहाँ कूर्मदेवको वन्दना करके नामसंकीर्तनके स्रोतमें समा-गत लोगोंको बहाते हुए वे कूर्म नामक एक वैदिक ब्राह्मणके घर अतिथि हुए। कूर्मने इनके प्रेम और भक्तिको देख कर इन्हें साक्षात् ईश्वर समझा और इनकी पूजा की। दूसरे दिन सुबह प्रस्थान करते समय कूर्मने इनका अनुगमन किया। चैतन्यने उनको उप-देश दिया कि, "गृहस्थाश्रम ही पवित्र साधनक्षेत्र है, घर बैठ कर नामका साधन करो। लौटते समय फिर मुझसे भेंट होगी।" कूर्मको वहीं छोड़ कर चैतन्य पुनः पूर्वलिखित नामकीर्तन करते हुए चलने लगे।

सेतुबन्ध तक जहां जिसके घर इन्होंने आतिथ्य ग्रहण किया, वहांके गृहस्वामियोंने कूर्मको तरह हो उनका अनुगमन करना चाहा, पर चैतन्यने उन लोगोंको उपदेश दे दे कर घर लौटा दिया। परिणाम यह हुआ कि इन गृहस्वामियोंने ही आखिर चैतन्यमतका प्रकाश किया और खुद आचार्यपद पर अभिषिक्त हुए। कूर्मग्राममें कुष्ठरोगग्रस्त वासुदेव नामका एक सेवक रहता था। चैतन्यके चले जाने पर वह कूर्मके घर पहुंचा और वहां उनके दर्शन पा कर रोने लगा। चैतन्यने रास्तेसे लौट कर उसका आलिङ्गन किया और घर बैठ कर उसे कृष्ण-नाम लेते रहनेका उपदेश दिया। वैष्णव-ग्रन्थानुसार

चैतन्यके आलिङ्गन करनेसे उसका कुष्ठरोग नष्ट हो गया था ; फिर वह पहलेकी तरह सुन्दर और सुखी हो गया था और प्रेमभक्तिका प्रचार किया था। वासुदेवके इस प्रकारसे कुष्ठविमोचन करनेके कारण वैष्णवोंने चैतन्यका नाम "वासुदेवामृत' रखा था।

(चै॰ चरि॰ मध्य॰ ७ परि॰)

इसके कुछ दिन बाद चैतन्यने जियड़नृसिंहक्षेत्रमें उपस्थित हो कर नृसिंहदेवका स्तव और वन्दना की। किन्तु राहमें इन्होंने कहां कहां गमन और भोजन किया, इसका कुछ उल्लेख नहीं है। इससे बहुतसे लोग अनुमान करते हैं कि, उस समय इस मार्गमें अत्यन्त जंगल था, रास्तेमें मनुष्योंकी बस्ती न थी, जो कुछ भी थी वह असभ्यजातियोंसे भरी थी, रास्तेमें प्राय: भोजनकी सामग्री मिलती ही न थी, चैतन्य उपवास कर कृष्णनामामृत पान करते हुए गमन करते थे। वनमें हिंस्रजन्तु इनका मुंह देख कर हट जाया करते थे।

नृसिंहक्षेत्रसे कुछ दिन बाद ये गोदावरीके किनारे पहुंचे। गोदावरी और यमुना तथा तीरस्थ वनको देख कर इन्हें वृन्दावनका स्मरण हो आया, ये नृत्य गीत करने लगे। इसके बाद वे गोदावरी पार हो कर राजमहेन्द्रनगरको चले। महाप्रभुने घाटमें स्नान किया और घाटके एक किनारे बैठ कर वे जप करने लगे। इतनेमें रामानन्दराय गोदावरी स्नानके लिए वहां आ पहुंचे। उनके साथ कुछ स्तावक और बहुतसे वैदिक ब्राह्मण वेद पढ़ते पढ़ते आ रहे थे। रामानन्दने डोलीसे उतरते ही चैतन्यके पास जा उन्हें प्रणाम किया। चैतन्यने उठ कर श्रीकृष्णका स्मरण करके उनसे पूछा कि, "क्या आप राजा रामानन्द राय हैं?" रामानंदने उत्तर दिया— "जी हां, मैं हो मंदबुद्धि शूद्राधम हूं।" तदनन्तर सार्वभौमके कहनेसे चैतन्य रामानंदसे मिलने आये हैं, यह सुन कर रामानंदका हृदय आनंदमें डूब गया। गौरचन्द्रकी भी रामानंदसे अनायासमें भेंट हो गई, इसलिए इन्हें भी बड़ी खुशी हुई। दोनों हाथ उठा कर नाचने लगे और दोनोंने एक दूसरेका आलिङ्गन किया। कम्प, स्वेद, अश्रु, रोमाञ्च आदि सात्त्विक भावोंसे विह्वल हो कर दोनों भूमि पर लोटने लगे। कुछ देर पीछे उठ कर बैठे और एक दूसरेकी प्रशंसा करने लगे। इसी समयसे रामानंदको विश्वास हो गया कि, ये मनुष्य नहीं किन्तु स्वयं ईश्वर हैं। रामानंदका इशारा पा कर एक वैदिक ब्राह्मणने इन्हें निमन्त्रण दिया और अपने घर ले जानेके लिए अनुरोध किया। चैतन्यने स्वीकारता दे दी और उसके घर जा कर मध्याह्नकृत्य किया। रामानंदने भी 'संध्याके बाद फिर भेंट करेंगे' ऐसा कह कर प्रस्थान किया।

श्रीचैतन्य सायाह्न स्नान समाप्त करके निभृतमें हरिनाम करने बैठे थे कि इतनेमें रामानंद भी एक नौकरके साथ वहां आ पहुंचे। अनेक शिष्टालापके बाद प्रभुने इन्हें साध्यनिर्णय करनेको कहा। परम वैष्णव रामानन्दने धीरे धीरे वैष्णवधर्मका प्रधानसाध्य वात्सल्यप्रेम और कान्तभाव-प्रेम बतलाया और उसीमें यह भी कह दिया कि राधिकाका प्रेम ही सर्वोत्कृष्ट प्रेम था। श्रीचैतन्यने भी उसे मान लिया। वैष्णवोंका कहना है कि, चैतन्यने रामानन्दके शरीरमें अपनी शक्ति दे कर उनके मुखसे अपने द्वारा प्रवर्तित धर्मके गूढ़तत्त्व प्रकट किये थे। इसी समय रामानन्दने उक्त धर्मके उपास्य कृष्ण और उनकी शक्ति राधिकाका स्वरूप भी बतलाया था। (चैतन्यचरि॰ मध्य॰ ८ परि॰) राजमहेन्द्रीनगरमें भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी और भी बहुतसे लोग वास करते थे। गौराङ्गका उपदेश सुन कर और उनके भावोंको देख कर बहुतोंने वैष्णवधर्म धारण किया। चैतन्य इस जगह दश दिन रहे थे। रामानन्दरायके व्यवहारसे सन्तुष्ट हो कर गौरचन्द्रने उन्हें रसराज महाभाव दोनों तरहसे विवर्तित अपूर्व रूप दिखाया था।

दशम रात्रिके अन्तमें चैतन्यने रामानन्दसे विदा मांग कर कहा—"तुम इन विषयोंको छोड़ कर नीलाचल चलनेका उद्योग करो, इधर मैं भी तीर्थ पर्यटन करके वहां पहुंच रहा हूं। रात बीत जाने पर सुबह हो चैतन्यने प्रातःकृत्य करके वहांसे प्रस्थान किया।

इसके बाद वे कहां कहां गये थे, वैष्णवग्रन्थोंमें इसका ठीक ठीक विवरण नहीं पाया जाता, सिर्फ प्रधान प्रधान तीर्थोंका उल्लेख मिलता है।

इस समय दक्षिणदेशमें ज्ञानी, कर्मी और पाखण्डि-

यांकी संख्या ही अधिक थी। वैष्णवोंकी संख्या बहुत कम थी। उसमें भी रामोपासक और तत्त्ववादी ही ज्यादा थे। चैतन्यके मुखसे धर्मोपदेश सुन कर सब कृष्ण नाम लेते लेते कृष्णोपासक हो गये। श्रीचैतन्यने इस प्रकारसे दक्षिण देशमें प्रकाश करते हुए गौतमीगङ्गामें स्नान करके मल्लिकार्जुनतीर्थमें महेश-मूर्तिके दर्शन किये। इसके बाद अहोवलम् नगरमें जा कर उन्होंने रामानुजों द्वारा प्रतिष्ठित मठ और नृसिंहविग्रहके दर्शन करते हुए सिद्धवट नामक स्थानके दर्शन किये। सिद्धवटमें एक रामोपासक ब्राह्मणके घर उन्होंने आतिथ्य ग्रहण किया था। यहांसे उन्होंने स्कन्दक्षेत्रमें जा कर स्कन्दमूर्तिके दर्शन किये और फिर त्रिमठमें जा वामनमूर्तिके दर्शन किये। त्रिमठसे लौट कर वे पुनः सिद्धवट पहुंचे और ब्राह्मणके घर जा कर देखा कि ब्राह्मण कृष्णका नाम ले रहा है। भोजनके बाद जब चैतन्यने इसका कारण पूछा, तब उसने उत्तर दिया कि, "तुम्हारे दर्शनसे मेरा पुराना अभ्यास छूट गया, तभीसे मैं रामनामके बदले कृष्णनाम ले रहा हूं।" श्रीचैतन्य उस पर कृपा करके वहांसे वृद्धकाशी (वृद्धकाशी ?) पहुंचे और वहां शिवके दर्शन किये। वहांसे वे किसी निकटवर्ती ग्राममें जा कर रहने लगे। इस ग्राममें उस समय अनेक ब्राह्मण सज्जनोंका वास था। तार्किक, मीमांसक, दार्शनिक, मायावादी, स्मार्त्त और पौराणिक आदि नाना प्रकारके विद्वान् यहां विद्याचर्चा करते थे। इसके सिवा यहां बौद्धोंका भी एक आश्रम था। उक्त पण्डितोंके साथ इनका तुमुल शास्त्रार्थ हुआ। आखिर इन्होंने अपनी अलौकिक शक्तिके प्रभावसे सबको अपना मत स्वीकार करा दिया। बौद्धोंने अपने नवग्रन्थद्वारा, जो नवम नामसे प्रसिद्ध हैं, शास्त्रार्थ किया। आखिर चैतन्यने स्वीय असाधारण तर्कशक्तिके प्रभावसे उनके जटिल प्रश्नोंका उत्तर दे बौद्धमतका खण्डन कर दिया। यह सब देखभाल कर वहांकी पण्डितमण्डलीको अवाक् हो जाना पड़ा और बौद्धाचार्यकी भी दृष्टि नीचेको हो गई।

महाप्रभुने यहांसे त्रिपदीमल्लमें जा कर चतुर्भुज विष्णुमूर्तिके दर्शन करके वेङ्कटगिरि होते हुए त्रिपदी नगरमें रामसीताके दर्शन किये। इसके बाद गौरचन्द्रने पाना-नरसिंहके दर्शन करके शिवकाञ्ची और विष्णुकाञ्ची जा कर पार्वती और लक्ष्मीनारायणके दर्शन किये। तदनन्तर त्रिमल्ल और त्रिकालहस्ती इन दोनों तीर्थोंका पर्यटन किया। फिर पक्षतीर्थमें वृद्धकाल और श्वेतवराह मूर्तिके दर्शन कर उन्होंने पीताम्बर शिवस्थान होते हुए शियाली नगरमें शियाली-भैरव-मूर्तिके दर्शन किये। तत्पश्चात् कावेरी नदीके किनारे गोसमाज (?) शिव, वेदावनमें महादेव-मूर्ति और अमृतलिङ्गके दर्शन किये। कई शिवालयोंके उपासक पण्डे भी इन्हें देख कर वैष्णव हो गये थे। इसके बाद देवस्थानमें जा कर इन्होंने विष्णुदर्शन और वैष्णवोंसे धर्मालाप किया। गौरचन्द्र इस तरह क्रमशः कुम्भकर्ण-कपालका सरोवर, शिवक्षेत्र और पापनाशन तीर्थ देखते हुए श्रीरङ्गक्षेत्र पहुंचे, वहां इन्होंने कावेरी-स्नान और रङ्गनाथके दर्शन किये। रङ्गनाथके मन्दिरके प्राङ्गणमें कीर्तन और नृत्य करते करते गौराङ्ग प्रेममें डूब गये। यह देख कर वेङ्कटभट्ट नामके एक ब्राह्मण उन्हें निमन्त्रण कर अपने घर ले गया। इसी समय चातुर्मास्य भी आ पहुंचा। पथ-पर्यटनमें विशेष कष्ट होगा, यह जान कर वेङ्कटभट्टने उनसे चार मास वहीं रहनेके लिए अनुरोध किया। प्रभुने भक्त वेङ्कटभट्टकी बात मान ली, चार मास वहीं रहे। यहां वे सुबह कावेरीमें स्नान कर रङ्गनाथका दर्शन, दोनों सांझ मन्दिर-प्राङ्गणमें नृत्य और सङ्कीर्तन तथा अवशिष्ट समयमें वेङ्कट आदि वैष्णवोंके साथ धर्मालाप करते रहते थे। थोड़े ही दिनोंमें इनका यश चारों ओर फैल गया, सभी लोग इनको देखने आये और देख कर मुग्धकी तरह पैरों तले पड़ गये। इन्होंने भी कृपा कर उन लोगोंको वैष्णवधर्ममें दीक्षित किया। चार मासके भीतर बहुतसे लोग वैष्णव हुए थे। उस समय वेङ्कटका पुत्र बालक गोपालभट्ट भी चैतन्यके साथ रहनेसे वैष्णव हो गया था। श्रीरङ्गक्षेत्रके ब्राह्मणोंने एक एक दिन प्रभुको निमन्त्रण दे कर भोजन कराया था।

रङ्गनाथके मन्दिरमें बैठ कर एक ब्राह्मण प्रतिदिन सुबहके वक्त गीता पढ़ता था। ब्राह्मण निहायत मूर्ख था, उसे व्याकरणका ज्ञान तो था ही नहीं। जो कुछ उच्चारण करता था, सब अशुद्ध और विकृत होता था।

इससे सभी लोग उसकी निन्दा करते थे। किन्तु ब्राह्मण किसीकी बात पर ध्यान न दे कर अपने काममें मस्त रहता था, पढ़ते समय आंसुओंसे उसकी छाती भीग जाती थी, उसका शरीर रोमाञ्चित होता था, पसीना और विवर्णता भी दिखलाई पड़ती थी। श्रीचैतन्य प्रतिदिन उसका यह हाल देख कर विस्मित होते थे। एक दिन ब्राह्मणको बुला कर इन्होंने पूछा कि, "महाशय! आपके उच्चारणके सुननेसे अनुमान होता है, कि आप गीताका एक भी अक्षर नहीं जानते, तो भी आपकी आंखोंसे आंसु बहने लगते हैं इसका क्या कारण? मुझे खुलासा समझा दीजिये।" ब्राह्मणने नम्रताके साथ कहा—"प्रभो! मैं गीताका एक अक्षर भी नहीं समझता यह सच है, किन्तु जब तक मैं उसे पढ़ता रहता हूं तब तक मुझे साफ दीखता रहता है कि मानो अर्जुनके रथ पर श्रीकृष्ण घोड़ोंकी लगाम थाम कर अर्जुनको हितोपदेश दे रहे हैं। उनको देख कर मेरा हृदय भर आता है, इसीलिए मैं लोगोंके उपहास करने पर ध्यान न दे कर अपना काम करता रहता हूं।" ब्राह्मणके उत्तरसे सन्तुष्ट हो कर चैतन्यने यह कहते हुए कि "गीता पढ़ना तुम्हारा ही सार्थक है, उसमें वास्तविक अधिकार तुम्हारा ही है" उनका आलिङ्गन किया। ब्राह्मण उसी दिनसे इनका परम भक्त हो गया। इन दिनों वेङ्कटभट्टके साथ परिहास करते हुए चैतन्यने धर्ममत प्रकट किया था।

(चै॰च॰ मध्य॰ ९ परि देखो।)

इस प्रकार चातुर्मास्यके पूर्ण होने पर श्रीचैतन्यने वहांसे ऋषभ-पर्वत पर जा कर नारायणके दर्शन किये। माधवेन्द्रपुरीके प्रधान शिष्य और चैतन्यके गुरु ईश्वरपुरीके अध्यात्मभ्राता परमानन्दपुरी वहां चातुर्मास्य कर रहे थे। गौरचन्द्रने उनके साथ कृष्णकी चर्चामें तीन दिन बड़े आनन्दसे बिताये। इसके बाद पुरी महाशयने जब पुरुषोत्तमके दर्शन करके वङ्गदेशकी तरफ जानेकी इच्छा जाहिर की, तब चैतन्यने उनसे पुनः पुरुषोत्तम लौटनेके लिए अनुरोध किया। पुरीके चले जाने पर चैतन्यदेवने श्रीशैल जा कर शिवदुर्गाके दर्शन किये और वहांसे वे कामकोष्ठि नगर होते हुए दक्षिण मथुरा (मदुरा) पहुंचे। यहां वे एक रामोपासक ब्राह्मणके घर ठहरे। वह ब्राह्मण उपवास करके इसलिए अपनी हत्या देना चाहता था कि, जगल्लक्ष्मी सीतादेवीको राक्षसने स्पर्श क्यों किया। चैतन्यने उसे समझाया कि, "वास्तवमें सीता चिन्मयमूर्ति थीं, उनको स्पर्श करना तो दूर रहा, साधारण मनुष्य उनके दर्शन भी नहीं पा सकता। रावण जिस समय सीताको स्पर्श करनेके लिए उद्यत हुआ था, उस समय सीता अन्तर्धान हो गई थीं; वह मायामयी सीताकी आकृति मात्र ले गया था।" ब्राह्मणके आश्वस्त होने पर चैतन्यदेव वहांसे चल कर दुर्वसन नगरीमें पहुंचे। रघुनाथ और महेन्द्रशैल पर परशुराम दर्शन करते हुए वहांसे सेतुबन्ध जा कर रामेश्वरके दर्शन किये। इस जगह ब्राह्मणसभामें कूर्मपुराण पढ़े जा रहे थे। उसमें 'मायासीता रावण द्वारा हरी गई' ऐसा उपाख्यान सुना। चैतन्य उस पत्रेको ले कर पुनः मदुरा गये और उन्होंने उस ब्राह्मणका संदेह मिटा दिया। उस दिन दक्षिण मदुरामें उस रामदास विप्रके घर रह कर ताम्रपर्णी नदीके किनारे पाण्ड्यराज्यमें भ्रमण किया। उसके बाद क्रमसे नयत्रिपदि, चियड़ताला तिलकाञ्ची, गजेन्द्रमोक्षण, पानागड़ी, चामतापुर, श्रीवैकुण्ठ, मलयपर्वतस्थ अगस्त्याश्रम, कन्याकुमारी और आमलीतला होते हुए मल्लार वा मलवार उपकूलमें पहुंचे। इस जगह तमालकार्तिक और बतापाणिमें रघुनाथ-मूर्तिके दर्शन करके एक रात्रि ठहरे। उस समय उस देशके भट्टमारियोंने चैतन्यके साथी कृष्णदास ब्राह्मणको सुन्दरी स्त्री और धनका लोभ दे कर बहला रक्खा था। चैतन्यको मालूम होते ही वे भट्टमारियोंके अड्डेमें जा कर बोले—"आप लोग भी संन्यासी हैं, हम भी संन्यासी हैं, हमारे साथीको रोक रखना आपको उचित नहीं।" दस्युप्रकृति भट्टमारियोंको इनकी बात बुरी लगी, वे तुरंत अस्त्रशस्त्र ले कर उन्हें मारने दौड़े; किन्तु कुछ देर बाद उनके अस्त्र उन्हीं पर पड़ने लगे जिससे डर कर वे भाग गये। उनके बाल-बच्चे रोने लगे, बड़ा हुल्लड़ मच गया। इसी मौके पर कृष्णदास भी दिखलाई दिया, चैतन्य उसकी चोटी पकड़ कर जबरन उसे घसीटते हुए दौड़ने लगे। उसी दिन उन्होंने पयस्विनी नदीके किनारे किसी भद्र ग्राममें आश्रय लिया।

यहां आदिकेशवके मन्दिरमें नृत्य और कीर्तन करनेसे उनकी भक्ति देख कर बहुतोंका मन उनके प्रति आकृष्ट हुआ। यहां उन्होंने ब्रह्मसंहिता नामक भक्तिपूर्ण आध्यात्मिक ग्रन्थको देख कर उसे लिखवा लिया। यहांसे वे मध्वाचार्यके दीक्षास्थान अनन्त-पद्मनाभको गये और वहां अनन्तेश्वर शिवके दर्शन किये। वहांसे चल कर श्रीजनार्दनके दर्शन कर दो दिन वहां कीर्तन किया। अनन्तर पयोष्णी जा कर शङ्करनारायणके दर्शन किये। इसके बाद चैतन्यदेव शृङ्गपुरमें शङ्कराचार्य द्वारा प्रतिष्ठित सिंहारिमठ और मत्स्यतीर्थ देखते हुए माधवाचार्यके प्रधान स्थान उदिपी नगरमें उड़ुपकृष्ण देख कर सुखी हुए। माधवाचार्यके अनुवर्ती तत्त्ववादियोंने गौरको मायावादी संन्यासी समझ पहले तो उनका कुछ सम्मान न किया। पीछे उनकी भक्ति और प्रेमको देख कर वे उनका सम्मान करने लगे और आखिरको शास्त्रार्थमें परास्त हो कर सभी उनके शरणापन्न हुए।

इसके बाद गौरचन्द्र फल्गुतीर्थ, त्रितकूप, विशाला पञ्चाप्सरा, गोकर्णशिव, द्वैपायणि, सूर्पारक, कोल्हापुरमें लक्ष्मी, क्षीरभगवती, लिङ्गगणेश और चोर पार्वती इन देवमन्दिरोंके दर्शन कर पांडुपुरको चल दिये। वहां उन्होंने विट्ठल ठाकुरका अवलोकन कर प्रेमावेशमें बहुत देर तक नृत्य और कीर्तन किया। अनन्तर एक ब्राह्मणके घर अतिथि हुए। इसी समय माधवेन्द्रपुरीके अन्यतम शिष्य श्रीरङ्गपुरीके साथ इनकी मुलाकात हो गई। श्रीरङ्गपुरीके साथ कृष्णचर्चा और नृत्य-कीर्तन करते हुए पांच सात दिन बड़े आनन्दसे बीतने पर चैतन्यको मालूम हुआ कि, नवद्वीपवासी जगन्नाथमिश्रके पुत्र शङ्करारण्यने (विश्वरूपके संन्यास-आश्रमका नाम) इस तीर्थसे सिद्धि पाई है। पीछे गौर और श्रीरङ्गपुरी द्वारिका तीर्थके लिए निकल पड़े।

किसी गृहस्थ ब्राह्मणके अनुरोधसे वहां और भी चार दिन ठहरे, पीछे कृष्णवेण्वा नदीके किनारे नाना तीर्थोंके दर्शन करते हुए भ्रमण करने लगे। कुछ दिन बाद उन्होंने वैष्णव ब्राह्मणमण्डलीपरिवृत किसी ग्राममें जा कर सुना कि वैष्णवसमाजमें "कृष्णकर्णामृत" नामक कृष्णलीलाविषयक मधुर ग्रन्थ पढ़ा जा रहा है। इन्होंने भी उसकी एक प्रतिलिपि कर ली। सिद्धान्तविषयक ब्रह्मसंहिता और लीलाविषयक कृष्णकर्णामृत, इन दो ग्रन्थोंको पा कर चैतन्य महा आनन्दित हुए और भक्तोंको उपहार देनेके लिए उन्होंने दोनोंको बड़े यत्नसे रख दिया। इसके बाद गौरचन्द्र कृष्णाके किनारेसे उत्तर-पश्चिमकी तरफ नाना राज्योंमें भ्रमण और तापी नदीमें स्नान करते हुए माहेष्मतीपुरमें आ पहुंचे। कृष्णासे तापी नदी बहुत दूर है, रास्तेमें चैतन्यने कौन कौनसे देशोंमें भ्रमण किया, वैष्णव ग्रन्थोंमें इसका कोई विवरण नहीं मिलता। इसके बाद नाना देश पर्यटन करते हुए गौरचन्द्र नर्मदानदीके किनारे आये और वहांसे चल कर धनुतीर्थ तथा ऋष्यमुख पर्वतके दर्शन कर दण्डकारण्य होते हुए सप्तताल चले गये। वैष्णवग्रन्थकर्ताओंके मतसे, रामचन्द्रके समयका जो सप्ततालवृक्ष आज तक वर्तमान था, गौराङ्गके देखनेके बाद वह अन्तर्हित हो गया। यहांसे गौरचन्द्र पम्पा सरोवरमें स्नान करके पञ्चवटीवनमें गये। वहांसे नासिक और त्र्यम्बकनगरमें जा कर ब्रह्मगिरि होते हुए गोदावरीके उत्पत्ति-स्थान कुशावर्त पर गये। सप्तगोदावरीके दर्शन कर गोदावरीके किनारे किनारे भ्रमण करते हुए चैतन्यप्रभुने पुनः विद्यानगरमें आ कर रामानन्दसे साक्षात् किया। पुनर्मिलनसे दोनोंको अत्यन्त आनन्द हुआ। श्रीचैतन्यने कहा—"तुमने जितने भी सिद्धान्त पहले मुझे सुनाये थे, ये दो ग्रन्थ उन्हीके प्रमाण स्वरूप हैं।" रामानन्दराय गौरके साथ दोनों ग्रन्थोंको पढ़ कर सन्तुष्ट हुए और उनकी नकल कर ली। श्रीचैतन्य कुछ दिन वहीं रह कर फिर पुरुषोत्तमको चले गये। राय रामानन्द भी वहां जानेकी कोशिश करते रहे। चैतन्य पूर्वपरिचित मार्गसे चलते चलते यथासमय अलालनाथ पहुंचे और कृष्णदास ब्राह्मणके द्वारा नित्यानन्द आदिके पास पहले संवाद भेज कर स्वयं पीछे पीछे जाने लगे। भक्तोंने मृतशरीरमें प्राण पाये, उनके लौटनेकी खबर सुन नाचते नाचते उन लोगोंने मार्गमें ही प्रभुसे साक्षात् किया। सार्वभौम भट्टाचार्य, जगन्नाथके प्रधान पण्डा और उत्कलराजके इष्टदेव काशीमिश्र आदि बड़े बड़े सम्भ्रान्त लोग समुद्रके किनारे आ कर गौरके साथ हो लिये। सब मिल कर

जगन्नाथके दर्शन करते हुए सार्वभौमके घर जा कर ठहरे। गौरचन्द्रको अपने तीर्थभ्रमणको कहानी सुनाते सुनाते इस रातको जागरण करना पड़ा था।

श्रीचैतन्यके दक्षिणदेशको तरफ चले जाने पर उत्कलराज गजपति प्रतापरुद्र सार्वभौमके मुंहसे चैतन्यके प्रभाव और भक्तिकी प्रशंसा सुन कर उन पर अनुरक्त हो गये। उन्होंने सार्वभौमसे कहा, "संन्यासी गौरचन्द्र यहां आये, आप लोगों पर उन्होंने कृपा की, पर आपने मुझे उनके दर्शन क्यों न कराये? और इतनी जल्दी उन्हें जाने हो क्यों दिया?" इसके उत्तरमें सार्वभौमने कहा, "वे संन्यासी हैं, स्वप्नमें भी वे धनाढ्योंके साथ साक्षात् नहीं करते, इसी लिए इच्छा रहते हुए भी मैं आपसे उनकी मुलाकात न करा सका। वे स्वयं ईश्वर हैं जैसी इच्छा होती है, वैसा ही करते हैं। मैं बहुत कोशिश करके भी उन्हें रोक न सका। पर वे जल्दी ही आवेंगे।" महाराज सार्वभौमके साथ परामर्श करके अपने इष्टदेव काशीमिश्रके घर प्रभुका वासस्थान ठीक कर चल गये। गौराङ्गके उपस्थित होने पर भट्टाचार्यने उन्हें काशीमिश्रके घर ठहराया। काशीमिश्र भी परम भक्त थे, उनकी सेवासे सन्तुष्ट हो कर श्रीचैतन्यने उन्हें चतुर्भुज मूर्तिके दर्शन कराये।

श्रीचैतन्यचरितामृतमें चैतन्यके दक्षिणदेशका भ्रमण-वृत्तान्त जैसा लिखा है, उसीके अनुसार ऊपर लिखा गया है। किन्तु "गोविन्दका कड़चा" और अन्यान्य छोटे छोटे ग्रन्थोंमें 'चैतन्यचरितामृत"के साथ सामञ्जस्य नहीं है। उक्त ग्रन्थोंके मतसे चैतन्यदेवने दो वर्ष तक दक्षिणमें भ्रमण किया था। पुरुषोत्तमसे विद्यानगर तकका गमन-वृत्तान्त प्रायः चरितामृतके समान ही है।

तदनन्तर विद्यानगरसे त्रिमदनगर जा उन्होंने बौद्ध पण्डित रामगिरिके साथ शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया। इसके बाद ढूण्ढिरामतीर्थमें ढूण्ढिरामके साथ प्रभुका शास्त्रार्थ हुआ। उक्त पण्डित इनकी कृपासे वैष्णव हो कर हरिदास नामसे प्रसिद्ध हुए। उसके बाद श्रीचैतन्य अक्षयवटमें उपस्थित हुए। यहां तीर्थराम नामक एक वणिक्ने सत्यबाई और लक्ष्मीबाईके द्वारा प्रभुकी परीक्षा कराई थी; अन्तमें उनकी भक्तिको देख कर तीनों ही उनके पैरों पड़ गये और वे वैष्णव हो गये। तीर्थरामकी पत्नी कमलकुमारी पर भी प्रभुने कृपा की थी। अक्षयवटमें ७ दिन रह कर वे विशाल वनमें घुस गये। यह वन १० कोस विस्तृत था। इसके भीतर किस जगह कौनसी विशेष घटना हुई, उसके जाननेका कोई उपाय नहीं है। अनन्तर इन्होंने मुन्ना नगर होते हुए वेङ्कटनगरमें जा कर घर घर हरिनाम वितरण किया। फिर बगुला नामक प्रसिद्ध वनमें जा कर इन्होंने पन्थभील नामक दस्युका उद्धार किया। दुर्वृत्त पन्थभील श्रीचैतन्यकी दो चार बातोंको सुनते ही अपने अस्त्र-शस्त्र और चिरसञ्चित हिंसाप्रवृत्तिको हमेशाके लिए विसर्जित कर वैष्णवधर्ममें दीक्षित हो गया। पन्थभीलके उद्धारके बाद ये तीन दिन बिना कुछ खाये पीये भ्रमण करते रहे। चौथे दिन इन्होंने दूध और अन्नका आहार किया था।

इसके बाद उन्होंने गिरीश्वरलिङ्गके दर्शन कर अपने हाथसे बिल्वपत्रादि उपहारोंसे शिवकी पूजा की। इस जगह एक मौनी संन्यासीने इनके प्रेमावेगको देख कर मौनव्रत परित्यागपूर्वक वैष्णव-धर्म अवलम्बन किया था। यहाँसे चल कर वे त्रिपतिनगर पहुंचे, इन्होंने वहांके प्रधान तार्किक मथुरा नामक एक रामायत पण्डितको शास्त्रार्थमें परास्त किया। उसके बाद पानानरसिंह तथा विष्णुकाञ्चीनगरमें लक्ष्मीनारायण और त्रिकालेश्वर शिवके दर्शन कर ये भद्रा नदीके किनारे पक्षगिरि तीर्थमें उपस्थित हुए। उसके बाद कालतीर्थमें वराहमूर्ति देखते हुए सन्धितीर्थमें अद्वैतवादी सदानन्दपुरीको वैष्णव बना कर ये चाँइपन्दितीर्थ और नागर नगर होते हुए तञ्जोरमें कृष्णभक्त धनेश्वर ब्राह्मणके घर उपस्थित हुए। अनन्तर संन्यासियोंके मुख्यस्थान चण्डालू पर्वत पर पहुंचे और वहांके भट्ट नामक ब्राह्मण और सुरेश्वर नामक संन्यासीको वैष्णव बना कर ये पद्मकोटतीर्थको चले गये। यहां अष्टभुजा देवीके सामने कीर्तन करते समय प्रभु पर सहसा पुष्पवृष्टि हुई थी। एक जन्मान्ध भक्त ब्राह्मणने प्रभुकी कृपासे चक्षुदान पा कर प्रभुको देखते ही प्राण छोड़ दिये और

प्रभुने भी महा समारोहसे उन्हें समाश्विष्ट किया। पद्म-कोटसे त्रिपात्रनगरमें जा कर इन्होंने चण्डेश्वर शिवके दर्शन और वहांके प्रधान दार्शनिक बुद्ध और अन्य भार्गवदेव पर कृपा की। यहाँ ये ७ दिन ठहरे थे।

तदनन्तर गौरचन्द्रने पुनः गभीर वनमें प्रवेश किया। पन्द्रह दिनमें उस जङ्गलको पार करके वेङ्कटधाममें पहुंचे। वहाँसे ऋषभपर्वत पर जा कर परमानन्दपुरीसे साक्षात् किया, फिर रामनाद नगर होते हुए रामेश्वर-तीर्थ पहुंचे। इस स्थानसे चल कर तीन दिन बाद साध्वोवन नामक स्थानमें इन्होंने एक मौनव्रतधारी तापसीको वैष्णव बनाया। माघीपूर्णिमाके दिन ताम्र-पर्णी नदीमें स्नान करके वे समुद्रपथसे कन्याकुमारीमें पहुंचे। वहांसे समुद्रमें स्नान करके लौट आये। आते समय वे सांतन पर्वत होते हुए त्रिवाङ्कुरमें पहुंचे। प्रभुको देख कर त्रिवाङ्कुरके राजा रुद्रपतिके उनके शरणापन्न होने पर प्रभुने कृपा कर इनको वैष्णवधर्ममें दीक्षित किया।

त्रिवाङ्कुरके निकटवर्ती रामगिरि नामक पर्वत पर अद्वैतवादी शङ्कराचार्यके शिष्योंको वैष्णव बना कर इन्होंने मत्स्यतीर्थ, नागपञ्चपदी, चितोल आदि प्रसिद्ध स्थानोंके दर्शन करते हुए तुङ्गभद्रानदीमें स्नान किया। वहांसे चण्डीपुर जा कर ईश्वरभारती नामक किसी संन्यासीको वैष्णव बनाया जिसका नाम कृष्णदास रक्खा था।

चण्डीपुरके बाद प्रभुने एक भयानक वनमें प्रवेश किया। यहाँ इनका मुख देख कर वनके हिंस्र जन्तुओंने भी अपना हिंस्र-स्वभाव छोड़ दिया था। इस दुर्गम पथको छोड़ कर इन्होंने पर्वतवेष्टित किसी क्षुद्र ग्राममें जा किसी ब्राह्मण और ब्राह्मणीको दर्शन दिये। अनन्तर नीलगिरिके निकटस्थ काण्डारि नामक स्थानमें जा कर इन्होंने कुछ संन्यासियोंसे साक्षात् किया, फिर वे अन्यान्य स्थान भ्रमण करते हुए गुर्जरी नगरमें पहुंचे और वहाँ अगस्त्यकुण्डमें स्नान किया। वहाँसे बीजकुल पर्वत हो कर सह्यपर्वत और महेन्द्रमलयके दर्शन करते हुए पूना पहुंचे। वैष्णव ग्रन्थकर्ताओंके मतसे यहां प्रभुने ठीक नवद्वीपकी तरह धर्मप्रकाश करके चतुष्पाठीके पण्डित और छात्रोंको स्वमतमें दीक्षित किया था। पीछे ये तस्कर नामक जलाशयके किनारे बैठ कर कृष्णके विरहसे रोये थे। वहाँसे चल कर इन्होंने भोलेश्वर और देवलेश्वरके दर्शन कर खण्डोबामें जा खण्डोबादेवके दर्शन किये। प्रवाद है कि जिस नारीका विवाह न होता था, उसके मातापिता उसे खण्डोबा देवकी सेवामें नियुक्त करते थे, इस तरहसे वहाँ बहुतसी स्त्रियां देवदासी हुई थीं और दिनों दिन वे भ्रष्टाचारिणी हो रही थीं। श्रीचैतन्य उन लोगोंको सत्पथमें लाये। वे वैष्णवधर्ममें दीक्षित हो गईं। तत्पश्चात् गौरचन्द्रने चोरानन्दीवनमें प्रवेश कर प्रसिद्ध डकैत नारोजीका उद्धार किया। नारोजीको साथ ले कर ये मुला नदीके तीरस्थ खण्डलातीर्थ, नासिक और पञ्चवटी वनको अतिक्रम करते हुए दमन नगरमें पहुंचे। वहाँसे उत्तरकी तरफ १५ दिन चल कर ये सूरत पहुंचे। यहाँ ये तीन दिन रहे थे। इन्होंने यहाँकी अष्ट-भुजा भगवती पर जो पशुओंकी बलि चढ़ाई जाती थी उसे बंद कराके ताप्ती नदीमें जा कर स्नान किया। तद-नन्तर नर्मदामें स्नान और बलाव नगरमें यज्ञकुण्डके दर्शन करके बरोदा पहुंचे। यहां नारोजी डकैतका देहान्त हो गया। मृत्युके समय प्रभुने स्वयं उसके कानोंमें कृष्णनाम पढ़ा था। इस समय बरोदाके राजा भी प्रभुके शरणापन्न हुए।

महानदी पार हो जब प्रभु अहमदाबाद हो कर शुभ्रानदीके किनारे पहुंचे, तो प्रभुकी रामानन्द वसु और गोविन्दचरणके साथ मुलाकात हुई। उसके बाद योगानन्द स्थानमें आ कर प्रभुने बारहमुखी नामकी एक वेश्या पर कृपा की, फिर सोमनाथ-दर्शन करनेके लिए व्याकुलचित्त हो वे जाफराबाद हो कर छह दिनमें सोमनाथ पहुंचे। यवनोंने सोमनाथकी दुर्दशा कर रक्खी थी, इससे प्रभु हाहाकार कर आर्त्तनाद करने लगे; बादमें सोमनाथके सामने कातरस्वरसे बिनती करके वहाँसे उन्होंने प्रस्थान किया। धीरे धीरे जूनागढ़ अति-क्रम कर गिरनार पहाड़ पर श्रीकृष्णके चरणचिह्न देख कर प्रेममें विह्वल हो गये। यहां उन्होंने भर्गदेव नामक एक संन्यासीको पीड़ासे मुक्त कर प्रेमदान किया था।

प्रभुने कहीं भी विश्राम नहीं किया। सोलह भक्तोंके

साथ वे निविड़ वनपथसे चल कर सात दिन बाद अमरावती और गोपीतला नामक स्थान पर उपस्थित हुए। इसीका नाम प्रभासतीर्थ है। यहां आते ही प्रभु ज्ञानशून्य हो पड़े थे और ज्ञान होने पर रोये थे।

आश्विनके प्रारम्भमें चैतन्यदेव प्रभास छोड़ कर द्वारकाको चले। सागरके किनारे चार दिन चल कर रत्नाके ऊपरसे सागरकी खाड़ी पार हो कर वे द्वारका पहुंच गये। यहां भी प्रभासकी तरह प्रेममें विह्वल हो गये। एकपक्ष तक यहां रह कर प्रभु नीलाचलकी तरफ लौटे। यहां इन्होंने अपने साथियोंको विदा कर दिया था। आश्विन मासके अन्तमें ये पुनः बरोदा आये। उसके सोलह दिन बाद नर्मदा नदीमें आ कर स्नान किया। यहां मार्गवदेवसे प्रभुका विच्छेद हो गया। नर्मदाके किनारे किनारे चलना प्रारम्भ कर वे दोहद और कुक्षि नगरमें अनेक वैष्णवोंसे मिलते हुए विन्ध्याचलके मन्दुरा नगरमें उपस्थित हुए। वहांसे ३ दिनमें देवघर आ कर आदिनारायण नामक कुष्ठरोगीको आरोग्य किया। वहांसे दो दिनमें शिवानीनगरमें आ कर उसके पूर्वभागस्थ महलपर्वत परसे चण्डी नगरमें पहुंचे और वहां चण्डीदेवीके दर्शन किये। वहांसे रायपुर होते हुए विद्यानगरमें जा रामानन्दरायके साथ साक्षात् किया। इस स्थानसे पुरी जानेका विवरण चरितामृतके समान है।

महाप्रभु दक्षिण लौट आये हैं, यह सुन कर नीलाचलके प्रधान प्रधान उनसे परिचय करने आये। सबके बैठ जाने पर सार्वभौमने उनका परिचय सुना दिया। उनमेंसे जगन्नाथके सेवक जनार्दन, सुवर्ण बेतधारी, लिखनाधिकारी शिखिमहाति, वैष्णव प्रद्युम्नमिश्र, जगन्नाथके महाशोयाके दास नामक व्यक्ति, शिखिमहाति के भ्राता मुरारि महाति, चन्द्रनेश्वर, सिंहेश्वर, मुरारि, विष्णुदास, प्रहराज महापात्र और परमानन्द महापात्र ये सब उसी दिनसे श्रीचैतन्यके एकान्त अनुगत हो गये। इस समय रामानन्दरायके पिता भवानन्दराय चार पुत्रोंके साथ वहां आ पहुंचे, भट्टाचार्यके उनका परिचय कराने पर श्रीचैतन्यने उनकी और रामानंदरायकी बहुत प्रशंसा की। भवानंदने भी चारो पुत्रोंके साथ आत्मसमर्पण किया और पुत्र वाणीनाथको चैतन्यकी सेवाके लिए उन्हींके पास छोड़ दिया। भवानंदके मुंहसे ४।५ दिनमें रामानंदरायके आनेका संवाद सुन चैतन्य अत्यन्त आह्लादित हुए। भवानंद विदा ले कर चले गये, वाणीनाथ प्रभुके ही पास रहे।

सार्वभौम भट्टाचार्यके सिवा और सभी लोग विदा हुए। श्रीचैतन्यने दक्षिण-यात्राके सङ्गी कृष्णदासको बुलाया और भट्टमारियोंके प्रलोभनसे उसकी जैसी अवस्था हुई थी, उसका आद्योपान्त वर्णन कर सार्वभौमसे कहा—"अब मैं इसको देशमें लौटा लाया और विदा देता हूं ; जहां इच्छा हो चला जावे, अब मैं इसे अपने पास न रक्खूंगा।" यह सुन कर कृष्णदास रोने लगा। सभा भङ्ग हो गई। चैतन्य उठ कर चले गये। कृष्णदासका क्रंदन सुन कर नित्यानंद अत्यन्त दुःखित हुए ; उन्होंने चैतन्यचन्द्रको आज्ञानुसार महाप्रसाद दे कर उसे महाप्रभुके नीलाचल लौट आनेका संवाद देनेके लिए नवद्वीप भेज दिया। कृष्णदासने नवद्वीप जा कर शचीमाता और श्रीवासादि भक्तोंको तथा शान्तिपुर जा कर अद्वैताचार्यको संवाद दिया। इस शुभसंवादसे भक्तोंके आनंदकी सीमा न रही। भक्तोंने मिल कर तीन दिन इसका उत्सव मनाया और नीलाचल जानेका निश्चय कर शचीमाताके घर जा उनसे आज्ञा ली। कृष्णदासके मुखसे संवाद सुन कर नवद्वीपवासी वासुदेवदत्त, मुरारिगुप्त, शिवानंद, चन्द्रशेखर आचार्य, वक्रेश्वर पण्डित, आचार्यनिधि, दामोदर पण्डित, श्रीमान् पण्डित, विजयदास, श्रीधर, राघव पण्डित और हरिदास ठाकुर आदि भक्तगण नीलाचल जानेकी तैयारियां करने लगे। कुलीनग्रामवासी सत्यराजखान् और रामानंद तथा श्रीखण्डवासी मुकुंद, नरहरि और रघुनंदन ये भी शामिल हो लिये।

इसी समय परमानंदपुरी दक्षिणापथसे आ कर शचीके घर उपस्थित हुए। वे गौरके नीलाचल आनेकी खबर सुनते ही गौराङ्गके एक भक्त कमलाकान्तको साथ ले भक्तोंकी चलनेकी तैयारियां होनेसे पहले ही नीलाचलको चल दिये। श्रीचैतन्य इनको पा कर महा आनंदित हुए और प्रणाम करके बोले—"मेरी आपके साथ रहनेकी बड़ी इच्छा है, आप नीलाद्रिमें ही अपना

डेरा जमाइये।" पुरीने भी इसका कुछ विरोध न किया। गौरचन्द्रने पुरीके लिए काशीमिश्रके उसी मकानमें एक एकान्तका घर और सेवाके लिए एक किङ्कर नियुक्त कर दिया। पुरीसे ही चैतन्यको मालूम हुआ कि भक्तगण शीघ्र ही आनेवाले हैं।

दिनों दिन काशीमिश्रका मकान भराभरासा होने लगा। एक दिन प्रातःकालमें सार्वभौम और परमानन्द पुरीके साथ श्रीचैतन्य धर्मप्रसंग कर रहे थे, कि इतनेमें स्वरूप दामोदर आ कर उनके पैरों तले पड़ गये और रोने लगे। इनका निवास नवद्वीप और पूर्वाश्रमका नाम पुरुषोत्तम आचार्य था। गौराङ्गके संन्यास होने पर इन्होंने भी बनारस जा कर संन्यास-धर्म ग्रहण किया था, किन्तु योगपट्ट नहीं लिया था। ये चैतन्यके एकान्त अनुरागी थे, स्वरूप इनका संन्यासाश्रम का नाम था। भक्तिरस और वाक्यशास्त्रमें ये अद्वितीय थे, वेदान्तादिशास्त्रोंमें भी इनकी जोड़ीका विद्वान् दूसरा न था। इनका कण्ठस्वर अत्यन्त मधुर था। गौराङ्गके नीलाचल आनेका संवाद पा कर ये गुरुसे अनुमति ले यहां आये थे। श्रीचैतन्यने स्वरूपको उठा कर उनका गाढ़ आलिङ्गन किया और कहा—"आज तुम्हें मैंने स्वप्नमें आते देखा था। अच्छा हुआ, मैं अन्धा था, आज तुम्हें पा कर चक्षुरत्नोंका लाभ हो गया।" स्वरूपने रोते हुए प्रभुके चरण बन्दे। गौरचन्द्रने स्वयं ही भक्तोंको उनका परिचय सुना दिया और काशीमिश्रके मकानमें एक घर और भृत्यका प्रबंध कर दिया। अब स्वरूप गोस्वामी श्रीचैतन्यके प्रधान सभासद हो गये। यदि कोई चैतन्यको दिखानेके लिये कोई ग्रन्थ वा श्लोक या गीत बना कर लाता था, तो पहले स्वरूप उसकी परीक्षा कर लेते थे कि वह भक्ति सिद्धान्तके विरुद्ध तो नहीं है; तब कहीं वह चैतन्यके पास भेजा जाता था। स्वरूप एकान्तमें बैठ कर उपासना करते थे तथा विद्यापति, चण्डीदास और गीतगोविन्दके सुललित पद और रायके नाटक प्रभुको सुना कर उनका चित्तविनोदन करते थे। इसके कुछ दिन बाद गोविन्दने चैतन्यके निकट आ कर कहा, "ईश्वरपुरीकी सिद्धि हो गई, सिद्धि प्राप्तिके समय वे मुझे आपकी सेवामें रहनेको कह गये हैं और उनके अन्य भृत्य काशीश्वर भी तीर्थ-दर्शन कर यहां आ रहे हैं। चैतन्यकी यद्यपि इच्छा न थी, तथापि गुरुकी आज्ञा शिरोधार्य कर गोविन्दको उन्होंने सेवकरूपमें रख लिया। इसके बाद रामाई और नन्दाई नामके और भी दो व्यक्ति तथा कीर्तनीया छोटे और बड़े हरिदास ये चारों भी प्रभुकी सेवाके लिए नियुक्त हुए।

थोड़े दिन बाद ब्रह्मानन्द भारती आ पहुंचे। मुकुंदके-मुखसे ब्रह्मानन्दकी आगमनवार्त्ता सुनते ही प्रभु स्वयं उठ कर उनके पास गये। ब्रह्मानंद मृगचर्म पहने हुए द्वार पर बाट देख रहे थे। गौरने मुकुंदके साथ ब्रह्मानंदको देख कर भी नहीं देखा, मुकुंदसे पूछा—"वे कहां हैं?" मुकुंदने उत्तर दिया—"सामने ही खड़े हैं।" गौरने कुछ हंस कर कहा—"मुकुंद, तुम्हारी क्या बुद्धि बिगड़ गई है? किसी व्यक्तिमें दूसरे किसीको कल्पना करते हो, भारती गुसांई चर्माम्बर क्यों पहनने लगे?" गौरके इस परिहासव्यञ्जक वाक्यसे भारतीके हृदयमें चोट लगी, उनके हृदयमें अनेक तर्क वितर्क हुए, अन्तमें उन्होंने दाम्भिकताके परिचायक मृगचर्मका परित्याग कर बहिर्वास पहन लिया। श्रीचैतन्यके उनकी बन्दना करने पर उन्होंने गौरको आलिङ्गन दिया था। कहा जाता है, कि इस समय दोनोंने एक दूसरेको सचल ब्रह्म समझ कर स्तुति की थी। इसी समय भगवान् आचार्य और रामभट्टाचार्य नामक दो व्यक्तियोंने गौरका आश्रय लिया। कुछ दिन बाद ईश्वरपुरीके अन्य शिष्य काशीश्वर भी आ पहुंचे; ये अत्यन्त बलिष्ठ थे। उन पर लोगोंकी भीड़ हटा कर गौराङ्गको जगन्नाथके दर्शन करानेका भार सौंपा गया था। (चै० चरि० मध्य० १० परि)

कुछ दिन इसी तरह धर्मप्रसङ्ग कर श्रीचैतन्य भक्तोंके साथ परम आनंदसे समय बिताने लगे। एक दिन सार्वभौम भट्टाचार्यने श्रीचैतन्यसे कहा कि, राजा प्रतापरुद्र आपको देखनेके लिए अत्यन्त उत्कंठित हो रहे हैं। श्रीचैतन्यने सार्वभौमकी बातको सुन कर विष्णुका स्मरण किया, फिर वे कान पर हाथ रख कर कहने लगे—

"निष्किञ्चनस्य भगवद्भजनोन्मुखस्य
पारं परं जिगमिषोर्भवसागरस्य।

सन्दर्शनं विषयिणामथ योषिताञ्च
हा हन्त हन्त विषभक्षणतोऽप्यसाधु ॥" (श्रीचैतन्यचन्द्रोदयना० ८।२४)

अर्थात् —"जो भवसागरके उस पार जानेकी इच्छासे सब कुछ छोड़ कर भगवानका भजन करते हैं, उनके लिए विषयी और स्त्रियोंको देखनेकी अपेक्षा विषभक्षण करना भी भला है। तुम्हारे वचनोंसे मैं दुःखित हूं।" सार्वभौमने फिर कहा—'प्रभो! हमारे राजा जगन्नाथके सेवक और परम भक्त हैं।" श्रीचैतन्यने घोर-गम्भीरस्वरसे कहा—"राजा और स्त्री कालसर्पकी भांति परित्यज्य हैं। जैसे काष्ठमय रमणी मूर्तिके देखनेसे मनमें विकार उत्पन्न होनेकी सम्भावना है, उसी तरह राजाके देखनेसे भी धनकी तृष्णा प्रबल हो सकती है। अतएव ऐसी बात फिर न कहना, पुनः कहोगे तो मैं यहांसे चला जाऊंगा।"

सार्वभौमने फिर कुछ न कहा। कहा जाता है कि राजा प्रतापरुद्रने श्रीचैतन्यके दर्शनके लिए व्याकुल हो कर सार्वभौमको इस आशयका एक पत्र लिखा था कि, वे किसी तरह गौरके भक्तों द्वारा अनुरोध करा कर प्रभुको राजी करनेकी चेष्टा करें। सार्वभौमने उस पत्रको नित्यानन्द आदिको दिखाया, उन लोगोंने प्रभुसे बात कुछ अनुरोध किया, पर प्रभु तब भी राजी न हुए। अन्तमें भक्तोंने सलाह कर प्रभुका एक बहिर्वास राजाके पास भेज दिया, राजा उसीको मस्तक पर रख कर पूजा करने लगे।

इसके कुछ दिन बाद राजा प्रतापरुद्र नीलाचल पहुंचे। उनके साथ रामानन्दराय भी आये थे। रामानन्दने नीलाचल पहुंचनेके साथ ही सबसे पहले गौरचन्द्रसे भेंट की। उनको देख कर गौरचन्द्रको बहुत आनन्द हुआ, प्रभुने सब भक्तोंसे उनका परिचय करा दिया।

नीलाचल आ कर राजा प्रतापरुद्रने सार्वभौमके मुखसे सुना कि गौरचन्द्र किसी तरह भी उनको दर्शन न देंगे। इस पर राजाने प्रतिज्ञा की कि, "यदि गौराङ्गके दर्शन न हुए तो निश्चय ही प्राणत्याग करूंगा।" आखिर सार्वभौमके परामर्शानुसार दीनवेशमें उन्होंने उद्यानमें रह कर रथयात्राके दिन प्रभुके दर्शन किये।

स्नानयात्रा देख कर श्रीचैतन्य गोपीभावमें नितान्त व्याकुल हो गये और भक्तोंको छोड़ कर आलालनाथको चल दिये। सार्वभौम बड़े विनयके साथ उन्हें लौटा लाये थे। इसी समय गौरके भक्तगण भी बङ्गालसे यहां आ पहुंचे। भक्तदल प्रेममें उन्मत्त हो नृत्य और कीर्तन करते हुए काशीमिश्रके घरकी तरफ चलने लगे। उस हरिध्वनि, हुङ्कार, गर्जन और उत्साहके देखनेसे मृत प्राणमें भी उत्साहका संचार हो जाता है। राजा प्रतापरुद्रने अट्टालिकाकी छत पर खड़े हो कर गौरके भक्तोंको देखा था। गोपीनाथ आचार्यने क्रमवार भक्तोंका परिचय दिया था भक्तगण जगन्नाथके दर्शन न कर सबसे पहले चैतन्यके दर्शनके लिए चले। गौरचन्द्रने भक्तोंके आनेका समाचार सुन कर माला और चन्दन भेज दिया। पीछे उनके निकटवर्ती होने पर स्वयं उनसे जा मिले। सबको बड़ा आनन्द हुआ। वे सबसे कुशल-मङ्गल पूछने लगे। पीछे वे मुकुन्ददत्तके ज्येष्ठभ्राता वासुदेवसे कहने लगे—"तुम्हारे लिए ब्रह्मसंहिता और कृष्णकर्णामृत नामकी दो पोथियां लाया हूं स्वरूपके पास है, ले कर पढ़ना।" सबसे मिल चुकने पर चैतन्यने पूछा—"हरिदास कहां है।" भक्तोंने कहा—"हरिदास अपनेको नीच-जाति समझ कर मन्दिरके भीतर नहीं आया, बाहर पड़ा पड़ा रो रहा है।" सार्वभौमके परामर्शसे राजा प्रतापरुद्रने गौड़वासी भक्तोंके लिए उपयुक्त वासस्थानका बन्दोबस्त पहलेसे हो कर रक्खा था। श्रीचैतन्यने भक्तोंको घर जाने और समुद्रस्नान करके पुनः आ कर महाप्रसाद लेनेको कहा।

भक्तोंके विदा होने पर गौराङ्गने बाहर जा कर हरिदासको उठाया और छातीसे लगाया। हरिदासने कातर-स्वरसे अपनी नीच जातिका उल्लेख कर उन्हें छूनेसे मना किया। परन्तु प्रभुने कुछ ध्यान नहीं दिया, वे इसकी प्रशंसा ही करने लगे। पीछे श्रीचैतन्यने हरिदासके लिए पुष्पोद्यानके भीतर एक निर्जन स्थानका प्रबन्ध कर दिया।

इसके बाद वे समुद्रस्नान करके घर आये और वैष्णवोंके भोजनका आयोजन करने लगे। गोपीनाथ और काशीमिश्र पहलेसे ही प्रभुके आदेशानुसार वैष्णवोंके

लिए महाप्रसाद ले आये थे। यथासमय अद्वैत आदि भक्तगण भोजनके लिए चैतन्यके घर उपस्थित हुए। चैतन्यने उन सबको अपने हाथसे परोस कर जिमाया। अन्तमें गोविन्दके द्वारा हरिदासके लिए महाप्रसाद भेज कर प्रभु स्वयं भोजन करने लगे। स्वरूप दामोदर और जगदानन्द परिवेशन करने लगे। जब सब कोई जीम चुके, तब चैतन्यने सबको माला चन्दन दे कर विश्रामके लिए डेरे पर जानेको कहा और स्वयं भी विश्राम करने लगे।

सायाह्नमें जब सेवकमण्डली गौराङ्गको सभामें आई तब रामानन्दराय भी आ पहुंचे। गौरचन्द्रने सबको इनका परिचय कह सुनाया। सभी हरिचर्चामें तल्लीन हो गये। इसके बाद श्रीचैतन्यने अनुयायियोंके साथ जगन्नाथके मन्दिरमें जा कर सन्ध्या-आरतीके उपरान्त कीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। इस दिन चैतन्यको बड़ा ही उत्साह था। नवद्वीप छोड़े पीछे ऐसा कीर्तन और कहीं भी न हुआ था। गौरने आनन्दतरङ्गमें मत्त हो कर कीर्तनके चार थोक कर दिये। आठ मृदङ्ग और बत्तीस जोड़ी झांझें बजने लगीं। आकाशभेदी इस कीर्तनके नादसे ग्रामवासी सभी उन्मत्त हो उठे। नीलाचलवासी नरनारीगण घर छोड़ छोड़ कर दौड़े। प्रतापरुद्र अमात्य-वर्गके साथ अट्टालिकाकी छतसे सब देखने लगे। गौरचन्द्रने कीर्तन-सम्प्रदायोंसे जगन्नाथ-मन्दिरको वेष्टित कर दिया और खूब उत्साहसे नृत्य करने लगे। नृत्य समाप्त होने पर उन्होंने मन्दिरके पीछे खड़े हो कर गानेको कहा। इस तरह उस दिनका कीर्तन समाप्त हुआ।

इसके बाद चैतन्य अनुयायियोंके साथ घर पहुंचे और महाप्रसादका भोजन करा कर सबको विदा किया। नीलाचलके पवित्रक्षेत्रमें गौरचन्द्रके प्रेमकी हाट बैठ गई, धीरे धीरे भारतके नाना स्थानोंसे भक्त आ आ कर उसमें शामिल होने लगे।

तदनन्तर रामानंदरायने चैतन्यसे प्रतापरुद्र पर कृपा करनेके लिए अनुरोध किया; पर वे राजी न हुए। चैतन्यने उनके पुत्रके लिए अनुमति दे दी। राजकुमार-की भक्ति देख कर चैतन्यने उन्हें छातीसे लगा लिया। राजाने चैतन्य-सङ्गी पुत्रको ही छातीसे लगा कर अपने-को कृतार्थ माना।

धीरे धीरे रथयात्राका समय आ पहुंचा। गुण्डिचा-मन्दिर बहुत ही अपरिष्कृत था। चैतन्यकी आज्ञा पा कर सब उसे साफ करने लग गये। चैतन्यने स्वयं भी मार्जनी ले कर मंदिरकी सफाई की थी। थोड़ी देरमें सम्पूर्ण मंदिर साफ हो गया। इसी समय किसी मनुष्य-ने प्रभुके पैरों पर पानी डाल कर उसे पान किया था। उस पर चैतन्य बहुत बिगड़े थे। मंदिरका काम पूरा हो जाने पर चैतन्य समस्त भक्तोंके साथ संकीर्तन करने लगे। स्वरूप उच्चैःस्वरसे गीत गाने लगे। समस्त भक्तोंकी आंखोंसे अश्रुधारा बह चली। इस समय आचार्य गोस्वामीके पुत्र गोपाल नाचते नाचते बेहोश हो गये थे। बहुत कोशिश करने पर भी जब उन्हें होश न हुआ, तो सभी चिन्तित हुए। आखिर चैतन्यने उनकी छाती पर हाथ रक्खा और कहा, "प्यारे गोपाल, उठ कर एक बार कृष्णनाम भजो।" गोपाल तुरंत उठ खड़े हुए और कृष्ण कृष्ण कह कर रोने लगे। पीछे गौराङ्गदेवने भक्तोंके साथ महाप्रसाद खा कर विश्राम किया। वैष्णव गण इसे 'धोया पाखला लीला' कहते हैं। इसके बाद जगन्नाथकी और भी एक लीला है। जिसको नेत्रोत्सव कहते हैं। गौराङ्ग जगन्नाथ-दर्शनके लिए जाते समय जब दलके अग्रवर्ती हो कर नृत्य-कीर्तन करते थे, तब उसे लोग नेत्रोत्सवलीला कहते थे।

रथयात्राके दिन तड़के ही उठ कर प्रभुने प्रातःस्नान किया, फिर वे पाण्डुविजयके दर्शनके लिये चले। इस समय लोगोंकी बड़ी भीड़ थी, बहुतोंको तो जगन्नाथके दर्शन ही नहीं मिले। गौराङ्ग और उनके भक्तोंके दर्शनमें कोई व्याघात न होवे, इस उद्देशसे स्वयं प्रतापरुद्र पात्रोंके साथ उसका बंदोबस्त कर रहे थे। जगन्नाथ रथ पर सवार हुए, सेवकगण राजाकी तरह उनकी सेवा करने लगे। सब मिल कर रथ खींचने लगे, धीरे धीरे रथ चलने लगा। श्रीचैतन्यको इस दृश्यको देख कर अत्यन्त आनंद हुआ। वे चार थोक बाँध कर कीर्तन करने लगे। प्रभुने अपने आप ही भक्तोंको गलेमें माला और चंदन दे कर सजा दिया। चार थोकोंमें कुल चौबीस

गायक और आठ मृदङ्ग थे। बाकीके वैष्णवोंने और भी तीन थोक बाँधे और सब कीर्तन करने लगे। कीर्तन सुन कर सभी लोग उन्मत्तसे हो गये थे। वैष्णवोंका कहना है कि इस कीर्तनको सुननेके लिए जगन्नाथने रथ रोक दिया था।

प्रभु घूम फिर कर सब थोकोंमें शामिल होने लगे। कुछ देर बाद दण्डवत् करके चैतन्य ऊपरको मुँह कर जगन्नाथका स्तव करने लगे। स्तव करते उनका प्रेमावेग यहां तक बढ़ा कि वे भूमि पर लोटने लगे। चैतन्यका सात्विक भाव जग उठा। कुछ देर नृत्य करके उन्होंने स्वरूपको आदेश दिया, स्वरूप भी मौका देख कर भक्तिरसका पद गाने लगे। चैतन्य आनंदमें नाचने लगे। उनके नाना हाव-भाव देख कर जनता भी नाचने लगी। फिर क्या था, भक्तिरसकी गङ्गा बह चली।

चैतन्य प्रेमावेशमें आ कर गिरना ही चाहते थे कि इतनेमें राजा प्रतापरुद्रने आ कर उन्हें थाम लिया। प्रतापरुद्रके स्पर्श मात्रसे उनको होश आ गया, वे विषयीके स्पर्श होनेके कारण अपनेको धिक्कारने लगे। इसके बाद वे अपने साथियोंके साथ रथके आगे कीर्तन करने लगे। उस समय सार्वभौमके परामर्शानुसार प्रतापरुद्रने राजवेश त्याग दिया और वैष्णववेश धारण कर वे चैतन्यके पैर दाबते हुए भागवतके 'जयति तेऽधिकं" अध्यायका पाठ करने लगे। चैतन्यको ज्ञान हो गया, उन्होंने यह कहते हुए कि "फिर कहो, बड़ा मधुर है, भाई फिर कहो" उनका प्रेमालिङ्गन किया। राजा और चैतन्य दोनों कुछ देर तक नाचते रहे। पीछे प्रभुने कृपा कर उनको अपना ऐश्वर्य दिखा दिया। कीर्तन भङ्ग हो गया, श्रीचैतन्यने मध्याह्न-कृत्य समाप्त कर भक्तोंको महाप्रसाद खिलाया। उधर जगन्नाथका रथ खींचा गया तो चला नहीं, सुमेरुसा खड़ा रहा। राजाके पास खबर पहुंची, उन्होंने अनेक मल्ल भेजे, पर किसीसे भी कुछ न हुआ। आखिर चैतन्य अपने भक्तोंके साथ वहां आये और उन्होंने रथको चालू किया। कहा जाता है कि चैतन्यने रथके पीछे जा कर अपना मस्तक अड़ा दिया था, तब कहीं रथ चला था। रथयात्राका उत्सव समाप्त हो गया। प्रभु इसी तरह आनन्दसे दिन बिताने लगे। धीरे धीरे होरा-पञ्चमी भी आ गई। उस दिन प्रभुने विजयरङ्गके दर्शन किये। विजया और कृष्ण-जन्मोत्सवके दिन भी पहलेकी तरह भक्तोंके साथ नृत्य-कीर्तन आदि हुआ था।

देखते देखते चार मास बीत गये। श्रीचैतन्यने विजयाके दिन रामलीलाका अभिनय किया था। उत्थान एकादशीके बाद दूसरे दिन भी कीर्तनसे लोगोंको आनन्दित किया था। इसके बाद चैतन्यने एकदिन नित्यानन्दसे कुछ सलाह की थी; पर इसका खुलासा किसी भी ग्रन्थमें नहीं मिलता। दूसरे दिन श्रीचैतन्यने गौड़वासी भक्तोंको बुला कर कहा, "तुम लोग अब देश जा कर चण्डाल तकको कृष्ण-भक्ति सिखाओ। प्रति वर्ष रथयात्रासे पहले यहां आना और मेरे साथ गुण्डिचाके दर्शन करना" इसके बाद उन्होंने नित्यानन्दको बुला कर कहा—"श्रीपाद! तुम भी गौड़देशको जा कर वहां अनर्गल भक्तिका प्रचार करो। गदाधर आदि कई एक प्रधान भक्त तुम्हारी सहायता करेंगे।" अन्यान्य सभी भक्तोंको मीठे वचनोंसे समझा कर देश जानेके लिए कहा। सब रोते हुए गौड़की तरफ चल दिये। गदाधर पण्डित, पुरी गुसांई जगदानन्द, स्वरूप दामोदर, दामोदर पण्डित, गोविन्द और काशीश्वर ये सब नीलाचलमें ही रहने लगे। बङ्गालके भक्तगण प्रति वर्ष रथयात्राके पहले पुरुषोत्तम आते थे और ४।५ मास गौरके साथ रह कर कार्तिक मासमें घर लौट जाया करते थे। जब तक गौर पृथिवी पर थे, तब तक यह नियम जारी रहा था। इसके बाद गौड़वासी भक्तोंके स्त्रीपुत्रादि भी आने लगे थे।

भक्तोंके चले जाने पर भट्टाचार्यके अनुरोधसे वे कभी कभी उन्हींके घर जीमने लगे। सार्वभौमकी पत्नी षाठीकी माता भी प्रभु पर विशेष अनुरक्त थीं। कहा जाता है कि, परम भक्त भट्टाचार्यके अनुरोधसे प्रभु अधिक भोजन कर लेते थे—दशबारह आदमीका भोजन वे अनायास ही खा लिया करते थे। एक दिन भट्टाचार्यके जामाता और षाठीके भर्त्ता अमोघ प्रभुका भोजन देख कर कह उठे—"इतने अन्नसे तो दश बारह आदमियोंका पेट भर सकता है, संन्यासी इसको अकेले ही

खा जाते हैं।" प्रभुकी निन्दा सुनते ही भट्टाचार्य डंडा उठा कर अमोघको मारने दौड़े, पर अमोघ भाग गये। उसके बाद भट्टाचार्य और षाठीकी माता दोनों अमोघके १४ पुरखोंको गाली देने लगे और षाठीके वैधव्यके लिये प्रार्थना करने लगे। उन लोगोंकी अवस्था देख कर चैतन्य हंस कर कहने लगे—"अमोघ सरलमति है, इसलिए वैसा कह गया है, इसमें उसका कोई अपराध नहीं।" भोजनके बाद प्रभु अपने वासस्थानको चले गये। सार्वभौमने "चैतन्यकी निन्दा करनेवाले जामाताका मुंह न देखूंगा" ऐसी प्रतिज्ञा की और षाठीसे कहा, "बेटी, चैतन्यकी निन्दा कर अमोघ पतित हुआ है तुम उसका परित्याग करो, शास्त्रोंमें पतित भर्त्ताको त्यागनेका विधान है।" इतने पर भी सार्वभौमको शान्ति न हुई। उन्होंने प्रायश्चित्त रूपमें स्वयं तथा षाठीकी माताको उपवास कराया।

कहा जाता है कि उसी दिन रात्रिमें अमोघको विसूचिका रोग हुआ था। जीनेकी कोई उम्मेद न थी। धीरे धीरे अमोघ अचेतन हो गये। अन्तमें उनकी मृत्यु हो गई। चैतन्यके पास समाचार पहुंचा। चैतन्य शीघ्र ही वहां उपस्थित हुए और अमोघकी छाती पर हाथ रख कर कहने लगे—"बेटा अमोघ! तुम्हारा हृदय सरल है, यह कृष्णके बैठने योग्य है, इसमें मात्सर्य-चण्डालको क्यों स्थान दिया? बेटा, सार्वभौमके सम्पर्कसे तुम्हारे समस्त पाप लुप्त हो गये हैं, उठो एकबार तुम कृष्णका नाम लो, भगवान् तुम पर कृपा करेंगे।" चैतन्यकी बात सुन कर अमोघको होश आ गया, वे उठ कर कृष्ण कृष्ण कह कर नाचने लगे और रोते हुए चैतन्यके पैरों तले गिर पड़े यह देख कर दर्शकमंडली अवाक् हो गई। सार्वभौम आदि भक्तगण इस संवादको पाते ही वहां उपस्थित हुए। गौराङ्ग सार्वभौमको बहुत समझा-बुझा कर वहांसे चले आये।

(चै० चरि० मध्य० १५ परि०)

संन्यासके बाद चार वर्ष बीत गये, गौरचन्द्र नीलाद्रिकी पुण्यभूमि पर ही ठहरे हुए हैं। दूसरे वर्ष दाक्षिणात्य भ्रमण कर यहां लौट आये थे। तीसरे वर्ष उनको वृन्दावन जानेकी अभिलाषा हुई। रामानन्द और सार्वभौमने आज-कल करते करते दो वर्ष बिता दिये! पांचवें वर्ष बङ्गालके भक्तगण रथयात्रासे पहले आये और रथयात्रा देख कर लौट गये। अन्यान्य वर्षकी तरह उस वर्ष चार मास नीलाचल न रहे। भक्तोंके विदा हो जाने पर गौरचन्द्रने रामानन्द और सार्वभौमसे बङ्गदेशमें जननीके चरण और जाह्नवीके दर्शन कर वृन्दावन जानेकी इच्छा प्रगट की। वर्षाकालमें तकलीफ होगी, इसलिए दोनोंके परामर्शानुसार विजयादशमीके दिन जानेका निश्चय हुआ।

विजयादशमीके दिन जगन्नाथका प्रसाद और माला-चन्दन ले कर गौराङ्गने प्रातःकाल ही यात्रा कर दी। पुरी गुसांई, स्वरूप दामोदर, जगदानन्द, मुकुन्द गोविन्द काशीश्वर, हरिदास ठाकुर, वक्रेश्वर पण्डित, गोपीनाथ आचार्य, दामोदर पण्डित और रामाई नन्दाई आदि उनके साथ चले। यात्रीदल जब भवानीपुर पहुंचा, तब रामानन्दराय और सार्वभौम भट्टाचार्य आ कर मिले। काशीनाथने वाहकके द्वारा महाप्रसाद भेज दिया था। महाप्रसाद खा कर सब भुवनेश्वर होते हुए कटक पहुंचे। श्रीचैतन्य साक्षीगोपालके दर्शन करके स्वप्नेश्वर नामक एक ब्राह्मणके घर आतिथ्य ग्रहणको स्वीकारता दे वकुल वृक्षके नीचे विश्राम कर रहे थे। इतनेमें राजा प्रतापरुद्रने वहां आ कर उनसे साक्षात् किया। इस समय राजाके साथ चैतन्यकी बहुतसी बातें हुई थीं। अनन्तर गौरने चलनेकी तैयारियां कीं। प्रतापरुद्रने महाप्रभुके गमनके सुभीतेके लिये राजाज्ञा जारी कर दी। हरिचन्दन और मङ्गराज नामक सचिवद्वय तथा रामानन्द रायको सीमान्तप्रदेश तक प्रभुके साथ जानेकी आज्ञा दी गई। अन्यान्य वेत्रधारी सैनिकोंको भी प्रभुके साथ जानेकी आज्ञा मिली थी। इधर चित्रोत्पला नदी पार होनेके लिये उत्कृष्ट तरणी रखी गई, नगरके मार्गों और नदीके घाटोंमें रमणीय स्तम्भ और तोरण बनाये गये। राजा राज-महिषी और परिजनवर्गको ले कर मार्गमें उनकी बाट देखने लगे। महाप्रभु सन्ध्याके समय वहांसे निकल कर घाट पर पहुंचे और वहां उन्होंने अवगाहन किया। इसी समय राजाने महिषियोंके साथ चैतन्यकी पाद-वन्दना की थी। सन्ध्याके बाद वे नदी पार हो कर चतुर्द्वार

(चौद्वार) नामक स्थानमें पहुंच और वहीं रात बितायी। राजाके आदेशानुसार प्रातःकाल हो नीलाचलसे बहुतसा महाप्रसाद आया। गौरने प्रातःकृत्य समाप्त करके भोजन किया और फिर चलने लगे। याजपुर आ कर अमात्य द्वयको और रेमुणामें आ कर रामानन्दरायको विदा किया। गौरचन्द्र जहां कहीं गये, वहीं उन्होंने राज सम्मान पाया। उत्कलराज्यके सीमान्तप्रदेशमें उपनीत होने पर राज-कर्मचारी महापात्रने इनको खूब सम्मानके साथ ग्रहण किया। दो चार दिन बाद महापात्रने कहा—"मार्गमें यवन राजाका अधिकार होनेसे बड़ा भय है, कुछ दिन ठहर जाइये, सन्धि हो जाने पर जाइयेगा।"

इस समय एक यवनोंका गुप्तचर छद्मवेश धारण कर कटकमें ठहरा हुआ था, चैतन्यदेवकी मूर्ति और उनका आचरण देख कर वह मुग्ध हो गया। उसने अपने अधिपतिसे जा कर सब हाल कहा और सभामें पागलकी तरह कभी हसने और कभी रोने लगा। इससे यवनाधिपतिका मन बदल गया। उन्होंने उत्कलके राजकर्मचारीको चैतन्यके दर्शन पानेके लिए लिख भेजा। महापात्रने उन्हें निरस्त्र हो कर केवल पांच भृत्योंके साथ आनेको लिख दिया। संवाद पा कर मुसलमानराज हिन्दूका भेष धारण कर कटक आये और चैतन्यको देख कर उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। चैतन्यने कृपा कर यवनराजको हरिनामकी दीक्षा दी। दोनों राज्योंमें सन्धि हो गई। मुकुन्ददत्तने मौका देख कर यवनराजसे प्रभुको बङ्गदेश जानेके लिए बन्दोवस्त कर देनेको कहा। यवनराजने अपनेको कृतार्थमन्य समझा और चैतन्यदेवको वे नावमें बैठा कर अपने साथ ले चले। यवनाधिपने मन्त्रेश्वर नामक दुष्ट नदीको पार कर प्रभुको निरापद स्थान पिछलदा तक पहुंचा दिया और रोते हुए वे अपने स्थानको चले गये।

अनन्तर महाप्रभु पानिहाटी पहुंचे और नाविकोंको पुरस्कार दे कर विदा किया।

पानिहाटी ग्राममें राघव पण्डितका वासस्थान था। उन्होंने प्रभुको महा समारोहसे अपने घर रख कर सेवा की। यहां भी प्रभुने गदाधर दास आदि पर कृपा की थी। एक दिन यहां रह कर फिर वे कुमारहट्ट (वर्तमान हालिशहर) पहुंचे। श्रीवास देखो। यहां कीर्तन, भागवतपाठ आदिमें महानन्दसे समय बीता। ये वासुदेव दत्त और शिवानन्दके घर जा कर भी लीला और कौतुकादि करते थे। कुछ दिन बाद सार्वभौमके कनिष्ठ विद्यावाचस्पतिके घर पहुंचे। दो एक दिन बाद चैतन्यके आगमनका संवाद राष्ट्र हो गया, असंख्य मनुष्योंकी भीड़ होने लगी। लोगोंकी भीड़से उत्यक्त हो कर इन्हें नित्यानंदके साथ कुलिया ग्राममें भाग जाना पड़ा था। आखिर लोगोंने तंग करने पर वाचस्पतिको प्रभुका पता बता देना पड़ा था।

कुलियामें जन-कोलाहल और भी बढ़ गया। लाखोंकी भीड़ हो गई। यहां गोपाल चापाल अपराधी हो कर कुष्ठरोगमें कष्ट पा रहा था। प्रभुकी कृपासे वह रोगमुक्त हो गया। सार्वभौमके पिता महेश्वर विशारदके पड़ोसी देवानंद पण्डित श्रीवासके अपराधी थे, वक्रेश्वरकी कृपासे उन्हें ज्ञान हो गया। वक्रेश्वरने एक बात पूछा—"साधुनिंदा और परनिंदाजनित पाप कैसे क्षय होता है?" चैतन्यने उत्तर दिया—"निन्दित व्यक्तिके पास जा कर अपने अपराधोंकी क्षमा मांगनेसे तथा कृष्णनाम लेने और फिर उसकी निंदा न करनेसे उस पापका क्षय होता है।" देवानंद भागवत पढ़ते थे, पर उसका अर्थ न समझ सकते थे। कहा जाता है कि श्रीचैतन्यसे भागवतका अर्थ पूछने पर उन्होंने उसमें आद्योपान्त भक्तिका ही एकमात्र प्रयोजन बतलाया।

सात दिन कुलिया ग्राममें रह कर, बहुतोंको प्रेम-भक्ति सिखा कर श्रीचैतन्य दल सहित शान्तिपुर अद्वैतके घर पहुंचे। आचार्यके घर एक सन्यासीके यह पूछने पर कि 'केशव-भारती चैतन्यके कौन हैं?' अद्वैतने उत्तर दिया कि—"चैतन्यके गुरु।" यह सुन कर अद्वैतका पञ्चवर्षीय पुत्र अच्युतानन्द गुस्सेमें बोल उठा—"आप क्या कह रहे हैं? चैतन्य तो स्वयं जगद्गुरु हैं, उनका गुरु कौन हो सकता है?" आचार्यने पुत्रके मुखसे ऐसा उत्तर सुन कर उसे गोदमें उठा लिया और नाचने लगे। इतनेमें श्रीचैतन्य भी "हरि बोल" कहते हुए वहां आ पहुंचे। आचार्यका प्रेम-सिन्धु उमड़ उठा, हरिनामकी

घोर घटा छा गई। अद्वैतने डोली भेज कर नवद्वीपसे शचीदेवीको बुला लिया। शचीमाता अपने हाथोंसे रन्धन कर निमाईको जिमाने लगीं। नवद्वीपके और भी बहुतसे भक्त आये थे। कुछ दिन यहां रह कर ये भक्तोंके साथ वृन्दावनको चल दिये। वे जितने आगे बढ़ने लगे, उतने ही उनके साथ भक्त बढ़ने लगे। धीरे धीरे वे गौड़के निकट रामकेली ग्राममें उपस्थित हुए। नगरके कोतवालने गौड़ेश्वरको संवाद दिया कि, एक सन्यासीके साथ बहुतसे लोग यहां लगातार भूतका सङ्कीर्तन करते हैं। सैयदहुसेन वा २य अलाउद्दीन उस समय गौड़के राजा थे। उन्होंने हिन्दू सभासदोंसे पूछा तो केशव छत्री, रूप और साकर मल्लिकने उनको समझा दिया कि, "कुछ नहीं, एक सन्यासी तीर्थयात्राको जा रहे हैं, उनके साथ दो चार आदमी हैं।" इधर चुपकेसे चैतन्यको अन्यत्र चले जानेके लिए कहलवा भेजा। उन लोगोंके मनमें आशंका थी कि कहीं वे उन्हें तकलीफ न दें, पर वह निर्मूल थी सैयदने चैतन्यके सुभीतेके लिए ही प्रबन्ध किया था। उपरोक्त रूप और साकर मल्लिक ही परम वैष्णव रूप और सनातनके नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। रूप और सनातन देखो।

रूप और साकरमल्लिक चैतन्यके दर्शनकी इच्छासे रातों रात भेष बदल कर वहांसे चल दिये। ये चैतन्यके संन्यास ग्रहणके बाद लोक-परम्परासे उनके गुणकी कथा सुन कर उन पर अत्यन्त अनुरक्त हो गये थे। चैतन्यसे इन्होंने अपने कर्तव्यके बारेमें कुछ पूछा भी था, जिसका उत्तर चैतन्यने इस प्रकार लिख दिया था—

"परव्यसनिनी नारी व्यग्रापि गृहकर्मणि।
तमेवास्वादयत्यन्तर्नवसङ्गरसायनम्॥"

अर्थात् परपुरुषासक्ता कुलकामिनी घरके कामोंमें व्यग्र रहते हुए भी मन ही मन जैसे परपुरुषके सम्भोगसुखका आस्वादन किया करती है, उसी प्रकार घरमें रहते हुए भी भगवान्के रसमें मन पाग सकते हो।

ये भी उसी उपदेशानुसार चलते रहे। यथासमय दोनों चैतन्यके पास पहुंचे और उनके चरणों पर पड़ कर रोने लगे। चैतन्यने कहा—'तुम लोगों पर मेरा बड़ा स्नेह है, इसीलिए मैं यहां आया हूं, अब घर जाओ, श्रीकृष्ण अवश्य ही तुम लोगोंका उद्धार करेंगे।" इसके बाद वे उपस्थित भक्तोंसे कहने लगे, "कृपा कर सब मिल कर इन दोनोंका उद्धार करो। आजसे इनका नाम हुआ—रूप और सनातन।" भक्तगण हरिध्वनि करने लगे। रूप और सनातनके हृदयमें भी नूतन शक्तिका सञ्चार हो गया, दोनों आनन्दमें नाचने लगे। घर लौटते समय सनातन चैतन्यसे शीघ्र ही वृन्दावन जानेके लिए कह गये थे और इशारेमें समझा गये थे कि इतने आदमियोंको साथ न लेवें, दो एकको साथी बना कर जाना ही अच्छा है। गौराङ्ग दूसरे दिन सुबह ही वहांसे चल दिये और नाटशाला ग्राममें पहुंचे। उस दिन वहीं रहे और दूसरे दिन सुबह गङ्गास्नान करके शान्तिपुर लौट आये। इस बार भी वृन्दावन न जा सके। शान्तिपुरमें शचीमाताको बुलवा कर दश दिन बड़े आनन्दसे बिता दिये। उस समय अद्वैतके गुरु माधवेन्द्र भी वहां मौजूद थे। रामभक्त मुरारिगुप्तके रामाष्टक रचने पर चैतन्यने उनके ललाट पर "रामदास" नाम लिख दिया था। रघुनाथदासने भी उस समय प्रभुकी कृपा पाई थी।

श्रीचैतन्य माता और अनुयायियोंसे विदा मांग कर तथा उस साल उन लोगोंको नीलाचल जानेके लिए मना कर सिर्फ बलभद्र आचार्य और दामोदरके साथ पुरुषोत्तमके लिए रवाने हुए। मार्गमें एक ब्राह्मणके मुखसे भागवत सुन कर इन्होंने प्रेममें विह्वल हो उनको भागवताचार्यकी उपाधि दी थी। भागवताचार्य देखो।

पहलेके मार्गसे नीलाचलको चले। प्रतापरुद्रको मालूम होते ही उन्होंने मार्गमें परिचर्याके लिए सेवक भेज दिये। गौरने यथासमय पुरुषोत्तम पहुंच कर भक्तोंके समक्ष रूप सनातनके मिलनका समाचार और वृन्दावन न जानेका कारण कह सुनाया।

चैतन्यने नीलाचल पहुंचते ही वृन्दावन जानेकी इच्छा प्रगट की। किन्तु भक्तोंके अनुरोधसे उन्हें वर्षा भर वहीं रहना पड़ा। पश्चात् वे एक दिन रात्रिके समय बिना किसीसे कहे-सुने बलभद्राचार्य और उनके साथी एक ब्राह्मणको ले कर वृन्दावन चल दिये। मनुष्य-समागमके भयसे उन्होंने झारिखण्ड नामक वनमें प्रवेश किया

जो कटक नगरके दक्षिन है। वनकी शोभा देख कर और कलनादी विहङ्गोंके गीत सुन कर चैतन्यका वृन्दावन-भाव उभड़ उठा। वे नाचते गाते हुए हिंस्र जन्तुओंसे परिपूर्ण निविड़ वनमार्गको निर्भीकचित्तसे अतिक्रम करने लगे। वैष्णव ग्रन्थकारोंका कहना है कि एक दिन एक व्याघ्र तथा और एक दिन एक हस्ती इनके आदेशानुसार "कृष्ण कृष्ण" कह कर चीत्कार करने लगा था !!

और निविड़ वन झारिखण्डमें अनेक असभ्य भीलोंको वैष्णव बनाते हुए संथाल और भीलोंके जनपदमें उपस्थित हुए। कुछ दिन बाद मध्याह्न समयमें काशी पहुंचे और वहां इन्होंने मणिकर्णिका घाटमें जा कर स्नान किया। घर पर तपनमिश्रके साथ उनकी भेंट हुई। तपन पहले तो इन्हें पहचान न सके थे, पीछे परिचय मिलने पर वे इन्हें अन्नपूर्णा, विश्वेश्वर और बिन्दुमाधवके दर्शन करा कर अपने घर ले गये। भोजनादिके बाद मिश्रजीके पुत्र रघुनाथ इनके पैर दाबने लगे। ये ही रघुनाथ कालान्तरमें छह गोस्वामियोंमें अन्यतम हुए थे। मिश्रजीके एक मित्र चन्द्रशेखर उस समय वहीं थे। चैतन्यके आनेका संवाद पाते ही वे इनकी चरणवन्दनाके लिए आये और सर्वदा वेदान्त-चर्चासे दुःखित हो कर बहुत रोने लगे।

श्रीपाद प्रकाशानन्दके एक शिष्य महाराष्ट्रीय ब्राह्मणने आ कर उनसे कृष्णचैतन्यकी रूपमाधुरी और प्रेमविह्वलताके विषयमें कहा तो वे उस बातको हंसीमें उड़ा कर कहने लगे—"वह ऐन्द्रजालिक है, तुम उसके पास न जाना। उसका नाम है काशी, तुम लोग चुप रहो, काशीपुरमें उसकी ताकत नहीं कि वह भाव-कदली बेच सके।" इस उत्तरसे ब्राह्मणको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने चैतन्यसे जा कर कहा—"प्रभो! आश्चर्यकी बात है कि हमारे अध्यापकके मुखसे 'कृष्णचैतन्य' नाम नहीं निकलता, वे सिर्फ 'चैतन्य' 'चैतन्य' ही कह सके हैं। इसका कारण क्या, प्रभो?" गौराङ्गने हंस कर उत्तर दिया—"मायावादी संन्यासी कृष्णापराधी हैं, अतः उनके मुंहसे 'कृष्ण' शब्द उच्चारण नहीं होता। मैं तो काशीके बाजारमें भाव-कदली बेचने आया हूं; ग्राहक न मिले तो सस्ते दामोंमें ही बेच जाऊंगा, बोझ लादनेसे क्या लाभ?" इतना कह कर चैतन्य जोरसे हंसने लगे और महाराष्ट्रीय ब्राह्मणको कृपाशीर्वाद दे कर विदा किया। मिश्रजीके अनुरोधसे दश दिन काशीमें रह कर उन्होंने प्रयागको प्रस्थान किया। प्रयागमें त्रिवेणी स्नान और माधव दर्शन कर नृत्य करने लगे। यमुना देख कर इन्हें वृन्दावनका स्मरण हुआ, वे आनन्दमें आ कर यमुनामें कूदना ही चाहते थे कि, इतनेमें भट्टाचार्यने उन्हें थाम लिया।

तीन दिन प्रयागमें रह कर यात्रीदल मथुराकी तरफ चला। पहले दाक्षिणात्यमें जिस तरह ग्राम ग्राममें कृष्ण नामका प्रचार किया था, पश्चिमके मार्गमें भी उन्होंने वैसा ही किया। यथासमय मथुरा पहुंच कर उन्होंने विश्रामतीर्थमें स्नान किया और प्रेममन्दिरमें केशवके दर्शन कर प्रेमावेगमें हंसते-रोते कीर्तन करने लगे। चैतन्यके कीर्तनकी खबर सुन बहुतसे लोगोंकी भीड़ हो गई। उनमेंसे एक ब्राह्मण उनके साथ नाचने लगा। चैतन्यने उसे एकान्तमें बुला कर उसका परिचय पूछा, तो ब्राह्मण कहने लगा—"श्रीमत् माधवेन्द्रपुरीने कृपा कर मुझे दीक्षित किया है। मैं सनाढिया ब्राह्मण हूं। संन्यासी सनाढियोंके हाथका भोजन नहीं करते, परन्तु माधवेन्द्रने उस बातका विचार न कर मेरे हाथका आहार लिया था।" परिचय पा कर चैतन्यने ब्राह्मणके पैरों पड़ कर अपना परिचय दिया। ब्राह्मण इन्हें अपने घर ले गया। श्रीचैतन्यने सनाढिया ब्राह्मणके हाथकी भिक्षा ग्रहण की थी।

इसके बाद उन्होंने यमुनाके चौबीसों घाटमें स्नान कर स्वयम्भू, विश्रामतीर्थ, विष्णु, भूतेश्वर और गोकर्णादि तीर्थोंके दर्शन किये। अनन्तर सनाढिया ब्राह्मणको साथ ले कर उन्होंने चौरासी योजन विस्तृत वृन्दावनके बारहों वन देखे। इस समय ये आठों पहर महाभावमें निमग्न रहते थे। वैष्णव कवियोंका कहना है कि, चैतन्यका कृष्णप्रेम पुरुषोत्तममें आ कर दूना, झारिखण्डके मार्गमें सौगुना, मथुरा देख कर हजार गुना और वृन्दावनकी वनलीलामें लाख गुना बढ़ा था।

(च० चरि० मध्य० १७ परि०)

इस समय प्रत्येक वस्तुमें इनका कृष्णभाव उदय होने लगा। कभी कभी ये मूर्छित भी हो जाया करते थे। कुछ दिन बाद आरिमठ ग्राममें आ कर इन्होंने राधाकुण्डमें स्नान किया और कुण्डका स्तव करने लगे। कृष्णलीलाके प्रायः सभी तीर्थ विलुप्त हो गये थे, इन्होंने उन सबका उद्धार किया। वहांसे सुमन सरोवर देखते हुए गोवर्द्धन पर्वतके पास गोवर्द्धन ग्राममें पहुंचे और वहां हरिदेव विग्रहके दर्शन किये। वह रात इन्होंने हरिदेवके मंदिरमें ही बिता दी। गोवर्द्धन पर्वतके ऊपर अन्नकूटपल्लीमें माधवेन्द्रपुरी द्वारा प्रतिष्ठित एक गोपालकी मूर्ति है, चैतन्यको उसके दर्शनकी इच्छा हुई ; परन्तु पवित्र लीलास्थान होनेके कारण चैतन्यने उस पर चढ़ना न चाहा। वे चिन्तित हुए। दैव वश उसी समय ऐसी अफवाह उड़ी कि, "ग्राम लूटनेके लिए तुरकसवार आ रहे हैं, सब भाग जाओ।" हल्ला होने पर सब लोग भागने लगे। पुजारियोंने मिल कर गोपालमूर्तिको गांठुली ग्राममें छिपा दिया। चैतन्यको मालूम हो गया, गांठुली जा कर उन्होंने गोपालके दर्शन किये। तीन दिन तक गोपाल दर्शन करके वे काम्यलीला स्थान देखते हुए नंदीश्वरशैल पर पहुंचे और वहां उन्होंने पावनकुण्डमें स्नान कर पर्वतके ऊपर जा व्रजेन्द्र, व्रजेश्वरी और कृष्णमूर्तिका अवलोकन किया। वहांसे खदिरवनमें जा शेषशायी और खेल-तीर्थ देखते हुए भाण्डीरवनमें पहुंचे। वहांसे यमुना पार हो कर भद्रवन, श्रीवन, लोहवन और महावन होते हुए गोकुल पहुंचे और वहां भग्नमूल यमलार्जुनको देख कर प्रेमानंदमें नाचने लगे।

चैतन्यकी साधुता और प्रेमकी चर्चा चारों तरफ फैल गई। प्रतिदिन हजारोंकी भीड़ होने लगी। प्रभुने उपदेश दे कर सब पर कृपा की। अन्तमें मनुष्य-गमागमसे विरक्त हो कर ये यमुनाके किनारे जा एक इमलीके पेड़के नीचे बैठ गये और वहां सङ्कीर्तन करने लगे। यहां भी भीड़ होने लगी। आखिर उन्हें वहांसे भाग कर वनमें जाना पड़ा, वहीं वे भजन करते थे। सिर्फ दो पहरको इमलीके नीचे आते थे और स्नान भोजनादि कर पुनः वनको चले जाते थे। यमुनापारवासी कृष्णदास नामक एक राजपूत अपने परिवारवर्गको छोड़ कर इन की शरणमें आया था, चैतन्यने उस पर कृपा की थी।

इस समय बहुतसे साधुपुरुष भी चैतन्यको देखने आते थे और वे उनके रूपलावण्यादि गुणोंको देख कर तथा उपदेश सुन कर मुग्ध हो जाते थे। उनकी कल्पना यहां तक बढ़ जाती थी कि वे इनको मनुष्य न समझते थे। धीरे धीरे हल्ला हो गया कि, पुनः कृष्णका उदय हुआ है। एक दिन संध्याके समय बहुतसे लोग कोलाहल करते हुए वृन्दावन जा रहे थे, श्रीचैतन्यने उनसे वृन्दावन जानेका कारण पूछा, तो वे कहने लगे—"कालियदहके जलमें कृष्ण उदित हुए हैं। प्रतिदिन वे कालियनागके मस्तक पर नृत्य करते हैं। हम लोग वहीं जा रहे हैं।" उत्तर सुन कर चैतन्यको कुछ हंसी आई। उनके साथी सरलमति बलभद्र भट्टाचार्यने कृष्णदर्शनके लिए जाना चाहा, परन्तु चैतन्यने उन्हें यह कह कर शान्त कर दिया कि, "कृष्ण कलिकालमें क्यों दर्शन देने लगे? यह तो मूर्खोंका हल्ला है। हां, कल रात्रिको जा कर कृष्ण-दर्शन करना।"

दूसरे दिन सुबह ही एक परिचित व्यक्तिके आने पर चैतन्यने उनसे कृष्णके विषयमें पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि, "कालियदहके जलमें रातको एक धीवर मशाल जला कर मछली पकड़ रहा था, लोगोंने बिना समझे ही नावको सर्प, मशालको माणिक और धीवरको कृष्ण समझ कर ऐसा हल्ला कर दिया है।" इसके बाद आगन्तुक भक्तोंने चैतन्यको ही कृष्ण समझ लिया।

तदनन्तर मथुरामें घर घरसे प्रभुको निमन्त्रण मिलने लगा। प्रति दिन बीस-पचीस निमन्त्रण आते थे, किन्तु प्रभु एकसे ज्यादा ग्रहण न करते थे। एक दिन इमलीके नीचे बैठे बैठे चैतन्य भावमें अज्ञान हो कर यमुनामें कूद पड़े। कृष्णदास राजपूत यह देख कर चीत्कार कर उठा, भट्टाचार्य तुरंत ही दौड़े आये और प्रभुको निकालनेके लिए यमुनामें कूद पड़े। बहुत परिश्रमके साथ प्रभुको बाहर निकाला और शुश्रूषा कर उन्हें सुस्थ किया।

भट्टाचार्य और मथुरानिवासी ब्राह्मण दोनोंने परामर्श किया और प्रभुको ले कर गङ्गाके किनारेके प्रकाश

पथसे सोरोंवेत होते हुए प्रयागको चले। राजपूत कृष्णदास तथा और भो पथाभिज्ञ दो व्यक्ति उनके साथ थे। मार्गमें एक गोपवंशो बजा रहा था, वंशोके मधुर स्वरको सुन कर प्रभु भावावेशमें अचेतन हो गये थे। इतनेमें दिल्लीसे दश पठान घुड़सवार वहां आ पहुंचे जो उसी मार्गसे जा रहे थे, उन लोगोंने यह समझ कर कि, साथके लोगोंने संन्यासीको लूटनेके लिए उन्हें धतूरा खिला कर बेहोश कर दिया है, पांचोंको बांध लिया। वे तलवार निकाल कर उन्हें मारना ही चाहते थे कि, इतनेमें राजपूत कृष्णदास कड़क करने एक धमकी दी, जिससे उन्हें तलवार म्यानमें घुसेड़नी पड़ी। तब तक चैतन्यको भी होश आ गया, उन्होंने सब हाल कह दिया। सैनिकोंमें बिजलीखाँ नामक एक राजकुमार और कुराणादि शास्त्रोंमें पारदर्शी एक मौलवी भी थे। चैतन्यकी आकृति-प्रकृति देख कर उनके हृदयमें भक्तिका सञ्चार हुआ। उन दोनोंके साथ चैतन्यका शास्त्रार्थ भी हुआ था। मौलवी साहबने कुराण द्वारा प्रतिपादित धर्मकी श्रेष्ठता सिद्ध करनेके लिए बहुत कोशिश की, पर कुछ फल न हुआ। आखिर मौलवी साहब रोते हुए इनके चरणों पर गिर पड़े और 'कृष्ण कृष्ण' कहने लगे। चैतन्यने उन्हें दीक्षित कर "रामदास" नाम दिया। राजकुमार बिजलीखाँ भी चैतन्यकी कृपासे वैष्णवधर्मका प्रचार करने लगे। ये 'पठान-वैष्णव' कहलाते थे।

अनन्तर श्रीचैतन्य पुन: प्रयागकी तरफ चलने लगे। पथाभिज्ञ दोनों व्यक्तियोंको प्रभुने विदा कर दिया। राजपूत कृष्णदास, मथुरावासी ब्राह्मण, बलभद्र और उनके सेवक गौरके साथ चले। यथासमय प्रयाग पहुंच कर सबने त्रिवेणीमें मकरस्नान किया और पूर्व परिचित एक दक्षिणीके घर रहने लगे। प्रभु त्रिवेणीके घाट पर एक पुष्पोद्यान-विशिष्ट वाटिकामें रहने लगे। चैतन्य यहां रह कर सुबह गङ्गास्नान, बिन्दुमाधव दर्शन, नृत्य, कीर्तन और धर्मप्रसङ्गमें सुखसे समय बिताते थे। इनकी गुणगरिमा चारों तरफ फैल गई। चारों तरफसे लोग आ आ कर इनकी शरण लेने लगे। एक दिन बिन्दुमाधवके प्राङ्गणमें प्रभु नृत्य कर रहे थे, इतनेमें श्रीरूप और उनके कनिष्ठ अनुपम मल्लिक भी वहां आ पहुंचे।

रूपगोस्वामी देखो।

प्रयागके पास ही यमुनाके उस पार आम्बलीग्राममें वल्लभभट्ट नामक एक उद्भट विद्वान् रहते थे, जो भागवतमें अद्वितीय थे। वे लोगोंके मुखसे चैतन्यकी प्रशंसा सुन कर वहां उपस्थित हुए और चैतन्यसे मिल कर मुग्ध हो गये। रूप और अनुपम भी आ पहुंचे, चैतन्यने कृपालिङ्गन कर वल्लभसे उन दोनोंका परिचय करा दिया। इस समय वल्लभ और चैतन्यदेवने बहुत विचारपूर्वक यह सिद्धान्त किया कि, जिसके मुखसे कृष्णनाम उच्चारित होता हो अर्थात् जिसने वैष्णवधर्म अवलम्बन किया है, उसका जन्म हीनजाति वा नीचकुलमें होने पर भी वह ब्राह्मणादिके समान है। इसी कारण उनके साथ रूप और अनुपमका साम्य हो गया था। इसके बाद वल्लभभट्ट भक्तों सहित चैतन्यको निमन्त्रण दे कर अपने घर ले गये। नाव पर पार होते समय चैतन्य भावावेशमें आ कर जमुनामें कूद पड़े थे। पीछे बड़ी मुश्किलसे उन्हें उठाया गया था। आम्बलग्राममें त्रिहुतवासी प्रसिद्ध रघुपति पण्डित चैतन्यसे मिलने आये। उनके साथ प्रभुने बहुत धर्मचर्चा की थी।

यहां भी जनसमागम अधिक देख कर त्रिवेणीघाटको चल दिये। वहां भी यही हाल हुआ। आखिर ये दशाश्वमेधमें जा कर रहे। दश दिन वहां रह कर रूपगोस्वामीको तत्त्वोपदेश दिया और सूक्ष्मरूपमें भक्तिरसका लक्षण समझा दिया। अनन्तर श्रीरूप और अनुपमको ब्राह्मण और कृष्णदासके साथ मथुरा जानेकी अनुमति दे कर ये काशी पहुंचे। काशीमें तपनमिश्र, चन्द्रशेखरादिके साथ परामर्श कर उपरोक्त जाति-विषयक सिद्धान्तको और भी दृढ़ बना लिया।

काशी रहते समय चैतन्य जान-बूझ कर संन्यासका सङ्ग छोड़ने लगे। इस पर परमहंसोंने इनकी निन्दा करनी शुरू कर दी। इसके प्रतीकारके लिए चन्द्रशेखर, तपनमिश्र और मराठी ब्राह्मणको बड़ी चिन्ता हुई। एक दिन काशीवासी किसी ब्राह्मणके घर संन्यासी और परमहंसोंको निमन्त्रण दे कर बुलाया गया। चैतन्य भी पहुंचे। जा कर देखा तो प्रकाशानन्द स्वामी बड़े ठाठ

बाटसे वेदान्तको आलोचना कर रहे हैं। चैतन्य उनको नमस्कार कर निम्नासन पर बैठ गये। प्रकाशानंद सरस्वतीने उन्हें सभामें बैठनेको कहा तो प्रभुने विनीत भावसे उत्तर दिया—"मैं अति हीन-सम्प्रदायका हूं, आप लोगोंके साथ बैठनेके योग्य नहीं हूं।" इस पर प्रकाशानंदने हाथ पकड़ कर उन्हें सभाके मध्य बैठाया। बातों ही बातोंमें चैतन्यके साथ उनका शास्त्रार्थ हो पड़ा। चैतन्यकी ही जीत हुई, फिर क्या था, संन्यासी सभामें निन्दाकी जगह उनकी प्रशंसा हो होने लगी। अन्तमें प्रकाशानंद भी चैतन्यके भक्त हो गये। काशीके और भी सैकड़ों मायावादी संन्यासी चैतन्यके भक्त हो कर कीर्तन करने लगे। पीछे सनातनको वृंदावन जाने और रघुनाथ, चन्द्रशेखर आदिको फिर कभी नीलाचल आनेके लिए कह कर ये बलभद्रके साथ झारिखण्डके मार्गसे नीलाचलको चल दिये।

मार्गमें उनकी सुबुद्धिराय नामक गौड़नगरके एक ऐश्वर्यशाली जमींदारके साथ भेंट हुई। सुबुद्धिने अपने नौकर सैयद हुसेनको किसी अपराधसे चाबुक मारा था। कालान्तरमें वही सैयदहुसेनखाँ गौड़के सिंहासनका अधिकारी हुआ और उसने सुबुद्धिरायको अपना पानी पिला कर उनका हिन्दुत्व नष्ट किया था। सुबुद्धि हाय हाय करते हुए प्रायश्चित्तके लिए काशी पहुंचे, तो काशीके पण्डितोंने यह व्यवस्था दी कि, "उत्तप्त घृत पान कर मर जाना ही इसका प्रायश्चित्त है।" यह सुबुद्धिको अभीष्ट न हुआ। वे चैतन्यसे इसकी व्यवस्था मांगने लगे। चैतन्यने कहा—"वृन्दावन जा कर निरन्तर कृष्णनाम सङ्कीर्तन करिये और वहीं रहिये, यही आपके लिए प्रायश्चित्त है।"

सुबुद्धिरायका हृदय आनंदसे उछलने लगा, वे चैतन्यको साष्टाङ्ग प्रणाम कर सीधे वृंदावनको चल दिये। वहां उन्होंने कठोर भजना की और परमभक्तोंमें उनकी प्रसिद्धि हो गई। वैष्णव कविगण यहां तकके वर्णनको मध्यलीलाके नामसे उल्लेख करते हैं।

इधर चैतन्यके नीलाचल आनेका संवाद पा कर अद्वैत नित्यानंद आदि दल सहित वहां पहुंचे। शिवानंद सेन इनके साथ तत्त्वावधायक रूपमें गये थे। रूप और अनुपम उधर प्रभुके दर्शनार्थ काशी पहुंचे और नीलाचल चले जानेकी खबर सुन वहांसे गौड़ होते हुए उत्कलदेश आये। गौड़देशमें अनुपमकी मृत्यु हो गई, रूप अकेले ही चैतन्यके पास पहुंचे।

धीरे धीरे जगन्नाथदेवकी रथयात्रा भी निकट आ गई। पहलेकी तरह इस बार भी गुण्डिचामार्जन, वनभोजन, रथके आगे नृत्य कीर्तनादि सब हुए।

चार मास बाद गौड़देशको भक्तमण्डलीके चले जाने पर रूपगोस्वामी दोलयात्रा तक नीलाचल ही रहे। दोलयात्राके बाद चैतन्यने रूपको छातीसे लगा कर कहा—"अब वृंदावन जाओ, दोनों भाई मिल कर भक्तिशास्त्रका प्रचार, लुप्त तीर्थोंका उद्धार और कृष्णकी सेवा करना। मेरी भी एक बार वहां जानेकी इच्छा है, सनातनको किसी समय यहां भेज देना।" रूप प्रभुके आदेशानुसार वृन्दावनको चल दिये।

शतानन्दखाँके ज्येष्ठ पुत्र भगवान् आचार्य विषय सुखको छोड़ कर प्रभुके पास आ कर रहते थे। एक दिन भगवान् आचार्यने छोटे हरिदासके जरिये शिखि माहांतीकी भगिनी माधवीके पाससे भिक्षारूपमें एक मन चावल मंगाये थे। श्रीचैतन्यको भोजन करते समय यह बात मालूम पड़ी। उन्होंने उसी समय गोबिंदसे कहा कि, "आजसे छोटे हरिदासको यहां न आने देना।" हरिदास तीन दिन तक उपासा पड़ा र[illegible] उसके कष्टको देख कर भक्तोंने श्रीचैतन्यसे उसका [illegible] राध पूछा। चैतन्यने उत्तर दिया—'वैरागी हो कर जो स्त्रीसे सम्भाषण करता है, उसे मैं आंखोंसे नहीं देख सकता।" भक्तोंने बहुत कुछ कहा-सुना, अनुरोध किया, पर चैतन्यने किसीकी भी न मानी। आखिर हरिदास नीलाचल परित्याग कर प्रयाग चला गया और वहां त्रिवेणीमें प्रवेश कर उसने अपने प्राण दे दिये। वैष्णव ग्रन्थकर्त्ताओंका कहना है कि, उसने मर कर उसी समय दिव्यमूर्ति प्राप्त की थी और चैतन्यके आस पास रह कर वह सुमधुर गीतोंसे उन्हें सन्तुष्ट किया करता था। एक दिन समुद्र-स्नान करते हुए शायद जगदानन्द आदिने भी हरिदासका गीत सुना था। प्रयागसे एक वैष्णव नवद्वीप आया और उसने श्रीवासादिसे छोटे

हरिदासका मृत्यु-वृत्तान्त कहा। दूसरो साल जब श्रीवास आदि भक्तों ने नीलाचल जा कर गौराङ्गसे छोटे हरिदासके बारेमें पूछा, तो उन्होंने उत्तर दिया—"स्वकर्म फलभुक् पुमान्।" इसके बाद श्रीवासने हरिदासका पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। श्रीचैतन्यने कुछ हंस कर प्रसन्नचित्तसे कहा—"स्त्री दर्शनका यही प्रायश्चित्त है।"

पुरुषोत्तम-निवासी एक पितृहीन ब्राह्मण-बालक प्रतिदिन चैतन्यके पास आता था। बालक देखनेमें बड़ा सुन्दर था, चैतन्य उसको अच्छी दृष्टिसे देखते थे। बालकको माता भी युवती और देखनेमें परम सुन्दरी थी, किन्तु वह सती-साध्वी विधवा होनेके बादसे निरन्तर तपस्यामें निरत रहती थी। ब्राह्मण बालकके साथ चैतन्यकी घनिष्ठता दामोदर पण्डितको अच्छी न लगती थी। एक दिन उन्होंने कह ही दिया कि, "अन्योपदेशमें सभी पण्डित होते हैं। अब आपकी कीर्ति फैलेगी और पुरुषोत्तममें भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी।" दामोदरको विद्रुपोक्ति सुन कर चैतन्यने उनसे खुलासा कहनेके लिए कहा। दामोदरने विनीतभावसे उत्तर दिया—"आप स्वतन्त्र ईश्वर हैं, स्वच्छन्दताका आचार करके भी लोगोंके मुंह बंद कर सकते हैं। पण्डित हो कर भी विचार नहीं करते कि, रांड़के बालकके साथ प्रीति क्यों करते हैं? यद्यपि ब्राह्मणी तपस्विनी सती है, तो भी उसमें 'सुन्दरी' और 'युवती'-पनेका दोष है। आप भी युवा और परम सुन्दर हैं, फिर क्यों लोगोंको कानाफूसी करनेका अवसर देते हैं?"

चैतन्यको अपने भक्तके मुखसे ऐसी बात सुन कर बहुत हर्ष हुआ। उन्होंने दामोदरको सबसे योग्य देख उन्हीं पर शचीदेवीके रक्षणका भार दे कर नवद्वीपमें ही रहनेके लिए आदेश दिया और यह भी कहा कि, "दामोदर! तुम सरीखा निरपेक्ष व्यक्ति हमें दूसरा कोई नहीं दीखता, इसीलिए मैं तुम्हारे द्वारा धर्मको रक्षा होगी, ऐसी आशा करता हूं। तुमने जब मुझको सतर्क किया है, तब सभीको कर सकोगे ऐसी उम्मेद है।" दामोदर चैतन्यकी आज्ञा पा कर नवद्वीप चले गये।

इसके कुछ दिन बाद सनातन भी नीलाचल आ पहुंचे। झारिखण्डके दुर्गम मार्गको अतिक्रम करनेसे सनातनके तमाम शरीरमें खाज हो गई थी और पक जानेसे पीब बह चला था। सनातनने अपनी जातीय लघुता और शरीरकी अपवित्रताका खयाल कर चैतन्यके दर्शनकी आशा त्याग दी और जगन्नाथके रथके नीचे दब कर आत्मघात करनेकी ठान ली। सनातन पुरुषोत्तममें आ कर बड़े हरिदासके घर ठहरे। वहां चैतन्यका भी आना हुआ। सनातनको देखते ही चैतन्यने उन्हें छातीसे लगा लिया। बहुत बातचीत होनेके बाद सनातनने अपना सङ्कल्प प्रकट किया। चैतन्यने उन्हें उस सङ्कल्पको छोड़ कर श्रवण और कीर्तन करनेका उपदेश दिया; तथा वृन्दावन जा कर वैष्णवकृत्य, वैष्णव आचार, कृष्णप्रेम, भक्ति-सेवा और लुप्ततीर्थोंका उद्धार करनेको कहा।

दोलयात्रा तक सनातन वहीं रहे। उसके बाद वे जिस रास्तेसे चैतन्य गये थे उसी रास्तेसे वृन्दावन चले गये।

कुछ दिन बाद प्रद्युम्नमिश्र नामक एक साधु पुरुषने आ कर चैतन्यसे उपदेश चाहा, तो चैतन्यने उन्हें रामानन्दरायके पास भेज दिया। रामानन्दके पास पहुंचने पर प्रद्युम्नको मालूम हुआ कि, वे निर्जन उद्यानमें अप्सरा जैसी सुन्दरी युवतीके साथ क्रीड़ा कर रहे हैं। नौकरके मुंहसे रामानन्दकी कहानी सुन कर प्रद्युम्नको उन पर श्रद्धा न रही। वे रायसे ऊपरी वार्तालाप कर लौट आये और चैतन्यसे सब हाल कह दिया। चैतन्यने उलटी उनकी प्रशंसा ही की कि, निर्जन स्थानमें युवती सुन्दरी स्त्रीके साथ क्रीड़ा करने पर भी रामानन्दको विकार नहीं होता। उन्होंने प्रद्युम्नसे कहा कि, "रामानन्द मुझसे भी अधिक भक्त हैं, आप उन्हींके पास जा कर उपदेश ग्रहण कीजिये।" प्रद्युम्नको ऐसा ही करना पड़ा। इसी समय एक विद्वान् गौराङ्गचरितके आधार पर एक संस्कृत नाटक लिख कर चैतन्यको उपहार देने आया था, पर भक्तोंने उसे समादरपूर्वक ग्रहण नहीं किया।

इस प्रकार नीलाचलमें रह कर चैतन्यदेव नाना तरहकी लीलाएं प्रकट करने लगे। मुंहसे तो अनुया-

थियोंके साथ धर्मालाप आदि करते थे, पर हृदयमें उन्हें कृष्णका विरह सता रहा था। वे घड़ी घड़ी मूर्छित हो जाया करते थे। रातको कृष्ण-विरह अत्यन्त प्रबल हो उठता था। प्रभुके रक्षणावेक्षणके लिए रामानंद राय और स्वरूप सर्वदा उनके पास रहते थे। इसी समय रघुनाथ दास भी आ मिले थे। यथासमय चौमासेके समय गौड़वासी भक्तगण आये और पूर्ववत् चार मास रह कर रथयात्राके बाद चले गये। अबकी बार भी पहलेकी तरह गुण्डिचा मार्जन आदि हुआ था। वृंदावनवासी शङ्करानंद सरस्वतीने प्रभुको शिलामाला अर्पण की थी। श्रीचैतन्यने तीन वर्ष तक धारण कर, अन्तमें वह माला रघुनाथके वैराग्यसे सन्तुष्ट हो उन्हींको दे दी।

रघुनाथदास देखो।

दूसरे वर्ष गौड़के भक्तोंके उपस्थित होने पर गौरचन्द्र उनके साथ धर्मप्रसंग और नृत्यकीर्तन करने लगे। इसी समय वल्लभभट्ट वहां आ पहुंचे। चैतन्यके मुखसे धर्म मीमांसा सुन कर भट्टका अभिमान जाता रहा। एक दिन वल्लभभट्ट श्रीधरस्वामीकी व्याख्याको दूषित करते हुए भागवतकी नवीन व्याख्या बना कर चैतन्यको दिखाने आये। चैतन्यने पहले तो देखनी न चाही, पीछे देखी भी तो उसमें सैकड़ों दोष निकाल दिये। वल्लभभट्ट बालगोपालके उपासक थे, किन्तु गदाधरकी देखा देखी चैतन्यके आदेशानुसार उन्होंने गदाधरसे किशोर-गोपाल-मन्त्रकी दीक्षा ले ली।

कुछ दिन बाद रामचन्द्रपुरी भी वहां आ पहुंचे। चैतन्यने उन्हें नमस्कार कर यथेष्ट भक्ति दिखाई। रामचन्द्र परनिन्दा करनेमें वृहस्पतिके समान थे। भक्तोंके अनुरोधसे चैतन्यके आहारकी वृद्धि हो गई थी। रामचन्द्रने गौरके भोजनको देख कहा—"संन्यासीका इतना खाना अच्छा नहीं। दुर्वृत्त इन्द्रियोंको दमन करनेके लिए आहार घटाना ही चाहिये, सिर्फ जीवन धारणके लिए थोड़ा खाना चहिये। यथार्थ वैराग्य होने पर मनुष्य इतना खा ही नहीं सकता; यह तो दिखावटी वैराग्य है।" इस तरह रामचन्द्रपुरी इनकी निन्दा करने लगे। परन्तु चैतन्यने उस पर कुछ भी ध्यान न दिया और न क्षुब्ध ही हुए। एक दिन प्रातःकालके समय रामचन्द्रने चैतन्यके वासभवनमें चींटियां देख कर निश्चय कर लिया कि चैतन्य मिष्टभोजी हैं और उनके सामने ही उनको खूब निन्दा की। दूसरे दिनसे चैतन्य चौथाई भोजन करने लगे। भक्तोंके अनुरोध करने पर उन्होंने उत्तर दिया कि, "रामचन्द्रपुरीने ठीक कहा है, संन्यासीके लिये अल्पाहार ही प्रशस्त है।" अन्तमें बहुत अनुरोध करने पर चैतन्य आधा भोजन करने लगे।

दूसरी साल फिर पहलेकी तरह उत्सव हुआ। उस साल जगन्नाथके जलकेलिके दिन खूब समारोहसे नृत्य-कीर्तन हुआ था। चैतन्य हरवक्त भावमें मग्न रहते थे। चार मास बाद बड़े हरिदासने श्रीचैतन्यके चरणोंमें ध्यान रख कर मानवलीला समाप्त की। मरते समय स्वयं चैतन्यने उनके कानोंमें कृष्णनाम सुनाया था। समुद्रके किनारे बालूमें इनको समाधि हुई थी।

चैतन्यका कृष्ण-विरह दिनों दिन बढ़ने ही लगा। उनका अन्तर सर्वदा ही विषादपूर्ण रहता था; क्या रात और क्या दिन, किसी समय भी उनको शान्ति न थी। वे सर्वदा "हा कृष्ण! हा कृष्ण! कहां हो प्राणनाथ! कहां तुम्हारे दर्शन मिलेंगे?" इत्यादि कह कर रोया करते थे। प्रभुकी ऐसी अवस्था सुन कर बहुतसे लोग उन्हें देखने आये। एक बार भक्तोंके साथ उनके स्त्री-पुत्रादि भी आये थे। जगदानन्द उस समय प्रभुकी [illegible] पा कर वृन्दावन चले गये थे। एक दिन श्रीचैतन्य यमेश्वर टोटा जा रहे थे। रास्तेमें कुछ देवदासियां गीत गा रही थीं। सुन कर प्रभु भावमें तल्लीन हो गये। उन्होंने स्त्री-पुरुषका कुछ विचार न कर आलिङ्गन करना चाहा, इतनेमें गोविन्द दौड़ा आया और कहने लगा—"ये स्त्रियां हैं।" स्त्रियोंका नाम सुनते ही उनका भावावेश रफूचक्कर हो गया। उन्होंने गोविन्दको साधुवाद दिया। कुछ दिन बाद तपन मिश्रके पुत्र रघुनाथ विरागी हो कर इनके पास आये। चैतन्यने उनको घर जा कर पितामाताकी सेवा करनेके लिए कहा और विवाह करनेको मना कर दिया। तदनुसार रघुनाथ घर चले गये।

एक दिन चैतन्य गरुड़के पास खड़े खड़े जगन्नाथके दर्शन कर रहे थे, इतनेमें एक स्त्री भीड़में दर्शन न कर सकनेके कारण उनके कंधे पर पैर रख कर गरुड़ पर चढ़ गई और वहांसे जगन्नाथ देखने लगी। गोविन्द पासमें ही खड़े थे, वे "सर्वनाश! सर्वनाश!" कह कर चिल्ला उठे। चैतन्यने उन्हें रोक कर कहा, "इसके समान भाग्यवती और कोई भी नहीं है; जगन्नाथने इस पर कृपा की है। इसीलिए बाह्यज्ञानशून्य हो कर दर्शन कर रही है।" स्त्रीके उतरने पर प्रभुने उसकी पदवन्दना की।

इस समय चैतन्यकी वही दशा थी, जैसी कृष्णके विरहसे गोपियोंकी हुआ करती थी। एक दिन राय-रामानन्द और स्वरूप आदिके साथ प्रभुकी धर्मचर्चा करते करते सहसा जबान बंद हो गई और फिर धीरे धीरे बेहोश हो गये। भागवतके श्लोक सुनाने पर भी जब पूर्णज्ञान न हुआ, तब भक्तोंने उन्हें भीतर ले जा कर सुला दिया। चैतन्य रातको प्रायः जगते और कृष्ण-नाम लिया करते थे। स्वरूप आदि कुछ सो कर उठे तो उन्हें सन्नाटा मालूम पड़ा; किवाड़ खोल कर देखा तो प्रभु नहीं हैं। बहुत खोजनेके बाद पता लगा कि वे सिंहद्वारके उत्तरकी बगल विकृत अवस्थामें पड़े हैं। स्वरूप भक्तोंके साथ उन्हें ऊंचे स्वरसे कृष्णनाम सुनाने लगे। कुछ देर बाद श्रीचैतन्य कृष्णनामकी ध्वनि करते हुए उठे और कहने लगे—'न मालूम कृष्ण मुझे दर्शन दे दे कर बिजलीकी तरह किधर चले जाते हैं?' उन्हें अपनी बेहोशीका हाल सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ। इसके बाद वे स्नान करने चले गये। और एक दिन समुद्रको जाते समय चटक पर्वतको देख कर ये अत्यन्त व्याकुल हो गये थे और भागवतका "हन्ताय-मद्रि—"आदि श्लोक पढ़ते हुए ज्ञानशून्य हो इधर उधर दौड़ने लगे थे। गोविन्द भी पीछे पीछे दौड़े, पर पार न पाई। आखिर वे समुद्रके किनारे एक जगह गिर पड़े। स्वरूप शुश्रूषा करने लगे, बहुत देर बाद उन्हें कुछ ज्ञान हुआ, वे बोले—"गोवर्धन पर्वत पर कृष्ण वंशी बजा रहे थे, तुम लोगोंने मुझे वहांसे ला कर अच्छा नहीं किया।" पूरा होश होने पर स्वरूपने उनको सब समझा दिया। इसके बाद भी ये सर्वदा कृष्ण और वृन्दावनकी चर्चामें तल्लीन रहते थे, रोदन, विलाप, मूर्च्छा और भावमें तल्लीन हो कर दौड़ना इत्यादि इनके दैनिक कार्य थे। इसी तरह वर्ष बीत गया। दूसरे वर्ष फिर गौड़वासी भक्तगण आये और यथासमय चले गये। एक दिन रात्रिके द्वितीय प्रहरके समय वेणु-का शब्द सुन कर ये सिंहद्वारके पास गाभियोंमें जा कर अचेतन हो गये। इस समय इनके हस्तपदादि अवयव पेटमें घुस जानेसे ये कुष्माण्डकी तरह दीखते थे। वैष्णवगण उसको कूर्माकृति भाव कहते हैं।

एक दिन शारदीय रात्रिको भक्तोंके साथ उद्यान भ्रमण करते हुए ये आईटोटा आ पहुंचे। सहसा समुद्रको देख कर ये यमुना समझ उसमें कूद पड़े, साथ-के लोगोंको कुछ मालूम हो न पड़ा। बहुत खोज हुई। भक्तगण समुद्रके किनारे किनारे पूर्वकी तरफ चले। कुछ दूर जा कर देखा तो एक धीवरको हंसते, रोते और नाचते हुए पाया। धीवरसे कारण पूछने पर उसने उत्तर दिया कि "मेरे जालमें मत्स्यके धोखे एक मुरदा पड़ गया, उसे छूते ही मेरी ऐसी हालत हो गई है।" एक चतुर व्यक्तिने ओझा बन कर उसकी पीठ पर तीन धौल लगाये और उसे शान्त किया। उसको सब हाल समझाया और उसके साथ प्रभुके पास जा कर वे कृष्ण नामका कीर्तन करने लगे। बहुत देर बाद उनके शरीरमें पहलेकी भांति कुछ चेतना आने पर उन्हें घर ले आये। उन्होंने उठ कर कहा—"मैं वृन्दावनकी यमुनामें क्रीडा कर रहा था।"

समालोचकोंका कहना है कि, इस समुद्र-पतनके दिन ही भारतका एक प्रधान आदर्श पुरुष और धर्म-प्रचारक, भारतमें अन्धकार करता हुआ, दक्षिण-समुद्रमें अस्तमित हुआ था। वैष्णवोंने धीवरके जालमें उनका जीवनहीन शरीर पाया था।

परन्तु वैष्णव कवियोंका कहना है कि इसके बाद भी कई मास तक चैतन्य जीवित थे। उनके मतसे इस घटनाके बाद भी चैतन्यने जगदानंदको अपनी माताके पास भेजा था। शचीमाता और भक्तोंको चैतन्यका निवे-दन और उपदेश सुना कर लौटते समय जगदानंदको

आचार्य गुंसाईंने चैतन्यके लिए एक प्रहेलिका भेजी थी।

जगदानंदने यथासमय चैतन्यके पास आ कर आचार्यकी प्रहेलिका कह सुनाई। कोई भी उसका अर्थ न समझ सका, सब दंग रह गये। चैतन्यने कुछ हंस कर कहा, "पागल संन्यासीकी बात मैं भी न समझ सका।" इसी दिनसे विरहदशा दूनी बढ़ने लगी और प्रलाप वचन कहने लगे। आधी रातके बाद स्वरूपने इनको गम्भीरा पर सुला दिया। उस दिन प्रेमावेशमें इन्होंने अपने शरीरको दीवालसे रगड़ कर क्षत विक्षत कर डाला था। कुछ दिन ऐसे ही बीत गये। वैशाख मासकी पूर्णिमाकी रात्रिको जगन्नाथवल्लभके उद्यानमें जा कर चैतन्य अचेतन हो गये। पीछे भक्तोंकी चेष्टासे कुछ चैतन्य हुआ। इसके बाद एक दिन परमानन्द राय आदिको धर्म और कर्त्तव्यका उपदेश दिया था। इसी समय इन्होंने 'शिक्षाष्टक' नामक आठ श्लोकोंको प्रकट किया था। कृष्णदासकृत 'चैतन्यचरितामृत' ग्रन्थकी यहीं समाप्ति है। औरोंने भी इन्हींके मतको स्वीकार किया है। परन्तु कृष्णदासने अपने सूत्राध्यायमें ऐसा लिखा है—शक सं० १४०७के चैत्र मासमें चैतन्यका जन्म हुआ, चौबीस वर्ष गृहस्थवासके बाद संन्यास ग्रहण कर छह वर्ष गमनागमनमें बिताये। उसके बाद १८ वर्ष नीलाचल रह कर नाना उपायोंसे लोक-शिक्षा और धर्म प्रचार करते हुए शक सं० १४५५में, ४८वर्षकी अवस्थामें महाप्रभु अन्तर्हित हुए। (चै० चरि० १।१३ परि०)

चैतन्यका धर्ममत—चैतन्यने सम्भवतः धर्मविषयक कोई भी पुस्तक नहीं लिखी है। हां, समय समय पर जो उन्होंने उपदेश दिया है, उससे उनका धर्ममत ज्ञात हो सकता है। बाल्यावस्थासे ही चैतन्यकी हिन्दूधर्म और हिन्दू देवदेवियोंमें दृढ़ विश्वास और अचला भक्ति थी; ये बाल्यकालसे ही विश्वसंसारको ब्रह्मका विवर्त्त समझते थे। प्रथम-जीवनमें इनका वैष्णवधर्ममें विशेष अनुराग न था, किन्तु गयामें जा कर ये वैष्णवधर्मको प्रधान समझ कर उसके पक्षपाती हो गये। चैतन्यने स्वयं किसी दर्शन वा दार्शनिक मतका उद्भावन नहीं किया, प्रत्युत प्राचीन हिन्दूधर्ममें जो ग्रन्थ वा मत प्रमाणित समझे गये हैं, उन्होंकी समालोचना कर अपने मतका स्थापन किया है। इससे पूर्वतन मतकी अपेक्षा इनके मतमें बहुतसा नवीनत्व आ गया है। इन्होंने अपने धर्म-मतको प्रमाणित बनानेके लिए विष्णुपुराण, गीता, भागवत, पद्मपुराण उत्तरखण्ड, वृहन्नारदीय, पञ्चरात्र और ब्रह्मसंहिता आदि ग्रन्थोंके प्रमाणोंका अवलम्बन किया है। सिवा इसके ये उपनिषद्, श्रुति और वेदान्तसूत्रका भी यथेष्ट सम्मान करते थे। चैतन्यचरितामृतमें वर्णित सार्वभौमके साथ शास्त्रार्थ, रामानन्दको धर्ममीमांसा, रूपको उपदेश, सनातनकी शिक्षा, और वल्लभभट्टके साथ शास्त्रार्थ आदिके पढ़नेसे चैतन्यके द्वारा प्रवर्तित मतका ज्ञान हो जाता है।

चैतन्यके मतसे उपनिषद्, श्रुति और आर्य-ऋषि प्रणीत धर्मशास्त्रके मुख्य अर्थके अवलम्बनसे जो व्याख्या हो सकती है, वही ग्रहणीय है। गौणार्थका अवलम्बन कर तत्त्वका निरूपण करना शास्त्रका उद्देश्य नहीं है। इसलिए लक्षणावृत्तिका अवलम्बन कर जो शास्त्रकी व्याख्या की जाती है, वह यथार्थ नहीं हो सकती (१)। चैतन्यके मतसे ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वैश्वर्यपूर्ण और साकार हैं। जिन श्रुतियोंमें ईश्वरको निर्विशेष कहा गया है, उसका तात्पर्य प्राकृततत्त्व निषेध करना है। ब्रह्म वा ईश्वरके द्वारा विश्वसंसारकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होती है। भगवान् ईश्वर इस जगत्‌के अपादान कारण और अधिकरणके रूपमें अवस्थित हैं। ईश्वरके नेत्र प्र— आदि सभी नित्य हैं। ईश्वरकी इच्छासे उनकी शक्ति द्वारा प्राकृत जगतकी सृष्टि हुई है। श्रुति और पुराण आदिमें जो ब्रह्म शब्दका उल्लेख है, उसका अर्थ ईश्वर है (२)। द्वापरके अन्तमें नन्दगोपके घर स्थित कृष्णमें और ईश्वरमें कुछ अन्तर नहीं, वे ही स्वयं भगवान् हैं। भागवतके दशवें स्कन्धके १४वें अध्याय (श्लोक ३१)में इसका प्रमाण है। श्रीकृष्ण सर्वैश्वर्य, सर्वशक्ति और सर्वरसपूर्ण अनन्त ब्रह्माण्डके आधार हैं और उनका शरीर सच्चिदानन्द स्वरूप है (३)। उनकी अनन्त शक्तियोंमें तीन प्रधान हैं, जैसे—चिच्छक्ति, मायाशक्ति और जीवशक्ति। इनमें चिच्छक्ति ही प्रधान है जिसका द्वितीय नाम स्वरूपशक्ति

(१), (२) चै० चरि० मध्य० ६ परि०।

(३) चैतन्यचरि० मध्य० ८ परि। ब्रह्मसंहिता ५।१।

(४) है। स्वरूपशक्ति भी तीन प्रकारकी है जो आनन्दांशमें ह्लादिनी, सदंशमें सन्धिनी और चिदंशमें संवित् नामसे प्रसिद्ध हैं। कृष्ण वा ईश्वर स्वयं सुखमय हो कर भी भक्तोंको सुखी करनेके लिए ह्लादिनी शक्ति द्वारा सुखास्वादन करते हैं। ह्लादिनीके सारांशको प्रेम और प्रेमके परम सारांशको महाभाव कहते हैं। वृन्दावनकी राधा महाभावस्वरूपा हैं। उनका शरीर प्रेमस्वरूप है। उनकी ललितादि सखी कायव्यूह हैं और वे स्वयं कृष्णप्रेयसी रूपसे प्रसिद्ध हैं (५)। राधा और कृष्णके स्वरूपनिर्णयका नाम है तत्त्वनिर्णय। ईश्वरसे जीव सम्पूर्ण रूपसे पृथक् है। इस मतमें दो तरहकी सद्गतियां मानी हैं-एक तो ऐश्वरिक ऐश्वर्यलाभपूर्वक चिरन्तन स्वर्गभोग, दूसरी आनन्दमय वैकुण्ठधाममें श्रीकृष्णके साथ एकत्र वास करना। श्रीकृष्णके भक्तगण इन अवस्थाओंको प्राप्त कर सालोक्य, सामीप्य, सार्ष्टि और सारूप्य इन चार प्रकारकी मुक्तिको पा कर परम सुखका अनुभव करते हैं। ज्ञानशून्य भक्ति, प्रेमभक्ति, दास्यप्रेम, सख्यप्रेम, वात्सल्यप्रेम और कान्तभाव प्रेम ये प्रधान साध्य हैं और इनमें भी राधिकाका प्रेम ही सर्वश्रेष्ठ है। दास्य और वात्सल्य आदि भावमें श्रेष्ठ साध्यकी प्राप्ति नहीं होती। सखी भाव ही उसके पानेके लिए प्रधान है। चैतन्यदेवने इसीका अनुसरण किया था। कलिकालमें हरिनाम वा भगवान्का नामकीर्तन ही प्रधान है, इसके बिना जीवकी दूसरी गति नहीं है। जो तृणसे भी लघुवृत्ति और वृक्षसे भी अधिक सहिष्णुता अवलम्बन कर सकते हैं एवं स्वयं अहङ्कारशून्य हो दूसरेका आदर करते हैं, वे ही नाम कीर्तनके अधिकारी हैं। सभी जातिके लोग इसके अधिकारी हैं। कृष्णभक्त नीचजातिकी ब्राह्मणादिसे हीन नहीं है। परहिंसा, परद्वेष और परस्त्रीसम्भाषण आदि सर्वथा परित्याग करने योग्य हैं।

विशेष जानना हो तो चैतन्यसम्प्रदाय शब्द और उक्त सम्प्रदायके ग्रन्थ देखने चाहिये।

चैतन्य भागवत—चैतन्यचरित्र विषयक एक ग्रन्थ। इसका दूसरा नाम चैतन्यमङ्गल है। परम भागवत वृन्दावन दास इसके प्रणेता हैं। यह आदि, मध्य और अन्त्य तीन खण्डोंमें विभक्त है। आदिखण्डमें चैतन्यका जन्म, बाल्यलीला, अध्ययन अध्यापना, विवाह और गमनागमन है, मध्यखण्डमें चित्तका भावान्तर, कृष्णप्रेमावेश, नित्यानन्द, अद्वैत और श्रीवासादि भक्तोंके साथ मिलन, सङ्कीर्त्तन, पातकियोंका उद्धार प्रभृति कथा लिखी है। और अन्त्यखण्डमें केशवभारतीके निकट संन्यासग्रहण, नीलाचलगमन, गौड़ आगमन, धर्मप्रचार और दूसरी बार नीलाचलमें आनेका हाल वर्णित है।

चैतन्यभैरवी (सं० स्त्री०) चैतन्यः शिवस्तद्युक्ता भैरवी, मध्यपदलो०। तन्त्रसारोक्त भैरवतान्त्रिकोंकी एक भैरवीका नाम।

चैतन्य सम्प्रदाय—एक आधुनिक वैष्णवसम्प्रदाय। श्रीकृष्णचैतन्य इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे और अद्वैताचार्य तथा नित्यानन्द उनके प्रधान सहकारी रहे। चैतन्यके प्रादुर्भावके कुछ पूर्व अर्थात् १४श शताब्दीके अन्तमें इसका सूत्रपात हुआ, और चैतन्य, अद्वैत और नित्यानन्द प्रभृति द्वारा फैल गया। उनके शिष्यों और प्रशिष्योंने फिर यत्न करके भारतवर्षके प्रायः सब प्रान्तोंमें इसको चला दिया। इस सम्प्रदायके अनुसार चैतन्य केवल प्रवर्तक ही नहीं उपास्य भी हैं। चैतन्य ईश्वरके पूर्णावतार और अद्वैत तथा नित्यानन्द अंशावतार माने गये हैं। कृष्णावतारके बलराम चैतन्य अवतारमें नित्यानंद होते हैं। अद्वैत साक्षात् सदाशिव हैं।

इस सम्प्रदायके वैष्णव श्रीकृष्णकी उपासना करते और श्रीकृष्णको ही स्वयं भगवान् समझते हैं। वही वृंदावनवासी कृष्णचन्द्र शचीके पुत्र गौराङ्ग रूपसे अवतीर्ण हुए। सुतरां चैतन्यदेव भी अपने आप ईश्वर और उपास्य हैं। कहते हैं—गोपाल बालकों और सखियोंने भी नवद्वीपमें अवतार लिया था। चैतन्यके समसामयिक वैष्णव और उनके अतिशय अन्तरङ्ग स्वरूप दामोदर प्रभृति कई एक सज्जनोंने इस सिद्धान्तका उद्भावन किया। इनकी उपासना वल्लभाचारी वैष्णवोंसे मिलती है। नाम संकीर्तन ही इस सम्प्रदायका प्रधान साधन है। गुरुको सर्वप्रथम पूजते हैं। गोस्वामी इस सम्प्रदायमें गुरुत्व पदाधिकारी हैं।

संस्कृत और बंगला भाषामें उस सम्प्रदायके मतप्रव-

(४) (५) चैतन्यचरि० मध्य० ८ परि०।

तेक अनेक ग्रन्थ मिलते हैं। तन्मध्य विदग्धमाधव नाटक, ललितमाधव, उज्ज्वलनीलमणि, दानकेलि कौमुदी, बहुस्तवावली, अष्टादशलीलाकान्त, गोविन्दविरुदावली, मथुरामाहात्म्य, लघुभागवत, भक्तिरसामृत-सिन्धु, आदि प्रसिद्ध हैं।

इस सम्प्रदायके वैष्णव नासामूल अवधि केशपर्यन्त गोपीचंदनका ऊर्ध्वपुण्ड्र लगा करके नासाग्रके साथ मिला देते हैं। बाहु, वक्षस्थल और ललाटपार्श्व पर राधाकृष्णके नामाङ्कनको छाप रहती है। कण्ठदेशमें तुलसी काठको त्रिकण्ठी माला पहनते हैं। सहस्र संख्यक तुलसीमणि-ग्रथित जयमालासे इष्ट मन्त्र जप करना इनका एकान्त कर्तव्य है।

ईशानसंहिताके मतसे गौरके कई मन्त्र इस प्रकार हैं—

१ ओं गौराय नमः। २ क्लीं ओं गौराय नमः क्लीं। ३ क्लीं गौरचन्द्राय क्लीं। ४ क्लीं ओं गौरचन्द्राय नमः।

गौराङ्गका ध्यान नीचे लिखा जाता है—

"स्वभुजं सुन्दरं स्वच्छं वरा भयकरं विभुम्।
सुहास्यं पुण्डरीकाक्षं दधानं सितवाससी।
कृष्णकृष्णेति भाषन्तं सुस्वरं सुमनोहरम्।
वलिरेखधरं सौम्यं वनमालाविभूषितम्।
तारयन्तं जनान् सर्वान् भवाम्भोधिदंशानिधिम्।" (ईशानसंहिता)

चैतन्यके यन्त्रमें प्रथम एक षट्कोण अङ्कित करते हैं। उसके बाहर कर्णिका और अष्टदलपद्म बनानेका विधान है। फिर अपरापर यन्त्रकी भाँति चतुरस्र चतुर्द्वार और भूपुर अङ्कित किया जाता है।

ब्रह्मजामलके मतमें चैतन्यका मन्त्र है—ओं चैं चैतन्याय नमः। चैतन्यदेव देखो।

चैतसघृत (स्वल्प)—वैद्यकोक्त औषध विशेष, एक तरहकी दवा। इसके बनानेका तरीका इस प्रकार है—घी ४ सेर। क्वाथके लिए—गाम्भारीवर्जित दशमूल, रास्ना, एरण्डमूल, निशोत, विजबन्द, मूर्वा (चूर्णहार), शतमूली, इनका प्रत्येकका दो पल, पाकके लिए जल ६४ सेर, शेष बचे १६ सेर, कल्कार्थ—ग्वालककड़ी, त्रिफला, अम्भाल के बीज, देवदारु, एलवा, शालपर्णी (सरिवण), तगरचण्डी, हल्दी, दारुहल्दी, श्यामालता (दूधि), प्रियङ्गु, नीलोत्पल, अनन्तमूल, इलायची, मञ्जिष्ठा, दन्तीमूल, दाड़िमके बीज, नागेश्वर, तालिशपत्र, विडङ्ग, मालतीके ताजे फूल, बृहतिका, पोटवन, कुड़, लालचन्दन, पद्मकाष्ठ, इन २८ चीजोंमेंसे प्रत्येकका २ तोला। जल १६ सेर। इसके सेवन करनेसे चित्तविकार (उन्मादपन) जाता रहता है।

चैतसघृत (वृहत्)—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—क्वाथके लिए शणके बीज निशोथ, एरण्डमूल, दशमूल, शतमूली, रास्ना, पीपल, शोभाञ्जन (संजन) की जड़, प्रत्येकका २ पल, पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष बचे १६ सेर। कल्कार्थ—विलाईकन्द, जेठीमधु, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, चीनी, पिण्डखजूर, दाख, शतमूली, गोखुरू, ताड़वृक्षके काण्डका अग्रभागका श्वेतसार तथा स्वल्प चैतसघृतमें लिखा हुआ मिश्रित कल्क १ सेर। इसके सेवनसे अपस्मार, मृगी, उन्माद और अन्यान्य अनेक रोग नष्ट हो जाते हैं।

चैना (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक प्रकारका पक्षी। इसका सिर काला, छाती चितकबरी और पीठ काली होती है।

चैती (हिं० स्त्री०) १ चैतमें होनेवाली फसल, रब्बी। २ जमुआ नील जो चैतमें बोया जाता है। ३ चैत्रमासमें गानेका गीत।

चैत्त (सं० त्रि०) चित्तस्येदम् चित्त-अण्। १ चित्तसम्बन्धी स्मरणादि।

(पु०) २ चित्ताभिमानी क्षेत्रज्ञ। "चैत्येन इदयं चैत्तः प्राविशद् यदा।" (भाग० ३।२६।६५) (क्ली०) ३ बौ. मतसे विज्ञानस्कन्धातिरिक्त स्कन्धमात्र है। बौद्ध लोग चित्त और चैत नामक सिर्फ दो प्रकारके पदार्थ मानते हैं। उनके मतसे विज्ञानातिरिक्त पदार्थ मात्र ही चैत है।

चैत्तक (सं० त्रि०) चैत्त स्वार्थे कन्। चित्तसम्बन्धी, हृदयसे लगाव रखनेवाला।

चैत्य (सं० क्ली०-पु०) चित्यस्येदम् चित्य-अण् तस्येदम्। पा ४।३।१२०। १ आयतनवृक्ष, वह घर जो किसीके मरने पर उसकी यादगारीके लिए बनाया जाता हो। २ यज्ञायतन, वह स्थान जहां यज्ञ हो। ३ देवायतन, मंदिर, देवालय। ४ देवकुल। (भारत सभा० ३।१२) ५ चिता।

चैत्यदेवायतनादिस्थाने तिष्ठति चैत्य-अण्। (पु०) ६ चैत्यस्थ देवभेद, वह मंदिर जो आदिबुद्धके उद्देश्यसे बना हो। ७ बुद्धदेव। ८ विम्बमूर्त्ति, प्रतिमा। ९ बुद्धकी प्रतिमूर्त्ति। १० उद्देशवृक्ष, पीपलका पेड़। इसके पर्य्याय देवतरु, देवावास, करिभ और कुञ्जर है।

"इच्छा पतन्ति चैत्याश्च ग्रामेषु नगरेषु च।" (भारत ६।३।४०)

११ जिनतरु, तुनका पेड़, १२ ग्रामादि-प्रसिद्ध महावृक्ष, गांवका कोई प्रसिद्ध पेड़। घरके पास चैत्यका पेड़ रहनेसे ग्रहका भय होता है। (वृहत्सं ५३।९०) (क्ली०) १३ विहार, बौद्ध संन्यासीयोंके रहनेका मठ। (पु०) १४ बुद्धविप्र, बौद्ध संन्यासी या भिक्षुक। (त्रि०) १५ बुद्धचैत्य। १६ चिता सम्बन्धीय, चिताका। (पु०) १७ विल्व वृक्ष, बेलका पेड़। १८ जैन मूर्ति।

चैत्य—बौद्धोंके मतसे जो मन्दिर आदिबुद्ध या ध्यानी बुद्धोंके नामसे प्रतिष्ठित हैं, उन्हें ही चैत्य कहते हैं; किन्तु मानुषी बुद्धोंके उद्देशसे जो मन्दिर बनते हैं, उन्हें कूटागार कहते हैं। सद्धर्मपुण्डरीक नामक बौद्ध ग्रन्थोंमें चैत्य या बुद्धमण्डलकी प्रस्तुत प्रणालीका वर्णन लिखा है। चैत्य नामक बुद्धमन्दिरमें गर्भ और उसके ऊर्द्धमें लिङ्गाकृति चूडामणि रहती है। इस अंशको अकनिष्ठभुवन कहते हैं। उसके ऊपर पांच छत्रसे बने रहते हैं, जो पञ्चध्यानी बुद्ध-भवनके नामसे मशहूर हैं। पूर्वमें अक्षोभ्य, दक्षिणमें रत्नसम्भव, पश्चिममें अमिताभ, उत्तरमें अमोघसिद्ध और कभी कभी वैरोचन मूर्त्ति अङ्कित रहती है; परन्तु वज्रसत्त्वकी मूर्त्ति कभी भी चैत्यमें अङ्कित नहीं होती। भारतवर्षके नाना स्थानमें बुद्ध चैत्य पाये जाते हैं, जिनके प्राचीन शिल्पनैपुण्य और निर्माणकौशलको देख कर दांतों उंगुली दबानी पड़ती है। नेपाली चैत्य-पुङ्गव नामक बौद्धग्रन्थमें चैत्यपूजाकी विधि लिखी है।

जैनमतानुसार—चैत्य अरहन्तकी मूर्त्तिको कहते हैं और जहां वह मूर्त्ति रहती हो उसे चैत्य या चैत्यालय कहते हैं। जिस मन्दिरको शिखर (चूड़ा) न बनी हो अर्थात् साधारण गृहमें प्रतिमा विराजमान हों तो वह चैत्य कहलाता है। धर्म सेवन करनेका स्थान।

चैत्यक (सं० पु०) चैत्य इव कायति चैत्य-कै-कन्। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। २ गिरिव्रजपुरवेष्टक पञ्च गिरिके अन्तर्गत पर्वतभेद, वर्त्तमान राजगृहके पास एक प्राचीन पहाड़का नाम। यह गयासे प्रायः ३० मील दूरी पर अवस्थित है। अभी यह पर्वत जंगलसे भरा हुआ है। इस पर चरणचिह्न हैं जिनके दर्शनके लिये प्रायः जैनी वहां जाते हैं। राजगृह देखो।

चैत्यगृह (सं० क्ली०) चैत्यस्य सन्निहितं गृहं शाकपार्थिवादित्वात् समा०। चैत्यके सन्निहित गृह, वह घर जो जैनमन्दिर अथवा बौद्धमठके पास हो।

चैत्यतरु (सं० पु०) कर्मधा०। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका दरख्त।

"चैत्यतरौ वा पतिता सत्त्वक्षयपीड़ा करोत्युल्का।" (वृहत्सं ३३।२१)

पीपलवृक्ष पर यदि उल्कापात हो तो साधुओंको पीड़ा होती है। २ गांवका कोई प्रसिद्ध वृक्ष।

चैत्यद्रु (सं० पु०) कर्मधा०। अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

चैत्यद्रुम (सं० पु०) कर्मधा०। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। २ अशोक वृक्ष। ३ जिनतरु, तुनका पेड़।

चैत्यपाल (सं० पु०) चैत्यं पालयति चैत्य-पालि-अच्। चैत्यका रक्षक वा प्रधान अधिकारी।

चैत्यमुख (सं० पु०) चैत्यस्य देवकुलस्येव मुखमस्य, बहुव्रो०। कमण्डलु, संन्यासियोंका जलपात्र।

चैत्ययज्ञ (सं० पु०) आश्वलायन गृह्योक्त यज्ञभेद।

"चैत्ययज्ञे प्राक् स्विष्टकृतश्चैत्याय बलिं हरेत्।" (गृ०)

इस यज्ञके प्रथम शङ्कर, पशुपति, आर्या, ज्येष्ठा आदि देवताओंके निकट प्रतिज्ञा करनी चाहिये—"अपनी अभिप्रेत वस्तु लाभ होनेसे मैं आज्यस्थाली पाक वा पशु द्वारा आपका यज्ञ करूंगा।" फिर अभीष्टसिद्धि होने पर आज्यादिसे चैत्ययज्ञ किया जाता है। इस यज्ञमें चैत्यायतन उपलेपन करना पड़ता है। स्विष्टकृत बलिके पूर्व चैत्यको पूजा चढ़ाते हैं।

"यदु वै विदेशस्थं पलाशदूतेन यज्ञ वैच्छा वनस्याने दृत्येत यथा वोपिण्डौ कृत्वा वीवधेऽभ्याधाय दूताय प्रयच्छेदिमन्तस्मै, बलिं हरेति चैनं ब्रूयादयं तुभ्यमिति यो दूताय।" (आश्वलायन-गृह्यसूत्र)

विदेशस्थ चैत्यका याग करनेमें पलाशकाष्ठ द्वारा दूत और वीवध (बोझा ढोनेकी बांक) निर्माण करना चाहिये। फिर 'यत्रवेच्छ' मन्त्र द्वारा दो पिण्ड बना कर वीवधमें रख दूतको कहा जाता है—एक उनके

चैत्यके लिए ले आवो और दूसरा तुम ग्रहण करो।

"प्रतिभय' चैत्यस्य भक्ष्यमपि किञ्चित् ।" (सु०)

"नाद्याचैत् मद्यस्थापूयक्षमपि किञ्चिद्दनेन तर्त्तव्यम् ।" (सु०)

यागकर्ता और विदेशस्थ चैत्य उभयके मध्यस्थित पथमें किसी प्रकारका भय रहनेसे पलाश-कल्पित दूतको एक शस्त्र प्रदान करना चाहिये। नौकाद्वारा तरणीय नदी बीचमें पड़नेसे उतारेके लिये घरनई जैसी कोई चीज दी जाती है।

"धन्वंतरि' यद्य ब्राह्मणमग्नि चान्तरा पुरोहिताय बलि' हरेत् ।" (सु०)

यदि धन्वन्तरि चैत्य हो, तो ब्राह्मण और अग्निके समीप पुरोहितको पहले बलि देते हैं। मन्त्र "पुरोहिताय नमः" और पीछेका "धन्वन्तरये नमः" है। धन्वन्तरि विदेशस्थ होने पर धन्वन्तरि और पुरोहितको एक पिण्ड दे करके एक पिण्ड दूतको भी दिया जाता है।

चैत्यवन्दन (सं० पु०) १ जैनियों और बौद्धोंकी मूर्त्ति। २ जैनियों और बौद्धोंका मन्दिर। ३ चैत्य या मन्दिर सम्बन्धी धनकी रक्षा।

चैत्यवासी—मठवासी, बीसपन्थी जैन।

चैत्यविहार (सं० पु०) चैत्यस्येव विहारोऽत्र, बहुव्री०। १ जिनगृह, जैन-मन्दिर। २ बौद्धोंका मठ।

चैत्यवृक्ष (सं० पु०) कर्मधा०। १ अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका दरख्त। चैत्यतरु देखो।

२ जैनमतानुसार—एक प्रकार पार्थिव वृक्ष, जो कभी विनष्ट नहीं होता और उस पर जैन-मन्दिर होता है।

चैत्यशैल (सं० पु०) चैत्यपर्वत।

चैत्यस्थान (सं० क्ली०) ६-तत्। १ वह स्थान जहां बुद्धदेवकी प्रतिमूर्त्ति स्थापित हो। २ पवित्र स्थान।

"चैत्यस्थाने स्थितं वृक्षं फलवन्तमिव द्विजाः।"

(भारत अनुशा० १११ अ०)

चैत्यालय (सं० पु०) ६-तत्। जैनोंका वह छोटा मन्दिर, जिसमें शिखर न हो। चैत्य देखो।

चैत्र (सं० क्ली०) चि-ष्ट्रन् चित्रं ततः स्वार्थे-अण्। १ देवकुल, एक प्रकारका देव-मंदिर जिसका द्वार अत्यन्त छोटा हो। २ मृत स्मारक घर। (पु०) ३ बौद्ध भिक्षुक, बौद्ध भिखमंगा। ४ वर्षपर्वतभेद, सात वर्षपर्वतोंमेंसे एक। चित्रा भवार्थे अण्। ५ चित्राके गर्भसे उत्पन्न बुधका पुत्र। ये सप्तद्वीपोंके अधिपति तथा सुरथ राजाके पितामह थे। (ब्रह्मवैवर्त्त प्रकृतिखण्ड) ६ मासभेद, फाल्गुन और वैशाखके बीचका महीना। इसके दो भेद हैं, सौर और चान्द्र। सूर्यका मीन राशिमें संक्रमण और उस राशिके भोग तकको सौर चैत्र, तथा जिस चान्द्रमासमें चित्रा नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा हो, उसे चान्द्रचैत्र कहते हैं। चान्द्र चैत्र कृष्ण प्रतिपदासे पूर्णिमा तक गौण और शुक्लप्रतिपदासे अमावस्या तक मुख्य है।

इसके पर्याय—चैत्रिक, मधु, चैत्री, कालादिक, चैत्रक और चित्रिक। जो चैत्र मासमें जन्म ग्रहण करता है वह सत्कर्मशाली, विनयी, सुन्दराकृति, सुखी, सत्सङ्गयुक्त, द्विज और देवताभक्त होता है। चैत्र मासके कृत्य ये हैं—वारुणी, अशोकाष्टमी, श्रीरामनवमी, मदनत्रयोदशी, मदनचतुर्दशी और संन्यास इत्यादि। ७ वार्हस्पत्य वर्षभेद। ८ वार्हस्पत्य अर्द्धमास। ९ यज्ञभूमि। (क्ली०) १० चैत्य। (त्रि) ११ चित्रा नक्षत्रजात, चित्रा नक्षत्र सम्बन्धी।

चैत्रक (सं० पु०) चैत्र स्वार्थे कन्। चैत्रमास, चैत।

चैत्रगौड़ी (सं० स्त्री०) रागिणीविशेष, एक प्रकारकी रागिणी जो संध्या समय अथवा रातके प्रथम प्रहरमें गाई जाती है।

चैत्रमख (सं० पु०) चैत्रस्य मखः, ६-तत्। चैत्रमासीय मदनत्रयोदशी प्रभृति उत्सव, चैत मासके उत्सव जो प्रायः मदनसंबन्धी होते हैं।

चैत्ररथ (सं० क्ली०) चित्ररथेन गन्धर्वेण निर्वृत्तं चित्ररथ-अण्। १ कुबेरका उपवन जो चित्ररथका बनाया हुआ और इलावृत खण्डके पूर्वमें अवस्थित माना जाता है।

"बभौ बहुजनाकीर्णं वनं चैत्ररथं यथा।" (हरि० १२४ अ०)

लिङ्गपुराणके मतसे यह मेरुके पूरबमें अवस्थित है। देवीभागवतके मतानुसार चैत्ररथ एक पीठस्थान है। इसकी अधिष्ठात्री देवीका नाम मदोत्कटा है।

"मदोत्कटा चैत्ररथे जयन्ती हस्तिनापुरे।" (देवीभा० ७।३०।५८)

(पु०) २ महाभारतमें वर्णित एक मुनिका नाम। (क्ली०) चित्ररथं गन्धर्वमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः चित्ररथ-

अण्। ३ महाभारतके आदिपर्वके अन्तर्गत एक पर्वाध्याय।

चैत्ररथि (सं० पु०) चित्ररथस्य अपत्यं चित्ररथ-इञ्। अत-इञ्। पा ४।१।६५। शशबिन्दु राजा।

"आसीत् चैत्ररथिर्वीरो यज्वाविपुलदक्षिणः।
शशबिन्दुःपरं वृत्तं राजर्षीणां समन्वितः॥" (हरिवंश ३७ अ०)

चैत्ररथी (सं० स्त्री०) चैत्ररथेरपत्यं स्त्री चैत्ररथि-अण् ततो ङीप्। शशबिन्दु राजाकी कन्या। इसका विवाह युवनाश्वके पुत्रसे हुआ था। (हरिवंश १२ अ०)

चैत्ररथ्य (सं० क्लो०) चैत्ररथमेव स्वार्थे ष्यञ्। कुबेरका बाग, चैत्ररथ।

"मानसे चैत्ररथ्ये च स रेमे रामया रतः।" (भागवत ६।१२।१८)

चैत्रराज (सं० पु०) चम्पावती देवीके भक्त गोपऋषिकुलके प्रथम राजा। (सह्याद्रिखण्ड ११।११४२)

चैत्रवती (सं० स्त्री०) नदीविशेष, हरिवंश-वर्णित एक नदीका नाम।

चैत्रवाहनी (सं० स्त्री०) चित्रवाहनस्यापत्यं स्त्री चित्रवाहन-अण् स्त्रियां ङीप्। चित्रवाहनकी कन्या चित्राङ्गदा। ये अर्जुनकी स्त्री और बभ्रुवाहनकी माता थीं।

चैत्रवृक्ष (सं० पु०) आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

चैत्रसखा (सं० पु०) मदन, कामदेव।

चैत्रायन (सं० पु०) चित्रस्य गोत्रापत्यं चैत्र नड़ादित्वात् फक्। नड़ादिभ्यः फक्। पा ४।१।९९। १ चित्रका गोत्रज, चित्रका वंशधर। २ एक जगहका नाम। चित्रेण निर्वृत्तः चित्र पक्षादित्वात् फक्। (त्रि०) २ चित्रनिर्वृत्त।

चैत्रावली (सं० स्त्री०) चैत्रं चैत्रमासं आ सम्यक्रूपेण वरयत्यभिलषति चैत्र-आवर-णिच् अच् स्त्रियां ङीप्, रस्य लत्वं। चैती पूर्णिमा, चैतकी पूनिम। इसके पर्याय—मधूत्सव, सुवसन्त, काममह, वासन्ती और कर्दमी।

"चैत्रावल्याः परेद्युर्या।" (तिथितत्त्व)

२ मदनत्रयोदशी, चैत्रशुक्ल त्रयोदशी।

चैत्रि (सं० पु०) चैत्री विद्यते अस्मिन् चैत्री इञ्। चैत्रीगत पूर्णिमायुक्त चैत्रमास, चित्रा नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा, चैत्रकी पूर्णिमा।

चैत्रिक (सं० पु०) चित्रा नक्षत्रयुक्तपूर्णिमा विद्यते अस्मिन् चैत्रपक्षे ठक्। चैत्रमास, चैतका महीना।

चैत्रिन् (सं० पु०) चित्रा नक्षत्रयुक्ता पूर्णिमा विद्यतेऽस्मिन् व्रीह्यादित्वात् इनि। चैत्रमास।

चैत्री (सं० स्त्री०) चित्रा-अण् ततो ङीप्। चित्रानक्षत्रयुक्त पूर्णिमा, चैत्रकी पूर्णिमा।

"चैत्र्यादि पौर्णमासी तत्संज्ञा भविष्यति।" (भारत १४।७१ अ०)

चैदिक (सं० त्रि०) चेदिदेशे भवः चेदि काश्यादित्वात् ठञ् ञिठ्। चेदिदेशज, चेदिदेश-संबन्धी, चेदि देशका।

चैद्य (सं०पु०) चेदीनां जनपदानां राजा चेदि-ष्यञ्। चेदि देशके राजा, शिशुपाल।

"त्वया विप्रकृतश्चैद्यः" (माघ २ स०)

२ (त्रि०) चेदिदेशज, चेदिदेशका।

"नकुलस्तु चैद्यां करेणुमतीं।" (भारत आदि ९५ अ०)

(पु०) ३ त्रिपुरदेश। इसका वर्तमान नाम तेवार है। ४ त्रिपुर देशवासी, वे जो त्रिपुर देशमें रहते हों। ५ चेदिराज वसुके वंशोत्पन्न, चेदिराज वसुके वंशधर।

चैन (हिं० पु०) आराम, सुख, आनन्द।

चैनपुर—विहार प्रादेशिक शाहाबाद जिलेके भभुवा सबडिविजनका एक गांव। यह भभुवा नगरसे ७ मील पश्चिम अक्षा० २५° २´ उ० और देशा० ८३° ३१´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई २८७० होगी। यहां पहले जो राजा रहते थे, उनको प्रायः २५० वर्ष हुए पठानोंने निकाल बाहर किया। चैनपुर दुर्गके चारों ओर खाई और पत्थरका प्राचीर है। बीचमें ईंट और पत्थरके मकान और कूएं बने हैं। बादशाह शेरजहांकी कन्यासे विवाह करनेवाले फतेहखांका कब्र भी है।

चैनपुरमें प्रवाद है कि सत्ययुगमें शुम्भ निशुम्भके चण्ड और मुण्ड दो सेनापति रहे। असुरनाशिनी पार्वती दोनोंको मार करके चामुण्डा नामसे ख्यात हुईं। उसीसे इसका नाम चामुण्डापुर पड़ गया। आज भी चैनपुरसे ढाई कोस पूर्वको मुण्डेश्वरी भगवतीका एक मन्दिर दृष्ट होता है।

फिर किसीके मतमें कटनी नदी तटके गोराहाट नामक स्थान पर मण्ड नामक किसी चेरू सरदारका राजत्व रहा। चण्ड उसीके भाई थे। चेरू लोग गणेश, हनुमान, हरगौरी और नारायण देवको पूजा करते थे।

आज भी उन सभी देवमूर्तियोंका भग्नावशेष नाना स्थानोंमें देख पड़ता है।

गोराघाटमें मुण्डेश्वरीका मन्दिर विख्यात है। इस समय उक्त मन्दिरमें, नितान्त भग्नावस्था होते भी, महिषमर्दिनी और शिवलिङ्ग विराज रहा है। प्राचीन बुद्ध मूर्त्तिकी भांति इन महिषमर्दिनीके भी कंधपास और कर्णद्वय हैं। सिवा इसके मन्दिरगात्रमें वाद्यकर प्रभृतिकी नाना मूर्त्तियां बनी हैं।

चैनपुरके हिन्दू राजाओंने चेरुओंको भगा दिया था। यह राजपूतवंशीय थे और बहुत दिनों यहां राजत्व किया। यह अति मनोरम स्थान है, विशाल खेत और पर्वत नयनगोचर होते हैं।

चैनपुरिया—सनाढ्य ब्राह्मणोंका एक पद। चैनपुर युक्तप्रदेशमें एक गाँव है। वहांसे जितने सनाढ्य ब्राह्मण बाहर निकले, वे ही चैनपुरिया कहलाये।

चैनसिंह—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। यह लखनऊके रहनेवाले एक क्षत्रिय थे। इनका जन्म १८५२ ई०में हुआ था। उन्होंने भारतदीपिका और शृङ्गारसारावली रची हैं।

चैनसुख—एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्त्ता। ये जयपुरके रहनेवाले थे। इन्होंने अकृत्रिमचैत्यालयपूजा नामक एक जैनग्रन्थ रचा था।

चैन्तित (सं० पु०-स्त्री०) चिन्तिताया स्तन्नामिकायाः स्त्रिया अपत्यं चिन्तिता-अण्। चिन्तितानामिका स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न पुत्र या कन्या।

चैन्तितेय (सं० पु०) चिन्तितायाश्चिन्तायुक्तयाः स्त्रिया-अपत्य-ठक्। चिन्तायुक्त स्त्रीका अपत्य, चिन्तित स्त्रीकी सन्तान।

चैन्सेलर (अं० पु०) विश्वविद्यालयका प्रधान, यूनिवर्सिटीका मुखिया। सभा-समितियोंमें सभापतिका जो काम है, वही काम युनिवर्सिटीमें चैंसेलरका भी है। चैंसेलरके साथ एक सहायक या वाइस-चैंसेलर भी होता है।

चैपला (देश०) पक्षिविशेष, एक प्रकारकी चिड़िया।

चैल (सं० त्रि०) चेलस्येदं चेल-अण्। १ वस्त्रसम्बन्धीय, कपड़ेका। (क्ली०) २ वस्त्र, कपड़ा। ३ पोशाक पहनने योग्य बना हुआ कपड़ा।

चैलक (सं० पु०) वर्णसङ्कर जातिविशेष। इसकी उत्पत्ति शूद्र पिता और क्षत्रिया मातासे हुई है।

(याज्ञ० ब्र०)

चैलकि (सं० पु०) चैलकस्य ऋषेरपत्यं चेलक-इञ्। चेलक ऋषिके पुत्रका नाम। इनका दूसरा नाम जीवल था।

"तदु होवाच जीवलश्चैलकिः।" (शत०ब्रा० २।३।१।३४)

चैलधाव (सं० पु०) चैलं वस्त्रं धावति परिष्कुरुते चैल-धाव-अण्, उपपदस०। १ रजक, धोबी।

"चैलधाव-सुराजीवि-सहोपपतिवेश्मनाम्।" (याज्ञ० १।१६४)

चैला (हिं० पु०) लकड़ीका वह टुकड़ा, जो कुल्हाड़ीसे चीरा गया हो। यह जलानेके काममें आता है।

चैलाशक (सं० पु०) चैलं वस्त्रकीटं अश्नाति अश्-ण्वुल्। १ क्षुद्र प्राणीविशेष, एक तरहका छोटा कीड़ा जो कपड़ेमें लगे हुए कीड़ोंको खाता है। मनुका मत है कि जो शूद्र अपना कर्त्तव्य कर्म छोड़ देता है वह दूसरे जन्ममें चैलाशक रूपमें जन्म लेता है। (मनु १२।७२) (त्रि०) २ जो कपड़ोंके कीड़ोंको खाता हो। (मनुटीका)

चैलिक (सं० पु०) वस्त्रखण्ड, कपड़ेका टुकड़ा।

चैली (हिं० स्त्री) १ लकड़ीका काटा या छीला हुआ टुकड़ा। २ लोहूका जमा हुआ टुकड़ा। अधिक गर्मी होनेके कारण कभी कभी यह नाकसे निकलता है।

चैलेञ्ज (अं० पु०) वह ललकार जो लड़ने, झगड़ने अथवा मुकाबला करनेके लिये दी जाय।

चोंक (स्त्री०) वह चिह्न जो चूमनेसे गाल पर पड़ गया हो।

चोंगा (पु०) बांसकी खोखली नली जिसके द्वारा सोनार द्रव्य गलानेके लिये आगको फूंकता है। २ कागजकी बनी हुई पोली चीज।

चोंगी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी नली जो भाथीमें लगी रहती है।

चोंच (हिं० स्त्री०) चिड़ियोंके मुंहका अग्रभाग, ठोंट या ठोर।

चोंटली (स्त्री०) सफेद घुंघची।

चोंड़ा (हिं० पु०) खेतके पास खुदा हुआ कच्चा कुआं।

चोंथ (अनु० पु०) गाय, भैंस आदिका एक बारका गिरा हुआ गोबर।

चौंधर (हिं० वि०) जिसके नेत्र बहुत छोटे हों। २ मूर्ख, मूढ़, गावदो।

चोआ, चुआना (हिं० पु०) परिस्रवण, टपकना, चूना। किसी तरल पदार्थको भाफ बना कर दूसरे पात्रमें ले जा कर उसे पुनः तरल करनेको चोआ या चुआना कहते हैं। जिस यन्त्रसे यह काय होता है, उसको वकयन्त्र कहते हैं। वकयन्त्र देखो। यथार्थमें चुआनेके कार्यमें कोई रासायनिक क्रिया नहीं होती, किन्तु जान्तव और उद्भिज्ज पदार्थोंको बन्द पात्रमें रख कर उन्हें प्रखर उत्तापसे चुआनेसे वे सब भिन्न भिन्न उपादानोंमें विभक्त हो जाते हैं। इसको विच्छेदक या विश्लेषक चोआ (चुआना) कहते हैं।

सब पदार्थ समान उत्तापसे वाष्पीभूत नहीं होते। बहुत थोड़े ही पदार्थ एकसे उत्तापसे वाष्पीभूत होते हैं। यही कारण है कि, मिश्रद्रव्यको एक निर्दिष्ट उत्तापसे उत्तप्त करनेसे, जो द्रव्य सबसे थोड़े उत्तापसे वाष्पीभूत होता है, वही भाफ हो कर उड़ जाता है और अन्यान्य द्रव्य पड़े रहते हैं। पदार्थमें उक्त गुण रहनेसे ही चुआना सहज है। पानी फारेणहीटके २१२° अंश उत्तापसे भाफ हो जाता है, ऐसे ही सुरासार १७३° से, सलफिउरिक इथर ८४·८° से, तार्पीन तेल ३१८° से और पारा ६६२° अंश तापसे भाफ रूपमें परिणत हो जाता है। इसलिए ये पदार्थ, अपेक्षाकृत अधिक उत्तापसे वाष्पीभूत होते हों, ऐसे पदार्थोंके साथ मिले हुए रहनेसे उक्त मिश्र द्रव्यको उक्त परिमाण जल उत्तप्त करनेसे ही जल, सुरासार इत्यादि पृथक्-हो जाते हैं। कुछ भी हो, कार्यतः चुआनेसे एक बारगी विशुद्ध कोई भी द्रव्य नहीं पाया जाता। कोई न कोई अन्य पदार्थ भी रह जाते हैं। एक बारगी विशुद्ध द्रव्य बनानेके लिए भिन्न रासायनिक क्रियाकी आवश्यकता है।

सुरा प्रस्तुत ही चोआका उत्कृष्ट उदाहरण है। नाना तरहके फल, फूल और शस्यादिको पानीमें कुछ दिन सड़ाते रहनेसे उसमें अम्लरसक प्रारम्भ होता रहता है। इसी तरह उक्त फलादिकोंके कुछ अंश सुरासारमें परिणत होते हैं। बादमें उन्हें धीमी आँचसे वकयन्त्रद्वारा चुआनेसे शराब बन जाती है। शराबको निर्जल करनेके लिए उसे पुनः चुआना पड़ता है; सम्पूर्ण निर्जल करना हो तो ऐसी प्रक्रिया कई बार करनी चाहिये। इस देशके शौण्डिक (कलवार लोग) साधारणतः महुआ और चाँवल इत्यादिसे ही शराब बनाते हैं। परीक्षाद्वारा निर्णय किया गया है कि, चीनी और श्वेतसार ही विकृत हो कर सुरासार रूपमें परिणत होता है। इसलिए जिन पदार्थोंमें चीनी और श्वेतसार मौजूद है। उनसे ही शराब बनाई जा सकती है। आलू, जौ, गुड़, चीनी, दाख और नाना प्रकारके फलोंसे शराब बनाई जा सकती है। मद्य देखो।

किसी भी फलको चुआ कर उसका सार निकाल लेनेसे फलका अरक बन जाता है। निम्बूका अरक, अनारका अरक, इलायचीका अरक इत्यादि ऐसे ही बनाये जाते हैं।

गुलाब और अन्यान्य सुगन्धित द्रव्योंको निर्दिष्ट समय तक पानीमें भिगो कर चुआनेसे उनकी सुगन्धि पानीके साथ मिल जाती है। विलायती रोज़-वाटर (Rose-water) अर्थात् गुलाब-जल और लभेण्डर, अडिकलन आदि इसी तरह बनाये जाते हैं।

नदी, ह्रद, समुद्र और सरोवर इत्यादिके पानीमें प्रायः चूना, नमक, आदि नाना तरहके खनिज पदार्थ मिले हुए रहते हैं। वकयन्त्रमें चुआनेसे उक्त पदार्थ पड़े रहते हैं और पानी भाफ हो कर दूसरे पात्रमें चला जाता है। इस पानीको चोआ या चुआन कहते हैं। यह वृष्टिके पानीसे भी विशुद्ध होता है। चोआ-जल गन्धहीन, विस्वाद और वर्णहीन होता है। इसे किसी पात्रमें रख कर जलानेसे सब भाफ हो कर उड़ जाता है, नीचे कुछ पड़ा नहीं रहता।

जान्तव और उद्भिज्ज पदार्थको बन्द पात्रमें रख कर प्रखर उत्तापसे उत्तप्त करनेसे वह भिन्न भिन्न पदार्थोंमें विभक्त हो जाता है।

इसका प्रकृष्ट उदाहरण कोयलेकी गैस है। पत्थरके कोयलेको इस तरह चुआने पर उससे कोयलेकी गैस अलकतरा, नेपथा, आमोनिया आदि वाष्परूपमें निकलते हैं। काष्ठको इस तरह चुआनेसे स्पिरिट, अलकतरा आदि बनते हैं। इसी प्रकार हाड़ चुआनेसे भी

उसके ऊपर जान्तव अङ्गार और एक तरहका तेल जम जाता है, जिसको अंग्रेजीमें डिप्पेल्स् आनिमल ओयेल कहते हैं।

चोई (हिं० स्त्री०) दालका छिलका।

चोक (सं० क्ली०) १ स्वर्णक्षीरीमूल, भड़भांड़ या सत्यानाशी नामक क्षुपकी जड़।

चोक—१ बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ राज्यका उन्टसर्वीय नामक स्थानके अन्तर्गत एक क्षुद्रराज्य। इसमें सिर्फ दो ग्राम लगते हैं। दो मनुष्य स्वतन्त्र भावसे इसका राजस्व देते हैं। राजस्वका अधिकांश भाग गवर्मेंटको और कुछ जूनागढ़के नवाबको मिलता है।

चोकर (हिं० पु०) आटा छाननेके बाद छलनीमें बचा हुआ भाग, भूसी, छिलका।

चोकहातु—बङ्गालके लोहारडागा जिलाभुक्त डामर परगनाका एक ग्राम। यहां मुण्डाओंका एक बड़ा कब्रस्थान है जिसमें लगभग सात हजारसे अधिक कब्र देखी जाती हैं। अधिक कब्र होने होके कारण ग्रामका नाम चोकहातु पड़ा है।

चोकुटि (सं० पु०) प्रवरविशेष, किसी प्रवर्त्तक मुनिका नाम।

चोक्कण—दाक्षिणात्यवासी एक संस्कृतके कवि। तंजोरके राजा शाहजीके लिये इन्होंने कुमारसम्भवचम्पूकी रचना की थी।

चोक्कनाथ—अठारवीं शताब्दीके एक संस्कृत ग्रन्थकार, तिप्पके पुत्र। इन्होंने शब्दकौमुदी और धातुरत्नावली नामक व्याकरण तथा शाहजी राजाके लिए कान्तिमतीपरिणयनाटक रचा है।

चोक्ष (सं० पु०) च्यायते प्रशंस्यते चक्ष-घञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ स्वाभाविक शुचिप्रदेश, वह प्रांत जो स्वभावसे ही पवित्र हो।

"चरकारेषु चोक्षेषु नदीतीरेषु चैव हि" (मनु ३।२०७)

(त्रि०) गीत, प्रशंसित, जिसकी प्रशंसा की गई हो। ३ शुचि, पवित्र, शुद्ध। ४ दक्ष, चालाक, निपुण, पटु, होशियार।

"अश्वावन्तो रथावन्तश्चोक्षाश्चोक्षजनप्रियाः।" (भारत १३।१०४।४०)

५ तीक्ष्ण, तेज। ६ मनोज्ञ, सुन्दर, मनोहर, सुडौल।

चोख (हिं० स्त्री०) तीक्ष्णता, तेजी, फुरती, वेग।

चोखरा (हिं० पु०) इन्दुर, चूहा, मूसा।

चोखा (हिं० वि०) १ निर्मल, जिसमें किसी प्रकारका मैल, खोट आदि न हो, जो पवित्र और बढ़िया हो। २ विश्वासपात्र जो सच्चा और ईमानदार हो। ३ धारदार, जिसकी धार तीक्ष्ण हो। ४ श्रेष्ठ या चतुर। (पु०) ५ भरता जो केला, आलू, बैंगन आदिको भूभर या आगमें भून कर बनाया जाता है और ऊपरसे नमक मिर्च आदि ममाला मिलाया जाता है। जैसे—केलेका भरता। ६ चावल।

चोखाई (हिं० स्त्री०) १ चोखापन। २ चूसनेकी क्रिया या भाव।

चोखे—एक प्रसिद्ध कवि। शिवसिंहने कहा है, कि इनकी कविता बहुत अच्छी या चोखी होती थी, इसीसे इनका नाम चोखे पड़ा है।

चोगर (फा० पु०) उल्लूकेसे नेत्रवाला घोड़ा, वह घोड़ा जिसकी आंखें उल्लूकीसी हों इस तरहका घोड़ा दोषी समझा जाता है।

चोगा (तु० पु०) लवादा, एक प्रकारका पहनावा जो पैरों तक लटकता और बहुत ढीला होता है। इसे प्रायः बड़े आदमी पहनते हैं।

चोच (सं० क्ली०) कोचति अवरणद्धि आवृणोति कुच-अच् पृषोदरादित्वात् ककारस्य चकारः। १ वल्कल, छाल। २ चर्म, चमड़ा।

प्रशस्तं चोचं त्वग् विद्यतेऽस्य चोच-अच्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। ३ गुड़त्वक्, दारचीनी। ४ तेजपत्र, तेजपत्ता। ५ तालफल, ताड़का फल। ६ कदलीफल, केला। ७ नारिकेल, नारियल। ८ तालफलका अवशिष्ट भाग, चचड़ा। ९ लवङ्ग, लौंग।

चोचक (सं० क्ली०) चोच स्वार्थे कन्। चोच देखो।

चोचकपुर—स्वर्गभूमिके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर।

चोचला (अनु० पु०) १ शरीरकी वह चेष्टा जो अपने प्रिय पात्रके रिझानेके लिये या किसीको मोहित करनेके लिये जवानीकी उमङ्गमें की जाती हो, हाव भाव। २ नखरा, नाज, ठसक।

चोज (सं० पु०) १ सुभाषित, दूसरोंको रिझानेके लिये

कही गई बात। २ व्यङ्ग्यपूर्ण उपहास, हँसी, ठट्ठा।

चोट (हिं॰ स्त्री॰) १ प्रहार, आघात, आक्रमण, मार। २ वह प्रभाव जो आघात या प्रहारसे हो, घाव, जख्म। ३ आक्रमण, धावा, हमला। ४ हिंस्र पशुका आक्रमण। ५ मानसिक व्यथा, मर्मभेदी दुःख, सन्ताप। ६ व्यंग्य-पूर्ण झगड़ा, ताना, बोलीठोली। ७ विश्वासघात, धोखा, छल। ८ दूसरोंको हानी पहुंचानेके लिए चली गई चाल। ९ बार, दफा।

चोटहा (हिं॰ वि॰) जिसपर चोटका चिह्न हो।

चोटा (हिं॰ पु॰) चोआ, लपटा, माठ।

चोटार (हिं॰ वि॰) १ आघात करनेवाला, चोट पहुंचानेवाला। २ आघात खाया हुआ, चुटैल।

चोटिला—सुराष्ट्रके अन्तर्गत थाना जिलेके पासका एक प्राचीन ग्राम। इसका दूसरा नाम चोटगढ़ है। पहले परमार राजा यहां राज्य करते थे।

चोटी (सं॰ स्त्री॰) चुट-अण् ङीप्। घाड़ी, स्त्रियोंके पहननेका एक प्रकारका कपड़ा।

चोटी (हिं॰ स्त्री॰) १ शिखा, चुंदी। २ एकमें गुंथे हुए स्त्रियोंके सिरके बाल। ३ स्त्रियोंकी चोटी गूंथने का डोरा। ४ स्त्रियोंके जूड़े में खोंसने या बाँधनेका एक प्रकारका आभूषण। ५ शीर्षभाग, शिखर। ६ कलगी, चिड़ियोंके शिरके वे पर जो आगेको उठे हुए होते हैं।

चोटीदार (हिं॰ वि॰) शिखावाला, जिसके चोटी हो।

चोटीवाला (हिं॰ पु॰) भूत, प्रेत, पिशाच।

चोट्टा (हिं॰ पु॰) चोर, वह जो दूसरेकी चीज उसकी अनुपस्थिति या अजानकारीमें छिप कर लेता हो।

चोड़ (सं॰ पु॰) चोड़ति संवृणोति शरीरं चुड़-अच्। १ प्रावरण, उत्तरीय वस्त्र। २ देशविशेष, चोल नामक प्राचीन देश। चोल देखो।

चोड़क (सं॰ पु॰) वस्त्रविशेष, एक प्रकारका पहननेका कपड़ा।

चोड़गङ्ग—एक विख्यात त्रिकलिङ्गाधिपति तथा उत्कलके गङ्गवंशीय प्रथम राजा। इनका प्रकृत नाम अनन्तवर्मा था। इनके मातामहका नाम महाराज राजेन्द्र चोड़ और पिताका नाम राजराज था। मालूम पड़ता है कि मातामह और पितामह दोनोंकी उपाधि मिला कर इन्होंने चोड़गङ्ग नामसे अपना परिचय दिया। इनके प्रदत्त ताम्रशासन पढ़नेसे जाना जाता है कि ये ९९९ शकको कलिङ्गराज्यमें अभिषिक्त हुए थे। कलिङ्ग राज्यसे इनके बहुतसे ताम्रशासन प्राप्त हुए हैं।* उत्कलके ऐतिहासिकोंने लिखा है कि इन्होंने १०३४ ई॰में उड़ीसा जीता था, किन्तु वह प्रकृत नहीं है। यद्यपि यह ठीक भी हो तौभी कब इन्होंने उड़ीसा पर आक्रमण किया इसका पता आज तक भी मालूम नहीं हुआ है। किन्तु पुरी जिलाके अन्तर्गत भुवनेश्वरके निकटवर्त्ती केदारेश्वर मन्दिरसे आविष्कृत शिलालेखके पढ़नेसे मालूम होता है कि १००४ ई॰को इन्होंने उत्कलमें अपना आधिपत्य फैलाया था। प्रकाशित उड़ीसाके इतिहासके मतानुसार इन्होंने ११३२से ११५२ ई॰ पर्यन्त अर्थात् ३० वर्ष तक राज्य किया था। फिर भी गङ्गवंशचम्पू नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है कि उत्कलराज चुड़ङ्ग देवने ७४ वर्ष तक राज्य किया था। लेकिन नरसिंह देवके ३ ताम्रशासनमें लिखा है कि, चोड़गङ्गने प्रायः ७० वर्ष तक राज्य किया और उनके लड़के कामार्णव १०६४ ई॰में उत्कलके सिंहासन पर बैठे थे बहुतसे प्रत्नतत्त्ववित् और उड़ीसाके ऐतिहासिकोंने लिखा है कि महाराज अनङ्ग-भीम देवने ११९८ शकमें जगन्नाथका विख्यात मन्दिर निर्माण किया, किन्तु नरसिंहके बृहत् ताम्रलेखमें लिखा है कि गङ्गेश्वर चोड़गङ्गने उत्कलके राजाको पराजय कर कीर्त्ति चिरस्थायी करनेके लिये पुरुषोत्तमका प्रासाद निर्माण किया है। जगन्नाथ और गङ्गराजवंश देखो।

महावीर चोड़गङ्गने बहुतसे देश जीत कर राज्यकी वृद्धि की थी, लेकिन जाज्जल्लदेवके ८१८ चेदि सम्वत्‌में उत्कीर्ण शिलालेखमें लिखा है कि चन्द्रवंशीय चोड़गङ्ग चेदिराज रत्नदेवसे पराजित हुए थे। §

चोड़वरम्—मन्द्राजके गोदावरी जिलेका एक छोटा तालुक। यह अक्षा॰ १७° ९' और १७° ५२' उ॰ तथा देशा॰ ८१° २८' और ८१° ५३' पू॰में अवस्थित है। भूपरिमाण ७१५ वर्गमील है। इसके दक्षिण और पश्चिममें

* Indian Antiquary, Vol XVII, Epigraphia Indica, Vol, III. p. 17.

§ Epigraphia Indica Vol, I P. 40.

गोदावरी नदी प्रवाहित है। लोकसंख्या लगभग २३२२८ है। इसमें कुल २३२ ग्राम लगते हैं। तालुकको आय ७४००) रु० है। यहां सिर्फ एक पक्की सड़क है जो राजहमहेन्द्रोसे चोड़वरम् तक चली गई है। यहांके जङ्गलमें देवदारु, इमली, हलदी, नारंगी, नीबू, मोम, आदि पाये जाते हैं। तालुकको प्रधान उपज धान, दलहन, अनाज, रागो, और ज्वार है।

चोड़ा (सं० स्त्री०) महाश्रावणिका, बड़ी गोरखमुण्डो।

चोड़ो (सं० स्त्री०) चोड़ गौरादित्वात् ङीष्। शाटिका, स्त्रियोंके पहननेको साड़ो।

चोतक (सं० क्लो०) १ वल्कल, छाल। २ गुड़त्वक्, दारचीनी।

चोद (सं० पु०) चोदयति प्रेरयति अश्वान् चुद-अच्। १ अश्वताड़नी, चाबुक। २ तीच्ण लौहशलाकायुक्त काष्ठ विशेष, वह लम्बी लकड़ी जिसके सिरे पर कोई नुकीला और तेज लोहा लगा हो। (त्रि) ३ प्रेरक, उत्तेजना देनेवाला।

चोदक (सं० त्रि०) चुद-ण्वुल्। १ प्रेरक, प्रेरणा करनेवाला, जो कोई काम करनेके लिये दूसरेको उसकाता हो। (पु०) २ प्रवृत्तिजनक विधिवाक्य।

चोदकड़ (हिं० पु०) अत्यन्त कामी, वह जो स्त्री प्रसङ्ग अधिक करता हो।

चोदन (सं० क्लो०) चुद भावे ल्युट्। १ प्रवर्त्तन, प्रेरणा।

"प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्त्तव्यं श्रुतिचोदनात।" (मनु २।३५)

२ प्रेरणा, कार्य्यमें प्रवृत्त करना, किसीको किसी काममें लगाना। (त्रि०) चुद कर्त्तरि ल्यु। ३ प्रेरणा करनेवाला। (क्लो०) ४ कर्म्म, काम।

"अपि प्र' चोदना वा मिमाना।" (शुक्लयजुः २९।७)

'चोदना चोदनानि कर्म्माणि' (महीधर)

चोदना (सं० स्त्री०) चोद्यते प्रवर्त्यतेऽनया चुद-णिच्-युच्-टाप्। १ क्रियाका प्रवर्त्तक वाक्य, वह वाक्य जिसमें कोई कार्य करनेका विधान हो, विधिवाक्य।

"चोदना चोपदेशश्च विधिश्चैकार्थवाचिनः।" (भर्तृहरि)

"चोदनालक्षणोऽर्थो धर्म्मः।" (मीमांसा १।१।२)

'चोदना इति क्रियायाः प्रवर्त्तकं वचनमाहुः।' (शवरस्वामी)

२ प्रेरणा। ३ प्रवर्त्तना, उत्तेजना, उसकाना। ४ प्रवृत्तिका कारण।

"ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्म्मचोदना।" (गी० १८।१८)

५ अज्ञात पदार्थका ज्ञापक शब्द, अपरिचित चीजोंका सूचक शब्द। ६ यागादिविषयक प्रयत्न, योग आदिके सम्बन्धका प्रयत्न।

चोदना (हिं० क्रि०) स्त्री-प्रसंग करना, संभोग करना।

चोदनागुड़ (सं० पु०) चोदना या प्रेरणया आगुड़्यते उत्क्षिप्यते आ-गुड़-क। कन्दुक।

चोदनी (सं० स्त्री०) दुरालभा।

चोदप्रवृद्ध (सं० त्रि०) चोदः स्तोत्रं तेन प्रवृद्धः। स्तुति द्वारा जिसकी प्रशंसा की जाय।

"जघन् वा इन्द्रमित्रेरुञ्चोदप्रवृद्धः।" (ऋक् १।१७४।६)

'चोदप्रवृद्धश्चोदनैः स्तोत्रैःप्रवृद्धः।' (सायण)

चोदयन्मति (सं० त्रि०) चोदयन्ती प्रेरयन्ती मतिर्यस्य, बहुव्री०। जिसकी इच्छा प्रेरणा करनेकी हो।

"चक्रदधिरे चोदयन्मतिः।" (ऋक् ।५।८।६)

'चोदयन्ती मतिर्यस्य तच्चोदयन्मति।' (सायण)

चोदयितृ (सं० त्रि०) चुद-णिच्-तृच्। प्रेरणा करनेवाला।

चोदाई (हिं० स्त्री०) १ संभोग करनेकी क्रिया। २ प्रसंग करनेका भाव।

चोदास (हिं० स्त्री०) कामेच्छा। चुदास देखो।

चोदित (सं० त्रि०) चुद-क्त। प्रेरित, जो किसी कार्य्यके लिये प्रेरित या नियुक्त किया गया हो।

चोदिष्ट (सं० त्रि०) चोदितृ-इष्ठ, तृचो लोपः। प्रेरक-श्रेष्ठ।

चोद्य (सं० क्लो०) चुद-ण्यत्। १ प्रश्न, सवाल। २ पूर्वपक्ष, वाद विवादमें पूर्वपक्ष।

"सत्यं ध्यानं समाधानं चोद्यं वैराग्यमेव च।" (भारत ५।४३।३४)

(त्रि०) ३ चोदनार्थ, प्रेरणा योग्य, जो प्रेरणा करने योग्य हो।

"नीवारमूलेङ्गुदशाकवृत्तिः सुसंयतात्मिकार्य्येषु चोद्यः।" (भारत ५।३८।८)

४ आक्षेप्य, जिसके लिये शोक प्रकाश किया जाय।

'चपलाजनं प्रति न चोद्यमदः।' (माघ)

चोप (हिं० पु०) १ चाह, इच्छा, ख्वाहिश। २ सींकेसे कच्चा आम तोड़ते समय उसकी ढेपनीका रस। यह तेजाबसा तेज होता है। शरीरमें यह जहां लग जाता है वहां छाला पड़ जाता है।

चोप—बङ्गदेशके अन्तर्गत हजारोबाग जिलेका एक ग्राम।

यह हजारीबाग नगरसे ८ मील दूर तथा मोहानो नदी-के निकट अवस्थित है। यह स्थान समुद्रपृष्ठसे २००० फुट ऊंचा है। इसके पास कोयलाकी एक खान है। इससे जो कोयले निकलते हैं वे अच्छे मालूम नहीं पड़ते हैं।

चोपदार (हिं० पु०) चोबदार देखो।

चोपन (सं० त्रि०) चुप कर्त्तरि ल्यु। १ मन्दगामी, जो धीरे धीरे चलता हो। २ मौनी, जो सदा चुप रहता हो। (क्लो०) चुप-ल्युट्। ३ मन्दगमन, धीमी चाल। ४ मौन भाव, चुप रहनेका भाव।

चोपरा—१ बम्बईके पूर्व खानदेश जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २१° ८′ और २१° २५′ उ० तथा देशा० ७५° १′ और ७५° ३४′ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७५५५० और भूपरिमाण ३६८ वर्गमील है। इस तालुक-में चोपरा और अदावद नामके दो शहर और ८१ ग्राम लगते हैं। यहांकी आय दो लाख रुपयेसे अधिक है। सतपुरा पहाड़ तालुकको दो उपत्यकाओं पृथक् करता है। यहांकी प्रधान नदियां ताप्ती, अनर और गुली हैं। २ बम्बई प्रदेशके खानदेश जिलेके अन्तर्गत चोपरा उप-विभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २१° १५′ उ० और देशा० ७५° १८′ पू०को ताप्ती नदीसे ४ कोस दक्षिणमें अवस्थित है। यह नगर बहुत प्राचीन काल-का है। १६०० ई०को हिन्दूराजाओंके समय यहां बहुत-से मनुष्योंका वास था। दूर दूर देशोंके मनुष्य यहांके रामेश्वरका मन्दिर देखनेके लिये आते हैं। यहां डाकघर, पाठशाला आदि हैं। तीसी और कपासके लिये यह नगर मशहूर है। लोकसंख्या लगभग १८६१२ होगी।

चोब (फा० स्त्री०) १ वह बड़ा खंभा जिस पर शामि-याना खड़ा किया जाता है। २ वह लकड़ी जिससे नगाड़ा या ताशा बजाया जाता है। ३ सोने या चांदी-से मढ़ा हुआ डंडा। ४ छड़ी, सोटा।

चोबकरी (फा० स्त्री०) एक प्रकारका दस्तकारीका काम।

चोबचीनी (फा० स्त्री०) औषधविशेष। यह एक प्रकार-की लताकी जड़ है जो चीन और जापानमें पायी जाती है। यह रक्तशोधक होती है और गरमी तथा गठिया आदिकी दवाओंमें पड़ती है। इसके गुण—तिक्त, उष्ण-वीर्य्य, अग्निदीपक, मलमूत्र-शोधक और शूल, वात, फिरंग, उन्माद तथा अपस्मार रोगनाशक।

चोबदार (फा० पु०) चोब या असा रखनेवाला भृत्य, वह नौकर जिसके पास असा रहता हो।

चोबा (हिं० पु०) १ छोटी कील। २ चोब देखो।

चोबारि—बम्बई विभागके उत्तर काठियावाड़के अन्तर्गत एक क्षुद्रराज्य। यह दो राजाओंके अधिकारमें है। इस-में सिर्फ तीन ग्राम लगते हैं। सालाना आमदनी प्रायः ४५५६) रु० है जिनमेंसे वृटिश गवर्मेण्ट और सुखदोको कर स्वरूप १६८) रु० मिलता है।

चोभा (हिं० पु०) लोथा, आँख सेकनेकी बंधी हुई दवा-इयोंकी पोटली।

चोया (हिं० पु०) चोआ देखो।

चोर (सं० पु०) चोरयति चुर-णिच्-अच्। १ वह जो दूसरेका चीज अपहरण करता हो, चोरी करनेवाला, तस्कर। इसके पर्य्याय—चोर, दस्यु, तस्कर, प्रतिरोधी, मलिम्लुच, स्तेन, ऐकागारिक, स्तैन्य, प्रच्छन्नजन, मोषक, पाटच्चर, परास्कन्दी, कुम्भिल, खनक, शङ्कितवर्ण, खानिक, प्रतुरपुरुष, लपु, तक्का, रिम्वा, रिपु, रिक्का, विहायस्, तायु, वनर्गु, ह्वरशित्, मूषीवान्, अघशंस और वृक है। २ गन्धद्रव्यविशेष, चोरक, एक तरहका गठिवन। ३ कृष्णशटी, एक तरहकी औषधि। ४ भारतवर्षीय एक प्राचीन संस्कृत कवि। चोरकवि देखो।

५ ताश आदिका वह पत्ता जिसको खिलाड़ी अपने हाथमें छिपाए रहता है और जिसके कारण दूसरोंकी जीतमें अड़चन पड़ती है। ६ खेलमें वह लड़का जिस-से दूसरे लड़के दाव लिया करते हैं। इसको छूने, ढूंढ़ने आदिका अधिक परिश्रम करना पड़ता है। ७ घाव आदिमें वह दूषित अंश जो अनजानमें भीतर रह जाता है और ऊपरसे घाव अच्छा हो जाता है। यह अंश भीतर ही भीतर बढ़ता रहता है जिससे शीघ्र ही उस घावका मुंह पुनः खोलना पड़ता है। ८ वह छोटी सन्धि या छिद्र जिसमें हो कर कोई पदार्थ बह कर निकल जाय या ऐसा हो और कोई अनिष्ट हो। ९ शिरो-रोगविशेष, मस्तकको एक बीमारी।

चोर-उरद (हिं॰ पु॰) उरदका कठिन दाना जो गलाने या चक्कोमें पोसनेसे भी चूर नहीं होता है।

चोरक (सं॰ पु॰) १ पृक्काशाक, पुरी नामका साग। २ सुगन्धि द्रव्यविशेष, एक प्रकारका गठिवन। इसके पर्याय—शङ्कित, खड़्ग, दुष्पत्र, क्षेमक, रिपु, चपल, कितव, धूर्त्त, पटु, नीच, निशाचर, गणहास, कोपनक, चोर, फलचोरक, ग्रन्थिपर्ण, ग्रन्थिदल और ग्रन्थिपत्र। इसके गुण—तीव्रगन्ध, उष्ण, तिक्त, वात, कफ, नासिकारोग, मुखरोग, अजीर्ण और क्रिमिदोषनाशक है। चोर स्वार्थे कन्। ३ तस्कर, चोर।

चोरकट (हिं॰ पु॰) चोर, उचक्का।

चोरकण्टक (सं॰ पु॰) १ चोरक नामका गन्धद्रव्य। २ शङ्खिनी वृक्ष।

चोरकपल (सं॰ पु॰) लाक्षावृक्ष, लाहका दरख्त।

चोरकवि—भारतवर्षीय एक प्राचीन संस्कृत कवि। प्रवाद है कि ये महाकवि कालिदासके समसामयिक थे। इनके साथ कालिदासका सद्भाव नहीं था। एक दूसरेको घृणा-दृष्टिसे देखा करते थे। एक दिन एक मनुष्यने कालिदासके निकट कविके लक्षणोंको जिज्ञासा की। महाकवि चोरकविके चिरविद्वेषी होने पर भी उनको प्रशंसा किये बिना रह न सके और उन्होंने एक कविता रची जो इस तरह है—

"कविरमरः कविरमरः कवी चोरमय रवी।
अन्ये ववयः कपयः कपिशालिनावबमतवः॥"

यह प्रवाद भ्रान्तिशून्य समझ कर ग्रहण नहीं किया जा सकता है, क्योंकि चोरकविके बहुत पहले महाकवि कालिदास विद्यमान थे। अनेकोंका मत है कि चोरकवि ही चौरपञ्चाशिकाके प्रणेता हैं। बिह्लण देखो।

चोरका (सं॰ स्त्री॰) चोर पुष्प।

चोरखाना (हिं॰ पु॰) वह खाना जो संदूक आदिमें गुप्त तौरसे बना रहता है।

चोर-खिड़की (हिं॰ स्त्री॰) छोटा चोर दरवाजा।

चोरगणेश (सं॰ पु॰) चोरश्चासौ गणेशश्चेति, कर्मधा॰। गणेशविशेष, ये उस मनुष्यके फल हरण करते हैं जो उंगलीको बिना एक दूसरेमें सटाये जप करता है।

चोरगली (हिं॰ स्त्री॰) १ पतली और संकीर्ण गली जिसे बहुत कम मनुष्य जानते हों। २ पायजामेका एक हिस्सा जो दोनों जांघोंके बीचमें रहता है।

चोरचकार (हिं॰ पु॰) तस्कर, चोर।

चोरछिद्र (सं॰ क्लो॰) चोरेण क्षतं छिद्रं, मध्यपदलो॰। सन्धि, दरज, दो चीजोंके बीचका अवकाश।

चोर जमीन (हिं॰ स्त्री॰) पोली जमीन, वह जमीन जिस पर पैर रखते हो धँस जाय।

चोरताला (हिं॰ पु॰) वह ताला जिसका पता दूर या ऊपरसे न लगे।

चोरथन (हिं॰ वि॰) जो अपने बच्चोंके लिये थनोंमें दूध चुरा रखती और दुहनेके समय पूरा दूध न देती हो।

चोरदन्त (हिं॰ पु॰) बत्तीस दांतोंके अतिरिक्त एक तरहका दाँत जिसके निकलनेसे अधिक कष्ट मालूम पड़ता है।

चोरदरवाजा (हिं॰ पु॰) वह द्वार जो किसी मकानमें पीछेकी ओर अथवा अलग कोनेमें बना हुआ हो।

चोरद्वार (हिं॰ पु॰) चोरदरवाजा देखो।

चोरपट्टा (हिं॰ पु॰) दक्षिण हिमालय, आसाम, बरमा तथा सिंहलमें होनेवाला एक तरहका विषधर पौधा। इसके पत्तों और डंठलों परके जहरीले रोएँ शरीरमें लगा कर सूजन पैदा करते हैं। शरीरके जिस अंग पर ये लगते हैं उस स्थान पर बड़ी जलन होती है। इसमेंसे बहुत अच्छे अच्छे रेशे निकलते हैं, लेकिन जहरीले होनेके कारण कोई छूता तक भी नहीं है। अतः यह पौधा किसी काममें लाने योग्य नहीं है।

चोर-पहरा (हिं॰ पु॰) किसी प्रकारका गुप्त पहरा।

चोरपुच्छ (सं॰ पु॰) चोरो लुक्कायितः अप्रशस्तः पुच्छ पश्चाद्भागो यस्य, बहुव्री॰। गर्दभ, गदहा, गधा।

चोरपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) चोरपुष्पी स्वार्थे कन्-टाप् पूर्व्वह्रस्वश्च। चोरपुष्पी, शंखिनी नामकी झाड़ी।

चोरपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) चोर इव पुष्पमस्याः बहुव्री॰। पुष्पविशेष, शंखिनी नामका फूल। इसका आकार शंखसे बहुत कुछ मिलता जुलता है और रंग आसमानीसा लगता है। यह सदा नीचेकी ओर लटका रहता है। वैद्यकमें इसे हितकारी तथा गूढ़ गर्भको आकर्षण करनेवाला माना है। इसका नामान्तर अंधा-

हुली या शंखाहुली भी है। इसके संस्कृत पर्याय-शङ्खिनी, केशिनी, चोरपुष्पिका, अधःपुष्पी, मङ्गल्या, भ्रमरपुष्पी, राज्ञी और हैटली है। शङ्खपुष्पी शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

चोरपेट (हिं० पु०) वह पेट जिसमेंके गर्भका पूरा पूरा पता शीघ्र मालूम न पड़ता हो। २ गुप्त स्थानयुक्त पदार्थ, वह चीज जिसके बीचमें कोई गुप्त स्थान हो।

चोरबदन (हिं० पु०) वह मनुष्य जिसकी शक्तिका पता उसके बदनको देख कर न लग सके। वह मनुष्य जो यथार्थमें बलवान् हो पर देखनेमें दुबला जान पड़े।

चोरबालू (हिं० पु०) दलदलयुक्त बालू, वह रेत या बालू जिसके नीचे दलदल हो।

चोरमहल (हिं० पु०) राजा या रईसोंका वह गुप्त मकान जहां वे अविवाहिता स्त्री या प्रेमिकाको रखते हैं।

चोरमूंग (हिं० पु०) मूंगका कठिन दाना जो गलाने या चक्कीमें पीसनेसे भी अच्छी तरहसे चूर न हो।

चोररस्ता (हिं० पु०) चोरगली देखो।

चोरशपठी (सं० स्त्री०) श्वेतकिणिही, सफेद लटजीरा।

चोरसीढ़ी (हिं० स्त्री०) गुप्तसीढ़ी, बहुत जल्द पता न लगनेवाली सीढ़ी।

चोरस्नायु (हिं० पु०) चोरस्य गन्धद्रव्यविशेषस्य स्नायु-रिव। काकनासिका, कौवाठोंठी।

चोरा (सं० स्त्री०) चोरतुल्यं रात्रि-विकाशितया पुष्प-मस्त्यस्याः चोर-अच्-टाप्। चोरपुष्पी, शंखाहुली फूल।

चोरा—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़ राज्यभुक्त झालावाड़ जिलेका एक नगर।

चोराङ्गल—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत एक छोटा राज्य। इसका भूपरिमाण १६ वर्गमील है। इसमें १६ गांव लगते हैं। इसके शासनकर्त्ता एक राठोर राजपूत हैं। ये बड़ोदा राजाको राजस्व देते हैं। कोलि जातिका वास यहां अधिक है। सालाना आमदनी ५ हजार रुपयेसे अधिक है।

चोरासी—चौरासी देखो।

चोरिका (सं० स्त्री०) चोरस्य भावः चोर-ठन्-टाप्। तस्करता, चुरानेका काम, चोरी।

चोरित (सं० त्रि०) चुर-णिच् कर्मणि क्त। १ अपहृत, जो चुराया गया हो। (क्ली०) २ चुरानेका काम।

चोरितक (सं० क्ली०) चोरित स्वार्थे कन्। पर द्रव्योंका अपहरण, पराई वस्तुका चुराना।

चोल (सं० पु०) चुल समुच्छ्राये कर्मणि घञ्। १ कञ्चु-लिका, स्त्रियोंके पहननेकी एक तरहकी अंगिया, चोली।

"निजां चोर्यां वाणी निशुनयति चोलेन निभृतम्।" (आनन्दल० ६६)

इसके पर्याय—कूर्पासक, कञ्चुक, कञ्चुली और कुञ्चलिका। २ स्त्रियोंका वस्त्रविशेष, निचोल, आच्छा-दनवस्त्र, घांघरा, लहंगा। ३ पुरुषका वस्त्रविशेष, कुरता जैसा एक प्रकारका लम्बा पहनावा, चोला। (पु०) ४ देशविशेष, एक प्राचीन देशका नाम जिसका जिक्र रामायण महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थोंमें आया है। शक्तिसङ्गमतन्त्रका मत है—

"द्रविड़तैलङ्गयोर्मध्ये चोलदेशः प्रकीर्त्तितः।
लम्बकर्णास्ते प्रोक्तास्ते दौवालरे भवेत्॥"

द्रविड़ और तैलङ्गके मध्यमें चोलदेश है। संक्षेप-शङ्करजयका मत है कि, इस चोल देशमें हो कर कावेरी नदी बहती है। "यत्रापगावहति तत्र कवेरकन्या।" अशोकके शिलालेखमें यह स्थान "चोर", टलेमि कर्त्तृक "चोरई" (Chorai) और प्लिनि कर्त्तृक "सोर" नामसे वर्णित है।

चोल राज्यकी राजधानी आर्काट, काञ्चीपुर, त्रिचीना-पल्लीके निकटवर्त्ती वरिउर, कुम्भकोण, गङ्गैकोण्डसोर-पुर और तंजोरमें थी।

बहुत पहलेहीसे चोलराजा प्रबल हो उठे थे। महा-वंश नामक पालिग्रन्थमें लिखा है कि, बुद्ध-निर्वाणके २८६ वर्ष बाद किसी एक चोल राजाने सिंहल अधि-कार किया था। उस समय चोलराजाओंका आधिपत्य तामिलभाषी समस्त देशोंके ऊपर फैला हुआ था। पल्लववंशके अधःपतनके समय चोलराज काञ्चीपुरमें बस गये।

७वीं शताब्दीमें चीन-परिव्राजक युएन-चुयाङ्ग चोल-राज्यमें आये थे। उस समय यह स्थान प्रायः दो सौ कोस तक विस्तृत था। तब इसकी राजधानी नष्टभ्रष्ट सी थी। ११वीं शताब्दीमें चोलराजने फिरसे प्रभाव-शाली हो पाण्ड्य तथा कोङ्गु राज्य पर आक्रमण किया। उस वक्त राजेन्द्र कुलोत्तुङ्ग चोड़देवने बङ्गालसे विहार तक जीत लिया था। अन्तमें चोलराजाकी लक्ष्मी चोल

राजाके दौहित्र चालुक्य राजाओंके हाथमें आ गई। चालुक्य राजवंश देखो। बहुतोंका विश्वास है कि, वर्त्तमान करमण्डल उपकूल ही चोलमण्डल शब्दका अपभ्रंश है।

जिस तरह चालुक्यवंशका प्रकृत इतिहास पाया जाता है, उस तरह चोल राजाओंका नहीं मिलता। चाल-चरित्र, चोल-माहात्म्य प्रभृति ग्रन्थोंमें चोल सम्बन्धीय बहुतसी कथायें लिखी तो हैं, किन्तु वे प्रकृत इतिहासमूलक नहीं मालूम पड़ती हैं। यों तो चोल राजाओंके समयके भी बहुतसे शिलालेख और ताम्रशासन मिलते हैं, लेकिन उसमें कालनिर्देश नहीं रहनेके कारण प्रकृत धारावाहिक राजाओंके नाम भी स्थिर करना कठिन है।

क्रमानुसार चोलराजाओंने तंजोरमें बहुत दिनों तक राज्य किया था। १३१० ई०में मालिक काफुरके आक्रमण करने तथा विजयनगरके राजाओंके अभ्युदय होने पर चोल-राज्य तहस नहस हो गया था।

तस्य राजा सोऽभिजनोऽस्य इति वा चोल-अण् बहुत्वे तस्य लुक्। ५ चोल देशके राजा। ६ उस देशके अधिवासी। उक्त देशके क्षत्रिय राजाने सगर राजा कर्तृक हिन्दू-धर्मसे वहिष्कृत हो म्लेच्छत्व प्राप्त किया था। काम्बोज देखो। ७ मजीठ। ८ वल्कल, छाल। ९ कवच, जिरहबकतर। (पु०) १० चीनदेशका एक प्रसिद्ध ह्रद। (शब्दार्थ चि०)

चोलक (सं० पु०) चोलइव कायति कै-क। १ वर्म, कवच, जिरहबकतर। २ देशविशेष, चोल नामक देश। (क्ली०) ३ वल्कल, छाल।

चोलकिन् (सं० पु०) चोलक अस्त्यर्थे इनि। १ करीर, बाँसका कल्ला, करील। २ नागरंग, नारंगीका पेड़। ३ किष्कुपर्व, नल, एक प्रकारकी घास। ४ हाथकी कलाई।

चोलखण्ड (हिं० पु०) चोली या कुरतीके कपड़ेका वह टुकड़ा जो एक चोलीके बननेकाबिल बुना गया हो।

चोलण्डक (सं० पु०) चोलस्य अण्ड क इव शकन्ध्वादि० अकार लोपः। शिरोवेष्ट, पगड़ी।

चोलन (सं० क्ली०) चोल-इव आचरति चोल क्विप् कर्त्तरि ल्यु। १ नागरङ्ग, नारंगी। २ करीर, करील, बांसका कल्ला। ३ किष्कुपर्व, नल, एक घास।

चोलरंग (हिं० पु०) पक्का और लाल मजीठका रंग।

चोलसुपारी (हिं० स्त्री०) चोल देशमें होनेवाली चिकनी सुपारी।

चोला (हिं० पु०) १ साधु, फकीर और मुल्ला आदिके पहननेका एक प्रकारका ढीला ढाला कुरता। २ नवजात शिशुको पहले पहल कपड़े पहनानेकी एक प्रथा। यह रसम प्रायः अन्नप्राशनके समय होती है। ३ शरीर, जिस्म, बदन।

चोलियापन्थी—राजपूतानेका एक उपासक सम्प्रदाय। जयपुर और जोधपुर अञ्चलमें इस सम्प्रदायके लोग रहते हैं। उनका आचार विचार वामाचारी शाक्तों जैसा हैं। प्रत्येक गुरुका एक कोतवाल होता है। उसके एक सहकारी कोतवाल और कितने ही शिष्य रहते हैं। किसी निर्दिष्ट रात्रिको इनका चक्र बैठता है। चक्रारम्भसे पहले एक पार्श्वमें गुरुका और उसको दक्षिण दिशामें कोतवाल तथा सहकारी कोतवालका आसन लगता है। उसके सामने सुरापूर्ण एक बड़ा पात्र और एक शून्य कुम्भ रखते हैं। स्त्रियां अपनी अपनी चोलियां उतार उसी घड़ेमें रख करके एकत्र किसी स्थान पर बैठ जाती हैं। पुरुष दूसरी ओर बैठते हैं। फिर कोतवाल उठ करके पूर्वोक्त सुरापात्रसे एक प्याला शराब निकालता है। उस समय गुरु अपनी इच्छाके अनुसार पुरुषोंमें किसीको आह्वान करते हैं। वह व्यक्ति जा करके गुरुके आदेशसे वाम पार्श्वमें बैठता है। फिर सहकारी कोतवाल उठ करके खाली घड़ेसे एक चोली निकालता है। जिस स्त्रीकी यह चोली होती है, वह आहूत पुरुषके वामभागमें एक ही आसन पर जा बैठती है। इसी प्रकार चेले चेलियां सब एक आसन पर दो दो करके चक्राकारमें बैठ जाते हैं। साधनाके समय वही दोनों पतिपत्नीके सत्य गण्य हैं। इस समय सम्प्रदायके नियमानुसार दोनों एकत्र सुरापान और अन्यान्य व्यवहार करते हैं।

(भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय २य भाग)

चोली (सं० स्त्री०) चुल-घञ् गौरादि० ङीष्। १ स्त्रियोंका वस्त्रविशेष, स्त्रियोंका एक पहनावा जो अंगियासे मिलता जुलता है। २ पुरुषका वस्त्रविशेष, चोला नामक एक तरहका कुरता। ३ पान आदि रखनेकी

उलिया। ४ अंगरखेका उपरी भाग जिसमें बंद लगे हुए होते हैं।

चोलीमार्ग (सं० पु०) वाममार्गका एक भेद। ऐसा कहा जाता है कि इस मार्गके अनुयायी स्त्रीपुरुष एक जगह मांस, मत्स्य और मद्य आदि खाते पीते हैं। इसके बाद स्त्रीयोंकी चोलियां एक घड़ेमें रख दी जाती हैं। एक एक कर प्रत्येक पुरुष उस घड़ेमें हाथ डाल कर चोली निकालता है। जिस पुरुषके हाथ जिस स्त्रीकी चोली आ जाती है, वह पुरुष उसीके साथ संभोग करता है।

चोलोण्डुक (सं० पु०) चोल उण्डुक इव। उष्णीष, पगड़ी, साफा।

चोष (सं० पु०) चोयति चि उच्छ्वासो उष्मस्येति, कर्मधा०। १ पार्श्व ज्वालाविशेष, भावप्रकाशके मतसे एक प्रकारका रोग। इसमें रोगीको बगलमें आगकोसी जलन मालूम होती है।

चोषक (सं० त्रि०) चूसनेवाला, जो किसी चीजको चूसता हो।

चोषण (सं० पु०) चूसना, चूसनेकी क्रिया।

चोष्य (सं० क्ली०) चुष ण्यत् आर्षत्वात् गुणः। चूष्य, चूसनेके योग्य, जो चूसा जा सके।

चोसा (देश०) एक प्रकारकी रेती जिससे लकड़ी रेती जाती है। यह एक हाथ लम्बी और दो अङ्गुल चौड़ी होती है।

चोस्क (सं० पु०) १ उत्कृष्ट घोटक, उत्तम जातिका घोड़ा। २ सिन्धुवार, सिंदुवार नामका पेड़।

चौंक (हिं० स्त्री०) झिझक, भड़क। भय, आश्चर्य और पीड़ाके साथ होनेवाली चंचलता।

चौंकना (हिं० क्रि०) १ भयके कारण चंचलता आ जाना, झिझकना, भड़कना। २ सतर्क होना, चौकन्ना होना। ३ विस्मित होना, चकित होना, भौचक्का होना। ४ भड़कना, भय वा आशंकासे हिचकना।

चौंकाना (हिं० क्रि०) १ भड़काना, जी धड़का देना। २ चकित करना, विस्मित करना। ३ सतर्क करना, होशियार करना।

चौंचा (हिं० पु०) गर्त्त विशेष, एक प्रकारका गड्ढा, जिसमें सिंचाईके लिये पानी इकट्ठा किया जाता है।

चौंटली (हिं० स्त्री०) श्वेत चिरमिटी, सफेद घुंघची।

चौंतिस (हिं० वि०) १ तीससे चार अधिक। (पु०) २ तीस और चारकी संख्या, आकार—'३४'।

चौंतिसवां (हिं० वि०) जो तैंतीसवेंके बाद पड़े।

चौंध (हिं० स्त्री०) अत्यन्त प्रकाशके सामने दृष्टिकी अस्थिरता, चकाचौंध, तिलमिली।

चौंधियाना (हिं० क्रि०) १ आंखोंसे न सूझना, दृष्टि मन्द होना। २ चकाचौंध होना, अत्यन्त अधिक प्रकाश वा चमकके सामने दृष्टिका स्थिर न रह सकना।

चौंधी (हिं० स्त्री०) चौंध देखो।

चौंर (हिं० पु०) १ चामर, चँवर। चामर देखो। २ झालर फूँदना। ३ सत्यानाशीकी जड़, भड़भांड़की जड़। ४ छन्दोभेद, पिङ्गलमें गगणके प्रथम भेदकी संज्ञा।

चौंरगाय (हिं० स्त्री०) चामरी गौ, सुरागाय। चामरी देखो।

चौंरा (हिं० पु०) वह स्थान जहां अनाज रखा जाता हो, खत्ती।

चौंरी (हिं० स्त्री०) १ घोड़ोंकी पीठ पर बैठी हुई मक्खियां उड़ानेका बालोंका गुच्छा। यह किसी काठमें लगा रहता है। घुड़सवार इसे प्रायः अपने साथ रखता है। २ स्त्रियोंके सिरके बाल गूँथनेकी डोरी। ३ गो विशेष, एक प्रकारकी गाय जिसकी पूँछ सफेद होती है।

चौंसठ (हिं० वि०) १ साठसे चार अधिक। (पु०) २ वह संख्या जो साठ और चारके योगसे बनी हो।

चौंसठवां (हिं० वि०) जो तिरसठवेंके उपरान्त पड़े।

चौ (हिं० वि०) १ चार, तीनसे एक अधिक। (पु०) २ जौहरियोंकी एक तौल जिससे मोती तौला जाता है।

चौअन (हिं० वि०-पु०) चौवन देखो।

चौआ (हिं० पु०) १ वह पशु जिसके चार पैर हों, चौपाया। २ चार अंगुलका माप। ३ चार बूटियांवाला ताश।

चौक (हिं० पु०) १ चतुष्कोण भूमि, चौकोर भूमि। २ प्राङ्गण, आंगन। ३ चौकोर चबूतरा, बड़ी वेदी। ४ बाजार बैठनेका विस्तृत स्थान, वह लंबा चौड़ा खुला स्थान जहां बड़ी बड़ी दूकान आदि हों। ५ चौराहा, चौमुहान, वह स्थान जहां चारों ओरसे चार सड़कें आ मिली हों। ६ शुभकार्यों वा मङ्गल अवसरों पर प्राङ्गण

वा चौर किसी ऐसे ही स्थान पर अबीर, आटे आदिकी लकीरोंसे बना हुआ चौखूंटा क्षेत्र। इसमें कई प्रकारके खाने एवं चित्रादि बने रहते हैं। इसी चौक पर देवताओंकी पूजा आदि की जाती है। ७ बिसात, चतुरङ्ग खेलनेका कपड़ा। ८ सीमन्तकर्म, अठवांसा। ९ सामनेके चार दांतोंकी पंक्ति।

चौक—अयोध्या प्रदेशकी एक नदी। जिस स्थानसे यह निकली है उस जगह यह शारदा नामसे मशहूर है। खेरी और सीतापुर जिलेमें आ कर इसका नाम चौक पड़ा है। इसके बाद इसने दह्योर नामसे कुटाईघाटके निकट कौड़ियाला नदीके साथ मिल कर घर्घरा नाम धारण किया है।

चौकठ (हिं०पु०) चौखट देखो।

चौकठा (हिं० पु०) चौखटा देखो।

चौकड़ (हिं० वि०) उत्तम, बढ़िया, अच्छा।

चौकड़ा (हिं० पु०) १ आभूषणविशेष, दो दो मोती लगी हुई एक प्रकारकी बाली जो कानमें पहनी जाती है। २ फसलकी बंटाई जिसमें चौथाई हिस्सा जमींदारको मिलता हो।

चौकड़ी (हिं० स्त्री०) १ हरिणकी गति जिसमें वह अपने चारों पैरोंको एक साथ फेंकता हुआ खूब जोरसे दौड़ता है, छलांग, फलांग। २ चार मनुष्योंका झुंड, मण्डली। ३ आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना। ४ चतुर्युगी, चार युगोंका समूह। ५ पद्मासन, पालथी। ६ खाटकी वह बुनावट जिसमें चार चार सुतलियां इकट्ठी बुनी जाती हों। (स्त्री०) ७ चार घोड़ेकी गाड़ी।

चौकनिकास (हिं० पु०) बाजारमें बैठनेवाले दूकानदारोंसे लिया जानेवाला कर या महसूल।

चौकन्ना (हिं० वि०) १ सावधान, सजग, होशियार। २ आशङ्कित, चौंकन्ना।

चौकल (सं० पु०) चार मात्राओंका समूह।

चौकस (हिं० वि०) १ सावधान, सजग, होशियार, सचेत। २ दुरुस्त, ठीक पूरा।

चौकसी (हिं० स्त्री०) सावधानी, खबरदारी, होशियारी।

चौका (हिं० पु०) १ प्रस्तरका चतुष्कोण खण्ड, पत्थरका चौकोर टुकड़ा। २ रोटी बेलनेका काठ या पत्थरका बना हुआ पाटा, चकला। ३ सम्मुखके चार दांतोंकी पंक्ति। ४ मस्तकका आभूषणविशेष, एक तरहका सिर परका गहना, सीसफूल। ५ वर्गाकार ईंट, वह ईंट जिसकी लम्बाई तथा चौड़ाई समान हो। ६ रसोई बनानेका पवित्र स्थान। ७ सफाईके लिए मिट्टी या गोबरका लेप। ८ चार सींगवाला एक प्रकारका जंगली बकरा। यह खासकर जलाशयके आस पासकी झाड़ियोंमें पाया जाता है। इसकी लम्बाई ४ या ५ फुट तककी होती है। इसके बाल पतले तथा रूखे होते हैं। इसे बचपनसे पाला जाय तो यह हिल सकता है। ९ चार बूटियोंवाला ताशका एक पत्ता। १० स्थूल वस्त्रविशेष, एक प्रकारका मोटा कपड़ा। यह फर्श या जाजिम बनानेके काममें आता है। ११ पात्रविशेष, एक प्रकारका बरतन। १२ एक ही स्थान पर सटा कर रक्खी हुई एक ही तरहकी चोजोंका समूह।

चौकिडांगा—वर्द्धमान जिलेके रानीगञ्जके निकट एक कोयलेकी खान। इस खानके कोयलेका अस्तर १४ फुट ६ इञ्च है। १८३४ ई०में यह पहले पहल खोदी गई थी। १८६१ ई०में आग लग जानेसे इसकी बहुत हानि हुई। १८७८ ई०से इसका काम भी बंद हो गया।

चौकियासोहागा (हिं० पु०) सोहागाके छोटे छोटे टुकड़े जो औषधके काममें उपयुक्त है।

चौकी (हिं० स्त्री०) १ चार पायेदार काठ या पत्थरका चौखूंटा आसन, छोटा तखत। २ कुरसी। ३ वह स्थान जहां यात्री आ कर ठहरता हो, सराय, टिकाव, अड्डा। ४ वह जगह जहां थोड़ेसे सिपाही आस पासकी रक्षाके लिये रक्खे जाते हैं। ५ पहरा, रखवाली, खबरदारी। ६ किसी देवी, देवता, ब्रह्मपीर आदिके स्थान पर चढ़ानेकी भेंट या पूजा। ७ जादू, टोना। ८ वह काष्ठ जो तेलियोंके कोल्हूमें लगा रहता है। ९ आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना जो प्रायः गलेमें पहना जाता है। १० वह छोटा गोल चकला जिस पर रोटी बेली जाती है। ११ मन्दिरमें मण्डपकी तरफसे खम्भोंके ऊपरका वह घेरा जिस पर उसकी शिखर स्थित हो। १२ उक्त खम्भोंके

बीचका स्थान जहाँसे मण्डपमें प्रवेश किया जाता है। १३ बकरियों या भेड़ोंका रातको किसी खेतमें रहना।

चौकीदार (हिं० पु०) वह मनुष्य जो चौकसी या पहरा देता है, प्रहरी, पहरा देनेवाला, सिपाही, गोड़ैत। पहले चोर डकैतोंके सर्दारको ही चौकीदार बनाया जाता था। सर्दार जब पहराका काम करता था तो चोरी डकैती बहुत कम हुआ करती थी। जो तनखाह चौकीदारको दी जाती है, वह ग्रामवासियोंसे वसूल की जाती है ग्रामवासी चौकीदारको जो तलब देते हैं उसको चौकीदारी कहते हैं। यद्यपि चौकीदारको कम तनखाह मिलती है, तो भी उन पर जिम्मेवारी बहुत है। उनको प्रति सप्ताह थानेमें जा कर अपनी हाजिरी तथा गाँवके जन्म और मृत्युका संवाद देना पड़ता है। उनकी सीमामें कहीं पर चोरी डकैती अथवा किसी तरहका दंगा होने पर उनको थानेमें जा कर इसकी सूचना देनी पड़ती है।

चौकीदारी (हिं० स्त्री०) १ चौकसी देनेका काम, खबरदारी। २ चौकीदारका पद। ३ वह कर जो चौकीदार रखनेके लिये दिया जाय।

चौकोना (हिं० वि०) चतुष्कोण, चौखूँटा।

चौकोर (हिं० वि०) १ चतुष्कोण, चौखूँटा। २ क्षत्रियोंकी एक शाखा।

चौक्र (सं० क्ली०) चुक्रस्य भावः चुक्र दृढ़ादि० ष्यञ्। वर्णदृढ़ादिभ्यः ष्यञ् च। पा ५।१।१२३। चुक्रता, खटाई।

चौक्ष (सं० वि०) चुक्षा हिंसा शीलमस्य चुक्षा छत्रादि० ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२ १ हिंसुक, जिसका स्वभाव हिंसा करनेका हो। २ मनोज्ञ, सुन्दर, मनोहर, सुडौल। "चौक्षं चौक्षजनाकीर्णं सुसुखं दक्षदर्शनम्।" (भारत १२।१२८ अ०)

चौखंड (देश०) १ चौमंजिला मकान। २ वह घर जिसमें चार चौक वा आँगन हो।

चौखट (हिं० स्त्री०) १ किवाड़के पल्ले लगानेका चार लकड़ियोंका ढाँचा। २ देहली, दहलीज।

चौखटा (हिं० पु०) शीशा जड़ा हुआ चार लकड़ियोंका ढाँचा, दर्पण वा तसवीरका फ्रेम।

चौखना (हिं० वि०) जो चार खंडका हो।

चौखा (हिं० पु०) चार चार ग्रामोंकी सीमा मिलनेकी जगह।

चौखानि (हिं० स्त्री०) चार प्रकारके जीव, यथा-अण्डज, पिण्डज, उद्भिज और स्वेदज।

चौखूँट (हिं० पु०) १ चारों दिशा। २ भूमंडल।

चौखूंटा (हिं० वि०) चतुष्कोण, चौकोर, चौकोना।

चौगच्छ—राजशाही जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २४° ३३' उ० और देशा० ८९° १२' पू० पर नाटोरसे १६ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।

चौगड़ा (हिं० पु०) १ खरगोश, खरहा। २ चौघड़ा देखो।

चौगड्डा (हिं० पु०) १ चार वस्तुओंका समुदाय। २ चौहद्दा, वह जगह जहां चार ग्रामोंकी हद वा सीमा मिली हो।

चौगड्डी (हिं० स्त्री०) बाँसकी कमचियोंका वह ढांचा जिसमें जानवर फंसाये जाते हैं।

चौगाछा—वङ्गदेशके यशोर जिलेका एक ग्राम। यह कबोदक नदीके किनारे अवस्थित है। चीनी कारखानेके लिये यह प्रसिद्ध है।

चौगान (फा० पु०) १ एक खेल। इसमें लकड़ीके बल्लेसे गेंद मारते हैं। यह खेल अंग्रेजी हौकी या पोलो खेलके सदृश है। यह खेल घोड़े पर सवार हो कर भी खेला जाता है। २ चौगान खेलनेका मैदान। ३ चौगान खेलनेकी लकड़ी। यह आगेकी ओर झुकी हुई या टेढ़ी होती है। ४ नगाड़ा बजानेकी लकड़ी।

चौगानी (फा० स्त्री०) धुआँ निकलनेकी हुक्केकी नली।

चौगाल—काश्मीर राज्यका एक शहर। यह अक्षा० ३४° २३' उ० और देशा० ७१° १०' पू० पर श्रीनगरसे ३४ मील उत्तर-पश्चिम तथा झेलमसे १११ मील उत्तर-पूरबमें अवस्थित है।

चौगिर्द (हिं० क्रि०-वि०) चारों ओर, चारों तरफ।

चौगुना (हिं० वि०) चतुर्गुण, चहारचंद, चार बार और उतना हो।

चौगोड़ा (हिं० वि०) १ जिसके चार पैर हों, चौपाया। २ खरहा, खरगोश।

चौगोड़िया (हिं० स्त्री०) १ एक तरहकी ऊंची और बड़ी चौकी, टिकटी। २ एक तरहका फंदा जो बाँसकी तीलियोंका बना हुआ रहता है। बहेलिया इससे चिड़िया फंसाता है।

चौगोशा (फा० पु०) मेवा, मिठाई आदि रखनेकी चौकोर तश्तरी।

चौगोशिया (फा० वि०) १ जिसमें चार कोने हों, चार कोनेवाली । (स्त्री०) २ एक प्रकारकी कपड़की टोपी । (पु०) ३ तुर्क घोटकविशेष, एक प्रकारका तुरकी घोड़ा ।

चौघड़ (हिं० स्त्री०) आहार चबाने या दाबनेका चौभर या दाढ़का चौड़ा और चिपटा दाँत ।

चौघड़ा (हिं० पु०) १ एक तरहका डिब्बा जो चाँदी सोने आदिका बना हुआ होता है । मसाला रखनेका वह बरतन जिसमें चार खाने बने हों । ३ गुजराती इलायची जो बड़ी होती है । ४ पत्तेकी खोंगी जिसमें पानके चार बीड़े हों । ५ दिवालीके दिनोंमें बिकनेवाला खिलौना जो मिट्टीका बना हुआ होता है । इसमें चार कुलियां होती हैं ।

चौघरा (हिं० पु०) १ मसाला आदि रखनेका चार खानोंवाला बरतन । २ चार बत्तियां जलनेकी पीतलकी दीवट ।

चौघाट—मन्द्राज प्रदेशके मलबार जिलेका पनानी तालुकका एक शहर । यह अक्षा० १०° ३५´ उ० और देशा० ७६° २´ पू०में अवस्थित है । लोकसंख्या प्राय: ७४२६ है । पहले यह शहर चौघाट तालुकका एक सदर था । यहां एक विद्यालय और निम्न विचारालय है । चौघाट तालुक पनानी तालुकके अन्तर्भुक्त हो गया है ।

चौचंदहाई (हिं० वि०) जो दूसरोंकी बुराई करती हो, बदनामी फैलानेवाली ।

चौज (हिं० पु०) चोज देखो ।

चौजुगी (हिं० स्त्री०) चार युगोंका समय ।

चौड (सं० क्ली०) जलाशय विशेष, एक तड़ाग ।

चौड़ (सं० क्ली०) चुड़ा प्रयोजनमस्य चूड़ा-अण् । चूड़ाकरण, चूड़ाकरण संस्कार । (मनु० २।२७)

चूड़ा स्वार्थे अण् । [illegible] शिखा, चोटी ।

चौड़ (हिं० वि०) सत्यानाश, चौपट ।

चौड़ा (हिं० वि०) १ जो लम्बाईकी ओरके दोनों किनारोंके बीचमें विस्तृत हो, लंबाका प्रतिकुल । (पु०) अनाज रखनेका गड्ढा ।

चौड़ाई (हिं० स्त्री०) विस्तार, फैलाव ।

चौड़ान (हिं० स्त्री०) विस्तार, चौड़ाई ।

चौडाय्य (सं० त्रि०) चूड़ार प्रगयादि० चातुरर्थिक ञ्य । चूड़ाश्रित पदार्थके निकटवर्त्ती, जो शिखाके समीप हो ।

चौड़ि (सं० पु० स्त्री०) चूड़ाया अपत्यं चूड़ा-इञ् । चूड़ा नामको स्त्रीको सन्तान ।

चौण्ठ्य (सं० क्ली०) चुण्ठे भवं चुण्ठ-ष्यञ् । चुण्ठजलाशयका जल । चुण्ठ देखो । भावप्रकाशके मतसे इसके गुण—अग्निदीपिकारक, रूक्ष, कफनाशक, लघु, मधुररस, पित्तघ्न, रुचिकर, पाचक और स्वच्छ ।

चौतग्गो (हिं० वि०) चारतागोंका डोरा ।

चौतङ्ग—पञ्जाबके अम्बाला और करनाल जिलेकी एक नदी । यह सरस्वतीमे कुछ दक्षिण समतल भूमिसे निकल कर सामानान्तर भावमें बहती हुई यमुनामें जा गिरी है ।

चौतनियां (हिं० स्त्री०) १ चोली, अंगिया, चौबन्दी । २ चौतनी ।

चौतनी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी बच्चोंकी टोपी जिसमें चार बंद लगाये जाते हैं ।

चौतरका (हिं० पु०) एक तरहका खेमा या तंबू ।

चौतरा (हिं० पु०) चबूतरा

चौतही (हिं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, एक प्रकारका कपड़ा ।

चौतान—राजपूतानाके अन्तर्गत जोधपुरका एक शहर । यह अक्षा० २५°६१´ उ० और देशा० ७१°३´ पू० पर जोधपुरसे १४१ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है ।

चौताल (हिं० पु०) १ तालविशेष, मृदंगका एक ताल । इसमें छह पद होते हैं जिनमेंसे १।३।५।६ इन चार पदोंपर आघात और २।४ पद खाली जाते हैं । इसका पद दो मात्राविशिष्ट है, इसमें चार आघात होते हैं इसलिये इसका नाम चौताल हुआ है । यथा—

।+ । ।०। ।१ । ।० । ।१ ।
(१) धा धा, दिन् ता, कत् तेटे, तेटे ता, तेटे कता, गेदिधिना : :— । (ह—रत्ना०)

।+।। ।० । ।१ । ।० । ।१ । ।१
(२) धा गे, दिन् ता, कत् तागे, दिन् ता, तेटे कता, गेदि घिनि : :— ।

२ होलीमें गानेका एक प्रकारका गीत ।

चौताला (हिं० वि०) जिसमें चार ताल हों, चार तालवाला ।

चौतुका (हिं० वि०) १ जिसमें चार पद्य हों चार, चरणवाला । (पु०) छन्दभेद, इसमें चारों चरणोंकी तुक मिली होती है ।

चौथ (हिं० स्त्री०) १ राजस्वका एकचतुर्थांश। महाराष्ट्रीय सर्दार जब प्रबल हो उठे थे, वे अनेक देश लूट कर वहांके अधिपतियोंको चौथ देनेके लिये वाध्य करते थे। जब तक राजा चौथ दिया करते थे, तब तक किसी तरहकी लूट नहीं मचती थी, किन्तु चौथ बंट कर देनेसे ही अश्वारोही महाराष्ट्र-सैन्य देश लूटते थे। १६७६ ई०में शिवाजीने सबसे पहले खान्देशसे चौथ वसूल की थी। क्रमशः मरहठोंने हैदराबाद प्रभृति दाक्षिणात्यके अन्यान्य देशोंसे तथा बङ्गालसे भी चौथ अदा की थी। १७३५ ई०में दिल्लीके सम्राट्ने चौथ दे कर मरहठोंसे छुटकारा पाया था।

२ प्रजा जब अपने कुछ वृक्ष आदि काटती है तो उसका चतुर्थांश या उसका मूल्य जमींदारको प्रदान करती है, इसका नाम भी चौथ है। ३ चतुर्थांश, चौथाई हिस्सा। ४ प्रति पक्षकी चौथी तिथि, चतुर्थी।

चौथपन (हिं० पु०) मनुष्यकी चार अवस्थाओंमेंसे अंतिम अवस्था, बुढ़ाई, बुढ़ापा।

चौथा (हिं० वि०) १ चतुर्थ, तीसरेके उपरांतका। (पु०) २ एक रीति जो मृतकके घर होती है। इसमें सम्बन्धी और बिरादरीके लोग एकत्र हो कर दाह करनेवालेको पगड़ी, रुपया वगैरह देते हैं। अगर मृतकी विधवा स्त्री जीवित हो, तो उसको धोती, चादर आदि दी जाती है।

चौथाई (हिं० पु०) चतुर्थांश, चार समभागोंमेंसे एक, चहारम।

चौथिया (हिं० पु०) १ चार दिनोंमें आनेवाला ज्वर। चतुर्थांशका अधिकारी, चौथाई हिस्सेका हकदार।

चौथी (हिं० स्त्री०) १ विवाहमें होनेवाली एक रिवाज जो विवाहके उपरान्त चौथे दिन होती है। २ चौकुर, फसलका वह बटवारा जिसमें जमींदारको चौथाई और किसानको तीन चौथाई हिस्सा मिलता है। चौथा देखो।

चौथैया (हिं० पु०) चतुर्थांश, चौथाई।

चौदन्ता (हिं० वि०) १ चतुर्दन्त, जिसके चार दाँत हो, जिसकी अवस्था पूरी न हुई हो। २ उद्दण्ड, उग्र, उद्धत, उजड्ड। ३ एक तरहका हाथी जिसके चार दाँत होते हैं। यह श्याम देशमें पाया जाता है।

चौदन्ती (हिं० स्त्री०) उद्दण्डता, धृष्टता, हठ, ढीठाई।

चौदश (हिं० स्त्री०) चौदस देखो।

चौदस (हिं० स्त्री०) चतुर्दशी, चौदहवें दिनमें होनेवाली एक तिथि। चतुर्दशी देखो।

चौदह (हिं० वि०) १ दशसे चार अधिक। (पु०) २ वह संख्या जो दश और चारके योगसे बनी हो।

चौदह-पूर्व—जैन-आगमभेद वा श्रुतभेद, यथा—१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायिणीपूर्व, ३ वीर्य्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्यप्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व और १४ लोकबिन्दुपूर्व।

चौदह-प्रकीर्णक—जैनमतानुसार अङ्गवाह्य श्रुतज्ञानके भेद, यथा १ सामायिक, २ चतुर्विंशतिस्तवन, ३ वन्दना, ४ प्रतिक्रमण, ५ विनय, ६ कृतिकर्म, ७ दशवैकालिक, ८ उत्तराध्ययन, ९ कल्पव्यवहार, १० कल्पाकल्प, ११ महाकल्प, १२ पुण्डरीक, १३ महापुण्डरीक और १४ निषिधिका।

चौदहवाँ (हिं० वि०) जो तेरहके बाद हो।

चौदानी (हिं० स्त्री०) आभूषणविशेष, एक तरहकी कानमें पहननेकी बाली, जिसमें मोतीके चार दाने लगे रहते हैं। २ वह बाली जिसमें चार सोनेकी पत्तियोंकी जड़ाऊ टिकड़ी लगी हों।

चौदायनि (सं० पु०) गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिविशेष।

चौदुली—दाक्षिणात्यमें सलेम जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० १२° ३' उ० और देशा० ७७° २७' पू० पर श्रीरङ्गपत्तनसे ४८ मील अग्निकोणमें अवस्थित है।

चौद्वार—उड़ीसाके अन्तर्गत महानदीके उत्तर किनारे पर अवस्थित एक प्राचीन नगर। उड़ीसा वासियोंका कहना है कि यह नगर उड़ीसाके ७ कटकोंमेंसे एक है। दूसरे कटकोंके नाम—१ याजपुर, २ पुरी, ३ भुवनेश्वर, ४ बड़ा, ५ सारणगड़ और ६ कतिया। प्रवाद है कि एक समय महानदीकी ओर भ्रमण करते हुए राजा अनङ्गभीमने चौद्वार ग्राममें एक मृत श्येनपक्षीके ऊपर बैठा हुआ एक बगलाको देखा। इसे शुभलक्षण समझ उन्होंने चौद्वारमें अपनी राजधानी स्थापित की। अब भी इस स्थानमें प्राचीन राजधानीका खंडहर देखा जाता है।

किसीका मत है कि गुप्तराजाओंके समयमें भी यहां शहर था।

चौधराई (हिं० स्त्री०) १ चौधरीका कार्य्य। २ चौधरीका पद।

चौधरात (हिं० स्त्री०) चौधराना देखो।

चौधराना (हिं० पु०) १ चौधरीका काम। २ चौधरीका पद। ३ चौधरानामें मिला हुआ चौधरीका धन।

चौधरी (हिं० पु०) यह चतुर्धुरीन् शब्दका अपभ्रंश मालूम पड़ता है। १ गांव, समाज या मण्डलीका मुखिया। व्यापारियोंमें और किसी सम्प्रदायमें जो प्रधान व्यक्ति हो, उसे भी चौधरी कहते हैं। ये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि चारों वर्णोंमें पाये जाते हैं। प्रधान, पंच, मुखिया।

२ परिदर्शक। ३ मालगुजारी वसूल करनेवाले। ४ दक्षिण देशमें बहुतसे देवमन्दिरोंमें वेदीके दोनों ओर जो दो मूर्त्तियां रहती हैं, उन्हें भी चौधरी कहते हैं।

चौधरी—ब्राह्मण जातिका एक पद। युक्तप्रदेशके गौड़ ब्राह्मणोंमें यह पद विशेष रूपसे पाया जाता है। यह नाम चतुर्धुरी इस शुद्ध शब्दका अपभ्रंश रूप है। पूर्व समयमें जो ब्राह्मण चारों वेद रूप धुरोंको धारण कर लेते थे, उन्हींको यह पद मिलता था। चतुर्धुरी कहाते कहाते वे चौधरी कहलाने लगते थे। पुनः एक विद्वान्‌का यह भी सम्मति है, कि यह नाम चौधरी शब्दका बिगड़ा हुआ रूप चौधरी है। पूर्व समयमें वे चारों वेदोंके ज्ञाता थे तथा वेदोंके अङ्ग, उपाङ्ग, न्याय, मीमांसा और तर्क शास्त्रको अच्छी तरह जानते थे, तब उस समय उन्हें यह उपाधि मिली थी। इसके साथ साथ इन्हें द्विजाति समुदायके झगड़े निवटानेका अधिकार भी दिया गया था। परन्तु आजकल ये निरक्षर भट्टाचार्य हैं और न्याय अन्यायकी तनिक भी सूझ नहीं है।

चौपई (हिं० स्त्री०) छन्दोभेद, एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें १५ अक्षर होते हैं और अन्तमें गुरु लघु होते हैं।

चौपट (हिं० वि०) १ अरक्षित, जो चारों ओरसे खुला हो। २ सत्यानाश, नष्टभ्रष्ट, विध्वंस, तबाह।

चौपटा (हिं० वि०) सत्यानाशी, नष्ट करनेवाला। तबाह करनेवाला।

चौपड़ (हिं० स्त्री०) १ चौसर नामका खेल, नर्दबाजी। २ चौसर खेलकी गोटियां। ३ चौसरकेसे खाने बुने हुए पलंग आदिकी बुनावट।

चौपतिया (हिं० स्त्री०) १ तृणविशेष, गेहूंके खेतमें होनेवाली एक प्रकारकी घास। यह खेतमें उत्पन्न हो कर फसलको बहुत हानि पहुंचाती है। २ चार पत्तियोंवाली वह बूटी जो कसीदे आदिमें लगती है। ३ उटंगन, एक तरहका शाक।

चौपथ (हिं० पु०) १ चौराहा, चौरास्ता, चौमुहानी। २ एक पत्थरका नाम जिस पर चाक रहता है। इसे चौपत भी कहते हैं।

चौपयत (सं० पु०) चुप-अच् चोपः सन् यतते यत-अच् ततः स्वार्थे अण्। ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

चौपयतविध (सं० क्ली०) चौपयतस्य विषयः चौपयतविधल्। चौपयत ऋषिका देश।

चौपयतायनि (सं० पु०-स्त्री०) चौपयतस्य ऋषेरपत्यं चौपयत तिकादिं फिञ्। चौपयत ऋषिके वंशधर।

चौपयत्या (सं० स्त्री०) चौपयतस्यापत्यं स्त्री चौपयत्-ष्यङ्। चौपयत ऋषिकी कन्या।

चौपरतना (हिं० क्रि०) कपड़ेको समेट कर रखना।

चौपल (हिं० पु०) कुम्हारका चाक रखे जानेका चौपत नामका पत्थर।

चौपहरा (हिं० वि०) चार प्रहर सम्बन्धीय, चार पहरका।

चौपहल (हिं० वि०) चार पार्श्ववाला, जिसके चार पहल हों।

चौपाई (हिं० स्त्री०) छन्दोभेद, १६ अक्षरोंका एक छन्द। इसमें सिर्फ द्विकल और त्रिकलका प्रयोग होता है तथा किसी त्रिकलके बाद दो गुरु और सबसे अन्तमें तगण वा जगण नहीं होता। इसके नामान्तर—चतुष्पदी, चौपदी, पादाकुलक और रूप चौपाई।

चौपाड़ (हिं० पु०) चौपाल देखो।

चौपायन (सं० पु०-स्त्री०) चुपस्यापत्यं चुप-अश्वादि फञ्। चुप नामक ऋषिके वंशज।

चौपाया (हिं० पु०) चतुष्पदविशिष्ट जन्तु, वह पशु जिसके चार पैर हों।

चौपाल (हिं० पु०) १ लोगोंके बैठने उठनेका स्थान। २ बैठक। ३ दालान, बरामदा। ४ वह छायादार चबूतरा जो घरके सामनेमें हो। ५ परदा या किवाड़ रहित एक प्रकारकी पालकी।

चौपुरा (हिं० पु०) वह बड़ा कुआं, जिस पर चार पुर एक साथ चल सकें।

चौपैया (हिं० पु०) १ चतुष्पदी छन्द, चार चरणोंवाले एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें १०, ८ और १२के विश्रामसे ३० अक्षर होते हैं और अन्तमें एक गुरु होता है। २ खाट, चारपाई।

चौफला (हिं० वि०) चार फलवाला, जिसमें चार धारदार लोहे हों।

चौफेर (हिं० क्रि०-वि०) चारों तरफ, चारों ओर।

चौबंसा (हिं० पु०) छन्दोभेद, एक वृत्तका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें एक नगण और एक यगण होता है।

चौबगला (हिं० पु०) वह भाग जो मिरजई, फतुही अंगा आदिके नीचे और कन्धोंके ऊपर होता हो।

चौबगली (हिं० स्त्री०) बगल बन्दी देखो।

चौबच्चा (हिं० पु०) १ जल रखनेका छोटा गड्ढा, कुंड, हौज। २ वह गड्ढा जहां धन गड़ा हो।

चौबन्दी (हिं० स्त्री०) १ बगलबंदी, एक प्रकारका चुस्त अंगा। २घोड़ेके चारों सुमोंको नालबंदी। ३ राजस्व, कर।

चौबरसी (हिं० स्त्री०) १ किसी घटनाके चौथे वर्षमें होनेवाला उत्सव या क्रिया। २ किसीके निमित्तसे चौथे वर्ष होनेवाला श्राद्ध आदि।

चौबा (हिं० पु०) १ ब्राह्मणोंकी एक जाति। २ मथुराका पंडा। चौबे देखो।

चौबाइन (हिं० स्त्री०) चौबेकी स्त्री।

चौबाछा (हिं० पु०) दिल्लीके बादशाहोंके समयका एक प्रकारका कर।

चौबार (हिं० पु०) चौबारा देखो।

चौबारा (हिं० पु०) १ एक कोठरी जिसके चारों ओर द्वार हों, बँगला, बालाखाना। २ वह खुली हुई बैठक जिसकी छत पटी हो। (क्रि०-वि०) ३ चतुर्थ बार, चौथी दफा।

चौबीस (हिं० वि०) १ बीससे चार अधिक (पु०) एक संख्या बीससे चार अधिककी संख्या जो इस तरह लिखी जाती है—२४।

चौबीस परगना—बङ्गालके प्रेसिडेन्सी डिविजनका जिला। यह अक्षा० २१° ३१´ तथा २२° ५७´ उ० और देशा० ८८° २´ एवं ८८° ६´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४८४४ वर्गमील है। कलकत्तेकी जमींदारोंमें मुसलमानोंके समय कई परगने रहनेसे ही उसका यह नाम पड़ा है। उसके उत्तर नदिया और जशोरजिला, पूर्व खुलना, पश्चिम हुगली नदी और दक्षिणको बङ्गालकी खाड़ी है।

१८६४ ई० अक्तूबर मासके तूफानमें समुद्रकी लहर चढ़नेसे १२००० प्राणी विनष्ट हुए। १८९७ ई० जूनके भूमिकम्पसे इस जिलेके कितने ही मकानोंको बड़ा धक्का लगा था। १९००ई०के सितम्बर मासके जलप्लावनसे धानकी फसल मारी गयी।

पूर्वकालके पद्माका दक्षिणस्थ और भागीरथी तथा ब्रह्मपुत्रकी पुरानी धाक मध्यस्थ देश वङ्ग कहलाता था। रघुवंशमें इसके लोगोंको नावोंमें रहने और धानकी खेती करनेवाला बतलाया गया है। सम्भवतः ई० ७ वीं शताब्दीके पहले चौबीस परगना खाड़ीके पानीसे उभरा न था। ई० १० वीं शताब्दीके अन्तको यह देश सेनवंशके अधिकारभुक्त हुआ। १२०३ ई०को मुहम्मद बख्तियार खिलजीके अधीन अफगानोंने इस पर धावा मारा। परन्तु १४९५ई० तक इसका निश्चित इतिहास अज्ञात था, जब किसी बङ्गला काव्यमें कई नदीतीरस्थ ग्रामोंका उल्लेख हुआ।

ई० १६ वीं शताब्दीको यह सातगांव सरकारमें लगता था। १७५७ ई०में पलाशीयुद्धके बाद बङ्गालके नवाब नाजिम मीरजाफरने चौबीस परगना अंगरेजोंको दे डाला। इसका कर उन्हें २२२९५८) रु० पड़ता था। १८२४ ई०को बारकपुर छावनीकी ४७वीं सेनाने ब्रह्मदेश जाना अस्वीकृत किया था। क्योंकि उन्हें भय था, कि वह जहाजसे यात्रा करनेको बाध्य होंगे। कलकत्तेसे युरोपीय फौज और तोपखानेने गमन कर उन पर गोली चलायी और फौज तितर बितर हो टूट गयी। बहुतसे बलवावालोंको गोली मार या फांसी दे दी गयी

और सेना स्थगित हुई। १८५७ ई०के बलवेकी चिनगारी पहले पहल बाराकपुरमें ही सुलगी थी।

१८४१ ई० को हिन्दू जमींदारोंने दाढी पर कर लगाया था जिससे वहहाबी मियां तोतुने बलवा खड़ा कर दिया। उसने ३००० लोगोंको इकट्ठा करके, कलकत्तासे लड़नेको भेजे सिपाहीयोंको टुकड़े टुकड़े कर डाला। मजिस्ट्रेटको भेजी हुई कुमक भी खेतसे पीछे हटी थी। अन्तको एक बड़ी सेनाने जा करके उपद्रवियोंको दमन किया।

चौबीस परगनेकी आबादी कोई २०७८३५८ है। यहां ज्वर और विसूचिकाका बड़ा प्रकोप रहता है। जिलेका सदर आलीपुर है। लोग बंगला भाषा व्यवहार करते हैं। यहां युरोपीय और ईसाई बहुत रहते हैं। चावल और पाटकी खेती अधिक है। इसके मवेशी वृषोत्सर्ग न होनेसे बिगड़ जाते हैं। टट्टू, भेड़ और भैंस कम हैं प्रति वर्ष जनवरी मासको सागर और फरवरीको हासवामें मेला लगता है। सुन्दरवनका कुछ अंश सुरक्षित है। माटागढ़में नकली ताले, कूचियां कड़ियां और सस्ते जूते बनते हैं। कुछ कपड़ा भी कहीं कहीं बुनते और चाकू, बर्तन तथा चटाइयां तैयार करते हैं। उत्तरको छोटे छोटे शक्करके भी कारखाने हैं। किन्तु रेलवे, सड़क, जहाज और तारके सुभीतेसे पुतलीघर बहुत चलते हैं। इनमें पाटकी गांठ बांधने, बुनने, रुईकातने, शक्कर साफ करने, रस्सी बटने, तारके समान लोहा ढालने, तेल निकालने, लाहकी तैयारी, हड्डी पीसने शोरा, चमड़ा रंगने और कागज, जहाज, सरकारी हथियार, सिपाहियोंकी वरदियां, साबुन और पक्की ईंट बनानेका काम होता है। यहां मिट्टीका तेल भी बहुत भरा जाता है। सबसे बड़ा काम सनके बोरे बनाना है।

ईष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवे इस जिलेमें चलता है। ११४४ मील कच्ची और २४१ मील पक्की सड़क है। डिष्ट्रिक्ट बोर्डके अधीन ५२ उताराके घाट हैं। इस जिलेमें डाका और चोरी बहुत होती है। खेतोंका लगान ऊंचा है। यहां २६ म्युनिसिपालटियां हैं। बाढ़से जमीनको बचानेके लिये २२२ मील तक बांध लगा हुआ है।

चौबीस परगनोंमें शिक्षाका बड़ा प्रचार है। कितने ही विद्यालय खुले और बहुतसे लोग पढ़ने लिखने लगे हैं।

आदिगङ्गाके तट पर कालीघाट चौबीस परगनेका प्रधान तीर्थस्थान है। सागरद्वीप उसका दूसरा तीर्थ होता है। यहां कपिलमुनिका आश्रम और गङ्गासागर-सङ्गम है। सिवा इसके अन्यान्य स्थानोंमें भी मन्दिर आदि बने हैं।

चौबीसवां (हिं० वि०) जो तेईसके बाद हो।

चौबीसे—गुजराती ब्राह्मणोंका एक भेद। इस श्रेणीके ब्राह्मण विशेष कर बड़ोदा राज्यमें पाये जाते हैं। इनके चौबीस गोत्र होते हैं, अतः ये चौबीसे नामसे प्रसिद्ध हैं।

चौबीसी पाठ—जैनोंका वह ग्रन्थ जिसमें चौबीस तीर्थङ्करोंकी पूजाके मन्त्रादि लिखे हों।

चौबे (हिं० पु०) ब्राह्मणोंकी उपाधि।

यह चतुर्वेदीय शब्दका अपभ्रंश है। इनके तीन भेद हैं, कड़ुवे चौबे, मीठे चौबे और लाल चौबे।

चतुर्वेदी शब्द देखो।

चौबे जागीर—बुन्देलखण्डके पोलिटिकल एजेण्टके अधीन सनद राज्य। यह अक्षा० २५° ५′ से ट २०′ और देशा० ८०° ४५′ से ८०° ५७′ पू०में अवस्थित है। इसके उत्तर, पूर्व और पश्चिम बन्दा जिला तथा दक्षिणमें बरोदा है। इसमें पांच राज्य मिले हुए हैं। यथा—पालदेव, पहरा, तरौन, भैसौण्डा और कामत रजउला। भूपरिमाण १२६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २०७११ है, जिनमेंसे हिन्दूकी संख्या सैकड़े ८४ है। इस जागीरमें कुल ६८ ग्राम लगते हैं।

जजहोतिया ब्राह्मण इस जागीरके अधिकारी हैं। इन लोगोंकी उपाधि चौबे है। ये पहले बुन्देलखण्डके आस पास दादरी ग्राममें रहते थे और बहुत युद्धकुशल थे। पन्नाके राजा छत्रशालने इन लोगोंको अपने यहां सैन्यकोंमें नियुक्त किया। इनके चौथे पुरुषका नाम रामकृष्ण था, जो पन्नाके राजा हृदयशाहके अधीन कालिञ्जर दुर्गके शासक थे। जब बन्दाके नवाब अली बहादुरने बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया, तब रामकृष्णने सुअवसर पा दुर्ग पर अपना पूरा अधिकार जमा

लिया। रामचन्द्रके मरने पर कालिञ्जर उनके सात पुत्रों के हस्तगत हुआ। सबसे ज्येष्ठ बलदेवसिंहको मृत्युके बाद उनके लड़के दरयाव सिंह उत्तराधिकारी हुए। १८१२ ई०में ब्रुटिश गवर्मेण्टने दरयावका अधिकार कालिञ्जर तथा निकटवर्त्ती देशोंमें पन्ना राजाके विरुद्ध इस शर्त पर सुदृढ़ कर दिया, कि वे समय पर ब्रुटिश गवर्मेण्टको सहायता करते रहेंगे। किन्तु जब दरयाव सिंहने अपनी प्रतिज्ञा पूरी न रखो, तब १८१२ ई० की १६वीं जनवरीको कौलोनल मारतिनडेलने उन्हें पदच्युत करनेके लिये कालिञ्जर दुर्ग पर आक्रमण किया। यद्यपि कौलोनलका मनोरथ सिद्ध न हुआ और हतोत्साह हो कर लौट आये, तो भी दरयाव सिंह स्वयं ब्रुटिश गवर्मेण्टके अधोन हो जानेको इस शर्त पर राजी हो गये, कि वर्त्तमान अधिकृत देशोंके बदले ब्रुटिश सरकार दूसरे दूसरे स्थान उनके परिवारको लिख पढ़ दे। गवर्मेण्टने इस शर्तको स्वीकार कर लिया और १८६२ ई०में परिवारके प्रत्येक व्यक्तिको पृथक् पृथक् सनद दो। इन लोगोंमें यह नियम स्थिर किया गया है, कि उत्तराधिकारोके अभावमें जागोर पुनः आपसमें बराबर बराबर बाँट लो जायगो। पहले इसके नौ अधिकारो थे, पोछे सात हुए और आजकल केवल पांच हो रह गये हैं।

चौबोला (हिं० पु०) छन्दविशेष, एक मात्रिक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें ८ और ७ के विश्रामसे १५ अक्षर होते हैं। अंतमें लघु गुरु होता है।

चौभड़ (हिं० स्त्री०) आहार कूँचने वा चबानेका चौड़ा और चिपटा दाँत जो दाढ़में होता है।

चौमंजिला (हिं० वि०) चार खंडोंवाला, जिसमें चार भाग हो। जैसे "चौमंजिला मकान।"

चौमसिया (हिं० वि०) १ जो वर्षाके चार महीनोंमें होता हो, चार महीनेका। (पु०) २ चार महीने तकके लिये रक्खा जानेका हलवाहा। ३ वह बटखरा जो चार माशेका हो।

चौमहला (हिं० वि०) जिसमें चार भाग हों, चारखण्डोंका।

चौम्बक (सं० त्रि०) १ चुम्बकसंक्रान्त, जिसमें चुम्बक मिला हो। २ आकर्षक, आकर्षण करनेवाला।

चौमार्ग (हिं० पु०) चौरस्ता, चौमुहानी।

चौमास (हिं० पु०) चौमासा देखो।

चौमासा (हिं० पु०) १ चातुर्मास, वर्षाकालके चार महीने, यथा—आषाढ़, श्रावण, भाद्र और आश्विन। २ वह कविता जो वर्षा ऋतुके संबन्धमें बनाई गई हो। ३ वर्षा कालके चार महीनोंमें जोता गया खेत। ४ खरीफकी फसल उगनेका वक्त। ५ जैन-मुनियोंके पालनेका एक व्रत। चातुर्मास देखो।

चौमासी (हिं० स्त्री०) वर्षा ऋतुमें गानेका एक तरहका गोत।

चौमुख (हिं० क्रि०-वि०) चारों ओर, चारों तरफ।

चौमुखा (हिं० वि०) जिसके चारों ओर मुँह हों, चार मुंहवला।

चौमुखी—१ जैनोंकी प्रतिमाविशेष, इनका मुंह चारों तरफ होता है। २ राजगृह तीर्थक्षेत्रका उदयगिरि नामक पर्वत।

चौमुहानी (हिं० स्त्री०) चतुष्पथ, चौरस्ता, चौराहा।

चौमू—राजपूतानेके जयपुर राज्यके अन्तर्गत सवाई-जयपुर निजामतके चौमू राज्यका एक प्रसिद्ध शहर। यह अक्षा० २७° १०´ उ० और देशा० ७५° ४४´ पू० जयपुर शहरसे २० मील उत्तरमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८३०० है। शहरमें एक दुर्ग है जो प्राचीर तथा खाईसे घिरा हुआ है। चौमू राजाके ठाकुरके वंशधर यहां वास करते हैं। इन्हें ब्रुटिश गवर्मेण्टको कर नहीं देना पड़ता। वर्त्तमान ठाकुर ष्टेट-कौंउन्सिलके मेम्बर हैं। शहरमें एक अस्पताल और ८ विद्यालय हैं।

चौमेंड़ा (हिं० पु०) वह स्थान जहां चार सीमाएं या मेंड़ मिलती हों।

चौमेखा (हिं० वि०) १ जिसमें चार मेखें या कीलें हों। (पु०) २ दण्डविशेष, एक प्रकारकी कठोर सजा। इसमें अपराधीको जमीन पर लिटा कर उसके हाथों और पैरोंमें मेखें ठोक देते थे।

चौरंग (हिं० पु०) १ खड्ग प्रहारका एक ढंग, तलवार चलानेको एक तरकीब। (वि०) २ खड्गके आघातसे खण्ड खण्ड, तलवारको वारसे कई टुकड़ोंमें कटा हुआ।

चौरंगा (हिं० वि०) चार वर्ण सम्बन्धोय, चार रंगोंका, जिसमें चार तरहके रंग हों।

चौंगिया (हिं० पु०) एक तरहको कसरत।

चौर सं० पु०) चुरा चौर्य्यं शोलमस्य चुरा-छत्रादि० ण। छत्रादिभ्योण:। पा ४।४।६२। वह जो दूसरोंकी वस्तु चुराता हो, चोर, तस्कर।

"चौरेष्वम् तेयामि सं भमि चाधि हादिते।" (मनु ४।११८)

(क्लो०) २ गन्धद्रव्यविशेष, एक गंधद्रव्य। ३ चोर-पुष्पी, अंधाहुलो नामका क्षुप।

चौर (हिं० पु०) खादर, वह तालाब जिसमें वर्षाका पानी बहुत दिन तक का रहता है।

चौर—पंजाबके अन्तर्गत शिरमूर राज्यका एक पर्वत। यह अक्षा० ३०° ५२´ उ० और देशा० ७७° ३२´ पू०में अवस्थित है और समुद्रतलसे प्रायः ११९८२ फुट ऊँचा है। यह आस पासके सब पर्वतोंसे ऊँचा दोख पड़ता है। सर-हिन्द प्रान्तसे इस पर्वतका दृश्य अत्यन्त मनोहर मालूम पड़ता है। पर्वतकी चोटो पर जानेसे दक्षिणको ओर एक बहुत बड़ा मैदान तथा उत्तरको ओर सोपानश्रेणी-वत् तुषारमण्डित पर्वतश्रेणी दृष्टिगोचर होती है। पर्वतकी छायामय कंदराओंमें ग्रीष्मकालमें भी तुषारराशि जमी रहती है। पर्वतके उत्तर और पूर्व पार्श्वमें देव-दारुका घना जंगल है तथा दक्षिणमें चिरायता आदि भिन्न भिन्न तरहके फल-पुष्प-शोभित गुल्म उत्पन्न होते हैं।

चौरकर्म (सं० क्लो०) परद्रव्यका अपहरण, चोरो।

चौरङ्गो—एक प्रसिद्ध हठयोगी। किसीका मत है कि उन्हींके नामसे कलकत्ताके दक्षिण भागका रास्ता और उस मुहल्लेका नाम चौरङ्गो पड़ा है। कलकत्ता देखो।

चौरपञ्चाशिका (सं० स्त्री०) १ चोरकवि प्रणीत पञ्चा-शत् श्लोक, चोरकविके बनाये हुए पाँचसौ श्लोक।

चौरकवि देखो।

चौरपुष्पौषधि (सं० पु०) चौरपुष्पिका, अंधाहुलो नाम-का क्षुप।

चौरपूर्व (सं० त्रि०) जिसने पहले चौर्यवृत्ति की थी, जो पहले चोरी करता था।

चौरप्रयोग—जैन मतानुसार चोरोके उपाय बतानेका भाव वा क्रिया। (तत्त्वार्थसूत्र)

चौरस (हिं० वि०) १ जिसका तल समतल हो, बराबर, हमवार। २ वर्गात्मक, चौपहल। (पु०) ३ बरतन चिकने करनेका ठठेरोंका एक औजार। ४ छन्दोभेद, एक वर्णवृत्त।

चौरस—अयोध्याके प्रतापगढ़ जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २५° ५६´ उ० और देशा० ८१° ४७´ पू०में अव-स्थित है।

चौरसा (हिं० पु०) १ शय्याकी वह चद्दर जिस पर ठाकुर जो सुलाये जाते हैं। २ चार तोलेका एक बाट। (वि०) ३ चार रसोंवाला, जिसमें चार रस हों।

चौरसाई (हिं० स्त्री०) १ बराबर करनेको क्रिया। २ बराबर करनेका भाव। ३ चौरस करनेकी मजदूरो।

चौरसाना (हिं० क्रि०) समतल करना, बराबर करना, हमवार करना।

चौरसो (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका चौखूंटा आभूषण जो बांह पर पहना जाता है। इस तरहका गहना सोतापुर आदि जिलोंमें व्यवहार किया जाता है। २ अन्न रखनेका कोठा, बखार। ३ चारस करनेका औजार।

चौरस्ता (हिं० पु०) चतुष्पथ, चौराहा।

चौरा (सं० स्त्री०) गायत्रीविशेष, गायत्रीका एक नाम।

चौरा (हिं० पु०) १ चबूतरा, वेदो, चौतरा। २ देवताओं अथवा भूत प्रेतोंका स्थान जहां चबूतरा बना रहता है। ३ सफेद पूँछवाला बैल। ४ बोड़ा, लोबिया। ५ चौपाल, चौवारा।

चौराई (हिं० स्त्री०) १ शाकविशेष, चौलाई नामका साग। २ एक पक्षी जिसका गला मटमला, डैने चित-कबरे, पूँछ सफेद और कहीं लाल तथा चोंच पोली होती है। ३ अग्रवाल वैश्योंकी एक रिवाज जिसमें किसी उत्सव पर किसोको न्योतनेमें उसके घर हलदीमें रंगे चावल रख आते हैं।

चौरागढ़—मध्यप्रदेशके नरसिंहपुर जिलेका एक भग्न गिरिदुर्ग। यह अक्षा० २२° ४६´ उ० और देशा० ७८° ५८´ पू०के मध्य सातपुराश्रेणीके उपकण्ठ महादेव पर्वतको सबसे ऊँचो चोटी पर अवस्थित है। यह पर्वत समुद्र-पृष्ठसे प्रायः ४२०० फुट और नर्मदा नदीगर्भसे ८०० फुट ऊँचा तथा नरसिंहपुरसे २२ मोल दक्षिण-पश्चिममें

खड़ा है। दुर्गके उत्तर, पूरब और पश्चिमको ओर कई सौ फुट गहरी एक खाई है और दक्षिणमें एक प्राकृतिक पहाड़ दुर्गको रक्षाके लिये खड़ा है। यह दुर्ग मध्य स्थलमें प्रायः १०० फुट गहरा दोनों बगलमें दो दुरारोह पर्वतशृङ्ग पर बनाया गया था। एक चोटो पर प्राचोन गौड़ राजाके राजप्रासादका भग्नावशेष और दूसरे पर नागपुर गवर्मेण्टका सैन्यागार है। यहां बहुतसे सरोवरमें यथेष्ट जल पाया जाता है। इस दुर्गके ऊपर जानेके लिये तीन राहें हैं।

चौरादार—मध्यप्रदेशके मण्डला जिलेमें पूर्ववर्त्ती एक मालभूमि। यह समुद्रतलसे ३२०० फुट ऊँचा है। यहां शीतकालमें बहुत ठंड पड़ती है। ग्रीष्म कालमें भी हवा ठण्ढी रहती है। यहांका जल सुस्वादु है। यदि यह स्थान दुरारोह न होता तो यह एक उत्तम स्वास्थ्यनिवास गिना जाता।

चौरानबे (हिं० वि०) १ नब्बेसे चार अधिक। (पु०) २ एक संख्या जो नब्बेसे चार अधिक होती है। आकार इस प्रकार है—९४।

चौरासिया—गौड़ ब्राह्मणके अन्तर्गत एक ब्राह्मण सम्प्रदाय। इनका वासस्थान जयपुर और जोधपुर राज्यमें है। किसी विद्वान्‌का मत है कि, ये भट्ट मेवाड़ सम्प्रदायमें हैं और इनमेंसे अधिकांश मारवाड़के चौरासो ग्राममें रहते हैं, इसीसे इन्हें चौरासिया कहते हैं।

चौरासी—१ चौरासो ग्राम ले कर बना हुआ एक विभाग। पहले राजस्व वसूल करनेको सुविधाके लिये यह विभाग प्रचलित था। राजपूतानेके उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें इस तरहके बहुतसे चौरासो विभाग देखे जाते हैं। २ मानभूमके अन्तर्गत एक परगना। इसका क्षेत्रफल १६३७५ वर्गमील है। यह पञ्चकोट राजाके अन्तर्गत है।

३ बम्बईके सूरात जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २१° २´ और २१° १७´ उ० तथा देशा० ७२° ३२´ और ७२° ५९´ पू०के मध्य पड़ता है। भूपरिमाण १०२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १६९१०० है। इसमें सूरात और रान्दर नामके दो शहर तथा ६५ ग्राम लगते हैं। तालुकमें एक भी प्रसिद्ध नदी नहीं होनेके कारण जल सिञ्चनकी बहुत असुविधा होती है। तालुकसे प्रायः १८ मील उत्तरमें ताप्ती नदी प्रवाहित है। यहांकी आय दो लाख रुपयेसे अधिक की है।

४ जैनोंका एक तीर्थस्थान जो मथुरासे १ मील दूरी पर है. इसी क्षेत्रसे अन्तिम केवली श्रीजम्बूस्वामी मोक्ष पधारे हैं। यहांका मन्दिर अत्यन्त रमणीय है।

चौरासी (हिं० वि०) १ अस्सीसे चार अधिक। (पु०) २ वह संख्या जो अस्सी और चारके योगसे बनी हो। ३ चौरासी लक्ष योनि। ४ पैरमें पहननेका एक प्रकार का घुंघरू। ५ एक प्रकारकी टांकी जिससे पत्थर काटा जाता है। ६ एक बखानी।

चौरासीलाख उत्तरगुण—जैन-मुनियोंके पालने योग्य कर्तव्यकर्म जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

हिंसा १, अनृत २, स्तेय ३, मैथुन ४, परिग्रह ५, क्रोध ६, मान ७, माया ८, लोभ ९, रति १०, अरति ११, भय १२, जुगुप्सा १३, मनोदुष्टत्व १४, वचनदुष्टत्व १५, कायदुष्टत्व १६, मिथ्यात्व १७, प्रमाद १८, पिशुनत्व १९, अज्ञान २०, इन्द्रियोंकी चञ्चलता २१, ये इक्कीस दोष हैं। इनको अतिक्रम १, व्यतिक्रम २, अतीचार ३, अनाचार ४ दोषोंसे गुणा करने पर चौरासी दोष होते हैं। इन दोषोंके परित्याग करनेसे चौरासी गुण होते हैं। इनको १०० काय संयमसे गुणित करने पर ८४०० गुण होते हैं, दश आलोचना शुद्धिसे और दश धर्मसे गुणा करने पर चौरासी लाख उत्तर गुण होते हैं। ये समस्त गुण जैन मुनियोंके पालनीय हैं। (षट्पाहुड टीका)

चौरासीलाख योनि—जैनमतानुसार जीवोंके जन्म ग्रहण करनेके स्थानको योनि कहते हैं, वे योनि सचित्त शीतसंवृत, अचित्त उष्ण विवृत, सचित्ताचित्त शीत उष्ण संवृतविवृतके भेदसे ९ प्रकारकी हैं और इन्हींके उत्तर भेद करनेसे चौरासी लाख योनियां होती हैं

नित्यनिगोद, इतरनिगोद, पृथ्वी, अप्, तेज और वायु कायिक जीवोंमेंसे प्रत्येकको सात सात लक्ष योनियां हैं। वनस्पति कायिक जीवोंको दश लाख और द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीवोंमेंसे प्रत्येकको दो दो लाख योनियां हैं। देव, नारक, तिर्यञ्चोंको चार लाख, और मनुष्योंको चौदह लाख योनियां हैं। सब मिल कर चौरासी लाख योनियां हैं। इन योनियोंमें हो संसारी

जीव वा जीवात्मा अनेक प्रकारके जन्म धारण करते रहते हैं।

चौराष्टक (सं० पु०) प्रातःकाल समय गानेका एक संकर राग।

चौराहा (हिं० पु०) वह स्थान जहां चारों ओर चार रास्ते या सड़कें मिली हों।

चौरिका (सं० स्त्री०) चोरस्य कार्य्यं भावो वा चोर-वुञ्। द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च। पा ५।१।१३३। १ चोरका धर्म, तस्करता। २ चौर्य्य, चोरी। (मनु १।८२)

चौरिकाक (सं० पु०) काकविशेष, एक तरहका कौवा। महाभारतका मत है कि जो नमक चुराता है वह दूसरे जन्ममें चौरिकाक योनिको प्राप्त होता है।

(भार० १३।१११ अ०)

चौरी (सं० स्त्री०) चौर-ङीष्। १ चौर्य्य, चोरी। २ गायत्रीका नामान्तर, गायत्रीका एक नाम। (देवीभा० १२।६।४९)

चौरी (हिं० स्त्री०) १ बेदी, छोटा चबूतरा। (देश०) २ हिमालय तथा रावी नदीके किनारेके जंगलोंमें होनेवाला एक पेड़। इसके काष्ठ बहुत मजबूत तथा चिकने होते हैं। इसकी छाल औषधके काममें आती है और इसकी लकड़ीसे कुरसी, मेज, अलमारी तथा तसवीरके चौखटे बनाये जाते हैं। ३ एक प्रकारका पेड़। इसकी छाल रंग बनाने और चमड़े सिझानेके काममें आती है।

चौरीभूत (सं० वि०) अचौरश्चौरोभूतः चौर-च्वि-भू-क्त। जो संप्रति चोर हुआ हो, जो पहले चोर न था लेकिन आजकल चोर हो गया हो।

चौर्य (सं० क्ली०) चोरस्य कर्म भावो वा। चोर-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४।

चोरका धर्म, स्तेय, चोरी। इसके पर्याय—स्तैन्य, स्तेय, चौरिका, चौरी और चोरिका। आर्यधर्मशास्त्रोंका मत है जिस द्रव्यमें अपना स्वत्व नहीं है, उसके अपहरण या ग्रहणका नाम चौर्य है। लेकिन साधारण धन अर्थात् जिसमें अपना और दूसरेका अधिकार है उसे ग्रहण करनेको चोरी नहीं कह सकते हैं। मनुके मतसे स्वामी या रक्षककी अनुपस्थिति या अज्ञानतामें दूसरेके धनको अपहरण करनेका नाम चोरी है। यदि स्वामी या रक्षककी उपस्थितिमें भी उसका धन अपहरण कर भयसे छिपा कर रक्खा जाय तो उसे चोरी कहते हैं।

प्राचीनकालमें निम्नलिखित नियमोंसे चोरीका विचार होता था। धनकी चोरी होने पर धनस्वामी राज-पुरुषोंके निकट धनकी अवस्था और चोरीका विवरण विशेष रूपसे कहते थे। विचारकगण धनके मालिकसे चोरी होनेकी सब बातें अच्छी तरह समझ कर ग्राहक या अनुसन्धानकारी पुरुषोंसे चोरोंका अनुसन्धान कराते थे। अनुसन्धानकारी राजपुरुष जिसके पास अपहृत द्रव्य या चोरीका माल पाते या जिसके पैरके चिन्ह गृहस्वामीके बतलाये हुए पदचिन्होंसे मिलते और जिसे एक बार चोरीके अपराधमें दण्ड मिला होता एवं जिसका वासस्थान अज्ञात होता, उसे ही पहले पहल चोर समझ कर गिरफ्तार करते थे। इसके अलावा स्मृतिके मतानुसार जो द्यूतासक्त, वेश्यासक्त और मद्यपायी हैं एवं राजपुरुषोंके प्रश्न करने पर जिसका मुख सूख जाय और बोली भयसूचक मालूम पड़े, जो बिना कारणके ही दूसरेके द्रव्योंकी पूछ ताछ करे, जो अपनी आयसे अधिक खर्च करे, अथवा जो चोरीका माल बेचे, वह चोर समझ कर पकड़ा जा सकता है। इस तरह चोरको गिरफ़ार कर लेनेसे ही दण्ड नहीं मिलता, वरन् यथासाध्य प्रमाण ले कर विचारसे चोर साबित होने पर उसे उपयुक्त दण्ड दिया जाता है।

चोरीके अपराधको दण्डविधि जाननी हो तो चोरी तथा चोरका भेद जानना पड़ता है। आर्य्य प्राड्विवाकोंके मतसे चोरीके तीन भेद हैं। उत्तम, मध्यम और अधम। अच्छे अच्छे द्रव्योंकी चोरीका नाम उत्तम, मध्यम द्रव्योंकी चोरीका नाम मध्यम तथा छोटी छोटी चीजोंकी चोरीका नाम अधम चौर्य है। चोरीके न्यूनाधिक्यमें दण्डको ह्रासवृद्धि करनी पड़ती है।

मट्टीका बरतन, आसन, खाट, हड्डी, काठ, चमड़ा, घास, कच्चे धान तथा पक्के धानको क्षुद्र द्रव्य, रेशमी वस्त्रके सिवा दूसरा वस्त्र, गायके सिवा दूसरा पशु, सोनेके सिवा धातुद्रव्य और धान, जौ प्रभृतिको मध्यम तथा सोना, रत्न, रेशमी वस्त्र, स्त्री, पुरुष, गौ, हाथी, घोड़ा एवं वह द्रव्य जिसमें देवता, ब्राह्मण या राजाका स्वत्व हो, उन्हें उत्तम द्रव्य कहते हैं।

कार्यभेदसे चोर विशेष कर दो भागोंमें विभक्त किये जा सकते हैं—प्रकाश और अप्रकाश। नैगम, वैद्य, कितव, उत्कोचग्राही या वञ्चक, सभ्य, दैवोत्पातविद्, भद्र, शिल्पज्ञ, प्रतिरूप, अक्रियाकारी, मध्यस्थ और कूटसाक्षी, इन सबको प्रकाश तथा उत्क्षेपक, सन्धिभेदक, पन्थापहारी, ग्रन्थिभेदक, स्त्रीहर्त्ता, पुरुषापहारक, गोचर, पशुहर्त्ता और बन्दीग्रहको अप्रकाश चोर कहते हैं।

दण्डविधि–नारदके मतसे नैगम प्रभृति चोरोंके दोषानुसार उन्हें दण्ड देना चाहिये, किन्तु धनके न्यूनाधिक्यमें दण्डको क्रमवृद्धि नहीं करनी चाहिये। वृहस्पतिके मतानुसार जो वाणिज्यव्यवसायी विक्रेय द्रव्योंका दोष छिपा कर उन्हें दूसरे अच्छे द्रव्योंके साथ मिला कर या किसी तरहका संस्कार कर विक्रय करता है, उसे नैगम तस्कर कहते हैं। इसके दण्डमें दुगुना माल खरीददारको और उतना ही माल राजाको देना पड़ता है। औषध, मन्त्र या रोग-निर्णयके बिना जो वैद्य रोगीको अनुपयुक्त औषध दे कर रुपया लेता है, उसे वैद्य तस्कर कहते हैं। इसका दण्ड साधारण चोरों जैसा है। कूटाक्षक्रीड़ाकारी या जुआड़ी, राजप्राप्य धनका अपहारक और वञ्चनाकारीको कितव (ठग)-चोर कहते हैं। जो सभ्य हो कर अनीति वचन बोलते हैं, उन्हें सभ्यतस्कर कहते हैं। उत्कोचग्राही (घूंसखोर)-को उत्कोचक एवं विश्वस्त मनुष्यके वञ्चनाकारीको वञ्चक कहते हैं। इसका दण्ड चिरनिर्वासन है। जिन्हें ज्योतिःशास्त्रमें उत्पात स्थिर करनेकी शक्ति नहीं है और जो छलपूर्वक लोगोंसे रुपये खींचते हैं, उनका नाम दैवोत्पातविच्चोर है। इसका दण्ड साधारण चोरकी भांति है। विचारकको बहुत सतर्क हो कर इसकी दण्डाज्ञा देनी चाहिये। जो दण्डचर्म प्रभृति संन्यासीका भेष धारणपूर्वक छिप कर मनुष्यका अनिष्ट साधन करते हैं, वे भद्रचोर कहलाते हैं। इनका दण्ड प्राणान्त ही है। जो किसी साधारण चीजोंकी चिकनी चुपड़ी बनाते और उन्हें बहुमूल्य कह कर स्त्री तथा लड़कोंके हाथ अधिक दाममें बेचते हैं, उन्हें शिल्पीतस्कर कहते हैं। रुपयेके अनुसार इसका दण्ड देना होता है। जो कृत्रिम सुवर्ण रत्न तैयार कर बेचते हैं, उन्हें प्रतिरूपक कहते हैं। इसके दण्डमें खरीददारको लिया हुआ मूल्य लौटा देना और मूल्यसे दुगुना राजदण्ड देना पड़ता है। जो मध्यस्थ हो कर स्नेह या लोभवश दूसरेको ठगता है, उसे मध्यस्थतस्कर कहते हैं। इसका दण्ड दुगुना है। जो साक्षी यथार्थ बात छिपा कर झूठ बोलता है, उसे साक्षीतस्कर कहते हैं। उसका दण्ड साधारण चोरोंसे द्विगुण है। (वृहस्पति)

विष्णुस्मृतिमें जुआ खेलमें जुआड़ियोंका करच्छेद करनेका विधान है। मनुने जुआड़ियोंको छुरासे खंड खंड करनेका विधान दिया है।

अप्रकाश चोरका दण्ड—जो धनस्वामीको अनवधानता देख कर उनकी उपस्थितिमें ही धन अपहरण करते हैं, उनका नाम उत्क्षेपक है। याज्ञवल्क्यमें इसका दण्ड पहले अपराधमें करच्छेद, दूसरेमें एक हाथ और एक पैर काट डालना लिखा है। जो घरके सन्धिस्थानमें रह दीवार काट कर घरमें प्रवेश करते और धन चुराते हैं, उनका नाम सन्धिभेदक या सेंधदेनेवाला चोर है। इसका दण्ड दोनों हाथोंका काटना और शूलारोपण है। वृहस्पतिने सन्धिभेदक चोरोंके हाथ काटनेकी व्यवस्था न कर सिर्फ शूली देनेकी ही व्यवस्था की है। जो भयानक स्थानमें या गहन कुंजमें पथिकोंका धन लूट लेते हैं, उनका नाम पान्थमुट् है। इसका दण्ड गला बांध कर वृक्ष पर लटका देना है। जो परिधेय वस्त्रमें बंधे हुए रुपयेको काट लेता है, उसे ग्रन्थिभेदक या गंठकटा कहते हैं। वृहस्पतिके मतसे इसका दण्ड अंगुष्ठ और तर्जनीका काट डालना है। मनुके मतसे प्रथम बार तर्जनी और अङ्गुष्ठका काटना, द्वितीय बार हाथ पैरोंका काटना और तृतीय बार प्राणदण्ड देना उचित है। स्त्री-हर्त्ता चोरको जलते हुए लोहेसे दागनेका विधान है। पुरुष-हर्त्ता चोरके हाथ और पैर काट कर चौराहे पर रख देना कर्त्तव्य है। वृहस्पतिके मतानुसार गौ चुरानेवालोंकी नाक काटनेके बाद हाथ और पैर बांध कर जलमें डुबा देना चाहिये।

नारदके मतमें कन्यापहारकको प्राणदण्ड देना उचित है तथा स्त्री, हाथी घोड़े प्रभृतिके चोरोंको यथा सर्वस्व दण्ड देनेका विधान है। पशुचोरका दण्ड तीक्ष्ण अस्त्र द्वारा अर्द्ध पदच्छेदन है। उन्हींके मतानुसार महा-

पशु चुरानेसे उत्तम साहस, मध्यम पशु चुरानेसे मध्यम साहस और क्षुद्र पशु चुरानेसे क्षुद्र साहसका दण्ड देना चाहिये। याज्ञवल्क्यके मतसे बन्दीग्रह प्रभृति चोरको शूलि देना विधेय है। स्मृतिके मतसे विचारकको उचित है कि वे चोरोंसे अपहृत द्रव्य या उसका मूल्य अदा कर धनस्वामीको अर्पण कर यथाविधि चोरोंको दण्ड देवें।

इसके सिवा अपहृत द्रव्यानुसार चोरोंको भिन्न भिन्न दण्ड देनेका विधान है।

मनुके मतमें दश घड़ेसे अधिक धान चुराने पर प्राणान्त और उससे कम चुराने पर अपहृतद्रव्यके मूल्यसे ११ गुना; मुख्य रत्न चुराने पर प्राणान्त; पचाससे अधिक सोना, चाँदी प्रभृति धातु या उत्कृष्ट वस्त्र चुराने पर हस्तच्छेदन; पचाससे न्यून होने पर अपहृत द्रव्यसे ११ गुना, काष्ठ, भाण्ड, तृणादि, मृण्मयपात्र, वेणु और वेणुभाण्ड, स्नायु, अस्थि, चर्म, शाक, आर्द्रमूल, फलमूल दुग्ध, गुड़, लवण, तैल, पक्वान्न, मत्स्य, औषध प्रभृति अल्प मूल्यकी चीजें चुरानेसे अपहृत द्रव्यसे पांच गुना दण्ड देना उचित है। कपास, गोमय, गुड़, दधि, क्षीर, मट्ठा, तृण, वेणु, वेणुनिर्मित भाण्ड, लवण, मृण्मय प्रभृति पात्र, भस्म, छाग, पक्षी, घृत, मांस, शहद, मद्य भात, पक्वान्न प्रभृति अपहरण करने पर अपहृत द्रव्योंसे दुगुना दण्ड देना चाहिये।

जिस चोरीमें जिस तरहका दण्डविधान लिखा गया है, शूद्र चोर होने पर उसका ८ गुना, वैश्य होने पर १६ गुना, क्षत्रियके लिये ३२ गुना तथा ब्राह्मण चोरके लिये ६४ या १२८ गुना दण्ड देना कर्त्तव्य है।

यदि लघुवृत्ति ब्राह्मण पथिक प्राणरक्षार्थ खेतसे दो ईख या मूली उखाड़ ले तो इसमें किसी तरहका दण्ड नहीं है। इसी तरह यदि क्षुधातुर पथिक एक मुट्ठी चना, धान, गेहूं, जौ और मूंग अपहरण करे तो किसी तरहका दण्ड देना उचित नहीं है। कर्मशून्य किसी मनुष्यको आहार न मिलने पर वह एक दिनके उपयुक्त चोरी कर सकता है, इसमें भी राजदण्ड नहीं है।

धर्मशास्त्रानुसार जो मनुष्य चोरको धन, निवास, स्थान, अग्नि, जल, उपदेश, चोरी करनेका कोई बल या चोरी करनेके लिये दूरदेश जानेका राह खर्च दे सहायता करे उसके लिये भी उत्तम साहस दण्ड विधेय है। (वीरमित्रोदय) चोरोंका प्रायश्चित्त और फल जाननेके लिए प्रायश्चित्त और कर्मविपाक शब्द देखो।

चौर्यगणना (सं० स्त्री०) ज्योतिःशास्त्रानुसार अपहृत द्रव्यकी अवस्था, चोरका नाम तथा अपहृत पदार्थ कहां है और मिलेगा या नहीं इत्यादि विषय जिस प्रक्रियामें निरूपित हैं, उसीका नाम चौर्यगणना है। ज्योतिःशास्त्रमें गणना करनेके भिन्न भिन्न नियम लिखे हैं जिनमेंसे लाग्निक, पञ्चपक्षी और प्रश्नाक्षरानुसारी ये तीन प्रक्रियायें प्रशस्त हैं। प्रश्नदीपिका, चंडेश्वर, होराषट्पञ्चाशिका और प्रश्नकौमुदी प्रभृतिका मत ले कर यहां चौर्यगणना लिखी जाती है। गणना आरंभके पहले ज्योतिषी मन स्थिर कर एक खड़ियामिट्टीको डली ले कर निर्जन स्थानमें बैठें और प्रश्नकर्त्ता पवित्र भावसे फल और दूब ले कर गणकसे प्रश्न करें। ज्योतिषीको प्रश्नलग्न स्थिर कर गणना करनी चाहिए। इस गणनामें प्रश्नलग्नके प्रति विशेष लक्ष्य रखना पड़ता है। लग्न स्थिर करनेमें इतस्ततः ध्यान रखनेसे गणनाका फलाफल ठीक नहीं होता। इसका नाम लाग्निक चौर्यगणना है।

प्रश्नदीपिकाके मतसे यदि प्रश्नलग्न रवि, मङ्गल, शनि प्रभृति पापग्रहों द्वारा दृष्ट या अधिष्ठित हो अथवा वह लग्न यदि पापग्रहका नवांश हो तो उद्दिष्ट द्रव्य चोरसे या है, यह स्थिर करना होगा।

"पापेक्षिते पापयुते पापांशसंगतेऽपिवा।
तस्करेण हृतं द्रव्यं वक्तव्यं विचक्षणैः॥" (प्रश्नदीपिका)

लाग्निक गणनामें प्रश्नलग्नानुसार चोरकी अवस्था, प्रश्न लग्नकी अपेक्षा द्वितीय लग्न या गृहमें अपहृत वस्तुकी अवस्था और चतुर्थ गृहके अनुसार अपहृत वस्तु कहां है, उसका निरूपण किया जा सकता है। इसके सिवा सप्तम गृहके अधिपति चौर्यके अधिनायक होते हैं अर्थात् सप्तम गृहानुसार किसने चोरी की है, उसका निर्णय हो सकता है एवं लग्नाधिपतिके अनुसार धन स्वामी भी सूर्य और चन्द्र द्वारा पता लगा सकता है कि अपहृत द्रव्य किसके पास है।

होराषट्पञ्चाशिकाके मतसे नवांश द्वारा अपहृत द्रव्य, द्रेक्काण द्वारा चोर, राशिद्वारा दिशा, देश और काल तथा लग्नाधिपति द्वारा चोरको जाति और अवस्था जानी जा सकती है।

नवांश द्वारा द्रव्य निरूपण—मेषके प्रथम भागमें प्रश्न होने पर तामा, रांगा अथवा चतुष्कोण या त्रिकोण द्रव्य मृत्तिका निर्मित पात्र तथा मेषके द्वितीयांशमें प्रश्न होने पर मूल, जलजद्रव्य, स्निग्ध, क्षार या अम्लरसयुक्त कोई पात्रादि अपहृत होनेका पता लगता है। इसी तरह दूसरे दूसरे अंशोंमें भी स्थिर करना चाहिए।

प्रश्नगणना शब्द देखो।

द्रेक्काण द्वारा चोरका निर्णय—मेषके प्रथम द्रेक्काणमें प्रश्न होने पर चोर पुरुष तथा उस चोरका परिधेय वस्त्र शुक्लवर्ण स्थिर करना चाहिये।

राशिके अनुसार दिशा, देश और कालका निर्णय—यदि मेष, सिंह या धनु प्रश्न लग्न हों तो अपहृत वस्तु पूरबकी ओर; वृष, कन्या और मकर लग्न हों तो दक्षिण की ओर; मिथुन, तुला या कुम्भ लग्नमें प्रश्न हो तो पश्चिमकी ओर तथा कर्कट, वृश्चिक या मीन लग्नमें प्रश्न हो तो चुराई हुई वस्तु उत्तरकी ओर है, ऐसा समझना चाहिये। देश गणनाका नियम साधारण प्रश्नगणनाके समान है। मेष, वृष प्रभृति छह लग्नोंमें प्रश्न हो तो रात्रि तथा सिंह, कन्या प्रभृति छह लग्नोंमें प्रश्न हो तो चोरीका समय दिवस स्थिर करना चाहिए। साधारण चोरकी आकृति प्रश्नगणनाके नियमसे स्थिर करनी चाहिये। प्रश्नाङ्क कौमुदीके मतसे यदि प्रश्न लग्न स्थिर राशि हो तो कोई बन्धुलोक, चर या कोई द्व्यात्मक हो तो पार्श्वस्थ किसी व्यक्तिने चोरी की है जानना चाहिये।

होराषट्पञ्चाशिकाके मतानुसार वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ लग्नमें अथवा इन राशियोंके नवांशमें या प्रश्न लग्नके नवांशमें प्रश्न हो तो समझें कि किसी आत्मीयने चोरी की है और वह वस्तु अब तक उसी स्थानमें है। इसके विपरीत होनेसे द्रव्य किसी दूसरेसे अपहृत हो कर दूसरे जगह भेज दिया गया है ऐसा स्थिर करना चाहिये। वर्गीत्तमके सिवा द्व्यात्मक लग्नमें प्रश्न होने पर पार्श्वस्थ व्यक्तिने वस्तु चुराई है और अब तक उसीके पास मोजूद है जानना चाहिये।

प्रश्नकौमुदीके मतसे लग्नाधिपतिकी दृष्टि लग्नमें रहनेसे अपने कुटुम्बमेंसे कोई चोर होगा तथा लग्नाधिपतिके स्वीय मित्रकी दृष्टि ग्रहके घरमें रहे तो अपना मित्र चोर और प्रश्नकालमें लग्नके षड्वर्गाधिपति यदि कोई लग्नस्वामीका शत्रु हो और वह यदि उस लग्नको देखता हो, तो किसी दूसरे पुरुषने द्रव्य चुराया है ऐसा निरूपण करना चाहिये। यदि प्रश्न लग्न पर रवि और चन्द्र इन दोनों ग्रहोंकी दृष्टि हो, तो चोर गृहवासी और यदि सिर्फ एककी दृष्टि हो तो प्रतिवेशी कोई व्यक्ति चोर होगा। यदि दोनों ग्रह लग्न या लग्नस्वामीके प्रति दृष्टि करते हों तो गृहस्वामी ही चोर होगा। किन्तु चन्द्र और सूर्य अपने घरमें रह कर लग्न दर्शन करते हों तो परिजनोंमेंसे कोई चोर है ऐसा स्थिर करना चाहिये। प्रश्नकालमें चन्द्र और सूर्य मिल कर यदि किसी द्व्यात्मक राशिमें रहें तो निर्णय करना चाहिये कि चोरने गृहस्वामियोंकी अनुपस्थितिमें आ कर चोरी की है। प्रश्नकालमें सप्तम गृहके अधिपति दूसरे या दशवें स्थानमें हों तो जानना चाहिये कि किसी दास या दासीने चोरी की है। सप्तम गृहके अधिपति पुरुष हो तो दास और स्त्री हो तो दासीके चोर स्थिर करना चाहिये। सप्तम गृहके अधिपति पापराशिके साथ मिल कर यदि केन्द्रमें रहें तो विश्वस्त आत्मीय व्यक्ति तथा सप्तम गृहके अधिपति शुभग्रहके साथ केन्द्रमें अवस्थान करते हों तो अनात्मीय किसी व्यक्तिको चोर जानना चाहिये। यदि सप्तम गृहके अधिपति अष्टम गृहमें रहते हों तो चोर विनष्ट या निरुद्देश हो गया है इस तरह विवेचन करना चाहिये। चन्द्र सप्तम गृहके अधिपति हों तो माता, सूर्य सप्तम गृहके अधिपति हों तो पिता, शुक्र सप्तम गृहके अधिपति हों तो पत्नी, शनि सप्तम गृहके अधिपति हों तो भृत्य, वृहस्पति सप्तमगृहके अधिपति हों तो गृहस्वामी तथा मङ्गल हों तो भ्राता, पुत्र, मित्र या आत्मीय स्वजनको चोर समझना चाहिये। प्रथम द्रेक्काणमें प्रश्न होनेसे नष्ट वस्तु घरके द्वारदेशमें, द्वितीय द्रेक्काणमें प्रश्न होनेसे अपहृत वस्तु घरमें तथा तृतीय द्रेक्काणमें प्रश्न होनेसे नष्ट वस्तु घरके बाहर है ऐसा निश्चय करना चाहिये। सिंहलग्नमें प्रश्न होनेसे अपहृत द्रव्य पृथ्वीमें

गाड़ा हुआ, धनु या तुलामें प्रश्न होनेसे जलमें डुबाया हुआ, कन्याराशिमें प्रश्न होनेसे अस्त्रशालामें, मेष होनेसे घरमें, मकर होनेसे अग्निके निकट या दृढ़ भूमिमें, कुम्भ होनेसे मक्खियों स्थान, गोस्थान या अजस्थानमें, मिथुन होनेसे खेतमें धानके निकट तथा कर्कट, मीन या मेषमें प्रश्न लग्न होनेसे अपहृत वस्तु घरमें या जमीनमें गाड़ी गई है ऐसा स्थिर करना चाहिये।

चोरावट्प्रश्नाशिका, प्रश्नकौमुदी और प्रश्नदीपिका प्रभृति ज्योतिर्ग्रन्थ देखो।

चौर्य्यवृत्ति (सं० स्त्री०) चौर्य्यरूपा वृत्तिः। चोरका काम, चोरी।

चौर्य्यव्यसन—जैनमतानुसार द्यूतादि सात व्यसनोंमेंसे एक व्यसन।

चौर्यानन्द—जैनमतानुसार रौद्रध्यानका एक भेद।
(तत्त्वार्थसूत्र, अ०९,सू० ३५)

चौल (सं० क्ली०) चूड़ा प्रयोजनमस्य चड़ा चूड़ा-अण् डस्य लः। चौर देखो।

चौल (चेउल)-बम्बईके कोलाबा जिलेके अन्तर्गत अलीबाग तालुकका एक शहर। यह अक्षा १८°३४´उ० और देशा ७२°५५´पू० बम्बईसे ३० मील दक्षिण कुण्डलीक नदीके बायें किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६५१७ है। चम्पावती और रेवती क्षेत्र पर शहरका नाम करण हुआ है। प्रवाद है, कि जब कृष्ण गुजरातमें राज्य करते थे, तभीसे यह शहर स्थापित हुआ है। युएनचुयङ्गने अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें इस शहरका नाम चिमोला लिखा है, किन्तु ग्यारहवीं शताब्दीमें अरब भ्रमणकारियोंने अपने ग्रन्थोंमें इसे सैमुर और जैमुर नामसे निर्णीत किया है। १५०५ ई०में सबसे पहले पुर्त्तगीज चौलको आये थे। १५०८ ई०को पुर्त्तगीज तथा मुसलमानोंमें घनघोर लड़ाई छिड़ी जिसमें पुर्त्तगीजोंकी हार हुई। १५१६ ई०में पुर्त्तगीजोंने यहां एक कारखाना स्थापित किया। इसके पांच वर्ष बाद यह शहर बीजापुरके जंगी अफसरों द्वारा दग्ध कर डाला गया। १५२८ ई०में गुजरात तथा तुर्कके जंगी जहाजोंने इस पर आक्रमण किया, परन्तु पुर्त्तगीज और अहमदनगरकी सेना द्वारा वे मार भगाये गये। १५२९ ई०में गुजराती सेनाने इसे अच्छी तरह लूटा। १६०० ई०में यह मुगलोंके हाथ लगा। १५८३ ई०में डचयात्री जीन ह्यूज (Jean Hegues) यहां आये थे। वे अपने ग्रन्थमें यों लिख गये हैं, चौल एक प्राचीन स्थान है तथा वाणिज्यके लिये बहुत प्रसिद्ध है। रेशम और सूतीके अच्छे अच्छे वस्त्र बुने जाते हैं; यहां एक बन्दर भी है। १७४० ई०में चौल महाराष्ट्रोंके अधिकारभुक्त हुआ। यहां पुर्त्तगीजोंको कीर्त्तिका भग्नावशेष, मसजिद, बौद्ध गुफा स्नानागार तथा राजकोटका किला देखने योग्य है। इसके सिवा यहां श्री हिङ्गलाजका एक मन्दिर है, जिसमें आशापुरी और चतुःशृङ्गीकी मूर्त्तियां भी स्थापित हैं। यह मन्दिर बहुत प्राचीन है। शहरमें केवल दो विद्यालय हैं।

चौलकर्म (हिं० पु०) चूड़ाकर्म, मुण्डन। चूड़ाकरण देखो।

चौलड़ा (हिं० वि०) चार लड़ोंवाला, जिसमें चार लड़ें हों।

चौलदेशी—दक्षिणप्रान्तस्थ ब्राह्मण जातिकी एक श्रेणी। इन लोगोंका वासस्थान विशेष कर कोल्हापुरकी ओर अधिक है। कोल्हापुरका प्राचीन नाम चौलदेश है, इसलिये यहांके ब्राह्मण चौलदेशी नामसे प्रसिद्ध हैं। विद्या-स्थितिमें ये लोग बहुत पीछे पड़े हुए हैं।

चौला (देश०) बोड़ा, लोबिया।

चौलाई (हिं० स्त्री०) हाथ भर ऊंचाईका एक पौधा। इसका साग खाया जाता है। इसके डंठलोंका रंग लाल होता है। यह हलकी, रूखी, और शीतल पित्त-कफ-नाशक, मलमूत्रनिःसारक, विषनाशक और दीपन मानी जाती है।

चौलि (सं० पु०) चौलस्यापत्यं चौल-इञ्। प्रवर ऋषि-विशेष, एक ऋषिका नाम।

चौलक्रिया (सं० पु०) जैनोंके षोड़श संस्कारोंमेंसे एक, इसको मुण्डनक्रिया वा केशवापकर्म भी कहते हैं। यह संस्कार बालकके जब केश बढ़ जाते हैं तब और बालकको उम्र ५ वर्षकी पूरी न हो पावे, उससे पहले ही किया जाता है। पौठिकाके मन्त्रोंके बाद इसका मन्त्र पढ़ा जाता है, यथा—

"उपनयनमुण्डभागी भव ॥ १ ॥ निर्ग्रन्थ मुण्डभागी भव ॥ २ ॥
निष्क्रान्तिमुण्डभागी भव ॥ ३ ॥ परमनिस्तारक केशभागी भव ॥ ४ ॥
सुरेन्द्रकेशभागी भव ॥ ५ ॥ परमराज्यकेशभागी भव ॥ ६ ॥
आर्हन्त्यराज्यकेशभागी भव ॥ ७ ॥"

अनन्तर अर्हत्-मूर्त्तिके चरणामृतसे केशोंको भिगो कर आशिकाके तण्डुल बालकके मस्तक पर डाले जाते हैं और बालकको दूसरी जगह बैठा कर शिखाके अतिरिक्त समस्त मस्तक मुण्डन किया जाता है। इसके बाद बालकको गन्ध-जलसे नहलाया जाता है और मस्तकादि अंगों पर चन्दनादि गन्ध-द्रव्य एवं आभूषण पहनाये जाते हैं। तदनन्तर मुनिके अथवा अर्हत्-मूर्तिके दर्शन कराते हैं एवं मन्दिरमें कुछ सामग्री भेंट दे कर घर लौटते हैं। गृहस्थाचार्य बालकके मस्तक (शिखास्थल) पर चन्दनसे स्वस्तिक बना देते हैं। तत्पश्चात् गरीबोंको दान और बन्धु-बान्धवोंको भोजन कराते हैं तथा घरमें माङ्गलिक गीत गाये जाते हैं। (आदिपुराण)

किसी किसीके मतसे इसी अवसर पर कर्णवेध भी हो सकता है, जिसका मंत्र इस प्रकार है—

"ओँ ह्रीँ श्रीँ अर्हं बालकस्य ह्रः कर्णनासावेधनं करोमि अ सि आ उ सा स्वाहा ।"

चौली (देश०) बोड़ा, लोबिया।

चौलुक्र (सं० त्रि०) चौलुक्यस्य छात्र चौलुक्य कण्वादिः अण् यलोपः। चौलुक्यके छात्र।

चौलुक्य (सं० पु०-स्त्री) चुलुकस्य गोत्रापत्यं चुलुक गर्गादि०। १ चुलुक नामक ऋषिके गोत्रापत्य, चुलुक ऋषिके वंशज। २ गुजरातके अनहिलपत्तनका एक पराक्रान्त राजवंश। अभी उस वंशके लोग सोलङ्की नामसे प्रसिद्ध हैं। चाहमान, परमार प्रभृति अग्निकुलोत्पन्न चार श्रेणियोंमेंसे चालुक्य एक है। राजपूतानाके भट्ट कवियोंका कथन है कि कन्नौजमें राठोर राजाओंके अभ्युदयके पहले सोलङ्कीगण गङ्गाप्रवाहित सुरु नामक स्थानमें राज्य करते थे। उसके बाद ये ही गुजरातमें पराक्रमी गिने जाने लगे।

हेमचन्द्र और लेशजाके तिलकगणि-विरचित द्व्याश्रय, धर्मसागर-प्रणीत प्रवचनपरीक्षा, विचारश्रेणी, रासमाला, सोमेश्वरकृत कीर्त्तिकौमुदी और सुरथोत्सव, कुमारपालचरित प्रभृति संस्कृत ग्रन्थोंमें अनहिलपुरके प्रसिद्ध चौलुक्य राजाओंका विवरण भली भांति वर्णित है। उक्त ग्रन्थोंमें सब जगह एक ही तरहकी बातें लिखी नहीं हैं, बहुत जगह मतभेद भी पाया जाता है, जहां तक समानता पाई गई, उसीका सारांश यहां लिखा गया है।

अनहिलवाड़-पाटनके चौलुक्य राजाओंमेंसे सबसे पहले मूलराजाका नाम पाया जाता है। मूलराजका कल्याणाधिपति भुवनादित्यके पौत्र और चापोत्कटराज सामन्तसिंहकी बहन लीलादेवीके पुत्र थे। सामन्तसिंहकी मृत्युके बाद मूलराज उत्तराधिकार-सूत्रसे ९९८ विक्रम सं०में अपने मामाके राज्य-सिंहासन पर बैठे। उन्होंने ग्राहरिपु प्रभृति राजाओंको पराजित कर ५५ वर्ष तक प्रबल प्रतापसे राज्य भोग किया था।

बाद उनके प्रिय पुत्र चामुण्डराजने १०५३ संवत्में राज्य सिंहासन पर बैठ १०६६ सम्वत् तक राज्य किया। चामुण्डराजके तीन पुत्र थे, वल्लभराज, दुर्लभराज और नागराज।

द्व्याश्रय नामक ग्रन्थमें लिखा है कि, चामुण्डराजने किसी समय कामोन्मत्त हो अपनी बहन काचिनीदेवीके साथ संभोग किया था। उस महापापके प्रायश्चित्तके लिए उन्होंने कुमार वल्लभदेवको राज्यभार सौंप कर काशीको प्रस्थान किया। काशीसे लौट कर उन्होंने वल्लभदेवसे कहा, "यदि तुम यथार्थ मेरे पुत्र हो तो शीघ्र ही जा कर मालवराजको दण्ड दो।" वल्लभ ससैन्य मालवको चल पड़े, किन्तु रास्तेमें माता वा चेचकका रोगसे उनका देहान्त हो गया। (द्व्याश्रय० ७ स०)

किसी किसी ऐतिहासिक ग्रन्थके मतानुसार वल्लभने सिर्फ ६ मास तक राज्य किया था।

चामुण्डराज प्रिय पुत्रके मृत्यु-संवादसे अत्यन्त शोकातुर हो दुर्लभको सिंहासन पर बैठा कर आप भरुकच्छके निकटवर्त्ती शुक्लतीर्थको चले गये और वहीं उनकी मृत्यु हो गई।

दुर्लभराज जिनेश्वरसूरिके निकट जैनधर्मका उपदेश सुनते थे। उनकी बहनके साथ मारवाड़के राजा महेन्द्रका विवाह हुआ था, तथा उनने भी स्वयम्बरमें महेन्द्र राजाकी बहनका पाणिग्रहण किया था। स्वयम्बरमें पाई हुई मारवाड़-राजकन्याको लाते समय उनके कर-प्रार्थी मालव, हूण, माथुर, काशी, अन्ध्र प्रभृति राजाओंके साथ दुर्लभराजका घमसान युद्ध हुआ, किन्तु उस महायुद्धमें दुर्लभकी ही जीत हुई।

दूर्लभराजको कोई संतति न थी। वे नागराजके पुत्र भीमको बहुत चाहते थे। प्रबन्धचिन्तामणिमें लिखा है कि दूर्लभने भीमदेवको राज्य प्रदान कर काशीकी यात्रा की, रास्तेमें मालवके मञ्जुराजने उनका राजचिह्न छीन कर उन्हें बहुत अपमानित किया था। अन्तमें काशीधाम जा कर दुर्लभराजको मृत्यु हो गई। अपमानकी घटना सुन कर भीमदेवने उसका बदला लेनेके लिये मुञ्जराजके विरुद्ध अस्त्रधारण किया।

दूर्लभने १०७८ सम्वत् अर्थात् ११ वर्ष ६ मास तक राज्य किया था। भीमदेव एक प्रसिद्ध महायोद्धा थे। उन्होंने सिन्धुराज हम्मुक और चेदिराजको पराजित किया था। उनके क्षेमराज और कर्ण नामके दो पुत्ररत्न थे।

ज्येष्ठ क्षेमराजने पितृराज्य ग्रहण नहीं किया था। उनके पुत्रका नाम देवप्रसाद था। देवप्रसादके त्रिभुवनपाल नामके एक पुत्र थे।

कर्णदेव पितृसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उन्होंने कदम्बराज जयकेशिकी कन्या मयाणल्लदेवीका पाणिग्रहण किया था। उनके गर्भसे जयसिंह सिद्धराज नामके एक पुत्र हुए। जयसिंहने उज्जयिनीराज यशोवर्मा और बर्बरको पराजित किया था। अवन्तिराजको जीत कर इन्होंने सिद्धपुरमें सरस्वतीनदीके किनारे रुद्रमाल नामक एक वृहत् शिवालय और जैन-तीर्थङ्कर महावीरस्वामीका मन्दिर निर्माण कर बहुत यश लूटा था। ये ११९८ विक्रम-सं० तक राज्य करनेके बाद कुमारपालको राज्य प्रदान कर परलोक सिधारे थे।

द्वाश्रयका मत है कि कुमारपाल उक्त त्रिभुवनपालके पुत्र थे। ये वि० सं० ११९८ में सिंहासन पर बैठे थे। इनके यत्नसे जैनधर्मको अधिक उन्नति हुई थी।

१२३० सम्वत्में कुमारपालको मृत्युके बाद उनके भतीजे अजयने राज्य-सिंहासन पर आरोहण किया। बाद बालमूलने २ वर्ष, भीमने ६३ वर्ष और तिहुनपाल या २य त्रिभुवनपालने ४ वर्ष राज्य किया। उनके समयमें कोई विशेष घटना न हुई थी।

१३०२ सम्वत्में चौलुक्यराज्य बघेला-राजाओंके अधीन आ गया। बघेला देखो।

किसी किसी पुस्तकमें चौलुक्यकी जगह चालुक्य लिखा गया है। किसीके मतसे चौलुक्य और चालुक्य ये दोनों स्वतन्त्र वंश हैं। किन्तु चालुक्य-राजाओंने कल्याणमें बहुत दिनों तक राज्य किया था, यदि वहींसे मूलराज अनहिलपुर आ कर रह गये हों, तो चौलुक्य वंशके ही कहे जा सकते हैं। नीचे चौलुक्यराज्य वंशावली लिखी जाती है—
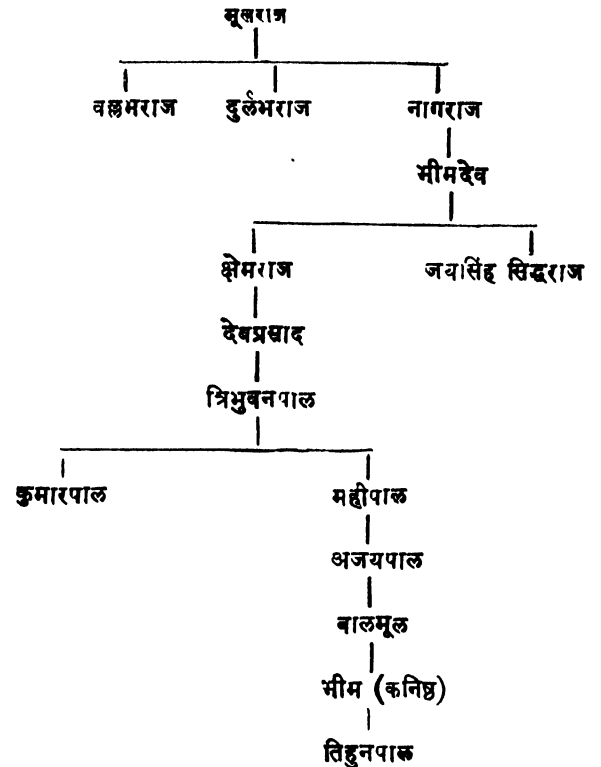
चौवन (हिं० वि०) १ जो गिनतीमें पचाससे चार ज्यादा हों। (पु०) २ वह संख्या जो पचास और चारके योगसे बनी हो।

चौवा (हिं० पु०) १ हाथको चार अंगुलियोंका समूह। २ वह तागा जो अंगूठेके सिवा चारों अंगुलियोंमें लपेटा गया हो। ३ चार अंगुलका माप। ४ चार बूटियोंका ताशका एक पत्ता।

चौवाड़ी—१ इलाहाबाद जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २५° ८´ उ० और देशा० ८२° १४´ पू०, इलाहाबादसे कुन्स गिरिसङ्कट हो कर रेवा जानेके रास्ते पर इलाहाबादसे २७ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है।

२ चतुष्पाठी, टोल, वह विद्यालय जहां सिर्फ वेद, वेदान्त प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ पढ़ाये जाते हों।

चौवालीस (हिं० वि०) १ जो चालीससे चार अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो चालीस और चारके योगसे बनी हो।

चौस (हिं० पु०) चार बार जोता हुआ खेत।

चौसर (हिं० पु०) एक प्रकारका खेल, चौपड़, नर्द-बाजी। दो मनुष्य भिन्न भिन्न रंगोंकी चार चार गोटियां और तीन पासे ले कर यह खेल खेलते हैं। दोनों खेलनेवाले दो दो रंगोंकी आठ गोटियां ले कर बारी बारीसे पांसे फेंकते हैं। पांसोंके बदले जब सात सात गोटियां ले कर यह खेल खेला जाता है तो उसे पचीसी कहते हैं। चतुरङ्ग देखो। २ इस खेलको बिसात। यह प्रायः कपड़े हीकी बनती है। इसके मध्यभागमें एक थैलीसी होती है जिसमें खेल खतम हो जाने पर गोटियां रख देते हैं।

चौसरी (हिं० स्त्री०) चौसर देखो।

चौसा—बिहारके अन्तर्गत शाहाबाद जिलेका एक थाना तथा इष्ट इण्डिया रेलवेका एक स्टेसन। यह अक्षा० २५° ३१´ उ० और देशा० ८३° ५४´ पू०के मध्य अवस्थित है। यह शहर कर्मनाशा नदीके बक्सारसे ४ मील पश्चिममें अवस्थित है। इसी स्थान पर प्रसिद्ध शेरशाहने १५३८ ई०में दिल्लीश्वर मुगल-सम्राट् हुमायूंको पराजित किया था। हुमायूंने कई एक अनुचरोंको साथ ले गङ्गा पार हो कर प्राण रक्षा की थी। किन्तु लगभग ८०० मुगल-सैन्य इस उद्यममें विनष्ट हुए थे।

२ शाहाबाद जिलेकी एक नहर तथा शोण नदीकी पयःप्रणालियोंकी एक शाखा। इस खालकी लम्बाई ४० मील है। यह कृषि-कार्यकी सुविधाके लिये बनायी गयी है।

चौसिंघा (हिं० वि०) जिसके चार सींग हों।

चौसिंहा (हिं० पु०) चार ग्रामोंको सीमा मिलनेकी जगह।

चौहट (हिं० पु०) चौहट्टा देखो।

चौहट्टा (हिं० पु०) १ वह स्थान जहां चारों ओर दुकान हों, चौक। २ वह स्थान जहां चारों ओरसे चार रास्ते आ मिले हों, चौरस्ता, चौराहा।

चौहत्तर (हिं० वि०) १ जो सत्तरसे चार अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो सत्तर और चारके योगसे बनी हो।

चौहद्दी (हिं० स्त्री०) १ एक अवलेह, जो जायफल पिप्पली, काकड़ासींगी और पुष्करमूलके चूर्णको शहदमें मिला कर बनाया जाता है। २ चारों ओरकी सीमा।

चौहरा (हिं० वि०) १ चार परतवाला, जिसमें चार तह हों। २ चतुर्गुण, चौगुना। (पु०) ३ पानके बीड़े लपेटनेका पत्ता, चौघड़ा।

चौहलका (हिं० पु०) गलोचेकी एक बुनावट।

चौहातिया—गुजरातके अन्तर्गत मुचाकान्था-निवासी मियाना या मालिया जातिके समाजपति। मियाना जातिके बहुतसे लोग मुचु नदीके तीर पर रहते हैं। इनमेंसे बहुत मत्स्यजीवी हैं।

चौहान—राजपूतोंकी एक प्रसिद्ध शाखा। इनको चाहमान भी कहते हैं। दिल्लीके अन्तिम हिन्दुराज प्रसिद्ध वीर पृथ्वीराजने इसी वंशमें जन्म लिया था। ये लोग मालव और राजपूतानाके नाना स्थानोंमें फैल गये और भिन्न भिन्न परिवारोंमें विभक्त हो गये हैं।

चौहानोंकी उत्पत्तिके विषयमें भिन्न भिन्न मत प्रचलित हैं। किसीके मतसे—आबूपहाड़की ऊंची शिखर पर स्थित अनलकुण्डसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है और ये अग्निकुलसम्भूत हैं। परन्तु चौहनोंका साधारण-गोत्र वात्स्य होनेके कारण बहुतसे लोग उक्त मतका परिहार करते हैं और अनुमान करते हैं कि, भृगुकुलोद्भव जामदग्न्य वत्स्यके वंशसे इनकी उत्पत्ति हुई है। पृथ्वीराजके राजत्वकालमें चौहानोंने अपनेको वात्स्यवंशका बताया है। कुछ भी हो, खिची चाहमानोंके (चौहानोंके) कुल-कवि मूकजीने चौहानोंको सिर्फ "अनलोद्भव" बतलाया है; तथा चाहमान शब्दके व्युत्पत्ति-अर्थमें भी अनलोद्भव होगा, ऐसा जान पड़ता है। बहुतोंका मत है कि इस जातिका यथार्थनाम चतुरमान है; चतुरका अर्थ है चार अर्थात् अनलोद्भव परिहार, परमार, सोलङ्की और चाहारमान; इन चार जातियोंमें से एक। चौ-शब्द चतुःशब्दका अपभ्रंश है; इसलिए चाहारमान शब्दका दूसरा नाम चौहान, चतुरमान शब्दसे ही उत्पन्न हुआ है—ऐसा बहुतोंका विश्वास है।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि, इस वंशके स्थापक माणिकराय थे। ये ८०० ई०में अजमेरके राजा थे और आपका राज्य शम्बरह्रद तक विस्तृत था। चौहानोंने ११८३ ई० तक अजमेरका राजसिंहासन अलङ्कृत किया था। इस वंशके शेष राजा पृथ्वीराज थे।

पृथ्वीराजने अपने नानासे दिल्लीका सिंहासन पाया था, तथा दिल्ली और अजमेरके राजा हो कर ११८३ ई० तक राज्य किया था। इसी वर्ष महम्मद गोरीने इनको परास्त कर दिल्ली और अजमेरका राज्य ले कर चौहानवंशका उच्छेद किया था।

अब भी सहारनपुरके उत्तर और पूर्वांचलमें, जहांगीराबादके आसपासमें, अलीगढ़ जिलेमें, रोहिलखण्डमें और बिजनौर जिलेके पश्चिम परगनामें बहुत चौहान देखनेमें आते हैं।

इसके अतिरिक्त गोरखपुर, आजमगढ़, दिल्ली और मेरठमें भी इन लोगोंका वास है। चौहानोंमें राजकुमार, हर, खिची, भदौरिया, राजोर, प्रतापरुद्र चक्रनगर और मौचना नामक श्रेणियां विशेष प्रसिद्ध हैं।

ये लोग अपनेको पृथ्वीराजके वंशधर कहते हैं; और इसीलिये एक घरके सिवा दूसरोंके साथ एकत्र बैठ कर भोजनादि नहीं करते। ये लोग राजा उपाधिसे भूषित हैं। मौचना-श्रेणीके चौहानोंको 'मैंनपुरीके राजा'-के नामसे प्रसिद्ध है। इसके अलावा दूसरी श्रेणियोंमें राणा, राव, दीपन आदि उपाधि पायी जातीं हैं।

मण्डावरका राववंश और नीमराणाका राजवंश, ये दोनों वंश पृथ्वीराजके सहोदर चाहड़देवके पौत्र सङ्गत् राजके हैं। सङ्गतराजको बुढ़ापेमें विवाह करनेकी इच्छा हुई, और उनने तोहारवंशकी एक रूपलावण्यवती कामिनीके साथ इस शर्त पर विवाह किया कि, उस स्त्रीसे जो पुत्र होगा, वही राज्यका उत्तराधिकारी होगा, दूसरी रानियोंके पुत्र राज्यसे वञ्चित रहेंगे। मण्डावरके राववंशके आदिपुरुष लाह, तथा नीमराणाके राजवंशके आदिपुरुष लीरो इस रानीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। सङ्गतराजवंशीय चौहानोंमें मण्डावरके राववंशका वंशमर्यादामें और अन्यान्यविषयोंमें श्रेष्ठस्थान है। राववंशके प्राधान्यके विषयमें निम्नलिखित दोहा सर्वमें आता है—

"लाह मण्डावर बैठिबो, चाठों मङ्गल वार।
जो जो वैरी सचरैं सो सो गिरि है मार॥"

इन दोनोंके सिवा सङ्गतराजके दूसरी रानियोंसे उत्पन्न उन्नीसपुत्र और भी थे, जिन्होंने अन्यान्य स्थानोंमें जाकर राजस्थापन करनेकी चेष्टा की थी जम्बूप्रदेशके सुप्रसिद्ध सर्द्दारगण उनमेंसे दूसरे (लीरो)के वंशके थे। ऊपर लिखे हुए चौहानवंशीयोंने मुसलमानोंके आधिपत्य विस्तारमें पुनः पुनः बाधाएं डाली थीं; तथा किसी किसीने तो मुसलमानोंके राज्यमें भी कुछ दिनों तक अपने राज्यमें स्वाधीन जय-पताका उड़ाई थी।

रेवा राज्यके पूर्वमें तथा कैमूर पहाड़के दक्षिणमें सारगुजा और सुहागपुरके बीचमें चौहानखण्ड नामका एक विस्तृत स्थान है, यही बहुतसे चौहान रहते हैं। ये अपनेको मैनपुरीके चौहानोंके वंशसे उत्पन्न बताते हैं। चौहानोंके रहनेके कारण शायद उक्त स्थानका नाम चौहानखण्ड पड़ा है। चौहानोंके प्रसिद्धनायक चन्द्रसेनके नामानुसार चौहानखण्डका नाम चन्द्रकोना हो गया है। उक्त प्रदेशके कोई कोई कहते हैं कि, चन्द्रकोना रेवाराज्यके पास नहीं, बल्कि कलकत्तेसे ४० मील दूरी पर मेदिनीपुरके पास है। और किसी किसीका कहना है कि, वर्द्धमानके पास जो चन्द्रकोना नामका स्थान है, वही उक्त चन्द्रकोना है। इसी कारण चौहानोंने रेवाराज्यके पासकी अनार्यजातिकी वासभूमि पार्वत्यप्रदेशमें न जा कर वर्त्तमान बङ्गदेशमें जा उन्होंने उपनिवेश स्थापन किया है, वह असङ्गत नहीं मालूम होता।

कोई कोई कहते हैं—गोरखपुरके चौहान चितोरराज रत्नसेनके पुत्र राजसेनके वंशके हैं। इसी वंशकी एक शाखाने विहारप्रदेशमें उपनिवेश स्थापन किया है। कहीं कहींके चौहान लोग इतने निकृष्ट वंशसे उत्पन्न हुए हैं कि, वे राजपूतोंमें नहीं गिने जाते। उत्तर रोहिलखण्ड प्रदेशके चौहान ऐसे ही हैं।

चौहैं (हिं० क्रि० वि०) चारों तरफ, चारों ओर।

च्यवन (सं० त्रि०) च्यवते पतित नश्यति च्यु-ल्यु। १ नश्वर, अचिरस्थायी, नष्ट होनेवाला। (ऋक् २।१२।४ सायण)

२ क्षरणकारी, टपकानेवाला। (सायण) च्यवते मातुरुदरात् च्यु-कर्त्तरि ल्यु। (पु०) ३ ऋषिविशेष,

एक ऋषिका नाम। इनके पिताका नाम महर्षि भृगु और माताका नाम पुलोमा था। महाभारतमें लिखा है कि पुलोमाके गर्भ सञ्चार होने पर एक दिन महर्षि भृगु अभिषेकके लिये बाहर गये हुए थे। ऐसे समयमें एक राक्षस महर्षिके आश्रयके आया और पुलोमाके रूपलावण्यको देख कर मुग्ध हो गया और उन्हें अकेली या हर ले जाना चाहा। गर्भस्थ पुत्र माताको आपत्तिमें देख गर्भसे बाहर निकल आए। उनके तेजसे राक्षस भस्म हो गया। ये स्वयं माताके गर्भसे निकल पड़े थे, इसोसे इनका नाम च्यवन पड़ा। (भारत १।६ अ०)

एक बार ये किसी अरण्यके मध्य एक सरोवरके किनारे तपस्या कर रहे थे। तपस्या करते करते इतने दिन हो गये कि इनका सारा शरीर वल्मीक (दीपककी मट्टी)-से ढक गया, सिर्फ चमकती हुई दोनों आंखें खुली रह गईं। एक दिन राजा शर्यातिकी कन्या सुकन्याने इनके दोनों नेत्रोंको कोई अपूर्व पदार्थ समझ उनमें कांटे चुभा दिये। इस पर महर्षिने क्रुद्ध हो कर योगके प्रभावसे राजा शर्यातिके सैन्य सामन्तोंका मलमूत्र रोक दिया। बहुत अनुसन्धान करनेके बाद राजाको इस रहस्यका पता लगा। उन्होंने च्यवन ऋषिके पास जा क्षमा माँगी। ऋषिने राजकन्या सुकन्यासे विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। राजा बहुत भारी संकटमें पड़ गये और लाचार हो अन्तमें सुकन्याका उनके साथ व्याह कर दिया। सुकन्याने भी उस वृद्ध, जरातुर महर्षि च्यवनसे विवाह करनेमें तनिक आपत्ति न की। विवाहके कुछ दिनोंके बाद एक दिन परमसुन्दर अश्विनीकुमार च्यवन ऋषिके आश्रमको पहुँचे और उस सुन्दरी रूपलावण्यवती नवयौवना राजबाला सुकन्यासे बोले, "आप इस वृद्ध जरातुर पतिको छोड़ दें और हमसे विवाह कर लें।" इस पर च्यवन-पत्नी सहमत न हुई। सुकन्याके व्यवहारसे सन्तुष्ट हो अश्विनीकुमारने च्यवन ऋषिको एक सुन्दर युवक कर दिया। इसके प्रत्युपकारमें महर्षि च्यवनने शर्यातिके यज्ञमें व्रती हो अश्विनीकुमारको सोमरस प्रदान किया। इस पर स्वर्गराज इन्द्रने पहले आपत्ति की, किन्तु महर्षिने कुछ भी परवाह न की। इसके बाद इन्द्र क्रुद्ध हो कर इसके ऊपर वज्र चलानेके लिये उद्यत हुए। च्यवनने मन्त्रबलसे उनकी बाहु रोक कर उनका नाश करनेके लिये एक विकराल असुरकी सृष्टि की। इस पर इन्द्र भयभीत हो च्यवनकी शरणागत आये। महर्षिने भी अश्विनीकुमारको सोम-भाजन कर इन्द्रको छुटकारा दिया और उस असुरको स्त्रीजाति, मद्यपान, अक्षक्रीड़ा और मृगयामें विभक्त कर दिया। (भारत ३।१२१-२२-२३ अ०) (क्लो०) च्यु-भावे-ल्युट्। ४ क्षरण, चूना, झरना, टपकना।

च्यवनप्राश—वैदिकोक्त औषधविशेष, दवा। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली—बेलकी गरी, गनियारकी छाल, सोनापाठकी छाल, कुम्भेरकी छाल, शालपर्णि, पृष्टपर्णि (पिठवन), अड़ूसा, पीपल, गोखरू, हर्र, बरियारा, काकड़ासिङ्गी, भटकटैया (कण्टकारी), मुनक्का, जीवन्ती, कूट, अगुरू, गुरच, ऋद्धि, वृद्धि, जीवक, ऋषभ, काकाली, काकजंघा, बिलाईकन्द, अदरख, मुस्तक (मोथा), पुनर्णवा, मेदा, छोटी इलायची, नीलोत्पल, लालचन्दन, कमलगट्टा, इनमें-से प्रत्येकका १ पल, पके और ताजे आंवले ५०० (अथवा ८७॥ सात सेर तेरह छटाक), इनको एकत्र कर ६४ सेर पानीमें उबाल कर १६ सेर हो जाने पर उतार कर काढ़ा छान लेना चाहिये; तथा पोटलीके आंवलोंको खोल बीजोंको फेंक कर ६ पल घी और ६ पल तिलके तेल (एकत्र)-में सेक कर पीस लेना चाहिये। बादमें मिश्री ५० पल, काढ़ेका पानी और उपर्युक्त पिसे हुए आंवलोंको एकत्र पाक करना चाहिये। गाढ़ा होने पर वंशलोचन ४ पल, पीपल २ पल दारूचीनी २ तोले, तेजपात २ तोले, इलायची २ तोले, नागकेशर २ तोले, इन सबको एक साथ पीस कर उसमें डाल देना चाहिये। फिर थोड़ा हिला डुला कर पाकको उतार लेना चाहिये। ठण्ढा होनेपर उसमें मधु ६ पल मिला कर घीके बरतनमें रख देना चाहिये। यह २ तोला खाया जाता है। अनुपान—बकरीका दूध। इसको खानेसे स्वरभङ्ग, यक्ष्मा या राजयक्ष्मा, शुक्रदोष इत्यादि दूर हो जाते हैं तथा स्मृति, बुद्धि, कान्ति, इन्द्रिय सामर्थ्य, बल वीर्य आयु और अग्निको वृद्धि होती है तथा जराजीर्ण वृद्धोंमें यौवनका सञ्चार होता है। यह दुर्बल और क्षीण धातुवालोंके लिये अत्यन्त उत्कृष्ट औषध है।

च्यवान (सं० पु०) च्यवनपृषोदरादि० दीर्घ। च्यवनऋषि।

च्यावन (सं० त्रि०) च्यु-णिच्-ल्यु। १ च्युतिकारक गिरानेवाला। (क्लो०) च्यु-भावे ल्युट्। २ चरण, चूना टपकना (पु०) च्यवन-पृषोदरादित्वात् साधुः। ३ च्यवन ऋषि (क्लो०) ४ सामविशेष।

च्यावयितृ (सं० त्रि०) च्यु-णिच्-तृच्। च्युतिकारक, गिरनेवाला।

च्यावितशरीर (सं० क्लो०) जैनमतानुसार तीन प्रकारके भूत ज्ञापकशरीरों (कर्मस्वरूपके जाननेवाले जीवका भूतपूर्व शरीरों)-मेंसे एक शरीर। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य श्रीमन्नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीने अपने गोम्मटसार नामक ग्रन्थमें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है:—जिस ज्ञापकका भूतकालवर्ती शरीर कदलीघात अकाल मृत्युसे विनष्ट हो गया हो, किन्तु संन्यासविधिसे रहित हो उसे च्यावितशरीर कहते हैं। (गो० सा० कर्मका० ५६, ५८)

च्युत (सं० त्रि०) च्यु-क्त च्युत-क इति वा। १ भ्रष्ट। २ पतित, गिरा हुआ। ३ क्षरित, टपका हुआ, चुवा हुआ। ४ अपने स्थानसे हटा हुआ। ५ विमुख, पराङ्मुख।

च्युतपथक (सं० पु०) शाक्यमुनिका नामान्तर।

च्युतमध्यम (सं० पु०) पीति नामक श्रुतिसे आरंभ होनेवाला एक विकृत स्वर। इसमें दो श्रुतियां होती हैं।

च्युतशरीर (सं० क्लो०) जैनमतानुसार एक प्रकारका शरीर जो दूसरे किसी कारणके बिना आयुके पूर्ण होने पर नष्ट हो जाता है। यह च्युतशरीर अकालमृत्यु और संन्यास इन दोनों अवस्थाओंसे रहित है। यह भूतज्ञापक शरीरके च्युत, च्यावित और त्यक्त इन तीनों भेदोंमेंसे पहला है। (गो० सा० कर्मकाण्ड)

च्युतषड्ज (सं० पु०) मन्दा नामक श्रुतिसे आरम्भ होनेवाला एक विकृत स्वर।

च्युतसंस्कारता (सं० स्त्री०) काव्यदोषविशेष, काव्यका एक दोष जो व्याकरणविरुद्ध पदविन्याससे होता है। यह दोष सिर्फ पदगत होता है। उदाहरण—

"गाण्डीवी कनकशिलानिभं भुजाभ्यामाजघ्ने विषमविलोचनस्य वक्षः।"

इस जगह आङ् पूर्वक हन् धातुका आत्मनेपद प्रयोग व्याकरणविरुद्ध है। व्याकरणविरुद्ध पदविन्यास होता है ऐसा जान कर उक्त पद्यार्द्धमें च्युतसंस्कारताका दोष लगा है। काव्यदोषोंमें यही दोष सबसे प्रधान है। इसके सद्भावसे कवित्वकी संपूर्ण हानि होती है।

(साहित्यद० ७ परि०)

च्युतसंस्कृति (सं० स्त्री०) काव्यदोषविशेष।

च्युतसंस्कारता देखो।

च्युति (सं० स्त्री०) च्यु-क्तिन्। १ गति, उपयुक्त स्थानसे हटना। २ पतन, स्खलन, झरना, गिरना। (भारत १।१०२ अ०) ३ चरण, टपकना, गिरना। ४ अभाव, कसर। (सुश्रुत) ५ गुदद्वार। ६ योनि, भग।

च्युप (सं० पु०) च्यवन्ते भाषन्तेऽनेन च्यु-प-किच (च्युव किच। उण् ३।१४।) मुख, मुंह। 'च्युपो वक्त्रं' (उज्ज्वलदत्त)

च्यूड़ा (हिं० पु०) चिउड़ा देखो।

च्यूत (सं० पु०) च्युत पृषोदरादित्वादुकारस्य दीर्घत्वं। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। (क्लो०) २ आम्रफल, आम।

च्योत (सं० क्लो०) श्चुत पृषोदरादित्वात् साधुः। घृतादि चरण, घी इत्यादिका टपकना। श्चोत देखो। (अमरटीका)

च्योत्न (सं० क्लो०) च्यवते-च्यु करणे यत्नण्। १ बल, शक्ति, ताकत, कूवत, जोर। (त्रि०) च्यु कर्त्तरि त्नण्। २ दृढ़, मजबूत, कड़ा, ठोस। (ऋक् १।१७।२ सायण) ३ गमनकर्त्ता, चलनेवाला। ४ अण्डज, अण्डेसे उत्पन्न होनेवाला, जो अंडेसे पैदा होता हो। ५ क्षीणपुण्य, जिसका पुण्य घट गया हो।

———:०:———

छ

छ—सप्तम व्यञ्जनवर्ण या चवर्गका द्वितीय वर्ण। इसका उच्चारण स्थान तालु है। इचुयशानां तालु। पा १।१।८। इसके उच्चारणमें वाह्यप्रयत्न विवृत कण्ठसे श्वास अघोष और महाप्राण है। "तत्र वर्गाणां प्रथमद्वितीया विवृतकण्ठाः श्वासानुप्रदाना अघोषाश्च। एकेऽल्पप्राणा इतरे महाप्राणाः।" (महाभाष्य १।१।९) यह पञ्च देवमय, पञ्चप्राणमय, त्रिबिन्दु और ईश्वरसंयुक्त

तथा पीतवर्ण विद्युत्‌के आकार परमास्य कुण्डली है। (कामधेनुतन्त्र) मातृकान्यासके समय इसका न्यास करना पड़ता है। इसका ध्यान—

"गमनस्याः प्रवक्ष्यामि शिमुर्जा तु त्रिलोचनाम।
पीताम्बरधरां नित्यां वरदां भक्तवत्सलाम्॥
एवं ध्यात्वा छकारं तु तन्मन्त्रं दशधा जपेत्॥" (वर्णोद्धारतन्त्र)

तन्त्रके मतानुसार इसके वाचक शब्द—छन्दन, सुषुम्ना, पशु, पशुपति, स्मृति, निर्मल, तरल, वह्नि, भूतमाता, विलासिनी, एकनेत्रा, छिन्नशिराः, वामकूर्पर, गोकर्ण, लाङ्गली, राम, काममत्त, सदाशिव, माता, निशाचर, पायु, विद्युत और स्थितिशब्दक हैं।

छ (सं० पु०) १ छ वर्ण, चवर्गका दूसरा अक्षर। छो भावे ड: घञर्थे वा-क। २ छेदन। (क्ली०) ३ गृह, घर। (त्रि०) छो-कर्म्मणि घञर्थे-क। ४ निर्मल, स्वच्छ, साफ। ५ तरल, चंचल। छद् भावे ड (क्ली०) ६ आच्छादन, ढाँकना।

छ (हिं० पु०) १ पांचसे एक अधिककी संख्या। २ उस संख्याको बतानेवाला अंक जो इस तरह लिखा जाता है—६। (वि०) ३ गिनतीमें पांचसे एक अधिक।

छंगा (हिं० वि०) जिसके छ अंगुलियां हों, छ अंगुलियोंवाला।

छँगुनिया—छगुनी देखो।

छँगुली—छगुनी देखो।

छंगु—छंग देखो।

छंछोरी (हिं० स्त्री०) छांछसे बननेवाला एक प्रकारका पकवान।

छंटना (हिं० क्रि०) १ किसी वस्तुके अवयवोंका अलग होना। २ पृथक होना, अलग होना, निकल जाना। ३ किसी झुण्डसे पृथक् होना, छितराना, तितर बितर होना। ४ साथियोंसे पृथक् होना, साथ छोड़ना। ५ परिष्कार होना, मैल निकलना। ६ क्षीण होना, कमजोर होना। ७ चुन कर अलग हो जाना, चुन जाना।

छँटवाना (हिं० क्रि०) १ कटवाना, छिलवाना। २ किसी चीजके फिजूलके हिस्सेको कटवा देना। ३ बहुतसी चीजोंमेंसे कुछको अलग करना।

छँटा (हिं० वि०) जिसके पैर छाने गये हों, जिसके पिछले पैर बांध कर उसे चरनेके लिए छोड़ा जाय। यह शब्द अकसर करके घोड़ों और गदहोंके लिए व्यवहृत होता है।

छंटाई (हिं० स्त्री०) १ काटने या छांटनेका काम। २ चुनाई, चुननेका काम। ३ परिष्कार करनेका काम। ४ काटने या छांटनेकी मजदूरी।

छंटाना (हिं० क्रि०) छंटवाना देखो।

छंटाव (हिं० पु०) १ छांटन। २ छांटनेका भाव और काम।

छंडरना (हिं० क्रि०) अधिक बोझ पड़नेसे छेदका कट जाना, छिनकना।

छंड़ुआ (हिं० पु०) १ छूट, व्याज, महसूल या कर्ज आदिका वह हिस्सा जिसे पानेवालेने माफ कर दिया हो। २ देवताके लिए उत्सर्ग किया हुआ पशु। (वि०) ३ जिनके ऊपर किसी तरहका शासन न हो। ४ मुक्त, जो छोड़ दिया गया हो। ५ जिसको दण्ड न हुआ हो, अदण्ड्य।

छंदना (हिं० क्रि०) पैरोंमें रस्सी लगा कर बाँधा जाना।

छंदबंद (हिं० पु०) छल, कपट, धोखा।

छंदो (हिं० स्त्री०) १ आभूषणविशेष, स्त्रियोंके हाथोंमें कलाइके पास पहननेका एक जेवर। (वि०) २ धूर्त्त, छली, धोखेबाज।

छंदेली (हिं० स्त्री०) छंदी देखो।

छकड़ा हिं० पु०) १ बैलोंसे खींची जानेवाली दुपहिया गाड़ी, बैलगाड़ी, सग्गड़, लढ़ी। (वि०) २ टूटा फूटा, जिसके अंजर पंजर ढीले हो गये हों।

छकड़िया (हिं० स्त्री०) छ कहारोंके उठानेकी पालकी।

छकड़ी (हिं० स्त्री०) १ छहका समूह। छ कहारोंके उठानेकी पालकी, छकड़िया। २ चारपाई बुननेका एक प्रकार जिसमें ६ बांध उठाये और ६ बैठाये जाते हैं। (वि०) ३ जिसमें छ: अंग हों, जो छ:से बना हुआ हो।

छकना (हिं० क्रि०) १ तृप्त होना, तुष्ट होना, अघाना, अफरना। २ उन्मत्त हो मतवाला होना। ३ हैरान होना, दिक् होना। ४ अचम्भेमें आना, चकराना। जैसे—"आखिर उसे छकना ही पड़ा।"

छकरी (हिं० स्त्री०) छकड़ी देखो।

छकाछक (हिं० वि०) १ संतुष्ट, तुष्ट, अघाया हुआ।

२ परिपूर्ण, भरा हुआ। ३ उन्मत्त, मतवाला, नशेमें चूर।

छकाना (हिं० क्रि०) १ भर पेट खिलाना, खूब खिलाना पिलाना। २ मादक पदार्थ खिला कर मतवाला करना ३ तंग करना, दिक करना। ४ चक्करमें डालना, अचंभे में डालना।

छकुर (हिं० पु०) उपजके छठे भागका एक भाग जो कहीं कहीं जमींदारको मिलता है। अयोध्या प्रदेशमें यह नियम प्रचलित है।

छक्का (हिं० पु०) १ वह वस्तु जो छः अवयवोंसे बनी हो, छःका समूह। २ पांसेका एक दांव। इसमें पासा फेंकनेसे छः बिंदियां ऊपर पड़ती हैं। ३ द्यूत, जुआ। ४ छः बूटियोंका तास। ५ जूएका एक दांव जिसमें कौड़ी फेंकने पर छह कौड़िया चित्त पड़ें। दो वा दश अथवा चौदह कौड़ियोंके चित्त पड़ने पर भी यही दाव माना जाता है। ६ पांच ज्ञानेन्द्रियों और एक मन, इन छःका समूह।

छग (सं० पु०) छं रोमभिश्छादनं यद्वादौ छेदनं वा गच्छति छ-गम्-ड। छाग, बकरा।

छगड़ा (हिं० पु०) छाग, बकरा।

छगण (सं० क्लो० पु०) छाय वह्नाच्छादनाय गण्यते छ-गण-कर्म्म ण्यप्। करीष, सूखा गोबर, कंडा।

छगन (हिं० पु०) १ प्रिय बालक, छोटा बच्चा। (वि०) २ लड़कों वा बच्चोंके लिये कहा जाने वाला एक प्यारका शब्द।

छगरी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र छागी, छोटी बकरी।

छगल (सं० क्ली०) छ्यति, छिनत्ति छायते वा को-कल, गुणागमः ह्रस्वश्च। उणा० १।११२। १ नीलवर्णका वस्त्र, नीले रंगका कपड़ा। (पु०) २ छाग, बकरा। ३ वृद्धदारक वृक्ष, विधाराका पेड़। ४ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम, अत्रि। ५ छाग प्रधान देश, वह देश जहां बहुत बकरे होते हैं।

छगलक (सं० पु०) छगल-स्वार्थे कन्। छाग, बकरा।

छगलण्ड (सं० पु०) दक्षिणदेशमें समुद्रके निकट प्रचण्ड देवीका पीठस्थान। (देवीभा० ७।३०।७२)

छगला (सं० स्त्री०) १ वृद्धदारक वृक्ष, विधाराका पेड़। २ छागी, बकरी। ३ मुनिपत्नीभेद, एक मुनिकी स्त्रीका नाम।

छगलाङ्घ्री (सं० स्त्री०) छगलवदङ्घ्रिर्मूलमस्याः बहुव्री०। ततो ङीप्। वृद्धदारक औषध।

छगलाण्डी (सं० स्त्री०) छगलवदण्डं अन्त्रं यस्याः बहुव्री०, ततो ङीप्। वृद्धदारक वृक्ष।

छगलान्त्रिका (सं० स्त्री०) छगलान्त्रि-स्वार्थे कन् टाप् पूर्वस्वरश्च ह्रस्वः। १ छगलान्त्री, वृद्धदारक। २ नीलवुह्ना, बधारकी लता। ३ वृक, भेड़िया।

छगलान्त्री (सं० स्त्री०) छगलवदन्त्रं यस्याः बहुव्री०, ततोऽदन्तत्वात् ङीप्। छगलान्त्रिका देखो।

छगलिन् (सं० पु०) ऋषिभेद, कालापीके शिष्य।

छगली (सं० स्त्री०) छगल जातित्वात् ङीप्। १ छागी, बकरी। २ वृद्धदारक वृक्ष, विधाराका पेड़।

छगुनी (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, हाथकी सबसे छोटी उंगली, कानी उंगली।

छच्छिका (सं० स्त्री०) सारहीन तक्र, नीरस मट्ठा, वह छाछ जिससे मक्खन उठा लिया गया हो। यह शीतल, लघुपाक, पित्त, वात और कफनाशक है। इसके खानेसे श्रम और तृष्णा जाती रहती है। नमकके साथ खानेसे जठराग्नि उद्दीप्त हो जाती है। (भावप्रकाश)

छछरौली—पञ्जाबके कलसिया राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० ३०° १५´ उ० और देशा० ७७° २५´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५५२० है। इस नगरमें म्युनिसपालिटी भी है।

छछिया (हिं० स्त्री०) १ वह छोटा पात्र जिसमें छाछ पीयी या मापी जाती है। २ तक्र, मट्ठा, छाछ।

छछूंदर (हिं० पु०) छुछुन्दरी देखो।

छजना (हिं० क्रि०) १ शोभा देना, सोहना, अच्छा लगना। २ उपयुक्त जान पड़ना, उचित जान पड़ना।

छज्जा (हिं० पु०) १ दीवारके बाहर निकला हुआ छतका भाग, ओलती। २ दीवारके बाहर निकला हुआ कोठे या पाटनका एक भाग। इस पर लोग हवा खाने या बाहरका दृश्य देखनेके लिये बैठते हैं। ३ दीवार या दरवाजेके ऊपर लगी हुई पत्थरकी पटिया। ४ टोप या टोपीके आगे निकला हुआ वह हिस्सा जिससे धूपका बचाव होता है।

छटंकी (हिं० स्त्री०) १ छटांकका बाट। २ अति क्षुद्र, बहुत छोटा।

छटक (सं० पु०) रुद्रतालके ग्यारह भेदोंमेंसे एक ।

छटकना (हिं० क्रि०) १ शीघ्रतासे पृथक् हो जाना, वेगसे अलग हो जाना, सटकना । २ पृथक् रहना, अलग अलग रहना, दूर दूर फिरना । ३ अधीनतासे निकल जाना, हाथ न आना, बहक जाना । ४ उछलना, कूदना ।

छटका (हिं० पु०) गर्तविशेष, मछली पकड़नेका एक प्रकारका गड्ढा जो दो जलाशयोंके बीच तंग मेड़ पर खोदा जाता है ।

छटकाना (हिं० क्रि०) १ छुड़ाना, बलपूर्वक झटका दे कर बंधनसे अलग कर देना । २ किसी चीजके दाबसे जबरन निकल जाने देना, छटक जाने देना । ३ बन्धनको जबरन अलग करना, दबावमें रखनेवाली चीजको बलपूर्वक पृथक् कर देना ।

छटना (हिं० क्रि०) छंटना देखो ।

छटपट (अनु० पु०) १ छटपटानेकी क्रिया । (वि०) २ नटखट, चपल ।

छटपटाना (अनु० क्रि०) १ तड़फड़ाना, तड़फना । २ अधीर होना, बेचैन होना । ३ अधीरतापूर्वक उत्कण्ठित होना, किसी चीजके लिये व्याकुल होना ।

छटपटी (हिं० स्त्री०) १ व्याकुलता, व्यग्रता, घबराहट । २ गहरी उत्कण्ठा, किसी चीजके लिए आकुलता ।

छटांक (हिं० स्त्री०) एक सेरका सोलहवां भाग, पाव भरका चौथाई ।

छटा (सं० स्त्री०) छो-अटन् किच । १ दीप्ति, प्रकाश, झलक । २ समूह, परम्परा । (माघ १।१०) ३ सौन्दर्य, शोभा, छवि । ४ विद्युत्, बिजली ।

छटाफल (सं० पु०) छटाइव परस्पर-संस्पृष्टानि फलानि यस्य, बहुव्रो । १ गुवाक वृक्ष, सुपारीका पेड़ । २ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़ । ३ तालवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

छटाभा (सं० स्त्री०) छटया दीप्त्या भाति भा-क्विप्, अथवा कः ततष्टाप् । १ विद्युत्, बिजली । २ चेहरेकी कान्ति ।

छटैल (हिं० वि०) चतुर, चालाक, छंटा हुआ ।

छठ (हिं० स्त्री०) प्रति पक्षकी छठीं तिथि, पखवारेका छठा दिन ।

छठई (हिं० वि०) छठां, छठवां ।

छठवां (हिं० वि०) छठां ।

छठां (हिं० वि०) गणनाके अनुसार जिसका स्थान छ पर हो, पांचके बादका ।

छठी (हिं० स्त्री०) १ वह पूजा जो जन्मसे छठे दिन की जाती है । २ एक देवी जिसकी पूजा छठीमें होती है ।

छड़ (हिं० स्त्री०) किसी धातु या लकड़ीका लम्बा पतला बड़ा टुकड़ा, जैसे—लोहेकी छड़ ।

छड़ना (हिं० क्रि०) अन्न परिस्कार करना, ओखलीमें रख कर अनाज कूटना जिसमें कने आदि अलग हो जांय और अनाज साफ हो जाय, छांटना ।

छड़बास (हिं० पु०) जहाज परकी पताका, झंडी, फरहरा ।

छड़रा—१ मानभूम जिलेका एक परगना । यह पञ्चकोटके राजाकी जमींन्दारीमें लगता है । २ छड़रा परगनेका एक गांव । यहां दो प्राचीन देवालय हैं । कहते हैं, स्थानीय श्रावकोंने एक सरोवर और सात देवालयोंको प्रतिष्ठित किया था । उनमें पांच गिर पड़े, पत्थरके दो देवालय अभी खड़े हैं । आजकल इनमें किसी प्रकारकी लिपि या देवमूर्ति नहीं है । परन्तु इतस्ततः प्रक्षिप्त अनेक भग्न प्रस्तरोंमें तीर्थङ्करोंकी नग्नमूर्तिका आभास मिलता है । दामोदरके किनारे तेलकूपी नामक स्थान पर भी ऐसे ही ८।१० जैनमन्दिर हैं । जिनसे एकमें विरूप नामक कोई मूर्ति देख पड़ती है । आस पासके लोग उसकी पूजा करते हैं । यह विरूपमूर्ति सम्भवतः २४ तीर्थङ्कर वीर वा महावीरस्वामीकी मूर्त्ति होगी ।

छड़ा (हिं० पु०) १ आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियां पैरोंमें पहनती हैं । इसका आकार चुड़ीसा होता है । २ मोतियोंकी लड़ोंका गुच्छा । (वि०) ३ एकाकी, अकेला ।

छड़िया (हिं० पु०) द्वारपाल, दरबान ।

छड़ियाल (हिं० पु०) एक प्रकारका भाला या बरछा ।

छड़ी (हिं० स्त्री०) १ पतली और सीधी लकड़ी, पतली लाठी । २ मुसलमान पीरोंकी मजार पर चढ़ानेकी झण्डी, सद्दा । ३ गुड़िया पीटने या चौथी छुड़ानेकी पतली लकड़ी । ४ लंहगे आदिमें गोखरू खुटकी आदि-

को सोधो टकाई। (वि०) ५ एकाकिनी, अकेली।

छड़ौदा (हिं० वि०) बिना बालबच्चे के, अकेला। जैसे— "छड़ौदे आदमीको यहां जरूरत नहीं।"

छड़ीदार (हिं० वि०) १ छड़ीवाला, जिसके पास छड़ी हो। २ लकीरदार, जिसमें सीधी पतली लकीरें हों। (पु०) ३ द्वारपालक, आसा-बरदार, चोबदार।

छड़ीदार—चैतन्यसम्प्रदायभुक्त वैष्णव गुरुओंके प्रतिनिधि कर्मचारी। ये स्थान स्थान घूम कर शिष्योंसे गुरुका वार्षिक चंदा वसूल करते हैं। ये दूसरे दूसरे मनुष्योंको वैष्णव-धर्ममें दीक्षा भी देते हैं। कोई कोई इन्हें फौजदार भी कहते हैं।

छड़ीबरदार (हिं० पु०) वह सेवक जो धनी आदमियोंकी सवारीके साथ सोने चांदीको छड़ी ले कर चलता हो, चोबदार।

छड़ीला (हिं० पु०) काईको भांतिका एक पौधा। छरीला देखो।

छण (हिं० पु०) क्षण देखो।

छणादा (हिं० स्त्री०) क्षणादा देखो।

छत (हिं० स्त्री०) १ घरके ऊपरका पटाव, गच। २ घरके ऊपरकी खुली हुई पाटन, ऊपरका खुला हुआ कोठा। ३ वह चादर जो ऊपर तानी जाती हो, चाँदनी, छतगीर।

छतरपुर (छत्रपुर)—बुंदेलखण्ड एजेन्सीके अधीन मध्य-भारतका एक सनदी राज्य। यह अक्षा० २४° २१´ एवं २५° १५´ उ० और देशा० ८९° ३४´ तथा ८०° ८´ के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ११११८ वर्गमील है। छतरपुरके उत्तर युक्तप्रदेशका हमीरपुर जिला तथा चरखारी अञ्चल, पूर्वमें केन नदी, पश्चिम विजावर एवं चरखारी राज्यका कुछ भाग और दक्षिणको विजावर, पन्नाराज्य तथा मध्यप्रान्तका दमोह जिला है। यहां मकान बनानेका अच्छा पत्थर होता है। जलवायु भी अच्छी है।

ईसाकी १८वीं शताब्दीके पिछले भागमें पन्नाराज्य हिन्दूपतके आश्रित कुमार सोनशाह पंवारने यह राज्य स्थापन किया था। १७७७ ई०को हिन्दूपतके स्वर्गवास होने पर उनके पुत्र शरणतसिंह राज्य परित्याग करनेको बाध्य हुए और राजनगर चले गये। वह अपने लड़के हीरासिंहको नाबालिग छोड़ कर मरे थे। कुंवर सोनशाह पंवार इसी लड़के अभिभावक हुए। अपने प्रभुको नाबालिगका लाभ उठा १७८५ ई०को उन्होंने जागीर पर कब्जा किया और महाराष्ट्र आक्रमणको गड़बड़ीमें इसको बहुत बढ़ा दिया। बुंदेलखण्डमें अंग्रेजोंका आधिपत्य होने पर १८०८ ई०को यह राज्य पूर्ण रूपसे उन्हें मिल गया। १८२७ ई०में छतरपुरके नृपतिको अंग्रेजोंने राजा बहादुर उपाधि दी। फिर १८५४ ई०को राजा प्रतापसिंहके अपुत्रक मरने पर इष्ट इण्डिया कम्पनीने यह राज्य अपने अधिकारमें लेना चाहा था, परन्तु छतरपुरके राजाओंको राजभक्तिका विचार करके रानी अधिकारिणी बनाई गयीं। १८५७ ई०के बलवेमें रानीने नौगांवके भगोड़ोंको आश्रय दिया। इस पर रानीको बदइन्तजामीके कारण हटा करके एक युरोपीय अफसर रखा गया। १८६७ ई०में फिर रानीको राज्यके प्रबन्धका भार मिला। १८७८ ई०को राजमाता कुप्रबन्धके कारण अपसृत हुईं। १८८७ ई०से विश्वनाथ सिंह राजकार्य करने लगे। १८९५ ई०को उन्हें महाराज उपाधि प्राप्त हुई। छतरपुरके महाराज बुंदेलखण्डीय पंवारोंके शिरोभूषण हैं। यहां पुरातत्त्वसम्बन्धी कितनी ही वस्तु विद्यमान हैं। चंदेलोंने अनेक सुन्दर सरोवर बनाये थे।

छतरपुरकी लोकसंख्या प्रायः १५६१३८ है। इसमें एक शहर और ४२१ गांव बसे हैं। बुंदेलखण्डी बनाफरा और खटोल भाषा प्रचलित है। १०० मील तक पक्की सड़क है। छतरपुरसे अनाज, तेलहन और मसालेकी रफ्तनी होती है। राजाको दीवानी और फौजदारी दोनोंका पूरा इख्तियार है। फांसीका मुकदमा गवर्नर जनरलके एजेण्ट करते हैं। रियासतकी आमदनी ३॥ लाख है। पहले छतरपुर और दूसरी स्थानीय टकसालोंमें राजाशाही सिक्का ढलता था। १८८२ ई०से अंगरेजी रुपया चलने लगा है।

छतरपुर—मध्य-भारतके छतरपुर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४° ५५´ उ० और देशा० ७९° ३३´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई १००२९ है। १७०७ ई०को पन्नाके राजा छत्रसालने इसको स्थापित किया था। इसकी तीनों ओर एक प्राचीर बनी है।

छतरिया विष (हिं० पु०) एक प्रकारकी विषैली खुमी।

छतरी (हिं० स्त्री०) १ छत्र, छाता। २ वह छाता जो पत्तोंका बना हुआ हो। ३ मण्डप। ४ वह छज्जेदार मण्डप जो राजाओंकी चिता या साधु महात्माओंकी समाधिके स्थान पर स्मारक रूपसे बनाया जाता हो। ५ कबूतरोंके बैठका टट्टर जो बांसकी फट्टियोंका बना हुआ और एक लम्बे बांसके सिरे पर बंधा रहता है। ६ बांसकी फट्टियोंका वह टट्टर जो छायाके लिये पालकीके ऊपर दिया जाता है। ७ वरली या इक्के आदिके ऊपरकी छाजन। ८ जहाजके ऊपरका अंश। ९ कुकुरमुत्ता, खुमी।

छतलोट (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी कसरत। इस कसरतके करनेसे तोंद नहीं निकलती।

छतारी—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेकी खुर्जा तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८° ६' उ० और देशा० ७८° ९' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५५७४ है। मेवाती छत्रधारी वंशके नामानुसार इसका नामकरण हुआ है। यह अपने ही नामकी रियासतमें लगता है, जिसको पहासूवाले मुराद अलीखांके भाई महमूद अलीखांने कायम किया था।

छतियाना (हिं० क्रि०) १ वक्षस्थलके निकट ले जाना, छातीके पास ले जाना। २ निशान करनेके लिये बन्दूकको छातीके पास लगाना, बन्दुक तानना।

छतिया—कटकसे २६ मील उत्तरस्थित एक ग्राम। यहां प्रस्तर निर्मित एक देवमन्दिर है और उसके भीतर सिन्दूर और हल्दीसे लिपी हुई अनेक भग्न देवदेवियोंकी मूर्तियां हैं।

छतिवन (हिं० पु०) भारतके प्रायः सभी शीतप्रधान प्रदेशोंमें होनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसके पत्ते में कई एक दल रहते हैं। इसका पेड़ बड़ा होता है और इस टहनियोंको तोड़नेसे दूध निकलता है। इसकी छाल दवाके काममें आती है। इसके गुण—हृद्य, कृमिनाशक, पुष्टिकारक, ज्वरघ्न और संकोचक। फोड़े पर इसका दूध लगानेसे वह अच्छा हो जाता है। तेलमें मिला कर इसका दूध कानमें डालनेसे कानका दर्द शीघ्र नष्ट हो जाता है। इसकी लकड़ीसे सन्दूक और अच्छी अच्छी अलमारियां बनाई जाती हैं।

छतीसा (हिं० वि०) १ चतुर, चालाक, सयाना। २ धूर्त, मक्कार। अकसर करके यह विशेषण नाइयोंके लिए व्यवहृत होता है।

छतीसापन (हिं० पु०) धूर्त्तता, चालाकी, मक्कारी।

छत्तौना (हिं० पु०) १ छत्र, छाता। छत्रक, कुकुरमुत्ता।

छत्ता (हिं० पु०) १ छत्र, छाता, छतरी। २ वह छत जिसके नीचेसे रास्ता गया हो। ३ मोमका बना हुआ मधुमक्खी और भिड़ आदिका घर। ४ वह वस्तु जो छातेकी तरह दूर तक फैली रहती हो, चकत्ता। ५ कमलका बीजकोश।

छत्तीस (हिं० वि०) १ तीससे छः अधिक। (पु०) २ वह संख्या जो तीस और छहके योगसे बनी हो। आकार इस प्रकार है—"३६"।

छत्तीसवां (हिं० वि०) जो पैंतीसवेंके बादमें पड़े।

छत्तीसा (हिं० पु०) १ नापित, हज्जाम, नाई। (वि०) २ चतुर, चालाक।

छत्तीसगढ़—मध्यप्रदेशका पूर्व विभाग। यह अक्षा० १९° ५०' तथा २३° ७०' उ० और देशा० ८०° ४३' एवं ८३° ३८' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २१२७० वर्गमील है। इसकी समतलभूमि पर्वतावृत है। छत्तीसगढ़में ३ जिले लगते हैं। पहले रत्नपुरके हैहयवंशीयोंका राजा छत्तीसगढ़ कहलाता था। यहांके अधिवासियोंका पहनावा, चाल चलन और भाषाभाव निराला है। छत्तीसगढ़ी बोली हिन्दीसे मिलती है। लोकसंख्या प्रायः २६४२९८३ है। इसमें ७ नगर और ९३५६ गांव बसे हैं।

छत्तीसी (हिं० वि०) १ व्यभिचारिणी, परपुरुषगामिनी, छिनाल। २ गहरे छल-छन्दवाली।

छत्तूर—कर्नाट प्रदेशके मदुरा जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ९° ४१' उ० और देशा० ७८° १' पू० कुमारी अन्तरीपसे ११२ मील ईशान कोणमें अवस्थित है।

छत्र (सं० क्ली०) छादयत्य नेन आतपादिकं छद-णिच ष्ट्रन् उपधाया ह्रस्वश्च। (उणादि सूत्र ४।१६०) १ राजछत्र, राजाओंकी छतरी। इसके संस्कृत पर्याय-आतपत्र, छायामित्र,

पटीटज, आतपवारण। पुराणोंके मतसे, एक दिन जेठके महिनेमें महर्षि जमदग्नि वाणक्रीड़ा करते थे और उनको पत्नी रेणुका उन वाणोंको बटोर लाती थीं। रेणुका प्रखर तपनके तापसे तमायमान हो कर वृक्षको छायामें कुछ देर तक विश्राम करके आ रही थीं, इस पर जमदग्निने क्रुद्ध हो कर उनसे विलम्बका कारण पूछा, तो रेणुकाने कहा—"प्रभो! अत्यन्त क्लान्त हो जानेके कारण मैं वृक्षको छायामें विश्राम कर रही थीं।" यह सुन कर महर्षिने सूर्यके प्रति क्रुद्ध हो कर धनुषमें ज्या रोपणपूर्वक वाण चढ़ाया, इससे सूर्य डर गये और ब्राह्मणके भेषमें उनके सामने आ खड़े हुए। सूर्यने अनेक स्तुति की; पर उनका क्रोध शान्त न हुआ। तब सूर्यदेवने शिरस्त्राण छत्र बना कर महर्षिको दिया और कहा—"आजसे लोग छत्र (छाता) द्वारा मेरे रौद्रतापसे परित्राण पावेंगे। व्रतादि नियमोंमें छत्रका दान अति पुण्यजनक होगा।" इतना कह कर सूर्य अन्तर्हित हो गये। छत्रदानका फल-जो ब्राह्मणको शुभवर्णका और शतशलाकायुक्त छत्र दान देते हैं, वे दूसरे जन्ममें सुखलाभ तथा ब्राह्मण, अप्सरा और देवों द्वारा पूजित हो कर देवलोकमें वास करते हैं। (भारत दानधर्म) छत्र वृष्टि, आतप, वायु और ओस आदिका निवारक है तथा आखोंके लिये फायदा पहुंचाता है। इसके धारण करनेसे मङ्गल होता है। (राजवल्लभ)

छत्र दो प्रकारका है, एक विशेष और दूसरा सामान्य। राजाका छत्र ही विशेष है। विशेष छत्रके भी दो भेद हैं—एक सदण्ड और दूसरा निर्दण्ड। सदण्ड छत्र खुला और मोड़ा जा सकता है। दण्ड, कन्द, शलाका, रज्जु, वस्त्र, और कीलक, इन छह चीजोंसे छत्र बनाया जाता है। चार युगोंमें इस छत्रके क्रमसे चार परिमाण हैं—दण्ड दश, आठ, छह और चार हाथ लम्बा। कन्द छह, पांच, चार और तीन वितस्ति परिमित। शलाका छ, पांच, और तीन हाथ परिमित। इनकी संख्या भी चार युगोंमें क्रमसे एक सौ, अस्सी, साठ और चालीस होती है। नौ तन्तुओंको भन कर एक सूत बनाना चाहिये, इसी प्रकार नौ सूतोंसे एक गुण, नौ गुणोंसे एक पाश, नौ पाशसे एक रश्मि (रस्सी) बनानी चाहिये। युगोंके अनुसार नौ, आठ, सात और छ रश्मिद्वारा एक एक रज्जु बनाई जाती है। वस्त्र शलाकासे दूना लम्बा होता है। कीलक भी यथाक्रमसे—ग्यारह, दश, नौ और आठ अङ्गुल-प्रमाण होता है। इस प्रकारके छत्र राजाओंके लिए मङ्गलकर होते हैं। युवराजके छत्रका परिमाण राजछत्रसे चौथाई कम होगा। विशुद्ध काष्ठके दण्ड और कन्द, विशुद्ध बांसकी शलाका, रस्सी और वस्त्रका रंग लाल हो, ऐसा छत्र ही राजाओंके लिए प्रशस्त है। युवराजके स्वर्ण छत्रका नाम प्रताप है, उसका दण्ड और वस्त्र नील तथा मस्तक पर सुवर्णमय कुम्भ होता है। रज्जु और वस्त्र शुक्लवर्ण हो तथा मस्तक पर सुवर्ण कुम्भ हो, ऐसे छत्रका नाम कनकदण्ड है। यह सब विषयमें सिद्धिदायक है। जिस राजछत्रके दण्ड, कन्द, शलाका और कीलक विशुद्ध सुवर्णसे निर्मित हों, रस्सी और वस्त्र जिसका काला हो, जिसके मस्तक पर कुम्भ, हंस और चामर क्रमसे सजाये गये हों, जिसमें बत्तीस मोतियोंकी माला झूलती हों तथा जिसके ऊपर विशुद्ध ब्रह्मजातीय हीरा निहित हो और दण्डके छोरमें कुरुविन्द और पद्मराग मणि विन्यस्त हो, ऐसे राजछत्रको नवदण्ड कहते हैं। यह सम्पूर्ण छत्रोंमें श्रेष्ठ होता है। अभिषेक और विवाहके समय इससे ग्रहादिके वैगुण्य दूर होते हैं। इस 'नवदण्ड' छत्रके अग्रभागमें आठ अङ्गुलकी एक पताका लगा देनेसे, उसे राजाओंका "दिग्विजयी" छत्र कहते हैं।

(भोजराजकृत युक्तिकल्पतरु)

(पु०) २ भूतृण, खुमी, भूफोड़, कुकुरमुत्ता। ३ वृक्षविशेष, यह बचकी भांतिका होता है। ४ छाता, छतरी। ५ छतरिया विष, खर विष। पर्याय—अतिच्छत्र, कूट।

छत्रक (सं० पु०) छत्रमिव कायति छत्र-कै-क। १ मत्स्यरङ्कपक्षी, मछरंग या कौडिल्ला चिड़िया। २ तालमखानेकी जातिका एक वृक्ष। इसके फल तथा पत्ते कुछ ललाईको लिए हुए होते हैं। ३ ईश्वर गृहविशेष, देवमन्दिर, मण्डप। छत्र स्वार्थे-कन्। (क्लो०) ४ छत्र, छतरी या छाता। ५ मिस्रीका कूजा। ६ शहदको मक्खीका छत्ता।

(पु०) ७ भूफोड़, कठफूला, खुमी, कुकुरमुत्ता

(Agaricus Campestris)। छत्रके साथ इसका आकार मिलता है, इसलिए इसका नामक छत्रक है। उद्भिजतत्त्वविदोंने इसे उद्भिदोंमें शामिल किया है। उन लोगोंका कहना है कि, लकड़ो और दोवरों पर जो छोटे छोटे कुकुरमुत्ते निकलते हैं, इनसे लगा कर बड़े बड़े कुकुरमुत्ते पर्यन्त सब हो एक जातोय उद्भिद् हैं। ये सब हो कोमल, जल्दो बढ़नेवाले और अधिकांश हो सफेद रंगके होते हैं। समग्र पृथिवो पर कितने तरहके कुकुरमुत्ते होते हैं, उनको संख्या स्थिर नहीं को जा सकतो। कोई कोई विद्वान् कहते हैं कि, करीब करीब ४००० प्रकार कुकुरमुत्तेको जातिके उद्भिदोंका आविष्कार हुआ है। इनमें बहुतसे ऐसे भो हैं जो बिना अणुवीक्षणयन्त्रके दिखलाई नहीं देते यह भीगो चीजों पर तथा आनजों पर उत्पन्न होता है और सूख जाने पर धूलिकणावत् हो जाता है। बहुतसे भूफोड़ पेड़, गुल्म, गलो हुई लकड़ो और पत्तों आदि पर भो उत्पन्न होते हैं। बाकोके भूमि पर पैदा होते हैं। इनमेंसे किसोका आकार सूत्रवत्, किसोका सरसों जैसा, किसोका अण्डे जैसा और अग्रभाग गोलाईको लिए होता है। कोई धतूरेके फूलके समान, कोई पत्ता जैसा, कोई छतरो जैसा, कोई मूल और डंठलशून्य अण्डेके समान होता है। वङ्गदेशमें नाना तरहके छत्रक या कुकुरमुत्ते खानेके काममें आते हैं। बहुतसे भूफोड़ विषैले भो होते हैं, इसलिए इन्हें विशेष सतर्कताके साथ खाना चाहिये।

साधारणतः भूफोड़ वर्षा और शरत्‌ऋतुमें हो उत्पन्न होते हैं। इस समय ये उद्यान, जङ्गल, नदोतोर, प्रान्तर इत्यादि स्थानोंमें हदसे ज्यादा पैदा होते हैं। पञ्जाब, काश्मीर, बङ्गाल आदि सब हो जगह आहार्य छत्रक उपजते हैं। परन्तु सिकिम प्रदेशमें भूफोड़ सबसे अच्छे और ज्यादा होते हैं। कुकुरमुत्ते बहुत जल्दो बढ़ते हैं, कोई कोई तो इतनो जल्दो बढ़ते हैं कि, जिसको देखनेसे अवाक् होना पड़ता है। साफ जमोन पर देखते देखते क्षण भरमें बुद्‌बुदाकार भूफोड़ जमोनको भेदते हुए उगते दिखाई देते हैं फिर वे हो २।३ घण्टेमें पूर्णाकृति हो जाते हैं और बादमें सूखने लगते हैं।

बङ्गालमें 'उई' (दोमक) नामका एक भूफोड़ होता है जो खानेके काममें आता है और बहुत स्वादिष्ट होता है। यह छोटा और दोमककी जगह होता है। 'फुड़को' नामका एक तरहका भूफोड़ घासोंमें और झोपड़ियोंके आस पास उत्पन्न होता है यह 'उई' भूफोड़से बड़ा और १½ इञ्च तक ऊंचा होता है। बंगालमें और भो बहुत तरहके भूफोड़ होते हैं। कोई कोई तो ऐसे विषैले होते हैं कि, जिनके खानेसे प्राणनाश होने तकको सम्भावना रहती है। जो कुकुरमुत्ते सफेद और सुगन्धियुक्त होते हैं तथा जिनमें छत्ते मोटे और जड़ ललाईको लिए होती है, वह खानेमें अच्छा होता है।

रोम नगरमें भूफोड़ोंको परोक्षा करनेके लिए एक राजकर्मचारी नियुक्त हैं, वे बाजारोंसे आये हुए भूफोड़ोंको परोक्षा किया करते हैं।

सूखे और ताजे दोनों तरहके भूफोड़ खानेमें आते हैं। सूखने पर भो इनकी सुगन्धि नहीं जाती। ताजे छत्रकोंको भली भाँति परोक्षा कर उनको जड़ और ऊपरको पतली छालको नुचा कर उन्हें कुछ देर तक ठण्डे पानोमें भिगो रखना चाहिये, बादमें निचोड़ कर उनमें नमकमिर्च आदि मसाला डाल कर तरकारो बनानो चाहिये। डिउपेटिट आदि किसो किसो रासायनिकके मतसे अधिकांश छत्रक विषैले होते हैं, परन्तु वह विष शतांशिक तापमानके १०० अंश उत्तापसे नष्ट हो जाता है। इसलिए इनको खूब ज्यादा आंचसे उबालना चाहिये।

बहुतसे निष्ठावान् हिन्दू इसको अभक्ष्य समझ कर नहीं खाते। श्रावक अर्थात् जैन लोग इसे नहीं खाते।

एक तरहके उत्कृष्ट भूफोड़ मट्टोके नोचे पैदा होते हैं जिनका आकार गोल और आवरण कठिन होता है तथा जड़ या काण्ड नहीं होता। इसके ऊपरका छिलका नुचा लेनेसे भोतर कोमल श्वेतसार निकलता है। दूसरे भूफोड़ोंको तरह इसको भो तरकारो बनाई जातो है। यह जङ्गलोंमें शाल वृक्षको जड़में बहुत होता है।

और एक तरहका छत्रक होता है जो बड़ा और मट्टो पर उत्पन्न होता है। इसके ऊपर कठिन छिलका नहीं होता और न यह खानेमें हो अच्छा होता है।

पञ्जाब आदि देशोंमें सूखे कुकुरमुत्ते बहुत बिकते हैं। बहुत तरहके विषैले भूफोड़ दवाईके काममें भी आते हैं। एक तरहका भूफोड़ ऐसा भी है कि, जिसके खानेसे भाँग जैसा नशा हो जाता है। डाकर ग्रेनभिल साहबने लिखा है कि, कामस्कट्का प्रदेशमें ऐसा ही एक जातिका भूफोड़ उत्पन्न होता है। वहांके लोग इसे (बड़ा १ और छोटे २) मुंहमें डाल कर ऊपरसे पानी पी लेते हैं। इससे २ घण्टे बाद उसे नशा आ जाता है और वह शराबीकी तरह हंसता और भूल बकता रहता है। डाकर साहब लिखते हैं कि, इसका नशा दिन भर रहता है। इसमें एक आश्चर्यजनक गुण यह भी है कि मत्त व्यक्ति रातमें सोनेसे सुबह तक प्रकृतिस्थ तो हो जाता है; पर उसका पेशाब असाधारण मादकतायुक्त हो जाता है। इसलिए कुकुरमुत्तेके अभावमें कोई कोई पक्के नशेबाज उस दुर्लभ वस्तु (मूत्र)-को व्यर्थ नष्ट न कर पी जाते हैं। इससे नशा पूरा होता है और दूसरे दिन उसका पेशाब भी वैसा ही होता है। पुराने पापी अर्थात् पक्के नशेबाज एक दिन भूफोड़ खा कर इसी प्रकार ७।८ दिन तक बराबर नशा करते रहते हैं। एकका पेशाब दूसरा और दूसरेका तीसरा, इस प्रकार बहुतसे लोग भी इससे नशा कर सकते हैं। भूफोड़के नशेको छुड़ानेकी दवा अभी तक आविष्कृत नहीं हुई।

यूरोप और अमेरिकामें अन्यान्य फलमूलादिकी तरह कुकुरमुत्तेकी भी खेती होती है। इसकी खेती करना उतना कष्टसाध्य नहीं है, इसमें खर्च और भी बहुत थोड़ा पड़ता है।

भारतमें भूफोड़की खेती नहीं होती। अगर हो, तो बहुतसे लोग इसे निःसंकोचभावसे खाने लग जांय। जङ्गलमें जो कठफूला उत्पन्न होते हैं, उनमेंसे कौनसे विषैले और कौनसे निर्दोष हैं, इसका निर्णय करना कठिन है। इसीलिए भूफोड़ खा कर विषाक्त होनेकी बात प्रायः सुनी जाती है। इसका बीज अत्यन्त सञ्चरणशील होता है, कभी कभी यह हवासे उड़ कर हजार हजार मीलकी दूरी तक पहुंच जाता है। इसके बीज सर्वत्र हो पाये जाते हैं और जहां कहीं मौका हुआ, वहीं उगने लगते हैं। यूरोप और अमेरिकामें नाना उपायोंसे भूफोड़ पैदा किया जाता है। किसी एक काठके गमलेमें एक तह पुआल, उसके ऊपर ताजी घोड़ेकी लीद एक तह और उस पर एक तह मिट्टी डाल कर छायामें रख देनेसे प्रायः उसमें कठफूला निकल आते हैं और यदि वह मट्टी भूफोड़की हो तब तो उसके पैदा होनेमें कोई सन्देह ही नहीं रह जाता। वहां स्पन (Spawn) नामके एक तरहके भूफोड़के बीज बिकते हैं। यह एक प्रकारकी मिट्टी ही है और भूफोड़ोंको इकट्ठे मल कर बनाई जाती है। इस मिट्टीको फोड़ कर खादके साथ छायामें गीली जगह पर बोनेसे ही भूफोड़ पैदा होते हैं।

कुकुरमुत्तेकी जातिके नानाप्रकारके उद्भिद् गले हुए काष्ठ, वृक्ष, फल और अनाजोंमें पैदा होते हैं। इसकी कोई कोई जाति चामकी तरहकी और आकारमें कुछ बड़ी होती है। बहुतसे तो रोमकी तरह फलों पर उत्पन्न हो जाते हैं। इससे अनाज आदि नष्ट हो जाते हैं। आसाममें एक तरहका भूफोड़ गोल आलुओंका बहुत अनिष्ट करता है। सिंहलमें कुलथीके पेड़में भी इससे बहुत हानि होती है। इसके सिवा गेहूं, जौ, धान, चाय इत्यादिमें यह क्षति पहुंचाता है। इन लोगोंके उपद्रवसे बड़े बड़े पेड़ भी जल्दी सूख और गिर जाते हैं।

छत्रकदेहिन् (सं० पु०) एक तरहका जलजन्तु। इसके शरीरके ऊपर एक गोल छातासा रहता है। यह समुद्रमें पाया जाता है। इसका अंग्रेजी नाम। Discophorn है।

छत्रक्षेत्र—नेपालका एक तीर्थ। यह अक्षा० २६° ८३' उ० और देशा० ८७° ४' पू०में पूरनियासे ८२ मील उत्तर-पश्चिम कोणको पड़ता है। इसके निकट वराहक्षेत्र नामक तीर्थमें विष्णुकी वराहमूर्ति विद्यमान है। वराहक्षेत्रमें अनेक विश्वासी संन्यासी जीते जी अपने आपको भूगर्भमें प्रोथित करते हैं। लोगोंको विश्वास है कि उस समय यह भविष्यद्वक्ता बन जाते हैं।

छत्रगढ़—आगरा जिलेमें चर्मण्वती नदीके दक्षिणतीरवर्ती एक नगर। यह अक्षा० २६° १०' उ० और देशा० ५८° २५' पू०में ग्वालियरके दक्षिण-पूर्व कोणसे २६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।

छत्रगुच्छ (सं० पु०) छत्रमिव गुच्छोऽस्य, बहुव्री०। गुण्ड तृण, बलहा।

छत्रचक्र (सं० क्ली०) छत्राकृतिः चक्रं, कर्मधा०। चक्रविशेष। अश्विनीसे अश्लेषा तक ८, मघासे ज्येष्ठा तक ८ और मूलासे रेवती तक ८ नक्षत्रोंमें क्रमशः ३ चक्र या पंक्तिकी कल्पना कर नामनक्षत्रानुसार शुभाशुभकी गणना की जा सकती है। इसीका नाम छत्रचक्र है पश्चिमकी मध्यरेखासे हयाधिपके ईशान कोण तक, नराधिपके अग्निकोण तक और गजाधिपके नैऋत कोण तक इनके छत्रविभागानुसार शुभाशुभ जाना जा सकता है। राजाका नामनक्षत्र छत्रस्थ होने पर उसके चामर, कलस, वीणा, छत्र, दण्ड, पतत्ग्रह (पीकदान), आसन, कीलक और रज्जु, इनमें शनि यदि छत्रस्थ हो तो छत्रभङ्ग हो जाता है। चामरमें वायु प्रचण्ड होनेसे सूखा, घोर दुर्भिक्ष और प्रजा रोगग्रस्त हो जाती है। शनि कलसस्थ होनेसे युद्धमें भङ्ग, वीणास्थ होनेसे पटरानीका विनाश और राजा चञ्चलचित्त तथा पृथिवी भयसे विह्वल हो जाती है। छत्र, दण्ड और पीकदानमें शनिकी दृष्टि होने पर छत्रभङ्ग होता है। आसनस्थ होनेसे आसनका विनाश, कीलकस्थ होनेसे युवराजकी मृत्यु, रज्जुस्थ हो तो राजाका बन्धन होता है। किन्तु अतिचारस्थ शनि यदि बुधयुक्त हो, तो उक्त बुरे फल नहीं होते। क्योंकि क्रूर ग्रह यदि क्रूरग्रहस्थ हो, तब ही वह बुरे फल देता है। शनि, राहु, मङ्गल, रवि ये यदि बृहस्पति और चन्द्रयुक्त हों, तो उत्तर दिशाके राजाका छत्रभङ्ग होता है।

चारो क्रूरग्रह बुध और चन्द्रयुक्त होनेसे पूर्व दिशाके राजाका छत्रभङ्ग होता है, तथा शुक्र और चन्द्रयुक्त हों तो दक्षिण दिशाकी फसल मारी जाती है। शनि जिस प्रकार बुरे फल देता है, शुक्र ठीक उसी प्रकार शुभ फल प्रदान करता है। मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, राहु और रवि-चन्द्र, ये समान बल रखते हैं। राजाका नाम यदि राहु या केतु नक्षत्रमें पड़े तो छत्रभङ्ग होता है। क्रूर ग्रह छत्रस्थ होनेसे राजाको शिकार, विजययात्रा, दुष्ट हस्ती और अश्व आदिका वाहन और विग्रह त्याग देना चाहिये। (समयामृत)

छत्रचण्डेश्वर—शिवका एक नाम। नेपालमें शैवों द्वारा प्रतिष्ठित छत्र-चण्डेश्वरके कई एक मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंके दक्षिण या अग्निकोणमें एक एक चण्डेश्वरको मूर्त्तियां देखनेमें शिवलिङ्ग जैसी हैं। शिवपूजाके अवशिष्ट पुष्प और नैवेद्यादि उन्हींके उद्देशसे चढाये जाते हैं। साधारण मनुष्य उक्त लिङ्ग मूर्त्तिको कामदेवकी मूर्त्ति बतलाते हैं।

छत्रदण्ड (सं० पु०-क्ली०) १ राजछत्र, राजाका छत्र। २ छत्र और दण्ड, छाता और छड़ी।

छत्रधर (सं० पु०) छत्रं धरति छत्र-धृ-अच्। १ छत्रधारी, वह जो छत्र धारण करता हो। २ नृपति, राजा। ३ राजाके ऊपर छाता लगानेवाला सेवक।

छत्रधान्य (सं० क्ली०) धन्याक, धनियां।

छत्रधार (सं० पु०) छत्रं धरति छत्र-धृ-अण्। छत्रधारी।

छत्रधारण (सं० क्ली०) छत्रस्य धारणं, ६-तत्। छत्रका व्यवहार, छाताका लगाना या इस्तेमाल। (मनु २।१७८)

छत्रधारिन् (सं० पु०) छत्रं धरति छत्र-धृ-णिनि। १ छत्रधर, वह जो छत्र धारण करे। २ राजा। ३ वह सेवक जो राजाओंके ऊपर छत्र लगावे।

छत्रपति (सं० पु०) राजोपाधिविशेष, छत्रका अधिपति, सम्राट् वा राजा।

छत्रपत्र (सं० क्ली०) छत्रमिव पत्रमस्य, बहुव्री०। १ स्थलपद्म, स्थलकमल। (पु०) २ भूर्जपत्र वृक्ष, भोजपत्रका पेड़। ३ माणक, मानकच्चू, मानपत्ता। ४ सप्तपत्रवृक्ष, छतिवन।

छत्रपर्ण (सं० पु०) सप्तपर्ण वृक्ष, छतिवन।

छत्रपर्पटी (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, सौराष्ट्र देशकी मट्टी, गोपीचन्दन।

छत्रपुर—छतरपुर देखो।

छत्रपुष्प (सं० पु०) छत्रमिव पुष्पमस्य, बहुव्री०। १ तिलकपुष्पवृक्ष। २ तिलकपुष्प।

छत्रपुष्पक (सं० पु०) छत्रपुष्प स्वार्थे कन्। तिलकपुष्पका वृक्ष।

छत्रपुष्पी (सं० स्त्री०) स्थूलशताह्वा, मोटी कतावरी।

छत्रप्रकाश—लालकवि प्रणीत एक हिन्दी ग्रन्थ। इसमें बुन्देलखण्डके अधिपति महाराज छत्रसालकी सूर्यवंशसे उत्पत्ति, उनका राज्य जय करना तथा औरङ्गजेब और बहादुरशाहके साथ उनकी लड़ाईका हाल विस्तार-

पूर्व का वर्णित है। इस ग्रन्थसे उस समयके बहुतसा असली इतिहास मालूम पड़ता है।

छत्रबन्धु (सं० पु०) क्षत्रियाधम, नीचकुलके क्षत्रिय।

छत्रभङ्ग (सं० पु०) ६-तत्। १ राजाका नाश। २ वैधव्य। ३ स्वातन्त्र्य, स्वतन्त्रता, अराजकता। ४ ज्योतिषका एक योग जो राजाका नाशक माना गया है। ५ हाथीका वह दोष जो उसके दोनों दांतोंके नीचे ऊपर होनेके कारण समझा जाता है।

छत्रभोग—डायमण्ड हारबारका भागीरथी तीरस्थ एक ग्राम। चैतन्यदेव नीलाचल यात्राके समय एक रात्रि इस ग्राममें ठहरे थे। यहां गङ्गातीर पर अम्बुलिङ्ग नामक एक घाट और शिवलिङ्ग है। छत्रेश्वरी मन्दिरके लिये भी पहले यह स्थान प्रसिद्ध था।

छत्रमहाराज—बौद्धोंके मतसे आकाशमण्डलस्थ दिक्पाल चतुष्टय। १म वीणाराज—ये पूर्व दिशाके अधिपति और हाथमें वीणा धारण किये रहते हैं। २य खड्गराज—ये पश्चिम दिशाके अधिपति हैं और हाथमें खड्ग रखते हैं। ३य ध्वजराज—ये उत्तर दिशाके अधिपति और हाथमें ध्वज रखते हैं।

४र्थ चैत्यराज—ये दक्षिण दिशाके अधिपति और हाथ पर चैत्य लिए हुए हैं। इन चार दिक्पालोंको ही छत्र-महाराज कहते हैं। बहुतसे बौद्ध मन्दिरोंमें इनकी मूर्त्तियां मौजूद हैं।

छत्रवत् (सं० त्रि०) छत्रं विद्यतेऽस्य छत्र-मतुप् मस्य वत्वञ्च। छत्रविशिष्ट, जिसके प्रशस्त छत्र हो।

छत्रवती—प्राचीन पाञ्चाल राज्यके उत्तरवर्ती एक राज्य। इसके दूसरे नाम अहिच्छत्र, अहिक्षेत्र और अहिच्छत्र हैं। इसकी राजधानी अहिछत्रा नगरी थी। महाभारत, हरिवंश और विष्णुपुराण इत्यादिमें इसका उल्लेख है।

छत्रवस्तु-बौद्धोंके महावस्त्ववदान नामक ग्रन्थका एक अंश। इसमें बुद्धदेवका निम्नलिखित उपाख्यान वर्णित है।

हिमालयके अधित्यका प्रदेशमें कन्दला नामकी हजार पुत्रवाली एक यक्षिणी रहती थी। उसके पुत्रोंने एक दिन वैशाली नगरमें आ कर वहांके लोगोंका तेज चुरा लिया। इससे वहांके अधिवासी तेजोहीन हो कर नाना तरहके रोगोंसे कष्ट पाने लगे और सन्तान उत्पन्न करनेमें असमर्थ हो गये। वहांके लिच्छविपति तोसल प्रजाके इस कष्टको दूर करनेके लिए बुद्धदेवको लानेके लिए राजगृह गये। तोसलके अनुरोध करने पर बुद्धदेव वैशाली चलनेको राजी हो गये। रास्तेमें गङ्गाके किनारे कपोतमूर्ति गोशृङ्गके राजदूतके साथ इनको भेंट हुई। कपोत बुद्धदेवको नमस्कार कर मनुष्यवाक्यमें उन्हें गोशृङ्गमें जानेके लिए अनुरोध कर चला गया। इस पर सभीको आश्चर्य हुआ। बुद्धदेवने कहा—'यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। काशीके राजा ब्रह्मदत्तके भी तीन पुत्र पेचक, शारिका और कपोत पक्षी थे। उन्होंने बुढ़ापेमें ऋषियोंकी कृपासे ये तीन पुत्र पाये थे। ये तीनों बड़े भारी राजनीतिज्ञ थे, राजाके प्रश्न करने पर ये ज्ञानीकी तरह उत्तर देते थे। पेचक कहता—"उद्भ्रान्त-मनोवृत्ति राजाके लिए योग्य नहीं, उनके संयमनसे ही अर्थकी वृद्धि, तथा धर्म और बुद्धिका विकाश होता है।" शारिका बोलता—"अर्थनीतिके मूल सूत्र तीन हैं, अर्थोपार्जन, अर्थसञ्चय और उसका सद्व्यवहार करना।" कपोत कहता—"राजशक्ति पांच प्रकारकी है-प्राधान्य, सन्तति, आत्मीयवर्ग, चतुरङ्गसेना और परिणामदर्शिता। इनमेंसे परिणामदर्शिता ही प्रधान है।"

बुद्धदेवके वैशाली आते ही वहांके लोग सम्पूर्ण नीरोग हो गये और उनमें पहलेकी भांतिका तेज आ गया। इससे सबको आश्चर्यान्वित होते देख बुद्धदेवने कहा—"तुम लोग आश्चर्य मत करो, मैं पहले पाञ्चालस्थ काम्पिल्यपतिके पुरोहित ब्रह्मदत्तका पुत्र था। मेरा नाम रक्षित था। रक्षित तपोबलसे अलौकिक शक्तिमान् हुआ था। एक बार काम्पिल्यदेशमें दुर्निवार्य महामारी फैलने पर रक्षितके आते ही वह निवारित हुई थी।

"इसी तरह मैं जब काशीराजका महेश नामका हस्ती हुआ था, तब भी मैंने मिथिलामें जा कर वहांके लोगोंकी अलौकिक व्याधिके हाथसे बचाया था।

"इसी प्रकार अङ्गदेशवासी ऋषभने वृषरूपसे राजगृहके लोगोंकी रक्षा की थी।"

इतना कह कर बुद्धदेव भोजन करके मरकतह्रदकी तरफ चल दिये।

छत्रवृक्ष (सं० पु०) मुचकुन्दका पेड़।

छत्रसाल—१ चौहान कुलके हरवंशीय बूंदीके एक प्रसिद्ध

राजपूत राजा। टड् साहबके राजस्थानमें इनका विवरण पाया जाता है। ये राव रतनके पौत्र और गोपीनाथ के पुत्र थे। पितामह अर्थात् राव रतनकी मृत्युके बाद ये शाहजहां बादशाह द्वारा बूंदीके राजसिंहासन पर बैठे थे। सम्राट्‌ने उनका सम्मान बढ़ानेके लिये उन्हें दिल्लीका शासनकर्त्ता बना दिया था। छत्रसाल जिन्दगी भर इस पद पर नियुक्त रहे। शाहजहांने जब अपना राज्य चार भागोंमें विभक्त कर चार पुत्रोंको राजप्रतिनिधिस्वरूप भेजा था, तब छत्रशाल भी औरङ्गजेबको अधीनतामें एक दल सैन्यके सेनापति हो कर दक्षिण देशमें गये थे। वहां जा कर उन्होंने दौलताबाद, बिदर, कुलबर्गा, दामनी आदिके युद्धमें अपनी असामान्य शूरवीरता दिखाई थी।

इसी समय सम्राट् शाहजहांका अलीक मृत्युसंवाद चारों ओर फैल गया। राजकुमारगण राज्य पानेकी चेष्टा करने लगे। सूजा बङ्गालसे दिल्लीकी तरफ रवाना हुए; औरङ्गजेब मुरादको साथ ले दक्षिण देशसे राजधानी की तरफ चलनेकी तैयारियां करने लगे। शाहजहांके ज्येष्ठपुत्र दारा ही इस समय राजधानीमें उपस्थित थे। इधर सम्राट् शाहजहांको औरङ्गजेबका असदभिप्राय मालूम हो गया और उन्होंने छत्रसालको फौरन राजधानीमें उपस्थित होनेके लिए लिख भेजा। छत्रसाल आदेश पानेके साथ ही, राजाज्ञा पालन करना कर्त्तव्य समझ कर दिल्ली चलनेकी तैयारियां करने लगे और औरङ्गजेबसे भी सम्राट्‌का आदेश कहा; परन्तु उन्होंने इस पर सम्मति न दी। छत्रसालने शाहजहांका आदेशपत्र दिखाया, पर तो भी औरङ्गजेबने अपनी सेनाको छत्रसालके अनुचरोंको रोकनेकी आज्ञा दे दी। परन्तु छत्रसालने अपने यानवाहनादि पहिले ही भेज दिये थे। अब वे वीर अनुचरोंको साथ ले गर्वके साथ औरङ्गजेबकी सेनाकी कुछ भी परवाह न कर वहीं गये। किसी का भी उन पर आक्रमण करनेका साहस न हुआ। इस समय नर्मदानदीमें बाढ़ आई हुई थी. छत्रसाल सोलह राजाओंकी सहायतासे नदी पार कर निर्विघ्न बूंदी राज्यमें पहुंच गये और वहां कई एक दिन रह कर दिल्ली उपस्थित हुए। यह कहना अत्युक्ति नहीं कि, उस समयके मुगलसम्राट् किसी भी मुगल सेनापतिका विश्वास नहीं करते थे; राजपूत ही उनके एकमात्र सहाय थे। राजपूत सेनापति अपने स्वामीको रक्षा या उपकार करनेके लिए जरा भी कुण्ठित न होते थे।

उधर औरङ्गजेबने ढोलपुरके युद्धमें दाराको पराजित कर दिल्लीका सिंहासन अधिकार कर लिया। इस युद्धमें छत्रसाल तथा अन्यान्य हरवंशीय वीर भी कुंकुमचन्दनलिप्त रणसज्जासे सज्जित हो कर युद्धक्षेत्रमें उतरे थे। किन्तु युद्धके समय दाराके युद्धक्षेत्रसे भाग जानेके कारण सेना भी भागने लगी। छत्रसाल सेनाओंको उत्साहित कर व्यूह रच कर हस्तीके ऊपर सवार हो युद्ध करने लगे। इस समय शत्रुपक्षकी तरफसे एक गोला आया और उसने उनके हाथीको आहत कर दिया, हस्ती रणक्षेत्रसे भागने लगा। इस पर छत्रसाल हस्ती परसे कूद पड़े और बोले—"यद्यपि मेरा हाथी रणसे भाग रहा है, किन्तु इसलिए मैं रणक्षेत्रसे भाग नहीं सकता।" इतना कह कर वे घोड़े पर सवार हो जल्दीसे रणक्षेत्रमें पहुंच गये। उन्होंने मुरादको मारनेके लिए बरछा उठाया ही था, कि इतनेमें शत्रुपक्षीय गोलेने आ कर उनके मस्तकको विदीर्ण कर डाला। छत्रसालके वीरपुरुषकी भांति रणशायी होने पर उनके कनिष्ठ पुत्र भरतसिंह महाक्रोधसे युद्ध करने लगे, इतने अगण्य शत्रुओंको मारा और अन्तमें ये भी धराशायी हुए।

बूंदीके राजवंशके इतिहासमें लिखा है कि, छत्रसालने अपने जीवनमें ५२ बार युद्ध कर अपनी वीरता, साहसिकता और विश्वस्तताका चिरस्थायी यश उपार्जन किया है। इन्होंने छत्रमहलके नामसे बूंदीके राजप्रासादका कुछ अंश नया बनाया था। तथा पाटन नामक स्थानमें केशवराय नामके विग्रहका एक मन्दिर बनवाया था। १७१५ संवत्में अर्थात् १६५८ ई०में ये परलोक सिधारे थे। इनके चार पुत्र थे—राव भावसिंह, भीमसिंह, भगवन्त और भरतसिंह। छत्रसालके बाद राव भावसिंह बूंदीके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए थे।

२ बुन्देलखण्डके प्रसिद्ध बुन्देलावंशीय एक प्रबल पराक्रमी राजा। ये राजा चम्पतरायके पुत्र थे। लालकविके छत्रप्रकाश नामक ग्रन्थमें इनके बहुतसे गुणोंका

विस्तृत विवरण लिखा है। "छत्रमाल" नामक हिन्दी पुस्तकमें इनके जीवनका बड़ा अच्छा चित्र खींचा गया है।

पिताकी मृत्युके बाद छत्रमालने राजसिंहासन पाया था। इस समय मुगल-सम्राटका बल घटता जाता था और महाराष्ट्रोंका बल प्रबल हो रहा था। छत्रमालने पहलेहीसे मुसलमान सम्राटोंकी अवहेलना कर झांसी पर कब्जा कर लिया और राज्य-विस्तार करने लगे। १६७१ ई०में जलायूंनसे उन्होंने प्रथम युद्ध शुरू किया था। १६८० ई०में हमीरपुर अधिकार कर उसे अपने राज्यमें मिला लिया। पन्ना नगरमें छत्रमालकी राजधानी थी। १७०० ई० तक दामनी नगर सम्राट् द्वारा प्रेरित शासनकर्त्तासे शासित होता था, इसी सालमें छत्रसालने वहांके अन्तिम शासनकर्त्ता नवाब मैरतखांको पराजित कर दामनीको अपने राज्यमें मिला लिया। १७०७ ई०में सम्राट् बहादुरशाहने छत्रसालको झांसी प्रदेश दिया, परन्तु तब भी मुसलमान लोग बुन्देला राजा पर आक्रमण करने लगे। अन्तमें १७३३ ई०में छत्रमालके राज्य पर फरुखाबादके शासनकर्त्ता अहमदखां बङ्गसके आक्रमण करने पर उन्होंने महाराष्ट्रोंसे सहायता मांगी। पेशवा बाजीराव, इस पर सम्मत हो गये। छत्रमालने बाजीरावकी सहायता पा कर समस्त बुन्देलखण्ड जीत लिया और प्रत्युपकार स्वरूप अपने राज्यका तृतीयांश पेशवाको दिया। इस समय सन्धि हुई कि, पेशवा और उनके उत्तराधिकारीगण छत्रसाल और उनके उत्तराधिकारियोंकी सहायता करते रहेंगे। १७३४ ई०में छत्रसालकी मृत्यु हुई थी।

वे छत्रसाल बुन्देला राजपूतवंशीय थे। ये विद्या चर्चाका अत्यन्त आदर करते थे। इन्होंने प्रसिद्ध लाल कविको अपनी सभामें रक्खा था और उन्हें छत्रप्रकाश नामक ग्रन्थ लिखनेकी आज्ञा दी थी। इसी समय पण्डित विश्वनाथने उन्हींकी जीवनीके आधार पर "शत्रुशल्यकाव्य" नामक संस्कृत काव्य रचा था। छत्रसालने ही बहुतसे युद्ध कर बुन्देलखण्डको स्वाधीन बनाया था। छत्रपुरमें अब भी उनके बनाये हुए एक मन्दिरका भग्नावशेष पड़ा है। उनके समयमें बुन्देलखण्डमें साहित्य-युगका आविर्भाव हुआ था। सैकड़ों कवि या विद्वान् हिन्दी भाषामें ग्रन्थ लिख कर अपनी मातृभाषाको अलङ्कृत कर गये हैं।

छत्रसिंह—खण्डरके जायगीरदार मोहकमसिंहके पुत्र। ये घरेलू झगड़ोंसे विरक्त हो कर दिल्ली चले गये थे और अपने सद्गुणोंसे सम्राट्के प्रियपात्र बन कर वहीं रहने लगे थे। सम्राट्ने छत्रसिंहको काबुल जय करने भेजा तो उन्होंने गजनीनगरमें शत्रुओंको परास्त कर दिया। सम्राट्ने इस कार्यसे खुश हो कर उन्हें ६० गाँव दिये थे।

छत्रसिंह आतरीवाला, (सर्दार)—अंग्रेजोंके नियुक्त किये हुए काश्मीरके हजारा जिलेके एक शासनकर्त्ता इन्होंने अफगानिस्तानके अमीर दोस्त महम्मदके साथ षड़यन्त्र कर पञ्जाब जय करनेकी चेष्टा की थी। इसी अभिप्रायसे इन्होंने काश्मीरके राजा गुलाबसिंहके पास दूत भेजा था। गुलाबसिंहके सहायता देनेके लिए मञ्जूर देने पर ये दोस्त महम्मदके साथ विद्रोही (१८४८ ई०में) हो गये। गुजरातके युद्धमें सर्दार छत्रसिंहकी सिख सेना प्रबल पराक्रमसे युद्ध करने पर भी अंग्रेजोंकी सेनासे हार गई। पराजित होने पर छत्रसिंहने अनुचरों सहित अस्त्र त्याग कर क्षमा मांगी थी। छत्रसिंह और उनके पुत्र शेरसिंह ही पञ्जाबके अन्तिम विद्रोही हुए हैं।

छत्रा (सं० स्त्री०) छद-ष्ट्रन्। (सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्। उण् ४।१५८) १ मधुरिका, सौंफ। २ शलुफा, सोवा। ३ धन्याक, धनियां। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ५ शिलीन्ध्र, खुमी, ढिंगरी। ६ धात्री, आँवला। ७ काश्मीरदेशजात धन्याकविशेष, रास्ना, रासन। ८ रसायन औषधभेद, सुश्रुतके अनुसार एक रसायन औषध।

छत्राक (सं० क्ली०) छत्रमिव कायति कै-क। १ कवक, छत्रक, कुकुरमुत्ता। यह ब्राह्मणोंके लिए अभक्ष्य है। (मनु ५।१९) (पु०) २ जालवर्बुरक वृक्ष, जलबबूल। ३ आमलक वृक्ष, आँवलेका पेड़। ४ खुमी, ढिंगरी।

छत्राकी (सं० स्त्री०) छत्राक गौरादित्वात् ङीष्। १ रास्ना, रासना। २ सर्पाक्षी, सरहची गण्डिनीका पेड़।

छत्राङ्ग (सं० क्ली०) गोदन्त, गोदंती हरताल।

छत्रातिच्छत्र (सं० पु०) छत्रमतिक्रम्य छत्रमावरणमस्यस्य

अर्शादित्वादच्। छत्राकार जलजात सुगन्धि तृणभेद एक तरहकी सुगन्धित घास जो जलमें होती है। इसके पर्याय—पालघ्नय, अतिछत्रा, सुगन्धा, छत्रक, कटुक और कट् है। (छत्रक देखो।)

छत्रादि (सं० पु०) छत्रं आदिर्यस्य, बहुव्री०। पाणिनि उक्त गणभेद। इसके उत्तर शीलार्थमें ण प्रत्यय होता है। छत्रादि गण, यथा—छत्र, शिक्षा, प्ररोह, स्था, बुभुक्षा, क्षुरा, तितिक्षा, उपस्थान, कृषि, कर्म्मन्, विश्वधा, तपस्, सत्य, अनृत, विशिखा, विशिका, भक्षा, उदस्थान, पुरोडाश, विक्षा, चुक्षा और मन्द्र।

छत्राधान्य (सं० क्ली०) छत्राधानमिव, कर्मधा०। धनियाक, धनियाँ।

छत्रिक (सं० पु०) छत्रं अस्त्यस्य छत्र-ठन्। छत्रविशिष्ट, वह जो छाता लगाये हो।

छत्रिका (सं० स्त्री०) छत्रा एव छत्रा स्वार्थे कन् अत इत्वञ्च अथवा छत्रं तदाकारपुष्पं वा अस्त्यस्य छत्र-ठन्। शिलीन्ध्र खुमी, ढिंगरी। इसके संस्कृत पर्याय—गोमय-छत्रिका, दिलीर, शिलीन्ध्रक, वनारोह, गोमास, उर्व्वङ्ग छत्राक और उच्छिलीन्ध्र है। गोवर, बाँसके नीचे तथा मट्टीमें होनेवाली खुमीके गुण—शीतल, कषा, स्वादु, गुरुपाक तथा छर्द्दि, अतिसार, ज्वर, और श्लेष्मनाशक है। पयालमें उगनेवाली छत्रि सुस्वादु, रुच और दोषकर होती है। अशुचि स्थानमें काठ या बाँसकी गांठसे उत्पन्न ख्रेतछत्रिका अत्यन्त दोषकर है। (छत्राक देखो।)

छत्रिन् (सं० त्रि०) छत्रं विद्यतेऽस्य छत्र इनि। १ छत्र-युक्त, छत्र धारण करनेवाला। "गच्छेद वर्षा तपे छत्री दण्डीरात्र्याट-वीषु च।" (स्मृति) (पु०) २ नापित, नाई।

छत्री—(क्षत्रिय शब्दका अपभ्रंश) बहुतसे राजपूत अपनेको छत्री कहा करते हैं।

उत्तर-पश्चिमाञ्चलके चौहान, भदौरिया, शिकरवाड़, मोड़ो, परोहार, परमार, यादव, वरेगिरि, तोमर, कच्छ-वह, तर्कन, वरगुजर, राठोर, ढकरा, इन्दोलिया, बचाल, गहलोत, यशभाट, वे और चंदेल प्रभृति अपनेको छत्रीके जैसा परिचय देते हैं।

खत्रि, काछि और जाटगण भी पहले छत्रियोंके साथ मिले हुए थे।

छत्वर (सं० पु०) छदते अपवारयति वर्षोष्णादिकमिति छद-ष्वरच। (छित्वरछत्वरेति। उण् ३।१।) १ गृह, घर। २ कुञ्ज, वह स्थान जिसके चारों ओर घनी लता छाई हो।

छद (सं० त्रि०) छादयति छादि-क्विप् ह्रस्वश्च। १ आच्छादक, ढाँकनेवाला। (पु०) छद अच्। २ पक्ष, चिड़ियोंके पंख। ३ ग्रन्थिपर्णी वृक्ष, गंठवी। ४ तमालवृक्ष। (पु०-क्ली०) ५ पत्र, पत्ता। (क्ली०) ६ तेजपत्र, तेजपात। ७ आव-रण, ढगनेवाली वस्तु।

छदन (सं० क्ली०) छद् ल्युट्। १ पत्र, पत्ता। २ पक्ष, पंख। ३ तमालपत्र। ४ तेजपत्ता। भावे ल्युट्। ५ आच्छादन, आवरण, ढक्कन। ६ गुड़त्वक्, दारचीनी।

छदपत्र (सं० पु०) छदार्थं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ भूर्जपत्र, भोजपत्र। २ तेजपत्र, तेजपत्ता।

छदवल्लभ (सं० पु०) ग्रन्थिपर्णिमूल, गठिवनकी जड़।

छदाम (हिं० पु०) पैसेका चतुर्थभाग।

छदि (सं० स्त्री०) छद-कि। छाद, गाड़ीकी छत।

छदिस् (सं० क्ली०) छादयति छाद्यते अनेन वा छादि-इसि। (अर्चिशुचिहुसृपिछादिछर्दिभ्य इसिः। उण् २।१०८) ह्रस्वश्च। (छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य। पा ६।४।९६) छाद, छत। (भागवत ५।२।११)

छद्दर (हिं० पु०) १ नटखट लड़का। २ वह जानवर जो छःदांत तोड़ चुका हो।

छद्दूर (हिं० पु०) गोपन, छिपाव। २ मिस, बहाना, हीला। ३ धूर्त्तता, छल, कपट, धोखा।

छद्मतापस (सं० पु०) छद्मोपलक्षितस्तापसः शाकपार्थि-वादित्वात् समासः। छलतापस, कपटी ब्रह्मचारी। इसके पर्याय—सर्व्वाभिसन्धि, वैड़ालव्रतिक और वेशधारी।

छद्मट् (अव्य०) विनाश, नाश।

छद्मद्विज (सं० पु०) कङ्कपक्षी, सफेद चील, काँक।

छद्मन् (सं० क्ली०) छाद्यते स्वरूपमनेन छद-मनिन्। कपट, छल, धूर्त्तता, ठगपना।

छद्मवेश (सं० पु०) छद्मोपलक्षितो वेशः, मध्यपदलो०। कपटवेश, कृत्रिम भेष, बदला हुआ स्वरूप।

छद्मवेशिन् (सं० त्रि०) छद्मवेश अस्त्यर्थे इनि। छद्मवेश-धारी, जो वेश बदले हो, जो अपना असली रूप छिपाए हो।

छद्मा (सं० स्त्री०) मञ्जिष्ठा, मजीठ।

छद्मिका (सं० स्त्री०) छद्म अस्त्यस्याः व्रीह्यादित्वादिनि संज्ञायां कन् टाप् च। १ गुडूची, गुडूच, गिलोय। २ मञ्जिष्ठा, मजीठ।

छद्मि (सं० त्रि०) छद्म अस्त्यस्य छद्मन् इनि। छद्मवेशधारी, बनावटी रूप धारण करनेवाला, जो दूसरोंको धोखा देनेके लिये अपना असली रूप छिपाता हो।

छद्वर (सं० पु०) दन्त, दाँत।

छन (हिं० पु०) क्षण देखो।

छनक (अनु० स्त्री०) १ झनझनाहट, झनकार। २ वह छन छनका शब्द जो जलती या तपती हुई वस्तु पर पानी आदि पड़नेके कारण होता हो।

छनक (हिं० स्त्री०) १ किसी भयके कारण चौकन्ना हो कर भागनेकी क्रिया, भड़क। (पु०) २ एक क्षण, काल या समयका बहुत छोटा भाग।

छनकना (हिं० क्रि०) १ झनकार करना, झन झन शब्द करना। २ चौकन्ना हो कर भागना।

छनकमनक (अनु० स्त्री०) १ आभूषणोंकी झनकार, वह शब्द जो चलते समय गहनोंसे निकलता हो। २ ठसक, साज बाज। ३ छोटे छोटे बच्चे, हँसते खेलते प्यारे बच्चे।

छनकाना (हिं० क्रि०) १ जलको उत्तप्त कर वाष्प बना कर उड़ा कर जिससे उसका परिमाण कुछ घट जाय। २ उत्तप्त पात्रमें जल या कोई द्रवपदार्थ डाल कर गरम करना। ३ भड़काना, चौकन्ना करना।

छनछनाना (हिं० क्रि०) १ झनझनाना। २ किसी तपे हुए बरतन पर पानी आदि पड़नेके कारण छन छन शब्द होना। ३ खौलते हुए घी आदिमें किसी गीली चीजके छोड़नेसे छन छन शब्द होना।

छननमनन (अनु० पु०) वह शब्द जो कड़ाहके खौलते घी या तेलमें किसी तली जानेवाली गीली वस्तुके देनेसे होता हो।

छनना (हिं० पु०) छाननेकी वस्तु, छननी।

छनना (हिं० क्रि०) १ छननीसे परिष्कार होना। २ छोटे छोटे छेदोंसे टपकना। ३ किसी मादक वस्तुका पीया जाना। ४ जगह जगह छिद्र हो जाना। ५ बहुतसी जगहों पर जखम खाना। ६ कड़ाहमेंसे पूड़ी आदि तल कर निकालना। ७ छान बीन होना।

छनवाना (हिं० क्रि०) छनाना देखो।

छनाका (अनु० पु०) १ झनकार, खनाका, ठनाका। २ वह शब्द जो रुपयेके बजनेसे होता हो।

छनाना (हिं० क्रि०) १ किसी दूसरेसे छाननेका काम कराना। २ मादक पदार्थ पिलाना। ३ कड़ाहमें पकवान तलवाना, पूड़ी आदि सिकवाना।

छन्द (सं० त्रि०) छदि-कर्मणि घञ्। १ उपच्छन्दनीय, उपासनीय, उपासना किये जाने योग्य, जो परस्तिश काबिल हो। भावे घञ्। (पु०) २ अभिप्राय, मतलब। (भागवत ३।११।२५) ३ ऐसी विद्याजिसमें छन्दोंके लक्षणादिका वर्णन हो। इसको पाद भी कहते हैं। यह छह वेदाङ्गोंमें शामिल है। ४ बन्धन, गाँठ। ५ संघात, जाल। ६ स्वेच्छाचारित्व, मनमानी कार्रवाई। ७ चेष्टा, रंग ढंग। ८ विष, जहर, हलाहल। ९ पत्ता। १० आवरण, ढक्कन। ११ युक्ति, चालबाजी। (त्रि०) १२ रहः, निर्जन। १३ कपट, छल। १४ एक गहना जो हाथमें चूड़ियोंके बीचमें पहना जाता हो। छंदस् देखो।

छन्दक (सं० त्रि०) छन्दयति छदि-ण्वुल्। १ रक्षक, पालनेवाला। २ छली, कपटी। (पु०) ३ वासुदेव, कृष्णचन्द्रका एक नाम। (भारत १२।१४) ४ बुद्धदेवके सारथीका नाम। ५ छल, कपट।

छन्दकपातन (सं० पु०) छन्दकेन छलेन पातयति लोकानिति, छन्दक पाति-ल्यु। छद्मतापस, कपटी, ब्रह्मचारी।

छन्दज (सं० पु०) वसु प्रभृति देवगण, वैदिक देवता।

छन्दःपर्ण (सं० पु०) छन्दांसि वेदविहितकर्माणि पर्णानीव यस्य बहुव्री०। मायामय संसार। जिस तरह पत्ते वृक्षको ढके रहते और रक्षा करते हैं, उसी तरह धर्माधर्मरूप कर्म भी संसारकी रक्षा करते हैं अर्थात् पुरुष कर्महीन होने पर फिर उसको संसारमें प्रवेश करना नहीं होता है। (गीता)

छन्दपातन (सं० पु०) छद्मतापस, साधु-वेषधारी, ठग, धोखेबाज, छली।

छन्दश्चिति (सं० स्त्री०) ६-तत्। १ छन्दःसमूह, छन्दोंका समूह। २ छन्दका भेद और गुरुलघु जाननार्थ प्रस्तार एक छन्दके जितने अक्षरोंसे एक पाद होता है, एक

संख्यासे क्रमसे एक तककी संख्या विन्यस्त करनी चाहिये। उक्त विन्यस्त संख्यासे पहलेकी संख्याका (अर्थात् जितने अक्षरोंमें एक पाद होता है) एकसे भाग देना चाहिये। भागका जो फल होगा, उतनी ही संख्यावाला उक्त छन्दमें एक गुरु अक्षरयुक्त पादभेद होगा। फिर उस भागफलको परकी संख्यासे (अर्थात जिस संख्याका भाग किया गया उसके बादकी संख्यासे) गुणा करना चाहिये। उस गुणित संख्याको २से भाग करनेसे जितना फल हो, उतना ही उक्त छन्दका दो गुरु अक्षरयुक्त पाद समझना चाहिये।

उक्त भागफलको फिर पर पर स्थित संख्याद्वारा गुणा कर तीन प्रभृति संख्या (जितने अक्षरोंसे एक पाद हुआ है, उस संख्या तक) द्वारा भाग करनेसे जो जो भागफल होगा, वह वह संख्या उक्त छन्दका तीन आदि गुरु अक्षरयुक्त पाद होगा। उदाहरण—गायत्रीके पाद ६ अक्षरोंमें है—

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६
६	१५	२०	१५	६	१

एकाक्षर ६। दो अक्षर गुरु १५। तीन अक्षर गुरु २०। चार अक्षर गुरु १५। पांच अक्षर गुरु ६। छह अक्षर गुरु १। सर्व लघु १। समष्टि ६४। (लीलावती)

पिङ्गलाचार्यके मतानुसार प्रस्तार—ग (गुरु एक अक्षर) और उसके नीचे ल (लघु एक अक्षर) लिखें। लकीर खींच कर फिर ग और ल लिखें। लकीरके ऊपरके ग और लके बगलमें ग निम्नस्थित ग और लके बगलमें ल जोड़ दें। बादमें लकीरको पोंछ कर लके नीचे लकीर खींच दें और ऊपरकी तरह चार रेखाएं लिखें, बादमें ऊपरकी रेखामें ग और नीचेकी रेखामें ल जोड़ दें। पहलेकी तरह फिर जोड़ कर नीचे लकीर खींच कर नीचे उपर्युक्त आठ छन्द लिखें। बादमें रेखाके ऊपर ग और नीचे ल जोड़ देना चाहिये। एक एक अक्षर बढ़ाना हो तो उसी तरह ग और ल जोड़ देना चाहिये। इस तरकीबसे छन्दके भेद तथा गुरु और लघु जाने जा सकते हैं। प्रस्तार—

ग
ल

ग ग
ल ग
ग ल
ल ल

ग ग ग
ल ग ग
ग ल ग
ल ल ग
ग ग ल
ल ग ल
ग ल ल
ल ल ल

इसी प्रकार क्रमसे ग और ल जोड़नेसे छन्दके भेद और गुरु लघु जाने जा सकते हैं। भेद जैसे—एकाक्षरपादक—२ प्रकार। द्व्यक्षरपादक—४ प्रकार। त्र्यक्षरपादक—८ प्रकार। चतुरक्षरपादक—१६ प्रकार। पञ्चाक्षरपादक—३२ प्रकार। षड़क्षरपादक—६४ प्रकार इत्यादि।

छन्दस् (सं० क्लो०) छन्दयति आह्लादयति चदि-असुन् चस्य छश्च। चन्देरादेश्च छः। उण् ४।२१८। १ इच्छा, अभिलाष, चाह।

"कामात्मका श्छन्दसि कर्मयोगात्।" (भारत १२।२०१।१२)

"इच्छादर्याश्छंदः शब्दः।" (पा० ४।३।८१)

२ वेद। "प्रणवश्छन्दसामिव" (रघु १ सर्ग)

३ नियमित अक्षर वर्ण वा मात्रा निबद्ध चतुष्पदादि पद्य। यह वेदका अङ्ग है। उपनिषत् आदिमें इस शब्दकी नाना प्रकारकी व्युत्पत्तियां देखनेमें आती हैं। आरण्यकाण्डके मतसे पाप सम्बन्धके निषेध करनेके लिए जो पुरुषको आच्छादित करता है, उसे छन्द कहते हैं। (ऋक्-सायणभाष्यभूमिका) तैत्तिरीयसंहिताके मतसे—जिसके द्वारा संचीयमान अग्निका उत्ताप आच्छादित होता है, उसका नाम छन्दः है। (कृष्णयजु ५।६।६।१) छान्दोग्य उपनिषत्के मतसे—अपमृत्युके निषेध करनेके लिए जो आच्छादन करता है, उसे छन्द कहा जा सकता है।

(छान्दोग्योप० १।४।२) इन मतोंमें निजन्त छन्द धातुके उत्तर कर्त्तवाच्यमें असुन् प्रत्यय द्वारा निपातनमें 'छन्दस्' इस शब्दका सिद्ध हुआ है, यह स्वीकार करना पड़ेगा पाणिनिने यदि धातुके उत्तर असुन् प्रत्यय कर 'छन्द इस शब्दको सिद्ध किया है। (चन्देरादेश छ:। उण् ४।२१८) व्याकरणकी व्युत्पत्तिके अनुसार जिससे आह्लाद जन्मे या जो प्रसन्न करे उसीका नाम छन्दः है, ऐसा यौगिकार्थ हो सकता है। मेदिनीकार आदि अभिधान-कर्त्ताओंने छन्दको पद्यका नामान्तर कहा है। साहित्यदर्पणके रचयिताने "छन्दोबद्धपदं पद्यं" अर्थात् छन्दोविशिष्ट पद वा वाक्यको पद्य कहते हैं ; ऐसा पद्यका लक्षण किया है। इससे ज्ञात होता है कि पद्यसे छन्दः पृथक् है। वास्तवमें लघु गुरु स्वर या मात्राको नियमित वर्ण-योजनका ही नाम छन्द: है।

इसके आदिका विवरण पानेका उपाय नहीं है। इसलिए किस समयमें किस व्यक्तिने पहले पहल छन्दको रचना की थी, इस बातका निर्णय करना असम्भव है। हां ; इतना अवश्य कहा जा सकता है कि, भाषाकी सृष्टिके अव्यवहित समय पीछे अथवा ग्रन्थरचनाप्रणालीके प्रारम्भ होनेसे कुछ पहले छन्दोनियमका आविष्कार हुआ है। सम्पूर्ण भाषाओंको मुख्यतः तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—पद्य, गीत और गद्य। छन्दोबद्ध वाक्यका नाम पद्य है, गीत पद्यका रूपान्तर है, तथा छन्दोनियमशून्य वाक्य गद्य कहलाता है। संस्कृत ग्रन्थोंमें सबसे प्राचीन और आदि ग्रन्थ वेद समझा जाता है, वेदसे पूर्ववर्त्ती किसी ग्रन्थ वा भाषाके अस्तित्वका विशेष प्रमाण नहीं मिलता। वैदिक भाषा भी तीन भागोंमें विभक्त है। उनमेंसे पद्यभागका नाम ऋक् वा मन्त्र, गीतका साम और गद्यभागके कुछ अंशका नाम यजुः तथा कुछ अंशको ब्राह्मण कहा है। वेद, उपनिषत और मनुस्मृतिके मतसे वेदका ऋक् अंश ही पहले प्रकाशित हुआ है। (ऋक् १०।९०।९, उपनिषत्, मनु) भाषाका रचनाप्रणालीको देख कर भी ऐसा ही प्रतीत होता है अतएव अब कहा जा सकता है कि, भारतको सम्पूर्ण भाषाओंमें संस्कृत भाषा ही पुरानी है और उसमें भी वैदिक भाषा प्राथमिक है। इसके सिवा जब वैदिक भाषामें भी यह प्रमाणित हो चुका कि, ऋक् वा पद्यांश सबसे पहले प्रकाशित हुआ है, तब मौलिक संस्कृत भाषाका प्रथम अंश पद्य या छन्दोबद्ध ही था ; उसमें सन्देह ही क्या ? हां, यदि वैदिक भाषासे पहले व्यवहारिक गद्यमय कोई भाषा प्रचलित थी, ऐसी कल्पना की जाय; तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि, आदि-ग्रन्थ वेदसे भी पहले छन्दोनियमका आविष्कार हुआ है। भाषा शब्दमें इसका अन्य विवरण देखो।

यह छन्द प्रधानतः वैदिक और लौकिक इन दो भागों-में विभक्त है। वैदिक समयमें जिन छन्दोंका आविष्कार और वेदमें व्यवहार देखा जाता है, उन्हें वैदिक ; तथा उन्हें मूल बना कर लौकिक भाषामें जिन असंख्य छन्दो-नियमोंका आविर्भाव हुआ है, उन्हें लौकिक कहा जा सकता है।

छन्दको मुख्य आवश्यकता भाषामें लालित्य लानेके लिये होती है, पद्य जिस तरह जल्दी कान और मनको परितृप्त कर सकता है, गद्य उतना नहीं कर सकता। पद्यमें गम्भीर भाव संक्षेपसे लिखा जाता है। पद्यका सहजमें अभ्यास हो जाता है और भूलता भी वह देरसे है। गद्यमें ये गुण नहीं पाये जाते। पद्य देखो। इसके सिवा वैदिक छन्दःज्ञानके लिये दूसरी भी आवश्यकता है। छन्द बिना जाने यज्ञ वा वेदका अध्ययन करनेसे पापी होना पड़ता है। (ऋक् सायणभाष्यभूमिकाधृत श्रुति) इस-लिए वेदका अङ्ग माना गया है। यह वेदका पाद-स्वरूप है। काव्यके रस, गुण और दोषादि सम्पूर्ण विषयों-में छन्दकी जरूरत है। वैदिक छन्द वेदके सिवा और किसी भी ग्रन्थमें नहीं मिलते। वेदके ब्राह्मण और आरण्यक खण्डमें वैदिक छन्दके बारेमें बहुत कुछ लिखा है ; परन्तु उससे छन्दका विशेष ज्ञान नहीं होता। कात्यायनने सर्वानुक्रमणिकामें सात वैदिक छन्दोंका उल्लेख किया है, जैसे—१ गायत्री, २ उष्णिक्, ३ अनु-ष्टुभ, ४ बृहती, ५ पंक्ति, ६ त्रिष्टुप और ७ जगती।

प्रथम छन्द गायत्री है, इसमें कुल २४ अक्षर या स्वरवर्ण होते हैं। वैदिक गायत्री छन्द तीन चरणोंमें निबद्ध है। गायत्री छन्दसे चार अक्षर ज्यादा अर्थात् जिसमें कुल २८ अक्षर हों, वह उष्णिक् छन्द है। ऐसे

ही अनुष्टुभ् छन्द ३२ अक्षरका, बृहती ३६ का, पंक्ति ४०का, त्रिष्टुभ् ४४ और जगती छन्द ४८ अक्षरका होता है। इससे ज्यादा अक्षरके छन्द वैदिक कालमें आविष्कृत नहीं हुए थे। वेदका विस्तृत मन्त्रभाग सिर्फ इन्हीं सात छन्दोंमें प्रकाशित है; जिसमें प्रथम छन्द ही अधिकतर है। कात्यायनने इनके और भी कुछ भेद किये हैं। (जिन्हें जानना हो, वे सर्वानुक्रमणिकाका ग्रन्थ देखें।

इन्हीं सात मौलिक छन्दोंका अवलम्बन कर व्यवहारिक भाषामें जिन अनन्त छन्दो-नियमोंका आविष्कार हुआ है, उन्हींको लौकिक छन्द कहते हैं। परन्तु किस समय किस व्यक्तिने पहिले पहल लौकिक छन्दका आविष्कार किया था इसका अभी तक निश्चय नहीं हुआ। महाकवि भवभूतिने उत्तररामचरितमें लिखा है कि, आदिकवि वाल्मीकिके मुखसे—"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः। यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।" इस श्लोकके निकलनेके कुछ दिन बाद आत्रेयीने बातों ही बातोंमें इसे वनदेवतासे कहा। इसको सुन कर वनदेवताने कहा—"चित्रं आम्नायादन्योऽयं नूतनश्छन्दसामवतारः।" (उत्तररामच० २ अ०) आश्चर्य है। वेदसे नया ही छन्द मालूम पड़ता है। इससे मालूम होता है कि, भवभूतिके मतसे वाल्मीकिने ही पहिले पहिल लौकिक छन्दकी रचना की है तथा सबसे पहले अनुष्टुभ् छन्द ही लौकिक भाषामें व्यवहृत हुआ था।

वाल्मीकि-रामायणके पढ़नेसे मालूम होता है कि, नारदका उपदेश ग्रहण कर महर्षि तमसा नदीमें स्नान करने गये थे। वहाँ व्याध द्वारा बकमिथुनोंमेंसे एकके निहत होने पर अकस्मात् उनके मुंहसे 'मा निषाद' इत्यादि श्लोक निकल गया था। अश्रुतपूर्व लौकिक छन्दका आविर्भाव होते देख वाल्मीकि मन ही मन विचारने लगे थे-"मैं क्या बोल रहा हूं; गद्य या पद्य (१)?" इससे भी स्पष्ट मालूम होता है कि लौकिक छन्दके प्रथम आविष्कारक आदिकवि वाल्मीकि ही हैं। रामायणके प्राचीन टीकाकार तीर्थ आदिने भी ऐसा ही तात्पर्य समझाया है।

(१) "तस्येत्थं ब्रुवतश्चिन्ता बभूव हृदि वीक्षतः। शोकार्त्तेनास्य शकुनेः किमिदं व्याहृतं मया।" (रामा० १।२।१६)

किन्तु आधुनिक टीकाकार रामानुज इसे नहीं मानते। उनके मतसे वाल्मीकिसे पहले भी लौकिक छन्दका प्रचार था।

(रामायण आदिकाण्ड २य सर्ग १५वें श्लोककी रामानुजकृत टीका देखो।)

लौकिक छन्दके अनेक ग्रन्थ हैं। उनमेंसे महर्षि पिङ्गलकृत छन्द ग्रन्थ ही पहिले बना है।

पिङ्गलाचार्यने १, ६७, ७७, २१६ प्रकारके वर्णवृत्तका उल्लेख किया है। इस छन्दोराशिमेंसे संस्कृत साहित्यमें साधारणतः ५० छन्द व्यवहृत होते आये हैं।

आधुनिक छन्दः—एकाक्षरा वृत्तिका नाम है उक्था-१श्री। द्व्यक्षरावृत्ति या अत्युक्था १ स्त्री, २ मधु, ३ मही, ४ सार, त्र्यक्षरा वृत्ति या मध्या—१ नारी, २ मृगी, ३ शशी, ४ रमण, ५ पञ्चाल, ६ मृगेन्द्र, ७ मन्दर, ८ कमल। चतुरक्षरा वृत्ति या प्रतिष्ठा १ कन्या, २ सती, ३ ध्वावि। पञ्चाक्षरा वृत्ति या सुप्रतिष्ठा—१ पंक्ति, २ प्रिया, ३ सम्मोहा, ४ हावोनबन्ध, ५ यमक। षडक्षरा वृत्ति या गायत्री-१ तनुमध्या, २ शशिवदना, ३ सोमराजी, ४ वाणी, ५ वसुमती, ६ तोर्णा, ७ हिघोषा, ८ मन्थान, ९ मालती, १० दमनक। सप्ताक्षरा वृत्ति या उष्णिक्—१ मधुमती, २ कुमारललिता, ३ मदलेखा, ४ हंसमाला, ५ सुमाली, ६ सुवास, ७ करहञ्च, ८ शीर्षं। अष्टाक्षरा वृत्ति या अनुष्टुप्——१ चित्रपदा, २ मानक, ३ विद्युन्माला, ४ समानिका, ५ प्रमाणिका, ६ गजपति, ७ हंसरुत, ८ वितान ९ नाराचिका, १० मल्लिका, ११ तुङ्ग, १२ कोमल। नवाक्षरा वृत्ति या बृहती—१ भुजगशिशुभृता, २ मणिमध्य, ३ भुजङ्गसङ्गता, ४ हलमुखी, ५ भद्रिका, ६ कमला, ७ रूपमाली, ८ महालक्ष्मी, ९ सारङ्गिका, १० पवित्रा, ११ बिम्ब, १२ तोमर। दशाक्षरा वृत्ति या पंक्ति—१ रुक्मवती २ मत्ता, ३ त्वरितगति, ४ मनोरमा, ५ शुद्धविराट्, ६ पणव, ७ मयूरसारिणी, ८ उपस्थिता ९ दीपकमाला, १० हंसी, ११ संयुक्त, १२ सारवती, १३ सुषमा। एकादशाक्षरा वृत्ति अथवा त्रिष्टुप्—१ इन्द्रवज्रा, २ उपेन्द्रवज्रा, ३ उपजाति, ४ सुमुखी, ५ शालिनी, ६ वातोर्मि, ७ भ्रमरविलसित, ८ अनुकूला, ९ रथोद्धता, १० स्वागता, ११ दोधक, १२ मोटनक, १३ श्येनी, १४ वृत्ता, १५ भद्रिका, १६ उपस्थित,

१७ शिखण्डित, १८ उपचित्र, १९ कुसुमजनिता, २० अनवसिता, २१ विभ्वङ्कमाला, २२ मान्द्रपद, २३ द्रुता, २४ इन्दिरा, २५ दमनक, २६ मालतीमाला। द्वादशाक्षरा वृत्ति या जगती-१ चन्द्रवर्त्म, २ वंशस्थविल, ३ इन्द्रवंशा, ४ जलोद्धतगति, ५ भुजङ्गप्रयात, ६ तोटक, ७ स्रग्विणी, ८ वैश्वदेवी, ९ प्रमिताक्षरा, १० द्रुतविलम्बित, ११ मन्दाकिनी, १२ कुसुमविचित्रा, १३ तामरस, १४ मालती, १५ मणिमाला, १६ जलधरमाला, १७ पुट, १८ प्रियम्बदा, १९ ललिता, २० उज्ज्वला, २१ नवमालिका, २२ ललना, २३ ललित, २४ द्रुतपद २५ विद्याधार, २६ पञ्चचामर, २७ सारङ्ग, २८ मौक्तिकदाम, २९ मोटक, ३० तरलनयन। त्रयोदशाक्षरा वृत्ति, अति-जगती—१ प्रहर्षिणी, २ रुचिरा, ३ मत्तमयूर, ४ चण्डी, ५ मञ्जुभाषिणी, ६ चन्द्रिका, ७ कलहंस, ८ प्रबोधिता, ९ मृगेन्द्रमुख, १० चञ्चरिकावली, ११ चन्द्ररेखा, १२ उपस्थित, १३ मञ्जुहासिनी, १४ कूटजगती, १५ कन्दुक, १६ प्रभावती, १७ तारका, १८ पङ्कजाली। चतुर्दशाक्षरा वृत्ति या शक्करी—१ असंबाधा, २ बसन्ततिलक, ३ अपराजिता, ४ प्रहरणकलिका, ५ वासन्ती, ६ लोला, ७ नान्दीमुखी, ८ इन्दुवदना, ९ नदी, १० लक्ष्मी, ११ सुपवित्र, १२ मध्यक्षामा, १३ कुटिल, १४ प्रमदा, १५ मञ्जरी, १६ कुमारी, १७ सुकेशर, १८ चन्द्रौरस, १९ वासन्ती, २० चक्रपद, २१ कुररीरुता। पञ्चदशाक्षरा वृत्ति वा अतिशक्करी—१ शशिकला, २ स्रक्, ३ मणि-गुणनिकर, ४ मालिनी, ५ लीलाखेल, ६ विपिनतिलक, ७ तूणक, ८ चन्द्रलेखा, ९ चित्रा, १० प्रभद्रक ११ मेला, १२ चन्द्रकान्ता, १३ उपमालिनी, १४ ऋषभ, १५ मानस-हंस, १६ नलिनी, १७ निशिपालक। षोड़शाक्षरा वृत्ति वा अष्टि—१ चित्र, २ ऋषभगजविलसित (गजतुरगविलसित), ३ चकिता, ४ पञ्चचामर, ५ मदनललिता, ६ वाणिनी, ७ प्रवरललित, ८ अचलधृति, ९ गरुड़रुत, १० धीरललिता, ११ अश्वगति, मणिकल्प-लता, १३ रूप, १४ वरयुवती। सप्तदशाक्षरा वृत्ति या अत्यष्टि-१ शिखरिणी, २ पृथ्वी, ३ वंशपत्रपतित, ४ मन्दा-क्रान्ता, ५ हरिणी, ६ नर्दटक, ७ कोकिलक, ८ हारिणी, ९ भाराक्रान्ता, १० हरि, ११ कान्ता, १२ रतिशायिनी, १३ पञ्चचामर, १४ मालाधर। अष्टादशाक्षरा वृत्ति या धृति—१ कुसुमितलतावेल्लिता, २ नन्दन, ३ नाराच, ४ चित्रलेख, ५ शार्दूलललित, ६ हरिणप्लुता, ७ अश्वगति, ८ सुधा, ९ भ्रमरपदक, १० शार्दूल, ११ केशर, १२ चल, १३ लालसा, १४ गजेन्द्रलता, १५ सिंहविस्फु-र्जित, १६ हरनर्त्तन १७ क्रीड़ाचक्र, १८ चन्द्रलेखा, १९ हीरक। ऊनविंशत्यक्षरा वृत्ति वा अतिधृति—१ मेघविस्फुर्जिता, २ छाया, ३ शार्दूलविक्रीड़ित, ४ सुरसा, ५ फुल्लदाम, ६ पञ्चचामर ७ बिम्ब, ८ मकर-चन्द्रिका, ९ मणिमञ्जरी, १० समुद्रता। विंशत्यक्षरा वृत्ति या कृति-१ सुवदना, २ गीतिका, ३ वृत्त, ४ शोभा, ५ सुवंशा, ६ मत्तेभविक्रीड़ित, एकविंशत्यक्षरा वृत्ति या प्रकृति-१ स्रग्धरा, २ सरसी, ३ सिंहक। द्वाविंशत्यक्षरा वृत्ति वा आकृति—१ हंसी, २ मदिरा, ३ भद्रक, ४ लालित्य, ५ महास्रग्धरा। त्रयोविंशताक्षरा वृत्ति वा विकृति—१ अद्रितनया, २ अश्वललित, ३ मत्ताक्रीड़, ४ सुन्दरिका। चतुर्विंशताक्षरा वृत्ति वा संस्कृति—१ तन्वी, २ किरीट, ३ दुर्मिल। पञ्चविंशताक्षरा वृत्ति वा अतिकृति—क्रौञ्चपदा। षड़्विंशताक्षरा वृत्ति या उत्कृति—१ भुजङ्गविजृम्भित, २ अपवाह। सप्तविंशता-क्षरा वृत्ति या दण्डक—१ चण्डवृष्टिप्रपात, २ अर्ण, ३ अर्णव ४ व्याल, ५ जीमूत, ६ लीलाकर, ७ उद्दाम, ८ शङ्ख, ९ आराम, १० संग्राम, ११ सुवासवेकुण्ठ, १२ सार, १३ कासार, १४ विसार, १५ संहार, १६ नीहार, १७ मन्दार, १८ केदार, १९ आसार, २० सत्कार, २१ संस्कार, २२ माकंद, २३ गोविंद, २४ मानंद, २५ संदोह, २६ आनंद, २७ प्रचित, २८ कुसुमस्तवक, २९ मत्तमातङ्ग, ३० लीलाकर ३१ अनङ्गशेखर, ३२ अशोकपुष्पमञ्जरी, ३३ सिंहविक्रीड़, ३४ अशोकमञ्जरी, ३५ सिंहविक्रान्त, ३६ भुजङ्गविलस, ३७ कामवाण।

लौकिक छन्द प्रथमत: दो भागोंमें विभक्त है—एक-वृत्त और दूसरा मात्रवृत्त। जिन छंदोंमें स्वर संख्या और लघु गुरुका नियम है, उन्हें वृत्त तथा जिनमें स्वर संख्याका नियम नहीं; सिर्फ मात्राका ही नियम है, उन्हें मात्रवृत्त कहते हैं। वृत्तके भी तीन भेद हैं,—एक समवृत्त, दूसरा अर्द्धसमवृत्त और तीसरा विषम वृत्त।

जिसके चारो चरण समान हों उसे समवृत्त कहते हैं। जिन छन्दोंके प्रथम और तृतीय चरण एक-से हों तथा बाकीके दो चरण इनसे भिन्न लक्षणयुक्त हों, उन्हें अर्द्ध सम कहते हैं। जिसके चारो चरण भिन्न भिन्न लक्षण वाले हों, उसको विषम कहते हैं। समवृत्तके भेद पहले लिखे जा चुके हैं। अब अर्द्धसमवृत्त इत्यादिके भेद लिखते हैं। अर्द्धसमवृत्त—१ उपचित, २ वेगवती, ३ हरिणप्लुता, ४ अपरवक्त्र, ५ पुष्पिताग्रा, ६ सुंदरी, ७ द्रुतमध्या, ८ भद्रविराट्, ९ केतुमती, १० आख्यानकी, ११ विपरितपूर्वा, १२ कौमुदी, १३ मञ्जुसौरभ, १४ मालभारिणी। विषमवृत्त—१ उद्गता, २ सौरभक, ३ ललित, ४ वक्त्र, ५ प्रचुपित, ६ वर्द्धमान, ७ आर्षभ, ८ शुद्ध-विराट्। मात्रावृत्त आर्या—१ लक्ष्मी, २ ऋद्धि, ३ बुद्धि, ४ लज्जा, ५ विद्या, ६ क्षमा, ७ देवी, ८ गौरी, ९ रात्रि, १० चूर्णा, ११ छाया, १२ कान्ति, १३ महामाया, १४ कीर्ति, १५ सिद्धा, १६ मनोरमा, १७ गाहिनी, १८ विश्वा, १९ वासिता, २० शोभा, २१ हरिणी, २२ चक्री, २३ सारसी, २४ कुररी, २५ सिंही, २६ हंसी, २७ गीति, २८ उपगीति, २९ उद्गीति, ३० वैतालीय, ३१ औपच्छन्दिक, ३२ आपातलिका, ३३ दक्षिणान्तिका, ३४ उदीच्यवृत्ति, ३५ प्राच्यवृत्ति, ३६ प्रवृत्तक, ३७ परान्तिका, ३८ चारुहासिनी, ३९ अचलधृति, ४० मात्रासमक, ४१ विश्लोक, ४२ नवासिका, ४३ चित्रा, ४४ उपचित्रा, ४५ पादाकुलक, ४६ शिखा, ४७ खजा, ४८ अनंगक्रीड़ा, ४९ रुचिरा। इनके सिवा पज्झटिका, गाथा आदि और भी कई एक छन्द हैं; जिनका विशेष विवरण पिङ्गलकृत छन्दोग्रन्थ और छन्दोमञ्जरी आदिमें लिखा है।

(यहां सिर्फ छन्दोंके नामके नाम ही लिखे गये हैं, विवरण उन उन शब्दमें मिलेगा।)

संस्कृत भाषाकी तरह परवर्त्ती भाषाओंमें भी छन्दो-नियम हैं। हिन्दी भाषामें चौपाई, दोहा, रोला, रूपमाला इत्यादि मात्रिक छन्द कहलाते हैं। छंद देखो।

छन्दस्कृत (सं० त्रि०) १ गायत्र्यादि छन्दोयुक्त, वह वेद जिसमें गायत्री आदि छन्द हैं। (मनु ४।१००) २ वेद-मन्त्री।

छन्दस्य (सं० त्रि०) छंदसो भवः छन्दस्-यत्। छन्दसोय देखो। पा ४।३।७१। १ छन्दोयुक्त, छन्दसे जिसकी उत्पत्ति हुई हो। २ अभिलाषाके द्वारा सम्पादित।

छन्दस्वत् (सं० त्रि०) छंदस् मतुप् मस्य वत्वञ्च। प्रशस्त छंदोयुक्त।

"छन्दस्वती उषसा पेपिशाने।" (तैत्तिरीयसं० ४।३।११।१)

छन्दःस्तुत् (सं० त्रि०) छंदसा स्तौति छंदः-स्तु-क्विप्। जो छंदसे स्तव करते हों।

"छन्दःस्तुतः शतविराजस्" (भागवत ५।२०।८)

छन्दःस्तुभ् (सं० त्रि०) छंदसा स्तोभते स्तुभ्यते वा छंदः स्तुभ कर्त्तरि कर्मणि वा क्विप्। १ जो छंद द्वारा स्तुति करते हों या जिनकी स्तुति छन्दों द्वारा की जाय। "छन्दःस्तुभः कुभन्यवः" (ऋक् ५।५२।१२) छन्दसा पत्रेण स्तुभ्नाति आच्छादयति सूर्यमिति शेषः कर्त्तरि क्विप्। (पु०) २ सूर्यके सारथी, अरुण। पितामह ब्रह्माने रविकी त्रिलोकदाहक तेजोराशि देख कश्यपसुत अरुणको सूर्यके सारथी पद पर नियुक्त किया। महाकाय अरुणके सम्मुख रहनेसे मार्त्तण्डकी प्रचण्ड किरणराशि खर्व हो गई है। (भारत आदि २४ अ०)

छन्द्दु (सं० त्रि०) उपच्छन्दयिता, जो किसी कार्यमें लगे हो।

छन्दुकी—मुलतान प्रदेशस्थ एक जिला। बाढ़के समय सिन्धु, लारखाना और अरल नदियां इसके चारों ओर घिरी रहती हैं। यहांकी जमीन अत्यन्त उर्वरा है।

छन्दोग (सं० पु०) छन्दो वेदविशेषं सामेत्यर्थः गायति छंदः-गै-टक्। गापोष्टक्। पा ३।२।८। १ सामग, सामगान करनेवाला पुरुष, सामवेदी।

"यजेन भोजयेच्छ्राद्धे बह्वृचं वेदपारगं।
शाखान्तगमथाध्वर्य्युं छन्दोगन्तु समाप्तिकम्॥" (मनु० ३।१४५)

छन्दोगपरिशिष्ट (सं० क्ली०) छंदोगेन सामगेन कात्यायनेन कृतं परिशिष्टं, मध्यपदलो०। कात्यायन कृत सामवेदोक्त कर्मबोधक गोभिलसूत्रका परिशिष्ट, कात्यायनका बनाया हुआ सामवेदके गोभिलसूत्रका परिशिष्ट।

छन्दोगमाहकि (सं० पु०) एक वैदिक आचार्य।

छन्दोदेव (सं० पु०) मतङ्ग नामका चण्डाल, ब्राह्मणीके गर्भ और नापितके औरससे इसकी उत्पत्ति हुई थी। इसने जातिसाङ्कर्यके कारण ब्राह्मणहीन हो कर तपस्या की थी। देवराज इन्द्र जब इसकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो

कर वर देने आये ; तब इसने ब्राह्मण्य पानेका वर मांगा। इस पर देवराजने कहा—"दूसरा वर मांगो।" मतङ्गने कहा—"प्रभो ! यदि आपको मुझे ब्राह्मण बनाना अभीष्ट नहीं तो ऐसा ही वर दीजिये कि, जिससे मैं यथेच्छाचारी कामरूपी विहङ्ग हो कर ब्राह्मण, क्षत्रिय आदिके पास पूजनीय हो सकूं।" इन्द्रने कहा—"तथास्तु, आजसे तुम्हारा छंदोदेव नाम हुआ। स्त्रियां तुम्हारी पूजा करेंगी।" ऐसा वर दे कर इन्द्र अन्तर्हित हो गये। (भारत १३।२८ अ०)

छन्दोनामन् (सं० क्ली०) ६-तत्। १ छंदका नाम। (त्रि०) २ छंदो नामक।

छन्दोभङ्ग (सं० पु०) छंद रचनाका एक दोष। यह गणना या लघु गुरु आदि नियमका पालन न करनेके कारण होता है।

छन्दोभाषा (सं० स्त्री०) ६-तत्। १ छंदका भाषण, छंदका कथन। २ उपाङ्गशास्त्रभेद।

छन्दोम (सं० पु०) त्रिसुता या तीन दिनोंमें साध्य अहीन यागभेद। यह आठवें, नवें और दसवें दिन तीन दिन तक होता था। राज्यलाभके लिए यह यज्ञ किया जाता है। (कात्यायन-श्रौतसूत्र २३।३।८)

छन्दोमदशाह (सं० पु०) दशदिनसाध्य यागभेद, एक प्रकारका याग जो दश दिनोंमें समाप्त होता है। पशुकामी इस यज्ञको करते हैं।

"छन्दोमदशाहः पशुकामस्य।" (कात्या० श्रौ० सूत्र २३।५।२८)

छन्दोमय (सं० त्रि०) छंदस्-मयट्। १ गायत्र्यादि छंदोमय। २ वेदमय।

"छन्दोमयोमखमयोऽखिलदेवतात्मा।" (भाग० २।७।११)

छन्दोमान (सं० क्ली०) ६-तत्। १ छंदका मान, छंदकी इज्जत।

छन्दोमाला (सं० स्त्री०) छंदःसमूह, छंदोंकी पंक्ति।

छन्दोवट्स्तोम (सं० क्ली०) छंदोभेद, एक प्रकारका छंद।

छंदोविचिति (सं० स्त्री०) ६-तत्। १ छंदःसमूह। ततो-भवे व्याख्याने वा ऋगयनादित्वादण् छंदोविचितिः। २ उसी नामका छंदोग्रन्थ।

छन्दोवत्त (सं० क्ली०) अक्षरसङ्घात छंद।

"छन्दोवृत्तैश्च विविधैरन्वितं विदुषां प्रियम्।" (भारत १।२४)

छन्न (सं० त्रि०) छद-क्त। १ आच्छादित, आवृत, ढका हुआ। २ लुप्त, गायब। ३ निर्जन, एकांत। (क्ली०) ४ रहः, निर्जन स्थान, एकान्त जगह। "छन्नेष्वपि स्पष्टतरेषु यत्र।" (माघ) ५ गुप्तस्थान, छिपनेकी जगह।

छन्न (हिं० पु०) १ छंदो नामका आभूषण। २ वह शब्द जो किसी तपी हुई चीज पर पानी आदि पड़नेसे उत्पन्न होता हो। ३ छनकार, ठनकार।

छन्नमति (सं० त्रि०) छन्ना लुप्ता मतिर्यस्य, बहुव्री०। नष्ट बुद्धि, जिसकी बुद्धि पर परदा पड़ा हो, जड़, मूर्ख।

छन्नवेशिन् (सं० त्रि०) छन्नवेश अस्त्यर्थे इनि। छन्नभेष-धारी, मायावी छली, फरेबी।

छन्ना (हिं० पु०) छनना देखो।

छप (हिं० स्त्री०) वह शब्द जो किसी पदार्थके जोरसे पानीमें गिरनेसे उत्पन्न होता हो।

छपका (हिं० पु०) १ एक प्रकारका आ[illegible] जो सिर पर पहना जाता है। यह लखनऊमें मुसलमान स्त्रियां पहनती हैं। २ कबूतर फंसानेका जाल। ३ पानीमें हाथ पैर फेंकनेकी क्रिया या भाव। ४ खुरकापका, खुर-वाले पशुओंका एक रोग जिसमें पशुओंके खुर पक जाते हैं। ५ छींटा पानीका भरपूर छींटा। ६ लकड़ीके सन्दूकमें वह ऊपरका पटरा जिसमें कुण्डेकी जञ्जीर लगी रहती है।

छपछपाना (हिं० क्रि०) १ जलमें हाथ पैर पटकना। २ कुछ तैर लेना।

छपड़ी (देश०) पक्षिविशेष, भुजंगा नामकी चिड़िया।

छपद (हिं० पु०) भ्रमर, भौंरा।

छपना (हिं० क्रि०) १ चिह्नपड़ना, छापा जाना। २ अङ्कित होना, चिह्नित होना। ३ छापेखानेमें अक्षरों आदिका अंकित होना। ४ शीतलाका टीका लगाना।

छपरखट (हिं० स्त्री०) वह पलंग जिसमें मसहरी लगी हो।

छपरबंद (हिं० वि०) १ आबाद, जिनका घर बना हो।

छपरबंदी (हिं० स्त्री०) १ छप्पर छानेका काम। २ छप्पर छानेकी मजदूरी।

छपरबल्ली—धारवार जिलेका एक ग्राम। यहां हनुमान-

का एक प्राचीन मन्दिर है। मंदिरमें बहुत पूर्व समयका एक शिलालेख है।

छपरा—विहार प्रान्तके सारन जिलेका सबडिविजन। यह अक्षा० २५° ३६' एवं २६° १४' उ० और देशा० ८४° २३' तथा ८५° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १०४८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ६७२७१८ है। इसमें २ नगर और २१७१ गांव बसे हैं।

छपरा—विहार प्रान्तके सारन जिलेका सदर। यह अक्षा० २५° ४७' उ० और देशा० ८४° ४४' पू०में घाघरा नदीके वाम तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४५६०१ है। १८७१ और १८८० ई०को छपरा घाघराकी बाढ़में डूब गया था। खृष्टीय १८वीं शताब्दीको यहां फरासीसियों, डचों और पोर्तगीजोंकी कोठियां रहीं; परंतु गङ्गा और घाघराके दूर हट जानेसे व्यवसायको बड़ा धक्का लगा। प्रधानतः शोरे, अफीम, अलसी, गुड़ और लाहकी रफ़्तनी होती है। यहां फौज भी रहती है। १८६४ ई०को म्युनिसपालिटी हुई। छपरामें एक बहुत अच्छी सराय और २ बाजार हैं।

छपरिया (हिं० स्त्री०) १ छपरी देखो। २ छोटा छप्पर।

छपरी (हिं० स्त्री०) झोपड़ी, मढ़ी।

छपरौली—युक्तप्रदेशके मेरठ जिलेकी बागपत तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८° १२' उ० और देशा० ७७° ११' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७०५८ है। कहा जाता कि खृष्टीय ८ वीं शताब्दीको जाटोंने उसे स्थापित किया था। १८ वीं० शताब्दीको मोरपुरके जाट सिख-उत्पीड़नसे घबरा करके यहां आये। उससे इसकी बहुत श्रीवृद्धि हुई। छपरौलीमें कितने ही धनी जैन वैश्य रहते हैं। गेहूं और शक्करका बाजार बड़ा है।

छपा (हिं० स्त्री०) रात्रि, रात।

छपाई (हिं० स्त्री) १ मुद्रण, अङ्कन, छापनेका काम। २ छापनेका तरीका। ३ छापनेकी मजदूरी।

छपाकर (हिं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ कपूर, कपूर।

छपाका (हिं० पु०) १ वह शब्द जो पानी पर किसी वस्तुके पड़नेसे होता हो। २ जलकण, सीकर, छींटा।

छपाना (हिं० क्रि०) १ छापनेका काम कराना। २ अङ्कित कराना, चिह्नित कराना। ३ शीतलाका टीका लगवाना। ४ खेतकी मट्टी नरम बनानेके लिये उसको सींचना। ५ मुद्रित कराना।

छप्पन (हिं० वि०) १ जो पचाससे छः अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो पचास और छःके योगसे बनती हो।

छप्पय (हिं० स्त्री०) छः चरणवाला एक तरहका मात्रिक छंद।

छप्पर (हिं० पु०) मकानकी छाजन। यह बांस या लकड़ीका फट्टियों और फूसकी बनी रहती है, छान। २ क्षुद्र जलाशय, छोटा ताल, डाबर, पोखर।

छप्परबन्द (हिं० पु०) १ वह जो छप्पर छानता हो। (वि०) २ आबाद, जो बस गया हो।

छप्परबन्द—पूना और हवेलीमें रहनेवाली एक जाति। इनका राजपूतवंश है। ये छप्परका घर बनाते हैं, इस लिये इनका छप्परबन्द नाम पड़ा है। इन लोगोंका कहना है कि, प्रायः दोसौ वर्षसे भी पहले ये स्त्रीपुत्र सहित जीविकानिर्वाहके लिये राजपूतानासे पूना आए थे। ये भवानीदेवीके उपासक हैं। पुरुष लंबी चोटी और मूंछ रखते हैं, किन्तु दाढ़ी नहीं रखते। ये मराठों जैसी पगड़ी बांधा करते हैं। स्त्रियोंका पहनावा साधारण है। ये आपसमें हिन्दी और दूसरोंके साथ मराठी बोलते हैं। प्रायः ये लोग कुत्ते पालते हैं। परदेशी ब्राह्मण इनके पुरोहित हैं। इनमें लड़कोंका विवाह १२से २५ और लड़कियोंका १०से २० वर्षकी उम्र तक होता है। इनमें बहुविवाह और विधवाविवाह प्रचलित है। फिलहाल गवर्मेण्टने छप्परके घर बनानेकी मुमानियत कर दी है; इसलिए इनका रोजगार मारा गया है। ये अत्यन्त दरिद्र, परिश्रमी, शान्त और कष्टसहिष्णु होते हैं।

छबड़ा (देश०) १ टोकरा, झाब, छितना। २ खांचा, बड़ा पिंजड़ा।

छबतखती (हिं० स्त्री०) सौन्दर्य, सुन्दरता, सज धज।

छबरा (हिं० पु०) छबड़ा देखो।

छबि (हिं० स्त्री०) छवि देखो।

छबीला (हिं० वि०) शोभायुक्त, जो देखनेमें अच्छा मालूम पड़ता हो।

छबुंदा (हिं॰ पु॰) कीटविशेष, एक प्रकारका कीड़ा जो गुबरैलेसे मिलता जुलता है। इसकी पीठ पर छः काली बुँदकियाँ होती हैं। यह बहुत विषैला कीड़ा है। ऐसा कहा जाता है कि इसका काटा आदमी नहीं जीता।

छब्बी (देश॰) पैसा।

छब्बीस (हिं॰ वि॰) १ जो बीससे छः अधिक हो। (पु॰) २ वह संख्या जो बीस और छः के योगसे बनती हो।

छब्बीसवाँ (हिं॰ वि॰) जो पचीसके बाद पड़ता हो, जिसका स्थान छब्बीस पर हो।

छब्बीसी (हिं॰ स्त्री॰) १ छब्बीस पदार्थोंका ढेर। २ फलोंकी बिक्रीका सैकड़ा जो छब्बीस गाही वा १३० का होता है।

छम (अनु॰ स्त्री॰) १ घुंघरूके बजनेका शब्द। २ वृष्टि का शब्द।

छमक (हिं॰ स्त्री॰) वह स्त्री जो अपनेको सजा कर चलती है, ठसक, ठाठबाट।

छमकना (हिं॰ क्रि॰) १ घुंघुरू या किसी दूसरे बाजेको बजाना। २ आभूषणकी झनकार करना, ठसक दिखाना।

छमच्छमित (सं॰ क्ली॰) शब्दभेद, एक प्रकारका शब्द।
"ज्वलन्मांसवसामेदच्छमच्छमितमङ्गलम्।" (मार्कण्डेय पु॰ ८।१११)

छमछम (अनु॰ स्त्री॰) १ पैरमें पहने हुए गहनोंके बजनेका शब्द। २ बादल बरसनेका शब्द।

छमछमाना (अनु॰ क्रि॰) १ छमछम आवाज करना।

छमण्ड (सं॰ पु॰) पितृहीन बालक, वह बालक जिसका पिता मर गया हो।

छमाछम (अनु॰ स्त्री॰) १ वह शब्द जो चलते समय आभूषणोंसे होता हो। २ वृष्टि होनेका शब्द।

छमाशी (हिं॰ स्त्री॰) छः माशेका तौल।

छमासी (हिं॰ स्त्री॰) १ वह श्राद्ध जो मृत्युके छः महीनेके बाद किया जाता हो। (वि॰) २ छः महीनेमें होनेका।

छमि (सं॰ पु॰) ऊर्णनाभ, मकड़ा।

छमुख (हिं॰ पु॰) कार्त्तिकेय, षड़ानन।

छम्वट (सं॰ अव्य॰) व्यवधान, अन्तर।

छय (हिं॰ पु॰) क्षय, नाश।

छर (हिं॰ पु॰) छल देखो।

छरई (देश॰) एक तरहका ठप्पा।

छरकना (हिं॰ क्रि॰) छलकना देखो।

छरछर (हिं॰ पु॰) १ वह शब्द जो पतली लचीली छड़ीके लगनेसे होता हो, सटसट। २ वह शब्द जो छर्रोंसे निकल कर वस्तुओं पर पड़नेसे होता हो।

छरछराहट (हिं॰ स्त्री॰) वह पीड़ा जो घावमें नमक आदिके लगानेसे होती हो।

छरना (हिं॰ क्रि॰) १ टपकना, चूना। २ चकचकाना, चमकना। ३ पृथक् होना, छँटना, दूर होना।

छरपुरी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका पौधा जिसमें केसर या फूल नहीं लगते, छरीला।

छरहरा (हिं॰ वि॰) १ चोणाङ्ग, सुबुक, हलका। २ चुस्त, चालाक, फुरतीला।

छरहरापन (हिं॰ पु॰) १ चोणाङ्गता, सुबुकपना। २ चुस्ती, चालाकी।

छरा (हिं॰ पु॰) १ छड़ा, चूड़ीके आकारका एक प्रकारका गहना जो पैरोंमें पहना जाता है। २ लर, लड़ी। ३ रस्सी, डोरी। ४ नारा, इजारबंद, नीवी।

छरिंदा (हिं॰ वि॰) छरीदा देखो।

छरिया (हिं॰ पु॰) द्वारपालक, छड़ीबरदार, चोबदार।

छरिला (हिं॰ पु॰) छरीला देखो।

छरिषा (सं॰ स्त्री॰) दारुहरिद्रा, दारुहल्दी।

छरीदा (हिं॰ वि॰) १ एकान्त, अकेला। २ बिना कोई बोझ या असबाब लिए।

छरीदार (हिं॰ वि॰) छरीदा देखो।

छरीला (हिं॰ पु॰) औषधके काममें आनेवाला एक प्रकारका पौधा। यह काईसे बहुत कुछ मिलता जुलता है। इसमें केसर या फूल नहीं लगते। यह कड़ीसे कड़ी चट्टानों पर बालके गुच्छोंके रूपमें फैलता है। ज्यादेसे ज्यादे गरमी या सरदी पड़ने पर भी इसे किसी तरहको हानि नहीं पहुंचती है। जब यह पौधा सूख जाता है तो इससे एक प्रकारकी मीठी सुगन्ध निकलती है। यह चरपरा, कड़ुआ, कफ और वातनाशक तथा तृष्णा या दाहको दूर करनेवाला माना गया है। खाज,

कोढ़, पथरी आदि रोगोंमें यह विशेष हितकर है। कहीं कहीं इसे पथरफूल और बुढ़ना भी कहते हैं। यह हिमालय चट्टानों, पेड़ों आदि पर बहुत दीख पड़ता है। इसका संस्कृत पर्याय—शैलाख्य, वृद्ध, शिलापुष्प, गिरिपुष्पक, शिलासन, शैलज, शिलेय, कालानुसार्य, स्थिर, पलित, जीर्ण और शिलादद्रु है।

छरीरा (हिं० पु०) नख आदि लगनेका या और किसी छिलनेका हलका चिह्न, खराश।

छर्द (सं० स्त्री०) छर्द भावे घञ्। छर्दि, वमन, कै, उलटी।

छर्दन (सं० क्ली०) छर्द भावे ल्युट्। १ छर्दि, वमन।

"छर्दनं दध्युदश्विद्धामयवाः तण्डुलाम्बुना।" (सुश्रुत ४।१०)

कर्त्तरि ल्यु। (पु०) २ अलम्बुष राक्षस। छेती णिच् ल्युट्। ३ अलम्बुष, तितलौकी। ४ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। ५ मदनवृक्ष, मुचुकुंदवृक्ष, मदनफल, कटहर। (त्रि०) ६ वमनकारी, कै या उलटी करनेवाला।

छर्दापनिका (सं० स्त्री०) छर्द मनं आपयति प्रापयति छर्द-आप्-ल्यु, ततः स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वं च। ककँटी, ककड़ी।

छर्दि (सं० स्त्री०) छर्द-छेती णिच्-इन्। १ वमनरोग, उलटी होनेकी बीमारी। इसके पर्याय—प्रच्छर्दिका, छर्द, वमथु, वमन, वमि, छर्दिका, छर्द्दिका, वान्ति, उद्गार, छर्दन और उत्कासिका। अतिशय तरल, तैलाक्त, कटु और नुनखरे तथा जिसकी धातमें जो सह्य न हों ऐसे पदार्थोंके खानेसे, श्रम, भय, उद्वेग, अजीर्णता, क्रिमिदोष और असमयमें ज्यादा भोजन करनेसे तथा अन्य वीभत्सके कारण गर्भिणी और जल्दी जल्दी भोजन करनेवालोंको छर्दिरोग होता है। हिचकी, उद्गार, रोध, मुंहसे पानीका गिरना और भोजनमें अरुचि-येही इसके पूर्वलक्षण है। वातज छर्दिरोगसे हृदय, बगल और नाभिमें शूलकी तरह वेदना होती है, मुख सूख जाता है और बड़ी मुश्किलसे थोड़ी थोड़ी सफेन कसैली काली कै होती है। कै होते समय गलेका शब्द अधिक होता है।

पित्तज छर्दिसे मूर्छा, पिपासा, मुखशोष, शिर, तालु और अक्षि आदिमें सन्ताप तथा वमनके समय देहमें ज्वलन होती है। पित्तज छर्दि पीली, हरी और अत्यन्त तिक्त होती है।

श्लेष्मज छर्दि स्निग्ध, घनी स्वादु और विशुद्ध होती है। इससे मुंहका आस्वाद बना रहता है, नाक या मुंहसे कफ निकलता और नींद आती है। भोजनमें रुचि होती है। वमन करते समय कुछ कष्ट और शरीर रोमाञ्चित हो जाता है।

त्रिदोषज छर्दि लवण और अम्लरसयुक्त तथा अत्यन्त उष्ण होती है। इसका रंग नीला या लाल होता है। इसमें शूल, अपाक, अरुचि, दाह, प्यास, श्वास इत्यादिका उपद्रव हुआ करता है। आगन्तुक छर्दि पाँच तरहकी है—१ वीभत्सज, दौहृदज, ३ आमज, ४ असातन्यज और ५ क्रिमिज।

क्रिमिज छर्दिमें क्रिमिदोष और हृद्रोगके लक्षण दिखाई देते हैं। इसमें शूलकी वेदना तथा हिचकियां आया करती हैं। क्षीण अवस्थामें क्रिमिज छर्दि यदि शोणितपूययुक्त हो तो उसे असाध्य समझना चाहिये। छर्दिके उपद्रव—खाँसी, श्वास, हिचकी, तृष्णा, वैचित्य और हृद्रोग।

औषध—असगंध और हर्रे दोनोंका चूर्ण बना कर पानीसे अथवा हर्रे और कुड़ इनकी बुकनी बना कर ठण्डे पानीके साथ गाल-भर खाना चाहिये। गुलञ्च, कुड़, अरिष्ट, धनिया और लाल चन्दन ये भी छर्दिके लिए लाभदायक हैं। बिल्वमूल और गुलञ्चको उबाल कर मधुके साथ खानेसे या चावलके पानीके साथ दूब बट कर खानेसे त्रिविध छर्दिरोग आरोग्य होता है। वातजके सिवा और सभी छर्दिमें लङ्घन करना चाहिये।

दूधको सुखा कर उसमें पानी डाल कर पीनेसे अथवा घृतसैन्धवयुक्त मूंग और आमलाजूश खानेसे वातज छर्दि आराम हो जाती है।

पित्तज छर्दिमें गुलञ्च, त्रिफला, नीम और परवलका उबाला हुआ पानी मधुसे मिला कर पीना चाहिये। कफज छर्दिमें विड़ङ्ग, त्रिफला और पीपलका चूर्ण अथवा विड़ङ्ग, प्लव (नागरमूथा) और सोंठका चूर्ण मधुसे खाना चाहिये।

धायका फल, चीनी और धानका लावा इनकी एकत्र

पीस कर, एक पल मधु और बत्तीस तोला जल मिलाना चाहिये ; फिर उसे कपड़ेमें छान कर पीनेसे त्रिदोष छर्दि जाती रहती है। गुलञ्चके उबाले हुए पानीको ठण्डा कर, उसे मधुके साथ पीनेसे भी त्रिदोष-छर्दिका उपशम होता है। रुचिकर फल खानेसे वीभत्सज वमि, वाञ्छित फल खानेसे दौहृदज, लङ्घन करनेसे आमज और असह्य पदार्थोंके खानेसे जो छर्दि हुई हो, वह सह्य पदार्थोंके खानेसे अच्छी हो जाती है। (भावप्र०) २ वमन, कै, उलटी।

छर्दिका (सं० स्त्री०) छर्दि स्वार्थे कन् स्त्रियां टाप्, यद्वा छर्दयति छर्दि-णवुल्-टाप् अत इत्वञ्च। १ विष्णुक्रान्ता, नील अपराजिता। २ उत्कासिका, काम रोगविशेष, किसी किस्मकी खांसी, खुखार। ३ वमन, कै, उलटी।

छर्दिकारिपु (सं० पु०) ६-तत्। छुहेला, छोटी इलायची।

छर्दिघ्न (सं० पु०) छर्दिं हन्ति छर्दि-हन्-टक्। १ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। २ महानिम्ब, बकाइन।

छर्दिष्प (सं० त्रि०) छर्दिः गृहं पाति रक्षति छर्दिः पा-क। गृहपालक, जो घरकी रक्षा करता हो।

छर्दिस् (सं० स्त्री०) छर्द इसि। (उण् २।१०८) १ वमि, वमनरोग, कैकी बीमारी।

"छर्दीं वि यामीह पुरोदितानि" (चरक १३ अ०) २ उद्गार, उबाल, उफान। ३ गृह, घर। "छर्दिर्यन्त मदाभ्यं" (ऋक् ८।५।१२) 'छर्दिः गृहं' (सायण) ४ तेज, प्रताप। ५ गुप्तस्थान।

छर्दीका (सं० स्त्री०) छर्दिरोग, कैकी बीमारी।

छर्द्यापनक (सं० पु०) छर्दिं वमिं आपयति प्रापयति, आप्-णिच्-ल्यु, ततः स्वार्थे कन् टाप् अतइत्वं। ककंटी, ककड़ी।

छर्रा (हिं० पु०) १ छोटी कंकड़ी, कंकड़ आदिका छोटा टुकड़ा। २ बन्दूकके काममें आनेका लोहे या सीसेके छोटे छोटे टुकड़ोंका समूह। ३ जलकण, छींटा।

छलंक (हिं० स्त्री०) छलांग देखो।

छल (सं० क्ली०) छो पृषोदरादित्वात् कलच् यद्वा छल-अच्। स्वरूपाच्छादन, कापट्य, असली बातको छिपानेका कार्य जो दूसरेको धोखा देनेके लिए किया जाता है।

"धर्मेण व्यवहारेण छलेनाचरितेन च।" (मनु ८।४९)

२ धूर्तता, ठगपन। ३ दम्भ, पाखण्ड, महत्त्व दिखानेके लिए व्यर्थका आडम्बर। ४ बहाना।

५ न्यायमतसिद्ध दोषभेद, न्यायशास्त्रका एक पदार्थ। प्रतिवादी यदि वादीके वक्तव्यके अर्थसे विरुद्ध अर्थकी कल्पना कर युक्ति द्वारा उसका खण्डन करे तो वह छल कहलाता है। छलके तीन भेद हैं—वाक्छल, सामान्यछल, उपचारछल। "विघातोऽर्थविकल्पोपपत्त्याच्छलम्" 'तत्त्रिविधं वाक्छलं सामान्यच्छलमुपचारच्छलञ्चेति।' (गौतमसूत्र)

वक्ताके ऐसे शब्दके प्रयोग करने पर कि जिसके दो अर्थ हो सकते हों—उसके अभिप्रेत अर्थको ग्रहण न करके अन्य अर्थकी कल्पना कर लेनेको वाक्छल कहते हैं।

जैसे—ये नव आभूषण पहन कर बैठे हैं। यहां 'नव' शब्दका नवीन अर्थ ही वक्ताका अभिप्रेत है; किन्तु प्रतिवादीने 'नव' शब्दसे नव संख्याकी कल्पना कर वादीके वाक्यका खण्डन कर दिया।

"अविशेषाभिहितेऽर्थे वक्तुरभिप्रायादर्थान्तरकल्पना वाक्छलम्।"

(गौतमसूत्र)

वक्ताके सम्भावित अर्थको अतिसामान्य प्रकारसे असम्भूत बता कर उसका खण्डन करना यह सामान्य छल है। जैसे—ये विद्याचरणसम्पन्न हैं, क्योंकि ब्राह्मण हैं। यहां वादी ब्राह्मणत्व रूप सामान्य द्वारा विद्याचरण सम्पद् साधन करते हैं। ब्राह्मणत्वरूपसे विद्याचार-संपन्न होना सम्भव है। किन्तु प्रतिवादीने वात्यरूप अति-सामान्य द्वारा उसका खण्डन कर दिया। ब्राह्मणत्वके हेतु द्वारा विद्याचरणसम्पन्न साधित नहीं हो सकता, क्योंकि वात्यमें विद्याचरणसम्पन्नके पक्षमें व्यभिचार मौजूद है। परन्तु तब ब्राह्मणत्वका अभाव नहीं है।

"सम्भवतोऽर्थस्यातिसामान्ययोगादसम्भूतार्थकल्पना सामान्यच्छलम्।"

(गौतमसू०)

शक्ति वा लक्षण द्वारा वादीके कहे हुए अर्थसे विरुद्ध अर्थकी कल्पना कर अर्थात् लाक्षणिक अर्थ और लाक्षणिकके स्थलमें शक्यार्थ कल्पना कर प्रतिवादी यदि वादीके वाक्य खण्डन करें, तो उसको उपचारच्छल कहते हैं। जैसे—"मञ्चाः क्रोशन्ति।" 'मञ्च' शब्दसे यहां वादीका अभिप्राय (लाक्षणिक अर्थ) 'मञ्चस्थ पुरुष'से है। किन्तु प्रतिवादीने इसका विरुद्ध

अर्थ अर्थात् मञ्च शब्दका शक्यार्थ (मञ्च या माचा) कल्पना कर वादीके वाक्यका खण्डन कर दिया।

"धर्म विकल्पनिर्देशेऽर्थ सद्भावप्रतिषेध उपचारच्छलम्।"

(गौतमसूत्र १।५५)

किसीका मत है कि, छलके दो भेद हैं। वाक्छल और उपचारछल एक ही हैं। वास्तवमें यह बात ठीक नहीं, क्योंकि दोनों हो प्रमाण द्वारा सिद्ध हो रहे हैं। और भी एक बात है कि, किञ्चित् साधर्म्य रहनेसे ही यदि दोनोंको एकता हो, तो किसी भी पदार्थके भेद नहीं किये जा सकते, क्योंकि परस्परमें कुछ न कुछ साधर्म्य होगा ही।

"वाक्छलमेवोपचारच्छलं तदविशेषात्।" "न तदर्थान्तरभावात्।" "अविशेषे वा किञ्चित् साधर्म्यादेकच्छलप्रसङ्गः।" (गौतमसू०)

६ नाटकोक्त वीथिका अङ्गभेद। एक अङ्ग रहते रहते नायक आकाशवाणीका अवलम्बन करता है। साहित्यदर्पणके मतसे प्रिय जो बहुतसे अप्रिय वाक्योंसे लुभा कर छलता है, उसे छल कहते हैं। किसी कार्यके उद्देशसे किसीको हंसी करनेकी तथा रोषजनक शठतापूर्ण बातको भी कोई कोई छल कहते हैं। (साहित्यद० ६ प०)

छलक (सं० त्रि०) छलयति छल-णवुल्। १ छलकारक, मायावी, छल करनेवाला। "मधुकैटभौ छलकौ धर्म शीलनाम्।" (हरिवंश २०३ अ०) छल स्वार्थे कन्। (क्लो०) २ छल, कपट। छल देखो।

छलक (हिं० स्त्री०) छलकनेका भाव या क्रिया।

छलकन ((हिं० स्त्री०) १ पानी आदिकी उछाल। २ उभार, स्फुरण।

छलकना (अनु० क्रि०) १ उभड़ना, बाहर प्रकट होना। २ पानी या और किसी तरल पदार्थका हिलने डोलने आदिके कारण बरतनसे उछल कर बाहर गिरना।

छलकाना (हिं० क्रि०) परिपूर्ण जलपात्रको हिला डुला कर पानी उछालना।

छलकारक (सं० त्रि०) छलं करोति छल-कृ कर्त्तरि णवुल्। छलकारी, मायावी, ठग, धोखेबाज।

छलग्राहक (सं० त्रि०) छलेन गृह्णाति छल-ग्रह-णवुल्। प्रतारक, वंचक, ठग।

छलछंद (हिं० पु०) धूर्तता, कपटका जाल, चालबाजी।

छलछंदी (हिं० वि०) धूर्त, चालबाज, धोखेबाज।

छलछलाना (अनु०-क्रि०) पानीको धीरे धीरे गिराना, छल छल आवाज करना।

छलछिद्र (सं० पु०) कपट व्यवहार, धूर्तता, धोखेबाजी।

छलछिद्री (हिं० वि०) कपटी, छली, धोखेबाज।

छलन (सं० पु०) छल णिच् भावे ल्युट्। प्रतारणा, छल करनेका कार्य।

"यथापरं यथायोगं न न स्यात् छलनं पुनः।" (भारत ६।१ अ०)

छलना (सं० स्त्री०) छलन स्त्रियां टाप्। प्रतारणा, धोखा, छल।

छलना (हिं० क्रि०) प्रतारित करना, किसीको धोखा देना, भुलावेमें डालना।

छलनी (हिं० स्त्री०) आटा इत्यादि छाननेका बरतन जो महीन कपड़े या छेददार चमड़ेसे मढ़ा हुआ रहता है, चलनी।

छलांग (हिं० स्त्री०) कुदान, फलांग, चौकड़ी।

छलाना (हिं० क्रि०) प्रतारित कराना, भुलावेमें पड़ाना।

छलाल—बम्बईके काठियावाड़ प्रान्तका एक छोटा राज्य।

छलावा (हिं० पु०) १ मायादृश्य, भूत प्रेत आदिकी छाया। २ उल्कामुख प्रेत, एक प्रकारका प्रेत जिसके मुंहसे प्रकाश या आग निकलती है, अगिया बैताल। ३ चपल, चञ्चल, शोख। ४ इन्द्रजाल, जादू।

छलि (सं० स्त्री०) चर्म, चमड़ा।

छलिक (सं० क्लो०) नाटकभेद, नाट्य शास्त्रमें रूपकका एक भेद।

छलित (सं० त्रि०) छल्-णिच् कर्मणि क्त। १ प्रतारित, वञ्चित, छला हुआ, जिसे धोखा दिया गया हो।

छलितक (सं० क्लो०) छलिक, नाटकका एक भेद।

छलितराम (सं० क्लो०) छलितः प्रतारितो रामो यत्र तत्, बहुव्री०। नाटकका एक भेद।

छलितस्वामी (सं० पु०) एक देवमूर्त्ति जो काश्मीरराज चन्द्रापीड़के राजत्वकालमें उनके नगररक्षक छलितकसे प्रतिष्ठित की गई है। (राजत० ४।८१)

छलिन् (सं० त्रि०) छलमस्त्यस्य छल-इनि। छलकारी, छल करनेवाला।

छलिया (हिं० वि०) कपटी, धोखेबाज।

छलौरी (हिं० स्त्री०) नाखूनमें होनेवाला एक तरहका रोग।

छल्ल (सं० क्ली०) वल्कल, छाल, छिलका।

छल्ला (हिं० पु०) १ मुंदरी, अंगुठी। २ वह वस्तु जो अंगुठीकी तरह गोल हो, कड़ा, कुंडली। ३ मजबूत पक्की दीवार जो ऊपरसे रक्षाके लिये कच्ची दीवारसे लगा कर बनाई गई हो। ४ तेलकी बूंदें। ५ एक तरहका पंजाबी गीत।

छल्लि (सं० स्त्री०) छदं छाद्यतां लाति छद्-ला-कि। १ वल्कल, छिलका। २ वृक्षविशेष। ३ पुष्पविशेष।

छल्ली (सं० स्त्री०) छल्लि ङीप्। १ वल्कल,छाल। २ लता। ३ सन्तति, सन्तान। ४ कुसुमविशेष, एक प्रकारका फूल।

छल्लेदार (हिं० वि०) १ जिसमें छल्ले लगे हों। २ मण्डलाकार चिह्नयुक्त, जिसमें गोल घेरे बने हों।

छवना (हिं० पु०) १ बच्चा। २ सूअरका बच्चा।

छवाई (हिं० स्त्री०) १ छप्पर छानेका काम। २ छानेकी मजदूरी।

छवाना (हिं० क्रि०) छानेका काम कराना।

छवाली (हिं० स्त्री०) छोटी जठवाली पत्थर आदि उठानेके काममें आती हैं।

छवि (सं० स्त्री०) छाति सूक्ष्मं करोति, यद्वा छाति छिनत्ति दूरीकरोति मालिन्यादिकुवेशादिकमिति छो-किन् निपातनात् साधुः। १ शोभा, कान्ति, सौंदर्य, दीप्ति, प्रभा, चमक।

"भत्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः (मेघदूत ३५)

२ चित्र, प्रतिकृति, फोटो।

छविपत्रक (सं० पु०) वृश्चिकाली, एक प्रकारका क्षुप।

छविल्लाकर (सं० पु०) एक कविका नाम। इन्होंने काश्मीरराज अशोकसे उनके वंशके और चार राजाओंका हाल लिखा है। (राजतरङ्गिणी १।१९)

छवी (सं० स्त्री०) छवि-ङीप्। शोभा, कान्ति, चमक।

छवैया (हिं० पु०) वह जो छप्पर छानता हो।

छहो (देश०) वह पक्षी जो दूसरेके अण्डे पर जा कर वहांकी कुछ चिड़ियोंको बहका कर अपने अण्डे पर ले आवे, कहा, मुर्गा।

छांक (फा० पु०) खण्ड, टुकड़ा।

छांगना (हिं० क्रि०) पृथक् करना, छांटना।

छांगुर (हिं० पु०) वह जिसे छः उंगलियां हों।

छांछ (हिं० स्त्री०) छाछ देखो।

छांट (हिं० स्त्री०) १ अलग अलग करनेकी क्रिया, छिन्न करनेका काम। २ कतरन, छांटन। ३ निष्प्रयोजन वस्तु, अलग की हुई निकम्मी वस्तु।

छांटन (हिं० स्त्री०) १ कतरन। २ निकम्मी वस्तु जो अलग की गई हो।

छांटना (हिं०क्रि०) १ छिन्न करना, अलग करना। २ अनाजको साफ करना, कूटना। ३ चुनने या निकालनेके लिये पृथक् करना। ४ दूर करना, हटाना। ५ शुद्ध करना। ६ किसी वस्तुको छोटा या संक्षिप्त करना। ७ पृथक् रखना, दूर रखना। ८ हिन्दीकी चिन्दी निकालना।

छांड़चिट्ठी (हिं० स्त्री०) रवन्ना, वह पत्र वा परवाना जिसे देख कर उसके रखनेवाले व्यक्तिको कोई रोक न सके।

छांद (हिं० स्त्री०) १ घोड़े या गदहेके अगले या पिछले दो पैरोंमें बांधनेकी रस्सी। उनके पैरोंमें रस्सी इसलिए बांधी जाती है जिससे कि वे दूर तक भाग न सकें बल्कि कूद कूद कर इधर उधर चरते रहें। २ वह रस्सी जिससे अहीर गाय दुहते समय बछड़ेको गायके पैरमें बांध देते हैं, नोई।

छांदना (हिं० क्रि०) १ रस्सी आदिसे जकड़ना, कसना। २ घोड़े या गदहेके दोनों पैरोंमें एकमें बांध देना।

छांस (हिं० स्त्री०) १ अनाजसे छांट कर निकाला हुआ कन या भूसी। २ कूड़ा करकट।

छांह (हिं० स्त्री०) १ प्रतिबिम्ब। २ वह स्थान जो ऊपरसे आवृत या छाया हुआ हो। ३ शरण, आश्रय, पनाह। ४ परिछाईं, छाया। ५ भूत-प्रेत आदिका प्रभाव, बाधा।

छांहगीर (हिं० पु०) १ राजछत्र, छत्र। २ दर्पण, आइना। ३ एक प्रकारका दर्पण जो छड़ीके सिरे पर बंधा हुआ रहता है। इसके चारों ओर पानके आकारकी किरनें लगी रहती हैं। यह विवाहमें लड़केके साथ आसा आदिकी तरह चलता है।

छा (सं० पु०) छो-क्विप्। १ शावक, बच्चा। २ पारद, पारा। (त्रि०) ३ छेदनकर्ता, काटनेवाला।

छाई—भागलपुर जिलेका एक परगना। यह गङ्गा नदीके उत्तर तीर पर अवस्थित है। परिमाणफल ४८० वर्गमील है। खृष्टीय १३वीं० शताब्दीके मध्यभागको यह परगना जङ्गली था। उसी समय छोटा नागपुरके हीरागढ़से लाठी, घना और हरीस नामक तीन भाई यहां आ करके बसे। उन्होंने छाई ग्राममें महादेवकी एक मूर्तिको स्थापन किया। महादेवने स्वप्नमें हरीसको दर्शन दे करके कहा था—तुम इस परगनेके राजा होगे। फिर उन्होंने कितने ही लोगोंको इकट्ठा करके चौधरी पदवी ली और उत्पन्न द्रव्योंका कियदंश दिल्लीके बादशाहको उपहार दे सनद हासिल की। चिरस्थायी बन्दोबस्तके पहले यहां उन्हींके वंशधरोंका अधिकार रहा।

छाक (हिं० स्त्री०) १ तृप्ति, इच्छापूर्ति। २ विवाहोंमें ले जानेके मैदेके बने हुए बड़े बड़े सहाल, माठ। ३ मद, नशा, मती। ४ वह भोजन जो काम करनेवाले दोपहरको खाते हैं, दुपहरिया।

छाग (सं० पु०) छ्यति छिद्यते देवालये, छो-गन्। १ स्वनामख्यात पशुविशेष, बकरा। इसका संस्कृत पर्याय—वस्त, छगलक, अज, स्तुभ, छग, छगल, छागल, तभ, स्तभ, शुभ, लघुकाम, क्रयसद, बर्कर, पर्णभोजन, लम्बकर्ण, मेनाद, बुक्क, अल्पायु, शिवाप्रिय, अबुक, मेध्य, पशु और पयस्वल है। अज देखो।

छागमांस द्वारा पितृ-पुरुषोंका श्राद्ध करना चाहिये। (याज्ञवल्क्य १।२५८)

श्राद्धमें छागमांस भोजन करके पितृगण ६ मास पर्यन्त तृप्ति लाभ करते हैं। (मनु ३।२६९) छाग यज्ञीय पशु है। यज्ञादि विधिमें सामान्य पशुमात्रके आलम्भनकी व्यवस्था रहनेसे छागहीको आलभ्य वा वध्य पशु समझना चाहिये।

छागविषयक शुभाशुभ लक्षण वराहमिहिरने इस प्रकार लिखा है—अष्ट, नव और दशदन्त छाग धन्य तथा गृहमें रक्षणीय होता है। किन्तु सप्त दन्त छागको त्याग करना चाहिये। शुक्ल छागके दक्षिण पार्श्वको कृष्णमण्डल शुभफलप्रद होता है। ऋष्य (श्वेतपाद मृग) सदृश कृष्णलोहित छागका श्वेत मण्डल भी शुभ समझा जाता है। छागके कण्ठमें जो स्तनवत् लम्बित होता, मणि-जैसा विख्यात है। एकमणि छाग शुभकर है। द्विमणि वा त्रिमणिवाला छाग उससे अच्छा कहा गया है। जिसका मुण्ड श्वेतवर्ण और समस्त देह कृष्णवर्ण रहता शुभ छाग ठहरता है। देह अर्ध कृष्ण और अर्ध श्वेत किंवा अर्ध कपिलवर्ण तथा अर्ध कृष्णवर्ण होनेसे भी छाग अच्छा समझा जाता है। यूथके आगे चलने और प्रथम जलमें अवगाहन करनेवाले छागका मस्तक श्वेत रहने या उसमें टीका पड़नेसे छाग शुभ है। पृषत मृगको भांति कण्ठ एवं मस्तक, तिलपृष्ठ सदृश ताम्रलोचन, श्वेतवर्ण कृष्णपद और कृष्ण छागका श्वेत पद होना अच्छा है। जिस छागका कृष्णवर्ण अथवा श्वेतवर्ण हो करके मध्यस्थलमें कृष्णपट्ट द्वारा आवृत देख पड़ता किंवा जो छाग बोलते बोलते थोड़ा थोड़ा चलता प्रशस्त ठहरता है।

जो छाग ऋष्य जैसा मस्तक तथा पादविशिष्ट है, जिसका सम्मुख भाग पाण्डुर और अपर भाग नीलवर्णयुक्त लगता, वह छाग शुभकारी है। कुट्टक, कुटिल, जटिल और वामन चार प्रकारके छाग लक्ष्मीपुत्र हैं। श्रीहीन व्यक्तिके घर वह कभी नहीं रहते। गर्दभ सदृश रवकारी, प्रदीप्तपुच्छ, कुत्सित नख, विवर्ण, छिन्नकर्ण, हस्ती जैसा मस्तकविशिष्ट और कृष्णवर्ण तालु तथा जिह्वा सम्पन्न छाग मन्द हैं। जिस छागका मुण्ड प्रशस्त, वर्ण मणियुक्त और नयन ताम्रवर्ण रहता, मनुष्यका पूज्य ठहरता है। ऐसा छाग सौख्य, यशः और श्रीवृद्धिकारक है। (बृहत्संहिता ६५ अ०)

देवताओंको कृष्णवर्ण, मानवोंको पीत वा हरिद्वर्ण और राक्षसोंको शुक्ल तथा बृहत्काय छाग उत्सर्ग करना चाहिये।

छागमांस लघुपाक, रुचि, बल एवं पुष्टिकारक त्रिदोषघ्न, शुक्रधातु साम्यकारी, मृदु और स्निग्ध होता है। (राजवल्लभ)

अप्रसूता छागोंका मांस पीनसरोगनाशक, शुष्ककास, अरुचि तथा शोथमें उपकारी और जठराग्नि वृद्धिकर है। (भावप्रकाश)

छागशिशुका मांस लघुपाक, ज्वरनाशक और बल तथा रुचिकारक है।

खस्सीका गोश्त—कफकारी, शीघ्र, वात एवं पित्त-नाशक और बल तथा पुष्टिकारक होता है। वृद्ध वा रोग-से मरे हुए छागका मांस वातज और रुक्ष है। छाग-मुण्ड त्रिदोषघ्न और रुचिकारक होता है।

छागदुग्ध—शीतल, लघुपाक, मधुर और रक्तपित्त, अतिसार, क्षयकास तथा ज्वरनाशक है। छाग-दधि रुचिकर, लघुपाक, त्रिदोषघ्न, जठराग्निसन्दीपक और श्वास, काश, अर्श, एवं क्षयकासमें उपकारी होता है। (भावप्रकाश) छागकी अपेक्षा उसका मूत्र अधिक उप-कारी है। यह कटु, उष्ण, रुक्ष और कफ, श्वास, गुल्म, प्लीहा प्रभृति रोगनाशक है। (राजनिघण्टु) अज देखो।

छाग (वै० पु०) शृङ्गहीन अज, बेसींग बकरा।

(ऋक् १।१६२।१)

छागकर्ण (सं० पु०) १ सर्ज्जतरु, शलईका पेड़। २ शाकतरु।

छागघृत (सं० क्लो०) बकरीका घी।

छागण (सं० पु०) छगण एव स्वार्थे अण्। करीषाग्नि कंडी या उपलेका आग।

छागदधि (सं० क्लो०) बकरीका दही।

छागदुग्ध (सं० क्लो०) अजादुग्ध, बकरीका दूध।

छागनवनीत (सं० क्लो०) बकरीके दूधका मक्खन।

छागभोजिन् (सं० पु०) छागं भुंक्ते छाग-भुज-णिनि। १ वृक, भेड़िया।

छागमय (सं० क्लो०) कार्त्तिकेयका आठवाँ पुत्र।

(भारतवन २२०।४०)

छागमांस (सं० क्लो०) ६-तत्। बकरेका मांस।

छागमित्र (सं० पु०) देशभेद, एक देशका नाम।

छागमित्रिक (सं० त्रि०) छागमित्रे भव: छागमित्र-काश्या-दित्वात् ठञ्, वा ञिठ्। छागमित्रदेशजात, जो छाग-मित्र देशसे उत्पन्न हुआ हो।

छागमुख (सं० पु०) छागस्य मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्रो०। १ कुमारका अनुचर भेद, कार्तिकेयका एक अनुचर। २ कुमार या कार्त्तिकेयका छठाँ मुख जो बकरेकासा है। छागमय देखो।

छागमूत्र (सं० क्लो०) छाग-प्रस्राव, बकरेका पेशाब या मूत। छाग देखो।

छागरथ (सं० पु०) छागो रथोऽस्य, बहुव्रो०। छागवाहन, अग्नि।

छागल (सं० पु०) छगल एव छागल: प्रज्ञादित्वादण्। १ छाग, बकरा। छगलस्य गोत्रापत्यं पुमान् छगल-अण्। २ आत्रेय ऋषिभेद, आत्रेय ऋषिका नाम। ३ बकरेकी खालकी बनी हुई चीज। ४ मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली।

छागल (हिं० स्त्री०) १ पानी रखनेका चमड़ेका बना हुआ मशक। यह प्राय: बकरेके चमड़ेका बनता है। २ मट्टीका लोटा, बधना। ३ पैरोंमें पहननेका एक प्रकारका गहना। इसमें घुंघुरू लगे रहते हैं, झांजन।

छागलक (सं० पु०) छागल-स्वार्थे कन्। मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली।

छागला (सं० स्त्री०) छागी, बकरी।

छागलाद (सं० पु०) १ वृक्षभेद, एक दरख्तका नाम। २ वृक, भेड़िया।

छागलाद्यघृत—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। ४ सेर घी, ५० पल छागमांस, ५० पल दशमूल, ६४ सेर जल सबको एक बर्तनमें भर करके आग पर उबालना चाहिये। १६ सेर पानी शेष रहने पर इसको उतार लेते और ४ सेर दूध तथा ४ सेर शतमूलीका रस मिला देते हैं। फिर इसमें जीवनीयदशक (जीवक, ऋषभक, मेद, महामेद, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, यष्टिमधुका) १ सेर मिलित कल्क पड़ता है। इसीका नाम छागलाद्यघृत है। छागलाद्यघृत पान करनेसे अर्दित, कर्णशूल, बधिरता, वाक्शक्तिराहित्य, अस्पष्ट भाषा, जड़ता, पङ्गुता, खञ्जता, गृध्रसी, कुब्जता, अपतानक, और अपतन्त्रक प्रभृति नाना प्रकारकी वायु-रोग नष्ट होते हैं। घृतके आरम्भमें यह मन्त्र पढ़ा जाता है—

"ओं कालि वज्रेश्वरी अमुकस्य फलसिद्धिं देहि रुद्रवचनेन स्वाहा।
स्नापयित्वा छागमादौ मधु दत्वा ललाटके।
उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा भिषगेनमुपालभेत्।"

छागके मारणका मन्त्र यह है—

ओं क्रीं ओं गौं गणपतये स्वाहा।

छागलाद्यघृत (वृहत्)-वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। १६ सेर गव्यघृत, नपुंसक छागमांस १०० पल, जल ६४ सेर एक साथ पाक करके १६ सेर पानी बचने पर उतार लेते हैं। फिर १० पल प्रत्येक दशमूल, ६४ सेर जल और १०० पल अश्वगन्धा तथा ६४ सेर जल और १०० पल वाट्यालक तथा ६४ सेर जल अलग अलग क्वाथ करके १६ सेर जल रहनेसे उतारा जाता है। इन चारों क्वाथोंको एक साथ करके १६ सेर शतमूलीका रस डाल जीवन्ती, यष्टिमधु, द्राक्षा, काकोली, क्षीरकाकोली, नीलोत्पल, मुस्ता, रक्तचन्दन, रास्ना, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, चाकुल्या, शालपर्णी, श्यामालता, अनन्तमूल, मेद, महामेद, कुष्ठ, जीवक, ऋषभक, शठी, दारुहरिद्रा, प्रियङ्गु, त्रिफला, तगरपादुका, तालीशपत्र, पद्मकाष्ठ, एला, तेजपत्र, शतमूली, नागेश्वर, जातीपुष्प, धान्यक, मञ्जिष्ठा, दाड़िमबीज, देवदारु, रेणुक, एलवालुक, विड़ङ्ग, जीरक प्रत्येक चार तोले पड़ता है। फिर इसको ताम्रपात्रमें मृदु अग्नितापसे पाक करते हैं। पाकशेषमें शीतल होने पर घृत छान करके २ सेर शक्कर मिला मृण्मय भाण्डमें रखा जाता है। इसकी मात्रा २ तोला है। व्याधि विवेचना करके दुग्धादि अनुपान व्यवस्था होती है। यह घृत वातव्याधिका श्रेष्ठ औषध है। इसको पीनेसे अपस्मार, उन्माद, पक्षाघात, आध्मान, कोष्ठरोध, कर्णरोग, शिरोरोग, वधिरता, अपतन्त्रक, भूतोन्माद, गृध्रसी, अग्निमांद्य, रक्तपित्त, मूत्रकृच्छ्र, वातरक्त प्रभृति बहु प्रकार व्याधिका उपशम होता है। कुछ दिन इसको खानेसे शरीर विलक्षण हृष्टपुष्ट और इन्द्रियशक्ति बढ़ती है।

छागलाद्यतैल—आयुर्वेदोक्त तैलभेद, किसी किस्मका तेल। ५० पल छागमांस, ५० पल दशमूल, ८ सेर जलमें पाक करना चाहिये। जल कुछ घटने पर ४ सेर तैल, दुग्ध, शतावरी, यष्टिमधु, वाट्यालक, कण्टकारी, शैलज, (सुगन्धि द्रव्यविशेष), जटामांसी, नागकेशर, तालीशपत्र, नालुका, घनवालुक, सब पृथक् पृथक् ग्रहण करके एक साथ उसमें मञ्जिष्ठा, लोध्र प्रत्येक ३२ तोला करके डाल देते हैं। फिर ८ सेर जलसे विधिपूर्वक पकाया जाता है। यह तैल सर्वप्रकार ज्वरनाशक एवं पान, मर्दन और भोजनमें अति प्रशस्त है। (वैद्यकचक्रपाणिसंग्रह)

छागलान्त्र (सं० पु०) ईहामृग, कोक, भेड़िया।

छागलान्त्रिका (सं० स्त्री०) छागलान्त्री संज्ञायां कन् टाप् पूर्व ह्रस्वः। १ वृद्धदारक वृक्ष, बधारका पेड़। २ वृकी, मादा भेड़िया।

छागलान्त्री (सं० स्त्री०) छागलं अन्तयति बाहुलकात् रक् ततो ङीप्। १ वृद्धदारकवृक्ष, बधारका पेड़। २ वृक, भेड़िया।

छागलि (सं० पु०) छगलस्य गोत्रापत्यं पुमान् छगल-वाह्वादित्वादिञ्। १ छगल नामक ऋषिके वंशधर। २ छगलदेशीय, छगल देशका।

"छागलिः पुर्वमित्र विराटय मरीचि:।" (हरिवंश ११ अ०)

छागली (सं० स्त्री०) छागल स्त्रियां ङीप्। १ छागी, बकरी। २ एक मुनिकी स्त्रीका नाम।

छागलेय (सं० पु०) छागल्या अपत्यं पुमान् छागली ठक्। एक स्मृतिकर्त्ता ऋषि।

छागलेयिन् (सं० पु०) छागलिना प्रोक्तमधीते छगलिन्-ढिनुक्। वह जो छगली ऋषिके बनाये हुए ग्रन्थोंको पढ़ता हो। छगली ऋषि कलापीके छात्र थे।

छागवाहन (सं० पु०) छागेन आत्मानं वाहयति छाग-वाह-ल्यु अथवा छागो वाहनमस्य, बहुव्री०। अग्नि, आग।

छागशकृत् (सं० क्ली०) बकरेकी विष्ठा।

छागशत्रु (सं० पु०) ईहामृग, कोक, भेड़िया।

छागाद्यघृत (सं० क्ली०) बकरीका घी जो यक्ष्मरोगमें बहुत हितकर है। छागलाद्यघृत देखो।

छागिका (सं० स्त्री०) छागी स्वार्थे कन् ततः टाप् पूर्व ह्रस्वः। छागी, बकरी।

छागी (सं० स्त्री०) छाग स्त्रियां जातौ ङीप्। छागमाता। बकरी। इसका पर्याय—अजा, पयस्विनी, भीरु, मेध्या, गलेस्तनी, छागिका, मज्जा, सर्वभक्षा, गलस्तनी, तुलुम्पा, गञ्जा, और मुखविलुण्ठिका है। बकरीका दूध-सुस्वादु, ठण्ढा, जठराग्निसन्दीपक लघुपाक, रक्तपित्त, विकार, क्षयकाश, अतिसार, ज्वर इत्यादि रोगनाशक है। बकरीके दूधका दही उत्तम सुस्वादु, लघुपाक, त्रिदोषघ्न, श्वास काश, अर्श, क्षय और दौर्बल्यके लिये उपकारी है। (भावप्रकाश) इसका मक्खन-क्षयकाश, नेत्ररोग, कफनाशक,

बलकारक और अग्निसन्दीपक तथा घी चक्षुरोगका महौषध, बलकारक, जठराग्निसंवर्द्धक, श्वास-कास-कफनाशक तथा यक्ष्मारोगका विशेष हितकर है।

छागीदुग्ध (सं० क्लो०) ६ तत्। बकरीका दूध।

छागीपयस् (सं० क्लो०) बकरीका दूध।

छागीपालक (सं० पु०) छागीं पालयति छागी पाल-णिच् ण्वुल्। वह जो बकरी पोसता हो।

छाग्यायनि (सं० पु०) छागस्यापत्यं पुमान् छाग-फिञ्। छागका अपत्य, बकरेकी सन्तान।

छाछ (हिं० स्त्री०) १. गोरस दधि, वह दही या दूध जिसका घी या मक्खन निकाल लिया गया हो, मट्ठा, मही। २ घी या मक्खन तपाने पर नीचे जम जानेवाला मट्ठा।

छाज (हिं० पु०) १ वह बरतन जिससे अनाज फटका जाता हो, सूप। २ छाजन, छप्पर। ३ गाड़ी या बग्घोका वह भाग जो उसके आगे छज्जे की तरह निकला हुआ रहता है और जिस पर कोचवान पैर रखता है।

छाजन (सं० स्त्री०) १ आच्छादन, आवरण, वस्त्र, कपड़ा। २ छाज, छप्पर। ३ छवाई, छानेका काम। ४ रोगविशेष, अपरस।

छाजना (हिं० क्रि०) १ शोभा देना, भला लगना। २ सुशोभित होना, विराजना।

छात (सं० त्रि०) छो-क्त विभाषायामित्वाभावः। १ छिन्न-खण्डित, जो काट कर पृथक् कर दिया गया हो। २ दुर्बल, क्षय, दुबला पतला।

छातक—आसामके श्रीहट्ट जिलेमें सुनामगञ्ज सबडिविजनका एक गांव। यह अक्षा० २५° २′ उ० और देशा० ९१° ४०′ पू०में सुरमा नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। चूने, आलू और नारङ्गीका बड़ा व्यापार होता है।

छातना—बङ्गालके बांकुड़ा जिलेका एक प्राचीन सामन्त राज्य। यह मालूम करनेका कोई उपाय नहीं, किस समयको वह राज्य स्थापित हुआ। कहते हैं, पहले यहां ब्राह्मण राजगण राजत्व करते थे। फिर राज्यको अधिष्ठात्री देवी विशालाक्षी ब्राह्मण राजाओंसे बिगड़ पड़ीं और राजाको स्वप्न दिया-सामन्त लोग राजा होंगे। ब्राह्मण राजाओंने इस पर सामन्तोंको समूल विच्छेद करनेका सङ्कल्प कर सबको काट डाला। कहते हैं, इससे भी राजाका भय दूर न हुआ और उन्होंने सामन्त नामके सादृश्यहेतु वनकी श्यामालता तक कटवा फेंकी।

स्पष्टरूपसे विदित नहीं होता, सामन्त कौन जातीय थे और कैसे उनकी उत्पत्ति हुई। कनिङ्हम साहब अनुमान करते कि सामन्त सन्ताल नामका ही रूपान्तरमात्र है। उन्होंने ब्राह्मण राजाको मार सिंहासन अधिकार किया और क्रमता बलसे अपने आपको हिन्दू समाजमें चला लिया। जो हो, यह प्रत्नतत्त्वानुसन्धित्सु विद्वानोंका ही विवेच्य विषय होता, वह अनुमान कहां तक सत्य है। छातनाके राजवंशीयगण अपने आपको क्षत्रिय जैसा बतलाते हैं।

कहा जाता ब्राह्मणराजाके सामन्तोंका उच्छेद साधन करने पर १२ सामन्त जनैक कुम्भकारके घर आश्रय ले करके बचे थे। वह कुंभारोंके साथ एक पंक्तिमें बैठ करके खाने पीनेसे पकड़े न गये। दूसरे दिन वह अरण्यमें जा छिपे और प्रतिशोधा लेनेको चेष्टा करने लगे। उन्होंने जङ्गलमें ही अपना दल बढ़ाया और किसी दिन अन्नादि प्रस्तुत करके कहा, आज जो हमारे साथ भोजन करेगा, हमारी जातीमें मिलेगा। कहनेसे क्या—अनेक नीचजाति उस सुयोगमें सामन्तोंके साथ मिल गये। एक सामन्तने इस प्रकार नाना जातिके साथ एकत्र आहार न करके थोड़ी दूर किसी पत्थर पर बैठ खाया था। इसीसे सबने उसको समाजच्युत किया और पत्थरकटा उपाधि दिया। आज भी उसके वंशीय पत्थरकटा सामन्त कहलाते हैं। किसी दिन सामन्तोंने भूखे प्यासे जङ्गलमें घूम रहे थे। उसी समय विशालाक्षी देवी वृद्धा स्त्रीके वेशमें उनके पास पहुंचीं और अपना परिचय दे करके कहने लगीं—'हम तुम्हारे उपर सन्तुष्ट हुई हैं। यह १२ कुल्हाड़े और खांड़े ग्रहण करो। अमुक दिनको तुम छद्मवेशसे राजप्रासादमें प्रवेश करोगे। उसी दिन उत्सवमें राजा बाहर निकलेंगे। जब ढोल जोर शोरसे बजने लगेगा, तुम प्रकाश्य भावसे राजाको आक्रमण करोगे। युद्धमें तुम्हारा ही जय होगा, परन्तु पहले रणमें तुम्हारेमेंसे एक मारा जायगा। तदनुसार १२ सामन्त अनुचर निर्दिष्ट उत्सव देखनेके बहाने राजाके महल-

में छुसे थे। राजा देवदर्शनको बाहर निकले। उधर ढोल सहसा धड़ाधड़ बजने लगा। उसी समय बारह सामन्तोंने वस्त्राभ्यन्तरसे देवीके दिये हुए कुल्हाड़े और खांड़े खैंच राजा पर टूट पड़े। एक सामन्त मारा जाने पर अवशिष्ट ११ लोगोंने राजाको वध करके युद्धमें जय पाया था। इसी प्रकार सामन्तोंने कुलक्षयका प्रतिशोध ले करके राज्याधिकार किया। प्रवादानुसार आजकल जहां राजप्रासाद है, उसके ईशान कोणमें छातनाके पश्चिम ब्राह्मण राजाओंका महल था। आज भी वहां एक ईंट और भास्करकार्यसमन्वित पत्थर मौजूद है। लोग कहते हैं—वहां राजाने जिनका वध कराया था, वह समय समय पर छिन्न मस्तक भूत जैसे देख पड़ते हैं। फिर अशोकवनमें इसी स्थानको निकटस्थ पुष्करिणीके घाट पर अग्रभागको तांबेके एक बड़े कड़ाहमें पाकतैल सञ्चित था। इस कड़ाह पर तांबेके ढक्कनमें ब्राह्मण राजाओंका विवरण लिखा रहा। परन्तु मालूम नहीं, किसने वह कड़ाह और ढक्कन रखा था।

११ सामन्तोंने राज्याधिकार किया था। सुतरां यह गड़बड़ी पड़ी, कौन राजा होगा। प्रतिदिन एक आदमी राजा बन राजकार्य पर्यालोचना करने लगा। परन्तु इससे भी कार्यकी विशेष असुविधा हुई। फिर सबने नितान्त विरक्त हो एक दिन सरामर्श ठहरा लिया था—कल सवेरे उठ करके जिसको देखेंगे; उसीको राजा बना देंगे।

इधर विधाताके घटनाक्रमसे उसी दिन २ राजपूत-बालक जगन्नाथ दर्शनको जाते जाते छातना पहुंचे और राजाओंकी दानशीलताका परिचय पा करके अति प्रत्यूष-को ही भिक्षा करनेके लिये राजभवनमें प्रविष्ट हुए। उस समय सामन्त यही सोच रहे थे-किसको राजा बनावेंगे। फिर उन्होंने दो सर्वसुलक्षण कुसुमसुकुमार बालकोंको आते देखा। बालकोंने जा करके उनको अभिवादन किया था। आगमनका कारण पूछा जाने पर बालकोंने कहा—'महाराज! हम जगन्नाथ दर्शनको जाते हैं। राहमें निःस्व हो कर आपके पास कुछ मांगने आये हैं।' सामन्तोंने कहा—'हमारे पास भीख देनेको कुछ भी नहीं। राज्य, धन, जन, यान, वाहनादि जो कुछ है; सब तुम्हारा ही हो गया। हम तुम्हारे आज्ञावह दासमात्र हैं। अब सिंहासन पर बैठ करके हमको और प्रजामण्डलीको पालन करो।' यह कहके उन्होंने उक्त दोनों बालकोंको राजोचित अभिवादन किया और मन्त्री तथा पुरोहितादि ले जा करके उसी स्थान पर ज्येष्ठको राज्याभिषिक्त किया। दोनों बालक अचिन्त्यपूर्व ऐश्वर्य लाभसे वहां राजा हुए और पराक्रान्त सामन्तोंके साहाय्यसे राजत्व करने लगे। वर्तमान राजवंशीय उन्हींके वंशधर हैं। विशालाक्षी देवीका भग्न मन्दिर आज भी छातनामें विद्यमान है। इसका प्राचीर और प्रधान देवालय इष्टक-निर्मित रहा। ईंटोंका अधिकांश लिपियुक्त है। इसमें दो प्रकारके इष्टक हैं;—एकमें ऊंचे और दूसरेमें गहरे अक्षर खुदे हैं। उच्च अक्षरोंके इष्टकोंमें लिखा है—

"श्रीछातनानगरेशश्रीउत्तररोय शक १४७६।"

गभीराक्षरोंमें लिखित इष्टक और भी प्राचीन जैसा समझ पड़ता है। यह प्राचीन मन्दिरका भग्नावशेष होगा। इसकी इबारत पढ़ी नहीं जाती। मंदिरका सदर दरवाजा और पश्चिमका एक मण्डप प्रस्तरनिर्मित है। यह मन्दिर वर्तमान राजपथसे बिलकुल उत्तर पड़ता है। आजकल विशालाक्षी देवी उसमें नहीं है। कहते हैं, अंगरेजोंके वह देश जय करने पर गोरा फौज आने जाने लगी। इससे देवीने राजाको स्वप्न दिया था—फिरङ्गियोंके पांवकी धूल उड़ करके हमारे शरीरमें लगती है, हमको तुम स्थानान्तरित करो। तदनुसार १६५५ शकको विवेकानन्द नृपतिने राजप्रासादके अभ्यन्तरमें पत्थरका एक मंदिर बनवाया था। मंदिरकी खोदित लिपिमें लिखा है—

"ब्रह्माशेषसुरेशवन्द्यचरणश्रीवासुलीप्रीतये।
शर्वाभ्यस्मरशायकेन्दु शशभृत संवीश शब्दे शुभे॥
सामन्तान्वयमागरेन्दुरभवद्धम्मीशान्तकेशरी।
सुभुग्रहस्तवगो विविकनृपतिः सौधं ददौ शार्गदम॥"

यह मंदिर इस समय भी खड़ा है, परन्तु स्थान स्थान पर फट गया और दो पत्थर गिर पड़े हैं। मंदिर पर प्रकाण्ड प्रकाण्ड अश्वत्थ वृक्ष उत्पन्न हुए हैं।

प्रवादानुसार विख्यात कवि चण्डीदास उक्त वासुली देवीके उपासक थे। वह प्राचीन मंदिरके निकट ही वास करते थे। फिर १२७८ ई०को वर्तमान वासुली

मंदिर बना। उसमें आजकल वासुली देवी प्रतिष्ठित हैं।

वासुली देवीको प्राप्तिके विषयमें ऐसा प्रवाद है—कोई व्यापारी इसी राहसे जा रहा था। उसी समय राजाको स्वप्न हुआ—'मैं वासुली हूं, इस व्यापारीको शिलामें मैं विद्यमान हूं। तुम शीघ्र मुझे ले जा करके स्थापन करो।' तदनुसार राजाने उस व्यापारीके पाससे शिला मंगा करके किसी सूत्रधरको गढ़नेके लिये दी थी। सूत्रधर भास्करकार्य जानता न था, परन्तु वासुली लगाते न लगाते वासुलीकी कृपासे मूर्ति आपसे आप निकल पड़ी। राजाने समादरसे उसकी पूजा करके मंदिरमें स्थापन किया था। और भी लोग कहते हैं कि पुरातन मंदिरमें अवस्थान कालको एक दिन वासुलीने किसी शङ्खवणिक्के निकट पुजारी कन्या जैसा परिचय दे शङ्ख पहने थे। शेषको शङ्खवणिक् यह मालूम करके मोहित हो गये—पुजारीकी कन्या नहीं वह सब वासुलीकी माया थी। तदवधि यह प्रति वत्सर एक जोड़ा शङ्ख देवी पर चढ़ाते रहे। कई एक वर्ष पूर्व पर्यन्त उनके वंशीय प्रथानुसार हर साल शङ्ख दे जाते थे।

सिवा इसके छातनामें दूसरे भी कई एक भग्नावशेष हैं। इसके मध्यस्थानमें कामारपाड़ासे पूर्वको राहके उत्तर अनतिदूर तीन पत्थर साधारण रीतिसे खोदित मूर्ति सह दण्डायमान हैं। बड़ा पत्थर प्रायः ४ फुट ऊंचा है। इसमें एक मूर्ति धनुः तथा दण्ड हाथमें लिये खड़ी है। दूसरे पत्थरमें एक धनुष्पाणि मूर्ति तथा पास हो कोई शिशु है।

छातनामें एक थाना है। पहले यह स्थान मानभूम जिलेके अन्तर्गत रहा। उस समय यहां एक मुनसिफ था बांकुड़ा जिलेमें लगने पर इसकी मुनसफी उठ गयी।

सामन्त शब्द देखो

छाता (हिं० पु०) १ छत्र, बड़ी छतरी २ छत्ता, खुमी ३ विशाल वक्षस्थल, चौड़ी छाती। ४ छातीकी चौड़ाईका माप।

छाता—युक्तप्रदेशके मथुरा जिलेकी उत्तर-पश्चिम तहसील। यह अक्षा० २७°३३´ तथा २७°५३´ उ० और देशा० ७७°१७ एवं ७७°४२´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४०६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १७३७५६ है। १५८ ग्राम और २ नगर आबाद हैं। मालगुजारी कोई ३३८००० है। इस तहसीलकी पूर्व सीमा पर यमुना प्रवाहित है। पश्चिम सीमा भरतपुर राज्य है। कहीं कहीं छोटी पहाड़ियां मिलती हैं। आगराकी नहरसे खेत सींचे जाते हैं।

छाता—युक्तप्रदेशके मथुरा जिलेकी छाता तहसीलका सदर। यह अक्षा० २७°४४´ उ० और देशा० ७७°३१´ पू०में आगरा दिल्ली सड़क पर पड़ता है। यहां किले जैसी एक बड़ी सराय है। कहा जाता है कि उसको अकबर बादशाहने बनाया था। १८५७ ई०को विद्रोहियोंने इसकी एक बुर्ज उड़ा करके अधिकार किया।

छाती (हिं० स्त्री०) १ वक्षःस्थल, सीना। वक्षस्थल देखो। २ हृदय, कलेजा, मन, जी। ३ स्तन, कुच। ४ साहस, हिम्मत, ढारस, जुरअत। ५ एक प्रकारकी कसरत।

छात्र (सं० पु०) छत्रं गुरोर्दोषावरणं शीलमस्य छत्र-ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२ १ शिष्य, चेला, अन्तेवासी, विद्यार्थी। (क्ली०) २ कपिल और पीतवर्ण वरटाकृति छत्राकार चाकसम्भव मधु, छतया नामक मधुमक्खी जो कुछ पीले और कपिल वर्णकी होती है सरघा। यह पिच्छल, उष्ण, गुरुपाक, क्रिमि, श्वित्र, रक्तपित्त और प्रमेहनाशक तथा सुस्वादु है। ३ मधु। ४ छतया नामक मधुमक्खीका मधु।

छात्रक (सं० क्ली०) छात्र-स्वार्थे कन्। १ पीत और पिङ्गलवर्ण सरघा-कृत छत्राकार चाकसम्भूत मधु, सरघा नामक मधुमक्खीका बनाया मधु। छात्रस्य भावः कर्म छात्र-मनोज्ञादित्वात् वुञ्। (पा ५।१।१३३) २ छात्रका भाव या कर्म।

छात्रगण्ड (सं० पु०) छात्रो गण्ड इव उपमान कर्मधा०। अल्प ज्ञानविशिष्ट छात्र, वह शिष्य जो श्लोकका एक चरण मात्र जानता हो।

छात्रगोमिन् (सं० पु०) वह जो विद्यार्थियोंकी देख भाल करता हो।

छात्रता (सं० स्त्री०) छात्रकी अवस्था, विद्यार्थीपना, नाबालिगी, तालिबिलमी।

छात्रदर्शन (सं०- क्ली०) छात्रं वरटीच्छत्रसम्भवं मधु

तदिव दृश्यते छात-दृश् कर्मणि ल्युट्। १सद्योजात घृत, ताजा मक्खन। २ छात्रोंका दर्शन।

छात्रवृत्ति (सं० स्त्री०) ६-तत्। वह धन या वृत्ति जो विद्यार्थियोंको उत्साह देनेके लिये पारितोषिक स्वरूप प्रति मासमें मिला करे।

छात्रव्यंसक (सं० पु०) छात्रो व्यंसकः मयूरव्यंसकादित्वात् समासः। धूर्त्त छात्र, कपटी या छली विद्यार्थी।

छात्रालय (सं० पु०) विद्यार्थियोंके ठहरनेका स्थान।

छात्रि (सं० स्त्री०) छादि-क्तिन्। छादन, आच्छादन, वस्त्र, कपड़ा।

छात्रिक्य (सं० क्ली०) छत्रिकस्य छत्रयुक्तस्य भावः कर्म वा छत्रिक पुरोहितादित्वात् यक्। छत्रयुक्तका कार्य या भाव।

छात्र्यादि (सं० पु०) पाणिनि उक्त शब्दगणभेद पाणिनिके एक शब्दगणका नाम। छात्रि, पेलि, भाण्डि व्याडि, आखण्डि, आटि और गोमि ये कई एक छात्र्यादि गण हैं।

छाद (सं० क्ली०) छाद्यतेऽनेन छादि करणे घञ्। १ छात, छता। २ वस्त्र, कपड़ा।

छादक (सं० पु०) छादयति छादि ण्वुल्। १ आच्छादनकर्त्ता, घर छानेवाला। २ वह जो दूसरोंको कपड़ा लत्ता पहनाता हो।

छादन (सं० क्ली०) छादि करणे ल्युट्। १ छदन, छिपाव। भावे ल्युट्। २ आच्छादन, आवरण, वह जिससे छाया या ढका जाय। कर्त्तरि ल्यु। ३ पत्र, पत्ता। (पु०) ४ नीलाम्लान वृक्ष, नील कोरैया। (त्रि०) ५ छादक, आच्छादनकर्त्ता, छानेवाला। "कण्ठगता च्छादनमिवमोक्षमः।" (माघ १ स०) ६ छाने या ढकनेका कार्य।

छादित (सं० त्रि०) छादि-क्त इडागमात् साधुः पक्षे छन्न। वादान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः। पा ७।२।२७। आच्छादित, ढका हुआ, छाया हुआ।

"घनतरघनवृन्दैश्छादितो पुष्पवन्तौ।" (ऋतु)

छादिन् (सं० त्रि०) छादयति आच्छादयति छादि-णिनि। आच्छादनकर्त्ता, छादक, छानेवाला।

छाद्मिक (सं० त्रि०) १ जो बाहरसे देखनेमें धार्मिक मालूम पड़े लेकिन भीतरमें घोर कपट भरा हो, पाखंडी, मक्कार। "धर्मध्वजी सदालुब्धश्छाद्मिको लोकदम्भकः।" (मनु० ४।१९५) २ बहुरूपिया, जो बहुत तरहके रूप बनाता हो।

छादी (सं० स्त्री०) चर्म, चमड़ा।

छान (हिं० स्त्री०) १ छप्पर, घास फसकी छाजन। २ बन्धन, वह रस्सी जिससे किसी पशुके पैर बांधे जाँय।

छानना (हिं० क्रि०) १ किसी तरल पदार्थको महीन कपड़ेके पार निकालना जिससे कि उसका कूड़ा करकट दूर हो जाय। २ संयुक्त पदार्थको पृथक् करना, बिलगाना। ३ अन्वीक्षण करना, जाँचना। ४ अन्वेषण करना, खोज करना, देख भाल करना। ५ किसी वस्तुको छेद कर पार निकालना। ६ मदिरा छानना, शराब पीना। ७ रस्सी या किसी दूसरी चीजसे जकड़ना। ८ घोड़े गदहे आदिके पैरोंमें रस्सी कस कर बांधना जिससे कि वह दूर भाग न सके।

छानबीन (हिं० स्त्री०) १ पूर्ण अनुसन्धान, जाँच पड़ताल, खोज खबर। २ पूर्ण समीक्षा, पूरी समालोचना, विस्तृत विचार।

छाना (हिं० क्रि०) १ ऊपरसे आच्छादित करना, ढकना। २ तानना, फैलाना। ३ विस्तृत करना, फैलना। ४ शरणमें लेना, बचाना। (क्रि०) ५ बिथरना, फैलना। ६ डेरा डालना, रहना, टिकना।

छानवे (हिं० वि०) १ नब्बेसे छः अधिक। (पु०) २ वह संख्या जो नब्बे और छःके योगसे बनी हो।

छानी (हिं० स्त्री०) वह ढक्कन जो ईखके रसकी नादके ऊपरमें रखा जाता है। यह सरकंडे या बाँसकी पतली फट्टियोंका बनता है।

छानुया—१ बालेश्वर जिलेका एक परगना। २ बालेश्वर जिलेकी एक नदी। ३ बालेश्वर जिलेकी पांपोड़ा नदी तीर पर स्थित एक ग्राम। यह चावलके व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है।

छान्दस (सं० पु०) छन्दो वेदं अधीते वेत्ति वा छन्दस्-अण्। १ वेदाध्येता श्रोत्रिय। (त्रि०) २ वेदभव, वेद सम्बन्धीय। "छान्दसीभिरुदाराभिः श्रुतिभिः समलङ्कृतां।" (हरिवंश २२१ अ०) ३ वेदज्ञ, वेदपाठी। ४ वेदसम्बन्धी। ५ रद्द। ६ मूर्ख।

छान्दसक (सं० क्ली०) छन्दसस्य भावः कर्म वा छान्दस मनोज्ञादित्वात् वुञ्। छान्दसत्व, छान्दसका कर्म या भाव।

छान्दसत्व (सं० क्लो०) छान्दस भावे त्व। छन्दःसम्बन्धीयत्व, वेदसम्बन्धीयत्व, वह जो वेदका हो।

छान्दसीय (सं० त्रि०) छांदस-छ। छांदस सम्बन्धी, वेदका।

छान्दोग्य (सं० क्लो०) छंदोगानां धर्मं आम्नायो वा छंदोग-ञ्य। १ सामवेदका एक उपनिषत्। २ छंदोगके धर्म। ३ छंदोगोंका समूह।

छान्दोभाष (सं० त्रि०) छंदोभाषा ऋगयनादित्वादण्। छंदोभाषासम्बन्धीय।

छान्दोमान (सं० त्रि०) छंदोमान-ऋगयणादित्वादण्। छंदका परिमाण वा संख्या सम्बन्धीय।

छान्दोमिक (सं० त्रि०) छंदोमस्येदम् छंदोम-ठक्। १ छंदोम यज्ञसम्बन्धीय, छंदोम यज्ञका।

छान्दोविचित (सं० त्रि०) छंदोविचिति ऋगयनादित्वादण्। छंदसमूहसम्बन्धीय।

छाप (हिं० स्त्री०) १ चिह्न, खुदे या उभरे हुए ठप्पेका निशान। २ मुद्रा, मुहरका निशान। ३ वे शङ्खचक्रके चिह्न जिन्हें वैष्णव अपने अंगों पर गरम धातुसे अंकित कराते हैं। ४ चाँक, खलियानमें अन्नकी राशि पर डाला हुआ चिह्न। ५ वह अंगूठी जिसमें नगीनेकी जगह अक्षर खुदे रहते हैं। ६ कवियोंका उपनाम। (स्त्री०) ७ काँटे या लकड़ीका बोझ जिसे लकड़िहारे जङ्गलसे सिर पर उठा कर लाते हैं। ८ बाँसकी बनी हुई टोकरी जिससे सिंचाईके लिए जलाशयसे पानी उलीच कर ऊपर चढ़ाते हैं।

छापना (हिं० क्रि०) १ किसी वस्तुकी आकृति बनाना, चिह्नित करना। २ मुद्रित करना, अंकित लगाना, ठप्पा देना। ३ कागज आदि पर चित्र या अक्षर मुद्रित करना।

छापा (हिं० पु०) १ कोई मुहर अथवा धातु काष्ठ वा प्रस्तरादिमें खोदित लिपि अथवा चित्रादिके ऊपर रंगके जरिये कागज वस्त्रादि पर छाप दे कर प्रतिकृति उठानेको छापा कहते हैं। सामान्य परिश्रमसे और थोड़े समयमें छापेके जरिये एक तसवीर या एक लिपिकी बहुतसी प्रतिलिपि बनाना ही छापेका उद्देश्य है। यह उद्देश्य नाना प्रकारसे साधित होता है। जैसे धातुके अक्षरों द्वारा पुस्तकादि छापना, काठके ऊपर तसवीर आदि खोद कर छापना (Wood-cut Printing), ताम्र या इस्पात पर तसवीर खोद कर छापना (Copper or Steel-plate Printing) और पत्थरके ऊपर तसवीर खोद कर छापना (Lithography)। लकड़ी, तांबा और इस्पात पर खुदे हुए चित्रोंका विस्तृत विवरण तक्षकता शब्दमें तथा प्रस्तरकी तसवीरोंका विषय लिथोग्राफ शब्दमें लिखा जायगा। यहाँ सिर्फ पुस्तक छापनेके विषयका ही लिखा जाता है।

पहले ताड़पत्र, भोजपत्र तथा स्वर्ण, रौप्य और ताम्रफलक इत्यादिमें पुस्तकादि लिखी जाती थीं। इसके बाद भारतमें कागज प्रचलित हुआ है। भारतमें कागज प्रचलित होनेके समयका अभी तक कुछ निर्णय नहीं हो सका है। कागज देखो।

पहले कागजका प्रचार होने पर भी हाथ होसे पुस्तकादि लिखी जाती थीं। इसलिए उस समय एक पुस्तकका ज्यादा प्रचार बहुत दिनोंमें हो पाता था। पुस्तकोंकी दुर्लभतासे उनका मूल्य भी बहुत अधिक था। ऐसी दशामें सम्वादपत्रोंका प्रचार तो असम्भव हो जान पड़ता है। इस समय छापेकी सहायतासे बहुत कम खर्च और सामान्य परिश्रमसे लाखों पुस्तकें तयार हो जाती हैं। जो चाहता है, वही थोड़ी कीमत दे कर बहुत तरहकी सुन्दर अक्षरोंमें छपी हुई पुस्तकोंका संग्रह कर लेता है। आज अगर कोई किसी ग्रन्थकी रचना करे तो बहुत थोड़े ही समयमें उसकी पुस्तकका देश भरमें प्रचार हो सकता है। छापेकी सहायतासे आजकी घटना हजारों सम्वादपत्रोंमें छप कर डाँकके सहारे कल ही तमाम देश भरमें फैल जाती है। कुछ भी हो, छापेखानोंके खुल जानेसे पुस्तकोंका मूल्य बहुत कुछ सुलभ हो गया है और विद्याशिक्षामें भी बहुत सहायता पहुँची है।

वर्तमान प्रणालीसे पुस्तक छापनेकी प्रथाका आविष्कार सबसे पहले १४२० ई०से १४३८ ई०के भीतर होलैण्ड और जर्मनमें हुआ था। इससे बहुत पहले काष्ठ इत्यादिके छापोंसे लिपि करनेकी प्रथा बहुतसे देशोंमें प्रचलित थी। प्रायः सब ही पाश्चात्य विद्वानोंका मत है कि, चीनदेशमें ही छापेकी आदि सृष्टि हुई है *। फिर इसमें

* बड़े लाट ह्वेष्टिंसके समय काशीमें जमीनसे एक काठकी बना हुई मशीन पाई गई थी। बहुतोंका कहना है कि, पहले उसी तरहके यन्त्रों द्वारा

नाना प्रकारकी उन्नति और परिवर्तन हो कर वर्तमानके छापेखानोंकी उत्पत्ति हुई है। ईसा जन्मके ७५० से ७३० वर्षके भीतर मंतांग्रो नामक एक राजमन्त्रीने सबसे पहले चीनमें छापेका आविष्कार किया था। उनकी छापनेकी प्रणाली वर्तमानके लकड़ी पर खुदे हुए चित्रों (Wood-block) जैसी थी। चीनके लोग अब भी धातुओंसे बने हुए फुटकर अक्षरोंको काममें नहीं लाते और प्राचीन प्रथाके अनुसार ही पुस्तक छापते हैं। वे पहले एक पतले कागज पर एक तरफ लिख कर लिखेकी तरफसे उसे एक पोलिसदार काठ पर बैठा देते हैं, फिर काठ पर उसके उल्टे निशान हो जाने पर लिखावटके सिवा अपरांश खोद देते हैं। वे यन्त्र द्वारा पुस्तक नहीं छापते वरन् उस काठ पर स्याही लगा कर उसके ऊपर कागज रख एक तरहके बुरुशसे थोड़ा थोड़ा दबाते हैं, जिससे एक तरफ छप जाता है। परन्तु इसमें संदेह नहीं कि, यह प्रणाली अत्यन्त कष्टसाध्य और अधिक समय लेनेवाली है।

ईसाकी तेरहवीं शताब्दीमें भिनिस-नगरवासी वणिकोंने ही सबसे पहले यूरोपमें इस तरहके काठके छापेका प्रचार किया था। पहिले-पहिल इस प्रणालीसे ताश छपे जाते थे। १४४० ई०में इसी तरहके छापेसे एक बाइबेल छापा गया था।

अन्तमें जन गुटेनवर्ग नामके एक जर्मनने एक एक अक्षर पृथक् बना कर छापेका वास्तविक पथ दिखाया। (१४५०-१४५५ ई०में)।

बहुतोंका कहना है कि, गुटेनवर्गने ओलन्दाजोंके पाससे अक्षर बनानेकी प्रणाली सीखी थी। परन्तु तो भी उन्होंने अपने हाथसे उसकी बहुत कुछ उन्नति की है, इसमें सन्देह नहीं। कुछ दिनों तक तो ये अक्षर लकड़ीसे ही बनते रहे, अन्तमें स्फूफार नामके दूसरे एक जर्मनने साँचेमें ढाल कर अक्षर बनानेकी प्रणाली निकाली। इस तरहके साँचेमें ढले हुए अक्षरों द्वारा पहिले पहल १४५८ ई०में एक पुस्तक छापी गई थी। किन्तु कारीगरोंने अक्षर बनानेके तरीकेको छिपा रक्खा था, इसलिये विदेशोंमें उस समय इसका प्रचार न हो सका था। १४६२ ई०में मेण्ट्ज् नगरके ध्वंस हो जाने पर वहांके कारीगर नानास्थानोंको चले गये और उन्होंने छापेका प्रचार किया।

१४६५ ई०में इटालीमें, १४६८ ई०में फ्रान्समें, १४७४ ई०में इङ्गलैण्डमें तथा १४७७ ई०में स्पेन देशमें छापेका प्रचार हुआ था।

बादमें प्रायः एक सौ वर्ष तक छापेखानेवाले अक्षर और अन्यान्य छापेकी चीजें अपने हाथसे ही बना लिया करते थे। सत्रहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें ओलन्दाजोंने पृथक् अक्षर बनानेका कारखाना खोला था। हॉलैण्डसे इङ्गलैण्ड आदि देशोंमें ये अक्षर भेजे जाते थे। बादमें जगह जगह इसके कारखाने खुलने लगे। १७०६ ई०में विलियम कैशलनने इङ्गलैण्डमें अक्षरोंकी बहुत कुछ उन्नति की थी।

साँचेमें ढले हुए अक्षर हस्तनिर्मित अक्षरोंसे बहुत हलके और सच्छिद्र होते थे तथा उनके बनानेमें ज्यादा देर लगती थी; इसलिये प्रतिदिन बहुत थोड़े ही अक्षर बन पाते थे। अन्तमें १८३८ ई०में निउइयर्क-निवासी डेभिड् ब्रुसने अक्षर बनानेकी एक मशीन बनाई। १८४३ ई०में उक्त मशीन और भी अच्छी तरह वाष्पीय मशीन-द्वारा चलने लगी। पहले हाथसे चलनेवाली साँचेकी मशीनसे घण्टेमें ४०० से ज्यादा अक्षर नहीं निकलते थे, किन्तु डेभिड् ब्रुसकी वाष्पीय मशीनसे प्रत्येक मिनटमें १०० एकसौ अक्षर तक तैयार होते हैं तथा ये अक्षर मजबूत और भारी भी हैं। अक्षर ढल जाने पर उन्हें घिसा तथा छाँटा जाता है और निशान काटा जाता है। पहले यह काम हाथसे ही किया जाता था, बादमें १८७१ ई०में मशीन द्वारा एक ही साथ घिस और छँट कर अक्षरोंके निकलनेका तरीका निकाला गया। अब तो मशीनसे ऐसे अक्षर निकलने लगे हैं कि, जो एकबारगी छापनेके काममें आ सकते हैं। १८५० ई०में अक्षरोंके मुख ताँबेसे मढ़ दिये गये, इससे अक्षर और भी मजबूत होने लगे।

छापेमें नाना तरहके अक्षर व्यवहृत होते हैं। सभी प्रकारके अक्षरोंकी लम्बाई प्रायः एक इञ्चकी है। सभी

भारतमें छापेका काम होता था, किन्तु इसमें अनुमानके सिवा दूसरा कोई प्रमाण नहीं मिलता।

कारखानेके लोग इनका माप एक इञ्चका रखते हैं; जिससे भिन्न भिन्न कारखानेके अक्षर एकत्र छप सकें। परन्तु तो भी एक ही छापेखानेमें एक ही कारखानेके बने हुए हरूफ काममें लाना चाहिये। अक्षरोंकी विस्तृति समान होती है; परन्तु छोटे बड़े अक्षरोंके अनुसार उनके वेधका तारतम्य अवश्य होता है। विस्तृति समान होनेके कारण एक पंक्तिके सम्पूर्ण अक्षर दो सीसेकी पत्तियोंके भीतर रह सकते हैं। कोई कोई अक्षर नीचेको जड़से भी बड़े अर्थात् निकले हुए होते हैं, जिन्हें करन् (Kern) कहते हैं। हिन्दी छापनेमें रेफ (^) रफला (‸) इत्यादि जोड़नेके लिए अधिकतर करन् अक्षर काममें आते हैं।

यूरोपीय प्रथाके अनुसार बिलायती यन्त्रादि द्वारा यूरोपियोंने ही इस देशमें छापेका काम प्रारम्भ किया था। अब भी बिलायती यन्त्रोंहीसे छापेका काम होता है। आजकल भारतमें भी अक्षर ढलते हैं; परन्तु उनकी मशीनें बिलायती ही हैं तथा ढालनेकी शिक्षा भी उन्हींसे पाई है। इसीलिए इस देशके छापेखानोंमें छापा सम्बन्धी समस्त शब्द अंग्रेजीके ही व्यवहृत होते हैं। अक्षरोंके सिवा स्पेस (Space) नामकी और भी बहुतसी चीजें हैं जो शब्दमें व्यवच्छेद रखनेके लिए व्यवहृत होती हैं। ये अक्षरोंके धड़के समान होते हैं, सिर्फ इसके अग्रभागमें अक्षर नहीं रहता अर्थात् अक्षरको काट देनेसे नीचेका जो हिस्सा रह जाता है, उसे स्पेस कहते हैं। इनकी मुटाई नाना प्रकारकी होती है। जिसका माप अंग्रेजी एम (M)अक्षरके बराबर हो, वह एम कहाता है। इसीके अनुसार उससे आधेको 'आधाएम'; दूनेको 'दो एम'; तिगुनेको 'तीन एम' इत्यादि कहते हैं। एक एमकी विस्तृति और वेध समान होता है।

अक्षरोंकी मुटाईके अनुसार उनके तरह तरहके नाम होते हैं। अंग्रेजी छापेखानोंमें साधारणतः १२ प्रकारके अक्षर प्रचलित हैं। जैसे—१ ग्रेट प्राइमर (Great primer), २ इङ्गलिश (English), ३ पाइका (Pica), ४ स्मालपाइका (Small pica) ५ लोङ्ग प्राइमर (Long primer), ६ बौर्जेश (Bourgeois), ७ ब्रेभियर (Brevier), ८ मिनियन (Minion), ९ नोनपेरिल (Nonpareil), १० रुबि (Ruby), ११ पार्ल (Pearl) और १२ डायमोण्ड (Diamond)। इनमें ग्रेट प्राइमर टाइप सबसे बड़ा है। पुस्तक छापनेमें इससे बड़ा अक्षर नहीं लगता। हां, पुस्तकोंका नाम इससे भी बड़े हरफोंमें छापा जाता है। ऊपरकी सूचीमें बड़ेसे लगा कर क्रमशः छोटे छोटे अक्षरोंके नाम लिखे गये हैं। डायमोण्ड टाइप (हरफ़) सबसे छोटा है। फ्रान्स और अमेरिकाके युक्त राज्यमें अंग्रेजी डायमोण्ड अक्षरसे भी एक तरहके छोटे अक्षर हैं। इसके सिवा उक्त अक्षरोंके आकारोंके अनुसार और भी बहुतसे भेद हैं। परन्तु उन अक्षरोंका व्यवहार थोड़ा ही पाया जाता है।

पाइका अक्षरके परिमाण और नमूनेको ले कर ही छापेका परिमाण निर्दिष्ट किया जाता है। पाइकाके एमोंके समान ही रूल, लेड (सीसेकी पत्ती) आदि काटे जाते हैं। इसलिए इतने एम कहने पर पाइकाका एम समझा जायगा। हिन्दीके हरूफोंके नाम समान अंग्रेजी अक्षरोंके नामानुसार ही होते हैं। परन्तु हिन्दीमें बहुत छोटे छोटे अक्षर अभी नहीं हुए। हिन्दी छापेखानोंमें साधारणतः बब्बिक, ग्रेट, ग्रेट प्राइमर, इङ्गलिश, पाइका, टूलाइन पाइका, स्मल पाइका इत्यादि व्यवहृत होते हैं। इनमेंसे पाइका ही अधिकतर व्यवहृत होता है, जिसमें कि "हिन्दी विश्वकोष" छपता है। इसकी एक पंक्ति बीस पाइका एमके बराबर है। श्लोक और टिप्पणियां लोङ्गप्राइमरमें छपती हैं।

हिन्दी टाइप या हरूफोंके भी कई एक भेद हैं, जैसे-बम्बइया, कलकतिया, इलाहाबादी इत्यादि। जिस टाइपमें यह "हिंदी विश्वकोष" छपता है, वह 'कलकतिया टाइप' कहाता है। बम्बइया टाइप देखनेमें खूबसूरत होता है, उससे उतरता हुआ इलाहाबादी और उससे कुछ उतरता हुआ यह कलकतिया टाइप है। भावमें भी इसी प्रकारका तारतम्य पाया जाता है।

ग्रेट प्राइमरकी अपेक्षा बड़ा टाइप क्रमसे इस प्रकार है—बब्बिक ग्रेट प्राइमर नं० १ और नं० २, टू-लाइन पाइका, टू-लाइन इङ्गलिश, टू-लाइन ग्रेट इत्यादि। टू-लाइन पाइका पाइका अक्षरसे दुगुना बड़ा होता

है। अन्यान्य बड़े हरूफ पाइकासे जितने गुने बड़े होंगे उतने लाइन पाइकाके नामसे कहे जाते हैं, जैसे—पाइकासे ६ गुने टाइपको "सिक्स लाइन पाइका" इत्यादि। बड़े बड़े विज्ञापन आदि छापनेके हरूफ पहले रेतोंके साँचेमें ढाले जाते थे ; परन्तु अब बड़े अक्षर प्रायः कोमल लकड़ी पर खोदे जाते हैं। इनके सिवा और भी असंख्य प्रकारके चित्रमय अक्षर बनाये जाते हैं।

अक्षरोंको सिलसिलेवार लगा कर जो व्यक्ति वाक्य या शब्दोंका ग्रन्थन करता है,उसे अंग्रेजीमें 'कम्पोजिटर' कहते हैं। जिसमें अलग अलग अक्षर रक्खे रहते हैं, उसे अंग्रेजीमें केस् (Case) कहते हैं। ये केस लकड़ीके बनाये जाते हैं। इसमें अलग अलग हरूफ रखनेके लिए छोटे बड़े खाने भी बने रहते हैं। कलकतिया हरूफोंके चार केस होते हैं और बम्बईया आदिके दो। बम्बइया 'खण्ड' टाइपमें एक छोटा केस और भी होता है, जिसे चलती बोलीमें 'टुकड़ी' कहते हैं। इनके प्रत्येक खानेमें पृथक् पृथक् हरूफ रहते हैं। छापेके काममें सभी हरूफ समान नहीं लगते, इसलिए जो अक्षर ज्यादा लगते हैं, वे बड़े खानोंमें ज्यादा रक्खे जाते हैं। जिसमें बड़े खाने और ज्यादा हरूफ हों, उसे नीचला (Lower) केस कहते हैं। यह कम्पोजिटरके सामने रक्खा जाता है, बाकीके ३ केस उस केसके तीनों तरफ तिरछे रक्खे जाते हैं। कम्पोजिटर इनमेंसे अपने अभ्यासके बलसे अक्षर उठा उठा कर एक पीतलके फ्रेममें सिलसिलेवार लगाते रहते हैं। इस पीतलके फ्रेमको कम्पोजिंग-ष्टिक (Composing stick) कहते हैं। बायें हाथमें ष्टीक पकड़ और दहिने हाथसे हरूफ उठा कर ष्टीकको बाईं ओरसे सजाते हैं। एक एक अक्षर ज्यों ही सजाया जाता है, त्यों ही कम्पोजिटर उसे अपने बायें हाथके अंगूठेसे दाब रखते हैं। एक पंक्ति पूरी हो जाने पर उसमें सीसेकी पत्ती (जिसे 'लेड' कहते हैं) डाल कर दूसरी पंक्ति कम्पोज करना प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकारसे जब ष्टीक भर जाती है, तब उन कम्पोज की हुई पंक्तियोंको एक लकड़ीके फ्रेममें रख देते हैं। इस काठके फ्रेमको 'गेली' (Gally) कहते हैं। प्रत्येक अक्षरको देख देख कर सजानेमें बहुत देर लगती है, इसलिए अक्षरोंमें दो या एक धारी कटी रहती है, जिसको टटोल कर उसके उलटे सीधेका ज्ञान हो जाता है, उसीके अनुसार ये कम्पोज करते चले जाते हैं। इससे सभी अक्षर सीधे लगते हैं।

कम्पोज ठीक हुआ या नहीं ; इस बातको जाननेके लिए निम्नलिखित विषयों पर ध्यान देना चाहिये। १—तमाम हरूफ ठीक तरहसे कड़े बैठे हैं या नहीं, हिलते तो नहीं हैं ? २—पंक्तियोंके दोनों तरफ समान हासिया है या नहीं ? ३—शब्दोंका व्यवच्छेद अर्थात् पदच्छेद समान है या नहीं ? अच्छे कम्पोजिटर सर्वत्र समान व्यवच्छेद रखते हैं। कहीं मिला हुआ और कहीं दूर दूर कम्पोज करना ठीक नहीं। अच्छे कम्पोजिटर इस बात पर पूरा ध्यान रखते हैं और जहां तक बनता है वहां तक वे एक शब्दको दो पंक्तिमें विभक्त नहीं करते।

एक पृष्ठ कम्पोज हो जाने पर उसको रस्सी द्वारा दृढ़तासे बांध दिया जाता है। बादमें इसी तरह बांध कर जितने पृष्ठोंको जरूरत हो उतने पृष्ठोंको एक समतल तख्ता, पत्थर या लोहे पर रख कर, लोहेके फ्रेममें काठकी गुल्लियों द्वारा ठीक ठीक कर कस दिया जाता है। बादमें उसे फ्रेम सहित उठा कर छापेकी मशीन अर्थात् प्रिण्टिं प्रेस या प्रिण्टिं मशीन पर चढ़ा दिया जाता है। उक्त फ्रेमको 'चेस' (Chase) और समतल लोहेको 'ष्टोन' (Stone) कहते हैं। कसे हुए पृष्ठ या फर्मा प्रेस पर चढ़ जाने पर एक आदमी सरेसके (या कपड़ेके *) बेलनसे अक्षरों पर स्याही पोत देता है और दूसरा आदमी आधा भीगा हुआ कागज फर्माके ऊपर फैला कर रख देता है, फिर एक हाथसे फ्रेम (जो गद्दे और बनातसे मुलायम कर दिया जाता है)-को सुला तथा ष्टोनको ढकेल प्रेसका हत्था खींच कर दाबता है। इस दाबसे हरूफोंकी स्याही कागजमें लग कर छप जाता है। फिर उसे निकाल कर अन्यत्र रख दिया जाता है। इसी प्रकार फिर स्याही लगा कर कागज छापते रहते हैं।

---

* करीब ७ वर्ष हुए पण्डित पन्नालालजी बाकलीवाल और पं० मोतीलालजी जैन काव्यतीर्थने कपड़ेके बेलनोंका आविष्कार किया है। यह छपाई कपड़ेके बेलनोंसे होती है।

परन्तु इस मशीन (हैण्ड प्रेस) द्वारा घण्टेमें ३००-४०० कागजसे ज्यादा नहीं छप सकते। सम्वादपत्रोंके अधिक ग्राहक हों तो इससे नियमित रूपसे काम नहीं होता। १७९० ई०में डब्ल्यू निकल्सन नामके एक अंग्रेजने गोल रोलरसे दाब कर छापनेवाली मशीन बनाई, परन्तु यह मशीन उन दिनों ज्यादा व्यवहृत न होती थी। १८१४ ई०में सबसे पहले वाष्पीय यन्त्रसे चलनेवाली छापेकी मशीनमें विलायतकी "टायम्स्" पत्रिका छपी थी। इसमें एक समतल लोहेकी सिल पर ही अक्षर (फर्मा) सजाये जाते हैं तथा वाष्पीय यन्त्रकी सहायतासे ज्यों ही रोलर घूमता त्यों ही उक्त अक्षरोंका फर्मा उसके नीचेसे निकल जाता है और उसीके दाबसे कागज छप जाता है। फर्माके रोलर या सिलण्डर (Cylinder)-के नीचे पहुंचनेसे पहले उसमें पतले पतले स्याहीके बेलनों द्वारा अपने आप स्याही पुत जाती है। सिर्फ दो आदमीकी जरूरत रहती है, एक कागज लगाता जाय और दूसरा उठाता जाय। आजकल इसमें कागज उठानेको 'झाप' भी लगा दी गई है जो कागजोंको अपने आप उठा कर एकत्र करती जाती है। परन्तु इस मशीनसे भी सम्वादपत्रोंकी मांग पूरी न हो सकी। इसलिए लोग इससे भी शीघ्र छापनेवाली मशीन बनानेकी कोशिश करने लगे।

बहुत दिनोंसे यूरोप और अमेरिकामें मशीन द्वारा कम्पोज करनेकी तरकीब निकालनेके लिए कोशिश की जा रही थी। अब वैसी मशीनें भी बहुत बन गई हैं। इनमें बड़ी आसानीसे कम्पोज हो सकता है। प्रायः सभी अंग्रेजी सम्वादपत्रोंका कम्पोज इसी मशीन (Lino)-से होता है। हिन्दी कम्पोज करनेकी मशीन अभी तक नहीं बनी।

१८४६ ई०में निउयर्कनिवासी रिचार्ड एम् हो नामके एक अंग्रेजने घूमते हुए रोलर (Cylinder)-में अक्षर कम्पोज करनेकी तरकीब निकाली। इस यन्त्रसे अक्षर-समूह बीचके एक बड़े गोलाकार सिलेण्डरके चारों तरफ बड़ी मजबूतीके साथ कस दिये जाते हैं। वाष्पीय यन्त्रकी सहायतासे वह सिलेण्डर अक्षरों सहित घूमता रहता है। इस बड़े सिलेण्डरके चारों ओर पतले पतले और भी बहुतसे रोलर रहते हैं। ये उस पर दाब देते रहते हैं; इनके बीचमें कागज जानेसे वह छप कर इधर उधरसे निकल जाता है। इसके सिवा और भी बहुतसे पतले पतले बेलन भी लगे रहते हैं जो उन अक्षरों पर स्याही पोता करते हैं। इसी प्रणालीसे पूर्वोक्त मशीनकी भांति अक्षर-समूहके जाने आनेमें समय नष्ट नहीं होता, अक्षर और दाब देनेवाले रोलर सब एक साथ घूमा करते हैं; इसलिए छापा भी लगातार चलता रहता है। क्रमशः इसकी भी उन्नति हुई; अब इसमें एक साथ दो या उससे भी ज्यादा कागज छापने लगे हैं। ये कागज अक्षरयुक्त सिलेण्डर और दाब देनेवाले रोलरोंके बीचसे छपते हैं। इसलिए अक्षरका सिलेण्डर जितना बड़ा होगा, उसके चारों तरफके दाब देनेवाले रोलरोंकी संख्या भी उतनी ही बढ़ाई जा सकती है, सुतरां अक्षर-समूहके एक बार घूमनेसे कागज भी उतने ही छपेंगे, जितने कि दाब देनेके रोलर होंगे। एक बारमें दश कागज एक साथ छप सकते हैं, ऐसी मशीनें भी बनी हैं। इस प्रकारकी मशीनोंसे घण्टेमें २०००० हजार कागज तक छपे जा सकते हैं।

इसके बाद १८६१ ई०में फिलाडेलफियानिवासी विलियम ए डब्ल्यूने नई एक मशीन बनाई। इङ्गलैंडमें भी १८६३से १८६८ ई०के भीतर एक मशीनका आविष्कार हुआ था। इसमें कागज टुकड़े टुकड़े नहीं छपते, बल्कि बहुत लम्बा कागज कौशलसे एक साथ दोनों तरफ छप कर निकलता है। यह कागज २।३ मील लम्बा और एक लोहेके डण्डेमें लिपटा हुआ रहता है। इसका एक छोर मशीनमें लगा देनेसे लगातार छपता रहता है। पूर्वोक्त मशीनमें प्रत्येक कागजको लगानेके लिए एक आदमीकी जरूरत है, किन्तु इस मशीनमें कागज अपने आप निकल कर लगता रहता है, तथा यथेच्छा आकारसे कटते, छपते और उनकी गिनती होती रहती है। ये कागज मशीनसे ही भंज कर और डाकमें भेजने लायक मुड़ कर निकलते हैं। विलायतके 'टायमस्' आदि और अमेरिकाके बहुतसे बड़े बड़े सम्वादपत्र इसी तरह छपते हैं। भारतमें 'इङ्गलिशमैन अमृत बाजार' आदि कई एक अंग्रेजी सम्वादपत्र ऐसी ही मशीनमें छपते हैं। आज

तक सम्वादपत्र छापनेके लिए जितनी मशीनोंका आविष्कार हुआ है, उनमेंसे १८८३-४ ई०में आविष्कृत हो साहबकी मशीन ही सर्वोत्कृष्ट है। इसमें प्रति मिनिटमें ५०० सौ और घण्टेमें लगभग २५००० हजार कागज दोनों तरफसे छप सकते हैं तथा साथ ही कटते, भँजते और मुड़ते रहते हैं।

आजकल अमेरिका और इङ्गलैण्डमें उक्त मशीन द्वारा पुस्तकें भी छपने लगी हैं। पुस्तकें भाँजने, सीने और छाँटनेकी मशीन भी बनी हैं। इसलिए वहां थोड़े समयमें बहुत ज्यादा पुस्तकें निकल सकती हैं।

भारतवर्षमें बहुत थोड़े समयसे छापेखानोंका प्रचार हुआ है। कालिदास, भवभूति आदि कवियोंने शायद ताड़पत्र या भोजपत्रादिमें शकुन्तला, उत्तरराम-चरित आदि ग्रन्थ लिखे थे। पहले ब्राह्मणगण रुईके कागज पर पुस्तकादि लिखते थे। कुछ भी हो, कागजका प्रचार होने पर भी उस समय पुस्तक छापनेकी तरकीब किसीको भी न सूझी, यह आश्चर्यका विषय है! मालूम पड़ता है, उस समय मुसलमानोंके अत्याचारोंसे देशीय साहित्य-चर्चामें शिथिलता हो गई थी। ब्राह्मण पण्डित और उच्चश्रेणीके लोगोंके सिवा क्वचित् कोई विद्या सीखता था। इसलिए पुस्तकोंका वैसा अभाव भी नहीं मालूम पड़ा, जिससे लोग बहुसंख्यक पुस्तक बनानेके लिए कोशिश करते। दीर्घायाससाध्य हस्तलिखित पुस्तकोंसे ही कथञ्चित् लोगोंकी विद्योपार्जन-पिपासा शान्त हो जाती थी।

ईसाकी १७वीं शताब्दीमें पोर्तगीजोंने भारतवर्षके गोया नगरमें पहिले पहल छापाखाना खोला था। उन्हीं लोगोंने सबसे पहले रोमन् हरूफोंमें कोङ्कणी भाषाकी कई-एक पुस्तकें छापी थीं। दाक्षिणात्यमें मेष्टोरीके मिशनरियों द्वारा अम्बलकड़ु नामक स्थानमें ईसाकी १७वीं और १८वीं शताब्दीमें बहुतसी देशीय पुस्तकें छपी थीं। १५७७ ई०में कोचिन नगरमें गनसलभेस् नामके एक जेसूटने पहिले पहल मलवारके अक्षर बनाये थे। १६७८ ई०में आमष्टार्डम नगरमें देशीय उद्भिज्जोंकी नाम छापनेके लिए पहले तामिल अक्षर बनाये गये थे।

अब अंग्रेजोंके प्रयत्नसे भारतमें विद्याकी काफी चर्चा और उन्नति हो रही है, इसीलिए हिन्दी और अंगरेजी पुस्तकोंकी दिन दिन मांग बढ़ रही है। साथ ही हिन्दीके छापेखाने भी खूब बढ़ रहे हैं। रेलोंका विस्तार और डाकखानोंकी सुव्यवस्था हो जानेके कारण आजकल मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक और दैनिक आदि सम्वादपत्रोंका भी खूब प्रचार हो गया है। पहले यहां सिर्फ हैण्ड प्रेसोंसे छापनेका काम होता था; किन्तु अब बड़े बड़े सम्वादपत्र इत्यादि वाष्पीय तथा वैद्युतिक यन्त्रोंसे भी छपते हैं।

भारतमें प्रति वर्ष हजारों हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला और अंग्रेजी पुस्तकें छपा करती हैं। अब यहां हरएक भाषाके अक्षर ढलने लगे हैं। इसके कारखानेका अंग्रेजी नाम "टाइप-फौण्ड्री" (Type Foundry) है। भारतवर्षके प्रायः सभी प्रधान नगरोंमें टाइप-फौण्ड्री और छापेखाने हैं।

ष्टिरिओटाइपिंग (Stereotyping)।—एकबार अक्षरोंको कम्पोज कर उससे ढाँचा बना करके उसमें गला हुआ चपड़ा या सीसा आदि छोड़ कर उसका हुबहु प्रतिरूप बनाना ही ष्टिरिओटाइपिंग कहलाता है। इस तरहसे एक या ज्यादा ष्टिरियो बना कर उस टाइपसे दूसरी पुस्तक कम्पोज की जा सकती है और उस प्रतिरूप या ष्टिरिओ द्वारा वह पुस्तक भी छपती रहती है। १७२५ ई०में विलियम जेड़ नामक एक स्काटलैण्डवासी सुनारने बाइबेल और स्तोत्रादि छापनेके लिए पहिले पहल ष्टिरिओटाइप बनाया था। तबसे इसकी क्रमशः उन्नति होती आई है। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली नानारूप होने पर भी सबकी जड़ एक ही है। सभी प्रणालीमें कीचड़, सूक्ष्म रेत, विलायती मट्टी आदिको मिला कर पीसना और गरम करना पड़ता है। उक्त पिसे हुए गीले पदार्थ पर कसे हुए अक्षरोंकी छाप देनेसे साँचा बहुत जल्दी सूख जाता है, फिर उस पर अक्षर बनाने लायक सीसा, रसाञ्जन आदि धातुओंको गला कर ढालनेसे हुबहु अक्षरोंका प्रतिरूप बन जाता है।

यथोचित दक्षता और तत्परताके साथ काम किया जाय तो यह ष्टिरिओ ८।१० मिनटके भीतर ही बन सकता है। लण्डनमें 'टाइमस' पत्रको जल्दी छापनेके

लिए जो ष्टिरियो बनाया जाता है, उसमें ८ मिनटसे ज्यादा समय नहीं लगता। इससे एक ही विषय एक साथ दो तीन जगह छापा जा सकता है। इसीके जरिये उक्त समस्त सम्वादपत्र जल्दी छप कर प्रकाशित हो जाते हैं।

इलेक्ट्रोटाइपिंग (Electrotyping)—यह प्रथा १८३८से १८४१ ई०के भीतर निउयर्क नगरमें जोसफ ए० एडामस् द्वारा प्रचलित हुई थी। एक पीले रंगके मोमके ऊपर चित्र या अक्षरोंकी छाप मार कर उस मोम पर ब्लाकपेन्सिल या दूसरा कोई ताड़ित-परिचालक पदार्थका चूर्ण पोत देना चाहिए। इससे मोम पर छपा हुआ चित्र या पृष्ठ ताड़ित-परिचालक हो जाता है। बादमें उस मोमको रासायनिक क्रियासे ताँबेके जरिये गिल्टी कर लेनेसे ताँबा जब खूब मोटा हो जाय उस परसे मोमको धो डालना चाहिये। इस पतले ताँबेके ढाँचे पर पीछेकी तरफ सीसा गला कर ढालनेसे, मुंह पर ताँबेका पत्तर मढ़ा हुआ सुन्दर अक्षरोंका इलेक्ट्रो बन जाता है। यह ष्टिरिओटाइपसे मजबूत और स्थायी होता है। तीन लाख दाब (छाप) पड़ने पर भी इसका कुछ नहीं बिगड़ता। काष्ठफलकादि चित्रके इस तरहसे बहुसंख्यक हूबहू अनुरूप फलक बनाये जा सकते हैं और काष्ठफलक ज्योंका त्यों बना रहता है। मुद्रायन्त्र देखो।

२ मुद्रा, मुहर। ३ मुहर या ठप्पेसे दबा कर डाला हुआ अक्षरादिका चिह्न। ४ मारका, वह चिह्न जो व्यापारिक माल पर डाला जाता है। ५ रात्रिके समय असावधानतामें शत्रु पर आक्रमण। ६ प्रतिकृति, किसी चीजकी हूबहू नकल। ७ हाथके पंजेका वह चिह्न जो विवाह आदि शुभ अवसरों पर दीवार आदि पर लगाया जाता है। यह चिह्न प्रायः हल्दी आदिसे डाला जाता है। ८ वह ठप्पा जिससे खलियानमें अन्नको राशि पर रख रख कर चिह्न लगाया जाता है। इसमें २।३ फुटका एक डंडा लगा रहता है और इसका आकार चौखूंटा वा गोल होता है। ९ चक्र, शङ्ख आदिका चिह्न जिसे वैष्णवगण अपने बाहु आदि अङ्गों पर उत्तप्त धातु द्वारा अङ्कित करते हैं। १० ठप्पा, वह साँचा जिस पर स्याही वा रंग पोत कर किसी चीज पर उसकी आकृति उतारते हैं।

छापाखाना (हिं० पु०) मुद्रालय, पुस्तकें आदि छपनेका स्थान, प्रेस।

छावड़ा—राजपूतानाके टोंक राज्यका एक परगना। यह ग्वालियर रेसीडेण्टके अधीन अक्षा० २४° २८´ तथा २४° ५३´ उ० और देशा० ७६° ४३ एवं ७७° ५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३१२ वर्गमील है। छावड़ाके उत्तर ग्वालियर तथा कोटा, पश्चिम कोटा और दक्षिण एवं उत्तर ग्वालियर है। इसमें अगवारा, मुंजवारा और पिछवारा तीन विभाग हैं। अगवारा समतल और मुंजवारा तथा पिछवारा वन्य पार्वत्य प्रदेश है। इसको उत्तर तथा पूर्व सीमा पर पार्वती और पश्चिम सीमाको अंधेरी नदी बहती है। लोकसंख्या प्रायः ३६०४६ है। इसमें १८५ ग्राम और एक नगरी है। कहते हैं कि पहले छावड़ामें खीची चौहान राजपूतोंने उपनिवेश स्थापन किया था। १२८५ ई०को इसी वंशके गूगल सिंहने गूगोर दुर्ग बनाया। खृष्टीय १८वीं शताब्दीके अन्तमें यह यशोवन्तराव होलकरके हाथ लगा। उन्होंने छावड़ा अमीरखाँको दिया था, जिन्हें १८१७ ई०को सन्धिके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टने भी अधिकारी रखा। राज्यका आय एक लाख ४० हजार है। यहां नारङ्गियां बहुत होती है। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुलाकी बीनाबारां शाखा इस प्रान्तमें २२ मील तक निकल गयी है।

छावड़ा—राजपूतानास्थित टोंक राज्यके छावड़ा प्रान्तका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४°२८´ उ० और देशा० ७६° ५२´ पू०में रैनरी नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६७२४ है। यहां खीची राजाओंका निर्मित एक दुर्ग दण्डायमान है।

छाय (सं० क्ली०) अनातप, धूपका अभाव।

"नभिन्नाय विभिन्नाय च्छाया यानातपाय च।" (गोत्रत २।८६ अ०)

छायल (हिं० पु०) स्त्रियोंका एक पहनावा।

छाया (सं० स्त्री०) छ्यति छिनत्ति सूर्यादिः प्रकाशः नाशयति छो-य। माच्छाशसिभ्यो यः। उण् ४।१०९। ततष्टाप्। १ अनातप, रौद्रशून्य, सोरक, छाँह। पर्याय—भावानुजा श्यामा, अतेजः, भोक, अनातप, आभोति, आतपाभाव, भावालीना। "उपच्छायामिव घृणेरलभ।" (ऋक् ६।१६।३८)

"छायामिव प्रतापम् सूर्य्ः।" (अथर्व ८।४।१८)

वैद्यकके मतसे छायाके गुण—यह मधुर, शीतल, दाहश्रमहारी और धर्मनाशी है। (राजनि०) मेघकी छाया श्रम, मूर्च्छा, भ्रम और सन्तापनाशक है। (राजव०) विशेष कर बड़के पेड़की छाया बल और वर्णवर्द्धक होती है। (चरक) प्रदीप, खाट और शरीरकी छाया अत्यन्त दोषकर होती है। (कर्मलोचन)

ज्योत्स्ना, आतप, जल दर्पण और किसीके अङ्ग पर जिसकी छाया विकृत भावसे पड़े, उसकी मृत्यु आसन्न समझनी चाहिये। छिन्न-भिन्न, आकुल, हीन वा अधिक विभक्त, मस्तकशून्य वा विस्तृत और प्रतिच्छायारहित—ऐसी छाया बहुत ही बुरी और कोई कारण जन्य नहीं होती, जो मुमूर्षु अर्थात् मरणासन्न हैं, उन्हींकी ऐसी छाया पड़ती है। जिन्हें स्वप्नमें अपनी छायाके अवयव संगठन वा प्रमाण और प्रभाका परिवर्तन होते दीखता है, उनको भी आसन्न मृत्यु समझनी चाहिये।

आकाश इत्यादि पञ्च महाभूतोंके भिन्न भिन्न लक्षणोंसे पांच प्रकारकी छाया होती है। जैसे—१ आकाश सम्बन्धी छाया निर्मल, नीलवर्ण, स्नेह और प्रभायुक्त है। २ वायवीय छाया रूक्ष, कपिश और अरुणवर्ण तथा निष्प्रभ है। ३ अग्निकी छाया विशुद्ध रक्तवर्ण, उज्ज्वल और रमणीय है। ४ जलकी छाया निर्मल, वैदूर्यमणिकी भांति नीलवर्ण और सुस्निग्ध है। ५ पृथिवीकी छाया स्थिर, स्निग्ध, श्याम और श्वेतवर्ण है। इनमेंसे वायवीय अर्थात् वायुकी छाया अप्रशस्त (बुरी) और विनाश या महाकष्टका कारण है।

अग्निकी प्रभा सात प्रकारकी है—रक्त, पीत, शुक्ल, कपिश, हरित, पाण्डुर और कृष्ण। विकासी, स्निग्ध और विपुल प्रभा ही शुभ होती है तथा रूक्ष, मलिन, और संक्षिप्त प्रभा अशुभ। प्रभाके शुभाशुभके अनुसार तद्युक्त छाया प्रशस्त और अप्रशस्त है।

(चरक इन्द्रियस्था० ९ अ०)

वर्तमान विज्ञानके मतसे किसी अस्वच्छ वस्तुके व्यवच्छेदके कारण जिस स्थानसे आलोक हट जाय, उस स्थानको छाया कहते हैं। इस छाया भूमि या अन्य किसी तलक्षेत्र द्वारा विभक्त होने पर जो प्रतिकृति उत्पन्न होती है, उसे भी उस अस्वच्छ वस्तुकी छाया कहते हैं। छाया सर्वदा वस्तुके समान नहीं होती। आलोकप्रद पदार्थके आकार और दूरत्वके भेदसे तथा तलके साथ अस्वच्छ पदार्थके अवस्थानके भेदसे छायाके भेद हुआ करते हैं। आलोक बहुदूरवर्ती तथा तलक्षेत्रके ऊपर लम्बी तरहसे पड़ने पर छाया प्रायः पदार्थके व्यवधानके समान होती है, तथा छायाका छोर बहुत ही साफ होता है। इसके सिवा छाया प्रायः व्यवहित वस्तुसे भिन्नाकृतिकी हुआ करती है। आलोककी गति सीधी रेखाओं जैसी होती है। सिर्फ एक बिन्दुसे आलोक निकलने पर समस्त पदार्थोंकी छाया एकमात्र और सुस्पष्ट होती है; किन्तु कार्यतः एक ही बिन्दुसे आलोकका उत्पन्न होना असम्भव है, इसलिए एक पदार्थकी एक छाया न हो कर कई छायाएँ उत्पन्न होती हैं। जहां बहुतसी छायाएं तर ऊपर पड़ती है, वहांकी छाया सबसे घोर और क्रमशः चारो ओर फीकी हो जाती है। इस फीके अंशको उपच्छाया (Penumbra) कहते हैं। आलोकप्रद वस्तु व्यवहित वस्तुकी अपेक्षा बड़ी हो तो छायामय स्थान क्रमशः ह्रस्व होता रहता है, परन्तु व्यवहित वस्तु वृहत्तर हो तो छाया क्रमशः बड़ी होती रहती है। यहां छाया और उपच्छायाका चित्र दिया जाता है।
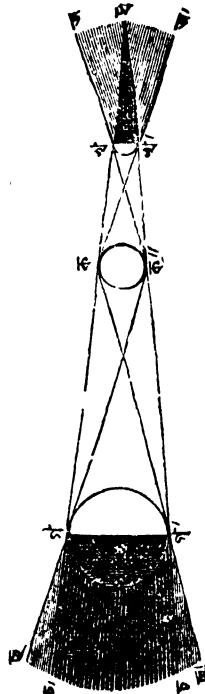
इस चित्रके बीचका वर्तुल आलोकप्रद है। क र्क की अपेक्षा ख र्ख क्षुद्रतर और ग र्ग वृहत्तर है। क र्क के दोनों प्रान्तस्थ विपरीत बिन्दुओंसे आलोकरश्मि ख र्ख के दोनों प्रान्तकी घ बिन्दुमें जा मिले हैं। इसलिए ख र्ख घ नामक स्थान सम्पूर्ण छाया और घ ग ज और घ र्ख र्ज नामक स्थान उपच्छाया है, ग र्ग के वृहत्तर होनेसे इसकी छाया क्रमशः बढ़ रही है, सुतरां ग र्ग की छाया क र्क की विपरीत दिशामें नहीं मिल सकती। ज ख घ नामक उपच्छाया ख र्ख घ नामक

छायासूचीको चारो ओरसे घेरे हुए है, यह स्थान कर्क के किसी न किसी अंशसे आलोकित होता है। चन्द्रग्रहण-के समय पृथिवीको छाया ठीक इसो तरह रहती है। इस समय चन्द्र य थ ज इस उपच्छायाके भीतर आनेसे लाल दीखने लगता है। अस्वच्छ वस्तुको छाया पासमें अपेक्षाकृत सुस्पष्ट होती है, क्रमशः छाया जितनी दूर जाती है, उतना ही उपच्छायाका भाग बढ़ता जाता है। पहले हो कहा जा चुका है कि, आलोकके आकार और जिस तल पर छाया पड़ती है उसके अवस्थानके भेदसे छायाके आकारोंमें भेद होता है।

२ प्रतिबिम्ब। "मयि तेज इति छायां स्वां दृष्ट्वा गतां जपेत्" (याज्ञवल्क्य १।२७९) ३ कान्ति, शोभा, दीप्ति। "स छायया दधिरे शिशिरांशु।" (ऋतु ५।४६।६) 'छायया दीप्त्या' (सायण) ४ पालन, रक्षा। ५ उत्कोच, रिशवत, घूस। ६ पंक्ति, श्रेणी। ७ कात्यायनी। (शब्दर०)

८ सूर्यको एक पत्नी। विवस्वान् सूर्यको संज्ञा नाम-को एक पत्नी थी। उनके गर्भसे वैवस्वत श्राद्धदेव तथा यम और यमुनाका जन्म हुआ था। पतिके रूपसे उनके चित्तमें सन्तोष न था। सूर्यका तेज उनके लिए अत्यन्त असह्य हुआ, इसलिए उन्होंने माया द्वारा अपनी छायासे अपने समान एक कामिनी बनाई और उससे कहा—"हे भद्रे! मैं अपने पिताके घर जाती हूं, तुम मेरे इन दोनों लड़कों और लड़कीको पालन करना तथा यह बात किसीसे कहना नहीं।" यह कह कर संज्ञा अपने पिता विश्वकर्माके पास चली गई। विश्वकर्माको भी यह सब हाल मालूम हो गया था, उन्होंने संज्ञाको भर्त्सनापूर्वक स्वामीके घर चले जानेको कहा। बार बार पिताकी ताड़नासे संज्ञाने अपना रूप त्याग दिया और घोड़ीका रूप धारण कर घास खाने लगीं। विव-स्वान् सूर्यने भी संज्ञाकी प्रतिकृति छायाको संज्ञा समझ करके उससे दो पुत्र उत्पन्न किये, पहले पुत्रका नाम हुआ सावर्णि और दूसरेका शनैश्चर (शनि)। छाया इन्हें संज्ञाके पुत्रपुत्रियोंकी अपेक्षा कहीं अधिक प्यार करती थी। यह देख यम अत्यन्त क्रुद्ध हो कर छायाको पदाघात करनेके लिए उद्यत हुए। छायाने दुःखित हो कर "तुम्हारे पैर कट पड़ें" ऐसा शाप दिया। यम शापग्रस्त हो कर पिताके पास गये और कहने लगे—"पितः! माताको सब पुत्रोंसे समान स्नेह करना चाहिये। परन्तु वे हम तीनोंसे छोटोंको ज्यादा प्यार करती हैं। इसीलिए मैं उनको पदाघात करनेके लिए उद्यत हुआ था; किन्तु शरीर पर आघात नहीं किया। तब भी उन्होंने अभिशाप दिया कि, पुत्र हो कर तुम मुझे लात मारनेको उद्यत हुए हो, तुम्हारे पैर कट पड़ें।" इस पर सूर्यने कहा—"तुम्हारी माताने जब कहा है, तब उस वचनको मैं अन्यथा नहीं कर सकता। क्रमिगण तुम्हारे पैरोंसे मांस ले कर भूमि पर गमन करेंगे। इसके बाद सूर्यने छायाको बुला कर छोटे पुत्रों पर अधिक स्नेहका कारण पूछा। परन्तु छायाने कुछ भी नहीं कहा। सूर्यदेवको समाधि द्वारा सब वृत्तान्त मालूम हो जाने पर वे शाप देनेको उद्यत हुए, तब छायाने डरके मारे सब हाल कह सुनाया। फिर भगवान् सूर्य क्रोधित हो विश्वकर्माके पास गये। विश्वकर्माने कहा—"संज्ञा तुम्हारे तेजको सहन न कर सको, इसलिए वह घोड़ीका रूप धारण कर तपस्या कर रही है। जाओ, देखो जा कर!" सूर्य फिर वड़वारूपधारिणी संज्ञाके पास गये। पत्नीको कृश, दीन और ब्रह्मचारिणी देख कर सूर्यने कहा—'देवी! अब तपस्या करनेकी आवश्यकता नहीं: मैं अपने रूपके परिवर्तन करता हूं।" इतना कह कर सूर्यने अपना रूप बदल दिया। (हरिवंश ९ अ०)

९ तमः, अन्धकार। मीमांसक लोग तमको पृथक् द्रव्य मानते हैं। नैयायिकोंका कहना है कि, आलोकका अभाव ही तमः है, यह कोई पृथक् वस्तु नहीं है। जैन लोग तमको पुद्गलद्रव्यके अन्तर्गत मानते हैं तथा इसमें रूप, रस, गन्ध और वर्णका अस्तित्व बतलाते हैं। १० सादृश्य, तद्रूप, समानता। "पक्षादर्शेत्युपं जपन्त्याः पाश्राय शिशुमर्दनि। वस्त्रादिभिरलङ्कृत्य पुत्रच्छायावहं सुतं॥" 'पुत्रच्छाया पुत्र-सादृश्यम्।' (दत्तकचन्द्रिका) ११ छन्दोभेद, एक छन्द। इसके प्रत्येक पदमें १९ अक्षर होते हैं। उनमेंसे २।३।४।५।६। १२।१३।१४।१६।१७।१८ वां वर्ण गुरु और बाकीके लघु होते हैं। ६।१२।१९वां अक्षर यति होता है। "भवेत् सैव छायातयुगगयुता आदहाद्यान्ते यदा।" (छन्दोमञ्जरी) १२ रागिणी-

विशेष, एक रागिणी। यह हम्मीर और शुद्ध नटके योगसे उत्पन्न और सम्पूर्ण श्रेणीभुक्त है। पञ्चम वादी, ऋषभ सम्वादी और अवरोहणमें इसका तीव्र मध्यम व्यवहार होता है। इसके ग्रह, अंश, और न्यास हैं। (सङ्गीतसार) दामोदरके मतसे यह ओड़व है, जैसे—"नि ध म ग सा" (सङ्गीतरत्नाकर) नारायणकृत सङ्गीतसारमें इसको षड़्ज श्रेणीके अन्तर्गत माना है। जैसे—"षड्ज-ग्रामसहिता छाया शङ्करवीरयोः।" इसकी मूर्ति मुक्तकेशी दिगम्बरी नीलपद्मके समान श्यामवर्ण और भयङ्करी है। यह सूर्यकान्तमणिको धारण किये हुए हैं। (सङ्गीतसार) १३ परिमाणभेद। तत्पुरुष समासमें छायान्त शब्द बहुलतासे क्लीवलिङ्ग होता है। छाया बाहुल्ये। पा २।४।२२। इक्षुच्छायं। १४ भूत, पिशाचादिके प्रभावको भी छाया कहते हैं, जैसे—अमुक स्त्री पर भूतकी छाया पड़ गई है। १५ अनुकरण। किसी ग्रन्थका शब्दशः भाषान्तर करना, जैसे यह पुस्तक संस्कृत ग्रन्थका छायानुवाद है। १६ अक्स, आईना, जल इत्यादिमें पड़ा हुआ प्रतिबिम्ब।

छायाक (सं० त्रि०) छायायुक्त, जिसमें छाया हो।

छायाकर (सं० त्रि०) छाया-कृ-अच्। छत्रधारी, जो छातासे दूसरेको छाया देता हो।

छायागणित (सं० क्ली०) छायानुगतं गणितं, मध्यपदलो०। गणितकी एक प्रक्रिया। इस देशके प्राचीन आर्य-ज्योतिर्विद्‌गण छायाका अवलम्बन कर जिस प्रक्रियासे ग्रहणगति और अयनांशके गमनागमन इत्यादिका निरूपण करते थे, उसीको छायागणित कहा जा सकता है।

दिग्देश और कालका निरूपण करनेके लिए छायाका अवलम्बन करना पड़ता है। प्राचीन आर्यगण छाया अवलम्बन कर जिन नियमोंसे दिग्देश निरूपण करते थे, उनका विवरण खगोल शब्दमें, ६६४ और ६६५ पृष्ठमें देखना चाहिये। उस प्रक्रियाके अनुसार शंकु द्वारा पूर्व पश्चिम रेखा या विषुवन्मण्डलको स्थिर कर छायाकर्ण निरूपित होता है।

छायाकर्ण निरूपण करनेका उपाय—शङ्कुका वर्ग वा १४४के साथ छायाके वर्गको जोड़ कर जो फल होगा, उसके वर्गमूलको छायाकर्ण कहते हैं। छायाकर्ण ठीक हुआ या नहीं, इस बातको जाननेके लिए छायकर्णके वर्गसे १४४ को पृथक् कर अवशिष्ट जो बचे, उसका वर्गमूल छाया होनेसे गणित ठीक हुआ समझना चाहिये।

इसकी उपपत्ति सूर्यसिद्धान्तकी टीकामें देखनी चाहिये।

अयनसंस्कृत सूर्यका स्फुट जिस दिन शून्य होगा, उस दिनको मध्याह्नकालकी शंकुच्छायाका नाम होगा विषुवती छाया। इसका विषुवत् प्रभा और अक्षभाके नामसे भी उल्लेख किया जाता है। शङ्कु परिमाणको कोटी और विषुवत्प्रभा परिमाणमें भुजकी कल्पना कर क्षेत्रव्यवहारके कर्ण लानेके नियमानुसार उसकी प्रक्रिया करनेसे जो फल होगा, उसको अक्षकर्ण या अक्षक्षेत्र कहते हैं। कर्ण स्थिर करनेकी प्रक्रिया क्षेत्रव्यवहार शब्दमें देखो।

त्रिज्यासाधन-प्रक्रिया द्वारा त्रिज्या स्थिर कर उसको पृथक् रूपसे शङ्कु १२ और विषुवत्प्रभा द्वारा गुना करनेसे जो दो राशि होंगी, उनको दो जगह रख कर विषुवत्प्रभा द्वारा भाग करना चाहिये। जो उपलब्ध होगा, वही दोनों गोलके दक्षिणदिशामें स्थित लम्बाक्ष है।

नतानयन-प्रक्रिया—अभीष्ट दिनको मध्याह्नकी छायासे त्रिज्याको गुना कर मध्याह्न छायाके कर्ण द्वारा भाग करनेसे जो उपलब्ध हो, उसका चापसाधन करना चाहिये, लब्ध चापकलाको नतकला कहा जा सकता है। मध्याह्न छाया पूर्वापर सूत्रमध्यसे दक्षिणस्थ हो तो उस नतकलाको उत्तरनतकला और यदि मध्याह्न छाया उत्तरदिशामें हो तो उसे याम्य-नतकला कहते हैं। नतकला और सूर्यक्रान्ति-कलाकी दिशा एक हो तो दोनोंका योग तथा विभिन्न दिक् होनेसे दोनोंका वियोग करना चाहिये। जो फल होगा, उसका नाम अक्षकला है। कहीं कहीं अक्ष नामसे भी इसका उल्लेख किया जाता है।

अक्षभा स्थिर करनेकी प्रक्रिया—अक्षकलासे पहले अक्षज्या स्थिर करनी चाहिये। ज्या देखो। त्रिज्याके वर्गसे अक्षज्याका वर्ग अलग कर देने पर जो अवशिष्ट रहेगा, उसके वर्गमूलको लम्बज्या कहते हैं। अक्षज्याको १२ से गुना कर लम्बज्या द्वारा भाग करनेसे जो उपलब्ध होगा, उसका नाम अक्षभा है। कहीं कहीं पलभा नामसे भी इसका उल्लेख है।

नतांश स्थिर करनेका नियम—एक दिक् होनेसे स्वदेशके अक्षांश और मध्याह्नकालिक सूर्यक्रान्तिका योग तथा

भिन्न दिक् होने पर नतांश और सूर्यक्रान्तिका वियोग करना चाहिये। जो फल होगा, उसका नाम माध्याह्निक सूर्य-नतांश है। इस नतांशकी भुज कल्पना कर प्रक्रिया करनेसे कोटिज्या स्थिर की जा सकती है।

छाया और कर्ण स्थिर करनेका तरीका—नतांशज्याको शङ्कु, १२ से गुना कर कोटिज्या द्वारा भाग करनेसे जो फल होगा, उसको माध्याह्निकी छाया तथा त्रिज्याको शङ्कु, १२ द्वारा गुना कर कोटिज्या द्वारा भाग करनेसे जो लब्ध होगा, उसे माध्याह्निक छायाकर्ण कहते हैं।

अग्रा और कर्णाग्रा लानेकी प्रक्रिया—सूर्यक्रान्तिज्याको अक्षकर्ण द्वारा गुना कर शङ्कु १२ द्वारा भाग करनेसे जो लब्ध होता है, उसका नाम अग्रा है। इसको सूर्यकी अग्रा भी कहते हैं। दूसरे ग्रहोंके संबन्धमें भी ऐसा ही नियम समझना चाहिये। अग्राको अभीष्टकालके छायाकर्णसे गुना कर त्रिज्या द्वारा भाग करनेसे जो फल उपलब्ध होगा, उसको कर्णाग्रा कहते हैं।

भुजानयन-प्रक्रिया—अभीष्ट समयके सूर्याग्राके साथ अक्षभाको जोड़ना चाहिये। उस योग-फलको दक्षिण-गोलका उत्तर भुज तथा पलभासे कर्णाग्राको निकाल देनेसे जो अवशिष्ट रहेगा, उसको उत्तर गोलका उत्तर भुज समझना चाहिये। यदि पलभासे कर्णाग्रा ज्यादा हो तो कर्णाग्रासे पलभाके पृथक् करनेसे जो अवशिष्ट रहेगा, उसे दक्षिण भुज समझें। सूर्य याम्योत्तरवृत्तमें अवस्थित होने पर किस प्रकार छायाकर्ण स्थिर करना चाहिये, सो पहिले लिखा जा चुका है।

सूर्यके पूर्वापरवृत्तस्थ होने पर छायाकर्ण स्थिर करनेका नियम—लब्धज्याको अक्षभा और अक्षज्याको १२ से गुना कर क्रान्तिज्या द्वारा भाग करनेसे जो दो राशि लब्ध होंगी, वेही समवृत्तस्थ वा पूर्वापर वृत्तस्थ सूर्यके दो कर्ण हैं। इसी तरह कोणछाया और कर्णादिका भी साधन करना पड़ता है। उसका प्रयोजन और विस्तृत विवरण स्फुट आदि शब्दोंमें देखना चाहिये।

पहिले कही हुई प्रक्रिया द्वारा छायाकर्ण निरूपित होने पर सूर्य साधन किया जा सकता है। उसकी प्रक्रिया इस प्रकार है—अभीष्टकालके कर्णाग्रासे लब्ध-ज्याको गुना कर तात्कालिक छायाकर्णको परिमाण-अङ्गुलो द्वारा भाग करनेसे जो फल उपलब्ध होगा, उसे क्रान्तिज्या कहते हैं। क्रान्तिज्याको त्रिज्यासे गुना कर परमक्रान्तिज्या द्वारा भाग करनेसे जो फल उपलब्ध होगा उसके धनुको राशि आदिको क्षेत्र कहते हैं। इस क्षेत्रमेंसे स्फुट नियमके द्वारा रवि साधन करना चाहिये। रविस्फुट देखो। प्राचीन आर्यज्योतिर्विद्गण छायाका अवलम्बन कर अनेक गणितकार्य चलाते थे। ऊपर उनकी एक प्रक्रिया संक्षेपमें लिखी गई है। जिस नियमसे सूर्य-साधनप्रणाली दिखलाई गई है, उस नियमके अनुसार अन्यान्य ग्रहोंका भी साधन हो सकता है। स्फुट आदि शब्दोंमें इसका अन्यान्य विवरण देखो।

छायाग्रह (सं० पु०) दर्पण, आइना।

छायाग्राहिणी (सं० स्त्री०) एक राक्षसी जिसने समुद्र फांदते हुए हनुमानकी छाया पकड़ कर उन्हें खींच लिया था।

छायाङ्क (सं० पु०) छाया सूर्यप्रतिबिम्बः अङ्को यस्य, बहुव्री०। चन्द्र, चन्द्रमा।

छायातनय (सं० पु०) छायायाः सूर्यपत्न्याः तनयः, ६-तत्। छायापुत्र, शनि, शनैश्चर।

छायातरु (सं० पु०) छायाप्रधानास्तरुः शाकपार्थिववत्, मध्यपदलो०। १ छायाप्रधान वृक्ष। पूर्वाह्न या अपराह्णके समय जिस वृक्षके तले शीतल छाया हो वही छायातरु कहलाता है। २ सुरपुन्नाग, छतिवन।

छायात्मज (सं० पु०) छायाया आत्मजः, ६-तत्। शनि, शनैश्चर।

छायादान (सं० पु०) एक प्रकारका दान। यह दान शरीरके ग्रहजनित अरिष्टकी शान्तिके निमित्त किया जाता है। इसमें दान करनेवाला घी या तेलसे परिपूर्ण किसी एक कांसेके कटोरेमें कुछ दक्षिणा डाल देता है और तब वह अपनी छाया देख ग्रहविप्रको दान करता है। ग्रहविप्र देखो।

छायादेवी (सं० स्त्री०) गायत्री देवी।

(देवीभागवत १२।६।५४)

छायाद्रुम (सं० पु०) छायाप्रधानो द्रुमः शाकपार्थिववत् समासः। १ छायातरु। २ नमेरुवृक्ष, सुरपुन्नागवृक्ष, छतिवनका पेड़।

छायानट—रागविशेष। इसके ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। यह राग सम्पूर्ण श्रेणीभुक्त है। यह छाया और नटके योगसे उत्पन्न है। अवरोहणमें तीव्र मध्यम लगता है। सा वादी ग सम्वादी। यह नव प्रकारके नटोंके अन्तर्गत है। नव प्रकारके नट यथा—शुद्धनट, केदारनट, कल्याणनट, कामोदनट, मल्लारनट, छायानट, कादम्बनट, हाम्बीरनट और आहीरीनट। (सङ्गीतरत्नाकर)

छायानट्ट (सं॰ पु॰) छायानट रागविशेष। इसका लक्षण।

"धैवतांशग्रहन्यासश्छायानट्टः प्रकीर्त्तितः।
सम्पूर्णः कथितश्चासौ कविभिस्तत्त्वदर्शिभिः।"

(सङ्गीतसार) छायानट देखो।

छायान्वित (सं॰ त्रि॰) छायायुक्त, छायादार।

छायापथ (सं॰ पु॰) छायायुक्तः पन्थाः शाकपार्थिववत् समास। १ देवपथ। २ आकाश। "छायापथेनेवशरत्प्रसन्नं।" (रघु॰) ३ ज्योतिश्चक्रके भीतरका प्रदेशविशेष। ४ ज्योतिश्चक्रके भीतरकी मण्डलाकार नक्षत्र पंक्ति।

विशेष-मेघशून्य रात्रिमें निर्मल आकाशमें असंख्य तारकापंक्तिके साथ उत्तरसे दक्षिण दिशा तक विस्तृत जो शुभ्र वर्णका नीहारवत् (कुहरा जैसा) पदार्थ दीखता है, उसको ज्योतिर्विद्‌गण छायापथ वा नीहारिका कहते हैं। इसके सिवा कविगण उसका देववर्त्म, देवमार्ग इत्यादि कितने ही नामोंसे उल्लेख करते हैं। साधारण लोग उसे यमपथ अर्थात् यमके घर जानेकी सड़क बतलाते हैं। इस अद्भुत पदार्थके प्रति दृष्टि निक्षेप करनेसे ही इसके स्वरूपको जाननेके लिए किसका चित्त आकुलित नहीं होता? किसका चित्त ऐसा है जो कौतूहलवश संशयरूपी झूलनेमें झूलता हुआ इस मनोहर विमानस्थ पदार्थके प्रति धावित नहीं होता?

साधारण दृष्टिसे यह पथ सिर्फ शुभ्रवर्णका कुहरा जैसा मालूम पड़ता है; परन्तु उत्कृष्ट दूरवीक्षण-यन्त्रकी सहायतासे इसके भीतर छोटी छोटी अगण्य तारकापंक्तियां दिखाई देती हैं। इन तारकाओंके पीछे भी पूर्ववत् नीहारिका दिखाई देती है। उत्कृष्टसे उत्कृष्टतर दूरवीक्षण यन्त्रकी सहायतासे इस द्वितीय स्तवकमें भी केवल तारासमष्टि ही दिखलाई देती है और उसके पीछे नीहारिकामय तृतीय स्तवक दीखता है। ज्योतिर्विदोंने सबसे उत्कृष्ट दूरवीक्षण यन्त्र द्वारा उसमें भी तारापुञ्ज देखा है। किन्तु जितने स्तरोंको वे पार करते जाते हैं, उतने ही पीछे उन्हें वहीं एक नीहारिकामय स्तर दिखलाई देता है। ज्योतिर्वेत्ताओंका अनुमान है कि, उन स्तरोंमें भी क्षुद्र क्षुद्र तारासमष्टि होगा। छायापथकी ये तारकापंक्तियां इतनी दूरवर्ती हैं कि, हम उन्हें स्पष्ट नहीं देख सकते, उनकी बहुतसी राशियां एकत्र हो कर पतले बादल जैसी दीखती हैं। इनके दूरत्व और आकारके विषयकी पर्यालोचना करनेसे अतीव विस्मयान्वित होना पड़ता है। छायापथकी सम्पूर्ण तारकाएं पृथिवीसे समान दूरवर्त्ती नहीं हैं। ये तारकाएं शायद सूर्यकी अपेक्षा बहुगुण बृहत्तर हैं, इनके उदयका आलोक प्रति सेकेण्डमें लाख कोस, इस अभावनीय द्रुतगतिमें धावमान होने पर भी अयुत वर्षमें पृथिवी पर नहीं आ सकता। इस छायापथमें हमारे तारा-जगत्‌की तरह करोड़ों जगत् विद्यमान हैं। छायापथ एक प्रकाण्ड वलयकी तरह पृथिवीके चारों ओर आकाशमें व्याप्त है। इसका आधा अंश दो भागोंमें विभक्त है। इस वलयके साथ समकोण करके गगनमण्डल पर दृष्टिपात करनेसे उस अंशमें तारकाओंकी संख्या बहुत थोड़ी ही दिखाई देती है। क्रमशः छायापथके जितने पास पहुँचा जाता है, उतनी ही तारका-संख्या बढ़ती दिखाई देती है तथा छायापथके दोनों बगल और छायापथमें एक साथ पुञ्ज पुञ्ज नक्षत्र दीखते हैं। तमाम स्थान ही मानो तारकामय मालूम पड़ता है। इससे ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि, इस अनन्त शून्यमें इन दृश्यमान नक्षत्रपंक्तियोंका समावेश सर्वत्र समान नहीं; बल्कि अधिकांश नक्षत्र एक असीमस्तरमें अवस्थित हैं। इस स्तरकी लम्बाई और चौड़ाईकी तुलनासे इसका वेध बहुत थोड़ा है। पृथिवी इस प्रकाण्ड स्तरके बीचमें कुछ तिरछी तरहके एक जगह अवस्थित है।

छायापथने राशिचक्रको उत्तर खगोलार्द्धमें एकबार वृष और मिथुन राशिके बीच तथा दूसरी बार दक्षिण खगोलार्द्धमें वृश्चिक और धनुराशिके बीच छेद किया है।

छायापथमें सर्वत्र समान आलोक नहीं होता।

उज्ज्वल स्थानोंका आकार भी नाना प्रकारका होता है। कहीं वृत्ताकार, कहीं आवर्त्ताकृति और कहीं डमरू जैसा होता है। सभोंका मध्यस्थान अधिकतर उज्ज्वल होता है; किसी किसी तारकाके चारों ओर नीहारिका-मण्डल दिखाई देता है। उत्कृष्ट दूरवीक्षण यन्त्र द्वारा देखने पर भी किसी किसी नीहारिका (कुहरा) में तारा नहीं दिखलाई देते। इससे कोई कोई ज्योतिर्विद् अनुमान करते हैं कि, वे समस्त कुहरा धूमकेतुकी पूंछकी तरह उज्ज्वल वाष्पमय पदार्थ होंगे। ये विशाल वाष्पराशियां करोड़ों योजन तक फैली हुई हैं तथा किसी अचिन्त्य नैसर्गिक कारणसे आवर्तित होती हैं। इस घूर्णनके कारण उनके अणु बराबर केन्द्रकी तरफ धावित होते हैं तथा मध्याकर्षण शक्तिक्रमशः वृद्धि हो कर वे क्रमशः ह्रस्वायतन और घनीभूत होती हैं। कालान्तरमें वे ग्रह उपग्रहों सहित एक एक प्रकाण्ड सूर्यमें परिणत हो जायगीं। उक्त पण्डितोंका अनुमान है कि, सौरजगत्‌की सम्भवतः ऐसे ही सृष्टि होती होगी।

ग्रीकोंने इस छायापथको गेलाक्सियन् अर्थात् दुग्धवर्त्म कहते थे। प्राचीन ग्रीकोंको विश्वास था कि, जुपिटर हारक्यिउलिसको जूनो देवीकी गोदमें रखने पर, जूनोदेवीने उसे मार-(Marr)-पुत्र जान कर छोड़ दिया। जूनोदेवीके स्तनोंका दूध आकाशमें फैल गया, इसीसे वह पथ हो गया है। इसके सिवा बहुतसे यह भी कहते थे कि, छायापथके सम्पूर्ण अंश दूधके नहीं बल्कि आइसिस् (Isis)-ने टाइफनसे भागते समय रास्तेमें जो धान्यशीर्षक छोड़ते गये थे उसके हैं।

प्लेटोने जो आख्यायिका लिखी है, उसमें छायापथको देवता और महावीरोंके चलनेका प्रशस्त मार्ग बतलाया गया है। रोमकगण भी इसको दुग्धवर्त्म कहते थे। पिथागोरस् मतावलम्बी पण्डितगण इसको सूर्य द्वारा परित्यक्त रथ्या कहते थे तथा कोई कोई सूर्यरश्मिका प्रतिबिम्ब समझते थे। आरिष्टटलका अनुमान है कि, यह धूमकेतुकी पूंछकी तरह उज्ज्वल वाष्पराशिसे बना है। इसके सिवा कोई इसे पृथिवीकी छाया, कोई अग्निमण्डल, कोई दोनों खगोलार्द्धको बांधनेका दृढ़ ज्योतिष्मान् वलय और कोई इसे विस्तीर्ण कठिन गगनतलके फाटसे दीखनेवाली स्वर्गकी आलोकराशि बतलाते थे। अन्तमें डिमोक्रिटास्‌ने कुछ कुछ वास्तविक बातका पता लगाया कि, यह बहुत दूरका तारापुञ्ज मात्र है; दूरत्वके कारण पृथक् पृथक् न दीख कर सिर्फ शुभ्र दूध जैसा मालूम पड़ता है। गैलिलिओने अपने आविष्कृत दूरवीक्षणयन्त्रसे छायापथमें तारका देख कर कहा था कि उन्होंने समस्त छायापथको विश्लिष्ट (पार) कर सिर्फ तारापुञ्ज ही देखा है। गैलिलिओका दूरवीक्षण यन्त्र इस समयके उत्कृष्ट दूरवीक्षणसे अवश्य ही अपकृष्ट होगा. इसीलिए आप शनि ग्रहके वलयको स्पष्ट नहीं देख सके होंगे। अतएव उनके द्वारा जो सम्पूर्ण छायापथ तारकामय दीखे, यह सम्भव नहीं। पहिले ही कहा जा चुका है कि, वर्तमानके अति उत्कृष्ट दूरवीक्षणयन्त्र द्वारा भी सम्पूर्ण छायापथ विश्लिष्ट नहीं होता. पीछे नीहारिकामय स्तर दीखता ही जाता है। इससे मालूम होता है कि, गैलिलिओने अपेक्षाकृत निकटवर्ती स्तरको देख कर ही यह बात कही होगी।

अंग्रेजीमें छायापथको (ग्रीकोंका अनुकरण कर) गैलाक्सि (Galaxy) या मिल्कि-वे (Milkyway) अर्थात् दुग्धवर्त्म कहते हैं। छायापथके कुछ आभायुक्त स्थानको नीहारिका (Nebulæ) कहते हैं। नीहारिका देखो।

छायापट (सं० पु०) प्राचीन यन्त्रविशेष, प्राचीनकालका एक यन्त्र। इसमें बारह अंगुलका शङ्कु होता था जिसकी छायाके द्वारा समयका ज्ञान होता था।

छायापुरुष (सं० पु०) छायायां दृष्टः पुरुषः पुरुषाकृतिविशेषः शाकपार्थिववत् समासः। आकाशमें दीखनेवाला अपनी छायाकी भाँतिका पुरुष। तन्त्रमें लिखा है कि, एक दिन गौरीने भगवान् शूलपाणिसे पूछा—"प्रभो! किस तरह भविष्यत्‌की बात जानी जा सकती है?"

भगवान्‌ने सन्तुष्ट हो कर उत्तर दिया, "देवि सुनो, किस तरह पापियोंकी पापराशि नष्ट होती और भविष्यत्‌का ज्ञान होता है। मनुष्य शुद्धचित्त हो कर अपनी छाया आकाशमें देख सकता है, उसके दर्शनसे पापोंका नाश और छह मासके भीतर जो होनेवाला है उसका ज्ञान हो सकता है।" भगवतीने कहा "मनुष्य कैसे अपनी भूमिकी छायाको आकाशमें देख सकता है और कैसे

उसे छह मास आगेकी बात मालूम हो सकती है।" महादेवने कहा—"आकाश मेघशून्य और निर्मल होने पर निश्चल चित्तसे अपनी छायाकी तरफ मुंह कर खड़ा होगा और गुरुके उपदेशानुसार अपनी छायामें कण्ठ देख कर निमेषशून्य नयनोंसे सम्मुखस्थ गगनतल देखेगा; ऐसा करनेसे उसको एक स्फटिकवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखलाई देगा। अगर न दीखे तो बारबार परीक्षा करनी चाहिये। किसी किसीको बहुत पुण्योदयसे छायापुरुषका दर्शन होता है। गुरुके वाक्यों पर विश्वास करके तथा उन्हें प्रणाम कर छायापुरुषका दर्शन करना चाहिये। इसके देखनेसे छह मास तक मृत्यु नहीं होती। परन्तु छायापुरुषको मस्तकशून्य देखनेसे छह मासके भीतर मृत्यु अवश्यम्भावी है। पैर न दीखनेसे स्त्रीकी मृत्यु और हाथ न दीखें तो भाईकी मृत्यु होती है। इनको जान कर बुद्धिमानोंको गङ्गाके किनारे जा हविष्याशी और संयत हो कर मृत्युञ्जयका नाम जपना उचित है। यदि छायापुरुषकी आकृति मलिन दीखे तो ज्वरकी पीड़ा होती है। समाहित (अचल) चित्तसे महादेवकी सेवा कर इसका शान्तिविधान करना चाहिये। छायापुरुषकी आकृति लाल दीखनेसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति तथा उसमें छिद्र दीखें तो शत्रुओंका नाश होता है। कलियुगमें छायापुरुषके दर्शन पुरुषका लक्षण है तथा उसके देखनेसे दीर्घ आयु होती है।" (योगप्रदीपिका ५ पटल)

मन्त्र—"ओं अस्य श्रीच्छायापुरुषप्रकरणमन्त्रस्य ब्रह्मर्षिं हहरगायिवीच्छन्द', ... ायादेवी देवता: हां बीजं स्वाहा शक्ति: पुरुष: इति कीलकं सर्वसिद्धिमन्दर्शन-सिद्धार्थे जपे विनियोग: । हामित्यादि षडङ्ग न्यास: । मायया मायया ओं ओं ह्रीं ... शिवबिचारी ऋषय: ओं क्रीं ... सरस्वति । ओं नमो भगवते भूत-शरीरमात्मानमाकाशे दर्शय । वां वां वां ह्रीं भैरवाय नम: स्वाहा।"

आकाशमें दर्शन करनेका मन्त्र— 'ओं क्रों भूनचारी खेचरी आत्मानमाकाशे दर्शय सर्व हस्तान्त कथय कथय, हुं फट् स्वाहा।" (योगप० ६ प०)

छायाभूत (सं० पु०) छायां छायारूपं मृगलाञ्छनं शीतलकान्तिं वा बिभर्ति छाया-भृ-क्विप्। चन्द्रमा, चाँद।

छायामय (सं० त्रि०) छाया-मयट्। अज्ञानमय, अबोध, जड़, मूर्ख। "यम वारं छायामय: पुरुष: स एषपदैव शाकल्य।" (शतपथब्राह्मण १४।६।८।१६)

छायामान (सं० पु०) छायया सूर्यप्रतिविम्बेन मीयते छाया-मा-ल्युट्। १ चन्द्र, चन्द्रमा। ६-तत्। (क्लो०) २ छायाका माप, परिमाण।

छायामित्र (सं० क्लो०) छायायामित्रमिव अथवा छायया छायाकरणेन मित्रमिव। आतपत्र, छाता, छतरी।

छायामृगधर (सं० पु०) छायारूपं मृगं धरति छायामृग-धृ-अच्। धृ-अच् धर: छायामृगस्य धर:,६-तत्। चन्द्र, चन्द्रमा।

छायायन्त्र (सं० क्लो०) छायया कालज्ञानसाधकं यन्त्रं। १ छाया द्वारा कालज्ञानसाधक यन्त्रभेद, वह यन्त्र जिससे छाया द्वारा कालका ज्ञान हो। सूर्यसिद्धान्तमें शंकु, धनु, चक्र आदि इसके अनेक प्रकार बतलाये हैं। २ धूपघड़ी।

छायावत (सं० क्लो०) छाया विद्यतेऽस्य छाया-मतुप् अव-र्णान्तत्वात् मस्य वत्वं। १ छायाविशिष्ट, छायायुक्त, छाया-दार, छाँहवाला। २ कान्तियुक्त, जिसमें चमक हो।

छायाविप्रतिपत्ति (सं० स्त्री०) छायानां देहकान्तीनाम् विप्रतिविरुद्धा प्रतिपत्तिर्ज्ञानं, ६-तत्। मरणसूचक देहकी कान्ति आदिमें विपरीत भाव होना। जिसकी छाया कपिश लोहित वा नीले या पीले रंगकी हो, उसकी आसन्नमृत्यु होती है। जिसकी लज्जा और श्री अकस्मात् नष्ट हो जाय तथा तेज, बल, स्मरणशक्ति और प्रभा इत्यादि भी सहसा दूरीभूत हो जाय, उसकी भी मृत्यु नजदीक समझनी चाहिये। जिनके ओठ नीचे या ऊपरको फैल गये हों, एक या दोनों ओठ जामुनकी तरह काले हो गये हों, दांत कुछ लाल या कपिशवर्ण अथवा खञ्जन जैसे हो कर गिर रहे हों, तथा जिसकी जिह्वा काली, निश्चल, अवलिप्त, फूली या कर्कश हो गई हो, जिसकी नाक टेढ़ी, सूखी या मग्न, अधिकशब्दयुक्त और फट गई हो, आंखें जिसकी छोटी, विषम, स्थिर, लाल और अश्रु-सहित हों तथा जिसके केश मांगदार, भौंह छोटी और झूल पड़ी हों, आंखोंके पलकोंके लोम छिन्न हो गये हों, उनका शीघ्र ही मरण होता है। मुंहमें कौर देने पर भी जो खा न सके, जिसका मस्तक ढुल जाता हो और आंखोंकी दृष्टि एकाग्र हो, उसकी शीघ्र ही मृत्यु होती है। दुर्बल या बलवान कैसा भी क्यों न हो बार-बार उठाने पर भी जिसे मूर्छा आवे, जो सर्वदा चित्त हो

कर सोता हो, सोते समय इधर उधर पैर फटकारे तथा जिसके हाथ पैर ठण्डे और श्वास नष्टप्राय हुई हो अथवा काककी तरह श्वास गिरती हो, सर्वदा जो सोता या जागता रहता हो या बोलते बोलते जिसको मोह आ जाय, जो ओठ चाटता और उद्गार उठाता या प्रेतपुरुषके साथ बात करता हो, जिसके लोमके छेदोंसे खून भर रहा हो तथा जिसके हृदयमें उर्ध्वगत वातष्ठीवा और अरुचि रोग हो, वह जल्दी ही मर जाता है। आकस्मिक पादज शोथसे पुरुषोंको मुखज या गुह्यज शोथसे स्त्रियोंको तथा श्वास वा कासरोगीके अतिसार, ज्वर, हिचकी, सर्दी, या लिङ्ग सूज कर अण्डकोष जैसा होनेसे मृत्यु निकटवर्ती समझनी चाहिये।

जिसकी जीभ कपिशवर्ण, बाईं आँख कोठरगत और मुंह दुर्गन्धयुक्त हो, उसकी शीघ्र ही मृत्यु होती है। जिसका मुंह आँखोंके पानीसे भर गया हो, जो पैरोंको घसता हो, जिसकी आँखें आकुल हों, उसकी मृत्यु निकटवर्ती है। जिसकी देह अकस्मात् हलकी या भारी हो गई हो, जिसे सर्वदा कीचड़, मछली, तेल, चरबी और घीकी ही गन्ध सुंघाई पड़े, जिसके ललाट पर जूं चढ़े, जिसकी पूजाकी द्रव्यको कौआ न ले, जिसके हृदयमें सन्तोष न हो, दौर्बल्य अवस्थामें जिसको क्षुधा, तृष्णा, सुस्वादु अन्नपानादि द्वारा तृप्त नहीं हो, इसको एक समयमें उदरामय, शिरःशूल, कोष्ठशूल, पिपासा और दौर्बल्य आदि रोग हो जांय, उसकी मृत्यु अनिवार्य है। इस प्रकारके मरणोन्मुख व्यक्तिके पास भूत, प्रेत, पिशाचादि नित्य आते रहते हैं। औषधादिके प्रयोगसे इनका कुछ उपशम होता है (सुश्रुत सू॰ ३१ अ॰)

छायाद्रुम (सं॰ पु॰) अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

छायाव्यवहार—किसी भी पदार्थकी छायासे उसके परिमाण स्थिर करनेको छायाव्यवहार कहते हैं। भास्कराचार्यने लीलावतीमें इसकी प्रक्रिया इस प्रकार लिखी है—

दो छाया और दोनों कर्णोंका अन्तर मालूम होने पर छायाद्वय और कर्णद्वय निकालनेका उपाय—

छायाद्वयके अन्तरका वर्ग कर्णद्वयके अन्तरका वर्ग, इन दोनों वर्गोंके वियोगफलके साथ ५६७का भाग लगावें। लब्ध भागफलमें एक जोड़ कर उस योगफलके वर्गमूलद्वारा कर्णद्वयके अन्तरको गुणा करना चाहिये। उस गुणफलमें छायाद्वयके अन्तरका एक बार योग और एक बार वियोग कर दोनों फलोंका आधा आधा लेनेसे दो छायाका परिमाण मालूम हो जायगा।

उदाहरण—छायाद्वयका अन्तर १८ और कर्णद्वयका अन्तर १३ है; तो छायाद्वय और कर्णद्वय कितने हैं? छायाद्वयका अन्तर १९, इसका वर्ग ३६१; कर्णद्वयका अन्तर १३, इसका वर्ग १६९; दोनों वर्गोंका वियोगफल हुआ १९२। ५७६को १९२ द्वारा भाग करनेसे ३ होता है। इस भागफलमें १ जोड़नेसे ४ होता है। इसके वर्गमूल २से कर्णद्वयके अन्तर १३का गुणा करने पर २६ होता है। २६के साथ १८ जोड़नेसे ४५ और वियोग करनेसे ७ होता है। इनका आधा लेनेसे छायाद्वय $\frac{7}{2}$ और $\frac{45}{2}$ अङ्गुल हुआ।

इसी प्रकार कर्णान्तरके बदले छायान्तर १८ को २से गुणा कर गुणफलमें कर्णान्तरका योगवियोगादि करनेसे वर्गद्वय $\frac{25}{2}$ और $\frac{51}{2}$ निकलेगा।

प्रदीपकी उच्चता और उसके पेंदेसे शङ्कुके पेंदेका दूरत्व मालूम होनेसे शङ्कुकी छायाका परिमाण निकालनेका उपाय—

शङ्कु और प्रदीपके तलेके दूरत्वसे शङ्कुके परिमाणका गुणा करें। फिर उस गुणफलको शङ्कुमान रहित दीपशिखाकी उच्चताके द्वारा भाग करनेसे लब्ध भागफल छायाका परिमाण होगा।

उदाहरण—शङ्कु $\frac{1}{2}$ हाथ प्रदीप और शङ्कुके तलेका दूरत्व २ हाथ और प्रदीपकी उच्चता ३$\frac{1}{2}$ हाथकी है, तो छाया कितनी होगी?

शङ्कु और प्रदीपके तलेके अन्तर २ को शङ्कुके परिमाण $\frac{1}{2}$ से गुणा करनेसे १ होता है। दीपकी उच्चता ३$\frac{1}{2}$ से शङ्कुकी उच्चता $\frac{1}{2}$ को घटानेसे वियोगफल ३ रहता है। १को ३से भाग करनेसे $\frac{1}{3}$ छायाका परिमाण हुआ।

शङ्कुकी उच्चता, छायाका परिमाण और शङ्कुसे प्रदीप तलका दूरत्व मालूम रहनेसे, प्रदीपकी उच्चता निकालनेका तरीका—शङ्कु और प्रदीपतलके अन्तर द्वारा शङ्कुके परिमाणको गुणा करें। उस गुणफलको छायाके परि-

माणसे भाग कर उसके साथ शङ्कुके परिमाणको जोड़ देनेसे दीपकी उच्चता निकल आयेगी।

उदाहरण—प्रदीपतल और शङ्कुका अन्तर ३ हाथ, छाया १६ अङ्गुल और शङ्कु १२ अङ्गुल हो, तो प्रदीपकी उच्चता कितनी होगी?

शङ्कु १/२ हाथ, अन्तर ३ हाथ, दोनोंके गुणफल ३/२को छाया परिमाण २/३से भाग करनेसे ९/४ होता है। इस भागफलके साथ शङ्कुका परिमाण १/२ जोड़ देनेसे प्रदीपकी उच्चता ११/४ हुई।

प्रदीप और शङ्कुका दूरत्व निकालनेके लिए निम्नलिखित तरीका पकड़ना चाहिये। शङ्कुपरिमाणरहित प्रदीपकी उच्चताके बराबरकी संख्यासे छायाङ्गुलिको गुणा कर गुणफलको शङ्कुके परिमाण द्वारा भाग करनेसे प्रदीप और शङ्कुका अन्तर निकल आवेगा।

उदाहरण पहिलेकी भाँतिका है।

दीपोच्छ्राय ११/४, शङ्कु १/२ और छाया २/३ है। प्रणालीके अनुसार लब्ध दूरत्व ३ हाथ हुआ।

छाया और प्रदीपका अन्तर तथा प्रदीपकी उच्चता निकालनेका तरीका—

दोनों छायाके अग्रभागके अन्तरको छायासे गुणा कर छायाद्वयके अन्तर द्वारा भाग करने पर भूमि अर्थात् प्रदीपतलसे छायाग्रभागका दूरत्व निकल सकता है। इस भूमिको शंकु परिमाण द्वारा गुणा कर छायाके साथ भाग करनेसे दीपशिखाकी उच्चता उपलब्ध होगी।

उदाहरण—१२ अङ्गुल प्रमाण शङ्कुकी छाया ८ अङ्गुल शङ्कुको छायाकी तरफ पूर्वस्थानसे सीधे सीध २ हाथ दूर रखने पर छाया १२ अङ्गुलकी होती है। छायासे प्रदीपका अन्तर और उच्चता निकालो।

दोनों छायाग्रभागोंका अन्तर ५२ अङ्गुल तथा दोनों छाया ८ और १२ अङ्गुलकी हैं। ५२ को प्रथम छाया ८से गुणा करनेसे गुणफल ४१६ होता है। इसको छायाद्वयके अन्तर ४ द्वारा भाग करनेसे भागफल १०४ भूमि अर्थात् प्रदीपतलसे प्रथम छायाके अग्रभागका दूरत्व हुआ। इसीप्रकार द्वितीय छायाग्रभागका दूरत्व १५६ अङ्गुल हुआ। इनमेंसे एकको शङ्कुसे गुणा कर उसकी छायाके द्वारा भाग करनेसे ही प्रदीपकी उच्चता १३/२ हाथ निकलेगी।

त्रैराशिकके नियमसे भी यह गणित किया जा सकता है। प्रथम छाया ८ से द्वितीय छाया १२ जितनी अधिक ४ है, उतने परिमाणके छायावयवसे भूमिका परिमाण यदि छायाग्रभागद्वयके अन्तरके ५२ समान हो तो छायाग्र कितना होगा? इस तरहसे छाया और प्रदीपतलका अन्तर निरूपित करना चाहिये। भूमिद्वय निरूपित होनेके बाद छायाके समान भुजमें यदि शङ्कुके बराबर कोटि हो, तो भूमि-परिमाण भुजमें कोटि कितनी होगी? इस प्रकारसे त्रैराशिक द्वारा प्रदीपकी उच्चता निरूपित हो जायगी।

छायासुत (सं० पु०) छायायाः सूर्यपत्न्याः सुतः, ६-तत्। शनि, शनैश्चर।

छार (हिं० पु०) १ क्षार, जली हुई वनस्पतियोंकी राखका नमक। २ लवणविशेष, खारी नमक। ३ खारी पदार्थ। ४ भस्म, राख। ५ रेणु, धूल, गर्द।

छारकर्दम (हिं० पु०) क्षारकर्दम देखो।

छारछबीला (हिं० पु०) छरीला देखो।

छाल (सं० पु०-क्ली०) छो अलच् अर्धर्चादित्वात्, पुंलिङ्गता क्लीवलिङ्गता च। वल्कल, छाल, वृक्षकी त्वचा।

छाल (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी मिठाई। २ अस्वच्छ चीनी।

छालटी (हिं० स्त्री०) १ वह वस्त्र जो छाल, सन या पाटका बना हुआ हो। २ रेशमीकी तरह एक प्रकारका वस्त्र जो सन या पाटका बना हुआ रहता है।

छालना (हिं० क्रि०) १ चलनीमें रख कर साफ करना, छानना। २ छिद्रमय करना, झँझरा करना।

छाला (हिं० पु०) १ चर्म, चमड़ा, छाल। २ फफोला, आबला, फुटका। ३ लोहे या शीशे आदिका उभरा हुआ दाग।

छालापाक—बङ्गालके रङ्गपुर जिलेका एक नगर। यह पाट और चूनेके व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है।

छालिक्य (सं० पु०) छलिके रूपकभेदे भवः छलिक-ष्यञ्। गानभेद, एक प्रकारका गीत। यह गीत पहले केवल देवलोकमें ही था, बाद भगवान् वासुदेवकी इच्छासे नरलोकमें लाया गया। यह प्रशस्त, पुण्यकर और भगवान्‌का प्रीतिप्रद है। इसके कीर्तनसे दुःस्वप्न दूर होता है। राजाने आत्मसुकृतके फलसे स्वर्गको जा कर यह गान श्रवण करते हैं। (हरिवंश १०८ अ०)

छालिया (हिं० पु०) छायापात्र, छाया दानकी कटोरी।

छालियार—बम्बईके रेवाकांटा विभागके अन्तर्गत एक क्षुद्रराज्य। बहुत दिनसे चौहानगण यहां वास करते आ रहे हैं।

छाली (हिं० स्त्री०) १ सुपारीका टुकड़ा। २ सुपारी।

छालो (हिं० पु०) छाग, बकरा।

छाँव (हिं० स्त्री०) छाया, साया।

छाल—बम्बईके काठियावाड़ अन्तर्गत एक क्षुद्रराज्य।

छावनी (हिं० स्त्री०) १ छप्पर, छान। २ डेरा, पड़ाव। ३ वह स्थान जहां सेना ठहरती हो, फौजकी बारिक।

छावर (हिं० स्त्री०) मछलियोंके छोटे छोटे बच्चे।

छावा (हिं० पु०) १ शावक, बच्चा। २ पुत्र बेटा, लड़का। ३ वह हाथी जो १०से २० वर्ष तकका हो, जवान हाथी।

छावी (सं० स्त्री०) सुरपुन्नागवृक्ष, छतिवनका पेड़।

छासठ (हिं० वि०) १ जो गनतीमें साठसे छः अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो साठ और छःके योगसे बनती हो।

छाह (हिं० स्त्री०) छाछ देखो।

छिउँका (हिं० पु०) पेड़ों पर रहनेवाला एक तरहका चिउँटा। यह साधारण चिउँटेसे बहुत छोटा और पतला तथा भूरे रंगका होता है। यह बहुत जोरसे काटता है।

छिउँकी (हिं० स्त्री०) १ बड़े जोरसे काटनेवाली एक तरहकी छोटी चींटी। २ एक प्रकारका कीड़ा जो इधर उधर उड़ता है। इसके काटनेसे बड़ी जलन होती है। ३ छवालीसे छोटे आकारका एक औजार। यह लकड़ी उठानेके काममें आता है। ४ बोरीमें लगी हुई रस्सीकी मुद्धी जो घोड़ों पर लादते समय लकड़ीमें फंसा दी जाती है।

छिँकाना (हिं० क्रि०) छींक लाना, छींकनेकी क्रिया कराना।

छिँटुआ (हिं० पु०) बीज बोनेकी एक तरकीब, छींटा।

छिँड़ाना (हिं० क्रि०) बलपूर्वक लेना, छीनना।

छि (अनु० अव्य०) १ घृणासूचक शब्द। २ तिरस्कार और अवज्ञासूचक शब्द।

छिकनी (हिं० स्त्री०) छिक्कनी देखो।

छिक (सं० पु०) क्षुत्, छींक।

छिकणी (सं० स्त्री०) छिक् इत्यव्यक्तं क्षुत्शब्दं कनत्य- नया छित्-कन् करणे अप् ततो ङीप्। वृक्षभेद, एक प्रकारकी बहुत छोटी घास। यह पृथिवी पर ही फैलती है। इसमें बहुत छोटे छोटे फूल लगते हैं। इसका पर्याय- अवक्षुत्, तिक्ता, छिक्किका, घ्राणदुःखदा, उग्रा और उग्रगन्धा है। इसका गुण कटु, रुचिकर, अत्यन्त तीव्र, अग्नि और पित्तकर, वात, रक्त, कुष्ठ, क्रमि तथा वात- कफनाशक है. नकछिकनी। (भावप्रकाश)

छिक्कर (सं० पु०) छिक् इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, छिक्- कृ-ट। मृगभेद, हिरन जातिका एक जानवर। बृहत्- संहिताके अनुसार ऐसे मृगका दाहिनी ओरसे निकलना शुभ है। (बृहत्संहिता ८६ अ०)

छिक्का (सं० स्त्री०) छिक् इत्यव्यक्तं शब्देन कायति छिक्- कै-क ततष्टाप्। क्षुत्, छींक्। अग्निकोण और नैऋतमें छींक होनेसे शोक और मनस्ताप, दक्षिणमें हानि, पश्चिम- में मिष्टान्नलाभ, वायुकोणमें भय, उत्तरमें कलह तथा ईशान कोणमें छींक होनेसे मरण होता है।

(गरुड़ ज्योतिषक ६० अ०)

छिक्कार (सं० पु०) छिक्-कृ-अण्। मृगभेद, एक प्रकार- का मृग, छिकारा।

छिक्किका (सं० पु०) छिक्का क्षुतं साध्यत्वे नास्त्यस्याः छिक्का बाहुलकात् ठन्। वृक्षविशेष, छिकनी, नकछिकनी।

छिक्किणी (सं० स्त्री०) छिक्कणी देखो।

छिक्किपत्रा (सं० स्त्री०) छिक्किनी, नकछिकनी।

छिगुनी (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, सबसे छोटी अंगुली।

छिछड़ा (हिं० पु०) छीछड़ा देखो।

छिछला (हिं० वि०) कम गहरा, उथला।

छिछली (हिं० वि०) १ छिछला देखो। (स्त्री०) २ लड़कों- का एक खेल जिसमें वे एक पतले ठीकरेको पानी पर फेंकते हैं जो उछलता हुए दूर तक चला जाता है।

छिछोरपन (हिं० पु०) क्षुद्रता, नीचता, ओछापन।

छिछोरा (हिं० वि०) क्षुद्र, ओछा, नीच प्रकृतिका।

छिजाना (हिं० क्रि०) नष्ट होने देना, बरबाद करना।

छिटकना (हिं० क्रि०) १ छितराना, इधर उधर फैला देना। २ प्रकाशका व्याप्त होना, उजाला छाना।

छिटकनी (हिं० स्त्री०) सिटकनी देखो।

छिटकाना (हिं० क्रि०) चारों ओर फैलाना, छितराना

छिटनी (हिं० स्त्री०) छोटी टोकरी, डलिया, झौवा

छिटवा (हिं० पु०) एक प्रकारका टोकरा।

छिटाका (हिं० पु०) रूई धुननेकी एक बालिश्त लंबी मोटी लकड़ी।

छिड़कना (हिं० क्रि०) १ पानी या किसी और द्रव पदार्थका इधर उधर फेंकना। २ न्योछावर करना।

छिड़कवाना (हिं० क्रि०) छिड़कनेका काम दूसरेसे कराना।

छिड़काई (हिं० स्त्री०) १ छिड़काव, छिड़कनेकी क्रिया। २ छिड़कनेकी मजदूरी।

छिड़काव (हिं० पु०) पानी या किसी और द्रव पदार्थके छिड़कनेकी क्रिया।

छिड़ना (हिं० क्रि०) प्रारम्भ होना, शुरू होना, चल पड़ना।

छित् (सं० त्रि०) छिनत्ति छिद्-क्विप्। छेदनकर्त्ता, छेदनेवाला।

छित (सं० त्रि०) छो-क्त-इत्वञ्च। छिन्न, खण्डित, जो काट कर पृथक् कर दिया गया हो।

छितनी (हिं० स्त्री०) टोकरी, छिछली टोकरी।

छितरना (हिं० क्रि०) छितराना देखो।

छितर बितर (हिं० वि०) तितर बितर देखो।

छितराना (हिं० क्रि०) १ बिखरना, बहुतसी वस्तुओंका इधर उधर पड़ा रहना। २ घनी वस्तुओंका विरल करना, दूर दूर करना।

छितराव (हिं० पु०) छितराने या बिखरनेका भाव।

छितिपाल (हिं० पु०) क्षितिपाल देखो।

छितिरुह (हिं० पु०) वृक्ष, पेड़।

छितीस (हिं० पु०) नृपति, राजा।

छित्तराजदेव—कोङ्कणदेशीय शिलाहार वंशीय एक राजा। बम्बई प्रदेशके भाण्डुप नामक स्थानके निकट ९४८ शकका अङ्कित इनके नामका एक ताम्रलेख मिला है। शिलाहार-राजवंश देखो।

छित्ति (सं० स्त्री०) छिद्-क्तिन्। १ छेद, छेदन, काटनेका काम। (पु०) २ करञ्जवृक्ष, एक प्रकारका पेड़, करौंदा।

छित्वर (सं० त्रि०) छिद्-ष्वरप् पृषो० दस्य तः। १ छेदक, छेदनेवाला। २ धूर्त्त, छली चालबाज। ३ वैरी, दुश्मन।

छिदक (सं० क्ली०) छिद्-वुन्। वज्र, बिजली।

छिदना (हिं० क्रि०) बिंधना, सूराखदार होना।

छिदरा (हिं० वि०) १ विरल, जो घना न हो। २ छिद्रयुक्त, जिसमें छेद न हो। ३ जीर्ण, जर्जर, फटा हुआ।

छिदा (सं० स्त्री०) छिद्-अङ्। छेदन, काट कर अलग करनेका भाव, चीरफाड़।

छिदि (सं० स्त्री०) छिद्यतेऽनया छिद्-इन्-किच्च। १ कुठार, कुल्हाड़ी। २ वज्र, बिजली। (त्रि०) ३ छेदनकर्त्ता, छेदनेवाला।

छिदिर (सं० पु०) छिनत्त्यनेन छिद्-किरच्। १ अग्नि, आग। २ कुठार, कुल्हाड़ी ३ असि, करवाल, तलवार। ४ रज्जु, रस्सा।

छिदुर (सं० पु०) छिनत्ति छिद्-कुरच्। १ छेदक, वह जो चीरफाड़ करता हो। २ वैरी, दुश्मन। ३ धूर्त्त, चालबाज। ४ छेदनद्रव्य, वह वस्तु जिससे कोई चीज काटी जाती हो। (त्रि०) ५ स्वयं छिन्न, जो आपसे आप फट जाता हो।

"संलक्ष्यते न छिदुरोऽपि हारः।" (रघु १६।६२)

छिद्यमान (सं० त्रि०) छिद् कर्मणि शानच्। जो काटा जा रहा हो।

छिद्र (सं० त्रि०) छिद्यते भिद्यते छिद्-रक्। १ छिद्रयुक्त, जिसमें छेद किया हुआ हो। "सवमाक्षवा पुवसे प्रकरी छिद्रां प्रभवतीति" (कात्यायन-श्रौतसूत्र १७।४।१५) 'छिद्रां सच्छिद्रां छिद्रयुक्तां' भाष्य) (पु०) २ भेद, छेद, सूराख। इसका पर्याय—कुहर, शुषिर, विवर, बिल, निम्नथन, रोक, रन्ध्र, श्वभ्र, वपा, शुषि, खभ्र और शुषी है।

"छिद्रञ्च धारयेत् सर्व्वं मयूकमुखाननम्" (मनु ८।२३९)

३ अवकाश, जगह। ४ दूषण, दोष।

देहको छिद्र-संख्या—लोमकूप चौवन करोड़ है। पसीना निकलनेके छिद्रोंके साथ इसकी संख्या ४५ करोड़ ६७ लाख ५० हजार है। ये वायवीय परमाणु द्वारा विभक्त हो कर पृथक्‌रूपसे गिने जाते हैं। ये सूक्ष्म छिद्र होते हैं। स्थूलछिद्र नो हैं, मुख, नयन, कर्ण और नासिका (इनके दो दो छिद्र) पायु तथा उपस्थ। ५ ज्योतिषोक्त लग्नसे अष्टम स्थान, फलित ज्योतिषके अनुसार लग्नसे आठवाँ घर। "छिद्राख्यमष्टमस्थानं।" (ज्योतिस्तत्त्व) ८ नव संख्या, नौकी संख्या।

छिद्रकर्ण (सं० त्रि०) छिद्रयुक्तः कर्णोऽस्य, बहुव्री०। छिद्रयुक्त कर्णविशिष्ट, जिसके कानमें छेद हो।
छिद्रकर्ण शब्द देखो।

छिद्रता (सं० स्त्री०) छिद्र भावे तल् स्त्रियां टाप्। छिद्रयुक्तता, छिद्रयुक्तका भाव।

छिद्रदर्शन (सं० त्रि०) छिद्रं पश्यति, छिद्र दृश-कर्त्तरि ल्युट्। दोषदर्शी, पराया दोष देखनेवाला, नुक्स निकालनेवाला। "भूमिर्भवति भूतानां समग्रच्छिद्रदर्शनाः।" (भारत ८ अ०)

छिद्रदर्शिन् (सं० त्रि०) छिद्र-दृश-णिनि। १ दोषदर्शक, जो सदा दूसरोंके दोष देखता हो, ऐब निकालनेवाला। २ छिद्रान्वेषी शत्रु, पराया दोष निकालनेवाला दुश्मन। (पु०) ३ योगभ्रष्ट ब्राह्मणभेद, एक योगभ्रष्ट ब्राह्मणका नाम, ये बाभ्रव्यके पुत्र थे। (हरिवंश २१ अ०)

छिद्रवैदेही (सं० स्त्री०) छिद्रप्रधाना वैदेही शाकपार्थिववत् समासः। गजपिप्पली, गजपीपर।

छिद्रश्वासिन् (सं० पु०) छिद्रेण श्वसिति छिद्र-श्वस्-णिनि। वे जो कई एक देहपार्श्व स्थित छिद्र द्वारा श्वास फेंकते हों, इनकी चार आँखें होती हैं।

छिद्रात्मन् (सं० त्रि०) छिद्रः छिद्रयुक्त कुटिल इति यावत् आत्मा स्वभावो यस्य, बहुव्री०। खलस्वभाव, कुटिल खल।
"नित्यं यथापि छिद्रात्मा मनं वधाति तत्वतः।" (भारत १२।१०७ अ०)

छिद्रान्तर (सं० पु०) छिद्रमन्तमध्ये यस्य, बहुव्री०। नल, नरकट।

छिद्रानुसन्धानिन् (सं० त्रि०) छिद्रस्यानुसन्धानं विद्यतेऽस्य इनि। जो दूसरोंका दोष ढूंढ़ता हो।

छिद्रानुसरण (सं० त्रि०) छिद्रस्यानुसरणं येन। छिद्र अन्वेषण करनेवाला, नुक्स निकालनेवाला।

छिद्रान्वेषण (सं० पु०) नुक्स निकालना, खुचर निकालना, दोष ढूंढ़ना।

छिद्रान्वेषिन् (सं० त्रि०) छिद्र-अनु-इष-णिनि। छिद्र या दोष ढूंढ़नेवाला, पराया दोष निकालनेवाला।

छिद्राफल (सं० क्ली०) छिद्रं भूषणं आफलति छिद्र-आ-फल-अच्। मायाफल, माजूफल।

छिद्रित (सं० त्रि०) छिद्र तारकादित्वादितच्। १ क्षतवेध, छेदा हुआ, बेधा हुआ। २ जातछिद्र, दूषित, जिसमें दोष लगा हो।

छिद्रालदेही (सं० पु०) (Porifero) इस वर्गका प्रत्येक प्राणी अत्यन्त क्षुद्र होता है। इसका आवास बहुतसे छिद्रवाला होता है, इसलिए इसको छिद्रालदेही कहते हैं। उक्त आवासका साधारण नाम स्पञ्ज है।

छिद्रिन् (सं० त्रि०) छिद्रमस्त्यस्य छिद्र-इनि। छिद्रयुक्त, जिसमें छेद हो, सूराखदार।

छिद्रोदर (सं० पु० क्ली०) क्षतोदररोग। यह रोग प्रायः नाभिसे नीचे ही होता है। इससे उपसर्ग, श्वासकास, हिक्का, तृष्णा, प्रमेह, अरुचि और दौर्बल्य होते हैं। इससे निकला हुआ मल लोहित तथा पीतवर्णसा मालूम पड़ता है और दुर्गन्ध भी बहुत निकलती है।

छिनकना (हिं० क्रि०) नाकका मल निकालना।

छिनना (हिं० क्रि०) १ हरण होना, ले लेना, छीन लिया जाना। २ छेनी या टांकीके आघातसे कटना। ३ कुटना।

छिनरा (हिं० वि०) पर-स्त्रीगामी पुरुष, लम्पट, कुलटा, वृषल।

छिनवाना (हिं० क्रि०) १ अपहरणका काम कराना। २ कोई कठिन चीज छेनीसे कटवाना। ३ खुरदरी कराना, कुटाना।

छिनार (हिं० वि०) छिनाल देखो।

छिनाल (हिं० वि०) १ व्यभिचारिणी, कुलटा, परपुरुषगामिनी। (स्त्री०) २ भ्रष्टास्त्री, खराब चालचलनकी औरत।

छिनालपन (हिं० पु०) व्यभिचार, भ्रष्टाचार।

छिनाला (हिं० पु०) व्यभिचार, वह जिसकी चाल चलन अच्छी न हो।

छिन्दवाड़ा—१ मध्यप्रदेशके नर्मदा विभागका एक जिला। यह अक्षा० २१° २८' तथा २२° ४८' उ० और देशा० ७८° १०' एवं ७९° २४' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल प्रायः ४६३१ वर्गमील है। इसके उत्तर होशङ्गाबाद तथा नरसिंहपुर, पश्चिम बैतूल, पूर्व सिवनी, दक्षिणको नागपुर तथा अमरावती जिला है। छिन्दवाड़ामें ३७०० फुट ऊंचे तक पहाड़ हैं। नदियां प्रायः दक्षिणको बहती हैं। इस जिलेमें कोयलेके कितने ही खान हैं। जङ्गल बहुत होते भी शेर नहीं देख पड़ते।

जागीरदारीमें कुछ जंगली भैंसे होते हैं। नदियों और नालोंमें मछलियोंकी बहुतायत है। जलवायु शीतल तथा स्वास्थ्यकर है। मरी बहुत कम पड़ती है।

इसका पूर्व इतिहास प्राय: अज्ञात है। कहते हैं, गोंड़ोंके पहले गावली राज्य था। जाटवा नामक गोंड़ वीरने माघ वृचके तलपर एक कुमारीके गर्भसे जन्मग्रहण किया था। किसी नाग (सांप) उसकी रक्षा की। दिनको जब इसकी माता काम पर चली जाती थी, वह अपनी फणा फैला करके धूप बचाया करता था। जाटवाने अनेक साहसिक कर्म किये और रणशूर तथा घनशूर नामक दो राजाओंको जादूकी तलवारसे वध करके अपने आप उनके राज्यका अधिकारी बन बैठा। इसने पतनसावंगी और नगरधन नामक दो किले बनाये। जाटवासे खृष्टीय १७वीं शताब्दीके अन्त बख्त बुलन्द तक कोई बात सुन नहीं पड़ती। कहते हैं, अपने सामरिक कार्योंके कारण बख्त बुलन्द दिल्ली सम्राट्‌के प्रेमपात्र बने थे। यह देवगढ़के राजा माने गये। उन्होंने चांदा और मंडला तोड़ करके बहुतसे नगरों और ग्रामोंके साथ नागपुर नगर बसाया था। गोंड़ वंशके पतन पर रघुजी भोंसलाने छिंदवाड़ा अधिकार किया। उनके पिछले समय इसकी बड़ी दुर्दशा हुई। पहाड़ी गोंड राजाओंने मराठा बल घटने पर यहां बड़ी लूट मार मचायी थी। अप्पा साहबने राजाच्युत किये जाने पर अंगरेजोंने छिन्दवाड़ा शासन किया। १८५३ ई०को यह जिला अंगरेजी राज्यमें मिला था। फिर इसका कुछ कुछ भाग होशङ्गाबाद, सिवनी और बेतूलमें जोड़ा गया। छिन्दवाड़ा जिलेमें द्रष्टव्य भवनों और प्रधान मन्दिरोंका अभाव है।

छिन्दवाड़ाकी लोकसंख्या प्राय: ४०७९२७ है। इसमें ४ नगर और १७५१ ग्राम बसे हैं। बुंदेलखण्डी, मराठी और गोंडी भाषा व्यवहृत होती है। जमींदार प्राय: ब्राह्मण हैं। यहां मवेशी अच्छे होते हैं। लाहकी उपज बहुत है। जङ्गलसे प्राय: ७००००) रु०की आमदनी आती है। प्राय: नगरों और बड़े गाँवोंमें कपड़ा बुना जाता है। टसरको भी कहीं कहीं बुनाई होती है। तरह तरहके रंगदार कम्बल तैयार करते हैं। गेहूं, रूई तेलहन और सनकी रफ्तनी होती है। छिन्दवाड़ासे नागपुर और सिवनीकी पक्की सड़क लगी है। इन्तजामके लिये यह जिला २ तहसीलोंमें बाँटा गया है।

२ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़ा जिलेकी उत्तर तहसील। यह अक्षा० २१° ४६´ तथा २२° ४९´ उ० और देशा० ७८° १०´ एवं ७६° २४´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३५२८ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: २८७०४३ है। इसमें एक शहर और १३६८ गांव आबाद हैं। मालगुजारी कोई १७८०००) रु० होगी।

३ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़ा जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° ४´ उ० और देशा० ७८° ५७´ पू०में बोदरी नदी पर अवस्थित है। १८०५ ई०को यहां बङ्गाल नागपुर रेलवेकी एक शाखा खुली। छिन्दवाड़ा सातपुरा पर्वत पर २२०० फुट ऊंचे बसा है। जलवायु स्वास्थ्यकर है। रत्न रघुवंशी नामक एक व्यक्तिने यह नगर पत्तन किया था। लोकसंख्या प्राय: ८७३६ है। १८६७ ई०को यहां म्युनिसपालिटी हुई। छिन्दवाड़ा नगर स्थानीय व्यापारका केन्द्र है। मट्टीके बर्तन और सूती तथा टसरी कपड़े तैयार होते हैं। मवेशी, लकड़ी और अनाज बेचनेके लिये हफ्तेवार बाजार लगता है।

४ मध्यप्रदेशके नरसिंहपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २३° २´ उ० और देशा० ७६° २८´ पू०में ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे पर पड़ता है। लोकसंख्या प्राय: ४२१६ है। १८२४ ई०को यह नगर बसा था। १८६७ ई०को म्युनिसपालिटी हुई। यहां सप्ताहमें एक बार मवेशियोंका बड़ा बाजार लगता है।

छिन्दिपाड़ा—कटक जिलेके अङ्गूल राज्यका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २१° ५´ ३०´´ और देशा० ८४° ५५´ पू०में अवस्थित है। यहां एक थाना है।

छिन्दू—जातिविशेष, एक कौम। बिलासपुरके पास ८८२ ई०का जो एक शिलालेख मिला है, उसमें दश जातिका उल्लेख है। अब छिन्दू नामकी किसी भी जातिका अस्तित्व नहीं मिलता। सर हेनरी इलियट् साहबका अनुमान है कि, यह नाम प्राचीन चन्देल वा चन्द्रात्रेय शब्दका रूपान्तर होगा।

छिन्न (सं० त्रि०) छिद्-क्त। १ कृतच्छेदन, खण्डित, जो काट कर अलग कर दिया गया हो। इसके पर्याय-छात, लून, कृत्त, दात, दित, छित, वृक्ण, कष्ट, छादित, छेदित और खण्डित है। "छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे।" (मार्कण्डेय पु० १०।११) २ विभक्त, बँटा हुआ। "छिन्नाभ्रमिव नश्यति" (गीता) ३ मन्त्रभेद। जिस मन्त्रके आदि, मध्य और अन्तमें वायु-बीज संयुक्त या वियुक्त रूपसे उच्चारण करना पड़ता है और जो तीन चार या पांच प्रकारसे पराक्रान्त है, उस मन्त्रको छिन्न कहते हैं। ४ आगन्तुक छह प्रकारके व्रणोंमेंसे एक व्रण। छिन्न, भिन्न, विद्ध, क्षत, पिच्छित, और घृष्ट येही छः प्रकारके व्रण है। वक्र या सरल आयत व्रणका नाम छिन्न हैं; इसमें शरीरका मांस गिर पड़ता है। (त्रि०) ५ नष्ट भ्रष्ट, जो बिलकुल टूटफूट गया हो। ६ अस्त व्यस्त, तितर बितर।

छिन्नक (सं० त्रि०) छिन्न-कन्। अनत्यन्तगतौ क्तात्। पा ५।४।४। ईषत् छिन्न, कुछ कटा हुआ।

छिन्नकर्ण (सं० त्रि०) छिन्नः कर्णोऽस्य, बहुव्री० छिन्न शब्दस्य विष्टादित्वात् दीर्घप्रतिषेधः। छिन्नकर्ण रूप दुर्लक्षणयुक्त, जिसके कान फटे हुए हों।

छिन्नग्रन्थिनिका (सं० स्त्री०) छिन्नग्रन्थिनी संज्ञायां कन् ह्रस्वश्च। १ त्रिपर्णिकालता, शालपर्णी लता। २ गोरक्ष-मुण्डी।

छिन्नग्रन्थिनी (सं० स्त्री०) त्रिपर्णिका लता, एक प्रकारकी लता।

छिन्नद्वैध (सं० त्रि०) छिन्नं द्वैधं संशयोऽस्य, बहुव्री०। निवृत्तसंशय, वेदान्तादि वाक्य सुननेसे जिसका संशय दूर हो गया हो।

छिन्नतरक (सं० त्रि०) छिन्न-तरप्। द्विवचनविभज्योपपदे तरबीय-सुनौ। पा ५।३।५७ ततः स्वार्थे कन्। 'उभयवचने उभयं प्राप्नोति छिन्नतरकं छिन्नतरकं। समादयो भवन्ति पूर्वप्रतिषेधेन।' तदन्ताच्च स्वार्थे कन्वचनं। 'तदन्ताच्च स्वार्थे कन्वक्तव्य।' छिन्न तरकमिति। (महाभाष्य, पा ५।४।१) 'भेदस्य प्रकर्षं च व्यपदत्ये। युगपद्द्विवक्षायां पूर्वं प्रतिषेध। तदपि कृते कालत्वाभावात् कन्न प्राप्नोति इत्याह तदन्तात्वेनि स्वार्थे पुनरव्ययत्वगति युक्त एव नतु शब्दः। भाष्यप्रदीप, अतिशय छिन्न।

छिन्ननास (सं० त्रि०) छिन्ना नासा नासिका यस्य, बहुव्री०। द्विधाभूत नासायुक्त, छिन्ननासिक, जिसकी नाक कटी हो।

छिन्नपक्ष (सं० त्रि०) छिन्नौ लूनौ पक्षौ यस्य, बहुव्री०। जिसके डैने काट लिये गये हों।

"त्वमिन्द्रकपोताय छिन्नपक्षाय वञ्चते।" (अथर्व वेद २०।१३५।१२)

छिन्नपत्री (सं० त्रि०) छिन्नं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। ततो ङीप्। अम्बाष्ठा, अम्बाड़ा क्षुप्।

छिन्नपुष्प (सं० पु०) छिन्नं पुष्पं यस्य, बहुव्री०, ततः स्वार्थे कन्। तिलकपुष्पवृक्ष, तिलक फूलका पेड़।

छिन्नभिन्न (सं० त्रि०) विशेषणेन सह विशेषणस्य कर्मधा०। १ विच्छिन्न, उच्छिन्न, विनष्ट, कटा कुटा, टूटा फूटा। २ नष्ट भ्रष्ट। ३ अस्त व्यस्त, तितर बितर।

छिन्नमस्तक (सं० त्रि०) छिन्नं मस्तकं यस्य, बहुव्री०। मस्तकहीन, जिसके सिर न हो।

छिन्नमस्ता (सं० स्त्री०) छिन्नं मस्तं शिरो यस्याः बहुव्री०। दश महाविद्याके मध्य एक महाविद्या।

दशमहाविद्या देखो।

यही प्रचण्डचण्डिका नामसे ख्यात हैं। इनके प्रसन्न होनेसे लोग शिवत्व लाभ कर सकते हैं; अपुत्र पुत्रवान्, निर्धन धनी और मूर्ख विद्वान् होते हैं। उनका पूजा-प्रयोग इस प्रकार हैं—साधकको प्रातःकृत्य समापनान्तर आचमन करके बैठना चाहिये। फिर लक्ष्मी, माया और कूर्चबीज द्वारा तीन बार जलपान करते हैं। वाग्बीज द्वारा ओष्ठद्वय सम्मार्जन करके मायाबीजसे दो बार उन्मार्जन करनेका विधान है। फिर श्री, माया, कूर्च, सरस्वती, काम त्रिपुटा, भगवती तथा भगबीज एवं कामकला और अङ्कुश द्वारा यथाक्रम मुख, नासिका, चक्षुः, कर्ण, नाभि, हृदय, मस्तक और अंसद्वय स्पर्श करते हैं। आचमनान्तर षोढ़ान्यासके पीछे ऋष्यादि करना चाहिये। इस मन्त्रके भैरव ऋषि, सम्राट् छन्दः, छिन्नमस्ता देवता, हुङ्कारद्वय बीज, स्वाहा शक्तिके अभीष्टार्थ सिद्धिका विनियोग होता है। यथा—शिरसि भैरवऋषये नमः, मुखे सम्राट् छन्दसे नमः, हृदि छिन्नमस्तायै देवतायै नमः, गुह्ये हुं हुं बीजाय नमः। पादयो स्वाहा शक्तये नमः। करन्यास इस

प्रकार है—कनिष्ठाङ्गुष्ठे श्रीं श्रीं खड्गाय हृदयाय स्वाहा, पवित्राङ्गुलिद्वये श्रीं ह्रं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा, मध्यमाद्वये श्रीं ह्रं सुवज्राय शिखायै स्वाहा, तर्जनीद्वये श्रीं ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा, अङ्गुष्ठद्वये श्रीं श्रीं अङ्कुशाय नेत्रत्रयाय स्वाहा करतलपृष्ठद्वये श्रीं अः सुरक्ष सुरक्ष सुराकान्ताय फट्। ऐसे ही हृदयादिमें भी न्यास करना चाहिये। विश्वसिन्तन्त्रमें लिखित है—अपनी नाभिमें अर्धविकशित शुक्लवर्ण पद्मका ध्यान करना चाहिये। उसके मध्यमें जवाकुसुम सदृश रक्तवर्ण सूर्यमण्डल है। उसमें कोटि सूर्य जैसी उज्ज्वलवर्णा महादेवी छिन्नमस्ताकी भावना की जाती है। यह वाम करमें निज मस्तक धारण करके लपलपाती जिह्वासे अपने कण्ठनिःसृत रुधिरकी धारा पीती हैं। विविध कुसुमशोभित केशपाश इतस्ततः परिक्षिप्त है। यह आलुलायितकेशा और दिगम्बरी है। दक्षिण हस्तमें कर्तरी है। मुण्डमालाविभूषिता, षोड़शवर्षी, पीनोन्नत पयोधरा, रति तथा काम पर प्रत्यालीढ़ पदसे खड़ी हैं। गलेमें अस्थिमाला और सर्परूप यज्ञोपवीत भूषित है। वाम और दक्षिणपार्श्वमें डाकिनी और वर्णिनी हैं। डाकिनी देखनेमें कल्पान्त सूर्य जैसी उज्ज्वल, विद्युज्जटा, त्रिनयना, विकटदन्ता, मुक्तकेशी और दिगम्बरी हैं। वाम तथा दक्षिण हस्तमें नरकपाल और कर्तरी है। वह लप लपाती हुई जीभ निकाल करके देवीकी कण्ठनिर्गत रक्तधारा पान करती हैं। दक्षिण पार्श्वमें वर्णिनी—देखनेमें लोहितवर्णा, मुक्तकेशी, दिगम्बरी, वाम तथा दक्षिण हस्तमें कपाल और कर्तरी लिये हुए हैं। गलेमें नागयज्ञोपवीत और मुण्डमाला है। यह प्रत्यालीढ़ पदसे अवस्थित हो करके देवीकी कण्ठनिःसृत रुधिरधारा पीती हैं। रति और कामकी विपरीत रतिमें आसक्त रूप भावना करना पड़ती है।

विना ध्यान देवीकी पूजा करनेसे साधकका मस्तक सद्यः छिन्न होता है। ध्यानान्तर यथा—

"प्रत्यालीढ़पदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा।
नागाबद्धशिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालङ्कृतां
रत्यासक्तमनोभवोपरि दृढां ध्यायेज्जवासन्निभाम्॥
दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्रीं तथा खर्परं
हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नापि सा वर्णिनी।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्तीं मुदा
नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः॥
वामे कृष्णतनुस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
प्रत्यालीढ़पदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी
शक्तिः सापि परात्परा भगवती नाम्ना पराडाकिनी॥"

पूजा-यन्त्रमें एक दशदलपद्म अङ्कित करना चाहिये। इसका दल पूर्व दिक्को श्वेत, अग्निकोणमें रक्त, वायुकोण पर पीत, पश्चिमको शुक्ल, नैर्ऋतमें रक्त, उत्तर पर सित और ईशान कोणको कृष्णवर्ण रहता है कर्णिकाके मध्यमें सूर्यमण्डल बना करके रक्तवर्ण रजः, शुक्लवर्ण सत्व और कृष्णवर्ण तमो गुणकी रेखा खींचनी पड़ती है। फिर षड़स्वरयुक्त मायावीजद्वय अङ्कित कर कर्णिकाके चारों ओर प्राकार बनाना चाहिये यह प्राकार पूर्व दिक्में रक्तवर्ण, दक्षिणको कृष्णवर्ण, पश्चिम पर शुक्लवर्ण और उत्तरको पीतवर्ण बनता है। प्राकारके चार द्वार होते हैं। प्रत्येक द्वार पर एक एक क्षेत्रपाल रहता है।

(भैरवीय०)

पूजा-यन्त्रका प्रकारान्तर ऐसा है—त्रिकोणाकार रेखा खींचनी चाहिये। इसके मध्यमें तीन मण्डल और मण्डलके बीचमें द्वारत्रययुक्त योनि बनाते हैं। बाहरको अष्टदलपद्म और भूविम्बत्रय तथा इसके मध्य कूर्चवीज अङ्कित किया जाता है। तीनों कोण फट्युक्त रखना चाहिये। यही ध्यानोक्त यन्त्र है। उक्त ध्यानमन्त्र योगियोंके पक्षमें विहित है। गृहस्थोंको इनका ध्यान अपने नाभिपद्मके बीचमें निर्लिप्त, निर्गुण, सूक्ष्म बालचन्द्रके सदृश द्युति, एवं सत्व, रजः तथा तमोगुण द्वारा वेष्टित जैसा करना चाहिये। (तन्त्र)

इसी प्रकार ध्यानपूर्वक मानसपूजा करके शङ्ख स्थापन करते हैं। फिर पीठ पूजा करनी पड़ती है। यथा—

ओं आधारशक्तये नमः, ओं प्रकृत्यै नमः, ओं कूर्माय नमः, ओं अनन्ताय नमः, ओं पृथिव्यै नमः, ओं क्षीरसमुद्राय नमः, ओं रत्नद्वीपाय नमः, ओं कल्पवृक्षाय नमः, ओं तदधः स्वर्णसिंहासनाय नमः, ओं आनन्दकन्दाय नमः, ओं संविन्नालाय नमः, ओं सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः, ओं सं सत्वाय नमः, ओं रं रजसे नमः, ओं तं तमसे नमः, ओं आं आत्मने नमः, ओं अं अन्तरात्मने नमः, ओं पं परमात्मने नमः, ओं ह्रीं ज्ञानात्मने नमः, पद्म मध्ये ओं रतिकामाभ्यां नमः।

भैरवके मतमें—आधारशक्ति, कूर्म, नागराज, पद्म

नाल, पद्म, चतुष्कोणमण्डल, रजः, सत्व, तमः, रति और कामकी पूजा करके शक्तिपूजा करना चाहिये।

पीठमन्त्र यह है—

"रति कामोपरि वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गच्छ गच्छ मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा।"

फिर ध्यान करके आवाहन करना चाहिये।

"सर्वसिद्धिवर्णनीये सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इहावह इहा वह" मन्त्र उच्चारण करके "इह तिष्ठ इह तिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निरुध्यस्व।" मन्त्र द्वारा आवाहन और 'ओं ह्रीं क्रों हं सः' मंत्रसे प्राणप्रतिष्ठा करते हैं। "ओं आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा" इत्यादि मन्त्र द्वारा षडङ्ग न्यास पूर्वक यथाशक्ति पूजा करके वलि दीया जाती है। उसका मंत्र इस प्रकार है—

"वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गच्छ गच्छ इमं वलिं मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा।"

तदुपरि देवीके दक्षिण 'ओं वर्णिन्यै नमः' वाएं "ओं डाकिन्यै नमः" मन्त्र द्वारा वर्णिनी और डाकिनीकी पूजा करनी चाहिये। देवीकी षडङ्ग पूजा करके दक्षिणमें "ओं शङ्खनिधये नम." वामको 'ओं पद्मनिधये नमः' पूर्वदिक् लक्ष्मी, दक्षिण लज्जा, पश्चिम माया, उत्तर सरस्वती, अग्निकोण पर ब्रह्मा, वायुकोणको विष्णु, नैऋत कोणमें रुद्र, ईशानकोणको ईश्वर, मध्यमें सदाशिवकी पहले "ॐ" और पीछे "नमः" लगा करके पूजा करते हैं। फिर पञ्चपुष्पाञ्जलि पूर्वक आवरणपूजा की जाती है। अष्टदिक् तथा मध्यमें "ओं ओं खड्गाय हृदयाय स्वाहा" इत्यादि मन्त्र द्वारा षडङ्ग पूजा करके पूर्वादि क्रमसे अष्टदल पूजना चाहिये। यथा पूर्व दलमें "ओं काल्यै नमः" अग्निकोणदलमें "ओं वर्णिन्यै नमः" दक्षिण दलमें 'ओं डाकिन्यै नमः' वायुकोणदलमें 'ओं भैरव्यै नमः' पश्चिम दलमें "ओं महाभैरव्यै नमः" नैऋतकोण दलमें 'ओं इन्द्राक्ष्यै नमः' उत्तर दलमें "ओं पिङ्गलाक्ष्यै नमः" ईशानकोण दलमें "ओं संहारिण्यै नमः" पद्ममध्ये "हुं हुं फट् नमः स्वाहा" देवीके दक्षिण "सम्राट् सुन्दरी नमः", उत्तरमें सर्ववर्णेभ्यो नमः, फिर दक्षिण कोणमें "ओं वीजशक्तिभ्यो नमः", पत्रके अग्रभाग पर पूर्वदिक्को "ओं ब्राह्म्यै नमः", अग्निकोणमें "ओं माहेश्वर्यै नम." दक्षिण "ओं कौमार्यै नमः", वायुकोणको "ओं वैष्णव्यै नमः", पश्चिम 'ओं वाराह्यै नमः', नैऋत "ओं इन्द्राण्यै नमः", उत्तर "ओं चामुण्डायै नमः' ईशान कोणमें "ओं महालक्ष्म्यै नमः", पूर्वद्वारको "ओं करालाय नमः" दक्षिण द्वारको "ओं विकरालाय नमः" पश्चिम द्वारको 'ओं अतिकरालाय नमः', और उत्तर द्वार "ओं महाकालाय नम."

उपरि लिखित मन्त्र उच्चारण करके रूप भावना पूर्वक वाम नासापुट द्वारा सूर्यमण्डलमें नियोजित करते हैं।

पुरश्चरण लक्ष जप है। रातको विभवानुरूप वलि देना चाहिये। वलिका मन्त्र यह है—

"ओं सर्वसिद्धिप्रदे वर्णनीये सर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये छिन्नमस्ते देवि एह्येहि इमं वलिं गच्छ गच्छ मम सिद्धिं देहि देहि ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।"

(भैरवीय)

छिन्नमस्तिका (सं० स्त्री०) १ छिन्नमस्तादेवी। काठमण्डू से डेढ़ मील पूर्व ललितपत्तन नामक स्थानमें छिन्नमस्तादेवीका एक सुन्दर और प्राचीन मन्दिर है। उस मन्दिरके पास ही ४८ सम्वत्का खुदा हुआ जिष्णुगुप्तका एक शिलालेख देखा जाता है।

छिन्नरुह (सं० पु०) छिन्नोपि रोहति रुह-क। तिलक वृक्ष, पुन्नाग।

छिन्नरुहा (सं० स्त्री०) छिन्नरुह स्त्रियां टाप्। १ गुडूची, गिलोय। इसके पर्याय--वत्सादनी, मधुपर्णी, अमृता, अमरा, कुण्डली, अमृतवल्ली, गुडूची और चक्रलक्षणा हैं। २ स्वर्णकेतकी, सफेद केतकी। ३ शल्लकी, शलई।

छिन्नरोहा (सं० स्त्री०) गुडूची, गिलोय।

छिन्नलता (सं० स्त्री०) गुडूची।

छिन्नवेशिका (सं० स्त्री०) छिन्नो विच्छिन्नो वेशो यस्याः संज्ञायां कन् ततष्टापि अतइत्वं। पाठा।

छिन्नव्रण (सं० पु०) १ अस्त्र वा शस्त्रसे काटा हुआ घाव। २ वह घाव जो शस्त्रसे कटे हुये घाव पर हुआ हो।

छिन्नश्वास (सं० पु०) कर्मधा०। १ सुश्रुतोक्त श्वासरोगविशेष। श्वासरोगमें कफ और वातकी अधिकता होनेसे छिन्नश्वास कहलाता है। इसमें रोगीका पेट फूलता, पसीना आता और साँस रुक जाता है। २ छिन्नश्वासयुक्त, जिसको छिन्नश्वास रोग हुआ हो।

छिन्ना (सं० स्त्री०) छिद्यतेऽसौ छिद् क्त ततष्टाप्। १ गुडूची, गुडुच, गिलोय। २ पुंश्चली, छिनाल। ३ महानीलकण्ठरस। ४ शल्लकीवृक्ष, शलाइका पेड़।

छिन्नाङ्गी (सं० स्त्री०) गुडूची, गिलोय।

छिन्नोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) छिन्नापि उद्भवति छिन्न-उत्-भू-अच् ततष्टाप्। गुड़ूची, गिलोय।

छिपकली (हिं॰ स्त्री॰) १ एक प्रकारका सरीसृप। यह जमीन पर पेट रख कर पंजोंके बल चलती है। यह लगभग एक बित्ता लम्बा और प्रायः मकानकी दीवार आदि पर दीख पड़ती है। यह छोटे छोटे कीड़े पकड़ कर खाती है। भीत कितनी हो चिकनी क्यों न हो, उस पर यह सुगमतासे दौड़ सकती है। इसका रंग मटमैला और काला होता है। इसकी पैदायश अंडेसे है। यह गरम स्थान वा वृक्षोंके कोटर आदिमें रहती और निरीह प्रकृति होती है। समग्र पुरातन महाद्वीपोंमें इसका अस्तित्व पाया जाता है। यह कीट-पतङ्गोंको खा कर अपना पेट भरती है।

प्राणीतत्त्वविदोंने इसे वृहत्तर कृकलास, गोधा और प्रकाण्डकाय कुम्भीर आदिके समजातीय बतलाया है। छिपकलीकी पूंछ सहज हो कट कर गिर जाती है और हिलती रहती है। किन्तु फिर इनकी पूंछ बन जाती है। यह छिप् छिप् शब्द करती है, इसलिए इसका नाम छिपकली पड़ा है। लोगोंका विश्वास है कि उस शब्दसे दिकभेदसे यात्राके शुभाशुभका ज्ञान होता है। शरीरके किसी अङ्ग पर पड़नेसे क्या फल होता है, इसकी भी सूचना मिलती है। ज्येष्ठी देखो। इसके पर्याय—मुषली, गृहगोधा, विशंबरी, ज्येष्ठा, गृहगोलिका, माणिक्या, भित्तिका और गृहोलिका हैं। २ एक प्रकारका आभूषण जो कानोंमें पहना जाता है।

छिपना (हिं॰ क्रि॰) १ गोपनीय स्थानमें रहना, ऐसी स्थितिमें होना जहांसे दिखाई न पड़े। २ अदृश्य होना, गायब होना। ३ गुप्त होना, जो प्रगट न हो।

छिपाछिपी (हिं॰ क्रि॰) चुपचाप, गुप्तरीतिसे।

छिपाना (हिं॰ क्रि॰) १ गोपन करना, आड़में करना, ढाकना। २ गुप्त रखना, प्रकाश न करना, पोशीदा रखना।

छिपारुस्तम (हिं॰ पु॰) १ वह मनुष्य जो सब गुणोंमें निपुण हो, लेकिन उसकी ख्याति बहुत दूर तक फैली न हो। २ गुप्तगुंडा, वह दुष्ट जिसकी दुष्टता सबको मालूम न हो।

छिपाव (हिं॰ पु॰) गोपन रखनेकी क्रिया, किसी बात या भेदके छिपानेका भाव।

छिपिया—युक्तप्रदेशके गोंडा जिलेकी उतरौला तहसीलका एक छोटा गांव। यह अक्षा॰ २६´२८। उ॰ और देशा॰ ८२° २५´ पू॰में बङ्गाल नर्थ वेष्टर्न रेलवे पर अवस्थित है। यहां वैष्णवधर्म-संस्कारक सहजानन्दके सम्मानार्थ एक सुन्दर मन्दिर बना है। उन्होंने प्रायः १३० वर्ष पूर्व इस ग्राममें जन्मग्रहण किया था। क्रमशः वह जूनागढ़में वैष्णव मतके प्रधान महन्त हो गये। सहजानन्दके शिष्य उन्हें कृष्णका अवतार बतलाते हैं। उनकी उपाधि स्वामीनारायण है। उनके वंशधर आज भी उनके प्रवर्तित मतावलम्बी वैष्णवोंमें नेता जैसे परिगणित हैं। कोई ७० वर्ष पूर्व उनके मतावलम्बी गुजराती वैष्णव उनके जन्मस्थान छिपियामें एक मन्दिर निर्माणार्थ यत्नवान् हुए। तदनुसार वर्तमान मन्दिर बनाया गया है। मन्दिरका गठन सुन्दर है। मन्दिरके पीछे प्रति वत्सर रामनवमी और कार्तिक पूर्णिमाको मेला लगता है। बारहों महीने नानास्थानोंसे यात्री यह स्थान देखने आया करते हैं। लोकसंख्या प्राय ७३१ है।

छिवड़ा (हिं॰ पु॰) छबड़ा देखो।

छिबड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ एक प्रकारकी डोली जो खटोलीके आकारकी होती है। इस पर बैठ कर रेतोले मदानोंमें यात्रा करते हैं। २ छोटा टोकरा। ३ खांचा।

छिबरामऊ—१ युक्तप्रदेशके फरूखाबाद जिलेकी दक्षिणस्थ मध्य तहसील। यह अक्षा॰ २६° ५८´ एवं २७° १४´ उ॰ और देशा॰ ७८´२३´ तथा ७९´४७´ पू॰के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २४० वर्गमील है। इसके उत्तर काली नदी तथा गङ्गा और दक्षिणको इसान नदी है। लोकसंख्या कोई १२६७०५ होगी। इसमें २ नगर और २४० ग्राम बसे हुए हैं। मालगुजारी प्रायः १८००००) रु॰ पड़ती है। पूर्व विभागमें दलदल और झील बहुत हैं। कई एक गांवोंमें भांगकी खेती बहुत होती है।

२ युक्तप्रदेशके फरूखाबाद जिलेकी छिबरामऊ तहसीलका सदर। यह अक्षा॰ २७´८´ उ॰ और देशा॰ ७९´ ३१´ पू॰में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६५२६ है। अकबरके समय भी यह परगनेका सदर रहा। १८वीं

शताब्दीके आदिकालमें फरुखाबादके नवाब मुहम्मदखाँने मुहम्मदगंज नामका मुहल्ला और एक बड़ी सराय बसाई थी। सप्ताहमें दो बार बाजार लगता है।

छिया (हिं॰ स्त्री॰) १ घृणित वस्तु वह पदार्थ जिसे देख कर घृणा उत्पन्न हो, घिनौनी चीज। २ मल, गलीज, मैला।

छियाज (हिं॰ पु॰) कटुआँ व्याज।

छियालीस (हिं॰ वि॰) १ जो चालीससे छः अधिक हो। (पु॰) २ वह संख्या जो चालीस और छहके योगसे बनती हो।

छियासी (हिं॰ वि॰) १ जो अस्सीसे छह अधिक हो। (पु॰) २ वह संख्या जो अस्सी और छहके योगसे बनती हो।

छिरकना (हिं॰ क्रि॰) छिड़कना देखो।

छिरछिरा—गानेवाली एक छोटी चिड़िया। इसकी लम्बाई ५६। इञ्चकी है। यह दक्षिण देशमें बहुत जगह तथा सिंहल और बङ्गालमें कहीं कहीं देखनेमें आती है। यह निर्भय हो कर लोकालयमें आती है, मैदानमें कूदती और वृक्षका डाली पर बैठ कर गाती रहती है। यह एकबार थोड़ा ऊपरको उड़ कर फिर उसी समय डैना समेट कर नीचे उतर आती है तथा इसीप्रकार बैठते गाती रहती है।

छिरेटा (हिं॰ पु॰) मैदानों और नदीके करारों पर होने वाली एक प्रकारकी बेल। इसकी पत्तियां ढाई तीन अंगुलसे अधिक लम्बी नहीं होती हैं। पत्तियोंके रसमें विशेष गुण यह है कि जल, दूध आदिमें डालनेसे जल या दूध गाढ़ा हो कर जम जाता है। इसमें बहुत छोटे छोटे फल गुच्छोंमें लगते हैं। फल पकने पर काले हो जाते हैं। इसके गुण—मधुर, वीर्यवर्द्धक, रुचिकारक तथा पित्त, दाह और विषनाशक है। इसके संस्कृत पर्याय—छिलहिण्ड, पातालगरुड़, महामूल, वत्सादनी, तिक्ताङ्गा मोचकाभिधा, तार्क्षी, सौपर्णी, गारुड़ी, दीर्घकाण्डा, महाबला, दीर्घवल्ली और दृढ़लता हैं।

छिलका (हिं॰ पु॰) फलोंकी त्वचा या बाहरी आवरण। छाल, छिलका और भूसीमें अन्तर है। पेड़ोंके धड़, डाल और टहनियोंके ऊपरी आवरणको छाल, कन्द, मूल, फल आदिके ऊपरी आवरणको छिलका और अनाज या किसी सूखी वस्तुओंके कूटनेसे जो महीन चूर्ण निकलता है उसको भूसी कहते हैं।

छिलना (हिं॰ क्रि॰) १ छिलका या छाल अलग करना। २ नख आदि लगने या और किसी प्रकार छिलनेका हलका चिह्न हो जाना, खरोंच जाना। ३ गलेके भीतर चुनचुनाहट या खुजलीसी होना।

छिलवा (हिं॰ पु॰) कटेहुए ऊखोंकी पत्तियोंको छिलनेवाला मनुष्य।

छिलवाना (हिं॰ क्रि॰) किसी दूसरेसे छीलनेका काम कराना।

छिलावट (हिं॰ स्त्री॰) छीलनेका भाव या क्रिया।

छिलिहिण्ड (सं॰ पु॰) चिलिना वसनखण्डरूपतया हिण्डते आनाद्रियते चिलि-हिण्ड-अच् पृषोदरादित्वात्चस्य छः। पातालगरुड़वृक्ष। छिरेटा देखो।

छिलौरी (हिं॰ स्त्री॰) आवला, छोटा छाला।

छिल्लड़ (हिं॰ पु॰) भूसी, छिलका।

छिहत्तर (हिं॰ वि॰) १ जो सत्तरसे छह अधिक हो। (पु॰) २ वह संख्या जो सत्तर और छहके योगसे बनती हो।

छिहाई (हिं॰ स्त्री॰) १ चिता, सरा। २ श्मशान, मरघट, वह स्थान जहां मुर्दा जलाया जाता हो।

छिहानी (हिं॰ पु॰) श्मशान, मसान, मरघट।

छींक (हिं॰ स्त्री॰) छिक्का, वह वायुका झोंका जो सहसा नाक और मुँहसे निकलता हो। हिन्दुओंमें एक प्राचीन रीति है कि, जब कोई छींकता है तब 'शत जीव' या 'चिरंजीव' कहा जाता है। यह प्रथा यूनानियों, रोमनों और यहूदियोंमें भी थी। अंगरेज भी छींकते समय 'ईश्वर कल्याण करें' ऐसा कहा करते हैं। हिन्दुओंमें किसी कामके शुरू करते समय छींक होना अशुभ माना जाता है। छिक्का देखो।

छींट (हिं॰ स्त्री॰) १ एक या अनेक रंगीन चित्रयुक्त कार्पासवस्त्र, एक तरहका सूती कपड़ा जिस पर पक्के रंगके बेल-बूटे छपे हों। छींट कपड़ा कहनेसे साधारणतः सादी या इकरंगी जमीन पर रंग बिरंगे बेल-बूटे छपे हुए

कपड़ेका बोध होता है। ‘गीन सूत वा रेशम आदिसे बेल-बूटे काढ़ना अथवा तांतमें छींट बुनना इत्यादि विषय चिकन शब्दमें देखो।

अति प्राचीनकालसे ही भारतवासी छींट बनानेमें मशहूर हैं। दाक्षिणात्यके कालिकोट बन्दरसे विलायतको छींट जाया करती थी, इसलिए वहां छींट बनानेका नाम कालिको-प्रिण्टिङ (Calioprinting) पड़ गया है। बङ्गालके ढाकेकी छींट भी इंङ्गलैण्ड जाया करती थी।

कुछ भी हो, किसी समय विलायतमें इतनी छींट पहुंची थी कि, वहांके अर्थसचिवोंने वहांके रेशम और ऊर्णा-शिल्पके अनिष्ट होनेको आशङ्का कर भारतकी छींट न पहननेके लिए घोषणा कर दी थी। बादमें वहां छींट बनानेके लिए नाना प्रकारके उपायोंका आविष्कार होने लगा और क्रमशः इसकी उन्नति चरम सीमा तक पहुंच गई। अब वहां तरह तरहकी मशीनोंसे तरह तरहकी रंग बिरंगी छींटें बनने लगी हैं।

कुछ रंग तो ऐसे हैं जो पानी डालते ही गल जाते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो स्वभावतः नहीं गलते; किन्तु कृत्रिम साधनोंसे उनको गलाया जा सकता है। द्रवणीय अवस्थामें रंगको कपड़ेमें लगा कर बादमें गरम पानी तथा साबुन और क्षार-जलमें अद्रवणीय किया जा सके तो वह रंग सच्छिद्र सूतके भीतर दृढ़ और स्थायी रूपसे बद्ध हो जाता है। तब फिर सहजमें रंग नहीं छूटता। छींट बनानेका यही मूलसूत्र है, इस उद्देश्यके प्रति दृष्टि रख कर ही विलायतके छीपीगर नाना वर्णकी उत्कृष्ट छींट बनाते हैं।

हमारे देशके छीपीगर लोग पहिलेकी प्रथाके अनुसार ही छींट छापते आते हैं। उक्त समस्त प्रक्रियाओंका गूढ़ मर्म वे नहीं जानते, इसलिए वे बद्ध संस्कारकी तरह प्राचीन पद्धतिका परिवर्तन वा उत्कर्ष साधन करनेमें सम्पूर्ण असमर्थ हैं। इधर यूरोप और अमेरिकाके तत्त्वानुसन्धित्सु व्यक्तिगण छींटके यथार्थको जान कर उसीकी भरपूर उन्नति कर रहे हैं। वहां बड़े रासायनिक पण्डितोंकी सहायतासे पक्के रंगकी छींट बनानेके लिए तरह तरहकी तदबीरें निकाली जा रही हैं तथा बड़े बड़े शिल्पियों द्वारा शीघ्र और सुन्दर छींट छापनेवाली नई नई मशीनोंका आविष्कार हो रहा है। हमारे देशका एक आदमी दिनभर परिश्रम कर जितनी छींट छापता है, विलायतकी मशीन १ मिनटमें उससे कहीं दश गुनी छाप देती है। फिलहाल विलायती छींटकी प्रतिद्वन्द्विता में देशी छींटकी बड़ी दुर्दशा हो रही है, अब मशीनसे बनी हुई खूबसूरतसे खूबसूरत छींट बहुत सस्ते दामोंमें बिकने लगी है, इसलिए देशी छींटकी खपत बिल्कुल घट गई है। दिनों दिन यह रोजगार भारतसे उठा जा रहा है। परन्तु तो भी लखनऊ इत्यादि कई एक स्थानोंकी छींट विदेशीय लोगोंको अब भी विस्मय पैदा कर देती है, इसमें सन्देह नहीं।

भारतवर्षके रंगरेज कपड़े रंगनेमें निम्नलिखित उपकरण काममें लाते हैं। यथा—बबूलकी छाल, बबूलका फल, खैर, सुपारीका पानी, माजूफल, गेरूआमिट्टी, हिरमिची, नील, कुसुमफूल, केसर, लाल चन्दन, पीपलकी छाल, हर्र, बहेड़ा, मजीठ, पलाश, लाख, हल्दी, दारुहल्दी, अतिविषा, दाड़िम्बछाल, हरताल, हीराकस, तूंतिया इत्यादि।

भिन्न भिन्न रंग बनानेमें भिन्न भिन्न उपादानोंकी जरूरत होती है। पक्का काला रंग निम्नलिखित पदार्थोंके मिलानेसे उत्पन्न होता है। यथा—१ अतिविषा, हीराकस, हर्र और फिटकरी। २ कुसुमफूल, हीराकस और हर्र। ३ गेरू, हीराकस और हर्र। ४ गेरू, हीराकस, हर्र और फिटकीरी। ५ बबूल, सोंठ और कालीमट्टी। ६ हीराकस, हर्र और फिटकरी इत्यादि।

इसी तरह धूसरवर्ण नील और माजूफलके योगसे उत्पन्न होता है।

लमेण्डर रंग—कुसुमफूल, मांजूफल और फिटकिरी।

मेहनी रंग—नील और कुसुमफूल।

नील रंग—नील, तूंतिया और चूना।

हरा रंग—नील, पलाशफूल और सेफालिका, अथवा हीराकस, हल्दी, दाड़िमकी छाल और फिटकरी, अथवा हरताल और पीली मिट्टी।

पीला रंग—हल्दी, सेफालिका, पलाश-फूल, चना

और खट्टा पानी, अथवा हल्दी, दाड़िमका छाल और फिटकरी वा हरताल और पीली मिट्टी ।

जरद रंग—हल्दी, कुसुमफूल और खट्टा पानी।

पाटलवर्ण—रससिन्दूर।

लोहितवर्ण—कुसुमफूल, मञ्जिष्ठा, हरीतकी और फिटकरी, अथवा बकायन, हरीतकी और फिटकरी, अथवा लाक्षारस और हीराकस ।

कपड़े पर छींट छापनेसे पहिले उसे छापनेके लायक बना लेना पड़ता है। इस देशके छीपी पहले कपड़े-को धो कर क्षारजल, चूनेके पानी इत्यादिसे अच्छी तरह साफ कर उस पर हर्रे, माजूफल, बबूल और गोंद मिश्रित माड़ लगाते हैं तथा सूख जाने पर लकड़ीके हतौलसे समान कर फिर उस पर छींट छापते हैं।

इस देशमें साधारणतः भिन्न भिन्न उपायोंसे कपड़े रंगे जाते हैं। १, कपड़े पर द्रवणीय रंग चढ़ा कर बादमें वह रंग पक्का किया जाता है। २, कपड़े पर धातुका मोरचा या दूसरा कोई रंग पक्का करनेका मसाला लगा कर वा छाप कर बादमें उस पर रंग दिया जाता है। ३, भींगे हुए पक्के रंगसे कपड़े पर छाप देना । शेषोक्त प्रकारका छपा हुआ रंग सूख जाने पर पक्का हो जाता है। पहिला तरीका कन्द, खाकुआ आदि रंगने-के लिए ही अच्छा है। इसमें भिन्न भिन्न मसालेसे कपड़े पर छाप दे कर एक ही रंगमें डुबोनेसे छाप लगी हुए स्थान भिन्न भिन्न रंगोंसे रञ्जित हो जाते हैं।

छाप या ठप्पे मामूली तौरसे महीन दृढ़ काष्ठसे ही बनते हैं। यहांके छीपीगर इमली और कटहर आदिकी लकड़ी काममें लाते हैं। ऊपर कहे अनुसार कपड़ेको धो कर तथा उजला और चिकना बना कर उस पर छींट छापी जाती है। छापनेके मसाले रंगके अनुसार नाना प्रकारके हैं। काली छींटके लिए लोहा, लालके लिए फिटकरी या राङ, नीली छींटके लिए तामा, इसी तरह नाना प्रकारकी धातुओंका मोरचा व्यवहृत होता है। यह मोरचा सिर्काम्ल वा इसी तरहके किसी पदार्थमें गला कर सरेश या गोंदके जरिये गाढ़ा कर बादमें कपड़े पर लगाया जाता है।

इस देशके रंगरेज लोग बड़े बड़े हण्डोंमें पानी और गुड़ एकत्र घोल कर उसमें लोहेके टुकड़े छोड़ देते हैं। गुड़ और पानी क्रमशः सिर्काम्ल और एसिटिक एसिडमें परिणत हो लोहेको गलाता रहता है। इस तरह २।३ महीने तक रखे रहनेके बाद उस पानीको छान कर उसमें तूंतिया मिला दिया जाता है और मैदा या गोंदसे गाढ़ा कर उससे छापा जाता है।

छापनेके बाद २।३ दिन रख देनेसे धातुका जंग कपड़ेमें लग जाता है। फिर उस कपड़ेको तालाब, नदी आदिके पानीसे धो कर बकायन, अवनिषि, मञ्जिष्ठा आदिके पानीमें कुछ देर तक उबालनेसे छापा हुआ रंग पक्का हो जाता है। इसके बाद उस कपड़ेको फिरसे साबुन या क्षारजलमें धो लेनेसे छापके सिवा और सब जगहका रंग छूट जाता है। यदि कपड़ा अलग अलग धातुके मोरचेसे छापा गया होगा तो एक रंगमें रंगने पर भी बेल बूटोंका रंग पृथक् पृथक् हो जायगा। अगर कपड़े पर लोहे और फिटकरीकी छाप हो, तो बकायन काठके रंगमें डुबोनेसे लोहेका छापवाला स्थान काला और फिटकरीका छापवाला स्थान लाल रंगका होगा। लोहे और फिटकरीको मिला कर छाप देनेसे उसका धूमलवर्ण होगा। नामावली आदि इसी तरह छापी जाती है।

चुनरी नामकी और एक तरहकी छींट प्रायः सब जगह पाई जाती है। इसकी प्रस्तुतप्रणाली इसी तरहसे है। पहले कपड़ेको भिगो कर उसमें जगह जगह खूब कस कर गांठें बाँध देनी चाहिये। उस कपड़ेको रंगमें डुबोनेसे बंधे हुए स्थानोंके सिवा और सारी जमीन रंग जाती है। उसके बाद निचोड़ करके बन्धन खोल कर सुखानेसे ही चुनरी छींट बन जाती है। इसमें रंगीन कपड़े पर सिर्फ सफेद बुंदकियां रहती हैं। कपड़ा और बुंदी दोनोंको रंगना हो, तो पहले तमाम कपड़े-को एक रंगमें डुबो करके बादमें उसे बाँध कर फिरसे दूसरे रंगमें डुबोनेसे जमीन और बूटियाँ दोनों ही रंगीन हो जाती हैं। पहले कपड़ेको पीले रंगमें रंग कर बादमें गाँठ बाँध कर लाल रंगमें डुबोनेसे कपड़े पर पीली बूंटियां हो जाती हैं। कलकत्तेके रंगरेज इसी तरहसे चुनरी रंगते हैं।

सुनहरी और रुपैली छींट भी कलकत्तेमें छापी जाती है। कपड़ेको रंग कर उस पर गोंद वा दूसरी कोई लसीली चीजसे छाप लगा कर उन स्थानों पर नकली सोने या चांदीके वरक चुपका देनेसे ही सुनहरी वा रुपैली छींट बन जाती है। साधारणतः घोर बैंगनी जमीन पर सुनहरी और लाल जमीन पर रुपैली छींट छापी जाती है। इस तरहको छींट देखनेमें खूबसूरत और जरीदार कपड़ेकी भांति चमकती है।

युक्तप्रदेशमें प्रायः प्रत्येक नगरमें ही थोड़ी बहुत छींट बना करती है। लखनऊमें साधरणतः विलायती कपड़े पर ही छींट छपती है। कन्नौज और फरूखाबादमें देशी मोटे कपड़े पर छींट छाप कर रजाई, धोती जोड़ा, तोषक इत्यादि बनाई जाती हैं।

व्यवहार और कपड़ेके प्रकारभेदसे वहांकी छींटोंके बहुतसे नाम हैं। उनमेंसे निम्नलिखित नाम ही मुख्य हैं—फर्द, रजाई, तोषक, जाजिम, शामियाना, छींटजर्दा इत्यादि।

यूरोपके लोग इस देशकी छींटको मसहरी और पर्दा बनानेके लिए खरीदा करते हैं। विशेषतः ये लोग अतिविषासे रंगी हुई लखनऊकी छींटका ज्यादा आदर करते हैं। इस समय भी लखनऊ और फरूखाबादकी छींट नानास्थानोंको जाती है। इसके सिवा काशीपुर, अलीगढ़, अतरौली, आगरा, मथुरा, वृन्दावन, मैनपुरी, इलाहाबाद, फतेपुर, कल्याणपुर, जाफरगञ्ज कानपुर, चांदपुर, नाजिरगञ्ज, शाहजहांपुर, मिर्जापुर, मुजफ्फर-नगर, देवबन्द, जहांगीराबाद, बागपत, इटावा, बांदा, पेलासी, काशी और बुधानपुर इत्यादि नगरोंमें उत्तमोत्तम छींट छपा करती है।

युक्तप्रदेशमें खारुआ और सालू नामका लाल कपड़ा बहुत बनता है। खारुआ देशी मोटे कपड़े (खद्दर)-को लाल रंग कर बनाया जाता है और यह गद्दी, तकिया आदि बनानेके काममें आता है। महीन और विलायती कपड़ेको लाल रंगमें रंगनेसे सालू बन जाता है। इससे पगड़ी, साड़ी, फर्द इत्यादि बनती है।

पञ्जाब प्रदेशमें भी उक्त समस्त प्रकारकी छींट बनती है। वहां एक वर्गगज छींटका मूल्य लगभग ।।=) आना पड़ता है। पञ्जाबमें और एक तरहका छींट जैसा कपड़ा बनता है। कपड़े पर पहले लाल, पीले इत्यादि घने रंगके नाना प्रकारके बेलबूटे छाप कर फिर उस पर अबरक भुरक देते हैं। इससे कपड़ा चमकने लगता है।

काश्मीरकी छींट फिलहाल विलायत जाने लगी है। वहांके लोग मकानकी सजावटके लिये इसको बहुत खरीदते हैं। इसकी ज्यादा खपत देख काश्मीरके राजाने इस रोजगारको अपने हाथ ले लिया है, इसे दूसरा कोई नहीं बना सकता।

राजपूतानेमें सांगानेर, जयपुर, बरार इत्यादि स्थानोंमें बहुतसे लोग छींट बना कर जीविकानिर्वाह करते हैं। इन स्थानोंमें अति उत्कृष्ट छींट मिल सकती है।

ग्वालियर, रतलाम उज्जयिनी, मन्दसौर, इन्दौर इत्यादि मध्यप्रदेशके अनेक नगरोंमें मोटी छींट बनती है। उड़िसाकी औरतोंकी पहननेकी साड़ी सम्बलपुरमें बनती है। मन्द्राज प्रेसीडेन्सीमें बङ्गजा, आर्काट, मेदेर-पाक, तिम्मूर, अनन्तपुर, कुम्भकोनम्, सालेम, चिङ्गलपट्ट, कड़ापा, काकनाड़ा त्रिचीनापल्ली और गोदावरी—ये सब छींट बननेके प्रधान अड्डे हैं। उक्त स्थानोंकी छींटोंके वर्णविन्यास और चित्रादि यूरोपीय छींटोंके अनुरूप न होने पर भी देखनेमें वे बहुत ही खूबसूरत होती हैं।

बम्बई प्रेसिडेन्सीके अहमदाबाद, खेड़ा, बरोदा, भड़ौंच, मालगा, कच्छ आदि नगरोंमें छींट बनती है। साड़ी आदिकी महीन छींट विलायती कपड़े पर तथा जाजिम आदि मोटी छींट देशी कपड़े पर छपती है। एक खेड़ा नगरमें ही प्रायः चार सौ हिन्दू और डेढ़ सौ मुसलमान परिवार छापनेका काम करते हैं।

सूती कपड़ोंके सिवा धूपछाया, मयूरकण्ठी, चाँदतारा, झिलमिली, लहरिया, पीताम्बर इत्यादि बहुत तरहके पट्टवस्त्र और ऊनी कपड़े भारतके नानास्थानोंमें बनते हैं।

ईसाकी १७वीं शताब्दीमें भारतके रंगीन कपड़ोंने यूरोपियोंकी दृष्टि आकर्षित की थी। उक्त शताब्दीके आखिरमें इङ्गलैण्डमें छींटके कारखाने खुले थे। किन्तु रेशम और ऊनी कपड़े बनानेवालोंने अपने स्वार्थकी हानि देख जीजानसे इसमें रुकावट डालनेकी चेष्टा की। इस समय इष्ट इण्डियन कम्पनी द्वारा भारतसे

बहुतसी छींट विलायतको जाया करती थी। इङ्गलैण्डके ऊन और रेशमके व्यवसायियोंने पार्लामेण्टमें बार बार आवेदन कर भारतीय कपड़े पर शुल्क बढ़वा दिया। १७०० ई०में इङ्गलैण्डकी पार्लामेण्टने ऊन और रेशमके व्यवसायियोंके सुभीताके लिए भारतीय छींटको आमदनी बिल्कुल ही रोक दी। १७२० ई०के अन्तमें क्या देशी और क्या विदेशी सभी तरहको छींटोंका व्यवहार बन्द हो गया था। कुछ भी हो, १७३० ई०में पार्लामेण्टने रेशम और सूतसे बनी हुई विलायती छींट व्यवहार करनेके लिए आज्ञा दे दी। १७७४ ई०में छींट बनानेवालोंने बहुत कुछ खर्च करके पार्लामेण्टमें आवेदन कर सूती छींट बनानेकी अनुमति ले ली। परन्तु इस पर भी कारोबारमें विशेष कुछ उन्नति न हुई।

आखिर १८३१ ई०में कानूनोंके बदल जाने पर छींटको उन्नतिका मार्ग साफ हो गया। तभीसे छींटकी भरपूर उन्नति हुई और हो रही है।

इङ्गलैण्डमें जिन तदबीरोंसे छींट बनती है, नीचे उनका उल्लेख किया जाता है।

जिस कपड़े पर छींट छापनी हो सबसे पहले उस कपड़ेके लोमोंको दूर करना चाहिये। यह कार्य दो तरहसे होता है। उत्तप्त लाल लोहे अथवा गैस-बत्तीके ऊपरसे कपड़ेको ले जानेसे उसके लोम जल जाते हैं और कपड़ा चिकना हो जाता है। इसके बाद कपड़ेको सफेद करना पड़ता है। कपड़ा जितना सफेद होगा, रंग भी उतना ही उजला दीखने लगेगा। इस कामके लिए सोडा, चूनेका पानी, क्षार इत्यादि व्यवहृत होता है। महीन कपड़ेके लिए मृदु और मोटेके लिए उग्र क्षार-जलकी जरूरत है। साधारणतः ब्लिचिङ् पाउडरसे कपड़े साफ किये जाते हैं। पहले कपड़ेको कुछ देर तक क्षारजलमें उबाल कर पीछे साफ पानीसे धो लिया जाता है। विलायतमें उक्त तमाम प्रक्रियाएँ मशीनों द्वारा हो की जाती हैं। मशीनमें कपड़ा क्रमशः एक बार पानीमें डूबता और एक बार निचुड़ता रहता है। इसी तरह कपड़ेसे सम्पूर्ण क्षारको अलग करनेके लिए उसे अत्यल्प गन्धकद्रावक (Sulphuric acid) मिश्रित पानीमें डुबो कर साफ पानीसे धो लिया जाता है। इससे कपड़ेका संपूर्ण क्षार और लौहादि दूर हो जाता है तथा उसकी सफेदी नहीं बिगड़ने पाती। कपड़ेके सूख जाने पर उसे मशीनमें दे कर चिकना और मुलायम बना लिया जाता है। फिर उससे छींट बन सकती है।

विलायती छींट छापनेकी प्रणाली साधारणतः चार प्रकारकी है। १, लकड़ीके छोटे छोटे ठप्पोंको कपड़े पर लगा कर दाबना। २, कई एक छापोंको एक फ्रेममें कस कर मशीन द्वारा दबाना। ३, समतल ताँबेकी छाप। ४, ताँबेकी लम्बी छाप। प्रथम प्रकारका छापा इस देशके छापे जैसा ही है। अब विलायतमें उसका बहुत कम प्रचार है। परन्तु जहां बहुत सूक्ष्म कार्यको जरूरत है, वहां इसी काठके छापेसे हाथसे छींट छापी जाती है। द्वितीय प्रणाली ही ज्यादा प्रचलित है। तृतीय प्रणालीका बहुत ही कम प्रचार है। चतुर्थ प्रकारका छापा ही सबसे उत्कृष्ट और यूरोप, अमेरिका आदिके बड़े बड़े छींटके कारखानोंमें भी उसीका प्रचार पाया जाता है। इसकी स्थूल प्रणाली इस प्रकार है—

एक स्तम्भकी आकृतिका घूमनेवाले रोलर (Press roller)के चारों तरफ छींटके रंगोंको संख्याके अनुसार दो चार या उससे अधिक खोदित ताँबेके चोंगे लगे रहते हैं, रोलरमें छाप नहीं रहती। यह सिर्फ दाब कर कपड़े पर छाप लगता है। इस रोलर और चोंगाओंकी लम्बाई करीब ३ फीट होती है। वाष्पीय यन्त्रसे रोलर और ताँबेके चोंगे घूमते रहते हैं, कपड़ा उस रोलर और प्रत्येक चोंगाके भीतर हो कर आते समय अत्यन्त विशदरूपसे प्रत्येक चोंगाके द्वारा एक एक रंगसे यथास्थानमें छप कर निकलता है। एक बारमें १०।१२ ताँबेके चोंगे लगा कर १०।१२ प्रकारके रंगकी छींट छापनेकी मशीन भी बन गई हैं। परन्तु साधारणतः ३।४ प्रकारके रंगकी छींट ही ज्यादा छपती है। इस तरह एक मशीनमें अत्यन्त थोड़े परिश्रमसे मिनटमें २८ गज तक ३।४ रंगकी छींट भली भांति छापी जा सकती है। सुतरां एक घण्टेके भीतर ही करीब १ मील कपड़ा छप जाता है। भिन्न भिन्न कई एक बेलनोंसे उक्त तमाम ताँबेके चोंगाओंमें मशीन द्वारा ही रंग या मोरचा लगता रहता है, इसलिए छापा बराबर चलता रहता है। पृथक

पृथक् थानोंको एक साथ सी कर फिर उस लम्बे कपड़े-को एक लोहेके डण्डे पर लपेट दिया जाता है। छापते समय उसका एक छोर मशीनमें लगा देते हैं। एक ३ इञ्च लम्बे और १ या २ इञ्च व्यासवाले इस्पातके साँचेको वाष्पीय यन्त्रकी कठोर दाबसे दबा कर कोमल ताँबेके चोंगाओं पर इच्छानुसार बेलबूटे काटे जाते हैं।

अभी तक हमने सिर्फ छींटके यान्त्रिक छापेका विषय ही वर्णन किया है, इसके बाद रासायनिक प्रणाली द्वारा किस प्रकार उसका रंग पक्का किया जाता है, उसका ही संक्षेपमें वर्णन करते हैं। विलायतमें मामूली तौरसे छींटका रंग पाँच तरहसे पक्का किया जाता है।

१। पहिले पहल रंगको शोषण करनेवाले धातुके मोरचेसे कपड़ेमें छाप दे कर बादमें उस कपड़ेको रंगके पानीमें डुबो देनेसे छापा पक्का हो जाता है।

२। तमाम कपड़ा एक तरहके पक्के रंगमें रंग कर बादमें रासायनिक उपायसे उस पर सफेद और भिन्न भिन्न रंगके बेल बूटे छापे जा सकते हैं। पारसी साड़ी आदि इसी तरहसे बनती है।

३। कपड़े पर वर्णप्रतिरोधक किसी पदार्थ द्वारा चाप लगा कर पीछे उसे रंगके पानीमें डुबोनेसे छाप लगे हुए स्थान सफेद रह जाते हैं। नीले रंगकी बहुतसी छींटें इसी तरह बनाई जाती हैं।

४। कपड़े पर रंग और मोरचेको एक साथ छाप लगा कर रंगको भापके उत्तापसे पक्का करना।

५। 'नाइट्रोमिउरियेट् आफ् टीन' नामक रांगके नमकके साथ कपड़े पर रंग लगानेसे उसका वर्ण उज्ज्वल होता है; किन्तु इस प्रकारकी छींटका रंग अस्थायी है।

फिटकरी, लोहा और रांग ये तीनों पदार्थ ही रंग पक्का करनेमें प्रधान हैं। फिटकरी एसिटेट आफ् आलु मिनाकी हालतमें, लोहा एसिटेट आफ् आयरन्की अवस्थामें और रांग नाइट्रोमिउरियेट, अक्सिमिउरियेट् अथवा पारक्लोराइड् आफ् टीन्की हालतमें व्यवहृत होता है। एसिटिक् एसिडमें यह गुण है कि, वह उक्त धातुओंके मोरचेको भली भाँति गला देता है और कपड़े पर लगनेके बाद बड़ी आसानीसे अलग हो जाता है, तथा वह मोरचा अद्रवणीय अवस्थामें कपड़े पर लगा रहता है। इसके सिवा अम्लमें कपड़ेका कुछ अनिष्ट भी नहीं करता। अन्यान्य अम्ल मोरचेको गला तो अवश्य देते हैं, परन्तु वे उग्र क्रियाको उत्पादन करते हैं और उससे कपड़ेके सूत कमजोर होते हैं। फिटकरीसे रंगका पानी बनानेमें नाना प्रकारके पदार्थ भिन्न भिन्न परिमाणसे व्यवहृत होते हैं। हम यहां उनका कुछ उल्लेख करते है। वस्तुतः उनका मूल एक ही है।

खौलता हुआ गरम पानी—२५० सेर। फिटकरी—५० सेर। दानादार सोडा—२० सेर। सीसशर्करा (Acetate of lead) ३७½ सेर।

पहले गरम पानीमें फिटकरीको गला कर उसमें क्रम क्रमसे सोडा मिलाना चाहिये। पानीमें उफान आनेके बाद (पानीके स्थिर हो जाने पर) सीसशर्कराको अच्छी तरह पीस कर उसमें एक साथ डाल देना चाहिये। और फिर कर्छुलसे बराबर टारते रहना चाहिये। कुछ देर तक रखनेसे सीसा आदि अद्रवणीय अवस्थामें नीचे जम जायगा। ऊपरके स्थिर पानीको खौला कर गोंदसे गाढ़ा करनेसे ही वह लाल रंगका मसाला बन जायगा। इस पानीमें थोड़ी बहुत फिटकरी अपरिवर्तित अवस्थामें रह जाती है, इसलिए सम्पूर्ण फिटकरीको परिवर्तित करना हो, तो सीसशर्करा ८२ सेर डालनी चाहिये।

१०० भाग फिटकरी पानीमें गला कर उसके साथ १५० भाग पाइरोलिग्नाइट् आफ् लाइम मिला कर पानी बनाया जाता है।

फिटकरी ४ भाग और क्रिम् आफ् टार्टर १ भाग आवश्यकतानुसार पानीमें गलानेसे भी पानी बन सकता है। ५ सेर पटाश और ४ सेर चूना (Quicklime) दोनोंको २५ सेर पानीमें एक घण्टा तक उबाल करके स्थिर हो जाने पर उसके ऊपरका पानी निकाल लेना चाहिये। फिर उस पानीको उबालना चाहिए। उबालते उबालते उसका आपेक्षिक गुरुत्व १·३२ होने पर उसमें ७ सेरमें ५ सेर फिटकरी मिलानी पड़ती है। तब सलफेट् आफ् पटासके दाने बंध जाते हैं। छान लेनेसे फिटकरीका पानी बनता है। ऊपर जो माप वा तौल

लिखी गई है, उसमें थोड़ा बहुत फर्क रह जाय तो विशेष कुछ हानि नहीं होती।

लोहेसे रंगका पानी पाइरोलिग्नाइट आफ् लाइम (Pyrolignite of lime) और हीराकस मिला कर बनाया जाता है। सीसशर्कराके योगसे हीराकसके गन्धकद्रावकको हरण करनेसे एसिटेट् आफ् आयरन् अर्थात् लोहेके छापनेका पानी बनता है। सिर्का या एसिटिक् एसिडमें छोटे छोटे लोहेके टुकड़े बहुत देर तक डुबा रखनेसे भी एसिटेट् आफ् आयरन् बन जाता है।

रांगसे छापेका पानी बनाना हो, तो रांगको हाइड्रोक्लोरिक् एसिडमें गलाना चाहिये। एसिडमें रांगको गलानेसे वह गल कर क्लोराइड आफ् टीन नामक रांगका लवण बन जाता है। उसका सम्पूर्ण अम्ल दूर करना हो, तो ज्यादा रांग दे कर खौलाना चाहिये।

एक मजबूत मिट्टीके बर्तनमें ५ सेर पानी रख कर उसमें ५ सेर सोरा और ३ सेर मिउरियाटिक् एसिड मिलाना पड़ता है। अच्छी तरह मिल जाने पर २।३ दिन क्रम क्रमसे ५ तोला रांग उसमें गलाना चाहिये। सारा रांग एक साथ डालनेसे उग्र रासायनिक क्रिया हो कर पानी खराब हो जाता है। उसका रंग घोर लाल करना हो तो उसमें और भी ज्यादा रांग देना चाहिये।

लाक्षाका रंग पक्का करनेके लिए मिउरियाटिक् १५ सेर, पानी १० सेर और नाइट्रिक एसिड ५ सेर, इनको एक साथ मिला कर उसमें ३ सेर रांग देना पड़ता है।

फीके लाल रंगके ५ सेर मिउरियाटिक् एसिडमें १ सेर रांगके दाने गलानेसे ही जल बन जाता है।

ऊपर लिखे हुए छापनेके पानीको मैदा या गोंदसे गाढ़ा कर उससे कपड़े पर छाप लगाई जाती है। गोंदके न रहनेसे उक्त पानी फैल जाता है और फूल नष्ट या अस्पष्ट हो जाता है। उपकरणोंके परिमाणके अनुसार रंग फीका और गाढ़ा होता है। मसालेको खूब घना कर उसमें गोंद डालनेसे रंग घोर होता है। छापनेके बाद जल्दी जल्दी सूख जानेसे मसाला कपड़े पर अच्छी तरह लगने नहीं पाता, इसलिए छापेके घर जहां तक हो गोले रक्खे जाते हैं। इन घरोंका उत्ताप ६५० से ७५० (फा०) तक होता है। वस्त्र छप जानेके बाद वे ३।४ दिन तक सुखाये जाते हैं, तथा पानीसे भी धो लिए जाते हैं। कपड़े पर धातुके मोरचेकी छाप रहने पर भी उसको गोबरके पानीमें धो लिया जाता है। यह कार्य गन्दा है, इसलिए गोबरकी जगह लोग अन्यान्य पदार्थ काममें लाते हैं। इसके बाद कपड़ेको बकायन, मजीठ आदिके पानीमें डुबाना चाहिये।

रंगका पानी यथोपयुक्त गाढा रखना चाहिये। रंग घरका उत्ताप भी ६५से ७५ (फा०) तथा वायुको जलीय वाष्पपूर्ण रखना ही उचित है। किसी किसी रंगके पानीमें कुछ अम्ल रह जाता है। उसको नष्ट करनेके लिए रंगके पानीमें थोड़ी-सी खड़िया मट्टी अथवा कार्वनेट् आफ् सोड़ा मिला देना चाहिये। सुदक्ष रंगरेज लोग यथा परिमाण उक्त पदार्थोंको मिलाते हैं, अन्यथा परिमाणसे अधिक मिलानेसे रंग नष्ट हो जाता है। रंगके पानीमें कपड़ेको प्राय: १५ मिनट मृदुतापसे उबाल करके उसे निचोड़ कर साफ पानीमें धो लेनेसे बेल-बूटोंके सिवा तमाम जमीनका रंग छूट जाता है। कहना फिजूल है कि, विलायतमें ये सब काम मशीनोंसे ही होते हैं।

अन्यान्य प्रकारके छींट बनानेकी प्रणाली भी प्राय: ऐसी ही हैं। सिर्फ उनके उपकरण भिन्न प्रकारके हैं तथा कहीं कहीं प्रक्रियामें भी थोड़ा बहुत अन्तर है।

रसायनशास्त्रकी उन्नतिके साथ साथ अनेक तरहके वर्ण और उनसे पक्के रंगकी छींट बनानेके उपायोंका आविष्कार हो रहा है। पहले केवल उद्भिज्ज वर्ण द्वारा ही कपड़े रंगे जाते थे, लाक्षा नामक जान्तव वर्ण भी व्यवहृत होता था। १७१० ई०में डिसबक् नामक बार्लिन नगरनिवासी एक रासायनिकने प्रूसियान्-ब्लू (Prussian blue) नामके खनिज वर्णका आविष्कार किया था। इसके बाद अन्यान्य खनिज वर्ण भी निकलने लगे तथा उनसे कपड़े आदि रंगे जाने लगे।

१८२६ ई०में जर्मनके रासायनिक अनभार्डर्बेन (Unverderben) ने ऐनिलाइन (Aniline) नामक पदार्थका आविष्कार कर छींटको बहुत कुछ उन्नति की थी। उन्होंने पहिले पहल नीलको चुआ कर ऐनि-

लाइन बनाई थी। शीघ्र ही इससे कपड़े का रंग पक्का करनेका उपाय निकाला गया। अन्तमें गैस बननेके कारखानेके अलकतरासे बहुत अच्छी ऐनिलाइन बनने लगी। मञ्जिष्ठाकी भाँतिका रंग भी अलकतरासे ही बनता है।

फिलहाल विलायतके नानास्थानोंमें बड़े बड़े छींटोंके कारखाने खुल गये हैं तथा उनके मालिक भी नाना प्रकारकी नूतन नूतन वर्णकी छींट बनाने लगे हैं। कुछ भी हो, उन सबका स्थूल मर्म प्रायः एकसा ही है। वहांके छींटोंके कारखाने यहां जैसे नहीं हैं। प्रायः प्रत्येक बड़े कारखानेमें एक एक रसायनविभाग है। वहां सब तरहके रंग, मसाले अन्यान्य उपकरण तथा परीक्षा करनेकी अनेक प्रकारकी मशीनें सर्वदा तयार रहती हैं। रासायनिकगण उनके द्वारा नूतन नूतन प्रणाली और रंगोंका आविष्कार करते रहते हैं। प्रसिद्ध कारखानेवाले दूसरे कारखानोंमें व्यवहृत अर्थात् उस नमूनेकी छींट नहीं बनाते; इसलिए वहां नये नये बेलबूटे और चित्रादिके नमूने निकालनेके लिए सुदक्ष आदमी नियुक्त रहते हैं। वे सिर्फ नये नये बेल बूटे और चित्रादि बनाते रहते हैं। और एक विभागमें उक्त नमूनोंमेंसे अच्छे अच्छे छाँट कर उनको काष्ठ या ताम्रफलकादि पर खोदा जाता है। इसके बाद कपड़े की परीक्षा करना, छापना, रंगना, सुखाना, माड़ देना, मुलायम करना, गठें बाँधना इत्यादि प्रत्येक कार्यके लिए पृथक् पृथक् विभाग हैं। इनके सिवा मशीनोंकी मरम्मत करने इत्यादि कामके लिए एक एक शिल्प-विभाग भी रहता है, जिसमें हर वक्त सब तरहके कलपुर्जे बन कर तयार रहते हैं। ऐसे अनेक कार्यविभागोंके रहनेके कारण ही विलायतमें एक एक छींटके कारखानेमें इतनी अपर्याप्त छींट बना करती है।

भारतवर्षमें विलायती छींटकी आमदनी किस तरह बढ़ी है, उसकी एक तालिका नीचे दी जाती है।

किस वर्षमें—	कितने रुपयेकी छींट आई।
१८६६-६७	२,५७,६८,८४०) रु०
१८७५-७६	२,८३,७२,५०६) रु०
१८८८-८९	५,६२,२१,८१७) रु०

शेषोक्त वर्षमें भारतवर्षसे कुल ४३,१८,७४१) रुपयेको छींट (खारुवा आदि सहित) विलायतको रफ्तनी हुई।

२ पानी आदिकी पड़ी हुई बूंद वा उसका चिह्न जो किसी चीज पर पड़ जाय। ३ जलकण, सीकर, जल या और किसी द्रवपदार्थको सूक्ष्म बिन्दु वा बूंद।

छींटा (हिं० पु०) १ जलकण, सीकर। २ छोटी छोटी बुन्दोंकी वृष्टि, झड़ी। ३ वह चिन्ह जो किसी द्रव पदार्थका पड़ा हो। ४ दम, चण्डूकी एक मात्रा। ५ छलका आक्षेप, छिपा हुआ ताना।

छींदा (हिं० स्त्री०) छीमी, कली।

छी (हिं० अव्य०) १ घृणासूचक शब्द, वह शब्द जिसे घृणा प्रगट की जाय। (पु०) २ वह शब्द जो धोबी कपड़ा धोते समय घाट पर मुंहसे निकालता है।

छीका (हिं० पु०) १ एक प्रकारका जाल। यह रस्सियोंका बना हुआ रहता है और छतमें इसलिए लटकाया जाता है कि उस परकी वस्तु कुत्ते या बिल्ली आदि न पा सकें। २ वह खिड़की जिसमें जाली दी हुई है। ३ एक प्रकारका जाल जो बैलोंके मुंहमें कभी कभी पहनाया जाता है। ४ एक प्रकारका पुल जो रस्सियोंका बना हुआ रहता है, झूला। ५ बांस या पतली टहनियोंका बना हुआ टोकरा, छिटनी, खंचिया।

छीछड़ा (हिं० पु०) १ मांसका खराब और निकम्मा टुकड़ा। २ पशुओंके मलकी थैली।

छीछालेदर (हिं० स्त्री०) दुर्दशा, दुर्गति, खराबी।

छीज (हिं० स्त्री०) घाटा, नुकसान, कमी।

छीजना (हिं० क्रि०) १ क्षीण होना, ह्रास होना, घटना, कम होना।

छीट (हिं० स्त्री०) छींट देखो।

छीटा (हिं० पु०) १ एक प्रकारका टोकरा जो बांस या टहनियोंका बना हुआ होता है, खाँचा। २ चिलमन, बाँसकी फट्टियोंका परदा, चिक।

छीतना (हिं० क्रि०) १ बिच्छू, भिड़ आदिका डंक मारना। २ कूटना, मारना।

छीतस्वामी (हिं० पु०) वे वैष्णवभक्त जिन्हें अष्टछापके चिह्न थीं। ये वल्लभाचार्यके शिष्य थे। इन्होंने व्रज-

सम्बन्धी बहुतसे पद रचे हैं जो इनके सम्प्रदायके लोग अब तक गाते हैं। इनका जन्म १५६७ ई०में हुआ था।

छौना (देश०) छेता, औरतके ससुराल जानेकी साइत।

छौतोछान (हिं० वि०) छिन्नभिन्न तितर बितर।

छौदा (हिं० वि०) १ छिद्रयुक्त, जिसमें बहुतसे छेद हों, झाँझरा। २ जो सघन न हो, जो अलग अलग हो, विरल।

छौन (हिं० वि०) १ क्षीण, कृश दुबला पतला। २ शिथिल मन्द, मलिन।

छौनचन्द्र (हिं० पु०) क्षीणचन्द्र, द्वितीयाका चन्द्रमा।

छौनता (हिं० स्त्री०) चीनता देखो।

छौनना (हिं० क्रि०) १ छिन्न करना, काट कर पृथक् पृथक् कर देना। २ अपहरण करना, किसी दूसरेकी चीज बलपूर्वक ले लेना। ३ अनुचित रूपसे अधिकारमें लाना। ४ कुटना, रेहना।

छौना छौनी (हिं० स्त्री०) छीना झपटी देखो।

छौप (हिं० वि०) १ क्षिप्र, तेज, वेगवान्। (स्त्री०) २ चिन्ह, छाप, दाग। (देश०) ३ मछली पकड़नेका औजार, बंसी, डगन। ४ एक प्रकारका फल।

छौपना (हिं० क्रि०) बंसीमें मछली फँसने पर उसको खींच कर बाहर फेंकना।

छौपी (हिं० पु०) १ जो वस्त्र कपड़े पर बेल बूटे छापता हो। (देश०) २ कबूतर आदि उड़ानेकी लम्बी छड़ी।

छौपी छौपीगर)-छींट छापनेवाली एक जाति। इस जाति के लोग बहुत ही कम पाये जाते हैं। खेरा और काशी के आसपास इन लोगोंका वास है। अलीगढ़ आगरा इत्यादि शहरोंमें भी ये पाये जाते हैं। कपड़े पर छींट छापना ही इनका मुख्य काम है। छौपीगर अपनेको राठोर राजपूतवंशके बतलाते हैं। इनको भावसार भी कहते हैं।

छौबर (हिं० स्त्री०) बेलबूटेदार वस्त्र, मोटी छींट।

छौर (हिं० पु०) १ चौ देखो। (स्त्री०) २ कपड़े का छोर ३ कपड़े पर डालनेका चिन्ह।

छौलना (हिं० क्रि०) छोलना देखो।

छौलर (हिं० पु०) १ कुंएके पास खुदा हुआ गड्ढा, छिछला, छिलारी। २ वह गड्ढा जो बहुत गहरा न हो।

छुआछूत (हिं० स्त्री०) १ अस्पृश्य स्पर्श, अशुचि संसर्ग। २ छूतका विचार।

कुईखदान—मध्यप्रान्तका एक राज्य। यह अक्षा० २१° २' एवं २१° ३८' उ० और देशा० ८०° ५३' तथा ८१° ११' पू०के मध्य अवस्थित है। इसकी चारो ओर खैरागढ़ तथा नन्दगांव राज्य और दुर्ग जिलेकी जमीन्दारी लगी है। क्षेत्रफल १५४ वर्गमील है। कुईखदान नामक नगर इस राज्यका सदर है। उसकी लोकसंख्या प्रायः २०८५ होगी। राजा वैरागी है। खृष्टीय १८वीं शताब्दीके प्रायः मध्यभागको महन्त रूपदासने पारपोदीस्थ कौंडका-के जमीन्दारसे यह राज्य एक ऋणके बदले पाया था। १७८० ई०को इनके उत्तराधिकारी तुलसीदास नागपुरके भौंसला राजा द्वारा कौंडकाके जमीन्दार माने गये। १८६५ ई०को कुईखदानके अधिपतिको राजा पदवी मिली। राज्यकी आबादी प्रायः २६३६८ है। इसमें १०७ गांव बसे हैं। छत्तीसगढ़ी भाषा व्यवहार करते हैं। राज्यकी पूरी आमदनी ७३०००) रु० है।

कुईमुई (हिं० स्त्री०) एक कटीला पौधा, लज्जालु, लज्जावती।

कुगेर—एक पतित राजपूत जाति। ये जाड़ेजा राजपूत वंशीय हैं। इनका वास कच्छ प्रदेशमें अधिक है।

कुच्छी (हिं० स्त्री०) १ पतली पोली छोटी नली। २ वह नली जिसमें जुलाहे तागा लपेटते हैं, नरी। ३ आभूषणविशेष, एक गहना जो कानमें पहना जाता है। इसका आकार लौंगसा होता है, नाकको कील, लौंग। ४ एक तरहकी पतली नली जिसका एक छोर गिलासकी तरह चौड़ा होता है। यह एक बरतनसे दूसरे बरतनमें तेल आदि डालनेके काममें आता है, कीप।

कुकुका (सं० स्त्री०) कुकु इत्यव्यक्तशब्दं कायति कुकु कोक। कुकुन्दरी, छछूंदर।

कुकुन्दर (सं० पु०) कुकुमित्यव्यक्तशब्दो दीर्यते निर्गच्छत्यस्मात् कुकुम-दृ अपादाने अप्। मूषिकभेद, छछूंदर।

"कुकुन्दरैर्वाविद्धु भक्षो वीवालभोविकृभवम्।" (सुश्रुत)

कुकुन्दरि (सं० पु०) कुकुम्-दृ-इन्। मूषिकभेद, छछूंदर।

"कुकुन्दरिः शुभान् गन्धान् पत्रशाकन्तु बर्हिणः।" (मनु १२।६५)

मनुके मतसे कस्तूरी प्रभृति सुगन्धद्रव्य अपहरण करनेसे कुकुंदर योनिमें जन्म होता है।

कुकुन्दरी (सं॰ स्त्री॰) कुकुन्दर स्त्रियां ङोप्। १ चूहेको आकारका एक जन्तु, गन्धमूषिका, छछुंदरी। पर्याय—गन्धमूषा, चिक्कवेश्य, नकुल पुंस्त्व, गन्धमूषिक, राजपुत्री, प्रतिमूषिका, सुगन्धमूषिका, गन्धाखु, गन्धशुण्डिनी शुण्डिमूषिका, गन्धनकुल, सुखु। (Mole)

यह रातमें कीट-पतङ्गोंको खाया करती है और दिनमें अंधेरे गड्ढे में छिपी रहती है। रात्रिमें शिकार ढूंढ़ते समय यह छू छू शब्द करती है। इन्हें प्रायः घरके आंगनोंमें तिलचट्टा पकड़ते देखा जाता। इनकी देहसे कुछ कुछ मृगनाभि जैसी, किन्तु अत्यन्त अप्रीतिकर तीव्र गन्ध निकलती है। यह गन्ध इतनी तीक्ष्ण होती है कि, किसी पदार्थके ऊपरसे कुछुंदरी चली जानेसे, बहुत देर तक उसमें कुकुन्दरीकी दुर्गन्ध आती रहती है। इसके स्पर्शसे खानेकी चीज तो बिल्कुल ही नष्ट हो जाती है और तो क्या, ढके हुए पात्र या डाट लगी हुई बोतलके पाससे भी अगर यह निकल जाय तो उसके भीतरकी चीज दुर्गन्धयुक्त हो जाती है। इसका रंग चूहे जैसा होता है।

कुकुन्दरीके काटनेसे कभी कभी शरीर विषाक्त हो जाता है। प्रवाद है कि, सांप कुकुन्दरीके काटनेसे मर जाता है। इसके सिवा यह भी कहा जाती है कि यदि सांप कुकुन्दरीको पकड़ ले तो वह दो तरहकी विपत्तिमें पड़ जाता है। अगर खा ले तो मर जाय और छोड़ दे तो अन्धा हो जाता है। कुछ लोगोंका विश्वास है कि, इससे तलवार छू जानेसे उसका लोहा बिगड़ जाता है और फिर उससे अच्छी कटाई नहीं होती। तन्त्रोंके प्रयोगोंमें इसकी आवश्यकता होती है। भारतमें छछुंदरकी जातिके और भी बहुतसे जन्तु हैं।

२ एक तरहका ताबीज। यह राजपूतानाकी तरफ पहना जाता है। इसका आकार छछुंदर जैसा होता है। यह सोने या चांदीसे बनया जाता है पुरोहित इसे यजमानोंको पहनाते हैं। वहांके लोगोंका विश्वास है कि, इसके पहननेसे सब तरहके अनिष्टोंसे रक्षा होती है।

कुच्छ (सं॰ स्त्री॰) कुकुका, छछूंदर। यात्राकालमें छछूंदर यदि बाईं ओर रहे तो यात्रा शुभ होती है।

कुटकारा (हिं॰ पु॰) मुक्ति, रिहाई। २ निस्तार, मोक्ष, बचाव, उद्धार। ३ किसी कार्यभारसे मुक्ति।

कुटैयां (हिं॰ स्त्री॰) भाँड़ों और स्वांग करनेवालोंकी चमत्कारपूर्ण उक्ति।

कुट्टा (हिं॰ वि॰) १ जो बँधा न हो। २ एकाकी, अकेला। ३ जिसका हाथ खाली हो, जिसके साथ कुछ माल असबाब न हो।

कुट्टी (हिं॰ स्त्री॰) १ मुक्ति, रिहाई, कुटकारा। २ अवकाश, फुरसत। ३ कार्यालयके बंद रहनेका दिन, नातील ४ वह आज्ञा जो कहीं जानेके लिये ली जाती है। ५ भाँड़ोंकी बिनोदपूर्ण बात। ६ मौकूफी, कामसे कुड़ाये जानेका भाव क्रिया।

कुड़वाना (हिं॰ क्रि॰) मुक्ति करनेके लिये प्रेरित कराना, छोड़नेका काम कराना।

कुड़ाई (हिं॰ स्त्री॰) १ मुक्त करनेकी क्रिया, छोड़नेका काम। २ किसी मनुष्य या वस्तुके छोड़ने बदले लिया हुआ धन।

कुड़ाना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी वस्तुको छोड़ानेकी कोशिश करना। २ दूसरेके अधिकारसे अलग करना। ३ किसी प्रवृत्तिको दूर करना। ४ नौकरीसे अलग करना, बरखास्त करना। ५ किसी वस्तु पर पुती हुई वस्तुको दूर करना। ६ छोड़नेका काम कराना, कुड़वाना।

कुद्र (सं॰ क्लो॰) छद रक् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ प्रतीकार, बदला। २ रश्मि, किरण, प्रकाश।

कुद्रघण्टिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रघण्टिका देखो।

कुधा (हिं॰ स्त्री॰) क्षुधा, भूख।

कुप (सं॰ पु॰) कुप् घञ् र्थे क। १ क्षुप, भाड़ी। २ वायु। ३ स्पर्श। ४ युद्ध, लड़ाई। (त्रि॰) ५ चपल, चंचल।

कुपना (हिं॰ क्रि॰) छिपना देखो।

कुपाना (हिं॰ क्रि॰) छिपाना देखो।

कुबुक (सं॰ क्लो॰) चिटक, ठुड्डी।

कुभित (हिं॰ वि॰) १ चञ्चलचित्त, विचलित। २ घबराया हुआ।

कुरण्ड (सं॰ पु॰) पक्षी, चिड़िया।

छुरा (सं० स्त्री०) छुरति रञ्जयति नाशयति दुर्गन्धादिकमिति वा छुर-क स्त्रियां टाप्। १ सुधा, पोतनेका चूना। २ चुर्ण, चूर।

छुरा (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, एक हथियार। यह मारने या आक्रमण करनेके काममें आता है। २ नाईके बाल मूंड़नेका हथियार उस्तरा।

छुरिका (सं० स्त्री०) छुरति छिनत्ति छुर-क्कन्। यद्वा छुरा स्वार्थे कन् टाप् पूर्व ह्रस्वश्च। अस्त्रविशेष, छुरी। इसके पर्याय—असी, असिपुत्री, असिधेनुका, छुरी, खुरी, छुरी, कृपाणिका, धेनुपुत्री और धूरिका हैं।

छुरिकापत्री (सं० स्त्री०) छुरिकेव पत्रमस्याः ततो ङीप्। श्वेतवृक्ष, सफेद अपराजिताका पेड़।

छुरित (सं० त्रि०) छुर-क्त। १ खचित, रञ्जित, जड़ा हुआ, खुदा हुआ। २ लास्य नामक नृत्यक एक भेद। ३ विद्युत्तरङ्ग, बिजलीकी चमक।

छुरिपत्रक (सं० क्ली०) वृश्चिकालीलता, बरहन्ता लता।

छुरिपत्रिका (सं० स्त्री०) वृश्चिकालीलता, बरहन्ता।

छुरिपत्री (सं० स्त्री०) वृश्चिकाली, बरहन्ता।

छुरी (सं० स्त्री०) छुरति छिनत्ति छुर-क। इगुपधज्ञेति। पा ३।१।१३५। ततो ङीप्। छुरिका, छुरी, चाकू। भारतके नानास्थानोंमें छुरी बनती है। बर्द्धमान जिलेके अन्तर्गत काञ्चननगरमें अच्छी छुरी बनती है। अलीगढ़ जिलेके अन्तर्गत हाथरसका चाकू प्रसिद्ध और उसका मूल्य भी कम है। परन्तु काञ्चनगरकी छुरीकी सफाई बहुत अच्छी है, उससे विलायती छुरियां टक्कर खाती हैं।

छुरी—मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलेका ईशानकोणस्थित एक राज्य। इसका परिमाण ३२० वर्गमील है।

छुरीधार (हिं० स्त्री०) हाथी दांतका बना हुआ एक औजार, इसमें जाली कटी रहती है।

छुरीमार—पञ्जाब प्रदेशका एकश्रेणी फकीर। ये साथमें छुरी ले कर घूमते हैं और लोगोंके घर जा जा कर उस छुरीसे अपने शरीरको चीरते फाड़ते हैं। लोग डर कर इनको भीख दे देते हैं। दड़ीवाला, तसमीवाला, दण्डीवाला, छड़ीमार, गुर्जमार नामके और भी कई एक श्रेणीके फकीर हैं।

छुलछुल (अनु० पु०) वह शब्द जो धीरे धीरे पेशाब करनेसे निकलता हो।

छुलकना (हिं० क्रि०) थोड़ा थोड़ा कर पेशाब करना।

छुलकी (अनु० स्त्री०) थोड़ा थोड़ा करके पेशाब करनेकी क्रिया।

छुलछुलाना (हिं० क्रि०) छुलकना देखो।

छुलाना (हिं० क्रि०) स्पर्श कराना।

छुहारबेर (हिं० पु०) पका हुआ बेर।

छुहारा (हिं० पु०) १ अरब सिंध आदि मरु स्थानोंमें होनेवाला एक प्रकारका खजूर। इसके फल बहुत मीठे होते हैं। इसके गुण - पुष्टिकारक, शुक्र और बलवर्द्धक तथा मूर्च्छा, वात और पित्तनाशक हैं, खुरमा, पिंड खजूर। पिंड खजूरका फल। पिण्डखजूर देखो।

छुहारी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका छुहरा जो बहुत छोटा और निकृष्ट होता है।

छुहारी अजवायन (हिं० स्त्री०) वह अजमोदा जो पारससे आती है।

छूंछा (हिं० वि०) १ जिसके भीतर कोई वस्तु न हो, रिक्त, रीता, खाली। २ जिसके पास धन न हो, निर्धन। ३ जिसके भीतर कुछ सार न हो, निःसार।

छू (अनु० पु०) वह शब्द जो मन्त्र पढ़ कर किया जाता हो, मन्त्रकी फूंक।

छूछू (हिं० वि०) तुच्छ, मूर्ख, जड़।

छूट (हिं० स्त्री०) १ मुक्ति, छुटकारा। २ अवकाश, फुरसत। ३ छुड़ौती, वह रुपया जो आसामी या देनदारसे दयावश या और किसी कारणसे न लिया जाय। ४ स्वतन्त्रता, स्वच्छन्दता, आजादी। ५ निःसंकोचसे कही गई उपहासकी बात, गाली गलौज। ६ स्त्री-पुरुषका परस्पर सम्बन्ध, त्याग, तिलाक। ७ बौछार, छींटा। ८ एक प्रकारकी कसरत। ९ किसी कार्यसे सम्बन्ध रखनेवाली किसी बात पर ध्यान न जानेका भाव। १० हर देना जो माफ हो जाय। ११ पटैत, फेंकैत आदिकी वह लड़ाई जिसमें जहां जिसे दांव मिले वह बेधड़क वार करे। १२ वह स्थान जहांसे कबूतरबाज शर्त बद कर कबूतर छोड़े।

छूटना (हिं० क्रि०) १ संलग्न न रहना, अलग हो जाना, दूर जाना। २ ढीला पड़ जाना, अलग होना ३ किसी पुती हुई वस्तुका छूट जाना। ४ मुक्त हो जाना,

छुटकारा होना, रिहाई होना। ५ प्रस्थान करना, चल पड़ना, रवाना होना। ६ वियुक्त होना, बिछुड़ना। ७ बंद होना, न रह जाना। ८ किसी वस्तुसे वेगके साथ निकलना। ९ शेष रहना, बाकी रहना। १० भूल या प्रमादसे किसी वस्तुका कहीं पर प्रयुक्त न होना, रखा न जाना। ११ नौकरीसे अलग किया जाना, बरखास्त होना। १२ किसी पेशा या जीविका न रह जाना। १३ किसी दूर तक जानेवाले अस्त्रका चल पड़ना। १४ रस रस कर पानीका निकलना। १५ किसी ऐसी वस्तुका अपनी क्रियामें तत्पर होना जिसमेंसे कोई वस्तु छींटोंके रूपमें वेगसे बाहर निकले। १६ पशुओंका अपनी मादासे संभोग करना।

छूत (हिं॰ स्त्री॰) १ स्पर्श, संसर्ग, छुवाव। २ अस्पृश्यका संसर्ग, किसी अपवित्र वस्तुका छुवाव। ३ अपवित्र वस्तु स्पर्श करनेका दोष। ४ भूत प्रेतकी छाया।

छूना (हिं॰ क्रि॰) १ एक वस्तुको दूसरे वस्तुमें लगाना या सटाना। २ हाथ लगाना, अनुभव करना। ३ दौड़की बाजीमें किसी दूसरेको पकड़ना। ४ उन्नति करना। ५ धीरेसे मारना। ६ थोड़ा व्यवहार करना, बहुत कम इस्तेमालमें लाना। ७ पोतना, लगाना।

छूरा (हिं॰ पु॰) छुरा देखो।

छूरिका (सं॰ स्त्री॰) छूरी स्वार्थे कन् ह्रस्वः। छूरी, चाकू।

छूरिकापत्री (सं॰ स्त्री॰) छूरिकाइव पत्राणि यस्याः, बहुव्री॰, स्त्रियां ङीप्। वृश्चिकाली लता।

छूरी (सं॰ स्त्री॰) छूरी पृषोदरादित्वात् दीर्घः। छूरी, चाकू।

छेंकना (हिं॰ क्रि॰) १ आच्छादित करना, ढक लेना, स्थान घेरना। २ अवरोध करना, रास्ता बन्द करना, रोकना। ३ रेखाके भीतर डालना। ४ लिखे हुए शब्दों पर लकीर चलाना, मिटाना।

छेक (सं॰ पु॰) छो बाहुलकात् डेकन्। १ गृहासक्त मृगपक्षी आदि, घरके पालतू पशुपक्षी। इसका पर्याय गृह्यक है। (त्रि॰) २ नागर, नगरमें रहनेवाला। (पु॰) ३ शब्दालङ्कारभेद, छेकानुप्रास। कई एक व्यञ्जनोंके स्वरूपतः और क्रमतः एक बार साहश्यको छेकानुप्रास कहते हैं अर्थात् इसमें एक ही चरणमें दो वा अधिक वर्णोंकी आवृत्ति कुछ अन्तर पर होती है। ४ मधुमक्षिका, मधुमक्खी।

छेकापह्नुति (सं॰ स्त्री॰) अर्थालङ्कारभेद, एक अलङ्कार। अलङ्कार देखो।

छेकाल (सं॰ त्रि॰) छेक देखो।

छेकिल (सं॰ त्रि॰) छेक देखो।

छेकोक्ति (सं॰ स्त्री॰) छेकानां विदग्धानामुक्तिः, ६-तत्। वक्रोक्ति, वह लोकोक्ति जो अर्थान्तर गर्भित हो अर्थात् जिससे अन्य अर्थकी ध्वनि निकले। (कुवलयानन्द)

छेड़ (हिं॰ स्त्री॰) १ तंग करनेकी क्रिया। २ व्यङ्ग्य उपहास आदिके द्वारा किसीको दिक् करनेकी क्रिया, चुटकी। ३ दिक् या तंग करनेवाली बात। ४ विरोध, द्वेषता, आपसकी चोटें, रगड़ा, झगड़ा। ५ बजानेके लिए किसी वाद्ययन्त्रका स्पर्श, बाजेमें शब्द उत्पन्न करनेके लिए उसे छूनेकी क्रिया।

छेड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ दबाना, कोंचना। २ तंग करना, दिक् देना। ३ उपहास करना, हंसी दिल्लगी करके खिझाना। ४ कोई कार्य आरम्भ करना, शुरू करना, उठाना। ५ बजानेके लिये बाजेमें हाथ लगाना। ६ छिद्र करना। ७ छू कर भड़काना या तंग करना।

छेड़ा (हिं॰ पु॰) रस्सी, डोरी।

छेत्तव्य (सं॰ त्रि॰) छेदनीय, जो छेदन करने योग्य हो। (मनु ७।१०९)

छेत्तृ (सं॰ त्रि) छेदनकर्ता, जो छेद करता हो।

छेद (सं॰ त्रि॰) छिद् कर्तरि अच्। १ छेदनकारी, छेदने या काटनेवाला। 'स्थाणुच्छेदस्य केदारमाहुः शल्यवतो मृगम्।' (मनु ९।४४) कर्मणि घञ्। २ भाजक, गणितमें भाजक। "छिदं गुणं गुणं छेदम्।" (लीलावती) ३ खण्ड, टुकड़ा। "बलाहकच्छेदविभक्तरागमकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्।" (कुमार १।४) भावे घञ्। (पु॰) ४ छेदन, काटनेका काम। 'अभिज्ञाश्छेदपातानां क्रियन्ते नन्दनद्रुमाः।' (कुमार २।४१) ६ नाश, अपगति, ध्वंस। "भेदच्छेदकयोः" (शाकुन्तल २ अङ्क) ७ श्वेताम्बर जैन सम्प्रदायके धर्मग्रन्थोंका एक विभाग।

छेद (हिं॰ पु॰) १ छिद्र, सूराख। २ बिल, खोखला, विवर, कुहर। ३ दोष, दूषण, ऐब।

छेदक (सं॰ त्रि॰) १ छिद्-ण्वुल्। छेदनकर्त्ता, छेदनेवाला, काटनेवाला। २ नाश करनेवाला। ३ विभाजक, भाजक, छेद। (क्ली॰) कान्त लौह, इस्पात।

छेदन (सं॰ क्ली॰) छिद् भावे ल्युट्। १ छेदन, अस्त्र द्वारा काटनेका काम। इसका पर्याय—वर्द्धन, कर्त्तन, कल्पन, और छेद है। 'फलदानान्तु वृक्षाणां छेदने जाप्यमृक्शतम्।' (मनु ११।१४१) २ नाश, ध्वंस। "सनत्कुमारं धर्म्मज्ञं संशयच्छेदनाय वै।" (भारत वन १८१।७) ३ काटने या छेदनेका अस्त्र। ४ कफको दूर करनेवाली औषध। (त्रि॰) छिनत्ति छिद-ल्यु। ५ छेदक, काटनेवाला।

छेदना (हिं॰ क्रि॰) १ बेधना, भेदना। २ क्षत करना, घाव करना। (पु॰) ३ छेद करनेका औजार।

छेदनी (सं॰ स्त्री॰) छिद् करणे ल्युट् स्त्रियां ङीप्। कर्त्तरी, कैंची, कतरनी।

छेदनीय (सं॰ त्रि॰) छिद् कर्मणि अनीयर्। १ छेद्य छेदन करने योग्य। २ कतकवृक्ष, रीठाका पेड़।

छेदा (हिं॰ पु॰) १ घुन नामका कीड़ा। २ अनाजमें घुन लग जानेका रोग।

छेदि (सं॰ त्रि॰) छिनत्ति छिद्-इन। १ छेदनकर्त्ता, काटनेवाला। (पु॰) २ वज्र, बिजली। ३ सूत्रधार, बढ़ई।

छेदित (सं॰ त्रि॰) छेद तारकादित्वादितच् किम्बा छिद्-णिच्-क्त। द्विधाकृत, कर्त्तित, कटा हुआ, चीरा फाड़ा हुआ।

छेदिन् (सं॰ त्रि॰) छेद-इनि उपपदे णिनि। १ छेदयुक्त, कटा हुआ। (पु॰) २ कतकवृक्ष, रीठाका पेड़।

छेदीराम—१ हिन्दीके एक कवि। ये १८३७ ई॰में विद्यमान थे। इन्होंने कविनेह नामक ग्रन्थ छन्दमें प्रणयन किया है।

छेदोपस्थापनचारित्र (सं॰ पु॰) जैनोंके अनुसार सामायिक, छेदोपस्थापन, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात इन पांच चारित्रोंमेंसे एक। पञ्च महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्तिको पालन करनेका नाम छेदोपस्थापनचारित्र है। यह चारित्र दिगम्बर मुनि हो पालन कर सकते हैं।

पंच महाव्रत—१ हिंसा, २ सत्य, ३ अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य और ५ अपरिग्रह। पांचसमिति—१ सम्यगीर्या (सूर्यके उदय होने बाद, जिस स्थानको ओस बरफ आदि पशुओंके भ्रमणसे दूर हो गई हो, उस स्थानसे जीवोंको रक्षा करते हुए गमन करना), २ सम्यग्भाषा (ऐसे मिष्टवचन कहना जिससे दूसरेका हित हो होय), ३ सम्यगेषणा (दिनमें एक बार निर्दोष भोजन करना), ४ सम्यगादाननिक्षेपण (स्थानको अच्छी तरह परीक्षा कर, जहां जीव वा प्राणी नहीं हो, वहीं किसी वस्तुको रखना वा उठाना) और ५ सम्यगुत्सर्ग (ऐसे स्थान पर मलमूत्र क्षेपण करना, जहां त्रस और स्थावर किसी प्रकारके जीवोंको बाधा न पहुंचे)। तीन गुप्ति—१ मनोगुप्ति (मनको सर्वदा आत्मध्यानमें लगा कर स्थिर रखना), २ वाग्गुप्ति (केवलमात्र उतना ही बोलना जिससे अपना और दूसरेका सच्चा हित वा कल्याण हो) और ३ कायगुप्ति (शरीरको स्थिर रखना)। (चर्चाप्रकाशिका ८ भ॰)

छेद्य (सं॰ क्ली॰) छिद् कर्मणि ण्यत्। १ छेदनीय, छेदन करने योग्य, छेदनेके लायक। "शीर्षच्छेद्यमतीहंतात।" (भट्टि) (पु॰) २ कपोतपक्षी, कबूतर। ३ अक्षिरोगके प्रतिषेधका एक उपाय, आँखकी बीमारीको रोकनेका एक तरीका।

रोगीके अन्न पथ्य ले कर स्थिरतासे बैठने पर वैद्यको उसको आखोंमें नमकका चूर्ण डालना चाहिये। इससे जलन पड़ेगी और आखोंसे पानी गिरेगा। रोगीको तिरछा ताकनेके लिए कह कर बडिश (मछली पकड़नेका कांटा) अथवा सूचीसूत्रको चक्षुकी गलीमें लगाना चाहिये। इस समय आंखोंका पानी रोके रहना ही उचित है। फिर उस तीक्ष्णमण्डलाग्र द्वारा हिला-डुला कर वलि उद्धृत करना चाहिये। बादमें ज्वार (यवनाल), त्रिकटु और लवणचूर्णसे स्वेद कर दोनों आंखें बाँध देनी चाहिये। व्रणकी तरह तेलसे इसकी चिकित्सा करनी पड़ती है। तीन दिन पीछे हाथोंके पसीनेसे उसे शोधन करना चाहिये। करञ्जबीज, आंवला और मधुपक्व जलमें, मधु मिला कर उससे दो दिन तक आंखें धोना चाहिये। मधुक, पद्मकेशर, दूब और कल्क द्वारा मस्तक पर शीतल प्रलेप देना उचित है। रोगके कुछ अंश बाकी रह जांय, तो लेख्याञ्जन द्वारा उसका

शोधन कर दें। वलिरोग यदि शुक्ल, नील, लाल या धूमर-वर्णका हो, तो शुक्ररोगकी तरह औषध लगा कर उसका प्रतीकार करना चाहिये। अर्म (एक तरहकी आँखकी बीमारी) रोग मांसबहुल वा कृष्णमण्डलगत होनेसे उसे छेद देना उचित है। नसके ऊपर होनेसे यह अति दुःसाध्य है। मण्डलाग्रद्वारा हिला डोला कर उसे उद्धृत करना चाहिये। नसके ऊपर स्फोटक हो तो अर्मरोगको तरह उस पर नश्तर लगाना चाहिए। (औषधकी व्यवस्था अर्मरोगके समान ही है)

पर्वणाका नामके नेत्ररोगमें नश्तर लगा कर सेंधा नमक और मधुसे प्रतिसारण (अलग) करना चाहिये। शङ्ख, समुद्रफेन, समुद्रज मण्डूकी, स्फटिक, कुरुविन्द, प्रवाल, अश्मन्तक, वैदूर्य मणि, मुक्ता, लौह और ताम्र इनको समान समान पीस करके स्रोतोञ्जनके साथ मिला कर मेषशृङ्गनिर्मित पात्रमें रख कर उससे अञ्जन लगाना चाहिये। इससे अर्म, पिड़का, शिराजाल, बवासीर इत्यादि रोग नष्ट हो जाते हैं। (सुश्रुत ३।१५ अ०)

छेद्यकण्ठ (सं० पु०) पारावत, परेवा, कबूतर।

छेना (सं० पु०) पनीर, फाड़ कर जमाया हुआ दूध। इसके बनानेमें पहले दूध खटाई या फिटकरी द्वारा फाड़ा जाता है। तब फटे हुए दूधको एक कपड़ेमें रख कर निचोड़ते हैं। ऐसा करनेसे पानी अलग निकल जाता और दूधका सफेद भुरभुरा भाग रह जाता है। इसी बचे हुए अंशको छेना कहते हैं। इससे अनेक प्रकारकी मिठाइयां बनाई जाती हैं।

छेनी (हिं० स्त्री०) १ वह लोहेकी कील जिससे पत्थर तोड़ते काटते या छोलते हैं, टांकी। २ एक प्रकारको टांकी जिससे नक्काशी करनेवाले सीधी लकीर बनाते हैं। ३ सोनारोंका एक औजार जिससे फूल आदि बनाते हैं। ४ बड़ी बड़ी पत्तियां बनानेका औजार, बलिस्त। ५ छोटी छोटी पत्तियां बनानेका औजार, दोबर्द। ६ टेढ़ी लकीर बनानेका औजार, तिलरा। ७ गोल महराव काटनेका औजार, डिंगा। ८ बेल और पत्तियां बनानेका यन्त्र, भिर्रा। ९ दोहरी लकीर बनानेका यन्त्र, मलकरना। १० गोल नक्काशी बनानेका औजार, गोटरा। ११ पानके जैसा चित्र बनानेका औजार, पानदार गोटरा। १२ पोस्तेसे अफीम पाँछ कर निकालनेवाली महरनी।

छेमकरण (क्षेमकरण)—ब्राह्मणवंशसम्भूत एक प्रसिद्ध कवि। इनका जन्म १७७१ ई०को बारावाँकी जिलेके धनोली ग्राममें हुआ था। इन्होंने हिन्दीमें रामरत्नाकर, रामास्पद, गुरुकथा, आह्निक, रामगीतमाला, कृष्णचरितामृत, पदविलास, रघुराज-धनाक्षरी, दूत-भास्कर तथा और कई एक ग्रन्थोंकी रचना की है। १८६१ ई०को नब्बे वर्षकी अवस्थामें इनका देहान्त हुआ।

छेमण्ड (सं० पु०) छमु-अदने बाहुलकात् अण्डन् अत एत्वञ्च। पितृहीन बालक, वह लड़का जिसके मा बाप न हों, अनाथ।

छेरना (हिं० क्रि०) अजीर्ण होनेके कारण बार बार दस्त होना।

छेरी (हिं० स्त्री०) छेलिका, बकरी।

छेलक (सं० पु०) छो कर्मणि भेलक्। छाग, बकरा।

छेलिका (सं० स्त्री०) छागी, बकरी।

छेलु (सं० पु०) छो-भेलु। सोमराजी वृक्ष, सोमराजका पेड़।

छेव (हिं० पु०) १ वह आघात जो काटने छीलने आदिके लिये किया जाय, चोट वार। २ जखम, घाव।

छेवन (हिं० पु०) कुम्हारका वह तागा जिससे वह चाक परके बरतनको काटता है।

छेवा (हिं० पु०) १ छीलने या काटनेका काम। २ काटने छीलने आदिके लिये किया हुआ आघात। ३ वह चिह्न जो काटने छीलने आदिसे पड़े, जखम, घाव।

छेहर (हिं० स्त्री०) छाया, साया।

छैल (हिं० पु०) वह व्यक्ति जो अपना अंग खूब सजाता हो, शौकीन, बाँका।

छैल—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इनका जन्म १६९८ ई०में हुआ था। इन्होंने शान्तिरस और शृङ्गार रसको बहुतसी कवितायें रची हैं—

"मेरो अंगिया रङ्गमें बोरी भला कीनो।
मेरी जान भली तुमसे खेलोंगी हो होरी॥
बरजोरी हाथ लगावत छतिया बहुआवत है मोरी।
या हा छैल बर जान दे छैलवा बहुत दिनकी गोरी॥"

छैल चिकनियाँ (देश०) छैल देखो।

छैल छबीला (देश०) १ छरीला नामका पौधा। २ छैल देखो।

छैला (हिं० पु०) छैल देखो।

छोंकर (हिं० पु०) शमीका वृच, सफेद कीकर।

छोंड़ि (हिं० स्त्री०) १ मथानी। २ बड़ा बरतन।

छो (हिं० पु०) १ कृपा, दया। २ क्षोभ, क्रोधजनित दुःख, कोप, गुस्सा। ३ छोह, प्रीति, चाह।

छोकड़ा (हिं० पु०) अपरिपक्व बुद्धिका युवक, लड़का, बालक।

छोकड़ापन (देश०) १ बाल्यावस्था, लड़कपन। २ अज्ञान, नासमझी, नादानी।

छोकड़ी (हिं० स्त्री०) लड़की, कन्या, बेटी।

छोटभैया (हिं० पु०) १ अल्प मर्यादाका मनुष्य, कम हैसियतका आदमी।

छोटा (हिं० वि०) १ आकारमें लघु, डील डौलमें कम। २ सामान्य, जो महत्वका न हो। ३ क्षुद्र, ओछा, जिसका आशय उच्च न हो। ४ जो अवस्थामें कम हो, जो थोड़ी उम्रका हो। ५ जो पद प्रतिष्ठामें कम हो, जो मान मर्यादा, योग्यता, गुण, शक्ति आदिमें न्यून हो।

छोटाई (हिं० स्त्री०) १ लघुता, छोटापन। २ क्षुद्रता, नीचता।

छोटा उदयपुर—बम्बई प्रान्तको रेवाकांठा पोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० २२° २´ तथा २२° ३२´ उ० और देशा० ७३° ४७´ एवं ७४° २०´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल प्राय: ८७३ वर्गमील है। छोटा उदयपुरके उत्तर बारिया राज्य, पूर्व अलीराजपुर, दक्षिण सङ्खेड़ा मह्वासके क्षुद्र राज्य और पश्चिमको बड़ोदाप्रान्त है। यहां पहाड़ और जङ्गल बहुत है। जलवायु अच्छा नहीं। ज्वरका प्राय: प्रकोप रहता है।

स्थानीय राजा चौहान राजपूत हैं। १२४४ ई०को मुसलमानोंके आक्रमण समय अपने राज्यसे निकाले जाने पर इन्होंने गुजरात जा चम्पानेर नगर अधिकार किया था। १४८४ ई०को जब महमूद बेगारने उन्हें चम्पानेरसे भी खदेर दिया, उनमें एक शाखाने बारिया और दूसरीने छोटा उदयपुर राज्य बना लिया। १८५८ ई०को विद्रोह-के समय राजाने तांतिया तोपीके विरुद्ध अस्त्र उठाया था। राजाका उपाधि महारावल है। इन्हें दत्तकपुत्र ग्रहण करनेका अधिकार प्राप्त हुआ है। ६ तोपोंकी सलामी होती है। इस वंशने मोहन जा करके एक दुर्ग निर्माण किया था। पहले यह राज्य गायकवाड़का करद रहा, १८२२ ई०से अंगरेजोंके अधीन हुआ।

इसकी लोकसंख्या प्राय: ६४६२१ है। इस राज्यमें एक नगर और ५०२ ग्राम बसे हैं। यहां खनि और व्यवसायका अभाव है। वरन्तु कहीं कहीं लोहा और मरमर होनेका अनुमान किया जाता है। खास कर लकड़ी; रूई और महुवेके फूलोंकी रफ्तनी होती है।

स्थानीय राजा द्वितीय श्रेणीभुक्त हैं। राज्यकी आमदनी प्राय: २ लाख है। ८८०८) रु० अंगरेज सरकार द्वारा गायकवाड़को करस्वरूप दिया जाता है।

छोटाकुंवार (हिं० स्त्री०) महिसुर प्रान्तमें होनेवाला एक प्रकारका ग्वारपाठा जिसकी पत्तियां बहुत छोटी छोटी होती हैं। इसकी पत्ती चीनीके साथ मिला कर खानेसे दस्तकी बीमारी जाती रहती है।

छोटा कचूर (हिं० पु०) गन्धपाली, कपूर कचरी।

छोटा कपड़ा (हिं० पु०) अंगिया, चोली।

छोटाचांद (हिं० पु०) लताविशेष, एक लता। इसकी जड़ सांपके विषको अति शीघ्र दूर करती है। जड़को सुखा कर और चूर्ण करके सांपके काटे हुए स्थान पर लगाने और उसका काढ़ा २४ घंटेमें कुछ छटांक तक पिलानेसे रोगी शीघ्र ही होशमें आ जाता है।

छोटा नागपुर—विहार प्रान्तका एक विभाग। यह अक्षा० २१° ५८´ तथा २४° ४६´ उ० और देशा० ८३° २´ एवं ८६° ५४´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें ५ जिले लगते हैं। १८३१-२ ई०को कोल-विद्रोहके बाद १८३३ ई०के १३वें नियमानुसार यह विभाग साधारण व्यवस्थासे रहित किया गया और गवर्नर जनरलका एक एजेण्ट-को प्रबन्धका अधिकार मिला। १८५४ ई०से फिर एक कमिश्नर उसका इन्तजाम करने लगे। लोकसंख्या प्राय: ४६२८७८२ है। लोग अपनी मुण्डा और द्राविड़ी भाषा छोड़ हिन्दी, उड़िया तथा बङ्गला व्यवहार करने लगे हैं। यहां १३ नगर और २३८७६ ग्राम बसे हैं। छोटा नागपुरमें कोयला खूब निकलता है।

छोटा नागपुर—छोटा नागपुर विभागका देशी राज्य। यह अक्षा० २२° २८´ एवं २२° ५४´ उ० और देशा० ८५° ३८´

तथा ८६° ०´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ६०२ वर्गमील है। इसके उत्तर रांची तथा मानभूम जिला, पूर्व एवं पश्चिम सिंहभूम और दक्षिणको उड़ीसेका मयूरभञ्ज राज्य तथा सिंहभूम है। इस राज्यमें खरसावां और सरायकेला नामको दो रियासतें शामिल हैं।

छोटापन (हिं० पु०) १ लघुता, छोटा होनेका भाव। २ बालगावस्था, लड़कपन, बालपन।

छोटा-पाट (हिं० पु०) एक प्रकारका रेशमका कीड़ा।

छोटा-पीलू (हिं० स्त्री०) छोटा-पाट देखो।

छोटा बैठान—वृन्दावनका स्थानविशेष। वृन्दावनमें बैठान और छोटा बैठान नामक दो ग्राम हैं। जावट ग्रामसे उत्तर बैठान और बैठानके उत्तर छोटा बैठान गांव है। इसके मध्यमें कृष्णकुण्ड और कुन्तलकुण्ड नामक दो कुण्ड अवस्थित हैं। यहां श्रीकृष्णने सखियोंके साथ विहार किया था। (वृन्दावनलीला २४ अ०)

छोटा सिम्बुला—बङ्गाल प्रान्तीय जलपाइगुड़ीका एक पर्वतशिखर। यह अक्षा० २६° ४८´ उ० और देशा० ८८° ३४´ पू०में बक्सा छावनीसे कोई ७ मील दूर पड़ता है। इसको उंचाई समुद्रतलसे ५६८५ फुट है। यह शिखर अंगरेजी सीमाको भोट देशसे पृथक् करता है।

छोटिका (सं० स्त्री०) वह शब्द जो तर्जनी और अङ्गुष्ठा अङ्गुलीके बजानेसे होता हो, चुटकी।

छोटिन (सं० पु०) कुटति नीचजातितया खल्पी भवति छुट-णिनि। कैवर्त देखो।

छोटीइलायची (हिं० स्त्री०) गुजराती इलायची।

छोटी देवली—बुंदेलखण्डका एक गांव। यह जोकाही ष्टेशनसे १६ मील पश्चिम पड़ता है। यहां बहुतसे सुन्दर प्राचीन मन्दिरोंका भग्नावशेष पड़ा है। एकवर्ग हस्त प्रशस्त और ७ फुट २ इञ्च ऊंचा एक स्तम्भ है। इसमें बहुत पुरानी ११ छत्र लिपियां विद्यमान हैं, परन्तु समस्त ही पढ़नेमें नहीं आतीं। प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्गहम साहबके अनुमानमें उसको कलचुरि-वंशीय राजा शङ्करने स्थापित किया होगा।

छोटी भागीरथी—बङ्गालके मालदह जिलेमें गङ्गाकी एक शाखा। पहले गङ्गाका प्रधान स्रोत यही था। आजकल वर्षाकाल व्यतीत इसमें जल नहीं रहता। ग्रीष्मकालमें यह शुष्क हो जाती है। गङ्गाकी भांति छोटी भागीरथी भी पुण्यतीया कहलाती है। यह नदी प्रथम पूर्वाभिमुख और पीछे दक्षिणमुख १३ मील फैल गौड़नगरका ध्वंसावशेष वेष्टन करके गङ्गाकी पागली नामक अपर शाखासे मिली, फिर प्रायः १६ मील दक्ष एक द्वीपको घेर करके पुनर्वार गङ्गाके साथ मिलित हुई है।

छोटी मैन (सं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़ियाका नाम।

छोटी रकरियो (हिं० स्त्री०) पंजाबके हिसार आदि स्थानोंमें मिलनेवाली एक घास। यह चार पांच वर्ष तक रहती है। घोड़े इसे बड़ी रुचिसे खाते हैं।

छोटी सहेली (हिं० स्त्री०) एक खूबसूरत पक्षीका नाम।

छोटी सादड़ी—उदयपुर राज्यके छोटी सादड़ी जिलेका सदर। यह अक्षा० २४° २३´ उ० और देशा० ७४° ४३´ पू०में उदयपुर नगरसे ६६ मील दूर पड़ता है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ५०५० है। नगर चारों ओरसे प्राचीराहृत है। छोटी सादड़ी जिला उदयपुर राज्यमें बहुत उपजाऊ है। यहां एक डाकखाना, एक देशी भाषाका प्राथमिक स्कूल और एक शफाखाना बना हैं।

छोटी हाजिरी (हिं० स्त्री०) प्रातर्भोजन, भारतीय अंगरेजोंका प्रातःकालका कलेवा।

छोटू राम तिवारी—बनारसके रहनेवाले एक सुविख्यात पण्डित। इनका जन्म १८४० ई०में और देहान्त १८८७ ई०में हुआ था। ये बहुत दिनों तक पटना कालेजके संस्कृतके अध्यापक थे। हिन्दीके पद्यमें इनकी अच्छी योग्यता थी। इनकी बनाई हुई रामकथा नामक पुस्तक प्रशंसनीय है। इस तरहकी भावपूर्ण तथा ललित पुस्तक आज तक किसी कवि वा पण्डितने प्रणयन नहीं की है। भारतवर्षमें इनका नाम कौन नहीं जानता है, इनके पिताका नाम देवीदयाल त्रिपाठी था। इनके दो भाई थे, बड़ेका नाम शीतलप्रसाद और छोटेका गोपीनाथ था।

छोटेलाल कवि-एक दिगम्बर जैन कवि। इनके बनाये हुए ग्रन्थोंमेंसे चौबीसीपूजा, पञ्चकल्याणपूजा और नित्यनियमपूजा नामक तीन ग्रन्थ मिलते हैं। इनकी जाति जैसवाल थी। उक्त ग्रन्थोंके सिवा इन्होंने जैनोंके प्रसिद्ध सूत्र-

ग्रन्थ श्रीतत्त्वार्थसूत्रको पद्यमें टीका लिखी थी।
(दि० जैनग्रं०कः०)

छोड़ छुट्टी (हिं० स्त्री०) सम्बन्धत्याग, नाता टूटना।

छोड़ना (हिं० क्रि०) १ किसी पकड़ी हुई वस्तुको त्यागना। २ चिपकी हुई वस्तुका अलग हो जाना। ३ किसीको मुक्त कर देना, छुटकारा देना, रिहाई देना। ४ अपराध क्षमा करना, कसूर माफ करना। ५ ग्रहण न करना, न लेना। ६ ऋणी या देनादारको ऋणसे छुटकारा देना। ७ त्यागना, अपने पास न रखना। ८ साथ न लेना। ९ प्रस्थान करना, गमन करना, दौड़ाना। १० क्षेपण करना, अस्त्र फेंकना। ११ किसी नियमित स्थानसे आगे बढ़ जाना। १२ किसी बीमारीका छूट जाना। १३ बचाना, शेष रखना, काममें न लाना। १४ ऊपरसे गिराना या डालना। १५ किसी कामको बन्द कर देना या छोड़ देना। १६ भीतरसे वेगके साथ बाहर निकलना। १७ किसी ऐसी चीजको चलाना जिसमेंसे कोई वस्तु कणों वा छींटोंके रूपमें वेगसे बाहर निकले। १८ किसी कार्य वा उसके किसी अङ्गको भूलसे न करना, भूल या विस्मृतिसे किसी वस्तुको न लेना, न रखना वा न प्रयुक्त करना।

छोड़वाना (हिं० क्रि०) छोड़नेका काम कराना।

छोड़ाना (हिं० क्रि०) छुड़ाना देखो।

छोद (सं० पु०) चूर्ण, बुकनी।

छोप (हिं० पु०) १ मोटा लेप। २ लेप करनेका काम। ३ प्रहार, आघात, वार। ४ बचाव, छिपाव।

छोपना (हिं० क्रि०) १ मोटा लेप करना। २ किसी गीली चीजको मोटी तह ऊपरसे जमाना या रखना, थोपना। ३ ग्रसना, धर दबाना।

छोपा (हिं० पु०) पालकी वह रस्सियां जो उसके चारों कोनों पर बँधी हुई रहती हैं।

छोपाई (हिं० स्त्री०) १ छोपनेका भाव। २ छोपनेकी क्रिया। ३ छोपनेकी मजदूरी।

छोभ (हिं० पु०) १ क्षोभ, विचलता, खलबली। २ नदी तालाब आदिका भर कर उमड़ना।

छोर (हिं० स्त्री०) १ आयतविस्तारकी सीमा, चौड़ाईका हाशिया। २ विस्तारकी सीमा, हद। ३ नोक, कोर कोना।

छोरण (सं० क्ली०) छुर भावे ल्युट्। परित्याग, निकालना छोड़ना, अलग कर देना।

छोल (हिं० स्त्री०) १ छिल जानेका घाव। २ साँपके काटनेका दाग।

छोलङ्ग (सं० पु०) छुरति छुय बाहुलकात् अङ्गच् ततो रस्य लत्वं। मातुलुङ्ग, सन्तरा नीबू, मीठा नीबू।

छोलदारी (सं० स्त्री०) छोटा तंबू, छोटा खेमा।

छोला (हिं० पु०) १ ईखको काटने और छोलनेवाला पुरुष। २ चना।

छोवन (हिं० पु०) कुम्हारके चाक परके बरतन काटनेका तागा।

छोह (हिं० पु०) १ क्षोभ, ममता, प्रेम। २ अनुग्रह, कृपा, दया।

छोहारा (सं० स्त्री०) द्वीपान्तरस्थ खर्जुरिका, अरब, सिंध आदि मरु स्थानोंमें होनेवाला एक प्रकारका खजूर।

"खर्जुरी गोस्तनाकारा परद्वीपादिहागता।
जायते पश्चिमे देशे सा छोहारेति कीर्त्यते॥" (भावप्रकाश)

छौंक (अनु० स्त्री०) तड़का, बघार।

छौंकना (हिं क्रि०) सुगन्धित करनेके लिए दाल आदिमें हींग, मिरचा, जीरा, राई, लहसुन आदिको कड़कड़ाते घी या तेलमें पका कर डालना, बघारना।

छौंड़ा (हिं० पु०) अनाज रखनेका जमीनमें खोदा हुआ गड्ढा, खत्ता, गाड़।

छौना (हिं० पु०) किसी जानवरका बच्चा।

छौरा (हिं० पु०) १ चारेके काममें आनेका ज्वार या बाजरेका डंठल, कोयर, मर्री, खरई। २ कपासका डंठल। ३ छोकड़ा।

ज

ज—१ संस्कृत और हिन्दीके व्यञ्जनवर्णका आठवां और च-वर्गका तीसरा अक्षर। इसका उच्चारण तालुसे होता है। उच्चारणमें आभ्यन्तर प्रयत्न जिह्वाके मध्यभाग द्वारा तालुका स्पर्श करना है। इसके बाह्य प्रयत्न ये हैं—घोष, संवार और नाद। यह अल्पप्राण वर्णोंमें गिना जाता है। कलापके मतसे इसको घोषवत् संज्ञा है। मातृका-न्याससे वाममणिबन्धमें इसका न्यास करना पड़ता है। तन्त्रके मतसे इसके पर्याय वा वाचक शब्द ये हैं—चतुरानन, शूली, भोगी, विजया स्थिरा, बलदेव, जय, जेता, धातकी, सुमुखी, विभु, लम्बोदरी, शाखा, स्मृति, सुप्रभा, कर्णकाधरा, दीर्घबाहु, रुचि, हंस, नन्दी, तेजाः, सुराधिप, जवन, वेगित, वाममणिबन्ध, कृष्णात्रेश्वर, वेशी, आमोदी और मदविह्वला। (वर्णोद्धारतन्त्र) कामधेनुतन्त्रके मतसे—जकारका स्वरूप मध्यकुण्डलीयुक्त, त्रिगुणात्मक, शारदीय चन्द्रकी भाँति मनोहर कान्तियुक्त, पञ्चदेवस्वरूप और पञ्च प्राणमय है। इसमें त्रिगुण त्रिशक्ति और तीन बिन्दु हैं। इसका ध्यान करनेसे साधक शीघ्र ही अभीष्टलाभ कर सकता है। ध्यान इस प्रकार है—

> "ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने।
> नानालङ्कारसंयुक्तां सुं जोर्दादशभियुं ताम्।
> रक्तचन्दनदिग्धाङ्गीं विचित्राम्बरधारिणीम्।
> त्रिलोचनां जगद्धात्रीं वरदाभयहस्तकाम्।
> एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपां तन्मन्त्रं दशधा जपेत्॥" (वर्णोद्धारतन्त्र)

काव्यमें सबसे पहले इसका विन्यास करनेसे मित्रलाभ होता है। "जो मित्रलाभ" (वृत्तर० टी०) २ छन्दःशास्त्र प्रसिद्ध गणविशेष। तीन अक्षरमें तीन स्वरवर्णको गण कहते हैं। जिस गणमें मध्यका स्वर गुरु और आस पासके दो स्वर लघु हों, उसको जगण कहते हैं। जैसे रमेश, महेश इत्यादि।

ज (सं॰ पु॰) जयति जि-ड, यद्वा जायते जन-ड। पञ्चम्यामजातौ। पा ३।२।९८। १ मृत्युञ्जय। २ जन्म। ३ जनक, पिता। ४ जनार्दन। (मेदिनी) ५ विष। ६ मुक्ति, मोक्ष। ७ तेजः। ८ पिशाच। (शब्दरत्ना॰) ९ वेग। (एकाक्षरकोष) (त्रि॰) १० जात, उत्पन्न हुआ। "प्रावृट् शरत्कालदिशो जे। (रा चतुभ्र॰) ११ वेगित। १२ जेता, जीतनेवाला। (शब्दरत्ना॰)

जंग (फा॰ स्त्री॰) १ समर, युद्ध, लड़ाई। २ एक बहुत लम्बी चौड़ी नाव। (पु॰) ३ लोहेका मोरचा।

जंगआवर (फा॰ वि॰) योद्धा, लड़नेवाला, शूरमा, भट, वीर।

जंगजू (फा॰ वि॰) योद्धा, लड़ाका।

जँगरा (देश॰) उर्द, मूंग आदिके डंठल जो दाना निकाल लेने पर शेष रह जाते हैं, जेंगरा।

जंगरैत (हिं॰ वि॰) १ हाथ-पैरवाला, जाँगरवाला। २ परिश्रमशील, उद्यमी।

जंगल-जलेबी (हिं॰ पु॰) विष्ठा, गू, गलीज़।

जंगला (हिं॰ पु॰) १ लोहेको छड़ोंकी वह पंक्ति जो खिड़की दरवाजे, बरामदे आदिमें लगी रहती है, बाड़, कठहरा। २ जाली या छड़ लगी हुई चौखट। ३ वह बेल बूटा जो दुपट्टे आदिके किनारे काढ़ा हुआ रहता है। ४ बारह इंच लम्बी एक मछली। इस तरहकी मछलियां बङ्गालकी नदियोंमें बहुत पायी जाती हैं। ५ अन्न निकाला हुआ डंठल। ६ एक रागका नाम। ७ सङ्गीतके १२ मुकामोंमेंसे एक।

जंगली (हिं॰ वि॰) १ जो जंगलमें रहता या मिलता हो। २ जो बिना बोए या लगाये उपजाता हो। ३ जो घरेलू या पालतू न हो। ४ बनैला, जङ्गलमें रहनेवाला।

जंगली बादाम (हिं॰ पु॰) १ भारतवर्षके पश्चिमी घाटके पहाड़ों तथा मर्तबान और तेनासरिमके ऊपरी भागोंमें मिलनेवाला एक पेड़। यह कतीलेकी जातिका होता और इसमेंसे एक प्रकारका गोंद निकलता है। इसमें फागुन चैत मासमें फूल लगते हैं। फूलोंसे एक प्रकारकी कड़ी दुर्गन्ध आती है। इसके फलोंसे तेल निकाला जाता है। अकाल पड़ने पर लोग इसके बीजोंको भून कर [illegible] हैं। इसकी पत्तियां और फूल औषधमें बहुत उ[illegible] हैं। २ अंडामानके टापू तथा भारतवर्ष और [illegible] होनेवाला बड़ जातिका एक पेड़। इ[illegible] जनमें फूल प्रकारका गोंद और बीजसे एक कि[illegible]।

निकलता है। तेलकी गन्ध और गुण बदामके तेलके समान ही होता है। इसकी पत्तियां कसैली होती हैं जो चमड़ा उबालनेके काममें आती हैं। इसका प्रत्येक अंग औषधके काममें आता है।

जंगली रेंड़ (हिं० पु०) बन रेंड़ देखो।

जंगा (हिं० पु०) वे दाने जो आवाज करनेके लिये घुंघुरूमें दिये रहते हैं, बोर।

जंगार (फा० पु०) १ तूतिया, तांबेका कसाव। २ एक प्रकारका रंग।

जंगारी (फा० वि०) नीला।

जंगाल (फा० पु०) जंगार देखो।

जंगाली (हिं० पु०) चमकीले नीले रंगका एक प्रकारका रेशमी कपड़ा।

जंगी (फा० वि०) १ जो लड़ाईसे सम्बन्ध रखता हो। २ सैनिक, फौजी। ३ दीर्घकाय, बहुत बड़ा। ४ वीर, योद्धा।

जंगीहड़ (फा० स्त्री०) छोटी हड़, काली हड़।

जंगे (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी कमरपट्टी जिसमें घुंघुरू लगी रहती है। अहीर या धोबी अपने जातीय नाचके समय इसे कमरमें बांधते हैं।

जंघाफार (हिं० पु०) खाई, खन्दक। यह शब्द सिर्फ कहारोंके व्यवहारमें आता है।

जंघामथानी (हिं० स्त्री०) पुंश्चली, कुलटा, व्यभिचारिणी, बद चलन, छिनाल।

जंघार (हिं० स्त्री०) जांघमें होनेवाला एक प्रकारका फोड़ा।

जंघारा (देश०) राजपूतोंकी एक जाति। ये बहुत कलहप्रिय होते हैं।

जंचना (हिं० क्रि०) १ निरीक्षण होना, देखा भाला जाना। २ दृष्टिमें ठीक मालूम पड़ना। ३ प्रतीत होना, जान पड़ना।

[illegible] (हिं० वि०) १ सुपरीक्षित, अजमाया हुआ। २ अव्यर्थ, [illegible]।

[illegible] (हिं० पु०) १ प्रपंच बखेड़ा, झंझट, झमेला। [illegible]म, फंसाव। ३ पानीका भंवर। ४ एक [illegible] बड़ी बंदूक। ५ एक प्रकारकी तोप जिसका मुंह बहुत बड़ा होता है। ६ बड़ा जाल।

जंजालिया (हिं० वि०) प्रपंच रचनेवाला, कलहप्रिय, झगड़ालू, बखेड़ा करनेवाला।

जंजाली (हिं० वि०) १ झगड़ालू। (स्त्री०) २ पाल चढ़ाने और गिरानेकी रस्सी और घिरनी।

जंजीर (फा० स्त्री०) सिकड़ी, सांकल। २ बेड़ी। ३ किवाड़की कुंडी, सिकड़ी।

जंजीरा (हिं० पु०) जंजीरकी तरह दीखनेवाली एक प्रकारकी सिलाई, लहरिया।

जंजीरी (हिं० वि०) जिसमें सिकड़ी लगी हो, जंजीरदार।

जंजिरेदार (हिं० वि०) जिसमें जंजीरा डाला गया हो।

जंटिलमैन (अं० पु०) १ सभ्यपुरुष, भला आदमी। २ वह मनुष्य जो अंगरेजी चाल ढालसे रहते हों।

जंड (देश०) सांगर नामका एक जंगली पेड़। इसकी फलियोंका अचार बनाया जाता है।

जंतर (हिं० पु०) १ यन्त्र, औजार, कल। २ तान्त्रिक यन्त्र। ३ तान्त्रिक यन्त्र या कोई टोटकेकी वस्तु दो हुई एक लम्बी तावीज। ४ आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना जो गलेमें पहना जाता है। ५ मानमन्दिर, आकाशलोचन। ६ वैद्यों या रासायनिकोंका तेल और आसव आदि तैयार करनेका यन्त्र।

जंतर मंतर (हिं० पु०) १ यन्त्र मन्त्र, जादू टोना। २ ज्योतिषीके नक्षत्रोंकी स्थिति, गति आदिके निरीक्षण करनेका स्थान, मानमन्दिर, आकाशलोचन, अबजर वेटरी।

जंतरी (हिं० स्त्री०) १ सोनारके तार बढ़ानेका छोटा जंता। २ तिथिपत्र, पञ्जिका, पत्रा। ३ वह जो जादू करता हो, जादूगर। ४ वाद्यकुशल, बाजा बजानेवाला।

जंतसार (हिं० स्त्री०) वह स्थान जहां जांता बैठाया जाता है।

जंता (हिं० पु०) १ यन्त्र, औजार। २ तार खींचनेका सोनारों और तारकशोंका एक औजार। यह लोहेकी पटरीका बना रहता है और इसमेंसे बहुतसे छोटे बड़े छेद रहते हैं। (वि०) ३ यन्त्रणा देनेवाला, सजा देनेवाला।

जंताना (हिं० क्रि०) जंतेमें चूर चूर करना।

जंती (हिं० स्त्री०) सोनारके बारीक तार खींचनेका छोटा जंता।

जंत्र (हिं० पु०) १ यन्त्र, कल, औजार । २ तान्त्रिक यन्त्र। ३ ताला। यन्त्र देखो।

जंत्रना (हिं० क्रि०) ताला लगाना। खूब कस कर बांधना।

जंत्रित (हिं० वि०) बद्ध, बंद, बंधा। यन्त्रित देखो।

जंत्री (हिं० पु०) १ वह जो वीणा या कोई दूसरा बाजा बजाता हो। (वि०) २ यंत्रित करनेवाला, कस कर बांधनेवाला। यन्त्री देखो।

जंद (फा० पु०) पारसियोंका एक प्राचीन धर्मग्रन्थ। जन्द अवस्ता देखो।

जंदरा (हिं० पु०) १ यन्त्र, औजार। २ जांता, चक्की।

जंबीरी नीबू (हिं० पु०) कागजी नीबूसे बड़ा एक प्रकारका खट्टा नीबू। इसका पेड़ बड़ा और कंटीला होता है। वसन्त ऋतुमें इसमें फूल और वर्षा ऋतुमें फल लगते हैं। कार्त्तिकके बाद इसके फल खाने योग्य होते हैं। जम्बीर देखो।

जंबूर (फा० पु०) १ लोहेका जमुरका जिसके द्वारा किवाड़ बाजूसे जकड़ा रहता है, कुलाबा, पायजा। २ प्राचीन कालकी तोप जो ऊंटों पर लादी जाती थी, धंबूरक। ३ तोपको चरख।

जंबूरक (फा० पु०) १ ऊंटों पर लादी जानेकी एक छोटी तोप। २ वह गाड़ी जिस पर तोप चढ़ी रहती है, तोपकी चर्ख।

जंबूरची (फा० पु०) १ वह जो जबूर नामक छोटा तोप चलाता हो, तोपची। २ सिपाही, बर्कंदाज।

जंबूरा (फा० पु०) १ तोप चढ़ाई जानेकी चर्ख। २ एक प्रकारका औजार। यह सोने लोहे आदि धातुओंको बारीक करनेके काममें आता है। ३ भंवरकी कली, भंवर कड़ी। ४ लकड़ीका वह बल्ला जो मस्तूल पर आड़ा लगा रहता है। इस पर पालका ढांचा रहता है।

जंभाई (हिं० स्त्री०) मुंहके खुलनेकी एक स्वाभाविक क्रिया। यह निद्रा या आलस्य मालूम पड़ने तथा दुर्बलता आदिके कारण होती है। इसमें जब मुंह खुलता है तो सांसके साथ बहुतसी हवा धीरे धीरे भीतर जाती है और वहां कुछ काल ठहर कर फिर धीरे धीरे बाहर निकल आती है। प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है कि जिस वायुके कारण जंभाई आती है उसे देवदत्त कहते हैं। वैद्यक ग्रन्थमें लिखा है कि जंभाई आने पर उत्तम सुगन्धित पदार्थ खाना चाहिये। इसमें एक विशेष गुण यह है कि जब कोई व्यक्ति जंभाई लेता हो तो उसे देख कर दूसरेको भी जंभाई आने लगती है।

जंभाना (हिं० क्रि०) जंभाई लेना।

जंभीर (हिं० पु०) जंभीरी देखो।

जंभीरी (हिं० पु०) जंभीरी नीबू देखो।

जंभूरा (हिं० पु०) जंबूरा देखो।

जई (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका अनाज। यह जौकी जातिका है और इसका पौधा जौके पौधेसे बहुत मिलता जुलता है। यह अनाज भी वर्षाके अन्तमें बोया जाता है। जब इसके हरे डंठल कुछ बड़े होते हैं तो ये काट लिए जाते हैं। काटनेके थोड़े दिनके बाद ही उसमें नवीन कोयल निकल आते हैं। इसके हरे डंठल तीन बार काटे जाते हैं और अन्तमें अन्नके लिये छोड़ दी जाती है। कुछ समयके बाद इसमें हाथ भरकी लंबी बालें लगती हैं। यह फसल सिर्फ तीन चार महिनोंमें तैयार हो जाती है। अपक्व अवस्थामें ही यह काट ली जाती है जिससे कि इसके दाने झड़ न जावें। एक बीघेमें लगभग बारह तेरह मन अन्न और अठारह मन डंठल होते हैं। इस फसलमें अधिक सिंचाईकी आवश्यकता है। भारतवर्षमें यह सिर्फ घोड़ों आदिको ही खिलाई जाती है, लेकिन जिस देशमें गेहूं जौ आदि कम उपजते वहां लोग इसके आटेकी रोटियां बना कर खाते हैं। गाय, भैंस और घोड़े इसके भूसेको बड़े चावसे खाते हैं। २ जौका छोटा अंकुर। यह दुर्गापूजाकी नवमीके दिन पवित्र माना जाता है। देवीकी स्थापनाके साथ थोड़ेसे जौ बोए जाते और नौमीके दिन वे उखाड़ लिए जाते हैं। ब्राह्मण उन्हें ले कर मंगल स्वरूप अपने यजमानोंकी शिखा पर रखते और यजमान उन्हें यथासाध्य दक्षिणा देते हैं। ३ उन फलोंकी बतिया जिनमें फूल भी लगा रहता है। ४ अङ्कुर, अंखुआ।

अईफ (अ० वि०) वृद्ध, बुड्ढा।

अईफो (फा० पु०) वृद्धावस्था, बुढ़ापा।

जक (हिं० पु०) १ धनरक्षक भूत प्रेत, यक्ष। २ कृपण मनुष्य, कंजूस आदमी। (स्त्री०) ३ हठ, जिद्द, अड़। ४ पराजय, हार। ५ हानि, घाटा, नुकसान। ६ ग्लानि लज्जा। ७ भय, डर, खौफ। ८ धुन, रट।

जकड़ (हिं० स्त्री०) कस कर बाँधनेका भाव।

जकड़ना (हिं० क्रि०) कस कर बांधना।

जकताल—मन्द्राज प्रेसीडेन्सीके नीलगिरि जिलेके अन्तर्गत एक गिरि। यह कनूरसे करीब १॥ मील दूर दोड़्वट्टा नामक गिरिमालासे निकला है। इसके ऊपर शैलनिवास है। अंगरेज लोग उसे वेलिंगटन् कहते हैं। यह मन्द्राजी सैनिकोंका स्वास्थ्यनिवास समझा जाता है। विषुवरेखासे सिर्फ ११ अंश दूरी पर होने पर भी यहां-की आबहवा उमदा और स्वास्थ्यकर है तथा जमीन उपजाऊ है। यहां ७५° (फा०) से अधिक उत्ताप है। यहांके सेनानिवासके चारों ओर मनोरम उपवन और नाना प्रकारके फलपुष्प शोभित वृक्षराजि दीख पड़ती है। इसके सिवा यहां अनेक प्रकारके विलायती फल भी उत्पन्न होते हैं।

जकात (अ० पु०) १ दान, खैरात। २ शुल्क, कर, महसूल।

जकाती (हिं० पु०) जगाती देखो।

जकासना—बम्बई प्रान्तके माहीकांठा जिलेका क्षुद्र राज्य।

जकुट (सं० पु०, जं जातं कुटति कुट-क। १ मलयाचल। २ कुक्कुर, कुत्ता। (क्ली०) ३ वार्त्ताकुपुष्प, बैंगनका फूल। जुकुट देखो।

जको—सिमला जिलेका एक गिरिशृङ्ग। सिमलाका शैल निवास इसी गिरिशृङ्ग पर है। यह अक्षा० ३१° ५ उ० और देशा० ७७° १५ पू०में अवस्थित है। इस पर तरह तरहके पहाड़ी वृक्ष उपजा करते हैं।

जकोबाबाद—सिन्धुप्रदेशके अपर सिन्ध सीमा जिलेका तालुक। यह अक्षा० २७° ५६ एवं २८° २६ उ० और देशा० ६७° ५८ तथा ६८° ३७ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४६० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ६४८७२ है। इसमें एक नगर और ८५ ग्राम बसे हैं। मालगुजारी और सेस ५॥ लाख है।

जकोबाबाद—सिन्धुप्रदेशके अपर सिन्ध सीमा जिलेका सदर। यह अक्षा० २८° १७ उ० और देशा० ६८° २९ पू०में नार्थवेष्टर्न रेलवेकी सिन्ध पिशीन् शाखा पर पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १०७८७ लोगो। १८४७ ई०को जनरल जान जकोबने इसे बसाया था। यहां एक देशी घुड़सवार फौज रहती है। छावनीके सिवा यहां कचहरी, शफाखाना, जेल, जनरल जकोबको कब्र, १८८७ ई०को निर्मित विक्टोरिया घड़ीबुर्ज और मध्य एशियाको कारवां जानेको राह भी है। १८७५ ई०को म्युनिसपाल्टी पड़ी। उसमें कपड़े और सब्जीका बाजार बना है।

जक्को (देश०) बुलबुलकी जातिकी एक चिड़िया। यह जाड़ेके दिनोंमें उत्तर या पश्चिम भारतवर्षके सिवा समस्त भारतवर्षमें पाई जाती है। गरमी ऋतुमें यह हिमालय पर्वत पर रहती है।

जक्रानि—वलुच जातिकी एक शाखा। ये रणमें निपुण होनेके कारण प्रसिद्ध हैं।

जक्ष (सं० पु०) यक्ष देखो।

जक्षण (सं० क्ली०) जक्ष भावे ल्युट्। भक्षण, भोजन, खाना।

जक्षन् (सं० पु०) यक्षन् देखो।

जक्षादि (सं० पु०) पाणिनीय एक गण। जक्ष, जागृ, दरिद्रा, चकास, शास, दीधी, वेवी इन ७ धातुओंको जक्षादि कहते हैं। ये अभ्यस्त संज्ञा हैं।

जखड़ासाधु—एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्त्ता। इनके ग्रन्थोंमें-से फिलहाल श्रीधन्यकुमारचरित्र ही प्राप्य है।

जखनाचार्य—महिसुरके एक प्रसिद्ध शिल्पी और स्थपति। महिसुरके सभी प्रधान प्रधान देवालय इन्होंके बनाये हुए हैं, ऐसा सुननेमें आता है। ईसाकी १२वीं शताब्दीमें हय-शाल-बल्लाल राजाओंके समय महिसुरके कैडल वा क्रीडा-पुर नामक ग्राममें आपका जन्म हुआ था। इन्होंने जितने भी मन्दिर बनाये हैं, उनमेंसे कैडलका छिन्नकेशव, सोम नाथपुरका प्रसन्न-चित्र केशव और बेलूर ग्रामस्थ केशव-मन्दिर ही प्रधान है।

जखम (फा० पु०) १ क्षत, घाव। २ मानसिक दुःखका आघात, सदमा।

अखमी (फा॰ वि॰) आहत, घायल, चुटैल।

अखीरा (अ० पु॰) १ कोष, खजाना। २ समूह, ढेर। ३ भिन्न भिन्न प्रकारके पेड़, पौधे और बीज आदि मिलनेका स्थान।

जखम (हिं॰ पु॰) जखम देखो।

जग (हिं॰ पु॰) १ जगत्, विश्व, संसार। २ संसारके मनुष्य।

जगच्चक्षुस (सं॰ पु॰) जगतां चक्षुरिव प्रकाशकत्वात्। सूर्य।

जगच्छन्दस् (सं० त्रि०) जगती छन्दोऽस्य, बहुव्री०, निपातनात् पुंवद्भावः। जगती छन्दसे जिसका स्तव किया जाय। "स्वरोऽसि गयोऽसि जगच्छन्दाः।" (वाजसना० १।५।१५)

जगजीवन—१ हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इनका जन्म १६४८ ई०में हुआ था। इन्होंने बहुतसी कवितायें रची हैं जिनमेंसे एक नीचे दी जाती है—

'तू कबलन होगी होशियार नादान गजरेवाली।
जगजीवन मुख जाने मेरी कहो तू माने
क्या ऐसी रहेगी भोलीभाली॥
एक मनुष यह कीज्यो जरा नाथ गले लगि लीजे
जामें दिन दिन होवे बहाली।

२ एक जैनविद्वान्। ये विक्रम सं० १७२१में विद्यमान थे। इनका वासस्थान आगरा था। इन्होंने कविवर बनारसीदासकृत समयसारको टीका बनाई है।

जगजीवनदास—सत्नामीसम्प्रदायके प्रवर्तक एक महात्मा। चन्देल-ठाकुरवंशमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम गङ्गाराम था। सं॰ १७३८में बाराबङ्की जिलेके अन्तर्गत सहंडाग्राममें जगजीवनने जन्मग्रहण किया था। छह महीनेकी उम्रमें उनके पितृगुरु विश्वेश्वरपुरीने एक दिन उनके मस्तक पर उत्तरीय प्रदान किया, किन्तु प्रदान करते ही उनके ब्रह्मतल पर कुङ्कुमलिप्त तिलक दिखाई दिया था। विश्वेश्वरने उसे देख कर कहा था—"भविष्यमें यह बालक एक महापुरुष होगा।" गुरुदेवकी बात सत्य निकली। जगजीवनकी जितनी उम्र बढ़ने लगी ग्रामवासी उन पर उतने ही अनुरक्त होने लगे। वे भली भाँति शास्त्रचर्चा तो नहीं करते थे, किन्तु उनके मुंहसे जो अभूतपूर्व आध्यात्मिक बातें निकला करती थीं, उन्हींके कारण लोग उन्हें महापुरुष समझते थे। इनके ज्ञानगर्भ उपदेशको सुन कर ब्राह्मणसे लगा कर नीच चमार तक, और तो क्या मुसलमान लोग भी उनके शिष्य बनने लगे। जगजीवनदास सिर्फ वेदान्तप्रतिपाद्य ब्रह्मको ही ईश्वर मानते थे। उनका मत और विश्वास नानक-पन्थसे मिलता जुलता था। ये जातिभेदको नहीं मानते थे। इन्होंने अपने शिष्योंको उपदेश देनेके लिये सुललित हिन्दी कवितामें अघविनाश, ज्ञानप्रकाश, महाप्रलय और प्रथमग्रन्थ नामक कई एक ग्रन्थ लिखे थे। इनमेंसे अघविनाश नामक ग्रन्थ सबसे बड़ा तथा ज्ञानप्रकाश १८१७ सम्वत्‌में रचा गया था। मृत्युसे दश वर्ष पहले ये ज्ञातिवर्ग द्वारा परित्यक्त हो कर जन्मस्थानको छोड़ ५ मील दूरी पर कोटवा ग्राममें जा बसे थे। यहां सं॰ १८१७में इनका देहान्त हुआ था। सत्नामी सम्प्रदायके लोग अब भी इनकी अत्यन्त भक्ति श्रद्धा करते हैं। अयोध्याके नवाब आसफ् उद्दौलाके राजत्वकालमें राय निहालचन्दने मृत जगजीवनके सम्मानार्थ एक सुन्दर मन्दिर बनवाया था। अब भी हर साल कार्त्तिक और वैशाखकी संक्रान्तिके दिन कोटवा ग्राममें मेला लगता है, इसमें अनेक यात्री जगजीवनके सम्मानार्थ और पवित्र 'अभिराम-तालाब' नामक कुण्डमें स्नान करनेके लिए कोटवा जाया करते हैं। अब भी कोटवा ग्राममें जगजीवनके वंशधर वास करते हैं, नीचे उनकी वंशावली दी जाती है—
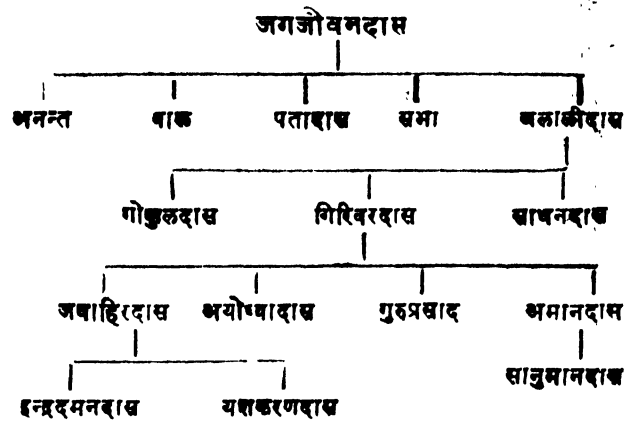
जगजीवनमिश्र—महाप्रभु चैतन्यदेवके ज्ञातिवंशके एक बङ्गाली वैष्णव कवि। इनके पिताका नाम रामजीवन

था। आपने 'मन:सन्तोषिणी' नामका एक बङ्गला पद्यग्रन्थ लिखा है। चैतन्यचन्द्र देखो।

जगजोनि (हिं० पु०) ब्रह्मा।

जगज्जन (सं० पु०) जगतां जनः, ६-तत्। जगत्के मनुष्य, संसारके लोग, जन समुदाय।

जगज्जयमल्ल—नेपालके एक राजा। ८२२ नेपाली सम्वत्में अपुत्रक भास्करमल्लकी मृत्यु हो जानेके बाद उनकी महिषीने पतिके दूरसम्पर्कीय जगज्जयमल्लको राजसिंहासन प्रदान किया था। इन्होंने ३० वर्ष राज्य किया था, बादमें नेपाली सं० ८५२ (१७३२ ई०)में आपकी मृत्यु हो गई। मृत्युके बाद इन्हींके मध्यम पुत्र जयप्रकाश राज्यसिंहासन पर बैठाये गये थे।

जगझम्प—भारतवर्षीय वाहिद्दारिक यन्त्रविशेष, तासा। यह पूजा और विवाहादिके समय काममें लाया जाता है। पहले इसे युद्धके समय बजाया जाता था। इसको चर्माच्छादनी चमड़ेकी रस्सीसे बाँधी जाती है और ध्वनिकोष मिट्टीका बनता है। बजानेवाले इसे गलेमें और पेट पर लटका कर बजाते हैं। यह तांबेके यन्त्रके साथ व्यवहृत होता है।

जगड्वाल (सं० पु०) आडंबर, ऊपरी बनावट, तड़क भड़क, टीम टाम।

जगण (सं० पु०) पिङ्गलशास्त्रके अनुसार तीन अक्षरोंका समूह, जिसका मध्याक्षर दीर्घ मात्रायुक्त और आदि तथा अन्तका अक्षर ह्रस्व होता है। यथा—जमाल रसाल इत्यादि।

जगत् (सं० पु०) गच्छति गम-क्विप् निपातनात् द्वित्वं तुगागमश्च। १ वायु, हवा। २ महादेव, शिव। "चिरञ्जीवी तुनतैजाव भीमाय् भीबर्द्धनो जगत।" (भारत १३।१७।१५१) (त्रि०) ३ जङ्गम, चलने फिरनेवाला, चलता फिरता। (क्ली०) ४ विश्व, संसार। इसका पर्याय—जगती, लोक, पिष्टप और भवन है। "यदा स देवो जागर्त्ति तदेदं चेष्टते जगत्।" (मनु० १।५२) ५ गोपीचन्दन।

जगत (हिं० स्त्री०) वह चबूतरा जो कुएँके ऊपर बना हुआ रहता हो।

जगतियाल—१ हैदराबाद राज्यके करीमनगर जिलेका एक तालुक। इसका क्षेत्रफल ६७१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २०३८८८ है। इसमें २ नगर और २५१ ग्राम बसे हैं। सालाना मालगुजारी कोई ३१००००) रु० है। तलावको सींचसे चावल बहुत होता है। दक्षिणको एक छोटा पहाड़ है।

२ हैदराबाद राज्यके करीमनगर जिलेमें जगतियाल तालुकका सदर। यह अक्षा० १८° ४८´ उ० और देशा० ७८° ५५´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १११-८१ होगी। नगरसे उत्तर एक प्रसिद्ध दुर्ग है जिसे १७४७ ई०को जफरउद्-दौलाने बनाया था। रेशमी साड़ियां और रूमाल यहां तैयार होते हैं।

जगती (सं० स्त्री०) गच्छति गम-अति निपातने साधुः शतवद् भावात् ततो ङीप्। १ भुवन, संसार। "उपयाय जगतीं तमसैव समावृता।" (रामा० ३।६१।११) २ पृथिवी, पृथ्वी। आर्यभटके मतसे पृथिवीमें गति मानी गई है, अतः पृथिवीका नाम 'जगती' पड़ा है। जो पृथ्वीको अचला कहते उनके मतसे इसमें गति नहीं होने पर भी इसे जगत् अर्थात् समस्त जङ्गमका आधार समझ कर 'जगती' नामसे उल्लेख किया गया है। "जगत्यां पातयामास भित्वा मूर्द्धान वक्षसि।" (मार्क पु० ८।१२) ३ जम्बूद्वीप। ४ छन्दोभेद। बारह अक्षरोंसे युक्त या जिस समवृत्तके प्रत्येक चरणमें १२ अक्षर या स्वरवर्ण हों, उसीका नाम जगती है।

जगतीतल (सं० पु०) पृथ्वी, भूमि।

जगतीधर (सं० पु०) १ पृथिवीधारणकारी, पर्वत, पहाड़। २ बोधिसत्व।

जगतीपति (सं० पु०) पृथिवीके अधिपति, राजा, बादशाह।

जगतीपाल (सं० पु०) जगतीं पालयति जगती-पालि-अण्, उपस०। भूपाल, राजा।

जगतीभर्त्तृ (सं० पु०) जगत्यां भर्ता, ६-तत्। पृथिवीपति, राजा।

जगतीभुज (सं० पु०) जगतीं भुङ्क्ते जगती-भुज-क्विप्। पृथिवी भोगकारी, राजा।

जगतीरुह (सं० पु०) जगत्यां रोहति रुह-क। महीरुह, वृक्ष, पेड़।

जगत्कर्त्तृ (सं० पु०) जगतः कर्त्ता, ६-तत्। १ ईश्वर। २ ब्रह्मा। "जगत्कर्त्ता जगन्नाथो वरदाय नमो नमः।" (शिवकवचस्तो०)

जगत्कीर्ति भट्टारक-एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्ता। इन्होंने एकीभावोद्यापन नामक एक संस्कृत जैनग्रन्थकी रचना की थी।

जगत्कुण्ठ—काठियावाड़के अन्तर्गत द्वारकासे कुछ दूरी पर अवस्थित एक अन्तरीप। यहां बहुत दिनों तक वघेल नामक राठौर राजपूतोंका आधिपत्य था।

जगत्तुङ्ग—राष्ट्रकूटराज गोविन्दका नामान्तर। राष्ट्रकूट देखो।

जगत्नारायण—एक हिन्दीके प्रसिद्ध कवि। ये लखनऊके नवाब आसफ उद्दौलाको लक्ष्य करके बहुतसी कविताएं लिख गये हैं।

जगत्नारायणशर्मा—हिन्दीके एक कवि। ये काशीके रहनेवाले थे। इनका जन्म सं० १८१५ ई०को हुआ था। इन्होंने ईसाईमतपरीक्षा, गोरक्षा, दयानन्दियोंकी अपार महिमा और यवनोंकी दुर्दशा ये चार पुस्तकें लिखी हैं।

जगत्पति (सं० पु०) जगतां पतिः, ६ तत्। १ जगत्कर्त्ता, परमेश्वर। २ हरि, विष्णु। ३ हर, महादेव। ४ ब्रह्मा। ५ राजा।

जगत्पाण्ड्य—सिंहलके एक पाण्ड्य राजा। १०६४ ई०के बाद कुछ दिन तक इन्होंने सिंहलका शासन किया था। पाण्ड्य देखो।

जगत्पाल (जगपाल)—मध्यप्रदेशके राजमालवंशीय एक प्रबल राजा। वर्त्तमानके राजिम नामक स्थान पर ये राज्य करते थे। राजिमके रामचन्द्रमन्दिरकी भीत पर ८९६ कलचुरि सम्वत्में खुदे हुए शिलालेखमें इनकी वीरताका इतिहास लिखा हुआ है। उसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, इनकी माताका नाम उदया ठकुरानी और पिताका नाम देवसिंह था। उन्होंने कमोमण्डल जय किया था। उनके पुत्र जगपालने चेदिराज आजल्लदेवके समयमें मायूरिक और नानास्थानके सामन्तोंको परास्त किया था। चेदिराज रत्नदेवके समय इन्होंने तलहार राज्य जय किया था। इसके बाद महाराज पृथ्वीदेवके समयमें इन्होंने सरहरागढ़, मचकासिंह, भ्रमरवद्र, कान्तार, कुसुम, भोग, कान्दासेह्वार और काकयव नामक कई एक स्थानोंको हस्तगत किया था। इसके सिवा आपने अपने नामसे जगपालपुर नामक एक नगर भी स्थापित किया था। राजिम देखो।

जगत्प्रकाशमल्ल—नेपालके अन्तर्गत भाटगाँव राज्यके एक राजा, नरेन्द्रमल्लके पुत्र। इनके राजत्वकालमें भीमसेनका मन्दिर बना था, उसमें ७७५ नेपाली सम्वत्का शिलालेख है। विमलसुचमण्डप और नारायणचौकके शिलालेखमें लिखा है कि, इन्होंने ७८२ नेपाली सम्वत्में भवानीशङ्करको लक्ष्य कर ५ स्तोत्र तथा ७८५ नेपाली सम्वत्में गुरुड़-स्तम्भके ऊपर गरुड़को लक्ष्य कर एक प्रशस्ति खुदाई थी। ७८७ नेपाली सम्वत्में इन्होंने प्रसिद्ध भवानीशङ्करका मन्दिर बनवाया था।

जगत्प्रसिद्ध (सं० त्रि०) लोकप्रसिद्ध, नामी, मशहूर।

जगत्प्राण (सं० पु०) जगतां प्राणः ६-तत्। वायु, हवा।

'जगत्प्राण प्राणानपहरसि किन्ने व्यवसितम्।' (साहित्य दर्पण)

जगत्राय—एक हिन्दीके कवि। ये जैनधर्मावलम्बी थे। वि० सं० १७२१में इन्होंने पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका (छन्दोबद्ध) की रचना की है। आगमविलास और सम्यक्त्वकौमुदी ये दो पद्य-ग्रन्थ इन्हींके बनाये हुए हैं।

जगत्साक्षी (सं० पु०) जगतां साक्षी, ६-तत्। १ ईश्वर। २ सूर्य।

जगत्सिंह—मेवाड़के एक राणा, राणा कर्णके पुत्र। कर्णकी मृत्युके बाद सं० १६८४में ये राजसिंहासन पर बैठे थे। इनके समयमें मेवाड़में विशेष कुछ युद्धविग्रह नहीं हुआ, इसलिए वीररसामोदी भट्ट कवियोंने जगत्सिंहका इतिहास नहीं लिखा है। इनके शान्तिमय राजत्वकालमें मेवाड़में शिल्प और स्थापत्यविद्याकी यथेष्ट उन्नति हुई थी। उस समय जहाँगीरकी मृत्यु हो जानेके कारण सम्राट्पुत्र खुर्रम् सौराष्ट्रमें अवस्थान कर रहे थे। जगत्सिंहने उनके पास अपने भाईको भेज कर उन्हें सम्राट् दिया तथा उन्हें उदयपुर आनेके लिए आह्वान किया। जगत्सिंहके प्रयत्नसे ही राजपूतानेके समस्त राजाओंने खुर्रमको सम्राट् स्वीकार किया था। इस उपलक्षसे जगत्सिंहने उदयपुरस्थ बादलमहल नामक प्रासादकी सजावट कराई। इसी भवनमें खुर्रम करदनृपतिगण द्वारा सबसे पहले शाहजहांके नामसे अभिहित हुए थे। सम्राट् शाहजहांने उदयपुरसे विदा होते समय कृतज्ञता जतानेके लिए उपहारस्वरूप जगत्सिंहको एक बहुमूल्य मरकतमणि और मोगलाधिकृत पांच प्रदेश प्रत्यर्पण किये

थे। इसके सिवा उन्होंने राणाको चितोरके दुर्गप्रकारोंका पूर्ण संस्कार करनेके लिये भी अनुमति दी थी।

जगतसिंहके प्रयत्नसे मेवाड़में अनेक अट्टालिकाएं बनी थीं, जिनमेंसे जगनिवास और जगमन्दिर नामकी दो अट्टालिकाएं ही प्रधान हैं। जगनिवास उदयसागरके किनारे और उसी ह्रदके मध्यवर्ती क्षुद्र द्वीप पर जगमन्दिर बना है। इन दोनों महलोंकी भीत, स्तम्भ तथा स्नानागार, तड़ाग, कृत्रिम झरना, आदि सभी स्थान कीमती संगमर्मर पत्थरसे बनाये गये हैं। इनके दरवाजे और झरोखे आदि नानावर्णके कांचोंसे जड़े हुए हैं, जिन्हें देख कर मन और नयन विमुग्ध हो जाते हैं। इसके सिवा गहलोतकुलके अभ्युदयसे लगा कर इस समय तकको तमाम प्रसिद्ध घटनाओंके चित्र भी उक्त प्रासादोंके दीवारों पर अङ्कित किये गये हैं, जिन्हें देख कर वास्तविकताका भ्रम होता है।

इसके अतिरिक्त जगतसिंहने मालबुरुज, सिंहद्वार और छतलाट आदि अन्यान्य भग्नस्थानोंका पुनः संस्कार कराया था।

सं० १७१० में इनकी मृत्यु हुई और इनके ज्येष्ठ पुत्र वीरवर राजसिंह सिंहासन पर अभिषिक्त हुए।

जगत्‌विलास नामक ग्रन्थमें जगतसिंहके समयका इतिहास कथञ्चित् वर्णित है।

जगतसिंह—जयपुरके एक राजा। ये महाराज प्रतापसिंहके पुत्र तथा सवाई जगतसिंहके नामसे प्रसिद्ध थे। प्रतापसिंहकी मृत्युके बाद १८०३ ई०में इन्होंने राजगद्दी पाई थी। इस समय समस्त राजपूताना महाराष्ट्रोंके प्रबल आक्रमणोंसे नितान्त शोचनीय अवस्थामें पड़ा था। इस समय महाराष्ट्रनेता होलकर और सिन्धिया तथा दुर्दान्त अमीरखां आदि पठान दस्यु भारतके नानास्थानोंमें अराजकता फैला रहे थे। इधर इष्ट इण्डिया कम्पनी बङ्गालमें पूर्ण प्रभुत्व स्थापन कर भारतके अन्यान्य स्थानोंमें अपना आधिपत्य फैलानेके लिए अग्रसर हो रही थी। ब्रटिश राजनैतिकोंने देखा कि, इस समय राजपूत राजगण निहायत अवसन्न हो पड़े हैं, ऐसी हालतमें महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे बचानेकी आशा दे कर उन्हें सन्धि बन्धनमें आबद्ध करना सहज है। इस उद्देश्यसे बड़े लाट वेलेसलिने १८०३ ई०को १२वीं दिसम्बरको महाराज जगतसिंहके साथ सन्धि कर ली। इस सन्धिके अनुसार महाराज जगतसिंह अंग्रेजोंके मित्र गिने गये तथा आपत्ति विपत्तिमें परस्पर सहायता करनेके लिए दोनोंने प्रतिज्ञा की। इसके बाद जब कर्णवालिस बड़े लाट बन कर आये, तब उन्होंने सोचा कि, दीर्घसूत्री राजपूतराजके साथ इस तरहके सन्धिसूत्रमें आबद्ध रहनेसे कोई लाभ नहीं। इसलिए उन्होंने महाराज जगतसिंहमें कोई प्रकाश्य दोष न रहने पर भी झूठा दोष लगा कर सन्धि तोड़ दी। सन्धि टूटनेका सम्वाद जयपुर पहुंचते न पहुंचते लार्ड लेकके साथ होलकरका समरानल जल उठा। महाराज जगतसिंहने इस युद्धमें लार्ड लेकको भरपूर सहायता कर पूर्वसम्मानकी रक्षा की।

पीछे जब सन्धि तोड़नेका प्रस्ताव हुआ, तब लार्ड लेकके विशेष प्रतिवाद करने पर भी सर जार्ज वार्लोने लार्ड कर्णवालिसको राजनीतिका अनुसरण कर सन्धिबन्धन तोड़ दिया। महाराज जगतसिंह इससे ब्रटिश जाति पर अत्यन्त विरक्त हुए और अंग्रेजोंको घृणा करने लगे।

इसी समय मारवाड़के प्रधान सामन्त पोकर्णके अधिपति सवाईसिंहके साथ मेवाड़के राणा मानसिंहका दारुण मनोविवाद उपस्थित हुआ। चतुर सवाईसिंहने पूर्वतन मारवाड़के अधिपति भीमसिंहके पुत्र राजकुमार धनकुलसिंहको ही मारवाड़का वास्तविक उत्तराधिकारी बतला कर घोषणा कर दी। परन्तु इससे भी उन्होंने अपनी अभीष्टसिद्धि न होते देख जिससे जयपुरराजके साथ मानसिंहका विवाद हो, ऐसा प्रयत्न किया। उन दिनों मेवाड़की राजकन्या कृष्णाकुमारीके रूपकी चर्चा राजपूताने भरमें फैल रही थी। (कृष्णकुमारी देखो।) सवाईसिंहने मित्रताके भावसे जगतसिंहको कहा कि,—"राणा भीमसिंहकी कन्या कृष्णाकुमारी परम सुन्दरी है, आप उनके साथ विवाह करनेके लिए राणाके पास प्रस्ताव भेजिये।"

इन्द्रियपरायण जगतसिंहने लोगोंके मुंह कृष्णाकुमारीके रूपकी प्रशंसा सुन शीघ्र ही बहुमूल्य उपढौकनके साथ चार हजार सेना और विवाहके प्रस्तावको

उत्थापन करनेके लिये एक दूत भेजा। पोकर्णाधिपने जब सुना कि, जयपुरसे मेवाड़की तरफ सेना जा रही है, तब उन्होंने मानसिंहसे भी जा कर कहा कि—"राणा, भीमसिंहकी कन्याके साथ हमारे मृत महाराज भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव हुआ था। अब सुनते हैं कि, जयपुरके राजा जगत्सिंह उनके साथ विवाह करनेके लिए उपहारद्रव्य और दूत भेज रहे हैं। जगत्सिंह यदि कृष्णाकुमारीके साथ विवाह कर लें, तो मारवाड़के राजाके कलङ्कको सीमा न रहेगी।" इस बातसे मारवाड़पतिका मन विचलित हो गया, वे भी चतुराईके जालमें फँस गये। वे शीघ्र ही सामन्तोंके साथ तीन हजार सेना ले कर निकल पड़े तथा मेवाड़में प्रवेश करनेसे पहले ही जयपुरकी सेना पर उन्होंने आक्रमण कर उनकी चीज वस्तु छीन ली।

इससे महाराज जगत्सिंहने अपना घोर अपमान समझा और वे मानसिंहको इसका समुचित दण्ड देनेको उत्तेजित हुए। जगत्सिंह और मानसिंहमें विवाद होते सुन दुर्दान्त महाराष्ट्रनायक सिन्धिया जगत्सिंहसे प्रचुर अर्थ मांग बैठे तथा यह धमकी दिखाई कि, धन न देनेसे उनके साथ किसी हालतमें कृष्णाकुमारीका विवाह न होने देंगे। जयपुराधिपतिने सिन्धियाकी बात पर कुछ भी ध्यान न दिया। इधर सिन्धिया भी अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिये मेवाड़ पर आक्रमण करनेके लिए अग्रसर हुए। राणा भीमसिंहने सिन्धियाके आनेकी खबर सुन जयपुराधिपतिसे सहायता मांगी, उसके अनुसार जगत्सिंहने एक दूतके साथ कई एक हजार सेना मेवाड़को भेज दी। सिन्धियाने राना भीमसिंहको कहला भेजा कि "वे किसी तरह भी अपनी कन्या जगत्सिंहको न दे सकेंगे।" राणा भीमसिंहने भी उनकी बातको अग्राह्य किया और सिन्धियाको घेरनेके लिए अग्रसर हुए। किन्तु दुर्दान्त सिन्धियाके आक्रमणसे राणा भीमसिंहकी सारी चतुराई व्यर्थ हुई, उन्होंने महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे डर कर जयपुरकी सेनाको लौटा दिया।

इधर महाराज जगत्सिंहने भी मानसिंहके विरुद्ध युद्धकी घोषणा कर दी थी। इस समय चतुर सवाईसिंह भी कुमार धनकुलसिंहको ले कर जगत्सिंहके साथ जा मिले। जगत्सिंह धनकुलको मारवाड़का असली राजा समझ थोड़े ही दिनमें लाखसे भी अधिक सेना संग्रह कर मारवाड़ जय करनेको अग्रसर हुए। इससे पहले जयपुरके किसी भी राजाने इतनी सेना संग्रह न की थी, इसलिए जगत्सिंहकी यह विपुल-वाहिनीका संग्रह अवश्य ही महाक्षमताका परिचायक था, इसमें सन्देह नहीं।

गाङ्गोली नामक स्थान पर जगत्सिंहने मानसिंहको सम्पूर्णरूपसे परास्त कर दिया। इस समय मारवाड़के प्रायः सभी प्रधान सामन्तोंने सवाईसिंहको उत्तेजनासे जगत्सिंहका पक्ष अवलम्बन किया था। जगत्सिंह और अन्यान्य नेताओंने मानसिंहका शिविर लूट कर प्रचुर धनरत्न और युद्धसज्जादिका संग्रह किया था। इसके बाद सवाईसिंहके परामर्शानुसार जगत्सिंहने जोधपुर राजधानी पर भी अपना अधिकार कर लिया।

मानसिंहने दुर्गहीमें आश्रय लिया। जगत्सिंह लगातार छह मास तक दुर्गको घेरे रहे। परन्तु दुर्गसे गोला बरसनेके कारण उनकी बहुत हानि हुई थी। इसी अवसरमें जगत्सिंहका अधीनस्थ अमीरखाँ नामक एक सेनापति स्वाधीनताके साथ मारवाड़के नाना स्थान लूट कर यथेष्ट धन सञ्चय कर रहा था, इससे जगत्सिंह अमीरखाँ पर और भी नाराज हो गये तथा उसको दण्ड देनेके लिए मनमें ठान ली। अमीरखाँ जयपुरपतिका मनोभाव जान कर जयपुरको भाग गया और वहां सहसा जयपुरकी सेना पर आक्रमण कर अरक्षित राजधानीको लूटता रहा। महाराज जगत्सिंह जोधपुरसे इस समाचारको पा कर अपनी राजनीतिकी रक्षा करनेके लिए शिविरसे चल दिये। इस समय राठोरसेनाने उन पर आक्रमण कर सब कुछ छीन लिया। जगत्सिंहका धनागार तो पहिलेहीसे (जोधपुरके अवरोध करनेमें) खाली हो चुका था और सेना भी बहुत बिगड़ चुकी थी, अब वे और भी बलहीन हो गये। जिस कृष्णाकुमारीके लिये इतना धनव्यय और इतना युद्ध किया गया, वह भी जगत्सिंहको न मिली। उधर होलकरकी सेना बार बार जयपुर पर हमला करने लगी। दुर्दान्त अमीरखाँ भी होलकरके नामसे बहुतसे

प्रदेशोंको जीत कर चौथ (कर) स्वरूप उन स्थानोंको भोग-ने लगा। इस समय जगत्‌सिंहका चरित्र अत्यन्त कलुषित हो गया था। वे रसकपूर नामकी एक मुसलमान रमणीको ले कर उन्मत्त हो गये। उस वेश्याको उन्होंने आधा राज्य बाँट दिया। और तो क्या, महाराज सवाई-सिंहने जिन अमूल्य ग्रन्थोंका सङ्कलन किया था, उन-मेंसे भी आधे ग्रन्थ वेश्याको दे दिये। ये समस्त ग्रन्थ नष्ट हो गये तथा वेश्याके आत्मीयस्वजनोंने उसकी धनसम्पत्तिका टवारा कर लिया। इतने पर भी कोई अगर वेश्याको अवज्ञा करता तो जगत्‌सिंह उसे कैद कर लेते। इससे वीरचेता राजपूत सामन्तगण जगत्‌सिंहको घृणाकी दृष्टिसे देखने लगे। उनको राजगद्दीसे हटानेका षड़यन्त्र चलने लगा। इस समय उनके कई एक मित्रोंने राजसम्मानकी रक्षाके लिये रसकपूरके चरित्रके सम्बन्धमें अत्यन्त दूषित व्यवहार जगत्‌सिंहसे कहा, जगत्‌सिंह-ने भी उनकी बात पर विश्वास कर लिया। उन्होंने रसकपूरको जो कुछ दिया था, वह सब छीन लिया और उसे साधारण कैदीकी तरह कैद कर रखा।

उधर विलायतमें कोई आफ् डिरेक्टरोंने सन्धिभङ्गको सन्देह जनक समझ कर पुनः जयपुरके साथ सन्धि करने का आदेश दिया। इतनी विपत्तिमें भी जगत्‌सिंह अंग्रेजोंके साथ सन्धि करनेके लिए राजी नहीं हुए थे, किन्तु जब देखा कि दुर्वृत्त अमीरखां जयपुर पर हमला करनेके लिए मधुराजपुरमें आ कर गोले बर्षा रहा है, तथा कम्पनी भी उनके साथ सन्धि करनेको तयार है, तब वे शीघ्र ही सन्धि करनेके लिए बाध्य हुए। इस सन्धि-पत्रमें भी पहलेकी सब बातें रहीं, इसके सिवा यह भी स्थिर हुआ कि, २य वर्षमें ४ लाख, ३य वर्षमें ५ लाख, ४थ वर्षमें ६ लाख, ५म वर्षमें ७ लाख और ६ठे वर्षमें ८ लाख रुपया दिल्लीके कोषागारमें वृटिश गवर्मेण्टको देना होगा।

इसके बाद बराबर उन्हें ८ लाख रुपया ही देना पड़ेगा, किन्तु राज्यकी आमदनी ४० लाखसे ज्यादा होने पर ८ लाखके सिवा बढ़ी हुई आमदनीसे सोलह भागका ५ भाग अतिरिक्त देना पड़ेगा। सन्धिमें जगत्‌सिंह मित्र राजा गिने जाने पर भी, प्रकारान्तरसे वे सुचतुर वृटिशके करदराज हो गये। १८१८ ई०को २ अप्रेलको यह सन्धि हुई और इसी सालमें २१ दिसम्बरको इनका देहान्त हो गया।

जगत्‌सिंह—१ विसेनवंशीय एक हिन्दीके कवि। गोंडा और भिङ्गा राजवंशमें इनका जन्म हुआ था। ये देउवहा परगणाके तालुकदार थे और शिव-अरसेल नामक कविके पास इन्होंने काव्यको शिक्षा पाई थी। इनकी कविता बहुत अच्छी है, ये भाषा काव्यके आचार्योंमें गिने जाते हैं। इन्होंने हिन्दी भाषामें छन्दशृङ्गार नख-शीख, चित्रमीमांसा और साहित्यसुधानिधि नामका एक अलङ्कार रचा था। करीब १७७० ई०में विद्यमान थे। इनकी एक कविता उद्धृत की जाती है—

"सीस लसै ससिसौ नख रेख खगी उपटी उर पै नगमालैं।
पेंच खुली पगरीके बनी जनु गङ्ग तरङ्ग बनी कवि जालैं॥
जागत रैनि मिढुकी अलसाय कियौ विषपान रहै हग लालैं।
देखहु रूप लखी हरिको हरको धरि आवत रूप रसालैं॥"

२ मऊ राज्यके एक प्रबल राजा, इन्होंने सम्राट् शाहजहांके साथ भयानक युद्ध किया था। कवि गम्भीर-रायने इस युद्धका बड़ी अच्छी तरह वर्णन किया है।*

३ हरवंशीय मुकुन्दसिंहके पुत्र। ये एक महा योद्धा थे और औरङ्गजेबके समय जीवित थे।

जगत्‌सिंह—इतिहासमें जगत्‌राजके नामसे प्रसिद्ध और बुन्देलखण्डके राजा छत्रसालके पुत्र। इनके चार सहोदर थे—हृदयसिंह, जगत्‌राज, पाण्डुसिंह और भारतीसिंह। राजा छत्रसाल अपने राज्यको दो भागोंमें विभक्त कर ज्येष्ठपुत्र हृदयसिंहको पन्ना राज्य और द्वितीयपुत्र जगत्-सिंहको जैतपुर राज्य दे गये थे। अजयगढ़, बोड़ागढ़, बर्षा, मन्धरगढ़, रणगढ़, जैतपुर, चर्खारी इत्यादि स्थान जैतपुरके अन्तर्गत हैं। जगत्‌सिंह जब राजसिंहासन पर बैठे, तब फरुखाबादके नवाब महम्मदखां बङ्गशने बुन्देलखण्डको जीतनेके लिए दलीलखां नामक एक सेनापतिको भेजा।

जगत्‌राज सेना सहित युद्धके लिए निकले, नदपुरीखा नामक स्थान पर दोनोंकी भेंट हुई। पहली बारमें जगत सिंहके आहत हो कर भूमिशायी होने पर उनकी रानी

* Jour. As. Soc. Beng. XIV.

अमरकुमारी सेनाको उत्साह देती हुई युद्धके लिए निकलीं। जगत्राजकी जान बची।

कुछ दिन पीछे मजके युद्धमें दलीलखाँके निहत होने पर मुसलमानसेना तितर बितर हो कर भाग गई। जगत्राजने रानी अमरकुमारी पर खुश हो कर उनके पुत्र कीर्त्तिसिंहको सिंहासन देनेका वचन दिया।

उधर दलीलखाँके पराजित हो जानेसे नवाब महम्मद खाँने क्रोधसे अधीर हो कर ससैन्य पुनः बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया। आखिरकार जगत्राजने बहुत बार परास्त हो कर पर्वत पर आश्रय लिया। पीछे उन्होंने पेशवा बाजीरावकी सहायतासे नवाबको परास्त कर पुनः अपने राज्यका उद्धार किया। इसके कुछ दिन बाद रानी अमरकुमारीके पुत्र कीर्त्तिसिंहकी मृत्यु हो गई। जगत्राजने कीर्त्तिके पुत्र गुमानसिंहको 'दीवानसवायी' की उपाधि दी। थोड़े दिन पीछे महोबाके निकटवर्त्ती मज ग्राममें जगत्राजका उत्कट रोगसे १८१५ सम्वत्में (१७५८ ई०) देहान्त हो गया। इनके ५ पुत्र थे— पहाड़सिंह, केशरीसिंह, सुनपतसिंह, बिहारसिंह और रानी अमरकुमारीके गर्भजात कीर्त्तिसिंह।

जगत्सिंहपुर—उड़ीसाके कटक जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २०° १५´ ५०´´ उ० और देशा० ८६° १२´ पू०में माछगाँवकी नहरके किनारे पर अवस्थित है। यहां करीब २००० आदमियोंका वास है।

जगत्सेठ—(जगत्श्रेष्ठी शब्दका अपभ्रंश है) मुर्शिदाबादनिवासी इतिहास-प्रसिद्ध वणिक् वंश श्वेताम्बर जैन सम्प्रदायभुक्त राजपूतवंशमें इनका जन्म हुआ। राजपूतानाके जोधपुर राज्यके अन्तर्गत नागर नामक नगरमें इनके पुरखा रहते थे, करीब ढाई सौ वर्ष हुए होंगे, अन्यान्य मारवाड़ियोंकी तरह ये भी गौड़ राज्यमें आये थे।

१६५२ ई०में सेठोंके पूर्वपुरुष हीरानन्दसा पहले पटना नगरमें आ कर बसे थे। इस समय पटना नगरमें पोर्त्तगीज, ओलन्दाज और अंग्रेजोंकी बड़ी बड़ी कोठियां थीं। हीरानन्दसाके सात पुत्र थे, ये सातों ही पिताकी तरह भारतके नानास्थानोंमें महाजनी और हुण्डीका काम करते थे। इनमेंसे ज्येष्ठपुत्र माणिकचन्दने ढाका जा कर कोठी बना ली थी। इन्हीं माणिकचन्दसे सेठवंशका नाम सर्वत्र फैल गया है। उन दिनों बङ्गालकी राजधानी ढाकामें रह कर मुर्शिदकुली खाँ बङ्गराज्यका शासन करते थे। माणिकचन्द उनके दाहिने हाथका काम करते थे। १७०४ ई०में मुर्शिदकुली खाँ राजधानीको मुर्शिदाबाद ले आये, माणिकचन्द भी उनके साथ नवीन राजधानीमें आ कर रहने लगे तथा नवाब-सरकारके एक प्रधान व्यक्ति गिने गये। यहां नयी टकसाल स्थापित हुई, माणिकचन्दने उसका कर्तृत्व पाया। इस समय नियम हुआ कि, जमींदार या राजस्व उगाहनेवालोंको महीनावारी कर जमा देना पड़ेगा। ये रुपये भी माणिकचन्दके पास जमा होते थे और उन्हींके मारफत प्रतिवर्ष दिल्लीश्वरके पास डेढ़ करोड़ रुपये भेजे जाते थे। दिल्लीमें माणिकचन्दके भाईकी भी कोठी थी। माणिकचन्द दिल्लीको नगदी रुपये न भेज कर अपने भाईके नाम हुण्डी भेज दिया करते थे। इस तरह बङ्गाल का सारा नगद खजाना माणिकचंदके पास जमा रहता था। नवाबको रुपयोंकी जरूरत पड़ने पर माणिकचंदका मुंह ताकना पड़ता था. इस तरह माणिकचन्दकी शक्तिकी वृद्धि होने लगी। उनके ऊपर बात कहनेकी मजाल किसीकी भी न थी। १७१५ ई०में सम्राट् फर्रुखशियारने नवाब मुर्शिदकुलीके आवेदनानुसार माणिकचन्दको "सेठ"-की उपाधि प्रदान की। सुना जाता है कि, माणिकचन्दने भी—औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद जिसमें मुर्शिदकुलीखांकी नवाबी बनी रहे—इसके लिए यथेष्ट प्रयत्न किया था। उस समयके राजकर्मचारी मात्र ही अर्थके वशमें थे। ऐसी दशामें महाधनी माणिकचन्द जो मुर्शिदकुलीखांके दरबारमें सर्वेसर्वा हो गये होंगे, इसमें सन्देह नहीं। प्रवाद है—मुर्शिदकुलीकी मृत्युके बाद भी माणिकचन्दके पास पांच करोड़ रुपये पावने थे।

माणिकचन्दके कोई लड़का न था। उनकी बहन धनबाईके साथ अन्यतम राजवंशीय राय उदयचंदका विवाह हुआ था। इन्हीं धनबाईके गर्भसे फतेचन्दका जन्म हुआ। माणिकचन्दने अपने भानजे फतेचन्दको गोद रख लिया। १७२२ ई०में माणिकचन्द प्रचुर धनसम्पत्तिको

छोड़ते महासम्मानके साथ परलोक सिधारे ।

माणिकचंदकी मृत्युके बाद फतेचंद भी एक धन-कुवेर हो उठे, भारतके नानास्थानोंमें उनका हुण्डीका कारोबार चलने लगा। उस समय इनके समान अर्थनीतिवित् दूसरा कोई न था। १७२२ ई०में दिल्ली जा कर उन्होंने सम्राट् महम्मदशाहसे भेंट की। भेंट करते समय सम्राट्ने उन्हें "जगतसेठ" (अर्थात् जगत्के प्रधान श्रेष्ठी या धनाढ्य)-की उपाधि दी थी। उससमय दिल्लीके दरबारमें बङ्गालके नवाब नाजिमने "साहब तहसील" अर्थात् कर वसूल करनेके मालिक, जगत्सेठने "साहब तहवील" अर्थात् धनरक्षक, और डाहापाड़ाके बङ्गालाधिकारीने "साहब-तहरी" अर्थात् हिसाब किताबके मालिक इस तरहकी उपाधियां पायी थीं।

उक्त सेठोंकी वंशपत्रिकामें लिखा है कि, किसी कारणसे उस समय दिल्लीश्वर नवाब मुर्शिदकुली पर क्रुद्ध हो गये थे और जगत्सेठ फतेचन्दको ही बङ्गालका सिंहासन देना चाहते थे। किन्तु उच्चहृदय फतेचन्दने अपने पूर्व उपकारी मुर्शिदकुलीका जिससे कुछ अमङ्गल न हो और वे भी अच्छी तरह रह सकें—इसके लिए आवेदन किया था। इससे सम्राट्ने खुश हो कर फतेचन्दको एक समुज्ज्वल मरकत मणि प्रदान की, जिस पर "जगतसेठ" नाम खुदा हुआ था।

१७२५ ई०में मुर्शिदकुलीखांकी मृत्यु हुई, उनके बाद सुजाउद्दौलाने नवाब हो कर १४ वर्ष निर्विघ्न राज्य-शासन किया, इस लम्बे समयमें फतेचन्द उनके चार प्रधानसचिवोंमें गिने जाते थे। नवाब हर एक काममें फतेचन्दकी सलाह लेते थे। उस समय बङ्गालका राजकोष फतेचन्दके ही हाथमें था।

१७३९ ई०में सरफराजखां बङ्गालके मसनद पर बैठे। ये कुछ लम्पट थे। इसी लम्पटताके कारण उनसे जगत्सेठका विवाद हुआ था। फतेचन्दकी पुत्रवधू बहुतही खूबसूरत थीं, उनके समान सुन्दरी युवती शायद बङ्गाल भरमें न थी। इन्हीं पर नवाब सरफराजका दांत था। उन्होंने एकबार उस सुन्दरीको देखना चाहा। जगत्सेठ इस बातसे राजी न थे, किन्तु अत्याचारके भयसे एकदिन उन्होंने कुछ देरके लिए बाध्य हो कर अपनी पुत्रवधू नवाबके प्रासादमें भेज दी यद्यपि नवाब सरफराजने उसे सुन्दरीकी देहको कलङ्कित न किया था, किन्तु तो भी फतेचन्दका इसमें बहुत ही अपमान हुआ। नवाबको मालूम था कि, मुर्शिदकुलीखां सात करोड़ रुपये फतेचन्दके पास रख गये हैं, अब नवाब उन रुपयोंकी मांग बैठे।

एक तो फतेचन्द नवाबके ऊपर नाराज थे ही, दूसरे रुपयोंके लोभसे वे उनके शत्रु हो गये। फतेचन्द सरफराजको मसनदसे उतारनेके लिए अलीवर्दीखान्से मिल गये। (मुर्शिदाबाद और अलीवर्दीखान् देखो।) जगत्सेठकी सहायतासे अलीवर्दी बङ्गालके नवाब हो गये। १७४२ ई०में मराठा-सर्दार भास्कर पण्डित मुर्शिदाबाद लूटने आये, इस बार जगत्सेठका ढाई करोड़ रुपया लुट गया था।

१७४४ ई०में फतेचन्दकी मृत्यु हुई। इनके दो पुत्र थे—एक सेठ दयाचन्द और दूसरे सेठ आनन्दचन्द। दयाचन्दके औरससे स्वरूपचन्द और आनन्दचन्दके औरससे महताबरायका जन्म हुआ था। स्वरूपचन्दको "महाराज" की तथा महताबरायको 'जगत्सेठ"की उपाधि प्राप्त हुई।

१७४८ ई०में अरमनी वणिकोंपर क्रुद्ध हो कर नवाब अलीवर्दीने जब काशिमबाजारकी कोठी पर आक्रमण किया था; तब अंग्रेजोंने जगत्सेठसे १२ लाख रुपया ले कर नवाबको दिये थे। तभीसे अंग्रेज लोग उक्त सेठोंसे कभी कभी विशेष उपकार पाते थे।

१७५७ ई०में विलायतसे कोर्ट आफ् डिरेकटरोंने इष्ट इण्डिया कम्पनीको कलकत्तेमें टकसाल खोलनेके लिए विशेष तगादा किया, किन्तु यहांके सभापतिने लिख भेजा कि,—"यहां नवाबको ठण्डा करना हमारी कूवतसे बाहर है, हम जिस भाव रुपया देना चाहेंगे, जगत्सेठ उससे ज्यादा दे कर हम लोगोंको हताश कर देंगे। इस देशमें चांदी या सोना जितना भी आता है, वह सब जगत्सेठके द्वारा खरीद लिया जाता है, इससे भी उन्हें प्रतिवर्ष यथेष्ट लाभ होता है। हां, यदि हम दिल्लीसे सम्राट्का आदेश ले सकें, तो भले ही हमारा अभिप्राय सिद्ध हो सकता है, परन्तु उसमें भी कमसे कम दो लाख

रुपयोंकी जरूरत होगी। और इस तरहसे कार्रवाई करनी होगी कि, जिससे जगत्सेठको इसका जरा भी पता न लगने पावे। उन्हें मालूम हो गया, कि हम लोगों पर विपत्ति अवश्य आवेगी।

१७५६ ई०में सिराजउद्दौला बङ्गालके नवाब हुए। इस समयसे ही जगत्सेठके साथ अंग्रेजोंकी घनिष्ठताका सूत्रपात हुआ। सिराजने जब कलकत्ते पर आक्रमण किया, तब अंग्रेजोंने जगत्सेठ द्वारा सन्धिका प्रस्ताव कराया। जगत्सेठने निरपेक्ष भावसे अंग्रेजोंके लिये यथेष्ट चेष्टा की थी। अन्यान्य लोगोंकी तरह उन्होंने अपने स्वार्थ पर दृष्टिपात नहीं किया था।

सेठोंकी ऐसी कृपादृष्टि सिर्फ अंग्रेजों पर ही न थी, बल्कि फरासी गवर्मेण्टने भी उनकी यथेष्ट सहायता पाई थी। जिस समय क्लाइवने चन्दननगर पर आक्रमण किया था, उस समय भी फरासी गवर्मेण्टकी तरफ जगत्सेठके १५ लाख रुपये निकलते थे।*

इसी समय दिल्लीश्वर सिराजके ऊपर क्रुद्ध हो गये। पूर्णियाके नवाब विद्रोही हो उठे। सिराजने जगत्सेठको बुला कर कहा—"आपने दिल्लीश्वरके पाससे हमारा फरमान क्यों नहीं मंगाया? आपको बहुत जल्द ३ करोड़ रुपये इकट्ठे कर देने पड़ेंगे।" जगत्सेठने उत्तर दिया—"इस समय राज्यमें चारों ओर सूखा पड़ रहा है, ऐसी हालतमें कोई भी सुभीताके अनुसार रुपया नहीं दे सकता। अब इस असमयमें मैं किस तरह इतने रुपयोंका इन्तजाम करूं?" इस बातको सुन कर उद्धत सिराजने जगत्सेठके गाल पर एक तमाचा मार दिया और उन्हें कैद कर लिया।

जगत्सेठका अपमान ही सिराजके अधःपतनका मूल कारण हुआ। जगत्सेठके कैद होनेकी खबर सुन मीरजाफर पूर्णियासे जल्द ही लौट आये और उनकी मुक्तिके लिए उन्होंने सिराजको बहुत कुछ कहा। किन्तु मन्दमति नवाबने किसीकी भी न सुनी।

२१ नवम्बरको कलकत्तासे अंग्रेज-वणिक्-सभाने जगत्सेठको लिखा कि, "हमारी आशा और साहस सब ही आपके ऊपर निर्भर है, आपहीकी आशासे हम लोग अभी तक आपकी बाट जोह रहे हैं।"

जगत्सेठ कैदसे छूटे तो सही, पर नवाबके डरसे उन्होंने प्रकाश्य भावसे अंग्रेजोंका पक्ष समर्थन नहीं किया। उन्होंने प्रधान नायब रणजित् रायको अंग्रेजोंका पक्ष समर्थन करनेके लिए नवाबके पास रक्खा।

१७५७ ई०के फरवरी महीनेमें सिराजके साथ अंग्रेजोंकी जो सन्धि हुई थी, वह इन्हीं रणजित् रायकी कार्यदक्षतासे।

क्लाइव द्वारा चन्दननगर दखल होने पर सिराजके साथ अंग्रेजोंका युद्ध होना निश्चित हो गया। उस समय अंग्रेज वणिकोंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि, सिराजका अधःपतन और वे ही बङ्गालके हर्त्ता-कर्त्ता होंगे। जगत्सेठने ही पहले सिराजको राज्यच्युत करनेका प्रस्ताव किया। मीरजाफर भी उनके प्रस्ताव पर सहमत हुए। यार लतिफखांने यह गुप्तरहस्य कासिमबाजारके वाट साहबसे कह दिया। यार लतिफखां नवाबकी अधीनतामें दो हजार-सेनाके नायक थे। नवाबके अधीनस्थ होने पर भी वे सेठोंके वेतनभोगी थे। यह बात पक्की हुई थी कि, सम्पूर्ण विपत्ति आपत्तियोंमें—और तो क्या नवाबके विपक्षमें भी उन्हें सेठोंकी सहायता करनी होगी। वास्तवमें जगत्सेठके आदेशसे ही यार लतिफखांने नवाबके विपक्षमें षड़यन्त्र किया था और इसी षड़यन्त्रके फलस्वरूप जगत्सेठकी सहायतासे ही भविष्यमें अंग्रेज वणिकोंने बङ्गालका आधिपत्य पाया था।

पलासी युद्धके सात दिन बाद जगत्सेठके भवनमें बड़ी धूमधाम हुई थी। यहीं लाल सन्धिपत्रका रहस्य खुला था। सिराजके अधःपतनसे जगत्सेठको खुशी अवश्य हुई थी, पर उन्होंने यह नहीं सोचा था कि, इसमें उनका फायदा हुआ या नुकसान?

दूसरे वर्ष कलकत्तेमें टकसाल बन गई। जगत्सेठका अक्षुण्ण प्रताप रहने पर भी इस समयसे उनके कारोबारमें कुछ ढीलापन आना सम्भव था। सुचतुर अंग्रेज-वणिक्गण जगत्सेठको भुलाये रखनेके लिए नानाप्रकारसे उन्हें सन्तुष्ट रखने लगे। १७५९ ई०के सेप्टेम्बर महीनेमें मीरजाफरके साथ जगत्सेठ भी निमन्त्रित हो कर कलकत्ते आये थे। और तो क्या, इष्ट इण्डियन कम्पनीने जगत्सेठको अभ्र

* Orme's Hindusthan, Vol II.

थेनाके लिए इस समय १७१७४) आकटी (?) रुपये व्यय किये थे। महाराज स्वरूपचन्द और जगत्सेठ महताबराय-के प्रयत्नसे ही मीरजाफर मुर्शिदाबादके मसनद पर बैठे थे, किन्तु इस अर्थलोलुप नव नवाबकी अर्थपिपासाको वे किसी तरह मिटा न सके। इस मीरजाफरसे ही सेठोंके भाग्यने पलटा खाया।

दोनों भाई नवाबके व्यवहारसे विरक्त हो कर तीर्थ-यात्राको निकल गये। रास्तेमें भी नवाबने उनका पिण्ड न छोड़ा, दो हजार सेना भेज कर उन्हें रुपये देनेके लिए लौट आनेको कहा। किन्तु सेनाने अर्थलोभमें पड़ कर सेठोंका ही पक्ष लिया था।

१७६० ई०में मीरजाफर गद्दीसे उतार दिये गये और उनके दामाद मीरकासिमको नवाबका पद मिला। पहले ही मीरकासिमने सेठोंको हस्तगत किया। उनसे दोनों भाइयोंने पहिले पहल खूब ही सम्मान पाया; किन्तु जब अंग्रेजोंके साथ मीरकासिमका झगड़ा चला, तब उन्होंने सुना कि सेठोंने अंग्रेजोंका पक्ष अवलम्बन किया है। इस पर मीरकासिमने तुरंत ही (२१ अप्रेल, ई० सन् १७६३ को) परिवार सहित सेठोंको कैद करनेके लिए महम्मद तकीखांको भेजा। जगत्सेठकी पुरमहिलाओंने जब सुना कि, अब उनका छुटकारा नहीं, शीघ्र ही मुसलमानोंके हाथ उन्हें अपमानित होना पड़ेगा, तब वे हाथोंमें आग ले ले कर बारूदके ऊपर जा बैठीं। इस दारुण सङ्कटके समय क्लाइवने जा कर उनकी रक्षा की थी। परन्तु महाराज स्वरूपचन्द और जगत्सेठ महताबरायको नवाबने कैद कर लिया।

अंग्रेज कर्मचारियोंने दोनोंकी मुक्तिके लिए बहुत कुछ अनुनय-विनय किया था, परन्तु मीरकासिमने उस पर जरा भी ध्यान न दिया। उदयनालेके युद्धमें परास्त हो कर वे मुर्शिदाबादसे दोनों सेठोंको ले कर मुङ्गेर चले गये। वहां जा कर उन्होंने समझ लिया कि, "जब चारों ओर विश्वासघातक हैं, तब फिर राज्यकी रक्षा करना कठिन ही है।" इसी समय उन्होंने क्रोधसे उन्मत्त हो कर महाराज स्वरूपचन्द और जगत्सेठ महताबरायको मार डाला था। बादमें दोनों सेठोंके ज्येष्ठ पुत्रोंने पितृ-पद प्राप्त किया।

उस समय स्वरूपचन्द और महताबरायके कनिष्ठ सहोदरोंकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गई थी। दोनों भाइयोंके कनिष्ठ सहोदरोंके पुत्रोंको भी कैदीकी तरह दिल्लीमें पकड़ लिया गया था। मीरजाफरने बङ्गालके राजसिंहासन पर पुनः बैठनेके बाद उक्त सेठोंकी मुक्तिके लिए अयोध्याके नवाब वजीरके पास आवेदन किया था। परन्तु वजीर बहुत रुपये मांग बैठे। १७६५ ई०के मई मासमें जगत्सेठने अपनी दुरवस्थाकी बात लार्ड क्लाइवको कही, किन्तु उसके उत्तरमें नवम्बर मासमें क्लाइवने लिखा कि—"आपके पिताको हमने बहुत कुछ सहायता पहुंचाई है, सो शायद आप भी जानते हैं। परन्तु मान सम्भ्रम और साधारणके उपकारके लिए जो कुछ कर्त्तव्य था, वह उन्होंने नहीं किया। कोषागारमें तीन तीन चाबी लगानेकी बात थी, परन्तु वह बात कार्यमें परिणत नहीं हुई। तमाम खजाना आपहीके घर रहा। उधर सुनते हैं कि, जमींदारोंसे सरकारी खजाना वसूल करनेके लिए ५ मास पहलेसे ही—शायद पितृऋण परिशोध करनेके लिए—उन पर जोर-जुलुम किया जाता है। आपका यह कार्य ठीक नहीं, ऐसा करने देना हमारे लिए उचित नहीं है। आप इस समय भी महाधनी हैं, किन्तु अर्थलोभके कारण ही शायद आप लोगोंको असुविधा भोगनी पड़ेगी और आप लोगों पर जो धारणा थी, वह भी दूर हो जायगी।"

दूसरे ही वर्ष जगत्सेठ अंग्रेजों पर ५०।६० लाख रुपयेका दावा कर बैठे। इसी बीचमें मीरजाफर और अंग्रेजोंकी सेनाके व्यय निर्वाहार्थ जगत्सेठने २१ लाख रुपये दिये थे। लार्ड क्लाइवने इन्हीं २१ लाख रुपयोंको देनेका आदेश दिया और पहलेका कुछ भी नहीं दिया। इसके दूसरे वर्षमें ही इष्ट इण्डियन कम्पनीने जगत्सेठसे कर्जकी तौर पर १॥ लाख रुपये लिए।

शाहआलमने लार्ड क्लाइवको जब बङ्गालका दीवान बनाया, तब महताबरायके ज्येष्ठपुत्र अष्टादश वर्षीय खुशालचन्द कम्पनीकी तरफ अर्थात् तहवीलदार नियुक्त हुए। इस वर्ष शाहआलमने खुशालचन्दको "जगत्-सेठ" और महाराज स्वरूपचन्दके ज्येष्ठ पुत्र उद्योतचन्द-को "महाराज"-की उपाधिसे विभूषित किया था।

१७६६ और १७७० ई०में नवाबके साथ कम्पनीके सन्धि-पत्रसे ज्ञात होता है कि, उस समय भी जगत सेठ राज्यके अन्दर एक मन्त्री समझे जाते थे। लार्ड क्लाइव खुशालचन्दको ३ लाख रुपयेकी वार्षिक वृत्ति देना चाहते थे, किन्तु खुशालचन्दने इसकी जरा भी परवाह न की। उनका मासिक खर्च १ लाख रुपयेका था। इस समय जगत सेठकी अवस्था ठीक न होने पर भी उन्होंने पार्श्वनाथशैलकी तरहटीमें लाखों रुपये खर्च कर जैनमन्दिर और धर्मशाला आदिका निर्माण किया था। उक्त मन्दिरकी देवमूर्त्तियों पर उनके भाई सुगोलचन्द और होसियालचंदका नाम खुदा हुआ है। अब मुर्शिदाबादके जैनवणिकोंकी तथा अन्यान्य जैन पञ्चोंसे उक्त मन्दिरका खर्च चलता है।

बहुतोंका कहना है कि, जगत्सेठ खुशालचंदके समयसे ही सेठवंश अवसन्न हो पड़ा था। १७७० ई०के महादुर्भिक्षमें जगत सेठके बहुतसे रुपये मारे गये थे। १७७२ ई०में वारेन हेष्टिंग जब कलकत्तेमें खालसा ले आये तब जगत सेठका सरफ पद जाता रहा। कोई कोई कहते हैं कि, दुर्भिक्ष या पदच्युतिके कारण ही सेठवंशका अधःपतन नहीं हुआ, बल्कि खुशालचंदकी मृत्यु ही उनके अधःपतनका कारण है। ३८ वर्षकी उम्रमें उनकी मृत्यु हुई थी। उस समय सभी अपना धन गाड़ रखते थे। किन्तु खुशालचंद मरते समय उस विपुल गुप्तधनकी बात किसीको कह न सके थे, इसीलिए खुशालचन्दके साथ जगत्सेठकी लक्ष्मी भी चली गई। पहले वंशके सिर्फ एक ही व्यक्ति "जगत्सेठ"की उपाधि व्यवहार करते थे, किन्तु खुशालचन्दके पीछे यह नियम भी नहीं रहा, उनके सहोदर और भतीजे आदि सब ही नाम मात्रके लिए "जगतसेठ"की उपाधि व्यवहृत करने लगे।

खुशालके कोई पुत्र न था, उन्होंने अपने भतीजे हरकचंदको ही गोद रक्खा था। इनको दिल्लीसे उपाधि नहीं लानी पड़ी थी, अंग्रेजोंने ही "जगत्सेठ"की पदवी दे दी थी। हरकचंद रुपयोंसे बड़े तंग थे, अन्तमें गुलाबचंदकी मृत्युके बाद उनकी सम्पत्तिके येही उत्तराधिकारी हुए, इससे उनकी तंगी जाती रही। हरकचंदके पुत्र नहीं होता था, इसके लिए उन्होंने श्वेताम्बर धर्मानुसार सब तरहके धर्मानुष्ठान किये थे। अन्तमें एक वैरागीके कहनेसे वे वैष्णव धर्ममें दीक्षित हुए। हरकचंदको पुत्रकी प्राप्ति हुई। कहते हैं, इस समयसे यह वंश वैष्णवोंमें गिना जाने लगा। परन्तु इनका सम्मान जरा भी न घटा, वैसाका वैसा ही रहा। अब भी उच्चश्रेणीके श्वेताम्बर जैनोंमें इनका आदान-प्रदान चलता है।

हरकचन्दके दो पुत्र थे—इन्द्रचन्द और विष्णुचन्द। इन्द्रचन्दको "जगत्सेठ"की उपाधि मिली थी। इनके पुत्र गोविन्दचन्द थे। इन गोविन्दचंदने परिवार पोषणके लिए बहुमूल्य हीरा मोती आदि तक बेच डाले थे। आखिरकार ये बिल्कुल निःस्व हो पड़े। अंग्रेज कम्पनीने दयादृष्टिसे इनके लिये १२०००) रुपयेकी वार्षिक वृत्तिका बंदोबस्त कर दिया था। गोविंदचंदकी मृत्युके बाद विष्णुचंदके पुत्र कृष्णचंद सेठवंशके कर्त्ता हुए। इनके समयमें गवर्मेण्टने वृत्ति घटा कर ८०००) रुपये मात्र रहने दिये। जगतसेठ कृष्णचंद बड़े धार्मिक थे। इनके कोई पुत्र नहीं था। ये काशी जा कर अपने परम आत्मीय राजा शिवप्रसादके साथ रहे थे।

प्रवाद है कि, जगत सेठके घर लक्ष्मी बंधी थी। प्रति वर्ष बड़े धूमधड़क्केके साथ लक्ष्मीकी पूजा होती थी। उक्त लक्ष्मीदेवीकी वेदीके नीचे १ लाख असरफियां गड़ी थीं।

जगत्सेतु (सं० पु०) जगतः सेतुरिव, ६-तत्। परमेश्वर।

जगद (सं० पु०) रक्षक, पालक।

"बली जगदैः सह वसुंच बहूनामादिमान्।" (पारस्कर गृ० ३।४)

जगदन्तक (सं० पु०) जगतामन्तकः, ६-तत्। जगद् विनाशक, मृत्यु, मरण।

"उपमाय सर्वं जगदन्तकान्तकम्।" (भागवत ४।२।१६)

जगदम्बा (सं० स्त्री०) जगतोऽम्बा, ६-तत्। दुर्गा।

जगदम्बिका (सं० स्त्री०) जगदम्बा स्वार्थे कन्-टाप् इत्वञ्च। दुर्गा।

"सृष्टिस्थितिविनाशानां विधात्री जगदम्बिका।" (भगवतीगीता)

जगदलपुर—मध्यप्रदेशके अन्तर्गत वस्तार राज्यका प्रधान नगर। यहां वस्तारका राजप्रासाद है। यह अक्षा०

१८° ६´ उ० और देशा० ८१´ ४´ पू०में ईन्द्रावती नदीके किनारे पर अवस्थित है। इसके एक तरफ नदी और बाकीकी तीनों दिशाओंमें मिट्टीकी प्राचीर और गहरी खाई है। यहांके मुसलमान वणिक् खूब धनाढ्य हैं। जो लोग बाहरसे ऊंट, घोड़े, खजूर आदि बेचने आते हैं, वे सब प्राचीरके बाहर रहते हैं। इस नगरके पास ही एक बड़ा तालाब है। इसके चारों तरफ बहुत लम्बा चौड़ा मैदान और बीच बीचमें छोटे छोटे गांव और बगीचे हैं। यहांसे ४० मीलकी दूरी पर जयपुरराज्य ा जयपुर नगर है। यहांकी लोकसंख्या ५०४४ है, यहांके असभ्य लोग 'गोई' कहलाते हैं। मद्राषलम् देखो।

जगदादि (सं० पु०) जगत् आदिः कारणम्, ६-तत्। १ परमेश्वर। २ ब्रह्मादि। "जगदादिरनादिस्त्वं।" (कुमारसं०)

जगदादिज (सं० पु०) जगतां आदौ हिरण्यगर्भरूपेण जायते प्रादुर्भवति जन-ड, उपस०। परमेश्वर।
"आजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः।" (विष्णुस०)

जगदाधार (सं० पु०) जगत आधारः, ६-तत्। १ वायु, हवा। जगत्का आश्रय, वह जिसके ऊपर संसारका सम्पूर्ण भार हो, परमेश्वर। "कालोऽपि जगदाधारः।" (तिथितत्त्व)

जगदानन्द (सं० पु०) जगत आनन्दः। १ परमेश्वर। २ कई एक संस्कृत ग्रन्थकार—एक कवि, पद्यावलीमें इनकी कविता उद्धृतकी गई है। एक प्रसिद्ध नैयायिक। एक व्यक्तिने कृत्यकौमुदी नामक स्मृतिका संग्रह किया है। दूसरे एक महाशयने १६४७ ई०में काशीमें रह कर 'कौलार्चनदीपिका' की रचना की थी।

जगदायु (सं० पु०) जगतामायुः पृषोदरादि० सकारलोपः। जगत्प्राण, संसारका जीवन, वायु, हवा।

जगदायुस् (सं० क्ली०) जगत आयुः, ६-तत्। जगत्प्राण, वायु।
"वायु वा विपदां मे ह:ऽबकितो जगदायुषा।" (भारत १०।१४० अ०)

जगदीश (सं० पु०) जगतामीशः, ६-तत्। १ विष्णु। विधाता। ३ शूलपाणिके श्राद्धविवेकके भावार्थदीपिका नामक टीकाकार। ४ जगन्नाथ।

जगदीश कवि—हिन्दीके एक कवि। १५२१ ई०में इनका जन्म हुआ था। ये बादशाह अकबरको सभामें रहते थे।

जगदीशतर्कालङ्कार—एक बङ्गाली नैयायिक, दीधितिग्रन्थके अन्यतम टीकाकार। ये १७वीं शताब्दीके प्रारम्भमें उत्पन्न हुए थे। चैतन्यदेवके श्वशुर सनातनमिश्रके अधस्तन चतुर्थ पुरुष। इनकी ११।१२वीं पीढ़ी अब भी विद्यमान है। इस हिसाबसे अनुमान किया जाता है कि, ये ३२५ वर्ष पहले विद्यमान थे। इनके पिताका नाम था यादवचन्द्र विद्यावागीश। ये पाश्चात्य वैदिक श्रेणीके ब्राह्मण थे। ये अपने बापके ५ पुत्रोंमेंसे ३रे पुत्र थे। जब इनकी उम्र ५।७ वर्षकी थी, तभी इनके पिताकी मृत्यु हो गई थी। बचपनमें ये बहुत ही उद्दण्ड थे। पेड़ों पर चढ़ना, चिड़ियोंके घोंसलोंमें हाथ डाल कर बच्चे पकड़ना आदि तो इनके दैनिक कार्य थे।

एकदिन इसी तरह ताड़-वृक्ष पर चढ़ कर इन्होंने एक घोंसलेमें हाथ डाला, तो उसमेंसे एक सर्प फुंकारके इन्हें काटने आया। तुरंत ही इन्होंने उसका मुंह पकड़ लिया। सर्प इनके हाथमें लिपट गया, इन्होंने पत्थरसे उसके टुकड़े टुकड़े कर डाले और नीचे फेंक दिया। एक संन्यासी खड़ा खड़ा इनकी कारंवाई देख रहा था। उसने बालककी तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय पा कर इन्हें अपने पास बुलाया और पढ़नेका उपदेश दिया। जगदीश उक्त संन्यासीके पास पढ़ने लगे। उस समय इनकी उम्र १८ वर्षकी थी। थोड़े ही दिनोंमें इन्होंने वर्णपरिचयसे प्रारम्भ कर व्याकरण, काव्यादिके ग्रन्थ पढ़ डाले। इस समय इनकी गरीबाईका अन्त न था, ये तेलके अभावमें बांसके पत्ते जला कर अध्ययन करते थे। इसके बाद इन्होंने भवानन्द सिद्धान्तवागीशकी चतुष्पाठीमें अध्ययन कर न्यायशास्त्रमें पूर्ण व्युत्पत्ति लाभ की और वहींसे इन्हें तर्कालङ्कारकी उपाधि प्राप्त हुई। इसके बाद नवद्वीपमें जा कर इन्होंने स्थानीय लोगोंकी सहायतासे एक चतुष्पाठी खोली थी। इनकी चतुष्पाठीमें दूर दूरके छात्र पढ़नेके लिए आया करते थे।

इन्होंने अनेक न्याय-ग्रन्थोंकी टीका, टिप्पनी, व्याख्या, भाष्य आदि लिख कर न्याय जगत्में अच्छी कीर्ति लाभ की थी। इनके "काव्यप्रकाश रहस्यप्रकाश" नामक हस्तलिखित ग्रन्थकी प्रशस्तिमें लेखकने लिखा है कि, यह ग्रन्थ १५७६ शकमें लिखा गया है। इससे मालूम होता है कि शक सं० १५७९ तक ये जीवित थे। इनके दो पुत्र थे, रघुनाथ और रुद्रेश्वर।

जगदीश पण्डित—महाप्रभु चैतन्यदेवके एक प्रधान परिकर। ये बङ्गाली थे। आनन्दचन्द्रदासने "जगदीशचरितविजय"में इनकी विस्तृत जीवनी लिखी है। उसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, पूर्व बङ्गालके भट्टनारायण-वंशमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम था कमलाक्ष वन्द्य और माताका भाग्यवती। ये बचपनहीसे कृष्णके भक्त थे। यहां तक कि खेलते समय भी कृष्णकी मूर्ति बना कर खेला करते थे। पढ़ने लिखनेमें इनका जरा भी ध्यान न था, परन्तु गुरुके प्रश्नका ये तुरंत उत्तर दे दिया करते थे। आठ वर्षकी अवस्थामें ही इन्होंने अनेक ग्रन्थ पढ़ डाले थे। श्रीमद्भागवत पढ़ कर इनकी कृष्णभक्ति और भी बढ़ गई। कुछ दिन बाद ये एक महापण्डित कहलाने लगे। इनके टोलमें बहुत छात्र पढ़ते थे। ये उनके साथ संकीर्तन किया करते थे। उस समय भी चैतन्यदेवका आविर्भाव न हुआ था।

ये चैतन्यके पिता जगन्नाथमिश्रके घरके पास ही रहते थे और जगन्नाथ तथा हिरण्यभागवतसे इनकी खूब मित्रता थी। जगदीशकी स्त्रीसे चैतन्यकी माताका सद्भाव था, दोनोंने चैतन्यका लालन-पालन किया था। विशेष विवरण जाननेके लिये 'चैतन्यदेव' देखना चाहिये।

ये चैतन्यदेवके साथ बहुत दिन रहे थे और उनकी अनुमतिसे नीलाचल भी गये थे। यहां ये जगन्नाथके प्रेममें विमुग्ध हो गये थे। भगवान्‌ने ज्योतिर्मय नील-कान्तमणिमयरूपमें इन्हें दर्शन दिये थे।

इसके बाद इन्होंने जसोड़ा ग्राममें जगन्नाथकी मूर्ति स्थापित की। जसोड़ाके राजाने इन्हें कुछ भूमि दान की थी, उसीमें मकानात बना कर ये परिवार सहित रहने लगे। वहीं इनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

कवि आनन्ददासका कहना है कि, वह जगन्नाथकी मूर्ति, जिसका कि नाम गौरगोपाल था, जगदीशकी माता दुखिनीदेवीको 'मा' कह कर पुकारती थी और दुखिनी उन्हें गोदमें ले कर स्तन पिलाया करती थीं।

जगदीशपण्डितके उक्त तीनों पुत्रोंकी मृत्युके उपरांत वृद्धावस्थामें एक पुत्र और कन्या हुई थी; पुत्रका नाम था रामभद्र और कन्याका रसमञ्जरी। पौष मासकी शुक्ल-तृतीयाके दिन इनका अन्तर्धान हुआ था। गौड़ीय वैष्णव अब भी इनकी भक्तिश्रद्धा करते हैं। पौष मासकी शुक्ल तृतीया वैष्णव पर्वोंमें सम्हाली जाती है। जगदीशके भक्तगण उक्त दिवस उनकी पूजा करते हैं।

जगदीशपुर—१ विहारके शाहाबाद जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° २८' उ० और देशा० ८४° २६' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ११४५१ होगी। यह नगर शक्करके व्यवसायका केन्द्र है। १८६६ ई०को म्युनिसपालिटी हुई। २ नसपुर नगर देखो।

जगदीशपुर—अयोध्याके सुलतानपुर जिलेके अन्तर्गत (मुसाफरखाना तहसीलका) एक परगना। इसके पश्चिमको और गोमती नदी बहती है। इसका रकवा १५५ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ८५००० होगी। भर राजाओंके आधिपत्यके समय जगदीशपुर सातन और कृष्णी इन दो परगनाओंमें विभक्त था। मुसलमानोंके भरवंश उच्छेद करनेके बादसे ये दोनों परगने मिल गये और जगदीशपुर नाम पड़ गया। इस परगनेमें १६६ गांव लगते हैं।

इसका प्रधान नगर है निहालगढ़। जगदीशपुरसे एक सड़क रायबरेली और फैजाबादकी गई है। यहांसे अनाज, कपड़ा आदिकी रफ्तनी होती है। फैजाबादकी सड़क और गोमती नदीके कारण यहांके वाणिज्यमें सुभीता पहुंचता है।

जगदीशपुर-निहालगढ़—अयोध्याप्रदेशके सुलतानपुर जिलेके अन्तर्गत जगदीशपुर परगनेका एक प्रधान नगर। यह नगर छोटा है। यहांकी जनसंख्या २०००के करीब है। यहां एक सरकारी विद्यालय है।

जगदीशलाल गोस्वामी—हिन्दीके एक कवि। ये बूंदीके रहनेवाले थे। इन्होंने साहित्यसार, व्रजविनोद नायिका-भेद, महावीराष्टक, नृपरामपचीसी, प्रस्तारप्रकाश पिङ्गल आदि कई ग्रन्थ रचे हैं। इनकी कविता साधारणतः अच्छी होती थी।

जगदीश्वर सं० पु०) जगतामीश्वरः, ६-तत्। जगदीश देखो।

जगदीश्वरी (सं० स्त्री०) जगदीश्वर-ङीप्। भगवती, पार्वती।

जगदुन्मादका (सं० स्त्री०) सुरा, शराब, मदीरा।

जगदेकनाथ (सं० पु०) जगत एकोऽद्वितीयोः नाथः।

जगत्के प्रधान अधीश्वर, एकच्छत्र धारणीपति, सम्राट, बादशाह।

जगदेव—१ इनके दूसरे नाम जगद्देव और त्रिभुवनमल्ल भी थे। ये दाक्षिणात्यके महिसुर प्रदेशके शान्तरवंशीय एक राजा थे। ईसाकी १२वीं शताब्दीमें इनका प्रादुर्भाव हुआ था। जगदेवके पिताका नाम काम और माताका नाम विज्जलादेवी था। ये दो भाई थे—छोटे भाईका नाम था सिंहदेव। जगदेवके पुत्रका नाम बम्मरस था। शान्तरवंशीय राजा चालुक्यराजाओंके अधीन करद थे। एकबार जगदेवने चालुक्यभूपति तैलके आदेशसे ओरङ्गल-के निकटवर्त्ती अनुमकुण्ड पर आक्रमण किया था। परन्तु युद्धमें पराजित हो कर उन्हें भागना पड़ा था।

२ स्वप्नचिन्तामणि नामक संस्कृत दिगम्बर जैनग्रन्थके रचयिता।

३ हिन्दीके एक कवि। १७३५ ई०में इनका जन्म हुआ था। इनकी कविता सरस होती थी।

जगदेव परमार—भक्तमाल ग्रन्थमें वर्णित एक भक्त वैष्णव। ये जिस राज्यमें रहते थे, उस राज्यकी राजकुमारी इनकी सरलता और साधुता पर मोहित हो गई तथा इनके साथ विवाह करनेके लिए उन्होंने प्रस्ताव भी किया। राजा भी उक्त प्रस्ताव पर सहमत हो गये और उन्होंने बड़े यत्नसे जगदेवको अपने पास बुलाया। परन्तु विषय-निस्पृह जगदेवने किसी तरह भी उक्त प्रस्तावको मञ्जूर न किया। राजकुमारीने भी प्रतिज्ञा कर ली कि, "जगदेवके सिवा मैं और किसीके गलेमें वरमाला न पहनाऊंगी।" राजा सङ्कटमें पड़ गये, उन्होंने जगदेवको भुलानेके लिए एकदिन परमरूपसी किसी नायिका द्वारा हरिनामका गायन कराया और जगदेवको भी बुलाया। आखिरकार जगदेव उस नर्त्तकीके गानेको सुन कर इतने प्रसन्न हुए कि, उन्होंने पुरस्कार स्वरूप अपना मस्तक काट कर नर्त्तकीको अर्पण किया। इससे राजकुमारी शोकातुर हो कर जगदेवके कटे हुए मस्तकको सुवर्णके थालमें रख कर उसका अवलोकन करने लगीं। कहा है कि, जगदेवके मस्तकने भी अपनी प्रतिज्ञा न छोड़ी, राजकुमारीका मुंह न देख कर वह औंधा हो गया। बहुत प्रयत्न करने पर भी वह सीधा न रहा। अन्तमें उनके धड़से मस्तकके मिलाने पर वे जीवित हो गये। फिर राजकुमारीकी प्रार्थनासे तथा उनके वैष्णवभाव देख कर जगदेवने उनके साथ विवाह कर लिया। पीछे कुछ समय तक गृहस्थीमें रह कर अन्तमें उन्होंने घरद्वार छोड़ दिया था। (भक्तमाल)

जगदेव राय—महिसुर और मालीमके राजा। ये विजय-नगराधिपति श्रीरङ्गके जामाता थे।

१५७७ ई०में मुसलमानोंने श्रीरङ्गकी राजधानी पेनुकुण्ड पर आक्रमण किया था, उस समय जगदेव रायनेससैन्य जा कर मुसलमानोंको परास्त कर भगा दिया था। श्रीरङ्गने सन्तुष्ट हो कर इनको पुरस्कारस्वरूप बहुत सी भू-सम्पत्ति दी थी। १५८५ ई०में श्रीरङ्गकी मृत्यु-के बाद उनके भाई वेङ्कटपतिने चन्द्रगिरिमें राजधानी स्थापित की थी। इनके समयमें जगदेव राय चेन्नपत्तन नामक स्थानके राजप्रतिनिधि हुए थे।

जगद्गुरु (सं० पु०) जगतो गुरुः, ६-तत्। १ परमेश्वर। २ शिव प्रभृति। ३ जगत्के उपदेष्टा नारद प्रभृति (नैषध च०)। ४ वृत्तकौमुदी नामके संस्कृत ग्रन्थकार। ५ अत्यन्त पूज्य और प्रतिष्ठित पुरुष जिसका सब लोग आदर करें। ६ शङ्कराचार्यकी गद्दी परके महन्तोंकी उपाधि।

जगद्गौरी (सं० स्त्री०) जगत्सु मध्ये गौरी। १ दुर्गा। २ मनसादेवी। यह नागोंकी बहन और जरत्कारु ऋषिकी स्त्री थी।

जगद्दल (सं० पु०) दरदके एक राजाका नाम।

"सा राजकार्यं मानिन्ये दरदराजं जगद्दलम्।" (राजतर० ८।२१०)

जगद्दल—बंगालके चौबीस परगनेके अन्तर्गत एक ग्राम। पहले यहां महाराज प्रतापादित्यकी एक कचहरी थी।

जगद्दलक—अफगानिस्तानकी एक नदी, एक उपत्यका और एक गिरिपथका नाम। नदी कोटाल नामक गिरि-पथके निकट उत्थित हो कर काबुल-नदीमें जा मिली है। उपत्यका पर अवलखेल इब्राहिम और खिलजाई जातिका वास है। गिरिपथ ऊंचा, कम चौड़ा, टेढ़ा-मेढ़ा है, ४०।५० गजसे अधिक विस्तार कहीं भी नहीं है, एक जगह सिर्फ ६ फुटका ही विस्तार है। १८४२ ई०की १२ जनवरीको भागती हुई अंग्रेजी सेना इसी गिरिपथमें मारी गई थी; कुछ लोग बच भी गये थे।

जगद्दलपुर—जगदलपुर देखो।
जगद्दीप (सं० पु०) जगती दीप इव प्रकाशकः। १ ईश्वर। २ शिव।
जगद्देव—दुर्लभराजके पुत्र, स्वप्नचिन्तामणिके रचयिता।
जगद्धर—१ एक संस्कृत कवि। इनका बनाया हुआ दर्पदलनकाव्य है।

२ यजुर्वेदके टीकाकार काश्मीर-देशके पण्डित गौरधरके पौत्र। इनके पिताका नाम था रत्नधर। इन्होंने स्तुतिकुसुमाञ्जलि, कातन्त्रको बालबोधिनी टीका और अपशब्दनिराकरण इन तीन ग्रन्थोंकी रचना की थी।

३ मथुरावासी एक संस्कृतके कवि। ये अनेक ग्रन्थोंकी टीकाएं लिख गये हैं; जिनमेंसे देवीमाहात्म्य-टीका, भगवद्गीताप्रदीप, मालतीमाधवटीका, रसदीपिका नामक मेघदूतकी टीका, तत्त्वदीपिनी नामक वासवदत्ताटीका और वेणीसंहारटीका देखनेमें आती है। इन्हींकी बनाई हुई तत्त्वदीपनीमें इनका कुछ परिचय मिलता है, जो इस प्रकार है—चण्डेश्वरके पुत्र वेदेश्वर (या वेदधर), वेदेश्वरके पुत्र रामेश्वर (या रामधर) रामेश्वरके पुत्र गदाधर, गदाधरके पुत्र विद्याधर, विद्याधरके पुत्र रत्नधर और इन्हीं रत्नधरके पुत्र गदाधर थे।
जगद्धातृ (सं० पु०) जगतां धाता, ६-तत्। १ ब्रह्मा। २ विष्णु। ३ शिव, महादेव।
जगद्धात्री (सं० स्त्री०) जगतां धात्री, ६-तत्। १ दुर्गामूर्ति विशेष। हिन्दू धर्मावलम्बी आस्तिक भारतवासियोंमें बहुत समयसे मूर्ति निर्माण करके जगद्धात्रीको पूजा करते आ रहे हैं। इसका विवरण नहीं मिलता, कौन समय किस महात्मा द्वारा वह पूजा आरम्भ की गयी। फिर भी इतना तो कहा जा सकता है कि शारदीय दुर्गापूजा प्रचलित होने पर जगद्धात्रीपूजा चली है। बङ्गालमें किसी किसीको यह भी विश्वास है कि राजा कृष्णचन्द्रने प्रथम मृण्मयी प्रतिमा बना करके जगद्धात्री पूजा की।

जिस नियम, जिस पद्धति और जिस फलकामनासे बड़ी धूमधामके साथ तीन दिनकी शारदीय पूजा सम्पन्न होती, वैसे ही एक दिनमें तीन बार जगद्धात्री पूजा हो जाती है। इसको एक प्रकारसे संक्षेपमें एक दिननिष्पाद्य दुर्गापूजा कह सकते हैं। कात्यायनीतन्त्र, शक्तिसङ्गमतन्त्र, उत्तरकामाख्यातन्त्र, कुब्जिकातन्त्र, भविष्यपुराण स्मृतिग्रह और दुर्गाकल्प प्रभृति ग्रन्थोंमें थोड़ा बहुत जगद्धात्रीपूजाका उल्लेख मिलता है। निगमकल्पसार ज्ञानसारस्वत ग्रन्थमें जगद्धात्री पूजाका काल और विधि इस प्रकारसे लिखित हुआ है—

कार्त्तिक मासके शुक्लपक्षको नवमीतिथिका नाम दुर्गानवमी है। इस दिन दुर्गापूजा करनेसे चतुर्वर्ग लाभ होता है। प्रातः सात्त्विकी, मध्याह्न राजसिकी और सायंकाल तामसी—त्रिकालिकी पूजा करना उचित है। सप्तमीसे नवमी पर्यन्त त्रिविध पूजा करके दशमीको जैसे विसर्जनका विधान है, इसमें एक ही दिन त्रिविध पूजा करके दशमीको विसर्जन करना पड़ता है। यह नवमी तिथि किसी भी दिन त्रिसन्ध्याव्यापिनी न होनेसे जिस दिवसकी प्रातःकालव्यापिनी निकलेगी, तीन बार पूजा की जावेगी। किन्तु वैसे स्थलमें यदि नवमी सवेरे मुहूर्तव्यापिनी न ठहरे, तो पूर्व दिन ही पूजा कर लेना उचित है। एक समयमें तीन पूजा करना अविधेय है, अतएव तीन वक्त तीन पूजाएं होती हैं। (दुर्गाकल्प) ऐसे स्थल पर दशमीको बलिदान देना निषिद्ध नहीं। कात्यायनीतन्त्र, शक्तिसङ्गमतन्त्र प्रभृतिका भी यही मत है।

सिवा इसके कात्यायनीतन्त्रके मतमें चन्द्र कुम्भराशिगत होनेसे कार्त्तिक शुक्ला नवमी तिथिकी उषाकालके सूर्योदयके समय पुत्र, आरोग्य तथा बल और शनिवार वा मङ्गलवारका योग होनेसे चतुर्वर्ग कामनासे दुर्गापूजा करना चाहिये। (कात्यायनीतन्त्र ७८) कात्यायनीतन्त्रमें जगद्धात्रीकी उत्पत्तिका विवरण इस प्रकार कहा है—

किसी समय कई एक देवताओंने मन ही मन सोचा कि—"हम ही ईश्वर हैं, दूसरे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करना अनावश्यक है।" देवताओंका वैसा गर्व देख जगन्माता चैतन्यरूपिणी भगवती दुर्गा उन्हें प्रबोधित करनेके लिये ज्योतिर्मयीके रूपमें आविर्भूत हुईं। लोकभयङ्कर कोटिसूर्यवत् दीप्तियुक्त वह तेजोराशि अवलोकन करके देव डर गये और कुछ भी स्थिर कर न सके। फिर उनने आपसमें परामर्श करके पवनको यह निश्चय करनेके लिये भेजा, वह क्या पदार्थ था। द्रुतगमनसे

निकट उपस्थित होने पर देवीने उनको सम्बोधन करके कहा—"यदि आप इस तृणको उठा कर ले जा सकें, तो मैं आपको बलवान् समझूं।" वायुने बहुत कोशिश की परन्तु तृणको हिला न सके, उन्हें हार मान कर लौटना पड़ा। इसी प्रकार अग्निदेव भी जा करके उस तृणको जला न सके। और अपनासा मुंह ले कर वापस चले गये। फिर सब देवता इनको ईश्वरी स्वीकार करके स्तव करने लगे। इनके स्तवसे सन्तुष्ट हो करके उसी तेजःपुञ्जसे जगद्धात्री आविर्भूत हुई। केनोपनिषद्में भी हैमवतीके आविर्भाव सम्बन्धमें वैसा ही एक उपाख्यान है। इससे बहुतसे लोग दोनोंको अभिन्न जैसा मानते हैं। जगद्धात्री मृगेन्द्र पर बैठी हैं। मुख हास्ययुक्त है। शरीर सब अलङ्कारोंसे विभूषित हो रहा है। इनके

श्री श्री जगद्धात्री।

चार हाथ हैं। परिधानमें रक्तवस्त्र लगा है। शरीरका वर्ण भी नवोदित सूर्य जैसा और कोटि चन्द्रकी तरह आभायुक्त है। नागका यज्ञोपवीत है। चक्षु तीन हैं। देवर्षि और मुनि सर्वदा उनकी सेवामें लगे रहते हैं। ध्यान इस प्रकार है—

"सिंहस्कन्धाधिरूढ़ां नानालङ्कारभूषिताम्।
चतुर्भुजां महादेवीं नागयज्ञोपवीतिनीम्॥
शङ्खशार्ङ्गसमायुक्तवामपाणिद्वयान्विताम्।
रक्तवस्त्रपरीधानां बालार्कसदृशीं तनुम्॥
नारदाद्यैर्मुनिगणैः सेवितां भवसुन्दरीं।
त्रिवलीवलयोपेतनाभिनालमृणालिनीं॥
रत्नद्वीपे महाद्वीपे सिंहासनसमन्विते।
प्रफुल्लकमलारूढ़ां ध्यायेत्तां भवगेहिनीम्॥"

(कात्यायनीतन्त्र ७७ पटल)

जगद्धात्रीयन्त्र—पहले तीन त्रिकोण बना करके त्रिविम्ब और त्रिरेखायुक्त अष्टदल पद्म अङ्कित करना चाहिये। इसके बाद यथाविधान वज्रभूपुर लिखना पड़ता है। इसीका नाम जगद्धात्रीयन्त्र है।

दुर्गा और दुर्गापूजा देखो।

२ सरस्वती। (मार्कण्डेयपुरा० ९१।१०)

जगद्बल (सं० पु०) जगतां बलमस्मात्, बहुव्री०। वायु, हवा। उपनिषद्के मतसे पर्यालोचना करने पर मालूम पड़ता है कि प्राणियोंके बल कार्यके प्रति वायु एक प्रधान कारण है, इसीलिए वायुको जगद्बल नामसे उल्लेख किया है। इसका विशेष विवरण वायु शब्दमें देखो।

जगद्योनि (सं० पु०) जगतां योनिरुत्पत्तिस्थानं, ६-तत्। १ शिव, महादेव।

"जगद्योनिं जगद्बीजं जयिनं जगतोगतिम्।" (भा० १३।१७।१३)

२ विष्णु। "तं समेत्य जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम्।" (विष्णु० ११२।१२) ३ ब्रह्मा। "जगद्योनिरयोनिस्त्वं जगदन्तो निरन्तकः।" (कुमार २।९) ४ परमेश्वर। (स्त्री०) ५ पृथिवी, पृथ्वी।

जगद्वन्द्य (सं० पु०) जगतां वन्द्यः, ६-तत्। जगत्पूज्य, कृष्ण। "ववन्दे चरणौ मूर्द्धा जगद्वन्द्यः पितृष्वसुः।" (भारत १।२।१)

जगद्बन्धु शर्मा—एक प्रसिद्ध बङ्गाली पण्डित। इन्होंने आरव्योपन्यासकी प्रथम ५० रात्रियोंकी कहानियोंका संस्कृत भाषामें पद्यानुवाद किया था। इस "आरव्य-यामिनी" काव्यमें कुल १५८४१ श्लोक हैं।

जगद्वहा (सं० स्त्री०) जगन्ति वहति धारयति जगद्वह-अच् टाप्। पृथिवी, पृथ्वी।

जगद्विनाश (सं० पु०) जगतां विनाशो ध्वंसो यत्र, बहुव्री०। युगान्त, प्रलयकाल। प्रलय देखो।

जगनक—एक प्रसिद्ध कवि जो महोबाधीश परमालके बाद दरबारमें रहते थे।

जगनकवि—कालिदास त्रिवेदीकृत "हजारा" नामक कवितासंग्रहधृत एक कवि। ये १५९५ ई०में मौजूद थे। ये शृङ्गाररसके एक अच्छे कवि थे।

जगनन्द कवि—एक हिंदीके कवि, इनका निवासस्थान वृंदावन था। १६०१ ई०में इनका जन्म हुआ था। अन्यान्य वृन्दावनी कवियोंकी भांति इनकी कविताएं भी कालिदास त्रिवेदीकृत हिन्दोकविता-संग्रह "हजारा" नामक पुस्तकमें उद्धृत हुई है।

जगना (हिं० क्रि०) १ नींदत्याग देना, नींदसे उठना। २ सावधान होना, खबरदार होना। ३ उत्तेजित होना, उमंग आ जाना, उमड़ना। ४ दहकना, आगका जलना। ५ झलकना, दमकना।

जगनिक—इनका दूसरा नाम था जगनायक। ११८१ ई०में इन्होंने प्रसिद्धि पाई थी। ये राजपूतानाके प्रसिद्ध राजकवि चांदवर्दाईके समसामयिक तथा बुंदेलखण्डमें महोवा नामक स्थानके राजा परमर्दी (परमल)को सभाके राजकवि थे। पृथ्वोराजके साथ परमर्दीका जो युद्ध हुआ था, उसीको लक्ष्य कर आपने एक काव्य रचा था। बहुतोंका कहना है कि, चाँदकविके "पृथ्वीराजरायसा" नामक महाकाव्यमें महोवाखण्ड प्रक्षिप्त है, तथा अनुमान किया जाता है कि, वह भाग जगन कविका लिखा हुआ है।

जगनेश कवि—बाँकीपुरके प्रसिद्ध हिन्दी कवि। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रके "सुन्दरीतिलक" नामक कवितासंग्रहमें इनकी कविताऐं उद्धृत की गई हैं।

जगन्नाथ—भारतके उत्कल प्रान्तमें पुरी जिलेका एक पुण्यक्षेत्र। यह अक्षा० १९° ४८′ १७″ उ० और देशा० ८५° ५१′ ३९″ पू०में समुद्रतीर पर अवस्थित है। इस स्थानको नीलाचल, पुरी, पुरुषोत्तम, श्रीक्षेत्र, शङ्खक्षेत्र और क्षेत्र भी कहते हैं। दारुब्रह्म श्रीजगन्नाथके आविर्भावसे वह स्थान सर्वत्र जगन्नाथ नामसे प्रसिद्ध है।

भारतके उच्च नीच सभी हिन्दुओंके निकट जगन्नाथ एक पुण्यस्थान है। यहां स्वर्गद्वार है, यहां वैकुण्ठ है और यहां भुक्तिमुक्तिदाता स्वयं भगवान् दारुब्रह्म रूपसे विराज करते हैं, छोटे बड़े का कोई विचार नहीं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज सभी समान हैं। ब्राह्मण और चण्डाल सबके सब एकत्र महाप्रसाद भक्षण करते हैं। ऐसा प्रान्त पवित्र भाव हिन्दू-जगत्‌में किसी भी दूसरे स्थान पर नहीं है। इसी कारण छोटेसे छोटे भक्तसे बड़े बड़े महाराजाधिराज तक सब इसको प्रकृत निर्वाणमुक्तिका स्थान जैसा समझते हैं। उसीसे लाखों यात्री धन और प्राणको परवा न करके जगन्नाथ दर्शनको जाया करते हैं। ऐसे पुण्यस्थानका विवरण कौन हिन्दू जानना न चाहेगा!

ब्रह्मपुराण, नारदपुराण, स्कन्दपुराण (उत्कलखण्ड), कूर्म, पद्म तथा भविष्यपुराणोय पुरुषोत्तम माहात्म्य, कपिलसंहिता, नीलाद्रिमहोदय, पुराणसर्वस्व, विष्णुरहस्य, मुक्तिचिन्तामणि, पुरुषोत्तमपुरोमाहात्म्य प्रभृति संस्कृत ग्रन्थों और हिन्दी, उड़िया, तैलङ्ग एवं बङ्गला भाषाके अन्य पुस्तकोंमें जगन्नाथदेव तथा जगन्नाथक्षेत्रका माहात्म्य आदि थोड़ा बहुत लिखा है। इसके सिवा मत्स्यपुराण, वराहपुराण और प्रभासखण्डमें भी पुण्यधाम पुरुषोत्तमक्षेत्रका उल्लेख है।

पौराणिक ग्रन्थोंमें जगन्नाथकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें अल्पविस्तर मतभेद देख पड़ता है। संक्षेपमें उसका परिचय दिया जाता है। नारदपुराणके उत्तर भाग (५२-५३ अ०)-में लिखा है—

एक दिन सुमेरु पर्वत पर लक्ष्मीने नारायणसे पूछा—"नाथ! पृथिवी पर ऐसा कौनसा पदार्थ है, जिसमें मानव संसार-सागरसे मुक्तिलाभ कर सके।" भगवान्‌ने कहा—"देवी! पुरुषोत्तम नामक एक महातीर्थ है। त्रिलोकके मध्य वैसा स्थान और कहीं भी नहीं। दक्षिण समुद्रके तीर पर एक कल्पस्थायी वटवृक्ष लगा है। इस वटवृक्षसे उत्तर चल करके उससे कुछ दक्षिणको केशवप्रतिमा है। स्वयं भगवान् कर्द्दक वह मूर्ति निर्मित हुई है। यह मूर्ति दर्शन करनेसे मानव वैकुंठ पाता है। (नारदपुराण उत्तरभाग ५२।१२) किसी दिन धर्मराज वह मूर्ति देखने गये थे। उन्होंने हमारे पास आ विस्तर स्तव स्तुति करके कहा—"भगवन् आपकी इन्द्रनीलमयी प्रतिमाका दर्शन करके सब मुक्त हो रहे हैं, सुतरां मेरा सारा काम बिगड़ा जाता है।" (नारदपुराण उत्तरभाग ५२।१५) अतएव मेरा यही निवेदन है कि आप अपनी इन्द्रनीलमयी मूर्ति छिपा लीजिये। उस समय हमने इस मूर्तिको बालूमें गोपन किया।" (नारदपुराण उत्तरभाग ५२।१८)

सत्ययुगमें इन्द्रद्युम्न राजाने जन्मग्रहण किया था।

एकदिन उनको विष्णुपूजा करनेकी इच्छा हुई। किन्तु वह इस दारुण चिन्तासे घबरा गये, कहां किस प्रकार विष्णुकी आराधना की जावेगी। मन ही मन उन्होंने एक बार सब तीर्थोंको विचार लिया, फिर भी कुछ ठीक ठाक न हुआ। वह पुरुषोत्तमक्षेत्र पहुंचे थे। यहां उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया, ब्राह्मणोंको भूमिदान की, और पुरुषोत्तममें प्रासाद बनवाया। किन्तु उन्हें यही बड़ा सोच लग गया—उस प्रासादमें कौन मूर्ति स्थापन और कैसे सर्गस्थित्यन्तकारी पुरुषोत्तमका दर्शन लाभ करेंगे। उन्होंने आहारनिद्राको त्याग किया और केवल विष्णुस्तवस्तुतिमें अपना समस्त समय लगा दिया। भावना करते करते इन्द्रद्युम्न कुशासन पर सो गये। इसी समय भगवान्‌ने उन्हें स्वप्नमें दर्शन दे करके कहा था—"हे महीपाल! तुम्हारे यागयज्ञ और भक्ति-श्रद्धासे हम बहुत ही प्रसन्न हुए हैं। तुम्हें हमारी सनातनी प्रतिमा मिलेगी। आज जब निशावसानको निर्मल भास्कर उदित होगा, तुम सागरके किनारे जलस्थलमें एक महावृक्ष देखोगे। (नारदपु० उ० ५४।१२।२१) तुम्हें वहां अकेले कुल्हाड़ हाथमें ले करके जाना चाहिये। उसी वृक्षसे हमारी प्रतिमा बनाओ।" यह कह करके भगवान् अन्तर्हित हुए। इन्द्रद्युम्नने पहले सवेरे उठ करके सागरके सलिलमें स्नान किया था, फिर पवित्रभावमें हृष्टचित्तसे सागरकूल पर वही वृक्ष देखा। ऐसा वृक्ष उन्हें कभी भी देख न पड़ा था। उन्होंने समझा, भगवान्‌की कृपा हुई है। शीघ्र ही स्वयं विष्णु और विश्वकर्मा ब्राह्मणका रूप धारण कर वहां पहुंच गये। (नारदपु० उ० ५४।२८) नृपति इन्द्रद्युम्न परशु द्वारा वह वृक्ष काट रहे थे, इसी समय विष्णुने वहां जा करके कहा—"महाराज! इस निर्जन गहन समुद्रतीरमें एकाकी किस लिये वृक्ष छेदन करते हैं, आपका प्रयोजन क्या है?" राजाने उन तेजःपुञ्ज ब्राह्मणरूपी विष्णुको नमस्कार करके बतलाया था—"जगत्पतिकी पूजाके लिये उनकी प्रतिमा बनानेकी मेरी बड़ी इच्छा है, उसीसे इस पेड़को काट रहा हूं।"

विष्णु राजाकी बात सुन करके हंसे और कहने लगे—"राजन्! तुम्हारा उद्देश बड़ा है। हमारे साथ विश्वकर्माका समकक्ष एक शिल्पी आया है। यदि आपकी इच्छा हो, तो यह कारीगर मूर्ति बना सकता है।"

इन्द्रद्युम्न उसी समय सम्मत हुए और विश्वकर्माके निकट जा करके ऐसी प्रतिमा बनानेको कहने लगे—"पहली पद्मपलाशायतनयन शङ्खचक्रगदाधर, शान्त कृष्णमूर्ति दूसरी गोक्षीरसदृश गौरवर्ण तथा लाङ्गलास्त्रधारी महाबल अनन्तमूर्ति और तीसरी वासुदेव-भगिनी सुभद्राकी रुक्मवर्ण एवं सुशोभन मूर्ति।" [illegible] विश्वकर्माने कर्णमें विचित्र कुण्डलविभूषित और [illegible] लादिशोभित मूर्तिको निर्माण किया। (ना० [illegible] ५४।५८-६५) मूर्ति अवलोकन करके इन्द्रद्युम्न प्रेममें बहने लगे। उस समय साष्टाङ्गप्रणिपातपूर्वक ब्राह्मणरूपी देवद्वयको इन्होंने कहा था—"देव, दैत्य, यक्ष, गन्धर्व, अथवा स्वयं हृषीकेश, आप कौन हैं। मुझे यथार्थ बतला दीजिये।"

द्विजरूपी विष्णुने अपना परिचय इस प्रकार दिया—"हम स्वयं पुरुषोत्तम हैं। हम ही विष्णु, हम ही ब्रह्मा, हम ही शिव और हम ही स्वयं देवराज इन्द्र हैं। हे राजन्! हम आप पर सन्तुष्ट हुए हैं। तुम १० सहस्र ९ शत वर्ष राजत्व करोगे, फिर परात्पर निर्लेप निर्गुण परमपद प्राप्त होगे। जब तक चन्द्र, सूर्य, समुद्र और देव वर्तमान रहेंगे, तुम्हारी कीर्ति कभी भी विलुप्त न होगी। आपका यज्ञाज्यसम्भूत इन्द्रद्युम्न सरोवर महातीर्थमें गण्य होगा। इसी सरोवरके दक्षिण नैर्ऋत कोणमें वटवृक्ष है। उसके निकट केतकीवनभूषित नाना पादपराजिवेष्टित मण्डप खड़ा है। आषाढ़ मासकी शुक्लपञ्चमीके दिन-सात दिन तक महोत्सव करके वहां इष्टदेवको आप स्थापन करें।"

आज इन्द्रद्युम्न धन्य हुए। इन्होंने नृत्यगीत वाद्यादि पूर्वक बड़े समारोहमें पुरोहितादि परिवृत हो इन तीनों मूर्तियोंको रथ पर रखा और प्रासादमें ले जा करके विधिवत् प्रतिष्ठित किया। अनन्तर बहुतसे याग यज्ञादि करके वह कृतकृत्य हुए और वैकुण्ठ जा करके विष्णुका पद पाया। (नारदपुरा० ५४ अ०)

ब्रह्मपुराणमें भी जगन्नाथकी उत्पत्तिका बिलकुल ऐसा ही उपाख्यान वर्णित है। नारदपुराणमें इन्द्रद्युम्नको छोड़ करके दूसरे किसी भी राजाका उल्लेख नहीं।

किन्तु ब्रह्मपुराणमें बतलाया है कि इन्द्रद्युम्नके पहले पहल पुरुषोत्तमक्षेत्रमें उपस्थित होने पर कलिङ्गराज, उत्कल-राज और कोशलराज वहां जा कर उनसे मिले थे।

(ब्रह्मपु० ४५ अ०)

स्कन्दपुराणीय उत्कलखण्ड अन्य प्रकार कथा कही है—

ब्रह्माने चराचर सृष्टि की। यथास्थानमें तीर्थोंको स्थापन करके वह सोचने लगे – किस प्रकारसे त्रिताप-सन्तप्त प्राणी मुक्तिलाभ करेंगे, क्यों कर हम इस गुरु भार वहनसे छूटेंगे। फिर उन्होंने भगवान्‌की स्तुति की। विष्णुने दर्शन दे करके उनके मनकी बात कह दी—सागरके उत्तर कूलमें महानदीसे दक्षिण एक प्रदेश है ; वहां पृथिवीके सब तीर्थोंका फल मिलता है। मनुष्य पूर्वजन्मार्जित पुण्यफलसे वहां जा करके रहता है। अल्प-पुण्य और भक्तिहीन मानव वहां जन्म नहीं ले सकता। एकाम्रकाननसे दक्षिण समुद्रतीर पर्यन्त प्रतिपदको क्रमशः श्रेष्ठसे श्रेष्ठ समझना चाहिये। पृथिवीके मध्य आपका भी दुर्लभ अतिगुप्त नीलाचल समुद्रके तीर पर विराज रहा है। हमारी मायासे आच्छादित होनेके कारण देव या दानव कोई भी उसे देख नहीं सका है। हम इसी पुरुषोत्तमक्षेत्रमें सर्वसङ्ग परित्याग पूर्वक सशरीर वास करते हैं। यह पुण्यधाम सृष्टि वा प्रलय कालको भी आक्रान्त नहीं होता। यहां चक्रादि चिह्नित हमारा जो रूप देखते हो, वहां भी देख सकोगे। वहां कल्पवृक्ष और इसके पश्चिम रोहिणकुण्ड है। हमको दर्शन करके उस कुण्डका निर्मल जल पीनेसे मानव हमारा सायुज्य पाता है।

विष्णुकी बात सुन कर ब्रह्मा नीलाचलको चल दिये। वहां जा कर इन्होंने देखा कि एक काक रोहिणकुण्डमें स्नान और जलपान करके भगवान्‌को देखते ही विष्णुरूप बन गया और नीलमाधवके पार्श्वमें रहने लगा। उधर धर्मराजने संवाद पा जल्द जल्द आ करके भगवान्‌का स्तव आरम्भ किया। नीलमाधवके सन्तुष्ट हो लक्ष्मी-को इङ्गित करने पर देवीने कहा था—"धर्मराज! तुम डर गये हो, कि सब जीवोंकी तरह मुक्त होने पर तुम्हारा आधिपत्य चला जावेगा। किन्तु यह आशङ्का अमूलक है। इस पुरुषोत्तमक्षेत्रको छोड़ करके और सब जगह तुम्हारा अधिकार है। केवल यहां प्राणत्याग करनेवाले प्राणीको आप ले जा नहीं सकते। परार्धकाल पर्यन्त हम नीलकान्तमणिमयी मूर्तिमें अवस्थान करेंगे, दूसरे अपरार्धके प्रारम्भ श्वेतवराहकल्पके स्वायम्भुव मन्वन्तरमें ब्रह्माके पञ्चम पुरुष राजा इन्द्रद्युम्नके आनेसे पहले अन्तर्हित हो जावेंगे और इन्द्रद्युम्नके शत अश्व-मेध यज्ञ करने पर फिर दारुमयी चार मूर्तियोंमें आवि-र्भूत हो अपरार्धकाल पर्यन्त यहीं रहेंगे।" उस समय ब्रह्मा और धर्मराज अपने अपने स्थानको चले गये।

अपरार्धके प्रथम द्वितीय सत्ययुगको राजा इन्द्रद्युम्न अवन्तिनगरमें आविर्भूत हुए। यह प्रथम भागवत बने थे। एकदिन पूजाके समय विष्णुमन्दिरमें जा कई एक वेदविद् लोगोंको देख इन्होंने पूछा—"क्या आप बतला सकते हैं, वह पवित्र स्थान कहां है जहां मैं इन चर्म-चक्षुओंसे जगन्नाथका दर्शन कर सकूं।" वहां एक तीर्थपर्यटक पण्डित उपस्थित थे। उन्होंने राजाकी कथा सुन करके कहा—"राजन्! मैं बहुकालसे अनेक तीर्थपर्यटन कर रहा हूं। मैंने कितने ही भ्रमणकारियों-से बहुतसे तीर्थोंकी बात भी सुनी है। परन्तु पुरुषोत्तम क्षेत्र-अपेक्षा पुण्यक्षेत्र कहीं भी नहीं है। दक्षिण समुद्रके तीर ओड़देशमें काननावृत नीलाचलके बीच पुरुषोत्तम-क्षेत्र अवस्थित है। इसी क्षेत्रमें क्रोशव्यापी एक कल्पवट है। उसके पश्चिम भागमें रोहिणकुण्ड और इस कुण्ड-के पूर्वभागमें नीलकान्तमणि निर्मित भगवान्‌की नील-माधव मूर्ति विद्यमान है। आप वहीं जा करके यह कैवल्यदायिनी मूर्ति-दर्शन कीजिये।"

तपस्वी ब्राह्मण यह कह कर सबके सामने अन्तर्हित हुए। उस समय इन्द्रद्युम्नने पुरोहितके भाई विद्या-पतिको यह जाननेके लिये भेज दिया, कि उस ब्राह्मण की बात ठीक है या नहीं।

विद्यापति नानास्थान अतिक्रम कर महानदी पार हुए और समुद्रके दक्षिण तीर जा पहुंचे। यहां चारों ओर निविड़ वन था। विद्यापति कुछ भी स्थिर न कर सके, वह कहां जावेंगे। कुशासन पर बैठ कर यह मन लगा भगवान्‌का नाम लेने लगे। इसी समय

उनको वेदध्वनि सुन पड़ी। उस शब्दको लक्ष्य कर नीलगिरिके पीछे यह शबरद्वीपके शबरालयमें जा उपस्थित हुए। इसी समय विश्वावसु नामक एक वृद्ध शबर भगवान्‌की पूजा करके निर्माल्य चन्दन तथा भोगावशेष ले घर आया। वह विद्यापतिसे इनका उद्देश अवगत हो प्रथम भगवान्‌को देखाने पर असम्मत हुआ, पीछे ब्रह्मशापके भयसे विद्यापतिको रोहिणकुण्ड पर ले गया। विप्रवरने वहां स्नान कर नीलमाधवको नमस्कार किया और अनेक स्तव स्तुतियां सुनायीं। फिर इन्होंने शबरके साथ उसके घर आ तत्प्रदत्त भोगान्न खाया, फिर विश्वावसुके साथ बन्धुता बढ़ा राजाके लिये देवका निर्माल्य ले स्वदेश लौट आये।

इन्द्रद्युम्न देवका निर्माल्य पा करके पुरुषोत्तम पहुंचनेको कृतसङ्कल्प हुए और विद्यापतिको आह्वान कर कहने लगे—"हम यह राज्य छोड़ उसी क्षेत्रको जावेंगे और बहुशत नगर, ग्राम तथा दुर्ग बना कर वहीं रहेंगे और जगन्नाथकी प्रीतिके लिये शत अश्वमेध यज्ञ करेंगे।" इसी समय नारद आ पहुंचे और राजाका अभिप्राय मालूम कर हृष्टचित्तसे उनके साथ जानेको सम्मत हुए।

ज्यैष्ठमासकी शुक्लसप्तमी पुष्यानक्षत्र शुक्रवारको इन्द्रद्युम्नने सदल पुरुषोत्तमके अभिमुख यात्रा की थी। उत्कलकी सीमा पर पहुंच उन्होंने मुण्डमालाविभूषिता करालवदना चण्डिकादेवीका दर्शन और पूजादि किया। तत्पर वह चित्रोत्पला नदीके तीर धातुकन्दर नामक वनमें उपस्थित हुए। मध्याह्नकालको विश्राम हो करते थे कि इनसे ओड्रराज उपहार ले करके आ मिले और कहने लगे—"हे अवन्तिराज! दक्षिण सागरके कूलमें घने जङ्गलके बीच नीलाचल अवस्थित है। वह बहुत दुर्गम है, लोगोंकी बात छोड़ दीजिये, देवता भी वहां पहुंच नहीं सकते। कुछ दिन हुए सुना है—जिस दिन विद्यापति शबरपतिके साहाय्यसे नीलमाधव संदर्शन कर अवन्तिपुर वापस गये, सन्ध्याकालको प्रबल वेगसे वृष्टि होने लगी। इसमें सागरकी प्रान्तभूमिसे प्रभूत वालुकाराशिने उठ कर नीलाचलको छिपा लिया। उसी दिनसे हमारे राज्यमें भीषण दुर्भिक्ष और महामारी उपस्थित है।" राजा इन्द्रद्युम्न वैसा संवाद पा भग्नोत्साह हुए और आक्षेप करने लगे। उनको सान्त्वना दे कर नारदने कहा था—"राजन्! विस्मृत न होइये, विष्णुभक्तका कोई कार्य वृथा नहीं जाता। आपको वहां जाने पर अवश्य ही नीलमाधवकी मूर्तिका दर्शन मिलेगा। भगवान् आपके ऊपर कृपा करके चतुर्धा मूर्तिसे दर्शन देंगे।"

फिर सब महानदी पार कर एकाम्रकानन जा पहुंचे। यहां नारदके मुखसे एकाम्र उत्पत्तिकी कथा सुन कर इन्द्रद्युम्नने त्रिभुवनेश्वरका पूजादि समापन किया था। त्रिभुवनेश्वरने सन्तुष्ट हो उन्हें दर्शन दे कर कहा—"राजन् आपके समान दूसरा वैष्णव नहीं, तुम्हारा अभिलाष पूर्ण होगा।"

अब इन्द्रद्युम्न पुरुषोत्तमक्षेत्रकी ओर अग्रसर हुए। राहमें कपोतेश्वर और विल्वेश्वर दर्शन कर यह पुरुषोत्तमकी प्रान्तसीमा पर नीलकण्ठके निकट आये। वहां इन्द्रद्युम्नको अनेक कुलक्षण देख पड़े। इसका कारण पूछने पर नारदने बतलाया—"बुरेसे ही फिर भला होता है, सुतरां आप विषण्ण न हों। आपके पुरोहितके कनिष्ठ सहोदर विद्यापति, नीलमाधव दर्शन कर जाने पर नीलाचल वालूसे ढांक गये हैं और नीलमाधव पातालमें प्रविष्ट हुए हैं।" वह निदारुण कथा सुन कर राजा मूर्छित हो गये, फिर संज्ञालाभ कर रोने लगे। नारदने उन्हें शान्त करनेके लिये कहा था—"राजन् मैं बार बार बतला चुका हूं कि शुभकार्यमें पद पद पर विघ्न हुआ करता है, इसलिये आपको दुःखित होना न चाहिये। अब स्थिरचित्त हो सौ अश्वमेध यज्ञ कर गदाधरको सन्तुष्ट कीजिये। ऐसा होने पर उनका दर्शन मिल जावेगा।"

राजाने नारदकी बात सुन कर नीलकण्ठकी पूजा की और उनसे अनतिदूर ज्यैष्ठशुक्लाद्वादशीको स्वाति नक्षत्रमें नृसिंहदेवको प्रतिष्ठित किया। इन्हींके सम्मुख वह शत अश्वमेध यज्ञमें दीक्षित हुए।

यज्ञके षष्ठ दिन शेषरात्रको उन्होंने स्वप्नमें श्वेतद्वीपस्थ भगवान्‌की अपूर्व मूर्ति देखी थी। नारदने राजाके मुखसे यह वृत्तान्त सुन कर कहा—"सूर्योदयकालमें आपने स्वप्न देखा है। इसलिये दश दिनके मध्य ही

उसका फल प्रत्यक्ष हो जावेगा। यह यज्ञ पूरा होते ही वैकुण्ठनाथ दर्शन देंगे।"

यज्ञावसानमें याज्ञिक उदात्तादि स्वरसे वैदिक स्तुति पाठ कर ही रहे थे कि राजनियुक्त कुछ ब्राह्मणोंने राजाको जा कर बतलाया—"इस महासागरके तीर स्नान करनेके पथमें मञ्जिष्टा जैसा वर्णविशिष्ट एक वृक्ष आ पड़ा है। उसमें शङ्ख और चक्रके चिह्न लक्षित हैं। ऐसा वृक्ष हमने कहीं भी नहीं देखा। इसका सुगन्ध समुद्रतीरमें व्याप्त हो गया है।" (उत्कलखण्ड १८ अ०)

उस समय नारदने बहुत हंस कर राजाको कहा था—"नृपवर! आपके यज्ञका फलस्वरूप वह काष्ठ आ पहुंचा है। आपने स्वप्नमें श्वेतद्वीपको जो मूर्ति देखी थी, उसीका अङ्गस्खलित रोम वृक्षरूपमें परिणत हुआ। जो अंशावतार अपौरुषेय मूर्ति आपको देख पड़ती है, भगवान् इसी तरुमें उसका रूप धारण करेंगे।" नारदने जैसा बतलाया, इन्द्रद्युम्नने समुद्रमें जा अवभृत स्नान किया और स्वप्नका देखा हुआ चतुर्भुज रूप वहुशाख वृक्षमें भी देख पाया। बड़े समारोहसे नृत्यगीतवाद्य कर वह महातरुको ले आये और इन्हीं तरुरूपी यज्ञेश्वरको महावेदीमें स्थापन कर दिया। पूजाके अन्तमें राजाने नारदको पूछा था—"अब विष्णुकी कैसी प्रतिमा निर्माण करना चाहिये।" नारदने उत्तर दिया—"वह अचिन्त्य, जगत्पति और जगत्स्रष्टा हैं, उनका रूप कौन स्थिर कर सकता है।"

उसी समय आकाशवाणी हुई—"इन अपौरुषेय भगवान्‌को १५ दिन तक ढांक रखो। किसी शस्त्रपाणि वर्धकिके आ प्रवेश करने पर द्वार बन्द कर दीजिये। जब तक भगवान्‌की प्रतिमा बन न जावे, तुम बाहर हो नाना वाद्यध्वनि करते रहो। कारण प्रतिमा-निर्माण शब्द सुननेवालेका वंशनाश और नरकमें वास होगा। जो वेदीके मध्य प्रवेश और दर्शन करेगा, युग युग अन्धा बना रहेगा। उस मूर्तिमें भगवान् स्वयं आविर्भूत होंगे।" (उत्कलखण्ड १८ अ०)

इन्द्रद्युम्नने देववाणी सुन करके तदनुसार सब कार्य किया। विश्वकर्मा वृद्ध सूत्रधाररूपसे आ करके महावेदीके मध्य प्रविष्ट हुए थे। धीरे धीरे १५ दिन बीत गये। राजाने स्वप्नमें जैसी प्रतिमा देखी थी, ज्यैष्ठमासकी पूर्णिमाके दिन द्वार उद्घाटन करने पर फिर अवलोकन की। उन्होंने देखा—

भगवान् वैकुण्ठनाथ बलराम, सुभद्रा और सुदर्शनके साथ दिव्य रत्नमय सिंहासन पर सुशोभित हैं। जगन्नाथके हस्तमें शङ्ख, चक्र, गदा तथा पद्म और मस्तक पर उज्ज्वल मुकुट है। बलराम हाथमें गदा, मूषल, चक्र एवं पद्म लिये, कर्णमें कुण्डल पहने और शिर पर छत्राकार सात फणा धारण किये हैं। दोनोंके बीच वर, अभय और पद्मधारिणी सुभद्रादेवी विराजमान हैं।

यह सुभद्रा स्वयं चैतन्यरूपिणी लक्ष्मी हैं। इन्होंने कृष्णावतारके समय रोहिणीके गर्भमें बलदेवके रूप की चिन्ता करके बलभद्रा रूपसे जन्मग्रहण किया था। यह नीलमणिका विच्छेद कभी भी सहन कर नहीं सकतीं। बलदेव और कृष्णमें अभेद भाव है। बलदेव और सुभद्राने एक गर्भसे जन्मग्रहण किया था। इसीसे लौकिक व्यवहार और पुराणमें सुभद्रा बलदेवकी भगिनी जैसी वर्णित हुई हैं। किन्तु लक्ष्मी स्त्री पुरुष उभय रूपसे सर्वदा विराज करती हैं। उन्हींका पुं नाम विष्णु और स्त्री नाम लक्ष्मी है। ब्रह्मविद् सभी समझते हैं कि लक्ष्मी और नारायणमें कोई भी भेद नहीं। स्वयं भगवान् व्यतीत कौन फणाग्र द्वारा यह चतुर्दश भुवन धारण कर सकता है। जो अनन्त इस ब्रह्माण्डका भार उठाते, बलदेव कहलाते हैं। बलदेव और कृष्ण अभिन्न हैं। उनकी शक्तिस्वरूपा लक्ष्मी हो भगिनी जैसी कीर्तित हुई हैं। आखाश्मन्यभमधारस्थ जो सुदर्शनचक्र विष्णुके हस्तमें सर्वदा विराजमान रहता, इनकी तुरीयरूप चतुर्थ मूर्ति है। (उत्कलखण्ड १६ अ०)

इन्द्रद्युम्न चारों मूर्ति अवलोकन कर साष्टाङ्ग प्रणिपातपूर्वक स्तव करने लगे। इसी समय फिर आकाशवाणी सुन पड़ी—"राजन्! नीलाचल पर जो कल्पवृक्ष है, उसके वायुकोणमें १०० हाथ दूर नृसिंह मूर्ति विराज रही है। इसके उत्तर एक विस्तृत भूमि है। वहां सहस्र हस्त उच्च एक प्रासाद बना कर उसमें भगवान्‌की मूर्ति स्थापन करो। पहले इस नीलाचलमें भगवान् रहते थे। विश्वावसु नामक एक शवरपति उनकी पूजा

किया करता था। तुम्हारे पुरोहितके साथ उसका सम्बन्ध रहा। उसी विश्वावसुके वंशधर अभी विद्यमान हैं। उनको ला कर जगत्पतिका लप-संस्कार और उत्सव आदि निर्वाह कीजिये।

देववाणी सुन कर इन्द्रद्युम्न विश्वावसुके पुत्रवर्गको ला लेप-संस्कार कराया और प्रासाद बना कर उसमें गर्भप्रतिष्ठा की। फिर यह ब्रह्माके द्वारा जगन्नाथकी प्रतिष्ठा आदि करानेको नारदके साथ ब्रह्मलोक चले गये।

जब वह ब्रह्मलोक पहुंचे, ब्रह्मा देवगणके साथ पूर्णब्रह्मका लीलागान सुनते थे। इसीसे इन्द्रद्युम्न कुछ न कह कर अपेक्षा करने लगे। गाना पूरा होने पर ब्रह्माने इनका अभिप्राय समझ कर कहा था—"इन्द्रद्युम्न! तुम्हारा अभिप्राय पूर्ण करनेको हम सम्मत हैं। किन्तु यह जो क्षणकाल विलम्ब हुआ, ७१ युग बीत गये। अब तुम्हारा राज्य वा अंश कुछ भी नहीं रहा। इसी बीच कोटि २ राजाओंने राजत्व कर कालका आतिथ्य स्वीकार किया है। उन देवता और देवप्रासादका सामान्य चिह्न मात्र अवशिष्ट है। आजकल स्वारोचिष मनुका अधिकार चलता है। आप थोड़ी देर यहां विश्राम लीजिये। ऋतु परिवर्तन होने पर नरलोक जाइये और देवता तथा प्रासाद निकाल कर प्रतिष्ठाका द्रव्य संग्रह कीजियेगा। हम पीछे आवेंगे।"

इन्द्रद्युम्न विधाताके आदेशसे नारदके साथ फिर मर्त्यलोक आये थे। अनेक अनुसन्धान कर उन्होंने देवमन्दिर निकाल लिया।

उस समय उत्कलमें गाल नामक एक राजा राजत्व करते थे। उन्होंने माधव नामक देवकी एक प्रस्तर-मूर्ति बना कर इस प्रासादमें स्थापित की। फिर उन्होंने और पांच छोटे प्रासाद निर्माण कर उनमें माधव प्रतिमाकी स्थापन कर दिया। जब इन्होंने सुना कि इन्द्रद्युम्न नामक कोई व्यक्ति जा कर उस प्रासादमें देवप्रतिष्ठा करता था, बहुत क्रुद्ध हो ससैन्य नीलाचल जा पहुंचे किन्तु यहां आने पर दुर्लभ देवमूर्ति दर्शन कर उनका दिल पिघल पड़ा। उन्होंने देखा कि ब्रह्मलोकसे आ इन्द्रद्युम्न ब्रह्मा और नारदके साहाय्यसे उस मूर्तिकी प्रतिष्ठा कर रहे थे। गाल नृपतिका वह क्रोध नामासूम कहां उड़ गया, दारुब्रह्म देख कर कृतार्थ हुए। (उत्कल-खण्ड २५ अ०) उन्होंने इन्द्रद्युम्नको एक असाधारण व्यक्ति समझ यथाविधि सत्कार किया और इनके पास रह कर आज्ञावाही भृत्यकी तरह सब कामकाज सुधारने लगे। ब्रह्माने जा कर भरद्वाज मुनिको प्रासादप्रतिष्ठा करनेकी आज्ञा दी थी। तदनुसार वैशाख मास बृहस्पतिवार पुष्या नक्षत्र शुक्लाष्टमीको प्रासाद-प्रतिष्ठा हुई और एक ध्वजा चढ़ायी गयी। उस समय भगवान्ने इन्द्रद्युम्नको सम्बोधन कर कहा था—"तुम्हारे निष्काम कार्यसे हम प्रसन्न हुए हैं। तुमने करोड़ों रुपया खर्च कर हमारा यह आयतन बनाया। कभी टूट जाने पर भी हम इस स्थानको न छोड़ेंगे। हम अपरार्द्ध काल पर्यन्त यहां रहेंगे।" फिर देवकी नित्यपूजा और विविध उत्सव आदि होने लगा। यथाकाल इन्द्रद्युम्नने यह नश्वर जगत् परित्याग किया था। (उत्कलखण्ड १५-२९ अ०)

उत्कलखण्डमें जैसा वर्णित हुआ, कपिलसंहितामें भी बिलकुल वैसा ही कहा है। नीलाद्रिमहोदयका देव-उत्पत्ति विवरण और सब विषयोंमें कपिलसंहिता तथा उत्कलखण्डसे मिलता, केवल उनके आविर्भाव सम्बन्धमें पूरा मतभेद पड़ता है नीलाद्रिमहोदयके ४र्थ अध्यायमें लिखा है—

पञ्चदश दिन आने पर स्वयं भगवान् जनार्दन दिव्य सिंहासन पर बैठे। बलदेव, सुभद्रा, सुदर्शन, विश्वधात्री, लक्ष्मी और माधवके साथ वहां आविर्भूत हुए।

जगदानन्दकन्द (जगन्नाथ) नील मेघ जैसा वर्ण और पद्मपत्रकी भांति आयतलोचन हैं। पद्मासनमें अवस्थित रहनेसे दो करकमल शुभ्र और दो उत्तोलित हैं। बलभद्रका सप्त फणावेष्टित विकट मस्तक और वर्ण कुन्देन्दुशङ्खधवल है। पद्मलोचन तथा शुभ्रपाद हैं। दो हस्त छिपे और दो उठे हैं। भक्तको मुक्तिदायिनी शुभाननां सुभद्राकी मूर्ति भी वैसी है। उनके करपद्म अधोलम्बित और रंग कुङ्कुमाभ है। सुदर्शन स्तम्भरूपी और जितेन्द्रिय है। माधव भगवानका स्वरूप कृस्वायतन है। सुहास्यवदना लक्ष्मी चतुर्भुजा हैं। दो हाथोंमें वर और अभय तथा दो हाथोंमें दिव्यकमल हैं। वह कमला-

सनमें उपविष्टा हैं। चार गज शुण्ड द्वारा सुवर्ण कलस ले कर उनका अभिषेक करते हैं। देवी विश्वधात्री भी पद्मासनमें अवस्थिता हैं। वह दक्षिण पाणिमें ज्ञानमुद्रा और वाम पाणिमें चारुकमल लिये हैं। प्रकाशाकी मूर्ति धवलवर्ण है। १५ दिन बाद सबने भगवान्‌की यही दारु-मयी सात मूर्तियां देखीं, किन्तु उस सूत्रधारको कोई भी देख न सका। (नीलाद्रिमहोदय ४ अ०)

उड़िया भाषाके आधुनिक ग्रन्थ और प्रवाद-अनुसार जगन्नाथकी उत्पत्ति इस प्रकार है—मालव देशके राजा इन्द्रद्युम्नको किसी दिन नारदने जा कर बतलाया था—"तुम विष्णुको लाभ करोगे, तुम्हारी महिमा जगत्‌में फैलेगी।" इन्द्रद्युम्नने हाथ जोड़ कर पूछा,—"भग-वान् कहां हैं, उन्हें किस जगह पावेंगे।" तब नारदने कहा—"नीलाचलमें भगवान् नीलमाधवरूपसे रहते हैं और एक शबर बहुत छिप कर उनकी पूजा किया करता है।" नारद यह कह कर चले गये। इन्द्रद्युम्न चारों ओर दूत भेज कर पता लेने लगे। विद्यापति नामक कोई ब्राह्मण भी भेजा गया। वह बहुत जगह घूम कर नीलाचल पर वसु शबरके घर जा ठहरे। उसकी ललिता नामकी एक युवती कन्या थी। विद्यापतिके वहां कुछ दिन रहने पर वसुने कहा—"हमारी यही एक अकेली प्यारी कन्या है, हम चाहते हैं कि आपके साथ ललिता-का विवाह कर दें। विद्यापतिके इस प्रस्तावसे असम्मत होने पर वह खूब डांट डपट कर बोल उठा—"हमारे बापने एक वाणसे श्रीकृष्णको मार डाला था, हम क्या तेरे जैसे एक ब्राह्मणको ठिकाने नहीं लगा सकते।" इस पर द्विजने बहुत डर कर कहा, "पहले आप यह बतला-इये कैसे आपके पिताने श्रीकृष्णका प्राणसंहार किया था, फिर मैं आपकी कन्यासे विवाह कर लूंगा।"

उस समय शबर कहने लगा—"भगवान् वासुदेव-की मायासे द्वारकापुरीमें कुकुयाभय उपस्थित हुआ। यह यादव लोगोंका अपने साथ ले कर उसको मारने चले। किन्तु कुकुया भाग गया। तब द्वारकानाथने भासक्षेत्रमें एक कदम्बतरु दिखा कर कहा था-"इसी पेड़की जड़में वह छिपा है।" बलरामने बहुत क्रुद्ध हो उस वृक्ष पर मुषल मारा। देखते देखते उसी कादम्बसे पेड़-से दूध जैसा रस निकलने लगा। सब यादवोंने मिल कर उस कादम्बरीको पान किया। धीरे धीरे इसके नशासे सब मतवाले हो आपसमें लड़ने लगे। उसी झगड़ेसे यदुकुल निर्मूल हो गया। बलरामने समुद्रमें देह छोड़ा था। कृष्ण सियालीके पत्तों पर लेट कर रोने लगे। इसी समय हमारे बाप शिकारकी खोजमें वहां घूमते थे। उन्हों-ने लताके भीतर कृष्णका पांव देख कर हिरनका कान समझा और वाण छोड़ दिया। उसी वाणसे कृष्ण विद्ध हो यह कह कर चिल्ला उठे-"अर्जुन मुझे बचाओ।" रोने-की आवज आने पर हमारे बाप वहां गये और कृष्णके शरीरमें वाणका चोट देख भयसे बेहोश हुए। उनको होश आने पर श्रीकृष्णने कहा-"शबर! मैंने निरपराधी तुम्हारे पिताका वध किया था। उसी पापका यह प्रायश्चित्त है। पूर्वजन्ममें तुम्हारा पिता बाली और तुम उसके लड़के अङ्गद थे। शबर! तुम हस्तिनापुर जा कर पाण्डवोंको संवाद दो कि कृष्ण मृत्युशय्या पर पड़े हैं।" खबर पा कर पाण्डव वहां पहुंचे। कृष्णने उनको देख कर बहुतसी उलटी सीधी बातें कहीं और अर्जुनका बल हरण कर शरीर छोड़ दिया। पाण्डवोंने कृष्णका पवित्र देह चिता पर रखा, परन्तु सात दिन तक कोशिश करते रहने पर भी जला न सके। तब आकाशवाणी हुई—"तुम क्या पागल हो गये हो! क्या आग इस लाशको जला सकेगी? इसको समुद्रमें फेंक दो। कलियुगमें नीलाचल पर दारुब्रह्मके रूपसे यह पूजी जावेगी।" पाण्डवोंने आकाशवाणी सुन कर समुद्रमें उसको बहा दिया।

यह कह कर वसु शबरने विद्यापतिको समझाया—"हम उसी शबरके लड़के हैं। तुम यदि हमारी लड़की-से विवाह न करोगे तो जरूर मारे जावोगे।"

तब विद्यापतिने गड़बड़ीमें पड़ ललिताके साथ शादी की और दोनों शबरके ही घरमें रहने लगे। ललिताने देखा कि मेरे स्वामीके मनमें चैन नहीं, हमेशा चिन्ता-में डूबे रहते हैं। एक दिन उसने बड़ी खातिरसे इन्हें बुला कर कहा था—"नाथ! तुम्हें किस बातकी फिक्र है। तुम क्यों हमेशा नाखुश देख पड़ते हो। तुम्हारा कुम्हलाया हुआ मुंह देख कर मेरी छाती फट जाती

है। पांव पड़ती हूं, अपने दिलकी बात खोल कर कह दो।" विद्यापतिने उत्तर दिया—"तुम सच बतलाओ तुम्हारे बाप रोज रोज पहर भर रात रहते हो कहां चले जाते और दोपहरको कहांसे आते हैं। इस समय उनके जिस्मसे चन्दनको खुशबू क्यों आने लगती है।"

शवर-कन्या बोल उठी—"तुम्हें इसीकी फिक्र है। नीलाचलमें नीलमाधव हैं। यह बात कोई नहीं जानता। हमारे बाप खूब छिप कर उनकी पूजा कर आते हैं। आज आने पर उनको कहूंगी। तुम जगन्नाथके दर्शन कर सकोगे।"

बुड्ढे शवरको घर आने पर ललिताने जा कर पकड़ लिया। ललिताके मुंहको सब बातें सुन कर वह घबराया और बहुत डांट डपट कर कहने लगा—"हमने पुराणसे सुना है कि राजा इन्द्रद्युम्न जगन्नाथकी पूजा करेंगे। यह ब्राह्मण उन्हींका दूत मालूम पड़ता है। इसको दिखलाने पर जगन्नाथ जरूर हाथसे निकल जावेंगे।" ललिता रोने लगी। लड़कीको रुलाईसे उसका दिल बदल गया और विद्यापतिकी आंखोंमें पट्टी बांध कर उसे जगन्नाथके दर्शन कराने पर राजी हुआ।

ललिताने विद्यापतिको बापकी बात बतलायी थी। विद्यापतिने कहा—"यदि हमारी आंखें ही बंधी रहेंगी तो दर्शन करनेका क्या काम!" ललिताने जवाब दिया-"इसकी कौन चिन्ता है। मैं राह पहचाननेकी तदबीर लगा देती हूं। अपने खूंटमें तिल बांध लीजिये और राहमें दोनों ओर उन्हें छोड़ते चले जाइये। पेड़ लग आने पर तुम अपने आप राह देख लोगे।

दूसरे दिन सवेरे शवर विद्यापतिको अन्धेकी तरह आंखें ढांप कर ले चला। वनमें पहुंच करके उसने इनकी आंखें खोली थीं। विद्यापतिने बड़की जड़में नीलमाधवकी मूर्ति देखी। वह ब्राह्मणको बड़के नीचे बैठा फल लेने चला गया। इसी समय विद्यापतिने देखा कि एक भुषण्डी कौवा नींदका मारा पेड़से पासके रोहिणकुण्डमें जा गिरा और गिरते ही चतुर्भुज बन कर चन्दनवृक्ष पर आ बैठा। वह देख कर यह भी चतुर्भुज और संसारसे मुक्त होनेकी आशा पर रोहिणकुण्डमें कूदने चले। तब उस कौवेने इन्हें रोक कर कहा था—"ब्राह्मण! तुम जिस कामके लिये आये हो, क्या भूल गये। तुम्हारे ही द्वारा मर्त्यलोकमें जगन्नाथ प्रकाशित होंगे। तुम्हारी इसीमें मुक्ति है।"

विद्यापति फिर कूद न सके। उसी समय शवरपति फल मूल ले कर आ पहुंचा और नीलमाधवको चढ़ा कर कहने लगा—"महाप्रभो! मेरी यह मामूली भेंट मञ्जूर कीजिये।" बार बार हाथ जोड़ कर कहने पर भी उस दिन भगवान्ने इसका फलमूल नहीं लिया था। शवर बहुत दुःखी हो कर बोल उठा—"भगवन्! मैंने कौनसा अपराध किया है, मेरे ऊपर आप क्यों नाराज हो गये।"

तब देववाणी हुई—"शवर! तू ब्राह्मणको यहां क्यों ले आया। इतने दिनों तेरा कन्दमूल हमने खूब खाया, परन्तु अब वह अच्छा नहीं लगता। राजा इन्द्रद्युम्न देख पड़े हैं। अब हम तेरे पास न रहेंगे और नीलाचलमें दारुब्रह्मरूप धारण करेंगे। नाना उपचारोंसे हमारा भोग लगेगा। सुर असुर नर हमारी वह मूर्ति देख कर कृतार्थ होंगे। ब्रह्माकी आयुके अर्धकाल तक हम यहां रहे, अपरार्धको दारुब्रह्मरूपमें विराजमान होंगे।"

शवर देववाणी सुन माथे पर हाथ रख कर बैठ गया और चिल्लाने लगा—"अफसोस! मेरी लड़कीहीसे मेरा सब मटियामेट हो गया।" फिर उसने और भी बहुतसा रोना रोया। इसी प्रकार थोड़ी देर रो पीट कर उसने ब्राह्मणकी आंखों पर पट्टी चढ़ाई और घरको वापस गया।

विद्यापतिकी मनस्कामना सिद्ध हुई। इधर तिलके पेड़ लग गये थे। उनको देख कर ब्राह्मणने सब राह अच्छी तरह पहचान ली। अब यही फिक्र पड़ गयी, कैसे देश जावेंगे। एकदिन ललिताने स्वामीको चिन्तित देख कर इसका कारण पूछा था। विद्यापतिने अफसोसमें आ कर जवाब दिया—"मुझे देश छोड़े बहुत दिन हो गये। नहीं जानता-मेरे घरवाले कैसे हैं; उनको देखनेके लिये मेरा दिल घबरा रहा है।"

तब ललिताने गिड़ गिड़ा कर कहा था—"अब मालूम हुआ, तुम राजा इन्द्रद्युम्नके दूत हो। जो हो,

पिताये कह कर तमको देश पहुंचा दूंगी। तुम मेरे प्राणसर्वस्व हो। दासीका बस इतना ही कहना है, मुझे छोड़ न दीजियेगा।" विद्यापति भी ललिताकी ठुड्डी पकड़ कर प्यारसे कहने लगे—"तुम मेरी छोटी पत्नी हो। तुम्हें क्या मैं छोड़ सकता हूं।"

शबरपतिने लड़कीके कहनेसे विद्यापतिको रास्ता दिखला दिया। यह आकाशगङ्गाकी नामक स्थान पर शबरसे कन्दमूल ले कर चल दिये। यथाकाल वह इन्द्रद्युम्नके प्रासादमें जा पहुंचे। चोबदारने जा कर राजाको खबर दी—"विद्यापति ब्राह्मण आये हैं। उनके देहमें शङ्खचक्रके चिह्न हैं।" इन्द्रद्युम्नने गोविन्द गोविन्द कह करके ख्याल किया—विद्यापतिको जरूर जगत्पतिका दर्शन मिला है। उन्होंने उसी वक्त विद्यापतिको अपने पास बुलाया था। विद्यापतिने राजाके सामने जा निवेदन किया—"महाराज! मैं भगवान्को देख आया हूं। वह नीलमाधव मूर्तिमें वटवृक्षके मूलमें अवस्थान करते हैं। मैंने अपनी आंखोंसे रोहिणीकुण्डमें गिरे और कौवेको चतुर्भुज बनते देखा है।"

तब राजा इन्द्रद्युम्नने विद्यापतिको पादवन्दना करके कहा—"आपकी कृपासे मेरा उद्धार हो जायगा।" फिर इन्होंने मन्त्रियोंको हुक्म दिया—"मैं नीलाचल जाऊंगा जल्द तयार हो।"

काफी रसद और फौज ले कर अवन्ति-नरेशने राजधानी छोड़ी। विद्यापति उनके पथप्रदर्शक बने थे। यथाकाल नीलाचलमें उसी न्यग्रोध तरुके मूल पर सब जा पहुंचे। किन्तु राजाने वहां नीलमाधव या रोहिण कुण्ड न देख कर विद्यापतिसे पूछा—"नीलमाधव कहां हैं।"

नारायणकी मायासे उस समय सब अन्तर्हित हुए थे। परन्तु विद्यापतिने उसे न समझ कर राजासे कहा—"मालूम होता है वसु शबर कहीं उठा कर ले गया।" इन्द्रद्युम्नने शबरको पकड़ लानेके लिये उसी वक्त आदमी भेजे थे।

राजाके सिपाही शबरके घर जा पहुंचे। वसु उन्हें देख करके भयसे भगवान्को पुकारने लगा—"जगन्नाथ! मेरी क्या आखीरमें ऐसी हालत करनी थी। इतने दिनों आपकी सेवा की, अब क्या उसका यह फल मिला।"

भक्तवत्सल भगवान्ने तब दैववाणीमें इन्द्रद्युम्नको बतलाया था—"इस समय हमारा दर्शन नहीं मिल सकता। हमारा मन्दिर बनावो और स्वर्गसे ब्रह्माको ला कर उसकी प्रतिष्ठा करो, तब तुम हमें देख सकोगे।"

ढेरका ढेर सङ्गमरमर इकट्ठा हुआ। * वैशाख मास पुष्या नक्षत्र वृहस्पतिवार, शुक्ल पञ्चमी तिथि महेन्द्र लग्नमें मन्दिर बनने लगा। बहुत रुपया खर्च कर इन्द्रद्युम्नने मन्दिर उठा दिया। इसी समय नारद आ पहुंचे। इन्द्रद्युम्न नारदके साथ ब्रह्मलोक गये थे। वहां ब्रह्माने राजाके दिलकी बात जान कर कहा—"तुम थोड़ी देर ठहरो,—हम पूजा तर्पण आदिको समाप्त कर तुम्हारे साथ मर्त्यलोक चलेंगे और मन्दिरकी प्रतिष्ठा करेंगे।"

उसी समयके बीच शताब्दी बीत गयी। समुद्रकी लहरोंसे इन्द्रद्युम्नका बनाया मन्दिर भी धीरे धीरे बालूमें दब गया। राजा माथे पर हाथ रख ब्रह्माके दरवाजे पर राह देखने लगे। इधर सुदेव, वसुदेव, श्रीपति आदि राजाओंने राजत्व कर इहलोक छोड़ा था। माधव नामके किसी व्यक्तिने उड़ीसाका राजा हो १२७ वर्ष शासन किया। एकदिन वह मित्रोंके साथ समुद्र नहाने जाते थे और आगे आगे उनके नौकर राह बनाते चलते थे। उसी समय इन्होंने एकाएक मन्दिरको चूड़ा देखी और राजाको खबर दी। राजा वह जगह खोदवाने लगे। बहुत दिन खोदनेके बाद सब मन्दिर देख पड़ा। माधवने ख्याल किया—शायद मेरे ही पुरखे यह मन्दिर बना गये हैं, मैं भी इसमें मूर्ति स्थापन करूंगा।

ब्रह्माका तर्पण पूरा हुआ। वह इन्द्रद्युम्न और नारदके साथ नीलाचल पहुंचे थे। उन्होंने देखा—मन्दिर पहले जैसा ही है, दरवाजे पर कई दरबान हाजिरी दे रहे हैं। उन्होंने ब्रह्मा वगैरहको मन्दिरमें घुसनेसे रोका था। किन्तु इन्द्रद्युम्न उनकी बात न सुन मन्दिरमें घुस पड़े। फिर एक दरबानने जा कर राजा माधवको बतलाया—"एक चतुर्मुख और इन्द्रद्युम्न नामक कोई

* मार्गशिला दोवन लि या है कि कबूरे १६ पत्थर अपनी पीठ पर लाद कर ले गये थे।

आदमी आपके हुक्मकी परवाह न कर मन्दिरमें घुस गया है।"

माधव दरबानकी बात सुन कर बहुत बिगड़े और मन्दिरमें जा कर ब्रह्मा तथा विष्णुसे कहने लगे—"तुम क्यों यहां आये ?" इन्द्रद्युम्नने उत्तर दिया-"मैं प्रतिष्ठा करनेके लिए आया हूं।" इस पर माधव घमण्डमें आ कर बोल उठे—"यह मन्दिर हमारा है, तुम्हारा इसमें कोई अधिकार नहीं।"

माधव और इन्द्रद्युम्नमें खूब झगड़ा होने लगा। तब ब्रह्माने मध्यस्थ बन कर कहा था—"तुममें किसका कौन गवाह है।" माधवने कहा—"मैंने खुद मन्दिर बनवाया है, उसके लिए गवाहकी क्या जरूरत ?" इन्द्रद्युम्न बोले-"हां, हमारे गवाह हैं, पहला भुषण्डो कौवा और दूसरे इन्द्रद्युम्न सरोवरमें रहनेवाले कछुवे।" ब्रह्माने गवाही ली। कौवे और कछुवोंने इन्द्रद्युम्नकी ओरसे शहादत दी। तब ब्रह्माने माधवको शाप दिया—"तुम झूठ बोले हो। उसीसे कलियुगमें तुम लिङ्ग होगे, तुम्हारी पूजा कोई भी न करेगा।"

ब्रह्मा बड़ी धूमधामसे मन्दिरकी प्रतिष्ठा कर ब्रह्मलोकको रवाना हुए। मन्दिर तो प्रतिष्ठित हुआ परन्तु इतनी चिन्ता रह गयी—कैसे दारुब्रह्म रखेंगे। एक दिन रातके वक्त स्वप्नमें भगवान्ने दर्शन दे इन्द्रद्युम्नको कहा था—"कल सबेरे समुद्र किनारे जावो। वहां बांकी मुहाने पर दारुब्रह्मरूपमें हमें देखोगे।" दूसरे दिन राजाने फौजके साथ समुद्र किनारे जा कर दारुब्रह्मका दर्शन किया।

फिर सब लोग मिल कर उस बड़ी लकड़ीको किनारे उठा लानेके लिये आगे बढ़े। परन्तु हाथी और आदमी सबके सब किसी भी तरह उसको सरका न सके। अवन्तिपतिको बड़ी फिक्र हुई। उसी रोज रातको फिर विष्णुने दर्शन दे उनसे कहा था—"इन्द्रद्युम्न! सिवा भक्तके कोई भी उस लकड़ीको हटा न सकेगा। उसी वसु शबरको बुला भेजो। उसके और तुम्हारे हाथ लगानेसे काम बन जावेगा।" दूसरे दिन सबेर राजाने विद्यापतिको भेज कर शबरको बुलाया। इन्द्रद्युम्न और शबरके छूते ही दारु गाड़ी पर पहुंच गयी। मन्दिरके सामने गरुड़स्तम्भके पास पहले उसको रख दिया।

बारह सौ बढ़ई जगन्नाथ मूर्ति बनाने लगे। सात दिन बाद राजा देखने चले, कैसी मूर्ति बनती है। किन्तु मूर्ति बनना तो छोड़ दीजिये, लकड़ी जैसीकी तैसी रखी थी। सूत्रधारोंने विनीत भावसे कहा-"महाराज! हमसे कुछ भी न होगा। देखिये हमारे औजार टूटे पड़े हैं।" राजा उन पर नाराज हो कर बोल उठे—"यदि कल देवमूर्ति तयार न होगी, तुमको फांसी दी जावेगी।"

बढ़ई राजाका कड़ा हुक्म सुन हाहाकार कर जगन्नाथ जगन्नाथ पुकारने लगे। उसी समय दैववाणी हुई—"सूत्रधारो! तुमको कोई डर नहीं। हम कल राजासे मिल कर तुम्हें बचा लेंगे।"

दूसरे दिन अपने आप भगवान्* ब्रह्म—सूत्रधारके वेशमें राजद्वार पर जा पहुंचे। उनके पैरमें फीलपा, पीठ पर कुब्बड़, आंखोंमें कीचड़ लगा हुआ था और कानसे भी कम सुनाई पड़ता था। अरदलीने उन्हें दरबारमें जाने न दिया। पीछे राजाकी इजाजतसे वह सभामें लाये गये। बुड्ढेको देख कर सबने दांतों उंगली दबायी थी। मन्त्रीने कहा—'यह मरनेहोवाला है, परन्तु रुपये पैसेका लालच नहीं छूटा।" राजाने ऊंची आवाजमें पुकारा था—"तुम्हारा क्या नाम है?" बुड्ढेने हंस कर जवाब दिया—"मुझे वासुदव महाराणा कहते हैं। मैं विश्वकर्माका उस्ताद हूं। ऐसा कोई भी काम नहीं जिसे मैं न कर सकूं। आप जो कहेंगे, मैं उसी वक्त बना दूंगा।"

राजा बुड्ढेको अपने साथ उसी महाद्रुमके पास ले गये। इसने नाखूनसे ही उस लकड़ीका छिलका निकाल डाला था। यह देख कर सब लोग अवाक् हुए। फिर बुड्ढेने राजासे अर्ज की थी—"महाराज! मैं मन्दिरके अन्दर ही बैठ कर प्रतिमा बनाऊंगा। २१ रोज दरवाजा बन्द रहेगा। इस बीचमें कोई भी दरवाजा खोल न सकेगा।" राजाने उसकी बात मान ली।

बुड्ढा मन्दिरमें घुस पड़ा। राजा दरवाजा बन्द कर

* नीलाद्रिमहोदयमें भी लिखा है कि भगवान्ने सूत्रधारके वेशमें आ कर अपनी मूर्ति प्रकाशित की।

चले गये। इन्द्रद्युम्नको पटरानीका नाम गुण्डिचा था। एकदिन उन्होंने राजासे पूछा—"आपने मुझको जगन्नाथ दिखलानेको कहा था, परन्तु दिखलाया तो नहीं।" राजाने उत्तर दिया—"एक बुड्ढा मूर्ति बना रहा है। उसको यह काम करते १५ दिन हो गये। और ६ रोज बीतने पर देख सकोगी।" गुण्डिचा हंस कर कहने लगीं—"बारह सौ बढ़ई आ कर जब कुछ न कर सके, अकेला बुड्ढा क्या कर सकेगा? मालूम होता है, इतने दिन भूखा रहनेसे वह मर गया।" रानीकी बात सुन कर राजाको भी कुछ फिक्र हुई। वह मन्त्रीको साथ ले कर मन्दिर पहुंचे। दरवाजेमें कान लगा कर कोई आवाज न सुनने पर उन्होंने ख्याल किया कि बुड्ढा मर जैसा गया था।

पहले मन्त्रीने दरवाजा खोलनेको रोका था, परन्तु राजाने उसकी बात न सुनी और दरवाजा खोल डाला। उसी वक्त इन्होंने देखा कि सिंहासन पर दारुब्रह्म जगन्नाथकी मूर्ति विराजमान थी, परंतु हाथ, उंगली वगैरह कुछ भी न रहा। बुड्ढा भी गुम हो गया था। राजा बुड्ढेको न देख पहले खामोश हुए, आखीरको यह सोच कर कि उन्होंने सत्यलङ्घन किया था, रोने लगे और कुश बिछा कर लेट रहे। धीरे धीरे आधी रात बीत गयी। गंभीर रजनीकालको जगन्नाथ राजाको दर्शन दे कर कहने लगे —"तुम कोई भी फिक्र मत करो। कलियुगमें हम हस्तपदहीन ब्रह्म रूपसे यहां रहेंगे, तुम सोनेसे हमारे हाथ बना दो।"

फिर राजाने हाथ जोड़ कर पूछा था—"प्रभो! आपकी पूजा कौन करेगा।"

नारायणने कहा—"जो शबर वनमें हमारी पूजा करता था, उसीका लड़का पशुपालक दैत्यपति हमारा सेवक होगा। इसके सन्तान हमेशा दैत्यपति नामसे हमारे सेवक रहेंगे।" बलभद्र गोत्रके 'सुयार' लोग हमारी रसोई बनावेंगे। हमारा प्रसाद चारों वर्णके आदमी जातिभेदकी परवा न कर एक साथ बैठ कर खा सकेंगे।

उसीके अनुसार राजा इन्द्रद्युम्नने देवसेवाका इन्तजाम बांध दिया। आजकल भी उसी तरीकेसे सब कामकाज चलता है।

ऐतिहासिकों और पुराविदोंने जगन्नाथकी उत्पत्ति पर कितनी ही आलोचना की है। ष्टालिङ्ग, राजा राजेन्द्रलाल, कनिङ्गहम, फर्गुसन, हण्टर, अक्षयकुमार दत्त आदि सबने एकवाक्यसे लिखा है कि बौद्धोंका साज सामान ले कर जगन्नाथ देवकी सृष्टि हुई, इसमें सन्देह नहीं। जगन्नाथ, सुभद्रा और बलराम बौद्ध शास्त्रोक्त बुद्ध, धर्म और सङ्घका रूपान्तर हैं। उन सबने प्रमाणित करनेकी चेष्टा की है यह तीनों मूर्तियां बौद्ध स्तूपका ही रूप हैं।

प्रत्नतत्त्वविद्ने इस प्रकार कहा है-ई० ४थी शताब्दीको इलु भाषामें दलदा-वंश लिखा गया था। उसी ग्रन्थके अवलम्बनसे ई० १२वीं शताब्दीके शेषभागमें दाथधातु वंश वा दाथवंश बनाया गया। इस दाथवंशके पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि बुद्धनिर्वाणके बाद उनके प्रिय शिष्य क्षेमने कलिङ्गाधिपति ब्रह्मदत्तको बुद्धका दांत दिया था। इन्होंने भक्तिपूर्वक वही दांत दन्तपुर नामको अपनी राजधानीमें प्रतिष्ठित किया। ब्रह्मदत्तके मरने पर उनके वंशधरोंका बहुत दिन उत्कल और इसके निकटवर्ती राज्योंमें शासन रहा। उसी प्राचीनकालसे उड़ीसामें बौद्धधर्म चल पड़ा। अलतिगिरि, खण्डगिरि, धौली आदि स्थानोंमें आज भी बौद्ध धर्मका यथेष्ट निदर्शन मिलता है। ई० ३री शताब्दीके अन्तमें राजा गुहशिव उड़ीसाका आधिपत्य करते थे। पहले यह हिन्दू थे। किसी दिन नागरिकोंको उत्सवमें मत्त देख इन्होंने पूछा, उत्सव होनेका क्या कारण था। कलिङ्गवासी श्रमणोंने उनको बौद्ध-धर्म और बुद्धदन्तका इतिहास सुना कर पीछे बतलाया—"आज उसी बुद्धदन्तका उत्सव हो रहा है।" अनेक तर्क वितर्कके बाद महाराज गुहशिवने बौद्ध-धर्म ग्रहण किया और ब्राह्मण्य धर्मावलम्बी मन्त्रियोंको भगा दिया। ब्राह्मण अपमानित हो मगधराज पाण्डुके पास पहुंचे और बहुतसे अभियोग उपस्थित किये। इस पर महाराज पाण्डुने चैतन्य नामक एक सामन्तराजको गुहशिवके विरुद्ध भेजा था। गुहशिव युद्ध न कर अति विनीत भावसे नाना उपहारोंके साथ चैतन्यराजसे मिले और उनको अभ्यर्थनाके साथ अपने प्रासादमें ले गये। वहां चैतन्यराजने

कहा था—"पाण्डु राजके आदेशानुसार हम आपको आपके उपास्य देवताके साथ बन्दी करके ले जावेंगे।" राजा गुहशिव पाण्डु राजकी आज्ञा माननेको सम्मत हुए। उधर चेतनरने गुहशिवके मुंहसे बौद्धधर्मका उपदेश सुन कर बौद्धधर्मको दीक्षा लो थी। दोनों बुद्ध-दन्त ले कर पाटलीपुत्र नगरमें जा राजाधिराज पाण्डुसे मिले। इन्होंने दांत तोड़नेको बड़ी चेष्टा की, परन्तु सफलता न मिली। फिर उन्होंने इस दांतके लिये एक बड़ा मन्दिर बना दिया। इधर स्वस्तिपुरराजने दांत लेनेके लिये पाटलीपुत्र आक्रमण किया था। उसी युद्धमें राजाधिराज पाण्डु मारे गये। इस पर राजा गुहशिवने वह दांत ले जा कर फिर दन्तपुरमें रख दिया।

मालवदेशके एक राजपुत्र बुद्धके दांत देखनेके लिए दन्तपुर गये। इनके साथ गुहशिवको कन्या हेममालाका विवाह हुआ। मालव-राजकुमार दांतके मलिक बने और दन्तकुमार नामसे पुकारे जाने लगे। स्वस्तिपुरराज छोरधारके मरने पर उनके भ्रातुष्पुत्रोंने दूसरे भी चार राजाओंके साथ बुद्धका दांत लानेको दन्तपुर पर चढ़ायी की थी। रणक्षेत्रमें राजा गुहशिव निहत हुए। दन्तकुमार छिप कर राजप्रासादसे निकले और एक वृहत् नदी अतिक्रम कर नदीके तीर वालुकामें उसी दांतको प्रोथित कर दिया। फिर उन्होंने गुप्त भावसे हेममालाको साथ ले कर दांत निकाला और ताम्रलिप्तनगरमें जा पहुंचे। यहांसे वह अर्णवपोत पर दांत ले कर सस्त्रीक सिंहल चले गये। वह दांत इसी जगन्नाथक्षेत्रमें था। पुरीधामका प्राचीन नाम दन्तपुर है।*

किन्तु डाक्टर राजेन्द्रलालके मतानुसार पुरी दन्तपुर जैसी गृहीत हो नहीं सकती। यदि पुरी दन्तपुर होती, तो दन्तकुमार पुरीसे सुदूरवर्ती ताम्रलिप्त नगर जा कर जहाज पर क्यों चढ़ते। मेदिनीपुर जिलेका दांतन नामक ग्राम ही सम्भवतः दन्तपुर है। यहांसे ताम्रलिप्त वा तमलुक अधिक दूरवर्ती नहीं। उन्होंने और भी कहा है—पुरी दन्तपुर न सही, परन्तु इसमें क्या सन्देह है कि यहां बौद्धधर्म बहुत दिन तक प्रबल रहा। बुद्धके दांतका उत्सव ही अब जगन्नाथके रथयात्रारूपमें परिणत हो गया है। रथयात्रा देखो।

उक्त ऐतिहासिकों और पुराविदोंका मत अवलम्बन करके अक्षयकुमार दत्तने लिखा है—

जगन्नाथका व्यापार भी बौद्धधर्ममूलक वा बौद्धधर्म-मिश्रित जैसा प्रतीयमान होता है। इस प्रकारको एक जनश्रुति कि, जगन्नाथ बुद्धावतार हैं, सर्वत्र प्रचलित है। चीनदेशीय तीर्थयात्री फाहियान बौद्ध-तीर्थपर्यटन करनेके लिए भारतमें आये थे। राह पर तातार देशके खुतन नगरमें उन्होंने एक बौद्ध महोत्सव सन्दर्शन किया। उसमें जगन्नाथकी रथयात्राकी तरह एक रथ पर एकसौ तीन प्रतिमूर्तियां—मध्यस्थलमें बुद्धमूर्ति और दोनों पार्श्वमें बोधिसत्वकी दो प्रतिमूर्तियां—रखी थीं। खुतनका जलसा जिस वक्त और जितने दिन चलता, जगन्नाथकी रथयात्राका उत्सव भी रहता है। मेजर जनरल कनिङ्गहमकी विवेचनामें यह तीनों मूर्तियाँ पूर्वोक्त बुद्धमूर्तित्रयका अनुकरण ही हैं। उक्त तीनों मूर्तियां बुद्ध, धर्म और सङ्घकी हैं। साधारणतः बौद्ध लोग उस धर्मको स्त्रीका रूप जैसा बतलाते हैं। वही जगन्नाथकी सुभद्रा है। श्रीक्षेत्रमें वर्णविचारके परित्यागकी प्रथा और जगन्नाथके विग्रहमें विष्णुपञ्जरकी अवस्थितिका प्रवाद-दोनों विषय हिन्दूधर्मके अनुगत नहीं। प्रत्युत नितान्त विरुद्ध हैं। किन्तु इन दोनों बातोंको साक्षात् बौद्धमत कहा जा सकता। दशावतारके चित्रपटमें बुद्धावतारस्थल पर जगन्नाथका प्रतिरूप चित्रित होता है। काशी और मथुराके पञ्चाङ्गमें भी बुद्धावतारको जगह जगन्नाथका रूप बनाते हैं। यह सब पर्यालोचना करनेसे अपने आप विश्वास हो जाता है कि जगन्नाथका व्यापार बौद्धधर्ममूलक है। इस अनुमानको जगन्नाथ-विग्रहके विष्णुपञ्जरविषयक प्रवादने एक प्रकार सप्रमाण कर दिया है कि जगन्नाथक्षेत्र किसी समय बौद्धक्षेत्र ही था। जिस समय बौद्धधर्म अत्यन्त अवसन्न भावमें भारतवर्षसे अन्तर्हित हो रहे थे, उसी समय अर्थात् ई० १२वीं शताब्दीको जगन्नाथका मन्दिर बना यह घटना भी उल्लिखित अनुमानको अच्छीसी पोषकता करती है। चीना परिव्राजक युएनचुयङ्गने उत्कलके पूर्व

* Hunter's Statistical Account of Bengal, Vol. xix, p. 42; Fergusson's Indian Architecture, p. 416.

दक्षिण प्रान्तमें समुद्रतट पर (जहां पुरी है) चरित्रपुर नामक एक सुप्रसिद्ध बन्दर देखा था। वह चरित्रपुर ही अब पुरी जैसा समझ पड़ता है। उसके निकट अत्युन्नत पांच स्तूप थे। कनिङ्गहम साहब अनुमान करते, उन्हींमें एक अधुनातन जगन्नाथका मन्दिर है। स्तूपमें बुद्धादिके अस्थि शेष समाहित रहते हैं। उसीसे जगन्नाथके विग्रहमें विष्णुपञ्जरकी अवस्थितिका उल्लिखित प्रवाद प्रचलित हुआ है। जनरल कनिङ्गहमने सांचि, अयोध्या, उज्जयिनी प्रभृति नानास्थानों और शकराजोंकी मुद्राओंमें भी वैसे ही अनेक धर्मयन्त्र संग्रह कर प्रकाशित किये हैं। यह धर्मयन्त्र वायु, अग्नि, मृत्तिका, जल और आकाश वोज जैसे य र ल व न पांच पाली अक्षरोंका समष्टि समझे गये हैं।* उल्लिखित तीनों धर्मयन्त्रोंके साथ जगन्नाथादि तीनों मूर्तियोंका अभेद वा सौसादृश्य है। जनरल कनिङ्गहमने भिलसास्तूपविषयक ३२वें चित्रपटमें इन दोनोंको पास ही पास छपाया है। देखनेसे श्रीक्षेत्रकी वैष्णव-त्रिमूर्ति बौद्धधर्मके तीनों यन्त्रोंका अनुकरण जैसी प्रतीयमान होती है। यह तीनों यन्त्र समग्र बौद्धधर्मिमूर्तिके परिचायक हों या न हों, जब जगन्नाथपुरीकी तीनों मूर्तियां कोई परिज्ञात देवाकृति, पशुआकृति वा प्रकृत मनुष्याकृति नहीं और तीन धर्मयन्त्रोंके साथ उनका अत्यन्त सादृश्य दृष्ट होता है, तो उल्लिखित अनुमान सर्वतोभावसे सम्भावित तथा सङ्गत जैसा स्वीकार करना पड़ता है। औरङ्गाबाद जिलेके अन्तर्गत इलोराका एक निकटस्थ बौद्धदेवालय अद्यापि जगन्नाथ-मन्दिर कहलाता है। उससे यह भी अक्लेश ही मनमें ला सकते हैं कि हिन्दू देवताका जगन्नाथ नाम बौद्धोंसे गृहीत हुआ है।'

राजा राजेन्द्रलालका कहना है—महाराज ययाति केशरीने लोगोंका विश्वास अक्षुण्ण रखनेके लिये ही उन तीनों मूर्तियोंको दारु ब्रह्मके रूपमें ग्रहण किया था। इसीके साथ साथ प्राचीन बौद्धस्तूप भी हिन्दुओंके प्रधान आराध्य देव जैसे गण्य हुए। वहां हिन्दूधर्मके अनुसार पूजा संस्कार प्रभृति चला गये और बौद्ध नाम बदल दिये। जैसे बौद्धोंका प्रधान तीर्थ गयाधाम हिन्दुओंका तीर्थ समझा गया, सम्भवतः वही हाल पुरुषोत्तमक्षेत्रका भी है।

उत्कलके देशीय और विदेशीय पुराविद् सब एक वाक्यसे कहते हैं कि जगन्नाथक्षेत्रके माहात्म्यप्रकाशक पुराणादि भी ययातिकेशरीके पीछे ही बने हैं।

किन्तु हम उस बातको नहीं मानते। कारण हिन्दूधर्म सब धर्मोंसे अधिक प्राचीन है। ऐसा कौन धर्म है, जिसने इसका अनुकरण नहीं किया। अंगरेजोंदांओंने अपनी मनगढन्त पर वैसा लिख मारा है। बौद्धधर्मसे जगन्नाथजीका कोई भी संस्रव नहीं है। सांचीसे जो चित्र प्रदर्शित हुआ, केवल अनुमान द्वारा बौद्धधर्मयन्त्र कहा गया है। विना प्रमाणके हम कैसे दारुब्रह्मके मूर्तित्रयको धर्मयन्त्र जैसा मान सकते हैं? विशेषतः आजकल दारुब्रह्मकी जो मूर्ति है, बौद्धयन्त्रसे नहीं मिलती। तीनों मूर्तियों और धर्मयन्त्रका चित्र यहां दिया

बलराम
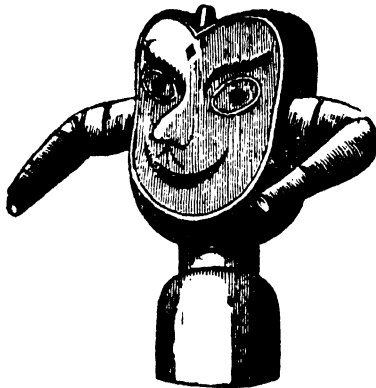
सुभद्रा
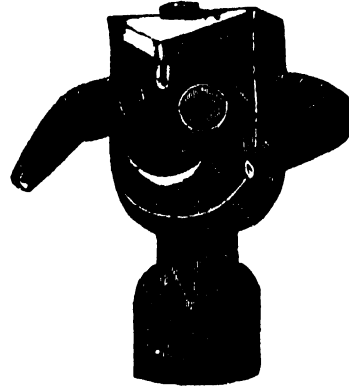
जगन्नाथ
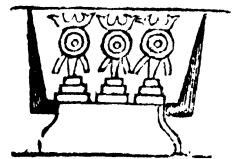
तीन धर्मयन्त्र

जाता है। इसको देख कर लोग समझ लेंगे, धर्मयन्त्रके साथ वर्तमान दारुब्रह्म मूर्तिका क्या सम्बन्ध है? और यह भी सम्भव है कि दारुब्रह्म मूर्ति देख कर ही

* Mitra's Antiquities of Orissa vol. II. p. 126.

वह धर्मयन्त्र बना हो। प्रायः उक्त सभी पुराविदोंने दारुब्रह्मके मूर्तित्रयको देव, पशु वा मनुष्यका रूप न देख कर ही धर्मयन्त्र जैसा ठहराया है। किन्तु वह युक्ति समीचीन नहीं है। नारद और ब्रह्म आदि पुराणोंमें तथा कपिलसंहिता और उत्कलखण्डमें मूर्तियोंका जैसा परिचय दिया गया है, वह पहले लिख चुके हैं। उसके पढ़नेसे यह प्रकृत देवमूर्ति मालूम पड़ती है। इस समय हम जो मूर्ति देख रहे हैं, वह पूर्वकालमें न थी। यह मूर्ति आधुनिक है; इसका विवरण पीछे दिया जायगा। इस बातका क्या अर्थ है कि इलोराका बौद्धदेवालय जगन्नाथमन्दिर जैसा माना जाने पर जगन्नाथको भी बुद्ध समझना पड़ेगा, अथवा अन्य चित्रकारोंकी खींची हुई दो एक नई तसवीरोंमें दशावतारकी बुद्धमूर्तिके स्थान पर जगन्नाथ अङ्कित होनेसे उनको बुद्धावतार कह सकते हैं। पुराने हिन्दू मन्दिरमें जहां दशावतारकी बुद्धमूर्ति खोदित हुई, वहां भी बुद्धमूर्ति है। आजकलकी जैसी हस्तपदहीन जगन्नाथ मूर्ति दृष्ट नहीं होती। जिस प्रकार प्राचीन बोधगया हिन्दुओंको मिल जानेके पीछे भी वायुपुराणीय गयामाहात्म्यमें बोधितरुमूल पर बुद्धको नमस्कार कर पिण्डादि प्रदान करनेकी व्यवस्था है, जगन्नाथ बौद्धतीर्थ होने पर किसी न किसी संस्कृत ग्रन्थमें बुद्धका कोई आभास अवश्य रहता। उलटे उत्कलखण्डमें दशावतारसे जगन्नाथका प्रभेद दिखलाया गया है—

"यतो दशावताराणां दर्शनार्थं च यत्फलम्।
तत्फलं लभते मर्त्यो दृष्ट्वा श्रीपुरुषोत्तमम्॥" (५१ अ०)

माणुनिया दास वगैरहकी बात पुरानी नहीं और न उसका कोई सबूत ही है। राजेन्द्रलालने जगन्नाथके बुद्धवेशादिकी जो कथा लिखी, वह भी अप्रामाणिक है। नीलाद्रिमहोदयमें जगन्नाथके समस्त शृङ्गारादि वेशका उल्लेख है, परन्तु बुद्धवेशकी कोई बात नहीं मिलती। सिवा इसके उक्त पुराविद श्रीक्षेत्रकी वर्णविचार परित्याग प्रथाका उल्लेख कर बौद्धधर्मका प्राधान्य दिखलाने चले हैं। वह भी दुरुस्त नहीं। कारण श्रीक्षेत्रमें विलक्षण वर्णविचार-प्रथा प्रचलित है, केवल महाप्रसाद भक्षणमें उसको छोड़ दिया है। ठीक तौर पर नहीं कहा जा सकता है, कि जगन्नाथकी रथयात्रा बुद्धदेवका रथयात्राका अनुकरण है। क्योंकि रथयात्राकी चाल बहुत पुरानी है। जगन्नाथके सिवा अपरापर हिन्दू देवदेवियोंकी रथयात्राका भी विवरण मिलता है। फिर बुद्धके पूर्ववर्ती प्रसिद्ध जैन-तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ और महावीर स्वामीकी भी रथयात्रा होती थी। रथयात्रा देखो।

जहां तक प्रमाण मिला है, पुरुषोत्तमको हिन्दू जातिको एक अत्यन्त प्राचीन प्रतिमा जैसा समझते हैं। शाङ्खायन ब्राह्मणमें लिखा है—

"आदौ यद्दारु प्लवते सिन्धोः पारे अपुरुषम्।
तदा लभस्व दुर्द्दणो तेन याहि परं स्थलम्॥"

आदि कालसे विप्रकृष्ट देशमें जो अपौरुषेय दारुमूर्ति समुद्र तीरमें तैर रही है, उसकी उपासना करनेसे लोग परमलोक पहुंचते हैं। सात सौ वर्षकी पुरानी लिखी हुई उत्कलखण्डकी एक पोथीमें भी इसी आशयके श्लोक हैं—

"स एव प्लवते दारुः सिन्धुपारे ह्यपौरुषः।
तमुपास्य दुराराध्यम् मुक्तिं यान्ति सुदुर्लभाम्॥"

(उत्कलखण्ड २१।३ श्लोक)

इस श्लोकके बाद लिखा है—

"ब्रह्मज्ञाननिधिः साक्षाद्भास्करः प्रत्युवाच तं।
नहि प्रवृत्तिर्विप्रोऽस्तु विना वेदं प्रवर्त्तते॥
परेषां यस्य वा सृष्टौ श्रुतिप्रामाण्यवान् प्रभुः।
विना श्रुतिं प्रवृत्तेऽनत् कस्तत् प्रामाण्यमृच्छति॥
तस्मात् श्रुतिप्रसिद्धोऽयमवतारोऽस्य भूपते।
वेदान्तवेद्यं पुरुषं गीतं तं सामगीतिषु॥
प्रतिमामिव जानीहि निःश्रेयसकरीं स्वयम्।
सन्त्येव श्रुतयः पूर्वमितस्याप्रकाशिकाः॥"

इससे अनुमित होता है कि, जिस समय वेदान्तवेद्य उपनिषत्में ब्रह्मको महिमा कीर्तन की जाती थी, उसी प्राचीन कालमें अथवा उसके अनतिकाल पीछे दारुब्रह्मको प्रतिमा प्रकाशित हुई होगी।

ऋग्वेदमें विष्णुका माहात्म्य कहा है। विष्णु देखो। मालूम होता है कि जब विष्णुमतावलम्बी पहले उड़ीसा पहुंचे थे, तब उन्होंने वहां असभ्योंका आधिपत्य पाया था। आदिम असभ्य जातियां अब भी पृथिवी पर नाना स्थानोंमें काष्ठ-प्रस्तरादिकी पूजा करती हैं। सम्भाल

आदि जातिमें इसके प्रमाण मौजूद हैं। ऋग्वेदके ऐतरेय-ब्राह्मणमें विश्वामित्रपुत्र दुर्धर्ष शवरजातिका उल्लेख है। शबर देखो। उत्कल और दक्षिणकोशलमें बहु पूर्वकालसे ही शवरोंका प्राबल्य था। सम्भवत: हिन्दुओंने वहां शवरोंको समुद्र तीर पर काष्ठ तथा प्रस्तरकी पूजा करते देखा था और फिर यह भी उनमें मिल वैसा ही करने लगी होंगी।

नारद और ब्रह्मपुराणमें शवरप्रसङ्ग, इन्द्रद्युम्ननिर्मित मन्दिरका वालुकाके मध्य आच्छादन और ब्रह्मलोकसे ब्रह्माके आगमनका उल्लेख नहीं है। इससे मालूम होता है कि, उत्कलखण्ड और कपिलसंहिता आदिके आख्यानों-की अपेक्षा नारद और ब्रह्मपुराणका विवरण मौलिक है। इनमें कहा गया है, इन्द्रद्युम्नके पुरुषोत्तमक्षेत्र पहुंचने पर भगवान् समुद्र किनारे बालोंमें छिप गये थे। उन्होंने केवल वेदी देखी और इसी पर सौ अश्वमेधयज्ञ किये। पञ्चपाण्डवने भी यहां आ सिर्फ वेदीको अवलोकन कर स्तवपाठ किया था। महाभारतमें बतलाया है—

"ततः प्रसन्ना पृथिवी तपसा तस्य पाण्डव।
पुनरुन्मज्ज सलिलाद्वेदीरूपा स्थिता बभौ॥
सैषा प्रकाशते राजन् वेदी संस्थानलक्षणा।
आरुह्यात्र महाराज वीर्यवान् वै भविष्यसि॥
सैषा सागरमाश्रित्य राजन् वेदी समाश्रिता।
एतामारुह्य भद्रन्ते त्वमेक स्तर सागरम्॥
अहञ्च ते स्वस्त्ययनं प्रयोक्ष्ये त्वमेनामधिरोहस्व।
स्पृष्टाहि मर्त्येन ततः समुद्रमेषा वेदी प्रविशत्यजमीढ़॥
ओं नमो विश्वगुप्ताय नमो विश्वपराय ते।
सान्निध्यं कुरु देवेश सागरे लवणाम्भसि॥
अग्निर्मित्रो योनिरापोऽथ देव्यो विष्णोरेतस्त्वममृतस्य नाभिः।
एवं ब्रुवन् पाण्डव सत्यवाक्यं ततोऽवगाहेत पतिं नदीनाम्॥"
(वनपर्व ११४।२२-२७)

पृथिवी तपःप्रभावसे प्रसन्न हो सलिलसे उठ कर वेदीरूपमें विराजमान हुई। महाराज यह वही वेदी दीख पड़ती है, इस पर आरोहण करनेसे आप वीर्यवान् हो जावेंगे। वेदी सागरका आश्रय लिये है। इस पर चढ़नेसे एकाकी ही (भव) सागर पार हो सकते हैं। मैं स्वस्त्ययन करता हूं, आप स्पर्श कीजिये। 'हे देवेश! तुम विश्वके ईश्वर हो। तुमको नमस्कार है। तुम लवण-सागरके सन्निहित हो। तुम अग्नि, तुम मित्र, तुम सलिलके आधार, तुम देवीस्वरूप और तुम अमृतके आकार हो।' ऐसे ही स्तव कर वेदीमें प्रवेश कीजिये।

आजकल भी पुरुषोत्तमवासी ब्राह्मण पण्डितोंका विश्वास है कि महावेदी ही प्रकृत सिद्धपीठ और महा-पुण्यप्रद है। थोड़े दिन हुए मन्दिरके भीतर एक पत्थर गिर जानेसे दारुमूर्तियां स्थानान्तरित की गयी थीं। उस समय कितनों ही महाप्रसाद नहीं पाया। पण्डितोंने बतलाया—भगवान् महावेदीमें न रहनेसे कैसे प्रसाद बन सकता है। नारद, ब्रह्म प्रभृति पुराणोंमें भी उस वेदीका माहात्म्य वर्णित है। उत्कलखण्डमें जगन्नाथका रथोत्सव भी 'महावेदी उत्सव' जैसा कहा है।

(उत्कलखण्ड ११।१४ अ०)

उत्कलखण्ड, कपिलसंहिता और नीलाद्रिमहोदयके मतमें इसी वेदी पर इन्द्रद्युम्नने १०० अश्वमेधयज्ञ किये थे। इसी वेदीमें दारुब्रह्मकी प्रतिष्ठा हुई थी। शास्त्रवर्णित अपौरुषेय दारुमूर्ति भी, मालूम होता है, इसी वेदी पर अधिष्ठित थी।

उपर्युक्त प्रमाण द्वारा प्रतिपन्न होता है कि, बौद्ध-धर्मके अभ्युदयसे बहुत पहले पुरुषोत्तमक्षेत्र हिन्दुओंका महातीर्थ समझा जाता है।

फिर उत्कल राज्यमें बौद्धोंका अधिकार विस्तृत हुआ, जिससे दीर्घकाल तक दारुब्रह्म वा महावेदीका माहात्म्य हिन्दू-जगत्में अप्रकाशित रहा। बौद्धोंका परा-क्रम खर्व होने पर असभ्य शवरोंने कलिङ्गराज्यमें अपना आधिपत्य फैलाया था। हिन्दुओंके संस्रवसे वह धीरे धीरे सभ्य बन गये। ब्राह्मणजाति पर असभ्योंका हमेशा डाह बना रहा। किन्तु सुचतुर शवर-राजा वैरभावको छोड़ कर ब्राह्मणोंके साथ मिल गये। बौद्धकर्तृक उत्पीड़ित ब्राह्मण असभ्य शवरोंसे मिलनेमें पीछे हटे न थे।

रायपुर, सम्बलपुर और कटक जिलासे आविष्कृत ताम्रशासन तथा शिलालिपि पढ़नेसे समझ पड़ता है कि पूर्वतन सकल शवर-राजा विष्णुभक्त थे। वह महाकोशलमें राज्य करते और अपनेको त्रिकलिङ्गाधि-पति जैसा कहते थे।

बाणभट्ट रचित हर्षचरित पढ़नेसे मालूम होता है कि जब महाराज हर्षवर्धन भगिनी राज्यश्रीको ढूंढने निकले थे, तब विन्ध्यप्रदेशमें शवर-राज शरभकेतुके पुत्र व्याघ्रकेतु राजत्व करते थे। उन्हींके साहाय्यसे इन्होंने वहनका सन्धान पाया। हर्षराजके उत्कल जय करते समय भी मालूम होता है, वहां शवरोंका अधिकार था।

उड़ीसाके पुराविद्ने मादलापांजीकी बात कह कर लिखा है-शिवदेव वा शोभनदेवके राजत्वकालमें (२४५ शाक वा ३२३ ई० ?) रक्तवाहु नामक यवनने अर्णवपोत द्वारा वहां आ कर नगर आक्रमण किया था। राजा यवनके भयसे जगन्नाथ-मूर्त्ति और समस्त तैजसपत्र ले शोणपुरके जङ्गलमें भाग गये। रक्तवाहु मन्दिर लुण्ठन कर नगर-वासियों पर अत्याचार करने लगे। राजा शिवदेवने वह संवाद सुन कर दारुब्रह्ममूर्ति मृत्तिकाके मध्य प्रोथित की थी।

शवर-राजा महानदीतीरस्थ राजिम नगरमें राजत्व करते थे। यहां उन्होंने बहुसंख्यक विष्णुमन्दिर बनाये। राजिम-माहात्म्यमें मन्दिरोंका विस्तृत विवरण लिपिबद्ध हुआ है। आजकल राजिम नगरमें जगन्नाथदेवका एक प्राचीन मन्दिर है। स्थानीय लोगोंका विश्वास है और राजिम-माहात्म्यमें भी लिखा है कि, इस मन्दिरमें जो दारुमयी जगन्नाथमूर्ति विराजमान है, प्रथम श्रीक्षेत्रके मन्दिरसे आनीत हुई। दारुब्रह्मकी भांति राजिमकी दारुमूर्तिका भी लेप-संस्कारादि हुआ करता है। इससे मालूम होता है कि यवनके खौफसे महाराज शिवगुप्तने श्रीक्षेत्रकी पवित्र मूर्ति ले जा कर अपनी राजधानीमें स्थापन की थी।

उड़ीसाके ऐतिहासिक रक्तवाहु यवनको ग्रीक जैसा अनुमान करते हैं। किन्तु ई० ८वीं शताब्दीमें किसी दूसरे इतिहासमें नहीं लिखा है कि, यूनानियोंने उत्कल आक्रमण किया था। यवद्वीपके अधिवासी भी यवन वा जवन कहलाते हैं। ई० ८म वा ६म शताब्दीमें यवद्वीपीयोंने बहुत प्रबल हो कर जहाजमें जा चीनसमुद्रवर्ती कम्बोजसे भारतवर्षके पूर्व उपकूलवर्ती बहुतसे स्थान लूटे थे। इसमें ७०६ शकमें उन्होंने कम्बोजमें जो भीषण उत्पात उठाया, वहांके प्राचीन संस्कृत शिलाफलकमें ओजस्विनी भाषासे बतलाया है।*

सम्भवतः कम्बोजकी तरह जवनोंने अर्णवपोतसे आ कर श्रीक्षेत्र भी लूटा था। पराक्रान्त जवनसैन्यके भयसे ही राजा शिवगुप्त जगन्नाथजीको हटाने पर बाध्य हुए।

उत्कलखण्ड और तत्परवर्ती ग्रन्थसमूहमें जो लिखा है कि शवर पुरुषोत्तमकी पूजा आदि किया करता था, सम्भव है वह शवर राजाओंके समयकी ही कथा हो। ययातिने शवरराजधानीसे दारुब्रह्ममूर्ति ला कर नाना याग यज्ञ किये और ब्राह्मण द्वारा फिर उसकी प्रतिष्ठा करायी। मालूम होता है, इसीको लक्ष्य कर उत्कल-खण्ड आदि ग्रन्थोंमें ब्रह्मा द्वारा दारुब्रह्मकी प्रतिष्ठाका वर्णन किया गया है।

नारद वा ब्रह्मपुराणमें शवर या ब्रह्माका प्रसङ्ग न होनेसे हमारा दृढ़ विश्वास है, कि शवरप्रसङ्गमूलक उत्कलखण्ड २य इन्द्रद्युम्न उपाधिधारी ययातिके समयमें वा उनके कुछ समय पीछे रचा गया है।† उन्होंने ब्राह्मणके द्वारा श्रीमूर्तिकी पुनः प्रतिष्ठा करा कर जो बन्दोवस्त किया था, उसीको उत्कलखण्ड-रचयिताने नारद और ब्रह्मपुराणकी सहायतासे बहुतसी अन्यान्य कथाओंके साथ विस्तारपूर्वक लिख दिया है। उस समय भी शवरराजका आधिपत्य था, इसीलिए राजा ययाति शवरोंको जगन्नाथके सेवकरूपमें ग्रहण करनेके लिए बाध्य हुए थे। यही कारण है कि परवर्ती समस्त ग्रन्थोंमें जगन्नाथके लेप संस्कारादि सम्पूर्ण कार्योंमें शवरके पूर्णाधिकारकी बात लिखी है। अब भी उन पूर्वतन जगन्नाथ-सेवक शवरोंके वंशधर दैतापतिके नामसे प्रसिद्ध हैं और पूर्व-अधिकारके अधिकारी हैं। परन्तु अन्यान्य शवरोंको मन्दिरके प्राङ्गणमें प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है।

उत्कलखण्डमें लिखा है-महाराज (सम्भवतः २य) इन्द्रद्युम्न जगन्नाथका दर्शन करनेके लिये जब चित्रोत्पला

---

* Inscriptions Sanskrites de Campa et du Cambodge par M. Abel Bergaigne, p. 33. (1894).

† कपिलसंहिता, नीलाद्रिमहोदय आदि ग्रन्थोंकी अपेक्षा उत्कलखण्ड प्राचीन है; यह बात आनुषङ्गिक प्रमाणों द्वारा मालूम पड़ती है।

नदीके किनारे उपनीत हुए तब उत्कलराज उनसे जा कर मिले थे। कपिलसंहिताके मतानुसार जहां उत्पलेश्वर हैं, चित्रोत्पला नदी बहती है। राजिममाहात्म्यमें कहा है कि महानदी और प्रेतोद्धारिणीके सङ्गम पर उत्पलेश्वर विराजमान हैं।

"उत्पलेशं समासाद्य यावीश्वरा महेश्वरा।
तावत् चित्रोत्पला ख्याता सर्वपुण्यप्रदा नदी॥"

राजिम नगरमें ही महानदी और प्रेतोद्धारिणी (पाइरी) मिली हैं। ययातिके समय वहां शबरराजकी राजधानी रही। उत्कलखण्डका विवरण प्रकृत होनेसे मानना पड़ेगा कि महाराज इन्द्रद्युम्न (२य)ने इसी राजिमनगरमें उत्कलराजासे नीलाचलका संवाद पाया था। सम्भवतः ययातिसे वहांकी मूर्ति देख कर ही नीलाचलमें फिर दारुब्रह्मकी प्रतिष्ठा करना चाहा।

उत्कलखण्डमें कहा है—इन्द्रद्युम्न जब स्वर्गमें चले गये, तब बहुत युगों तक महामन्दिर समुद्रकी बालुकामें ढंका रहा। गाल नामक किसी राजाने उनकी उद्धार किया और दूसरे भी पांच प्रस्तर-मन्दिर निर्माण कर उनमें प्रस्तरमयी माधवकी प्रतिमाको प्रतिष्ठित करा दिया।

"सो ऽप्यथ प्रतिमा कृत्वा माधवाख्या हमन्मयीं।
स्थापयित्वाथ प्रासादे पूजयामास भक्तिमान्॥
यवीयान् पञ्चप्रासादान् निर्माय नृपसत्तमः।
तत्र तां स्थापयामास ततो निष्कृत्य सादरम्॥"

(उत्कलखण्ड २९।७८)

प्रसिद्ध चीना परिव्राजक युएनचुयाङ्गने ई० ७म शताब्दीमें चरित्रपुर (वर्तमान पुरी) जा कर उक्त पांचों प्रासादोंकी उच्च चूड़ा देखी थी। उन्हें इन पांचों मन्दिरोंके गात्रमें नाना सिद्धर्षियोंकी मूर्तियां भी देख पड़ी। मालूम होता है कि चीना परिव्राजकके समय जगन्नाथका मूल-मन्दिर बालुकाशायी अथवा भग्न हो गया था। उड़ीसाकी मादलापंजीमें बतलाया है कि उसी मन्दिरका पुनःसंस्कार वा पुनरुद्धार करनेके बाद ही ययातिकेशरीने द्वितीय इन्द्रद्युम्नकी उपाधि पायी थी। (Sterling's Orissa, p.114.)

ब्रह्मेश्वर-लिपिमें लिखा है कि राजा अपवारके कोई पुत्र न था। उनकी मृत्युके समय जनमेजयतनय (वृद्ध) विचित्रवीर देशान्तरमें रहे। फिर उन्होंने उड़ीसा आ कर राजच्छत्र ग्रहण किया। शिलालिपिमें उद्योतकेशरीके सिवा उस वंशके किसी दूसरे राजाको केशरी उपाधि नहीं मिलती। सम्भवतः इन्हीं उद्योतकेशरीसे केशरी नाम विख्यात हुआ होगा। यह एक पराक्रमशाली राजा थे। इन्होंने गौड़ और चोड़ आदिके राजाओंको परास्त किया था। खण्डगिरिकी अनन्तगुहा उन्हींके १८वें अङ्कमें निर्मित हुई।

पहले लिखा है कि ई० ८वीं शताब्दीमें महाराज ययाति आविर्भूत हुए थे। ऐसे स्थल पर उनके भ्राताके चतुर्थ पुरुष महाराज उद्योतकेशरीने (३ पुरुषमें एक शताब्दी रखनेसे) ई० ११वीं शताब्दीमें जन्म लिया होगा।

इस ११वीं शताब्दीमें गाङ्गेयराज वीरवर चोड़गङ्गने उत्कलराज्य अधिकार किया था। शिलालिपिसे यह सन्धान आज तक भी नहीं मिला कि, चोड़गङ्गने जब उत्कलराज्य आक्रमण किया था तब वहां केशरीवंशका कोई राजा था या नहीं। उद्योतकेशरी और चोड़गङ्गके समयकी उत्कीर्ण शिलालिपियोंमें परस्पर सम्पूर्ण सादृश्य रहनेसे अनुमान होता है, कि उद्योतकेशरी अथवा उनके वंशधरके समय महाराज चोड़गङ्गने उड़ीसा जीता। चोड़गङ्ग देखो। मालूम होता है कि इसी समय केशरीवंशीय राजा दक्षिणकी तरफ भागनेके लिए मजबूर हुए। पारलाकिमेदीके राजा अपनेको इस केशरीवंशीय बतलाते हैं। जगन्नाथ वल्लपति नारायण देव देखो।

गङ्गवंशीय २य नरसिंहके ताम्रशासनमें लिखित है—'गङ्गेश्वर चोड़गङ्गने उत्कलराजसिन्धुको मन्थन कर कीर्तिरूप चन्द्र, पृथिवीरूपा राजलक्ष्मी, मदमत्त सहस्र हस्ती, दश हजार अश्व और असंख्य रत्न लाभ किये थे।'

'यह विशाल भूमण्डल जिसका चरण, अन्तरीक्ष जिसकी नाभि, दशदिक् जिसके कर्ण, सूर्य एवं चन्द्र जिसका नयनयुगल और स्वर्गलोक जिसका मस्तक है, इस त्रिलोकव्यापी परमेश्वर पुरुषोत्तमके वासयोग्य मन्दिर कौन व्यक्ति बना सकेगा? मानो यही विचार कर ही पूर्वतन नरपतियोंने पुरुषोत्तमके मन्दिर निर्माणकी उपेक्षा की थी। किन्तु गङ्गेश्वर चोड़गङ्गने वैसा न कर यह बड़ा मन्दिर बना दिया।'

ताम्रशासनके उक्त विवरणसे समझ पड़ता है कि महाराज ययातिने जिस मन्दिरका संस्कार कर द्वितीय इन्द्रद्युम्न उपाधि पाया था, किसी समय विध्वस्त अथवा भग्न हो गया। ययातिवंशीय किसी राजाने न तो उसका संस्कार किया और न नये ढंगसे ही बना दिया। वह शिवमन्दिर बनानेमें ही व्यस्त रहे। परन्तु महाराज चोड़गङ्गने पुरुषोत्तमका महामन्दिर निर्माण कर वैष्णवोंका आनन्द बढ़ाया।

भुवनेश्वरके निकटवर्ती केदारेश्वरद्वार पर उत्कीर्ण शिलालिपिके पढ़नेसे मालूम होता है कि १००४ शकमें चोड़गङ्गके आधिपत्यकाल केदारेश्वरका मन्दिर निर्मित हुआ। उसी समय या कुछ पहले जगन्नाथका महामन्दिर भी बनाया गया होगा।

उड़ीसेके सब ऐतिहासिकोंने लिखा है कि, महाराज अनङ्गभीमने परमहंस वाजपेयीके तत्त्वावधानमें तीस चालीस लाख रुपया लगा कर ११८६ ई०में यह महामन्दिर निर्माण किया था। परन्तु यह बात कहां तक ठीक है, ठहरा नहीं सके। गङ्गवंशीय राजाओंके पचास साठ खुदे हुए शिलाफलक और ताम्रशासन मिले हैं। उनमें अनङ्गभीमके महामन्दिर बनानेकी बात कहीं भी नहीं है। परन्तु यह लिखा है कि उन्होंने अपरापर शत शत मन्दिर बनाये थे। इससे मानना पड़ेगा कि अनङ्गभीमने वह बड़ा मन्दिर नहीं बनवाया। चाटेश्वरके शिलाफलकमें उनके द्वारा प्राचीन मन्दिरका संस्कार किये जानेकी कथा लिखी रहनेसे अनुमान करते हैं कि, उनके समय इस महामन्दिरकी मरम्मत हुई होगी।

जगन्नाथके पण्डे कहा करते हैं कि महाराज चोड़गङ्गने ही जगन्नाथकी प्रात्यहिक विवरणमूलक मादला पंजी लिखानेकी व्यवस्था डाली थी। उस समयसे बराबर प्रत्यह तालपत्रमें वह लिखित होती है। उपर्युपरि मुसलमानोंके आक्रमणसे तत्पूर्ववर्ती प्राचीन मादला पंजीका अधिकांश बिगड़ गया है। इसलिए उसके आधारसे यदि प्राचीन वंशावली बनायी जाती तो वह अधिकांश कल्पित होती। हालके ऐतिहासिकोंने मुसलमानोंके आक्रमणसे पहलेकी जो, घटनावली लिखी है, वह उड़ीसाके राजाओंकी सामयिक खोदित लिपिसे नहीं मिलती।

गङ्गवंशीय राजाओंके आधिपत्यकालमें ही जगन्नाथकी समृद्धि बढ़ी थी। वह उड़ीसाकी ज्यादातर आमदनी जगन्नाथकी सेवामें लगाते और अपनेको इनका टहलुआ बतलाते थे। आजकल भी रथयात्राके दिन जगन्नाथ जब रथ पर चढ़ते, सबसे पहले पुरीके राजा झाड़ूसे रास्ता साफ करते हैं। यह प्रथा गङ्गवंशीय राजाओंके समयसे चली आती है।

गङ्गवंशीय राजाओंका प्रताप खर्व होने पर सूर्यवंशीय कपिलेन्द्रदेवने कर्णाटसे जा कर उत्कलराज्य अधिकार किया। यह और इनके मन्त्री सभी परम वैष्णव थे। जगन्नाथके महामन्दिरकी उत्कीर्णशिलालिपि पढ़नेसे जान पड़ता है कि महाराज कपिलेन्द्रदेवने जगन्नाथकी सेवाके लिये बहुतसी जमीन और दौलत दी थी। (गोपीनाथपुर देखो।)

कपिलेन्द्रके बाद उनके पुत्र पुरुषोत्तमदेवने उत्कलका सिंहासन लाभ किया। इनकी नामाङ्कित शिलालिपि पढ़नेसे ज्ञात होता है कि उनके समय उड़ीसामें बहुतसी जगह विष्णुमन्दिर प्रतिष्ठित हुए थे। राजा पुरुषोत्तमदेव जगन्नाथके एक प्रधान भक्त थे। (पुरुषोत्तमदेव देखो।) इन्होंने भी दारुब्रह्मके उद्देशसे विस्तर भूसम्पत्ति दान की। आजकल जगन्नाथके महामन्दिरकी चूड़ामें जो नीलचक्र लगा है, पुरुषोत्तमदेव कर्तृक ही प्रदत्त हुआ। इसके बीचमें भी पुरुषोत्तमदेवके समयकी उत्कीर्ण खोदित लिपि देख पड़ती है। बार बार रंगामेजी होनेसे आजकल वह लिखावट बहुत ही अस्पष्ट हो गई है।

पुरुषोत्तमदेवके पुत्र प्रतापरुद्र देवने १५०३ ई०को सिंहासन पर आरोहण किया। उनके समय श्रीक्षेत्रमें नवयुगका आविर्भाव हुआ। श्रीचैतन्यदेव इन्हींके समय बहुत दिन श्रीक्षेत्रधाममें रहे। फिर उन्होंने बहुतसे नये उत्सव चलाये। महाप्रसादका प्राधान्य भी उसी समय स्थापित हुआ।

एकबार प्रतापरुद्र दाक्षिणात्य जीतनेको निकल पड़े। उसी मौके पर बङ्गालके मुसलमान सूबेदार फौजके साथ उड़ीसा पर चढ़ा था। मुसलमानीसैन्यने श्रीक्षेत्र तक लुण्ठन किया। उसी समय जगन्नाथके सेवक दारुब्रह्ममूर्तिको गिरिगह्वरमें छिपानेके लिये गुप्तभावसे

नौकामें रख कर चिल्का ह्रद ले गये। प्रतापरुद्रने वापस आ कर म्लेच्छोंको हटाया और दारुब्रह्ममूर्तिको फिर बैठाया था।

प्रतापरुद्रके मरने पर उनके बहुसंख्यक पुत्रों और मन्त्रियोंमें राज्यके लिये विवाद उठा। क्रमशः मन्त्री और सामन्त प्रबल हो सिंहासन अधिकार करते रहे। उस उपद्रवके समय जगन्नाथदेवकी सेवामें भी बड़ी विशृङ्खला पड़ी। राज्यविप्लव मिटा भी न था कि देवद्वेषी कालापहाड़की रणढक्का उड़ीसामें निनादित हुई। मुकुन्ददेव तब उत्कलके राजा थे। किन्तु उससे पहले ही अन्तर्विप्लवमें गजपति राजाओंका दबदबा कितना ही घट चुका था।

मुसलमान सेनापति कालापहाड़ बहुतसी फौजके साथ याजपुर पहुंचा। उस समय उत्कलवासियोंने जीजानसे उसको रोका था। इसी युद्धमें राजा मुकुन्ददेव निहत हुए। उत्कलराजाके पराजयकी वार्ता "जगन्नाथमें सुन पड़ी थी। उस समय भी सेवकोंने चिल्का झीलके पास पारीकूद ले जा कर एक गड्ढेमें दारुब्रह्मकी मूर्ति छिपा कर रख दी। दुर्दान्त कालापहाड़ सैकड़ों देवमूर्ति और देवमन्दिर चूर्णविचूर्ण वा अङ्गहीन कर जगन्नाथके महामन्दिरमें पहुंचा; यहां खूब लूटमार और नुकसान कर दारुब्रह्ममूर्तिका पता लगानेको उसने चारों ओर भेदिये भेजे थे।

सेवकने बहुत यत्न किया पर कालापहाड़के कराल कवलसे वे पवित्र मूर्तिको बचा न सके। वह पारीकूदसे दारुब्रह्मको निकाल कर गङ्गाके किनारे उपस्थित हुआ। वहां उसने लकड़ीका एक टाल बनाया और उसमें आग लगा कर दारुब्रह्म मूर्तिको जलाया था। फिर दग्धमूर्ति अग्निसे निकाल कर गङ्गाके जलमें फेंक दी थी। मादला पंजीमें लिखा है कि अग्निमें पड़ते ही दारुब्रह्मका सर्वाङ्ग जल गया और उनका विनाश हो गया। कालापहाड़के अनुचरोंने जब उस पवित्र मूर्तिको जलमें फेंका तब देवके एक प्रधान भक्त बेसरमहान्तिने उसे फेंकते देखा था। उन्होंने अति गुप्त भावसे यह दग्धमूर्ति निकाल कुजङ्ग दुर्गाधिपति खण्डायतके घरमें ले कर रख दी। फिर बीस वर्ष बाद राजा रामचन्द्रदेवके राजत्व कालमें दारुब्रह्म कुजङ्गसे आनीत हुआ।

उस समय उत्कलका अधिकांश पठानोंके हाथमें चला गया था। किन्तु अकबर बादशाहके आदेशसे मुनीमखां और उनके बाद खां जहान्‌ने आ कर पठानोंको सम्पूर्ण रूपसे परास्त किया और १५७८ ई०में उड़ीसा राज्य दिल्लीश्वरके अधिकारमें मिला लिया। उस युद्ध घटनाके समय जगन्नाथदेवको दो तीन बार चिल्का ह्रदमें ले जा कर रखना पड़ा। इसमें सन्देह नहीं कि मुगल और पठानोंकी लड़ाईसे उड़ीसेमें बड़ी अराजकता हुई थी। १५८० ई०में उड़ीसेके सामन्तोंने एकत्र हो दनाई विद्याधरके पुत्र दनाई रावत्तकी रामचन्द्रदेव नाम रख कर सिंहासन पर अभिषिक्त कर दिया। उसी समय अकबरके अन्यतम प्रधान सेनापति सवाई जयसिंह बादशाहका काम करनेके लिये उड़ीसेमें टिके थे। उन्होंने भी रामचन्द्रदेवके अभिषेक कार्यको अनुमोदन किया। जयसिंहदेवके आदेशसे ही रामचन्द्रदेवने वंशपरम्परामें उत्कलके दूसरे सब राजाओंसे प्राधान्य पाया था। राजा रामचन्द्र और उनके वंशधर जगन्नाथके प्रधान सेवक जैसे नियुक्त हुए। रामचन्द्रने राजा होते ही शास्त्रीय विधानानुसार निम्बकाष्ठसे दारुब्रह्मका नवकलेवर स्थापन कर महासमारोहसे पुनः प्रतिष्ठा की थी। पूर्ववत् षोड़शोपचारसे देवकी पूजा होने लगी। किन्तु दुःखकी बात है कि, दिन थोड़े पीछे ही फिर गोलकुण्डाके आदिलशाही नवाबने उड़ीसा आक्रमण कर रामचन्द्रको हरा दिया।

१५८२ ई०को राजा मानसिंहने उड़ीसा आ कर जगन्नाथक्षेत्र देखा था। उन्होंने राजा रामचन्द्रदेवके व्यवहारसे सन्तुष्ट हो उन्हें महाराज उपाधि और जगन्नाथ एवं चतुःपार्श्वस्थ १२८ दुर्गोंका शासनभार प्रदान किया। उसी समयसे खुर्दाके राजाने सर्वप्रकार प्राधान्य पाया था।*

उसके बाद थोड़े दिनों तक जगन्नाथमें और कोई गड़बड़ नहीं हुई। तोशीरत-उल्-नाजरीं नामके फारस रोजनामचेमें लिखा हुआ है—

* आजकल भी उन्हींके वंशधर पुरीके ठाकुर राजा कहे जाते हैं। उड़ीसेकी पञ्जिकामें इन्हींका राज्याङ्क गृहीत होता है। परन्तु वह अब जगन्नाथके सेवकसे भिन्न और कुछ भी नहीं। उस आधिपत्य और सम्पत्तिका कहां ठिकाना है।

'बादशाह औरङ्गजेबने जगन्नाथ-मन्दिर तोड़नेके लिये नवाब इकराम खाँको हुक्म दिया। उस समय यह मन्दिर राजा द्रव्यसिंहदेवके अधीन रहा। राजाने मोर मुहम्मदको अनुरोध किया, तुम हमको नवाबसे मिला दो। वह मन्दिर तोड़ कर विराट् मूर्ति सम्राट्के निकट भेजने पर भी सम्मत हो गये। तदनुसार राजाने सिंहद्वार पर रखी एक राक्षस मूर्ति और द्वारके सम्मुखस्थ दो तोरणोंको तोड़ डाला था। उसी समय बृहत् चन्दन काष्ठकी एक मूर्ति और देवके नेत्रस्थानोंमें रक्षित दो प्रधान होरक बीजापुरमें औरङ्गजेबके पास पहुंचाये गये।'

उक्त विवरण पाठसे मालूम होता है कि देवद्वेषी औरङ्गजेबकी तीक्ष्ण दृष्टिसे जगन्नाथमूर्ति भी बच न सकी। केवल खुर्दाराजके कौशलसे ही दारुब्रह्म मूर्तिकी रक्षा हुई। उन्हीं द्रव्यसिंहके समय जगन्नाथकी पाकशाला बनी थी।

कुछ दिन पीछे उड़ीसामें दुर्दान्त मराठोंका आधिपत्य विस्तृत हुआ। वर्णना नहीं कर सकते, उस समय अर्थलोभी मराठांके निर्यातनमें पड़ कर उत्कलवासियोंने कैसा कष्ट पाया। किन्तु उस दुःखके समय जगन्नाथ देवकी सेवामें कोई त्रुटि नहीं पड़ी। महाराष्ट्र-नायक जगन्नाथदेवकी अतिशय भक्ति-श्रद्धा करते और उनकी सेवाके लिये बहुत अर्थ आदि भी देते थे। पहले महामन्दिरमें सिंहद्वारके सम्मुख गरुड़स्तम्भ था। मालूम पड़ता है कालापहाड़ वगैरह मुसलमानोंके हमलेसे वह बरबाद हो गया। ई० १८वीं शताब्दीके प्रथम भाग महाराष्ट्रोंने कोणार्कका अरुणस्तम्भ उखाड़ कर महामन्दिरके सामने स्थापित कर दिया। आज भी वही काले पत्थरका बना कोई २८ हाथ ऊंचा सुन्दर शिल्पकार्ययुक्त अरुणस्तम्भ महामन्दिरके सामने लगा है।

१८०४ ई०में खुर्दाके राजाका समस्त अधिकृत भूभाग अंग्रेजोंके हाथ चला गया। उसी समय मन्दिरके तत्त्वावधानका भार कुछ दिनके लिये अंग्रेजोंको मिला और वे यात्रीयोंसे कर वसूल करने लगे।

ईसाई मिशनरियोंसे यह सहा न गया कि ईसाई सरकार हिन्दू मन्दिरका तत्त्वावधान करती। उनके पुनः पुनः उत्तेजना देने पर गवर्नमेण्टने पुरीके राजाको फिर तत्त्वावधायक बना दिया और देवसेवाके लिये उपयुक्त सम्पत्ति भी छोड़ी। अब पुरीके राजा ही देवसेवा निर्वाह करते हैं। जगन्नाथके सब कार्योंमें आजकल उन्हींका अधिकार है।

जगन्नाथके बौद्धावतार होनेके विषयमें—हमें धार्मिक ग्रन्थ अलेखलीलासे तथा इस मतके अनेक महन्तोंसे ऐसा मालूम हुआ है कि लगभग ७५ वर्ष हुए भगवत् बुद्ध इस लोकमें अवतीर्ण हुए थे। उनका उद्देश्य था पृथिवीके लोगोंको संसारसे मुक्त करना। उनका अलेखब्रह्मकी उपासना करनेके लिए उपदेश था। उन्होंने पहले पहल बौदराज्यके गोलासिंहा ग्रामको कृतकृत्य किया था। जगन्नाथजी भी नीलाचलको छोड़ उनसे मिलनेको गये। साक्षात् होने पर जगन्नाथजीने उनसे पूछा—"क्या आप मेरे हृदयके सन्देहको दूर कर सकते हैं? कृपया मुझे यह भी बतलाइये कि आप किसकी आज्ञासे और क्यों गुरु हो कर यहां पधारे हैं?" इस पर उन्होंने जवाब दिया, "हे जगन्नाथ! सुनो मैं निराकार अलेखकी आज्ञासे यहां आया हूं, अलेखके सिवा निराकार परमब्रह्म और दूसरा कोई नहीं है, तथा वे ही सभी गुरुओंमें श्रेष्ठ हैं। कलियुग चारों ओर फैल गया है, मैंने सिर्फ कलियुगके पाप ध्वंस करनेके लिए ही अवतार लिया है; अतः आप मुझे आज्ञा दीजिये कि जिससे मैं सहर्ष आपको सच्चे धर्मकी दीक्षा दे सकूं। पश्चात् आप मनुष्योंकी भलाईके लिये कपिलासमें जा कर काष्ठवत् मौनभावसे कुछ काल तक अवस्थान करिये।" इतना कह कर उन्होंने अपनी सारी शक्तियां जगन्नाथको अर्पण की। जगन्नाथ भी बुद्धके कथनानुसार ठेनकानल राज्यके कपिलास पर्वत पर चले गये। यहां ये गोविन्द नामसे पुकारे जाने लगे। यहां उन्होंने पृथिवीके लोगोंको भलाईके लिए बारह वर्ष तक मौन धारणपूर्वक तपस्या की। उस समय उनका भोजन थोड़ा दूध और पानीके सिवा और कुछ न था। बारह वर्षके बाद जगन्नाथजी जनसाधारणमें 'महिमा-धर्म'का प्रचार करनेके लिए कपिलाससे नीचे उतरे। यहां उन्होंने भीमभोइको ज्ञान-चक्षुका दान दिया था। कपिलास, खण्डगिरि, मणिनाग तथा कई स्थानोंमें महिमा-धर्म

प्रचार कर आप अन्तर्धान हो गये।

उत्कलके अनेक प्राचीन धार्मिक ग्रन्थोंमें बौद्धावतार जगन्नाथका उल्लेख है। अब प्रश्न यह उठता है, कि जगन्नाथ जब स्वयं बुद्ध थे तब बौद्ध धर्ममें किस प्रकार दीक्षित हुए! इसका उत्तर सिर्फ यह है कि केवल एक बुद्ध नहीं अनेक बुद्ध इस संसारमें हुए हैं। प्रमाणके लिए चैतन्यदासके निर्गुणमाहात्म्यमें भी लिखा है—

"बहुत बुद्ध अवतारे, हरि जन्मिला संसारे।"

बौद्धजातकमें भी इसका सविस्तर विवरण है। इस सम्प्रदायके कुछ लोगोंका यह भी मत है, कि नीलाचल छोड़नेके बाद जगन्नाथने व्यक्तिगत सत्ता छोड़ दी और स्वयं बुद्धस्वामी जैसे हो गये। पश्चात् उन्होंने अपने धर्मकी उत्तरोत्तर वृद्धि करनेको भार अपने हाथमें लिया था। यशोमतीमालिका नामक उनके एक धर्मग्रन्थमें इस बातका विशेष विवरण है कि किस समय, कैसे और क्यों इस धर्मका प्रचार हुआ था।

भगवान्‌ने भी गरुड़से कहा है, "हे गरुड़! मुकुन्ददेवके ४१ वर्ष राज्य कर चुकने पर मैं इस बौद्धावतारको छोड़ कर अन्तर्द्धान हो जाऊंगा। जब मैं यह शरीर त्याग कर दूंगा, तो सभी देवता ऐसाही करेंगे, क्योंकि, हरि, हर, ब्रह्मा और मैं एक हूं। मेरी आत्मा अलेखमें रहेगी। तब मायाके साहाय्यसे मैं अवधूत रूप धारण कर अलेख प्रभुका पूजन करूंगा। इसके बाद कलिका आगमन होगा, वह कलियुग चार भागोंमें विभक्त होगा और देदीप्यमान् सर्वगुणसम्पन्न एक ब्राह्मणकी सृष्टि होगी। ये नवदेव खण्डगिरि, मणिनाग और कपिलासको जा कर फल, वृक्षके पत्ते दूध और पानी द्वारा अपनी क्षुधा निवृत्त करेंगे। लेकिन यह कोई नहीं कह सकता कि कब इनकी सृष्टि होगी। ये शून्यपुरुष संसाररूपी मञ्च पर क्रीड़ा करेंगे, क्यों कि उस समय संसार भर व्यभिचारादि पापोंसे लिप्त होगा। बौद्धावतारमें ये धर्मोपदेष्टा हो कर अपने शिष्योंको धार्मिक उपदेश देंगे। इनके शिष्य कुम्भीपट (कुम्भीवृक्षकी वल्कल पहननेके कारण) कहे जायेंगे। इतने पर भी इन्हें पूर्वके शिष्य भीमभोईके सिवा और कोई नहीं पहचानेगा। ये गुप्तरीतिसे रहेंगे और भगवान्‌का गुण-गायन करेंगे। इसके बाद ये अलेख मण्डलमें शून्य पद प्राप्त करके अवस्थान करेंगे। अनन्तर गुरुके उपदेशानुसार भक्तगण परम आनन्दसे 'महिमा' गावेंगे।"

उपरोक्त घटनासे यह स्पष्ट है कि उत्कलके मुकुन्ददेवके राज्यशासनमें ४१वें वर्ष तक जगन्नाथ बौद्धावतारमें थे। बौद्ध ऐतिहासिक तिब्बतके लामा तारनाथके लेखसे पता चलता है कि मुकुन्ददेव बुद्धके कट्टर तथा विश्वासी उपासक थे और वे धर्मराज नामसे प्रसिद्ध थे। इनके समयमें दुर्दान्त कालापहाड़ने आ कर बौद्ध तथा हिन्दूधर्मको जड़से उखाड़ डालनेकी पूरी चेष्टा की थी। फलतः इनके राज्यशासनके अन्तमें बौद्धधर्म गुप्तरीतिसे चलता रहा। जगन्नाथजीके मन्दिरके मध्य सूर्यनारायण-मन्दिर बगलमें बुद्धकी एक प्रकाण्ड मूर्त्ति भूमिस्पर्श-मुद्राके ऊपर विद्यमान है। उस मूर्त्तिके सामने एक बड़ी ऊंची दीवार बना दी गई है जिससे दूरसे वह मूर्ति दृष्टिगत नहीं होती। कहा जाता है, कि यह बुद्ध-मूर्ति जगन्नाथजीके मन्दिरके पहलेकी बनी हुई है। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि मुकुन्ददेवके राज्यशासनके शेषभागमें मूर्त्तिके सामनेकी दीवार बनी होगी।

१८७५ ई०में पुरीके राजा दिव्यसिंहके राज्यशासन कालमें (२१ वर्ष बीतने पर) बौद्ध धर्मका महिमाधर्मके नामसे पुनरुद्धार किया गया। इस समय भक्त भीमभोईके उपदेश देनेसे महिमाधर्मका महत्त्व बढ़ा था और वह बहुत कुछ स्पष्ट हो गया था। इस धर्मके धर्मोपदेष्टाके मुंहसे सुना गया है कि उस समय इस धर्म सम्बन्धी बहुतसे प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे गये थे। उन ग्रन्थोंमें इस धर्मको सत्यता और उच्चादर्शका वर्णन था। ये ग्रन्थ पीतलके पात्रमें बन्द कर जमीनमें गाड़ दिये जाते थे। उन ग्रन्थोंमें ५ ग्रन्थकार प्रधान थे जैसे—जगन्नाथ, बलराम, अच्युतानन्द, यशोवन्त और चैतन्यदास।*

क्षेत्रकी सीमा और माहात्म्य—नीलाद्रिमहोदयके मतमें श्रीक्षेत्रकी सीमा और माहात्म्य इस प्रकार है—

"ऋषिकुल्यां समारभ्य यावत् वैतरणी नदी।
तावत् पीतस्य माहात्म्यं वर्णते मुनिपुङ्गवाः॥
समुद्रस्योत्तरं तीरं महानद्यास्तु दक्षिणम्।

* Modern Budhism & its foffowers in Orissa, p. 151-161

भटमारभ्य तत् चैव राजनीत च पावनम्॥
वन्ते ते तत् समारभ्य समन्तादृशयोजनम्।
पदे पदे च उत्तमं तत्रैव वस्ति तेऽनघाः॥
तत्रीनावत पर्यन्तं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥"

ऋषिकुल्या नदीसे वैतरणी नदी पर्यन्त क्षेत्रका माहात्म्य है। महानदीके दक्षिण और सागरके उत्तरकूलमें नीलाचल तक दशयोजनके बीच स्थान स्थान पर अतिश्रेष्ठ क्षेत्र है—

"यत् क्षेत्रस्पर्शनतो विप्राः समुद्रस्तीर्थराट् स्मृतः।
स शङ्खाकृतिपुते क्षेत्रे श्रीपुरुषोत्तमे।
शङ्खाकारेऽपि तन्मध्ये राजते नीलभूधरः॥"

जिस क्षेत्रको स्पर्श कर समुद्र तीर्थराज जैसा गण्य हुआ, उसी तीन कोस विस्तृत शङ्खाकार पुरुषोत्तमक्षेत्रमें नीलाचल अवस्थित है।

उपरोक्त प्रमाणोंसे मालूम होता है कि, ऋषिकुल्यासे वैतरणी तक सम्पूर्ण स्थान क्षेत्र कहलाने पर भी पुरुषोत्तमक्षेत्र तीन कोश तक ही समझा जाता है। यह क्षेत्र शङ्खाकार होने पर भी उत्कलखण्डमें कहा है—

"इदं चैव समर्थं तत्सम्मूर्त्तिं सदृशं विभुः।" (५५ अ०)

उस क्षेत्रको भगवान्‌ने अपनी मूर्त्तिके अनुरूप बनाया है।

पुरुषोत्तमक्षेत्र सब तीर्थोंका राजा है। जगन्नाथदेव सकल देवताओंके अधीश्वर हैं।

मन्दिरादि— जगन्नाथका वर्त्तमान मन्दिर अक्षा० १९° ४८' १७" उ० और देशा० ८५° ५१' ३९" पू०में भूमिसे २२ फुट ऊंचा पड़ता है। पहले उसी अञ्चलको नीलाचल कहते थे। वर्तमान मन्दिरका प्राङ्गण दैर्घ्यमें पूर्व-पश्चिमको ६६५ फुट और उत्तर-दक्षिण प्रस्थमें ६४४ फुट है। इसके चारों ओर २४ फुट ऊंचा पत्थरका बना हुआ मेघनाद नामक प्राचीर वेष्टित है। यह प्राचीर राजा पुरुषोत्तमदेवके समय बना था। उसमें चार द्वार हैं। पूर्वमें सिंहद्वार, पश्चिममें खांजाद्वार, उत्तरमें हस्तिद्वार और दक्षिणदिशामें अश्वद्वार है। सिंहद्वार काले पत्थरका बना है। इसमें यथेष्ट शिल्पनैपुण्य है। दोनों पार्श्वमें दो सिंहमूर्त्ति हैं। कपाट शालकाष्ठसे और छत चूड़ाकारमें निर्मित हुई है। इस द्वारदेशमें जय और विजयकी मूर्त्ति है। दरवाजेके सामने ४४ फुट ऊंचा प्रसिद्ध अरुणस्तम्भ है। खांजाद्वारमें कोई मूर्त्ति नहीं। अपर दोनों द्वारों पर नामानुसार दो दो घोड़े और हाथियोंकी मूर्त्तियां हैं।

पूर्वद्वारमें प्रवेश करनेसे वामभागमें श्रीकाशी विश्वनाथ और रामचन्द्रको मूर्त्ति दृष्ट होती है। इसके बाद २२ सिढ़ियां हैं अर्थात् बाईस सिढ़ियां चढ़नेसे भीतरी प्राङ्गण मिलता है। यह प्राङ्गण पूर्व-पश्चिममें ४०० और उत्तर-दक्षिणमें २७८ फुट है। इसको भी चारों दिशाओंमें ४ प्रवेशद्वार लगे हैं। उसी प्राङ्गणके मध्य जगन्नाथदेवका विशाल मन्दिर है। इस मन्दिरके चारों ओर देवदेवियोंके बहुतसे छोटे मोटे मन्दिर बने हैं।

जगन्नाथदेवका मन्दिर भी चार भागोंमें विभक्त है। सबसे पश्चिम जगन्नाथका मूलमंदिर, उसके सम्मुख मोहन, मोहनके सामने नाटमंदिर और उससे पूर्वको ओर भोगमण्डप है। भोगमण्डपकी भित्ति आदिमें बहुत बढ़िया काम और उसीके साथ यथेष्ट भोगविलासका परिचय है। यह पूर्वपश्चिममें ५८ फुट और उत्तर-दक्षिणमें ५६ फुट जमीन पर गठित है। द्वार पर अति सुन्दर नवग्रहमूर्त्ति है। इसमें भी चार प्रवेशद्वार हैं। यहां अन्नभोग लगनेसे पूर्व, दक्षिण और उत्तर दरवाजा हमेशा बन्द रहता है।

मूलमन्दिर मोहन नाटमन्दिर भोगमण्डप

उसके बाद नाटमन्दिर है। यह लगभग ८० फुट लम्बा-चौड़ा है। इसमें भी चार दरवाजे लगे हैं। पूर्वद्वार पर जय विजयकी क्षुद्र मूर्त्ति हैं। नाटमन्दिरके पीछे मोहन वा जगमोहन बना है। यह ८० फुट भूखण्ड पर खड़ा है। मोहनकी छत १२० फुट ऊंची पड़ती और देखनेमें चौपहल मीनार (Pyramid) जैसी लगती

है। पश्चात् मूलमन्दिर वा महामंदिर है। इसी देवालयको महाराज चोड़गङ्गने बनाया था, दूसरा अंश उनके बहुत पीछे निर्मित हुआ। यह मूलस्थान भी ८० फुट भूमि पर अवस्थित है। मंदिरकी चूड़ा १८२ फुट ऊंची है। उसीसे यह बहुत दूर तक दृष्टिगोचर हुआ करती है।

मन्दिरके अग्निकोणमें बदरीनारायण हैं। उनके पश्चिम श्रीराधाकृष्णमूर्ति विराजमान है। इन दोनोंके बीचमें पाकशालाका दरवाजा है। इसके पश्चिम वटकृष्ण और उससे पश्चिममें वटमूलस्थित अष्टशक्तिकी अन्यतमा मङ्गलादेवी हैं।* उत्कलखण्ड, कपिलसंहिता और नीलाद्रिमहोदयके मतमें मङ्गलाका दर्शन और पूजा करनेसे मोहबन्ध दूर होता है। इसके ईशानकोणमें मार्कण्डेयेश्वर और उनसे दक्षिणको वटमूलमें वटेश्वर लिंग है।

नारद, ब्रह्म प्रभृति पुराणोंमें यही वट अक्षयवट वा कल्पवृक्ष नामसे वर्णित है। यहां आ कल्पवृक्षको तीन बार प्रदक्षिण कर विष्णुरूपसे उसकी पूजा करनी पड़ती है। जो जगन्नाथक्षेत्रको बौद्धमूलक समझते हैं, वे कहते हैं कि बौद्धोंने बोधगयाके बोधिद्रुमकी शाखा ले जा कर नाना स्थानोंमें लगायी थी। यह अक्षयवट भी उसी प्रकार स्थापित हुआ होगा। किन्तु अनुमान भिन्न विशेष प्रमाण न मिलनेसे यह बात समीचीन जैसी नहीं जान पड़ती। बुद्ध-अभ्युदयके पूर्ववर्ती महाभारतादि ग्रन्थोंमें अक्षयवटका उल्लेख रहनेसे हम वैसा मान नहीं सकते।

मार्कण्डेयेश्वरसे उत्तरमें इन्द्राणी, वटेश्वरके नैऋतमें सूर्यमूर्ति, उससे पश्चिम क्षेत्रपाल और तत्पश्चात् मुक्तिमण्डप है। राजा प्रतापरुद्रने चैतन्यदेवके अवस्थिति कालमें १८ फुट जमीन पर यह मुक्तिमण्डप प्रस्तुत कराया था। समय समय पर यहां नानादेशीय पण्डित जाते और यात्रियोंको शास्त्रकी व्याख्या सुनाते हैं।

मुक्तिमण्डपके पश्चिम नरसिंह मूर्ति है। उससे पश्चिम मण्डप बना है। यहां देवका अनुलेपन आदि घिसा जाता है। उसके पश्चिम गणेश और वायु कोणमें भुषण्डी काकको मूर्ति है। गणेशके पश्चिमभागमें एक कुण्ड आ गया है। उत्कलखण्ड, कपिलसंहिता प्रभृति ग्रन्थोंमें उस कुण्डके स्नानका माहात्म्य वर्णित है।

उक्त कुण्डके पश्चिम भागमें अष्टशक्तिकी अन्यतमा विमलादेवीका मंदिर है। मंदिर देखनेमें बहुत पुराना जैसा समझ पड़ता है। उत्कलस्थ तान्त्रिक बतलाते हैं कि विमला ही क्षेत्रकी प्रकृत अधिष्ठात्री आद्याशक्ति हैं। जगन्नाथ उनके भैरव होते हैं। ब्रह्मपुराण पाठसे मालूम पड़ता है कि वास्तवमें यहां अन्य सम्पूर्ण शक्ति-मूर्तियोंकी अपेक्षा विमला प्रधान और प्राचीन हैं। (ब्रह्मपुराण ११०।५०) आश्विन मासकी महा अष्टमीको अर्धरात्रके समय जब जगन्नाथ सो जाते हैं तब विमलादेवीको छागबलि चढ़ाते हैं। सिवा इसके क्षेत्रमें दूसरी जगह बकरा कट नहीं सकता। बलरामके उत्कृष्ट भोगान्नसे इनका भोग हुआ करता है। विमलाके उत्तर और दक्षिणभागमें राधाकृष्णकी मूर्ति है। पश्चिमद्वारकी दाहनी ओर भाण्डगणेश विराजमान हैं। इसी द्वारके उत्तरमें गोपीनाथमूर्ति है। उसके उत्तर माखनचोरकी मूर्ति और इसके उत्तर सरस्वती तथा नीलमाधव मूर्ति पड़ती है।

नीलमाधवके उत्तर लक्ष्मीका मन्दिर है। इसकी बनावट बहुत अच्छी है। जगन्नाथकी भांति यह मन्दिर भी भोगमण्डप, नाटमंदिर, मोहन और मूलमंदिर इन चार अंशोंमें बंटा हुआ है। इसका मूलमंदिर दर्शन करनेसे अति प्राचीन जैसा समझ पड़ता है। नरसिंहदेवके ताम्रशासनमें इस बातका आभास मिलता है कि महाराज चोडगङ्गने लक्ष्मीदेवीको प्रतिष्ठित किया था। गाङ्गेयवंश देखो। मालूम होता है कि उन्होंने जगन्नाथके मन्दिरकी तरह इसकी भी निर्माण करा कर लक्ष्मीदेवीको बैठा दिया। इनकी स्वतन्त्र पाकशाला है। उसमें साधारण विग्रहोंका भोगान्न प्रस्तुत होता है।

लक्ष्मीमन्दिरके पश्चिम एक छोटेसे मन्दिरमें सर्वमङ्गला नामसे कालीमूर्ति विद्यमान है। लक्ष्मीके नाटमंदिरसे उत्तर राधाकृष्णके दो मंदिर और ईशानकोणमें सूर्यनारा-

* उत्कलखण्डमें इन आठ शक्तियोंका नाम इस प्रकार कहा है—वटमूलमें मङ्गला पश्चिममें विमला, शंखके पृष्ठभागमें सर्वमङ्गला, उत्तरदिक्‌पर अर्धाशनी एवं लम्बा, दक्षिण और कालरात्रि, कालरात्रिके पीछे चण्डरूपा और पूर्वदिक्‌में मरीचिका है। यह अष्टशक्तियां क्षेत्र रक्षा किया करती हैं।

यण हैं। उसके पूर्व सूर्यमंदिर खड़ा है। इस मंदिरकी भी कारीगरी निहायत उम्दा है। कोई कोई कहता है कि नरसिंहदेवके समय वह मंदिर बना होगा। इसके पूर्व जगन्नाथ, उससे पूर्व पातालेश्वर और पातालेश्वरके पास ही उत्तरद्वार है। इसके पूर्व कृष्ण और उसके निकट वाहनोंका मंदिर है। उससे पूर्वकी ओर महामंदिरके ईशानकोणमें राधाश्याम और उसके दक्षिणमें भोगमण्डपके ईशानकोणमें गौराङ्गदेवकी मूर्ति है। राधाश्याम और गौराङ्गके बीच एक दरवाजा है। इसी द्वारसे स्नानवेदीको जाना पड़ता है। वहीं जन्मोत्सव वा स्नानयात्रा हुआ करता है। स्नानमण्डपके अग्निकोणमें चाहनिमंडप है। वहां लक्ष्मी जा कर देवका स्नानोत्सव देखती हैं।

सिंहद्वारके दक्षिणभागमें भेटमण्डप है। जगन्नाथ जब गुण्डिचा मंदिरमें जाते हैं, तब लक्ष्मीदेवी यहां आ कर उनकी प्रतीक्षा करती हैं। बाईस सिढ़ियोंके ऊपर पंडागृहमें महाप्रसाद बिकता है।

हस्तिद्वारके निकट प्रदक्षिणाके बीच वैकुण्ठ नामका एक द्वितल घर है। यहां कितनी ही नीमकी लकड़ी पड़ी है। गत बार जो नवकलेवर हुआ, यह उसीका अवशिष्टांश है। प्रतिवर्ष स्नानयात्राके बाद वहां देवका कलेवर चित्रित होता है। वैकुण्ठसे पश्चिम एक पक्का चत्वर है। वहां कलेवर बना करता है। इस चत्वरमें दो वेदी हैं उनमें एक पर पुरानी मूर्ति रखते और दूसरे पर नयी मूर्ति गढ़ते हैं।

श्रीमूर्ति और महावेदी—रघुनंदनके पुरुषोत्तमतत्त्वधृत ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है-मंदिरमें प्रवेश कर पहले कल्पवट और गरुड़को नमस्कार कर फिर सुभद्रा, बलराम और जगन्नाथदेवका दर्शन करना चाहिये। इससे परमगति मिलती है।

मंदिरके अभ्यन्तरमें पहुंच कर पहले रत्नवेदीको तीन बार प्रदक्षिण करना पड़ता है। अनन्तर प्रथम बलराम, उसके पीछे द्वादशाक्षर मन्त्रसे श्रीजगन्नाथदेव और आखीर को मूलमन्त्रसे सुभद्रादेवीकी पूजा करना चाहिये।

(पुरुषोत्तमतत्त्व)

साधारणतः यात्री सिंहद्वारसे मंदिरमें जा कर अपरापर देवताओंका दर्शन करते हैं। फिर नाटमंदिरके उत्तर द्वारसे उसमें घुसते हैं। फिर जगमोहनमें जा कर गरुड़मूर्तिको प्रदक्षिणा देते और नमस्कार किया करते हैं। जगमोहनके बीच एक बाड़ा है। इस बाड़के बाहर खड़े हो कर ही श्रीमूर्ति संदर्शन किया करते हैं।

श्रीमंदिरके भीतर अन्धकार है। वहां केवल दो ही दीप जलते हैं। सुतरां यात्री लोग उजालेसे जा कर वहां पहले मूर्ति देख नहीं सकते। बहुत देरके बाद अस्पष्ट मूर्तिका उन्हें दर्शन मिलता है। जिनकी दर्शनशक्ति क्षीण हो गयी है, शायद कुछ भी देख नहीं पाते। उसीसे लोगोंको विश्वास है कि सबको जगन्नाथका दर्शन नहीं मिलता। वहां देवदर्शनके उपलक्षमें जो चढ़ाते हैं उसे पण्डा खा जाते हैं। ज्यादा खर्च करनेवाले ही दक्षिण द्वारसे मूलमन्दिरमें पहुंच सकते हैं। यहां जो दक्षिणा दी जाती है, वह मन्दिरके हिसाब खाते आती है। रत्नवेदी वा महावेदीके सामने खड़े हो दर्शक कर्पूरालोकमें देवदर्शन और पूजादि करते हैं।

रत्नवेदी प्रस्तरसे निर्मित हुई है। यह १६ फुट लम्बी और ४ फुट ऊंची है। प्रवाद इस प्रकार है कि उसमें लक्ष शालग्रामशिला प्रतिष्ठित है। इसीसे दारुब्रह्मकी अपेक्षा उसका माहात्म्य अधिक और वह महावेदी वा सिद्धपीठ जैसी गण्य है।

इसी रत्नवेदी पर पहले दक्षिण पार्श्वमें बलराम, इनके बाद सुभद्रा, फिर जगन्नाथ और अन्तमें सुदर्शन मूर्ति अधिष्ठित है।

इन्हींके सम्मुख स्वर्णनिर्मित लक्ष्मीमूर्ति, रजतकी विश्वधात्रीमूर्ति और पित्तलकी माधवमूर्ति है।

प्रधान चतुर्मूर्ति केवल स्नानयात्रा और रथोत्सव उपलक्षमें बाहर निकलती है। भिन्न भिन्न समयमें दारुमूर्तिका नानाप्रकार शृङ्गार होता है। प्रथम प्रातःकालमें मङ्गल आरति शृङ्गार और उसके बाद अवकाश शृङ्गार है। द्विप्रहरके समय प्रहर शृंगार और सन्ध्यासे पहले चन्दनशृङ्गार करते हैं। सन्ध्याके बाद बहुत बड़ा शृङ्गार किया जाता है। कभी कभी दामोदर, वामन प्रभृति वेश भी बनाते हैं।

देवके प्रात्यहिक विधि—देवके प्रात्यहिक विधिमें पहले

जागरण है। इस समय दुन्दुभिध्वनि और मङ्गल आरति होती है। फिर यथाक्रम दन्तकाष्ठ (दंतवन) प्रदान, वस्त्रपरिधान, बालभोग और प्रातः भोगकी बारी आती है। बालभोग लाई, मेनूं, दही और नारियलका लगता है। प्रात: भोगमें खेचरान्न और पिष्टकादि रखते हैं। इसके बाद अन्नव्यञ्जनादिका द्विप्रहर भोग लगा कर दरवाजा बन्द किया जाता है। ४ बजे शामको निद्राभङ्ग होता और जलेबीका भोग लगता है। फिर नानाप्रकार मिष्टान्नयुक्त सन्ध्याभोग लगाते हैं। बड़े शृङ्गारका भोग सबसे पीछे होता है। उसी समय राजप्रासादसे 'गोपाल-वल्लभ' नामकी मिठाई आती है, और देवको चढ़ायी जाती है। सब भोगोंसे पहले पूजा और पीछे आरती होती है।

महाप्रसाद—जगन्नाथके उद्देशसे जो भोग चढ़ता, महा-प्रसाद ठहरता है। इस महाप्रसादके लिये जगन्नाथ लोगोंमें आजकल उतने विख्यात हो गये हैं।

इस अपूर्व महाप्रसादके माहात्म्यसे ही आचण्डाल लोग जगन्नाथको महापुण्यस्थान जैसा समझते हैं। जिस भारतीय समाजमें परस्पर आहारादि पर विशेष लक्ष्य कर जातिभेदकी प्रथा रखी जाती, उसी हिन्दू समाजमें महाप्रसादका इतना आदर होना बड़े आश्चर्यकी बात है।

सब पुराविदोंने एक वाक्यसे कहा है—यह चाल बौद्धोंसे ही गृहीत हुई है कि जातिभेद छोड़ कर हिन्दू लोग महाप्रसाद लिया करते हैं। किन्तु यह बात ठीक नहीं। क्योंकि बोधगया प्रभृति स्थानोंमें, जहां बौद्धधर्म बहुत प्रबल था और जहां आज भी हिन्दू बुद्धदेवको पूजते हैं, वहां यह प्रथा प्रचलित नहीं है। यही हाल नेपाल प्रभृति स्थानोंका भी है। वहां आज भी बुद्धदेव हिन्दुओं कर्टक पूजित होते हैं, किन्तु सब लोग एकसाथ बैठ कर उनका प्रसाद खा नहीं सकते। यदि वह प्रथा बौद्धोंसे ली गयी होती, तो बौद्ध स्थानोंमें क्यों न चलती। कोई भी इस चालको बौद्धमूलक नहीं ठहरा सकता।' सम्भवतः जब जगन्नाथक्षेत्र शबर राजाओंके अधिकारमें था, वह सामान्य भावसे प्रकाशित हुई और चैतन्यदेवके समय सब लोगोंमें चल पड़ी।

आजकल कोई भी उच्च भारतीय शबरोंका छुआ अन्न नहीं खाता। परन्तु जब समस्त कलिङ्ग राज्यमें उनका आधिपत्य था, जब सोमवंशीय राजा ययाति उनके अधीन उत्कल शासन करते थे, जब वह जगन्नाथकी पूजा करते तथा भोग बनाते थे और जब सैकड़ों ब्राह्मण उनके आश्रित हुए एवं जगन्नाथका प्रसाद भक्षण कर अपने आपको कृतार्थ समझते थे, उसी समय ९० ९वीं वा १०वीं शताब्दीमें महाप्रसादके आदरका सूत्रपात हुआ। नीचजाति जब किसी सभ्यजाति पर आधिपत्य पाती, उसको अपने समाजमें मिला कर स्वयं बड़े होनेकी चेष्टा करने लग जाती हैं। उसीसे सुचतुर शबरराज अपने अधीनस्थ सोमवंशीय नृपतियोंको आयत्त कर इसको तरह अपने आपको भी चन्द्रवंशीय जैसा बतला-नेमें कुण्ठित न हुए। शबरराज शिवगुप्त और भवगुप्तके समय उत्कीर्ण शासनपत्र पढ़नेसे यह बात खूब समझ पड़ेगी।

इसी प्रकार शबरोंने हिन्दुओंके साथ मिल कर इनके आराध्य देव जगन्नाथके निकट अपने आत्मीयोंको सेवक जैसा रखा था। मित्रता एवं अधीनता पाशमें बंधे हुए राजा ययाति और इनके अनुगत ब्राह्मण प्रबल पराक्रान्त शबरराजके विरुद्ध कोई बात कह न सके और इस प्रकार अभिप्राय प्रकाश करते रहे—दारुरूपी परमब्रह्मके निकट जातिभेद नहीं चल सकता; छोटे बड़े सब उनकी सेवा-के समान अधिकारी हैं, ऊंच नीच सभी लोग देवका प्रसाद एकत्र ग्रहण कर सकते हैं, पुण्यस्थान पर उसमें कोई दोष नहीं। तत्परवर्ती उत्कलखण्ड, कपिलसंहिता आदि ग्रन्थोंमें इसीसे महाप्रसादका माहात्म्य वर्णित हुआ है। उत्कलखंडमें लिखा है—भगवान्‌की देहार्धधारिणी अमूला वैष्णवी शक्ति (लक्ष्मीदेवी) स्वयं अमृत सदृश अन्न पाक करती हैं। नारायण अपने आप उसका भोग लगाते हैं। उनका भोगावशिष्ट उच्छिष्ट अन्न पवित्र और समस्त पाप विनाश करनेवाला है। ऐसी पवित्र वस्तु जगत्‌में और दूसरी नहीं है। त्रैवर्णिक हो या शूद्र, कोई भी पाक क्यों न करे—समझना चाहिये कि लक्ष्मीने अपने आप ही रसोई बनायी है। सुतरां अपरा-पर लोगोंके सम्पर्कसे भी कोई दोष नहीं लगता। सकल

जाति—दीक्षित, अग्निहोत्री प्रभृति महाप्रसादके भोजनसे पवित्र होते हैं। जैसे गङ्गाजल चण्डालके छूनेसे नहीं बिगड़ता, महाप्रसाद भी सर्वप्रकार पवित्र बना रहता है। इसके क्रय विक्रयमें कोई दोष नहीं। वह शुष्क होने और दूरसे लाया जाने पर भी शुद्ध है। जब जिस अवस्था में मिले, उसको खा लेना चाहिये। इससे सब पाप दूर होते हैं। (उत्कलखण्ड १८ अ०)

मालूम होता है कि उस समय किसी किसी ब्राह्मण पण्डितने महाप्रसाद-भक्षणको अशास्त्रीय प्रमाणित करनेकी चेष्टा चलायी थी। किन्तु जगन्नाथके सेवकोंने बतला दिया—

"साधारणं धर्मशास्त्रं चेन्नेऽस्मिन् विचार्यते।
अयन्तु परमो धर्मो यो देवेन प्रवर्तितः॥
आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः।" (उत्कलखण्ड० १८ अ०)

साधारण धर्मशास्त्र यहां चल नहीं सकता। यह धर्म (महाप्रसाद-भक्षण) स्वयं भगवान्ने प्रचार किया था। आचारसे ही धर्मको उत्पत्ति है। एवं स्वयं जगन्नाथ धर्मके कर्ता हैं।

वास्तवमें जब जगन्नाथ शबरराजकी पूजा पाते तब नीच शबर जाति इनका भोग बनाते थे। यद्यपि २य इन्द्रद्युम्न उपाधिधारी ययातिने ब्राह्मण द्वारा देवकी पुनः प्रतिष्ठा की थी, तथापि शबरराजके अधीन जैसे रहने पर पूर्वापर पद्धति वह एक बारगी बदल न सके। ब्राह्मण पूजक तो हो गये, परन्तु उस समय भी शबर भोग प्रस्तुत करते रहे। उनको हटानेका कोई दांव न था। जब जगन्नाथ-सेवक ब्राह्मणोंने देखा कि सब तीर्थयात्री आ कर परम आनन्दसे महाप्रसाद खाते हैं और लोग कोई बड़ी अड़चन नहीं लगाते, तो उन्होंने शबरोंको यज्ञोपवीत दे कर एक प्रकार स्वतन्त्र ब्राह्मण बना दिया। आज भी जगन्नाथके सूपकार बलभद्रगोत्रीय शबर जैसे परिचित हैं।

जहां तक मालूम हुआ है, कि ययातिसे पहले महाप्रसाद खानेकी चाल न थी। उन्हीं ययातिके समय जब शबरराजका आधिपत्य था, सम्भवतः भुवनेश्वरमें महाप्रसाद-भोजन-प्रथा चली होगी। (कपिलसं० ११ अ०) नारद, ब्रह्म आदि पुराणोंमें विस्तृत भावसे जगन्नाथका माहात्म्य वर्णित होने पर भी महाप्रसादका नामोल्लेख पर्यन्त नहीं मिलता। इसको आधुनिक प्रथा जैसा समझ कर ही रघुनन्दन प्रभृति स्मार्तोंने लिखना छोड़ दिया है। हिन्दुस्थानके बड़े बड़े आर्त पण्डित जगन्नाथके दर्शनको तो जाते, परन्तु महाप्रसाद कम खाते हैं। कहा जाता है कि पहले पुरुषोत्तममें भी कोई कोई प्रधान पण्डित महाप्रसाद खाता न था। चैतन्यदेव जब पुरुषोत्तम पहुंचे, तो राजा प्रतापरुद्रके बड़े पण्डित प्रसिद्ध नैयायिक सार्वभौम भट्टाचार्य महाप्रसाद आहार करनेसे विरत रहते थे। चैतन्यचरितामृतमें बतलाया है—सार्वभौम भट्टाचार्य चैतन्यके भक्त बन गये। एकदिन उनकी परीक्षा लेनेके लिये महाप्रभुने अरुणोदयकालमें महाप्रसाद ले जा कर दिया। भट्टाचार्यका स्नानाह्निक कुछ भी हुआ न था। परन्तु उन्होंने चैतन्यके हाथसे महाप्रसाद ले कर मजेमें खा डाला। चैतन्यदेव चिरभक्तिविद्वेषी सार्वभौमका व्यवहार देख कर प्रेमाविष्ट हुए और कहने लगे—"आज मेरी सब इच्छा पूरी हो गयी। आज मैंने त्रिभुवन जीत लिया। आज मुझे वैकुण्ठ मिला। सार्वभौमको महाप्रसाद पर विश्वास हुआ।" चैतन्यदेव देखो।

चैतन्यदेवकी कथाके भावसे भी समझ पड़ता है कि बहुतोंको महाप्रसाद पर विश्वास न था। इन्हींके गुणसे महापण्डित सार्वभौमको महाप्रसादमें विश्वास हुआ था। प्रेमके अवतार चैतन्यदेव जगन्नाथ पहुंचते ही जगद्बन्धुके प्रेममें अपने आपको भूल बैठे। उनके लिये जगन्नाथदेवका जो कुछ रहा, सब अपार्थिव और अलौकिक था। सुतरां कौन विश्वास नहीं करेगा—जिन महाप्रभुने हिन्दू और मुसलमानोंको समभावसे गले लगाया, शबरपक्व महाप्रसाद ग्रहण न करेंगे। उनकी देखादेखी सैकड़ों भक्तोंने महाप्रसाद अमृत समझ कर खाया था। उसी समयसे इसका प्राधान्य स्थापित हुआ है। इसमें कोई संशय नहीं—जिन चैतन्यदेवको सब उड़ियोंने भगवान्‌का अवतार जैसा माना और जिन गौराङ्गको मूर्ति उड़ीसेके आठ शताधिक मन्दिरोंमें आज भी पूजित होती है, उन्हींका प्रसादित महाप्रसाद उत्कलदेशीय आबालवृद्धवनिता सभी ग्रहण करेंगे।

शास्त्रोंकी अपेक्षा वैष्णव लोग ही महाप्रसादका अधिक आदर करते और देश देशान्तरको ले जा कर अति भक्तिभावसे बांटते हैं। आज भी बहुतसे शाक्त जगन्नाथका अन्नप्रसाद नहीं लेते किन्तु महाप्रसादका माहात्म्य सुन कर अपरापर प्रसाद ग्रहण किया करते हैं।

पुरुषोत्तमक्षेत्रमें प्रत्यह हजारों रुपयेका महाप्रसाद बिकता है। विशेषतः किसी किसी रथयात्राके समय एकदिनमें लाख रुपयेका महाप्रसाद बिकनेको भी बात सुनते हैं। महाप्रसादविक्रयसे पुरीके ठाकुर राजा और पण्डाओंको यथेष्ट लाभ होता है।

महोत्सव—प्रात्यहिक नित्य नैमित्तिक कार्य व्यतीत जगन्नाथकी अनेक यात्राएं वा उत्सव हुआ करते हैं—

१ वैशाख मासमें अक्षयतृतीयासे २२ दिन तक गन्ध लेपन वा चन्दनयात्रा होती है। उस समय जगन्नाथकी भोगमूर्ति मदनमोहनको प्रतिदिन निकटवर्ती नरेन्द्र-सरोवरमें ले जा कर नाव पर घुमाते हैं।

२ वैशाख शुक्ला अष्टमीको प्रतिष्ठोत्सव होता है। क्योंकि उस दिन इन्द्रद्युम्नने देवकी प्रतिष्ठा की थी।

३ ज्यैष्ठमासमें शुक्ल एकादशीको रुक्मिणीहरण। इस दिन मदनमोहन गुण्डिचा जा रुक्मिणीहरण करते हैं। रातको वटमूल पर दोनोंका विवाह होता है।

४ ज्येष्ठ मासकी पूर्णिमाके दिन स्नानयात्रा वा जन्मयात्रा होती है। उस दिन दारुमूर्तियोंको स्नान-वेदी पर रखते हैं और अक्षयवटमूलस्थ रोहिणीकुण्ड-के जलसे देवका स्नानकार्य सम्पन्न करते हैं। इस समय लक्ष्मीदेवी चाहनिमण्डपमें बैठ कर स्नानोत्सव देखती हैं। स्नानके बाद शृङ्गारवेश होता है। इस दिन बड़ी धूम धामसे पूजा होती है। उसके बाद दारुब्रह्म जगन्मोहनके पार्श्वस्थ निरोधनगृह (सोवर)-में जा कर १५ दिन रहते हैं।

उस समय १५ दिन किवाड़ और रसोई घरको नहीं खोलते। न तो महाप्रसाद बनता और न कोई देवदर्शन कर सकता है। पण्डा बाहरी लोगोंको बतला देते—अति-रिक्त जलसेचनसे जगन्नाथ महाप्रभुको ज्वर आ गया है, उसीसे पाचन भोग देते हैं। नीलाद्रिमहोदयमें उन १५ दिनोंका कार्य आदि इस प्रकार वर्णित हुआ है—

स्नानोत्सवके पीछे १५ दिन दारुरुद्ध वंशावृत स्थानमें प्रभुको ले जा कर वंशावरणको चित्र विचित्र वस्त्र द्वारा आवृत करते और उनके निकट एक रमणीय पर्यङ्क रखते हैं। फिर सार्ध हस्तत्रय परिमित मोटे कपड़े पर कृष्ण बलराम प्रभृतिको मूर्तियाँ चित्रित करनी चाहिये। बलरामकी मूर्ति श्वेतवर्ण, चतुर्भुज, शङ्ख-चक्र-हल-मुषलधारी और नाना प्रकार अलङ्कारसे अलङ्कृत होती है। कृष्णमूर्ति मेघ जैसी नीलवर्ण और पद्मासनस्थ है। उसके चारों हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म रहता तथा वनमाला एवं कौस्तुभादि नाना आभरणोंसे संवारना पड़ता है। सुभद्राको मूर्ति पीतवर्ण, पद्मासनस्थ, चतुर्भुज, दो हाथोंमें दो कमल और दोमें वर तथा अभय धारण किये हुए हैं। ऐसी ही पट पर तीन मूर्तियां बना कर पूर्वद्वारसे मन्दिर प्रदक्षिण करना चाहिये। प्रदक्षिणान्तको पूर्वोक्त वंशावृत स्थानमें यह तीनों मूर्तियाँ ले जा कर रखते हैं। अनन्तर पूर्वस्थापित पलंग पर बलदेव-के सामने राम, नृसिंह एवं कृष्ण, सुभद्राके सम्मुख भागमें विश्वधात्री तथा लक्ष्मी और जगन्नाथके सामने श्रीकृष्णको मूर्ति स्थापित की जाती है। उक्त कृष्णकी (जगन्नाथ) मूर्तिके पास सुदर्शनचक्र जैसा नारायण-चक्र भी रहता है। इसी प्रकार सब मूर्तियां स्थापित हो जाने पर दर्प-णादिके प्रतिबिम्बमें पञ्चामृत प्रभृति द्वारा महास्नान समापन कर मध्याह्नविहित पूजा करना चाहिये। उस दिनसे बराबर १५ दिन तक स्नान और पूजा यथासमय करना पड़ता है। दारुब्रह्म मूर्तिका शरीर महास्नानसे अलस हो जाता है। उसीसे प्रधान मन्दिरमें पूजा प्रभृति यावदीय उत्सव निषिद्ध हैं। इन पन्द्रह दिनोंका निर्माल्य आदि भी उसी वंशावरणमें रख देना चाहिये। उस समय मिसरी और शक्करका शर्बत प्रशस्त पूजोपकरण होता है। विद्यापति और विश्वावसुवंशीय व्यक्तियोंको ही समस्त कार्य करनी चाहिये। क्रमसे ६ दिन तक दारु-मूर्तिका लेपन आदि कार्य होने पर सातवें दिन सुवा-सित तिलतैल लगाते हैं। ८म दिवसको रमणीय पट्ट-सूत्रसे दारुमूर्तिका सर्वाङ्ग लपेट शुष्क सर्जवृक्षका रस

चूर्ण कर सुवासित तिलतैलमें मिला सर्वाङ्गमें मर्दन किया जाता है। ८वें दिन चिक्कण आर्द्र वस्त्रसे पूर्व दत्त अनुलेपन बार बार पोंछते हैं। १०वें रोज खूब चिकने कपड़े से दारुमूर्ति आच्छादन कर रक्तचन्दन, सारचन्दन, कस्तूरिका, कुङ्कुम और कर्पूर प्रभृति सुवासित द्रव्य ले लेपन लगाया जाता है। ११श दिवसको सायंकालीन पूजाके उपरान्त नानाविध वाद्यध्वनि होने पर पुनर्वार पूर्वोक्त चन्दनादि द्रव्य द्वारा लेपन करते हैं। प्रथम वारके लेपनसे दारुमूर्तिमें रक्त और द्वितीयवारको मांस कल्पना करना चाहिये। अनन्तर १२श दिवसको पुनर्वार वस्त्राच्छादनपूर्वक पूर्वोक्त लेपन लगा कर चर्मकल्पना की जाती है। उस दिन पूजा, स्नान और लेप आदिमें १॥ प्रहर अतीत होने पर नानाविध मङ्गलवाद्य पूर्वक सुदृढ़ वस्त्र तथा पूर्वोक्त लेपन द्वारा पदद्वय निर्माण करना चाहिये। उस लेपनका शब्द श्रुतिगोचर होनेसे बधिर पड़ जाते हैं। अतएव वैसी मालिश करना चाहिये, जिसमें आवाज न आवे। रोमकल्पनार्थ कपूरका लेप चढ़ाना पड़ता है। पक्षके अन्तिम दिनको, जब नेत्र चित्रित होते हैं, नेत्रोत्सव कहते हैं।

(नीलाद्रिमहोदय १५ अ०)

५ आषाढ़ मासकी शुक्ल द्वितीयाको रथयात्रा होती है। उस दिन जगन्नाथका प्रधान उत्सव होता है। उत्कलखण्ड, कपिलसंहिता, नीलाद्रिमहोदय प्रभृति ग्रन्थों में रथयात्रादर्शन-माहात्म्य विस्तृत भावसे कहा है। उनके मतानुसार रथयात्रा दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता। इसीसे रथयात्रा देखनेके लिए लक्षाधिक तीर्थयात्री आया करते हैं।

प्रतिवर्ष तीन नूतन रथ बनते हैं। जगन्नाथका रथ ४८ फुट ऊंचा ३५ फुट लम्बा चौड़ा रहता है। उसमें ७ फुट व्यासके १६ लौहचक्र लगाते हैं। चूड़ा पर चक्र वा गरुड़ पक्षीकी मूर्ति होती है। उसीसे इस रथको चक्रध्वज वा गरुड़ध्वज कहते हैं। बलरामका रथ ४४ फुट ऊंचा और ३४ फुट लम्बा चौड़ा होता है। उसमें ६ फुट व्यासके १४ चक्र लगाते हैं। चोटी पर तालचिह्न रहनेसे ही उसका नाम तालध्वज है। सुभद्राका रथ ४३ फुट ऊंचा और ३२ फुट लम्बा चौड़ा है। उसमें ६ फुट व्यासके १२ चक्र लगाते हैं। मस्तक पर पद्मचिह्न रहनेसे हो उसको पद्मध्वज कहा जाता है।

(पुरुषोत्तममाहात्म्य)

दैतापति मूर्तिको उठा कर रथ पर रखते हैं। जगन्नाथ और बलरामके कटिदेशमें रेशमी डोरा बांध कर लटका दिया जाता है। उस समय पण्डा भी हाथ लगाते हैं। सुभद्रा और सुदर्शनको शिर पर रख कर लाते हैं। जगन्नाथके ही रथ पर सुदर्शन स्थापित होते हैं। श्रीमूर्तिका राजशृङ्गार बहुत अच्छा करते और सोनेके हाथ-पाव रखते हैं।

प्रथानुसार पुरीके राजा राजवेशमें जा कर मुक्ताखचित सम्मार्जनी द्वारा रथके सामने प्रथम परिष्कार कर देते, फिर मूर्तिकी पूजा कर रथका रस्सा पकड़ कर खेंचते हैं। उस समय ४२०० कालबेड़िया मजदूर रथकी रज्जू ले राजाकी साहाय्य करते हैं। फिर साधारण यात्री रथ खेंचने लगते हैं। उसी दिन गुण्डिचा जानेकी बात है। परन्तु वहां पहुंचनेमें कोई ४ दिन लगते हैं। अवशिष्ट कई दिनों श्रीमूर्तियां गुण्डिचा मंदिरमें अवस्थान करती हैं। दशमीको पूनर्यात्रा होती है, उस समय भी महामंदिर पहुंचनेमें चार दिन लग जाते हैं।

पहले बहुत भीड़ होनेसे रथचक्रके नीचे दब कर किसी किसीको मरना पड़ता और कोई दुःसाध्य व्याधिसे मुक्त होनेके लिए उसके नीचे जा कर दब मरता था। आजकल भी यद्यपि पुलिसका विशेष लक्ष्य रहता, किसी किसी वर्ष वैसी दुर्घटना हो जाती है।

६ आषाढ़ मासकी शुक्ल एकादशीको शयन-एकादशी कहते हैं। उस दिन मंदिरके मध्य एक कोणमें पलंग पर बलराम, सुभद्रा और जगन्नाथ मूर्तिको लिटा देते हैं।

७ श्रावण मासमें शुक्ल एकादशीसे पूर्णिमा पर्यन्त झूलनयात्रा होती है। उस समय रातको सुसज्जित मुक्तिमण्डपके दोलमञ्च पर मदनमोहन आ उपवेशन करते हैं। उनको रिझानेके लिये विविध नृत्यगीत होता है।

८ भाद्र मासकी कृष्णाष्टमीके दिन किसी ब्राह्मण और देवनर्तकीको वसुदेव तथा देवकी बना कर जन्माष्टमीका अभिनय किया जाता है। उस दिन खूब धूम धामसे पूजा होती है।

९ श्रावण मासमें कृष्ण एकादशीको कालियदमन यात्रा होती है। उस दिन मदनमोहन मार्कण्डेय सरोवरमें जा कालियदमन लीला करते हैं।

१० भाद्र मासकी शुक्ल एकादशीको देवका पार्श्व-परिवर्तन होता है। उस दिन भगवान् शयनख्टमें पर्यङ्क पर लेटे हुए करवट बदला करते हैं। वहीं इनकी यथाविधि पूजा होती है। यही वामन-जन्मोत्सवका भी समय है। देवकी वामनाकृति मूर्तिको छत्र कमण्डलुके साथ शिविकामें रख घुमाते हैं।
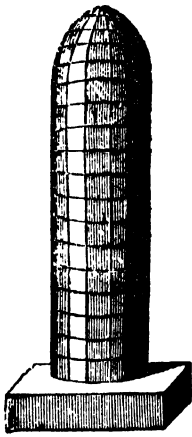
११ आश्विन मासकी कोजागर पूर्णिमाको सुदर्शनोत्सव होता है। उस दिन सुदर्शनको पालकी पर बैठाल कर नृत्यगीतादि सह नगर-परिभ्रमण कराते हैं। रातको महामंदिरमें लक्ष्मीकी पूजा होती और सब लोग जागरण करते हैं।

१२ कार्तिक मासकी शुक्ल एकादशीको उत्थान एकादशी होता है। उस दिन प्रातःकाल सङ्कल्प और अर्धरात्र पूजा कर देवको शय्यासे उठाते हैं।

१३ कार्तिक मासकी पूर्णिमाको बड़े समारोहसे रासलीला होती है।

१४ अग्रहायण मासकी शुक्ल षष्ठीको प्रावरणोत्सव होता है। उस दिन देवको शीतवस्त्र पहनाते हैं।

१५ पौष मासकी पूर्णमासीको अभिषेकोत्सव होता है। उसमें देवका सुन्दर शृङ्गारवेश बनाया जाता है।

१६ मकरसंक्रान्तिको मकरोत्सव होता है। उस समय नूतन नूतन द्रव्य द्वारा देवका भोग प्रस्तुत होता है।

१७ माघ मासकी शुक्ल पञ्चमी वा धनुमासकी शुक्लाष्टमीको गुण्डिचा उत्सव होता है। उस दिन मदनमोहन गुण्डिचा मन्दिरमें जाते हैं। उत्कलखण्डमें रथयात्राके समय जगन्नाथके गुण्डिचा-मंदिरमें जाना भी गुण्डिचोत्सव नामसे वर्णित हुआ है।

१८ माघीपूर्णिमा। उस दिन श्रीगमूर्तिको सागर सलिलमें ले जा कर नहलाते हैं। सब लोग समुद्र-जलसे तर्पण किया करते हैं। उत्कलखण्ड आदिमें लिखा है कि सागरके सलिलमें महा देव दर्शन करनेसे शतपुरुष उद्धार होता है।

१९ फाल्गुन मासकी पूर्णिमाको दोलयात्रा होती है। मंदिरके ईशान कोणमें जो आमनमञ्च है, उसी पर होली होती है। इसी समय देवके गात्र पर सब लोग फल्गु निक्षेप करते हैं। पहले वहां मूल मूर्ति ले जाते थे। परन्तु राजा गौड़ीय गोविंदके समयमें मञ्चका काष्ठ टूट जानेसे जगन्नाथदेव गिर पड़े थे, तभीसे जगन्नाथके बदले मदनमोहनका दोल होने लगा है।

२० रामनवमीको जगन्नाथ और श्रीगमूर्तिका रामवेश बना बड़ी धूमधामसे पूजा की जाती है।

२१ चैत्रशुक्ल एकादशीको दमनकभञ्जिका होती है। जगन्नाथवल्लभ नामक उद्यानमें दमनकपत्रकी माला बना कर मदनमोहनके मस्तक पर छोड़ देते और षोड़शोपचारसे पूजा करते हैं।

उत्कलखण्डादिमें लिखा है कि उपर्युक्त कोई भी उत्सव दर्शन करनेसे महापुण्य लाभ होता है।

नव कलेवर—उपर्युक्त उत्सवोंको छोड़ कर श्रीमूर्तिका जीर्ण देहपरित्याग और नूतन कलेवर स्थापन होता है। नूतन मूर्ति प्रतिष्ठाका यह उत्सव ही नव कलेवर नामसे विख्यात है। उस समय लक्ष लक्ष यात्री बहु दूर देशान्तरसे श्रीमूर्तिके दर्शनके लिए आते हैं। जगन्नाथके जितने उत्सव होते, उनमें यह कलेवर उत्सव ही सर्वप्रधान है। ऐसा समारोह कभी भी नहीं होता। लोगोंको विश्वास है कि प्रति द्वादश वत्सरान्तरमें देवका नूतन कलेवर आता है। किन्तु जगन्नाथ पूजापद्धतिमूलक ग्रन्थोंमें ऐसी कोई कथा नहीं, कि बारह वर्षके बाद कलेवर बदलना पड़ेगा। उड़िया पण्डित कहते हैं कि

जिस आषाढ़ मासमें दो पूर्णिमा और मलमास पड़ेगा, नवकलेवर होगा। ऐसे स्थल पर सातसे ३० वर्षके बीच उक्त निर्दिष्ट समयमें नवकलेवर हुआ करता है। नीलाद्रिमहोदयमें लिखा है—

"वर्षाणां शतशो वापि तदर्द्धं वा तदुपोनम।
आविर्भाव-तिरोभावौ भविष्यतो हरेः कलौ॥
वर्षं विंशतितो वापि पञ्चविंशतितश्च वा।
जीर्णतां दारुदेहानां देवानां घटना भवेत्॥"

सौ या पचास वर्षके बाद कलिकालमें हरिका आविर्भाव और तिरोभाव होगा। २० या २५ वर्षमें जीर्ण दारुमूर्तिका पुनर्निर्माण किया जाता है।

नवकलेवर होनेकी व्यवस्था रहने पर भी अनिष्टको आशङ्कासे अब केवल संस्कार होता है, कलेवर नहीं। लोग कहा करते हैं, पूर्वोक्त नवकलेवरके समयमें ही वृटिश गवर्नमेण्ट कर्तृक खुर्दाके राजा निर्वासित हुए थे। कोई पचीस वर्ष हुए, नवकलेवर करनेकी बात चली थी। उसको देखनेके लिये प्रायः दशलक्ष यात्री आये पहुंचे। परन्तु राजमाताने पुत्रके अनिष्टकी आशङ्का कर नवकलेवर नहीं होने दिया। केवल देवका पूर्ण संस्कार किया गया था। नीलाद्रिमहोदयमें देवके नवकलेवरका विधान इस प्रकार बतलाया गया है—

जिस वर्ष आषाढ़ मासमें मलमास पड़ेगा, राजाके आदेशसे उनका प्रतिनिधिस्वरूप कोई व्यक्ति वैशाख मासमें शुभदिन एवं शुभ लग्नमें विद्यापतिवंशीय तथा विश्वावसु वंशीय निष्ठापर व्यक्ति, राजपुरोहित, चतुर्वेदज्ञ ब्राह्मण और शिल्पनिपुण वर्द्धकियोंके साथ नानाविध पूजोपकरण ले पवित्र अरण्यमें प्रवेश कर चतुःशाखायुक्त, सरल, कीटपतङ्गादिके दंशनसे वर्जित, आयत निम्ब वृक्ष संग्रह करेगा। इसका मूलदेश गोमय-जलसे पवित्र कर पेड़की जड़में चंदनादि अनुलेपन लगाया जाता है। गरुड़ारूढ़ भगवान्‌का ध्यान, नानाविध उपचारसे अर्चना, वेदपाठ, मन्त्रराज जप और प्रभुका नामकीर्तन कर उपवासी रहते तीन या एक दिन अतिवाहित करना चाहिये। दूसरे दिन प्रातःकालके समय प्रातःकृत्य, सन्ध्या वन्दनादि नित्यकर्म समापनपूर्वक पहले गणेश, दुर्गा, शङ्कर, रवि, विष्णु तथा वरुणकी पूजा कर स्वस्तिवाचन पूर्वक सङ्कल्प किया जाता है। फिर आचार्य एवं ब्रह्म वरण कर मन्त्रराज द्वारा होम करनेका विधान है। उस होमके बाद 'पातालनरसिंहेन' इत्यादि मन्त्रसे दो सहस्र बार आहुति प्रदान और अयुत वा नियुत संख्यक समिध् होम करते हैं। तत्पश्चात् भक्तिपूर्वक पूर्णाहुति दे कर आचार्यको दक्षिणा दी जाती है। आचार्य उसी वृक्षके मूलदेशमें प्रभुका मन्त्रराज जप कर गन्ध-पुष्प आदिसे कुठारकी अर्चना करते हैं। वेदपाठक ब्राह्मण वृक्षके चतुष्पार्श्वमें वेदध्वनि करते रहते हैं। आचार्य जब स्वयं उस वृक्षको छेदन करते हैं, तब वर्धकी खण्ड खण्ड उतार लेते हैं। पहले दो टुकड़े कर एक खण्ड जगन्नाथ और दो खण्ड बलभद्र तथा सुभद्राकी मूर्तिके लिये रखे जाते हैं। फिर एक दूसरे खण्डसे एक टुकड़ा माधवमूर्ति, एक टुकड़ा सुदर्शनचक्र और दो टुकड़े सबके लिये रखते हैं। सब मिला कर बारह टुकड़े होते हैं। पहले यह खण्ड चतुरस्र बना लेना चाहिये। उस वृक्षकी शाखा, पत्र तथा वल्कलादि सब किसी गड्ढेमें गाड़ दिया जाता है। फिर रमणीय वस्त्र और पट्टसूत्रादि द्वारा इन खण्डोंको ढांप और बांध कर चार नौकर गाड़ी पर उठा कर रखते और छत्र धारणपूर्वक चमरादि व्यजन करते करते ले चलते हैं। उसके बाद प्रतिदिन नानाविध भोगादि उपचारसे त्रैकालिक अर्चनादि करना चाहिये। मन्दिरके उत्तरांश पर रमणीय गृहमें इन सब टुकड़ोंको रख कर शुभ दिनके प्रशस्त लग्नमें मूर्ति-निर्माण आरम्भ कराना चाहिये। आरम्भके समय वरुणकी पूजा और विश्वावसुवंशीय द्विजाति तथा विद्यापति वंशीयको माला, चन्दन, वस्त्र एवं अलङ्कारसे सन्तुष्ट करते हैं। उस समय शिल्पियोंको भी माला, चन्दन आदिसे खुश करना पड़ता है।........

६ तिल आगे पीछे मिला कर रखनेसे जितना टैढ़ आता, एक यव परिमाण कहलाता है। ऐसे ही ४ यवोंका एक मुष्टि होता है। ६ मुष्टिका एक हाथ और चार हाथका एक धनुः कहा है। उसके १६ भागोंमें २ भाग छोड़ कर १४ भागोंका जो परिमाण ठहरता, इसीमें जगन्नाथ देवका कलेवर पादपीठसे शिखा पर्यन्त बनाना पड़ता है। भुजद्वय

भी उसी परिमाणमें आयत है। इस नापकी मूर्तिके ३२ अंशोंमें एक अंशका चक्राकार कपालदेश निर्माण करते हैं। मस्तकसे मुख पर्यन्त १४ अंशमें विभक्त है। फिर १२ यवमें चतुर्वन्ध, ६ अष्टमांशमें ६ यव परिमित हृदयस्थान, सार्धदश यवमें मध्यस्थान और ६ भागमें पादद्वय तथा १०॥ यवमें परिधानक निर्मित होता है। उसके बाद ५६ यवका भुजद्वय एवं करपार्श्व तथा भुज-चतुर्वन्ध प्रमाणानुसार रखते हैं। दोनों हाथोंमें चार यवके दो शूल चिह्न बनेंगे। पार्श्व तथा भुजका आयत ४ यव, नासिकाका अधोभाग १२ यव और श्रीमुखका आयतन ३० यव है। ब्रह्मके स्थापनार्थ १४ यव परिमित हृदयस्थान रखना चाहिये। इसी प्रकार जगन्नाथदेवकी मूर्ति बनानी पड़ती है। बलदेवकी मूर्ति सर्पाकृति है। यह ८५ यवमें परिपूर्ण होती है। उसमें ६१ यवका श्री-मुख रहेगा। मुखके ऊपर ५ यवकी फणा लगती है। ११ यवमें चतुर्वन्ध, ६ यवमें हृदयस्थान, १०॥ यवमें परि-धापन और १८॥ यवमें दोनों पांव निर्मित होते हैं। २४ यवका भुजद्वय विभाग और चतुर्वन्ध विभाग रखना पड़ेगा। स्कन्धके उपरिभागमें आध आध यवकी दो दो फणाएं प्रस्तुत करनी चाहिये। पार्श्व तथा भुज मुखका आयाम २१ यव, नासिकाका अधोदेश ८ यव और ललाट १८॥ यव परिमित होगा। इसी प्रकार बलदेवकी मूर्ति बनायी जाती है। सुभद्राकी मूर्तिका परिमाण ५२॥ यव है। आकृति पद्मतुल्य रहती है। सुभद्राका मुख १७ यव आयत और १५ यव विस्तृत है। केशकलाप ३॥ यव बैठता है। हृदयस्थान ३ यव, मध्यस्थान १२ यव, पदद्वय १७ यव और पार्श्व तथा भुज १७॥ यवका बनेगा। उसी प्रकार सुभद्राकी मूर्ति रचना-के बाद सुदर्शन और गदाकी एकविंशति यव परिमित बनाना पड़ता है। (नीलाद्रिमहोदय १८ अ०)

लोग कहते हैं, कि नवकलेवर निर्मित होने पर प्रधान पण्डा जगन्नाथका पूर्वदेहस्थ विष्णुपञ्जर निकाल कर नयी मूर्तिके हृदयमें स्थापन करते हैं। परन्तु किसी प्राचीन ग्रन्थमें उक्त विष्णुपञ्जरका उल्लेख नहीं है।

आजकल जैसा नवकलेवर हुआ करता, नीलाद्रि-महोदयमें वर्णित है। नारद, ब्रह्मपुराण, उत्कलखण्ड तथा कपिलसंहितामें जगन्नाथ एवं बलरामकी चतुर्भुज और सुभद्राकी द्विभुज मूर्ति बतलायी है। उन ग्रन्थोंका विवरण पढ़नेसे समझ पड़ता है कि भुवनेश्वरस्थ अनन्त-वासुदेवके मन्दिरमें जगन्नाथ, बलराम तथा सुभद्राकी जैसी प्रस्तरमयी मूर्ति है, श्रीक्षेत्रमें भी पहले दारुमयी श्रीमूर्तियां वैसी ही बनती थीं। नीलाद्रिमहोदयमें चारकी जगह सात मूर्तियोंका उल्लेख है। किन्तु चैतन्य-देव जब जगन्नाथ-दर्शनके लिए गये, तो उन्होंने सात नहीं चार ही मूर्तियां देखीं। (चैतन्यभागवत २ अ०)

चैतन्यके जीवनचरितलेखकोंने भी कहा है कि उन्होंने जगन्नाथकी चतुर्भुज मूर्तिका ही दर्शन किया था। श्रीचैतन्यदेवने जीवनका अधिकांश समय इसी क्षेत्रधाममें बिताया था। उन्होंने श्रीक्षेत्रके सब तीर्थ, उपतीर्थ आदि देखे थे। कपिलसंहितामें अलाबुकेश्वर नामक एक लिङ्गका उल्लेख है। चैतन्यने वहां जो जो तीर्थ देखे थे, उनके पारिषदोंने लिपिबद्ध किये हैं। किन्तु उसमें अला-बुकेश्वरका नाम तक नहीं है। पुरुषोत्तममाहात्म्य, उत्कलखण्ड और पुराणसर्वस्वमें जगन्नाथके नानातीर्थ, लिङ्ग आदिका उल्लेख रहते भी अलाबुकेश्वर शब्दका अभाव है। इन कारणोंसे स्पष्ट ही बोध होता है कि १३८६ शक अथवा चैतन्यदेवके पीछे अलाबुकेश्वर लिङ्ग प्रतिष्ठित हुआ। उड़ीसाके ऐतिहासिक बतलाते हैं कि अलाबुकेश्वर-मन्दिर राजा अलाबुकेशरीके समय बना था। परन्तु किसी खोदित लिपि वा प्रामाणिक ग्रन्थमें यह नहीं लिखा है कि अलाबुकेशरी नामक कोई राजा उत्कलमें राजत्व करते थे; किन्तु कपिलसंहितामें भी देवकी चतु-र्भुज मूर्तिका स्पष्ट उल्लेख है। उसीसे आजकल भी स्नान-यात्रादिके समय जगन्नाथ और बलरामकी चतुर्भुज मूर्ति चित्रित होती है।

श्रीमंदिरसे २ मील पश्चिममें लोकनाथ नामका एक प्रसिद्ध शिवमंदिर है। नारद, ब्रह्मपुराण, उत्कलखण्ड, कपिल-संहिता और पुराणसर्वस्व अथवा चैतन्यदेवके तीर्थ भ्रमण-प्रसङ्गमें लोकनाथका उल्लेख न होते भी नीलाद्रिमहोदयमें उनका विवरण दिया हुआ है। ऐसी दशामें यही प्रतीत होता है कि लोकनाथका आविर्भाव चैतन्यदेवके आविर्भाव और कपिलसंहिताके रचे जानेके बाद हुआ था। यदि यह

ठीक है तो लोकनाथ-प्रसङ्गमूलक नीलाद्रिमहोदय भी ईसाकी १६वीं शताब्दीमें अथवा उससे कुछ समय पीछे रचा गया होगा, ऐसा प्रतीत होता है। मुसलमान ऐतिहासिकोंके मतमें १५६८ ई०को कालापहाड़ने उड़ीसा जीता था। उसीने जगन्नाथ मूर्तिको अग्निमें निक्षेप किया। मादला पञ्जीको देखते रामचन्द्रदेवके समय देवका नवकलेवर हुआ था।

सम्भव है—श्रीमूर्तियां जलनेके बाद जैसी मिली थीं, उन्हीं मूर्तियोंको आज हम देख रहे हों और उसीके आदर्श पर इनका नवकलेवर बना हो। इन्हीं अभिनव मूर्तियोंका विवरण नीलाद्रिमहोदयमें लिखा है। भारतके बहुतसे स्थानों पर म्लेच्छोंकी तोड़ी हुई सैकड़ों देवमूर्तियां देखते हैं। उनके मंदिरादिको बार बार मरम्मत होने पर भी वह जैसीकी तैसी हो पड़ी रहीं। उसी भग्नरूपमें इनकी पूजा होती है। सम्भव है, जगन्नाथकी दग्धमूर्ति भी इसी तरह पूज्य हुई हों और उस रूपके परिवर्तन करनेका किसीने साहस न किया हो।

पञ्चाल तीर्थ और उपतीर्थ—महामन्दिरसे आध मील उत्तर मार्कण्डेय ह्रद है। नारद एवं ब्रह्मपुराण और कपिलसंहिता तथा उत्कलखण्डमें इस मार्कण्डेय तलावका माहात्म्य कहा है। श्रीक्षेत्रके पञ्चतीर्थमें वह भी एक है। यहां मार्कण्डेयवट रहा। कपिलसंहिताके मतमें स्वयं श्रीकृष्णने मार्कण्डेयके मङ्गलार्थ मार्कण्डेय वट निर्माण किया था। ब्रह्मपुराणमें लिखा है-मार्कण्डेय सरोवरमें नहा मार्कण्डेयेश्वर शिव दर्शन करनेसे दश अश्वमेधका फल, सकल पापसे मुक्ति और शिवलोक लाभ होता है।

मार्कण्डेय-सरोवरके दक्षिण कूल पर मार्कण्डेयेश्वरका मन्दिर है। वह नाटमन्दिर, मोहन और मूलस्थान भेदसे तीन अंशोंमें विभक्त है। उसकी चारों ओर आद्यनाथ, हरपार्वती, कार्तिकेय, पञ्चपाण्डव लिङ्ग, षष्ठीमाता प्रभृति की मूर्तियां हैं। सरोवरके पूर्वांशके मध्यभागमें कालिय सर्पकी फणा पर वंशीधारी कृष्णमूर्ति खड़ी है। कालिय दमनोत्सवके समय मदनमोहन यहां का लीला करते हैं। उत्तर भाग पर एक मन्दिरमें चतुर्भुजा अष्टमातृका, गणेश, नवग्रह और नारदको प्रस्तरमयी मूर्ति है।

इन्द्रद्युम्नसरोवर—मन्दिरसे कोई एक कोस दूर इन्द्रद्युम्न सरोवर है। ब्रह्म तथा नारदपुराणके मतमें इन्द्रद्युम्नके यज्ञाज्यसे उस तीर्थकी उत्पत्ति हुई है। उत्कलखण्डमें लिखा है कि इन्द्रद्युम्नने यज्ञकी दक्षिणामें जिन गायोंको दान किया था, उन्हींके खुराग्रसे जो गड्ढा हुआ था, वही इन्द्रद्युम्न सरोवर है। यहां नहा देव तथा पितृ उद्देशमें तर्पण करनेसे सहस्र अश्वमेधका फल होता है। इसीसे उस तीर्थका अपर नाम अश्वमेधाङ्ग है। यह सरोवर ४८६ फुट लम्बा और ३९६ फुट चौड़ा है। चारों ओर पत्थरकी जोड़ाई है। उसमें बहुतसे बड़े बड़े कछुवे रहते हैं। कहते हैं, इन्द्रद्युम्नके यह खयाल कर कि वंश रहनेसे पीछेकी कीर्ति लुप्त हो जावेगी, जगन्नाथसे वंशनाशके लिये प्रार्थना की थी। जगन्नाथके वरसे उनके लड़के कच्छप बन गये। इसके दाहिने किनारे नृसिंह और बायें किनारे नीलकण्ठका मन्दिर है। कपिलसंहिताके मतमें इन्द्रद्युम्न सरोवरमें स्नान कर उक्त दोनों मूर्तियोंको पूजनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है। यह नीलकण्ठ क्षेत्रके अष्टलिङ्गोंमें एक है। (उत्कलखण्ड० ४ अ०) किन्तु मन्दिर बहुत पुराने नहीं।

गुण्डिचागार—श्रीमन्दिरसे २ मील दूर पड़ता है। यहां लोग बतलाते हैं कि इन्द्रद्युम्नकी गुण्डिचा पटरानी थीं उन्हींके नामानुसार इस मन्दिरकी प्रतिष्ठा हुई। परन्तु किसी प्राचीन ग्रन्थमें इन्द्रद्युम्नकी स्त्रीका नामोल्लेख न रहते भी नारद, ब्रह्म, साम्ब प्रभृति पुराणोंमें गुण्डिचागार की कथा आयी है। मन्दिर दर्शन करनेसे समधिक प्राचीन जैसा नहीं समझ पड़ता। वर्तमान मन्दिरकी चारों ओर ५ फुट चौड़ा और २० फुट ऊंचा प्राचीर खड़ा है। प्राङ्गण ४३२ फुट लम्बा और ३२१ फुट चौड़ा है। प्राचीरके पश्चिमांशमें सिंहद्वार, उत्तरांशमें विजयद्वार और मध्यस्थलमें देवागार है। यह देवागार फिर चार भागोंमें बंटा हुआ है—मूलमन्दिर जो ५५ फुट लम्बा और ४६ फुट चौड़ा है, ४८ फुट दीर्घ मोहन, ४८ फुट लम्बा तथा ४५ फुट चौड़ा नाटमन्दिर और भोगमण्डप जो दैर्घ्यमें ५८ एवं प्रस्थमें २६ फुट पड़ता है।

मूलमन्दिर वा देवालय ७५ फुट ऊंचा है। उसमें काले पत्थरकी १८ फुट दीर्घ और ३ फुट ऊंची एक रत्नवेदी है। रथयात्राके समय दारुमूर्ति जा कर उस रत्नवेदी पर सात दिन अवस्थान करती है। उसका सिंहद्वारसे प्रवेश और विजयद्वारसे बहिर्गमन होता है। प्रवाद है कि यहीं पहले विश्वकर्माने दारुब्रह्मकी ओङ्कार मूर्ति बनायी थी।

चक्रतीर्थ—बाङ्गगण्डीनालेके किनारे समुद्रतीर पर एक क्षुद्र सरोवर है। उसीको चक्रतीर्थ कहते हैं। पण्डा लोग कहते हैं कि पहले चक्रतीर्थके किनारे ही ब्रह्मदारु बहता हुआ लगा था। वहां जा कर श्राद्धादि करनेके पश्चात् लोग वालुकाका पिण्ड देते हैं। श्रीक्षेत्रमें इसी चक्रतीर्थका पानी सबसे मीठा है। उसके पास ही उत्तर भागमें चक्रनारायणकी मूर्ति और इसके ईशानकोणकी शृङ्खलबद्ध हनूमानकी मूर्ति है।

श्वेतगङ्गा—यह महामन्दिरके उत्तरभागमें अवस्थित है। ब्रह्म एवं नारदपुराण, कपिलसंहिता और उत्कल-खण्डमें उस तीर्थका माहात्म्य वर्णित है। अति पुण्य-तीर्थ समझ कर हो प्रायः सब यात्री उसको देखा करते हैं। किनारे पर श्वेतमाधव और मत्स्यमाधवकी मूर्ति है। कपिलसंहिता और उत्कलखण्डके मतानुसार श्वेतगङ्गामें नहा कर श्वेत तथा मत्स्यमाधव दर्शन करनेसे सब पाप छूटता और श्वेतद्वीप लाभ होता है।

यमेश्वर—महामन्दिरसे आध मील दूर यमेश्वर मन्दिर है। उत्कलखण्डमें लिखा है कि महादेव यहां यमका संयम नष्ट कर यमेश्वर नामसे ख्यात हुए। कपिल-संहिताके मतमें यमेश्वरको पूजा करनेसे यमदण्ड कटता और शिवत्व मिलता है।

अलाबुकेश्वर—यमेश्वरके पश्चिम अलाबुकेश्वर मन्दिर है। यह लिङ्ग देखनेमें अलाबु (कद्दू) जैसा लगता है। मालूम पड़ता है, इसीसे इसका नाम अलाबुकेश्वर रखा गया है। कपिलसंहितामें कहा है कि उस लिङ्गको दर्शन करनेसे अपुत्र पुत्रवान् और कदाकार व्यक्ति सुन्दर हो जाता है।

कपालमोचन—अलाबुकेश्वरके पास ही कपालमोचन है। काशी प्रभृति स्थानोंमें कपालमोचनका जैसा माहात्म्य वर्णित हुआ, यहां भी कहा है।

स्वर्गद्वार—महामन्दिरके नैर्ऋत कोणमें आध मील दूर समुद्र किनारे स्वर्गद्वार है। कहते हैं, ब्रह्मा इन्द्र-द्युम्नकी प्रार्थनासे पहले यहीं उतरे थे। यात्री यहीं आ समुद्रमें नहाते हैं। वहां किसी भी समय स्नान करनेसे पुण्यलाभ होता है। पुरुषोत्तममाहात्म्यके मतानु-सार सूर्यग्रहणके समय स्वर्गद्वारमें स्नान करनेसे कोटि जन्मका पाप छूटता है। उसीके पास स्वर्गद्वारसाक्षी हनूमान्‌की मूर्ति है। प्रवाद है कि सागरके तरङ्गशब्दसे भीत होने पर सुभद्राका हाथ पेटमें प्रविष्ट हुआ था। उसीसे जगन्नाथने सागरको कह दिया—"हमारे मन्दिरमें अब तुम्हारी आवाज पहुंचने न पावे।" इसी कारण भगवान्‌की आज्ञासे हनूमान् काम लगा कर सागरका शब्द सुनते और पहरा देते हैं कि लहरोंकी आवाज मन्दिरके निकट जा न सके।

लोकनाथ—श्रीक्षेत्रकी पश्चिम सीमा पर लोकनाथका मन्दिर है। लोगोंको विश्वास है कि रामचन्द्रने उस मन्दिरको प्रतिष्ठित किया था। बङ्गालमें जैसे तारकेश्वर उड़ीसामें लोकनाथ हैं। पुरीके लोग जगन्नाथको अपेक्षा उनको ज्यादा डरते हैं। यह लिङ्ग सर्वदा वेदीके मध्य एक उत्समें डूबा रहता है। किसी निकटस्थ सरोवरके साथ उस उत्सका योग रहनेसे मन्दिरमें थोड़ा जल पहुं-चता और अतिरिक्त अंश वेदी पर बहता है। केवल शिवचतुर्दशीको लोकनाथ लिङ्ग बाहर निकलता है। उस समय यहां बीस तीस हजार यात्री आते हैं। दूसरे समय भी हरपार्वतीके उद्देशसे कितने ही लोग लोक-नाथ पहुंचते हैं।

मठ—जगन्नाथक्षेत्रमें नाना सम्प्रदायियोंके जानेसे विस्तर मठ स्थापित हुए हैं। कोई कोई आजकल यहां ७५२ मठ गणना करता है। इनमें निमाई चैतन्य, विदुर-पुरी वा मूलकदास, सुदामापुरी, नानकशाही जो पाताल-गङ्गाके पास है, कबीरपन्थी (अतलस्पर्शी स्वर्गद्वार स्तम्भके निकट) और बालूशाहीका शङ्कर-मठ प्रधान है। उनमें अपने अपने सम्प्रदायके संन्यासी आश्रय और आहार पाते हैं। शङ्करमठमें बहुतसे वेदान्तिक ग्रन्थ हैं।

आठारनाला—पुरीके बड़े रास्तेसे जाने पर श्रीक्षेत्रमें

घुसते ही पहले पहल अट्ठारहनाला सामने पड़ता है। कहते हैं, राजा मत्स्यकेशरीने मुटिया नदी पार करनेकी सुविधाके लिये १८ मेहराबोंका एक पुल बंधवा दिया था। इसीसे उसका नाम अट्ठारहनाला पड़ा है। दूसरे किसी किसीका कहना है, इन्द्रद्युम्नने यात्रियोंके पारापारकी सुविधाके लिये अपने १८ लड़कोंका शिर काट कर अट्ठारहनालोंको दिया था। उसीसे १८ नाला हुए। शाय ही कोई वैष्णव बतलाते हैं कि चैतन्यदेव वहां जा कर जब नदी पार हो न सके तो, जगन्नाथदेवने उनके सुभीतेके लिए एक रातमें यह नाला तैयार कर दिया। वास्तविक आज भी यह स्थिर नहीं हुआ, कब वह अट्ठारहनाला बना था।

जगन्नाथक्षेत्रका जलवायु अच्छा नहीं। इसीसे अधिक यात्रियोंका समागम होनेसे वहां तरह तरहकी बीमारियां फूट पड़ती हैं। यहां खैराती अस्पताल है। उसमें लोगोंका मुफ्त इलाज किया जाता है।

समुद्र-किनारे अदालत वगैरह हैं। ग्रीष्मकालमें उड़ीसेके बड़े बड़े साहब वहां हवा खाने जाते थे।

जगन्नाथके श्रीमन्दिरकी प्रदक्षिणामें मुसलमानोंके सिवा शबर, चमार, डोम, चण्डाल, चिड़ीमार, जुलाहा, चौकीदार, काण्डार कसबी, सरकारी सजायाफ्ता आदमी, कुम्हार, धोबी 'बाउड़ी,' 'पान,' 'हाड़ी,' 'कावरा,' 'तीवर,' 'दुलिया,' 'पात्र,' 'जंगली,' आदि जातियोंको जानेकी मुमानियत है। सिवा इसके नीलाद्रिमहोदयमें कहा है—

सिवा उसके जो पाककर्मका अधिकारी है, ब्राह्मण, संन्यासी, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थाश्रमी और शूद्र अथवा उनके लड़के देवकी पाकशालामें न जा सकेंगे। यदि वह रसोई घरमें घुसेंगे, तो सब भोज्य भोज्य बड़े गड्ढेमें फेंक देना पड़ेगा। (नीलाद्रिमहोदय ७ अ०)

जगन्नाथमें यात्री जा कर अटका चढ़ाते हैं। इसका मूल्य कमसे कम २॥) रु० है। पण्डा ३ दिन तक अपने यजमानोंको महाप्रसाद पहुंचाया करते हैं।

जगन्नाथ (सं० पु०) जगतां नाथ, ६-तत्। १ परमेश्वर। २ विष्णु।

जगन्नाथ—१ किम्पुरीवंशके एक राजा। इन्हींके अनुग्रहसे कवि नरसिंह भट्टने अद्वैतचन्द्रिका और भेदाधिकारीटीका प्रणयन की थी। नरसिंह देखो।

२ एक काम्बोजराज। इन्हींके अनुग्रहसे सुरमिश्र कविने जगन्नाथप्रकाशकी रचना की थी।

३ निम्बादित्यके पिता। निम्बादित्य देखो।

४ अश्वभोगकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता।

५ ऋग्वेदवर्णक्रमलक्षण, ऋग्वेदसर्वानुक्रमणिका-विवरण और दीक्षादीपन नामके संस्कृत ग्रन्थोंके रचयिता।

६ पर्वसम्भव नामक संस्कृत ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता।

७ मानसिंहकीर्त्तिमुक्तावली नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ये वर्तमान शताब्दीमें विद्यमान थे।

८ वेदान्ताचार्यताराहारावली नामक संस्कृतग्रन्थके रचयिता।

९ शङ्करविलासचम्पूके कर्त्ता।

१० शरभराजविलासप्रणेता। इस ग्रन्थमें तञ्जोरके शरभोजी राजाका विवरण है।

११ सारप्रदीप नामक संस्कृत व्याकरणके रचयिता।

१२ सिद्धान्ततत्त्व नामक दर्शनमूलक एक संस्कृत व्याकरणके रचयिता।

१३ वेदान्तिसिद्धान्तरहस्य नामक संस्कृत ग्रन्थके कर्त्ता।

१४ होतमञ्जरी नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

१५ नारायण दैवविद्के पुत्र, इन्होंने संस्कृत भाषामें ज्ञानविलासकाव्यकी रचना की थी।

१६ एक मैथिल ब्राह्मण। इनके पिताका नाम पीताम्बर और पितामहका नाम रामभद्र था, इन्होंने फतेशाहको अनुमतिके अनुसार अतन्द्रचन्द्रिका नाटक बनाया था।

१७ योगसंग्रह नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता। इनके पिताका नाम लक्ष्मण था। योगसंग्रह १६१६ ई०में रचा गया था।

१८ अग्निष्टोमपद्धतिकार, इनके पिताका नाम था विद्याकर।

१९ एक प्रसिद्ध नैयायिक। ये प्रसिद्ध नैयायिक गोकुलनाथके छोटे भाई और वंशधरके मामा थे।

२० राजा भगवान्‌दासके भाई। राणा प्रतापके युद्धमें इन्होंने प्रसिद्धि पाई थी। इन्होंने जगमल्लके पुत्र रामदासका बध किया था।

२१ चौरासीबोल नामक हिन्दीग्रन्थके रचयिता।

२२ हिन्दीके एक कवि। ये छतरपुरके रहनेवाले और संवत् १८४५में विद्यमान थे। इन्होंने कृष्णायण नामक एक हिन्दी ग्रन्थकी रचना की है।

जगन्नाथअवस्थी—एक हिन्दीके कवि। ये पहले अयोध्याके महाराज मानसिंहकी सभामें रहते थे। मानसिंह देखो। तदनन्तर अलवरके महाराज शिवदीनसिंहका आश्रय ग्रहण किया था। ये संस्कृत साहित्यमें विशेष व्युत्पन्न थे। हिन्दीभाषामें इनकी कुछ कविताएं हैं। सुमेरपुरमें (उन्नाव जिलेमें इनका निवास था)। मि० ग्रियारसन अनुमान करते हैं कि, कवितामोंमें ये जगन्नाथदास नामसे प्रसिद्ध हैं।

जगन्नाथकलावित्—ये सामान्यतः जगन्नाथ कालोयात् नामसे विख्यात हैं। ये एक प्रसिद्ध सङ्गीतशास्त्रवित् थे, तथा मोगलबादशाह शाहजहांके दरबारमें रहते थे। सम्राट्‌ने इन्हें "महाकविराज"की उपाधि दी थी।

जगन्नाथकवि-१ हिन्दीके एक कवि। इनकी एक कविता उद्धृत की जाती है—

"तुम भयेहो पोषचन्द वारकी चारसो।
देखत देखन दुराय राखे पीय चतुर तिय तुम महारसो॥
मगन करे देत तिहारो यह चित रही चारसो।
जगन्नाथकवि राधवे प्रभु जीवन मोर बहारसो॥"

२ एक हिन्दी कवि। इनकी कविता अच्छी होती थी; नीचे एक उदाहरण दिया जाता है—

"हरत मोहि दीजे भोरदुचोर।
दास जानके करुना कीजे धरी जात नहिं धोर॥
वा दिनकी कुछ सुरत करो जब पढ़ो द्रोपदी चोर।
जगन्नाथके बार सांवरे काहे भये वे पीर॥"

जगन्नाथक्षत्रिय—हिन्दीके एक कवि। ये प्रतापगढ़के अन्तर्गत ढिंगवस ग्रामके रहनेवाले थे। इन्होंने युद्धोत्सव और ब्रह्मसमाधियोग ये दो ग्रन्थ रचे हैं। १८३० ई०में ये विद्यमान थे।

जगन्नाथ गजपतिनारायणदेव—दाक्षिणात्यके गञ्जाम जिलेमें किमिदी नामसे एक बहुत विस्तृत जमींदारी है। यह तीन भागोंमें विभक्त है—पारलाकिमिदी, पेड्डाकिमिदी और चिन्नाकिमिदी। इन तीनों स्थानोंके जमींदार एक ही वंशके तथा उड़िष्याधिपति केशरीवंशोय कह कर अपना परिचय देते हैं। पारलाकिमिदीके जमींदारोंके कागजात देखनेसे, जहां तक समझमें आता है, उनकी वंशावली इस प्रकार मिलती

कपिलदेव
(१२२७—१२४५)
|
नरसिंहदेव (१म)
(१२४५—१२६५)
|
मदनदेव
(१२६५—१२९०)
|
नारायणदेव
(१२९०—१३०९)
|
आनन्ददेव
(१३०९—१३१७)
|
अनन्तरुद्रदेव
(१३१९—१३२५)
|
जयरुद्रदेव
(१३२५—१३६७)
|
लक्ष्मीनरसिंह भानुदेव
(१३६७—१३९२)
|
मधुकर्ण देव
(१३९२—१४२३)
|
मृत्युञ्जय भानुदेव
(१४२३—१४५७)
|
माधव मदनसुन्दर भानुदेव
(१४५७—१४९४)
|
चन्द्रबेताल भानुदेव
(१४९४—१५२७)
|
सुवर्णलिङ्ग भानुदेव
(१५२७—१५६६)
|
शिवलिङ्गनारायणदेव
(१५६६—१५९०)
|
सुवर्णकेशरीनारायणदेव
(१५९०—१६३०)
|
मुकुन्दरुद्रनारायणदेव
(१६३०—१६५६)
|
मुकुन्ददेव
(१६५६—१६७४)
|
अनन्तपद्मनाभदेव
(१६७४—१६८६)
|
सर्वज्ञ जगन्नाथनारायण देव
(१६८६—१७०२
|
नरसिंहदेव (२य)
(१७०२—१७२९)
|
वीर पद्मनाभनारायण देव
(१७२९—१७४८)
|
वीर प्रताप रुद्रनारायणदेव
(१७४८—१७६६)
इन्होंने पुत्र न होनेके कारण दत्तक पुत्र ग्रहण किया था।
|
जगन्नाथनारायणदेव
(१७६६—१८०६)
|
गौरचन्द्र गजपतिनारायणदेव
(१८०६—१८३९)
|
पुरुषोत्तम गजपतिनारायणदेव
(१८३९—१८४३)
|
जगन्नाथ गजपतिनारायण देव
(१८४३—१८५०)
|
वीर प्रतापरुद्र गजपतिनारायणदेव
(१८५०)

जगन्नाथगञ्ज—बङ्गालके मैमनसिंह जिलेमें टङ्गाइल सबडिविजनका एक गांव। यह अक्षा० २४° ४१′ उ० और देशा० ८९° ४६′ पू०में ब्रह्मपुत्र पर अवस्थित है। लोक-

संख्या कोई ६०८ होगी। ईष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवेको ढाका-मैमनसिंह शाखाका यह अन्तिम ष्टेशन है। यहां जहाजोंका भी बड़ा भरभर रहता है।

जगन्नाथ चौबे (माथुर)—हिन्दीके एक कवि। आप कवि व्यासीरामके पुत्र और बुंदोके रहनेवाले थे। इन्होंने निम्नलिखित ग्रंथ रचे हैं—रामायणसार, अलङ्कारमाला, शिक्षादर्पण, यमुनापच्चीसी और माथुरकुलकल्पद्रुम।

जगन्नाथ तर्कपञ्चानन—१ बङ्गालके एक अद्वितीय विद्वान्। वि० सं० १७५१ को आश्विन शुक्ल पञ्चमीके दिन हुगली जिलेके अन्तर्गत त्रिवेणी ग्राममें इनका जन्म हुआ था इनके पिताका नाम था रुद्रदेव तर्कवागीश। वृद्धावस्थामें रुद्रदेवको स्त्रीको मृत्यु हो गयी। उन्होंने लोगोंके अनुरोध करने और कोई सन्तान न होनेके कारण ६४ वर्षकी उम्रमें पुन: विवाह किया। विवाहके कुछ वर्ष बाद जगन्नाथका जन्म हुआ। बुढ़ापेकी सन्तान होनेसे बचपनमें ये बड़े लाड़ले थे और इसी लिए कुछ उद्दण्ड भी हो गये थे। परन्तु पढ़ने लिखनेमें इनकी बुद्धि अच्छी थी। सातवर्षको उम्रमें ये व्याकरण पढ़ने लगे थे।

आठ वर्षकी उम्रमें इनकी माताकी मृत्यु हुई। कुछ दिन बाद ये अपने ताऊ भवदेवके साथ पासके वंशबाटी ग्राममें चले गये। वहां ये साहित्य और अलङ्कारशास्त्रमें खूब व्युत्पन्न हो गये।

पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें इनका विवाह हुआ। इनकी स्त्रीका नाम था द्रौपदी। २४ वर्षकी उम्रमें इनके पिता भी परलोक सिधारे। पिताके मरने पर इनकी बड़ी दुरवस्था हुई, पिताके श्राद्धादिके साथ साथ इनका पढ़ना भी बंद हो गया। जगन्नाथने 'तर्कपञ्चानन' उपाधि प्राप्त कर एक चतुष्पाठी खोल दी। धीरे धीरे इनके पाण्डित्यका यश बङ्गालके चारों ओर फैल गया। टोलमें छात्रोंकी भी वृद्धि होने लगी। इनके पाण्डित्य पर सन्तुष्ट हो कर वर्द्धमानाधिपति त्रिलोकचन्द्रने इन्हें पाण्डुआके अन्तर्गत हेदुआपेत नामक ग्राम निष्कर दान किया था। मुर्शिदाबादके नवाबने भी इन्हें कुछ पारितोषिक दिया था।

जगन्नाथकी उम्र जिस समय ६२ वर्षकी हुई, उस समय उनकी स्त्रीका देहान्त हो गया। इनके दो पुत्र और तीन कन्याएं थी। स्त्रीवियोगके बादसे ये प्राय: सन्ध्यापूजामें अपना समय बिताते थे।

१७६५ ई०में इन्होंने अंग्रेजोंके समझने योग्य स्मृतिका एक संग्रह किया था, जिसका नाम था "विवादभङ्गार्णवसेतु।" अंग्रेज इनका खूब सम्मान करते थे। कभी कभी कठिन कठिन समस्याओंके समझनेके लिए क्लाइव, हेष्टिंग, हार्डिङ्ग आदि भी इनके घर आया करते थे।

इन्होंने कई एक ग्रन्थ रचे थे, पर वर्तमानमें रामचरितनाटकके कुछ अंशके सिवा और कुछ भी प्राप्य नहीं है।

वि० सं० १८६४ को आश्विन कृष्णातृतीयाके दिन ये गङ्गामें अपने नश्वरशरीरको छोड़ कर स्वर्ग सिधारे। मरते समय इनकी उम्र ११३ वर्षकी थी।

२ और भी एक जगन्नाथ तर्कपञ्चाननका नाम मिलता है जिन्होंने जगन्नाथीय न्यायग्रन्थकी रचना की थी।

जगन्नाथदास—१ उड़ीसाके एक प्रधान साधुपुरुष। उड़ीसाके वैष्णव इनको गोकुलवासिनी श्रीराधिकाके अवतार मानते हैं। उड़िया भाषाके जगन्नाथचरितामृतमें लिखा है कि, एकदिन वैकुण्ठधाममें श्रीराधाकृष्ण एक दूसरेको देख कर प्रेमावेशमें हंस पड़े, फलत: राधाके हास्यसे जगन्नाथदास और कृष्णके हास्यसे श्रीचैतन्यदेव आविर्भूत हुए। कृष्णके आदेशानुसार पापियोंके उद्धारके लिए दोनोंने उड़ीसा और नवद्वीपमें एक साथ जन्म लिया था।

ईसाकी १५वीं शताब्दीके अन्तमें पुरी जिलेके अन्तर्गत कपिलेश्वरपुरमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम था भगवानदास पण्डा और माताका नाम पद्मावती।

बचपनसे ही इनके हृदयमें कृष्णप्रेम अङ्कुरित हुआ था। कालान्तरमें उसीके विकाशने उत्कलवासियोंको मुग्ध कर लिया था। इन्होंने थोड़ी उम्रमें ही कलाप, वर्द्धमान आदि व्याकरण एवं यजु: और सामवेदका अध्ययन कर डाला था। सोलह वर्षकी उम्रमें ये श्रीक्षेत्रमें आ कर भागवत पढ़ने लगे थे।

अनन्तर चैतन्यके मठमें आ कर इन्होंने वैष्णवी दीक्षा ली और छह वर्ष तक चैतन्यकी सेवाकी। श्रीक्षेत्रमें इनकी भक्ति देख कर बहुतसे लोग इनके भक्त हो गये थे। जगन्नाथचरितामृतमें लिखा है—इस समय सार्व-

भीमभट्टाचार्यने जगन्नाथदासके पुलक-अङ्गमें स्त्री-चिह्न और उनके कौपीनवासमें रक्त देख कर उन्हें राधिकाका अवतार समझ लिया था और उनकी पद-वन्दना की थी।

इसके बाद ये ब्रह्मधर्मका प्रचार करने लगे। इस समय इन्होंने उड़ियाभाषामें श्रीमद्भागवत, प्रेमसाधन आदि भक्तिग्रन्थोंका प्रचार किया था। ६० वर्षकी अवस्थामें ये पुरुषोत्तमके अङ्गमें विलीन हो गये। उड़ीसामें इनके भक्त अब भी मौजूद हैं।

२ हिन्दीके एक कवि। रागसागरोद्भवमें इनके रचे हुए पद्य पाये जाते हैं। ये लगभग १६४३ ई०में जीवित थे।

३ हिन्दीके एक कवि। ये महाकवि तुलसीदासके शिष्यपरम्परामें थे। इन्होंने १७११ ई०में गुरुचरित्र और मनबत्तीसी नामक दो ग्रन्थ रचे थे।

जगन्नाथ दीधी—त्रिपुरा सदरका एक थाना। यहां कुछ आदिम असभ्य लोग रहते हैं। उनको पहाड़िया कहा जाता है। यह कहते कि कोई ६०।७० वर्ष हुए वह अंगरेजी राज्यमें जा कर रहने लगे हैं। क्योंकि इससे पहले वह स्त्रीपुत्रहरण, ग्रामदाह इत्यादि नाना कारणोंसे उत्पीड़ित होते थे।

जगन्नाथदेव—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कृष्णा जिलेके अधिपति। १४२७ ई०में कोण्डवीडु-राजवंशके मुसलमानों द्वारा पराजित होने पर इन्होंने कृष्णा जिलेमें अपना आधिपत्य फैलाया था। पीछे विजयनगराधिपति कृष्णदेव-रायने १५०१ (?) ई०में इनको परास्त कर दिया था। जगन्नाथदेव विद्रोहादि नाना उपद्रवोंसे सर्वदा ही विव्रत रहा करते थे। कृष्णा जिलेके अन्तर्गत माचर्ला ग्राममें विभूतिकुण्ड नामक एक तीर्थ है। उस कुण्डके पास १३६६ शकमें उत्कीर्ण शिलालेखमें लिखा है कि, बधिरोद्गारी नामके एक व्यक्तिने अधिपति जगन्नाथदेवके सम्मानार्थ भूमिदान की थी।

जगन्नाथपञ्चानन—आनन्दलहरीके एक टीकाकार।

जगन्नाथपण्डित—१ तञ्जोरनिवासी विख्यात पण्डित। इन्होंने अश्वमेधकाव्य, रतिमन्मथ नाटक और वसुमती परिणय नाटककी रचना की थी।

२ "संवादविवेक" नामक न्यायग्रन्थके रचयिता।

३ तञ्जोर-निवासी श्रीनिवासके पुत्र और अनङ्गविजयभाणके रचयिता।

४ विश्वनाथके पुत्र इन्होंने १५८६ ई०में ऐष्टिकैकाह्निकपद्धतिका प्रणयन किया था।

५ एक संस्कृतके प्रसिद्ध जैन विद्वान्। इन्होंने सप्तसन्धानकाव्य, चतुर्विंशतिसन्धान काव्य (सटीक), पुरुषार्थसिध्युपाय-टीका, श्रीपालचरित्र, सुभौमचरित्र आदि संस्कृत भाषाके दिगम्बर जैन-ग्रन्थोंकी रचना की है। इनके सप्तसन्धान और चतुर्विंशतिसन्धान नामक काव्यग्रन्थोंमें यह बड़ी भारी खूबी है कि, उसके प्रत्येक श्लोकके सात सात और चौबीस चौबीस प्रकारके अर्थ होते हैं। यह बड़े भारी पाण्डित्यका काम है। उक्त ग्रन्थोंके पढ़नेसे यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि, ये एक प्रतिभाशाली और उच्चकोटिके कवि थे। जैनियोंमें इनके उपरोक्त दोनों ही काव्य सम्मानकी दृष्टिसे देखे जाते हैं।

जगन्नाथपण्डितराज—तैलङ्गके एक विख्यात पण्डित। इनके पिताका नाम था पेरम्। इनके शिक्षागुरुओंके नाम-ज्ञानेन्द्र, महेन्द्र, खण्डदेव, विद्याधर, पेरु भट्ट और लक्ष्मीकान्त। ये दिल्लीमें रहते थे तथा प्रसिद्ध कवि कवि भी थे। इनके काव्योंमें शब्दलालित्य और अलङ्कारोंके माधुर्यकी छटा निराली ही पाई जाती है। मोगल-सम्राट् शाहजहांके ज्येष्ठ पुत्र दाराके साथ १६५८ ई०में ये मारे गये थे। इनके बनाये हुए ग्रन्थोंमेंसे निम्नलिखित ग्रन्थ पाये जाते हैं—अमृतलहरी (यमुनास्तोत्र), आसफविलास (नवाब आसफखाँके गुणोंका कीर्तन), करुणालहरी, गङ्गालहरी, चित्रमीमांसाखण्डन, जगदाभरण, पीयूषलहरी, प्राणाभरणकाव्य, भामिनीविलास, मनोरमाकुचमर्दन, यमुनावर्णनचम्पू, रसगङ्गाधर (अलङ्कार ग्रन्थ,) लक्ष्मीलहरी और सुधालहरी (सूर्यस्तोत्र)। इनमें किसी किसी ग्रन्थमें 'भट्ट' लिखा है, इससे मालूम होता है कि, इनकी "भट्ट" उपाधि थी। ऐसा प्रवाद है कि, ये केवल अप्पयदीक्षितको ही अपना समकक्ष मानते थे। ये बालविधवाके विवाहके पक्षपाती थे। थोड़ी उम्रमें इनकी एक कन्या विधवा हो गई थी, उसका पुनर्विवाह करानेके लिए इन्होंने शास्त्रीय प्रमाणोंका भी संग्रह किया था। परन्तु दूसरे पण्डित इनके विरुद्ध थे। वे जब

शास्त्रार्थमें इनको परास्त न कर सके तब उन्होंने इनकी माताको इसकी खबर दी। जगन्नाथने अपनी बालविधवा कन्याके लिए वर ढूंढ़ लिया और मातासे अनुमति मांगी। जगन्नाथको माताने पुत्रकी बातको सुन कर कहा—"यदि विधवा-विवाह शास्त्रसङ्गत है, तो मुझे भी कुछ कहना है। तुम्हारी लड़की तो प्रेमरससे वञ्चित है, किन्तु मैं अब उपयुक्त हो कर विधवाविवाहको शास्त्रसङ्गत जान रही हूं तब पहले मेरा विवाह होना चाहिये।" माताका यह उत्तर सुन कर जगन्नाथको अपना सङ्कल्प त्याग देना पड़ा।

काशीमें रह कर इन्होंने बहुत दिनों तक विद्याभ्यास किया था। इन्होंने जयपुराधिपतिकी आज्ञासे जयपुर और काशीमें मानमन्दिर बनवाये थे। काशीमें अब भी वह मानमन्दिर मौजूद है, परन्तु जमीनके हिल जानेसे अब वहांसे नक्षत्रादि दीख नहीं पड़ते। सुननेमें आता है कि, इन्होंने एक मुसलमान स्त्रीकी मुहब्बतमें फंस कर उससे व्याह कर लिया था, जिससे जातिच्युत कर दिये गये थे। बुढ़ापेमें कुछ दिन ये मथुरामें रहे थे और अन्तमें काशीमें गङ्गा किनारे इनकी मृत्यु हुई।

जगन्नाथपाठक—देवनाभके पुत्र और स्वभावार्थदीपिका नामक विष्णुपुराणकी टीकाके रचयिता।

जगन्नाथपाण्ड्य—दक्षिण देशके एक पाण्ड्यराज, पाण्ड्यवंशीय ६३ वें राजा। मदुराके स्थापयिता कुलशेखरपाण्ड्यसे ६२ पुरुष (पीढ़ी) अधस्तन कहा जाता है कि, काञ्चीपुरके चोलराजने इनके समयमें पाण्ड्यराज्य पर आक्रमण किया था, किन्तु इन्होंने उनको परास्त कर जैनधर्म छुड़वाया था और चोलके जैनोंको कोल्हूमें पिरवाया था। परन्तु किसीके मतसे यह घटना इनके पिता अरिमर्दनके समय हुई थी। इनके पुत्रका नाम वीरबाहु था। पाण्ड्य देखो।

जगन्नाथपुर—१ विहार प्रान्तके रांची शहरसे ३ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। इस गांवमें पहाड़ पर जगन्नाथदेवका एक बड़ा मन्दिर बना है। वह पुरीके महामन्दिरके अनुकरणसे निर्मित हुआ है। मालूम नहीं, कि इसको बने कितने दिन हुए। फिर भी इसमें सन्देह नहीं, कि वह बहुत पुराना है। रथयात्राके समय यहां भी ६।७ हजार यात्री आते हैं।

२ उड़ीसा प्रान्तके कटक जिलामें जगत्सिंह उपविभागका एक थाना।

जगन्नाथप्रसाद—इस नामके दो कवि हो गये हैं। दोनों ही कायस्थ थे, एक बुन्देलखण्डके अन्तर्गत समथर और दूसरे कोसी-मथुराके निवासी थे।

जगन्नाथ प्राचीन—एक हिन्दीके कवि। इनकी कविता शान्तिरसकी होती थी। इन्होंने १७१८ ई०में मोहमदराजकी कथा लिखी थी।

जगन्नाथ भट्टाचार्य—मन्त्रकोष नामक तान्त्रिक ग्रन्थके रचयिता, ये बङ्गाली थे।

जगन्नाथ महामहोपाध्याय—सिद्धान्ततत्त्व नामक संस्कृत व्याकरण-प्रणेता।

जगन्नाथमिश्र—१ एक मैथिल पण्डित, इन्होंने साधुकथोपकथन सम्बन्धी सभातरङ्ग नामकी एक पुस्तक रची थी। २ एक गौड़ीय ब्राह्मण, इन्होंने संस्कृत भाषामें कथाप्रकाश लिखा था। ३ चैतन्यदेवके पिता। चैतन्यदेव देखो। ४ जौनपुर-निवासी एक हिन्दी कवि। इन्होंने राजाहरिचन्द्रकी कथा नामक एक पद्य ग्रन्थ रचा है।

जगन्नाथ यति—एक प्रसिद्ध वैदान्तिक और ब्रह्मसूत्रभाष्यदीपिकाके रचयिता।

जगन्नाथराय—सारस्वत व्याकरणके एक बङ्गाली टीकाकार।

जगन्नाथ वैश्य—कालिकाष्टक नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता। ये बाराबङ्की जिलेके पैंतेपुर ग्राममें रहते थे। ११०१ ई० में इनकी मृत्यु हुई।

जगन्नाथ शास्त्री—१ ब्रजेश्वरी काव्यके कर्त्ता। २ न्यायशास्त्रीय सामान्य निरुक्तिटीकाके प्रणेता।

जगन्नाथशुक्ल—१ हिन्दीके एक कवि। ये अमृतसरके अन्तर्गत पुष्करतके रहनेवाले थे। इन्होंने श्रीशिक्षामणि और व्याख्यानविधि ये ग्रन्थ लिखे हैं। २ मुजफ्फरपुर वासी एक हिन्द कवि।

जगन्नाथ सम्राट्—एक प्रसिद्ध अङ्कशास्त्रविद्। ये संस्कृतके सिवा और भी बहुतसी भाषाओंके जानकार थे जयपुराधिप जयसिंहके आदेशसे १७३० ई० में इन्होंने संस्कृत भाषा

में रेखागणित और सिद्धान्तसार कौस्तुभ वा सम्राट् सिद्धान्त नामक दो ग्रन्थ रचे थे। उक्त रेखागणित युक्लिडकी ज्यामितिके आधार पर लिखा गया है।

जगन्नाथ सरस्वती—हरिहर सरस्वतीके शिष्य, इन्होंने अद्वैतामृत और तत्त्वदीपन नामक दो संस्कृत ग्रन्थ रचे थे।

जगन्नाथसहाय—आनन्दसागर, प्रेमरसामृत, भक्तरसनामृत गोपालसहस्रनाम और कृष्णबाललीला आदि ग्रन्थोंके रचयिता।

जगन्नाथसूरी—एक विख्यात स्मृतिविद्, इन्होंने धर्माचारके विषयका 'समुदायप्रकरण' नामक एक ग्रन्थ लिखा था।

जगन्नाथ सेन—पद्यावली प्रणेता एक बङ्गाली कवि।

जगन्नाथसेनकविराज—गङ्गादासकृत छन्दोमञ्जरीके एक बङ्गाली टीकाकार। इनके पिताका नाम जटाधर था।

जगन्नाथा (सं॰ स्त्री॰) जगन्नाथ-टाप्। दुर्गा।

"जगन्नाथे जगन्नाथे प्रिये दान्ते महाव्रते।" (हरिवंश १७८) अ॰

जगन्नारायण—भवन नारायणके पुत्र और देवीभक्तिरसोल्लास नामक संस्कृत ग्रन्थके कर्त्ता।

जगन्नियन्तृ (सं॰ पु॰) परमात्मा, ईश्वर।

जगन्निवास (सं॰ पु॰) निवसत्यत्र नि वस-घञ्। १ निवास आश्रयस्थानं जगतां निवासः, ६-तत्। २ परमेश्वर। ३ विष्णु, प्रलयकालमें समस्त संसार परमेश्वरमें लीन हो जाता है, किन्तु पौराणिक मतसे विष्णुके शरीरमें लीन हो कर रहता है। इसीलिये विष्णुका नाम जगन्निवास पड़ा है। प्रलय देखो।

जगन्नु (सं॰ पु॰) जगता विश्वजीवजातेन नम्यते जगत्-नम-डु। १ जन्तु, जानवर। २ अग्नि। ३ कीटभेद, एक कीड़ा

जगन्मङ्गल (सं॰ क्ली॰) जगतां मङ्गलं यस्मात्, बहुव्री॰ कालीके एक कवचका नाम।

"जगन्मङ्गलं नाम कवचं पूर्व सूचितम्।" (भैरवीतन्त्र)

जगन्मय (सं॰ पु॰) जगत्स्वरूप, विष्णु।

जगन्मयी (सं॰ स्त्री॰) जगन्मय-ङीप्। १ समस्त संसारको चलानेवाली शक्ति। २ लक्ष्मी।

जगन्माता (सं॰ स्त्री॰) जगतां माता, ६ तत्। दुर्गा।

जगन्मोहिनी (सं॰ स्त्री॰) जगन्ति मोहयति मुह-णिच्-णिनि, ६-तत्; स्त्रियां ङीप्। १ महामाया। २ दुर्गा।

जगन्मोहिनी सम्प्रदाय—बङ्गदेशके पूर्वखण्डमें इस नामका एक सम्प्रदाय है। बङ्गालमें जब मुसलमानी राज्य था, तब रामकृष्ण गोस्वामी नामक एक व्यक्तिने उक्त सम्प्रदायका प्रवर्त्तन किया था। इस सम्प्रदायके लोग कहते हैं कि, रामकृष्णसे भी पहले जगन्मोहन गोस्वामी नामक एक व्यक्ति इस धर्मोपासनाका सूत्रपात कर गये हैं, इसलिए उन्हींके नामानुसार इस सम्प्रदायका नाम हुआ है। प्रवाद है कि, जगन्मोहनसे उड़िष्याके एक रामानन्दी वैष्णवसे उपदेश ग्रहण कर भेक धारण किया था। जगन्मोहनके शिष्य गोविन्द गुसाँई, गोविन्दके शिष्य शान्त गुसाँई और इन शान्तके शिष्य रामकृष्ण गुसाँई थे।

रामकृष्णके समयमें ही इस मतका अधिक प्रचार हुआ है इस सम्प्रदायके लोग कहते हैं कि इस समय इस सम्प्रदायमें लगभग ५ हजार आदमी होंगे। बङ्गालके पूर्वांशलमें इनके बहुतसे मठ हैं। मठके प्रधान पुरुषको उपाधि महन्त है। शिष्योंके अभीष्टकी सिद्धि होने पर वे मठमें आ कर महन्तका भोगादि देते हैं, इस प्रकारसे संगृहीत अर्थ और द्रव्यादि द्वारा ही उक्त मठोंका खर्च चलता है। ये लोग निर्गुण उपासक हैं, किसी साकार देवताकी पूजा नहीं करते। गुरुको ही मूर्तिमान् परमेश्वर मानते और उन्हें ही त्राणकर्त्ता समझते हैं।

दीक्षा लेते समय ये लोग "गुरु सत्य" यह वाक्य उच्चारणपूर्वक गुरुको प्रत्यक्ष देवता स्वीकार करते हैं और उनसे ब्रह्मनाम ग्रहण कर उन्हींको उपासना करते हैं। इनमें कोई सम्प्रदायिक ग्रंथ नहीं है, कई एक धर्मसङ्गीत ही इनके मुख्य अवलम्बन हैं। इन सङ्गीतोंका नाम निर्वाणसङ्गीत है।

अन्यान्य सम्प्रदायोंकी तरह इनमें भी दो भेद हैं—गृही और उदासीन। इनमें गृही ही अधिक हैं।

जगन्वंशी—अयोध्याके अन्तर्गत फतेपुर जिलेके कोरा परगणामें एक श्रेणीके ब्राह्मण हैं, ये अपनेको जगन्वंशी बताते हैं। इनकी जमींदारी है। शाहजहाँपुरके गातम ठाकुर भी इसी श्रेणीके मालूम होते हैं। कोराके पश्चिम

नामक स्थानमें एक वंशके लोग अपनेको गौतम ठाकुरके आदि वंशका बतलाते हैं तथा इस बातको गौतम ठाकुर भी जुरम करते हैं। शाहजहांपुरमें ३७ ग्राम गौतम-ठाकुरोंके अधीनमें हैं।

जगमग (अनु० वि०) १ प्रकाशित, जिस पर रोशनी पड़ती हो। २ चमकीला, चमकदार, भड़कीला।

जगमगाना (हिं० क्रि०) चमकना, झलकना।

जगमगाहट (हिं० स्त्री०) चमक, दीप्ति, आभा, चमचमाहट।

जगमांझी—सन्थालोंमें जो व्यक्ति बालक-बालिकाओं और स्त्रियोंको नीतिकी शिक्षा देता है तथा उनके नैतिक आचार आदि पर दृष्टि रखता है, उसको जगमांझी कहते हैं। विवाहके समय उक्त व्यक्ति उत्सव-कर्ता होता है तथा वही लड़कीके हाथमें आमकी डाली तोड़ कर देता है। संथाल देखो।

जगमोहनसिंह—हिन्दीके एक कवि। इनके पिताका नाम था राजा सरयूसिंह, ये विजयराघवगढ़के रहनेवाले थे, इनकी जायदाद १८५७ ई०के विद्रोहमें सरकारने जब्त कर ली थी। जगमोहनसिंहने काशी जा कर विद्याभ्यास किया था। इनसे भारतेन्दु हरिश्चन्द्रका बड़ा स्नेह था। इन्होंने मेघदूत, ऋतुसंहार, कुमारसम्भव, प्रमसम्पत्तिलता, श्यामालता, श्यामासरोजिनी, सज्जनाष्टक आदि कई ग्रन्थ रचे हैं। इसके सिवा इन्होंने सांख्यसूत्रकी टीका और वेदान्त सूत्रकी टिप्पणी भी लिखी है। इनकी एक कविता उद्धृत की जाती है।

> "आई शिशिर बरोदरातें चह जलन संकुल धरनी।
> प्रबल आगी चहु दवानकी खींच रोर मनहरनी॥
> मूंदे मन्दिर उदर भरोसे भानु-किरन चह आनी।
> भाजी बसन बसन सुखदाता नवयौवन अनुरानी॥"

जागर (सं० पु०) जागर्त्ति युद्धेऽनेन जागृ-अच्, पृषोदरादिवत् साधुः। कवच।

जगरांव—१ पञ्जाब प्रान्तके लुधियाना जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३०°३५ तथा ३०°५८ उ० और देशा० ७५°२२ एवं ७५° ४७ पू०के मध्य शतद्रु के दक्षिण तट पर अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४१८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १८४७३५ है। पूर्व तथा दक्षिण सीमा पर पतियाला एवं मालेर-कोटला राज्य पड़ता है। इसमें २ शहर और १३८ गांव आबाद हैं। मालगुजारी और ऐसे प्रायः ३३००००) रु० है। मालीवालका रणक्षेत्र इसी तहसीलमें लगता है।

२ पञ्जाबके लुधियाना जिलेकी जगरांव तहसीलका सदर। यह अक्षा० ३०° ४७ उ० और देशा० ७५° २८ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई १८७१० होगी। यहां गेहूं और शक्करका बड़ा व्यापार होता और हाथी-दांतका काम बनता है। १८६७ ई० में म्युनिसपालिटी हुई।

जगरा—रणथम्भरके चौहान—कुलतिलक हमीरके वैमात्रेय भ्राता (दासीके गर्भने उत्पन्न) भोजदेवने यह स्थान सम्राट् अलाउद्दीनसे जायगीरके तौर पर पाया था।

हमीर और भोजदेव देखो

जगराज—एक हिन्दीके कवि। ये १८४३ ई०में विद्यमान थे।

जगरासिंह—मोगलोंके राजत्वकालमें पञ्जाबके गुरुदासपुर जिलेमें बताल और पठानकोट नामके दो प्रसिद्ध स्थान थे। बताल दोआबके ठीक बीचमें था। अकबरके समयमें उन्होंके धात्रीपुत्र शमशेरखां इस जगह रहते थे, इन्होंने इसकी प्राचीर बढ़ा दी थी और एक सुरम्य सरोवर बनवाया था, जो अभी तक मौजूद है। इसके उपरान्त जिस समय सिखोंने प्रबल हो कर समस्त पञ्जाबको आपसमें बँटवारा किया था, उस समय रामघरिया दलके सर्दार जगरासिंहको बताल प्राप्त हुआ था। बतालके सिवा दीनगर, कालनौर, श्रीगोविन्दपुर और निकटवर्ती अन्यान्य नगर भी उनके अधीन हो गये थे। अमरसिंह भगके अधीन कन्हियायोंने प्रबल हो कर जगरासिंह को एकबार निताड़ित कर दिया था, किन्तु १७८३ ई० में इन्होंने पुनः अपना पद पाया था। १८०३ ई० में इनकी मृत्यु हुई थी। इनके पुत्र योधसिंह रणजित्-सिंहके अधीन राजा हुए थे। १८१६ ई० में योधसिंहकी मृत्यु होने पर, रणजित्ने उत्तराधिकारी-निर्णयमें गड़बड़ देख कर समस्त राज्यको अपने राज्यमें मिला लिया था।

जगरूप—हिन्दीके कवि। इनकी कविताका एक उदाहरण दिया जाता है।

> "नभमें नन्दनन्दन छट पड़े चावोरी।

सुधरे सघरा ध्नत लीनरेखा।
महबर प्रभु पैम परे जगदप बिसेखा॥

जगल (सं॰ पु॰) जन-ड जः जातः सन् गलति गल-अच्। १ मद्यकल्क, शराबकी सीठी। इसका पर्याय मेदक है। २ मदनवृक्ष, मैनो। ३ मदिराविशेष, पिष्ट नामक सुरा, पीठीसे बना हुआ मद्य। (त्रि॰) ४ धूर्त, चालाक। (क्लो॰) ५ कवच। ६ गोमय, गोबर।

जगलूर—महिसुर राज्यके चितलद्रूग जिलेका उत्तर तालुक। यह अक्षा॰ १४° ५४´ एवं १४° ४५´ उ॰ और देशा॰ ७६° ७´ तथा ७६° २२´ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३७२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ४७१८६ है। इसमें एक नगर—(जगलूर सदर) और १६८ गांव बसे हैं। मालगुजारी कोई ६०००० रु॰ होगी। दक्षिणकी भूमि उत्तरसे अच्छी है। यहां चावल और ईखकी खेती बहुत होती है।

जगवाना—(हिं॰ क्रि॰) १ निद्राभंग करवाना, सोतेसे उठवाना। २ किसी पदार्थको अभिमन्त्रित करा कर उसमें कुछ प्रभाव कराना।

जगह (फा॰ स्त्री॰) १ स्थल, स्थान। २ स्थिति, पद। ३ अवसर, मौका। ४ पद, दरजा, ओहदा।

जगा—काशीकी भट्ट उपाधिधारी ब्राह्मणश्रेणीकी एक शाखा जगा नामसे प्रसिद्ध है। ये भट्टगण एक महाराष्ट्री ब्राह्मण मयूरभट्टके औरस और सर्वरिया जातीय किसी कामिनीके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं। ये सङ्करदोषान्वित हैं या नहीं, यह मालूम नहीं।

जगाई—एक प्रसिद्ध वैष्णवविद्वेषी बङ्गाली, यह नित्यानन्दके अनुग्रहसे वैष्णवधर्ममें दीक्षित हुआ था।

नित्यानन्द देखो।

जगाधरी—१ पञ्जाब प्रान्तके अम्बाला जिलेकी पूर्व तहसील। यह अक्षा॰ ३०° २´ एवं ३०° २८´ उ॰ और देशा॰ ७७° ४´ तथा ७७° ३६´ पू॰के मध्य हिमालयके पाददेश पर अवस्थित है। क्षेत्रफल ४०६ वर्गमील है। दक्षिण-पश्चिममें यमुना नदी इसे युक्तप्रदेशसे पृथक् करती है। लोकसंख्या प्रायः १६१२३८ है। इसमें २ नगर और ३७८ ग्राम बसे हैं। मालगुजारी और सेस प्रायः २८००००) रु॰ है।

२ पञ्जाबके अम्बाला जिलेकी जगाधरी तहसीलका सदर। यह अक्षा॰ ३०° १०´ उ॰ और देशा॰ ७७° १८´ पू॰में अम्बाला और सहारनपुरकी पक्की सड़क पर नार्थ-वेष्टर्न रेलवेसे कोई ५ मील उत्तर अवस्थित है। लोक-संख्या प्रायः १३४६२ होगी। बूरियाके सिख सरदार रायसिंहने यहां व्यापारियों और कारीगरोंको बसाया था। नादिरशाहने नगर बिलकुल तोड़ डाला था, परन्तु १७८३ ई॰में रायसिंहने पुनर्वार पत्तन किया। १८२८ ई॰में यहां अंगरेजोंका अधिकार हुआ। कहते हैं, उसकी नींवमें बीसियों गङ्गाधारायोंका जल लगा है। इसीसे उसका नाम बिगड़ कर 'जगाधरी' हो गया है। यह लोहे और पीतलके समानके लिए प्रसिद्ध है। यहां पहाड़ी सोहागा साफ किया और जस्ता बनाया जाता है। १८६७ ई॰में म्युनिसपालटी हुई।

जगाना (हिं॰ क्रि॰) निद्राभङ्ग करनेके लिये प्रेरणा करना। २ उद्बोधन कराना, चैतन्य कराना, होश दिलाना।

जगी—मयूरकी तरहका एक पक्षी। यह सिमलाके पहाड़ पर और उसके आस-पास देखनेमें आता है। युक्तप्रदेशमें इसको जवाहिर कहते हैं। सिमला पहाड़ पर जङ्गी और लुङ्गी तथा कुमायूं प्रदेशमें सींगमोनाल (अर्थात् सींगवाला मोनाल) कहते हैं। सिमला पहाड़के शिकारी अंग्रेज लोग इसे आर्गस् फेजाण्ट कहते हैं।

इनमें नरके सिरका रंग काला, चोटीका अग्रभाग लाल, गलेके आसपासका भाग घोर लाल, पीठ घोर पाटलवर्ण और पतली पतली काली धारियोंसे सुशोभित तथा पर (डैने) घोर लाल रंगके होते हैं। परकी कलमों और लम्बी दुमका रंग काला, किन्तु प्रत्येक पङ्खकी जड़में श्वेताभ पाटलवर्णकी धारियां खिंची हुई होती हैं। गर्दन और गला सिन्दूरवर्ण होता है। इस सिन्दूरवर्णके नीचे ही धूमल और पीतवर्णके काँटेके समान कुछ पङ्ख हैं। छाती और निम्नभाग या पेटका रंग ललाईको लिए हुए काला तथा प्रत्येक पङ्ख पर सफेद बुंदकियां रहती हैं। चोंच कृष्णाभ और उसके दोनों तरफ सींगकी भांतिका मांसका कांटा रहता है।

इसकी लम्बाई प्रायः २७।२८ इञ्च है। मादा जगीके मस्तकसे लगा कर सारी देह पर ऊपरकी तरफ और

और तरल प्राटलवर्णके तथा कृष्णाभ और स्निग्धवर्णके पङ्ख तथा उन पङ्खोंके मुह पर पीतवर्णकी छोटी छोटी रेखाएं हैं। पेट पांशु प्राटलवर्ण तथा सर्वत्र सफेद बुंदकियां हैं। मादाके सींग नहीं होते। यह २४ इञ्च लम्बा होता है। नर बच्चा पहले तो मादाकी भांतिका दीखता है, बादमें जब २ वर्षका हो जाता है, तब उसके शरीरका रंग बदलने लगता है। यह तीसरे वर्षमें नर पक्षी जैसा हो जाता है।

इस जातिके सुन्दर पक्षी पश्चिम नेपालसे लगा कर उत्तर पश्चिम हिमालयके बहुत दूर तक देखे जाते हैं। बहुतोंका कहना है कि, सिमला या मुसौरीके पास यह पक्षी कम देखनेमें आते हैं। आलमोरामें इनकी संख्या ज्यादा है। ये चिरतुषारावृत स्थानके पास नीचे गभीर जङ्गलमें एक जगह एक या दूर दूरमें कुछ कुछ रहते हैं। जाड़ेमें ये और भी नीचे आ कर ओक, बादाम और देवदारुके जङ्गलमें रहते हैं। ये पहाड़ों पर बांसके दुर्गम भाड़ोंमें रहना ज्यादा पसन्द करते हैं। जहां झुण्ड बांध कर रहते हैं, वहां १२ से ज्यादा नहीं रहते। प्रति वर्ष शीत ऋतुमें एक जगह घोंसला बनाते हैं। आंधी अंधड़ या और किसी तरहके उपद्रवसे तंग हो कर ये पहाड़ोंके कन्दराओंमें आ कर रहते हैं।

यह बिना डरे कभी शब्द नहीं करता। डर लगने पर यह भेड़ या बकरीके बच्चों जैसा चीत्कार करता है। पहले आलाप प्रारम्भ कर उत्तरोत्तर स्वर चढ़ाता रहता है, फिर जोरसे चीत्कार करता हुआ उड़ जाता है। जहां यह तंग नहीं होता, वहां बड़े आरामसे रहता है, पासमें आदमीके जाने पर भी नहीं डरता। उड़ते समय यह चीत्कार करता रहते है, परन्तु एकबार उड़ कर बैठने पर फिर नहीं बोलता। एक यदि डर कर चीत्कार करे, तो झुण्डके सबके चिल्लाने लगते हैं। यह उड़ कर ऊपरको नहीं चढ़ता, बल्कि नीचेकी ओर झुकता हुआ पाहाड़की कन्दरा या वृक्षोंकी तरफ उतरता रहता है। यह चीलकी तरह घूम उड़ता है और बड़ा चतुर होता है। बरफकी गलती देख यह जाड़ेका घोंसला छोड़ कर ऊपर चढ़ जाता है और झुण्ड तोड़ देता है। जितनी दूर तक पेड़ आदि दिखाई देते हों, यह गरमियोंमें उतने ऊंचे तक चढ़ जाता है। बैशाखमें यह जोड़ बांधना प्रारम्भ करता है। इस समय नरपक्षी एक पतित वृक्षके ऊपर वा शाखा या पत्थरके ऊपर बैठ कर अत्यन्त स्पष्ट और उच्च स्वरसे "उवा" "उवा" शब्द करता रहता है। यह शब्द १ मील तक सुनाई पड़ता है। इस तरहका चीत्कार १०।१५ मिनट अन्तर या दिनभरमें ५-७ बार सुनाई पड़ता है। नर अगो कामकी पीड़ासे पीड़ित हो इस प्रकार चीत्कार करता रहता है और रमणाभिलाषिणी मादा अगो उसे सुन कर उसके पास आ जाया करती है। इसके बाद मादा पक्षी गर्भधारण कर उस नर पक्षीके साथ किसी गुप्त स्थानमें घोंसला बना कर एकत्र रहने लगती है। इस समय प्रायः शीतका प्रारम्भ हो जाता है।

यह साधारणतः ओक और बक्स नामक वृक्षकी पत्तियां खाता है। छोटी छोटी झाड़ियोंमें विंगल नामक कांटेदार पौधोंके पत्तोंको यह बड़ी रुचिसे खाता है। इसके सिवा अन्यान्य वृक्षोंके पत्ते, फूल और मूल भी खाया करता है, परन्तु इसका प्रधान खाद्य पत्ती ही है। कई एक प्रकारके कीड़े मकोड़े भी खाता है। गर्भिणी होने पर मादा अगो अनाज खाती है। इनको पाला जा सकता है।

शाकुनशास्त्रानुसार इनको दो श्रेणियां हैं,—सेरिओर्निस मिलानो सिफला और सेरिओर्निस् टेम्मिरिंटाई।

अगुरि (सं० त्रि०) गु किन् हित्वं उत्वञ्च छान्दसत्वात्। १ उद्‌गूर्ण, उत्तोलित, उठाया हुआ। २ जङ्गम, चर, चलने फिरनेवाला।

अगोजो—हिन्दीके एक ग्रन्थकार। इन्होंने १६५८ ई०में रतनमहेशदासोतवचनिका नामक ग्रन्थ रचा था।

अग्यय्यपेठ—मन्द्राज प्रान्तके कृष्णाजिलेमें नन्दीगाम तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १६° ५४´ उ० और देशा० ८०° ७´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८४३२ होगी। यहां रेशम बुननेका कुछ काम होता है। किसी स्थानीय राजाने इसकी चारों ओर प्राचीर बना अपने पिताके नाम पर इसको बसायी थी। खृष्टीय १७वीं शताब्दीके अन्तिम भागमें इसके निकट एक बौद्धस्तूप आविष्कृत हुआ।

अग्यारी—सामुद्रिक छोटी मछली, दाक्षिणात्यकी नदीमें

भी थोड़ी बहुत पाई जाती है। मलय उपसागरसे लगा कर दाक्षिणात्यके उपकूल तक समस्त सागरमें इसका अस्तित्व पाया जाता है। गञ्जामके लोग इसे जग्गरी कहते हैं। तामिल भाषामें 'उदान' और आराकानमें "गांजिङ्ग्यू" कहते हैं। नदीकी मछली कुछ छोटी लम्बाईमें ४।५॥ इञ्च होती है, परन्तु समुद्रमें यह ८ इञ्च तक लम्बी होती है। मत्स्यतत्त्वविद्गण इसे "गेरेस फर्लैमेण्टोसास" कहते हैं। यह देखनेमें चांदी जैसी चमकती है।

जग्गिक (सं० पु०) राजतरङ्गिणीवर्णित एक वीर पुरुष। इनकी उपाधि ठाकुर थी।

जग्ध (सं० त्रि०) अद कर्मणि क्त जग्धादेशः। १ भुक्त, भक्षित, खाया हुआ। (क्ली० अद भावे क्त। २ भोजन, खाना।

जग्धि (सं० स्त्री०) अद क्तिन् पूर्ववद् जग्धादेशः। १ भक्षण, भोजन खानेकी क्रिया। २ सहभोजन, कई आदमियोंका साथ मिल कर खाना।

जग्नर—आगरेसे करीब २६ मील दक्षिण-पश्चिम और फतेपुर-सीकरीसे करीब १८ मील दक्षिणमें अवस्थित एक सुरम्य नगर। यह भरतपुर और ढोलपुर राज्यके मध्यवर्ती अंग्रेजी अधिकारकी पश्चिम-सीमा पर है। दक्षिणदिशासे लगा कर अग्निकोण होती हुई पूर्वदिशा तक एक विस्तृत गिरिमाला गई है। पर्वतका ऊपरी भाग समतल है और वहां एक अच्छा किला है।

यहांके अधिवासीयोंका कहना है कि, मडोआके अधिपति अलहाके मामा जगनसिंहके नामानुसार इसका नाम जग्नर पड़ा है। कोई कोई ऐसी भी कहते हैं कि, यदुवंशीय किसी राजाने यह नगर बसाया था। किन्तु वहां 'जग्' नामकी एक जातिका वास है, इससे अनुमान होता है कि उसीके अनुसार इसका नाम पड़ा है। टड साहबका कहना है कि, १६१० ई० तक जग्नर परमारवंशके राजाओंके अधिकारमें था। उसके बाद यह मुसलमानोंके हाथमें चला गया। यहां बहुतसे मन्दिर थे, जो अब प्रायः टूट टाट गये हैं। ये मन्दिर अकबरके समयसे पहले बने हों, ऐसा अनुमान नहीं होता। मन्दिरमें लगे हुए शिलालेखोंमें सबसे पुराना लेख नागरीमें लिखा हुआ है, जिस पर १६२८ संवत् खुदा है।

जग्मि (सं० पु०) गम-कि: द्वित्वञ्च। १ वायु, हवा। (त्रि०) २ गमनशील, गन्ता, जो चलता हो।

जघन (सं० क्ली०) हन्यतेऽसौ हन कर्मणि-अच् द्वित्वञ्च। १ कटिके नीचे आगेका भाग, पेड़ू। २ कटिदेश, नितम्ब, चूतड़। ३ सेनाका सबसे पिछला भाग।

जघनकूपक (सं० पु०) जघनस्य कूपे इव कायतः कै-क। कुकुन्दर, चूतड़ परका गड्ढा।

जघनचपला (सं० स्त्री०) १ मात्रावृत्तविशेष। वह मात्रावृत्त जिसका प्रथमार्ध आर्य्याछन्दके प्रथमार्धसा और द्वितीयार्ध चपला छन्दके द्वितीयार्धसा हो। २ कामुकी स्त्री। ३ व्यभिचारिणी, कुलटा।

जघनार्ध (सं० पु०) जघनस्यार्धः, ६-तत्। पूर्वार्ध, पूर्व-भाग।

जघनिन् (सं० त्रि०) जघनमस्त्यस्य जघन-इनि। प्रशस्त जघनयुक्त, उत्तम चूतड़वाला।

जघनेफला (सं० स्त्री०) जघने इव मध्यभागे फलमस्याः, अलुकस०। काकोडुम्बरिका, कठगूलर, कठूमर।

जघन्य (सं० त्रि०) जघनमिव जघन-तत्। १ चरम, अन्तिम। २ गर्हित, त्याज्य, अत्यन्त बुरा। (क्ली०) जघने कटिदेशे भवं जघन्यं दिगादित्वात् यत्। ३ मेहन, मूत्रेन्द्रिय, लिङ्ग। (त्रि०) ४ क्षुद्र, (पु०) ५ शूद्र। ६ हीनवर्ण, नीच जाति। ७ पृष्ठभाग, पीठका वह भाग वह पुट्ठेके पास होता है। (त्रि०) ८ निकृष्ट, नीच। (पु०) ९ राजाओंके पांच प्रकारके संकीर्ण अनुचरोंमेंसे एक। बृहत्संहितामें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा हुआ है—जघन्य पुरुष प्रायः ही मालव्य पुरुषकी सेवा किया करते हैं। इनके कान अर्धचन्द्राकार, शरीरके जोड़ अधिक दृढ़, शुक्र सारमय और उंगलियाँ मोटी होती है। ये क्रूर और कृतघ्न होते हैं। इनमें कवित्वशक्ति भी होती है। जघन्यपुरुष, धनी, स्थूलबुद्धि, ताम्रमूर्त्ति और परिहासशील होते हैं। इनकी छाती, हाथों और पैरोंमें तलवार, पाश और कुल्हाड़ी आदिकेसे चिह्न होते हैं। (बृहत्संहिता ६८।२१-२४)

जघन्यचपला (सं० स्त्री०) जघनचपला देखो।

जघन्यज (सं॰ पु॰) जघन्ये चरमे जायते जघन्य-जन-ड। १ शूद्र (त्रि॰)। २ कनिष्ठ, छोटा।

जघन्यतर (सं॰ त्रि॰) जघन्य-तरप्। निकृष्टतर, बहुत नोच।

जघन्यभ (सं॰ क्लो॰) आर्द्रा, अश्लेषा, स्वाति, ज्येष्ठा, भरणी और शतभिषा इन छह नक्षत्रोंको जघन्यभ या जघन्य नक्षत्र कहते हैं।

जघन्यशायिन् (सं॰ त्रि॰) जघन्यं चरमं शेते शी-णिनि। जो अंतमें सोता हो, जो सबसे पीछे सोनेके लिये जाता हो।

जघ्नि (सं॰ पु॰) हन्-किन् द्वित्वञ्च। १ वधसाधन अस्त्रादि, वह अस्त्र जिससे वध किया जाय। २ हन्ता, वह जो वध करता हो, कतल करनेवाला।

जघ्नु (सं॰ त्रि॰) हन कर्त्तरि कु द्वित्वञ्च। घातक, मारनेवाला, कतल करनेवाला।

जघ्रि (सं॰ त्रि॰) घ्रा-कि द्वित्वञ्च। घ्राणकारी जो गन्ध ग्रहण करता हो।

जङ्गपूग (सं॰ पु॰) पापकर्म, अत्याचार, निष्ठुरता।

जङ्गबहादुर—नेपालके एक वीरपुरुष, ठप्पावंशीय वीर कुमार बालनरसिंहके ज्येष्ठ पुत्र। बालनरसिंह अत्यन्त राजभक्त थे, इसलिए उनके वंशको काजी उपाधि मिली थी। बामबहादुरसिंह, बदरी-नरसिंह आदि जङ्गबहादुरके और भी चार भाइयोंका विवरण मिलता है। इनमेंसे बामबहादुर जङ्गबहादुरको अत्यन्त स्नेह करते थे और उन्होंने कई बार इनकी रक्षा भी की थी। जङ्गबहादुरके वृद्धपितामह भीमसेनने गोरखावंशीय चतुर्थ राजा रणबहादुरके समय १८०४ ई॰में नेपालके राजमन्त्री बन कर बहुत दिनों तक अभूतपूर्व क्षमताके साथ राजकार्यका पर्यवेक्षण किया था। उनके समयमें राज्यकी बहुत कुछ उन्नति हुई थी। १८३२ ई॰में भीमसेनको प्रधान सहाय महाराणी त्रिपुरासुन्दरीकी मृत्युके बादसे ठप्पाओंका बल घटने लगा। रणबहादुरके पौत्र तथा गोर्धविक्रमके पुत्र राजेन्द्रविक्रम इस समय नेपालकी गद्दी पर बैठे थे। ठप्पाओंके परम शत्रु पाँड़ोंने नाना कौशलसे उनको वशमें ला कर इन लोगोंको राजकार्यसे बिल्कुल अलग कर दिया। भीमसेनके विरुद्ध नाना तरहके मिथ्या अभियोग किये जाने लगे, इससे उन्होंने अत्यन्त दुःखित हो कर १८३८ ई॰में आत्महत्या कर ली। इस घटनासे पहले भीमसेनके भतीजे मर्त्तवरसिंहको एक तरहसे निर्वासनदण्ड दिया गया था।

राजेन्द्र-विक्रमकी दो रानियाँ थीं। बड़ी रानी पाँड़ोंकी प्रधान सहाय थीं। उन्हींकी सहायतासे पाँड़े ठप्पाओंका उच्छेद कर रहे थे। बड़ी रानीके ज्येष्ठ पुत्र सुरेन्द्र-विक्रमको युवराज बनाया गया। पाँड़े और चौन्त्रागण इस समय नेपालके प्रधान प्रधान पद पर अधिष्ठित थे।

१८४१ ई॰में बड़ी रानीकी मृत्यु हुई। उस समय चौन्त्रावंशीय फतेजङ्ग चोन्त्रा नेपालके प्रधान मन्त्री थे। राज्यमें यत्परोनास्ति विशृङ्खलता फैलने लगी। राजा किसी भी कार्यका भार अपने ऊपर न लेते थे; उनकी इच्छा थी कि, वे राजा रहें, युवराज समस्त राजकार्य करें और दायित्व किसीके सिर पर न रहे। इसके अलावा युवराज अत्यन्त उद्धतस्वभाव थे, वे जरासे कारण पर नाना तरहसे प्रजाको असह्य पीड़ा पहुंचाते थे। कोई भी धनप्राणके लिये निश्चिन्त न था। ऐसी हालतमें राज्यके प्रधान प्रधान प्रजाओंने एकत्र हो कर १८४२ ई॰के दिसम्बर मासमें राजाके पास जा कर आवेदन किया। इस पर राजाने छोटो राणी पर समस्त राजकार्यका भार दे दिया। इसी बीचमें पाँड़े लोग नाना कारणोंसे राजाके क्रोधभाजन हो उठे थे, विशेषतः छोटी रानी उनके लिए खड्गहस्त रहती थीं। छोटी रानीने अपने पुत्रको सिंहासन पर बैठानेके लिए स्थिर किया कि ठप्पावंशीय मर्त्तवरसिंहको निर्वासनसे स्वदेशमें बुला कर उन्हें ही प्रधान मन्त्रीके पद पर अधिष्ठित करनेसे उनका अभीष्टकी सिद्धि हो सकती है। राजासे कह कर १८४३ ई॰में उन्होंने मर्त्तवरसिंहको राज्यमें बुला लिया। राजा पहले तो उन्हें प्रधान मन्त्री बनानेके लिए राजी न थे, किन्तु पीछे रानीके अनुरोधसे उन्हें सम्मति देनी पड़ी। जङ्गबहादुर भी इस समय अपने चचा मर्त्तवरसिंहके साथ नेपाल लौट आये थे। मर्त्तवरने नेपाल राज्यमें आ कर ही भीमसेनको निर्दोषता सिद्ध कर दी और पाँड़ोंको दण्ड दिया। पाँड़े और चौन्त्रा सर्दार

निर्वासित किये गये। मन्त्रिपद पर प्रतिष्ठित हो कर मत्तबर युवराजका पक्ष लेने लगे, जिससे वे रानीके विद्वेषभाजन हो गये और राजा भी अन्यान्य कारणोंसे उन पर नाराज हो गये। आखिरकार राजा और रानीने सलाह कर मत्तबरको गुप्त रीतिसे मरवा डाला। १८४६ ई०में १७ मईको मत्तबर निहत हुए थे। इस हत्याकाण्डमें उनके भतीजे जङ्गबहादुर भी शामिल थे। इन्होंने बहुत दिन पीछे प्रगट किया था कि, राजाने प्राणदण्डका भय दिखा कर उन्हें इस कार्यमें प्रवृत्त कराया था। मत्तबरकी मृत्युके बाद पाण्डे और चौन्तारीओंको लौटा लानेकेलिए दूत भेजे गये और यह स्थिर हुआ कि जबतक वे लौट न आवें, तबतक जङ्गबहादुर प्रधान मन्त्रीका कार्य करते रहें। उन्हें 'जेनरल' उपाधि दे कर तीन फौजों (रेजिमेण्ट)का अधिनायक बनाया गया। फतेजङ्ग चौन्तारीने लौट आनेके बाद पहले मंत्री होना अस्वीकार किया। उस समय जंगबहादुर, गगनसिंह, अभिमान राणा आदि बहुतसे मंत्रिपदके प्रार्थी थे। पहले तो स्थिर हुआ कि, सेनाविभागका कार्य जंगबहादुर तथा अन्यान्य विभागका कार्य गगनसिंह करेंगे। पीछे १८४५ ई०के सेप्टेम्बर महीनेमें फतेजंगने प्रधानमंत्रीका पद ग्रहण कर लिया और गगनसिंह, अभिमान राणा, दलभञ्जन पाण्डे और फतेजंग इन कई जनोंको ले कर एक मंत्रिसभा स्थापित हुई। फतेजंग इसके सभापति हुए। जंगबहादुर युवराजका पक्ष लेते थे, इसलिए उन्हें इस सभामें स्थान नहीं दिया गया। किन्तु उनके बलविक्रम और बुद्धिकौशलको देख कर किसीने भी प्रगट रूपसे उनसे शत्रुता ठाननेके लिए साहस नहीं किया। मंत्रिसभामें गगनसिंहका प्रभुत्व सबसे बढ़ा चढ़ा था।

गगनसिंह रानीके अतिशय प्रियपात्र थे, सर्वदा रानीके पास उनका जाना-आना रहता था। इससे रानीके चरित्रमें सन्देह होनेके कारण राजाने पुत्र और मंत्रियोंके साथ षड्यंत्र रच १८४६ ई०में १४ सेप्टेम्बरके दिन गगनसिंहको गुप्त भावसे मरवा दिया। इस हत्याकी खबर सुन रानी क्रोधसे अन्धी हो कर उसी समय कोट (संग्राम-सभागृह) की तरफ दौड़ी। सबको एकत्र करनेके लिए बिगुल बजाया गया। सबसे पहले जंगबहादुरने सेना सहित कोटमें उपस्थित हो कर रानीको कहा कि, वे और गगनसिंह दोनों ही रानीके प्रधान कर्मचारी हैं, इसलिए उनका जीवन भी निरापद नहीं है; अतएव इस हत्याकाण्डका विशेष रूपसे अनुसन्धान करना चाहिये। सबके एकत्र होने पर रानीने हत्याकारीको ढूंढ़नेका आदेश दिया। वीरकिशोर पाण्डे पर सन्देह हुआ, उसी समय वे कैद कर लिए गये। वीरकिशोरके पुनः पुनः दोष अस्वीकार करनेपर रानीको क्रोध आ गया और उन्होंने उसी समय उनका शिरश्छेद करनेके लिए अभिमानराणाको आदेश किया। अभिमान राणा राजाकी अनुमतिके लिए ठहर कर उनकी तरफ ताकने लगे, इस पर राजाने प्रधान मंत्रीको अनुपस्थित देख उनके आगमनकी प्रतीक्षा करनेके लिए कहा और वे कुछ देर पीछे कोट छोड़ कर चले गये। प्रधान मंत्री फतेजंग भी आ गये, विचारके लिए वे बार बार अनुरोध करने लगे, इससे रानीका क्रोध उत्तरोत्तर बढ़ने ही लगा। इस समयसे भयानक हत्याकाण्ड चलने लगा। जंगबहादुर रानीके इशारे पर गोलियां बरसाने लगे, फतेजंग, अभिमानराणा और दलभञ्जन तीनों ही भूमिशायी हुए। चारों ओर घोर युद्ध चलने लगा। युद्धके अन्तमें रानीने सन्तुष्ट हो कर जंगबहादुरको प्रधानमंत्री और प्रधान सेनापतिका पद दिया।

इस समय जङ्गबहादुर रानीके अत्यन्त विश्वासपात्र बन गये थे। युवराजको मारनेके लिए रानी उन्हें बार बार अनुरोध किया करती थीं; किन्तु वे नाना कौशलसे इस काममें विलम्ब करने लगे। कुछ दिन बाद वीरध्वज वसनियत्‌ने रानीके पास जा कर युवराजके प्रति जङ्गबहादुरके अनुरक्तिकी बात कह दी और जङ्गको मारनेके लिए षड्यन्त्र रचने लगी। परन्तु पण्डित विजयराज नामके जङ्गके एक हितैषी व्यक्तिने उनसे यह बात कह दी। षड्यन्त्र व्यर्थ हो गया। वसनियतोंमेंसे बहुतोंको प्राणदण्ड दिया गया, सन्ध्याके समय युवराजकी अनुमतिके अनुसार जङ्गबहादुरने रानीसे कहा कि,—"आप युवराजकी परम शत्रु हैं, नेपालराज्यमें आपके लिए स्थान नहीं है, शीघ्र ही नेपाल छोड़ कर पुत्रों सहित आपको कहीं अन्यत्र चला जाना चाहिये।" रानीने

यह समझ कर कि, उनका षड़यन्त्र व्यर्थ हुआ है, कुछ दिखलाई नहीं की। १८४६ ई०में २३ नवंबरके दिन राजा और रानी अपने दोनों पुत्रों सहित नेपाल परित्याग कर बनारस चले गये। युवराज नेपालमें राजप्रतिनिधिस्वरूप कार्य करने लगे। बसनियत्-षड़यन्त्र प्रगट हो जानेके बाद राजाने जङ्गबहादुरको महासमारोहसे प्रधान मन्त्रीके पद पर पुनः बैठाया था। उन्हें सम्मानसूचक अनेक उपाधियां भी दी गई थी। इस समयसे इनकी पारिवारिक उपाधि कुमारके बदले राणाजी हो गई। जङ्गबहादुरका प्रताप खूब ही बढ़ गया, तमाम नेपाल उनके वशीभूत हो गया।

रानी और उनके साथी बनारस पहुंच कर किस तरह पुनः नेपालको हस्तगत किया जाय इस चिन्तामें लीन हो गये और उसके लिए कोशिशें करने लगी। राजा भी 'क्या करना चाहिये' इस प्रश्नको हल न कर सके और चिन्तित रहने लगी। कुछ दिन ऐसे ही काटने पर राजा बनारस परित्याग कर सिगोली चले आये। रानीने गुरुप्रसाद चौन्त्रा नामक किसी एक व्यक्तिके जरिये नानारूप षड़यन्त्र कर राजाको सम्पूर्ण वशीभूत किया और वे पत्रों द्वारा राजाके साथ षड़यन्त्र रचने लगीं। इधर युवराज और जङ्गबहादुर राजाको पुनः पुनः पत्र लिख कर नेपाल आनेको लिख रहे थे। परन्तु वे रानीको ले कर नेपाल न आ सकेंगे, यह बात भी उन्हें स्पष्ट लिखी गई थी। राजा किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो कर कभी जङ्गके विरुद्ध षड़यन्त्र रचते और कभी नाना प्रकारके मिष्ट वाक्यों द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करनेकी चेष्टा करते थे।

आखिरकार १२ मईको गुरुदास चौन्त्रा और काजी जगत्‌राम पाण्डे पकड़ लिए गये। उनके पाससे एक पत्र मिला, जिस पर राजाके हस्ताक्षर थे। पत्र ८००० सैन्य और ५६००००० प्रजाको लक्ष्य कर इस आशयका लिखा गया था कि—वे जिस तरह बने प्रधानमन्त्री और उनके परिवारवर्गका (आत्मीय स्वजन सभीका) विनाश कर दें। इतने दिन बाद राजका भीतरी अभिप्राय जान जङ्गबहादुरने सम्पूर्ण सेनाके सामने उस राजाज्ञाको पढ़ कर कहा कि "आप लोगोंको आद्योपान्त समस्त घटनाएं मालूम हैं, अब राजाका ऐसा आदेश है, मैं ही प्रधान मन्त्री और आप लोगोंके सामने उपस्थित हूं; आप लोग जैसा उचित समझें, वैसा कर सकते हैं।' सेनाने राजाज्ञाको युक्तियुक्त न समझा, बल्कि युवराजको राजगद्दी पर बैठानेके लिए पुनः पुनः अनुरोध किया। १८४७ ई०में १२ मईको युवराज सुरेन्द्रविक्रम साह नेपालके राजा हुए। युवराजको राजा बनानेका कारण उल्लेखकर उसके नीचे सर्दार, काजी आदि उच्चपदस्थ व्यक्तियोंके हस्ताक्षर करा कर, जिनकी संख्या प्रायः ३७०से कम न थी, एक पत्र नेपालके भूतपूर्व राजा राजेन्द्रविक्रमके पास भेज दिया गया। इस पत्रमें भीमसेनकी हत्यासे लगा कर वर्त्तमानके प्रधान मन्त्रीके प्राणनाशकी चेष्टा तक, राजाके सम्पूर्ण कार्योंका विवरण लिखा गया था। परन्तु यह बात कहीं भी नहीं लिखी गई थी कि, वे नेपालमें न आवें, बल्कि उनको बुलानेके लिए अनुरोध ही किया गया था। इस घटनाके उपरान्त रघुनाथ पण्डित बहुतसी सेना संग्रह कर राजेन्द्र-विक्रमकी अनुमतिके अनुसार जङ्गके विरुद्ध षड़यन्त्र रचने लगे। राजा राजेन्द्रविक्रम भी उनके साथ मिल गये। २३ नवम्बरको वे रघुनाथकी सेनाको ले कर सिगोलीसे आलून पहुंच गये। सैन्यसंग्रहकी खबर सुन कर जङ्गबहादुरने कप्तान सनकसिंहको उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए भेजा। सनकसिंहने २८ मईकी रातको पहुंचनेके साथ ही विपक्षियों पर धावा कर दिया। राजेन्द्र-विक्रमकी सेना भाग गई और वे कैद हो कर नेपाल लाये गये।

१८४८ ई०में स्थिर हुआ कि, महारानी भारतेश्वरीको राजाका अभिवादन जनानेके लिए जङ्गबहादुरको इङ्गलैण्ड भेजा जायगा। १८५० ई०के जनवरी मासमें जङ्गबहादुर विलायतको रवाना हुए। जङ्गबहादुरकी अनुपस्थितिमें उन्होंके मध्यम भ्राता जेनरल बाम बहादुर प्रधान मंत्री और प्रधान सेनापतिका कार्य करने लगे।

१८५१ ई०में ६ फरवरीको जंगबहादुरके इङ्गलैण्डसे लौटने पर राजा तथा उनके पिता और राज्यके प्रधान प्रधान व्यक्ति उनको अभ्यर्थनापूर्वक ले आये। कई एक दिन बाद २१ तोपें दाग कर जङ्गबहादुरने पूर्ण दरबारमें भारतेश्वरी-प्रेरित कृतज्ञतासूचक पत्र पढ़ा। इन्होंने

इङ्गलैण्ड आकर 'नाइट् आफ् दी ग्राण्ड क्रास आफ् दी बाथ' और 'ग्राण्ड कमाण्डार आफ् दी ष्टार आफ् इण्डिया' ये दो पदवियां पाई थीं। यहां आकर वे पुनः राजकार्य का पर्यवेक्षण करने लगे।

१६ फरवरीको जंगके विरुद्ध और एक षड़यंत्र प्रगट हो गया। विलायत जानेके कारण वे जातिच्युत किये गये है, ऐसा षड़यंत्र रचा गया था। इनके भाई कुमार बदरीसिंह राणाजी, चचेरे भाई जयबहादुर राणाजी और राजसहोदर महिला साहब भी इस षड़यंत्रमें शामिल थे। उन्होंने जंगके मध्यम भ्राता बामबहादुरसिंहसे यह बात कही थी। बामबहादुरने जंगबहादुरसे सब बात खोल कर कह दी। षड़यंत्रकारियोंको पकड़ कर दरबारमें उपस्थित किया गया। विचारमें वे दोषी ठहराये गये। राजाने कहा कि, अन्यान्य अपराधियोंको जो सजा

जङ्ग बहादुर

दी जायगी, महिला साहबको भी वही सजा भोगनी पड़ेगी। दरबारके सभी लोगोंका मत था कि, अपराधियोंको प्राणदण्ड मिलना चाहिये, किन्तु जंगबहादुर इससे सहमत न थे। उन्होंने कहा—अपराधियोंको ब्रटिश गवर्मेण्टकी सहायतासे उन्हींके अधिकारमें किसी जगह कैद कर रखना चाहिये। दरबार पहले तो इस प्रस्तावसे सहमत नहीं हुआ, किन्तु पीछे जंगबहादुरने नाना प्रकारसे दरबारको सहमत किया। बहुत तर्क वितर्कके उपरान्त ब्रटिश गवर्मेण्टने अपराधियोंको इलाहाबादमें कैद कर रखना मञ्जूर किया। इनके भरण-पोषणका भार नेपाल राज्य पर ही रहा।

इस झगड़ेके खतम हो जानेके बाद जंगबहादुर नेपालके कानूनोंकी कठोरता घटानेके लिए चेष्टा करने लगे। नरहत्याके सिवा दूसरे समस्त अपराधोंमें प्राणदण्ड बन्द किया गया। विशेष गुरुतर अपराधके विना अंगच्छेदका दण्ड भी बन्द हो गया। नेपालमें सतीदाह प्रचलित है, किन्तु जंगबहादुरने विशेष चेष्टा कर अनेक सतियोंके प्राण बचाये थे।

जंगबहादुर ब्रटिश गवर्मेण्टके पक्षपाती थे। १८५१ ई०से नेपालमें महारानी भारतेश्वरीके जन्मदिवस २४ मईको प्रति वर्ष २१ तोपें दागी जानेकी प्रथा इन्होंने चलाई थी। यह प्रथा तभीसे चली आ रही है। डिउक आफ् वेलिंटन इनके मित्र थे, उनकी मृत्युका संवाद सुन इन्होंने ८३ तोपें दगवाई थीं।

१८५३ ई०में १५ माघके दिन महासमारोहसे जंगबहादुरकी प्रतिमूर्त्ति राजप्रासादके सामनेके खाण्डिखेल मयदानमें प्रतिष्ठित हुई। इस समय नेपालमें बड़ी धूमधाम हुई थी।

दूसरे वर्ष ८ मईको जंगबहादुरके ज्येष्ठ पुत्रसे महाराजकी बड़ी रानीकी बड़ी पुत्रीका विवाह हो गया। इसके थोड़े दिन बाद जंगबहादुरके साथ फतेजंग चौन्तरीकी छोटी बहिनका विवाह हुआ। इस विवाहसे ठप्पा (थापा) और चौन्तराओंका पुनर्मिलन हुआ था।

इसके बाद १८५५ ई०में १४ फरवरीको जङ्गके द्वितीय पुत्रके साथ राजाकी द्वितीयकन्याका तथा २री मईको फतेजङ्ग चौन्तराकी भतीजीके साथ जङ्गका विवाह हुआ। इस प्रकार जङ्गबहादुरने फतेजङ्गकी बहन और भतीजी दोनोंका ही पाणिग्रहण किया था।

१८५७ ई०में २५ जूनको जङ्गकी ज्येष्ठ कन्याके साथ राजाके ज्येष्ठ पुत्रका विवाह हुआ। इस तरह राजपरिवार और चौन्तरा-परिवारके साथ विवाहसूत्रसे बद्ध होनेके कारण इनका बहुत दिनोंसे चला आया हुआ द्वेषभाव सम्पूर्ण रूपसे दूर हो गया।

१८५६ ई०में १ले अगस्तको जङ्गबहादुरने सहसा प्रधान मंत्रीका पद त्याग दिया और अपने भाई बाम-

बहादुरको उस पद पर नियुक्त किया। परन्तु इसका कोई कारण नहीं मालूम हुआ। वे कहते थे कि, सर्वदा राजकार्य में लगी रहनेसे मन उकट गया और इसीलिए उन्होंने मंत्रिपद त्याग दिया।

इसके कुछ दिन पीछे राजा सुरेन्द्रविक्रमने जङ्गबहादुरको कास्की और लंजङ्ग प्रदेशका राजा प्रदान कर उन्हें 'महाराज'की उपाधिसे सुशोभित किया। उक्त प्रदेशमें जंगबहादुर दण्डमुण्डके कर्त्ता हो गये। स्थिर हुआ कि, प्रधान मंत्रीका पद उनको वंशपरम्पराको दिया जायगा। जङ्गबहादुर नेपालके राजा तथा रानी पर भी प्रभुत्व कर सकेंगे और उनके साथ विना परामर्श किये चीनगवर्मेण्ट या ब्रटिश गवर्मेण्टके साथ कोई भी कार्य नहीं किया जायगा। इस तरह जङ्गबहादुर नेपालके सर्वमय कर्त्ता हो गये।

१८५७ ई०में मईको बामबहादुरकी मृत्यु हो गई। कुछ दिन बाद जङ्गबहादुरके विरुद्ध और एक षड़यन्त्र पकड़ा गया। नेपालका गुरुङ्ग सेनाका एक जमादार इस षड़यन्त्रमें लिप्त था। सेनाओंने षड़यन्त्रकारी उक्त जमादारको विश्वासघातक जानकर मार डाला। बामकी मृत्यु, जङ्ग अत्यन्त शोकाकुल थे, शोक कुछ शान्त होनेपर इन्होंने राजा और प्रधान प्रधान व्यक्तियोंके अनुरोधसे २८ जून को मन्त्रीका पद ग्रहण कर लिया।

इसी समय सिपाही-विद्रोह आरम्भ हुआ। बहुत दिनोंसे जङ्गबहादुरकी इच्छा थी कि, वे खुद ब्रटिशोंकी कुछ सहायता करें। अब वह मौका देख उन्होंने ब्रटिश गवर्मेण्टको अपनी इच्छा जतलाई। ब्रटिश गवर्मेण्टने आदरके साथ उनकी सहायता लेना स्वीकार कर लिया जङ्गबहादुर सेना सहित आ कर अंग्रेजोंमें मिल गये। यात्राके समयमें उन्हें निहत करनेके लिए और एक षड़यन्त्र प्रगट हुआ। प्रधान प्रधान षड़यन्त्रकारियोंको उसी समय प्राणदण्डका आदेश दिया गया। १८५८ ई०के प्रारम्भमें अयोध्यामें विद्रोह उपस्थित हुआ। यहां सिर्फ सिपाही ही नहीं, बल्कि अधिवासी भी विद्रोहमें शामिल हो गये थे। अंग्रेज सेनापति जेनरल फ्राङ्कस बनारसमें सेना संग्रह कर रहे थे। ऐसे समयमें विश्वस्त गोरखा सेनाके साथ जङ्गबहादुर अंग्रेजोंकी सहायताके लिए आ पहुंचे। उनके साथ ८००० सेना थीं। जङ्गबहादुरके असीम पराक्रमसे समस्त अयोध्या वशीभूत हो गई। इन्होंने गोरखपुरके विद्रोही दलके अधिपति महम्मद हुसेनको नगरसे निकाल दिया। इस प्रकारसे अंग्रेजोंको सहायता कर जङ्गबहादुर और गोरखा लोग ब्रटिश गवर्मेण्टके अत्यन्त प्रियपात्र बन गये।

जङ्गबहादुर अत्यन्त साहसी और शिकारके प्रेमी थे। जहां अत्यन्त विपद्‌की सम्भावना होती, वे उसी जङ्गलमें बेधड़क अकेले घुस जाया करते थे और बड़ी चतुराईके साथ शिकार करते थे।

जङ्गबहादुर १८७७ ई० में परलोक सिधारे थे।

जङ्गम (सं० त्रि०) पुनः पुनर्गच्छति गम-यङ् अच्। १ अस्थावर, चलने फिरनेवाला, चलता फिरता। सुश्रुतके मतसे जङ्गम चार भागोंमें विभक्त है—जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज्ज। मनुष्य पशु प्रभृति जरायुज, पक्षी सर्प सरीसृप प्रभृति अण्डज, कृमि कीट प्रभृति स्वेदज तथा इन्द्रगोप, मण्डूक प्रभृति उद्भिज्ज हैं। (सुश्रुत सू० अ०१)

२ जो एक स्थानसे दूसरे स्थान पर जा सके।

जङ्गम—(अर्थात् लिंगाधिकारी मानव) दक्षिण देशवासी लिंगायत पुरोहित। इनका दूसरा नाम अय्य वा वीरशैव भी है। तमाम दक्षिण देशमें प्रायः एक लाखसे अधिक जंगम रहते हैं। इनमें कोई भी उपाधि नहीं है, किन्तु जो जिस गांवमें रहता है, उस गांवके अनुसार वह अपना परिचय दिया करता है।

जंगमोंका कहना है कि, यह सम्प्रदाय पहले हो से चला आ रहा है, परन्तु कालके वशसे अवनति होनेके कारण शैवधर्मके प्रचारार्थ शिवने नन्दीको आदेश किया था। नन्दीने श्रीशैलके पीछेके हिंगुलेश्वर-पार्वती नामक अग्रहारमें मादिग राय नामक ब्राह्मणके औरस और मदोखा वा महादेवीके गर्भसे जन्मग्रहण किया, उनका नाम हुआ-बासव या बासवन्न। बासवपुराणमें इनका वर्णन है। परन्तु उसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, इस बासवसे ही जंगम-सम्प्रदाय प्रवर्त्तित हुआ होगा।

जंगम दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं—एक धतस्थल या विरक्त और दूसरे गुरुस्थल या गृहस्थ। विरक्त जंगम

लोग विवाह नहीं कर सकते, उदासीन वैरागियोंकी तरह संसारकी आसक्तिको दूर कर पवित्र भावसे जीवन बिताते हैं। ये देखनेमें स्मार्त्त संन्यासियोंसे कुछ कुछ मिलते जुलते हैं। ये लिंगायतोंके ऊपर गुरुपना नहीं कर सकते और न उन पर किसी तरहका बलप्रयोग ही कर सकते हैं। शास्त्रोंकी आलोचना और शास्त्रोपदेश करना ही इनका प्रधान कर्त्तव्य कर्म है।

गुरुस्थलश्रेणीके जंगम विवाह करते हैं। अन्यान्य लिंगायतोंके ऊपर ये लोग गुरुपना चलाते हैं; इसलिये ये गुरुस्थल कहलाते हैं। किसी विरक्तकी मृत्यु होनेपर एक दश वर्षका बालक उस पदको पाता है। गुरुस्थल श्रेणी से ही यह बालक लिया जाता है। इस बालकको आजन्म कुँवारा रहना पड़ता है। नाना स्थानोंके लिंगायतोंमें विधवाविवाह प्रचलित होने पर भी गुरुस्थलश्रेणीके लोग विधवा-विवाह नहीं कर सकते। ये कुमारी कन्याका ही विवाह करते हैं।

जङ्गमोंमें एक एक मठ भी हैं वहां एक एक गुरु रहते हैं, उनका नाम है पटदय। जन्म, मृत्यु और विवाहमें पटदय व्यवस्था दिया करते हैं। विरक्त या पटदय कभी भी अपने मठको नहीं छोड़ते। उनके कई एक सहकारी रहते हैं, जो चरन्ति कहलाते हैं। ये चरन्ति ही धर्मभीरु लिङ्गायतोंके घर जा कर रुपये-पैसे आदि वसूल करते हैं तथा मठका अन्यान्य कार्य चलाते रहते हैं

चरन्तियोंके सिवा विरक्त और पटदयोंके और भी १२ कर्मचारी रहते हैं, वे उनमें छोटे हों या बड़े परन्तु कहाते मरी अर्थात् छोकड़े ही हैं। गुरुस्थलोंके घरसे खूब छोटेपनसे ही चरन्ति या मरी चुन लिए जाते हैं। पटदय, चरन्ती या जो मरी भविष्यमें पटदय होंगे वे विवाह नहीं कर सकते। अन्यान्य मरी इच्छानुसार विवाह कर सकते हैं।

किसीको जातिच्युत करने या समाजमें मिलानेका पटदयोंको सम्पूर्ण अधिकार होता है। जातिच्युत व्यक्ति पटदयको यदि ज्यादा रुपया न दे सके, तो वह सहजमें समाजभुक्त नहीं हो पाता। इसलिए लिङ्गायत जङ्गममात्र ही पटदयसे खब डरते, भक्ति करते और इष्टदेवकी तरह उनकी पूजा करते हैं।

विरक्त लोग आत्मीय कुटुम्बके साथ नहीं मिलना चाहते, किन्तु पटदय जाति कुटुम्बको मठमें अपने पास रख सकते हैं। सुना जाता है कि, बहुतसे पटदय सेवाके लिए दासी भी रक्खा करते हैं। विरक्त, पटदय, चरन्ती और मरी ये सभी रोज एक बारसे लगा कर तीन बार तक स्नान करते हैं। जितने भी बड़े मठ हैं, वे एक एक पटदयके अधीन हैं, किन्तु अत्यन्त छोटे मठ चरन्ती और मरी लोगोंके अधीन देखनेमें आते हैं।

विरक्त और पटदय अपने अपने मठमें सुबह और शामको पुष्पभूषित कर लिङ्गकी पूजा करते हैं। शिष्य दिनमें दो बार इनके पैर धोया करते हैं। पहली बारके पैर धोनेके पानीको ये लोग धूल पादोदक कहते हैं। लिङ्गायतोंके लिए यह पानी बहुत ही मूल्यवान पदार्थ है, वे इसे स्पर्श कर वा इससे स्नान कर अपनेको कृतार्थ समझते हैं। जब कोई भक्त विरक्त या पटदयके दर्शन करनेको आता है, वह पहले उनके पैर धोनेके "करुणवारि" को पान कर धन्य होता है। दर्शन करते समय गुरुगण लिङ्गायतोंके माथे पर पैर रख कर आशीर्वाद दिया करते हैं

जङ्गम लोग खानेमें बड़े निपुण होते हैं, किन्तु पकानेमें उतने नहीं। दूध, घी, मठा, अन्न, यव आदि इनका प्रधान खाद्य है, लहसुन, प्याज आदि खानेमें भी इनको आपत्ति नहीं, किन्तु मद्य मांस कोई भी नहीं खाते। मठके जङ्गमोंके खान-पानमें भी कुछ अदबकायदा है। भोजनके लिए बैठनेसे पहले एक एक गलीचा या चटाई बिछा कर उसके ऊपर एक एक "अड्डणी" नामक तिपाई रक्खी जाती है, फिर उसके ऊपर पीतल या कांसेकी थालियां लगा दी जाती हैं। बादमें खानेकी सामग्री परोसी जानेके उपरान्त ये बैठ कर खाना प्रारम्भ करते हैं। आहार कर चुकने पर ये अपनी चादरसे थालीको पोंछते हैं।

गुरुस्थल या साधारण जङ्गम लोग कनाड़ियोंकी तरह पोषाक पहनते हैं। देह पर कुरता आदि पहनते हैं। इनकी स्त्रियां भी कुरती या चोली पहना करती हैं। परन्तु विरक्त, पटदय, चरन्ती और मरी लोग चादर और लाल पगड़ीके सिवा कुरता आदि कुछ भी नहीं पहनते।

अङ्गम पुरुष मात्र ही देह पर विभूति, कण्ठमें रुद्राक्ष और चौखूंटो चाँदीको डिब्बी तथा लिङ्ग रखनेका एक गुन्दगुटंगो वा गोल चांदीका डिब्बा रखते हैं। स्त्रियां सब तरहके गहने पहनती हैं। अङ्गम लोग साधारणतः नम्र, सत्प्रकृति और आतिथेय होते हैं। शास्त्रिसम्बन्धन, स्नाना ह्निक, लिङ्गकी उपासना, साधारण लिङ्गायतकी पूजा ग्रहण करना, साधारणको उपदेश देना इत्यादि अङ्गमोंकी विशेषतः विरक्त और पटदयोंकी उपजीविका है। वर्त्तमानकी कनाड़ी भाषामें लिखित बासवपुराण और चेन बासवपुराण ही इनके प्रधान शास्त्रीय ग्रन्थ हैं, इनमें अङ्गम गुरु और साधुओंके उपाख्यान वर्णित हैं।

अङ्गम लोग हिन्दू होने पर भी विष्णु, राम, कृष्ण इत्यादि अपरापर देवताओंकी उपासना नहीं करते और न अपर किसी ब्राह्मणका ही सम्मान करते हैं। उलवी और श्रीशैल ही इनके प्रधान पुण्यक्षेत्र हैं।

चित्तलदुर्गमें मार्गस्वामी नामक अङ्गमोंके प्रधान आचार्य्य वास करते हैं।

अन्यान्य ब्राह्मणोंकी तरह ये सम्पूर्ण संस्कारोंको नहीं करते। सन्तान होनेके साथ ही उसका नाल काटा जाता है, एक अङ्गमपुरोहित आ कर प्रसूतिगृह (सोवर) में बैठता है। पुरोहितके पैर धोनेका पानी अर्थात् धूलपादोदकको सबके माथे लगाया जाता है और घरोंमें छिड़क कर सब लोग परिशुद्ध होते हैं। इसके बाद पुरोहितको पादपूजा, लिङ्गपूजा, करुणवारि पान इत्यादि आनुष्ठानिक कार्य किये जाते हैं। तदनन्तर पुरोहित एक नवीन पाषाण-लिङ्ग ले कर दो एक मिनट तक बच्चेके गलेमें छुआ कर उसे प्रसूतिके गलेमें बाँध देता है और आशीर्वाद देता है कि, बच्चा इस लिङ्गको धारण करनेके उपयुक्त बने। फिर पुरोहित अपने टके ले कर विदा होता है। पांचवें दिन रातको भक्तादि चढ़ा कर षष्ठीदेवीकी पूजा की जाती है। लिङ्गायतोंका कहना है कि, यह प्रथा उनमें पहले नहीं थी, दूसरे हिन्दुओंको देखादेखी चल पड़ी है। तेरहवें दिन पुरोहित फिर आता है और धूलपादोदक, करुणवारि आदि दे कर बच्चेका नाम बतलाता है। इस दिन सन्ध्याके समय पांच सुहागिन स्त्रियां आ कर बच्चेको झूलनेमें बैठाती हैं और अभ्यागतोंको पान सुपारी दी जाती है। मास पूरा होनेके दो एक दिन पहले घरकी या कुटुम्बकी स्त्रियां प्रसूतिको नदी वा सरोवरके किनारे ले जाती है। यहां सिन्दूर और हल्दीसे जलदेवताकी पूजा कर प्रसूति एक गागर पानी कांखमें रख कर घर लौट आती है। एक वर्ष पूरा होने पर बालकका चूड़ाकरण होता है। इस समय फिर पुरोहितकी जरूरत होती है, वह आ कर दो पानोंको कैंचीकी तरह भांज कर बालकके बालोंसे छुआ देता है, फिर नाई मस्तक मूड़ता है, इसको अङ्गम लोग 'सदोकतो सोना' कहते हैं। बालकका चूड़ाकरण किसी भी अयुग्म वर्षमें किया जा सकता है, किन्तु लड़कोंका पाँच वर्षके बाद नहीं होता। कोई कोई अङ्गम कहते हैं कि, पांच वर्षमें कन्याके बाल बड़े हो जाने पर काट दिये जाते हैं। उनका विश्वास है कि, ऋतुकालमें उन बालोंके छू जानेसे नवजात शिशुको किसी तरहकी पीड़ा हो सकती है दशवें वर्षमें लड़कोंका उपनयन होता है।

वर और कन्यापक्षवालोंका एक गोत्र या एक गुरु होनेसे विवाह नहीं हो सकता। विवाहके समय आचार्य आ कर वर-कन्याकी जन्मपत्री मिलाते हैं। जन्मपत्रीके मिलने पर शुभदिनमें पुरोहित, आत्मीय कुटुम्ब और पाँच सुहागिन स्त्रियोंके सामने विवाहका दिन नियत किया जाता है। इस दिन पान वितरण और वरपक्षियोंको भेज दिया जाता है। विवाह होनेसे एक दिन पहले कन्याका पिता वरके घर दो अंगरखाओंका कपड़ा, ५ पान, ५ सुपारी, ५ सेर चावल, ५ निम्बू, ५ हल्दीकी गाँठें, और ५ भेली गुड़ भेजता है और उनके घर जा कर कन्याका पाणिग्रहण करनेके लिए लिखता है।

विवाहके समय इनके घरोंमें हल्दीकी खूब ही बखेर होती है। वरका घर दूसरे गांवमें हो और बरात गांवके पास आ गई हो, तो कन्यापक्षके लोग बड़ा समारोहके साथ कुछ दूर जा कर अभ्यर्थना पूर्वक उन्हें ले जाते हैं। बरातियोंके ठहरनेके लिए एक मकान पहले होसे ठीक कर लिया जाता है। यहां वरके उपस्थित होने पर कन्यापक्षवाले पांच माङ्गलिक घटोंकी पूजा करते हैं और वर जिस घर या कमरेमें ठहरा हो, वहीं कन्याको ले आते हैं। वर और कन्या दोनों एक चौकी

पर बिछा दिये जाते हैं और फिर ५ सुहागिन स्त्रियां मिल कर दोनों पर तेल-हल्दी चढ़ाती हैं। बादमें उनके चारों ओर कलावा (लाल पीला सूता) लपेट दिया जाता है। इसके बाद वर और कन्या दोनों कन्याके घर पर आ कर पहले पुरोहितका पादधौत करणवारि पान करते हैं। दूसरे दिन वर-कन्या दोनों फिर हल्दी पोतते और करण-वारि पीते हैं। बादमें जब वर-वधू दोनों वरके घरके लिए यात्रा करते हैं, तब कन्यापक्षको तरफसे पान-सुपारी और कपड़े आदि भेजे जाते हैं। इस समय वर और कन्या दोनोंके घर पर लिङ्ग पूजा और लिङ्गायत मन्दिरमें मिट्टीका दीपक जला कर "गुगल" नामक उत्सव होता है। दूसरे दिन सुहागिन औरतें फिर वर-कन्या पर तेल-हल्दी चढ़ाती हैं। कन्यापक्ष-वाले वरके घर जा कर पक्वान्न भोजन करते हैं, वरको भी उसमेंसे कुछ कुछ खाना पड़ता है। इस दिन कन्याका पिता एक थालमें वरके पैर धोता है और पितामाता दोनों उस पानीमें फल और सिन्दूर निक्षेप करते हैं। इसके उपरान्त वर खूबसूरत पोशाक पहन कर और कपोलों पर विभूति लगा कर बैल पर सवार हो मन्दिर-में जा कर पूजा करता है, पीछे विवाह करनेके लिए श्वशुरके घर पहुंचता है। श्वशुरालयमें पहुंचते ही उसको उत्तम बिछौने पर बैठा कर वस्त्र अलङ्कार आदि, दिये जाते हैं और उसके हाथ पैरों पर हल्दी पोत दी जाती है। फिर वह अन्तःपुरमें लाया जाता है। यहां पहले-हीसे गोबरसे लिपी हुई जगह पर पुआल बिछा कर ऊपरसे गलीचा बिछा रखते हैं, वर-कन्या दोनों उसी पर बैठाये जाते हैं। कन्याकी सखी स्वरूप दो कुमारियां उसके पास पास बैठाई जाती हैं। इनके सामने ५ कलस रखे जाते हैं और पांच फेर कलावा उनके चारों तरफ घेर देते हैं और उसीका कुछ टुकड़ा पुरोहित और कन्याकी कलाईमें लपेट दिया जाता है।

पुरोहित मन्त्र पढ़ता रहता है और कन्या वरका दाहिना हाथ पकड़े रहती है। मठपति थोड़ासा पञ्च-गव्य वरके दाहिने हाथ पर उंड़ेल देता है और कन्या उसे स्पर्श करती है। इस समय वर-कन्या दोनों पांच दफे हाथ धो लेते हैं। पांच सुहागिन स्त्रियां दीपक-से आरती उतारती हैं। पुरोहित और उपस्थित सभी लोग धान चढ़ा कर वरकन्याको आशीर्वाद देते हैं। इसके बाद पुरोहित धान, सिन्दूर और फूलोंसे मङ्गल-सूत्रको पूजा कर उसे पांच सौभाग्यवती स्त्रियोंके हाथ-में देता है स्त्रियां उस सूत्रको कन्याके गलेमें बांध देती हैं। इस समय पूर्वोक्त पुरोहितके हाथका कलावा खोल कर उसे तेल और हल्दीमें पोत कर वरके दाहिने हाथ-को कलाईमें बांध दिया जाता है इस सूत्रको ये लोग गुरुकङ्कण कहते हैं। इस समय पांच सुहागिन स्त्रियां कन्याके हाथमें भी वैसा सूत बांध देती हैं, इसको वधू-कङ्कण कहते हैं। फिर नवदम्पती उपस्थित गुरुजनोंको नमस्कार करते हैं, पीछे आत्मीय स्वजनोंका भोज होता है। वर और वधू दोनों एक पत्तलमें जीमते हैं। इस कार्यके होते ही विवाह समाप्त हो जाता है। दूसरे दिन वरवधू फूल चन्दनसे पुरोहितको पादपूजा कर करुण-वारि पान करते हैं। मध्याह्न भोजनके उपरान्त नर-नारी सभी मिल कर बड़े धूमधड़ाकेसे गाते-बजाते और नाचते हुए बड़ी सड़कसे लिङ्ग-मन्दिरको जाते हैं। वर-वधू यहां लिङ्गकी पूजा कर फिर पहलेकी तरह ठाट-बाटसे वरके घर लौटते हैं। घरमें प्रवेश करते समय वरकी बहन, यदि न हो, तो और कोई बालिका द्वार रोक कर खड़ी हो जाती है। और कहती है कि, "तुम्हारे लड़की होने पर मेरे लड़केके साथ उसका ब्याह करोगे कहो. तब जाने दूंगी।" वरवधू दोनोंको स्वीकारता मिलने पर लड़की रास्ता छोड़ देती है। उधर अन्तःपुरमें वरकी माता बैलकी जीनके ऊपर बैठी रहती है, वर माताके दाहिनी गोदमें आ कर बैठ जाती है। बैठ कर ही तुरन्त दोनों गोदें बदल लेते हैं। इस पर पांच सौभाग्यवती स्त्रियां मातासे पूछती है कि, "दोनों फूलोंमें भारी कौनसा है?" माता उत्तर देती है—"मेरे दोनों फूल ही बराबर हैं मैं हमेशा दोनोंको समान भाव-से प्यार करूंगी।"

तदनन्तर वरवधू दोनों ब्याहके माड़के नीचे लाये जाते हैं, वहां नाई दोनोंके हाथ पैरों पर हल्दी पोतता है, और पांच सुहागिन स्त्रियां मिल कर उन्हें नहला देती हैं। वरवधूकी भीगी धोती या साड़ी नाईको मिलती

है। इसके बाद आत्मीय स्वजनोंको भोजन करा कर विवाह उत्सव समाप्त किया जाता है।

कन्या बारह तेरह वर्षको उम्र तक पिताके घर रहती है, इसके बाद वरके आत्मीय स्वजन कन्याके घर आ कर बड़ी धूमधामके साथ उसे अपने घर ले आते हैं। इस समय ज्योनार और वरवधूको कपड़े, गहने आदि दिये जाते हैं। इसके उपरान्त कन्याके रजस्वला न होने पर भी दोनोंको एक घरमें सोने देते हैं। कन्याके रजस्वला होने पर अन्यान्य उच्च जातियोंकी भांति ये भी तीन दिन तक उसे अलग रखते हैं, वह किसी पुरुष का मुंह नहीं देख सकती। चौथे दिन सिर्फ उसे नहला दिया जाता है, और कुछ उत्सव नहीं होता। इसके बाद ऋतुमती होने पर उसे तीन दिन तक छूते नहीं और न देवालय वा रसोई घरमें ही जाने देते हैं।

मृत्युका समय उपस्थित होने पर मठपति वा पुरोहित आ कर उसे धूलपादोदक और करणवारि पिलाते हैं, बादमें वे मुमूर्षुके सर्वाङ्गमें विभूति वा गोबर पोत कर कण्ठमें रुद्राक्षकी माला पहना देते हैं। मुमूर्षु भी पुरोहितको पान सुपारी, एक मुट्ठी विभूति और कुछ रुपया-पैसा दे कर प्रणाम करता है। मृत्यु होने पर फिर पुरोहित आ कर पदधूलि देते हैं। मृत व्यक्ति यदि विवाहित वा पुरोहित हो तो मठपति उसे बैठा कर विभूति लगाते और नाना अलङ्कारादि पहनाते हैं। इसके बाद घरसे निकाल कर रथाकृति डोलीमें रखते हैं, फिर चार लिङ्गायत उस डोलीको कंधे पर रख कर श्मशानमें पहुंचते हैं। यहां आ कर मृत व्यक्तिके घरके लोग उन अलङ्कारोंको उतार कर बांट लेते हैं। ज्येष्ठ पुत्र मस्तकके परिच्छदादि पाता है। बादमें मुर्देको बैठा कर एक थैली में भर देते हैं और उसके कण्ठस्थ लिङ्ग सहित उसे जमीनमें गाड़ देते हैं। समाधि खोदनेवालेको पुरोहित २१ पैसे देते हैं। उन पैसोंके ऊपर पुरोहित कुछ मन्त्र लिख दिया करते हैं। समाधि खोदनेवाला उन पैसोंको कब्रके भीतर जा कर मुर्देको देहके नाना स्थानों पर रख देता है। तदनन्तर उस कब्रमें मुर्देके ऊपर एक कपड़ा बिछा देते हैं और उपस्थित सभी लोग मन्त्र पढ़ते हुए फूल और बिल्वपत्रोंकी वर्षा करते हैं। कब्र खोदनेवाला उनको इकट्ठा कर मुर्देके ऊपर एक जगह रखता जाता है। इस समय मृत व्यक्तिके घरके लोग एक एक मुट्ठी मिट्टी ले कर मुर्देके ऊपर डालते हैं। बादमें मिट्टीसे कब्र को ढक देते हैं। इसके बाद पुरोहितके पैरोंके पास एक नारियल फोड़ा जाता है, तथा सब मिल कर उनके पैरों पर फूल और सिन्दूर अर्पण करते हैं। इसके बाद सब घर लौट आते हैं। घरमें आ कर ज्येष्ठपुत्र घरके चारों ओर धूल-पादोदक छिड़कता है। इसीसे सब शुद्ध हो जाते हैं। एक मास बाद पुरोहितको भोज दिया जाता है। बालक और अविवाहितको सतर सुला कर गाड़ देते हैं।

जङ्गम और उनके शिष्य प्रशिष्योंको ले कर इनमें एक एक समाज है, प्रत्येक समाजके भिन्न भिन्न नाम और उनके एक एक मठाधिकारी हैं। कोई कोई समाज में शामिल भी नहीं हैं। इनमें विशेष कोई जातिविचार नहीं है। इनमें विधवा-विवाह और बहुविवाह प्रचलित है।

जङ्गमकुटी (सं० स्त्री०) जङ्गम कुटीव। छत्र, छत्ता।

जङ्गमगुल्म (सं० पु०) जङ्गमश्चासौ गुल्मश्चेति, कर्मधा०। पदाति सैन्य, पैदल सिपाहियोंकी सेना।

जङ्गमविष (सं० क्लो०) जङ्गमस्य विषं, ६ तत्। जङ्गमसे प्राप्त विष, जङ्गमसम्बन्धी जहर। प्राचीन पदार्थतत्त्वविदो के मतसे विष तीन भागोंमें विभक्त है—स्थावर, जङ्गम और कृत्रिम। स्थावर और कृत्रिम विषका विवरण विष शब्दमें देखो। जङ्गम वा चलते-फिरते प्राणियोंके शरीरमें जो विष उत्पन्न होता है, उसे जङ्गम विष कहते हैं। इसके सोलह आधार हैं १ दृष्टि, २ निश्वास, ३ दंष्ट्रा (दांत), ४ नख (नाखून) ५ मूत्र, ६ मल (टट्टी), ७ शुक्र, ८ लाला (लार), ९ आर्तव (रज, जो स्त्रियोंके ऋतु कालमें निकलता है), १० आल (डङ्क), ११ मुखसन्दंश, १२ अस्थि, १३ पित्त, १४ विशर्द्धित (?), १५ शूक और १६ मृतदेह। दिव्य सर्पको दृष्टि और निश्वासमें विष रहता है। पृथिवीस्थ सर्पके दंशनमें विष है; मार्जार, कुक्कुर, वानर, मकर भेक, पाकमत्स्य, गोधा (गोह), शम्बूक, प्रचलाक, छिप कली और अन्यान्य चौपाये कीड़ोंके दांतों और नखोंमें विष रहता है। चिपिट, पिच्छक, काषायवासिक, सर्षप·

वासिक, तोटकवर्ण और कीटकोण्डिन्यक इनके विष्ठा और मूत्रमें विष है। मूषिकके शुक्रमें विष है, मकड़ीकी लाला, मूत्र,पुरीष, मुखसन्दंश, नख, शुक्र, आर्त्तव ये सब विषाक्त हैं। वृश्चिक, विश्वम्भर,राजीवमत्स्य, उच्चिटिङ्ग और समुद्रवृश्चिक, इनके डङ्कमें विष होता है। चित्रशिर, सरावकुर्दि, शतदारक, अरिमेदक और शारिकामुख, इनका मूत्र और पुरीष जहरीला होता है जिससे मरे हुए प्राणीको हड्डी, सर्पकण्टक और वरटीमत्स्यकी हड्डीमें अस्थिविष है।

शकुलोमत्स्य, रक्तराजी और चरकोमत्स्य इनके पित्तमें विष रहता है। सूक्ष्मतुण्ड, उच्चिटिङ्ग, वरटी, शतपदी, शूक, वलभिका, शृङ्गी और भ्रमर, इनके रोंआ और मुंहमें विष होता है। (सुश्रुत कल्प० ३ अ०)

अङ्गमत्व (सं० क्ली०) जङ्गमस्य भावः जङ्गम त्व। जङ्गमका धर्म या भाव।

"तथा देवो जङ्गमत्वादिर्हिष्टा।" (भारत १४।११ अ०)

अङ्गरा—अंगरेजोंकी एक जाति। ये अधिकतर बुन्देलखण्ड और लोदी-फतेपुर रियासतमें रहते हैं। इनका आचरण उच्च हिन्दुओंके समान है। ये विधवा-विवाहके विरोधी हैं और स्त्रीके व्यभिचारिणी होने पर उसे जातिच्युत कर देते हैं। ये लोग नाईके हाथकी पक्की रसोई खाते हैं।

अङ्गल (सं० त्रि०) गल यङ्-अच् निपातने साधु। १ जलशून्य, निर्जल, रोगिस्तान। २ निर्जन जहां कोई आदमी न बसता हो। (शब्दार्थचिन्तामणि) (पु०-क्ली०) ३ मांस। (मेदिनी) ४ अरण्य, वन।

अङ्गलीजयगढ़—बम्बई प्रदेशके सतारा जिलेमें सह्याद्रिमाला ६० मील विस्तृत है; ६० मीलके भीतर पर्वतों पर ५ पार्वतदुर्ग हैं। उत्तरकी ओर प्रतापगढ़ है, इसके ७ मील दक्षिणमें मार्कण्डगढ़ है और इसके १० मील दक्षिणमें अङ्गलीजयगढ़ है। सतारा देखो।

अङ्गाल (सं० पु०) जङ्गल पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पानी रोकनेका बांध। इसके पर्याय—आलि, पद्धार, सेतु और सम्बर है। (क्ली०) २ रङ्गमद्रव्यभेद, एक रङ्ग।

अङ्गिड़ (सं० पु०) मणिविशेष, एक प्रकारकी मणि। इसको पासमें रखनेसे राक्षस प्रभृतिका भय जाता रहता है। "देवेडं सेन मणिना जङ्गिडेनमयोभुवा।" (अथर्व)

अङ्गीपुर-१ बङ्गालके मुर्शिदाबाद जिलेका उत्तर सबडिविजन। यह अक्षा० २४° १८´ तथा २४° ५२´ उ० और देशा० ८७° ४९´ एवं ८८° २१´ पू०के मध्य पड़ता है। क्षेत्रफल ५०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३३४१६१ है। भागीरथी नदी इसको दो भागोंमें विभक्त करती है। पूर्वकी भूमि उर्वरा है। इसमें एक शहर और १०६३ गांव है।

२ बङ्गालके मुर्शिदाबाद जिलेमें अङ्गीपुर सबडिविजनका सदर। यह अक्षा० २४° २८´ उ० और देशा० ८८° ४´ पू०में बसा है। लोकसंख्या प्रायः १०८२१ है। कहते हैं, नगर जहांगीर बादशाहने पत्तन किया था। अंगरेजी शासनके आदि समयकी यहां कम्पनीकी एक व्यापारिक आढ़त थी। रेशमका कारबार खूब चलता था। अब भी आसपास रेशम लपेटनेकी बहुत चरखियां हैं। भागीरथीमें चलनेवाली नावोंका महसूल यहां वसूल किया जाता है। १८६९ ई०में म्युनिसपालिटी कायम हुई।

अङ्गीरा—राजमहल और मुङ्गेरके मध्यस्थित एक पहाड़। बहुत दिनोंसे यह एक गङ्गातीरस्थ पवित्र स्थान समझा जाता है। यहांके नारायणमन्दिरमें यात्रियोंका समागम हुआ करता है।

अङ्गुल (सं० क्ली०) गम-यङ्-लुक् बाहुलकात् डुल्। १ विष, जहर। २ जाङ्गिनी फल।

अङ्घ (सं० पु०) प्रशस्ता जङ्घा विद्यतेऽस्य जङ्घा-अच्। रामायणप्रसिद्ध राक्षसविशेष, एक राक्षसका नाम जिसका उल्लेख रामायणमें किया गया है। (रामायण ६।८८।१२)

अङ्घा (सं० स्त्री०) जंघन्यते कुटिलं गच्छति हन्-यङ्-लुक्-अच् पृषोदरादि ततष्टाप्। १ गुल्फके ऊपर और जानुके नीचेका भाग, जांघ, रान, ऊरु। इसके पर्याय—टङ्गा, टङ्क और टङ्किका है। २ पिंडली। ३ फल और हस्तानेमें लगे हुए कैंचीका दस्ता। ४ काकजङ्घा।

अङ्घाकर (सं० त्रि०) जङ्घां तत् साधागतिं करोति जङ्घा-कृ-ट। धावक, तेज चलनेवाला।

अङ्घाकरिक (सं० त्रि०) कृ-अप्, कारो विक्षेपः जङ्घायाः करोऽस्यस्य जङ्घाकार-ठन्। धावक, जो दौड़ धूप कर अपनी जीविका निर्वाह करता हो। इसके पर्याय—धावक और जाङ्घिक हो।

जङ्घात्राण (सं० क्ली०) त्रायते ऽनेन त्रा ल्युट् जङ्घायास्त्राणं ६-तत्। जङ्घासन्नाह, जाँघका आवरण।

जङ्घापिण्डिका (सं० स्त्री०) जङ्घाद्वय, दोनों जाँघ।

जङ्घाप्रहृत (सं० त्रि०) जङ्घा तद्गतिः प्रहृता यस्य, बहुव्री०। निष्ठान्तत्वात् परनिपातः। मन्दगामी, धीरे धीरे चलनेवाला। जिसकी चाल बहुत धीमी हो।

जङ्घाप्रहृत (सं० त्रि०) जङ्घा प्रहृता यस्य, बहुव्री०। जिसकी जांघ पर मार पड़ी हो।

जङ्घाबन्धु (सं० पु०) ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

"जङ्घाबन्धुश्च रैभ्यश्च कौपवैनलपावृतः।" (भारत १३।४ अ०)

जङ्घार—बुन्देलखण्डमें रहनेवाली राजपूतजातिकी एक शाखा। इनमें दो विभाग है, एक भूर और दूसरा तराई जो मरुभूमिमें रहते हैं, वे भूर और जो पर्वतकी तलहटी रहते हैं, वे तराई कहाते हैं। शाहजहांपुरके रहनेवाले जङ्घारोंका कहना है कि, वे दिल्लीके तोमरराजाके वंशधर हैं। रोहिलखण्ड, बरेली, शाहजहांपुर, पीलीभीत बदाऊं आदि स्थानोंमें प्रायः २५००० जङ्घार रहते हैं।

जङ्घारथ (सं० पु०) जङ्घा रथ इव गमनसाधनं यस्य, बहुव्री०। १ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम। २ जङ्घारथ नामक ऋषिके गोत्रापत्य, जंघारथ नामक ऋषिके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

जङ्घारि (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम।

जङ्घाल (सं० त्रि०) जंघा वेगवती अस्त्यस्य जंघा-लच्। १ धावक, दौड़ कर चलनेवाला, हरकारा। (पु०-स्त्री०) २ पशुविशेष, मृगकी एक सामान्य जाति। भावप्रकाशके मतसे हरिण, एण, कुरङ्ग, ऋष्य, पृषत, न्यङ्कु, शम्बर, राजीव और मुण्डी प्रभृतिको जंघाल कहते हैं। ताम्रवर्णके मृगको हरिण, कृष्ण वर्णको एण, कुछ ताम्रवर्ण लिए लघुसाराकृतिको कुरङ्ग, नील वर्णको ऋष्य हरिणसे कुछ छोटे चन्द्रबिन्दुयुक्तको पृषत, बहुतसे सींगवालोंको न्यङ्कु, बड़े शरीरवालेको शम्बर और जिस मृगका सम्पूर्ण शरीर रेखाओंसे ढका हो उसको राजिव तथा शृङ्गहीन मृगको मुण्डी कहते हैं। एक मृग जातिके अवस्था भेदसे भिन्न भिन्न नाम पड़ा है। इनके मांसका गुण पित्त और कफनाशक, लघु तथा बलकारक है।

जङ्घामूल (सं० क्ली०) जंघायाः मूलमिव। शूलरोगविशेष। इस रोगके होनेसे जाँघमें बहुत दर्द होता है। इर, अदरक, देवदारु, चन्दन तथा लटजीरेकी जड़को बकरीके दूधमें उबाल कर नियमपूर्वक सेवन करनेसे सात रातमें जाँघकी वेदना और शूल दूर हो जाता है।

"जङ्घायत्तमुद्वस्त्यं सप्तरात्रेण नाशयेत्।" (गरुड़पु० १८९ अ०)

जङ्घास्थि (सं० क्ली०) जाँघकी हड्डी।

जङ्घिल (सं० त्रि०) प्रशस्ता अतिशयेन वेगवती जंघा ऽस्त्यस्य जंघा-इलच्। अत्यन्त द्रुतगामी धावक, खूब तेज चलनेवाला हलकारा।

जचना (हिं० क्रि०) जंचना देखो।

जच्चा (फा० स्त्री०) प्रसूता स्त्री, वह औरत जिसे तुरंत बच्चा पैदा हुआ हो।

जज (सं० पु०) जजति युध्यति जज-अच्। १ योद्धा, वीर लड़ाका।

जज (अं० पु०) १ विचारक, न्यायाधीश, विचार करनेवाला। ऊँची अदालतका विचारकर्त्ता। इस देशमें इष्ट इण्डियन कम्पनीके समयसे ही इस समयकी तरह जज नियत करनेकी प्रथा चली है; १७७४ ई०में २८ अक्टोबरको सबसे पहले बड़ी अदालतमें जज आये थे।

विचार और विचारक शब्दमें विशेष विवरण देखना चाहिये।

२ वह हाकिम जो दीवानी और फौजदारीके मुकदमोंका विचार करता हो। हिन्दुस्थानमें एक या अधिक जिलोंके लिये एक जज होते हैं। जिलेकी अन्तिम अपील जजके ही निकट होती है।

जजमान (हिं० पु०) यजमान देखो।

जजहारखाँ हबसी—गुजरातके एक प्रधान अमीर। इनका पैतृक वासस्थान आबिसिनियामें था। १५६८ ई०में इन्होंने गुजरातके शासनकर्त्ता चेङ्गिजखांको विनाश किया था। तीनवर्ष बाद अकबर बादशाहके सूरत जय करने पर चेङ्गिजखांकी माताने पुत्रके मारे जानेको वृत्तान्त कह कर उनसे विचार करनेके लिए प्रार्थना की विचारमें जजहारखांका अपराध प्रमाणित हो गया। बादशाहने इनको हाथीके पैरों तले दबा कर मारनेका प्राणदण्ड दिया था।

जजहारसिंह बुन्देला—राजा नरसिंहदेव बुन्देलाके पुत्र। नरसिंहदेव सम्राट् जहांगीरके अत्यन्त प्रियपात्र थे,

उनकी सहायतासे इन्होंने प्रचुर धन-सम्पत्ति भी पाई थी। १६२७ ई०में नरसिंहदेवकी मृत्युके उपरान्त जजहार पितृसम्पत्तिके अधिकारी हुए। इसके कुछ दिन बाद शाहजहां जब दिल्लीके तख्तपर बैठे, तब जजहार विद्रोही हो गये। सम्राट्ने विद्रोहको दबानेके लिए महबतखां और खानखानान्‌को भेजा। जजहारने छुटकारा न देख अधीनता स्वीकार कर ली, सम्राट्ने उनके अपराधको क्षमा कर उन्हें महबतखां और खानखानान्‌के साथ दक्षिणदेशमें भेज दिया।

१६३० ई०में जजहारके पुत्र विक्रमजित्ने खांजहां नामक एक राजविद्रोहीको अपने अधिकारके भीतरसे भाग जानेकी अनुमति दे दी, इसलिए सम्राट् जजहारके प्रति अत्यन्त क्रुद्ध हो गये। सम्राट्के क्रोधका कारण सुन विक्रमजित्ने खांजहांका अनुसरण कर उन पर आक्रमण किया तथा दरियाखां नामक उनके सेनापतिका मस्तकछेद कर सम्राट्के पास भेज दिया। सम्राट् बहुत ही खुश हुए, उन्होंने विक्रमजित्‌को "जगराज"-की उपाधि प्रदान की। १६३४ ई०में छुट्टी ले कर जजहार घर लौटे। घर आते ही उन्होंने गढ़ाके जमींदार भीमनारायण पर धावा कर दिया। भीमनारायणको वाध्य हो कर सन्धि करनी पड़ी। किन्तु पीछे सन्धिके नियमभङ्ग किये जानेके कारण जजहारने भीमनारायण और उनके बहुतसे अनुचरोंको मार डाला। बादशाह इस घटनाको सुन बहुत ही नाखुश हुए, उन्होंने जजहारको समस्त सम्पत्ति परित्याग करने और दश लाख रुपये राजसरकारमें भेजनेके लिए फरमान भेजा। जजहारने बादशाहके हुक्मको अग्राह्य किया। इस पर २०००० सेना ले कर औरङ्गजेब जजहारके विरुद्ध लड़ने चले। जजहारने भी सेना संग्रह कर उण्डचेके किलेका आश्रय लिया। प्रतिदिन अश्वारोहियोंके साथ काटाकाटी चलने लगी। आखिरकार जजहारसिंहने डर कर पहले धामुनी, फिर वहांसे कुटुम्ब सहित चौरागढ़को कूच किया। अन्तमें दाक्षिणात्यके मार्गमें कुटुम्ब सहित भागते समय सम्राट्की सेनाके साथ उनकी भेंट हो गई। जजहारने अपनी पुरमहिलाओंको उनके सम्मानकी रक्षाके लिए अपने हाथसे मार डाला। विक्रमजित्ने विपक्षियोंका सामना किया, किन्तु उन्हें पराजित हो कर भागना पड़ा। दुर्गावाहन, उदाहन, श्याम, देव आदि जजहारके पुत्र तथा विक्रमजित्के पुत्र दुर्जनसाल कैद कर लिए गये। मार्गमें जजहार और विक्रमजित् भी अधिवासियोंके हाथ मारे गये।

जजहोती—१ कनौजब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। यह "यजुर्होता" शब्दका अपभ्रंश है। पहले यजुर्वेदके विधानके अनुसार ये होम करते थे, इसीलिये इनका नाम ऐसा पड़ा है। रूपरौन्दके चौबे, दौड़ियाके दूबे और हमीरपुर तथा कड़ियाके मिश्रगण जजहोती वंशके हैं। (मिश्रोतिया देखो।)

२ बुन्देलखण्डका प्राचीन नाम। ३ प्राचीन चन्देलप्रदेशका एक श्रेणीका वणिक्।

जजिया (अ० पु०) १ दण्ड, सजा। २ मुसलमानराजाके समयका एक कर। यह अन्य धर्मवालों पर लगता था।

जजी (हिं० स्त्री०) १ जजकी अदालत, जजकी इजलास। २ जजका काम। ३ जजका पद।

जजीरा (फा० पु०) द्वीप, टापू।

जज्ज—१ राजतरङ्गिणी-वर्णित एक व्यक्ति, महाराज जयापीड़के श्यालक। जयापीड़के, युद्धके लिए राजधानी छोड़ कर बाहर जाने पर जज्जने उनका सिंहासन अधिकार कर लिया था। जब वे लौटे तब इन्होंने उनसे युद्ध करना शुरू कर दिया। पुष्कलेत्र ग्राममें दोनोंका भयानक युद्ध होता रहा। एकदिन श्रीदेव नामक एक ग्रामचण्डालने सहसा युद्धक्षेत्रमें प्रवेश कर जज्जको मार डाला काश्मीरवासी प्रजा जज्जके राज्यशासनसे दुःखित थी। (राजतरङ्गिणी ४।११०८०)

२ मथुराके राजा विजयपाल (अथवा अजयपाल)-के अधीन एक क्षत्रिय सामन्तराज। इनके वृद्धप्रपितामहका नाम सिंहराज और प्रपितामहका नाम तेजराज था। इन्होंने ऋषिकी राजकन्याका पाणिग्रहण किया था। इनके चार पुत्र जन्मे थे, सब छोटेका नाम था, आशिक। १०२७ सम्वत्के बेग्रवग्रेलके शिलालेखमें इनका वृत्तान्त मिलता है। उससे मालूम होता है कि, जज्ज ईसाकी १२वीं शताब्दीके बीचमें हुए थे। जज्ज परम वैष्णव थे, इन्होंने एक प्रकाण्ड विष्णुमन्दिर भी बनवाया था।

जज्ज—उतङ्गन नदीके किनारेका एक ग्राम। यह बेरा-

गढ़से ८ मील पूर्वमें अवस्थित है। ग्वालियरको पुरानी सड़क इसके पाससे हो गई है। यहां एक बड़ी सराय और एक मसजिद है। मसजिद लाल पत्थरसे बनी हुई और बहुत खूबसूरत है। इसके सिवा यहां बहुतसे भग्नमन्दिर भी हैं जिनके देखनेसे मालूम होता है कि यहां किसी समय हिन्दुओंका आधिपत्य था।

जज्जक—तोमरवंशीय एक राजा। पृथूदकतीर्थमें त्रिमूर्ति सम्वलित विष्णुमन्दिरके एक शिलालेखमें इनकी वंशावली खुदी हुई है। ये वज्रटके पुत्र और जौलके पौत्र थे। चन्द्रा और नायिका नामको इनकी दो स्त्रियां थीं चन्द्राके गर्भसे गग्गा तथा नायिकाके गर्भसे पूर्णराज और देवराज, ये तीन पुत्र जनमे थे। इन्हीं लोगोंने उपर्युक्त मन्दिर बनवाया था।

जज्ञि (सं० त्रि०) जा-किन् द्वित्वं यद्वा जन-क्विन् द्वित्वं १ ज्ञाता, जाननेवाला। २ जात, उत्पन्न।

जझझती (वै० स्त्री०) शब्दविशष्ट जल, वह जल जिसमेंसे शब्द निकलता। (ऋक् ५।५२।६)

जञ्ज (सं० त्रि०) जजि अच्। १ योद्धा। जजि भावे। घञ्। २ युद्ध, लड़ाई।

जञ्जणाभवत् (सं० त्रि०) जञ्जणा-भू-शतृ। जो जल रहा हो।

जञ्जन (सं० लि०) जन-यङ् लुक्-अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः। जो कई बार उत्पन्न हो।

जञ्जपूक (सं० त्रि०) पुनः पुनरतिशयेन वा जपति जप-यङ्-उक्। १ अत्यन्त जपशील, जो बहुत जप करता हो। (पु०) २ तपस्वी।

जञ्जीरा-१ बम्बई प्रान्तके जञ्जीरा द्वीपकी राजधानी। यह अक्षा० १८° १८' उ० और देशा० ७३° पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६२० है। किला राजपुरी खाड़ीके मुंहाने पर है। उसमें नवम्बर महीनेको एक मुसलमानी मेला लगता है। १० तोपें चढ़ी हैं। आलोकगृह चोरखास नामक शिलासङ्घात पर प्रकाश डालता है।

जञ्जीरा—१ बम्बईके अन्तर्गत कोङ्कणके कोलावावापोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० १८° तथा १८° ३१' उ० और देशा० ७३° ५३' एवं ७२° १७' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३२४ वर्गमील है। इसके उत्तरमें कुण्डलिक खाड़ी, पूर्वमें रोह और मानगांव, दक्षिणमें बाणकोट खात और पश्चिममें अरब सागर है। राजपुरी खाड़ीने इसे दो भागोंमें बांट दिया है। पहाड़ बहुत है। जङ्गलकी कोई कमी नहीं। खाड़ियोंके मुंहाने पर खजूरके पेड़ १।२ मील तक खड़े हैं। १८८३ ई०को नवाब साहबने सड़कें निकाल कर आने जानेका अच्छा प्रबन्ध कर दिया है। कोई नदी ५।६ मीलसे अधिक लम्बी नहीं। पानीकी चाल प्रायः पश्चिमको है। उत्तरमें सागूनकी उपज बहुत है। जहरीले सांप भी कम नहीं।

कहते हैं, १४८८ ई०में अहमदनगरके निजामशाही नवाबोंके किसी हबसी नौकरने कोलीके सेनापति रामपटेलसे व्यवसायी होनेको छलनामें ३०० सन्दूक जहाजसे उतारनेकी आज्ञा ली थी। प्रत्येक पेटीमें एक सैनिक था। इस प्रकार हबसियोंने जञ्जीर द्वीप और टण्ड राजपुरी दुर्ग अधिकार किया। फिर यह टापू बीजापुर राज्यका एक विभाग बना। शिवाजीके आक्रमण करने पर १६७० ई०में सिदोय सरदारने मुगल बादशाह औरङ्गजेबकी नौकरी कर ली। परन्तु कोई मराठा उसे जीत न सका था। अंगरेजोंने अपने आने पर इसके भीतरी कामोंमें कोई हस्तक्षेप न किया।

इसके अधिपति हबसी वा सिदीवंशके सुन्नी मुसलमान हैं। उनको नवाब कहा जाता है। वह मुसलमानी कानूनके अनुसार उत्तराधिकारकी सनद पाये हुए हैं और कोई कर नहीं देते। पोलिटिकल एजेण्ट पुलिस और फौजदारी अदालतका इन्तजाम करते हैं। १८७०ई० में वृटिश गवर्नमेण्ट और नवाबके बीच सन्धि हुई थी। ११ तोपोंकी सलामी है।

इसकी आबादी कोई ८५४१४ है। इसमें २ नगर और २३४ गांव बसे हैं। भूमि प्रायः पथरीली और लाल है। जञ्जीरकी श्रीवर्धन सुपारी प्रसिद्ध है। साड़ियां, मोटा सूती कपड़ा तथा पगड़ियां बुनी और रस्सियां बटी जाती हैं। धातुका सामान, पत्थरकी चीजें और देशी जूते भी तैयार करते हैं। लकड़ी, नारियल और सुपारीकी रफ्तनी होती है। १८७४ ई०में बम्बई और जञ्जीरके बीच

जहाजोंका नियमानुसार आना जाना आरम्भ हुआ। राज्यमें १२ आमदनी-घाट हैं। १८८० ई०में देशी डाकखाना उठा और अंगरेजी जमा था। कारभारी राज्यका प्रबन्ध करते हैं। आमदनी ५॥ लाखसे ज्यादा है। पहले नवाबी रुपया पैसा चलता था, परन्तु १८३४ ई०में बन्द हो गया। सब मिला कर २८६ गांव हैं।

जज़ूहिय—अफगानोंकी एक जाति। मुसलमान इतिहासवेत्ता फिरिस्ताके मतसे ये लोग पञ्जाब प्रान्तमें सिन्धुसागर दोआबके अन्तर्गत मखियाला नामक पार्वत्य प्रदेशमें रहते थे। किसी समय इन लोगोंने वहांके राजा केदाररायको पराजित कर उनका राज्य हस्तगत किया था। पञ्जाब प्रान्तमें ये प्रसिद्ध जमींदार समझे जाते हैं।

जट (देश०) झाड़ीके आकारका एक गोदना।

जटना (हिं० क्रि०) ठगना, धोखा दे कर कुछ लेना।

जटमल्ल—कोशलवंशीय स्वर्णपुरीके एक राजा। ये बालचन्द्रके पुत्र और मल्लदेवात्मज ढोलके पौत्र थे। श्रीधरकृत जटमल्लविलासमें इनका विवरण पाया जाता है।

जटर (सं० पु०) उदर, पेट।

जटल (हिं० स्त्री०) जटिल, व्यर्थकी बात, गप, बकवाद।

जटा (सं० स्त्री०) जटति परस्परं संलग्ना भवति जट-अच् टाप्, यद्वा जायते जन-टन् अन्य लोपः। १ परस्परसंहत केश, एकमें उलझे हुए सिरके बहुतसे बड़े बड़े बाल। इसके पर्याय—शटा, जटि, जटी, जूट, जटक, शट, कोटीर जुटक और हस्त है। "सिन: प्रवरोष जट;प्रगध्या" (भागत ३।१९।१२)। २ व्रतको शिखा। ३ शटा, केशर। ४ मूल, जड़। ५ शाखा। ६ कपिकच्छु, केवांच, कौंछ। ७ रुद्रजटा, बालछड़। ८ जटामांसी। ९ शतावरी, शतावर। १० एकमें सटे हुए बहुतसे रेशे। ११ पाट, जूट। १२ वेद पाठविशेष, वेदपाठका एक भेद जिसमें मन्त्रके दो वा तीन पदोंको क्रमानुसार पूर्व और उत्तर पदको अलग अलग फिर मिला कर दो बार पढ़ते हैं। मन्त्र देखो। १३ भूमि आमलकी।

जटाकर (सं० त्रि०) जटां करोति जटा-कृ-अच्। जिससे जटा हो, जिससे जटा बनाई जाती हो।

जटाचीर (सं० पु०) जटासहितं चीरं वसनं यस्य, बहुव्री०। शिव, महादेव।

जटाजिनी (सं० पु०) वह जो जटा और मृगचर्म धारण करता हो।

जटाजूट (सं० पु०) जटानां जूटः सगूहः, ६-तत्। १ जटासमूह, बहुतसे लम्बे बड़े हुए बालोंका समूह। २ शिवकी जटा।

जटाज्वाल (सं० पु०) जटेव ज्वालाऽस्य, बहुव्री०। प्रदीप दीपक, दीया, चिराग।

जटाटङ्क (सं० पु०) जटा टङ्क इवास्य, बहुव्री०। शिव, महादेव।

जटाटीर (सं० पु०) जटामटति अट-ईरन्। शिव, महादेव।

जटाधर (सं० पु०) जटां धरति जटा-धृ-अच्। १ शिव, महादेव। २ बुद्धविशेष, एक बुद्धका नाम। ३ दाक्षिणात्यके अन्तर्गत एक देश, दक्षिणके एक देशका नाम जिसका वर्णन बृहत्संहितामें आया है। (बृहत्सं० १४ अ०) ४ अभिधानतन्त्र नामक कोषकार। ये दिगड्डीग्रामके राढ़ीश्रेणी ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम रघुपति और माताका नाम मन्दोदरी था। (त्रि०) ५ जटाधारी जिसके जटा हो।

जटाधर—१ एक ग्रन्थकार। १८६१ ई०में इन्होंने कालेशाहप्रकाश नामक ग्रन्थ प्रणयन किया था। इनके पिताका नाम वनमाली और पितामहका नाम दुर्गामिश्र था। ये गर्गगोत्रके थे।

जटाधर कविराज—गङ्गादास-प्रणीत छन्दोमञ्जरीके एक टीकाकार। ये जगन्नाथसेनके पिता थे।

जटाधारिन् (सं० त्रि०) जटां धरति जटा-धृ-णिनि। १ जो जटा धारण करते हों, जिसके मस्तक पर जटा हो। (पु०) २ शिव, महादेव। ३ एक प्रकारका पौधा। इसके ऊपर कलगीके आकारके लहरदार लाल फूल लगते हैं, मुर्गकेश।

जटाना (हिं० क्रि०) किसी दूसरेसे जटाना या ठगाना।

जटाम्ला (सं० स्त्री०) १ जटामांसी। २ भूमि आमलकी।

जटापटल (सं० पु०) ऋग्वेदविहित क्रमपाठका एक बहुत जटिलप्रकार या क्रम। प्रवाद है कि यह हयग्रीवने निकाला था। गङ्गाधराचार्य, दयाशङ्कर मथुरानाथ शुक्ल

मधुसूदन और अनन्ताचार्य आदि द्वारा बनाई हुई जटापटलकी टीका पाई जाती है।

जटामासी (हिं० स्त्री०) जटामांसी देखो।

जटामांसी (सं० स्त्री०) जटां जटाकृतिं मनाति मन-स दीर्घश्च। मनेदीर्घ च। उण् ३।६४। स्वनामख्यात गन्धद्रव्य विशेष, जटामासी बालछड़, बालूचर, बालचोर। इसके संस्कृत पर्याय ये हैं—नदल, विहनी, पेशी मांसी, क्रव्यासिनी, जटिला, लोमशा, तपस्विनी, नड़ामांसी, मिसी, छगजटा जटी, मिसी, मिषिका, मिसी, भूतजटा, पेशी क्रव्यादि, पिशिता, पिशी, पेशिनी, जटा, हिंस्रा, मांसनी जटाला, नलका, मेषी, तामसी, चक्रवर्तिनी, माता अमृतजटा, जननी, जटावती और मृगभक्ष्या (Nardostachys Jatamansi)

जटामांसीको नेपालमें हस्व, नख, जटामांसी, काश्मीरमें भूतजट और कुकिलीपट, बम्बईमें बालचरिया सुम्बुल तथा अरबी भाषामें सुम्बुल-हिन्द कहते हैं। विहारके लोग इसे बेखकुरफुस कहा करते हैं।

गढ़वालसे ले कर सिकिम तक विस्तीर्ण हिमालयके ऊंचे शिखर पर यह वृक्ष उपजता है। जटामांसीकी जड़का रंग फीका काला, गन्ध तीव्र और सुमिष्ट तथा आस्वाद कटु होता है। वर्तमान चिकित्सकोंके मतसे—यह बलकारक, उत्तेजक, हिक्का-निवारक, विषदोषघ्न। तथा मृगी, हिष्टिरिया, पाकयंत्र और फुसफुसके रोग तथा कमला आदि रोगोंके लिए फायदे मन्द है। इससे बाल बढ़ते और घने काले होते हैं। इससे शीतल गुणविशिष्ट एक प्रकारका तेल बनता है। २८ सेर जटामांसीको चुआ कर जो १॥ छटाक तेल बनाया जाता है, वह सबसे उत्तम हुआ करता है। अन्यान्य पदार्थोंको मिला कर नाना प्रकारके वैद्यक तेल भी इससे बनाये जाते हैं। बङ्गालमें 'लोहारडांगा' नामक स्थानमें जटामांसीको जड़ और कमलागुंड़ी (?) मिला कर एक तरहका रंग बनाया जाता है।

अति प्राचीन समयसे ही भारतवर्ष, पारस, ग्रीस इत्यादि देशोंमें जटामांसीका आदर है। बाइबेलमें भी इसका उल्लेख है।

बाइबेलमें कहा हुआ नार्ड (Nard) क्या है और वह कहां मिलता है, इसकी बहुत कुछ खोज की गई थी। किन्तु वास्तविक विषयका निर्णय बहुत दिनों तक नहीं हुआ। अन्तमें बहुत खोज करनेके बाद सर विलियम जोन्सने निश्चय किया कि बाइबेलका नार्ड जटामांसीके सिवा और कुछ नहीं है।

वैद्यक मतानुसार यह सुरभि कषाय, कटु, शीतल तथा कफ भूतदाह और पित्तनाशक, कान्ति और आमोदजनक है। (राजनि०) भावप्रकाशके मतसे इसके गुण—यह तिक्त, मेध्य, बलकर, स्वादु, त्रिदोष रक्त, विसर्प और कुष्ठनाशक है। राजवल्लभका कहना है कि, इसका अनुलेपन काममें लानेसे ज्वर और कृष्णता जाती रहती है।

इसकी डालियां १८ इञ्चसे २५-२६ इञ्च तक लम्बी होती हैं। पत्ते १॥-२ अंगुल लम्बे और आधीसे एक अंगुल तक चौड़े होते हैं। यह पहाड़ों पर उत्पन्न होती है।

जटामांस्यादि (सं० पु०) जटामांसी आदिर्यस्य, बहुव्री०। वैद्यकोक्त एक गण। जटामांसी, नखी, पत्री, लवङ्ग, तगर, शिलारस और गन्धपाषाण इन सात गन्धद्रव्योंको जटामांस्यादि गण कहते हैं।

जटामालिन् (सं० पु०) शिव, महादेव।

जटामूला (सं० स्त्री०) शतमूली।

जटायु (सं० पु०) जटा-याति लभते या कु। १ रामायणका एक प्रसिद्ध पक्षी। सूर्यके सारथी अरुणके औरस और श्येनीके गर्भसे इसका जन्म हुआ था। इसका भाईका नाम सम्पाति था। जटायुने समस्त पक्षियों पर आधिपत्य पाया था। इसका पक्षिराज नामसे उल्लेख किया जाता है। महाराज दशरथके साथ इसकी मित्रता थी। दशरथ देखो। सीताहरणके समय सीताका क्रन्दन सुन कर जटायुने रावणके साथ बहुत युद्ध किया था। और अन्तमें रावणके द्वारा खड्गके आघातसे आहत हुआ था। राम जब इसके पास आये, तब इसने सीताहरणकी बात कहते कहते प्राण छोड़े थे। रामचन्द्रने इसको पितृसखा समझ, इसकी अन्त्येष्टिक्रिया की थी। २ गुग्गुल। (मेदिनी)

जटायुस् (सं० पु०) जटं संहतमायुर्यस्य बहुव्री०। पक्षि-

राज, जटायु। (रामायण ३।१४ अ०)

जटारुद्रा (सं० स्त्री०) १ रुद्रजटालता। २ सुगन्ध जटामांसी।

जटाल (सं० पु०) जटा अस्त्यर्थे लच्। १ वटवृक्ष, बरगद। २ कच्चूर, कचूर। ३ मुष्कक, मोखा। ४ गुग्गुलु, गुग्गुल। (त्रि०) ५ जटाधारी, जो जटा रखे हों।

जटाला (सं० स्त्री०) जटाल-टाप्। जटामांसी।

जटाव (देश०) कुम्हरौटी, कुम्हारकी काली मट्टी जिससे वे घड़े आदि बनाते हैं।

जटावत् (सं० त्रि०) जटा विद्यतेऽस्य जटा-मतुप् मस्य वः। जटायुक्त।

जटावती (सं० स्त्री०) जटावत् ङीप्। जटामांसी, जटामासी।

जटावल्ली (सं० स्त्री०) जटेव वल्ली। १ रुद्रजटा लता, शंकर जटा। २ गन्धमांसी।

जटाशालपाणि (सं० पु०) जटायुक्त शालपाणि एक प्रकारका वृक्ष।

जटासुर (सं० पु०) जटायुक्तः असुरः। मध्यपदलो०। १ भारतप्रसिद्ध एक राक्षस। पाण्डवगण नाना तीर्थ भ्रमण कर जिस समय नरनारायणाश्रममें (बदरिकाश्रम) वास करते थे, उस समय जटासुर द्रौपदीके रूपलावण्य पर मुग्ध हो कर ब्राह्मणके वेशमें पाण्डवोंके साथ मिल गया। एक दिन भीमसेनके मृगयार्थ निविड़ वनमें चले जाने पर, मौका देख उसने पाण्डवोंके अस्त्र-शस्त्र छिपा दिये और द्रौपदी, युधिष्ठिर, नकुल और सहदेवको बावत कर हरण करनेका उद्योग किया। राक्षस सबको हरण करके ले आ रहा था, किन्तु मार्गमें भीमसेनने उसका संहार किया। (भारत ३।१५७ अ०) (बहु०) २ देशविशेष। (वृहत्सं० १४।१ स०)

जटि (सं० स्त्री०) जटति परस्परं संलग्ना भवति जट-इन्। १ वटवृक्ष, बरगदका पेड़। २ जटा। ३ समूह। ४ जटामांसी ५ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। ६ प्रदत्त पक्षिविशेष, जटायु। जटिक—जाटिकायन देखो।

जटिन् (सं० पु०) जटाऽस्त्यस्य जटा-इन। १ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। (त्रि०) २ जटायुक्त, जिसके जटा हो। "जटी दण्डी मुण्डी ... " (भारत ७।४१ अ०)

(पु०) ३ कार्त्तिकके एक सैनिक। (भारत ९।४६ अ०)

जटिका (सं० स्त्री०) गुञ्जालता घुंघची।

जटित (सं० त्रि०) जड़ा हुआ।

जटिल (सं० पु०-स्त्री०) जटाऽस्त्यस्य जटा इलच्। लोमादि पामादि पिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। १ सिंह। (शब्दच०) स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है। (त्रि०) २ जटायुक्त, जटावाला। (पु०) ३ ब्रह्मचारी। ४ जिसमें ज्यादा गड़बड़ी हो, दुर्बोध, कठिन। ५ दयाहीन, क्रूर हिंसक। ६ वटवृक्ष, बरगदका पेड़। ७ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। ८ गुग्गुल। ९ कच्चूर, कचूर। १० दमनकवृक्ष। ११ तिल। (स्त्री०) १२ पिप्पली। १३ उच्चट, १४ वच। १५ श्वेतवच। १६ श्वेतपूनर्नवा। १७ सुगन्ध जटामांसी। १८ जटामांसी।

१८ एक विष्णुभक्त बालक। पौराणिकोंने इसकी आख्यायिका इस प्रकार लिखी हैं - जटिल नामका एक बालक माताकी आज्ञासे प्रतिदिन पाठशाला जाता था, रास्तेमें अकेला होनेके कारण उसे डर मालूम हुआ। एक दिन उसने अपनी मातासे डरकी बात कही,तो माता ने कहा—"वत्स! मार्गमें यदि डर मालूम पड़े, तो तुम अपने सखा गोविन्दको पुकारना, वे तुम्हारी रक्षा करेंगे।" दूसरे दिन पाठशाला जाते समय बालकको जब डर लगा तब वह "सखे गोविन्द!" कह कर कातरस्वरसे बुलाने लगा। बालककी पुकारसे हरिने कृपा कर उसे दर्शन दिया। उस दिनसे वह बालक रास्तेमें गोविन्दके साथ खेलता हुआ देरीसे पाठशाला पहुंचने लगा। एकदिन गुरुजीने देरीका कारण पूछा, तो बालकने आद्योपान्त सब सुना दिया। परन्तु गुरुजीने उसकी बात पर विश्वास न किया, वे उसे बेंतसे पीटने लगे। इतना मारने पर भी जटिलकी देह पर दाग न हुआ। इसके बाद जब गुरुके पिताका श्राद्ध हुआ, तब जटिलको दहीका भार दिया गया। जटिल यथासमय एक दहीकी हण्डी ले कर उपस्थित हुआ। थोड़ा दही देख कर लोग उसका तिरस्कार करने लगे। जटिलने कहा—"मेरे सखा गोविन्दने कहा है कि, निमन्त्रित समस्त व्यक्ति यदि पेट भरके दही खाय, तो भी इस हण्डीका दही नहीं निबटेगा। पहिले तो बालककी बात पर किसीने विश्वास ही नहीं किया, किन्तु समय पर जब ऐसा ही हुआ, तब

लोग बड़ा आश्चर्य करने लगे। इसके उपरान्त जटिल गुरुको गोविन्दके दर्शन करानेके लिए वनमें ले गया; किन्तु गोविन्दने दर्शन न दे कर यह कह दिया कि, "उस तिन्तिड़ी वृक्षमें जितने पत्ते हैं, उतने काल तक तपस्या करनेसे तुम्हारे गुरु मेरा दर्शन पा सकेंगे।" जटिलके मुंहसे ऐसी बात सुन कर उसके गुरु उस इमली के पेड़के नीचे बैठ कर तपस्या करने लगे।

२० शिव। जिस समय उमा शिवको पानेके लिए हिमालय पर तपस्या करती थीं, उस समय उन्हें छलनेके लिए महादेव जटिलरूप धारण कर उनके सामने उपस्थित हुए थे। शिवपुराणान्तर्गत ज्ञानसंहितामें लिखा है कि—पार्वतीने महादेवको पानेके लिए कठोर तपस्या की थी, इससे ऋषिगण डर गये और महादेवके पास जा कर कहने लगे—"पार्वती दारुण लोकशोषणकारी तपस्याका अनुष्ठान कर रही हैं। हम लोगोंने ऐसी कठोर तपस्या पहले कभी नहीं देखी और न भविष्यमें ही देखेंगे अतएव हे सदाशिव! हम लोगोंके प्रति प्रसन्न हो कर इसका कुछ उपाय-विधान कीजिये।" ऋषियोंको विदा कर महादेव जटिल-मूर्त्ति धारण कर पार्वतीके पास उपस्थित हुए। पार्वतीने एक वृद्ध जटाधारी पुरुषको तपोवनमें उपस्थित होते देख विधिके अनुसार उनका सत्कार किया। यह जटिल उपहास कर शिवकी नाना प्रकार निन्दा करने लगे। पार्वतीके कमनीय रूपगुणोंके साथ शिवका असामञ्जस्य दिखा कर उन्होंने पार्वतीसे व्रतानुष्ठान करनेके लिए निषेध किया। पार्वतीसे शिवकी निन्दा न सही गई; उनके उस स्थानको छोड़ कर अन्यत्र जानेको उद्यत होने पर शिवने जटिल रूप त्याग कर असली रूप धारण कर उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण की। (ज्ञानसंहिता ११ अ०)

जटिलक (सं० पु०) जटिल-कन्। १ एक ऋषिका नाम। २ जटिलक ऋषिके गोत्रापत्य, जटिल ऋषिके वंशज।

जटिला (सं० स्त्री०) जटिल-टाप्। १ जटायुक्त स्त्री, वह स्त्री जिसके जटा हो, ब्रह्मचारिणी। २ जटामांसी। ३ पिप्पली, पीपल। ४ वचा, वच। ५ उच्चटा, गुंजा, घुंघची। ६ दमनकवृक्ष, दौनाका पेड़। ७ राधिकाकी सास, आयानकी माता। ये गोल नामक गोपकी स्त्री थीं। इनके आयान और दुर्मद नामके दो पुत्र और कुटिला नामकी एक कन्या थी। वृन्दावनके अन्तर्गत जावट ग्राममें इनका वास था। (वृन्दावनलीला ११ अ०) ८ गौतमवंशकी एक धर्मपरायणा ऋषिकन्या। इनका विवाह सात ऋषि-पुत्रोंसे हुआ था। यथा—

"श्रूयते हि पुराणेऽपि जटिला नाम गौतमी।
ऋषीन् अध्यासितवती सप्तधर्मभृतांवरा।" (भारत १।१९६।१४)

जटिलीभाव (सं० पु०) जटिल-च्वि-भू-घञ्। संहति, वह जो जटाके रूपमें बना हुआ हो।

जटी (सं० स्त्री०) जटि वा ङीष्। १ पर्कटीवृक्ष, पाकरका पेड़। २ जटामांसी।

जटुल (सं० पु०) जट-उलच्। शरीरस्थ चिह्नविशेष, शरीरके चमड़े पर एक विशेष प्रकारका दाग जो जन्मसे ही होता है, लच्छन, लक्षण। इसके पर्याय—कालक और पिप्लु है।

जटेश्वर (सं० पु०) नर्मदा नदी तीरवर्त्ती एक प्राचीन तीर्थ। यहां जटेश्वर लिङ्ग स्थापित है। (शिवपु० रेवाखं०)

जटोदा (सं० स्त्री०) कामरूपकी एक विख्यात नदी।

कामरूप देखो।

जठर (सं० पु०-क्ली० जायते गर्भो मलं वा अस्मिन् जन-अर ठश्चान्तादेशः। १ उदर, कुक्षि, पेट। (त्रि०) २ वृद्ध, बूढ़ा। ३ बद्ध, बंधा हुआ। ४ कठिन। (पु०) ५ पर्वतविशेष, एक पहाड़का नाम। भागवतपुराणके अनुसार यह मेरुके पूर्वकी ओर अवस्थित है। यह नील पर्वतसे निषध गिरि तक चला गया है। इसकी लम्बाई उन्नीस हजार योजन और चौड़ाई तथा ऊँचाई दो हजार योजन है। ६ देशविशेष, एक देशका नाम। बृहत्संहिताके कूर्मविभागके अग्निकोणमें इस देशका उल्लेख है। यह श्लेषा, मघा और पूर्वाफल्गुनीके अधिकारमें है। महाभारतमें इसे कुकुर और दशार्ण देशके निकट बतलाया है। (भारत ६।९।४२) ७ उदररोगविशेष, पेटकी एक प्रकारकी बीमारी। इसमें पेट फूल जाता और रोगी बल तथा वर्णहीन हो जाता है। इसमें भस्म भी धीरे धीरे मंद होने लगती है और पेटके ऊपर रेखा दीख पड़ती है। (सुश्रुत निदान ८ अ० इसका दूसरा विवरण उदररोगमें देखो।) ८ शरीर, देह। ९ मरकत मणिका एक दोष

इस तरहके मरकातके रखनेसे मनुष्य दरिद्र हो जाता है। १० कर्कट।

जठरगद (सं० पु०) जठरस्य गदः, ६-तत्। उदररोग, पेटकी बीमारी।

जठरघ्न (सं० पु०) जलोदर।

जठरज्वाला (सं० स्त्री०) जठरस्य ज्वाला, ६-तत्। उदर यन्त्रणा, पेटमें शूल मारना।

जठरनुत् (सं० पु०) जठरं नुदति नुद-क्विप्, ६-तत्। आरग्वध, अमलतास।

जठरयन्त्रणा (सं० स्त्री०) जठरस्य यन्त्रणा, ६-तत्। १ जठरज्वाला, उदरका अग्नि। २ क्षुधा, भूख।

जठररोग (सं० पु०) उदररोग, पेटकी बीमारी।

जठरव्यथा (सं० स्त्री०) जठरयन्त्रणा, पेटका दर्द।

जठराग्नि (सं० पु०) जठरास्थितोऽग्निः, मध्यपदलो०। कुक्षिगत भुक्तद्रव्य परिपाककारी अग्नि, पेटका वह तेज (या अग्नि) जो खाये हुए पदार्थको पचाता है। प्राचीन शरीरतत्त्ववित् आर्योंके मतसे प्राणीमात्रके उदरमें यह अग्नि मौजूद है, भोजन किया हुआ पदार्थ इसीके द्वारा परिपक्व होता है। भोजन करनेके कुछ समय पीछे आभ्यन्तरीण वायु द्वारा खाये हुए पदार्थोंमेंसे निस्सार अंश अलग हो जाते हैं। इसके बाद वायु द्वारा चालित जठराग्निके ऊपरकी तरफ पहले जल और उसके ऊपर अन्न संस्थापित होता है। प्राणवायु उसके नीचे आ कर धीरे धीरे अग्निको उद्दीप्त करती रहती है और उस अग्निसे जल गरम हो कर अन्नको पकाता रहता है। पाक हो जानेके बाद उसका किट्ट वा मल अलग हो जाता है और अपरांश रस नाड़ीप्रणालियों द्वारा सारे शरीरमें सञ्चारित होता है। (पौनार्थ व) इसका अन्य विवरण शरीरविज्ञान शब्दमें देखो।

जठरामय (सं० पु०) जठरस्यामयो रोगः, ६ तत्। १ जलोदररोग। २ अतीसार रोग। अतीसार देखो।

जठरिन् (सं० त्रि०) जठरिन् देखो।

जठरोत्थित (सं० त्रि०) उदरोत्थित, खाया हुआ।

जठल (सं० क्ली०) जठरं साहश्येनास्त्यस्य अर्श अच् रस्य लः। जलपात्रविशेष, वैदिक कालका एक प्रकारका जलपात्र जिसका आकार उदरसा होता है।

जड़ (सं० त्रि०) जलति धनी भवति जल-अच् लस्य ड। १ मन्दबुद्धि, ना समझ, मूर्ख। जो पुरुष मोहप्रयुक्त अपना इष्टानिष्ट समझ नहीं सकता और सर्वदा दूसरेके वशीभूत रहता है, उसे जड़ कहते हैं। २ मूर्ख। ३ वेद ग्रहणासमर्थ, जो वेद पढ़नेमें असमर्थ हो। ४ हिमग्रस्त, सरदीका मारा या ठिठुरा हुआ। ५ शीतल, ठण्ढा। ६ मूक, गूंगा। ७ बधिर, बहरा, जिसे सुनाई न दे। ८ अप्रज्ञ, अनभिज्ञ, अनजान। ९ निस्पन्द, जिसकी इन्द्रियों की शक्ति मारी गई हो। १० मोहित, जिसके मनमें मोह हो। (क्ली०) ११ जल, पानी। १२ सीसक, सीसा नामकी धातु। (त्रि०) १३ अचेतन जिसमें चेतना न हो।

जड़ (हिं० स्त्री०) १ वृक्षोंके जमीनके भीतरका भाग। इसीसे वृक्षोंका पोषण होता है। इसके दो भेद हैं, एक मूसला और दूसरी झकरा। मूसला डंडेके आकारकी होती है और जमीनके अन्दर सीधी नीचेकी ओर जाती है। झकराके रेशे जमीनके अन्दर बहुत नीचे नहीं जाते और थोड़ी ही गहराईमें चारों तरफ फैलते हैं। जड़ वृक्षकी मजबूतीसे पकड़ी रहती है। यही कारण है कि बड़े बड़े तुफानमें वृक्ष सहजसे नहीं गिरते हैं। सिंचाईका पानी और खाद आदि जड़के द्वारा ही वृक्षों और पौधों तक पहुंचती है, मूल, सोर। २ वह जिसके ऊपर कोई चीज स्थित हो, नींव, बुनियाद। ३ हेतु, कारण, सबब। ४ आधार, वह जिसपर कोई चीज अवलम्बित हो।

जड़आमला (हिं० पु०) भुई आँवला।

जड़क्रिया (सं० त्रि०) जड़स्य हिमक्लिष्टस्येव क्रिया यस्य, बहुव्री०। दीर्घसूत्री, जिसे कोई काम करनेमें देर लगे, सुस्त।

जड़ता (सं० स्त्री०) जड़स्य भावः जड़-तल्-टाप्। १ शीतलत्व। २ अचेतनता। ३ अपटुता, मूर्खता, बेवकूफी। ४ स्तब्धता, अचलता, चलन-चलन न होनेका भाव। ५ साहित्यदर्पणके मतसे—मङ्गल वा अमङ्गलके दर्शन वा श्रवणसे कुछ समयके लिए कर्तव्याकर्तव्य निर्णय करनेमें असमर्थ हो कर अचेतन पदार्थकी तरह मनकी अवस्थितिका नाम जड़ता है। निर्निमेष नयनोंसे अवलोकन और तूष्णीभाव आदि इसका कार्य है। यह भाव प्रायः अकस्मात्‌से होता है। (साहित्यद० ३ प०)

जड़त्व (सं० क्ली०) जड़स्य भावः जड़त्व । जड़ता देखो ।

जड़ना (हिं० क्रि०) १ एक पदार्थको दूसरे पदार्थ पर भली भांति बैठाना जिससे फिर वह अलग न हो सके । २ किसी वस्तुसे प्रहार करना । ३ शिकायत करना, कान भरना । ४ एक चोजको दूसरो चोजमें ठीक कर बैठाना ।

जड़भरत (सं० पु०) जड़ो मूक इव भरतः आङ्गिरस प्रवर किसीके पुत्र एक योगी । ये पूर्व जन्ममें भरत नृपतिके रूपमें अवतीर्ण हुए थे। ये जीवनके शेषभागमें संसारसे मोह तोड़ कर वानप्रस्थ हुए थे। दैववश एक हरिणके बच्चे पर ये मोहित हो गये, जिससे जन्मान्तरमें इन्हें पशुयोनि प्राप्त हुई । पीछे आङ्गिरस नामक ब्राह्मणके औरससे जन्म ले कर, फिर सङ्गदोषसे पशुयोनि न प्राप्त हो इसलिए ये ज्ञानी हो कर भी जड़की तरह व्यवहार करते थे। भागवतमें इनका उपाख्यान इस तरह लिखा है—

आङ्गिरस प्रवर किसी ब्राह्मणकी प्रथम पत्नीके गर्भसे भरतका जन्म हुआ । भरत ज्ञानी थे, इसलिए पूर्व जन्मको बात उन्हें याद थी। ये सङ्गदोषको समस्त अनर्थोंका मूल समझ कर जड़की तरह अनुष्ठान करते थे उनके पिताने यथासमय उनका उपनयन करा कर उन्हें वेदाध्ययनके लिए नियुक्त किया। दैवदोषसे इसके थोड़े दिन पीछे उनके पिताका स्वर्गवास हो जानेके कारण भरतको माता सपत्नीके हाथ पुत्रको सौंप कर पतिकी अनुमृता हो गई । भरतके भाइयोंने उन्हें जड़मति समझ कर आगे पढ़ने न दिया। भरत अपने आप इनका कोई भी काम नहीं करते थे, बल्कि दूसरे जो कहते वही करते थे। भरतके भाइयोंने उन्हें धान्यक्षेत्रकी रक्षाके लिए नियुक्त किया। एक दिन रातको भरत वीरासनसे बैठे हुए खेत रखा रहे थे। इसी समय एक पणि नरपति पुत्रको कामनामें भद्रकालीको नरबलि देनेकी इच्छासे अनुचरों सहित घूमता हुआ वहां आ पहुंचा और भरतको उठा ले गया। भरतने इस काममें जरा भी बाधा न पहुंचाई। ब्राह्मण-कुमार भरतको स्नान करा और रक्तमाला पहना कर देवीके पास बैठा दिया गया, राजा उनको वध करनेके अभिप्रायसे खड्ग हाथमें ले कर देवीको नमस्कार करने लगे। भद्रकालीने इस असह्य दृश्यको देख कुपित हो कर अपनी मूर्ति प्रगट की और उसी खड्ग द्वारा राजा तथा उनके अनुचरोंका विनाश किया । इस तरह भरतके प्राण बचे ।

और एक दिन रहुगण नामक राजाके शिविकावाहकके अभावमें भरतको ले जा कर उस काममें नियुक्त किया गया। किन्तु भरत अन्य वाहकोंकी तरह निपुण न थे, इसलिए राजाने उनका बहुत तिरस्कार किया । अब भरतका मुंह खुला, वे राजाको सम्बोधन कर ज्ञानपूर्ण उपदेश देने लगे। राजा शिविका वाहकके मुंहसे धर्मोपदेश सुन कर अवाक् हो गये, उन्होंने पालकीसे उतर कर उनके पैर छूए और क्षमा मांगी । जड़ भरतने इसी तरह कुछ दिनों तक भूमण्डलमें वास कर प्रारब्ध क्षय होने पीछे मुक्ति पाई थी। (भागवत ५।९।१०।११ अ०)

जड़वाना (हिं० क्रि०) किसी दूसरेसे जड़नेका काम कराना ।

जड़वी (हिं० स्त्री०) हालका रोपा हुआ धानका छोटा पौधा।

जड़हन (हिं० पु०) अगहनी धान। यह धान आषाढ़में बोया जाता है। जब इसके पौधे हो १ फुट ऊंचे हो जाते हैं तो गृहस्थ उन्हें उखाड़ कर दूसरे खेतोंमें रोपते हैं । जड़हन पौधोंमें आश्विनके अन्तमें बालें फूटने लगती हैं और अगहनमें पक कर काटने योग्य हो जाती हैं । इस धानके कई एक भेद हैं जिनमेंसे कुछके चावल मोटे और कुछके महीन होते हैं ।

जड़ा (सं० स्त्री०) जड़ं करोति जड़ णिच्-अच्-टाप् । १ शूकशिम्बी, कौंछ, केवांच । २ भूम्यामलकी, भूईं आमला

जड़ाई (हिं० स्त्री०) १ पच्चीकारी, जड़नेका काम । २ जड़नेका भाव । ३ जड़नेकी मजदूरी ।

जड़ाऊ (हिं० वि०) पच्चीकारी किया हुआ जोड़ा या बैठाया हुआ ।

जड़ाना (हिं० क्रि०) किसी दूसरेसे जड़नेका काम कराना ।

जड़ामांसी (सं० स्त्री०) जटामांसी ।

जड़ावट (हिं० स्त्री०) जड़ाव, जड़नेका काम ।

जड़ावर (हिं० पु०) वह कपड़ा जो जाड़ेमें पहना जाता है ।

जड़िमन् (सं० पु०) जड़स्य भावः जड़-इमनिच् । जड़ता,

मूर्खता, बेवकूफी। उज्ज्वलमणिके मतसे इष्ट अनिष्टके अपरिज्ञानके कारण प्रश्नके अनुसार तथा दर्शन और प्रवलके अभावको जड़िमा कहते हैं।

जड़िया (हिं० पु०) १ वह मनुष्य जो नगोंके जड़नेका काम करता हो, कुंदनसाज। २ सुनारोंकी एक जाति, ये गहनेमें नग जड़नेका काम करते हैं।

जड़ी (हिं० स्त्री०) औषधके काममें आनेकी वनस्पति, बिरई।

जड़ीकृत (सं० त्रि०) १ स्फूर्त्तिहीन, जिसमें कोई चंचलता न हो। २ स्पन्दहीन, स्तब्ध, जिसमें चेतनता न हो। ३ जिसकी बुद्धि मारी गई हो।

जड़ीभाव (सं० पु०) जड़-च्वि-भू-घञ्। जड़ता, अचेतनता।

जड़ीभूत (सं० पु०) जड़-च्वि-भू-क्त। जड़ीकृत देखो।

जड़ाला (हिं० पु०) उपयोगी वनस्पति, वह वनस्पति जिसकी जड़ काममें आती हो।

जड़ुआ (हिं० पु०) पैरके अंगूठेमें पहननेका चाँदीका गहना।

जड़ुल (सं० पु०) जटुलपृषोदरादित्वात् साधुः। देहस्थ तिलक, शरीरके चमड़े पर एक दाग जो जन्मसे ही होता है।

जड़ैया (हिं० स्त्री०) जाड़ा हो कर आनेवाला बुखार, जूड़ी।

जण्डियाला—पञ्जाब प्रान्तके जालन्धर जिलेकी फिलौर तहसीलका नगर। यह अक्षा० ३१´ ३४´ उ० और देशा० ७५´ ३७ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ६६२० है। १८७२ ई०को मुनिसपालिटी टूट गयी।

जण्डियाला गुरू—पञ्जाब प्रान्तके अमृतसर जिले और तहसीलका नगर। यह अक्षा० ३१' ३४' उ० और देशा० ७५' २´ पू०में नार्थ वेष्टर्न रेलवे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ७७५० है। जाटोंका प्राधान्य है। भावर जैन व्यवसाय करते हैं। कम्बल और पीतलके बर्तन बहुत बनते हैं। १८६७ ई०में म्युनिसपालिटी हुई।

जण्डोला—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशकी दक्षिण वजीरिस्थान पोलिटिकल एजेन्सीका एक गांव। यह अक्षा० ३२° २०´ उ० और देशा० ७०´ ६´पू०में टाँक-जाम नदीके दक्षिण तट पर पड़ता है। गांवके पास ही एक किलेमें फौज रहती है।

जतनी (हिं० पु०) १ वह जो यत्न या उपाय करता हो। २ सुचतुर, चालाक। (स्त्री०) चरखेकी खुरियोंके मालके पास लगाई जानेवाली रस्सी।

जतपोल—हैदराबाद राज्यके महबूबनगर जिलेका दक्षिणस्थ करद राज्य। क्षेत्रफल १९१ वर्गमील और जनसंख्या प्राय: ३१६१३ है। इसमें ८९ गांव बसते हैं। कुल आमदनी १८००००) है। ७२५३७) रु० निजामको कर स्वरूप दिया जाता है।

शिलाफलकोंसे मालूम पड़ता है कि १२४३ ई०में अश्वपीत नायडूने जतपोल अधिकार किया और पङ्गल तथा दूसरे किलोंको लूट लिया। १८३१ ई०में लछमन रावने निजामसे यह परगना ७००००) रु० वार्षिक कर पर पाया था। राजा साहब कोल्हापुरमें रहते हैं। इसकी लोकसंख्या प्राय: २२०४ है

जतलाना (हिं० क्रि०) जताना देखो।

जतसर (हिं० पु०) जाँतसर देखो।

जताना (हिं० क्रि०) १ ज्ञात कराना, मालूम करना। २ आगाह करना, पहलेसे चेतावनी देना।

जतिङ्ग रामेश्वर—महिसुर राज्यका एक पहाड़। यह अक्षा० १४´५०´ उ० और देशा० ७६´४१´ पू०में अवस्थित है। समुद्रपृष्ठसे उंचाई ३४६९ फुट है। यहांसे अशोकके अनुशासन प्राप्त हुए हैं। पश्चिम सीमा पर रामेश्वरका मन्दिर है।

जतिङ्गा—काछाड़के उत्तरकी ओर बहनेवाली एक नदी। यह बराइल पहाड़से निकल कर शिलचरके दक्षिणमें बराक नदीमें जा मिली है।

जती (हिं० पु०) यति, संन्यासी। यति देखो।

जतु (सं० क्ली०) जायते वृक्षादिभ्य: जन उ, तोऽन्तादेशश्च। १ वृक्षका निर्यास, गोंद। २ लाक्षा। लाह, लाख इसके पर्याय—राक्षा, लाक्षा, याव, अल, द्रुमामय, रक्ता, कीटजा, क्रिमिजा, जतुका, अलक्तका, गवाक्षिका, जतुक, यावक, अलक्तक, रक्त, पलङ्कषा, क्षमि और वरवर्णिनी है। ३ शिलाजतु, शिलाजीत।

जतुक (सं० क्ली०) जतु इव कायति। कै-क। १ हिङ्गु,

हींग। जतु एव जतु स्वार्थे-कन्। २ लाक्षा, लाह, लाख। ३ शरीरकी चमड़ी परका एक चिह्न जो जन्मसे ही होता है। इसे 'लच्छन' या 'लक्षण' कहते हैं।

जतुकर्ण—भगवान् पुनर्वसुके छ शिष्योंमेंसे एक। इन्होंने एक वैद्यकसंहिता बनाई थी, किन्तु वह मिलती नहीं है। (चरकसंहिता)

जतुका (सं० स्त्री०) जतुक-टाप्। १ जनी नामक गन्धद्रव्य, पहाड़ी नामक लता। २ चर्मचटिका, चमगादड़। ३ पर्पटी नामक गन्धद्रव्य, पपड़ी। इसके पर्याय—जतुकारी, जननी, चक्रवर्त्तिनी, तिर्यक्फला, निशान्धा, बहुपुत्री, सुपुत्रिका, राजवृक्षा, जनेष्टा, कपिकच्छु, फलोपमा, रञ्जनी, सूक्ष्मवल्ली, भ्रमरी, कृष्णवल्लिका, विज्जलिका, कृष्णवृन्ता, तरुवल्ली और दीर्घफला है। इसके गुण—शीतल, तिक्त, रक्तपित्त, कफ, दाह, तृष्णा, विषनाशक, रुचिकर तथा दीपन है। यह लता मालवदेशमें अधिकतासे पाई जाती है। इसके पत्ते गिरहदार और फल कौंचफलके समान होते हैं। इससे एक प्रकारका काला गोंद निकलता है। ४ लाक्षा, लाह, लाख। ५ वास्तूक।

जतुकाजननी (सं० स्त्री०) मक्षिकाविशेष, एक मक्खी।

जतुकारी (सं० स्त्री०) जतुकवत् संश्लेषमिच्छति कर-अण् उपपदस० गौरादित्वात् ङीष्। १ जतुकालता, पपड़ी नामकी लता। २ अलक्तक, महावर। यह लाखसे बनता और सौभाग्यवती स्त्रीके पैरोंमें लगता है।

जतुकाश्मीर (सं० क्ली०) कुङ्कुम, केसर, जाफरान।

जतुकाह्वा (सं० स्त्री०) लाक्षा, लाख, लाह।

जतुकृत् (सं० स्त्री०) जतुवत् संश्लेषं करोति कृ-क्विप्। १ जतुकालता। २ लाक्षा, लाह।

जतुकृष्णा (सं० स्त्री०) जतुरिव कृष्णा। जतुकालता, पपड़ी नामकी लता।

जतुगृह (सं० क्ली०) जो, गोंद इत्यादि दाह्य अर्थात् शीघ्र जलनेवाले पदार्थोंसे बना हुआ घर। पाण्डवोंके मारनेके लिए राजा दुर्योधनने वारणावतमें ऐसा घर बनवाया था।

जतुनी (सं० स्त्री०) जतुरिव नयति जतुकारिव प्रापयति संश्लिष्टद्रव्यमिति नी-क्विप्। चर्मचटिका, चमगादड़।

जतुपत्रिका (सं० स्त्री०) १ चाङ्गेरी। २ क्षुद्रपाषाण।

जतुपुत्रक (सं० पु०) जतुनिर्म्मित पुत्र इव कायति कै-क। १ पाशक, चौसरकी गोटी। २ शतरंजका मोहरा।

जतुमणि (सं० पु०) क्षुद्ररोगविशेष एक प्रकारका साधारण रोग। यह रोग चमड़ेके ऊपर होता है। शस्त्र द्वारा उठा कर क्षाराग्नि द्वारा दग्ध करनेसे इसका प्रतीकार होता है, लहसुन, जतुक।

जतुमुख (सं० पु०) जतुनेव संश्लिष्टं मुखं यस्य, बहुव्री०। व्रीहिविशेष। सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका धान।

जतुरस (सं० पु०) जतु नीरसः, ६-तत्। अलक्तक, लाखका बना हुआ रंग, महावर। (भावप्रकाश)

जतुराणी—दिल्ली और रोहिलखण्डके रहनेवाले जाटोंकी एक श्रेणी। (जाट देखो।)

जतुशिला (सं० स्त्री०) शिलाजतु, शिलाजीत।

जतू (सं० स्त्री०) जतु निपातनादूङ्। १ पक्षिविशेष, एक पक्षीका नाम। ५ अलक्तक, लाखका बना हुआ रंग

जतूकर्ण (सं० पु०) १ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम। २ एक तन्त्रकार।

जतूका (सं० स्त्री०) जतुका निपातनाद्दीर्घत्वं। १ चर्मचटिका, चमगादर। २ जनी नामक गन्धद्रव्य। ३ वास्तूक भेद।

जतोई—पञ्जाबके मुजफ्फरगढ़ जिलेकी अलीपुर तहसीलका गांव। यह अक्षा० २९° ३१ उ० और देशा० ७०° ५१´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ४७४८ होगी। कहते हैं सम्राट् बाबरके समय मीर बजार खाँने उसे प्रतिष्ठित किया गत शताब्दीमें सिंधुने उसको बहाया था, परन्तु फिर नया नगरका बन गया। कुछ दिनों वह भावलपुर राज्यके अधीन रहा। मूलराजके विरुद्ध युद्धमें जतोईके लोगोंने सिख शासन अमान्य किया और खूब काम दिया।

जत्तनलाल गोस्वामी—अनन्यसार नामक हिन्दी पद्यग्रन्थके रचयिता। सम्भवतः वे १८६० संवत्में विद्यमान थे। इनकी कविता साधारणतः अच्छी होती थी।

जत्था (हिं० पु०) बहुतसे जीवोंका समूह, झुंड, गरोह।

जत्रानी—रुहेलखंडमें बसनेवाली जाटोंकी एक जाति।

जत्रु (सं० क्ली०) जन-रु तान्तादेशश्च। १ स्कन्धसन्धि,

गलेकी सामनेकी दोनों ओरको हड्डी, हंसली, हंसिया। २ कंधे और बाँहका जोड़।

जतुक (सं० क्लो०) जत एव जतु स्वार्थे कन्। जतु देखो।

जतुक्ष्मज (सं० क्लो०) जतुरूपमश्म-कन्। शिलाजतु, शिलाजीत।

जथ—बम्बई प्रान्तके एक राज्य। बीजापुर देखो।

जथ—बम्बई प्रान्तके जथ राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० १७° ३' उ० और देशा० ७५° १६' पूर्व्में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ५४०४ होगी। शहरमें म्युनिसपालिटीका प्रबन्ध है।

जथा (हिं० क्रि०) १ यथा देखो। (स्त्री०) २ समूह, मंडली, गरोह ३ सम्पत्ति, धन।

जदवर (अ० पु०) निर्विषी, निर्विसी।

जदीद (अ० वि०) नवीन, नया, हालका।

जदु (हिं० पु०) यदु देखो।

जद्दवद्द (हिं० पु०) दुर्वचन, अकथनीय बात।

जद्द—गौड़निवासी एक संस्कृतज्ञ पण्डित। इनके पिताका नाम जयगुप्त था। विक्रमकी ११वीं शताब्दीके प्रारम्भमें ये भोटराज्याधिपति यशोवर्माके करणिक थे।

जन (सं० त्रि०) जायते इति जन-अच्। १ जात, उत्पन्न। (पु०) २ लोक, लोग। ३ भुवन, संसार। ४ असुरविशेष, एक राक्षसका नाम। ५ भूरादि सप्तलोकके अन्तर्गत पंचम लोक, सात लोकोंमेंसे पाँचवां लोक। इस लोकमें ब्रह्माके मानसपुत्र और बड़े बड़े योगीन्द्र रहते हैं। जन-लोक देखो। ६ वह जिसकी जीविका शारीरिक परिश्रम करने और दैनिक वेतन लेनेसे चलती हो। ७ पामर, देहाती, गंवार। ८ प्रजा। ८ शर्कराक्षके एक पुत्रका नाम। १० अनुयायी, अनुचर, दास। ११ समुदाय, समूह, गरोह। १२ सात महाव्याहृतियोंमेंसे पाँचवीं व्याहृति।

जनअनाथ बन्दीजन—सर्वसार और विचारमाला नामक हिन्दी पद्य ग्रन्थके रचयिता। ये १६६६ ई०में विद्यमान थे।

जनक (सं० पु०) जनयति इति जन णिच्-ण्वुल्। १ पिता, जन्मदाता, बाप। २ शम्बर असुरका चतुर्थ पुत्र। ३ उपस्मृतिकारक ऋषिका नाम। ४ इक्ष्वाकुवंशजात निमिराजके पुत्र और मिथिलाके राजा। शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण, छान्दोग्य उपनिषत्, महाभारत हरिवंश, भागवत आदि ग्रन्थोंमें जनककी कथा लिखी है।

शतपथब्राह्मणके मतानुसार ये विदेहके राजा थे। (शतपथब्रा० ११।३।१।२) रामायणमें दो जनोंका नाम जनक पाया जाता है—एक मिथिके पुत्र और उदावसुके पिता, दूसरे ह्रस्वरोमाके पुत्र और सीताके पिता।

(रामायण आदि ७१स०)

भागवतमें लिखा है—निमिने वशिष्ठको छोड़ यज्ञका प्रारम्भ किया था। वशिष्ठने क्रुद्ध हो कर उनको शाप दिया। इस पर ऋषिगण गन्ध, माल्य इत्यादि द्वारा उनको देहकी पूजा कर मन्थन करने लगे, उस मथित देहसे पुत्र जन्मा। मथित देहसे उत्पन्न होनेके कारण इसका नाम मिथि हुआ, इसका दूसरा नाम जनक था। मिथि नामसे प्रयुक्त जनक द्वारा स्थापित देशका नाम मिथिला हुआ। इनके पुत्रका नाम उदावसु था।

(भागवत ९।१३ अ०)

उपनिषद् और पुराणादिके पढ़नेसे मालूम हो सकता है कि, जनक संसारमें रहते हुए भी योगी हुए थे, शुकदेव आदि ऋषियोंने भी उनसे उपदेश लिया था। प्रधानतः ये राजर्षि नामसे प्रसिद्ध थे।

५ काश्मीरराज सुवर्णके पुत्र। ये अत्यन्त प्रजारञ्जक थे। इनके पुत्रका नाम था शचीनर। इन्होंने विहार और जालोर बनवाया था। (राजतरं १।९८) (त्रि०) ६ उत्पादक, उत्पन्न या पैदा करनेवाला। (पु०) ७ वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम।

"वृक्षकी स्यात् जनको नन्दीमझातको मः।" (रत्नमाला)

जनककन्या (सं० स्त्री०) जनकस्य तनयेव तत्पाल्यत्वात्। सीता, जानकी।

जनककूप (सं० पु०) तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम।

जनकजी—सिन्धिया राज्यके एक राजा। पूर्वराजा दौलतरावके मर जाने पर उनकी विधवा रानी बैजाबाईने जनकजीको गोद रक्खा था। सिन्धिया राज्यमें १८३३ ई०में सिंहासनके उत्तराधिकारको ले कर बड़ी गड़बड़ी हुई थी। जनकजीने सिंहासन पर बैठना चाहा, किन्तु रानीने उसमें बाधा दी। इस समय दो दल हो कर युद्ध होनेका उपक्रम हुआ और राज्यमें बड़ी विशृङ्खलता

फैल गई। यह मामला इतना बढ़ गया था कि, उससे समस्त मध्यभारतके देशीय राजगण विचलित हो गये थे और कोई इस पक्षमें, कोई उस पक्षमें मिल कर युद्ध करनेको तयार हो गये थे। उस समय लार्ड विलियम बेण्टिक भारतके बड़े लाट थे। वे इस गड़बड़ीको देख कर ग्वालियर पहुंचे, किन्तु इसको राजाका गृहविवाद समझ कर उन्होंने इसमें हस्तक्षेप न किया। इस समय यहां कर्णल ष्टुयार्ट रेसिडेण्ट थे। १० जुलाईको दोनोंमें लड़ाई छिड़नेवाली थी; परन्तु रेसिडेण्टके कौशलसे वह हो न पाई। उन्होंने तमाम झगड़ेको मिटा कर गवर्णर जेनरल द्वारा जनकजीको ही राजा कहलवा लिया रानी बैजाबाई हताश हो कर राज्य छोड़ कर चली गई ग्वालियर देखो।

जनकजी सिन्धिया—सिन्धियावंशके एक महाराष्ट्र वीर-पुरुष। बहुत थोड़ी उम्रमें ही इनको भीषण युद्ध कार्यमें व्यापृत होना पड़ा था। जिस समय अहमदशाह दुरानी भारतवर्षमें विजय पताका उड़ानेके लिए जी-जानसे कोशिश कर रहे थे, उस समय महाराष्ट्रोंका प्रभुत्व प्रायः समस्त भारतवर्षमें विस्तृत था। अहमदशाहके साथ मराठोंका संघर्ष सबसे पहले अटक नदीके किनारे हुआ था। इस युद्धमें दत्तपटेल सिन्धिया और सत्रह वर्षके युवक जनकजी महाराष्ट्रोंके अधिनायक थे। महाराष्ट्रगण परास्त तो हो गये थे, किन्तु पीछे उन्हें और भी अनेक बार अहमदशाहके साथ युद्ध करना पड़ा था। आखिरकार १७६१ ई०में १२ जनवरीको पानीपथके भीषण युद्धमें महाराष्ट्रगर्व सम्पूर्ण रूपसे खर्व होने पर जनकजी भी कैद कर लिए गये। इस समय उसकी उम्र कुछ २० वर्षकी थी। इनकी प्राणरक्षाके लिए बहुतोंने अहमदशाहसे अनुरोध किया था। अहमदकी भी इच्छा थी। किन्तु अहमदके मन्त्री बरखुर्दारखांकी इच्छाके अनुसार जनकजीको छिपा कर हत्या की गई।

जनकता (सं० स्त्री०) जनक तल्-टाप्। १ कारणता, उत्पादकता, उत्पन्न करनेका भाव या काम। २ उत्पादन शक्ति, उत्पन्न करनेकी शक्ति।

जनकधारी—सुनीतिसंग्रह नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जनकनन्दिनीदास—भेदभास्कर नामक हिन्दी पद्यग्रन्थके रचयिता।

जनकपुर—मिथिलाके अधिपति जनकका बसाया हुआ नगर। यहां जनककी राजधानी थी। कोई कोई अनुमान करते हैं कि मिथारि जिलाके बीचका आधुनिक जनकपुर ही मिथिलाकी पुरानी राजधानी है। भविष्य ब्रह्मखण्डमें वर्णित है—मिथिला देशमें जनकपुर नामक कोई नगर स्थापित होगा। इससे दो योजन पूर्वको मोधर और तरसा नामक दो गांव कालान्तरमें वनभूमि बन जावेंगे। शेरशाह आ कर जब जनकपुर आक्रमण करेंगे क्षत्रिय लोग स्त्री और पुत्रकी रक्षाके लिये तुमुल युद्ध कर मृत्युके मुखमें पतित होंगे। शेरशाह तीन दिन तक शहर लूट कर कालञ्जरमें जा मरेंगे। फिर जनकपुरमें जगह जगह जङ्गल हो जावेगा। परन्तु श्रीरामचन्द्रका मन्दिर और बहुतसे सरोवर विद्यमान रहेंगे। जनकपुरमें बहुतसे क्षुद्र जाति बसेंगे। (४५।२४-३५)

यहां सीतामारी और सीताकुण्ड नामक दो पवित्र तीर्थ हैं। कहते हैं कि सीतामारीमें सीताका जन्म हुआ और श्रीरामचन्द्रके साथ विवाह होनेसे पहले सीताने सीताकुण्डमें स्नान किया था।

जनकराज—हिन्दीके एक कवि।

जनकराज किशोरीशरण—हिन्दीके एक कवि। ये अयोध्याके रहनेवाले और १७४० ई०में विद्यमान थे। इन्होंने तुलसीदासचरित्र, कवितावली, ललितशृङ्गारदीपिका, सिद्धान्तचौंतीसी, दोहावली रसदीपिका, अनन्यतरङ्गिणी आन्दोलरसदीपिका, विवेकसारचन्द्रिका, आदि हिन्दीके कई ग्रन्थ रचे हैं। इनकी पुस्तकें छतरपुरके राजकीय पुस्तकालयमें मौजूद हैं।

जनक लाड़लीशरण—नेहप्रकाशिका और ध्यानमञ्जरी नामक हिन्दी पद्यग्रन्थके रचयिता। आप अयोध्याके रहनेवाले और १८४७ ई०में विद्यमान थे।

जनकल्प (सं० त्रि०) ईषदून: जन-कल्प। १ मनुष्य जाति सदृश। २ अथर्ववेदोक्त धर्मानुष्ठानविषयक २।१८: मन्त्र।

जनकवंश (सं० पु०) जनकानां वंशः। इक्ष्वाकुवंशकी एक शाखा। इस वंशके सभी लोग जनक उपाधिधारी हैं। विष्णुपुराणके मतानुसार इस वंशमें ५६ राजा

जन्मे थे और भागवतके मतसे ५३। यथा—१ इक्ष्वाकु, २ निमि, ३ जनक, ४ उदावसु, ५ नन्दिवर्द्धन, ६ सुकेतु, ७ देवरात, ८ बृहदुक्थ, ९ महावीर्य, १० सत्यधृति, ११ धृष्टकेतु, १२ हर्यश्व, १३ मरु, १४ प्रतिवन्धक (भागवतके मतसे प्रतीप) १५ कृतरथ, १६ कृति, १७ विबुध १८ महाधृति, १९ कृतिरात, २० महरोमा, २१ सुवर्णरोमा, २२ ह्रस्वरोमा, २३ सीरध्वज (जनक उपाधिके धारक सीरध्वजको पुत्रार्थ यज्ञभूमि कर्षण करते समय सीता नामका एक अयोनिसम्भव कन्या प्राप्त हुई थी, इसी सीताके साथ रामचन्द्रका विवाह हुआ था) २४ सीरध्वजके पुत्र भानुमान्, २५ शतद्युम्न, २६ शुचि, २७ ऊर्जवह, २८ सत्यध्वज, २९ कुणि (कुणि), ३० अञ्जन ३१ ऋतुजित्, ३२ अरिष्टनेमि, ३३ श्रुतायु, ३४ सुपार्श्व, ३५ सञ्जय, ३६ क्षेमारि, ३७ अनेनाः, ३८ मीनरथ, ३९ सत्यरथ, ४० सत्यरथि, ४१ उपगु ४२ श्रुत; ४३ शाश्वत ४४ सुधांधा; ४५ सुभास; ४६ सुश्रुत, ४७ जय, ४८ विजय, ४९ ऋत, ५० सुनय, ५१ वीतहव्य, ५२ सञ्जय, ५३ क्षेमाश्व, ५४ धृति, ५५ बहुलाश्व, ५६ कृति। महाभारतके शान्तिपर्वमें कराल और वसुमान् नामसे और भी दो जनकवंशीय राजाओंके नाम पाये जाते हैं।

जनकसप्तरात्र (सं० पु०) सप्तभिः रात्रिभिः साध्यः अण्, जनकेन दृष्टः सप्तरात्र। जनकदृष्ट सप्तरात्रिसाध्य यज्ञ विशेष, सात रातमें होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ। कात्यायन, शांख्यायन, आश्वलायन और आपस्तम्ब श्रौत सूत्रमें इस सप्तरात्रिका विवरण वर्णित है।

जनकारिन् (सं० पु०) जनैः कार्यते कृ-णिनि। अल लाक, लाखका बना हुआ रंग, महावर।

जनकीय (सं० त्रि०) जनक-छ। जनकसम्बन्धीय, जनक राजाके सम्बन्धी।

जनकेश्वरतीर्थ (सं० क्लो०) जनकेन स्थापित ईश्वरः जनकेश्वरः तस्य तीर्थम्। नर्मदा नदीके तीरका एक तीर्थ। यहां जनक राजाका स्थापित किया हुआ शिवलिङ्ग है। (शिवपु० रेवाखा०)

जनकेश बन्दीजन—हिन्दीके एक कवि। ये छतरपुर-महाराजके यहां रहते थे। इनकी कविता तोषकविके समान होती थी।

जनकौर (हिं० पु०) १ जनकनगर, जनकका स्थान। २ जनक राजाके गोत्रापत्य, जनक राजाके वंशधर।

जनखा (फा० वि०) १ औरतके जैसा हाव भाववाला। २ नपुंसक, हीजड़ा।

जनखोरो—हुसेनखेल, आदमखेल और आफ्रिदी पहाड़ियोंके मध्यस्थित जनकखाड़की क्षुद्र उपत्यकामें रहनेवाली एक पार्वतीय जाति। ये दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं—टुटकाई और बरकाई। ये साहसी और लड़ाईमें निपुण होते हैं।

जनगांव—हैदराबाद राज्यके आदिलाबाद जिलेका तालुक यह मरपुर और लक्षेतीपेट तालुकके बीचों बीच पड़ता है। सदर जनगांवकी आबादी कोई २०५२ है।

जनगूजर—कृष्णपचीसी नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जनगोपाल—१ हिन्दीके एक कवि। ये झांसीके अन्तर्गत मऊ-रानीपुरके रहनेवाले थे। इनकी भाषा और भावोंमें जैसी गम्भीरता पाई जाती है, उससे अनुमान होता है कि इनकी कवित्व-शक्ति ऊंचे दरजेकी थी। इन्होंने १७७६ ई०में समरसार नामक हिन्दी पद्य-ग्रन्थकी रचना की थी। इनकी एक कविता (सवैया) नीचे उद्धृत की जाती है—

"पीयिन पूरकौला दूरकौली विधु कला मान
सरसौली भौंहनि समाधि सरसति है।
प्रानायाम साधन कलित कमलासन के
विघन बिनासनको बासना बसति है॥
सिन्दूर सुसब्द गण्ड मण्डल समीर मन
बदनकी रदनकी दुति यों लसति है।
सांझ समै सोरनिधि नीरके निकट मानो
दोजके कलाधरकी कला बिलसति है॥"

२ महात्मा दादूके शिष्य और ध्रुवचरित्रके रचयिता। १६०० ई०में ये विद्यमान थे।

जनगोविन्द—हिन्दीके एक कवि। इनकी कविताका एक नमूना नीचे दिया जाता है।

"जो कोऊ वृन्दावन-रस चाखे।
खाटो लागै खांड़ गुड़ ओपरा चाम देखको नखैं।
अब समान मूल नहीं औषधि लोभ दिखावे नाखैं।
सुधि रहै और चावै आगी निरखि रहै दृग साखैं।
जनगोविन्द बलवीर बिहारी जो वृन्दावन राखैं॥"

जनधर (हिं० पु०) संख।

जनङ्गम (सं० पु०) जनैर्थ्यो गच्छति वहिः गम्-खच् मुमागमः। चण्डाल, चांडाल।

जनचक्षु (सं० क्ली०) जनस्य चक्षुरिव चक्षुवत् प्रकाशकः। सूर्य।

जनचर्चा (सं० स्त्री०) लोकवाद, वह बात जो सर्वसाधारणमें फैल गई हो।

जनछोतम—हिन्दीके एक कवि।

जनजगदेव—भुवचरित्र नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जनजन्मादि (सं० पु०) जनस्य जनिमतो जन्मन आदिः। जो जन्मके पहलेसे ही विद्यमान हैं, परमेश्वर।

"जननीजनजन्मादिः।" (विष्णुपु०)

जनत् (सं० पु०) जन भावे अति। १ धर्मक्रियानुष्ठानके समयमें उच्चारित ओङ्कारादि तुल्य पावन शब्दविशेष। २ जनन, उत्पत्ति, उद्भव।

जनता (सं० स्त्री०) जनानां समूहः, जन-तल्-टाप्। १ जनसमूह, मनुष्योंकी भीड़। जनस्य भाव। २ जनत्व जननका भाव। ३ उत्पादन, पैदायश।

जनतुलसी—हिन्दीके एक कवि और भक्त।

जनत्रा (सं० स्त्री०) जनान् त्रायते जन्-त्रै-क। वह जो मनुष्योंको रौद्र अथवा वृष्टिसे त्राण करता हो, छाता या इसी प्रकारकी और कोई चीज।

जनदयाल—प्रेमलीला नामक हिन्दी पद्य-ग्रन्थके रचयिता।

जनदेव (सं० पु०) जनो देव इव उपमि०। १ नरदेव, राजा, भूपति। २ मिथिलाके एक राजा। एक सौ आचार्य इनके प्रासादमें रह कर इनको आश्रमवासियोंके विविध धर्मोपदेश सुनाते थे, परन्तु ये उनके उपदेशसे तृप्त न होते थे। अन्तमें कपिलके पुत्र महर्षि पञ्चशिखने मिथिलामें आ कर इनको मोक्षमार्गका स्वरूप समझाया था, इससे इनको तत्त्वका ज्ञान हो गया था।

(महाभारत शान्ति २१८ अ०)

जनद्वत् (सं० पु०) जनत् जननं अस्ति यस्य जनत् मतुप् जनन गुणयुक्त अग्नि।

"अपये तपस्वते जनद्वते पावकवते स्वाहा।" (एतरेयब्रा ४८)

जनधा (सं० पु०) जनः दधाति, जन-धा-क्विप्। जनपोषक वह्नि, अग्नि, आग।

जनन (सं० क्ली०) जन भावे ल्युट्। १ उद्भव, उत्पत्ति, पैदायश। २ जन्म। ३ आविर्भाव। ४ यज्ञ आदिमें दीक्षित व्यक्तिका एक संस्कार। दीक्षित व्यक्तिके दीक्षारूप जन्म ग्रहणके लिये इस संस्कारका नाम 'जनन' हुआ है। ५ वंश, कुल। जन्-णिच्-भावे ल्युट्। ६ उत्पादन। ७ (त्रि०) उत्पादक। (पु०) ८ पिता, बाप। ९ परमेश्वर। १० तन्त्रके अनुसार मन्त्रोंके दश संस्कारोंमेंसे पहला संस्कार।

जनना (हिं० क्रि०) प्रसव करना, सन्तानको जन्म देना।

जननाशौच (सं० क्ली०) जनन निमित्त अशौच, वह अशौच जो घरमें किसीका जन्म होनेके कारण लगता है। अशौच देखो

जननि (सं० स्त्री०) जायते इति जन् भावे-अनि। १ उत्पत्ति, जन्म पैदाइश। २ वंश, कुल। ३ जनी नामक गन्धद्रव्य। ४ मालव देशमें होनेवाली जनी नामकी लता।

जननी (सं० स्त्री०) जनयति इति जन्-णिच्-अनि, अथवा जायते अस्याः इति जन् अपादाने-अनि। १ माता, मा। २ उत्पादिका, उत्पन्न करनेवाली। ३ दया, अनुकंपा, कृपा, मेहरबानी। ४ जनी नामक गंधद्रव्य। ५ चर्मचटिका, चमगादड़। ६ यूथिका, जूहीका फूल। ७ पर्पटी, पपड़ी। ८ कटुकी, कुटकी। ९ मञ्जिष्ठा, मजीठ। १० अलक्तक, अलता। ११ जटामांसी। १२ उत्पादक स्त्रीमात्र। 'बीजप्ररोहजननीं ज्वलनः करोति।' (रघु) १३ जतुका लता। १४ वास्तूक। १५ मल्लिका।

जननीय (सं० त्रि०) जन-अनीयर्। उत्पादनयोग्य, पैदा करने लायक।

जननेन्द्रिय (सं० स्त्री०) वह इन्द्रिय जिससे प्राणियोंकी उत्पत्ति होती है, भग, योनि।

जनपद (सं० पु०) जनाः पद्यन्ते गच्छन्ति अत्र इति जन पद, आधारे घ; अथवा जनानां पदं आश्रयस्थानं यत्र। १ देश, वह स्थान जहां बहुत मनुष्य बसते हों। २ देशवासी, सर्वसाधारण लोक, लोग।

जनपदाधिप (सं० पु०) जनपदस्य अधिपः। जनपदके अधिपति, राजा।

जनपदिन् (सं० त्रि०) जनपदाः सन्ति यस्य स्वत्वेन

इनि। जनपदस्वामी, देशके मालिक।

जनपदेश्वर (सं० पु०) जनपदस्य ईश्वरः। जनपदके अधीश्वर, राजा।

जनपालक (सं० पु०) १ मनुष्योंका पोषण करनेवाला। २ सेवक या अनुचरका पालनेवाला।

जनप्रवाद (सं० पु०) जनेषु प्रवादः अपवादः, ७-तत् लोकापवाद, लोकनिन्दा। इसके पर्याय—कौलीन, विगान और वचनीयता। २ जनरव, किंवदंती, अफवाह।

जनप्रिय (सं० पु०) जनानां प्रियः, ६-तत्। १ शोभाञ्जनवृक्ष, सहजनका पेड़। (पु०-स्त्री०) २ धन्याक, धनियाँ। (त्रि०) ३ लोकप्रिय, सबका प्यारा, जिसको लोग चाहते हों। (पु०) ४ शिव, महादेव। ५ गोधूम। ६ नागरवृक्ष।

जनप्रियता (सं० स्त्री०) सर्वप्रियता, सबके प्रिय होनेका भाव।

जनप्रिया (सं० स्त्री०) १ हिलमोचिका शाक, हुलहुलका साग। २ कुस्तुम्बुरो, कोथम्बोर।

जनबगुला (हिं० पु०) एक प्रकारका बगुला।

जनभक्ष (सं० पु०) जनानां भक्षः, जन-भज-बाहुलकात् स। १ कामना पूरणके लिये यजमान जिसको प्यार करता हो।

जनभूयिष्ठ (सं० त्रि०) जना भूयिष्ठा बाहुला यत्र। १ जहाँ बहुत मनुष्य रहते हों। २ बहुजनाकीर्ण, जो बहुत मनुष्योंसे भरा हो।

जनभृत् (सं० पु०) जनान् बिभर्त्ति धारयति पोषयति जन-भृ-क्विप्, पित्त्वात् तुगागमः। मनुष्योंके भरणकर्त्ता, वे जो लोगोंको पालते हों।

जनभोला—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने भगवद्गीताका हिन्दी पद्योंमें अनुवाद किया है।

जनम (हिं० पु०) १ उत्पत्ति, जन्म। २ आयु, उम्र, जिन्दगी। जन्म देखो।

जनमघूंटी (हिं० स्त्री०) वह घूंटी जो बच्चोंको जन्मकालसे दो तीन वर्ष तक दी जाती है।

जनमना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न होना, पैदा होना। २ चौसर आदि खेलोंमें किसी नई आ मरी हुई गोटीका उसके नियमानुसार खेले जानेके उपयुक्त होना।

जनमपत्ती (हिं० स्त्री०) चायकी फुनगी जो पहले पहल निकलती है।

जनमरक (सं० पु०) जनानां मरकः नाशनः। जन-मृ-वुन्। मनुष्यनाशकारी देशव्यापीरोग, वह बीमारी जिससे थोड़े समयमें बहुतसे लोग मर जाते हैं, महामारी।

जनमर्य्यादा (सं० स्त्री०) जनानां मर्यादा। लौकिकरीति, लोकाचार

जनमाना (हिं० क्रि०) प्रसव कराना, बच्चा उत्पन्न कराना।

जनमेजय (सं० पु०) जनान् शत्रुजनान् एजयति प्रतापैः कम्पयति इति। एज् कम्पने णिच्-खश्। १ विष्णु, जनार्दन। २ कुरु राजाके पञ्चम पुत्र। ये कुरु सूर्यतनया तपतीके पुत्र थे। ३ पुरुराजाके एक पुत्र। (हरिवंश ३१ अ०) ४ अभिमन्यु-तनय राजा परीक्षितके पुत्र। जनमेजय देखो। जनमेजयने जब मन्त्रियोंसे अपने पिता परीक्षितकी मृत्यु का विवरण सुना, तो वे पितृहन्ता तक्षकके ऊपर अत्यन्त क्रुद्ध हुए। इस समय महर्षि उतङ्क, तक्षक द्वारा नाना तरहसे उत्पीड़ित हो कर उससे बदला लेनेके अभिप्रायसे हस्तिनापुर आये और राजा जनमेजयको यथोचित आशीर्वाद दे कर तक्षकको प्रतिफल देनेके लिए उन्हें उत्तेजित किया। फिर क्या था; जनमेजयने ऋत्विजोंको सर्पकुल विध्वंश करनेके लिए बड़ा भारी सर्पसत्र आरम्भ करनेकी आज्ञा दे दी। यज्ञ आरम्भ हुआ। ऋत्विकगण मन्त्रोच्चारण पूर्वक होम करने लगे। नामोच्चारण पूर्वक सर्पोंकी आहुति आरम्भ होने पर सर्पगण भयसे विह्वल हो कर जल्दी जल्दी निश्वास लेते हुए निहायत परवश हो कर यज्ञकुण्डमें गिरने लगे। तक्षकने डर कर इन्द्रकी शरण ली। जरत्कारुके पुत्रने अत्यन्त उद्विग्न हो कर अपने भागिनेय आस्तीकको सर्पयज्ञ बन्द करानेके लिए जनमेजयके पास भेजा। आस्तीक यज्ञकी प्रशंसा करने लगे। सभाके सभी लोग आस्तीकके गुणसे अत्यन्त प्रसन्न हुए। जनमेजयने तक्षककी इन्द्रके शरणागत जान कर ऋत्विजोंसे कहा—"यदि इन्द्र तक्षकको न छोड़ें, तो इन्द्रके साथ एकत्र तक्षकको भस्म कीजिये।" राजाकी आज्ञा पा कर होतृगण तदनुसार कार्य करने लगे।

इन्द्रके साथ तक्षक आकृष्ट होने लगा। इन्द्रने डर कर तक्षकको छोड़ दिया। तक्षक कातर हो कर प्रज्वलित अग्निशिखाके समीप आने लगा। ऋत्विजोंने कहा—"महाराज! आपके अभीष्टकी सिद्धिमें अब कोई भी कसर नहीं रही।" यह सुन कर जनमेजयने आस्तीकसे कहा—"ब्राह्मणकुमार! आपका अभीष्ट क्या है, कहिये वही आपको दिया जायगा।" आस्तीकने कहा—"महाराज! सर्पसत्र बन्द हो और मेरा मातुलकुल निराकुलचित्तसे इच्छानुसार रहे।" जनमेजय "तथास्तु" कह कर सर्पसत्रसे निवृत्त हुए।

इसके बाद जनमेजयने अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान किया था। (महाभारत, ऐतरेय ब्राह्मण और शतपथब्राह्मणमें परीक्षितके पुत्र जनमेजयके अश्वमेधका प्रसङ्ग पाया जाता है)

५ पुरञ्जयका एक पुत्र। (हरिवंश) ६ सोमदत्तका एक पुत्र (विष्णु०) ७ सुमतिका पुत्र। (भाग० ९।२।३६) ८ मृत्युञ्जयका पुत्र। (भाग ९।२२।२)

९ एक प्रसिद्ध नाग। (पञ्चविंश ब्रा० २५।१५)

१० उड़िष्याके सोमवंशीय एक राजा। ये ययातिके पिता और पहले तिलङ्गके राजा थे। इन्होंने उडुराजको परास्त कर उत्कल अधिकार किया था। त्रिकलिङ्गाधिपति महाभवगुप्तके आधिपत्यके समय ये उड़िष्याका शासन करते थे। (जगन्नाथ शब्द देखो।)

जनमोह (सं० पु०) मुह-घञ्-जनानां मोहः, ६-तत्। मनुष्योंका मोह, अचैतन्य, अज्ञान।

जनमोहन—सनेहलीला नामक हिन्दी पद्यग्रन्थके रचयिता।

जनयत् (सं० त्रि०) जन णिच्-शतृ। उत्पादक।

जनयति (सं० स्त्री०) जन् णिच् भावे-क्तिन्। उत्पादन, पैदा करनेका भाव।

जनयन्ती (सं० स्त्री०) शुमागमः जनयत् देखो।

जनयितृ (सं० पु०) जन णिच् तृच्। १ पिता। २ उत्पादक, जन्मदाता।

जनयित्री (सं० स्त्री०) जनयितृ स्त्रियां ङीप्। माता। "जनयित्रीमलञ्चक्रे यः प्रश्रय इव श्रियम्।" (रघुवंश)

जनयिष्णु (सं० त्रि०) जन णिच् इष्णुच्। जननशील, उत्पादक, जन्म देनेवाला।

जनयोपन (सं० त्रि०) जनाह्लादकर, जो लोगोंको खुश करता हो।

जनरङ्गक (सं० पु०) वनवास्तुक।

जनरञ्जन (सं० त्रि०) जनानां रञ्जनः जन-रञ्ज-ल्यु। मनुष्योंके चित्तको आकर्षण करनेवाला, जो लोगोंको प्रसन्न करता हो।

जनरञ्जनी (सं० स्त्री०) १ जतुका लता। २ जनी नामक गन्धद्रव्य।

जनरल (अं० पु०) अंग्रेजी-सेनाका सेनानायक वा सेनापति। फौजका एक बड़ा अफसर जिसके मातहत कई रेजिमेण्टें होती हैं।

जनरव (सं० पु०) जनेषु लोकेषु रवः प्रवादः, ७-तत्। निन्दा, लोकनिन्दा, बदनामी। २ बहुतसे लोगोंका कोलाहल, शोर। ३ जनश्रुति, किंवदन्ति, अफ़वाह।

जनराज (सं० पु०) जनेषु राजते शोभते इति राज-क्विप्। जनाधिप, राजा।

जनराजन (सं० पु०) जनाधिप, राजा।

जनराम—हिन्दीके एक कवि। इनकी कविता एकसे एक बढ़ कर है। नीचे एक कविता उद्धृत की जाती है—

"तन बिन कब नहीं एक घरीकहु। कैसे बीते दिनरात। सखी अब० ।
बैन मिलनको रीत सुधारी। गिन गिन रैन बितात॥ अब कैसे०॥
सपनेमें कहुं देखत परत मन भावनको सब गात।
जब नहि फिरि फिरि बातभात। अब तन० ।
सुन्दर छवि चौंक परत जनराम भाखत फेर बचनन कही जात॥ घरी अब तन बिन॥"

जनलोक (सं० पु०) भूरादि सप्तलोकान्तर्गत पञ्चमलोक, सात लोकोंमेंसे पाँचवां लोक। जनलोकमें ब्रह्माके मानसपुत्रगण तथा ऊर्ध्वरेता योगीन्द्रगण सर्वदा सुखसे वास करते हैं। स्कन्दपुराणके काशीखण्डके मतानुसार जनलोक दो करोड़ योजन विस्तृत है तथा पृथ्वीसे एक करोड़ योजन ऊपरमें अवस्थित है।

जनवरी (अं० स्त्री०) अंगरेजी वर्षका प्रथम मास। यह इकतीस दिनोंका होता है।

जनवल्लभ (सं० पु०) १ श्वेतरोहित वृक्ष, सफेद रोहिड़ा। २ लोकप्रिय, जनप्रिय।

जनवाड़ा—हैदराबाद राज्यके बीदर जिलेका तालुक।

जनवाद (सं० पु०) जनानां वादः कथनं। १ जनप्रवाद। २ निन्दा। ३ जनरव, अफवाह।

जनवादिन् (सं० त्रि०) जनवादकारी, अफवाह उड़ानेवाला।

जनवाना (हिं० क्रि०) प्रसव कराना, लड़का पैदा कराना।

जनवार—राजपूत जातिकी एक श्रेणी। अवध और युक्तप्रदेशमें इनकी संख्या अधिक है। सर सो० इलियटने इनके विषयमें यों लिखा है—"कन्नौजसे राठोरोंके भगाये जाने पर जनवार राजपूतोंने कन्नौज पर अपना अधिकार जमाया और पीछे ये लोग वानगरमऊ परगनेमें रहने लगे। ये दिल्लीके समीप बुलवर्गसे आये हुए थे। कुछ तो हरदोई जिलेमें बस गये और कुछ वानगरमऊ परगनेमें। सूरज और दासू इस वंशके प्रधान पुरुष थे। सूरज यहां बहुत दिनों तक रह न सके, उन्होंने घाघरा लौट कर इकौना राज्य स्थापित किया। दासूने रावतकी उपाधि पाई थी। जब इनके वंशजोंने चौबीस ग्राम चार भागों या तरफमें बाँट लिये, तब सबसे बड़ा तथा प्रधान वंश रौताना तरफ नामसे प्रसिद्ध हुआ और शेष तीन लाल भान और सीतू कहलाने लगी। इन लोगोंमें यह नियम है कि राजाके मरने पर सबसे बड़े लड़के ही राजाके पूर्ण अधिकारी होते हैं।

जनवार राजपूतोंने दिल्लीमें जागीर पाई थी या नहीं यह संदेहयुक्त है। लेकिन यह निश्चय है कि इनमेंसे अनेक लगभग तीनसौ वर्ष पहलेसे फतेपुर चौरासी परगनेमें रहते आये हैं। इन्हें आदिमनिवासी थेथर या लोधसे कुछ जमीन मिल गई है।

भड़ौंचके जनवारोंका कहना है कि इनके पूर्वपुरुष बरियार साह गुजरातके सीमावर्त्ती पावागढ़के सोमवंशी सरदार थे। अपने भाई तथा पितासे लड़ाईमें परास्त होने पर दिल्लीके सुलतान गयासउद्दीन बलबनने इन्हें कैद कर लिया; किन्तु कुछ दिन बाद सुलतान जलालउद्दीन फिरोज खिलजीने इन्हें मुक्त कर दिया। उस समय भर और थार राज्ञो और पहाड़के मध्यवर्त्ती जंगलमें रहते थे। बरियारसाह भड़ौंचके गवर्नरसे मिल गये और उन्हींकी सहायतासे इन्होंने जंगलवासी भर और थारको परास्त किया। इसी वंशमें माधोसिंह एक हो गये हैं जिन्होंने वर्त्तमान शहर बलरामपुरमें प्रवेश कर खस चौधरीको मार भगाया था।"

सीतापुरमें भी जनवार लगभग १२०० वर्ष पहलेसे बसते आ रहे हैं। खेरोके जनवार अपनेको चौहान बतलाते हैं। ये लोग गौर और तोमर वंशमें अपना लड़कोंका और बाछल वंशमें अपने लड़केका विवाह करते हैं।

जनवास (हिं० पु०) १ वह स्थान जहां सर्वसाधारण ठहरते हों। २ बरातियोंके टिकनेका स्थान। ३ सभा, समाज।

जनविद् (सं० पु०) जनान् वेत्ति जन-विद्-क्विप्। वह जिसमें बहुतोंका अधिकार हो।

जनव्यवहार (सं० पु०) जनानां व्यवहारः। प्रचलित रीति, लोकाचार।

जनशिवदीन—हिन्दीके एक कवि।

जनश्री (सं० स्त्री०) १ वह जो मनुष्यके निकट जाता हो। २ पूषाका एक नाम।

जनश्रुत (सं० त्रि०) जने श्रुतः विख्यातः। १ लोकविख्यात, प्रसिद्ध, मशहूर। (पु०) २ एक राजाका नाम।

जनश्रुति (सं० स्त्री०) जनेभ्यः श्रुतिः श्रवणं। १ लोकप्रवाद, अफवाह। २ एक राजा, ये अत्यन्त दानशील थे। छान्दोग्य उपनिषद्में इनका उल्लेख है।

जनस् (सं० स्त्री०) जन णिच्-असुन्। १ सबभूत जनयित्री, पृथिवी। २ जनलोक।

"जनसपः सत्यनिवासिनो नमः।" (भागवत ३।११।२५)

जनसमूह (सं० पु०) जनानां समूहः। मनुष्योंकी समष्टि, लोगोंकी भीड़।

जनसंक्षय (सं० पु०) जनानां संक्षयः नाशः। जनसमूहका क्षय, नाश।

जनसंबाध (सं० पु०) जनानां संबाधो यत्र। जनाकीर्ण स्थान, वह जगह जो मनुष्योंसे ठसाठस भर गई हो।

जनसंसद् (सं० स्त्री०) जनानां संसत्। बहुत मनुष्योंसे गठित सभा।

जनस्थ (सं० त्रि०) मनुष्योंके पास रहनेवाला।

जनस्थान (सं० क्ली०) जनस्य स्थानं भूभागः। १ लोकालय,

वह स्थान जहाँ मनुष्य बसते हों। २ दण्डकारण्य, दंडक वन। ३ दण्डकारण्यके समीपवर्ती स्थानविशेष, दंडक वनके समीपके एक स्थानका नाम। रामायणमें लिखा है कि इक्ष्वाकु राजपुत्र दण्डके शुक्राचार्यकी कन्या अरजाके साथ बलात्कार करने पर शुक्राचार्यने क्रुद्ध हो राजाको शाप दिया। शापके प्रभावसे दण्डराज सात रात्रिमें भस्म हो गये। उन्हीं दण्डराजके नाम पर दण्डका रण्य नाम पड़ा है और तपस्विगणने जिस स्थानमें रह कर रक्षा पाई थी उसको 'जनस्थान' कहते हैं। ४ दण्डकारण्यमें रावणबलनिवेश स्थान। यहाँ खर, दूषण प्रभृति सेन्यगण रहते थे।

"खरेणाधीनमस्तरं जनस्थाननिवासिना।" (भारत आदि २७६ अ०)

जनस्थानरुह (सं॰ पु॰) जनस्थाने रोहति रुह-क। जनस्थानमें उत्पन्न वृक्ष।

जनहमीर—रामरहस्य नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जनहर जीवन—हिन्दीके एक कवि।

जनहरण (सं॰ पु॰) एक दण्डक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें ३० लघु और एक गुरु होता है।

जना (सं॰ स्त्री॰) जन्-अङ्-टाप्। १ उत्पत्ति, पैदाइश। (मुग्धबोध) २ माहिष्मतीराज नीलध्वजकी पत्नी ज्वाला। ये गङ्गाकी बड़ी भक्त थीं। उनकी कृपासे जनाके गर्भसे एक शिवकिङ्करका जन्म हुआ, जो प्रवीर नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। ज्वालाकी पुत्री स्वाहाका जब अग्निदेवके साथ विवाह हुआ, तब माहिष्मतीपुरमें पाण्डवोंके आश्वमेधिक अश्वके उपस्थित होने पर प्रवीरने उस अश्वको बाँध लिया। नीलध्वजने जब उस अश्वको लौटा देनेके लिए कहा, तब वीरमाता ज्वालाने उनकी बातको रोक कर पुत्रको युद्ध करनेकी अनुमति दी और स्वयं सेनाओंको उत्साहित करने लगीं। श्रीकृष्णकी सहायतासे बड़ी मुश्किलसे पाण्डवोंकी जय हुई और प्रवीर निहत हुए। युद्धके बाद अग्निदेवके परामर्शानुसार नीलध्वजने पाण्डवोंसे सन्धि कर ली, इस पर पुत्रशोकार्त्ता तेजस्विनी ज्वाला राजाको बहुत भर्त्सना कर महातेजसे उन्मादिनीकी तरह युद्धस्थलको दौड़ीं। उनके तेजसे सभी भस्मसात् होने लगे। बड़े कष्टसे और श्रीकृष्णकी सहायतासे पाण्डवोंने रक्षा पाई। आखिरकार ज्वाला पुत्रशोकसे अर्द्धरित हो आकाशको गोदमें कूद पड़ीं। (जैमिनि भारत)

(त्रि॰) ३ उत्पन्न किया हुआ, जन्माया हुआ।

जनाई (हिं॰ स्त्री॰) १ दाई, जनानेवाली। २ दाईकी मजदूरी।

जनाई—एक देवता। बम्बई प्रान्तके पूना जिलेमें कुनबी लोग इनको पूजते हैं।

जनाकीर्ण (सं॰ त्रि॰) जनैः आकीर्णः आ-कॄ-क्त। बहुत मनुष्यसे परिवृत, जहां बहुत मनुष्य रहते हों।

जनाचार (सं॰ पु॰) जनस्य आचारः, ६-तत्। लोकाचार, देश या समाज आदिकी प्रचलित रीति।

जनाजा (अ॰ पु॰) १ मृतक शरीर, शव, लाश। २ अरथी या सन्दूक जिस पर मुर्देको रख कर जलाने या गाड़ने ले जाते हैं।

जनातिग (सं॰ त्रि॰) जनमतीत्य गच्छति अति-गम्-ड। लोकातीत, अलौकिक।

जनाधिनाथ (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ जनसमूहके अधिनाथ, प्रभु, मालिक। २ राजा। ३ विष्णु।

जनाधिप (सं॰ पु॰) जनानां अधिपः अधि-पा-क। राजा, नरपति।

ज़नानख़ाना (फा॰ पु॰) स्त्रियोंके रहनेका घर।

जनाना (हिं॰ क्रि॰) १ ज्ञात कराना, जताना, मालूम कराना। २ उत्पन्न कराना, जननेका काम कराना।

ज़नाना (फा॰ वि॰) १ स्त्रीसम्बन्धीय, स्त्रियोंका (पु॰) २ स्त्रीसमूह, स्त्रियोंकी भीड़। ३ अन्तःपुर, ज़नानख़ाना। (वि॰) ४ नपुंसक, नामर्द, हीजड़ा। ५ निर्बल, डरपोक, कायर।

ज़नामापन (फा॰ पु॰) स्त्रीत्व, मेहरापन।

जनान्त (सं॰ पु॰) जनस्य अन्तः, ६-तत्। १ देश, सीमाबद्ध प्रदेश, जिला। २ जनसमीप। ३ जनमर्यादा। ४ यम। (त्रि॰) ५ मनुष्यनाशक, जो मनुष्योंकी हत्या करता हो। ६ जहां मनुष्योंका वास न हो।

जनान्तिक (सं॰ क्लो॰) जनस्य अन्तिकः समीपः। १ जनसमीप। २ अप्रकाश भावसे कथोपकथन, गुप्तरीतिसे बातचीत।

जनाब (अ॰ पु॰) सम्मानसूचक उपाधि, आदरसूचक शब्द, महाशय, हुजूर।

जनावधाली (सं० पु०) प्रतिष्ठित पुरुषोंके लिये आदर सूचक सम्बोधन, मान्यवर।

जनाबाई—विठोबाकी उपासिका एक महाराष्ट्र-महिला। सोलापुरके अधीन पण्ढरपुरमें प्रसिद्ध गोपालकृष्णके मन्दिरके पास जनाबाईको कुटोर है। उस कुटोरमें दो पत्थरकी मूर्त्तियां हैं—एक विठोबाको और दूसरी जनाबाईको। उक्त कुटोरमें एक बहुत पुरानी कथड़ा (कन्था) पाई जाती है, लोग इसे जनाबाईकी बताते हैं। इस प्रान्तके लोग जनाबाईको भी पूजा करते हैं।

जनार्णव (सं० पु०) जनाः अर्णवाः इव उपमि० बहुत मनुष्योंका समावेश, लोकसमुद्र।

जनार्थशब्द (सं० पु०) पारिवारिक उपाधि।

जनार्दन (सं० पु०) (१) जनं असुरविशेषं अर्दितवान् इति जन-अर्दि-णिच्-कर्त्तरि ल्यु। (२) अथवा जनैः अर्द्यते याच्यते पुरुषार्थलाभाय इति जन-अर्द्द-कर्मणि ल्युट्। अथवा (३) जनं (जन-भावे घञ्) जन्म अर्दयति हन्ति भक्तस्य मुक्तिदानेन इति जन-अर्दि-ल्यु। (४) जनान् लोकान् अर्दयति हररूपेण संहारकत्वात् इति। अथवा (५) जनयति उत्पादयति ब्रह्मरूपेण इति जनः (जन्-णिच् पचाद्यच्) अर्दति हन्ति लोकान् हररूपेण इति अर्दनः (अर्द-ल्यु) जनश्चासौ अर्दनश्चेति (कर्मधा०) अथवा (६) जनान् लोकान् अर्दति गच्छति प्राप्नोति रक्षणार्थं पालकत्वात् इति। (अमर) १ विष्णु। २ गयातीर्थकी जनार्दन नामकी विष्णुमूर्ति। गयाक्षेत्रमें इनके हाथ पर जीवित व्यक्तिके उद्देशसे पिण्ड दिया जाता है। गयामाहात्म्यमें लिखा है कि जिसके उद्देशसे इस तरहका पिण्ड अर्पित होता है, उसकी मृत्युके बाद स्वयं भगवान् जनार्दन वह पिण्ड उसके लिये गयाके शिर पर अर्पण करते हैं।

"एष पिण्डो मया दत्तस्तव हस्ते जनार्दन।
अन्तकाले गते मह्यं त्वया देयो गयाशिरे॥"
परलोकं गते मह्यं तस्मिन् पिण्डो मतो प्रभो॥
एष पिण्डो मया दत्तस्तव हस्ते जनार्दन।
अन्तकाले गते मह्यं त्वया देयो गयाशिरे॥"

३ शालग्रामशिलाविशेष। इनका लक्षण पद्मपुराण पातालखण्डके १०वें अध्यायमें इस तरह लिखा है—

"चतुश्चक्राङ्कितश्चैव जनार्दन इति स्मृतः।
चतुर्वर्गप्रदं नित्यं सेवितव्यः मनीषिभिः॥"

इनकी उपासना करनेसे मोक्षलाभ होता है। (त्रि०) ४ जनपीड़क, लोगोंको कष्ट पहुंचानेवाला।

जनार्दन—१ एक वेदान्तिक, अनुभूति स्वरूपाचार्यके शिष्य। इन्होंने तत्त्वालोक नामक वेदान्तकी रचना की है। २ एक संस्कृत कवि।

जनार्दन कवि—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म १६६१ ई०में हुआ था। इनकी कविता प्रेम-मूलक होती थी।

जनार्दनभट्ट—१ आनन्दतीर्थकृत भगवत्तात्पर्यनिर्णय और मेघदूतके एक टीकाकार। इसके सिवा इन्होंने मन्त्र-चन्द्रिकातन्त्र नामक एक संस्कृत ग्रन्थ भी रचा था। इनकी टीकाओंमें हरिदेव, वल्लभ और आसड़का नामोल्लेख पाया जाता है।

२ विवाहपटल नामक संस्कृत ज्योतिषग्रन्थके रचयिता।

३ एक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकार। इनके बनाये हुए दो ग्रन्थ मिलते हैं—१ वैराग्यशतक और २ शृङ्गारशतक।

४ वैद्यरत्न नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

जनार्दन विबुध—एक संस्कृत टीकाकार। ये अनन्तके शिष्य थे। इन्होंने श्लोकदीपिकाके नामसे काव्यप्रकाशकी टीका, भावार्थदीपिकाके नामसे वृत्तरत्नाकरकी टीका तथा रघुवंशकी टीका लिखी थी।

जनार्दनव्यास—एक प्रसिद्ध दार्शनिक। ये बापूजी व्यासके पुत्र, विट्ठल व्यासके पौत्र और जयराम न्यायपञ्चाननके शिष्य थे। इन्होंने पदार्थमाला और गूढ़ार्थदीपिका नामक वैशेषिकदर्शन-सम्बन्धी ग्रन्थ रचे थे।

जनाव (हिं० पु०) सचेत करनेकी क्रिया, सूचना, इत्तिला।

जनाशन (सं० पु०) जनान् अश्नाति भक्षयति जन-अश-भोजने ल्यु। १ वृक, भेड़िया। (त्रि०) २ मनुष्यभक्षक, जो आदमियोंको खाता हो। (क्ली०) ३ लोकभक्षण आदमियोंको खानेका काम।

जनाश्रय (सं० पु०) जनानां आश्रयः, ६-तत्। १ मण्डप, वह मण्डप जो किसी विशेष कार्य या समयके लिये बनाया जाय। २ गृह, साधारण घर। ३ लोकालय। ४ पान्थशाला, यात्रियोंके ठहरनेका स्थान, धर्मशाला, सराय।

जनाषाह् (सं॰ पु॰) जनान् सहते सह-क्विप्। लोकसहिष्णु।

जनि (सं॰ स्त्री॰) जन्-इन्। १ उत्पत्ति, जन्म, पैदाइश। २ नारी, स्त्री। ३ माता। ४ स्नुषा, पुत्रवधू, पतोहू ५ जाया भार्या। जायते आरोग्यमनया। ६ औषधविशेष ७ जतुका। ८ जनी नामक गन्धद्रव्य। ९ जन्मभूमि, जन्मस्थान। जनो रक्षा। १० वेदमें 'जनि' शब्दका अर्थ "अङ्गुलि" लिखा है। यथा "जनिभिः समिद्ध" अर्थात् अङ्गुलि द्वारा प्रज्वलित।

जनिका (सं॰ स्त्री॰) जनि-स्वार्थे-कन् ततः स्त्रियां टाप्। १ जनि देखो। जन-णिच्-ण्वुल-टाप्। २ जननकर्त्री, स्त्री, औरत।

जनिका (हिं॰ पु॰) पहेली, बुझौवल।

जनिकाम (सं॰ पु॰) जनिं भार्यां कामयते जनि-कम-अण्। स्त्रीलाभेच्छु, वह जिसे स्त्री पानेकी इच्छा हो।

जनित (सं॰ त्रि॰) जन्-णिच्-क्त। १ उत्पादित, उत्पन्न किया हुआ। जन्-क्त। २ उत्पन्न, जनमा हुआ, उपजा हुआ।

जनितव्य (सं॰ त्रि॰) जन्-तव्य। जनमने योग्य, पैदा होने लायक।

जनितृ (सं॰ पु॰) जनयति इति जन-णिच्-तृच्। निपातनात् णिलोपः। १ पिता। जन-तृच्। (त्रि॰) २ जो जनमता हो, जो पैदा होता हो।

जनित्र (सं॰ क्ली॰) जन् आधारे-त्र। जन्मस्थान, जन्मभूमि।

जनित्री (सं॰ स्त्री॰) जनितृ स्त्रियां ङीप्। माता, मा।

जनित्व (सं॰ पु॰-स्त्री॰) जन्-णिच्-इत्वन्। १ पिता २ माता। जन भविष्यति इत्वन्। ३ जनिष्यमाण वह जो उत्पन्न होगा। (क्ली॰) ४ भार्यात्व, स्त्रीका धर्म।

जनित्वन् (सं॰ क्ली॰) जन भावे-इत्वन्। १ जनन, जन्म पैदाइश। २ भार्यात्व, स्त्रीका भाव।

जनित्वा (सं॰ स्त्री॰) जन-इत्वन-टाप्। माता, मा।

जनिदा (सं॰ स्त्री॰) जनि-दा-क, स्त्रियां टाप्। वह जो भार्या प्रदान करता हो।

जनिनीलिका (सं॰ स्त्री॰) जन्या उत्पत्त्या नीलिका-महानीलीवृक्ष, नीलका बड़ा पेड़।

जनिमत् (सं॰ पु॰) जनि-जन्म-मतुप्। जन्मयुक्त।

जनिमत्, जनिमा (सं॰ पु॰) जन्यते इति जन-औणादिक इमनिन्। १ जन्म, उत्पत्ति, पैदाइश। २ जन्तु, जानवर।

जनिष्ठा (सं॰ स्त्री॰) जनेष्ठा देखो।

जनिष्य (सं॰ त्रि॰) जन बाहुलकात् भविष्यति स्य। जनिष्यमाण, जो पैदा होगा। "जातो वा जनिष्यो वा" (रामायण

जनी (सं॰ स्त्री॰) जन-इन् स्त्रियां ङीष्। जायते सन्ततिर्यस्याः। १ वधू, स्त्री। जन् भावे इन्। २ उत्पत्ति। ३ जनी नामक गन्धद्रव्य। ४ दासी, अनुचरी, सेविका। ५ उत्पन्न करनेवाली, माता। ६ कन्या, पुत्री लड़की। ७ औषधविशेष। इसके पर्याय—जतूका, रजनी, जतुकृत्, चक्रवर्त्तिनी, संस्पर्शा, जतुका, जनि और जननी। ८ वास्तूक। ९ जन्तुका। १० कटुकी।

जनीन (सं॰ त्रि॰) जन-ख। १ जनका हितकारी, मनुष्योंका उपकार करनेवाला। २ यथाप्रयोजन।

जनीपर (हिं॰ पु॰) एक वृक्षका नाम।

जनीबेगतुर्खन मिर्जा—सिन्धु प्रदेशके अन्तर्गत ठट्ठेके एक शासनकर्त्ता। इनके पितामह मिर्जा महम्मद बाकीको मृत्यु होने पर १५८४ ई॰में ये सिंहासन पर बैठे थे। महम्मद बाकीको मौजूदगीमें अकबर बादशाहने जनीबेगके साथ मिलनेके लिये लाहोर गये थे। जनीबेग जब उनसे मिलनेको राजी न हुए, तब अकबर उन पर बहुत ही नाराज हो गये और १५९१ ई॰में उन्होंने बैरामखांके पुत्र अबदुल रहीमखांको जनीबेगके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए भेज दिया। ३ नवम्बरको दोनों दलोंमें घोर युद्ध हुआ और जनीबेगको पूरी तरहसे हार हुई। इसके बाद जनीबेगके अकबरको अधीनता स्वीकार करने पर अबदुल रहीमखांने जनीबेगकी कन्यासे अपने पुत्र मिर्जा ईरिचका विवाह कर दिया और जनीबेगको वे अपने साथ (१५९२ ई॰में) सम्राट्के पास ले गये। अकबरने उच्च उपाधि दे कर उनका सम्मान किया। तभीसे सिन्धु राज्य मोगल-साम्राज्यके अन्तर्भुक्त हुआ। १५९८ ई॰में बरहानपुरमें जनीबेगको मृत्यु हुई थी।

जनु (सं० स्त्री०) जन-उ । १ जन्म, उत्पत्ति ।

जनु (हिं० क्रि-वि०) मानो ।

जनुस (सं० स्त्री०) जनु स्त्रियां उङ् । जन्म, पैदाइश ।

जनू (सं० स्त्री०) जनु स्त्रियां उङ् । जन्म, पैदाइश ।

जनेऊ (हिं० पु०) १ यज्ञोपवीत, ब्रह्मसूत्र । २ यज्ञोपवीत संस्कार । यज्ञोपवीत देखो ।

जनेत (हिं० स्त्री०) वरयात्रा, बरात ।

जनेता (हिं० पु०) पिता, बाप ।

जनेन्द्र (सं० पु०) जन-इन्द्र इव उपमि० । नृपति, राजा ।

जनेरा (हिं० पु०) एक प्रकारका बाजरा । इसके पेड़ बहुत बड़े होते हैं । इसमें बड़ी बालें भी निकलती हैं ।

जनेव (हिं० पु०) जनेऊ देखो ।

जनेवा (हिं० पु०) १ लकड़ी आदिमें बनाई या पड़ी हुई लकीर या धारी । २ एक प्रकारकी ऊंची घास जिसे घोड़े बहुत चावसे खाते हैं ।

जनवाद (सं० पु०) अलुक्स० । जनश्रुति, किंवदन्ती, अफ़वाह ।

जनेश (सं० पु०) नृपति, राजा ।

जनेष्ट (सं० पु०) १ मुद्गरपुष्पवृक्ष, गन्धराज मोगरा बेला । (त्रि०) २ जनाभिमत ।

जनेष्टा (सं० स्त्री०) ६-तत् । १ जतुका । २ वृद्धि नाम की ओषधि । ३ हरिद्रा, हल्दी । ४ जातीपुष्प, चमेली-का पेड़ । पर्पटी, पपड़ी ।

जनैया (हिं० वि०) जानकार, जाननेवाला ।

जनोत्तम (सं० पु०) शाकवृक्ष ।

जनोदाहरण (सं० क्ली०) जनैरुदाह्रियते कथ्यते जन-उत् आ-हृ कर्मणि ल्युट् । यश, सुख्याति, नामवरी, शुहरत ।

जनौ (सं० त्रि०) जनान् अवति रक्षति जन अव-क्विप् जनरक्षक ।

जनौघ (सं० पु०) जनानां ओघः समूहः । जनसमूह, भीड़ ।

जन्तु (सं० पु०) जायते इति जन्-औणादिक तुन् । १ प्राणी, जन्मशील जीव, जन्म लेनेवाला जीव । २ माया मोहवशतः देहाभिमानी जीव । "ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तो-र्विषयगोचरे" (चण्डी १) मनुष्य, आदमी । ४ सोमकराजपुत्र सोमकको एक सौ रानियां थी । वृद्धावस्थामें जन्तु नामके उनके एक पुत्र हुए । राजाने एक सौ पुत्रकी इच्छा कर लोमशके द्वारा जन्तुकी वपासे होम कराया । तब जन्तुसे सोमकके एक सौ पुत्र हो गए । (भारत ३।१२७-१२८अ०)

जन्तुक (सं० पु०) जन्तु स्वार्थे-कन् । १ जन्तु, जानवर । २ हिङ्गु, हींग ।

जन्तुकम्बु (सं० पु०) जन्तुश्चेतनाविशिष्टः कम्बुः । कृमि-शङ्ख, जीवित शङ्ख; शंखका कीड़ा ।

जन्तुका (सं० स्त्री०) जन्तुभिः कायति प्रकाशते जन्तु-कै क टाप् । १ लाक्षा, लाख, लाह । २ जन्तुकालता, पपड़ी-३ नाड़ीहिङ्गु, । ४ भ्रमरी । ५ लवक् ।

जन्तुकारी (सं० स्त्री०) १ जन्तुका लता । २ नाड़ीहीङ्ग । ३ अलक्तक ।

जन्तुघ्न (सं० पु०) जन्तून् कृमीन् हन्ति हन-टक् । १ वीज-पुरवृक्ष, बिजोरा नीबू । (क्ली०) २ विड़ङ्ग, बायविड़ङ्ग । ३ हिङ्गु, हींग । (त्रि०) ४ प्राणिघातक, प्राणीको नाश करनेवाला । (क्ली०) ५ वह औषध जिसके सम्पर्कसे कीड़े मर जाते हों ।

जन्तुघ्नी (सं० स्त्री०) जन्तुघ्न स्त्रियां ङीप् । १ विड़ङ्ग, बायविड़ङ्ग । २ जन्तुका लता ।

जन्तुजित् (सं० पु०) जम्बीरवृक्ष, जंबीरी नीबूका पेड़ ।

जन्तुतन्तु (सं० पु०) शणवीज, सनका बीज ।

जन्तुनाशन (सं० क्ली०) जन्तून् कीटान् नाशयति नश-णिच् ल्यु । १ हिङ्गु, हींग । (पु०) २ विड़ङ्ग, बाय-बिडंग ।

जन्तुपादप (सं० पु०) जन्तुप्रधानः पादपः । कोशाम्र वृक्ष, कोसम नामका पेड़ ।

जन्तुफल (सं० पु०) जन्तवः कोटाः फले यस्य । उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़ । उदुम्बर पांच प्रकारके हैं ।

जन्तुमत् (सं० त्रि०) जन्तवः सन्त्यस्यां बाहुल्येन मतुप् । जिसमें बहुतसे कीड़े रहते हों ।

जन्तुमाता (सं० स्त्री०) १ लाक्षा, लाख,लाह । २ रक्तजकृमि

जन्तुमारिन् (सं० पु०) जन्तु-मृ-णिच्-इनि । जीवघाती ।

जन्तुमारी (सं० स्त्री०) जन्तून् कृमीन् मारयति मृ-णिच-अण्-ङीप् । निम्बूक वृक्ष, बिजौरिया नीबूका पेड़ ।

जन्तुरस (सं० पु०) अलक्तक, महावर ।

जन्तुला (सं० स्त्री०) जन्तून् कीटान् लाति आददाति जन्तु-ला-क-टाप्। १ काशतृण, कांस नामको घास। २ जन्तुकालता।

जन्तुवृक्ष (सं० पु०) १ कोषाम्रवृक्ष, कोसमका पेड़। २ उडुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़।

जन्तुशत् (सं० पु०) विडङ्ग, वायविड़ङ्ग।

जन्तुहनन (सं० क्ली०) विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग।

जन्तुहन्त्री (सं० स्त्री०) जन्तून् हन्ति हन्-तृच ङीप्। १ विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग। (त्रि०) २ जन्तुको नाश करनेवाला।

जन्त्व (सं० त्रि०) जन् क्तार्थे-त्वन्। जन्मि उत्पन्न होगा।

सप्तम भाग सम्पूर्ण।